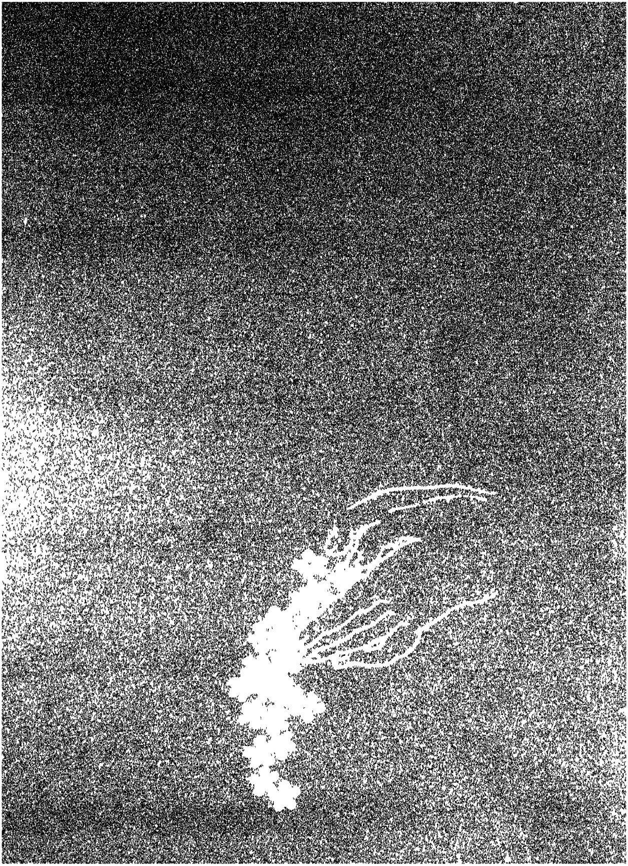


दिवंगत हिन्दी-सेवी

द्वितीय खण्ड

स्वागत
श्री वियोगी हरि

लेखक
क्षेमचन्द्र 'सुमन'

शकुन प्रकाशन

DIVAMGAT HINDI-SEVI (Vol II)
The Encyclopaedia of Late Hindi Litterateurs and Devotees

First Edition May, 1983

Price : Rs. 300 00

Published by
SUBHASH JAIN
Director
SHAKUN PRAKASHAN
3625, Subhash Marg,
New Delhi-110 002

Printed in India
BY RAM MURTI AGRAWAL
at Bharti Printers,
K-16, Naveen Shahdara,
Delhi-110 032

•

दिवंगत हिन्दी-सेवी : द्वितीय खण्ड

सदर्भ-ग्रन्थ

प्रथम सस्करण मई, 1983

मूल्य . 300.00

प्रकाशक

सुभाष जैन
संचालक
शकुन प्रकाशन
3625, सुभाष मार्ग,
नई दिल्ली-110 002

मुद्रक
राममूर्ति अग्रवाल
भारती प्रिण्टर्स
के-16, नवीन शाहदरा,
दिल्ली-110 032

प्रकाशकीय

हिन्दी साहित्य के विकास में, हमने अपनी सेवाओं के बाईस वर्षों का विनम्र प्रयास अब तक प्रस्तुत किया है। साहित्य की उन विधाओं और कृतियों के प्रकाशन के प्रति हमारे विशिष्ट प्रयास रहे है, जिनकी आवश्यकता साहित्य-जगत् में बराबर अनुभव की जाती रही है। 'दिवगत हिन्दी-सेवी' ग्रन्थ का प्रकाशन भी हमारे इसी प्रयास का एक पुष्प है। हमारे इस ग्रन्थ के प्रथम खण्ड का विमोचन सन् 1981 में भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाधी द्वारा सम्पन्न हुआ था। इस अवसर पर प्रधानमन्त्री ने कहा था—"यह काम आधुनिक हिन्दी के लिए इसलिए भी बडा उपयोगी सिद्ध होगा, क्योंकि इसमे हिन्दी-भाषी साहित्यकारो के साथ-साथ अहिन्दी-भाषी क्षेत्रो के दिवगत हिन्दी-सेवियो का भी परिचय दिया गया है।" वस्तुत यह तथ्य इस ग्रन्थ की सफलता का एक महत्त्वपूर्ण कारण बना है। देश के कोने-कोने मे हिन्दी के जिन विद्वानो और समर्पित रचनाकारो ने हिन्दी की सेवा की है, उनका परिचय इसमे प्रस्तुत करने के प्रयास की सर्वत्र प्रशसा हुई है। देश के सभी साहित्य-मनीषियो और पत्र-पत्रिकाओ ने भी इस ग्रन्थ की उपादेयता और प्रामाणिकता को मुक्त कण्ठ से स्वीकार करके हमारा उत्साह बढाया है। अब इस विशालकाय सन्दर्भ ग्रन्थ के द्वितीय खण्ड को हिन्दी-पाठको के कर-कमलो मे सौपते हुए हमे अत्यन्त प्रसन्नता अनुभव हो रही है।

शोध तथा अनुसन्धान के क्षेत्र मे इस ग्रन्थ का अपना एक सर्वथा विशिष्ट महत्त्व है। अभी तक हिन्दी मे ऐसी सन्दर्भमूलक सामग्री से समन्वित जो ग्रन्थ उपलब्ध है, उनमे 'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास' (डॉ० अब्राहम जार्ज ग्रियर्सन), 'शिवसिह सरोज'(शिवसिह सेगर), 'कविता कौमुदी' (रामनरेश त्रिपाठी), 'मिश्रबन्धु विनोद' (मिश्रबन्धु) और 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल) आदि महत्त्वपूर्ण है। जब ये ग्रन्थ लिखे गए थे तब इनकी अपनी एक विशिष्ट महत्ता थी। शिक्षा के प्रचार एव प्रसार के साथ-साथ शोध और अनुसधान के क्षेत्र मे भी उल्लेखनीय प्रगति हुई है। अभी तक हिन्दी म ऐसा कोई सन्दर्भमूलक ग्रन्थ उपलब्ध नही था जिसमे विगत दो सौ वर्षों की काल-परिधि मे हुए उन अनेक साहित्यकारो तथा हिन्दी-सेवियो की जानकारी सुलभ हो सकती, जिनका हिन्दी साहित्य के उत्कर्ष मे उल्लेखनीय योगदान रहा है।

इस ग्रन्थ के लेखक श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' ने इस महान् कार्य को जिस जीवट और लगन से उठाया है, उसीका शुभ परिणाम है यह दूसरा खण्ड। सुमन जी ने देश के सभी क्षेत्रो की हजारो मील की श्रमसाध्य यात्रा करके इस सन्दर्भ-ग्रन्थ की योजना की क्रियान्विति के लिए जो प्रचुर सामग्री सग्रहीत की है उसकी पुष्कलता को दृष्टि मे रखकर इसे दस समरूपी खण्डो मे प्रकाशित करने की योजना को पूर्णता देने की दिशा मे हम क्रमश. अग्रसर हो रहे है। इस ग्रन्थ

के लिए अपेक्षित चित्रो की उपलब्धि मे बहुत-सी कठिनाइयाँ हमारे सामने आई है। फिर भी सन्तोष है कि कुछ दुर्लभ चित्र हम जुटा पाए है। इस दृष्टि से हमने अपनी सुविधा से भी अधिक प्रामाणिकता को प्राथमिकता दी है। कागज और मुद्रण-सामग्री की महँगाई के इस युग मे हमने इस ग्रन्थ को यथासम्भव उपादेय और सग्राह्य बनाने का पूर्ण प्रयत्न किया है। आशा है विद्वज्जन और हिन्दी-प्रेमी पाठक हमारे इस प्रयास का पूर्ववत् उदारता से स्वागत करेंगे और हमे इस बात के लिए प्रोत्साहित करेंगे कि हम आगामी खण्डो को भी यथाशीघ्र प्रकाशित करके साहित्य की श्री-वृद्धि मे अपना विनम्र योगदान दे सके।

शकुन प्रकाशन
नई दिल्ली-110 002

सुभाष जैन

स्वागत

विपदा को कोई नही चाहता, और सम्पदा को सभी चाहते हैं। ये दोनो, विपदा और सम्पदा, बहुत सारी चीजो की तरह सापेक्ष है। एक का दु.ख दूसरे के लिए सुख हो जाता है, यदि उनके बीच शत्रु-भाव होता है, और इसी प्रकार एक का सुख दूसरे के लिए दु ख बन जाता है। परन्तु विवेकवान् व्यक्ति की दृष्टि मे विपदा और सम्पदा इन दोनो की व्याख्याएँ अलग ही है। भगवान् का, सत्पुरुषो का, सद्भावना का विस्मरण ही आपदा है, और उनका स्मरण सच्ची सम्पदा है --'विपद् विस्मरण विष्णो सपद् नारायणस्मृति.।'

हम अक्सर उसे भूल जाते हैं जिसे भूलना नही चाहिए, और उसे याद रखते है जिसे भूल जाना चाहिए। यदि किसी का उपकार हम कर बैठते है तो बार-बार बखान करते है, उसे भूलते नही है। यदि कोई हमारा अपकार करता है तो उसे सदा याद रखते है। ये दोनो ही बाते जीवन को प्रकाश देने वाली नही है, और अँधेरे मे हम भटका देती है। प्रकाश का रास्ता तो यह है कि दूसरो के प्रति अपनी की हुई अच्छाई को भूल जायें और किसी दूसरे ने हमारा भला किया हो तो उसे हमेशा याद रखें। हम गहरे उतरकर देखें कि जो नही भूलना था उसे भूल बैठे, और भूल जाने की बातो को याद करते रहते है। 'कृतज्ञता' के स्थान पर जान या अनजान मे 'कृतघ्नता' ने कब्जा कर लिया है। तब, हमे चेतना होगा। कृतघ्नता के पाप से मुक्त होना होगा। असत् का विस्मरण और सत् का स्मरण यदि समय रहते नही किया तो बहुत बडी कीमत चुकानी पडेगी। काल संकेत दे रहा है, चेतावनी दे रहा है कि स्मरण करो उसका, जो वस्तुत स्मरणीय है।

हम भूल गए है या भूलते जा रहे है अनेक बातो के साथ-साथ ऐसे हिन्दी-सेवियो को, जो पिछली शताब्दी मे और वर्तमान शताब्दी मे दिवगत हो गए—जिन्होने हाथ मे टिमटिमाते दीपक को लेकर हमे मार्ग दिखाया था, समाज का चित्र खीचकर समय-समय पर हमारे सामने रखा था। उनमे से बहुतों के नाम भी याद नही रख सके। दिमाग के स्टोर मे, जानकारी के नाम पर न जाने क्या-क्या जमा कर रखा है। पर अनमोल रत्नो को भूल की धूल से ढक रखा है। कैसी विडम्बना है यह !

अन्य देशो और हमारे अपने देश के अनेक भाषा-भागो मे साहित्य-सेवियो पर जो काम हुआ है उसे हम छोड देते है। देखना है कि हिन्दी-साहित्य मे इस ओर कितना कुछ हुआ है। 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' एव 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' तथा नाभाजी के 'भक्तमाल' के बाद 'शिवसिंह सरोज' पर, फिर 'हिन्दी नवरत्न' और 'मिश्रबन्धु-विनोद' पर सबसे पहले दृष्टि जाती है। 'मिश्रबन्धु-विनोद' और 'कविता-कौमुदी' साहित्य-सेवियों के अच्छे परिचायक और समीक्षात्मक ग्रन्थ है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'

अनुपम है। बाद मे और भी कई ग्रन्थ लिखे गए। वे भी मार्गदर्शक है। हिन्दी-साहित्य का काल-विभाजन तथा साहित्य-सेवियो का श्रेणी-विभाजन भी हुआ, जो विचारणीय रहा है। नीव रखने वाले इन लेखकों के हम सभी ऋणी है। इनके द्वारा हमे आगे बढने की प्रेरणा मिली है।

हिन्दी-सेवियो का परिचायक साहित्य वास्तव मे बड़ा श्रम-साध्य है। यदि गहराई से शोध और अन्वेषण न किया जाय, तो परिचय कभी-कभी भ्रामक बन जाता है। एक ही नाम के साहित्य-सेवियो के परिचय गलतफहमी पैदा कर देते है। सूरदास को ही लीजिए। संस्कृत के भक्त कवि बिल्वमगल और ब्रजभाषा-सम्राट् सूरदास को एक ही व्यक्ति मान लिया गया था। 'हिन्दी-शब्द-सागर' मे भी यह भूल थी। गोस्वामी तुलसीदास का नाम कुछ रचनाओं मे जोड दिया गया। 'कहे कबीर सुनो भई साधो' यह जोड़कर सैकडो भजन कबीर के नाम से प्रचलित हो गए। आज मन्दिरो मे और घरो मे भी 'जय जगदीश हरे' यह आरती गाई जाती है। इसके रचयिता प० श्रद्धाराम फिल्लौरी का नाम लोग भूल गए है। कोई-कोई इसके तथा इसीके अनुकरण पर रची गई अन्य आरतियो के अन्त मे 'कहत शिवानन्द स्वामी' या 'कहत हरीहर स्वामी' यह छाप जोड लेते है।

पुराने हिन्दी-सेवियो के जो परिचय उपर्युक्त ग्रन्थो मे दिए गए, उनमे नि सन्देह कुछ-न-कुछ प्रेरणा मिली है, आगे बढने का रास्ता खुला है। कुल मिलाकर यह काम स्तुत्य है।

खेद है कि इधर पिछले कुछ दिनो से यह कार्य जैसे रुक-सा गया है। इसका एक कारण यह जान पडता है कि राज-पुरुषो पर हमारा ध्यान केन्द्रित होता जा रहा है। राजनीति के क्षेत्र के प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध व्यक्तियो के नाम बहुधा सामने आ जाते है—ऐसे भी नाम, जिनका सम्बन्ध साहित्य-सृजन तो दूर की बात है, जिन्होने साहित्य की तरफ कभी झाँका भी नही। और, वे साहित्य-सेवियो को उपदेश देने लगते है, उनको सही रास्ता भी दिखाने लग जाते है। किन्तु वास्तविकता यह है कि समाज के सर्जक साहित्यकार अपनी रचनाओ के बल पर सदा अमर रहेगे, भले ही उनके नाम राजनीति की धुन्ध मे साफ-साफ न पढे जायँ। पर इसमे सन्देह नही कि उनका स्थान स्थायी रहेगा। एक प्रसग हमे याद आ रहा है। जब राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन को 'भारत-रत्न' का अलकरण दिया गया, तब हमने उनको बधाई का पत्र लिखा। पत्र का उत्तर उन्होने यह दिया—

> "मुझे उतार-चढाव की उपाधियाँ देने का सरकारी क्रम अच्छा नही लगता। इसमे गवर्नमेंट को अन्तर करना पडता है, परन्तु वह सूक्ष्म न्याय नही कर सकती। सुमित्रा-नन्दन पन्त को नीची उपाधि दी गई, मुझे ऊँची उपाधि मिली। यह सच है कि मैं आयु मे बडा हूँ और पुराना कार्यकर्ता भी हूँ। परन्तु यह मैं जानता हूँ कि मुझे जब लोग भूल जायेंगे, तब सुमित्रानन्दन पन्त की कविता पढी जायगी। जनता स्वय अपने आदर के पात्रो को समय-समय पर पहचान लेती है। यह काम बन्द हो जाय तो अच्छा।"

अपना स्थान साहित्य-सेवी स्वय ही निर्माण करते है। डगमगाती हुई राजनीति उनको डिगा नही सकती। वे बुलाने नही जाते स्तुतिकारो को अपना गुण-कीर्तन कराने को। किन्तु साहित्य-सेवियों का जो गुण-गान करता है वह अक्षय पुण्य का भागी बन जाता है।

जिस कार्य को शिवसिह सेंगर, मिश्रबन्धु, रामचन्द्र शुक्ल तथा रामनरेश त्रिपाठी आदि साहित्यकारों ने हाथ मे लिया था वह बीच मे कुछ शिथिल-सा हो गया। उस परम्परा को आगे

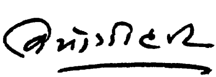
बढ़ते हुए देखकर स्वभावत बडा सन्तोष और आनन्द होता है। हिन्दी-जगत् के जाने-माने सुलेखक श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' ने जब दिवगत हिन्दी-सेवियो के कीर्ति-गान का सकल्प किया, तो हम सबके मन प्रफुल्लित हो गए। संकल्प यह महान् ज्ञानयज्ञ का है। विशुद्ध भावना, ऊँचा साहस और अथक परिश्रम इस यज्ञ की पुनीत सामग्री है। अकेले ही सुमन जी ने इस सामग्री को जुटाया। दिवगत हिन्दी-सेवियों का स्मृति-श्राद्ध करते हुए पुण्य-सलिला गगा मे मानो वे अवगाहन कर रहे है, और दूसरो को भी इस पावन पर्व पर पुण्य लूटने का आमन्त्रण दे रहे है।

उनका सकल्प है दस खण्डो मे इस महान् ग्रन्थ का सृजन और प्रकाशन करने का। पहले खण्ड मे 889 दिवगत हिन्दी-सेवियो का परिचय दिया गया था और इस द्वितीय खण्ड मे 893 का परिचय प्रस्तुत किया गया है, न्यूनाधिक रूप मे जैसा कि सुलभ हो सका। यह सन् 1800 से प्रारम्भ होता है। सुमन जी को इसके लिए काफी भ्रमण करना पडा, जो उनके लिए तीर्थ-यात्राएँ थी। दिन और रात इस ज्ञानयज्ञ के लिए उन्होंने एक कर दिया 'चरैवेति चरैवेति' सूक्ति को सामने रखकर। अधिकाश हिन्दी-सेवियों के चित्र भी उनके परिचय के साथ दिए गए है।

इतना बडा कार्य सुमनजी ने अकेले ही उठाया। लगता है कि हमारे देश की मिट्टी ही कुछ ऐसी है कि जहाँ अकेले व्यक्तियों ने ही बडे-बडे काम हाथ मे लेकर पूरे किये है। उनके साथी रहे है, उनका सत्सकल्प, उनकी विशुद्ध भावना, उनकी अखण्ड निष्ठा, और अथक परिश्रम।

हमारी दृढ आशा है कि 'दिवगत हिन्दी-सेवी' ग्रन्थ के सभी खण्ड यथोचित काल मे सुसम्पादित एव सुसज्जित रूप मे प्रकाशित होगे। हिन्दी-सेवियो के स्मृति-श्राद्ध मे लेखक के साथ-साथ हम सभी साहित्य-प्रेमी पाठक अपना योगदान देकर पुण्यार्जन करेगे।

'सेवा निकेत'
एफ 13/2 माडल टाउन, दिल्ली-9



एक शोध-स्तरीय सन्दर्भ-ग्रन्थ

'दिवंगत हिन्दी-सेवी' ग्रन्थ श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' के विलक्षण साहसपूर्ण सकल्प का मूर्त्तरूप है। अद्भुत जीवट और कर्मठता का ज्वलन्त उदाहरण है यह विशाल ग्रन्थ, जिसे सर्वथा एकाकी अध्यवसाय से सुमन जी ने देश के विराट् भूभाग की यात्रा करके तैयार किया है। भारत एक विशाल देश है और हिन्दी इस देश की राष्ट्रभाषा है, जिसमे लिखने, बोलने और पढ़ने वालो की अपरिमित सख्या है। सुमन जी का प्रयत्न रहा है कि जहाँ कही कोई भी सच्चा हिन्दी-सेवी व्यक्ति रहा हो उसका जीवन-वृत्त इस ग्रन्थ मे समाहित किया जाय। जीवित व्यक्तियो का वृत्त जान लेना जितना आसान है उतना ही कठिन और श्रमसाध्य काम है दिवगत व्यक्तियो का भूला-बिसरा, वर्षों पुराना जीवन-वृत्त सकलित करना। यह काम सचमुच ही परलोकवासियो को फिर से लोक मे लाने का है, उनके भौतिक शरीर मे नही वरन् उनके साहित्य एव भाषा-सेवा के सूक्ष्म शरीर से।

'दिवगत हिन्दी-सेवी' ग्रन्थ मे लेखक ने सन् 1800 के बाद दिवगत हुए हिन्दी-सेवियो का विवरण प्रस्तुत किया है। इसी सन् मे कलकत्ता मे जान गिल क्राइस्ट नामक अग्रेज ने फोर्ट विलियम कालेज मे हिन्दी मुन्शियों की नियुक्ति की थी और हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए शासकीय स्तर पर कार्य शुरू किया था। इस ग्रन्थ की जो योजना सुमन जी ने तैयार की है उसे देखकर लगता है कि यह महान् कार्य एक व्यक्ति के सामर्थ्य का नही है, यदि दो-चार हिन्दी-सेवी सस्थाएँ मिलकर इस विराट् योजना मे अपना योग दे तो शायद यह पूर्ण हो सके। किन्तु विस्मय की बात यह है कि सुमन जी अकेले ही इस पुनीत कार्य को परम पुरुषार्थ मानकर पूरा करने मे सलग्न हैं और अपनी इस योजना की कार्यान्विति का ईषत् परिचय उन्होंने इस ग्रन्थ के दो खण्ड प्रकाशित करके दे भी दिया है। जब यह सम्पूर्ण योजना दस खण्डो मे पूरी हो जायगी तब निश्चय ही आठ-दस हजार दिवगत हिन्दी-सेवियो का कार्य-वृत्त इस विशाल ग्रन्थ मे एकत्र सुलभ हो जायगा। जिस दिन यह साहित्यिक अनुष्ठान पूर्ण होगा उस दिन हिन्दी-भाषी गौरव का अनुभव कर सकेंगे।

इस ग्रन्थ के निर्माण की प्रेरणा सुमन जी को अपने मित्र स्वर्गीय डॉ० पद्मसिह शर्मा 'कमलेश' के एक भ्रातिपूर्ण परिचय को पढकर मिली। चण्डीगढ मे प्रकाशित होने वाली 'जागृति' नामक पत्रिका मे डॉ० कमलेश के देहावसान पर जो परिचय छापा गया था वह उन स्वर्गीय पडित पद्मसिह शर्मा का था जिनका देहान्त डॉ० कमलेश के स्वर्गारोहण से लगभग बयालीस वर्ष पूर्व हो चुका था। सुमन जी डॉ० कमलेश के इस परिचय को पढकर स्तब्ध और क्षुब्ध हो उठे। उन्हें लगा कि यदि हम हिन्दी-सेवी साहित्यकारो को इसी प्रकार भूलते जायेंगे और उनका नितान्त भ्रामक परिचय पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित करेंगे तो एक दिन ऐसा आयगा कि हिन्दी

पाठक को सही जानकारी दुर्लभ हो जायगी। इस घटना से प्रेरणा लेकर सुमन जी ने दिवगत हिन्दी-सेवी व्यक्तियो के विषय मे पूछ-ताछ प्रारम्भ की और पाया कि सैकडों ऐसे साहित्यकार है जिनका कोई परिचयात्मक वृत्तान्त कही सुलभ नही है। पुरानी पत्र-पत्रिकाओ मे उनके लेख, निबन्ध, कहानी, कविता आदि प्रकाशित हैं, किन्तु आज की पीढी उनके नाम से भी अनभिज्ञ है। हिन्दी के इतिहास-ग्रन्थो मे उनका जीवन-वृत्त या कृतित्व दर्ज नही है। सुमन जी ने परलोकवासी हिन्दी-सेवियो का वृत्तान्त जानने के पहले विगत 200 वर्ष की पत्र-पत्रिकाओं की पुरानी फाइले टटोलना शुरू किया। उनमे कुछ व्यक्तियो की रचनाएँ मिली। यत्र-तत्र कुछ जीवन-वृत्त भी मिले, किन्तु इस श्रम से दस प्रतिशत व्यक्तियों का ही सामान्य-सा वृत्तान्त मिला। शेष व्यक्तियो के परिचय प्राप्त करने, उनके नाम, पते, कृतियाँ आदि जानने के लिए उन्होने देशाटन प्रारम्भ किया। अद्यावधि सुमन जी साठ-सत्तर हजार किलोमीटर की यात्रा कर चुके है। देश के सभी प्रदेशों मे उन्होने भ्रमण किया है और घर-घर जाकर हिन्दी-सेवियो का पता लगाया है। उनके प्रामाणिक जीवन-वृत्त सग्रह किये है। यदि किसी पत्र-पत्रिका या परिवार मे उनका कोई पुराना फोटो या चित्र है तो उसे भी सकलित किया है। अधिकाश हिन्दी-सेवियो के चित्र इसमे दिये गए है।

'दिवगत हिन्दी-सेवी' ग्रन्थ के प्रथम खण्ड म 889 तथा इस खण्ड मे 893 हिन्दी-सेवियो का परिचय प्रस्तुत किया गया है। यह परिचय मात्र जीवन-वृत्त न होकर उनकी साहित्य-साधना पर समीक्षात्मक टिप्पणी भी है। यदि इस ग्रन्थ मे हिन्दी-सेवी का नाम और जन्म-मरण का ब्योरा होता तो यह ग्रन्थ उतना उपयोगी न बन पाता जैसा कि अब साहित्यिक टिप्पणियों, उद्धरणो एव जीवन्त सस्मरणो मे बन गया है। कहना न होगा कि यह ग्रन्थ अपने वर्तमान रूप मे '**एक शोध-स्तरीय सन्दर्भ ग्रन्थ**' है।

उन्नीसवी शती मे हिन्दी-भाषी प्रदेशो मे बाहर शताधिक व्यक्तियो ने हिन्दी भाषा को अपनी अभिव्यक्ति का स्वेच्छा से माध्यम बनाया था और उनकी यह मान्यता थी कि हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा है। उस समय न तो कोई भाषिक विवाद था और न राजनीतिक चेतना से उत्पन्न किसी प्रकार का वैमनस्य ही। जिन्हे आज हम अहिन्दी प्रदेश कहते है, उस समय इस शब्द का प्रयोग ही नही होता था। 'अहिन्दी' शब्द तो स्वतत्र भारत की देन है। कभी बगाल का प्रख्यात नगर कलकत्ता हिन्दी का सबसे बडा गढ था और अनेक बगीय बधु हिन्दी लिखने म गौरव का अनुभव करते थे। केशवचन्द्र सेन जैसे महान् सुधारक तो हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा मानते थे। हिन्दी के प्रारम्भिक दैनिक और साप्ताहिक पत्र कलकत्ता से ही प्रकाशित होते थे। जिन लोगो ने उस समय हिन्दी के सम्वर्धन मे योग दिया उनका वृत्तान्त इस ग्रन्थ म पढकर हम विस्मय होता है कि आज बगाल मे हिन्दी-विरोध क्यो और कैसे उत्पन्न हुआ?

'दिवगत हिन्दी-सेवी' ग्रन्थ के प्रथम खण्ड मे सबसे पहला नाम तमिलभाषी महिला कु० अनन्त कमला का है, जिन्होने हिन्दी की सर्वोच्च उपाधियाँ प्राप्त करके आजीवन हिन्दी-सेवा की। यह नाम साधारण पाठक को चौकाने वाला लगेगा, किन्तु इस ग्रन्थ के दोनो खण्डो मे इस प्रकार के लगभग तीन सौ नाम है जिनकी मातृभाषा हिन्दी नही है किन्तु हिन्दी को ही अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाकर वे लोग लिखते-पढते रहे थे। इस ग्रन्थ मे मुस्लिम, ईसाई, सिख आदि अनेक हिन्दी-सेवियो की भी ऐसी विपुल सामग्री है जो हिन्दी के राष्ट्रभाषा पद को सार्थक बनाती है।

'दिवगत हिन्दी-सेवी' एक विशिष्ट कोटि का संदर्भ ग्रन्थ है। लेखक का यह प्रयत्न रहा है कि दिवगतो की जानकारी प्रामाणिक आधार पर प्रस्तुत की जाय और उनके कृतित्व की

सक्षिप्त किन्तु तलस्पर्शी समीक्षा भी हो। जो लोग हिन्दी साहित्य का इतिहास तैयार करते है अथवा अनुसधानपरक शोध-प्रबन्ध आदि लिखते है उनके लिए तो यह ग्रन्थ वास्तव मे 'पथ-प्रदर्शक प्रामाणिक दस्तावेज' है। लोकोक्ति है कि उगते सूर्य को सब नमस्कार करते है अस्तंगत सूर्य को कोई याद नही करता। लेकिन सुमन जी ने दिवगत, भूले-बिसरे, अज्ञात, अनाम एव पूर्णतया अस्त हुए व्यक्तियों का श्रद्धापूर्वक स्मरण किया है। भावना के साथ उनका श्राद्ध और तर्पण किया है। मेरी जानकारी मे ऐसा उपयोगी सन्दर्भ ग्रन्थ भारत की किसी भी भाषा मे अभी तक नही लिखा गया है। यदि अन्य भारतीय भाषाओ मे भी इस प्रकार के ग्रन्थो का निर्माण हो तो भारतीय मनीषा की पूरी जानकारी प्राप्त हो सकेगी। निश्चय ही यह एक कटकाकीर्ण दुर्गम पथ है, किन्तु सुमन जी ने अपने पद-न्यास से इसे प्रशस्त बना दिया है। जब यह दस खण्डो की योजना सम्पन्न होगी तब निश्चय ही हिन्दी-सेवियो की विशाल परम्परा हमारे सामने आयगी और 'हिन्दी ही भारत की राष्ट्रभाषा है' यह घोषणा भी स्वय इन ग्रन्थों से ही मुखरित होगी।

—**विजयेन्द्र स्नातक**

स्नातक सदन
ए 5/3 राणा प्रताप बाग
दिल्ली-110007

लेखकीय निवेदन

'दिवगत हिन्दी-सेवी' ग्रन्थ का द्वितीय खण्ड पाठको के हाथो मे प्रस्तुत करते हुए हमे हार्दिक प्रसन्नता अनुभव हो रही है। जिस समय हमने इस कार्य को हाथ मे लिया था उस समय हमे स्वप्न मे भी यह आशा नही थी कि हिन्दी-जगत् इसे इतनी उदारतापूर्वक अपनायगा। हर्ष का विषय है कि इस ग्रन्थ के प्रथम खण्ड का समस्त देश मे जो हार्दिक स्वागत हुआ उससे प्रोत्साहित होकर हम अपनी इस योजना की कार्यान्विति मे और भी तत्परतापूर्वक सलग्न हो सके। हमारे अनुष्ठान की सफलता का सबसे उत्कृष्ट प्रमाण यही है हिन्दी के वरेण्य साहित्यकार श्री वियोगी हरि ने इसकी महत्ता इन शब्दो मे निरूपित की है—"इतना बडा कार्य सुमन जी ने अकेले ही उठाया। लगता है कि हमारे देश की मिट्टी ही कुछ ऐसी है कि जहाँ अकेले व्यक्तियो ने ही बडे-बडे काम हाथ मे लेकर पूरे किए है। उनके साथी रहे है उनका सत्सकल्प, उनकी विशुद्ध भावना, उनकी अखण्ड निष्ठा और अथक परिश्रम।" वास्तव मे हम अपनी 'विशुद्ध भावना' और 'अखण्ड निष्ठा' के बल पर ही इस कार्य को सम्पन्न करने की दिशा मे अग्रसर हो सके है।

उन्नीसवी शताब्दी को हम हिन्दी साहित्य का उत्कर्ष-काल मानते हैं। इसी शताब्दी मे सन् 1800 ईस्वी मे कलकत्ता मे 'फोर्ट विलियम कालेज' की सस्थापना हुई थी और तब ही से हिन्दी गद्य का आधुनिकतम रूप विकसित हुआ था। ब्रजभाषा की प्राचीनतम परम्पराओं को छोडकर खडी बोली मे उत्कृष्टतम गद्य के सृजन का जो सूत्रपात हुआ था उससे ही हिन्दी के आधुनिकतम रूप का निर्माण हुआ था। हिन्दी हमारे देश की उन भाषाओं मे है जिसके माध्यम से हमारे प्राय सभी सन्तो, सुधारको, नेताओ और साहित्यकारो ने अपने विचारो और सिद्धातो का उन्मुक्त भाव से प्रचार किया था, फिर चाहे वे इस देश के किसी भी भू-भाग के निवासी रहे हो।

भारत की स्वतन्त्रता से पूर्व ऐसे अनेक सन्त, नेता और सुधारक इस देश के अनेक क्षेत्रो मे हुए है जिन्होने हिन्दीतर-भाषी होते हुए भी हिन्दी भाषा और साहित्य के उन्नयन तथा विकास मे अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था। ऐसे महानुभावो मे जहाँ महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती और महात्मा गाधी-जैसे गुजराती-भाषी सुधारको तथा नेताओ ने हिन्दी को अपने विचारों के प्रचार का सशक्त माध्यम बनाया वहाँ बगाल के राजा राममोहन राय, केशवचन्द्र सेन, बकिमचन्द्र चटर्जी, जस्टिस शारदाचरण मित्र, भूदेव मुखर्जी, नवीनचन्द्र राय, नगेन्द्रनाथ बसु, अमृतलाल चक्रवर्ती, श्यामसुन्दर सेन और नलिनीमोहन सान्याल आदि अनेक महानुभावों ने हिन्दी के महत्त्व को समझकर उसके प्रचार एव प्रसार के लिए अनेक सफल प्रयास किये थे। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने जहाँ बगभाषी श्री केशवचन्द्र सेन की प्रेरणा पर सस्कृत की बजाय अपना 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक ग्रन्थ हिन्दी मे लिखा और उसे 'आर्य भाषा' का गौरवपूर्ण अभिधान

दिया वहाँ राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने हिन्दी को 'भारतीय एकता की आत्मा' समझकर उसे 'राष्ट्रभाषा' के गौरवपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित करने मे अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाही थी। राजा राममोहनराय ने जहाँ अपने 'बंगदूत' पत्र मे हिन्दी के महत्त्व का प्रतिपादन किया था वहाँ बंकिमचन्द्र चटर्जी ने अपने 'बंगदर्शन' नामक पत्र मे उसकी उपयोगिता का उदारतापूर्वक समर्थन किया था। इन दोनों महानुभावों की विचार-धारा का अनुसरण करके एक ओर जहाँ जस्टिस शारदाचरण मित्र ने 'एक लिपि विस्तार परिषद्' की स्थापना द्वारा उसकी ओर से प्रकाशित 'देवनागर' पत्र मे भारत की सभी प्रमुख भाषाओ की उत्कृष्टतम कृतियो को देवनागरी लिपि के माध्यम से हिन्दी के पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने की पहल की थी,वहाँ अमृतलाल चक्रवर्ती ने अनेक वर्ष तक कई हिन्दी-पत्रो का सम्पादन करके अपने हिन्दी-प्रेम का परिचय दिया था। वे अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वृन्दावन-अधिवेशन के अध्यक्ष भी रहे थे। यहाँ यह तथ्य भी विशेष रूप से ध्यातव्य है कि हिन्दी मे 25 भागो मे 'विश्वकोश' का लेखन और प्रकाशन करके जहाँ नगेन्द्रनाथ बसु ने अपने अनन्य हिन्दी-प्रेम का परिचय दिया था वहाँ चिन्तामणि घोष और रामानन्द चट्टोपाध्याय प्रभृति महानुभावों ने लाखों रुपये का घाटा सहकर भी 'सरस्वती' और 'विशाल भारत'-जैसे साहित्यिक पत्रो का अनेक वर्ष तक प्रकाशन करके हिन्दी की समृद्धि मे अपनी महत्त्वपूर्ण देन दी थी। इस दिशा मे श्री नवीनचन्द्र राय का नाम भी विशेष रूप से इसलिए अविस्मरणीय है कि उन्होंने जहाँ पंजाब विश्वविद्यालय की ओर से हिन्दी की रत्न, भूषण तथा प्रभाकर परीक्षाओ का प्रचलन करके उस अहिन्दी-भाषी प्रदेश मे हिन्दी का बिरवा रोपा वहाँ स्वयं भी हिन्दी मे 'ज्ञान प्रदायिनी' पत्रिका का वर्षों तक सम्पादन तथा प्रकाशन करने के साथ-साथ 'नवीन चन्द्रोदय' नामक हिन्दी-व्याकरण की रचना की थी। उनकी सुपुत्री श्रीमती हेमन्त-कुमारी चौधुरी का नाम भी विशेष महत्त्व रखता है, जिन्होंने 'सुगृहिणी' नामक महिलोपयोगी पत्रिका का कई वर्ष तक सफल सम्पादन करने के अतिरिक्त बहुत-सी हिन्दी-पुस्तकों की रचना की थी। इनके अतिरिक्त श्री नलिनीमोहन सान्याल का नाम ऐसा है जिन्होंने कलकत्ता विश्व-विद्यालय से न केवल हिन्दी में सर्वप्रथम एम०ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की, प्रत्युत निरन्तर 7 वर्ष तक इस विश्वविद्यालय मे हिन्दी का अध्यापन करने के साथ-साथ 82 वर्ष की आयु मे हिन्दी मे पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। हिन्दी मे 'भाषा विज्ञान' विषय पर सर्वप्रथम आपने ही ग्रन्थ-रचना की थी। इनके अतिरिक्त ऐसे अनेक बंगभाषी महानुभाव हैं जिन्होंने हिन्दी की एकनिष्ठ भाव से सेवा की थी। उन विभूतियो मे सर्वश्री तडितकान्त बख्शी, द्वारकानाथ मैत्र, तारामोहन मित्र, नलिनीबाला देवी, राजेन्द्रबाला घोष, बृजेन्द्रनाथ बन्द्योपाध्याय, ब्रजरत्न भट्टाचार्य, गिरिजाकुमार घोष और क्षितिमोहन सेन आदि के नाम अन्यतम है।

स्वतन्त्रता से पूर्व कभी ऐसा समय था जब हिन्दी को स्वाधीनता-प्राप्ति की अमर उद्घोषिका समझा जाता था। यदि ऐसा न होता तो देश के अनेक हिन्दीतरभाषी महानुभाव अपने विचारों के प्रचार का माध्यम हिन्दी को क्यों बनाते ? एक ओर जहाँ लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक-जैसे मराठीभाषी राष्ट्रीय नेता ने हिन्दी के राष्ट्रीय महत्त्व को स्वीकार किया था वहाँ उनकी प्रेरणा से केशव वामन पेठे ने सन् 1893 मे 'राष्ट्रभाषा किंवा सर्व हिन्दुस्तानची एक-भाषा करणे' नामक पुस्तिका की रचना करके हिन्दी के महत्त्व की प्रस्थापना की थी। उनके इस प्रयास की आशंसा जहाँ सर्वश्री राजाराम रामकृष्ण भागवत, काशीनाथ पाण्डुरंग परब, महादेव राजाराम बोडस-जैसे अनेक गण्यमान्य विद्वानो ने की थी वहाँ माधवराव सप्रे ने लोकमान्य तिलक के राष्ट्रीय विचारों को समस्त देश में प्रसारित तथा प्रचारित करने के पावन उद्देश्य से प्रेरित होकर सन् 1907 मे नागपुर से 'हिन्दी केसरी' नामक पत्र का सम्पादन एवं प्रकाशन किया था।

लगभग उन्ही दिनों सन् 1906 मे श्री वासुदेव गोविन्द आप्टे ने पूना से 'आनन्द' नामक जो बालोपयोगी पत्र मराठी भाषा में प्रकाशित किया था उसमें उन्होंने 16 पृष्ठ हिन्दी में भी प्रकाशित करने प्रारम्भ किये थे। इन महानुभावो के अतिरिक्त जिन अन्य मराठी-भाषी सज्जनो ने अपनी प्रतिभा और योग्यता के बल पर हिन्दी को राष्ट्रभाषा का गौरवपूर्ण स्थान दिलाने मे अपना अभूतपूर्व सहयोग दिया उनमे सर्वश्री सखाराम गणेश देउस्कर, बाबूराव विष्णु पराडकर, रामराव चिंचोलकर, लक्ष्मणनारायण गर्दे, मनोहर पन्त गोलवलकर, आत्माराव देवकर, श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, दामोदर शास्त्री सप्रे, सिद्धनाथ माधव आगरकर, रामकृष्ण रघुनाथ खाडिलकर, गोविन्द शास्त्री दुगवेकर, नारायण शास्त्री खिस्ते, गोविन्दराव हर्डीकर, गोविन्द रघुनाथ थत्ते, नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ, बाबा राघवदास, केशवराम फडसे, अनन्त सदाशिव अल्तेकर, गोपाल दामोदर तामस्कर, कृष्ण विनायक फडके, नारायण वासुदेव गोडबोले, हरि रामचन्द्र दिवेकर, भास्कर रामचन्द्र भालेराव, माधव विनायक किबे, कमलाबाई किबे, विश्वनाथ गगाधर वैशम्पायन, भास्कर रामचन्द्र ताँबे, भास्कर गोविन्द घाणेकर, गणेश रघुनाथ वैशम्पायन, रामकृष्ण रघुनाथ सरवटे, पाण्डुरग सदाशिव साने गुरु जी, गजानन माधव मुक्तिबोध, अनिल-कुमार अडयालिकर तथा अनन्तगोपाल शेवडे प्रभृति के नाम विशेष रूप मे स्मरणीय है। इनमे सर्वश्री माधवराव सप्रे और बाबूराव विष्णु पराडकर ने तो क्रमश अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के देहरादून तथा शिमला-अधिवेशनो की अध्यक्षता भी की थी।

एक ओर जहाँ उक्त सभी महानुभाव हिन्दी को अपनाकर उसमे प्रचुर साहित्य-सर्जना कर रहे थे वहाँ गुजराती-भाषी साहित्यकारो ने भी इस क्षेत्र मे उल्लेखनीय योगदान दिया था। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती और महात्मा गाधी द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर चलकर जिन अनेक गुजराती-भाषी महानुभावो ने हिन्दी-लेखन को अपनी साधना का अमर लक्ष्य बनाया था उनमे सर्वश्री मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या, मेहता लज्जाराम शर्मा, गणपत जानकीराम दबे, गोपाललाल ठाकुर दुर्गाशकर कृपाशकर मेहता, गोविन्द गिल्लाभाई, भवानीशंकर याज्ञिक, जीवनशकर याज्ञिक, मयाशकर याज्ञिक, मायाशकर दबे, गगाशकर पचौली, लज्जाशकर झा और गोपीवल्लभ उपाध्याय के नाम विशेष रूप से ध्यातव्य है। इन सब महानुभावो ने जहाँ हिन्दी को अपनाया वहाँ उसके साहित्य की बहुमुखी अभिवृद्धि करने मे भी अपना अनन्य अवदान दिया था। यहाँ तक कि गुजराती-भाषी होते हुए जहाँ बडौदा-नरेश महाराजा सयाजीराव गायकवाड और कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी ने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के क्रमश दिल्ली और उदयपुर अधिवेशनो की अध्यक्षता की थी, वहाँ राष्ट्रपिता महात्मा गाधी भी सम्मेलन के क्रमश सन् 1918 तथा सन् 1935 मे इन्दौर मे सम्पन्न हुए अधिवेशनो के अध्यक्ष रहे थे। गाधी जी ने इससे पूर्व भी अपने दक्षिण अफ्रीका के निवास-काल मे सन् 1914 मे वहाँ से हिन्दी मे पत्र प्रकाशित करके उसके महत्त्व की प्रतिष्ठापना की थी। मुन्शी सदासुखलाल, लल्लूजीलाल, केशवराम भट्ट और गौरीशकर हीराचन्द ओझा भी गुजराती-भाषी थे। हिन्दी-साहित्य की अभिवृद्धि मे जहाँ इनका प्रमुख योगदान रहा है वहाँ ओझा जी ने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भरतपुर अधिवेशन की अध्यक्षता करने के साथ-साथ 'भारतीय प्राचीन लिपिमाला' नामक ऐतिहासिक ग्रन्थ का निर्माण किया था। बडौदा-नरेश सयाजीराव गायकवाड ने तो अपने राज्य मे हिन्दी के पठन-पाठन की समुचित व्यवस्था भी कर दी थी।

अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सन् 1918 मे इन्दौर मे सम्पन्न हुए उसके आठवें अधिवेशन के निर्णयानुसार महात्मा गाधी ने चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य के सक्रिय सहयोग

से मद्रास मे जिस 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' की स्थापना की थी कालान्तर मे वह उस क्षेत्र मे राष्ट्रीय जागरण का सशक्त माध्यम बनी। इस सभा के द्वारा दक्षिण मे जहाँ अनेक हिन्दी-प्रचारक और देशभक्त कार्यकर्ता तैयार हुए वहाँ ऐसे अनेक महानुभावो के नाम भी अगुलिगण्य है जिन्होने राष्ट्रीय जागरण के साथ-साथ हिन्दी भाषा और साहित्य की बहुविध सेवा की थी। ऐसे वरेण्य महानुभावो मे श्री उन्नि दामोदरन् के अतिरिक्त प्रो० ए० चन्द्रहासन, ए० सी० कामाक्षिराव, के० भास्करन नायर, के० वासुदेवन पिल्लै, डॉ० हिरण्मय, बी० पार्थसारथी अय्यगार, इब्राहीम शरीफ, उन्नव राजगोपाल कृष्णय्या, कन्नय्या तिरुवीथि, एन० जी० रामकृष्ण पणिक्कर, एस० आर० (रामचन्द्र) शास्त्री, एस० महालिंगम्, श्रीमती डॉ० एस० लक्ष्मी, श्रीमती सरस्वती तकच्ची, कुमारी अ० कमला, एस० रेवण्णा, के० जी० शिवण्णा, के० श्रीकण्ठैया, पूर्ण सोमसुन्दरम्, आलूरि वैरागी चौधरी, आक्कूर अनन्ताचारी, उल्लाट्टिल गोविन्दन कुट्टिनायर, ए० पी० सी० वीरबाहु, ए० वी० नागेश्वर राव, एन० एस० ईश्वरन, एम० आर० आशीर्वादम्, एम० वी० माधव कुरुप, एस० देवराजन, एम० धर्मराजन, के० केलप्पन, कण्णदासन, कर्णवीर नागेश्वरराव, टी० आर० कृष्णस्वामी अय्यर, टी० वी० श्रीनिवासमूर्ति, पी० कृष्णन नायर, पी० कृष्णमूर्ति, मुत्तैया दास तथा आरिगपूडि (ए० रमेश चौधरी) आदि के नाम उल्लेख्य हैं। हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार डॉ० रांगेय राघव भी तमिल-भाषी थे।

यहाँ यह भी विशेष रूप से ध्यातव्य है कि आन्ध्रप्रदेश मे जहाँ भारतेन्दु के समय मे नादेल्ल पुरुषोत्तम कवि दक्खिनी हिन्दी मे मौलिक अभिनेय नाटकों की रचना कर रहे थे वहाँ उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भ मे केरल के राजा गर्भश्रीमान् स्वाति तिरुनाल ने ब्रजभाषा मे सूरदास की शैली पर भक्ति-पदो की समर्थ सर्जना की थी। तमिलनाडु को आज जब कि हिन्दी-विरोधी कहा जाता है तब हम यह कैसे भूल जाते है कि मद्रास मे पहला 'हिन्दी प्रचार विद्यालय' द्रविडमुन्नेत्रकषगम के संस्थापक श्री रामास्वामी नायिक्कर के निवास-स्थान मे ही आरम्भ हुआ था। यहाँ यह तथ्य भी अवधारणीय है कि तमिल के महाकवि श्री सुब्रह्मण्य भारती ने लोकमान्य बाल गगाधर तिलक की प्रेरणा पर जहाँ सन् 1908 मे मद्रास मे हिन्दी-कक्षाएँ प्रारम्भ की थी वहाँ अपने 'इण्डिया' नामक पत्र मे हिन्दी के पाठ भी प्रकाशित करने प्रारम्भ किए थे। यदि यहाँ तमिल-भाषी पण्डित श्रीरगाचार्य कान्दूर के नाम का उल्लेख न किया गया तो भारी कृतघ्नता होगी, जिन्होने सन् 1904 के लगभग वृन्दावन आकर यहाँ से 'श्रीमद्भागवत' के हिन्दी अनुवाद का 10 खण्डो मे सम्पादन किया था। यहाँ यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि इस अनुवाद का प्रकाशन बगदेश के ताडाम राज्य के भूपति श्री वनमालीराय की आर्थिक सहायता से हुआ था। इस प्रकार जहाँ बगला, गुजराती, मराठी, तमिल, तेलुगु, कन्नड और मलयालम-भाषी अनेक महानुभाव हिन्दी-रचनाओ के द्वारा उसके साहित्य की अभिवृद्धि करने मे सलग्न थे वहाँ असम, उडीसा, सिन्ध, कश्मीर तथा पजाब आदि अनेक हिन्दीतर प्रदेशो के साहित्यकारो ने भी अपनी रचना-प्रतिभा से हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि मे अनन्य एव उल्लेखनीय योगदान दिया था। उडीसा की कुन्तलाकुमारी सावत ने जहाँ अपनी रचना-चातुरी से हिन्दी साहित्य मे एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बनाया है वहाँ सर्वश्री गोपबन्धु चौधरी, गोपबन्धु दास, गोलोकविहारी धल, लिंगराज मिश्र, राजकृष्ण बोस और विच्छन्दचरण पटनायक आदि के नाम भी उनकी हिन्दी-सम्बन्धी सेवाओ के लिए बहुत महत्त्व रखते है। इसी प्रकार सिन्धी-भाषी ऐसे अनेक महानुभाव है जिन्होने हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार मे उल्लेखनीय कार्य करने के साथ-साथ हिन्दी-लेखन करके अपना विशिष्ट स्थान बनाया

है। ऐसे महानुभावों में सेठ उद्धवदास ताराचन्द, सन्त टेऊराम, तोलाराम आजिज, देवदत्त कुन्दाराम शर्मा, साधु टी० एल० वास्वानी, प्रभुदास ब्रह्मचारी, मूलचन्द्र वमुमल राजपाल तथा टोपणलाल सेवाराम जैतली के अतिरिक्त जयरामदास दौलतराम का नाम भी स्मरणीय है। कश्मीर और पजाब प्रदेश यद्यपि भाषा की दृष्टि से हिन्दी-भाषी प्रदेशो की अपेक्षा अपना सर्वथा पृथक् अस्तित्व रखते है, किन्तु हम यह भी नही भुला सकते कि हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि मे इन दोनों प्रदेशो का सर्वथा अनुपम योगदान रहा है। जम्मू मे उत्पन्न हुए पण्डित दुर्गाप्रसाद मिश्र ने जहाँ सन् 1878 मे कलकत्ता से 'भारत मित्र' का सम्पादन-प्रकाशन किया था वहाँ उन्होंने तत्कालीन कश्मीर-नरेश महाराज रणवीरसिंह के अनुरोध पर जम्मू से 'जम्बू प्रकाश' नामक पत्र का सम्पादन भी किया था। कुछ समय तक कश्मीरी पण्डित मुकुन्दराम ने लाहौर से प्रकाशित होने वाली नवीनचन्द्र राय की 'ज्ञान प्रदायिनी' नामक पत्रिका का सम्पादन किया था। इनके बाद आगा हश्र कश्मीरी, हरिकृष्ण जौहर, तुलसीदत्त 'शैदा', मोहनलाल नेहरू, रामेश्वरी नेहरू, उमा नेहरू, सुशीला आगा, विमला रैना, प्रद्युम्नकृष्ण कौल, लक्ष्मीधर शास्त्री, विश्वम्भरनाथ जिज्जा, सूर्यनाथ तकरू, प्रेमनाथ दर, नन्दलाल चत्ता तथा नरेन्द्र खजूरिया आदि अनेक महानुभावो ने अपनी रचनाओ के द्वारा हिन्दी की समृद्धि मे अपनी प्रमुख भूमिका निबाही थी।

स्वातन्त्र्य-पूर्व पजाब का तो हिन्दी-साहित्य की अभिवृद्धि मे सर्वथा अप्रतिम योगदान रहा है। यदि हिन्दीतर-भाषी कहकर उस प्रदेश के लेखको की गणना की जायगी तो वह हिन्दी के साथ बहुत बडा अन्याय होगा। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के द्वारा प्रवर्तित आर्यसमाज के सुधारवादी आन्दोलन के कारण वहाँ हिन्दी का जो प्रचार-प्रसार हुआ उसने वहाँ की जनता को हिन्दी-लेखन की ओर प्रेरित किया था। हिन्दी के प्रमुख कथाकार चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, सुदर्शन, यशपाल तथा मोहन राकेश इसी प्रदेश की देन है। पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी इस प्रदेश के लेखको ने साहित्य की अभिवृद्धि मे अपना विशेष सहयोग दिया था। हिन्दी के मूर्धन्य पत्रकार श्री बालमुकुन्द गुप्त तथा माधवप्रसाद मिश्र भी पजाबी ही थे, क्योकि उन दिनो हरियाणा पजाब प्रदेश मे था। महात्मा मुन्शीराम ने जहाँ अपने 'सद्धर्म प्रचारक' नामक पत्र के माध्यम से उस प्रदेश मे हिन्दी का बिरवा रोपा, वहाँ गुरुकुल कागडी-जैसी राष्ट्रीय सस्था की स्थापना करके हिन्दी को अनेक लेखक और पत्रकार प्रदान किए। गुरुकुल मे प्रशिक्षित और दीक्षित प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति, सत्यदेव विद्यालकार, भीमसेन विद्यालकार, धर्मदेव विद्या-मार्तण्ड, जयदेव शर्मा विद्यालकार, जयचन्द्र विद्यालकार, वशीधर विद्यालकार और चन्द्रगुप्त वेदालकार-जैसे अनेक लेखक व पत्रकार पजाबी-भाषी ही थे। महात्मा हसराज, लाला लाजपतराय और लाला देवराज की डी० ए० वी० कालेज, नेशनल कालेज तथा कन्या महाविद्यालय आदि शिक्षा-सस्थाओ का भी राष्ट्रीय जागरण के साथ हिन्दी की अभिवृद्धि मे प्रचुर योगदान रहा था। इन सस्थाओ मे प्रशिक्षित एव दीक्षित महानुभावो मे आचार्य विश्वबन्धु शास्त्री, आचार्य रामदेव, सत्यदेव परिव्राजक, डॉ० रघुवीर, रघुनन्दन शास्त्री, गोवर्धन शास्त्री तथा परमानन्द शास्त्री आदि अनेक नाम ऐसे है जिन्होने अपनी रचनाओ के माध्यम से हिन्दी साहित्य को गौरवान्वित किया है। अमर शहीद सरदार भगतसिंह मे भी हिन्दी-लेखन के प्रति रुचि ला० लाजपतराय के 'नेशनल कालेज' मे जागृत हुई थी। भाई परमानन्द तथा लाला लाजपतराय ने अपने भाषणो तथा लेखो के माध्यम से पजाब मे हिन्दी के प्रति अच्छा वातावरण बनाया था। महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती (खुशहालचन्द 'खुरसन्द') ने अनेक वर्ष तक वहाँ से 'हिन्दी मिलाप' दैनिक का सफलतापूर्वक प्रकाशन करके जहाँ अपनी

हिन्दी-निष्ठा का परिचय दिया था वहाँ गोस्वामी गणेशदत्त ने 'विश्वबन्धु' तथा 'अमर भारत' दैनिक का प्रकाशन करके पंजाब में हिन्दी का वातावरण तैयार करने में अविस्मरणीय कार्य किया था। यह भी तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि पंजाब में उत्पन्न हुए महात्मा मुन्शीराम, गोस्वामी गणेशदत्त और जयचन्द्र विद्यालंकार ने क्रमश: अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भागलपुर, जयपुर और कोटा-अधिवेशनों की अध्यक्षता की थी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जब सारा देश हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार के पावन यज्ञ में अपनी महनीय आहुति देकर उसके साहित्य की समृद्धि में संलग्न था तब यहाँ के मुस्लिम बन्धु भी कैसे पीछे रहते! अतीत काल में जहाँ कबीर, रहीम, जायसी, आलम, रसखान तथा अमीर खुसरो आदि अनेक विशिष्ट कवियों ने हिन्दी-साहित्य को समृद्ध किया वहाँ आधुनिक काल में भी सैयद इन्शा अल्ला खाँ, मीर अनीस, नजीर अकबराबादी, सैयद अमीर अली 'मीर', मुन्शी अजमेरी, कासिमअली साहित्यालंकार, जहूरबख्श हिन्दी कोविद, समीउल्लाखाँ, हफीजउल्ला खाँ, नबीबख्श 'फलक', लतीफ हुसैन 'नटवर', आगा हश्र कश्मीरी, पीर मुहम्मद मूनिस, अब्दुल रशीद खाँ 'रशीद', दाराबखाँ 'अभिलाषी', इब्राहीम शरीफ तथा महमूद अहमद 'हुनर' आदि के नाम हिन्दी साहित्य के इतिहास की गौरव-निधि हैं। यहाँ यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि अन्तिम मुगल-सम्राट् बहादुरशाह जफर ने भी ब्रजभाषा में बड़ी सशक्त रचनाएँ की थी। कदाचित् ऐसे ही महानुभावों की हिन्दी-सेवाओं को लक्ष्य करके भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने यह कहा था—'इन मुसलमान हरिजनन पर कोटिन हिन्दू वारिए।'

आज जब हिन्दी विश्व-मंच पर प्रतिष्ठित होने की अद्भुत क्षमता रखती है तब हम उन अनेक विदेशी मनीषियों को कैसे भुला सकते हैं जिन्होंने हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि की दिशा में अपनी प्रतिभा का अद्भुत परिचय दिया था। ऐसे महानुभावों में गार्सां द तासी, जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन, एडविन ग्रीव्ज, एफ० ई० केई, फ्रेडरिक पिन्काट, एल० पी० तैस्सितोरी, ए० पी० बरान्निकोव, एफ० एफ० ग्राउस, ए० जे० पालटेण्ड, बेंजामिन शुल्ट्ज तथा सैमुअल हेनरी-जैसे 200 से ऊपर नाम हैं, जिनका विवरण इस ग्रन्थ के अन्तिम दसवें खण्ड में दिया जायगा। इनमें भारत-वंशी मारीशस, सुरीनाम, फीजी, त्रिनीडाड, गुयाना और दक्षिण अफ्रीका-जैसे अनेक देशों के साहित्यकारों के परिचय भी रहेंगे। सारा ग्रन्थ 8-8 सौ पृष्ठ के 10 ममरूपी खण्डों में विभक्त रहेगा और इसके 9 खण्डों में भारत के सभी भूभागों के 10 हजार से अधिक हिन्दी-सेवियों की प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत करने का हमारा संकल्प है।

हिन्दी के इस सार्वभौमिक स्वरूप को दृष्टि में रखकर ही हमने समस्त देश में फैले हुए दिवंगत हिन्दी-सेवियों की प्रामाणिक जानकारी देने का एक विनम्र प्रयास किया है। इस ग्रन्थ के प्रथम खण्ड में जहाँ असम (2), आन्ध्र प्रदेश (15), उड़ीसा (4), उत्तर प्रदेश (450), कर्नाटक (3), कश्मीर (5), केरल (9), गुजरात (14), तमिलनाडु (3), दिल्ली (6), पंजाब (50), बंगाल (14), बिहार (91), मध्यप्रदेश (111), महाराष्ट्र (17), राजस्थान (77), सिन्ध (3), हरियाणा (11) तथा हिमाचल (4) आदि प्रदेशों के 889 हिन्दी-सेवियों के परिचय प्रस्तुत किये गए थे वहाँ इस खण्ड में असम (2), आन्ध्र प्रदेश (23), उड़ीसा (2), उत्तर प्रदेश (417), कर्नाटक (5), कश्मीर (5), केरल (4), गुजरात (7), तमिलनाडु (5), दिल्ली (7), पंजाब (37), बंगाल (12), बिहार (59), मध्य प्रदेश (152), महाराष्ट्र (20), मेघालय (1), राजस्थान (104), सिन्ध (12), हरियाणा (17) तथा हिमाचल (2) के 893 महानुभावों का विवरण दिया गया है। कोष्ठकों में दी गई संख्याएँ तत्तद् प्रदेशों की सूचक हैं। पहले खण्ड में कुल 889 हिन्दी-सेवियों का विवरण प्रस्तुत किया गया था। जिनमें से

190 व्यक्तियों के हम चित्र नही जुटा पाए थे। ठीक यही कैफियत द्वितीय खण्ड की है। इसमे भी 893 मे से 190 व्यक्तियो का विवरण चित्र-रहित दिया गया है।

स्वतन्त्रता के लगभग 4 दशक बाद भी हिन्दी मे अच्छे सन्दर्भ ग्रन्थ के अभाव का अनुभव करके हमने इस ग्रन्थ के निर्माण का पावन सकल्प किया था। प्रारम्भ मे जब हमने इस कार्य को पूर्णत. प्रामाणिक बनाने की दृष्टि से सन् 1800 के बाद के काल मे दिवगत हुए साहित्य-सेवियो की सूची मुद्रित कराकर हिन्दी के सभी सुधी समीक्षको, विद्वानो, प्रचारको और अध्येताओ की सेवा मे भेजकर उनके रचनात्मक सुझाव आमन्त्रित किए तब देश के कोने-कोने से जहाँ इस योजना के उन्मुक्त स्वागत के पत्र आने प्रारम्भ हुए वहाँ कही-कही मे कुछ जीवित साहित्यकारो के नाम भी अपनी उस सूची मे समाविष्ट होने की सूचनाएँ हमे मिली। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि हमने अपनी वह सूची हिन्दी के पुराने इतिहासो तथा पत्र-पत्रिकाओ को देखकर ही बनाई थी। हमने अपनी यह सूची प्रसारित एव प्रचारित ही इसलिए की थी कि हम सही सूचनाएँ अपने इस ग्रन्थ मे प्रस्तुत करे और इस पावन उद्देश्य से प्रेरित होकर ही हमने स्पष्ट रूप से उसमें यह निवेदन कर दिया था कि "प्रबुद्ध पाठक अपने उपयोगी सुझावो से हमे अवगत करने के साथ-साथ यह भी सूचित करने का कष्ट करे कि कही हमारी अज्ञानता के कारण इसमें कोई उल्लेखनीय व्यक्तित्व समाविष्ट होने मे छूट तो नही गया अथवा किन्ही ऐसे महानुभावो के नाम तो इसमे नही आ गए, जो आज भी जीवित है।" कदाचित् हमारी इन पक्तियो से प्रेरित होकर ही सुधी पाठको ने यह सूचना देना अपना नैतिक कर्तव्य समझा था।

उस समय तो हमारे आश्चर्य का कोई ठिकाना ही न रहा जब हमे हिन्दी के वरिष्ठ कवि एव साहित्यकार श्री रामवचन द्विवेदी 'अरविन्द' का पटना से निम्नलिखित पत्र मिला—

1-3-81

आदरणीय सुमन जी,

मुझे विश्वस्त सूत्र से पता चला है कि आप दिवंगत हिन्दी-सेवियो का परिचय-ग्रन्थ प्रकाशित कर रहे है। आप प्रारम्भ से ही हिन्दी-सेवियो की प्रोन्नति के प्रति जागरूक रहे है। आप इस दिशा मे मानव नही, एक सुदृढ सस्था है। मुझे पता चला है कि दिवगत हिन्दी-सेवियो मे आपने मुझे भी स्थान दिया है। शायद यह जानकारी आपको 'मिश्रबन्धु विनोद' से मिली है। ऐसी भूले 'विनोद' मे बहुत है। अगर मेरे सम्बन्ध मे उपर्युक्त छपी नही है तो कृपया निकाल दें। आपको जिस प्रोफार्मा मे उपर्युक्त जानकारी चाहिए, सूचित करे, ताकि मैं भी आपकी कुछ सेवा कर सकूं।

विनीत
रामवचन द्विवेदी 'अरविन्द'

वास्तव मे हमने 'मिश्रबन्धु विनोद' के चतुर्थ भाग के सवत् 1991 मे प्रकाशित प्रथम सस्करण के पृष्ठ 555 पर मुद्रित उनके परिचय से ही यह सूचना प्राप्त की थी। उस विवरण में श्री अरविन्दजी का मृत्यु-काल स्पष्टत. सवत् 1986 दिया हुआ है। इसी प्रकार छायावाद के उन्नायक कवि श्री मुकुटधर पाण्डेय के सम्बन्ध मे भी यह भ्रामक सूचना हमे हिन्दी के अनेक इतिहास-ग्रन्थो मे 'गतानुगतिकता' के अन्धानुकरण के कारण मिली। उन्हे आचार्य शुक्ल और उनके परवर्ती अनेक साहित्यकारो ने अपने ग्रन्थो मे 'दिवंगत' लिख दिया था। जब हमारे पास

ऐसी अनेक सूचनाएँ सब ओर से प्राप्त हुई तो हमने अपनी सूची को प्रामाणिक रूप देने तथा तत्सम्बन्धी सामग्री सँजोने के पावन उद्देश्य से प्रेरित होकर सारे देश की यात्रा करने का दुर्वह सकल्प किया और 3-4 बार लगभग 70 हजार किलोमीटर की यात्राएँ करके इस सबंध मे प्रचुर सामग्री एकत्रित की। अपनी इन यात्राओ मे हमे खट्टे-मीठे और तीखे ऐसे अनेक अनुभव हुए कि जिनके कारण कभी-कभी मन अत्यन्त खिन्न हो जाता था। हमने सारे देश की इन दीर्घ-कालीन यात्राओ मे यह निष्कर्ष निकाला कि विस्मृत साहित्यकारो के सम्बन्ध मे जो कुछ लिखना या करना है उसे अपने ही बलबूते पर किया जा सकता है। सभी विश्वविद्यालय और सस्थाएँ सरकारी अनुदानो की राशि को जीमने मे लगी हुई है। किसी को उन साहित्य-सेवियो की कीर्ति-रक्षा की तनिक भी परवाह नही, जिनके त्याग, तप और बलिदान से हिन्दी-साहित्य गौरवान्वित हुआ है। इससे अधिक पीडा की और क्या बात होगी कि 50-60 वर्ष पूर्व आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने जो इतिहास नागरी प्रचारिणी सभा के बन्द कमरे मे बैठकर लिखा था, उनके परवर्ती लेखकों ने उसमे आगे बढने की कोई पहल ही नही की। यदि सारे देश मे फैले हुए विश्व-विद्यालय अपने-अपने क्षेत्रो की साहित्यिक उपलब्धियो का प्रामाणिक विवरण ही तैयार करा देते तो कालान्तर मे उन सामग्री के आधार पर हिन्दी साहित्य का एक अच्छा इतिहास तैयार किया जा सकता था। अब जो इतिहास हमारे छात्रो को पढाया जा रहा है वह सर्वथा अधूरा और एकागी है। उसमे केवल हिन्दी-भाषी प्रदेशो के उन लेखको की ही चर्चा आपको पढने को मिलती है जो शुक्लजी या उनके परवर्ती लेखको के समकालीन थे। यहाँ तक कि शुक्लजी ने जब श्री श्रद्धाराम फिल्लौरी के 'भाग्यवती' (सन् 1877) उपन्यास को हिन्दी का पहला सामाजिक उपन्यास घोषित कर दिया तो उनके बाद के इतिहासकारो ने इस सम्बन्ध मे 'गतानुगतिकता' का ही आश्रय लिया और इस लीक मे हटकर सोचने का तनिक भी कष्ट नही किया, जबकि उनसे पूर्व मेरठ के पण्डित गौरीदत्त का 'देवरानी जेठानी की कहानी' नामक उपन्यास सन् 1870 म प्रकाशित हो चुका था। इसी प्रकार आचार्य शुक्ल ने यदि भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र को खडी बोली का पहला कवि घोषित कर दिया तो किसी परवर्ती इतिहासकार को उसमे हटकर लिखने की नही सूझी, जबकि भारतेन्दु के आविर्भाव से पूर्व सन्त गगादास (1823-1913) खड़ी बोली मे उनसे अधिक सशक्त रचना कर रहे थे।

हम दूसरों की तो क्या कहे, दिवगत साहित्यकारो के पारिवारिकजन भी उनकी कीर्ति-रक्षा के प्रति सर्वथा उदासीन है। हिन्दी-सेवी सस्थाओ का भी बहुत-कुछ यही हाल है। वे दूसरो की सूचना एकत्र करने मे तो सहायता क्या करती स्वय उनके पदाधिकारी और कार्य-कर्ताओ ने अपने पारिवारिकजनो के प्रति भी यही उपेक्षा दिखाई। जब अखिल भारतीय ख्याति की एक सस्था के कार्यकर्ता मे उनके एक पारिवारिकजन की जानकारी प्राप्त करने के सम्बन्ध मे हमने कई पत्र लिखे तब उनका जो पत्र हमे मिला उसमे पाठक उनकी मनोवृत्ति का अनुमान सहज ही लगा सकते है। यहाँ हम जान-बूझकर सस्था, व्यक्ति और स्थान का नाम नही दे रहे है। उन्होने लिखा था—

....

22-12-80

प्रिय सुमनजी,

नमस्कार।

आपके दोनो पत्र मिले, किन्तु पत्र-पुष्प रहित। जमाना अर्थ का है, आप भी अपने व्यापार की भूमिका बाँध रहे हैं। व्यापार मे कुछ लगाकर ही फल की आशा की जाती है। मुझसे

जो कार्य आप लेना चाहते हैं वह श्रम-साध्य है। श्रम के लिए पारिश्रमिक अत्यन्त आवश्यक होता है। अत एक हजार रुपये मेरा पारिश्रमिक भेज सके तो मै आपके लिए श्रम करने को प्रस्तुत हूँ। अन्यथा व्यर्थ श्रम करने की मेरी आदत नही।

आशा है आप सानन्द होगे।

भवदीय

....

ऐसे एक नही अनेक अनुभव हमें अपने इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने मे हुए है और अब भी दिन-प्रतिदिन हो रहे हैं। इतनी कठिनाइयो और उपेक्षाओ मे हम यह कार्य कर रहे है। हाँ, अब भी देश मे कुछ ऐसे सुधी और सहृदय साहित्य-प्रेमी है, जो उन्मुक्त मन तथा उदार हृदय से हमारी सहायता कर रहे है, लेकिन ऐसे महानुभाव उँगलियो पर ही गिने जा सकते है। हमारे इस अनुष्ठान मे जिन महानुभावो ने सामग्री जुटाने मे अविस्मरणीय सहयोग दिया है उन सबके प्रति हम अपना हार्दिक आभार व्यक्त करते है। ऐसे महानुभावो मे सर्वश्री बनारसीदास चतुर्वेदी (फीरोजाबाद), गोविन्दवल्लभ पन्त (हलद्वानी), अवध वैरागी (लखनऊ), कृष्णकुमार 'मनीषी', डॉ० राष्ट्रबन्धु (कानपुर), विश्वनाथ मुखर्जी, डॉ० विश्वनाथप्रसाद, पुरुषोत्तम मोदी, कृष्णचन्द्र बेरी (वाराणसी), श्रीरजन सूरिदेव, उमाशकर वर्मा, उदयराजसिंह, सुरेन्द्रप्रसाद जमुआर (पटना), प्रो० मगलमूर्ति (मुगेर), शशिकर (चक्रधरपुर), रमेशचन्द्र झा (मोतीहारी), डॉ० बेचन (भागलपुर), डॉ० शिवनारायण खन्ना (कलकत्ता), डॉ० प्रणवीर चौहान (आगरा), डॉ० त्रिलोकीनाथ 'व्रजबाल' (मथुरा), डॉ० वेदप्रकाश 'अमिताभ' (अलीगढ), डॉ० मलखान-सिंह सिसोदिया (एटा), भगवतीशरणदास, (झाँसी), शैवाल सत्यार्थी (ग्वालियर), बलभद्र-प्रसाद तिवारी (भोपाल),डॉ० श्यामसुन्दर व्यास (इन्दौर), डॉ०गणेशदत्त शर्मा 'इन्द्र' (आगर), भगवन्तशरण जौहरी (उज्जैन), डॉ० पार्थसारथी डबराल (ऋषिकेश), प्यारेलाल पाण्डेय अधि-वक्ता (रायगढ), युगलकिशोर चतुर्वेदी (जयपुर), रामनरेश सोनी (बीकानेर), रामदत्त थानवी (जोधपुर), श्री भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव (आजमगढ), मदनमोहन व्यास (मुरादाबाद), डॉ०गणेश-दत्त सारस्वत (सीतापुर), निरकारदेव 'सेवक' (बरेली), श्री महावीरप्रसाद गैरोला (टिहरी), डॉ०श्यामसुन्दर 'बादल' (राठ), मोती बी०ए० (बरहज), डॉ० विवेकीराय (गाजीपुर), जगपति चतुर्वेदी (प्रयाग) तथा नारायणलाल परमार(धमतरी) के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। जबलपुर के श्री रामेश्वर गुरु, श्री हरिकृष्ण त्रिपाठी और डॉ० विश्वभावन देवलिया का योगदान हमारे लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहा है। श्री गुरु ने जहाँ मध्यप्रदेश के सभी प्रमुख हिन्दी-सेवियों के विषय मे हमे समय-समय पर अनेक विश्वस्त सूचनाएँ प्रदान की वहाँ इतर प्रान्तो के हिन्दी-सेवको की सामग्री भी सुलभ कराई। यहाँ हिन्दी के अध्यवसायी पत्रकार और लेखक श्री अखिल विनय का उल्लेख करना इसलिए अनिवार्य है कि उन्होने हमारे इस आयोजन की देशव्यापी चर्चा करके उसकी महत्ता प्रस्थापित की। हिन्दीतर-भाषी प्रदेशो की सामग्री के सचयन मे हमे जहाँ डॉ० एन० चन्द्रशेखरन नायर(त्रिवेन्द्रम)से उल्लेखनीय सहयोग सुलभ हुआ है वहाँ दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास के श्री र० शौरिराजन ने भी हमारी भरपूर सहायता की है। असम और उड़ीसा की सामग्री हमे डॉ० कृष्णनारायणप्रसाद 'मागध'(गोहाटी) और प्रो० वनमालीदास (भुवनेश्वर) से प्राप्त हुई है। आन्ध्रप्रदेश के दिवगत हिन्दी-सेवियो के विषय मे हमे हैदराबाद के डॉ० वेदप्रकाश शर्मा का भी अनन्य सहयोग मिला है। इस ग्रन्थ के प्रस्तुत कलेवर के निर्माण मे ग्रन्थ के लेखन और टंकण के दिनों मे समय-समय पर डॉ० मनोहरलाल, प्रेमनाथ चतुर्वेदी,

डॉ० मुरलीधर कृष्णचन्द्र जैतली, श्री रमेशप्रसाद शर्मा, श्री इन्द्र सैंगर और श्री आनन्द त्रिवेदी का जो सक्रिय सहयोग हमें सुलभ हुआ है उसके लिए वे हमारे साधुवाद के पात्र हैं।

इस महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ की परिकल्पना को मूर्त्त रूप देने का सम्पूर्ण श्रेय शकुन प्रकाशन के अध्यवसायी सचालक श्री सुभाष जैन को है। वास्तव मे यदि वे इस कार्य मे रुचि न लेते तो हम अपने इस स्वप्न को कदापि साकार होता न देख पाते। इस प्रसंग मे श्री जैन के दोनों सुपुत्रों (चिरजीव पकज जैन तथा अम्बुज जैन) का स्मरण करना भी हमारा नैतिक कर्तव्य है, जिनकी सतर्क दृष्टि ने इस बार ग्रन्थ के चित्रो को अधिक सुरुचि के साथ प्रस्तुत किया है। इस ग्रन्थ के मुद्रक श्री राममूर्ति अग्रवाल भी हमारे धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने सर्वथा विपरीत परिस्थितियों मे इसका मुद्रण करके अपना अनन्य सहयोग प्रदान किया है। अन्त मे हम हिन्दी की पुरानी पीढी के यशस्वी तथा मनस्वी साहित्यकार श्री वियोगी हरि के प्रति भी पूर्णत: श्रद्धा-नत है जिन्होंने इस ग्रन्थ के प्रथम खण्ड के प्रकाशन के अवसर पर अपना अशेष आशीष प्रदान करके हमारा मार्ग प्रशस्त किया था। इस ग्रन्थ के सम्बन्ध में डॉ० विजयेन्द्र स्नातक ने अपने जो महत्त्वपूर्ण विचार प्रकट किये है उनके लिए भी हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता अर्पित करते हैं। अन्त मे इतना ही निवेदन है कि इसमे जो अच्छाइयाँ है वे हमारे सभी गुरुजनो और हितैषियो की है, और जो कमियाँ है वे सब हमारी अज्ञानता के कारण है। हाँ, हम इतना तो अवश्य ही विश्वासपूर्वक कह सकते है कि यद्यपि हमने यथाशक्य इसकी सामग्री को पूर्ण प्रामाणिक बनाने मे कोई कोर-कसर नही रखी है, फिर भी यदि इसमे कोई त्रुटि रह गई हो तो प्रेमी पाठक हमे उससे अवगत कराने की कृपा करे, जिससे आगामी खण्डो मे उन त्रुटियो से बचा जा सके। यद्यपि हमने सभी हिन्दी-सेवियों के चित्र देने का सकल्प किया था, किन्तु हम उसमे सफल नही हो सके। इसे पाठक हमारी विवशता ही समझकर क्षमा कर देगे। अन्त मे अपनी लेखनी को विराम देते हुए हम यही कह सकते है

अब तक तो लिखते आए थे हम चाँदनी की बात,
अब फिक्र यह है डूबते सूरज को क्या लिखे?

अजय निवास, दिलशाद कालोनी,
शाहदरा, दिल्ली-110032

क्षेमचन्द्र 'सुमन'

राजधानी दिल्ली के पुराने प्रकाशक एवं पत्रकार
स्व० श्री शंकरलाल गुप्त 'बिन्दु'
की स्मृति को सादर
जिन्होंने इस ग्रन्थ के लिए प्रचुर उपयोगी एवं अलभ्य सामग्री
प्रदान करके मेरा कार्य सरल किया

अनुक्रम

• •

निम्नलिखित सूचनाएँ हमें ग्रन्थ के मुद्रण के बाद प्राप्त हुईं।
पाठक कृपया संशोधन कर लें।

1	श्री आत्माराम गैरोला	जन्म—सन् 1855
2.	श्री कृष्णबिहारी द्विवेदी 'नलिनीश'	जन्म—सन् 1910
3	श्री कैलाश भार्गव	जन्म— 8 जुलाई सन् 1937
4	श्री गोवर्धनलाल 'श्याम'	जन्म—सन् 1879
5.	श्री गोवर्धन शास्त्री	जन्म—सन् 1881
6.	चूहडमल 'डियार्योमल' हिन्दूजा	'डियार्योमल' नहीं
7	श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र 'बदउआ गुरु'	जन्म—7 जून सन् 1909 निधन—2 मई सन् 1971
8.	श्री जनार्दन झा 'जनसीदन'	निधन—सन् 1951
9.	श्री जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज'	निधन—सन् 1964
10.	श्री धर्मवीर एम० ए०	जन्म—सन् 1904
11.	श्री नाथूराम शर्मा	जन्म—सन् 1883
12.	श्री बन्देअली फातमी	निधन—21 नवम्बर सन् 1981

श्री अंजनीकुमार त्रिपाठी 'कलाकार'

श्री त्रिपाठी का जन्म उत्तर प्रदेश के रायबरेली जनपद के बछरावाँ कस्बे मे सन् 1905 मे हुआ था। आपके पिता पण्डित रामदयाल तिवारी जिन दिनो बलरामपुर (गोंडा) मे कोतवाल थे उन दिनों ही आपका जन्म हुआ था। बलरामपुर के राजा साहब से आपके पिताजी की अच्छी मैत्री थी। राजा साहब ने अपने नवजात पुत्र के पालन-पोषण के लिए इंगलैंड से जो एक नर्स मँगवाई थी उसे राजा साहब के पुत्र का असामयिक निधन हो जाने के उपरान्त पण्डित रामदयाल तिवारी ने अपने पास रख लिया था। इस प्रकार अपने बचपन के लगभग 6 महीने तक बालक अजनीकुमार की देख-रेख इसी विलायती नर्स ने की थी। आपको चाय पीने की बहुत अधिक आदत इसी नर्स के कारण विरासत मे मिली थी। अपने जीवन के सम्बन्ध मे श्री त्रिपाठी जी ने यह सही ही लिखा है—"मैं असाधारण हूँ—इस विचार ने मुझे निकम्मा बना दिया। यही नही, उसने मुझे बदनसीबी की स्थिति तक पहुँचा दिया। मैंने आराम मे जिन्दगी व्यतीत की। फलतः सफलता के लिए कोई प्रयत्न, कोई सघर्ष मैं न कर सका।"

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा बछरावाँ मे हुई थी और बाद मे आपने सन् 1922 मे हाई स्कूल बरेली से और इंटर तथा बी० ए० (सन् 1927-29 मे) महाराजा कालेज, जयपुर से किया था। जिन दिनों आप जयपुर मे बी० ए० के छात्र थे उन दिनो एस० डी० कालेज, कानपुर के प्रिंसिपल प्रो० शेषाद्रि जयपुर के महाराजा कालेज का निरीक्षण करने के लिए वहाँ गये थे। वे श्री त्रिपाठी जी के उत्तरो से बहुत प्रसन्न हुए थे और उन्हीकी प्रेरणा पर आगे की एम० ए० की पढ़ाई के लिए आपने कानपुर मे प्रवेश लिया था, किन्तु असहयोग-आन्दोलन की चपेट में आ जाने के कारण आपने प्रथम वर्ष के बाद पढाई रोक दी और सक्रिय रूप से आन्दोलन मे भाग लेने लगे। बाद में श्री रफीअहमद किदवई के अनुरोध पर आपने मेरठ कालेज से एम० ए० (द्वितीय वर्ष) की परीक्षा सन् 1935 में उत्तीर्ण की। दुर्भाग्य ने आपका पीछा यहाँ भी न छोड़ा और आपके पुराने प्रिंसिपल प्रो० शेषाद्रि (जो आपके असहयोग आन्दोलन मे भाग लेने के कारण बहुत रुष्ट थे।) वहाँ आपकी मौखिक परीक्षा लेने आए। आपकी राष्ट्रीय भाव-धारा के कारण उन्होने आपको कम नम्बर दिये, जिससे आपको परीक्षा मे प्रथम श्रेणी प्राप्त न हो सकी। आपने फिर रफी साहब की प्रेरणा पर एल-एल० बी० की परीक्षा भी मेरठ कालेज से ही उत्तीर्ण की और बाद मे पूर्णत राजनीतिक जीवन को अपना लिया।



राजनीतिक क्षेत्र मे आपने जिन कतिपय नेताओं के साथ कधे से कधा मिलाकर कार्य किया था उनमे श्री रफी-अहमद किदवई के अतिरिक्त सर्वश्री लालबहादुर शास्त्री, महावीर त्यागी, केशवदेव मालवीय, अजितप्रसाद जैन और फीरोज गाधी-जैसे अनेक उच्चकोटि के नेताओं के नाम उल्लेखनीय है। आपको अपने जेल-जीवन में महामना मदनमोहन मालवीय, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन और डॉ० सम्पूर्णानन्द-जैसे महानुभावो का सान्निध्य भी सुलभ हुआ था। जब रफी साहब का कांग्रेस से मतभेद हो गया और उन्होने 'किसान मजदूर प्रजा पार्टी' का गठन किया तब आप भी उनके अन्यतम सहयोगी रहे थे। अपने राजनैतिक जीवन मे सक्रिय रहते हुए आपने अनेक बार जेलों की यातनाएँ भी भोगी थी।

आप जहाँ उच्चकोटि के राजनीतिक कार्यकर्ता थे वहाँ लेखन और पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपका अत्यन्त

महत्त्वपूर्ण योगदान रहा था। आपने कवि, लेखक, पत्रकार, निबन्धकार और सस्मरण-लेखक के रूप में अपनी प्रतिभा का प्रचुर परिचय दिया था। आप जहाँ कई वर्ष तक 'ट्रिब्यून', 'नेशनल कॉल' और 'हिन्दुस्तान टाइम्स' आदि अनेक अँग्रेजी पत्रों के सवाददाता रहे थे वहाँ लखनऊ से प्रकाशित होने वाले हिन्दी दैनिक 'स्वतन्त्र भारत' के सम्पादकीय विभाग के भी सक्रिय सदस्य रहे थे। लखनऊ के दैनिक 'नवजीवन' में भी आपकी रचनाएँ प्रकाशित होती रहती थी। प्रयाग के 'भारत' में भी आप प्राय लेख आदि लिखा करते थे। कवि के रूप में भी आपने अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था। आपकी कविताओं में शृगार, वीर, शान्त और भक्ति रस का प्राचुर्य रहा करता था। व्यग्य, हास्य, सस्मरण, कहानी तथा निबन्ध-लेखन की दिशा में भी आपकी रचनाएँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।

कहानी-लेखक के रूप में आपने कथा-विन्यास तथा यथार्थ-चित्रण के कारण अच्छी ख्याति प्राप्त कर ली थी। 'कलाकार' के नाम से प्रकाशित आपकी कहानियों की एकमात्र विशेषता यह है कि वे सभी मानव-जीवन के दैनिक घटना-क्रम पर आधारित है और प्राय सभीमें आपने जीवन की अनेक अनुभूतियों का सजीव चित्रण किया है। आपकी साहित्यिक सेवाओं के उपलक्ष्य में 'बैसवारा साहित्य-सस्थान' रायबरेली की ओर से आपका अत्यन्त गौरवपूर्ण अभिनन्दन किया गया था। यह अत्यन्त खेद का विषय है कि जीवन के अन्तिम दिनों में आपकी नेत्र-ज्योति क्षीण हो गई थी।

आपका देहावसान 16 फरवरी सन् 1982 को रायबरेली में हुआ था।

पद्धति के आधार पर हुआ था। आप वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् श्री ब्रह्मदत्त जिज्ञासु के गुरुभाई थे।

आर्यसमाज के सुधारवादी आन्दोलन से प्रभावित होकर आपने प्रारम्भ में मथुरा, गुड़गाँव तथा रोहतक आदि अनेक स्थानों में शुद्धि के कार्य में पर्याप्त रुचि ली और फिर काशी में जाकर रहने लगे। आप अनेक वर्ष तक काशी की आर्यसमाज के प्रधान व मन्त्री भी रहे थे और कुछ दिन तक 'आर्य गुरुकुल देवरिया' के 'कुलपति' के पद को भी सुशोभित किया था। काशी में रहते हुए आपने अनेक विपक्षी विद्वानों से जमकर शास्त्रार्थ भी किये थे।



आप कुशल वक्ता होने के साथ-साथ उत्कृष्ट कोटि के लेखक भी थे। आपने 'वाल्मीकि रामायण' की जो टीका लिखी थी वह काशी से प्रकाशित होने वाली 'वेद वाणी' में क्रमश छपा करती थी और बाद में उसे पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया गया था। 'रामायण' के अवशिष्ट काण्डों की टीका बाद में उसी शैली पर पडित युधिष्ठिर मीमासक ने की थी। आप केवल बालकाण्ड से सुन्दर काण्ड तक ही टीका लिख पाए थे कि 84 वर्ष की आयु में 19 अक्तूबर सन् 1968 को आपका निधन हो गया।

श्री अखिलानन्द ब्रह्मचारी

श्री अखिलानन्द जी का जन्म 1 अगस्त सन् 1884 को उत्तर प्रदेश के जौनपुर जनपद के पटखाली नामक ग्राम के एक सात्विक ब्राह्मण-परिवार में हुआ था। आपका पठन-पाठन स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती की देख-रेख में पूर्ण आर्ष-

राजा अजीतसिंह (खेतड़ी)

राजा अजीतसिंह का जन्म राजस्थान के अलसीसर नामक स्थान में 16 अक्तूबर, सन् 1861 को ठाकुर छत्तूसिह के यहाँ हुआ था। खेतड़ी-नरेश राजा फतहसिहजी ने आपको

अपने दत्तक पुत्र के रूप मे स्वीकार कर लिया था और आप विधिवत् 15 दिसम्बर सन् 1870 को खेतडी की राजगद्दी प्रर प्रतिष्ठित हुए थे। जिस समय आपने यह दायित्व सँभाला था उस समय आपकी आयु केवल 9 वर्ष थी और राजगद्दी सँभालने की यह सारी प्रक्रिया जयपुर के पोलिटिकल एजेण्ट मेजर ई०आर०सी०ब्राडफोर्ड की उपस्थिति मे सम्पन्न हुई थी, क्योकि खेतडी राज्य उन दिनो परगना कोटपुतली की हैसियत से ब्रिटिश सरकार की जागीर मे था। इस सम्बन्ध मे खेतडी राज्य की ओर से ब्रिटिश सरकार को 20 हजार रुपये 'मातमी नजराना' इसलिए देना पडा था क्योंकि गोद लेने की दशा मे गद्दी का उत्तराधिकार सौपने के मिलसिले मे यह नजराना देने का नियम था। क्योकि अजीतसिहजी गद्दी पर बैठने के समय नाबालिग थे, इसलिए खेतडी का सारा राज-काज 'जयपुर स्टेट कौसिल' के द्वारा सचालित होता था।

यद्यपि जयपुर-नरेश सवाई रामसिह के खेतडी के राजा फतहसिह के साथ काफी मतभेद थे, फिर भी अजीतसिह की शिक्षा-दीक्षा उन्हीकी देख-रेख मे हुई थी। उन्होने आपको पढाने के लिए महाराजा कालेज के मुख्याध्यापक श्री कान्तिचन्द्र मुखर्जी के परामर्श से श्री गोपीनाथ पुरोहित (प्रख्यात हिन्दी-लेखक) की नियुक्ति कर दी थी। साथ ही आपको 'नोबल्स स्कूल' मे भी भरती कर दिया गया था। शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त सन् 1875 मे आउवा (मारवाड) के ठाकुर देवीसिह चाँपावत की सुपुत्री से आपका विवाह हो गया। सन् 1880 मे आपने विधिवत् राज्य का कार्य-भार सँभाल लिया। राज-काज का भार सँभालते ही आपने सबसे पहले खेतडी राज्य पर चढे हुए 11 लाख रुपये के ऋण को उतारने मे अपनी शक्ति लगाई और सन् 1886 तक उसे ब्याज सहित चुकाकर चैन की साँस ली। आपकी शासन-सम्बन्धी योग्यता पर मुग्ध होकर जयपुर के महाराजा ने आपको 'मोरछल मुरतब' का सम्मान प्रदान किया था।

खेतडी का प्रबन्ध-भार सँभालते ही अजीतसिहजी ने अपने विद्या-गुरु श्री गोपीनाथ पुरोहित को अपनी राजसभा का प्रधान बनाया और उनके सत्परामर्श से ही आप काम-काज करने लगे। अपने कार्य-काल मे आपने खेतडी राज्य मे नि शुल्क शिक्षा के विस्तार के लिए बहुत बडा कार्य किया था। आपने जहाँ खेतडी से बबाई तक की 10 मील लम्बी सड़क का निर्माण कराया था वहाँ 'अजीत निवास बाग', 'बन्ध अजीत सागर' और 'बन्ध अजीतसमन्द' भी बनवाए थे। राज्य के पुराने कुओं की मरम्मत कराने के साथ-साथ आपने किसानो की सिचाई के लिए और भी अनेक कुँए बनवाए थे। सन् 1897 मे आपने महारानी विक्टोरिया की 'डायमड जुबली' के अवसर पर शाहपुरा के राजकुमार श्री उम्मेदसिह के साथ विलायत की यात्रा भी की थी। राजा अजीतसिह जहाँ विद्वानो के पुरस्कर्ता, गुणियो के आश्रयदाता और धर्म के अनन्य प्रेमी थे वहाँ अनेक विद्याओ तथा कलाओ के उत्कर्ष के प्रति भी प्रेम रखते थे। आपने प्रख्यात ज्योतिषी श्री रूडमल्ल शर्मा से 'अजीत प्रकाश पचाग' नाम से एक पचांग भी प्रारम्भ कराया था, जिसका प्रकाशन लगभग 3 वर्ष तक खेतडी से होता रहा था।



प्रख्यात विचारक और दार्शनिक स्वामी विवेकानन्द जब खेतडी पधारे थे तब आपने उनसे जहाँ घटो धर्म-चर्चा करके वेदान्त मे अपनी गहन रुचि प्रकट की थी वहाँ उनके गुरुभाई स्वामी अखडानन्दजी के द्वारा खेतडी राज्य मे शिक्षा-प्रचार का अभिनन्दनीय कार्य कराया था। कदाचित् यह बात भी हमारे बहुत-से पाठको को अविदित ही होगी कि प्रख्यात समाज-सेवी सस्थान 'रामकृष्ण मिशन' की स्थापना भी सर्व-प्रथम खेतडी मे ही हुई थी। इस सम्बन्ध मे स्वामी विवेकानन्द ने यह सही ही लिखा है—"यदि राजाजी मुझे न मिलते तो भारतवर्ष की उन्नति के लिए मै जो थोडा-बहुत काम कर सका हूँ, वह कभी न कर सकता।" खेतडी राज्य के व्यय पर ही स्वामी विवेकानन्द ने अमरीका की अपनी 'ज्ञान-प्रसार-यात्रा' की थी और उन्हे यावज्जीवन राज्य से 100 रुपये मासिक मिलते रहे थे। राजा अजीतसिह ने स्वामीजी से ही कानून और पदार्थ विज्ञान का विधिवत् अध्ययन किया

था। यहाँ यह बात भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि स्वामी विवेकानन्द का यह नाम भी राजा अजीतसिंह ने ही रखा था। इससे पूर्व वे 'विविदिषानन्द' लिखा करते थे।

आपका कविता के प्रति कितना अनुराग था इसका ज्वलत प्रमाण यही है कि आपने कविराजा बलदेवजी बारहठ को एक लाख रुपए का दान दिया था, जिसे 'लाख पसाव' भी कहते है। पडितो, कवियो और सगीतज्ञों का सम्मान करने के साथ-साथ आप सगीत तथा कविता मे स्वयं रुचि लेते थे। सगीतज्ञो के द्वारा वीणा-वादन सुनकर जब स्वामी विवेकानन्द भाव-विभोर हो जाते थे तब बहुत अद्भुत वातावरण हो जाता था।

सगीत और काव्य के प्रति आपके अनन्य अनुराग का सबसे सुपुष्ट प्रमाण यही है कि आप स्वय भी अच्छी कविता किया करते थे। आपका एक कवित्त इस प्रकार है

कहत नमीत आन राजों को 'अजीत' एक
सुकृत करोगे जम लोगे सो ही ताको है।
कौन के है पुत्र-त्रिया, बन्धु-धन कौन का है,
कौन के है राज-साज, कौन को इलाको है?
कौन के है सुभट, गजराज-हय कौन के है,
दिष्ट देर देखो जब, बीज को झपाको है।
एक दिन फाको, दिन एक है नफा को,
दिन एक है वफा को, एक सफम-सफा को है।।

आपके द्वारा लिखी गई कविताएँ 'राजा अजीतसिह बहादुर की जीवनी' तथा 'शेखावाटी के कवि' नामक पुस्तको मे देखी जा सकती है।

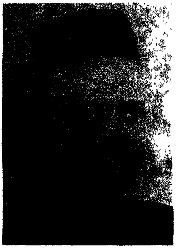
जिस समय राजपूताने मे सर्वत्र उर्दू भाषा का ही प्रचार था तब अजीतसिहजी ने उसके स्थान पर न केवल वहाँ के न्यायालयो मे हिन्दी को प्रतिष्ठित किया, प्रत्युत अनेक कवियो और साहित्यकारो को प्रोत्साहित करने मे भी आप सर्वदा अग्रणी रहे।

यह दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि आपका निधन 18 जनवरी सन् 1901 को सिकन्दरा (आगरा) की मीनार से गिर जाने के कारण उस समय हुआ था जब आप सपरिवार कश्मीर की यात्रा से लौटते हुए आगरा ठहरे थे। वहाँ का दृश्य देखने के लिए सिकन्दरा गये थे कि यह दुर्घटना हो गई। आपका शव विशेष ट्रेन से मथुरा ले जाया गया था और वही पर आपकी दाह-क्रिया की गई थी।

श्री अजुध्याप्रसाद माथुर

श्री माथुर का जन्म सन् 1867 मे आगरा नगर मे हुआ था। आपने अपने पिता मुशी गोरेलाल की असामयिक मृत्यु के बाद बीच मे ही पढ़ाई छोडकर सरकारी नौकरी कर ली थी। किन्तु अचानक स्वास्थ्य खराब हो जाने के कारण नायब तहसीलदारी के पद से अवकाश ग्रहण करके आप कानपुर से अपने मूल निवास-स्थान आगरा मे लौट आए थे।

पेंशन से मिलने वाली थोडी-सी राशि तथा अपनी ससुराल की ओर से प्राप्त जमीदारी की आय से ही आप अपने जीवन का निर्वाह करते थे। सयोग से आपको जान्स मिल आगरा की एजेंसी भी मिल गई थी, जिससे आप अपने सामाजिक कर्तव्यो का पालन बडी ही सफलतापूर्वक करने लगे थे। यद्यपि आपकी आर्थिक स्थिति ठीक नही थी और अत्यन्त सीमित आय थी, किन्तु फिर भी आप योग्य एव असहाय छात्रों की सहायता करते रहते थे। ऐसे प्रतिभाशाली छात्रो मे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रख्यात भूगर्भ-शास्त्री स्व० श्री कृष्णकुमार का नाम प्रमुख है।



आप भक्त-प्रवृत्ति के कवि थे और प्राय उसी मे निमग्न रहते थे। आपकी माता श्रीमती गोमती देवी मूलत धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थी और राधास्वामी मत की अनन्य भक्त थी। आपके संस्कार भी अपनी माताजी के भावो के अनुरूप भक्ति मे ओत-प्रोत रहते थे। पहले आप उर्दू मे लिखा करते थे, किन्तु बाद मे आपका रुझान हिन्दी की ओर हो गया था। आपने जहाँ उर्दू मे 'स्वाँग पद्मावत' (सन् 1900), तथा 'फायलनामा' (1915) नामक रचनाएँ की थी वहाँ हिन्दी मे लगभग 100 पदों का संग्रह 'बाल अजान की अर्जी'

(1925) लिखा था। खेद है कि आपकी ये सब रचनाएँ अप्रकाशित ही रह गईं।

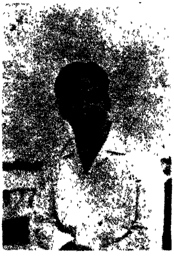
सामाजिक सेवा करने की आपकी यह भावना धीरे-धीरे इतनी जोर पकड़ती गई कि आप राजनीतिक कार्यों में भी रुचि लेने लगे। परिणामस्वरूप आपके यहाँ स्वर्गीय गणेशशंकर विद्यार्थी, श्रीकृष्णदत्त पालीवाल तथा श्रीराम शर्मा प्रभृति अनेक राजनीतिक कार्यकर्ताओं का आवागमन होने लगा, जिसके कारण आप पर गुप्तचर पुलिस की भी कृपा हो गई थी।

आपके इन संस्कारों का प्रभाव बाद में आपके सुपुत्र श्री आनन्दीप्रसाद माथुर पर भी प्रचुर परिमाण में हुआ था और उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया था।

आपका निधन 10 जून सन् 1929 को हुआ था।

श्री अटलूरि पिच्चेश्वर राव

श्री पिच्चेश्वर राव का जन्म 12 अप्रैल सन् 1925 को आन्ध्र प्रदेश के 'अटलूरि' नामक ग्राम में हुआ था। आपकी मातृभाषा तेलुगु थी। आप 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' के हिन्दी-प्रचार-आन्दोलन से प्रभावित होकर ही हिन्दी के अध्ययन की ओर उन्मुख हुए थे और इस सभा की ओर से ली जाने वाली 'राष्ट्रभाषा विशारद' परीक्षा में सारे आन्ध्र प्रदेश के परीक्षार्थियों में आपका स्थान 'सर्वोपरि' रहा था।



तेलुगु तथा हिन्दी के अतिरिक्त बंगला, संस्कृत और मराठी आदि कई भाषाओं के भी आप मर्मज्ञ विद्वान् थे। तेलुगु भाषा में अनेक मौलिक रचनाएँ करने के अतिरिक्त आपने हिन्दी से प्रेमचन्द तथा किसनचन्दर आदि की कृतियों के अनुवाद भी अपनी भाषा में प्रस्तुत किये थे। हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं के लिए अनेक मौलिक हिन्दी लेख लिखने के अतिरिक्त आपने आकाशवाणी के हैदराबाद केन्द्र से समय-समय पर हिन्दी वार्ताएँ भी प्रसारित की थी।

आपने जहाँ तेलुगु भाषा में 'विशालान्ध्र' नामक दैनिक पत्र का सम्पादन (1953 से 1962 तक) किया था, वहाँ आप तेलुगु के फिल्म-क्षेत्र में भी उत्कृष्ट संवाद तथा पटकथा-लेखक के रूप में विख्यात थे। आपने राष्ट्रीय स्वतन्त्रता-आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने के साथ-साथ मृत्यु-पर्यन्त 'बन्दार कालेज' मछली पट्टणम्, कृष्णा जिला (आन्ध्र प्रदेश) में हिन्दी-अध्यापन का भी कार्य किया था।

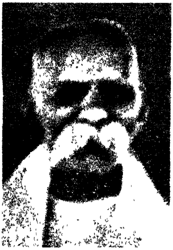
आपका निधन 26 सितम्बर सन् 1966 को हुआ था।

पण्डित अनन्तराम शर्मा

श्री शर्मा जी का जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जनपद के बजेहरा नामक ग्राम में सन् 1876 में हुआ था। आप बाल्य-काल से ही आर्यसमाज की सुधारवादी विचार-धारा से प्रभावित थे। सन् 1894 में आपका जो सम्पर्क महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) से हुआ तो जीवन-भर वे उनके अनन्य साथी के रूप में ही जाने जाते रहे। जब स्वामी जी ने जालन्धर में 'सद्धर्म प्रचारक' का प्रकाशन उर्दू में प्रारम्भ किया तब आपने ही उनके प्रेस की प्रबन्ध-व्यवस्था का सम्पूर्ण भार सँभाला था। जब स्वामी जी ने अपना प्रेस और पत्र गुरुकुल काँगडी को दान दे दिया तब आपने भी काँगडी जाकर उर्दू के स्थान पर 'सद्धर्म प्रचारक' का प्रकाशन हिन्दी में करने की दिशा में अपना अनन्य सहयोग दिया था।

सन् 1905 में आपने दिल्ली के सेठ रामगोपाल की सहायता से 'सद्धर्म प्रचारक प्रेस' गुरुकुल काँगडी से खरीद लिया और दिल्ली में स्थायी रूप से आ गए थे। स्वामीजी ने

उनके इसी प्रेस से 'सद्धर्म प्रचारक' का प्रकाशन सन् 1912 मे प्रारम्भ किया था। काल-क्रम से शर्मा जी के इसी प्रेस से बाद मे 'वीर अर्जुन' और 'विजय' आदि पत्र स्वामी श्रद्धानन्द के दो पुत्रों—श्री हरिश्चन्द्र और इन्द्र विद्यावाचस्पति ने कई वर्ष तक सफलता-पूर्वक प्रकाशित किये।



'सद्धर्म प्रचारक प्रेस' दिल्ली का एक ऐसा प्राचीनतम प्रेस था, जिसमे हिन्दी और सस्कृत की अनेक पुस्तके छपा करती थी। आप जहाँ आर्य सिद्धान्तो के प्रबल सम्पोषक थे वहाँ आपने प्रेस की प्रबन्ध-व्यवस्था से समय निकालकर कुछ हिन्दी की पुस्तको की रचना भी की थी। आपकी ऐसी पुस्तको मे 'नवयुग', 'भारत जननी', 'विकासवाद', 'हिन्दू जाति की दुर्दशा पर दो आँसू' तथा 'मानव धर्म' आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है। प्रेस की व्यवस्था मे अपने जीवन को सर्वात्मना समर्पित करते हुए आपने यावज्जीवन वैदिक साहित्य और सस्कृत वाङ्मय के प्रचार तथा प्रसार मे महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। आपका हिन्दी के अनेक प्राचीन प्रसिद्ध लेखको से निकट का सम्पर्क था।

आपका निधन 5 अप्रैल सन् 1954 को दिल्ली मे हुआ था।

मीर अनीस

मीर अनीस का जन्म सन् 1803 मे फैजाबाद (उत्तर प्रदेश) मे हुआ था। आपके पूर्वज मूलत दिल्ली के निवासी थे और जब दिल्ली की राजधानी यहाँ से उखड़कर दौलताबाद (दक्षिण) गई थी तब आपके पारिवारिक जन फैजाबाद चले गए थे। उन दिनो अवध के नवाब सिराजुद्दौला ने 'फैजाबाद' को बसाना प्रारम्भ किया था, फलत दिल्ली के अनेक उर्दू शायर वहाँ जा बसे थे। आपके बाबा मीर हसन साहब भी उर्दू भाषा के प्रख्यात 'मसनवी' लेखक थे।

अनीस साहब की शिक्षा-दीक्षा लखनऊ मे अपने पिता की देख-रेख मे ही हुई थी; परिणामस्वरूप आप भी उर्दू मे 'शेरो-शायरी' करने लगे थे। प्रारम्भ मे आप 'गजलें' लिखा करते थे, परन्तु बाद मे अपने पिता मीर खलीक के आग्रह पर आपने उर्दू मे 'मर्सिये' लिखने प्रारम्भ किए, और इस क्षेत्र मे अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया। मीर अनीस उस समय तक लखनऊ मे ही जमे रहे थे जब तक कि सन् 1857 मे वह पूर्णतया तबाह नही हो गया। अपनी मृत्यु मे कुछ दिन पूर्व आप पटना, बनारस तथा प्रयाग आदि के अतिरिक्त दक्षिण के अनेक शहरों मे भी घूमे थे। आपका पूरा नाम 'मीर बबर अली' था।

आप जहाँ उर्दू के प्रख्यात 'मर्सियागो शायर' (शोक-गीत-लेखक कवि) के रूप मे जाने जाते थे वहाँ ब्रजभाषा की काव्य-रचना करने मे भी अत्यन्त दक्ष थे। आपका जो एक कवित्त हिन्दी-साहित्य की अमर धरोहर के रूप मे आज भी याद किया जाता है, वह इस प्रकार है

सुनो हो विटप हम पुहुप तिहारे अहे,
राखिहौ हमै तो सोभा रावरी बढ़ावैंगे।
तजिहौ हरषिकै तो विलग न मानैं कछू,
जहाँ-जहाँ जैहै तहाँ दूनो जस गावैंगे।।
सुरन चढ़ैंगे, नर सिरन चढ़ैंगे नित,
सुकवि 'अनीस' हाथ-हाथन बिकावैंगे।
देस मे रहेंगे, परदेस मे रहेंगे, काहू—
भेस मे रहेंगे तऊ रावरे कहावैंगे।।

आपका निधन सन् 1874 मे लखनऊ मे हुआ था और वही पर आपको दफनाया गया था।

श्री अनुसूयाप्रसाद बहुगुणा

श्री बहुगुणा का जन्म सन् 1890 मे उत्तर प्रदेश के गढ़वाल क्षेत्र के चमोली नामक स्थान से लगभग 10 मील दूर पट्टी

मल्ला नागपुर के पुण्य तीर्थ अनुसूया देवी मे हुआ था। वैसे आपके पूर्वज नन्द प्रयाग के निवासी थे। एक प्रमुख तीर्थ-स्थान में जन्म लेने के कारण ही आपका नाम 'अनुसूया-प्रसाद' रखा गया था।

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा नन्द प्रयाग मे हुई थी और बाद मे आपने मिशन स्कूल चोपडा (पौडी) से सन् 1910 मे हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। दो वर्ष बाद आप अलमोडा के 'रेम्जे कालेज' से एफ० एस-सी० की परीक्षा देने के उपरान्त इलाहाबाद चले गए और वहाँ के 'म्योर सेण्ट्रल कालेज' से बी० एस-सी० की परीक्षा उत्तीर्ण करके वहाँ से ही आपने एल-एल० बी० किया था। जिन दिनो आप प्रयाग विश्वविद्यालय मे पढा करते थे उन दिनो राष्ट्रीय स्वाधीनता सग्राम मे भाग लेने की इच्छा से आपने सार्वजनिक जीवन मे रुचि लेना भी प्रारम्भ कर दिया था और इसी दृष्टि से 'वकालत' को व्यवसाय के रूप मे अपनाने का सकल्प लिया था।

सार्वजनिक जीवन मे पदार्पण करने के साथ ही आपने सर्वप्रथम श्री महेशानन्द नौटियाल और कुँवर शिवसिह जी द्वारा कर्ण प्रयाग मे सस्थापित 'मिडिल स्कूल' के कार्यो मे रुचि लेना प्रारम्भ कर दिया और उसकी प्रबन्ध समिति के मन्त्री हो गए। उन्ही दिनो गाधीजी के असहयोग आंदोलन मे सक्रिय रूप मे भाग लेने के कारण आपको जेल-यात्रा भी करनी पडी। जब सन् 1930 मे



कौसिलो के चुनाव हुए तो आपने काग्रेस के अनुशासित सैनिक के रूप मे मुकुन्दीलाल बैरिस्टर के विरुद्ध उसके प्रत्याशी श्री नारायणसिह नेगी का पक्ष-समर्थन किया था। श्री मुकुन्दीलाल बैरिस्टर उस चुनाव मे काग्रेस के आदेश की अवहेलना करके स्वतत्र उम्मीदवार के रूप मे खडे हुए थे।

फिर जब जिला-बोर्डो के चुनाव हुए तो आपने उनमे भी सक्रिय रूप से भाग लिया और जिला बोर्ड के अध्यक्ष के रूप मे निर्वाचित हुए। सन् 1937 मे जब प्रान्तीय विधान-सभाओ के चुनाव हुए तब भी आपने काग्रेस के प्रत्याशी के रूप मे सफलता प्राप्त की थी। आपने उन दिनो 'बद्रीनाथ मन्दिर प्रबन्ध' कानून को अपने अथक प्रयास से असेम्बली द्वारा स्वीकृत कराया था।

जिन दिनो आप जिला बोर्ड के अध्यक्ष थे तब आपने ही गढवाल मे सर्वप्रथम सन् 1932 मे एक 'प्रिंटिंग प्रेस' की स्थापना की थी। सन् 1934 मे आपके अनुरोध पर श्री देवकीनन्दन ध्यानी ने भी 'स्वर्गभूमि प्रेस' की स्थापना का प्रयास किया था, किन्तु उनका असामयिक देहावसान हो जाने के कारण वह कार्य पूरा न हो सका। फिर नवम्बर सन् 1936 मे श्री महेशानन्द थपलियाल ने उस कार्य को सँभाला और 'उत्तर भारत' नामक एक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। सन् 1939 मे आपने कतिपय उत्साही व्यक्तियो के सहयोग से 'गढ़वाल प्रकाशन मण्डल' नामक एक सस्था की स्थापना करके उसके द्वारा 'नवप्रभात' नामक पत्र का प्रकाशन प्रारभ किया। इस प्रकार गढवाल मे सर्वप्रथम प्रेस की स्थापना और हिन्दी-पत्र-सचालन के कार्य का सूत्रपात आपने ही किया था।

जब पडित जवाहरलाल नेहरू ने सन् 1938 मे गढवाल मडल का दौरा अपनी बहन विजय लक्ष्मी पडित के साथ किया था तब आपने 'गोचर' नामक हवाई पट्टी पर उनके स्वागत की शानदार व्यवस्था की थी।

आपका निधन 12 मार्च सन् 1943 को अपने निवास-स्थान नन्द प्रयाग मे हुआ था।

श्री अप्पन शास्त्री 'चन्द्रभट्ट'

श्री अप्पन शास्त्री का जन्म आन्ध्र प्रदेश के राजमन्द्री नामक स्थान मे 16 सितबर सन् 1914 को हुआ था। आप आन्ध्र प्रदेश के हिन्दी सेवको मे अपना प्रमुख स्थान रखते थे और आपने सन् 1933 मे हिन्दी के प्रचार का कार्य प्रारभ किया था। आपने अनन्तपुरम्, विनयाश्रम, विजयवाड़ा,

राजमन्द्री, वरंगल, सामर्लकोट तथा हैदराबाद आदि विविध हिन्दी-प्रचार - केन्द्रों मे अनेक रूपों मे कार्य किया था।



आप बहुत दिन तक अनन्तपुरम् के केन्द्र के मडल-संगठक के पद पर अत्यंत सफलतापूर्वक कार्य करने के उपरांत 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा (आन्ध्र शाखा), हैदराबाद' के सचिव भी रहे थे और वहाँ मे अवकाश ग्रहण कर चुके थे।

आपका देहावसान 1 सितबर सन् 1981 को हुआ था।

श्री अब्दुल रहमान सागरी

श्री अब्दुल रहमान सागरी का जन्म मध्य प्रदेश के सागर जनपद के गढाकोटा नामक स्थान मे सन् 1911 मे हुआ था। अपने ही ग्राम की पाठशाला मे प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने के उपरात आपने हिन्दी तथा उर्दू मे मिडिल, और बाद मे नार्मल की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। इन परीक्षाओं को उत्तीर्ण करने के पश्चात् आप सागर की एक प्राथमिक पाठशाला मे अध्यापन का कार्य करने लगे थे।

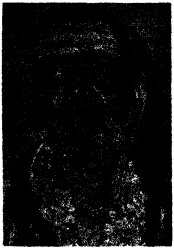
एक सफल शिक्षक होने के साथ-साथ आपने हिन्दी तथा उर्दू दोनो भाषाओ मे लिखना प्रारंभ कर दिया था और थोड़े ही दिनो में अच्छी ख्याति प्राप्त कर ली थी। बाल-साहित्य की रचना करने मे आप पूर्णत दक्ष थे। आपकी ऐसी रचनाएँ 'मोतियों की माला' नामक पुस्तक में संकलित हैं।

आपका निधन सन् 1945 मे तपेदिक के कारण हुआ था।

स्वामी अभिनव सच्चिदानन्द तीर्थ

स्वामीजी का जन्म 23 दिसम्बर सन् 1919 को कर्नाटक के मैसूर राज्य के दुर्वासिपुर नामक स्थान के एक ब्राह्मण-परिवार मे हुआ था। वेदान्त, साहित्य, तर्क एवं मीमांसा आदि के अध्ययन के उपरान्त आपने अँग्रेजी तथा अन्य भारतीय भाषाओं का विधिवत् अध्ययन किया और काफी समय तक एकांत में साधना करते रहे। द्वारका के शारदा पीठ के शंकराचार्य होने के उपरान्त आपने वहाँ रहते हुए 'शारदा पीठ विद्यासभा' नामक एक विशाल सस्था की स्थापना करके उसके अन्तर्गत 'श्री द्वारकाधीश संस्कृत विद्यापीठ', 'श्री शारदा आर्ट्स कालेज' तथा 'भारतीय विद्या अनुसधान परिषद्' आदि अनेक शिक्षणालयों का संचालन किया। इन सभी सस्थाओं के द्वारा सस्कृत वाङ्मय के उच्चतम अध्ययन-अध्यापन का जो कार्य आजकल हो रहा है वह सर्वथा अभिनन्दनीय है।

गोवर्धन पीठाधिपति स्व० भारती कृष्णतीर्थ तथा स्वामी करपात्री प्रभृति अनेक उच्चकोटि के सन्यासियो ने आपकी विद्वत्ता की उन्मुक्त कठ से सराहना की थी। आपको सन् 1946 मे 'अखिल भारतीय धर्म सघ' का अध्यक्ष बनाया गया था और आपके ही अध्यक्ष-काल मे सन् 1948 मे स्वामी करपात्रीजी महाराज ने 'गोहत्या' तथा 'हिन्दू कोड बिल' के विरुद्ध अभियान शुरू किया था। सन् 1966 मे हुए 'गोरक्षा आन्दोलन' मे भी आपका अभिनन्दनीय योगदान रहा था। मार्च सन् 1954 मे नेपाल के



महाराजा त्रिभुवन वीर विक्रम ने आपको अपने देश में बुलाकर अभिनन्दित किया था।

आप भारतीय संस्कृति के अनन्य संवाहक के रूप मे तो

प्रतिष्ठित थे ही, लेखन तथा प्रकाशन के क्षेत्र मे भी आपने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। आपने जहाँ गुजराती भाषा में 'नवभारती' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन किया था वहाँ आपके द्वारा सस्थापित 'जगद्गुरु ग्रन्थमाला' तथा 'श्री नवभारती पुस्तकमाला' के माध्यम से भी प्रशंसनीय कार्य हुआ है। 'नवभारती' (मासिक) का प्रकाशन आपने हिन्दी मे भी किया था। आपके द्वारा हिन्दी मे लिखित 'सनातन धर्म के तत्त्व', 'पुनर्जन्म' तथा 'पारलौकिक जीवन' आदि ग्रन्थों के माध्यम से भारतीय सस्कृति के उन्नयन तथा विकास की दिशा में बहुत कार्य हुआ है। बम्बई-मद्रास के भूतपूर्व राज्यपाल श्री श्रीप्रकाश आपके द्वारा संचालित 'शिक्षा प्रचार योजना' की विभिन्न गतिविधियों से बहुत प्रभावित थे। सन् 1957 में बडौदा मे जो 'अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन' सम्पन्न हुआ था उसमे आप भी आमन्त्रित किये गए थे। आपके भाषणो को सुनकर भारत के तत्कालीन उपराष्ट्रपति सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने उस समय यह ठीक ही कहा था—"स्वामीजी राष्ट्र की महान् विभूति है।"

आपका निर्वाण 7 अप्रैल सन् 1982 को प्रभासपट्टन (गुजरात) के निकट वेरावल मे मस्तिष्क की नली मे गतिरोध उत्पन्न होने के कारण हुआ था।

श्री अमरदत्त ध्यानी 'कुमुद'

श्री ध्यानी का जन्म उत्तर प्रदेश के गढवाल क्षेत्र की कोलागाड पट्टी के बडेथ ग्राम मे सन् 1902 मे हुआ था। हिन्दी मिडिल तक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने क्वेटा (बिलोचिस्तान) जाकर नौकरी कर ली थी। वहाँ पर रहते हुए ही आपने अपना स्वाध्याय बढ़ाकर इतनी योग्यता अर्जित कर ली थी कि आप नौकरी छोडकर सार्वजनिक सेवा के कार्यों मे सलग्न हो गए थे। आप कवि और लेखक के रूप मे अत्यन्त विख्यात थे।

आपके द्वारा रचित पुस्तको मे 'श्रद्धा सुमन', 'कन्या-विक्रय' और 'कृष्ण लहरी' के नाम विशेष प्रसिद्ध है। इनमें से केवल अन्तिम दो प्रकाशित हो सकी थीं। पहली कृति 'श्रद्धा सुमन' मे उनकी कविताएँ संकलित थी और दूसरी कृति 'कन्या विक्रय' उनका एक सामाजिक नाटक था, जिसमें गढवाल मे प्रचलित कन्या-विक्रय की कुप्रथा का वर्णन किया गया था। 'कृष्ण लहरी' में आपने भगवान् कृष्ण को सम्बोधित करके भारत की तत्कालीन दुरवस्था का अच्छा चित्रण किया था।

आपका निधन केवल 32 वर्ष की अवस्था मे सन् 1934 में हुआ था।

श्री अमरदान बारहठ

आपका जन्म अलवर राज्यान्तर्गत सटावट ग्राम की कविया शाखा-परिवार मे सन् 1873 मे हुआ था। आपने अपने पिता से 'छन्दप्रबन्ध', 'अमरकोष', 'रसमजरी', 'रसराज' और 'रसरत्न' आदि अनेक ग्रन्थों का विधिवत् अध्ययन किया था। आपके पितामह रामनाथ बारहठ विनयसिंह देव अलवर नरेश के राजकवि थे और उन्होने ही आपके पितामह को सन् 1898 में 'सटावट' ग्राम पुरस्कार-स्वरूप प्रदान किया था। इस ग्राम की आय उन दिनो लगभग तीन हजार रुपये थी।

अपने पितामह की भाँति आप भी अलवर-नरेश की सेवा मे ही रहते थे। आपकी कविताएँ वीररसपूर्ण होती थी। डिंगल भाषा और ब्रजभाषा दोनो पर आपका समान रूप से अधिकार था। आपकी रचनाओ मे अनुप्रासों की छटा देखने को मिलती है। आपका रचना-काल सन् 1895 के आस-पास कहा जाता है।

आपका निधन सन् 1921 मे हुआ था।

श्री अमानसिंह गोंटिया

श्री गोंटिया का जन्म सन् 1860 मे मध्यप्रदेश के जबलपुर नगर के समीपवर्ती गढा नामक स्थान मे हुआ था। आपके पिता श्री किसुनसिंह गोंटिया उस क्षेत्र के अत्यन्त प्रतिष्ठित

रईस थे। गढा को उन दिनों मध्यप्रदेश मे 'लघु काशी' कहा जाता था। क्योकि वहाँ पर 'बाघ' से लडकर अपने शौर्य की प्रतिष्ठापना करने वाले युवक हुए थे इसलिए इस घटना की स्मृति मे वहाँ एक ऐतिहासिक 'बघा ताल' बना है। कविवर स्वामी छत्रमाध और भक्तवर सेवकदास-जैसी विभूतियों के जन्म से भी यहाँ का गौरव बढा है। उन्होने अपने संस्कृत तथा ज्योतिष शास्त्र के ज्ञान के कारण जब बनारस के अनेक पडितो से टक्कर ली थी तब आप केवल 5 वर्ष के थे।

जिन दिनो बनारस मे भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र हिन्दी-साहित्य की सेवा मे सलग्न थे उन्ही दिनो आपकी शिक्षा-दीक्षा काशी के 'वार्ड इस्टीट्यूट' मे हुई थी। वहाँ पर ही आपका परिचय भारतेन्दुजी तथा ठा० जगमोहनसिह से हो गया था और इस सम्पर्क के कारण ही आपका झुकाव साहित्य-सेवा की ओर हुआ था। वहाँ पर 6 वर्ष तक रहकर आपने अग्रेजी, सस्कृत तथा हिन्दी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त जब सन् 1880 मे आप अपनी जन्मभूमि मे पधारे तो आप भी साहित्य की सेवा मे ही सलग्न हो गए। आपने भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र की प्रेरणा पर 'मदन मजरी' नामक एक नाटक भी लिखा था। इस नाटक मे आपने अपने विषय मे जो दोहा लिखा था उससे आपके पारिवारिक परिवेश का परिचय मिलता है। वह दोहा इस प्रकार है .

जन्म सनाढ्य वश मे, सबसे महा अधीन।
क्रूर कुटिल खल जानके, गुरु अपना कर लीन।।

इस नाटक की भूमिका मे आपने यह सही ही लिखा था, "जब काशी मे था तब श्रीयुत बाबू हरिश्चन्द्र भारतेन्दु की बनाई हुई बहुत-सी पुस्तके देखी तो मन मे उत्पन्न हुआ कि मै भी बाबू साहब की सहायता से इस पुस्तक को प्रचलित करूँ।"

श्री गोटिया जी के उक्त नाटक का प्रकाशन सन् 1884 मे काशी के 'भारत जीवन प्रेस' से हुआ था, जिसके स्वामी श्री रामकृष्ण वर्मा थे। इस नाटक के कारण आप जहाँ हिन्दी साहित्य के इतिहास मे मध्यप्रदेश के प्रथम नाटककार के रूप मे जाने जाते है, वहाँ आपकी इस कृति ने मध्यप्रदेश मे रगमच की स्थापना करने मे भी अपना विशिष्ट एव अभिनन्दनीय कार्य किया था। श्री गोटिया के जन्म-स्थान गढ़ा मे जब दशहरे का उत्सव मनाया जाता था तब इस नाटक का मचन किया जाता था। इस नाटक के अभिनय के लिए बाहर से भी बहुत-से कलाकार आया करते थे। ब्रजभाषा के लालित्य और अलकारो की नैसर्गिक छटा से ओत-प्रोत यह नाटक प्रेम रस की अद्भुत सृष्टि करता है। श्री गोटिया जी जबलपुर जनपद के प्रमुख रईसो मे गिने जाते थे और उनकी ताल्लुकेदारी मे 84 गाँव थे। इमारते बनवाने का आपको बहुत शौक था। गढा मे उनकी जो अटारी बनी है उसे 'टाउन हाल' कहते है। इसीके अनुकरण पर काशी मे भी आपने एक अटारी बनवाई थी। आपकी जबलपुर मे निर्मित हवेली मे प्राय. साहित्यकारों का जमाव रहा करता था। इसमे समय-समय पर भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र और ठा० जगमोहनसिह आकर ठहरा करते थे।

यह एक विचित्र सयोग की बात है कि ये तीनो मित्र बहुत थोडी आयु मे ही इस ससार मे विदा हुए थे। ठा० जगमोहनसिह ने जहाँ केवल 42 वर्ष की आयु ही पाई थी वहाँ क्रमश भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने 35 तथा गोटिया जी ने केवल 32 वर्ष की आयु मे ही इस ससार मे विदा ली थी। आपका निधन सन् 1892 मे हुआ था।

सैयद अमीरअली 'मीर'

आपका जन्म मध्यप्रदेश के सागर जनपद के देवरी नामक स्थान मे 22 अक्तूबर सन् 1873 को हुआ था और अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप छत्तीसगढ के भाटापारा (रायपुर) नामक स्थान मे जा बसे थे। आप जब केवल 2 वर्ष के ही थे तब आपके पिता मीर रुस्तमअली का देहावसान हो गया था। फलस्वरूप आपका पालन-पोषण एव शिक्षण आपके चाचा मीर रहमतअली की देख-रेख मे हुआ था। पहले-पहल आप जबलपुर मे नार्मल की परीक्षा उत्तीर्ण करके वहाँ के 'अंजुमन इस्लामिया हाई स्कूल' मे 'ड्राइग-टीचर' हो गए तथा बाद मे अपनी योग्यता बढ़ाने की दृष्टि से आपने बम्बई के 'जे० जे० स्कूल ऑफ आर्ट्स' मे प्रवेश ले लिया। वहाँ पर आँखों मे कष्ट हो जाने के कारण आप पढ़ाई बीच मे ही छोड़कर जबलपुर वापिस लौट आए। यहाँ पर भी जब

आपकी आँखों का कष्ट बराबर बना रहा तब आप अपनी नौकरी छोड़कर देवरी चले गए और अपने चाचा की दुकान पर ही कार्य करने लगे।

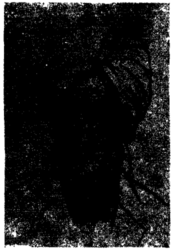
देवरी में रहते हुए आपका रुझान हिन्दी-कविता की ओर हुआ, जो धीरे-धीरे हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री जगन्नाथप्रसाद 'भानु' द्वारा संस्थापित 'भानु समाज' के सम्पर्क से और भी परिपुष्ट हो गया। आपने सर्वप्रथम अपने काव्य-जीवन का प्रारम्भ 'लोभ ते अमी के अहि, चढ्यो जात चन्द पै' समस्या की पूर्ति करके किया था। आप कविता की ओर किस प्रकार आकर्षित हुए इस सम्बन्ध में आपने यों वर्णन किया है—"सन् 1894 में एक दिन मैं देवरी में अपने चाचा की दुकान पर बैठा हुआ था कि रमजानखाँ नामक एक कांस्टेबल मेरे पास 'श्री वेंकटेश्वर समाचार' की एक प्रति लिये हुए आया, जिसमें 'कवि समाज सागर' की ओर से यह सूचना छपी थी कि जो व्यक्ति 'लोभ ते अमी के अहि, चढ्यो जात चन्द पै' समस्या की पूर्ति करेगा उसे 'छन्द प्रभाकर' नामक ग्रन्थ पुरस्कार में मिलेगा।"

इस सूचना को पढ़कर अमीर अली जी के मन में कविता करने की जो प्रेरणा हुई उसके फलस्वरूप उन्होंने उक्त समस्या की पूर्ति इस प्रकार की थी

सीता राम ब्याह को उछाह अवलोकि सब,
जनक समाज बलि जात सुख कन्द पै।
वेद कुल रीति जैसी आज्ञा वसिष्ठ दीन्हों,
भाँवरो के सुन्दर सुभ समै निर्द्वन्द्व पै॥
ता समै दुलही माँग भरिबे चलायो हाथ,
दूल्हा ने सिन्दूर लै अँगूठा अनन्द पै।
उपमा तहँ ऐसी मन आई कवि 'मीर' मानो,
लोभ ते अमी के अहि चढ्यो जात चन्द पै॥

एक मुस्लिम कवि की इस पहली रचना में विशुद्ध हिन्दुत्व के जो भाव प्रस्फुरित हुए है वे वास्तव में आश्चर्यजनक है। 'भानु समाज' द्वारा पुरस्कृत इस 'समस्या-पूर्ति-परक' रचना से प्रोत्साहित होकर 'मीर' जी ने हिन्दी-काव्य की जो साधना की वह सर्वविदित है। आपकी हिन्दी-निष्ठा के सम्बन्ध में श्री जहूरबख्श हिन्दी कोविद ने यह सही लिखा था—"वे एक प्रकार से हिन्दी-संसार में मुस्लिम जगत् के प्रतिनिधि कवि थे। जब मुस्लिम समाज में हिन्दी के प्रति विद्रोह की भावनाएँ जोर पकड़ रही थीं तब वे उसकी सेवा करने के लिए अग्रसर हुए थे और उन्होंने यथाशक्ति उस विद्रोह का मुकाबला किया था।"

एक मुस्लिम घराने में जन्म लेकर अपनी रचनाओं में आपने हिन्दू पर्वों, त्योहारों और रीति-रिवाजों का चित्रण अत्यन्त सफलतापूर्वक किया है। आपकी ऐसी रचनाओं में 'सूर्य', 'सन्ध्या', 'उलाहना पत्रक', 'अन्योक्ति सप्तक', 'दशहरा' तथा 'कृष्णाष्टमी' आदि अत्यन्त लोकप्रिय है। 'मीर' जी धार्मिक कट्टरता के प्रबल विरोधी थे इसीलिए



आपकी रचनाओं में पारस्परिक सद्भाव प्रचुर मात्रा में दिखाई देता है। आपकी ऐसी प्रभावशाली रचनाओं को दृष्टि में रखकर ही आपको 'रसखान' और 'आलम' की परम्परा का कवि समझा जाता था।

'भानु कवि समाज' के सम्पर्क में आकर आपने जहाँ अपने कवित्व को निखारा वहाँ अपने निवास-स्थान देवरी में भी 'मीर मण्डल' की स्थापना करके उसके माध्यम से अनेक कवियों और लेखकों का निर्माण किया था। 'भानु' जी के 'छन्दप्रभाकर' को पुरस्कार में प्राप्त करके आपने छन्द-शास्त्र का जो गहन ज्ञान प्राप्त किया था उससे उन्होंने बहुत-से युवकों को लाभान्वित किया था। धीरे-धीरे आपकी ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। एक बार आपके 'मातृभाषा की महत्ता' शीर्षक एक निबन्ध पर आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने सौ रुपए का पुरस्कार भी प्रदान किया था। इसका प्रकाशन अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की ओर से किया गया था। आपको जहाँ 'रसिक कवि समाज कानपुर' और 'कवि समाज सीतापुर' की ओर से 'साहित्य-रत्न' तथा 'काव्य-रसाल' की सम्मानोपाधियाँ प्रदान की गई थीं वहाँ मध्यप्रदेश के उदयपुरा दरबार ने भी आपको पुरस्कृत किया था। यहाँ तक कि उदयपुरा के दरबार ने अपने एक विद्यालय

मे 'प्रधानाध्यापक' के पद पर भी आपकी नियुक्ति कर ली थी।

महात्मा गांधी के सुधारवादी विचारों से प्रभावित होकर ही आपने अपनी काव्य-रचनाओं के विषय ऐसे बनाए, जिनसे उनके द्वारा प्रदर्शित एव प्रचारित सिद्धान्तो का प्रचार होने मे सहायता मिल सके। सामाजिक कुरीतियो के बहिष्कार की ओर भी आपका ध्यान बरावर रहता था। 'हिन्दू मुस्लिम एकता' तथा 'सर्व धर्म समन्वय' की भावना भी आपकी रचनाओ में कूट-कूटकर भरी रहती थी। वृद्ध-विवाह तथा बाल-विवाह के विरोध मे भी आपने अपनी प्रतिभा का प्रचुर प्रयोग किया था। आपने अपनी 'बूढ़े का ब्याह' नामक रचना के समर्पण की जो पक्तियाँ लिखी थी वे आपकी ऐसी सुधारवादी मनोवृत्ति का ज्वलन्त साक्ष्य प्रस्तुत करती है। आपने लिखा था :

जो यौवन का लूट चुके सुख, अब मलते रहते हैं हाथ।
बाबा कहलाते, पर रहती विषय-वासना जिनके साथ ॥
देख किशोरी को हो जाते, जिनके आनन-कूप सनीर।
उन बूढ़ों के कम्पित कर में, करें समर्पण सादर 'मीर' ॥

आपकी रचनाओं मे 'बूढे का ब्याह' के अतिरिक्त 'नीति दर्पण', 'सदाचारी बालक', 'काव्य-संग्रह' तथा 'लेख माला' आदि प्रमुख है। अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे आप महात्मा शेखसादी की अत्यन्त ख्याति-प्राप्त कृतियों 'गुलिस्ताँ' और 'बोस्ताँ' का हिन्दी पद्यानुवाद कर रहे थे।

श्री 'मीर' का निधन अत्यन्त करुणाजनक परिस्थिति मे हुआ था। 19 जनवरी सन् 1937 को रात्रि के समय अन्धकार मे अचानक आप रेलगाड़ी के नीचे आ गए और आपका निधन हो गया।

श्री अमीरचन्द बम्बवाल

श्री बम्बवाल का जन्म 1 फरवरी सन् 1886 को पेशावर (पश्चिमी पाकिस्तान) मे हुआ था। आप बाल्यावस्था से ही क्रांतिकारियों के सम्पर्क मे आ गए थे और ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध राष्ट्रीय साहित्य वितरित करने के अपराध में आपको 8 वर्ष की सजा दी गई थी। आप वहाँ की मुलतान, टाक तथा नन्दिया गली आदि अनेक जेलों मे रहे थे।

पेशावर मे रहते हुए आपने जहाँ पजाब-केसरी लाला लाजपतराय की प्रेरणा पर 'फ्रंटियर एडवोकेट' नामक पत्र अग्रेजी तथा पश्तो भाषाओं में निकाला था वहाँ संस्कृत का प्रचार एवं प्रसार करने की दृष्टि से वहाँ की 'राधाकृष्ण पाठशाला' के सचालन मे भी अपना अनन्य सहयोग प्रदान किया था। आप प्रयाग से निकलने वाले, 'स्वराज्य' नामक उर्दू पत्र के भी सन् 1907 से सन् 1910 तक सपादक रहे थे।

भारत-विभाजन के उपरांत आप देहरादून आ गए थे और वहाँ आकर अपने जीवन के अंतिम क्षण तक आप हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य के लिए ही कार्य करते रहे। वहाँ की जिन अनेक मस्जिदों को हिन्दुओं ने अपने निवास-स्थान के रूप में परिवर्तित कर लिया था, वे सब आपने उन्हें वापस दिला दी।

देहरादून मे आकर आपने 'फ्रंटियर मेल' नामक पत्र पहले अंग्रेजी तथा बाद मे हिन्दी मे प्रकाशित करना प्रारम्भ किया और उसके माध्यम से वहाँ की जनता की प्रशसनीय सेवा की। एक उच्च-कोटि के राष्ट्रीय कार्यकर्ता होते हुए भी आपने स्वाधीनता-सेनानियो को सरकार की ओर से दी जाने वाली पेंशन को ग्रहण नही किया था। क्रांतिकारियो के लिए



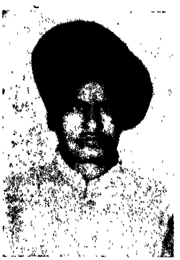
सुविधाएँ जुटाने की दृष्टि से आपने राजा महेन्द्रप्रताप के सहयोग से 'अखिल भारतीय स्वतत्रता सग्राम सेनानी समिति' का गठन भी किया था। आपके द्वारा संचालित 'फ्रंटियर मेल' अब भी उस क्षेत्र की जनता की प्रशंसनीय सेवा कर रहा है।

आपका निधन 10 फरवरी सन् 1972 को नई दिल्ली मे उस समय हुआ था जबकि आपको चिकित्सा के लिए यहाँ लाया गया था।

श्री अमृतलाल माथुर

श्री माथुर का जन्म राजस्थान के जोधपुर राज्य के कुचेरा नामक ग्राम मे सन् 1898 मे हुआ था। आपके पिता का नाम श्री गोपाललाल था, जो भक्त प्रकृति के सहृदय महानुभाव होने के साथ-साथ ब्रजभाषा, राजस्थानी और खड़ी बोली में सफल काव्य-रचना किया करते थे। राम के अनन्य भक्त के रूप मे आपने आस-पास के क्षेत्र मे बहुत ख्याति अर्जित की थी और स्वय भी राजस्थानी भाषा में 'श्रीराम सुधा रस' नामक एक काव्य लिखा था।

यद्यपि कुचेरा ग्राम में बालक अमृतलाल की शिक्षा-दीक्षा का कोई प्रबन्ध नही था किन्तु आपने अपने स्वाध्याय के बल पर जीविका के लिए महाजनी ढग से हिसाब-किताब रखने की कला भी सीख ली थी। उन्ही दिनो अचानक आपको कार्यवश कलकत्ता जाना पडा। वहाँ जाकर आपका सम्पर्क हास्य रस के लेखक प० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी और सस्कृत के अद्वितीय विद्वान् पं० सकलनारायण शर्मा तथा प्रख्यात पत्रकार और राजस्थानी काव्य तथा इतिहास के मर्मज्ञ प० झावरमल्ल शर्मा-जैसे साहित्यकारों तथा पत्रकारों से हो गया। इस सम्पर्क से आपकी काव्य-चेतना और भी प्रस्फुटित हुई। वहाँ पर ही आपने 'अमृत सतसई' नाम से ब्रजभाषा मे एक रचना की, जो सन् 1924 मे प्रकाशित हुई थी।



परिस्थितिवश आपको फिर कलकत्ता से अपनी जन्म-भूमि मारवाड मे आना पडा और जीविकोपार्जन के लिए आप जोधपुर के तत्कालीन महाराजा उम्मेदसिह के अनुज महाराजाधिराज अजीतसिह के यहाँ कोषाध्यक्ष का कार्य करने लगे। सन् 1945 मे इस कार्य से निवृत्ति पाने के उपरान्त किसी स्कूल या कालेज की विधिवत् शिक्षा प्राप्त न होने के कारण आपको जीविका चलाना कठिन हो गया किन्तु फिर भी जोधपुर के सर प्रताप हाई स्कूल के प्रबंधको ने आपकी साहित्यिक योग्यता से प्रभावित होकर किसी उपाधि या परीक्षा का प्रमाणपत्र न होते हुए भी आपको वहाँ हिन्दी का अध्यापक नियुक्त कर दिया। कालान्तर मे यह अध्यापन-कार्य करते हुए ही आपने पजाब विश्वविद्यालय से 'हिन्दी प्रभाकर' की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की। उस प्रौढ आयु मे यह परीक्षा उत्तीर्ण करना आपके लिए एक अटपटा कार्य था, किन्तु विद्यालय मे अध्यापन-कार्य करने की आवश्यकता-पूर्ति के कारण यह परीक्षा उत्तीर्ण की थी। लगभग चार वर्ष तक उस विद्यालय मे अध्यापन-कार्य करने के उपरांत विद्यालय के प्रबंधकों ने यह अनुभव किया कि आपकी अपेक्षा किसी विश्वविद्यालय का स्नातक उपाधिधारी व्यक्ति ही अच्छा अध्यापन-कार्य कर सकता है। क्योंकि आप मध्यकालीन काव्य के मर्मज्ञ थे फलत आप आधुनिक काव्य को इतनी तन्मयता और तत्परता से नही पढा सकते थे जितनी तन्मयता और तत्परता से कोई आधुनिक परिपाटी पर शिक्षित-दीक्षित व्यक्ति पढ़ाता। फलस्वरूप जुलाई 1949 मे आपको विद्यालय की सेवा से मुक्त कर दिया गया।

इस विद्यालय की सेवा से मुक्त हो जाने के कारण आपके सामने फिर भयकर आर्थिक संकट उत्पन्न हो गया और आप अस्वस्थ रहने लगे। इस बीच आपने खडी बोली मे 'श्री राम रस' नामक काव्य भी लिखा, जो आपके निधन से पूर्व प्रेस मे मुद्रित हो रहा था। आप प्रकाशन का पूरा व्यय न चुका सके थे, जिससे पुस्तक समय पर प्रकाशित न हो सकी। राजस्थानी साहित्य के प्रख्यात विद्वान् और गवेषक डॉ० मोतीलाल मेनारिया के अनुसार आपके द्वारा विरचित काव्यो मे 'राघव रस', 'अमृत सतसई' (राम सतसई), 'गीत रामायण', 'यमक रामायण', 'श्री रामासव', 'गगा लहरी', 'राम प्रेमामृत', 'श्रीराम सुधा रस', 'श्री शकर शतक' तथा 'श्री प्रेम रामायण' आदि विशेष उल्लेखनीय है।

आपकी 'अमृत सतसई' के सम्बन्ध मे प्रख्यात समालोचक लाला भगवानदीन ने यह सही ही लिखा था :

अमृत सतसई पै सखे, अमृत सतसई वार।
अमृत सतसई करि थके, तऊ न पावै पार।।

इस काव्य मे यमक अलंकार की प्रधानता थी। इसकी प्रशस्ति में श्री दीनजी ने उसके अलकारो, भावों और रसों की उत्कृष्टता बताते हुए यहाँ तक लिख दिया था :

अलंकार की छवि छटा, भाव घटा घनघोर।
रस बरसत घनश्याम को, लखि नाचत मन मोर।

इसी प्रकार काशी के प्रख्यात विद्वान् प० किशोरीलाल गोस्वामी ने आपके 'राम सतसई' नामक ग्रन्थ की प्रशसा इस प्रकार की थी :

ऐसो अनुपम काव्य लहि, जा मम ग्रन्थ न अन्य।
भाषा, कविता, कामिनी, आजु भई अति धन्य ।।

आपके जीवन के अन्तिम दिन अत्यन्त सकट मे निकले थे और प्राय आप तुलसी, सूर और मीरा के गीतो और पदों का ही गायन करते रहते थे। अत मे एक दिन ऐसा भी आया जब आपको यक्ष्मा के भीषण रोग ने घर दबाया और इस व्याधि की पीडा को झेलते हुए 2 जनवरी सन् 1954 को जोधपुर मे आपने अपने प्राणो का विसर्जन कर दिया।

श्री अम्बादत्त शर्मा 'अम्ब'

श्री 'अम्ब' का जन्म सन् 1911 मे उत्तर प्रदेश के अलीगढ जनपद के हरदुआगज नामक स्थान मे हुआ था। आपका बचपन का नाम 'पोपीराम' था। आपमे कवित्व के सस्कार अपने ही ग्राम के महाकवि पडित नाथूरामशकर शर्मा के सत्सग के कारण जगे थे।

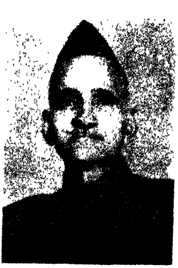
पंडित नाथूरामशकर शर्मा के सम्पर्क के कारण आप देश की अनेक सामाजिक तथा सास्कृतिक प्रवृत्तियो से जुडने के साथ-साथ राजनीति मे भी सक्रिय भाग लेते रहे थे। अपने गुरु 'शकर' जी के प्रोत्साहन के कारण आपने कवित्व-लेखन मे भी पर्याप्त प्रगति की थी। आप 'समस्या-पूर्ति' करने मे बहुत प्रवीण थे।

आपने 'कवि-सम्मेलन' (मासिक) तथा 'राजनीति' (साप्ताहिक) पत्रो का सम्पादन-प्रकाशन भी बहुत दिन तक अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। यद्यपि आपने बहुत-सी रचनाएँ की थी, किन्तु पुस्तक रूप मे प्रकाशित आपका केवल एक काव्य-संकलन 'समय की रागिनी' ही मिलता है। आपकी रचनाएँ अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे अब भी देखने को मिल जाती है। आप वैद्यक व्यवसाय के साथ-साथ 'पुस्तक-विक्रेता' का कार्य भी किया करते थे।

आपका निधन 19 मई सन् 1980 को अलीगढ मे हुआ था।

श्री अम्बिकाचरण शर्मा

श्री शर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा जनपद की फतेहाबाद तहसील के तिवाहा नामक ग्राम मे 9 फरवरी सन् 1909 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा पहले अपने पिता श्री राजाराम शर्मा के निरीक्षण मे हुई थी, जो उन दिनो फिरोजाबाद के मिशन स्कूल मे अध्यापक थे। वही मे आपने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करके आगे की पढ़ाई जारी रखने के उद्देश्य से जयपुर मे प्रवेश लिया था। किन्तु किसी कारणवश जब आपका मन वहाँ नही लगा तब आप आगरा चले आए और वहाँ के 'सेण्ट जान्स कालेज' मे प्रवेश ले लिया। यहाँ से ही आपने क्रमश सन् 1928 मे इटर, सन् 1930 मे बी० ए० तथा सन् 1932 मे एम० ए० (इतिहास) की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। इतना कर लेने पर भी जब आपका मन अध्ययन मे नही उकताया तब आपने अध्यापक - परीक्षार्थी के रूप में क्रमश सन् 1936 तथा सन् 1940 मे हिन्दी तथा सस्कृत विषयो में भी एम० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की।



अपना बी० ए० तक का अध्ययन समाप्त करने के उपरान्त आपने 'सेण्ट जान्स कालेज' मे ही सन् 1930 मे

'स्टूडेंट ट्यूटर' के रूप मे कार्य करना प्रारम्भ किया और सन् 1932 मे इतिहास विषय के प्रवक्ता के रूप मे नियुक्त हो गए। जब सन् 1936 मे कालेज में हिन्दी की कक्षाएँ प्रारम्भ हुईं तब आप हिन्दी विभाग मे आ गए और सेवा-निवृत्ति के समय (सन् 1969) तक उसीमे रहे। अपने इस कार्य-काल मे आपने इतिहास तथा हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत का अध्यापन भी किया था। अपने शैक्षणिक कार्यों मे रुचि लेने के साथ-साथ आप कालेज की विभिन्न सांस्कृतिक प्रवृत्तियों मे भी रुचि पूर्वक भाग लिया करते थे। एक अच्छे अध्यापक के रूप मे आपका कालेज के छात्रों मे बहुत सम्मान था। आपको हिन्दी के सुप्रसिद्ध आलोचक बाबू गुलाबराय तथा डॉ० हरिहरनाथ टंडन-जैसे कुशल प्राध्यापको के साथ कार्य करने का सुअवसर प्राप्त हुआ था।

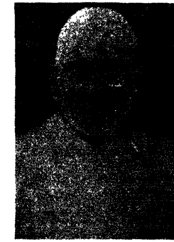
अपने अध्यापन-कार्य से समय निकालकर आप लेखन मे भी रुचि लेते रहते थे। आपकी लेखन की परिधि इतिहास, नागरिक शास्त्र, राजनीति शास्त्र और साहित्यालोचन आदि अनेक विषयो तक थी। सर्वप्रथम सन् 1933 मे आपकी जो पहली कृति प्रकाशित हुई थी वह इतिहास-सम्बन्धी एक छात्रोपयोगी सहायक पुस्तक थी। इसकी लोकप्रियता इसी बात मे प्रकट होती है कि उसके अंग्रेजी तथा हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित हुए थे। आपकी पहली मौलिक पुस्तक 'भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का विकास' नाम से हिन्दी-जगत् के समक्ष आई थी। बाद मे आपने इतिहास तथा राजनीति-सम्बन्धी कई पुस्तकों के हिन्दी-अनुवाद भी किये थे, जिनका पाठको ने बहुत स्वागत किया था। हिन्दी-साहित्य से सम्बन्धित आपकी अधिकांश रचनाओ मे पाठ्य-पुस्तको की टीकाएं और समीक्षाएँ ही है। ऐसी कृतियों मे 'भारत दुर्दशा' (भारतेन्दु हरिश्चन्द्र), 'बिहारी वैभव', 'तुलसी पथ-प्रदर्शक','अजातशत्रु एक अध्ययन' तथा 'त्रिवेणी-अनुशीलन' आदि प्रमुख है। आपके द्वारा सम्पादित विश्वविद्यालयीन पाठ्य-पुस्तको मे 'नक्षत्र मालिका' (काव्य-संकलन), 'हिन्दी गद्य-संकलन' तथा 'हिन्दी गद्य कुसुम' आदि उल्लेखनीय है। आपकी काव्य-शास्त्र-सम्बन्धी पुस्तक 'रस-अलंकार-दीप' भी कम महत्त्व नही रखती। 'साहित्य-संदेश' तथा 'साहित्य परिचय' नामक पत्रो मे यदा-कदा लिखी गई आपकी पुस्तक-समीक्षाओं तथा 'नोंक-झोंक' मे प्रकाशित हास्य-व्यंग्य की कविताओ से भी आपकी साहित्यिक रचनाधर्मिता का अच्छा परिचय मिलता है।

आपका निधन 23 फरवरी सन् 1982 को हुआ था।

श्री अयोध्याप्रसाद तिवारी

श्री तिवारी का जन्म उत्तर प्रदेश के इटावा जनपद के ग्राम क्योटरा (तहसील औरैया) मे 5 जुलाई सन् 1894 को हुआ था। आपने नॉर्मल, बी० टी० सी० तथा हिन्दी मे 'विशारद' की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। आपने अपना व्यावसायिक जीवन शिक्षक के रूप मे प्रारम्भ किया था और बीकानेर राज्य (राजस्थान) मे 'निरीक्षक' के पद से सेवा-निवृत्त हुए थे।

आप हिन्दी, उर्दू, मराठी और अँग्रेजी भाषाओ से सुपरिचित थे। अच्छे शिक्षक होने के साथ-साथ आप कुशल लेखक भी थे। अपने समय की 'मर्यादा', 'कान्यकुब्ज', 'चित्रमय जगत्' (पुणें) आदि पत्रिकाओं मे आपके अनेक शोधपूर्ण लेख प्रकाशित होते रहते थे। हिन्दी साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग ने आपके द्वारा लिखी गई रहीम के काव्य की टीका 'रहिमन विनोद' प्रकाशित की थी, जो अत्यन्त प्रामाणिक समझी जाती है। इसी प्रकार 'गोरा - बादल की कथा' के बारे मे आपकी यह शोध कि वह पद्यकथा है गद्य मे नही लिखी गई, को हिन्दी साहित्य के अनेक मूर्धन्य समीक्षको ने स्वीकार किया है।



साहित्यिक रचनाओ के अलावा आपने कई विषयों की पाठ्य पुस्तके भी लिखी थी, जो राजस्थान (राजपूताना) की अनेक रियासतो के शिक्षा विभागो द्वारा स्वीकृत थी। इनमे 'राजपूताने का भूगोल', 'सरल बही-खाता', 'सरल हिन्दी

व्याकरण' (दो भाग), 'अंकगणित' (दो भाग) आदि उल्लेखनीय है। इनके अलावा आपने दुर्लभ हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज भी की थी तथा बीकानेर की कुलदेवी 'श्रीकरणी औरमहिमा' राजस्थानी पहेलियों का सग्रह 'आडी सग्रह' के नाम से किया था।

आपके मँझले पुत्र श्री वीरेन्द्र त्रिपाठी हिन्दी के अच्छे साहित्यकार हैं।

आपका निधन 5 फरवरी सन् 1980 को हुआ था।

श्री अयोध्याप्रसाद वाजपेयी 'औध'

श्री 'औध' का जन्म उत्तर प्रदेश के रायबरेली जनपद के सातनपुरवा नामक ग्राम मे सन् 1803 मे हुआ था। आपके पिता श्री नन्दकिशोर वाजपेयी पौरोहित्य तथा लेन-देन का कार्य करने के साथ-साथ व्याकरण, ज्योतिष और काव्य-रचना मे भी रुचि रखते थे। वे सस्कृत, फारसी, उर्दू तथा हिन्दी आदि कई भाषाओं के पडित तथा सभा-चतुर महानुभाव थे। 'औध' जी भी अपने पिता के सस्कारो के अनुसार काव्य-रचना में अत्यन्त चतुर थे। आपको बौडी, चन्दापुर, बलरामपुर, गोंडा आदि राज्यो मे अच्छा सम्मान प्राप्त हुआ था। सीतापुर जिले की रामपुर और मल्लापुर नामक रियासतों मे भी आपको कई गाँव उपहार मे मिले थे। आपके कुछ कुटुम्बीजन बहराइच के पंडितपुरवा और बहिरापुर नामक ग्रामों मे भी रहते हैं। जब सन् 1857 की क्रान्ति के समय बौंडी राज्य की ओर से मिली हुई आपकी जमीन आदि जब्त कर ली गई तब आप भी सीतापुर मे अपनी जन्म-भूमि को वापिस लौट आए थे।

यह भी कहा जाता है कि 'पद्माकर' जी से आपका अच्छा सम्बन्ध था। यही कारण है कि 'औध' जी की रचनाओं में पद्माकर जी की भाँति अनुप्रासों की छटा देखने को मिलती है। आपकी अधिकांश रचनाओं मे शकर भगवान् और रामचन्द्र की प्रशसा ही अधिक हुई है। आपकी अनुप्रासमयी रचना की बानगी इस प्रकार है .

वाटिका विहंगन पै, वारिगात रंगन पै,
वायु वेग गंगन पै वसुधा बगार है।
बाँकी वेनु तानन पै बँगले वितानन पै,
बेम 'औध' मानन पै, बीथिन बजार है।।
वृन्दावन बेलिन पै, बनिता नवेलिन पै,
ब्रजचन्द केलिन पै, बंशीवट मार है।
बारि के कनाकन पै, बद्दलन बाँकन पै,
बीजुरी बलाकन पै, बरखा बहार है।।

आपके द्वारा रचित ग्रन्थो मे 'अवध शिकार', 'रागरत्नावली', 'साहित्य सुधा सागर', 'राम कवितावली', 'छन्दानन्द', 'शंकर शतक', 'ब्रज ब्रज्या', 'चित्र-काव्य' और 'रास सर्वस्व' आदि प्रमुख हैं। इनमे से 'अवध शिकार' को 'रघुनाथ शिकार', 'शिकारगाह', 'राम आखेट' तथा 'रघुनाथ आखेट' आदि नामो से भी अभिहित किया जाता है। इस पुस्तक के क्रमश. सन् 1866, सन् 1905 तथा सन् 1915 मे तीन सस्करण प्रकाशित हो चुके है। सबसे शुद्ध सस्करण श्री चम्पाराम मिश्र बी० ए० द्वारा सम्पादित सन् 1915 मे प्रकाशित हुआ था।

अपने जीवन के अन्तिम काल मे आप अयोध्या मे रहते थे और आपका निधन सन् 1885 मे वहाँ पर ही हुआ था।

श्री अरविन्द देशपाण्डे

श्री देशपाण्डे का जन्म महाराष्ट्र प्रदेश के मिरज नामक स्थान मे 21 मई सन् 1924 को हुआ था। पुणे की 'नवीन मराठी शाला' से प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण करके आपने पहले वहाँ के 'फर्गुसन कालेज' मे प्रवेश लिया और बाद मे सन् 1946 मे बम्बई विश्वविद्यालय मे बी० एस-सी० की परीक्षा उत्तीर्ण की। उसी वर्ष आप बम्बई चले गए और वहाँ की 'सेण्ट्रल लैबोरेटरी इण्डिया यूनाइटेड मिल्स' मे नौकरी कर ली। यह नौकरी करते हुए ही आपने 'सिटी एण्ड गिल्ड्स आफ लन्दन' की 'डाइग, ब्लीचिग तथा प्रिंटिंग परीक्षा' टैक्सटाइटल प्रिंटिंग विषय लेकर दी और उसमे प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। कपडो के व्यवसाय मे लग जाने के नाते आपने 'स्वदेशी मिल', 'सिम्प्लैक्स मिल', 'बाम्बे डाइंग मिल', 'जुबली मिल' तथा 'माडर्न मिल्स' में कई वर्ष तक कार्य किया और सन् 1980 मे स्वास्थ्य खराब हो जाने के कारण

इस कार्य से अवकाश ग्रहण कर लिया। इस कार्य से निवृत्ति पाकर आपने 'एम० एस-सी० स्कूल ऑफ मैनेजमेण्ट' की 'मैनेजमेण्ट' परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी।

अपने इन सब कार्यों में व्यस्त रहते हुए भी आपने सन् 1950 से हिन्दी-प्रचार के कार्य में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया था। इसी प्रसग में आपने 'महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा प्रचार सभा पुणे' की 'राष्ट्र-भाषा प्रवीण' परीक्षा उत्तीर्ण की थी। उसी वर्ष आपने बम्बई में 'राष्ट्रभाषा मन्दिर' नामक संस्था प्रारम्भ की और उसके द्वारा निरन्तर 25 वर्ष तक हिन्दी-प्रचार का कार्य करते रहे। आपने अपने इस कार्य-काल मे जहाँ हिन्दी के अनेक भाषणों, व्याख्यान प्रतियोगिताओ और ज्ञान-सत्रो का सफल सचालन किया वहाँ आप 'महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा प्रचार सभा' के 'नियामक मण्डल' के सदस्य भी रहे। बम्बई के वातावरण को 'हिन्दीमय' बनाने की दिशा मे आपका बहुत बडा योगदान रहा था। आप एक कुशल सगठक तथा अनन्य हिन्दी-प्रेमी थे। सन् 1975 मे आप मधुमेह की घातक बीमारी से ग्रस्त हो गए और 18 नवम्बर सन् 1981 को हृद्रोग के कारण आपका निधन हो गया।



सेठ अर्जुनदास केडिया

श्री केडिया का जन्म राजस्थान के जयपुर राज्य के 'महणसर' नामक ग्राम मे सन् 1857 मे हुआ था। आपका बाल्य-काल अपने पिता द्वारा बसाए गए बीकानेर राज्य के रतननगर नामक ग्राम मे व्यतीत हुआ था। वहाँ पर आप उस समय ही चले गए थे जब केवल 3 वर्ष के थे। अग्रवाल वैश्य होते हुए भी आपमें क्षत्रियत्व का जो ओज तथा तेज था, वह बहुत कम लोगों मे दिखाई देता है। आपके काव्य-गुरु श्री गणेश-पुरी गोस्वामी थे, जो राजस्थानी भाषा के अद्वितीय ग्रन्थ 'वंश भास्कर' के रचयिता श्री सूर्यमल्ल मिश्रण के शिष्य थे।

यद्यपि केडिया जी की प्रारम्भिक शिक्षा अत्यन्त साधारण हुई थी, किन्तु आपने अपने अनवरत अध्यवसाय से सस्कृत तथा हिन्दी के अनेक ग्रन्थो का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। हिन्दी तथा सस्कृत के अतिरिक्त आप उर्दू, फारसी, गुजराती तथा पंजाबी भाषाओं के भी अच्छे ज्ञाता थे। आप जहाँ एक विचक्षण अलकार शास्त्री के रूप मे विख्यात थे वहाँ ज्योतिष तथा आयुर्वेद आदि विषयों के भी अच्छे जानकार थे। आपने अपने विद्या-गुरु श्री गणेशपुरी से 'रूप दीप', 'पिगल', 'छन्द रत्नावली' तथा 'अलकार आशय' नामक पुस्तकों का विधिवत् अध्ययन किया था और 'राम-चरित मानस'-जैसे उत्कृष्ट ग्रन्थ के निरन्तर स्वाध्याय से आप कविताएँ भी बहुत अच्छी लिखने लगे थे।

अपने सतत स्वाध्याय एवं शास्त्रीय ग्रन्थों के गम्भीर मनन के कारण आपने जहाँ 'भारती भूषण'-जैसा उत्कृष्टतम कोटि का अलकार-ग्रन्थ लिखा वहाँ 'काव्य कलानिधि' नामक पुस्तक में आपकी कविताएँ भी सकलित है। इस कृति को 'रसिक रजन', 'नीति नवनीत' और 'वैराग्य वैभव' नामक तीन भागो मे विभक्त किया गया है, जिनमें क्रमश श्रृगार, नीति तथा वैराग्य-सम्बन्धी रचनाएँ सग्रहीत है। 'भारती भूषण' की रचना (1928) के द्वारा श्री केडिया जी का स्थान हिन्दी के अलकार-शास्त्रियो मे उल्लेखनीय हो गया है।



आप अपने जीवन के अन्तिम चरण में काशी में रहने लगे थे और वहीपर सन् 1931 मे आपका निधन हुआ था।

दीवान अलखधारी

श्री अलखधारी का जन्म 4 सितम्बर सन् 1882 को शाहजहाँपुर (उ० प्र०) मे हुआ था। आपके पिता श्री बनवारीलाल वहाँ पर जेलर थे और बाद मे 'सब-रजिस्ट्रार' के पद पर कार्य करने लगे थे। आपके पूर्वजों का जन्म-स्थान अम्बाला था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा यद्यपि पंजाब के उन दिनो के वातावरण के अनुसार उर्दू माध्यम से हुई थी, किन्तु अपने पिताजी द्वारा प्रतिदिन किये जाने वाले 'रामायण-पाठ' के कारण आप हिन्दी की ओर आकर्षित हुए। इस सत्संग तथा अध्ययन के परिणाम-स्वरूप आपको 'रामायण' के बहुत-से दोहे तथा चौपाइयाँ कण्ठाग्र हो गई थी। उन दिनो आपकी आयु 5-6 वर्ष की ही होगी। सन् 1890-91 मे लाहौर-निवासी मा० दुर्गाप्रसाद जी ने आपको वेद-मत्रों का एक ऐसा 'गुटका' दिया जिसमे उनके अर्थ अँग्रेजी तथा हिन्दी मे दिए गए थे। उनके स्वाध्याय से आपका हिन्दी-ज्ञान धीरे-धीरे बढता गया और आपने महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रणीत 'सत्यार्थ प्रकाश' तथा 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' का अध्ययन भी प्रारम्भ कर दिया। इससे आपका हिन्दी-अभ्यास और भी बढ गया।



आपका यह हिन्दी-प्रेम उन दिनों और भी प्रगाढ से प्रगाढतर होता गया जब आप मेरठ कालेज मे विद्याध्ययन किया करते थे। वहाँ पर 'वेद प्रकाश' नामक मासिक पत्र के सम्पादक श्री तुलसीराम स्वामी के सम्पर्क मे आकर आपने वेद के 'आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्म वर्चसी जायताम्' मन्त्र का वास्तविक मर्म समझा और तब से वे जीवनपर्यन्त बराबर इसी मन्त्र के माध्यम से ईश्वर-प्रार्थना करते रहे। धीरे-धीरे आर्यसमाज की गतिविधियो मे भाग लेते रहने के कारण आप पंजाब के प्रख्यात आर्यसमाजी नेता महात्मा हंसराज के सम्पर्क में आए और आपके मन मे हिन्दी-प्रचार के कार्यों मे भाग लेते रहने की प्रेरणा उद्भूत हुई।

सन् 1898 में आप लोकमान्य बाल गगाधर तिलक के सम्पर्क में आए। उनकी प्रख्यात कृति 'गीता रहस्य' के हिन्दी अनुवाद के निरन्तर अध्ययन ने आपके मानस मे अपने 'प्राचीन वैदिक वाङ्मय' के प्रति और गहन रुचि जाग्रत कर दी, जिससे आप हिन्दी की ओर और भी तत्परतापूर्वक उन्मुख हो गए। आर्यसमाज के कार्यों तथा राष्ट्रीय आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण आपने पजाब के सामाजिक क्षेत्र मे अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया था। इस बीच आप अलवर (राजस्थान) मे दीवान (प्रधान-मन्त्री) हो गए और वहाँ पर आपने कई वर्ष तक कार्य किया। अलवर के अतिरिक्त आप ग्वालियर, बीकानेर तथा डूँगरपुर राज्यो के 'दीवान' भी रहे थे। जिन दिनो आप 'अलवर' राज्य' मे दीवान थे तब वहाँ के नरेश द्वारा आप पर 'आर्य-समाज' की गतिविधियो मे भाग न लेने के लिए दबाव डाला गया था। आपने नरेश के इस अनुरोध को न मानकर वहाँ से 'त्यागपत्र' देकर लौट आना ही श्रेयस्कर समझा था।

उक्त सभी स्थानो मे कार्य करने के उपरान्त आप स्थायी रूप मे अम्बाला मे रहने लगे थे और हिन्दी-प्रचार के कार्य को ही अपना एक-मात्र लक्ष्य बना लिया था। आर्य-समाज द्वारा सन् 1957-58 मे पजाब मे प्रारम्भ किये गए 'हिन्दी रक्षा-आन्दोलन' मे आपने सक्रिय रूप मे भाग लिया था। 'आर्यसमाज श्रद्धानन्द बाजार अम्बाला छावनी' तथा वहाँ के 'आर्य कालेज' एव 'गाधी मेमोरियल कालेज' की सस्थापना मे आपका प्रमुख योगदान रहा था। 'रामायण परिषद्' की गतिविधियो मे भी आप बढ-चढकर भाग लिया करते थे। आपने 'अरोडा' जाति का इतिहास तैयार करने मे उल्लेखनीय भूमिका निबाही थी। इस सम्बन्ध में आपके सहयोग से लिखा गया 'अरोड वश का इतिहास' नामक ग्रन्थ विशेष उल्लेखनीय है। आपकी हिन्दी मे लिखी गई 'रामराज्य' नामक पुस्तक प्रमुख है। आपके लेख 'धर्म-भानु' तथा 'वीर प्रताप' आदि पत्रो मे प्रकाशित होते रहते थे।

आपका निधन 23 जनवरी सन् 1970 को हुआ था।

श्री अलगूराय शास्त्री

श्री शास्त्री जी का जन्म 29 जनवरी सन् 1900 को उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जनपद के 'अमिला' नामक ग्राम में हुआ था। सन् 1923 मे काशी विद्यापीठ से विधिवत् शिक्षा प्राप्त करके आप समाज-सेवा के क्षेत्र मे आ गए और पंजाब केसरी लाला लाजपतराय के 'लोक-सेवक-मण्डल' के सदस्य हो गए और उन्ही की देख-रेख मे सर्वप्रथम अछूतोद्धार के कार्य मे लग गए। आप अनेक वर्ष तक मेरठ की प्रमुख हरिजन-संस्था 'कुमार आश्रम' के व्यवस्थापक रहे थे। अपने इस कार्य-काल (सन् 1926 से 30 तक) मे आपका सम्पर्क भारत के प्रधानमत्री श्री लालबहादुर शास्त्री से भी रहा था, जो सन् 1927-28 मे 'कुमार आश्रम' मे ही आपके साथ कार्य किया करते थे।

'कुमार आश्रम' के माध्यम से आपने जहाँ समाज-सुधार के क्षेत्र मे उल्लेखनीय कार्य किया था वहाँ शिक्षा के क्षेत्र मे भी आपकी सेवाएँ सर्वथा अविस्मरणीय है। मेरठ की सुप्रसिद्ध शिक्षा-सस्था 'गुरुकुल डौरली' की सस्थापना मे आपका प्रमुखतम सहयोग रहा था। बहुत दिन तक आप इस सस्था के 'कुल-पति' भी रहे थे। राजनीति तथा समाज-सुधार के क्षेत्र मे आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान था और इसी कारण आप जहाँ मेरठ के प्रमुख नेताओं में गिने जाते थे वहाँ साहित्य-रचना की दिशा मे आपका अप्रतिम स्थान था। मेरठ में उन दिनो श्री हरिशरण श्रीवास्तव 'मराल' और बाबू घासीराम आदि साहित्यकार आपकी मण्डली मे थे।



मेरठ मे रहते हुए आपने राष्ट्रीय गतिविधियों और शिक्षा के क्षेत्र मे अनेक क्रांतिकारी कार्यों मे भाग लेने के साथ-साथ समाज-सुधार की अपनी प्रवृत्तियों में कमी नही आने दी तथा आर्यसमाज से भी सक्रिय रूप से जुड़ गए। यहाँ तक कि उन दिनो प्रति रविवार को होने वाले आर्य-समाज के सत्संगों मे आपके भाषण बड़ी ही रुचिपूर्वक सुने जाते थे। विभिन्न क्षेत्रों मे कार्य करते हुए आप साहित्य-निर्माण की दिशा मे भी अपनी प्रतिभा का प्रचुर प्रयोग करते रहते थे। आप जहाँ कुशल कवि तथा गम्भीर समीक्षक थे वहाँ दार्शनिक विषयों पर भी आपने अपनी लेखनी का सदुपयोग किया था। कविता मे आप 'आनन्द' नाम का उपयोग किया करते थे।

शास्त्री जी के गम्भीर ज्ञान तथा विश्लेषण-चातुर्य का प्रमुख प्रमाण उनके 'शकर दर्शन' तथा 'ऋग्वेद रहस्य' नामक ग्रन्थों मे भली-भाँति मिल जाता है। आप जहाँ गम्भीर विषयों की विवेचना मे पूर्णतः रुचि लिया करते थे वहाँ साहित्य-समीक्षा की दिशा मे भी अपनी प्रतिभा का परिचय समय-समय पर देते रहते थे। जब राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त का महाकाव्य 'साकेत' प्रकाशित हुआ था तब आपने उसके सम्बन्ध मे जो समीक्षात्मक लेखमाला लिखी थी वह मेरठ से श्री विश्वम्भरसहाय 'प्रेमी' के सम्पादन मे प्रकाशित होने वाली साहित्यिक पत्रिका 'तपो-भूमि' मे सन् 1933 मे धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुई थी। उस समीक्षात्मक लेखमाला मे शास्त्री जी की समा-लोचना-शैली का एक नया रूप प्रकट हुआ था। उनकी ऐसी ही प्रतिभा कबीर, सूर और तुलसी के सम्बन्ध मे लिखे गए समीक्षात्मक लेखो मे भी देखने को मिलती है। एक कुशल सगठनकर्ता, दूरदर्शी नेता और गम्भीर दार्शनिक होने से पूर्व आपकी साहित्य-प्रतिभा एक सहृदय कवि के रूप मे समाज के सामने तब प्रकट हुई थी जब सन् 1923 मे आपकी पहली काव्य-पुस्तक 'शान्ति प्रताप' नाम से प्रकाशित हुई थी। आपकी आत्मकथा भी 'मेरा जीवन' नाम से छपी है, जिसमे आपके जीवन-सघर्ष की गाथा सशक्त शैली में वर्णित है।

देश के स्वाधीनता-सग्राम मे सक्रिय रूप से भाग लेकर आपने कई बार जेल-यात्राएँ भी की थी। स्वतंत्रता के उपरान्त आप जहाँ अनेक वर्ष तक एम० एल० ए० तथा ससद्-सदस्य रहे थे वहाँ उत्तर प्रदेश कांग्रेस के सचिव एव अध्यक्ष के रूप मे भी आपकी सेवाएँ सदा स्मरणीय रहेगी। जिन दिनों आप लोक सभा के सदस्य थे तब आपने आर्यसमाज

के अनुरोध पर 'हिन्दी सत्याग्रह' के समय सत्याग्रहियों पर फीरोजपुर (पजाब) मे किये गए अत्याचारो के सम्बन्ध मे एक ऐतिहासिक प्रतिवेदन भारत के तत्कालीन प्रधानमत्री पडित जवाहरलाल नेहरू की सेवा मे भेजा था। आप कई वर्ष तक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान रहने के अतिरिक्त मृत्यु से पूर्व उत्तर प्रदेश मत्रिमण्डल के भी वरिष्ठतम सदस्य रहे थे।

स्वतन्त्रता-सग्राम मे सक्रिय रूप से भाग लेते रहने के प्रसग में आपको प्राय. जब-जब भी कारावास मे रहने का सुअवसर प्राप्त हुआ तब-तब ही आपने वहाँ पर कोई-न-कोई ग्रन्थ लिख डाला था। सन् 1930 के आन्दोलन के समय आप जब शाहजहाँपुर (उत्तर प्रदेश) की जिला जेल मे रहे थे तब आपने 600 पृष्ठ का शकर के 'वेदान्त दर्शन' का जो भाष्य हिन्दी मे किया था वह अभी तक अप्रकाशित ही है। इसी प्रकार सन् 1932 के कारावास के समय आपने लगभग 1200 पृष्ठ का 'सर्व दर्शन परिचय' नामक एक विशाल ग्रन्थ लिखा था। दुर्भाग्यवश यह ग्रन्थ भी अभी तक छप नही सका। सन् 1942 से 1945 तक के लखनऊ तथा बनारस के कारावास मे बिताये गए समय मे आपने 'ऋग्वेद रहस्य' नामक ग्रन्थ की रचना की थी, जो प्रकाशित हो चुका है। इसके अतिरिक्त 'कार्लमार्क्स' के दर्शन पर स्वतंत्र ग्रन्थ लिखने के साथ-साथ आपने उसकी प्रख्यात कृति 'कैपिटल' का हिन्दी अनुवाद भी बनारस जेल मे ही सम्पन्न किया था। इनकी भी वही गति हुई और ये रचनाएँ भी नही छप सकी। शास्त्री जी के 'ऋग्वेद रहस्य' नामक ग्रन्थ को देखने मे यह भली-भाँति समझा जा सकता है कि ऋग्वेद मे गणित, पदार्थ विज्ञान, रसायन, खगोल, भूगोल, औषधि, वनस्पति, पशु विज्ञान एव खनिज शास्त्र के सम्बन्ध मे प्रचुर सामग्री समाविष्ट है। इसमे 14 विद्याओं और 64 कलाओ की वेद-मूलकता का परिचय प्रस्तुत किया गया है।

आपका निधन 12 फरवरी सन् 1967 को हुआ था।

श्री अलोपीप्रसाद चौबे

श्री चौबेजी का जन्म सन् 1865 मे बिहार जनपद के भागलपुर दामक नगर मे हुआ था। आप भागलपुर के अनन्य हिन्दी-प्रेमी और वहाँ के 'भगवान पुस्तकालय' के सस्थापक श्री भगवानप्रसाद चौबे के भतीजे थे। इन चाचा-भतीजों में इतना अगाध प्रेम था कि जब चाचा आपको पुकारते थे तो अलोपीप्रसाद जी 'मर्जी साहब' कहकर उत्तर दिया करते थे और उनके सामने ही खडे रहते थे। श्री भगवानप्रसादजी को आप पर इतना विश्वास था कि वे अपनी सारी जायदाद की देख-भाल का कार्य आप पर ही छोड़कर प्राय भागलपुर रहा करते थे। अलोपीप्रसाद को प्राय. घर में ही रहने की आदत थी और आप प्रायः बाहर जनता मे जाने से कतराया करते थे। अपनी इसी प्रवृत्ति के कारण जब आपको आनरेरी मजिस्ट्रेट बनाया गया तब, आपने इस पद से शीघ्र ही त्यागपत्र दे दिया था। चौबेजी के परिवार के पैतृक ग्राम मे जो मन्दिर और जायदाद थी उसकी देख-भाल का सम्पूर्ण दायित्व आपके ऊपर ही रहता था।

आपने अपने चाचा भगवानप्रसाद चौबे द्वारा संस्थापित 'भगवान पुस्तकालय भागलपुर' के सचालन मे अत्यधिक रुचि ली थी। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यही है कि आपने सन् 1913 मे 25 हजार रुपये की लागत से भागलपुर के 'तेज-नारायण जुबली कालेज' के पुराने भवन के सामने 'श्री भगवान पुस्तकालय' का निर्माण कराया था। आपको वैद्यक का अच्छा ज्ञान था तथा आप प्रतिदिन अपने 'महावीर भडार औषधालय' से गरीबों को नि शुल्क दवाएँ



वितरित किया करते थे। आपकी हस्तलिपि अत्यन्त सुन्दर थी और आप अच्छे चित्रकार भी थे। आपकी हस्तलिपि और चित्रकारी को देखकर एक बार राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र-प्रसाद ने आपको एक प्रमाण-पत्र और चाँदी का पदक भी प्रदान किया था। इसका प्रमाण आपके द्वारा बनाई गई

'चौबे परिवार की वंशावली' नामक उस चित्र-कृति से मिल जाता है जो आपने 7 मार्च सन् 1932 को बनाई थी और जो 'भगवान पुस्तकालय' की 'स्वर्ण जयन्ती स्मारिका' में छपी है। पुस्तकालय के संचालन के निमित्त आपने तथा आपके चाचा श्री भगवानप्रसाद चौबे ने जो ट्रस्ट-डीड लिखी थी उसके मुताबिक आज भी उसका संचालन होता है।

आपकी साहित्यिक योग्यता का प्रमाण इससे अधिक और क्या होगा कि आपने अपने ही ग्राम के प्रतिष्ठित कवि श्यामसुन्दर कवीश्वर की सुप्रसिद्ध रचना 'चित्रकाव्यम्' का सम्पादन भी किया था। उस पुस्तक के सम्पादकीय वक्तव्य से पंडित अलोपीप्रसाद चौबे की साहित्यिक योग्यता एवं शोध-वृत्ति का विशद परिचय मिल जाता है। आपने लिखा था—"यह वंश बहुत दिनो से मिल्की ग्राम मे है। इनमे से 9 व्यक्ति कवीश्वर हुए, जिसमे पंडित श्यामसुन्दरजी कवीश्वर बहुत ही विद्वान् और सर्वश्रेष्ठ हुए। यह पद्माकर इत्यादि कवियो के जोड़ के थे और चित्र-काव्य मे यह अद्वितीय थे। कुछ दिन बिहपुर रहने के पश्चात् यह जयपुर रियासत मे जाकर रहे और वहाँ उनका बडा नाम रहा। कविजी जयपुर मे ही स्वर्गीय हुए। वहाँ कविजी के प्रेमी सज्जन लोग बहुत थे। उन लोगो ने इनका संस्कार-क्रियादि ब्राह्मण द्वारा हरिद्वारजी मे करवाये। पश्चात् इनकी सब पुस्तकें छपी अथवा हाथ की लिखी दो संदूक मे भर के रेलवे पार्सल द्वारा कविजी के वारिसान को भेज दिये। इसी संदूक मे चित्र काव्य की पुस्तकें स्वयं कविजी का बनाया व हाथ का लिखा हुआ था। यहाँ इस काव्य के समझने व बूझने वाले कोई भी कवीश्वर नही रहे...परिणाम यह हुआ कि सब पुस्तके पंसारियो के यहाँ पुड़ियाँ बाँधने के लिए दे दी गई और इसका मूल्य केवल थोड़ा चावल, दाल, नमक, सुपारी इत्यादि मिला। इन लोगो ने इसे यथेष्ट समझकर ले लिया।...पंसारी लोगों ने चित्रकाव्य को अद्भुत अनोखा जानकर मुझको लाकर दिखलाया। हमने सबोंको रख लिया।...देखा कि इस वंश मे इसके ज्ञाता, जानकार कोई भी नहीं है। कुछ दिनो मे कोई जानेंगे भी नही कि मिल्की मे नौ-नौ कवि हो चुके हैं।...इसलिए हमने इसकी नकल करना प्रारम्भ किया और आज प्रभु की कृपा से जहाँ तक इस क्षुद्र से हो सका, पूरा किया।"

आपका निधन नवम्बर सन् 1940 मे हुआ था।

डॉ० अवध उपाध्याय

डॉ० अवध उपाध्याय का जन्म उत्तर प्रदेश के बलिया जनपद के अंतर्गत ग्राम ऊँचल में सन् 1893 मे हुआ था। वाराणसी मे इंटर की परीक्षा देकर आप वहाँ के मिशन स्कूल मे अध्यापन का कार्य करने लगे थे। अध्यापन के उस प्रारम्भिक काल मे ही आपकी रुचि गणित-जैसे शुष्क विषय की ओर हो गई और धीरे-धीरे आपने इस क्षेत्र में अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया। आपकी एतत्संबधी प्रतिभा का परिचय शनै-शनै गणित के प्राय. सभी उल्लेखनीय विद्वानों को मिल गया और आपकी ख्याति दिनानुदिन बढ़ती ही गई। उत्तर प्रदेश के तत्कालीन शिक्षा-मंत्री श्री सी० वाई० चिन्तामणि की दृष्टि भी आप पर पडी और उनकी कृपा से आपको शोध-संबधी छात्रवृत्ति सरकार की ओर से प्रदान की गई, जिसके कारण आपको विदेश जाने का सुअवसर अनायास ही उपलब्ध हो गया, किन्तु विदेश-यात्रा से जाति चली जायगी, इस धार्मिक कट्टरता और रूढिवादी धारणा ने आपकी इस ज्ञान-यात्रा मे व्यवधान डाल दिया और आप उस समय विदेश न जा सके।

इसी बीच राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन से आपकी भेंट हो गई। उन्होंने हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से प्रयाग मे यमुना नदी के पार महोबा नामक स्थान मे एक 'हिन्दी विद्यापीठ' की स्थापना उन्ही दिनों की थी। आपको टंडनजी ने उस विद्यापीठ का प्राचार्य नियुक्त कर दिया। यद्यपि गणित मे आपकी अत्यन्त प्रगाढ पैठ थी, किन्तु उपाधिहीन होने के कारण आपको कोई शासकीय स्थायी वृत्ति प्राप्त नही हो रही थी। उपाध्यायजी ने विद्यापीठ मे रहकर जहाँ अपना हिन्दी साहित्य-संबधी ज्ञान बढाया वहाँ अनेक छात्रों को अपने निरीक्षण मे साहित्य मे भी पूर्णत. निष्णात किया। आपके तत्कालीन शिष्यों मे छाता (बलिया) निवासी श्री ब्रजभूषण शुक्ल और डॉ० हरिशंकर शुक्ल के नाम प्रमुख है। श्री हरिशंकरजी बहुत दिन तक रायपुर (म०प्र०) के दुर्गा महाविद्यालय के अध्यापक रह चुके है। आपने कुछ दिन पन्ना के स्टेट हाईस्कूल मे भी अध्यापन का कार्य किया था।

विद्यापीठ मे कार्य करते हुए भी आपने अपनी गणित-संबधी खोजों को निरंतर आगे बढ़ाते जाने का उपक्रम रखा, जिसके कारण कुछ मित्रों ने आपको हिन्दी में गणित-संबधी

ऐसी पुस्तक की रचना करने की प्रेरणा भी प्रदान की जो कम-से-कम हाईस्कूल तक के छात्रों के लिए उपयोगी हो और सभी छात्र उससे लाभान्वित हो सकें। मित्रों की इस प्रेरणा का सुफल यह हुआ कि आपने हिन्दी में 'अंकगणित' की एक पुस्तक तैयार कर दी, जिसका प्रकाशन रामनारायणलाल बुकसेलर, इलाहाबाद की ओर से किया गया था। इस पुस्तक का नाम 'नवीन अंकगणित' था। आपकी ऐसी ही एक और पुस्तक 'इंटर स्टेटिस्टिक्स' भी उल्लेखनीय है। विद्यापीठ मे अध्यापन-कार्य करते हुए आपने हिन्दी-साहित्य के विभिन्न अंगों की सम्पूर्ति में भी अपनी लेखन-प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। आपकी ऐसी रचनाओं मे 'नवीन पिंगल' और 'हिन्दी साहित्य' के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। आपकी 'सत्य हरिश्चन्द्र' (टीका), 'सापेक्षवाद' तथा 'चित्र-कला' आदि पुस्तको का भी हिन्दी-जगत् मे पर्याप्त समादर हुआ था। आपने 'काशी के छायाचित्र' नामक पुस्तक का सम्पादन भी किया था। आपके द्वारा लिखित 'रूबिया' नामक उपन्यास स्मरणीय है। आपकी साहित्यिक प्रतिभा की प्रखरता का परिचय हिन्दी-जगत् को उस समय मिला जब आपने हिन्दी के प्रख्यात उपन्यासकार प्रेमचन्द के 'रगभूमि' नामक उपन्यास की तुलना 'वैनिटी फेयर' से करके उसे उसकी भद्दी नकल सिद्ध किया था। आपकी यह लेखमाला 'सरस्वती' के कई अंको मे धारावाहिक रूप मे प्रकाशित हुई थी। उन्ही दिनो आपने 'सुधा' मे प्रेमचन्द के 'काया कल्प' नामक उपन्यास को भी 'इटर्नल सिटी' पर आधारित सिद्ध करने के लिए अनेक सुपुष्ट तर्क उपस्थित किये थे। इस सबध मे यह बात विशेष रूप से ध्यातव्य है कि अवध उपाध्याय द्वारा लिखित इन लेखों से हिन्दी-जगत् मे बहुत तहलका मचा था और ठाकुर श्रीनाथसिंह तथा श्री रामकृष्ण शुक्ल 'शिलीमुख' आदि कई लेखकों ने भी प्रेमचन्दजी की कई ऐसी साहित्यिक अनुकृतियों का भडाफोड किया था। श्री उपाध्यायजी की इन समीक्षाओं का वर्चस्व जब प्रेमचन्दजी ने 'सुधा' के नवम्बर 1927 के अक मे प्रकाशित उसके सम्पादक श्री दुलारेलाल भार्गव के नाम लिखे अपने एक पत्र मे स्वय स्वीकार कर लिया तब ही आपने अपनी वह लेखमाला बद की थी। जिन दिनों प्रेमचन्द जी का निधन हुआ था तब आप विदेश मे थे। जब आपको वहाँ पर यह समाचार मिला तब आपको हार्दिक वेदना हुई थी। अपनी इस वेदना का प्रकटीकरण आपने अपने मित्र विनोदशंकर व्यास को लिखे एक पत्र मे किया है। यह पत्र 'हंस' के 'प्रेमचन्द स्मृति अंक' मे छपा है।

सन् 1935 के लगभग जब आप दारागज में रहकर अपनी छोटी-मोटी नौकरी और किताबों की स्वल्प-सी रायल्टी से जीवन-निर्वाह कर रहे थे तब आपकी भेंट अचानक हिन्दी के प्रख्यात विद्वान् महापंडित राहुल सांकृत्यायन से हो गई। उन्होंने विदेश-यात्रा न करने के आपके दकियानूसी विचारो की आलोचना करते हुए आपको विदेश जाने की प्रेरणा दी थी। राहुलजी की प्रेरणा ने आपकी उस भ्रान्त धारणा को निर्मूल कर दिया और आप अपने गणित-संबंधी ज्ञान मे अभिवृद्धि करने की दृष्टि से विदेश चले गए तथा फ्रास से गणित के डॉक्टर होकर जब आप भारत लौटे तब आप लखनऊ विश्वविद्यालय के गणित विभाग मे प्राध्यापक हो गए थे। आप अभी ठीक तरह से जम भी न पाए थे कि अपनी गणित-सबधी महत्त्वपूर्ण अन्य उपलब्धियां का परिचय देने से पूर्व ही सन् 1941 मे आपका असामयिक देहावसान हो गया।

श्री अवधबिहारी शरण वाजपेयी 'अवधेश'

श्री अवधेश का जन्म सन् 1893 मे उत्तर प्रदेश के फतहपुर जनपद के रिवारी बुजुर्ग नामक स्थान के समीपवर्ती ग्राम देवमई कुटिया मे हुआ था। आप सर्वश्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' और गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' के समकालीन थे और राजकवि तथा राजवैद्य के रूप मे विख्यात थे।



श्री वाजपेयी जी पुरानी परपरा की रचनाएँ करने मे जितने दक्ष थे, उसी सफलता से रचनाएँ

सुनाने मे भी कुशल थे। पहले आप 'अवधेश' के नाम से रचनाएँ किया करते थे, किंतु बाद मे 'अवधैया' लिखने लगे थे। आपको सभी रंगों तथा रसों की रचनाएँ करने मे पूरी सफलता प्राप्त थी। हास्यरस की रचनाएँ भी आप पूर्ण तन्मयता से किया करते थे। एक उदाहरण इस प्रकार है :

अपने मन मे सभी खुशी हैं, अपने-अपने ठाट के ऊपर
रायबहादुर लाट के ऊपर, कलुआ धोबी घाट के ऊपर
खटमल खुश है खाट के ऊपर, बनिया खुश है हाट के ऊपर
कविता-प्रेमी भाट के ऊपर, शहर चटोरे चाट के ऊपर

श्री वाजपेयी जी को बार-बार अपनी जेबी घडी देखने की बुरी बीमारी थी। उसमें चाबी देना भी आपको याद नही रहता था। बार-बार घड़ी देखने वालों को आप यह कहकर विदा कर देते थे

घडी-घडी मे घडी देखना, यह भी इक बीमारी है।
ऐसी आदत मत डालो जी, कहता अवध बिहारी है ॥

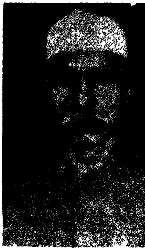
आपकी प्रकाशित कृतियो में 'सुदामा शतक' (1921), 'सागीत रत्नाकर' (1936), 'राष्ट्र की पुकार' (1940), 'काव्य-कलानिधि' (1940), 'राम रहस्य शतक' (1950) 'कामिनी कुसुमावलि' (1953), 'कृष्ण रहस्य शतक, (1954), 'कोष रत्नाकर' (1954), 'दादरा शतक' (1960) और 'सरस्वती अर्पण शतक' (1963) उल्लेखनीय हैं।

इन प्रकाशित रचनाओं के अतिरिक्त 'गणिका जीवनी' और 'कर्पट मजरी' नामक रचनाएँ अभी अप्रकाशित ही है। इनमे से अतिम हास्य-रचना है।

आपका निधन सन् 1967 मे हुआ था।

(उन्नाव) मे रहा करते थे और वहा पर स्टेट के मैनेजर रहे थे।

आपके द्वारा लिखित प्रकाशित-ग्रन्थों मे 'छून छत्तीसी', 'भव सिन्धु-सेतु', 'श्री भँवरेश्वर भक्ति', 'श्री गोविनय' तथा 'गोवध बद हो' विशेष उल्लेखनीय हैं। आपकी अनेक रचनाएँ अप्रकाशित ही पडी है। 'गोवध के निषेध' के सबध मे आप बराबर आन्दोलन करते रहते थे। गाय की महिमा वर्णित करते हुए आपने गोवध बद होने के अपने विचार एक छद मे इस प्रकार प्रकट किए है



गाय नहीं पशु है, पारिवारिक जीव है,
माय है, हाय न अन्ध हो।
है असहाय सहायक जो हमें,
तो कहो क्यो बने नेम निकन्द हो।
मानुष के वध से भी जघन्य है,
गोवध का अघ कर्म विनिन्द हो।
देश की माँग है, गोवध बन्द हो,
गोवध बन्द हो, गोवध बन्द हो।

आपका निधन सन् 1965 मे हुआ था।

श्री अवधबिहारी श्रीवास्तव 'अवधेश'

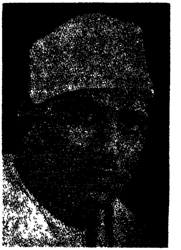
श्री अवधेश का जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के पीर नगर नामक स्थान मे सन् 1894 मे हुआ था। आपके पिता का नाम श्री गंगाप्रसाद श्रीवास्तव था। आपकी शिक्षा केवल मिडिल तक ही हो सकी थी और आपने 'साहित्यालकार' की उपाधि भी प्राप्त की थी। आप प्राय. करदहा

राजा अवधेशसिंह

राजा साहब का जन्म उत्तर प्रदेश के कालाकाँकर (प्रतापगढ) नामक राज्य मे 20 सितम्बर सन् 1906 को हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा लखनऊ के 'काल्विन ताल्लुकेदार कालेज' मे हुई थी। आपके साथ ही आपके दो भाई (श्री ब्रजेशसिह तथा सुरेशसिह) भी वहाँ अध्ययनार्थ प्रविष्ट हुए

थे और अमेठी के साहित्य-प्रेमी राजकुमार श्री रणवीर सिंह और रणजयसिंह भी आपके सहपाठियों में थे। आपके सुपुत्र श्री दिनेशसिंह अनेक वर्ष तक केंद्रीय मंत्रि-मंडल के वरिष्ठ सदस्य भी रहे हैं। आपका परिवार प्रारम्भ से ही हिन्दी-प्रेमी था और कालाकाँकार के राजा रामपालसिंह ने वहाँ से 'हिन्दोस्थान' नामक दैनिक पत्र अनेक वर्ष तक सफलतापूर्वक प्रकाशित किया था। आपके अनुज कुँवर सुरेशसिंह भी हिन्दी के सुलेखक है। अपने छात्र-जीवन से ही आपके हृदय मे जो हिन्दी-प्रेम कूट-कूटकर भरा था बाद मे आर्यसमाज के सम्पर्क ने उसमें और भी अभिवृद्धि कर दी।

महात्मा गाधी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर आपने स्वदेशी तथा हरिजनोद्धार के कार्यों मे बढ़-चढ़कर भाग लिया। गाधीजी के विचारों और आदर्शों के प्रचार के लिए आपने कालाकाँकर से एक 'दरिद्रनारायण' नामक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन भी अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। अवध क्षेत्र के राजा-महाराजाओ मे राष्ट्रीयता की भावनाओ के प्रसार के हेतु आपने पडित मोतीलाल नेहरू की प्रेरणा से 'राष्ट्रीय सेवा सघ' (आर० एस० एस०) नामक एक सघ की स्थापना की थी। यहाँ यह विशेष रूप मे ध्यातव्य है कि उस समय तक हमारे देश मे 'राष्ट्रीय स्वय सेवक सघ'-जैसी सस्था का जन्म भी नही हुआ था।



जिन दिनों उपन्यास-सम्राट् मुन्शी प्रेमचन्द लखनऊ से प्रकाशित होने वाली साहित्यिक पत्रिका 'माधुरी' का सम्पादन करते थे तब राजा साहब ने उनसे राजा-रईसों के नाम एक अपील भी लिखवाई थी, जिसके प्रारूप को आपने प्रेमचन्द जी के साथ मसूरी जाकर पडित मोतीलाल नेहरू से सम्पुष्ट कराया था। पडित मोतीलाल जी उन दिनों वहाँ गए हुए थे। प्रारूप को सुनकर मोतीलाल जी ने कहा था—"यह तो मुन्शी जी ने पूरा नॉविल (उपन्यास) ही लिख डाला है। इतना पढ़ेगा कौन? सक्षेप में पत्र ऐसा हो, जिसमे भाव अधिक और शब्द कम हों तथा आसानी से सब उसे पढकर उस पर पूरा विचार कर सकें।" यह घटना सन् 1930 की है। राज-परिवार मे जन्म लेकर भी आप सब प्रकार के व्यसनों से सर्वथा दूर थे। स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार और स्वभाषा का सम्पोषण ही आपके जीवन का एकमात्र लक्ष्य था।

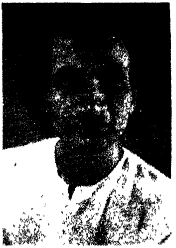
आर्यसमाज के सुधार-संबंधी कार्यों का तालमेल कांग्रेस के कुछ रचनात्मक कार्यक्रमों के साथ ऐसा बैठा कि राजा साहब ने उनमे खूब बढ़-चढकर भाग लिया। यहाँ तक कि आपने महात्मा गाधी जी को कालाकाँकर बुलाकर उनके कार्यक्रमो के प्रति अपनी पूर्ण आस्था भी प्रकट की थी राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति आपका जो अनन्य अनुराग था। यह उसका ही सुपरिणाम था कि आपके अनुज कुँवर सुरेशसिंह ने हिन्दी-लेखन के क्षेत्र मे अपना महत्त्वपूर्ण स्थान ही नही बनाया प्रत्युत कालाकाँकर से 'कुमार'-जैसा युवकोपयोगी पत्र निकाला तथा 'वानर' नामक बालोपयोगी पत्र का भी सम्पादन किया। कुँवर सुरेशसिह का हिन्दी-प्रेम यहाँ तक बढा कि वे हिन्दी के छायावादी काव्य के अनन्य उन्नायक कविवर सुमित्रानन्दन पन्त को कालाकाँकर ही ले गए थे और वहाँ पर उनके सहयोग से पन्त जी ने 'रूपाभ' नामक साहित्यिक पत्र का सम्पादन श्री नरेद्र शर्मा के साथ मिलकर किया था।

जब आपने 20 सितम्बर सन् 1927 को कालाकाँकर का राज्य-भार सँभाला था तब आप केवल 20 वर्ष के ही थे। केवल 7 वर्ष तक ही आपने राज्य का कार्य किया था। अवधेशसिह ने राज-काज के साथ-साथ अन्य सामाजिक कार्यों मे इतना बढ़-चढ़कर भाग लिया कि आप अपने स्वास्थ्य को भी गँवा बैठे और जब लखनऊ मे चिकित्सा से आपके स्वास्थ्य मे कोई सुधार न हुआ तब कलकत्ता जाकर आपने कविराज गणनाथ सेन से अपना उपचार कराया। जिन दिनों आप कलकत्ता में उपचारार्थ गए हुए थे उन्ही दिनों ब्रिटिश सरकार ने आपके कालाकाँकर राज्य को कुर्क कर लिया। फलस्वरूप आप वहाँ से लौट आए और 20 सितम्बर

सन् 1934 को केवल 28 वर्ष की आयु मे इस असार ससार से विदा हो गए।

श्री असीम दीक्षित

श्री असीम दीक्षित का जन्म उत्तर प्रदेश के औद्योगिक नगर कानपुर के एक मध्यवर्गीय ब्राह्मण परिवार मे सन् 1924 में हुआ था। आपका वास्तविक नाम गयाप्रसाद दीक्षित था। आपकी शिक्षा-दीक्षा कानपुर मे ही हुई थी और अपने छात्र-जीवन से ही आप हिन्दी के प्रख्यात कवि श्री गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' के सम्पर्क मे आ गए थे। मैट्रिक करने के बाद श्री सनेही जी के सान्निध्य से आपने कविता के क्षेत्र मे अच्छी निपुणता प्राप्त कर ली थी। आपकी रचना-कुशलता का स्पष्ट प्रमाण आपके इस पद से मिल जाता है



रसना रस राम के नाम को ले,
फिर यूँ मन मेरा हुआ न हुआ।
क्षण के लिए भी यह छिन्न कभी,
फिर मोह का घेरा हुआ न हुआ।
हवा सांस है, सांस का आसरा क्या,
फिर सांस का फेरा हुआ न हुआ।
अभी रात 'असीम' बनी अपनी,
कल जाने सवेरा हुआ न हुआ।

आपका निधन 29 नवम्बर सन् 1964 को हुआ था।

सुश्री आइति ब्रेटिस एस० लिंगवा

खासी जाति की इस एक-मात्र हिन्दी-प्रचारिका का जन्म शिलांग (मेघालय) मे सन् 1937 मे हुआ था। जिन दिनो बाबा राघवदास के प्रयत्न से असम मे हिन्दी प्रचार का कार्य प्रारम्भ हुआ था तब उस क्षेत्र की आप ही एक-मात्र ऐसी महिला थी जिन्होंने हिन्दी सीखकर उसमे लेखन प्रारम्भ कर दिया था।

गोहाटी से प्रकाशित होने वाले 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' असम के पत्र 'राष्ट्र सेवक' तथा 'बालक' आदि पत्रो मे आपके 'खासी पर्वत का नारी जीवन', 'खासी वीर तिरोत-सिंह' और खासी जाति से संबंधित कुछ संस्मरण एव निबन्ध प्रकाशित हुए थे।

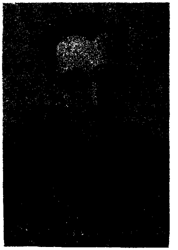
खेद है कि हिन्दी की इस मूक सेविका का असामयिक निधन सन् 1959 मे हो गया।

श्री आत्मस्वरूप शर्मा

श्री शर्माजी का जन्म 10 मार्च सन् 1899 को लाहौर (पाकिस्तान) मे हुआ था। आपके पिता डॉक्टर परशुराम शर्मा एक धर्मपरायण जन-सेवी व्यक्ति थे। डॉक्टर परशुराम फीरोजपुर मे प्रैक्टिस किया करते थे और इस कार्य-काल मे ही उनकी गणना नगर के प्रमुख जन-सेवी महानुभावो मे होती थी। सन् 1919 मे मार्शल-लॉ के दिनो मे जब 'जलियाँ वाला काण्ड' हुआ था तब से वे महामना मदनमोहन मालवीय के अनुरोध पर अपनी अच्छी-खासी चलती हुई प्रैक्टिस को छोडकर जन-सेवा के कार्यों मे रुचि लेने लगे थे। 'महात्मा गाधी के आह्वान पर उन्होने पंजाब मे काग्रेस का प्रचार करने का प्रशसनीय कार्य किया था और मालवीय जी ने 'सेवा समिति प्रयाग' मे कार्यकारी चिकित्सक के रूप मे भी उनकी सेवाएँ प्राप्त की थी। समिति के कर्णधार श्री हृदयनाथ कुजरू उनकी कार्य-पद्धति एव सेवा-भावना से इतने प्रभावित हुए थे कि उन्होने झूंसी (प्रयाग) स्थित अस्पताल का नाम ही 'परशुराम आतुरालय' कर दिया था। उनकी सेवा-भावना से प्रसन्न होकर उनको

सनातन धर्म के प्रचार के लिए त्रिनिदाद आदि द्वीपों मे इस आशय से भेजा गया था कि वे वहाँ के हिन्दुओ को ईसाई धर्म के प्रभाव से मुक्त करके उनमे हिन्दुत्व की भावनाओं को भर सकें।

आत्मस्वरूप जी मे भी अपने पिता की ज्येष्ठ सन्तान होने के कारण वे सब गुण पूर्णत समाविष्ट थे, जिनके कारण आप जन-सेवा के क्षेत्र मे कार्य करके अत्यन्त लोकप्रिय हुए थे। निरन्तर अस्वस्थ रहने के कारण आपकी शिक्षा-दीक्षा अधिक नही हो सकी थी, किन्तु फिर भी अपने अध्यवसाय से आपने पजाब की पत्रकारिता के क्षेत्र मे एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था। आपने उर्दू के 'प्रताप' दैनिक के अतिरिक्त 'गुरु घटाल' तथा 'पारस' आदि पत्रों मे विभिन्न रूपों मे कार्य करके पत्रकारिता का श्रीगणेश किया था और बाद मे 'पजाब केसरी' हिन्दी साप्ताहिक मे कई वर्ष तक सफलतापूर्वक कार्य-रत रहे थे। जब पजाब के सुप्रसिद्ध आर्य नेता महात्मा खुशहालचन्द 'खुरसन्द' (बाद मे महात्मा आनन्द स्वामी) ने अपने उर्दू 'मिलाप' की लोकप्रियता को देखकर 11 सितम्बर सन् 1929 को 'दैनिक हिन्दी मिलाप' का प्रकाशन प्रारम्भ किया तब आत्मस्वरूप शर्मा उर्दू के 'मिलाप' के सम्पादकीय विभाग मे कार्य करते थे। 'खुरसन्द' जी शर्माजी की कार्यक्षमता से इतने प्रभावित थे कि आपको ही 'हिन्दी मिलाप' का आदि सपादक बनाया गया।



जिन दिनो आत्मस्वरूप जी ने 'हिन्दी मिलाप' दैनिक के सम्पादन का भार अपने कन्धों पर उठाया था उन दिनो पजाब-जैसे ऊसर प्रदेश मे हिन्दी के बिरवे को रोपकर उसे अनेक आँधी-तूफानो मे भी सुरक्षित रखना भारी जोखम का काम था। किन्तु 'खुरसन्द' जी के प्रोत्साहन और अपनी अनन्य निष्ठा से आपने लगभग 12 वर्ष तक उस पत्र का सम्पादन अत्यन्त सफलतापूर्वक करके उसको जो लोकप्रियता प्रदान की, वह सर्व विदित है। अपने सम्पादन के दिनों मे शर्मा जी ने 'हिन्दी मिलाप' के माध्यम से पजाब मे हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार मे अनन्य योगदान देने के साथ-साथ वहाँ पर अनेक हिन्दी लेखक भी तैयार किये। यह आपकी कर्म-कुशलता का ही सुपरिणाम था कि अपने पत्र का कार्य करते हुए भी आप पजाब की अनेक समस्याओ के सम्बन्ध मे दूसरे हिन्दी पत्रो मे भी लेख आदि लिखते रहते थे। आपके ऐसे अनेक लेख हिन्दी की सुप्रसिद्ध पत्रिका 'सरस्वती' की पुरानी फाइलो मे देखे जा सकते है।

यद्यपि आपने पत्रकारिता के क्षेत्र मे 'हिन्दी मिलाप' के सम्पादन के माध्यम से अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था, किन्तु अपने स्वाभिमानी स्वभाव के कारण आप अधिक दिन तक 'हिन्दी मिलाप' मे न टिक सके और लगभग 12 वर्ष तक कार्य करने के उपरान्त आपको सन् 1942 मे वहाँ से पृथक् होना पड़ा। शर्माजी के उपरान्त दैनिक 'हिन्दी मिलाप' के सम्पादन का दायित्व दिल्ली से प्रकाशित होने वाले 'वीर अर्जुन' के सम्पादक श्री लेखराम बी० ए० ने सँभाला था। वहाँ से कार्य-मुक्त होने के उपरान्त आपने अँग्रेजी दैनिक 'ट्रिब्यून' (लाहौर) मे भी कुछ दिन तक कार्य किया था। जिन दिनों आप 'ट्रिब्यून' मे कार्य करते थे तब राणा जंगबहादुर सिंह उसके प्रधान सम्पादक थे। राणा जी शर्मा जी की कार्य-पद्धति तथा अध्यवसायिता से पूर्णत सन्तुष्ट थे और आपकी वे प्राय प्रशसा किया करते थे। भारत-विभाजन से पूर्व आपने 'भारत मे नाट्य-परम्परा' विषय पर एक शोधपूर्ण ग्रन्थ भी लिखा था, जो विभाजन की विभीषिका मे अग्नि को भेंट हो गया।

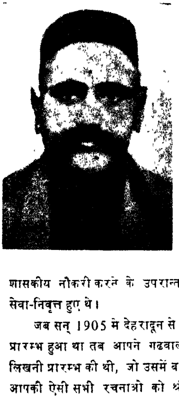
शर्मा जी विभाजन के उपरान्त भी इस धारणा से लाहौर मे ही रुके रहे कि यह थोडे दिन का तूफान है, फिर धीरे-धीरे स्थिति सामान्य हो जायगी। लेकिन आपके यह विचार कोरे स्वप्न ही सिद्ध हुए और 12 सितम्बर सन् 1947 को जब वे अपनी पूज्या माता श्रीमती लक्ष्मीदेवी, धर्मपत्नी मनोरंजना देवी और ज्येष्ठ पुत्री के साथ लाहौर से विदा होने वाले थे तब कुछ सशस्त्र पठानों ने आपके कृष्णनगर स्थित निवास पर धावा बोल दिया और माता, पत्नी तथा पुत्री के देखते-देखते आपको अपने साथ खीचकर ले गए, जिसके

बाद वे फिर वापिस अपने घर नही लौटे। शर्मा जी के पिता डॉ० परशुराम शर्मा ने पूर्वी पंजाब के तत्कालीन मुख्यमन्त्री डॉ० गोपीचन्द भार्गव और कांग्रेस के प्रमुख नेता श्री भीमसेन सच्चर के सहयोग से आपकी खूब खोज-बीन की, किन्तु वे उसमें सफल न हो सके। विश्वस्त सूत्रों के अनुसार पठानों ने पास के ही एक घर मे ले जाकर आपको गोली मार दी थी।

इस प्रकार पंजाब से प्रकाशित होने वाले सर्वप्रथम हिन्दी-दैनिक पत्र का यह आदि-सम्पादक भारत-विभाजन की विभीषिका का शिकार हो गया।

श्री आत्माराम गैरोला

श्री गैरोला का जन्म उत्तर प्रदेश के टिहरी-गढ़वाल क्षेत्र की बड्यारगड पट्टी के दालढूंग नामक ग्राम मे 25 अप्रैल सन् 1955 मे हुआ था। आपके पिता श्री वैजराम गैरोला पहले गढ़वाली तहसीलदार थे। श्री आत्माराम ने इण्ट्रेंस की परीक्षा सारे गढ़वाल क्षेत्र मे सबसे पहले उत्तीर्ण की थी और आप सरकारी अदालत मे सरिश्तेदार के पद पर नियुक्त हो गए थे। निरन्तर 32 वर्ष तक निष्ठापूर्वक शासकीय नौकरी करने के उपरान्त आप सन् 1908 मे सेवा-निवृत्त हुए थे।



जब सन् 1905 मे देहरादून से 'गढ़वाली' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ था तब आपने गढ़वाली भाषा मे कविताएँ लिखनी प्रारम्भ की थी, जो उसमें बराबर छपा करती थी। आपकी ऐसी सभी रचनाओं को श्री तारादत्त गैरोला ने सम्पादित करके 'गढ़वाली कवितावली' नाम से प्रकाशित किया था।

आपका निधन 22 जून सन् 1922 को पक्षाघात के कारण हुआ था।

डॉ० आदित्यनाथ झा

डॉक्टर झा का जन्म 18 अगस्त, सन् 1911 को वाराणसी मे हुआ था। उन दिनो आपके पिता महामहोपाध्याय डॉ० गंगानाथ झा वहाँ के 'गवर्नमेन्ट क्वीन्स कालेज' के प्राचार्य थे। जब वे प्रयाग विश्वविद्यालय के वाइस-चान्सलर होकर वहाँ आए तो आदित्यनाथ जी भी प्रयाग चले आए और आपने वहाँ से ही एम० ए० तथा एल-एल० बी० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। तदुपरान्त आपने सन् 1934 मे आई० सी० एस० की परीक्षा दी और उसमे सफलता प्राप्त की। जब आप प्रशासनिक प्रशिक्षण की विशेष ट्रेनिंग के लिए आक्सफोर्ड (लन्दन) गए तब वहाँ पर भी आप न केवल सफल रहे, प्रत्युत 'घुड़सवारी' के टैस्ट मे भी आपने सर्वाधिक अंक प्राप्त किए। आप अँग्रेजी, हिन्दी, मैथिली और संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे।

आई० सी० एस० की परीक्षा मे सफलता प्राप्त करने के उपरान्त आप सर्वप्रथम अक्तूबर सन् 1936 मे फैजाबाद मे नियुक्त किए गए। तीन वर्ष तक वहाँ 'ज्वाइंट मजिस्ट्रेट' रहने के उपरान्त आप कुछ दिन बनारस के 'सिटी मजिस्ट्रेट' भी रहे और फिर भारत सरकार के 'परराष्ट्र विभाग' मे आ गए। सन् 1954 मे फिर आप उत्तर प्रदेश चले गए और विभिन्न विभागो मे कार्य करते हुए सन् 1942 मे वहाँ के 'मुख्य सचिव' नियुक्त हुए। अपने इस कार्य-काल मे आपने अपनी प्रशासनिक दक्षता का अपूर्व परिचय दिया था। सन् 1958 मे आप 'वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय' के प्रथम उपकुलपति बनाकर वहाँ भेजे गए और आपके निरीक्षण मे ही उसकी आधार-शिला रखी गई थी। इसी बीच जब मसूरी मे भारत सरकार की ओर से 'शासन प्रशिक्षण संस्थान' की स्थापना हुई तो आप ही उसके 'प्रथम निदेशक' बनाए गए थे। सन् 1962 मे आप नई दिल्ली आ गए और

सनातन धर्म के प्रचार के लिए त्रिनिदाद आदि द्वीपो मे इस आशय से भेजा गया था कि वे वहाँ के हिन्दुओं को ईसाई धर्म के प्रभाव से मुक्त करके उनमे हिन्दुत्व की भावनाओं को भर सके।

आत्मस्वरूप जी मे भी अपने पिता की ज्येष्ठ सन्तान होने के कारण वे सब गुण पूर्णत समाविष्ट थे, जिनके कारण आप जन-सेवा के क्षेत्र मे कार्य करके अत्यन्त लोकप्रिय हुए थे। निरन्तर अस्वस्थ रहने के कारण आपकी शिक्षा-दीक्षा अधिक नही हो सकी थी, किन्तु फिर भी अपने अध्यवसाय से आपने पजाब की पत्रकारिता के क्षेत्र मे एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था। आपने उर्दू के 'प्रताप' दैनिक के अतिरिक्त 'गुरु घटाल' तथा 'पारस' आदि पत्रों मे विभिन्न रूपो मे कार्य करके पत्रकारिता का श्रीगणेश किया था और बाद मे 'पंजाब केसरी' हिन्दी साप्ताहिक मे कई वर्ष तक सफलतापूर्वक कार्य-रत रहे थे। जब पंजाब के सुप्रसिद्ध आर्य नेता महात्मा खुशहालचन्द 'खुरसन्द' (बाद मे महात्मा आनन्द स्वामी) ने अपने उर्दू 'मिलाप' की लोकप्रियता को देखकर 11 सितम्बर सन् 1929 को 'दैनिक हिन्दी मिलाप' का प्रकाशन प्रारम्भ किया तब आत्मस्वरूप शर्मा उर्दू के 'मिलाप' के सम्पादकीय विभाग मे कार्य करते थे।



'खुरसन्द' जी शर्माजी की कार्यक्षमता से इतने प्रभावित थे कि आपको ही 'हिन्दी मिलाप' का आदि सपादक बनाया गया। जिन दिनो आत्मस्वरूप जी ने 'हिन्दी मिलाप' दैनिक के सम्पादन का भार अपने कन्धो पर उठाया था उन दिनो पजाब-जैसे ऊसर प्रदेश मे हिन्दी के बिरवे को रोपकर उसे अनेक आँधी-तूफानो मे भी सुरक्षित रखना भारी जोखम का काम था। किन्तु 'खुरसन्द' जी के प्रोत्साहन और अपनी अनन्य निष्ठा से आपने लगभग 12 वर्ष तक उस पत्र का सम्पादन अत्यन्त सफलतापूर्वक करके उसको जो लोकप्रियता प्रदान की, वह सर्व विदित है। अपने सम्पादन के दिनों मे शर्मा जी ने 'हिन्दी मिलाप' के माध्यम से पजाब मे हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार मे अनन्य योगदान देने के साथ-साथ वहाँ पर अनेक हिन्दी लेखक भी तैयार किये। यह आपकी कर्म-कुशलता का ही सुपरिणाम था कि अपने पत्र का कार्य करते हुए भी आप पजाब की अनेक समस्याओ के सम्बन्ध मे दूसरे हिन्दी पत्रो मे भी लेख आदि लिखते रहते थे। आपके ऐसे अनेक लेख हिन्दी की सुप्रसिद्ध पत्रिका 'सरस्वती' की पुरानी फाइलों मे देखे जा सकते है।

यद्यपि आपने पत्रकारिता के क्षेत्र मे 'हिन्दी मिलाप' के सम्पादन के माध्यम से अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था, किन्तु अपने स्वाभिमानी स्वभाव के कारण आप अधिक दिन तक 'हिन्दी मिलाप' मे न टिक सके और लगभग 12 वर्ष तक कार्य करने के उपरान्त आपको सन् 1942 मे वहाँ से पृथक् होना पडा। शर्माजी के उपरान्त दैनिक 'हिन्दी मिलाप' के सम्पादन का दायित्व दिल्ली से प्रकाशित होने वाले 'वीर अर्जुन' के सम्पादक श्री लेखराम बी० ए० ने संभाला था। वहाँ से कार्य-मुक्त होने के उपरान्त आपने अँग्रेजी दैनिक 'ट्रिब्यून' (लाहौर) मे भी कुछ दिन तक कार्य किया था। जिन दिनो आप 'ट्रिब्यून' मे कार्य करते थे तब राणा जगबहादुर सिह उसके प्रधान सम्पादक थे। राणा जी शर्मा जी की कार्य-पद्धति तथा अध्यवसायिता से पूर्णत सन्तुष्ट थे और आपकी वे प्राय प्रशसा किया करते थे। भारत-विभाजन मे पूर्व आपने 'भारत मे नाट्य-परम्परा' विषय पर एक शोधपूर्ण ग्रन्थ भी लिखा था, जो विभाजन की विभीषिका में अग्नि को भेंट हो गया।

शर्मा जी विभाजन के उपरान्त भी इस धारणा से लाहौर मे ही रुके रहे कि यह थोडे दिन का तूफान है, फिर धीरे-धीरे स्थिति सामान्य हो जायगी। लेकिन आपके यह विचार कोरे स्वप्न ही सिद्ध हुए और 12 सितम्बर सन् 1947 को जब वे अपनी पूज्या माता श्रीमती लक्ष्मीदेवी, धर्मपत्नी मनोरजना देवी और ज्येष्ठ पुत्री के साथ लाहौर मे विदा होने वाले थे तब कुछ सशस्त्र पठानो ने आपके कृष्णनगर स्थित निवास पर धावा बोल दिया और माता, पत्नी तथा पुत्री के देखते-देखते आपको अपने साथ खीचकर ले गए, जिसके

बाद वे फिर वापिस अपने घर नहीं लौटे। शर्मा जी के पिता डॉ० परशुराम शर्मा ने पूर्वी पंजाब के तत्कालीन मुख्यमन्त्री डॉ० गोपीचन्द भार्गव और कांग्रेस के प्रमुख नेता श्री भीमसेन सच्चर के सहयोग से आपकी खूब खोज-बीन की, किन्तु वे उसमें सफल न हो सके। विश्वस्त सूत्रों के अनुसार पठानों ने पास के ही एक घर में ले जाकर आपको गोली मार दी थी।

इस प्रकार पंजाब में प्रकाशित होने वाले सर्वप्रथम हिन्दी-दैनिक पत्र का यह आदि-सम्पादक भारत-विभाजन की विभीषिका का शिकार हो गया।

श्री आत्माराम गैरोला

श्री गैरोला का जन्म उत्तर प्रदेश के टिहरी-गढ़वाल क्षेत्र की बड्यारगड पट्टी के दालढूंग नामक ग्राम में 25 अप्रैल सन् 1955 में हुआ था। आपके पिता श्री वैजराम गैरोला पहले गढ़वाली तहसीलदार थे। श्री आत्माराम ने इण्ट्रेंस की परीक्षा सारे गढ़वाल क्षेत्र में सबसे पहले उत्तीर्ण की थी और आप सरकारी अदालत में सरिश्तेदार के पद पर नियुक्त हो गए थे। निरन्तर 32 वर्ष तक निष्ठापूर्वक शासकीय नौकरी करने के उपरान्त आप सन् 1908 में सेवा-निवृत्त हुए थे।



जब सन् 1905 में देहरादून से 'गढ़वाली' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ था तब आपने गढ़वाली भाषा में कविताएँ लिखनी प्रारम्भ की थी, जो उसमें बराबर छपा करती थी। आपकी ऐसी सभी रचनाओं को श्री तारादत्त गैरोला ने सम्पादित करके 'गढ़वाली कवितावली' नाम से प्रकाशित किया था।

आपका निधन 22 जून सन् 1922 को पक्षाघात के कारण हुआ था।

डॉ० आदित्यनाथ झा

डॉक्टर झा का जन्म 18 अगस्त, सन् 1911 को वाराणसी में हुआ था। उन दिनों आपके पिता महामहोपाध्याय डॉ० गंगानाथ झा वहाँ के 'गवर्नमेन्ट क्वीन्स कालेज' के प्राचार्य थे। जब वे प्रयाग विश्वविद्यालय के वाइस-चान्सलर होकर वहाँ आए तो आदित्यनाथ जी भी प्रयाग चले आए और आपने वहाँ से ही एम० ए० तथा एल-एल० बी० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। तदुपरान्त आपने सन् 1934 में आई० सी० एस० की परीक्षा दी और उसमें सफलता प्राप्त की। जब आप प्रशासनिक प्रशिक्षण की विशेष ट्रेनिंग के लिए आक्सफोर्ड (लन्दन) गए तब वहाँ पर भी आप न केवल सफल रहे, प्रत्युत 'घुड़सवारी' के टैस्ट में भी आपने सर्वाधिक अंक प्राप्त किए। आप अँग्रेजी, हिन्दी, मैथिली और संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे।

आई० सी० एस० की परीक्षा में सफलता प्राप्त करने के उपरान्त आप सर्वप्रथम अक्तूबर सन् 1936 में फैजाबाद में नियुक्त किए गए। तीन वर्ष तक वहाँ 'ज्वाइंट मजिस्ट्रेट' रहने के उपरान्त आप कुछ दिन बनारस के 'सिटी मजिस्ट्रेट' भी रहे और फिर भारत सरकार के 'परराष्ट्र विभाग' में आ गए। सन् 1954 में फिर आप उत्तर प्रदेश चले गए और विभिन्न विभागों में कार्य करते हुए सन् 1942 में वहाँ के 'मुख्य सचिव' नियुक्त हुए। अपने इस कार्य-काल में आपने अपनी प्रशासनिक दक्षता का अपूर्व परिचय दिया था। सन् 1958 में आप 'वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय' के प्रथम उपकुलपति बनाकर वहाँ भेजे गए और आपके निरीक्षण में ही उसकी आधार-शिला रखी गई थी। इसी बीच जब मसूरी में भारत सरकार की ओर से 'शासन प्रशिक्षण संस्थान' की स्थापना हुई तो आप ही उसके 'प्रथम निदेशक' बनाए गए थे। सन् 1962 में आप नई दिल्ली आ गए और

केन्द्रीय सरकार के विभिन्न विभागो मे सचिव के रूप मे कार्य करते रहे। जिन दिनों श्रीमती इन्दिरा गांधी सूचना तथा प्रसारण मंत्री बनाई गई थी तब आप 'सूचना तथा प्रसारण मन्त्रालय' के सचिव थे। इसके उपरान्त आप सन् 1966 के मार्च मास मे दिल्ली के 'चीफ कमिश्नर' बनाए गए। बाद मे आपका यह पद 'उप-राज्यपाल' के रूप मे परिवर्तित हो गया और इसी पद पर रहते हुए आपने इस लोक से महा प्रयाण किया था।



आप अपने पाँच भाइयो मे सबसे छोटे थे। इनमे सबसे बडे भवनाथ झा, उनसे छोटे अमरनाथ झा, तीसरे शिवनाथ झा और चौथे विभूतिनाथ झा थे। आपके सभी भाई अपनी योग्यता के कारण विभिन्न उत्तरदायित्व पूर्ण पदो पर प्रतिष्ठित रहे थे। डॉ० अमरनाथ झा जहाँ 'प्रयाग विश्वविद्यालय' के 'उपकुलपति' रहे थे वहाँ वे 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के अबोहर-अधिवेशन के सभापति भी निर्वाचित हुए थे। आदित्यनाथ झा ने अपने परिवार की सांस्कारिकता के कारण जहाँ प्रशासन के क्षेत्र मे अपनी विशिष्ट पहचान बना ली थी वहाँ साहित्य, कला तथा सस्कृति के क्षेत्र मे भी आपकी अप्रतिम देन थी। आपकी कला, सस्कृति और साहित्य-सबधी विभिन्न रचनाएँ समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रहती थीं। आप जहाँ अँग्रेजी के उच्चकोटि के विद्वान् थे वहाँ सस्कृत, हिन्दी और मैथिली आदि भाषाओ पर भी आपका असाधारण अधिकार था। आप साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली की 'मैथिली परामर्शदात्री समिति' के भी सम्मानित सदस्य रहे थे। कला, सस्कृति और साहित्य-संबंधी आपकी सेवाओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए 2 अप्रैल सन् 1969 को आपको 'सस्कृति' नाम से एक विशाल अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया गया था। यह ग्रन्थ 3 भागो मे प्रकाशित हुआ था। और इसमें अँग्रेजी, संस्कृत, हिन्दी, उर्दू तथा पजाबी भाषाओं के अनेक मूर्धन्य विद्वानों के कला, संस्कृति और साहित्य से संबंधित शोधपूर्ण लेख प्रकाशित हुए थे।

आपका निधन 60 वर्ष की आयु में अचानक दिल का दौरा पडने के कारण सन् 1971 मे हुआ था।

श्री आदित्यराम भट्टाचार्य

श्री भट्टाचार्य का जन्म 23 नवम्बर सन् 1847 को बगाल के चौबीस परगना जिले के राजपुर नामक गाँव मे हुआ था। वैसे आपका परिवार इलाहाबाद मे मध्य प्रदेश से आया था। आपने अपने कार्य-काल के प्रारम्भिक दिनों मे इलाहाबाद मे 'हिन्दू समाज' तथा 'साहित्य समाज' की स्थापना की थी। जिन दिनो सन् 1872 मे आप प्रयाग के 'म्योर सेण्ट्रल कालेज' मे सस्कृत पढाया करते थे तब महा-मना मदनमोहन मालवीय आपके छात्र रहे थे। और सन् 1898 में आप काशी के 'सेण्ट्रल हिन्दू कालेज' के अध्यक्ष रहे थे। सन् 1897 मे आपको शासन की ओर से 'महामहोपाध्याय' की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया था। सन् 1898 मे आपने अपनी सारी सम्पत्ति 'हिन्दू विश्वविद्यालय काशी' को दान कर दी थी और सन् 1916 मे आप इस विश्वविद्यालय के 'प्रोवाइस चान्सलर' बने थे। आप स्वदेशी वस्त्रों के व्यवहार के कट्टर पक्षपाती थे।



आप जिन दिनों इलाहाबाद मे रहते थे तब आप हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक श्री बालकृष्ण भट्ट के सम्पर्क के कारण

हिन्दी के अनन्य भक्त बन गए थे। हिन्दी साहित्य की उन्नति की दिशा में आप सदा-सर्वदा उत्साह दिखाते रहते थे। उस समय हिन्दी भाषा की कोई अच्छी पत्रिका न होने की बात आपको दिन-रात खटकती रहती थी। जब प्रयाग से 'सरस्वती' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तब आपको उससे विशेष सन्तोष मिला था। आप 'नागरी प्रचारिणी सभा' के सक्रिय सदस्य भी रहे थे। आपने जहाँ अनेक हिन्दी-संस्थाओं की बहुविध सहायता की थी वहाँ 'शिवशंकर सस्कृत पाठशाला, इलाहाबाद' की स्थापना भी की थी। आप महामना मदन-मोहन मालवीय के गुरु थे। आपके प्रोत्साहन से ही मालवीय जी सन् 1886 में काग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन मे सम्मिलित हुए थे। भट्टाचार्य जी की पुस्तक 'वासुदेव रसायन' मे मालवीय जी ने आपकी जीवनी भी लिखकर प्रकाशित कराई थी। आपने सस्कृत का एक व्याकरण 'ऋजु पाठ' नाम से हिन्दी मे लिखा था। 'बीजगणित' के सबध मे भी आपकी एक पुस्तक उल्लेखनीय है। आप अपने जीवन के अतिम क्षण तक विभिन्न समाजोपयोगी कार्यों मे सलग्न रहे थे।

आपका निधन 18 अक्तूबर सन् 1921 को हुआ था।

स्वामी आनन्द भिक्षु सरस्वती

स्वामी आनन्द भिक्षु जी का जन्म उत्तर प्रदेश के फतेहपुर हसवा नामक नगर के एक कायस्थ परिवार मे सन् 1878 में हुआ था। आपका जन्म-नाम बलदेवप्रसाद श्रीवास्तव था। यद्यपि आपकी प्रारम्भिक शिक्षा उर्दू तथा फारसी मे हुई थी, किन्तु अपने स्वाध्याय के बल पर आपने हिन्दी का भी अच्छा ज्ञान अर्जित कर लिया था। आपको अपने छात्र-जीवन से ही कविताएँ और लेख आदि लिखने का शौक लग गया था। जब आप केवल 17 वर्ष के ही थे तब आपके अँग्रेजी तथा उर्दू भाषा मे लिखे गए अनेक लेख 'बिहार गार्जियन' आदि अनेक पत्रो में छपे थे। अपने पिता के देहावसान के उपरान्त आप 'रेलवे' की सर्विस मे चले गए थे और लगभग 10-12 वर्ष आप उसमे रहे थे।

सन् 1918 में आपने रेलवे की नौकरी को सर्वथा तिलांजलि देकर अपनी पत्नी श्रीमती कुन्तीदेवी के साथ वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण कर लिया और लोक-सेवा में लग गए। क्योंकि आप निःसन्तान थे अत आपने अपने भतीजे श्री हरिश्चन्द्र को विधिवत् गोद लेकर उसकी शिक्षा-दीक्षा गुरुकुल वृन्दावन मे कराई थी। उन दिनो गुरुकुल वृन्दावन के मुख्याधिष्ठाता मुन्शी नारायणप्रसाद (बाद मे महात्मा नारायण स्वामी) थे। उनके अनुरोध पर आप सपत्नीक गुरुकुल वृन्दावन मे चले गए और वहाँ पर आपने अवैतनिक रूप मे सहायक मुख्याधिष्ठाता का कार्य भी किया था।

गुरुकुल वृन्दावन मे निरन्तर 3 वर्ष तक निष्ठापूर्वक कार्य करने के उपरान्त उस सस्था की स्वामिनी सस्था आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के अधिकारियो से मतभेद हो जाने के कारण आप वहाँ से चले आए। उन्ही दिनो सन् 1920 मे जब मुन्शी नारायणप्रसाद सन्यास की दीक्षा लेकर 'महात्मा नारायण स्वामी' हो गए तब आपने भी सन्यास ग्रहण कर लिया और 'आनन्द भिक्षु' के नाम से अभिहित किये जाने लगे। गुरुकुल वृन्दावन को छोडकर आप वहाँ की ही प्रख्यात सस्था 'प्रेम महाविद्यालय' मे अवैतनिक सचिव हो गए। 'प्रेम महाविद्यालय' की स्थापना प्रख्यात क्रातिकारी नेता राजा महेन्द्रप्रताप ने की थी।

'प्रेम महाविद्यालय' मे रहते हुए आपका घनिष्ठ सपर्क हिन्दी के प्रख्यात लेखक श्री भगवानदास केला से हुआ, जो वृन्दावन से 'भारतीय ग्रन्थमाला' नाम से प्रकाशन तथा लेखन का कार्य करने के साथ-साथ संस्था के मासिक मुखपत्र 'प्रेम' का सम्पादन भी करते थे। श्री केला जी के सपर्क से आपका रुझान हिन्दी-लेखन की ओर हुआ और थोड़े से ही समय मे आपने इतनी दक्षता प्राप्त कर ली कि आप बहुत अच्छे गद्य-काव्य लिखने लगे। आपके ऐसे गद्य-



काव्यो का सकलन 'भावना' के नाम से प्रकाशित हुआ है। वहाँ पर रहते हुए आपने केला जी को 'प्रेम' के सम्पादन मे

भी सहयोग किया था।

जब महात्मा नारायण स्वामी 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली' के प्रधान निर्वाचित हुए तब आप उनके अनुरोध पर दिल्ली आ गए और उक्त सभा के 'कार्यालय सचिव' के रूप मे कार्य करने लगे। आप कई वर्ष तक सभा के सचिव भी रहे थे। सस्था के मत्री के रूप मे आपने सभा के मासिक पत्र 'सार्वदेशिक' का सम्पादन भी कई वर्ष तक सफलापूर्वक किया था। उन्ही दिनों आपकी दूसरी पुस्तक 'महकते फूल' का प्रकाशन भी हुआ था। आपकी 'हमारा प्राचीन गौरव' नामक रचना भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

अपनी 'भावना' तथा 'महकते फूल' नामक गम्भीर भाव-गद्य की रचनाओं के कारण आपका हिन्दी साहित्य मे अच्छा स्थान बन गया था। आपकी रचनाएँ उन दिनो 'सार्वदेशिक' तथा 'प्रेम' के अतिरिक्त 'महारथी' तथा 'चाँद' आदि कई प्रतिष्ठित पत्रो मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। सार्वदेशिक सभा के अतिरिक्त आपका 'अखिल भारतीय श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा', 'सन्यासी मण्डल', 'भारती मातृ-मन्दिर', 'अखिल भारतीय गोरक्षिणी समिनि', 'आर्यवीर दल', 'भारतीय ग्रन्थमाला' तथा 'कुन्ती हिन्दी मन्दिर' आदि अनेक सार्वजनिक सस्थाओ से गहरा सबध था।

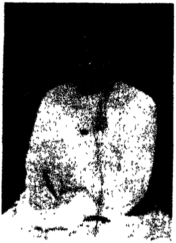
आपका देश के जिन अनेक साहित्यकारों से निकट का सपर्क रहा था उनमे सर्वश्री प्रेमचन्द, जैनेन्द्रकुमार, ऋषभचरण जैन, चतुरसेन शास्त्री, रामचन्द्र शर्मा महारथी, बनारसीदास चतुर्वेदी, इन्द्र विद्यावाचस्पनि तथा हरिशकर शर्मा आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपकी जिन बहुत-से नेताओ और पत्रकारो से घनिष्ठता थी उनमे सर्व श्री गणेशशकर विद्यार्थी, देशबन्धु गुप्ता, जे० एन० साहनी तथा शकर (प्रख्यात कार्टूनिस्ट) के नाम अग्रणी स्थान रखते है।

यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि अपने लेखन-काल के प्रारम्भिक दिनो मे हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार श्री जैनेन्द्रकुमार की रचनाएँ आपने जहाँ सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मासिक पत्र 'सार्वदेशिक' मे प्रकाशित की थी वहाँ उनके 'कल्याणी' नामक उपन्यास की नायिका श्रीमती कुन्तलाकुमारी से जैनेन्द्र जी का संपर्क भी आपके ही माध्यम से हुआ था।

आपका निधन सन् 1936 मे भरतपुर मे हुआ था।

श्री आनन्द मिश्र

श्री मिश्र का जन्म मध्यप्रदेश के लश्कर (ग्वालियर) नामक स्थान मे 5 फरवरी सन् 1933 को हुआ था। आपने सन् 1950 से लिखना प्रारम्भ किया था और आपका पहला काव्य-सकलन 'साधना' सन् 1952 मे प्रकाशित हुआ था। फिर सन् 1957 मे 'झाँसी की रानी', 'चन्देरी का जौहर' तथा 'प्रियदर्शी अशोक' नामक आपके तीन प्रबन्ध-काव्य प्रकाशित हुए और दूसरे कविता-सकलन 'हिमालय के आँसू' की पाडुलिपि पर सन् 1960 मे मध्यप्रदेश शासन साहित्य-परिषद्' द्वारा 2100 रुपये का 'देव



पुरस्कार' प्रदान किया गया था, जिसका प्रकाशन सन् 1961 मे हुआ था। इसके बाद भी आपका 'अकुर की आस्था' नामक एक और काव्य-सकलन प्रकाशित हुआ था।

अपनी पुरस्कृत कृति 'हिमालय के आँसू' के 'निवेदन' मे श्री मिश्र ने अपनी रचनाधर्मिता के संबध मे जो विचार प्रकट किए थे उनमे आपकी काव्य-साधना पर अच्छा प्रकाश पडता है। आपने लिखा था—"नही जानता कि मै अच्छी कविता लिख भी पाता हूँ या नही। इसके निर्णय का अधिकार भी लेखक का नही होता। मेरे आत्म-तोष का आधार मात्र इतना ही है कि मैंने अब तक जो कुछ भी लिखा है, उसका अधिकांश कर्तव्य जानकर लिखा है, सोद्देश्य लिखा है। यह ठीक है कि मैं अपनी 11 वर्षों की साहित्यिक यात्रा के विषय मे बहुत-कुछ कहना चाहता हूँ, पर यह कल की बात है। आज मेरा मौन रह जाना अधिक श्रेयस्कर है।"

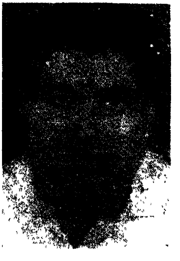
यह संतोष का विषय है कि आनन्दजी ने ऊपर की पक्तियों मे कलाकार की जिस ईमानदारी की घोषणा की

है अपने जीवन मे यथाशक्ति उसका निर्वाह भी आपने किया था। आपकी सम्पादन-पटुता का परिचय आपके द्वारा सम्पादित 'आस्था के शिखर' (1962 मे प्रकाशित) नामक उस काव्य-संकलन से मिल जाता है जिसमे आपने ग्वालियर के कवियों की रचनाएँ प्रस्तुत की थीं। अपने इस संकलन के सम्पादकीय वक्तव्य में आपने यह ठीक ही कहा था—"आस्था के शिखर अपनी तरह का अनूठा प्रयास है। नगर के सास्कृतिक मथन का नवनीत इस कृति के रूप मे काव्य-प्रेमियों के हाथो सौपते हुए मैं अपने-आपको कृतार्थ अनुभव करता हूँ। मुझे पूरी-पूरी आशा है कि हिन्दी-ससार इसे समुचित समादर देगा।"

दुर्भाग्यवश आपका 24 नवम्बर सन् 1974 को असामयिक निधन हो गया।

श्री आनन्दमोहन अवस्थी

श्री अवस्थी का जन्म मध्य प्रदेश के जबलपुर नगर के एक साहित्य-प्रेमी परिवार मे 6 नवम्बर सन् 1928 को हुआ था। आपके पिता श्री सूरजप्रसाद अवस्थी स्वय भी बहुत अच्छे लेखक और शिक्षा-शास्त्री थे। अपने मस्तमौला स्वभाव के कारण आप जबलपुर के साहित्य-प्रेमियों मे बहुत लोकप्रिय थे और नगर की प्रत्येक साहित्यिक गतिविधि से तन्मयतापूर्वक जुडे रहते थे। अपनी



शिक्षा की समाप्ति के उपरान्त आप पहले-पहल 'जयहिन्द' (दैनिक) के नगर संवाददाता बने और बाद मे सन् 1948-1949 मे 'हितकारिणी' (मासिक) के प्रधान सम्पादक भी रहे थे। कुछ समय तक आपने जबलपुर से 'कहानी' नामक मासिक पत्र का सम्पादन-प्रकाशन भी किया था और उसके 4-5 अक प्रकाशित भी हुए थे।

अपने स्वाभिमानी स्वभाव के कारण गरीबी और मुफलिसी को आपने ऐसा अपनाया हुआ था मानो आपका उनसे पूर्व-जन्म का ही सबध हो। अन्याय से आप कभी समझौता नही करते थे और मानवीय गुणो के प्रति आपकी पूर्ण आस्था थी। लेखन के क्षेत्र मे आपको 'लघुकथा' शैली का जन्मदाता कहा जाता है। आपकी ऐसी रचनाओं का सग्रह 'बन्धनों की रक्षा' नाम से सन् 1950 मे प्रकाशित भी हो चुका है। आप अनेक वर्ष तक 'नवभारत टाइम्स' के बम्बई सस्करण मे सहकारी सम्पादक भी रहे थे। बम्बई से लौटकर आपने जबलपुर से 'खबरें' नामक एक सान्ध्य दैनिक का सम्पादन भी किया था।

आपका निधन 3 अगस्त सन् 1974 को रक्षा बन्धन के दिन प्रात 'चाय-सेवन' के समय हुआ था।

श्री आनन्दीप्रसाद मिश्र 'निर्द्वन्द्व'

श्री निर्द्वन्द्व का जन्म सन् 1901 मे उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद जनपद के अगवानपुर नामक स्थान मे हुआ था। आप हिन्दी के प्रख्यात लेखक तथा पत्रकार थे। व्यवसाय से आप 'जिला विद्यालय निरीक्षक' थे, किन्तु लेखन की दिशा मे आपकी अभूतपूर्व गति थी।

आप हिन्दी के सुलेखक होने के साथ-साथ सस्कृत, उर्दू तथा रूसी आदि कई भाषाओ का भी गभीर ज्ञान रखते थे। आपने अनेक वर्ष तक मुरादाबाद से 'ब्राह्मण पत्रिका' का सम्पादन भी अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था।

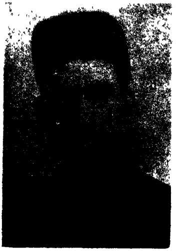
आपके लेख तथा कहानियाँ 'प्रतिभा', 'प्रभा', 'प्रताप', 'मनोरमा', 'माया' तथा 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' आदि अनेक प्रमुख हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रहती थी। आपके द्वारा अनूदित रूसी कहानियो का एक अनुवाद सन् 1940 मे माया प्रेस प्रयाग से प्रकाशित हुआ था। इसके अतिरिक्त आपने 'विद्या विनोदिनी प्रवेशिका' नामक एक पाठ्य-पुस्तक की रचना भी की थी, जो अनेक वर्ष

तक महिला विद्यापीठ प्रयाग के पाठ्य-क्रम मे रही थी।

आपका निधन 19 नवम्बर सन् 1956 को मुरादाबाद मे हुआ था।

श्री आनन्दीप्रसाद श्रीवास्तव

श्री श्रीवास्तव का जन्म सन् 1899 मे उत्तर प्रदेश के फतेहपुर नामक नगर मे हुआ था। प्रयाग विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा ससम्मान उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप प्रयाग के के० पी०स्कूल मे अध्यापक हो गए थे। उन दिनों छायावादी काव्य-धारा के प्रमुख कवियों मे आपका अन्यतम स्थान था। आपने बहुत थोडे ही काल मे अपनी रचनाओं के माध्यम से जो ख्याति अर्जित कर ली थी, वह आपकी प्रतिभा की द्योतक है।



आप जहाँ उच्च कोटि के कवि और सफल प्राध्यापक थे वहाँ पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपकी देन सर्वथा अभिनन्दनीय कही जा सकती है। आपने अनेक वर्ष तक 'चाँद' के सम्पादकीय विभाग मे सफलतापूर्वक कार्य किया था।

आपकी कविताएँ वैसे तो मुख्य रूप से 'चाँद' मे ही प्रकाशित होती थीं, किन्तु 'विशाल भारत', 'माधुरी', 'सरस्वती' और 'सुधा' आदि अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं मे भी आपकी रचनाएँ सादर प्रकाशित होती थी। आप जहाँ उच्चकोटि के कवि थे वहाँ उपन्यास और नाटक-लेखन मे भी आपने अपनी प्रतिभा का प्रचुर परिचय दिया था। बालोपयोगी रचनाओं के क्षेत्र मे भी आपकी सेवाएँ सर्वथा अविस्मरणीय कही जा सकती हैं। आपकी प्रकाशित रचनाओं मे 'उषा काल' (1927), 'नयन के प्रति' (1929), 'अछूत' (1930), 'मकरन्द' (1933), 'कुरबानी' (1953), 'झाँसी' (1953) 'शंखनाद', 'आत्मत्याग', 'आत्मघात', 'अबलाओं का बल' और 'लखपति कैसे हुआ ?' आदि विशेष उल्लेखनीय है।

आपके निधन की कोई निश्चित तिथि नहीं है। सुना जाता है कि एक दिन किसी बात पर नाराज होकर आप घर से निकल गए, तब से यह पता ही नही चला कि आप कहाँ है ? आपको अब मृत ही समझ लिया गया है।

श्री आनन्दीलाल जैन शास्त्री

आपका जन्म जयपुर (राजस्थान) मे सन् 1913 मे हुआ था। जयपुर के दिगम्बर जैन सस्कृत कालेज मे विधिवत् अध्ययन करके आपने शास्त्री और न्याय-काव्य-तीर्थ की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। इसके अतिरिक्त आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'साहित्यरत्न' परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी।

अपने अध्ययन की समाप्ति के उपरान्त आपने अध्यापन का कार्य प्रारम्भ कर दिया था। अपने छात्र-जीवन ही से आपकी रुचि लेख तथा कविताएँ आदि लिखने की ओर थी। आपकी रचनाएँ समय-समय पर तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रहती थी।

आपका निधन केवल 30 वर्ष की आयु मे सन् 1943 मे हुआ था।

डॉ० आर० डी० विद्यार्थी

श्री विद्यार्थी जी का जन्म 10 मार्च सन् 1913 को उत्तर-प्रदेश के प्रयाग नामक नगर के 'भारती भवन' (मालवीय नगर) मोहल्ले में हुआ था। इनका मूल नाम रामदास था और लिखने मे आपने उक्त नाम को अपनाया हुआ था। कायस्थ पाठशाला कालेज में इंटर तक की शिक्षा प्राप्त करने

के उपरांत आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से 'जीव विज्ञान' मे एम० ए० की सर्वोच्च उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् एल० टी० करके पहले-पहल लखनऊ के 'कान्य-कुब्ज कालेज' मे अध्यापन प्रारंभ किया और लगभग 6 वर्ष तक उसमें कार्य करने के उपरांत आप वहाँ के 'मार्टिनियर कालेज' में विज्ञान के प्राध्यापक हो गए। आपने इस कालेज मे सन् 1947 में कार्य प्रारंभ किया था और जीवन-भर उसीमें सेवा-रत रहे। आपने अपने शिक्षक-जीवन में जीव विज्ञान-जैसे विषय को छात्रों को समझाने की दिशा में जिस पद्धति को अपनाया था, उससे आपकी लोकप्रियता विज्ञान के क्षेत्र में दिनानुदिन बढती ही गई थी।

आपने विज्ञान के क्षेत्र में अपनी अनन्य कर्मठता से न केवल एक शिक्षक के रूप मे अच्छी ख्याति अर्जित की थी, प्रत्युत लेखन की दिशा में भी अपनी योग्यता का प्रदर्शन किया था। विज्ञान के प्रति आपकी रुचि अपने छात्र-जीवन से ही हो गई थी। जब आप प्रयाग के के० पी० इंटर कालेज मे पढा करते थे तब वहाँ आपके शिक्षक प्रो० गोपालस्वरूप भार्गव थे। भार्गव जी का संबध उन दिनो जहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन से था वहाँ वे प्रयाग की 'विज्ञान परिषद्'-जैसी सस्था से भी निकटता से



जुडे हुए थे। 'मम्मेलन' का लक्ष्य जहाँ हिन्दी का प्रचार करना था वहाँ 'विज्ञान परिषद्' हिन्दी में 'विज्ञान' संबधी साहित्य की रचना के प्रोत्साहन के निमित्त स्थापित की गई थी। प्रो० भार्गव के प्रोत्साहन से श्री विद्यार्थी जी का जो झुकाव हिन्दी-लेखन की ओर हुआ था, कालांतर मे वह इतना विकसित हुआ कि आपने हिन्दी के विज्ञान-संबधी साहित्य के लेखकों में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया और आपने हिन्दी मे जीव-विज्ञान-सबंधी पुस्तकों के निर्माण की दिशा में अत्यन्त उल्लेखनीय कार्य किया। हाईस्कूल व इंटर की कक्षाओं के छात्रों को जीव-विज्ञान-संबंधी जानकारी देने की दृष्टि से आपने अनेक पुस्तकों की रचना की। आपकी ऐसी पाठ्य-पुस्तकें इंडियन प्रेस, प्रयाग और श्रीराम मेहरा एण्ड संस, आगरा की ओर से प्रकाशित हुई थी।

वैज्ञानिक पत्रकारिता के क्षेत्र में भी आपकी देन कम महत्त्व नहीं रखती। आपने जहाँ विज्ञान परिषद् के मासिक हिन्दी पत्र 'विज्ञान' के द्वारा अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा से साहित्य की सेवा की वहाँ श्रीराम मेहरा एण्ड संस, आगरा की ओर से प्रकाशित होने वाले विज्ञान-संबंधी हिन्दी मासिक पत्र 'विज्ञान लोक' का अनेक वर्ष तक सफलतापूर्वक सपादन भी किया था। इसके उपरांत आपने इडियन प्रेस, प्रयाग की ओर से 'विज्ञान जगत्' नामक हिन्दी मासिक का प्रकाशन प्रारभ कराया और अनेक वर्ष तक उसका सफलतापूर्वक संपादन किया। केन्द्रीय सरकार की ओर से प्रकाशित होने वाली 'विज्ञान प्रगति' मे भी आपके लेख आदि प्रकाशित होते रहते थे। हिन्दी मे 'विज्ञान'-जैसे विषय को सरल और रोचक भाषा तथा प्रवाहपूर्ण शैली में प्रस्तुत करने में जो सफलता विद्यार्थी जी ने प्राप्त की थी, वह बहुत कम लोगों को सुलभ होती है।

आपका निधन 14 जनवरी सन् 1979 को हुआ था।

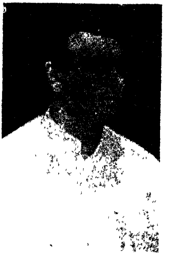
आचार्य इन्द्रनारायण गुर्टू

आचार्य गुर्टू का जन्म 10 दिसबर सन् 1912 को उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जनपद के बहुती गाँव (पोस्ट श्रीनिवास-धाम) नामक ग्राम में हुआ था। क्योंकि यह स्थान इलाहाबाद के अधिक समीप है, अत: आपकी शिक्षा-दीक्षा भी प्रयाग के सास्कृतिक वातावरण मे ही हुई थी। प्रख्यात सत श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी के आप सहपाठी रहे थे। आप जब विद्याध्ययन ही कर रहे थे कि महात्मा गाधी के आह्वान पर आपने घर-बार छोड़कर 'राष्ट्र-सेवा' मे पूर्णतः लग जाने का सकल्प कर लिया था। फलत: आपने पैदल ही प्रयाग से गगोत्री तक की यात्रा करके गांधीजी के संदेश का घर-घर मे प्रचार किया। अपनी इस यात्रा में आपने जहाँ आध्यात्मिक सपदा का अर्जन

किया वहाँ राष्ट्रीय चेतना से भी अपने व्यक्तित्व को उजागर किया।

प्रारभ मे देश के नव निर्माण का सकल्प लेकर आपने प्रगतिशील युवकों के सहयोग से 'युवक मित्र' नामक एक पत्र का संपादन भी किया था, किन्तु बाद मे प्रौढ़ चिन्तन और मनन की दार्शनिक वृत्ति के विकसित होने पर आपने आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत धारण करके सांस्कृतिक कार्य करने का निश्चय किया और स्थायी रूप से वृन्दावन जाकर निम्बार्क सप्रदाय मे दीक्षित होकर 'इन्द्र ब्रह्मचारी' के रूप मे पूर्णत लेखन और प्रकाशन मे लग गए। वहाँ से आपने अनेक वर्ष तक जहाँ 'श्रेय' नामक सास्कृतिक तथा धार्मिक मासिक पत्र का सपादन किया वहाँ 'विष्णु ग्रथमाला' के नाम से अनेक सुरुचिपूर्ण तथा विचारोत्तेजक पुस्तकों का प्रणयन और प्रकाशन भी किया। आपकी भावनात्मक गद्य की पहली पुस्तक 'नि.श्वास' थी, जिसका अँग्रेजी अनुवाद प्रख्यात समीक्षक डॉ० नगेन्द्र ने उस समय किया था जब वे सन् 1934 मे आगरा के सेण्ट जॉन्स कालेज मे पढ़ा करते थे। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि आचार्य गुर्टू जी ने उन्हें उस समय पढ़ाया भी था जब वे अनूपशहर मे कक्षा 9 के छात्र थे।

आपने लगभग डेढ दशक तक वृन्दावन मे रहकर धुआँ-धार लेखन किया। आपके द्वारा लिखित 'शिव पुराण' के पद्यानुवाद के अतिरिक्त 'प्रेम दर्शन मीमासा', 'श्रीकृष्ण लीला रहस्य', 'एकान्त में', 'भावना परिमल', 'पूर्वाग्रह', 'विचार वीथी', 'महापुरुषो के विचार', 'जेम्स एलन के विचार', 'कपिल मुनि' तथा 'जीवन विज्ञान' आदि प्रमुख है। जिन दिनों आप वृन्दावन मे 'इन्द्र ब्रह्मचारी' के रूप मे वहाँ की कुज-गलियो में राधा-कृष्ण के एक भावुक भक्त के रूप में साहित्य-सर्जना मे संलग्न थे उन्ही दिनो 'गायत्री देवी' नामक एक कश्मीरी वृद्धा महिला ने आपको 'दत्तक पुत्र' के रूप मे अपना लिया और आप 'इन्द्र नारायण पाठक' से 'इन्द्रनारायण गुर्टू' हो गए। उन्ही के अनुरोध से आपने 'विवाह बधन' में बँधना स्वीकार किया और आपका विवाह 30 नवम्बर सन् 1940 को बिजनौर-निवासी वैद्य वैशम्पायन की सुपुत्री 'शचीरानी' से हो गया, जो आज 'शचीरानी गुर्टू' के नाम से हिन्दी की उत्कृष्ट लेखिका के रूप मे जानी जाती है।



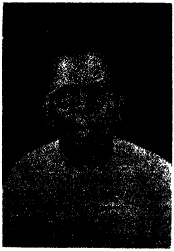
हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपकी देन सर्वथा अनुपम और महत्त्वपूर्ण थी। 'वृन्दावन' से प्रकाशित होने वाले 'श्रेय'-जैसे आध्यात्मिक पत्र का सपादन करने के अतिरिक्त विवाहोपरात आप सेठ रामकृष्ण डालमिया के निमत्रण पर दिल्ली आ गए और अनेक वर्ष तक उनके द्वारा सचालित 'नवयुग' साप्ताहिक का सपादन किया। जिन दिनो आपने 'नवयुग' साप्ताहिक के सम्पादन का दायित्व ग्रहण किया था उन दिनो श्री महावीर अधिकारी और श्री गोपालकृष्ण कौल आपके सहकारी थे। श्री अधिकारीजी आजकल बम्बई से प्रकाशित होने वाले 'करट' नामक हिन्दी साप्ताहिक के सम्पादक है। बाद मे यही 'नवयुग' 'धर्मयुग' के रूप मे बम्बई से प्रकाशित होने लगा। 'नवयुग' मे आने से पूर्व आपने 'श्रेय' के अतिरिक्त 'युवक मित्र', 'देश बन्धु', 'निर्भय', 'विश्वधर्म' और 'स्वास्थ्य लतिका' नामक पत्र-पत्रिकाओं का सपादन भी किया था। जब 'नवयुग' को बम्बई से प्रकाशित करने की योजना बनी तब आपने बम्बई न जाकर दिल्ली मे ही रहने का निश्चय किया और आप भारत सरकार के श्रम मत्रालय की ओर से प्रकाशित 'मजदूर जगत्' का सपादन करने लगे। बाद मे आपने कुछ दिन तक भारत सरकार के सचार मत्रालय के पत्र 'डाक तार' का सपादन भी किया था।

फिर आप स्वेच्छा से इस कार्य से विरत होकर 'सन्त साहित्य शोध केन्द्र' के अवैतनिक निदेशक हो गए और आपने 'हिन्दी के जनपद सन्त', 'टैगोर अभिनन्दन ग्रन्थ' तथा 'जगजीवनराम अभिनन्दन ग्रन्थ' आदि कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का सफल सपादन भी किया। इसके साथ-साथ आपने अनेक धार्मिक तथा आध्यात्मिक ग्रन्थों का हिन्दी रूपातर भी किया था। आप पिछले कई वर्ष से अस्वस्थ चले आ रहे थे कि सहसा 14 अगस्त सन् 1981 को आपका शरीरांत हो गया।

श्री इन्द्रलाल शास्त्री विद्यालंकार

श्री शास्त्री जी का जन्म 21 सितम्बर सन् 1897 को राजस्थान के जयपुर नगर मे हुआ था। जब आप केवल 2 वर्ष के थे तब आपके पिता श्री मालीलाल जी का देहावसान हो गया था और आपकी माता भी उस समय आपको असहाय छोड़कर परलोक प्रयाण कर गई थीं जब आप केवल 12 वर्ष के ही थे। माता-पिता के असमय में चले जाने के कारण आपको अनेक विषम परिस्थितियो का सामना करना पडा था। आपने प्राइवेट ट्यूशन आदि करके अपने अध्ययन का क्रम चलाया था और ऐसी अवस्था मे ही 'शास्त्री' एव 'साहित्याचार्य' की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करके आप 'विद्यालकार', 'धर्म दिवाकर' तथा 'धर्मवीर' आदि सम्मानोपाधियो से विभूषित हुए थे।

शास्त्री की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपकी ख्याति धीरे-धीरे जैन-समाज मे इतनी फैल गई कि आपको 'जैन सस्कृत कालेज जयपुर' मे अध्यापक नियुक्त कर दिया गया और फिर आप अनेक वर्ष तक 'जैन सस्कृत महाविद्यालय मथुरा' के प्रधानाचार्य भी रहे। इसी बीच आपके लेख तथा कविताएँ देश की अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होने लगी थी और जैन समाज मे आपकी विद्वत्ता की धाक पूरी तरह जम गई थी। परिणामस्वरूप आपको बम्बई के 'संस्कृत कालेज' का आचार्य बनाकर वहाँ बुला लिया गया और वहाँ पर ही आपने 'सत्यवादी' नामक मासिक पत्र के सम्पादन के अतिरिक्त 'जिनदत्त चरित्र' और 'चरित्र सार' नामक महत्त्वपूर्ण जैन-ग्रंथो का अनुवाद एवं सम्पादन भी किया।



कलकत्ता के जैन-समाज के अनुरोध पर सन् 1927 मे आप वहाँ चले गए और वहाँ पर कई वर्ष तक 'खण्डेलवाल जैन हितेच्छु' नामक पाक्षिक पत्र का सम्पादन किया। इसके साथ आप दिल्ली से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक 'जैन गजट' का सम्पादन भी किया करते थे। इसके उपरान्त आप जब सेठ भागचन्द सोनी की फर्म मे काम करने के उद्देश्य से कलकत्ता छोड़कर जयपुर चले आए तब आपने जयपुर राज्य के 'देव स्थान विभाग' मे भी कुछ वर्ष तक उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर कार्य किया था। उन दिनो आप जैनेतर समाज मे भी अत्यन्त लोकप्रिय हो गए थे। जयपुर के सुप्रसिद्ध राजकीय मन्दिर 'गोविन्ददेव जी' एवं 'बालानद-जी' का प्रबन्ध भी उन दिनो आप ही की देख-रेख में होता था। इन मदिरो के सचालन के प्रसग मे आपकी धार्मिक उदारता का परिचय वहाँ की जनता को मिला था। इसी उपलक्ष मे सन् 1940 मे आपका 'भारत धर्म महा मण्डल काशी' की ओर से अभिनन्दन भी किया गया था।

शास्त्री जी जहाँ एक कुशल अध्यापक, कर्मठ पत्रकार और सफल प्रबन्धक थे वहाँ आपकी प्रतिभा का पूर्ण परिचय लेखक के रूप मे भी साहित्य-जगत् को मिला था। आपकी ऐसी महत्त्वपूर्ण रचनाओ मे 'वर्ण विज्ञान', 'तत्त्वालोक', 'आत्म वैभव', 'महावीर देशना', 'भारतीय सस्कृति का मूल रूप', 'जैन मन्दिर और हरिजन', 'धर्म सोपान', 'अहिंसा तत्त्व विवेक मजूषा', 'दिगम्बर जैन साधु की चर्या', 'जैन धर्म सर्वथा स्वतन्त्र धर्म है', 'श्रेयो मार्ग', 'जैन धर्म और जाति', 'पुण्य धर्म मीमासा', 'भावलिगी द्रव्य लिगी मुनि का स्वरूप', 'साम्यवाद से मोर्चा', 'भारतीय सस्कृति का मूल रूप', 'पशु-वध सबसे बड़ा देशद्रोह', 'मन्दिर-प्रवेश मीमासा', 'रात्रि-भोजन', 'शान्ति पीयूष-धारा' तथा 'भक्ति कुसुम सचय' आदि प्रमुख रूप से उल्लेख्य है। सस्कृत तथा हिन्दी मे समान रूप से साधिकार लिखते रहने के साथ-साथ आप उच्चकोटि के वक्ता भी थे। आपकी साहित्य-सेवाओ के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हुए एक बार महामहोपाध्याय श्री गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी ने यह ठीक ही कहा था—"पडित इन्द्रलाल जी से मेरा काफी पुराना सम्बन्ध है। आप वास्तव मे एक उच्चकोटि के विद्वान्, प्रभावशाली वक्ता एव महान् साहित्य-साधक है। सस्कृत एव हिन्दी के प्रचार मे आपका महत्त्वपूर्ण योग रहा है।"

आपका देहावसान सन् 1972 में हुआ था।

श्री इब्राहीम शरीफ

श्री शरीफ का जन्म आन्ध्रप्रदेश के कडपा जिले के राजमपेट तालुके के अन्तर्गत नन्दलूर नामक ग्राम मे 27 दिसम्बर सन् 1939 को हुआ था। आपने सन् 1964 मे विश्वभारती विश्वविद्यालय शान्तिनिकेतन से प्रथम श्रेणी मे बी०ए०(आनर्स)की परीक्षा उत्तीर्ण करके सन् 1965-66 मे दिल्ली विश्वविद्यालय में एम०ए० (हिन्दी) की उपाधि ससम्मान प्राप्त की थी। इन उच्चतम परीक्षाओ के साथ-साथ आपने पजाब विश्वविद्यालय की 'हिन्दी प्रभाकर', दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास की 'राष्ट्रभाषा विशारद' तथा केन्द्रीय हिन्दी सस्थान, आगरा की 'शिक्षण कला प्रवीण' आदि अनेक हिन्दी-परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण की थी। आपने 'हिन्दी-साहित्य पर भारत-विभाजन का प्रभाव' विषय पर एम० ए० की परीक्षा मे एक 'लघु शोध निबन्ध' भी प्रस्तुत किया था।



आप तेलुगु के अतिरिक्त हिन्दी, उर्दू, मलयालम और बंगला आदि अनेक भारतीय भाषाओं के मर्मज्ञ विद्वान् होने के साथ-साथ हिन्दी के अच्छे कथा-लेखक थे। आपकी कहानियाँ 'कल्पना' (हैदराबाद), 'धर्मयुग' (बम्बई), 'माध्यम' (प्रयाग), 'सारिका' (बम्बई) तथा 'सरिता' (दिल्ली) आदि अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित होती रहती थी। आपके अनेक समीक्षात्मक लेख 'रचना', 'रक्ताभ', 'संग्रह' तथा 'जन साहित्य' आदि पत्रो मे देखने को मिल जाते है।

आपकी पुस्तकाकार प्रकाशित कृतियों में 'अँधेरे के साथ' (उपन्यास), 'कई सूरजों के बीच' तथा 'जमीन का आखिरी टुकड़ा' (कहानी-सकलन) आदि प्रमुख हैं। इनमे से आपकी 'कई सूरजों के बीच' नामक कथा-कृति उत्तर प्रदेश तथा 'यशपाल स्मारक पुरस्कार' द्वारा सम्मानित एवं पुरस्कृत हो चुकी है। आपकी अनेक कहानियों का जहाँ तमिल, तेलुगु, मराठी और पंजाबी भाषाओं में अनुवाद हुआ था वहाँ आपका 'अँधेरे के साथ' नामक उपन्यास भी मलयालम में अनूदित हुआ था।

आपने जहाँ कुशल कहानी-लेखक और समीक्षक के रूप में अच्छी ख्याति प्राप्त की थी वहाँ शिक्षक के रूप मे आपकी सेवाएँ कम महत्त्व नही रखती। सन् 1967 में आप तिरूवलला (केरल) के 'हिन्दी प्रशिक्षण विद्यालय' के लगभग एक वर्ष तक आचार्य रहने के साथ-साथ सन् 1968 से सन् 1971 तक सर सैयद कालेज तलिपरम्पा (केरल) मे हिन्दी-प्राध्यापक भी रहे थे। आपने सन् 1972 से सन् 1977 तक 'हिन्दी विकास समिति' (मद्रास-दिल्ली) की ओर से प्रकाशित होने वाले 'विश्व ज्ञान सहिता' नामक कोश मे सम्पादक के रूप में भी कार्य किया था। यह कोश दक्षिण भारत के प्रख्यात हिन्दी-सेवी श्री मोत्तूरि सत्यनारायण के निरीक्षण में तैयार हो रहा था और सन् 1974 मे इसका प्रथम भाग प्रकाशित भी हो चुका है।

आपने मद्रास मे रहते हुए 'समान्तर लेखक सघ' नामक एक लेखकीय सहयोगी प्रकाशन संस्था का सचालन भी किया था और इस सघ के तत्वावधान मे 2-3 पुस्तकें भी प्रकाशित की थी। आपको अपनी साहित्यिक गतिविधियो के सचालन मे तमिल तथा हिन्दी के विद्वान् लेखक श्री र० शौरिराजन का भी अत्यन्त सक्रिय सहयोग और प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था। उक्त प्रकाशन सस्थान के अतिरिक्त आपने मद्रास मे 'प्रगतिशील साहित्यकार परिषद्', 'कला भारती' तथा 'बाल विज्ञान साहित्य माला' नामक अनेक सस्थाओ के द्वारा भी अपनी साहित्यिक तथा सास्कृतिक प्रवृत्तियों को चालू रखा था।

आपका निधन 27 अप्रैल सन् 1977 को मद्रास मे हुआ था।

श्री इरफान मोहम्मद नातिक 'मालवी'

श्री नातिक 'मालवी' का जन्म मध्यप्रदेश के विदिशा जनपद

के सिरोंज नामक स्थान में 30 जनवरी सन् 1893 को हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा यद्यपि उर्दू तथा फारसी के पुराने वातावरण मे ही हुई थी, किन्तु इन दोनो भाषाओं पर समान अधिकार रखने के साथ-साथ आपने हिन्दी का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

आप जहाँ उर्दू में सफल कविताएँ किया करते थे वहाँ हिन्दी में भी आपकी कुछ रचनाएँ देखने को मिलती हैं। 'सिरोंज' के हिन्दी-कवियों की कविताओं का जो संकलन 'रिमझिम' नाम से प्रकाशित हुआ है उसमें आपकी 'पंछी से' नामक जो हिन्दी-रचना प्रकाशित हुई है उसमे आपकी गहन पीडा और दार्शनिक वृत्ति का पूर्ण परिपाक परिलक्षित होता है। इस कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

निशि अंधियारा जी घबराए
नींद बुलाए, नींद न आए
तुम भी चुप हो, मैं भी चुप हूँ,
कैसे कटे यह रात बताओ।
पंछी कोई गीत सुनाओ।
जिन बोलों मे जग जगमग हो
जिनको सुनकर मन लहराए
भूल जाऊँ मैं अपने मन को,
ऐसा कोई राग सुनाओ।
पंछी कोई गीत सुनाओ।

नातिक साहब का स्थान मध्यप्रदेश के उर्दू कवियों मे प्रथम कोटि का था। आपने हिन्दी के विख्यात ग्रन्थ 'बिहारी सतसई' का 'उर्दू-काव्यानुवाद' भी किया था। यह दुर्भाग्य का विषय है कि वह अभी तक अप्रकाशित ही है। आपके निधन के उपरान्त सन् 1969 के 16 नवम्बर को जब मध्यप्रदेश सरकार के तत्कालीन सूचना एवं प्रकाशन मन्त्री सिरोंज पधारे थे तब उन्होंने आपकी इस कृति के प्रकाशन का आश्वासन भी दिया था। खेद का विषय है कि आपकी यह कृति अभी तक भी प्रकाशित न हो सकी।

आपका निधन 30 सितम्बर सन् 1967 को हुआ था।

श्री ईश्वरदास

श्री ईश्वरदास का जन्म मध्यप्रदेश के कटनी जनपद के मुडवारा नामक स्थान मे सन् 1848 मे हुआ था। आप हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान्, इतिहासज्ञ और तत्ववेत्ता डॉ० हीरालाल के पिता थे और आपके संस्कार ही उनमें पूर्णतः प्रतिबिम्बित हुए थे। अपनी प्रभु-भक्ति, भजनानन्दी भावना तथा मानस-मर्मज्ञता के कारण आप जाति से कलवार होते हुए भी 'पण्डित जी' के गौरवमय अभिधान से सम्बोधित किये जाते थे।

आप प्रतिदिन सायं समय अपनी चौपाल पर बैठकर अन्य ग्रामीण साथियों के साथ तल्लीन होकर झाँझ और मँजीरे पर जो भजन आदि गाया करते थे वे आप ही के बनाए हुए होते थे। आपको जहाँ 'विनय पत्रिका' पूर्णतः कण्ठस्थ थी वहाँ 'रामचरितमानस' के भी आप मर्मज्ञ व्याख्याता के रूप में जाने जाते थे। आपके सस्कारों का प्रभाव ही आपके दोनों पुत्रो (डॉ० हीरालाल तथा गोकुल-प्रसाद) पर प्रचुर मात्रा में पड़ा था और आपकी प्रेरणा पर ही वे दोनों साहित्य-सेवा की ओर उन्मुख हुए थे। इसलिए वे दोनों यह कहा करते थे .

"सुमरि पितु मन म समाय हुलास
शुभ श्री कमला मातु हमारी, पितु श्री ईश्वरदास।"

आपका निधन सन् 1912 मे हुआ था।

श्री ईसरदास बारहठ

श्री बारहठ का जन्म राजस्थान के बाडमेर क्षेत्र के भादरेस ग्राम मे सन् 1797 मे हुआ था। ऐसा कहा जाता है कि आपकी दास्य भक्ति से प्रसन्न होकर द्वारकानाथ भगवान्, रणछोडराय और भगवती रुक्मिणी ने आपको दर्शन दिए थे। आप इतनी अच्छी कविता करते थे कि आपकी तुलना महाकवि तुलसीदास और भक्त कवि सूरदास से की जाती है। आपको 'राजस्थान का परमेश्वर' भी कहा जाता है और 'ईसर परमेसरा' नामक कहावत आज भी राजस्थान तथा गुजरात के घर-घर मे प्रचलित है।

श्री ईसरदास की काव्य-प्रतिभा से प्रसन्न होकर आपको जामनगर के रावल ने अपने दरबार मे रख लिया था और जागीर मे आपको 9 गाँव दिए थे। आपके द्वारा

लिखित भक्ति-रस का अद्भुत काव्य 'हरिरस' अत्यन्त प्रसिद्ध है। इस काव्य के अतिरिक्त आपके द्वारा विरचित जो कृतियाँ अब उपलब्ध है उनमे 'छोटा हरिरस', 'देवियाण', 'गुण वैराठ', 'गुण रासलीला', 'हनुमान चालीसा', 'गुण आगम', 'गुण-निन्दा स्तुति', 'गुण भगवन्त हंस', 'गुण बाल लीला समापन', 'मुरड पुराण', 'आपण', 'दाण लीला', 'सादला रा दूहा', 'नीस दुआलो' और 'सृष्टि से उत्पत्ति रो गीत' आदि प्रमुख है। आज भी आपकी कविता, छन्द, दोहे, छप्पय, चौपदे और भजन गुजरात के सौराष्ट्र तथा कच्छ और राजस्थान मे अत्यन्त भक्ति-पूर्वक गाए जाते है। पाकिस्तान के सिन्ध और थार पारकर क्षेत्रो मे भी आप बहुत लोकप्रिय थे।

आपका निधन बाडमेर के गुडा नामक गाँव मे सन् 1848 मे हुआ था।

श्री उदयनारायण वाजपेयी

श्री वाजपेयी का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रमुख औद्योगिक नगर कानपुर मे सन् 1884 मे हुआ था। बचपन मे ही अपने पिता के असामयिक निधन के कारण आपके परिवार की आर्थिक दशा अत्यन्त विपन्न हो गई थी। फलस्वरूप आप मैट्रिक की परीक्षा मे भी नही बैठ सके थे। आपने अपने ही अध्यवसाय से हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, फारसी, अँग्रेजी, बगला और गुजराती आदि कई भाषाओं का गहन अध्ययन किया था। पहले-पहल आपने अध्यापन का कार्य प्रारम्भ किया था, किन्तु बाद मे पूरी तरह पत्रकारिता के क्षेत्र मे उतर गए थे।



आपने जहाँ इटावा से प्रकाशित होने वाले 'बिजली' पत्र के सम्पादन मे अपना उल्लेखनीय सहयोग दिया था वहाँ आप कानपुर के खन्ना प्रेस के मालिक श्री गोवर्धनदास खन्ना के प्रयास से सन् 1919 मे प्रकाशित 'संसार' नामक मासिक पत्र के सम्पादक भी रहे थे। उस समय श्री नारायण-प्रसाद अरोडा भी आपके सहयोगी थे। यह पत्र राजनीति-प्रधान था। इस पत्र के द्वारा आपने साहित्यिक क्षेत्र मे जिन प्रतिभाओ को बढने का प्रोत्साहन प्रदान किया था उनमें श्री सद्गुरुशरण अवस्थी तथा श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी के नाम वरेण्य है। जब आपने और श्री अरोडा जी ने 'ससार' का सम्पादन छोडा था तब श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी ने उसका सम्पादन सँभाला था। आपने कई वर्ष तक आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के साथ 'सरस्वती' मे सहकारी सम्पादक के रूप मे भी कार्य किया था।

आप जहाँ उच्चकोटि के पत्रकार थे वहाँ ग्रन्थ-निर्माण की दिशा मे भी आपने अपनी प्रतिभा का प्रचुर परिचय दिया था। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थो मे 'प्राचीन भारत का वैदेशिक व्यापार', 'इलियड काव्य-सार', 'स्वदेश-प्रेम' तथा 'स्वराज्य तत्त्व मीमासा' आदि प्रमुख है। खेद है कि आपके द्वारा लिखित 'कार्य-क्षेत्र' तथा 'विकासवाद' नामक ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ मकान गिर जाने से नष्ट हो गई और प्रकाशित न हो सकी। आपने इन गम्भीर ग्रन्थो के अतिरिक्त 'दासत्व मोचन' नामक एक नाटक की रचना भी की थी। आपके लेखन मे आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी-जैसा शैली-गाम्भीर्य था। आपने द्विवेदी जी को अनेक ग्रन्थो के लेखन के समय अपना महत्त्वपूर्ण परामर्श तथा सहयोग भी प्रदान किया था।

साहित्य के क्षेत्र मे की गई अपनी इन अनेक उल्लेखनीय सेवाओ के साथ-साथ सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र मे भी आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान था। आप अनेक वर्ष तक कानपुर की बहुत-सी सामाजिक सस्थाओ से सक्रिय रूप से जुडे रहने के साथ-साथ वहाँ की नगर कांग्रेस कमेटी के मत्री तथा जिला काग्रेस कमेटी के अध्यक्ष भी रहे थे। अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे आपकी नेत्र-ज्योति सर्वथा जाती रही थी और आप सर्वथा अशक्त तथा असमर्थता का जीवन जी रहे थे।

आपका निधन सन् 1939 में हुआ था।

श्री उदयराज उज्वल

आपका जन्म राजस्थान के मारवाड राज्य के अन्तर्गत ऊजलाँ नामक स्थान में सन् 1885 में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा पोकरण में हुई थी और बाद में आपने क्रमश: मैट्रिक तथा इण्टर करके बी० ए० तक की शिक्षा प्राप्त की थी। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेख्य है कि मारवाड के चारणों मे आपने ही सर्वप्रथम बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इसके लिए श्री उदयराज जी ने अपने अध्यापक श्री वीरेश्वर शास्त्री द्रविड का विशेष आभार माना था।

शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त आपने राज्य-सेवा प्रारम्भ कर दी थी और सन् 1945 में अवकाश ग्रहण किया था। अपने इस शासकीय सेवा-काल मे आप जहाँ 'शहर कोतवाल' के पद पर नियुक्त हुए थे वहाँ आपने राजस्व विभाग और विकास कार्यालय मे भी अनेक रूप मे कार्य किया था। आपकी कार्य-कुशलता का सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि जब आपकी सेवा-निवृत्ति का समय आया तब आपका सेवा-काल 3 वर्ष तक और बढा दिया गया था।

आप जब छात्र ही थे तब से राष्ट्रीय प्रवृत्तियो मे बराबर रुचि लेना प्रारम्भ कर दिया था। राजस्थान के प्रख्यात स्वतन्त्रता-सेनानी श्री केसरीसिह बारहठ (कोटा) पर जब राजद्रोह का अभियोग चलाया गया था तब वे प्राय: आपके पास छात्रावास मे आकर ठहरा करते थे। जब वे बन्दी बनाए गए थे तब आपके छात्रावास की तलाशी हुई थी और इसके कारण आपको उन दिनो अनेक कठिनाइयो का सामना करना पडा था। यह आपके व्यक्तित्व की विशेषता ही कही जायगी कि आपने जहाँ महात्मा गाधी के विभिन्न आन्दोलनो मे अपना गोपनीय सहयोग दिया वहाँ अनेक सामाजिक प्रवृत्तियो मे भी आप जुडे रहे। आपने जहाँ 'राजपूत हित-कारिणी सभा' के सक्रिय सदस्य के रूप मे अपनी जाति की सेवा की वहाँ सन् 1954 मे आप अखिल भारतीय राज-स्थानी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष भी चुने गए थे। यह दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि अपने भतीजे श्री जैतदान का असामयिक देहावसान हो जाने के कारण आप उक्त सम्मेलन मे उपस्थित न हो सके थे।

आपने अपने प्रशासकीय जीवन मे भी समय निकालकर साहित्य-रचना का कार्य बराबर जारी रखा था। आपकी साहित्यिक रचनाधर्मिता का सबसे उत्कृष्ट प्रमाण यही है कि निरन्तर स्वाध्याय तथा लेखन में व्यस्त रहने के कारण अपने जीवन के अतिम दिनों मे आपके नेत्रों की ज्योति क्षीण हो गई थी। आपने



छोटे-बड़े 100 से अधिक ग्रन्थो की रचना की थी, जिनमें से 60-70 तो प्रकाशित रूप मे उपलब्ध हैं। आपकी ऐसी कृतियो मे 'धड सार', 'मारवाड रा वीर', 'दूध प्रकाश', 'मातृ-भाषा दोहावली', 'भानिए रा दूहा', 'स्वराज शतक', 'उज्वल शतक', 'तेज शतक', 'सर्वोदय शतक', 'श्रम शतक', 'सती शतक', 'उदय दोहावली', 'पिगल शतक' तथा 'कुशल शतक' आदि प्रमुख है। आपने श्री सीताराम लालस के सहयोग से 'डिंगल कोष' का निर्माण भी किया था।

राजस्थानी तथा हिन्दी के अतिरिक्त आप अँग्रेजी मे भी लिखा करते थे। चारण साहित्य के सरक्षण तथा राजस्थानी भाषा एव साहित्य के पुनरुद्धार की दिशा में आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान था। आपके कार्य की महत्ता सर्वश्री डॉ० एल० पी० तैसीतोरी (इटली) तथा डॉ० डब्ल्यू० एस० एलन (इंगलैण्ड)-जैसे विद्वानो ने भी मुक्त कण्ठ से स्वीकार की है। राजस्थानी भाषा और साहित्य के अनेक ज्ञात तथा अज्ञात लेखको एव कवियो की आप इतनी व्यापक जानकारी रखते थे कि आपको इस भाषा का जीवित कोश ही समझा जाता था। आप राजस्थानी भाषा के इतने अधिक समर्थक थे कि उसे स्कूलो, कालेजों और विश्वविद्यालयों तक मे पढाई का माध्यम बनाना चाहते थे। आपने अपने जीवन-काल मे राज-स्थानी को शासकीय मान्यता दिलाने की दिशा मे अथक परिश्रम किया था।

आपका निधन सन् 1967 मे हुआ था।

श्री उन्नव राजगोपाल कृष्णय्या

श्री उन्नव जी का जन्म आंध्रप्रदेश के गुण्टूर जिले के उन्नव नामक ग्राम में। एक जुलाई सन् 1904 को हुआ था। अपने गाँव की पाठशाला में प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप गुण्टूर के हाईस्कूल मे पढ़ ही रहे थे कि महात्मा गांधीजी का 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' सारे देश में जोर पकड़ गया। गांधीजी की इस अपील का कि युवक सरकारी स्कूलो और कालेजों को छोडकर असहयोग आन्दोलन में सक्रिय भाग लें, आप पर भी बहुत प्रभाव पड़ा। परिणाम स्वरूप आप अँग्रेजी शिक्षा को सर्वथा तिलाजलि देकर स्वभाषा और स्वदेश की सेवा में लग गए और गुण्टूर में ही पण्डित रामानन्द शर्मा द्वारा संचालित हिन्दी विद्यालय 'आनन्दाश्रम' में प्रविष्ट होकर आपने विधिवत् हिन्दी का अध्ययन किया।

दक्षिण भारत का प्रथम 'हिन्दी प्रचारक विद्यालय' जब राजमहेन्द्री मे गोदावरी के पावन तट पर खोला गया तब आपने भी उसमे प्रविष्ट होकर 'प्रचारक' का प्रशिक्षण प्राप्त किया और फिर केवल 18 वर्ष की आयु मे सन् 1922 मे पूर्णत हिन्दी-प्रचार-कार्य मे जुट गए। हिन्दी-प्रचारक का कार्य करते हुए आप महात्माजी के आन्दोलन मे भाग लेने के लिए भी जनता को प्रेरित किया करते थे। परिणामस्वरूप पुलिस आपको सन्देह की दृष्टि से देखने लगी थी। जब श्री पट्टाभि सीतारमैया ने 'मछली पट्टणम्' मे



सन् 1927 मे 'राष्ट्रीय विद्यालय' की स्थापना की तब आप उसमे हिन्दी-अध्यापक नियुक्त हुए और सन् 1939 तक वहाँ पर कार्य करते रहे। वहाँ पर कार्य करते हुए आपका संपर्क देश के अनेक उच्चकोटि के नेताओं तथा साहित्यकारो से हो गया था।

आप जहाँ कुशल शिक्षक के रूप मे अपने क्षेत्र मे प्रतिष्ठित थे वहाँ नाट्य-मंचन तथा अभिनय की दिशा में भी आपकी गहरी रुचि थी। 'चन्द्रगुप्त', 'मेवाड पतन', तथा 'देवदास' आदि नाटकों में आपने क्रमश. चाणक्य, गोविन्दसिंह और भुवन बाबू का अभिनय अत्यन्त कुशलता से किया था। जब सन् 1961 मे महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की शताब्दी मनाई गई थी तब आपने उनके 'तपती' नाटक में विक्रमसिंह का अभिनय किया था। आपकी नाट्य-प्रतिभा का परिचय आकाशवाणी से प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों में भी समय-समय पर मिलता रहता था। आप एक कुशल अभिनेता होने के अतिरिक्त उत्कृष्ट लेखक भी थे। आपने जहाँ महात्मा गांधी की 'मंगल प्रभात' तथा 'अनासक्ति योग' नामक रचनाओं का तेलुगु भाषा मे अनुवाद प्रस्तुत किया था वहाँ तेलुगु से हिन्दी मे भी कई उत्तम साहित्यिक पुस्तकें अनूदित की थी।

आप एक कुशल अध्यापक और साहित्यकार होने के साथ-साथ अद्भुत सगठक भी थे। आपकी सगठन-क्षमता का परिचय उन दिनों मिला था जब आपने 'हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास' की आन्ध्र शाखा को आगे बढाने की दिशा मे प्रशसनीय कार्य किया था। वे जहाँ उस शाखा के मन्त्री के रूप मे अनेक वर्ष रहे वहाँ उसके मुख्य कार्यालय मे भी सहायक सचिव के रूप मे अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया था। आपकी हिन्दी-सेवाओ के महत्त्व का परिचय इसी बात से मिल जाता है कि जब आप सभा की सेवा से निवृत्त हुए तब श्री ए० सी० कामाक्षिराव और श्री चावलि सूर्य-नारायण मूर्ति ने उन्हे एक 'अभिनन्दन ग्रन्थ' भी समर्पित किया था। सन् 1934 मे दक्षिण भारत के जिस 'यात्री-दल' ने उत्तर भारत की यात्रा की थी, श्री उन्नव जी उस दल मे भी सम्मिलित थे।

आपका निधन 25 अक्तूबर सन् 1981 को हुआ था।

श्री उपेन्द्र महारथी

श्री उपेन्द्रजी का जन्म उड़ीसा प्रदेश के बालूगाँव नामक

स्थान में सन् 1910 में हुआ था। आप उच्चकोटि के चित्रकार के रूप में जाने और माने जाते थे। चित्रकला के प्रति आपकी प्रवृत्ति बचपन से ही थी। अपनी माताजी द्वारा बनाए गए चित्रों को देखकर आपके बाल-मानस में चित्रकला के प्रति जो प्रेम उपजा था उसका प्रभाव यह हुआ कि आप पढ़ना छोड़कर चित्र बनाने की ओर ही उन्मुख हो गए और अपनी इस ललक को पूर्ण करने के लिए कलकत्ता जाकर आपने विधिवत् वहाँ के 'आर्ट्स स्कूल' मे चित्रकला की शिक्षा प्राप्त की। थोड़े दिन तक आप गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शिक्षा-संस्थान 'विश्व भारती' मे भी जाकर रहे और वहाँ पर 'हस्त-शिल्पों का 'व्यावहारिक ज्ञान' भी प्राप्त किया था।

अपनी चित्र-कला-संबंधी शिक्षा पूरी करने के उपरान्त आप सन् 1930 मे बिहार के प्रमुख प्रकाशन-सस्थान 'पुस्तक भडार लहेरिया सराय' मे आ गए और लगभग 10 वर्ष तक वहाँ जमकर कार्य किया। इस अवधि में आपने जहाँ अपनी चित्र-कला को उन्नत किया वहाँ आपके चित्रों को देखकर सभी कला-प्रेमियों का ध्यान आपकी ओर आकर्षित हुआ। आपने अपने चित्रों में जहाँ बिहार के गौरवमय अतीत का अकन किया वहाँ आपने 'पुस्तक भंडार' के कार्य के अतिरिक्त प्रदेश की अनेक सांस्कृतिक एव साहित्यिक गतिविधियो मे भी अपना उल्लेखनीय योगदान किया। पुस्तक भडार मे कार्य-रत रहते हुए आपका सम्पर्क आचार्य शिवपूजन सहाय, रामवृक्ष बेनीपुरी, रामधारीसिह 'दिनकर', गोपालसिह नेपाली और जानकीवल्लभ शास्त्री-जैसे बिहार के अनेक ख्यातिलब्ध साहित्यकारों के अतिरिक्त सर्व श्री मैथिलीशरण गुप्त, राय कृष्णदास और बेचन शर्मा 'उग्र'-जैसे देश के दूसरे लेखको से भी हुआ था। इस सम्पर्क ने आपको कला के साथ-साथ साहित्य-साधना की ओर भी प्रेरित किया और आप हिन्दी मे लेख आदि भी लिखने लगे। अपनी मातृभाषा उड़िया होते हुए भी इतने दिन के बिहार-प्रवास ने आपमें हिन्दी के प्रति जो अनन्य निष्ठा जागृत कर दी थी उससे आप लेखन की ओर प्रवृत्त हुए थे। अपनी कला-साधना से धीरे-धीरे महारथीजी ने अपना वह महत्त्व स्थापित कर लिया था कि आपके बिना उस प्रदेश का कोई भी साहित्यिक तथा सांस्कृतिक समारोह फीका-फीका-सा लगता था।

पुस्तक-भडार से प्रकाशित होने वाली पुस्तकों तथा बालोपयोगी पत्र 'बालक' के माध्यम से महारथीजी कला बिहार प्रदेश की सीमाओं को लाँघकर देश-व्यापी चर्चा का विषय बन गई थी। उन दिनों आपके द्वारा निर्मित चित्र 'बालक' के मुखपृष्ठ पर छपा करते थे। आपकी प्रतिद्वन्द्विता मे अहमदाबाद से प्रकाशित होने वाले गुजराती भाषा के बालोपयोगी मासिक पत्र 'कुमार' मे भी वैसे ही कलापूर्ण चित्र प्रकाशित होने प्रारभ हो गए थे। इस स्वस्थ प्रतियोगिता का प्रारम्भ महारथीजी द्वारा बनाए गए चित्रों से ही होता था। एक बार जब सन् 1937 में पुस्तक भडार से प्रकाशित कैलेण्डर परमहारथीजी द्वारा निर्मित 'शिव-पार्वती'



का चित्र मुद्रित हुआ था तो उसकी कलात्मकता से प्रख्यात कलाविद राय कृष्णदास भी बहुत प्रभावित हुए थे और उन्होंने महारथीजी से भेट करने की उत्सुकता प्रकट की थी। उन दिनो इस कैलेण्डर की 5 हजार प्रतियाँ हाथों-हाथ बिक गई थी। जिन दिनो आप लहेरिया सराय मे काम करते थे उन्ही दिनो एक बंग महिला ने महारथीजी का परिचय बिहार प्रदेश के 'काटेज इण्डस्ट्रीज विभाग' के निदेशक श्री एस० एन० मजूमदार से कराया। उनकी प्रेरणा पर आप सन् 1942 की पहली अगस्त को बिहार सरकार की सेवा मे नियुक्त होकर पटना आ गए।

पटना आकर आपने इस विभाग मे दरी बुनने का काम भी उसी लगन से किया जिस लगन से आप 'लहेरिया सराय' मे चित्रांकन किया करते थे। ग्रामोद्योग विभाग मे आकर अपनी कला का जो परिचय महारथीजी ने दिया उससे उस विभाग की लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगी और उन्होंने परदो, कालीनों और फर्नीचरो मे भी उसका भरपूर प्रयोग किया। भारत की अतीतकालीन सस्कृति का अभि-कल्पन करना ही उन दिनों महारथीजी का प्रमुख ध्येय था।

अपनी अध्यवसायिता के कारण आप धीरे-धीरे इस विभाग के उपनिदेशक हो गए और अपने इस कार्य-काल में आपने इस विभाग मे मिथिला की कला को लोकप्रिय बनाने की दिशा मे अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपके कार्य-काल मे बनाए गए ऐसे अनेक कलापूर्ण चित्रो मे 'शिव पार्वती', 'आम्रपाली', 'बुद्ध' तथा 'गाधी' आदि के चित्र अत्यन्त उल्लेखनीय है। जब आप लहेरिया सराय मे थे तब सन् 1939 मे रामगढ (बिहार) मे जो कांग्रेस का अधिवेशन हुआ था उसके मुख्य पण्डाल की साज-सज्जा मे भी महारथीजी का बहुत बडा सहयोग रहा था। उस अवसर पर महारथीजी द्वारा समय-समय पर बनाए गए अनेक कलापूर्ण चित्रो का एक संकलन भी 'पुस्तक भडार' की ओर से 'बिहार का चित्र-गौरव' नाम से प्रकाशित किया गया था। उन चित्रो को देखकर भारतीय पुरातत्व, प्राचीन वस्त्र-विन्यास और मूर्ति-कला का सहज आभास हो जाता था। आपकी मूर्ति-कला की लोकप्रियता का इससे अधिक ज्वलन्त प्रमाण और क्या हो सकता है कि आपके द्वारा निर्मित गौतम बुद्ध की एक मूर्ति जापान भी गई थी।

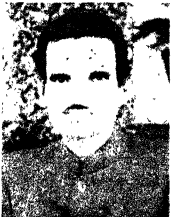
अपनी कलाप्रियता के कारण आपको एकाधिक बार विदेश-यात्रा करने का भी सुयोग प्राप्त हुआ था। एक बार सन् 1954 मे आप 'यूनेस्को' द्वारा आयोजित एक कला-संबधी गोष्ठी मे भाग लेने के लिए जापान गए थे और दूसरी बार सन् 1957 मे बिहार सरकार की ओर से 'वेणुशिल्प' का प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए आप वहाँ भेजे गए थे। जापान मे जाकर आपने वहाँ के अनेक कला-सस्थानो मे मृण्मय शिल्प तथा धातु-शिल्प के अतिरिक्त अन्य बहुत-से शिल्पो की शिक्षा प्राप्त की थी। वहाँ से लौटने के उपरान्त आपने जहाँ बिहार सरकार के 'कुटीर उद्योग विभाग' को अत्यन्त उन्नत और विकसित किया वहाँ 'वेणु-शिल्प' के सबध मे एक अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ की रचना भी की, जो 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' ने प्रकाशित किया था। जापान से लौटने के उपरान्त आपका निवास प्राय. जापानी बौद्ध भिक्षुओं का 'आश्रय-स्थल' ही बन गया था और अनेक जापानी यात्री आपसे परामर्श लेने के लिए वहाँ आते रहते थे।

सन् 1973 मे सरकारी सेवा से निवृत्ति पाने के उपरान्त आप अनेक वर्ष तक भारत सरकार के 'वाणिज्य मत्रालय' मे विशेष पदाधिकारी और 'प्राविधिक परामर्श-दाता' भी रहे थे। इसके साथ-साथ आप 'बिहार हस्त-करघा हस्तशिल्प निगम' के निदेशक तथा 'पटना सग्रहालय', 'बोध गया मन्दिर', 'पालि संस्थान नालन्दा', 'वैशाली संघ', और 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' आदि के भी सम्मानित सदस्य रहे थे। आपको जहाँ भारत सरकार ने सन् 1969 मे 'पद्मश्री' की उपाधि से सम्मानित किया था वहाँ 'नव नालन्दा महा विहार' ने सन् 1977 में 'विद्या वारिधि' की उपाधि भी प्रदान की थी। आप सन् 1976 मे 'बिहार विधान परिषद्' के सदस्य भी मनोनीत किए गए थे।

आपका निधन 11 फरवरी सन् 1981 को पटना मे हृदयाघात के कारण हुआ था।

डॉ० उमापतिराय चन्देल

डॉ० चन्देल का जन्म उत्तर प्रदेश के बलिया जनपद के परीखरा नामक ग्राम मे सन् 1922 मे हुआ था। आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय तथा आगरा विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) तथा पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त अपना कार्मिक जीवन प्रारम्भ मे एक पत्रकार के रूप मे शुरू किया था। लखनऊ से प्रकाशित होने वाले 'संघर्ष' (साप्ताहिक) तथा 'अधिकार' (दैनिक) नामक पत्रो मे कार्य करने के उपरान्त आप सन् 1957 मे नवलगढ़ (राजस्थान) के सेठ जी० बी० पोद्दार कालेज मे प्राध्यापक हो गए थे, जहाँ पर आपने सन् 1967 तक अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया था। इसके



उपरान्त आप दिल्ली विश्वविद्यालय के 'पत्राचार-पाठ्यक्रम एवं अनुवर्ती शिक्षा विद्यालय' में आ गए थे और जीवन-पर्यन्त वहीं कार्य-रत रहे।

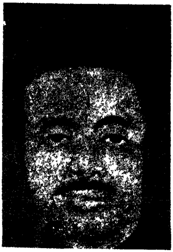
आपने एक सफल एवं अध्यवसायी अध्यापक तथा पत्रकार के रूप मे तो अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा तथा योग्यता का परिचय दिया ही था, साहित्य-रचना की दिशा मे भी आप अत्यन्त तत्परतापूर्वक अग्रसर थे। आपके द्वारा पी-एच०डी० की उपाधि के लिए लिखित 'पौराणिक आख्यानों का विकासात्मक अध्ययन' तथा 'हिन्दी सूफी प्रेमाख्यानक काव्य मे पौराणिक आख्यान' नामक ग्रन्थो के अतिरिक्त आपकी 'तथागत' (काव्य', 'व्यावहारिक हिन्दी' तथा 'हिन्दी प्रारूपण एव टिप्पण' नामक पुस्तकें उल्लेखनीय हैं। अनेक अँग्रेजी ग्रन्थो का अनुवाद करने मे भी आपने अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'मनोविज्ञान' (वुडवर्थ और मार्क्विस), 'सुखी और संतुलित जीवन की कला' (फ्रेंक एम० कैप्रिओ), 'चरित्र परखने की कला' (फ्रेडरिक मेयर), 'प्राच्य धर्म और पाश्चात्य विचार' (सर्वपल्ली राधाकृष्णन), 'अपराजित' (ऐरो स्मिथ), 'हमारी सस्कृति' (सर्वपल्ली राधाकृष्णन), 'यादों की घाटियाँ' (मार्क ट्वेन), 'आनन्ददायक शान्ति का मार्ग' (माँ श्री रमा देवी) तथा 'महायोगिनी की महायात्रा' (एम० वी० पै) प्रमुख हैं।

आपका निधन 17 मार्च सन् 1982 को हुआ था।

श्री उमाशंकर वर्मा

श्री वर्मा का जन्म सन् 1927 मे बिहार प्रदेश के भागलपुर जनपद में हुआ था। आप बिहार के अपने समय के कवियों मे अपनी रचनाओं के कारण विशेष स्थान बना चुके थे। निम्न मध्यवर्गीय परिवार मे जन्म लेकर आपने अभावो और पीडाओं को निकट से जाना और परखा था, यही कारण है कि बी० ए० डिप० एड० तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त भी आपने सरकारी अफसरी की नौकरी को छोडकर एक साधारण अध्यापक का जीवन अपनाया था।

आप जहाँ मानवीय पीडाओ के चितेरे कवि के रूप मे समाज मे जाने जाते थे वहाँ राजनीति मे भी आपकी पर्याप्त पैठ थी। समाजवादी व्यवस्था के जीवन-दर्शन में विश्वास रखने के कारण आप कई बार जेल गए, पुलिस की लाठियाँ खाईं और अपनी पढाई-लिखाई छोडकर कई वर्ष तक देश-भक्ति के पीछे दीवाने बने रहे। अपना अध्ययन भी आपने इन्हीं सघर्षों मे पूर्ण किया था। आपकी विचार-धारा का सही



चित्र आपकी एक कविता की इन पंक्तियों में पूर्णत साकार हुआ है :

नए युग का नया इन्सान बनने की पिपासा है
कभी स्वप्निल जगत् की आश फिर गहरी निराशा है
निराशा मे जगत् को आँसुओं के फूल देता हूँ—
कि आशा मे नये कचन पे झूला झूल लेता हूँ

किसी की जिन्दगी का मैं क्षणिक मधुमास बन जाऊँ
कि आगत के लिए स्वर्णिम नया इतिहास बन जाऊँ
कि बन जाऊँ मृदुल तृण मै, किसी नव श्वेत शबनम का
कि दोनों के अधर का मैं, नवल मधुमास बन जाऊँ।

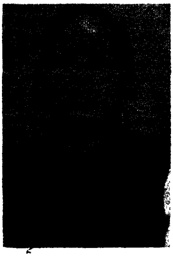
आपकी कविता-रागिनी जब वाणी की हुकार बनकर समाज के शोषण का 'पोस्ट मार्टम' करती थी तब श्रोताओं और पाठको मे आपकी कला का जादुई चमत्कार दिखाई देता था। युवकों, छात्रों और साहित्यानुरागियो की गोष्ठियो में आप अपनी कला-प्रियता के लिए समान रूप से समादृत थे। यह आपकी कविता की एक विशेषता ही थी कि हिन्दी के वरिष्ठ आलोचक आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी तक को यह कहना पडा था—"आपके कंठ मे अद्भुत ओज, कविता मे नवनिर्माण की उमग और जर्जर निर्जीव पुरातन के विध्वस का उत्साह है। मनुष्यता मे आपका अडिग विश्वास है।

मनुष्यत्व के उन्नयन में आपकी कविताओं का पूर्ण योग है। आपकी कविताओं को सुनकर मुझे ऐसा लगा कि मैं हिन्दी में एक नवीन तेज को देख रहा हूँ।"

यह दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि हिन्दी का यह 'तेज' अधिक दिन तक स्थिर न रह सका और 18 नवम्बर सन् 1969 को एक मोटर दुर्घटना में आहत हो जाने के कारण आपका प्राणान्त हो गया।

श्री उमाशंकर श्रीवास्तव 'जानकार'

श्री श्रीवास्तव जी का जन्म उत्तर प्रदेश के वाराणसी जनपद के गोपीगंज कस्बे में सन् 1914 में हुआ था। आपके पिता संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे। आप प्रयाग के सी० एम० पी० डिग्री कालेज में संस्कृत के प्राध्यापक थे और वहीं से सेवा-निवृत्त हुए थे। आपके समस्त परिवार मे सस्कृत भाषा के प्रति अटूट प्रेम परिलक्षित होता है और इस परिवार की तीन पीढ़ियाँ सस्कृत के अध्ययन-अध्यापन मे ही सलग्न है। अपने पिता से 'जानकार' जी को संस्कृत-प्रेम मिला और गवर्नमेंट सस्कृत कालेज, बनारस से शास्त्री



की परीक्षा उत्तीर्ण करके आप पहले-पहल कायस्थ पाठशाला इटर कालेज मे सस्कृत के प्रवक्ता बने थे और आपके सुपुत्र आनन्दकुमार श्रीवास्तव भी उसी कालेज मे संस्कृताध्यापक हैं जिससे श्री जानकार जी सेवा-निवृत्त हुए थे। आपकी पुत्र-वधू भी प्रयाग के आर्य कन्या डिग्री कालेज में संस्कृत पढ़ाती हैं।

आप सस्कृत के प्रकाण्ड पंडित होने के साथ-साथ हिन्दी के भी अच्छे लेखक थे। कहानी, उपन्यास, नाटक और समीक्षा आदि लिखने के अतिरिक्त आपने अनेक पत्र-पत्रिकाओं के संपादन मे भी अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया था। साथ ही 'चाँद', 'रसीली कहानियाँ', 'नई कहानियाँ', 'जगत्' तथा 'प्रयाग संगीत समिति पत्रिका' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओ को भी आपकी प्रतिभा से लाभान्वित होने का सुअवसर मिला था। आप जहाँ सस्कृत और हिन्दी के मर्मज्ञ विद्वान् थे वहाँ उर्दू, फारसी और अरबी आदि कई भाषाओं का अच्छा ज्ञान रखते थे। कायस्थ परिवार मे जन्म लेकर भी आप आचरण से ब्राह्मण-सरीखे प्रतीत होते थे। आपकी हिन्दी तथा सस्कृत-संबंधी उल्लेखनीय सेवाओं के उपलक्ष्य में भारती परिषद् इलाहाबाद की ओर से आपका सन् 1954 मे बड़ा भावभीना अभिनन्दन किया गया था।

आपका निधन 3 सितम्बर सन् 1979 को हुआ था।

श्री ऊमरदान

आपका जन्म राजस्थान के जोधपुर राज्य के फलौदी परगने के ढाढरवाड़ा नामक ग्राम में सन् 1852 मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा रामसनेही सम्प्रदाय के सरक्षण मे हुई थी। डिंगल तथा पिंगल के साथ-साथ आपने अँग्रेजी भाषा का भी सामान्य ज्ञान अर्जित कर लिया था। जब स्वामी दयानन्द सरस्वती को जोधपुर के महाराजा ने अपने दरबार मे आमन्त्रित किया था तब सन् 1883 मे आप ही उन्हें लेने के लिए गए थे। आपके व्यक्तित्व पर आर्यसमाज के धार्मिक व सुधारवादी आन्दोलन अमिट छाप थी।

आप कबीर की भाँति फक्कड़ प्रकृति के कवि थे। इसीलिए जब कोई उनसे उनके निवास-स्थान आदि के विषय में प्रश्न करता था तब वे सहजभाव से यही उत्तर दिया करते थे .

दुकान है दुकान माँ, मकान ना मकान माँ।
उठाय लट्ठ अट्ठ जाम, मैं फिरों घर्मां घर्मां।

आपकी रचनाओं का संग्रह 'ऊमर-काव्य' नाम से प्रकाशित हो चुका है। इसका प्रकाशन आपके निधन के उपरान्त सन् 1906 में हुआ था। जनता ने इस संकलन का अच्छा स्वागत किया था। इसमें आपकी अनेक फुटकर रचनाएँ

संकलित हैं। इसके अतिरिक्त आपकी 'जसवन्त जस जलद' और 'डफोलाष्टक डूँडी' नामक रचनाएँ भी प्रकाशित हुई थी।

आपका निधन सन् 1903 मे हुआ था।

श्री ऋषिलाल अग्रवाल

श्री अग्रवाल का जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद नामक नगर मे सन् 1900 के रक्षाबंधन के दिन हुआ था। आपके पिता श्री रघुनाथप्रसाद वहाँ हाईकोर्ट मे कर्मचारी थे। आप हिन्दी की 'त्वरा संकेत लिपि' (शार्ट हैण्ड) के प्रवर्तक थे। आपके द्वारा प्रवर्तित प्रणाली को 'ऋषि प्रणाली' के नाम से जाना जाता है। इस प्रणाली के आविष्कार का विचार आपके मन मे उन दिनों आया था जब आप सन् 1922 मे 'लीगल रिमेम्बरेन्सर' के कार्यालय मे मुख्य लिपिक थे। आपकी अँग्रेजी शार्टहैण्ड मे अच्छी गति थी और आप कौंसिल के सभी सदस्यों के भाषण अँग्रेजी में सुविधापूर्वक लिख लिया करते थे। उन्ही दिनो आपका कार्यालय इलाहाबाद से लखनऊ के लिए स्थानान्तरित हो गया और आपको वहाँ जाना पडा। लखनऊ-निवास आपकी वृद्धा माता को बडा कष्टप्रद लगा और उन्हे वहाँ पर रहने मे अरुचि होने लगी। फलस्वरूप आपने इलाहाबाद मे ही रहकर कुछ अपना काम करने का निश्चय किया और आप 8 मास की छुट्टी लेकर सन् 1924 मे इलाहाबाद चले गए।

इलाहाबाद मे आपने सर्वप्रथम एक प्रेस की स्थापना की और थोडा-बहुत काम जमने पर नौकरी से त्यागपत्र देकर उसी मे पूर्णत लग गए। इन्ही दिनो आपके मन मे हिन्दी की 'त्वरा सकेत लिपि' के आविष्कार की दिशा मे कुछ कार्य करने का संकल्प जगा। फलस्वरूप आपने अँग्रेजी की 'पिटमैन शार्टहैण्ड प्रणाली' के आधार पर हिन्दी की 'त्वरा लेखन-प्रणाली' का आविष्कार किया। मात्राओ की सुविधा होने के कारण आपने 'स्लोन डुप्लाइन प्रणाली' को भी साथ में अपना लिया। आपने अपनी इस प्रणाली का नाम 'ऋषि प्रणाली' रखा, जो कालान्तर में बहुत ही लोकप्रिय हुई। अपने इस कार्य के प्रारम्भिक दिनों मे आपको अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कर्णधार राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन तथा सम्मेलन के तत्कालीन प्रधानमन्त्री प्रो० ब्रजराज का बहुत सहयोग मिला और उन्होंने सम्मेलन की ओर से 'हिन्दी त्वरा सकेत लिपि' के विधिवत् अध्यापन के लिए एक विद्यालय भी प्रारम्भ कर दिया, जिसमे श्री ऋषिलाल जी ने दिन-रात एक करके इस प्रणाली को लोकप्रिय बनाने मे उल्लेखनीय कार्य किया था।



इस अवसर पर आपको डॉ० बाबूराम सक्सेना और श्री दयाशकर दुबे से भी प्रचुर सहायता मिली थी। यद्यपि इससे पूर्व भी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के प्रयास से सन् 1907 मे हिन्दी मे 'त्वरा लेखन-प्रणाली' प्रचलित करने की दिशा मे श्री निष्कामेश्वर मिश्र ने 'हिन्दी शार्टहैण्ड' पुस्तक लिखी थी, किन्तु श्री मिश्र की यह प्रणाली सफल न हो सकी। इस प्रणाली के 5-7 मास के अभ्यास से केवल 100 शब्द प्रति मिनट ही लिखे जा सकते थे। नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'हिन्दी शब्द कोश' मे ऋषिलाल अग्रवाल द्वारा प्रचलित त्वरा लेखन की प्रणाली का विशेष उल्लेख किया गया है। आपके द्वारा प्रवर्तित इस प्रणाली की व्यावहारिकता इसीसे प्रमाणित होती है कि इसमें व्यजनो की रचना अधिकतम ज्यामिति की सरल रेखाओ को आधार बनाकर की गई है और जहाँ पर सरल रेखाओ से काम नहीं चलता वहाँ ही वक्र रेखाएँ ग्रहण की गई है। उनमे भी इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि वे लहरदार या मनमाने ढग की न होकर वृत्त के आधार पर बनाई गई है।

श्री ऋषिलाल जी ने सन् 1926 मे 'लक्ष्मी' नामक एक पुस्तक भी लिखी थी, जिसमे व्यापार की अनेक विधियाँ प्रदर्शित की गई थी। अपनी 'त्वरा सकेत लिपि प्रणाली' को लोकप्रिय बनाने की दिशा में आपने 'हिन्दी सकेत लिपि'

नामक पुस्तक की रचना भी की थी, जिसके सन् 1982 तक 32 सस्करण प्रकाशित हो चुके है। आपने अपने 'विष्णु आर्ट प्रेस' की ओर से ही इसका प्रकाशन किया था। आपकी इस पुस्तक का प्रथम सस्करण सन् 1938 मे प्रकाशित हुआ था। यह हर्ष का विषय है कि आपके पारिवारिक जन आपके साहित्य के प्रचार मे अब भी पूर्ण तत्परता से सलग्न है।

आपका निधन केवल 44 वर्ष की आयु मे 22 मार्च सन् 1944 को हुआ था।

श्री ऋषीश्वरनाथ भट्ट

श्री भट्ट का का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रख्यात नगर आगरा के बल्का बस्ती (गोकुलपुरा) मोहल्ले मे 27 अगस्त सन् 1884 को हुआ था। आपके पिता श्री रामेश्वरनाथ भट्ट हिन्दी के अच्छे विद्वान् थे, उन्होंने 'रामचरितमानस' की अच्छी टीका की थी। आपके भाई श्री केदारनाथ भट्ट और श्री बद्रीनाथ भट्ट का भी हिन्दी साहित्य मे अपना सर्वथा विशिष्ट स्थान है। आपका अक्षरारम्भ केवल 5 वर्ष की आयु मे हुआ था और 11 वर्ष तक पहुँचते-पहुँचते आपको सस्कृत के प्रख्यात विद्वान् श्री रामगोपाल शास्त्री के शिष्यत्व मे सस्कृत की विधिवत् शिक्षा प्राप्त करने का सुअवसर प्राप्त हो गया था। सन् 1898 मे आपने गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज की प्रथमा परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी। बाद मे आपने ग्वालियर जाकर वहाँ के 'विक्टोरिया कालेज' मे प्रवेश ले लिया और कालेज के शिक्षक महामहोपाध्याय रघुपति शास्त्री से आगे का अपना सस्कृत का अध्ययन जारी रखा था। आपने छात्रावस्था मे ही सस्कृत मे बोलने और काव्य-रचना करने का अच्छा अभ्यास कर लिया था। वहाँ रहते हुए ही आपने सन् 1900 मे पजाब विश्वविद्यालय से सस्कृत की 'प्राज्ञ' परीक्षा भी सारे विश्वविद्यालय मे चतुर्थ स्थान प्राप्त करके उत्तीर्ण की थी। बाद मे आपने आगरा आकर अपने पिताजी की इच्छा-नुसार अँग्रेजी का विधिवत् अध्ययन प्रारम्भ किया और सन् 1904 मे मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। मैट्रिक करने के उपरान्त आपको आपके पिताजी ने अपने मित्र कुँवर हनुमन्तसिह रघुवंशी के पास भेज दिया, जो उन दिनो 'राजपूत प्रेस' का संचालन करते थे। वहाँ पर आपने कुँवर साहब के निरीक्षण में प्रेस का काम सीख लिया और आपके पिताजी ने आपके लिए राजा मण्डी मे एक प्रेस की विधिवत् स्थापना कर दी।

आपके प्रेस का कार्य धीरे-धीरे इतना जम गया कि सभी स्थानीय स्कूलों और कालेजो का मुद्रण-कार्य वहाँ होने लगा। इसी बीच सन् 1906 में आपके मन में अपना अध्ययन आगे बढ़ाने की भावना उठी और आपने आगरा कालेज मे प्रवेश ले लिया। कालेज के प्रधानाचार्य आपकी प्रतिभा तथा योग्यता से भली भाँति परिचित थे। उन्होंने आपको कालेज की ओर से मेधावी छात्रों को दी जाने वाली 8 रुपये प्रतिमास की 'दीवान जानी बिहारीलाल छात्रवृत्ति' भी देने का निर्णय कर लिया। इस प्रकार आपने अपना अँग्रेजी का अध्ययन प्रारम्भ करके क्रमशः सन् 1908 मे इण्टर तथा सन् 1910 मे बी० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर ली। 'प्राइवेट परीक्षार्थी' के रूप मे आपने



सस्कृत विषय मे एम० ए० की परीक्षा भी देनी चाही किन्तु विश्वविद्यालय के अधिकारियो ने इसकी स्वीकृति नही दी। क्योकि तब तक आगरा कालेज मे एम० ए० की कक्षाएँ प्रारम्भ ही नही हुई थी, अत. विवश होकर आपने वकालत पढनी प्रारम्भ कर दी और साथ-साथ ज्योतिष का अध्ययन भी करने लगे। वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त ही आपने प्रेस का कार्य सँभाल लिया था। इस बीच अचानक ऐसी घटना घटी, जिसके कारण आप को आगरा छोड़ने को विवश होना पड़ा। आपके प्रेस मे एक हैंडबिल स्थानीय 'बलवन्त राजपूत हाईस्कूल' के हेडमास्टर श्री फोर साहब के विरुद्ध छपा जिसके कारण आपको पुलिस पूछ-ताछ के लिए रोजाना ले जाती थी और 2-3 घटे बैठा-

कर छोड़ देती थी। जब पुलिस-इंस्पेक्टर को यह विश्वास हो गया कि इस हैंडबिल को छापने में इनका कोई विशेष हाथ नही है तो उन्होंने सलाह दी कि आप आगरा छोड़ दे और कही अन्यत्र जाकर कार्य कर लें। इसी से आपका पीछा छूट सकेगा।

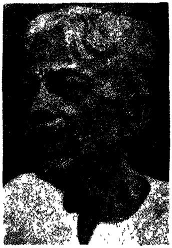
सयोगवश धौलपुर-नरेश के जो दो भाई उन्ही दिनों अजमेर के मेयो कालेज मे पढ रहे थे, आपको उनका सरक्षक (गार्जियन) बनाकर वहाँ भेज दिया गया। वहाँ पर रहते हुए ही आपका परिचय भरतपुर, टिहरी, झालावाड और किशनगढ़ आदि कई रियासतो के राजकुमारो से हो गया। विजयनगरम् और ओरछा के राजकुमार भी आपके अच्छे मित्र हो गए थे। मेयो कालेज के अपने निवास के दिनो मे ही आपका परिचय हिन्दी के प्रख्यात कथाकार श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी से हुआ था। वे उन दिनों वहाँ पर 'सस्कृत विभागाध्यक्ष' थे। वहाँ पर रहते हुए आप महामहोपाध्याय रायबहादुर गौरीशकर हीराचन्द ओझा के सम्पर्क मे आए थे। अप्रैल सन् 1919 मे आप अजमेर से धौलपुर आ गए और फिर कुछ दिन वहाँ रहने के उपरान्त आगरा चले आए तथा 1920 मे वहाँ वकालत प्रारम्भ कर दी। इस प्रकार अभी वकालत प्रारम्भ किये हुए केवल 4 मास ही बीते थे कि अवागढ के राजा साहब आगरा आए और आपको साथ ले गए। वहाँ पर आपको उन्होंने अपने राज्य मे 'कण्ट्रोलर आफ हाउस होल्ड' के रूप मे नियुक्त कर लिया। धीरे-धीरे वे आपके कार्य से इतने प्रसन्न हुए कि आपको सन् 1922 मे उन्होने अपना 'पर्सनल असिस्टेंट' बना लिया। इन्ही दिनो आपके द्वारा अनूदित 'कादम्बरी' का प्रकाशन बम्बई के 'गाधी पुस्तक भण्डार' से हुआ था। जब एटा के कलक्टर श्री एन० सी० मेहता आई० सी० एस० ने सुना कि 'कादम्बरी' के अनुवादक भट्टजी अवागढ मे है तो वे आपसे मिलने के लिए वहाँ आए थे। अवागढ मे रहते हुए जब आपका स्वास्थ्य खराब रहने लगा तब आप अपने चिकित्सक कामबन (मथुरा) निवासी स्वामी अद्वैतानन्द के परामर्श पर वहाँ से आगरा चले आए और अपना त्यागपत्र भेज दिया।

जिन दिनों आप आगरा आए थे तब वहाँ की नगरपालिका के अध्यक्ष सेठ कृष्णलाल थे। कृष्णलाल जी से आपका परिचय अपने कालेज-जीवन से ही था। उन्होने आपको नगरपालिका मे 'आफिस सुपरिटेंडेंट' के रूप मे नियुक्त कर लिया और स्थायी रूप से आप आगरा मे ही रहने लगे। आपने 12 मार्च सन् 1942 को इस पद से निवृत्ति प्राप्त की थी और बाद मे हरिद्वार तथा ऋषिकेश आदि स्थानो मे रहने लगे थे। आपने अपने इस व्यस्त जीवन मे भी अपनी लेखनी को विश्राम नही दिया और प्राय: स्वाध्याय एवं लेखन मे ही सलग्न रहे। आपने अपनी प्रतिभा का उपयोग प्राय: सस्कृत के ग्रन्थो का अनुवाद प्रस्तुत करने मे ही किया था। आपके द्वारा अनूदित 'कादम्बरी' के अतिरिक्त 'अमरु शतक', 'नैषधचरित' तथा 'अमरकोश' आदि ग्रन्थो के अतिरिक्त 'स्त्रियो की पराधीनता', 'प्रेमकान्त', 'आधुनिक सस्कृत हिन्दी कोश' नामक आदि कई ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण है। इनके अतिरिक्त आपने और भी अनेक पुस्तकों का निर्माण किया था, जो किसी कारणवश आपके नाम से प्रकाशित नही हो सकी।

आपका निधन 6 दिसम्बर सन् 1971 को हुआ था।

डॉ० सैयद एजाज हुसेन

डॉक्टर एजाज हुसेन का जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद नगर के राजापुर नामक मोहल्ले मे सन् 1898 मे हुआ था। प्रयाग विश्वविद्यालय से उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप सन् 1929 में उसी विश्वविद्यालय के उर्दू विभाग से जुड़ गए थे और वहाँ रहते हुए डी० लिट्० की उपाधि भी प्रप्त की। प्रयाग विश्वविद्यालय से इतिहास मे उर्दू मे डी० लिट्० की उपाधि प्राप्त करने



वाले आप पहले व्यक्ति थे। आपने जहाँ शिक्षा के क्षेत्र मे

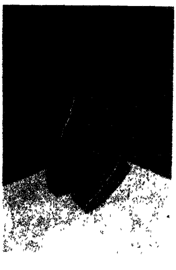
अपना उल्लेखनीय स्थान बनाया था वहाँ साहित्यिक जगत् को भी अपनी प्रतिभा से आलोकित किया था। आप विश्वविद्यालय से सन् 1961 में सेवा निवृत्त हुए थे।

उर्दू साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् तथा सुलेखक होने के साथ-साथ आप हिन्दी के भी प्रबल समर्थक और सेवक थे। आपके द्वारा हिन्दी मे लिखित 'महाकवि मीर', 'अकबर इलाहाबादी', 'बागो बहार', 'प्रेम रस','किस्सा चहार दरवेश' तथा 'उर्दू साहित्य का इतिहास' नामक पुस्तके इसकी सुपुष्ट प्रमाण है। आपके इन सभी ग्रन्थो का हिन्दी-जगत् मे बहुत स्वागत-समादर हुआ है। हिन्दी-साहित्य के प्रति की गई उल्लेखनीय सेवाओं के लिए उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा आप सम्मानित भी किये गए थे।

आपका निधन 23 फरवरी सन् 1975 को मुजफ्फरपुर (बिहार) मे हृदय की गति रुक जाने के कारण हुआ था।

श्री एन० जी० रामकृष्ण पणिक्कर

श्री पणिक्कर का जन्म केरल प्रदेश के पुत्तन चेरी नामक स्थान मे 11 जून सन् 1924 को हुआ था। आप दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार-सभा के सक्रिय हिन्दी प्रचारक थे। सन् 1952 से आपने तमिलनाडु सरकार के शिक्षा विभाग मे 'हिन्दी शिक्षक' के रूप मे कार्य किया था और नागपट्टिनम की सरकारी उच्च माध्यमिक शाला मे हिन्दी का अध्यापन किया करते थे। जब सन् 1968 मे



तत्कालीन द्रमुक पार्टी की सरकार की हिन्दी-विरोधी नीति के कारण उस प्रदेश के सभी सरकारी विद्यालयों मे हिन्दी का पठन-पाठन बन्द किया गया तब आपका स्थानान्तरण नागपट्टिनम से एक दूसरे समीपवर्ती नगर तिरुवारूर (तंजाउर जनपद) के 'माध्यमिक विद्यालय' मे प्रारम्भिक अध्यापक के रूप में कर दिया गया था।

आपने अपने इस अध्यापन-काल में शासकीय विद्यालयों के अतिरिक्त नागपट्टिनम और तिरुवारूर नगरों में 'हिन्दी प्रेमी मण्डल' नामक संस्था की स्थापना करके उसके माध्यम से हजारों छात्र-छात्राओ को हिन्दी के अध्ययन की ओर प्रवृत्त किया था। अपने निधन से कुछ दिन पूर्व तक आपने हिन्दी-कक्षाएँ चलाई थी और निर्धन तथा असहाय विद्यार्थियों की विशेष सहायता किया करते थे। आपने महात्मा गाधी के अनन्य अनुयायी के रूप मे हिन्दी-सेवा को एक पवित्र राष्ट्रीय यज्ञ मानकर अपने जीवन को इस ओर प्रवृत्त किया था।

आपका निधन 22 फरवरी सन् 1982 को तिरुवारूर मे हुआ था।

श्री एस० आर० (रामचन्द्र) शास्त्री

श्री शास्त्री का जन्म तमिलनाडु प्रदेश के तजाउर नामक जनपद के सिलगुडी ग्राम में 24 मार्च सन् 1905 को हुआ था। आपने सन् 1923 मे मद्रास विश्वविद्यालय से 'संस्कृत व्याकरण शिरोमणि' (उपाधि) परीक्षा उत्तीर्ण करके सन् 1925 मे हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास से 'हिन्दी प्रचारक' की परीक्षा दी और फिर सन् 1926 मे अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन से 'साहित्य विशारद' की उपाधि प्राप्त की। उसी समय से आपने 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' के मद्रास कार्यालय मे 'हिन्दी प्रचारक' के रूप मे कार्य करना प्रारम्भ किया और फिर धीरे-धीरे वे 'प्रचारक' से 'संगठक', 'शिक्षा मंत्री' तथा 'साहित्य मत्री' भी रहे। सन् 1964 मे जब आपने सभा की सेवा से अवकाश ग्रहण किया तब आप उसके प्रधानमंत्री के पद पर अधिष्ठित थे। अपने इसी सेवा-काल मे आपने मद्रास विश्वविद्यालय से हिन्दी मे एम० ए० की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली थी।

सभा के द्वारा 'हिन्दी प्रचार' का कार्य करते हुए आपने

हिन्दी की ऐसी अनेक पुस्तकें भी तैयार की थी, जो समय-समय पर सभा की हिन्दी परीक्षाओं में पाठ्य-पुस्तक के रूप मे निर्धारित रही थीं। आपकी ऐसी पुस्तकों मे 'सरल हिन्दी व्याकरण' (दो भाग) प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। आप जहाँ एक कुशल सगठक तथा अध्ययनशील हिन्दी-प्रचारक के रूप मे विख्यात थे वहाँ आप मद्रास विश्वविद्यालय तथा प्रदेश शिक्षण बोर्ड की अनेक हिन्दी पाठ्यक्रम समितियों के भी सम्मानित सदस्य रहे थे।



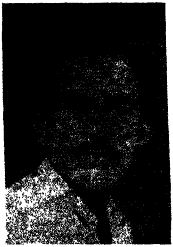
दक्षिण भारत मे हिन्दी प्रचार के कार्य को आगे बढाने वाले महानुभावों मे आपका प्रमुख स्थान है। आपके कार्य-काल मे दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास का कार्य अत्यन्त तीव्र गति से आगे बढा था। आपने हिन्दी-प्रचारकों मे लेखन के प्रति उत्साह भी जागृत किया था।

आपका देहावसान 24 फरवरी सन् 1970 को मद्रास मे हुआ था।

डॉ० एस० एम० एकबाल

डॉ० एकबाल का जन्म उत्तर प्रदेश के देवरिया जनपद के पैना नामक ग्राम मे 1 जुलाई सन् 1940 को हुआ था। आपके पिता हकीम मौलवी रियाजुलहक 'रियाज' उस क्षेत्र के सुप्रसिद्ध चिकित्सक थे, इसी कारण आपने भी इसी व्यवसाय मे आने का निश्चय कर लिया था। आपका चिकित्सालय इस क्षेत्र के साहित्यकारों का एक 'केन्द्र-स्थल' बन गया था।

आप हिन्दी और भोजपुरी के अच्छे कवि थे। आपके द्वारा रचित अनेक गीतों और गजलों ने साहित्य-प्रेमी समुदाय को बहुत प्रभावित किया था। आपका गीतों और गजलों को पढने का ढंग अत्यन्त आकर्षक और प्रभावक होता था। आज भी पूर्वी जनपद के लोग अत्यन्त भाव-विभोर होकर आपको याद करते हैं। आपके निधन के उपरान्त 'यादगारे एकबाल' नामक जो 'श्रद्धांजलि-स्मारिका' प्रकाशित की गई थी उसे देखकर आपके बहुमुखी व्यक्तित्व का सम्यक् परिचय मिलता है।



आपका असामयिक निधन 25 दिसम्बर सन् 1977 को केवल 39 वर्ष की अल्पायु मे हुआ था।

श्री एस० महालिंगम्

श्री महालिंगम् का जन्म तमिलनाडु प्रदेश के तजाउर नामक नगर मे 27 मई सन् 1909 को हुआ था। आप 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' के प्रमुख उन्नायक थे और अपने जीवन का अधिकांश समय आपने उसकी विविध प्रवृत्तियो के पोषण मे लगाया था। अपनी लगन, निष्ठा और कार्य-तत्परता के कारण आप वहाँ के कार्यकर्ताओं मे अत्यन्त लोकप्रिय थे। आपने सभा की सेवा व्यवस्थापक, परीक्षा मत्री, साहित्य मत्री, सयुक्त मत्री, प्रधान मत्री और कुल सचिव आदि अनेक रूपो मे की थी। अपनी सरलता और निश्छलता के कारण आप 'अजातशत्रु' कहे जाते थे।

आप कुशल व्यवस्थापक तथा निष्ठावान प्रचारक होने के साथ-साथ सफल लेखक भी थे। सभा के अन्तर्गत संचालित होने वाले अनेक हिन्दी विद्यालयो मे आने वाले विद्यार्थियों

के लाभार्थ आपने 'बच्चों की किताब' नाम से जो पुस्तक लिखी थी उससे दक्षिण के छात्रों को हिन्दी सीखने मे बहुत सहायता मिलती थी। इस पुस्तक की प्रतियाँ लाखो की संख्या में प्रकाशित हुई है। इसके अतिरिक्त आपके द्वारा अनूदित भूतपूर्व केन्द्रीय मत्री श्री सी० सुब्रह्मण्यम की विश्व-भ्रमण-सबधी यात्रा-पुस्तक भी हिन्दी-जगत् मे पर्याप्त समादृत हुई थी। आकाशवाणी के मद्रास केन्द्र से प्रसारित होने वाले हिन्दी-कार्यक्रमो मे भी आप प्राय भाग लेते रहते थे।



आपने अपने कार्य-काल मे 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' की विविध प्रवृत्तियो के विकास तथा विस्तार के लिए अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपने जहाँ सभा की परीक्षाओ की समुचित व्यवस्था की वहाँ सभा के अनेक शाखा-कार्यालयो का सगठन भी तत्परतापूर्वक किया था। यद्यपि सन् 1932 मे सभा की सेवा मे आने के बाद आपने सन् 1967 मे विश्राम ग्रहण किया था, किन्तु सेवा-निवृत्ति के बाद भी आप उसके सभी कार्यों मे बराबर रुचि लेते रहते थे। आपने अपनी स्वाध्यायप्रियता से तमिल के अतिरिक्त मराठी तथा अँग्रेजी का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। हिन्दी के तो आप अच्छे लेखक थे ही। आपकी हिन्दी-लेखन-प्रतिभा का परिचय उन सस्मरणात्मक लेखो से भली-भाँति मिल सकता है जो आपने समय-समय पर 'हिन्दी प्रचार समाचार' मे प्रकाशित कराए थे। आपने 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' का एक इतिहास भी लिखा था, जिसकी पाण्डुलिपि आपने सभा के अधिकारियो को सौप दी है। आपके इन सस्मरणात्मक लेखों तथा सभा के इतिहास का प्रकाशन अत्यन्त आवश्यक है।

आपका निधन 25 अक्तूबर सन् 1981 को मद्रास मे हुआ था।

डॉ० एस० रेवण्णा

डॉ० रेवण्णा का जन्म सन् 1932 मे कर्नाटक के एक अत्यन्त साधारण परिवार मे हुआ था। शैशवावस्था मे ही अपने पिता का देहान्त हो जाने के कारण आपको 'जुलाहे' का धन्धा करने को विवश होना पड़ा था। इसी बीच आपने हिन्दी सीखने का प्रयास किया और 'भाषारत्न' परीक्षा देने के उपरान्त 'साहित्यरत्न' की परीक्षा भी आपने ससम्मान उत्तीर्ण की। इसके उपरान्त आपने काशी जाकर अपने हिन्दी भाषा-सम्बन्धी ज्ञान को और भी परिपुष्ट किया। आपने कर्नाटक विश्वविद्यालय से बी०ए० करने के उपरान्त एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा दी और फिर 'प्रेमचन्द तथा कन्नड के उपन्यासकार श्री अ० न० कृष्णराव के उपन्यासो का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर आपने एक शोध-प्रबन्ध भी प्रस्तुत किया। इसे दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि आपको पी-एच० डी० की उपाधि 'मरणोपरान्त' ही मिली थी।

पहले आपने एक साधारण सरकारी पाठशाला मे अध्यापक के रूप मे कार्य प्रारम्भ किया था, किन्तु बाद मे आप रेणुकाचार्य कालेज मे कुछ समय पढाने के उपरान्त एस० एल० एन० कालेज मे अध्यापक हो गए थे। और जीवन-पर्यन्त इसी पद पर बने रहे थे। अध्यापन के कार्य से समय निकालकर आपने लेखन भी प्रारम्भ कर दिया और पहले-पहल हिन्दी की कहानियों को आप कन्नड मे रूपान्तरित करने की ओर अग्रसर हुए थे। इसके उपरान्त आपने हिन्दी मे कन्नड भाषा की भी अनेक रचनाएँ अनूदित करके अपनी लेखन-प्रतिभा का परिचय दिया था। हिन्दी में आपकी 'अपराधी कौन है'



नामक रचना उल्लेखनीय है। आपने हिन्दी में कुछ नाटक, कहानियाँ, निबन्ध तथा यात्रा-विवरण लिखने के साथ-साथ कविताएँ भी लिखी थीं। आपने अनेक कवि-सम्मेलनों मे भी सफलतापूर्वक भाग लिया था। नाटक लिखने के साथ-साथ आप उनके अभिनय मे बराबर भाग लिया करते थे। मृत्यु से 15 मिनट पूर्व तक भी आप एक हिन्दी नाटक के रिहर्सल मे लगे हुए थे।

आपके द्वारा लिखे गए कई नाटक आकाशवाणी के बंगलौर केन्द्र से प्रसारित भी हुए थे। आपकी रचनाएँ हिन्दी तथा कन्नड की पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। सन् 1958 मे आपने बगलौर मे 'श्री जयभारती हिन्दी विद्यालय' की स्थापना करके उसके द्वारा हिन्दी-प्रचार का अभूतपूर्व कार्य किया था। आप लगभग 12 वर्ष तक 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास' के भी सक्रिय सदस्य रहे थे।

आपका निधन 7 सितम्बर सन् 1981 को बंगलौर मे हुआ था।

डॉ० श्रीमती एस० लक्ष्मी

आपका जन्म तमिलनाडु के तिन्नेलवेली नामक स्थान मे सन् 1945 मे हुआ था। आपकी शिक्षा मद्रास विश्वविद्यालय मे हुई थी। आपने मद्रास के 'गोवर्धन कालेज कुम्भ कोनूर' से बी० एस-सी० की उपाधि प्राप्त की थी। यह एक विचित्र-सा संयोग है कि 'रसायन-विज्ञान' की स्नातिका होने के उपरान्त आपकी रुचि हिन्दी के अध्ययन और मनन की ओर हुई तथा आपने सन् 1966 मे हिन्दी साहित्य से



एम० ए० की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त 'केशव के विशेषणों का कोश' विषय पर एक लघु शोध प्रबन्ध भी लिखा। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेख्य है कि आपने एम० ए० (हिन्दी) मे सफलता प्राप्त करके स्वर्ण पदक भी प्राप्त किया था।

इसके उपरान्त आपने 'डॉक्टर नगेन्द्र के सैद्धान्तिक एव व्यावहारिक आलोचना-सिद्धान्त और उनका मूल्याकन' विषय पर डॉ० विजयपालसिंह के निदेशन मे शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके 'वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय तिरुपति' से पी-एच० डी० की उपाधि भी प्राप्त की। सन् 1968 से लगभग 4 वर्ष अध्यापन-कार्य करने के उपरान्त आपका विवाह 'रिजर्व बैंक के हिन्दी अधिकारी' श्री आर० गोपाल-कृष्ण से हो गया और आप बम्बई चली गई। आप हिन्दी के प्रति अत्यन्त समर्पण भावना रखने वाली महिला थी।

खेद है कि असमय मे ही आपका सन् 1976 मे केवल 31 वर्ष की आयु मे स्वर्गवास हो गया।

सैयद एहतेशाम हुसेन

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के आजमगढ जनपद के अटरडीहा नामक कस्बे में 21 अप्रैल सन् 1912 को हुआ था। सन् 1930 मे हाई स्कूल की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करके आप इलाहाबाद चले आए और वहाँ से ही क्रमश: सन् 1932 मे इण्टरमीडिएट, सन् 1934 मे बी० ए० तथा 1936 मे एम० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। सन् 1938 मे आप लखनऊ विश्वविद्यालय के उर्दू विभाग मे प्रवक्ता हो गए और सन् 1961 मे वहाँ पर विभागाध्यक्ष बने थे। इस बीच आप सन् 1952 मे अमरीका के 'राकफेलर फाउण्डेशन' की ओर से आमन्त्रित होकर वहाँ गए और वहाँ के सामाजिक, साहित्यिक और सास्कृतिक विकास का गहन अध्ययन किया था। इसके उपरान्त आप सन् 1961 मे ही लखनऊ से प्रयाग विश्वविद्यालय के उर्दू विभाग के अध्यक्ष होकर वहाँ चले गए, जहाँ जीवन-पर्यन्त कार्य-निरत रहे थे।

आपकी साहित्यिक प्रतिभा का परिचय आपकी उन

अनेक रचनाओं को देखने से मिल जाता है जो आपने अपने गहन अध्ययन से साहित्य-जगत् को अर्पित की थी। मार्क्सवादी वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समन्वित समीक्षा लिखने में आपको जो दक्षता प्राप्त थी उससे आपकी साहित्यिक योग्यता का परिचय मिल जाता है। उर्दू भाषा और साहित्य की समृद्धि मे आपका जहाँ अद्वितीय योगदान था वहाँ हिन्दी-साहित्य के उत्कर्ष के प्रति भी आप सतत प्रयत्नशील रहा करते थे। आपके द्वारा हिन्दी में लिखित 'उर्दू साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' नामक ग्रन्थ हमारी इस मान्यता का सुपुष्ट प्रमाण प्रस्तुत करता है। आपके द्वारा हिन्दी मे लिखित 'महाकवि मीर' तथा 'किस्सा चहार दरवेश' नामक कृतियाँ भी उल्लेखनीय है। आपने 'हिन्दुस्तानी एकेडेमी' तथा 'साहित्य अकादेमी' के सदस्य के रूप मे भी साहित्य का अच्छा मार्ग-प्रदर्शन किया था।



आपकी लोकप्रियता का सबसे उत्कृष्ट प्रमाण यही है कि आपके निधन पर 'हिन्दुस्तानी एकेडेमी' की ओर से जो शोक-सभा हुई थी उसकी अध्यक्षता जहाँ हिन्दी के वरिष्ठ कवि श्री सुमित्रानन्दन ने की थी वहाँ सर्वश्री उपेन्द्रनाथ अश्क, डॉ० हरदेव बाहरी, डॉ० रघुवंश, अमृतराय तथा उमाशकर शुक्ल आदि अनेक विद्वानो ने भी श्रद्धांजलि समर्पित की थी।

आपका निधन 1 दिसम्बर सन् 1972 को हृदयगति बन्द होने के कारण हुआ था।

श्री ओंकारनाथ वाजपेयी

श्री वाजपेयी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा जनपद के 'महुआ' नामक ग्राम में सन् 1881 में हुआ था। आपने लगभग 10 वर्ष की आयु में ही अपना गाँव छोड दिया था और अपने पिताजी के पास रहते हुए पठन-पाठन करने लगे थे। क्योंकि आपके पिताजी जमकर कही नही रहे इसलिए आपकी शिक्षा-दीक्षा भी कुछ अधिक नही हो सकी थी और सन् 1905 मे प्रयाग विश्वविद्यालय से मैट्रिक की परीक्षा द्वितीय श्रेणी मे उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने प्रयाग के क्रिश्चियन कालेज मे आगे की पढ़ाई जारी रखने की दृष्टि से प्रवेश ले लिया था। आपने उन्ही दिनो एफ० ए० की कक्षा मे पढते हुए ही 'ओंकार प्रेस' तथा 'ओंकार बुकडिपो' की स्थापना कर दी थी। मैट्रिक की परीक्षा देने से पूर्व आप कुछ दिन के लिए बम्बई चले गए थे और वहाँ के 'वेंकटेश्वर प्रेस' में कुछ दिन काम भी सीखा था। जब आप बम्बई मे यह काम सीख रहे थे तब ही आपके मन मे प्रयाग जाकर प्रेस खोलने की भावनाएँ हिलोरे मारने लगी थी, जिसके फलस्वरूप आपने इण्टर मे पढते हुए ही 'ओंकार प्रेस' की स्थापना कर दी थी। आपके इस उत्साहपूर्ण कार्य मे आपके कालेज के संस्थापक डॉ० ईविंग भी बहुत प्रसन्न हुए थे।

अपने अध्ययन-कार्य मे लगे रहने के साथ-साथ आप प्रेस को अच्छी तरह जमाने के अतिरिक्त लेखन-कार्य भी करने लगे थे। इसका ज्वलन्त प्रमाण आपके द्वारा लिखित वे अनेक बालोपयोगी पुस्तके है जो आपने अपने प्रेस की ओर से 'ओंकार आदर्श चरितमाला' के नाम से प्रकाशित की थी। प्रेस और प्रकाशन के इस कार्य मे सलग्न रहने के अतिरिक्त आप आर्यसमाज के कामों में भी पर्याप्त रुचि लेने लगे थे। आप जहाँ कई बार 'आर्य कुमार सभा' के मन्त्री तथा प्रधान चुने गए थे वहाँ 'आर्य कन्या पाठशाला' और 'डी० ए० वी० स्कूल' की संस्थापना मे भी आपका प्रमुख



सहयोग रहा था। आपने अपने प्रकाशन की 'ओंकार आदर्श चरितमाला' के अन्तर्गत देश-विदेश के लगभग 400 महा-पुरुषो के जीवन-चरित्र प्रकाशित करने का सकल्प किया था, किन्तु दुर्भाग्यवश वे 25 पुस्तकें ही इस 'माला' में प्रकाशित कर सके थे। स्त्री-शिक्षा के प्रचार की दिशा मे भी आपकी गहन रुचि थी, जिसका ज्वलन्त प्रमाण आपके द्वारा लिखित 'शान्ता' नामक वह पुस्तक है, जिसका प्रकाशन आपने अपनी इस सस्था की ओर से किया था। इसके अतिरिक्त आपकी अन्य प्रकाशित पुस्तको मे 'आदर्श कन्या पाठशाला', 'लक्ष्मी', 'कन्या दिनचर्या', 'कन्या सदाचार' तथा 'दो कन्याओ की बातचीत' विशेष उल्लेखनीय हैं।

आपने जहाँ अपने इस प्रेस से समाजोपयोगी अनेक पुस्तकों का प्रकाशन किया था वहाँ 'कन्या मनोरजन' नामक एक महिलोपयोगी मासिक पत्रिका का सम्पादन एव प्रकाशन किया था, जो निरन्तर आपके निधन तक पाँच वर्ष तक चला था। आपके द्वारा लिखित महिलोपयोगी पुस्तक 'शान्ता' का विशेष महत्त्व है। शिक्षा-प्रचार करने की आपमे इतनी धुन थी कि आप अनेक असहाय तथा निर्धन विद्यार्थियो को आर्थिक सहायता भी देते रहते थे। स्त्री शिक्षा तथा उसके अनन्य उद्धारक के रूप मे आपका नाम आज भी प्रयाग मे गौरव के साथ स्मरण किया जाता है। 'ओकार प्रेस प्रयाग' का नाम हिन्दी-प्रकाशन के इतिहास मे भी अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण स्थान रखता है।

आपका निधन 28 जुलाई सन् 1918 को प्रयाग मे विशूचिका के कारण हुआ था।

श्री ओंप्रकाश

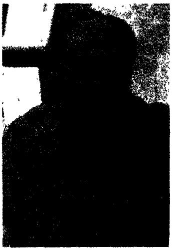
श्री ओप्रकाश का जन्म 2 जून सन् 1916 को अमृतसर (पजाब) मे हुआ था। आपके पिता लाला राधाकृष्ण महात्मा मुन्शीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) के अनन्य सहयोगी तथा आर्य-समाज के कट्टर अनुयायी थे। इसी कारण उन्होने आपको अध्ययन के लिए गुरुकुल काँगड़ी मे प्रविष्ट कराया था, किन्तु आप अधिक दिन तक गुरुकुल में न रह सके और फिर आपने अपनी उच्च शिक्षा लाहौर के एफ० सी० कालेज से पूर्ण की थी। शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त आप अपने पिता के ही व्यवसाय मे सहयोगी के रूप मे कार्य करने लगे थे। आपके पिताजी की उन दिनो अमृतसर मे कपडे की दुकान थी। अपने पिताजी के व्यवसाय में सहयोग करने के साथ-साथ आप नगर की अन्य सामाजिक सस्थाओ की गति-विधियो मे भी बराबर भाग लिया करते थे। इसी प्रसग मे आप सन् 1942 के आन्दोलन के समय पुलिस की निगाह में चढ गए और गिरफ्तारी के उपरान्त कुछ दिन तक आपको हवालात मे भी रहना पडा था।

समाज-सेवा की अपनी कौटुम्बिक भावना के सस्कार आपके मानस मे इतने गहरे पैठ गए थे कि स्वतन्त्रता के उप-रान्त जब सारे देश मे साम्प्रदायिकता का घातक विष जोरो से फैल गया तब आप फिर नए जोश-खरोश के साथ जनता मे शान्ति और सद्भावना उत्पन्न करने के कार्य मे लग गए। इस कार्य के सिलसिले मे ही आपका सम्पर्क प्रख्यात समाज-सेविका श्रीमती मृदुला साराभाई से हो गया और उनके साथ आप कश्मीर मे कार्य करने के लिए चले गए। कश्मीर के अपने कार्य-काल मे श्री ओप्रकाश जी का सम्पर्क प्रख्यात प्रगतिवादी समीक्षक श्री शिवदानसिंह चौहान और श्रीमती शीला भाटिया से हुआ था। कश्मीर मे रहकर आपने वहाँ की जनता मे शान्ति तथा सद्भाव उत्पन्न करने मे अपना सक्रिय सहयोग देने के साथ 'प्रगतिवादी आन्दोलन' का काफी गहराई से अध्ययन किया था। उन्ही दिनो जब सारे देश मे साम्प्रदायिक दगो का दौर-दौरा चल रहा था तब आपने अमृतसर से 'आज की बात' नाम से एक हिन्दी का पाक्षिक पत्र भी सम्पादित किया था, जो लगभग 7 मास तक चला था। इस पत्र मे आपने 'राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ' के विरुद्ध जमकर लेख लिखे थे। बाद मे उनमे से कुछ लेखों को मृदुला साराभाई ने पुस्तकाकार भी छपवाया था। ओंप्रकाश जी को अपने इन लेखो के लिए सकुचित हिन्दू मनोवृत्ति के लोगो ने जान से मार डालने तक की धमकियाँ भी दी थी।

यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि श्री ओप्रकाश को हिन्दी-प्रकाशन-क्षेत्र का उस समय तक कुछ भी अनुभव नही था। हाँ, उनके छोटे भाई श्री देवराज ने अवश्य ही 'भारत-विभाजन' से पूर्व सन् 1946 मे दिल्ली मे 'राजकमल प्रकाशन' का सूत्रपात कर दिया था। क्योकि उन दिनो लालकिले में 'आजाद हिन्द फौज' का अभियोग चल

चुका था, इसलिए विषय की सामयिकता को देखते हुए इस प्रकाशन संस्था की ओर से सर्वप्रथम हिन्दी और अँग्रेजी में कैप्टन शाहनवाज खाँ द्वारा लिखित पुस्तक ही पहले-पहल प्रकाशित की गई थी, जो 'आजाद हिन्द फौज' से सबंधित थी। विभाजन के उपरान्त जब देश मे लोकप्रिय सरकार का निर्माण हुआ तब प्रख्यात गुजराती लेखक श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी भी केन्द्रीय मंत्रि-मण्डल के सदस्य रहे थे। उन्ही दिनो सौभाग्य से उनका सम्पर्क 'राजकमल प्रकाशन' के सचालको से हो गया और वे भी इस प्रकाशन के एक भागीदार बन गए। वह महत्त्वपूर्ण वर्ष सन् 1950 का था, जब श्री ओंप्रकाश जी भी अपने पारम्परिक वस्त्र-व्यवसाय को छोडकर 'राजकमल प्रकाशन' से आ जुडे थे। श्री मुन्शी के सुझाव पर जब बम्बई मे 'राजकमल प्रकाशन' की शाखा खुली तो सर्व प्रथम ओंप्रकाश जी वहाँ भेजे गए थे।

सन् 1950 से सन् 1953 तक बम्बई मे रहकर आपने जहाँ 'राजकमल प्रकाशन' की प्रतिष्ठा को चार चाँद लगाए वहाँ आप ही के सत्प्रयास से मद्रास मे भी 'राजकमल' की एक शाखा खोली गई और उसमे ओंप्रकाश जी के सबसे छोटे भाई श्री भीमसेन 'व्यवस्थापक' बनाए गए। इस बीच श्री ओंप्रकाश जी ने 'राजकमल प्रकाशन' के कार्य को विस्तार देने की दृष्टि से सन् 1954 मे प्रयाग मे उसकी शाखा स्थापित की और आप वहाँ पर सन् 1957 तक रहे। प्रयाग-निवास के अपने कार्य-काल मे आपके साहित्यिक सम्पर्कों का क्षेत्र बहुत विस्तृत हो गया था। जिन दिनों आप बम्बई मे थे उन्ही दिनो राजकमल की ओर से 'आलोचना' नामक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन भी आपके ही सत्प्रयास से प्रारम्भ हुआ था और उसके सम्पादन के लिए आपने अपने कश्मीर-प्रवास के मित्र श्री शिवदानसिंह चौहान को बुला लिया था। उनसे मतभेद होने पर आनन-फानन मे अपने प्रयाग-निवास के सम्पर्क के कारण आपने डॉ० धर्मवीर भारती आदि कई प्रयाग के अध्यापक-समीक्षको का एक सम्पादक-मण्डल बनाकर उसे और भी गति दी थी। जब उनसे भी आपकी पटरी न बैठी तो फिर आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी को आपने 'आलोचना' का सम्पादन सौप दिया। हिन्दी मे 'पाकेट बुक' प्रकाशित करने की 'घोषणा' सर्वप्रथम आपने ही की थी, किन्तु 'प्रकाशन' मे बाजी 'हिन्द पाकेट बुक' मार ले गई थी। उसका सैट पहले प्रकाशित हुआ था। इस बीच अपने प्रयाग-निवास मे लिये गए स्वप्नो को साकार करने की दृष्टि से आपने 'नई कहानियाँ' नामक कहानी-मासिक प्रारम्भ करने के साथ-साथ हिन्दी मे कुछ ऐसे लेखको को भी प्रस्थापित किया, जो आपके प्रकाशन-क्षेत्र मे आने से पूर्व लिखते तो थे, परन्तु उनका नाम उतना चढा नहीं था जितना ओंप्रकाश जी ने उठाया। ऐसे लेखकों मे सर्वश्री फणीश्वरनाथ 'रेणु', मोहन राकेश और राजेन्द्र यादव अन्यतम हैं। लगभग इसी समय आपने प्रयाग के 'परिमल ग्रुप' के हिन्दी-लेखको की रचनाएँ छापने के साथ-साथ डॉ० जगदीश गुप्त और श्री विजयदेवनारायण साही के सम्पादन मे 'नई कविता' (द्वैमासिक) के भी कई अक प्रकाशित किये थे।



श्री ओंप्रकाशजी ने जहाँ राजकमल के माध्यम मे हिन्दी-प्रकाशन मे नए मानदण्ड स्थापित किए वहाँ 'आलोचना' तथा नई कहानियाँ' के माध्यम से समीक्षा तथा कहानी के क्षेत्र मे कुछ नई प्रतिभाओं को प्रतिष्ठित करने मे भी उल्लेखनीय सहयोग दिया। इन सब प्रवृत्तियो के अतिरिक्त हिन्दी के प्रकाशनों को व्यावसायिक धरातल पर सुप्रतिष्ठित करने और प्रकाशन-व्यवसाय को नई दिशा देने की दृष्टि से आपने जहाँ 'अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक सघ' की स्थापना द्वारा हिन्दी के प्रकाशको के लिए एक मच सगठित किया वहाँ उसके सभी पक्षो को सुपुष्ट तथा व्यवस्थित करने के लिए 'प्रकाशन समाचार'-जैसे व्यावसायिक पत्र का भी कई वर्ष तक सफलतापूर्वक सचालन और सम्पादन किया। आप जहाँ कई वर्ष तक 'अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक सघ' के मन्त्री रहे और उसके अध्यक्ष के रूप मे भी आपने प्रकाशन-व्यवसाय को सर्वथा नये परिप्रेक्ष्य प्रदान किए।

यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि आपकी

राजकमल प्रकाशन की उल्लेखनीय उपलब्धियों में आपके अनुज श्री देवराज का उल्लेखनीय हाथ था, जो सस्था के प्रबन्ध-निदेशक के रूप मे आपको सदा-सर्वदा उचित दिशा-निर्देश देते रहते थे। परिस्थितिवश जब श्री देवराज ने 'राजकमल' से अलग होकर 'शुचि (प्रा०) लिमिटेड' नाम से अपना नया 'आफसैट प्रेस' खोल लिया तो आपको भी कोई दूसरा मार्ग अपनाने को विवश होना पडा था। 'राजकमल प्रकाशन' से जुडे रहने के इतने लम्बे 'कार्य-काल' मे आपने हिन्दी के प्राय सभी छोटे-बडे उल्लेख्य लेखकों की कृतियाँ प्रकाशित करके उसे उत्कर्ष के उत्तुग शिखर पर पहुँचा दिया था।

प्रकाशन का कार्य अब आपके लिए व्यवसाय न रहकर जीवन की 'अनिवार्यता' बन गया था इसलिए जब आपने 'राजकमल' से सबध-विच्छेद करने का निश्चय किया तब 'राधाकृष्ण प्रकाशन' नाम से यही कार्य प्रारम्भ किया। अपने साहित्य और सस्कृति-प्रेमी पिता श्री राधाकृष्ण की स्मृति को चिरस्थायी बनाने की आपकी भावना भी कदाचित् इस नाम के पीछे काम कर रही थी। ओप्रकाश जी केवल व्यवसायी प्रकाशक ही नही थे, प्रत्युत आपने इस क्षेत्र मे रहकर जहाँ उसको वैज्ञानिक रूप प्रदान किया था वहाँ इस व्यवसाय मे रहकर एक 'जागरूक' तथा 'बुद्धिजीवी' व्यक्ति की भूमिका का भी पूर्ण निर्वाह किया था। आप आनन-फानन मे अपने इर्द-गिर्द ऐसे लेखको का जमाव करने की कला मे पूर्णत दक्ष थे, जो आप-जैसे जागरूक प्रकाशक का सहयोग पाने को आतुर-उत्सुक रहते है। परिणामस्वरूप आपको लेखको का भरपूर सहयोग मिला और 'राजकमल' की भाँति 'राधाकृष्ण' के प्रकाशनो को भी आपने उत्कृष्टता के उसी 'मानदण्ड' तक पहुँचा दिया। ओप्रकाश जी प्रकाशक होने के साथ-साथ क्रातिकारी विचारक भी थे। अपने इन विचारो को आपने यदा-कदा मूर्त्त रूप भी दिया था। आपके ऐसे विचारो का एक सकलन आपकी मृत्यु के उपरान्त आपके 'प्रथम स्मृति दिवस' पर 'सबद रमन्ता सबद गुणन्ता' नाम से प्रकाशित हुआ था। इसमे जहाँ आपके द्वारा 'पन्तजी के साथ दुनिया का चक्कर' लगाने के यात्रा-सस्मरण तथा आपके द्वारा सम्पादित 'आज की बात' नामक पत्र मे प्रकाशित साम्प्रदायिकता-विरोधी कुछ लेख समाविष्ट है वहाँ प्रकाशन की समस्याओं से संबधित कुछ लेख भी समाविष्ट हैं। आपके जाति-भेद और साम्प्रदायिकता-विरोधी क्रांतिकारी विचारो को इस पुस्तक के माध्यम से जाना जा सकता है।

आपका निधन 30 अगस्त सन् 1979 को हुआ था।

श्री ओंप्रकाश 'दीपक'

श्री 'दीपक' का जन्म 25 जनवरी सन् 1927 को उत्तर प्रदेश के प्रयाग नगर मे हुआ था। आप बचपन से ही विद्रोही प्रवृत्ति के थे इसलिए 'भारत छोडो आन्दोलन' के समय, जब आप बच्चे ही थे तब हाथ मे तिरगा झडा लेकर एक सभा मे भाग लेने के कारण आप गिरफ्तार कर लिये गए थे। शिक्षा के नाम पर आप केवल 'कायस्थ पाठशाला इलाहाबाद' मे इटर तक ही पढे थे और यह कहकर आगे की पढाई को 'फुल स्टाप' लगा दिया था कि 'असली पढ़ाई डिग्रियो मे नही है'। पढाई छोडकर पहले कुछ दिन आपने वायु-सेना मे प्रशिक्षण प्राप्त किया, किन्तु वह भी अधिक दिन तक न चल सका और फिर कुछ दिन 'किसान-मजदूर पचायत हिसार' मे कार्य करने के उपरान्त आप दिल्ली मे आकर 'समाजवादी सगठन' से जुड गए। इस कार्य-काल मे ही आपका प्रख्यात समाजवादी नेता डॉ० राममनोहर लोहिया से सम्पर्क हुआ और जब वे लोकसभा का चुनाव जीतकर स्थायी रूप से दिल्ली मे आकर रहने लगे और उन्होंने 'जन' नाम से एक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया तब 'दीपक' जी उनके मुख्य सहयोगी हो गए। अपने इस कार्य-काल मे आपकी



राजनीतिक विचार-धारा मे निरतर निखार आता गया और वाणी तथा विचारों से आप पूर्णत 'भावुक' न रहकर

'बौद्धिक' हो गए। आपने देश की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था मे क्रान्ति लाने की भावना से ऐसे अनेक कार्य किए थे, जिनसे आपकी इस विचार-धारा के नये उद्बोधन का आभास होता था। आप अत मे कुछ दिन तक जयप्रकाश बाबू के भूदान आन्दोलन से भी जुडे रहे थे।

आपने इस राजनीतिक जीवन मे लिखना भी बराबर जारी रखा था और आपकी अनेक कृतियाँ प्रकाशित भी हुई थी। आपकी प्रकाशित कृतियों मे 'मानवी'(1958), 'जिन्दगियाँ बेमतलब'(1968) और 'लोहिया—असमाप्त जीवनी' (1978) प्रमुख है। आपके द्वारा अनूदित पुस्तकों मे 'अमरीकी साहित्य का सक्षिप्त इतिहास','अमरीकी दर्शन का इतिहास' तथा 'एक उदारवादी स्वर' के नाम विशेष है। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित कहानियो और निबंधों के दो सकलन भी अप्रकाशित ही पड़े रह गए। आपके द्वारा समय समय पर पत्र-पत्रिकाओं मे लिख गए ऐसे अनेक लेख तथा यात्रा-विवरण भी अप्रकाशित ही है। कुछ समीक्षाएँ और कहानियाँ भी आपकी अप्रकाशित पड़ी रह गई। आपकी लोहिया से सबधित अपूर्ण जीवनी का प्रकाशन आपके निधन के उपरान्त ही हो पाया था।

आपका निधन 25 मार्च सन् 1975 को हुआ था।

श्री ओम्प्रकाश लवानिया

श्री लवानिया का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा जनपद के बेरी चाहर नामक ग्राम में 15 अगस्त सन् 1928 को हुआ था। आपकी प्रवृत्ति बचपन से ही कविता-लेखन की ओर थी। आपने उन दिनो अनेक कविताएँ लिखी, किन्तु उनमे से प्रकाशित एक भी न हो सकी। आप अपनी शिक्षा अधूरी ही छोडकर बम्बई चले गए थे और वहाँ पर आपने 'आपबीनी' साप्ताहिक के संपादकीय विभाग में काम किया था। सन् 1946 मे बम्बई से वापिस आकर आप प्रख्यात पत्रकार और राष्ट्रीय नेता पण्डित श्रीकृष्णदत्त पालीवाल के दैनिक पत्र 'सैनिक' मे कार्य करने लगे थे। पालीवालजी ने आपको 'नगर संवाददाता' के रूप में रखा था, जिसके कारण आपकी आगरा मे पर्याप्त ख्याति थी।

अपने इस कार्य-काल में आपने जहाँ नगर और बाहर के अनेक समाचार छापकर 'सैनिक' को लोकप्रियता प्रदान की वहाँ आप अपने इसी गुण के कारण उसके 'प्रबंध सम्पादक' भी बना दिए गए।



आपका लगभग 20 वर्ष तक 'सैनिक' से अटूट संबंध रहा था। इसके अतिरिक्त आपने सन् 1970 से सन् 1978 तक 8 वर्ष 'अमर उजाला' दैनिक के सम्पादकीय विभाग में भी कार्य किया था। अपने इतने सुदीर्घ अनुभव के कारण श्री लवानिया का स्थान आगरा के विशिष्ट पत्रकारों मे हो गया था। आपके अनेक राजनीतिक तथा साहित्यिक लेख 'सैनिक' और 'अमर उजाला' के अतिरिक्त अन्य बहुत-से हिन्दी पत्रों मे छपा करते थे।

आपका निधन 8 दिसम्बर सन् 1978 को आगरा के 'सरोजिनी नायडू अस्पताल' मे हुआ था।

श्री ओम्प्रकाश शर्मा

श्री शर्माजी का जन्म उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जनपद के लाँक नामक ग्राम मे 13 अगस्त सन् 1899 को हुआ था। आप प्रारभ मे ही विद्रोही प्रकृति के धनी थे। राष्ट्रपिता महात्मा गाधी के आह्वान पर आपने सरकारी नौकरी से त्यागपत्र देकर अपने विद्रोह का परिचय दिया था।

आपकी शिक्षा भी पहले कुछ अधिक नही हो सकी थी। केवल मिडिल तक की पढ़ाई करके आपने सरकारी नौकरी कर ली थी। बाद मे आपने धीरे-धीरे प्रति वर्ष एक परीक्षा देनी प्रारभ की और हिन्दी साहित्य-सम्मेलन की 'साहित्य रत्न' परीक्षा देकर क्रमश: एम० ए० तथा शास्त्री की

परीक्षाएँ अपने अध्यवसाय से ही उत्तीर्ण कीं और मुजफ्फरनगर के इस्लामिया इंटर कालेज मे हिन्दी अध्यापक हो गए। आपकी विद्यालयीय पढाई समाप्त कराने मे किसी ऐसे ज्योतिषी का हाथ था जिसने आपको मिडिल करते समय यह कह दिया था कि आगे नही पढ सकोगे ।

अपने ही अध्यवसाय से आपने जहाँ अपनी शिक्षा पूरी की थी वहाँ राष्ट्रीय कार्यों में योगदान देने के साथ-साथ आप कविताएँ भी लिखने लगे थे। आपकी कविताएँ उन दिनो अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी। आपकी कविताओं का विषय प्राय राष्ट्रोद्धार, जाति-कल्याण और धर्म-सबधी ही रहा करता था। अपनी रचनाओ के माध्यम से आप सदा सबको हँसाते रहते थे और सारे मुजफ्फरनगर मे 'डडे वाले मास्टर' के नाम से जाने जाते थे।

आपका निधन सन् 1976 मे 77 वर्ष की आयु मे हुआ था। आप अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक सक्रिय रहे थे।

स्वामी ओम्भक्त

स्वामी ओम्भक्तजी का जन्म राजस्थान के जयपुर राज्य के एक ग्राम के गौड ब्राह्मण-परिवार मे सन् 1893 मे हुआ था। आपका जन्म-नाम 'राममहाय' था। अपनी शिक्षा-दीक्षा पूरी करने के उपरान्त आपका सम्पर्क आर्यसमाज से हो गया और जीवन-पर्यन्त उसीकी सेवा मे सलग्न रहे। अपनी समाज-सेवा की इस लगन के कारण ही आपने पहले तो कुछ समय अजमेर के डी० ए० वी० स्कूल मे अध्यापन-कार्य किया और फिर बाद मे अपने ज्ञान मे और अभिवृद्धि करने की दृष्टि से आप बनारस गए थे। उन दिनो वहाँ पर आर्य विचार-धारा के विद्यार्थियो को विद्याध्ययन करने मे बहुत कठिनाइयो का सामना करना पड़ता था, किन्तु फिर भी अपने अनवरत अध्यवसाय और लगन से आपने वहाँ रहकर अपने स्वाध्याय को बहुत बढाया। इसके उपरान्त आप पण्डित भोजदत्त शर्मा द्वारा सचालित आगरा के 'आर्य मुसाफिर विद्यालय' मे चले गए। यह विद्यालय उन दिनो आर्य उपदेशकों और प्रचारको के प्रशिक्षण का महत्त्वपूर्ण केन्द्र था। इसी स्थान पर आपका सम्पर्क पण्डित केदारनाथ विद्यार्थी (बाद मे राहुल सांकृत्यायन) और मौलवी महेशप्रसाद-जैसे विश्व-ख्याति के विद्वानों से हुआ। ये दोनो महानुभाव भी उन दिनों वहाँ पढा करते थे। राहुल जी ने अपनी 'आत्मकथा' मे भी उन दिनों के 'रामसहाय' का प्रेमपूर्वक स्मरण किया है।

'आर्य मुसाफिर विद्यालय' में विधिवत् दीक्षित होकर आप 'आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा' की सेवा मे चले गए और 'राममहाय आर्योपदेशक' कहलाने लगे। सभा मे जाकर आपने लगभग 50 वर्ष तक आर्यसमाज की सर्वात्मना सेवा की और उपदेशक के कार्य के साथ-साथ प्रारम्भ मे आपने अनेक वर्ष तक सभा के साप्ताहिक मुखपत्र 'आर्य मार्तण्ड' का सम्पादन भी किया था। आप जहाँ उच्च-कोटि के वक्ता, शास्त्रार्थ महारथी और उत्साही नेता थे वहाँ 'आर्य मार्तण्ड' के माध्यम से आपने अपनी लेखन-पटुता का भी परिचय दिया था। आपने अनेक पुस्तकें भी लिखी थी। वल्लभ सम्प्रदाय के महाभागो पर चलाए गए मुकदमे का रोचक वृत्तान्त आपने अपनी 'पापमोचनी कथा' नामक कृति मे प्रस्तुत किया है। इसके अतिरिक्त आपकी 'राधा का रहस्य', 'क्या हनुमान वानर थे', 'भारत कीर्ति', 'निष्कलक कृष्ण' आदि आपकी अनेक उल्लेखनीय कृतियाँ है। 'आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान तथा मालवा' की सेवा मे सलग्न रहने के साथ-साथ आप अजमेर के सर्वश्री चाँदकरण शारदा, प० जियालाल, मानकरण शारदा और प्रकाशचन्द्र कविरत्न आदि अनेक नेताओं और कार्यकर्ताओं को उचित सहायता और मार्ग-निर्देशन भी देते रहते थे।



सभा के महोपदेशक पद से निवृत्ति पाने के उपरान्त

आपने सन्यास धारण कर लिया था और 'रामसहाय आर्योपदेशक' से 'स्वामी ओम्भक्त' हो गए थे। इतने लम्बे समय तक राजस्थान व मालवा मे आर्यसमाज की गतिविधियों से जुडे रहने के कारण आपको उस प्रदेश की आर्यसमाजों के इतिहास का 'कोश' कहा जाता था और वास्तव मे थे भी 'विश्व कोश' ही। उनरती उम्र मे भी अपने जीर्ण-शीर्ण स्वास्थ्य की तनिक भी परवाह न करके आप निष्काम भाव से सदैव आर्यसमाज की सेवा मे सलग्न रहा करते थे। 'परोपकारिणी सभा' की ओर से जब-जब भी कोई उत्सव या मेला आयोजित किया जाता था, स्वामी ओम्भक्त का उसमे अनन्य तथा प्रमुख योगदान रहता था। वास्तव मे राजस्थान मे आज आर्यसमाज के प्रति जनता मे जो प्रेम तथा निष्ठा दिखाई देती है उसका प्रमुख श्रेय स्वामी ओम्भक्त को ही दिया जाना चाहिए।

आपका निधन 30 जनवरी सन् 1974 को जोधपुर मे हुआ था।

श्रीमती ओम्वती अग्रवाल

श्रीमती ओम्वतीजी का जन्म उत्तर प्रदेश के झाँसी जनपद के नथ गाँव (छावनी) नामक स्थान मे सन् 1916 मे हुआ था। आपने अपने पारिवारिक परिवेश मे रहते हुए ही प्रवेशिका, विद्या विनोदिनी, हाईस्कूल, इटर, विशारद और साहित्य रत्न आदि परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। हिन्दी और अँग्रेजी के अतिरिक्त आपको सस्कृत, बगला, उर्दू, पजाबी और गुजराती आदि कई भाषाओं का



भी अच्छा ज्ञान था।

आप हिन्दी की सवेदनशील कवयित्री होने के साथ-साथ अच्छी गद्य-लेखिका भी थी। आपकी कविताएँ हिन्दी की अनेक पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित होती रहती थी। आपकी प्रकाशित कृतियो म 'भारतीय त्योहार' और 'लोक-कथाएँ' प्रमुख है। आपको साहित्य की दिशा मे बढने का प्रोत्साहन अपने पतिदेव से मिला था।

आपका निधन सन् 1968 मे लखनऊ मे हुआ था।

श्रीमती कनीज़ फातमा

श्रीमती कनीज़ फातमा का जन्म मध्यप्रदेश की रीवाँ रियासत मे सन् 1878 में हुआ था। आप रीवाँ राज्य के सुप्रसिद्ध सगीतज्ञ दिलावरखाँ की धर्मपत्नी और हिन्दी की अत्यन्त लोकप्रिय कवयित्री थी। दादरा, गजल तथा भजन लिखने मे आप अत्यन्त निपुण थी और उनमे नारी-जीवन के प्रेम एव विरह का प्रकटीकरण इस प्रकार करती थी कि जन-साधारण मे आपका काव्य बहुत लोकप्रिय हो गया था। आपकी रचनाओं का सकलन 'जज्बाते कनीज' नाम से प्रकाशित हुआ था।

क्योकि आपके पति श्री दिलावर खाँ रीवाँ दरबार के प्रख्यात सगीतज्ञ थे इसलिए आपकी रचनाएँ भी सगीत की कसौटी पर पूरी उतरती हैं। आपके काव्य की भाषा उर्दू-मिश्रित सरल हिन्दी होती थी। यही कारण है कि आपकी गजले तथा दादरे जन-साधारण मे सहजता से लोकप्रिय हो गए थे। नारी-जीवन की पीडा को मूर्त्त रूप देने मे आपने अपनी प्रतिभा का प्रचुर प्रयोग किया था। आपकी बहुत-सी रचनाओ मे भक्ति-रस का बाहुल्य भी दिखाई देता था।

कनीज के काव्य की भाषा प्राय आम बोल-चाल की है। अलकारो और दुरूह उपमानो के प्रयोग से आप सर्वथा दूर ही रही है। आपने अपने दादरो तथा अन्य रचनाओ मे अपने हृदय की पीड़ा और प्रियतम से मिलने की उत्कठा को जिस उत्कटता से अभिव्यक्त किया है वह सर्वथा अनुपम और विरल है। एक बानगी देखिए :

पिया तोरे दरस बिन मर जाऊँगी
मैं तो सबकी नजरियों से गिर जाऊँगी।
जो तुम पिया मोहे दरस न देहो,
दोऊ जगत् से गुजर जाऊँगी।।
माई-बाप जब घर से निकारिहै,
तुम ही बताओ किधर जाऊँगी।
आओ पिया अब डूबी 'कनिज' इक
बहियाँ पकड़ लो उबर जाऊँगी।।

आपका निधन जब सन् 1948 मे हुआ था तब आपकी आयु 70 वर्ष की थी और आप अपने जीवन की अन्तिम घड़ियों मे भी 'श्याम' का नाम ही जप रही थी।

श्री कन्नय्या तिरुवीथि

श्री कन्नय्या का जन्म आन्ध्र प्रदेश के त्रिचूर जिले के कालहस्ति नामक स्थान मे 15 जनवरी सन् 1910 को हुआ था। आपने 'दक्षिण हिन्दी प्रचार सभा' मद्रास की हैदराबाद शाखा के द्वारा सचालित 'हिन्दी विद्यालय' मे विधिवत् शिक्षा प्राप्त करके 'राष्ट्रभाषा विशारद' तथा 'एम०एस०एल० सी० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी।



सन् 1934 मे आप हिन्दी-प्रचार के कार्य मे सलग्न हुए थे और सभा के पाकाला, मदनपल्लि, चन्द्रगिरि, रेणुगुण्टा तथा तिरुपति आदि अनेक केन्द्रो मे अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया था।

आपका निधन 23 दिसम्बर सन् 1955 को हुआ था।

श्री कन्हैयालाल चंसोलिया 'लाल विनीत'

श्री लाल विनीत का जन्म मध्य प्रदेश के सागर जनपद के देवरी नामक स्थान के समीपवर्ती चिटचिट्टा नामक स्थान मे सन् 1878 मे हुआ था। देवरी के मिडिल स्कूल मे मिडिल तक की शिक्षा प्राप्त करके आपने अध्यापक बनने की ट्रेनिंग लेकर अध्यापन का कार्य प्रारम्भ कर दिया था। आपकी रचनाएँ प्राय. रीतिकालीन परिपाटी की हुआ करती थी। समस्या-पूर्ति करने मे आप बहुत दक्ष थे। आपने 'लक्ष्मी उपदेश लहरी' का सम्पादन भी किया था। आप भी 'मीर मण्डल' के प्रमुख कवि थे।

पहले देवरी से सागर तक ऊँटगाडियाँ ही चला करती थी। उन पर की गई यात्रा का वर्णन आपने जिस व्यग्य-विनोदमयी शैली मे किया है वह सर्वथा अभूतपूर्व है। आपने लिखा था

ऊँट गाडी मे लगै दचका
जब ऊँट चले करि हाल चका
सो 'लाल विनीत' कहै सच का।

आपके निधन पर देवरी मे जो शोक-सभा हुई थी उसमे श्री नेगी लहीप्रसाद ने जो कविता सुनाई थी उससे श्री 'लाल विनीत' की महत्ता का अनुमान हो जाता है। आपने लिखा था

मण्डल मीर के रत्न अनूपम,
काव्य-कला द्युति जानन हारे।
भारत-भक्त भले सबके,
कुल मे जो दीपक से उजियारे।।
देवरी नाम किया जग उज्ज्वल,
'नेगी' कहै गुण को नहि पारे।
श्रावण कृष्ण एकादशी के दिन,
'लाल विनीत जी' स्वर्ग सिधारे।।

आपका निधन सन् 1938 मे हुआ था।

पण्डित कन्हैयालाल मिश्र

श्री मिश्र जी का जन्म मध्य प्रदेश के विलासपुर जनपद के

जाँजगीर नामक स्थान मे जुलाई सन् 1897 में हुआ था। आप छत्तीसगढ क्षेत्र के पुराने साहित्यकारो में अग्रणी स्थान रखते थे। आपके समकालीन लेखकों मे सर्वश्री लोचनप्रसाद पाण्डेय, सैयद अमीरअली 'मीर', डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र, तथा पण्डित मधुमगल मिश्र आदि प्रमुख थे। आपने हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार श्री रामनरेश त्रिपाठी के 'कविता कौमुदी' नामक ग्रन्थ के पाँचवे भाग के लिए छत्तीसगढ क्षेत्र के लोकगीत सकलित कराने की दिशा में बहुत बडा योगदान दिया था। इस बात का उल्लेख त्रिपाठी जी ने अपने उक्त ग्रन्थ की भूमिका में विशेष रूप से किया है। आपके लेख आदि विलासपुर डिस्ट्रिक्ट कौंसिल के शिक्षा विभाग की ओर से प्रकाशित मासिक पत्र 'विकास' मे समय-समय पर प्रकाशित होते रहते थे। छत्तीसगढ क्षेत्र की कहावतों और लोकोक्तियो के संबध मे आपने अनेक मौलिक लेख लिखे थे।

आप एक अच्छे गद्य-लेखक होने के साथ उच्चकोटि के कवि भी थे। आपकी रचनाओं में अवधी तथा ब्रजभाषा का अद्भुत समन्वय दृष्टिगत होता है। कुछ कविताएँ आपने खड़ी बोली मे भी की थी। आपकी रचनाओ के सकलन 'भजन रत्नाकर' एवं 'पद्य प्रसून' नाम से अभी अप्रकाशित ही है।

आपका निधन 27 जनवरी सन् 1967 को हुआ था।

श्री कन्हैयालाल वैद्य

श्री वैद्य जी का जन्म मध्य प्रदेश की झाबुआ रियासत के थांदला नामक ग्राम मे सन् 1909 मे हुआ था। आपके पिता श्री दौलतराम जी वैद्य अपने क्षेत्र के अत्यन्त प्रतिष्ठित नागरिक थे। महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन के कारण आपका अध्ययन बीच मे ही रुक गया था। सन् 1931 मे अँग्रेजी शासन द्वारा वकालत की सनद छीन लिये जाने के कारण आपने पत्रकारिता के क्षेत्र को अपनाया था और अँग्रेजी, गुजराती, मराठी, उर्दू तथा हिन्दी के 40 से अधिक पत्रो के सम्वाददाता के रूप मे अपना कार्य प्रारम्भ किया था।

आप जहाँ उच्चकोटि के पत्रकार थे वहाँ सामाजिक एवं राजनीतिक जागरण के क्षेत्र में भी आपका कार्य सर्वथा प्रशंसनीय एवं अभिनन्दनीय था। देश के स्वाधीनता-सग्राम मे कई बार जेल-यात्राएँ करने के साथ-साथ आपने पत्रकारिता के माध्यम से अँग्रेजों और देशी राजाओ के अनेक षड्यन्त्रों का अनेक बार भडाफोड किया था। आप घनघोर और क्रातिकारी मनोवृत्ति के राष्ट्रीय कार्यकर्ता होने के कारण कई बार अपने जिले और प्रान्त मे निर्वासित किये गए थे। राज्यसभा के सदस्य के रूप मे भी आपने हिन्दी के लिए बहुत प्रशसनीय कार्य किया था।



आपका निधन सन् 1974 मे उज्जैन में हुआ था।

श्री कमलदेवनारायण

श्री नारायण का जन्म बिहार के मुजफ्फरपुर जिले के बखरा नामक ग्राम मे 15 मई सन् 1900 को हुआ था। प्रारम्भ मे आपकी शिक्षा उर्दू मे हुई थी, किन्तु जब सन् 1910 मे आप स्कूल मे प्रविष्ट किए गए तब आपने हिन्दी ही ली थी। नार्थ ब्रुक स्कूल से मैट्रिक तथा टी० एन० जुबली कालेज से इटर की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के अनन्तर आपने पटना कालेज मे सन् 1923 तथा सन् 1926 में क्रमशः बी० ए० तथा एल-एल० बी० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। फिर आप दरभंगा मे वकालत करने लगे।

बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन का कार्यालय जब तक मुजफ्फरपुर में रहा तब तक सम्मेलन को आपका सहयोग बराबर प्राप्त होता रहा। आपके साहित्यिक जीवन का

प्रारम्भ सन् 1917 से होता है जबकि आप विद्यार्थी ही थे। उस समय आपकी रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित होती रहती थी। आपने कहानी, निबंध, जीवनी तथा उपन्यास आदि विभिन्न विधाओं मे रचनाएँ की हैं। आपकी प्रकाशित रचनाओं के नाम इस प्रकार है—'ईश्वरचन्द्र विद्यासागर' (जीवनी), 'युगल-कुसुम' (कहानी), 'अर्द्धांगिनी' (निबन्ध), 'झरना' (कहानी सग्रह), 'एक भूल' (उपन्यास), 'जीजा' (उपन्यास), 'खानदानी' (उपन्यास), 'जोड़ा' (उपन्यास), 'माया'(उपन्यास),'गपशप' (उपन्यास), 'भूखा भगवान्' (उपन्यास), 'बदर्जे मजबूरी' (कहानी-सग्रह), 'भले आदमी कैसे बनें' (निबन्ध), 'हँसते कैसे रहें' (निबन्ध), 'हिन्दी मुहावरे और उनका उपयोग' (निबन्ध), 'साइस की बातें' (निबन्ध), 'दाम्पत्य जीवन की समस्याएँ' (निबन्ध) आदि।

आपका निधन सन् 1970 मे हुआ था।

राजा कमलनारायण सिंह

खैरागढ (मध्य प्रदेश) के राजा कमलनारायण सिह का जन्म सन् 1871 मे नागपुर मे हुआ था। उन दिनों नागपुर मध्य-प्रदेश की राजधानी था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा खैरागढ मे हुई थी और बाद मे आप आगे की उच्च पढाई करने के लिए जबलपुर के राजकुमार कालेज मे चले गए थे।

आपने जहाँ अँग्रेजी की उच्च शिक्षा प्राप्त की थी वहाँ पण्डित माधवदत्त के द्वारा संस्कृत वाङ्मय का भी गहन अध्ययन किया था। आपने सन् 1890 मे खैरागढ राज्य का शासन-प्रबन्ध सँभाला था। वहाँ की जनता मे आपका बहुत अधिक सम्मान था। इसका ज्वलन्त प्रमाण यही है कि जनता जनार्दन ने आपकी शासन-पटुता से प्रभावित होकर 'राजा' की उपाधि प्रदान की थी। खैरागढ़ राज्य मे हिन्दी का वातावरण तैयार करने में आपने प्रशसनीय कार्य किया था।

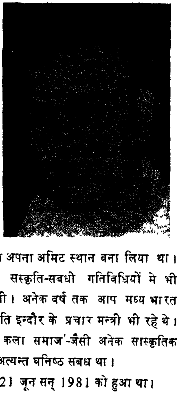
आप हिन्दी-सस्कृत के मर्मज्ञ विद्वान् तथा साहित्यकार थे। गान विद्या मे प्रवीण होने के साथ-साथ आप पखावज बजाने मे भी बहुत सिद्धहस्त थे।

आपका निधन 7 अक्तूबर सन् 1908 को हुआ था।

श्री कमलाकान्त मोदी

श्री मोदी का जन्म 10 जुलाई सन् 1926 को मध्य प्रदेश के इन्दौर क्षेत्र के कम्पेल नामक ग्राम मे हुआ था। आपकी सारी शिक्षा-दीक्षा इन्दौर मे ही सम्पन्न हुई थी। सन् 1948 मे एम० ए० और सन् 1951 मे एल-एल० बी० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने पूर्णत पत्रकारिता को ही अपना लिया था। वैसे जब आप पढते थे तब से ही आपने सन् 1946 मे इन्दौर से प्रकाशित होने वाले 'दैनिक क्राति' नामक पत्र मे सह-सम्पादक के रूप मे पत्रकारिता के क्षेत्र मे प्रवेश कर लिया था। फिर आपने सन् 1951-52 मे कुछ समय तक श्री पुरुषोत्तम 'विजय' के 'इन्दौर समाचार' मे भी कार्य किया था। इसके उपरान्त आप इन्दौर नगरपालिका की सेवा मे 'जन सम्पर्क अधिकारी' के रूप मे आ गए। यहाँ पर आपने 'उपायुक्त' और 'सचिव' के पद पर भी अनेक वर्ष तक सफलतापूर्वक कार्य किया था।

एक उत्कृष्ट पत्रकार के रूप मे आपकी प्रतिभा का परिचय इन्दौर नगर के नागरिको को उस समय मिला जब आपने अनेक वर्ष तक नगर-पालिका के पत्र 'नागरिक' का कुशलतापूर्वक सपादन किया। इस पद पर रहते हुए आपने अपने मृदुल स्वभाव और सहृदयता के कारण सभी



कर्मचारियो के मन मे अपना अमिट स्थान बना लिया था। कला-साहित्य और सस्कृति-सबधी गतिविधियों मे भी आपकी गहन रुचि थी। अनेक वर्ष तक आप मध्य भारत हिन्दी साहित्य समिति इन्दौर के प्रचार मन्त्री भी रहे थे। नगर की 'अभिनव कला समाज'-जैसी अनेक सास्कृतिक संस्थाओं से आपका अत्यन्त घनिष्ठ सबध था।

आपका निधन 21 जून सन् 1981 को हुआ था।

स्वामी करपात्री जी महाराज

स्वामी करपात्री जी का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ जनपद के भटनी नामक ग्राम में सन् 1907 मे हुआ था। आपके पूर्वज वैसे गोखपुर जनपद के ओझौली नामक ग्राम के निवासी थे, किन्तु कालाकाँकर रियासत के तत्कालीन नरेश के आग्रह पर आपके पितामह यहाँ आकर बस गए थे। आपके पिता श्री रामनिधि ओझा सात्विक एव धार्मिक प्रवृत्ति के सरयूपारीण ब्राह्मण थे और आपका मूल नाम हरनारायण था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिताजी के निरीक्षण मे ही हुई थी और आपने घर पर रहते हुए ही संस्कृत की 'प्रथमा' परीक्षा के पाठ्य-ग्रन्थो का पारायण कर लिया था। आपकी प्रवृत्ति बचपन से ही कुछ विलक्षण थी। सांसारिक कार्यों मे विरक्ति के कारण आप प्राय एकान्त-सेवन को ही प्रमुखता दिया करते थे। कभी-कभी जब मन मे आता तब घर से भी निकल पडते थे। न जाने कितनी बार आपको पकडकर घर पर लाया गया था।

जब घर वालो ने आपकी यह प्रवृत्ति देखी तो उन्होंने छोटी-सी आयु में ही आपका विवाह कर दिया था। आप केवल 17 वर्ष के ही थे कि एक कन्या के पिता बन गए। इस घटना के उपरान्त आप एक दिन अचानक घर से निकल गए। इसी बीच आपकी भेट प्रयाग के समीप कुरेश्वर ग्राम मे एक विशाल वटवृक्ष की छाया मे बैठे हुए एक टाट - कोपीनधारी ध्यानमग्न महात्मा से हो गई। इन महात्मा का नाम स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती था, जो कालान्तर मे ज्योतिष्पीठ के शकराचार्य हुए। उन्होने आपका नाम 'हरि चेतन' रखा और आपको अपने अध्ययन को सम्पूर्ण करने का सुझाव दिया। फलस्वरूप लगभग 7 वर्ष तक हिन्दू धर्मशास्त्रों का विधिवत् अध्ययन करने के उपरान्त आपने संन्यास ग्रहण कर लिया और आप 'हरि चेतन' से 'हरिनारायणानन्द' हो गए, किन्तु आपका यह नाम भी अधिक दिन नही चल सका। किसी भी प्रकार के बरतन मे भोजन न करने के निश्चय के फलस्वरूप आपने अपने हाथ मे भिक्षा लेना प्रारम्भ कर दिया और इस प्रकार आप 'करपात्री स्वामी' कहलाने लगे।



स्वामी करपात्री जी उन साधुओं में नही थे जो किसी गहन गुफा या आश्रम मे बैठकर एकान्त साधना करने मे विश्वास करते है। हिन्दू-जीवन-दर्शन का प्रचार करने के लिए सन् 1940 मे आपने 'अखिल भारतीय धर्म सघ' नामक सस्था की स्थापना की। देश मे पाश्चात्य सस्कृति के बढते हुए प्रभाव को रोकने के लिए आपने 'धर्म सघ शिक्षा मडल' नामक सस्थान के माध्यम से देश मे यत्र-तत्र अनेक ऐसे विद्यालय भी स्थापित किए जिनमे भारतीय धर्म-ग्रन्थो की शिक्षा-दीक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। भारतीय राजनीति मे धर्म को उचित स्थान दिलाने की दृष्टि से आपने सन् 1952 मे 'अखिल भारतीय रामराज्य परिषद्, की स्थापना करके उसके माध्यम मे भारतीय ससद् और विभिन्न प्रदेशो की विधान-सभाओं मे भी अपने प्रतिनिधि भेजने का निश्चय किया और उसमे आप काफी सफल भी हुए। 'हिन्दू कोड बिल' और 'गो हत्या'-जैसे प्रश्नो पर आपने सत्तारूढ दल की नीतियो का डटकर विरोध किया। आपने सन् 1966 म गो-हत्या-विरोधी आन्दोलन का सफल नेतृत्व भी किया था और आप जीवन-पर्यन्त गो-वध पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए सतत संघर्ष करते रहे।

स्वामीजी एक उत्कट धर्म-प्रचारक और कर्मठ सगठक होने के साथ-साथ हिन्दी के उच्चकोटि के लेखक भी थे। आपने दो दर्जन से अधिक ग्रन्थो की रचना की थी, जिनमे 'रामायण मीमासा', 'मार्क्सवाद और रामराज्य', 'संघर्ष और शान्ति', 'विचार पीयूष', 'भक्ति सुधा', 'वेद-स्वरूप विमर्श', 'विचार रत्नाकर', 'विदेश यात्रा—शास्त्रीय पक्ष',- 'वेदार्थ पारिजात', 'भक्ति रसार्णव', धर्म और राजनीति', 'श्री विद्यारत्नाकर', 'चातुर्वर्ण्य सस्कृति विमर्श', 'सकीर्तन मीमांसा एव वर्णाश्रय धर्म', 'वेद का स्वरूप और प्रामाण्य', 'राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ और हिन्दू धर्म', 'पूँजीवाद, समाजवाद और राम राज्य', तथा 'वेद प्रामाण्य मीमासा'

आदि उल्लेखनीय है। आपके इन ग्रन्थो में से कई पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कार भी प्रदान किया गया था। भारतीय वाङ्मय का कोई भी अंग आपकी प्रतिभापूर्ण दृष्टि से अछूता न बचा था। पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपकी देन सर्वथा अभिनन्दनीय एवं अविस्मरणीय है। यह आपके व्यक्तित्व का अभूतपूर्व चमत्कार ही था कि आपने 'सन्मार्ग'-जैसे दैनिक पत्र का प्रकाशन दिल्ली से प्रारम्भ किया था, जो आजकल काशी और कलकत्ता से एक साथ प्रकाशित होता है। 'सन्मार्ग' का स्थान हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र मे अपनी स्पष्ट और निर्भीक नीति के कारण सर्वथा अनुपम और अभिनन्दनीय है। कुछ दिन तक आपने 'सिद्धान्त' नामक एक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन भी किया था, जो अनेक वर्ष तक सफलतापूर्वक चलता रहा था।

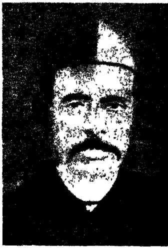
इन सब लोकोपयोगी कार्यों के साथ-साथ आपने विश्व-शान्ति के पावन सन्देश को आधार बनाकर सन् 1942 मे दिल्ली मे यमुना तट पर जो 'शतादुखकोटि यज्ञ' का ऐतिहासिक अनुष्ठान किया था, उसे देखने के लिए नित्य-प्रति देश के सहस्रों नर-नारी एकत्र हुए थे। ऐसा ही एक आयोजन आपने कानपुर मे गगा के उस पार सन् 1943 मे भी किया था। कानपुर के पश्चात् काशी मे नगवा के समीप गगा के पावन तट पर भी आपने एक ऐसा ही महान् अनुष्ठान किया था जिसमे 108 बार 'श्रीभद्भागवत' का सप्ताह-पाठ भी आयोजित किया गया था। इस यज्ञ के बाद आपने लखनऊ तथा उदयपुर मे 'लक्ष चण्डी महा यज्ञ' का अनुष्ठान भी सम्पन्न किया था। आपकी ऐसी मान्यता थी कि देश के चहुमुखी कल्याण और मगल के लिए ऐसे यज्ञो का विधान अत्यन्त आवश्यक है।

आपका निधन 7 फरवरी सन् 1982 को काशी मे पावन गगा-तट पर हुआ था।

श्री कर्ण कवि

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ जनपद के चँडोली (खुर्द) नामक ग्राम मे सन् 1881 मे हुआ था। यह ग्राम अलीगढ़-अतरौली मार्ग पर साधु आश्रम (हरदुआगज) के पास नहर के किनारे पर है। आपके काव्य-गुरु कविता कामिनीकान्त पंडित नाथूराम शर्मा 'शकर' इसी हरदुआगंज ग्राम के निवासी थे और उनके निरन्तर सत्सग से ही आप काव्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए थे। 'शकर' जी के पास आने वाले अनेक कवियो और साहित्यकारों के सम्पर्क ने कर्ण कवि की प्रतिभा को और भी चमका दिया था। शकर जी के सुपुत्र पण्डित हरिशकर शर्मा आपको अपने भाई के समान मानते थे।

क्योकि शकरजी विचारो से आर्यसमाजी थे अत उनकी रचनाओ मे सुधारवादी भावनाओ का अद्भुत समन्वय रहता था। कर्ण कवि की रचनाओ मे भी अपने गुरु शकर जी की भाँति वे ही भावनाएँ प्रचुर परिमाण मे समाविष्ट रहती थी। आप स्वभाव से सरल और लेखन से योद्धा के रूप मे समाज मे जाने जाते थे। आपकी 'सुमन माला', 'यमुना लहरी', 'अनुराग वाटिका' और 'काव्य कुसुमोद्यान'



नामक प्रकाशित काव्य-कृतियो से आपकी कवित्व-प्रतिभा का सही अनुमान हो जाता है। इन रचनाओ के अतिरिक्त आपकी 'जेबी हिन्दी कोष' और 'तहजीबुल इस्लाम' (अनूदित) नामक कृतियाँ भी उल्लेखनीय है।

हिन्दी-कविता मे छायावाद के बढते हुए प्रभाव से आप बडे चिन्तित रहा करते थे। समाज मे प्रचलित अनेक दुष्प्रवृत्तियो और कुरीतियो पर चोट करके उसे सुधारवादी पथ पर अग्रसर करना ही आपके कवि का एकमात्र लक्ष्य था। आपकी काव्यगत विशिष्टता और व्यक्तित्व की महत्ता का परिचय हमे कविवर डॉ॰ हरिशकर शर्मा की उन पक्तियो से मिल जाता है जो उन्होने कर्ण कवि की 'सुमन माला' नामक काव्य पुस्तक की भूमिका मे लिखी थी। उनका कहना था—"हमारी धारणा है कि कर्ण कवि जी आर्यसमाज ही नही

हिन्दी के ऊँचे कवियों की कोटि मे परिगणित करने योग्य है। उनका अधिक विज्ञापन नही हुआ, उन्हें उचित ऊँचाई पर ले जाने के लिए मित्रों की ओर से प्रोत्साहन नही दिया गया, उनकी सरलता और सिधाई ने उन्हे 'महाकवि' या 'युगप्रवर्त्तक कवि' बनने के लिए नही उकसाया।" एक बार उन्होने छायावादी छन्द-विहीन काव्य-पद्धति के प्रति अपनी चिन्ता इस प्रकार प्रकट की थी ·

वह न कलित कविता रही, यह न सुकवि रस-सिद्ध।
रही कल्पना भी न वह, आए भाव निषिद्ध॥

अपनी रचनाओ मे आप समाज को ऊँचे आदर्शों की ओर ले जाने की पुनीत भावनाएँ ही समाविष्ट किया करते थे। यह दुर्भाग्य की बात है कि ऐसे प्रतिभाशाली कवि की अनेक रचनाएँ अभी अप्रकाशित ही पडी है। आपकी ऐसीं रचनाएँ 'कामना कौमुदी' और 'कर्ण सतसई' नामक सग्रहो मे समाविष्ट हैं। सीधी-सादी भाषा मे गहन-से-गहन बात को पाठक तक पहुँचाना ही आपकी कविता का एक-मात्र उद्देश्य था। किसी समय देश के सुधारवादी आन्दोलन के सवाहक कवि के रूप मे कर्ण कवि का नाम बड़े सम्मान से लिया जाता था।

आपका निधन 20 जून सन् 1943 को हुआ था।

आचार्य काका साहेब कालेलकर

काका साहेब का जन्म एक दिसम्बर सन् 1885 को महाराष्ट्र के सातारा नामक नगर मे हुआ था। आपके पिता श्री बालकृष्ण जीवाजी सातारा मे कलक्टर थे। आपका पूरा नाम 'दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर' था। आपकी प्रारभिक शिक्षा कारवार, पूना, शाहपुर और बेलगाम मे हुई थी और मैट्रिक की परीक्षा आपने सन् 1903 मे उत्तीर्ण की थी। मन् 1904 से सन् 1907 तक जब आप पूना के फर्गुसन कालेज मे पढ़ रहे थे तब ही राष्ट्रीय आन्दोलन की धाराओ से जुड़ने की भावनाएँ आपके मानस मे हिलोरे लेने लगी थीं। सन् 1907 में बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरांत आप सर्वप्रथम बेलगाम के 'गणेश विद्यालय' के आचार्य नियुक्त हुए। किन्तु वहाँ पर थोड़े ही समय कार्य करने के उपरांत वकालत पढने का संकल्प किया। इसी बीच 18 जून सन् 1908 को आपकी माताजी तथा सन् 1910 में आपके पिताजी का असामयिक निधन हो गया।

जब आप बम्बई मे एल-एल० बी० के द्वितीय वर्ष मे अध्ययन कर रहे थे तब ही आपने लोकमान्य बाल गगाधर तिलक के 'राष्ट्रमत' नामक एक मराठी दैनिक में कार्य करना प्रारभ कर दिया था। जब सरकारी प्रतिबंध के कारण 'राष्ट्रमत' बन्द हो गया तब आप बड़ौदा के गंगनाथ विद्यालय के आचार्य होकर वहाँ चले गए। किन्तु वहाँ भी जब सरकारी प्रतिबध के कारण वह विद्यालय बन्द कर दिया गया तब आप पर्वतीय स्थानो की यात्रा करने की दृष्टि से हिमालय की ओर चले गए। पहले कुछ दिन तक आप देहरादून रहे और फिर सन् 1913 मे थोडे समय तक 'ऋषिकुल हरिद्वार' के मुख्य अधिष्ठाता भी रहे। इसके उपरांत कुछ समय सिन्ध के एक ब्रह्मचर्याश्रम मे कार्य करने के उपरात आप सन् 1915 मे 'शान्ति निकेतन' चले गए और यही पर आपकी भेंट महात्मा गाधी से हुई। जिन दिनो महात्माजी शान्ति निकेतन मे गए थे तब काका साहेब वहाँ पर पढाया करते थे। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि जब आप लोकमान्य तिलक के 'राष्ट्रमत' नामक पत्र मे कार्य करते थे तब अँग्रेजो की गुप्तचर पुलिस आपके पीछे पड गई थी, फलत. आप साधु का वेश बनाकर भूमिगत हो गए थे। उन दिनो आप 'साधु दत्तात्रेय' कहलाते थे। पुलिस की निगाह से बचने के लिए आपने कश्मीर से नेपाल तक लगभग 3500 किलोमीटर की यात्रा पैदल ही सम्पन्न की थी। इस यात्रा के प्रसग मे आप 'शान्तिनिकेतन' पहुँचे थे। आपको गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर स्नेहवश 'दत्तू बाबू' कहा करते थे। जिन दिनों आप शान्तिनिकेतन मे थे उन दिनों सर्वश्री मगनलाल गाधी, मगनभाई पटेल, मणिलाल गांधी, रामदास गाधी, जमुनादास गाधी, प्रभुदास गाधी, कृष्णदास गाधी, देवदास गाधी और हरिहर शर्मा आदि वही पर रह रहे थे। उन्ही दिनो रवीन्द्रनाथ ठाकुर को 'सर' की उपाधि भी मिली थी।

गांधी जी की प्रेरणा पर काका साहेब सन् 1917 मे उनके 'साबरमती आश्रम' के सदस्य होकर अहमदाबाद चले गए। काका साहेब ने 'राष्ट्रभाषा हिन्दी' के सम्बन्ध मे अपना सबसे पहला लेख 'शिक्षा परिषद्' भड़ौच के लिए लिखा

और सन् 1918 में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन में गांधीजी के साथ सम्मिलित हुए। इस सम्मेलन की अध्यक्षता गांधीजी ने ही की थी। यह एक विचित्र संयोग की बात है कि अपनी मातृभाषा मराठी होते हुए भी काका साहेब ने हिन्दी-सेवा का जो व्रत लिया, उसे आपने आजीवन निबाहा। गाधीजी के निरन्तर सम्पर्क के कारण आपने न केवल गुजराती भाषा सीखी, प्रत्युत उसमे इतनी पटुता प्राप्त कर ली कि कालान्तर मे आप गुजराती भाषा के सिद्ध लेखकों में गिने जाने लगे। यहाँ तक कि सन् 1966 मे आपको जहाँ साहित्य अकादेमी की ओर से आपकी 'जीवन-व्यवस्था' नामक गुजराती पुस्तक के लिए पुरस्कृत किया गया वहाँ आपको अकादेमी ने सन् 1971 मे अपनी 'फैलोशिप' भी प्रदान की। जब 19 जुलाई सन् 1920 को अहमदाबाद मे 'गुजरात विद्यापीठ' की स्थापना की गई तो आप ही उसके प्रथम आचार्य बनाए गए थे। गाधीजी के निरन्तर सम्पर्क और सान्निध्य के कारण आपने जहाँ उनकी अनेक रचनात्मक प्रवृत्तियो मे अपना अनन्य सहयोग दिया वहाँ उनके 'नवजीवन' पत्र के सचालन और सम्पादन मे भी पूर्ण तत्परतापूर्वक सलग्न रहे। जब सन् 1922 मे 'यग इडिया' और 'नवजीवन' पर आपत्तिजनक लेख छापने के कारण गाधीजी को जेल जाना पडा तब 'नवजीवन' का सम्पादन आपको ही सँभालना पडा था। इस सन्दर्भ मे आपको भी अनेक बार जेल-यात्राएँ करनी पडी थी।



'गुजरात विद्यापीठ' और 'साबरमती आश्रम' की अनेक प्रवृत्तियो मे सलग्न रहते हुए भी आपने अपना लेखन-कार्य निरन्तर जारी रखा और जब गान्धीजी अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष बने तब उनके साथ 'हिन्दी-प्रचार' के कार्य को आगे बढाने मे भी आपका अनन्य सहयोग रहा था। जब गाधीजी सन् 1935 में अ० भा० हिन्दी साहित्य सम्मेलन के दूसरी बार अध्यक्ष बने थे तब भी आप सम्मेलन की ओर से निर्मित उसकी 'लिपि सुधार समिति' के अध्यक्ष बनाए गए थे। यह आपके व्यक्तित्व की एक विशेषता ही थी कि राष्ट्रीय प्रवृत्तियों में पूर्णत सलग्न रहते हुए भी आपने अपना लेखन-कार्य बराबर जारी रखा और सन् 1936 मे आपकी पहली गुजराती पुस्तक 'जीवन विकास' नाम से प्रकाशित हुई। इस पुस्तक मे 'नवजीवन' मे लिखे गए आपके गुजराती भाषा के लेख समाविष्ट थे। इसी वर्ष आप 'गुजराती साहित्य सम्मेलन' के बारहवे अधिवेशन के अन्तर्गत कला विभाग के सभापति भी बनाये गए। इस सम्मेलन की अध्यक्षता महात्मा गाधी ने की थी। जब गाधीजी ने वर्धा मे 'सत्याग्रह आश्रम' की स्थापना की तब आप भी उनके साथ वहाँ चले आए और वहाँ रहते हुए आपने जहाँ 'वर्धा शिक्षा योजना' को क्रियात्मक रूप प्रदान किया वहाँ 'सर्वोदय', 'सबकी बोली' और 'बुनियादी तालीम'-जैसे कई हिन्दी पत्रो का सम्पादन भी किया। मई सन् 1942 मे आपने 'हिन्दुस्तानी प्रचार सभा' की स्थापना करके अपने जीवन को हिन्दुस्तानी के प्रचार मे लगाने का सकल्प किया।

स्वतन्त्रता के उपरान्त 30 जनवरी सन् 1948 को जब महात्मा गाधीजी की हत्या हो गई तब 'गाधी स्मारक निधि' की स्थापना की गई और सन् 1951 मे आप स्थायी रूप से दिल्ली आ गए। यहाँ पर रहते हुए आपने जहाँ 'गाधी स्मारक निधि' और 'गाधी स्मारक सग्रहालय' की अनेक प्रवृत्तियो को मूर्त्त रूप देने मे अथक परिश्रम किया वहाँ 'सम्पूर्ण गाधी वाङ्मय' की प्रकाशन-योजना के भी आप परामर्शदाता रहे। यहाँ पर रहते हुए आपने 'पिछड़ी जाति आयोग' के अध्यक्ष के रूप मे भी प्रशसनीय कार्य किया था। सन् 1952 से सन् 1964 तक आप राज्य सभा के मनोनीत सदस्य भी रहे थे। आपने जहाँ देश के अनेक भू-भागो की यात्राएँ की थी वहाँ युगाडा, स्विटजरलैंड, जर्मनी, फ्रास, केनिया, टागानिका, जजीबार, रूआडा, उरूडी, इगलैंड, कम्बोडिया, वैस्टइंडीज, पुर्तगाल, अफ्रीका, नाईजीरिया, चीन, थाईलैंड, ट्रिनीडाड, ब्रिटिश गयाना, सुरीनाम, सयुक्त राष्ट्र अमेरिका, मारीशस और जापान आदि अनेक देशो का भ्रमण भी किया था। इन

सभी देशो मे आपने भारतीय सस्कृति तथा साहित्य का जो सदेश प्रचारित किया था उससे वहाँ पर काका साहेब के अनेक अनुगामी बन गए थे। अपनी साहित्य और सस्कृति-सबधी बहुविध सेवाओ के लिए आपको भारत के राष्ट्रपति की ओर से जहाँ सन् 1964 मे 'पद्म विभूषण' के सम्मान से अलकृत किया गया था वहाँ आपको सन् 1965 मे 'सस्कृति के परिव्राजक' नामक एक विशाल अभिनन्दन ग्रथ भी समर्पित किया गया था। इस ग्रथ का समर्पण राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद के कर-कमलो से सम्पन्न हुआ था। इसी प्रकार आपके 95वे जन्म-दिवस पर भारत के उपराष्ट्रपति जस्टिस एम० हिदायतुल्ला द्वारा 1 दिसम्बर सन् 1979 को आपको 'समन्वय के साधक' नामक एक और ग्रन्थ भी समर्पित किया गया था।

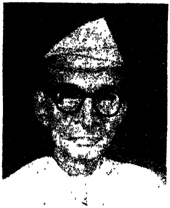
आपके कर्ममय जीवन की एक विशेषता यह भी थी कि अनेक बहुमुखी प्रवृत्तियो मे सलग्न रहते हुए भी आपने अपनी लेखनी तथा वाणी के द्वारा भारतीय साहित्य और सस्कृति के उत्थान की दिशा मे अनेक उपयोगी कार्य किये। नई दिल्ली की 'गाधी हिन्दुस्तानी सभा' के माध्यम से आपने अध्यात्म और भारतीय सस्कृति का जो सदेश दिया था वह हमारे लिए आज भी प्रेरणा-स्तम्भ का कार्य कर रहा है। अतिम दिनो मे आपके द्वारा सम्पादित 'मगल प्रभात' साप्ताहिक इसका ज्वलन्त प्रमाण है। आपने गुजराती मे जहाँ 60 से अधिक ग्रन्थ लिखे थे वहाँ हिन्दी मे भी आपकी लगभग 28 पुस्तके प्रकाशित हुई थी। इनमे से अधिकाश आपकी मौलिक कृतियाँ ही है। आपकी हिन्दी-सबधी प्रशस-नीय सेवाओ को दृष्टि मे रखकर अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा आपको 'साहित्य वाचस्पति' की उपाधि से भी सम्मानित किया गया था। आपकी हिन्दी कृतियो का विवरण कालक्रमानुसार इस प्रकार है— 'राष्ट्रीय शिक्षा के आदर्शो का विकास' (1928), 'जिन्दा बनो' (1930), 'सहजीवन की समस्या' (1937), 'सप्त सरिता' (1937), 'कला : एक जीवन-दर्शन' (1937), 'हिन्दुस्तानी की नीति' (1947), 'हिन्दुस्तानी के प्रचारक गाधीजी' (1948), 'बापू की झाँकियाँ' (1948), 'नागरी वर्णलिपि बोध' (1951), 'उस पार के पडोसी' (1951), 'कैद की आजादी (उत्तर की दीवारें)' (1951), 'हिमालय निवासियो से' (1954), 'जीवन-साहित्य' (1955), 'लोक-जीवन' (1955), 'जीवन सस्कृति की बुनियाद' (1955), 'नक्षत्र माला' (1958), 'जीवन लीला' (1958), 'सूर्योदय का देश' (1959), 'गांधीजी की अध्यात्म-साधना' (1959), 'स्वराज्य-भाषा' (1959), 'सद्बोध शतकम्' (1961), 'कठोर कृपा' (1961), 'गीता-रत्नप्रभा' (1961), 'आश्रम-सहिता (1962), 'नमक के प्रभाव से' (1962), 'प्रजा का राज प्रजा की भाषा मे' (1962), 'उडते फूल' (1964), 'यात्रा का आनन्द' (1965), 'समन्वय' (1965), 'सत्याग्रह-विचार और युद्ध-नीति' (1965), 'परसखा मृत्यु' (1966), 'शान्ति सेना और विश्व शान्ति' (1966), 'समन्वय सस्कृति की ओर' (1967), 'गीता के प्रेरक तत्त्व' (1967), 'राष्ट्रभारती हिन्दी का प्रश्न' (1967), 'युगमूर्ति रवीन्द्रनाथ' (1969), 'जीवन-योग की साधना' (1969), 'विनोबा और सर्वोदय क्रान्ति' (1970), 'गाधी-युग के जलते चिराग' (1970) 'गाधी चरित्र कीर्तन' (1970), 'गाधीजी का जीवन दर्शन' (1970), 'गाधीजी का रचनात्मक क्रातिशास्त्र (दो खडो मे—1971), 'नवभारत के चन्द निर्माता' (1972), 'युगा-नुकूल हिन्दू जीवन-दृष्टि' (1972), 'स्वराज्य सस्कृति के सतरी'(1973), 'प्रकृति का सगीत' (1976), 'ईशावास्य उपनिषद्' (1976), 'उपनिषदो का बोध' (1977)। आपकी अप्रकाशित रचनाएँ—'चिंतनिका', 'साहित्य—एक कला और जीवन दर्शन', 'नवसृजन की गाधीनीति', 'अहिंसा की जीवन-दृष्टि' और 'गाधीजी के जीवन सिद्धात' है। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा हिन्दी मे सम्पादित पुस्तके भी प्रकाशित हुई है। ऐसी पुस्तको मे 'बापू के पत्र बजाज परिवार के नाम' (1957), 'स्मरणाजलि' (1957), तथा 'आश्रम की बहनो से' (1957) विशेष उल्लेखनीय है।

आपका निधन 96 वर्ष की आयु मे 21 अगस्त सन् 1981 को नई दिल्ली मे हुआ था।

श्री कालिदास कपूर

श्री कपूर का जन्म 11 अगस्त सन् 1892 को लखनऊ के कटारी टोला नामक मोहल्ले में अपनी ननसाल में हुआ था।

आपके पिता श्री विश्वम्भरनाथ कपूर उन दिनो कानपुर-अछनेरा जाने वाली रेलवे लाइन के किसी स्टेशन पर स्टेशन-मास्टर थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा पहले अपने पिताजी के पास हुई थी और बाद में आप आगे की पढाई करने के लिए मामा के पास लखनऊ ही भेज दिये गए थे। आप जब केवल 11 वर्ष के ही थे तब से आपने आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के सम्पादन मे प्रकाशित होने वाली 'सरस्वती' पत्रिका का नियमित अध्ययन प्रारम्भ कर दिया था।



सन् 1909 मे आपने लखनऊ के 'जुबली हाई स्कूल' से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी और आगे की पढाई करने के लिए 'कैनिग कालेज' मे प्रवेश ले लिया था। आपके बाबा की योजना आपको डाक्टर बनाने की थी, किन्तु उनकी असामयिक अस्वस्थता के कारण आप इटरमीडिएट की परीक्षा मे प्रथम स्थान नही प्राप्त कर सके, फलस्वरूप विवशता के कारण आपने आगे की पढ़ाई का विचार छोडकर 30 रुपये मासिक पर 'कालीचरण हाई स्कूल लखनऊ' मे शिक्षक का कार्य प्रारम्भ कर दिया। अपने इस कार्य को करते हुए भी आपने पढाई को नही छोडा और सन् 1915 मे प्रयाग विश्वविद्यालय से बी० ए० तथा सन् 1916 मे एल०टी० की परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण कर ली। इसके उपरान्त आपकी नियुक्ति मौरावाँ (उन्नाव) के 'केदारनाथ डाइमड हाई स्कूल' मे उप प्रधानाचार्य के पद पर हो गई और आप वहाँ चले गए।

शिक्षा के क्षेत्र मे सतत सलग्न रहते हुए भी आपने सन् 1918 से 'सरस्वती' पत्रिका मे लिखना प्रारम्भ किया और आपको आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने खूब प्रोत्साहित किया। इसी बीच आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से एम० ए० (इतिहास) की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली और आप मौरावाँ के हाई स्कूल से त्यागपत्र देकर 'कालीचरण हाई स्कूल लखनऊ' मे उसके प्रधानाचार्य होकर आ गए। यहाँ यह बात विशेष रूप मे उल्लेखनीय है कि 'प्रधानाचार्य' का यह स्थान बाबू श्यामसुन्दरदास के 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' के हिन्दी-विभागाध्यक्ष हो जाने के कारण रिक्त हुआ था। उसी वर्ष प्रख्यात हिन्दी-सेवी पडित श्रीनारायण चतुर्वेदी भी लखनऊ के 'कान्यकुब्ज हाई स्कूल' के प्रधानाचार्य नियुक्त हुए थे। कपूर साहब ने 'कालीचरण हाई स्कूल' का प्रधानाचार्य पद सँभालकर जहाँ शिक्षा के क्षेत्र मे अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया वहाँ उन्होने उत्तर प्रदेश के गैर सरकारी शिक्षको के सगठन की ओर से 'एजुकेशन' नामक एक पत्रिका का भी प्रकाशन प्रारम्भ किया और आप उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षक परिषद् मे भी प्रधानाध्यापको के प्रतिनिधि निर्वाचित हुए। सन् 1936 मे आपने जापान की शैक्षिक यात्रा की और वहाँ से लौटकर 'जापान-एज आई सा इट' नामक एक अग्रेजी पुस्तक लिखी, जिसका प्रकाशन स्वतन्त्रता के उपरान्त द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर ही सभव हो सका था। आपने सन् 1938 से सन् 1947 तक 'एजुकेशन' पत्रिका का सफलतापूर्वक सम्पादन किया था। इसके उपरान्त आपने 'अखिल भारतीय शिक्षा समुदाय सघ' की मासिक पत्रिका 'भारतीय शिक्षा' का सम्पादन भी अनेक वर्ष तक किया था।

आप जब 'कालीचरण हाई स्कूल' के प्रधानाचार्य पद से 15 अक्तूबर सन् 1951 को सेवा-निवृत्त हुए तब आपने 'मुदर्रिस की राम कहानी' (1953) नामक जो आत्म-कथा लिखी थी, उसमे आपके कर्म-रत जीवन की सघर्ष-प्रवणता का परिचय मिलता है। अपने शिक्षकीय जीवन मे रहते हुए आपने अपनी लेखनी को भी पूर्णत सतर्क और जागरूक रखा। फलस्वरूप आपने लगभग दो दर्जन पुस्तके लिखी। इनमे से कुछ अंग्रेजी मे तथा शेष हिन्दी मे है। आपकी प्रमुख रचनाओं मे से कुछ के नाम इस प्रकार है--'आधुनिक पद्यावली', 'स्वतन्त्र भारत और किशोर कर्तव्य', 'किशोरावस्था की नागरिकता', 'साहित्य समीक्षा', 'शिक्षा-समीक्षा' 'भारतीय सभ्यता का विकास', 'भारतीय इतिहास की मानचित्रावली', 'स्वाधीनता की सुरक्षा', 'बाबा की बातें', 'भारतीय इतिहास की रूपरेखा', 'विश्व सस्कृति का विकास', 'मानव इतिहास की झलक', 'भारतीय इतिहास की कहानियाँ',

'हिन्दी सार संग्रह' (चार भाग), 'विज्ञान वार्ता', 'देश-देश के सखा-सहेली', 'भारतीय भू-नीति', 'भारतवर्ष का प्रारम्भिक इतिहास', 'संयुक्त राज्य परिचय', 'मुगल साम्राज्य का उत्थान और पतन', 'गांधी जी और भावी संसार', 'दम्पति दर्पण', 'पुण्यभूमि भारत', 'भारतीय अतीत की बातें', 'व्यावहारिक नैतिकता' तथा 'मानसिक स्वतन्त्रता की ओर' आदि। इनमे से क्रमश: 'भारतीय भू-नीति', 'मानसिक स्वतन्त्रता की ओर', 'दम्पति दर्पण' और 'पुण्यभूमि भारत' उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हुई थी। अपने देहावसान से पूर्व आपने देश के उन अमर सैनिको के सचित्र जीवन-चरित्र भी प्रस्तुत किए थे जिन्होने सन् 1947 से 1965 तक भारतीय स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी थी। यह खेद का विषय है कि यह पुस्तक कपूर साहब के जीवन-काल मे प्रकाशित नही हो सकी थी। अब इस पुस्तक का प्रकाशन उत्तर प्रदेश शासन के अनुदान से सम्भव हो सका है। आपके द्वारा अनूदित 'दास कौन ?' नामक पुस्तक का प्रकाशन भी सन् 1958 मे हुआ था।

यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि हिन्दी मे सर्व प्रथम 'हिन्दी सेवी संसार' नाम मे हिन्दी के साहित्यकारों और संस्थाओ का एक परिचय-ग्रन्थ आपने अप्रैल सन् 1944 मे प्रकाशित किया था। इसमे आपके सहयोगी डॉ० प्रेम-नारायण टण्डन थे, जिन्होंने इस ग्रन्थ के बाद मे 2-3 संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण स्वतन्त्र रूप से सम्पादित करके प्रकाशित किए थे।

आपका निधन 22 मई सन् 1977 को हुआ था।

पंडित कालीचरण शर्मा आर्य मुसाफिर

श्री शर्मा जी का जन्म सन् 1878 मे उत्तर प्रदेश के बदायूं जिले के एक ग्राम मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा पहले गाँव मे हुई और बाद मे आप आगे की पढाई पूरी करने की दृष्टि से आगरा के 'आर्य मुसाफिर विद्यालय' मे प्रविष्ट हो गए। यह वही शिक्षा-संस्थान है जहाँ महापण्डित राहुल सांकृत्यायन, महेशप्रसाद मौल्वी फाजिल, कुँवर सुखलाल, पण्डित रामसहाय शर्मा (बाद मे स्वामी ओम्‌भक्त) तथा ठा० अमरसिंह (आजकल अमर स्वामी) आदि अनेक विद्वानों ने शिक्षा प्राप्त की थी। उक्त सभी महानुभावों का आर्यसमाज के क्षेत्र मे अपना सर्वथा विशिष्ट स्थान रहा है। महापण्डित राहुल सांकृत्यायन उन दिनों केदारनाथ पाण्डे के नाम से जाने जाते थे। इस विद्यालय के संस्थापक शास्त्रार्थ महारथी पण्डित भोजदत्त शर्मा थे।

पण्डित कालीचरण जी ने इस विद्यालय मे रहते हुए आर्यसमाज के सिद्धान्तो का सर्वांगीण अध्ययन करने के साथ-साथ इस्लाम तथा ईसाई मतो का भी विस्तृत ज्ञान प्राप्त किया था। अपने इसी ज्ञान के आधार पर आपने सारे देश मे घूम-घूमकर ईसाइयों और मुसलमानों से अनेक शास्त्रार्थ करके अभूतपूर्व विजय प्राप्त की थी। आप लगभग 18 वर्ष तक डी० ए०वी० कालेज, कानपुर मे धर्मशास्त्र के अध्यापक रहे थे और इस संस्था मे रहते हुए आपने इस दृष्टि से अनेक छात्रों को ईसाई और मुस्लिम मतो के सिद्धान्तो की जानकारी प्रदान की थी जिससे वे उनसे डटकर लोहा ले सकें। कानपुर मे रहते हुए आपने 'आर्य तर्क मण्डल' की स्थापना करके उसके माध्यम से भी आर्य युवको मे शास्त्रार्थ करने की अभूतपूर्व मेधा को जागृत किया था। कालेज से अवकाश ग्रहण करने के उपरान्त आपने राजस्थान को अपना कार्य-क्षेत्र बनाया था और आप 'बाँदीकुई' मे रहने लगे थे, जहाँ पर आपके पुत्र रेलवे मे कर्मचारी थे। आप जहाँ ईसाई और मुस्लिम मतो के सिद्धान्तो के पारगत विद्वान् थे वहाँ आपने बौद्ध तथा जैन साहित्य का भी तलस्पर्शी अध्ययन किया था।

आप जहाँ एक कुशल तथा तार्किक वक्ता थे वहाँ आपने अपनी लेखनी को भी पूर्णत सतर्क रखा था। आपकी लेखनी का प्रसाद वे अनेक ग्रन्थ हैं जिनका निर्माण आपने किया था। ऐसे ग्रन्थो मे 'अल्ला मियाँ का हुलिया', 'अल्ला मियाँ की सुन्नत', 'अल्ला मियाँ का फोटो', 'इस्लामी गप्पें', 'काठ का उल्लू', 'मुसलमानी बुर्का', 'कुरान और उसकी शिक्षा का नमूना', 'अल्ला मियाँ की चालों का नमूना', 'विचित्र जीवन', 'कुरान मजीद' प्रथम भाग, 'हास्य रत्न माला', 'ईश्वर धर्म ज्ञान' (नास्तिक मत खण्डन), 'वेद स्वाध्याय', 'वैदिक रूसी साम्यवाद' (कम्युनिज्म मत दर्पण), 'पशु वध निषेध', 'जैन और बौद्ध एक हैं', 'ईसाई मत दर्पण' तथा 'बाइबिल मत परीक्षा' (वैदिक यज्ञ में मसीही मत की आहुति) आदि प्रमुख

हैं। आपने अरबी और उर्दू में भी अनेक ग्रन्थों की रचना की थी। राजस्थान में रहते हुए आपने वृद्धावस्था में भी अनेक उल्लेखनीय शास्त्रार्थ किए थे। ऐसे शास्त्रार्थों में 'डीडवाना का शास्त्रार्थ' प्रमुख है। यद्यपि इस शास्त्रार्थ के प्रमुख वक्ता पण्डित बुद्धदेव विद्यालकार और पण्डित लोकनाथ तर्क वाचस्पति थे, परन्तु आप भी उसमे इन दोनों विद्वानों की सहायता कर रहे थे।

आपका निधन बाँदीकुई मे 90 वर्ष की आयु मे 13 सितम्बर सन् 1968 को हुआ था।

श्री काशीनाथ खत्री

श्री खत्री का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा नगर के माईथान मोहल्ले मे सन् 1849 मे हुआ था। आपके पिता लाला दयालदास टण्डन भी हिन्दी के अच्छे कवि थे। काशीनाथ जी को हिन्दी मे लिखने की प्रेरणा अपने पिताजी से ही मिली थी, जो बाद मे आपने अपनी लगन मे परिपुष्ट की थी। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आप आगरा से सिरसा (इलाहाबाद) चले गए थे, जहाँ पर आप शिक्षक का कार्य करते थे। कुछ दिन तक आप सरकारी विभाग मे 'रिपोर्टर' का कार्य करने के उपरान्त लाट साहब के कार्यालय मे 'पुस्तकाध्यक्ष' नियुक्त हो गए थे।

आप स्वभाव से धर्म-प्रेमी और राष्ट्रभाषा हिन्दी के अनन्य भक्त थे। सरकारी सेवा मे रहते हुए भी आपने अपने लेखो और नाटको के द्वारा जन-जागरण का जो कार्य किया था उससे आपकी कर्तव्य-निष्ठा और ध्येय के प्रति अटूट लगन का परिचय मिलता है। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'खेती विद्या के मुख्य सिद्धान्त' (1883), 'परम मनोहर' (1884), 'यूरोपियन पतिव्रता और धर्मशील स्त्रियो के जीवन-चरित्र' (1884), 'मनुष्य के लिए सच्चा सुख' (1885), 'मातृभाषा की उन्नति किस विधि करना योग्य है' (1885), 'उत्तम वक्तृता देने की विधि और नियम' (1887), 'ताबीज' (1888), 'वर्ण बोध' (1890), 'ग्राम पाठशाला और निकृष्ट नौकरी' (1893), 'भारतवर्ष की विख्यात रानियों के जीवन-चरित' (1902), 'भारतवर्ष की विख्यात स्त्रियों के जीवन-चरित्र' (1902), 'स्वच्छ हिन्दी भाषा की पुस्तक' (चार भाग), 'विधवा विवाह', 'बाल विवाह की कुरीति', 'नीत्युपदेश' तथा 'भारतवर्ष का सुधार किस विधि से होना सम्भव है?' आदि के नाम विशेष रूप मे उल्लेखनीय हैं।

आपका निधन 9 जनवरी, सन् 1891 को हुआ था।

श्री काशीनाथ तिवारी झा

श्री झा का जन्म सन् 1882 को बिहार के दरभगा जिले के कोइलख नामक ग्राम मे हुआ था। माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप संस्कृत और हिन्दी साहित्य के अध्ययन की ओर अग्रसर हुए। आप पहले पूर्णिया राज्य के मैनेजर के पद पर नियुक्त हुए और बाद मे बनैली राज्य के मैनेजर हो गए। आप बनैली की रानी चन्द्रावती द्वारा निर्मित और स्थापित काशी के श्यामा-मन्दिर तथा श्यामा-महाविद्यालय के भी प्रबन्धक रहे थे। आपकी साहित्यिक योग्यता से प्रभावित होकर 'भारत धर्म महा-मडल' काशी ने आपको 'विद्यालकार' की उपाधि से विभूषित किया। आपकी अनेक स्फुट रचनाएँ हिन्दी की तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओ मे देखने को मिलती है। बगला भाषा की कई पुस्तको का हिन्दी मे अनुवाद करने के अतिरिक्त आपने 'प्रस्थानत्रय-प्रकाशिका' नामक एक ग्रन्थ भी लिखा था, जो प्रकाशित हो चुका है।

आपका निधन सन् 1966 मे हुआ था।

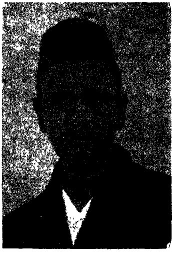
श्री काशीनाथ बलवन्त माचवे

श्री माचवे का जन्म 12 अप्रैल सन् 1902 को गुजरात प्रदेश के मेहसाना नामक स्थान मे हुआ था। आपके परिवारिकजन मूलत. ग्वालियर राज्य के निवासी थे और आपके परिवार मे मराठी भाषा का व्यवहार होता था। आपके पिता श्री बलवन्त माचवे क्योंकि रेलवे मे सेवा-रत थे

अतः आपकी शिक्षा भी विभिन्न स्थानो पर हुई थी। जब आपके पिताजी का स्थानान्तरण गुजरात मे हुआ तब आपने कुछ समय तक गुजराती माध्यम के विद्यालय मे अध्ययन किया था। फिर सन् 1910 से सन् 1916 तक हाई स्कूल की परीक्षा आपने माधव महाविद्यालय उज्जैन मे रहकर उत्तीर्ण की। मिडिल की परीक्षा मे आपको स्वर्ण-पदक प्राप्त हुआ था। आपने बी० ए० की परीक्षा 'विक्टोरिया कालेज ग्वालियर' से उत्तीर्ण की थी।

आपने अध्ययन की समाप्ति के उपरान्त रतलाम के 'दरबार हाई स्कूल' मे अध्यापक के रूप मे कार्य प्रारम्भ किया और कला तथा विज्ञान से सम्बन्धित सभी विषयो का विधिवत् अध्यापन किया। अध्यापन का कार्य करने के अतिरिक्त आपने कई वर्ष तक रतलाम के 'शासकीय महाविद्यालय' मे 'ग्रन्थपाल' के रूप मे भी कार्य किया था। आप हिन्दी के प्रख्यात लेखक डॉ० प्रभाकर माचवे के बडे भाई थे। माचवेजी ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा आपके निरीक्षण मे रतलाम मे ही सम्पन्न की थी।

श्री काशीनाथ जी एक कुशल अध्यापक होने के साथ-साथ हिन्दी के कुशल कवि भी थे। इसके अतिरिक्त मराठी और अँग्रेजी मे भी आप उसी तत्परता से लेख आदि लिखा करते थे। रतलाम मे होने वाले कवि-सम्मेलनो मे आपकी कविताएँ बडे मनोयोग से सुनी जाती थी। नागरिक शास्त्र के सम्बन्ध मे लिखी गई आपकी पुस्तक ने अत्यन्त लोकप्रियता प्राप्त की थी। आप हाकी, कबड्डी और



फुटबॉल के अच्छे खिलाडी थे। आपने रतलाम मे 'सेवा मण्डल' नामक सस्था के माध्यम से वहाँ की जनता की उल्लेखनीय सेवा की थी। आप विचारो से पूर्णतः गांधीवादी थे, अत आप आजीवन स्वावलम्बी तथा मितभाषी रहे। आपके सयम का सबसे बडा प्रमाण यही है कि इतने दीर्घ-कालीन अध्यापन के जीवन मे आपने कभी किसी छात्र को मारा-पीटा तक नही था।

आपका निधन 8 सितम्बर सन् 1977 को हुआ था।

आचार्य किशोरीदास वाजपेयी

वाजपेयी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के कानपुर जनपद के मधना क्षेत्र के रामनगर नामक ग्राम के एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार मे सन् 1898 मे पडित सतीदीन वाजपेयी के यहाँ हुआ था। आपका जन्म-नाम 'गोविन्दप्रसाद' था। शैशवावस्था मे गाँव मे साधारण शिक्षा प्राप्त करके आप सस्कृत पढने के विचार से वृन्दावन पहुँचे थे। उसी समय आपने सन् 1916 मे 'दशधा भक्ति' नाम से सबसे पहला हिन्दी-लेख लिखा, जो प्रख्यात साहित्यकार श्री किशोरीलाल गोस्वामी के सम्पादन मे वृन्दावन से प्रकाशित होने वाले 'वैष्णव सर्वस्व' नामक पत्र मे प्रकाशित हुआ था। कुछ दिन तक आप इस पत्र के सहायक सम्पादक भी रहे थे। वहाँ पर रहते हुए आपने सन् 1917 मे बनारस की सस्कृत की प्रथमा परीक्षा, सन् 1918 मे पजाब विश्वविद्यालय की 'विशारद' और सन् 1919 मे वहाँ की 'शास्त्री' परीक्षा ससम्मान उत्तीर्ण की थी।

शास्त्री की परीक्षा देने के उपरान्त आपने सोलन (हिमाचल) के बी० डी० हाई स्कूल मे अपना अध्यापकी का जीवन प्रारम्भ किया था। उन्ही दिनो पजाब मे विख्यात 'जलियाँ वाला' काण्ड हो गया, जिसके कारण वाजपेयी जी के मानस मे राष्ट्रीयता के भाव गहरे घर कर गए। आपने उस भीषण हत्या-काण्ड से प्रभावित होकर जो एक गद्य-काव्य की पुस्तक लिखकर उस समय की एकमात्र प्रतिष्ठित प्रकाशन-सस्था 'हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर बम्बई' के सचालक श्री नाथूराम 'प्रेमी' के पास प्रकाशनार्थ भेजी थी, उसका शीर्षक था 'अमृत मे विष'। 'प्रेमी' जी ने आपकी पाण्डुलिपि वापिस लौटाते हुए लिखा था—"आपकी हिन्दी हमे बहुत-बहुत पसन्द आई है। एक सस्कृत का पडित ऐसी बढिया हिन्दी लिखता है। यह देखकर प्रसन्नता हुई।" 'प्रेमी' जी के

इस पत्र से वाजपेयी जी को जो प्रोत्साहन मिला था उसीने आपको आगे बढने की प्रेरणा दी थी। अपने उसी पत्र मे प्रेमी जी ने आपसे 'जैन सस्कृत-ग्रन्थों' का हिन्दी अनुवाद करने का अनुरोध भी किया था, जिन्हे वे 'जैन ग्रन्थ रत्नाकर' नामक अपनी दूसरी प्रकाशन-सस्था की ओर से प्रकाशित करना चाहते थे। आपकी सहमति होने पर उन्होंने जो पुस्तके अनुवाद के लिए भेजी थी उनके नाम इस प्रकार है— 1. 'प्रद्युम्न चरित', 2. 'अनिरुद्ध चरित', 3. 'सागर धर्मामृत' तथा 4. 'पार्श्वनाथ चरित'। क्योकि ये सभी ग्रन्थ जैन धर्म से सम्बन्धित थे, अत वैष्णव सस्कारो के धनी वाजपेयी जी को यह स्वीकार न हुआ और आपने प्रेमी जी को स्पष्ट शब्दों मे लिख दिया—"मैं इन ग्रन्थो का अनुवाद न करूँगा, क्योंकि इनके कथानक मेरी मनोवृत्ति को ठेस पहुँचाते है।" इस पर 'प्रेमी' जी ने आपको लिखा—"आप तो किसी की चीज का अनुवाद कर रहे है, स्वय तो वैसा कुछ कह ही नहीं रहे है। अनुवाद करने मे क्या बाधा ?" परन्तु वाजपेयी जी के विद्रोही मानस ने यह स्वीकार नही किया और स्वत द्वार पर आई हुई प्रथम सफलता को आपने अत्यन्त सहजता से अस्वीकार कर दिया। वाजपेयी जी द्वारा किया गया यह अपमान 'लक्ष्मी' को बहुत खला और उसी-का दुष्परिणाम यह हुआ कि आप जीवन-भर सघर्षों मे ही जूझते रहे।

इस घटना के उपरान्त वाजपेयी जी फिर संस्कृत की ओर मुडे और 'निम्बार्काचार्यस्तन्मत च' शीर्षक से एक पुस्तक सस्कृत मे ही लिख डाली, जिसे अपने अध्यापन-जीवन मे प्राप्त वेतन की राशि से आपने स्वय ही छपा डाला था। इसका मुद्रण इटावा निवासी पडित भीमसेन शर्मा के 'ब्रह्म प्रेस' से हुआ था। मूल्य उसका आठ आने रखा था, किन्तु जब वह नही बिकी तो उसे वाजपेयी जी ने वृन्दावन तथा काशी मे नि.शुल्क वितरित करा दिया। इसके उपरान्त वाजपेयी जी ने एक ऐसी पुस्तक हिन्दी मे लिखी जिसमें महर्षि मालवीय, लोकमान्य तिलक, महात्मा गाधी, महात्मा बुद्ध, शकराचार्य तथा महारानी लक्ष्मीबाई आदि की जीवनियाँ थीं। जिन दिनो इस पुस्तक की रचना हुई थी उन दिनों वाजपेयी जी हरियाणा के करनाल जिले के पुण्डरी नामक कस्बे के सनातन धर्म हाई स्कूल मे सस्कृत-हिन्दी के अध्यापक थे। पुस्तक को जब आपने अपने स्कूल के इस्पैक्टर लाला आत्माराम को दिखाया तो वे बहुत प्रसन्न हुए और उन्होने वाजपेयी जी को सलाह दी कि इसमे ईसा, विक्टोरिया और पचम जार्ज के जीवन और दे देने चाहिएँ। वाजपेयी जी के गले मे उनकी यह बात नही उतरी तथा आपने इससे साफ इन्कार कर दिया।



बहुत समझाने-बुझाने पर वाजपेयी जी ईसा की जीवनी देने को तो तैयार हो गए, किन्तु लाला जी द्वारा सुझाए गए अन्य नामो से आप सहमत न हो सके। लालाजी ने वाजपेयी जी से यह स्पष्ट रूप से कहा —"ऐसी स्थिति मे आपकी यह पुस्तक मैट्रिक परीक्षा मे लग सकेगी। छात्रो मे अच्छे विचार आयँगे और आपको काफी रुपये मिलेगे।" उनकी इस सुन्दर सीख का भी वाजपेयी जी पर कोई प्रभाव नही हुआ और आपने उस पुस्तक की पाण्डु-लिपि ही नष्ट कर दी।

उन्ही दिनो लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस से दुलारेलाल भार्गव के प्रयास मे 'माधुरी' नामक हिन्दी पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ था। सम्पादक थे रूपनारायण पाण्डेय। हिन्दी मे उन दिनो कदाचित् वही एक अकेली पत्रिका थी जिसने ईस्वी सन् और विक्रम सवत् के साथ 'तुलसी सवत्' छापना प्रारम्भ किया था। इससे पूर्व साहित्यिक पत्रिकाओ मे केवल 'सरस्वती' ही उल्लेखनीय थी। 'माधुरी' के प्रकाशन से साहित्यिक क्षेत्र मे उन दिनो पर्याप्त हलचल मची थी। कुछ दिनो बाद दुलारेलाल भार्गव ने नवलकिशोर प्रेस से अलग होकर 'सुधा' नामक साहित्यिक पत्रिका का सूत्रपात किया और पाण्डेय जी भी उन्हीके साथ चले गए और 'सुधा' का सम्पादन करने लगे। 'माधुरी' के सम्पादन का भार कृष्णबिहारी मिश्र और प्रेमचन्द को सौपा गया। वाजपेयी जी के कई लेख 'माधुरी' और 'सुधा' में प्रकाशित हुए। 'माधुरी' मे महामहोपाध्याय पडित सकलनारायण शर्मा ने

एक छोटा-सा लेख छपवाकर हिन्दी भाषा के व्याकरण के सम्बन्ध मे कुछ जिज्ञासाएँ प्रकट की। उनकी यह जिज्ञासा सम्पूर्ण हिन्दी-जगत् के लिए एक चुनौती थी। वाजपेयी जी ने हिन्दी व्याकरण की महत्ता के सम्बन्ध में 'माधुरी' में एक बड़ा विस्तृत लेख लिखा। आपके इस लेख का हिन्दी जगत् मे अच्छा प्रभाव पड़ा और फिर पंडित सकलनारायण शर्मा ने कोई आपत्ति नही उठाई। वाजपेयी जी के इस लेख ने ही आपके लिए भाषा-परिष्कार का मार्ग उद्घाटित किया और आपको यह जँच गया कि भाषा-परिष्कार और व्याकरण के क्षेत्र मे भी कुछ काम किया जा सकता है। बस आप सस्कृत के क्षेत्र को छोड़कर हिन्दी की ओर उन्मुख हो गए। सर्वप्रथम आपने हिन्दी साहित्य-सम्मेलन प्रयाग की मध्यमा (विशारद) परीक्षा दी और 'उत्तमा' की परीक्षा मे भी बैठ गए। जब आप 'उत्तमा' (साहित्य-रत्न) की परीक्षा दे रहे थे तब आपको हिन्दी मे अलकार-सम्बन्धी कई पुस्तकें गलत जान पडी और व्याकरण के साथ-साथ रस तथा अलकार-सम्बन्धी ऊहापोह करने की दिशा मे भी आपकी रुचि हो गई। जिन दिनो आपने 'साहित्य-रत्न' परीक्षा दी थी उन दिनो एक ऐसी मनोरजक घटना घटी कि उसने आपको 'साहित्य रत्न' ही नही होने दिया। आजकल की तरह उन दिनो भी मौखिक परीक्षा ली जाती थी। वाजपेयी जी को जब सम्मेलन द्वारा सचालित हिन्दी विद्यापीठ के तत्कालीन आचार्य श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर' के द्वारा यह विदित हुआ कि आपकी मौखिक परीक्षा श्री आनन्दीप्रसाद श्रीवास्तव लेगे तो आपने परीक्षा देने का विचार ही छोड दिया और समाचार पत्रो मे एक वक्तव्य इस आशय का प्रकाशित करा दिया कि जब 'उत्तमा' (साहित्य रत्न) परीक्षा के मौखिक परीक्षक आनन्दीप्रसाद श्रीवास्तव-जैसे लोग होंगे तब इसकी क्या इज्जत रहेगी? और बिना 'साहित्य-रत्न' बने ही आप प्रयाग से वापिस लौट गए। उन दिनों 'साहित्य-रत्न' मे बहुत कम छात्र बैठते थे और इस परीक्षा का केवल एक ही केन्द्र प्रयाग मे होता था।

भाषा, छन्द, अलकार और व्याकरण की दिशा मे निरन्तर अध्ययन तथा स्वाध्याय करते हुए आपने 'माधुरी' मे सन् 1930 मे साहित्याचार्य पडित शालिग्राम शास्त्री की 'साहित्य-दर्पण' की 'विमला टीका' पर एक समीक्षात्मक लेखमाला प्रकाशित कराई। इस लेखमाला मे विद्वानो का ध्यान वाजपेयी जी की ओर आकर्षित हुआ और आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने कही से आपका पता-ठिकाना जानकर आपको प्रोत्साहन तथा आशीर्वाद का पत्र लिखा था। वाजपेयी जी के 'आलोचक' रूप की यह पहली विजय थी। द्विवेदीजी से प्रोत्साहन पाकर वाजपेयी जी ने अपनी समीक्षक लेखनी को विराम नही दिया तथा 'बिहारी सतसई और उसके टीकाकार' शीर्षक से एक दूसरी लेखमाला भी 'माधुरी' मे ही प्रकाशित कराई। इसकी मुख्य प्रेरणा आपको समालोचक शिरोमणि पडित पद्मसिह शर्मा द्वारा लिखित 'बिहारी सतसई का संजीवन भाष्य' से मिली थी। इसके केवल 2-3 लेख ही 'माधुरी' मे प्रकाशित हो पाए थे कि सम्पादको ने घबराकर उसे बीच में ही छापना बन्द कर दिया। इसके उपरान्त इस लेखमाला के 3-4 लेख भागलपुर से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'गगा' में प्रकाशित हुए थे, किन्तु वहाँ भी यह लेखमाला आगे न चल सकी। वाजपेयी जी ने वहाँ से कुल 31 रुपये का पारिश्रमिक भी रजिस्टर्ड नोटिस देकर वसूल किया था। पहली लेखमाला से वाजपेयी जी को जहाँ आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का स्नेह सुलभ हुआ था वहाँ इस दूसरी लेखमाला ने आपको आचार्य पद्मसिह शर्मा का स्नेहभाजन बना दिया। इन दोनों लेखमालाओ ने जहाँ आपकी साहित्यिक प्रतिष्ठा बढाई वहाँ अनेक साहित्यिक मित्र भी आपसे रुष्ट हो गए थे।

जिन दिनो वाजपेयी जी ने साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण किया था उन दिनो आप सम्पादको को देवता समझा करते थे। फलस्वरूप देवताओं की श्रेणी मे सम्मिलित होने की ललक मे आप अध्यापकी छोडकर उस दिशा मे बढने का निश्चय कर बैठे और 'सुधा' तथा 'चाँद' के सम्पादको से उनके यहाँ काम करने का विचार प्रकट किया। दोनो ही जगह स्वागत हुआ। परिणामस्वरूप आप अपनी धर्मपत्नी सहित पहले तो लखनऊ गए और बाद मे प्रयाग। लखनऊ स्टेशन पर धर्मपत्नी को बिठाकर आप सीधे 'सुधा' कार्यालय गए और वहाँ 'सुधा' के सम्पादक श्री दुलारेलाल भार्गव से मिले। उन्होंने तुरन्त मैनेजर के नाम एक पर्ची लिखकर कहा, जाकर अपना काम सँभाल लीजिए। वाजपेयी जी को भार्गव जी का यह 'दफ्तरी व्यवहार' बिलकुल भी न रुचा और मैनेजर की ओर मुडकर आपने वह पर्ची फाड़कर फेंक दी और मैनेजर से यह कहकर चले गए कि यदि मेरी कोई

चिट्ठी-पत्री यहाँ आए तो उसे 'चाँद' कार्यालय (प्रयाग) भेज दीजिएगा। लखनऊ से तुरन्त प्रयाग पहुँचे। वहाँ पर भी उसी तरह श्रीमती जी को स्टेशन पर बैठाकर वाजपेयी जी 'चाँद' कार्यालय पहुँचे। वहाँ पर आपको यह आभास हुआ कि साहित्यिक प्रवृत्ति के लोग अभी भी है। 'चाँद' के संचालक श्री रामरखसिंह सहगल के कहने पर आप तुरन्त स्टेशन गए और श्रीमती जी को साथ लेकर जब तक वहाँ लौटे तब तक आपके लिए निवास की व्यवस्था हो चुकी थी। सबसे पहले आपने उसके 'अछूत अक' के लिए 'कुछ अछूत सन्त और भक्त' शीर्षक जो लेख तैयार किया वह 'चाँद' के सम्पादक श्री नन्दकिशोर तिवारी तथा सचालक श्री सहगल को बहुत पसन्द आया। दूसरे दिन जब सहगल जी कार्यालय मे आए तो उन्होने आपकी ओर जो एक पर्ची बढाई उस पर लिखा था—"जो कुछ आपको देना तय हुआ है उसमे दस रुपये मासिक की वृद्धि की गई।" उसी समय 'चाँद' कार्यालय के कक्ष मे टँगी हुई एक सूचना पर वाजपेयी जी की दृष्टि घूम गई, जिसमे लिखा था- -"यहाँ वेतन बढवाने के लिए किसी को अर्जी नही देनी पडती।" यहाँ भी वाजपेयी जी के अक्खड स्वभाव ने अपना करिश्मा दिखा दिया। जिन दिनो 'चाँद' का 'विधवा अक' निकल रहा था उन दिनो सहगलजी के मुख से महामना मालवीय जी के लिए कुछ 'अपशब्द' निकल गए। इसका कारण यह था कि उन्हे प्रयास करने पर भी उनके 30 वर्षों के किसी भी भाषण मे विधवाओ के सम्बन्ध मे कुछ भी नही मिला था। वाजपेयी जी ने केवल इतना ही कहा—"मेरे सामने आप कभी मालवीय जी को ऐसे शब्द अब न कहिएगा, अन्यथा मेरा यहाँ रहना कठिन होगा।" और खूब सोच-विचारकर आपने वहाँ से त्यागपत्र दे दिया।

जब शहर मे वाजपेयी जी के इस प्रकार त्यागपत्र देने की घटना सुनी गई तब श्री मगलदेव शर्मा आपको अपने साथ ले गए जो उन दिनो 'अभ्युदय' मे कार्य करते थे। उन्होने आप पर मालवीय द्वारा सस्थापित 'अभ्युदय' मे कार्य करने के लिए भी दबाव डाला। किन्तु आप टस से मस न हुए। वहाँ से पत्र-व्यवहार करके वाजपेयी जी 'नवलकिशोर प्रेस लखनऊ' चले गए और उसके प्रकाशन विभाग मे कार्य करने लगे। नवलकिशोर प्रेस मे कार्य करते हुए ही आपने गुरुकुल काँगडी के अधिकारियो से पत्र-व्यवहार किया और वहाँ साहित्याध्यापक होकर चले गए। वहाँ पर जाकर वाजपेयी जी का आचार्य पद्मसिंह शर्मा, रामदास गौड और ईश्वरचन्द्र दर्शनाचार्य से निकट सम्पर्क हुआ। उक्त तीनों महानुभाव उन दिनो वहाँ पढाया करते थे। विचारों से सनातनी होने के कारण आप वहाँ भी अधिक समय तक न टिक सके और वहाँ से बीकानेर के सेठ भैरोदान सेठिया द्वारा सचालित विद्यालय मे चले गए। वहाँ पर रहते हुए ही आपने 'साहित्य दर्पण' की 'विमला टीका' से सम्बन्धित लेखमाला लिखी थी। बीकानेर मे जब वाजपेयी जी के एक पुत्र का देहावसान हो गया तो आप वहाँ की अच्छी-खासी जमी-जमाई नौकरी छोडकर इधर-उधर भटकते हुए प्रयाग पहुँचे थे। उन्ही दिनो प्रयाग मे रहकर आपने 'साहित्य-रत्न' बनने का विचार किया था। प्रयाग मे रहते हुए ही आपने पत्र-व्यवहार करके हरिद्वार के म्युनिसिपल स्कूल मे 40 रुपये मासिक पर अध्यापन का कार्य स्वीकार किया था। इस कार्य मे आपका वेतन 2.50 रुपये प्रति वर्ष की वृद्धि के साथ 60 रुपये तक पहुँचना था। यह बात सन् 1929 की है। सन् 1930 मे आप इस पद पर स्थायी हुए ही थे कि कांग्रेस का 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' छिड गया। वाजपेयी जी भी इससे अछूते न बचे और आन्दोलन मे कूद पडे। परिणामत म्युनिसिपल बोर्ड हरिद्वार के सरकारी चेयरमैन मि० ह्यूम ने आपको नौकरी से बर्खास्त कर दिया।

उन्ही दिनों वाजपेयी जी ने 'रस और अलकार' नामक एक पुस्तक लिखी, जो बम्बई की 'हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर' सस्था से प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक की एक विशेषता यह थी कि इसमे उदाहरण आपने स्वय अपनी रचनाओ के ही दिए थे। यहाँ तक कि 'शृङ्गार' और 'वीभत्स' रस के उदाहरण भी राजनीतिक पुट लिये हुए थे। इन राजनीतिक पुट वाली रचनाओ के उदाहरणों का यह प्रभाव हुआ कि बम्बई सरकार ने उसे सन् 1930 मे तुरन्त जब्त घोषित कर दिया। उसमे वीभत्स रस का एक उदाहरण इस प्रकार छपा था :

उरद की दार दरी बीबी ने बनाए बरे,
दही मे सराए सो कठौता खूब भरिगो।
भए पेट-भेट मैने दाबि भरे भूरि-भूरि,
गरे लौं गरीब पेट ममक सो भरिगो॥
हाय अधरातक महान् अचरजु भयो,
उमडि-घुमडि पौन भड दै निकरिगो।
काहू ने रपट करी, आयो धाय कोतवाल,
पकरिकै मोहि कह्यो, बम्म कितै फटिगो॥

यह कविता जब आगरा के 'सैनिक' मे छपी थी तब वाजपेयी जी हरिद्वार से बर्खास्त होकर आगरा मे रहने लगे थे। उन दिनो दिल्ली के 'महारथी' तथा आगरा के 'वीर सन्देह' मे वीर रस की कविताएँ खूब छपा करती थी। उन्ही दिनों आपने राष्ट्रीय रस से सराबोर दोहे भी लिखे थे, जो आपकी 'तरगिणी' नामक पुस्तक मे प्रकाशित हुए है। जब 'गाधी-इरविन-पैक्ट' के अधीन आन्दोलन वापिस ले लिया गया तो पैक्ट की शर्तों के कारण वाजपेयी जी वापिस फिर हरिद्वार के उसी विद्यालय मे पहुँच गए। उन दिनो वाजपेयी जी जहाँ सहारनपुर जिला कांग्रेस कमेटी के मन्त्री रहे थे वहाँ आपने 'हरिजन सेवक सघ' के कार्यों मे भी सक्रिय योगदान किया था। साहित्य मे उठा-पटक की प्रवृत्ति की भाँति वाजपेयी जी राजनीति मे भी न टिक सके और हरिद्वार के सामाजिक जीवन मे भी आपने अपने अनेक विरोधी उत्पन्न कर लिए। परिणामत आपका विद्यालय के अधिकारियो से फिर सघर्ष हो गया और आपको नौकरी से बर्खास्त कर दिया गया। नौकरी से बर्खास्तगी के समय आपका जो वेतन जब्त कर लिया गया था वह जब वापिस मिला तो आपने कनखल मे एक छोटा-सा प्रेस खोल लिया। इस प्रेस से वाजपेयी जी ने अपनी 'लेखन कला' तथा 'द्वापर की राज्य-क्रान्ति' नामक पुस्तके सन् 1936 मे प्रकाशित की। 'द्वापर की राज्य क्रान्ति' (नाटक) पहले हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर बबई से 'सुदामा' नाम मे सन् 1930 मे प्रकाशित हो चुका था। 'सुदामा' के साथ ही हिन्दी ग्रथ रत्नाकर ने आपकी 'साहित्य की उपक्रमणिका' नामक वह पुस्तक सन् 1932 मे प्रकाशित की थी, जिसमे आपने साहित्य-समीक्षा के शास्त्रीय सिद्धान्तो को सर्वथा नए रूप मे प्रस्तुत किया था। 'लेखन कला' के माध्यम से आपने भाषा-परिष्कार के जो नए सिद्धान्त उस समय हिन्दी-जगत् के समक्ष प्रस्तुत किए थे उनसे आपके 'वैयाकरण' रूप का उद्घाटन हुआ था। सन् 1944 मे आपकी जब 'ब्रजभाषा का व्याकरण' पुस्तक प्रकाशित हुई तब उसमे आपके व्याकरण-सम्बन्धी परिपक्व विचार हिन्दी-जगत् के समक्ष आए थे। जिन दिनों वाजपेयी जी ने 'लेखन कला' पुस्तक लिखी थी, लगभग उसी समय श्री रामचन्द्र वर्मा की 'अच्छी हिन्दी' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई थी। वाजपेयी जी कब चुप बैठने वाले थे? आपने तुरन्त 'अच्छी हिन्दी का नमूना' (सन् 1948) नामक पुस्तक लिखकर वर्मा जी की मान्यताओं की शल्य-क्रिया ही कर डाली। उन्हीं दिनों आपने 'राष्ट्रभाषा का प्रथम व्याकरण' (1949) लिखकर तो भाषा विज्ञान के क्षेत्र मे नई क्रान्ति ही उत्पन्न कर दी थी।

आपके जीवन-सघर्ष मे एक समय ऐसा भी आया था जब वाजपेयी जी ने प्रेस को बेचकर जडी-बूटियाँ सप्लाई करने की दुकान 'हिमालय एजेन्सी' नाम से खोल ली थी। इसी प्रकार एक बार आपने साहित्यिक जगत् के मठाधीशो की उपेक्षा-वृत्ति से तग आकर 'चाय की दुकान' तक खोलने का निश्चय कर लिया था। यह बात बिलकुल सही है कि आपने हिन्दी-जगत् मे अनेक हडकम्पकारी आन्दोलनो का सूत्रपात किया था। 'द्विवेदी जी का लिफाफा कहाँ गया' शीर्षक जो आन्दोलन आपने नागरी प्रचारिणी सभा काशी के विरुद्ध चलाया था उससे बडे-बड़े दिग्गज हिल गए थे। यह आन्दोलन वाजपेयी जी ने उस लिफाफे के सम्बन्ध मे उठाया था जिसे काशी मे अपने अभिनन्दन के समय आचार्य महावीर-प्रसाद द्विवेदी ने सभा को सौपते हुए यह इच्छा प्रकट की थी कि इसे उनके जीवन-काल मे न खोला जाय। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अक्तूबर 1939 मे हुए काशी-अधिवेशन के समय वाजपेयी जी ने उस लिफाफे के विषय मे एक पर्चा वितरित करके सभा के अधिकारियो का ध्यान आकर्षित किया था।

वाजपेयी जी साहित्य-क्षेत्र मे सदा सदेह और शका की दृष्टि से ही देखे जाते रहे थे। जब भी आप किसी सभा या सम्मेलन मे पहुँच जाते थे तो हडकम्प-सा मच जाता था। खरी बात कहने की आपकी प्रवृत्ति ने आपके बहुत दुश्मन बना दिए थे। जब आपके सम्पादन मे आगरा से नवम्बर सन् 1939 मे 'मराल' नामक समीक्षात्मक मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तो उसके द्वारा वाजपेयी जी ने जहाँ 'द्विवेदी जी के लिफाफे' का आन्दोलन प्रखरता से चलाया वहाँ भाषा-परिष्कार एव समीक्षा के क्षेत्र मे चली आने वाली अनेक भ्रान्तियो का भी निराकरण किया। 'मराल' के सम्पादकीय लेखो से नागरी प्रचारिणी सभा के तत्कालीन अधिकारी इतने आतकित हो गए थे कि 'मराल' के प्रकाशक (मैसर्स लक्ष्मीनारायण अग्रवाल एंड सस) पर दबाव डालकर उन्होंने उसे बन्द ही करा दिया। यह दुर्भाग्य का विषय है कि केवल एक वर्ष तक प्रकाशित होकर ही यह पत्र बन्द हो गया। इस पत्र के उद्देश्य की घोषणा वाजपेयी जी ने इस प्रकार की थी.

तुम बिन कौन मराल करै जग,
दूध को दूध, औ पानी को पानी।

'*मराल' तो बन्द हो गया, लेकिन वाजपेयी जी की प्रखर* मनस्विता और भी उत्कटता से हिन्दी-जगत् के समक्ष आई। फिर आपने लेखनी सँभाली और हिन्दी साहित्य को 'राष्ट्र-भाषा का प्रथम व्याकरण' (सन् 1949) के अतिरिक्त 'हिन्दी निरुक्त' (सन् 1949) तथा 'हिन्दी शब्दानुशासन' (सन् 1959)-जैसी सशक्त रचनाएँ प्रदान की। आपका 'हिन्दी शब्दानुशासन' नामक अकेला ग्रन्थ ही ऐसा है जिसने भाषा-परिष्कार के क्षेत्र मे उल्लेखनीय मानदण्ड प्रस्थापित किए है। आपके 'हिन्दी शब्द मीमासा' (सन् 1958), 'भारतीय भाषा विज्ञान' (सन् 1959) तथा 'हिन्दी की वर्तनी तथा शब्द-विश्लेषण'(सन् 1968) आदि ग्रन्थ भी ऐसे ही है। वाजपेयी जी के जीवन-सघर्ष की वास्तविक झाँकी उनकी 'साहित्यिक जीवन के अनुभव और सस्मरण' नामक कृति मे प्राप्त की जा सकती है। आपकी स्वाभिमानी प्रवृत्ति की अतिशयता को कभी-कभी 'अक्खडता' समझ लिया जाता था। एक बार जब केन्द्रीय शिक्षामत्रालय की ओर से "हिन्दी व्याकरण समिति' बनाई गई तब आपको भी उस समिति का सदस्य मनोनीत किया गया था। वाजपेयी जी ने इस आधार पर उस समिति का सदस्य होना अस्वीकार कर दिया था कि उसमे अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी-जैसे वरिष्ठ साहित्य-कार को क्यो नही रखा गया। आपके व्याकरण-सम्बन्धी परिपक्व ज्ञान को दृष्टि मे रखकर ही जब नागरी प्रचारिणी सभा काशी के अध्यक्ष डॉ० अमरनाथ झा बने तब आपको हिन्दी-व्याकरण लिखने के लिए आमन्त्रित किया गया था। यही ग्रन्थ सभा द्वारा 'हिन्दी शब्दानुशासन' के नाम से प्रकाशित हुआ है। वहाँ पर भी आपकी सभा के कोश विभाग मे डॉ० हेमचन्द्र जोशी से प्राय खटपट रहा करती थी। आपकी साहित्यिक प्रतिभा का परिचय उक्त रचनाओ के अतिरिक्त 'काव्य मे रहस्यवाद', 'सस्कृति का पाँचवाँ अध्याय', 'मानव-धर्म मीमासा', 'कांग्रेस का सक्षिप्त इतिहास', 'सुभाषचन्द्र बोस' तथा 'काव्य और काव्य शास्त्र'-जैसी अनेक कृतियो से मिलता है। आपने डाक्टर सम्पूर्णानन्द की 'ब्राह्मण सावधान' नामक विवादास्पद कृति का उत्तर भी अपनी 'ब्राह्मण सावधान' नामक रचना द्वारा दिया था। आपकी 'काव्य और काव्य शास्त्र' नामक रचना मे वे तीन भाषण सकलित है, जो उन्होने फरवरी सन् 1970 मे जबलपुर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग मे दिए थे।

वाजपेयी जी की इस संघर्ष-प्रवण प्रवृत्ति के कारण लोग प्राय आपसे कतराते थे। आप इसलिए उखडे-उखडे से प्रतीत होते थे कि हिन्दी-जगत् मे आपके कृतित्व के प्रति जो उपेक्षा भाव अपनाया हुआ था, वह आपको अन्दर-ही-अन्दर कचोटता रहता था। एक बार आपकी वह पीडा निम्न पक्तियो मे इस प्रकार फूट पडी थी—

"हिन्दी साहित्य के जितने भी इतिहास लिखे गए है उनमे कही भी किसी भी रूप मे मेरा नाम नही है। मैने 'तरगिणी' दी, पर कवियो मे कही नाम नही। 'सुदामा' या 'द्वापर की राज्य-क्रान्ति' देने पर भी नाटककारो मे किसी ने मेरा नाम नही लिखा डॉ० माताप्रसाद गुप्त को छोडकर। निबन्ध-लेखको मे भी नही। आलोचको की पाँत से भी बहिष्कृत। 'मराल'-जैसे साहित्यिक पत्र का मै सम्पादक रहा, पर सम्पादको मे भी नाम नही। हिन्दी के परिष्कारको और वैयाकरणो मे भी नही। हिन्दी के समर्थको मे भी किसी ने मेरा नाम नही लिया।·· तबियत जल रही है। बस, अब आगे कलम इस समय चल नही रही है—

जद्यपि जग दारुन दुख नाना।
सबते कठिन जाति अपमाना।।"

वाजपेयी जी की इस घनघोर उपेक्षा का प्रायश्चित्त हिन्दी-जगत् ने बहुत देर से किया। दो बार आपका अभि-नन्दन किया गया—एक बार कलकत्ता मे सन् 1961 मे और दूसरी बार कनखल मे सन् 1979 मे। दोनो ही अभि-नन्दन निराले हुए। उनकी शर्त थी कि मेरे अभिनन्दन मे कोई राजनेता नही आना चाहिए। वही हुआ। सन् 1961 मे आपको जो अभिनन्दन-ग्रन्थ कलकत्ता मे भेट किया गया था उसके सम्पादक थे डॉ० रामधारीसिह 'दिनकर' और आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी। कनखल मे समर्पित अभि-नन्दन-ग्रन्थ का सम्पादन आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने किया था। इसी प्रकार हमारे अनुरोध पर आपने नई दिल्ली मे भी एक बार अभिनन्दन मे आना स्वीकार कर लिया था। वह समारोह सन् 1965 मे हिन्दी भवन की ओर से डॉ० बाबूराम सक्सेना की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुआ था। आपका ब्रह्म तेज सात्विक होते हुए भी इतना प्रखर था कि 14 सितम्बर 1977 को जब उत्तर प्रदेश हिन्दी सस्थान ने

आपका लखनऊ में सम्मान किया तब भी भारत के तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्री मोरारजी देसाई को अपना आसन छोड़कर उस स्थान तक आना पड़ा था जहाँ आप बैठे हुए थे। अन्त में राजनीतिज्ञ को साहित्यकार के सामने झुकना पड़ा।

वाजपेयी जी हिन्दी के उन स्वाभिमानी साहित्यकारो मे थे जिनका सारा ही जीवन सामाजिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक क्षेत्र में सघर्ष करते हुए बीता था। जहाँ भाषा-परिष्कार की दिशा मे आपने साहित्य के अनेक महारथियो से डटकर लोहा लिया था वहाँ अपने कर्म-सकुल जीवन मे अनेक स्थानों पर कार्य करते हुए अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए कई नौकरियो पर ऐसे लात मार दी थी, जैसे कुछ हुआ ही न हो। आपने कठिन-से-कठिन परिस्थितियों मे भी अपने ब्रह्म-तेज को कम नही होने दिया और कैसे भी प्रलोभन आपको झुका नही सके। आचार्य वाजपेयी कदाचित् हिन्दी मे अकेले ही ऐसे साहित्यकार थे जिन्होने अनेक सम्पादकों, समीक्षकों तथा हिन्दी के धुरन्धरो से डटकर लोहा लिया और अपनी बात मनवाकर ही छोडी।

अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे वाजपेयी जी अस्वस्थ रहने लगे थे और कनखल (हरिद्वार) के 'रामकृष्ण मिशन अस्पताल' मे आपकी चिकित्सा चल रही थी कि वहाँ पर ही 12 अगस्त सन् 1981 को रात्रि के डेढ़ बजे आप इस असार ससार से विदा हो गए।

श्री किशोरीलाल अग्रवाल 'लल्ला'

श्री 'लल्ला' का जन्म मध्यप्रदेश के जबलपुर नगर मे सन् 1932 मे हुआ था। आपकी शिक्षा केवल इण्टरमीडिएट तक ही हो सकी थी। आप मुख्यत· बुन्देलखण्डी भाषा की रचनाएँ करने मे दक्ष थे और सन् 1970-71 से आपका साहित्यिक जीवन प्रारम्भ हुआ था। आपकी पहली रचना 'राधे' मे आपके कवित्व की आस्था पूरी तरह प्रस्फुटित हुई थी। हिन्दी मे भी आपकी रचनाएँ पर्याप्त लोकप्रिय हुई थी। उनमे मुख्यत श्री जयशकर 'प्रसाद' के 'आँसू' तथा मैथिलीशरण गुप्त के 'पचवटी' नामक काव्यों का प्रभाव परिलक्षित होता है।

आपने जहाँ अनेक फुटकर रचनाएँ की थीं वहाँ सिद्धार्थ उर्मिला, द्रोपदी, दुर्योधन, अर्जुन और अभिमन्यु आदि पौराणिक तथा ऐतिहासिक चरित्रो को आधार बनाकर भी वर्णनात्मक शैली मे आपकी कई रचनाएँ उपलब्ध है। आपके द्वारा लिखित 'हरदौल चरित' नामक खण्डकाव्य अपनी विशिष्ट शैली का परिचायक है। आपने जहाँ 500 से अधिक गीतो की पुस्तक लिखी थी वहाँ बुन्देली भाषा मे लिखे गए आपके अनेक फाग आपकी प्रतिभा के ज्वलन्त साक्षी है। आपके द्वारा बुन्देली फागों की शैली मे लिखी गई 'रामायण' अधूरी ही रह गई। इसमे केवल सौ के लगभग फाग ही लिख पाए थे कि असमय मे चले गए।



आप जहाँ उच्चकोटि के कवि थे वहाँ अच्छे गद्यकार के रूप मे भी आपने अपनी क्षमता का परिचय बुन्देली भाषा मे 'मामुलिया' नामक पत्र का प्रकाशन करके दिया था। आपके द्वारा हिन्दी मे लिखी गई कहानियो मे भी आपकी लेखन-क्षमता का पूर्ण परिपाक दृष्टिगत होता है।

आपका निधन 10 जून, सन् 1981 को हुआ था।

श्री किसनसिंह चावड़ा

श्री चावड़ा का जन्म 27 नवम्बर सन् 1904 को गुजरात प्रदेश के बड़ोदरा नामक स्थान में हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा बड़ोदरा में ही हुई थी। योगी अरविन्द तथा माता जी के प्रति आपकी अनन्य श्रद्धा थी। सरदार वल्लभभाई पटेल ने जब बारडोली में ऐतिहासिक 'किसान सत्याग्रह' किया था तब आप भी उस अभियान में उनके अनन्य सहयोगी रहे थे।

एक उत्कृष्ट पत्रकार तथा साहित्यकार के रूप में भी आपने राष्ट्रीय आन्दोलन को उल्लेखनीय मार्ग-दर्शन दिया था।

प्रारम्भ मे आप कुछ समय तक अरविन्द के आश्रम मे 'पाण्डिचेरी' रहे और बाद मे 'साधना मुद्रणालय' की स्थापना करके उसके द्वारा प्रकाशन का कार्य किया था। आप 'क्षत्रिय' मासिक के सम्पादक तथा 'नव गुजरात' के सह-सम्पादक रहे थे। हिन्दी के प्रख्यात उपन्यासकार और कथाकार श्री प्रेमचन्द की कई कहानियो का आपने हिन्दी से गुजराती मे अनुवाद किया था। आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', 'कबीर सम्प्रदाय', 'सन्त कबीर' तथा 'कुमकुम' (उपन्यास) प्रमुख है।

1 दिसम्बर सन् 1979 को आप बड़ोदरा नगर निगम की ओर से आयोजित 'सरदार वल्लभ पटेल व्याख्यानमाला' के अवसर पर वहाँ के गाधीनगर सभागार के मच पर भाषण देने के लिए खडे हुए ही थे कि अचानक हृदयाघात से दिवगत हो गए और सरदार पटेल की पुण्य स्मृति में आयोजित वह समारोह एक 'शोक सभा' के रूप मे परिवर्तित हो गया।

श्री कुंजबिहारी शर्मा

श्री शर्मा का जन्म राजस्थान के चूरू नामक नगर के समीपवर्ती ग्राम खासोली मे सन् 1917 मे हुआ था। आपके पिता पण्डित कानीराम जी रामगढ के सेठ हरनन्दराय रुइया के परिवार के साथ बम्बई चले गए थे और उनकी हवेली की ठाकुरवाडी की पूजा-अर्चना किया करते थे। उन्ही दिनो चूरू के सेठ गगाविष्णु खेमराज बजाज ने सन् 1817 मे बम्बई मे 'श्री वेंकटेश्वर प्रेस' की स्थापना करके उसकी ओर से जो प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया था उसमें श्री कानीराम जी प्रूफ-रीडर हो गए। वहाँ पर कार्य करने से कानीराम जी को यह लाभ हुआ था कि उन्हें अनेक ग्रथ कठाग्र हो गए थे। वे जब कभी 2-3 महीने के लिए बम्बई से अपने गाँव मे आते थे तब उन ग्रन्थों के अनेक प्रसंगों को अपने भाइयो तथा ग्रामवासियो को सुनाया करते थे। जब श्री कुंजबिहारी जी का जन्म हुआ था तब आपकी झोपड़ी बरसात के कारण टपाटप चू रही थी। जब रामगढ के सेठो को उनके मकान की स्थिति का पता चला तो उन्होंने उनके गाँव में एक हवेली बनवा दी और उनका परिवार उसमे ही रहने लगा था। 3-4 वर्ष तक तो कुजबिहारी जी के पिता बम्बई आते-जाते रहे, किन्तु बाद मे वे वहाँ से अपने गाँव खासोली मे ही आ गए थे।

जब चूरू मे सन् 1920 मे 'श्रीमद्भागवत विद्यालय' की स्थापना हुई तब श्री कुजबिहारी जी के पिता कानीराम जी की नियुक्ति सन् 1923 मे इस विद्यालय मे हो गई। बालक कुजबिहारी की शिक्षा-दीक्षा इसी विद्यालय मे हुई थी और मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करके आप इसी विद्यालय मे अपने पिता जी के स्थान पर अध्यापन-कार्य करने लगे थे। उन दिनो आपके पिता 'काली मैया' के मन्दिर मे पुजारी हो गए थे। धीरे-धीरे बिहारी जी का



परिचय स्थानीय 'हिन्दी विद्यापीठ' के जन्मदाता पडित रामनारायण जोशी से हो गया और उनके सम्पर्क से आपने 'साहित्य-रत्न' की परीक्षा भी दे डाली। अपने विद्यालय मे कार्य करने के अतिरिक्त आप जब 'हिन्दी विद्यापीठ' मे भी अध्यापन का कार्य करने लगे तब आपका सम्पर्क श्री मुरलीधर सारस्वत तथा सत्यनारायण गोयनका आदि अनेक साहित्य-प्रेमियों से हो गया, जिसके फलस्वरूप आप वहाँ होने वाली 'साहित्य गोष्ठियो' मे भाग लेने लगे। सन् 1944 मे आप राजगढ के सेठ सूरजमल मोहता की फर्म मे कार्य करने के लिए पटना चले गए। वहाँ पर थोडे दिन ही रह सके और अपने पिता जी के अनुरोध पर फिर चूरू आ गए। यहाँ आकर आपने फिर राजकीय विभाग मे शिक्षक का कार्य प्रारम्भ कर दिया और आप चूरू के 'बागला उच्च विद्यालय' मे पढाने लगे। जब चूरू मे 'लोहिया कालेज' की स्थापना हुई

तब उसके प्रधानाचार्य श्री आर० एस० गुप्ता ने आपकी अध्यापन-शैली से प्रभावित होकर आपको उच्च कक्षाओ को पढाने के लिए आमत्रित किया। 'बागला हाई स्कूल' मे कार्य करते हुए आपने बी० ए० की परीक्षा भी दे दी थी और एम० ए० की तैयारी कर रहे थे कि अस्वस्थता के कारण वह बीच मे ही रुक गई।

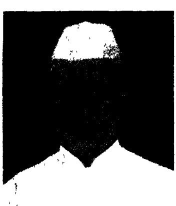
आप एक आदर्श अध्यापक के रूप मे चूरू मे बडे लोकप्रिय थे। आपकी यह मान्यता थी कि "विद्यार्थी को जो कुछ पढाया जाय वह उसे मन मारकर दवा के घूंट की तरह नही, बल्कि ताजे गो-दुग्ध की तरह खुशी-खुशी पिए।" विद्यार्थियो मे अनुशासन की भावनाओ का उद्बोधन करना भी आपका लक्ष्य था। अपने अध्यापन-जीवन में आपने विद्यालय की पत्रिका 'ज्योति शिखा' को सन् 1967 मे मुद्रित रूप मे सर्वप्रथम प्रकाशित कराया था। इससे पूर्व यह पत्रिका हस्तलिखित रूप में निकला करती थी। आप एक कुशल अध्यापक होने के साथ-साथ उत्कृष्ट कोटि के कवि और लेखक भी थे। एकाकी-लेखन मे भी आपकी प्रतिभा 'शिव सकल्प' नामक उस रचना के माध्यम मे प्रकट हुई थी, जो विद्यालय की पत्रिका 'ज्योति शिखा' मे प्रकाशित हुई थी। राजस्थानी भाषा मे भी आप अत्यन्त मनोहारी रचनाएँ किया करते थे। कवि सम्मेलनो के संयोजन तथा सचालन मे भी आप बहुत पटु थे। 16 अगस्त सन् 1968 को तत्कालीन जिलाधीश श्री जी० रामचन्द्र की अध्यक्षता मे जो सफल कवि-सम्मेलन चूरू मे हुआ था उसका सचालन आपने ही किया था। अपने जीवन के अतिम दिनो म आपका झुकाव जैन धर्म (तेरा पन्थ) की ओर हो गया था और उसकी अनेक गतिविधियो मे आप सक्रिय रूप से भाग लेने लगे थे। विख्यात जैन विद्वान् मुनि श्री चन्दनमल जी ने सन् 1954 मे जब अपना चातुर्मास चूरू मे किया था तब उनकी अनेक हिन्दी, गुजराती, मारवाड़ी, पजाबी रचनाओ का सकलन करके 'मलयज की महक' नाम से प्रकाशित किया था। आपके ही सत्प्रयास से चूरू मे 'महिला अणुव्रत समिति' की स्थापना हुई थी।

आपको मधुमेह की जो बीमारी विरासत मे मिली थी उसीके कारण आपको असमय मे यह ससार छोड़ना पडा था। आपके निधन के उपरान्त आपकी स्मृति मे 'श्री कुजबिहारी स्मृति सुमन' नामक जो स्मृति-ग्रन्थ सन् 1969 मे प्रकाशित हुआ था उससे आपके व्यक्तित्व एवं कृतित्व की विशद जानकारी मिलती है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन श्री गोविन्द अग्रवाल के सम्पादन मे चूरू की प्रख्यात सांस्कृतिक संस्था 'लोक संस्कृति शोध सस्थान' की ओर से हुआ था। इस ग्रन्थ के 'श्रद्धाजलि और सस्मरण' नामक प्रथम खण्ड मे जहाँ शर्मा जी के व्यक्तित्व का सही रूप हमे देखने को मिलता है वहाँ इसके द्वितीय खण्ड 'कुंज कुसुमाजलि' मे आपकी अनेक कविताएँ आकलित की गई है।

आपका निधन 20 सितम्बर सन् 1968 को हुआ था।

श्री कुन्दनलाल जैन (मोदी)

श्री जैन का जन्म मध्यप्रदेश के सागर जनपद के देवरी कलाँ नामक कस्बे के एक जैन परिवार मे सन् 1891 मे हुआ था।



आपकी शिक्षा-दीक्षा काशी के 'स्याद्वाद विद्यालय' मे हुई थी। आप 'हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर' के सचालक श्री नाथूराम 'प्रेमी' की प्रेरणा पर बम्बई मे उनके पास चले गए थे और उनके कार्य मे तत्परतापूर्वक सहयोग दिया करते थे। 'हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर' के प्रकाशनो की प्रामाणिकता और उपादेयता की अभिवृद्धि मे आपका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा था।

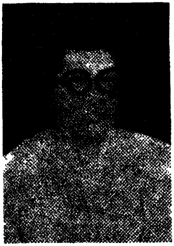
'हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर' के कार्यो की देख-भाल के साथ-साथ आप 'श्री परमश्रुतप्रभावक मण्डल' की 'श्रीमद् रामचन्द्र जैन ग्रन्थमाला' के कार्य का सचालन भी किया करते थे। इस सस्था की ओर से 'गोमट्ट सार जीव काण्ड', कर्मकाण्ड प्रवचन-सार', 'लब्धि सार' तथा 'क्षपण सार' आदि अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का प्रकाशन हुआ है। इस प्रकार हिन्दी-जैन-

साहित्य की सेवा के क्षेत्र मे आपकी देन अनन्य कही जा सकती है।

आपका निधन 30 जुलाई सन् 1964 को हुआ था।

श्री कुशवाहा कान्त

श्री कुशवाहा कान्त का जन्म 9 दिसम्बर सन् 1918 को उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर नगर के महुवरिया नामक मोहल्ले मे हुआ था। सन् 1935 मे आपने हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आपकी शिक्षा केवल इटरमीडिएट तक हो सकी थी कि आप फिर लेखन मे लग गए। आप जब नवी कक्षा मे ही पढते थे कि आपने 'खून का प्यासा' नामक एक जासूसी उपन्यास लिखा था। छात्रावस्था मे आपने 'किरण' नामक एक हस्तलिखित मासिक पत्रिका का सम्पादन भी किया था। लेखन की ओर आपकी रुचि 'चन्द्रकान्ता' नामक उपन्यास के पढने से हुई थी। अपने छात्र-जीवन म आपने जहाँ लेखन की ओर विशेष ध्यान दिया था वहाँ सन् 1940 मे 'अनन्त विजय नाटक मडली' नामक सस्था की स्थापना करके आपने हिन्दी रगमच को लोकप्रिय बनाने की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया था। आप जहाँ एक कुशल अभिनेता और नर्तक थे वहाँ तबला और बाँसुरी वादन मे भी अत्यन्त निष्णात थे। आपका वास्तविक नाम 'कामता प्रसाद' था।



अपने अध्ययन की समाप्ति के उपरात आपने सन् 1942 की क्रांति मे सक्रिय रूप से भाग लेकर कारावास की यन्त्रणाएँ भी भोगी थी। जेल से वापस आने पर आप सन् 1943 मे 'रायल एयर फोर्स' मे 'एयर प्रैक्टस फर्स्ट क्लास' के पद पर आसीन हो गए थे। फौज मे रहते हुए आपने 'इशारा' नामक एक उपन्यास की रचना भी की थी। जब सरकार का आपके सन् बयालीस की क्राति के दिनों मे जेल जाने की घटना का पता चला तो आपको वहाँ से 'डिस्चार्ज' कर दिया गया। फौज से वापस आने पर आपने स्थायी रूप से काशी मे रहकर साहित्य-रचना करने का सकल्प किया और सन् 1948 मे 'चिनगारी प्रकाशन' की स्थापना करके उसके माध्यम से 'चिनगारी' तथा 'बिजली' नामक मासिक पत्रिकाओ का प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया। चिनगारी प्रकाशन के प्रारम्भिक दिनो मे आपने जहाँ जम-कर लेखन किया वहाँ आप उसके 'डिस्पैच' तथा 'कम्पोजिग' तक का सारा कार्य स्वय ही किया करते थे। 'चिनगारी' पत्रिका के अतिरिक्त आपने 'नागिन' नामक एक और पत्रिका का प्रकाशन भी वहाँ से किया था। अपने प्रकाशन के लिए पुस्तको की रचना करने के साथ-साथ आप 'चौधरी एण्ड सस काशी' के लिए भी उपन्यास लिखा करते थे। आपके ऐसे सब उपन्यास 'कुँवर कामताप्रसाद' के नाम से प्रकाशित हुआ करते थे।

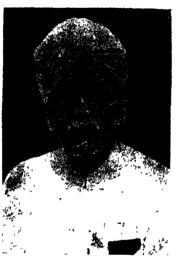
आपने अपनी प्रतिभा से थोड़े ही समय मे वह लोक-प्रियता प्राप्त कर ली थी कि हिन्दी-क्षेत्र मे आपके उपन्यासो को बडे चाव से पढा जाने लगा था। उन उपन्यासो की लोकप्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण यह भी है कि उनमे से कई के आधार पर फिल्मे भी बनी थी। आपने लगभग 3 दर्जन उपन्यासो की रचना की थी, जिनमे 'लाल रेखा', 'पपिहारा', 'पारस', 'परदेसी', (दो भाग), 'विद्रोही सुभाष', 'नागिन', 'मदभरे नयना', 'आहुति', 'अकेला', 'बसेरा', 'भँवरा', 'चूडियाँ', 'इशारा', 'कुकुम', 'मजिल', 'नीलम', 'पागल', 'जलन', 'लवग', 'निर्मोही' तथा 'अपना-पराया' आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपने 'महाकवि मोची' के नाम से अनेक हास्य-नाटको तथा कविताओ का सृजन भी किया था।

आपका लेखन तथा प्रकाशन जब लोकप्रियता के चरम शिखर को छू रहा था तब अचानक 29 फरवरी सन् 1952 को अपने प्रेस (राम कटोरा रोड) से वापस लौटते समय कबीर चौरा के पास कुछ गुण्डों ने आप पर घातक आक्रमण कर दिया। इस दुर्घटना का पता चलने पर 'चौधरी एण्ड

सस' के श्री कुंवरजी ने आपको अस्पताल पहुँचाया था। अस्पताल मे कुशवाहाजी ने डाक्टरो से अपने को 'चिनगारी कार्यालय' पहुँचाने का अनुरोध किया था। आक्रमण इतना घातक किया गया था कि डाक्टर भी आपको न बचा सके और यह लोकप्रिय उपन्यासकार 12 मार्च सन् 1952 को होलिका के दिन इस ससार से विदा हो गया।

महाशय कृष्ण

महाशय कृष्ण का जन्म वजीराबाद (अब पाकिस्तान) मे सन् 1881 मे हुआ था। लाहौर से सन् 1902 मे बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करके आप आर्यसमाज के सुधारवादी आन्दोलन की ओर मुड गए और सर्वप्रथम आपने सन् 1903 मे 'आर्य पत्रिका' नामक एक अँग्रेजी साप्ताहिक पत्र का सम्पादन किया था और बाद मे सन् 1909 मे उर्दू साप्ताहिक 'प्रकाश' की नीव डाली। मुख्यत. आपने उर्दू के माध्यम से ही पत्रकारिता को अपनाकर पजाब मे आर्यसमाज के सुधारवादी आन्दोलन का प्रचार एवं प्रसार किया था। अपनी इसी पवित्र और क्रांतिकारी धारणा के वशीभूत होकर आपने सन् 1919 मे 'प्रताप' नाम से एक उर्दू दैनिक का भी सूत्रपात किया, जो आज भी जालधर और नई दिल्ली से प्रकाशित हो रहा है।



आर्यसमाज के अनेक सुधारवादी कार्यों मे आप महात्मा मुशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) के अनन्य सहयोगी के रूप मे बढ-चढकर भाग लेते रहे और उनके द्वारा सस्थापित गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय के सचालन में भी अपना अनन्य सहयोग दिया। आप जहाँ अनेक वर्ष तक आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के प्रधान पद पर प्रतिष्ठित रहे वहाँ 'परोपकारिणी सभा अजमेर' से भी आपका निकट का सम्बन्ध था। आर्यसमाज की ओर से संचालित निजाम हैदराबाद के विरुद्ध किये गए 'आर्य सत्याग्रह' के भी आप छठे सर्वाधिकारी रहे थे।

आपने उर्दू पत्रकारिता के माध्यम से सामान्यत. समस्त भारत और विशेषत: पजाब की जनता की जो सेवा की वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। हिन्दू सस्कृति और विभिन्न राष्ट्रोपयोगी कार्यों मे आपके अग्रलेखों ने जनता का जो मार्गदर्शन किया था वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कहा जा सकता है। हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपकी देन उपेक्षणीय नही कही जा सकती। इस दृष्टि से भी आपने सन् 1934 मे लाहौर से 'प्रभात' नामक एक दैनिक पत्र का प्रकाशन करके अपने अनन्य हिन्दी-प्रेम का परिचय दिया था। इसके प्रधान सम्पादक प्रख्यात राष्ट्रीय कवि श्री छैलबिहारी दीक्षित 'कटक' थे जिन्हे विशेष रूप से कानपुर मे बुलाया गया था। इस पत्र के अग्रलेख इतने उग्र हुआ करते थे कि तत्कालीन पजाब सरकार के अधिकारी उससे आतकित हो गए और यह पत्र केवल तीन सप्ताह ही चल सका कि सरकार ने उसके प्रकाशन पर प्रतिबध लगा दिया। इस प्रकार सरकार की दमन नीति के कारण महाशयजी की हिन्दी-सेवा का जो स्वप्न अधूरा रहा था उसे आपने स्वतत्रता के उपरात अप्रैल 1954 मे दिल्ली से 'वीर अर्जुन' नामक हिन्दी दैनिक का प्रकाशन करके पूरा करने का प्रयास किया, जो कई वर्ष तक सफलता पूर्वक चलता रहा। यह भी उल्लेखनीय है कि महाशयजी के ज्येष्ठ पुत्र श्री वीरेन्द्र जालन्धर से भी 'प्रताप' (उर्दू) के प्रकाशन के साथ-साथ 'वीर-प्रताप' नामक हिन्दी दैनिक का सम्पादन कर रहे हैं।

आपका निधन 25 फरवरी सन् 1963 को नई दिल्ली मे हुआ था।

श्री कृष्णकान्त मालवीय

श्री मालवीय का जन्म जून 1883 मे इलाहाबाद मे हुआ था। आप महामना मदनमोहन मालवीय के ज्येष्ठ भ्राता

श्री जयकृष्ण मालवीय के द्वितीय पुत्र थे। आपकी शिक्षा प्रयाग में ही हुई थी और प्रयाग विश्वविद्यालय से सन् 1904 में आपने बी० ए० की परीक्षा ससम्मान उत्तीर्ण की थी। शिक्षा-प्राप्ति के उपरांत आप पत्रकारिता के क्षेत्र मे सक्रिय हो गए और सन् 1910 मे आपने महामना मदनमोहन मालवीय द्वारा सस्थापित 'अभ्युदय' नामक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन भार सँभाला और 25 वर्ष तक आप निरन्तर उसका सम्पादन करते रहे। 'अभ्युदय' साप्ताहिक के अतिरिक्त आपने सन् 1911 मे 'मर्यादा' नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन भी सँभाला था, जिसमे साहित्यिक, राजनीतिक और सामाजिक विषयो पर विचारपूर्ण लेख प्रकाशित हुआ करते थे। 'मर्यादा' और 'अभ्युदय' इन दोनो पत्रो के सम्पादन के दिनो मे आपने अपनी लेखनी का जो जौहर दिखलाया उसका देश की तत्कालीन राजनीति पर अत्यधिक प्रभाव पडा था। आपने 'मर्यादा' का सम्पादन सन् 1922 तक किया था।

जब देश मे महात्मा गाधी द्वारा प्रवर्तित 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' ने जोर पकडा तो आप भी उसके प्रभाव से अछूते न रहे। आपने समय-समय पर काग्रेस के विभिन्न आन्दोलनो मे डटकर हिस्सा लिया और थोडे ही दिनो मे आपकी गणना अखिल भारतीय ख्याति के राजनीतिक नेताओं मे होने लगी। आप निरतर 12 वर्ष तक केन्द्रीय असेम्बली के सक्रिय सदस्य रहे थे और अपने कार्य-काल मे आपने जहाँ विधवा विवाह तथा पैतृक सम्पत्ति मे लड़कियो का हिस्सा होने के सबंध मे असेम्बली मे महत्त्वपूर्ण कार्य किया, वहाँ अछूतोद्धार की दिशा मे भी आपकी देन विशेष रूप से उल्लेखनीय है।



प्रथम महायुद्ध के समय आपने 'अभ्युदय' के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का विश्लेषण जिस निर्भीकता से किया था उससे हिन्दी पत्रकारिता को एक सर्वथा नई दिशा मिली थी। 'अभ्युदय' का 'ससार संकट' नामक स्तम्भ उन दिनो पाठक बड़ी रुचि के साथ पढ़ा करते थे। आप जहाँ उच्चकोटि के राजनेता और जागरूक पत्रकार थे वहाँ उर्दू कविता के भी बहुत प्रेमी थे। आप अपने भाषणो मे प्राय. उर्दू की शेरो-शायरी के चमत्कारी उदाहरण प्रस्तुत किया करते थे। आपकी भाषा अत्यन्त सरल, स्पष्ट और उर्दू के पुट से सयुक्त हुआ करती थी। पत्रकारिता के साथ-साथ आपने हिन्दी साहित्य को अनेक ग्रन्थ-रत्न भी प्रदान किये थे। आपकी उल्लेखनीय मौलिक कृतियों मे 'विश्व का राजनीतिक भविष्य', 'ससार की राजनीतिक विजय', 'स्वराज्य और साहित्य', 'सुहाग रात', 'मनोरमा के पत्र', 'मातृत्व' तथा 'ससार सकट' आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है। उक्त मौलिक रचनाओ के अतिरिक्त आपने बगला और मराठी से अनेक उपन्यासों का अनुवाद भी किया था। आप सन् 1928 से सन् 1931 तक अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान मत्री भी रहे थे।

आपका निधन 3 जनवरी सन् 1941 को नई दिल्ली मे हुआ था।

डॉ० कृष्णचन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

श्री 'चन्द्र' जी का जन्म 7 फरवरी सन् 1911 को उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर नामक नगर मे हुआ था। आपकी शिक्षा बुलन्दशहर, कानपुर और आगरा मे हुई थी। आगरा विश्वविद्यालय से आपने एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त 'मेरठ जनपद के लोकगीत' विषय पर पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। प्रारम्भ मे आप कई वर्ष तक मेरठ के बी० ए० वी० हाई स्कूल मे 'हिन्दी शिक्षक' रहे थे और सन् 1948 से सन् 1974 तक 'मेरठ कालेज' मे हिन्दी-प्रवक्ता हो गए थे।

आपका स्थान मेरठ के साहित्यिक जागरण के क्षेत्र मे सर्वथा अनुपम और अनन्य था। आपने हिन्दी की प्रख्यात

कवयित्री और कहानी-लेखिका श्रीमती होमवती देवी के साथ मिलकर मेरठ मे 'हिन्दी साहित्य परिषद्' की स्थापना की थी। इस परिषद् के माध्यम से कई वर्ष तक अनेक गोष्ठियाँ और सम्मेलन आदि आयोजित हुए थे। इन गोष्ठियो और सम्मेलनों मे सर्वश्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', हजारीप्रसाद द्विवेदी, भगवती प्रसाद वाजपेयी, उदयशकर भट्ट, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', डॉ० नगेन्द्र और डॉ० शिवमगलसिह 'सुमन' आदि अनेक कवियो और साहित्यकारो ने भाग लिया था। हिन्दी साहित्य परिषद् की सयोजना मे आपको प्रख्यात साहित्यकार श्री सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' का भी सक्रिय सहयोग सुलभ हुआ था। वे उन दिनो मेरठ मे ही रहा करते थे।



'हिन्दी साहित्य परिषद्' के अतिरिक्त नगर की अनेक साहित्यिक एव सामाजिक सस्थाओ से आपका घनिष्ठ सम्बन्ध रहा था। सन् 1948 मे अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का जो वार्षिक अधिवेशन सेठ गोविन्ददास की अध्यक्षता मे मेरठ मे सम्पन्न हुआ था उसमे भी आपका प्रमुख सहयोग रहा था। आप राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन की स्मृति मे स्थापित 'पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन' के ट्रस्टी-बोर्ड के भी सम्मानित सदस्य रहे थे। सन् 1973 मे मेरठ के 'कृष्णादेवी शीतलप्रसाद जैन ट्रस्ट' की ओर से 'सरस्वती परिषद्' नामक जिस साहित्यिक सस्था की स्थापना की गई थी उसके भी आप सचिव रहे थे। इस परिषद् के तत्वावधान मे प्रतिवर्ष 5 हजार रुपए का एक 'अखिल भारतीय पुरस्कार' और एक हजार रुपए का 'माण्डलिक पुरस्कार' देने की योजना भी आपके कार्यकाल मे बनाई गई थी। इसी परिषद् के तत्वावधान मे आपके ही सम्पादकत्व मे 'मयराष्ट्र मनीषा' नामक एक ऐसा विशालकाय ग्रन्थ प्रकाशित किया गया था जिसमें मेरठ की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, साहित्यिक, भौगोलिक तथा ऐतिहासिक विरासत का सर्वांगीण सन्दर्भ प्रस्तुत किया गया है।

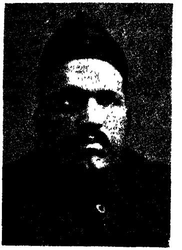
आप जहाँ एक कुशल शिक्षक और सामाजिक संगठन-कर्ता थे वहाँ साहित्य-रचना और कविता के क्षेत्र मे भी आपका महत्त्वपूर्ण स्थान था। कवि के रूप में,आपका योगदान भी कम उल्लेखनीय नही था। आपकी प्रकाशित काव्य-कृतियों मे 'प्रतिछाया', 'मरीचिका' और 'मदशाला' आदि के नाम विशेष परिगणनीय हैं। 'प्रतिछाया' मे उनके साथ श्रीमती होमवती देवी और श्री विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक' की कविताएँ भी प्रकाशित हुई थी। कुरु जनपद की आंचलिक सम्पदा तथा सस्कृति को प्रकाश मे लाने की दृष्टि से आपने सन् 1960 मे 'कुरु लोक सस्थान' नामक एक सांस्कृतिक सस्था की स्थापना भी की थी। आपने इस सस्था की ओर से 'कुरु भारती' नामक जो एक पत्रिका का सम्पादन एव प्रकाशन किया था उसके माध्यम से भी अत्यन्त प्रेरणाप्रद कार्य सम्पन्न हुआ है। सामान्यत मेरठ जनपद और विशेषत: कुरुक्षेत्र की सस्कृति से सम्बन्धित आपके अनेक शोधपूर्ण लेख हिन्दी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहते थे। आपके द्वारा लिखित गद्य-कृतियो मे 'प्राचीन कवियो का तुलनात्मक अध्ययन', 'भाषा विज्ञान दर्शन', 'हिन्दी साहित्य का परिचयात्मक इतिहास', 'हिन्दी के ज्योतिवन्त', 'नव-निधि' तथा 'नीति और शिष्टाचार' आदि विशिष्ट हैं। इनके अतिरिक्त आपकी 'काव्य-कल्पद्रुम' तथा 'एकाकी संग्रह' नामक पुस्तकें भी उल्लेख्य है।

श्री 'चन्द्र' जी एक कुशल कवि, सहज समीक्षक और निष्णात अध्यापक होने के साथ-साथ साहित्य के अन्वेषक भी थे। यही कारण है कि अपने शिक्षकीय जीवन मे आपने जहाँ साहित्य और सस्कृति के उन्नयन तथा विकास के क्षेत्र मे अनेक लोकोपयोगी कार्य किए वहाँ अनेक छात्रों को शोध के नए-नए आयामो की दिशा मे अग्रसर किया था। आपके निरीक्षण मे आगरा तथा मेरठ विश्वविद्यालयो से लगभग 2 दर्जन छात्रों ने शोध-कार्य करके पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी।

आपका निधन 23 जून सन् 1981 को मेरठ मे हुआ था।

श्री कृष्णदत्त त्रिवेदी

श्री त्रिवेदी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के ब्रह्मावली नामक ग्राम मे सन् 1901 मे हुआ था। आपके पिता श्री महाराजप्रसाद भी अच्छे काव्य-मर्मज्ञ थे। मैट्रिक तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप अपनी 'स्टेट' की व्यवस्था मे लग गए थे। आपने अपने यहाँ 'साहित्य-सघ' नाम की एक सस्था स्थापित करके उसके तत्वावधान मे 'आदर्श पुस्तकालय' खोला था, जिसमे अनेक अप्रकाशित और अनुपलब्ध ग्रन्थो का अच्छा सकलन है।



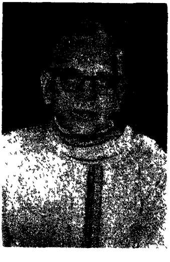
कवि के रूप मे भी आपने अपने क्षेत्र मे अच्छी ख्याति प्राप्त कर ली थी। आपकी रचनाओ मे 'कृष्ण दोहावली', 'कृष्ण चरित मानस', 'महात्मा गाधी', 'विवेक चूडामणि', 'सती शक्ति', 'नैमिष', 'अक्षत' तथा 'सत्यनारायण कथा' आदि के नाम प्रमुख रूप से उल्लेख्य है। आपके 'कृष्णचरित मानस' नामक 31 सर्गों के काव्य पर उत्तर प्रदेश सरकार ने पुरस्कार भी प्रदान किया था। यह खेद की बात है कि आपकी सभी रचनाएँ प्रकाशित न हो सकी, केवल 'नैमिष' (1934) और 'सती शक्ति' (1949) का ही प्रकाशन हुआ है।

आपका निधन सन् 1970 मे हुआ था।

श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़ 'बेढब बनारसी'

श्री गौड़ जी का जन्म उत्तर प्रदेश के वाराणसी नगर मे 29 अक्तूबर सन् 1895 को हुआ था। एम० ए० एल० टी० करने के उपरान्त आप सन् 1917 से सन् 1939 तक डी० ए० वी० कालेज, वाराणसी मे अध्यापक रहे और बाद मे सन् 1958 तक उसी कालेज के प्रधानाचार्य भी रहे। अपने अध्यापक जीवन मे आपने अपनी कार्यशीलता और परिश्रम के बल पर नगर के शैक्षणिक जीवन मे अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया था। आप अनेक वर्ष तक प्रदेश की पाठ्य-पुस्तक-समिति के सम्मानित सदस्य रहने के साथ-साथ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की सीनेट के सदस्य और उत्तरप्रदेश माध्यमिक शिक्षक सघ के भी अध्यक्ष रहे थे। एक कुशल शिक्षक के रूप मे आप सन् 1951 से 1953 तक जहाँ उत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग की 'नरेन्द्रदेव समिति' के सक्रिय सदस्य रहे थे वहाँ सन् 1955 मे आपने केन्द्रीय सरकार द्वारा गठित और कश्मीर मे आयोजित 'पाठ्य-पुस्तक रचना वर्कशाप' मे भी सोत्साह भाग लिया था।

शिक्षा के क्षेत्र मे एक महत्त्वपूर्ण स्थान होने के साथ-साथ साहित्यिक क्षेत्र मे भी आपका एक सर्वथा अनन्य स्थान हो गया था। आप जहाँ काशी नागरी प्रचारिणी सभा के कई वर्ष तक प्रधानमत्री रहे थे वहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के साहित्य मत्री के रूप मे भी आपकी सेवाएँ सर्वथा स्तुत्य रही थी। आप उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रतापगढ अधिवेशन के अध्यक्ष रहने के साथ-साथ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के कोटा अधिवेशन के अवसर पर आयोजित साहित्य परिषद् के अध्यक्ष भी रहे थे। हिन्दुस्तानी एकेडेमी प्रयाग की सेवा भी आपने अनेक वर्ष तक की थी। आप उसके जहाँ सस्थापक-सदस्य थे वहाँ उसके प्रधान-मत्री के रूप मे भी आपकी सेवाएँ सदा स्मरणीय रहेगी। काशी की 'प्रसाद परिषद्' के तो आप प्राण ही थे। इस संस्था के माध्यम से



गौड जी ने काशी के साहित्यिक जागरण मे बहुत बडी भूमिका निबाही थी। आपका जहाँ हिन्दी के छायावादी कवि जयशंकरप्रसाद से अत्यन्त निकट का सम्बन्ध था वहाँ काशी के अनेक साहित्यकार भी आपकी प्रतिभा का लोहा मानते थे। बनारस की हँसोड साहित्यकारों की परम्परा के आप जैसे प्राण ही थे। हिन्दी साहित्य की ऐसी कोई भी विधा नही है जिसमे आपने अपनी प्रतिभा का ज्वलन्त परिचय न दिया हो। इतने दीर्घकाल तक काशी की एक महत्त्वपूर्ण सस्था मे शिक्षक रहने के कारण काशी के छोटे-बडे सभी लोग आपका बहुत आदर करते थे और आपका 'मास्टर साहब' नाम अपनी अद्वितीय गरिमा के साथ सबके सामने उजागर रहता है। आपने जहाँ अनेक 'पर्सनल एसेज' लिखे वहाँ लघु निबन्धों के लेखन मे भी अपनी अद्वितीय प्रतिभा का परिचय दिया था। आपके ऐसे निबन्ध 'हुक्का-पानी' तथा उपहार' नामक पुस्तको मे सकलित है। हास्य और व्यग्य कविता के क्षेत्र मे भी बेढब जी की अदा सर्वथा निराली थी। आपकी ऐसी रचनाएँ 'बिजली', 'बेढब की बहक', 'बेढब की बानी' तथा 'नया जमाना' नामक पुस्तको मे सकलित है। कहानी, उपन्यास तथा एकाकी-लेखन मे भी आपकी अद्वितीय प्रतिभा के दर्शन होते है। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'बनारसी इक्का', 'मसूरी वाली', 'टनाटन', 'गाधीजी का भूत', 'धन्यवाद', 'महत्त्व के गुमनाम पत्र' तथा 'जब मै मर गया था' (कहानी सकलन), 'लेफ्टिनेंट पिगसन की डायरी' (उपन्यास) और 'बेढब के एकाकी' प्रमुख है। साहित्य-समीक्षा के क्षेत्र मे भी आपकी प्रतिभा सर्वथा अनुपम और अद्वितीय थी। हिन्दी साहित्य के इतिहास का परिशीलन भी आपकी 'हिन्दी साहित्य की रूप-रेखा' तथा 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' नामक पुस्तकों मे अत्यन्त उत्कृष्टता के साथ किया गया था। इन सब मौलिक रचनाओ के साथ-साथ आपने उर्दू के काव्य को भी हिन्दी मे प्रस्तुत करने का अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपकी ऐसी प्रतिभा का उत्कृष्ट प्रमाण 'गालिब की कविता' तथा 'रूहे सुखन' नामक पुस्तकों से मिल जाता है। यहाँ यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि आपकी अधिकाश रचनाओ का जहाँ साहित्यिक जगत् मे उचित समादर हुआ था वहाँ वे विभिन्न सरकारो द्वारा पुरस्कृत भी हुई थी। इन साहित्यिक रचनाओ के अतिरिक्त अनेक शिक्षा-सम्बन्धी ग्रन्थो के निर्माण मे भी आपका उल्लेखनीय सहयोग रहा था। आपकी ऐसी रचनाओं मे 'कक्षा शिक्षण के सिद्धान्त' तथा 'इतिहास एक अध्ययन' नामक पुस्तके उल्लेखनीय हैं।

आपकी शिक्षा, साहित्य और संस्कृति-सम्बन्धी विभिन्न सेवाओं के कारण बेढब जी को जहाँ उत्तरप्रदेश विधानसभा का सदस्य मनोनीत किया गया था वहाँ आप नगर कांग्रेस कमेटी के भी कई वर्ष तक उपाध्यक्ष रहे थे। इसके साथ-साथ आप काशी की कारमाइकेल लाइब्रेरी की प्रबन्ध समिति के सदस्य और भारत सेवक समाज के अध्यक्ष भी रहे थे। एक उच्चकोटि के शिक्षक, साहित्यकार और समाज-सेवी होने के साथ-साथ पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपने अपना उल्लेखनीय स्थान बना लिया था। आपने जहाँ अनेक वर्ष तक हास्य रस के साप्ताहिक पत्र 'तरग' का सम्पादन किया था वहाँ 'खुदा की राह पर', 'बेढब' और 'आँधी' नामक पत्रो के सम्पादन मे भी पूर्ण मनोयोग से कार्य किया था। शिष्ट और सुरुचि-पूर्ण व्यग्य साहित्य के सृजन और प्रोत्साहन की दिशा मे गौडजी का स्थान सर्वथा अनुपम और अनन्य था।

आपका निधन 6 मई सन् 1968 को बनारस मे हुआ था।

श्री कृष्णदेव शर्मा

श्री शर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ जनपद के अतरौली नामक नगर मे सन् 1905 मे हुआ था। इस नगर मे आपकी ननसाल थी। आपके पिता श्री प्राणसुख जी आपको केवल डेढ वर्ष की आयु मे ही छोडकर असमय में स्वर्ग प्रयाण कर गए थे। आपके नाना पडित लालसिह जी अलीगढ जिले की जोदडो नामक एक छोटी-सी रियासत मे दीवान थे। आपके नाना जी आर्यसमाज की विचार-धारा से प्रभावित थे इसी कारण उर्दू तथा फारसी के वातावरण मे भी उन्होने शर्माजी को हिन्दी तथा सस्कृत की ओर उन्मुख किया था। शर्मा जी की शिक्षा-दीक्षा देहरादून के डी०ए०वी० कालेज मे हुई थी। वहाँ से इण्टर तथा बी० ए० की परीक्षाएँ देने के अनन्तर शर्माजी ने सन् 1936 मे आगरा विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। पहले आपने देहरादून के डी०ए०वी० इण्टर कालेज

में सहायक अध्यापक के रूप मे कार्य प्रारम्भ किया था और बाद मे उसके प्रधानाचार्य हो गए थे तथा सन् 1966 मे आपने इस पद से अवकाश ग्रहण किया था।

अपने छात्र-जीवन से ही आपको समाज-सेवा के कार्यों मे रुचि हो गई थी। आपकी इस प्रवृत्ति का परिचय इससे ही मिल जाता है कि पहले आप 'आर्य कुमार सभा' के पुस्तकालय के अध्यक्ष बने और फिर उप-प्रधान भी रहे थे। आर्यसमाज कर्णपुर, देहरादून के भी आप अनेक वर्ष तक मत्री तथा उपप्रधान रहे थे। आर्यसमाज की विभिन्न प्रवृत्तियो मे सक्रिय रूप से भाग लेने के साथ-साथ आप काग्रेस द्वारा प्रवर्तित राष्ट्रीय आन्दोलन मे भी अपना अनन्य योगदान देते रहते थे। आप जहाँ 'हिन्दी साहित्य समिति देहरादून' के सस्थापको मे अन्यतम थे वहाँ 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की स्थायी समिति के भी कई वर्ष तक सदस्य रहे थे। सन् 1950 मे आपने देहरादून मे 'सर्वोदय स्वाध्याय मण्डल' की स्थापना करके गाधी-विचार-धारा के प्रचार का प्रशसनीय कार्य भी किया था।

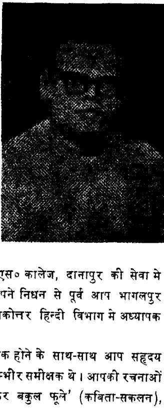


समाज-सेवा के इन व्यस्त कार्यक्रमो मे समय निकालकर आप कभी-कभी साहित्य-लेखन का कार्य भी करते रहते थे। अध्यापन के दिनों मे आपने कालेज की पत्रिका मे जहाँ अनेक लेख आदि लिखे वहाँ 'आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश' के साप्ताहिक पत्र 'आर्यमित्र' मे भी आपकी रचनाएँ ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। आप कालेज की पत्रिका 'नव प्रभात' के कई वर्ष तक सम्पादक भी रहे थे। आपने 'हिन्दी साहित्य समिति' के माध्यम से जहाँ देहरादून मे हिन्दी का वातावरण तैयार किया था वहाँ प्रो० गयाप्रसाद शुक्ल के साथ 'हिन्दी-आन्दोलन' भी चलाया था। आपकी हिन्दी-सेवाओ को दृष्टि मे रखकर देहरादून की जनता ने आपका सम्मान भी किया था। आपकी लेखन-प्रतिभा का परिचय आपकी 'सूर-वश-निर्णय', 'चरित्र-निर्माण' तथा 'बाल समाज विज्ञान' नामक कृतियो से भली भाँति मिल जाता है। आपकी 'अनन्त की गोद मे' नामक एक अप्रकाशित कृति भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

आपका निधन 24 जनवरी सन् 1976 को 71 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री कृष्णनन्दन दीक्षित 'पीयूष'

श्री 'पीयूष' का जन्म बिहार प्रदेश के मुजफ्फरपुर जनपद के लहलादपुर नामक ग्राम मे 8 नवम्बर सन् 1933 को हुआ था। बिहार विश्वविद्यालय से बी० ए० (आनर्स) करने के उपरान्त आपने उसी विश्वविद्यालय से हिन्दी म प्रथम श्रेणी मे एम०ए० किया था। एक लम्बी अवधि तक विविध स्थानो मे अध्यापन-कार्य करने के उपरान्त आप पटना विश्वविद्यालय के अधीन सचालित बी० एस० कालेज, दानापुर की सेवा मे भी सलग्न रहे थे। अपने निधन से पूर्व आप भागलपुर विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग मे अध्यापक थे।



एक कुशल अध्यापक होने के साथ-साथ आप सहृदय कवि, कथाकार और गम्भीर समीक्षक थे। आपकी रचनाओं मे 'दर्द की मीनार', 'फिर बकुल फूले' (कविता-सकलन), 'दो हथेलियो का पुल', 'अनन्त' (उपन्यास), 'उमापति का

पारिजात हरण', 'चिन्तन-अनुचिन्तन' तथा 'अर्पापन और स्थापन' (समीक्षा) आदि उल्लेखनीय है। आपने सन् 1960 में 'साहित्यकार रमण' नामक ग्रन्थ का सम्पादन भी किया था।

आपकी कुछ कविताओं का जहाँ चेक तथा अँग्रेजी भाषाओं मे अनुवाद हुआ था वहाँ आपके द्वारा लिखित नवगीत भी अपनी विशिष्टता के लिए पर्याप्त लोकप्रिय हुए थे। लघुकथा, डायरी और संस्मरण-लेखन की कला मे भी आप अत्यन्त दक्ष थे।

आपका देहावसान सन् 1968 मे हुआ था।

श्री कृष्णप्रकाशसिंह 'कृष्ण' अखौरी

श्री अखौरी जी का जन्म 8 जून सन् 1892 को बिहार के गया जिले के औरंगाबाद नामक नगर मे हुआ था। सन् 1913 मे आपने वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण करके औरंगाबाद मे ही प्रैक्टिस प्रारम्भ कर दी और थोडे ही दिनो मे आपकी गणना प्रदेश के अच्छे वकीलो मे होने लगी। आपने औरंगाबाद मे एक कालेज की स्थापना भी की थी।

सन् 1912 मे रामगढ मे आयोजित एक कवि-सम्मेलन मे आपको 'सुकवि' की उपाधि से भी विभूषित किया गया था। कलकत्ता विश्वविद्यालय की एक हिन्दी परीक्षा मे प्रथम आने पर आपको एक सम्मान पत्र प्रदान किया गया था। यह सम्मान पत्र आपने श्री जयशंकर प्रसाद की उपस्थिति मे ग्रहण किया था। आप निबन्ध, कहानियाँ और नाटक आदि लिखने मे अधिक दक्ष थे और आपकी ऐसी रचनाएँ 'मनोरजन', 'मर्यादा', 'हितैषी', 'भागवत्' तथा 'इन्दु' आदि तत्कालीन प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी। 'भागवत्' का तो आपने अनेक वर्ष तक सम्पादन ही किया था।

आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'पन्ना' (1915), 'वीर चूडामणि' (1915), 'शान्ति और सुख' (1915) तथा 'बलिदान' (1920) के नाम विशेष रूप मे उल्लेखनीय है।

आपका देहावसान सन् 1954 मे हुआ था।

वल्लभवंशजा कृष्णप्रिया बेटी जी महाराज

आपका जन्म सन् 1923 की गुरुपूर्णिमा को काशी के गोपाल मन्दिर के सुप्रसिद्ध वल्लभ-कुल मे हुआ था। आपके मन में शैशव-काल से ही महाप्रभु वल्लभाचार्य जी के आध्यात्मिक सदेश और उनके द्वारा विरचित कृष्ण-भक्ति-विषयक ग्रन्थो के प्रचार तथा प्रसार की अद्भुत लगन थी। परिणाम-स्वरूप आपने प्रथम बार सन् 1949 मे उत्तर भारत के अनेक स्थानो मे घूमकर राष्ट्रीय जीवन के परिप्रेक्ष्य मे वल्लभाचार्य के सिद्धान्तो का अद्भुत सदेश प्रचारित किया था। आपके द्वारा सस्थापित 'वल्लभ विद्यापीठ' ने बालिकाओ मे शिक्षा का प्रचार करने की दिशा मे अद्भुत कार्य किया है। काशी की महिलाओ मे सास्कृतिक जागरण करने और उनमे स्वाध्याय की प्रवृत्ति का सचार करने की पुनीत भावनाओ से प्रेरित होकर आपने सन् 1952 मे 'शुद्धाद्वैत जप यज्ञ समिति' की स्थापना भी की थी।



महाप्रभु वल्लभाचार्य के ग्रन्थों के पारायण तथा अध्ययन-मनन पर विशेष बल देने के अतिरिक्त आपने देश के विभिन्न नगरो मे अपनी 'शुद्धाद्वैत जप यज्ञ समिति' नामक सस्था के माध्यम से धार्मिक तथा साहित्यिक क्षेत्र मे बहुमुखी जागृति उत्पन्न की थी। इसके साथ-साथ आपने 'मदनमोहन पुस्तकालय' की स्थापना करके साहित्य-सृजन और प्रकाशन की दिशा म भी अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपने जहाँ महाप्रभु वल्लभाचार्य की प्रामाणिक जीवनी की रचना की थी वहाँ अपने पूर्वज षष्ठपीठाधीश्वर श्री गिरिधर महाराज के 'शुद्धाद्वैत मार्तण्ड' नामक विशाल ग्रन्थ का सम्पादन एव प्रकाशन भी किया था। आपके द्वारा विरचित

'अष्टाक्षर महामंत्र' नामक ग्रन्थ अत्यन्त उल्लेखनीय है। आपने वल्लभ दर्शन और कृष्ण-भक्ति-सम्बन्धी अनेक प्रकार के साहित्य की रचना करके अपने विशद पाण्डित्य का परिचय दिया था। आप जहाँ उच्चकोटि की गम्भीर गद्य-लेखिका थी वहाँ काव्य-रचना की दिशा मे भी आपकी प्रतिभा प्रचुर परिमाण मे प्रस्फुटित हुई थी। आपके द्वारा विरचित ग्रन्थो में 'नवधा भक्ति विवेचन', 'मोहन माधुरी', 'मोहन सुधा' तथा 'मोहन भजनमाला' के नाम अन्यतम है।

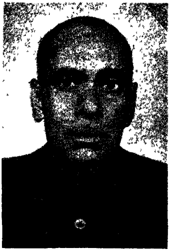
आप जहाँ उत्कृष्ट कोटि के गम्भीर साहित्य-प्रणयन की ओर अग्रसर थीं वहाँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे समाजोपयोगी लेख आदि लिखकर सांस्कृतिक शिक्षण का कार्य भी करती रहती थी। आपने जहाँ प्रख्यात मासिक पत्र 'श्रीकृष्ण' के महिला विभाग का सम्पादन करके अपनी प्रतिभा का परिचय दिया था वहाँ 'ससार' (साप्ताहिक) मे शकुन्तला तैलग नाम से आपने नारी-जागरण-सम्बन्धी अनेक लेख लिखे थे। सामाजिक एव सांस्कृतिक क्षेत्र मे उच्च मानवीय मूल्यों की प्रस्थापना करने की दृष्टि से आपने 'आज के मानव की आवश्यकता', 'मानव-जीवन और उसकी सार्थकता', 'सुख की खोज', 'जीवन मे मुसकान का महत्त्व' तथा 'आज के युग का अभावग्रस्त मानव' आदि जो अनेक प्रेरणाप्रद निबन्ध लिखे थे उनसे आपकी वैचारिक उदात्तता का परिचय मिलता है। कविता-लेखन के क्षेत्र मे आपने जिस कोमल कान्त पदावली और भव्य भावनाओं का परिचय दिया था वह भी अभूतपूर्व है। आपकी रचनाओ मे आनन्द, वियोग, विरह, करुणा तथा याचना के जो भाव परिलक्षित होते हैं उनसे आपकी वैचारिक उपलब्धियो का आभास सहज ही हो जाता है।

आपका निधन केवल 35 वर्ष की स्वल्प-सी आयु मे सन् 1958 मे हुआ था।

श्री कृष्णबिहारी तिवारी

श्री तिवारी जी का जन्म सन् 1916 मे हरियाणा के रिवाडी नामक नगर मे हुआ था। आपका बाल्यकाल अपने पिता श्री चन्द्रभान तिवारी के पास कराची (सिन्ध) मे व्यतीत हुआ था। वही पर आपकी शिक्षा-दीक्षा भी हुई थी। छात्रावस्था से ही आपने वहाँ की 'सिन्ध नागरी प्रचारिणी सभा', 'मारवाड़ी विद्यालय छात्र सघ' तथा 'नवयुवक सेवा दल' के माध्यम से जन-सेवा का जो पावन व्रत लिया था आप आजीवन उसमे लगे रहे। उक्त सस्थाओ के अनेक वर्ष तक आप जहाँ प्रधानमत्री के रूप में अनेक युवको का नेतृत्व करते रहे वहाँ आपने महात्मा गांधी के आवाहन पर सन् 1930-31 के सत्याग्रह आन्दोलन मे शराब की दुकानो पर धरना देकर और प्रदर्शन करके भी उल्लेखनीय कार्य किया था।

फिर आप कराची से अपने मूल निवास-स्थान रिवाडी मे आकर यहाँ की जनता की सेवा करते रहे और लगभग 11 वर्ष वहाँ की नगरपालिका के सक्रिय सदस्य रहने के साथ-साथ काग्रेस म्युनिसिपल पार्टी के नेता भी रहे। आप कई वर्ष तक रिवाडी नगर पालिका के उप प्रधान भी रहे थे। सन् 42 के आन्दोलन के समय आपने वेश बदलकर और बहुत



समय तक भूमिगत रहकर राष्ट्र-सेवा का जो महान् कार्य किया था वह अभूतपूर्व है। उन दिनो आपने 'प्रलापी' नाम से 'साप्ताहिक हिन्दू' का सम्पादन भी किया था। स्वतन्त्रता के उपरान्त आप दिल्ली मे आ गए और करौल बाग मे स्थायी रूप से रहने लगे थे। यहाँ रहते हुए आप जहाँ करौल बाग जिला कांग्रेस कमेटी, तिब्बिया कालेज, सनातन धर्म सभा आदि अनेक सस्थाओ से सम्बद्ध रहे वहाँ आपने 'विश्व भारती गीता रामायण सस्थान'-जैसी सांस्कृतिक सस्था की स्थापना करने के साथ-साथ 'मानस मन्दिर' का भी निर्माण कराया। आप जहाँ शकराचार्य सम्मान समारोह और सनातन धर्म महा सम्मेलन के सयोजक रहे थे वहाँ आपने श्री गगेश्वरधाम मे 'वेद स्थापना महोत्सव' भी आयोजित किया था।

आप एक उच्चकोटि के समाज-सेवी होने के साथ-साथ सफल लेखक और पत्रकार के रूप मे भी अपना एक विशेष महत्त्व रखते थे। आपने जहाँ कराची से प्रकाशित होने वाले 'प्रेम' पत्र का सम्पादन किया था वहाँ दिल्ली मे रहते हुए भी आपने 'युग भारती' और 'शुभ' नामक पत्र प्रकाशित किए थे। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा सम्पादित अनेक स्मारिकाएँ संग्रहणीय और स्थायी साहित्य का रूप प्राप्त कर चुकी हैं। इन सभी स्मारिकाओं का उनकी रूप-सज्जा, संयोजन और उत्कृष्ट सामग्री-चयन की दृष्टि से अपना एक विशेष महत्त्व है। ऐसी स्मारिकाओ मे 'विश्व भारती गीता रामायण संस्थान' की ओर से प्रकाशित 'विश्व भारती स्मारिका' तथा 'अखिल भारतीय वेदान्त सम्मेलन कनखल' की 'रजत जयन्ती स्मारिका' प्रमुख है। आपके द्वारा सम्पादित करौल बाग क्षेत्र के कांग्रेसजनों का परिचय भी आपकी योजना-कुशलता का ज्वलन्त साक्षी है।

आप अनेक वर्ष तक 'राष्ट्रीय साहित्य निकेतन' नामक एक प्रकाशन सस्थान के मैनेजिंग डाइरेक्टर भी रहे थे। एक सफल लेखक के रूप मे भी आपकी प्रतिभा का परिचय हिन्दी जगत् को उस समय मिला था जब आपकी 'आजाद सेना', 'चलो दिल्ली' और 'बापू के सस्मरण' नामक पुस्तके प्रकाशित हुई थी। एक उत्कृष्ट समाज-सेवी, कर्मठ देश-भक्त, उदात्त सस्कृति-प्रेमी और कुशल लेखक के रूप मे आपका योगदान सर्वथा अभिनन्दनीय था।

आपका निधन 8 मार्च सन् 1982 को दिल्ली मे हुआ था।

श्री कृष्णबिहारी द्विवेदी 'नलिनीश'

श्री 'नलिनीश' का जन्म उत्तर प्रदेश के हरदोई नगर के सराय थोक नामक मोहल्ले मे हुआ था। बाल्यावस्था मे ही आपकी प्रवृत्ति लेखन की ओर थी, जो प्रख्यात साहित्यकार श्री गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' के सम्पर्क के कारण धीरे-धीरे विकसित हो गई थी। श्री सनेही जी प्राय उनके घर पर आया करते थे और वहाँ पर होने वाली साहित्यिक चर्चाओ का श्री नलिनीश के मानस पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा था। आप जहाँ खड़ी बोली मे काव्य-रचना करने मे सिद्धहस्त थे वहाँ ब्रजभाषा की रचना भी आप सफलतापूर्वक किया करते थे। आपकी रचनाएँ श्री सनेही जी द्वारा सम्पादित 'सुकवि' के अतिरिक्त 'हरदोई समाचार' नामक पत्र मे भी प्राय प्रकाशित हुआ करती थी। राधा और कृष्ण के प्रेम-प्रसगो को आधार बनाकर लिखी गई आपकी रचनाएँ बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। आपकी ऐसी रचनाओ का संकलन 'राधा प्रेम योग' नाम से प्रकाशित भी हो चुका है। आपकी अधिकाश अप्रकाशित रचनाएँ अभी भी आपके सुपुत्र श्री उमाशकर द्विवेदी के पास सुरक्षित हैं।

आपका निधन 22 दिसम्बर सन् 1972 को हुआ था।

श्री कृष्णबिहारीलाल चतुर्वेदी

श्री चतुर्वेदी जी का जन्म सन् 1913 मे उत्तर प्रदेश के इटावा नगर मे हुआ था। अपने ही नगर मे एण्टर तक की शिक्षा प्राप्त करके आपने अपने दादाजी से आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की थी। पहले-पहल आप एक ब्रिटिश इश्योरेंस कपनी मे पदाधिकारी थे किन्तु गाधीजी की विचार-धारा से प्रभावित होने के कारण आपने उसे छोडकर मध्य प्रदेश मे जगलो तथा खानो की ठेकेदारी का कार्य प्रारम्भ कर दिया था।

स्वतत्रता के उपरान्त आप अपना यह कार्य छोडकर सन् 1950 मे हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश) चले गए और वहाँ पर स्वतन्त्र रूप से आयुर्वेदिक पद्धति पर चिकित्सा का कार्य करने लगे। वहाँ पर रहते हुए आपने हिन्दी के प्रचार और प्रसार का कार्य करने के साथ-साथ हिन्दी-लेखन मे भी अपने को लगाया। आपके लेख आदि हैदराबाद से प्रकाशित होने वाले अनेक पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित होते रहते थे।

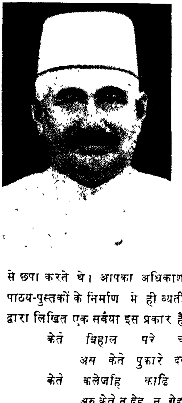
आपका निधन 17 अप्रैल सन् 1957 को हुआ था।

श्री कृष्णबिहारी वाजपेयी 'कृष्ण'

श्री वाजपेयी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के शिकोहाबाद जनपद

के बटेश्वर नामक ग्राम में सन् 1894 मे हुआ था। आपके पिता यद्यपि संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे, किन्तु वाजपेयी जी ने आधुनिक शिक्षा प्राप्त करके अपने अध्ययन तथा अध्यवसाय के बल पर अपने परिवार के भरण-पोषण का निश्चय किया और ग्वालियर रियासत मे नौकरी कर ली। इस बीच आपने नौकरी करते हुए ही मैट्रिक से आरम्भ करके एम० ए० तक की शिक्षा अपने सतत प्रयास से ग्रहण की थी। आप ग्वालियर राज्य मे 'जिला विद्यालय निरीक्षक' के पद से अवकाश-प्राप्ति के उपरान्त भी शान्त नही बैठे और अपने पुत्रों के साथ कानपुर के डी० ए० वी० कालेज से एल-एल० बी० की परीक्षा सम्मान सहित उत्तीर्ण करके ग्वालियर मे ही आपने वकालत प्रारम्भ की थी। आपके एक पुत्र श्री अटलबिहारी वाजपेयी देश के उच्चकोटि के राष्ट्रनेताओ मे अग्रणी स्थान रखते है।

आप जहाँ कुशल शिक्षक, प्रशासक और उच्चकोटि के समाज-सेवक थे वहाँ लेखन तथा वक्तृत्व की कला भी आपको पैतृक धरोहर मे प्राप्त हुई थी। आप अच्छे लेखक होने के साथ-साथ सहृदय कवि भी थे। आपके द्वारा लिखित अनेक उत्कृष्टतम निबन्ध, कवित्त, सवैये तथा कुण्डलियाँ आदि ग्वालियर से प्रकाशित होने वाले 'जयाजी प्रताप' नामक साप्ताहिक पत्र मे नियमित रूप से छपा करते थे। आपका अधिकाश समय शिक्षोपयोगी पाठय-पुस्तकों के निर्माण मे ही व्यतीत हुआ था। आपके द्वारा लिखित एक सवैया इस प्रकार है



केते बिहाल परे चहुँधा,
अस केते पुकारे दवार-दवारी।
केते कलेजहि काढि मलैं,
अरु केते न देह न गेह सम्हारी॥
कवि 'कृष्ण' कहाँ लौं कहीं कटुता,
कटि जात अनेकन के हिय प्यारी।
अजन आँजिके लीहो कहा,
यह नैन की तेग दुधारी तिहारी॥

ग्वालियर के पुरानी पीढी के कवियो तथा साहित्यकारो मे आपका एक सर्वथा विशिष्ट एवं अनूठा स्थान था।

आपका निधन सन् 1956 मे हुआ था।

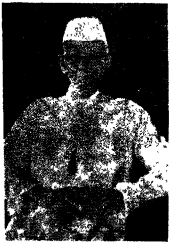
श्री कृष्णलाल वर्मा

श्री वर्माजी का जन्म राजस्थान के उदयपुर नामक नगर के समीपवर्ती ग्राम कोठरिया मे सन् 1890 मे हुआ था। आपका वास्तविक नाम 'किशनसिंह भाटी' था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा मौलवी इशाकअहमद से उर्दू और फारसी मे हुई थी। किन्तु बाद मे अंग्रेजी का ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ आपने सस्कृत 'शब्द रूपावली', 'धातु रूपावली', 'अमर कोष' और 'लघु सिद्धान्त कौमुदी' आदि अनेक पुस्तकों का अच्छा पारायण कर लिया था। आपके पिता श्री मोडसिह भाटी ने आपको आगे के अध्ययन के लिए उदयपुर मे श्री अर्जुनलाल सेठी के विद्यालय मे जयपुर भेज दिया था। वहाँ पर रहते हुए आपने मैट्रिक की परीक्षा देने के साथ-साथ हिन्दी-साहित्य तथा विविध जैन-ग्रन्थो का भी गहन अध्ययन कर लिया था। वहाँ पर रहते हुए ही श्री अनूपचन्द्रजी के ससर्ग के कारण आपकी आस्था जैन धर्म की ओर हो गई थी।

पण्डित अर्जुनलाल सेठी अपने विद्यालय के सभी छात्रों को पुस्तकीय ज्ञान अर्जित करने के साथ-साथ देशभक्ति की प्रेरणा देने की दृष्टि मे गीता के कर्मयोग के सिद्धातो की जानकारी भी दिया करते थे। यहाँ तक कि वे आपको मेजिनी और गेरीबाल्डी-जैसे विश्व-ख्याति के देश-भक्तों की जीवनियाँ सुनाकर स्वतन्त्रता-सग्राम मे सक्रिय रूप से भाग लेने के निमित्त भी प्रोत्साहित करते रहते थे। इसका प्रभाव यह हुआ कि कृष्णलालजी अपनी पढाई छोडकर स्वतन्त्रता-आन्दोलन मे कूद पडे। उधर अर्जुनलालजी भी विद्यालय को बद करके इन्दौर चले गए और वहाँ पर रहकर

आन्दोलन का संचालन करने लगे। श्री वर्माजी भी उनके साथ इन्दौर चले गए। आप अपने अध्ययन-काल से ही हिन्दी मे कविताएँ लिखने लगे थे। फलस्वरूप इस आन्दोलन से प्रेरणा प्राप्त करके आपने अपनी एक देश-भक्तिपरक कविता प्रयाग से प्रकाशित होने वाली राष्ट्रीय पत्रिका 'मर्यादा' मे भेज दी, जो यथासमय उसमे प्रकाशित भी हुई थी।

उन्हीं दिनो दिल्ली मे एक बम-काड हुआ, जिसके कारण इन्दौर मे अर्जुनलाल सेठी के निवास की तलाशी ली गई। इस तलाशी मे पुलिस को आपके द्वारा लिखित राष्ट्रीय कविता भी मिल गई। फलस्वरूप सेठीजी के साथ आपको भी गिरफ्तार करके दिल्ली जेल ले जाया गया। जब पुलिस को आपसे उस केस के सम्बन्ध मे कोई जानकारी नही मिली तो आपको छोड दिया गया। इसके थोडे ही दिन बाद आपको 'महन्त मर्डर केस' के प्रसग मे गिरफ्तार करके आरा (बिहार) जेल मे भेज दिया गया। किन्तु वहाँ पर भी जब पुलिस उनसे कुछ भी सूचना प्राप्त करने मे सर्वथा असफल रही तो आप छोड दिये गए। जेल से छूटने के उपरान्त आप जब वापस अपनी जन्मभूमि उदयपुर मे पहुँचे तो वहाँ के लोगो ने आपको वहाँ रखने मे असमर्थता व्यक्त की। इस सदर्भ मे रियासत की ओर से आपके पिता पर भी बहुत दबाव डाला गया, किन्तु वे भी आपको झुकाने मे असमर्थ रहे। जब उन्होंने अपने क्षेत्र के निवासियों तक को शासकीय यन्त्रणाओ से भयाक्रान्त अनुभव किया तो आप अपनी जन्म-भूमि को नमस्कार करके गोहाना चले गए। वहाँ पर पहुँचकर आपने 'बुजदिल मेवाडी' शीर्षक से एक लेख लिखा, किन्तु उसे भी किसी पत्रिका ने छापने की हिम्मत नही दिखाई।



जब आपने अपने विरुद्ध ब्रिटिश नौकरशाही और देशी राज्यों की पुलिस का ऐसा व्यवहार देखा तो आप अन्तिम रूप से अपनी जन्म-भूमि को प्रणाम करके बम्बई चले गए और अपना नाम भी बदलकर 'किसनसिह भाटी' से 'कृष्णलाल वर्मा' रख लिया। बम्बई मे आपने 'शान्ति निकेतन परिचय' नामक लेख लिखा, जिसे प्रख्यात साहित्य-कार श्री नाथूराम 'प्रेमी' ने 'जैन हितैषी' नामक पत्र मे प्रकाशित किया था। आपके परिवर्तित नाम से छपा हुआ यह प्रथम लेख था। इसके उपरान्त आपने 'चम्पा' नामक एक लघु उपन्यास लिखा, जिसे गोहाना-निवासी श्री अमीचन्दजी ने अपने ही खर्च से छपवा दिया था। इसके उपरान्त आपका उत्साह बढ गया और आपने लेखन को ही अपना प्रमुख ध्येय बना लिया। उन्ही दिनों सन् 1917 मे पहले आपने 'जैन ससार' तथा बाद मे 'मुनि' नामक मासिक पत्रों का सम्पादन भी किया था। इसके उपरान्त सन् 1918 मे आपने लीलावती देवी नामक एक महिला से विवाह कर लिया और स्थायी रूप से एक सद्-गृहस्थ के रूप मे माटुगा मे रहने लगे। वहाँ पर भी आपने अपनी राष्ट्रीय प्रवृत्तियों को दबने नही दिया, प्रत्युत सन् 1920 के असहयोग-आन्दोलन के दिनो मे काग्रेस की विभिन्न रचनात्मक प्रवृत्तियों मे सक्रिय रूप से भाग लेने के साथ-साथ खादी-प्रचार के कार्य को आगे बढाया।

बम्बई मे स्थायी रूप से निवास करने के उपरान्त आपने अपना लेखन-कार्य बराबर जारी रखा। यहाँ तक कि हिन्दी-प्रचार करने की दृष्टि से आपने जहाँ 'हिन्दी ग्रन्थ भडार' नामक सस्था की स्थापना की वहाँ बम्बई के स्कूलो मे हिन्दी को प्रचलित करने मे भी आपने अथक प्रयास किया। सन् 1923 मे जब श्री विट्ठलभाई पटेल बम्बई के मेयर बने तब उन्होंने वर्माजी मे हिन्दी-प्रचार की लगन देखकर बम्बई की मराठी और गुजराती पाठशालाओ में हिन्दी की पढाई जारी करने का कार्य आपको सौंपा था। आपने दिन-रात परिश्रम करके बम्बई मे हिन्दी-प्रचार का जो कार्य किया उसकी प्रशसा श्रीमती सरोजिनी नायडू ने भी मुक्त कठ से की थी। बम्बई मे रहते हुए ही आपने उदयपुर मे 'महाराणा प्रताप' का उपयुक्त स्मारक बनाने की योजना भी बनाई। आपके सत्प्रयास से ही यति श्री अनूपचन्द्रजी, श्री शिवनारायणजी और श्री बलवन्तसिह मेहता ने इस योजना को कार्यान्वित

किया था। उदयपुर मे निर्मित 'महाराणा प्रताप स्मारक' श्री वर्माजी के ही अथक प्रयास का फल है। इस बीच आपका सम्पर्क बम्बई के कुछ ऐसे सेठों से हो गया जो सट्टे के बाजार में विश्वास करते थे। इस कुसग मे पडकर आपने अपनी खून-पसीने की कमाई को (लगभग 35 हजार रुपया) वैसे ही गँवा दिया। सट्टे का व्यापार साहित्यकार वर्माजी को रास न आया और फिर आपने अपनी पत्नी के आभूषण आदि बेचकर लेखन के कार्य को जमाने का सत्प्रयास किया। यह विडम्बना की बात है कि जो व्यक्ति जीवन-भर स्वाभिमानपूर्वक संघर्ष करके जीवन-यापन करता रहा उसे विवश होकर अन्त मे नौकरी करनी पडी।

इसे एक विचित्र सयोग ही कहा जायगा कि आपने अपने स्वाभिमानी स्वभाव के कारण फिर अपनी लेखनी का आश्रय लिया और अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हिन्दी साहित्य को अर्पित किये। आपने जहाँ जैन धर्म से सम्बन्धित अनेक ग्रन्थ लिखे वहाँ 'हिन्दी मराठी कोष' का महत्त्वपूर्ण कार्य भी पूरा किया। आपने मराठी, गुजराती और अँग्रेजी से अनेक ग्रन्थो का अनुवाद भी कुशलतापूर्वक किया था। आपके द्वारा लिखित, अनूदित और सम्पादित ग्रन्थो की सख्या 70 से ऊपर है। आपकी महत्त्वपूर्ण कृतियो मे से कुछ के नाम इस प्रकार है—'चम्पा' (उपन्यास), 'स्त्री रत्न', 'सती दमयन्ती', 'पुनरुत्थान', 'सवाद सग्रह', 'बाल श्रीकृष्ण' (दो भाग), 'सरल हिन्दी रचना बोध', 'दलजीतसिह', (नाटक), 'महाजन' (उपन्यास), 'मनोरमा', 'महासती सीता', 'वीर हनुमान', 'धर्म-प्रचार', 'आदर्श जीवन', 'तीर्थकर चरित्र', 'आदिनाथ चरित्र', 'अजितनाथ चरित्र', 'अनन्तमती' और 'चौबीस तीर्थकर चरित्र' आदि। अनूदित रचनाओं मे 'जैन रामायण', 'धर्म देशना', 'सूरीश्वर और सम्राट् अकबर', 'गृहिणी गौरव', 'स्वदेशी धर्म', 'तीन रत्न', 'सत्याग्रह मीमासा' और 'पच रत्न' आदि प्रमुख है। आपने अंग्रेजी से भी 'लेनिन' नामक एक पुस्तक का हिन्दी अनुवाद किया था।

अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप बम्बई की 'गौरीशकर ग्रामसेवा मडल' नामक सस्था से सम्बद्ध थे और सन् 1930 से सन् 1962 तक आप उसकी व्यवस्था समिति के ट्रस्टी, उपाध्यक्ष तथा अध्यक्ष रहे थे।

आपका निधन 7 सितम्बर सन् 1962 को रायपुर (मध्यप्रदेश) मे हुआ था।

श्री कृष्णविनायक फड़के

श्री फड़केजी का जन्म मध्यप्रदेश के दमोह जनपद के पथरिया नामक स्थान मे 12 अक्तूबर सन् 1895 को हुआ था। आप 21 वर्ष की आयु मे ही सन् 1916 मे कानपुर चले आए थे और वहाँ पर ही स्थायी रूप से रहने लगे थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा कानपुर के 'क्राइस्ट चर्च कालेज' मे हुई थी। आपके उस समय के सहपाठियो मे सर्वश्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', द्वारकाप्रसाद मिश्र और उमाशकर दीक्षित आदि के नाम उल्लेखनीय है। अपने अध्ययन की समाप्ति के उपरान्त आप सन् 1917 से सन् 1919 तक क्राइस्ट चर्च कालेज मे अध्यापक रहे। बाद मे आप वहाँ के मारवाडी विद्यालय मे पहुँच गए और निरतर 22 वर्ष तक इस सस्था मे प्रधानाध्यापक के पद पर प्रतिष्ठित रहे। जिन दिनो आप मारवाडी विद्यालय मे अध्यापक के रूप मे गए थे उन दिनो मुशी प्रेमचन्दजी उसके प्रधानाचार्य थे। मुशी प्रेमचन्द के बाद आपने ही यह पद सन् 1920 मे सँभाला था।

श्री फडकेजी जहाँ एक कुशल शिक्षक के रूप मे कानपुर के सामाजिक जीवन मे अपना अन्यतम स्थान रखते थे वहाँ सन् 1940 मे आपने कानपुर मे 'बाल सघ' नामक सस्था की स्थापना करके उसके माध्यम से बाल कल्याण आन्दोलन का जो कार्य किया वह सर्वथा अभिनन्दनीय है। आपके द्वारा सस्थापित और पोषित कानपुर की जिन सस्थाओ का वहाँ के सामाजिक जीवन मे प्रमुख योगदान है उनमे 'सगीत समाज, 'गोलाघाट सत्सग',



'ज्ञान भारती', 'ओमरवैश्य विद्यालय', 'किराना सेवा समिति', 'बाल चिकित्सालय', 'अग्रसेन व्यायामशाला' तथा 'मार-

वाडी पुस्तकालय' आदि प्रमुख है।

बाल कल्याण के आन्दोलन को तो आपने जैसे अपने जीवन का चरम लक्ष्य ही बना लिया था और अपनी समस्त सम्पत्ति बाल कल्याण के लिए दान में देकर अपना शेष जीवन निरन्तर अभावों से जूझते हुए ही व्यतीत किया था। आपकी यह अत्यन्त उत्कट अभिलाषा थी कि कानपुर मे बच्चों के लिए बाल सूचना केन्द्र और बाल पुस्तकालय अवश्य ही स्थापित किया जाय और इसके लिए आप निरतर प्रयास भी करते रहे थे। आपने बच्चो को गले लगाकर जहाँ उन्हें हारमोनियम बजाना और गीत गाना सिखाया वहाँ आप उन्हे कविताएँ और कहानियाँ सुनाकर साहित्य-रचना की ओर भी प्रेरित किया करते थे। आपकी बाल सेवाओ को दृष्टि मे रखकर उत्तर प्रदेश सरकार ने जहाँ आपको 5 हजार रुपये का पुरस्कार प्रदान किया था वहाँ लखनऊ दूरदर्शन ने भी आपके जीवन पर 'बालबन्धु बाबा फडके' नामक एक वृत्तचित्र भी तैयार किया था। सन् 1979 मे कानपुर के गुरुनारायण खत्री इटर कालेज मे आपका जो अभिनन्दन हुआ था उसमे प्रदेश के तत्कालीन शिक्षा मत्री डॉ० शिवानन्द नौटियाल ने आपको 11 हजार रुपये की एक थैली भी भेट की थी। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि आपने इस राशि मे से थोडा-मा रुपया अपने लिए रखकर शेष मब बाल कल्याण मे ही लगा दिया। अपनी जन्म-भूमि पथरिया (मध्य प्रदेश) मे निजी अचल सम्पत्ति के दान के आधार पर जनपद पचायत द्वारा 'फड़के बाल मन्दिर' और 'फडके बाल पुस्तकालय' की स्थापना भी आपने की थी।

वैसे तो फडकेजी प्राय· यह कहा करते थे कि 'बच्चो के लिए लेखन का कोई कार्य मैने नही किया, जीवन-भर बच्चों का साहित्य पढता रहा और कहानी एव कविताओ द्वारा बच्चों का मनोरजन करता रहा', किन्तु फिर भी आपने इस दिशा मे अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य किया था। आपने जहाँ सन् 1925 मे 'बाल कवितावली' नाम से बालोपयोगी कविताओ का एक सकलन प्रकाशित किया था वहाँ 'बापू नतिक शिक्षा' (चार भाग), 'कथा कहानी' और 'फडकेजी के कपट' प्रकाशित की थीं। इनके अतिरिक्त आपकी 'बाल दर्शन', 'बाल मनोविज्ञान', 'शिशु का प्रथम वर्ष', 'शिशु का द्वितीय वर्ष', 'आपके बालक की समस्या', 'भारत मे बाल-श्रम', 'बाल संगठन','शिशु पालन','बाल विनोद (सम्मेलन)', 'सामान्य मनोविज्ञान', 'शिक्षा मनोविज्ञान', 'समाज मनोविज्ञान', 'शिक्षा शास्त्र' तथा 'अध्यापक का मानसिक स्वास्थ्य' आदि पुस्तकों के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य है।

आपका निधन 12 जुलाई सन् 1981 को हुआ था।

राजा कृष्णसिंह (भरतपुर)

भरतपुर-नरेश राजा कृष्णसिह का जन्म 4 अक्तूबर सन् 1899 को भरतपुर (राजस्थान) मे हुआ था। आपके पिता का नाम श्री रामसिह और माता का नाम गिरिराजकौर था। 26 अगस्त सन् 1900 को आप तब राजगद्दी के अधिकारी माने गए थे जब आप नाबालिग थे और अजमेर के मेयो कालेज मे विद्याध्ययन करते थे, किन्तु राजाधिकार आपको 28 नवम्बर सन् 1918 को ही प्राप्त हो सके थे। जब तक आप शासन करने योग्य नही हुए तब तक ब्रिटिश सरकार के एक एजेण्ट की देख-रेख मे राज-काज चलता रहा था।



आपके शासन-काल मे सन् 1919 मे उर्दू के स्थान पर हिन्दी को राजभाषा घोषित किया गया और सभी सरकारी कर्मचारियों को देवनागरी लिपि सीखने के लिए उचित समय दिया गया। आपने राज्य मे देवनागरी लिपि को अनिवार्यत सीखने का आदेश इस दृष्टि से दिया था कि नागरी सीखने पर लोग स्वत ही हिन्दी पढने-लिखने की ओर प्रवृत्त हो सकेगे। जब भरतपुर मे 'हिन्दी साहित्य समिति' की स्थापना हुई तब आपने उसके भवन के निर्माणार्थ 25 जुलाई सन् 1925 को 2500 रुपए का दान देने के अतिरिक्त 40 रुपए मासिक की सहायता प्रदान करने की

घोषणा भी की थी। इसी सन्दर्भ मे एक बार 13 सितम्बर सन् 1926 को समिति के भवन मे पधार कर आपने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किए थे—"हिन्दी साहित्य समिति के कार्यों के प्रभाव से ही भरतपुर राज्य मे अदालती भाषा के रूप मे हिन्दी प्रचलित हो सकी है। यह क्षेत्र ब्रजभाषा का केन्द्र होते हुए भी हिन्दी के प्रयोग मे अन्य राज्यो से आगे है। इन्ही बातो को देखते हुए मैने राज्य-शासन प्राप्त होते ही संकल्प किया कि उर्दू को त्याग दूँ और हिन्दी को स्थान दूँ। फलस्वरूप अब सारा काम-काज हिन्दी मे ही होता है।" राजा कृष्णसिह की एक योजना यह भी थी कि 'हिन्दी साहित्य समिति' के भवन को केन्द्रित करके भरतपुर मे एक ऐसा 'टाउन हॉल' निर्मित किया जाय जिसमे नगरपालिका के कार्यालय के अतिरिक्त एक 'समृद्ध पुस्तकालय' और 'विशाल सभागार' भी हो। खेद है कि आप अपने इस स्वप्न को साकार न कर सके। आपके हिन्दी-प्रेम का परिचय इसी बात से मिल जाता है कि आपकी प्रेरणा से ही भरतपुर की 'हिन्दी साहित्य समिति' ने अपने यहाँ 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' का 17वाँ अधिवेशन करने का निमन्त्रण सम्मेलन के अधिकारियो को दिया था। यह अधिवेशन 30 मार्च सन् 1927 को प्रख्यात इतिहासज्ञ और पुरातत्त्ववेत्ता रायबहादुर गौरीशकर हीराचन्द ओझा की अध्यक्षता मे हुआ था। इस सम्मेलन का आयोजन पुराने राजभवन के विशाल प्रागण मे हुआ था और इसमे देश के जितने प्रमुख व्यक्ति पधारे थे कदाचित् उतने सम्मेलन के और किसी अधिवेशन मे नही आए थे। ऐसी विभूतियो मे विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ टाकुर, महामना मदनमोहन मालवीय, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन, सरदार माधव विनायक किबे, सेठ जमनालाल बजाज, श्री के० बी० रगस्वामी अय्यगार, श्रीमती हेमन्तकुमारी चौधरी और श्रीमती कमला बाई किबे आदि के नाम विशेष गणनीय है। इस अधिवेशन के अवसर पर क्रमश: श्री माखनलाल चतुर्वेदी तथा गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुए 'पत्रकार सम्मेलन' तथा 'कवि सम्मेलन' कई दृष्टि से महत्त्वपूर्ण कहे जा सकते है।

आप न केवल उत्कृष्ट कोटि के हिन्दी-प्रेमी थे, प्रत्युत कुशल प्रशासक के रूप मे भी आपका स्थान अन्यतम था। आपने अपने राज्य मे जहाँ प्रारभिक शिक्षा अनिवार्य कर दी थी वहाँ गो-रक्षा तथा समाज-सुधार-सम्बन्धी अनेक कानून भी बनाए थे। सन् 1924 की भयंकर बाढ मे आपने अपने राज्य की जनता की भरपूर सेवा की थी। जब आपकी शासन-प्रणाली से भारत सरकार के उच्च अंग्रेज अधिकारी अप्रसन्न हो गए और आपके शासन-कार्य मे वे पग-पग पर बाधाएँ उपस्थित करने लगे, तब आपने उनके आरोपो का करारा उत्तर देने के उद्देश्य से अँग्रेजी मे एक बहुत बडी पुस्तक का प्रकाशन भी कराया था। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि अँग्रेज दीवान डी० जी० मैकेंजी ने उस पुस्तक को जलवा दिया था। आपके स्वाभिमानी व्यक्तित्व की प्रशसा अमर शहीद गणेशशकर विद्यार्थी ने भी अपने पत्र 'प्रताप' मे की थी।

आपका निधन मार्च सन् 1929 मे दिल्ली मे हुआ था।

श्री कृष्णसिंह सौदा बारहठ

श्री बारहठ का जन्म राजस्थान के शाहपुरा राज्य के देवपुरा नामक ग्राम मे सन् 1849 में हुआ था। आप प्रख्यात क्राति-कारी, कवि और साहित्यकार श्री केसरीसिह बारहठ (कोटा) के पिता थे।



उदयपुर के कविराजा श्यामलदास इनके मामा थे और इसी कारण आप पर उदयपुर के महाराणा की बड़ी कृपा थी। आप उनके प्रमुख दरबारी थे। बाद मे जब किसी कारणवश वे आपसे रुष्ट हो गए तब आप जोधपुर चले गए थे। वहाँ पर जोधपुर के महाराजा ने आपको तीन सौ रुपए मासिक की वृत्ति देनी प्रारम्भ कर दी थी।

साहित्यिक क्षेत्र मे आपकी बहुत ख्याति थी। आपने

कविराजा मुरारीदान की प्रेरणा पर पण्डित रामकरण आसोपा के सहयोग से श्री सूर्यमल्ल मिश्रण के प्रख्यात ग्रन्थ 'वंश भास्कर' की टीका लिखी थी। आपने महारानी विक्टोरिया के सम्बन्ध में भी कुछ कवित्त लिखे थे, जिनका प्रकाशन जोधपुर राज्य ने अपनी ओर से कराया था।

आपका निधन सन् 1907 में हुआ था।

स्वामी कृष्णस्वरूप परमहंस

स्वामी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ जनपद के दादरी नामक ग्राम में सन् 1891 में हुआ था, जो मेरठ से मुजफ्फरनगर जाने वाले मार्ग पर स्थित है। आपके पिता श्री शहजादे सिंह और माता श्रीमती मीराबाई सन्तों को बड़े सम्मान के साथ अपने घर बुलाया करते थे। आपका जीवन इस पावन वातावरण से अप्रभावित न रह सका। इस सन्त-समागम ने आपको परम सन्त बना दिया।

आपकी वाणियों का संग्रह 'नित्य प्रकाश' नाम से प्रकाशित हो चुका है।

आपका निधन सन् 1978 में हुआ था।

ब्रह्मर्षि कृष्णानन्द महाराज 'आशुकवि'

श्री कृष्णानन्द जी का जन्म अविभाजित पंजाब के मुलतान नामक नगर में सन् 1903 में हुआ था। आपकी माता श्रीमती मीरावा बाई ऐसी सिद्धयोगिनी थी, जिन्होंने अपनी मृत्यु की घोषणा एक मास पूर्व ही कर दी थी। भारत-विभाजन के उपरान्त आप गाजियाबाद में स्थायी रूप से रहने लगे थे। आप जहाँ भारत के कोने-कोने में घूमकर सनातन धर्म का प्रचार किया करते थे वहाँ 'आशुकवि' के रूप में भी विख्यात थे। आपके सुपुत्र श्री ओप्रकाश जी प्रख्यात ज्योतिषी है। इन्हीं के पास आप रहा करते थे।

आप एक कुशल वक्ता होने के साथ-साथ अध्ययनशील लेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित 'श्रीराम दरबार' नामक एक ग्रन्थ लगभग 1600 पृष्ठ का है। अभी इसका प्रथम भाग ही प्रकाशित हुआ है, जिसमें 250 पृष्ठ है। इस ग्रन्थ में तुलसी, सूर, कबीर, रैदास, दादू, नानक, दरिया साहब तथा मीराबाई आदि असंख्य सन्त एवं भक्त कवियों की वाणियों का संकलन प्रस्तुत किया गया है।



आपका निधन 13 जुलाई सन् 1977 को हुआ था।

श्री के० जी० शिवण्णा

श्री के० जी० शिवण्णा का जन्म कर्नाटक प्रदेश के दावणगेरे ताल्लुके के कोण्डज्जी ग्राम में 6 अप्रैल सन् 1930 को हुआ था। आप अरसिकेरे के श्री वाणी महिला समाज में तथा वहाँ के हाई-स्कूल में कई वर्ष तक हिन्दी के अध्यापक रहे थे।

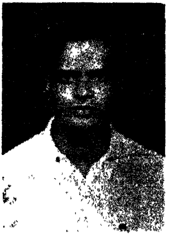


आप जहाँ हिन्दी के सफल प्रचारक थे वहाँ अनन्य समाज-सेवी भी थे। आपका निधन 17 जुलाई सन् 1981 को हृदयाघात के कारण पढ़ाते हुए ही हो गया था।

श्री के० श्रीकण्ठैया

श्री श्रीकण्ठैया का जन्म 26 जनवरी सन् 1911 को कर्नाटक राज्य के मैसूर जनपद के चामराज नगर क्षेत्र के कागलवाडी नामक ग्राम में हुआ था। सन् 1935 मे आपने अँग्रेजी मे बी० एस-सी० (आनर्स) की परीक्षा उत्तीर्ण करके अपने ही स्वाध्याय से हिन्दी सीखी और बाद मे कर्नाटक के प्रख्यात हिन्दी-सेवी प्रो० नागप्पा आदि अनेक विद्वानो के सम्पर्क मे आकर अपने ज्ञान को बढाया। फिर आपने मद्रास विश्व-विद्यालय की 'हिन्दी विद्वान्' नामक हिन्दी उपाधि परीक्षा दी और इसके उपरान्त दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास की 'राष्ट्रभाषा विशारद' परीक्षा भी आपने ससम्मान उत्तीर्ण की। आपने यह सब परीक्षाएँ रेलवे मे कार्य करते हुए ही उत्तीर्ण की थी।

जब आपका स्थानान्तरण मैसूर को हो गया तो आपने वहाँ जाकर भी हिन्दी प्रचार मे बराबर रुचि बनाए रखी।



आप सन् 1972 से सन् 1978 तक 'मैसूर हिन्दी प्रचार सभा' के अवैतनिक मन्त्री रहे। अपने कार्य-काल मे आपने जहाँ अनेक युवको को हिन्दी के प्रति उन्मुख किया वहाँ आपने 'मैसूर महिला सदन' नामक सस्था की स्थापना करके उसके माध्यम से महिलाओ मे हिन्दी का अभिनन्दनीय प्रचार किया। अपने इस कार्य-काल मे आपने लगभग 40 वर्ष तक इस सस्था की अनेक प्रकार से सेवा की। 'मैसूर हिन्दी प्रचार सभा' का अपना भवन भी आपके ही कार्य-काल मे बना था।

दक्षिण रेलवे की समय-सारिणी हिन्दी मे तैयार करने का भार भी सर्वप्रथम आपने ही अपने ऊपर लिया था और उसे आप बराबर निष्ठापूर्वक पूरा करते रहे। आपके ही सत्प्रयासों से गांधी जी की सर्वोदयी विचार-धारा के अनुसार 'कस्तूरबा महिला शिक्षा विद्यालय' प्रारम्भ हुआ था, जो अब भी उस क्षेत्र की उल्लेखनीय सेवा कर रहा है। इस सस्था मे प्रशिक्षित और दीक्षित अनेक महिलाएँ कर्नाटक मे सर्वोदयी विचार-धारा का प्रचार करने के साथ-साथ हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन को भी आगे बढा रही है। आप जहाँ हिन्दी के उत्कृष्ट कोटि के प्रचारक थे वहाँ आपने लेखन की दशा मे भी उल्लेखनीय कार्य किया था। आपने अपने अनेक लेखों के द्वारा कर्नाटक मे हिन्दी साहित्य तथा गाधीवादी विचार-धारा का प्रचुर प्रचार किया था।

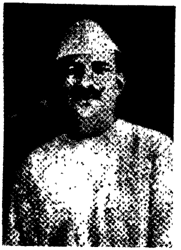
आपका निधन 3 जुलाई सन् 1981 को मैसूर नगर मे हुआ था।

श्री केदारनाथ गुप्त

श्री गुप्तजी का जन्म उत्तरप्रदेश के बाँदा जनपद के राजापुर नामक ग्राम मे सन् 1893 मे हुआ था। मिर्जापुर से इटर की परीक्षा उत्तीर्ण करके आप प्रयाग चले आए और वहाँ पर अध्यापन का कार्य प्रारम्भ किया। सर्वप्रथम आप सन् 1914 मे वहाँ के क्रिश्चियन कालेज मे अध्यापक नियुक्त हुए थे। इसके उपरान्त आप दारागज के उस मिडिल स्कूल मे हेडमास्टर होकर चले गए, जो आजकल 'राधारमण कालेज' कहलाता है। आप सन् 1928 तक इसी शिक्षणालय मे रहे थे। इसी अवधि मे आपने आगरा विश्वविद्यालय से अध्यापक प्रत्याशी के रूप मे क्रमश बी० ए० तथा एम० ए० की परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण कर ली थी। सन् 1928 मे जब दारागज मे 'अग्रवाल विद्यालय' की स्थापना हुई तो आप उसके प्रथम प्रधानाध्यापक नियुक्त हुए और अवकाश-प्राप्ति के समय (सन् 1958) तक उसके 'प्रधानाचार्य' रहे। अपने इस कार्य-काल मे आपने इस सस्था के उत्कर्ष के लिए जो प्रयास किए थे उन्हीके परिणामस्वरूप आज वह नगर का प्रमुख 'महाविद्यालय' गिना जाता है। आपका देश के 'स्काउटिग आन्दोलन' से भी घनिष्ठ सम्बन्ध रहा था।

शिक्षा के क्षेत्र मे आपकी सेवाओ का तो महत्त्वपूर्ण स्थान है ही, प्रकाशन और साहित्य-रचना की दृष्टि से भी आपकी सेवाएँ सर्वथा अभिनन्दनीय है। आपने अपने ही

कालेज के हिन्दी-अध्यापक श्री गणेश पाण्डेय के सहयोग से 'छात्र हितकारी पुस्तक माला' नामक जिस प्रकाशन संस्था का सूत्रपात किया था उसके द्वारा हुए अनेक महत्त्वपूर्ण प्रकाशनों ने हिन्दी-साहित्य की अभिवृद्धि मे सर्वथा उल्लेखनीय योगदान किया है। स्वास्थ्य, नैतिकता, राष्ट्रीयता और चरित्र-निर्माण-सम्बन्धी पुस्तके प्रकाशित करना ही इस सस्थान का प्रमुख ध्येय था । आपने इस प्रकाशन-कार्य मे व्यावसायिकता की ओर अधिक ध्यान न देकर उत्कृष्ट एव उदात्त भावनाओ से परिपूर्ण साहित्य ही पाठको को प्रदान किया था। छात्रो मे चरित्र-निर्माण की भावनाएँ उत्पन्न करना ही इस सस्था का प्रमुख उद्देश्य था ।



अपने उक्त सभी कार्यो से समय निकालकर आप स्वय भी साहित्य-रचना मे सलग्न रहा करते थे। आपके द्वारा विरचित तथा अनूदित ग्रन्थो मे 'हम सौ वर्ष कैसे जीवे', 'आसन और व्यायाम', 'आदर्श भोजन', 'स्वास्थ्य और जल-चिकित्सा', 'घरेलू प्राकृतिक चिकित्सा', 'रोगो की नवीन चिकित्सा-प्रणाली', 'ईश्वरीय बोध', 'स्वामी दयानन्द', 'स्वामी रामतीर्थ', 'गुरु गोविन्दसिह', 'मनुष्य-जीवन की उपयोगिता', 'सफलता की कुजी', 'मन की अपार शक्ति', 'जेम्स एलेन की डायरी', विजय के आठ स्तम्भ', 'मनुष्य ही मन, शरीर और परिस्थितियो का कारागार है' तथा 'ईश्वर के सम्पर्क मे' आदि विशेष उल्लेखनीय है। प्राकृतिक चिकित्सा और समाज-सेवा के क्षेत्र मे आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान था । अपने जीवन को पूर्ण शाकाहारी के रूप में व्यतीत करते हुए आपने अन्तिम क्षण तक प्रात भ्रमण का कार्य निरन्तर जारी रखा था ।

आपका निधन 25 जुलाई सन् 1982 को प्रयाग मे हुआ था।

श्री केदारनाथ भट्ट

श्री भट्ट जी का जन्म आगरा के गोकुलपुरा मोहल्ले मे सन् 1888 म हुआ था। आप हिन्दी के पुराने साहित्यकार और रामायण के सुप्रसिद्ध टीकाकार श्री रामेश्वरनाथ भट्ट के ज्येष्ठ पुत्र थे। आपने आगरा विश्वविद्यालय से अँग्रेजी विषय मे एम० ए० करके एल-एल० बी० की परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी। मित्रों के परामर्श पर आपने ललितपुर (झाँसी) जाकर वकालत प्रारम्भ की थी, जो वहाँ खूब चमकी थी। जब आपके पिता का देहावसान हुआ तब आप आगरा आ गए और फिर ललितपुर वापिस न जा सके।

आप प्रकृति से अत्यन्त सरल, मस्त और निश्छल थे। बात-बात मे सहज विनोद करने का आपका स्वभाव था। सच्चे अर्थों मे आप व्यग्य-विनोदमयी शैली के धनी थे और मित्रो से भी पारस्परिक व्यवहार मे प्राय नोक-झोक करने मे आनन्द का अनुभव किया करते थे। आप प्राय शरारत करने की दृष्टि से कभी-कभी अपने व्यग्यपूर्ण लेख बाबू गुलाबराय के नाम से छाप दिया करते थ, जिसके कारण गुलाबराय जी को बडी विचित्र स्थिति का सामना करना पडता था। वे विवशता से मौन रह जाते थे। मस्ती और अल्हडपन आपमे कूट-कूटकर भरा था। अपनी इस मस्ती तथा व्यग्य-विनोदमयी प्रकृति के कारण आप मित्र-मण्डली मे सदैव सजीवता ला दिया करते थे। उदासीनता तथा गभीरता से जैसे आपको भारी चिढ थी। अपनी इस साहित्यिक भूख को मिटाने की दृष्टि से आपने कई वर्ष तक आगरा से 'नोक-झोक' नामक एक हास्य-व्यग्य-प्रधान मासिक पत्र का सम्पादन-प्रकाशन किया था। आपने कुछ दिन तक 'आगरा समाचार' और 'मतवाला' का सम्पादन भी किया था।



आगरा के साहित्यिक जीवन के तो आप जैसे प्राण ही थे। वहाँ पर जब सन् 1911 मे 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की गई थी तब आप ही उसके प्रथम प्रधान-मन्त्री निर्वाचित हुए थे। लेखक के रूप मे भी आपने साहित्य मे अच्छा स्थान बनाया हुआ था। अपने प्रतिभाशाली पिता के सस्कारो के कारण आपने हिन्दी में जिन ग्रन्थो की रचना की वे आपकी प्रतिभा के सुपुष्ट प्रमाण है। आपकी पहली पुस्तक 'जाल हितोपदेश' के नाम से प्रकाशित हुई थी। उर्दू के प्रख्यात शैलीकार मिर्जा रुसवा के दो उपन्यासो—'उमरावजान अदा' तथा 'गुरु घण्टाल' का आपने हिन्दी अनुवाद करके अपनी विशिष्ट गद्य-शैली का परिचय दिया था। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा सम्पादित 'उर्दू-हिन्दी कोश', 'आधुनिक कोश' तथा 'रामायण कोश' प्रमुख है।

आपका निधन 80 वर्ष की आयु मे 17 अगस्त सन् 1968 को लखनऊ मे हुआ था।

श्री केदार शर्मा चित्रकार

श्री शर्मा का जन्म बिहार प्रदेश के भागलपुर जनपद के साहबगज नामक स्थान मे सन् 1897 मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपनी जन्म-भूमि मे ही हुई थी और बाद मे आपने काशी आकर अपना अध्ययन पूर्ण किया था। प्रयाग के इडियन प्रेस मे जर्मन कलाकार लुई जोमर के सम्पर्क मे आकर आपने चित्र-कला का अच्छा अभ्यास किया था। आपका जन्म-नाम 'नारायण' था, किन्तु कला-जगत् मे 'केदार शर्मा' के नाम से ही जाते थे।



आपकी कला मे मुख्यत काशी के लोक-जीवन की अभिव्यक्ति पूर्णतः मुखर हुई थी। आप जहाँ कुशल चित्र-कार थे वहाँ आप कलम के भी धनी थे। आपकी रचनाएँ अधिकतर व्यग्यमूलक तथा हास्यरस-प्रधान ही हुआ करती थी। कला के क्षेत्र मे अपनी व्यंग्य-प्रधान शैली के कारण आपका अपना एक विशिष्ट स्थान बन गया था। आपके अनेक व्यंग्य चित्र जहाँ हिन्दी की सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'सरस्वती' मे प्रकाशित हुआ करते थे वहाँ काशी से प्रकाशित होने वाले दैनिक 'आज' में आपके व्यग्य चित्र 'मण्डूक' नाम से धारावाहिक रूप मे प्रकाशित हुआ करते थे।

आपकी तूलिका व्यक्तिचित्र, हास्यचित्र, रेखाचित्र तथा व्यग्यचित्रो के अकन मे समान गति से पूर्णत सिद्ध थी। आपके द्वारा निर्मित 'भारतेन्दु' और 'निराला' के 'प्रतीक चित्र' अपनी सर्वथा विशिष्ट शैली के द्योतक है। शुरू-शुरू मे आप प्रकाशन के क्षेत्र मे एकमात्र पुस्तक-चित्रकार थे। लेखक के रूप मे भी आपके व्यक्तिपरक निबन्ध अपनी विशिष्ट भगिमा के परिचायक है। आपके ऐसे निबन्ध 'खिलौना', 'बालसखा', 'चाँद' तथा 'माधुरी' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करते थे। आप जहाँ कुशल चित्रकार तथा भावनाप्रवण लेखक थे वहाँ 'बाँसुरी' और 'हारमोनियम' आदि वाद्यो के वादन मे भी आप पूर्णत. निपुण थे।

आपका निधन 23 अगस्त, सन् 1968 को हुआ था।

डॉ० केशनीप्रसाद चौरसिया

श्री चौरसिया का जन्म उत्तर प्रदेश के बाँदा जनपद के कर्वी नामक कस्बे के समीपवर्ती तरौहा नामक ग्राम मे 1 जनवरी सन् 1930 को हुआ था। आप बाँदा के स्कूल से सन् 1948 मे हाई स्कूल की परीक्षा देकर आगे की पढाई करने की दृष्टि से इलाहाबाद आ गए थे और वही से सन् 1950 मे इण्टर तथा सन् 1952 तथा सन् 1954 मे प्रयाग विश्वविद्यालय से क्रमश बी० ए० तथा एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। प्रारम्भ मे आप सन् 1955 मे प्रयाग के 'अग्रवाल इण्टर कालेज' मे हिन्दी के अध्यापक हुए थे

और वहाँ पर लगभग तीन वर्ष कार्य करने के उपरान्त प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग मे प्राध्यापक हो गए थे। आपने सन् 1960 मे प्रयाग विश्वविद्यालय से 'मध्य-कालीन हिन्दी सन्त : विचार और साधना' विषय पर शोध-ग्रन्थ प्रस्तुत करके डी० फिल० की उपाधि प्राप्त की थी। आपका यह शोध-प्रबन्ध हिन्दुस्तानी एकेडेमी प्रयाग की ओर से प्रकाशित हुआ है।



आपने अपने पारिवारिक दायित्वो के निर्वाह के लिए प्रमुखत लेखन को ही प्रारम्भ मे व्यवसाय के रूप मे अपनाया था और जमकर लेखन-कार्य किया था। यह प्रसन्नता की बात है कि आपको इस कार्य मे कुछ सफलता भी मिली थी।

आपने जहाँ लगभग 2 दर्जन से अधिक छात्रोपयोगी पुस्तकें लिखी थी वहाँ आप एक कुशल कवि तथा उपन्यास-कार भी थे। आपकी प्रमुख रचनाओ मे 'सूरदास समीक्षा', 'आदर्श निबन्ध', 'देव, बिहारी और सेनापति', 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', 'आलोचना के प्रतिमान' तथा 'चुटकी भर चाँदनी' (उपन्यास) आदि उल्लेखनीय है। आपका 'चुटकी भर चाँदनी' उपन्यास प्रकाशनोपरान्त बहुत चर्चित हुआ था। इसमे उसका भाषा-सम्बन्धी निखार सर्वथा नवीन रूप मे हिन्दी-जगत् के समक्ष आया था। इसकी शैली भी अत्यन्त स्पृहणीय और अनुकरणीय थी।

आप जहाँ कुशल प्राध्यापक और गम्भीर समीक्षक थे वहाँ सहृदय कवि के रूप मे भी आपने अच्छी ख्याति अर्जित कर ली थी। आपने सस्कृत के प्रख्यात ग्रन्थ 'ऋतु सहार' और 'मेघदूत' का रूपान्तर भी अत्यन्त सरल मनोहारी शैली मे किया था।

आपका देहावसान असमय मे ही 8 जून सन् 1966 को हुआ था।

श्री केशरीदास अग्रवाल

श्री अग्रवाल का जन्म उत्तर प्रदेश के वाराणसी नगर मे सन् 1915 मे हुआ था। आपकी शिक्षा बहुत अधिक नही हो सकी थी, किन्तु काशी के विद्वानो के ससर्ग से साहित्य मे आपकी अच्छी पैठ हो गई थी। आपने अनेक वर्ष तक जहाँ अखौरी गगाप्रसादसिह के साथ कार्य किया था वहाँ मद्रास से प्रकाशित होने वाले अँग्रेजी दैनिक 'हिन्दू' तथा कलकत्ता के 'विश्वमित्र' दैनिक मे भी आप सहायक सम्पादक रहे थे।

वाराणसी मे जब ससार प्रेम की स्थापना हुई और उसकी ओर से 'ससार' नामक अर्द्धसाप्ताहिक पत्र प्रकाशित होने लगा तो आप उसके सहायक सम्पादक भी रहे। आप उसमे जहाँ अनेक सामयिक विषयों पर रोचक लेख लिखा करते थे वहाँ आपने अनेक जासूसी उपन्यासो का अँग्रेजी से हिन्दी अनुवाद करने के साथ-साथ 'सफल घरेलू चिकित्सा' नामक एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी लिखा था। पत्रकारिता और स्वतन्त्र लेखन का कार्य करने के अतिरिक्त चिकित्सा के क्षेत्र मे भी आपका महत्त्वपूर्ण स्थान था।

आपका निधन 10 जुलाई सन् 1978 को हुआ था।

श्री केशवदास मोहगाँवकर

आपका जन्म महाराष्ट्र की सौसर तहसील के मोहगाँव नामक स्थान मे सन् 1840 मे हुआ था। आप हिन्दी तथा मराठी के अच्छे ज्ञाता तथा अद्वैतवादी नाथ सम्प्रदाय के अनुयायी सन्त थे। आपने देश के प्राय सभी तीर्थों की यात्रा की थी और नागपुर मे आपकी अच्छी प्रतिष्ठा थी। आपने अपने पदों के गायन के द्वारा जनता का ध्यान अध्यात्मवाद की ओर खीचा था। आपके हिन्दी पदो मे नागपुरी हिन्दी का अच्छा परिपाक हुआ है। कृष्ण के विषय मे लिखा गया आपका एक पद इस प्रकार है

कमल नयन निरख नमन, बिसर गई धन्धा।
देह से विदेह भई, देखती स्वानन्दा ॥
जमुना तीर भरन नीर, श्याम सुन्दर आयो।
नाटक रूप देखत सखी, मन मेरा सुख पायो ॥

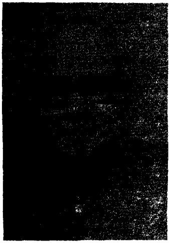
गोकुल मो दिखात नहीं, श्याम बिना कोई।
जहाँ-तहाँ नन्द-कुँवर, बिसर गई दोई॥
तन-मन हर श्याम जी ने, प्रीति मोसो लाई।
'केशव' प्रभु मिलत, रोम रोम सुख पाई॥

आपका देहान्त सन् 1910 मे हुआ था।

श्री केशवदेव मालवीय

श्री मालवीय जी का जन्म उत्तर प्रदेश के बस्ती जनपद के एक गाँव मे 10 जून सन् 1903 को हुआ था। प्रयाग विश्वविद्यालय से एम० एस-सी० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने 'हरकोर्ट बटलर इन्स्टीट्यूट कानपुर' से तेल टैक्नालॉजी मे अल्पकालीन डिप्लोमा प्राप्त किया था। जब महात्मा गाधी का असहयोग-आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तब उसमे शामिल हो गए और 2 वर्ष की जेल-यात्रा की। आप कई वर्ष तक उत्तरप्रदेश काग्रेस कमेटी मे अनेक महत्त्वपूर्ण पदो पर रहे थे। जब सन् 1937 के ऐतिहासिक चुनाव हुए थे तब आप उसके प्रमुख सगठनकर्ता थे। कई वर्ष तक आप उत्तरप्रदेश काग्रेस कमेटी के मन्त्री रहने के अतिरिक्त प्रदेश के मन्त्रि-मण्डल के भी वरिष्ठतम सदस्य रहे थे। सन् 1946 से 1950 तक आपने 'विधान निर्मात्री परिपद्' के सक्रिय सदस्य के रूप मे भी उल्लेखनीय कार्य किया था। सन् 1952 से 1954 तक आप केन्द्र मे 'प्राकृतिक साधन व वैज्ञानिक गवेषणा मन्त्रालय' मे उपमन्त्री रहे थे। सन् 1954 मे आपने केन्द्र मे मन्त्री का पद ग्रहण किया था और सन् 1957 मे आपने जब 'तेल मन्त्रालय' का काम सँभाला था, तब आपके कार्य-काल मे 'भारतीय तेल निगम' की स्थापना हुई थी। आज भारत तेल के सम्बन्ध मे जो इतना आत्मनिर्भर हुआ है उसका बहुत बडा श्रेय मालवीय जी को दिया जा सकता है।

वैज्ञानिक विषयों मे गहरी रुचि होने के साथ आपने हिन्दी भाषा के विकास और परिष्कार मे भी महत्त्वपूर्ण सहयोग किया था। आपका मत था कि "हिन्दी देश के विशाल जन-समुदाय की भाषा है। अत देश की विभिन्न भाषाओं के प्रचलित शब्द हिन्दी मे आने ही चाहिएँ। जनपदीय भाषाओ के ही नही, बल्कि देश की अन्य मुख्य भाषाओं के शब्द भी व्यवहार



मे लाने से हिन्दी-क्षेत्र का और भी विस्तार होगा। नये-नये शब्द गढने के बजाय प्रचलित शब्दो को ही अपनाना अच्छा है।" हिन्दी मे लेखन के प्रति आपकी रुचि प्रारम्भ से ही थी। आपने सन् 1920 से सन् 1936 के मध्य प्रयाग से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक 'अभ्युदय' मे अनेक लेख लिखे थे। जब आप केन्द्रीय मन्त्री-मण्डल मे थे तब आप गोरखपुर से प्रकाशित होने वाले 'पूर्वी सन्देश' नामक साप्ताहिक पत्र मे भी राजनीतिक विषयो पर बराबर लेखादि लिखते रहते थे। यह पत्र श्री मुहम्मद जकी के सम्पादन मे प्रकाशित हुआ करता था। जून सन् 1966 मे प्रकाशित इसका 'कबीर अक' अपनी उपादेय सामग्री के लिए एक महत्त्वपूर्ण सन्दर्भ का स्थान ग्रहण बना चुका है। इस विशेषाक मे भी मालवीयजी का 'कबीर एक तेजस्वी व्यक्तित्व' शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ था, जो आपकी साहित्यिक विवेचन-पटुता का परिचायक है।

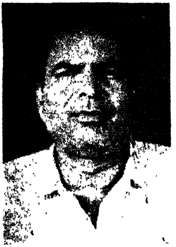
विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे हिन्दी मे लेख आदि लिखने के अतिरिक्त आपने कई पुस्तकें भी लिखी है। आपकी ऐसी पुस्तको मे 'एटम की कहानी' विशेष उल्लेखनीय है। इस पुस्तक मे आपने उसकी भाषा को ऐसा सरल तथा बोधगम्य रखा है जिसे सभी वर्ग के पाठक सहजता से समझ सकते है। भारत सेवक समाज की बुनियादी बातो को समझाने के लिए भी आपने एक छोटी-सी पुस्तिका लिखी थी। हिन्दी के अनन्य शैलीकार पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' आपके शैशवावस्था के साथी थे।

आपका निधन 27 मई सन् 1981 को 78 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री केशवप्रसाद चौबे

श्री चौबे का जन्म मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ अचल के रायगढ नामक नगर मे 6 जून सन् 1913 को हुआ था। आप हिन्दी के प्रख्यात कविद्वय श्री लोचनप्रसाद पाण्डेय तथा मुकुटधर पाण्डेय के भानजे थे। आप रायगढ की सुप्रसिद्ध साहित्यिक सस्था 'प्रेम मदिर' के सक्रिय सदस्य रहने के साथ-साथ वहाँ की अनेक सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाओ मे भी सम्बद्ध रहते थे।

आपने अपना साहित्यिक जीवन पत्रकारिता से प्रारम्भ किया था और आपकी रचनाएँ रायगढ से प्रकाशित होने वाले 'छत्तीसगढ' (मासिक) के अतिरिक्त 'कर्मवीर', 'शुभचिन्तक', 'चाँद' 'इन्दु', 'स्त्री दर्पण' और 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रहती थी। छत्तीसगढ क्षेत्र के 'अग्रदूत' (सपादक श्री केशव प्रसाद वर्मा) तथा 'राष्ट्रदूत' (सम्पादक श्री प्यारे लाल सिह) आदि पत्रो के तो आप स्थायी लेखक ही थे।



लेखन तथा पत्रकारिता मे सक्रिय रहने के साथ-साथ आप सुप्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी भी थे। सन् 1942 के 'भारत छोडो आन्दोलन' के समय जब आपकी गिरफ्तारी का वारण्ट निकला था तो आप 'भूमिगत' हो गए थे। खेद का विषय है कि आपकी कोई पुस्तक प्रकाशित न हो सकी थी।

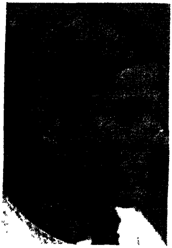
आपकी राष्ट्र-भक्ति अनन्य, अनुपम और अनुकरणीय थी। उस समय के अनेक युवको ने आपसे प्रेरणा प्राप्त करके स्वाधीनता-सग्राम मे भाग लिया था।

आपका देहावसान 8 जनवरी सन् 1974 को हुआ था।

श्री केशवप्रसाद पाठक

श्री पाठक का जन्म मध्यप्रदेश के सस्कारधानी नगर जबलपुर मे सन् 1906 के अप्रैल मास मे हुआ था। आपके पिता पण्डित लक्ष्मीप्रसाद पाठक नगर के प्रख्यात ज्योतिषी और धारावाहिक वक्ता भी थे। आपके ज्येष्ठ भ्राता श्री श्यामाकान्त पाठक भी हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि, नाटककार और लेखक थे। सन् 1924 मे आपने जब मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी तब आपके पिता की यह हार्दिक इच्छा थी कि आप अपनी आगे की पढ़ाई भी जारी रखे, किन्तु आपकी प्रवृत्ति स्कूल और कालेज की पाठ्य-पुस्तको के अध्ययन की सकुचित परिधि से बाहर निकलने की थी। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि आप इण्टर की परीक्षा मे दो बार अनुत्तीर्ण हुए।

अपने स्कूली अध्ययन से मुख मोड़कर आप साहित्य की ओर उन्मुख हुए और हिन्दी तथा पाश्चात्य साहित्य के अनेक ग्रन्थो को आपने ढूंढ-ढूंढकर पढा। समय निकालकर आप नगर मे होने वाले कवि सम्मेलनो मे भी समस्यापूर्ति के माध्यम से भाग लेने लगे। थोडे ही दिनो मे आपकी काव्य-प्रतिभा इतनी विकसित हुई कि आप अत्यन्त सशक्त मौलिक रचनाएँ करने लगे। इस बीच आपने फिर अपना अध्ययन आगे जारी रखने की दृष्टि से सन् 1928 मे राबर्टसन कालेज मे विधिवत् प्रवेश ले लिया और सन् 1936 मे एम० ए० (हिन्दी) भी कर लिया। जिन दिनो आप कालेज मे पढ़ते थे उन्ही दिनो मध्यप्रदेश के प्रख्यात साहित्यकार रामानुजलाल श्रीवास्तव ने इण्डियन प्रेस लि०, जबलपुर ब्रांच की ओर से 'प्रेमा' नामक एक साहित्यिक पत्रिका का सम्पादन और प्रकाशन



प्रारम्भ किया था। पाठक जी की रचनाएँ उस समय इस पत्रिका मे ससम्मान प्रकाशित होने लगीं और एक समय ऐसा भी आया जब आपने इस पत्रिका के 'करुण रसांक' का सम्पादन करके अपनी साहित्यिक प्रतिभा का चमत्कारी परिचय दिया था। यह विशेषांक आज भी अपनी सन्दर्भ-मूलकता के लिए स्मरण किया जाता है।

पाठक जी जिन दिनों कालेज मे पढ रहे थे उन्ही दिनों आपने उमर खय्याम की रुबाइयों का अत्यन्त सशक्त शैली मे पद्यानुवाद भी किया था। इस अनुवाद के प्रकाशन से आपकी ख्याति हिन्दी क्षेत्र मे प्रकाश-पुज की तरह फैल गई थी। इस अनुवाद की यह विशेषता थी कि आपने इसकी रचना करते समय अपने को पूरी तरह उमरखय्याम ही बना डाला था। इसके साथ-साथ आपने उन दिनो जिन गीतो की रचना की थी उनमे भी उनकी वही पीडा और कसक रूपायित हुई थी जिस पीडा और कसक को आपने उमरखय्याम की रुबाइयो मे अनुभव किया था। एम० ए० करने के उपरान्त आप जहाँ कुछ महीने तक शिक्षक रहे वहाँ आपने एक प्रकाशन सस्था के सचालन का भार भी अपने ऊपर उठाया। फर्नीचर की दुकान खोलने के साथ-साथ बीमा कम्पनी के एजेण्ट का काम भी आप करते रहे। किन्तु इन सब कार्यों म आपका मन नही लगा। पिताजी के देहान्त के बाद जब आपके दो अग्रज भी इस संसार को छोडकर चले गए तो आप सर्वथा बे-घर-बार हो गए और मुक्त पछी के समान इधर-उधर भटकने लगे। यद्यपि लोगो ने आपकी ओर घोर उपेक्षा की दृष्टि से देखा किंतु फिर भी आप अपनी धुन और मस्ती मे डूबे निरन्तर साहित्यिक क्षेत्र मे बढते ही गए।

प्रारम्भ मे आपकी रचनाओ का प्रकाशन 'त्रिधारा' नामक उस कृति मे हुआ था जिसमे आपके साथ श्री लक्ष्मणसिह चौहान तथा सभुद्राकुमारी चौहान की रचनाएँ भी सकलित थी। आपकी कुछ रचनाएँ मध्य प्रान्त विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से प्रकाशित और ब्योहार राजेन्द्रसिह द्वारा सम्पादित 'नक्षत्र' नामक ग्रन्थ मे भी सकलित है। इस संकलन का प्रकाशन 'मधु मगल ग्रन्थ-माला' के प्रथम 'पुष्प के रूप मे सन् 1947 मे हुआ था और इसमें मध्य प्रान्त और विदर्भ के प्रमुख कवियों की चुनी हुई रचनाएँ प्रविष्ट की गई थी। श्री पाठक जी के व्यक्तित्व और कृतित्व का सम्यक् आकलन आपके निधन के बाद 'केशव पाठक की काव्य कृतियाँ' नामक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ में प्रस्तुत किया गया था। इस ग्रन्थ का प्रकाशन 'जबलपुर साहित्य सघ' की ओर से सन् 1957 मे हुआ था। उन दिनों सघ के सभापति प्रख्यात वैयाकरण श्री कामताप्रसाद गुरु के सुपुत्र श्री रामेश्वर गुरु थे।

पाठक जी के अन्तिम दिन अत्यन्त आर्थिक सकट मे बीते थे। इन सकटो मे भी आपने अपनी अस्मिता को पूर्णत अक्षुण्ण रखा था और निरन्तर साहित्य-सर्जना मे सलग्न रहे थे। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आपने 'उर्दू साहित्य की सैर' नामक लेखमाला शुरू की थी उससे आपके उर्दू भाषा के गहन ज्ञान का परिचय मिलता है। आप 'नदीम' उपनाम से उर्दू मे भी लिखा करते थे। खेद का विषय है कि आप इस लेखमाला को पूरा नही कर सके थे। जब गहन आर्थिक सकट के कारण आप अपनी दवा-दारू करने मे भी असमर्थ थे तब भी आपका स्वाभिमान आपकी इन पक्तियों मे इस प्रकार मुखरित हुआ था—"मै दान नही लूंगा। हाँ ! यदि प्रान्तीय सरकार इज्जत से इलाज करवाना चाहे तो उसे स्वीकृत कर लूंगा।" अपने इसी पत्र पर आपने साक्षी स्वरूप अपनी बेटी के हस्ताक्षर भी करा लिए थे। दुर्भाग्य कि आप घुल-घुलकर मरे और घुट-घुटकर जिए, किन्तु अपना हिमालय-सा मस्तक झुकने नही दिया। निरन्तर मद्य-पान करने की आदत ने आपको गरीबी और अभावो मे जीने को विवश किया था। अपनी मृत्यु-शैया पर आपके द्वारा लिखी हुई यह पक्तियाँ आपकी तत्कालीन मन.स्थिति की द्योतक है। आपने लिखा था .

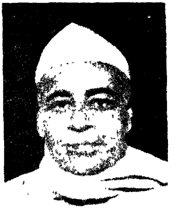
जीस्त की नीव किसने डाली है,
खूब प्याली है, मगर खाली है।
मौत पर हम निसार सौ-सौ बार,
जिसने जिन्दा शराब ढाली है।

बात पर बात हो निकल आई,
वरना क्या मैं हूँ कोई सौदाई।
जिन्दगी जिस पे जान देती है,
मौत करती है वो मसीहाई।

आपका निधन 3 अक्तूबर सन् 1956 को छिन्दवाडा सेनेटोरियम मे टी० बी० के कारण हुआ था।

आचार्य श्री केशवप्रसाद मिश्र

श्री मिश्र जी का जन्म काशी के भदैनी मोहल्ले मे सन् 1885 मे हुआ था। आपके पूर्वज उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के धर्मपुर नामक ग्राम से आकर कई शताब्दी पूर्व यहाँ बस गए थे। आप अपने पिता श्री भगवतीप्रसाद मिश्र के ज्येष्ठ पुत्र थे। 14 वर्ष की आयु तक आपका जीवन खेल-कूद मे ही व्यतीत हुआ था। आप प्राय पतग उडाने मे ही सारा दिन बिता दिया करते थे। 14 वर्ष की आयु मे आपने पण्डित योगेश्वर झा से सर्व प्रथम व्याकरण का अध्ययन प्रारम्भ किया था और बाद मे क्रमश जयनारायण हाई-स्कूल तथा क्वीन्स कालेज मे शिक्षा ग्रहण की। क्योकि आपके परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी न थी इसलिए शिक्षा पूरी होने से पूर्व ही आपको आजीविका चलाने की दृष्टि से नौकरी करनी पडी थी। फलत आप सर्वप्रथम अपने गुरु श्री योगेश्वर झा की पाठशाला मे ही अध्यापक हो गए। फिर कुछ समय तक महामहोपाध्याय श्री शिवकुमार शास्त्री के साथ 'साग-वेद विद्यालय' मे आपने व्याकरण के अध्यापन का कार्य किया। इसी बीच श्री माधवाचार्य, श्री राम शास्त्री, महा-महोपाध्याय गगाधर शास्त्री तथा श्री दामोदर गोस्वामी आदि अनेक विद्वानो की छत्रछाया मे रहकर आपने साहित्य, व्याकरण, वेदान्त तथा दर्शन आदि विषयो का विधिवत् अध्ययन किया। अपने निजी स्वाध्याय और अध्यवसाय के बल पर ही आपने प्राईवेट रूप मे इण्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण करने के साथ-साथ कलकत्ता विश्वविद्यालय की 'काव्यतीर्थ' परीक्षा भी दे दी थी।



इन परीक्षाओ को उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने सर्वप्रथम सन् 1914 से सन् 1916 तक इटावा के 'सनातन धर्म हाई स्कूल' में अध्यापन का कार्य किया और फिर आप काशी के 'सेण्ट्रल हिन्दू स्कूल' में आ गए। यहाँ पर आपने लगभग 12 वर्ष तक अत्यन्त ही सफलतापूर्वक कार्य किया। जिन दिनो आप इस शिक्षा-सस्थान मे कार्य-निरत थे तब आपकी अध्यापन-शैली की प्रशंसा महामना मालवीय के कानो तक भी पहुँच चुकी थी। जब बाबू श्यामसुन्दरदास को काशी विश्वविद्यालय के 'हिन्दी विभाग' मे एक और अध्यापक की नियुक्ति की आवश्यकता अनुभव हुई तो उन्होंने मालवीय जी से आपकी नियुक्ति की अनुशसा की। मालवीय जी की यद्यपि श्री मिश्र जी की अध्यापन-शैली के सम्बन्ध मे अच्छी धारणा बन गई थी किन्तु वे एक स्कूल मे पढाने वाले अध्यापक को एकदम विश्वविद्यालय की उच्च कक्षाओ को पढाने का कार्य सौपने मे सकोच का अनुभव कर रहे थे, इसलिए उन्होंने बाबू श्यामसुन्दरदास के प्रस्ताव पर कोई विशेष ध्यान नही दिया। इस बीच विश्वविद्यालय मे 'तुलसी जयन्ती' का आयोजन हुआ। श्री रामनारायण मिश्र के सुझाव पर मिश्र जी ने उस आयोजन मे जाकर भाषण देने का निश्चय किया। सौभाग्यवश उस अवसर पर मालवीय जी भी उपस्थित थे। मिश्र जी ने अपने भाषण मे गोस्वामी जी की काव्यगत अनेक विशेषताओ का वर्णन करते हुए 'विनय पत्रिका' की अत्यधिक प्रशसा की थी। मालवीय जी 'विनय पत्रिका' की उन विशेषताओ को सुनकर इतने गदगद हुए कि उन्होंने आपको अपनी सस्था मे लाने का मन-ही-मन सकल्प कर लिया। इसके कुछ समय बाद ही सेण्ट्रल हिन्दू स्कूल के काशी-नरेश हाल मे एक 'अखिल भारतीय सस्कृत-सम्मेलन' का आयोजन हुआ। इस सम्मेलन के अध्यक्ष सौभाग्य से महामना मालवीय जी ही थे। उस अवसर पर आचार्य केशवप्रसाद मिश्र का सस्कृत मे भाषण हुआ। इस भाषण ने मालवीय जी के मानस मे आपके प्रति और भी सहज अनुरक्ति जगा दी और जब एक बार फिर विश्वविद्यालय मे एक हिन्दी अध्यापक की नियुक्ति करने का प्रसग उपस्थित हुआ तो मालवीय जी ने स्वय ही आपकी नियुक्ति का प्रस्ताव किया था।

हिन्दू विश्वविद्यालय मे श्री मिश्र जी की नियुक्ति सन् 1928 मे हुई थी और सन् 1941 तक आपने वहाँ

एक अध्यापक के रूप मे कार्य किया था। सन् 1941 से सन् 1950 तक आप वहाँ 'हिन्दी विभागाध्यक्ष' के रूप मे प्रतिष्ठित रहे थे। अपने इस कार्य-काल मे आपने जिस निष्ठा, तत्परता और योग्यता से कार्य किया था उसके कारण आपकी प्रतिष्ठा दिनानुदिन बढती ही गई थी। आपकी अध्यापन-पटुता और विद्वत्ता की प्रशसा बाबू श्यामसुन्दरदास ने अपनी आत्मकथा मे उन्मुक्त मन से की है। अपने कार्य-काल मे मिश्र जी ने जहाँ हिन्दी-विभाग को सर्वतोभावेन समृद्ध करने की ओर ध्यान दिया था वहाँ आप विश्वविद्यालय की कोर्ट, सीनेट, सिण्डीकेट आदि विभिन्न समितियो के सम्मानित सदस्य एवं कला सकाय के अधिष्ठाता भी रहे थे। सन् 1950 मे विश्वविद्यालय की सेवा मे निवृत्ति पाकर आपने अपने को स्वाध्याय और लेखन मे ही सर्वात्मना सलग्न कर लिया था। आप आत्म-प्रचार और विज्ञापन मे सर्वथा दूर रहकर साहित्य-रचना मे प्रवृत्त रहते थे।

आप जहाँ एक सफल अध्यापक और गम्भीर प्रकृति के विद्वान् थे वहाँ आपने अपनी लेखनी के द्वारा भी भारतीय वाङ्मय की अभिवृद्धि मे बहुत बडा योगदान दिया था। आप हिन्दी तथा सस्कृत के अत्यन्त प्रतिभा-सम्पन्न कवि होने के साथ-साथ उत्कृष्ट कोटि के गद्य-लेखक भी थे। तकनीकी शब्दो के निर्माण मे भी आपकी प्रतिभा एव योग्यता का लाभ हिन्दी-जगत् को समय-समय पर मिलता रहा था। आपके द्वारा लिखित अनेक ग्रन्थो की भूमिकाएँ आपकी विद्वत्ता एव विवेचन-पटुता की साक्षी है। भाषा, व्याकरण और साहित्य-शास्त्र का गहन ज्ञान रखने के साथ रस-सिद्धात के भी आप पारगत विद्वान् थे। सस्कृत के महाकवि कालिदास की अमर कृति 'मेघदूत' के पद्यानुवाद की भूमिका मे आपने 'रस-सिद्धान्त' का जो विवेचन किया है उससे आपकी विद्वत्ता का विशद परिचय मिल जाता है। इसके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित 'आदर्श और यथार्थ', 'परिचय', 'गद्य भारती', 'काव्यालोक' और 'पद चिह्न' नामक अनेक ग्रन्थो की भूमिकाओ को देखकर आपकी विवेचन-पटुता का अच्छा परिचय मिल जाता है। आपने जहाँ 'हिन्दी वैद्युत् शब्दावली' (1925) जैसे ग्रन्थ की रचना करके अपनी भाषावैज्ञानिक क्षमता का परिचय दिया था वहाँ नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से प्रकाशित 'हिन्दी शब्द सागर' का कार्य भी आपके ही निरीक्षण मे सम्पन्न हुआ था। आपकी प्रारम्भिक हिन्दी कविताएँ जहाँ 'सरस्वती' तथा 'इन्दु' आदि पत्रिकाओं मे छपा करती थी वहाँ आपके अँग्रेजी भाषा के लेख 'इण्डियन एण्टीक्वेरी' नामक शोध पत्र मे ससम्मान प्रकाशित होते थे। आपने सस्कृत का ज्ञान कराने की दृष्टि से जहाँ 'सस्कृत सारिणी' नामक पुस्तक दो भागो मे लिखी थी, वहाँ सस्कृत मे 'हरिवश गुण स्मृति' नामक एक काव्य की रचना भी की थी। आप जहाँ सन् 1939 मे काशी मे सम्पन्न हुए अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अन्तर्गत आयोजित 'कवि सम्मेलन' के स्वागताध्यक्ष रहे थे वहाँ 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' की ओर से आपको सन् 1952 मे डी० लिट्० की सम्मानित उपाधि भी प्रदान की गई थी। आपके निधन पर नागरी प्रचारिणी सभा ने अपनी 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' का 'केशव स्मृति अक' भी प्रकाशित किया था। आप अनेक वर्ष तक इस पत्रिका के 'सम्पादक-मण्डल' के वरिष्ठ सदस्य भी रहे थे।

अपनी साहित्य-सेवा की इस दीर्घ अवधि मे आपका सम्पर्क हिन्दी के अनेक कवियो और साहित्यकारो से हुआ था। समय-समय पर आपका उन सबसे पत्र-व्यवहार भी होता रहता था। ऐसे मनीषियो और विद्वानो मे सर्वश्री महावीरप्रसाद द्विवेदी, रामदहिन मिश्र, जयशकर प्रसाद, अयोध्यासिह 'उपाध्याय', लाला भगवानदीन, रामचन्द्र शुक्ल, राय कृष्णदास, मैथिलीशरण गुप्त, विश्वनाथप्रसाद मिश्र और धीरेन्द्र वर्मा आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उस युग के जिन बहुत-से साहित्य-महारथियो का स्नेह और सौजन्य आपको सुलभ था उनमे महामहोपाध्याय पण्डित गौरीशकर ओझा, पडित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, डॉ० काशीप्रसाद जायसवाल और पडित कामताप्रसाद गुरु के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उक्त सभी महानुभाव मिश्र जी की विद्वत्ता के प्रति सहज स्नेह रहते थे। 'हिन्दी शब्द सागर' के सम्पादन के दिनो मे शब्दो की 'व्युत्पत्ति' के प्रसग मे आपका प्राय. इन विद्वानो से मनोरजक वाद-विवाद भी हो जाया करता था। नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से जब 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' लिखवाने की विशाल योजना बनी तब उसमे भी आपके 'सत्परामर्श' का पूर्ण लाभ उठाया गया था। सर यदुनाथ सरकार के सम्पादन मे 'भारतीय इतिहास परिषद्' की ओर से भारतवर्ष का इतिहास नए सिरे से

लिखे जाने का जो निश्चय किया गया था उसमें भी आपसे विचार-विमर्श हुआ था। आपके पास साहित्य का जो समृद्ध सग्रह था वह आपके सुपुत्र श्री महावीरप्रसाद मिश्र ने 'केशव स्वाध्याय मन्दिर' को दान दे दिया था। इसके साथ-साथ उन्होंने पुस्तकालय और स्वाध्याय मन्दिर के लिए भूमि भी देकर अपनी पितृ-भक्ति का अद्वितीय परिचय दिया है।

श्री मिश्र जी का निधन 21 मार्च सन् 1952 को हुआ था।

श्री केशवराम टण्डन

श्री टण्डन का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रमुख तीर्थ काशी मे सन् 1903 मे हुआ था। यद्यपि आपके परिवार मे व्यापार का ही कार्य होता था किन्तु आपने अपने को सर्वथा साहित्य के अध्ययन की ओर ही लगाया था। काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय से स्नातक होने के उपरान्त आपने हिन्दी रगमच को समृद्ध करने की दिशा मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र द्वारा हिन्दी रगमच को समृद्ध करने की दिशा मे जो कार्य हुआ था उसे आगे बढाने का बहुत-कुछ श्रेय श्री टण्डन को है।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना के उपरान्त जब सन् 1905 मे 'भारतेन्दु नाटक मण्डली' की स्थापना हुई और उसके द्वारा काशी मे हिन्दी रगमच को उन्नत करने का कार्य प्रारम्भ हुआ तब श्री टण्डन इस मण्डली मे सदा सर्वदा के लिए जुड गए और आपने दिन-रात परिश्रम करके नगर मे अनेक नाटको का मचन करके उस समय हिन्दी-सेवा का जो कार्य किया वह अभूतपूर्व था। बाद मे जब देश मे व्याव-सायिक पारसी थियेटर कम्पनियो द्वारा आपने हिन्दी की दुर्दशा होती हुई देखी तो आप सन् 1921 मे मेरठ के प्रख्यात नाटककार श्री विश्वम्भरसहाय 'व्याकुल' द्वारा सस्थापित 'व्याकुल भारत कम्पनी' की सेवा मे सलग्न हो गए।

'व्याकुल भारत कम्पनी' उन दिनो देश की एक-मात्र ऐसी नाटक कम्पनी थी जिसने हिन्दी नाटको का सफल मचन करने के साथ-साथ राष्ट्रीयता के प्रचार और प्रसार को भी अपना प्रमुख ध्येय बनाया हुआ था। परिणामत. यह कम्पनी बहुत लोकप्रिय हुई और थोडे ही दिनो मे इसने अपना क्षेत्र अत्यन्त व्यापक बना लिया। इस कम्पनी की ओर से जब कलकत्ता मे कई नाटको का मचन किया गया तब श्री टण्डन जी ने उसमे बड़ी तन्मयता और लगन से भाग लिया था। थोडे ही दिनो में आप अपनी भाव-भगिमाओं तथा अभिनय की अन्य उल्लेखनीय विशिष्टताओ के कारण इतने लोकप्रिय हो गए कि आपको अनेक स्वर्ण-पदक तथा सम्मान-पत्र भी प्रदान किये गए थे। किन्तु यह कम्पनी भी अधिक समय तक खडी न रह सकी और आर्थिक संकट के कारण उसका कार्य बीच मे ही रुक गया। फलस्वरूप आप कलकत्ता से फिर वापस काशी आ गए।

काशी मे आकर भी आप चुप नही बैठे और फिर आपने 'भारतेन्दु नाटक मण्डली' तथा 'नटराज' आदि अनेक सस्थाओ के माध्यम से हिन्दी रगमच को समृद्ध करने की दिशा मे अनेक नाटको का सफल मचन किया और उनमे सक्रिय रूप से भाग भी लिया। आपके द्वारा खेले गए 'सुभद्रा-हरण' और 'चन्द्रगुप्त' आदि नाटको मे प्रस्तुत की गई आपकी भूमिकाएँ आज भी काशी के नाट्यप्रेमीजनो के मानस पर अमिट रूप से अकित है। अपनी ढलती उम्र मे सन् 1959 मे आपने काशी मे श्री जगदीशचन्द्र माथुर के 'कोणार्क' नामक नाटक की जो प्रस्तुति की थी उसे देखकर सारा दर्शक समुदाय आश्चर्य-चकित हो गया था। आपकी हिन्दी रगमच और नाटक के प्रति की गई सेवाओ का हिन्दी साहित्य मे सर्वथा एक विशिष्ट स्थान है।

आपका निधन 15 मार्च सन् 1963 को हुआ था।

श्री केशवानन्द नैथानी 'रसिक'

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के पौडी गढवाल क्षेत्र के जाख कपोलस्यूं नामक ग्राम मे 16 जुलाई सन् 1897 को हुआ था। मिडिल तक की शिक्षा प्राप्त करके टीचर्स ट्रेनिग करने के उपरान्त आपने सन् 1917 मे अध्यापक के रूप मे अपना कर्ममय जीवन प्रारम्भ किया था और सन् 1938 मे इस कार्य से निवृत्ति प्राप्त की थी। आप एक कुशल शिक्षक होने के साथ-साथ अच्छे कवि भी थे। आपकी कविताओं मे

राष्ट्र-प्रेम और वीरभावना कूट-कूटकर भरी हुई होती थी। आपकी अधिकाश राष्ट्रीय कविताएँ 'भावुक' नाम से छपा करती थी। क्योंकि आप शासकीय सेवा में थे इसलिए आपने प्रचलित 'रसिक' उपनाम के अलावा राष्ट्रीय रचनाओं के लिए 'भावुक' नाम को अपना लिया था। आपको अपने साहित्यिक जीवन मे श्री विश्वम्भरदत्त चन्दोला सम्पादक 'गढवाली' से प्रमुख प्रेरणा प्राप्त हुई थी।



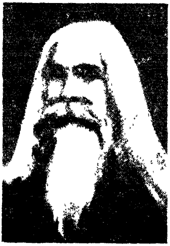
आपकी पहली रचना पौडी से प्रकाशत होने वाली 'विशाल कीर्ति' नामक पत्रिका मे प्रकाशित हुई थी। इसके उपरान्त 'हितैषी', 'गढ देश', 'कर्मभूमि' तथा 'क्षत्रिय वीर' आदि पत्रो के अतिरिक्त आप 'सरस्वती', 'मनोरमा' तथा 'अभ्युदय' आदि पत्रो मे भी बराबर लिखते रहे थे। गढवाल के सर्वश्री ब्रह्मानन्द थपलियाल, पीताम्बरदत्त पसबोला, कृपाराम मिश्र 'मनहर', भैरवदत्त धूलिया, भक्त दर्शन और बुद्धिवल्लभ थपलियाल आदि अनेक प्रमुख साहित्यकारो एव पत्रकारो से आपका अत्यन्त घनिष्ठ तथा स्नेहपूर्ण सम्बन्ध रहा था। आपके द्वारा लिखित अनेक शोधपूर्ण निबन्ध भी बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रखते है। आपका एक ऐसा ही खोजपूर्ण निबन्ध 'प्रागैतिहासिककालीन गढवाल' शीर्षक से दिल्ली से प्रकाशित 'गिरीश' नामक एक शोध ग्रन्थ मे छपा है।

आपका निधन 4 अगस्त सन् 1981 को ऋषिकेश मे अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री रमेशचन्द्र नैथानी के पास हुआ था।

श्री केसरीसिंह बारहठ (कोटा)

आपका जन्म 21 नवम्बर सन् 1872 को मेवाड के शाहपुरा राज्य के खेडा नामक ग्राम मे हुआ था। आपके पिता श्री कृष्णसिंह उच्चकोटि के विद्वान् और इतिहास-वेत्ता थे। उन्होंने राजस्थानी भाषा के प्रमुख कवि सूर्यमल्ल मिश्रण के प्रख्यात ग्रन्थ 'वश भास्कर' की उदधिमथनी टीका और 'राजपूताने का अपूर्व इतिहास' नामक ग्रन्थो की रचना की थी। खेद है कि वे अभी तक अप्रकाशित ही है। इनके अतिरिक्त उनकी 'कृष्णोपदेश' नामक एक और अप्रकाशित रचना है। केसरीसिह के बाल-मानस पर जहाँ उनके विद्वान् पिता के सस्कारो का प्रभाव पडा था वहाँ आप उदयपुर के महामहोपाध्याय कविराज श्यामलदास से भी अत्यन्त प्रभावित हुए थे।

यद्यपि आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने पिता जी के निरीक्षण मे सस्कृत मे ही सम्पन्न हुई थी और आपने उनसे ज्योतिष, वेदान्त, धर्म तथा दर्शन-सम्बन्धी अनेक ग्रन्थो का चूडान्त अध्ययन किया था, किन्तु फिर भी आपने सस्कृत और हिन्दी के अतिरिक्त प्राकृत, पालि, मराठी और गुजराती का भी विधिवत् अध्ययन किया था। आप साहित्य, इतिहास, राजनीति एव दर्शन-शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित थे। जब आप युवक ही थे तब इटली के निर्माता मेजिनी की जीवनी पढकर आपके मानस मे राष्ट्र-भक्ति के भाव कूट-कूट कर भर गए थे। यद्यपि आप शाहपुरा के बहुत बडे जागीरदार थे और आपकी जागीर की आय लगभग 12 हजार रुपए वार्षिक थी, किन्तु सामन्ती जीवन का वैभव तथा विलास आपको बाँध नही सका और आप देश-भक्ति के कण्टकाकीर्ण मार्ग पर चलने को उद्यत हो गए। पहले आप उदयपुर के महाराणा के सलाहकार के रूप मे नियुक्त थे, किन्तु बाद मे कोटा के महाराजा के निमन्त्रण पर आप वहाँ चले गए थे।



कोटा पहुँचकर आपने सन् 1911 में राजपूत जाति की सेवा मे एक अपील निकाली जिससे अँग्रेज चिढ़ गए और 31 अक्तूबर सन् 1914 को आपको बिना कोई अभियोग लगाए गिरफ्तार कर लिया गया। तीन मास तक बन्द रखने के बाद आप जब छोडे गए थे तब भी आपके विषय मे शासन पूर्णत सतर्क रहने लगा था। इस बीच आप पर कोटा के सम्राट् का शासन उलटने का अभियोग लगाकर झूठा मुकद्दमा चलाया गया और 20 वर्ष की सजा देकर हजारी बाग (बिहार) जेल मे भेज दिया गया। आपने वहाँ जाकर अन्न न ग्रहण करने की प्रतिज्ञा कर ली। फलस्वरूप आप केवल दूध पर ही रहने लगे और यह भीषण प्रतिज्ञा उस समय भग की जब आप 5 वर्ष बाद सन् 1919 मे वहाँ से मुक्त होकर अपने घर लौटे थे।

आप उच्चकोटि के देशभक्त होने के साथ-साथ एक उत्कृष्ट कवि, गद्य-लेखक, पत्रकार और समीक्षक भी थे। आपके प्रत्येक आचरण मे देश-भक्ति के अपूर्व भाव समाए हुए थे। अपने युवा-काल मे आपने प्रसिद्ध देशभक्त वीर सावरकर की प्रख्यात पुस्तक 'मैजिनी का जीवन चरित्र' का मराठी से हिन्दी मे अनुवाद किया था। इस पुस्तक को राज-द्रोहात्मक होने के कारण जला दिया गया था। आपने सस्कृत के सुप्रसिद्ध विद्वान् कल्हण के 'राज-तरगिणी' ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद भी करना प्रारम्भ किया था, किन्तु उसे बीच मे इसलिए रोक दिया था कि उन्हे पता चला था कि कोई दूसरा व्यक्ति इसका अनुवाद कर रहा है। अपने जीवन के सन्ध्या-काल मे आपने अश्वघोष की प्रख्यात कृति 'बुद्ध चरित' का हिन्दी अनुवाद भी किया था। खेद है कि आपकी यह रचना प्रकाशित नही हो सकी। जिन दिनो लार्ड कर्जन द्वारा दिल्ली-दरबार मे देशी नरेशो को बुलाया गया था तब आपने उनमे स्वाभिमान की भावना जगाने की दृष्टि से जो सोरठे लिखकर भेजे थे वे भारतीय साहित्य की अमर तथा शाश्वत निधि है। आपने लिखा था

पग-पग भम्या पहाड, धरा छाँडि राख्यो धरम।
ईशू महाराणा र मेवाड, हिरदै बसिया हिन्द रै॥
घण-घलिया घमसाण, राणा सदा रहिया निडर।
तब पेखन्ता फरमाण, हलचल किम फतमल हुवै॥
देखे अज मदीह, मुल कैलो मन ही मना।
दम्भी गढ दिल्लीह, शीस नमन्ता शीप वद॥

श्री बारहठ जी के इस उद्बोधन का सुप्रभाव यह हुआ कि उदयपुर के तत्कालीन नरेश महाराणा फतहसिह उस दरबार मे नही गए। आपका यह स्पष्ट मत था कि अब जमाना 'यथा राजा तथा प्रजा' का न होकर 'यथा प्रजा तथा राजा' का है। आप राजसत्ता के कटु आलोचक थे और समय-समय पर ऐसी क्रान्तिकारी रचनाएँ करते रहते थे। आपने एक बार स्वतन्त्रता की वन्दना इस प्रकार की थी :

प्रधान मानवीय सत्य है स्वतन्त्रता अहा।
वरेण्य धर्म कर्म मर्म मन्त्र हो यही रहा॥
महान् प्रान, प्रान वारि के तुम्हे ही खोजते।
नमामि विश्व वन्दनीय, अन्त माँ स्वतंत्रते!

देशी राज्यो मे धार्मिक, सामाजिक, नैतिक, आर्थिक, मानसिक और शारीरिक लोक-हितकारी शक्तियो को जागृत करने की दिशा मे बारहठ जी ने अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किया था। इस सम्बन्ध मे आपने जो 'स्मरण पत्र' हिन्दी मे भेजा था उसकी यह पक्तियाँ आपकी अटूट देश-भक्ति और हिन्दी-प्रेम की परिचायिका है --"इस बार मैंने यही उचित समझा कि मै अपने विचार अपनी भाषा मे ही प्रकट करूँ। अँग्रेजी न जानने के कारण पहले भी जब-जब मैंने आपकी सेवा मे अपने विचार अँग्रेजी मे दूसरो से लिखवाकर भेजे तब मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मेरे विचार ठीक रूप से आपके सामने नही रखे जा सके और ऐसी दशा मे गलतफहमी रह जाना स्वाभाविक है। अत हिन्दी मे लिखने के साहस पर क्षमा करे।" आपकी इन पक्तियो से आपके राष्ट्रभाषा-प्रेम का परिचय मिलता है। यह आपके परिवार के सस्कारो का ही क्रातिकारी प्रभाव था कि आपके अनुज श्री जोरावरसिह बारहठ तथा सुपुत्र श्री प्रतापसिह बारहठ भी स्वतन्त्रता-आन्दोलन के अनन्य सवाहक रहे थे।

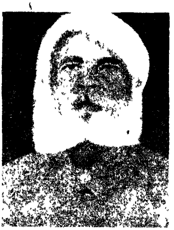
आपका निधन 14 अगस्त सन् 1941 को कोटा मे हुआ था।

श्री केसरीसिंह बारहठ (सोन्याणा)

श्री बारहठ का जन्म राजस्थान के मेवाड क्षेत्र के सोन्याणा नामक स्थान मे सन् 1870 मे हुआ था। आपका उपनाम

'केशव' अथवा 'केशोदास' भी था। आप डिंगल और पिंगल दोनों के अच्छे ज्ञाता थे और बाल्यकाल से ही आपमे अद्भुत काव्य-प्रतिभा थी। इतिहास-प्रेमी होने के कारण आपको राजस्थान की अनेक ख्याते—बाते याद थी। आपके पूर्वज केवल कवि ही नही, प्रत्युत ऐसे योद्धा भी थे जिन्होने मेवाड के महाराणाओं को युद्ध-क्षेत्र मे उत्तेजना देने के साथ-साथ तलवार भी चलाई थी।

क्योकि आप जाति के चारण थे इसलिए आपके हृदय मे वीर रस का आप्लावित होना स्वाभाविक था। आपका रहन-सहन, चाल-ढाल, वेश-भूषा तथा भाषा एवं भावना अत्यन्त सरल और सीधी-सादी थी। आपकी रचनाओ मे इतिहास तथा वीर रस का ऐसा सम्मिश्रण हुआ है कि उसमे जन-साधारण मे भी उत्साह का सागर हिलोरे लेने लगता है। आपने पिंगल के साथ-साथ कही-कही



डिंगल के छन्दो की भी रचना की थी। वैसे आपकी रचनाओ मे प्राय वीर रस की प्रचुरता ही दृष्टिगत होती है, किन्तु कही-कही अन्य रसो की छटा भी दिखाई दे जाती है।

आपकी अटूट देश-भक्ति और दृढ निष्ठा का परिचय हमारे पाठक इस पद से प्राप्त कर सकते है

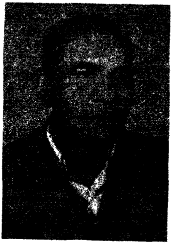
मित्र वारि डारौं और मन्त्री वारि डारौ मान,
सेना वारि डारौ सब याके पद-नख पैं।
गजन अलान युत बाजि कारबान वारौ,
हीरन की खान वारि डार भव्य मुख पैं॥
ओरहू हमारे पास होय तार्कों बैर-बैर,
हैर-हैर वारि डारौ, हिन्दुअन हक पैं।
धर्म के सिवाय धन-धाम वारि डारौं मै तो,
प्रान वारि डारौ प्यारे भारत मुलक पैं॥

आपके द्वारा रचित काव्य-ग्रन्थो मे 'प्रताप चरित्र', 'राजसिंह चरित्र', 'दुर्गादास चरित्र', 'जसवत सिंह चरित्र', 'अमरसिंह राठौड' और 'रूठी राणी' प्रमुख है। इनमे से 'प्रताप चरित्र' मे दोहे-कवित्त आदि सब मिलाकर 911 छंद हैं, इसमे जो सवाद है वे बडे ही सजीव और मर्म-स्पर्शी बन पडे है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आपके इस काव्य की प्रशसा मे यह सही ही लिखा है—"मेवाड के श्री केसरीसिंह बारहठ का 'प्रताप चरित्र' वीर रस का एक बहुत उत्कृष्ट काव्य है।" आपको इस काव्य पर नागरी प्रचारिणी सभा काशी के द्वारा सन् 1935 में 'रत्नाकर पुरस्कार' और 'बलदेवदास पदक' भी प्रदान किया गया था।

आपका निधन 30 अक्तूबर सन् 1957 को हुआ था।

श्री कैलाशचन्द्र 'पीयूष'

श्री 'पीयूष' का जन्म राजस्थान की अलवर रियासत के नीमराणा नामक स्थान मे 13 अक्तूबर सन् 1917 को हुआ था। आपका अधिकाश समय दिल्ली मे ही व्यतीत हुआ था और एक समय ऐसा भी था जब आप राजधानी के कवियो मे अपना शीर्षस्थ स्थान रखते थे। प्रख्यात हिन्दी-सेवी श्री पुत्तूलाल वर्मा 'करुणेश' ने जब भारत की राजधानी मे हिन्दी के प्रचार और प्रसार की नीव डाली थी और उस नीव को मजबूत करने की दृष्टि से यहाँ 'कवि समाज' की स्थापना की थी तब आप उनके प्रमुख सहयोगी थे।



श्री पीयूषजी जहाँ एक कुशल एव कर्मठ सगठक थे वहाँ आप उत्कृष्ट कोटि के कवि भी थे। 'कवि समाज' के माध्यम से राजधानी मे किसी समय जिन कवियो का उत्कर्ष

हुआ था उनमें सर्वश्री शम्भूनाथ 'शेष' तथा दीनानाथ 'दिनेश' के साथ पीयूषजी का नाम भी लिया जा सकता है। राजधानी के कवि-सम्मेलनों में कभी आपकी रचनाओ की धूम रहा करती थी। आपके द्वारा रचित काव्य-कृतियों में 'ग्रामबाला', 'सरित दीप', 'कपोती', 'अवगुठन' और 'माण्डवी' प्रमुख है। आपने पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी कुछ दिन तक कार्य किया था। इस दिशा में श्री राधावल्लभ हल्दिया के सहयोग से सन् 1945-46 मे प्रकाशित 'कौमुदी' नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन तथा प्रकाशन विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

आपका निधन 7 मार्च सन् 1973 को हुआ था।

डॉ० कैलाशनाथ भटनागर

डॉ० भटनागर का जन्म 11 जुलाई सन् 1906 को लाहौर मे हुआ था। आपके पिता प्रो० गुलशनराय पजाब के प्रमुख शिक्षा-शास्त्री और इतिहासकार थे। कैलाशनाथजी ने पंजाब विश्वविद्यालय से एम० ए० करने के उपरान्त लाहौर के सनातन धर्म कालेज मे अध्यापन प्रारम्भ कर दिया था। आप सस्कृत तथा हिन्दी के मर्मज्ञ विद्वान् तथा गम्भीर अध्येता थे। सस्कृत मे पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त आप विश्वविद्यालय की अनेक समितियों के सक्रिय सदस्य रहे थे। आपने जहाँ विश्वविद्यालय की सस्कृत तथा हिन्दी-पाठ्य-पुस्तक-निर्धारिणी समितियो के सदस्य के रूप मे पजाब मे सस्कृत तथा हिन्दी साहित्य की उल्लेखनीय सेवा की थी वहाँ अनेक साहित्यिक



संस्थाओ के सचालन मे भी आपका प्रमुख सहयोग रहा था।

आप हिन्दी तथा सस्कृत के कुशल अध्यापक होने के साथ-साथ उत्कृष्ट नाटककार और अध्ययनशील लेखक भी थे। आपके द्वारा रचित, सकलित और सम्पादित ग्रन्थो मे 'नाट्य सुधा', 'भीम प्रतिज्ञा', 'चाणक्य प्रतिज्ञा', 'कुणाल', 'कवि सम्राट् कालिदास', 'श्रीवत्स' (नाटक), 'निकुज' (एकाकी), 'नव सतसई सार', 'गल्प विनोद', 'पद्य-प्रसून', 'गद्य चयनिका' (सम्पादन) प्रमुख है। इनमे से 'नाट्य-सुधा' जहाँ 'पजाब टैक्स्ट बुक कमेटी लाहौर' द्वारा पुरस्कृत हुई थी वहाँ अनेक कृतियाँ पाठ्य-क्रमो मे भी निर्धारित थी। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा सम्पादित एव सकलित और कुछ पुस्तकें भी है।

भारत विभाजन के उपरान्त आप नई दिल्ली के 'कैम्प कालेज' मे हिन्दी-सस्कृत विभाग के अध्यक्ष के रूप मे कई वर्ष तक कार्य-रत रहे। वहाँ से निवृत्ति पाने के उपरान्त आप स्थायी रूप से लखनऊ मे रहने लगे थे, जहाँ से आपने 'भारतीय साहित्य माला' नाम से अपना प्रकाशन प्रारम्भ किया था।

आपका निधन सन् 1960 मे लखनऊ मे ही हुआ था।

श्री कैलाश भार्गव

श्री भार्गव का जन्म हिमाचल प्रदेश के शिमला नगर मे हुआ था। आप मूलत. नाहन नगर के निवासी थे। आपके पिता श्री बालकृष्ण शर्मा शिमला की तत्कालीन नाट्य सस्था 'नैशनल ए० डी० सी०' से सम्बद्ध थे अत: इस सम्पर्क का प्रभाव भार्गव जी पर पडे बिना नही रह सका और रचमचीय गतिविधियो मे आपकी रुचि निरन्तर विकासोन्मुख होती गई।

उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए जब आप अम्बाला गए तब आपकी प्रथम कविता 'आँसू' उसी कालेज की वार्षिक पत्रिका 'इन्द्र धनुष' मे प्रकाशित हुई थी। साथ ही उन दिनो 'हिन्दी मिलाप' (जालन्धर) मे आपकी कहानी 'चाँदी के सिक्के' भी प्रकाशित हुई। यह एक सुयोग ही था कि आपका सम्पर्क उस समय के लोकप्रिय गीतकार प्रो० मदन-

लाल 'मधु' से हो गया और उनके मार्गदर्शन से आपकी काव्य-प्रतिभा निरन्तर विकसित होती गई।

श्री भार्गव जहाँ साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सस्थाओं के एक निष्ठावान एव कुशल सयोजक थे वहाँ विभिन्न खेलो के आयोजन मे भी आपकी गहन रुचि थी। सन् 1956 मे जब प्रो० कैलाश भारद्वाज ने नाहन मे 'साहित्य ससद्'नामक संस्था की स्थापना की तो आपने इस सस्था को अपना सक्रिय योगदान दिया था। सन् 1958 मे आपके सहयोग से 'नव कला केन्द्र' नामक संस्था की भी वहाँ स्थापना हुई जिसके माध्यम से अनेक नाटकों का मचन किया गया। ध्यातव्य है कि यह सस्था आज भी कार्यशील है।



नौकरी करने के साथ-साथ आप अनेक गतिविधियो मे सलग्न रहकर अपने पारिवारिक दायित्वो का पूर्णरूपेण निर्वाह करते रहे। आपके द्वारा लिखित नाटको मे 'न्याय', 'और फूल मुरझा गए', 'तलवार का धनी' और 'वह सुबह कभी तो आएगी' आदि प्रमुख है। यह श्री भार्गव के क्रियाशील व्यक्तित्व का ही सुपरिणाम था कि हिमाचल प्रदेश-जैसे असाहित्यिक क्षेत्र मे 'साहित्य दर्शन'-जैसी लघु पत्रिका का प्रारम्भ हुआ, जो आज भी अपने मार्ग पर सतत गतिशील है। आप जहाँ 'सिरमौर बन्धु समाज' नामक सस्था के प्रेरणा-स्रोत थे वहाँ 'अखिल भारतीय युवा कल्याण सघ' के भी सयुक्त सचिव रहे थे।

आपका निधन 15 जनवरी सन् 1976 को हुआ था।

श्री कोमाण्डूरि गोविन्दराजाचार्य

श्री कोमाण्डूरि का जन्म आन्ध्र प्रदेश के पश्चिम गोदावरी जनपद के विजय राय (वाया एलूरू) नामक स्थान में सन् 1882 में हुआ था। आप हिन्दी तथा संस्कृत साहित्य के पारगत विद्वान् साहित्य शिरोमणि तथा वेदान्त शास्त्राचार्य थे। महात्मा गांधी ने जब सारे भारत को एकता के सूत्र मे ग्रथित करने की दृष्टि से सन् 1918 मे मद्रास मे 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' की स्थापना करके हिन्दी-प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया था तब आपने उनके साथ मिलकर 'प्राथमिक' से लेकर 'प्रवीण' तक की हिन्दी-कक्षाओं का आयोजन करके उनमे नि शुल्क अध्यापन किया था।



आपने दक्षिण मे हिन्दी-प्रचार के कार्य को अग्रसर करने की दृष्टि से तुनि, राजमहेन्द्री, काकिनाडा, सम्मर्लकोट, पेड्डापुरम्, पिप्परा, गोपवरम् और विजयवाडा आदि अनेक केन्द्रों की स्थापना की थी। आपका कार्य-क्षेत्र मुख्यत आन्ध्र प्रदेश ही रहा था। उस प्रदेश के गाँव-गाँव मे आपका नाम बडे आदर से लिया जाता है।

आपका निधन 30 सितम्बर सन् 1962 को हुआ था।

श्री कोमाण्डूरि शठकोपाचार्य

श्री शठकोपाचार्य का जन्म आन्ध्र प्रदेश के पश्चिम गोदावरी जनपद के विजयराय नामक स्थान मे सन् 1892 मे हुआ था। एम० ए० बी० एल० तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप महात्मा गाधी जी के आह्वान पर हिन्दी-प्रचार के कार्य मे सलग्न हो गए और सन् 1920 से जीवन-पर्यन्त

निरन्तर हिन्दी-संस्थाओं के कार्य मे अपना अनन्य सहयोग देते रहे थे। आप 'आन्ध्र राष्ट्र हिन्दी प्रचार सघ' विजयवाड़ा की कार्यकारिणी के सदस्य होने के साथ-साथ काकिनाडा नगर मे निर्मित 'हरिजन-छात्रावास' के सचालक-सस्थापक भी थे।



आप अच्छे हिन्दी-प्रचारक होने के अतिरिक्त तेलुगु तथा हिन्दी भाषा के अच्छे लेखक भी थे। आपने तेलुगु भाषा मे महात्मा गाधी, जवाहरलाल नेहरू तथा मौलाना अबुल कलाम आजाद की जीवनियाँ लिखने के साथ-साथ हिन्दी मे 'प्रथम हिन्दी-तेलुगु कोश' की रचना भी की थी।

आपका निधन 6 अप्रैल सन् 1969 को हुआ था।

आचार्य क्षितिमोहन सेन

आचार्य सेन का जन्म 30 नवम्बर सन् 1880 को उत्तर प्रदेश के वाराणसी नगर मे हुआ था। आपके पूर्वज सोनारग (ढाका) के मूल निवासी थे। क्वीन्स कालेज, बनारस से शास्त्री और एम० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करके आप सन् 1908 मे 28 वर्ष की आयु मे कवीन्द्र रवीन्द्र के शिक्षा-सस्थान 'विश्व भारती' के अन्तर्गत 'विद्या भवन' के अध्यक्ष बने थे। इस पद पर प्रतिष्ठित होने से पूर्व कुछ दिन तक आपने वर्तमान हिमाचल प्रदेश की चम्बा रियासत के शिक्षा विभाग मे भी कार्य किया था। आपकी कार्य-कुशलता से मुग्ध होकर गुरुदेव ने आपके ही सबल कन्धो पर शान्ति-निकेतन के सचालन का भार सौप दिया था। जब इसे विश्व-विद्यालय बनाया गया तो आप ही इसके प्रथम उपकुलपति नियुक्त हुए थे।

आप मध्यकालीन सन्त साहित्य के मर्मज्ञ समीक्षको मे अपना सर्वथा विशिष्ट और अग्रणी स्थान रखते थे। आपने आर्य और व्रात्य, ब्राह्मण और बौद्ध-जैन, आगम-निगम सभी ग्रन्थो से पूर्णत लाभ उठाकर अपने ज्ञान को पूर्ण परिपक्व किया था। आपका केवल पुस्तकीय ज्ञान ही नही था, प्रत्युत भारत-भर मे घूमकर आप सभी प्रकार के सन्तो और साधको से मिले थे। अपने अध्ययन-काल मे आप जहाँ



महामहोपाध्याय प० सुधाकर द्विवदी और महामहोपाध्याय प० गगाधर शास्त्री से प्रचुर मात्रा मे प्रभावित हुए थे वहाँ शान्तिनिकेतन मे जाकर आपने गुरुदेव के सम्पर्क से भी अपने ज्ञान मे अभिवृद्धि की थी। आपका परिवार परम्परा से सस्कृत तथा आयुर्वेद के क्षेत्र म अत्यन्त प्रसिद्ध था, अत वे ही सस्कार आपके ज्ञान की पूर्व पीठिका बने थे।

आप जहा कुशल शिक्षक, सन्त साहित्य के मर्मज्ञ और गूढ साधना के अभ्यासी थे वहा लेखक के रूप मे आपकी देन कम महत्त्वपूर्ण नही है। दादू और कबीर के विषय मे लिखी गई अपनी बगला पुस्तको का तो विशेष महत्त्व है ही, आपने गुरुदेव को भी हिन्दी के अध्ययन की प्रेरणा प्रदान की थी। इस सम्बन्ध मे गुरुदेव रवीन्द्र ने यह स्वीकार किया है—"मैं अपने अपरिचित हिन्दी साहित्य के क्षेत्र मे विशुद्ध रस-रूप की खोज मे था। ऐसे समय मे एक दिन क्षितिमोहन सेन महाशय के मुख से बघेलखण्ड के कवि ज्ञानदास के दो-एक हिन्दी पद मुझे सुनने को मिले। मै कह उठा—'यही तो मुझे चाहिए था।' विशुद्ध वस्तु, एकदम चरम वस्तु, इसके ऊपर और ज्ञान नही चल सकता।" और आपने कबीर की गुरु-गम्भीर काव्य-गरिमा से गुरुदेव को परिचित कराया। गुरुदेव की 'कबीर की 100 कविताएँ' नामक कृति आचार्य

क्षितिमोहन सेन के 'कबीर' नामक ग्रन्थ के स्वाध्याय का ही परिणाम है।

आप बगला भाषा के तो उत्कृष्ट लेखक थे ही, हिन्दी में भी आपने अपनी प्रतिभा का पूर्ण परिचय अपनी 'भारतवर्ष में जाति भेद' तथा 'सस्कृति सगम' नामक कृतियों के द्वारा दिया है। अपनी साहित्य-सेवाओ के लिए जहाँ आपको विश्वभारती शान्ति निकेतन की ओर से सन् 1952 म 'देशिकोत्तम' की सम्मानोपाधि प्रदान की गई थी वहाँ हिन्दी-सेवा के लिए भी आपको सम्मानित किया गया था। आपने 'बम्बई हिन्दी विद्यापीठ' म जो दीक्षान्त भाषण दिया था वह पुस्तकाकार भी प्रकाशित हुआ था। भारतीय साहित्य और सस्कृति की आत्मा को जाँचने तथा परखने मे आपकी प्रतिभा सर्वथा अद्वितीय थी।

अन्तिम दिनो मे आप विश्व भारती से सेवा-निवृत्ति पाकर वहाँ के 'कुल स्थविर' के रूप मे प्रतिष्ठित थे। आपका निधन 12 मार्च सन् 1960 को बर्दवान मे हुआ था।

श्री क्षितीन्द्रमोहन मित्र 'मुस्तफी'

श्री मित्र का जन्म पूर्वी बगाल के नदिया जनपद के 'बीरनगर' नामक कस्बे के एक प्रसिद्ध जमीदार परिवार मे 29 नवम्बर सन् 1908 को हुआ था। आप जब केवल 5 वर्ष के ही थे कि आपके माता-पिता का असामयिक देहावसान हो गया। इसके उपरान्त आपकी बुआ ने, जो तेनपा (रगपुर) की रानी साहिबा थी, आपका पालन-पोषण किया। जब आपको उन्होंने गोद लेना चाहा तब उनके परिवार मे झगडा उठ खडा हुआ। परिणामत वे मित्र जी को लेकर उत्तर प्रदेश के विभिन्न पहाडी तथा मैदानी नगरो मे घूमती रही। कभी वे कही रहती, और कभी कही। एक जगह न रह पाने के कारण मित्र जी को विधिवत् कोई स्कूली शिक्षा भी प्राप्त न हो सकी। अपनी बूढी तथा दुखी बुआ के अलावा आपको किसी दूसरे से मेल-जोल बढ़ा पाने का कोई उपयुक्त अवसर भी नही मिल सका। इसका प्रभाव आपके मानस पर यह हुआ कि आप एकान्तप्रिय तथा मननशील हो गए।

सन् 1926 मे नवयुवक क्षितीन्द्रमोहन अपनी बुआ के साथ प्रयाग आए और यहाँ रहने लगे। प्रयाग का वातावरण मित्र जी को अपनी रुचि के अनुकूल प्रतीत हुआ। इसी बीच आपका सम्पर्क प्रख्यात हिन्दी-लेखक सी० बी० राव (चिन्तामणि बालकृष्ण राव) तथा डॉ० आर्येन्द्र शर्मा से हो गया। उन दिनो ये दोनो महानुभाव भी साहित्य मे घुसपैठ कर रहे थे। इस भेट ने श्री मित्र के मानस मे सोए हुए साहित्यिक सस्कारो को जगा दिया और वे



सब आपस मे एक-दूसरे की सहायता करने लगे। जिन दिनों की यह घटना है तब भारत मे 'स्वाधीनता-सग्राम' जोरो पर था और देश-भर मे राष्ट्रीयता की लहर फैली हुई थी। क्षितीन्द्र जी का सम्बन्ध बगाल के 'नेशनलिस्ट मूवमेण्ट' (राष्ट्रीय आन्दोलन) से हो गया। उन दिनो आपके सम्पर्क मे बगाल के जो युवक आए थे उनमे से अरुणचन्द गुहा अनेक वर्ष तक लोकसभा के सदस्य तथा केन्द्रीय मन्त्रिमडल मे वरिष्ठ मन्त्री रह चुके हैं और दूसरे भूपेन्द्रदत्त पूर्वी पाकिस्तान (आजकल बगला देश) की नेशनल असेम्बली के सदस्य रहे थे।

श्री क्षितीन्द्रमोहन मित्र को हिन्दी के पाठक 'माया' तथा 'मनोहर कहानियाँ' के सम्पादक और 'माया प्रेस' के सचालक के रूप मे ही प्राय जानते है। जब आप केवल 19 वर्ष के ही थे तब आपके मन मे हिन्दी मे एक पत्रिका निकालने की धुन सवार हुई। मित्रों ने राय दी कि जिस व्यक्ति को इस क्षेत्र का कोई अनुभव न हो और जिसकी मातृभाषा हिन्दी न हो उसका इस क्षेत्र मे उतरना सरासर पागलपन है। जब आपने राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन से इस विषय मे उनकी राय माँगी तो उन्होंने भी निराशाजनक उत्तर दिया। अपनी इस योजना को लेकर आप कालाकाँकर के कुँवर सुरेशसिह के पास भी गए थे। आप चाहते

थे कि कुँवर साहब आपको 'माया' के प्रकाशन मे आर्थिक सहयोग प्रदान करें। क्योंकि वे स्वयं सुप्रसिद्ध कवि श्री सुमित्रा नन्दन पन्त के साथ मिलकर साहित्यिक पत्र 'रूपाभ' और युवकोपयोगी 'कुमार' प्रकाशित करने की योजना बना चुके थे, इसलिए आप उनके सहयोगी कैसे बन सकते थे?

मित्र जी के मन में क्योकि 'माया' के प्रकाशन का सकल्प जन्म ले चुका था, इसलिए आप इस दिशा मे अहर्निश प्रयत्नशील रहे और सन् 1929 में हिन्दी की पहली कहानी पत्रिका 'माया' का प्रकाशन हो गया। उन दिनो क्योकि सारे देश में राष्ट्रीयता की जोरदार लहर व्याप्त थी, इसलिए 'माया' में राष्ट्रीय कहानियाँ प्रकाशित करने का ही निश्चय किया गया। इसके पहले सम्पादक विजय वर्मा थे और बाद में श्री बालकृष्ण बलदुआ भी कानपुर से प्रयाग जाकर आपके सहयोगी बन गए थे। इसी बीच सन् 1930 मे मित्र जी का विवाह हो गया और उसके एक मास बाद ही आपकी बुआ इस संसार को छोडकर अचानक चली गईं। बुआ को जमीदारी से जो रकम गुजारे के लिए मिला करती थी उसीमे मित्र जी के परिवार का भरण-पोषण भी होता था। यहाँ तक हुआ कि बुआ को मिलने वाली रकम तो बन्द हो ही गई, उनके नाम बैंक मे जमा रुपया तथा व्यक्तिगत जायदाद भी जाती रही।

'माया' के प्रकाशन से कोई विशेष आय तो होती नही थी, उल्टे मित्र जी सकट मे फँस गए। इतनी परेशानी मे भी आप हार मानने वाले नही थे। आपने जमकर मेहनत की। 'माया' के लिए मैटर जुटाने से लेकर सम्पादन, प्रूफ रीडिंग, डिस्पैच और बिक्री के लिए एजेंटो से पत्र-व्यवहार भी आपको स्वयं ही करना पडता था। धीरे-धीरे आपको अपने घनघोर परिश्रम का फल भी मिलना प्रारम्भ हुआ और 'माया' अपने पैरों पर खड़ी होती गई। 'माया' की सफलता के उपरान्त आपने सन् 1940 मे 'मनोहर कहानियाँ' नामक एक दूसरी कहानी पत्रिका का सूत्रपात भी कर दिया। आपकी व्यावसायिक कुशलता का सबसे बडा प्रमाण यही है कि उन दिनों देश के कोने-कोने मे ये पत्रिकाएँ बडे ही चाव से पढी जाती थी। जब 'माया' और 'मनोहर कहानियाँ' अपनी सफलता के शिखर को चूम रही थी तब आपने सन् 1948 मे 'मनमोहन' नाम से एक बालोपयोगी मासिक का प्रकाशन भी प्रारम्भ किया था। सन् 1952 मे 'मनोरमा' नामक एक पारिवारिक महिलोपयोगी मासिक पत्रिका भी आपने प्रारम्भ की थी। आज इन पत्रिकाओ की लोकप्रियता इस सीमा तक बढ़ गई है कि देश-विदेश मे इनके लाखो पाठक है।

मित्र जी ने 'माया', 'मनोहर कहानियाँ', 'मनमोहन' तथा 'मनोरमा' के प्रकाशन के द्वारा जहाँ हिन्दी-पत्रकारिता मे नये आयाम उद्घाटित किए वहाँ हिन्दी-पुस्तकों के प्रकाशन से भी साहित्य की अभूतपूर्व समृद्धि की। आपने 'माया सीरिज' के माध्यम से हिन्दी मे कहानी तथा उपन्यासों की असख्य पुस्तकें छापकर सस्ते मूल्य मे हिन्दी पाठकों को उपलब्ध कराईं। उन दिनो 150-200 पृष्ठो की पुस्तक 'माया सीरिज' के अन्तर्गत 6 से 8 आने तक मे सुलभ हो जाती थी। आप जहाँ एक कुशल सम्पादक, विलक्षण और व्यवसायी प्रकाशक थे वहाँ साहित्य मे आपकी अभूतपूर्व पैठ थी। अपने स्वाध्याय के बल पर आपने देशी और विदेशी कथा-साहित्य का ऐसा गहन ज्ञान अर्जित कर लिया था कि आप रचनाओं की उत्कृष्टता की परख अत्यन्त सहज भाव से कर लेते थे।

'मित्र' जी ने जहाँ अपनी इन पत्रिकाओ और 'मित्र प्रकाशन' के माध्यम से हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि मे अपना अभूतपूर्व योगदान दिया वहाँ आपने हिन्दी को कई अच्छे कहानीकार भी प्रदान किए। 'माया' के द्वारा जिन कहानीकारों को प्रश्रय और प्रोत्साहन मिला उनमे सर्व श्री द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण', देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त' तथा रागेय राघव आदि प्रमुख है। हिन्दी के जिन अनेक ख्यातनामा लेखको और पत्रकारो ने भी 'माया' कार्यालय मे कार्य किया था उनमे से आज अधिकाश साहित्य के क्षेत्र मे अपना विशिष्ट स्थान बना चुके है। एक लेखक के रूप मे भी आपकी प्रतिभा अभूतपूर्व थी। मानव-मनोविज्ञान के गहन पण्डित होने के साथ-साथ आप राजनीति और ललित कलाओ के अध्ययन मे भी गहरी रुचि रखते थे। ससार के कथा-साहित्य का कोई भी अग आपके अध्ययन से छूटा हुआ नही था। आपने स्वय जहाँ लगभग 100 मौलिक कहानियाँ हिन्दी मे लिखी वहाँ लगभग 500 कहानियों के सुन्दर अनुवाद भी अपनी पत्रिकाओ के द्वारा हिन्दी पाठको के समक्ष प्रस्तुत किये थे। यह मित्र जी के तप, त्याग, निष्ठा और परिश्रमशीलता का ही सुपरिणाम है कि आपके बाद भी आपके सुयोग्य उत्तराधिकारियो ने उसे इस प्रकार सँभाल लिया है कि वह सस्थान आज हिन्दी-प्रकाशन मे प्रगति कर रहा है।

आपका निधन 11 फरवरी सन् 1957 को केवल 49 वर्ष की आयु में ही हो गया था।

पण्डित क्षेत्रपाल शर्मा

श्री शर्मा जी का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा जनपद के गोछ नामक ग्राम में सन् 1870 में हुआ था। आपके पिता पण्डित चतुर्भुज शर्मा सस्कृत के विद्वान् थे अत उन्होने शर्मा जी को भी सस्कृत भाषा ही पढाई थी। शैशवावस्था मे ही अपनी माता के असामयिक निधन के कारण आपका अध्ययन रुक गया और आपके पिता ने शर्मा जी का विवाह कर डालने का निश्चय कर दिया। शर्मा जी को यह अच्छा न लगा। आपका विचार तब तक विवाह करने का नही था जब तक कि स्वय कमाने न लगे। यही सोचकर आप अपने गाँव से मथुरा भाग आए और वहाँ पर स्वामी दयानन्द सरस्वती के महाध्यायी पण्डित उदयप्रकाश जी से विद्याध्ययन करने लगे। क्योंकि क्षेत्रपाल जी आर्यसमाजी विचार-धारा से प्रभावित थे अत उदयप्रकाश जी आपसे चिढ गए और उन्होंने शर्माजी को पढाना बन्द कर दिया। फलस्वरूप शर्मा जी प्रयाग चले गए और वहाँ पर आप स्वामी दयानन्द जी के अनन्य शिष्य पण्डित भीमसेन शर्मा (इटावा वाले) से विद्याध्ययन करने लगे। उन दिनो शर्मा जी अपने गुरुजनो की जैसी सेवा किया करते थे वैसी आज के वातावरण मे कठिनाई से ही कोई करता है। धीरे-धीरे आपने सस्कृत वाङ्मय का अच्छा ज्ञान अर्जित कर लिया था।

सन् 1889 मे आप प्रयाग से कलकत्ता चले गए और वहाँ पर एक प्रेस मे केवल 10 रुपये मासिक पर 'प्रूफ रीडर' हो गए। उस प्रेस से उन दिनो सम्पादकाचार्य पण्डित रुद्रदत्त शर्मा के सम्पादन मे 'आर्यावर्त' नामक एक पत्र भी प्रकाशित होता था। प्रेस के मालिको से शर्मा जी की योग्यता छिपी न रह सकी और उन्होने आपको 30 रुपये मासिक पर उक्त पत्र का सहकारी सम्पादक बना दिया। यहाँ से ही शर्मा जी का साहित्यिक जीवन प्रारम्भ हुआ और आपने पत्र के सपादन मे अत्यन्त योग्यता तथा प्रतिभा का परिचय दिया। पत्र मे छपने वाले विज्ञापनो के संबध मे भी आप ही विज्ञापनदाताओ से पत्र-व्यवहार किया करते थे। फलस्वरूप आपके मन मे भी व्यापार करने के बीज अकुरित होने प्रारम्भ हो गए थे। उन्ही दिनो कलकत्ता के प्रख्यात चिकित्सक कविराज श्री अविनाशचन्द्र ने 'चिकित्सा सम्मिलनी' नामक एक पत्रिका का प्रकाशन प्रारभ किया था। जब शर्मा जी ने इस पत्रिका को देखा तो आपने कविराज अविनाशचन्द्र जी के औषधालय मे जाना प्रारम्भ कर दिया। आप वहाँ जाकर उनके चिकित्सा-कार्य के साथ-साथ औषध-निर्माण की विधियो का बडी तत्परतापूर्वक अध्ययन करने लगे। इस बीच पण्डित रुद्रदत्त शर्मा 'आर्यावर्त' का सम्पादन छोडकर 'भारत मित्र' के सम्पादक हो गए और 'आर्यावर्त' के सम्पादन का सम्पूर्ण दायित्व शर्मा जी के कन्धो पर आ पडा। आपने बडी योग्यता तथा कुशलता से इस कार्य को निभाया। पत्र के सचालको ने आपका वेतन भी 30 रुपये से बढाकर 60 रुपये मासिक कर दिया। इस प्रकार चिकित्सा-कार्य और औषध-निर्माण का अनुभव प्राप्त करने के साथ-साथ सम्पादन मे भी आपने अपनी अभूतपूर्व क्षमता का परिचय दिया।



जब 'भारत मित्र' मे सम्पादकाचार्य पण्डित रुद्रदत्त शर्मा पूरी तरह जम गए तब उन्होंने पण्डित क्षेत्रपाल शर्मा को भी वहाँ बुला लिया। 'भारत मित्र' मे जाकर शर्मा जी की पत्रकार-कला और भी सुपुष्ट तथा विकसित हुई। इसी बीच आपकी भेट मथुरा के रामलाल वर्मन नामक एक व्यक्ति से हुई, जिसने आपसे यह कहा—"तुम यहाँ आगरा से इतनी दूर क्यो पडे हो, चलो, मथुरा मे जाकर कोई व्यापार करेगे। वहाँ पर दियासलाई तथा साबुन बनाने के मेरे दो कारखाने है और मैं वहाँ से 'ब्रजवासी' नामक एक पत्र भी निकालता हूँ। आप उस पत्र का सम्पादन करने के साथ-

साथ मेरी कम्पनी के हिस्सेदार भी बन जाना।" परिणाम-स्वरूप शर्मा जी उनके साथ कलकत्ता से मथुरा चले आए और आपको उस समय होश आया जब आपकी कलकत्ता में हुई गाढी कमाई श्री वर्मन ने झटक ली और आपको कुछ भी नही दिया। जब शर्मा जी के सामने कोई विकल्प दिखाई नही दिया तो आपने उससे अपना संबध-विच्छेद कर लिया। जिन दिनो आप कलकत्ता मे थे तब आपने वहाँ पर 'काम-लता' नामक एक पुस्तक सन् 1890 मे लिखी थी, जो उन दिनो बडी लोकप्रिय हुई थी। फलस्वरूप आपने एक छोटा-सा कोठा ढाई रुपये मासिक किराये पर लेकर अपना स्वतत्र व्यापार करने का निश्चय किया और 'ससार सुख' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की तथा साबुन बनाकर बेचना प्रारभ कर दिया। अपने साबुन बनाने के अनुभवो को आपने अपनी 'साबुन शिक्षा' नामक पुस्तक मे प्रस्तुत किया है। धीरे-धीरे आपका साबुन का धन्धा भी बढने लगा और आपने अपनी लेखनी को भी विश्राम न देकर ज्योन्का-त्यो क्रियाशील रखा। आपकी उन दिनो लिखी गई पुस्तको मे 'फोटोग्राफी की शिक्षा', 'हजार व्यापार', 'बिक्री बढाने का उपाय', 'व्यापार भाण्डागार', 'व्यापार शिक्षा', 'चिकित्सा सिन्धु' और 'शक्ति सचय' आदि अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इन पुस्तकों से आपको जो लोकप्रियता प्राप्त हुई उसने भी आपके व्यापार को बढाने मे प्रचुर सहयोग दिया था। आपने अपने साबुन-सबधी व्यवसाय को आगे बढाने की दृष्टि से समाचार-पत्रो मे उसका खूब विज्ञापन किया था।

अन्त मे एक दिन ऐसा भी आया जब आपने केवल 150 रुपये के मूलधन से सन् 1890 मे 'सुख सचारक कम्पनी' की स्थापना करके उसके द्वारा आयुर्वेद की अनेक ऐसी औषधियाँ निर्मित की, जो थोड़े ही प्रयास से सारे देश मे बहुत लोक-प्रिय हुई थी। आपकी ऐसी औषधियो मे अकेली 'सुधा-सिन्धु' का ही नाम ऐसा है, जिसे आज भी सारे देश के चिकित्सा-जगत् मे गौरव के साथ याद किया जाता है। शर्मा जी ने अपने अथक प्रयास तथा सतत परिश्रम से 'सुख सचारक कम्पनी' को इतनी लोकप्रियता प्रदान कर दी थी कि उसका स्थान देश के गिने-चुने औद्योगिक सस्थानों मे अग्रणी हो गया था। उन दिनों देश की ऐसी कोई भी पत्र-पत्रिका नही थी जिसमे 'सुख सचारक कम्पनी' की औषधियो के विज्ञापन न छपते हो। उन दिनो कम्पनी का इन विज्ञापनो पर ही लगभग एक लाख रुपया प्रतिवर्ष व्यय होता था। सन् 1 मे कम्पनी का कार्य इतने उत्कर्ष पर था कि इसमे ल 200 कर्मचारी कार्य करते थे और लगभग 52 हजार केवल पोस्टेज पर ही व्यय होता था। कम्पनी का भवन तथा 'पोस्ट आफिस' भी था। उन दिनो शम सरकार को लगभग 8 हजार रुपये वार्षिक इन्कमटैक्स करते थे। आप जहाँ एक कुशल-व्यवसायी थे वहाँ स सेवा के क्षेत्र मे भी आपका स्थान सर्वोपरि था।

आपका निधन 24 जनवरी सन् 1942 को हुआ

श्री क्षेमानन्द राहत

श्री राहत जी का जन्म उत्तर प्रदेश के पीलीभीत जन मकतुल नामक ग्राम के एक भटनागर कायस्थ परिव 21 मार्च सन् 1894 को हुआ था। पीलीभीत से हाई की परीक्षा उत्तीर्ण करके आपने इलाहाबाद की क पाठशाला मे इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। उन्ही महात्मा गाधी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित ह आपने पढाई छोड दी और उनके आवाहन पर दक्षि हिन्दी का प्रचार करने के उद्देश्य से मद्रास चले गए। उ साथ पहले-पहल दक्षिण मे हिन्दी-प्रचार करने के उद्देश जो महानुभाव गए थे उनमे महात्मा गाधी के कनिष्ठ श्री देवदास गाधी के अतिरिक्त स्वामी सत्यदेव परिव्रा पण्डित हृषीकेश शर्मा और उदयपुर के भवानीशकर वै नाम विशेष उल्लेखनीय है। मद्रास जाकर हिन्दी-प्रचा कार्य करने के साथ-साथ आपने अपनी आगे की पढाई रखने के उद्देश्य से वहाँ के एक कालेज मे अपना नाम लिया और बी० ए० की तैयारी करने लगे। परन्तु गाधी जी ने रौलट एक्ट के विरुद्ध आन्दोलन शुरू किया अमृतसर मे जलियाँ वाला का नृशस हत्याकाण्ड हुअ राहत जी पढाई छोडकर आन्दोलन मे कूद पडे।

मद्रास मे रहते हुए राहत जी ने वहाँ एक बहुत औषधि-विक्रेता श्री नृसिहदास अग्रवाल के सहयोग से 1922 मे 'भारत तिलक' नामक एक राष्ट्रीय साप्त पत्र भी हिन्दी मे प्रकाशित किया था। उन दिनों अ

हिन्दी-प्रचार-कार्य के अनन्य सहयोगी श्री भवानीशंकर वैद्य भी इस कार्य मे हाथ बँटा रहे थे। पत्र मे राजद्रोहात्मक लेख छापने के कारण राहत जी पर मुकद्दमा चला और आपको 2 वर्ष के लिए वेलौर जेल में भेज दिया गया। मद्रास मे रहते हुए आपने हिन्दी-प्रचार-कार्य और अपने अध्ययन को आगे बढाते हुए वहाँ की तमिल भाषा का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। डेढ वर्ष का यह कारावास आपके तमिल भाषा के ज्ञान को समृद्ध करने की दिशा म और भी सहायक हुआ और आपने वहाँ रहते हुए ही तमिल भाषा के प्रख्यात कवि ऋषि तिरुवल्लुवर द्वारा रचित 'तिरुक्कुरल' ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद किया, जो जो बाद म सन् 1927 म 'सस्ता साहित्य मण्डल अजमेर' की ओर से 'तमिल वेद' नाम से प्रकाशित हुआ था। जेल मे रहते हुए ही राहत जी ने टालस्टाय के तीन नाटकों का भी हिन्दी अनुवाद सम्पन्न किया था। ये नाटक सन् 1927 और 1929 के बीच मण्डल से ही क्रमश: 'कलवार की करतूत', 'अन्धेरे मे उजाला' तथा 'जिन्दा लाश' के नाम से प्रकाशित हुए थे। अपने कारावास की इसी अवधि मे आपने टालस्टाय के एक और अत्यन्त प्रसिद्ध ग्रन्थ 'ह्वाट टू डू' का भी अनुवाद 'क्या करें' नाम से किया था और वह भी सस्ता साहित्य मण्डल ने ही प्रकाशित किया था।



जेल से वापिस लौटने के बाद आप सन् 1922 मे मद्रास के अपने व्यापारी मित्र श्री नृसिहदास अग्रवाल के साथ वर्धा गए और वहाँ पर उन्होंने राहत जी की भेट प्रख्यात देशभक्त और उद्योगपति सेठ जमनालाल बजाज से कराई। बजाज जी की प्रेरणा पर कुछ दिन तक आपने उनकी मारवाडी विद्यालय नामक सस्था मे अध्यापन का कार्य किया और वहाँ से श्री सत्यदेव विद्यालंकार के सम्पादन मे प्रकाशित होने वाले 'राजस्थान केसरी' नामक पत्र के सम्पादन मे भी कुछ समय देने लगे। यही नृसिहदास अग्रवाल बाद मे राजस्थान मे जाकर 'बाबा नृसिंहदास' नाम से विख्यात हुए थे। बाबा जी की प्रेरणा पर आप अजमेर चले आए और यहाँ आकर 'प्रताप जयन्ती' और 'राजस्थान साहित्य सम्मेलन'-जैसे उत्सवों का सूत्रपात भी आपने किया था। इस कार्य मे इनके मद्रास के साथी भवानीशकर वैद्य और शिवनारायण शर्मा का भी सहयोग रहा था। आपके इन सब कार्यों मे सर्वश्री जीतमल लूणिया, ओम्दत्त शास्त्री, मदनलाल खेतान, कपूरचन्द पाटनी और बैजनाथ महोदय-जैसे अनेक महानुभावों का अनन्य सहयोग रहा था।

सन् 1927 म जीतमल लूणिया ने अजमेर मे जब 'सस्ता साहित्य मण्डल' नामक सस्था की स्थापना करके उसकी ओर से राष्ट्रीय जीवन को प्रेरणा देने वाला सस्ता साहित्य प्रकाशित करने की योजना बनाई तब 'मण्डल' द्वारा 'त्यागभूमि' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन करने का निश्चय हुआ और उसके सम्पादन का भार श्री हरिभाऊ उपाध्याय के साथ-साथ राहत जी पर पडा और इन दोनों के सम्पादन मे पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हो गया। 'त्यागभूमि' का प्रमुख उद्देश्य समाज के नागरिको मे जीवन, जागृति, बल और बलिदान की भावना उत्पन्न करना था। उसमे प्रकाशित राहत जी की कविताएँ मानव-मन मे प्रेरणा, उत्साह, स्फूर्ति और बलिदान की जो भावनाएँ उत्पन्न करती थी उनसे राहत जी के कवि-मानस की उत्कटता का आभास होता है। उनकी 'प्रबोधन' शीर्षक एक कविता की दो पक्तियाँ इस प्रकार है

मृत्यु से भिडना हो भिडिए,
शोक से कटना हो कटिए।
जरूरी हो मिटना मिटिए,
मगर मत पीछे को हटिए।

आपकी कविता मे राष्ट्र के प्रति मर-मिटने का एक सदेश, एक आवाहन और एक प्रेरणा रहा करती थी। 'त्यागभूमि' के साहित्यिक महत्व का अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि उन दिनो इसके सम्पादकीय विभाग में ऐसे-ऐसे महानुभाव कार्य-रत थे जो कालान्तर मे साहित्य की विभिन्न विधाओं के सर्जक और प्रेरक बने। ऐसे महानु-

भावों मे सर्वश्री बैजनाथ महोदय, मुकुटबिहारी वर्मा, कृष्णचन्द्र विद्यालकार, काशीनाथ त्रिवेदी, हरिकृष्ण 'प्रेमी', रामनाथ 'सुमन' तथा जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द' आदि के नाम अगुलिगण्य है। श्री गोपीवल्लभ उपाध्याय,श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय और बाबा नृसिहदास-जैसे महानुभाव जीतमल लूणिया को 'सस्ता साहित्य मडल' और प्रेस के कार्य को आगे बढाने मे अपना अनन्य महयोग दे रहे थे। भरतपुर मे होने वाले सप्तदश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष पद के लिए महामहोपाध्याय डॉ० गौरीशकर हीराचद ओझा को व्यक्तिगत रूप से निमत्रित करने का काम पण्डित युधिष्ठिर-प्रसाद चतुर्वेदी को सौपा गया था। वे जब अजमेर जा रहे थे तब मार्ग मे अचानक गगापुर सिटी स्टेशन पर प्रात -काल दिल्ली जाते हुए श्री राहतजी से उनकी भेट हो गई। चतुर्वेदीजी क अनुरोध पर आप उल्टे अजमेर को चल दिए। जब ओझाजी अजमेर मे नही मिले, तो दोनो उदयपुर पहुँचे। वहाँ भी बडे अनुरोध-आग्रह के बाद ओझाजी ने इस शर्त पर अध्यक्ष बनना स्वीकार किया कि कोई उनके सकेतानुसार भाषण का प्रारूप तैयार कर दे। यह भार राहतजी ने अपने ऊपर ले लिया था।

सन् 1930 के सत्याग्रह आन्दोलन के समय आप जब लगभग दो वर्ष तक जेल मे रहे थे तब आपको सहसा भगवान् के दर्शनो का आभास हुआ था और वहाँ से छूटने पर इस ससार से विरक्त होकर हठयोग की साधना मे सलग्न हो गए थे। उन दिनो राहतजी के मानस की स्थिति बड़ी विचित्र थी। आप बडी शान्ति से आध्यात्मिक, धार्मिक और नैतिक धरातल की बाते किया करते थे और अपने को 'भगवान्' नाम से सम्बोधित करने लगे थे। उन्ही दिनो सन् 1940 के आस-पास आपने मसूरी मे अपना निवास बनाया और वहाँ रहकर लिखने-लिखाने का कार्य भी करते रहे। आपकी 'सूफी सत चरित', 'मुस्लिम सत चरित', 'जीवन-झाँकी', 'प्रताप विजय', 'प्रताप शतक', 'वीर शतक', 'भक्ति शतक', 'राम शतक', 'भरत शतक', 'ज्ञान शतक', 'मानव शतक', 'शाम शतक', 'गायत्री शतक' और 'टालस्टाय के सिद्धान्त' नामक पुस्तके इसी अवधि मे लिखी गई थी। आपने रमेश को मुख्य पात्र बनाकर अन्य पुरुष मे अपनी एक आत्म-कथा भी लिखी थी, जो अभी तक अप्रकाशित है।

स्वतत्रता के उपरान्त जब अजमेर मे काग्रेस की ओर से पहला लोकप्रिय मंत्रिमंडल बना और उसमें मुख्यमंत्री आपके 'त्यागभूमि' के समय के वरिष्ठ साथी श्री हरिभाऊ उपाध्याय को बनाया गया तब राहतजी कई दिन तक वहाँ जाकर उनके साथ मुख्यमंत्री निवास मे रहे थे। अजमेर शासन की ओर से जब 200 रुपये मासिक पेंशन की व्यवस्था आपके लिए की गई तो मनीआर्डर फार्म पर हस्ता-क्षर न करने की आपकी सनक के कारण तीन-चार मास बाद मनीआर्डर वापस लौट आया और अंत मे आपकी वह सहायता बद कर दी गई। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि आपकी अत्य-धिक आध्यात्मिक मनोवृत्ति इस सीमा तक पहुँच गई थी कि आप रुपये-पैसे को भी हाथ नही लगाते थे और प्रायः 'आसुरी वृत्ति का नाश हो' यह वाक्य दोहराया करते थे। यहाँ तक कि आप प्राय कुत्ते-बिल्लियो को हलुआ-पूड़ी खिलाने लगे थे। यद्यपि आप पैसे छूते नही थे, पर रुपये-पैसे का व्यवहार-हिसाब पूरा रखते थे। 'सस्ता साहित्य मण्डल' से मिलने वाली रायल्टी का आप पूरा-पूरा ध्यान रखते थे। आपने जीवन-भर अविवाहित रहकर समाज और साहित्य की जो सेवा की, वह अभूतपूर्व है।

आपका निधन 80 वर्ष की आयु मे 21 मार्च सन् 1974 को देहरादून के सरकारी अस्पताल मे हुआ था।

श्री खड्गजीत मिश्र

श्री मिश्र का जन्म उत्तर प्रदेश के मैनपुरी नगर मे खजाची खानदान के एक मथुरिया चौबे परिवार में सन् 1872 मे हुआ था। आपके पितामह श्री राधारमण खजाने का काम करते थे और बाद मे जमीदारी सँभालने लगे थे। आपके पूर्वजो ने गदर के दिनो मे मैनपुरी का खजाना बागियो से बचाया था, इसी कारण उन परिवार का नाम 'खजाची खानदान' पड गया था। आपकी शिक्षा पहले हिन्दी तथा सस्कृत मे हुई और बाद मे मैनपुरी के स्कूल से मिडिल की परीक्षा देकर आप सहारनपुर चले गए। सहारनपुर के हाई-स्कूल से आपने सन् 1890 मे मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की थी। इसके उपरान्त आपने आगरा कालेज से क्रमश सन् 1894 मे बी०ए० और सन् 1898 में एम०ए०

तथा एल-एल० बी० की परीक्षाएँ ससम्मान उत्तीर्ण की। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि एम० ए० मे आपने प्रथम श्रेणी प्राप्त की थी और सारे विश्वविद्यालय में



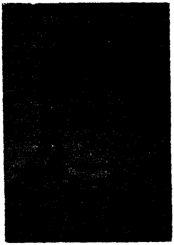
आपका द्वितीय स्थान रहा था। शिक्षा-प्राप्ति के अनन्तर आप डिप्टी कलक्टरी और इलाहाबाद हाई कोर्ट मे मुन्सिफ के पद के लिए चुने गए थे, किन्तु आपने वहाँ जाना स्वीकार न करके सन् 1897 मे स्वतत्र रूप से मैनपुरी मे ही वकालत प्रारम्भ की और फिर सन् 1898 मे वहाँ की नगरपालिका के सदस्य भी निर्वाचित हो गए। जिन दिनो आप नगरपालिका के सदस्य चुने गए थे तब आप उसके अध्यक्ष भी रहे थे। साथ ही आप आगरा कालेज के ट्रस्टी और उसकी कार्यकारिणी के सम्मानित सदस्य भी रहे थे। सन् 1900 में आपको सरकारी वकील नियुक्त किया गया, जिस पद पर आपने 12 वर्ष तक निरन्तर सफलतापूर्वक कार्य किया था। सन् 1921 मे आपको गवर्नर जनरल ने 'रायबहादुर' की मानद उपाधि भी प्रदान की थी। आपने सन् 1912 से सन् 1936 तक स्वतत्र वकालत भी अत्यन्त सफलतापूर्वक की थी।

अपने सार्वजनिक सेवा के कार्यों से समय निकालकर आप साहित्य-रचना म भी तत्पर रहा करते थे। आप साहित्य-शोध-सम्बन्धी लेख, कहानियाँ तथा कविताएँ आदि लिखने मे अत्यन्त प्रवीण थे। आपकी रचनाएँ तत्कालीन अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे छपा करती थी।

आपका निधन 5 नवम्बर सन् 1936 को हुआ था।

संत कवि खाकीजी

आपका जन्म बिहार प्रदेश के सीवान नामक स्थान मे सन् 1854 मे हुआ था। आपका वास्तविक नाम 'रामबिहारी लाल' था और आप

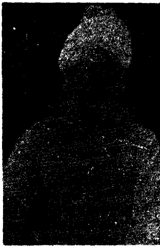


सीवान आर्यसमाज के सस्थापक होने के साथ-साथ शान्त प्रकृति के सिद्ध सत थे। आप जहाँ उत्कृष्ट कोटि के कवि थे वहाँ शास्त्रीय सगीत के भी निष्णात विद्वान् थे। आपके द्वारा रचित भक्तिपूर्ण भजनो का एक सकलन श्री प्रभुनारायण विद्यार्थी ने सम्पादित करके सन् 1981 मे 'खाकी जी के भजन' नाम से प्रकाशित किया है।

आपका निधन 17 अक्तूबर सन् 1921 को हुआ था।

श्री खुमाणसिंह चौहान

श्री खुमाणसिह जी का जन्म मध्यप्रदेश के मन्दसौर जनपद की सीतामऊ रियासत



के महुआ नामक ग्राम मे सन् 1850 मे हुआ था। आप ब्रजभाषा के अत्यन्त सशक्त कवियो मे गिने जाते थे। मालवा प्रदेश के स्थानीय वातावरण का प्रभाव भी आपकी रचनाओं मे प्रचुरता से हुआ था। आपकी पुस्तक 'कालिया शतक' का नाम उल्लेखनीय है। 'नीति-काव्य' के क्षेत्र मे इस कृति का विशेष महत्त्व है।

आपका निधन सन् 1934 में 84 वर्ष की आयु में हुआ था।

मुंशी खैरातीखाँ 'खान'

मुंशी खैरातीखाँ का जन्म मध्यप्रदेश के सागर अंचल के देवरी नामक स्थान के एक धुनिया परिवार में सन् 1878 में हुआ था। मिडिल तक की शिक्षा प्राप्त करने के अनन्तर ट्रेनिंग करके आप वहाँ की नगरपालिका के विद्यालय में सहायक अध्यापक हो गए थे। आपका ब्रजभाषा-काव्य पर असाधारण अधिकार था। यदि आप अधिक दिन तक जीवित रहते तो अपनी प्रतिभा का और भी अधिक परिचय देते। 'मीर मण्डल' के कवियों में आपका अत्यन्त उल्लेखनीय स्थान था।

आपकी रचना का एक उदाहरण इस प्रकार है

केतक मारिबे सिहन के फिरे,
सूर गरूर भरे अभिमानी।
त्यों करि कुम्भ विदारन को,
किते ठोकत ताल करें मरदानी।।
'खान' लखे बलवान किते,
बलवान पछारत है बल ठानो।
पैदल वे कुसुमायुध के—
अवलोकहु क्या बिरले जग प्राणी।।

आपका निधन 18 जनवरी सन् 1907 को हुआ था।

श्री ख्यालीराम भाटी 'रत्नाकर'

श्री 'रत्नाकर' का जन्म मध्यप्रदेश के मन्दसौर जनपद के रतनगढ़ नामक कस्बे में सन् 1886 में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा पहले एक छोटे-से 'मकतब' तथा बाद में 'शिवाजीराव हाई स्कूल' में हुई थी। आपके पिता श्री खेमचन्द भाटी उस क्षेत्र के अच्छे वैद्य और सामाजिक कार्य-कर्ता थे। अपने पिता के संस्कारों के अनुरूप आप भी एक कुशल कवि होने के साथ-साथ समाज-सुधार के कामों में बढ़-चढ़कर भाग लिया करते थे। आपकी कविताओं में सामाजिक कुरीतियों और रूढ़ियों पर बड़ा सशक्त व्यंग हुआ करता था।

जिन दिनों उपन्यास-सम्राट् मुंशी प्रेमचन्द अपने उपन्यासों तथा कहानियों के द्वारा समाज में प्रचलित बाल-विवाह का विरोध और पुनर्विवाह का प्रचार कर रहे थे उन दिनों मालवा के अंचल में प्रचलित अनेक कुरीतियों के विरुद्ध भाटी जी भी अपनी सशक्त लेखनी का पूर्ण सदुपयोग कर रहे थे। आपके द्वारा लिखित तथा 'जयाजी प्रताप' में प्रकाशित 'रूढ़ी मेटो या मोसर की इमे



भारत रूठ्यो जाय' मालवी भाषा की कविता ने सन् 1936 में उस प्रदेश में बड़ी क्रान्ति की थी। आपकी रचनाओं का प्रथम प्रकाशन सबसे पहले 'सुपथ दर्शक भजनमाला' नाम से सन् 1935 में हुआ था। आपकी दूसरी कृति गद्य में थी, जो 'आर्य कौन ?' नाम से प्रकाशित हुई थी। इसमें श्री रत्नाकर के द्वारा लिखित समाज-सुधार-सम्बन्धी विचारपूर्ण निबन्धों का संकलन था। आपकी कविताएँ प्रायः हिन्दी के अतिरिक्त मालवी और राजस्थानी में भी हुआ करती थीं।

शासकीय सेवा में होते हुए भी आपका सम्पर्क उन दिनों देश के जिन प्रमुख स्वतंत्रता सेनानियों से था उनमें श्री हरिभाऊ उपाध्याय, श्री विजयसिंह 'पथिक' और माणिक्य-लाल वर्मा के नाम विशिष्ट हैं। आपने लोक-साहित्य की एक प्रमुख विधा 'कलगी' तथा 'तुर्रा' की शैली में भी अनेक रच-नाएँ की थीं और आप प्रायः ऐसे समारोहों में सक्रिय रूप से सम्मिलित हुआ करते थे। आप अपने परिचितों में 'पिताजी' के नाम से प्रसिद्ध थे। आपने भैंसोदा मण्डी में एक गुरुकुल की स्थापना भी की थी।

आपका निधन सन् 1981 में मन्दसौर में हुआ था।

श्री गंगाधर मिश्र 'गंग'

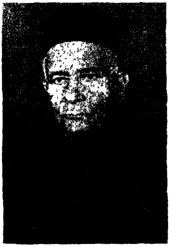
श्री गग का जन्म उत्तर प्रदेश के शाहजहाँपुर नामक जनपद के पुवायाँ नामक स्थान मे सन् 1916 मे हुआ था। आप सस्कृत, हिन्दी तथा उर्दू के मर्मज्ञ विद्वान् और हिन्दी के सुकवि थे। आपकी हिन्दी रचनाओ का सकलन 'कल्पवृक्ष' नाम से प्रकाशित हुआ था। कवि होने के साथ-साथ आप अच्छे गद्य-लेखक भी थे। आपकी अनेक कृतियाँ अभी अप्रकाशित ही पडी हैं।

आपका निधन सन् 1957 मे हुआ था।

श्री गंगाप्रसाद 'अजल'

श्री अजल का जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ नगर मे सन् 1881 मे हुआ था। आपकी शिक्षा अलीगढ मे ही हुई थी। आपको उर्दू और हिन्दी का अच्छा ज्ञान था। अँग्रेजी के विषय मे आपने स्वय लिखा है कि अंग्रेजी तो मुझसे सात समुन्दर दूर है। आपकी रचनाएँ तत्कालीन स्थानीय पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी।

आपके हिन्दी मुक्तक तीन भागो मे प्रकाशित हुए थे।



हिन्दी के साथ-साथ आप उर्दू के भी शायर थे। उर्दू मे लिखी गई 'कलामे अजल' नाम की शायरी की दो रचनाएँ आपने देवनागरी लिपि म भी प्रकाशित कराई थी। क्योकि आपके चार पुत्रो मे मे केवल एक पुत्र ही उर्दू जानता था, अत अन्य पुत्रो के आग्रह को सार्थक बनाने के लिए ही आपने यह कदम उठाया था।

आपका निधन 1 दिसम्बर सन् 1962 को अलीगढ मे हुआ था।

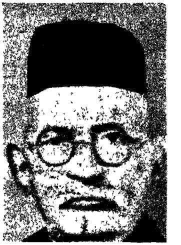
श्री गंगाप्रसाद चीफ जज

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर के एक सम्भ्रान्त वैश्य-परिवार मे सन् 1871 मे हुआ था। आगरा विश्व-विद्यालय से एम० ए० की परीक्षा सन् 1893 मे उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने 5 वर्ष तक मेरठ कालेज मे अध्यापन का कार्य किया और फिर उत्तर प्रदेश शासन मे 'डिप्टी कलक्टर' हो गए। सन् 1920 तक लगभग 22 वर्ष सरकारी सेवा करने के उपरान्त आपने त्याग-पत्र दे दिया और 13 अप्रैल सन् 1921 से 28 फरवरी सन् 1922 तक गुरुकुल वृन्दावन मे आचार्य तथा मुख्याधिष्ठाता रहे। सन् 1922 से सन् 1939 तक आप टिहरी रियासत (गढवाल) मे चीफ जज रहे थे।

आपके बाबा लाला फकीरचन्द मेरठ आर्यसमाज के प्रारम्भिक सदस्यो मे थे और आपने अपनी बाल्यावस्था मे ही आर्यसमाज के सस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के दो बार दर्शन किए थे। प्रथम बार तब, जबकि 'थियोसो-फिकल सोसाइटी' के सस्थापकद्वय—कर्नल आल्काट तथा मैडम ब्लैवेट्स्की स्वामी जी से मिलने मेरठ पधारे थे और दूसरी बार तब, जबकि सुप्रसिद्ध सस्कृत विदुषी पण्डिता रमाबाई ने उनसे वहाँ आकर भेट की थी। बाल्यावस्था के इन सस्कारो के कारण ही आपने सन् 1886 मे मेरठ मे 'आर्य डिबेटिंग क्लब' नामक एक सस्था की स्थापना की थी और जब आप आगरा कालेज मे पढा करते थे तब भी आपने वहाँ के अपने अन्य साथी विद्यार्थी ठाकुर हनुमन्तसिंह रघुवशी के सहयोग से 'आर्य मित्र सभा' की स्थापना की थी।

अपनी छात्रावस्था मे ही आप आर्यसमाज के सिद्धान्तो के मर्म को अत्यन्त गम्भीरता से जानने-समझने लगे थे और अपने निजी स्वाध्याय के बल पर आपने अनेक आर्ष-ग्रन्थो का गहन ज्ञान अर्जित कर लिया था। आपकी प्रखर वाग्मिता और विद्वत्ता का सबसे उत्कृष्ट प्रमाण यही है कि जब जोधपुर

के महाराणा प्रतापसिंह ने स्वामी दयानन्द जी के अनन्य शिष्य प० भीमसेन शर्मा (इटावा) को मासाहार करने या न करने के प्रश्न पर अपनी व्यवस्था देने के लिए जोधपुर आमन्त्रित किया। उन्होने जब आर्यसमाज के मास-भक्षण-विरोध के पक्ष मे अपनी कुछ कमजोरी प्रदर्शित की तब स्वामी अच्युतानन्द तथा स्वामी प्रकाशानन्द नामक दो सन्यासियो की प्रेरणा पर आर्य प्रतिनिधि सभा, पजाब की ओर से आर्य पथिक लेखराम और आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश की ओर से आपको ही जोधपुर भेजा गया था। आपकी उपस्थिति मे प० भीमसेन शर्मा को



मासाहार के पक्ष में व्यवस्था देने का साहस नही हुआ था। जिन दिनो आप मेरठ कालेज मे पढाते थे तब आप मेरठ आर्यसमाज के प्रधान भी रहे थे। टिहरी राज्य से अवकाश ग्रहण करने के उपरान्त आप सपत्नीक ज्वालापुर (हरिद्वार) के 'आर्य विरक्त आश्रम' मे स्थायी रूप से रहने लगे थे।

अपने छात्र-जीवन से ही आपने आर्य-सिद्धान्तो का जो गहन अध्ययन किया था उसीके कारण कालान्तर मे आपने आर्य सिद्धान्तो पर व्यापक प्रकाश डालने वाले अनेक ग्रन्थो का निर्माण भी किया था। आपकी पहली कृति 'ज्योतिष चन्द्रिका' का प्रकाशन उत्तर प्रदेश आर्य-प्रतिनिधि-सभा ने किया था और उसके अनेक सस्करण हुए थे। इस पुस्तिका की रचना आपने सन् 1889 मे केवल 18 वर्ष की आयु मे ही की थी। बाद मे आपकी 'ब्राह्मणोस्य मुखमासीद्'(1897) तथा 'आकृष्णेन रजसा' (1897) नामक लघु पुस्तिकाएँ भी उक्त सभा ने ही प्रकाशित की थी। आपकी दूसरी हिन्दी रचनाओ मे 'वैदिक धर्म का विकास', 'गरुड पुराण की आलोचना' और 'मेरी आत्म-कथा' के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। आपकी 'धर्म का आदि स्रोत' नामक ग्रन्थ का उसकी उपादेयता के कारण बहुत बड़ा महत्त्व है। इनके अतिरिक्त आपकी 'मैं और मेरा भगवान्', 'वैदिक धर्म का विकास' तथा 'मनुष्य विचार' नामक कृतियाँ भी उल्लेखनीय है। आप जहाँ हिन्दी के उत्कृष्ट लेखक थे वहाँ आपने अँग्रेजी मे भी ऐसे अनेक ग्रन्थ लिखे है जिनके कारण आपकी विशेष ख्याति थी। वास्तव मे आपके द्वारा अँग्रेजी मे लिखित ग्रन्थों के कारण आर्य-सिद्धान्तो का व्यापक प्रचार हुआ था। आपने जहाँ अँग्रेजी मे 'फाउण्टेन हैड ऑफ रिलीजन'-जैसा महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा था वहाँ आपके द्वारा केन तथा कठ उपनिषदो के अँग्रेजी मे किये गए अनुवाद भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

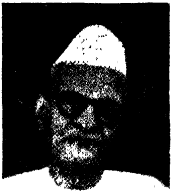
आप जहाँ सन् 1906 से 'परोपकारिणी सभा अजमेर' के सदस्य रहे थे वहाँ आपने अनेक वर्ष तक 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' के अध्यक्ष के रूप मे भी आर्य-जगत् का प्रशसनीय दिशा-निर्देशन किया था। आर्यसमाज के प्रति की गई आपकी उल्लेखनीय सेवाओ के कारण आपका उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से 'दयानन्द दीक्षा शताब्दी' के अवसर पर मथुरा मे जो अभिनन्दन किया गया था उस समय राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद के कर-कमलो द्वारा एक अभिनन्दन ग्रन्थ भी आपको भेंट किया गया था। अपने जीवन के अन्तिम दिनो म आप अपने सुपुत्र डा० प्रकाशस्वरूप के पास जयपुर (राजस्थान) मे रहने लगे थे।

आपका निधन 13 जनवरी सन् 1966 को हुआ था।

श्री गंगाप्रसाद भौतिका

श्री भौतिका का जन्म राजस्थान मे सन् 1889 मे हुआ था और 17 वर्ष की आयु मे ही आप कलकत्ता चले गए थे। कलकत्ता आप गए तो थे दलाली का धन्धा करने, किन्तु जब उसमे सफलता नही मिली तब आपने अपनी पढाई जारी रखने का निश्चय किया। आप अपने पिताजी के मित्र डा० नारायणदत्त के परामर्श पर 'विशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालय' के तत्कालीन अध्यापक श्री राधामोहन गोकुलजी के पास गए और उनसे अपनी पढाई जारी रखने का मन्तव्य

प्रकट किया। श्री गोकुलजी उन दिनों हरिसन रोड (अब महात्मा गाधी रोड) पर एक कमरे मे रहा करते थे और कलकत्ता के प्रख्यात व्यापारी श्री गजानन्द खेमका तथा श्री जुहारमल के बालकों को भी पढाने जाया करते थे। आप अपने साथ वहाँ पर भौतिका जी को भी ले जाया करते थे। इस प्रक्रिया से भौतिका जी का अध्ययन प्रगति करने लगा और गोकुलजी ने आपको 'विशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालय' में नवी कक्षा मे भी भर्ती करा दिया। भौतिका जी ने शीघ्र ही अपनी लगन से केवल दो वर्ष मे ही मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली और आपकी सफलता के कारण आगे पढने के लिए सरकारी छात्र-वृत्ति भी मिलने लगी। इस प्रकार आपकी सफलता का जो द्वार श्री राधा-मोहन गोकुलजी के सहयोग से उद्घाटित हुआ उससे आपको आगे अपनी पढाई जारी रखने के लिए बहुत प्रोत्साहन मिला और आपने क्रमश कलकत्ता विश्वविद्यालय से एफ०ए०, बी०ए०, एम०ए० तथा बी०एल० की परीक्षाएँ भी अत्यन्त सफलतापूर्वक उत्तीर्ण कर ली।



जिन दिनों श्री भौतिका जी ने बी० एल० की परीक्षा मे सफलता प्राप्त की थी तब श्री गोकुलजी ने आपसे कहा था "यदि तुम्हारी इच्छा हो तो मै तुमको युक्तप्रान्त (उत्तर प्रदेश) मे ले जाकर कही तुम्हारी वकालत प्रारम्भ करवा दूँ।" यद्यपि भौतिका जी ने बी० एल० की परीक्षा स्वय ही उत्तीर्ण की थी परन्तु वकीलो को जो सच्चे-झूठे गवाह तैयार करने पडते थे उससे आपको घनघोर घृणा थी। यह सब सोचकर ही आपने गोकुलजी से क्षमा माँग ली और कलकत्ता के एक प्रसिद्ध व्यापारी-सस्थान मे नौकरी कर ली। क्योंकि उनके गुरु श्री राधामोहन गोकुलजी साहित्यिक प्रवृत्ति के थे अत वे प्राय नगर मे होने वाली सभी साहित्यिक गोष्ठियो मे सम्मिलित हुआ करते थे। ऐसी ही गोष्ठियाँ कभी-कभी 'श्री हिन्दी साहित्य परिषद्' के नाम से बडा बाजार लाइब्रेरी मे हुआ करती थी। भौतिका जी के गुरु श्री राधामोहन जी भी उनमे सम्मिलित हुआ करते थे और 'राधे' उपनाम से अपनी कविताएँ भी वहाँ सुनाया करते थे। उनकी ऐसी रचनाएँ 'नीति छन्दावली' नाम से प्रकाशित हुई थी। उन दिनों 'मारवाडी समाज' मे कतिपय रूढिवादी और सुधारवादी युवको मे सघर्ष चल रहा था जो बाद मे धीरे-धीरे 'सनातन धर्म' और 'आर्यसमाज' के सघर्ष मे परिणत हो गया था। यह आपस का सघर्ष इतना विकट रूप धारण कर गया कि रूढिवादियो की ओर से 'श्री सनातन धर्म' तथा सुधारवादियों की ओर से 'सत्य सनातन धर्म' नामक पत्रो का प्रकाशन शुरू हो गया और उनमे एक-दूसरे की खुली आलोचनाएँ होने लगी। भौतिकाजी के मास्टर श्री राधामोहन गोकुलजी 'सत्य सनातन धर्म' नामक पत्र का सम्पादन किया करते थे। जब यह सघर्ष बहुत बढ गया तो उसे मिटाने तथा समाज मे एकता स्थापित करने की दृष्टि से प्रख्यात देश-भक्त सेठ जमनालाल बजाज ने सन् 1918 मे काफी प्रयत्न किया किन्तु रूढिवादी दल टस से मस न हुआ। फलस्वरूप आपने कुछ मारवाडी नव-युवको के सहयोग से 'मारवाडी अग्रवाल महासभा' की स्थापना करके सन् 1919 मे वर्धा मे उसका प्रथम अधिवेशन बुलाया। श्री भौतिका जी भी राधामोहन गोकुलजी के साथ वहाँ गए और उनकी प्रेरणा से आपने वहाँ अपना लिखित भाषण भी पढकर सुनाया।

जब भौतिका जी वर्धा से लौटकर आए तो देश मे स्वाधीनता आन्दोलन उग्र रूप धारण कर चुका था। राधा-मोहन गोकुलजी महात्मा गाधी जी की अहिंसात्मक नीतियो से सर्वथा असहमत थे और आप क्रान्तिकारी आन्दोलन की प्रवृत्तियो मे भाग लेने लगे थे। ऐसे अनेक बगाली क्रान्ति-कारी युवक जब राधामोहन जी के पास आया करते थे तब भौतिका जी भी उन्हे देखा करते थे, लेकिन आपकी रुचि इस आन्दोलन मे बिलकुल नही थी। उन्ही दिनो कलकत्ता मे हिन्दी के प्रमुख नाटककार और कवि श्री माधव शुक्ल ने श्री भोलानाथ वर्म्मन आदि अनेक युवको के सहयोग से 'हिन्दी नाट्य परिषद्' की स्थापना करके हिन्दी-रगमच को लोक-प्रिय बनाने का जो कार्य किया था उसमें राधामोहन गोकुलजी

का भी अनन्य सहयोग था। भौतिका जी भी कैसे पीछे रहते! आप भी अपने गुरु राधामोहन गोकुलजी के निर्देश पर इसमे बढ-चढ़कर कार्य करने लगे। अपने गुरु श्री राधामोहन गोकुलजी के परामर्श पर आप हिन्दी मे लेख आदि लिखने लगे थे; जो तत्कालीन विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करते थे। आपकी अपने शिक्षक और मार्ग-दर्शक राधामोहन गोकुलजी के व्यक्तित्व मे कितनी अगाध श्रद्धा थी इसका ज्वलन्त प्रमाण यह है कि गोकुलजी के निधन के उपरान्त सन् 1938 मे भौतिका जी ने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन को 1100 रु० भेजकर उनकी स्मृति मे 'श्री राधामोहन गोकुलजी पुरस्कार' प्रारम्भ कराया था। अभी तक यह पुरस्कार श्री सत्यदेव विद्यालकार, श्री रामनारायण यादवेन्दु, श्री व्यथित हृदय तथा श्रीमती राधादेवी गोयनका को उनकी 'परदा', 'भारत का दलित समाज', 'पहली भेट' तथा 'नारी समस्या' के लिए दिया जा चुका है।

आपका निधन सन् 1975 मे कलकत्ता मे हुआ था।

श्री गंगाप्रसाद शर्मा, विद्या विनोद

श्री शर्मा जी का जन्म उत्तर प्रदेश के पावन तीर्थ हरिद्वार मे सन् 1899 मे पुरोहितो के उच्चकुल मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा हरिद्वार मे ही हुई थी। किशोरावस्था से आपकी रुचि साहित्य के गहन अध्ययन की ओर उन्मुख हो गई थी। इस विशिष्ट साहित्यानुराग से प्रेरित होकर आपने बगला भाषा का भी ज्ञान अर्जित कर लिया था। हिन्दी और बगला के अतिरिक्त अँग्रेजी भाषा का भी आपको अच्छा ज्ञान था। आपके एक निबन्ध से प्रभावित होकर बगाल की एक साहित्यिक सस्था ने आपको 'विद्या विनोद' की उपाधि से सम्मानित किया था।

कनखल के श्री रामचन्द्र शर्मा आपके समकालीन साहित्यकारो मे थे। आपकी 'कैदी' कहानी 'मनोरजन' नामक पत्रिका मे प्रकाशित हुई थी जिसका सम्पादन और प्रकाशन श्री रामचन्द्र शर्मा कनखल मे किया करते थे। यह कहानी उन दिनो की चर्चित कहानियों मे से एक थी। जब यह कहानी श्री रामचन्द्र शर्मा के द्वारा सम्पादित एक दूसरे पत्र 'आदर्श' मे भी प्रकाशित हुई तब प्रसिद्ध कहानीकार श्री जैनेन्द्रकुमार ने पत्र के सम्पादक को लिखा था कि 'कैदी' कहानी के लेखक को मेरी बधाई पहुँचा दे। आपने बगला के प्रसिद्ध लेखक श्री विमल मित्र की 'मोह' कहानी का भी सफल अनुवाद किया था, जो उन दिनो 'आदर्श' पत्र मे प्रकाशित हुआ था। इसके अतिरिक्त आपने बगला भाषा के एक उपन्यास का अनुवाद भी हिन्दी मे किया था परन्तु वह प्रकाशित न हो सका।



आप अनन्य धर्म-प्रेमी होने के साथ-साथ सच्चे समाज-सुधारक थे। इसलिए आपने अपने पुत्रो की शादी मे दहेज का बहिष्कार कर दिया था। इसके साथ-साथ आपने अपने छोटे पुत्र श्री आनन्द शर्मा का विवाह एक बाल विधवा से सम्पन्न करके अपने अदम्य साहस का परिचय दिया था। इन्ही सुधारवादी विचारधाराओ के कारण आज भी कनखल निवासी शर्मा जी को याद करते है। आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री श्यामलाल शर्मा भी अच्छे पत्रकार है और वे दिल्ली मे प्रकाशित होने वाले 'दिनमान' साप्ताहिक मे कार्य-रत है।

आपका निधन सन् 1964 मे हुआ था।

आचार्य गंगाप्रसाद शास्त्री

श्री शास्त्री जी का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रख्यात तीर्थ मथुरा मे सन् 1889 मे हुआ था। आपकी शिक्षा पारिवारिक परम्परा के अनुसार सस्कृत से ही प्रारम्भ हुई थी और आपने शास्त्री की परीक्षा उत्तीर्ण करने के साथ-साथ

आयुर्वेदाचार्य की उपाधि भी अर्जित की थी। अपनी प्रख्यात मंत्र-सिद्धि और अभूतपूर्व विद्वत्ता के कारण आपको काशी के विद्वानों की ओर से 'मंत्र विशारद' की सम्मानोपाधि प्रदान की गई थी। मंत्र-शास्त्र और श्रीमद्-भागवत के निष्णात पण्डित होने के कारण आपका ओरछा, रायपुर तथा अवागढ आदि रियासतों के राजदरबारों में बहुत सम्मान था। आप अपनी निस्पृह, सरल और उदार प्रवृत्ति के कारण अपने परिचितों में 'शास्त्री बाबा' के नाम से जाने-माने जाते थे।



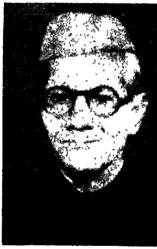
आप जहाँ आयुर्वेद और संस्कृत वाङ्मय के प्रकाण्ड विद्वान् थे वहाँ लेखन की दिशा में भी आपने अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थों में 'वेदान्त सिद्धान्त मत मार्तण्ड' दो भाग (सन् 1927-1928), 'मंत्र साधना' (सन् 1929) तथा 'मुक्ति साधना' (सन् 1934) आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। आपके सुपुत्र डॉ० त्रिलोकीनाथ व्रजबाल हिन्दी के अध्ययनशील लेखक और सुकवि हैं और सुपुत्री भी हिन्दी की अच्छी कवयित्री है, जिन्होंने 'कृष्णा माँ' नाम से अनेक भक्ति पदों की रचना की है।

आपका निधन सन् 1972 में हुआ था।

श्री गंगाप्रसादसिंह अखौरी

श्री अखौरी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रख्यात तीर्थ काशी में 10 नवम्बर सन् 1899 को हुआ था। स्थानीय श्री-हरिश्चन्द्र विद्यालय और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप सन् 1924 से सन् 1938 तक नागरी प्रचारिणी सभा के पुस्तकाध्यक्ष रहे थे। इस पद पर रहते हुए आपने संस्कृत और हिन्दी के अतिरिक्त उर्दू, बंगाली, गुजराती और अंग्रेजी भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान अर्जित कर लिया था।

नागरी प्रचारिणी सभा में आने से पूर्व आपने कलकत्ता के 'भारत जीवन' और 'विश्व दूत' आदि पत्रों में भी कार्य किया था। काशी में रहते हुए भी आपने पत्रकारिता के क्षेत्र को बिलकुल तिलांजलि नहीं दी थी प्रत्युत वहाँ से प्रकाशित होने वाले 'भारत जीवन', 'अग्रगामी', 'सूर्य', 'भूत', 'सन्मार्ग' तथा 'आर्य महिला' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओं से सक्रिय रूप से जुड़े रहे थे और जब सन् 1955 में काशी में 'संसार' (अर्द्ध साप्ताहिक) का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तब आप ही उसके प्रधान सम्पादक रहे थे।



आप उत्कृष्ट पत्रकार होने के साथ-साथ एक सुलेखक के रूप में भी विख्यात थे। आपके द्वारा रचित ग्रन्थों में 'हिन्दी के मुसलमान कवि', 'पद्माकर की काव्य-साधना', 'महाभारत की नीति-कथा' तथा 'भारतीय लोक कथाएँ' के अतिरिक्त 'मृगमरीचिका', 'देवदास' एवं 'अभागिनी' नामक उपन्यास भी उल्लेखनीय हैं।

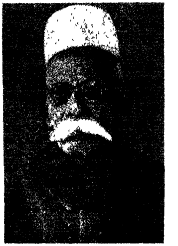
आपका निधन 7 सितम्बर सन् 1975 को हुआ था।

पण्डित गंगाविष्णु पाण्डेय विद्याभूषण 'विष्णु'

आपका जन्म अपने मातृ-कुल (उत्तर प्रदेश) लखनऊ जनपद

के अमानीगज नामक ग्राम मे सन् 1891 मे हुआ थाँ। अपनी प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम मे समाप्त करके आप लखनऊ चले आए और वहाँ पर सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री सीताराम शास्त्री वेदमूर्ति से संस्कृत साहित्य का विधिवत् अध्ययन करके अनेक छात्रवृत्तियाँ प्राप्त की। बाद में आप जबलपुर चले गए और वहाँ रहते हुए आपने व्याकरण, पुराण, वेद, उपनिषद् और आयुर्वेद-सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों का पारायण करके कई परीक्षाएँ भी सफलतापूर्वक उत्तीर्ण की। आपकी सस्कृत-वाङ्मय की बहुमुखी योग्यता से प्रभावित होकर आपको 'सनातनधर्म मण्डल', 'विद्वत् परिषद्' तथा 'भारत धर्म महामण्डल' ने 'साहित्यालंकार' और 'विद्याभूषण' की सम्मानोपाधियो से विभूषित किया था।

प्रारम्भ मे आपने सस्कृत में ही लिखना प्रारम्भ किया था और आपके लेख तथा कविताएँ सस्कृत के 'शारदा', 'संस्कृत रत्नाकर', 'मजु भाषिणी', 'सूर्योदय' और 'बहुश्रुत' आदि अनेक प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी। बाद मे आपने हिन्दी मे लिखना प्रारम्भ किया। आप गद्य और पद्य दोनो मे लिखा करते थे और कविताओ मे आप 'विष्णु' उपनाम का प्रयोग किया करते थे। आपकी रचनाएँ 'माधुरी', 'चाँद', 'विकास', 'शुभचिन्तक' तथा 'हितकारिणी' आदि कई पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित होती थी। आपकी प्रकाशित कृतियों मे 'कृष्ण चरित्र', 'विष्णु सतसई' और 'आदर्श मित्र कृष्ण सुदामा' आदि प्रमुख है। आपने 'कवित्त हजारा' नाम से भी एक ग्रन्थ की रचना की थी, जिसमे खडी बोली के विभिन्न विषयो से सम्बन्धित एक हजार कवित्त तथा सवैये एकत्रित है। आपने 'स्वास्थ्य दर्पण' नामक एक आयुर्वेद-सम्बन्धी मासिक पत्र का भी कई वर्ष तक सफलतापूर्वक सम्पादन किया था।



एक सफल साहित्यकार के रूप में आपने जहाँ चूडान्त ख्याति अर्जित की थी वहाँ आपका मनस्वी अध्यापक के रूप मे भी जबलपुर मे बड़ा सम्मान था। आप अनेक वर्ष तक वहाँ की 'हितकारिणी संस्कृत पाठशाला' के प्रधानाध्यापक भी रहे थे। अपने अध्यापकीय जीवन मे आप हिन्दी, सस्कृत, और आयुर्वेद की विभिन्न परीक्षाओ के परीक्षक और केन्द्राध्यक्ष भी रहे थे। जबलपुर की प्रख्यात साहित्यिक सस्था 'साहित्य सघ' की विभिन्न गतिविधियों को दिशा-दान करने मे आपका प्रशसनीय सहयोग रहता था। उसके अध्यक्ष रहने के साथ-साथ नगर मे आयोजित अनेक कवि-दरबारो और कवि-गोष्ठियो मे भी आप सक्रिय रूप मे भाग लिया करते थे। जबलपुर नगर मे आपकी शिष्य-परम्परा इतनी समृद्ध है कि उससे आपके व्यक्तित्व की महत्ता का परिचय मिलता है।

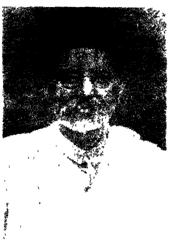
आपका निधन 22 जून सन् 1960 को जबलपुर मे हुआ था।

पण्डित गंगाशंकर (नागर) पंचौली

श्री पचौली जी का जन्म सन् 1857 मे राजस्थान के भरतपुर नामक नगर मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा अलीगढ मे हुई और वहाँ पर ही सन् 1880 मे आपने मुख्तारी की परीक्षा दी थी और सन् 1886 मे बी० ए० की परीक्षा मे बैठे थे। प्रारम्भ मे कुछ दिन तक आप सन् 1887 मे बूँदी के एक हाई स्कूल मे हेड मास्टर हो गए थे बाद मे आप सन् 1910 मे भरतपुर आ गए थे और यहाँ के एक विद्यालय मे प्रधानाध्यापक के पद पर कार्य करते रहे। सन् 1918 मे भरतपुर के विद्यालय मे पेशन लेकर आप बूँदी राज्य मे न्यायमन्त्री के पद पर प्रतिष्ठित हो गए थे। सन् 1932 मे आप बूँदी से चले आए और बयाना मे अपने भतीजे प० हीराशकर पचौली के पास रहने लगे थे।

आप जहाँ कुशल शिक्षक तथा गम्भीर न्यायविद् थे वहाँ आपने लेखन की दिशा मे भी अपना विशेष परिचय दिया

था। कृषि विज्ञान, ज्योतिष विद्या तथा अनेक वैज्ञानिक व्यवसायों से सम्बन्धित आपने बहुत-से ग्रन्थ लिखे थे।



आँख, शकुन, शालिहोत्र और वाटिका विज्ञान के सम्बन्ध मे भी आपने अनेक गम्भीर एव शोधपूर्ण लेख लिखे थे। वैसे तो आपकी छोटी-बडी पुस्तको की सख्या 30 के लगभग है किन्तु उनमे 'व्यापार शिक्षा', 'करणलाघव', 'काल समीकरण', 'कृत्रिम काष्ठ विज्ञान', 'नीबू-नारगी' तथा 'स्वर्णकारी' आदि विशेष उल्लेखनीय है।

आपका निधन 14 जुलाई सन् 1938 को हुआ था।

श्री गंगाशंकर मिश्र

श्री मिश्र का जन्म सन् 1887 मे उत्तर प्रदेश के हरदोई जनपद के भगवन्तनगर नामक स्थान मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा उर्दू तथा फारसी मे हुई थी और सन् 1903 मे हरदोई के जिला स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त ही आपके मन मे हिन्दी के अध्ययन की अभिलाषा जगी थी। सन् 1911 मे आप बनारस के सेण्ट्रल हिन्दू स्कूल की इण्टरमीडिएट कक्षा मे प्रविष्ट हुए और वहाँ पर महामना पडित मदनमोहन मालवीय तथा श्रीमती एनी वेसेण्ट के सम्पर्क से आपके मानस मे आध्यात्मिक चेतना उद्भूत हुई थी। आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से इतिहास विषय मे प्रथम श्रेणी मे एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त करने के अनन्तर आपने महामना मालवीय जी द्वारा सस्थापित और प्रयाग से प्रकाशित 'अभ्युदय' मे लेख आदि लिखने प्रारम्भ किए और फिर धीरे-धीरे अन्य पत्र-पत्रिकाओ मे भी लिखने लगे। आपके लेख उन दिनों 'सरस्वती' मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करते थे। 'अभ्युदय' तथा 'सरस्वती' मे प्रकाशित आपके लेखो को पढकर मालवीय जी बहुत प्रभावित हुए थे। फलस्वरूप उन्होने मिश्र जी को सन् 1919 मे काशी के कमच्छा नामक स्थान मे अवस्थित 'तैलग पुस्तकालय' के पुस्तकालयाध्यक्ष के रूप मे नियुक्त कर लिया। बाद मे आप मालवीय जी के विशेष अनुरोध पर 'काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय' के 'सयाजीराव गायकवाड पुस्तकालय' के अध्यक्ष के रूप मे वहाँ चले गए और निरन्तर 28 वर्ष तक इस कार्य को अत्यन्त योग्यता तथा तत्परतापूर्वक निभाया।

यद्यपि श्री मिश्र जी को विधिवत् शिक्षा उर्दू और अँग्रेजी मे ही मिली थी और हिन्दी का अभ्यास आपने अपने अध्यवसाय तथा स्वाध्याय के बल पर किया था, फिर भी पुस्तकालयाध्यक्ष के इस दीर्घ कार्य-काल मे आपने सस्कृत-वाङ्मय का गहन अध्ययन कर लिया था। वेद, उपनिषद्, स्मृति, पुराण, रामायण, महाभारत और आयुर्वेद आदि सस्कृत के अनेक विषयो से सम्बन्धित कोई भी ऐसा महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ नही था जिसका पारायण मिश्र जी ने न किया हो। 'पुस्तकी भवति पडित.' सस्कृत की इस सूक्ति के अनुसार वास्तव मे वे 'सजीव पुस्तकालय' ही हो गए थे।



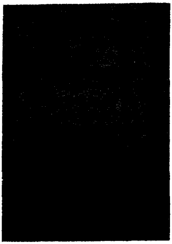
सस्कृत-वाङ्मय का कदाचित् कोई ही ऐसा ग्रन्थ होगा, जो आपकी पैनी दृष्टि से ओझल रहा हो। अपने इस कार्य-काल मे आपने 'एक किताबी कीडा' नाम से ऐसे अनेक महत्त्व-पूर्ण लेख लिखे थे, जिनमे मानव-जीवन की छोटी-छोटी बातो पर अत्यन्त सूक्ष्म और गहन रीति से प्रकाश डाला गया है। आपने 'हाथ-पैर धोना'-जैसे विषय से लेकर 'आहार-विहार-सम्बन्धी' अनेक विषयो पर अत्यन्त रोचक शैली में अपने विचार

प्रकट किए थे। आपके ऐसे महत्त्वपूर्ण लेख 'भारत', 'आज', 'आर्यावर्त', 'हिन्दुस्तान' तथा 'सरस्वती' आदि अनेक प्रमुख पत्रों मे प्रकाशित होते रहे थे। काशी से प्रकाशित होने वाले 'आज' मे आप 'नोटबुक के पन्ने' शीर्षक से जो लेख लिखा करते थे उन पर आपका नाम 'मण्डन मिश्र' छपा करता था। वैसे तो आपका विषय विशेष रूप से भारतीय इतिहास ही था किन्तु आपने अनेक विषयो पर अपनी लेखनी चलाई थी। आपके महत्त्वपूर्ण मुद्रित ग्रन्थो मे हिन्दू विश्व-विद्यालय के प्रकाशन विभाग की ओर से प्रकाशित 'भारत मे ब्रिटिश साम्राज्य' तथा 'भारतवर्ष का इतिहास' मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं। आपकी ये दोनो कृतियाँ अनेक वर्ष तक विभिन्न विश्वविद्यालयो मे पाठ्यक्रम के रूप मे निर्धारित रही थी। भारतीय सस्कृति के विभिन्न अगों से सम्बन्धित आपके 280 लेखो का एक सकलन 'ज्ञान मण्डल वाराणसी' की ओर से 'छान-बीन' नाम से प्रकाशित हुआ है। इन लेखो को 14 भागों मे विभाजित किया गया है।

पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपकी देन सर्वथा अनुपम एव अनुकरणीय रही थी। जब सन् 1946 मे श्री करपात्री जी ने 'अखिल भारतीय धर्म सघ' की ओर से 'सन्मार्ग' का प्रकाशन प्रारम्भ किया तब उन्होंने आपसे उसका सम्पादन-भार ग्रहण करने का अनुरोध किया था। फलस्वरूप आपने विश्वविद्यालय के 'ग्रन्थालयाध्यक्ष' के पद से त्यागपत्र दे दिया और 'सन्मार्ग' के सम्पादन का जो दायित्व अपने ऊपर लिया आजीवन उसका निर्वाह करते रहे। यहाँ यह स्मरणीय है कि 'सन्मार्ग' का प्रकाशन पहले दिल्ली से हुआ था और जब उसका प्रकाशन 1947 मे काशी से होना प्रारम्भ हुआ तब ही आपने यह भार सँभाला था। फिर उसका प्रकाशन कलकत्ता से भी होने लगा था। आपने 'सिद्धान्त' नामक सास्कृतिक तथा धार्मिक मासिक पत्र का सम्पादन भी अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। जब लोकसभा मे 'हिन्दू कोड बिल' प्रस्तुत हुआ था तब आपने 'कल्याण' (गोरखपुर) मे पहली बार उसके विरुद्ध जोरदार लेख लिखा था। इस विरोध का यह परिणाम हुआ कि सरकार को वह बिल वापस लेना पडा था। श्री मिश्र जी हिन्दी के इन पत्रकारो मे थे जिन्होंने सदैव आपने अध्ययन का निष्कर्ष भारतीय सस्कृति और अस्मिता के उत्थान की दिशा में प्रस्तुत किया था।

आपका निधन 16 मार्च सन् 1972 को हुआ था।

श्री गंगासहाय गोयल



श्री गोयल का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ जनपद (अब (गाजियाबाद) के बखेडा नामक ग्राम मे 5 नवम्बर सन् 1908 को हुआ था आपकी शिक्षा बी० ए० तक हुई थी और आप सस्कृत, हिन्दी तथा अँग्रेजी के अच्छे ज्ञाता थे। राजस्थान के योगि-राज श्री स्वामी माधवानन्द से आध्यात्मिक प्रेरणा प्राप्त करके आपने 'गीता' का हिन्दी अनुवाद किया था। योग विद्या और आयुर्वेद शास्त्र के भी आप मर्मज्ञ थे।

आपके लेख आदि हिन्दी की अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहते थे और आपने आयुर्वेद-शास्त्र से सम्बन्धित एक 'सरल गृह चिकित्सा' नामक जो ग्रन्थ लिखा था उसका प्रकाशन सन्य प्रकाशन, मथुरा ने किया था। आपकी एक दूसरी कृति 'मन की शान्ति के लिए' नाम से कासगज से प्रकाशित हुई थी। आप हिन्दी के प्रख्यात लेखक भक्त रामशरणदास के तयेरे भाई थे।

आपका निधन 29 मार्च सन् 1973 को बाँदा (उत्तर-प्रदेश) मे हुआ था।

श्री गजराज बाबू श्रीवास्तव

श्री गजराज बाबू का जन्म मध्यप्रदेश के खैरागढ राज्य के सिंगारपुर नामक ग्राम मे सन् 1888 मे हुआ था। शैशवावस्था से ही साहित्य के प्रति रुझान होने के कारण आप तुकबन्दी करने लगे थे। खैरागढ़ के हाई स्कूल मे मैट्रिक की परीक्षा

उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने पहले तो खैरागढ़ राज्य में नौकरी कर ली थी, किन्तु बाद मे आप रायपुर में जाकर 'नकल नवीस' हो गए थे।

छोटी-सी अवस्था में ही आपने छन्द-शास्त्र का इतना गहरा ज्ञान प्राप्त कर लिया था कि उसे देखकर लोग आश्चर्य से दाँतों-तले उँगली दबाया करते थे। आपने अनेक मुक्तक रचनाएँ करने के साथ-साथ 'रामायणाष्टक' नामक एक ऐसी कविता की रचना की थी जिसमें रामायण के सारे कथानक को आठ अष्टकों में ही कुशलता से निबद्ध किया गया था। आपकी कविता का मूल आधार भक्ति तथा लोक-कल्याण की भावना थी। भक्तिरस से संवलित आपके इस 'दोहे' में सर्वसाधारण को जो प्रेरणा दी गई है वह अद्भुत है :

सुनहिं कहहिं यह ककहरा, राम नाम पद प्रीति।
निशा मोह नशि जाहि हिय, आतप होवे सीत।।

आपका यह दोहा आपकी 'ककहरा' नामक रचना से उद्धृत किया गया है, जिसमें भक्तिरस से परिपूर्ण आपके 36 दोहे हैं। यह 'ककहरा' भक्तिरस की आपकी अद्वितीय कृति कहा जाता है।

यह दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि अभूतपूर्व प्रतिभा का यह कवि केवल 32 वर्ष की आयु मे 30 जनवरी सन् 1920 को असमय में ही परलोकवासी हो गया।

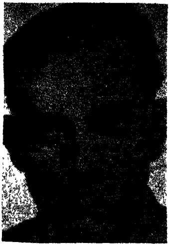
श्री गजानन माधव मुक्तिबोध

श्री मुक्तिबोध का जन्म मध्यप्रदेश की भूतपूर्व ग्वालियर रियासत के श्योपुर नामक स्थान मे 13 नवम्बर सन् 1917 को हुआ था। वैसे आप मूलत. महाराष्ट्र के थे। आपके पूर्वज वहाँ पर लगभग 150 वर्ष पूर्व आ बसे थे। आपके पिता क्योंकि ग्वालियर रियासत की पुलिस मे नौकर थे अत. बार-बार अनेक स्थानों पर स्थानान्तरण होते रहने के कारण आपका अध्ययन भी विभिन्न स्थानो पर हुआ था। आपने सन् 1930 में उज्जैन के एक विद्यालय से 'मिडिल' की परीक्षा दी थी, किन्तु उसमें अनुत्तीर्ण हो गए थे। मुक्तिबोध जी ने उसे अपने जीवन की 'पहली महत्त्वपूर्ण घटना' स्वीकार किया है। उसके बाद आपने उज्जैन के 'माधव कालेज' से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की और अध्यापन को अपनी आजीविका का प्रमुख आधार बना लिया तथा अन्त तक इस 'निम्न मध्यवर्गीय निष्क्रिय मास्टरी' में ही सघर्ष-रत रहे। जिन दिनो आप बी० ए० मे पढ़ा करते थे उन्ही दिनो आपका झुकाव साहित्य-लेखन की ओर हुआ, जो अन्तिम समय तक साँसो की डोरी का अन्यतम साथी रहा। आपने सन् 1935 में सबसे पहले काव्य-रचना प्रारम्भ की और फिर सन् 1936-38 के मध्य कहानी-लेखन भी चला, किन्तु उसमे अधिक गति नही रही।

मालवा की प्राकृतिक सम्पदाओं से प्रेरणा पाकर आपका कवि-मानस शनै.-शनै. अनुभूतियों की गहराइयों को छूता गया और आपने मानव-मन की अनेक खट्टी-मीठी अनुभूत विकृतियों का चित्रण करने में अद्वितीय सफलता प्राप्त की। इस कवि-जीवन मे आपको अपने गुरु श्री रमाशंकर शुक्ल 'हृदय' (अब स्वर्गीय) से प्रचुर प्रेरणा प्राप्त हुई थी। आपका कवि-मानस प्रारम्भ मे यत्किंचित् श्री माखनलाल चतुर्वेदी से भी प्रभावित था, अत उनके काव्य की राष्ट्रीयता तथा 'हृदय' जी की प्रेरणापूर्ण अनुभूतियो का अद्भुत समन्वय आपकी प्रारम्भिक रचनाओ में देखने को मिलता है। फिर धीरे-धीरे सन् 1938 तथा 1942 के बीच आपके कवि को प्रगति युग की अनुभूतियों ने प्रभावित किया और मार्क्सवादी विचार-धारा का प्रतिफलन आपकी रचनाओ मे होने लगा। आपकी उन दिनो की मानसिकता का सम्यक् परिचय आपकी इन पक्तियो से होता है—"यहाँ यह स्वीकार करने मे मुझे सकोच नही कि मेरी विकास-स्थिति मे मुझे घोर असन्तोष रहा, और है। मानसिक द्वन्द्व मेरे व्यक्तित्व मे बद्धमूल है। यह मै निकटता से अनुभव करता आ रहा हूँ कि जिस भी क्षेत्र मे मैं हूँ वह स्वय अपूर्ण है, और उसका ठीक-ठीक प्रकटीकरण भी नहीं हो रहा है। फलत गुप्त अशान्ति मन के अन्दर घर किये रहती है।" लगभग उन्ही दिनो आपकी रचनाएँ श्री सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' द्वारा सम्पादित सहयोगी काव्य-सकलन 'तार सप्तक' (1943) मे प्रकाशित हुई। इस सकलन की कविताओं मे आपके व्यक्तित्व का सर्वथा नया रूप प्रकट हुआ है। इन रचनाओ से आप 'प्रयोगवाद' के अग्रणी कवि के रूप मे साहित्य मे प्रतिष्ठित हुए।

आपकी रचनाओ मे जहाँ कही-कही छायावादी दुरूहता

और संश्लिष्टता दिखाई देती है वहाँ आपकी प्रयोगधर्मी प्रतिभा ने उसे सर्वथा नई भाव-भूमि भी प्रदान की है। सर्वथा नये प्रतीकों, उपमानो और बिम्बों के माध्यम से अपनी



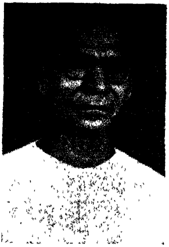
अनुभूतियों का अंकन करने मे मुक्तिबोध को उन दिनों जो सफलता मिली थी उसमे आपके जीवन-मूल्यों की सही अवतारणा हुई है। आपकी रचनाओं मे मध्यवर्गीय अभिजात्य वर्ग का पतनोन्मुख भविष्य और सर्वहारा वर्ग की सामाजिकता का अच्छा चित्रण हुआ है। आपने छन्दबद्ध और अतुकान्त दोनों ही प्रकार की रचनाएँ की है, किन्तु इन सभी मे आपकी कवि-सुलभ संवेदना अत्यन्त सफलता से प्रकट हुई है। संक्रान्ति-युग के अनेक परिवर्तनों और विरोधाभासों के प्रति भी आपका कवि पूर्णत. सचेष्ट रहा है। आपकी ऐसी रचनाएँ बाद मे 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' (1964) नामक काव्य-संकलन मे प्रकाशित हुई थी, जो हिन्दी-प्रेमी जनता मे अत्यन्त लोकप्रिय हुआ है। आप एक जागरूक और संवेदनशील कवि होने के अतिरिक्त उत्कृष्ट कोटि के समीक्षक तथा निबन्ध-लेखक भी थे। डायरी-लेखन की दिशा में भी आपने अपनी नई प्रभावात्मक शैली का परिचय दिया है। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'कामायनी . एक पुनर्विचार' (1961), 'नई कविता का आत्म-संघर्ष तथा अन्य निबन्ध' (1964), 'एक साहित्यिक की डायरी' (1964) तथा 'नये साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र' (1971) अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

यह एक दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि अपने जीवन-काल मे मुक्तिबोध जी निरन्तर अभावों और संघर्षों से जूझते रहे और अनेक बाधाओ से भी आपने अपनी साहित्यिक अस्मिता को आँच नही आने दी। यह प्रसन्नता का विषय है कि आपके निधन के उपरान्त आपकी सभी रचनाओं को 'मुक्तिबोध रचनावली' (सम्पादक—नेमिचन्द्र जैन) के नाम से प्रकाशित कर दिया गया है।

आपका निधन 11 सितम्बर सन् 1964 को हुआ था।

श्री गणपतिचन्द्र केला

श्री केलाजी का जन्म 19 सितम्बर सन् 1907 को उत्तर प्रदेश के अलीगढ जनपद के विजयगढ़ कस्बे में हुआ था। आपकी शिक्षा घर पर ही अपने पारिवारिक जनों के निरीक्षण मे हुई थी। निजी स्वाध्याय के बल पर आपने संस्कृत, हिन्दी तथा अँग्रेजी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। एक स्वावलम्बी और अध्यवसायी पत्रकार के रूप मे आपका स्थान हिन्दी की पत्रकारिता मे एक उत्कृष्ट आदर्श प्रस्तुत करने वाला है।



आपने जहाँ विजयगढ से प्रकाशित होने वाले मासिक 'धन्वन्तरि' का सम्पादन अनेक वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था वहाँ दैनिक 'सैनिक' और 'वीर अर्जुन' के सम्पादन में भी अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया था। आपने स्वतन्त्र रूप से आगरा से दैनिक 'ताजा तार' और 'उजाला' नामक दैनिक पत्र अनेक वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक संचालित एवं सम्पादित किये थे। आपने 'अँग्रेजी शिक्षक' नामक एक पुस्तक का प्रकाशन भी किया था।

आप उत्कृष्ट कोटि के स्वावलम्बी पत्रकार होने के अतिरिक्त राष्ट्रीय कार्यकर्ता भी थे। आपका अनेक क्रांतिकारियों से सम्पर्क रहा था और आपने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध चलाए गए आन्दोलनों में भाग लेकर कई बार जेल-

यात्राएँ भी की थीं।

आपका देहावसान 30 अगस्त सन् 1974 को कलकत्ता में हुआ था।

श्री गणपति मालवीय

श्री मालवीय जी का जन्म मध्यप्रदेश के इन्दौर नगर में सन् 1921 में हुआ था। श्रमिक-परिवार में जन्म लेने के कारण आपका झुकाव प्रारम्भ से ही मार्क्सवाद की ओर था और आप सन् 1939-1940 में 'मजदूर सभा' के कार्यमन्त्री रहने के साथ-साथ वहाँ के 'प्रजा मण्डल' के भी सक्रिय कार्यकर्ता रहे थे। अनेक मजदूर-आन्दोलनों से सबद्ध होने के कारण आपको एकाधिक बार जेल-यात्राएँ भी



करनी पड़ी थीं। आप इन्दौर की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रमुख स्तम्भ होने के साथ-साथ 'किसान सभा' के संस्थापकों में भी अग्रगण्य थे।

पारिवारिक जीवन की सफलता के लिए आपने आजीविका के रूप में पत्रकारिता को अपनाया था और यावज्जीवन उसी क्षेत्र में सघर्ष करते रहे। आपने इन्दौर से प्रकाशित होने वाले 'नया जमाना', 'नया हिन्द' तथा 'नई दुनिया' आदि कई पत्रों में अपना अनन्य सहयोग देने के साथ-साथ स्वय भी अपने पत्र निकाले थे। 'मध्य प्रदेश श्रमजीवी पत्रकार सघ' की स्थापना में भी आपका बहुत बडा योगदान रहा था। आपने साप्ताहिक 'बढता कारवाँ' का सम्पादन भी किया था।

स्वतन्त्रता के उपरान्त आपने 'मालवा क्षेत्र' की समस्याओं के समाधान की ओर विशेष ध्यान देना प्रारम्भ किया था। आपने जहाँ 'इन्दौर-उज्जैन-परिचय' नामक पत्रिका का सम्पादन किया था वहाँ 'मालवा का इतिहास' भी लिखना प्रारम्भ किया था। खेद है कि आप इसे पूरा न कर सके। आप अनेक सामाजिक सस्थाओं से जुड़े रहने के कारण सभी क्षेत्रों मे अत्यन्त लोकप्रिय थे। आप जहाँ 'भारत-पाक-युद्ध' के समय अपने क्षेत्र के वार्डन रहे थे वहाँ मध्य प्रदेश की 'सविद सरकार' के दिनों मे 'जिला भूमि वितरण समिति' के भी सदस्य रहे थे।

आपका निधन 9 मई सन् 1979 को हुआ था।

श्री गणपतिलाल चौबे

श्री चौबे का जन्म मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ अचल के रायपुर नगर मे सन् 1861 को हुआ था। आप झारखण्ड तथा उत्कल की अनेक रियासतों मे प्रमुख शिक्षा-अधिकारी रहे थे। वहाँ के 'एजेन्सी एजुकेशन इस्पेक्टर' के पद पर रहते हुए आपने हिन्दी की अनेक पाठ्य-पुस्तको का निर्माण किया था। मध्यप्रदेश के प्रख्यात साहित्यकार और 'रामचरितमानस' की 'विनायकी टीका' के रचयिता पण्डित विनायकराव के सहयोग से भी आपने व्याकरण और छन्द शास्त्र-सबधी अनेक पुस्तको की रचना की थी। आपने शिक्षा विभाग के अनेक कर्मचारियों को उडिया की कृतियों को हिन्दी मे अनूदित करने की प्रेरणा भी दी थी।

प्रख्यात हिन्दी वैयाकरण पण्डित कामताप्रसाद गुरु ने भी आपकी ही प्रेरणा से उड़िया सीखकर उडिया भाषा के 'भावना' और 'यशोदा' नामक उपन्यासों के हिन्दी अनुवाद किए थे। उन दिनो श्री गुरु जी कानाहेड़ी रियासत में शिक्षा अधिकारी थे। आपके कारण रायपुर मे हिन्दी साहित्य के प्रचार का कार्य काफी आगे बढा था और आपके पारिवारिक-जन हिन्दी तथा सस्कृत भाषा के प्रति अनन्य अनुराग रखते थे। आप जहाँ कामताप्रसाद गुरु के ममिया श्वसुर थे वहाँ प्रख्यात न्यायविद् तारिणीप्रसन्न नायक और शिक्षा-शास्त्री श्री रमाप्रसन्न नायक आपके दौहित्र है। श्री रमाप्रसन्न नायक भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय के वरिष्ठ अधिकारी तथा गृह-मन्त्रालय मे 'हिन्दी सलाहकार' होने के

साथ-साथ जबलपुर विश्वविद्यालय के कुलपति भी रहे हैं। आपके भतीजे स्वर्गीय केशवानन्द चौबे भी हिन्दी के अच्छे कवि थे।

आपका निधन सन् 1935 मे हुआ था।

पण्डित गणपति शर्मा

श्री शर्मा जी का जन्म राजस्थान प्रदेश के चूरू नामक नगर मे सन् 1873 मे हुआ था। आपके पूर्वज जयपुर राज्य के सीकर नामक जिले के नानी ग्राम के निवासी थे। आपके पिता श्री भानीराम वैद्य पाराशरगोत्रीय पारीक ब्राह्मण थे। वे चूरू मे पौरोहित्य कार्य के साथ-साथ चिकित्सा का कार्य भी किया करते थे। पण्डित गणपति शर्मा की प्रारम्भिक शिक्षा चूरू मे ही उनके निरीक्षण में हुई थी और फिर धीरे-धीरे उन्होंने छोटी-सी अवस्था में ही व्याकरण तथा साहित्य में अच्छी प्रवीणता प्राप्त कर ली थी। आप आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के अन्यतम शिष्य पण्डित कालूराम जी के उपदेशों को सुनकर आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रति अनुरक्त हुए थे। क्योंकि आपके पिता भी अनन्य आस्तिक तथा ईश्वर-भक्त थे अत: उनका प्रभाव पण्डित गणपति शर्मा के जीवन पर भी पड़ा था।

शर्मा जी की गणना आर्यसमाज के प्रमुख वक्ताओं मे की जाती थी। 'वेदो की अपौरुषेयता' और 'ईश्वर-सिद्धि' आपके भाषणो के प्रमुख विषय थे। आपके पाण्डित्यपूर्ण भाषणों को सुनकर बडे-से-बडे नास्तिक भी ईश्वर की सत्ता में विश्वास करने को विवश हो जाते थे। आपके अकाट्य तर्कों और प्रबल युक्तियों के समक्ष आपके विरोधी अपनी पराजय सहज भाव से स्वीकार कर लेते थे। आप कल्पना कीजिए कि उस युग मे ध्वनि-विस्तारक यन्त्रों के अभाव मे 15-15 हजार श्रोताओं की मण्डली को घटो तक अपनी ओजस्वी भाषा के धारावाहिक भाषण से वे ऐसा मन्त्रमुग्ध कर लेते थे कि उसे समय बीतने का पता ही न चलता था। आपकी प्रखर वाग्मिता और शास्त्रार्थ-पटुता की धाक थोडे ही दिनों में देश-व्यापी हो गई थी। बडे-बड़े पण्डित, पादरी और मुल्ला आपके पाण्डित्य के समक्ष विनत हो जाते थे।

क्योंकि आप विचारों से आर्यसमाजी थे अत: कभी-कभी अन्य विधर्मी लोगों के अतिरिक्त आपको सनातनी पण्डितो से भी शास्त्रार्थ करने को विवश होना पड जाता था। आपके ऐसे कई शास्त्रार्थ झालरापाटन, धार और देवास राज्य में हुए थे। अपनी इसी ललक को पूरा करने की दृष्टि से एक बार आप स्वामी दयानन्द सरस्वती के विद्वान् शिष्य पण्डित ज्वालादत्त शर्मा को साथ



लेकर काशी के सुप्रसिद्ध सनातनधर्मी पण्डित महामहोपाध्याय शिवकुमार शास्त्री से शास्त्रार्थ करने के लिए वहाँ पहुँच गए थे। काशी जाने पर पता चला कि शास्त्री जी अपने गाँव गए हुए है। फलस्वरूप आप उनके गाँव मे ही जा पहुँचे और उनसे अपनी इच्छा प्रकट की। पण्डित शिवकुमार शास्त्री ने मूर्ति-पूजा तथा श्राद्ध आदि पौराणिक विवादास्पद विषयो को छोडकर किसी और विषय पर शास्त्रार्थ करने की इच्छा व्यक्त की। परिणामस्वरूप शास्त्रार्थ तो नही हो सका, पर पण्डित गणपति शर्मा के वैदुष्य का सिक्का काशी के विद्वानों पर जम गया।

आपके द्वारा किये गए शास्त्रार्थों मे कश्मीर, रोहतक, कोटा और अजमेर के शास्त्रार्थ विशेष महत्त्व रखते है। सन् 1912 मे स्वामी दर्शनानन्द और आपके बीच हुआ 'वृक्षों मे जीव की सत्ता' विषयक शास्त्रार्थ भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह शास्त्रार्थ गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर के वार्षिक उत्सव के अवसर पर हुआ था और इस शास्त्रार्थ का विस्तृत विवरण प्रख्यात हिन्दी समीक्षक पण्डित पद्मसिंह शर्मा ने अपने द्वारा सम्पादित 'भारतोदय' पत्र मे प्रकाशित किया था। आपने प्रख्यात नास्तिक विद्वान् महामहोपाध्याय पण्डित रामावतार शर्मा पाण्डेय को भी गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के वार्षिक उत्सव पर शास्त्रार्थ के लिए आमन्त्रित किया था,

किन्तु असमय मे ही आपका देहावसान हो जाने के कारण यह शास्त्रार्थ न हो सका था। आपके द्वारा किये गए महत्त्वपूर्ण एव उल्लेखनीय शास्त्रार्थो मे झालावाड मे इटावा निवासी पण्डित भीमसेन शर्मा से हुआ शास्त्रार्थ भी प्रमुख है। कश्मीर में प्रसिद्ध ईसाई पादरी जानसन से किया गया शास्त्रार्थ भी अपनी विशिष्टता के लिए सदा याद किया जाता है। आपकी एक-मात्र कृति 'ईश्वर-भक्ति विषयक व्याख्यान' ही आजकल प्रकाशित रूप मे उपलब्ध है।

जिन दिनो स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती अजमेर मे वहाँ के जैन विद्वानो से शास्त्रार्थ कर रहे थे तब स्वामी जी ने अपने सहयोग के लिए उनका स्मरण किया था। किन्तु खेद है कि असामयिक देहावसान हो जाने के कारण आप वहाँ नही पहुँच सके थे। आपके निधन पर प्रख्यात कवि श्री नाथूरामशकर शर्मा ने अपनी श्रद्धाजलि इस प्रकार अर्पित की थी

भारत का रत्न, भारती का बडभागी भक्त,
शकर प्रसिद्ध सिद्ध सागर सुमति का।
मोह तम हारी ज्ञान पूपण प्रताप शील,
दूपण - विहीन शिरोभूपण विरति का।।
लोक-हितकारी, पुण्य कानन-विहारी वीर,
धीर धर्म धारी अधिकारी शुभ गति का।
देख लो विचित्र चित्र, बाँच लो चरित्र मित्र,
नाम लो पवित्र, स्वर्गगामी गणपति का।।

आपका असामयिक अवसान केवल 39 वर्ष की आयु मे 27 जून सन् 1912 को जगरावाँ (पजाब) मे हुआ था।

आचार्य गणेश कीर्ति जी महाराज

आचार्य गणेश कीर्ति जी महाराज का जन्म उत्तर प्रदेश के झाँसी जनपद के मडावरा क्षेत्र के हसेरा नामक ग्राम मे सन् 1874 मे हुआ था। आप गणेशप्रसाद वर्णी के नाम से भी विख्यात थे। आपके पिता तथा बाबाजी का निधन सन् 1892 मे एक ही दिन हो गया था। आपके जन्म के बाद 6 वर्ष तक आपके परिवार की आर्थिक स्थिति अत्यन्त शोचनीय रही थी। ज्योतिषियो ने आपके विषय मे यह घोषणा की थी कि कालान्तर में यह बालक 'भगवान्'-जैसी प्रतिष्ठा अर्जित करेगा। सन् 1880 मे आपका परिवार हसेरा से मडावरा मे आकर बस गया था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा मडावरा के प्राइमरी तथा मिडिल स्कूलो मे ही हुई थी। आपकी लौकिक और आध्यात्मिक शिक्षाएँ साथ-साथ ही चल रही थी। जब आप केवल 10 वर्ष ही के थे कि आपने एक जैन मन्दिर मे होने वाले प्रवचन को सुनकर रात्रि-भोजन के त्याग का व्रत ले लिया था। 12 वर्ष की आयु मे आपका यज्ञोपवीत-सस्कार हुआ था और 14 वर्ष की आयु मे आपने हिन्दी मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। जब आप 18 वर्ष के ही थे कि आपका विवाह भी कर दिया गया था। सन् 1895 मे केवल 3 वर्ष बाद ही आपकी सहधर्मिणी का स्वर्गवास हो गया था।

जब आप टीकमगढ (ओरछा) के स्कूल मे अध्यापक थे तब आप उस गाँव के समीपवर्ती सिमरा नामक गाँव मे एक जैन क्षुल्लक के सम्पर्क मे आए और उनसे आपने जैन धर्म की जानकारी प्राप्त करने की इच्छा प्रकट की। आप उनके साथ यात्रा पर चल दिए। रामटेक तथा मुक्तागिरि आदि अनेक स्थानो की यात्रा करते हुए जब आप बम्बई पहुँचे तब सौभाग्यवश आपकी भेट वहाँ पर श्री गोपालदास बरैया से हो गई और उन्होने आपको छात्रवृत्ति दिलाकर अध्ययन के लिए जयपुर भेज दिया। जब मथुरा मे एक विद्यालय की स्थापना हुई तब बरैयाजी ने आपको वहाँ बुला लिया। इसके बाद आपने खुर्जा मे रहकर सस्कृत साहित्य का विधिवत् अध्ययन किया और वहाँ से गवर्नमेंट सस्कृत कालेज, बनारस की प्रथमा तथा न्याय मध्यमा की परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण की। जब आप खुर्जा मे थे तब एक दिन आपने मृत्यु का स्वप्न देखा। फलस्वरूप आप जैन तीर्थ सम्मेद शिखर की यात्रा के लिए चल दिए। शिखरजी पहुँचने पर गिरिनार के दर्शन से आप अत्यन्त उत्साहित हुए। थोडे दिन बाद आप शिखरजी से फिर सिमरा वापस आ गए और टीकमगढ मे रहकर अपना अध्ययन जारी रखने के लिए काशी चले गए।

काशी पहुँचने पर जब आप अन्य विद्यार्थियो के समान पोथी लेकर पण्डित जीवनाथ मिश्र के सम्मुख उपस्थित हुए तो आपसे गुरुजी ने आपका नाम व कुल-धर्म पूछा। जब गणेशप्रसाद जी ने उन्हे यह बताया कि 'मैं ब्राह्मण नही हूँ' तो गुरुजी आग-बबूला हो गए। उन्होंने ब्राह्मणेतर गणेशजी को

पढाने से इन्कार कर दिया। इस घटना का आपके मन पर ऐसा प्रभाव पडा कि आपने उसी दिन काशी में एक पाठशाला स्थापित करने का निश्चय कर लिया और थोडे ही दिनों मे वहाँ सम्भ्रान्त धनिको और जैनियो के सहयोग से आपने अपना वह सकल्प पूर्ण कर लिया। यही पाठशाला बाद मे 'स्याद्वाद विद्यालय' के रूप मे प्रसिद्ध हुई। इस विद्यालय के पहले छात्र श्री गणेशप्रसाद ही बने थे। इस सस्था ने कालान्तर मे सामान्यत. समस्त भारत और विशेषत: जैन समाज की जो सेवा की है, वह इतिहास मे स्वर्ण अक्षरो मे लिखी जाने योग्य है। यह अकेली सस्था ही वर्णीजी के कृतित्व को प्रतिष्ठित करने के लिए पर्याप्त है। इसके उपरान्त आपने अपना स्वाध्याय नही छोड़ा और अपने शास्त्रीय ज्ञान को बढाते हुए देश के अनेक नगरों मे कई पाठशालाओं की स्थापनाएँ कराई।



आप जहाँ उच्चकोटि के शिक्षा-प्रचारक और धर्म-गुरु थे वहाँ देश मे प्रचलित अनेक कुरीतियो को जड-मूल से उखाड़ फेकने मे भी आपने अपने जीवन को सर्वात्मना लगा दिया था। स्थान-स्थान पर आपने जहाँ अनेक शिक्षणालयो की स्थापना कराई थी वहाँ जैन धर्म और सस्कृति के अमर आलोक को सारे ससार मे फैलाने की दृष्टि से जैन-साहित्य के प्रकाशन के लिए भी अनेक सस्थाओ का सूत्रपात किया था। आपने जबलपुर मे एक 'जैन विश्वविद्यालय' की स्थापना करने का प्रयास भी किया था। आज जैन-समाज मे बुन्देलखण्ड के पण्डितो का जो बाहुल्य है उसका श्रेय भी वर्णीजी को ही दिया जाना चाहिए। आपके प्रयास और प्रेरणा से बुदेलखण्ड प्रदेश के सादुमल, पपौरा, मालथौन, ललितपुर, कटनी, मड़ावरा, खुरई, बीना और बरुआ सागर आदि अनेक स्थानों मे जो पाठशालाएँ स्थापित की गई थी उनमे जैन-धर्म और उसके सिद्धांतो के मर्मज्ञ पण्डित ही तैयार किये जाते थे। आपके इन कार्यों को आगे बढ़ाने मे बाबा भगीरथ वर्णी और दीपचन्दजी वर्णी का अनन्य सहयोग रहा था, इसीलिए इन्हें उन दिनों 'वर्णित्रय' के नाम से जाना जाता था। आपने अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए अपने प्रवचनों में हिन्दी को एक विशेष महत्त्व दिया था। आप सदा जनता की भाषा मे ही बोलते थे और जनता की भाषा मे ही सोचा करते थे। आपने जितनी शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना की थी उनके माध्यम से जो भी व्यक्ति शिक्षित तथा दीक्षित होकर निकला वह हिन्दी-प्रचार मे ही सर्वात्मना लग गया।

आपके प्रवचनो का जनता मे ऐसा व्यापक प्रभाव होता था कि आप बात की बात मे अपार धनराशि एकत्र कर दिया करते थे। सन् 1945 मे एक बार जबलपुर के फोहारा नामक स्थान पर अपनी दो चादरो में से एक चादर को नीलाम करने के प्रसग मे आपको केवल तीन मिनट मे ही 3 हजार रुपये प्राप्त हो गए थे। यह रुपया आपने स्वतत्रता-सग्राम मे सक्रिय रूप से भाग लेने वाले सेनानियो की सहायता मे लगा दिया था। जब आपने तीर्थ-क्षेत्र गिरिनार के दर्शन किये थे तब जैन समाज मे आपको 'बड़े पण्डितजी' के नाम से जाना जाता था और बाद मे आप 'वर्णी जी' कहलाने लगे थे। सन् 1947 मे आपने 'क्षुल्लक' व्रत धारण किया था और अपने निधन से केवल 16 घटे पूर्व ही दिगम्बर व्रत ग्रहण करके आप 'श्री 108 आचार्य गणेश कीर्तिजी महाराज' कहलाने लगे थे। आपका सारा जीवन आत्म-ध्यान एव परमार्थ की पगडंडियों पर चलकर आत्म-कल्याण का पावन सदेश देने मे ही व्यतीत हुआ था।

आपका देहावसान सन् 1961 मे हुआ था।

श्री गणेशचन्द्र प्रमाणिक

श्री प्रमाणिक का जन्म जबलपुर (मध्यप्रदेश) मे सन् 1865 मे हुआ था। आप मूल रूप से बगाल के निवासी थे। जिन प्रवासी बगालियो ने महाकोशल में बीसवी सदी के प्रारम्भिक दशकों मे हिन्दी-सेवा और हिन्दी के प्रचार-कार्य मे सक्रिय योगदान दिया उनमे आपका नाम अविस्मरणीय है। आप

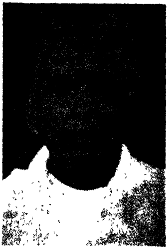
तब जबलपुर के 'राष्ट्रीय हिन्दी मन्दिर', 'शारदा भवन पुस्तकालय' और हिन्दी मासिक 'श्रीशारदा' से अभिन्न रूप से सम्बद्ध रहे थे। यह आपकी कर्मठता का ही ज्वलन्त प्रमाण है कि अस्वस्थ रहते हुए भी आप जबलपुर से प्रकाशित 'गीतानुशीलन' पत्रिका का सफल सम्पादन करते रहे। आपने जहाँ विभिन्न गम्भीर विषयो पर लेख लिखकर अपनी लेखनी की उत्कृष्टता का परिचय दिया वहाँ गीता-सम्बन्धी अत्यन्त गंभीर लेखो द्वारा अनेक धर्म-प्रेमियो का मार्ग-दर्शन भी किया था। जबलपुर के सभी साहित्यिक आयोजनो मे आपको सादर आमन्त्रित किया जाता था। अपने भव्य एव साधु व्यक्तित्व के कारण आप जनसामान्य मे भी काफी प्रतिष्ठित हो गए थे और जबलपुर के साहित्य-समाज मे आपका बडा आदर था।

आपका निधन सन् 1935 मे जबलपुर मे हुआ था।

गोस्वामी गणेशदत्त

गोस्वामी जी का जन्म अविभाजित पजाब के जिला झग के 'चिन्योट' नामक स्थान मे 2 नवम्बर सन् 1889 को हुआ था। यद्यपि आपकी शिक्षा कुछ अधिक नही हुई थी, किन्तु फिर भी अपनी लगन और उत्साह से आपने सस्कृत तथा हिन्दी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। अपने जीवन के प्रारम्भिक दिनों मे आपने स्वामी रामतीर्थजी की साधना-पद्धति से प्रेरणा प्राप्त करके अपना कर्तव्य-पथ निश्चित किया था। आपने सनातन धर्म और भारतीय सस्कृति के उद्धार का जो व्रत उस समय लिया था आजीवन आप उसीमे सलग्न रहे और जगह-जगह सस्कृत की पाठशालाओ तथा पुस्तकालयो की स्थापना करने का कार्य ही करते रहे। बाद मे आपने जहाँ रामकृष्ण परमहस और स्वामी विवेकानन्द-जैसे महापुरुषों के कार्यों से प्रेरणा ग्रहण करके अपना मार्ग प्रशस्त किया वहाँ महामना मदनमोहन मालवीय के निकट सम्पर्क मे आकर आपकी जीवन-धारा ही बदल गई।

मालवीयजी के सम्पर्क से आपने समाज-सुधार और सास्कृतिक उन्नयन के क्षेत्र को ही मुख्यत अपनाया और 'सनातन धर्म सभा' के सगठन के द्वारा जहाँ पंजाब में नव-जागरण का मन्त्र फूंका वहाँ सारे प्रदेश मे सस्कृत की अनेक पाठशालाएँ भी स्थापित की। उच्च शिक्षा के लिए आपने 'सनातन धर्म कालेज' लाहौर की स्थापना का जो कार्य किया था वह सर्वविदित है। सारे पजाब प्रदेश म हिन्दी का प्रचार करने की दृष्टि से सन् 1921 मे आपने सर्वप्रथम लायलपुर मे एक 'रात्रि पाठशाला' की स्थापना की थी।



बाद मे यह सस्था इतनी विस्तृत और विशाल हो गई कि इसके माध्यम से देश को अनेक कवि, लेखक, साहित्यकार, पत्रकार और विद्वान् शिक्षा-शास्त्री मिले।

अपने सस्कृति, शिक्षा और समाज-सुधार के कार्यों को गति देने की दृष्टि से आपने सन् 1933 मे लाहौर से साप्ताहिक 'विश्वबन्धु' का प्रकाशन प्रारम्भ किया और भारत-विभाजन के उपरान्त दिल्ली से अक्तूबर सन् 1947 से 'अमर भारत' नामक एक हिन्दी दैनिक का प्रकाशन भी प्रारम्भ किया। 'विश्वबन्धु' का दैनिक सस्करण भी आपने सन् 1942 मे लाहौर से प्रकाशित किया था। 'विश्वबन्धु' का सम्पादन श्री बी० पी० 'माधव' किया करते थे और 'अमर भारत' प्रख्यात पत्रकार श्री सत्यदेव विद्यालकार के सम्पादन मे प्रकाशित हुआ था। आप सन् 1937 से भारत-विभाजन तक 'पजाब प्रातीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के अध्यक्ष रहने के साथ-साथ आप'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के सन् 1944 मे आयोजित जयपुर-अधिवेशन के अध्यक्ष भी रहे थे।

हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप मे प्रतिष्ठित कराने के प्रयासो मे भी गोस्वामीजी का प्रमुख हाथ था। आप महामना मदनमोहन मालवीय और राजर्षि पुरुषोत्तमदास टडन की विचार-धाराओं के अनन्य अनुयायी और समर्थक थे, इसी

कारण आपने उनके द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चलकर समस्त देश मे भारतीय सस्कृति के उन्नयन तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार को अपने जीवन का प्रमुख लक्ष्य बनाया था। गोरक्षा, हरिजनोद्धार और विधवा-विवाह जैसे अनेक समाजोपयोगी कार्यों मे आपका प्रमुख भाग रहता था। त्याग और सादगी आपके जीवन के मूल मत्र थे। आपके कुछ लेख, भाषण और डायरी के अश सनातन धर्म सभा नई दिल्ली की ओर से प्रकाशित 'गणेशदत्त स्मृति ग्रन्थ' मे सकलित है।

आपका निधन 10 जून सन् 1959 को हुआ था।

डॉ0 गणेशदत्त गौड़

श्री गौड का जन्म उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर जनपद के नरसेना नामक ग्राम के एक ब्राह्मण परिवार मे 4 नवम्बर सन् 1924 को हुआ था। सन् 1942 मे प्रथम श्रेणी मे 'हाई स्कूल' की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप भारतीय सेना मे 'वायरलैस आपरेटर' के रूप म भर्ती हो गए और कुछ दिन कार्य करके वहाँ से भाग आए। फिर आपने सन् 1946 मे इण्टर की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की और अपने ही गाँव के समीप खालौर-डरोरा नामक एक विद्यालय की स्थापना करके उसमे अध्यापन का कार्य प्रारम्भ किया। इस विद्यालय में कार्य-रत रहते हुए ही आपने सन् 1948 मे प्राइवेट शिक्षक प्रत्याशी के रूप मे आगरा विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की। इसके उपरान्त आप लखनऊ चले गए और लखनऊ विश्वविद्यालय से सन् 1950-51 मे एम० ए० (हिन्दी) प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करने के साथ-साथ एल-एल० बी० की परीक्षा भी ससम्मान उत्तीर्ण की। इसके उपरान्त आपने उक्त विश्वविद्यालय से ही पी-एच० डी० करने का विचार किया, किन्तु उन्ही दिनो आप लन्दन चले गए।

लन्दन जाकर जहाँ आपने 'कुरु प्रदेश का लोक-साहित्य' विषय पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की वहाँ हिन्दी व्याकरण मे सम्बन्धित अनेक ग्रन्थ भी आपने अग्रेजी मे लिखकर अच्छी ख्याति अर्जित की। सितम्बर सन् 1952 मे आप 'ओरियण्टल एण्ड अफ्रीकन यूनिवर्सिटी' लन्दन मे शिक्षक नियुक्त हुए थे और इस पद पर आप दिसम्बर सन् 1965 तक रहे थे। सन् 1962-63 मे आप 'वनस्थली विद्यापीठ राजस्थान' मे रीडर भी रहे थे। इससे पूर्व आप अपने लन्दन के कार्य-काल मे सन् 1956-57 से सन् 1965 तक बी० बी० सी० लन्दन के हिन्दी-कार्यक्रमो के इचार्ज रहने के साथ-साथ वहाँ के टेलीविजन मे 'सलाहकार' भी रहे थे। अपने लन्दन-प्रवास के दिनो मे आपने 'विश्व शान्ति मिशन' की स्थापना भी की थी, जिसकी प्रशसा वहाँ के प्रमुख पत्र 'लन्दन टाइम्स' ने की थी। कुरु प्रदेश के लोक-जीवन और उसकी सस्कृति पर आपका शोध-प्रबन्ध अत्यन्त उपादेय कहा जा सकता है।



यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि आपके दो विवाह हुए थे। आपका प्रथम विवाह सन् 1946 म श्रीमती सत्यवती से भारत मे हुआ था। इनसे सुशील गौड नामक आपका एक पुत्र भी है। द्वितीय विवाह सन् 1960 मे आस्ट्रिया की एक महिला श्रीमती एलबर्टाइन से हुआ था। आपके निधन के उपरान्त वे लन्दन मे ही रह रही है और भारतीय पत्नी श्री गौड के जन्म-ग्राम मे ही है। आपके निधन के उपरान्त 'लन्दन टाइम्स' ने अपने 22 दिसम्बर सन् 1965 के अक मे डॉ० गौड की विस्तृत जीवनी देकर आपके लन्दन-प्रवास के कार्यों की उल्लेखनीय चर्चा की थी। आपके निधन के उपरान्त आपके जन्म-स्थान मे सन् 1950-51 मे आपके द्वारा ही सस्थापित इण्टर कालेज को आपके नाम पर 'गणेश स्मारक आदर्श इण्टर कालेज' के नाम से परिवर्तित करके आपका उपयुक्त स्मारक बना दिया गया है।

आपका असामयिक देहावसान 22 दिसम्बर सन् 1965 को लन्दन के एक अस्पताल मे मस्तिष्क की नस फटने के कारण हुआ था।

श्री गणेश पुरी

आपका जन्म राजस्थान के मारवाड प्रदेश के परबतसर नामक स्थान के समीपवर्ती चारणवास नामक ग्राम मे सन् 1826 में हुआ था। आपका जन्म नाम गुलाबदान था, किन्तु जब आपने सन्यास ग्रहण कर लिया तब आप 'गणेश पुरी' नाम से प्रख्यात हो गए थे। आपने जब सन्यास धारण किया था तब आपकी आयु केवल 27 वर्ष की थी। सन्यास ग्रहण करने के उपरान्त आपने लगभग 5 वर्ष तक काशी मे रहकर हिन्दी तथा सस्कृत का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था।

आप डिगल तथा पिगल दोनो भाषाओ के मर्मज्ञ थे। अत आपने अपनी काव्य-प्रतिभा का परिचय दोनो ही भाषाओ मे काव्य-रचना करके दिया था। एक बार आप जब बूँदी गये थे तब श्री सूर्यमल्ल मिश्रण आपकी प्रतिभा से बहुत प्रसन्न हुए थे और 5 वर्ष तक अपने पास रखकर उन्होंने आपको काव्य-साधना कराई थी। जब आपका काव्य-ज्ञान परिपक्व हो गया तब आपने डिगल और पिगल दोनो ही भाषाओ मे अनेक काव्य-कृतियाँ लिखीं। आपका सस्कृत तथा ब्रजभाषाओं का उच्चारण भी अत्यन्त प्रभावशाली था। आपके द्वारा रचित 'वीर विनोद' नामक ग्रन्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसकी भाषा 'पिगल' है और इसमे महाभारत के कर्ण पर्व का कथानक है। इसके अतिरिक्त श्री गणेश पुरी की 'मारू महराण' तथा 'भर्तहरिशतक एव जीवन मूल' कृतियाँ भी उल्लेख्य है। आपके द्वारा विरचित अनेक फुटकर कवित्त तथा सवैये भी अपनी विशिष्ट रचना-शैली के कारण जन-जन मे बहुत लोकप्रिय हुए है।



आपका निधन सन् 1896 मे हुआ था।

डॉ० गणेशप्रसाद गणितज्ञ

डॉ० गणेशप्रसाद का जन्म उत्तर प्रदेश के बलिया नामक नगर मे 15 नवम्बर सन् 1876 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा बलिया मे हुई थी और तदुपरान्त आपने इलाहाबाद के म्योर सेण्ट्रल कालिज मे प्रवेश लेकर प्रयाग विश्वविद्यालय से सन् 1398 मे डी० एस-सी० की उपाधि प्राप्त की थी। आपने अध्ययन की समाप्ति के उपरान्त आपने कायस्थ पाठशाला मे 2 वर्ष तक अध्यापन-कार्य किया और फिर राजकीय छात्रवृत्ति प्राप्त करके आप गणित के विशेष अध्ययन के लिए विदेश चले गए। वहाँ पर आपने कैम्ब्रिज (इगलैण्ड) तथा गटिंगेन (जर्मनी) विश्वविद्यालयों मे गणित-सम्बन्धी विधाओ का गहन अध्ययन किया।

सन् 1904 मे भारत लौटने पर आपने उत्तर प्रदेश के विभिन्न शिक्षणालयों मे गणित के अध्यापन का कार्य लगभग 10 वर्ष तक किया। इसके उपरान्त आप सन् 1914 से सन् 1918 तक कलकत्ता विश्वविद्यालय मे गणित के प्रोफेसर रहे और फिर वहाँ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय मे आ गए। काशी मे आपने सन् 1918 से सन् 1923 तक गणित के प्रोफेसर के रूप मे अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया और फिर आप कलकत्ता विश्वविद्यालय मे 'शुद्ध गणित' के 'हार्डिज प्रोफेसर' बनकर चले गए जहाँ आप कई वर्ष तक कार्य-रत रहे। जिन दिनो आप सन् 1918 मे बनारस आये थे तब आपने वहाँ 'बनारस मैथमैटिकल सोसाइटी' की स्थापना भी की थी।



आपने अपने गणित-सम्बन्धी ज्ञान का प्रसार हिन्दी के माध्यम से करने की दिशा मे भी उल्लेखनीय कार्य किया था और विभिन्न विश्वविद्यालयों मे नियत गणित-सम्बन्धी

पाठ्य-ग्रन्थों को हिन्दी मे रूपान्तरित कराने की दिशा मे भी आप प्रयत्नशील रहे थे। 'विज्ञान परिषद् प्रयाग' के कार्य को आगे बढ़ाने मे भी आपका प्रशंसनीय योगदान रहा था।

आपका निधन 9 मार्च सन् 1935 को मस्तिष्क-सम्बन्धी रक्त-स्राव के कारण आगरा मे उस समय हुआ था जब आप विश्वविद्यालय की एक बैठक मे भाग ले रहे थे।

श्री गणेशप्रसाद द्विवेदी

श्री द्विवेदी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जनपद के हरीपुर नामक स्थान मे सन् 1900 मे हुआ था। प्रयाग विश्वविद्यालय से शिक्षित-दीक्षित होकर आपने अपना कार्य-क्षेत्र इलाहाबाद को ही बना लिया था और वही पर साहित्यिक लेखन का कार्य करने लगे थे। आपका स्थान हिन्दी के प्रारम्भिक काल के एकाकी-लेखको मे अग्रगण्य है। आप कई वर्ष तक प्रयाग की साहित्यिक सम्था 'हिन्दुस्तानी एकेडेमी' के सहायक मत्री भी रहे थे।

सफल एकाकी-लेखक होने के साथ-साथ आप उत्कृष्ट कोटि के समीक्षक और साहित्य-मर्मज्ञ भी थे। आपके द्वारा लिखित और सम्पादित पुस्तको मे 'कवि कालिदास', 'हिन्दी साहित्य', 'हिन्दी-साहित्य का गद्य-काल' 'आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना', 'हिन्दी के कवि और काव्य' (तीन भाग), 'हिन्दी प्रेम-काव्य-सग्रह', 'हिन्दी वीर काव्य-सग्रह', 'हिन्दी प्रेम-गाथा काव्य-सग्रह' और 'हिन्दी



सन्त काव्य-सग्रह' के नाम विशेष उल्लेख्य है। इनमे से अतिम दो रचनाओ का सम्पादन आपने क्रमश बाबू गुलाबराय और श्री परशुराम चतुर्वेदी के साथ किया था। आपके द्वारा लिखित मौलिक एकांकियों का संग्रह 'सुहाग बिन्दी' नाम से प्रकाशित हुआ था।

आपका देहान्त सन् 1949 मे हुआ था।

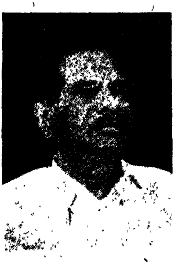
श्री गणेश रघुनाथ वैशम्पायन

श्री वैशम्पायन का जन्म महाराष्ट्र प्रदेश के नासिक जनपद के नागडे नामक स्थान मे 7 जनवरी सन् 1892 को हुआ था। आप महाराष्ट्र के हिन्दी-प्रेमियो में एक कोशकार, वक्ता, अनुवादक, अध्यापक, कलोपासक, समाज-सुधारक, राष्ट्र-सेवक और राष्ट्रभाषा-प्रेमी के रूप मे आदर के साथ याद किये जाते है। महात्मा गाधी के आवाहन पर आप राष्ट्र-भाषा हिन्दी के प्रचार और प्रसार के पुनीत कार्य मे इतनी निष्ठा और लगन से लगे थे कि आपने इस निमित्त पुणे मे 'हिन्दी चार सघ' की स्थापना ही कर दी थी। हिन्दी-प्रचार के कार्य मे रुचि लेने के साथ-साथ आपने देश के नवयुवको मे चारित्रिक बल बढाने की भावना उत्पन्न करने की दृष्टि मे पूना, दिल्ली तथा भावनगर आदि कई स्थानो मे 'गणेश व्यायाम मन्दिर' तथा 'गणेश व्यायामशाला' नामक कई सस्थाओ की स्थापना की थी।

प्रारभ मे आपने अपना लेखन-कार्य मराठी भाषा के 'सह्याद्रि' और 'कीर्तन' नामक पत्रो से प्रारम्भ किया था और बाद मे आप हिन्दी-लेखन की ओर उन्मुख हुए थे। आपने जहाँ हिन्दी से मराठी तथा मराठी से हिन्दी मे अनुवाद का कार्य अत्यन्त कुशलता से किया था वहाँ कोश-निर्माण के क्षेत्र मे आपकी देन सर्वथा अभिनन्दनीय कही जायगी। आपके द्वारा रचित 'हिन्दी-मराठी-व्यवहार कोश' (1939), 'मराठी से हिन्दी शब्द-सग्रह' (1949), 'हिन्दी मराठी लोकोक्ति कोश' (1950) 'हिन्दी लोकोक्ति कोश', 'काव्य गगा' तथा 'राष्ट्रभाषा प्रवेश' नामक ग्रन्थ अत्यन्त उल्लेखनीय हैं। आपके द्वारा मराठी से हिन्दी मे अनूदित ग्रन्थो मे '1857 का स्वातत्र्य समर', 'उपेक्षितो की मनोगति', 'ससार में कैसे चले ?' तथा 'हिन्दुओं की अवनति' प्रमुख है। आपके व्याकरण तथा रचना-सम्बन्धी ग्रन्थो मे 'हिन्दी मराठी अनुवाद माला' (दो भाग) तथा 'हिन्दी

परीक्षा व्याकरण' के नाम अनन्य है।

'महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा प्रचार सभा' के उन्नायकों में आपका नाम अग्रणी स्थान रखता है। आपके ही सत्प्रयासों से सन् 1940 मे पुणे मे 'अखिल भारतीत हिन्दी साहित्य सम्मेलन' का वार्षिक अधिवेशन हुआ था। इस अधिवेशन के 'स्वागताध्यक्ष' आप ही थे। अपने स्वागत भाषण मे 25 दिसम्बर सन् 1940 को आपने जो भाव व्यक्त किये थे उनसे आपकी अनन्य हिन्दी-निष्ठा का परिचय मिल जाता है। आपने कहा था--"हमे आपको यह सूचित करते हुए हर्ष होता है कि महाराष्ट्र के कोने-कोने से 'हिन्दी-प्रेम' की एक अद्भुत लहर उठती चली आ रही है।...हमारा तो सकल्प है कि आपके कबीर, सूर, तुलसी, जायसी, प्रेमचन्द, प्रसाद तथा मैथिलीशरण आदि को हम आत्मसात् कर लें और अपने ज्ञानेश्वर, तुकाराम, मोरो पन्त, वामन पण्डित, मुक्तेश्वर, सावरकर, कवि गोविन्द, केलकर, ना० सी० फडके, खाण्डेकर और वरेरकर आदि को राष्ट्रभाषा मे प्रतिष्ठित करके उन्हे प्रतिबिम्बित कर दें और फिर एक प्रचण्ड सम्मिलित शक्ति के आवाहन से हमारा महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा हिन्दी मे ऐसे मौलिक साहित्य का सृजन करे जो सचमुच महाराष्ट्र के महत्त्व को विश्वव्यापी बनाकर राष्ट्र-भाषा का मस्तक संस्कृत और अँग्रेजी के सामने उन्नत बना दे। विश्वात्मा हमे आशीर्वाद दे।"

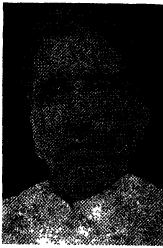


आपने राष्ट्रभाषा के प्रचार-कार्य को जिस उदात्त भावना से अपनाया था उसी पवित्र ध्येय को सामने रखकर आप राष्ट्रीय स्वतन्त्रता-आन्दोलन मे भी पूर्णत सक्रिय रहे थे। महाराष्ट्र के हिन्दी सेवकों म आपका नाम प्रमुख स्थान रखता है।

आपका निधन 9 अक्तूबर सन् 1953 को हुआ था।

जन-कवि गणेशलाल व्यास 'उस्ताद'

श्री व्यास जी का जन्म राजस्थान ने जोधपुर नामक नगर मे पुष्करणा ब्राह्मण-परिवार में सन् 1910 मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने ही नगर मे सम्पन्न हुई थी। आप क्रातिकारी विचारो के एक निर्भीक कवि थे। अपनी निर्भीकता और क्रातिकारी प्रवृत्ति के बल पर ही आप देशी राज्यों की क्राति के समय यूथ लीग के मन्त्री बनाए गए। उसी समय आपकी राष्ट्रीय कविताओ का सग्रह 'गरीबो की आवाज' (सन् 1932) बडी हलचल के साथ प्रकाशित हुआ। यह पुस्तक सुमेर प्रेस से श्री सरदारमल थानवी के द्वारा मुद्रित की गई थी। विद्रोही भावनाओ के कारण मारवाड स्टेट ने उक्त काव्य-सग्रह को जब्त कर लिया और सुमेर प्रेस के साथ भी यही कार्यवाही की गई थी।



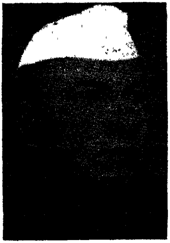
आपका निधन सन् 1965 मे हुआ था।

श्री गणेशलाल शर्मा 'प्राणेश'

श्री 'प्राणेश' का जन्म 4 जनवरी सन् 1912 को मध्यप्रदेश के रतलाम जनपद के सैलाना नामक नगर मे हुआ था। हिन्दी, राजनीति तथा इतिहास विषयों मे एम० ए० की उपाधि प्राप्त करने के साथ-साथ आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की सर्वोच्च परीक्षा 'साहित्य रत्न' परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी। आपने सन् 1931 से 1933 तक 'श्रीकृष्ण सन्देश' नामक पत्र का सम्पादन किया था वहाँ अपनी जन्म-

भूमि सैलाना मे 'साहित्य सदन' नामक सस्था की स्थापना करके उसकी ओर मे 'साहित्य-रजन' का प्रकाशन भी किया था। थोडे दिनो के लिए सन् 1933 मे आप बम्बई के सेठ गोविन्दलाल पित्ती के 'निजी सचिव' भी रहे थे, किन्तु दमे की बीमारी का शिकार होने के कारण वहाँ से शीघ्र ही अपनी जन्मभूमि को वापिस आ गए थ। थोडे दिन तक आपने 'कथा-वाचक' का कार्य भी किया था और फिर 'राजपूताना हरिजन सेवक सघ' द्वारा सचालित 'हरिजन आश्रम' अजमेर मे कार्य-रत रहे थे। इसके उपरान्त आपने सन् 1936 मे उदयपुर तथा बाँसवाडा नामक स्थानों मे कुछ दिन तक 'हरिजन पाठशालाएँ' भी चलाई थी।

इसके उपरान्त आप राजस्थान के प्रख्यात राष्ट्रकर्मी श्री हीरालाल शास्त्री द्वारा संस्थापित 'वनस्थली विद्यापीठ' मे चले गए और कुछ दिन तक वहाँ अध्यापन-कार्य करने के



अतिरिक्त 'जयपुर राज्य प्रजा मण्डल' मे भी सक्रिय योगदान दिया। आप इन सब सस्थाओ मे सन् 1939 तक सम्बद्ध रहे थे। सन् 1940 मे आप ग्वालियर चले गए और वहाँ के एक मिडिल स्कूल मे अध्यापक हो गए। कुछ समय तक आपने भीलवाडा (राजस्थान) के 'महाराणा हाई स्कूल' मे भी अध्यापन-कार्य किया था। इस बीच 14 जुलाई सन् 1947 को आप फीरोजाबाद (आगरा) के डी० ए० वी० इण्टर कालेज मे शिक्षक होकर आ गए और अन्तिम समय तक फीरोजाबाद ही रहे। फीरोजाबाद मे रहते हुए आपका कार्य-क्षेत्र बहुत विस्तृत हुआ। आपने फीरोजाबाद मे जहाँ 'हिन्दी विद्यापीठ' की स्थापना की वहाँ इस नगर से प्रकाशित होने वाली 'जनवाणी' तथा 'ज्योत्स्ना' आदि कई पत्रिकाओं के सम्पादन मे भी आपना उल्लेखनीय सहयोग दिया। जिन दिनो आप वनस्थली मे थे तब आपने वहाँ की पत्रिका 'वीर बाला' के सम्पादन मे भी अपना सक्रिय साहाय्य प्रदान किया था।

एक कुशल शिक्षक और अध्यवसायी पत्रकार के रूप मे तो आपने ख्याति अर्जित की ही थी, लगनशील सामाजिक कार्यकर्ता के रूप मे भी आप अत्यन्त लोकप्रिय थे। आप जहाँ 'उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन' तथा 'व्रज साहित्य मण्डल' की कार्यकारिणी समितियो के सदस्य थे वहाँ आपने सन् 1967 मे 'आर० एम० विद्यापीठ' की स्थापना भी की थी। आप दिल्ली, आगरा तथा कानपुर से प्रकाशित होने वाले अनेक समाचारपत्रो के सवाददाता भी थे। लेखन के क्षेत्र मे भी आपकी प्रतिभा पूर्णत विकसित हुई थी। आपके द्वारा सम्पादित और नियोजित 'फीरोजाबाद परिचय' नामक ग्रन्थ अपनी विशिष्टता के लिए आज भी याद किया जाता है। आप जहाँ उत्कृष्ट गद्य-लेखक थे वहाँ सवेदनशील कवि के रूप मे भी आप अत्यन्त विख्यात थे। आपने समालोचक शिरोमणि पण्डित पद्मसिह शर्मा के जीवन और कृतित्व पर सन् 1961 मे आगरा विश्वविद्यालय मे पी-एच० डी० का एक शोध प्रबन्ध भी प्रस्तुत किया था। खेद का विषय है कि आपको इस पर उपाधि प्रदान नही की जा सकी और यह ग्रन्थ अप्रकाशित ही रह गया। आपकी अन्य प्रकाशित कृतियों मे 'प्राणेश पुष्पाजलि' तथा 'पच पात्र' के नाम प्रमुख है। आपकी 'सविता' (कहानी-सग्रह), 'एकाकी नाटककार', 'साहित्य एव साहित्यकार', 'तरगिणी' तथा 'राजस्थान-गौरव' आदि रचनाएँ अभी अप्रकाशित ही है।

आपका देहावसान 27 जनवरी सन् 1977 को हुआ था।

कुँवर गणेशसिंह भदौरिया

कुँवर गणेशसिह का जन्म उत्तर प्रदेश के इटावा जनपद के पछाव गाँव नामक ग्राम मे सन् 1892 मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा मेरठ कालेज मे हुई थी। जिन दिनो आप मेरठ कालेज मे बी० ए० के छात्र थे तब आपके सहपाठियो मे हिन्दी के प्रख्यात पत्रकार और 'विश्वमित्र' नामक दैनिक, मासिक और साप्ताहिक पत्र के ख्यातनामा सम्पादक श्री

मूलचन्द अग्रवाल भी एक थे। वे इटावा के हाई स्कूल से आकर वहाँ प्रविष्ट हुए थे और कुँवर साहब ग्वालियर से आए थे। यह एक सयोग ही था कि आप बी० ए० की परीक्षा मे असफल हो गए और आप आगे की पढाई करने के विचार से कलकत्ता चले गए और कलकत्ता विश्वविद्यालय के तत्कालीन वाइस-चासलर सर आशुतोष मुखर्जी की कृपा से वहाँ प्रवेश पा लिया और उसी वर्ष आपने बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण भी कर ली। मेरठ कालेज की वह असफलता इस प्रकार सर आशुतोष मुखर्जी की सहृदयता से आपके भावी जीवन की सफलता मे सहायक हो गई।

जिस समय कुँवर साहब कलकत्ता गए थे तब आपके पास कुल दो रुपये तेरह आने थे और इस धनराशि मे आपका एक नौकर भी भागीदार था। हरिसन रोड पर जब आप दूसरो से किसी अच्छी धर्मशाला का पता पूछ रहे थे तब आपको ठीक तरह किसी ने उत्तर भी नही दिया था। फिर एक समय ऐसा भी आया जब अपने अनवरत अध्यवसाय तथा अटूट लगन से आप कलकत्ता मे इतने प्रसिद्ध हो गए कि जिस समय आप मोटर मे निकलते थे तो सब लोग इशारो से बतलाया करते थे कि कुँवर साहब जा रहे है। जिन दिनो आप कलकत्ता मे पहुँचे थे तब वहाँ से 'कलकत्ता समाचार' नामक एक दैनिक पत्र प्रकाशित हुआ करता था, जिसके सम्पादक श्री झाबरमल्ल शर्मा थे। सयोग की बात कि आप जब उस पत्र मे नौकरी करने की तलाश मे गए तब आपको वहाँ सफलता नही मिली। फलस्वरूप आपने श्री हरिकृष्ण जौहर द्वारा सम्पादित साप्ताहिक 'हिन्दी बगवासी' मे कार्य प्रारम्भ कर दिया और फिर आप धीरे-धीरे 'कलकत्ता समाचार' मे पहुँच गए।

जब आप कलकत्ता की पत्रकारिता के क्षेत्र मे धीरे-धीरे अपना अच्छा स्थान बना चुके थे तब आपकी भेट अपने पुराने सहपाठी श्री मूलचन्द अग्रवाल से हो गई। वे भी मेरठ मे अपना अध्ययन समाप्त करके पत्रकारिता के क्षेत्र मे कार्य करने के विचार से वहाँ पहुँचे थे। उन्होने अध्यापन के कार्य मे लगने के विचार से मेरठ कालेज से बी० ए० की जो परीक्षा दी थी उसमे वे भी असफल हो गए थे। इस बीच कुँवर साहब 'कलकत्ता समाचार' के सम्पादक बन गए थे। उन्होने मूलचन्द अग्रवाल को अपने यहाँ सहकारी सम्पादक के रूप मे रख लिया। जिन दिनो आप 'कलकत्ता समाचार' के सम्पादक थे तब कलकत्ता के मारवाडी समाज मे आपकी अच्छी घुसपैठ हो गई थी। फलस्वरूप आपने अपने बुद्धि-बल और कार्य-कौशल से कुछ व्यापार भी प्रारम्भ कर दिया, जिसमे आपको अभूतपूर्व सफलता मिली। उन दिनों कलकत्ता मे चर्बी मिले हुए घी का व्यापार बहुत बढ गया था, शुद्ध घी मिलना सर्वथा कठिन हो गया था। आपने इसके विरुद्ध डटकर आन्दोलन किया, जिससे वहाँ के व्यापारी थर्रा गए। यहाँ तक कि जिस व्यापारी के कारखाने मे चर्बी मिलाने का कार्य होता था उस पर आपने एक लाख रुपया जुरमाना भी कराया। इस घटना से आपकी धाक कलकत्ता के व्यापारी-समाज पर बहुत हो गई थी।

कुँवर साहब विचारो से पक्के सनातनधर्मी और सुधार-वादी भावना के राष्ट्रवादी व्यक्ति थे। जब 'कलकत्ता समाचार' की राष्ट्रीय नीति के कारण उसके सचालन मे बाधा आने लगी तब कलकत्ता के 'मार-वाडी एसोसिएशन' ने उसे खरीदने का विचार किया था। कुँवर साहब को यह बात रुचिकर नही लगी थी। फलस्वरूप आपने अपनी ही कम्पनी के द्वारा 'कलकत्ता समाचार', उसके प्रेस तथा पूरे सामान को खरीद लिया और उसे दिल्ली ले आए। जिस 'समाचार' के सम्पादन और सचालन मे आपने अपने जीवन के महत्त्वपूर्ण वर्ष गँवाए थे, आप नही चाहते थे कि यह पत्र किसी अन्य व्यक्ति अथवा सस्था के द्वारा खरीद लिया जाय। इस प्रकार 'कलकत्ता समाचार' सन् 1924 की बसन्त पचमी से दिल्ली से 'हिन्दू ससार' दैनिक के रूप मे निकलने लगा और उसका सम्पादन श्री झाबरमल्ल शर्मा ने ही पूर्ववत् सँभाल लिया। कुँवर साहब ने 'कलकत्ता समाचार' को खरीदकर दिल्ली से प्रकाशित करने का निश्चय सनातन धर्म के सुप्रसिद्ध नेता पडित



दीनदयालु शर्मा व्याख्यान वाचस्पति की प्रेरणा से किया था। पत्र अभी पूरी तरह जम भी नही पाया था कि टिहरी (गढ़वाल) रियासत के विरुद्ध समाचार छापने के कारण उस पर मुकदमा चल गया। फलस्वरूप आपने माफी माँगने की बजाय पत्र को सर्वथा बन्द करने मे ही पत्रकारिता का गौरव समझा और वह बन्द हो गया। आपने निरन्तर कई वर्ष तक इसके सचालन मे बहुत घाटा उठाया था, किन्तु झुकना पसन्द नही किया था।

जिन दिनो आप कलकत्ता में थे तब आपने सन् 1923 मे आगरा की 'जान्स मिल्स' की मैनेजरी भी सँभाल ली थी। इन मिलो की मालिक 'चैरी एण्ड कम्पनी' ने आपको अपनी सारी मिलो का 'मैनेजिग एजेण्ट' नियुक्त कर दिया था। आपने आगरा आकर इन मिलो का सचालन करते हुए वहाँ के सामाजिक जीवन मे अपना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया था। यहाँ तक कि समाज-सेवा और राष्ट्रीय जागरण का कोई भी कार्य हो, आप उसमे सहयोग देने मे पीछे नही रहते थे। कितनी विधवाएँ, कितने बालक-और कितनी संस्थाएँ कुँवर साहब के दान से काम चलाती थी, इसका पता लगाना सर्वथा कठिन है। कुँवर साहब ने लाखो रुपया इस प्रकार दान किया था कि जिसे आज कोई नही जानता। शायद ही कोई ऐसा अभागा व्यक्ति होगा जो आपके यहाँ से खाली हाथ लौटा हो। एक बार जब आगरा की नागरी प्रचारिणी सभा के किसी उत्सव मे श्री गणेशशंकर विद्यार्थी आने वाले थे तब उस उत्सव मे होने वाला आधा खर्च आपने स्वेच्छा से दे दिया था। इसी प्रकार जब सन् 1925 मे वृन्दावन मे अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन श्री अमृतलाल चक्रवर्ती की अध्यक्षता मे हुआ था तब भी आपने स्वागत-समिति को प्रचुर आर्थिक सहायता दी थी।

समाज-सुधार के कामो मे आप कभी भी पीछे नही रहते थे। इतना सब-कुछ होते हुए भी आप किसी भी प्रकार के प्रचार अथवा सम्मान आदि से सर्वथा दूर रहते थे। ऐसा कदाचित् कोई व्यक्ति होगा जो अनायास मिलने वाले सम्मान को इस प्रकार ठुकरा दे। कुँवर साहब सदा लोकेषणा से बचते रहते थे। यश-लिप्सा आपको छू भी नही गई थी। आपकी लोकप्रियता का इससे बडा प्रमाण और क्या हो सकता है कि जब आपका निधन हुआ तब आगरा की जनता ने जिस प्रकार का शोक मनाया था वैसा कदाचित् किसी अखिल भारतीय ख्याति के नेता का भी नही मनाया गया। यहाँ तक कि उस अवसर पर आगरा के प्रख्यात पत्रकार श्री महेन्द्र जी के 'आगरा पंच' ने तो एक विशेषाक ही प्रकाशित कर दिया था। इस विशेषांक मे जहाँ प्रख्यात साहित्यकार श्री हरिशकर शर्मा ने कविता मे अपनी श्रद्धाजलि समर्पित की थी वहाँ अन्य अनेक कवियों और लेखकों के लेख तथा कविताएँ भी बडी हृदय-विदारक थी। कविवर डॉ० पद्मसिह शर्मा 'कमलेश' की श्रद्धाजलि मे व्यक्त विचारो से उनके सही व्यक्तित्व का अनुमान हो जाता है। उन्होने लिखा था

करेगा सहाय अब कौन असहायन की,
कौन यों गरीबन को कण्ठ लिपटाएगा।
देगा कौन रोजी अगणित मजदूरों को,
कौन बेकारों को अब काम मे जुटाएगा॥
दान कौन देगा सार्वजनिक सस्थाओं को,
मन मे सभी के कौन प्रेम को पगाएगा।
मुख मे सहर्ष कौन देगा उत्साह हमे,
कौन हाय दुख-दुविधान को बँटाएगा॥

आपका देहावसान 30 दिसम्बर सन् 1934 को हृदय-गति बन्द हो जाने के कारण हुआ था।

पण्डित गणेशीलाल सारस्वत

श्री सारस्वत का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा जनपद के फतेहपुर-सीकरी के सीकरी ग्राम मे सन् 1876 मे हुआ था। आपकी शिक्षा वहाँ पर ही हुई थी और आपने 13 वर्ष की आयु मे मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इस परीक्षा मे आपने गणित विषय मे विशेष योग्यता प्राप्त की थी। मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने विश्वेश्वर आश्रम नरवर मे रहकर एक दण्डी स्वामी से सस्कृत भाषा का अध्ययन किया था। प्रारम्भ मे आपने सन् 1908 मे आगरा के बलवन्त राजपूत हाई स्कूल मे सस्कृत शिक्षक का कार्य प्रारम्भ किया था। जब वह इण्टर कालेज हो गया तब उसमे भी आप ही वरिष्ठतम सस्कृताध्यापक नियुक्त हुए थे। आपके सुपुत्र श्री रामप्रसाद सारस्वत भी हिन्दी के अच्छे

साहित्यकार, कवि और प्राध्यापक थे।

पण्डित जी अपने रहन-सहन, चाल-ढाल तथा वेश-भूषा से पूर्णत: भारतीय थे और सनातन धर्म के सिद्धान्तो में आपकी अगाध निष्ठा तथा भक्ति थी। आपने अपने सिद्धान्तो के प्रचार के लिए अनेक पुस्तकें लिखी थी। एक कुशल लेखक होने के साथ-साथ आप अद्वितीय वक्ता भी थे। आपके भाषण जनता को मन्त्र-मुग्ध कर दिया करते थे। आपके द्वारा लिखित हिन्दी पुस्तकों मे 'शास्त्रीय विचार' (दो भाग) तथा 'स्त्रियो के लिए दीक्षा' प्रमुख हैं। नागरी प्रचारिणी सभा आगरा की स्थापना मे आपका अनन्य सहयोग रहा था।



उत्कृष्ट कोटि के हिन्दी लेखक होने के साथ-साथ आप सुधारवादी विचार-धारा के कवि भी थे। राष्ट्रीयता और देश-भक्ति आपकी रचनाओ का प्रमुख विषय हुआ करता था। जन-जागरण की दृष्टि से आप प्राय. उद्‌बोधन-परक रचनाएँ ही लिखा करते थे। आपकी एक ऐसी रचना का उदाहरण इस प्रकार है .

दुष्ट-दल-दर्प-तरु मूल से उखाड़ डालो,
पाप विष-वृक्ष को कदापि रुपने न दो।
विद्या-वारि लेकर अविद्या-वह्नि को बुझाय,
काम, क्रोध, लोभ, मोह, ज्वाला फुंकने न दो।।
मेटेंगे 'गणेश' जो कलेश भी अवशेष पड़े,
देश-भक्ति-गगा का प्रवाह रुकने न दो।
सिद्धि व असिद्धि मे समान भाव धारे सदा,
जन्म-भूमि भारत का झडा झुकने न दो।।

आपका निधन 8 जनवरी सन् 1932 को 56 वर्ष की आयु मे हुआ था।

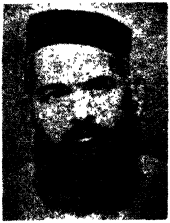
बाबू गदाधरसिंह

बाबू गदाधरसिंह का जन्म सन् 1848 मे उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर नगर मे हुआ था। आपके पूर्वज काशी के रहने वाले थे और आपके पिता बाबू रामसहाय सिंह राजा शिव प्रसाद सितारेहिन्द के अनन्य सहयोगी थे। जब बाबू गदाधर-सिंह केवल 5 वर्ष के थे कि आपके पिता का असामयिक देहावसान हो गया। आपके पारिवारिक जनो ने आपकी सारी सम्पत्ति को हड़प लिया, किन्तु आपके पिताजी के मित्रो ने इस विपत्ति के समय मे आपकी बहुत सहायता की। दुर्भाग्य ने यहाँ भी पीछा नही छोडा। सन् 1860 मे जब आप केवल 12 वर्ष के ही थे आपकी माता जी भी आपको निपट अनाथ बनाकर चल बसी। ऐसी विपत्ति मे भी आपने हिम्मत न हारी और आपने धीरे-धीरे अपने अनन्य अध्यवसाय तथा परिश्रम के बल पर सन् 1868 मे मैट्रिक की परीक्षा मे सफलता प्राप्त कर ली थी।

मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपके पिता के अनन्य मित्र राजा शिव प्रसाद सितारेहिन्द आपको 100 रुपये मासिक की सरकारी नौकरी दिलाना चाहते थे तब आपने इकार कर दिया और कोई स्वतन्त्र व्यापार करने की अपनी इच्छा उनसे प्रकट की। इस पर भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने उन्हें एक हजार रुपये इस कार्य के लिए दे दिए और गदाधरसिंह जी ने अपने एक-दो मित्रो के साथ कलकत्ता जाकर वहाँ से कुछ किराने का सामान लाकर काशी मे व्यापार शुरू कर दिया। किन्तु आपका यह व्यापार-कार्य सफल न हो सका और विवश होकर उन्हे 16 रुपये मासिक पर हरिश्चन्द्र स्कूल मे नौकरी करनी पड़ी। सन् 1817 मे आपको राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द ने सरकार के बन्दोबस्त विभाग मे नौकर करा दिया और आप कानपुर चले गए। कानपुर मे रहते हुए आपने आजन्म हिन्दी-सेवा करने का जो कठिन व्रत लिया था उसे आजीवन निबाहते रहे। वहाँ पर रहते हुए ही आपने अपने स्वाध्याय तथा भारतेन्दु बाबू के प्रोत्साहन पर बगला का भी अच्छा अध्ययन कर लिया था। आपने जब पहले-पहल 'कादम्बरी' उपन्यास लिखा तब भारतेन्दु जी ने उसका कुछ अंश अपनी 'हरिश्चन्द्र-चन्द्रिका' नामक पत्रिका मे प्रकाशित किया था। सन् 1878 मे आपकी यह पहली कृति प्रकाशित हुई थी। फिर आपका

स्थानान्तरण कानपुर से आजमगढ हो गया और आप वहाँ 'कानूनगो' के रूप मे कार्य करने लगे। कुछ दिन बाद आपको जौनपुर रियासत मे 'कोर्ट ऑफ वार्ड्स' बनाकर भेज दिया गया। जौनपुर में आप अधिक दिन कार्य न कर सके तथा फिर अपने पुराने ही पद पर आजमगढ चले गए और वहाँ पर आप सन् 1883 तक रहे। इस बीच आपने प्रख्यात बगला उपन्यास 'दुर्गेश नन्दिनी' का अनुवाद कर लिया था।

भारतेन्दु जी के प्रोत्साहन के बल पर आपने अपना साहित्य-सेवा का कार्य निरन्तर जारी रखा और धीरे-धीरे आपने उसमे प्रौढ़ता भी प्राप्त की। आपने जहाँ बगला की अनुपम कृति 'बग विजेता' का अनुवाद किया वहाँ शेक्सपियर के प्रख्यात नाटक 'ऑथेलो' को भी हिन्दी मे रूपान्तरित किया। आपके इस नाटक का प्रकाशन इटावा के रेवेन्यू सुपरिटेडेट ने सन् 1894 मे प्रकाशित किया था। सन्



1883 मे आप आजमगढ मे पेशकार बनाकर मिर्जापुर भेज दिये गए, जहाँ आपने सन् 1893 तक बड़ी योग्यतापूर्वक कार्य किया। मिर्जापुर आकर आपकी साहित्यिक प्रतिभा वहाँ के प्रख्यात साहित्यकार श्री बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' के सम्पर्क से और भी विकसित हुई। आपके 'बग विजेता' नामक उपन्यास की समीक्षा श्री 'प्रेमघन' जी ने अपनी 'आनन्द कादम्बिनी' पत्रिका मे 5 पृष्ठो मे छापी थी। आपकी पहली औपन्यासिक कृति 'कादम्बरी' के कारण आपको अधिक यश मिला था। बाबू श्यामसुन्दरदास ने उसे हिन्दी के आधुनिक साहित्य की पहली कथात्मक कृति माना है। वैसे इसकी रचना बगला कृति के हिन्दी रूपान्तर के रूप मे ही की गई थी। जब आप इटावा मे काम करते थे तब आपने 'ऑथेलो' के अतिरिक्त 'रोमन उर्दू की पहली किताब' और 'भगवद्गीता' नामक पुस्तक की रचना भी की थी।

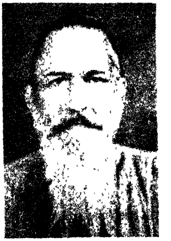
आपने 25 वर्ष की आयु मे ही 'हिन्दी-सेवा' करने का जो व्रत लिया था उसका ज्वलन्त प्रमाण यह है कि आपने दिसम्बर सन् 1884 मे 'आर्य भाषा पुस्तकालय' के नाम से एक ऐसा पुस्तकालय स्थापित करने का अपने मन मे जो सकल्प किया था उसकी पूर्ति आपने सन् 1885 मे उस समय की, जब आप मिर्जापुर की कचहरी मे सरिश्तेदार थे। आपने अपने ही घर मे केवल 217 पुस्तको से जिस 'आर्य भाषा पुस्तकालय' की स्थापना की थी वह दिन-प्रतिदिन बढता ही गया। किन्तु नौकरी के कारण जब आप निरन्तर बाहर रहने लगे तब उसकी देख-रेख न होने के कारण उसकी हालत खराब हो गई और विवश होकर पुस्तकालय की स्थिति को सुधारने की दृष्टि से आपने नौकरी मे 2 वर्ष की छुट्टी ले ली और जुलाई सन् 1896 मे आप उस पुस्तकालय को बनारस ले गए। उन्ही दिनो 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना हो चुकी थी और आप भी उसके सदस्य बन चुके थे। आपने अपने 2000 पुस्तको के उस पुस्तकालय को सभा को समर्पित करने का निश्चय कर लिया। पुस्तकालय की जो प्रथम वार्षिक रिपोर्ट जनवरी 1886 मे छपी थी, उसका यह अश पुस्तकालय की स्थापना का सही विवरण प्रस्तुत करता है—"सन् 1884 को दिसम्बर मास मे यह सकल्प किया कि एक 'आर्यभाषा पुस्तकालय', जिसमे हिन्दी की पुस्तके रखी जाएँ, प्रस्तुत किया जाए। यद्यपि यह काम एक व्यक्ति का नही तथापि यदि ग्रन्थ रचयिता लोग कृपापूर्वक एक-एक प्रति अपनी रची पुस्तको की दिया करेगे तो यह कार्य सिद्ध हो जाएगा। मुख्य स्थान इस पुस्तकालय का काशी विचारा गया है, किन्तु अभी तक अपनी स्थिति के कारण और काशी मे किसी निर्धारित स्थान के न होने से यह पुस्तकालय मिर्जापुर नगर मेरे घर मे है।" बाबू गदाधरसिंह क्योकि विचारो मे आर्यसमाजी थे अत आपने आर्यसमाज के सस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा निर्दिष्ट नाम ही हिन्दी भाषा के इस पुस्तकालय का रखा था। स्वामी दयानन्द ने 'हिन्दी' को 'आर्य भाषा' का पावन अभिधान प्रदान किया था, अत. अपनी वसीयत मे आपने अपने इस पुस्तकालय का नाम 'आर्य भाषा पुस्तकालय' रखा था। इस प्रकार सन् 1903 मे यह पुस्तकालय नागरी प्रचारिणी सभा के उस पुस्तकालय मे समाविष्ट कर दिया गया जिसका नाम उसके सस्थापको (डॉ० श्यामसुन्दरदास, ठा० शिव-

कुमार सिंह तथा पण्डित रामनारायण मिश्र) ने 'नागरी भण्डार' रखा था; किन्तु सभा ने सारे पुस्तकालय का नाम 'आर्यभाषा पुस्तकालय' ही कर दिया। आज इस पुस्तकालय से असख्य हिन्दी-प्रेमी लाभ उठा रहे है। जब तक 'नागरी प्रचारिणी सभा' और उसका यह 'आर्यभाषा पुस्तकालय' है तब तक बाबू गदाधरसिंह का नाम हिन्दी मे अमर रहेगा।

आपका निधन 29 जुलाई सन् 1898 को हुआ था।

श्री गयाप्रसाद द्विवेदी 'प्रसाद'

श्री द्विवेदी जी का जन्म सन् 1899 मे उत्तर प्रदेश के अवध अचल के अमेठी राज्य (सुलतानपुर जनपद) के गगावली नामक ग्राम मे हुआ था। क्योंकि जब आपका जन्म हुआ था उससे पूर्व आपके पिता गया की यात्रा करके लौटे थे इसलिए आप का नाम 'गयाप्रसाद' रखा गया था। आपके परिवार मे परम्परा से 'पौरोहित्य' का कार्य होता था और आपके 'यजमान' प्राय मध्यप्रदेश के नीमाड अचल मे ही रहते थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा परिवार की प्रणाली के अनुसार



पहले हिन्दी-सस्कृत मे ही हुई थी। जब आपकी आयु 15-16 वर्ष की ही थी तब आप अमेठी के राज-परिवार मे 'रामचरितमानस' का पारायण करने लगे थे। रामायण-पाठ के इस प्रसग मे अमेठी-नरेश श्री भगवानबख्शसिंह जी के भानजो (तेजबहादुरसिंह और बटुकबहादुरसिंह) से अच्छी मैत्री हो गई। इस कारण राज-परिवार मे आने वाली पत्र-पत्रिकाएँ और नवप्रकाशित पुस्तके आपको सुविधापूर्वक पढ़ने को मिलने लगी। धीरे-धीरे आपका रुझान खड़ी बोली मे काव्य-रचना करने की ओर हो गया और एक दिन सहसा आपकी लेखनी से 'बाल विवाहाष्टकम्' शीर्षक रचना का पहला छन्द इस प्रकार निकल पडा :

जिसकी कृपा से देश की लाखों-करोडों नारियां।
है भोगती वैधव्य दुख इस हिन्द की सुकुमारियाँ॥
स्वर्गीय सुख का लोप जिसके पुण्य का परिणाम है।
उस देव बाल-विवाह को युग हस्त जोड प्रणाम है॥

इसके कुछ दिन बाद आपकी भेंट अमेठी के दरबारी कवि पण्डित श्रीपाल तिवारी से हो गई, वे अमेठी के राजकुमार रणवीरसिंह जी के पास आया करते थे। उनके सम्पर्क से आपने छन्द-शास्त्र का विधिवत् अध्ययन किया। धीरे-धीरे आपका काव्याभ्यास बढता गया और अमेठी के राज-परिवार के साहित्यिक वातावरण ने उसे और भी परिपुष्ट किया। आपकी पहली पुस्तक 'पावस प्रमोद', दूसरी 'हृदय निकुज' और तीसरी 'नवदल' थोडे-थोडे समय के अन्तर से प्रकाशित हुई। इनमे से पहली का समर्पण आपने श्री बटुकबहादुरसिह को किया था और दूसरी तथा तीसरी का समर्पण क्रमश अमेठी राज्य के राजकुमार शत्रुजयसिंह तथा राजकुमार रणजयसिंह को किया था। श्री बटुकबहादुरसिंह अमेठी नरेश राजर्षि भगवानबख्श सिंह के भानजे थे। आपकी पहली कृति मे जहाँ वर्षा ऋतु के माध्यम से प्रकृति की छटा वर्णित की गई थी वहाँ दूसरी एव तीसरी पुस्तक मे आपकी समय-समय पर लिखी गई अनेक स्फुट रचनाओ का सकलन प्रस्तुत किया गया है। आपकी इन रचनाओ की प्रशसा आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी तथा मैथिलीशरण गुप्त-जैसे अनेक ख्यातिलब्ध साहित्यकारो और कवियो ने की थी।

उन्ही दिनों जब एक बार मिश्रबन्धुओ मे से एक श्री शुकदेवबिहारी मिश्र अमेठी दरबार मे निमन्त्रित होकर आए तब उन्होंने द्विवेदी जी को फुटकर काव्य-रचना से विमुख करके 'महाकाव्यो के प्रणयन' की ओर प्रेरित किया। उनकी प्रेरणा पर द्विवेदी जी ने 'मधुपुरी' तथा 'नन्दिग्राम' नामक महाकाव्यो की रचना की। इन काव्यो का भी हिन्दी-जगत् की ओर से अच्छा स्वागत हुआ था। आपने 'श्री बदरीनारायण दर्शन' नामक एक यात्रात्मक 'खण्डकाव्य' की रचना भी की थी। जब अपने पौरोहित्य-कार्य के सिलसिले मे आप नीमाड (मध्यप्रदेश) जाया करते थे तब वहाँ के खरगोन

नामक स्थान से श्री विश्वनाथ सखाराम खोडे के सम्पादन मे प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'वाणी' मे आपकी रचनाएँ बहुत प्रकाशित हुआ करती थी। उन्ही दिनो जब इन्दौर मे पूज्य महात्मा गांधी जी की अध्यक्षता मे अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का 24वाँ अधिवेशन हुआ था तब आपकी सम्मेलन के अवसर पर प्रकाशित हुए 'वाणी' के 'स्वागतांक' मे महात्मा जी के स्वागत मे जो रचना प्रकाशित हुई थी उसकी कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है

धन्य हो भारत के भगवान्!
विश्वबन्धु वर-बन्धु विश्व के
विमल विवेक - निधान!

इस सम्मेलन के अवसर पर अन्तिम दिन होने वाले 'कवि सम्मेलन' मे सर्वश्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', भगवती-चरण वर्मा, गोपालसिह नेपाली, माखनलाल चतुर्वेदी, मुशी अजमेरी, मैथिलीशरण गुप्त, सियारामशरण गुप्त, माधव शुक्ल, हरिवशराय 'बच्चन' तथा भँवरलाल भट्ट 'मधुप' आदि अनेक कवियो के साथ आपने भी अपनी रचनाओ का पाठ किया था।

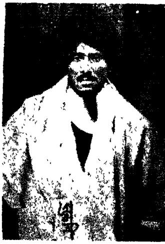
उक्त रचनाओ के अतिरिक्त आपके द्वारा विरचित 'श्रीमद्भागवद्गीता दिव्य दर्शन' नामक एक रचना और प्रकाशित है। आपकी 'हृदय निकुज' (व्रजभाषा), श्री लक्ष्मण परशुराम सवाद', 'श्रीकृष्णाकर्षण', 'प्रपच पुराण', 'हिमालय के सन्त', 'दक्षिण भारत के पवित्र एव वैभव सम्पन्न मदिर', 'सोमनाथ यात्रा', 'योग सूत्र दिव्यालोक' तथा 'पुर्नमिलन' (उपन्यास), 'पद्य-पत्र सग्रह', 'प्रसाद दोहावली', 'भारतायन', 'मधु और माधुर्य', 'निषादराज' तथा 'शबरी' कई गद्य-पद्य की कृतियाँ अभी अप्रकाशित ही है।

आपका निधन सन् 1976 मे हुआ था।

(भट्ट) गिरधारी शर्मा 'कविकिंकर'

श्री कविकिकर का जन्म राजस्थान के अलवर नामक स्थान मे सन् 1889 मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा शास्त्रीय परम्परा के अनुसार मथुरा (उत्तर प्रदेश) मे हुई। वेदों, धर्मशास्त्रो और संस्कृत वाङ्मय का सर्वांगीण अध्ययन करने के उपरान्त आप साहित्य-सृजन की ओर उन्मुख हुए थे। पहले आप संस्कृत मे काव्य-रचना किया करते थे और बाद मे हिन्दी में लिखना प्रारम्भ किया था। आपकी संस्कृत-रचना-प्रतिभा का परिचय जहाँ 'राजस्थान साहित्य अकादमी (संगम)' की ओर मे प्रकाशित 'राजस्थानी कवि-भाग-1' मे प्रस्तुत किया गया है वहाँ आपकी हिन्दी-सेवा का विस्तृत विवरण अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के जयपुर अधिवेशन के अवसर पर सन् 1944 मे प्रकाशित 'राजस्थान के हिन्दी साहित्यकार' नामक पुस्तक मे भी दिया गया है।

आप झालावाड राज्य के राजकवियों में अपना विशिष्ट स्थान रखते थे और अलवर तथा झालावाड के राजघरानो मे आपका बडा समादर था। झालावाड-नरेश महाराजा राजेन्द्रसिंह 'सुधाकर', पण्डित रामनिवास शर्मा, कविराज हरनाथ और पण्डित गिरिधर शर्मा नवरत्न आपके समकालीन थे। आपकी रचनाएँ पण्डित गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' द्वारा सम्पादित 'सुकवि' मे अत्यन्त आदर के साथ प्रकाशित की जाती थी। 'सुधाकर स्मृति ग्रन्थ' तथा 'जय विनोद' (अलवर से प्रकाशित) नामक ग्रन्थो मे भी आपकी रचना-प्रवणता का सम्यक् परिचय प्रस्तुत किया गया है। अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे आपकी साहित्यिक सेवाओ के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के निमित्त 'सुधाकर साहित्य परिषद् झालावाड़' की ओर से आपका हार्दिक अभिनन्दन किया गया था।



घनाक्षरी-कवित्त लिखने मे आप इतने सिद्ध थे कि सुकवि गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' आपकी प्रतिभा के प्रति पूर्ण श्रद्धा-नत थे। भारत की दशा का वर्णन आपने अपने एक कवित्त में इस प्रकार किया है .

आज मुहताज परदेश के प्रकाश का है,
सारे जहान का कभी जो तम-हारी था।
साहस-विहीन दीन दुर्लभ बना है वह,
तीन लोक माना जो महान् बलधारी था।।
कैसा 'कविंकिर' स्वरूप बिसराया हाय,
भीख माँगता है जो स्वतन्त्र अधिकारी था।
बात-बात ही मे भ्राता भ्रात लड जाते अहो,
भारत वही तो विश्व-प्रेम का पुजारी था।।

आप कवित्त छन्द के अतिरिक्त सवैये और दोहे आदि छन्दो की रचना करने मे भी अत्यन्त प्रवीण थे।

आपका निधन सन् 1967 मे हुआ था।

श्री गिरधारीसिंह पड़िहार

श्री पडिहार का जन्म 5 जुलाई सन् 1920 को राजस्थान के बीकानेर नगर मे हुआ था। आपके पिता श्री रावतसिह बीकानेर रियासत की फौज मे कर्मचारी थे। जब आप कक्षा 3-4 मे ही पढ रहे थे तब आपके पिताजी का असामयिक देहावसान हो गया। फलस्वरूप आपके परिवार की आर्थिक स्थिति अत्यन्त क्षीण हो गई और आपकी पढाई भी बीच मे ही रुक गई। अपने पारिवारिक दायित्वों के निर्वाह के लिए आपने कही नौकरी करने का निश्चय किया। कई जगह घूमने एव भटकने के उपरान्त आप बीकानेर नगर के 'टेलीफोन एक्सचेज' मे आपरेटर हो गए। नौकरी का सहारा मिल जाने पर आपने फिर अपनी पढाई जारी रखने का निश्चय किया और एक दिन



'भारतीय विद्या मन्दिर' की ओर से संचालित 'हिन्दी प्रभाकर' की कक्षा मे प्रवेश ले लिया। दिन मे नौकरी, रात मे पढ़ाई और ऊपर से पारिवारिक झझट। इन सब असुविधाओं मे भी आपने प्रभाकर की परीक्षा दी। किन्तु दुर्भाग्यवश उसमे उत्तीर्ण न हो सके।

परीक्षा की इस असफलता से आप निराश न हुए और अचानक 'सरस्वती का वरदान' आपको मिल गया। रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत की पुस्तक 'मॉझल रात' के स्वाध्याय से आपके मानव-मानस मे कविता की स्रोतस्विनी फूट पडी और आपने राजस्थानी मे कविताएँ लिखनी प्रारम्भ कर दी। आपकी रचनाओ का प्रमुख विषय देश की जनता मे वीरता के भावो का उद्रेक करके उसे धर्म, समाज और राष्ट्र की रक्षा के लिए प्रेरित करना था। आपकी कविताओ के सग्रह 'जागती जोता', 'मानसो' तथा 'सूरै रो सदेसो' नाम से प्रकाशित हो चुके है। राजस्थानी भाषा के नई पीढी के कवियो मे आपका स्थान सर्वथा अप्रतिम था।

खेद है कि शौर्य और वीरता के भावों का सवाहक यह कवि बीमारी से जूझते-जूझते असमय मे ही 4 अक्तूबर सन् 1968 को इस ससार से महाप्रयाण कर गया।

श्री गिरिजाकुमार घोष

श्री घोष का जन्म सन् 1878 मे बगाल के चौबीस परगना जिले के उत्तरपाडा वाडी नामक ग्राम मे हुआ था। आपके पारिवारिकजन आजीविका चलाने की दृष्टि से प्रयाग मे आ गए थे और यही पर आपकी शिक्षा-दीक्षा हुई थी। आपका स्थान हिन्दी के प्रारम्भिक काल के लेखको मे अन्यतम है। आप 'पार्वतीनन्दन' नाम से कहानी लिखा करते थे। आपका लेखन 'सरस्वती' से प्रारंभ हुआ था। आप इण्डियन प्रेस के स्वामी श्री चिन्तामणि घोष के भागीदार के रूप मे उसी प्रेस मे कार्य करते थे और आपके कार्य-काल मे ही 'सरस्वती' का प्रकाशन सन् 1900 मे 'इण्डियन प्रेस' से हुआ था। इण्डियन प्रेस मे आने से पूर्व आप एक्साइज कार्यालय मे काम करते थे और श्री चिन्तामणि घोष की प्रेरणा पर प्रेस से सम्बद्ध हो गए थे। 'सरस्वती' के 'हीरक जयन्ती

ग्रन्थ' मे आपके द्वारा 'पार्वती नन्दन' के नाम से अनूदित कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'मुक्ति का उपाय' नामक कहानी प्रकाशित है। आपने अपने हिन्दी-लेखन की शुरूआत पहले अनुवादक के रूप मे ही की थी। आपके द्वारा अनूदित गुरुदेव ठाकुर की यह रचना सन् 1901 की 'सरस्वती' मे प्रकाशित हुई थी।

धीरे-धीरे जब प्रेस का काम चलने लगा तब बाबू चिन्तामणि घोष ने आपके समक्ष यह प्रस्ताव रखा कि आप 1200 रुपये मासिक वेतन पर कार्य करने लगे और प्रेस की आधी साझीदारी का अधिकार छोड दे। श्री गिरिजाकुमार घोष को यह बात स्वीकार नही हुई और आप बिना कुछ लिये हुए ही प्रेस से पृथक् हो गए और फिर लीडर प्रेस मे मैनेजर के रूप मे कार्य प्रारम्भ कर दिया। उन दिनो भी आपको 500 रुपये मासिक वेतन वहाँ पर मिलता था। वहाँ भी आप अधिक समय तक नही टिक सके। एक दिन जब प्रेस के किसी अँग्रेज डायरेक्टर ने आपके कार्य को दोषपूर्ण बताने की धृष्टता कर दी तब आपका स्वाभिमान जाग उठा और आपने आनन-फानन मे ही अच्छी-खासी जमी हुई नौकरी को लात मार दी।



लीडर प्रेस से जीविका का आधार समाप्त हो जाने के उपरान्त आपने स्वतन्त्र रूप से हिन्दी-लेखन का कार्य प्रारभ किया और उससे जो कुछ मिल जाता था उसीसे परिवार का भरण-पोषण करने लगे। उन्ही दिनो आपका सम्पर्क राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन से हो गया, जिससे आपके लेखन को और भी अधिक प्रेरणा मिली। आपने उन्ही दिनो एक ऐसी हिन्दी पुस्तक का निर्माण किया, जो लडकियो के पाठ्य-क्रम मे आ गई। जिन दिनो अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का द्वितीय अधिवेशन सन् 1911 मे प्रयाग मे पडित गोविन्दनारायण मिश्र की अध्यक्षता मे हुआ था तब आप टण्डन जी के दाहिने हाथ के रूप मे उन्हे सहयोग दे रहे थे। आपके द्वारा हिन्दी मे अनूदित तथा मौलिक रूप से लिखित पुस्तको मे 'होमर गाथा', 'गल्प लहरी', 'नारी रत्न माला', 'छोटी बहू', 'लक्ष्मी', 'बाल रामायण' और 'सन्त जीवनी' आदि प्रमुख रूप से उल्लेख करने योग्य है।

आपका निधन केवल 42 वर्ष की आयु मे सन् 1920 मे हुआ था।

श्री गिरिजादत्त नैथाणी

श्री नैथाणी का जन्म सन् 1872 मे उत्तर प्रदेश के पौडी गढवाल जनपद की मन्यारस्यूँ पट्टी के नैथाणा नामक ग्राम मे हुआ था। सन् 1888 मे काँसखेत के मिडिल स्कूल मे मिडिल की परीक्षा देकर आप बरेली चले गए और वहाँ के 'बरेली कालेज' से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्ही दिनो आप अपने एक साथी के साथ आगरा चले गए जहाँ पर दुर्भाग्यवश आप एक डाकू के चकमे मे आकर पकडे गए और 4 वर्ष तक नैनी सेण्ट्रल जेल मे बन्द रहे। किसी भी युवक के लिए अपनी छात्रावस्था मे ऐसी दुर्घटना दुर्भाग्यपूर्ण हो सकती है, किन्तु नैथाणी जी के लिए यह जेल-निवास वरदान ही सिद्ध हुआ। वहाँ पर आपकी भेट एक अत्यन्त सुशिक्षित कैदी से हो गई, जिसके कारण आपका स्वाध्याय बढता गया और लेखन की शक्ति भी आपने वहाँ रहते हुए ही पूर्णत विकसित कर ली थी। जेल से छूटने पर आपने मई सन् 1902 मे लैंसडोन से 'गढवाल समाचार' नामक एक मासिक पत्र का सम्पादन तथा प्रकाशन प्रारम्भ किया। यह पत्र प्रारम्भ मे मुरादाबाद के 'आर्यभास्कर प्रेस' मे मुद्रित होता था, किन्तु बाद मे आपने उसका प्रकाशन अक्तूबर सन् 1902 से कोटद्वार से करना प्रारम्भ किया, किन्तु आर्थिक स्थिति की विषमता के कारण आप इस पत्र को आगे चालू न रख सके और 2 वर्ष भी पूरे नही हो पाए थे कि इसका प्रकाशन आपको स्थगित कर देना पडा।

इसके थोडे दिन उपरान्त जब सन् 1905 मे देहरादून की 'गढ़वाल यूनियन' की ओर से 'गढ़वाली' नामक पत्र के

प्रकाशन की योजना बनाई गई तब आपको ही अपने सम्पादकीय अनुभव के कारण उसका सम्पादन-कार्य सौपा गया। धीरे-धीरे यूनियन के पदाधिकारियो ने इसके प्रकाशन और सम्पादन का सारा दायित्व ही आपके ऊपर छोड दिया और आपने उसे पूरी तत्परता तथा योग्यता से निभाया। किन्तु किसी कारणवश जब सन् 1910 मे आपका 'गढवाली' की सचालक सस्था के अधिकारियो से मतभेद हो गया तब आपने वहाँ से अलग होकर सन् 1912 मे दुगड्डा मे 'स्टौवल प्रेस' नाम से अपना एक अलग प्रेस ही स्थापित कर दिया। इस प्रेस का नाम आपने गढवाल के तत्कालीन कमिश्नर के नाम पर रखा था। फरवरी सन् 1913 मे आपने इसी प्रेस से 'गढवाल समाचार' का पुनर्प्रकाशन प्रारम्भ किया, जिसे आप अनेक वर्ष तक सम्पादित करते रहे।

समालोचक शिरोमणि पण्डित पद्मसिह शर्मा द्वारा सम्पादित गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर का मासिक पत्र 'भारतोदय' जिन दिनो दुगड्डा मे आपके प्रेस मे छपा करता था तब शर्मा जी के द्वारा विरचित 'सतसई सहार' के कुछ परिच्छेद नैथाणी जी के इस प्रेस मे ही छपे थे। इमी बीच आपने 'विशाल कीर्ति' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन भी प्रारम्भ किया था। सन् 1914 मे फिर सहसा गढवाल के कुछ उत्साही नेताओ के प्रयास से आपका 'गढवाली' पत्र की सचालक सस्था 'गढवाल यूनियन' के सदस्यो से समझौता हो गया और आपका 'स्टौवल प्रेस' 'गढवाल यूनियन' ने खरीद लिया और आपको 'गढवाली' साप्ताहिक का सम्पादक नियुक्त कर दिया गया। इस प्रकार आप फिर देहरादून चले गए और जनवरी 1915 से अगस्त 1916 तक ही आप इस पत्र का सम्पादन कर सके और फिर सम्पादकीय नीति मे मतभेद हो जाने के कारण उससे अलग हो गए। इसके उपरान्त आपने सन् 1917 मे फिर दुगड्डा से 'पुरुषार्थ' नामक मासिक पत्र का सम्पादन-प्रकाशन प्रारम्भ किया। अपना प्रेस न होने के कारण यह पत्र बिजनौर के किसी प्रेस मे छपाना पडता था। इसके कुछ अक नैथाणा से प्रकाशित हुए थे और कुछ अक 'बाराबकी' मे भी छपे थे। खेद है कि नैथाणी का यह प्रयास सफल न हो सका और कुछ समय चलाकर ही इसे बन्द कर देना पडा। अपनी मृत्यु से कुछ समय पूर्व भी आपने प्रयास करके इसका एक अक निकाला था, किन्तु असमय मे काल-कवलित हो जाने के कारण आप अपना यह स्वप्न साकार न कर सके।

आप जहाँ एक उच्चकोटि के पत्रकार तथा सामाजिक कार्यकर्ता थे वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आपने अपनी प्रतिभा का पूर्ण परिचय दिया था। आपके द्वारा लिखी गई हिन्दी कहानियाँ उस समय के वातावरण को यथातथ्य रूप मे प्रस्तुत किया करती थी। उनमे अधिकाशत युद्ध-सम्बन्धी कथानक हुआ करते थे। आप उच्चकोटि के कवि भी थे। आपके द्वारा लिखी गई अनेक कविताएँ 'गढवाली' मे प्रकाशित हुआ करती थी। आपके द्वारा लिखे गए मागलो का एक सकलन 'मागल सग्रह' के नाम से सन् 1922 मे प्रकाशित हुआ था। आपके एक सुपुत्र श्री मायादत्त नैथाणी भी हिन्दी के अच्छे पत्रकार थे।

श्री नैथाणी जी का निधन 21 नवम्बर सन् 1927 को निमोनिया के कारण हुआ था।

श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'

श्री 'गिरीश' जी का जन्म 18 जनवरी सन् 1899 को उत्तर प्रदेश के जौनपुर जनपद के कोदईपुर नामक ग्राम मे हुआ था। प्रयाग विश्वविद्यालय से बी० ए०, एल-एल० बी० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप प्रयाग मे रहकर ही साहित्य-सेवा के कार्य मे पूर्णत सलग्न हो गए थे। आप मूलत कवि थे, किन्तु बाद मे आपने समीक्षा के क्षेत्र मे ही अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। आपका सर्व-प्रथम काव्य-सकलन 'रसाल वन' जब सन् 1925 मे प्रेम मन्दिर, आरा (बिहार) से छपा था तब सभी ओर से उसकी प्रशसा हुई थी। आपके द्वारा लिखित 'तारक वध' महाकाव्य (1958) भी अपनी विशिष्ट रचना-शैली के लिए विख्यात है। 'तारक वध' की भूमिका हिन्दी के वरिष्ठ कवि श्री सुमित्रानन्दन पन्त ने लिखी है। आपके अनेक फुटकर काव्य-ग्रन्थ प्रकाशित हुए थे। आपके द्वारा लिखित 'गृह लक्ष्मी' (खण्ड काव्य) भी अत्यन्त उल्लेखनीय है।

एक उत्कृष्ट और सहृदय कवि होने के साथ-साथ आप उच्चकोटि के समीक्षक भी थे। आपकी समीक्षात्मक कृतियो

मे 'महाकवि हरिऔध' (1932) तथा 'गुप्तजी की काव्य-धारा' (1936) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन दोनों



कृतियों का हिन्दी के समीक्षात्मक साहित्य मे इसलिए भी महत्त्व-पूर्ण स्थान है कि इनसे पूर्व इन दोनों महा-कवियो पर एक भी समीक्षा-पुस्तक नही थी। इसके उपरान्त आपकी अन्य समीक्षा-कृतियो मे 'समीक्षक-प्रवर श्री रामचन्द्र शुक्ल', 'हिन्दी के वर्तमान कवि और काव्य', 'उर्दू के कवि और उनका काव्य', 'हिन्दी की कहानी-लेखिकाएँ और उनकी कहानियाँ', 'हिन्दी काव्य की कोकिलाएँ', 'सूर पदावली' तथा 'साहित्य वार्ता' आदि विशिष्ट है। आपके द्वारा सम्पादित और हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की ओर से प्रकाशित 'सम्मेलन निबन्धमाला' का भी हिन्दी निबन्ध-साहित्य मे सर्वथा अप्रतिम स्थान है।

आप जहाँ उच्चकोटि के कवि और समीक्षक थे वहाँ उपन्यास-रचना के क्षेत्र मे भी आपकी प्रतिभा प्रचुर परिमाण मे प्रस्फुटित हुई थी। आपकी औपन्यासिक कृतियो में 'आस्तीन का साँप', 'जगद्गुरु का विचित्र चरित्र', 'नादिरा', 'पण्डाजी', 'पाप की पहेली', 'प्रेम की पीडा', 'विद्रोह', 'प्रोफेसर', 'बहता पानी' 'बाबू साहिब', 'लम्बोदर त्रिपाठी', 'सन्देह', 'स्मृति' तथा 'प्रमाण' आदि विशिष्ट है। आपकी अधिकाश रचनाओं पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कार भी प्रदान किये गए थे। साहित्यिक रचना-कार्य मे सलग्न रहते हुए भी आप अनेक सस्थाओं से सक्रिय रूप से जुडे हुए थे। आप जहाँ कई वर्ष तक उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधानमन्त्री रहे थे वहाँ सन् 1947 से सन् 1949 तक अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के सग्रह-मन्त्री भी रहे थे। यह आपकी साहित्यिक रचनाधर्मिता का ही उत्कृष्ट प्रमाण है कि आपको सन् 1949 मे अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर आयोजित 'साहित्य परिषद' के अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित किया गया था। यह सम्मेलन आचार्य चन्द्रबली पाण्डेय की अध्यक्षता मे हैदराबाद (दक्षिण) मे हुआ था।

पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपकी सेवाएँ उल्लेखनीय रही थी। आपने अपना साहित्यिक जीवन सर्वप्रथम एक पत्रकार के रूप मे ही प्रारम्भ किया था। आप जहाँ 'श्री शारदा' (जबलपुर) के सन् 1923 मे सहकारी सम्पादक रहे थे, वहाँ प्रयाग से प्रकाशित होने वाले 'मनोरमा' (1925), 'बाल सखा' (1926), 'प्रेम पत्र' (1933), 'वन लता', 'अरुणोदय', 'गृहवाणी' (1950), 'विद्यार्थी' (1952) आदि के सम्पादन मे भी आपका अनन्य योगदान रहा था।

आपका निधन 6 जून सन् 1959 को हुआ था।

श्री गिरिजादयाल श्रीवास्तव 'गिरीश'

श्री 'गिरीश' का जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के कचनपुर सरैयाँ नामक स्थान मे 1 जनवरी सन् 1897 को हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा बिसवाँ (सीतापुर) के सेठ जयदयाल कालेज



मे हुई थी और बाद मे आप सन् 1919 मे लखनऊ जाकर 'अवध चीफ कोर्ट' मे नौकर हो गए थे। जिन दिनो आप बिसवाँ मे पढा करते थे उन्ही दिनो अपने ग्राम के पण्डित रघुवरदयाल शुक्ल से प्रेरणा प्राप्त करके आप कविता की ओर उन्मुख हुए थे और अपनी रचनाएँ कानपुर से प्रकाशित होने वाले 'सुकवि' पत्र मे भेजने लगे थे। लखनऊ मे आकर आप वहाँ की 'कवि

समाज' नामक संस्था के सदस्य हो गए थे और उसके माध्यम से अपनी काव्य-प्रतिभा को विकसित करते रहे थे।

आप ब्रजभाषा के सिद्ध कवियों मे थे और आपकी रचनाओं के मुख्य विषय प्राय उपालम्भ, अलि-सुमन-सवाद, मजदूरों तथा अछूतों से सम्बन्धित हुआ करते थे। कवित्त तथा सवैया छन्दों में रचना करने मे आप अत्यन्त सिद्धहस्त थे। आपकी 'ताजमहल' तथा 'शिशु' नामक रचनाएँ अत्यन्त लोकप्रिय रहो थी। कवि-सम्मेलनो के माध्यम से राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार तथा प्रसार करने मे 'गिरीश' जी सर्वथा अग्रणी रहे थे।

आपकी रचनाओं मे 'वीणा वादिनी', 'तरगिणी', 'कालिन्दी माधवी', 'महिला महत्त्व', 'विधवा विलाप', 'वासन्ती' तथा 'राका' आदि प्रमुख है। इनमे से केवल पहली 2 कृतियाँ ही प्रकाशित हो सकी थी। आप श्री अनूप शर्मा के सहपाठी रहे थे और सर्वश्री गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही', श्रीनारायण चतुर्वेदी तथा अमृतलाल नागर आदि अनेक ख्यातिप्राप्त साहित्यकार आपका बड़ा सम्मान करते थे।

आपका निधन 28 दिसम्बर सन् 1976 को हुआ था।

श्री गिरिजाशंकर मिश्र

श्री मिश्र का जन्म जुलाई सन् 1918 मे उत्तर प्रदेश के



कानपुर जनपद के भरहरा नामक ग्राम मे हुआ था। आपके पिता पण्डित बेनी-प्रसाद मिश्र सदर कानूनगो थे। अपने पिता के स्थानान्तरण के कारण आपको अनेक स्थानो पर उनके साथ रहना पड़ा था और इसी कारण आपकी शिक्षा जमकर न हो सकी थी। अपने अध्यवसाय के बल पर ही बी० ए० करने के उपरान्त सी० टी० करके आपने बिन्दकी (फतहपुर) मे अध्यापन प्रारम्भ कर दिया था। नौकरी करते हुए ही आपने आगरा विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा उत्तीर्णकी और 'विद्यालय निरीक्षक' के रूप मे पदोन्नत हो गए। बेसिक शिक्षा के क्षेत्र मे आपकी सेवाएँ उल्लेखनीय थी।

अपनी शैक्षणिक तथा प्रशासकीय व्यस्तताओं में से समय निकालकर आपने हिन्दी मे लेखन का कार्य भी जारी रखा और 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' नामक एक पुस्तक का प्रणयन किया। आपके लेख आदि हिन्दी की अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करते थे।

आपका निधन 20 नवम्बर सन् 1979 को प्रयाग मे हुआ था।

श्री गिरिजाशंकर शुक्ल

श्री शुक्ल का जन्म उत्तर प्रदेश के कानपुर जनपद के सकरवाँ नामक ग्राम मे 10 जुलाई सन् 1919 को हुआ था। आपकी

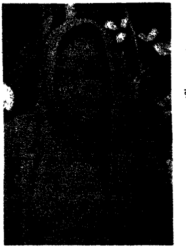


रचनाएँ समय-समय पर तत्कालीन प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित हुआ करती थी और आप प्राय सभी कवि-सम्मेलनों तथा कवि-गोष्ठियो मे भाग लिया करते थे। आप एक उत्कृष्ट कवि होने के साथ-साथ उच्चकोटि के स्वतन्त्रता सेनानी भी थे। आपकी रचनाओ का एक सकलन सन् 1953 मे 'युग वीणा' नाम से प्रकाशित हुआ था।

आपका देहावसान 5 अक्तूबर सन् 1969 को हुआ था।

माँजी गिरिराज कुँवरि

माँ जी गिरिराज कुँवरि भरतपुर-नरेश महाराज रामसिंह की प्रथम पत्नी थी। आपका जन्म दीवली ग्राम तहसील वैर (भरतपुर) के सम्भ्रान्त ठाकुर-परिवार मे सन् 1883 मे हुआ था। आप अत्यत ही धर्मनिष्ठ और परोपकारी भावना से परिपूर्ण महिला थी। अपने सुपुत्र महाराज कृष्णसिंह की छठी वर्ष-गाँठ के शुभ अवसर पर आपने सन् 1905 मे 'ब्रजराज विलास' नामक एक काव्य-सकलन वेकटेश्वर प्रेस बम्बई से प्रकाशित कराया था। 134 पृष्ठ की उस पुस्तक की भूमिका मे आपने लिखा था—"स्त्रियो मे लज्जित गान करने का रिवाज बढता जाता है।...मनोहर, पवित्र, उत्तम विषययुक्त और मागलिक गान करना स्त्रियो का धर्म है।"



अपनी इन्ही उदात्त भावनाओं के वशीभूत होकर आपने 'ब्रजराज विलास' की रचना की थी। साधारण चाल मे मनोरजन करने और भक्ति की भावना से अभिभूत होकर ही आपने इस ग्रन्थ का प्रकाशन कराया था। आप गोपालजी की परम भक्त थी। 'ब्रजराज विलास' का यह प्रथम दोहा इसका ज्वलन्त प्रमाण प्रस्तुत करता है :

पारब्रह्म परमात्मा, दीनबन्धु प्रतिपाल।
नमो हाथ बँ जोड कै, भजहुँ सदा गोपाल॥

आपके इस ग्रन्थ मे शिव-पूजन, बधाई, अनेक लीलाओ और रास-पचाध्यायी के पद होली, मल्हार, माढ, रसिया, गजल आदि अनेक राग-रागिनियो मे है। इसके अन्तिम भाग मे 'जानकी मगल' है, उसके एक पद की टेक इस प्रकार है

जहाँ आदर भाव न पइये
मनुवा वा घर कबहुँ न जइये।

आपके द्वारा विरचित इस ग्रन्थ की रचनाओ मे आपकी कवित्व-प्रतिभा पूर्णत: प्रस्फुटित हुई है। भगवान् कृष्ण के प्रति आपके मानस मे कितना लगाव था इसका परिचय आपकी इन पंक्तियों से भली-भाँति मिल जाता है :

इन बातन कछु हाथ न आवै, नित उठि मोहि उडावै।
कित मे रहत कौन को ढोटा, कहा तू मोहि सुनावै॥
को जानै झूठी-साँची, तेरी हाँसी मोहि न भावै।
जो तू मन मोहन सँग मेरी प्रीत पुनीत बतावै॥
तौ ब्रजपति सों लगी लगनियाँ लागी पे कौन छुडावै॥

आपने 'ब्रजराज पाकशास्त्र' और 'देसी इलाज सग्रह' नामक दो और पुस्तको की रचना की थी। उनमे से 'देशी इलाज सग्रह' का प्रकाशन नही हो सका। 'ब्रजराज पाकशास्त्र' नामक ग्रन्थ का विभाजन आपने ऋतुओ के अनुसार किया था और उसमे प्रत्येक मौसम की दिनचर्या के अनुसार भोजन, पकवान तथा अचार आदि बनाने की विधियाँ बताकर उनके गुण-दोषो का विवेचन भी यथा-प्रसग वर्णित किया गया था। इन दोनो प्रकाशित रचनाओ मे आपने अपने सुपुत्र श्री कृष्ण-सिंह (भरतपुर-नरेश) के चित्र भी प्रकाशित किये थे।

आपने अपने सुपुत्र की शिक्षा-दीक्षा का उचित प्रबन्ध किया था और उनके साथ सन् 1910 तथा सन् 1914 मे इगलैंड की यात्रा भी की थी। आपको ब्रिटिश सरकार ने 'सी० आई०' का खिताब भी दिया था। आपकी स्मृति मे गोवर्धन (मथुरा) के 'कुसुम सरोवर' पर एक छतरी बनी हुई है।

आपका निधन 24 सितम्बर सन 1922 को हुआ था।

गुमानी कवि

गुमानी कवि का जन्म उत्तर प्रदेश के कूर्माचल क्षेत्र के काशीपुर नामक नगर मे सन् 1790 मे हुआ था। आपका वास्तविक नाम 'लोकरत्न पन्त' था। यद्यपि आपका मूल निवास-स्थान गगोली का उपराडा गाँव था, किन्तु आपके पूर्वज महाराष्ट्रीय ब्राह्मण थे, जो वहाँ से आकर पौरोहित्य करने की दृष्टि से काशीपुर मे बस गए थे। 24 वर्ष की अवस्था तक सस्कृत तथा हिन्दी का अच्छा अध्ययन करने के

उपरान्त आपने खूब देशाटन किया और उसके उपरान्त आप काशीपुर के राजा गुमानसिंह देव की सभा मे 'राजकवि' हो गए थे। यह भी जनश्रुति है कि राजा गुमानसिंह के दरबार मे रहने के कारण ही आपका नाम 'गुमानी' या 'गुमान' पडा था। आपके पिता भी आपको 'गुमानी' नाम से पुकारा करते थे।

आप सस्कृत तथा हिन्दी के अतिरिक्त अँग्रेजी, फारसी, उर्दू और नेपाली भाषाओ के मर्मज्ञ विद्वान् होने के साथ-साथ अपनी मातृभाषा 'कुमायूँनी' के भी अच्छे ज्ञाता थे। सस्कृत, हिन्दी तथा ब्रजभाषा मे अच्छी कविताएँ लिखने के अतिरिक्त आप कुमायूँनी भाषा मे भी काव्य-रचना करने मे अत्यन्त पटु थे। आपकी कुछ रचनाएँ ऐसी भी मिलती हैं जिनमे सस्कृत, हिन्दी, नेपाली, कुमायूँनी और उर्दू शब्दो का खुला प्रयोग किया गया है। आपने हिन्दी-सस्कृत-मिश्रित शब्दो मे पर्वतीय भाषाओ के ऐसे पद बनाए है जिनकी संख्या शताधिक है।

आप काशीपुर के नरेश के दरबारी कवि तो थे ही, टिहरी-नरेश महाराजा सुदर्शन शाह के दरबार मे भी आप सचिव के रूप मे रहे थे। आपकी रचनाओ मे 'रामनाम पचाशिका', 'राम महिमा वर्णन', 'गगा शतक', 'जगन्नाथाष्टक', 'कृष्णाष्टक', 'राम सहस्र गणदण्डक', 'चित्र पद्मावली', 'राम महिमा', 'रामाष्टक', 'कालिकाष्टक', 'राम विषयक भक्ति विज्ञप्ति सार', 'तत्त्व विद्योतिनी पच पचाशिका', 'नीतिशतक शतोपदेश', 'राम विषय विज्ञप्ति सार' तथा 'ज्ञान भैषज्य मजरी' आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कुछ लोग 'तिथि निर्णय', 'आचार निर्णय' और 'अशौच निर्णय' को भी इनकी ही कृतियाँ मानते है। आपकी रचनाओ के 'गुमानी नीति' तथा 'गुमानी कवि विरचित दो काव्य सग्रह' नामक संकलन क्रमश श्री रेवाधर उप्रेती तथा देवीदत्त शर्मा द्वारा सम्पादित होकर प्रकाशित हो चुके है। आपकी हिन्दी, कुमायूँनी, नेपाली और सस्कृत रचना का एक उदाहरण इस प्रकार है

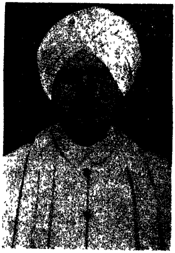
बाजे लोग त्रिलोकनाथ की पूजा करें तो करैं। (हिन्दी)
वने वने भवन गणेश का जगत मे बाजा हुनी तौ हुनौ।।
(कुमायूँनी)
रामो ध्यान भवानि का चरण माँ गरदन कसे ले गरन।
(नेपाली)
धन्यात्मातुल धामनीह रमते रामे गुमानी कवि.।।
(सस्कृत)

आपकी ख्याति केवल पर्वतीय अचलो मे ही नही थी, प्रत्युत अपनी जन्म-भूमि से कोसो दूर बिहार मे भी आपका बडा सम्मान था। आपकी लोकप्रियता का सबसे बडा प्रमाण यही है कि आपने अपनी रचनाओं मे समाज की तत्कालीन परिस्थितियों का अच्छा चित्रण किया है। आपने अपनी रचनाओ मे जहाँ पटियाला के महाराजा कर्णसिह के शौर्य एव पराक्रम का वर्णन किया है वहाँ अलवर-नरेश नैनसिह की राजनीति तथा नाहन के भूपति फतह प्रकाश के राज्य की सुख-शान्ति के चित्रण को भी अपने काव्य का आधार बनाया है। आपकी रचनाओ का वर्णन जार्ज ग्रियर्सन ने अपनी 'लिग्विस्टिक सर्वे आफ इण्डिया' नामक ग्रन्थ मे अत्यन्त विस्तार से किया है।

आपका निधन सन् 1846 मे हुआ था।

पण्डित गुरुदत्त शास्त्री वैद्य

श्री वैद्य जी का जन्म सन् 1893 मे उत्तर प्रदेश के अलीगढ जनपद के विजयगढ नामक कस्बे मे हुआ था। आप वहाँ के प्रख्यात चिकित्सक और समाज-सेवी थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा विजयगढ के स्कूल मे हुई थी और सस्कृत का अध्ययन आपने पीलीभीत तथा फिरोजाबाद मे रह-कर किया था। जयपुर के सस्कृत कालेज से आयुर्वेद की उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के उप-रान्त आप पूर्णत



चिकित्सा के क्षेत्र मे संलग्न हो गए। आपके आयुर्वेद के

सहपाठियों मे मेरठ के रामसहाय वैद्य, गुरुकुल वृन्दावन के भूतपूर्व प्राध्यापक उमाशकर द्विवेदी और हरिद्वार के पण्डित पूर्णानन्द पन्त के नाम विशेष उल्लेखनीय है।

आर्य समाज के अनेक सुधारवादी आन्दोलनो मे सक्रिय रूप से भाग लेने के साथ-साथ आपने महात्मा गांधी द्वारा प्रारम्भ किये गए 'असहयोग आन्दोलन' मे भी बढ-चढकर भाग लिया था। स्वदेशी वस्त्रों के प्रचार के लिए आपके मानस मे कितनी लगन थी, इसका प्रमाण आपके द्वारा लिखित इन पक्तियों से मिलता है·

हर साल कपड़े के लिए, धन साठि कोटि विदेश को—
अरु सूत हित देना पड़े है कोटि दश निज देश को।
बदले मे इन रुपयों के, हम हैं नाज घी देते रहे।
इससे हमारे देशवासी भूख से मरते रहे।
अतएव गाधी, मालवी का वचन यह सुन लीजिये।
घर-घर चले चरखा सभी नर-नारि खद्दर लीजिये॥

राष्ट्रीय और सामाजिक जागरण के क्षेत्र मे कार्य करते हुए आपने अनेक युवको के जीवन-निर्माण मे उल्लेखनीय सहयोग दिया था। वैद्य जी के सम्पर्क से उस समय उस नगर के जिन नवयुवको ने अनन्य प्रेरणा ग्रहण की थी उनमे हिन्दी के प्रख्यात पत्रकार और बयालीस की क्रान्ति के अमर शहीद श्री रमेशचन्द्र आर्य का नाम विशेष रूप मे उल्लेखनीय है। आपने विजयगढ मे 'श्री गाधी विद्यालय' की सस्थापना मे अपना अनन्य सहयोग दिया था। आपके निधन के उपरान्त अब इसका नाम 'महात्मा गान्धी गुरुदत्त इण्टर कालेज' हो गया है। 'अमर ज्योति' नामक विद्यालय की पत्रिका का जो 'श्रद्धांजलि परिशिष्ट' प्रकाशित किया था उसमे हिन्दी के अनेक लेखको ने वैद्य जी की विभिन्न सेवाओ का कृतज्ञतापूर्वक उल्लेख किया था। हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार श्री हरिशंकर शर्मा ने आपके निधन पर जो कविता लिखी थी वह इस प्रकार है

श्री पण्डित गुरुदत्त वैद्यवर मित्र हमारे
छोड धरा, गृह, ग्राम हाय सुरधाम सिधारे
थे पीयूष-पाणि जन-सेवक जन हितकारी
आधि-व्याधि-सन्तप्त जनों के आश्रय भारी
वे सहृदयता के सिन्धु थे, गुण-गरिमा अनुरक्त थे।
ऋषि दयानन्द के शिष्यवर, वेदों के दृढ़ भक्त थे॥

एक कुशल सामाजिक कार्यकर्ता और पीयूष-पाणि चिकित्सक होने के साथ-साथ आप हिन्दी के सुलेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'प्रमेह की प्राकृतिक चिकित्सा', 'आर्य चिकित्सा-पद्धति' और 'वर्ण विवेक' (पद्य-बद्ध) के नाम विशेष उल्लेखनीय है।

आपका निधन 2 मई सन् 1953 को हुआ था।

श्री गुरुदेव स्वामी

श्री स्वामी का जन्म उत्तर प्रदेश के रायबरेली जनपद के हरिदासपुर नामक ग्राम मे सन् 1875 मे हुआ था। अँग्रेजी मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करके आपने रेलवे विभाग मे नौकरी कर ली थी और बीसवी शती के तीसरे दशक मे उससे निवृत्ति पाने के उपरान्त आप स्थायी रूप से मथुरा मे रहने लगे थे, जहाँ पर आपकी विधवा पुत्री मनोरमा देवी शास्त्री वहाँ की आर्य कन्या पाठशाला मे प्रधानाध्यापिका थी। आपका बाल्यावस्था का नाम गुरुप्रसाद था। बाद मे आप सन्यास ग्रहण करने के उपरान्त गुरुदेव स्वामी के नाम से विख्यात हुए थे। आपका सन्यासावस्था का नाम 'महादेवानन्द सरस्वती' भी था।

स्वामी जी प्रारम्भ से ही राष्ट्रीय विचार-धारा से प्रभावित थे। सन् 1932 मे आपने निषेधाज्ञा भग करके दिल्ली मे एक मास तक कारावास भी भोगा था। जिन दिनो सन् 1942 का सुप्रसिद्ध क्रान्ति आन्दोलन हुआ था तब आपके लघु पुत्र श्री चिन्तामणि शुक्ल बुलन्दशहर मे रहा करते थे और वहाँ पर रहते हुए ही आपने



उस आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग लिया था। स्वामी

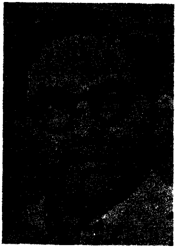
जी एक राष्ट्रीय दृष्टिकोण वाले समाज-सुधारक होने के साथ-साथ उच्चकोटि के कवि भी थे। आपकी काव्य-कृतियो में 'सुन्दर रसिक विनोद', 'गोविन्द गीता','गजेन्द्र मोक्ष' तथा 'उपनिषत्सार' के नाम अनन्य है। इनमे से पहली कृति का केवल पूर्वार्द्ध ही प्रकाशित हुआ था। उत्तरार्द्ध की पाण्डुलिपि अभी तक सुरक्षित है। इसी प्रकार 'गोविन्द गीता' पहले सन् 1921 मे आपने ग्वालियर की राजमाता को पाण्डुलिपि के रूप मे समर्पित की थी, किन्तु बाद मे मथुरा मे इसका प्रकाशन हुआ था। अन्तिम दोनों कृतियो का प्रकाशन भी नही हो सका था।

आपका निधन 12 सितम्बर सन् 1942 को बुलन्दशहर मे हुआ था।

डॉ0 गुलाबचन्द्र चौधरी

डॉ० चौधरी का जन्म मध्य प्रदेश के जबलपुर जनपद के सिल्लौडी नामक ग्राम मे 2 अक्तूबर सन् 1917 को हुआ था। अपनी प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम मे पूरी करके आपने 'दिगम्बर जैन शिक्षा-सस्था' कटनी से सिद्धान्तशास्त्री और काव्यतीर्थ आदि परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। तदुपरान्त आप काशी चले गए और वहाँ सन् 1939 से सन् 1947 तक 'श्री स्याद्वाद विद्यालय' तथा 'भारतीय ज्ञानपीठ' मे कार्य-रत रहे। वहाँ पर कार्य करते हुए ही आपने व्याकरणाचार्य तथा साहित्यरत्न की परीक्षाएँ देने के अतिरिक्त 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' से मैट्रिक से लेकर एम० ए० तक की उपाधियाँ प्राप्त की। काशी मे रहते हुए ही आपका सम्पर्क प्रख्यात इतिहासवेत्ता श्री जयचन्द्र विद्यालकार से हो गया और लगभग 3 वर्ष तक आपने उनकी 'भारतीय इतिहास परिषद्' मे कार्य किया। फिर आपने काशी की 'श्री सन्मति जैन निकेतन' और 'श्री पार्श्वनाथ जैन विद्याश्रम' नामक सस्थाओ मे कार्य करते हुए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से 'प्राचीन भारतीय इतिहास और सस्कृति' विषय पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-एच० डी० की उपाधि भी प्राप्त की।

काशी के बाद आपने सन् 1952 से सन् 1960 तक बिहार सरकार के शिक्षा विभाग के अधीन 'नव नालन्दा महा विहार पटना' में एक विशाल पुस्तकालय की स्थापना में सक्रिय योगदान दिया और वहाँ पर रहते हुए ही पालि-प्राकृत-सस्कृत के पाठ्यग्रन्थों



एव भारतीय इतिहास तथा सस्कृति का अध्यापन करने के साथ-साथ अनेक शोधार्थियों का पथ-प्रदर्शन भी किया। फिर आप बिहार सरकार के अधीन मुजफ्फरपुर मे स्थापित 'प्राकृत जैन शोध प्रतिष्ठान' मे जैन दर्शन एवं विविध प्राकृत भाषाओ का अध्यापन करने के निमित्त वहाँ चले गए। इसके उपरान्त 'मिथिला शोध सस्थान दरभगा' तथा नवनालन्दा महाविहार मे भी वरिष्ठ प्राध्यापक का कार्य किया और वहाँ पर रहते हुए भी आपने 'वृहत्तर भारत के इतिहास' का प्राध्यापन करने के साथ-साथ अनेक शोध-छात्रो का पथ-प्रदर्शन किया। इसके साथ-साथ आप देश के अनेक विश्वविद्यालयो की स्नातक, स्नातकोत्तर और शोध-परीक्षाओ के परीक्षक भी रहे थे। जैन सस्कृति और साहित्य के उन्नयन की दिशा मे आपका योगदान प्रशसनीय रहा था।

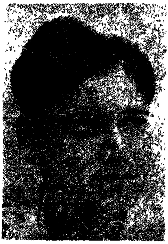
आप जहाँ कुशल प्राध्यापक और गम्भीर प्रकृति के पण्डित थे वहाँ आपने अपनी लेखनी के माध्यम मे भी साहित्य की बडी सेवा की थी। आपके द्वारा विरचित एव सम्पादित ग्रन्थो मे 'पुराण सार सग्रह' (दो भाग), 'जैन शिलालेख संग्रह' (भाग 2-3) तथा 'जैन काव्य साहित्य का इतिहास' आदि विशेष उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपने कन्नड भाषा के 53 जैन शिलालेखो का देवनागरी लिप्यन्तर तथा सारानुवाद भी प्रस्तुत किया था। जैन सस्कृति और साहित्य के सम्बन्ध मे आपके अनेक महत्त्वपूर्ण लेख विभिन्न शोध-पत्रिकाओ मे भी प्रकाशित हुए थे।

आपका निधन सन् 1972 मे हुआ था।

श्री गुलाबप्रसन्न शाखाल

श्री शाखाल का जन्म सन् 1914 में मध्यप्रदेश के जबलपुर नगर में हुआ था। आपके पिता सेठ छुनमुनलाल गोलछा नगर के अत्यन्त प्रतिष्ठित नागरिक थे। एम० ए० तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप प्रारम्भ में नगर के 'हितकारिणी हाई स्कूल' में अध्यापक हो गए थे, किन्तु बाद में आपने कलकत्ता जाकर वहाँ से प्रकाशित होने वाले 'समाज सेवक' नामक पत्र का सम्पादन 2 वर्ष तक किया था। वहाँ से श्री शाखाल बम्बई के पोद्दार सेठ की फर्म में प्रचार-अधिकारी होकर चले आए थे। जब आप कलकत्ता में थे तब आपका सम्पर्क वहाँ पर हिन्दी के प्रख्यात उपन्यासकार श्री भगवतीचरण वर्मा से हो गया था, वे वहाँ पर 'विचार' साप्ताहिक का सम्पादन कर रहे थे। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेख्य है कि आपकी प्रेरणा पर ही वर्मा जी 'विचार' के बन्द हो जाने पर बाम्बे टाकीज में संवाद एवं कहानी-लेखक के रूप में गए थे।

अपने छात्र-जीवन से ही आपकी साहित्यिक प्रतिभा प्रस्फुटित हो गई थी और सन् 1931 में ही आपकी रचनाएँ देश की सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में होने लगी थी। शाखाल जी मध्यप्रदेश के अच्छे गीतकार थे। आपकी रचनाओं में कल्पना, भावना और अनुभूति की सरस त्रिवेणी प्रवाहित होती रहती थी। कविता के साथ-साथ कहानी-लेखन के क्षेत्र में भी आपने अच्छी लोकप्रियता अर्जित की थी। आपकी कविताओं में छायावादयुगीन सहज भावुकता की जो



झलक दिखाई देती है उससे उनकी अनुभूति की गहराई का पता चलता है। भाषा, भाव, छन्द और शिल्प-विधान सभी दृष्टि से आप छायावाद युग की सही अभिव्यक्ति के सूत्रधार कवियों में अग्रणी थे। आपकी इन पंक्तियों में भावुकता के दर्शन मिलते हैं

अधर पर फरियाद बाँधे अश्रु-कण में आस।
प्रात-सुधि में रात बीती, निशि बुलाते साँस।।
मुस्कराते नयन आते, प्राण जाते खोल।
मूक-से संसार में तुम, प्रथम सुख की बोल।।

आपकी रचनाओं में 'प्रतीकवाद' की झाँकी भी कहीं-कहीं देखने को मिल जाती है। आप जहाँ अच्छे कवि थे वहाँ कुशल स्वर-साधक भी थे। अपने निधन से पूर्व आपने जबलपुर छोड़कर बम्बई को अपना कार्य-क्षेत्र बना लिया था। यह खेद का विषय है कि साहित्य की विभिन्न विधाओं में अत्यन्त सशक्त रचनाएँ करने पर भी आपकी कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हो सकी। आपकी कुछ कविताएँ श्री ब्योहार राजेन्द्रसिंह द्वारा सम्पादित और मध्यप्रान्त निदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से प्रकाशित 'नक्षत्र' नामक काव्य-संकलन में प्रकाशित हुई हैं।

आपका निधन सन् 1978 में बम्बई में हुआ था।

श्री गुलाबरत्न वाजपेयी 'गुलाब'

श्री वाजपेयी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के सुमेरपुर नामक ग्राम में सन् 1901 में हुआ था। आपके पिता श्री कामेश्वर वाजपेयी अपने क्षेत्र के बहुत बड़े जमींदार तथा वस्त्र-व्यवसायी थे। पारिवारिक पृष्ठभूमि व्यावसायिक होने के कारण आपकी शिक्षा अधिक नहीं हो सकी थी और आपका अध्ययन कक्षा 4 में ही रुक गया था। आपकी यह शिक्षा भी वाराणसी में हुई थी। जिन दिनों आप चौथी कक्षा में पढ़ा करते थे तब आपको 'नथुनी' नाम से पुकारा जाता था। जब आपकी पढ़ाई बीच में ही रुक गई तो आप 'भारत' (प्रयाग) के तत्कालीन सम्पादक राधाकुमुद झिंगरन की प्रेरणा से काशी 'कारमाइकेल लायब्रेरी' में जाने लगे, जिससे आपकी अध्ययन कीप्र वृत्ति दिनानुदिन बढ़ती ही गई। परिणामस्वरूप कविता तथा गद्य-लेखन की ओर आपका झुकाव हो गया और झिंगरन जी की प्रेरणा पर ही आपने केवल 12 वर्ष की अवस्था में एक कविता लिखी थी,

जो उन दिनो कानपुर मे प्रकाशित होने वाले 'प्रताप' साप्ताहिक के मुखपृष्ठ पर छपी थी।

धीरे-धीरे श्री झिगरन जी की प्रेरणा और 'प्रताप' के सम्पादक श्री गणेशशकर विद्यार्थी के प्रोत्साहन से आपकी लेखन-प्रतिभा विकसित होती गई और आप अपनी रचनाएँ अन्य पत्र-पत्रिकाओ को भी भेजने लगे। उन दिनो आपकी रचनाएँ जहाँ 'प्रताप' के अतिरिक्त 'सरस्वती', 'सुधा', 'माधुरी' आदि मे सम्मान छापी जाती थी वहाँ वे उरई (उत्तर प्रदेश) से प्रकाशित होने वाले 'उत्साह' तथा खण्डवा (मध्यप्रदेश) के 'कर्मवीर' मे भी छपा करती थी। आपके साहित्यिक जीवन के प्रेरणा-स्रोत उपर्युक्त महानुभावो के अतिरिक्त सर्वश्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', मैथिलीशरण गुप्त और माखन लाल चतुर्वेदी भी थे। 'मतवाला' मे आपकी रचनाएँ ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। उन दिनो आपको इन पत्र-पत्रिकाओ से 5 रुपये से लेकर 15 रुपये तक पारिश्रमिक के रूप मे मिला करते थे। हिन्दी के प्रख्यात मनीषी आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र आपके भानजे थे। वे भी आपकी साहित्य-साधना से प्रभावित होकर इस क्षेत्र मे आगे बढे थे। आपने केवल 14 वर्ष की आयु मे ही 'चित्रकाव्य' नामक एक काव्य-कृति की रचना की थी।



आप उच्चकोटि के कवि होने के साथ-साथ सफल उपन्यासकार भी थे। कहानी-लेखन की दिशा मे भी आपकी लेखनी का समर्थ अवदान हिन्दी-साहित्य को मिला था। आपने सन् 1930 से सन् 1945 तक कलकत्ता की 'भारत लक्ष्मी स्टुडियो' नामक एक नाटक-कम्पनी मे भी कार्य किया था। कुछ समय तक चित्रपट-कथा-लेखन को आपने अपना प्रमुख ध्येय बनाया था। आपके जीवन का अधिकांश समय कलकत्ता मे ही व्यतीत हुआ था। आपकी रचनाओ मे 'चित्र-काव्य', 'लतिका' (कविता), 'समाज विप्लव', 'काँटा', 'हलाहल', 'मृत्युजय', 'वसुन्धरा', 'सेवा और त्याग', 'सत्याग्रही', 'नारंगी', 'मल्लिका' (उपन्यास), 'प्रेम पथ', 'बारूद', 'पागलखाना', 'पपीहा' तथा 'तारामण्डल' (कहानी) आदि के अतिरिक्त मनोविज्ञान और काम-शास्त्र से सबधित 'आकर्षण शक्ति', 'नई रोशनी', 'अमर जीवन', 'सजीवनी', 'आत्म-ज्योति', 'स्त्री-पुरुष', 'नर-नारी' तथा 'नारी विद्रोह' आदि विशेष उल्लेखनीय है। आपकी इन कृतियो मे से 'आकर्षण-शक्ति' तथा 'काँटा' के तो क्रमश अग्रेजी, बगला तथा नेपाली भाषाओ मे अनुवाद भी हो चुके है। नाटक-लेखन-सबधी आपकी प्रतिभा के दर्शन आपके द्वारा लिखित 'भक्त के भगवान्' तथा 'दिल की प्यास' मे हो जाते है। इनमे से 'दिल की प्यास' का तो फिल्मीकरण भी हो चुका है। बाल-साहित्य के निर्माण की ओर भी आपने अपनी प्रतिभा को मोडा था। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'कुकुम' तथा 'गुलाब जी की श्रेष्ठ कहानियाँ' उल्लेख है।

आपका निधन 19 दिसम्बर सन् 1970 को हुआ था।

कविवर गुलाबराय

श्री गुलाब राय का जन्म मध्य प्रदेश के छतरपुर नामक स्थान मे सन् 1874 मे हुआ था। आप छतरपुर के महाराजा विश्वनाथ सिह जूदेव के कृपापात्र कवि रहे थे। आपकी कृतियो मे 'काली पचक', 'हरिश्चन्द्र पचक', 'सती माहात्म्य' और 'कवित्त सग्रह' आदि विशेष उल्लेखनीय है। आपकी रचनाओ मे भक्ति के साथ-साथ शृगार का पुट भी यत्र-तत्र दृष्टिगत होता है।

आप हिन्दी के परम भक्त थे। अपनी इस भावना का प्रकटीकरण आपने अपनी एक रचना मे इस प्रकार किया है

बानी ये निज देश की, सुखदानी जस धाम।
रसखानी जानी सुकवि, कविता करी ललाम।।
कविता करी ललाम, काम याही सो लीनौ।
हिन्दुस्थानि कहाय यार, हिन्दी तो चीनौ।।

कह 'गुलाब' यह सहज, बालपन ही से जानी।
यह नागरी सुदेस देव बानी सम बानी।।

आपका निधन सन् 1930 में हुआ था।

सन्त गुलाबराव महाराज

सन्त गुलाबराव जी का जन्म महाराष्ट्र के अमरावती जनपद से 23 मील दूर माधान नामक ग्राम मे सन् 1880 मे हुआ था। 9 मास की अवस्था मे ही आपकी नेत्र-ज्योति क्षीण हो गई थी और जब 4 वर्ष के थे तब आपकी माता का स्वर्गवास हो गया था। आपका लालन-पालन आपकी नानी ने किया था। यद्यपि आपको विधिवत् कोई शिक्षा नही मिली थी, किन्तु आपकी बुद्धि इतनी परिपक्व तथा पैनी थी कि वे जिस ग्रन्थ को भी सुनते थे, उसे तुरन्त कण्ठस्थ कर लेते थे। यहाँ तक कि महाभारत, पुराण, गीता, भागवत, रामायण और योग वाशिष्ठ आदि ग्रन्थों से भी आपका परिचय हो गया था। सन्त ज्ञानेश्वर का भक्त होने के कारण आपको 'ज्ञानेश्वरी' भी पूर्णत कण्ठस्थ थी। महाकवि तुलसीदास के 'रामचरित-मानस' पर भी आपका अनन्य अनुराग था। सन् 1896 मे आपका विवाह हुआ था और 13 वर्ष बाद आपकी धर्मपत्नी का देहान्त हो गया था।

आपका जीवन मधुरा और प्रेमा भक्ति से पूरी तरह सश्लिष्ट था। अपनी धर्मपत्नी के देहावसान के उपरान्त आपने अपना सारा जीवन प्रभु के चरणो मे ही समर्पित कर दिया था। आप जब सन् 1910 मे काशी गए थे तब वहाँ के प्रख्यात पण्डित आदित्यराम भट्टाचार्य आपकी विद्वत्ता पर बहुत मुग्ध हुए थे। उन्होंने आपको 'बाल वृहस्पति' की उपाधि भी प्रदान कर दी थी। गोपी और कृष्ण की लीला के माध्यम से आपने अपने मनोभावों को सर्वथा निराले ढग से व्यक्त किया है। आपके द्वारा लिखित पदों मे आपकी यह भक्ति-भावना इस प्रकार व्यक्त हुई है :

माई मोहे श्याम ने मोहिनी डारी।
जाती थी मैं चित्र बाग तब, बासन, चुनरी फारी।
मारि जोरि कर पाथर तो मन, सचित मटकी फारी।
बोलत तूँ दे छोरी पति सग, हो जा मेरी नारी।
लेय पिताबर टाकन मो पर, चित्र हरत पुत नारी।
अब बनिता भई जनम जनम हूँ, त्रिकाल रूप करारी।
ज्ञानेश्वर करुणा बस मम, हिरदै बसै मुरारी।
माई मोहे श्याम ने मोहिनी डारी।

आपके बहुत-से पद काव्य की दृष्टि से अत्यन्त ही उत्कृष्ट बन पड़े है। आपने दोहा, चौपाई, सवैया, कवित्त के अतिरिक्त विभिन्न राग-रागनियो मे हिन्दी-कविता की रचना की थी। वास्तव मे आप मधुराद्वैत उपासना के आदर्श भक्त थे।

आपका देहान्त सन् 1921 मे हुआ था।

कविराव गुलाबसिंह

आपका जन्म सन् 1830 मे राजस्थान की अलवर रियासत के राजगढ नामक स्थान मे हुआ था। आप भट्टवशी ब्राह्मण-परिवार के रत्न थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई थी और आपने केवल 5 वर्ष की अल्पायु मे ही 'सारस्वत चन्द्रिका' कण्ठस्थ कर ली थी। अलवर जाकर आपने जहाँ ब्रह्मभट्ट पडित पूर्णचन्द्र जी से सस्कृत के साहित्य विषय का गम्भीर अध्ययन किया था वहाँ श्री जगन्नाथ अवस्थी से 'कुवलयानन्द' तथा 'काव्यप्रकाश' आदि अनेक प्रमुख ग्रन्थो का विधिवत् ज्ञान अर्जित किया था। वहाँ पर अध्ययन करते हुए ही आपने हिन्दी-साहित्य का भी सम्यक् पारायण करके अपनी साहित्यिक योग्यता को द्विगुणित कर लिया था।

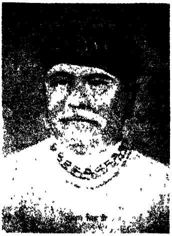
आपकी साहित्यिक क्षमता का सुपुष्ट प्रमाण इसीसे मिल जाता है कि आपने जिन काव्य-ग्रन्थो की रचना की थी उनकी सख्या 40 के लगभग है। इन ग्रन्थो के अतिरिक्त आपने अनेक फुटकर रचनाएँ भी की थी। आप अपने साहित्यिक जीवन के प्रारम्भिक दिनो मे जहाँ अलवर राज्य के दरबारी कवि के रूप मे प्रतिष्ठित रहे थे वहाँ बाद मे काफी समय तक बूँदी के राज-दरबार में भी रहे थे। बूँदी जाने से कुछ समय पूर्व तक करौली राज्य मे भी रहे थे। आपकी काव्य-प्रतिभा से प्रभावित होकर बूँदी-नरेश महाराज श्री रामसिह ने आपको बडे आदर एवं सम्मान के साथ दो गाँव, हाथी तथा दुशाला आदि भेट मे दिए थे। कुछ समय

तक आप बूँदी राज्य की 'स्टेट कौंसिल' के सम्मानित सदस्य भी रहे थे।

बूँदी मे रहते हुए ही आपका 'वश भास्कर' के रचयिता बूंदी-निवासी सूर्यमल्ल मिश्रण से संस्कृत काव्य पर कुछ विवाद भी हो गया था। वे आपके इतने मित्र बन गए थे कि उन्होने आपकी प्रशसा मे एक बार यह पद लिखा था .

जाति मे न जान्यो, पहचान्यो जो न पुष्कर मे,
मल्ली में न मान्यो, मंजु पृथक् पिपासा को।
धार्यो गन्ध धूली में न जूही कवि फूली मे न,
मालव की मूली मे न मिष्टपन भासा को।।
पीतन मे प्रीतन प्रतीत न जो पाटला मे,
उत्पल मे ईतन जो चित्त अलि आसा को।
भट्ट कुलभूषण गुलाब कवि काम तेरो,
सभ्य गुण सौरभ निहाल करे नासा को।।

जब बूँदी नरेश ने सूर्यमल्ल मिश्रण द्वारा लिखे हुए इस पद को सुना तो वे भी आपसे मिलने के लिए आतुर हो उठे और उन्होंने आपको अपने राज्य मे प्रतिष्ठित स्थान दे दिया। बूंदी-नरेश श्री रार्मासह सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रश, डिगल और पिगल आदि भाषाओ के पूर्ण विद्वान् तथा मर्मज्ञ थे, अत. उनके द्वारा कविराव गुलाबसिह का यह सम्मान स्वाभाविक ही था।



कानपुर की 'रसिक कवि सभा' की ओर से आपको 'साहित्य भूषण' की सम्मानोपाधि भी प्रदान की गई थी। राजस्थान के प्रमुख कवि ठाकुर बिडदसिह और ठाकुर ईश्वरसिंह आपके अन्यतम शिष्य थे। आपकी प्रमुख रचनाओ के नाम इस प्रकार है --'रुद्राष्टक', 'रामाष्टक','गंगाष्टक', 'शारदाष्टक' 'कालाष्टक', 'पावस पच्चीमी', 'प्रेम पच्चीसी', 'रस पच्चीसी', 'समस्या पच्चीसी', 'गुलाब कोश चार काण्ड', 'नामचन्द्रिका', 'नामसिन्धु कोष', 'व्यंग्यार्थचन्द्रिका', 'वृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका', 'भूषण चन्द्रिका', 'ललित कौमुदी','नीतिसिन्धु खण्ड चार', 'नीति मजरी', 'नीति चन्द्र भाग-2', 'काव्य नियम', 'वनिता भूषण', 'वृहद् वनिता भूषण', 'चिन्तातन्त्र', 'मूर्ख शतक', 'ध्यान रूप स्वस्तिकाबद्धा कृष्ण चरित्र', 'आदित्य हृदय', 'कृष्ण लीला', 'राम लीला', 'सुलोचना लीला', 'विभीषण लीला', 'दुर्गा स्तुति', 'लक्ष्मण कौमुदी', 'कृष्ण चरित्र' तथा 'कृष्ण चरित्र सूची'।

आपके व्यक्तित्व एव कृतित्व पर महाराष्ट्र के एक हिन्दी-प्रेमी विद्वान् श्री र० वा० विबलकर ने शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की है। यह शोध प्रबन्ध 'अभिलाषा प्रकाशन कानपुर' से प्रकाशित हुआ है।

आपका निधन सन् 1901 में हुआ था।

श्री गोकुलचन्द्र मिश्र

श्री मिश्र का जन्म आन्ध्र प्रदेश के हैदराबाद नगर मे 9 मार्च सन् 1914 को हुआ था। आपने हिन्दी तथा सस्कृत का अच्छा ज्ञान अर्जित किया था। 'कल्पना' के सम्पादक-मण्डल के अन्यतम सदस्य श्री वृन्दावनबिहारी मिश्र के आप अनुज थे। दक्षिण मे हिन्दी के प्रचार-कार्य मे आपका अनन्य योगदान रहा था। आपने जहाँ नगर मे अनेक 'रात्रि हिन्दी विद्यालयों' की सस्थापना करके अहिन्दी-भाषियो मे हिन्दी का प्रचार किया था वहाँ 'हिन्दी प्रचार सभा' हैदराबाद के भी अनेक वर्ष तक व्यवस्थापक रहे थे। नगर मे सभा की हिन्दी-परीक्षाओ को लोकप्रिय बनाने में भी आपने बहुत बडा कार्य किया था।

आपका निधन 3 फरवरी सन् 1970 को हुआ था।

सन्त गोकुलचन्द्र शास्त्री

आपका जन्म अविभाजित पंजाब के पेशावर नामक नगर मे सन् 1888 मे हुआ था। क्वीन्स कालेज बनारस से 'शास्त्री'

की परीक्षा उत्तीर्ण करके आप लाहौर के डी० ए० वी० हाई स्कूल में संस्कृताध्यापक हो गए थे और सन् 1945 में वहाँ से सेवा-निवृत्त हुए थे। अपने इस शिक्षक-जीवन में ही आपने पंजाब विश्वविद्यालय से बी०ए० की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी। आप पंजाब के उन कतिपय महानुभावों में थे जिन्होंने 'शास्त्री' होते हुए 'बी०ए०' की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। उन दिनों बी० ए० पास करना असाधारण कार्य समझा जाता था। आप कई वर्ष तक पंजाब विश्वविद्यालय की 'ओरियण्टल फैकल्टी' के सम्मानित सदस्य और संस्कृत तथा हिन्दी की पाठ्य-क्रम समितियों के सक्रिय सदस्य भी रहे थे। उन दिनों पंजाब में उर्दू का ही बोलबाला था। संस्कृत तथा हिन्दी का नाम लेना बड़े साहस का काम था। एक साधारण से विद्यालय में अध्यापक के पद पर कार्य करते हुए यूनिवर्सिटी की फैकल्टी और पाठ्यक्रम-समिति का सदस्य निर्वाचित होना आपके लिए एक गौरव की बात थी।

आपने जहाँ विश्वविद्यालय की उच्चतम कक्षाओं में संस्कृत तथा हिन्दी को लोकप्रियता के शिखर तक पहुँचाने में अपना सक्रिय योग-दान दिया था वहाँ पंजाब के सभी सरकारी और गैर-सरकारी विद्यालयों में हिन्दी के पठन-पाठन को प्रचलित कराने में भी बहुत परिश्रम किया था। पंजाब के शिक्षा विभाग में उर्दू तथा अँग्रेजी के पाठ्य-ग्रंथों के बढ़ते हुए प्रभाव को रोकने के लिए आपने हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकें बनाने की योजना भी प्रारम्भ की थी, जिसके अन्तर्गत आपने 'हिन्दी पाठशाला', 'मेरी सहेली', 'बाल सखा', 'बाल विनोद', 'हिन्दी-संस्कृत व्याकरण' तथा 'संस्कृत व्याकरण' आदि अनेक पुस्तकों का प्रणयन किया था। उच्च कक्षाओं में साहित्य के विविध अंगों के पठन-पाठन का प्रचार बढ़ाने के उद्देश्य से आपने अच्छे



नाटक लिखने की ओर भी ध्यान दिया। आपके ऐसे नाटकों में 'सारथी से महारथी','चण्ड प्रतिज्ञा','देशद्रोही', 'राजरानी मीरा' तथा 'हिरौल' आदि प्रमुख हैं। बच्चों में सच्चे नागरिक बनने की भावना उत्पन्न करने की दृष्टि से आपने 'आदर्श चरितावली', 'गांधी दर्शन','सुनहली सीखें', 'चमकते तारे' तथा 'वीरता की अमर कहानियाँ' आदि पुस्तकों की रचना की। विद्यालयों में नाट्य-कला के मंच को लोकप्रिय बनाने के लिए आपने जिन पुस्तकों की रचना की थी उनमें 'आधुनिक एकांकी', 'बच्चों का मंच' तथा 'परदे के खेल' आदि उल्लेखनीय हैं। आपकी छात्रोपयोगी पुस्तकों में 'आदर्श निबन्ध माला', 'सरल पत्र शिक्षक' तथा 'व्याकरण प्रदीप' प्रमुख हैं। आपके कई नाटक समय-समय पर पंजाब विश्वविद्यालय की हिन्दी-रत्न, हिन्दी भूषण तथा हिन्दी प्रभाकर परीक्षाओं के पाठ्य-क्रम में भी रहे थे।

भारत-विभाजन के उपरान्त आप स्थायी रूप से दिल्ली में रहने लगे थे और आपका निधन यहाँ ही सन् 1971 में हुआ था।

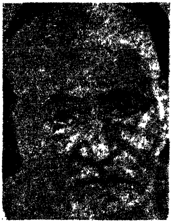
श्री गोकुलप्रसाद 'ब्रज'

श्री 'ब्रज' जी का जन्म उत्तर प्रदेश के गोंडा जनपद के बलरामपुर नामक नगर में सन् 1820 में हुआ था। आपके पूर्वज आपके जन्म से लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व बिहार से आकर यहाँ बसे थे। अपने जन्म-स्थान में ही हिन्दी, संस्कृत और फारसी की योग्यता प्राप्त करने के उपरान्त आप कई वर्ष तक बलरामपुर के राजा की अमलदारी में कटरा और पहाड़ापुर नामक स्थानों में कोतवाल के पद पर प्रतिष्ठित रहे थे। जब इस कार्य से आपके अनुभव में वृद्धि हो गई तब आप कुछ समय तक तुलसीपुर के राजा दिग्राजसिंह के यहाँ रहे थे। आपके मुख्य गुरु काशी के बाबा दीनदयाल गिरि थे। इसका प्रमाण आपके द्वारा लिखे गए इस पद से मिल जाता है :

पाए जा पद प्रीत सों, कवित रीति सारस।
श्री गुरु दीनदयाल गिरि, परमहंस अवतंस।।

कविता और साहित्य के प्रति प्रेम आपके मानस में उस

समय जागृत हुआ था जब आप 30 वर्ष के थे। उस समय आपने परिश्रम के साथ हिन्दी के अनेक काव्य-ग्रन्थों का अध्ययन प्रारम्भ किया था। 'शिवसिंह सरोज' नामक ग्रन्थ के ख्याति-प्राप्त रचयिता ठा० शिव-सिंह, दीवान राम-प्रसाद, प० गदाधर प्रसाद तथा बाबा दीनदयाल गिरि आदि अनेक महानुभावों से आपने काव्य-शास्त्र का विधिवत् अध्ययन किया था। थोड़े ही दिनों में आपने अपने अनवरत स्वाध्याय तथा सतत अध्यवसाय से काव्य-शास्त्र का गहन ज्ञान अर्जित कर लिया था। जिन दिनों आप बलरामपुर-नरेश के यहाँ कार्य-रत थे तब आपका मन शासकीय दायित्वों का वहन करने से हट गया और आपने केवल साहित्य-चिन्तन में ही व्यस्त रहने की अभिलाषा नरेश के सामने प्रकट की थी। उस समय आपने एक छोटे-से पद में अपनी हार्दिक आकांक्षा को इस प्रकार अभिव्यक्त किया था



एक दिवस अस मन अनुमाना।
जग में नाम कवन विधि माना।।
कितौ पुंज करि पुंज कौ, कितौ पुंज करि पाप।
गोकुल द्वै विधि लोक में, जाहिर नाम प्रताप।।
अमर होत है नाम जग, कीरति, कविता जाहि।
बाग, बावली, ताल, पुर, गिरत परत मिटि जाहि।।

बलरामपुर-नरेश इस पद से बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने आपको साहित्य-चिन्तन में ही निमग्न रहने की अनुमति दे दी। आपके द्वारा लिखे गए ग्रन्थ बलरामपुर के 'श्री जगबहादुर यन्त्रालय' से लीथो टाइप में छपकर प्रकाशित हुए थे। आपका पहला ग्रन्थ 'अष्टयाम प्रकाश' है और दूसरे ग्रन्थ का नाम 'चित्र कलाधर' है। इसके उपरान्त आपने 'पंचदेव पंचक' तथा 'दिग्विजय भूषण' नामक ग्रन्थों की रचना की थी। इनके अतिरिक्त आपने 'नीति मार्तण्ड', 'नीति रत्नाकर', 'सुतोपदेश', 'वामा विनोद' तथा 'चौबीस अवतार' नामक ग्रन्थों की रचना की थी। जब सन् 1876 में आपके तीन पुत्रों का एक साथ निधन हो गया तब आप पुत्रों के वियोग से दुखी होकर वेदान्त-चिन्तन में संलग्न हो गए और आपने 'सोक बिनास' नामक एक ऐसे ग्रन्थ-रत्न की रचना की जिसमें गीता, रामायण, महाभारत और पुराणों से पुत्र-शोक के अनेक उदाहरण देकर वैराग्योत्पादन के भाव समाविष्ट है। आपने संस्कृत के प्रख्यात ग्रन्थ 'अद्भुत रामायण' का भी हिन्दी में पद्यानुवाद प्रस्तुत किया था। इसके उपरान्त आपने 'टिट्टिभ आख्यान', 'सुहृदोपदेश' तथा 'मृगया मयंक' नामक पुस्तकों की भी रचना की थी। महाराज दिग्विजय सिंह की मृत्यु के उपरान्त जब बलरामपुर राज्य कोर्ट के अधीन हो गया तब उनके दरबार के नवरत्न तथा राज्य के अन्य अनेक प्रतिष्ठित गुणी तथा विद्वज्जन राज्य से पृथक् कर दिए गए। इसी झमेले में सन् 1880 में आप भी पेंशन लेकर अलग हो गए थे।

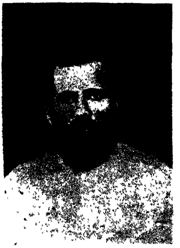
बलरामपुर राज्य की सेवा से पृथक् होने के उपरान्त भी आपका साहित्य-रचना का कार्य निरन्तर जारी रहा और इसके बाद भी आपकी 'एकादशी माहात्म्य', 'कृष्णदत्त भूषण', 'अचल प्रकाश' और 'महावीर प्रकाश' नामक रचनाएँ प्रकाश में आई थी। इन कृतियों की रचना आपने गोंडा-नरेश श्री कृष्णदत्त राम, मेहमोन के राजा अचलसिंह और पयागपुर के भैया विजयराजसिंह के निर्देशानुसार की थी। इसी बीच आपने 'मनुस्मृति' का पद्यानुवाद भी की थी, जिसका प्रकाशन बलरामपुर राज्य की छोटी महारानी जयपाल कुँवरि ने बड़े आदर के साथ 'महारानी धर्म चन्द्रिका' नाम से पटना से कराया था। इन महारानी की ओर से श्री 'ब्रज' जी को 50 रुपये प्रतिमास जीवन-पर्यन्त मिलता रहा था। आपकी कुछ कविताओं को अवधवासी लाला सीताराम बी० ए० 'भूप' ने कलकत्ता विश्वविद्यालय के पाठ्य-ग्रन्थों में भी स्थान दिलाया था।

आपका देहावसान 85 वर्ष की आयु में बलरामपुर में ही सन् 1905 में हुआ था।

श्री गोपबन्धु दास

श्री दास का जन्म उड़ीसा के मुअण्डो ग्राम में सन् 1877

मे हुआ था। वे उड़ीसा के विख्यात जन-नेता होने के साथ-साथ हिन्दी-प्रचारक भी थे। महात्मा गाधीजी की पुकार पर वे देश के स्वाधीनता-आन्दोलन मे अग्रणी कार्यकर्ता के रूप मे समाज में विख्यात हुए और एक उच्चकोटि के सम्पादक, समाज-सेवक और हिन्दी के उन्नायक के रूप मे प्रतिष्ठित हुए थे।



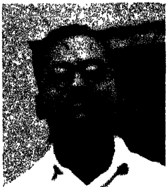
भारत की एकता के लिए वे स्वदेशी वस्तुओ के प्रयोग के साथ-साथ देवनागरी लिपि और हिन्दी के प्रयोग को परम आवश्यक मानते थे। आपने अपने जीवन को सर्वात्मना हिन्दी के लिए ही समर्पित कर दिया था।

आपका निधन 17 जून सन् 1928 मे हुआ था।

श्री गोपालकृष्ण दास

आपका जन्म काशी के एक सम्भ्रान्त परिवार में सन् 1921 मे हुआ था। आपके पिता श्री बालकृष्णदास उर्फ बल्ली बाबू भी अच्छे साहित्यकार थे। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के फुफेरे भाई श्री राधाकृष्णदास आपके पितामह थे। आप शैशवा-वस्था से ही बडे कुशाग्र बुद्धि थे। अँग्रेजी साहित्य मे एम०ए० तथा एम० एड० करने के उपरान्त आप काशी के 'हरिश्चन्द्र कालेज' मे प्रवक्ता हो गए थे। इससे पूर्व आप कई वर्ष तक 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' मे अनुवाद तथा शोध-संबंधी कार्योंमे सलग्न रहे थे। सन् 1948-49 मे आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के अन्तर्गत संचालित 'भारत कला भवन' की त्रैमासिक शोध पत्रिका 'कलानिधि' के सम्पादन में राय कृष्णदास को अपना अनन्य सहयोग प्रदान किया था। आपके निधन के उपरान्त यह पत्रिका बन्द हो गई। उसके केवल दो अंक ही प्रकाशित हुए थे। इस पत्रिका में आपके कई शोधपूर्ण लेख छपे थे, जिनमें 'उखल बन्धन' विशेष चर्चनीय है।

हरिश्चन्द्र कालेज मे कार्य-रत रहते हुए भी आपने साहित्य-सेवा के मार्ग को नहीं छोडा और जब-तब अनेक साहित्यिक कार्य करते रहे। आप अपने अध्ययन-काल से ही बडे प्रतिभाशाली थे और अपनी कक्षाओ मे सदैव सर्वोच्च स्थान प्राप्त करते रहे थे। काशी विश्वविद्यालय की ओर से आपको अपनी प्रतिभा तथा योग्यता के लिए 'स्वर्ण पदक' प्रदान किया गया था। आपके असामयिक देहावसान के उपरान्त आपकी स्मृति को सुरक्षित रखने की दृष्टि से हरिश्चन्द्र कालेज मे 'गोपाल स्मारक निधि' की स्थापना करके उसकी ओर से वहाँ एक 'पुस्तकालय कक्ष' का निर्माण किया गया है। आपके छोटे भाई स्वर्गीय श्री श्याम-कृष्ण दास भी एक प्रतिभाशाली साहित्यकार थे।



आपका निधन केवल 28 वर्ष की आयु मे ही अपने छोटे भाई की मृत्यु से केवल 16 दिन पूर्व 14 अक्तूबर सन 1949 को हुआ था।

श्री गोपालदान कविया

श्री गोपालदान का जन्म राजस्थान के जयपुर राज्य के सीकर जनपद के उदयपुरा नामक ग्राम मे सन् 1815 मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने चाचा श्री रामनाथ कविया के द्वारा सम्पन्न हुई थी और बाद मे आप उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए तिजारा (अलवर) के श्री बलवन्तसिंह के यहाँ

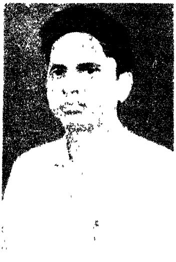
चले गए थे और वही पर आपने कविता करने का अभ्यास कर लिया था। आपके मामा श्री बालाबक्श भी डिंगल-पिंगल के अच्छे मर्मज्ञ थे।

'वंश-भास्कर' के रचयिता बूँदी-निवासी श्री सूर्यमल्ल मिश्रण आपके समकालीन थे और आपने अपने चाचा के साथ उनसे बूँदी जाकर भेंट की थी। आपकी रचनाओं पर उनके कवित्व का अत्यधिक प्रभाव पडा था। आपकी काव्य-प्रतिभा से प्रभावित होकर सीकर के रावराजा माधोसिंह ने आपको अपने राज्य मे सम्मान प्रदान किया था।

आपका देहावसान सन् 1885 मे 70 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री गोपालदास गुप्त

श्री गुप्त का जन्म 4 जुलाई सन् 1931 को भारत के पवित्र तीर्थ हरिद्वार मे हुआ था। आपके पिता लाला तुलाराम मित्तल सुप्रसिद्ध व्यवसायी तथा धार्मिक प्रवृत्ति के सज्जन है और आजकल उन्होंने अनेक वर्ष से राजधानी दिल्ली को ही अपना कार्य-क्षेत्र बना लिया है। अपने धर्मनिष्ठ पिता के सतर्क निरीक्षण मे ही आपकी शिक्षा-दीक्षा हुई थी और आपने सस्कृत, हिन्दी और अँग्रेजी का अच्छा ज्ञान अर्जित कर लिया था। काशी तथा हरिद्वार आदि अनेक स्थानो मे विद्याध्ययन करते हुए आपका सम्पर्क अनेक विद्वानो तथा सन्तो से भी हो गया था, जिसके परिणामस्वरूप दिन-रात आप अहर्निश भारतीय संस्कृति तथा साहित्य के अवगाहन मे ही सलग्न रहते थे।



अपने थोड़े-से जीवन मे ही आपने अपनी प्रतिभा का जो परिचय दिया उससे हिन्दी के अनेक साहित्यकार प्रभावित थे। संस्कृत की जिन अनेक कृतियों के आपने सफल अनुवाद प्रस्तुत किये थे उनमे 'भर्तृहरि शतकम्', 'कुमार सम्भवम्' तथा 'वाल्मीकि रामायणम्' आदि प्रमुख है। आप इतनी सफल पद्य-रचना करते थे कि उसे देखकर आश्चर्य होता था। आपकी ऐसी कारयित्री शक्ति का पूर्ण परिपाक इन रचनाओं में दृष्टिगत होता है।

आपकी अन्य रचनाओं मे 'आस्तिक नेहरू' तथा 'गीता ज्ञान' भी उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपकी 'रास पचाध्यायी', 'रघुवंश' तथा 'श्रीमद्भागवत प्रसग' नामक पाण्डुलिपियों के अतिरिक्त अनेक फुटकर रचनाएँ अभी अप्रकाशित ही पडी है। आपके अनुज श्री ज्ञानचन्द गुप्त भी 'रूपान्तर प्रेस' के माध्यम से सत्साहित्य का प्रचार करने मे सलग्न हैं।

यह अत्यन्त दुर्भाग्य की बात है कि आपका असामयिक देहावसान 12 नवम्बर सन् 1974 को एक कार-दुर्घटना मे हुआ था। आपकी स्मृति को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए आपके पारिवारिकजनो ने हरिद्वार मे एक अत्यन्त मनोरम अतिथि-गृह का निर्माण कराया है।

श्री गोपालदास मुञ्जाल

श्री मुजाल का जन्म 28 नवम्बर सन् 1910 को पजाब प्रान्त के एक नगर मे हुआ था, किन्तु 3 वर्ष की आयु मे ही अपने माता-पिता के साथ आप राँची (बिहार) चले गए थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा वही हुई और कार्य-क्षेत्र भी बिहार ही रहा। अगस्त 1937 मे विवाहोपरान्त आप साहित्य-सेवा के साथ-साथ राजनीतिक तथा सामाजिक क्षेत्र मे कूद पडे और काफी लोकप्रियता प्राप्त की। आपका निवास साहित्य-सेवियो का अड्डा बना रहता था और सर्वश्री डॉ० सत्य-नारायण शर्मा, छेदीलाल गुप्त, राधाकृष्ण और शशिकर आदि साहित्यकार आपके घनिष्ठ मित्रों मे थे।

साहित्य के साथ-साथ राजनीति के क्षेत्र मे भी आपने अपना उल्लेखनीय स्थान बना लिया था। आपने जहाँ 'आबुआ झाड़खण्ड' नामक हिन्दी साप्ताहिक का अनेक वर्ष तक

सफलतापूर्वक सम्पादन किया था वहाँ 'बिहार झाडखण्ड पार्टी' के महामन्त्री भी रहे थे। जिन दिनों आप इस पार्टी के महामन्त्री थे तब श्री जयपाल सिंह जी उसके अध्यक्ष थे। पत्र-सम्पादन के साथ-साथ आपने अनेक मौलिक कहानियाँ लिखने के अतिरिक्त अनेक विदेशी कहानियो का अनुवाद भी किया था।



आपकी कविता, कहानी तथा उपन्यास-सम्बन्धी जो रचनाएँ प्रकाशित हुई थी उनमे 'सिद्धिश्री', 'फाँसी का सौदा', 'नीली आँखे', 'साटन का सूट' (सभी कहानियाँ), 'पूनम एक याद' और 'बिन्दोदा दुआरा' (उपन्यास) आदि उल्लेखनीय है। आपकी कविताओ के जहाँ 'अटपटी उडाने' तथा 'दियासलाई की तीलियाँ' नामक सकलन प्रकाशित हुए थे वहाँ आपके द्वारा अनूदित 'अनोखे प्रेमी-प्रेमिकाएँ' नामक रचना भी उल्लेख्य है।

आपकी सभी प्रकाशित रचनाओ को केवल डाक-व्यय की राशि उपलब्ध होने पर चक्रधरपुर के प्रख्यात साहित्यकार श्री शशिकर ने जन-साधारण मे प्रचारित करने का अभिनन्दनीय कार्य किया है।

आपका निधन 14 नवम्बर सन् 1972 को कैसर के कारण हुआ था।

श्रीमती गोपालदेवी

श्रीमती गोपाल देवी का जन्म सन् 1890 मे उत्तर प्रदेश के बिजनौर नगर मे हुआ था। आप बाल्यकाल मे विधवा हो गई थी और बाद मे हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक श्री सुदर्शनाचार्य ने अनेक जातीय तथा धार्मिक बन्धनो के होते हुए भी आपसे 'पुनर्विवाह' कर लिया था। इस विवाह के अवसर पर महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय ने आपको अपना आशीर्वाद प्रदान किया था। क्योंकि आपके पति श्री सुदर्शनाचार्य हिन्दी के अच्छे लेखक थे अत आप भी उनके सम्पादन-लेखन आदि के कार्य में रुचि लेने लगी और आपने उनके प्रत्येक कार्य मे बढ-चढकर सहयोग दिया था।

आपने अपने पति के सम्पादन-कार्य मे सहयोग देने के साथ-साथ प्रयाग से 'गृहलक्ष्मी' नामक एक महिलोपयोगी मासिक पत्रिका भी प्रकाशित की थी। इसके सम्पादन के समय आपका ध्यान उस पत्रिका को राष्ट्रीय विचारो से ओत-प्रोत सुधारवादी मार्ग पर अग्रसर करने की ओर भी रहता था। आप पुरानी घिसी-पिटी सामाजिक रूढियो के विरुद्ध लिखने मे तनिक भी सकोच न करती थी। सन् 1920-21-22 के असहयोग आन्दोलन के दिनो मे आपने 'गृहलक्ष्मी' के माध्यम से नारी-जागरण की दिशा मे अत्यन्त प्रशसनीय कार्य किया था। 'गृहलक्ष्मी' के माध्यम से आपने भारतीय महिलाओं मे जहाँ नई चेतना उत्पन्न की थी, वहाँ उन्हे साहित्य-सृजन की दिशा मे भी अग्रसर होने की प्रेरणा प्रदान की थी।



जिन दिनो श्रीमती गोपालदेवी ने अपनी 'गृहलक्ष्मी' नामक यह पत्रिका प्रकाशित की थी तब महिलाओ के रोगो की चिकित्सा का कोई अच्छा प्रबन्ध नही था। क्योंकि गोपालदेवी अच्छी वैद्या और चिकित्सिका भी थी अत. आप अपनी पाठिकाओं को नारी-रोगो के उपचार के उपाय भी अपनी पत्रिका मे सुझाती रहती थी। आपने 'राजवैद्या' नामक मासिक पत्रिका भी इस उद्देश्य से अलग ही निकाली थी। इस पत्रिका से उन दिनों महिला-जगत् अत्यन्त

लाभान्वित हुआ था। आपका घर उन दिनों अनेक राजनैतिक, धार्मिक तथा सामाजिक गतिविधियों का केन्द्र-स्थल बना हुआ था। भारत-विख्यात प्रख्यात सन्त प्रभुदत्त ब्रह्मचारी भी पहले-पहल जब प्रयाग पधारे थे तब वे श्रीमती गोपालदेवी तथा श्री सुदर्शनाचार्य के घर मे ही ठहरे थे। आप दोनों के ज्येष्ठ पुत्र श्री सत्यवान शर्मा आजकल प्रभुदत्त ब्रह्मचारी के निवास-स्थान झूंसी (इलाहाबाद) मे ही रह रहे है।

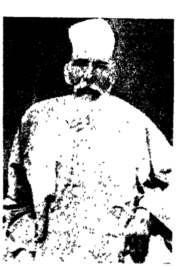
आप जहाँ एक जागरूक सामाजिक कार्यकर्त्री तथा निर्भीक सम्पादिका थी वहाँ अनेक गम्भीर पुस्तकें भी आपने लिखी थी। 'गृहलक्ष्मी' के सम्पादन के व्यस्त क्षणो से समय निकाल कर आपने अनेक ऐसी रचनाओ का निर्माण किया था जिनसे हमारे देश का नारी-समाज तथा शिशु-वर्ग पर्याप्त लाभान्वित हुआ था। आपके पति अपने 'शिशु कार्यालय' से बालोपयोगी मासिक 'शिशु' नामक जो पत्र प्रकाशित कर रहे थे उसमे भी आपका सराहनीय सहयोग रहता था। आपने ऐसी अनेक बालोपयोगी कहानियो को पद्यबद्ध किया था जिन्हे पढकर बच्चे मनोरजन के साथ-साथ कुछ शिक्षा भी ग्रहण कर सकते है। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'चमगादड', 'धोबी और गधा', 'भेड और भेडिया' तथा 'मौत और घसियारा' आदि अत्यन्त प्रसिद्ध है। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'छोटी बहू', 'लक्ष्मी बहू', 'दिव्य देवियाँ', 'गृहिणी', 'केश-विन्यास', 'दयावती', 'परियो का देश', 'परी लोक', 'लाल-बिल्ली', 'आटे का लडका' तथा 'परियो का नाच' के नाम विशेष ध्यातव्य है। आप हिन्दी तथा सस्कृत की विदुषी होने के साथ-साथ बगला भाषा का भी अच्छा ज्ञान रखती थी। आपने अनेक बगला पुस्तकों के हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित किए थे।

आपका स्वर्गवास सन् 1952 मे बम्बई मे हुआ था।

श्री गोपालप्रसाद शर्मा

श्री शर्मा का जन्म सन् 1867 ईस्वी मे मध्य प्रदेश के होशगाबाद जनपद के रैसलपुर नामक ग्राम मे हुआ था। आप हिन्दी के सुलेखक और समाज-सुधारक थे। आपकी प्रमुख प्रकाशित रचनाओं मे 'श्री हित चरित', 'भ्रमोच्छेदन', 'सुमनमाला', 'रमणी पंच रत्न' और 'बाल पच रत्न' आदि प्रमुख हैं। इनमे से पहली पुस्तक मे हितहरिवश जी का जीवन-चरित्र है और दूसरी मे हितहरिवंश जी के सम्बन्ध मे हिन्दी-जगत् मे व्याप्त भ्रमो का निराकरण किया गया है। इस ग्रन्थ की चर्चा इसके प्रकाशन के दिनों मे हिन्दी-जगत् मे बहुत हुई थी। इसमे मिश्रबन्धुओं को लेखक ने बडे आडे हाथों लिया था। आप कई भाषाओ के जानकार थे और आपने बहुत समय तक 'सत्यवक्ता' नामक मासिक पत्र का सम्पादन भी किया था।

इनके अतिरिक्त 'चार दोहन की विस्तृत टीका' नामक ब्रजभाषा के अपने विशिष्ट अप्रकाशित ग्रन्थ मे आपने हित-हरिवश के चार दोहो की टीका प्रस्तुत की है। इसके साथ-साथ आपकी 'श्रीमद्भागवत गीता की अनन्य भक्तिवर्द्धिनी टीका', 'रसिक अनन्य की वार्ता' और 'श्री सेवक वाणी की टीका' नामक पुस्तके भी अप्रकाशित ही है। आपका राधावल्लभीय सम्प्रदाय के साहित्य-कारो मे विशिष्ट



स्थान है। आपके सभी अप्रकाशित ग्रन्थ वृन्दावन-स्थित 'राधावल्लभ मन्दिर' मे अभी भी सुरक्षित हैं। होशगाबाद के आपके शिष्य श्री टीकाराम जी के पास भी आपके कई ग्रन्थ है। आपका स्थान अपने काल के मध्य प्रदेश के साहित्यकारो मे सर्वथा विशिष्ट था। आप राधावल्लभ सम्प्रदाय के अनन्य अनुयायी थे और उसीका प्रचार करने की दिशा मे आपने अपने जीवन का अधिकाश समय व्यतीत किया था। हितहरिवश के जीवन तथा उनके साहित्य-सम्बन्धी इतिवृत्त के आप अधिकारी विद्वान् थे।

आपका निधन सन् 1947 मे हुआ था।

डॉ० गोपाल राठौर

डॉ० राठौर का जन्म उत्तर प्रदेश के एटा जनपद के फफोतू नामक ग्राम में 11 अक्तूबर सन् 1935 को हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा सब दिल्ली में ही हुई थी। आपने हिन्दी के प्रख्यात कवि श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के काव्य के सम्बन्ध में अपना शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। आप अपने निधन के दिनों में दिल्ली विश्वविद्यालय के अन्तर्गत संचालित 'शिवाजी कालेज' में हिन्दी प्रवक्ता के रूप में कार्य-रत थे।



आप मूलत: कवि थे और कवि-जन-सुलभ भावुकता आपके जीवन का अविभाज्य अंग थी। कभी ऐसा भी समय था जब दिल्ली की कविगोष्ठियों में श्री गोपाल राठौर को बड़े चाव से सुना जाता था। आपकी कविताओं का संकलन सन् 1962 में 'दीप के स्वर' नाम से प्रकाशित हुआ था।

आपका निधन 28 नवम्बर सन् 1977 को हुआ था।

श्री गोपालराव अपर्सिंगीकर

श्री अर्पासगीकर का जन्म तमिलनाडु के तंजाऊर नामक नगर में 15 नवम्बर सन् 1915 को हुआ था। आपकी मातृभाषा मराठी थी। महात्मा गांधी जी द्वारा प्रारम्भ किये गए दक्षिण में हिन्दी के प्रचार-कार्य में आपने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। 'हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद' के आप प्रमुख कार्यकर्ता थे। सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों में सक्रिय रूप से भाग लेकर आपने सन् 1935 से सन् 1966 तक अत्यन्त निष्ठापूर्वक हिन्दी-प्रचार-कार्य किया था।

आप एक कर्मठ हिन्दी-प्रचारक होने के साथ-साथ लेखन की दिशा में भी पूर्णत: सक्रिय रहे थे। आपने जहाँ हिन्दी में मौलिक लेखन किया था वहाँ मराठी की जिन अनेक महत्त्वपूर्ण कृतियों को हिन्दी में अनूदित किया था उनमें श्री माडखोलकर तथा श्री फड़के के उपन्यास प्रमुख है। सभा में कार्य-रत रहते हुए आपने अनेक हिन्दी-पाठ्य-पुस्तकों की रचना करने के अतिरिक्त 'अभिनव ग्रन्थ संग्रह' (1952) नामक कृति का सम्पादन भी किया था।



आपका निधन 1 मार्च सन् 1966 को हैदराबाद (आन्ध्र) में हुआ था।

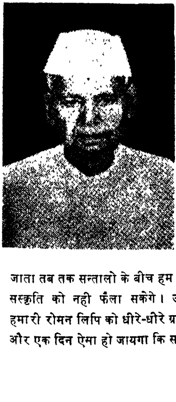
श्री गोपाललाल वर्मा

श्री वर्मा जी का जन्म बिहार प्रदेश के मुंगेर जनपद के 'माउर' (थाना बरबीघा) नामक स्थान में सन् 1891 में हुआ था। आपका बिहार के समाज-सेवियों में प्रमुख स्थान था। आपने महात्मा गांधी जी के आन्दोलन से प्रभावित होकर देवनागरी हिन्दी का प्रचार-कार्य करने के साथ-साथ हरिजनों और आदिवासियों की सेवा में ही अपने जीवन को लगा दिया था। आपका कार्य-क्षेत्र सन् 1939 से मुख्यत: सन्ताल परगना ही रहा था, जहाँ पर आप एक 'शिक्षा पदाधिकारी' के रूप में नियुक्त होकर गए थे।

सन्ताल परगना के आदिवासियों में ईसाई मिशनरियों का जो प्रभाव दिनानुदिन बढ़ता जा रहा था, वर्मा जी ने उसे कम करके उनमें देवनागरी लिपि तथा हिन्दी भाषा के प्रति

अटूट निष्ठा जागृत की थी। अपने मिशन का प्रचार करने के बहाने ईसाई धर्म-प्रचारक जहाँ ईसाई मत का प्रचार किया करते थे वहाँ रोमन लिपि अर्थात् अँग्रेजी का दबदबा भी वे बढाते जा रहे थे। श्री वर्मा जी ने उन आदिवासियों मे इस बात का गहन आत्म-विश्वास जगा दिया कि न केवल सन्ताली भाषा को अपितु संसार की किसी भी जटिलतम भाषा को देवनागरी लिपि के माध्यम से लिखा जा सकता है। इसके लिए आपने सन्ताली भाषा मे भी देवनागरी लिपि को अपनाकर कई पुस्तकों की रचना की थी। आपकी सन्ताली भाषा-सम्बन्धी पुस्तक का नाम 'सन्थाली पहिल पुथी' था। आपके इस कार्य को आगे बढाने मे बिहार के प्रख्यात प्रकाशक आचार्य रामलोचनशरण ने अपना उदारतापूर्ण सहयोग प्रदान किया था और उन्होंने ही अपने 'पुस्तक भण्डार' नामक प्रकाशन-सस्थान से इस पुस्तक को प्रकाशित किया था।

देवनागरी भाषा के प्रचार-कार्य मे आपको जहाँ ईसाई मिशनरियो से लोहा लेना पड़ता था वहाँ तत्कालीन अँग्रेज जिलाधीशों से भी आपकी रस्साकशी होती रहती थी। इतनी सघर्षपूर्ण स्थिति मे भी आपने अपने कार्य को विराम नही दिया और पूर्ण निष्ठा तथा तत्परता से यह कार्य करते रहे। यहाँ तक कि सन् 1942 के आन्दोलन के समय सन्ताल परगना के तत्कालीन अँग्रेज उपायुक्त श्री आर्चर ने स्पष्ट रूप से सरकार को यह लिख दिया कि "जब तक श्री वर्मा को इस जिले से हटा नही दिया जाता तब तक सन्तालो के बीच हम अपनी लिपि और अपनी सस्कृति को नही फैला सकेंगे। उनकी देवनागरी लिपि हमारी रोमन लिपि को धीरे-धीरे ग्रस्त करती जा रही है और एक दिन ऐसा हो जायगा कि सन्तालो के बीच हमारा सदियों से किया गया प्रयत्न रोमन लिपि का चिह्न भी नही मिलेगा।" परिणामस्वरूप श्री वर्मा को सन्ताल परगना से हटाकर बिहार के सुदूर कोने में पटक दिया गया। जब कांग्रेस सत्ता में आई तो वहाँ के मुख्यमन्त्री श्रीकृष्ण सिनहा ने आपको फिर वहाँ ही भेज दिया।



यह श्री वर्मा जी के घनघोर परिश्रम का ही सुपरिणाम है कि सन्ताली भाषा और साहित्य के प्रकाड पण्डित श्री डोमन साहू 'समीर' आदि अनेक महानुभाव हिन्दी-लेखन की ओर अग्रसर हो गए हैं। आपके ही परामर्श पर सन्ताली भाषा का एक-मात्र साप्ताहिक 'होड सोम्बाद' देवनागरी लिपि मे प्रकाशित हुआ था। आप सन्ताल परगना के 'प्रथम जिला कल्याण पदाधिकारी' रहे थे। इस पद को आपने 'जिला विद्यालय निरीक्षक' के पद के साथ-साथ सँभाला हुआ था। आपके ही सत्प्रयत्न से बिहार सरकार, बिहार विश्वविद्यालय, बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन तथा बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् आदि ने बिहार के आदिवासी क्षेत्र की सभी भाषाओ मे देवनागरी लिपि को व्यवहृत करने का सिद्धान्त स्वीकृत कर लिया था। आपने सन्ताली भाषा की प्राइमर लिखने के साथ-साथ और भी कई पुस्तकें सन्ताली भाषा मे लिखी थी।

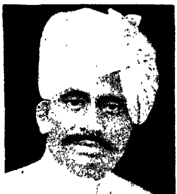
आपका निधन 17 दिसम्बर सन् 1967 को हुआ था।

ठाकुर गोपालशरणसिंह

ठाकुर साहब का जन्म मध्यप्रदेश के रीवाँ राज्य के नई गढी नामक स्थान के एक प्रतिष्ठित जमीदार परिवार मे सन् 1891 मे हुआ था। आपके पिता ठाकुर जगद्‌बहादुरसिह हिन्दी तथा सस्कृत के अच्छे विद्वान् थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा रीवाँ तथा प्रयाग मे हुई थी। प्रारम्भ मे आपने रीवाँ के स्कूल मे अध्ययन किया था और बाद मे आपने प्रयाग मे आकर कालेज मे प्रवेश लेकर अग्रेजी का विधिवत् अध्ययन किया था। आप अभी प्रयाग मे अध्ययन कर ही रहे थे कि असमय मे ही आपके पिताजी का निधन हो गया, जिसके कारण आपका अध्ययन बीच मे ही रुक गया और परिवार का समस्त दायित्व आपके कन्धो पर आ पडा। अपने छात्र-जीवन

से ही काव्य-रचना की ओर बहुत झुकाव था और आप ब्रजभाषा तथा खड़ी बोली दोनों में अच्छी रचना करने लगे थे।

आपकी काव्य-प्रतिभा में तब बहुत निखार आया जब आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने आपको बहुत प्रोत्साहन दिया था। इस सम्बन्ध में द्विवेदी जी के ऋण को आपने इस रूप में स्वीकार किया है—"पुण्य स्मृति श्रद्धेय पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी की मुझ पर सदैव कृपा रही है और कविता लिखने के लिए वे मुझे बराबर प्रोत्साहित करते है। यदि उनका करावलम्बन न मिलता तो मै अधिक दिन तक कवि-कर्म मे प्रवृत्त रह सकता या नही इसमे सन्देह है। मेरे आरंभिक कविता-काल मे तो वे मेरे पथ-प्रदर्शक ही थे।" खड़ी बोली मे लिखे गए आपके कवित्त तथा सवैये इतने



सुमधुर तथा टकसाली होते थे कि लोग उन्हे पढकर ब्रजभाषा के माधुर्य तथा ओज को भूल जाते थे। धीरे-धीरे आपकी गणना खड़ी बोली के प्रमुख कवियो मे होने लगी और आपने अपनी काव्य-प्रतिभा से हिन्दी-जगत् को ऐसा चमत्कृत कर दिया कि आपने जन-जन के हृदय मे अपना प्रमुख स्थान बना लिया। यद्यपि आपकी रचनाओं मे यथार्थवाद का बाहुल्य रहता था, किन्तु आदर्श के प्रति वे विमुख नही थे। वर्णनात्मक रचनाएँ लिखने की दृष्टि मे भी आपको अभूतपूर्व सफलता मिली थी। आपकी रचनाओ मे देश-प्रेम, प्रकृति-चित्रण और सामाजिक उत्थान के साथ-साथ भक्तिरस का भी पूर्णत परिपाक देखने को मिलता है। आपने पिंगल शास्त्र के अनुसार कवित्त, सवैया, दोहा, कुण्डलिया और छप्पय आदि अनेक छन्दों के अतिरिक्त आधुनिक परिपाटी के नवीन छन्दो एव गीतो की रचना भी अत्यन्त सफलतापूर्वक की थी।

जैसा कि हमने प्रारम्भ मे लिखा है कि ठाकुर साहब को 'सरस्वती' के माध्यम से पर्याप्त प्रोत्साहन मिला था। आपकी पहली रचना 'सरस्वती' मे सन् 1912 मे प्रकाशित हुई थी और पहला काव्य-सकलन सन् 1925 मे 'माधवी' नाम से प्रकाशित हुआ था। इस सकलन की प्राय सभी रचनाओं मे आपकी मजुल शब्दावली, ललित पदावली और ओजपूर्ण वाणी के अद्भुत दर्शन होते है। जीवन की सप्राण अनुभूतियो तथा प्रकृति-चित्रण से युक्त आपकी रचनाओं का दूसरा सकलन 'कादम्बिनी' नाम से सन् 1937 मे प्रकाशित हुआ था। इसके उपरान्त आपकी जिन रचनाओ का प्रकाशन हुआ उनका विवरण इस प्रकार है—'ज्योतिष्मती' (1938) 'मानवी' (1938), 'सचिता' (1939), 'सुमना' (1941) 'सागरिका' (1944), 'ग्रामिका' (1951), 'जगदालोक' (1952), 'प्रेमाजलि' (1953) तथा 'विश्वगीत' (1955) आदि। इनके अतिरिक्त अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'आधुनिक कवि' नामक पुस्तकमाला के अन्तर्गत भी आपकी रचनाओ का एक प्रतिनिधि सकलन प्रकाशित हुआ था।

आपकी 'मानवी' नामक रचना मे जहाँ नारी के विभिन्न रूपों का चित्रण हुआ है वहाँ 'ग्रामिका' मे आपने ग्राम्य जीवन के अत्यन्त प्रभावक चित्र प्रस्तुत किये है। खड़ी बोली तथा ब्रजभाषा दोनो मे ही आप इतने सरस और प्राजल शैली के कवित्त लिखते थे कि उन्हे पढकर सभी सहृदय और रसिकजन झूम-झूम उठते थे। आपकी यह रचना ऐसी प्रतिभा का ज्वलन्त साक्ष्य प्रस्तुत करती है

तेजधारियो मे है कृशानु का भी नाम बडा,
किन्तु भानु सबसे महान् तेजवान है।
तारो मे पारिजात, पर्वतो मे हिमवान्,
नदियों मे जाह्नवी मनोज्ञता की खान है।।
मोर सा मनोहर न कोई खग रूपवान,
फूल कौन दूसरा गुलाब के समान है।
यद्यपि सभी है उपमान इन्हे मान चुके,
किन्तु उस छवि-सा न कोई छविमान है।।

आपकी 'जगदालोक' कृति पर जहाँ मध्यप्रदेश शासन ने 'देव पुरस्कार' प्रदान किया था वहाँ वह उत्तर प्रदेश शासन द्वारा भी पुरस्कृत हुई थी। आपकी 'ग्रामिका' नामक रचना भी उत्तर प्रदेश सरकार ने पुरस्कृत की थी। आप जहाँ अनेक वर्ष तक प्रयाग की 'हिन्दुस्तानी एकेडेमी' के कार्य-

कारी मण्डल के प्रतिष्ठित सदस्य रहे थे वहाँ आप सन् 1933 मे आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के अभिनन्दन मे प्रयाग मे आयोजित 'द्विवेदी मेले' के स्वागताध्यक्ष भी रहे थे। सन् 1935 मे मैसूर मे आयोजित 'ओरियण्टल कान्फ्रेंस' के अवसर पर हुए 'अखिल बहुभाषा सम्मेलन' के आप सभापति बनाए गए थे। आप 'रघुराज साहित्य परिषद्, रीवाँ', 'कवि समाज, प्रयाग' तथा 'मध्य भारत हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर' के सभापति भी रहे थे।

आपका निधन 2 सितम्बर सन् 1960 को प्रयाग मे हुआ था।

श्री गोपीकृष्ण 'गोपेश'

श्री गोपेश का जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद नामक नगर मे 20 अक्तूबर सन् 1921 को हुआ था। वैसे आपका मूल निवास-स्थान बरेली जनपद का समीपवर्ती पीताम्बरपुर नामक ग्राम था। आपकी शिक्षा-दीक्षा प्रयाग में ही हुई थी और आपने प्रयाग विश्वविद्यालय मे एम० ए० (हिन्दी)



करने के उपरान्त अपने को पूर्णत. साहित्य-सेवा में ही सलग्न कर लिया था। आप वैसे तो मूलत कवि थे, किन्तु अनुवाद के क्षेत्र मे भी आपका योगदान कम उल्लेखनीय नही था। आप सन् 1956 से सन् 1962 तक मास्को के 'विदेशी भाषा प्रकाशन-गृह' से सबद्ध रहे थे। अपने रूस के प्रवास-काल मे आप वहाँ के 'विदेशी भाषा प्रकाशन-गृह-प्रकाशनो का कार्य देखने के साथ-साथ मास्को रेडियो मे भी कार्य-रत रहे थे। वहाँ पर रहते हुए आपने अनेक रूसी कृतियों के हिन्दी-अनुवाद भी किये थे। मास्को के प्रवास के दिनों मे आपने जहाँ अनेक हिन्दी मे अनूदित ग्रन्थो का सम्पादन किया था वहाँ 'रूसी हिन्दी बातचीत' नामक एक पुस्तक की रचना भी की थी।

अपनी शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आपने लगभग 3 वर्ष तक प्रयाग के एक इण्टर कालेज मे अध्यापन करने के अतिरिक्त आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रो पर भी कार्य किया था। दिल्ली तथा प्रयाग विश्वविद्यालय के रूसी भाषा विभाग मे अध्यापन करने के अतिरिक्त आप कई वर्ष तक प्रयाग की सुप्रसिद्ध प्रकाशन-सस्था 'किताब महल' के साहित्य-सलाहकार भी रहे थे। आपने कई बार चीन, रूस और मिस्र आदि देशो की यात्राएँ भी की थी।

एक सहृदय कवि, कुशल शिक्षक तथा पटु अनुवादक के रूप मे श्री गोपेश ने जहाँ अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था वहाँ पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपका योगदान कम महत्त्वपूर्ण नही। आपने श्री कृष्णकान्त मालवीय के पत्र 'अभ्युदय' मे लगभग 3 वर्ष तक कार्य करने के अतिरिक्त 'भारत' मे भी विशेष प्रतिनिधि के रूप मे कार्य किया था। कवि के रूप मे श्री 'गोपेश' ने अच्छी ख्याति अर्जित की थी। आपकी काव्य-कृतियो मे 'किरण' (1930), 'धूप की लहरें' (1944) तथा 'तुम्हारे लिए' (1963) विशेष उल्लेखनीय है। आपके द्वारा लिखित रेडियो-एकाकियो का एक सकलन 'अर्वाचीन और प्राचीन के परे' (195[illegible]) प्रकाशित हुआ था। आपके द्वारा अनूदित 'विदेशों के महाकाव्य' (1946), 'पूँजीपति' (1946) तथा 'ये मेरी कविताएँ है' (1953) के नाम भी विशेष उल्लेखनीय है।

रूस से वापिस भारत लौटने पर आप प्रयाग विश्वविद्यालय के एशियन भाषा विभाग मे कार्य कर रहे थे कि अचानक हृदयाघात के कारण 4 सितम्बर सन् 1974 को आपका देहावसान हो गया।

श्री गोपीकृष्ण तिवारी

श्री तिवारी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के औद्योगिक नगर कानपुर मे सन् 1920 मे हुआ था। आपके पिता सोने-चाँदी

का व्यापार करते थे। जब आप कानपुर के प्रख्यात शिक्षण-संस्थान बी० एन० एस० डी० इण्टर कालेज में पढ रहे थे तब महात्मा गाधी जी के आवाहन पर आपने राजनीति मे प्रवेश किया था और कई बार जेल-यात्राएँ भी की थी। आप कई वर्ष तक कानपुर नगर काग्रेस कमेटी के पदाधिकारी भी रहे थे। आप प्रख्यात क्रान्तिकारी, साहित्य-प्रेमी और समाज-सेवी के रूप मे कानपुर की जनता में अत्यन्त लोकप्रिय रहे थे।

आपने अपना कर्ममय जीवन एक पत्रकार के रूप मे प्रारम्भ किया था। 'प्रताप' दैनिक के नगर सवाददाता के रूप मे आपने वहाँ की जनता की जो सेवा की थी, वह सर्वथा अभिनन्दनीय है। नगर की प्रत्येक सामाजिक, सास्कृतिक, शैक्षणिक और राजनीतिक गतिविधि मे आपका उल्लेखनीय स्थान रहता था। स्वतत्रता के उपरान्त आपका ध्यान 'ओमर वैश्य विद्यालय' की उन्नति की ओर आकर्षित हो गया था और उसीके उत्कर्ष मे आप लगे रहे। यह आपके अथक परिश्रम तथा सतत अध्यवसाय का ही सुपरिणाम है कि आज यह संस्थान नगर की प्रशंसनीय सेवा कर रहा है और इसमे आजकल लगभग 10 हजार विद्यार्थी पढ रहे है।

आपकी कर्मठता का प्रत्यक्ष परिचय इसी बात से मिल जाता है कि कानपुर के 'गणेशशंकर विद्यार्थी मैडिकल कालेज', बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की स्मृति में स्थापित परेड स्थित 'नवीन मार्केट' और महाकवि भूषण तथा मतिराम के स्मारको के निर्माण मे आपका अभिनन्दनीय योगदान रहा था। कानपुर के 'हिन्दी पत्रकार पुस्तकालय भवन' के निर्माण मे आपका अद्वितीय सहयोग रहा था। स्थानीय पत्रकारो के निवास के लिए सहकारिता के माध्यम से भूमि-खण्ड प्राप्त करने और उस पर आवास-निर्माण की सुविधाएँ प्राप्त कराने में भी आपने बहुत प्रयास किया था। आप कई वर्ष तक 'कानपुर प्रेस क्लब' के अध्यक्ष भी रहे थे। जब 'प्रताप' का प्रकाशन बन्द हो गया तब तिवारी जी आकाश वाणी के संवाददाता बनाए गए थे और अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक आप नगर की जनता की सेवा में पूर्णत जागरूक रहे थे। नगर की विभिन्न समस्याओ के प्रति शासन का ध्यान आकृष्ट करने मे आप कभी भी पीछे नही रहते थे।



जब आप कानपुर नगर महापालिका के सम्मानित सदस्य बनाए गए थे तब 'प्रेस क्लब' द्वारा आपका जो भाव-भीना अभिनन्दन किया गया था उस अवसर पर आपने जो उद्‌गार प्रकट किए थे उनमे आपकी सेवा-भावना पर अच्छा प्रकाश पडता है। आपने कहा था—"मै अपने नागरिक बन्धुओं की सेवा करने को पूरी तरह तत्पर हूँ, किन्तु लोग गलत कामों को करने के लिए मुझे बाध्य न करे। जो सही काम है और किन्ही कारणो से नही हो पा रहे है, उन्हे कराने मे लोगो के साथ कही पर भी चलने को मैं हमेशा तैयार रहूँगा, किन्तु यदि गलत कामो के लिए वे मेरे पास आयेंगे तो उन्हे निराशा ही हाथ लगेगी।"

आपकी स्मृति-रक्षा के निमित्त 'हिन्दी पत्रकार भवन' मे आपके चित्र का जब सन् 1977 मे अनावरण किया गया था तब एक स्मारिका भी प्रकाशित की गई थी। इस स्मारिका से आपके व्यक्तित्व तथा कृतित्व का अच्छा परिचय प्रस्तुत किया गया था। इस स्मारिका मे प्रकाशित इन पक्तियो मे आपके व्यक्तित्व की महत्ता और भी प्रोद्‌भासित हुई है—"भवन निर्माण सहकारी समिति के प्रयास मे ही इस पुस्तकालय भवन का निर्माण महापालिका के अनुदान द्वारा, समिति के अध्यक्ष स्व० पडित गोपीकृष्ण तिवारी के अथक प्रयास से सम्पन्न हुआ है। आज उनका स्मरण कर हम सभी पत्रकार तथा नागरिक उनके प्रति हार्दिक श्रद्धाजलि अर्पित कर रहे है।"

आपका निधन 27 अप्रैल सन् 1976 को हुआ था।

श्री गोमतीप्रसाद पाण्डेय 'कुमुदेश'

श्री 'कुमुदेश' का जन्म सन् 1923 मे उत्तर प्रदेश के लखनऊ नगर मे हुआ था। इण्टरमीडिएट तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने लखनऊ की नगरपालिका के शिक्षा

विभाग में कार्य प्रारंभ कर दिया था और यावज्जीवन उसी-की सेवा में संलग्न रहे। कविता की ओर आपकी प्रारम्भ से ही रुचि थी और उसी-में आपने अपने को पूर्णत रमा लिया था।



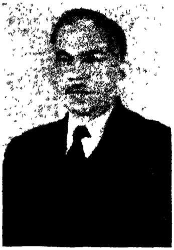
आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'कुमुदावली' (1953), और 'तुलसी रत्नावली' (1961) के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपकी 'मालती', 'वनमाला, 'जागृति' तथा 'कृष्ण चरित्र' नामक कई रचनाएँ अभी तक अप्रकाशित ही है।

आपका निधन 7 सितम्बर सन् 1978 को हुआ था।

डॉ० गोरखप्रसाद

डॉक्टर गोरखप्रसाद का जन्म 28 मार्च सन् 1896 को उत्तर प्रदेश के गोरखपुर नगर मे हुआ था। सन् 1918 मे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से एम० एस-सी० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने सुप्रसिद्ध गणितज्ञ डॉ० गणेशप्रसाद के शिष्यत्व मे अनुसधान-कार्य किया और महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय की प्रेरणा पर 'एडिनबरा विश्वविद्यालय' मे जाकर वहाँ से सन् 1924 मे डी० एम-सी० की उपाधि प्राप्त की। तदुपरान्त 21 जुलाई सन् 1931 से 20 दिसम्बर सन् 1957 तक प्रयाग विश्वविद्यालय के गणित विभाग मे प्राध्यापक रहे। विश्वविद्यालय से सेवा-निवृत्ति के उपरान्त आपने नागरी प्रचारिणी सभा काशी की ओर से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दी विश्वकोश' का सम्पादन-भार ग्रहण किया और अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक उसी कार्य मे सलग्न रहे।

आपने कुशल प्राध्यापक होने के साथ-साथ लेखन के क्षेत्र मे भी अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। हिन्दी में विज्ञान - सम्बन्धी साहित्य की रचना करने की दिशा मे आपका स्थान अन्यतम है। आपके 'फोटोग्राफी' नामक हिन्दी ग्रन्थ पर अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से सन् 1931 मे उसका सर्वोच्च 'मगला प्रसाद पुरस्कार' प्रदान किया गया था।



नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की ओर से प्रकाशित आपकी 'सौर परिवार' (सन् 1932-33) नामक पुस्तक पर डॉक्टर छन्नूलाल पुरस्कार, ग्रीव्स पदक और रेडिचे पदक प्रदान किये गए थे। आपकी अन्य वैज्ञानिक रचनाओ मे 'ज्यामिति' (1932), 'नियामक ज्यामिति' (1934), 'आकाश की सैर' (1936), 'फल सरक्षण' (1937), 'उपयोगी नुस्खे, तरकीबे और हुनर' (1939), 'लकडी पर पालिश' (1940), 'घरेलू डॉक्टर'' (1940), 'तैरना' (1944), 'चन्द्र सारिणी' (1945), 'सरल फोटोग्राफी' (1945), 'सरल विज्ञान सागर' (1946), 'सूर्य सारिणी' (1948), 'प्रारम्भिक अवकलन समीकरण' (1948), 'नियामक ज्यामिति' (1948), 'रसायनिक तत्त्व विश्लेषण' (1949), 'गति विज्ञान' (1953), 'नीहारिकाएँ' (1954), 'भारतीय ज्योतिष का इतिहास' (1955), 'सूर्य' (1959), तथा 'ज्योतिष की पहुँच' (1963) आदि उल्लेखनीय है। आपने श्री हरिश्चन्द्र के साथ 'व्यावहारिक मनोविज्ञान' नामक एक ग्रन्थ भी लिखा था। इसके अतिरिक्त डॉ० धीरेन्द्र वर्मा और डॉ० भगवतशरण उपाध्याय के साथ मिलकर आपने 'हिन्दी कथा कोष' का सम्पादन भी किया था। उच्च कक्षाओं को विज्ञान-सम्बन्धी सर्वांगीण जानकारी देने की दृष्टि से आपने तीन भागो मे 'माध्यमिक रसायन'

नामक एक और भी ग्रन्थ लिखा था, जो शिक्षा-जगत् मे पर्याप्त लोकप्रिय हुआ था।

अपना अध्यापकीय जीवन प्रारम्भ करने के साथ-साथ हिन्दी मे विज्ञान-सम्बन्धी साहित्य की सर्जना करने की दिशा में आपने जो कार्य प्रारम्भ किया था, उसमे आजीवन संलग्न रहे। आपका देश-विदेश की अनेक साहित्यिक तथा वैज्ञानिक संस्थाओं से निकट का सम्बन्ध रहा था। प्रयाग की विज्ञान परिषद् के तो आप प्रमुख स्तम्भ ही थे। आप सन् 1952 से सन् 1959 तक उसके उपसभापति रहे थे और अपने देहान्त के समय आप परिषद् के सभापति थे। अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के परीक्षा मन्त्री के रूप में आपने कई वर्ष तक सफलतापूर्वक कार्य किया था। प्रख्यात इतिहासवेत्ता रायबहादुर हीरालाल के सम्बन्ध मे प्रकाशित 'हैहय क्षत्रिय' (1936) के विशेषांक का सम्पादन भी आपने किया था। आप अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के काशी मे हुए 28वे वार्षिक अधिवेशन के अन्तर्गत आयोजित 'विज्ञान परिषद्' के अध्यक्ष भी रहे थे। जिन दिनो आप काशी नगरी प्रचारिणी सभा के 'हिन्दी विश्वकोष' के मुख्य सम्पादक थे। उन दिनों आप बनारस की 'मैथमेटिकल सोसायटी' के भी अध्यक्ष थे।

आपका निधन 5 मई सन् 1961 को काशी मे गगा मे नहाते हुए अपने नौकर को बचाने के प्रयास मे हुआ था और आपने वही जल-समाधि ग्रहण कर ली थी।

श्री गोरादान बारहठ

श्री बारहठ का जन्म मध्यप्रदेश की सीतामऊ रियासत के करडिया नामक स्थान मे सन् 1871 मे हुआ था। आप-में कवित्व की प्रतिभा अपनी पारिवारिक परम्परा से ही उद्भूत हुई थी। आपने अनेक फुटकर छन्द लिखे है। यदि उनका सकलन प्रकाशित हो जाता तो साहित्य का बड़ा उपकार होता। सीतामऊ राज्य के कवियो मे आपका प्रमुख स्थान था।

आपका निधन सन् 1931 मे हुआ था।

श्री गोरेलाल 'मंजुसुशील'

श्री 'मजुसुशील' का जन्म मध्यप्रदेश के सागर जिले के देवरी नामक स्थान में सन् 1881 मे हुआ था। आपकी साहित्यिक प्रतिभा का सबसे उत्कृष्ट प्रमाण यही है कि आप अपनी शैशवावस्था से ही काव्य-रचना करने लगे थे। आपके पिता श्री प्यारेलाल श्रीवास्तव क्योंकि मध्यप्रदेश शासन के राजस्व विभाग मे पटवारी का कार्य करते थे, इसलिए आपने भी पहले-पहल 'पटवारी' का कार्य ही प्रारम्भ किया था। बाद मे इस नौकरी को छोड़कर आपने 'बिसातखाने' की दुकान कर ली थी।

आपने सन् 1895 मे देवरी मे 'मीर मण्डल' नामक कवि-समाज की स्थापना की थी। आप जहाँ उच्चकोटि के कवि और साहित्यकार थे वहाँ पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपकी देन कम महत्त्व नही रखती। आपके द्वारा सम्पादित 'लक्ष्मी उपदेश लहरी' नामक पत्र महत्त्वपूर्ण है। इसका सम्पादन आपने सन् 1903 मे प्रारम्भ किया था और इसका प्रकाशन निरन्तर 30 वर्ष तक अबाध गति मे होता रहा था।

कविता की ओर आपका रुझान सैयद अमीरअली 'मीर' की प्रेरणा से हुआ था। कवि के रूप मे भी आपकी बहुत ख्याति थी। ब्रजभाषा की रचनाएँ करने मे आप इतने निपुण थे कि उन्हे देखकर आपकी काव्य-प्रतिभा का सही अनुमान हो जाता है। एक उदाहरण देखिए

विकसे अरविन्द के वृन्दन ते, मकरन्द अनन्दमयी बरसै।
पुहुपान की पखुरियान पै प्रेम सो, भौर की भीर छुपी हरसै॥
वलवीर समीर के झोकन ते, तरु-मजरी झूमिकै भू परसै।
कवि 'मजुसुशील' बसन्त की लोनी, छटा छिति-मडल पै दरसै॥

आपकी रचनाओ मे मतिराम और देव के समान सरलता और शुद्धता दृष्टिगत होती है। उनमे प्राय अनुप्रासो की छटा और उपमानो का प्रयोग बहुलता मे हुआ है।

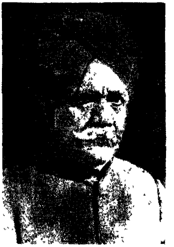
आपका निधन सग्रहणी के कारण सन् 1906 मे हुआ था।

श्री गोवर्धनलाल पणिया

श्री पणिया का जन्म राजस्थान के जोधपुर नामक नगर के गूंदी

के मोहल्ले मे जून सन् 1890 में हुआ था। आपके पिता जोधपुर के महाराजा के किले मे 'कामदार' थे। बाद में वे बूँदी भेज दिए गए थे। श्री पणिया की प्रारम्भिक शिक्षा वही हुई थी और बूँदी मे ही आपने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। हाई स्कूल की परीक्षा देने के उपरान्त आप प्रारम्भ मे 2 वर्ष तक जोधपुर रियासत के प्राथमिक विद्यालयो में अध्यापक रहे और बाद मे सन् 1921 में आप अपने शैक्षणिक जीवन में उन्नति करने की दृष्टि से बीकानेर चले गए और वहाँ पर आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'विशारद' की परीक्षा उत्तीर्ण की। इससे आपके साहित्यिक ज्ञान मे अभिवृद्धि हुई और फिर धीरे-धीरे आपकी रुचि लेखन की ओर बढ़ने लगी। अध्यापन-कार्य में व्यस्त रहते हुए भी आप साहित्य-रचना की ओर अग्रसर होते रहे।

अपने साहित्यिक जीवन के प्रारम्भ में आपने सर्वप्रथम सामाजिक कुरीतियो और जाति-सुधार-सम्बन्धी कार्यो पर प्रकाश डालने वाले लेख ही लिखे और बाद मे अपने क्षेत्र को शनै-शनै विकसित करते गए। आपकी गद्य-पद्य की व्यग्य-विनोदमयी रचनाएँ उन दिनो 'चाँद', 'माधुरी', 'सरस्वती', 'महारथी', 'सुधा', 'कल्याण', 'विश्वमित्र' तथा 'बालक' आदि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित होती थी। आप जहा अपनी साहित्यिक प्रतिभा को इन पत्रिकाओं के माध्यम से उत्तरोत्तर उत्कर्ष की ओर अग्रसर करते जा रहे थे वहाँ आपकी जाति-सुधार-सम्बन्धी अनेक क्रान्तिकारी रचनाएँ 'माहेश्वरी बन्धु', 'ब्रह्मणोपकारक' तथा 'पुष्करणा सन्देश' आदि अनेक जातीय पत्रो मे प्रकाशित हुआ करती थी। आपकी राष्ट्रीय एव सामाजिक जागरण-सम्बन्धी रचनाएँ 'ज्वाला', 'बीकानेर समाचार' और 'प्रजा सेवक' आदि स्थानीय पत्रो मे छपा करती थी।



आपने जहाँ अनेक साहित्यिक, राजनीतिक और समाज-सुधार-सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से अपनी लेखन-प्रतिभा का पूर्ण परिचय दिया वहाँ पत्रकारिता की दिशा मे भी आपकी देन कम महत्त्व नही रखती। आपने 'अखिल भारतीय पुष्करणा ब्राह्मण महासभा' के सगठन के द्वारा उसके मासिक पत्र 'पुष्करणेन्दु' को पहले साप्ताहिक, फिर पाक्षिक और बाद मे मासिक रूप मे अनेक वर्ष तक सम्पादित किया था। आपके ही सत्प्रयासों से 'अखिल भारतीय पुष्करणा ब्राह्मण महासभा' के तीन अधिवेशन कराची, जोधपुर और बीकानेर मे हुए थे।

आप जहाँ एक लगनशील अध्यापक, जागरूक पत्रकार और कर्मठ समाज-सुधारक के रूप मे विख्यात थे वहाँ आपके द्वारा लिखित कई पुस्तकें आपकी लेखन-प्रतिभा का परिचय देने वाली है। आपकी ऐसी प्रकाशित रचनाओ मे 'पुष्करणा सज्जन चरित्र', प्रथम भाग, (जीवनियाँ) 'अबलाओ का इन्साफ' और 'विवेक वचनावली' प्रमुख है। आपकी अप्रकाशित रचनाओ मे 'पुष्करणा सज्जन चरित्र' (द्वितीय भाग), 'व्रज रक्षक विलास' (काव्य-सग्रह), तथा 'राजस्थान के वीर बालक' उल्लेख्य है। अध्यापक के रूप मे भी आपने जो महत्त्वपूर्ण सेवाएँ समाज की की थी वे सर्वथा अविस्मरणीय है। आप अनेक वर्ष तक जहाँ बीकानेर के 'आचार्य श्रीराम विद्यालय' के प्रधानाध्यापक रहे थे वहाँ 'मोहता मूलचन्द हाई स्कूल' मे की गई आपकी शैक्षणिक सेवाएँ भी उल्लेखनीय कही जा सकती है। आपने बीकानेर नगर की पुरानी सस्था 'विद्यार्थी सभा' के अध्यक्ष के रूप मे जहाँ प्रशसनीय कार्य किया था वहाँ नगर की अनेक शिक्षण-सस्थाओ के सचालन मे भी बढ़-चढ़कर भाग लिया था। प्रौढ शिक्षा और महिला-जागरण की दिशा मे भी आपकी सेवाएँ उल्लेखनीय थी।

आपका निधन 9 नवम्बर सन् 1959 को बीकानेर मे हुआ था।

श्री गोवर्धनलाल 'श्याम'

श्री श्याम का जन्म मध्यप्रदेश के ग्वालियर क्षेत्र के विदिशा

जनपद के गंज बासोदा नामक नगर मे सन् 1839 मे हुआ था। आपके पितामह सन् 1857 मे स्वतन्त्रता-सग्राम मे सैनिक थे और पिता श्री दयाचन्द एक ईश्वर-भक्त और कला-प्रेमी महानुभाव थे। 'श्याम' जी ने क्वीन्स कालेज बनारस से मिडिल तथा नार्मल की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के उपरान्त हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की 'विशारद' की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आपने विदिशा (भेलसा) के हाई स्कूल में 'हिन्दी-शिक्षक' के रूप मे कार्य प्रारम्भ किया था। शिक्षक के रूप मे आपकी सेवाएँ सदैव स्पृहणीय तथा प्रशंसनीय रही थीं। आपके छात्रो में से अनेक आगे चलकर सामाजिक, साहित्यिक और राजनीतिक क्षेत्रो मे सम्मानित हुए थे। ऐसे महानुभावो मे सर्वश्री गणेशशकर विद्यार्थी, बाबू भोलानाथ, श्री तख्तमल जैन, बाबू रामसहाय तथा श्री निरजन वर्मा के नाम उल्लेखनीय है। आपकी अध्यापन-पटुता का सबसे ज्वलन्त साक्ष्य यही है कि आपको ग्वालियर-नरेश श्री माधवराव सिन्धिया ने एकाधिक बार 'शाल' और 'रजत पदक' से सम्मानित किया था। 'कवीन्द्र सभा प्रयाग' ने आपको 'श्याम' उपाधि प्रदान की थी।

आप अध्यापन के कार्य मे सलग्न रहते हुए साहित्य-सेवा के क्षेत्र मे भी अग्रणी स्थान रखते थे। आपने जहाँ विदिशा मे 'कवि-समाज' की स्थापना करके उसके द्वारा जनता मे 'समस्या-पूर्ति' करने की ललक जगाने मे प्रशसनीय कार्य किया था वहाँ आप स्वय भी उत्कृष्ट काव्य-रचनाएँ किया करते थे। आपकी रचनाएँ तब 'रसिक रहस्य', 'रसिक मित्र', 'जाह्नवी', 'कवीन्द्र वाटिका', 'प्रियवदा', 'कवि', 'सुकवि', 'जयाजी प्रताप' तथा 'वेंकटेश्वर समाचार' आदि तत्कालीन अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। आपने व्रजभाषा मे लगभग 5 हजार छन्दों की रचना की थी। इनमें अनेक विषयों का निदर्शन मिलता है। आपकी ऐसी रचनाओं का प्रकाशन 'पूर्ति प्रमोद' (प्रथम भाग) नाम से प्रकाशित हुआ है। आपके सुपुत्र श्री नर्मदेश आपकी अन्य कृतियो के प्रकाशन के लिए प्रयत्नशील है। आपके द्वारा लिखे गए सवैयो मे से एक बानगी इस प्रकार है·



कचन-कान्ति-सी देह की कान्ति,
कलानिधि कोटि लजावन हारी।
हीरा जडे प्रति अग अभूषण,
सारी सजी सिर पं जर तारी॥
'श्याम' अँधेरे मे आनन गोय,
चली मग बीच मिले बनवारी।
घूँघट के पट खोलत ही भई,
रात अमावस की अँधियारी॥

आपने विदिशा मे सन् 1940 मे 'साहित्य परिषद्' नामक जिस सस्था की स्थापना की थी आप आजीवन उसके अध्यक्ष रहे और आपके सतर्क निरीक्षण मे हिन्दी साहित्य के प्रचार तथा प्रसार का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य हुआ था। परिषद् की ओर से प्रकाशित आपके तीन काव्य-सग्रह भी प्रमुख है। आपकी अप्रकाशित रचनाओ मे 'होली रहस्य', 'बेतवा लहरी', 'नया दमन', 'प्रेम प्रवाह' और 'साहित्य भास्कर' आदि प्रमुख है।

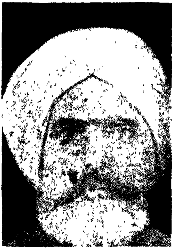
आपका निधन 1 जून सन् 1959 को हुआ था।

प्राणाचार्य गोवर्द्धन शर्मा छाँगाणी

श्री छाँगाणी का जन्म राजस्थान की जोधपुर रियासत के पोकरण नामक स्थान मे सन् 1876 की विजयदशमी के पर्व पर हुआ था। आपके पिता प० जीतमल जी पुष्करणा वश के विद्या-व्यसनी ब्राह्मण थे। छाँगाणी की शिक्षा-दीक्षा उनके ममेरे भाई प० हीरालाल जोशी की देख रेख मे महाराष्ट्र के अमरावती जिले के मगरूल दस्तगीर नामक स्थान म हुई थी। 11 वर्ष की आयु तक आप अपने जन्म-स्थान पोकरण मे ही रहे थे, जहाँ पर आपने अक्षरारम्भ भी नहीं किया था। जोशी जी ने आपको उक्त कस्बे के सरकारी मराठी स्कूल मे अध्ययनार्थ प्रविष्ट करा दिया। अपनी तीव्र मेधा तथा सतत

परिश्रम की प्रकृति के कारण छाँगाणी जी ने केवल 6 वर्ष में ही स्कूली शिक्षा के अतिरिक्त अपने मुख्याध्यापक पण्डित मोरो नारायण भिडे की कृपा से मराठी और अंग्रेजी के अलावा सस्कृत, हिन्दी, व्याकरण, काव्य और कोश का भी विधिवत् पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया। साथ ही अपने इसी विद्यालय के मौलवी अब्दुल गफ्फार साहब से उर्दू और फारसी का ज्ञान सम्पादित करने मे भी आपने कोई कमी नही की। इस प्रकार अपने सतत अध्यवसाय से आपने मराठी, हिन्दी, सस्कृत, उर्दू तथा फारसी आदि भाषाओ का सम्यक् ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ इन सभी भाषाओ के उत्कृष्टतम साहित्य का सर्वांगीण अध्ययन कर लिया था।

आप अपने छात्र-जीवन मे ही उच्चकोटि के लेखक और वक्ता समझे जाने लगे थे और प्राय: सर्वत्र आपके भाषणो की धूम रहती थी। अपने गुरु श्री भिड़े जी की प्रेरणा पर आपका ध्यान ज्योतिष शास्त्र के अध्ययन की ओर भी गया और उसमे भी आप पूर्ण पारगत हो गए। ज्योतिष के विधिवत् अध्ययन के लिए आप जम्मू (कश्मीर) के 'रघुनाथ सस्कृत विद्यालय' मे गए थे और वहाँ के पण्डित गगाधर जी से आपने 'लीलावती' और 'गृह लाघव' नामक ग्रन्थ पढ़े थे। फिर आपने अमृतसर के पडित हजारीलालजी के पास आकर अपने तत्सम्बन्धी ज्ञान को और भी परिपुष्ट किया। आपको 'त्रिपुर सुन्दरी' सिद्ध थी। ज्योतिष के साथ-साथ आपने 'मन्त्र शास्त्र' और 'कर्म-काण्ड' मे भी पूर्ण दाक्षिण्य प्राप्त कर लिया था। इस बीच सन् 1896 मे आपका विवाह हो गया। विवाहोपरान्त आप ज्योतिष तथा कर्मकाण्ड मे सर्वात्मना लग गए और आपकी ख्याति धीरे-धीरे विस्तार लेती गई। इस प्रसंग मे आपको देश के अनेक स्थानो की यात्रा भी करनी पडती थी। एक ज्योतिषी



कर्मकाण्डी और तान्त्रिक के रूप मे तो आपकी ख्याति हो ही रही थी साथ ही 23 वर्ष की आयु मे आप 'आशु कवि' के रूप में भी विख्यात हो गए।

कवि के रूप मे आपकी ख्याति इतनी अधिक हुई कि जैसलमेर-नरेश ने आपको अपने शासकीय अतिथि के रूप मे आमन्त्रित किया था और आपने वहाँ रहकर 2-3 काव्य-ग्रन्थो का निर्माण किया था। महाराजा बीकानेर ने भी आपको अपने दरबार मे आमन्त्रित करके सम्मानित किया था। एक बार महाराजा ने आपको 'उपदेश देते है' समस्या देकर आपसे उसकी पूर्ति करने का जब अनुरोध किया तब छाँगाणीजी ने कविता मे उसे इस प्रकार निबद्ध किया था :

आप तो विवेकहीन रहे सदा पापलीन,
थाप दे भुलाय देत ईश ते न भेने है।
लेते है न हरि नाम कामवश धाम-धाम-
डोलत निशंक औ, कलक लेत जेते है ।।
हैट, बूट, कोट, पतलून को सजाय निज,
स्पीच को समाज मे सुनाय सुख लेते है।
'गिरिराज' आज कलिराज के प्रभाव ऐसे,
नेचर विज्ञानी केते उपदेश देते है ।।

आपने अपने 'गोवर्धन' नाम को इस कविता मे 'गिरिराज' के रूप मे प्रयुक्त किया था। जैसलमेर मे रहते हुए आपने जिन-जिन ग्रन्थो की रचना की थी, उनके नाम 'भट्टविश प्रकाश' और 'आई पदमाला' है।

आप कवि के रूप मे तो चूडान्त प्रतिष्ठा प्राप्त कर ही चुके थे, राजनीति के क्षेत्र मे भी आपकी सेवाएँ कम महत्त्व नही रखती। आपने राजस्थान मे सेठ दामोदरदास राठी (ब्यावर) तथा पजाब मे लाला लाजपतराय के साथ रहकर अनेक ऐसे कार्य किए थे। जब आप योगिराज अरविन्द घोष के सम्पर्क मे आए, तब आपने उन्हे राजनीति के बजाय धार्मिक क्षेत्र मे रहकर ही कार्य करने की सलाह दी थी। आपने 14 महीने तक कलकत्ता मे रहकर 'रामायण की कथा' के माध्यम से राष्ट्रीय जागृति की भावना उत्पन्न की। आपकी कथा को अरविन्द घोष भी नियमित रूप से सुना करते थे। आप उन दिनो राष्ट्रीय भाव-धारा से परिपूर्ण बडे गम्भीर और मौलिक लेख भी लिखा करते थे। साथ ही आप अरविन्द घोष के बगाली लेखों का हिन्दी मे अनुवाद भी प्रस्तुत किया करते थे। उन्ही दिनों आपका

सम्पर्क पं० सुन्दरलाल और विजयसिंह 'पथिक'-जैसे क्रान्तिकारी पत्रकारो से हो गया और आपने पत्रकारिता के माध्यम से कार्य करने का सकल्प कर लिया। कलकत्ता से लौटकर आप खामगाँव (बरार) आ गए और वहाँ पर आयुर्वेद तथा ज्योतिष का कार्य करते हुए पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी उल्लेखनीय योगदान दिया। उन्ही दिनो सन् 1912 मे नागपुर के सेठ रामनारायण राठी ने आपको 'मारवाडी' नामक हिन्दी साप्ताहिक पत्र का सम्पादन करने के निमित्त नागपुर बुला लिया। इस पत्र का सम्पादन करने के साथ-साथ आप चिकित्सा का कार्य भी किया करते थे। जब आपने अपने चिकित्सा-कार्य मे सम्पादन से बाधा आती देखी तो आपने उससे त्यागपत्र देकर वैद्य सम्मेलन की पत्रिका के सम्पादन का भार ही ग्रहण कर लिया। इस पत्रिका के माध्यम से आपने मारवाडी समाज और आयुर्वेद जगत् की बहुत अधिक सेवा की थी। आपने समय-समय पर 'धन्वन्तरि' आदि आयुर्वेद-सम्बन्धी कई पत्रो के अनेक विशेषाको का सम्पादन भी योग्यतापूर्वक किया था।

आयुर्वेद के क्षेत्र मे भी छाँगाणी जी की सेवाएँ सदा आदर के साथ याद की जाती रही है। आपकी आयुर्वेद-सम्बन्धी योग्यता से सुप्रसिद्ध वैद्य श्री यादवजी त्रिक्रमजी आचार्य बहुत प्रभावित हुए थे। उनके अनुरोध पर छागाणी जी ने आयुर्वेद के क्षेत्र मे अनेक ऐसे कार्य किये जिनके कारण आपकी ख्याति दिनानुदिन बढती ही गई और एक दिन वह भी आया जब आप 'निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महामण्डल' तथा 'विद्यापीठ' के आश्रयदाता और आजीवन सदस्य बन गए। सन् 1931 से लेकर कई वर्ष तक आपने जहाँ महामण्डल की पत्रिका का सफलतापूर्वक सम्पादन किया वहाँ आपने उसकी परीक्षाओ के प्रचार तथा प्रसार के कार्य मे भी अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया। इसके अतिरिक्त आप जहाँ कई वर्ष तक 'वैद्यक महाविद्यालय नागपुर' के प्रधानाचार्य रहे वहाँ सिवनी और अमरावती मे सचालित 'आयुर्वेद महाविद्यालयो' को भी आपका सक्रिय सहयोग बराबर मिलता रहा। आपने सन् 1931 मे नागपुर मे 'मध्य प्रान्तीय द्वितीय वैद्य सम्मेलन' भी बुलाया था, जिसकी अध्यक्षता लखनऊ के प्रख्यात चिकित्सक श्री शालिग्राम शास्त्री साहित्याचार्य ने की थी। आप सन् 1932 मे राजपूताना प्रान्तीय तृतीय वैद्य सम्मेलन के अध्यक्ष भी निर्वाचित हुए थे। इसी प्रकार सन् 1934 मे आप जहाँ 'बरार मध्यप्रान्तीय वैद्य सम्मेलन' के अध्यक्ष बनाए गए थे वहाँ सन् 1935 मे अहमदाबाद मे आयोजित 'निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन' के रजत जयन्ती अधिवेशन के अध्यक्ष भी आप ही थे। अपने इस अध्यक्ष-काल मे आपने 'महासम्मेलन' की बडी उन्नति की थी।

ग्रन्थ-लेखन और सम्पादन द्वारा भी आपने आयुर्वेद की जो सेवा की थी वह सर्वथा स्तुत्य एव अभिनन्दनीय है। आपने जहाँ बसवराज नामक आन्ध्र विद्वान् के तेलुगु भाषा मे लिखे आयुर्वेद-सम्बन्धी 'बसवराजीयम्' नामक ग्रन्थ का सम्पादन-प्रकाशन किया वहाँ आपके द्वारा लिखी गई 'आयुर्वेद प्रकाश', 'रसतन्त्र सार व सिद्ध प्रयोग सग्रह' और 'चिकित्सा तत्त्व प्रदीप' आदि ग्रन्थो की टीकाएँ एव भूमिकाएँ भी विशेष महत्त्वपूर्ण है। आपकी आयुर्वेद-सम्बन्धी उल्लेखनीय सेवाओ को दृष्टि मे रखकर ही सन् 1948 मे आपको एक 'अभिनन्दन ग्रन्थ' भेट किया गया था। इस ग्रन्थ का सम्पादन 'श्री धन्वन्तरि आयुर्वेद महाविद्यालय नागपुर' के अध्यापक वैद्यवाचस्पति श्री गुलराज शर्मा मिश्र आयुर्वेदाचार्य ने किया था। आयुर्वेद के क्षेत्र के अतिरिक्त गो-सेवा के आन्दोलन को चलाने मे भी आपका बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान रहा था। जिन दिनो आप 'मारवाडी' का सम्पादन किया करते थे उन दिनो आपने इस आन्दोलन को बहुत आगे बढाया था। आपकी गो-सेवा की भावनाओ से प्रभावित होकर महामहोपाध्याय कवि-सम्राट् पण्डित केशवराव जी ताम्हन ने यह ठीक ही लिखा था

"गो-सेवा-निरतो वहन्यनुगुणा गोवर्धनाख्या कृती।"

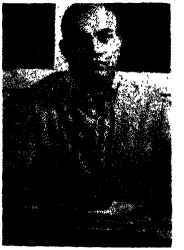
अर्थात् गो-सेवा मे नित्य निरत होने ही से आपका नाम 'गोवर्धन' है। आपके गो-सेवा के कार्य मे नागपुर विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति न्यायमूर्ति वासुदेव रामचन्द्र पुराणिक और सेठ शिवनारायण राठी ने बहुत सहयोग दिया था। छागाणी जी योगविद्या के भी अनन्य प्रेमी थे। आप योगक्रिया के द्वारा ज्वरादि की चिकित्सा भी किया करते थे। आपकी चिकित्सा-सम्बन्धी सेवाओ को दृष्टि मे रखकर आपको विभिन्न सस्थाओ की ओर से 'वैद्य भूषण', 'विद्यावाचस्पति', 'भिषगाचार्य', 'भिषक् केसरी', 'प्राणाचार्य' और 'आयुर्वेद महोपाध्याय' की सम्मानोपाधियाँ प्रदान की गई थी। प्रख्यात यूनानी हकीम स्व० श्री अजमलखाँ के

सुपुत्र हकीम जमील खाँ ने भी आपको 'हाजिकुलमुल्क' की उपाधि प्रदान की थी । आपकी साहित्यिक सेवाओ का इससे अधिक उत्कृष्ट प्रमाण और क्या हो सकता है कि जहाँ आप अनेक वर्ष तक 'नागरी प्रचारिणी सभा काशी' के सम्मानित सदस्य रहे थे वहाँ आपका 'भास्कराचार्य की जन्म-भूमि' शीर्षक खोजपूर्ण निबन्ध 'सरस्वती' मे प्रकाशित हुआ था ।

आपका निधन सन् 1957 में हुआ था ।

श्री गोवर्धन शर्मा त्रिपाठी वैद्य

श्री त्रिपाठी का जन्म सुदूर दक्षिण के हैदराबाद नगर मे 9 सितम्बर सन् 1905 को हुआ था । आप नगर के प्रख्यात आयुर्वेद-चिकित्सक श्री नन्दकिशोर त्रिपाठी के सुपुत्र थे। अपने पिता के सस्कारो के अनुरूप आपने भी आयुर्वेद का चूडान्त अध्ययन किया था और 'आयुर्वेद विशारद' की उपाधि प्राप्त करके आयुर्वेद-चिकित्सा की ओर विशेष ध्यान दिया था ।



आपका स्थान नगर के स्वाधीनता-सेनानियो मे अग्रगण्य था। आपने अनेक बार स्वाधीनता-आन्दोलनो मे भाग लेकर जेल-यात्राएँ भी की थी। आपने हैदराबाद के प्रख्यात हिन्दी-प्रेमी डॉ० वेदप्रकाश शास्त्री के सहयोग मे नगर मे लगभग 20 वर्ष तक एक 'सान्ध्य आयुर्वेद महाविद्यालय' भी चलाया था ।

आप एक उच्च-कोटि के पत्रकार तथा सफल लेखक भी थे। आपके लेख आदि जहाँ हैदराबाद से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दी मिलाप' मे प्रकाशित हुआ करते थे वहाँ आपने हैदराबाद से ही 'कर्तव्य' नामक मासिक पत्र का कई वर्ष तक सफलतापूर्वक सम्पादन किया था । आपके आयुर्वेद-सम्बन्धी लेख 'स्वास्थ्य' मे ससम्मान छपा करते थे। आप हिन्दी के इतने पक्षपाती थे कि अपनी कार पर हिन्दी मे नम्बर लिखने पर आपने जुरमाना अदा किया था । आपके द्वारा लिखित 'योग शतक' नामक एक ग्रन्थ का प्रकाशन सन् 1965 मे हुआ था ।

आपका देहावसान 5 मई सन् 1970 को हैदराबाद मे ही हुआ था ।

श्री गोवर्धन शास्त्री

श्री गोवर्धन शास्त्री का जन्म पाकिस्तान के डेरागाजीखान जनपद के ताशा-शरीफ नामक ग्राम मे सन् 1981 मे हुआ था। यह गाँव सिन्ध नदी के पश्चिम मे है और इसके इर्द-गिर्द अफगानिस्तान तथा बिलोचिस्तान की सीमाएँ लगी हुई है । सन् 1905 मे गवर्नमेट कालेज लाहौर स बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा संस्थापित गुरुकुल कागडी मे अध्यापक हो गए थे और सन् 1914 तक वहाँ रहे थे । अपने छात्र-जीवन मे ही आपका झुकाव महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा सस्थापित आर्य समाज के सुधारवादी आन्दोलन की तरफ हो गया था । इसी कारण आप स्वामी श्रद्धानन्द के चुम्बकीय व्यक्तित्व से आकृष्ट होकर गुरुकुल की सेवा मे गए थे। गुरुकुल के अपने कार्य-काल मे आपने अनुशासन के जो नए मानदण्ड स्थापित किए थे वे सर्वथा अनूठे थे । आपकी अनुशासनप्रियता का वर्णन प्रख्यात आस्ट्रेलियन लेखक श्री



जार्डन के द्वारा लिखित 'स्वामी श्रद्धानन्द की जीवनी' में देखा जा सकता है।

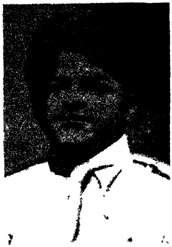
गुरुकुल मे रहते हुए आपने जहाँ स्वामी श्रद्धानन्द की प्रेरणा पर सन् 1908 मे भौतिक विज्ञान और रसायन विज्ञान की पुस्तकें हिन्दी मे लिखी थी वहाँ फ्रांस के प्रख्यात विचारक रूसो की पुस्तक 'एमील' का हिन्दी रूपान्तर भी 'माँ और बच्चा' नाम से किया था। आपके द्वारा लिखित रसायन और भौतिक शास्त्र-सम्बन्धी पुस्तकें गुरुकुल के पाठ्य-क्रम मे निर्धारित रही थी। सन् 1914 मे गुरुकुल से त्याग-पत्र देकर आप दिल्ली चले आए थे और यहाँ से 'साप्ताहिक प्रह्लाद' नामक पत्र का सम्पादन करने लगे थे, परन्तु अर्थाभाव के कारण यह पत्र अधिक दिन तक नही चल पाया। बाद मे आप दिल्ली के रामजस हाई स्कूल मे प्रधानाध्यापक हो गए और सन् 1919 तक इस पद पर सफलतापूर्वक कार्य करते रहे।

इस बीच सन् 1920 मे अपनी जन्मभूमि डेरा गाजीखाँ के उत्साही आर्यजनो के अनुरोध पर आप वहाँ लौट गए और अपने ही ग्राम ताशा शरीफ मे 'सघड़ वर्नाकुलर हाई स्कूल' की स्थापना कर दी। इससे पूर्व सन् 1918 में आपने पजाब विश्वविद्यालय से सस्कृत मे एम० ए० की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली थी। उक्त स्कूल का कार्य करते हुए सन् 1922 मे आपने एम० ओ० एल० तथा शास्त्री की परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण कर ली। आप जब अपने इस हाई स्कूल के कार्य की देख-भाल कर ही रहे थे कि आपसे पजाब के प्रख्यात आर्यसमाजी नेता रायबहादुर ठाकुरदत्त धवन ने डेरा इस्माइल खाँ के 'वैदिक छात्री कालेज' तथा 'कन्या पाठशाला' के कार्य को सँभालने का अनुरोध किया और प्रिंसिपल बालकृष्ण ने आपसे कोल्हापुर के डी० ए० वी० कालेज मे कार्य करने की प्रार्थना की। किन्तु अपनी जन्मभूमि मे चल रहे विद्यालय के कार्य के विकास को दृष्टि मे रखकर आपने डेरा इस्माइल खाँ की सस्था मे कार्य करना ही श्रेयस्कर समझा और वहाँ चले गए। श्री ठाकुरदत्त धवन भी क्योकि उनके साथ गुरुकुल कागडी मे रहे थे, अत आपने उनकी आज्ञा का पालन किया था। आपके सुपुत्र श्री बलभद्र हूजा आजकल गुरुकुल कागड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति हैं।

आपका निधन 19 मार्च सन् 1927 को डेरा इस्माइल-खाँ मे हुआ था।

श्री राव गोवर्धनसिंह

राव गोवर्धनसिंह का जन्म मध्यप्रदेश के मालवा अंचल की सीतामऊ नामक रियासत में सन् 1903 मे हुआ था। आपके पिता राव हीरालाल जी रियासत के अत्यन्त सम्मानित व्यक्ति थे। अपनी पारिवारिक परम्परा के अनुसार आप साहित्य-रचना मे अत्यन्त प्रवीण थे। आपने सन् 1929 से लेकर सन् 1936 तक खूब डटकर साहित्य-रचना की थी। आपकी प्रमुख कृतियो मे 'सिंह सतसई' (केवल 300 दोहे प्राप्त), 'चेनक चालीसा' (काव्य), 'रक्त मथन', 'मदालसा' (नाटक), 'कबर के कोने मे', 'चाकलेट-चर्चा' तथा 'हाल मे मस्त' (लघु प्रहसन) आदि उल्लेखनीय है।

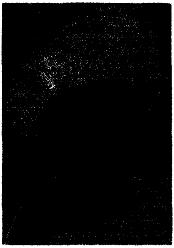


आपका निधन अप्रैल सन् 1939 मे हुआ था।

श्री गोविन्द गिल्ला भाई

श्री गोविन्द गिल्ला भाई का जन्म गुजरात प्रदेश की भावनगर रियासत के सिहोर नामक स्थान मे सन् 1848 मे हुआ था। आप मूलत राजस्थानी थे और आपके पूर्वज राजस्थान के मारवाड अचल के पीपलोद नामक स्थान से आकर काठियावाड मे बस गए थे। गोविन्दजी की प्रारम्भिक शिक्षा गुजराती भाषा मे हुई थी, किन्तु आप विशेष पढ नहीं सके थे। मुख्यत. श्री गोविन्दजी ने अपने ही परिश्रम से साहित्य-विषयक ज्ञान उपार्जित किया था। बहुत दिन तक आपने सरकारी नौकरी भी की थी।

यद्यपि आपकी सारी शिक्षा गुजराती के माध्यम से ही हुई थी और गुजराती साहित्य के आप अच्छे मर्मज्ञ थे, किन्तु आपका अधिकाश लेखन हिन्दी मे ही हुआ है। मुख्यतः आप कवि थे और आपने सन् 1868 से ही काव्य-रचना करनी प्रारम्भ कर दी थी। आपके हिन्दी मे रचित जो 32 ग्रन्थ प्राप्त हुए है उनमे से 'विवेक विलास', 'लच्छन-बत्तीसी', 'विष्णु विनय पचीसी', 'परब्रह्म पचीसी', 'प्रबोध पचीसी', 'सिख नख चन्द्रिका', 'राधा रूप मजरी', 'भूषण मजरी', 'शृगार षोडशी', 'भक्ति कल्पद्रुम', 'प्रवीण सागर', 'छवि सरोजिनी', 'साहित्य चिन्तामणि', 'षट् ऋतु वर्णन', 'प्रेम पचीसी', 'वक्रोक्ति विनोद', 'गोविन्द ज्ञान बावनी', 'पावस पयोनिधि', 'शृगार सरोजिनी', 'प्रारब्ध पचासा', 'समस्या पूर्ति प्रदीप', 'श्लेष चन्द्रिका', 'रत्नावली रहस्य', 'बोध बत्तीसी', 'शब्द विभूषण', 'गोविन्द हजारा', 'अन्योक्ति गोविन्द', 'अलकार अम्बुधि' तथा 'प्रेम प्रभाकर' आदि प्रमुख है। इनमे से आपके चुने हुए 14 ग्रन्थो का एक सकलन 'गोविन्द ग्रन्थ-माला' नाम से प्रकाशित हुआ है।



आपका निधन 8 जुलाई सन् 1926 को हुआ था।

श्री गोविन्ददास व्यास 'विनीत'

श्री 'विनीत' जी का जन्म उत्तर प्रदेश के झाँसी जनपद के तालबेहट नामक स्थान मे सन् 1900 मे हुआ था। आपका परिवार परम्परा से ही साहित्य-प्रेमी था। आपके पिता श्री मथुरादास, पितामह श्री बनवारी लाल और प्रपितामह श्री हरिदास व्यास प्रतिष्ठा-प्राप्त कवि थे। अपने पिता के निरन्तर प्रोत्साहन और साहित्य-प्रेम के कारण ही 'विनीत' जी इस पथ के पथिक बने थे। आपने अपने ही अध्यवसाय से हिन्दी, उर्दू, सस्कृत तथा अग्रेजी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आप व्यवसाय से अध्यापक होते हुए भी अनेक सामाजिक तथा सास्कृतिक कार्यों मे भी बढ-चढकर भाग लिया करते थे।

अपने अध्यापकी जीवन से समय निकालकर आप प्राय साहित्य-रचना मे ही सलग्न रहा करते थे। आपकी रचनाएँ 'माधुरी', 'चाँद', 'प्रताप', 'वीर अर्जुन', 'सजनी', 'समाज', 'रगमहल' तथा 'शिक्षा सुधा' आदि तत्कालीन अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। आपने जहाँ श्रीमद्भागवत, रामायण तथा महाभारत आदि के कथानको से सम्बन्धित अनेक ग्रन्थो की रचना की थी वहाँ कई सामाजिक तथा राजनीतिक विषयो पर सामयिक रचनाएँ भी की थी। नाटक तथा ज्योतिष-जैसे विषय भी आपकी प्रतिभा से अछूते नही बचे थे। आप जहाँ उच्चकोटि के कवि थे वहाँ गद्य-लेखन मे भी आपने अपनी प्रभूत प्रतिभा का परिचय दिया था। आप 'सादा जीवन तथा उच्च विचार' के सिद्धान्तो के अनन्य अनुयायी थे। दैनिक व्यवहार, चाल-चलन और रग-ढग सभी मे आपकी सादगी परिलक्षित होती थी।



एक अध्ययनशील अध्यापक, सहृदय कवि, कुशल लेखक और कर्मठ सामाजिक कार्यकर्त्ता होने के साथ-साथ राष्ट्रीय सग्राम मे भी आपकी देन कम महत्त्वपूर्ण नही थी। महात्मा गाधीजी द्वारा सचालित सत्याग्रह-संग्राम मे भी आपने अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया था। इस प्रसग मे आपको कई बार कृष्ण मन्दिर की यात्राएँ भी करनी पडी

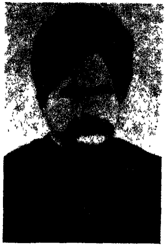
थी। आपका निवास 'दीन कुटीर ताल बेहट' किसी समय उस क्षेत्र के निवासियो के लिए तीर्थ के समान हो गया था। आपने अपनी लेखनी की सार्थकता 'आल्हा'-जैसी रचनाएँ लिखने के साथ-साथ साहित्य की विभिन्न विधाओ की कृतियो के लेखन मे सिद्ध की थी। आपकी प्रमुख काव्य-कृतियों मे 'शिवशिवास्तवन', 'महाभारत', 'गोविन्द गीता', 'प्रिया या प्रजा' और 'श्रीकृष्ण कथामृत' के नाम स्मरणीय है। इनके अतिरिक्त आपकी 'बाल स्वास्थ्य', 'ऐतिहासिक ड्रामा', 'सवाद सौरभ', 'बाल साहित्य' (चार भाग), 'ऐतिहासिक कहानियाँ', 'भक्त प्रह्लाद', 'आपत्ति यौवना', 'जीवन-द्वन्द्व', 'आग', 'हत्यारा समाज', 'भ्रम के बादल', 'नथनी का भार', 'पाप का घडा', 'खोया हुआ सुहाग', 'नही तो' तथा 'तिलक' आदि रचनाएँ महत्त्वपूर्ण है। इनमे आपकी प्रतिभा नाटक, उपन्यास तथा प्रहसन आदि अनेक विधाओ मे प्रस्फुटित हुई है। 'ज्योतिष'-जैसे गहन विषय पर भी 'विनीत' जी ने अपनी लेखनी का चमत्कार प्रदर्शित किया था।

आपका निधन 23 मई सन् 1953 को हुआ था।

श्री गोविन्दप्रसाद घिल्डियाल

श्री घिल्डियालजी का जन्म 24 मई सन् 1870 को उत्तर प्रदेश के गढवाल जनपद के श्रीनगर अचल के डाँग नामक ग्राम मे हुआ था। गोरखा शासन के उपरान्त जब सन् 1815 में यह जनपद अग्रेजों के अधीन हुआ तब इस परिवार के लोगों को नौकरियाँ मिली थी। श्री घिल्डियाल के दादा उन दिनों अलमोडा तथा नैनीताल मे सदर अमीन रहे थे। उन दिनो यह पद बहुत बडा समझा जाता था। श्रीनगर मे शिक्षा की व्यवस्था ठीक न होने के कारण आप अपने दादाजी के पास चले गए थे और वही पर आपकी शिक्षा-दीक्षा उनके निरीक्षण मे हुई थी। वहाँ पर रहते हुए आपने गढवाली तथा कुमायूँनी भाषाओ का अच्छा ज्ञान प्राप्त करने के अतिरिक्त पर्वतीय इतिहास एवं संस्कृति से भी अपना अच्छा तालमेल बैठा लिया था। बरेली कालेज से बी० ए० की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप 22 वर्ष की अल्प अल्पावस्था में ही 1 मार्च सन् 1892 को सरकारी नौकरी मे चले गए थे।

जिन दिनों आप कालेज मे पढा करते थे तब आपने अनेक नाटको तथा भाषण प्रतियोगिताओं में भाग लेकर जो लोकप्रियता अर्जित की थी उससे आपकी प्रतिभा का परिचय मिलता है। आपने अपने छात्र-जीवन मे जहाँ अँग्रेजी के प्रख्यात कवि वर्ड्सवर्थ, कूपर, लागफेलो तथा गोल्ड स्मिथ आदि की अनेक रचनाओ के हिन्दी-अनुवाद अपनी हस्त-लिखित पत्रिका मे प्रस्तुत किये थे वहाँ शेक्सपियर के नाटको को भी अपनी पत्रिका मे अनूदित किया था। जब कुमायूँ तथा गढ़वाल मण्डल मे प्रख्यात भाषा वैज्ञानिक सर जार्ज ग्रियर्सन ने भाषा-सम्बन्धी सर्वेक्षण का कार्य किया था तब उन्होंने आपको भी अपने इस कार्य मे अपने साथ ले लिया था। उस समय सर ग्रियर्सन के साथ कार्य करते हुए आपके मन मे यह भाव जाग्रत हुए कि गढवाली मे भी मानक पुस्तक लिखी जा सकती है। परिणामस्वरूप आपने गढवाली बोली मे सस्कृत की प्रख्यात नीति-पुस्तक 'हितोपदेश' का 'राजनीति' नाम से अनुवाद किया, जिसका प्रकाशन सन् 1901 मे 'डिबेटिंग क्लब अलमोडा' की ओर से किया गया था। उन दिनो आप शासकीय सेवा मे 'डिप्टी कलक्टर' के रूप मे कार्य कर रहे थे।



अपने इस भाषा-सर्वेक्षण के अनुभव के आधार पर आपने सन् 1919 मे 'हिन्दी की शब्द-शैली' के सम्बन्ध मे कई लेख लिखे थे, जो उन दिनो मण्डी धनौरा (मुरादाबाद) से प्रकाशित होने वाली 'मनोरमा' नामक पत्रिका के कई अको मे प्रकाशित हुए थे। आपने शेक्सपियर के नाटक 'ऑथेलो' का सर्वप्रथम अनुवाद हिन्दी मे प्रस्तुत करके इतिहास मे अपनी महत्ता स्थापित की थी। इस अनुवाद का

प्रकाशन सन् 1915 मे 'सनातन धर्म पताका प्रेस' मुरादाबाद से हुआ था। जिन दिनो इस नाटक का प्रकाशन हुआ था तब आप वहाँ पर 'जनगणनाधिकारी' थे। आप 'भारतीय शेक्सपियर सोसाइटी' के सम्मानित सदस्य थे। आपके इस अनुवाद को देखकर हिन्दी की शब्द-सामर्थ्य का सही अनुमान हो जाता है। आपकी रचनाएँ उन दिनो 'मनोरमा' के अतिरिक्त 'अलमोड़ा अखबार', 'शक्ति', 'मर्यादा' तथा 'गढवाली' आदि पत्रो मे ससम्मान छपा करती थी। 'ऑथेलो' के अतिरिक्त आपने प्रख्यात अंग्रेजी कवि गोल्डस्मिथ के 'दि हरमिट' नामक काव्य का अनुवाद भी 'विस्मित योगी' नाम से किया था। आपने गढवाली भाषा मे भी अनेक ऐतिहासिक तथा सामयिक निबन्धों की रचना करके अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। गढ़वाल की सैनिक परम्परा के विषय मे लिखी गई आपकी 'गढवाली ब्राह्मणो और राजपूतो की सैनिक सेवा' नामक पुस्तिका इस सम्बन्ध मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कही जा सकती है। आप अपने वास्तविक नाम के अतिरिक्त 'खिलारीराम' तथा 'अनुभवी' आदि कई नामो से भी लिखा करते थे।

गढवाल की सस्कृति तथा साहित्य की उल्लेखनीय सेवाएँ करने के उपलक्ष्य मे आपको शासन की ओर से सन् 1922 मे 'रायबहादुर' का सम्मान उस समय प्रदान किया गया जब आप उन्नाव से लैंस डाउन मे ग्रीष्म अवकाश पर आए हुए थे। यह सतोष की बात है कि आपने गढ़वाल की सस्कृति की सेवा करने का जो व्रत अपने कर्ममय जीवन मे लिया था, उसे आपके सुपुत्र श्री रमाप्रसाद घिल्डियाल 'पहाडी' पूर्ण तत्परता से पूर्ण करने मे सलग्न है।

आपका निधन लैंस डाउन मे ही 19 जुलाई सन् 1922 को सेवा-निवृत्ति से पूर्व ही उस समय हुआ था जब आप वहाँ ग्रीष्मावकाश का समय बिता रहे थे।

श्री गोविन्दप्रसाद तिवारी

श्री तिवारी का जन्म 6 फरवरी सन् 1914 को मध्य प्रदेश के जबलपुर नामक नगर मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा भी वही पर हुई थी। अपने छात्र-जीवन से ही आपके मानस मे ब्रिटिश नौकरशाही के अमानुषिक अत्याचारों के प्रति भयंकर विद्रोह समा गया था, जिसके कारण शोषण और उत्पीडन के विरुद्ध मोर्चा लेने की भावना आपमे कूट-कूटकर भरी हुई थी। आप जहाँ सहज और सुमधुर भावना से परिपूर्ण गीतो के निर्माता के रूप मे जाने जाते थे वहाँ युग-परिवर्तनकारी क्रान्तिकारी कवि के रूप मे भी आपकी अच्छी ख्याति थी।



एक शिक्षक के रूप मे अपना कर्ममय जीवन प्रारम्भ करके आपने देश की स्वाधीनता के निमित्त चलाए जाने वाले अनेक आन्दोलनो मे भी सक्रिय रूप से भाग लिया था। जबलपुर नगर की साहित्यिक परपराओ से जुडे रहने के कारण 'साहित्य सघ' के अध्यक्ष के रूप मे भी आपने उस क्षेत्र की अच्छी सेवा की थी। एक कर्मठ कार्यकर्ता, गम्भीर शिक्षक और सहृदय कवि के रूप मे भी आपका स्थान जबलपुर के इतिहास मे अन्यतम रहा है। 'साहित्य सघ' के अपने अध्यक्षता-काल मे आपने नगर के प्रमुख दिवगत साहित्यकारो के चित्रो की स्थापना नगर के बीचो-बीच निर्मित 'माखनलाल चतुर्वेदी सभा-भवन' मे कराकर देश की भावी पीढी के लिए एक अद्वितीय मार्ग-दर्शक का कार्य किया था।

आपके द्वारा लिखित तथा सम्पादित रचनाओ मे 'वीरांगना दुर्गावती' (खण्ड काव्य), 'गाधी गीत', 'अभियान', 'तरुणाई बोल', 'स्मृति के क्षण', 'स्वप्न गीत', 'पाहुने चले गए' और 'कोहरे मे खोई सम्भावना' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। आपकी प्रेरणात्मक कविताओं ने जहाँ देश की तरुणाई को नई दिशा दी थी वहाँ आपके समकालीन साहित्यिकजन भी उनसे प्रचुर मात्रा में प्रभावित हुए थे। आपकी प्रेरक वाणी आज भी इन शब्दो मे देश को नई दिशा

देती-सी परिलक्षित होती है :

निर्झर, नदियाँ, पहाड़ियाँ,
बागों की मधुर क्यारियाँ,
सब-कुछ अपना जमीन पर,
ग्राम-नगर के धवल शिखर,

ज्योति रहते तम पिये जा
आँधियों मे भी जिये जा
लहर उठती, प्रखर जलती
ज्वाल मे तू पल।
दीप जीवन जल।

आपका निधन 9 अगस्त सन् 1979 को हुआ था।

श्री गोविन्दप्रसाद पाण्डेय

आपका जन्म मध्य प्रदेश के रीवाँ नगर मे सन् 1854 मे हुआ था। आपके पिता रीवाँ दरबार के आश्रित साहित्य-कारो मे प्रमुख थे। जब श्री गोविन्दप्रसाद पाण्डेय केवल 13 वर्ष के ही थे तब आपके पिता श्री माधवप्रसाद पाण्डेय का असामयिक देहावसान हो गया था। अपने पिता के देहावसान के उपरान्त ही पाण्डेय जी ने निजी अध्यवसाय से अपना पठन-पाठन आगे बढ़ाया था। आपने अपनी अटूट लगन तथा निष्ठा से हिन्दी और सस्कृत के अतिरिक्त उर्दू तथा फारसी का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

आप मूलत कवि थे। राधा और कृष्ण की भक्ति के प्रति आपका प्रारम्भ से ही झुकाव था। आपकी कवित्व-प्रतिभा का ज्वलन्त प्रमाण यह पद है :

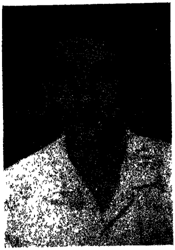
चन्द्रमुखी कहती क्यों हमें,
तोहि सीख दयो यों दया करि को है।
जाहिर होत कलक उनै,
कहिए इतै कौन कलंक लग्यो है॥
वीर विचारिकै बोलिए बैन,
गोविन्द यों मो पै करै मत छोहै।
मोह मयक री मोहन के मुख,
मो मुख मोहन को मुख मोहै॥

आपकी काव्य-कृतियों मे 'रसिक सुधार्णव', 'रस कल्पद्रुम', 'दीन विनय शतक', 'हनुमत कीर्ति माल' तथा 'गंग पचीसी' आदि प्रमुख है। यह अत्यन्त खेद का विषय है कि आपकी इन कृतियों मे से एक भी प्रकाशित नही हो सकी।

आपका निधन सन् 1921 मे हुआ था।

श्री गोविन्दप्रसाद भट्ट

श्री भट्ट का जन्म उत्तर प्रदेश के टिहरी गढ़वाल जनपद के सुपार ग्राम नामक स्थान मे 19 सितम्बर सन् 1926 को हुआ था। प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने 'भारतीय तेल तथा प्राकृतिक गैस निगम' मे लगभग 21 वर्ष तक हिन्दी-अध्यापन का कार्य किया था। आगरा विश्व-विद्यालय से हिन्दी मे एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप 'शाक्त सम्प्रदाय का हिन्दी पर प्रभाव' विषय पर पी-एच० डी० का शोध प्रबन्ध तैयार कर रहे थे, जो बीच मे ही छोड देना पडा।



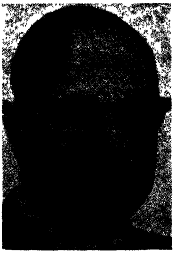
देहरादून मे हिन्दी-प्रचार कार्य आगे बढाने मे आपका प्रमुख योगदान रहा था। आप जहाँ एक कुशल शिक्षक एव हिन्दी-प्रचारक थे वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आपने अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। आपके द्वारा लिखित 'हमारा भूगोल' (तीन भाग) नामक पुस्तक इसकी साक्षी है। इस पुस्तक मे आपने गढवाल की बहुत-सी विशेषताओं पर अच्छा प्रकाश डाला है।

आपका निधन 25 दिसम्बर सन् 1977 को हुआ था।

डॉ० गोविन्दबिहारीलाल

डॉ० लाल का जन्म सन् 1889 मे भारत की राजधानी दिल्ली मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा स्थानीय सेण्ट स्टीफन कालेज मे हुई थी। आपने केवल 19 वर्ष की आयु में एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आप प्रख्यात क्रान्तिकारी लाला हरदयाल, वीर सावरकर और भाई परमानन्द के निकट सहयोगियों मे रहे थे। आप पहले भारतीय थे कि जिन्होने लाला हरदयाल की प्रेरणा पर सन् 1912 मे अमरीका जाकर वहाँ के विभिन्न नगरो मे बसे हुए भारतीयो मे भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के प्रति नई स्फूर्ति तथा चेतना उत्पन्न की थी। लाला हरदयाल ने जब वहाँ पर 'गदर पार्टी' का गठन किया तब डाक्टर लाल ने उनको बहुत सहयोग दिया था। जब प्रथम विश्व-युद्ध के समय लाला जी ने हिन्दी, उर्दू तथा पजाबी भाषाओ मे 'गदर' नामक पत्र का प्रकाशन वहाँ से किया था तब आपने ही उसके सम्पादन का भार अपने ऊपर लेकर वहाँ की जनता मे क्रान्तिकारी भावनाओ का प्रसार किया था।

इस पत्र के माध्यम से आपने जहाँ वीर सावरकर की क्रान्तिकारी गतिविधियो से वहाँ के निवासियो को परिचित कराया था वहाँ मदनलाल ढीगरा द्वारा लार्ड कर्जन की हत्या करने आदि के उदाहरण देते हुए अत्यन्त ओजस्वी भाषा मे वहाँ के भारतीयों का आवाहन किया था। आपको अपनी इन क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो के कारण सन् 1917 से सन् 1920 तक सानफ्रांसिस्को की जेल मे भी अनेक विषम यन्त्रणाएँ सहन करनी पड़ी थी। भाई परमानन्द के साथ मिलकर आपने 'भारत का इतिहास' सही रूप मे प्रस्तुत किये जाने का आन्दोलन भी चलाया था।



जब अमृतसर मे 'जलियाँ वाला बाग' का नृशस तथा रोमांचक हत्याकाण्ड हुआ तब आपने सर्वप्रथम उसके विरुद्ध अमरीका के पत्रों मे लेख लिखकर आन्दोलन चलाया था।

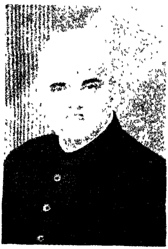
आपने अनेक क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो मे संलग्न रहते हुए भी अमरीका के प्रमुख समाचार पत्र 'हर्स्ट' के सम्पादकीय विभाग मे विज्ञान-लेखक के रूप मे कार्य किया था। आप 'नेशनल एसोसिएशन आफ साइस राइटर्स अमरीका' के अध्यक्ष भी रहे थे। आप इसी प्रसग मे दो बार भारत भी आ चुके थे। अन्तिम बार आपका भारत आगमन सन् 1975 मे हुआ था। आपकी विज्ञान-सम्बन्धी उल्लेखनीय उपलब्धियो के कारण आपको जहाँ 'अमरीकन एसोसिएशन फार एडवान्समेण्ट आफ साइन्स' नामक सस्था ने सम्मानित किया था वहाँ सन् 1937 मे आपको पत्रकारिता का सबसे उच्च पुरस्कार 'पुलित्जर' भी प्राप्त हुआ था। पुरस्कार-प्राप्ति के उपलक्ष्य मे आयोजित समारोह के अवसर पर आपने जो विचार व्यक्त किए थे उनसे आपके भारत-प्रेम का परिचय मिलता है। आपने कहा था—"मै एक गुलाम देश का निवासी हूँ। मै इस पर गर्व अर्थात् पूर्ण सन्तोष तब ही कर सकता हूँ जबकि मेरा देश भारत स्वाधीन हो तथा वह अध्यात्मवाद की भाँति विज्ञान के क्षेत्र मे भी आगे बढ़े।" महात्मा गाधीजी ने अपने 'नवजीवन' मे लेख लिखकर डॉ० लाल के इन विचारो की बहुत सराहना की थी।

यद्यपि आप अमरीका मे लगभग 70 वर्ष तक रहे थे किन्तु आपने 'भारतीय नागरिकता' नही छोडी थी। भारत के प्रति आपके अगाध प्रेम का परिचय आपके इन शब्दों से मिल जाता है जो आपने अपने जीवन के अन्तिम क्षणो मे व्यक्त किए थे—"मैंने अपने जीवन का अधिकाश समय अपनी मातृभूमि भारत से हजारो मील दूर परदेश मे बिताया। परन्तु मुझे इस बात का सन्तोष है कि मै अपनी मातृभूमि की आजादी के महान् आन्दोलन का एक सिपाही रहा। मेरी अन्तिम इच्छा है कि मेरे शरीर की राख को मेरी मातृभूमि भारत की पवित्र मिट्टी मे मिला दिया जाय। मै पूर्ण सन्तोष के साथ ससार से विदा होऊँगा।" आपको भारत सरकार ने सन् 1969 मे 'पद्मभूषण' की सम्मानोपाधि से भी विभूषित किया था।

आपका निधन अप्रैल सन् 1982 मे सानफ्रासिस्को (अमरीका) मे हुआ था।

श्री गोविन्द मालवीय

श्री गोविन्द मालवीय का जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद नगर मे सन् 1902 मे हुआ था। आप देश के प्रख्यात नेता महामना मदनमोहन मालवीय के ज्येष्ठ पुत्र थे। आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राचीन भारतीय इतिहास विषय मे एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। एल-एल०बी० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने वकालत करने के निमित्त अपना नाम पजीकृत भी कराया था, किन्तु वकालत कभी नही की। अपने छात्र-जीवन मे ही आप राजनीतिक आन्दोलनो मे भाग लेकर कई बार जेल भी गए थे।



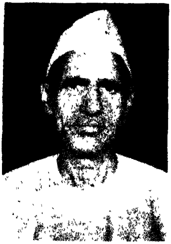
शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आप अपने पिता श्री मालवीय जी के निजी सचिव के रूप मे कार्य करने लगे थे। सन् 1937 मे आपने प्रतापगढ से उत्तर प्रदेश विधान सभा का चुनाव भी लडा था। तब से आप अनेक बार प्रदेश विधान सभा, केन्द्रीय लेजिस्लेटिव असेम्बली, विधान निर्मात्री परिषद् तथा लोकसभा के विभिन्न रूपो मे सदस्य रहे थे। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप मुलतानपुर से लोकसभा के सदस्य निर्वाचित हुए थे।

आप हिन्दी के अनन्य हिमायती और सुलेखक थे। विधान निर्मात्री परिषद् की सदस्यता के दिनो मे आपने सविधान मे राष्ट्रभाषा के रूप मे हिन्दी को प्रतिष्ठित कराने के लिए अभूतपूर्व सघर्ष किया था। आप सन् 1947-48 मे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के 'प्रो-वाइस चान्सलर' तथा सन् 1948 से सन् 1952 तक 'वाइस चान्सलर' भी रहे थे।

आपका निधन लगभग 6 मास की लम्बी बीमारी के उपरान्त नई दिल्ली के विलिगडन अस्पताल मे 27 फरवरी सन् 1961 को हुआ था।

श्री गोविन्दराम बडोला

श्री बडोला का जन्म उत्तर प्रदेश के गढवाल क्षेत्र के चौन्दकोट परगने के 'बडोली' नामक ग्राम मे सन् 1901 मे हुआ था। आपके पिता पडित श्रीविलास जी संस्कृत तथा ज्योतिष के प्रकाण्ड पण्डित थे और उनके संस्कार ही श्री गोविन्दराम जी ने प्रारम्भ से प्राप्त किये थे। सस्कृत के साथ-साथ हिन्दी भाषा का प्रेम भी आपको पारम्परिक सम्पदा के रूप मे अपने पिता से प्राप्त हुआ था। उन्ही की प्रेरणा से आपने 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की 'विशारद' परीक्षा उत्तीर्ण करके अध्यापन का कार्य प्रारम्भ कर दिया था। आप सस्कृत, अँग्रेजी तथा उर्दू भाषाओ के भी अच्छे मर्मज्ञ थे। अपने अन्तिम दिनो मे आप अनेक वर्ष तक एच० आर० इण्टर कालेज गगोह (सहारनपुर) मे अध्यापक रहे थे और अपने अध्यापन-काल मे आपने वहाँ की 'हिन्दी साहित्य सेवा समिति' के माध्यम मे अनेक छात्रो को हिन्दी पढने के लिए प्रेरणा प्रदान की थी।



जिन दिनो आप म्युनिसिपल स्कूल मसूरी तथा ए० पी० मिशन स्कूल देहरादून मे कार्य-रत थे तब काग्रेस के राष्ट्रीय आन्दोलन से सहानुभूति रखने के कारण नौकरी से बर्खास्त कर दिए गए थे। यद्यपि आपका चयन उत्तर प्रदेश सरकार के शिक्षा विभाग मे 'डिप्टी इस्पेक्टर आफ स्कूल्स' के पद पर कार्य करने के लिए हो गया था, किन्तु अपनी राष्ट्रीय भावधारा के कारण एक गोपनीय आदेश द्वारा आप इस पदोन्नति से वचित रखे गए थे। इसके उपरान्त ही आप गगोह के उक्त विद्यालय मे आए थे।

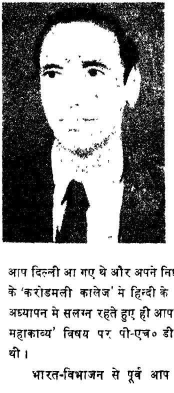
आप एक अध्ययनशील अध्यापक के रूप मे तो विख्यात थे ही, भक्ति-प्रधान कविता-लेखन मे भी आपकी पर्याप्त गति

थी। आपकी पहली काव्य-कृति 'शिव दोहावली' नाम से प्रकाशित हुई है और शेष रचनाएँ अप्रकाशित है। सहारनपुर से प्रकाशित होने वाली 'हिमवन्ती' नामक पत्रिका के सम्पादक श्री आशुतोष बडोला आपके एक-मात्र पुत्र है, जो आपकी अप्रकाशित रचनाओ के प्रकाशन की व्यवस्था कर रहे हैं।

आपका निधन 19 मार्च सन् 1982 को सहारनपुर मे अपने पुत्र के निवास पर हुआ था।

डॉ० गोविन्दराम शर्मा

श्री शर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के गढवाल क्षेत्र के पुराणकोट नामक स्थान मे 19 सितम्बर सन् 1914 को हुआ था। आपके पिता श्री रविदत्त कोटनाला प्रख्यात ज्योतिषी थे। आपकी माता का सम्बन्ध हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार डॉ० पीताम्बरदत्त बडथ्वाल के परिवार से था। प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप लाहौर चले गए और वहाँ से आपने सन् 1938 मे पजाब विश्वविद्यालय की एम० ए० (सस्कृत) परीक्षा सम्मान उत्तीर्ण की थी। इस परीक्षा मे प्रथम श्रेणी प्राप्त करने के उपलक्ष्य मे आपको स्वर्णपदक भी प्राप्त हुआ था। भारत विभाजन के उपरान्त आप दिल्ली आ गए थे और अपने निधन के समय आप यहाँ के 'करोडमली कालेज' मे हिन्दी के अध्यापक थे। यहाँ पर अध्यापन मे सलग्न रहते हुए ही आपने 'हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य' विषय पर पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी।



भारत-विभाजन से पूर्व आप लाहौर के फोरमैन क्रिश्चियन कालेज मे प्राध्यापक थे। वहाँ से दिल्ली आने पर 'करोड़ीमल कालेज' मे कार्य करने से पूर्व आप दिल्ली विश्व-विद्यालय से सम्बद्ध हिन्दू कालेज, सेण्ट्रल कालेज और निर्मला कालेज मे भी प्राध्यापक रहे थे। आप सरल और निश्छल प्रवृत्ति के मौन साधक थे। अपने शोध प्रबन्ध मे आपने हिन्दी महाकाव्यो की परम्परा की पूर्व पीठिका देकर आधुनिक महाकाव्यों की विशद विवेचना की है। आपके द्वारा लिखित 'हिन्दी साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ', 'विद्यापति की काव्य-प्रतिभा' तथा 'सस्कृत साहित्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ' नामक पुस्तके उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त आपने 'सूर की काव्य-साधना' नामक एक और पुस्तक लिखी थी, जो आपकी अन्तिम कृति कही जा सकती है।

आपका निधन 2 जुलाई सन् 1969 को सहसा कोटद्वार मे हुआ था।

श्री गोविन्दराम शास्त्री

श्री शास्त्री जी का जन्म मध्य प्रदेश के विदिशा जनपद के सिरोज नामक स्थान मे सन् 1902 मे हुआ था। आपके पिता श्री रुक्मिणीरमण जी हिन्दी, उर्दू, फारसी तथा सस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा भी उन्हीके निरीक्षण मे सम्पन्न हुई। आप अभी केवल 10 वर्ष के ही हो पाए थे कि आपकी माता जी की छत्र-छाया आपके सिर पर से उठ गई और आपको अपने ताऊ श्री राधारमण जी का स्नेह-सरक्षण मिला। उन्ही की देख-रेख मे आपने हिन्दी तथा सस्कृत के अनेक ग्रन्थो का गहन ज्ञान अर्जित किया। उन्ही की प्रेरणा पर आपने उज्जैन जाकर ज्योतिष, वेदान्त तथा सगीत का भी विधिवत् अध्ययन किया। अपनी पत्नी के देहान्त से दुखी होकर श्री शास्त्री जी के पिता श्री रुक्मिणी-रमण सिरोज को छोडकर झाबुआ चले गए और वहाँ पर 'झाबुआनरेश' के दीवान हो गए तथा अपने जीवन के अन्तिम क्षण सन् 1947 तक वही रहे थे।

उधर अपने ताऊ श्री राधारमण से प्रेरणा पाकर बालक गोविन्द धीरे-धीरे प्रगति करता गया और एक दिन वह भी आया जब आपकी ख्याति ज्योतिष तथा सगीत के क्षेत्र मे देश-व्यापी हो गई। आपने उज्जैन तथा इन्दौर आदि अनेक

नगरो में रहकर वहाँ बहुत से छात्रो को ज्योतिष तथा सगीत की शिक्षा दी। आप जहाँ सगीत का गहन शास्त्रीय ज्ञान रखते थे वहाँ बाँसुरी, हारमोनियम, सारगी, जलतरग, वीणा सितार, इकतारा तथा तबला आदि अनेक वाद्यो को बजाने मे भी अत्यन्त प्रवीण थे। आपकी इस कला से प्रभावित होकर भानपुर, होलकर स्टेट तथा बदरिकाश्रम के शकराचार्य आदि ने आपका बहुत सम्मान किया था और आपको 'धर्माधिकारी' की उपाधि भी प्रदान की थी।

आप जहाँ कुशल संगीतज्ञ तथा वाद्य-यन्त्र-निष्णात थे वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आपने अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। आपने सस्कृत और हिन्दी मे सुन्दर कविताएँ लिखने के साथ-साथ बहुत-से सस्कृत ग्रन्थो का हिन्दी-अनुवाद भी किया था। इसके साथ-साथ सस्कृत के अनेक अनुपलब्ध ग्रन्थो की प्रतिलिपि करके आपने उनकी रक्षा की थी। आपके द्वारा लिखे गए अनेक पत्र तथा पाण्डुलिपियाँ इन्दौर, उज्जैन तथा रतलाम आदि बहुत से नगरो मे सुरक्षित है। आपके द्वारा लिखित जिन ग्रन्थो का विवरण सुलभ है उनके नाम इस प्रकार है—'देवपुर माहात्म्य', 'विजय धर्म नाटक', 'श्रीकृष्ण जन्म', 'पचदेव पच्चीसी', 'श्रीकृष्णार्जुन युद्ध' (कथा रूप मे) तथा 'हिन्दी बाल शब्दकोश' आदि। इनमे से 'श्रीकृष्णार्जुन युद्ध' आजकल उपलब्ध नही है और 'हिन्दी बाल शब्दकोश' अभी तक अप्रकाशित है तथा शेष चारो पुस्तके प्रकाशित हो चुकी है।



ब्रजभाषा की सुन्दर रचना करने मे आप इतने प्रवीण थे कि उन रचनाओ को देखकर आपको रसखान और रत्नाकर की श्रेणी मे रखने को जी चाहता है। उनमे से एक पद की बानगी देखिए .

चटकी ज्यों पुष्पन की कलिका,
त्यों रश्मि छटा रवि की सटकी।
सटकी अलि उग्र प्रभावयुता,
मन रम्य करी प्रतिभा तट की॥
तट की वर भूमि सुहावनि है,
फल-भार सुवृक्ष लता लटकी।
लटकी दुख पातक की मटकी,
'गोविन्द' कहै पटको चटकी॥

आपकी 'विजय धर्म नाटक' नामक कृति को पढ़कर उपन्यास-सम्राट् प्रेमचन्द जी तक ने उसकी सराहना की थी। उस नाटक की रचना शास्त्री जी ने मच पर अभिनीत करने की दृष्टि से की थी। आप महात्मा गाधी की विचार-धारा तथा उनके असहयोग-आन्दोलन से बहुत प्रभावित थे फलस्वरूप आपने कट्टर पौराणिक होते हुए भी हरिजनो के मन्दिर-प्रवेश का समर्थन किया था। हिन्दू-मुस्लिम-एकता, के भी आप कट्टर समर्थक थे। आपने जहाँ समाज-सुधार की दिशा मे मालवा के सिरोज क्षेत्र मे प्रशसनीय कार्य किया था वहाँ अनेक शोध-छात्रो को पौराणिक इतिहास-लेखन मे मार्ग दर्शन भी किया था। आपकी ऐसी प्रवृत्ति की प्रशसा 'आसारे मालवा' के लेखक सैयद अहमद मुर्तजा ने अपने ग्रन्थ मे अनेक स्थलो पर की है। मालवा के प्रख्यात कवि इरफान सोहम्मद 'नास्तिक मालवी' ने भी 'बिहारी सतसई' का गहन ज्ञान आपके ही चरणो मे बैठकर प्राप्त किया था। आपके शिष्यो मे अनेक मुसलमान थे, जिनम सिरोज के नाजिम साहबजादे यासीन अली खाँ का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपने उन्हे न केवल हिन्दी सिखाई थी बल्कि वहाँ के अनेक उर्दू-भाषियो मे हिन्दी-प्रेम जाग्रत किया था।

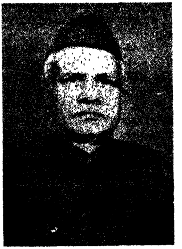
आपके परिवार मे सगीत का अध्ययन-अध्यापन आज भी उसी निष्ठा से होता है। आपके सुपुत्रो मे श्री बालकृष्ण जहाँ साहित्य तथा शास्त्रों मे रुचि रखते है वहाँ श्री सच्चिदानन्द ज्योतिष और वेदान्त के अभूतपूर्व पण्डित है। तीसरे और चौथे पुत्र चन्द्रशेखर एव नन्दकिशोर महता सगीत-साधना के क्षेत्र म अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। यह परम प्रसन्नता की बात है कि आपके पारिवारिक जन आपकी परम्परा का निर्वाह आज भी कर रहे हैं।

आपका निधन 27 सितम्बर सन् 1967 को हुआ था।

श्री गोविन्दराम हासानन्द

आपका जन्म अविभाजित भारत के सिन्ध प्रदेश के शिकारपुर नामक नगर के वल्लभाचार्य मत के एक शाकाहारी वैष्णव-परिवार मे सन् 1886 मे हुआ था। आपकी माता का असामयिक देहावसान उसी समय हो गया था जब आप केवल एक मास के ही थे। फलस्वरूप आपका लालन-पालन प्रारम्भ मे एक धाय ने और तत्पश्चात् 6 वर्ष तक आपकी दादी श्रीमती लक्ष्मीदेवी के निरीक्षण मे हुआ था। 10 वर्ष की आयु तक आप अपने पिता श्री हासानन्द के साथ क्वेटा (बिलोचिस्तान) मे रहे और बाद मे उनके साथ बम्बई चले आए थे। बम्बई में ही आपकी प्रारम्भिक शिक्षा भूलेश्वर क्षेत्र के 'म्युनिसिपल प्राइमरी स्कूल' मे हुई थी। जब आप पाँचवी श्रेणी मे ही पढ रहे थे कि सन् 1899 मे आप अपने पिता के साथ कलकत्ता आकर व्यापार मे लग गए और इस प्रकार आपका नियमित विद्याध्ययन बन्द हो गया।

जब आप केवल 17 वर्ष के ही थे तब एक दिन प्रातःकाल आपके पिताजी ने वायु-सेवन के समय कसाईखाने को जाती हुई अनेक गौओ के झुण्ड को देखा और उसमे उनके हृदय को बडा आघात लगा। फलस्वरूप उन्होने सारा कारोबार आपको सौप दिया और वे पूर्णत गोरक्षा के कार्य मे सलग्न हो गए। उन्ही दिनो आपका सम्पर्क आर्यसमाज की क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो से हुआ। आप भी आर्य-



समाज के माध्यम से समाज-सेवा के कार्य मे जुट गए। नौवत यहाँ तक पहुँची कि कट्टर वैष्णव और मूर्ति-पूजक पिता के लाख विरोध करने पर भी आपका आर्य समाज के प्रति रुझान कम नही हुआ और एक दिन ऐसा भी आया जब आपको घर से निकाल दिया गया। आप उन दिनो अपने पिताजी के साथ दलाली का कार्य किया करते थे।

जब आप घर से बिलकुल असहाय अवस्था मे निष्कासित होकर किसी उपयुक्त कार्य की खोज मे संलग्न थे तब गोकुलचन्द नामक एक आर्यसमाजी सज्जन से आपकी भेंट हो गई। उनको भी उनके पारिवारिक जनों ने घर से निकाल दिया था। फलस्वरूप 'समान शील व्यसनेषु सख्यम्' तथा 'खूब गुजरेगी जब मिल बैठेंगे दीवाने दो' लोकोक्तियो के अनुसार दोनों मित्र बन गए। उन दिनों देश मे महात्मा गान्धी के असहयोग आन्दोलन के कारण स्वदेशी वस्तुओ तथा वस्त्रों के व्यवहार का प्रचलन होता जा रहा था। दोनो मित्रो ने मिलकर 'गोकुलचन्द गोविन्दराम' नाम से 'स्वदेशी' वस्तुओ की एक दुकान खोल ली, जो कुछ ही दिनो मे खूब चल निकली थी। इस प्रकार अपने व्यापार मे लगकर भी आप आर्य समाज को न भूले और फिर दोनो मित्रों ने अपनी दुकान पर 'आर्य साहित्य' भी बेचना प्रारम्भ कर दिया। आप उन दिनो अपनी दुकान के 'कैश मीमो' की पीठ पर बगला भाषा मे आर्यसमाज के सस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' तथा 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक ग्रन्थो के विज्ञापन भी छापा करते थे।

जब आपका व्यापार ठीक तरह चल पडा तब आपने 'आर्य अनाथालय अजमेर' की एक कन्या के साथ विवाह कर लिया, किन्तु विवाह के 8-9 मास पश्चात् ही आपकी सहधर्मिणी का देहान्त हो गया। प्रथम पत्नी के असामयिक देहावसान के उपरान्त आपने अपने निकट सम्बन्धियो के आग्रह-अनुरोध से विवश होकर आर्य विचारो वाली कोई उपयुक्त कन्या न मिलने पर अपनी ही बिरादरी की एक कन्या से विवाह कर लिया और उसे अपने विचारो तथा सस्कारो के अनुरूप ढाल लिया और आपकी सहधर्मिणी भी आपके आर्यसमाजो के सत्सगो मे नियमित रूप से जाने लगी। आर्य समाज कार्नवालिस स्ट्रीट कलकत्ता' के सदस्य, पुस्तकाध्यक्ष और मन्त्री के रूप मे अनेक वर्ष तक आपने अत्यन्त लगन तथा निष्ठा से कार्य किया था। आर्यसमाज की ओर से सचालित अनेक कार्यक्रम आपके मन्त्रित्व-काल मे चरम सफलता को प्राप्त हुए थे। आपका आर्यसमाज के प्रति प्रेम इस सीमा तक बढ गया कि आपने वेदमन्त्रो, शास्त्र-वाक्यो और अनेक सूक्ति-वचनो को सुन्दर रूप से मुद्रित

कराकर समाज के समक्ष प्रस्तुत किया और उसके उपरान्त स्वामी दयानन्द तथा स्वामी श्रद्धानन्द आदि के बडे चित्र भी प्रकाशित किए थे ।

जब आपके इस कार्य का सर्वत्र उन्मुक्त मन से स्वागत किया गया तो आपने सन् 1925 मे "श्रीमद्दयानन्द जन्म शताब्दी समारोह' के सुअवसर पर 'सत्यार्थ प्रकाश' बहुत सस्ते मूल्य मे जनता के समक्ष प्रस्तुत करके एक आदर्श प्रस्तुत किया था । आपके द्वारा प्रकाशित 'सत्यार्थ प्रकाश' मे ही सर्वप्रथम उसमे प्रयुक्त सब मन्त्रो, श्लोको तथा अन्य प्रमाणो की अकारादि क्रम से अनुक्रमणिका भी प्रकाशित की गई थी । इस अनुक्रमणिका की सरचना प्रख्यात वैदिक विद्वान् श्री जयदेव शर्मा विद्यालकार ने की थी। इसके उपरान्त आपने आर्य साहित्य के विधिवत् प्रकाशन का जो निश्चय किया था वह आज भी आपके देहावसान के उपरान्त आपके कर्मठ सुपुत्र श्री विजयकुमार के निरीक्षण मे दिल्ली से हो रहा है । आपके सस्थान की ओर से प्रारम्भ मे 'आर्य चित्रावली' और 'दयानन्द चित्रावली' नामक जिन पुस्तको का प्रकाशन कलकत्ता से हुआ था उनका समस्त देश मे प्रचुर स्वागत हुआ था । इसके उपरान्त आपने 'सस्कार प्रकाश', 'वेद तत्त्व प्रकाश,' 'आर्य पथिक लेखराम', 'वीर सन्यासी श्रद्धानन्द', 'श्रीमद्दयानन्द प्रकाश', तथा 'दर्शनानन्द ग्रन्थमाला' आदि अनेक महत्त्वपूर्ण प्रकाशन कलकत्ता से किए थे। अपने इस प्रकाशन-कार्य को सुचारु रूप मे करते हुए आपने अपने पिताजी की गो-भक्ति से प्रभावित होकर उनके गोरक्षा तथा गोपालन के कार्य मे भी सहयोग देना प्रारम्भ किया था। आपने इस कार्य को आर्यसमाज कलकत्ता के माध्यम से आगे चलाना चाहा था, किन्तु जब आर्यसमाज ने उसे अपने प्रबन्ध मे लेने मे असमर्थता प्रकट की तो विवश होकर आपने वह सारी जमीन 'पिजरा पोल सोसाइटी' को सौप दी । श्री गोविन्दराम जी को आर्य समाज की इस उपेक्षा-वृत्ति का दु ख अपने जीवन के अन्तिम समय तक रहा था ।

सन् 1939 मे आप कलकत्ता छोड़कर दिल्ली आ गए और यहाँ पर आपने अपने प्रकाशन-कार्य को और भी विस्तृत रूप देने का साहसिक अभियान छेडा । यह श्री गोविन्दराम जी के कठिन परिश्रम तथा अद्भुत साहस का ही सुपरिणाम हुआ कि आपके प्रकाशन की ओर से देश के सभी उच्चकोटि के आर्य विद्वानो की रचनाएँ प्रकाशित हुई । प्रकाशन के इस कार्य के साथ-साथ आपने 30 वर्ष पूर्व सन् 1952 में 'वेद प्रकाश' नामक जिस मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया था वह आज भी सफलतापूर्वक आर्य जगत् की सेवा कर रहा है और इसके अनेक विशेषाक साहित्य की अमूल्य निधि है। इस पत्र का सम्पादन आजकल स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती कर रहे है। आपके निधन के उपरान्त आपकी स्मृति मे इस पत्र का एक विशेषाक भी प्रकाशित हुआ था।

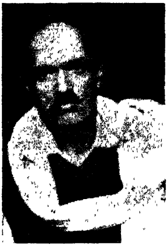
आपका देहावसान 25 फरवरी सन् 1960 को शिव-रात्रि के अवसर पर हुआ था।

श्री गोविन्दराव विट्ठल

श्री विट्ठल का जन्म मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ अचल के चाँदा जनपद के बोरगाँव नामक स्थान मे 4 अगस्त सन् 1890 को वहाँ के एक भट्ट ब्राह्मण-परिवार मे हुआ था। आप अभी केवल 4 मास के ही थे कि आपके पिता श्री वेकटराव उपाध्याय का देहान्त हो गया । आपकी माता श्रीमती नर्मदाबाई विधाता के इस क्रूर प्रहार को सहन न कर सकी और वे अपने दोनो पुत्रो (गोपालराव तथा गोविन्दराव) को लेकर अपने मायके (रतनपुर) चली गई। उनकी विपत्ति का यहाँ भी अन्त न हुआ और वहाँ जाते ही आपके भाई गोपालराव की सर्प-दश से असामयिक मृत्यु हो गई। आपकी माता ने इस मर्मान्तिक आघात को भी हृदय पर पत्थर रखकर सहन किया । जब अपने मायके मे रहते हुए भी आपकी माता का मन ऊब गया तब उन्होंने अपने तथा आपने एक-मात्र पुत्र गोविन्दराव के जीवन-यापन के लिए किसी उपयुक्त आजीविका की खोज प्रारम्भ की । परिणामस्वरूप आपको रायपुर जनपद के पाण्डुका नामक ग्राम की प्राथमिक पाठशाला मे 'सेविका' का कार्य मिल गया और वे वहाँ चली गई ।

गोविन्दराव जी की प्रारम्भिक शिक्षा पाण्डुका मे ही हुई । जब आपने मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली तो आपका चयन भी रायपुर के नार्मल स्कूल मे ट्रेनिग के लिए हो गया । इस प्रकार प्रशिक्षण की अवधि समाप्त होने के उपरान्त आपकी अध्यापक के रूप मे विधिवत् नियुक्ति हो गई । आपने अपने अध्यापकीय जीवन का लम्बा समय धमनी,

पटेवा, किरवई, पिथौरा और राजिम में व्यतीत किया था। लगभग एक वर्ष तक आप सीतावर्डी नागपुर में भी शिक्षक रहे थे। राजिम से आप अन्तिम दिनों में गरियाबाद आ गए थे और सन् 1948 में वहीं से प्रधानाध्यापक के पद से सेवा-निवृत्त हुए थे।



आपने अपने शिक्षक-जीवन में कार्य-रत रहते हुए साहित्य-सृजन की दिशा में भी उल्लेखनीय प्रगति की थी। आपने अपने जीवन की संघर्षपूर्ण गाथा का वर्णन अपनी 'श्री गोविन्द रोदन' नामक आत्मकथात्मक काव्य-कृति में इस प्रकार किया है :

जाति महाराष्ट्र में दक्षिणी कहावत हो,
पीढ़ी बीती सात मोको आठवाँ गिनाइए ।
चन्देश्वर माँहि बोरगाँव नाम ग्राम-बास,
पिता, पितामह सो लगाय सुख पाइए ।।
चार माह वयस पिताजु स्वर्गधाम गयो,
रहि ननियारे रत्नपुरी जेहि गाइए ।
'गोविन्द' पढ़उ बढ़ि कोटि-क्लेश झेलि-झेलि,
आज भाग उदित चरित हरि गाइए ।।

आपका व्यक्तित्व बहुत आकर्षक तथा अद्वितीय था। आपने जहाँ-जहाँ भी कार्य किया वहाँ-वहाँ ही अपने आदर्श चरित्र की अद्भुत छाप छोड़ी थी। जिन दिनों आप राजिम में थे तब आपका सम्पर्क वहाँ के प्रख्यात साहित्यकार पण्डित सुन्दरलाल शर्मा से भी हुआ था। उनके सम्पर्क में आकर तो आपकी काव्य-प्रतिभा बहुत विकसित हुई थी। आपने अपनी 'नाग लीला' नामक काव्य-कृति उन्हें ही समर्पित की थी। यद्यपि आप अपने को मूल रूप में शिक्षक ही मानते थे फिर भी तत्कालीन परिस्थितियों तथा पण्डित रविशंकर शुक्ल, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, माधवराव सप्रे, लोचनप्रसाद पाण्डेय, मैथिलीशरण गुप्त और पण्डित सुन्दरलाल शर्मा के निकट सम्पर्क ने आपको साहित्य-सेवा करने की प्रचुर प्रेरणा प्रदान की थी। छत्तीसगढ़-जैसे ऊसर प्रदेश में कविता के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करने में आपने अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपकी प्रथम काव्य-कृति 'श्री गोविन्द रोदन' के अतिरिक्त 'शिव सरोज' तथा 'नाग लीला' भी प्रकाशित हो चुकी है। इनके अतिरिक्त 'राजीवलोचन माहात्म्य', 'गजेन्द्र मोक्ष' तथा 'मान भजन' नामक आपकी अप्रकाशित रचनाएँ है। आपकी इन कृतियों में 'नाग लीला' अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कही जा सकती है। इसकी रचना आपने पण्डित सुन्दरलाल शर्मा की ख्याति-प्राप्त कृति 'दान लीला' के अनुकरण पर की थी। यह रचना छत्तीसगढ़ी भाषा में लिखी गई है। 'गजेन्द्र मोक्ष' हिन्दी की रचना है और 'मानव भजन' विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की एक बंगला कविता का अनुवाद है।

कविता के अतिरिक्त आपने नाटक-लेखन की दिशा में भी कई महत्त्वपूर्ण प्रयोग किये थे। अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रमों के लिए ही आप प्रायः ऐसे नाटकों की रचना किया करते थे। आपकी ऐसी लघु नाटिकाएँ प्रायः विद्यालयों के कार्यक्रमों में अत्यन्त लोकप्रिय हुआ करती थीं और उनमें से अधिकांश पुरस्कृत भी हुई थीं। आप एक सहृदय कवि और कुशल नाटककार होने के अतिरिक्त उत्कृष्ट निबन्धकार भी थे। आपने छत्तीसगढ़ में जिन अनेक प्रतिभाशाली लेखकों को अपने सतत प्रोत्साहन से साहित्य के पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा प्रदान की थी उनमें डॉ० नारायणलाल परमार का नाम सर्वोपरि है। श्री परमार सन् 1935 से सन् 1941 तक आपके अत्यन्त प्रिय छात्र रहे थे।

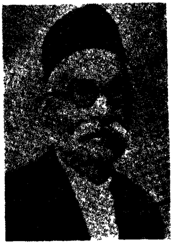
आपका निधन 23 जून सन् 1966 को हुआ था।

श्री गोविन्दराव हर्डीकर

श्री हर्डीकर का जन्म मध्यप्रदेश के सागर नामक नगर के एक अत्यन्त प्रतिष्ठित महाराष्ट्र परिवार में सन् 1881 में हुआ था। आपके पिता श्री नारायणराव भारतीय संगीत तथा साहित्य के बहुत बड़े विद्वान् थे और सारे मध्यप्रदेश में उनके शिष्यों की मण्डली थी। अपने पिता के अनुरूप आपने

भी संगीत की साधना अपने बाल्यकाल से ही की थी और ज्यों-ज्यों समय बीतता गया आप सितार-वादन में सिद्ध-हस्त हो गए। बी० ए० एल-एल० बी० तक की शिक्षा प्राप्त करने पर भी साहित्य और संगीत आपके जीवन से अन्त तक जुड़े रहे।

संगीत में ख्यातिलब्ध होने के कारण आप जहाँ अनेक संगीत सम्मेलनों में सादर आमन्त्रित किये जाते थे। वहाँ सहित्य के क्षेत्र में भी आपकी बहुत धाक थी। आपकी साहित्य-साधना का ज्वलन्त प्रमाण आपके द्वारा लिखित ख्याति-प्राप्त पत्रकार श्री माधवराव सप्रे की वह जीवनी है जिसका प्रचार मध्य-प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन जबलपुर की ओर से सन् 1950 में किया गया था। इस जीवनी को लिखने में श्री हर्डीकर को कितना परिश्रम करना पड़ा होगा इसका परिचय इसी बात से मिल जाता है कि आपने सन् 1935 में श्री कामताप्रसाद गुरु की प्रेरणा पर इसे लिखने का जो संकल्प किया था उसे सन् 1941-42 में आप पूर्ण कर सके।



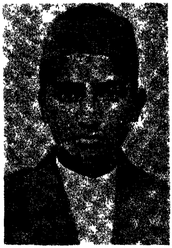
आपकी यह भी हार्दिक आकांक्षा थी कि इसके उपरान्त सप्रेजी के समस्त साहित्य को भी संकलित करके प्रकाशित करें। दुर्भाग्य की बात है कि आप अपने इस स्वप्न को सार्थक नहीं कर सके। आपके द्वारा लिखित इस जीवनी का हिन्दी साहित्य में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थानहै। आपकी यह अकेली कृति ही आपकी साहित्यिक महत्ता का प्रामाणिक मानदण्ड प्रस्तुत करती है। इस पुस्तक के सम्बन्ध में ब्योहार राजेन्द्रसिंह ने यह सही ही लिखा है—"आपके परिश्रम से राष्ट्रीयता और साहित्य-चेतना के उस प्रारम्भिक युग का इतिहास इस जीवनी के रूप में हमें उपलब्ध हो सका।"

आपका निधन सन् 1966 में नागपुर में हुआ था।

श्री गोविन्द वैष्णव

श्री वैष्णव का जन्म उत्तरप्रदेश के गढ़वाल क्षेत्र के चमोली जनपद के नागनाथ पोखरी के समीपवर्ती ग्राम गोदी में सन् 1913 में हुआ था। आप हिन्दी के प्रख्यात लेखक श्री शालिग्राम वैष्णव के एक-मात्र पुत्र थे और जब आप इलाहाबाद विश्वविद्यालय के बी० ए० कक्षा के विद्यार्थी थे तब ही केवल 20 वर्ष की अल्पावस्था में आपका असामयिक देहावसान हो गया था। बद्रीनाथ पुरी के अलौकिक एवं आध्यात्मिक वातावरण में पालन-पोषण होने के कारण आप स्वामी रामतीर्थ तथा स्वामी विवेकानन्द-जैसे तत्त्वचिन्तकों से बहुत प्रभावित हुए थे। आपके पिता श्री शालिग्राम वैष्णव बद्रीनाथ में 'नायब तहसीलदार' के पद पर कार्य करते थे। बाद में वह 'तहसीलदार' हो गए थे, जिस पद पर रहते हुए उन्होंने सन् 1926 में अवकाश ग्रहण किया था।

अपनी छात्रावस्था से श्री गोविन्द जी में साहित्य के प्रति अद्भुत लगाव था और आप हिन्दी में लेख आदि लिखने लगे थे। आपके लेख उन दिनों 'सेवा', 'गढ देश' तथा 'गढवाली' आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करते थे। आपके लेखों तथा फुटकर रचनाओं का संकलन आपके निधन के उपरांत श्री तपीश्वर-प्रसाद नथाणी ने सन् 1934 में 'गोविन्द विचार वाटिका' नाम से सम्पादित करके प्रकाशित किया था। आपकी स्मृति में आपके पिता ने 'गोविन्द पाठशाला' नामक एक संस्था की स्थापना भी की थी, जिसमें इनके ज्येष्ठ भ्राता श्री आत्माराम वैष्णव ने 10 हजार रुपये भी दान में दिये थे।



आपका देहावसान 15 सितम्बर सन् 1933 को हुआ था।

श्री गौरीशंकर

श्री गौरीशंकर का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर के खारी कुआ नामक मोहल्ले मे 20 मार्च सन् 1887 को हुआ था। उर्दू मिडिल की परीक्षा उतीर्ण करने के उपरान्त आप सन् 1914 मे सेना मे भरती हो गए और प्रथम विश्वयुद्ध के समय आपने एशिया तथा यूरोप के अनेक मोर्चों पर युद्ध मे भाग लिया। सेना मे रहते हुए ही आपको ब्रिटिश नौकरशाही के अत्याचारो का अनुभव हो गया था। फलस्वरूप वहाँ से त्यागपत्र देकर आप कांग्रेस मे सम्मिलित हो गए। सन् 1928 मे आपने मेरठ मे मजदूर नेताओ के सहयोग से एक 'किसान मजदूर सम्मेलन' का आयोजन किया और विश्व-प्रसिद्ध 'मेरठ षड्यन्त्र केस' (1929-33) के प्रमुख अभियुक्त रहे। खादी-प्रचार, मादक द्रव्य-निषेध तथा अन्य अनेक समाज-सुधार-सम्बन्धी कार्यों मे आपने बढ-चढकर भाग लिया था। आप जहाँ अनेक वर्ष तक मेरठ जिला कांग्रेस कमेटी के महामन्त्री रहे थे वहाँ सन् 1946 मे मेरठ मे हुए कांग्रेस अधिवेशन की स्वागत-समिति के भी सक्रिय सदस्य रहे थे।



अपनी राष्ट्रीय विचार-धारा के प्रचार करने की दृष्टि से आपने सन् 1948 मे मेरठ से हिन्दी मे 'पब्लिक' नामक एक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन भी प्रारम्भ किया था। पहले आपने सन् 1946 मे इस पत्र को उर्दू मे निकाला था, किन्तु वह चल नही सका। सन् 1923 मे आल्हा की तर्ज पर आपने हिन्दी मे 'नागपुरी दरबार' नामक एक पुस्तक भी लिखी थी, जिसे उत्तर प्रदेश सरकार ने जब्त कर लिया था।

आपका निधन 23 दिसम्बर सन् 1967 को हुआ था।

श्री गौरीशंकर भट्ट

श्री भट्ट जी का जन्म उत्तर प्रदेश के कानपुर जनपद के मसवानपुर नामक स्थान मे सन् 1869 मे हुआ था। देवनागरी अक्षरों को विभिन्न आकर्षक रूपों मे लिखने का कौशल प्रदर्शित करके आपने हिन्दी की जो सेवा की है वह सर्वथा अभिनन्दनीय है। 'लिपि विज्ञान' को वैज्ञानिक और कलापूर्ण विधि से प्रस्तुत करके आपने अपनी अद्वितीय कल्पना-शक्ति का परिचय दिया था। जो लोग अँग्रेजी अक्षरो के बहुविध सौन्दर्य की प्रशसा करते हुए नही अघाते थे उन्होंने भी श्री भट्ट जी के लिपि-कौशल को मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया था।

आपकी लिपि-सम्बन्धी पुस्तकों मे 'वर्णाकृति पत्र', 'नागरी लिपि पुस्तक', 'आलेख्य पुस्तक', 'चित्र लिपि प्रवेशिका', 'अक्षर तत्त्व', 'देवनागरी लिपि का विधान निर्माण पत्र', 'लिपि कला' तथा 'लिपि बोध' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।



आपकी लेखन-पटुता की प्रशसा जहाँ हिन्दी के अनेक गण्यमान्य विद्वानो ने की थी वहाँ आपको हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तथा इन्द्रप्रस्थ वैदिक पुस्तकालय दिल्ली की ओर से स्वर्ण पदक भी प्रदान किया गया था। जिन दिनो आप उत्तर भारत की प्रख्यात शिक्षा-सस्था गुरुकुल कागड़ी मे अध्यापक थे उन दिनो देश-पूज्य महात्मा गांधी, स्वामी श्रद्धानन्द, पण्डित श्रीधर पाठक और आचार्य रामदेव ने भी विभिन्न अवसरों पर आपको सम्मानित एवं पुरस्कृत किया था। गुरुकुल कागड़ी के कार्य-काल मे ही आपने 'बालोद्यान' तथा 'सूक्ति सुधा' नामक पुस्तकों की रचना भी की थी। इन पुस्तकों मे से पहली मे बालकों के लिए विभिन्न रगो तथा आकारो मे वर्णमाला की

रचना करने की मनोरजक विधि प्रस्तुत करने के साथ-साथ दूसरी मे सस्कृत की अनेक सूक्तियो के लेखन की विधि समझाई गई है। ये सूक्तियाँ विभिन्न सभा-भवनो और सभा-समारोहो की साज-सज्जा के समय प्रयुक्त की जाती है।

भट्ट जी ने लगभग 16 वर्ष तक गुरुकुल कांगडी मे नागरी लिपि के सुलेख-शिक्षक के रूप मे अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया था। हिन्दी मे सुरुचिपूर्ण 'मोनोग्राम' बनाने की दिशा मे भी आपका अभिनन्दनीय कौशल रहा था। देवनागरी अक्षरो को विभिन्न आकर्षक रूपो मे प्रस्तुत करके निश्चय ही भट्ट जी ने हमारी भाषा और साहित्य की उल्लेखनीय सेवा की थी। आपको 'सुलेखकाचार्य' की उपाधि से भी विभूषित किया गया था।

आपका निधन 77 वर्ष की आयु मे 29 मई सन् 1946 को कानपुर मे हुआ था।

श्री गौरीशंकर सहाय

श्री सहाय का जन्म बिहार प्रदेश के मुगेर जनपद के खड़कपुर नामक स्थान मे सन् 1926 मे हुआ था। अपने अध्ययन की समाप्ति पर आपने पहले तो राजनीतिक क्षेत्र मे कार्य किया था और बाद मे पत्रकारिता मे आ गए थे। आप मुगेर जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष भी रहे थे।



सन् 1958 मे आप नई दिल्ली से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दुस्तान' दैनिक के सम्पादकीय विभाग मे आ गए और अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक उसमे विभिन्न पदों पर अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया।

आप अत्यन्त सरल, सहृदय, मिलनसार और मृदुभाषी थे और सदैव दूसरों की सहायता के लिए तैयार रहा करते थे। 'हिन्दुस्तान' मे आने से पूर्व आपने पटना से प्रकाशित होने वाले 'राष्ट्रवाणी' दैनिक मे भी कार्य किया था। राजनीतिक तथा आर्थिक विषयो पर लिखने मे आपको अभूतपूर्व सिद्धि प्राप्त थी।

आपका निधन 3 जनवरी सन् 1977 को हुआ था।

श्री घनश्याम

आपका जन्म राजस्थान के मेवाड अचल के कांकरौली नामक स्थान मे सन् 1859 मे एक ब्राह्मण परिवार मे हुआ था। पारिवारिक परिवेश मे ही शिक्षा प्राप्त करके आपने आजीविका चलाने की दृष्टि से नाथद्वारा के महन्त मे सम्पर्क साधा और वहाँ पर ठाकुर जी का प्रसाद पाने और खाने-पीने का साधन बना लिया। आप बड़े मन-मौजी स्वभाव के मस्त रहने वाले महानुभाव थे। आपकी कविता बडी सरस और मनोरजक हुआ करती थी और इसी कारण आपने वहाँ पर अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया था।

एक बार उदयपुर के महाराणा फतहसिंह ने अपनी सुपुत्री के विवाह के अवसर पर आपकी कविता से प्रसन्न होकर आपको 500 रुपये का पुरस्कार प्रदान किया था। आप अपनी रचना-शैली मे अत्यन्त स्वाभाविक और सरल शब्दावली का प्रयोग किया करते थे। आपकी कविता की भाषा ब्रजभाषा-मिश्रित राजस्थानी हुआ करती थी। अपनी रचनाओ मे आप अपना नाम 'घनश्याम प्यारे' लिखा करते थे। एक उदाहरण इस प्रकार है

पवन प्रचण्ड धूप धुन्धर धरा पै धूर,
बरस्यो ना इन्द्र त्राह तिविध तिपन्ना मे।
'घनश्याम प्यारे' नाज नेके ना भयो है तब,
मुरधरवासी सुख पायो ना सपन्ना मे॥
मर गये ढोर भयो गजब गरीबन पै,
बखत विलोक्यो सार राम के जपन्ना मे।
दहल गए दिग्गज धरम धुरीन वारे,
भूलि गए फैल छैल छिपगे छपन्ना मे॥

इस कविता की रचना आपने राजस्थान मे पड़े एक भयकर अकाल के अवसर पर की थी।

आपका निधन सन् 1911 में हुआ था।

पं० घनश्यामदास पाण्डेय

श्री पाण्डेयजी का जन्म सन् 1886 मे उत्तर प्रदेश के झाँसी जनपद के मऊरानीपुर नामक स्थान मे हुआ था। आप वहाँ की नगरपालिका द्वारा सचालित प्राथमिक पाठशाला मे प्रधानाध्यापक थे। अपने निजी स्वाध्याय के बल पर आपने सस्कृत, हिन्दी, उर्दू, गुजराती, मराठी और फारसी आदि कई भाषाओ का अच्छा ज्ञान अर्जित कर लिया था। आप जहा शक्ति के अनन्य उपासक थे वहाँ स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तो के भी प्रबल समर्थक थे। आयुर्वेद और ज्योतिष मे भी आपकी गहरी रुचि थी। सैर, ख्याल, लावनी, घनाक्षरी और सवैया आदि छन्दो पर आपका बहुत अधिक अधिकार था। फड साहित्य के भी आप अत्यन्त सिद्ध कवि थे। आपकी अध्यक्षता मे मऊरानीपुर व झाँसी की माहौर पार्टी मे रात-रात-भर फडबाजियाँ होती रहती थी। इन बैठको मे आपके कवित्व और अचार्यत्व दोनो का अच्छा परिचय श्रोताओ को सुलभ रहता था। राष्ट्रीय भाव-धारा की रचनाएँ करने मे भी आप अत्यन्त दक्ष थे। आपका बुन्देली और व्रजभाषा पर इतना अधिक अधिकार था कि दोनों भाषाओ मे आप अपनी काव्य-रचनाओ से जनता को चमत्कृत किये रहते थे।

आपकी विभिन्न रचनाओ मे 'बाल विवाह विडम्बना', 'प्राणायाम प्रक्रिया', 'गाधी गौरव', 'कूट प्रश्नावली' और 'भगवत भजनमाला' का प्रकाशन हो चुका है और 'हरदौल चरित्र', 'छत्रसाल बावनी','प्रतापोल्लास','लक्ष्मी समुल्लास', 'पावस प्रमोद', 'व्यग विनोद', 'नरसी मेहता' तथा 'किरातार्जुनीय' आदि कई कृतियाँ अभी तक अप्रकाशित है। बुन्देलखण्ड की वीरता और वहाँ की प्राकृतिक सुन्दरता का चित्रण करने मे आपको अद्वितीय सफलता प्राप्त हुई है। एक लोक-कवि के रूप मे भी आप सर्वथा अद्वितीय थे। अपनी काव्य-प्रतिभा के कारण आपको जिन अनेक सस्थाओ की ओर से सम्मानित और पुरस्कृत किया गया था उनमे 'बुन्देलखण्ड रामायण सभा' का नाम उल्लेखनीय है। इस सस्था की ओर से आपको सन् 1935 मे एक स्वर्ण पदक तथा 'कविरत्न' की सम्मानोपाधि से अलकृत किया गया था।

रानी झाँसी की वीरता और तेजस्विता का वर्णन करने मे भी आपका कवि सर्वथा अद्वितीय था। उसके युद्ध-कौशल का वर्णन अपने एक कवित्त मे आपने इस प्रकार किया है

देश की गुलामी और नमक हरामी इन,
दोनों कर लक्ष्मी देश-लक्ष्मी-सी छली गई।
आखिरी प्रणाम कर झाँसी को उसाँसी भर
साथ कुछ सूरमों के एक थो अली गई॥
विप्र 'घनश्याम' हाँकते ही रहे बाते अरि
ताकते ही रहे कहाँ कौन-सी गली गई।
वैरियों की भीर थी, औ हाथ-शमशीर थी,
यो चीरती फिरंगियों को तीर-सी चली गई॥

आपका देहावसान सन् 1952 मे हुआ था।

डॉ० घनश्याम 'मधुप'

डॉ० मधुप का जन्म 30 मई सन् 1936 को उत्तर प्रदेश के आगरा नगर मे हुआ था। शैशवावस्था मे ही माता-पिता की छत्रछाया सिर से उठ जाने के कारण आपका पालन-पोषण इटावा के समीपवर्ती एक छोटे-से ग्राम माढपुर मे अपने भाइयो की देख-रेख मे हुआ था। अपनी लगन और कर्मठता के कारण आपने अनेक विघ्न-बाधाओ मे भी अपने अध्ययन के कार्य को जारी रखा और सन् 1950 मे हाई स्कूल की परीक्षा देकर आप भोपाल (मध्य प्रदेश) चले गए और अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक मध्यप्रदेश मे ही रहे। अपने निधन के समय आप भोपाल के 'रवीन्द्र महाविद्यालय' मे प्रधानाचार्य थे। आपकी शिक्षा मे प्रगति सर्वप्रथम उस समय हुई जब आपने भोपाल के सोफिया महाविद्यालय से सन् 1962 मे बी० ए० किया और तत्पश्चात् क्रमश. हमीदिया महाविद्यालय से सन् 1965 मे एम० ए० (हिन्दी) तथा विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन से सन् 1970 मे पी-एच० डी० की उपाधियाँ प्राप्त की।

अपनी शिक्षा-सम्बन्धी योग्यताएँ अर्जित करने के दिनो

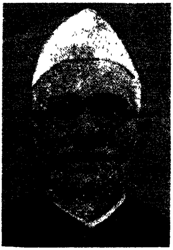
मे भी आप शिक्षक के रूप में विभिन्न स्थानों पर कार्य-रत रहे थे। सर्वप्रथम आपकी नियुक्ति मध्य प्रदेश के एक छोटे-से गाँव के प्राइमरी स्कूल के एक अध्यापक के रूप मे सन् 1952 में हुई थी। इस नौकरी मे व्यस्त रहते हुए भी आपने अपनी शैक्षणिक योग्यता को बढ़ाने की ओर अनवरत प्रयास जारी रखा था। अनेक विघ्न-बाधाओ मे सतत सघर्ष करके आप किस प्रकार 'प्रधानाचार्य' के पद पर पहुँचे थे इसे वे ही लोग अच्छी प्रकार समझ सकते हैं जिन्होने आपकी कर्मठता और अध्यवसायिता को निकट से जाँचा और परखा था। अकेले भोपाल शहर के 'रवीन्द्र महाविद्यालय', 'कस्तूरबा महाविद्यालय' तथा 'नालन्दा पब्लिक स्कूल' उनकी सतत कार्य-निष्ठा की कहानी कह रहे है, जिनकी स्थापना क्रमश: 1965, 1970 और 1972 मे हुई थी और जिनमें कार्य करके आपने अपनी अनवरत कर्म-शीलता का परिचय दिया था।

एक अध्ययनशील अध्यापक के रूप मे तो आप विख्यात थे ही, साहित्यकार भी आप उच्चकोटि के थे। सवेदनशील कवि के रूप मे भी आपकी अपनी एक सर्वथा अलग पहचान थी। आपकी पहली रचना जब सन् 1958 मे 'नवशिखा' के नाम से प्रकाशित हुई तो लोगो ने उसे अत्यन्त विस्मय और कौतूहल से देखा था। उसमे आपकी मुक्तक रचनाएँ समाविष्ट थी। आपने कुछ दिन तक 'नव लेखन' नामक पत्रिका के सम्पादन मे भी सहयोग प्रदान किया था। छोटे-मोटे लेख तथा कहानियाँ आदि लिखने मे भी आपकी पर्याप्त रुचि थी। आपकी कहानियाँ 'धर्मयुग' मे प्रकाशित होती रही थी। आपका शोध निबन्ध 'हिन्दी के लघु उपन्यास' नाम से राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली की ओर से प्रकाशित हुआ है।

आपका आकस्मिक देहावसान किडनी की खराबी के कारण 23 जनवरी सन् 1974 को भोपाल मे हुआ था।

श्री घनश्यामसिंह गुप्त

श्री गुप्त का जन्म मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ अचल के दुर्ग नामक नगर मे 22 दिसम्बर सन् 1885 को हुआ था। आपके पूर्वज नागपुर के भोसले सरदारो के प्रधान सूबेदार थे और उन्होने ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध डटकर मोर्चा लिया था। आपने 20 वर्ष की छोटी-सी आयु मे राबर्टसन कालेज जबलपुर के नियमित छात्र के रूप मे बी० एस-सी० की परीक्षा प्रयाग विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण करके स्वर्ण-पदक प्राप्त किया था। बंग-भंग के दिनों मे आपने जहाँ ब्रिटिश सरकार की कार्यवाही का विरोध किया था वहाँ अनेक साथी छात्रो को भी उकसाया था और सन् 1907 मे आपने कालेज मे हड़ताल भी करा दी थी। आप छात्र-जीवन से ही देश की राजनीतिक हलचलों मे सक्रिय रूप से भाग लेने लगे थे और प्राय सभी आन्दोलनों मे आपने डटकर कार्य किया था। इसके लिए आपने अनेक बार कारावास की नृशम यातनाएँ भी भोगी थी।



सन् 1923 मे जब सी० पी० तथा बरार असेम्बली का निर्वाचन हुआ था तब आप उसमे निर्विरोध निर्वाचित हुए थे। इसी प्रकार सन् 1926 मे भी आपने अपने विरोधी प्रत्याशी को भारी बहुमत से हराया था। आप जहाँ सन् 1926 से सन् 1929 तक विधानसभा मे काग्रेस पार्टी के नेता रहे वहाँ स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त 'मध्यप्रदेश विधान सभा' के 15 वर्ष (सन् 1937 से 1952) तक अध्यक्ष भी रहे थे। आपका जहाँ देश के राष्ट्रीय जागरण मे प्रमुख योगदान था वहाँ सांस्कृतिक और शैक्षणिक क्षेत्र मे भी आपकी सेवाएँ उल्लेखनीय रही है। बी०एस-सी० की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त आप कुछ दिन के लिए देश के उच्चकोटि के नेता और सुधारक महात्मा मुन्शीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) के निमत्रण पर उनकी शिक्षा-सस्था 'गुरुकुल कागड़ी' मे भी विज्ञान के प्राध्यापक बनकर गए थे। अपने इस शिक्षण-काल मे आप वहाँ के छात्रों मे बहुत लोकप्रिय हो गए थे।

आपने जहाँ छत्तीसगढ़ की जनता की राष्ट्रीय क्षेत्र मे

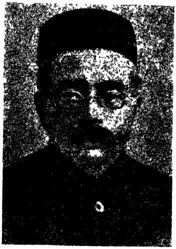
अभिनन्दनीय सेवा की थी वहाँ सामाजिक उत्थान और शैक्षणिक जागृति की दिशा मे पीछे नही रहे थे। आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश के अध्यक्ष के रूप मे आपने जहाँ सारे प्रदेश का मार्ग-प्रदर्शन किया था वहाँ 'तुलाराम आर्य कन्या पाठशाला दुर्ग' के संचालन मे भी आपका महत्त्वपूर्ण योगदान था। आप जहाँ अनेक वर्ष तक 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' मे मध्यप्रदेश की आर्यसमाजो के प्रमुख प्रतिनिधि रहे वहाँ कुछ वर्ष तक उसके अध्यक्ष के रूप मे समस्त आर्य-जगत् का सफल नेतृत्व किया था। हिन्दी पत्रकारिता मे 'समाचार-प्रेषण' करने वाली देश की अद्वितीय सस्था 'हिन्दुस्तान समाचार' के आप प्रथम अध्यक्ष रहे थे। जिन दिनो आप 'विधान निर्मात्री परिषद्' के सदस्य थे तब विधान के हिन्दी रूप के निर्माण के लिए जो समिति बनाई गई थी आप उसके भी सम्मानित सदस्य थे। आपके साथी अन्य सदस्यो मे सर्वश्री प्रो० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, राहुल साकृत्यायन, जयचन्द्र विद्यालंकार, मोतूरि सत्यनारायण तथा डॉ० रघुवीर आदि के नाम विशेष महत्त्व रखते है। जिन दिनो आप मध्यप्रदेश विधान सभा के अध्यक्ष थे तब आपकी ही प्रेरणा पर डॉ० रघुवीर ने नागपुर मे रहकर 'हिन्दी की पारिभाषिक शब्दावली' के निर्माण का महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। आप सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा निर्मित उस 'सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति' के भी अध्यक्ष थे, जिसके तत्वावधान मे सन् 1957 से 1959 तक पंजाब मे 'हिन्दी सत्याग्रह' सचालित हुआ था।

आपका निधन 14 जून सन् 1976 को हुआ था।

बाबू घासीराम

बाबू घासीराम जी का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर मे सन् 1872 मे हुआ था। जिन दिनों आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती मेरठ पधारे थे तब बाबू घासीराम जी के पिता श्री द्वारकादास उनके भाषणो को सुनकर आर्यसमाज की ओर आकर्षित हुए थे। अपने पिता के सस्कारो के कारण आपका भी झुकाव आर्यसमाज की ओर हो गया था। मेरठ से मैट्रिक की परीक्षा देने के उपरान्त आपने आगरा जाकर वहाँ से क्रमशः बी० ए०, एम० ए० तथा एल-एल० बी० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। अपना अध्ययन समाप्त करने के उपरान्त आप कुछ समय तक जोधपुर (राजस्थान) के 'जसवन्त कालेज' मे दर्शन-शास्त्र के प्राध्यापक भी रहे थे। इस पद पर आपने जोधपुर मे 5 वर्ष तक कार्य किया था। जब सन् 1901 मे जोधपुर मे विशूचिका का प्रकोप हुआ तो अपने पिताजी का आदेश पाकर आप नौकरी छोड़कर मेरठ चले आए थे।

मेरठ आने पर आपने वहाँ पर वकालत प्रारम्भ की और उसमे से समय निकालकर आर्यसमाज की विभिन्न प्रवृत्तियो मे सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। आपने सन् 1929 तक अत्यन्त सफलतापूर्वक वकालत की। इस बीच आपने वैदिक ग्रन्थो के पारायण मे अपना अधिकांश समय लगाया और सामाजिक कार्यो मे भी आपने रुचि लेनी प्रारम्भ की। आप जहाँ मेरठ आर्यसमाज के अनेक वर्ष तक प्रधान रहे वहाँ उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान तथा प्रधान के रूप मे आपकी सेवाएँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रही। क्योकि दिन-रात स्वाध्याय मे निरत रहने के कारण आपमे साहित्य-रचना की भावना हिलोरे मारने लगी थी अत आपने अपने कार्य-काल मे प्रतिनिधि सभा की ओर से प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया और इस विभाग की ओर से वैदिक साहित्य की महत्ता पर प्रकाश डालने वाले अनेक ग्रन्थ



प्रकाशित किए गए। आपके निधन के उपरान्त सभा के अधिकारियो ने अपने इस विभाग का नाम 'घासीराम प्रकाशन विभाग' रखकर अपनी कृतज्ञता का परिचय दिया है।

आपने जहाँ हिन्दी मे कई मौलिक ग्रन्थो की रचना की। वहाँ अनेक रचनाओ का अनुवाद करके भी अपनी अपूर्व

प्रतिभा का परिचय दिया था। आपने जहाँ प्रख्यात बंगाली लेखक श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय द्वारा लिखित महर्षि स्वामी दयानन्द की जीवनी का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया वहाँ श्री मुखोपाध्याय की दूसरी रचना 'विरजानन्द चरित' को भी हिन्दी-प्रेमी पाठकों को सुलभ कराया। इन दोनो पुस्तको का अनुवाद आपने मेरठ के श्री रघुवीरशरण दुबलिश की प्रेरणा से किया था और श्री दुबलिश ने इन्हे अपने 'भास्कर प्रेस' से ही प्रकाशित किया था। आपने महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के प्रख्यात ग्रन्थ 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' का अंग्रेजी अनुवाद प्रस्तुत करके उसको दूसरी भाषाओ के विद्वानो के लिए प्रकाश-स्तम्भ सिद्ध किया था।

आप जहाँ उच्चकोटि के लेखक थे वहाँ एक प्रखर वक्ता के रूप मे आपका व्यक्ति हमारे सामने उभरा था। जब सन् 1925 मे मथुरा मे 'दयानन्द जन्म-शताब्दी समारोह' का आयोजन हुआ तब आपके ही प्रयास से वहाँ पर 'धर्म परिषद्' की जो बैठक हुई थी उसमें 'ईश्वर जीव तथा प्रकृति' के सम्बन्ध मे आपके सारगर्भित भाषण को सुनकर श्रोता मन्त्र-मुग्ध हो गए थे। आर्यसमाज के सिद्धान्तो के प्रचार तथा प्रसार के लिए आपने अनेक शास्त्रार्थ भी किये थे। आर्य-समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा संस्थापित 'परोपकारिणी सभा' की अनेक प्रवृत्तियों को आगे बढाने मे भी आपका महत्वपूर्ण तथा सक्रिय सहयोग रहा था।

श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय द्वारा लिखिति 'महर्षि दयानन्द के जीवन-चरित' के लेखन के सम्बन्ध मे एक विशेष बात ध्यातव्य है। जब श्री मुखोपाध्याय बनारस मे निश्चित होकर महर्षि जी की जीवनी लिख रहे थे तब वे उसकी भूमिका तथा चार अध्याय ही लिख पाए थे कि अर्धांग रोग के कारण उनका आकस्मिक निधन हो गया। फलस्वरूप बाबू घासीराम ने काशी के तत्कालीन डिप्टी कलक्टर श्री ज्वालाप्रसाद के सहयोग से उक्त सभी सामग्री को प्राप्त करके इस जीवनी को पूर्ण किया। इस जीवनी की पूर्ण प्रामाणिकता का श्रेय बाबू घासीराम को ही दिया जा सकता है। कागज के सैकडो छोटे-बडे टुकडो, नोटबुकों, पत्रो और समाचार पत्रो की कतरनों को पढकर उसको व्यवस्थित रूप देने का कार्य भी मुखोपाध्याय के निधन के उपरान्त आपने ही किया था। यह हर्ष का विषय है कि यह ग्रन्थ अब तक की प्रकाशित सभी जीवनियो मे सर्वाधिक प्रामाणिक माना जाता है।

आपका निधन श्वास रोग के कारण 30 नवम्बर सन् 1934 को हुआ था।

कविवर घासीराम व्यास

श्री व्यास का जन्म उत्तर प्रदेश के झाँसी जनपद के मऊरानी-पुर (मधुपुरी) नामक स्थान मे सन् 1903 मे हुआ था। बुन्देलखण्ड के जिन तीन कवियों ने अपनी काव्य-प्रतिभा से साहित्य की समृद्धि मे अभूतपूर्व योगदान दिया था उनमें सर्वश्री नाथूराम माहौर और घनश्यामदास पाण्डेय के साथ आपका नाम भी गौरव के साथ लिया जाता है। बुन्देलखण्डी, ब्रज तथा खडी बोली तीनो भाषाओं मे ही रचना करने मे आप अत्यन्त प्रवीण थे। स्वतन्त्रता-संग्राम के दिनो मे आपने अपनी लेखनी का पूर्ण सदुपयोग जन-जागरण की रचनाएँ करके ही किया था।

व्यास जी की प्रतिभा की जहा राष्ट्रपिता महात्मा गाधी ने जनकवि के रूप मे सराहना की थी वहा राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त भी आपके रचना-कौशल से बहुत प्रभावित थे। आपने अपनी रचनाओ म जहाँ ब्रजभूमि तथा उसके अनन्य उन्नायक श्रीकृष्ण के गौरव का अकन अत्यन्त तन्मयता से किया है वहाँ राष्ट्र-भक्ति के पुनीत भाव भी आपकी लेखनी से प्रसूत हुए थे। असहयोग आन्दोलन के दिनों मे आपने अपने क्षेत्र की जनता का अपने काव्य मे जो उद्बोधन किया था वह इतिहास मे अमिट अक्षरो मे अंकित है। आप न केवल काव्य-रचना से जनता को उद्बोधित किया करते थे, प्रत्युत जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष के रूप मे भी आपने उस आन्दोलन को बहुत आगे बढाया था। इसके लिए आपको कारावास की नृशस यातनाएँ भी भोगनी पडी थी।

आपकी राष्ट्र-प्रेम की रचनाओ ने बुन्देलखण्ड की जनता को जो प्रेरणा दी थी उसकी कहानी आज भी वहाँ के जन-मन मे बड़े प्रेम से सुनी जाती है। अपनी रचनाओ के माध्यम से आपने राष्ट्रीयता का जो भैरवी मन्त्र फूँका था उसकी कुछ झलक आप आपकी इस रचना मे देख सकते है :

दीन दुखियों की बात करना कसूर जहाँ,
अपने घरों मे अपनी न कह पाते हैं।
जाते हुए जेल भाइयों के कही स्वागत में,
हाथ जो बढाते है तो हथकडी पाते है।।
भली भाँति शान्ति के व्रती है सुकृती है वे ही,
मानो अपराधी है, अशान्ति उकसाते हैं।
ऐसा यह एक ही अनोखा देश विश्व मे है,
जहाँ देश-भक्त राज-द्रोही वहे जाते है।।

आपकी 'वीर ज्योति', 'जवाहर ज्योति' एव 'श्याम सन्देश' प्रकाशित रचनाएँ है और 'किसान' तथा 'सम्मी' नामक रचनाओ का प्रकाशन नहीं हो सका। आपको 'बुन्देल-खण्ड-कोकिल' कहा जाता था और वहाँ की नगरपालिका की शिक्षा समिति के अध्यक्ष के रूप मे आपने जनता की अच्छी सेवा की थी। सन् 1942 के कारावास के दिनो मे आपका स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया था और जेल से रिहा होने के उपरान्त भी वे सँभल न सके और सन् 1942 मे ही आपका असामयिक देहावसान हो गया।

आचार्य चक्रधर जोशी

श्री जोशी का जन्म उत्तर प्रदेश के गढवाल मण्डल के देव-प्रयाग नामक स्थान के सुदर्शन क्षेत्र मे 26 सितम्बर सन् 1909 को 'वामन जयन्ती' के दिन हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने पिता आचार्य मुकुन्द दैवज्ञ बडथ्वाल की देख-रेख मे हुई थी। श्री दैवज्ञ को आधुनिक वराह मिहिर कहा जाता था और गणित ही उनका प्रिय विषय था। श्री दैवज्ञ की कृपा से आपने गणित के गुह्य ज्ञान के सूत्र सहज ही मे प्राप्त कर लिए थे। उनके द्वारा की गई फलित ज्योतिष पर आधारित भविष्यवाणियाँ पूर्णत सटीक उतरा करती थी। आपका समस्त जीवन भारतीय ज्योतिष, वेद, पुराण, दर्शन, साहित्य, सगीत, कला और इतिहास के गुह्य ज्ञान की प्राप्ति मे ही व्यतीत हुआ था।

आपने अपने ज्योतिष-सम्बन्धी ज्ञान का परिचय सभी सस्कृति-प्रेमियों को देने की दृष्टि से सन् 1946 मे देव प्रयाग मे जो 'नक्षत्र वेधशाला' स्थापित की थी उसमे ध्रुव घटी, जल घटी, सूर्य घटी, लग्नमापक यंत्र, द्वादशांगुल शकु बैरोमीटर, क्रोमो मीटर, सोला-सिल्टन आदि अनेक विशाल दूरवीक्षण यन्त्रो का जो विशाल सकलन है वह आपकी कार्य-कुशलता का द्योतक है। इसके अतिरिक्त इस वेधशाला की 'लक्ष्मीधर विद्या मन्दिर' नामक जो शाखा है उसमे भी आपकी 22 हजार पुस्तके, 3 हजार पाण्डुलिपियाँ सग्रहीत है। इन सभी मे ज्योतिष, कर्मकाण्ड, वेद, पुराण, सहिता, उपनिषद्, धर्मशास्त्र, राम-रसायन, कोष,



गणित, इतिहास, भूगोल, साहित्य तथा सगीत आदि विभिन्न विषयो से सम्बन्धित प्रचुर दुर्लभ सामग्री है। इस सस्था के माध्यम से, 'ज्योतिष तत्त्वम्' (दो भाग), 'गदावली', 'त्रिकाल सन्ध्या' तथा 'तीर्थ श्राद्ध विधान पद्धति' आदि कई ग्रन्थो का प्रकाशन हो चुका है और 'रत्नाजलि' की पाण्डु-लिपि अभी अप्रकाशित है।

ज्योतिष विज्ञान के क्षेत्र मे आपकी अपूर्व विद्वत्ता का प्रमाण इसीसे मिल जाता है कि पूना मे आयोजित 'अखिल भारतीय ज्योतिष सम्मेलन' की आपने अध्यक्षता की थी। आप श्री केदारनाथ प्रभाकर द्वारा सहारनपुर मे बुलाए गए 'ज्योतिष सम्मेलन' के भी मुख्य अतिथि रहे थे। आपने जहाँ गढवाल मण्डलीय 'सस्कृत साहित्य सम्मेलन' की अध्यक्षता की थी वहाँ 'उत्तर प्रदेश सस्कृत अकादमी' ने भी आपका सम्मान किया था। आप सगीत क्षेत्र की प्रख्यात सस्था 'सुर सिगार परिषद्' के सस्थापक तथा सरक्षक होने के साथ-साथ 'गढवाल विश्वविद्यालय' की विभिन्न समितियों के सम्मानित सदस्य भी रहे थे। आपके द्वारा सस्थापित इस 'नक्षत्र वेधशाला' की महत्ता का सबसे बडा प्रमाण यही है कि सामान्यत समस्त विश्व और विशेषत भारत मे अवस्थित सभी वेधशालाएँ समय-समय पर इस 'नक्षत्र वेधशाला' से

परामर्श लेती रहती थी। आपने सहारनपुर के 'ज्योतिर्विज्ञान संस्थान' से प्रकाशित 'काल विज्ञान' और 'वेद चक्षु' का मार्ग दर्शन भी किया था।

आप हिन्दी, संस्कृत, बगला, गुजराती, मराठी और अग्रेजी आदि अनेक भाषाओ के प्रकाण्ड विद्वान् थे। आपने जहाँ अपने पूज्य पितृदेव श्री मुकुन्द दैवज्ञ के कई संस्कृत ग्रन्थो की टीकाएँ हिन्दी मे की थी वहाँ अनेक मौलिक ग्रन्थो की रचना भी की थी। आप ज्योतिष के गणित-फलित विषयों के ज्ञाता होने के साथ-साथ कर्मकाण्ड के भी अगाध विद्वान् थे। आपके पास अपनी शकाओं के समाधान के लिए दूर-दूर से अनेक श्रद्धालुजन आया करते थे।

आपका निधन 16 अगस्त सन् 1980 को हुआ था।

श्री चक्रेश्वर भट्टाचार्य

श्री भट्टाचार्य का जन्म असम प्रदेश के कामरूप जिले मे सन् 1917 मे हुआ था। प्रारम्भ मे आपका सम्पर्क शिक्षा-प्राप्ति के दिनो मे ही असम के प्रख्यात हिन्दी-सेवी श्री कमल-नारायण देव से हो गया था। फलस्वरूप जब उन्होने 'जयन्ती' नामक पत्रिका का प्रकाशन-सम्पादन प्रारम्भ किया था तब भट्टाचार्यजी भी उनके अनन्य सहयोगी बन गए थे। यह पत्रिका प्राय. 'असमिया' और 'हिन्दी' दोनो भाषाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी। श्री चक्रेश्वरजी क्योंकि मूलत असमिया भाषा-भाषी थे, अत हिन्दी के साथ-साथ आपको असमिया की सामग्री भी तैयार करनी पडती थी। आप उसमे प्राय छद्म नामो से ही लिखा करते थे।

बाद मे जब आप आकाशवाणी की सेवा मे चले गए तब भी आपने हिन्दी-लेखन बद नही किया और हिन्दी मे अनुवाद-कार्य बराबर करते रहे। आपने जहाँ हिन्दी मे अनेक मौलिक लेख लिखे थे वहाँ अनेक असमिया पुस्तको का हिन्दी अनुवाद भी किया था। आपके द्वारा हिन्दी मे अनूदित 'जिवनर बाटत' नामक उपन्यास प्रमुख है। खेद है कि इसका प्रकाशन अभी तक नही हो सका। आपने हिन्दी की अनेक पुस्तको का असमिया भाषा मे भी अनुवाद किया था और आप 'देवानां प्रिय' नाम से असमिया मे कविताएँ एव कहानियाँ भी लिखा करते थे। साहित्य अकादेमी नई दिल्ली की ओर से प्रकाशित 'भारतीय कविता' नामक काव्य-सकलन मे समाविष्ट असमिया कविताओं के हिन्दी-अनुवादक के रूप में आप बहुत लोकप्रिय हुए थे।

आपका निधन सन् 1970 मे हुआ था।

कविराजा श्री चण्डीदान मिश्रण

कविराजा श्री चण्डीदान का जन्म राजस्थान के बूँदी राज्य मे सन् 1791 मे हुआ था। आप राजस्थानी भाषा के प्रमुख कवि श्री सूर्यमल्ल मिश्रण के पिता थे और बूँदी-नरेश महाराव राजा विष्णुसिह तथा रामसिह के समय में विद्यमान थे। आपको महाराव राजा विष्णुसिह ने 'विरुद प्रकाश' नामक ग्रथ की रचना करने के उपलक्ष्य मे 'होसूदा' नामक ग्राम, हाथी, लाख पसाव और रहने के लिए मकान प्रदान किया था। आप सस्कृत, पिंगल और डिंगल के बहुत बडे विद्वान् थे। आपके विषय मे यह दोहा विशेष रूप से उल्लेखनीय है .

बदन सुकवि सुत कवि मुकुट, अमर गिरा मनिमान।
पिंगल डिंगल पटु भये, कविवर चण्डीदान।।

आपकी कवित्व-प्रतिभा आपके इस पद से जानी जा सकती है

घूमत घटा से, घनघोर से घुमड़ घोख,
उमडत आए कमठन ते अधीर से।
चपट चपेट चरखीन की चला चल ते,
धूरि धूम धूसत धकात बलवीर से।।
मसत मतग रामसिह महिपाल जू के,
डाकिनि डराए मद छाकिनि छकीर से।
साजै सौंट मारन अखारन के जैत बार,
अरन के अचल पहारन के पीर से।।

आपने 'विरुद प्रकाश' के अतिरिक्त 'सार सागर', 'बल विग्रह', 'वंशाभरण' तथा 'तीज तरंग' नामक 4 अन्य ग्रन्थों की रचना भी की थी।

आपका निधन सन् 1835 में हुआ था।

डॉ० चण्डीप्रसाद जोशी

डॉ०जोशी का जन्म उत्तर प्रदेश के गढ़वाल जनपद के जोशीमठ नामक स्थान में 18 नवम्बर सन् 1931 को हुआ था। आपने जैरीसाल (लैन्सडाउन) से हाई स्कूल, आगरा विश्वविद्यालय से बी० ए० तथा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के निर्देशन में सागर विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी।

आपके शोध प्रबन्ध का विषय 'हिन्दी उपन्यास—समाज-शास्त्रीय विवेचन' है, जो कानपुर से प्रकाशित हुआ है। आपने सन् 1960 से 1963 तक सागर विश्वविद्यालय मे अध्यापन किया था और तदुपरान्त आपकी नियुक्ति मसूरी के 'पोस्ट ग्रेजुएट कालेज' मे रीडर के पद पर हो गई थी। कालान्तर मे आप उस कालेज के 'प्राचार्य' भी बना दिए गए थे।

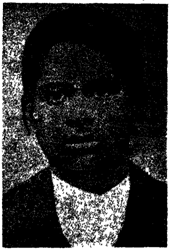
आप एक सुयोग्य विद्वान् और कुशल प्राध्यापक होने के साथ-साथ समाज-सेवा के क्षेत्र मे भी पूर्णत. सक्रिय थे।

आपका निधन सन् 1978 में हृदयाघात के कारण हुआ था।

श्री चण्डीप्रसाद बी० ए० 'हृदयेश'

श्री 'हृदयेश' का जन्म सन् 1891 मे उत्तरप्रदेश के पीलीभीत नामक नगर मे हुआ था। बी०ए० तक की परीक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप लेखन की ओर अग्रसर हो गए थे। पहले-पहल आपने पीलीभीत की शुगर मिल मे 'असिस्टेंट' मैनेजर' के रूप मे कार्य प्रारम्भ किया था और बाद मे मिल के सचालक राजा ललिताप्रसाद के 'प्राइवेट सेक्रेटरी' हो गए थे। कुछ समय तक आपने झाँसी की 'सरस्वती पाठशाला' के हेडमास्टर के रूप मे कार्य करने के अतिरिक्त पीलीभीत के 'ललित हरि आयुर्वेदिक कालेज' का 'प्राधानाचार्यत्व' भी सँभाला था। यहाँ यह बात भी विशेष रूप से उल्लेख करने योग्य है कि आप डूँगर कालेज बीकानेर (राजस्थान) में भी उन दिनों शिक्षक रहे थे जब वहाँ पर प्रख्यात राजनेता और साहित्य-सेवी डॉ० सम्पूर्णानन्द जी भी अध्यापन का कार्य करते थे। उन दिनो इस सस्था का नाम 'सेठिया हाई स्कूल' था।

लेखन की दिशा में डॉ० सम्पूर्णानन्द जी का यह सम्पर्क आपके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ था। पहले-पहल आपने अपना उपनाम 'चन्द्र' रखा था और प्रारभ मे आप कविता लिखा करते थे। जब आपको यह पता चला कि 'पुवायाँ नरेश' भी 'चन्द्र' उपनाम से कविताएँ लिखते हैं तो आपने अपना उपनाम बदलने का सकल्प कर लिया। यह भी निश्चय किया गया कि 'दुर्गा सप्तशती' खोलने पर जो भी पृष्ठ सामने आ जाय, उसके पहले शब्द को ही वे अपने 'उपनाम' के रूप मे अगीकार कर लेगे। परिणामस्वरूप आपका नाम 'हृदयेश' पड़ गया।



जिन दिनों 'हृदयेश' जी ने साहित्य के क्षेत्र मे प्रवेश किया था उन दिनो भारत मे 'राष्ट्रीय आन्दोलन' जोरो पर चल रहा था। आप भी उसके प्रभाव से अछूते न रह सके, और दुर्गाशकर शुक्ल तथा कन्हैयालाल त्रिवेदी नामक अपने दो अभिन्न मित्रो के साथ आप काग्रेस के अहमदाबाद अधिवेशन मे सम्मिलित हुए। उसी अवसर पर आप महात्मा गाधी जी के दर्शन करने की लालसा से 'साबरमती आश्रम' मे भी गए। वहाँ पर माता कस्तूरबा ने आपको यह सन्देश दिया—"जाओ, और नवयुवको से देश की जेलो को भर दो। बस यही बापू के वास्तविक दर्शन है।" माता कस्तूरबा के इन शब्दों ने उन पर जादू-जैसा असर किया और वहाँ से लौटकर आपने पीलीभीत के कमरौली नामक ग्राम मे बड़ा जोशीला भाषण दिया। परिणामस्वरूप आप अपने मित्रो सहित बन्दी बना लिए गए। काग्रेस के झाँसी-अधिवेशन के अवसर पर आपने जो भाषण दिया था उससे श्रीमती सरोजिनी नायडू

भी बहुत प्रभावित हुई थीं।

जेल-जीवन में आपने अपने लेखन को पर्याप्त गति दी और आप परिनिष्ठित गद्य में कहानियाँ लिखने लगे। आपकी भाषा पर जहाँ छायावादयुगीन शब्द-लालित्य का पूर्ण प्रभाव परिलक्षित होता है वहाँ तत्कालीन बंगला साहित्य की रचनात्मक प्रवृत्तियों की स्पष्ट छाप भी देखने को मिलती है। आपने हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी के अतिरिक्त मराठी, गुजराती और बंगला आदि भाषाओं का भी गहन अध्ययन किया था। आपकी गद्य-शैली पर इन सभी भाषाओं की स्पष्ट छाप दृष्टिगत होती है। आप उन दिनों क्रान्तिकारियों की एक 'बंगला समिति' के भी सक्रिय सदस्य थे और उसमें आपका सारा पत्र-व्यवहार बंगला भाषा में ही होता था। आपकी एक 'परित्यक्ता' नामक कहानी से प्रभावित होकर सिकन्दरा राउ (अलीगढ़) के सेठ लक्ष्मीनारायण की धर्म-पत्नी ने आपको एक 'स्वर्ण पदक' भी प्रदान किया था।

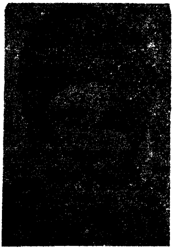
'हृदयेश' जी की लेखन-प्रतिभा के विकास में पीलीभीत नगर की साहित्यिक संस्था 'कवि मण्डल' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आप इसके सक्रिय सदस्य थे। आपने इस संस्था के माध्यम से ही अपना साहित्यिक जीवन एक कवि के रूप में प्रारम्भ किया था और बाद में एक कुशल कहानी-लेखक के रूप में प्रतिष्ठित हुए थे। आपकी कहानियों और उपन्यासों में प्रकृति की अद्भुत छटा के दर्शन इसलिए होते हैं कि प्रारम्भिक दिनों में निर्जन वनों में भ्रमण करके प्राकृतिक सौन्दर्य निरखने का आपका स्वभाव-सा बन गया था। हिन्दी के कथा-लेखकों में आपकी शैली सर्वथा अनूठी और बेजोड़ थी। आपका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और अनुभूति-चित्रण बिलकुल निराला होता था। उसमें कल्पना, भावना और अनुभूति की त्रिवेणी अपने अजस्र वेग से प्रवाहित होती लगती थी। आपकी रचनाएँ 'चांद', 'सुधा', 'माधुरी' तथा 'सरस्वती' आदि सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थीं। 'चाँद' के तो आप कुछ दिन तक सम्पादक भी रहे थे।

आपकी प्रकाशित कृतियों में 'नन्दन निकुंज', 'गल्प संग्रह', 'वनमाला' (कहानी-संग्रह), 'मनोरमा' तथा 'मंगल प्रभात' (उपन्यास) आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। आप अपने जीवन के अन्तिम दिनों में 'मातृ मंदिर' नामक एक ऐसे ग्रन्थ की रचना कर रहे थे जिसमें भारत की प्राचीन, मध्ययुगीन और वर्तमान सतियों की जीवनियाँ समाविष्ट थीं। इसके दो खण्ड ही आप लिख सके थे और तीसरा खण्ड अभी अपूर्ण ही था कि आप असमय में चले गए। इस कार्य को करने की प्रेरणा के पीछे वह संकल्प था, जो आपने 'चाँद' के कार्य-काल में उसका एक विशेषांक 'सती अंक' नाम से निकालने की सोची थी, किन्तु आप अपने इस विचार को साकार नहीं कर सके थे। आपने पीलीभीत में 'मातृ मंदिर' नामक एक पत्र प्रकाशित करने का भी विचार किया था, किन्तु वह भी पूरा न हो सका। आपका यह चित्र उन दिनों का है जब आप लखनऊ में बी० ए० के छात्र थे।

आपका निधन 15 जून सन् 1927 को सन्निपात के कारण तब हुआ था जब आप 'चाँद' के सम्पादक थे।

श्री चतरदान सामौर

श्री सामौर का जन्म राजस्थान की बीकानेर रियासत के अन्तर्गत सुजानगढ़ तहसील के बोबासर नामक ग्राम में सन् 1887 में हुआ था।



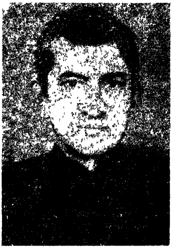
आपको ऊँट पालने का बहुत शौक था। आपने खुडिया (सरदारशहर) ग्राम-निवासी श्री महेश-दान बारहठ के असामयिक निधन पर अनेक मर्सिये लिखे थे। इनके अतिरिक्त आपने अन्य बहुत-सी फुटकर कविताएँ लिखी थीं। खेद का विषय है कि आपकी ये रचनाएँ प्रकाशित नहीं हो सकीं। गद्य के क्षेत्र में आपकी प्रतिभा का अच्छा परिचय आपकी 'घर बीती-पर बीती' नामक रचना को पढ़कर मिल जाता है।

आपका स्वर्गवास सन् 1968 में हुआ था।

डॉ० चतरसिंह रावत

डॉ० रावत का जन्म उत्तर प्रदेश के गढ़वाल क्षेत्र के टिहरी जनपद के नौघर पट्टी नामक ग्राम मे 5 मार्च सन् 1934 को हुआ था। जब आप कक्षा 5 मे ही पढ रहे थे तब आपके पिताजी का असामयिक देहावसान हो गया था। परिवार के भरण-पोषण का भार अपने ऊपर वहन करते हुए भी आपने अपने अध्ययन का क्रम बन्द न करके सन् 1951 में हाई स्कूल की परीक्षा देकर 'बेसिक अध्यापक' के रूप मे आजीविका प्रारम्भ की थी। इस कार्य मे व्यस्त करते हुए ही आपने प्राइवेट छात्र के रूप मे क्रमश इण्टर, बी० ए० तथा एम० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। इसी बीच अपनी शैक्षणिक योग्यता बढाने की दृष्टि से आपने जे० टी-सी० की परीक्षा भी दे दी थी, जिसके कारण आप अपने अध्यापन-कार्य को सफलतापूर्वक चला सके।

एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप सन् 1967 मे 'सरस्वती इण्टर कालेज लम्ब गॉव' मे हिन्दी प्रवक्ता के पद पर नियुक्त हुए और धीरे-धीरे आपने अपने निजी स्वाध्याय तथा अध्यवसाय के बल पर आगरा विश्वविद्यालय से सन् 1974 मे 'गढवाली साहित्य-कारो की हिन्दी साहित्य को देन' विषय पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-एच० डी० की उपाधि भी प्राप्त कर ली थी।



डॉ० रावत गढवाल के ऐसे सपूत थे जिन्होने सारे गढवाल अचल की धूल छानकर और ग्रामीण परिवेश में रहकर भी इस क्षेत्र की साहित्यिक उपलब्धियो का अत्यन्त उपादेय अध्ययन अपने शोध-प्रबन्ध मे प्रस्तुत किया था। श्री चन्द्रशेखर बड़ोला द्वारा सम्पादित 'गढवाल मे शिक्षा और शोध' नामक ग्रन्थ मे प्रकाशित आपके दो महत्त्वपूर्ण लेखो से गढवाल की साहित्यिक एव सास्कृतिक चेतना का यथार्थ परिचय मिलता है। गढवाल के सर्वश्री मोलाराम, पीताम्बरदत्त बडथ्वाल, चन्द्रकुवर बर्त्वाल और तोताकृष्ण गैरोला-जैसे उच्चकोटि के साहित्यकारो के सम्बन्ध मे आपने अपने शोध प्रबन्ध मे विशद जानकारी प्रस्तुत की है।

यह दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि जब आप अपनी साहित्यिक प्रतिभा का परिचय देने की स्थिति मे आए थे तब अचानक आप पेट के एक भयकर रोग मे ग्रसित हो गए और इसी प्रसग में दिल्ली के सफदरजग अस्पताल मे चिकित्सार्थ प्रविष्ट हो गए, जहाँ पर 16 जून सन् 1977 को आपका निधन हो गया।

महाराज चतुरसिंह बावजी

आपका जन्म 9 फरवरी सन् 1880 को राजस्थान की उदयपुर रियासत के करजाली ठिकाने मे हुआ था। आप मेवाड के महाराणा फतहसिह के भतीजे तथा भगतसिह के चाचा थे। आपके पिता सूरतसिह अत्यन्त धर्मनिष्ठ तथा ईश्वर-भक्त थे। अपने पिता के अनुरूप ही आपका भी चरित्र था। अपने जीवन के अन्त तक आप भी साख्य, वेदान्त, न्याय तथा ईश्वर-भक्ति-सम्बन्धी साहित्य का पारायण करते रहे थे। कविता के प्रति आपका स्वाभाविक रुझान था। आपकी कवित्व-प्रतिभा का परिचय इसी बात से मिल जाता है कि आपने 'मानव मित्र', 'राम चरित्र', 'शेष चरित्र', 'अलख पचीसी', 'तुनी अष्टक', 'अनुभव प्रकाश', 'परमार्थ विचार', 'समान बत्तीसी', 'हनुमान पचक', 'चन्द्रशेखराष्टक', 'महिम्नस्तोत' तथा 'चतुर प्रकाश' आदि अनेक मौलिक रचनाएँ लिखी थी। आप सस्कृत साहित्य के भी मर्मज्ञ विद्वान् थे। आपकी ऐसी विद्वत्ता का परिचय उन अनेक सस्कृत-ग्रन्थो की टीकाओ से मिल जाता है, जो आपने प्रस्तुत की थी। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'श्रीमद्भगवद्गीता की गगाजली टीका', 'योगसूत्र की टीका', 'सांख्य समाज की टीका' और 'साख्य कारिका की टीका' प्रमुख है।

आपने कबीर, नानक, मीरा तथा दादू आदि जिन अनेक भक्त कवियों की रचनाओं का चूडान्त पारायण किया था उनकी झाँकी आपकी सभी कृतियो मे दिखाई देती है। अपनी फुटकर कृतियों मे आपने मुख्यत समाज-सुधार, शिक्षा-प्रचार, भक्ति, वैराग्य तथा ससार की नश्वरता आदि अनेक विषयों पर अच्छा प्रकाश डाला है। क्योकि आपका जन्म वीर-भूमि मेवाड मे हुआ था इसलिए वीररस-प्रधान रचनाएँ लिखने मे भी आप अत्यन्त दक्ष थे। भारतीय सस्कृति तथा सभ्यता के प्रति आपका इतना अनन्य अनुराग था कि आप सभी बालकों को भारतीय पद्धति मे शिक्षा दिलाने के समर्थक थे। आप प्राय कहा करते थे कि आधुनिक पाठशालाओं मे शिक्षा नही मिलती, बल्कि बालको के गले घोटे जाते है। उन्हे दुर्बल, अधार्मिक तथा नास्तिक बनाया जाता है। आपने अपने 'चतुर चिन्तामणि' नामक ग्रन्थ मे इसकी सम्यक् विवेचना भी की है।

आपका निधन 7 जुलाई सन् 1929 को हुआ था।

श्री चतुर्भुज पाराशर 'चतुरेश'

श्री चतुरेश जी का जन्म उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड अचल के हमीरपुर जनपद के कुलपहाड नामक ग्राम मे सन् 1889 मे हुआ था। आपने अपने जीवन का प्रारम्भ एक अध्यापक के रूप मे किया था और अन्त मे बुन्देलखण्ड के एक उत्कृष्ट कवि के रूप मे आपने जो ख्याति अर्जित की थी उससे आपकी कर्मठता, योग्यता तथा अनुभूति-क्षमता का सम्यक् परिचय मिल जाता है। आप पहले-पहल इन्दौर के एक हाई स्कूल मे अध्यापक हुए थे, जहाँ पर रहते हुए आपका सम्पर्क सर्वश्री माधवराव सप्रे, माखनलाल चतुर्वेदी, हरिभाऊ उपाध्याय और बनारसीदास चतुर्वेदी-जैसे हिन्दी के अनेक उच्चकोटि के साहित्यकारो से हुआ था। इस सम्पर्क ने आपमे साहित्य के प्रति जो ललक जागृत की थी कालान्तर मे वह पल्लवित और पुष्पित होकर इस सीमा तक पहुँची कि आप एक उच्चकोटि के कवि के रूप मे प्रतिष्ठित हो गए।

खडी बोली, ब्रजभाषा और बुन्देलखण्डी में काव्य-रचना करने मे आप इतने कुशल थे कि आप देश के कोने-कोने मे आयोजित होने वाले कवि-सम्मेलनों में आमन्त्रित किये जाने लगे। इन कवि-सम्मेलनों में आपको सर्वश्री गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' त्रिशूल, जगदम्बाप्रसाद मिश्र 'हितैषी', घासीराम व्यास और मुन्शी अजमेरी आदि अनेक शीर्षस्थ कवियो का जो सान्निध्य सुलभ हुआ था उसके कारण आपकी ख्याति शनै-शनै. दूर-दूर तक फैल गई थी। आपने जहाँ महात्मा गाधी की अध्यक्षता मे इन्दौर मे सम्पन्न हुए हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अन्तर्गत आयोजित कवि सम्मेलन मे भाग लिया था वहाँ ओरछा-नरेश महाराज वीरसिह जू देव द्वारा वहाँ पर प्रतिवर्ष आयोजित किये जाने वाले कवि सम्मेलनों मे भी आप ससम्मान आमन्त्रित किये जाते थे।



अपनी जन्म-भूमि हमीरपुर मे आकर आपने अपनी प्रतिभा से जो साहित्यिक वातावरण तैयार किया था उसके कारण ही सर्वश्री भगवानदास 'बालेन्दु', श्रीपति सहाय, 'दिनेश', खेतसिह यादव, उमाशकर नगाइच और परशुराम पाराशर-जैसी प्रतिभाएँ इस अंचल को प्राप्त हो सकी। आपने देश के स्वाधीनता आन्दोलन को अपनी राष्ट्रीय रचनाओ से गति देने मे भी बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी पण्डित परमानन्द तथा दीवान शत्रुघ्नसिह से आपका अच्छा सम्पर्क था और वे प्राय आपके पास आते रहते थे। आपने गाधी जी के व्यक्तित्व की महत्ता अपनी एक रचना मे इस प्रकार वर्णित की थी

फूँकता स्वराज्य-'शख' चरखे का 'चक्र' लिये,
सत्याग्रह 'गदा' प्रेम 'पद्म' भुज भाती मे।
शस्त्र न उठाता, रथ भारत का हाँकता है,
जीतता है युद्ध है करिश्मे करामाती मे।।
ऐसे-ऐसे ढँची गुण नरों मे तो होने नहीं,
बात क्या है, देखने जो एक गुजराती मे।

लेके अवतार भगवान् कृष्ण आए न हों,
देखना है, हैं तो नहीं, चरण-चिह्न छाती में ।।

आप जहाँ अद्वितीय कवि के रूप में प्रतिष्ठित थे वहाँ साहित्यान्वेषण की दिशा में भी आपकी देन अनुपम कही जा सकती है। आपने जहाँ तुलसीदास के समकालीन कवि 'अक्षर अनन्य' की 'दुर्गा पाठ' नामक कृति की पाण्डुलिपि प्राप्त करके उसको शुद्ध, परिमार्जित और प्रामाणिक रूप मे सम्पादित करके प्रस्तुत किया वहाँ महाराजा छत्रसाल के समकालीन कवि मचित की हस्तलिखित पुस्तक 'सुरभि दानलीला' की खोज का भी अद्भुत कार्य किया था। यह दुर्भाग्य की बात है कि आपकी रचनाएँ प्रकाशित नही हो सकी। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'जगल के फूल', 'शक्ति कुसुमांजलि', 'ऊदल का खाडा' और 'भाषा प्रदीपिका' प्रमुख है।

आपका निधन सन् 1949 मे हुआ था।

परम संत डॉ0 चतुर्भुजसहाय

डॉ० चतुर्भुजसहाय का जन्म उत्तर प्रदेश के एटा जनपद के चमकरी नामक ग्राम मे 3 नवम्बर सन् 1883 को हुआ था। आपके पिता लाला रामप्रसाद कुलश्रेष्ठ शाखा के कायस्थ वश के उज्ज्वल रत्न थे और अपने परिवार की तत्कालीन परम्परा के अनुसार उन्होंने चतुर्भुजसहायजी की शिक्षा के लिए एक मौलवी साहब की नियुक्ति कर दी थी। किन्तु बालक चतुर्भुजसहाय की रुचि उर्दू तथा फारसी की ओर न होकर हिन्दी तथा सस्कृत की ओर ही अधिक थी। प्राथमिक शिक्षा की प्राप्ति के अनन्तर आपको एटा के हाई स्कूल मे प्रविष्ट करा दिया गया। जिन दिनो आप स्कूल मे पढ़ा करते थे उन दिनो देश का वातावरण बहुत ही अधिक उथल-पुथल का था। विदेशी शासन का प्रभाव ही सब ओर दृष्टिगत होता था। आपके बाल-मानस मे भी अनेक प्रकार की भावनाएँ उभार ले रही थी। उन्ही दिनो आपको परिस्थितिवश अपनी ननसाल फतेहगढ़ (फर्रुखाबाद) जाना पडा, जहाँ आपने कुछ समय तक रहकर एलैक्ट्रो तथा होम्योपैथिक चिकित्सा-प्रणाली का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। आपके पिता आयुर्वेदिक चिकित्सा-प्रणाली के भी अच्छे ज्ञाता थे, फलस्वरूप आयुर्वेद का ज्ञान आपने उनके साहचर्य मे रहकर अर्जित किया।

चिकित्सा के क्षेत्र मे कार्य करते हुए आपका सामाजिक परिवेश धीरे-धीरे बढ़ता गया और इस बीच आपने निजी स्वाध्याय के बल पर अपनी ज्ञान-सीमा को भी बहुत बढाया। उन दिनो समस्त देश मे आर्यसमाज ही एक ऐसी सस्था थी जिसके कार्यकर्त्ता समाज-सुधार तथा राष्ट्रीय जागरण के विभिन्न आन्दोलनो मे बढ-चढ़कर भाग लिया करते थे। आपने भी चिकित्सा-कार्य के साथ-साथ आर्य-समाज द्वारा प्रवर्तित अनेक प्रवृत्तियो मे भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। आर्यसमाज के कार्यों मे सक्रिय रूप से अपना सहयोग देते हुए आपका सम्पर्क एक ऐसी विभूति से हो गया जिसके द्वारा आपने नेती, धोती, प्राणायाम आदि अनेक यौगिक क्रियाओं का अच्छा अभ्यास कर लिया था। उन विभूति का नाम था श्री रामचन्द्र महाराज। वे अलीगढ तहसील से बदलकर वहाँ फतेहगढ़ आए थे और चिकित्सा-कार्य के प्रसग मे आपसे उनकी भेंट हुई थी। उन दिनो आप महाराजा तिर्वा की गगा किनारे पर बनी कोठी मे रहा करते थे। वे भी अकेले ही उनके पास रहने के लिए आ गए और उसी अन्तराल मे आपका झुकाव अध्यात्म-साधना की ओर हो गया। एक बार उन्होने आपसे यह भी कहा था—"मैं यह सब काम अपना नही कर रहा हूँ, अपने गुरु महाराज का कर रहा हूँ। मैं न रहूँ तो इस काम को तुम पूरा करना। मेरी आत्मा को इससे बढकर कोई दूसरी प्रसन्नता की बात नही होगी और यही मेरी दक्षिणा समझना। इसके लिए मै हर समय तुम्हारी सहायता करूँगा।" ये शब्द उन्होने डॉक्टर साहब से एकाधिक बार कहे थे और अपना शरीर त्यागते समय भी दोहराए थे।

अपने गुरु के द्वारा दिये गए आदेश का पालन करने के निमित्त आपने उनकी विचार-धारा का प्रचार अपनी उन पुस्तको मे किया जिनकी रचना आपने समय-समय पर की थी। आपकी पुस्तकें किसी सम्प्रदाय या धर्म विशेष की नही थी, प्रत्युत उनमे यही प्रतिपादित किया गया था कि आत्म-ज्ञान के बिना मनुष्य कभी शान्ति नही प्राप्त कर सकता। इस ज्ञान की प्राप्ति के लिए उसे जगल मे जाने की आव-श्यकता नही, अपने धर्म और सम्प्रदाय को भी त्यागने की

आवश्यकता नही। गृहस्थ धर्म का निर्वाह करते हुए कोई भी प्राणी इस कार्य को कर सकता है। यह एक ऐसी विद्या है जिसका सम्बन्ध शरीर से नही, अपितु मन से है। आपने अपने गुरु द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चलकर कार्य करने का सकल्प किया और सन् 1930 मे एटा मे बसन्त पचमी को प्रथम भण्डारे के अवसर पर 'साधन आश्रम' की नीव डाली, जिसका नाम बाद मे आपने अपने गुरु महाराज की स्मृति को अक्षुण्ण रखने की दृष्टि से 'रामाश्रम सत्सग' रख दिया था। इसी आश्रम की ओर से आपने एटा मे 'रामाश्रम आर्ट स्कूल' भी खोला था। इसी बीच 14 अगस्त सन् 1931 को आपके गुरु ने जब अपनी जीवन-लीला समाप्त की तब आपने उनकी विचार-धारा का प्रचार करने की दृष्टि से एक मासिक पत्र प्रकाशित करने का निश्चय किया। आपका यह स्वप्न सन् 1933 मे उस समय क्रियान्वित हो सका जब अगस्त मे जन्माष्टमी के अवसर पर आपने 'साधन' नामक पत्र का प्रथम अक जनता के समक्ष प्रस्तुत किया।



'साधन' के प्रकाशन का समस्त देश मे उन्मुक्त स्वागत हुआ। उसमे लेख आदि बाहर से नही आते थे, परन्तु आप स्वय ही लिखा करते थे। पत्र की महत्ता का इसीसे अनुमान हो जाता है कि उसके प्रकाशन पर कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'बगवासी' पत्र ने अपनी भावनाएँ इन शब्दो मे अभिव्यक्त की थी—"इस पत्रिका 'साधन' से एक बडे अभाव की पूर्ति हुई है। वास्तव मे इसके द्वारा पाठकों को ज्ञान और विवेक के राज्य मे प्रवेश करने की बड़ी सुविधा होगी और पर्याप्त सहायता मिलेगी। भक्ति, ज्ञान और वैराग्य-सम्बन्धी इसके लेख पढने लायक होते है, और पढना शुरू कर छोडने को जी नही चाहता। हम 'साधन' की ओर जन-साधारण का ध्यान आकृष्ट करते हुए इसकी मंगल-कामना करते है।" इसी प्रकार 'आर्यमित्र', 'कर्मवीर', 'प्रताप' तथा 'अयोध्यावासी पंच' आदि तत्कालीन अनेक प्रमुख पत्रों ने आपके इस अभियान का स्वागत किया था।

पत्र-प्रकाशन के साथ-साथ आपने समय निकालकर अपनी विचार-धारा के प्रचार तथा प्रसार के लिए अनेक पुस्तको की रचना की थी। आपके द्वारा रचित ऐसी पुस्तको मे 'साधन के अनुभव' (सात खण्ड), 'आध्यात्मिक शारीरिक ब्रह्मचर्य', 'सन्त श्री मीराबाई', 'गुरु भक्त सहजोबाई के उपदेश', 'सन्त तुकाराम', 'समर्थ गुरु महात्मा श्री रामचन्द्रजी की जीवनी और उपदेश', 'मृत्यु और मृत्यु के पश्चात्', 'पार होने की कुजी', 'व्यावहारिक धर्म', 'स्वर्ग और अपवर्ग', 'हमारा कर्त्तव्य', 'काल शक्ति और दयाल शक्ति', 'दु ख का कारण', 'राजभोग और शक्तिवाद', 'आदेश और अनुशीलन', 'शान्ति का रहस्य', 'नाम महिमा', 'सृष्टि और साधना', 'रहस्यभरी गाथाएँ', 'अमृत-कुण्ड' (पाँच भाग), 'हमारा सत्सग कार्यक्रम और प्रार्थना' आदि प्रमुख रूप से उल्लेख्य है। पुस्तको तथा पत्र (साधन) के प्रकाशन से समय निकालकर आप अपनी विचार-धारा के प्रचार के लिए देश-व्यापी भ्रमण भी किया करते थे। धीरे-धीरे आप अपनी इस साधना मे इतने तल्लीन हो गए कि सन् 1950 मे आप परिवार का लगभग सम्पूर्ण भार अपने मँझले पुत्र श्री हेमेन्द्रकुमार को सौंपकर पूर्णत चिन्तन तथा लेखन मे सलग्न हो गए। आजकल आपका यह आश्रम और प्रकाशन एटा की बजाय मथुरा मे केन्द्रित हो गया है।

आपका निधन 24 सितम्बर सन् 1957 को मथुरा मे हुआ था।

श्री चन्दनदास

आपका जन्म राजस्थान की जयपुर रियासत के एक छोटे-से ग्राम मे सन् 1844 मे हुआ था। आप एक दादू पन्थी सन्त कवि के रूप मे विख्यात थे और आपका जन्म-नाम चुन्नीलाल था। आप आयुर्वेद के इतने सिद्धहस्त विद्वान् थे कि रोगी की शक्ल देखते ही उसके रोग को समझ जाते थे। अपनी कुशल चिकित्सा के कारण आप आस-पास के क्षेत्र मे

बहुत ही अधिक विख्यात थे।

आप छन्द-शास्त्र के परम निष्णात विद्वान् थे। आपका छन्द-सम्बन्धी ग्रन्थ 'छन्दछवि मण्डन' आपके प्रमुख शिष्य स्वामी लक्ष्मीरामजी ने अपने ट्रस्ट की ओर से प्रकाशित किया था। आपने वैद्यक-सम्बन्धी 'पथ्यापथ्य' नामक एक और ग्रन्थ की रचना भी की थी। आपकी रचना का एक उदाहरण इस प्रकार है :

को नर बन्धव है जग मे, प्रभु-सम्मुख धारन का जइये।
दुःखित जीव निहारि करे किमि, मृत्युहि को चित क्यों रखिये॥
को बलवन्त अजेय सुविप्रन, का करि शीलहि को करिये।
कौन गुरु सत्कर्म कहाँ तक, ईश्वर सूँ मति का धरिये॥
को रखि कै नृप धर्म करै जग, वृद्धन के ढिग क्यों चलिये।
समरथ सम्पति पाय करै किमि, तेरह प्रश्न महाकवि ये॥
'दीन दया मन राख सदा नत' उत्तर दे कवि 'चन्दन' ये।
व्यसन गतागत फेर समस्तहि, पेखि विचार सदा भनिये॥

आपका देहावसान सन् 1883 मे हुआ था।

ब्रह्मचारिणी चन्दाबाई पण्डिता

ब्रह्मचारिणी चन्दाबाई पण्डिता का जन्म उत्तर प्रदेश के वृन्दावन नामक नगर मे सन् 1889 मे बाबू नारायणदास अग्रवाल के यहाँ हुआ था। आपके पिता कांग्रेस के प्रख्यात कार्यकर्त्ता और पण्डित मोतीलाल नेहरू के अन्यतम सहयोगी थे और किसी समय प्रान्तीय असेम्बली के सक्रिय सदस्य भी रहे थे। वैष्णव-संस्कारो और राधा-कृष्ण की रसमयी भक्ति-धारा के वातावरण मे पली और बढी चन्दाबाई का विवाह केवल 11 वर्ष की आयु मे ही आरा (बिहार) के गोयल गोत्रीय जैन धर्मावलम्बी परिवार के एक धर्मकुमार नामक युवक से हुआ था। श्री धर्मकुमार ने एफ० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करके बी० ए० मे अध्ययन करना प्रारम्भ ही किया था कि उनका असमय मे निधन हो गया। विवाह के समय उनकी आयु केवल 18 वर्ष की थी। श्री धर्मकुमार जी के अग्रज श्री देवकुमार सुप्रसिद्ध साहित्य-सेवी और धर्मनिष्ठ व्यक्ति थे। केवल 12 वर्ष की अल्पायु मे ही बन्धु-वधू के वैधव्य की दुर्घटना ने आपके मानस को झकझोर दिया और उन्होने चन्दाबाईजी को पुन विद्यारम्भ करने को प्रोत्साहित किया। उनके इस प्रोत्साहन से चन्दाबाईजी ने धर्मशास्त्र, न्याय, साहित्य और व्याकरण की शिक्षा प्राप्त करने के लिए अनवरत परिश्रम किया और थोड़े ही समय में काशी की 'पण्डिता' परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। जैन शास्त्रो के अध्ययन, मनन और निरन्तर चिन्तन के कारण आपकी रुचि और श्रद्धा जैन धर्म मे अत्यधिक हो गई। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि पति के असामयिक निधन के उपरान्त चन्दाबाईजी ने श्री वर्णी नेमसागरजी तथा अपने पितृवत् ज्येष्ठ श्री देवकुमारजी की प्रेरणा पर जैन मन्दिर जाकर जहाँ जैन धर्म की दीक्षा ग्रहण की थी वहाँ उसके 'रत्न करण्ड' 'श्रावकाचार', 'तत्त्वार्थ सूत्र', 'द्रव्य सग्रह-परीक्षा मुख', 'न्याय दीपिका' और 'चन्द्रप्रभु चरित' आदि अनेक प्रमुख ग्रन्थों का गहन स्वाध्याय करके जैन धर्म की महत्ता को भी जान लिया था। इसी बीच आपने अपने ज्येष्ठ श्री देवकुमार जी के साथ दक्षिण के 'श्रवणबेलगोला', 'धर्मस्थल', 'मूड-बिद्री' और 'कार्कल' आदि प्रसिद्ध जैन तीर्थों की यात्रा भी की थी। इस यात्रा मे वर्णी नेमिसागरजी भी आपके साथ थे। वहाँ पर भी आपने एक पाठशाला की स्थापना कराई थी। यात्रा के समय आपके ज्येष्ठ तथा आपके जो भाषण हिन्दी मे होते थे उनका अनुवाद वर्णीजी साथ-के-साथ वहाँ की भाषा मे कर दिया करते थे। इसके उपरान्त आपने उत्तर भारत के सभी जैन तीर्थों की यात्राएँ भी की। इसी बीच आपके ज्येष्ठ श्री देवकुमारजी का भी कलकत्ता मे 4 जून सन् 1908 को असामयिक निधन हो गया। श्री देवकुमारजी के निधन के उपरान्त तो आपने अपने जीवन को पूर्णत जैन समाज की सेवा मे समर्पित कर दिया और नारी-जागरण की दिशा मे अत्यन्त उल्लेखनीय कार्य किया। जैन-महिलाओं मे फैली हुई अनेक कुरीतियो तथा मिथ्या भ्रान्तियो के निराकरण के लिए आपने घनघोर परिश्रम किया। इसकी सम्पूर्ति के लिए 'अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला परिषद्' की स्थापना करके आपने उसके माध्यम से देश-की महिलाओं मे फैली हुई पर्दा-प्रथा और दासत्व की भावना को दूर करने का भी अभिनन्दनीय कार्य किया।

सन् 1921 मे जब सारे देश मे महात्मा गाधी का असह-योग आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तो आपने उसमे भी बढ-चढकर

भाग लिया। उन्ही दिनों आपने जहाँ 'जैन बाला आश्रम' की स्थापना की वहाँ 'जैन महिलादर्श' नामक पत्र का सम्पादन भी प्रारम्भ किया। 'जैन बाला आश्रम आरा' के द्वारा आपने जहाँ महिलाओ मे शिक्षा, धर्म तथा संस्कृति के प्रति रुचि जागृत की वहाँ उनमे स्वदेशी वस्त्रो के धारण करने की प्रेरणा उत्पन्न करके उन्हे चरखा चलाने की ओर भी उन्मुख किया। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि



इन राष्ट्रीय आन्दोलनो के प्रसंग मे महात्मा गान्धीजी तथा नेहरू कई बार आपके 'जैन बाला आश्रम' मे आकर ठहरे थे। आपने अनेक शैक्षणिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए जैन धर्म के प्रख्यात साधु आचार्य शान्तिसागरजी महाराज के साथ देश के अनेक प्रमुख नगरों की यात्रा करके धार्मिक क्रान्ति के क्षेत्र मे भी अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपके अनेक क्रातिकारी कार्यों के कारण देश के सभी उच्चकोटि के नेता आपका सम्मान किया करते थे। आपकी महत्त्वपूर्ण समाज-सेवाओ को दृष्टि मे रखकर आपको दिल्ली मे भारत के तत्कालीन उपराष्ट्रपति डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन् के कर-कमलो द्वारा एक अभिनन्दन ग्रन्थ भी भेंट किया गया था।

आप जहाँ उच्चकोटि की समाज-सुधारक और सांस्कृतिक प्रेरणा थी वहाँ अपने महत्त्वपूर्ण विचारो को आपने अपनी लेखनी के द्वारा भी समाज के समक्ष प्रस्तुत किया था। अपने 'जैन महिलादर्श' पत्र के द्वारा आपने समाज को जो नई दिशा प्रदान की थी वह सर्वथा अविस्मरणीय है। आपने बाल-विवाह और वृद्ध-विवाह के विरोध में जहाँ समाज को उद्‌बोधन दिया वहाँ स्त्री-शिक्षा की दिशा मे भी आपका कार्य सर्वथा अनुपम था। इस सम्बन्ध मे विचार-विमर्श करने के निमित्त आप वर्धा जाकर महात्मा गाधीजी से भी मिली थीं। आपने सन् 1948 के अगस्त मास में 'हरिजन मन्दिर प्रवेश बिल' के सम्बन्ध मे भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू तथा श्री जगजीवनराम प्रभृति अनेक राजनेताओ से मिलकर उन्हे जैन समाज की भावनाओ से अवगत कराया था। आपकी मान्यता थी कि क्योकि हरिजन जैन मन्दिरों कोपूज्य नही मानते और न जैन मूर्तियाँ ही उनकी आराध्य है अतएव यह बिल जैनियों पर लागू नही होना चाहिए।

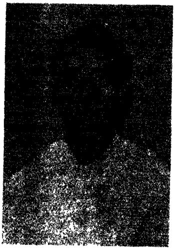
आप उच्चकोटि की चिन्तक और लेखिका भी थी। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'उपदेश रत्नमाला', 'सौभाग्य रत्नमाला', 'निबन्ध रत्नमाला', 'आदर्श कहानियाँ', 'आदर्श निबन्ध' और 'निबन्ध दर्पण' प्रमुख है। सन् 1974 मे वृद्धावस्था के कारण यद्यपि आपका स्वास्थ्य गिरने लगा था किन्तु फिर भी आपने अपने कार्यों की गति मे ढील नही आने दी और आप प्राय नित्य प्रति आश्रम की छात्राओ को रात्रि मे अपने पास बिठाकर 'शास्त्र-सभा' किया करती थी। जब तक आप स्वस्थ रही तब तक प्रति वर्ष सम्मेद शिखर, पावापुरी एव राजगृह की यात्राएँ भी करती रहती थी। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे भी आप निरन्तर चिन्तन-रत रहा करती थी। आपके जीवन तथा कार्यों की महत्ता का अनुमान इसीसे हो जाता है कि आपके द्वारा संस्थापित 'वनिता विश्राम' को देखकर गाधीजी ने यह लिखा था—"पण्डिता चन्दाबाई द्वारा स्थापित 'वनिता विश्राम' को देखकर मुझे बडा आनन्द हुआ।" आपको दिगम्बर मुनि श्री कुन्थसागर महाराज ने दीक्षा देकर आपको 'आर्यिका चन्दा माँ श्री' के पावन अभिधान से भी अभिषिक्त किया था।

आपका निधन 29 जुलाई सन् 1977 को हुआ था।

श्री चन्दूलाल वर्मा 'चन्द्र'

श्री वर्मा जी का जन्म हरियाणा प्रदेश के भिवानी नामक नगर मे 14 जनवरी सन् 1902 को हुआ था। आप हिन्दी, उर्दू, गुजराती और अँग्रेजी का साधारण ज्ञान प्राप्त करके लेखन की ओर अग्रसर हुए और अनेक वर्ष तक 'मेढ प्रभा-

कर', 'स्वर्णकार दर्पण', 'स्वर्णकार सर्वस्व', 'रसायन' तथा 'दस्तकार' आदि कई पत्रों का सम्पादन किया। आपने



मुख्यत. दस्तकारी तथा उद्योग-धन्धों से सम्बन्धित लगभग 27 पुस्तकें लिखी थी जिनमें 'सतयुग मीमांसा', 'स्वर्णकार विद्या', 'अनुभूत मुलम्मसाजी' (दो भागों मे), 'प्रभाकर पुष्पांजलि', 'मीनाकारी शिक्षा' (दो भागो मे), 'यूरोप के हुनर और व्यापारिक रहस्य', 'सौन्दर्य और शृंगार-सामग्रियाँ', 'रबड स्टाम्प का व्यापार', 'शरबत का व्यवसाय', 'प्लास्टिक का व्यापार', 'रोशनाई का व्यापार', 'मोमबत्ती का व्यापार', 'अँग्रेजी मिठाई का व्यापार', 'सुगन्धित तेल विज्ञान', 'सुगन्धित साबुन विज्ञान', 'दन्त मजन विज्ञान' तथा 'नेत्राजन विज्ञान' आदि प्रमुख है। आपकी कई पुस्तके अप्रकाशित भी रह गई है, जिनमे 'सती सावित्री' उल्लेखनीय है।

गद्य-लेखन के अतिरिक्त आपने सफल कवि के रूप मे भी अच्छी ख्याति प्राप्त की थी, लेकिन कविता की पुस्तक एक भी नही छप सकी। हाँ, पत्र-पत्रिकाओ मे आपकी कविताएँ ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। समाज-सेवा के क्षेत्र मे भी आपने अपना अच्छा स्थान बनाया हुआ था। आप कांग्रेस तथा आर्यसमाज के सक्रिय सदस्य रहने के साथ-साथ सेवा-समिति और अनेक स्वजातीय सस्थाओ के भी सदस्य रहे थे। स्वर्णकार जाति के उत्थान के लिए भी आपने अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किया था। जब सरकार ने सोने पर प्रतिबन्ध लगाया था तब 'राजपूत दर्शन' नामक पत्र के 6, फरवरी 1980 के अक मे आपका 'स्वर्ण नियन्त्रण मुर्दाबाद' नामक जो एक ऐतिहासिक लेख छपा था कदाचित् वही आपका अन्तिम लेख था।

आपका निधन 14 जनवरी सन् 1980 को हुआ था। यह एक संयोग ही कहा जायगा कि आपका जन्म और निधन एक ही तारीख को हुआ था।

श्री चन्द्रकुँवर बर्त्वाल

श्री बर्त्वाल का जन्म उत्तर प्रदेश के गढ़वाल जनपद के तल्ला नागपुर पट्टी के मालकोटी नामक ग्राम में 20 अगस्त सन् 1919 को हुआ था और बाद मे आप पम्पालिया ग्राम में आ गए थे। आपके पिता श्री भूपालसिह बर्त्वाल पहले जिला बोर्ड के प्राइमरी स्कूल मे अध्यापक थे और बाद मे उन्नति करते-करते मिडिल स्कूलों के प्रधानाध्यापक हो गए थे। पिता के अध्यापक होने के कारण आपकी प्रारम्भिक शिक्षा उन्ही स्थानों पर हुई थी जहाँ-जहाँ पर उनका स्थानान्तरण होता रहा था। नागनाथ के स्कूल से हिन्दी मिडिल की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप पौडी के मिशन स्कूल मे प्रविष्ट हो गए और वहाँ से सन् 1935 मे हाई स्कूल की परीक्षा मे सफल हुए थे। तदुपरात आपने देहरादून के डी० ए० वी० कालेज में इण्टर की कक्षा मे प्रवेश ले लिया



और सन् 1937 मे वहाँ से इण्टर की परीक्षा मे उत्तीर्ण होने के पश्चात् सन् 1939 मे प्रयाग विश्वविद्यालय से बी० ए० की उपाधि प्राप्त की। इस बीच अपनी आकस्मिक अस्वस्थता के कारण आपने घर पर ही विश्राम किया और जब स्वास्थ्य ठीक हो गया तो सन् 1941 मे आप लखनऊ विश्वविद्यालय मे एम० ए० की कक्षा मे प्रविष्ट हो गए। आपके अध्ययन का विषय 'भारत का प्राचीन इतिहास' था। दुर्भाग्यवश

आपके स्वास्थ्य ने यहाँ भी साथ नहीं दिया और आपको विवश होकर अपना अध्ययन बीच में ही रोक देना पड़ा और घर वापिस चले आए।

जब आप घर पर स्वास्थ्य सुधार रहे थे उन्हीं दिनों आपकी जन्मभूमि के समीप ही 'अगस्त्य मुनि' नामक स्थान में एक हाई स्कूल की स्थापना करने की योजना बनाई जा रही थी। आपने भी अपनी जन-सेवी भावना के कारण उसकी प्रबन्ध समिति में सम्मिलित होकर उसके लिए धन-संग्रह करने के कार्य में उल्लेखनीय सहायता की। जब स्कूल स्थापित हो गया तो आपने लगभग एक वर्ष तक उसमें अध्यापन का कार्य भी किया। यहाँ भी वेतन आदि के प्रश्न को लेकर आपका मतभेद हो गया। ऐसी परिस्थिति में आपको अपना जीवन भयंकर अर्थ-संकट में व्यतीत करना पड़ा। पुरानी बीमारी फिर जोर मार गई और फिर इसीमें आपने संघर्ष करते हुए अपनी जीवन-लीला समाप्त कर दी। अपनी छोटी-सी आयु में श्री बर्त्वाल ने अपने कवि-जीवन की जो झाँकी साहित्य-प्रेमियों के समक्ष प्रस्तुत की उसमें आपके उज्ज्वल भविष्य का आभास मिलता है। लेकिन विधाता को यह स्वीकार न था।

श्री बर्त्वाल न केवल एक सहानुभूतिप्रवण कवि थे, आपने अपनी प्रतिभा का अपूर्व परिचय निबन्ध, कहानी, एकांकी, गद्यकाव्य, यात्रा-विवरण तथा समीक्षा आदि विभिन्न अंगों की रचना करके दिया था। प्रारम्भ में आपकी रचनाएँ सन् 1939 में 'कर्मभूमि' (कोटद्वार) में प्रकाशित होनी प्रारम्भ हुई थी। आपकी काव्य-प्रतिभा का इससे अधिक ज्वलन्त उदाहरण क्या हो सकता है कि आपकी 7 अगस्त सन् 1939 के 'कर्मभूमि' के अंक में प्रकाशित 'चूहा-बिल्ली' शीर्षक रचना को 'विशाल भारत' ने उद्धृत किया था। आपके रचना-वैशिष्ट्य का यह भी एक उदात्त रूप है कि प्रख्यात समीक्षक श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश' ने अपनी 'हिन्दी के वर्तमान कवि और उनकी कविता' नामक पुस्तक में भी आपकी इस कविता को संकलित करके हिन्दी-जगत् में उसकी प्रतिष्ठा की थी। आपके निधन के उपरान्त आपके अनन्य मित्र और सहपाठी श्री शम्भुप्रसाद बहुगुणा ने जहाँ 'नागिनी' नाम से आपके स्फुट निबन्धों का एक संकलन प्रकाशित किया वहाँ 'हिमवन्त का एक कवि' शीर्षक से आपकी काव्य-प्रतिभा पर प्रकाश डालने वाली एक पुस्तिका भी सन् 1945 में प्रकाशित की थी। श्री बर्त्वाल की कविता की उत्कृष्टता का एक यह भी सबसे बड़ा प्रमाण है कि आपकी 'काफल पाक्कू' नामक रचना को श्री नाथूराम 'प्रेमी' को समर्पित 'प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ' में समाविष्ट किया गया था। आपकी गीति-रचनाओं का एक संकलन श्री शम्भुनाथ बहुगुणा ने 'नन्दिनी' नाम से सम्पादित किया था। इसके अतिरिक्त, श्री बहुगुणा के प्रयास से आपकी 'पयस्विनी', 'प्रणयिनी', 'गीत माधवी', 'कंकड़-पत्थर', 'जीतू' और 'विराट्-हृदय' नामक रचनाएँ भी प्रकाशित हुई हैं।

श्री बर्त्वाल की रचनाओं में हिमालय का प्राकृतिक सौन्दर्य इतने विविध रूपों में प्रस्तुत किया गया है कि उसे देखकर आपके लिए प्रयुक्त किया गया 'हिमवन्त का कवि' शब्द पूर्णत सार्थक प्रतीत होता है। हिमालय के देवदारु तथा चीड़ के वनों की सौंधी सुगन्ध के साथ-साथ उसकी इन्द्रधनुषी सुन्दरता भी आपकी रचनाओं में पूर्णत मुखरित हुई है। आपकी 'काफल पाक्कू' नामक अकेली रचना ही ऐसी है जिसे पढ़कर अंग्रेजी कवि शैली और टेनीसन की याद आ जाती है। आपके निधन पर हिन्दी के प्रख्यात विद्वान् डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ने यह ठीक ही लिखा था—"जो कुछ भी अट्ठाईस वर्ष की आयु में आपसे हम मिल सका, वह ही अद्भुत है। आपकी लिखी हुई कविताओं की संख्या लगभग सात सौ है और शुद्ध मुक्तक के आनन्द की दृष्टि से वे इतनी सुन्दर हैं कि वे निखिल हिन्दी-संसार की सम्पत्ति कही जा सकती है।

आपका निधन 14 सितम्बर सन् 1947 को हुआ था।

श्री चन्द्रदत्त जोशी

श्री जोशी का जन्म सन् 1895 में उत्तर प्रदेश के पीलीभीत नामक नगर में हुआ था। आपके पूर्वज कुमायूँ के रहने वाले थे। संस्कृत तथा आयुर्वेद का विधिवत् अध्ययन करके आपने पीलीभीत में ही आयुर्वेद की प्रैक्टिस प्रारम्भ कर दी थी। संस्कृत के अतिरिक्त हिन्दी तथा अँग्रेजी का भी आपको अच्छा ज्ञान था। आप स्थानीय संस्था 'कवि मण्डल' के बड़े

उत्साही तथा सक्रिय कार्यकर्ता थे।

आप प्रख्यात साहित्यकार और कथाकार श्री चण्डी-प्रसाद बी० ए० 'हृदयेश' से बड़े प्रभावित थे और उनसे प्रेरणा प्राप्त करके आपने कविताएँ लिखना भी प्रारभ कर दिया था। 'हृदयेश' जी आपके समकालीन तथा अन्य मित्र थे। खेद है कि आपकी रचनाएँ प्रकाशित होकर हिन्दी-प्रेमी पाठकों के समक्ष न आ सकी थीं।

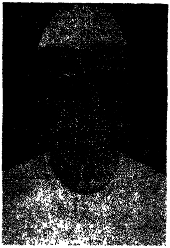


आपका निधन केवल 27 वर्ष की आयु में सन् 1922 में हुआ था।

श्री चन्द्रधर जौहरी

श्री जौहरी का जन्म उत्तर प्रदेश के एटा नामक नगर में 30 अक्तूबर सन् 1895 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा एटा में हुई थी। जब सन् 1904 में आपके पिता श्री मेवाराम जी जब सरकारी मिडिल स्कूल की हेडमास्टरी से निवृत्त होकर आगरा में जाकर रहने लगे तब आप भी वहाँ चले गए थे और अपने अन्य भाइयों के साथ वहाँ के 'मिशन स्कूल' में पढ़ने लगे थे। अपने विद्यालय-जीवन से ही आपमें देश-भक्ति की भावनाएँ जोर मारने लगी थीं। जब आपके विद्यालय में प्रातःकाल अंग्रेजी में प्रार्थना कराई जाती थी तब उस प्रार्थना को जौहरी जी तथा आपके साथी जिस प्रकार गाया करते थे उसकी एक पंक्ति इस प्रकार है "ईसु मसी मेरी जोरू का भैया।" जब देश में बंग भंग का आन्दोलन छिड़ा था तब आपने भी अपने अन्य साथियों के साथ मिलकर उस आन्दोलन का समर्थन किया था। जब सन् 1908 में आपके पिताजी आगरा से पुनः एटा चले गए तब आप 'सेंट जान्स स्कूल' के छात्र थे। आपके उन दिनों के सहपाठी छात्रों में श्रीकृष्णदत्त पालीवाल और गेंदालाल दीक्षित भी थे। इन लोगों ने मिलकर एक सुदृढ़ एवं क्रान्तिकारी संगठन बनाया था। इस संगठन ने 'शिवाजी' के नाम पर 'शिवाजी समिति' नामक जिस संस्था की स्थापना की थी उसकी शाखाएँ मथुरा, एटा, मैनपुरी, शाहजहाँपुर, ग्वालियर, धौलपुर तथा भरतपुर आदि स्थानों में भी स्थापित हो चुकी थीं। इस संस्था के माध्यम से इन सभी युवकों ने मिलकर स्वाधीनता-संग्राम में सहयोग करने का एक सर्वथा नया मार्ग खोज निकाला था। वे सब सशस्त्र क्रान्ति की चेष्टा में संलग्न थे। फलस्वरूप श्री जौहरी अपनी संस्था के लिए शस्त्र खरीदने के विचार से पाण्डिचेरी और श्रीलंका आदि स्थानों में भी गए थे।

अपने इस आन्दोलन के संगठन को मजबूत करने तथा उसके लिए शस्त्र खरीदने के निमित्त आपने उन दिनों श्री रासबिहारी बोस तथा श्री पिंगले-जैसे क्रान्तिकारियों से भी सम्पर्क किया था और देश के अनेक स्थानों में भ्रमण करके अनेक धनी-मानियों और राजाओं-महाराजाओं से धन एकत्रित किया था। धन इकट्ठा करने की भावना से ही इन सब युवकों ने मैनपुरी जिले के सिरसागंज कस्बे के सेठ ज्ञानचन्द्र के यहाँ डकैती भी डाली थी, लेकिन यह डकैती सफल न हो सकी थी। जब नवयुवकों का यह दल वहाँ पहुँचा तब दुकान बन्द हो चुकी थी। उस समय दोनों ओर से गोलियाँ भी चली थीं और उसमें दुकान के दो पहरेदार भी मारे गए थे। डकैती डालने वाले इस दल में 30 आदमी पंचमसिंह के गिरोह के थे और जो 10 व्यक्ति 'शिवाजी समिति' के थे उनमें श्री जौहरी के अतिरिक्त सर्वश्री गेंदालाल दीक्षित, स्वामी लक्ष्मणानन्द और श्रीकृष्णदत्त पाली-



वाल के नाम प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। 'मैनपुरी षड्यन्त्र केस' मे श्री जौहरी जी को 5 वर्ष की सजा हुई थी, किन्तु आप 1 वर्ष के बाद ही रिहा कर दिए गए थे। इसके उपरान्त जिन युवको ने 'काकोरी के डकैती काण्ड' मे भी भाग लिया था श्री जौहरी जी उनमें से थे। इसमे भी 8-10 मास तक हवालात मे रखने के उपरान्त कोई सुपुष्ट प्रमाण न मिलने के कारण आपको छोड दिया गया। जब सन् 1921 का असहयोग आन्दोलन छिड़ा था तब उसमे भी आपको जेल भेज दिया गया और सरकार ने 'मैनपुरी षड्यन्त्र केस' की शेष 4 वर्ष की सजा भी इसी क्रम मे पूरी करवाली। आपके छोटे भाई श्री चन्द्रभाल जौहरी भी आपकी प्रवृत्तियो मे सहयोगी रहे थे। जब आप 'तिलक स्वराज्य फण्ड' मे काम करते थे तो आपने यह प्रण किया था कि "मै जब तक मैनपुरी से 3 लाख रुपया एकत्रित न कर लूँगा तब तक खाना नही खाऊँगा।" जब उनकी माता जी को अपने पुत्र की इस भीषण प्रतिज्ञा का पता चला तो उन्होने अपना मकान और आभूषण आदि बेचकर 25 हजार रुपये दान मे दिए थे।

इस बीच जून सन् 1926 मे आपका विवाह हो गया। आपने पारिवारिक भरण-पोषण के लिए अपनी सास श्रीमती पार्वतीदेवी के परामर्श पर लाहौर की 'लक्ष्मी इश्योरेंस कम्पनी' की एजेन्सी ले ली। उन दिनो श्री के० सन्थानम् उस कम्पनी के जनरल मैनेजर थे। जब श्री सन्थानम् जौहरी जी की कर्मठता, ईमानदारी तथा लगन से प्रभावित हुए तो उन्होने आपको अपनी कम्पनी की उत्तर प्रदेश की शाखा का प्रबन्धक बनाकर लखनऊ भेज दिया। इस बीच आप आन्दोलनो मे भी भाग लेते रहे और अपना कार्य भी करते रहे। आपने इस कम्पनी से सन् 1956 मे उस समय अवकाश ग्रहण किया था जबकि उसका राष्ट्रीयकरण हो गया था। जब आप 24 वर्ष लखनऊ मे रहने के उपरान्त सन् 1965 मे आगरा लौटे थे तब वहाँ के नागरिको ने अपका अत्यन्त भावभीना अभिनन्दन किया था। यहाँ यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय तथ्य है कि आपकी सहधर्मिणी श्रीमती विद्याधरी जौहरी भी अच्छी सामाजिक कार्यकर्त्री और राष्ट्र-सेविका थी। आगरा पहुँचने पर आपने पण्डित श्रीकृष्णदत्त पालीवाल के द्वारा सम्पादित होने वाले 'सैनिक' नामक पत्र की व्यवस्था का भार सँभाला और उसके लिए दिन-रात परिश्रम करके नई रौटरी मशीन खरीदकर लगवाई तथा खन्दारी रोड पर उसके लिए अपना भवन भी बनवाया था। आप कई वर्ष तक आगरा नगर कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष भी रहे थे। आपके अध्यक्ष-काल मे जब आगरा 'नगर महा-पालिका' का चुनाव हुआ तब सबसे अधिक कांग्रेसी प्रत्याशी विजयी हुए थे। सन् 1969 में जब कांग्रेस का विभाजन हुआ तब आपने अध्यक्ष पद के साथ-साथ उसकी प्राथमिक सदस्यता से भी त्यागपत्र दे दिया था। आपका कहना था कि 'मैं जिस कांग्रेस का सिपाही था वह कांग्रेस टूट चुकी है। अब मैं सदस्य किसका रहूँ? मैं तो प्राण की बाजी लगाकर देश-सेवा करता आया हूँ। यह पद-लोलुपता तथा खींच-तान मैंने न सीखी थी, न सीखना चाहता हूँ।"

30 अक्तूबर सन् 1970 को आगरा के नागरिकों ने आपकी 75 वी वर्षगाँठ अत्यन्त समारोह पूर्वक मनाई थी। उस दिन जहाँ वेद मन्त्रो के पाठ से यज्ञ सम्पन्न हुआ था वहाँ मित्रो ने खुशी-खुशी जल-पान करके खूब गले मिलकर उनके दीर्घायुष्य की कामना की थी। किन्तु विधाता को कुछ और ही मजूर था। आप जब 31 अक्तूवर (भैया दूज) की रात्रि को दिन-भर हँसने-खेलने के उपरान्त पलँग पर विश्राम के लिए लेटे तब अचानक आपको दिल का दौरा पडा तथा देखते-ही-देखते 'अब हम चलते है' कहते हुए इस ससार से विदा हो गए। आपकी स्मृति मे 'अमर कीर्ति' नाम से एक 'स्मृति-ग्रन्थ' भी प्रकाशित किया गया था, जिसका सम्पादन डॉ० हरिहरनाथ टण्डन ने किया था।

श्री चन्द्रनाथ शुक्ल 'मानु चाचा'

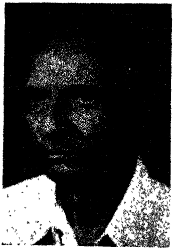
श्री शुक्ल का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के बिहार नामक स्थान मे जनवरी सन् 1901 मे हुआ था। आपके पितामह श्री साहबदीन शुक्ल और पिता श्री शिवदुलारे शुक्ल भी अच्छे कवि थे। आप बैसवारी तथा हिन्दी के बहुत अच्छे कवि और फागों के उत्कृष्टतम गायक के रूप में उस क्षेत्र मे बहुत विख्यात थे। आपकी रचनाएँ आज भी सारे बैसवारा अंचल की जनता के कण्ठ से यदा-कदा उच्चरित होती रहती है।

आपकी प्रथम पुण्य तिथि पर आपके जन्म-स्थान मे जहाँ विशेष 'फाग सन्ध्या' का आयोजन किया गया था वहाँ 'श्रद्धा-जलि'स्वरूप एक स्मारिका भी प्रकाशित की गई थी। इस स्मारिका का सम्पादन आपके भतीजे डॉ० गणेशनारायण शुक्ल ने किया था।

आपका निधन 22 जुलाई सन् 1978 को हुआ था।

श्री चन्द्रभान गर्ग

श्री गर्ग का जन्म उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद नगर मे सन् 1907 हुआ था। यद्यपि आपका परिवार व्यवसाय मे लगा हुआ था, फिर भी आपका ध्यान समाज-सेवा और पत्रकारिता की ओर ही अधिक था। महात्मा गान्धी द्वारा सचालित असहयोग-आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण आपने कारावास की यातनाएँ भी भोगी थी। आपने कई वर्ष तक गाजियाबाद मे 'इन्सान' नामक एक



साप्ताहिक पत्र का सम्पादन भी किया था। आपने लगभग 40 वर्ष से दैनिक 'हिन्दुस्तान' के सवाददाता के रूप मे नगर की प्रशसनीय सेवा की थी। पारिवारिक व्यवसाय 'सर्राफे' का होने के कारण आप 'गाजियाबाद सर्राफा एसोसिएशन' के अध्यक्ष भी रहे थे। नगर की अनेक सामाजिक, साहित्यिक तथा सास्कृतिक सस्थाओ से जुडे रहने के कारण आप सभी क्षेत्रो मे बडे लोकप्रिय थे। आपकी लोकप्रियता का सबसे उत्कृष्ट प्रमाण यही है कि आज भी लोग उन्हे बडे आदर से याद करते है।

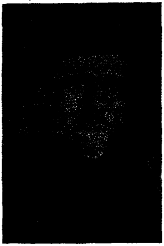
आपका निधन 8 मार्च सन् 1981 को दिल का दौरा पड़ने के कारण हुआ था।

श्री चन्द्रभाल

आपका जन्म 20 सितम्बर सन् 1894 मे भारत के सुप्रसिद्ध तीर्थ मथुरा मे हुआ था। आपके पिता काशी-निवासी डॉक्टर भगवानदास विश्व-ख्याति के दार्शनिक और ज्येष्ठ भ्राता प्रख्यात नेता श्री श्रीप्रकाश थे। जिन दिनो आपका जन्म हुआ था तब डॉ० भगवानदास मथुरा मे डिप्टी-कलक्टर थे और वे अपने पिता जी के निधन के उपरान्त सरकारी नौकरी से त्यागपत्र देकर स्थायी रूप से काशी मे जाकर रहने लगे थे। श्री चन्द्रभाल जी की प्रारम्भिक शिक्षा पहले अपने चचेरे भाइयो के साथ श्री चिन्तामणि मुखर्जी की पाठशाला मे हुई थी और बाद मे जब सेण्ट्रल हिन्दू स्कूल मे उपयुक्त कक्षाएँ खुल गई तब आप और आपके सारे भाई उस स्कूल मे चले गए तथा उसी स्कूल और उसके कालेज विभाग मे शिक्षा प्राप्त की। बी० एस-सी० की उपाधि आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्राप्त की थी। शैशवावस्था से स्वास्थ्य अच्छा न रहने के कारण आप प्राय अस्वस्थ रहा करते थे और आपको आजीवन अनेक विषम बीमारियो का सामना करना पडा था। श्वास का रोग तो आपको बराबर लगा ही रहता था और निमोनिया तथा कवल (पीलिया) आदि कई रोगो का आक्रमण भी आपके शरीर पर कभी-कभी होता ही रहता था। आपका विवाह हलदौर (बिजनौर) के प्रख्यात आर्य नेता लाला ठाकुरदास की पुत्री श्रीमती कृपादेवी से हुआ था।

अपने निरन्तर कमजोर रहने वाले शरीर को भी आप आत्मबल के सहारे चलाते रहते थे। सयम और साहस भी आपके जीवन के अभिन्न अंग थे। इन्हीके कारण आप 72 वर्ष तक जीवित रह सके थे। चिकित्सकों के आदेश के कारण आप नमक, चीनी और कभी-कभी अन्न तक खाना भी छोड दिया करते थे। प्राय फलो के रस पर ही आप अपना जीवन व्यतीत करते थे। सन् 1923 मे आप बनारस नगरपालिका के सदस्य निर्वाचित हुए थे और बाद में सन् 1937 मे आप उत्तर प्रदेश (जिसका नाम उस समय सयुक्त प्रान्त था) की लेजिस्लेटिव कौसिल के सदस्य चुने गए थे। स्वतत्रता-प्राप्ति के उपरान्त जब संयुक्त प्रान्त का नाम उत्तर प्रदेश हुआ और वहाँ का विधान मण्डल दो सदनों (विधान सभा तथा विधान परिषद्) मे विभक्त हुआ तब

आप उसके उच्च सदन (विधान परिषद्) के सदस्य चुने गए और 9 वर्ष तक उसके अध्यक्ष रहे। अपने निरन्तर रुग्ण रहने वाले स्वास्थ्य तथा अन्य अनेक सामाजिक दायित्वों से घिरे रहते हुए भी आप स्वाध्याय तथा चिन्तन-मनन के लिए समय निकाल लेते थे यह भी बहुत बड़ी बात है। आपने 'श्रीमद्-भगवद्गीता' का विशेष अध्ययन किया था और उसके 18 अध्यायों के 700 श्लोकों में से केवल 108 श्लोकों का एक संकलन किया था जिसे आपने 'ज्ञान' 'कर्म' और 'भक्ति' नामक तीन विभागों में विभक्त किया था। अत्यन्त सरल और सीधी-सादी भाषा में अनुवाद करने में भी आपने बहुत परिश्रम किया था। प्रत्येक संकलित श्लोक के नीचे पाठकों की सुविधा के लिए आपने मूल ग्रन्थ के अध्यायों और श्लोकों की संख्या भी दे दी थी। यह दुर्भाग्य की बात है कि आपकी यह कृति आपके जीवन-काल में प्रकाशित नहीं हो सकी थी। बाद में इसका प्रकाशन आपकी सहधर्मिणी श्रीमती कृपादेवी ने अपनी भूमिका के साथ किया था।

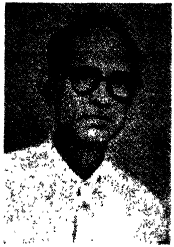


आपका निधन 20 अप्रैल सन् 1966 को हुआ था।

श्री चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमईकाका'

श्री त्रिवेदी का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के रावतपुर नामक ग्राम में 2 फरवरी सन् 1915 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा सिकन्दरपुर करन की प्राथमिक पाठशाला में हुई थी। प्रथम विश्व-युद्ध में जब आपके पिता श्री वृन्दावन त्रिवेदी शहीद हो गए थे तब आपकी आयु केवल ढाई वर्ष थी। आपने पडरी कलाँ में मिडिल तक की शिक्षा प्राप्त की और अटलबिहारी हाई स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आपने केवल 12 वर्ष की आयु से कविता करनी प्रारम्भ कर दी थी और अपनी छात्रावस्था में ही 'पण्डित का स्कूल' नामक प्रहसन लिखकर उसे गाँव वालों के समक्ष प्रस्तुत करके सबको चमत्कृत कर दिया था। अभिनय के प्रति रुचि भी आपकी प्रारम्भ से ही थी। कविता लिखने, हारमोनियम, सितार और बैंजो बजाने तथा अभिनय करने के लिखने के अतिरिक्त आपका शास्त्रीय संगीत के अनेक रागों पर भी पूर्ण अधिकार था।

हिन्दी और अवधी के उत्कृष्ट कवि के रूप में आपकी ख्याति देश-व्यापी थी। एक उच्च-कोटि के संगीतज्ञ, नाटककार और अभिनेता के रूप में भी आप जन-जन के हृदय में इतने रम गए थे कि आपका नाम ही 'रमई' पड़ गया और समय ने आपको 'काका' बना दिया। इस प्रकार 'रमई काका' के रूप में आप हिन्दी-प्रेमियों में लोकप्रिय हो गए। आपकी 'बौछार', 'भिनसार', 'फुहार' 'गुलछर्रा', 'हास्य के छींटे', 'रतौंधी', 'नेताजी', 'हरपाती', तरवारि', 'बहिरे बाबा', 'मिस्टर जुगनू', 'माटी के बोल', 'धरती हमारी' और 'कलुआ बैल' आदि कृतियाँ हिन्दी-साहित्य की अमूल्य धरोहर हैं।



आप लगभग 35 वर्ष तक आकाशवाणी के लखनऊ केन्द्र से सम्बद्ध रहे थे और उसके माध्यम से 'चतुरी चाचा' तथा 'बहिरे बाबा' के रूप में भी लोकप्रिय हो गए थे। आपके आकाशवाणी से प्रसारित 'बुढ़ू का दुशाला', 'बुढ़ू का इण्टरव्यू', 'हरफनमौला' तथा 'तीन आलसी' नामक नाटक और प्रहसन साहित्य-प्रेमी जनता में बहुत प्रसिद्ध हुए थे। आकाशवाणी के विभिन्न कार्यक्रमों और कवि-सम्मेलनों के माध्यम से आपने जहाँ जनता का सहज

मनोरंजन किया था वहाँ अपनी व्यंग्योक्तियों से सामाजिक कुरीतियों पर भी तीखे प्रहार किए थे। आपने उत्तर प्रदेश सरकार के पाक्षिक पत्र 'उत्तर प्रदेश' तथा लखनऊ से प्रकाशित होने वाले 'स्वतन्त्र भारत सुमन' साप्ताहिक मे 'गाँव की गली' तथा 'गाँव की बतकही' नामक स्तम्भ-लेखक के रूप में भी पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त की थी।

आपकी रचना-चातुरी अवधी तथा खडी बोली दोनों में ही समान प्रतिभा रखती थी। अपनी हास्य तथा व्यंग्यमयी रचनाओ के माध्यम से आप जिस वातावरण की सृष्टि करते थे वह सर्वथा अनुपम और अप्रतिम होता था। आपका 'चन्द्रमा' के सम्बन्ध मे लिखा गया अवधी भाषा का एक कवित्त पठनीय है

लरिका बडेन के हौ बापु रतनाकर है,
ताहि पै कलाधर रूप के अगार हो।
तनकेई घामे मां हों तुम कुम्हिलाय जात,
छाँही छाँही चलन हौ बडे सुकुमार हो।।
बने दिव्य भूपन हो तुम 'चन्द्र भूपण' के,
सिर चढे देवन के बहुतै पियार हो।
मामा लरिकन के हो, कहै कोऊ कैसे कछु,
लछिमी के भाई तुम बडेन के सार हो।।

आपके व्यंग्य इतने मार्मिक तथा तीखे होते थे कि पाठक अथवा श्रोता उनको पढ़-सुनकर जहाँ तिलमिला जाता था वहाँ वह सहज गुदगुदी भी अनुभव करता था। आपकी 'दो छींकें' नामक खडी बोली की रचना मे आपका व्यंग्य किस प्रकार प्रकट हुआ है वह देखिए

छींक मुझको भी आती है
छींक उनको भी आती है,
हमारी-उनकी छींक मे अन्तर है।
हमारी छींक साधारण है
उनकी छींक मे जादू-मन्तर है।
हमारी छींक छोटी नाक की है
उनकी छींक बड़ी धाक की है।
हमारी छींक हवा मे खप जाती है
उनकी छीक अखबारों में छप जाती है।

आपके द्वारा आल्हा की शैली मे लिखित 'नेताजी' नामक काव्य भी अत्यन्त प्रसिद्ध है। आपकी 'धोखा हुई ग्वा' नामक अवधी की रचना किसी समय जनता मे कवि-सम्मेलनो के माध्यम से बहुत लोकप्रिय हुई थी। आप जहाँ हिन्दी-जगत् मे अपनी खुली, स्पष्ट और दो-टूक व्यंग्य-शैली के लिए प्रसिद्ध थे वहाँ उत्तर प्रदेश सरकार के 'हिन्दी संस्थान' ने आपको 5 हजार रुपये का पुरस्कार भी प्रदान किया था।

आपका निधन 18 अप्रैल सन् 1982 को लखनऊ के बलरामपुर अस्पताल मे 67 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री चन्द्रमोहन रतूड़ी

श्री रतूडी का जन्म उत्तर प्रदेश के गढवाल अंचल के टिहरी नगर के समीपवर्ती गोदी नामक ग्राम मे सन् 1880 मे हुआ था। आपके पिता श्री लक्ष्मीदत्त रतूडी अपने गाँव मे ही रहा करते थे, किन्तु आपके चचेरे भाई श्री ईश्वरीदत्त रतूडी नेपाल की राजधानी काठमाण्डू मे अध्यापक थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा वहीं पर उनकी देख-रेख मे हुई थी और वहाँ रहते हुए ही आपने सन् 1896 मे कलकत्ता विश्व-विद्यालय से मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की थी। आगे के अध्ययन के लिए आपने बरेली कालेज मे प्रवेश ले लिया था और बी० ए० की परीक्षा देने की पूरी तैयारी भी कर ली थी, किन्तु किसी कारणवश आगे आपका अध्ययन रुक गया था।

आप पढाई बीच मे ही छोडकर प्रारम्भ मे लगभग 4 वर्ष तक घर पर बिलकुल खाली रहे, किन्तु बाद मे सन् 1904 मे टिहरी-दरबार की ओर से 'फारेस्ट कालेज' मे विशेष अध्ययन के लिए भेजे गए और सन् 1906 मे आपने वहाँ से 'रेंजर' की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। इसके उपरान्त आप टिहरी राज्य मे लगभग 8 वर्ष तक 'असिस्टेंट कन्सर-वेटर' रहे और सन् 1914 मे वहाँ से मुक्ति प्राप्त कर ली। फिर आपने एल-एल० बी० की पढाई प्रारम्भ की, किन्तु उसे भी आप पूरा न कर सके।

आपकी रुचि प्रारम्भ मे जन-सेवा के कार्यों की ओर थी। फलस्वरूप आपने जन-जागरण की दिशा मे कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रवृत्ति के कारण आप टिहरी दरबार की आँखो मे खटकने लगे। टिहरी मे अपने को

अरक्षित समझकर आप काठमाण्डू चले गए और जब सन् 1919 मे टिहरी के नए राजा नरेन्द्रशाह को शासनाधिकार सौंपा गया तब आप पुन. यहाँ वापिस आ गए। सन् 1904 मे आपका जो सम्पर्क श्री तारादत्त गैरोला और उनके द्वारा संस्थापित 'गढ़वाल डिबेटिग क्लब' की प्रवृत्तियों से हुआ उससे आप बहुत उत्साहित हुए और उनकी इस सस्था से जीवन-पर्यन्त जुडे रहे।

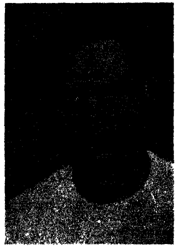
जब 'गढवाली' पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तो आप उसमें बराबर लिखने लगे। हिन्दी, अँग्रेजी और सस्कृत के पारगत विद्वान् होने पर भी आप गढवाली भाषा मे ही लिखा करते थे। आपकी अधिकाश कविताएँ श्री तारादत्त गैरोला द्वारा सम्पादित 'गढवाली कवितावली' में संकलित हैं। आपकी कविताओ मे पर्वतीय सुषमा और वहाँ की प्रकृति का अच्छा चित्रण देखने को मिलता है। आप सन् 1905 से सन् 1912 तक 'गढवाली' के सम्पादक-मण्डल के सक्रिय सदस्य भी रहे थे।

आपका निधन केवल 40 वर्ष की आयु मे 14 मई सन् 1920 को हुआ था।

श्री चन्द्रमौलि उपाध्याय

श्री उपाध्याय का जन्म उत्तरप्रदेश के मिर्जापुर जनपद के कछवा क्षेत्र के गगा-तट पर बसे बरैनी नामक ग्राम मे 15 सितम्बर सन् 1933 को हुआ था। आपके पिता श्री शिवनाथ उपाध्याय व्याकरण, साहित्य और न्याय आदि विषयों के आचार्य तथा वाराणसी के 'गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज' के अध्यापक थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता के निरीक्षण मे ही सम्पन्न हुई थी और आपने उनसे ही सस्कृत साहित्य का विधिवत् अध्ययन प्रारम्भ किया था। जब आप सन् 1942-43 मे केवल 9-10 वर्ष के ही थे और कछवा के 'जूनियर मिडिल स्कूल' के छात्र थे तब आपने राष्ट्रीय आन्दोलन मे भी भाग लिया था। सन् 1947 मे मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप अपने पिता के पास काशी चले आए थे। पहले आपने डी० ए० वी० हाई स्कूल मे प्रवेश लेकर वहाँ से मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की और बाद मे 'गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज' से इण्टर की परीक्षा देकर आप आगे की पढाई के लिए 'हिन्दू विश्वविद्यालय' मे प्रविष्ट हो गए और सन् 1954 मे वहाँ से बी० ए० की उपाधि प्राप्त की।

जब आपके पिता शासकीय सेवा से निवृत्ति पा गए तब परिवार के भरण-पोषण के कार्य मे सहयोग देने की दृष्टि से आप आजीविका की खोज मे कलकत्ता चले गए और 'कलकत्ता विश्वविद्यालय' की एम० ए० (अग्रेजी) कक्षा मे प्रवेश लेकर ट्यूशन आदि करके अपना जीवन-यापन करने लगे। साथ-साथ वहाँ के 'माहेश्वरी विद्यालय' और 'बालकृष्ण विट्ठलनाथ विद्यालय' मे अध्यापन का कार्य



भी आपको मिल गया। इसी बीच आपका झुकाव कविता-लेखन की ओर हो गया और सन् 1962 मे आपकी प्रथम कविता-सकलन 'किरण गान्धारी' जुही कुज नामक साहित्य-सस्था की ओर से प्रकाशित हुआ। सन् 1963 मे कलकत्ता के एक व्यवसायी श्री रामचन्द्र अग्रवाल की दत्तक पुत्री मिण्टू (अनामिका) से आपका प्रेम-विवाह हो गया। इससे पूर्व आपका एक विवाह और हो चुका था, जिससे 3 पुत्रियाँ थी। पहली पत्नी गाँव मे ही रहती थी। इस द्वितीय विवाह के कारण जब कुछ विपरीत परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई तो आपने कलकत्ता छोड दिया। 2-3 वर्ष तक देश के अनेक भू-भागो मे आजीविका की खोज मे भटकते रहने के उपरान्त आप श्री राजकमल चौधरी के आमन्त्रण पर पटना चले आए और वहाँ के 'भारती भवन' नामक प्रकाशन-सस्थान मे नौकरी करने लगे। जब श्री राजकमल चौधरी का निधन हो गया तब आप इलाहाबाद की प्रकाशन-सस्था 'किताब महल' मे चले गए। वहाँ पर भी अब आपका मन नही जमा तो कुछ महीने बाद आप चक्रधरपुर (बिहार) मे अध्यापक होकर चले गए।

जब चक्रधरपुर मे भी अध्यापक के रूप में आपका कार्य सन्तोषजनक रूप मे नही चल सका तो आप फिर पटना चले आए और 'भारती भवन' में सेवा-रत हो गए। जब 'भारती भवन' के कार्य से आपको अपना जीवन-निर्वाह करना कठिन प्रतीत होने लगा तब आपने पटना में एक 'सामिष भोजनालय' खोला, किन्तु उसे भी थोड़े दिन बाद बन्द कर देना पड़ा। इसके उपरान्त आपने 'भट्टाचार्य एण्ड कम्पनी' की 'होम्योपैथिक फार्मेसी' मे नौकरी कर ली। 2-3 वर्ष तक वहाँ कार्य करने के उपरान्त आपने सन् 1977-78 में अपना स्वतन्त्र-व्यापार 'प्रतिभा स्टोर' के नाम से प्रारम्भ किया जिसके माध्यम से आप चाय की पत्तियो का व्यवसाय किया करते थे। सौभाग्य से आपका यह कार्य चल निकला और आप सुख से जीवन-यापन करने लगे।

कवि के रूप मे तो आपको विशेष ख्याति मिली ही थी, आपने सन् 1954 मे 'सन्यासी' नाम से एक लघु उपन्यास भी लिखा था। प्रयोगवादी कविता, नवगीत, नाटक, समीक्षा तथा निबन्ध-लेखन आदि के क्षेत्र मे भी आपने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की थी। आज हिन्दी मे 'नवगीत' के नाम से जिस काव्य-विधा को जाना जाता है उपाध्याय जी ने उसके अत्यन्त सशक्त प्रयोग अपनी रचनाओं मे किये थे। आपका 'किरण गान्धारी' नामक प्रथम काव्य-सकलन इसका ज्वलन्त प्रमाण है। आपका द्वितीय काव्य-सकलन 'युद्ध श्रेयस्' नाम मे सन् 1967 मे 'बिहार ग्रन्थ कुटीर पटना' की ओर से प्रकाशित हुआ था। इस पुस्तक के प्रकाशन पर पटना मे जो साहित्य-गोष्ठी आयोजित की गई थी उसमे अनेक नये-पुराने साहित्यधर्मियो ने आपके कवित्व की उन्मुक्त आशसा की थी। आपका एक और उपन्यास 'समय की सर्पमणियाँ' नाम से प्रकाशित हुआ था। आपने हिन्दी के अतिरिक्त बनारसी भोजपुरी बोली मे भी कुछ अच्छे गीत लिखे थे। आप जहाँ एक सफल कवि और संवेदनशील गीतकार के रूप मे प्रख्यात थे वहाँ आपका गद्य भी कम आकर्षक नही होता था।

यह दुर्भाग्य की बात है कि ऐसे सशक्त गीतकार और सफल साहित्यकार का निधन बड़ी रहस्यमयी परिस्थितियो मे 6 जून सन् 1982 को हो गया। आपकी द्वितीय पत्नी अनामिका और आपके शव पटना के निवास पर एक कमरे में फाँसी के फन्दे से झूलते मिले। इस सम्बन्ध मे 2 जून सन् 1982 को उपाध्याय जी द्वारा अपने छोटे भाइयों (श्री चन्द्रधर और श्री गगाधर उपाध्याय) के नाम लिखे गए और 'हिन्दी ब्लिट्ज' के 28 अगस्त सन् 1982 के अक मे प्रकाशित इस पत्र से कुछ प्रकाश पड़ सकता है—

"प्रिय चन्द्रधर, गगाधर,

आशीर्वाद।

दस दिन पूर्व चन्द्रकांत को पटना आने के लिए पत्र लिखा था, वह नही आया। इस समय मैं काफी खतरे मे घिर गया हूँ। मकान-मालिक के लडके तथा उसके कुछ गुंडे साथियो ने मिलकर मेरे खिलाफ षड्यत्र किया है। वे मुझे मारकर सारा सामान लूट लेना चाहते है। मुझसे आर्थिक इमदाद न पाने के कारण ये लोग सक्रिय हुए और इन्होने किसी तरह मेरी सारी कहानी (प्रेम-प्रसग—द्वितीय विवाह) का पता लगा लिया। और अब आर्थिक सहयोग न प्राप्त होने से ऐसा कर रहे है। मैं इतना घिर गया हूँ कि कही निकल भी नही सकता। मेरे बाजार के सारे रुपये डूब गये। उन्होंने लोगों को देने से मना कर दिया। उनके आदमी मेरे चारो तरफ घेरा डाले रहते है। अब मैं या तो मारा जाऊँगा या आत्महत्या करूँगा। यदि निकलने मे सफल हो सका, तो 3 जून को पजाब मेल से बनारस आ जाऊँगा। चन्द्रकात के क्वार्टर पर किसी को भेजकर पता कर लेना। भरसक मैं निकल नही पाऊँगा। तुम लोग मत आना अन्यथा तुम लोग भी मारे जाओगे या फँस जाओगे। किसी चीज का मोह करना अब बेकार है। तुम लोग आना मत। हमारा अतिम आशीर्वाद लो।

—चन्द्रमौलि उपाध्याय"

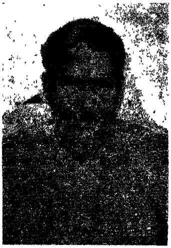
श्री चन्द्रशेखर उपाध्याय

श्री उपाध्याय का जन्म बिहार प्रदेश के शाहाबाद जनपद के पैगा नामक ग्राम मे 11 जनवरी सन् 1906 को हुआ था। आपके पिता श्री गोकुलानन्द उपाध्याय सुप्रसिद्ध कथावाचक थे। अपने पिता के संस्कारों के अनुरूप ही आप भी अत्यन्त प्रतिभाशाली रहे थे। सन् 1928 में पटना विश्वविद्यालय

से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने सन् 1939 में स्वतन्त्र परीक्षार्थी के रूप में एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा भी दी थी। इन परीक्षाओं के अतिरिक्त आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'विशारद' परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी, जिसके कारण आपका झुकाव साहित्य-रचना की ओर हो गया था।

शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आपने अध्यापक के रूप में अपना जीवन प्रारम्भ किया और सर्वप्रथम आपकी नियुक्ति पटना जनपद के डुमरी मिडिल स्कूल में 'प्रधानाध्यापक' के रूप में हुई थी। शिक्षा-क्षेत्र में आपने अपनी योग्यता तथा कर्मठता से बहुत उन्नति की और धीरे-धीरे आपको उन्नति के अनेक अवसर मिलते गए। आप सन् 1961 में सेवा-निवृत्ति के समय 'शिक्षा पदाधिकारी' थे।

एक कुशल शिक्षक तथा प्रशासक के अतिरिक्त साहित्यिक क्षेत्र में भी आपकी देन सर्वथा स्पृहणीय रही थी। आपकी प्रमुख कृतियों में 'बाल रचना विकास', 'प्रतिवेश पाठ की पाठन-प्रणाली', 'भास नाटक चक्र' तथा 'वैदिक शब्दकोश' के नाम उल्लेखनीय हैं। यह अत्यन्त खेद का विषय है कि आपकी तीसरी और चौथी कृति अभी तक अप्रकाशित ही है। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखे गए अनेक निबन्ध तथा कविताएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए थे।



आपकी काव्य-प्रतिभा का सम्यक् परिचय आपके द्वारा इस कवित्त से भलीभाँति मिल जाता है

भास के सुनाटकों का अनुवाद आप करें,
गद्य-पद्य-युक्त होवे शैली हरिचन्द की।
गति-युक्त यति-युक्त काव्य-दोष-मुक्त होवे,
सूक्ति हों प्रयोग सब मस्ती हो गयन्द की।।
गंदगी न आवे रचना में लेश-मात्र कहीं,
बानगी अवश्य रहे मीठे-मीठे छन्द की।
रसमग्न विज्ञ करें संस्कृत के नाटकों का,
भाग जाए भावना समस्त दुःख-द्वन्द्व की।।

यह कवित्त आपने अपनी 'भास नाटक-चक्र' नामक कृति में भास के नाटकों का अनुवाद प्रस्तुत करते हुए अपने 'प्राक्कथन' में दिया था।

आपका निधन 12 जुलाई सन् 1976 को हुआ था।

श्री चन्द्रशेखर पाण्डेय 'चन्द्रमणि'

श्री पाण्डेय जी उत्तर प्रदेश के रायबरेली जनपद के बन्नावाँ नामक ग्राम के निवासी थे और आपका जन्म अपनी ननसाल में 30 जुलाई सन् 1908 को हुआ था। आपके पितामह स्वामी बद्रीप्रपन्न 'त्रिदण्डी' एक सिद्ध महात्मा थे। आपकी विधिवत् शिक्षा-दीक्षा कुछ भी नहीं हो सकी थी, किन्तु अपने ही पुरुषार्थ तथा स्वाध्याय के बल पर आपने जहाँ संस्कृत और हिन्दी का गहन ज्ञान अर्जित किया वहाँ बंगला तथा अँग्रेजी की सामान्य जानकारी भी प्राप्त कर ली थी। आप संस्कृत साहित्य के उद्भट विद्वान् और व्याकरणाचार्य थे। आपने अपना मार्ग स्वयं ही बनाया था और एक उत्कृष्ट पत्रकार के रूप में अपने साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ करके आप साहित्य में उत्कृष्ट तथा प्रतिष्ठित विद्वान् के रूप में प्रतिष्ठित हुए थे। सर्वप्रथम आपने 'वेंकटेश्वर समाचार' में अपने पत्रकार जीवन का प्रारम्भ किया था और बाद में आप लखनऊ से प्रकाशित होने वाली प्रख्यात साहित्यिक पत्रिका 'माधुरी' में मुन्शी प्रेमचन्द के सहयोगी रहे थे। आप अध्यात्म एवं दर्शन-प्रधान मासिक पत्र 'ब्रह्मलोक' का सम्पादन करने के अतिरिक्त 'सिनेमा समाचार' नामक पत्र के प्रथम सम्पादक भी रहे थे। इसके अतिरिक्त आपने 'काव्य कलाधर', 'संकीर्तन', 'सुकवि' और 'मानस मार्तण्ड' आदि विभिन्न पत्रों के अतिथि-सम्पादक का कार्य भी किया था।

आप एक सफल और उत्कृष्ट पत्रकार के रूप में प्रतिष्ठित होने के साथ-साथ सहृदय कवि, कहानी-लेखक,

नाटककार और उपन्यासकार भी थे। आपका 'कराल चक्र' नाटक जहाँ आपकी प्रतिभा का प्रत्यक्ष प्रमाण प्रस्तुत करता है वहाँ आपकी 'वाग्दान' (उपन्यास) तथा 'मजुमाला' (कहानी-सग्रह) नामक कृतियाँ आपकी कथा-लेखन-पटुता की उत्कृष्ट उदाहरण है। शोध तथा अनुसधान की दिशा मे भी आपकी अच्छी पैठ थी। आपकी ऐसी प्रतिभा का प्रस्फुटन 'रायबरेली के कवि' नामक कृति मे पूर्ण



रूप से हुआ है। इस कृति मे आपने जहाँ उस जनपद के सभी कवियो का प्रामाणिक इतिवृत्त देकर उनकी प्रमुख रचनाओ को प्रस्तुत किया है वहाँ जनपद की साहित्यिक चेतना का विशद वर्णन भी दिया है। 'कवि केहरी कृपाण' नामक अपनी कृति मे आपने जीवनी-लेखन का सर्वथा उदात्त उदाहरण प्रस्तुत करके कवि की काव्य-प्रतिभा का सम्यक् अनुशीलन किया है।

वैसे आपने साहित्य की विभिन्न विधाओ मे प्रचुर साहित्य का निर्माण किया है, किन्तु उसमे से कुछ ही प्रकाशित हो सका है। आपकी प्रकाशित रचनाओ मे 'कराल चक्र', 'अजामिल', 'राजपूत रमणी', 'वनवासिनी शबरी', 'दहेज का अन्त', 'सिरसा सग्राम' 'देवासुर सग्राम', 'राजर्षि परीक्षित', 'सती सुलोचना', 'शतमुख रावण' तथा 'सती शिरोमणि' (सभी नाटक), 'द्वारिका प्रवेश', 'सन्त लोक', 'गीता लोक', 'प्रेम योगिनी मीरा', 'सती तुलसी वन्दा', 'महासती अनसूया', पतित अजामिल', 'भक्त जयदेव', 'कृष्णार्जुन सग्राम', 'महाकाली सीता', 'वामनावतार', 'गणेश जन्म', 'वीरागना कैकेयी' (सभी काव्य), 'मानस मन्दाकिनी', 'मानस पचरत्न' 'मानस सप्तरत्न', 'मानस पचामृत' (मानस-साहित्य), 'लोही का हलुवा', 'कीर्तन कुसुमाजलि' आठ भाग, 'सकीर्तन सरिता', 'कीर्तन कलाप', 'माधुरी भजनावली' (लोक काव्य) आदि प्रमुख है। इनके अतिरिक्त आपने कई प्रहसन भी लिखे थे। आपके द्वारा विरचित 'चन्द्रलोक', 'वनदेवी', 'वाराह चरित्र', 'बिल्व मंगल', 'वीर परशुराम', 'पुनर्जन्म', 'शिवरात्रि-कथा', 'हर तालिका', शिव विवाह', 'हनुमान चरित्र', 'गजेन्द्र मोक्ष', 'बन्धु भरत', 'भक्त अहीर बालक', 'गोपीचन्द्र किरन', 'बड़भागी केवट', 'काव्य-कुंज', 'मानस सोपान', 'वाणी विनोद', 'वाग्दान', 'ससार चन्द्र', 'रामबोला', 'वनवासिनी' तथा 'दहेज का अन्त' नामक कृतियाँ अभी अप्रकाशित ही हैं।

श्री पाण्डेय जी ने एक उत्कृष्ट रचनाकार के रूप मे प्रतिष्ठा प्राप्त करने के साथ-साथ समाज-सेवा के क्षेत्र मे भी प्रशसनीय कार्य किया था। आपने जहाँ रायबरेली मे 'भारतीय भवन पुस्तकालय' की सस्थापना की थी वहाँ आप 'सिरस समाज बछरावाँ', 'चातुर मण्डल रायबरेली' और 'ब्रजेश मण्डल गौरा' के प्रमुख सरक्षक और आजीवन सदस्य रहे थे। सास्कृतिक क्षेत्र मे भी आपका अत्यन्त प्रतिष्ठित स्थान था। एक दार्शनिक, ज्योतिषाचार्य, कर्मकाण्डी, वैद्य तथा धर्मोपदेशक के रूप मे भी आप समाज मे बहुत सम्मानित थे। आपके साहित्यिक जीवन का आरम्भ एक लोक-कवि के रूप मे हुआ था और धीरे-धीरे आपकी गणना प्रदेश के उच्चकोटि के साहित्यकारो मे होने लगी थी। आपने 'रायबरेली के कवि' नामक ग्रन्थ की रचना करके जहाँ जनपद के अनेक विस्मृत कवियो का नाम इतिहास के पृष्ठो मे सर्वथा सुरक्षित कर दिया था वहाँ दूसरे अचलो के लोगो को भी इस प्रकार के सकलन प्रकाशित करने की प्रेरणा प्रदान की थी। आपके सुपुत्र डा० रामेन्द्र पाण्डेय भी हिन्दी के अच्छे साहित्यकार है।

आपका निधन 27 फरवरी सन् 1982 को अपने निवास-स्थान बन्नावाँ मे ही हुआ था।

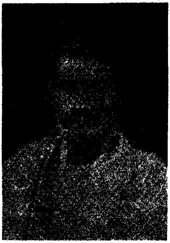
श्री चन्द्रशेखर शास्त्री साहित्याचार्य

श्री शास्त्रीजी का जन्म बिहार प्रदेश के शाहाबाद (अब भोजपुर) जनपद के अतर्गत डुमराँव राज्य के निमेज नामक ग्राम मे सन् 1883 मे हुआ था। ब्राह्मण कुल मे जन्म लेने

के कारण आपके संस्कार विद्यार्जन की ओर ही अधिक थे। शास्त्रीजी के पिता श्री शकरदयाल ओझा कुछ दिन तक डुमराँव राज्य मे तहसीलदार भी रहे थे। डुमराँव राज्य की संस्कृत पाठशाला मे संस्कृत की प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करके शास्त्रीजी बाल्यावस्था से ही विद्याध्ययनार्थ घर छोड-कर काशी चले गए थे और अपने ही बल-बूते पर वहाँ अपना अध्ययन जारी रखा था। वहाँ पर रहते हुए आपने दिन-रात घनघोर परिश्रम करके क्वीन्स कालेज से शास्त्री तथा साहित्याचार्य की परीक्षाएँ अत्यन्त सफलतापूर्वक उत्तीर्ण की थीं।

आप इतने स्वाभिमानी थे कि छात्रावस्था मे एक बार कालेज के अग्रेज प्रिंसिपल डॉ० वेनिस द्वारा जारी किये गए ऐसे किसी आदेश का आपने खुलकर विरोध किया था, जो उन्हे अनुचित प्रतीत होता था। आपने न केवल स्वय ही उसका विरोध किया प्रत्युत अन्य छात्रो को उसका उल्लघन करने को प्रेरित किया था। इस पर प्रिंसिपल बहुत नाराज हुए और आपने शास्त्रीजी को बुलाकर यह धमकी दी थी कि मै इस अपराध के लिए तुम्हे कालेज से निकाल सकता हूँ। शास्त्रीजी पर उनकी इस धमकी का कोई प्रभाव नही पडा और उन्होने निर्भीकतापूर्वक यह उत्तर देकर अपने स्वाभिमान का परिचय दिया कि "आप मुझे कालेज से ही तो निकाल सकते है, मेरा विद्यार्जन नही रोक सकते। मै किसी भी अन्याय और अपमान के सामने अपना सिर नही झुकाऊँगा।" अपने छात्र की इस निर्भीकता और अकाट्य तर्कों मे प्रिंसिपल बहुत प्रसन्न हुए और उन्होने न केवल अपना वह आदेश वापस लिया बल्कि 3 जर्मन छात्रो के ट्यूशन भी आपको दिला दिए, जिससे शास्त्रीजी का अध्ययन निर्विघ्न और सफलतापूर्वक सम्पन्न हो सका। आपके काशी के सहपाठियो मे प्रख्यात दार्शनिक पाण्डेय रामावतार शर्मा भी थे। आप दोनो ही काशी के उद्भट विद्वान् पण्डित गगाधर शास्त्री के प्रमुख शिष्य और अनन्य मित्र थे।

अपने अध्ययन की समाप्ति के उपरान्त आपने कुछ समय तक काशी की 'भारत धर्म महामण्डल' नामक सस्था की ओर से 'प्रचारक' का कार्य किया और बाद मे जोधपुर के महाराजकुमार के शिक्षक रहे, किन्तु दोनो ही स्थानो मे आपका मन नही लगा और आपने यह कार्य छोड़ दिया। आपने पटना के 'खड्ग विलास प्रेस' मे भी कुछ समय तक रहकर बालोपयोगी पौराणिक पुस्तकें लिखी थी। किन्तु वहाँ रहते हुए आपको नौकरी की इस वृत्ति से इतनी वितृष्णा हो गई कि आपने यावज्जीवन इस वृत्ति से दूर रहने का निश्चय कर लिया और सपरिवार इलाहाबाद जाकर स्वतंत्र रूप से लेखन और प्रकाशन करना प्रारम्भ किया। आपने सन् 1910 मे सर्वप्रथम प्रयाग से 'श्रीशारदा' नामक एक संस्कृत की मासिक पत्रिका का सम्पादन तथा प्रकाशन वहाँ के दारागज मोहल्ले से प्रारम्भ किया। थोड़े ही दिनो मे आपकी इस पत्रिका ने इतनी लोकप्रियता अर्जित कर ली थी कि उसकी माँग जर्मनी तक से होने लगी थी और वहाँ उसकी बहुत-सी प्रतियाँ जाती थी। किन्तु दुर्भाग्यवश प्रथम विश्वयुद्ध छिड जाने के कारण आपकी यह पत्रिका चिरजीवी न हो सकी और उसे बद कर देना पड़ा।



यहाँ यह उल्लेखनीय है कि जर्मनी मे 'श्रीशारदा' की जो हजारो प्रतियाँ जाती थी उनका रुपया अटक जाने के कारण ही पत्रिका का प्रकाशन विवश होकर बन्द करना पडा था। उन्ही दिनों आपने कुछ समय तक 'सरयूपारीण पत्रिका' का सम्पादन भी करना प्रारम्भ किया था, किन्तु सन् 1920 मे उसे भी छोड़ना पडा। इस प्रसग मे आपके द्वारा सम्पादित 'समाज' (मासिक) तथा 'शिक्षा' (साप्ताहिक) नामक पत्रों का उल्लेख कर देना भी अप्रासगिक न होगा। इनसे पूर्व उन दोनों पत्रो का सम्पादन क्रमश. महामहोपाध्याय पण्डित सकलनारायण शर्मा और पण्डित ईश्वरीप्रसाद शर्मा करते रहे थे।

इसके उपरान्त शास्त्रीजी ने प्रयाग मे रहते हुए ही 'ओझा-बन्धु आश्रम' के निवासकाल मे 'वाल्मीकि रामायण' का हिन्दी अनुवाद किया, जो आज भी अपनी प्रामाणिकता के लिए प्रख्यात है। इसके कुछ समय उपरान्त आपने 'श्रीमद्-

भागवत' और 'महाभारत' का अनुवाद भी प्रारम्भ किया। 'महाभारत' का मूल सहित हिन्दी अनुवाद तो आपने स्वयं ही खण्डश. प्रकाशित किया था और 'श्रीमद्भागवत' के 9 स्कन्ध इन्दौर से प्रकाशित हुए थे। शास्त्रीजी का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य 'पद्म पुराण' में सगृहीत 'प्रयाग माहात्म्य-शताध्यायी' की हिन्दी टीका है, जो 300 खुले पृष्ठों म सन् 1924 मे छपी थी। पण्डित शिवशकर राम शोकहा ने उसका अनुवाद कराया था, जिसे श्री शोकहा के निधन के उपरान्त उनके सुपुत्र श्री शेषनारायण शोकहा ने प्रकाशित कराया था। प्रयाग मे रहते हुए शास्त्रीजी ने जीवन-यापन के लिए जो अनेक बालोपयोगी पुस्तके लिखी थी उनको देखकर भी आपकी लेखन-प्रतिभा का सम्यक् अनुमान हो जाता है। आपके द्वारा लिखित, अनूदित और सम्पादित रचनाओं मे उक्त ग्रन्थो के अतिरिक्त 'दरिद्र कथा', 'भरत चरित', 'विधवा के पत्र', 'समाज का कोढ', 'भारत की सती नारियाँ', 'शकुन्तला की कथा', 'भीष्म प्रतिज्ञा', 'सावित्री और गायत्री', 'विवेक चूडामणि', 'उपदेश मजरी अर्थात् सदाचार शिक्षा', 'माता के उपदेश', 'विद्यार्थी जीवन', 'पैसा', 'नीति रत्नमाला', 'कवितावली', 'पच बन्धु', 'काव्य-परिचय' तथा 'अलकार प्रवेशिका' आदि विशेष उल्लेख्य है।

प्रयाग मे रहते हुए आपने जहाँ साहित्य-सृजन और प्रकाशन की दिशा म अपन को लगाया था वहाँ हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार के लिए भी बराबर समय देते रहते थे। आपके निवास-स्थान पर जहाँ देश के विभिन्न भू-भागो से पधारे हुए जिज्ञासुओ और विद्वानो का जमघट रहता था वहाँ वेद-वेदान्त-उपनिषद् और साहित्य-चर्चा का वातावरण भी दर्शनीय होता था। हिन्दी के प्रति आपका कितना अनुराग था इसका सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि राजर्षि पुरुषोत्तमदास टडन और अमर हुतात्मा गणेशशकर विद्यार्थी-जैसे महानुभाव आपके मित्रो मे थे। आपके सुपुत्र श्री प्रफुल्लचन्द्र ओझा 'मुक्त' भी हिन्दी के सुलेखक और विद्वान् है।

आपका निधन केवल 51 वर्ष की आयु मे सन् 1934 म प्रयाग मे उस समय हुआ था जब आपके द्वारा अनूदित 'महाभारत' का केवल एक ही पर्व प्रकाशित हो सका था। इसका प्रकाशन आपने स्वय ही किया था।

श्री चन्द्रिकाप्रसाद तिवारी

श्री तिवारीजी का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद की शफीपुर तहसील के अगू नामक ग्राम में 28 नवम्बर सन् 1858 को हुआ था। आप अपने जीवन मे प्रारम्भ से ही हिन्दी के पक्षपाती थे। जिन दिनों सन् 1888-89 मे महा-मना मदनमोहन मालवीय कालाकांकर राज्य के राजा रामपाल सिह द्वारा सचालित 'दैनिक हिन्दुस्थान' का सम्पादन किया करते थे तब आपने रेलवे के अर्थशास्त्र के सम्बन्ध में उस पत्र मे 5 लेख लिखे थे। सन् 1906 मे आपने 'भारत-मित्र' मे महामहोपाध्याय पण्डित सुधाकर द्विवेदी के दादू-सम्बन्धी विवाद मे भी भाग लिया था। सन् 1911 मे 'सरस्वती' के कई अको मे आपकी एक लेख-माला 'सुन्दर-दास' के विषय मे भी प्रकाशित हुई थी। आपके द्वारा विर-चित 'दादू का काव्य व दर्शन' नामक ग्रन्थ सन् 1907 मे अजमेर से प्रकाशित हुआ था।

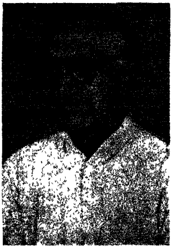
आप सन् 1877 से सन् 1916 तक बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे के अजमेर वर्कशाप से सम्बद्ध रहने के अतिरिक्त सन् 1921 से 1925 तक 'ऑल इण्डिया रेलवे-मैन फेडरेशन' के अध्यक्ष भी रहे थे। आप जहाँ सन् 1926-27 मे 'ऑल इण्डिया ट्रेड यूनियन काग्रेस' के अध्यक्ष रहे थे वहाँ आपने 5 फरवरी सन् 1916 को 'काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय' के उद्घाटन समारोह मे सक्रिय रूप से भाग लिया था। आपका मुख्य कार्य-क्षेत्र अजमेर था और आपका निधन 30 जून सन् 1939 को गन्दरबल (काश्मीर) मे हुआ था।

पण्डित चन्द्रिकाप्रसाद मिश्र

श्री मिश्र जी का जन्म उत्तर प्रदेश के कानपुर जनपद के सचेडी (सत्य चण्डी) नामक स्थान मे सन् 1898 मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा ग्वालियर रियासत के मुरार नामक स्थान के हाई स्कूल मे हुई थी और वहाँ से ही आपने सन् 1916 मे हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आपने इण्टरमीडिएट की परीक्षा प्राइवेट छात्र के रूप मे सन् 1935 मे उस समय दी थी जब आप शिक्षक का कार्य करते थे।

ग्वालियर रियासत के शिक्षा विभाग मे सेवा-रत रहते हुए सन् 1936 मे 'सोनकच्छ' (उज्जैन) मे आपने एक ऐसा 'शिक्षक सम्मेलन' आयोजित किया था जिसकी अनुगूंज समस्त मध्य भारत मे बहुत दिनो तक रही थी। आपने मध्य भारत के श्योपुर, मुरार, मुरैना,शाजापुर, सोन कच्छ और सबलोढ आदि विभिन्न नगरो में अध्यापक और प्रधानाध्यापक के रूप मे अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया था। आपमे सगठन की अपूर्व क्षमता थी इसी कारण आप कैसे भी बड़े-से-बड़े कार्य को सहज भाव से सम्पन्न कर लिया करते थे। अपने शिक्षक-जीवन मे आपने जो शिष्य तैयार किए थे उनमे से अनेक ऐसे है जिन्होने कालान्तर मे साहित्य के क्षेत्र मे अपना प्रमुख स्थान बना लिया था। ऐसे महानुभावो मे सर्वश्री हरिकृष्ण 'प्रेमी', जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द', हरिहरनिवास द्विवेदी और प्रभागचन्द्र शर्मा के नाम विशेष उल्लेखनीय है।

आप एक कुशल शिक्षक होने के साथ-साथ अद्वितीय वक्ता, प्रखर समाज-सुधारक और कर्मठ सास्कृतिक उन्नायक थे। आर्य समाज के समाज-सुधार के क्रान्तिकारी आन्दोलन के सम्पर्क मे आने के कारण आपने अपने जीवन को ऐसा ढाल लिया था कि आपका स्थान मध्य प्रदेश के प्रमुख लोगो मे बन गया था। रियासत के शिक्षा विभाग मे कार्य करने के अतिरिक्त आपने उसके जन-गणना विभाग और खाद्य-विभाग में भी उल्लेखनीय कार्य किया था। आपने जिस स्थान पर भी कार्य किया उसी पर अपनी अमिट छाप छोडी थी। पुस्तकालय-विज्ञान के क्षेत्र मे तो आपका मध्य भारत के विशिष्ट विद्वानो मे स्थान था। आप अनेक वर्ष तक ग्वालियर केन्द्रीय पुस्तकालय के 'पुस्तकालयाध्यक्ष' रहे थे।



आप जहाँ कुशल शिक्षक और पुस्तकालय विज्ञान के मर्मज्ञ विद्वान् के रूप मे माने जाते थे, वहाँ लेखन के क्षेत्र में आपकी देन कम महत्त्व नहीं रखती। आपने कवि, नाटककार और जीवनी-लेखक के रूप में अपनी जिस प्रतिभा का परिचय हिन्दी-जगत् के समक्ष प्रस्तुत किया वह अद्वितीय है। आपने अपने इस लेखकीय जीवन मे शिक्षा, सस्कृति तथा इतिहास से सम्बन्धित अनक ग्रन्थो का निर्माण किया था। आपके लेख ग्वालियर राज्य के 'जयाजी प्रताप' नामक पत्र मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करते थे। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद यही पत्र पहले 'मध्य भारत सन्देश' तथा बाद मे 'मध्य प्रदेश सन्देश' नाम से प्रकाशित होने लगा था, जो आज भी मध्य प्रदेश शासन के सूचना विभाग की ओर से सफलतापूर्वक निकल रहा है। जिन दिनो आप उज्जैन मे शिक्षक रहे थे तब आपका सम्पर्क वहाँ पर प्रख्यात कवि और प्राध्यापक श्री रमाशकर शुक्ल 'हृदय' से हो गया था, जिसके कारण आपमे कवित्व की धारा फूट पडी थी और आपने अपना उपनाम 'चन्द्र' रख लिया था। ग्वालियर सम्भाग के कवियो मे आपका कितना महत्त्वपूर्ण स्थान था इसका सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि आपकी रचनाएँ सन 1932 मे श्री रामकिशोर शर्मा के सम्पादन मे प्रकाशित 'निकुज' नामक सकलन मे समाविष्ट की गई थी। इसका प्रकाशन अ० भा० हिन्दी साहित्य सम्मेलन के ग्वालियर अधिवेशन के अवसर पर किया गया था।

आपकी विभिन्न प्रकाशित रचनाओ मे 'मारवाड गौरव' (1942), 'चचल कुमारी' (1944), 'नवप्रभात' (1948), 'भारतीय नवनिर्माण की रूपरेखा' (1950), 'किसानो से दो-दो बाते' (1955),'आकाश की सैर' (1956), 'भगवान् बुद्ध' (1956). 'चिडियाघर' (1956), 'जातक कथाएँ' (1958) 'प्राचीन भारत का ऐतिहासिक पुनरवलोकन' (1978) तथा 'अदब की कहानियाँ' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। जिन दिनों आप सोनकच्छ मे शिक्षक थे तब आपने छात्रो के लिए स्त्री-पात्र-विहीन एक विशेष मचीय नाटक लिखा था। आपकी साहित्य तथा सस्कृति-सम्बन्धी उल्लेखनीय सेवाओं के उपलक्ष्य मे 'मध्य भारत हिन्दी साहित्य सभा ग्वालियर' मे सन् 1975 मे आपका अत्यन्त भावभीना अभिनन्दन किया था। आपके सुपुत्र श्री वीरेन्द्र मिश्र भी हिन्दी के प्रख्यात और निष्णात कवि है।

आपका निधन सन् 1978 मे हुआ था।

श्री चम्पाराम मिश्र

श्री मिश्र का जन्म उत्तर प्रदेश के मैनपुरी नामक नगर में, वहाँ के एक प्रख्यात चतुर्वेदी-परिवार में सन् 1877 में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा सहारनपुर में हुई थी और बाद में आपने सन् 1898 में आगरा कालेज से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इसके उपरान्त आप सन् 1899 में उत्तर प्रदेश शासन में 'तहसीलदार' के पद पर नियुक्त हुए थे और बाद में 'डिप्टी कलक्टर' के रूप में पदोन्नत हो गए थे। आपके बड़े भाई श्री खड्गजीत मिश्र भी हिन्दी के अच्छे साहित्यकार थे। सरकारी सेवा में रहते हुए आप जहाँ बाराबंकी तथा प्रतापगढ़ जिलों की कई रियासतों के 'कोर्ट आफ वार्ड्स' के विशेष व्यवस्थापक रहे थे वहाँ सन् 1921 में आपने उत्तर प्रदेश सरकार के औद्योगिक सर्वेक्षण विभाग में 'उप निदेशक' का कार्य भी अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। आपकी सर्वेक्षण-रिपोर्ट जब सन् 1925 में प्रकाशित हुई थी तब प्रख्यात अर्थशास्त्री डा० राधाकुमुद मुखर्जी ने उसकी मुक्त कण्ठ से सराहना की थी। आप सन् 1934 में उत्तर प्रदेश शासन की सेवा से निवृत्ति प्राप्त करके मध्य प्रदेश की छतरपुर रियासत में 'दीवान' भी नियुक्त हुए थे। यहाँ यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय प्रसंग है कि आपसे पूर्व इस रियासत में हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार रायबहादुर शुकदेवबिहारी मिश्र भी दीवान रहे थे। जिन दिनों हिन्दी के महान् आलोचक बाबू गुलाबराय महाराजा छतरपुर के निजी सचिव थे उन्हीं दिनों ही आप वहाँ पर दीवान पद पर प्रतिष्ठित थे। आपको तत्कालीन ब्रिटिश शासन की ओर से 'रायबहादुर' की सम्मानोपाधि प्रदान की गई थी।



आप जहाँ कुशल प्रशासक और विचक्षण व्यवस्थापक थे वहाँ साहित्य-रचना के क्षेत्र में भी आपकी प्रतिभा सर्वथा विशिष्ट थी। यद्यपि अपने छात्र-जीवन में आपके विशिष्ट विषय गणित और रसायन थे, किन्तु हिन्दी और संस्कृत में भी आपकी गहन रुचि थी। जब 'सरस्वती' के सम्पादक आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी से आपका घनिष्ठ सम्पर्क हुआ तब आपकी साहित्यिक प्रतिभा प्रस्फुटित हुई थी। फलस्वरूप आपने जो साहित्य-रचना प्रारम्भ की थी उससे आपकी प्रतिभा का परिचय समस्त हिन्दी जगत् को मिला था। आपकी रचनाएँ उन दिनों 'सरस्वती' तथा 'वीणा' आदि कई प्रमुख पत्रिकाओं में ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थीं। आपने जहाँ 'बिहारी सतसई' की एक टीका लिखी थी वहाँ आपके द्वारा विरचित महाकवि तुलसीदासकी 'कवितावली' का भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। आपकी 'श्री रघुनाथ शिकार' और 'लीलावती का अकगणित' नामक रचनाएँ भी बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक काल में प्रकाशित हुई थीं। आपके द्वारा लिखी गई 'कवितावली' की विशद भूमिका की हिन्दी के प्रख्यात समीक्षक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की थी।

जिन दिनों आप छतरपुर राज्य में दीवान थे तब सन् 1939 में वहाँ ही आपका शरीरान्त हुआ था।

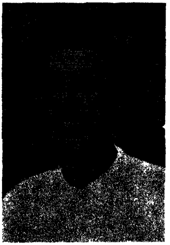
श्री चम्पालाल 'मंजुल'

श्री 'मंजुल' का जन्म सन् 1905 में राजस्थान के भरतपुर नामक नगर के खेरापति नामक मोहल्ले में हुआ था। आपका अधिकांश बाल्य-काल और युवा-काल छतरपुर राज्य में व्यतीत हुआ था। जिन दिनों छतरपुर-नरेश महाराज विश्वनाथ सिंह जू देव के दरबार में रायबहादुर शुकदेवबिहारी मिश्र, लाला भगवानदीन, श्री वियोगी हरि और बाबू गुलाबराय-जैसे प्रख्यात साहित्यकार विराजमान थे उन दिनों श्री 'मंजुल' जी भी महाराज के 'हिन्दी के निजी सचिव' के रूप में प्रतिष्ठित थे। छतरपुर-नरेश की मृत्यु के उपरान्त आप वहाँ से भरतपुर चले आए थे।

भरतपुर लौटकर भी आपकी साहित्य-साधना में किसी

प्रकार कमी नही आई और आप बराबर साहित्य-साधना मे सलग्न रहे। आपकी रचनाओ मे 'काव्येन्दु', 'मजुल शतक' 'अन्योक्ति प्रकाश', 'विरह माधुरी', 'भक्ति-माधुरी', 'प्रेम-माधुरी', 'नीति-माधुरी' और 'वैराग्य-माधुरी' के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सभी ग्रन्थो मे ब्रजभाषा के परिपुष्ट काव्य-सौन्दर्य के दर्शन होते है। इनके अतिरिक्त आपने खड़ी बोली मे भी अनेक रचनाएँ की है। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'द्रोण' नामक प्रबन्ध काव्य प्रमुख है।

आपने अपनी रचनाओं मे जहाँ रीतिकालीन लक्षण-ग्रन्थो की सुस्पष्ट बानगी दी है वहाँ तत्कालीन नायिका-भेद, शब्द-शक्ति के भी उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किए है। तत्कालीन दोहा, कवित्त तथा सवैया आदि छन्दो की रचना करने मे आपको अभूतपूर्व सिद्धि प्राप्त थी। अपने 'काव्येन्दु' नामक ग्रन्थ मे 'मजुल' जी ने जहाँ 375 प्रकार की नायिकाओ का वर्णन किया है वहाँ आपने अपने 'मजुल शतक' नामक ग्रन्थ मे दोहो में समस्यापूर्ति की बानगी प्रस्तुत की है। नायिका-भेद का निरूपण करने में भी आप पूर्णत प्रवीण थे। आपकी ऐसी रचना-चातुरी का एक उत्कृष्ट उदाहरण इस प्रकार है



कुसुमित ललित लतान के वितान तने,
गुजत मिलिन्द मकरन्द बुन्द घूम-घूम।
नवल किशोरी जोरी विपिन विहार हेत,
आई सग पिय के अनंग रंग झूम-झूम।।
करत विनोद कवि 'मजुल' चहुँ ओर दौरि,
रूप सुधा आसव छबीली छकि रूम-रूम।
जौ लौं एक टोरत प्रसून नन्दलाल तौं लौं,
दूजी को आनन मयक लेत चूम-चूम।।

आपके नायिका-भेद के काव्य से प्रसन्न होकर बुन्देल-खण्ड के खजुराहो नामक स्थान पर एक बगाली-बहुल 'विद्वत्मण्डली' ने आपको सन् 1930 में 'कवि शेखर' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी। इस विद्वत्सभा के अध्यक्ष पण्डित प्रवर षड्दर्शनाचार्य पण्डित दामोदरलाल थे। इसी अवसर पर आपको छतरपुर-नरेश ने एक 'स्वर्ण-पदक' भी प्रदान किया था।

खडी बोली मे भी आपकी काव्य-प्रतिभा उतनी ही प्रखरता से प्रकट हुई थी जितनी तन्मयता से आपने ब्रजभाषा की रचनाएँ की थी। भारत की परतन्त्रता के दिनो में आपने अपनी कान्तिकारी भावनाएँ जिस रूप मे व्यक्त की थी वह भी आपकी निर्भीकता की द्योतक है। आपने लिखा था :

पय पीकर पामर पन्नग के
विष दन्त कभी किल जायेगे क्या।
सभी देके निरन्तर यातनाएँ,
दिल द्रोहियो के हिल जायेगे क्या।
कवि 'मजुल' वारि के शोषण से,
कुल पकज के खिल जायेगे क्या।
बिन आयुध जेल के सींकचो मे,
अधिकार तुम्हे मिल जायेगे क्या।।

आपका कविता-पाठ का ढग भी इतना आकर्षक और मनोहारी होता था कि आप बडे-से-बडे जन-समूह को भी मन्त्र-मुग्ध करने की अद्भुत क्षमता रखते थे। आपकी अधिकांश रचनाएँ भरतपुर के 'सग्रहालय' और वहाँ की 'हिन्दी साहित्य समिति' के पुस्तकालय मे सुरक्षित है। ओरछा दरबार मे आपका बहुत अधिक सम्मान था और आप वहाँ की 'कवि मण्डली' के सिरमौर समझे जाते थे। वहाँ पर निर्मित 'मंजुल कुटीर' नामक भवन इसका ज्वलन्त प्रमाण है।

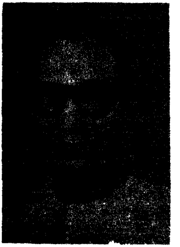
आपका निधन 25 अप्रैल सन् 1971 मे हुआ था।

श्री चम्पालाल सिंघई 'पुरन्दर'

श्री सिंघई का जन्म मध्यप्रदेश के गुना जनपद के चन्देरी नामक स्थान मे 6 फरवरी सन् 1919 को हुआ था। आपके पितामह श्री पूनमचन्द जी ने सन् 1886 मे वहाँ पर

'गज रथोत्सव' कराया था, जिसमे वहाँ के समाज ने आपको 'सिघई' की उपाधि से विभूषित किया था। आप चन्देरी के अत्यन्त लोकप्रिय नागरिक तथा सस्कृत, हिन्दी, फारसी, अरबी और उर्दू आदि अनेक भाषाओं के ज्ञाता थे। इनके साथ-साथ ज्योतिष, कानून तथा सगीत आदि विभिन्न विद्याओं के भी आप अद्वितीय पण्डित थे। इस पारम्परिक वैदुष्य के वातावरण मे श्री चम्पालाल जी की शिक्षा-दीक्षा हुई थी। आपने सन् 1933 मे मिडिल, सन् 1935 मे मैट्रिक, सन् 1939 मे इण्टर, सन् 1949 मे विशारद, सन् 1952 मे साहित्यरत्न, सन् 1954 मे बी० ए०, सन् 1956 मे एम० ए० (हिन्दी-आगरा विश्वविद्यालय से), सन् 1962 मे बी० एड०, सन् 1963 मे सस्कृत कोविद की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के साथ-साथ क्रमश. विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन तथा जीवाजीराव विश्वविद्यालय, ग्वालियर से सन् 1959 तथा सन् 1966 मे इतिहास विषय मे एम० ए० की उपाधियाँ भी प्राप्त की थी।

शिक्षा-प्राप्ति के अनन्तर आपने 'श्री पूनमचन्द रतनचन्द सिघई' नाम से चन्देरी मे चलने वाले अपने पारिवारिक 'वस्त्रोद्योग प्रतिष्ठान' मे कार्य करना प्रारम्भ कर दिया था और अपने पिताश्री के निधन के उपरान्त आपने अपने भाई के साथ मिलकर 'श्री चम्पालाल गेदालाल सिघई' नामक एक दूसरे प्रतिष्ठान की स्थापना करके इस कार्य को और भी प्रगति की ओर बढ़ाया था। जब



आपके भाई ने 'सिघई प्रेस' नाम से दूसरा कार्य प्रारम्भ कर दिया तब आपने अपने पुत्र के नाम पर प्रतिष्ठान का नाम 'श्री चम्पालाल उमेशचन्द्र' कर लिया और इस व्यवसाय में सलग्न रहते हुए साहित्य-साधना प्रारम्भ की। साहित्य के प्रति आपका झुकाव अपने छात्र-जीवन के प्रारम्भ से ही था और इस दिशा में आपको अपने अध्ययन-काल मे प्रो० रमाशकर शुक्ल 'हृदय' तथा श्री प्रभाकर माचवे से जो प्रश्रय तथा प्रोत्साहन मिला था उसने कालान्तर मे आपकी साहित्यिक अभिवृद्धि मे बहुत बडा योगदान दिया था। कुछ दिन तक आपने अनेक शासकीय तथा अशासकीय विद्यालयो तथा महाविद्यालयो मे अध्यापन का कार्य भी किया था। आपका इतिहास, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, तर्कशास्त्र, भूगोल और राजनीति आदि अनेक विषयो पर असाधारण अधिकार था।

आपकी कविताएँ और लेख आदि 'जैन मित्र', 'जैन सन्देश' 'सन्मति सन्देश', 'दिगम्बर जैन', 'वीर', 'अहिसा', 'वाणी', और 'अनेकान्त' आदि विभिन्न जैन पत्रो के अतिरिक्त 'ज्ञानपीठ पत्रिका', ज्ञानोदय', 'कल्याण', 'माधुरी', 'मदारी', 'झुनझुना', 'आलोक', 'स्वतन्त्र भारत' और 'नव प्रभात' आदि बहुत से पत्रो मे प्रकाशित हुआ करती थी। आप 'सरयू सहोदर' नाम से भी लिखा करते थे। आपकी रचनाओं मे एक कविता-सकलन, एक कहानी-सग्रह प्रमुख है। इनके अतिरिक्त आपने 'यशाब्ध' तथा 'तारण स्वामी' नामक खण्डकाव्यो का निर्माण भी किया था। यह खेद का विषय है कि आपकी ये रचनाएँ प्रकाशित नही हो सकी। इनके अतिरिक्त आपकी रचनाएँ श्रीमती रमारानी जैन द्वारा सम्पादित 'आधुनिक जैन कवि'-जैसे अनेक सन्दर्भ-ग्रन्थो मे प्रकाशित हुई थी। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप 'मध्यप्रदेश और राजस्थान मे भट्टारको का उद्गम विकास-स्थान' विषय पर पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त करने के लिए शोध-प्रबन्ध लिखने मे सलग्न थे। खेद का विषय है कि कैंसर-जैसे रोग से ग्रसित हो जाने के कारण इस कार्य को आप सम्पन्न न कर सके।

आप जहाँ उच्चकोटि के कवि और साहित्यकार थे वहाँ समाज-सेवा के क्षेत्र में भी आपका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। आप जहाँ नगर की अनेक सामाजिक, साहित्यिक तथा सास्कृतिक सस्थाओ की विभिन्न गतिविधियो मे भाग लेते रहते थे वहाँ आपने कई सस्थाओ की स्थापना मे भी अपनी सक्रिय भूमिका निबाही थी। आप जहाँ चन्देरी की अनेक जैन सस्थाओ के प्रेरणा-स्रोत थे वहाँ बहुत-सी समाज-सेवी सस्थाओ से भी आपका निकट का सम्बन्ध था। आपकी शिक्षा

तथा साहित्य-सम्बन्धी विभिन्न प्रवृत्तियो मे इतनी रुचि थी कि आपने अपने पारिवारिक वस्त्र-व्यवसाय की ओर से विमुख होकर 'शिक्षक' का जीवन अपना लिया था। आपने नगर काग्रेस-कमेटी के अनेक पदो पर रहते हुए जहाँ चन्देरी की जनता की बहुविध सेवा की थी वहाँ आप कई वर्ष त क 'चन्देरी नगरपालिका' के सदस्य भी रहे थे।

आपका निधन 16 सितम्बर सन् 1972 को उदयपुर मे हुआ था।

कुँवर चाँदकरण शारदा

श्री शारदा जी का जन्म 26 जून सन् 1888 को राजस्थान के अजमेर नामक नगर के एक प्रख्यात माहेश्वरी वैश्य-परिवार मे हुआ था। आपके पारिवारिकजन मूलत डीडवाना के निवासी थे, जो मेडता के निकट आलानियावास नामक ग्राम मे रहने लगे थे। वहाँ से ही आपके पितामह रामरतन शारदा अजमेर जाकर वहाँ के मदारगेट के भीतर वाले 'सराय गणपतपुरा' नामक मोहल्ले मे जाकर स्थायी रूप से बस गए थे। आपके पिता आर्यसमाज के सस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित 'परोप-कारिणी सभा' और उसके 'वैदिक प्रेस' के प्रमुख अधिकारी थे अत श्री चाँदकरण शारदा उनके पास आने वाली पत्र-पत्रिकाओं को पढकर ही साहित्य की ओर अग्रसर हुए थे। जब आप सन् 1906 मे मैट्रिक मे पढते थे तब अपने अन्य सहपाठी छात्रो के सहयोग से आपने एक 'वाचनालय' की स्थापना भी की थी। प्रयाग विश्वविद्यालय से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने गवर्नमेंट कालेज अजमेर से सन् 1910 मे बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इस परीक्षा मे सर्वाधिक अक प्राप्त करने के कारण आपको कालेज की ओर से 'कर्नल विन्हें स्वर्ण पदक' भी प्रदान किया गया था।

क्योकि उन दिनों अजमेर मे स्नातकोत्तर स्तर के अध्ययन की कोई व्यवस्था नही थी अत आपने आगरा आकर एम० ए० की कक्षाओ मे प्रवेश ले लिया। अपने इस अध्ययन-काल मे आपने नगर की 'आर्यमित्र सभा' नामक सामाजिक संस्था की सदस्यता स्वीकार कर ली और उसके माध्यम से आपके मानस मे 'वैदिक धर्म' और 'आर्य संस्कृति' के प्रति अनन्य अनुराग उत्पन्न हो गया। पारिवारिक पृष्ठभूमि के कारण आपने इस संस्था के माध्यम से नगर के अनेक युवको को आर्यसमाज के सुधार-वादी आन्दोलन की ओर सहज ही आक-र्षित कर लिया था। एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उप-रात आप वहाँ से ही एल-एल० बी० की परीक्षा देकर अजमेर चले गए और वकालत को अपने व्यवसाय के रूप मे अपना लिया।



वकालत करते हुए आपने समाज-सेवा के विभिन्न क्षेत्रों मे भी कार्य करना प्रारम्भ कर दिया और थोडे ही समय मे नगर मे आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान बन गया। सन् 1910 मे जब प्रयाग मे सर विलियम वेडरबर्न की अध्यक्षता मे भारतीय राष्ट्रीय महासभा (काग्रेस) का पच्चीसवाँ अधि-वेशन हुआ था तब आप उसमे उत्साहपूर्वक सम्मिलित हुए थे। इसके उपरान्त आप न केवल अजमेर, मध्यभारत और राजस्थान की प्रान्तीय काग्रेस कमेटी के कई वर्ष तक अध्यक्ष रहे, प्रत्युत अमृतसर, दिल्ली, बम्बई तथा कलकत्ता आदि नगरो मे हुए काग्रेस के अनेक वार्षिक अधिवेशनो मे भी आपने सक्रिय रूप से भाग लिया था। सन् 1921-22 के असहयोग आन्दोलन मे भी आप पीछे नही रहे और अपनी अच्छी चलती हुई 'वकालत' को छोडकर 6 मास का कारा-वास भी भोगा। स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार और प्रचार की दिशा मे भी आपका अनन्य योगदान रहा था। प्रातीय काग्रेस कमेटी के अध्यक्ष रहने के अतिरिक्त आप कई वर्ष तक अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी के भी सदस्य रहे थे। श्रीमती एनी बेसेण्ट के द्वारा सचालित 'होमरूल लीग' की विभिन्न प्रवृत्तियो मे भी आपका सक्रिय सहयोग रहा था।

आपका विवाह आर्यसमाज के प्रख्यात नेता, शिक्षा-शास्त्री और दार्शनिक मास्टर आत्माराम अमृतसरी की सुशिक्षिता पुत्री श्रीमती सुखदादेवी से 27 जून सन् 1917 को हुआ था। इस परिवार के सम्पर्क ने श्री शारदा के व्यक्तित्व में और भी प्रखरता उत्पन्न कर दी तथा आपका कार्य-क्षेत्र कांग्रेस के साथ-साथ आर्यसमाज का सुधारवादी आन्दोलन भी हो गया। आपकी सहधर्मिणी श्रीमती सुखदा देवी ने जहाँ आपकी राष्ट्रीय प्रवृत्तियों में सच्चे सहयोगी के रूप में भाग लिया वहाँ आर्यसमाज के द्वारा प्रवर्तित अनेक आन्दोलनों में वे पीछे नहीं रहीं। आप महात्मा गांधी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन से इतने प्रभावित हो गए थे कि आपने विश्वविद्यालय द्वारा प्रदत्त अपनी सभी डिग्रियाँ यह कहकर विश्वविद्यालय को लौटा दी थीं कि "इन गुलामी के चिह्नों को अपने नाम के साथ जोड़े रखना मैं राष्ट्रीय स्वाभिमान के प्रतिकूल समझता हूँ।" आपका यह पत्र श्री मोतीलाल नेहरू के संरक्षण में प्रयाग से प्रकाशित होने वाले अँग्रेजी के दैनिक पत्र 'दि इण्डिपेण्डेण्ट' के मुखपृष्ठ पर प्रकाशित हुआ था। आपने जहाँ कांग्रेस के माध्यम से राजस्थान के सभी देशी राज्यों में अभूतपूर्व जागृति की थी वहाँ आर्यसमाज के सुधारवादी आन्दोलन में भी आपका अनन्य योगदान रहा था। इस सन्दर्भ में आपका देश के अनेक उच्चकोटि के नेताओं से अत्यन्त निकट का सम्पर्क हो गया था। देशी राज्यों में राजनीतिक जागृति उत्पन्न करने के पावन उद्देश्य से आपने सर्वश्री गणेशशंकर विद्यार्थी, विजयसिंह 'पथिक' और जमनालाल बजाज के सहयोग से दिल्ली के चाँदनी चौक बाजार के 'मारवाड़ी पुस्तकालय' में 'राजपूताना मध्यभारत सभा' की स्थापना की थी, जिसके माध्यम से आपने देशी राज्यों की प्रजा की राजनीतिक आशाओं-आकांक्षाओं की पूर्ति करने का साहसिक अभियान चलाया था।

जब पण्डित जवाहरलाल नेहरू के प्रयास से 'अखिल भारतीय देशी राज्य प्रजा परिषद्' की स्थापना हुई तो आपको उसकी शाखा 'मारवाड़ प्रजा परिषद्' का अध्यक्ष बनाया गया। आपके साथ मन्त्री के रूप में लोकनायक श्री जयनारायण व्यास ने कार्य किया था। जब सन् 1933 में 'दयानन्द निर्वाण अर्ध शताब्दी' का उत्सव अजमेर में मनाया गया था तब उस अवसर पर आयोजित 'प्रवासी सम्मेलन' की अध्यक्षता आपने ही की थी। 'परोपकारिणी सभा' की अनेक प्रवृत्तियों से सम्बद्ध होने के साथ-साथ आप 'आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा' तथा 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' से भी यावज्जीवन जुड़े रहे और उनके विभिन्न पदों पर रहकर समाज की सेवा की। हैदराबाद (दक्षिण) में वहाँ के निजाम द्वारा आर्यसमाज के कार्यों में डाली जाने वाली बाधाओं के निराकरण के लिए जब आर्यसमाज की ओर से सन् 1939 में 'आर्य सत्याग्रह' प्रारम्भ किया गया तब आप उसके 'द्वितीय सर्वाधिकारी' बनाए गए थे। इस सत्याग्रह के 'प्रथम सर्वाधिकारी' आर्य जगत् के प्रख्यात नेता महात्मा नारायण स्वामी थे। 'सत्यार्थ प्रकाश' के 'चौदहवें समुल्लास' पर प्रतिबन्ध लगाने के विरोध में जब सिन्ध में सत्याग्रह करने की घोषणा हुई तब भी आप महात्मा नारायण स्वामी, राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री, लाला खुशहालचन्द 'खुरसन्द' (बाद में आनन्द स्वामी) तथा स्वामी अभेदानन्द आदि आर्य नेताओं के साथ कराची गए थे। इसी प्रकार जब पंजाब में राष्ट्रभाषा हिन्दी को प्रतिष्ठित कराने की दिशा में आर्यसमाज की ओर से अभियान चलाया गया तब भी आप पीछे नहीं रहे थे। इसके अतिरिक्त आर्यसमाज की विभिन्न संस्थाओं के संचालन तथा संवर्धन में भी आपका प्रशंसनीय सहयोग सदैव बना रहता था। जब महर्षि दयानन्द सरस्वती की जन्म-भूमि 'टंकारा' में एक 'स्मारक ट्रस्ट' का निर्माण सन् 1951 में किया गया तब आप उसके भी मन्त्री चुने गए थे। इस सम्बन्ध में ट्रस्ट की आर्थिक स्थिति मजबूत करने के लिए आप धन-संग्रहार्थ दक्षिण अफ्रीका भी गए थे। अपने जीवन के उत्तरार्ध में आपने संन्यास ग्रहण करके अपना नाम 'स्वामी चन्द्रानन्द' रख लिया था।

आप जहाँ कुशल संगठक, अद्भुत समाज-सुधारक और दूरदर्शी नेता थे वहाँ आपने अपनी लेखनी के द्वारा भी साहित्य और समाज की अभिनन्दनीय सेवा की थी। आर्यजगत् की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रेरणाप्रद लेखादि लिखने के अतिरिक्त आपने राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार में भी अत्यन्त उल्लेखनीय कार्य किया था। आप अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से संचालित हिन्दी परीक्षाओं के भी लगभग 20 वर्ष तक अजमेर केन्द्र के संचालक रहे थे। आपकी यह धारणा थी कि 'इस समय तो सबसे पहले जनता के सामने दो ही बातें रखनी चाहिएँ—

एक तो 'राष्ट्रभाषा हिन्दी' का सारे देश में प्रचार हो और दूसरे वह कचहरियों और शासकीय कार्यों की भाषा होकर शिक्षा का माध्यम भी बने। आपने यावज्जीवन हिन्दी की सेवा के लिए अथक प्रयास किया और अपनी लेखनी से अनेक ग्रन्थ-रत्न प्रस्तुत किये। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थों में 'कालेज होस्टल', 'आर्यसमाज और असहयोग', 'माडरेटों की पोल', 'दलितोद्धार', 'शुद्धि', 'शुद्धि चन्द्रोदय', विधवा विवाह करो', शारदा एक्ट', 'हिन्दू संगठन', 'सन्ध्या', 'सृष्टि की कहानी' तथा 'नोआखाली का भीषण हत्याकाण्ड' आदि उल्लेख्य है। आप अपनी 'आत्म-कथा' तथा 'दक्षिण अफ्रीका की यात्रा के सस्मरण' भी लिखना चाहते थे। खेद है कि आप अपनी इस इच्छा को पूर्ण न कर सके। पत्रकार के रूप में भी आपने हिन्दी की प्रशसनीय सेवाएँ की थी। 'आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा' के मुखपत्र साप्ताहिक 'आर्य मार्तण्ड' का आपने अनेक वर्ष तक सम्पादन किया था। आपके सम्पादन-काल मे प्रकाशित उसके अनेक विशेषाक आपकी ऐसी प्रतिभा तथा योग्यता के उत्कृष्ट प्रमाण है। इस उपलक्ष्य में आपका अभिनन्दन भी किया गया था। आपने अजमेर में नारी-शिक्षा की प्रबल समर्थिका श्रीमती गुलाब-देवी 'चाची जी' को समर्पित किये गए अभिनन्दन-ग्रन्थ का सम्पादन भी किया था। आप अनेक वर्ष तक 'अजमेर पत्र-कार परिषद्' के अध्यक्ष भी रहे थे।

आपका निधन 4 नवम्बर सन् 1957 को हुआ था।

स्वामी चाँदमल

आपका जन्म राजस्थान के जयपुर नगर के एक पोरवाल वैश्य-परिवार मे सन् 1863 मे हुआ था। यौवनावस्था तक पहुँचते-पहुँचते आपके मानस मे वैराग्य की भावनाएँ उत्पन्न हो गई थी। फलस्वरूप आपने सन् 1881 में 'श्वेताम्बर सम्प्रदाय' में दीक्षा ग्रहण करके विरक्त सन्यासी का-सा जीवन व्यतीत करना प्रारम्भ कर दिया था।

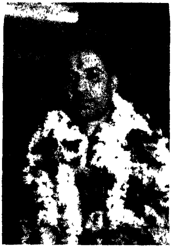
आप 'चित्र-काव्य' की रचना करने मे अत्यन्त दक्ष थे। आपकी चमत्कारपूर्ण रचना का एक उदाहरण इस प्रकार है :

धाम धरा धर धाक धजी धन
धेनु धरे रह जावत धोरी।
कोट-किला-गज-कोष-तुरी-रथ,
मात-पिता-सुत-बान्धव-गोरी ।।
राज रजा चर चीर सुअम्बर,
खास खवास तजी निज खोरी।
खेलत खेल खिलार गये कित,
फूँक दिया जिमि फागण होरी ।।

आपका देहान्त सन् 1934 मे हुआ था।

श्री चाँदमल अग्रवाल 'चन्द्र'

श्री अग्रवाल का जन्म 21 फरवरी सन् 1916 को महाराष्ट्र के औरगाबाद नामक नगर के एक व्यापारी परिवार में हुआ था। आपके परिवार मे हिन्दी के प्रति परम्परा से ही सहज अनुराग था इसी कारण बी० ए०, एल-एल० बी० तक की शिक्षा प्राप्त करने के साथ-साथ आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की साहित्यरत्न परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी। शिक्षा-समाप्ति के बाद आपने जहाँ समाज-सेवा के क्षेत्र मे उल्लेखनीय कार्य



करना प्रारम्भ किया था वहाँ साहित्यिक रचनाएँ करने की दिशा मे भी आपने अपनी प्रतिभा का अपूर्व परिचय दिया था।

आपने जहाँ औरगाबाद कैंटोनमेण्ट बोर्ड के उत्साही सदस्य के रूप में अपने नगर की जनता की उल्लेखनीय सेवाएँ की थीं वहाँ हैदराबाद हिन्दी-प्रचार-सभा, राजस्थानी

युवक मण्डल, अग्रवाल सभा, भारतीय साहित्य मण्डल और साहित्य संगम आदि अनेक सस्थाएँ भी आपके सहयोग से कृतार्थ हुई थी। साहित्य-रचना के क्षेत्र मे आपने सबसे पहले कहानी-लेखक के रूप मे अवतरण किया था। आपकी पहली कहानी सन् 1932 में 'नवजीवन' मे और पहली कविता 'कोयल के प्रति' नाम से सन् 1937 मे प्रकाशित हुई थी। आपकी अन्य प्रकाशित रचनाओ मे 'चित्रागदा', 'चन्द्रकिरणे', 'जुगनू', 'सुवर्ण तुला', 'बिखरे मोती', 'चन्द्रकवि गाथा', 'श्री-कृष्ण शतकार्घ' तथा 'कैकेयी' के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

आपका 'कैकेयी' नामक अकेला महाकाव्य ही ऐसा है जिसके कारण आपको बहुत ख्याति मिली थी और इसका महत्त्व हिन्दी के प्राय. सभी उच्चकोटि के समीक्षको ने मुक्त-कण्ठ से स्वीकार किया था। सन् 1959 मे आपकी कुछ स्फुट कविताएँ 'आन्ध्र के हिन्दी कवि' नामक काव्य-सकलन मे उन दिनो प्रकाशित हुई थी जब औरगाबाद कभी आन्ध्र मे समझा जाता था। आपने सन् 1956 मे 'हरिहर भक्ति' नामक एक फिल्म के गीत तथा सवाद भी लिखे थे।

आपका निधन 9 जुलाई सन् 1978 को हुआ था।

श्री चिरंजीलाल शर्मा 'चपल'

श्री 'चपल' का जन्म सन् 1871 मे उत्तर प्रदेश के अलीगढ जनपद के टप्पल नामक स्थान मे हुआ था। आपने 6 वर्ष की आयु से ही विद्याध्ययन आरम्भ कर दिया था और सन् 1886 मे टप्पल के मिडिल स्कूल से ही 'हिन्दी मिडिल' की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इस परीक्षा मे आशातीत सफलता प्राप्त करने पर आपको तहसील के शिक्षा विभाग की ओर से 4 रुपये के नकद पुरस्कार के साथ-साथ 'अबुल फजल' नामक पुस्तक भी उपहार मे प्राप्त हुई थी। मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने नलेसरा के प्राइमरी स्कूल मे 4 रुपये मासिक पर 'मानीटरी' का कार्य प्रारम्भ किया था और फिर धीरे-धीरे 19 नवम्बर सन् 1888 को दस रुपये मासिक पर वहाँ के 'टाउन स्कूल' मे मुख्य अध्यापक हो गए थे। सन् 1889 मे आपने आगरा के 'नार्मल स्कूल' मे ट्रेनिग के लिए प्रवेश लिया और वहाँ पर परीक्षा मे आपने सर्वप्रथम स्थान प्राप्त करके अपना विशिष्ट महत्त्व स्थापित किया। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि जिन दिनो आप 'नार्मल स्कूल' मे ट्रेनिग प्राप्त कर रहे थे तब भी आपको 7 रुपये मासिक की छात्रवृत्ति मिलती थी। इस प्रकार आप धीरे-धीरे प्रगति करते हुए सन् 1912 मे एक दिन सब-डिप्टी-इस्पेक्टर हो गए और सन् 1925 मे इस पद से निवृत्त हुए। जिस समय आपने इस पद मे मुक्ति प्राप्त की थी तब आपका वेतन 60 रुपये मासिक था।



आप एक कुशल अध्यापक होने के साथ-साथ अध्ययन-शील रचनाकार भी थे। आपके द्वारा विरचित अनेक कविताओ मे समाज-सुधार तथा राष्ट्र-भक्ति के उदात्त भाव दृष्टिगत होते है। आपके द्वारा लिखित कविताएँ 'पद्य पुष्पाजलि' नाम से सन् 1930 मे प्रकाशित हुई थी। इन कविताओ को देखकर आपकी काव्य-प्रतिभा का सहज अनुमान हो जाता है। आपकी 'निद्रा' के विषय मे लिखी गई एक कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है

इक चचल नारि से काम पर्यो,
नित साँझ सौ आइ सतावति है।
वह दूरि करौ, नहि जाइ सखा,
हिय सौ हिय आनि मिलावति है।।

आपका निधन सन् 1937 मे हुआ था।

श्री चुन्नीलाल 'शेष'

श्री 'शेष' का जन्म सन् 1909 मे उत्तर प्रदेश के प्रख्यात

तीर्थ मथुरा में हुआ था। आपका नाम सूर-साहित्य के विशेष अध्येताओं में अग्रगण्य है। आप जहाँ उच्चकोटि के समीक्षक और अन्वेषक थे वहाँ कवि के रूप में भी आपकी प्रतिभा का परिचय हिन्दी-जगत् को प्राप्त हुआ था। आपके द्वारा विरचित और सम्पादित 'सूर के सौ कूट' (1955) और 'अष्टछाप के वाद्य यन्त्र' (1954) नामक कृतियाँ आपके गहन ज्ञान का साक्ष्य प्रस्तुत करती है। 'सूर का वसन्त वर्णन' (1952) नामक आपकी कृति भी अपनी विशिष्ट शैली के लिए विख्यात है। आपकी इन सभी रचनाओ से आपके ज्ञान और ब्रज भाषा साहित्य-सम्बन्धी अटूट प्रेम का जो परिचय मिलता है वह बहुत कम लोगो मे दृष्टिगत होता है।



व्यवसाय मे रहते हुए भी आपने अपने स्वाध्याय के बल पर 'हाई स्कूल' तथा 'साहित्यरत्न' की परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर ली थी। आपकी अप्रकाशित कृतियो मे 'ब्रज की लोक-पूजा', 'सूर के राधा और कृष्ण' और 'ब्रज सस्कृति' के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपने ब्रजभाषा मे 'नागमेन' नामक एक उपन्यास की रचना भी की थी।

आपके अधिकाश शोध-सम्बन्धी लेख 'ब्रज भारती'-जैसी पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहते थे। कवि के रूप मे भी आपने अभूतपूर्व सिद्धि अर्जित की थी। आपकी कवित्त-प्रतिभा का परिचय आपकी 'लक्ष्मी स्वयवर' नामक काव्य-कृति को देखने मे मिल जाता है। आपकी रचनाएँ आकाशवाणी से भी समय-समय पर प्रसारित होती रहती थी। कहानी-लेखन मे भी आप अत्यन्त दक्ष थे। आपके द्वारा लिखित हास्य-रस की अनेक कहानियाँ बडी लोकप्रिय हुई थी, जिनमे 'मीठी बीजुरी' और 'गाम को उल्लू' विशेष स्थान रखती है।

आपका निधन 24 जून सन् 1963 को हुआ था।

श्री चूहड़मल डिपार्योमल हिन्दूजा

श्री हिन्दूजा का जन्म अविभाजित भारत के सिन्ध प्रदेश के दादू नामक स्थान मे 12 मार्च सन् 1902 को हुआ था। आप जहाँ सिन्धी भाषा के उत्कृष्ट लेखक तथा पत्रकार के रूप मे साहित्य मे अपना विशिष्ट स्थान रखते थे वहाँ सिन्धी भाषा को देवनागरी लिपि मे लिखने के प्रबल समर्थक थे।

अपने पत्रकारिता के जीवन मे आपने वहाँ के नवयुवकों मे हिन्दी भाषा तथा देवनागरी के प्रति जो प्रेम जागृत किया था वह अभूतपूर्व है। आपके द्वारा लिखित हिन्दी के अनेक स्फुट लेख समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहते थे।

विभाजन के उपरान्त आप स्थायी रूप से बम्बई मे आकर बस गए थे और वही पर सन् 1969 मे उल्हासनगर मे आपका निधन हुआ था।

श्री चेतराम शर्मा

श्री शर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के पौडी गढवाल क्षेत्र के बगार पट्टी साबली नामक ग्राम मे सन् 1891 मे हुआ था। आपने पोखडा के मिडिल स्कूल से मिडिल की परीक्षा देकर चौपडा (पौडी) के हाई स्कूल से मैट्रिक तक की शिक्षा प्राप्त की थी। इसके उपरान्त आप आगे की पढाई जारी रखने की दृष्टि से पजाब चले गए थे। वहाँ पर आपने जहाँ सस्कृत, हिन्दी और अन्य भाषाओ का ज्ञान अर्जित किया वहाँ सगीताचार्य श्री विष्णु दिगम्बर पलुस्कर की सगीत-पद्धति का भी सक्रिय ज्ञान प्राप्त किया। अपने विद्याध्ययन की समाप्ति पर आपने 'नेशनल कालेज लाहौर' मे हिन्दी-सस्कृत-शिक्षक का कार्य प्रारम्भ किया था। वहाँ पर आपके छात्रो मे विख्यात क्रान्तिकारी सरदार भगतसिह और यशपाल आदि प्रमुख थे। पहले आप अपना नाम 'चेतराम बौडाई' लिखा करते थे किन्तु फिर आपने 'बौडाई' शब्द को तिलाजलि दे दी थी और 'चेतराम शर्मा' कहलाने लगे थे।

जिन दिनो आप लाहौर मे शिक्षक का कार्य कर रहे थे उन दिनो आपने वहाँ पर हिन्दी-प्रचार के कार्य मे भी गह-

नता से रुचि ली थी और कुछ दिन तक आपने वहाँ से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दी सन्देश' नामक पत्र का सम्पादन भी



अत्यन्त योग्यतापूर्वक किया था। अध्यापन तथा सम्पादन के कार्य से समय निकालकर आपने साहित्य-रचना की ओर भी अत्यधिक ध्यान देना प्रारंभ किया था और पंजाब विश्वविद्यालय की ओर से संचालित हिन्दी की रत्न, भूषण तथा प्रभाकर परीक्षाओं के लिए अनेक पाठ्यपुस्तकें भी तैयार की थीं। लाहौर में रहते हुए आपने हिन्दी-प्रचार का कार्य करने के लिए अनेक संस्थाओं की स्थापना में भी अपना अनन्य सहयोग प्रदान किया था।

कुछ समय तक आपने उत्तर भारत की सुप्रसिद्ध शिक्षा-संस्था गुरुकुल कांगड़ी में भी अध्यापन का कार्य किया था और फिर लाला देवराज द्वारा संस्थापित जालन्धर के 'कन्या महाविद्यालय' में हिन्दी-संस्कृत-शिक्षक होकर चले गए थे। वहाँ पर रहते हुए आपने लेखन के क्षेत्र में अभिनन्दनीय कार्य किया था। उन दिनों आपके साहित्यिक समीक्षा-सम्बन्धी लेख हिन्दी की प्रायः सभी प्रमुख पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करते थे। आप हिन्दी के प्रति कितने अनुरक्त थे इसका सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि आपके द्वारा लिखी गई 'हिन्दी की आरती' किसी समय बड़ी लोकप्रिय हुई थी। उस आरती की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं

आरति श्री हिन्दी जननी की
वेद, ब्रह्म निःसृत अति नीकी।

संस्कृत रस पीयूष-पायिनी
चितवनि चलनि टपनि मुस्क्यावनि
सन्तन मन भाविनि अति पावनि
सुभग वर्ण सरला अति नीकी।

विद्यापति, नानक, कबीर की
चन्द, सूर, तुलसी, केशव की
गंग, बिहारी पद्माकर की
रहिमन, रसनिधि भूषणजी की,
मीरा, बनी ठनी, सहजो की
भट्ट, भिखारी, पूरणजी की
खान, लीन रस प्रेम परायण
दयानन्द, हरिचन्द नरायण
सरस्वती भारती ज्योती की,
सत्य सनातन योगि यती की
कीरति ललित मदन मोहन की
शंकर राम श्याम सुन्दर की
ओज भरी प्यारी गांधी की
जय जय जय हिन्दी जननी की।

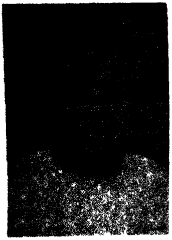
आप अपने जीवन के अन्तिम चरण में सौराष्ट्र (गुजरात) की सुप्रसिद्ध महिला शिक्षा संस्था 'आर्य गुरुकुल पोरबन्दर' में चले गए थे। इन सभी संस्थाओं में रहते हुए आपने अपने गहन शास्त्रीय ज्ञान द्वारा हिन्दी साहित्य की बड़ी सेवा की थी। पोरबन्दर से लौटने पर आप अपने जन्म-ग्राम में ही रहने लगे थे। यहाँ पर रहते हुए ही आपका निधन 29 मई, 1953 को हुआ था।

श्री चैनराम व्यास

श्री व्यासजी का जन्म 4 अक्तूबर सन् 1902 को मध्यप्रदेश के मन्दसौर जनपद के नारायणगढ़ नामक स्थान में हुआ था। जिन दिनों महात्मा गांधी का असहयोग आन्दोलन देश में पूर्ण यौवन पर था तब आप उससे पूर्णतः प्रभावित हो गए थे। एक कुशल और अध्यवसायी शिक्षक के रूप में अपने कर्ममय जीवन का प्रारम्भ करके आपने अनेक सामाजिक तथा राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लिया था। उन दिनों आपका सम्पर्क प्रदेश के जिन उच्चकोटि के नेताओं और कार्यकर्ताओं से था उनमें सर्वश्री मिश्रीलाल गंगवाल, वैद्य श्री ख्यालीराम द्विवेदी, ज्योतिषाचार्य पण्डित दीनानाथ शास्त्री चुलैट, लालाराम आर्य, सूर्यनारायण गौड

और लक्ष्मीदत्त शास्त्री के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य हैं।

राष्ट्रीय जागरण और समाज-सुधार के कार्यों के साथ-साथ आप साहित्य-रचना की ओर भी तन्मयतापूर्वक सलग्न रहे थे। इस दिशा मे आपको सर्वश्री पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', कालिका-प्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर' और शान्तिप्रिय द्विवेदी का अनन्य सहयोग प्राप्त हुआ था। कभी वह समय था कि इन्दौर मे यह 'चौकडी' अपनी विशिष्ट कार्य-प्रणाली के लिए अत्यन्त विख्यात थी।



इन्दौर के कार्य-काल मे आपके सहकर्मियो मे प्रोफेसर श्रीनिवास चतुर्वेदी, पण्डित कमलाशकर मिश्र, पण्डित शिवसेवक तिवारी और शिखरचन्द्र जैन के नाम भी ध्यातव्य है।

आपने 'दैनिक क्रान्ति' पत्र के माध्यम से समाज की जो सेवा की थी वह सर्वथा अभिनन्दनीय कही जा सकती है। अ० भा० हिन्दी साहित्य सम्मेलन का जो अधिवेशन इन्दौर मे सन् 1935 मे महात्मा गांधीजी की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुआ था उस अवसर पर आपने श्री मिश्रीलाल गगवाल के सहयोग से 'काग्रेस सेवा दल' का सगठन भी किया था। सन् 1930-31 मे आपने मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति इन्दौर की मासिक पत्रिका 'वीणा' के सम्पादन मे सहयोग देना प्रारम्भ किया था और अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक उसमे सलग्न रहे। आकाशवाणी के इन्दौर केन्द्र से जब 'ग्राम-सभा' का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ तब आप उससे सम्बद्ध हो गए थे। इस कार्यक्रम को आपने 'लच्छू काका' के रूप मे जो लोकप्रियता प्रदान की वह आपकी कर्मठता का प्रमाण है।

'वीणा' के सम्पादन के अतिरिक्त आपने कई वर्ष तक 'मध्य भारत हिन्दी साहित्य समिति' के प्रचारक के रूप मे भी अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया था। अपने इस कार्य-काल मे आपने समिति की ओर से अनेक 'सास्कृतिक समारोह' आयोजित किए थे। लगभग 30 वर्ष तक मध्य प्रदेश के शैक्षणिक क्षेत्र मे उल्लेखनीय योगदान देकर आप द्वितीय विश्व-युद्ध छिडने पर कुछ समय के लिए मध्य प्रदेश शासन मे 'पब्लिसिटी आफिसर' भी रहे थे। वास्तव मे उन दिनों इन्दौर के शिक्षा, सस्कृति, साहित्य और समाज-सेवा के क्षेत्र की कोई ऐसी प्रवृत्ति या सस्था नही बची थी, जिससे आपका निकट का सम्बन्ध न रहा हो। आप एक उत्कृष्ट लेखक, सफल अध्यापक, समर्पित जन-सेवक और कुशल सगठक थे।

आपका निधन 6 दिसम्बर सन् 1981 को हुआ था।

श्री चैनसुख लुहाड्या

श्री लुहाड्या का जन्म राजस्थान के जयपुर नगर मे सन् 1830 मे हुआ था। आप हिन्दी, प्राकृत, ज्योतिष तथा आयुर्वेद के प्रकाण्ड विद्वान् थे। पहले-पहल आपने आन्तेला नामक ग्राम में राजकीय कार्य किया था और फिर रियासत के धूला ठिकाने मे कामदार हो गए थे। अपनी आयु के चतुर्थ भाग मे आपकी नौकरी छूट गई थी और आपको गहन अर्थ-सकट का सामना करना पडा था। आपका अधिकाश समय धर्म-ध्यान करने और भजन-पद आदि बनाने मे व्यतीत होता था। समस्या-पूर्ति करने मे आप इतने प्रवीण थे कि उस समय के प्रख्यात कवि थानजी अजमेरा भी कठिन समस्याओ की पूर्तियाँ इनसे कराया करते थे।

आपके द्वारा रचित कृतियो मे 'अकृत्रिम चैत्यालय पूजा' और 'आत्म-बोध' प्रमुख है। आपके द्वारा की गई 'बाजत दमामा ये वीर शिव वामा के' की समस्या-पूर्ति को देखकर आपकी काव्य-पटुता का सम्यक् परिचय मिल जाता है। रचना इस प्रकार है.

केसर सुरग तन विविध प्रकार नामे,
नीर सुधा सम्यक् सँजोये दिग् जामा के।
चारित मुकुट धारि अव्रत विघन टारि,
आरती उतारे कहै सुमति सुधामा के।।
शील व्रत सजम ये सकल बराती सग,
चढे ध्यान दुरिद समाज मुक्ति रामा के।
मारि मोह तोरण विराजे क्षपक श्रेणी मे,
बाजत दमामा ये वीर शिव वामा के।।

आपका निधन 65 वर्ष की आयु मे सन् 1895 मे हुआ था।

जैन दिवाकर मुनि चौथमल

मुनि चौथमल का जन्म सन् 1877 मे मध्य प्रदेश के नीमचो नामक स्थान मे हुआ था। स्थानीय विद्यालय मे हिन्दी, उर्दू तथा अँग्रेजी की शिक्षा प्राप्त करके आप कर्म-क्षेत्र मे प्रवृत्त हुए और 16 वर्ष की आयु मे प्रतापगढ राजस्थान निवासी श्री पूनमचन्द्र की सुपुत्री मानकुँवर बाई के साथ आपका विवाह हो गया। आपने अपने निजी स्वाध्याय के बल पर प्राकृत, फारसी, गुजराती, राजस्थानी तथा मालवी आदि भाषाओ का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आपने जहाँ जैन धर्म के सभी ग्रन्थो का गम्भीर तलस्पर्शी अध्ययन किया था वहाँ गीता, रामायण, श्रीमद्भागवत, कुरान तथा बाइबिल आदि अनेक धर्म-ग्रन्थो का ज्ञान भी प्राप्त कर लिया था।

जैन ग्रन्थों के निरन्तर पारायण करते रहने के कारण आपकी आस्था उसमे दिन-प्रतिदिन दृढ से दृढतर होती गई और एक दिन वह भी आ गया जब कि आपने स्थानकवासी परम्परा के आचार्य श्री हुक्मीचन्द जी महाराज के सम्प्रदाय मे श्री हीरालाल जी महाराज द्वारा मुनि जीवन बिताने की दृष्टि से विधिवत् दीक्षा ग्रहण कर ली और देश के विभिन्न अचलों मे भ्रमण करके जैन धर्म का प्रचार करने मे सलग्न हो गए। अपने दीक्षा-जीवन के 55 वर्षों मे आपने राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश तथा दिल्ली आदि अनेक प्रदेशो के सभी प्रमुख नगरों मे जैन धर्म की उदात्त शिक्षाओ का प्रचार अथक रूप से किया था। आपने अपने व्यवहार मे अनेक नरेशो-नवाबो, अमीर-उमरावो, ठाकुर-सामन्तों को प्रभावित करके उनके द्वारा मानव जाति के उद्धार के अनेक लोकोपयोगी कार्य कराए।



अपने इस प्रचार-कार्य को गति देने की दृष्टि से आपने 'वीर वर्धमान श्रमण सघ' नामक सस्था की स्थापना भी की और उसके माध्यम से समाज मे प्रचलित मास, मदिरा, गाँजा, भाँग, तम्बाकू आदि मादक द्रव्यो के सेवन की कुटेवों को जड-मूल से उखाडने का अभिनन्दनीय कार्य किया। आप जहाँ कट्टर समाज-सुधारक थे वहाँ आपने अपनी योजनाओं के व्यापक प्रचार के लिए बहुत से समाजोपयोगी प्रेरक साहित्य की रचना की थी। आपकी ऐसी कृतियो मे 'भगवान् महावीर का आदर्श जीवन', 'जम्बू कुमार', 'श्रीपाल', 'भविष्यदत्त', 'चम्पक सेठ', 'धन्ना', 'शालिभद्र', 'नेमिनाथ' और 'पार्श्वनाथ' के जीवन-चरित्रो के अतिरिक्त 'आदर्श रामायण', 'जैन सुबोध गुटका' तथा 'चतुर्थ चौबीसा' नामक अनेक उपदेशपरक स्तवन एव निर्ग्रन्थ प्रवचन प्रमुख है। यह सौभाग्य का विषय है कि आपकी विचार-धारा के प्रचार तथा प्रसार की दिशा मे आपके अनेक शिष्य-प्रशिष्य पूर्ण तन्मयता से सलग्न है।

आपकी दिवगति सन् 1950 मे कोटा (राजस्थान) मे हुई थी। यह एक सयोग ही कहा जायगा कि आपके जन्म, दीक्षा तथा अवसान का दिन 'रविवार' ही पडता है।

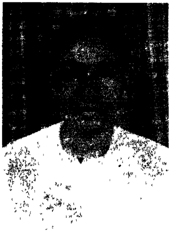
श्री छत्रध्वज शर्मा

श्री शर्मा का जन्म भारत के पूर्वोत्तर अचल के इम्फाल (मणिपुर) के 'शगोलबन्द तेरा कैथेल' नामक स्थान मे 19 अगस्त सन् 1922 को हुआ था। शर्मा जी जब बहुत छोटे थे तब आपके पिताजी का निधन हो गया था। फलस्वरूप आपका पालन-पोषण आपकी माता ने ही किया था। आपकी शिक्षा-दीक्षा 'तेरा कैथेल' (इम्फाल) निवासी पण्डित राधा-मोहन शर्मा की देख-रेख मे हुई थी। उनसे सस्कृत और हिन्दी का विधिवत् अध्ययन करके आप अपनी युवावस्था मे ही

महात्मा गाधी के 'साबरमती आश्रम' मे चले गए थे ।

बाद में महात्मा गाधी के परामर्श पर ही आप उनका आशीर्वाद प्राप्त करके अपने क्षेत्र मे चले गए और वहाँ पर राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा राष्ट्रीयता का प्रचार प्रारम्भ कर दिया। सन् 1946-47 मे आप 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा' की ओर से प्रारम्भ किये गए 'हिन्दी-प्रचारक प्रशिक्षण शिविर' मे सम्मिलित हुए और इस शिविर की समाप्ति पर आप 'मणिपुर' प्रान्त के लिए 'प्रमाणित प्रचारक' नियुक्त हुए। शर्मा जी की प्रेरणा और जनता की सहायता से वहाँ पर हिन्दी का पर्याप्त प्रचार हुआ और एक दिन वह भी आया जब आपके प्रयास से वहाँ पर 'मणिपुर राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' की स्थापना भी हो गई।

जब श्री जे० एम० रैना आई० सी० एस० मणिपुर मे चीफ कमिश्नर होकर गए तब आपने उनसे मिलकर हिन्दी के प्रचार-कार्य को आगे बढाने की अनेक योजनाएँ बनाईं। श्री रैना की धर्मपत्नी श्रीमती विमला रैना क्योंकि स्वय भी हिन्दी की उत्कृष्ट लेखिका थी अत उन्होंने भी शर्मा जी के कार्य को आगे बढाने मे पर्याप्त सहायता की। श्री शम्भुदयाल बहुगुणा जब मणिपुर मे शिक्षा विभाग के निदेशक के रूप मे पहुँचे तो आपका सक्रिय सहयोग भी शर्मा जी प्राप्त करने मे नही चूके। इन दोनों महानुभावों की सहायता से मणिपुर मे हिन्दी का प्रचार-कार्य काफी बढा था।



हिन्दी के प्रचार-कार्य मे अग्रसर रहने के साथ-साथ आपने वहाँ पर हिन्दी की अनेक पाठ्य-पुस्तकों का निर्माण भी किया था। यद्यपि साहित्यिक दृष्टि से उनका उनका महत्त्व नही, परन्तु वहाँ की जनता मे हिन्दी का प्रचार करने मे शर्मा जी की इन पुस्तको का बहुत बडा योगदान है। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों मे 'हिन्दी व्याकरण' (1952), 'राष्ट्रभाषा मित्र' (1958), 'हिन्दी गिनती और अर्जी' (1959), 'हिन्दी ट्रासलेशन पार्ट-1' (1959), 'हिन्दी ट्रासलेशन पार्ट-2' (1960), 'हिन्दी ट्रासलेशन पार्ट-3' (1961), 'राजभाषा प्रबोधिनी' (1974), 'गांधी विचार' तथा 'जातीय बाल साहित्य' आदि विशेष उल्लेखनीय है। आपने 'मणिपुर स्टेट सहकारी समिति' के लिए उसके नियम-उपनियमों का हिन्दी अनुवाद भी सन् 1959-60 में प्रस्तुत किया था।

शर्मा जी की हिन्दी-सेवा का सबसे उत्कृष्ट प्रमाण यही है कि आपने 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा' की ओर से प्रकाशित 'रजत जयन्ती ग्रन्थ' मे श्रीमती विमला रैना के सहयोग से 'मणिपुर की हिन्दी को देन' नामक एक विस्तृत समीक्षात्मक लेख लिखकर प्रकाशित कराया था। 'राष्ट्र-भाषा' पत्र मे भी आप अपने लेख तथा कविताएँ प्रकाशित कराते रहते थे। आकाशवाणी के इम्फाल केन्द्र से आपने वहाँ के लोकगीतो तथा सामाजिक जीवन के सम्बन्ध मे भी अनेक वार्ताएँ हिन्दी मे प्रसारित की थी। आपने हिन्दी के अतिरिक्त मणिपुरी भाषा मे भी महात्मा गाधी, जवाहर-लाल नेहरू, आचार्य विनोबा भावे और लालबहादुर शास्त्री के जीवन तथा कार्यों पर प्रकाश डालने वाली 4 पुस्तके लिखी थी।

आप सन् 1975 मे नागपुर मे आयोजित 'विश्व हिन्दी सम्मेलन' मे सम्मिलित होने के लिए आए थे कि यहाँ पर ही आपका स्वास्थ्य बिगड गया और इसी कारण 27 अप्रैल सन् 1975 को इम्फाल मे आपका निधन हो गया।

श्री छदम्मीलाल 'विकल'

श्री 'विकल' का जन्म उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद नगर मे जनवरी सन् 1895 को हुआ था। अपनी शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त आप साहित्य-निर्माण की दिशा मे प्रवृत्त हो गए थे। आपने मुरादाबाद के 'छोटेलाल जैन प्रिंटिंग प्रेस' की ओर से प्रकाशित होने वाले 'शकर' नामक मासिक पत्र का सम्पादन सन् 1929 मे किया था।

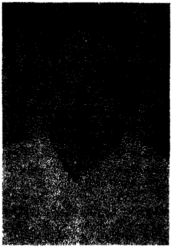
आप जहा एक सहृदय कवि और पत्रकार के रूप में

प्रतिष्ठित थे वहाँ उत्कृष्ट गद्य-लेखक भी थे। आपने नाटक-लेखन के क्षेत्र मे भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया था। आपने 'परशुराम' नामक एक महाकाव्य की रचना भी की थी। खेद है कि यह प्रकाशित न हो सका।

आपका निधन 3 अप्रैल सन् 1953 को हुआ था।

श्री छबीलेलाल गोस्वामी

श्री गोस्वामी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा नगर में सन् 1886 में हुआ था और आप हिन्दी के सुलेखक और उपन्यासकार वृन्दावन-निवासी श्री किशोरीलाल गोस्वामी के पुत्र थे। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आप सन् 1905 से ही समाज, राजनीति और साहित्य के क्षेत्र मे पूर्णत सक्रिय हो गए थे और सन् 1917 मे वृन्दावन की नगरपालिका के अध्यक्ष भी निर्वाचित हुए थे। आपने 'मोहन' (मथुरा) और 'ब्राह्मण' (अम्बाला) नामक पत्रों का सम्पादन भी किया था।



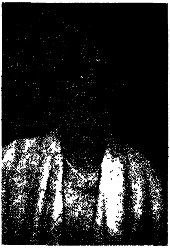
अपने पिता के सस्कारो के अनुरूप साहित्य के क्षेत्र मे भी आपकी देन कम महत्त्वपूर्ण नही कही जा सकती। अपने अत्यन्त व्यस्त सामाजिक जीवन से समय निकालकर आप साहित्य-रचना मे भी अग्रसर रहे थे। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'वेदान्त साहित्य सार' (1910), 'वेदान्त सिद्धान्त' (1912), 'जावित्री' (1916), 'पच कलिका' (1916), 'पच पल्लव' (1916), 'पंच पुष्प' (1916), 'पच पराग' (1916), और 'पच मजरिका (1916) विशेष है।

आपका निधन 10 मई सन् 1950 को हुआ था।

श्री छाँगुर त्रिपाठी 'जीवन'

श्री 'जीवन' का जन्म उत्तर प्रदेश के देवरिया जनपद के गौरा (बरहज) नामक स्थान मे 11 जनवरी सन् 1891 को एक सस्कारी ब्राह्मण-परिवार मे हुआ था। आप खडी बोली हिन्दी तथा भोजपुरी के अत्यन्त सशक्त कवि थे और अपनी कविताओं के द्वारा आपने राष्ट्रीय जागरण तथा समाज-सुधार के क्षेत्र मे बहुत बडा कार्य किया था। स्वतन्त्रता-सग्राम को गति देने की दिशा मे आपका सर्वथा अप्रतिम योगदान रहा था।

आपकी उग्र राष्ट्रीयता का इसीसे परिचय मिल जाता है कि आपके द्वारा प्रणीत 'सुदेशिया नाटक' (1942) तथा 'स्वराज्य आल्हा' (1944) नामक कृतियाँ ब्रिटिश सरकार द्वारा जब्त कर ली गई थी और आपको इनके कारण फैजाबाद जेल मे नजरबन्द रहना पडा था। आपकी अन्य कृतियो मे 'हृदयानन्द गीतावली' (1970) का नाम भी विशेष रूप से उल्लेख्य है। आपकी 500 से अधिक हास्य व्यग्य की भोजपुरी भाषा की रचनाएँ अभी अप्रकाशित ही है।



यह एक सन्ताप की ही बात है कि अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप अत्यन्त अभावग्रस्त रहे थे। जिन दिनो आप फैजाबाद जेल मे नजरबन्द रहे थे तब चक्की चलाते समय आप जो गीत गाया करते थे उसकी कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है

स्वराज्य धुन बोलो ए जेल जाता
लाल रंग गोंहुआ सफेद रग पिसना
कपट दिल खोलो, ए जेल जाता।
स्वराज्य धुन बोलो!

इस गीत को आप जब हारमोनियम पर गा-गाकर जन-चेतना जगाते थे तब और भी उत्साहपूर्ण वातावरण उत्पन्न हो जाता था।

आपका निधन 12 दिसम्बर सन् 1972 को हुआ था।

सैयद छेदालाल शाह

श्री शाह का जन्म मध्य प्रदेश के खण्डवा नामक नगर में सन् 1880 में हुआ था। आपकी रचनाएँ कृष्ण-भक्ति से ओत-प्रोत हुआ करती थी। जन्म से मुसलमान होते हुए भी आपने हिन्दी मे काव्य-रचना करने का जो सकल्प लिया था, आप आजीवन उसीकी सम्पूर्ति मे लगे रहे। 'रेवेन्यू' विभाग मे इस्पेक्टर के पद पर कार्य करते हुए भी आपने अपनी साहित्यिक प्रवृत्ति मे कोई बाधा नही आने दी।

जिन दिनों प्रख्यात साहित्यकार श्री जगन्नाथप्रसाद 'भानु' खण्डवा मे सैटलमेण्ट आफीसर थे उन दिनो वहाँ पर आपके प्रयास से 'भानु समाज' की सस्थापना भी हुई थी। इस समाज की ओर से आयोजित की जाने वाली कवि-गोष्ठियो मे उन दिनो सर्वश्री माखनलाल चतुर्वेदी और चम्पालाल जौहरी आदि अनेक कवि तथा साहित्यकार सक्रिय रूप से भाग लिया करते थे। उन दिनो ये सब महानुभाव ब्रजभाषा की मधुर काव्य-रचना और समस्या-पूर्तियाँ किया करते थे।

सैयद छेदालाल जी द्वारा विरचित अनेक ग्रन्थो मे 'भक्त पचाशिका', 'श्रीकृष्ण पचाशिका', 'हर गगा रामायण' तथा 'आत्म-बोध' आदि विशेष उल्लेखनीय है। आपने 'श्रीमद्-भागवत' की टीका भी लिखी थी। आपकी ब्रजभाषा की एक कविता इस प्रकार है :

बकि-बकि अली तुम खाली न मगज करो,
खैहौ न तु गाली, मेरी टेब बलिहारी है।
एक बार कहौ कि हजार बार कहौ 'शाह',
बिनहि जराए हाय छाती जरि हारी है॥
लाख बात ताक धरो, करो पन साख दूर,
और को सिखा के देखी केती छलि हारी है।
माय देवे गारी, चाहे बाप दे निवारी,
पर साँवरे बिहारी, पर तन बलिहारी है॥

आपका निधन सन् 1918 मे केवल 38 वर्ष की अल्पायु मे हुआ था।

श्री छैलबिहारी दीक्षित 'कंटक'

श्री कटक जी का जन्म उत्तर प्रदेश के इटावा नगर के छिपैटी मोहल्ले मे 9 अक्तूबर सन् 1905 को हुआ था। आप जब आठवी कक्षा मे ही पढ रहे थे तब तत्कालीन ब्रिटिश सम्राट् के चाचा ड्यूक ऑफ कनॉट के भारत आगमन पर हुए विरोध-प्रदर्शन से प्रभावित होकर आपने स्कूल का बायकाट कर दिया और गाधी जी के आन्दोलन मे सक्रिय रूप मे भाग लेने लगे। इस बीच आपने कुछ समय तक मथुरा से प्रकाशित होने वाले 'गौड हितकारी' (मासिक) तथा 'जीवन' (साप्ताहिक) पत्रो मे भी कार्य किया था। लेकिन फिर आगे की पढाई जारी रखने की दृष्टि से आप फिर डी० ए० वी० कालेज, कानपुर मे प्रविष्ट हो गए। सन् 1930 मे जब आप बी० ए० फाइनल के छात्र थे तब फिर महात्मा गाधी जी के आन्दोलन की चपेट मे आ गए और पढाई बन्द करके स्वतत्रता-आन्दोलन मे कूद पडे। सन् 1930 के सविनय अवज्ञा आन्दोलन से लेकर स्वतत्रता-प्राप्ति तक कोई ऐसा स्वातन्त्र्य-सघर्ष नही बचा था जिसमे कटक जी ने बढ-चढकर भाग न लिया हो। अपनी इसी प्रवृत्ति के कारण आपने अपना पूरा जीवन गरीबी और अभावो से सघर्ष करते हुए ही बिताया था। आप अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक स्वतत्रता-सग्राम के एक ऐसे सक्रिय योद्धा रहे जिन्होने अपने आदर्शो और सिद्धान्तो को त्यागकर सुविधाओ मे कभी समझौता नही किया था। स्वतत्रता के इन सघर्षो के दिनों मे आप जहाँ कानपुर नगर काग्रेस कमेटी के अध्यक्ष और नगर महा-पालिका के सक्रिय सदस्य रहे वहाँ 'स्वतत्रता सग्राम सेनानी समिति' के अध्यक्ष के रूप मे भी आपकी सेवाएँ सदा-सर्वदा स्मरणीय रहेगी।

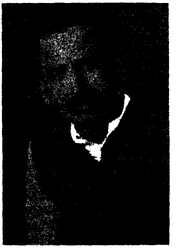
श्री कटक जी हिन्दी की राष्ट्रीय काव्य-धारा के उन अन्यतम कवियो मे थे जिनकी कविताओ ने देश के असख्य नवयुवको को देश की गुलामी को दूर करने के लिए प्रेरणा प्रदान की थी। आपकी एक कविता की ये पक्तियाँ :

जालिम सरकार मिटाएँगे
भारत स्वाधीन कराएँगे
वेदी पर शीश चढाएँगे।

असख्य नवयुवको के कण्ठ की वाणी बन गई थी। आपकी कविताओं को गाकर और पढकर हजारो-लाखो भारतीयों ने प्रसन्नतापूर्वक जेल-यातनाएँ भोगी थी। हिन्दी के कदाचित् आप अकेले ऐसे कवि थे जिन्हें अपनी विद्रोहमयी रचनाओ के कारण एकाधिक बार जुर्मानों और कारावास की सजाओं का दण्ड भोगना पडा था। सन् 1930 से मन् 1934 तक आपकी कविताओ के कारण आप पर राजद्रोह का मुकदमा चलता रहा और आप निरन्तर इस अवधि मे जेल मे ही रहे। अपनी विद्रोहमयी रचनाओं की पृष्ठभूमि के कारण आपको इसी प्रसग मे सन् 1939 से सन् 1945 तक छह वर्ष का कारावास भी भोगना पडा था। कानपुर के प्रमुख राष्ट्रीय हिन्दी दैनिक 'वीर भारत' के मुख्य पृष्ठ पर सदैव छपने वाली आपकी यह पक्तियाँ

समय आ गया काँप रहा जग
नभ गूँजा प्रस्थान करो।
चलो वीर भारत-वेदी पर,
प्राणों का बलिदान करो।।

न जाने कितने युवको के लिए प्रेरणा-स्रोत सिद्ध हुई थी।



कटक जी जब भी जेल से वापस आते थे तब अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए आपको पत्रकारिता करनी पडती थी। इस बीच आपके कवि को राष्ट्रीय रचनाएँ करने के लिए क्यो विवश होना पडा इसकी कुछ झलक आपके इन शब्दो से भी मिल जाती है—"गाधी की उस आँधी मे अनेक तिनको की तरह मैं भी उड गया। विद्यार्थी जीवन वैसे ही अल्हड़ होता है। फिर कुछ ऐसे साथियो का सम्पर्क, जो स्वभाव से ही मनमौजी थे, 'करेला और नीम चढा' की कहावत चरितार्थ हो गई। जीवन एक नई उमग और अभिनव प्रेरणा के प्रवाह मे पड गया। वैसी मस्ती न कभी आई और न आयगी। मस्ती के उसी वातावरण मे धरना देने जाने वाले स्वयसेवकों की टोलियो और सार्वजनिक जलसो मे गाने की आवश्यकता ने ही मेरी कविता को जन्म दिया है।" ये शब्द उत्तर प्रदेश सरकार के सूचना विभाग की ओर से प्रकाशित आपकी 'क्राति की झकारें' नामक उस काव्य-सकलन मे देखे जा सकते है जिसमे आपकी कुछ चुनी हुई राष्ट्रीय रचनाएँ प्रस्तुत की गई थी। यद्यपि अनेक बार जेलो के आवागमन की इस प्रक्रिया ने आपके अध्ययन मे बराबर व्याघात उपस्थित किया था किन्तु फिर भी हिन्दी के प्रख्यात विद्वान् प० अयोध्यानाथ शर्मा की प्रेरणा पर आपने हिन्दी तथा सस्कृत मे एम० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के साथ-साथ एल-एल० बी० की परीक्षा भी दे दी थी।

अपने जीवन की गाडी को लस्टम-पस्टम खीचने के लिए आपको पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आना पड़ा था। सर्वप्रथम आपने 'वर्तमान' दैनिक के सम्पादक-मडल मे कार्य प्रारम्भ किया था और अपनी लेखनी की उदग्रता के लिए आपको अनेक बार इसके लिए सरकार का कोप-भाजन भी बनना पडा था। पत्रकारिता के कार्य मे व्यस्त रहते हुए भी आपने अपनी राष्ट्रीय भाव-धारा को सर्वथा अक्षुण्ण बनाए रखा। आपकी लेखनी की तेजस्विता का सबसे बडा प्रमाण यही है कि जब आप पजाब के प्रख्यात पत्रकार महाशय कृष्ण द्वारा सन् 1934 मे प्रवर्तित और लाहौर से प्रकाशित हिन्दी दैनिक 'प्रभात' के सम्पादक के रूप मे वहाँ बुलाए गए तब आपने अपनी लेखनी का जो जौहर दिखलाया था उसके परिणाम-स्वरूप वह पत्र केवल तीन सप्ताह ही चल सका और पजाब सरकार ने उसके प्रकाशन पर प्रतिबन्ध लगा दिया। उसका पहला अक 1 जनवरी सन् 1934 को प्रकाशित हुआ था। कटक जी फिर कानपुर आ गए और आपने यहाँ आकर फिर अपना जीवन-सघर्ष प्रारम्भ कर दिया। अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध सघर्ष करने और जनता मे राष्ट्रीय चेतना जगाने की दिशा मे आप अपनी प्रतिभा का निरन्तर प्रयोग करते रहे। अपनी सघर्ष-यात्रा मे आपने जहाँ अपनी कविताओ के माध्यम से एक राष्ट्रीय वातावरण प्रस्तुत किया वहाँ युवको को यह उद्बोधन भी दिया था

आओ आओ आगे आओ,
इन दीवानों की टोली मे।
अपने प्राणों की भीख भरो,
भारत माता की झोली में।।
सौगन्ध उन्हीं की है तुमको,
जो उठती हुई जवानी मे।
अन्याय मिटाने को जूझे,
जेलों मे, काले पानी मे।।

सन् 1945 के उपरान्त आपकी कविता का स्वर गांधी वादी विचार-धारा से हटकर साम्यवादी दर्शन की ओर अधिक हो गया था। आप स्वार्थ, बेईमानी, लूट-खसोट की राजनीति से सर्वथा दूर रहकर एक ऐसे समाज की रचना का स्वप्न ले रहे थे जिसमे छोटे-बडे, धनी-निर्धन का किसी प्रकार का भेद-भाव न हो। यही कारण है कि आपने स्वतत्रता-प्राप्ति के उपरान्त जहाँ अपने राष्ट्र-नेताओ को

भूल न जाना क्षणिक विजय,
मदमे सैनिक सुकुमार कहो।
आजादी पर मिटने वालों,
के उजडे घर-बार कहो।।
माताओं की सूनी गोदी,
घर के लुटे सुहाग सखे।
भूल न जाना दीवानों के,
प्राणों के उपहार कहीं।।

अपने कर्ममय जीवन मे आप निरन्तर अभावो और पीडाओ मे ही सघर्ष करते रहे और अनेक विघ्न तथा बाधाओं मे भी आपने अपनी निष्ठा, समर्पण भावना और स्पष्ट अभि-व्यक्ति को तिलाजलि नही दी। आप चाहते तो बहुत-कुछ सुविधाएँ जुटा सकते थे लेकिन उनके प्रति आप सदा विमुख रहे। आपने कुछ दिन तक जीवकोपार्जन के लिए जी०एन० के० इण्टर कालेज मे अध्यापन भी किया था। आप बहुत बडे मानवतावादी थे और प्राय पैदल ही चला करते थे। रिक्शे मे यात्रा करने स आप प्राय कतराया करते थे। यह विडम्बना ही कही जायगी कि कानपुर-जैसे महानगर मे रहते हुए आप अन्तिम समय तक अपना सिर छिपाने के लिए कोई स्थायी निवास भी नही बना सके थे। 21 सितम्बर सन् 1947 को जब कानपुर मे 'जागरण' दैनिक का प्रकाशन श्री परिपूर्णानन्द वर्मा और श्री पूर्णचन्द गुप्त के सम्पादन मे प्रारम्भ हुआ था तब उसके प्रथम अंक के मुखपृष्ठ पर फहर-फहर फहराते तिरंगे राष्ट्र-ध्वज के नीचे 'कंटक' जी की जो पक्तियाँ छपी थी वे आपकी तत्कालीन भावनाओ का सही प्रकटीकरण कर रही है.

टूटे बन्धन, फिर स्वतत्र हैं, जन-गन में नव प्राण भरो।
आज जागरण की वेला मे, नवयुग का निर्माण करो।।

यह हर्ष का विषय है कि आपके देहावसान के उपरान्त कानपुर के प्रख्यात साहित्यकार श्री नरेश चतुर्वेदी ने आपकी चुनी हुई कविताओ का एक सकलन 'चलना होगा' नाम से सन 1982 मे प्रकाशित कर दिया है।

आपका निधन 75 वर्ष की आयु मे 27 मई सन् 1981 को हुआ था।

श्री छैलबिहारीलाल चतुर्वेदी

श्री चतुर्वेदी का जन्म उत्तर प्रदेश के इटावा नामक नगर मे सन् 1898 मे हुआ था। आपने मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त करके बाद मे सस्कृत की शास्त्री परीक्षा देकर विधिवत् आयुर्वेद का अध्ययन किया था। आयुर्वेद का अध्ययन आपने घर पर ही अपने दादा से किया था। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आप स्वतत्रता-सग्राम मे सक्रिय रूप से जुट गए और इसी प्रसग मे आप राजस्थान के रामगढ और रतनगढ आदि अनेक नगरो मे होते हुए सन् 1932 मे हैदराबाद (दक्षिण) चले गए और फिर वही अपना स्थायी निवास बना लिया।

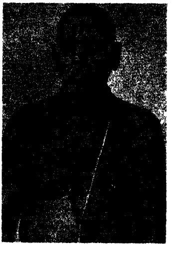
हैदराबाद जाकर आपने लगभग 10 वर्ष तक जमकर आयुर्वेद की चिकित्सा का कार्य किया और इस बीच अपने घर वालो को भी कोई खबर नही दी। आप हैदराबाद के राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय के प्रधानाचार्य भी रहे थे। आप कुशल तथा पीयूषपाणि चिकित्सक होने के साथ-साथ हिन्दी के उत्कृष्ट लेखक भी थे। अनेक पत्र-पत्रिकाओं मे आपकी सस्कृत साहित्य तथा आयुर्वेद से सम्बन्धित रचनाएँ प्रकाशित होती रही थी।

आपका निधन सन् 1951 मे उस समय हुआ था जब कि आप ग्रीष्मावकाश मे अपने जन्म-स्थान इटावा आए हुए थे।

श्रोत्रिय छोटेलाल शर्मा गौड़

श्री गौड का जन्म राजस्थान के जयपुर राज्य की विराट-नगर तहसील के अन्तर्गत प्रागपुरा (पावटा) नामक स्थान मे सन् 1875 मे हुआ था। आपके पिता पण्डित करुणानन्द मिश्र अच्छे कर्मकाण्डी विद्वान् थे। बाद मे वे सन्यासी होकर 'स्वामी करुणानन्द सरस्वती' के नाम से विख्यात हो गए थे। आर्यसमाज अजमेर मे लगभग 30 वर्ष तक धर्म-शिक्षक के रूप मे कार्य करके उन्होने अनेक वर्ष तक पेशन भी प्राप्त की थी। श्रोत्रियजी का मूल नाम गुलजारीलाल था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने जन्म-स्थान मे ही पण्डित रामदयाल के द्वारा सम्पन्न हुई थी। आपने बाद मे अपने पिता के पास नसीराबाद रहकर वहाँ के मिशन स्कूल मे अँग्रेजी की मिडिल परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आर्थिक विषमता के कारण आपका अध्ययन बीच म ही रुक गया और थोडे ही प्रयास से रेलवे मे 'तार बाबू' की नौकरी मिल गई। यह रेलवे पहले आर०एम०आर० कहलाती थी और बाद मे क्रमश बी०बी० एण्ड सी० आई० तथा वैस्टर्न रेलवे के नाम मे जानी जाने लगी। इस बीच मे आप रेलवे की नौकरी छोडकर कुछ दिन तक बम्बई के 'श्री वेकटेश्वर स्टीम प्रेस' मे भी रहे थे।

जब आपके श्वसुर श्री चौबे रामलाल का देहावसान हो गया तब आप बम्बई छोडकर कानपुर चले आए और यहाँ के अनवरगज रेलवे स्टेशन पर फिर 'तार बाबू के रूप मे कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। वहाँ सौभाग्य से आपका सत्सग तब आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी से हो गया जो उन दिनो कानपुर मे 'ईस्ट इण्डियन रेलवे' मे 'सिगनेलर' के रूप मे कार्य करते थे। द्विवेदी जी के इस सम्पर्क से आपमे जो साहित्यिक चेतना जागृत हुई थी



कालान्तर मे वह पण्डित रुद्रदत्त शर्मा सम्पादकाचार्य के सम्पर्क के कारण और भी परिपुष्ट हो गई। फलस्वरूप आपने लेखन की दिशा मे अनेक प्रयोग किए। सन् 1901 मे एक बार जब उत्तर प्रदेश प्रशासन की ओर से ऐसा सर-कुलर निकला जिसमे हिन्दुओं को जाति-भेद के आधार पर विभाजित करना सरकार का उद्देश्य था तब आपके मन मे हिन्दू जातियो का इतिहास निर्मित करने की पुनीत भावना उद्भूत हुई। फलस्वरूप आपने इस दिशा मे कार्य करने का दृढ सकल्प कर लिया और आपने सन् 1908 मे फुलेरा (राजस्थान) को केन्द्र बनाकर ही कार्य करना प्रारम्भ कर दिया तथा कानपुर से यहाँ चले आए।

आपने अपने सकल्पो की पूर्ति के लिए फुलेरा मे 'हिन्दू धर्म व्यवस्था मण्डल' और 'श्रोत्रिय पुस्तकालय' की स्थापना करके इनके माध्यम से इतिहास-लेखन का जो कार्य प्रारम्भ किया था उसका पहला परिचय समाज को उस समय मिला जब आपके द्वारा लिखित 'जाति अन्वेषण' नामक ग्रन्थ का प्रथम भाग सन् 1914 मे प्रकाशित हुआ। इस ग्रन्थ मे आपने 361 हिन्दू जातियो का सम्पूर्ण विवरण प्रस्तुत किया था। इसके उपरान्त सन् 1916 मे प्रकाशित अपने 'ब्राह्मण निर्णय' नामक ग्रन्थ के द्वारा आपने 324 ब्राह्मण जातियो का सर्वांगीण इतिहास प्रस्तुत करके एक नई क्रान्ति ही कर दी थी। यह प्रसन्नता का विषय है कि आपके इन ग्रन्थो का जहाँ हिन्दी-जगत् मे अभूतपूर्व स्वागत हुआ वहाँ अखिल भारतीय सस्कृत साहित्य सम्मेलन, अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, अखिल भारतीय साधुसमाज, अखिल भारतीय हिन्दू महासभा, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, अखिल भारतीय सनातन धर्म सभा और अखिल भारतीय ब्राह्मण महासभा आदि अनेक विशिष्ट सस्थाओ ने भी आपके इस कार्य की मुक्त कण्ठ से प्रशसा की थी।

जब आपके इन शोध-ग्रन्थो का सर्वत्र स्वागत हुआ तब आपने उससे उत्साहित होकर 'राजकुमार वश निर्णय' (1924) 'क्षत्रिय वश प्रदीप' (1928) तथा 'नौमुस्लिम जाति निर्णय'-जैसे कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो की रचना की। अपने 'नौ मुस्लिम जाति निर्णय' नामक ग्रन्थ मे आपने जहाँ ईसाई-मुसलमानो के चगुल मे फसकर हिन्दू धर्म से बिछुडे हुए विध-र्मियो की शुद्धि का वेद-शास्त्र-सम्मत मार्ग प्रदर्शित किया था वहाँ 'क्षत्रिय वश प्रदीप' नामक ग्रन्थ मे 1100 के लगभग

क्षत्रिय वंशो का विवरण प्रस्तुत किया था। आपके द्वारा प्रतिपादित 'शुद्धि व्यवस्था' से आर्य जगत् के प्रख्यात सन्यासी और 'अखिल भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा' के सर्वेसर्वा श्री स्वामी चिदानन्द सरस्वती इतने प्रभावित हुए थे कि उन्होने न केवल सभा के मुखपत्र 'शुद्धि समाचार' के माध्यम से उसका व्यापक प्रचार किया, प्रत्युत उसके 'शुद्धि व्यवस्था' नामक अश को पृथक् से मुद्रित करके समाज मे नि शुल्क वितरित भी किया था। आपके द्वारा लिखित 'जाति अन्वेषण' नामक ग्रन्थ का भी देश मे प्रचुर स्वागत हुआ था। आपके अन्य ग्रन्थों मे 'सप्त खण्डी जाति निर्णय' और 'सुनार जाति का इतिहास' भी प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

आप जहाँ उच्चकोटि के समाज-सुधारक, शिक्षा-प्रचारक, कुशल चिकित्सक और उत्कट देश-भक्त थे वहाँ गो-सेवा के क्षेत्र मे भी आपने अनेक उल्लेखनीय कार्य किये थे। स्वदेशी वस्तुओ के व्यवहार के आप कट्टर पक्षपाती थे। आपने स्वाधीनता-सग्राम मे सक्रिय रूप से भाग लेकर कारावास की यातनाएँ भी भोगी थी। समाज को भयकर काले नागो (विषधरो) के भय से मुक्त कराने की दिशा मे भी आपने अद्भुत प्रयोग किये थे। फुलैरा का 'हिन्दू धर्म वर्ण-व्यवस्था-मण्डल' आपका जीवन्त स्मारक है। आपके सुपुत्र स्व०ओमूदत्त शर्मा गौड भी अपने पूज्य पिता के द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चलकर देश, समाज, सस्कृति तथा साहित्य की उल्लेखनीय सेवा करते रहे थे।

आपका निधन 6 दिमम्बर सन् 1931 को हुआ था।

लाला जगतनारायण

लाला जगतनारायण का जन्म अविभाजित पजाब के गुजरानवाला (अब पाकिस्तान) जिले के वजीराबाद नामक स्थान मे 31 मई सन् 1899 को हुआ था। आपकी हाई स्कूल तक की शिक्षा लायलपुर मे हुई थी और बी० ए० आपने लाहौर के डी० ए० वी० कालेज से किया था। जब आप छात्र ही थे तब देशपूज्य महात्मा गाधीजी की पुकार पर अपनी वकालत की पढाई को छोडकर असहयोग आन्दोलन मे कूद पड़े थे। आपने काग्रेस द्वारा सचालित अनेक आन्दोलनो मे भाग लेकर लगभग 9 वर्ष का कारावास भुगता था। आप सन् 1921 मे लाहौर नगर काग्रेस कमेटी के संयुक्त महा-सचिव चुने गए थे और बाद मे 7 वर्ष तक उसके अध्यक्ष भी रहे थे। नागरिक सेवाओ मे प्रारम्भ से ही रुचि रहने के कारण आप जब 'लाहौर कारपोरेशन' के सदस्य चुने गए थे तब भी आप वहाँ काग्रेस दल के नेता थे। स्वतन्त्रता के बाद भी आपने 'जालन्धर नगरपालिका' तथा 'जालन्धर इम्प्रूवमेट ट्रस्ट' के सदस्य के रूप मे वहाँ की जनता की प्रशसनीय सेवा की थी।

राजनीतिक गतिविधियो मे भाग लेते हुए आपने आजीविका के लिए पत्रकारिता को अपनाया था और पहले-पहल उर्दू के माध्यम से ही आप इस क्षेत्र मे अवतरित हुए थे। सर्व प्रथम आपने 'आकाशवाणी' दैनिक का सम्पादन किया था और बाद मे 'पजाब केसरी' नामक एक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन किया था, जो आज भी जालन्धर से प्रमुख हिन्दी दैनिक के रूप मे देश की जनता की उल्लेखनीय सेवा कर रहा है। इस पत्र के माध्यम से आपने जो कुछ भी लिखा, उसे राजद्रोहात्मक माना गया और इस प्रसग मे भी आपको अनेक बार जेल-यात्राएँ करनी पडी थी।

भारत-विभाजन के उपरान्त आपने जहाँ जालन्धर से 'हिन्द समाचार' नामक उर्दू दैनिक का प्रकाशन प्रारम्भ किया वहाँ आपने 'पजाब केसरी' (हिन्दी साप्ताहिक) को भी दैनिक रूप दे दिया। स्वतन्त्रता के उपरान्त भी आपने राष्ट्र-सेवा के कार्य मे विराम नही आने दिया और सन् 1951 से लेकर सन् 1954 तक आप पजाब काग्रेस कमेटी के महा-सचिव रहने के अतिरिक्त वहाँ के 'चुनाव



मण्डल' के अध्यक्ष भी रहे थे। सन् 1952 से सन् 1962 तक आप जिन दिनो पजाब विधान सभा के सदस्य रहे थे

तब आपने सन् 1956 तक वहाँ के शिक्षा, परिवहन और स्वास्थ्य-मन्त्री के रूप में जनता की उल्लेखनीय सेवा की थी। जब आपने सन् 1956 मे सैद्धान्तिक मतभेद होने के कारण कांग्रेस छोड़ दी थी तब भी आप निर्दलीय प्रत्याशी के रूप मे वहाँ की विधान सभा के सदस्य चुने गए थे। जब सन् 1957 मे पंजाब मे 'हिन्दी रक्षा आन्दोलन' हुआ था तब, तथा सन् 1961 मे 'जनगणना आन्दोलन' के सिलसिले मे भी आप अनिश्चित काल के लिए नजरबन्द किये गए थे। सन् 1966 से सन् 1970 तक आप 'भारतीय क्रान्ति दल' की ओर से हरियाणा के प्रतिनिधि के रूप मे 'राज्य सभा' के सदस्य भी रहे थे।

पत्रकारिता के क्षेत्र मे आपके निष्पक्ष अग्रलेखो की बडी धूम थी और यह आपकी लेखनी का ही करिश्मा था कि पंजाब-जैसे अहिन्दी-भाषी प्रदेश से प्रकाशित होने पर भी आपके हिन्दी दैनिक 'पंजाब केसरी' की प्रसार-सख्या उत्तर भारत के प्रमुख हिन्दी दैनिको ('हिन्दुस्तान' तथा 'नवभारत टाइम्स') से कही अधिक थी। यह आपकी सम्पादन-पटुता का ही प्रमाण है कि आपका यह पत्र 2 लाख की सख्या को छू गया था, जबकि दैनिक हिन्दुस्तान केवल 1 लाख 81 हजार छपता था और 'नवभारत टाइम्स' दिल्ली और बम्बई के सस्करणों को मिलाकर लगभग 5 लाख ही छपता है। यह आँकडे भारत सरकार के आडिट ब्यूरो ऑफ सरकुलेशन की रिपोर्ट पर आधारित है। आपकी पत्रकारिता की प्रखरता इससे भी प्रकट होती है कि आपने पजाब में अलगाव की नीति का विरोध करने की दिशा मे जो आन्दोलन छेडा था उससे साम्प्रदायिक शक्तियाँ आतकित हो गई थी। यह भी आपकी लेखनी का ही प्रभाव था कि जब-जब पंजाब मे ऐसी प्रवृत्तियो ने सिर उठाया तब-तब आपने वहाँ की जनता के मनोबल को ऊँचा करने मे कोई कसर नही रखी। अपनी इसी अटूट लगन और निर्भीकता के कारण आपके पत्र के कार्यालयो का अनेक बार घिराव किया गया और एक बार तो ऐसा भी हुआ जब आपके प्रेस को मिलने वाली बिजली तक बन्द कर दी गई थी। किन्तु इन सब बाधाओ मे भी आप झुके नही और निरन्तर अपनी पत्रकारिता की अस्मिता को बनाए रहे।

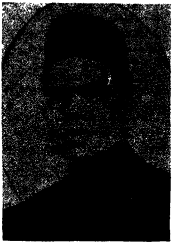
यह एक दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि इस ध्येयनिष्ठ पत्रकार के जीवन का अन्त उन साम्प्रदायिक आततायियो के हाथो हुआ जिनके विरुद्ध आप जीवन-भर डटकर मोर्चा लेते रहे थे। आप पर पहले भी एक बार घातक प्रहार किया गया था, किन्तु आप बच गए थे। इस घटना के बाद आपके घर पर पुलिस-रक्षा का पूरा प्रबन्ध कर दिया गया था। पर जब आप इस यात्रा के लिए निकल रहे थे तब आपने पुलिस-रक्षक को यह कहकर घर पर ही छोड दिया कि 'मेरा हथियार तो मेरी कलम है।' 9 सितम्बर सन् 1981 को जब आप लुधियाना से कार द्वारा जालन्धर जा रहे थे तब मार्ग मे लाडोवाल नामक स्थान के पास तीन व्यक्तियो ने गोली मारकर आपकी नृशस हत्या कर दी।

श्री जगदम्बाप्रसाद मिश्र 'हितैषी'

श्री हितैषी का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के अन्तर्गत गज मुरादाबाद नामक स्थान मे सन् 1895 मे हुआ था। आपके पूर्वज हरदोई जनपद में मल्लावाँ नामक कस्बे के मूल निवासी थे। अँग्रेजों के दमन-चक्र से बचने के लिए पहले वे कानपुर चले आए थे और बाद मे गज मुरादाबाद मे बस गए थे। आपके पितामह श्री श्यामलाल मिश्र और आपके भाई श्री देवीदयाल मिश्र ही पहले-पहल गज मुरादाबाद मे पहुँचे थे। श्री श्यामलाल मिश्र अध्यात्म की ओर उन्मुख थे और उन्होने जीवित समाधि लेकर शरीर छोड़ा था। श्री हितैषी जी का बचपन का नाम दुलीचन्द था और आपकी शिक्षा अत्यन्त साधारण रूप से घर पर ही पहले उर्दू-फारसी मे प्रारम्भ हुई थी। चौथे दरजे तक गाँव के विद्यालय मे उर्दू पढने के उपरान्त आपने पढना छोड दिया था। घर पर रहते हुए ही आपने जहाँ सस्कृत के 'सारस्वत चन्द्रिका' नामक व्याकरण ग्रन्थ का अध्ययन किया था वहाँ एक मौलवी साहब से 'आमदनामा', 'करीमा' और 'गुलिस्ताँ' की शिक्षा भी प्राप्त की थी। इसके उपरान्त आपने कुछ दिन तक कानपुर के 'गुरुनारायण खत्री स्कूल' मे सातवी कक्षा तक अँग्रेजी भी पढी थी। कविता के प्रति हितैषी का झुकाव उस समय हुआ जब आप अपनी दादी को प्रतिदिन 'रामायण' और 'सुख सागर' नामक ग्रन्थ पढ़कर सुनाया करते थे।

कानपुर मे रहते हुए आपके बाल-सस्कार वहाँ के

वातावरण से प्रस्फुटित हुए और आप कविता करने लगे। आपने अपनी पहली रचना जब आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के पास भेजते हुए यह आकांक्षा व्यक्त की थी कि उसे 'सरस्वती' के मुखपृष्ठ पर छापा जाय, तब आचार्य महोदय ने आपको जो उत्तर दिया था वह इस प्रकार है—"आपमे प्रतिभा है, परन्तु अभी उसका विकास नही हुआ है। उन्नाव मे सनेहीजी रहते है। तुम उनसे सशोधन प्राप्त करो। अभी तुम्हारी रचना मुखपृष्ठ तो क्या, किसी भी पृष्ठ पर छपने योग्य नही है। हाँ, एक दिन ऐसा अवश्य आयगा कि 'सरस्वती' का मुखपृष्ठ तुम्हारी रचना की प्रतीक्षा किया करेगा।" द्विवेदी जी की इन पक्तियो का 'हितैषी' जी पर इतना प्रेरक प्रभाव हुआ कि आपने तुरन्त सनेही जी के पास पहुँचकर उन्हे अपना 'काव्य-गुरु' बना लिया। सनेही जी के इस सम्पर्क का आपको यह लाभ हुआ कि थोडे ही समय मे



आपकी काव्य-प्रतिभा निखर उठी और एक समय ऐसा आया जबकि अनूप शर्मा के साथ सनेहीजी के शिष्यो मे आपकी भी गणना होने लगी। खडी बोली मे 'कवित्त' छन्द लिखने मे जो दक्षता अनूप शर्मा को प्राप्त थी 'सवैया' छन्द की रचना करने के क्षेत्र मे वही स्थान 'हितैषी' जी को प्राप्त हो गया। आपकी रचनाओ मे भावना का माधुर्य और भाषा की सहजता का जो रूप दृष्टिगत होता है वह सर्वथा अनूठा और अनुपम है। उर्दू-शब्दो की मुहावरेदानी और रवानी का जो रूप सनेही जी की रचनाओ मे दिखाई देता है, हितैषी जी उससे भी आगे बढ गए। विषयो का वैविध्य और भाषा की प्राजलता आपकी रचनाओं मे अत्यन्त सहजता से समा गई थी। राष्ट्रीय जागरण के क्षेत्र मे भी 'हितैषी' जी ने 'सनेही' जी-जैसी लोकप्रियता प्राप्त कर ली थी और आपने उस दिशा मे अपने व्यक्तित्व की गहन छाप छोडी थी।

प्रकृति से अक्खड और स्वभाव से मौजी होते हुए भी आपने अपने कार्य-कलापों से कानपुर के जन-जीवन मे जो स्थान बनाया था उसमे आपके व्यक्तित्व की गरिमा का परिचय मिलता है। जिस प्रकार किसी पर रुष्ट होने पर आप अपने मोटे डडे का प्रयोग सहज भाव से कर डालते थे उसी प्रकार आपने अपनी लेखनी की प्रखरता से भगवान् श्रीकृष्ण, महात्मा गांधी, सरोजिनी नायडू और गणेश-शकर विद्यार्थी-जैसी विभूतियो को भी नही बख्शा था। 'भडौआ' छन्दों की रचना करने मे भी आप पूर्णत दक्ष थे। जितने अधिक जानदार 'भडौए' हितैषी जी ने लिखे है, उतने कदाचित् किसी ने भी न लिखे होगे। आप जहाँ खडी बोली हिन्दी की कविताएँ लिखने मे प्रवीण थे वहाँ उर्दू मे भी आपने अनेक रचनाएँ लिखी थी। सन् 1913 मे जबकि आप केवल 18 वर्ष के थे तब आपने प्रख्यात क्रान्तिकारी और 'मैनपुरी षड्यन्त्र केस' के प्रमुख अभियुक्त श्री गेंदालाल दीक्षित द्वारा सस्थापित 'मातृदेवी' नामक सस्था की जो सदस्यता स्वीकार की थी उसके कारण आपका सम्बन्ध क्रान्तिकारी गतिविधियो से हो गया था। उन्ही दिनों आपने जो उर्दू की गजल लिखी थी कालान्तर मे वह अनेक क्रान्तिकारियो द्वारा अपनाए जाने पर बहुत लोकप्रिय हुई थी। यहाँ तक कि अधिकाश जनता उसे रामप्रसाद 'बिस्मिल' की रचना समझती है। वास्तव मे इसके रचनाकार 'बिस्मिल' नही 'हितैषी' जी है। उस रचना की कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है

वतन की आबरू का पास देखे कौन करता है,
सुना है आज मकतल मे हमारा इम्तिहाँ होगा।
इलाही वह भी दिन होगा, जब अपना राज देखेगे,
जब अपनी ही जमी होगी, और अपना आसमाँ होगा।
शहीदो की चिताओं पर जुडेगे हर बरस मेले,
वतन पर मरने वालो का, यही बाकी निशाँ होगा।

इस गजल को रामप्रसाद 'बिस्मिल' की समझने की भूल लोग इसलिए करते रहे है कि जब उन्हे फाँसी की सजा सुनाई गई थी तब 'बिस्मिल' जी प्राय. इस 'गजल' को उन्मुक्त कण्ठ से गाया करते थे। सर्व प्रथम इस 'गजल' के वास्तविक लेखक का पता साहित्य-जगत् को उस समय लगा था जब कि पहले-पहल यह रचना सन् 1916 मे 'अमरीका को स्वतन्त्रता कैसे मिली' नामक पुस्तक मे श्री 'हितैषी' जी

के नाम से प्रकाशित हुई थी। उर्दू शब्दावली मे आपने अपना परिचय एक बार इस प्रकार दिया था ·

हूँ हितैषी सताया हुआ किसी का,
हर तौर किसी का बिसारा हुआ।
घर से किसी के हूँ निकाला हुआ,
दर से किसी के दुतकारा हुआ।।
नजरों से गिराया हुआ किसी का,
दिल से किसी के हूँ उतारा हुआ।
अभी हाल हमारा हो पूछते क्या,
हूँ मुसीबत का इक मारा हुआ।।

जिस प्रकार आप उर्दू मे कविता करने मे दक्ष थे उसी प्रकार ब्रजभाषा मे भी आप अत्यन्त सफल काव्य-रचना किया करते थे और ब्रजभाषा मे आप 'हित' उपनाम लिखा करते थे। आपकी एक ब्रजभाषा की रचना की बानगी इस प्रकार है

कोऊ तन मन देत, कोऊ प्रान धन देत,
रसिक सुजान कोऊ, कोटिन कबीसैं देत।
कोऊ देत मान, कोऊ साहिबी समान देत,
कोऊ गज ग्राम दै, विविध बकसीसैं देत।।
कोऊ देत सहज सनेह 'हित' भारती के,
कोऊ देत सैकरा औ, कोऊ दस-बीसैं देत।
सुनत असीस सीस नाम कै रहत सूम,
देत, देत, देत तो खबीस काढि खीसैं देत।।

राष्ट्रीय जागरण के क्षेत्र मे भी हितैषी जी का बहुत बडा योगदान था। आपने जहाँ अपनी अनेक क्रान्तिकारी रचनाओ के द्वारा देश के स्वातन्त्र्य-सग्राम के लिए वातावरण तैयार किया वहाँ अनेक बार जेल-यात्राएँ भी की थी। वे राष्ट्रभाषा हिन्दी के अनन्य समर्थक थे। जिन दिनों महात्मा गांधीजी ने हिन्दी को 'हिन्दुस्तानी' का जामा पहनाने का आन्दोलन चलाया था तब आपने उसका डटकर विरोध किया था। आप शुद्ध हिन्दी लिखने के पक्षपाती थे। यहाँ तक कि जिन दिनो 'ऑल इण्डिया रेडियो' के मुख्य निदेशक सैयद अब्दुल्ला बुखारी के दिनो मे रेडियो की भाषा उर्दू-प्रधान हो गई थी तब आपने प्रख्यात साहित्यकार डॉ० राम-विलास शर्मा के सहयोग से 'आकाशवाणी' नामक मासिक पत्र प्रकाशित करने की एक योजना बनाई थी। बाद मे इसका सम्पादन भी आपने अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे आपने व्यापार भी प्रारम्भ किया था और धार्मिक साहित्य तथा ज्योतिष का अध्ययन भी करने लगे थे। आपने ज्योतिष का इतना गहन ज्ञान प्राप्त कर लिया था कि उसके सम्बन्ध मे वैज्ञानिक ढग से आपने एक ग्रन्थ भी लिखा था। खेद है कि वह ग्रन्थ अभी तक अप्रकाशित ही है। आपकी प्रकाशित पुस्तको मे 'मातृगीता', 'कल्लोलिनी', 'वैकाली' और 'दर्शना' प्रमुख है। आपने उमर-खैयाम की रुबाइयो का हिन्दी अनुवाद भी किया था। दुर्भाग्यवश यह प्रकाशित नही हो सका। 'मातृगीता' (1937) नामक कृति मे आपने जहाँ भारतमाता का गुणानुवाद करके अपनी राष्ट्र-भक्ति का अनुपम परिचय दिया है वहाँ 'कल्लोलिनी' (1937) और 'वैकाली' (1940) मे आपने सुपुष्ट घनाक्षरी और सवैया छन्द का प्रयोग प्रस्तुत किया है। 'दर्शना' (1963) मे आपका कवित्व नितान्त नवीन रूप मे देखने को मिलता है। इस कृति का प्रकाशन हितैषी जी के देहावसान के उपरान्त हुआ था। आपकी अन्य अप्रकाशित रचनाओ मे 'प्रेमाम्बु प्रवाह' का नाम भी उल्लेखनीय है।

हितैषी जी के काव्य की उत्कृष्टता का इससे बडा प्रमाण और क्या हो सकता है कि जिन आचार्य महावीर-प्रसाद द्विवेदी ने आपके काव्य-जीवन के प्रारम्भ मे यह शुभ-कामना की थी "एक दिन ऐसा भी अवश्य आएगा जब 'सरस्वती' का मुखपृष्ठ तुम्हारी रचना की प्रतीक्षा किया करेगा" उन्ही द्विवेदी जी ने उनकी 'कल्लोलिनी' नामक काव्य-कृति को पढकर 21 दिसम्बर सन् 1937 को लिखे अपने पत्र मे मुक्तकण्ठ से यह स्वीकार किया था—"'कल्लोलिनी' को देखकर ही मुग्ध हो गया था। पढने पर जो आनन्द मिला उसे मेरा मन ही जानता है।" यह हितैषी जी की रचना-प्रतिभा का ज्वलन्त प्रमाण है कि आपको 'सनेही मण्डल' के सर्वश्रेष्ठ कवियो मे माना जाता है।

आपका निधन सन् 1956 मे हुआ था।

डॉ० जगदीशचन्द्र भारद्वाज 'सम्राट्'

डॉ० भारद्वाज का जन्म 20 फरवरी सन् 1920 को अवि-भाजित पजाब के सरगोधा (अब पाकिस्तान) नामक नगर मे

हुआ था। पंजाब विश्वविद्यालय से शास्त्री की उच्चतम उपाधि प्राप्त करने के बाद भारत-विभाजन के समय आप दिल्ली आ गए थे और यहाँ पर दिल्ली विश्वविद्यालय के अंतर्गत सचालित आत्माराम सनातन धर्म कालेज मे अध्यापक के रूप मे सेवा-रत थे। दिल्ली की अनेक हिन्दी-प्रचार-सस्थाओ से आपका घनिष्ठतम संबध था। आप अनेक वर्ष तक 'भारतीय साहित्यकार संघ' से सम्बद्ध रहे थे और इसके कई महत्त्वपूर्ण पदों पर प्रतिष्ठित रहे थे। जिन दिनो इस सस्था की रजिस्ट्री की गई थी तब आप ही अध्यक्ष थे।

बिभाजन के उपरान्त दिल्ली मे आकर आपने अपने स्वाध्याय को नही छोडा और यहाँ रहते हुए जहाँ पंजाब विश्वविद्यालय की हिन्दी रत्न, हिन्दी भूषण और हिन्दी प्रभाकर परीक्षाओ के प्रसग मे अनेक छात्र-छात्राओ को हिन्दी के अध्ययन की ओर उन्मुख किया वहाँ स्वय भी दिल्ली विश्वविद्यालय से हिन्दी विषय मे एम० ए० करने के उपरान्त पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की। आपके शोध का विषय कृष्ण-भक्ति से सम्बन्धित था। आप विचारो से कट्टर सनातनधर्मी और भारतीय सस्कृति के अनन्य प्रेमी थे। 'सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा' के मंच से भी आप समय-समय पर भारतीय सस्कृति के प्रचार तथा प्रसार मे सक्रिय रूप से भाग लेते रहते थे। आप सस्कृत वाङ्मय के विभिन्न अंगो के प्रकाण्ड विद्वान् एव प्रखर वक्ता के रूप मे भी अत्यन्त विख्यात थे।



आप कुशल अध्यापक, कर्मठ हिन्दी-प्रचारक और सस्कृत वाङ्मय के गम्भीर विद्वान् होने के साथ-साथ निष्णात लेखक भी थे। आपकी लेखन-प्रतिभा का परिचय आपके द्वारा लिखित उन अनेक ग्रन्थों को देखकर भलीभाँति मिल जाता है जो समय-समय पर आपने माँ भारती के मन्दिर मे प्रस्तुत किये थे। आपकी ऐसी कृतियो मे 'कृष्ण-काव्य में लीला वर्णन' (1972) तथा 'श्रीकृष्ण-लीला-विमर्श' (1972) के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण है। आपने भागवत् मे वर्णित कृष्ण-लीलाओ से सम्बन्धित जो प्रचुर गवेषणात्मक सामग्री सकलित की थी वह अनेक खडो मे प्रकाशित होने योग्य है। आप जहाँ समर्थ गद्य-लेखक थे वहाँ काव्य के क्षेत्र मे भी आपने अपनी अपूर्व मेधा का परिचय दिया था। आपके द्वारा विरचित 'ऋतम्भरा' (1980) नामक काव्य आपकी काव्यगत उपलब्धि का ऊर्जस्वित प्रमाण है। आपने योगिराज श्री अरविन्द तथा असगर की कविताओं का अनुवाद भी किया था। खेद का विषय है कि ये रचनाएँ अभी प्रकाशित नही हो सकी है। आपने जितने प्रभूत साहित्य की सर्जना की है उसके प्रकाशन की व्यवस्था 'निर्मल कीर्ति प्रकाशन' तथा 'नचिकेता प्रकाशन' नामक सस्थानो की ओर से की जा रही है। आपकी स्मृति को अक्षुण्ण बनाए रखने की दृष्टि से एक ट्रस्ट की भी स्थापना की गई है।

आपका निधन 18 अगस्त सन् 1979 को हुआ था।

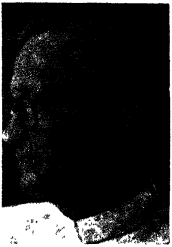
श्री जगदीशचन्द्र माथुर

श्री माथुर का जन्म 16 जुलाई सन् 1917 को उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर जनपद के खुर्जा नगर मे हुआ था। आपके पिता श्री लक्ष्मणप्रसाद माथुर नगर के प्रख्यात शिक्षा-शास्त्री और वहाँ के प्रख्यात शिक्षणालय के प्राचार्य थे। श्री माथुर की प्रारम्भिक शिक्षा अपने सुयोग्य तथा कर्मठ पिता की देख-रेख मे खुर्जा मे ही हुई थी और उच्च शिक्षा आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से प्राप्त की थी। यह उल्लेखनीय है कि विश्वविद्यालय की सभी परीक्षाओ मे प्रथम स्थान प्राप्त करके आपने 'भारतीय प्रशासन सेवा' (आई० सी० एस०) की परीक्षा भी सन् 1941 मे उत्तीर्ण कर ली थी। आपका स्थान इस परीक्षा मे समस्त भारत के परीक्षार्थियो मे चौथा था।

अपने छात्र-जीवन से ही श्री माथुर अत्यन्त मेधावी और जागरूक साहित्यवेत्ता के रूप मे प्रख्यात थे। यही कारण है कि आपने साहित्य के क्षेत्र मे अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था और आपकी गणना हिन्दी के

वरिष्ठ एकांकी-लेखकों में होने लगी थी। अपने छात्र-जीवन के प्रारम्भ से ही आपका झुकाव साहित्य-रचना की ओर हो गया था। इसका प्रमाण यह है कि आपने सन् 1928-29 में जहाँ एक हस्तलिखित पत्रिका का सम्पादन किया था वहाँ कई छोटे-छोटे नाटक भी लिखे थे। आपके द्वारा लिखित 'मूर्खेश्वर' नामक एक प्रहसन सन् 1930 में 'बालसखा' में भी प्रकाशित हुआ था। इसी प्रकार आपके द्वारा लिखित 'लव कुश' तथा 'शिवाजी और समर्थ रामदास' नामक नाटक प्रयाग से प्रकाशित होने वाली 'सेवा' नामक पत्रिका में छपे थे। उन्हीं दिनों आपने प्रख्यात हिन्दी-सेवी प० रामजीलाल शर्मा के 'हिन्दी प्रेस' से प्रकाशित होने वाली बालोपयोगी पुस्तकमाला के लिए 'हेनरी फोर्ड' की एक जीवनी भी लिखी थी। उन्हीं दिनों 'चाँद' में भी आपका 'सोमनाथ मन्दिर' पर एक विशिष्ट ऐतिहासिक लेख छपा था। यहाँ यह बात भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि नाटकों के प्रति आपका रुझान अपने बाल्यकाल से ही था। जिन दिनों आप सन् 1928 में खुर्जा में पढ़ते थे तब आपने वहाँ पर हिन्दी के प्रख्यात नाटककार राधेश्याम कथावाचक के 'वीर अभिमन्यु' नाटक में भाग लेने के अतिरिक्त बदरीनाथ भट्ट के कुछ नाटक भी अभिनीत किये थे। जिन दिनों आप इलाहाबाद में पढ़ते थे उन दिनों प्रख्यात शिक्षा-शास्त्री डॉ० अमरनाथ झा आपके शिक्षक, और सुकवि नरेन्द्र शर्मा आपके सहपाठी थे। सुप्रसिद्ध छायावादी कवि श्री सुमित्रानन्दन पन्त से भी आपका घनिष्ठ सम्बन्ध वहाँ पर ही हुआ था। प्रयाग के इस साहित्यिक वातावरण ने आपकी साहित्यिक चेतना को उद्बुद्ध करने की दिशा में जिस भूमिका का कार्य किया था उसीका सुपरिणाम यह हुआ कि आपने हिन्दी में एक उत्कृष्टतम एकांकीकार तथा नाटक-लेखक के रूप में शीर्ष-स्थान बनाया था। जिन दिनों सन् 1938 में सुकवि श्री सुमित्रानन्दन पन्त तथा श्री नरेन्द्र शर्मा ने कालाकाँकर से 'रूपाभ' नामक पत्र प्रकाशित किया था तब आप एकांकी-लेखन के क्षेत्र में प्रतिष्ठित हो चुके थे और आपके एकांकी 'रूपाभ' में भी प्रकाशित हुए थे। उन दिनों आपके जिन एकांकियों को बहुत लोकप्रियता प्राप्त हुई थी उनमें 'भोर का तारा' प्रमुख है। अपने प्रयाग के विश्वविद्यालयीन जीवन में आपने वहाँ के 'म्योर होस्टल' में रहते हुए हिन्दी नाटकों के मंचन का जो बीड़ा उठाया था उसके लिए डॉ० अमरनाथ झा ने आपको बहुत प्रोत्साहन प्रदान किया था। आपने वहाँ पर न केवल अपना 'मेरी बाँसुरी' नामक एकांकी मंचित किया था प्रत्युत गणेशप्रसाद द्विवेदी का 'परदे का अपर पार्श्व' नामक नाटक भी अत्यन्त सफलता से खेला था। आपके द्वारा लिखित 'मेरी बाँसुरी' नामक नाटक सन् 1936 में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुआ था।

श्री माथुर का अधिकांश प्रशासनिक क्षेत्र बिहार ही रहा था। वैसे आप अपने क्रियाशील जीवन के अन्तिम दिनों में केन्द्रीय सरकार के अनेक उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर प्रतिष्ठित रहे थे। आपकी शिक्षा तथा संस्कृति-सम्बन्धी अभिरुचियों का उदात्त तथा परिष्कृत रूप उन्हीं दिनों देखने को मिला था जब आप बिहार-प्रशासन में 'शिक्षा सचिव' के रूप में कार्य-रत थे। बिहार की प्रख्यात हिन्दी संस्था 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' आपके ही उर्वर मस्तिष्क की उपज है और आपने ही सर्व-प्रथम आचार्य शिव-



पूजनसहाय-जैसे ऋषिकल्प व्यक्तित्व को परिषद् का प्रथम निदेशक नियुक्त करके अपने साहित्य-प्रेम का परिचय दिया था। बिहार में शिक्षा-सचिव और आयुक्त के रूप में कार्य करते हुए आपने वहाँ पर कला और साहित्य के पुनरुत्थान और उन्नयन की दिशा में जो कार्य किया था उसका ज्वलन्त प्रमाण उस प्रदेश की 'प्राकृत शोध संस्थान वैशाली', 'पालि शोध प्रतिष्ठान नालन्दा' एवं 'संस्कृत शोध प्रतिष्ठान दरभंगा' आदि अनेक संस्थाएँ प्रस्तुत कर रही हैं। आपके ही सत्प्रयास से जहाँ 'वैशाली महोत्सव' का प्रारम्भ हुआ था वहाँ 'वैशाली संघ' की स्थापना में भी आपकी अभूतपूर्व प्रेरणा रही थी। अपने इस कार्य-काल में आपने जहाँ बिहार में सांस्कृतिक एवं साहित्यिक जागृति उत्पन्न करने का महान् कार्य किया था वहाँ आप ग्रामीण क्षेत्रों में बहुजन-माध्यमों का क्रियात्मक

अध्ययन करने के निमित्त अमरीका के 'हावर्ड विश्वविद्यालय' मे भी कुछ दिनों के लिए गए थे। प्रौढ़ शिक्षा को लोकप्रिय बनाने की दिशा मे भी आपकी सेवाएँ सदैव स्मरण की जाती रहेगी।

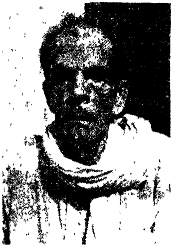
बिहार मे आने से पूर्व आप जिन दिनो उडीसा मे नियुक्त थे तब आपके साहित्यिक मानस पर वहाँ की लोक-संस्कृति तथा जन-जीवन का जो प्रभाव पडा था उसीके परिणामस्वरूप आपने वहाँ के प्रख्यात कोणार्क मन्दिर के स्थापत्य से प्रभावित होकर 'कोणार्क' नामक नाटक की रचना की थी। बिहार मे रहते हुए आपने जहाँ प्रशासन के नये मानदण्ड स्थापित किये थे वहाँ साहित्यिक तथा सास्कृतिक उन्नयन मे भी आपका उल्लेखनीय योगदान रहा था। आपकी कला तथा सस्कृति-सम्बन्धी अभिरुचियो का परिष्कृत रूप हमे उस समय देखने को मिला जब आप केन्द्र मे 1955 से सन् 1962 तक आकाशवाणी के महा-निदेशक रहे थे। इस पद पर रहते हुए आपने जहाँ आकाशवाणी के विभिन्न कार्यक्रमो को नई गति दी वहाँ हिन्दी के अनेक शीर्षस्थ कवियो तथा साहित्यकारो को भी आकाशवाणी मे विभिन्न उत्तरदायित्वपूर्ण पदो पर प्रतिष्ठित किया था। ऐसे महानुभावों मे हिन्दी के मूर्धन्य कवि श्री सुमित्रानन्दन पन्त के अतिरिक्त सर्वश्री इलाचन्द्र जोशी, भगवतीचरण वर्मा, उदयशकर भट्ट, हरिकृष्ण 'प्रेमी', नरेन्द्र शर्मा, प्रफुल्लचन्द्र ओझा 'मुक्त, तथा श्री भवानी-प्रसाद मिश्र आदि अनेक कवियो और साहित्यकारो के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। केन्द्र मे आकाशवाणी के महा-निदेशक पद पर प्रतिष्ठित होने के अतिरिक्त आपने कई वर्ष तक कृषि विभाग के अतिरिक्त सचिव पद पर भी कार्य किया था। उन्ही दिनों आपने दक्षिण एशिया के बहुत-से देशो की यात्रा की थी। आपके इस यात्रा के सस्मरण एक लेखमाला के रूप मे सन् 1977 मे 'दिनमान' मे प्रकाशित हुए थे। 'लोक सचार और उसके सगठन की समस्या' के सम्बन्ध मे भी आपके विचार सर्वथा अलग थे। भारत सरकार के गृह मत्रालय मे 'हिन्दी सलाहकार' के रूप मे भी आपकी सेवाएँ सर्वथा स्पृहणीय रही थी।

आप जहाँ एक कुशल प्रशासक के रूप मे 'भारतीय प्रशासनिक सेवा' मे अपना सर्वथा अप्रतिम स्थान रखते थे वहाँ साहित्य, कला और सस्कृति के उन्नयन एव विकास मे भी आपका अभिनन्दनीय योगदान था। लेखन के क्षेत्र मे आपने जहाँ उत्कृष्ट एकांकी लेखक और नाटककार के रूप मे अत्यन्त लोकप्रियता अर्जित की थी वहाँ समीक्षा, रेखाचित्र और सस्मरण-लेखन में भी आप परम प्रवीण थे। गम्भीर निबन्ध लिखने की कला मे भी आपको अभूतपूर्व सिद्धि प्राप्त थी। आपकी नाट्य-कृतियों मे 'भोर का तारा' (1947) 'ओ मेरे सपने' (1950), 'मेरे श्रेष्ठ रग एकाकी' (सभी एकाकी), 'कोणार्क' (1951), 'बन्दी' (1954), 'शारदीया' (1959) 'पहला राजा' (1969), 'दशरथ नन्दन' (1974) सम्पूर्ण नाटक के अतिरिक्त 'कुँवरसिह की टेक' (1954) और 'गगन सवारी' (1958) नामक कठपुतली नाटक विशेष उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपकी 'दस तस्वीरे' (1963) और 'जिन्होंने जीना जाना' (1971) नामक कृतियो मे आपकी रेखा-चित्र और सस्मरण-लेखन की कला उन्मुक्त रूप से मुखरित हुई है। समीक्षा और निबन्ध-लेखन मे भी आपने अपनी प्रतिभा का परिचय अपनी 'परम्पराशील नाट्य' (1969), 'प्राचीन भाषा नाटक सग्रह' (डॉ० दशरथ ओझा के साथ) तथा 'बोलते क्षण' (1973) नामक कृतियो मे दिया था। जन-सचार माध्यम के सम्बन्ध मे भी आपने बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् की ओर से प्रकाशित अपनी 'बहुजन सम्प्रेषण के माध्यम' (1975) नामक कृति मे अच्छा प्रकाश डाला है। आपके द्वारा सम्पादित 'नाटककार अश्क' (1954) नामक कृति से आपकी सम्पादन-पटुता का सम्यक् परिचय मिलता है। हिन्दी के कुछ कृतविद्य समीक्षको का मत यह है कि माथुर जी ने अपने नाटको मे श्री जयशकरप्रसाद की नाटक-कला को एक सर्वथा नए रूप और शिल्प मे प्रस्तुत करके उनके उत्तराधिकारी होने का गौरव प्राप्त किया है। आप जहाँ हिन्दी के उत्कृष्ट लेखक थे वहाँ अँग्रेजी मे भी आपने 'न्यू लैम्प्स फॉर अलादीन' और 'ड्रामा इन रूरल इण्डिया' नामक पुस्तके लिखकर अपनी प्रतिभा का उदात्त परिचय दिया था। भारत सरकार की ओर से सन् 1956 मे भगवान् बुद्ध की जो 2500वी जन्म-जयन्ती मनाई गई थी उसकी मूलभूत प्रेरणा भी आप ही थे।

आपका निधन 14 मई सन् 1978 को नई दिल्ली के राममनोहर लोहिया अस्पताल मे दिल का दौरा पडने के कारण हुआ था।

आचार्य जगदीशचन्द्र मिश्र

श्री मिश्र का जन्म उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जनपद के देवबन्द नामक कस्बे मे 20 जनवरी सन् 1901 को हुआ था। अपने पारिवारिक संस्कारो के कारण आपने सस्कृत का ही अध्ययन किया था और सन् 1919 मे 'आयुर्वेदाचार्य' की परीक्षा ससम्मान उत्तीर्ण करके देहरादून मे चिकित्सा-कार्य प्रारम्भ कर दिया था। जब महात्मा गाधी ने ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध समस्त देश मे 'सविनय अवज्ञा आदोलन' प्रारम्भ किया तो आप भी उसमे अछूते न रह सके और आपने



राष्ट्रीय आदोलन मे बढ-चढकर भाग लिया। राष्ट्रीय जागरण के इस अभियान मे सक्रिय रूप मे भाग लेने के कारण ही आपके मानस मे 'साहित्यिक चेतना' प्रस्फुटित हुई और आपने 'कुसुम' उपनाम से कविताएँ लिखनी प्रारम्भ कर दी। कविता के साथ-साथ गद्य-लेखन की ओर भी आपका झुकाव हुआ और आपने अनेक लेख भी लिखे।

सन् 1922 मे आप देहरादून से अपनी जन्मभूमि देवबन्द लौट आए और जमकर चिकित्सा-कार्य प्रारम्भ कर दिया। अपनी योग्यता, निष्ठा और साधना के सहारे आपको अपने इस कार्य मे पर्याप्त सफलता मिली। सन् 1925 मे आपने कहानी-लेखन प्रारम्भ किया, जो 1935 तक अबाध गति से जारी रहा। इसी काल मे आपने उपन्यास भी लिखा। आपकी कहानियाँ शिल्प और कथ्य दोनो ही दृष्टि से सर्वथा अनूठी और अनुपम कही जा सकती हैं। लघु-कथा-लेखन मे तो आप सर्वाग्रणी स्थान रखते थे। उनमे निबन्ध की अर्थ-गर्भिता और गद्य-काव्य की-सी इन्द्रधनुषी आभा रहती थी।

यद्यपि स्वास्थ्य की क्षीणता के कारण आपने बीच मे अपनी लेखनी को विश्राम दे दिया था, किन्तु आपका साहित्यकार चुप नही बैठा और आपने अपने मानस मे प्रचुर प्रेरणा सँजोकर बाद मे निरन्तर लेखन-कार्य जारी रखा। यह आपकी साधना का प्रमाण ही है कि आपने लगभग दो दर्जन से अधिक जो रचनाएँ प्रस्तुत की उनमे कहानियो के अतिरिक्त उपन्यास तथा नाटक प्रमुख है। आपकी प्रकाशित रचनाओं मे 'धूप दीप' के अतिरिक्त 'मौत की खोज' (1957), 'जय पराजय' (1957), 'पच तत्त्व' (1958), 'खाली भरे हाथ' (1958), 'उडन के पख' (1963), 'मिट्टी का आदमी' (1968) तथा 'ऐतिहासिक लघु कथाएँ' (1971), कहानी-सग्रह प्रमुख हैं। आपके द्वारा लिखित उपन्यासो मे 'इन्दिरा' (1957), 'और वह हार गई' (1960), 'सीमा के पार' (1962), 'हाथी के दाँत' (1962) तथा 'दुर्बल के पाँव' (1964) उल्लेख्य है। नाटक तथा एकाकी के क्षेत्र मे भी आपकी 'मरुस्थली के पहरेदार' (1962), 'पौराणिक एकाकी (1963), 'धर्म युद्ध' (1965) 'कल युग का राम' (1967) तथा 'अमृत पुत्र' नामक कृतियाँ महत्त्वपूर्ण है। बालोपयोगी साहित्य की रचना मे भी आपने अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था। आपकी ऐसी कृतियो मे 'हीरे मोती' (1959), 'माणिक मोती' (1963), 'धूल के फूल' (1964), 'स्वर्ग का द्वार' (1966), 'भारत माता' (1969) एव 'सरल रामायण' (1971) के नाम विशिष्ट स्थान रखते है। आपकी इन रचनाओ मे बहुत-सी उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हुई थी।

आपका निधन 29 मई सन् 1981 को पक्षाघात के कारण हुआ था।

श्री जगदीश झा 'विमल'

श्री विमल जी का जन्म बिहार प्रदेश के भागलपुर जनपद के कुमैठा नामक ग्राम मे सन् 1889 मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने ग्राम की पाठशाला मे ही हुई थी और बाद मे आपने अपने ग्राम के समीपवर्ती स्थान जलालाबाद के सैकेण्डरी स्कूल से मिडिल की परीक्षा पास की। इसके बाद आप पटना के नार्मल स्कूल मे प्रविष्ट हो गए थे जहाँ से आपने सन् 1910 मे नार्मल की परीक्षा सारे प्रदेश मे

सर्वोच्च अंक प्राप्त करके उत्तीर्ण की थी। इसके उपरान्त आप सन् 1911 में भागलपुर के क्रिश्चियन मिशन स्कूल में अध्यापक हो गए थे। शिक्षक-जीवन के अन्तिम दिनों में आप जमालपुर के रेलवे स्कूल मे अध्यापन का कार्य करते थे। अध्यापन से आपको इतना अनुराग था कि जीवन-भर आप इसीमें सलग्न रहे।

आप जहाँ एक लगनशील अध्यापक के रूप मे सारे प्रदेश में अपना एक विशिष्ट स्थान बना चुके थे वहाँ आपने अध्यापन के दिनों मे ही अपने निरन्तर स्वाध्याय और अभ्यास के बल पर लेख, कहानियाँ और कविताएँ लिखना भी प्रारम्भ कर दिया था। आप प्रचार और विज्ञापन से दूर रहकर साहित्य-रचना मे तल्लीन रहा करते थे। आपकी रचनाएँ उन दिनो 'पाटलिपुत्र', 'अभ्युदय', 'प्रताप', 'कर्मवीर', 'भारत मित्र', 'स्वतन्त्र', 'मतवाला', 'श्रीकृष्ण सन्देश', 'सैनिक', 'हिन्दू पंच', 'मर्यादा', 'कन्यकुब्ज', 'स्वतन्त्र', 'छात्र-सहोदर', 'हिन्दी चित्रमय जगत्', 'सरस्वती', 'सुधा', 'माधुरी', 'मनोरमा', 'चाँद', 'श्रीशारदा', 'प्रभा', 'आर्य महिला', 'लक्ष्मी', 'गृह लक्ष्मी', 'हितकारिणी' तथा 'विद्यार्थी' आदि तत्कालीन अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी।

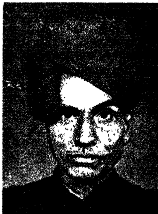


उक्त सभी पत्र-पत्रिकाओं मे फुटकर रचनाएँ लिखने के साथ-साथ आपने अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो की रचना भी की थी। आपके द्वारा रचित ग्रन्थो की सख्या पचास के लगभग है जिनमे से 'वीणा की झकार','पद्य प्रसून','पद्य सग्रह','छाया', 'सती पच रत्न', 'विनोद','सुषमा','उत्सर्ग', 'वेणु' (कविता), 'खरा सोना', 'जीवन ज्योति', 'लीलावती', 'आशा पर पानी', 'निर्धन की कन्या', 'दुरगी दुनिया', 'गरीब' (उपन्यास), 'रमणी', 'सावित्री' (कहानी-सकलन) तथा 'तरगिणी' आदि प्रमुख है। इनके अतिरिक्त आपकी कई पाण्डुलिपियाँ अभी अप्रकाशित ही पड़ी है। आपने कुछ जीवनियाँ भी लिखी थीं जिनमे से 'महावीर' और 'आदर्श सम्राट्' का प्रकाशन भी हो चुका है। इन सब रचनाओं के अतिरिक्त आपके द्वारा बगला से अनूदित अनेक ग्रन्थ भी प्रकाशित हुए थे। बिहार के साहित्य-सेवियो मे आपका स्थान सर्वथा विशिष्ट कहा जा सकता है। अपनी साहित्य-सेवा के इस काल मे आपने जहाँ अपनी कविताओ मे श्री रामचरित उपाध्याय-जैसी प्रबन्धात्मकता को महत्त्व दिया दिया था वहाँ श्री रामनरेश त्रिपाठी-जैसी भाषा की सरलता और भावना-प्रवणता की ओर भी पर्याप्त ध्यान दिया था।

आपका निधन सन् 1942 मे हुआ था।

श्री जगदीशदान खड़िया

श्री खडिया का जन्म मध्य प्रदेश के मन्दसौर जनपद के अन्तर्गत मालवा की प्रख्यात रियासत सीतामऊ के एकलगढ नामक स्थान मे 9 जुलाई सन् 1907 को हुआ था। आपके पिता श्री शेरदान खडिया (जगावत) भी अच्छे साहित्य-मर्मज्ञ थे। आपने सन् 1959 मे उनके द्वारा रचित 'भाटवाडे का युद्ध' नामक रचना का प्रकाशन करके पितृ-ऋण उतारा था।



अपने पारिवारिक जीवन तथा पारपरिक वातावरण के प्रभाव के कारण ही आप काव्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए थे। आपके द्वारा लिखित रचनाओ मे 'जगदीश विनोद' तथा 'उत्तरा अभिमन्यु सवाद' प्रमुख है।

आपका निधन 20 अप्रैल सन् 1970 को हुआ था।

श्री जगदीशनारायण वर्मा

श्री वर्मा का जन्म मध्य प्रदेश की पैड़ा रियासत में 20 जुलाई सन् 1920 को हुआ था, जहाँ पर आपके पिता श्री प्रेमनारायण वर्मा दीवान थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा बालाघाट में हुई थी और बाद में उच्च शिक्षा के लिए आप नागपुर चले गए थे। वहाँ के मारिस कालेज से अँग्रेजी साहित्य में एम० ए० करने के उपरान्त आपने एल-एल०बी० की परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी। कुछ दिन तक एक सरकारी नौकरी करने के उपरान्त आप सन् 1947 में अपने बड़े भाई लक्ष्मीनारायण वर्मा के पास बम्बई चले गए, जहाँ पर वे एक फिल्म-कम्पनी के जनरल मैनेजर थे। आपने



पहले तो एक फिल्म में असिस्टेंट डायरेक्टर का काम किया और फिर स्क्रिप्ट तथा संवाद-लेखन करने लगे। लेखन की ओर आपकी रुचि उन दिनों में ही थी जब आप छात्र-जीवन में एक हस्तलिखित पत्रिका का सम्पादन किया करते थे। आपने प्रख्यात सिने-कलाकार और लेखक श्री प्यारेलाल 'सन्तोषी' के साथ भी कार्य किया था। आपने जिन फिल्मों के लिए लेखन-कार्य किया था उनमें 'शहनाई', 'खिड़की', 'नादान', 'निशाना', 'आहुति' तथा 'अपनी छाया' आदि के नाम विशेष रूप से स्मरणीय हैं।

24 जनवरी सन् 1949 को आपका विवाह नागपुर में हुआ और तत्पश्चात् आप गोरेगाँव (बम्बई) में रहने लगे। फिल्म-क्षेत्र का वातावरण रास न आने के कारण आपने सन् 1952 में सिने-साप्ताहिक 'स्क्रीन' के हिन्दी-संस्करण के सम्पादकीय विभाग में कार्य करना प्रारम्भ किया। उन दिनों आपके साथ श्री दुर्गाप्रसाद खन्ना तथा शिरीष पाठक भी कार्य किया करते थे। 'स्क्रीन' में रहते हुए आपकी पत्रकारिता में निखार आया तथा आप समय निकालकर अँग्रेजी और हिन्दी में और भी स्वतन्त्र लेखन का कार्य करने लगे। उन दिनों आप जहाँ बम्बई के आकाशवाणी केन्द्र के विभिन्न कार्यक्रमों के लिए लिखा करते थे, वहाँ आपके लेख आदि 'स्क्रीन' के अतिरिक्त 'नवनीत', 'धर्मयुग' तथा 'सारिका' आदि में भी प्रकाशित होने लगे थे। अपने इस लेखन-कार्य में आपको सर्वश्री कन्हैयालाल नन्दन, नारायणदत्त, मनमोहन सरल, वीरेन्द्र श्रीवास्तव, सुरेन्द्र खरे, आनन्दप्रकाश सिंह, हरिमोहन शर्मा तथा सुभाषचन्द्र सरकार आदि अनेक साथियों का सौजन्यपूर्ण सहयोग समय-समय पर सुलभ रहता था।

जुलाई सन् 1956 में आप 'खादी ग्रामोद्योग मण्डल' में 'प्रचार-अधिकारी' होकर चले गए और अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक इस संस्थान में विभिन्न रूपों में कार्य-रत रहे। आपने जहाँ मण्डल के पत्र 'जागृति' तथा 'खादी ग्रामोद्योग' का अत्यन्त सफलतापूर्वक सम्पादन किया वहाँ मण्डल में कार्य-रत रहते हुए ही आपने पी-एच०डी करने का उपक्रम भी किया था, किन्तु पारिवारिक दायित्वों की व्यस्तता के कारण आप इसमें सफल न हो सके थे। अपने निधन के समय आप 'खादी ग्रामोद्योग मण्डल' में 'निदेशक' के पद पर कार्य करते थे।

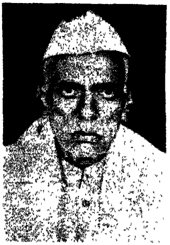
आपका निधन 27 मार्च सन् 1982 को हुआ था।

आचार्य जगदीश शर्मा 'मतवाला'

श्री 'मतवाला' का जन्म 10 अप्रैल सन् 1914 को बिहार राज्य के मुंगेर जनपद के दरखा नामक ग्राम में एक श्रोत्रिय ब्राह्मण-परिवार में हुआ था। आपके पितामह प० लोकनाथ शर्मा और पिता श्री गंगाधर शर्मा उच्चकोटि के कथावाचक और संस्कृत वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान् थे। अपने इन पारिवारिक संस्कारों के कारण आप भी संस्कृत तथा हिन्दी साहित्य का गहन ज्ञान रखते थे। हिन्दी के अतिरिक्त आप संस्कृत तथा मगही भाषाओं में काव्य-रचना करने में भी परम प्रतिभावान् थे। गया और वाराणसी में रहकर आपने हिन्दी तथा संस्कृत-वाङ्मय का गहन ज्ञान अर्जित

करने के साथ-साथ आयुर्वेद तथा ज्योतिष शास्त्र की भी अद्भुत जानकारी प्राप्त कर ली थी। आपने 'साहित्याचार्य', 'आयुर्वेदाचार्य' और 'साहित्यालकार' की उपाधियाँ भी प्राप्त की थी।

आप जहाँ उच्चकोटि के कथावाचक, सुधारक, स्वतन्त्रता-सेनानी और सामाजिक कार्यकर्ता थे वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आपने अपनी योग्यता तथा विशिष्टता का अद्भुत परिचय दिया था। अपने इस कर्म-सकुल जीवन मे आपका सम्पर्क सर्वश्री डॉ० राजेन्द्र-प्रसाद, लक्ष्मीनारायण-सिंह 'सुधांशु' रामधारीसिंह 'दिनकर' और बुद्धिनाथ झा 'कैरव' प्रभृति बिहार के अनेक



उच्चकोटि के नेताओ कवियो तथा साहित्यकारो मे हो गया था। इसी सम्पर्क के कारण आपने समाज-सेवा, राजनीति तथा साहित्य-सम्बन्धी सभी क्षेत्रो मे समान रूप से बढ-चढकर अत्यन्त प्रशसनीय कार्य किया था। स्वतन्त्रता-सग्राम के दिनो मे भी आपने डटकर कार्य किया था और सन् 1930, 1932 और 1942 मे जेल की यात्राएँ भी की थी। अपने राजनीतिक जीवन मे आपने महात्मा गाधी द्वारा निर्दिष्ट पथ पर चलकर काग्रेस के खादी-प्रचार, अछूतोद्धार तथा स्वदेशी वस्तुओ के व्यवहार के कार्यों मे भी बढ-चढकर भाग लिया था।

साहित्य के क्षेत्र मे भी आपकी सेवाएँ कम महत्त्व नही रखतीं। आपने हिन्दी मे जहाँ उत्कृष्ट लोकगीतों, भजनो और कविताओ की रचना की थी वहाँ सस्कृत मे लिखित आपकी 'देवाष्टक' नामक कृति उल्लेखनीय है। आप बगला-भाषा मे भी छुट-पुट रचना कर लिया करते थे। आपकी हिन्दी रचनाओ मे 'लाक्षागृह दहन', 'नल दमयन्ती', 'गगावतरण', 'समुद्र मन्थन' (सभी खण्ड काव्य) के अतिरिक्त 'कविता कुज', 'भजनमाला' (काव्य सकलन); 'महाचन्द्र' (प्रबन्ध काव्य), 'आदर्श गोभक्त', 'पुरु की पितृ-भक्ति' और 'समाज का कालिख' (सभी नाटक) के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपने 'सर्वोदय आलोक' नामक जो एक काव्य लिखा था उसकी पाण्डुलिपि पर आचार्य विनोबा भावे ने अपने हस्ताक्षर भी किए थे।

सन् 1930 मे हजारीबाग मे सम्पन्न हुई एक काव्य-गोष्ठी मे राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने आपकी समस्या-पूर्ति पर प्रसन्न होकर आपको 'मतवाला' कहकर सम्बोधित किया था। तब से ही आपके नाम के साथ 'मतवाला' का विशेषण जुड गया था। जनता उच्च विद्यालय, अलीगज और श्रीकृष्ण विद्यालय हिन्दी साहित्य परिषद्, अलीगज (मुगेर) की स्थापना मे आपका उल्लेखनीय योगदान रहा था।

आपका निधन 15 जनवरी सन् 1978 को हुआ था।

श्री जगदीश सरीन

श्री सरीन का जन्म भारत-विभाजन से पूर्व 3 अप्रैल सन् 1943 को लाहौर (पाकिस्तान) मे हुआ था। विद्यार्जनोपरान्त आपका पालन-पोषण अपनी माता के निरीक्षण मे ही हुआ था और आपका परिवार मध्यप्रदेश के ग्वालियर नगर मे स्थायी रूप मे रहने लगा था। अपनी प्रारम्भिक शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त आपने स्वत ही हिन्दी पजाबी, सिन्धी, मराठी और अँग्रेजी भाषाओ का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आपने निरन्तर अभावो और सघर्षों मे जूझते हुए ही अपने जीवन का निर्माण किया था।



अपने पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह करते हुए आपने अपनी शैक्षणिक योग्यता को बढाया और साहित्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए। बाल-साहित्य-रचना के क्षेत्र मे आपको अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई थी और थोडे ही दिनो मे आपने महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया था। 'कार्टूनिस्ट' के रूप मे भी आप अत्यन्त लोकप्रिय थे। आपकी बाल कविता के इस उद्धरण से आपकी काव्य-चातुरी का सहज ही अनुमान हो सकता है

पूरब का दरवाजा खोल
रग लाल बिखराते है
अँधियारे को दूर भगाने
सूरज भैया आते है
जग जातीं चिड़ियाँ सारी
खिल जातीं कलियाँ प्यारी
नया सवेरा लाते है
सूरज भैया आते है

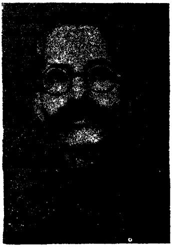
इस कविता का प्रकाशन 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' के दिसम्बर सन् 1978 मे एक अक मे हुआ था। आपने अपने जीवन मे 200 से अधिक बाल-कविताएँ लिखी थीं। आपकी रचनाएँ और व्यग्य-चित्र 'धर्मयुग', 'सरिता', 'मुक्ता', 'माधुरी' तथा 'माया' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओ म प्रकाशित होते रहते थे।

अपने जीवन के अन्तिम दिनो म आप कैसर-जैसे भयकर रोग से आक्रान्त हो गए थे। यद्यपि आपकी चिकित्सा का प्रबन्ध ग्वालियर के साहित्यकारो और समाज-सेवियो ने अत्यन्त सतर्कतापूर्वक किया था, किन्तु वे आपको न बचा सके और अचानक खून की उलटियाँ होने के कारण 'जया आरोग्य चिकित्सालय' ग्वालियर के कैसर वार्ड मे 12 जुलाई सन् 1981 को आपका निधन हो गया।

कुँवर जगदीशसिंह गहलोत

श्री गहलोत का जन्म राजस्थान के जोधपुर नगर मे सन् 1895 मे हुआ था। आपकी शिक्षा जोधपुर, हैदराबाद और रामपुर (उत्तर प्रदेश) मे हुई थी। पुरातत्त्व और इतिहास का ज्ञान आपने हैदराबाद (सिंध) मे रहकर प्राप्त किया था। आप राजस्थानी भाषा के प्रबल समर्थक थे और आपने समस्त राजस्थान के एकीकरण के सम्बन्ध मे प्रबल और सुपुष्ट प्रमाण प्रस्तुत करते हुए दिल्ली से प्रकाशित होने वाले 'नवभारत' के 16 अप्रैल सन् 1947 के अक मे जो लेख लिखा था उससे आपकी विचार-धारा का सम्यक् परिचय मिल जाता है। आपका आर्यसमाज की गतिविधियो मे भी सक्रिय योगदान रहता था। हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार के लिए भी आप समय-समय पर कार्य करते रहते थे। आपने जोधपुर मे 'हिन्दी प्रचार सभा' और 'हिन्दी साहित्य मन्दिर' की स्थापना भी की थी।

आपको इतिहास तथा पुरातत्त्व के विद्वान् के रूप मे जाना जाता है और इसी दिशा मे आपने कई उल्लेखनीय कार्य किए थे। आपने 'शाकद्वीपी ब्राह्मण' तथा 'सैनिक क्षत्रिय' नामक पत्रो का सम्पादन करने के अतिरिक्त 'देशी राज्य प्रतिहार मदिर' नामक सस्था के माध्यम मे इतिहास-सम्बन्धी अनेक ग्रथो का प्रकाशन भी किया था। आपका व्यक्तिगत ऐतिहासिक सग्रहालय भी अद्भुत



और दर्शनीय था। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थो मे 'ऊमर-काव्य' (सम्पादन), 'राजस्थान के लोक गीत', 'राजिया के सोरठे' (सम्पादन), 'राजस्थानी वार्ता', 'आर्यसमाज और हिन्दू सगठन', 'मारवाड के रीति-रिवाज', 'राजपूताने का इतिहास', 'राजस्थान का सामाजिक जीवन', 'मारवाड के लोकगीत', 'राजपूताने का इतिहास' (पाँच भाग), 'मारवाड़ राज्य का इतिहास', 'इतिहास सहायक पचाग' (वि० स० 1501-2100), 'भारतीय नरेश', 'चित्रमय जोधपुर', 'उम्मेद अभग', 'महाराजा सर प्रताप', वीर दुर्गादास राठौर', 'सती मीराबाई का जीवन और काव्य', 'मारवाड के जागीदार और

मुसद्दी', 'मारवाड़ राज्य के ताजीमी सरदार', 'राजपूताने के जागीरदार', 'जयपुर राज्य का इतिहास', 'चित्रमय राजस्थान', 'मारवाड का संक्षिप्त वृतान्त', 'ससार के धर्म', 'नेपाल का सचित्र इतिहास', 'राजस्थान की कृषि-कहावतें' तथा 'मारवाड़ के ग्राम-गीत' आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

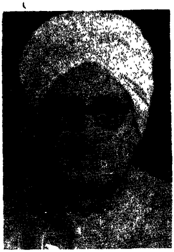
आप सन् 1952 से 1958 तक राजस्थान सरकार के पुरातत्त्व व संग्रहालय विभाग जोधपुर तथा बीकानेर खण्ड के अध्यक्ष भी रहे थे। अपने लेखन तथा प्रशासनिक व्यस्तताओ से समय निकालकर आप अन्य सामाजिक गतिविधियो में भी बढ़-चढकर भाग लेते रहते थे।

आपका निधन सन् 1958 में हुआ था।

श्री जगदेवसिंह सिद्धान्ती

श्री सिद्धान्ती जी का जन्म हरियाणा प्रदेश की झज्जर तहसील के बरहाणा नामक ग्राम के एक साधारण कृषक-परिवार मे सन् 1900 में हुआ था। आपके पिता चौधरी प्रीतराम ब्रिटिश-काल मे फौज के सैनिक थे। उन दिनो हरियाणा की झज्जर तहसील के भारतीय सेना मे बहुत सैनिक होते थे, आपका परिवार भी उससे पीछे कैसे रहता। आपके पिता श्री प्रीतराम भारतीय घुडसवार सेना की न० 4 बगाल कैवलरी (रिसाले) मे भर्ती हुए थे और फौज में रहते हुए ही उन्होंने हिन्दी, उर्दू और अँग्रेजी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। यह एक आश्चर्य का ही विषय है कि उन्होंने सैनिक जीवन से विश्राम लेकर 'नाड़ी विचार' नामक ग्रन्थ भी लिखा था जो अभी तक अप्रकाशित है। श्री सिद्धान्ती जी ने अक्षर-ज्ञान सन् 1906 मे गाँव मे ही प्राप्त किया था। उसी वर्ष आपके ग्राम मे 'प्राइमरी स्कूल' खुला था। आपने गाँव के विद्यालय से ही 'प्राइमरी' की परीक्षा उत्तीर्ण करके झज्जर के मिडिल स्कूल मे वजीफे के साथ प्रवेश लिया और वहाँ से मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। फिर आपने रोहतक के 'जाट हाई स्कूल' मे प्रवेश लिया था।

जिन दिनो आप रोहतक मे हाई स्कूल मे पढ़ा करते थे तब वहाँ पर आर्य समाज का बहुत अधिक प्रचार था। फलस्वरूप 10 वर्ष की आयु में ही आप आर्य समाज की सुधारवादी विचार-धारा से पूर्णत: प्रभावित हो गए। जब आप हाई स्कूल मे ही पढ रहे थे तब अचानक आपकी श्रद्धेया माताजी का असामयिक निधन हो गया। फलस्वरूप 16 वर्ष की आयु मे ही आपका विवाह कर दिया गया। अपने पिता के प्रभाव और तत्कालीन वातावरण से अभिभूत होकर आप भी सन् 1917 के प्रारम्भ मे पेशावर जाकर फौज मे भर्ती हो गए। कुछ दिनो के बाद आपको बगदाद के डोरा कैम्प का इन्चार्ज बनाकर भेज दिया गया। वहाँ पर मास खाने के मामले को लेकर आपका अपने अँग्रेज ब्रिगेडियर से सघर्ष हो गया। आपने वहाँ रहते हुए जहाँ अपने साथी सैनिको को मास-भक्षण के विरोध मे सगठित किया वहाँ 'आर्य समाज'की स्थापना करके उसमे 'प्रतिदिन' सन्ध्या-हवन भी करने लगे। वहाँ आप 'सत्यार्थ प्रकाश' का पारायण भी नियमित रूप मे किया करते थे। यहाँ तक कि आपके प्रयास से सभी सैनिक मार्च करते समय 'वैदिक धर्म की जय' और 'महर्षि दयानन्द की जय' के नारे भी लगाने लगे थे। आपने सन् 1917 मे सन् 1921 तक सैनिक जीवन व्यतीत किया था।



फिर आपके जीवन मे ऐसा मोड आया कि आप इस कार्य को सर्वथा तिलाजलि देकर सरस्वती की आराधना मे निमग्न हो गए और सस्कृत वाङ्मय के सर्वांगीण अध्ययन की ओर प्रवृत्त हुए। पहले-पहल आपने सन् 1922 मे गुरुकुल मटिण्डू मे कार्य प्रारम्भ किया। वहाँ पर गणित का अध्यापन करने के साथ-साथ सस्कृत का अध्ययन करते रहे। थोडे ही प्रयास से आपने पजाब विश्वविद्यालय की 'प्राज्ञ' परीक्षा बहुत अच्छे अक प्राप्त करके उत्तीर्ण कर ली और फिर 'विशारद' की परीक्षा मे प्रथम श्रेणी प्राप्त की। इसके

साथ-साथ आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के द्वारा संस्थापित 'दयानन्द उपदेशक विद्यालय' मे 2 वर्ष तक रहकर वहाँ की 'सिद्धान्त भूषण' उपाधि भी प्राप्त कर ली और अपने नाम के साथ 'सिद्धान्ती' विशेषण जोड लिया। इस बीच आप पजाब विश्वविद्यालय की 'शास्त्री' परीक्षा भी उत्तीर्ण कर चुके थे। इसके उपरान्त आप सन् 1929 मे 'आर्य महाविद्यालय किरठल (मेरठ)' मे आ गए और यहाँ पर ऐसे रमे कि इस सस्था के माध्यम से आपने जहाँ इस क्षेत्र की शैक्षणिक उन्नति मे उल्लेखनीय सहयोग दिया वहाँ उसके माध्यम से अच्छे कार्यकर्ता भी तैयार किए।

यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि गुरुकुल काँगडी विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के भूतपूर्व मन्त्री स्व० श्री रघुवीरसिह शास्त्री आपके अन्यतम शिष्यो मे से थे। उन्होने जहाँ आर्यसमाज के क्षेत्र मे श्री सिद्धान्ती जी के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर कार्य किया वहाँ राजनीति मे भी वे आपके अनुयायी रहे। यहाँ तक कि कई वर्ष तक गुरु-शिष्य दोनो ही भारतीय लोक सभा के सक्रिय सदस्य रहे। 'आर्य महाविद्यालय किरठल' के आचार्य के रूप मे आपने आर्य जगत् की जो उल्लेखनीय सेवा की थी, उसीके परिणाम-स्वरूप यह 'गुरु-शिष्य-सम्बन्ध' दृढता से स्थापित हुआ था। श्री रघुवीरसिह शास्त्री इसी गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक थे। जिस समय श्री सिद्धान्ती जी ने इस सस्था का कार्य-भार सँभाला था तब उसकी स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी। किन्तु थोडे ही दिनो मे आपने अपने अथक परिश्रम से उसका उत्तरोत्तर विकास करके एक सुदृढ रूप प्रदान कर दिया। यहाँ तक कि इस सस्था की स्थापना के 25 वर्ष पूर्ण होने पर सन् 1944 मे जब इसका 'रजत जयन्ती उत्सव' समारोहपूर्वक मनाया गया तब अकेले आपकी ही अटूट लगन का यह परिणाम हुआ कि सस्था के पास 40 हजार रुपये से अधिक की राशि जमा हो गई थी।

जिस समय सस्था का 'रजत जयन्ती समारोह' मनाने का सकल्प सिद्धान्ती जी ने किया था तब ही आपने सस्था की सेवा से निवृत्ति पाने का निश्चय कर लिया था। परिणाम स्वरूप आप सस्था से विदा लेकर दिल्ली आ गए और यहाँ पर 'सम्राट् प्रेस' की स्थापना करके उसकी ओर से 'सम्राट्' नामक एक हिन्दी साप्ताहिक पत्र भी प्रकाशित करने का निश्चय कर लिया। इस कार्य में आपके अन्यतम शिष्य श्री रघुवीरसिह शास्त्री भी सहयोगी बने और वे भी आपके साथ दिल्ली मे ही रहने लगे। यहाँ यह भी विशिष्ट रूप से उल्लेखनीय तथ्य है कि शास्त्री जी के अतिरिक्त उनके दो शिष्यों—श्री नारायणसिह शास्त्री और श्री चन्द्रमोहन शास्त्री का भी उल्लेखनीय सहयोग रहा था। यदि ये दोनो आकर इस कार्य मे न जुटते तो कदाचित् उतनी सफलता सिद्धान्ती जी को अपने इस कार्य मे न मिल पाती। 'सम्राट् प्रेस' और 'सम्राट्' पत्र के सचालन मे इन दोनों युवको का भी घनिष्ठतम सहयोग रहा था। 'सम्राट्' के माध्यम से श्री सिद्धान्ती जी ने जहाँ आर्य-जगत् की उल्लेखनीय सेवा की वहाँ 'सर्व खाप पचायत' के आन्दोलन को भी आपने पर्याप्त गति प्रदान की। आपने सम्वत् 1151 विक्रमी से सम्वत् 1914 विक्रमी तक के लगभग 750 वर्ष के पचायत के इतिहास को पूर्णत सुरक्षित करके देश को प्राचीन पचायत प्रणाली से परिचित कराया था। इस सगठन ने मुसलमानों के आक्रमण से लेकर अँग्रेजी राज्य की स्थापना तक अनेक सकटकालीन स्थितियो मे देश के नागरिको को उल्लेखनीय प्रेरणा दी थी।

आपने जहाँ 'सम्राट्' के माध्यम से आर्य-जगत् मे आर्य-सिद्धान्तों की प्रतिष्ठापना का अद्भुत कार्य किया था वहाँ उसके सगठन पक्ष को भी नई चेतना प्रदान की थी। आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के सगठनो मे भी आपकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही थी। आप 4 वर्ष तक निरन्तर आ० प्र० सभा पजाब के मन्त्री रहे थे। यह पद सँभालने मे पूर्व आप उपमन्त्री के रूप मे अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य करते रहे थे। इसी कारण आप स्वामी वेदानन्द जी के निधन के उपरान्त मन्त्री बने थे। आपने एक वर्ष सभा के प्रधान पद को भी सुशोभित किया था। सभा के प्रधान तथा मन्त्री होने के कारण आप गुरुकुल काँगडी विश्वविद्यालय के पदेन 'चान्सलर' और 'विद्या-सभा' के मन्त्री भी रहे थे। अपने इस कार्य-काल मे आपने सभा के उपदेशको की स्थिति को बहुत सुधारा था और उनके स्वागत-सत्कार का बडा ध्यान रखते थे। जब पजाब सरकार की 'हिन्दी विरोधी नीति' के कारण सन् 1957 मे वहाँ पर 'हिन्दी सत्याग्रह' प्रारम्भ हुआ तब उसके सचालन के लिए जो 'हिन्दी रक्षा समिति' बनी थी उसके भी प्रधानमन्त्री

आप ही बनाए गए थे। यह आपकी सूझ-बूझ और कर्मठता का ही सुपरिणाम था कि आर्य समाज को इस आन्दोलन मे अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई और सरकार को झुकना पडा। इस आन्दोलन में जहाँ आपने सगठन पक्ष को सुदृढ किया वहाँ जेल जाने मे भी आप पीछे नहीं रहे।

आपकी देश, समाज और हिन्दी के प्रति की गई उल्लेखनीय सेवाओ को दृष्टि मे रखते हुए 'आर्य विद्वत् परिषद् दिल्ली' की ओर से सन् 1977 मे आपका जो अभिनन्दन किया गया था वह अभूतपूर्व था। इस अवसर पर आपको लगभग 700 पृष्ठ का एक अभिनन्दन ग्रन्थ भी भेंट किया गया था। ग्रन्थ का सम्पादन श्री रघुवीरसिंह शास्त्री ने किया था और 'अभिनन्दन समिति' के सदस्यो मे श्री प्रकाशवीर शास्त्री (अध्यक्ष), स्वामी ओमानन्द सरस्वती, प्रो० शेरसिह, श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन', श्री शिवकुमार शास्त्री (उपाध्यक्ष), श्री चन्द्रमोहन शास्त्री (कोषाध्यक्ष) और श्री सुरेन्द्रसिंह कादियाण (संयोजक) के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य है। इस अभिनन्दन ग्रन्थ को देखकर आपके बहुमुखी व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। इस ग्रन्थ से वैदिक वाङ्मय से सम्बन्धित आपके विचारों को भी जाना जा सकता है।

आपका निधन 27 अगस्त सन् 1979 को हुआ था।

श्री जगन्नाथदास 'अधिकारी'

श्री अधिकारी का जन्म राजस्थान के भरतपुर नामक नगर के समीपवर्ती गोलपुरा नामक ग्राम में सन् 1891 मे हुआ था। बिलकुल छोटी आयु मे ही आप भरतपुर के 'विरक्त मन्दिर' के महन्त श्री लक्ष्मणदत्त जी के शिष्य हो गए थे। अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि होने के कारण आपने स्वत ही सस्कृत का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया था और लाहौर जाकर पजाब विश्वविद्यालय की 'विशारद' परीक्षा देकर 'शास्त्री' की तैयारी प्रारम्भ कर दी थी। इसी बीच अचानक स्वास्थ्य खराब हो जाने के कारण आप अपना अध्ययन छोडकर भरतपुर वापिस लौट आए। डाक्टरो ने जब आपको 'यक्ष्मा' का रोगी बतलाया तब आप इन्दौर के प्रख्यात चिकित्सक डॉ० सरयूप्रसाद अग्रवाल से चिकित्सा कराने के विचार से वहाँ चले गए।

इन्दौर जाकर आपने सन् 1909 मे देशाटन करने का विचार किया और दक्षिण भारत की यात्रा करते हुए बडौदा पहुँच गए। बडौदा पहुँचकर आपने वहाँ की 'साधु सभा' के मासिक पत्र 'साधु' के सम्पादन मे सहयोग देना प्रारम्भ कर दिया। उन्ही दिनो वहाँ पर एक विशाल साधु सम्मेलन का आयोजन हुआ जिसमे आपने बहुत उल्लेखनीय कार्य किया। आपके कार्य से प्रसन्न होकर इस सम्मेलन मे आपको 'विद्या-रत्न' की सम्मानोपाधि प्रदान की गई। फिर आप अपने गुरु महन्त लक्ष्मणदास के अनुरोध पर भरतपुर चले आए और उन्होंने आपको मन्दिर के 'अधिकारी' पद पर नियुक्त कर दिया और आप 'अधिकारी जी' कहलाने लगे।

अपने इन्दौर-प्रवास-काल मे डा० सरयूप्रसाद अग्रवाल के सम्पर्क के कारण आपमे हिन्दी के प्रति जो रुझान उत्पन्न हुआ था उसीके कारण आपने 'साधु' पत्र का सम्पादन करना प्रारम्भ किया था। आपने इन्दौर मे रहते हुए वहाँ की 'मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति' की स्थापना मे भी उल्लेखनीय योगदान दिया था। भरतपुर लौटकर आपने यहाँ पर भी हिन्दी की गतिविधि जारी रखने की दृष्टि से श्री गगाप्रसाद शास्त्री के सहयोग से 6 सितम्बर सन् 1912 को 'श्री हिन्दी साहित्य समिति' की स्थापना कर दी। भरतपुर के जिन हिन्दी-प्रेमियो ने आपके इस अभियान को सफल बनाया था उनमे श्री ओकारसिंह परमार (सिविल सर्जन), प० नारायणदास (सुपरिटेंडेंट इंजीनियर), प० गुलाब जी मिश्र (पुस्तकालयाध्यक्ष) प्रमुख है। इन सब महानुभावों ने दिन-रात एक करके 3-4 वर्ष मे ही समिति का भवन उसी स्थान पर बनवाया जहाँ अधिकारी जी के हाथो से उसकी नीव रखी गई थी। यह श्री अधिकारी जी के व्यक्तित्व का ही प्रभाव था कि समिति के वार्षिक अधिवेशनो मे समय-समय पर स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, कवि-रत्न सत्यनारायण, पण्डित जीवानन्द काव्यतीर्थ, और श्री माधव शुक्ल-जैसे प्रख्यात साहित्यकारो ने पधारकर भरतपुर की जनता को लाभान्वित किया था।

हिन्दी-प्रचार के कार्य मे रुचि लेने के साथ-साथ अधिकारी जी ने 'वैष्णव सम्प्रदाय' को सगठित करने की दिशा मे भी महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया था। इसी कारण सन्

1913 में आप 'अखिल भारतीय वैष्णव महासभा' के प्रधान मन्त्री भी बनाए गए थे। यहाँ पर यह बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि आपसे पूर्व वैष्णव महासभा के प्रधान मन्त्री प्रख्यात साहित्यकार चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा थे। अपने कार्य-काल में आपने महासभा के मुखपत्र 'वैदिक सर्वस्व' का सम्पादन भी किया था। कुछ समय बाद आप 'चतु सम्प्रदाय वैष्णव महासभा' के प्रधान मन्त्री भी बनाए गए थे। इस सभा का संचालन रीवाँ के महाराजा किया करते थे। आपने 'श्री वैष्णव' नाम से एक पत्र प्रकाशित करके सभा के उद्देश्यों के प्रचार के लिए जो कार्य किया था वह भी अत्यन्त अभिनन्दनीय था। सन् 1920-21 में आपने दिल्ली से 'वैभव' नामक जो साप्ताहिक पत्र प्रकाशित किया था उसके माध्यम से भी आपने भरतपुर राज्य की जनता की बहुत सेवा की थी। भरतपुर राज्य की बहुत-सी प्रजा-विरोधी नीतियों की आलोचना करने के कारण अधिकारी जी जहाँ भरतपुर-नरेश की आँखों में खटकने लगे थे वहां ब्रिटिश सरकार भी आपसे कम रुष्ट नहीं थी। इसके कारण जब अधिकारी जी को गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया गया तो भरतपुर नरेश श्री कृष्ण-सिंह की 'प्रताप' और 'राजस्थान केसरी' आदि कई पत्रों ने खुलकर भर्त्सना की। जब भरतपुर नरेश को अपनी भूल मालूम हुई तो उन्होंने अधिकारी जी को न केवल जेल से मुक्त किया, प्रत्युत अपने राज्य-वंश के पूज्य लक्ष्मण जी के बड़े मन्दिर का महन्त नियुक्त कर दिया और इसके बाद भरतपुर-नरेश आपके परम भक्त बन गए।



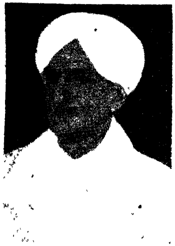
इस घटना का सुपरिणाम यह हुआ कि अधिकारी जी ने भरतपुर-नरेश से हिन्दी सेवा के कार्य में उल्लेखनीय सहयोग प्राप्त किया। नरेश ने जहाँ 'श्री हिन्दी साहित्य समिति' के भवन-निर्माण के लिए आर्थिक सहयोग प्रदान किया वहाँ समिति के निमन्त्रण पर सन् 1926 में भरतपुर में हुए अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सत्रहवें अधिवेशन को सफल बनाने में भारी सहायता की थी। इस अधिवेशन की अध्यक्षता जहाँ महामहोपाध्याय पण्डित गौरी-शंकर हीराचन्द ओझा-जैसे प्रख्यात इतिहासवेत्ता ने की थी वहाँ विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर और महामना मालवीय-जैसी विभूतियों के दर्शन भी भरतपुर की जनता को हुए थे। भरतपुर की 'श्री हिन्दी साहित्य समिति' के माध्यम से आपने हिन्दी-प्रचार का जो अभियान चलाया था उसमें आपने महाराज कृष्णसिंह को भी सहयोगी बना लिया था। बाद में भरतपुर राज्य का शासन-सूत्र जब अनेक कारणों से ब्रिटिश सरकार ने अपने हाथों में ले लिया तब महाराजा के निकट सहयोगी होने के कारण आपको भी भरतपुर छोड़ने को विवश होना पड़ा। उस समय राज्य के दीवान श्री मेकेंजी की नाराजगी की भी परवाह न करके जनता ने एकत्रित होकर आपको धूमधाम से विदाई दी थी। वहाँ से विदा होकर आप कानपुर, उज्जैन तथा नासिक आदि अनेक स्थलों में भ्रमण करते रहे थे। इस भ्रमण में खान-पान की समुचित व्यवस्था न होने के कारण आपका स्वास्थ्य खराब हो गया और बम्बई के पास सन् 1933 में जोगेश्वरी गुफा में आपने अपनी इहलीला समाप्त कर दी।

श्री जगन्नाथ पुच्छरत

श्री पुच्छरत का जन्म 31 मई सन् 1886 को अमृतसर में हुआ था। अपने पारिवारिक संस्कारों के कारण आपने हिन्दी तथा संस्कृत की अच्छी योग्यता घर पर रहकर ही प्राप्त कर ली थी। पंजाब में हिन्दी-प्रचार का कार्य करने वाले महानुभावों में श्री पुच्छरत का नाम सर्वाग्रणी स्थान रखता है। आपने पंजाब विश्वविद्यालय की ओर से संचालित होने वाली हिन्दी-रत्न, हिन्दी भूषण व प्रभाकर परीक्षाओं को लोकप्रिय बनाने की दिशा में अभूतपूर्व कार्य किया था। पंजाब में हिन्दी को प्रतिष्ठापित करने वाले महानुभावों में सर्वश्री श्रद्धाराम फिल्लौरी और नवीनचन्द्र राय के साथ

आपका नाम भी अपनी विशिष्ट महत्ता रखता है। आपके हिन्दी-प्रेम का सबसे उत्कृष्टतम उदाहरण यही है कि आपने पजाब विश्वविद्यालय की हिन्दीरत्न परीक्षा मे प्रतिवर्ष सर्व-प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले परीक्षार्थी को 500 रुपये का पुरस्कार देने की व्यवस्था की थी। आपके इस पुरस्कार की व्यवस्था 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' के द्वारा होती थी।

हिन्दी-लेखन की ओर आप आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा से प्रवृत्त हुए थे। आपका सबसे पहला लेख पूना से प्रकाशित होने वाले 'चित्रमय जगत्' नामक पत्र मे छपा था। आप वास्तव मे पजाब के पुराने हिन्दी-सेवको मे 'द्विवेदी काल' का प्रतिनिधित्व करते थे। आपने जहाँ अमृतसर मे 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की थी वहाँ अनेक लोगों को हिन्दी पढने की ओर प्रवृत्त किया था। जिन दिनो पजाब मे अँग्रेजी, उर्दू तथा पजाबी भाषाओ का ही बोल-बाला था तब श्री पुच्छरत को हिन्दी के लिए कितना सघर्ष करना पडा था, इसका प्रमाण आपके वे कार्य-कलाप है जो 'पुच्छरत हिन्दी-पदक' को लोकप्रिय बनाने के लिए आपने किए थे। हिन्दी के प्रचार के लिए हिन्दी की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे जो लेख लिखे थे उनसे आपके व्यक्तित्व की गरिमा का परिचय मिलता है। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'सकल्प विधि', 'मुद्रण पद्धति' तथा 'परीक्षा-पद्धति' प्रमुख है।

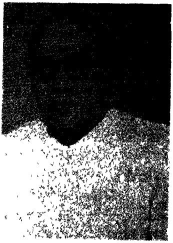


आपका निधन 8 जनवरी सन् 1965 को हुआ था।

श्री जगन्नाथप्रसाद चौबे 'वनमाली'

श्री 'वनमाली' का जन्म अगस्त सन् 1911 मे उत्तर प्रदेश के आगरा नगर में हुआ था। आप जब छोटे ही थे तब आप सागर (मध्य-प्रदेश) चले गए थे, जहाँ पर आपके पिता श्री ज्वालाप्रसाद चौबे पुलिस-इस्पेक्टर थे। इस प्रसग मे उनका स्थानान्तरण प्रदेश के अनेक स्थानो पर होता रहता था। आपकी शिक्षा-दीक्षा होशंगाबाद तथा नागपुर में हुई थी। अँग्रेजी साहित्य में एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने शिक्षक के रूप मे अपना जीवन प्रारम्भ किया था। पहले आप सन् 1940 से लेकर सन् 1954 तक मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ अंचल के बिलासपुर, जाजगीर और चापा आदि अनेक स्थानों मे शिक्षक और उप-प्राचार्य के पद पर कार्य-रत रहे और तदुपरान्त सन् 1955 से सन् 1966 तक खण्डवा के 'शासकीय विद्यालय' तथा सन् 1967-68 मे भोपाल के 'माध्यमिक शिक्षा मण्डल' द्वारा सचालित 'मॉडल स्कूल' मे प्रधानाध्यापक रहे। इसके उपरान्त आपने सन् 1969 से 1971 तक मध्यप्रदेश शासन के शिक्षा विभाग मे उपसचालक के रूप मे कार्य किया था।

आपने अपने अध्यापन के दिनो मे अपनी कार्य-कुशलता से जो सम्मान प्राप्त किया था वह इस बात का सुपुष्ट प्रमाण है कि आपको प्रदेश की अनेक शिक्षा-योजनाओ के कार्यान्वियन मे आमन्त्रित किया गया था। आपने 'प्रौढ शिक्षा' को लोकोपयोगी बनाने की दिशा मे जहाँ अपने अनुभव का लाभ प्रदेश के शिक्षा विभाग को पहुँचाया था वहाँ जन-साधारण मे उसके प्रति रुचि जाग्रत करने के लिए समय-समय पर 'नई तालीम' और 'प्रकाश' आदि कई पत्रो मे उसकी महत्ता पर अनेक उपयोगी लेख भी लिखे थे। आपने मध्य-प्रदेश के 'माध्यमिक शिक्षा मण्डल', 'राज्य पाठ्य पुस्तक निगम' तथा 'केन्द्रीय शैक्षणिक अनुसन्धान परिषद्' के लिए जहाँ अनेक पाठ्य-पुस्तको के निर्माण मे अपना सक्रिय



सहयोग प्रदान किया था वहाँ 'नागरिक ज्ञान' और 'भारतीय तथा विश्व इतिहास' आदि विषयों पर ऐसे कई महत्त्वपूर्ण पुस्तको की रचना की थी, जो मध्यप्रदेश के शिक्षा विभाग मे बहुत दिन तक पाठ्य-पुस्तक के रूप मे निर्धारित रही थी। आपकी इन सभी रचनाओं मे आपके दीर्घकालीन शैक्षणिक जीवन के गहन अनुभवों का निचोड प्रस्तुत किया गया था। शिक्षा के क्षेत्र मे की गई आपकी महत्त्वपूर्ण सेवाओ के उपलक्ष्य मे आपको जहाँ 1962 मे 'राष्ट्रपति पुरस्कार' प्राप्त हुआ था वहाँ केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय द्वारा आयोजित 'राष्ट्रीय प्रतियोगिता' मे शिक्षा-सुधार-सम्बन्धी आपके लेख को भी पुरस्कृत किया गया था।

आप जहाँ कुशल शिक्षक और सफल पाठ्य-पुस्तक-प्रणेता के रूप मे समादृत रहे थे वहाँ साहित्यिक क्षेत्र मे भी आपका विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान था। कहानी और व्यग्य लिखने मे आपने जो सफलता प्राप्त की थी वह आपकी प्रतिभा की परिचायिका है। क्योकि आप शासकीय सेवा मे थे अत आप ऐसी रचनाएँ 'वनमाली' नाम से लिखा करते थे। जब आप केवल 24 वर्ष के ही थे तब से ही आपकी कहानियाँ और व्यंग्य-लेख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होने प्रारम्भ हो गए थे। जिन पत्रिकाओ मे आपकी ऐसी रचनाएँ ससम्मान प्रकाशित होती थी उनमे 'सरस्वती', 'विश्वमित्र', 'कहानी', 'भारती', 'सारथी' और 'लोकमित्र' आदि प्रमुख है। जिन विशिष्ट रचनाओ के कारण आपको साहित्यिक क्षेत्र मे प्रचुर प्रसिद्धि मिली उनमे 'जिल्दसाज', 'साँझवेला', 'भूली बातें', 'छोटी जात', 'सन्तरे वाली', 'स्वामी' 'एक औरत', 'घर', 'आदमी और कुत्ता', 'दो चेहरे' और 'खरबूजे' आदि प्रमुख है। आपकी कुछ रचनाएँ आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी तथा श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी द्वारा सम्पादित सकलनो मे भी प्रकाशित हुई है। आपकी रचनाएँ आकाशवाणी से भी समय-समय पर प्रसारित होती रही थी।

आपका निधन 30 अप्रैल सन् 1976 को भोपाल मे हुआ था।

डॉ० जगन्नाथप्रसाद 'जीवन्त'



श्री जीवन्त का जन्म बिहार प्रदेश के पूर्वी चम्पारन जनपद के मोतीपुर नामक ग्राम में 5 जून सन् 1935 को हुआ था। आपकी हिन्दी की शिक्षा उच्चतम स्तर तक हुई थी और आप एम० ए०, पी-एच० डी० थे। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आप पटना जनपद के राम बाग बिहटा नामक स्थान के जी० जे० कालेज मे हिन्दी के प्राध्यापक थे।

अपने अध्ययन तथा शिक्षा-काल मे आपने अपनी लेखनी से अनेक महत्त्वपूर्ण रचनाओ का सृजन किया था। ऐसी कृतियों मे 'अणुयापनी' (प्रबन्ध-काव्य) तथा 'लीलहबा' नामक गद्य-काव्य के अतिरिक्त 'सग्राम भूमि', 'वैशाली की आँखें' तथा 'विश्वामित्र का लगोट' नामक नाटक उल्लेखनीय है।

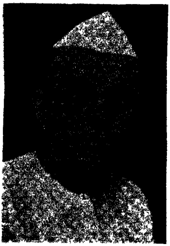
आपका निधन 13 फरवरी सन् 1980 को हुआ था।

श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र

श्री मिश्र का जन्म बिहार के दरभगा जनपद के पतोर नामक ग्राम मे सन् 1896 मे हुआ था। आपकी आरम्भिक शिक्षा अपने ग्राम की पाठशाला मे ही हुई थी और तत्पश्चात् हाई स्कूल की परीक्षा आपने दरभगा जिला स्कूल से प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की थी। हाई स्कूल करने के उपरान्त आपने अपनी उच्च शिक्षा क्रमश मुजफ्फरपुर, पटना और कलकत्ता मे पूर्ण की थी। कलकत्ता मे रहते हुए आपने एम० ए० करने के उपरान्त वकालत की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली थी। जिन दिनो सन् 1920-21 मे आप कलकत्ता मे पढा करते थे तब से ही आपका झुकाव साहित्य-रचना की ओर हो गया था और आपने अपने साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ एक

पत्रकार के रूप में किया था। वैसे आपका रचना-काल सन् 1914 में उस समय ही प्रारम्भ हो गया था जब कि आप विद्यार्थी ही थे।

आपने सर्वप्रथम 'कलकत्ता समाचार' के सहकारी सम्पादक के रूप में पत्रकारिता का जीवन प्रारम्भ किया था। इसके उपरान्त आपने 'भारत मित्र' (1930-32) तथा 'विश्वबन्धु' (1932) नामक पत्रों में सयुक्त सम्पादक के पद पर कार्य किया था। हिन्दी के प्रख्यात मासिक पत्र 'विशाल भारत' (1931) में भी आप सहकारी सम्पादक रहे थे। जिन दिनों 'विश्व-मित्र' दैनिक के सचालक श्री मूल-चन्द्र अग्रवाल ने 'विश्वमित्र' को मासिक रूप में प्रकाशित किया था तब सन् 1933 से लेकर 1938 तक आपने ही उसका सफल सम्पादन किया था। जब पटना के 'पुस्तक-भंडार' ने 'हिमालय' का प्रकाशन किया था तब आचार्य शिवपूजन सहाय के पश्चात् सन् 1948 में आप ही उसके सम्पादक रहे थे। सन् 1950-51 में आपने पटना से प्रकाशित होने वाले 'राष्ट्रवाणी' दैनिक का सम्पादन करने के अतिरिक्त 'पुस्तकालय' नामक त्रैमासिक पत्र का सम्पादन भी किया था।



आप जहाँ एक सफल पत्रकार के रूप में जाने-माने जाते रहे थे वहाँ शैक्षणिक क्षेत्र में भी आपकी सेवाएँ प्रशसनीय रही थी। आप सन् 1938 से सन् 1949 तक दरभगा के 'चन्द्रधारी मिथिला कालेज' में हिन्दी-विभागाध्यक्ष रहने के अतिरिक्त सन् 1959 से सन् 1967 तक 'महारानी रामेश्वरी महिला महाविद्यालय, दरभगा' के प्राचार्य भी रहे थे। इस पद पर कार्य करते हुए ही आप शासकीय सेवा से निवृत्त हुए थे। आपने जहाँ साहित्य तथा शिक्षा के क्षेत्र में अभिनन्दनीय सेवाएँ की थी वहाँ राजनीति के क्षेत्र में भी आपकी देन कम महत्त्वपूर्ण नही रही। सन् 1920 के असहयोग आन्दोलन में आप अपना अध्ययन बन्द करके स्वाधीनता-सग्राम में सक्रिय रूप से कूद पडे थे। आपकी पढाई का जो क्रम इस आन्दोलन में अवरुद्ध हुआ था, कालान्तर में उसकी पूर्ति आपने कलकत्ता में कार्य-रत रहते हुए की थी। सन् 1930 के आन्दोलन में भाग लेने के कारण आपका 'वकालत का लाइसेन्स' भी जब्त कर लिया गया था और कारावास की सजा भी भुगतनी पड़ी थी। आप सन् 1952 से सन् 1962 तक बिहार विधान परिषद् के मनो-नीत सदस्य रहने के अतिरिक्त 'बिहार क्षेत्र पुस्तकालय सघ' के कई वर्ष तक अध्यक्ष रहे थे।

आपका बिहार की जिन अनेक सस्थाओं से घनिष्ठतम सम्बन्ध रहा था उनमे 'बिहार विश्वविद्यालय', 'आकाश-वाणी केन्द्र, पटना', 'बिहार विश्वविद्यालय सीनेट', 'बिहार हिन्दी प्रगति समिति', 'हिन्दी विज्ञ समिति', तथा 'बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य है। 'बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के बीसवें अधिवेशन के तो आप अध्यक्ष भी रहे थे। यह सम्मेलन सन् 1948 में मुजफ्फरपुर में हुआ था। आपके लेखन की दिशा बहुमुखी थी। आपने विज्ञान, साहित्य, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, दर्शन, भूगोल, राजनीति, इतिहास, यात्रा, कामशास्त्र तथा धर्म आदि विविध विषयों पर साधिकार लिखा था।

आप जहाँ स्वाध्यायशील पत्रकार, मनस्वी शिक्षक, कर्मठ देश-सेवक और विवेकी संगठनकर्ता थे वहाँ उत्कृष्ट साहित्यकार के रूप में भी आपकी सेवाएँ सर्वथा स्तुत्य है। आप उत्कृष्ट गद्य-लेखक होने के साथ-साथ सहृदय कवि भी थे। आपकी स्फुट गद्य-पद्य-रचनाएँ 'मिथिला मिहिर', 'सत्य युग' 'मर्यादा', 'प्रताप', 'विशाल भारत' तथा 'विश्वमित्र' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही थी।

आपकी प्रकाशित कृतियों में 'साहित्य की वर्तमान धारा', 'जीवन देवता की वाणी', 'मनुष्य की मर्यादा', 'दर-भगा', 'प्रेम प्रपच', 'समाजवाद क्या है', 'एक ही दुनिया', 'जानते हो', 'प्रेम और दाम्पत्य', 'जीवन और जगत्', 'साहित्य-विवेचन', 'बच्चों का चिड़ियाखाना', 'राजनीति विज्ञान' और 'महान् मनीषी' प्रमुख है। आपने 'भारतीय शब्दकोश' का भी सन् 1964 में सम्पादन किया था।

आपका निधन 28 जनवरी सन् 1970 को हुआ था।

श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र 'उपासक'

श्री 'उपासक' जी का जन्म मध्यप्रदेश के ग्वालियर राज्य के जौरा अलापुर नामक स्थान मे 8 मई सन् 1912 को कौशिक गोत्रीय सनाढ्य ब्राह्मण परिवार मे हुआ था। आपके पिता पण्डित रगलाल शास्त्री तथा ज्येष्ठ भ्राता पण्डित पुरुषोत्तम जी भी हिन्दी के अच्छे कवि थे। आपके पिता श्री शास्त्री की 'भाग्य तथा पुरुषार्थ' शीर्षक एक कविता श्री रामकिशोर शर्मा द्वारा सम्पादित 'निकुज' नामक काव्य-सकलन के पृष्ठ 155 पर देखी जा सकती है।

अपने पारिवारिक सस्कारो के कारण आपने जहाँ साहित्य-साधना के क्षेत्र मे उल्लेखनीय स्थान बनाया था वहाँ आपने शिक्षा के क्षेत्र मे भी पर्याप्त प्रगति की थी। बी० ए० तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की 'विशारद' परीक्षा भी ससम्मान उत्तीर्ण की थी। आपने मैडिकल कालेज, इन्दौर मे प्रवेश लेकर वहाँ भी अध्ययन प्रारम्भ किया था, किन्तु परि-स्थितिवश वह बीच मे ही रुक गया।

एक उत्कृष्ट तथा सहृदय कवि के रूप मे आपने जो ख्याति अर्जित की थी उससे आपकी प्रतिभा का परिचय मिल जाता है। प्रारम्भ मे जब आपकी कई कविताएँ श्री राम-किशोर शर्मा द्वारा सम्पादित 'निकुज' नामक काव्य-सकलन मे सन् 1932 मे प्रकाशित हुई थी तब आप विक्टोरिया कालेज लश्कर के विद्यार्थी थे। आपकी अन्य प्रकाशित कृतियो मे 'बलिदान', 'प्रकाश', 'पुकार', 'नौकरी' तथा 'दो पछी' प्रमुख है। आपकी प्रथम पुण्य तिथि पर सन् 1969 मे ग्वालियर के साहित्यकारो की ओर से 'संवेदन के स्वर' नामक पुस्तक का प्रकाशन भी किया गया था।

आपका निधन 4 नवम्बर सन् 1968 को हुआ था।

श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र 'बदउआ गुरु'

आपका जन्म 13 जनवरी सन् 1905 को उत्तर प्रदेश के प्रयाग नगर मे हुआ था, जहाँ आपके पिता श्री यशोदानन्दन मिश्र आर०एम०एस० मे सेवा-रत थे। वैसे आपके पूर्वज बदायूँ के मूल निवासी थे और लगभग 150 वर्ष पूर्व प्रयाग जाकर बस गए थे। श्री 'बदउआ गुरु' का यह नाम इसीलिए पडा था कि आपके पूर्वज बदायूँ के थे। आप जहाँ उच्च-कोटि के कवि और उपन्यासकार थे वहाँ भारतीय वाड्मय के भी अद्वितीय एव गम्भीर विद्वान् थे। आपके द्वारा लिखित 'प्रायश्चित्त' तथा 'प्रत्याशित' नामक उपन्यासो के अतिरिक्त सस्कृत साहित्य के अमर ग्रथ 'गगा लहरी' के हिन्दी अनुवाद का भी विशिष्ट स्थान है।



आपकी 'गगा लहरी' नामक इस अनूदित कृति की भूमिका की यह पक्तियाँ श्री बदउआ गुरु की भावनाओ का सही चित्र प्रस्तुत कर रही है—"यह जल-धारा पुण्य प्रकृति की ही एक सृष्टि है जो भारतीय वाड्मय के आदिकाल से रत्न साध्य एव गेय बनी हुई है। कोई कवि अपनी वाणी का निखार उसकी प्रार्थना की रचना से कर सकता है। 'रत्ना-कर' जी उनमे प्रमुख रहे है। उनकी 'गगावतरण' नामक कृति इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। एक धृष्टता हिन्दी मे शिख-रिणी छन्द की मधुर लय, गति मे गंगा जी के कल-कल शब्द का सगीत सुनने-सुनाने की इच्छा से मैने भी की है।"

आपकी रचना-पटुता का उत्कृष्टतम प्रमाण आपके द्वारा अनूदित कृति 'गगा लहरी' की यह पक्तियाँ है

जगन्नाथ (मिश्र) गुरु बदउआ वन्दन करे
रची पद्यों टीका सुरुचिर छन्दो रस भरे
क्षमस्व वैध्य नू सुवन पर माता कर दया
त्रिवेणी गगा की अमर लहराये त्रिपथगा।

इस पद मे आपकी सस्कृत-प्रभावित काव्य-प्रतिभा पूर्णत प्रकट हुई है। हिन्दी-गीत-रचना की भी कुछ पंक्तियाँ देखिए :

दृग खुले-मुँदे दृग खुले-मुदे
मधुमय विकास,
मर-सर सुहास
घन तडित लास,
मन मदन बिधे।
दृग खुले-मुँदे, दृग खुले-मुँदे।

आपका निधन सन् 1980 में हुआ था।

श्री जगन्नाथप्रसाद शुक्ल 'आयुर्वेद पंचानन'

श्री शुक्ल का जन्म उत्तरप्रदेश के फतहपुर जनपद के एकडला नामक ग्राम में सन् 1879 मे हुआ था। 3 वर्ष की आयु मे ही आप पितृ-हीन हो गए थे। आपकी माता ने ही निरन्तर 30 वर्ष तक अपने परिवार का भरण-पोषण किया था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने क्षेत्र के विद्वान् और निष्णात आचार्य पण्डित गौरीदत्त त्रिपाठी द्वारा प्राचीन पद्धति पर हुई थी। कुछ दिन बाद शुक्ल जी एकडला छोडकर अपने बहनोई श्री मनोहरलाल वाजपेयी के पास बिलासपुर चले गए थे। वहाँ जाकर शुक्ल जी ने नार्मल स्कूल से मिडिल तक की शिक्षा प्राप्त की थी और 7 रुपए मासिक पर अध्यापक हो गए थे। कुछ दिन तक मध्यप्रदेश के शिक्षा विभाग मे अध्यापन कार्य करने के उपरान्त आप प्रयाग से प्रकाशित होने वाले 'प्रयाग समाचार' के सहायक सम्पादक होकर वहाँ चले गए थे। जिन दिनों आप बिलासपुर मे पढ़ते थे तब वहाँ रहते हुए आपने वहाँ पर 'हिन्दी सभा' की स्थापना भी की थी।

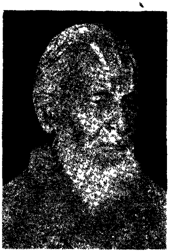
बिलासपुर मे रहते हुए आपने जब 'वेंकटेश्वर समाचार' को पढ़ना प्रारम्भ किया था तब आप स्कूल मे पढते थे। आपके विद्यालय के हिन्दी-प्रेमी इन्स्पेक्टर श्री गणपतिलाल चौबे ने जब अपना एक लेख 'वेंकटेश्वर समाचार' मे भेजने के निमित्त आपको साफ-साफ लिखने को दिया तब उस पत्र को देखने और पढने की उत्सुकता आपके मानस मे जागृत हुई थी। फिर आपने अपनी छात्रावस्था मे स्थापित 'हिन्दी सभा' नामक सस्था मे 'वेंकटेश्वर' समाचार', 'बगवासी' और 'भारत मित्र' नामक पत्र मंगवाने प्रारम्भ कर दिए। इन पत्रों के पारायण से आपकी साहित्यिक प्रतिभा दिन-प्रतिदिन परिपुष्ट होती चली गई। उसी समय आपके बाल-मानस मे यह भावना बलवती हो गई थी कि इन पत्रों मे से किसी का सम्पादक बनना चाहिए। उन्ही दिनों आपके पास रीवाँ से प्रकाशित होने वाला 'भारत भ्राता' तथा प्रयाग से छपने वाला 'प्रयाग समाचार' भी आया करता था। सयोग ऐसा बना कि आप इन पत्रो मे अपनी कविता तथा लेख आदि प्रकाशनार्थ भेजने लगे और एक दिन ऐसा भी आया कि जब अध्यापन का कार्य छोडकर 'प्रयाग समाचार' के सहकारी सम्पादक होकर वहाँ चले गए। प्रयाग मे रहते हुए आपका परिचय प्रख्यात विद्वान् पण्डित ज्वालाप्रसाद मिश्र विद्यावारिधि और उनके भाई पण्डित बलदेवप्रसाद मिश्र से हो गया। वे उन दिनो मुरादाबाद से 'तन्त्र प्रभाकर' नामक पत्र निकाला करते थे। उसमे भी आप लेख आदि लिखने लगे। इन दोनों बन्धुओ का बम्बई के 'वेंकटेश्वर प्रेस' के मालिको से अच्छा परिचय था। उन्होने जब मिश्रबधुओ से अपने 'वेंकटेश्वर समाचार' पत्र के लिए कोई उपयुक्त सहकारी सम्पादक भेजने का प्रस्ताव किया तो उन्होंने उनको श्री शुक्ल का नाम सुझा दिया। श्री बलदेवप्रसाद मिश्र ने शुक्ल जी के पास यह प्रस्ताव भेजा तो आपने भी अपनी स्वीकृति दे दी और सन् 1903 मे आप 'वेंकटेश्वर समाचार' के सहकारी सम्पादक होकर बम्बई पहुँच गए।

जिन दिनो आप 'प्रयाग समाचार' मे सहकारी सम्पादक थे तब महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय ने भी आपको कोई दूसरा स्थान ढूँढने की प्रेरणा दी थी। मालवीय जी की प्रेरणा और मिश्रबन्धुओ के सहयोग से शुक्ल जी को यह सुअवसर मिल गया और आपने बम्बई पहुँचकर अपनी लेखन-प्रतिभा को बहुत विकसित किया। जिन दिनों शुक्ल जी 'वेंकटेश्वर समाचार मे पहुँचे थे तब वहाँ पर उसके सम्पादक बूँदी-निवासी मेहता लज्जाराम शर्मा थे। उनके सम्पर्क से शुक्ल जी को बहुत प्रोत्साहन मिला और आप समाचारो तथा लेखों आदि का सम्पादन करने के अतिरिक्त सम्पादकीय टिप्पणियाँ भी लिखने लगे। श्री मेहताजी पत्रों का अवलोकन करते समय जो नोट आदि लगा दिया करते थे उन्हे आप ध्यान से देखने लगे, जिससे आपको मेहता जी की कार्य-पद्धति का सहज ही अनुमान होता चला गया। महीने-दो

महीने में ही मेहता जी ने यह समझ लिया था कि श्री शुक्ल जी उनकी अनुपस्थिति में कार्य-भार वहन करने की क्षमता रखते हैं। फलस्वरूप धीरे-धीरे शुक्ल जी पर कार्य-भार सौंपकर मेहता जी ने सम्पादन से अवकाश ग्रहण करने का सकल्प कर लिया। उन्होंने पत्र के मालिक सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास को पूर्णत: आश्वस्त कर दिया था कि शुक्ल जी उनकी अनुपस्थिति मे कार्य-भार सँभाल लेंगे। इस प्रकार शुक्ल जी को सम्पादन का पूर्ण दायित्व सौंपकर मेहता जी व्रजयात्रा को चले गए। इस अवधि मे शुक्ल जी ने पूरी निष्ठा और योग्यता से अपने कार्य का निर्वाह किया था।

अपनी व्रज-यात्रा से लौटकर जब मेहताजी ने स्वास्थ्य खराब होने के कारण 'वेंकटेश्वर समाचार' के सम्पादन से पूरी तरह अवकाश ग्रहण करके बूँदी जाने की इच्छा सेठ जी से प्रकट की तब सेठ जी ने विवशता मे उन्हे विदा दी थी, किन्तु उनका सम्बन्ध अन्त तक मधुर ही बना रहा था। मेहता जी की विदाई के उपरान्त शुक्ल जी ने जमकर परिश्रम किया और 'वेंकटेश्वर समाचार' की लोकप्रियता मे कोई कमी नही आने दी। निरन्तर कई वर्ष तक अकेले ही कार्य करते रहने के कारण आपका स्वास्थ्य भी ढुल-मुल रहने लगा। फलस्वरूप आप भी छुट्टी लेकर प्रयाग आ गए। आपकी अनुपस्थिति मे श्री अमृतलाल चक्रवर्ती ने 'वेंकटेश्वर समाचार' का सम्पादन-भार ग्रहण किया था। उन्हे 'भारत-मित्र के सम्पादक श्री बालमुकुन्द गुप्त ने कलकत्ता से भेजा था। श्री शुक्ल जी भी अपना स्वास्थ्य सुधर जाने पर वापस बम्बई चले गए और श्री चक्रवर्ती जी के सहयोगी के रूप मे कार्य-रत हो गए। यद्यपि श्री चक्रवर्ती आपसे सीनियर थे और आयु मे भी बडे थे, किन्तु उन्होंने अपने व्यवहार से आपको सदा ही महत्त्व दिया था। अनेक विवादास्पद लेखो के प्रकाशन के सम्बन्ध मे भी वे सदा शुक्ल जी से परामर्श किया करते थे। इस बीच सम्पादकीय नीति-सम्बन्धी एक विवाद के कारण जब श्री चक्रवर्ती त्यागपत्र देकर चले गए तब श्री बालमुकुन्द गुप्त के परामर्श पर आपको ही 'वेंकटेश्वर सचाचार' का सम्पादन करना पडा था। जिन दिनो यह घटना घटी थी तब देश मे स्वदेशी आन्दोलन जोरो पर था। लार्ड कर्जन की दुर्नीति के कारण 'बंग-भंग' हो चुका था और उसके विरुद्ध बंगाल मे प्रबल आंदोलन हो रहा था। ऐसे विकट समय मे शुक्ल जी ने अकेले दम पर ही पत्र का सम्पादन पूर्ण उत्तरदायित्व से सँभाला था। धीरे-धीरे पत्र की ग्राहक-सख्या भी बढ गई थी। यहाँ तक कि लोकमान्य बाल गगाधर तिलक ने भी पत्र की सम्पादन-नीति की मुक्त कण्ठ से सराहना की थी।

उन्ही दिनो जब नागपुर से श्री माधवराव सप्रे के सम्पादन मे 'हिन्दी केसरी' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तब उसके द्वारा लोकमान्य तिलक के उग्र विचारो की धूम-सी मच गई। इस बीच जब एक बार 'हिन्दी केसरी' के लिए आर्थिक सहयोग लेने की दृष्टि से श्री माधवराव सप्रे बम्बई पधारे तो उन्होंने श्री शुक्ल जी से नागपुर चलकर 'हिन्दी केसरी' के सम्पादन मे सहयोग देने का अनुरोध किया। फलस्वरूप श्री शुक्ल जी निरन्तर 4 वर्ष तक 'वेंकटेश्वर समाचार' की सेवा करने के उपरान्त सन् 1907 मे नागपुर चले गए। आपके नागपुर चले जाने के पश्चात् श्री गगाप्रसाद गुप्त और गौरीशकर शर्मा ने 'वेंकटेश्वर समाचार' का सम्पादन-भार सँभाला था। जब सरकारी दमन के कारण 'हिन्दी केसरी' विवशता मे बन्द कर देना पड़ा तब शुक्ल जी ने पत्रकारिता को सर्वथा तिलाजलि दे दी और प्रयाग वापिस लौट आए।



नागपुर मे रहते हुए ही आपने वहाँ के प्रख्यात आयुर्वेदिक चिकित्सक श्री शकरदाजी पटे शास्त्री द्वारा स्थापित 'आयुर्वेद विद्यालय' मे आयुर्वेद का विधिवत् अध्ययन कर लिया था। परिणामस्वरूप शुक्ल जी ने प्रयाग मे रहते हुए चिकित्सा करते हुए आयुर्वेद-जगत् की सेवा करने का सकल्प ले लिया और देश मे आयुर्वेद-चिकित्सा-पद्धति को लोकप्रिय बनाने की दृष्टि से दारागज मे 'प्रयागराज महौषधालय' की स्थापना करके उसकी ओर से 'सुधानिधि' नामक पत्र का सचालन किया। आपने जहाँ 'अखिल भारतीय आयुर्वेद सम्मेलन' का सभापतित्व किया, वहाँ 'अखिल भारतीय

हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की ओर से 'आयुर्वेद'-सम्बन्धी परीक्षाएँ भी संचालित कराईं।

आप जहाँ उच्चकोटि के पत्रकार, कुशल आयुर्वेदिक चिकित्सक और सफल संगठनकर्ता थे, वहाँ अपनी लेखनी के द्वारा आपने आयुर्वेद तथा साहित्य-सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों की रचना भी की थी। आपकी ऐसी कृतियो मे 'भारत मे मन्दाग्नि', 'आरोग्य विधान', 'रस-विज्ञान', 'आहार शास्त्र', 'आयुर्वेद का महत्त्व', 'भारतीय रसायन शास्त्र', 'पथ्यापथ्य निरूपण', 'नाडी परीक्षा', 'आयुर्वेदीय मीमासा', 'नीति-कुसुम', 'आदर्श बालिका', 'नीति सौन्दर्य', 'भारत मे डच राज्य', 'सिहगढ विजय', 'शिरो रोग विज्ञान', 'मुख रोग विज्ञान', 'राष्ट्रीय कविता विनोद', 'कर्णरोग विज्ञान', 'नासा रोग विज्ञान' तथा 'परिभाषा प्रबन्ध' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। आपने अपने कर्ममय जीवन मे जहाँ आयुर्वेद-जगत् और साहित्य-जगत् की उल्लेखनीय सेवा की थी वहाँ राष्ट्रीय सेवा के क्षेत्र मे भी आप पीछे नही रहे थे। जब-जब भी राष्ट्रीय आन्दोलनो को गति देने का प्रसग आपके समक्ष प्रस्तुत हुआ तब-तब ही आपने उसमे पूर्णत· सहयोग दिया था और इस प्रसग मे कारावास की यन्त्रणाएँ भी भोगी थी। 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' से आपको उसके प्रारम्भिक काल से ही इतनी ममता थी कि आप यावज्जीवन उसकी सभी गतिविधियो से सर्वात्मना सम्पृक्त रहे। यहाँ तक कि घनघोर दलबन्दी के दिनों में भी आप सभी दलो के श्रद्धा-भाजन रहे थे। सम्मेलन से आपको इतनी ममता थी कि आपने अपना स्थायी निवास 'सुधानिधि भवन' भी उसी-के भवन के पास बनवा लिया था। आप जहाँ सन् 1933 से सन् 1935 तक सम्मेलन के प्रधान मन्त्री रहे थे, वहाँ क्रमश सन् 1927-28 और सन् 1932-33 मे प्रबन्ध मन्त्री और सन् 1937 से 1944 तक सग्रह मत्री भी रहे थे। प्रयाग की अनेक शैक्षणिक और सांस्कृतिक सस्थाओ के आप सरक्षक और संपोषक थे। आपकी उल्लेखनीय हिन्दी-सेवाओं के लिए जहाँ 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' ने आपको 'साहित्य वाचस्पति' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी, वहाँ आपको 'सरस्वती' के हीरक जयन्ती समारोह के समय सन् 1963 मे 'अभिनन्दित' किया गया था। आपका पहला लेख 'सरस्वती' में सन् 1912 मे प्रकाशित हुआ था।

आपका निधन सन् 1967 मे हुआ था।

प्रो० जगन्नाथराय शर्मा

श्री शर्मा का जन्म बिहार प्रदेश के शाहाबाद जनपद के 'डिहरी' नामक स्थान मे 1 दिसम्बर सन् 1899 को हुआ था। बक्सर के ट्रेनिंग स्कूल मे प्राइमरी तक की शिक्षा प्राप्त करके आपने मिडिल तथा हाई स्कूल की परीक्षाएँ वहाँ के 'हाईस्कूल' से उत्तीर्ण की थी। इण्टरमीजिएट से एम० ए० (संस्कृत) तक की आपकी शिक्षा काशी के 'सेण्ट्रल हिन्दू कालेज' और 'हिन्दू विश्वविद्यालय' मे सम्पन्न हुई थी। बाद मे आपने पटना विश्वविद्यालय से सन् 1936 मे हिन्दी मे एम० ए० भी कर लिया था। यहाँ यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि आपको इस परीक्षा की अभूतपूर्व सफलता पर विश्वविद्यालय की ओर से 'स्वर्ण-पदक' भी प्रदान किया गया था।

अपने शिक्षक-जीवन का प्रारम्भ आपने सन् 1926 मे 'पाटलिपुत्र हाई स्कूल' से किया था, वहाँ पर आप सन् 1936 तक सहायक शिक्षक के रूप मे कार्य-सलग्न रहे थे।



आप सन् 1937 मे पटना विश्वविद्यालय मे हिन्दी-प्रवक्ता बने थे और धीरे-धीरे वहाँ विभागाध्यक्ष हो गए थे। विश्वविद्यालय की सेवा से विश्राम लेकर आपने 'श्रीकृष्ण स्वाध्याय मन्दिर' नामक सस्था की स्थापना की थी। आपके निर्देशन मे अनेक शोधार्थियो ने पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त करके आपके यश का विस्तार किया था।

जिन दिनो आप पटना विश्वविद्यालय मे कार्य-रत थे तब आप जहाँ 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' के कार्यकारी-मण्डल के सक्रिय सदस्य रहे थे वहाँ 'राममोहन राय इस्टीट्यूट' से भी निकटता से सम्बद्ध रहे थे। आप जहाँ अनेक साहित्यिक एव सांस्कृतिक संस्थाओ को दिशा-दान

देते रहते थे वहाँ 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की 'विशारद' और 'साहित्य रत्न' परीक्षाओं के केन्द्रों का संचालन भी आपने अनेक वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था।

आप एक विचक्षण शिक्षक और पटु संगठनकर्ता होने के साथ-साथ लेखन के क्षेत्र में भी अभूतपूर्व मेधा रखते थे। आपने अपनी लेखन-प्रतिभा का परिचय सन् 1915 में उस समय दिया जब आपकी कृति सर्वप्रथम हिन्दी-जगत् के समक्ष प्रकाशित रूप में आई थी। आपकी ऐसी प्रतिभा का परिचय आपके 'अपभ्रंश दर्पण', 'ब्रज साहित्य सौरभ', 'निबन्ध रत्नाकर', 'रामचरित मानस की कथावस्तु', 'सूर साहित्य-दर्पण', 'हमारा सांस्कृतिक साहित्य', 'पत्रालय', 'अयोध्या काण्ड' और 'तरुण तरंग' आदि ग्रन्थों से मिल जाता है। आप जहाँ हिन्दी के गम्भीर विद्वान् थे वहाँ प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य के क्षेत्र में भी आपका स्थान अप्रतिम था।

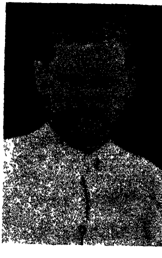
आपका निधन 14 मई सन् 1978 को हुआ था।

श्री जगन्मोहन वर्मा

श्री वर्मा का जन्म सन् 1870 में उत्तर प्रदेश के बस्ती जनपद की डुमरियागंज तहसील के देवीपार नामक ग्राम में हुआ था। देवीपार नामक ग्राम कायस्थों की पुरानी बस्ती है और इसे वर्मा जी के पूर्वजों ने ही बसाया था, इसके स्मृति-चिह्न के रूप में आज भी वहाँ किले के खण्डहर मौजूद हैं। आपके पिता श्री ब्रजराज सिंह एक विद्या-व्यसनी जमींदार थे। जिस युग में आपका जन्म हुआ था उन दिनों उर्दू, अरबी और फारसी में ही शिक्षा दी जाती थी। फलस्वरूप वर्मा जी को भी उर्दू मदरसे में ही पढ़ने के लिए भेजा गया था और 5 वर्ष की आयु से लेकर 18 वर्ष की आयु तक यही क्रम रहा था। एक बार उस विद्यालय के डिप्टी इंस्पेक्टर श्री अयोध्याप्रसाद जब आपके विद्यालय का निरीक्षण करने के लिए वहाँ आए थे तो वे श्री वर्मा जी की प्रतिभा को देखकर इतने प्रभावित हुए थे कि उन्होंने अपनी पुत्री का विवाह वर्मा जी से करने का प्रस्ताव ही आपके पिता से कर दिया था, जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया था।

वर्मा जी के अनन्य विद्यानुराग तथा प्रतिभा को देखकर उनके श्वसुर बाबू अयोध्याप्रसाद ने आपको अपने पास बस्ती बुला लिया और आपने वहाँ उनके निरीक्षण में रहकर अपनी अँग्रेजी, हिन्दी तथा संस्कृत की योग्यता भी बढ़ा ली थी। 20 वर्ष की आयु में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने आगे की पढ़ाई के लिए फैजाबाद के कालेज में प्रवेश ले लिया और वहाँ रहते हुए आपने अपने अँग्रेजी अध्ययन के साथ-साथ संस्कृत के 'अष्टाध्यायी' तथा 'वाल्मीकि रामायण' आदि ग्रन्थों का भी अच्छा स्वाध्याय कर लिया था। अपनी कालेज की शिक्षा समाप्त करने के उपरान्त आपने जहाँ उत्तर भारत के अनेक नगरों की यात्रा की थी, वहाँ संस्कृत के व्याकरण, निरुक्त, न्याय, दर्शन, वेदान्त, उपनिषद्, महिला आदि विविध विषयों के अनेक ग्रन्थों का सम्यक् पारायण करने के साथ-साथ पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश आदि भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आपकी प्रवृत्ति अध्ययन की दिशा में इतनी अधिक थी कि थोड़े ही प्रयास में आपने पंजाबी, बंगला, गुजराती तथा मराठी आदि भारत की कई प्रमुख भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान अर्जित कर लिया था।

क्योंकि स्वतन्त्र प्रवृत्ति के होने के कारण आपका विचार कहीं सरकारी नौकरी का नहीं था अतः निरन्तर स्वाध्याय में संलग्न रहकर साहित्य तथा संस्कृति की सेवा करने का संकल्प ही आपने कर लिया था। सौभाग्य से उन्हीं दिनों 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की ओर से डॉ० श्यामसुन्दर-दास के निरीक्षण में 'हिन्दी शब्द सागर' के निर्माण का कार्य प्रारम्भ हुआ था। वर्मा जी भी सन् 1909 में इस कार्य में जुट गए और स्थायी रूप से काशी



में ही रहने लगे। आपने सन् 1922 तक सभा की सेवा में रहकर जहाँ उसकी ओर से तैयार होने वाले 'हिन्दी शब्द

सागर' की रचना में अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया, वहाँ आपने भारतीय संस्कृति, इतिहास और साहित्य से सम्बन्धित अनेक स्वतन्त्र ग्रन्थों का भी निर्माण किया। आपकी सबसे पहली पुस्तक सन् 1914 में 'बुद्धदेव' नाम से प्रकाशित हुई थी। आपकी ऐसी अन्य पुस्तकों में 'सुग युन', 'फाहियान', 'राणा जंग बहादुर' और 'लोकवृत्ति' प्रमुख है। आपकी अन्य कृतियों में 'चित्रावली', 'श्रीकृष्णचरित', 'पुरुषार्थ', 'आर्ष प्राकृत-व्याकरण', 'ज्ञान योग' और 'साधना संग्रह' के नाम भी विशेष रूप से स्मरणीय है।

आप बौद्ध साहित्य से इतने प्रभावित हुए थे कि आपने 'महाबोधि सोसाइटी सारनाथ' के संस्थापक भिक्खु धर्मपाल के साथ मिलकर 'सारनाथ' में 'बौद्ध विहार' निर्माण कराने में भी अपना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया था। उन्ही दिनो आपने जहाँ 'बौद्ध विहार' में ठहरे हुए बर्मी भिक्षु चन्द्रमणि से बर्मी भाषा का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया, वहाँ भिक्खु धर्मपाल से सिंहली तथा एक चीनी भिक्खु से चीनी भाषाओ का भी गम्भीर अध्ययन किया था। इसी प्रकार जब आपका सम्बन्ध प्रख्यात गणितज्ञ डॉ० गणेशप्रसाद से हुआ तब आपने उनसे जर्मन भाषा भी सीखी ली थी। आपका भाषा-प्रेम इतना अधिक बढ गया था कि समय और साधन मिलते ही आप इस दिशा में सहज ही सलग्न हो जाते थे। धीरे-धीरे आपकी विद्वत्ता की बात सारी काशी नगरी मे इतनी फैल गई कि आपको 'काशी विद्यापीठ' मे हिन्दी-अध्यापन के लिए नियुक्त कर लिया गया। विद्यापीठ मे पहुँचकर आपकी विचार-धारा मे राष्ट्रीयता का जो बीज अकुरित हुआ वह धीरे-धीरे इतना पल्लवित तथा पुष्पित हुआ कि आप राष्ट्रीय आन्दोलन में भी सक्रिय रूप से भाग लेने लगे थे। यहाँ तक कि काशी मे 'खादी आश्रम' की स्थापना से पूर्व ही आपने चौक मे खद्दर की एक दुकान खोल दी थी। काशी के जिन अनेक साहित्यकारो से आपका घनिष्ठ सम्बन्ध था उनमे सर्वश्री प्रेमचन्द, श्यामसुन्दरदास, रामचन्द्र शुक्ल, लाला भगवानदीन और रामचन्द्र वर्मा आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

भाषा-विज्ञान, लिपि-विज्ञान और शब्द-शास्त्र आपके प्रिय विषय थे। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण आपके द्वारा लिखित उन विभिन्न लेखो मे मिल जाता है जो उन दिनो पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहते थे। उन लेखो में से कुछ के शीर्षक इस प्रकार है—'हिन्दी भाषा की उत्पत्ति', 'हिन्दी पर प्राकृत भाषाओ का प्रभाव', 'धातुओ और शब्दो का इतिहास', 'भाषा का विकास', 'भाषा और वर्णों की उत्पत्ति' 'शब्द-शास्त्र', 'नागरी वर्णमाला का अक्षर-विन्यास'। आपने जहाँ भाषा तथा लिपि-सम्बन्धी विविध गुरु-गम्भीर विषयों पर विशद प्रकाश डाला था वहाँ एक उपन्यास की रचना भी की थी। आपकी 'लोक-वृत्ति' नामक रचना आपकी औपन्यासिक प्रतिभा का उत्कृष्ट प्रमाण प्रस्तुत करती है। इस उपन्यास का प्रकाशन आपके निधन के उपरान्त काशी के 'भार्गव भूषण प्रेस' की ओर से हुआ था और इसकी भूमिका प्रख्यात उपन्यासकार मुन्शी प्रेमचन्द ने लिखी थी। प्रेमचन्द जी की भूमिका के ये शब्द आपकी औपन्यासिक प्रतिभा की उत्कृष्टता के परिचायक है—"मै नही समझ सकता था कि शुष्क विषयो का अध्ययन तथा लेखन करने वाला व्यक्ति इतना सुन्दर उपन्यास भी लिख सकता था। यदि आप इस क्षेत्र मे कार्य करते तो नि सन्देह अच्छे उपन्यासकार होते।" काव्य-रचना की दिशा मे भी वर्मा जी की बहुत रुचि थी। आपने अपनी मृत्यु से कुछ क्षण पूर्व जो कविता लिखी थी वह प्रयाग से प्रकाशित होने वाली 'मनोरमा' नामक अत्यन्त प्रख्यात साहित्यिक पत्रिका के अप्रैल सन् 1926 के अक मे छपी है।

यह प्रसन्नता का विषय है कि आपके पारिवारिकजन भी साहित्य-क्षेत्र मे ही कार्य करते रहे है। आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री सत्यजीवन वर्मा 'भारतीय' जहाँ काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय' के 'हिन्दी एम० ए०' के प्रथम बैच के छात्रों मे रहे थे, वहाँ साहित्य के क्षेत्र मे भी उन्होने अच्छी ख्याति अर्जित की थी। उनसे छोटे पुत्र श्री गुरुदेवप्रसाद वर्मा भी उत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग मे उपनिदेशक के पद पर कार्य करते हुए सेवा-निवृत्त हुए है।

आपका निधन सन् 1924 मे हुआ था।

आशु-कवि जगमोहननाथ अवस्थी 'मोहन'

श्री अवस्थी जी का जन्म 4 अक्तूबर सन् 1904 को उत्तर

प्रदेश के फतेहपुर जनपद के लालीपुर नामक ग्राम मे हुआ था। आप हिन्दी के अतिरिक्त उर्दू, अँग्रेजी और संस्कृत आदि भाषाओ के भी अच्छे ममज्ञ थे। आप आनन्द मण्डल पुस्तकालय अटौरा बुजुर्ग (रायबरेली), हिन्दी साहित्य पुस्तकालय मनिकापुर (उन्नाव) और बैसवारा परिपद् (रायबरेली) के अध्यक्ष रहने के साथ-साथ मनोबल प्रचार समिति और राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् (लखनऊ) के महामन्त्री भी रहे थे। तुलसी साहित्य परिषद् (कलकत्ता) के भी आप सक्रिय सदस्य रहे थे।



आपकी साहित्यिक प्रतिभा का सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि आपको अपनी कवित्व-प्रतिभा के कारण 'आशु-कवि' और 'साहित्य मनीषी' की उपाधियों से विभूषित किया गया था। आपने लगभग 2 दशक तक हिन्दी के कवि-सम्मेलनो मे अपनी 'आशु-कवित्व-प्रतिभा' का जो चमत्कारी परिचय दिया था उसके कारण आपकी ख्याति दूर-दूर तक हो गई थी। अपनी कवित्व-शैली के कारण आपको जहाँ अनेक कवि सम्मेलनो मे 'स्वर्ण' और 'रजत' पदको से सम्मानित एव पुरस्कृत किया गया था वहाँ एक बार जोधपुर नरेश ने 'सोर्ड ऑफ आनर' (तलवार का सम्मान) प्रदान किया था।

आपकी साहित्यिक क्षमता और रचना-शैली का सर्वोत्कृष्ट प्रमाण यही है कि आप उच्चकोटि के कवि होने के साथ-साथ उत्कृष्ट गद्य-लेखक भी थे। आपके अनेक काव्यो का जहाँ हिन्दी-जगत् मे पर्याप्त समादर हुआ, वहाँ कई उपन्यास तथा नाटक भी सम्मानित एव पुरस्कृत हुए। आपकी ऐसी रचनाओं मे 'कदम्ब', 'जीवन-कण', 'दिविता', 'अहिंसा वध', 'चौराहे से', 'प्राणदान', 'फाँसी के स्वर', 'अमर बापू' तथा 'जय स्वतन्त्रते' (सभी काव्य) के अतिरिक्त 'सुहाग की चिता' और 'सती वेश्या' (उपन्यास), 'निर्माण' एव 'पश्चात्ताप' (नाटक) आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त आपकी 'बापू का वरदान' एवं 'सुधा कलश' नामक कृतियाँ भी अपना अनन्य स्थान रखती हैं।

आप अनेक वर्ष तक उत्तर प्रदेश शासन के विभिन्न विभागो मे कार्य-रत रहकर 31 दिसम्बर सन् 1961 को सेवा-निवृत्त हुए थे। आपने अपनी प्रतिभा तथा योग्यता से शासन के जिन विभागों मे अपना महत्त्वपूर्ण तथा उल्लेखनीय स्थान बनाया था उनमे 'शिक्षा प्रसार विभाग' और 'सूचना विभाग' प्रमुख हैं। आप शिक्षा प्रसार विभाग में जहाँ 'प्रचार अधिकारी' थे वहाँ सूचना विभाग मे भी एक प्रतिभाशाली पत्रकार के रूप मे आपने अपनी कार्य-क्षमता का अभूतपूर्व परिचय दिया था। सेवा-निवृत्ति के उपरान्त आपने स्थायी रूप से लखनऊ मे रहकर वहाँ से 'उद्भव' नामक एक मासिक पत्र का भी कई वर्ष तक सम्पादन किया था। आपके सुपुत्र श्री रमानाथ अवस्थी हिन्दी के गीतकारो मे अपना प्रमुख स्थान रखते है।

आपका निधन 4 अप्रैल सन् 1982 को हृदय गति रुक जाने के कारण हुआ था।

ठाकुर जगमोहनसिंह

आपका जन्म भारतीय स्वतन्त्रता के प्रथम सघर्ष के वर्ष सन् 1857 मे मध्यप्रदेश के जबलपुर जनपद के विजय राघवगढ नामक राज्य के किले मे हुआ था। आपके पूर्वज विजय राघवगढ राज्य से सम्बन्धित थे। दुर्भाग्यवश आपके जन्म के साथ ही आपके पूर्वजों का यह राज्य अँग्रेजो के हाथ मे चला गया था। आपके पितामह राजा प्रयागदासिंह ने मैहर राज्य से अलग होकर विजय राघवगढ़ मे अपना एक छोटा-सा राज्य स्थापित करके उसे राजधानी का रूप प्रदान किया था। सन् 1857 की क्रान्ति का प्रभाव आपके इस राज्य पर भी पड़ा और अंग्रेजो ने जबलपुर से वहाँ पहुँचकर विजय राघवगढ के किले पर अपना झण्डा फहरा दिया था। फलस्वरूप इस राज्य को जबलपुर के प्रशासन से जोड़ दिया गया और ठाकुर जगमोहनसिंह क्योकि वहाँ के राजा के

एक-मात्र पुत्र थे, अतः उन्हें परवरिश-पेंशन दे दी गई।

आपको 9 वर्ष की आयु में ही विद्याध्ययन के लिए काशी भेज दिया गया और 20 रुपये पेंशन मिलने लगी। बनारस के कमिश्नर ने भारत सरकार से पत्र-व्यवहार करके इस पेंशन को बढ़वाकर 100 रुपये कराया था। ठाकुर जगमोहनसिंह ने निरन्तर 12 वर्ष तक काशी में ही रहकर विद्याध्ययन किया था। संस्कृत, हिन्दी और अँग्रेजी की अच्छी योग्यता प्राप्त करने के साथ-साथ आप हिन्दी-लेखन की ओर भी संलग्न हो गए थे। आपने गद्य में खड़ी बोली और पद्य में ब्रज-भाषा को अपनाया था। आपकी प्रायः सभी रचनाओं में आपके गम्भीरतम



अध्ययन के चिह्न दृष्टिगत होते हैं। जिन दिनों आप बनारस में पढ़ते थे उन दिनों आपका सम्पर्क भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र से हो गया था। इस सम्पर्क के कारण ही आपमें हिन्दी-साहित्य के प्रति घनिष्ठ प्रेम उद्भूत हुआ था। आपकी सबसे पहली काव्य-कृति 'ऋतु-सहार' है, जिसका प्रकाशन सन् 1876 में काशी से हुआ था। यह कृति संस्कृत के ग्रन्थ का अनुवाद है। आपने 'मेघदूत' का जो हिन्दी अनुवाद किया था उसकी भूमिका में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की मित्रता और सहायता का उन्होंने उल्लेख किया है। आपकी काव्य-कृतियों में मध्य प्रदेश के सतपुड़ा और विन्ध्याचल पर्वत की उपत्यकाओं में प्रचलित भाषा का भी अद्भुत सम्मिश्रण देखने को मिलता है। ब्रज-भाषा के साथ-साथ उस अंचल के निवासी मराठी-भाषा-भाषी नागरिकों की शब्दावली भी आपकी कृतियों में प्रचुरता से प्रयुक्त हुई है। मध्य प्रदेश के क्षेत्र के हिन्दी-शब्द-समूह में न तो शुद्ध संस्कृत शब्दों की अधिकता है, और न उर्दू की। कुछ शब्द मराठी के अवश्य ही अत्यन्त स्वाभाविकता से आ गए हैं। आपकी कविता का एक उदाहरण इस प्रकार है

आई शिशिर बरोरु शालि अरु ऊखन सन्तुल धरनी।
प्रमदा प्यारी ऋतु सुहावनी, क्रौंच-रोर मन-हरनी॥
मूँदे मन्दिर उदर झरोके भानु किरन अरु आगी।
भारी बसन हसन मुख बाला नव यौवन अरु रागी॥

अपने अध्ययन की समाप्ति पर आपको मध्य प्रदेश-शासन में तहसीलदार के सरकारी पद पर रहना पड़ा था। आपकी कविताओं में प्राकृतिक सुषमा के जो अभूतपूर्व प्रसंग यत्र-तत्र अपनी विशिष्ट भंगिमा से उभरे हैं वे इसी कारण है कि अपने इस कार्य-काल में आप धमतरी, खण्डवा, बैतूल तथा शबरीनारायण-जैसे अनेक स्थानों में रहे थे। आपकी काव्य कृतियों में जहाँ इन सब स्थानों की प्राकृतिक सम्पदा का चित्रण देखने को मिलता है वहाँ निमाड़-अंचल के कई स्थानों की झलक भी सहज भाव से रूपायित मिलती है। आपकी गद्य-कृतियों में जहाँ हिन्दी-गद्य के जन्मदाता लल्लू-लाल, सदासुखलाल, सदल मिश्र और राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द की गद्य-शैली की झलक देखने को मिलती है, वहाँ मध्यप्रदेश के ग्रामीण अंचलों में प्रचलित शब्दावली का भी स्पष्ट परिचय हो जाता है। आपने गद्य तथा पद्य सभी विधाओं में अपनी उत्कृष्टतम प्रतिभा का परिचय दिया था। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की यह पंक्तियाँ आपकी भाषा-शैली की विशेषता को और भी स्पष्टता से उजागर करती है—"प्राचीन संस्कृत साहित्य के अभ्यास और विन्ध्याटवी के रमणीय प्रदेश में निवास के कारण विविध भावमयी प्रकृति के रूप-माधुर्य की जैसी सच्ची परख, जैसी सच्ची अनुभूति आपमें थी वैसी उस काल के किसी हिन्दी कवि या लेखक में नहीं पाई जाती।"

आपकी प्रकाशित कृतियों में 'ऋतुसहार' और 'मेघदूत' के अतिरिक्त 'प्रेम रत्नाकर' (1873), 'ओंकार चन्द्रिका' (1874), 'प्रलय' (1874), 'सज्जनाष्टक' (1875), 'ज्ञानप्रदीपिक-प्रदीपिका' (1883) 'कुमार सम्भव' (1884), 'हंसदूत' (1884), 'प्रेम सम्पत्ति लता', 'श्याम (1885), 'श्यामलता' (1885), 'देवयानी' (1886), सरोजनी' (1887), 'ऋतु प्रकाश' (1887), 'रम्य पदावली' (1887), 'मानस सम्पत्ति' (1888) तथा 'श्यामा-स्वप्न' (1888) के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण है। आपका 'श्यामा-स्वप्न' नामक उपन्यास प्रकृति-चित्रण और रमणीय स्थलों के वर्णन की दृष्टि से अपना सर्वथा विशिष्ट स्थान रखता है।

अब इसका जो विशिष्ट सस्करण 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की ओर से डॉ० श्रीकृष्णलाल के सम्पादन मे प्रकाशित हुआ है वह साहित्य-प्रेमियो को अवश्य ही देखना चाहिए। आपकी विशिष्ट अनुप्रासमयी गद्य-शैली की झलक आप 'श्यामा-स्वप्न' की इन पक्तियो मे देख सकते है—"कुज मे तरु का पुज पुजित है, जिसमे श्याम तमाल की शाखा निम्ब के पीत पत्रों से मिली है, रसाल का विशाल वृक्ष अपने विशाल हाथों से पिप्पल के अचल प्रवासों मे मिलता है। कोई लता जम्बू से लिपटकर अपनी लहराती हुई डार को सबसे ऊपर निकालती है। अशोक के ललित पुष्पमय स्तबक झूमते है। माधवी तुषार के सदृश पत्रो को दिखलाती है और अनेक पुष्प-वृक्ष अपनी पुष्प-नमित डारो मे पुष्पो की वृष्टि करते है। पवन सुगन्ध के भार से मन्द-मन्द चलती है। केवल निर्झर का स्वर सुनाई पडता है। कभी-कभी कोयल का स्वर दूर से सुनाई पडता है और कोयल का कलरव निकटस्थित वृक्ष से भी सुनाई पडता है।"

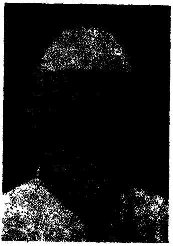
आपके 'श्यामा-स्वप्न' नामक उपन्यास की महत्ता ऐतिहासिक दृष्टि मे भी बहुत अधिक है। ठाकुर साहब ने इसमे पुराणो और 'वाल्मीकि रामायण' मे प्रतिपादित इस तथ्य का भी उल्लेख किया है कि 14 वर्ष के वनवास के समय भगवान् राम इसी महाकौशल के बीहड वन-मार्ग से होकर दक्षिण को गए थे। इसी अचल के 'शबरी नारायण' नामक स्थान पर भगवान् राम ने 'शबर' नामक आदिवासी जाति की महिला भक्तिन के द्वारा प्रदत्त झूठे बेरो का आस्वादन किया था। उसे 'शबर' जाति मे उत्पन्न होने के कारण ही 'शबरी' कहा जाता है। कदाचित् राम के उस उदात्त आदर्श की प्रतिष्ठा ही आज छत्तीसगढ के 'शबरीनारायण' के इस मन्दिर मे देखने को मिलती है। अपने इस उपन्यास की एक 'कुण्डली' मे आपने इस तथ्य का पद्यबद्ध वर्णन इस प्रकार किया है

याही मग ह्वै के गए, दण्डक वन श्री राम।
तासों पावन देश यह, बिन्ध्याटवी ललाम॥
बिन्ध्याटवी ललाम, तीर तरुवर सो छाई।
केतिक करव कुमुद, कमल के बरन सुहाई॥
भन 'जगमोहनसिंह' न शोभा जात सराही।
ऐसा बन रमनीय, गए रघुबर मग याही॥

आपका निधन सोहागपुर मे 4 मार्च सन् 1899 को हुआ था।

श्री जगमोहनसिंह नेगी

श्री नेगी का जन्म 5 जुलाई सन् 1905 को उत्तर प्रदेश के गढ़वाल जनपद की पट्टी उदयपुर वल्ला के कांडी नामक ग्राम मे हुआ था। आपके पिता श्री उत्तमसिह नेगी उस क्षेत्र के अत्यन्त सम्भ्रान्त व्यक्तियो मे गिने जाते थे। अपने ग्राम की पाठशाला मे ही प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त श्री नेगी पहले देहरादून के डी० ए० वी० हाई स्कूल मे प्रविष्ट हुए और फिर बाद मे 'गवर्नमेंट हाई स्कूल नजीबाबाद' में आ गए। इसी स्कूल से आपने सन् 1923 मे हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आपके पिता की हार्दिक इच्छा यह थी कि हाई स्कूल के बाद ही नेगी जी सरकारी सेवा मे जाकर 'तहसीलदार' या 'कलक्टर' के पद तक पहुँचें, किन्तु आपने नौकरी न करके आगे की पढाई जारी रखने के लिए बनारस जाकर वहाँ के 'हिन्दू विश्वविद्यालय' मे प्रवेश ले लिया और सन् 1928 मे वही से बी० ए० की परीक्षा देने के उपरान्त सन् 1929 मे एल-एल० बी० भी कर लिया।



अपने छात्र-जीवन मे ही आपमे समाज-सेवा की भावनाएँ हिलोरें मारने लगी थी। परिणाम स्वरूप महात्मा गान्धी और स्वामी दयानन्द के सुधारवादी आन्दोलन से प्रभावित होकर आपने समीपवर्ती आठ ग्रामो मे जन-सेवा का कार्य करने की दृष्टि से 'अष्टग्राम भ्रातृ-मण्डल' नामक सस्था की स्थापना की और उसके माध्यम से अनेक सुधार-कार्य किए। आपके उस समय किये गए कार्य का ज्वलन्त उदाहरण वहाँ का पचायती जगल है। फिर आप सन् 1930 मे 'असहयोग आन्दोलन' की चपेट मे आ गए और पूरी तरह जन-सेवा को ही अपने जीवन का प्रमुख लक्ष्य बना

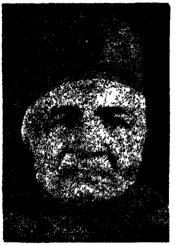
लिया। इस प्रसंग में आपने सभी आन्दोलनो मे जेल-यात्राएँ की और जब प्रदेश में कांग्रेसी मत्रिमण्डल का गठन हुआ तब न केवल कई बार विधान सभा के सदस्य चुने गए प्रत्युत आप प्रशासन मे सभा सचिव, उप मंत्री तथा मंत्री के उत्तर-दायित्वपूर्ण पदो पर भी प्रतिष्ठित रहे थे।

आप जहाँ उच्चकोटि के राजनीतिक तथा सामाजिक कार्यकर्ता थे वहाँ उत्कृष्ट लेखक एवं साहित्यकार के रूप मे भी आपकी सेवाएँ उल्लेखनीय है। आपके द्वारा समय-समय पर लिखित अनेक लेख इसके ज्वलन्त साक्षी है। आपके ऐसे लेखो का सकलन 'पर्यटको का स्वर्ग' नाम से उन दिनों प्रकाशित हुआ था जब आप उत्तर प्रदेश प्रशासन मे 'नियोजन उपमत्री' थे। इस पुस्तक का सम्पादन श्री प्रतापनारायण चतुर्वेदी ने किया था और प्रकाशन 'भारतवासी प्रकाशन इलाहाबाद' की ओर से हुआ था।

आपका निधन 30 मई सन् 1968 को 63 वर्ष की आयु में अचानक हृदय गति अवरुद्ध होने के कारण हुआ था।

श्री जड़ावचन्द जैन

श्री जैन का जन्म मध्यप्रदेश के मालवा अचल के नर्मदा-तटवर्ती मण्डलेश्वर नामक स्थान मे सन् 1904 मे हुआ था। शिक्षा - प्राप्ति के उपरान्त आप महात्मा गाधी के आवाहन पर भारत के स्वाधीनता-सग्राम मे पूरी तरह सलग्न हो गए थे। इस प्रसग मे आपने कई बार जेल-यात्राएँ भी की थी। आप जहाँ सन् 1938 से सन् 1948 तक मध्यप्रदेश विधान सभा के सदस्य रहे थे वहाँ सन् 1948 से सन् 1951 तक जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष का दायित्व भी पूर्ण सफलता से आपने सम्पादित किया था। आप सन् 1952 में भी दूसरी बार विधान सभा के सदस्य निर्वाचित हुए थे।



आप जिस तन्मयता से राजनीति के क्षेत्र में कार्य किया करते थे उसी तत्परता से आपने साहित्य तथा सस्कृति के क्षेत्र मे भी अपना अनन्य योगदान किया था। आपने जहाँ अनेक पुस्तके लिखी थी वहाँ निमाड़ी भाषा की अभिवृद्धि के क्षेत्र मे भी उल्लेखनीय कार्य किया था। निमाडी भाषा के मर्मज्ञ एव अध्येता के रूप मे आपकी सेवाएँ अभिनन्दनीय थी। 'बृहत्तर निमाड आन्दोलन' के आप जनक कहे जाते थे।

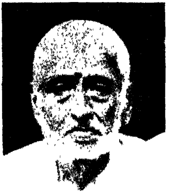
आपका निधन 4 मई सन् 1981 को हुआ था।

श्री जनार्दन झा 'जनसीदन'

श्री 'जनसीदन' का जन्म बिहार प्रान्त के मुजफ्फरपुर जनपद के कुमर बाजितपुर नामक ग्राम मे सन् 1872 मे हुआ था। केवल 5 वर्ष की आयु मे ही आपने अक्षरारम्भ कर दिया था और जब आप 9 वर्ष के थे तब लोअर प्राइमरी की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी। 10 वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते आपने सस्कृत का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया था। सन् 1887 मे जब आप हाजीपुर (मुजफ्फरपुर) की 'धर्म प्रचारिणी पाठशाला' मे सस्कृत का अध्ययन कर रहे थे तब आप 'खड्गविलास प्रेस' को देखने की लालसा से पटना गए थे। पटना में आपकी भेट बाबा सुमेरसिह साहबजादे मे हुई थी। वे आपकी कवित्व-प्रतिभा से उस समय बहुत प्रभावित हुए थे। सन् 1900 मे आप श्रीनगर (पूर्णिया) के राजा कमलानन्दसिह 'साहित्य सरोज' के दरबार मे चले गए और वहाँ पर ही साहित्य-रचना का कार्य अत्यधिक बढा था। वहाँ पर रहते हुए ही आपका सम्पर्क ब्रजभाषा के सिद्ध कवि श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' और सस्कृत-हिन्दी के प्रख्यात विद्वान् श्री अम्बिकादत्त व्यास से हुआ था।

इस बीच आपने निजी स्वाध्याय के बल पर सस्कृत के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ

बंगला भाषा का भी अच्छा अभ्यास कर लिया था। सन् 1901 मे आप आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी की अनुशंसा पर इण्डियन प्रेस प्रयाग के प्रकाशन विभाग में नियुक्त हुए थे और वहाँ रहते हुए आपने अनेक बगला पुस्तकों का हिन्दी-अनुवाद भी किया था। प्रयाग मे सन् 1916 तक रहने के उपरान्त आप अपने ही जनपद के पचगछिया हाई स्कूल मे हिन्दी तथा सस्कृत के अध्यापक नियुक्त होकर वहाँ चले गए थे। इस पद पर सन् 1917 से 1919 तक कार्य करने के उपरान्त आप दरभगा मे प्रकाशित होने वाले 'मिथिला मिहिर' का सम्पादन करने लगे थे। इस पद पर लगातार तीन वर्ष तक कार्य करने के उपरान्त सन् 1922 से सन् 1927 तक आपने स्वतन्त्र रूप से कलकत्ता के वणिक् प्रेस और कविराज नगेन्द्रनाथ सेन के लिए कई पुस्तके लिखी थी।



सन् 1928 से आपने घर पर रहकर ही साहित्य-सेवा का कार्य किया था। जिन दिनों 'वैशाली समारोह' मनाया गया था तब मुजफ्फरपुर जनपद के सबसे अधिक आयु वाले साहित्यकार के नाते आपको ही उसका अध्यक्ष बनाया गया था। आपकी महत्त्वपूर्ण रचनाओं को देखकर आपके कृतित्व के बहु आयामी विस्तार का सहज ही अनुमान किया जा सकता है। आपकी रचनाएँ उन दिनों जिन अनेक महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित हुआ करती थी उनमे 'सरस्वती', 'मिथिला मिहिर', 'रसिक मित्र' और 'रसिक वाटिका' आदि के नाम विशेष उल्लेख्य है। आपने जिन अनेक ग्रन्थो की रचना की थी उनमे से अधिकाशत बगला से अनूदित है। आपके द्वारा मौलिक रूप से रचित और अनूदित सभी रचनाएँ इण्डियन प्रेस प्रयाग, वणिक् प्रेस कलकत्ता, और पुस्तक भडार पटना तथा लहेरिया सराय से प्रकाशित हुई थी। आपकी प्रमुख रचनाओ के नाम इस प्रकार है—'राजर्षि', 'मुकुट', 'चरित्र गठन', 'ऋद्धि', 'स्वर्णलता', 'राबिन्सन क्रूसो', 'नेपोलियन बोनापार्ट', 'आश्चर्य घटना', 'विचित्र वधू रहस्य', 'सुशीला चरित्र', 'पतिव्रता', 'आदर्श महिला', 'राजपूत जीवन-सन्ध्या', 'माधवी ककण', 'समाज', 'गौर मोहन', 'नवीन सन्यासी', 'रत्नदीप', 'अद्भुत कथा', 'भारतीय साधक', 'गृह-नक्षत्र', 'षोडशी', 'सम्राट् अकबर', 'पारस्य', 'मनुस्मृति की टीका', 'सिख जाति का इतिहास', 'सुश्रूषा', 'विष वृक्ष', 'देवी चौधरानी', 'इन्दिरा', 'प्राणियों के अन्त करण की बात', 'पुरुष परीक्षा', 'अन्योक्ति मणिमाला', 'कलिकाल कुतूहल', 'मैथिली नीति पद्यावली', 'चिकित्सा सागर', 'वाटिका विनोद', 'पाचन मुष्टियोग', 'द्रव्य गुण शिक्षा', 'अनुभूत मुष्टियोग', 'पुनर्विवाह', 'शशिकला' और 'द्विरागमन रहस्य'। इनमे से अधिकाश बंगला के उपन्यासो के अनुवाद है और कुछ ज्योतिष तथा आयुर्वेद-सम्बन्धी ग्रन्थ है। 'शशिकला' तथा 'द्विरागमन रहस्य' आपके द्वारा लिखित मिथिला भाषा के उपन्यास है, जिनका धारावाहिक प्रकाशन 'मिथिला मिहिर' मे हुआ था। इस सूची मे आपकी बहुमुखी प्रतिभा का सहज ही अनुमान हो जाता है। आपके सुपुत्र डॉ० हरिमोहन झा भी मैथिली और हिन्दी के अच्छे लेखक है।

आपका निधन सन् 1958 मे हुआ था।

श्री जनार्दन पाण्डेय 'अनुरागी'

श्री 'अनुरागी' का जन्म 26 जुलाई सन् 1934 को उत्तर प्रदेश के देवरिया जनपद के भागलपुर क्षेत्र के बलिया नामक स्थान मे हुआ था। अपनी शिक्षा-दीक्षा परमहंस आश्रम बरहज के श्रीकृष्ण इण्टर कालेज मे सन् 1952 मे उन दिनों हुई थी जब हिन्दी के प्रख्यात कवि श्री मोती बी० ए० (मोतीलाल उपाध्याय एम० ए०) उसके प्रधानाचार्य थे। अपने छात्र-जीवन मे आपका मन पढने-लिखने मे नही लगता था और आप कविता की ओर पूर्णत. उन्मुख हो गए थे। आपकी कविता-प्रतिभा पर मुग्ध होकर कालेज के प्राचार्य श्री मोती बी० ए० ने आपका उपनाम 'अनुरागी

रख दिया था। येन केन प्रकारेण इण्टरमीजिएट की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपका अध्ययन-क्रम सर्वथा अवरुद्ध हो गया और आप कविता को ही समर्पित हो गए। अपने छात्र-जीवन में जहाँ अनुरागी जी ने कृष्ण-चरित-सम्बन्धी एक काव्य लिखा था वहाँ छायावादी शैली मे भी अनेक मनमोहक गीत लिखे थे।

खडी बोली में उत्कृष्ट गीत-रचना करने के साथ-साथ आपने भोजपुरी मे भी बडी सरस और प्राजल रचनाएँ की थी। थोडे ही दिनों मे आपने—

अनुरागी के देखि विरागी
काहे दुनिया रोई
देहिया धइले ना जानी कि
के कर का गति होई

जैसी पक्तियाँ लिखकर जहाँ उस क्षेत्र के लोक-जीवन को झकझोर दिया था वहाँ आप पूर्णत विरागी के रूप मे ही दिखाई देने लगे थे। आपकी खडी बोली की—

बड़े मौज से दिन जवानी के काटा
न होना था बिरला, न होना था टाटा

पक्तियो मे आपकी मानसिक स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है। आपके जीवन के अन्तिम दिन बडे ही अर्थ-संकट मे कटे थे। भोजपुरी कविता के क्षेत्र मे आपने अपनी रचना-प्रतिभा से इतना महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया था कि आपके निधन पर भोजपुरी भाषा के प्रख्यात साहित्यकार और भोजपुरी सस्कृति के अनन्य उपासक श्री गणेश चौबे ने यह सही ही लिखा था—"ऊ जीवन-भर गरीबी से लडत-रहले। बाद मे अनुरागी बैरागी हो गइले। ऊ सीधा-सादा भाषा मे अपने जीवन के अनुभूति रखले बाडे। उनकी कविता मे करुण रस का धार बहल बा।" थोडी-सी आयु मे आपने हिन्दी और भोजपुरी कविता के क्षेत्र मे स्तुत्य तथा उल्लेख-नीय कार्य किया था।

आपका निधन 4 जनवरी सन् 1982 को हुआ था।

श्री जनार्दनप्रसाद झा 'द्विज'

श्री 'द्विज' का जन्म बिहार प्रान्त के भागलपुर जनपद के 'रामपुर डीह' नामक ग्राम में 24 जनवरी सन् 1904 को हुआ था। आप अपने बाल्यकाल से ही अत्यन्त मेधावी थे। फलस्वरूप अपनी ही जन्म-भूमि के 'प्राइमरी स्कूल' मे शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप आगे की पढ़ाई पूरी करने के लिए काशी चले गए थे। काशी मे श्री रामनारायण मिश्र तथा महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय की प्रेरणा से आपने 'सेंट्रल हिन्दू स्कूल' मे प्रवेश ले लिया और वहाँ से मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करके आप आगे के अध्ययन के लिए 'हिन्दू विश्वविद्यालय' मे प्रविष्ट हो गए। यहाँ यह विशेष उल्लेखनीय तथ्य है कि आपने विश्व-विद्यालय की हिन्दी एम० ए० की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे विशेष योग्यता प्राप्त करके उत्तीर्ण की थी।

अपने छात्र-जीवन मे आपका सम्पर्क उन दिनो हिन्दी के जिन उच्चकोटि के लेखको मे हो गया था उनमे सर्वश्री प्रेमचन्द तथा जयशकर प्रसाद प्रमुख थे। इस सम्पर्क के कारण ही आपकी प्रवृत्ति लेखन की ओर हो गई और थोडे ही अभ्यास मे आपने कविता तथा समीक्षा-लेखन के क्षेत्र मे अत्यन्त सफलता प्राप्त कर ली। कहानी-लेखन की दिशा मे भी आपने अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था। जहाँ आपकी कहानियों



का प्रथम सकलन 'किसलय' नाम से सन् 1931 मे प्रकाशित हुआ था वहाँ कविताओ का सकलन 'अनुभूति' नाम से सन् 1933 मे हिन्दी-जगत् के समक्ष आ गया था। यहाँ यह तथ्य भी विशेष महत्त्व रखता है कि हिन्दी में प्रेमचन्द की उपन्यास-कला के सम्बन्ध म सर्वप्रथम समीक्षा-पुस्तक भी आपने ही लिखी थी। इस प्रकार कवि, कहानीकार और समीक्षक के रूप मे आपने अपने साहित्यिक जीवन के प्रारम्भिक काल मे ही स्पृहणीय ख्याति प्राप्त कर ली थी।

'रेखाचित्र'-लेखन की दिशा में भी आप सर्वथा विशिष्ट प्रतिभा रखते थे। एक कुशल अध्यापक के रूप मे भी आप अत्यन्त लोकप्रिय रहे थे। आप जितना सुन्दर गद्य लिखते थे उससे अधिक परिष्कृत भाषण देते थे। आपकी वक्तृता तथा लेखन की भाषा में कोई विशेष अन्तर नही होता था।

एम० ए० करने के उपरान्त सर्वप्रथम आपने देवघर की हिन्दी विद्यापीठ के 'गोवर्धन साहित्य महाविद्यालय' मे हिन्दी-अध्यापक का कार्य प्रारम्भ किया था। उन दिनों प्रख्यात समीक्षक श्री लक्ष्मीनारायणसिंह 'सुधांशु' भी वहाँ पर अध्यापक थे। आपने जहाँ अनेक वर्ष तक राजेन्द्र कालेज छपरा मे हिन्दी-विभागाध्यक्ष के रूप मे कार्य किया था वहाँ आप औरंगाबाद (गया) के सच्चिदानन्द सिन्हा कालेज तथा पूर्णिया कालेज के प्रधानाचार्य भी रहे थे। आपने सन् 1935 मे 'बिहार प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य सम्मेलन' के छपरा मे सम्पन्न हुए बारहवें अधिवेशन की अध्यक्षता भी की थी। आप कई वर्ष तक हिन्दी विद्यापीठ देवघर के रजिस्ट्रार भी रहे थे।

आपने साहित्य के क्षेत्र मे अपनी बहुविध कृतियों के कारण जो स्थान बना लिया था वह आपकी साहित्यिक प्रतिभा का ज्वलन्त साक्ष्य प्रस्तुत करता है। 'किसलय', 'अनुभूति' तथा 'प्रेमचन्द की उपन्यास-कला' नामक प्रारम्भिक कृतियों के अतिरिक्त आपकी 'मृदु दल','मालिका', 'मधुमयी', 'अन्तर्ध्वनि' तथा 'चरित्ररेखा' आदि रचनाएँ भी उल्लेखनीय है।

आपका निधन सन् 19७4 मे हुआ था।

श्री जनार्दन मिश्र 'पंकज'

श्री 'पंकज' का जन्म बिहार प्रदेश के मुंगेर जनपद के नया गाँव नामक स्थान मे सन् 1912 मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा प्राचीन पद्धति पर हुई थी और आपने व्याकरण, साहित्य, न्याय, सांख्य, वेदान्त तथा योग आदि विषयो मे आचार्य परीक्षा उत्तीर्ण करने के अतिरिक्त हिन्दी विषय मे 'साहित्य रत्न' तथा 'साहित्यालंकार' की उपाधियाँ भी प्राप्त की थीं। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त कुछ समय तक विश्वभारती विश्वविद्यालय शान्ति निकेतन मे प्राध्यापक रहने के उपरान्त आप अपने मूल निवास-स्थान को लौट आए थे।

घर पर आकर आपने फिर से बिहार के जिन अनेक शिक्षा-संस्थानो मे प्राचार्य तथा शिक्षक के रूप में कार्य किया था उनमे से बहूद्देशीय पटना कालेजिएट स्कूल, बहूद्देशीय पटना सिटी स्कूल, जिला स्कूल हजारीबाग, राजकीय संस्कृत विद्यालय राँची, धर्मसमाज राजकीय संस्कृत विद्यालय, मुजफ्फरपुर आदि के नाम विशेष रूप मे उल्लेखनीय है।

आप जहाँ एक कुशल शिक्षक के रूप मे विख्यात थे वहाँ लेखन और सम्पादन के क्षेत्र मे भी आपकी देन सर्वथा प्रशंसनीय रही थी। आप जहाँ भागलपुर से प्रकाशित होने वाले 'कर्मचारी' नामक पत्र के सम्पादक मण्डल के कर्मठ सदस्य रहे थे वहाँ अपनी लेखनी से अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना भी आपने की थी। आपकी प्रकाशित रचनाओं मे 'तुलसीदास', 'साहित्य सुषमा', 'मित्र लाभ दर्पण', 'संस्कृत संग्रह पयोधि', 'मनुस्मृति द्वितीयोध्याय', 'सत्य हरिशचन्द्र', 'कलम कसाई', 'आहों की दुनिया', 'हिन्दी का व्यावहारिक व्याकरण', 'नवादर्श हिन्दी व्याकरण और रचना', 'संस्कृत शिशु बोध', 'बापू की अमर वाणी' के अतिरिक्त 'श्मसान की चांदनी', 'चार बाग', 'गली की लडकियाँ', 'गोश्त का टुकडा' तथा 'अँगूठी' आदि अप्रकाशित पुस्तकें प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

आपका निधन सन् 1977 मे हुआ था।

श्री जनार्दन मिश्र 'परमेश'

आपका जन्म बिहार प्रदेश के सन्ताल परगना क्षेत्र के गोड्डा थाने के अन्तर्गत 'सनौर' नामक ग्राम मे सन् 1890 मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता श्री मुरारी मिश्र के निरीक्षण मे घर पर ही हुई थी। बाद मे आप सन् 1906 मे खडहरा के इंगलिश स्कूल में प्रविष्ट हो गए थे। सन् 1914 मे आपने पटना के नार्मल ट्रेनिंग स्कूल से अन्तिम परीक्षा उत्तीर्ण की और बाद में घर पर ही रहकर अंग्रेजी, संस्कृत,

हिन्दी, बगला तथा उर्दू आदि विभिन्न भाषाओ का अच्छा ज्ञान अर्जित किया।

अपने अध्ययन की समाप्ति पर आपने पटना के 'खड्गविलास प्रेस' में कार्य प्रारम्भ किया। यहाँ रहते हुए



प्रेस से प्रकाशित होने वाली 'शिक्षा' नामक पत्रिका के सम्पादन मे भी सहयोग किया करते थे। फिर आपने कुछ दिन तक अध्यापन का कार्य भी कई स्थानों मे किया था। किन्तु जब अध्यापन के कार्य मे मन नही रमा तब फिर भागलपुर के 'कारोनेशन आर्ट्स प्रिंटिंग वर्क्स' मे कार्य करने लगे। वहाँ पर रहते हुए आपने 'साहित्य कल्पलता' नामक पुस्तकमाला का प्रकाशन भी प्रारम्भ किया था। सन् 1922-23 मे इसी प्रेस से आपने 'सुप्रभात' नामक एक पत्र भी प्रकाशित किया था, जिसके केवल 2-3 अक ही निकले थे। इसके उपरान्त आपने भागलपुर के ही 'ब्राह्मण प्रेस' का कार्य-भार सँभाला और वहाँ से भी 'सुप्रभात' के प्रकाशन का पुन: उपक्रम किया। किन्तु 2-3 अक प्रकाशित करने के उपरान्त फिर विफलता का मुँह देखना पडा।

जब बार-बार अपने इन प्रयासो मे आप विफल होते गए तो विवश होकर आपने शिक्षक का कार्य करना प्रारम्भ किया और सन् 1931 मे 'हिन्दी साहित्य विद्यालय देवघर' मे अध्यापक होकर वहाँ चले गए और 3 वर्ष तक वहाँ रहे। उस समय तक देवघर मे 'हिन्दी विद्यापीठ' की स्थापना नही हुई थी; किन्तु 'विद्यापीठ' की स्थापना की योजना आपने ही बनाई थी। इसके पश्चात् आपने 'कुरसैला' (पूर्णिया) के रईस रायबहादुर रघुवशप्रसादसिंह के यहाँ रहकर उनके परिवार के बच्चो को पढाने का कार्य भी किया था। किन्तु जब वहाँ भी आपका मन नही लगा तब आप अपने घर चले गए और लेखन का कार्य करने लगे। काव्य के क्षेत्र मे सफल रचना करने की दृष्टि से आपने श्री अक्षयवट मिश्र 'विप्रचंद्र' को अपना गुरु बनाया था। आप खडी बोली तथा ब्रजभाषा दोनो में ही समान रूप से कविता किया करते थे। अपने छात्र-जीवन से ही यद्यपि आपका झुकाव लेखन की ओर था, किन्तु उस ओर विशेष ध्यान नही दिया था। अपने देवघर के निवास-काल मे आपने जहाँ 'बरवै रामायण' की टीका लिखी थी वहाँ अपने छात्र जीवन मे भी 'जार्ज किरणोदय' नामक एक पुस्तिका तैयार की थी। धीरे-धीरे आपका क्षेत्र विस्तृत होता गया और आपकी रचनाएँ जहाँ हिन्दी के सभी प्रमुख पत्रो मे छपने लगी वहाँ आप दूर-दूर तक कवि-सम्मेलनो मे भी आमन्त्रित किये जाने लगे।

वैसे तो आपने विपुल साहित्य की रचना की थी, किन्तु आपकी कुछ ही पुस्तके पुस्तकाकार रूप मे प्रकाशित हो सकी थी। ऐसी पुस्तको मे 'जार्ज किरणोदय', 'हमारा सर्वस्व', 'जीवन प्रभा', 'सती', 'रस बिन्दु', 'काला पहाड', 'राष्ट्रीय गान', 'पद्य पुष्प', 'बिल्व दल', 'बरवै रामायण की टीका', 'चकवार चरित','उल्लूपी' और 'बीरो की कहानियाँ या बीर वृत्तान्त' के नाम विशेष उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपने बहुत-सी पाठ्य-पुस्तको का सम्पादन भी किया था।

आपका निधन सन् 1955 मे हुआ था।

सेठ जमनालाल बजाज

आपका जन्म राजस्थान के जयपुर राज्य के सीकर क्षेत्र के 'काशी का वास' नामक ग्राम मे 4 नवम्बर सन् 1889 को कनीराम नाम के एक अत्यन्त साधारण वैश्य-परिवार में हुआ था। इस ग्राम की यह विशेषता थी कि वहाँ पर पीने के पानी का कोई कुआ तक न था। आपका जन्म का नाम 'जमना' था। जब वर्धा के सेठ बच्छराज जी ने सन् 1894 मे आपको गोद लिया तब जमनालाल जी के माता-पिता ने आपको गोद देने के बदले मे गाँव मे एक बडा पक्का कुआ बनवाने की माँग ही सेठ जी के सामने रखी थी। सेठ बच्छराज ने उस गाँव मे कुआ बनवा दिया और जमनालाल जी वर्धा चले गए। उनके नये पिता का स्वभाव बहुत क्रोधी था। जरा-जरा-सी बात पर वे बिगड़ जाते थे और बात-की-बात में

हर किसी आदमी का अपमान कर बैठते थे। एक बार वे इसी प्रकार जमनालाल जी पर बिगड गए और उन्होंने अपनी धन-दौलत तक आपसे छीन लेने की धमकी भी दे दी। उस समय जमनालाल जी की आयु केवल 17 वर्ष की थी। आपने बड़ी नम्रतापूर्वक सारी सम्पत्ति पर से अपना अधिकार वापिस लेने की बात तुरन्त अपने नये पिता के नाम लिखे एक पत्र में प्रकट कर दी। इस पर आपके नये पिता का सारा क्रोध पल-भर मे जाता रहा और फिर कभी उन्होंने जमनालाल जी से ऐसा व्यवहार नही किया। जमनालाल जी के द्वारा 17 वर्ष की आयु मे अपने नये पिता के नाम लिखा गया वह पत्र 'पाँचवें पुत्र को बापू के आशीर्वाद' नामक पुस्तक के पृष्ठ 519 पर प्रकाशित रूप मे देखा जा सकता है।

यद्यपि जमनालाल जी साधारण पढे-लिखे थे, किन्तु अपने कौशल से आपने व्यापार मे दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति की थी। आपकी व्यापार-कुशलता का इससे सुपुष्ट प्रमाण और क्या हो सकता है कि आपके पिता सेठ बच्छराजजी मरते समय जो सवा चार लाख रुपये छोड गए थे जमनालाल जी ने अपने पौरुष से उसे शीघ्र ही चौबीस लाख रुपये मे बदल लिया। यहाँ यह बात



विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि व्यापार में भी आपने कभी असत्य का सहारा नही लिया था। जिस विवेक से आपने धन कमाया था उसी विवेक से उन्मुक्त मन तथा उदार हृदय से उसे अनेक समाजोपयोगी कार्यों मे लगाया था। आपने जहाँ प्रख्यात वैज्ञानिक जगदीशचन्द्र बोस की प्रयोगशाला के लिए 35 हजार रुपये का दान दिया था वहाँ 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' के पुस्तकालय के लिए भी 51 हजार रुपये की राशि प्रदान की थी। आपने समाज के विभिन्न क्षेत्रों मे जहाँ 11 लाख रुपये से अधिक दान दिया था उसमे से करीब 2 लाख ही अपने समाज को आप दे सके थे। आपने मुसलमानो को भी लगभग 21 हजार रुपये की राशि दान में दी थी।

आपका राष्ट्रीय जीवन सन् 1919 से शुरू हुआ था। सरकार से असहयोग करने की भावना के वशीभूत होकर आपने 'रायबहादुरी' तथा 'आनरेरी मजिस्ट्रेटी' की अलामतों से भी छुटकारा पा लिया और महात्मा गाधी द्वारा सचालित असहयोग-आन्दोलन मे सक्रिय रूप से जुड गए और इस प्रसग मे आपको जेल भी जाना पडा था। यहाँ तक कि सन् 1921 मे काग्रेस का जो अधिवेशन नागपुर मे हुआ था उसके स्वागताध्यक्ष भी आप ही थे। यद्यपि राजस्थान से आप एक प्रकार से दूर थे, किन्तु वहाँ भी आपने 'प्रजामण्डल' की स्थापना करके जो प्रबल जन-आन्दोलन सन् 1939 मे किया था उससे आपका व्यक्तित्व बहुत निखरकर जनता के सामने आया था। गाँधीजी की प्रत्येक रचनात्मक प्रवृत्ति से आप इस प्रकार जुड गए थे कि वे आपको अपना पाँचवाँ पुत्र ही समझने लगे थे। इस सम्बन्ध मे गांधीजी के यह विचार पठनीय है—"श्री जमनालाल जी की तरह तन-मन-धन से और कोई भी मेरे कार्य-कलापो मे आत्म-विभोर नही हुआ। जैसा पुत्र वह मुझे मिला है, वैसा पहले और किसी मानव को प्राप्त नही हुआ था।" कदाचित् गाधी जी ने अपने पाँचवे पुत्र की सन्तुष्टि के लिए ही वर्धा मे स्थायी रूप से अपना निवास बना लिया था।

जब महात्मा गाधी ने देश की एकता के लिए हिन्दी भाषा के प्रचार तथा प्रसार का बीडा उठाया तब उसमे भी आपका बहुत अधिक सहयोग रहा था। यहाँ तक कि आपकी इस हिन्दी-निष्ठा के प्रति अभिभूत होकर ही आपको सन् 1937 मे अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मद्रास अधिवेशन का सभापतित्व सौंपा गया था। इस अधिवेशन के अध्यक्ष पद से आपने जो भाषण दिया था उससे राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति आपकी अनन्य भक्ति का परिचय मिलता है। आपने कहा था—"मै राष्ट्रभाषा हिन्दी का हिमायती अवश्य हूँ, लेकिन अँग्रेजी का दुश्मन नही। अन्तर्राष्ट्रीय दुनिया से व्यवहार करने मे हमे आज भी अँग्रेजी का सहारा लेना पडता है। मगर गुलाम देश को अपनी सदियो की गुलामी से जल्द से जल्द छुटकारा पाने के लिए अपनी राष्ट्रभाषा का ही सहारा लेना होगा। हमे यह नही भूलना चाहिए कि हिन्दी ईमान की भाषा है, प्रेम की भाषा

है, राष्ट्रीय एकता की भाषा है और आजादी की भाषा है। यह सब ताकत हिन्दी में प्रकट करने की जिम्मेदारी हम सभी की है।"

आपने जहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति के रूप मे हिन्दी-जगत् का मार्ग-प्रदर्शन किया था वहाँ अनेक हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ और सस्थाओ को भी आर्थिक सहायता द्वारा जीवन-दान दिया था। यहाँ तक कि जब दक्षिण में हिन्दी के प्रचार का प्रश्न गाधी जी के समक्ष प्रमुख रूप से प्रस्तुत हुआ तब आपने चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य के साथ दक्षिण का दौरा किया था। वर्धा की 'राष्ट्र-भाषा प्रचार समिति' की सस्थापना मे भी आपकी प्रेरणा ने ही क्रान्तिकारी कार्य किया था। यद्यपि आप लेखक तो नही थे, परन्तु अपने सार्वजनिक जीवन मे आपको देश के अनेक नेताओ, सुधारको और राष्ट्र-कर्मियो से पत्र-व्यवहार करने का सयोग समय-समय पर मिलता रहा था। आपके उस पत्र-व्यवहार को देखकर ही आपके विचारो और संकल्पो की उदात्तता का सम्यक् परिचय मिल सकता है। आपके ऐसे पत्रो का सकलन 8 भागो मे 'पत्र-व्यवहार' नाम से प्रकाशित हो चुका है। इसके अतिरिक्त आपकी डायरी के भी 5 भाग निकले है। गाँधीवादी रचनात्मक प्रवृत्तियो और राष्ट्रीय जन-जागरण का साहित्य प्रकाशित करने की दृष्टि से श्री हरिभाऊ उपाध्याय ने अजमेर मे 'सस्ता साहित्य मण्डल' नाम से जिस संस्था का सूत्रपात किया था उसके सचालन मे भी आपका सक्रिय सहयोग रहा था।

आपका निधन 11 फरवरी सन् 1942 को हुआ था।

श्री जमनालाल मालपुरावाला

आपका जन्म जयपुर (राजस्थान) के सेठ चिमनलाल के यहाँ सन् 1876 मे हुआ था। अपने पिता के अनुरूप आप भी धर्मनिष्ठ तथा साहसी थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा उनके निरीक्षण मे ही हुई थी और आपने हिन्दी, उर्दू तथा अँग्रेजी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। सन् 1891 मे आपकी नियुक्ति डाक विभाग मे हो गई थी और अनेक पदो तथा स्थानो पर कार्य करते हुए आप सन् 1911 मे जयपुर मे सब पोस्ट मास्टर के पद से सेवा-निवृत्त हुए थे।

जयपुर मे रहते हुए आपका सम्पर्क तत्कालीन अनेक साहित्यकारो से हो गया था और इस सत्संग से ही आप कवित्व-रचना की ओर प्रवृत्त हुए थे। आपके द्वारा रचित कृतियो मे 'जमन विलास' के अतिरिक्त अनेक स्फुट रचनाएँ है। आपकी कृतित्व-प्रतिभा का परिचय इस पद से मिल जाता है .

भेक पै भुजग ज्यूँ, भुजगन पै वैनतेय,
चोरें मकाम पै ज्यों राम दग चाली की।
'जमन' कहत जैसे कुहिया कुलिगन पै,
त्यों ही अनग अग मास है कपाली को॥
जैसे अनुकम्पा अनन्त पाप-पुजन पै,
कस नर-नाह पै ज्यों बाहु वनमाली की।
अगन पै मम्पा औ तुसार वारवाह पै ज्यूं,
काया पै चपेट त्यूं कराल काल व्याली की॥

आपका देहावसान सन् 1917 मे हुआ था।

आचार्य जयकिशोरनारायणसिंह

आपका जन्म बिहार प्रदेश के सीतामढी (पूर्व) जनपद के पकरी नामक ग्राम मे 6 अप्रैल सन् 1912 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा आश्रम-पद्धति से धर्म-समाज सस्कृत महाविद्यालय मुजफ्फरपुर के आचार्य के निरीक्षण मे हुई थी और आपने 'साहित्याचार्य' की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की थी। सस्कृत के अतिरिक्त हिन्दी, उर्दू, पालि, प्राकृत, बगला और अँग्रेजी आदि कई भाषाओ का भी आपने गहन अध्ययन किया था। आप इतिहास, दर्शन, राजनीति, विज्ञान और भारतीय सस्कृति आदि अनेक विषयो का गम्भीर ज्ञान रखने के साथ-साथ साहित्य के अन्य विभिन्न अंगों की भी तलस्पर्शी जानकारी रखते थे।

अपने अध्ययन-काल से ही लेखन की ओर आपकी बहुत अधिक रुचि थी। फलस्वरूप आपने गद्य और पद्य दोनों ही विधाओ में जमकर लिखा था। आपकी रचनाएँ 'चाँद', 'जागरण', 'सुधा', 'माधुरी' तथा 'विशाल भारत' आदि अनेक प्राचीन प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित होती

रहती थी। यहाँ तक कि आठवें दशक की 'सर्जना', 'अभिमत' और 'आईना' आदि पत्र-पत्रिकाओं मे भी आपने जमकर लिखा था। आपने सन् 1955-56 मे जहाँ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय मे 'कामायनी' पर कई गुरु-गम्भीर भाषण दिए थे, वहाँ काशी के 'स्वाध्याय मन्दिर' मे भी 'कालिदास की काव्य कला' पर आपने अपने सुपुष्ट विचार प्रकट किए थे। सन् 1957 मे 'विश्वभारती शान्तिनिकेतन' दिया गया आपका 'रवीन्द्रनाथ के काव्यगत मूल्य' विषयक भाषण भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था। बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'बच्चन देवी साहित्य-गोष्ठी' मे 'तुलसीदास की जीवन दृष्टि' तथा हिन्दी भवन नई दिल्ली का 'साहित्यकार का युगसत्य' विषय से सम्बन्धित भाषण भी आपके तद्विषयक पारगत ज्ञान के सुपुष्ट प्रमाण प्रस्तुत करते है।



आप जहाँ निरतर साहित्य-सृजन और स्वाध्याय मे सलग्न रहे थे वहाँ अनेक साहित्यिक, सास्कृतिक और सामाजिक सस्थाओ से भी आपका घनिष्ठ सम्बन्ध रहा था। बिहार की ऐसी जिन सस्थाओ को आपका प्रश्रय प्राप्त था उनमे 'विदेह शोध सस्थान', 'जीवन तीर्थ', 'सीतायन', और 'भूमण्डलीय मानव मुक्ति सघ' प्रमुख रूप से गणनीय है। आपका सीतामढी के 'भारत-सोवियत सास्कृतिक सघ' और 'जनवादी जर्मन गणतत्र मैत्री संघ' से भी अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध रहा था। यह एक विचित्र सयोग की बात है कि साहित्य की विभिन्न धाराओ मे इतना जमकर लिखने पर भी आप अपनी कृतियो के प्रकाशन के प्रति सर्वथा उदासीन रहे थे। आपकी यह धारणा थी कि 'लेखक को प्रकाशक तक नही, प्रकाशक को ही लेखक तक पहुँचना चाहिए।' आपकी इस मान्यता का ही यह दुष्परिणाम है कि आपकी अनेक कृतियाँ अप्रकाशित ही पडी रह गई।

आपने जहाँ सस्कृत के अनेक ग्रन्थो का अनुवाद किया था वहाँ अँग्रेजी तथा बँगला की कई कृतियो को भी हिन्दी मे प्रस्तुत किया था। आपकी हिन्दी की आरम्भिक कविताएँ जहाँ 'आगमनी' (सन् 1927-1931) नामक सकलन मे समाविष्ट है वहाँ 'परा' (सन् 1931-1934) नामक दूसरी कृति मे आपकी छायावादी चिन्तन-प्रक्रिया के दर्शन मिलते हैं। आपकी कविताओ का तीसरा सकलन 'प्रासगिक' है, जिसमे सन् 1934-1935 मे लिखी गई आपकी राष्ट्रीय कविताएँ सकलित है और चौथी पाण्डुलिपि 'सिन्धु दर्शन' (1935-36) है। इस कृति मे आपने बँगला छन्दो तथा पदो के अत्यन्त सुपुष्ट प्रयोग किये है।

जिन दिनो आपकी ये कविताएँ पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी तब आपको बिहार का 'पत' कहा जाने लगा था। हिन्दी के शीर्षस्थ कवि श्री जयशकर प्रसाद से आपका अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध था। प्रसाद की मृत्यु के समय लिया गया जो चित्र 'विशाल भारत' मे प्रकाशित हुआ था उसमे आप भी थे। आपने कालिदास के 'मेघदूत' का जो हिन्दी पद्यानुवाद 'घनाक्षरी' छन्द मे प्रस्तुत किया था उसकी चर्चा प्रख्यात सास्कृतिक विद्वान् डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ने अपने 'मेघदूत' मे की है। इन काव्य-कृतियो के अतिरिक्त आपकी कई सुपुष्ट गद्य-कृतियाँ भी अपनी विशिष्ट शैली और भगिमा के लिए प्रसिद्ध है। ऐसी रचनाओ मे 'दूरागत', 'नई बात' तथा 'चरितार्थता' प्रमुख हैं। आपने जहाँ अलैक्सिस केरल के 'मैन द अन्नोन' नामक ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद 'अज्ञात मानव' नाम से प्रस्तुत किया था वहाँ आपने 'तीर्थबल' नाम से कुछ सस्मरण भी लिखे थे। यह दुर्भाग्य है कि आपकी ये सारी कृतियाँ पुस्तक रूप मे प्रकाशित होकर साहित्यिक जगत् के समक्ष नही आ सकी।

आपका निधन 26 मार्च सन् 1980 को हुआ था।

श्री जयकृष्ण मणिठिया

श्री मणिठिया का जन्म भारत की राजधानी दिल्ली के समीपवर्ती बाँकनेर नामक ग्राम मे सन् 1877 मे हुआ था। आपके परिवार की आर्थिक स्थिति ठीक नही थी अतः आपने

मिडिल तक विधिवत् अध्ययन करके तदनन्तर अपने ही अध्यवसाय से हिन्दी, संस्कृत, पालि, मराठी, तेलुगु, कन्नड, अँग्रेजी आदि कई भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था।

लेखन की ओर भी आपकी प्रारम्भ से ही रुचि थी। फलस्वरूप थोड़े से ही प्रयास से आप अच्छे लेखक हो गए थे। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों में 'प्रमाण सग्रह', (दो भाग), 'ढोल की पोल', 'भीमसेन शर्मा से दो-दो बातें', 'लोहाकार वंश खण्डन', 'विश्वकर्मा देव की कथा', 'विश्वकर्मा महापुराण', 'विश्वकर्मा पूजन विधि', 'विश्वकर्मा कुल-दीपक', 'विश्वकर्मा माहात्म्य', 'विश्वकर्मा और उसकी सन्तान', 'विश्वकर्मा धर्म पत्रिका', 'असली कौन है', 'ज्योतिष पाठशाला' (दो भाग), 'बिजली मशीन मास्टर', तथा 'बिजली की रोशनी' आदि प्रमुख हैं।

आपका निधन 27 फरवरी सन् 1947 को सरदार शहर (राजस्थान) मे हुआ था।

श्री जयगोपाल कविराज

आपका जन्म अविभाजित पजाब के लाहौर नगर मे सन् 1892 मे हुआ था। आपके पिता लाला रामदास वधवा सच्चे समाज-सुधारक और आर्यसमाज के कर्मठ कार्यकर्त्ता थे। श्री लाला हसराज द्वारा सस्थापित डी०ए०वी० कालेज के सचालन मे उनका प्रमुख सहयोग रहा था। जिन दिनो पजाब मे 'मार्शल ला' की धूम थी तब वे अँग्रेजो के विरुद्ध आन्दोलन करने वाले व्यक्तियो मे अग्रणी स्थान रखते थे। लाला हरदयाल और श्री रामभजदत्त चौधरी उनके समकालीन थे। लोगों को स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार करने की प्रेरणा भी आप देते रहते थे। बालक जयगोपाल पर भी अपने पिता के सस्कारों का प्रचुर प्रभाव पडा था और इस प्रभाव के कारण आप भी समाज-सुधार की धारा मे बह गए थे। हिन्दू-संगठन के लिए कविराज जयगोपाल ने लाहौर मे अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपके छोटे भाई रामगोपाल शास्त्री वैद्य भी आपकी ही भाँति राष्ट्रीय जागरण की दिशा मे बढ-चढ़कर भाग लेते रहते थे।



आपने अपने ही अध्यवसाय से हिन्दी तथा संस्कृत का अच्छा ज्ञान प्राप्त करके आयुर्वेद का गम्भीर अध्ययन किया था। आपने अपनी आजीविका आयुर्वेदिक चिकित्सा से चलाने का निश्चय किया था और जीवन-पर्यन्त उसीके माध्यम से समाज-सेवा का कार्य भी करते रहे। हिन्दू समाज के नवयुवको मे शारीरिक सुपुष्टता लाने की दृष्टि से आपने जहाँ लाहौर के अनेक मोहल्लों मे 'अखाडे' प्रारम्भ किए वहाँ हिन्दी के प्रचार के लिए भी आपने प्रख्यात नाटककार श्री तुलसीदत्त 'शैदा' के साथ 'विक्रम विद्यापीठ' का सचालन किया था। आपने महिलाओं मे हिन्दी के पठन-पाठन के प्रति रुचि जागृत करने के दृष्टि मे 'महिला महाविद्यालय' की स्थापना भी की थी।

समाज-सुधार, चिकित्सा तथा हिन्दी-प्रचार-सम्बन्धी अपनी अनेक व्यस्तताओं से समय निकालकर आप लेखन की दिशा मे भी सक्रिय रहते थे। आपके लेखन के विषय समाज-सुधार और राष्ट्रीय जागरण के ही रहते थे। इसके लिए आपने कविता, नाटक तथा उपन्यास की कई विधाओ को अपनाया था। आपने आयुर्वेद-चिकित्सा-सम्बन्धी ग्रन्थ भी लिखे थे। सामाजिक जागरण को दृष्टि मे रखकर पहले-पहल आपने पजाबी भाषा मे ही लिखना प्रारम्भ किया था और बाद मे धीरे-धीरे पूरी तरह हिन्दी मे लिखने लगे थे। आपकी ऐसी कृतियो मे 'पति-पत्नी-प्रेम', 'सूरज कुमारी', 'पश्चिमी प्रभाव', 'सती सावित्री', 'स्वराज्य भजनमाला', 'प्रह्लाद भक्त', 'सुदामा भक्त', 'दुर्गादास राठौर', 'शिवाजी', 'हरिसिह नलवा', 'अजना हनुमान', 'सगीत पुष्पांजलि', 'सगीत चिकित्सा', 'दयानन्द चरितम्' तथा 'सत्यार्थप्रकाश कवितामृत' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

यह सौभाग्य की बात है कि आपकी इन सभी कृतियों से पजाब मे उन दिनों बहुत अधिक जागृति उत्पन्न हुई थी। आपकी इन कृतियों मे से जहाँ 'दयानन्द चरितम्' को पजाब

सरकार ने पुरस्कृत किया था वहाँ 'संगीत चिकित्सा' पर आपको 'आयुर्वेद महामण्डल' ने रौप्य पदक प्रदान किया था। आपकी 'सत्यार्थ प्रकाश कवितामृत' नामक कृति का आर्य जगत् में प्रचुर प्रचार हुआ था। जन-साधारण मे 'सत्यार्थ प्रकाश' का प्रचार करने की दृष्टि से ही आपने उसे दोहा, चौपाई, सोरठा, सवैया, छप्पय, कुण्डली तथा कवित्त आदि छन्दो मे निबद्ध किया था। यहाँ यह तथ्य भी विशेष रूप से ध्यातव्य है कि 'सत्यार्थ प्रकाश'-जैसे गुरु-गम्भीर ग्रन्थ को पद्यबद्ध करने की प्रेरणा कविराज जयगोपाल को आपके कनिष्ठ भ्राता श्री रामगोपाल शास्त्री ने दी थी। इस ग्रन्थ की रचना कविराज ने सन् 1944 मे प्रारम्भ की थी और केवल 1 वर्ष 9 मास मे ही उसे पूर्ण किया था।

आपकी कवित्व-शैली का परिचय 'सत्यार्थ प्रकाश कवितामृत' मे मुद्रित 'वश-परिचय' शीर्षक आपकी इन पक्तियो से भली भाँति मिल जाता है·

रामदास कविवर सुमन, श्री कवि जयगोपाल
कविनामृत रचना रची, आयु उनसठ साल
लवपुर जन्म भयो अपना,
कुल क्षत्रिय - वश अरोड सुपावन
मोहमयी मखमी जननी,
जनु भक्ति - भरी सरिता सरसावन
अक पौढाय सुनाय सुनामरु
पय कवितामय लागि पिलावन
ताहि की याद मे ग्रन्थ रच्यो
कवितामृत सत्य सुअर्थ सुहावन
द्वै सहस्र इक विक्रमी, सक्रान्ति वैशाख
आरम्भ्यो यह ग्रन्थ शुभ, ओट प्रभु की राख
द्वै सहस्र द्वय पौष की, प्रथम तिथि सक्रान्त
कवितामृत पूरण कियो, जयगोपाल नितान्त

आपका निधन भारत-विभाजन के उपरान्त सन् 1956 मे दिल्ली मे हुआ था।

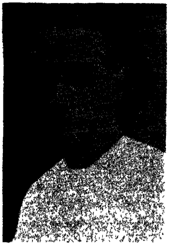
श्री जयचन्द्र विद्यालंकार

आपका जन्म 4 दिसम्बर सन् 1898 को अविभाजित पंजाब के लायलपुर जनपद के किजकोट नामक स्थान में हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा उत्तर-भारत की सुप्रसिद्ध शिक्षण-सस्था 'गुरुकुल काँगड़ी' मे हुई थी। अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द के चरणो मे बैठकर आपने राष्ट्रीयता का जो पाठ निरन्तर 14 वर्ष तक पढ़ा था उसीका सुपरिणाम यह था कि आपने समाज-सेवा तथा साहित्य के क्षेत्र मे अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था। भारतीय इतिहास के गवेषण और शोध की जो प्रवृत्ति आपके मानस मे अपनी छात्रावस्था से उत्पन्न हो गई थी उसीके कारण आपने इस क्षेत्र मे चूडान्त प्रतिष्ठा अर्जित कर ली थी। गुरुकुल की शिक्षा समाप्त करके सन् 1919 मे स्नातक होने के उपरान्त ही आपने भारतीय इतिहास के अनुसधान के क्षेत्र मे कार्य करने का जो पावन सकल्प लिया था, आप जीवन-भर उसीकी सम्पूर्ति मे सलग्न रहे थे।

गुरुकुल से स्नातक होने के अनन्तर पहले तो आपने कुछ दिन अपनी इस सस्था मे ही अध्यापन का कार्य किया था और फिर पजाब-केसरी लाला लाजपतराय के द्वारा सस्थापित 'नेशनल कालेज' मे इतिहास के अध्यापक होकर लाहौर चले गए। जिन दिनो आप वहाँ पढाते थे उन दिनो आपके शिष्यो मे प्रसिद्ध क्रान्तिकारी सरदार भगतसिह और सुखदेव आदि थे। अपने इस अध्यापन-काल मे जहाँ आपने अपने इन शिष्यो मे राष्ट्रीयता की भावनाएँ भरी थी वहाँ पजाब के सभी क्षेत्रो मे उग्र क्रान्तिकारी विचारों का प्रसार किया था। अपनी कक्षाओ मे इतिहास का अध्यापन करते हुए आप छात्रो को यह बताने का प्रयास किया करते थे कि हमारे देश की अधोगति किस कारण हुई है और हमे स्वाधीनता-प्राप्ति के लिए क्या-क्या साधन अपनाने चाहिएँ। नेशनल कालेज के बाद जब महात्मा गाधी के आवाहन पर 'बिहार विद्यापीठ' की स्थापना पटना मे हुई तब आप डॉ० राजेन्द्रप्रसाद के आमन्त्रण पर वहाँ चले गए थे। इसके अतिरिक्त अपने 'भारतीय विद्या भवन' बम्बई और काशी विद्यापीठ मे भी अध्यापन का कार्य किया था। जिन दिनों आप पटना मे थे तब पुलिस ने बिहार के कुछ युवक क्रान्तिकारियो पर 'पटना षड्यन्त्र केस' नाम से जो अभियोग चलाया था उसमे आपके द्वारा लिखित 'भारत का भौगोलिक आधार' (1925) नामक पुस्तक को प्रमुख कारण माना गया था। जब पुलिस से इस पुस्तक को आपत्तिजनक मानने का कारण पूछा गया

तो उसकी ओर से यह कहा गया था कि इस पुस्तक मे भारत के महामार्गों, रेल-पथों और सामरिक महत्त्व के स्थानों का इस ढंग से वर्णन किया गया है कि इसे पढ़कर इस षड्यंत्र केस के युवक यह योजना बना सकते है कि किन पुलों को तोड़-कर तथा जंकशनो पर कब्जा करके रेल-मार्गों के यातायात की व्यवस्था को पंगु बनाया जा सकता है।

आपकी लेखन-क्षमता का इससे अधिक सुपुष्ट प्रमाण क्या हो सकता है कि सही इतिहास प्रस्तुत करने की इस भावना ने ही उन्हे 'क्रान्तिकारी' घोषित कर दिया। बाद मे सन् 1930 मे जब इस पुस्तक का सशोधित और परिवर्धित सस्करण 'भारत-भूमि और उसके निवासी' नाम से उन्होने प्रकाशित किया तब उसका बहुत स्वागत हुआ था। आपकी 'भारतीय इतिहास की रूपरेखा' (1933) नामक कृति पर सन् 1934 मे अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के दिल्ली-अधिवेशन मे मगला-प्रसाद पारितोषिक' प्रदान किया गया था। आपकी प्रमुख कृतियो मे 'भारत भूमि और उसके निवासी' (1931), 'भारतीय वाङ्मय के अमररत्न' (1933), 'उत्कीर्ण लेखा-जलि' (1936),'इतिहास प्रवेश' (दो भाग 1938-1940) 'मनुष्य की कहानी' (1954), 'भारतीय कृषि का क ख' (1954), 'भारतीय इतिहास का उन्मीलन' (1957), 'भारतीय इतिहास की मीमासा' (1959-60), 'गोरखाली इतिहास की मुख्य धाराएँ' (1962), 'प्राचीन पजाब और उसका अडौस-पडौस' (1962), 'राष्ट्रीय इतिहास का अनुशीलन' अश एक (1966) तथा 'भारतीय स्थान कोश' आदि के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण है।



आपने जहाँ प्रख्यात इतिहासवेत्ता महामहोपाध्याय गौरीशकर हीराचन्द ओझा को समर्पित अभिनन्दन ग्रन्थ 'भारतीय अनुशीलन' का सम्पादन किया था वहाँ आप 'भारतीय इतिहास परिषद्' की ओर से 20 भागों मे प्रकाशित होने वाले 'भारतीय इतिहास' के सम्पादक-मण्डल के मन्त्री भी रहे थे। 'भारतीय इतिहास परिषद्' की स्थापना सन् 1937 मे राष्ट्रीय इतिहास का अनुशीलन करने की दृष्टि से डॉ० राजेन्द्रप्रसाद की प्रेरणा पर की गई थी और इस मण्डल के अध्यक्ष सर यदुनाथ सरकार थे। खेद का विषय है कि यह कार्य पूर्ण न हो सका और आर्थिक सहायता के अभाव मे यह सस्था सन् 1950 मे बन्द हो गई। आपने जहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के नागपुर अधिवेशन के अन्तर्गत आयोजित 'इतिहास परिषद्' की अध्यक्षता की थी, वहाँ सन् 1950 मे सम्मेलन के कोटा-अधिवेशन के अध्यक्ष भी आप ही निर्वाचित हुए थे। पटना विश्वविद्यालय की ओर से आयोजित 'रामदीन व्याख्यान माला' मे आपने 'भारतीय इतिहास मे विकास की प्रक्रिया' विषय पर जो महत्त्वपूर्ण भाषण दिया था उसमे अपने देश की ऐतिहासिक घटनाओ से खड़े होने वाले प्रश्नो को सुलझाने का प्रयास किया गया था। बाद मे यह कृति 'भारतीय इतिहास की मीमासा' नाम से प्रकाशित हुई थी।

आप जहाँ उच्चकोटि के इतिहासवेत्ता और सुलेखक थे वहाँ देश के राष्ट्रीय आन्दोलनो को गति देने मे भी आपका बहुत अधिक योगदान रहा था। जब सन् 1942 का 'भारत छोडो आन्दोलन' देश मे छिडा तब आपने उसमे सक्रिय रूप से भाग लेकर ब्रिटिश नौकरशाही के अनेक अत्याचार सहे थे। इस आन्दोलन मे नजरबन्दी के दिनो मे आपने जो कष्ट उठाए वे अवर्णनीय है। अपने जीवन के अतिम दिनों मे आप जब भयकर अर्थ-कष्ट और बीमारी से आक्रान्त हो गए तब आप सन् 1963 मे अपने एक-मात्र पुत्र अरुण के पास चिकित्सार्थ इटली भी चले गए थे। आपका सारा ही परिवार जहाँ राष्ट्रीय जागरण की दिशा मे सर्वात्मना संलग्न रहा था वहाँ साहित्यिक क्षेत्र मे भी उसकी देन कम महत्त्व नही रखती। आपके तीनों छोटे भाई (धर्मचन्द्र नारग, देवचन्द्र नारग और इन्द्रचन्द्र नारग) स्वय सुलेखक रहे और उन्होंने पहले लाहौर तथा भारत-विभाजन के उपरान्त जालधर और इलाहाबाद मे 'हिन्दी भवन' नाम से हिन्दी-प्रकाशन का कार्य किया था। इनमे से श्री इन्द्रचन्द नारंग अब भी प्रयाग मे प्रकाशन का कार्य देखते है। आपकी

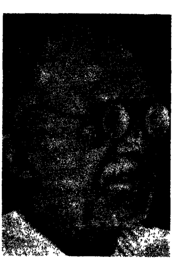
बहन श्रीमती पार्वती देवी भी विख्यात राष्ट्रीय कार्यकर्त्री और हिन्दी-सेविका थी।

आपका निधन 21 फरवरी सन् 1977 को हृदय-रोग के कारण नई दिल्ली मे हुआ था।

श्री जयदयाल गोयन्दका

श्री गोयन्दका का जन्म सन् 1885 मे राजस्थान के चूरू नामक स्थान मे हुआ था। व्यवसाय के सिलसिले मे आप पश्चिमी बगाल के बाँकुडा नामक स्थान मे चले गए थे। आपके यहाँ सूत, किरासिन तेल, कपडा, बर्तन, चीनी और रग आदि का व्यापार होता था। आपका 'एक भाव, सही भाव' तथा 'एक तौल, सही तौल' का सिद्धान्त था। अपने इस सिद्धान्त के कारण आप जहाँ जन-साधारण मे अत्यन्त लोकप्रिय थे वहाँ व्यापारियों मे भी आपकी बडी प्रतिष्ठा थी। दीन-दुखियों, असहायो और विधवाओ की सेवा-सहायता करने के साथ-साथ ब्राह्मणो और गायो की सेवा करने मे आप सोत्साह लगे रहते थे।

अपने व्यापार-कार्य मे व्यस्त रहते हुए भी आप 'श्रीमद्भगवदगीता' का पारायण करते रहते थे और उसके



व्यापक प्रचार करने की पुनीत भावना आपके मानस मे दिन-रात हिलोरे मारती रहती थी। अपने इस पवित्र सकल्प की सम्पूर्ति के लिए आपने 29 अप्रैल सन् 1923 को विधि-विधान से गोरखपुर मे 'गीता प्रेस' की स्थापना करके जहाँ प्रचुर धार्मिक एव सास्कृतिक साहित्य का प्रकाशन किया था वहाँ 'कल्याण' नामक हिन्दी मासिक का भी सूत्रपात किया था। इस प्रसंग मे आपके इस प्रेस से सन् 1934 मे प्रकाशित अँग्रेजी मासिक 'कल्याण कल्पतरु' का नाम भी विशेष रूप से उल्लेख्य है।

आप जहाँ एक भक्त प्रकृति के कुशल व्यवसायी थे वहाँ आपके मानस मे सगुण और निर्गुण भक्ति का अपार सागर ठाठे मारता रहता था। आपने गीता प्रेस के माध्यम से आध्यात्मिक और सुरुचिपूर्ण साहित्य के प्रकाशन की दिशा मे जो अभियान प्रारम्भ किया था उससे आपके व्यक्तित्व की महत्ता का परिचय मिल जाता है। जिन दिनो आपने 'गीता प्रेस' की स्थापना की थी उन दिनो गीता प्रेस के शुद्ध तथा सस्ते सस्करण कठिनाई से देखने को मिलते थे। भारत के धार्मिक साहित्य को कम-से-कम दामो मे जनता के हाथो तक पहुँचाने का जो कार्य आपने किया था वह सर्वथा अद्वितीय है। 'बाइबिल' के बाद यदि किसी पुस्तक का विश्व मे सस्ते दामो मे सर्वाधिक प्रचार हुआ है तो वह 'गीता' ही है। यदि गोयन्दका जी इस दिशा मे प्रयास न करते तो यह कदापि सम्भव न हो पाता।

'गीता प्रेस' की भाँति ही आपके द्वारा सस्थापित कलकत्ता के 'गोविन्द भवन' का भी अपना एक सर्वथा विशिष्ट महत्त्व है। इस भवन मे जहाँ नित्य-प्रति सत्सग की व्यवस्था है वहाँ अनुभवी वैद्यो द्वारा रोगियो की नि शुल्क चिकित्सा होती है और भवन मे शुद्ध आयुर्वेदीय औषधियो के अतिरिक्त चर्म-रहित वस्तुओ (जूता, चप्पल और बिस्तरबन्द आदि) का उत्पादन भी होता है। आपके द्वारा अपने जन्म-स्थान चूरू मे स्थापित 'ऋषिकुल' नामक शिक्षण-सस्था भी उल्लेखनीय कार्य कर रही है। गीता प्रेस के माध्यम से आपने 'गीता रामायण प्रचार सघ'-जैसे सगठन की स्थापना करके उसकी ओर से गीता तथा रामायण की परीक्षाएँ सचालित करने का जो महत्प्रयास किया है उसमे भी जनता मे धार्मिक भावनाएँ उत्पन्न करने की दिशा मे बहुत बडा कार्य हुआ है। ऋषिकेश मे गगा के तट पर स्वर्गाश्रम मे आपने 'गीता भवन' का निर्माण करके तो अपने अनन्य गीता-प्रेम का परिचय दिया था। गगा और गीता मे अगाध श्रद्धा होने के कारण ही आपने इस स्थान को चुना था। कदाचित् अपनी इस धारणा के कारण ही आप अपने निर्वाण से 18 दिन पूर्व बाँकुडा (बंगाल) से ऋषिकेश आ गए थे।

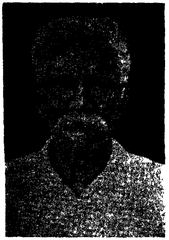
आपने अपने इस कर्ममय जीवन मे जहाँ अनेक लोकोपयोगी कार्य किए थे वहाँ अपनी लेखनी के द्वारा भी प्रचुर

आध्यात्मिक साहित्य का सृजन किया था। आपकी ऐसी कृतियों में 'शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ', 'महाभारत के कुछ आदर्श पात्र', 'अध्यात्म विषयक पत्र', 'ज्ञान योग का तत्त्व', 'तत्त्व चिन्तामणि', 'ईश्वर दयालु और न्यायकारी है', 'गीता निबन्धावली', 'ध्यानावस्था मे प्रभु से वार्तालाप', 'नवधा भक्ति', 'परम शान्ति का मार्ग', 'परमार्थ पत्रावली', 'प्रेम भक्ति प्रकाश', 'भगवत्-प्राप्ति के विविध उपाय', 'भगवान् क्या है','श्रीमद्भगवद्गीता के जानने योग्य विषय', 'आदर्श मातृ-प्रेम', 'शिक्षाप्रद पत्र' और 'स्त्रियो के लिए कर्तव्य शिक्षा' आदि उल्लेखनीय है।

आपका निधन 17 अप्रैल सन् 1965 को ऋषिकेश मे हुआ था।

श्री जयदेव शर्मा विद्यालंकार

आपका जन्म सन् 1892 मे अम्बाला जनपद के एक ग्राम मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा 'गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय' मे हुई थी। गुरुकुल से 'विद्यालकार' की उपाधि प्राप्त करने के अनन्तर आपने कुछ दिन गुरुकुल मे ही अध्यापन कार्य किया था और फिर जोबनेर और गुरुकुल मुलतान मे अध्यापक हो गए थे। काशी की प्रख्यात प्रकाशन-सस्था 'ज्ञान मण्डल' मे भी आपने कुछ समय तक कार्य किया था। जिन दिनो आप कलकत्ता मे रहे थे तब आपने वहाँ रहते हुए वेदाग मीमासा का अध्ययन करके कलकत्ता विश्वविद्यालय से 'मीमासा तीर्थ' की उपाधि भी प्राप्त की थी।



सन् 1925 मे आप 'आर्य साहित्य मण्डल लिमिटेड अजमेर' के संस्थापक श्री मथुराप्रसाद शिवहरे की प्रेरणा पर अजमेर चले आए और वहाँ पर रहकर निरन्तर ग्यारह वर्ष तक कठोर परिश्रम करके चारो वेदो का हिन्दी-भाष्य प्रस्तुत किया। आपके द्वारा प्रस्तुत यह भाष्य केवल हिन्दी मे ही नही प्रत्युत सभी भारतीय भाषाओ मे लिखा गया प्रथम वेदभाष्य है। इस भाष्य की एक प्रमुख विशेषता यह भी है कि इसकी भूमिका मे विभिन्न वेद-सहिताओ मे वर्णित विषयो का व्यापक परिचय प्रस्तुत किया गया है। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है रूस के प्रधानमंत्री श्री बुलगानिन जब भारत पधारे थे तब भारत सरकार की ओर से उन्हे यह भाष्य भेट मे दिया गया था।

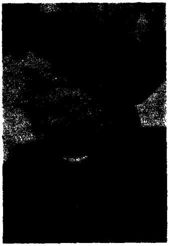
आपने 'आर्य साहित्य मण्डल अजमेर' के अपने कार्यकाल मे कई वर्ष तक 'उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा' के साप्ताहिक पत्र 'आर्यमित्र' का सम्पादन भी अत्यन्त सफलता पूर्वक किया था। राजस्थान मालवा की 'आर्य प्रतिनिधि सभा' के पत्र 'आर्य मार्तण्ड' के सम्पादक भी आप कुछ समय तक रहे थे। आपने लगभग 15 वर्ष तक वनस्थली विद्यापीठ (राजस्थान) मे भी सस्कृताध्यापक का कार्य किया था। आपके द्वारा लिखित अन्य ग्रन्थो मे 'विधवा विवाह मीमासा, (अनुवाद), 'मुद्राराक्षस चर्चा', 'पुराण मत पर्यालोचन', 'धनुर्वेद का इतिहास', 'क्या वेद मे इतिहास है', 'अथर्ववेद मे जादू-टोना', 'माधवानुक्रमणी', 'ईशोपनिषद् का अनुवाद' तथा 'यम-यमी-सूक्त' के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपकी वैदिक साहित्य-सम्बन्धी उत्कृष्टतम सेवाओ के कारण 'गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय' ने आपको मानद उपाधि 'विद्या मार्तण्ड' प्रदान करके आपका सम्मान किया था।

आपका निधन 29 जनवरी सन् 1961 को अजमेर मे हुआ था।

श्री जयनारायण कपूर

श्री कपूर का जन्म उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद जनपद के सम्भल नामक कस्बे मे सन् 1899 मे हुआ था। बी० ए०, एल-एल० बी० तक की शिक्षा-प्राप्ति के अनन्तर आप मौरावाँ (उन्नाव) मे जाकर वकालत करने लगे थे। वहाँ

पर आपने जहाँ सन् 1917 में 'हिन्दी साहित्य पुस्तकालय' की स्थापना की वहाँ सन् 1919 में 'हिन्दी नाट्य समिति' की स्थापना के द्वारा जनता में हिन्दी नाटकों को अभिनीत करने की चेतना जागृत की थी। आपके द्वारा सम्था पित इस पुस्तकालय में जहाँ सस्कृत तथा हिन्दी के अनेक दुर्लभ ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ सुरक्षित है वहाँ इसकी गणना समस्त उत्तर प्रदेश के महत्त्वपूर्ण ग्रन्थालयों में की जाती है। आपने मौरावाँ में एक सस्कृत पाठशाला की स्थापना भी की थी।



आपके साहित्य-प्रेम का सबसे उत्कृष्टतम उदाहरण यह है कि जनता मे साहित्यिक चेतना उत्पन्न करने के साथ-साथ आपने लेखन के क्षेत्र में भी अपनी प्रतिभा का अभूतपूर्व परिचय दिया था। आपके द्वारा विरचित कृतियो मे 'सोहराब रुस्तम' 'तीन तिलगे','मनोहर धार्मिक कहानियाँ', 'देहली की डाकनी', 'गदर देहली के अखबार', 'गदर की सुबह शाम' तथा 'अफसरो की चिट्ठियाँ' आदि प्रमुख है। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों में से 'राग विज्ञान', 'प्राचीन भारतीय शिक्षा-पद्धति' तथा 'कर्मयोगी श्रीकृष्ण का व्यक्तित्त्व' अभी अप्रकाशित ही है।

आपका निधन 29 मई सन् 1968 को हुआ था।

श्री जयनारायण पाण्डेय

श्री पाण्डेय का जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जनपद के रामापुर नामक स्थान मे 30 नवम्बर सन् 1925 को हुआ था। आपने अँग्रेजी और राजनीति शास्त्र म नागपुर विश्वविद्यालय से एम० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के उपरान्त एल-एल० बी० भी उसी विश्वविद्यालय से किया था। सस्कृत साहित्य मे भी आपने काशी से शास्त्री तथा साहित्याचार्य की उपाधियाँ प्राप्त की थी। अपनी शिक्षा-समाप्ति के दिनों मे आप देश के स्वतन्त्रता-आन्दोलन से बहुत जुड गए थे और इसी प्रसग मे आपने सन् 1942 के 'भारत छोडो आन्दोलन' मे सक्रिय रूप से भाग लेकर 6 मास की जेलयात्रा भी की थी। आपको यह सजा 'रायपुर' (म०प्र०) की सेण्ट्रल जेल की दीवार तोडने के प्रसग मे दी गई थी।

जेल मे वापिस आने पर आपने शिक्षा के क्षेत्र मे ही कार्य करने का निश्चय किया और सन् 1951 से 1953 तक रायपुर के 'दुर्गा महाविद्यालय' के प्राचार्य रहे। अपने इस शिक्षकीय जीवप मे आपने रायपुर के अतिरिक्त मध्य-प्रदेश के जबलपुर, जगदलपुर और अम्बिकापुर आदि कई नगरो मे राजनीति शास्त्र के अध्यापन का भी कार्य किया था। अपने इस कार्य-काल मे आपने रायपुर मे विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए जो आन्दोलन किया था, उसीके परिणाम स्वरूप 'रविशकर विश्वविद्यालय' की स्थापना वहाँ हो सकी थी।



आप जहाँ कर्मठ देशभक्त और अध्ययनशील शिक्षक के रूप मे मध्यप्रदेश मे विख्यात थे वहाँ साहित्य-रचना के क्षेत्र मे भी आपने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया था। आपके लेख तथा कविताएँ जहाँ हिन्दी के प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी वहाँ आपके द्वारा लिखित 'प्रमुख राजनैतिक विचारो की चिन्तन-धारा' नामक पुस्तक उत्तर-प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हुई थी। 'बस्तर के आदि-वासियों की सभ्यता और सस्कृति' पर भी आप एक अत्यन्त शोधपूर्ण ग्रन्थ लिख रहे थे। खेद का विषय है कि आपका

यह कार्य अधूरा ही रह गया।

आपका निधन 20 जनवरी, सन् 1965 को काशी मे हुआ था।

श्री जयनारायण मण्डल

श्री मण्डल का जन्म 1 जनवरी सन् 1925 को बिहार प्रान्त के कटिहार जनपद के समेली नामक ग्राम मे हुआ था। सन् 1948 मे पटना विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी मे एम० ए० करने के उपरान्त आपने कुछ दिन तक पटना विश्वविद्यालय मे अध्यापन किया और फिर राँची विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग मे रीडर हो गए थे। लगभग 24 वर्ष तक स्नातकोत्तर कक्षाओ का अध्यापन करते हुए आपने लेखन की दिशा मे भी उल्लेखनीय प्रगति की थी। इस सन्दर्भ मे सागर विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त करने के लिए आपके द्वारा प्रस्तुत किया गया 'हिन्दी उपन्यासों मे चरित्र-चित्रण की यथार्थवादी परम्परा' विषयक शोध-प्रबन्ध विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

आप उत्कृष्ट समीक्षक और अध्यवसायी अध्यापक होने के साथ-साथ सवेदनशील कवि और जागरूक नाटककार भी थे। आपकी जो रचनाएँ 'ज्योत्स्ना', 'परिषद् पत्रिका','आदिवासी' और 'छोटा नागपुर सन्देश' नामक पत्र-पत्रिकाओ मे समय-समय पर प्रकाशित होती रहती थी उन्हे देखकर आपकी बहुमुखी प्रतिभा का सहज ही अनुमान हो जाता है। पुस्तक रूप मे आपकी जो रचनाएँ प्रकाशित है उनमे 'उपन्यास के मूल तत्व' (1953), 'कलाकार' नाटक (1958), 'हिन्दी उपन्यासो की यथार्थवादी परम्पराएँ' (1968) तथा 'हिन्दी साहित्य की रूपरेखा' (1970) आदि प्रमुख है। आपकी 'गोदान—पुनर्मूल्याकन' तथा 'शाल के वृक्ष' (कविता सग्रह) नामक कृतियाँ अभी अप्रकाशित ही हैं।

बिहार के राज्यपाल ने सन् 1978 मे आपको 'बिहार विधान परिषद्' का सदस्य भी मनोनीत किया था और इसी पद पर रहते हुए 24 दिसम्बर सन् 1978 को आपका निधन हुआ था।

श्री जयनारायण व्यास

श्री व्यास का जन्म 18 फरवरी सन् 1899 को राजस्थान के जोधपुर के पुष्करणा ब्राह्मण-परिवार में हुआ था। अपनी शिक्षा-प्राप्ति के अनन्तर आपने समाज-सेवा के क्षेत्र मे कार्य करते हुए जो लोकप्रियता प्राप्त की थी उसीका सुपरिणाम यह था कि आप राजस्थान के प्रमुख जननायकों मे गिने जाते थे। महात्मा गाधी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन के सिलसिले मे आपने अपना राजनीतिक जीवन प्रारम्भ किया था और इसी प्रसंग मे अजमेर तथा मारवाड के पाँच इलाको से आपका अनेक बार निर्वासन हुआ था और अनेक बार जोधपुर तथा एक बार अजमेर जेल मे बन्दी बनाकर भी रखे गए थे। महात्मा गाधी जी द्वारा सचालित आन्दोलनो मे आपने क्रमश सन् 1929, 1930, 1932, 1940, 1942 और 1944 मे कारावास का जीवन भोगा था।

आपको राजनैतिक जीवन के अस्त-व्यस्त क्षणो मे अनेक बार प्रदेश से बाहर रहकर भी अपने पारिवारिक दायित्वो का निर्वाह करना पडा था। आप जहाँ सन् 1941 मे जोधपुर की नगर पालिका के सदस्य चुने गए थे वहाँ सन् 1948 49 मे जोधपुर राज्य के प्रधानमन्त्री भी रहे थे। सन् 1936 से सन् 1939 तक 'आल इण्डिया स्टेट पीपुल्स कॉन्फ्रेन्स' के प्रधान-मन्त्री रहने के अतिरिक्त आप 'राजपूताना प्रान्तीय काग्रेस कमेटी अजमेर,' 'प्रान्तीय काग्रेस कमेटी', 'जोधपुर लोक परिषद्' और 'राजस्थान स्टेट्स पीपुल्स कान्फ्रेंस' के भी कई बार अध्यक्ष और प्रधानमन्त्री रहे थे। जब बृहत्तर राजस्थान राज्य का निर्माण हुआ तब आप उसके दो बार मुख्यमन्त्री भी रहे थे। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप राज्य सभा के सदस्य थे।



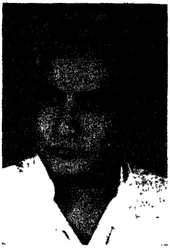
आप जहाँ उच्चकोटि के तपे हुए राष्ट्रनेता के रूप में सारे देश मे प्रतिष्ठित थे वहाँ लेखन की दिशा मे भी आपने अपनी अत्यन्त कुशल मेधा का परिचय दिया था। पत्र-कारिता के क्षेत्र मे आपने अपने साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ करके कविता, नाटक, कहानी और लोकगीतो के लेखन की दिशा में अत्यन्त उल्लेखनीय कार्य किया था। आपने 'पुष्करणा' व 'पुष्करणेन्दु' (1920), 'तरुण राजस्थान' (1928), 'अग्निबाण' (1936), 'अखण्ड भारत' (1936) और 'लोकराज्य' (1946) आदि कई मासिक, साप्ताहिक तथा दैनिक पत्रों का सम्पादन करने के साथ-साथ अनेक सफल कृतियाँ साहित्यिक जगत् को भेंट की थी। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'जीवन समस्या' (1931) तथा 'सभ्य मोहन' (1932) के अतिरिक्त अनेक स्फुट कविताएँ, कहा-नियाँ और लोकगीत आपकी लेखन-प्रतिभा का उदात्त उदाहरण प्रस्तुत करते है। आप जहाँ उच्चकोटि के नाटक-कार थे वहाँ अभिनय तथा नृत्य-कला में भी पूर्णत दक्ष थे। आपके द्वारा लिखित नाटको मे 'पाठशाला' और 'दुश्मन' के नाम चर्चनीय है।

आपकी जिन कविताओं और कहानियो ने आपको साहित्यिक क्षेत्र मे प्रचुर लोकप्रियता प्रदान की थी उनमे 'मातृ-वन्दना', 'आज मुझे कुछ कहना है', 'गाधी गीत', 'मैंने पत्थर से प्यार किया', 'ऊँट अष्टक' (सभी कविताएँ), 'यश का क्या होगा', 'नत्थू चाचा रिटायर हो गए', 'सुभा मे एक जूता चल गया', 'मामाजी चले गए' और 'शिवप्रसाद का क्या होगा' (कहानियाँ) प्रमुख स्थान रखती है। आपके व्यक्तित्व तथा कृतित्व को समझने के लिए प्रख्यात पत्रकार श्री सत्यदेव विद्यालकार द्वारा लिखित 'धुन के धनी' नामक ग्रन्थ पढना अनिवार्य है। इस ग्रन्थ मे आपके बहुमुखी जीवन की सर्वांगीण झाँकी प्रस्तुत की गई है। यह ग्रन्थ वास्तव मे व्यास जी की राष्ट्रीय, सामाजिक तथा साहित्यिक सेवाओं को सही रूप मे समझने के लिए एक अभूतपूर्व 'सन्दर्भ-ग्रन्थ' का काम करता है। सन् 1963 में आपके निधन के उपरान्त प्रकाशित 'प्रेरणा' (जोधपुर) का 'व्यास स्मृति अक' भी आपके कर्ममय जीवन का सही चित्र प्रस्तुत कर रहा है।

आपका निधन 14 मई सन् 1963 को नई दिल्ली मे हुआ था और आपका अन्तिम संस्कार 15 मई को पूर्ण राजकीय सम्मान के साथ जोधपुर मे हुआ था।

श्री जयन्त कुशवाहा

श्री कुशवाहा का जन्म उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जनपद के महुवरिया नामक ग्राम मे 10 अक्तूबर सन् 1925 को हुआ था। आप हिन्दी के लोकप्रिय उपन्यासकार श्री कुशवाहा कान्त के सुपुत्र थे और आपका वास्त-विक नाम श्री जगन्नाथ प्रसाद कुश-वाहा था। अपने पिता की भाँति आपने भी उपन्यास-लेखन के क्षेत्र मे वैसी ही प्रतिभा प्रदर्शित की थी। श्री कुशवाहा कान्त के निधन के उपरान्त आपने ही उनके द्वारा प्रवर्तित तथा सचालित 'चिनगारी प्रेस' तथा प्रकाशन और 'भारत पाकेट बुक्स' का सफल सचालन किया था।



आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'क्रान्ति दूत', 'बारूद', 'कफन', 'जनाजा', 'इन्तकाम', 'कैदी', 'बगावत', 'फाँसी', 'ललकार', 'सरहद' और 'जालिम' आदि प्रमुख है।

आपका निधन 12 अक्तूबर सन् 1976 को हुआ था।

श्री जयन्तीप्रसाद उपाध्याय

श्री उपाध्याय का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रख्यात नगर मुरादा-बाद के लोहागढ नामक मोहल्ले मे सन् 1860 मे हुआ था। आपने ज्योतिष-सम्बन्धी प्रमुख पत्र 'तन्त्र-प्रभाकर' का सन् 1901 से सन् 1907 तक अत्यन्त सफलतापूर्वक सम्पादन किया था और आप हिन्दी तथा सस्कृत के सुलेखक थे। आपने जहाँ संस्कृत के अनेक ग्रन्थों का अनुवाद प्रस्तुत किया था वहाँ आपके द्वारा लिखित और सन् 1901 मे प्रकाशित

'तात्या भील' नामक उपन्यास विशेष महत्त्व रखता है।

आपका निधन सन् 1920 में हुआ था।

लोक-नायक जयप्रकाश नारायण

श्री नारायण का जन्म बिहार प्रदेश के सारन जिले के सिताब दियरा नामक ग्राम में एक किसान कायस्थ परिवार मे 18 अक्तूबर सन् 1902 को हुआ था। भारत और अमरीका के अनेक विश्वविद्यालयों मे उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप महात्मा गाधी के आवाहन पर स्वाधीनता-संग्राम मे कूद पड़े थे और अनेक बार जेल-यात्राएँ भी की थीं। अखिल भारतीय काग्रेस के कार्यालय मे कई वर्ष तक मन्त्री का कार्य करते हुए आपने उसके माध्यम मे किसानों और मजदूरो मे उल्लेखनीय कार्य किया था। जिन दिनों आप नासिक जेल मे थे तब आपने डॉ० राममनोहर लोहिया, श्री यूसुफ मेहर अली, श्री मीनू मसानी और श्री अच्युत पटवर्धन के साथ मिलकर 'काग्रेस समाजवादी दल' के नियम तथा उद्देश्य आदि बनाए थे और सन् 1934 मे पटना मे एक 'अखिल भारतीय काग्रेस समाजवादी सम्मेलन' का आयोजन करके आपने उसकी विधिवत् स्थापना की थी। सर्वप्रथम आपने ही इस दल के प्रधान मन्त्रित्व का कार्य-भार सँभाला था। सन् 1936 मे जब पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने लखनऊ काग्रेस की अध्यक्षता सँभाली थी तब उन्होंने आपको 'काग्रेस कार्य-समिति' का सदस्य भी बनाया था।

देश मे जब द्वितीय विश्व-युद्ध के प्रारम्भ होने पर ब्रिटिश सरकार ने सन् 1940 मे दमन प्रारम्भ किया तब आप भी देवली कैम्प जेल मे नजरबन्द कर दिए गए। आपके विचारों की उग्रता का सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि जब सन् 1942 के जुलाई-अगस्त के महीनो मे सरकार ने देवली कैम्प जेल में नजरबन्द अन्य साम्यवादियो को रिहा किया था तब आप तथा आपके साथी अन्य समाजवादी नेता नही छोडे गए थे। आपको बाद मे 'अगस्त-क्राति' प्रारम्भ होने पर 'हजारीबाग सेण्ट्रल जेल' मे नजरबद कर दिया गया। ब्रिटिश सरकार को इस युद्ध मे सहायता न देने का निश्चय जयप्रकाश ने अपने इन शब्दो में प्रकट किया था—"मेरे देश का इस युद्ध से कोई मतलब नही है, क्योंकि हम ब्रिटिश साम्राज्यवाद और जर्मन नाजीवाद दोनों को ही समान रीति से बुरा समझते है। दोनों पक्ष स्वार्थ-प्रेरित है। स्पष्टतः ऐसे युद्ध से भारत का कोई सम्बन्ध नही हो सकता।" कालान्तर मे काग्रेस को भी 8 अगस्त सन् 1942 को अपने बम्बई अधिवेशन मे मौलाना अबुल कलाम आजाद की अध्यक्षता मे वही पथ अपनाने को विवश होना पडा था और महात्मा गांधी ने 'अंग्रेजो भारत छोडो' का नारा बुलन्द किया था।

महात्मा गाधी के आवाहन पर 'अगस्त क्राति' की जो लहर सारे देश मे फैली थी उसकी रूपरेखा जयप्रकाश जी ने बहुत पहले बना ली थी और आप जेल से भागने के साधन जुटाने मे सलग्न थे। अन्तत दिवाली की रात मे श्री योगेन्द्र शुक्ल और श्री रामनन्दन मिश्र जैसे कुछ मजबूत साथियो के साथ 5 मिनट मे जेल से बाहर हो गए और अनेक कठिनाइयाँ झेलते हुए सारे देश मे इस क्राति को



सफल बनाने के अभियान मे सलग्न हो गए। जब नेताजी सुभाषचन्द्र बोस द्वारा देश की पूर्वी सीमा पर 'आजाद हिन्द फौज' का गठन किया जा रहा था तब आपने भी नेपाल राज्य की सीमा पर ऐसी ही सेना के सगठन का केन्द्र बनाया था। इस सिलसिले मे कार्य करते हुए जब आप पजाब मे गिरफ्तार करके लाहौर के किले मे नजरबन्द कर दिए गए थे तब ब्रिटिश नौकरशाही ने आपको बहुत यन्त्रणाएँ दी थी। उस समय ब्रिटिश नौकरशाही ने आपकी गिरफ्तारी के लिए काफी धनराशि इनाम मे देने की घोषणा भी की थी। आपके सन् 1946 मे जेल से छूटने पर पटना मे जो जन-सभा आयोजित हुई थी उसमे कविवर रामधारीसिंह 'दिनकर' ने लाखो की भीड़ मे जो कविता पढ़ी थी उसकी इन पक्तियो

मे जयप्रकाशजी का व्यक्तित्व पूर्णत रूपायित हुआ है

झझा सोई तूफान रुका, प्लावन जा रहा कगारों मे
जीवित है सबका तेज, किन्तु अब भी तेरी हुकारों मे।

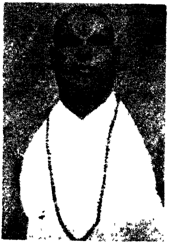
जेल से छूटने पर भी आप चुप नही बैठे और अनेक रचनात्मक कार्यों मे सलग्न हो गए 'सर्वोदय' और 'भूदान-आन्दोलन'-जैसी विनोबा भावे की प्रवृत्तियो से जुडकर आपने अपने व्यक्तित्व को एक सर्वथा नई दिशा की ओर ही मोड दिया। आचार्य विनोबा के इस अभियान से जुडने पर आपने हिन्दी मे सोचना, हिन्दी मे बोलना और हिन्दी मे ही लिखना प्रारभ कर दिया था। इस प्रसग मे आपने हिन्दी मे जो पुस्तकें लिखी थी उनमे 'छात्रो के बीच' नामक रचना के अतिरिक्त 'जीवन-दान', 'मजदूरों से', 'मेरी विदेश यात्रा' और 'समता की खोज मे' के नाम विशेष उल्लेखनीय है। कदाचित् यह बहुत कम लोगो को मालूम होगा कि जिन दिनो जयप्रकाश जी अगस्त क्राति के सिलसिले मे लाहौर के किले मे बन्द थे उन दिनो आपने हिन्दी मे कुछ कहानियाँ भी लिखी थी। आपकी उन कहानियो मे से कुछ आचार्य शिवपूजनसहाय और श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के सम्पादन मे प्रकाशित मासिक 'हिमालय' के प्रारम्भिक अको मे प्रकाशित हुई थी। उन्ही दिनो 'हिमालय' के प्रथम वर्ष के छठे अक मे लाहौर के किले मे 20 अगस्त सन् 1944 को लिखा गया आपका 'हमारा प्राचीन वाङ्मय' शीर्षक जो लेख प्रकाशित हुआ था उसे देखकर आपके भारतीय सस्कृति तथा हिन्दी के प्रति अटूट प्रेम का सही अनुमान हो जाता है। अपने इस लेख मे आपने हिन्दी की समृद्धि के लिए जो आकाक्षा व्यक्त की थी वह इस प्रकार है—"आज परिस्थिति यह है कि हिन्दी या अन्य वर्तमान भारतीय भाषाओं की अपेक्षा अँग्रेजी और जर्मन भाषाओ मे हमारे वेद, दर्शनादि अधिक सुलभ है। यदि हिन्दी को ले ले, तो इस भाषा मे प्राचीन भारतीय वाङ्मय का अनुवाद कराने का कार्य छोटे-मोटे प्रकाशको का नही है। यह काम तो बडी-बडी सार्वजनिक सस्थाओं का ही हो सकता है। क्या यह खेद का विषय नही है कि अमरीका का एक विश्वविद्यालय—उदाहरण के लिए हरवर्ड—एक प्राच्य ग्रन्थमाला का प्रकाशन करे, और हमारा हिन्दू विश्वविद्यालय 'कौटिल्य का अर्थशास्त्र'-जैसी पुस्तक को भी अँग्रेजी मे ही पढायगा। यह आशा की जा सकती थी कि यह विश्वविद्यालय पुराने वाङ्मय को हिन्दी मे प्राप्य बनाने की चेष्टा करेगा, लेकिन वहाँ भी अँग्रेजी भाषा का ही साम्राज्य है। यह साम्राज्य इतना विस्तृत है कि यदि कोई वक्ता वहाँ विद्यार्थियो की सभा मे हिन्दी मे बोलना शुरू करता है तो चारो तरफ से 'इगलिश-इगलिश' का शोर मच जाता है। कम-से-कम मेरा तो दो बार का यही अनुभव है। इसका कारण यह बताया जाता है कि वहाँ देश के हर भाग से विद्यार्थी आते है और विशेषकर दक्षिण के विद्यार्थी हिन्दी समझने मे कठिनाई महसूस करते है। यह भी विचित्र बात है। यदि ये दक्षिणी विद्यार्थी बर्लिन या पेरिस मे पढने जाते है, तो ये चेष्टा करते है कि कम-से-कम मे समय जर्मन या फ्रेंच समझने और बोलने की क्षमता प्राप्त कर ले। लेकिन काशी मे रहते हुए भी इस बात की प्रेरणा इनको नही होती कि थोडी हिन्दी सीख ले .मेरा ऐसा विचार है कि एक ऐसी सस्था स्थापित की जाय जिसका केवल यही कार्य हो कि भारत के पुराने (वैदिक, अवैदिक, बौद्ध जैन, ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक) वाङ्मय का हिन्दी मे अनुवाद करे और प्रकाशित करे, व्यापारिक लाभ इस सस्था का हेतु न हो।"

आप हिन्दी के बडे प्रेमी थे। आपकी लिखावट अत्यन्त सुन्दर, स्वच्छ और स्पष्ट थी। उसकी कुछ झलक जिन दिनो आप बम्बई के जसलोक अस्पताल मे जीवन तथा मृत्यु के बीच जूझ रहे थे, उन दिनो लिखी आपकी हिन्दी कविता को देखकर मिल जाती है। आपकी यह कविता आपकी हस्तलिपि मे ही उन दिनो 'धर्मयुग' मे प्रकाशित हुई थी। आपके चडीगढ-प्रवास मे 'इमरजेंसी' के दिनो मे लिखी गई आपकी 'जेल डायरी' भी हिन्दी मे ही मूल रूप मे प्रस्तुत है। जिन दिनो 'भारतीय विधान परिषद्' मे हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के सबध मे विचार हो रहा था तब भी आपने हिन्दी के समर्थन मे अनेक लेख लिखे थे। आपके हिन्दी-प्रेम का इससे अधिक सुपुष्ट प्रमाण और क्या हो सकता है कि आपने सन् 1968 मे 'विहार राष्ट्रभाषा परिषद्' के सोलहवे वार्षिक अधिवेशन की अध्यक्षता की थी। सन् 1978 मे आपके जीवन के 75 वर्ष पूर्ण होने पर सारे देश मे 'अमृत महोत्सव' मनाया गया था और इस अवसर पर 'सर्व सेवा सघ' की ओर से पटना मे आपको एक 'अभिनन्दन ग्रन्थ' भी भेट किया गया था।

आपका निधन 8 अक्तूबर सन् 1979 को पटना म हुआ था।

बाबा जयरामदास 'दीन'

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के सुलतानपुर जनपद मे मिश्रबली नामक ग्राम मे सन् 1889 मे हुआ था। आपका जन्म-नाम



जयनारायण मिश्र था। तत्कालीन प्रथा के अनुसार आपकी प्रारम्भिक शिक्षा उर्दू तथा फारसी मे हुई थी। हिन्दी तथा सस्कृत की शिक्षा आपने घर पर ही प्राप्त की थी। जिन दिनो आप एक विद्यालय मे विधिवत् प्रविष्ट होकर अँग्रेजी की शिक्षा प्राप्त कर रहे थे तब अचानक चेचक के भयकर प्रकोप के कारण आपकी शिक्षा बीच मे ही रुक गई और आप विद्यालय से घर लौट आए। इस बीच आप एक दिन अचानक अपने परिवार को छोडकर घर से निकल गए और बर्मा चले गए। बर्मा मे जाकर आपने रेलवे मे गार्ड की नौकरी कर ली और दो-ढाई वर्ष वहाँ ही रहे।

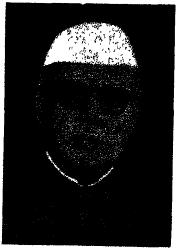
बर्मा से लौटकर आपने अपनी जन्मभूमि के समीपवर्ती दियरा राज्य मे नौकरी कर ली। फिर थोडे दिन बाद आप पुलिस मे थानेदार हो गए। एक बार आपको पुलिस-प्रबन्ध के सिलसिले मे जब प्रयाग के कुम्भ मेले मे भेजा गया तब आपकी जीवन-धारा ही बदल गई। वहाँ जाकर आपका सत्सग 'स्वामी अवधबिहारीदास' नामक एक सन्त से हो गया और आप पुलिस की नौकरी छोडकर 'जयनारायण मिश्र' से 'जयरामदास' हो गए। सन्यास की दीक्षा लेने के उपरान्त आप दिन-रात 'राम-नाम' के पारायण तथा 'रामायण' के अनुशीलन मे ही सलग्न रहने लगे। आपका यह सन्यस्त जीवन गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास तीनो ही आश्रमो का समुच्चय था। गृहस्थ-जीवन को भी आपने नही छोडा था।

अपने सद्गुरु के सत्सग से आपने 'रामायण' का इतना विशद ज्ञान प्राप्त कर लिया था कि उनके निर्देशन में आपने रामायण की एक टीका भी तैयार करके प्रकाशित की थी। आपके द्वारा रचित 'चारु चिन्तामणि कोश' नामक ग्रन्थ मे तुलसी साहित्य सागर से चुने गए अनेक विशिष्ट पदों का सकलन किया गया था। इस ग्रन्थ का प्रथम सस्करण श्री केदारनाथ गुप्त ने छापा था और द्वितीय सस्करण आपके सुपुत्र प० रामविशाल मिश्र ने प्रकाशित किया था।

आपका निधन सन् 1942 मे हुआ था।

श्री जयरामदास दौलतराम

आपका जन्म 21 जुलाई सन् 1891 को हैदराबाद (सिन्ध) मे हुआ था। मन् 1915 मे आप एल-एल० बी० तक की शिक्षा प्राप्त करने के



उपरान्त कराची मे महात्मा गाधी के द्वारा सचालित सविनय अवज्ञा आन्दोलन मे शामिल हो गए थे। प्रारम्भ मे आपने अँग्रेजी मे पत्रकारिता आरम्भ की थी। आपने जहाँ सन् 1921 मे कराची से 'हिन्दू' नामक अँग्रेजी पत्र का सम्पादन किया था वहाँ सन् 1926 से सन् 1929 तक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के सम्पादक भी रहे थे। ब्रिटिश नौकरशाही के विरुद्ध किए गए अनेक आन्दोलनो मे सक्रिय रूप से भाग लेकर आपने अनेक बार जेल-यात्राएँ भी की थी।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के अनन्तर आप जहाँ केन्द्रीय मन्त्रि-मण्डल के सदस्य रहे वहाँ आसाम तथा बिहार आदि कई प्रदेशों के राज्यपाल भी रहे थे। राज्य-सभा के सदस्य के

रूप में भी आपने देश की उल्लेखनीय सेवा की थी। आप हिन्दी के अनन्य भक्त तथा समर्थक थे। जब सिन्धी भाषा के लिए एक लिपि अपनाने का आन्दोलन चला था तब आपने 'देवनागरी लिपि' को अपनाने का समर्थन किया था। यह आपके ही सत्प्रयास का सुपरिणाम है कि आज सिन्धी-साहित्य अधिकांशत देवनागरी लिपि में उपलब्ध है। देवनागरी लिपि की उपयोगिता पर आपने सिन्धी भाषा में भी एक पुस्तक लिखी है।

आपका निधन सन् 1979 में नई दिल्ली में हुआ था।

श्री जयानन्द थपलियाल

श्री थपलियाल का जन्म 18 मई सन् 1884 को उत्तर प्रदेश के पौढ़ी गढ़वाल क्षेत्र के 'थापली' नामक ग्राम में हुआ था। शिक्षा-प्राप्ति के बाद आप उत्तर प्रदेश के शिक्षा-विभाग में लगभग 35 वर्ष तक कार्य-रत रहे थे। अनेक वर्ष तक आपने गढ़वाल के कई जूनियर हाई स्कूलों में अध्यापन करते हुए जो सम्मान अर्जित किया था वह विरले ही लोगों को मिल पाता है। आपकी शिक्षण-शैली और छात्रों में बौद्धिक और चारित्रिक निर्माण-सम्बन्धी भावनाओं के प्रसार के कार्य आज भी गढ़वाल के सार्वजनिक जीवन में बराबर याद किये जाते हैं। अपनी सेवा-निवृत्ति से पूर्व आप 'सब-डिप्टी इन्सपेक्टर ऑफ स्कूल्स' भी हो गए थे।



अपने शिक्षकीय जीवन में आपने जहाँ अपना जन-सम्पर्क बनाया हुआ था वहाँ गढ़वाल प्रदेश के शिक्षित समाज में साहित्यिक तथा नैतिक चेतना उद्बुद्ध करने की दिशा में भी महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। आप कुशल शिक्षक होने के साथ-साथ गम्भीर और विचारशील लेखक भी थे। आपकी रचनाएँ सन् 1912 से ही उत्तर प्रदेश शिक्षा विभाग के मासिक पत्र 'एजुकेशनल गजेट' में छपने लगी थी। आपको विभाग की ओर से अनेक बार सम्मानित भी किया गया था। आपकी रचनाएँ उक्त गजट के अतिरिक्त जहाँ 'सुधा', 'माधुरी' और 'सरस्वती' आदि सुप्रसिद्ध पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थी वहाँ गढ़वाल के पत्रों में भी आपके विचारों की धूम रहती थी।

आपकी 'मैं और मेरा युग' नामक एक कृति का प्रकाशन सन् 1964 में हुआ था। इसके अतिरिक्त 5 पुस्तकें अभी अप्रकाशित ही हैं। आपके सुपुत्र श्री बुद्धिवल्लभ थपलियाल उनके प्रकाशन की दिशा में प्रयत्नशील हैं और वे स्वयं भी अच्छे शिक्षा-शास्त्री तथा लेखक हैं।

आपका निधन 10 फरवरी सन् 1973 को हुआ था।

आचार्य मुनि जवाहरलालजी

मुनि जवाहरलालजी का जन्म मध्यप्रदेश की झाबुआ रियासत के थाँदला नामक कस्बे में सन् 1875 में हुआ था। आपके पिता श्री जीवराजजी कवाड गोत्रीय ओसवाल जैन थे और जब मुनिजी केवल 5 वर्ष के थे तब ही उनका देहान्त हो गया था और आपकी माता श्रीमती नाथीबाई भी आपको 2 वर्ष की आयु में ही आपको मातृ-विहीन कर गई थी। माता तथा पिता के असमय में ही चले जाने के कारण आपको अपने पैतृक व्यवसाय में लगना पड़ा था। आपके मामा श्री मूलचन्दजी धोका ने आपको इस कार्य में सहायता की थी। धीरे-धीरे बालक जवाहर ने अपने व्यवसाय की अच्छी जानकारी प्राप्त कर ली और जब आपके मामा को यह पूरा विश्वास हो गया कि अब वे काम को पूरी तरह सँभाल लेंगे, उन्होंने सारा कारोबार आपको सौंप दिया। अभी जवाहरलालजी 13 वर्ष के भी न होने पाए थे कि आपके मामाजी का भी असामयिक देहावसान हो गया। इस घटना के बाद मामा के परिवार (मामी तथा एक पुत्र) के भरण-पोषण का भार भी आपके कन्धों पर आ गया था। मामा की असामयिक मृत्यु ने आपके बाल-मानस में बड़ी हलचल

उत्पन्न की और ऐसी स्थिति आई कि आप धीरे-धीरे वैराग्योन्मुख हो गए। सयोग से उन्ही दिनों आपके कस्बे मे मुनि श्री राजमल महाराज के शिष्य मुनि श्री घासीलालजी व मगनलालजी तथा घासीलालजी के शिष्य श्री मोतीलाल तथा श्री देवीलालजी पधारे और जवाहरलालजी ने उनके प्रवचनो का भरपूर लाभ उठाया।

इस अवस्था मे आपके मानस मे धीरे-धीरे जो विचार-तरगे उठने लगी थी उन्होने जवाहरलालजी को अत्यन्त उद्विग्न कर दिया और एक दिन वह भी आया जब आपने अपने ताऊ श्री धनराजजी से मुनि-दीक्षा ले लेने की आज्ञा माँगी। आपकी इस प्रार्थना का आपके ताऊजी पर कोई प्रभाव नही पडा और उन्होंने आपको बहुत डाँटा-फटकारा। इस घटना के अनन्तर आपके ताऊजी ने जवाहरलालजी के सगी-साथियो के द्वारा भी अनेक प्रकार के प्रलोभनो की बात उन तक पहुँचाई, किन्तु जवाहरलालजी टस से मस नही हुए और अन्त मे एक दिन आप चुपचाप घर से भागकर लीबडी जा पहुँचे। पीछे-पीछे आपके ताऊ श्री धनराज भी वहाँ पहुँच गए और उन्होने आपको बहुत समझाया-बुझाया किन्तु जब उन्होने देखा कि उनकी बातो का कोई भी प्रभाव जवाहरलालजी पर नही हो पा रहा है तो विवश होकर उन्होने दीक्षा लेने की अनुमति दे दी। इस प्रकार श्री जवाहरलालजी ने सन् 1891 मे श्री मगनलालजी से विधिवत् दीक्षा ग्रहण कर ली और उनके श्रीचरणो मे बैठकर शास्त्रो का विधिवत् अध्ययन करना प्रारम्भ कर दिया। आपके दुर्भाग्य ने यहाँ भी पीछा नही छोडा और इस दीक्षा के केवल डेढ मास बाद ही अचानक आपके दीक्षा-गुरु श्री मगनलालजी का स्वर्गवास हो गया। इस घटना का आपके मन तथा मस्तिष्क पर ऐसा घातक प्रभाव पडा कि आप विक्षिप्त से रहने लगे। ऐसे कठिन समय मे मुनि घासीलालजी के शिष्य मुनि मोतीलालजी ने आपको बहुत आश्वासन दिया, जिससे आप पूर्ण स्वस्थ होकर अपने अध्ययन-मनन मे सलग्न हो गए।

धीरे-धीरे एक दिन ऐसा भी आया जब मुनि श्री जवाहरलालजी ने अपने स्वाध्याय के बल पर विभिन्न शास्त्रों का चूडान्त ज्ञान प्राप्त कर लिया और अपनी प्रतिभा, कवित्व-शक्ति और भाषण-चातुर्य से मुनि चौथमल-जैसे आचार्य को अभिभूत कर लिया। इसका सुपरिणाम यह हुआ कि उन्होने जिन 4 साधुओ को विभिन्न प्रान्तो में अपने सम्प्रदाय के प्रचार तथा प्रसार का कार्य भार सौपा था उनमे आप भी एक थे। जिस समय आपकी प्रतिभा का यह आदर किया गया तब आप केवल 24 वर्ष के ही थे। चौथे मुनि श्री चौथमलजी द्वारा सौंपे गए कार्य को कुशलता-पूर्वक करते हुए आपने समाज मे प्रचलित अनेक अन्ध-विश्वासो तथा कुरीतियों को दूर करने मे घनघोर परिश्रम किया। यहाँ तक कि पशु-बलि को रोकने, दलित, पीडित, शोषित, अस्पृश्यो को ऊपर उठाने के कार्य मे आपके प्रवचन बहुत प्रभावकारी सिद्ध हुए। इस बीच आपकी योग्यता और तपोनिष्ठा से प्रभावित होकर सम्प्रदाय के पाँचवे मुनि श्री लालजी महाराज ने आपको 26 मार्च सन् 1919 को 'युवाचार्य' के पद पर प्रतिष्ठित कर दिया। सन् 1920 मे जब मुनि श्रीलालजी ने देह-त्याग किया तो आप पर सम्प्रदाय के पाँचवे 'आचार्यत्व' का भार सँभालने का दायित्व आ पडा। आप अपने समय के अत्यधिक प्रभावशाली वक्ता, दूरदर्शी नेता तथा मनस्वी विद्वान् थे। राष्ट्रीय स्वाधीनता के सघर्ष के दिनो मे आपने सभी को खद्दर पहनने की प्रेरणा देते हुए "परतन्त्रता पाप है, बिना स्वतन्त्र हुए कोई भी जाति अपने धर्म का पालन भी ठीक तरह नही कर सकती" की घोषणा की थी। सन् 1931 मे आप जब दिल्ली मे चातुर्मास कर रहे थे तब आपके क्रान्तिकारी भाषणो से गिरफ्तारी की आशका हो गई थी। अपने सन् 1892 से लेकर सन् 1942 तक के 50 वर्ष के साधना-काल मे आपने समाज-सुधार, धर्म-प्रचार, ज्ञान-दान तथा लोक-कल्याण के इतने कार्य किये थे कि देश मे सर्वत्र आपकी विजय-दुन्दुभि बज रही थी। सन् 1941 मे आपकी दीक्षा की 'स्वर्ण जयन्ती' भी मनाई गई थी।

मुनि श्री ने जहाँ समाज-सुधार के अनेक क्षेत्रो मे अपनी प्रतिभा से बहुत-से महत्त्वपूर्ण कार्य किये वहाँ आपने हिन्दी को भारतीय सस्कृति की आत्मा के रूप मे स्वीकार करके उसे राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित करने की कामना की थी। धर्म, सस्कृति तथा समाज-सुधार-सम्बन्धी आपके विचार जानने के लिए आपकी 'जवाहर किरणावली' तथा 'जवाहर विचार सार' नामक कृतियो को पढना अत्यन्त आवश्यक है। इनमे से पहली रचना का प्रकाशन 35 भागों मे किया गया है। जैन धर्म की तेरापन्थी विचार-धारा के खण्डन मे

भी अपनी लेखनी चलाई थी। आपके ऐसे विचार आपकी 'अनुकम्पा विचार' और 'सद्धर्म मण्डन' नामक कृतियो मे देखे जा सकते हैं। इनके अतिरिक्त आपके अनेक स्थानों पर किये गए प्रवचनो के सकलन भी पुस्तकाकार प्रकाशित हुए थे। ऐसे मकलनो मे 'चिन्तन-मन-अनुशीलन' अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इनके अतिरिक्त 'राजकोट के व्याख्यान' नामक पुस्तक भी तीन भागो मे प्रकाशित की गई थी। श्वेताम्बर जैन पन्थ के अनेक पक्षों पर भी आपकी अनेक रचनाएँ उल्लेखनीय है।

आपका देश के अनेक नेताओ, सुधारकों और शिक्षा-शास्त्रियो से निकट का सम्बन्ध था। लोकमान्य तिलक, महात्मा गान्धी, सरदार पटेल तथा विनोबा भावे-जैसे महानुभावों ने अनेक बार आपके प्रवचनो से लाभ उठाया था। आपकी प्रेरणा पर अनेक जैन युवक-युवतियो ने स्वतन्त्रता-सग्राम मे बढ-चढकर भाग लिया था। आपके व्यक्तित्व और कृतित्व का विशद वर्णन आपके महाप्रस्थान के उपरान्त प्रकाशित 'श्रमणोपासक' के उस 'श्रीमज्जवाहाराचार्य शताब्दी विशेषाक' मे देखने तथा पढने को मिलता है जो 20 सितम्बर सन् 1976 को प्रकाशित हुआ था।

आपकी दीक्षा की स्वर्ण जयन्ती 18 फरवरी सन् 1942 को बीकानेर मे धूमधाम से मनाई गई थी। उन्ही दिनो 30 मई सन् 1942 को आपको पक्षाघात हुआ और कुछ दिन बाद एक जहरी फोडा 'कारबकल' हो गया। बहुत उपचार करने के उपरान्त फोडा तो ठीक हो गया, किन्तु आपकी अस्वस्थता बनी ही रही। फिर जुलाई, 1943 मे आपकी गरदन मे एक फोडा और निकल आया, जिसके कारण आपकी दशा बहुत बिगड गई और इसीके कारण 10 जुलाई सन् 1943 को आपने इस ससार का मोह त्यागकर महाप्रस्थान कर दिया।

श्री जवाहरलाल जैन वैद्य

आपका जन्म राजस्थान के जयपुर नगर मे सन् 1880 मे हुआ था। मैट्रिक तक अँग्रेजी की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने अपने ही अध्यवसाय से हिन्दी, उर्दू, बगला, मराठी तथा गुजराती आदि कई भाषाओ का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आपने देवनागरी के प्रचार को अपना जीवन का एक-मात्र ध्येय बनाया हुआ था और इस ध्येय की सम्पूर्ति के लिए आपने वहाँ पर 'नागरी भवन' नामक पुस्तकालय की स्थापना भी की थी। आपने लगभग 4 वर्ष तक 'समालोचक' नामक पत्र भी बडे परिश्रम से प्रकाशित किया था। इस पत्र का सम्पादन श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी किया करते थे।

आप 'नागरी प्रचारिणी सभा' काशी के भी सक्रिय तथा सहयोगी सदस्य थे और आपने सभा की अनेक रूपो मे सहायता की थी। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'कमल मोहिनी', 'भँवरसिह नाटक', 'व्याख्यान प्रतिबोधक' तथा 'ज्ञान वर्ण माला' प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

आपका निधन केवल 29 वर्ष की आयु मे सन् 1909 मे हुआ था।

श्री जसवन्तसिंह टोहानवी

श्री टोहानवी का जन्म हरियाणा के हिसार जनपद के टोहाना नामक स्थान मे सन् 1881 मे हुआ था। आप शिक्षा-प्राप्ति के दिनो मे ही आर्य-समाज के सुधारवादी आन्दोलन से पूर्णत. प्रभावित हो गए थे। हिन्दी तथा उर्दू की सामान्य-सी शिक्षा प्राप्त करके आपने आर्यसमाज के विचारो का प्रचार करने की दृष्टि से सगीत की शिक्षा ग्रहण की और आर्य-समाज के वार्षिक उत्सवो पर गीत गाने लगे। इसी प्रसग मे आपने नाटक-लेखन मे भी अच्छी सफलता प्राप्त कर ली। आपने नाटको तथा भजनो द्वारा आर्यसमाज के सिद्धान्तो का प्रचार करते हुए जो लोकप्रियता अर्जित की थी वह आपकी कर्मठता की द्योतक है।

थोड़े ही दिनो मे आपने अपनी लेखन-कला को इतना विकसित कर लिया कि आपकी रचनाओं की जनता मे माँग होने लगी। फलस्वरूप आपने अपने भजनों और नाटको की पुस्तकें छपवाने की ओर ध्यान दिया और थोड़े ही समय मे 'आर्य भजन दीपिका' तथा 'आर्य भजन सागर' नामक कृतियाँ

प्रकाशित कर दीं। उन दिनो इनके विषय समाज-सुधार, देश-प्रेम और कुरीति-निवारण ही हुआ करते थे। फिर आपने नाटक लिखने की ओर ध्यान दिया और उसमे भी आपको अभूतपूर्व सफलता मिली। आपके नाटको के विषय प्राय प्राचीन तथा मध्यकालीन इतिहास से सम्बन्धित होते थे। 'रामायण' और 'महाभारत' को अपनी काव्य-नाटकमयी शैली मे प्रस्तुत करने का आपने जो अभूतपूर्व कार्य किया था, उससे आपको बहुत प्रसिद्धि मिली थी।



यद्यपि यह बात निर्विवाद है कि आपकी रचनाएँ साहित्यिक कसौटी पर खरी नही उतरती, लेकिन जनता मे जो लोकप्रियता आपकी इन रचनाओ ने प्राप्त की थी उससे आपको हरियाणा मे बहुत सम्मान मिला था। आपने अपनी कृतियो के ऐतिहासिक पात्रों द्वारा देशवासियो को जहाँ नई दिशा प्रदान की वहाँ समाज मे जागरण की भावनाएँ भी उद्‌बुद्ध हुई थी। आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'आर्य सगीत रामायण', 'आर्य सगीत महाभारत', 'सगीत हकीकतराय', 'सगीत हरिश्चन्द्र', 'सगीत पृथ्वीराज', 'सगीत बाल शहीद', और 'सगीत ऋषि दयानन्द' आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यहाँ पर यह तथ्य भी विशेष रूप से ध्यातव्य है कि आपकी इन सभी रचनाओ के अनेक सस्करण हो चुके है और लाखो की सख्या मे उनकी मुद्रण-सख्या पहुँच गई है।

आपका निधन सन् 1957 मे हुआ था।

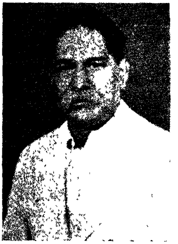
श्री जहूरबख्श हिन्दी कोविद

श्री जहूरबख्श का जन्म 12 मई सन् 1897 को सागर (मध्यप्रदेश) के मछरयाही नामक स्थान में हुआ था। आपकी प्राय: सारी शिक्षा-दीक्षा जबलपुर मे हुई थी और वहाँ के नॉर्मल स्कूल से विधिवत् ट्रेनिंग करके सागर के प्राइमरी स्कूल मे हिन्दी अध्यापक नियुक्त हुए थे। आपने जीवन-भर अध्यापन का कार्य किया और बच्चों के मनोविज्ञान के अनुसार उनके लिए शिक्षाप्रद रचनाएँ ही लिखते रहे। जिन दिनो आप जबलपुर मे विद्याध्ययन किया करते थे उन दिनों वहाँ के नॉर्मल स्कूल मे प्रख्यात वैयाकरण श्री कामताप्रसाद गुरु आपके शिक्षक थे। गुरुजी का आप पर अनन्य स्नेह था और उनके प्रोत्साहन से ही आप हिन्दी-लेखन की ओर उन्मुख हुए थे। व्याकरण-सम्मत, शुद्ध हिन्दी लिखने के कारण जहूरबख्श उनके अत्यन्त प्रिय शिष्य हो गए थे और जब उन्होने हिन्दी मे लिखना प्रारम्भ किया तो गुरुजी ने उन्हे बहुत प्रोत्साहित किया था। जिन दिनो श्री जहूरबख्श जबलपुर मे अपने साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ कर रहे थे उन दिनो आपका सम्पर्क वहाँ के अनेक शीर्षस्थ शिक्षको तथा साहित्य-सुधियो से हो गया था। इस सम्पर्क ने आपके साहित्यकार को और भी प्रोत्साहित किया था। सन् 1912 मे आपने मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करके 1913 मे नार्मल की ट्रेनिंग प्राप्त की थी और उसी वर्ष सागर नगर पालिका की पाठशाला मे शिक्षक हो गए थे और सन् 1948 तक इसी कार्य मे सलग्न रहे थे।

प्रारम्भ से ही शिक्षक होने के कारण आपको बाल मनोविज्ञान का अत्यन्त सहज ज्ञान हो गया था और उनके मानसिक स्तर के अनुरूप आप कहानी लिखने मे अत्यन्त सफल सिद्ध हुए थे। आपने पौराणिक, ऐतिहासिक और धार्मिक कहानियो के लेखन के क्षेत्र मे अद्वितीय सफलता प्राप्त की थी। आपके द्वारा लिखित अनेक पाठ्य-पुस्तके उन दिनो मध्यप्रदेश के शिक्षा विभाग मे अत्यधिक लोकप्रिय थी। फारसी के प्रख्यात साहित्यकार शेखसादी की 'गुलिस्ताँ' तथा 'बोस्ताँ' नामक कृतियो का हिन्दी अनुवाद भी आपने बड़े परिश्रम और लगन के साथ किया था। बुन्देलखण्डी बोली मे रचना करने की दिशा मे भी आपने उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की थी। आपने यद्यपि मुख्यत: बालोपयोगी साहित्य-रचना को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया था किन्तु प्रौढ़ रचनाएँ करने मे भी आप किसी से पीछे नही थे। सामाजिक पृष्ठभूमि पर उत्कृष्ट मनोवैज्ञानिक कहानी प्रस्तुत

करने मे आपने अद्वितीय सफलता प्राप्त की थी। आपकी कहानियाँ 'चाँद', 'माधुरी', 'सुधा', 'सरिता', 'आजकल' तथा 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' आदि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित होती थीं। आपकी रचनाओं मे 'समाज की चिनगारियाँ', 'शबनम', 'ऐतिहासिक कथा-माला', 'उच्च माध्यमिक भूगोल', 'ससार का भूगोल', 'धन्य ये बेटियाँ', 'बच्चो के बापू' तथा 'हमारे महापुरुष' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

श्री जहूरबख्श जी ने अपनी माता जी की प्रेरणा पर सन् 1914 मे हिन्दी मे लिखना प्रारम्भ किया था और तब से लेकर बराबर आप इस कार्य मे सलग्न रहे। बाल साहित्य और महिलोपयोगी लेखन की दिशा मे आपकी विशेष अभिरुचि थी। कहानियाँ लिखने मे आपको सदैव अपनी सहधर्मिणी से बहुत सहयोग मिला करता था। आपकी बहुत-सी कहानियो का अनुवाद अँग्रेजी, रूसी, गुजराती और मराठी भाषाओ मे भी हुआ था। आपकी कहानियो का सकलन 'हम पिरशीडेण्ट है' नाम से प्रकाशित हुआ था, जिसे मध्यप्रदेश शासन द्वारा पुरस्कृत भी किया गया था। आपकी कई कृतियाँ उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत हुई थी। आपने 'चन्द्र हार' नाम से एक ऐसे ग्रन्थ की भी रचना की थी, जिसमे लगभग 50 महिलाओ का जीवन-वृत्त प्रस्तुत किया गया है। खेद है कि यह ग्रन्थ अभी तक अप्रकाशित ही है। आपकी हिन्दी-सेवाओं के उपलक्ष में 'सरस्वती' के 'हीरक जयन्ती उत्सव' के अवसर पर जनवरी सन् 1963 मे आपका प्रयाग मे अभिनन्दन किया गया था।



आपने सागर मे अपने रात-दिन के पसीने की गहरी कमाई से सन् 1935 मे एक पक्का तिमजिला मकान बनवाया था। यह दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि अन्तिम दिनों मे साम्प्रदायिकता की विभीषिका से आप बचे न रह सके और 9 फरवरी सन् 1961 को आपके निवास को आततायियो ने बुरी तरह लूटा था। उनके इस मकान मे लगभग 17 हजार ग्रन्थो का सुन्दर सकलन था। गुण्डो ने यह कहते हुए उस पुस्तकालय को जला दिया—"हिन्दी की सेवा करता था म्लेच्छ कही का...अब करेगा हिन्दी लिखने का साहस ?... तुझसे किसने कहा था कि हिन्दी मे लिख।" श्री जहूरबख्श के इस पुस्तकालय मे सन् 1960 तक प्रकाशित हिन्दी के अनेक नये-पुराने पत्रो के सकलन के अतिरिक्त देवनागरी लिपि का वैज्ञानिकता से सम्बन्धित उनके स्वलिखित उस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि भी रखी थी जिसमे आपने अपने दीर्घकालीन लेखकीय जीवन का निचोड प्रस्तुत किया था। यदि यह ग्रन्थ प्रकाशित हो जाता तो उससे देवनागरी की वैज्ञानिकता पर अच्छा प्रकाश पड जाता। जिन दिनो आपके साथ यह दुर्घटना घटी थी तब आपका बडा पुत्र सागर विश्वविद्यालय मे एम० ए०, एल-एल० बी० की शिक्षा ग्रहण कर रहा था और छोटा पुत्र अपनी बहन के साथ बी० एस-सी० मे पढ रहा था।

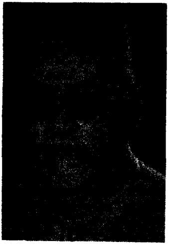
इस प्रकार निर्गेह, निर्धन, निराश्रित तथा निरीह जहूरबख्श अपनी जन्मभूमि से दूर आकर भोपाल मे अपनी जिन्दगी के आखिरी दिन गुजार रहे थे कि पक्षाघात के कारण वहाँ के हमीदिया अस्पताल मे नवम्बर 1964 मे आप इस ससार से विदा हो गए।

डॉ० जाकिर हुसैन

आपका जन्म 8 फरवरी सन् 1897 को हैदराबाद (आन्ध्र-प्रदेश) मे हुआ था। आपके पूर्वजों का निवास उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद जनपद का कायमगज नामक कस्बा है। आपके पिता वकील फिदा हुसैन साहब सपरिवार हैदराबाद चले गए थे। आप जब केवल 9 वर्ष के ही थे तब आपके पिता का असामयिक देहावसान हो गया। परिणाम स्वरूप आपका परिवार कायमगज लौट आया था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा इटावा के 'इस्लामिया हाई स्कूल' में हुई थी और

बाद में आपने 'अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय' से स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त करके बर्लिन विश्वविद्यालय से अर्थ शास्त्र विषय में डाक्टरेट किया था।

जिन दिनों आप अलीगढ में अध्ययन करते थे तब महात्मा गांधी के ओजस्वी भाषण को सुनकर आप उनके अनुयायी हो गए थे। फलस्वरूप आपने दिल्ली में अपने कुछ सहयोगी अध्यापकों के साथ मिलकर एक 'राष्ट्रीय शिक्षा-संस्थान' की स्थापना की, जो बाद में 'जामिया मिलिया इस्लामिया' के नाम से विख्यात हुआ और आजकल यह विश्व-विद्यालय - स्तरीय शिक्षा-संस्थान का रूप ले चुका है। जिन दिनों आपने पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की



थी तब आपको 'उस्मानिया विश्वविद्यालय हैदराबाद' की ओर से 600 रुपये मासिक वेतन पर अध्यापन-कार्य स्वीकार करने का आमन्त्रण मिला था। आप अपनी कर्त्तव्य-भावना से प्रेरित होकर 'जामिया मिलिया' में ही 75 रुपये मासिक पर कार्य करते रहे और वहाँ नहीं गए। यह आपकी सतत साधना तथा कर्मठता का ही सुपुष्ट प्रमाण है कि यह संस्था अब इस रूप में कार्य कर रही है।

अपने इस कार्य-काल में आप जहाँ 'जामिया मिलिया' के उपकुलपति रहे थे वहाँ आपने शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त ख्याति अर्जित कर ली थी। महात्मा गांधी द्वारा विकसित की गई 'बेसिक शिक्षा-पद्धति' के तो आप सूत्रधार ही थे। आपने इस दिशा में जो मूल्यवान सिद्धान्त निर्धारित किए थे वे बाद में 'वर्धा शिक्षा योजना' के नाम से विख्यात हुए थे। जब सन् 1937 में कुछ प्रदेशों में कांग्रेस मन्त्रिमण्डलों का गठन किया गया था तब आपकी इस शिक्षा-पद्धति का अनेक प्रदेशों में प्रचलन किया गया था। आप जहाँ 'हिन्दुस्तानी तालीमी संघ वर्धा' के अनेक वर्ष तक अध्यक्ष रहे थे वहाँ 'बुनियादी शिक्षा सम्बन्धी राष्ट्रीय समिति' के भी आप सभापति थे।

स्वतन्त्रता के उपरान्त जब मौलाना अबुल कलाम आजाद देश के शिक्षा-मन्त्री बने थे तब उनके अनुरोध पर आपने 'अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय' का कुलपतित्व सँभाला था। आप सन् 1952 में राज्य सभा के सदस्य मनोनीत किए गए थे और सन् 1954 में आपको 'पद्म विभूषण' की सम्मानोपाधि प्रदान की गई थी। सन् 1957 में आप बिहार के राज्यपाल बनाए गए थे और सन् 1962 में भारत का उपराष्ट्रपति पद सँभाला था। सन् 1963 में जहाँ आपको भारत का सर्वोच्च अलंकरण 'भारत रत्न' प्रदान किया गया था वहाँ सन् 1967 में आप भारत के राष्ट्रपति निर्वाचित हुए थे। इस पद पर आप मृत्यु-पर्यन्त रहे थे। जिन दिनों केन्द्रीय साहित्य अकादेमी के अध्यक्ष डॉ० राधाकृष्णन् थे उन दिनों आप उसके उपाध्यक्ष और उनके निधन के उपरान्त जीवन-पर्यन्त अध्यक्ष भी रहे थे।

आप जहाँ कुशल प्रशासक और मनस्वी शिक्षा-शास्त्री थे वहाँ विचारशील एवं गम्भीर लेखक भी थे। हिन्दी के प्रति आपकी बड़ी आस्था थी और आपने हिन्दी में कई पुस्तकें भी लिखी थीं। आपके द्वारा लिखी गई हिन्दी पुस्तकों में 'ईमानदारी', 'बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा' तथा 'अबू खाँ की बकरी' के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इनमें से 'अबू खाँ की बकरी' उनकी बालोपयोगी पुस्तक है, जिसका हिन्दी के बाल साहित्य में अच्छा स्थान है।

आपका निधन 3 मई, सन् 1969 को हृदय गति बन्द हो जाने के कारण हुआ था।

श्री जागेश्वर गुरु

श्री गुरु का जन्म 9 सितम्बर सन् 1909 को मध्य प्रदेश के संस्कारधानी नगर जबलपुर के प्रख्यात सांस्कृतिक परिवार में हुआ था। आप हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार तथा महा वैयाकरण श्री कामताप्रसाद गुरु के ज्येष्ठ पुत्र थे। आप अत्यन्त मेधावी तथा विद्या-व्यसनी थे और प्रारम्भिक कक्षा से लेकर उच्चतम श्रेणी की सभी परीक्षाओं में सर्वदा प्रथम

स्थान प्राप्त करके सफल हुए थे। बी० ए०, एल-एल० बी० करने के उपरान्त आपने अँग्रेजी साहित्य में भी एम० ए० करने के विचार से विधिवत् कालेज मे प्रवेश ले लिया था, किन्तु प्रीवियस ही कर सके थे। इसके उपरान्त आप वकालत की ओर लग गए थे इस कारण आगे परीक्षा न दे सके थे।

हिन्दी-लेखन की ओर भी आपका छात्रावस्था से ही झुकाव था और आपकी रचनाएँ कालेज की पत्रिका के अलावा 'बालक' तथा 'बालसखा' आदि तत्कालीन अनेक बालोपयोगी पत्रों मे प्रकाशित होती रहती थी। आप अपने

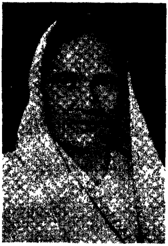


विद्यार्थी-जीवन मे कालेज-पत्रिका के सम्पादक भी रहे थे। आप हिन्दी, सस्कृत और अँग्रेजी साहित्य का बहुत विशद ज्ञान रखते थे। अपनी योग्यता के अनुरूप कोई कार्य या पद न मिलने के कारण विवश होकर आपने वकालत करना शुरू किया था। जब उसमे भी सफलता नही मिली तो जीवन-पर्यन्त विस्मृति तथा असन्तुलन के ही शिकार रहे। आपकी अधिकाश रचनाएँ अप्रकाशित ही रह गईं।

आपका निधन 4 जुलाई सन् 1972 को जबलपुर मे हुआ था।

श्रीमती जानकीदेवी बजाज

आपका जन्म मध्य प्रदेश के जावरा नामक स्थान मे सन् 1892 मे हुआ था। 8 वर्ष की आयु मे आपका विवाह सेठ जमनालाल बजाज से वर्धा मे हुआ था। पति के परिवार मे आकर आपका जो सम्पर्क देश के अनेकानेक राजनेताओं, सुधारकों और साहित्यकारों से हुआ था उससे आपको



अपने जीवन का निर्माण करने मे बडी सहायता मिली थी। आपके पति 5 वर्ष की आयु मे ही वर्धा के सेठ बच्छराज के परिवार मे गोद आए थे। विवाह के समय आपकी शिक्षा साधारण ही थी। आपके पति श्री जमनालाल जी ने आपको पढाने के लिए एक मास्टरनी रखी थी। सर्वप्रथम आपने मराठी पढी थी। धीरे-धीरे आपने 'प्रथमा' और 'मध्यमा' की परीक्षा भी दी, किन्तु दोनो मे ही फेल हो गई।

अपने सस्कारशील पति और उनके परिचितो के सम्पर्क मे आकर आपका कार्य-क्षेत्र विस्तृत हुआ और धीरे-धीरे आपका ज्ञान भी बढता गया। आपने लेखन के क्षेत्र मे भी अपनी प्रचुर प्रतिभा का परिचय दिया। आपके द्वारा लिखी गई आत्म-कथा इसका ज्वलन्त प्रमाण है। आप हिन्दी की अच्छी कवयित्री भी थी। पारिवारिक सस्कारो के कारण आपने स्वाधीनता-संग्राम मे भाग लेकर जेल-यात्रा भी की थी। क्योकि आपके पति श्री जमनालाल बजाज को गाधीजी अपना 'पाँचवाँ-पुत्र' कहते थे इसलिए आप भी गाधीजी को अपना श्वसुर ही समझती थी। आपकी गद्य-लेखन की प्रतिभा का परिचय आपके द्वारा महात्मा गान्धी, जमनालाल बजाज, विनोबा, महादेव देसाई, कस्तूरबा आदि के सम्बन्ध मे लिखे गए सस्मरणो से भली-भाँति मिल जाता है। ये सस्मरण आपकी 80वी वर्षगाँठ पर आपको समर्पित 'समर्पण और साधना' नामक अभिनन्दन ग्रन्थ मे प्रकाशित हुए है।

आपकी कवित्व-प्रतिभा का विकास बापू की प्रार्थनाओ मे निरन्तर सम्मिलित होते रहने के कारण हुआ था। आप कभी-कभी स्वान्त सुखाय तुकबन्दियाँ भी कर लिया करती थी। आपकी ऐसी रचनाओ की मूल भाव-भूमि का परिचय

इन पंक्तियों से मिल जाता है :

हे परम सृष्टि करतार,
मानूँ मैं तेरा उपकार।
दिया पति मुझको अपन समान
दिये सब साधन औ' सब साज
धाम, धन, बुद्धि, कुटुम्ब, समाज
कमी क्यों दया धरम की की,
बनाओ मेरा हृदय उदार,
हे परम सृष्टि करतार।

आपका निधन सन् 1979 में हुआ था।

श्री जानकीप्रसाद पुरोहित

श्री पुरोहित का जन्म मध्यप्रदेश के होशगाबाद जनपद के बाबई नामक ग्राम में सन् 1915 में हुआ था। यही ग्राम हिन्दी की राष्ट्रीय धारा के प्रमुख कवि श्री माखनलाल चतुर्वेदी की जन्म-भूमि भी है। आपने विश्वविद्यालय से कोई विधिवत् शिक्षा प्राप्त नहीं की थी। अपने छात्र-जीवन से ही आपका झुकाव साहित्य-रचना की ओर हो गया था और लघु कथा-लेखन में आप अत्यन्त प्रवीण हो गए थे। आप प्रारम्भ में 'प्रसून' उपनाम भी लिखा करते थे, किन्तु बाद में उसे तिलांजलि दे दी थी। शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त आपने इन्दौर जाकर 'नव-जीवन पुस्तकमाला' नाम से अपनी निजी प्रकाशन-संस्था की नींव डाली थी। इसी प्रकाशन-संस्था की ओर से आपका पहला पत्र-उपन्यास 'मुसाफिर' सन् 1939 में प्रकाशित हुआ था। जब आपका



यह उपन्यास प्रकाशित हुआ तब लोगों को यह विश्वास ही नहीं हुआ था कि इतने सुन्दर और आकर्षक कलेवर से युक्त प्रकाशन इन्दौर से भी सम्भव हो सकता है। आपके इस उपन्यास का हिन्दी-जगत् में उल्लासपूर्वक स्वागत किया गया था।

'मुसाफिर' के स्वागत से प्रोत्साहित होकर आपने अपनी लेखनी को विराम नहीं दिया और धीरे-धीरे कई उपन्यासों की सृष्टि कर डाली। 'नवजीवन पुस्तकमाला' के अन्तर्गत आपने अपनी रचनाओं के अतिरिक्त अन्य बहुत-से लेखकों की कृतियाँ भी प्रकाशित की थीं। आपकी प्रमुख कृतियों में 'मुसाफिर' के अतिरिक्त 'देहाती देवता', 'अवनिका और अनन्त', 'फरियाद', 'चित्रा', 'साथी', 'दामनगीर', 'दुविधा', 'उन्माद', 'सौभाग्य', 'प्रसून चतुर्दशी', 'गाँव का स्वर्ग', 'अहिंसा की हिंसा' तथा 'विहार' के नाम विशेष ध्यातव्य हैं। इन कृतियों में लगभग 6-7 पुरस्कृत भी हुई थीं। आपने अपनी प्रतिभा का उपयोग उपन्यासों के अतिरिक्त कहानी-लेखन के क्षेत्र में भी किया था। आपने 'सांस्कृतिक चरित्र-माला' के नाम से जिन पुस्तकों का प्रकाशन किया था उनका पाठकों ने अत्यन्त उन्मुक्त हृदय से स्वागत किया था। आपके इस प्रकाशन-संस्थान से आपकी लगभग 40 कृतियाँ प्रकाशित हुई थीं।

लेखन के अतिरिक्त समाज-सेवा के क्षेत्र में भी आपका कम योगदान नहीं था। आप जहाँ कांग्रेस के कई वर्ष तक सक्रिय सदस्य रहे थे वहाँ इन्दौर की साहित्यिक संस्था 'साहित्यकार संसद्' के साहित्य-मन्त्री भी चुने गए थे। आप वास्तव में साहित्य को ही समर्पित थे और दिन-रात साहित्य के उत्कर्ष का चिन्तन करना ही आपका प्रमुख कर्त्तव्य था।

आपका निधन सन् 1957 की विजय दशमी को हुआ था।

श्री जानकीप्रसाद बगरहट्टा

श्री बगरहट्टा का जन्म राजस्थान की बीकानेर रियासत के डूँगरगढ़ नामक ग्राम में 5 सितम्बर सन् 1900 को हुआ था। आपकी शिक्षा अधिक नहीं हो सकी थी, क्योंकि आपने

महात्मा गांधी द्वारा प्रवर्त्तित 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' के दिनों मे पढना छोड दिया था। जिन दिनो आपने लाहौर के डी० ए० वी० कालेज मे प्रवेश लिया था उन दिनों आप वहाँ की कांग्रेस कमेटी के सदस्य भी बन गए थे। जिसके कारण वहाँ समय-समय पर होने वाले विभिन्न आन्दोलनो मे आपका सक्रिय योगदान रहता था। आप जहाँ 'पजाब प्रान्तीय काग्रेस कमेटी' की कार्यसमिति के सक्रिय सदस्य रहे थे वहाँ पजाब केसरी लाला लाजपतराय तथा सी० आर० दास-जैसे शीर्षस्थ राष्ट्र-नेताओं से भी आपका घनिष्ठ सम्पर्क हो गया था। आप अनेक वर्ष तक रिवाडी नगरपालिका के अध्यक्ष भी रहे थे। जिन दिनो लाला लाजपतराय जी इगलैंड गए थे तब आप भी 2 तक वर्ष उनके साथ रहे थे। आपने अपनी क्रान्तिकारी लेखनी के कारण अनेक आन्दोलनो मे सक्रिय रूप से भाग लेकर अपनी गिरफ्तारी भी दी थी।



पजाब मे जब आप अपनी जन्म-स्थली राजस्थान मे आए तब आपने वहाँ पर राजस्थान के वरिष्ठ नेता श्री अर्जुन-लाल सेठी की अध्यक्षता मे 'देशी राज्य प्रजा परिषद्' का प्रधान मन्त्रित्व सँभाला था। इस प्रसग मे आपका सम्पर्क सर्वश्री एम०एन० राय, एम० ए० डांगे, जयप्रकाशनारायण, राममनोहर लोहिया और श्रीमती अरुणा आसफअली से भी हो गया था। इन सभी नेताओ के साथ मिलकर आपने राजस्थान की जनता की जो सेवा की थी वह सर्वथा अवि-स्मरणीय है।

वैसे तो आप मूलत. अँग्रेजी के पत्रकार थे, किन्तु बाद मे आप हिन्दी के क्षेत्र मे आ गए थे। पहले-पहल आपने श्री बी० जी० हार्नीमन द्वारा सम्पादित अँग्रेजी के पत्र 'बाम्बे क्रानिकल' मे सहकारी सम्पादक के रूप मे कार्य किया था और बाद मे जयपुर से 'दी न्यू लीडर' नामक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन किया था। आपने 'राजस्थान स्टैंडर्ड' नामक एक और अँग्रेजी पत्र भी बीकानेर से निकाला था। अन्तिम दिनो मे आपने बीकानेर से ही 'गणराज्य' नामक हिन्दी पत्र का सम्पादन किया था, जिसके माध्यम से आपने राजस्थान की जनता की उल्लेखनीय सेवा की थी। आप हिन्दी, अँग्रेजी, उर्दू, बगला तथा पजाबी भाषाओ पर असाधारण अधिकार रखते थे और तेलुगु तथा मराठी भाषाओ की भी आपको अच्छी जानकारी थी। आप जहाँ एक उद्‌भट पत्रकार के रूप मे सारे राजस्थान मे विख्यात थे वहाँ एक अत्यन्त प्रभावशाली वक्ता भी थे। आपके भाषणो का जनता पर अत्यन्त मोहक प्रभाव पडा करता था।

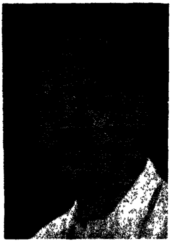
आपका निधन 10 फरवरी सन् 1965 को बीकानेर के रानी बाजार मे अपने निवास-स्थान पर हुआ था।

श्री जानकीशरण वर्मा

श्री वर्मा का जन्म 15 अगस्त सन् 1893 को बिहार प्रदेश के दरभगा जनपद के लहेरिया सराय नामक स्थान मे हुआ। आपके पिता वहाँ पर पुलिस-विभाग मे इन्सपेक्टर थे। वैसे आपके पूर्वज गया जनपद (अब औरगाबाद) के मिर्जापुर नामक ग्राम के निवासी थे। कलकत्ता विश्वविद्यालय से बी०ए० की परीक्षा द्वितीय श्रेणी मे उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने वकालत पढनी आरम्भ की थी, किन्तु प्रथम वर्ष की परीक्षा देने के बाद ही बन्द कर दी थी। आजीविका चलाने के लिए आपने शाहाबाद (अब भोजपुर) जनपद के मिडिल स्कूल मे अध्यापन प्रारम्भ कर दिया था। एक वर्ष तक इस विद्यालय मे लगनपूर्वक कार्य करने के उपरान्त आप सन् 1919 मे गया के 'थियोसोफिकल स्कूल' मे चले गए थे।

अपने इस शिक्षकीय जीवन मे कार्य-रत रहते हुए आप निरन्तर चिकित्सा-सम्बन्धी पुस्तकों का भी स्वाध्याय करते रहते थे। कुछ वैद्यो से भी आपने सम्पर्क कर रखा था। इस सम्पर्क तथा स्वाध्याय के परिणाम स्वरूप आपके मानस मे 'चिकित्सा-विज्ञान' के प्रति गहन रुचि उत्पन्न हो गई थी।

आपकी यह रुचि धीरे-धीरे इतनी परिष्कृत और परिवर्धित होती गई कि आयुर्वेद-सम्बन्धी ग्रन्थो का स्वाध्याय करते रहने के साथ-साथ 'बायोकेमिक चिकित्सा विज्ञान' की ओर भी आपका झुकाव हो गया और आप 'बायोकेमिक पद्धति' से रोगियो की चिकित्सा करने लगे। इन्ही दिनो जब मिसेज एनी बेसेण्ट और महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय के प्रयत्नो से समस्त देश मे अलग-अलग 'स्काउटिंग' का आन्दोलन तेजी के साथ प्रारम्भ हुआ तब आप शैक्षणिक कार्यों से समय निकालकर इस आन्दोलन मे भी सक्रिय रूप से जुड गए और आपने इस कार्य को अत्यन्त तत्परता से आगे बढाया।



जब इलाहाबाद मे पण्डित मदनमोहन मालवीय द्वारा सस्थापित 'सेवा समिति ब्वाय स्काउट एसोसिएशन' का कार्य-भार पण्डित श्रीराम वाजपेयी ने सँभाला तब आप सन् 1927 मे अपने शिक्षकीय जीवन को सर्वथा तिलाजलि देकर गया से प्रयाग चले आए। प्रयाग आकर वर्माजी ने स्काउटिंग के कार्य को अत्यन्त निष्ठापूर्वक आगे बढाने की दिशा मे महत्त्वपूर्ण कार्य किया।

इस बीच आपको सन् 1934 मे गठिया का रोग हो गया और इस प्रसग मे आपने कई चिकित्सा-पद्धतियों के प्रयोग किए। अपनी इस बीमारी के सिलसिले मे आपकी भेंट एक 'जल-चिकित्सा-विशेषज्ञ' से हो गई और उनके इस सम्पर्क से आपने अपने इस गठिया के रोग को सर्वथा दूर कर लिया। इस चिकित्सा-पद्धति का एक चमत्कारी प्रभाव यह भी हुआ कि आपने स्वय भी इस पद्धति के प्रचार के लिए प्रयत्न करना प्रारम्भ कर दिया और धीरे-धीरे वह दिन भी आया जब आप समस्त देश मे एक 'प्राकृतिक चिकित्सक' के रूप में विख्यात हो गए।

इस बीच आपने 'स्काउटिंग' के आन्दोलन को एक व्यापक रूप देने की दृष्टि से जब सन् 1938 मे दोनों सस्थाओं का विलयीकरण करके 'हिन्दुस्तान स्काउट एसोसिएशन' का निर्माण किया तब आप ही उसके 'नेशनल सेक्रेटरी' बनाए गए थे। आपने इस कार्य को करते हुए भी अपना 'चिकित्सा-कार्य' जारी रखकर 'जीवन सखा' नामक एक मासिक पत्र का सम्पादन भी प्रारम्भ कर दिया था। आपने इसका सफलतापूर्वक सचालन किया था। इस चिकित्सा, सम्पादन तथा स्काउटिंग आन्दोलन की व्यस्तता से समय निकालकर आपने कुछ पुस्तकें भी लिखी थी। इन पुस्तको के विषय जहाँ स्काउटिंग से सम्बन्धित थे वहाँ चिकित्सा-सम्बन्धी भी थे। आपकी ऐसी पुस्तको में 'स्काउट मास्टरी और ट्रुप सचालन', 'टोली विधि', 'कैम्प फायर', 'रोगो की अचूक चिकित्सा', 'अचूक चिकित्सा के प्रयोग', 'स्वस्थ कैसे रहे' और 'सरल शरीर विज्ञान' आदि प्रमुख है।

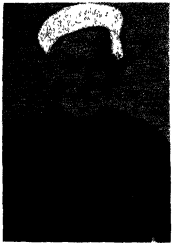
आपका निधन 17 अप्रैल सन् 1950 को हुआ था।

पण्डित जानीबिहारीलाल

पण्डित जी का जन्म उत्तर प्रदेश के मथुरा नगर के गजा पाइसा मोहल्ले मे सन् 1838 मे हुआ था। आपके पूर्वज लाधाजी जानी औदीच्य ब्राह्मण थे और वे गुजरात के सिद्धपुर नामक स्थान से आकर पहले-पहल अनूपशहर (बुलन्दशहर) मे आकर बसे थे और फिर बाद मे व्रज-वास करने की इच्छा से मथुरा आ गए थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने पारिवारिक परिवेश मे ही हुई थी। अध्यापन मे रुचि होने के कारण आप भरतपुर की राजकीय पाठशाला मे अध्यापक होकर वहाँ चले गए थे और भरतपुर नरेश के विद्या-गुरु होने के साथ-साथ आप राज-दरबार द्वारा सम्मानित महानुभावो मे अपना एक विशिष्ट स्थान रखते थे।

आप एक अध्ययनशील अध्यापक और उच्चकोटि के विद्वान् होने के साथ-साथ कविता और संगीत के क्षेत्र मे भी सर्वथा अद्वितीय थे। आपके गुरु लश्कर-निवासी पंडित लालजी तिवाडी गणित शास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान् होने के साथ-

साथ उच्चकोटि के कवि भी थे। वे जहाँ ग्वालियर के महाराजा सिन्धिया के शिक्षक थे वहाँ जानी बिहारीलाल-



जैसे आपके अनेक प्रतिभाशाली शिष्य थे। ऐसे विद्वान् गुरु की कृपा और अपनी अपूर्व मेधा के कारण जानी बिहारीलाल छोटी-सी आयु में ही कविता करने लगे थे। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों की संख्या लगभग 25 है, जिनमें से 12 प्रकाशित हो चुकी हैं और शेष अभी अप्रकाशित हैं। आपकी प्रकाशित कृतियों में 'बाल प्रबोध', 'इंगलैण्डीय इतिहास', 'कादम्बरी चरित्र', 'गोल व्याख्यान (भाग 2)', 'महिम्न स्तोत्र की टीका', 'रामायण', 'साराष्टक षट्ऋतु', 'मानमोचनाष्टक', 'विनय नाममाला', 'नक्शा राज्य भरतपुर', 'दम्पति द्युति भूषण', 'गौरी प्रेम परीक्षा', 'राम अष्टक', 'कृष्ण चरिताष्टक' और 'गोचारणाष्टक' के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य है। आपकी अप्रकाशित रचनाओं में 'शिक्षा शतक', 'भूगोल तत्त्व', 'मनुस्मृति', 'सार शतक', 'विज्ञान विभाकर नाटक', 'अष्टाष्टक', 'छन्द प्रभाकर पिंगल', 'ब्रह्म स्मर्णी वर्ण माला', 'कृष्ण वियोग बारहमासी', 'अधिकानन्द दायक', 'प्रश्नोत्तरी दान लीला', 'सरस फाग' और 'रियन पचरत्न' आदि प्रमुख है। आपने 'सुवर्ण रत्न जटित कण्ठाभरण' नामक काव्य भी गुजराती में लिखा था। इस सम्बन्ध में आपके द्वारा रचित 'गुजराती ऋतु मानमोचनाष्टक' का नाम भी अनन्य है।

आपकी उक्त रचनाओं में से 'दम्पति द्युति भूषण' नामक ग्रन्थ का अपना एक सर्वथा विशिष्ट महत्त्व है। इसमें कवि ने जहाँ शृंगार रस के विविध रूपों के साथ उनके अनेक आलम्बनों, नायक-नायिकाओं के भेदों, नख-शिख एवं ऋतु-वर्णन का अत्यन्त चमत्कारी रूप प्रस्तुत किया है वहाँ अनेक छन्दों और अर्थों की उत्पत्ति का विशद परिचय भी देखने को मिलता है। सन् 1969 में प्रकाशित इस ग्रन्थ के विवेचनापूर्ण 'प्राक्कथन' की डॉ० त्रिलोकीनाथ 'ब्रजबाल' की यह पंक्तियाँ कवि के कृतित्व की महत्ता को सम्यक् प्रस्तुत करती है . "प्रस्तुत काव्य-कृति 'दम्पति द्युति भूषण' हिन्दी साहित्य की रीतिकालीन परम्परा की एक सरस साहित्यिक कृति है। आलोच्य कृति की रचना कवि ने अपने जीवन के पच्चीसवें वर्ष में की थी। यौवन के प्रारम्भिक सोपान पर जो स्फूर्ति, सरसता एवं अल्हड़ता एक भावुक कवि में होनी चाहिए वह सब इस समय आपमें थी। यही कारण है कि यह कृति इतनी सशक्त एवं सरस बन सकी है।" 'भारती अनुसन्धान भवन' के संचालक श्री ज्योतिषी राधेश्याम द्विवेदी ने इस कृति का यह समीक्षात्मक संस्करण प्रकाशित करके हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि में अपना अभिनन्दनीय सहयोग प्रदान किया है। कवि की इस कृति का पहले-पहल क्रमश प्रकाशन सन् 1879 से सन् 1880 तक काशी से प्रकाशित होने वाली 'कवि वचन सुधा' पत्रिका में हुआ था।

श्री जानीबिहारीलाल का निधन सन् 1902 में हुआ था।

भक्त जीवनलाल

श्री भक्तजी का जन्म उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरपुरनगर जनपद के थाना भवन कस्बे में सन् 1843 में हुआ था। आपके पिता श्री गौहरसिंह भटनागर वहाँ पर 'वासिल बाकी नवीस' थे। वैसे आपके पूर्वज सहारनपुर के मोहल्ला कायस्थान के मूल निवासी थे। आपकी प्रारंभिक शिक्षा यद्यपि पारिवारिक परम्परा के अनुसार उर्दू में हुई थी, लेकिन आपको तुलसी 'रामायण' के पारायण का चस्का बचपन से ही लग गया था। सन् 1857 में 14 वर्ष की आयु में आप थाना भवन छोड़कर उसीके समीपवर्ती स्थान 'शामली' में आ गए थे। और 16 वर्ष की आयु में ही 'बुढाना' तहसील में मुहर्रिर का कार्य करने लगे थे। आपको शैशवावस्था से ही कविता लिखने का शौक था और आपका कण्ठ भी अत्यन्त मधुर था। आपके एक बालसखा श्री

कुन्दनलाल जी भी अत्यन्त संगीत-प्रेमी थे। दोनों के इस सत्सग से काव्य तथा संगीत का अद्‌भुत समन्वय हो गया था।

बुढ़ाना से फिर आप अपने भाई श्री नन्दलाल के निधन के उपरान्त शामली आ गए, जहाँ पर वे मुहर्रिर थे। भक्त जी ने अपना तबादला बुढाना से शामली के लिए ही करा लिया और स्थायी रूप से वही रहने लगे। सन् 1873 मे आप मुजफ्फरनगर चले गए और स्थायी रूप से वही रहने लगे। इस बीच आप कुछ दिन के लिए उत्तर प्रदेश सरकार के आबकारी विभाग मे इलाहाबाद चले गए थे। यहाँ यह बात विशेष रूप से ध्यातव्य है कि कायस्थ परिवार मे जन्म लेने और आबकारी विभाग मे कार्य करते हुए भी आपने कभी भी माम-मदिरा का सेवन नही किया था। 'रामचरित मानस' के निरन्तर पारायण मे आप राम के अनन्य भक्त बन गए थे। जिन दिनो महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती मुजफ्फरनगर पधारे थे तब भक्त जी ने उनसे भी भेट की थी। इस भेट से भक्त जी के जीवन मे बहुत परिवर्तन हुए थे और आपने अनेक धार्मिक ग्रन्थो का अच्छा स्वाध्याय कर लिया था।



'रामचरित मानस' के निरन्तर पारायण से आपके जीवन मे जो परिवर्तन आया था उससे आपने जन-साधारण को भी लाभान्वित किया था। आपके द्वारा आयोजित सत्सगो मे प्राय आपके द्वारा बनाए गए भजन भी गाए जाते थे। आपकी रचनाएँ भक्तिरस से ओत-प्रोत होती थी। उर्दू भाषा के अच्छे ज्ञान के कारण आपके द्वारा लिखा गया यह पद-साहित्य प्राय उर्दू लिपि मे ही मिलता है, वैसे भाषा इसकी हिन्दी ही थी। यद्यपि आपके द्वारा रचित साहित्य विपुल है, परन्तु उसमे से कुछ भजन चुनकर प्रख्यात साहित्यकार आचार्य सीताराम चतुर्वेदी ने 'भक्त जीवनलाल जी की जीवनी तथा भजन' शीर्षक से संग्रहीत कर पुस्तक रूप मे प्रकाशित करा दिए है। इस पुस्तक का प्रकाशन सनातन धर्म सभा मुजफ्फरनगर की ओर से हुआ है।

आपका निधन 18 अक्तूबर सन् 1926 को हुआ था। आपके निधन के समय आपकी शैया के पास रामायण पाठ हो रहा था और भक्त जी की स्वर-लहरी भी उसमे समाई हुई थी।

श्री जीवानन्द शर्मा काव्यतीर्थ

श्री शर्मा का जन्म बिहार प्रदेश के सारन जिले के रसूलपुर नामक ग्राम मे सन् 1873 मे एक संस्कार-सम्पन्न ब्राह्मण-परिवार मे हुआ था।



आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने पारिवारिक वातावरण के कारण सस्कृत मे हुई थी। आपने कलकत्ता विश्वविद्यालय मे 'काव्यतीर्थ' की परीक्षा उत्तीर्ण करने के साथ-साथ सस्कृत-वाड्मय का गहन अध्ययन किया था। हिन्दी-प्रचार की दिशा मे आपके झुकाव का परिचय इसी बात से भली-भाति मिल जाता है कि आप काफी दिनो तक अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग मे हिन्दी प्रचारक का कार्य करते रहे थे।

आपने जहाँ सस्कृत तथा हिन्दी-साहित्य का विशद ज्ञान अर्जित किया था। वहाँ आप गुजराती, मराठी और बगला आदि कई भाषाओ के भी मर्मज्ञ थे। आपकी कर्मठता का प्रमाण बिहार निवासियो को उस समय मिला था जब आपने बिहार मे सबसे पहले 'प्रजाबन्धु लिमिटेड कम्पनी' की

स्थापना करके उसकी ओर से कई वर्ष तक 'प्रजाबन्धु' नामक पत्र का सफल संचालन किया था। आपने 'प्रजाबन्धु' के अतिरिक्त 'श्री कमला' नामक पत्र का सम्पादन भी अत्यन्त योग्यतापूर्वक किया था।

आप जहाँ कर्मठ हिन्दी प्रचारक और सफल पत्रकार थे वहाँ कवि, नाटककार, गायक, सुवक्ता और कथावाचक के रूप में भी अत्यन्त लोकप्रिय थे। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों में 'बाल अभिनय', 'आदर्श हिन्दू', 'बाबा का ब्याह', 'छूत का भूत', 'चित्तौड़गढ दमन' और 'भारत विजय' आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है।

आपका निधन सन् 1934 में हुए बिहार के ऐतिहासिक भूकम्प के कारण हुआ था।

ज्ञान कराने की दृष्टि से जहाँ छह भागों में 'सस्कृत शिक्षा' नामक एक पुस्तक का निर्माण किया था वहाँ 'रघुवंश', 'शिशुपाल वध', 'किरातार्जुनीय' तथा 'भट्टि काव्य' आदि सस्कृत के अनेक काव्यो को सरल हिन्दी मे अनूदित करके प्रकाशित किया था। आपके द्वारा अनूदित अन्य विशिष्ट सस्कृत ग्रन्थों मे 'लघु सिद्धान्त कौमुदी', 'पाणिनीय व्याकरण सूत्र भाष्य' और 'तर्क सग्रह' के नाम भी विशेष उल्लेखनीय है। आपने सस्कृत की प्रचुर शब्दावली का हिन्दी पाठको को ज्ञान कराने की दृष्टि से 'सरस्वती-कोश' नामक एक विशाल कोश का निर्माण भी किया था।

आपका निधन 17 नवम्बर सन् 1939 को मुरादाबाद हुआ था।

श्री जीवाराम शर्मा उपाध्याय

श्री उपाध्याय जी का जन्म सन् 1880 मे उत्तर प्रदेश के मैनपुरी नामक शहर मे हुआ था। अपने पारिवारिक

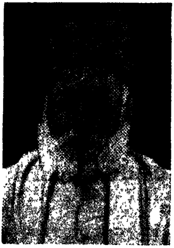


सस्कारो के अनुरूप आपकी शिक्षा-दीक्षा भी उसी वातावरण मे हुई थी और आपने सस्कृत वाङ्मय का गहन अध्ययन किया था। आपने अपने गुरु श्री भवानीदत्त जोशी से सस्कृत के प्राय सभी ग्रन्थो का गहन ज्ञान अर्जित किया था और फिर मुरादाबाद मे रहकर यावज्जीवन संस्कृत साहित्य के अध्ययन, मनन और लेखन मे ही अपने जीवन को लगाया था।

मुरादाबाद के किसरौल मोहल्ले मे 'सरस्वती प्रेस' की स्थापना करके आपने जन-साधारण को सस्कृत का विधिवत्

श्री जुगतीदान देथा

श्री देथा का जन्म सन् 1855 मे राजस्थान की जोधपुर रियासत के बोरूँदा नामक ग्राम में हुआ था। आप चारण जाति के वीर पुरुष थे और आपकी विचार-धारा पर आर्यसमाज के सस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के सुधारवाद का बहुत प्रभाव था। डिगल भाषा की रचनाएँ आप साधिकार किया करते थे। जोधपुर के महाराणा प्रतापसिंह की प्रशसा मे लिखी गई आपकी 'प्रताप



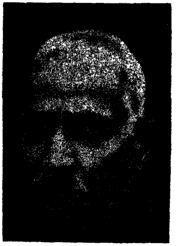
पच्चीसी' नामक एक रचना अत्यत प्रसिद्ध है। आपने समाज मे प्रचलित पर्दा-प्रथा, मद्य-पान और मृत्यु-भोज-जैसी अनेक कुरीतियों का डटकर विरोध किया था।

आपका देहावसान सन् 1936 मे हुआ था।

श्री जुगलकिशोर मुख्तार 'युगवीर'

श्री जुगलकिशोर जी का जन्म उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जनपद के सरसावा नामक कस्बे मे 20 दिसम्बर सन् 1877 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा तत्कालीन परम्परा के अनुसार उर्दू मे हुई थी। आपकी प्रखर मेधा और तर्कबुद्धि को देखकर आपके शिक्षक मौलवी साहब ने आपको 'ईश्वर-चन्द्र विद्यासागर' कहना प्रारम्भ कर दिया था। जब सरसावा के हकीम श्री उग्रसेन ने वहाँ पर एक सस्कृत-हिन्दी की पाठशाला प्रारम्भ की तब आप हिन्दी तथा सस्कृत का अध्ययन करते हुए जैन शास्त्रो के स्वाध्याय की ओर उन्मुख हुए थे। आपने सहारनपुर के अँग्रेजी स्कूल से विधिवत् नौवी कक्षा तक अध्ययन करके स्वाध्यायी छात्र के रूप मे 'मैट्रिक' की परीक्षा उत्तीर्ण की थी।

जिन दिनो आप सरसावा की जैन पाठशाला मे पढते थे तब से ही आपमे लेखन की प्रवृत्ति उद्भूत हो गई थी और आपने उन दिनो जो एक लेख लिखा था वह देवबन्द से प्रकाशित होने वाले 'जैन गजट' के 8 मई सन् 1886 के अक मे छपा था। सन् 1899 मे आपने 'प्रान्तिक जैन सभा' मे उपदेशक का कार्य प्रारभ कर दिया था, किन्तु 2 मास बाद ही वहाँ से त्याग-पत्र देकर स्वतन्त्र-वृत्ति के रूप



मे देवबन्द मे रहकर मुख्तारी की प्रैक्टिस आरम्भ कर दी। मुख्तारगिरी के कार्य मे व्यस्त रहते हुए भी आपने अपने स्वाध्याय की प्रवृत्ति को बराबर बनाए रखा और इस बीच आपने जैन धर्म से सम्बन्धित अनेक ग्रन्थो का विधिवत् ज्ञान प्राप्त कर लिया। निरन्तर अध्ययन तथा मनन की अपनी इसी प्रवृत्ति के कारण 10 वर्ष तक यह कार्य करके फिर उससे सर्वथा निवृत्ति प्राप्त कर ली। इस बीच आप पूर्णत. 'गृहस्थ जीवन' व्यतीत करने लगे थे। जब विवाह के लगभग 25 वर्ष उपरान्त आपकी सहधर्मिणी का आकस्मिक निधन हो गया तो आपने धर्म तथा समाज की सेवा मे ही अपना जीवन व्यतीत करने का निश्चय कर लिया था। आपकी इस विरक्ति का कारण आपकी 2 कन्याओं तथा धर्मपत्नी के असामयिक निधन की दुर्घटनाएँ ही थी। फलस्वरूप आप सन् 1929 के प्रारम्भ मे दिल्ली चले आए और यहाँ पर 21 अप्रैल को 'समन्तभद्र आश्रम' की स्थापना करके आपने 'अनेकान्त' नामक पत्र का सम्पादन प्रारम्भ कर दिया। बाद मे यह आश्रम 'वीर सेवा मन्दिर' के रूप मे परिवर्तित हो गया और आप इसे दिल्ली से सरसावा ले गए वहाँ पर रहते हुए आपने इसे जैन साहित्य के 'शोध सस्थान' का रूप दे दिया।

जिन दिनो आप देवबन्द मे मुख्तार थे उन दिनों आप 'जैन महासभा' के मुखपत्र 'जैन गजट' का सम्पादन भी किया करते थे। जब आपने इस पत्र के सम्पादन का दायित्व सँभाला था तब उसकी ग्राहक-सख्या केवल 300 ही थी। धीरे-धीरे आपने अपने अथक परिश्रम और सम्पादन-पटुता से उस सख्या को 1500 तक पहुँचा दिया था। अपने इस कार्य-काल मे आपने अपने स्वाध्याय के बल पर अनेक जैन ग्रन्थों का सर्वांगीण ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आपकी यह साधना ही कालान्तर मे 'वीर सेवा मन्दिर' को एक अनुसधान-सस्थान का रूप देने मे रूपायित हुई थी। आपने इस कार्य को सुचारु रूप से कार्यान्वित करने की दृष्टि से अपनी सम्पत्ति का एक ट्रस्ट बनाकर उसे 'वीर सेवा मन्दिर' को समर्पित कर दिया था। 'जैन गजट' का सम्पादन करने के अतिरिक्त आपने श्री नाथूराम 'प्रेमी' के अनुरोध पर 'जैन हितैषी' नामक पत्र का सम्पादन भी बड़ी योग्यता एव लगन से किया था। इन पत्रो के माध्यम से आपने अपनी आस्थाओ का जो प्रकटीकरण समय-समय पर किया था उसका अत्यन्त परिष्कृत तथा परिवर्धित रूप हमें 'अनेकान्त' के द्वारा देखने को मिला था। 'अनेकान्त' का सम्पादन-नीति का परिचय आपके द्वारा लिखित इस दोहे से भलीभाँति हो जाता है

शोधन-मथन विरोध का हुआ करे अविराम।
प्रेम-पगे रल-मिल सभी, करें कर्म निष्काम॥

अपने पत्रकारिता के जीवन मे आपने जहाँ अपने गद्य को सँवारा था वहाँ 'वीर सेवा मदिर' और 'अनेकान्त' के

माध्यम से आपकी चिन्तन-प्रणाली ने कविता का रूप ग्रहण कर लिया था। निरन्तर अध्ययन, मनन और चिन्तन के कारण आपके विचारो मे जो गाम्भीर्य आ गया था उसका प्रतिफलन ही आपकी कविताओं मे दृष्टिगत होता है। अपने इस कार्य-काल मे आपका झुकाव गांधी जी के अहिंसात्मक सत्याग्रह की ओर भी हो गया था। आपकी अधिकाश कविताओं मे वह राष्ट्रीय भावना प्रचुरता से प्रकट हुई थी। आपकी सन् 1916 में लिखित 'मेरी भावना' नामक कविता मे जो भाव निहित है उन्हे देखकर आपकी राष्ट्रीयता का सही दिग्दर्शन हो जाता है। आपकी 'सर्वधर्मसमभाव' की भावना इन पक्तियो मे अत्यन्त मुखरता से प्रकट हुई है

अहकार का भाव न रक्खूँ,
नही किसी पर क्रोध करूँ।
देख दूसरों की बढती को,
कभी न ईर्ष्या भाव धरूँ।।
रहे भावना ऐसी मेरी,
सरल सत्य व्यवहार करूँ।
बने जहाँ तक इस जीवन मे
औरों का उपकार करूँ।।

आपकी यह कविता उन दिनो बहुत लोकप्रिय हुई थी। इसकी विशिष्टता, उपादेयता और लोकप्रियता का इससे बडा प्रमाण और क्या हो सकता है कि इसका अनुवाद अँग्रेजी, सस्कृत, उर्दू, बगला, गुजराती, मराठी और कन्नड आदि अनेक भाषाओ मे हो गया था। वास्तव मे इस अकेली कविता के कारण ही श्री जुगलकिशोर मुख्तार का नाम सार्वजनिक महत्त्व प्राप्त कर गया था।

आपने एक सफल प्रचारक, जागरूक पत्रकार, मनन-शील अन्वेषक, सहृदय कवि तथा विवेकी निबन्धकार के रूप मे जो स्थान बनाया था उससे आपकी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय मिलता है। जैन साहित्य के अध्ययन और अन्वेषण के क्षेत्र मे आपने जो कार्य किया था उसका भली-भाँति परिचय आपके द्वारा अनूदित और लिखित ग्रन्थो को देखने से मिल जाता है। आपने जैन-समाज मे प्रचलित अनेक कुरीतियो को दूर करने का जो बीडा उठाया था उसकी सम्पूर्ति के लिए ही आपने अपनी वाणी और लेखनी का भर-पूर उपयोग किया था। यह आपके व्यक्तित्व की विशेषता ही है कि आपके कार्यों की प्रशसा अनेक जैन मुनियों, पंडितों, विचारको और सुधारको ने मुक्त-कण्ठ से की थी। आपकी काव्य-कृतियाँ 'युग भारती' नामक सकलन मे समाविष्ट है। 'जैन साहित्य और इतिहास पर विशद प्रकाश' नामक ग्रन्थ मे आपके द्वारा लिखित 32 शोधपरक निबन्ध प्रस्तुत किये गए हैं। 'ग्रन्थ परीक्षा' नामक चार खण्डो मे प्रकाशित ग्रन्थ मे आपकी समीक्षण शैली का उदात्त उदाहरण देखने को मिलता है। इसके अतिरिक्त आपकी 'युगवीर निबन्धावली' का प्रकाशन भी दो खण्डो मे किया गया है। इस पुस्तक में आपके समय-समय पर लिखित अनेक मौलिक लेख समाविष्ट किये गए है। आपको जहाँ श्री छोटेलाल जैन ने कलकत्ता मे आयोजित 'वीर शासन महोत्सव' के अवसर पर 'वाङ्मयाचार्य' की उपाधि से विभूषित किया गया था, वहाँ आपको एक अभिनन्दन-ग्रन्थ भी भेंट करने का निश्चय किया गया था। खेद है कि यह योजना कार्यान्वित न हो सकी। आपके निधन के उपरान्त 'अनेकान्त' का 'स्मृति अक' अवश्य प्रकाशित हुआ था।

आपका निधन अपने भतीजे डॉ० श्रीचन्द सगल के पास एटा मे 22 दिसम्बर सन् 1954 को हुआ था।

ठाकुर जुगलसिंह खीची

श्री खीची का जन्म राजस्थान की बीकानेर रियासत के खीचियाँ नामक ग्राम मे 1 अगस्त सन् 1894 को हुआ था। आपके पिता अन्नेसिह एक अच्छे जागीरदार थे। जिस ग्राम मे आपका जन्म हुआ था उसे खीची राजपूतो ने बसाया था, इसी कारण उसका नाम 'खीचियाँ' पडा था। वैसे आपके पूर्वजों की जागीर जयाल मे थी। आपके माता-पिता का देहान्त आपकी बाल्यावस्था मे ही हो गया था। आपका पालन-पोषण खीचियाँ ठिकाने के कामदार श्री जीवनसिंह शेखावत ने किया था। बीकानेर के दरबार हाई स्कूल से हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने आगरा के 'सेंट जान्स कालेज' मे विधिवत् प्रवेश लेकर 'आगरा विश्वविद्यालय' से एम० ए०, एल-एल० बी० की परीक्षाएँ भी ससम्मान उत्तीर्ण की थी।

बीकानेर रियासत के नियम के अनुसार जब आपकी

इस शैक्षणिक प्रगति की सूचना रियासत के महाराजा गगासिंह को दी गई तो उन्होंने सन् 1918 मे आपको अपने



'वाल्टर बावल्स मिडिल स्कूल' का प्रधानाचार्य नियुक्त कर दिया। आपने अपनी निष्ठा, तत्परता और योग्यता से इस स्कूल की इतनी ख्याति कर दी कि राजस्थान के सभी शिक्षणालयो मे इसका स्थान सर्वोपरि हो गया। महाराजा गगासिह श्री खीचीजी की अध्यापन-शैली से इतने प्रभावित हुए कि उन्होने आपको सन् 1924 मे अपने राजकुमार श्री विजयसिंह का शिक्षक बना दिया। आपने सन् 1924 से सन् 1930 तक यह कार्य अत्यन्त सफलतापूर्वक किया और फिर आप उच्च अध्ययन के लिए लन्दन चले गए। वहाँ पर जाकर आपने 'बार एट लॉ' करके उच्च शिक्षा का 'डिप्लोमा' प्राप्त किया था और सन् 1932 मे भारत वापिस लौट आए थे। यहाँ आकर आप अपने उसी पुराने विद्यालय मे कार्य करने लगे थे।

इसके अनन्तर आप सन् 1934 मे 'डूगर इण्टरमीडिएट कालेज' के प्रिंसिपल हो गए और जब यह विद्यालय 'महाविद्यालय' के रूप मे परिवर्तित हुआ तब आप उसके 'उपाचार्य' हो गए थे। आप थोडे ही दिन तक इस पद पर कार्य कर पाए थे कि आपका वहाँ कुछ मतभेद हो गया और आप वहाँ से त्यागपत्र देकर आगरा के 'सेण्ट जान्स कालेज' मे दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर होकर चले गए।

जब महाराजा गगासिह को आपके आगरा चले जाने की सूचना मिली तो उन्हें यह अच्छा नही लगा और वे आपको अपनी रियासत मे ही बुलाने के अवसर की तलाश मे रहने लगे। जब उन्होंने उचित अवसर समझा तब आपको सन् 1940 मे आगरा से बुलाकर अपने राज्य मे 'शिक्षा-निदेशक' के पद पर नियुक्त कर दिया। ऐसा सयोग हुआ कि आपका फिर मतभेद हो गया और आपने त्यागपत्र दे दिया। जब महाराजा शार्दूलसिंह ने राज्य-भार सँभाला तब फिर आपने खीचीजी को 'शिक्षा निदेशक' बना दिया। इसके पश्चात् आप रियासत की सेवा मे सन् 1949 तक रहे थे और आपने डूँगर कालेज बीकानेर के अध्यापक के रूप मे सेवा-निवृत्ति प्राप्त की थी।

राजकीय शैक्षणिक सेवा के अतिरिक्त खीचीजी ने साहित्यिक, सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्रो मे भी अपनी प्रतिभा का प्रचुर परिचय दिया था। आप जहाँ हिन्दी के उत्कृष्ट कवि तथा गद्य-लेखक थे वहाँ आपने मारवाड़ी बोली मे भी अत्यन्त सफल रचनाएँ की थी। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'मरुधर म्हारो देस म्हाने बालो लागे जी' राजस्थान के जन जन की वाणी का उद्‌गार बनी हुई है। आपकी हिन्दी रचनाओ मे—

भगवान् कृष्ण आकर मुरली मधुर बजा दे।
गीता का दिव्य गाना, वे भव्य भावनाएँ,
सुन्दर सुरीले स्वर से भारत को फिर सुना दे।

जहा जनता मे बहुत प्रचलित हुई थी, वहाँ आपके द्वारा लिखित ब्रजभाषा की कविताएँ भी बहुत लोकप्रिय हुई थी। आपके द्वारा लिखित ब्रजभाषा की कविताएँ जहाँ 'कविता-कानन' (1921) नामक पुस्तक मे प्रकाशित हुई है, वहाँ आपकी राजस्थानी भाषा मे लिखी गई रचनाएँ—'मरु माधुरी (1928) नामक सकलन मे देखी जा सकती है। आप अत्यन्त सफल कवि होने के साथ-साथ गद्य-लेखन में भी परम निष्णात थे। आपकी गद्य शैली का चमत्कार आपकी 'राजस्थान की झलक' (1954) तथा 'स्वर्णमय सस्मरण' (1957) नामक कृतियो म देखा जा सकता है। आपके हिन्दू धर्म की उत्कृष्टता-सम्बन्धी अनेक लेख 'कल्याण' मे भी प्रकाशित होते रहते थे।

आप एक उच्चकोटि के सामाजिक कार्यकर्ता और लगनशील सगठन भी थे। बीकानेर की 'नागरी भण्डार', 'सज्जनालय' और एन० एन० हाई स्कूल आदि अनेक सस्थाओं के सस्थापन और सचालन मे आपका उल्लेखनीय सहयोग रहा था। देश की नई पीढ़ी मे व्यायाम और स्वास्थ्य-निर्माण की चेतना जागृत करने की दिशा मे आपकी सेवाएँ सर्वथा अनुकरणीय थी। बीकानेर-नरेश महाराजा गगासिह समय-समय पर अनेक शासन-कार्यों मे आपका

परामर्श भी लेते रहते थे। आपको विभिन्न विषयो के साहित्य के अध्ययन का इतना शौक था कि आपके पास एक अच्छा पुस्तकालय ही बन गया था। आप बड़े स्वाध्याय-प्रवण और चरित्रवान् व्यक्ति थे और आपने अनेक रोग-पीड़ित व्यक्तियो को यौगिक क्रियाओ के प्रशिक्षण तथा अभ्यास द्वारा रोग-मुक्त किया था।

आपका निधन 21 जनवरी सन् 1977 को हुआ था।

श्री जे० पी० चौधरी काव्यतीर्थ

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जनपद के अदलहाट नामक ग्राम मे 1 मई, सन् 1881 को हुआ था। प्राचीन परम्परा के अनुसार आपकी प्रारम्भिक शिक्षा उर्दू मे हुई थी और आपने 17 वर्ष की आयु मे 'उर्दू मिडिल' की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। सन् 1900 मे आप 'नार्मल' की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करके मिर्जापुर के मिशन स्कूल मे अध्यापक हो गए थे। अपने इस शिक्षकीय



जीवन मे ही आपने परिश्रम करके अँग्रेजी की मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी। इसके उपरान्त आप मध्य प्रदेश की धार स्टेट मे विद्यालयो के 'निरीक्षक' हो गए थे। वहाँ पर आप थोड़े ही दिन रह पाए थे कि फिर राँची के 'सेण्ट पाल हाई स्कूल' मे शिक्षक होकर चले गए। इस बीच आपने आर्य समाज के सम्पर्क मे आकर अपने अनवरत अध्यवसाय और सतत स्वाध्याय के बल पर हिन्दी तथा संस्कृत भाषाओं का भी विधिवत् ज्ञान प्राप्त करके कलकत्ता विश्वविद्यालय की 'काव्यतीर्थ' परीक्षा अत्यन्त सफलतापूर्वक उत्तीर्ण कर ली थी। लगभग 4 वर्ष तक राँची के विद्यालय मे शिक्षण का कार्य करने के उपरान्त आप वाराणसी के डी०ए० वी० कालेज मे 'संस्कृताध्यापक' होकर यहाँ आ गए। काशी मे आकर आपके अध्ययन, मनन और चिन्तन का क्षेत्र बहुत विस्तृत हो गया और आपने वेद, शास्त्र, उपनिषद्, दर्शन, निरुक्त तथा 18 पुराणो का सर्वांगीण अध्ययन करके अपने ज्ञान के क्षेत्र को अत्यन्त विस्तृत कर लिया।

अपने इस कार्य-काल मे आपने शिक्षकीय व्यस्तताओ से समय निकालकर लेखन भी प्रारम्भ कर दिया था। जिसके फलस्वरूप आपने जहाँ अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे वैदिक सिद्धान्तो से सम्बन्धित गम्भीर लेख आदि लिखे थे वहाँ आपने पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी अपनी प्रचुर प्रतिभा का परिचय दिया था। सर्वप्रथम आपने अपने जातीय पत्र 'कोयरी हित चितक' मासिक का सम्पादन प्रारम्भ किया था और तदनन्तर 'कुशवाहा क्षत्रिय मित्र', 'कुशवाहा क्षत्रिय बन्धु' और 'कुशवाहा क्षत्रिय नवजीवन' आदि कई पत्रो का अत्यन्त सफल सम्पादन किया था। अपने इस पत्रकारिता के जीवन मे आपने जहाँ जाति-सुधार सम्बन्धी अनेक महत्त्वपूर्ण लेख आदि लिखे थे वहाँ आपके द्वारा लिखित गम्भीर शास्त्रीय समीक्षा-सम्बन्धी लेखमालाएँ भी अत्यन्त लोकप्रिय हुई थी। आर्य समाज की अनेक महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिकाओ मे भी आप जमकर लिखा करते थे। इस बीच आपने अपने एक-मात्र पुत्र को 'चौधरी एण्ड सस' नाम से काशी मे प्रकाशन का कार्य करा दिया और उसके माध्यम मे भी आपने संस्कृति तथा साहित्य के क्षेत्र मे बहुत उपयोगी कार्य कराया था। अपनी सैद्धान्तिक और वैचारिक धारणाओ को जनता तक पहुँचाने की भावना से आपने आर्यसमाज बुलानाला वाराणसी की ओर से प्रकाशित 'सद्धर्म प्रचारक' नामक पाक्षिक पत्र का सम्पादन प्रारम्भ किया। जब यह पत्र आर्थिक कारणो से बन्द हो गया तब आपने अनेक वर्ष तक अपने कुछ मित्रो के सहयोग से 'पाखण्ड खण्डिनी पताका' नामक मासिक पत्रिका का भी सफलतापूर्वक सम्पादन किया था। इन पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से आपने जहाँ सनातन धर्म के पण्डित कालूराम शास्त्री तथा पण्डित अखिलानन्द शर्मा के अनेक भ्रामक लेखो का डटकर उत्तर दिया था वहाँ 'वर्णाश्रम स्वराज्य सघ' के 'पण्डित पत्र' मे प्रकाशित लेखो की भी

खुलकर आलोचना की थी।

आर्य सिद्धान्तों के प्रचार तथा प्रसार के क्षेत्र में आपने जहाँ अपनी लेखनी के द्वारा अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किया था वहाँ आपने एक कुशल वक्ता तथा शास्त्रार्थ महारथी के रूप में भी बहुत ख्याति अर्जित कर ली थी। आर्यसमाज के मंचों से आपने अनेक सनातन धर्मी पण्डितों से शास्त्रार्थ तो किये ही थे अनेक गम्भीर शास्त्रीय ग्रन्थ लिखकर भी आपने अपनी अगाध विद्वत्ता और प्रकाण्ड पाण्डित्य का आदर्श भी प्रस्तुत किया था। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थों में 'कालूराम का जनाजा', 'अवतारवाद मीमांसा', 'शुद्धि सनातन है', 'ऋषि दयानन्द का सत्य स्वरूप', 'वेद और पशु यज्ञ', 'वैदिक वर्ण-व्यवस्था', 'पुराण पर्यालोचन', 'मूर्तिपूजा प्रश्नोत्तरी', 'शुद्धि प्रश्नोत्तरी', 'पौराणिक तीर्थ मीमांसा', 'यज्ञोपवीत शंका समाधान', 'अछूतों का मन्दिर प्रवेश सनातन धर्मानुकूल है', 'क्या अहल्या पत्थर बनी थी', 'क्या हनुमान जी वानर थे', 'गरुड पुराणोक्त श्राद्ध वेद विरुद्ध', 'महाभारत की रहस्यमय कथाएँ' तथा 'सरल संस्कृत प्रवेशिका' (दो भाग) के नाम विशेष रूप से उल्लेख करने योग्य है।

आपका निधन सन् 1963 में हुआ था।

पण्डित जौहरीमल शर्मा

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ जनपद के हाथरस नामक नगर में सन् 1867 में हुआ था। आपके पिता वेदपाठी पण्डित खुस्यालीराम देव शर्मा अपने समय के परम निष्णात विद्वान् थे और उन्हीं संस्कारों में श्री जौहरीमल शर्मा के जीवन का निर्माण हुआ था। आप जहाँ संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित तथा गम्भीर प्रकृति के चिन्तक थे वहाँ आपने अपने वैदुष्य से साहित्य के क्षेत्र में भी अनेक ग्रन्थ लिखकर अपनी सत्ता स्थापित की थी। पारिवारिक वातावरण के प्रभाव से वेदों, शास्त्रों और पुराणों का विस्तृत ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ अपने दैनिक कर्म-काण्ड सम्बन्धी अनेक उपयोगी पद्धतियों का भी विशद ज्ञान प्राप्त किया था।

सामाजिक दायित्वों के निर्वाह के प्रति भी आप सदा-सर्वदा सचेष्ट रहा करते थे। फलत आपको गौड महासभा (रामदल दरीबाकलाँ दिल्ली) के 25 जनवरी सन् 1929 को सम्पन्न हुए सप्तम अधिवेशन का अध्यक्ष बनाया गया था। आपने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में संस्कृत तथा हिन्दी में अनेक ऐसे महत्त्वपूर्ण लेख लिखे थे जिनमें भारतीय संस्कृति तथा उसके विभिन्न उज्ज्वलतम पक्षों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। आपके ऐसे लेखों में 'वेदों का अपौरुषयेत्व', 'उपनिषदों में शिवतत्त्व माहात्म्य', 'पचाग्नि विद्या', 'नवरात्रोत्सव', 'श्राद्ध मीमांसा' तथा 'कर्मयोग-भक्ति योग-ज्ञान योग' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।



यद्यपि आपके द्वारा लिखित प्रचुर साहित्य है, किन्तु आपकी 'वाक्योदाहरण चन्द्रिका' तथा 'सीयस्वयवर नाटक' कृतियाँ ही प्रकाशित हो सकी थी। गम्भीर शास्त्रीय विषयों पर लिखने के साथ-साथ आपने व्याकरण तथा अलंकार आदि विषयों में भी कई ग्रन्थ लिखे थे। आपने हिन्दी अलंकारों का विवेचन जहाँ दोहों में सोदाहरण किया था वहाँ 'हिन्दी व्याकरण विटप' नाम से हिन्दी व्याकरण का एक 'चार्ट' भी बनाया था। आपके दो पुत्रों (डॉ० रामदत्त भारद्वाज तथा डॉ० कृष्णदत्त भारद्वाज) का भी हिन्दी तथा संस्कृत वाङ्मय के क्षेत्र में प्रमुख योगदान रहा है।

आपका निधन सन् 1959 में हुआ था।

श्री ज्ञानस्वरूप 'राही'

श्री 'राही' का जन्म उत्तर प्रदेश के शाहजहाँपुर नामक

नगर के सदर मोहल्ले मे 7 मार्च सन् 1940 को हुआ था। आप नगर के प्रमुखतम साहित्यकार थे और आपने विविध विधाओं में रचनाएँ लिखकर अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया था। आपकी रचनाएँ 'कर्मवीर', 'पचायती राजपत्रिका', 'सरिता' तथा 'धर्मयुग' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित होती रहती थी। समीक्षा के क्षेत्र मे भी आपका विशिष्ट योगदान था। आपकी कविताओं का एक सकलन सन् 1970 मे आपके निधन के उपरान्त 'आँसू बिखर गए' नाम से प्रकाशित हो चुका है।

आपका निधन 27 फरवरी सन् 1969 को हुआ था।

कविराज पण्डित झारसराम शर्मा

श्री शर्मा का जन्म कामठी (महाराष्ट्र) मे सन् 1861 मे हुआ था। आपके पिता पडित बलदेव शर्मा भोसला शासन के समय राजस्थान के डीडवाना (जोधपुर) नामक स्थान से आकर वहाँ बस गए थे। आप हिन्दी के प्रख्यात विद्वान् पडित अम्बिकादत्त व्यास के अनन्य मित्र और षट्-शास्त्र-सम्पन्न पडित रामदत्त शास्त्री के प्रमुख शिष्य थे। आप आर्यसमाज तथा सनातन-धर्म-सम्बन्धी विवादो मे बढ-चढकर भाग लिया करते थे। आप उच्चकोटि के वक्ता होने के साथ-साथ कुशल लेखक और सफल सम्पादक भी थे।

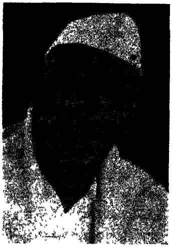
आपने जहाँ बम्बई के 'वेकटेश्वर प्रेस' की स्थापना मे अपना अनन्य सहयोग दिया था वहाँ सन् 1893 मे आपने कामठी से 'मित्र' नामक पाक्षिक पत्र भी सम्पादित किया था, जो लगभग 3 वर्ष तक बहुत सफलतापूर्वक प्रकाशित हुआ था। आपने छन्द-शास्त्र के सस्कृत ग्रन्थ 'वृत्त रत्नाकर' की हिन्दी टीका लिखने के अतिरिक्त 'अमृत सागर' नामक वैद्यक का ग्रन्थ भी लिखा था। ये दोनों ग्रन्थ 'वेकटेश्वर प्रेस बम्बई' से ही प्रकाशित हुए थे। सन् 1892 मे आपने कामठी मे ही 'विश्वविद्यालय प्रेस' की स्थापना भी की थी। आपका स्थान भारतेन्दु युग के विद्वानो मे अन्यतम था।

आपके द्वारा लिखित ग्रन्थो मे 'स्तोत्र नवरत्न', 'नारायण कवच', 'मुकुन्दाष्टक', 'वर्ण प्रबोध', 'सन्ध्या', 'श्री सूक्त', 'सद्व्याख्यान', 'मित्र विरहनी', 'पीव विरहनी', 'रसायन सुधानिधि' और 'बन्ध्याजीवनम्' आदि प्रमुख है। आपके सुपुत्र श्री नारायण शर्मा (सन् 1884-1948) भी हिन्दी के सुलेखक थे।

आपका निधन सन् 1937 मे हुआ था।

श्री ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल'

श्री निर्मल जी का जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जनपद को सोराँव तहसील के समीपवर्ती मिहगढ नामक ग्राम मे सन् 1895 मे हुआ था। आपके पिता पण्डित रामकुमार मिश्र प्रयाग के 'चन्द्रशेखर आजाद पार्क' मे सामान्य कर्मचारी थे और उनका निधन 'निर्मल' जी के देहावसान से एक वर्ष पूर्व सन् 1979 मे 110 वर्ष की आयु मे हुआ था। निर्मल जी के छोटे भाई श्री शम्भुनाथ मिश्र प्रयाग विश्वविद्यालय के चित्र-कला-विभाग के अध्यक्ष रहकर अभी पिछले दिनों ही सेवा-निवृत्त हुए है। पारिवारिक आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण निर्मल जी की शिक्षा अधिक न हो सकी थी और अपने ही अध्यवसाय से आपने अपनी साहित्यिक योग्यता इस सीमा तक बढ़ा ली थी कि कालान्तर मे आपकी गणना हिन्दी के प्रमुख पत्रकारो मे होने लगी थी।



अपने कार्मिक जीवन का प्रारम्भ आपने प्रयाग के 'वेलवेडियर प्रेस' मे 'प्रूफरीडर' के रूप मे किया था और धीरे-धीरे वह समय भी आया जब आपने सन् 1926 मे स्वल्प से वेतन पर इसी प्रेस से प्रकाशित होने वाली हिन्दी की सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'मनोरमा' के सम्पादन का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया था। 'मनोरमा' के सम्पादन से

मुक्ति पाने के उपरान्त आपने 'भारतेन्दु' नामक एक मासिक पत्र स्वतः ही सम्पादित तथा प्रकाशित किया था। 'मनोरमा' तथा 'भारतेन्दु' के सम्पादन के दिनों मे आपकी लेखनी इतनी प्रखर हो गई थी कि आपने हिन्दी मे अनेक आन्दोलनों का सूत्रपात उसके द्वारा किया था। कुछ दिन बाद आप प्रयाग से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दुस्तान' साप्ताहिक के सम्पादक भी रहे थे। आपकी पत्रकारिता का अत्यन्त सफल अवदान हिन्दी-जगत् को उन दिनो प्राप्त हुआ था जब आपने इण्डियन प्रेस प्रयाग से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक पत्र 'देशदूत' का अनेक वर्ष तक सफल सम्पादन किया था।

आपकी पत्रकारिता का जीवन सदैव कण्टकाकीर्ण ही रहा था। अपने स्वाभिमानी स्वभाव के कारण आप झुकना नही जानते थे और कभी-कभी आपका यह तेजस्वी रूप इतना उग्र रूप धारण कर लेता था कि आप बडी-से-बडी बाधाओ को ठेलकर अपना मार्ग प्रशस्त किया करते थे। जिन दिनो आप 'देशदूत' का सम्पादन किया करते थे तब आपने अपने निरीक्षण मे हिन्दी के तरुण पत्रकारो की जो पीढी तैयार की थी उसमे से आज अनेक साहित्य-सेवा के क्षेत्र मे अपना उल्लेखनीय स्थान बना चुके है। आपने अपने इस कर्ममय जीवन मे अपनी स्वाभिमानी प्रवृत्ति के कारण अनेक शत्रु भी बना लिए थे। कभी-कभी आपका यह स्वाभिमान अक्खडता की सीमा को छू लेता था। प्रयाग की ऐसी कोई साहित्यिक सस्था नही, जिससे आपका निकट का सम्बन्ध न रहा हो। अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन से तो आपका यावज्जीवन अटूट सम्बन्ध रहा था। आपने जहाँ क्रमश. सन् 1939-1941 तथा सन् 1947-1949 मे उसके 'साहित्य मन्त्री' का उत्तरदायित्वपूर्ण पद सँभाला था वहाँ अपने निधन से पूर्व आप कई वर्ष तक 'सम्मेलन पत्रिका' का सम्पादन भी अत्यन्त सफलतापूर्वक करते रहे थे।

आप एक जागरूक पत्रकार और कुशल सगठनकर्ता होने के अतिरिक्त सफल कवि, कहानीकार और समीक्षक भी थे। आपकी ऐसी प्रतिभा का परिचय आपकी लेखनी से प्रसूत उन कृतियो को देखने से भली-भाँति मिल जाता है जिनके कारण आपको साहित्य-जगत् मे प्रभूत मान्यता प्राप्त हुई थी। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'बाल मनोरजन', 'स्त्री कवि कौमुदी', 'नवयुग काव्य विमर्श', 'अभिमान', 'मंजिल', 'देव-दासी', 'पिंगल प्रबोध', 'महात्मा गाधी', 'रत्न हार', 'सक्षिप्त हिन्दी साहित्य', 'साहित्य प्रवेश', 'स्त्री कवि सग्रह', 'हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ' और 'सम्मेलन निबन्धमाला' के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनमे से 'सक्षिप्त हिन्दी साहित्य' नामक पुस्तक का लेखन आपने श्री यज्ञदत्त शर्मा के सहयोग से किया था। आपके द्वारा सम्पादित 'पटेल अभिनन्दन ग्रन्थ' भी विशेष स्थान रखता है। आपकी हिन्दी पत्रकारिता तथा साहित्य-सम्बन्धी उल्लेखनीय सेवाओ के उपलक्ष्य मे 9 अगस्त सन् 1969 को 'भारती परिषद् प्रयाग' ने आपका अत्यन्त भावभीना अभिनन्दन किया था। इस अवसर पर आपको जो प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया गया था उसकी इन पक्तियो मे निर्मल जी का सही व्यक्तित्व झाँकता दृष्टिगत होता है, "विकासोन्मुख क्रान्तचेतस श्री निर्मल जी काँटो से घिरकर भी, तूफानो की चोट सहकर भी साहित्य, सस्कृति और राजनीति के जगम प्रयाग बने हुए है।"

आपका निधन सितम्बर सन् 1980 मे हुआ था।

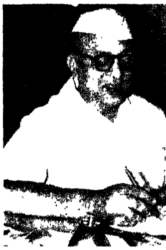
श्री ज्योतिभूषण गुप्त

श्री गुप्त का जन्म भारत के प्रख्यात तीर्थ-स्थान काशी नगर के नन्दन साहू लेन नामक मोहल्ले मे 24 जून सन् 1913 को हुआ था। आप काशी मे 'भैया जी' के नाम से विख्यात थे। आपका जन्म काशी के ऐसे सम्पन्न घराने मे हुआ था, जो अपनी परोपकार-परायणता देश-भक्ति, उदारता और दानशीलता के लिए प्रसिद्ध था। आपका कार्य-क्षेत्र अत्यन्त विशाल था। आप जहाँ नगर की अनेक साहित्यिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक और सामाजिक सस्थाओं के प्रेरणा-स्रोत थे वहाँ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना के समय से ही उससे सम्बद्ध रहे थे और देहान्त के समय विश्वविद्यालय के 'कोषाध्यक्ष' थे। विश्वविद्यालय की स्थापना के समय जिन महानुभावो ने एक-एक लाख रुपये की राशि दान मे दी थी उनमे आपके पूर्वज सर राजा मोतीचन्द्र भी अन्यतम थे और अपने निधन के समय तक वे भी विश्वविद्यालय के 'मानित कोषाध्यक्ष' रहे थे।

कदाचित् हिन्दी के बहुत कम पाठको को यह तथ्य विदित होगा कि अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर

से उत्कृष्टतम रचना पर प्रतिवर्ष दिया जाने वाला 1200 रुपये का 'मगलाप्रसाद पारितोषिक' आपके पिता 'राजा मगलाप्रसाद' के नाम पर ही दिया जाता है। जिसे उनके ज्येष्ठ भ्राता श्री गोकुलचन्द्र ने अपने छोटे भाई की स्मृति में सम्मेलन को 40 हजार रुपये की राशि दान देकर सन् 1920 मे प्रारम्भ कराया था। यहाँ यह भी विशेष रूप से स्मरणीय है कि इस राशि की दान देने की घोषणा डॉ० भगवानदास की अध्यक्षता में सम्पन्न हुए सम्मेलन के कलकत्ता-अधिवेशन के सुअवसर पर की गई थी।

जिस समय आपके पिता श्री मगलाप्रसाद का निधन हुआ था तब आप शिशु ही थे। आपका लालन-पालन आपके ताऊ श्री गोकुलचन्द्र तथा चचेरे भाई राष्ट्र-रत्न श्री शिव-प्रसाद गुप्त की देख-रेख मे हुआ था। जब आपका जन्म होने की सूचना महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय जी को मिली तब आपने प्रसन्नतापूर्वक यह उद्गार प्रकट किये थे : "मुझे विश्व-विद्यालय की सेवा के लिए एक अन्य मगल-ज्योति मिल गई है।" कदाचित् मालवीय की इन भावनाओ को लक्ष्य करके ही आपका नाम 'ज्योति-भूषण' रखा गया था।



आप जहाँ 'बनारस स्टेट बैंक' के डायरेक्टर, 'बनारस कॉटन एण्ड सिल्क मिल्स' के कोषाध्यक्ष, ज्ञान मण्डल लिमिटेड के अध्यक्ष रहे थे वहाँ नगर के प्रमुख सिनेमा-गृह 'चित्रा' के भी आप ही मालिक थे। ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध लडे जाने वाले अनेक आन्दोलनो मे जहाँ आपका सक्रिय सहयोग रहता था वहाँ आप आन्दोलनो के दिनों मे गुप्त रूप से प्रकाशित होने वाले हिन्दी पत्र 'रणभेरी' के स्तम्भ लेखक भी रहे थे।

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा 'नेशनल थियोसोफिकल स्कूल' और कालेज की शिक्षा हिन्दू विश्वविद्यालय के 'सेण्ट्रल हिन्दू कालेज' मे हुई थी। राजा मोतीचन्द्र के निधन के उपरान्त सन् 1934 से सारे पारिवारिक कार्यों की देख-भाल का सम्पूर्ण दायित्व आपके ऊपर आ गया था और मालवीय जी की प्रेरणा पर आप विश्वविद्यालय के सचालन-सम्बन्धी कार्यों मे भी हाथ बँटाने लगे थे। आपने विश्वविद्यालय कोर्ट तथा कार्यकारिणी के सदस्य के रूप मे जहाँ अपना उल्लेख-नीय सहयोग दिया था वहाँ सन् 1947 से आप उसके 'मानित कोषाध्यक्ष' भी रहे थे। आपकी ही प्रेरणा पर विश्व-विद्यालय मे 'भारती महाविद्यालय' और 'सगीत महा-विद्यालय' के भवनो के निर्माण के लिए काशी नरेश महाराजा विभूतिनारायण सिह ने प्रचुर धनराशि प्रदान की थी। आपके प्रोत्साहन पर विश्वविद्यालय मे अनेक विभागो की स्थापना भी हुई थी। विश्वविद्यालय की ओर से वैज्ञानिक विषयो पर मौलिक पुस्तको के सृजन तथा अनुवादो के प्रकाशन का कार्य भी आपके ही निर्देशन मे प्रारम्भ हुआ था। काशी से प्रकाशित होने वाले प्रख्यात हिन्दी दैनिक 'आज' तथा 'समार' के प्रकाशन मे भी आपका प्रमुख सहयोग रहा था। सन् 1942 के 'भारत छोडो आन्दोलन' के समय जिन अनेक स्वातन्त्र्य-सेनानियो ने फरारी की अवस्था मे आपके ही निवास 'मोती झील' को अपना केन्द्र-स्थल बनाया था उनमे श्री जयप्रकाश नारायण, अरुणा आसफ अली, डॉक्टर राम मनोहर लोहिया और श्री अच्युत पटवर्धन के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

आपका निधन 14 अगस्त सन् 1974 को हुआ था।

पण्डित ज्वालादत्त शर्मा

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के प्रख्यात नगर मुरादाबाद के किसरौल मोहल्ले मे सन् 1888 मे हुआ था। आप जहाँ सस्कृत, हिन्दी, बगला, गुजराती, मराठी और अँग्रेजी आदि भाषाओ के मर्मज्ञ विद्वान् थे वहाँ उर्दू और फारसी के साहित्य पर भी आपका असाधारण अधिकार था। यह एक विचित्र सयोग है कि आपने जहाँ सस्कृत वाङ्मय के विभिन्न पक्षो पर अनेक शोधपूर्ण लेख लिखे थे वहाँ ज्योतिष-

शास्त्र मे भी आपकी गहरी पैठ थी। एक उत्कृष्ट आलोचक, सम्पादक तथा कथाकार के रूप मे भी आपका स्थान सर्वथा अप्रतिम और अनुपम था।

मुरादाबाद से प्रकाशित होने वाले मासिक पत्र 'शकर' मे आप जहाँ अध्यात्म-शास्त्र और ज्योतिष-विज्ञान-सम्बन्धी लेख लिखा करते थे वहाँ गालिब, दाग और जौक आदि उर्दू के अनेक शायरों के जीवन और कृतित्व पर प्रकाश डालने वाली सामग्री प्रस्तुत करने मे भी आप बेजोड थे। संस्कृत और उर्दू के कवियो तथा शायरो की रचनाओ से भाव-साम्य का उदाहरण प्रस्तुत करने मे आपको अद्भुत दाक्षिण्य प्राप्त था। द्विवेदी युग मे मुरादाबाद से आपके सम्पादन मे 'प्रतिभा' नामक जो पत्रिका प्रकाशित होती थी, उसमे प्रकाशित सामग्री को देखकर आपके असाधारण ज्ञान तथा व्यापक दृष्टि का प्रत्यक्ष परिचय मिल जाता है।



जिन दिनो सन् 1917 मे आप मुरादाबाद से 'प्रतिभा' का प्रकाशन करते थे उन दिनो 'मानस-टीकाकार' विद्या-वारिधि ज्वालाप्रसाद मिश्र, टाड राजस्थान के हिन्दी अनुवादक श्री बलदेवप्रसाद मिश्र, 'सनातन धर्म पताका' के सम्पादक तथा 'हनुमन्नाटक' के अनुवादक पण्डित राम-स्वरूप शर्मा मुरादाबाद मे ही कार्य-रत थे और उन सभी से आपका अच्छा सम्पर्क था। हिन्दी के जिन अनेक प्राचीन साहित्यकारो से आपका अत्यन्त निकट का परिचय था उनमे आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, सम्पादकाचार्य पण्डित पद्मसिंह शर्मा, साहित्य दर्पण की विमला नामक टीका के लेखक श्री शालग्राम शास्त्री, साहित्याचार्य, प्रख्यात वैज्ञानिक लेखक श्री रामदास गौड़ और आचार्य शिवपूजन सहाय आदि प्रमुख हैं।

आपने जहाँ सस्कृत, बंगला तथा उर्दू से अनेक महत्त्व-पूर्ण ग्रन्थो का अनुवाद करके अच्छी प्रतिष्ठा अर्जित की थी वहाँ कहानी तथा उपन्यास-लेखन मे भी आप अत्यन्त दक्ष थे। 'सरस्वती' मे आपकी कहानियाँ जहाँ नियमित रूप से प्रकाशित हुआ करती थी वहाँ व्यग्य-चित्रो के अकन मे भी आप अत्यन्त कुशल थे। आपके द्वारा लिखित 'मिलन' शीर्षक कहानी सन् 1928 से सन् 1945 तक निरन्तर उत्तर-प्रदेश की हाई स्कूल के पाठ्यक्रम मे रही थी। आपके द्वारा अनूदित तथा मौलिक ग्रन्थो मे 'मौलाना हाली और उनका काव्य', 'गालिब और उनका काव्य', 'उस्ताद जौक और उनका काव्य', 'मौलाना दाग और उनका काव्य', 'गोस्वामी का दर्शन शास्त्र', 'आत्म तत्त्व प्रकाश', 'गीता मे ईश्वरवाद', 'जीवनी शक्ति', 'भवभूति' तथा 'सिक्खो के दस गुरु' के नाम अन्यतम है।

पत्र-लेखन की कला मे भी आप अत्यन्त पटु थे। आपके द्वारा लिखित पत्रो मे सस्कृत तथा उर्दू की सूक्तियों का प्रयोग प्रचुर मात्रा मे देखने को मिलता था। आपकी स्मृति-शक्ति इतनी तीक्ष्ण थी कि हिन्दी के अनेक प्राचीन तथा समकालीन साहित्यकारो के सस्मरण आप अत्यन्त सहजता और स्वाभाविकता से सुनाया करते थे।

यह एक विचित्र सयोग ही कहा जायगा कि आपका निधन 24 मार्च सन् 1958 को उस समय हुआ जब आप मुरादाबाद से किसी कार्यवश रेल द्वारा दिल्ली आ रहे थे। स्वय ज्योतिष के प्रकाण्ड पण्डित होते हुए भी आप यह नही जान सके कि यह यात्रा आपकी 'महायात्रा' है।

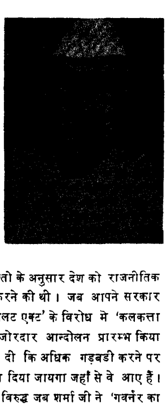
पण्डित झाबरमल्ल शर्मा

श्री शर्मा का जन्म सन् 1888 मे राजस्थान के खेतडी राज्य के समीपवर्ती जसरापुर नामक ग्राम मे पण्डित रामदयालु के यहाँ हुआ था। आपके पिता अपने समय के सुप्रसिद्ध संस्कृत पण्डित और आयुर्वेद के पीयूषपाणि चिकित्सक थे। उन्होंने कलकत्ता के सुप्रसिद्ध वैद्य कविराज गणनाथ सेन से आयुर्वेद का विधिवत् अध्ययन किया था। अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे वे गाँव मे रहकर ही वहाँ की जनता की निःशुल्क

चिकित्सा-सेवा किया करते थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा विधिवत् किसी कालेज या विश्वविद्यालय मे नहीं हुई थी। बचपन से ही अपने पिताजी के श्रीचरणों मे बैठकर आपने संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी और बंगला आदि कई भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। बाद मे सन् 1905-1906 मे आप अपने पिताजी के विद्या-गुरु कविराज गणनाथ सेन के टोले मे जाकर कलकत्ता मे रहने लगे थे और वहाँ पर निरन्तर स्वाध्याय द्वारा अपने ज्ञान की परिधि को विस्तृत कर लिया था।

इस बीच आपका सम्पर्क हिन्दी के प्रख्यात पत्रकार पण्डित दुर्गाप्रसाद मिश्र से हुआ, जो उन दिनों कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'भारत मित्र' नामक पत्र का सम्पादन किया करते थे। इस सम्पर्क के कारण शर्मा जी का झुकाव पत्रकारिता की ओर हो गया और आप सन् 1905 मे कलकत्ता से ही प्रकाशित होने वाले 'ज्ञानोदय' नामक पत्र के सम्पादक हो गए। इस पत्र का सम्पादन करने के साथ-साथ आप 'मारवाडी बन्धु' नामक पत्र के सम्पादन-कार्य मे भी सहयोग देते रहते थे। सन् 1909 मे आप बम्बई से प्रकाशित होने वाले 'भारत' नामक साप्ताहिक पत्र के सम्पादक होकर वहाँ चले गए। इस पत्र का प्रकाशन सन् 1908 मे झुझनू के परमोत्साही सेठ गजानन्द मोदी ने अपने 'नागरी प्रिंटिंग प्रेस' से किया था। इस पत्र के आदि-सम्पादक पण्डित रुद्रदत्त शर्मा थे। उनके उपरान्त क्रमश. श्री चन्द्रूलाल मेहता और गौरीशकर पाठक भी इस पत्र के सम्पादक रहे थे। उन दिनों 'भारत' ही अकेला ऐसा हिन्दी पत्र था जिसमे पूरे पृष्ठ के व्यंग्य चित्र प्रकाशित हुआ करते थे। जब आर्थिक कारणो से 'भारत' बन्द हो गया तब आप अखिल भारतीय माहेश्वरी महासभा के आमन्त्रण पर उसके मुखपत्र 'मारवाडी पत्र' के सम्पादक होकर नागपुर चले आए। जब आप नागपुर मे इस पत्र के सम्पादक थे तब आपका स्वास्थ्य वहाँ ढुलमुल रहने लगा। फलस्वरूप वहाँ की जलवायु अनुकूल न समझकर स्वास्थ्य-सुधार के लिए आप अपनी जन्मभूमि जसरापुर लौट आए।

जिन दिनों आप केवल 17 वर्ष के ही थे तब आपका सबसे पहला लेख सन् 1905-6 मे पण्डित दुर्गाप्रसाद मिश्र के 'भारत मित्र' मे छपा था और श्री मिश्रजी के सहयोग से ही आप पत्रकारिता के क्षेत्र में उतरे थे। बम्बई तथा नागपुर के पत्रकार-जीवन मे आपका परिचय-क्षेत्र और भी विस्तृत हो गया था। जब आप सन् 1911 में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन और अखिल भारतीय वैद्य सम्मेलन मे भाग लेने के लिए प्रयाग गए थे तब आपका परिचय वहाँ सर्व श्री द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी, पुरुषोत्तमदास टण्डन, बालकृष्ण भट्ट, माधव शुक्ल, महावीरप्रसाद द्विवेदी, गणेशशकर विद्यार्थी और सत्यदेव परिव्राजक प्रभृति अनेक साहित्यकारों से हो गया था। इस परिचय और सम्पर्क ने आपको साहित्य-सेवा तथा पत्रकारिता की दिशा मे बढने की प्रचुर प्रेरणा प्रदान की थी। इस प्रेरणा से प्रोत्साहित होकर ही आपने कलकत्ता से सन् 1914 मे जन्माष्टमी के पुनीत पर्व पर 'कलकत्ता समाचार कम्पनी लिमिटेड' की स्थापना करके उसके अधीन 'कलकत्ता समाचार' नामक दैनिक का प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया। पत्र का सम्पादन आप ही किया करते थे और इस कार्य मे सहायता प्रख्यात साहित्यकार श्री माधवप्रसाद मिश्र के छोटे भाई श्री राधाकृष्ण मिश्र किया करते थे। 'कलकत्ता समाचार' की नीति लोकमान्य बालगगाधर तिलक के सिद्धान्तो के अनुसार देश को राजनीतिक जागरण के प्रति प्रेरित करने की थी। जब आपने सरकार द्वारा जारी किये गए 'रौलट एक्ट' के विरोध मे 'कलकत्ता समाचार' के माध्यम से जोरदार आन्दोलन प्रारम्भ किया तो गवर्नर ने यह धमकी दी कि अधिक गड़बडी करने पर मारवाडियो को वही भेज दिया जायगा जहाँ से वे आए हैं। गवर्नर की इस धमकी के विरुद्ध जब शर्मा जी ने 'गवर्नर का गुस्सा' शीर्षक से अपने सम्पादकीय अग्रलेख मे उस पर तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की तब सरकार ने पत्र से दो हजार रुपये की जमानत माँग ली। इस पर कम्पनी के डायरेक्टरो ने यह निर्णय किया कि जमानत देकर पत्र नही निकालेंगे और



पत्र का प्रकाशन बन्द कर दिया गया। इसके उपरान्त उत्तर प्रदेश के इटावा जनपद के प्रख्यात उद्योगपति एव पत्र-कार कुँवर गणेशसिह भदौरिया ने प्रेस को खरीद लिया और अपने स्वामित्व मे 'कलकत्ता समाचार' का प्रकाशन पुन: प्रारम्भ किया। सम्पादन पूर्ववत् श्री झाबरमल्ल शर्मा ही करते रहे। इस प्रकार सन् 1925 तक 'कलकत्ता समाचार' कलकत्ता मे प्रकाशित होता रहा था। इसका अन्तिम अक 6 जनवरी सन् 1925 को वहाँ से प्रकाशित हुआ था। बीच मे सन् 1919 मे यह पत्र कुछ समय के लिए बन्द भी रहा था।

इसके उपरान्त सनातन धर्म के प्रख्यात नेता व्याख्यान वाचस्पति पण्डित दीनदयाल शर्मा की प्रेरणा पर कुँवर गणेशसिह भदौरिया और पण्डित झाबरमल्ल शर्मा 'कलकत्ता समाचार' को सन् 1925 मे दिल्ली ले आए और यहाँ से वह 'हिन्दू ससार' नाम से प्रकाशित होने लगा। सन् 1926 के अन्त मे जब 'हिन्दू ससार' पर टिहरी गढवाल के होम-मिनिस्टर की ओर से अभियोग चलाया गया तब अपने पत्र मे छपी टिहरी गढवाल के होम-मिनिस्टर से सम्बन्धित चिट्ठी का सम्पूर्ण दायित्व शर्माजी ने अपने ऊपर लेकर पत्र-कारिता के आदर्श की जो प्रस्थापना की थी वह इतिहास का अमर आलेख हो गई है। शर्माजी ने चिट्ठी के वास्तविक लेखक का नाम प्रकट न करके वास्तव मे एक प्रशसनीय कार्य किया था। जब यह अभियोग चला था तब शर्माजी के पिता अपने गाँव मे गम्भीर रूप से अस्वस्थ थे। फलस्वरूप आप उनके स्वास्थ्य की देख-भाल के लिए थोडे दिन के लिए गाँव मे जाकर रहने लगे थे। यहाँ पर रहते हुए भी आपने अपने साहित्यिक कार्यों को विराम नही दिया और जसरा-पुर मे 'इतिहास अनुसन्धान गृह' की स्थापना करके उसके माध्यम से हिन्दी साहित्य, जनपदीय साहित्य और इतिहास-सम्बन्धी पुस्तको के प्रकाशन का कार्य करने लगे। इसी अवधि मे आपने 'रामकृष्ण मिशन' के कार्यों मे भी रुचि लेनी प्रारम्भ कर दी और उसकी एक शाखा 'खेतडी' मे भी विधिवत् स्थापित कर दी। यह बात विशेष रूप से ध्यातव्य है कि रामकृष्ण मिशन ने सर्वप्रथम शर्माजी को ही इस शाखा का मानद मन्त्री बनाया था। आपके ही सत्प्रयास से खेतडी-नरेश ने अपना दीवानखाना और जनानी ड्योढी रामकृष्ण मिशन के लिए स्थायी रूप से प्रदान की थी।

शर्माजी ने जहाँ उत्कृष्ट पत्रकार के रूप मे हिन्दी जगत् की उल्लेखनीय सेवा की थी वहाँ आपने सस्कृति, साहित्य और इतिहास-सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ भी लिखे थे। आपने उत्कृष्ट गद्य-लेखन के साथ-साथ पद्य-लेखन मे भी अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था। आपके द्वारा लिखित तथा सम्पादित ग्रन्थों मे 'भारतीय गोधन', 'भारतीय देशभक्तों की कारावास कहानी', 'अरविन्द-चरित', 'खेतडी का इतिहास', 'सीकर का इतिहास', 'खेतड़ी नरेश और विवेकानन्द', 'माधव मिश्र निबन्धावली', 'बालमुकुन्द गुप्त निबन्धावली', 'बाल-मुकुन्द गुप्त स्मारक-ग्रन्थ', 'राष्ट्र भाषा और लिपि', 'आत्म विज्ञान शिक्षा', 'आदर्श नरेश', 'केसरीसिह समर' तथा 'केसरी का मुकद्दमा' के अतिरिक्त आपकी 'तिलक गाथा' तथा 'गांधी गुणानुवाद' नामक दो पद्य-पुस्तको के नाम भी विशेष रूप से परिगणनीय है। आपके इन सब ग्रन्थो मे आपके पत्रकार तथा इतिहासकार दोनो रूप भलीभाँति प्रकट हुए है। आपने अपने अनन्य मित्र श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की स्मृति मे 'गुलेरी गरिमा-ग्रन्थ' का सम्पादन भी किया था, जो नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की ओर से 'गुलेरी शताब्दी' के उपलक्ष्य मे शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है।

शर्मा जी अपने साहित्यिक जीवन के प्रारम्भ से ही दूसरो की कीर्ति-रक्षा करने के अनेक कार्य करते रहे थे। आपने जहाँ हिन्दी के प्राचीनतम प्रमुख पत्रकार बाबू बाल-मुकुन्द गुप्त की स्मृति को सुरक्षित रखने के निमित्त उनकी 'ग्रन्थावली' और 'स्मारक ग्रन्थ' का प्रकाशन प्रख्यात पत्र-कार श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के सहयोग से किया था वहाँ पण्डित माधवप्रसाद मिश्र के निबन्धो को भी श्री चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा के सहयोग से सम्पादित करके 'माधव-मिश्र निबन्धमाला' नाम से प्रकाशित किया था। इस प्रसग मे आपके द्वारा अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे प्रकाशित 'राजस्थान और नेहरू परिवार' विशेष रूप से उल्लेख्य है। इस ग्रन्थ का विमोचन भारत की प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाधी के करकमलो द्वारा विगत 26 मई सन् 1982 को नई दिल्ली के प्रधानमन्त्री-निवास मे हुआ था। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि शर्मा जी को आपकी उल्लेखनीय साहित्य-सेवाओं के लिए जहाँ 'राजस्थान मच दिल्ली' ने सन् 1977 मे एक विशालकाय 'अभिनन्दन ग्रन्थ' समर्पित किया था वहाँ उत्तर प्रदेश हिन्दी सस्थान ने भी

आपको हिन्दी-सेवाओं के उपलक्ष्य मे एक विशेष पुरस्कार से सम्मानित किया था। आपको भारत के राष्ट्रपति और 'अ० भा० हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की ओर से भी क्रमश 'पद्मभूषण' तथा 'साहित्य-वाचस्पति' की सम्मानोपाधियाँ भी प्रदान की गई थी। अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे पिछले 10-11 वर्ष से आप जयपुर मे रहने लगे थे और वही पर रहते हुए साहित्य-सेवा मे सलग्न थे।

आपने अपनी पत्रकारिता के दिनों मे जहाँ समाज-सेवा के क्षेत्र मे अनेक क्रातिकारी आन्दोलनो का सूत्रपात किया था वहाँ राष्ट्रीय जागरण की दिशा मे भी आपका योगदान अभिनन्दनीय था। घी मे की जाने वाली मिलावट तथा सामाजिक कुरीतियो के विरुद्ध किये गए आपके आन्दोलन इतिहास मे सर्वथा अविस्मरणीय है। क्रातिकारी आन्दोलन की गतिविधियो पर व्यापक रूप से प्रकाश डालने वाला आपका पत्र 'कलकत्ता समाचार' ही था। आप

कवि सेवक बूढे भये तो हुए,
पर मौज हनोज मनोज ही की।

के अनुसार इस वृद्धावस्था मे भी निरन्तर लेखन-कार्य-रत रहा करते थे। केवल 'मनोज' शब्द को छोडकर आपका झुकाव 'स्वाध्याय' और 'लेखन' की ओर ही रहा करता था। शेखावाटी का सही इतिहास प्रस्तुत करने की दिशा मे आप सतत प्रयत्नशील रहा करते थे।

आपका निधन 4 जनवरी सन् 1983 को 95 वर्ष की आयु मे जयपुर मे हुआ था।

श्री झुन्नीलाल वर्मा

श्री वर्मा का जन्म मध्यप्रदेश के दमोह नगर मे 26 सितम्बर सन् 1888 को हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने नगर मे ही हुई थी और राबर्टसन कालेज, जबलपुर से बी० ए० की परीक्षा देकर आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से 'विधि-स्नातक' की उपाधि प्राप्त की थी। अपने छात्र-जीवन से ही आप नगर की अनेक सामाजिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक गतिविधियों मे पूर्ण तन्मयता से भाग लेने लगे थे। आपकी रचनाएँ देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान-प्रकाशित हुआ करती थी। आप जहाँ 'दमोह कायस्थ समाज' के अनेक वर्ष तक अध्यक्ष रहे थे वहाँ आपने अनेक वर्ष तक नगर के 'विधि महाविद्यालय' के प्राचार्य के रूप मे वहाँ की शैक्षणिक उन्नति मे उल्लेखनीय योगदान दिया था। 'चित्र-गुप्त शिक्षण सस्था' दमोह की ओर से सचालित 'लालबहादुर उच्चतर माध्यमिकशाला' को भी आपका आशीर्वाद प्राप्त था। अपने नगर की राजनीतिक गतिविधियों से आपका कितना लगाव था इसका सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि जब सन् 1933 मे देश-पूज्य महात्मा गाधी पहले-पहल दमोह पधारे थे तब उनके प्रथम स्वागतकर्ताओ मे आप सर्वाग्रणी थे। गाधी जी की प्रेरणा पर मद्य-निषेध का जो कार्य-क्रम वहाँ प्रारम्भ किया गया था उसके भी सूत्रधार उन दिनो आप ही थे।

अपने राजनीतिक जीवन मे प्रमुख रूप से समाज-सेवा को ही एक-मात्र लक्ष्य बनाया था और इस भावना से अभिभूत होकर ही आप श्री गोकुलचन्द सिघई तथा मध्यप्रदेश के भूतपूर्व गवर्नर डॉ० ई० राघवेन्द्र राव की प्रेरणा पर 'सहकारी आन्दोलन' से जुड गए थे। आपने जहाँ 'दमोह सहकारी बैंक' की स्थापना करके अपने क्षेत्र के ग्रामीण अचल के विकास मे उल्लेखनीय सहयोग दिया था वहाँ सन् 1933 से 1936 तक मध्यप्रदेश विधान सभा के सदस्य के रूप मे भी जनता की सेवा की थी। शिक्षा के क्षेत्र मे भी आपकी सेवाएँ सर्वथा स्पृहणीय रही थी। आप 'कला महाविद्यालय' के सस्थापक-अध्यक्ष तो थे ही 'सागर विश्वविद्यालय' के 'विधि सकाय' के अधिष्ठाता भी थे। निरन्तर 15 वर्ष तक सागर विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी के कर्मठ सदस्य के रूप मे आपने उसकी उल्लेखनीय सेवा की थी। आप 'दमोह डिस्ट्रिक्ट कौसिल' और वहाँ की 'बार कौसिल' के अध्यक्ष भी रहे थे।



साहित्यिक क्षेत्र में भी आपकी देन सर्वथा अभिनन्दनीय रही थी। आपने जहाँ नगर की अनेक साहित्यिक संस्थाओं के संचालन तथा सम्पोषण मे अपना सौजन्यपूर्ण सहयोग प्रदान किया था वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आप पीछे नहीं रहे थे। सन् 1956 मे आपका जो एक विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ 'भरत दर्शन' नाम से इण्डियन प्रेस, प्रयाग से प्रकाशित हुआ था उससे प्रभावित होकर प्रख्यात साहित्यकार, कवि और समीक्षक डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र ने यह सही लिखा था—"हमारे मित्र श्री झुन्नीलाल वर्मा ने अच्छा भक्त हृदय पाया है। उन्होंने बड़ी सहृदयता के साथ भरत के चरित्र का अनुशीलन किया है और संस्कृत तथा हिन्दी के ग्रन्थों से उन्हे जो उपयुक्त सामग्री मिली है उन्होंने उसका अच्छा उपयोग किया है। उनका यह ग्रन्थ उनके गम्भीर अध्ययन तथा गवेषणापूर्ण शैली का परिचायक है।" राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त ने जब अपने चरितनायक के प्रति वर्मा जी का 'नीर-क्षीर-विवेक' देखा तब वे भी यह कहने से न चूके थे—"भरत के विषय मे लेखक ने यह प्रबन्ध लिखकर मेरी दृष्टि में अपनी लेखनी का अच्छे-से-अच्छा उपयोग किया है।" इस उल्लेखनीय ग्रन्थ को हिन्दी-जगत् को भेंट करने के उपरान्त आपकी दृष्टि त्रेता के इस आदर्श चरित्र के बाद 'द्वापर' के नायकों पर गई और आपने 'कृष्ण चरित्र चिंतन' नामक एक और गवेषणापूर्ण ग्रन्थ लिखा था।

आपका निधन 11 दिसम्बर सन् 1980 को हुआ था।

साधु टी० एल० वास्वानी

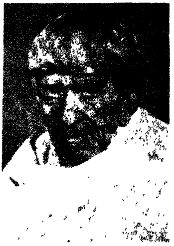
श्री वास्वानी का जन्म 25 नवम्बर सन् 1879 को हैदराबाद (सिन्ध) मे हुआ था। आपका बचपन का नाम थाँवरदास और पिता का नाम लीलाराम था। आपके पिता श्री लीलाराम भक्त प्रकृति के व्यक्ति थे और वे प्रतिदिन सिखो के धर्म ग्रन्थ 'सुखमनी साहब' का पाठ किया करते थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा पहले-पहल तत्कालीन परम्परा के अनुसार सिन्धी भाषा मे हुई थी और बाद मे मैट्रिक की परीक्षा देने के उपरान्त आपने बम्बई विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इस परीक्षा के सिलसिले मे आपको 'एलिस स्कालरशिप' भी प्रदान की गई थी। दो वर्ष बाद एम० ए० उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप सन् 1903 मे कलकत्ता के 'विद्यासागर कालेज' मे शिक्षक हो गए थे।

कलकत्ता मे रहते हुए आपके मानस में आध्यात्मिकता के जो अंकुर घर कर गए थे उन्होने आपको ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति की ओर उन्मुख कर दिया था। फलस्वरूप सन् 1908 मे आप कराची के डी० जी० कालेज मे दर्शन शास्त्र के अध्यापक होकर चले गए और इस प्रसंग मे आपने जहाँ 'सुखमनी साहब' का बड़ी तल्लीनता से पारायण किया वहाँ 'श्रीमद्भगवद्गीता' के स्वाध्याय से आपकी आध्यात्मिक भावनाएँ और भी पल्लवित तथा पुष्पित हो गईं। इसी प्रसंग मे आपको केवल 29 वर्ष की आयु मे जब बर्लिन में आयोजित होने वाले 'विश्व धर्म सम्मेलन' का निमन्त्रण मिला तो आप उसमे सहर्ष सम्मिलित हुए थे। इस सन्दर्भ में आपने

'असतो मा सद्गमय
तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्मा ऽ मृतम् गमय'

की अमर वाणी की जो व्याख्या वहाँ पर प्रस्तुत की थी उसे सुनकर अनेक विदेशी दार्शनिक और तत्त्ववेत्ता आश्चर्य-चकित हो गए थे।

एक तत्त्वचिन्तक के रूप मे आपने जो महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया था उससे अधिक शिक्षा के क्षेत्र मे आपकी देन थी। आपने 'दयालसिंह कालेज, लाहौर', 'विक्टोरिया कालेज, कूच बिहार', 'महेन्द्र कालेज, पटियाला' के प्राध्यापक तथा आचार्य के रूप मे अपने दृढ चरित्र के माध्यम से अपने अनेक शिष्यों पर जो छाप छोड़ी थी उसका सबसे ज्वलन्त प्रमाण यह है कि आपके आध्यात्मिक व्यक्तित्व का वर्चस्व सारे देश मे व्याप्त हो गया था। महात्मा गांधीजी के असहयोग आन्दोलन के सम्पर्क मे आकर आपका



आध्यात्मिक व्यक्तित्व और भी तेजस्विता से समाज के समक्ष प्रकट हुआ था। आपने जहाँ गांधीजी के पत्र 'यग इण्डिया' का सम्पादन सफलतापूर्वक किया था वहाँ 'न्यू टाइम्स' नामक पत्र भी प्रकाशित किया था। गाधीजी के सम्पर्क ने उनमें 'स्वदेशी' की जो भावना भरी थी उससे प्रेरित होकर आप 'स्वभाषा', 'स्वदेश' और 'स्वभूषा' को अपनाने की ओर उन्मुख हो गए थे।

'स्वराज्य टोली' की स्थापना करने के साथ-साथ अपने आध्यात्मिक प्रवचनों के माध्यम से आपने समस्त देश मे गाधीजी के सिद्धान्तों का प्रचार करने की दिशा मे जो महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी उसके कारण पहले आप 'दादा वास्वानी' और बाद में 'साधु वास्वानी' के रूप मे विख्यात हो गए थे। आपका सम्पर्क जब स्वामी श्रद्धानन्द तथा डॉक्टर केशवदेव प्रभृति आर्य नेताओं तथा सुधारकों से हुआ तब आपने आर्य समाज के मच से भी अपने प्रवचनों मे स्वदेशी तथा स्वभाषा हिन्दी के महत्त्व पर बल दिया था। 'गुरुकुल काँगडी' तथा 'शक्ति आश्रम राजपुर' मे रहकर आपने अपनी आध्यात्मिक चेतना को और भी विकसित किया था। आपने अपने 'जीव दया आन्दोलन' के सिलसिले मे भारतीय सस्कृति और उसकी महत्ता की प्रस्थापना की ओर बराबर ध्यान दिया था। आपकी आध्यात्मिक भावना इस सीमा तक विकसित हो गई थी कि आप 'विश्वबन्धुत्व के सन्देशवाहक' समझे जाने लगे थे। अहिसा, सत्य, अपरिग्रह और सर्वधर्मसमभाव आपके जीवन का अग ही बन गए थे। आपने सन् 1928 मे गुरुकुल काँगडी मे जो दीक्षान्त भाषण दिया था उसमे आपने जहाँ हिन्दी की महत्ता प्रतिपादित की थी वहाँ शिक्षा के माध्यम के रूप मे उसे अपनाने पर भी बल दिया था। आपने कहा था—"अगर एक विदेशी भाषा को शिक्षा का माध्यम बना दिया जाय तो विद्यार्थियों मे से स्वतन्त्र विचार करने की शक्ति नष्ट हो जायगी। हमारी सभ्यता और राष्ट्रीयता की उन्नति मातृभाषा द्वारा ही हो सकती है।"

साहित्यकार के रूप मे आपने अपनी एक सर्वथा विशिष्ट भाव-धारा का प्रचार किया था। मूल रूप से आपके हिन्दी-प्रेम का परिचय आपके द्वारा लिखित उन पदों से मिल जाता है जो आपने समय-समय पर अपने सद्गुरु की स्तुति और उपासना मे लिखे थे। आपके इन हिन्दी के पदों मे सिन्धी, उर्दू, फारसी तथा पजाबी के शब्दों का ऐसा स्वाभाविक प्रयोग हुआ है कि उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत नही होता कि आप किसी विशेष प्रदेश या वाद के बन्धन से जकडे हुए हैं। आपने मानव-मात्र के कल्याण की भावना जिस शब्दावली मे व्यक्त की है वह शब्दावली आध्यात्मिक क्षेत्र मे सभी की है। एक उदाहरण देखिये .

कचन काया सभ इहि माया
आया गंवाया सभ यह छाया
साधो इह देह ठाठ तम्बूरे का
बाजत-बाजत टूटे तार
कहाँ बुद्धि गई कहाँ विचार।

जग सारा फानी-फानी
दो दिन की है मजमानी

साधो गुम हुआ राग हजूरे का
रुपया रोपा, इहि बर्तन सोना
सभ तज कर इक दिन रोना
साधो सगल पसारा कूड़े का।

आपकी वाणियो मे कबीर, नानक तथा दादू-जैसे लोकोत्तर भावो का जो समावेश हुआ है उसीके कारण आप सब वर्गों और प्रदेशो मे समान रूप से लोकप्रिय थे। आपको सिन्ध प्रदेश का 'गुरु नानक' कहा जाता था। यह आपके साधु स्वभाव और विमल व्यक्तित्व का ही सुपुष्ट प्रमाण है कि आपकी स्मृति मे भारत सरकार ने 25 नवम्बर सन् 1969 को एक डाक टिकट निकाला था।

आपका निधन 16 जनवरी सन् 1966 को हुआ था।

सन्त स्वामी टेऊराम

आपका जन्म सिन्ध प्रदेश के हैदराबाद जनपद के खण्डू नामक ग्राम मे सन् 1888 मे हुआ था। आपके पिता श्री चेलाराम आसनदास सन्तो और सूफियो के सेवक थे और प्राय अपने निवास पर साधु-सन्यासियो को आमन्त्रित करते रहते थे। टेऊरामजी की माता बचपन से ही 'शिवोऽहं-शिवोऽहं' की लोरियाँ गाकर उन्हे सुलाया करती थी। इन्ही

पारिवारिक संस्कारों के कारण आपका मन 'खेल-कूद में नही लगता था और आप प्रायः अपने सभी साथी बालकों को एकत्रित करके राम नाम की धुन गाया करते थे और 14 वर्ष की आयु मे ही आपने 'गुरु मन्त्र' की दीक्षा ले ली थी।

जब अपने पिताजी के देहावसान के उपरान्त टेऊराम जी पर पिता के कारोबार का उत्तरदायित्व आ गया तब आप दुकान पर भी बैठने लगे। वहाँ अपने व्यापार-सम्बन्धी कार्यों मे व्यस्त रहते हुए भी आप प्राय भक्ति-भावना मे डूबे रहते थे और दिन मे 2-3 घण्टे के लिए ही दुकान खोलते थे। आपकी इस प्रवृत्ति को देखकर आपके बडे भाई श्री टहलराम जी आपसे बहुत क्रोधित होते थे। एक दिन टेऊराम जी श्मशान भूमि मे जाकर एक वृक्ष के नीचे ध्यान-मग्न हो गए। जब 2-3 दिन तक भी उनका कुछ पता न चला तो आखिर मे श्मशान भूमि मे मिले।

30 वर्ष की आयु मे ही आप अपनी जन्म-भूमि को छोडकर निकल पडे और प्रेमा-भक्ति मे निमग्न होकर भ्रमण करने लगे। अपनी इस भक्ति-साधना के प्रसग मे आपने सस्कृत के वेदो, उपनिषदो तथा श्रीमद्भगवद्गीता आदि अनेक ग्रन्थो का स्वाध्याय करके अपना ज्ञान बढाया था और कविताओ मे भी आपने इसी ज्ञान का सागर उँडेला था। एक ओर आपने जहाँ अनेक सन्तो एव भक्त कवियो की वाणियो का गम्भीर अध्ययन किया था वहाँ दूसरी ओर अपनी रचनाओ को रामकली, प्रभाती, आसा, धनाश्री, भैरवी, सोरठ, तिलग और मासू आदि रागो मे बाँधा था। आपकी रचनाएँ हिन्दी के दोहे, सवैये, कवित्त तथा कुण्डलिया आदि विविध छदो मे लिखी गई है। आपकी प्रकाशित काव्य-कृतियो मे 'कवितावली', 'छन्दावली' तथा 'अमरापुर की वाणी' के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य है। आपकी समस्त वाणियो का सकलन 'प्रेम प्रकाश' नामक ग्रन्थ मे प्रस्तुत किया गया है

आपकी रचनाओ मे सरल शब्दावली मे भक्ति, ज्ञान तथा वेदान्त की जो त्रिवेणी प्रवाहित हुई है वह वास्तव मे आपके कवि-चातुर्य का ज्वलन्त साक्ष्य प्रस्तुत करती है। आपका काव्य अधिकांशत कबीर से प्रभावित दृष्टिगत होता है। कबीर की भाँति ही आप रहस्यवादी पद्धति से अपने आराध्य की विशेषताओ का वर्णन करने मे पूर्णत सफल हुए थे।

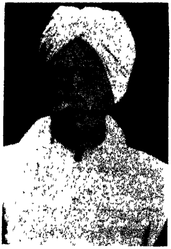
एक उदाहरण देखिये

जैसे शब्द नभ मह, स्पर्श पवन माँहि;
अग्नि माँहि उष्णता, पूरन पछानिये।
सलिल मे रस जैसे, गन्ध है धरन माँहि,
दूध माँहि घृत, रवि-किरण समानिये॥
मिर्चों माँहि तीक्ष्णता, ईख माँहि मधुरता,
घृत माँहि चिकनता, गुणी गुण मानिये।
कहै टेऊ तैसे नर सकल जगत् माँहि,
निजातम ब्रह्म इक, व्यापक पछानिये॥

आप सन् 1943 मे हैदराबाद मे ब्रह्मलीन हुए थे।

श्री ठाकुरप्रसाद मणि त्रिपाठी

श्री त्रिपाठी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रख्यात नगर इलाहाबाद के दारागज मोहल्ले मे सन् 1865 मे हुआ था। आपके पिता श्री पण्डित रामनेवाज मणि त्रिपाठी नगर के प्रख्यात वैद्य और पीयूषपाणि चिकित्सक थे। आपके पूर्वज गोरखपुर जनपद के बडी सोपरी नामक ग्राम से आकर वहाँ बसे थे। पण्डित रामनेवाज मणि त्रिपाठी इलाहाबाद के एक प्रेस मे साधारण नौकरी करते थे और



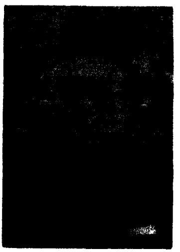
पारिवारिक सस्कारो के कारण आपने अपने पुत्र श्री त्रिपाठी को काशी मे सस्कृत की अच्छी शिक्षा दिलाई थी। श्री ठाकुरप्रसाद मणि त्रिपाठी के गुरु श्री अम्बिकादत्त व्यास सस्कृत के परम निष्णात विद्वान् तथा साधक थे। आप अपने जन्म-स्थान मे अनेक बार भागकर वर्षों तक काशी मे योग-साधना करते रहे थे। 'सरस्वती' के भूतपूर्व सम्पादक श्री देवीदत्त शुक्ल भी श्री त्रिपाठी के सहाध्यायी थे।

आपने संस्कृत वाङ्मय का विधिवत् पारायण करके अपनी प्रतिभा से हिन्दी मे कर्मकाण्ड-सम्बन्धी कुछ ग्रन्थ भी लिखे थे। आपके द्वारा लिखी 'विवाह सोपान' नामक पुस्तक अत्यत महत्त्वपूर्ण है। इसका प्रकाशन हिन्दी तथा संस्कृत-ग्रन्थों के प्रमुख प्रकाशक बम्बई के 'खेमराज श्रीकृष्णदास' की ओर से हुआ था। आपने अन्त्येष्टि-क्रिया से सम्बन्धित एक और पुस्तक 'स्वर्ग सोपान' नाम से लिखी थी, जो अभी तक अप्रकाशित है। आपने 'सरयूपारीण' ब्राह्मणो के इतिहास से सम्बन्धित एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी लिखा था। यह आधा संस्कृत तथा आधा हिन्दी मे है। इस ग्रन्थ का नाम 'सरवरिया विवरण' है। आपके पारिवारिक जन इस ग्रन्थ के प्रकाशन की व्यवस्था कर रहे है।

आपका निधन 28 जून सन् 1940 को 75 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री ठाकुरप्रसाद शर्मा 'सुरेश'

श्री 'सुरेश' जी का जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के 'बिसवाँ' नामक कस्बे में सन् 1883 मे हुआ था। आपके पिता श्री लक्ष्मीनारायण शर्मा ने आपकी शिक्षा-दीक्षा घर पर ही अपने पारिवारिक परिवेश मे सम्पन्न कराई थी। आपके काव्य-गुरु श्री 'दत्त द्विजेन्द्र' थे और उनके सम्पर्क के कारण ही आप अनेक वर्ष तक 'बिसवाँ कवि मण्डल' के स्थानापन्न मन्त्री भी रहे थे। आप जहाँ एक उत्कृष्ट कवि थे वहाँ गद्य-लेखन के क्षेत्र मे भी आपने अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। आपके द्वारा लिखी गई गद्य-कृति 'ह्वेनसांग की यात्रा' को देखकर आपकी गद्य-लेखन-क्षमता का पता चलता है।



समस्या-पूर्ति-परक कविताएँ लिखने मे आप परम निष्णात थे। आपकी ऐसी समस्या-पूर्ति-परक रचनाओं का एक सकलन भी तैयार है। आपकी काव्य-प्रतिभा का परिचय इस समस्या-पूर्ति से प्राप्त किया सकता है.

पाती लिखि भेजी श्याम कैसी चित ठानी यह,
नेकहू न मेरी बारी बैस को बिचारी है।
उन हूँ को दोष कछू लागत न मोहि ऊधो,
बात सब वाही लाभ कुबिजा बिगारी है।।
वा ने तो कियो है ठीक तियन सुभाव रीति,
नाहक 'सुरेश' तुम बुद्धि को बिसारी है।
योग को न नाम लीजियेजू सोग होवैं सुनैं,
योग के न योग अबैं उमर हमारी है।।

आपका निधन सन् 1957 मे हुआ था।

श्री ठाकोरभाई मणिभाई देसाई

श्री देसाई का जन्म गुजरात प्रदेश के बलसाड जनपद के बेगाम नामक स्थान में फरवरी सन् 1903 मे हुआ था। देश के अन्यतम नेता महात्मा गाधी के प्रभाव से आपने उनके द्वारा सस्थापित अनेक सस्थाओं के पोषण और सवर्धन मे अपना सहयोग दिया था। आपने अनेक वर्ष तक गाधीजी द्वारा सस्थापित 'गुजरात विद्यापीठ' के कुलनायक के पद पर रहते हुए हिन्दी को उच्चतम स्थान दिलाने का सराहनीय प्रयास किया था। हिन्दी को उसका उचित स्थान प्राप्त कराने मे प्रयत्नशील रहने के साथ-साथ गुजराती भाषा के उत्कर्ष के लिए भी आपने महत्त्वपूर्ण कार्य किया था।

आपने जहाँ महात्मा गाधी जी द्वारा प्रारम्भ किये गए 'हरिजन' नामक पत्र के सम्पादन मे सहयोग दिया था वहाँ आप 'नवजीवन ट्रस्ट' के ट्रस्टी भी रहे थे। आपने गुजराती पत्रिका 'शिक्षण अने साहित्य' के सम्पादक मण्डल के प्रमुख सदस्य के रूप मे भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।

आपने अच्छे लेखक और अनुवादक के रूप मे भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया था। आपके द्वारा अनूदित

'स्थितप्रज्ञ दर्शन' तथा 'गीता प्रवचन' नामक पुस्तकें महत्त्व-पूर्ण हैं।

आपका निधन 14 जून सन् 1972 को हुआ था।

श्री तड़ितकान्त बख्शी

श्री बख्शी का जन्म 11 जुलाई सन् 1875 को कलकत्ता मे हुआ था। आप प्रख्यात अँग्रेजी पत्र 'अमृत बाजार पत्रिका' के संचालक-सम्पादक श्री तुषारकान्ति घोष के फुफेरे भाई थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा कलकत्ता मे हुई थी। जिन दिनो आप कलकत्ता के 'प्रेसीडेंसी कालेज' मे पढ़ा करते थे उन दिनो आप आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय के अत्यन्त प्रिय एव स्नेह-भाजन शिष्यो मे से थे। कलकत्ता विश्वविद्यालय से 'रसायन शास्त्र' मे स्नातक कीउपाधि प्राप्त करने के उपरात आप केवल 21 वर्ष की आयु मे जबलपुर के गवर्नमेंट कालेज मे रसायन विज्ञान के अध्यापक हो गए थे। आपने जहाँ एम० ए० की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की थी वहाँ अन्य विषयो का भी आप प्रचुर ज्ञान रखते थे।

जबलपुर मे शिक्षकीय जीवन प्रारम्भ करने पर जहाँ आपने नगर की शैक्षणिक जागृति के क्षेत्र मे उल्लेखनीय सहयोग प्रदान किया था वहाँ अन्य अनेक सामाजिक एव साहित्यिक सस्थाओ से भी आपका निकट का सम्पर्क रहा था। आपने नगर मे 'बगाली साहित्य परिषद्' और 'बगाली पुस्तकालय' नामक सस्थाओ की स्थापना करने के साथ-साथ आपने जबलपुर की बहुत-सी हिन्दी सस्थाओ मे भी अपना अनन्य सहयोग प्रदान किया था। आपने जहाँ हिन्दी में 'रसायन शास्त्र' पर एक पुस्तक लिखी थी वहाँ अहिन्दी-भाषियो के उपयोग के लिए एक 'हिन्दी व्याकरण' भी अँग्रेजी मे लिखा था।

आपका जबलपुर के जिन अनेक प्रमुख हिन्दी-मेवियो मे निकट का सम्पर्क रहा था उनमे सर्वश्री विनायकराव, रघुवरप्रसाद द्विवेदी, लज्जाशकर झा और कामताप्रसाद गुरु के नाम विशेष रूप से स्मरणीय है। हिन्दी-व्याकरण-सम्बन्धी जो ग्रन्थ आप अँग्रेजी मे लिख रहे थे उसके विषय मे भी आपकी चर्चा उक्त सभी साहित्यकारो से होती रहती थी और आप इन सबके परामर्शों से लाभान्वित होते रहते थे। हिन्दी-व्याकरण जहाँ आपका अत्यन्त प्रिय विषय था वहाँ 'रामचरितमानस' के प्रति भी आपकी अगाध आस्था थी। आप प्रतिदिन उसका पारायण किया करते थे। जबलपुर की सुप्रसिद्ध सस्था 'राष्ट्रीय हिन्दी मन्दिर' के साथ आप यावज्जीवन अत्यन्त निकटता से जुड़े रहे थे।

आपका निधन 30 मार्च सन् 1928 को हुआ था।

श्री तनसिंह

श्री तनसिह का जन्म 25 जनवरी सन् 1924 को बाडमेर (राजस्थान) के बैरसिया नामक ग्राम मे हुआ था। आपको 'तणेराव' भी कहा जाता था। साधारण राजपूत परिवार मे जन्म लेकर आपने चौपासनी (जोधपुर) से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की और पिलानी के 'बिरला शिक्षा-सस्थान' से 'बी० ए० करके नागपुर विश्वविद्यालय से एल-एल० बी० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। आप जब नागपुर मे अध्ययन कर रहे थे तब ही आपने 'सघर्ष' नामक पत्रिका का सम्पादन-प्रकाशन जयपुर से प्रारम्भ कर दिया था।

आप प्रकृति से भक्त थे और साधारण ग्रामीण-जैसे वेश मे रहा करते थे। लोग आपको केवल एक राजनेता के रूप मे ही जानते थे। आपका कवि तथा साहित्यकार का रूप बहुतो से छिपा हुआ था। सन् 1952 मे 1962 तक बाड-मेर क्षेत्र के विधायक रहने के अतिरिक्त आप वहाँ की नगर-पालिका के भी कई वर्ष अध्यक्ष रहे थे। पत्रकारिता के क्षेत्र मे आपने इतना सघर्ष किया था कि सम्पादन करने के अति-रिक्त प्रेस मे कम्पोजीटर का काम करने के साथ-साथ आप मशीन चलाने मे भी पीछे नही रहे थे।

आप जहाँ कुशल गद्य-लेखक थे वहाँ आपकी लिखी हुई 200 से अधिक कविताएँ आपके कवि रूप को उजागर कर रही है। आपके द्वारा लिखे गए गीत राजस्थान की अनेक सामाजिक और सास्कृतिक सस्थाओ के द्वारा अत्यन्त उदारतापूर्वक अपनाए गए थे। आपके ऐसे गीतो का सकलन 'झनकार' नाम से प्रकाशित हुआ है। 'समाज चरित्र', 'साधना-पथ', 'साधक की समस्याएँ', 'शिक्षक की समस्याएँ',

तथा 'गीता और समाज-सेवा' आदि आपकी गद्य-पुस्तकें है। आपको 'सरस्वती सुत' और 'शक्ति-सेवी' के पावन अभिधान से भी अभिषिक्त किया गया था।

आपका निधन 7 दिसम्बर सन् 1979 को हुआ था।

श्री तनसुखजी व्यास

श्री व्यास का जन्म सन् 1886 मे राजस्थान की जोधपुर रियासत के 'पाली-मारवाड' नामक स्थान मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा प्राचीन पद्धति पर हुई थी। हिन्दी तथा सस्कृत साहित्य का अच्छा ज्ञान प्राप्त करके आपने आयुर्वेद के अनेक ग्रन्थो का स्वाध्याय करके आयुर्वेदिक पद्धति से चिकित्सा करने का



कार्य प्रारम्भ कर दिया था। आप जहाँ कुशल चिकित्सक के रूप मे समस्त राजस्थान मे विख्यात थे वहाँ अनेक समाज-सेवी सस्थाओ से भी आपका अत्यन्त निकट का सम्बन्ध रहा था। आपकी आयुर्वेद-सम्बन्धी समाज-सेवाओ को दृष्टि मे रखकर जहाँ 'अखिल भारतीय आयुर्वेद सम्मेलन' ने आपको 'आयुर्वेद-पचानन' की सम्मानोपाधि से विभूषित किया था वहां ब्रिटिश सरकार की ओर से भी 'राय साहब' का खिताब प्रदान किया गया था। आपने जोधपुर राज्य मे 'मारवाड़ आयुर्वेदिक बोर्ड' की स्थापना की थी वहाँ अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक आप उसके अध्यक्ष व निदेशक रहे थे।

आपके आयुर्वेद-सम्बन्धी अनेक शोधपूर्ण लेख जहाँ हिन्दी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित हुआ करते थे वहाँ आपने अहमदाबाद से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दी वैद्य कल्पतरु' नामक पत्र का सम्पादन भी कई वर्ष तक किया था। आपके द्वारा सम्पादित और जोधपुर से प्रकाशित आयुर्वेद-सम्बन्धी पत्र 'स्वास्थ्य रक्षा' (मासिक) का स्थान भी आयुर्वेद जगत् मे सर्वथा अनन्य था। आपके द्वारा लिखित आयुर्वेद-सम्बन्धी ग्रन्थो मे 'बीमारों का आहार', 'अमीरो की बीमारियाँ', 'ताकत की दवाएँ', 'रजस्वला के समय पालन के नियम' तथा 'बालको की भीषण मृत्यु-सख्या' के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण है। आपने ज्योतिष-सम्बन्धी 'भवानी वाक्य ज्योतिष' नामक एक ग्रन्थ दोहा छन्द मे लिखा था।

आपका निधन सन् 1953 मे हुआ था।

आचार्य तारकेश्वर उपाध्याय

श्री उपाध्याय का जन्म उत्तर प्रदेश के बलिया जनपद के नरही नामक स्थान मे 1 दिसम्बर सन् 1922 को हुआ था। आप अपने शैशव मे ही माता-पिता के सुख से वचित हो गए थे। आपका लालन-पालन एव शिक्षण अपने बडे भाई श्री मधुमगल उपाध्याय के निरीक्षण मे हुआ था। अपने ग्राम के प्राइमरी स्कूल मे प्रारम्भिक कक्षाओ की पढाई करके आपने बलिया के



'लक्ष्मी देवी मैस्टन हाई स्कूल' से हाई स्कूल की परीक्षा सन् 1934 मे उत्तीर्ण की थी। इसके उपरान्त आप बनारस के क्वीन्स कालेज मे सन् 1936 मे इण्टरमीडिएट की परीक्षा देकर इलाहाबाद विश्वविद्यालय मे चले गए और वहाँ से आपने सन् 1939 मे बी०ए० तथा सन् 1941 मे बी०टी० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी।

अपना अध्ययन समाप्त करने के उपरान्त आपने शिक्षक का जीवन प्रारम्भ किया और सन् 1941 मे 'गाधी इण्टर कालेज कप्तानगंज (देवरिया)' मे 'प्रधानाचार्य' के पद पर आपकी नियुक्ति हो गई। इस बीच आपने सन् 1950 मे आगरा विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली और फिर आप वहाँ से गाजीपुर के 'जनता जनार्दन इण्टर कालेज' मे चले गए और सन् 1950 से सन् 1967 तक बराबर उसीकी सेवा मे संलग्न रहे थे।

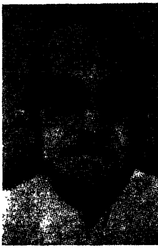
आप जहाँ अध्यवसायी अध्यापक के रूप मे विख्यात थे वहाँ साहित्य-रचना के क्षेत्र मे भी आपने अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। एक सहृदय कवि के रूप मे आपका उस क्षेत्र मे अत्यन्त विशिष्ट स्थान बन गया था। आपके द्वारा लिखित 'पथ पर' नामक महाकाव्य अत्यन्त लोकप्रिय हुआ था। इस महाकाव्य की उत्कृष्टता का सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि थोडे ही समय मे इसका प्रथम संस्करण समाप्त हो गया था। आपकी अन्य काव्य-कृतियो मे 'कामेश्वर धाम', 'वन्दिता', 'युग किरण' और 'छाया' के नाम विशेष रूप मे उल्लेखनीय है। इनमे से 'छाया' को आप पूर्ण भी नही कर सके थे। आप अँग्रेजी, हिन्दी और संस्कृत के अतिरिक्त भोजपुरी तथा उर्दू भाषा के अच्छे ज्ञाता थे। आपकी रचनाएँ जहाँ हिन्दी के अनेक प्रमुख पत्रो मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी वहाँ आप 'आकाशवाणी' पर भी प्रसारण करते रहते थे।

आपका निधन काशी विश्वविद्यालय के 'सर सुन्दरलाल अस्पताल' मे 30 जुलाई सन् 1967 को हुआ था।

डॉ० ताराचन्द

आपका जन्म 17 जून सन् 1888 को पश्चिमी पाकिस्तान के स्यालकोट नामक नगर मे हुआ था। इलाहाबाद विश्व-विद्यालय से उच्चतम शिक्षा प्राप्त करके आपने लन्दन के आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की थी। आपने कायस्थ पाठशाला इलाहाबाद से शिक्षक का जीवन प्रारम्भ किया था और अनेक वर्ष तक उसके प्राचार्य भी रहे थे। आपने जहाँ सन् 1945 मे अखिल भारतीय इतिहास कांग्रेस की अध्यक्षता की थी वहाँ उसी वर्ष आप प्रयाग विश्वविद्यालय मे राजनीति शास्त्र के प्राध्यापक नियुक्त हुए थे और कई वर्ष तक इस पद पर कार्य करते रहे थे।

आप जहाँ सन् 1947-48 मे प्रयाग विश्वविद्यालय के उपकुलपति के पद पर प्रतिष्ठित रहे थे वहाँ सन् 1948 से 1951 तक भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय मे सचिव तथा शिक्षा-परामर्श-दाता रहे थे। सन् 1951 मे 1956 तक ईरान मे भारत के राजदूत रहने के अतिरिक्त 'भारतीय स्वाधीनता-संग्राम का इतिहास' लिखने के लिए भारत सरकार की ओर से जो समिति नियुक्त की गई थी आप उसके अवैतनिक अध्यक्ष रहे थे। आप अगस्त 1957 तथा अप्रैल 1962 मे दो बार 5-5 वर्ष के लिए राज्य सभा के सदस्य मनोनीत किये गए थे।



जहाँ आप अँग्रेजी के अच्छे लेखक थे वहाँ हिन्दी मे भी आपने कुछ पुस्तके लिखी थी। आप 'हिन्दुस्तानी' के समर्थको मे अग्रणी समझे जाते थे। आपकी गणना प्रख्यात इतिहास-वेत्ताओ मे की जाती थी। आपके द्वारा लिखित हिन्दी पुस्तकों मे 'हिन्दुस्तान के निवासियो का संक्षिप्त इतिहास' (1934) तथा 'हिन्दुस्तानी क्या है' (1939) के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

आपका निधन सन् 1970 मे हुआ था।

श्री ताराचन्द गाजरा

श्री गाजरा का जन्म सिन्ध प्रदेश के शिकारपुर नामक नगर मे 12 दिसम्बर सन् 1886 को हुआ था। आपके पिता

श्री डेऊमल प्रख्यात समाज-सेवी थे। इसी कारण श्री गाजरा जी के जीवन में भी समाज-सेवा की भावनाएँ हिलोरें मारती रहती थी। आप आर्य-समाज के अच्छे कार्यकर्त्ता थे और आपने उसके मंच से सिन्धी जनता की अच्छी सेवा की थी। आपने सिन्ध में दलितोद्धार, वेद-प्रचार और आर्य वीर दल के सगठन मे उल्लेखनीय योगदान दिया था। जिन दिनों हैदराबाद (दक्षिण) मे वहाँ के नवाब की ओर से आर्य जनता पर होने वाले अत्याचारों के विरोध में 'आर्य सत्याग्रह' हुआ था उसमे भी आपने अत्यन्त उत्साह से भाग लिया था।

आपने कुछ दिन तक स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा सस्थापित 'गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय' मे अध्यापन का कार्य भी किया था। जब सन् 1946 मे सिन्ध सरकार ने 'सत्यार्थ प्रकाश' के सिन्धी भाषा के अनुवाद पर प्रतिबन्ध लगाया था तब आपने उसके विरुद्ध प्राणपण से आन्दोलन किया था। आप आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध के प्रमुख पदाधिकारियो मे से थे।

सिन्ध मे हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की जड जमाने मे आपने जहाँ आर्य-समाज के माध्यम से एक सुपुष्ट भूमिका का कार्य किया था वहाँ सिन्धी पत्र-पत्रिकाओं मे हिन्दी की महत्ता के सम्बन्ध मे अनेक लेख लिखे थे।

आपका निधन भारत-विभाजन के उपरान्त सन् 1970 मे बम्बई मे हुआ था।

श्री ताराचन्द सप्रू

श्री सप्रू का जन्म श्रीनगर (कश्मीर) मे सन् 1894 मे हुआ था। आप कश्मीर प्रदेश के प्रथम ग्रेजुएटो मे से थे। आपने सन् 1925 मे जहाँ पहले-पहल कश्मीरी भाषा की फिल्म-कहानी लिखी थी वहाँ सन् 1939 मे श्रीनगर मे 'श्री राम कृष्ण आश्रम शिक्षा-सस्थान' की स्थापना करके अँग्रेजी-हिन्दी-माध्यम से अवासीय शिक्षा का सर्वथा नया प्रयोग किया था। खेद का विषय है कि आर्थिक कठिनाइयो के कारण आपकी यह सस्था असमय मे ही बन्द हो गई।

आपने कश्मीर राज्य के शिक्षा-विभाग मे शिक्षक के रूप मे कार्य-रत रहते हुए हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि के प्रचार का कार्य अत्यन्त तत्परतापूर्वक किया था। जहाँ-जहाँ आपका स्थानान्तरण होता रहता था आप हिन्दी के कार्य को आगे बढाने का प्रयत्न करते रहते थे। आपने सन् 1918 मे श्री पण्डित आनन्द शास्त्री के सहयोग से 'सौन्दर्य लहरी' का हिन्दी तथा अँग्रेजी अनुवाद भी प्रकाशित किया था।

आपका निधन सन् 1963 मे हुआ था।

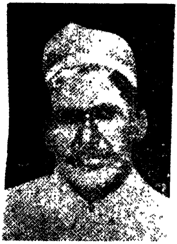
पण्डित तारादत्त गैरोला

श्री गैरोला का जन्म उत्तर प्रदेश के टिहरी गढवाल क्षेत्र के ढालढुग नामक ग्राम मे 6 जून सन् 1875 को हुआ था। अपनी प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम के प्राइमरी स्कूल मे पूर्ण करने के उपरान्त आपने सन् 1897 मे बरेली कालेज से प्रथम श्रेणी मे बी०ए० किया था। यहाँ पर यह बात विशेष रूप से उल्लेख करने योग्य है कि आपको इस परीक्षा मे सफलता प्राप्त करने पर 'टेम्पटन स्वर्ण पदक' प्रदान किया गया था। बी० ए० करने के उपरान्त आप प्रयाग चले गए और वहाँ के 'म्योर सेण्ट्रल कालेज' से सन् 1899 मे एम० ए० करने के उपरान्त आपने सन् 1900 मे वकालत की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली थी। वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् आप देहरादून चले गए और वहाँ पर प्रैक्टिस शुरू कर दी थी।

अपने इस देहरादून के निवास-काल मे आपने सन् 1901 मे 'गढवाल यूनियन' अथवा 'गढवाल हित प्रचारिणी सभा' नामक सस्था की स्थापना की थी और सन् 1905 मे उसकी ओर से मासिक 'गढवाली' पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया था। इस पत्रिका के सम्पादक-मण्डल मे आपके साथ सर्वश्री चन्द्रमोहन रतूडी और गिरिजादत्त नैथाणी भी रहे थे। इस त्रिमूर्ति ने 'गढवाली' के माध्यम से वहाँ की जनता मे जागृति उत्पन्न करने का अभिनन्दनीय प्रयास किया था। आपने टिहरी गढवाल के राजा कीर्तिशाह की मृत्यु के उपरान्त मिण्टो मार्ले सुधार के अन्तर्गत बनी कौन्सिल की की सदस्यता भी स्वीकार की थी और सन् 1917 मे आपको ब्रिटिश सरकार ने 'रायबहादुर' की सम्मानोपाधि भी प्रदान

की थी। सन् 1917-18 मे पडे देश के अकाल मे उल्लेखनीय सेवा-सहायता करने के उपलक्ष्य मे आपको सरकार की ओर से 'केसरे हिन्द' पदक भी प्रदान किया गया था।

आप जहाँ एक उत्कृष्ट कोटि के पत्रकार और उत्साही समाज-सेवक थे वहाँ साहित्य-रचना के क्षेत्र में भी आपकी देन सर्वथा अभिनन्दनीय थी। गढवाली और हिन्दी मे कविता लिखने की दिशा मे आपने जिस प्रतिभा का परिचय दिया था उसका प्रत्यक्ष उदाहरण आपकी 'सदेई' नामक काव्य-रचना को देखकर मिल जाता है। इसकी रचना आपने गढवाली भाषा मे की थी और इसमे 5 खण्ड तथा 105 पद्य है। इस पुस्तक की उपादेयता श्री गिरिजादत्त



नेथाणी की इन पक्तियो से अक्षरश. सही प्रतीत होती है—"इस पुस्तक मे पण्डित जी के मातृभूमि-प्रेम की पराकाष्ठा, भक्तिभाव का अतिरेक, भाई-बहन की अगाध प्रीति, माता के वात्सल्य का उत्कृष्ट नमूना ऐसी मार्मिक भाषा मे व्यक्तकिया है कि बडे से बड़ा निष्ठुर प्राणी या अबोध बालक भी बिना आँसू बहाये पुस्तक आद्योपान्त नही पढ सकेगा। मैंने अपने आठ वर्ष के बालक को यह पुस्तक सुनाई, सुनते ही उसकी आँखो से आंसुओ की झडी लग गई।" वास्तव मे आपकी इस रचना मे ग्रामोन्मुखी भावुकता कूट-कूट कर भरी गई है। 'सेदेई' के अतिरिक्त आपकी दूसरी रचना 'गढवाली कविता-वली' है। इसमें आपके द्वारा लिखित और समय-समय पर 'गढवाली' पत्र मे प्रकाशित आपकी कविताओ का सकलन प्रस्तुत किया गया है। आपने जहाँ कविता के क्षेत्र मे अपनी विशिष्ट प्रतिभा का ज्वलन्त उदाहरण प्रस्तुत किया था वहाँ अँग्रेजी मे भी कई पुस्तके लिखी थी। सन् 1937 मे 'गढवाल साहित्य परिषद्' की स्थापना करके आपने साहित्य के क्षेत्र में जिन अनेक प्रतिभाओ को प्रोत्साहन तथा प्रश्रय दिया था उनमे डॉ० पीताम्बरदत्त बडथ्वाल का नाम विशेष रूप से ध्यातव्य है। गढवाली लोक-सस्कृति और साहित्य को समृद्ध बनाने की दिशा मे आपने सर्वथा अनुपम अभिनन्दनीय कार्य किया था।

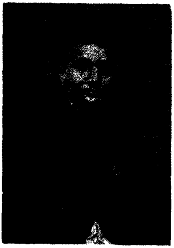
36 वर्ष की आयु से ही आप गठिया रोग से पीड़ित रहने लगे थे और इस बीमारी के कारण आपने प्राकृतिक चिकित्सा के विविध प्रयोग भी किए थे। आपने 12 वर्ष तक नमक का बिलकुल भी सेवन नही किया था। अन्तिम दिनों मे आपकी इस बीमारी ने इतनी भयकरता धारण कर ली थी कि इसीके कारण आपका निधन 28 मई सन् 1940 को हुआ था। आपके निधन के उपरान्त हिन्दी के प्रथम डी० लिट्० डॉ० पीताम्बर दत्त बडथ्वाल ने जो उद्गार प्रकट किए थे उनमे आपके गरिमामय व्यक्तित्व का सही अकन हुआ है। उन्होने कहा था—"मै उनको अपना गुरु और हितचिन्तक समझता आया हूँ। परामर्श, प्रोत्साहन और सहायता के रूप मे उन्होने जिस प्रकार मुझे साहित्यिक जीवन मे आगे बढ़ाया उसके लिए उनके प्रति पूर्ण कृतज्ञता करने के लिए मेरे पास शब्द नही है।"

श्री तारानाथ रावल

श्री रावल का जन्म 31 दिसम्बर सन् 1906 को मध्य प्रदेश के इन्दौर नामक नगर मे हुआ था। आपका परिवार कट्टर आर्यसमाजी था और आपके पिता डॉ० लालजी भाई ने इन्दौर की 'मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति' की स्थापना मे सहयोग देने के साथ-साथ वहाँ हिन्दी का प्रचार करने मे भी बढ-चढकर भाग लिया था। महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय ने जब 'हिन्दू विश्वविद्यालय' की स्थापना के लिए समस्त देश का भ्रमण करके अर्थ-सग्रह किया था उसमे भी आप पीछे नही रहे थे। इन्दौर मे ही विद्याध्ययन करके रावल जी ने समाज-सेवा के क्षेत्र को अपना लिया था और अपने पिता जी द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चलने लगे थे।

राजस्थान के प्रख्यात स्वतन्त्रता सेनानी और पत्रकार श्री अर्जुनलाल सेठी आपके श्वसुर थे। अपने पिता तथा श्वसुर के द्वारा हिन्दी-सेवा तथा पत्रकारिता के मार्ग को

अपनाए जाने के कारण रावल जी भी उसी दिशा मे पूर्णतः सलग्न हो गए। श्री सेठी जी के साथ ही आप अजमेर आ गए



और वहाँ पर रहते हुए आपने पत्रकारिता और राष्ट्र-सेवा की विधिवत् दीक्षा ग्रहण की और सन् 1928 मे आप स्थायी रूप से बीकानेर जाकर रहने लगे। पहले तो आपने वहाँ अपना जीवन एक शिक्षक के रूप मे प्रारम्भ किया और बाद मे धीरे-धीरे आप वहाँ के समाज-सेवा के क्षेत्र मे उतर गए। आपने जहाँ नोखा की एक जैन शिक्षण-सस्था मे 'प्रधानाध्यापक' के रूप मे कार्य किया वहाँ सन् 1934 मे बीकानेर मे एक 'हरिजन पाठशाला' की स्थापना मे भी अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया। बीकानेर की 'नागरी प्रचारिणी सभा', 'सेठिया जैन पुस्तकालय' और 'सज्जनालय' आदि अनेक सस्थाओं के माध्यम से आपने साहित्य के क्षेत्र मे भी अपनी महत्त्वपूर्ण सेवाओ की छाप छोडी है। इस प्रकार समाज-सेवा और अध्यापन मे सलग्न रहते हुए आपने अनेक राजनीतिक सम्मेलनो मे भी बढ़-चढकर भाग लिया था।

एक उत्कृष्ट और प्रखर पत्रकार के रूप मे भी रावल जी ने अपने 'प्रजामित्र' (साप्ताहिक) पत्र के माध्यम से बीकानेर की जनता की जो सेवा की थी, उसके कारण आपको 'बीकानेर का पत्रकार-पितामह' कहा जाता था। अपनी निर्भीक टिप्पणियो और अग्रलेखों के कारण आपको बीकानेर के तत्कालीन शासन मे सघर्षों के बहुत जहरीले घूंट पीने पडे थे। इस सम्बन्ध मे 3 जुलाई सन् 1939 को अजमेर से प्रकाशित होने वाले 'विजय' नामक साप्ताहिक मे आपने जो कटूक्ति की थी उससे आपके सघर्षों का किंचित् आभास हमे हो जाता है। आपने लिखा था—"मुझे इस बात का गौरव है कि मैं बीकानेर राज्य-भर मे परदेसी कहा जाते हुए भी ऐसा अकेला पहला व्यक्ति हूँ, जिसने संवाद-प्रेषण का कार्य बिलकुल प्रकट रूप में करना शुरू किया है। मै एक स्वतन्त्र पत्रकार हूँ और स्वतन्त्र पत्रकार किसी व्यक्ति या दल विशेष का गुलाम नही होता।" पत्रकारिता के क्षेत्र मे कार्य करते हुए रावल जी ने जहाँ अपने जीवन मे अनेक कठिनाइयो और सघर्षों का सामना किया था। आप प्रायः यह कहा करते थे :

"साँच कहूँ तो मारि है, झूठे जग पतियाय।
ये जग काली कूकरी, जे छेड़े तो खाय॥

आपकी निर्भीकता और स्पष्टवादिता इस सीमा तक बढ गई थी कि उसने आपके अनेक शत्रु भी उत्पन्न कर दिए थे।

एक प्रखर तथा ओजस्वी पत्रकार के रूप मे आपने जहाँ अत्यन्त लोकप्रियता प्राप्त की थी वहाँ एक उत्कृष्ट साहित्यकार के रूप मे भी आपकी देन कम महत्त्व नही रखती। आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'चरखा पुराण', 'गोलमेज का गोलमाल', 'चतुर बालक', 'वीरता की कहानियाँ' और 'राजपूतो के जौहर' आदि के नाम उल्लेख्य है। इनके अतिरिक्त एक उपन्यास और एक शरीर-रचना-सम्बन्धी पुस्तक अप्रकाशित ही रह गई। हिन्दी, सस्कृत, अँग्रेजी, उर्दू, राजस्थानी, मराठी, गुजराती और बगला भाषाओ के गहन ज्ञान का आपकी इन रचनाओ से स्पष्ट आभास मिलता है। आपकी लेखन-शैली और सम्पादन-कला की प्रशसा जहाँ प्रख्यात पत्रकार श्री सत्यदेव विद्यालकार और श्री शम्भुदयाल सक्सेना-जैसे मनस्वी साहित्यकार ने की थी वहाँ कलम के जादूगर श्री रामवृक्ष बेनीपुरी भी आपकी साहित्य-सग्रह-वृत्ति का लोहा मानते थे।

आपका निधन 26 जुलाई सन् 1957 को हुआ था।

राष्ट्र-सन्त तुकड़ो जी महाराज

राष्ट्र-सन्त तुकडोजी महाराज का जन्म महाराष्ट्र के विदर्भ अचल के अमरावती जनपद के यावली नामक ग्राम मे 19 अप्रैल सन् 1909 को हुआ था। आपके माता-पिता अत्यन्त धार्मिक प्रवृत्ति के थे। इस कारण आपके हृदय पर भी उन पारिवारिक सस्कारो का प्रचुर प्रभाव पडा था। सन्

1920 के अनन्तर आपकी धार्मिक तथा आध्यात्मिक भावनाओं में राष्ट्रीयता का भी अद्भुत समन्वय हो गया था।



सन् 1923 मे आपने अपने सभी साथियो को एकत्र करके 'बाल-समाज' की स्थापना की थी। बाद मे आपने 'श्री गुरुदेव प्रकाशन मण्डल', 'सन्त सम्मेलन' तथा 'हरिजन सम्मेलन' आदि अनेक समाज-सुधार - सम्बन्धी सस्थाओ के माध्यम से युवको मे नई चेतना उद्भूत की थी। महात्मा गाधी जी द्वारा प्रारम्भ किए गए राष्ट्रीय सग्राम के आन्दोलनों मे भी आपने बढ़-चढकर भाग लिया था। इस प्रसग मे आपको नागपुर सेण्ट्रल जेल और रायपुर की जेलों मे भी रहना पडा था।

आपके जीवन का प्रमुख लक्ष्य हिन्दी तथा मराठी भाषाओ के माध्यम से विपुल लोकापयोगी साहित्य का निर्माण करना था। यद्यपि आपकी मातृभाषा मराठी थी किन्तु आपने अपने विचारो के प्रचार के लिए प्रमुखत हिन्दी भाषा को ही माध्यम बनाया था। आपके द्वारा लिखी गई 'राष्ट्र-वन्दना' नामक हिन्दी राष्ट्र-गीतिका महाराष्ट्र के प्राय सभी विद्यालयो मे प्रार्थना के रूप मे गाई जाती है। इस प्रार्थना की कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है

है 'धर्म' सच्चा शील मे, है सत्य मे, अस्तेय मे
है शौच ब्रह्मचर्य मे, अरु आत्मरूप के स्नेह मे
इस्लाम, ईसा, बुद्ध हिन्दू, जैन, सिख चाहे रहे
पर एक सम साथी समझकर हम सभी से यह कहे

तुकडो जी महाराज सामाजिक कुरीतियो और मिथ्या आडम्बरो के सर्वथा विरुद्ध रहते थे। जिन दिनो हमारे देश पर सभी ओर से सकट था तब आपने 'राष्ट्र-धर्म सम्मेलन', 'भूदान यज्ञ', 'सन्त सम्मेलन' और 'भारतीय साधु समाज' आदि अनेक संस्थाओ के माध्यम से उल्लेखनीय कार्य किया था। आपके काव्य में इस वैज्ञानिक युग की परिस्थिति एवं आवश्यकता के फलस्वरूप जो नवीनता दृष्टिगत होती है उसके पीछे आपके स्वभाव की मृदुता और सौम्यता ही है। आप राष्ट्रभाषा हिन्दी के कट्टर भक्त और राष्ट्रीयता के प्रबल समर्थक थे। आपके द्वारा लिखित 'ग्राम गीता' नामक ग्रन्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

आपका निधन सन् 1968 मे हुआ था।

श्री तुकाराम कुलकर्णी

श्री तुकाराम जी का जन्म कर्नाटक प्रदेश के गुलबर्गा क्षेत्र के चितापुर नामक स्थान मे 7 मार्च सन् 1930 को हुआ था। आप मूलत कन्नडभाषी थे और महात्मा गाधी के प्रभाव से हिन्दी-प्रचार के कार्य मे सलग्न हुए थे। 25 वर्ष तक निरन्तर हिन्दी-प्रचार के क्षेत्र मे आपने उल्लेखनीय कार्य किया था। आप जहाँ एक कुशल सगठनकर्ता और लगनशील कार्यकर्ता थे वहाँ जन-साधारण मे अपने नाटको के माध्यम से नई चेतना भी उद्भूत किया करते थे।

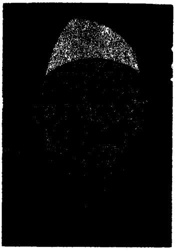
एक कुशल अभिनेता के रूप मे आपने जहाँ कर्नाटक की जनता मे अत्यन्त लोकप्रियता प्राप्त की थी वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आपकी देन कम महत्त्व नही रखती। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'रत्नमाला' (1965), 'कर्नाटक के कीर्ति स्तम्भ' (1965), 'आँचल की आग' (1966) तथा 'रक्त दीप' (1967) विशेष उल्लेखनीय है।

आपका निधन नवम्बर सन् 1969 को हुआ था।

मुन्शी तुलसीदास 'दिनेश'

श्री दिनेश का जन्म उत्तर प्रदेश के हमीरपुर जनपद के राठ नामक स्थान मे सन् 1899 मे हुआ था। सन् 1915 मे आपने वर्नाकुलर मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करके सन् 1916 मे शिक्षक बनने की ट्रेनिग ली थी। जुलाई सन् 1917 मे आपने शिक्षक के रूप मे कार्य प्रारम्भ करके सन्

1959 में प्रधानाध्यापक के रूप मे अवकाश ग्रहण किया था। जिन दिनों उपन्यास-सम्राट् मुन्शी प्रेमचन्द राठ में शिक्षा-निरीक्षक थे तब आप कक्षा 3 मे पढा करते थे। उनके छात्र-जीवन मे ही मुन्शी प्रेमचन्द ने आपको कवि होने का आशीर्वाद दे दिया था और कालान्तर मे आपने वास्तव मे एक सफल कवि के रूप मे ख्याति प्राप्त कर ली थी।



अपने सफल अध्यापन-काल मे आपने जहाँ साहित्यिक रचनाएँ लिखने मे निपुणता प्राप्त की थी वहाँ महात्मा गाधी के राष्ट्रीय आन्दोलन से भी आप पर्याप्त प्रभावित थे। एक बार जब 'सुकवि' की ओर से सत्याग्रह आन्दोलन के दिनो मे 'लन्दन हिलाय देत भारत कौ बनिया' समस्या दी गई थी तब आपने उसकी जिस प्रकार सम्पूर्ति की थी वह पठनीय है

बाँधे है लगोटी, एक तकली लिये है हाथ,
पास मे न तेग है, न तीर है, कमानियाँ।
मोहिनी पढ़ी है ऐसी, मोहित कियो है हिन्द,
चलत इशारे पर लोग अनगिनियाँ।।
उनके अगारू चल सकत किसी की नहीं,
ऐसो है निशक शक मानत है दुनिया।
बिन शस्त्र ही के शत्रु-दलन पछारे देत,
लन्दन हिलाए देत भारत कौ बनिया।।

आपका निधन 2 सितम्बर सन् 1980 को हुआ था।

श्री तुलसीराम शर्मा 'दिनेश'

श्री दिनेश का जन्म हरियाणा प्रदेश के भिवानी क्षेत्र के कैसू नामक ग्राम में सन् 1896 मे हुआ था। आपके पिता पण्डित लालचन्द जी गाँव मे पौराहित्य का कार्य किया करते थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव मे प्राइमरी स्कूल मे हुई थी और बाद मे आपने कुछ समय तक 'वैश्य स्कूल भिवानी' मे भी अध्ययन किया था। 17-18 वर्ष की आयु मे ही आप अपने बाबा पण्डित भीमसेन जी के साथ उडीसा चले गए थे, जहाँ पर वे कथा-वाचक का कार्य किया करते थे। अपने बाबा के सत्सग मे रहकर आपने श्रीमद्भागवत का स्वाध्याय करके अपनी आध्यात्मिक भावनाओ को परिपुष्ट कर लिया था। एक बार ऐसा हुआ कि राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की 'भारत भारती' नामक प्रख्यात कृति का स्वाध्याय करते हुए आपमे भी कवित्व का अकुर फूट पडा।



उडीसा से लौटकर आप पहले तो कुछ दिन तक भिवानी मे 'महाजनी' के शिक्षक रहे और फिर बाद मे आप इस अध्यापक-कार्य के प्रसग मे भटिण्डा और अमृतसर चले गए थे। इसके उपरान्त आप बम्बई चले गए, जहाँ पर रहते हुए आपकी काव्य-साधना बराबर परिपुष्ट होती चली गई। आपकी प्रथम रचना 'मगल मे दगल' नामक नाटक है। सन् 1923 मे आपने 'तिलक सन्देश' नामक जो काव्य-रचना की थी उसमे आपके राष्ट्रीयता के भाव प्रस्फुटित हुए हैं। आपने जहाँ 'मुनीमी दर्पण'(तीन भाग) नामक मुनीमी से सम्बन्धित पुस्तक की रचना की थी वहाँ काव्य के क्षेत्र मे आपकी प्रतिभा अत्यन्त प्रखरता से हिन्दी-जगत् के समक्ष आई थी।

आपकी जिन काव्य-कृतियो का प्रकाशन हो चुका है उनमे 'भक्त भारती', 'पुरुषोत्तम महाकाव्य', 'मतवाली मीरा', 'श्याम सतसई', 'तिलक सन्देश', 'बैजू बावरा', 'पचामृत' और 'बन्धु भरत' के नाम विशेष रूप से उल्लेख-

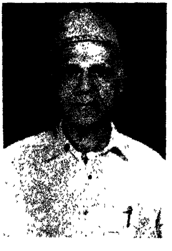
नीय है। नाटक-लेखन के आपने जहाँ 'मंगल मे दगल' नामक कृति के द्वारा सर्वप्रथम हिन्दी-जगत् को अपनी प्रतिभा से परिचित किया था वहाँ 'सत्याग्रही प्रह्लाद' नामक आपका एक और नाटक भी अत्यन्त विशिष्ट कहा जा सकता है।

आपने समस्त जीवन अविवाहित रहकर ही साहित्य-साधना की थी। आपकी रचनाएँ मुख्यत भक्ति-प्रधान हुआ करती थी। 'कल्याण' के माध्यम से आपकी कवित्व-चेतना को बहुत प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था। आपके कवित्व की उत्कृष्टता का इससे बडा प्रमाण और क्या हो सकता है कि आपके द्वारा लिखे गए कुछ दोहे सन् 1940-42 मे 'पजाब विश्वविद्यालय' की 'हिन्दी प्रभाकर' परीक्षा के पाठ्यक्रम मे निर्धारित 'दोहा मानसरोवर' नामक पुस्तक मे समाविष्ट किए गए थे।

आपका निधन सन् 1956 मे हुआ था।

पण्डित तेजपाल काला

श्री काला का जन्म नाँदगाँव (महाराष्ट्र) मे सन् 1912 मे हुआ था। आप बहुश्रुत विद्वान्, प्रखर वक्ता, समाज-सेवी और धर्मनिष्ठ महानुभाव थे। जैन-समाज के विद्वानो और पत्रकारो मे आपका प्रमुख स्थान था। आप जहाँ 'शान्तिवीर दिगम्बर जैन सिद्धान्त सरक्षिणी सभा' जयपुर के सस्थापको मे अन्यतम थे वहाँ सन् 1964 मे इसके सहायक मन्त्री भी रहे थे। सभा के साप्ताहिक पत्र 'जैन दर्शन' के आप सहकारी सम्पादक थे और इस पद पर कार्य करते हुए आपने जैन समाज की उल्लेखनीय सेवा की थी।



आपके व्यक्तित्व का विकास जैन समाज के जिन उच्च कोटि के विद्वानों के सम्पर्क से हुआ था उनमे सर्वश्री खूबचन्द शास्त्री, गौरीलाल शास्त्री, मक्खनलाल शास्त्री, इन्द्रलाल शास्त्री और सुमेरचन्द दिवाकर आदि के नाम विशेष महत्त्व रखते है। अपने अग्रज श्री तनसुखलाल काला के धार्मिक व्यक्तित्व की छाप भी आपके जीवन पर पडी थी। इसी कारण आपने अपनी अस्वस्थ अवस्था मे भी अँग्रेजी दवाइयाँ न लेकर आयुर्वेदिक औषधियों का ही सेवन किया था और अपने जीवन की अन्तिम साँस तक 'णमोकार मन्त्र' का ही जाप करते रहे थे।

आपका निधन 17 अक्तूबर सन् 1981 को औरगाबाद (महाराष्ट्र) मे हुआ था।

श्रीमती तोट्टाकाट्टु इक्कावम्मा

श्रीमती इक्कावम्मा का जन्म केरल प्रदेश के एक ग्राम मे 25 जनवरी सन् 1865 को हुआ था। आप भारत के स्वतन्त्रता-सग्राम मे सक्रिय रूप से भाग लेकर जन-जागरण का कार्य करती रही थी और महात्मा गाधी के आवाहन पर आपका झुकाव राष्ट्रीय सघर्ष मे भाग लेने को हुआ था। आपके पति श्री नारायण मेनन भी आपको प्रोत्साहित करते रहते थे।



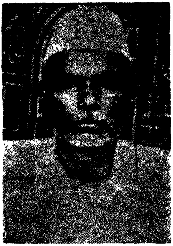
महात्मा गाधी द्वारा दक्षिण भारत मे किये गए हिन्दी-प्रचार के कार्य के कारण आपने भी हिन्दी-प्रचार को अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया था, और हिन्दी मे लेखन-कार्य भी करने लगी थी। आपकी मलयालम भाषा में लिखी गई अनेक रचनाएँ

पर्याप्त लोकप्रिय हुई थी। आपके द्वारा लिखी गई अनेक हिन्दी-कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती थी।

आपका निधन 3 मई सन् 1916 को हुआ था।

श्री तोडरलाल स्वर्णकार

श्री स्वर्णकार का जन्म मध्यप्रदेश के जबलपुर नगर मे सन् 1901 में हुआ था। अपने छात्र-जीवन से ही आपमे राष्ट्रीयता कूट-कूट-कर भरी हुई थी। आप मूलत लोक-कवि थे और आपने स्वातन्त्र्य-सग्राम मे अनेक कष्ट उठाकर भी दोहा, कवित्त, कजली, खयाल, लावनी और गजल आदि अनेक छन्दो मे लोक-भाषा-शैली मे अपनी कविताएँ लिखी थी। आपकी रचनाओ का मूल स्वर मुख्यत· ब्रिटिश साम्राज्यशाही का विरोध और लोगो को सत्याग्रह-सग्राम के लिए तैयार करना रहता था।



जिन दिनों भारत मे साइमन कमीशन के विरोध की लहर प्रबल रूप से व्याप्त थी तब आपने 'साइमन लौट जाओ' नामक जो काव्य-पुस्तिका प्रकाशित की थी वह ब्रिटिश सरकार द्वारा न केवल जब्त की गई थी, बल्कि आपको उसके कारण बगाल की जेल मे असह्य यातनाएँ भोगनी पड़ी थी। जिन दिनों सन् 1923 मे जबलपुर मे 'झण्डा सत्याग्रह' हुआ था तब आपने उसमे भी बढ-चढकर भाग लिया था। उस समय आपने 'राष्ट्रीय झण्डा' नामक जो पुस्तक लिखी थी उसकी :

राष्ट्र का झण्डा फहरेगा जगत् ऊपर
कीरति ये विजय की तीन लोग गाएँगे।

पक्तियाँ जन-जन के कण्ठ का उद्‌गार बन गई थी।

आपकी रचना-धर्मिता का एक-मात्र लक्ष्य देश में राष्ट्रीय जागरण की भावनाएँ उत्पन्न करना था और इस उद्देश्य से ही आपने 'राष्ट्रीय विजय शंख-ध्वनि' तथा 'राष्ट्रीय बरखा बहार' प्रभृति लगभग 12 पुस्तकें प्रकाशित की थी। इन सभी कृतियों में आपका दृढ सकल्प, असीम साहस और बलिदान की आकाक्षा का स्वर पूर्णत. मुखरित हुआ था।

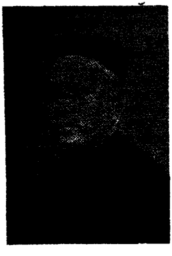
आपका निधन सन् 1959 मे हुआ था।

बाबू तोताराम वर्मा

श्री वर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रख्यात नगर अलीगढ में सन् 1847 मे हुआ था। क्योंकि उन दिनों प्राय: सब स्थानो मे उर्दू एव फारसी आदि भाषाओं के अध्ययन का अधिक प्रचार था अत आपकी शिक्षा-दीक्षा भी उर्दू मे ही हुई थी। परिवार की महिलाओ मे 'रामायण' का अधिक प्रचार होने के कारण आपने हिन्दी का अध्ययन उन्ही ग्रन्थों से किया था। सासनी के सरकारी स्कूल मे प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने अलीगढ के स्कूल मे प्रविष्ट होकर सन् 1863 मे मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आगे की पढाई जारी रखने के लिए आप आगरा के 'सैण्ट जान्स कालेज' मे भरती हुए थे। जिन दिनों आप बी० ए० मे पढ रहे थे उन्ही दिनो आपके पिताजी का असामयिक देहावसान हो गया और आपको अपनी पढाई बीच मे ही रोक देनी पडी।

पढाई छोडने के उपरान्त आप फतेहगढ के सरकारी स्कूल में मुख्य अध्यापक हो गए और कुछ ही दिनों मे आपका स्थानान्तरण बनारस के लिए हो गया। बनारस जाकर आपकी रुचि हिन्दी साहित्य के अध्ययन की ओर बहुत अधिक हो गई। वहाँ के साहित्यिक वातावरण ने आपको लेखन की दिशा मे प्रेरित किया और आप नौकरी को तिलाजंलि देकर लेखन की ओर उन्मुख हो गए। उन दिनो आपने 'केटो कृतान्त' नामक पुस्तक लिखी थी। जहाँ आपने अपना लेखन जारी रखा वहाँ आपने बगला, मराठी और गुजराती आदि कई भाषाओं

का अच्छा ज्ञान भी प्राप्त कर लिया था। सन् 1876-77 में आपने अलीगढ़ लौटकर अपना एक प्रिंटिंग प्रेस खोला और वहाँ से 'भारत बन्धु' नामक एक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन-प्रकाशन करने लगे। आपने इस पत्र के माध्यम से जहाँ हिन्दी-सेवा का उल्लेखनीय कार्य किया वहाँ संयुक्त प्रान्त के छोटे लाट की सहायता से आपने 'लायल लायब्रेरी' नामक एक पुस्तकालय की स्थापना भी अलीगढ में की थी। उन्हीं दिनों आपने 'भाषा सवंधिनी सभा' नामक हिन्दी-प्रचार-संस्था की स्थापना भी की थी। इस संस्था का उद्देश्य सस्ते मूल्य पर हिन्दी की पुस्तकों को जन-साधारण के



लिए सुलभ कराना था। आपने सभा को 'स्त्री-धर्म-बोधिनी' नामक एक पुस्तक भी लिखकर समर्पित की थी।

आपका भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र से अच्छा परिचय था। आपकी रचनाएँ उनकी पत्रिका 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' में बहुत छपा करती थी। 'केटो कृतान्त' नाटक के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित 'अद्भुत अपूर्व स्वप्न' (निबन्ध), 'विवाह विडम्बना', 'शान्ति शतक', 'नीति-सार' तथा 'कीर्ति केतु' (नाटक) नामक कृतियाँ विशेष उल्लेखनीय है। 'केटो कृतान्त' जोजेफ एडीसन के एक अंग्रेजी नाटक का अविकल अनुवाद है। यद्यपि आप वैष्णव धर्मावलम्बी थे परन्तु स्वामी दयानन्द सरस्वती के भी आप परम भक्त थे। उनकी सुधारवादी प्रवृत्तियों से आपने बहुत प्रेरणा प्राप्त की थी। आपने 'राम रामायण' नाम से संस्कृत के 'वाल्मीकि रामायण' ग्रन्थ का हिन्दी पद्यानुवाद करना प्रारम्भ किया था। खेद है कि आपका यह कार्य पूरा न हो सका। आप अपने समय के अच्छे हिन्दी-प्रचारक गिने जाते थे।

आपका निधन 7 दिसम्बर सन् 1902 को हुआ था।

पण्डित तोताराम सनाढ्य

आपका जन्म सन् 1876 में उत्तर प्रदेश के आगरा जनपद के हिरनगौ नामक गाँव मे हुआ था। वैसे आपके पूर्वज शेरपुर जलालपुर (आगरा) के रहने वाले थे किन्तु सन् 1822 में वहाँ आ बसे थे। घर की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण आपके बड़े भाई पण्डित रामलाल कलकत्ता चले गए थे और वहीं पर उनका देहान्त हो गया था। पण्डित तोताराम की आर्थिक स्थिति भी अच्छी नहीं थी, फलस्वरूप आप भी 16 वर्ष की आयु में आरकाटियों के बहकावे में आकर फीजी द्वीप चले गए थे। 21 वर्ष वहाँ पर बिताकर जब सन् 1913 में आप भारत वापिस आए तब आपने फीरोजाबाद को अपना स्थायी निवास बनाया था। गाँव के वातावरण में क्योंकि उन दिनों बहुत अन्ध विश्वास था, अत तोताराम जी को वहाँ का निवास रास नहीं आया था।

भारत लौटकर आपने महात्मा गाधी जी से पत्र-व्यवहार किया और आप उनके आमन्त्रण पर 'साबरमती आश्रम' में अहमदाबाद चले गए। वहाँ पर रहते हुए आपने आश्रम का खेती-सम्बन्धी सारा कार्य-भार सँभाला हुआ था। वहाँ आश्रम का नियम रुई धुनना, कातना और बुनना भी था। सभी सत्या-ग्रहियों को अपने शौचालय भी स्वयं साफ करने पड़ते थे और शाक-सब्जी में



नमक का भी प्रयोग सर्वथा वर्जित था। वहाँ पर रहकर पण्डित तोताराम जी ने महात्मा गाधी के सभी सिद्धान्तों को अपने जीवन में पूर्णत समाविष्ट कर लिया था और आप पूर्णत सतो-जैसा जीवन व्यतीत करने के अभ्यासी हो गए थे। कबीर की भक्ति-प्रधान कविताएँ प्राय आपके मन-प्राण को

उद्वेलित करती रहती थी। सन् 1938 मे आप अन्तिम बार अपने गाँव हिरनगौ पधारे थे। वहाँ गाँव के बाहर बनी एक छोटी-सी कुटिया मे रहते हुए प्राय: कबीर की साखियाँ सुनाकर गाँव वालो को प्रेरणा दिया करते थे।

जब प्रख्यात पत्रकार श्री बनारसीदास चतुर्वेदी से आपका परिचय 15 जून सन् 1914 को हुआ तब आप फीजी से लौटे ही थे। फीरोजाबाद के 'भारती भवन पुस्तकालय' मे उसके मैनेजर लाला चिरजीलाल ने यह परिचय कराया था। उन्ही दिनो पण्डित तोताराम जी के भाषण की जो रिपोर्ट 'भारत मित्र' मे छपी थी उससे श्री चतुर्वेदी जी बहुत प्रभावित हुए थे। जब चतुर्वेदी जी ने उनसे अपने फीजी-प्रवास के अनुभवो को लिखने का अनुरोध किया तब तोताराम जी ने कहा—"मै कोई लेखक तो हूँ नही। अगर कोई लिखने वाला मिल जाय तो मै अपनी अनुभूतियाँ उसे सुना सकता हूँ।" कुछ देर बातचीत होने के उपरान्त यह निश्चित हो गया कि 15 दिन तक पण्डित तोताराम जी अपनी अनुभूतियाँ चतुर्वेदी जी को नित्यप्रति उनके निवास पर जाकर सुनाएँ और चतुर्वेदी जी उन्हे लिपिबद्ध कर दे। इस प्रकार आपके फीजी प्रवास के 21 वर्षों की रोमाचक रामकहानी श्री चतुर्वेदी जी के सत्प्रयास से लिपिबद्ध होकर हिन्दी के पाठको के समक्ष 'फीजी मे मेरे 21 वर्ष' नाम से प्रस्तुत हुई थी।

इस पुस्तक के प्रकाशन के उपरान्त देश मे अँग्रेजो द्वारा फीजी मे भारतीयों पर किये जाने वाले अत्याचारो के विरुद्ध जो प्रबल आन्दोलन हुआ उसके सम्बन्ध मे सनाढ्य जी और चतुर्वेदी जी ने स्वप्न मे भी कल्पना नही की थी। थोड़े ही समय मे यह पुस्तक इतनी लोकप्रिय हुई थी कि बगला, गुजराती और मराठी मे भी उसके अनुवाद हो गए थे। उर्दू मे जहाँ इसका अनुवाद श्री पीर मोहम्मद मूनिस ने किया था वहाँ श्री सी० एफ० एण्ड्रूज भी इसका अँग्रेजी अनुवाद कराकर अपने साथ फीजी ले गए थे। इस पुस्तक की महत्ता का इससे बडा प्रमाण और क्या हो सकता है कि एक ओर जहाँ श्री मैथिलीशरण गुप्त ने इससे प्रेरणा प्राप्त करके अपना 'किसान' नामक लघु-काव्य लिखा था वहाँ दूसरी ओर प्रख्यात कवयित्री सुभद्राकुमारी चौहान के पति ठाकुर लक्ष्मणसिह चौहान ने 'कुलीप्रथा' नामक नाटक की रचना की थी। यहाँ यह तथ्य भी सर्वथा अविस्मरणीय है कि श्री चौहान का 'कुलीप्रथा' नाटक जब कानपुर के 'प्रताप' साप्ताहिक मे छपा था तब सरकार ने उसे जब्त कर लिया था। लोकमान्य बाल गगाधर तिलक ने आपकी इस पुस्तक से प्रभावित होकर अपने मराठी पत्र 'केसरी' मे दो बार अग्रलेख लिखे थे और 'मैनपुरी षड्यन्त्र केस' के अभियुक्तो ने इस पुस्तक से बहुत प्रेरणा प्राप्त की थी। इसकी महत्ता का इससे अधिक ज्वलन्त तथा सुपुष्ट प्रमाण और क्या हो सकता है कि ब्रिटिश पार्लमेण्ट तक मे इसकी गूँज रही थी और 'भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस' ने इस पुस्तक मे वर्णित अत्याचारो की सही जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से श्रीमती सरोजिनी नायडू के नेतृत्व मे एक प्रतिनिधि मण्डल भी अफ्रीका आदि देशो को भेजा था।

आपका निधन 6 जनवरी सन् 1948 को 'साबरमती आश्रम' अहमदाबाद मे हुआ था।

श्रीमती तोरनदेवी शुक्ल 'लली'

श्रीमती 'लली' का जन्म अपनी ननिहाल मे मध्यप्रदेश के जबलपुर जनपद के पिपरिया नामक ग्राम मे सन् 1896 मे हुआ था। आपके पिता श्री कन्हैयालाल तिवारी उन्नाव (उत्तर प्रदेश) के निवासी थे, किन्तु बाद मे प्रयाग मे रहने लगे थे। आपका विवाह हमीरगाँव रायबरेली (उत्तर प्रदेश) निवासी श्री कैलाशनाथ शुक्ल के साथ हुआ था। 'लली' जी को अपने पारिवारिक सस्कारो के कारण ही कविता



विरासत मिली थी। आप अपनी शैशवावस्था से ही कविता करने लगी थी और धीरे-धीरे आपकी कवित्व-प्रतिभा इतनी

सुपुष्ट हो गई थी कि आपकी रचनाएँ देश की सभी प्रमुख पत्रिकाओं मे छपने लगी थी। आपकी रचनाओं मे जहाँ नारी जीवन की अथाह पीड़ा का अंकन प्रचुर परिमाण मे हुआ है वहाँ राष्ट्रीय जागरण की दिशा मे भी आपने अपनी लेखनी का खुलकर प्रयोग किया था।

आपकी राष्ट्रीय भावनाओ का आदर्श आपकी एक कविता की इन पक्तियों मे पूर्णत मुखर हो उठा है

अब देखूँगी उत्थानों मे
देश-प्रेम के अभियानों मे
वीर-श्रेष्ठ के गुण-गानों में
अमर सुयशमय सम्मानों मे
दर्शन होते ही तज दूँगी,
हिय वेदना अपार।
मुझ से मिल जाना एक बार।

आपकी रचनाओ का जो सकलन सन् 1939 मे 'जागृति' नाम से प्रकाशित हुआ था उस पर अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से 500 रुपये का 'सेकसरिया पुरस्कार' प्रदान किया गया था। आपकी रचना-प्रतिभा से प्रसन्न होकर दरभगा-नरेश महाराजा कामेश्वरसिंह ने आपको 'साहित्य-चन्द्रिका' की उपाधि प्रदान की थी।

आपका निधन 9 नवम्बर सन् 1960 को हुआ था।

श्री तोलाराम आजिज

श्री आजिज का जन्म सिन्ध प्रदेश के 'नोशहरे फेरोज' नामक नगर मे सन् 1888 मे हुआ था। आपके पिता मुन्शी मेघराज बालाणी अत्यन्त हरिभक्त थे। आपने विद्यार्थी-जीवन मे अँग्रेजी, सिन्धी और फारसी आदि भाषाओ का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था और देश के स्वतन्त्रता-संग्राम मे खूब खुलकर भाग लेने लगे थे। अपनी शिक्षा पूरी करने के उपरान्त आपने अध्यापन का कार्य प्रारम्भ कर दिया था और उसके साथ-साथ सिन्धी भाषा के 'सवाइ सिन्ध' और 'देशभक्त' नामक पत्रो का सम्पादन भी किया था।

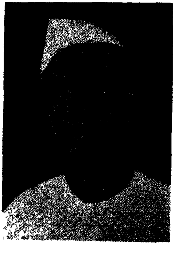
आप जहाँ कुशल शिक्षक, प्रखर देशभक्त और जागरूक पत्रकार थे वहाँ कविता के क्षेत्र मे भी आपकी देन उल्लेखनीय रही थी। वैसे तो मुख्यत आपने सिन्धी भाषा मे ही कविताएँ लिखी थी, किन्तु जब आपमें आध्यात्मिक भावनाओ का प्राचुर्य हुआ तब आपने अपनी उस विचार-धारा का प्रकटीकरण हिन्दी-रचनाओं के द्वारा ही किया था। आपकी यह मान्यता थी कि सब तीर्थ मनुष्य के शरीर मे ही है, अत मनुष्य को हरिद्वार, प्रयाग, काशी और अमरनाथ जाने की आवश्यकता नही है। आपकी एक हिन्दी रचना की बानगी इस प्रकार है

आतम तीर्थ भेट प्यारे गया गगा से होना क्या
काया को ही काशी जानो, मन अपने को मन्दिर मानो,
सत्पुरख को वहाँ पछानो, धन-दौलत को खोना क्या।
हिरदा जो हरद्वार कहावे, दर भागे वहाँ दौड न आवे,
हरि सी हरि रग नहि पावे, धरती जल से धोना क्या।
अमरनाथ का आसण नाही, जाने की जहाँ जगह नाही,
राम रह्या हरि रोम के माही, फुरनो फिर फिरना क्या।

आपका देहावसान 13 जुलाई सन् 1913 को हुआ था।

श्री त्रिभुवननाथ गुप्त 'नाथ'

श्री गुप्त का जन्म उत्तर प्रदेश के हरदोई जनपद के शाहाबाद नामक स्थान मे सन् 1907 मे हुआ था। आप मूलतः गोपामऊ के निवासी थे। हिन्दी तथा उर्दू की मिडिल तक शिक्षा प्राप्त करने के अनन्तर आगे आपने अपने स्वाध्याय के बल पर ही ज्ञानार्जन किया था। जमीदारी और कपड़े का व्यवसाय करते हुए आप निरन्तर काव्य-सृजन मे ही निमग्न रहा करते थे। उन दिनो शाहाबाद मे आयोजित होने वाली



ऐसी कोई ही गोष्ठी होती होगी जिसमे आप बढ-चढकर भाग न लेते हो।

जिस समय राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का बलिदान हुआ था उस समय आप इतने शोकाभिभूत हुए थे कि आपने अनेक गीतों की रचना कर डाली थी। आपके द्वारा लिखित वे सभी गीत 'पावन प्रसून' नामक आपकी उस पुस्तक मे समाविष्ट है जिसकी भूमिका डॉ० जगदीश गुप्त(वर्तमान हिन्दी-विभागाध्यक्ष, प्रयाग विश्वविद्यालय) ने लिखी थी। आपकी रचनाओं का मूल स्वर मुख्यत राष्ट्रीय ही था। आपने 15 अगस्त तथा 26 जनवरी-जैसे राष्ट्रीय पर्वों पर भी अनेक प्रेरक गीत लिखे थे।

आप योगिराज अरविन्द के जीवन-दर्शन से भी पर्याप्त प्रभावित थे और आपकी रचनाएँ 'अरविन्द आश्रम पाण्डिचेरी' की पत्रिका 'अदिति' मे भी प्राय प्रकाशित होती रहती थीं।

आपका असामयिक देहावसान 24 मई सन् 1969 को हुआ था।

श्री त्रिभुवननाथसिंह 'सरोज'

श्री 'सरोज' का जन्म सन् 1900 मे उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के बिसवाँ नामक स्थान के समीपवर्ती ग्राम खम्भापुर मे हुआ था। आपके पिता चौ० गंगाबख्श सिंह रामपुर कलाँ राज्य के सम्पन्न ताल्लुकेदार थे। 'सरोज' की शिक्षा 'सीनियर कैम्ब्रिज' तक हुई और फिर आप हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के सम्पर्क मे आए थे। इस सम्पर्क के कारण आपका झुकाव हिन्दी-कविता-रचना की ओर हो गया और आपने अपने समकालीन कवि श्री अनूप शर्मा के सहयोग से सन् 1926 में बिसवाँ से 'काव्य सुधाकर' नामक एक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। यह पत्र 2 वर्ष तक अत्यन्त सफलता पूर्वक प्रकाशित हुआ था, किन्तु फिर आर्थिक कठिनाइयों के कारण इसे बन्द कर देना पड़ा था।

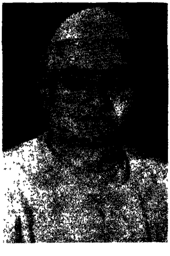


इसके उपरान्त आप सन् 1933 मे लखनऊ आ गए और वहाँ से 'प्रकाश' नामक एक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। यह पत्र भी 2 वर्ष तक ही सफलतापूर्वक चल सका और फिर इसे बन्द कर दिया गया। उन्ही दिनो आपकी धर्मपत्नी तथा अनुज डॉ० जानकीनाथसिंह 'मनोज' का असामयिक देहावसान हो गया और आप पत्र-प्रकाशन के इस धन्धे से पूर्णत विमुख हो गए। आपकी प्रकाशित काव्य-कृतियो मे 'मेवाड़ मुकुट', 'गांधी गाथा सप्तशती', 'स्वतन्त्र पार्टी प्रशस्ति' और 'सरोज सौरभ' प्रमुख है।

आपका निधन सन् 1978 मे हुआ था।

श्री त्रिलोचन पन्त

श्री पन्त का जन्म उत्तर प्रदेश के नैनीताल जनपद के काशीपुर नामक नगर मे 9 जुलाई सन् 1907 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा हाथरस तथा इटावा आदि नगरों में हुई थी और बाद मे आपने 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' से एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। विश्वविद्यालय से शिक्षा-समाप्ति के अनन्तर आपने सन् 1931 से सन् 1946 तक महामना मदनमोहन मालवीय के निजी सचिव के रूप मे कार्य किया था। मालवीयजी के निधन के पश्चात् आप हिन्दू विश्वविद्यालय के 'इतिहास विभाग' के प्रवक्ता हो गए थे और मृत्यु-पर्यन्त उसीकी सेवा मे



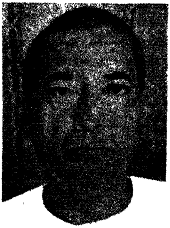
संलग्न रहे थे।

अपने छात्र-जीवन से ही आप 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की अनेक गतिविधियों से संलग्न रहने के कारण हिन्दी के प्रति अनुरक्त हो गए थे और यदा-कदा 'हंस' तथा 'आज' आदि स्थानीय पत्रों मे लेख आदि भी लिखते रहते थे। आपके द्वारा लिखित 'इंग्लैंड का संवैधानिक इतिहास' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुका है और 'इटली की राज्य-क्रान्ति' नामक ग्रन्थ अभी अप्रकाशित ही है। विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त करने के उपरान्त आप 'पण्डित मदनमोहन मालवीय की राजनीतिक विचार-धारा' के सम्बन्ध मे भी एक ग्रन्थ लिख रहे थे, जो अधूरा ही रह गया।

आपका निधन 13 अक्तूबर सन् 1975 को हुआ था।

श्री त्रिवेणीप्रसाद बी० ए०

आपका जन्म बिहार प्रदेश के शाहाबाद जनपद (अब भोजपुर) के रतनकुल नामक ग्राम मे सन् 1907 मे हुआ था। आपकी आरम्भिक शिक्षा अपने मामा के निरीक्षण मे हुई थी और आपने भागलपुर के टी० एन० जे० कालज से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। जिन दिनों आप बी० ए० कक्षा के छात्र थे उन दिनों देश मे सर्वत्र महात्मा गाधी के सत्याग्रह आंदोलन की धूम थी। आप भी उससे कैसे बचे रह सकते थे। फलस्वरूप आपने उस आन्दोलन मे बढ़-चढ़कर भाग लिया था।



आप किसी स्थायी कार्य की तलाश मे भटक ही रहे थे कि सन् 1930 मे प्रयाग मे आपकी भेंट 'चाँद' तथा 'भविष्य'-जैसे क्रांतिकारी पत्रों के संचालक श्री रामरखसिंह सहगल से हो गई। फलस्वरूप आपने 'चाँद' कार्यालय में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया और आपके द्वारा किया गया श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल द्वारा लिखित 'भगतसिंह की जीवनी' का हिन्दी अनुवाद जब 'चाँद कार्यालय' की ओर से प्रकाशित हुआ था तब आपको उसके लिए जेल-यात्रा भी करनी पड़ी थी। कुछ दिन तक आपने 'भविष्य' साप्ताहिक का सम्पादन भी किया था।

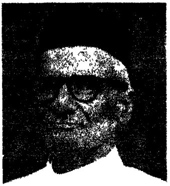
आपने साहित्य की विविध विधाओ मे जो पुस्तकें लिखी है उनकी सख्या लगभग 64 है, किन्तु इनमें से अधिकाशत अप्रकाशित ही रह गई। आपने जीवनी, कविता, उपन्यास तथा व्याकरण-रचना आदि विभिन्न विषयो पर अपनी लेखनी का चमत्कार प्रदर्शित किया था। आपकी प्रकाशित रचनाओ मे 'सरदार भगतसिंह की जीवनी' (1931) के अतिरिक्त 'विसर्जन' (1939), 'कैमूरी का शेर' (1948), 'गोबर का ब्याह' (1951) उपन्यास, 'मीरा' (1961) काव्य, 'मिठाई का दोना' (1932), 'भैया की कहानी' (1932), 'हिमालय' (1941), 'समुद्र' (1941), 'हमारा देश' (1941), 'आत्म-कथा' (1941), 'देश-विदेश की लहरें' (1952), 'अनमोल कहानियाँ' (1952), 'सौरभ' (1952), 'मस्तराम की चिट्ठियाँ' (1952), 'कलाकारो की फुलझड़ियाँ' (1953), 'वीर गाथा' (1957) सभी बालोपयोगी, 'रचना तत्त्व' (1936), 'शुद्ध हिन्दी' (1950) तथा 'शब्द रचनावली' (1951) आदि के नाम विशेष रूप मे उल्लेखनीय है। आपकी लगभग 37 पुस्तकें अप्रकाशित ही रह गई, जिनम 6 उपन्यास, 17 काव्य, 2 आलोचना, 3 व्याकरण, 1 सन्दर्भ ग्रन्थ और 8 बालोपयोगी विषयों से सम्बन्धित है। जितना प्रचुर साहित्य आपने लिखा था यदि वह प्रकाशित हो जाता तो हिन्दी के भण्डार मे अभूतपूर्व समृद्धि हो सकती थी।

आपने स्वतन्त्र रूप से एक बालोपयोगी पत्र का सम्पादन भी किया था। आप इतने निष्ठावान तथा अध्ययनशील थे कि जब जिस काम मे जुट जाते थे उसे पूरा करके ही छोड़ते थे। आपने जीवन-भर सघर्ष किया था और लेखनी के बल पर अपने जीवन का निर्वाह करते रहे थे। मृत्यु के समय तक भी आपकी लेखनी चलती रही थी।

आपका निधन 24 अक्तूबर सन् 1965 को हुआ था।

श्री त्र्यम्बकदत्त चन्दोला

श्री चन्दोला का जन्म 17 सितम्बर सन् 1895 को देहरादून में हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने बड़े भाई श्री विश्वम्भरदत्त चन्दोला की देख-रेख में हुई थी और डी० ए० वी० हाई स्कूल देहरादून से हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने काशी के थियोसोफिकल कालेज से एफ० ए० तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी० ए० किया था। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आप पहले अँग्रेजी के कई पत्रों के संवाददाता रहे, किन्तु बाद में अपने बड़े भाई श्री विश्वम्भरदत्त चन्दोला द्वारा सम्पादित साप्ताहिक 'गढ़वाली' में सहयोग देने लगे थे। जब सन् 1933-34 में आपके ज्येष्ठ भ्राता असहयोग आन्दोलन के प्रसंग में जेल चले गए थे तब आपने ही 'गढ़वाली' का सम्पादन अत्यन्त निष्ठा और योग्यता से किया था। जब आपके बड़े भाई जेल से वापिस लौट आए तब भी आपने उनके सहकारी के रूप में सन् 1941-42 तक बराबर कार्य किया था।



आपका हिन्दी तथा अँग्रेजी दोनों भाषाओं पर पूरा अधिकार था। फलस्वरूप सन् 1943 में आप लखनऊ से प्रकाशित होने वाले 'पायोनियर' नामक अँग्रेजी दैनिक में चले गए। उसके उपरान्त आप 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के विशेष प्रतिनिधि के रूप में कानपुर चले गए। जिन दिनों बंगाल में भीषण अकाल पड़ा था तब आपने वहाँ जाकर वहाँ की वास्तविक स्थिति का अध्ययन करके अँग्रेजी में जो एक पुस्तक लिखी थी उसकी उन दिनों बड़ी सराहना की गई थी।

आपका निधन 22 मई सन् 1973 को कालपी में हुआ था, जहाँ पर आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री नृपेन्द्रदत्त चन्दोला तहसीलदार थे।

राजवैद्य दयाकृष्ण शर्मा

श्री शर्माजी का जन्म उत्तर प्रदेश के मथुरा जनपद के बलदेव नामक स्थान में सन् 1795 में हुआ था। आपके पूर्वज गोस्वामी श्री कल्याणदेव जी के प्रतिष्ठित कुल से सम्बन्धित थे और बलदेव के उपासक थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा घर पर ही हुई थी और थोड़े-से ही अभ्यास से आपने ज्योतिष तथा आयुर्वेद का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। चिकित्सा के क्षेत्र में आपकी ख्याति जहाँ कोटा, बूँदी तथा गुजरात-काठियावाड़ के अनेक रजवाड़ों में थी वहाँ ज्योतिष-सम्बन्धी आपके गहन ज्ञान की धाक भी देशव्यापी थी। आपको 'राजवैद्य' की उपाधि भी इन्हीं रजवाड़ों की ओर से भेंट की गई थी। आपके पास ज्योतिष, आयुर्वेद तथा हिन्दी-साहित्य से सम्बन्धित ग्रन्थों का इतना विशाल भण्डार था कि उससे लाभान्वित होने के लिए लोग दूर-दूर से आते रहते थे। आपने अपने इस संग्रहालय में ज्योतिष तथा आयुर्वेद के अनेक अनुपलब्ध ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ दूर-दूर से मँगाकर रखी थीं। आज भी आपके वंशज श्री भुवनेन्द्रदत्त भिषगाचार्य आपकी स्मृति में 'श्री धन्वन्तरि चिकित्सालय व पुस्तकालय' चला रहे हैं।

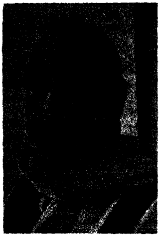
आप कुशल चिकित्सक और सिद्ध ज्योतिषी होने के साथ-साथ उच्चकोटि के कवि भी थे। आपके द्वारा विरचित 'बलदेव-विलास' नामक एक अकेला ही काव्य-ग्रन्थ ऐसा है जिससे आपके गहन ज्ञान का परिचय प्राप्त हो जाता है। केवल 24 पृष्ठ के इस ग्रन्थ में बलदेव जी के स्वरूप, महिमा, शृंगार, नखशिखवर्णन, झूला, रास विहार, होली और बलभद्र-लीलाओं का वर्णन किया गया है। बलभद्र-उत्सव तथा नियमों का प्रचार सर्वप्रथम श्री शर्माजी के द्वारा ही हुआ था, जो आज तक प्रचलित है। इसके अतिरिक्त आपके 'अलंकार प्रकाश', 'शेषनाग पिंगल', 'इश्क दरियाऊ', 'इश्क चमन' तथा 'रेखता-झूलना' आदि ग्रन्थ भी उल्लेखनीय हैं। अपने 33 वर्ष के थोड़े से जीवन में आपने लगभग 13 ग्रन्थों

की रचना की थी।

आपका निधन सन् 1845 में भड़ौच (गुजरात) में हुआ था।

श्री दया गिरि

श्री दया गिरि का जन्म 7 मार्च सन् 1907 को भारत के प्रख्यात तीर्थ काशी में हुआ था। अपने बाल्य-काल से आपकी संगीत और नाटक में पर्याप्त रुचि थी और आपने हिन्दी



तथा संस्कृत के साथ-साथ बंगला, उर्दू और अँग्रेजी आदि कई भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आप बनारसी परम्परा के मूर्तिमन्त रूप थे। आपने जहाँ काशी की अनेक नाट्य-संस्थाओं के माध्यम से हिन्दी-रंगमंच को लोकप्रियता प्रदान करने का अभिनन्दनीय कार्य किया था वहाँ नाट्य-कला-सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं के भी आप सम्पादक रहे थे। आप जहाँ सफल संगठनकर्ता और उत्कृष्ट नाटक-लेखक थे वहाँ अभिनय-कला में भी पूर्णत: दक्ष थे। नाटक के रंगकर्मियों और संगीत-साधकों को प्रोत्साहित करने में भी आप पीछे नहीं रहते थे।

काशी की 'संगीत परिषद्' के माध्यम से आपने जहाँ शास्त्रीय संगीत की पद्धति की अद्भुत साधना की थी वहाँ आपने संगीत-कला के सम्बन्ध में लेख आदि लिखकर अपने ज्ञान से हिन्दी-पाठकों को लाभान्वित किया था। आपने जहाँ अनेक बंगला नाटकों को हिन्दी में अनूदित किया था वहाँ मौलिक लेखन में भी आप पीछे नहीं रहे थे। आपकी अनूदित कृतियों में 'ये भी इन्सान हैं', 'परिचय', 'बिन्दु का बेटा', 'नारायणी का राम' तथा 'विसर्जन' आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

आपका निधन 26 मई सन् 1981 को हुआ था।

श्री दयाचन्द्र गोयलीय

श्री गोयलीय जी का जन्म उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जनपद के एक छोटे-से गाँव गढ़ी अब्दुल्लाखाँ में सन् 1888 में हुआ था। आपने सन् 1907 में देहरादून से इण्ट्रेंस की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने के उपरान्त क्रमश: क्वीन्स कालेज बनारस से एफ़० ए० और महाराजा कालेज जयपुर से बी० ए० की परीक्षाएँ ससम्मान उत्तीर्ण की थीं। जब आप देहरादून में पढ़ते थे तब ही से आपके मानस में जन-सेवा के जो भाव अंकुरित हुए थे उनके कारण आपने अपने जीवन को उसीमें खपाने का संकल्प कर लिया था। देहरादून के 'जैन अनाथालय' के संस्थापक लाला चिरंजीलाल के सम्पर्क में आकर आपने लेखन की दिशा में भी प्रगति की थी और आपके प्रारम्भिक लेख उनके उर्दू पत्र 'जैन प्रचारक' में छपने लगे थे। क्योंकि आप जयपुर में अध्ययन करते समय वहाँ की 'जैन शिक्षा प्रचारक समिति' के 'वर्धमान जैन बोर्डिंग हाउस' तथा बनारस-निवास के दिनों में वहाँ के 'स्याद्वाद विद्यालय' के छात्रावास में रहे थे इस कारण आपकी रुचि 'जैन धर्म-ग्रंथों' के अध्ययन की ओर हो गई थी।

अपने अध्ययन की समाप्ति पर आपने सर्वप्रथम ललितपुर (झाँसी) के 'जैन विद्यालय' में अध्यापन-कार्य प्रारम्भ किया था। वहीं पर आपका विवाह भी हुआ था। जिन दिनों आप ललितपुर में थे तब आपका सम्पर्क श्री नाथूराम 'प्रेमी' से हो गया और आपकी प्रवृत्ति लेखन की ओर हो गई। उन्हीं दिनों आपका विचार अध्यापकी का कार्य छोड़कर वकालत करने का भी बना था, किन्तु आपने उसे तिलांजलि देकर लेखन को ही पूर्णत: अपनाने का विचार कर लिया। तीन वर्ष तक आपने 'जाति प्रबोधक' नामक एक मासिक पत्र का सम्पादन भी किया था, जिसके प्रेरक लेखों ने जैन-समाज में जागृति का अभूतपूर्व कार्य करने के साथ-साथ आपकी

लोकप्रियता को भी द्विगुणित किया था। सन् 1911 में आपने प्रख्यात समाज-सेवी श्री अर्जुनलाल सेठी को 'गुरुकुल' की स्थापना करने मे भी अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया था। इसकी स्थापना हस्तिनापुर (मेरठ) मे हुई थी और इसका नाम 'ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम' रखा गया।

आप कुछ दिन तक लखनऊ के 'कालीचरण हाई स्कूल' मे अध्यापक भी रहे थे। जिन दिनों आप लखनऊ में रहा करते थे उन दिनों आपने प्रख्यात पाश्चात्य विचारक जेम्स एलन की कई प्रेरक पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद किया था। आपकी ऐसी रचनाएँ सन् 1918 मे 'शान्ति मार्ग', 'आत्म रहस्य', 'जैसे चाहो वैसे बन जाओ', 'सुख और सफलता के मूल सिद्धान्त', 'सुख की प्राप्ति का मार्ग', 'मुक्ति का मार्ग', 'विजयी जीवन', 'तन मन और परिस्थितियों का नेता मनुष्य' तथा 'जीवन के महत्त्वपूर्ण प्रश्नो पर प्रकाश' नाम से 'हिन्दी साहित्य भण्डार लखनऊ' की ओर से 'सद्विचार पुस्तकमाला' के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा अनूदित पुस्तको मे 'चरित्र गठन और मनोबल', 'युवाओं का उपदेश', 'प्रात काल और सायकाल के विचार' तथा 'सफल गृहस्थ' आदि के नाम भी उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित जैन धर्म और जीव-दया-सम्बन्धी अनेक हिन्दी पुस्तके अत्यन्त लोकप्रिय हुई थी। आपके द्वारा लिखित 'बाल बोध जैन धर्म' (चार भाग) नामक पुस्तक तो सभी जैन पाठशालाओ मे पाठ्य-पुस्तक के रूप मे पढाई जाती थी। इन सभी रचनाओ मे आपकी रचनात्मक प्रतिभा पूर्णत· प्रतिफलित हुई थी। आपकी विविध विषयक अन्य पुस्तकों मे 'सन्तान पालन', 'अब्राहम लिकन', 'मितव्ययिता', 'पिता के उपदेश', 'भारतीय शासन-पद्धति', 'सदाचारी बालक', 'विद्यार्थी जीवन का उपदेश', 'शान्ति वैभव' और 'अच्छी आदते डालने की शिक्षा' आदि विशेष उल्लेख्य है।

आपका निधन अक्तूबर सन् 1919 मे केवल 30 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री दयाधरप्रसाद धौलाखण्डी

श्री धौलाखण्डी का जन्म उत्तर प्रदेश के गढ़वाल क्षेत्र के खाटली पट्टी के मल्ला डुमैला नामक ग्राम मे 22 सितम्बर सन् 1919 को हुआ था। एम० ए० एल-एल० बी० तक की शिक्षा प्राप्त करके आप शासकीय सेवा मे चले गए थे और सन् 1947 तक विभिन्न पदों पर कार्य-रत रहे। आपने गढवालियों मे सामाजिक चेतना जगाने की दिशा में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। 'गढवाल साहित्य मण्डल' और 'पहाडी सेवक सघ' नामक सस्थाओं के संगठन में आपका बहुत बडा योगदान रहा था। आप 'गिरीश' नामक पत्र के सम्पादक-मण्डल के भी प्रतिष्ठित सदस्य थे।

कविताएँ लिखने की ओर आपकी प्रारम्भ से ही रुचि थी। आपकी रचनाएँ प्राय. 'कर्मभूमि' मे छपा करती थी। आपके लेख 'वसुधारा' मे देखने को मिलते हैं। आपकी कविताओ का सकलन 'मधुगीत' नाम से जाना जाता है और आपके निबन्ध आपकी 'ऐतिहासिक गढवाल' नामक कृति मे दृष्टिगत होते है। गढवाल के इतिहास के सम्बन्ध में आपने बहुत अधिक अध्ययन किया था और उससे सम्बन्धित प्रचुर सामग्री आपके पास एकत्रित थी। आप शैलेन्द्र नाम से भी कविताओ और लेखो की रचना करते थे।

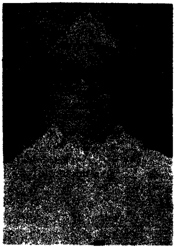
आपका देहावसान केवल 30 वर्ष की आयु मे ही 21 मार्च सन् 1949 को हुआ था।

आचार्य दयानिधि शर्मा वैद्य

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर जनपद के खुर्जा नामक नगर मे सन् 1907 मे हुआ था। आपके पिता श्री प्रेमनिधि शर्मा भी नगर के अच्छे चिकित्सक थे। आपने अपने सुयोग्य पिता के निरीक्षण एव मार्ग-दर्शन मे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से आयुर्वेद की ए० एम० एस० की उपाधि प्रथम श्रेणी मे प्राप्त करके चिकित्सा का स्वतन्त्र व्यवसाय चुना था। जिन दिनो आप छात्र थे उन दिनो आप शहीद चन्द्रशेखर को अपने यहाँ सरक्षण देने के अपराध मे गिरफ्तार भी हो गए थे। आपने सन् 1941 के व्यक्तिगत सत्याग्रह मे भी सक्रिय रूप से भाग लिया था।

आपने सर्वप्रथम अपना चिकित्सालय हापुड मे खोला था, किन्तु बाद मे आप स्थायी रूप से मेरठ मे रहने लगे थे।

आप एक कुशल चिकित्सक होने के साथ-साथ उत्कृष्ट लेखक भी थे। आपके द्वारा हिन्दी मे लिखित पुस्तकों मे 'पचशील' (1967) तथा 'महाशील' (1973) के नाम विशेष महत्त्व रखते है। आपने अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सरोजिनी देवी वैद्य के द्वारा लिखित 'महिला जीवन' नामक ग्रन्थ का सम्पादन भी किया था। आपने सर्वप्रथम सन् 1938 म 'सयुक्त प्रान्त इण्डियन मेडिसन एक्ट' का हिन्दी अनुवाद भी प्रस्तुत किया था।



आपका निधन 18 मई सन् 1975 को हुआ था।

स्वामी दयालनाथ

श्री दयालनाथ का जन्म महाराष्ट्र के मुर्तिजापुर नामक नगर मे सन् 1788 मे हुआ था। आप जाति से यजुर्वेदी ब्राह्मण और महाराष्ट्र के प्रख्यात सन्त देवनाथ जी के प्रमुख शिष्य थे। आपकी गुरु-परम्परा मे देवनाथ जी के अतिरिक्त गोपालनाथ और गोविन्दनाथ के नाम भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आप कीर्तन और भजन-गायन मे बहुत भाग लिया करते थे और आपने महाराष्ट्र के अतिरिक्त नागपुर, इन्दौर तथा ग्वालियर तक जाकर भक्ति का अच्छा प्रचार किया था।

आप उच्चकोटि के सन्त और भक्त होने के साथ-साथ हिन्दी और उर्दू के अच्छे कवि भी थे। आपके द्वारा लिखित गीतो मे तत्कालीन भक्ति-पद्धति का सही रूप देखने को मिलता है। आपका एक पद इस प्रकार है

जरा हँस-हँस बेणु बजाओ जी, तुम्हे दुहाई नन्द चरनन की।
लटपट पेच मुकुट पर छूटे, हँसि आवत तोरे लटकन की।।
घूँघट खोल दरस मोहि दीजे, चोट चलाओ उन अँखियन की।
सब बनिता बिरहिन की मारी, वृत्ति विकल पल छन-मन की।।
मोर-मुकुट पीताम्बर सोहे, चाल चलावें जैसी मटकन की।
देवनाथ प्रभु 'दयाल' तुम हो, आस लगी पद सुमरण की।।

आप प्राय. अपने गुरु देवनाथ जी के साथ कीर्तन और भजन मे निमग्न रहा करते थे।

आपका परलोक-वास सन् 1836 मे हुआ था।

महात्मा दयालशरण 'आनन्द प्रकाशी'

महात्मा आनन्द प्रकाशी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ जनपद के रोहटा नामक ग्राम मे सन् 1889 मे हुआ था। आपका जन्म-नाम हजारीलाल था। आपके पिता पण्डित नौनिदराय एक महान् ज्योतिषी और धुरन्धर विद्वान् थे तथा उनके पूर्वज मुरादाबाद जनपद के रहने वाले थे, जहाँ पृथ्वीराज चौहान के मुख्य सेनापति चामुण्डराय के वशज रहा करते थे। उसी वश मे उनका भी सम्बन्ध था। आपकी शिक्षा अपने ग्राम के प्राइमरी स्कूल मे ही हुई थी और बाद मे आप सरधना के मिडिल स्कूल मे दाखिल हो गए थे। तब छठी कक्षा मे आपने आपने सारे जिले के छात्रों मे प्रथम स्थान प्राप्त किया था।



आप केवल ढाई वर्ष ही शिक्षक के कार्य को कर पाए थे कि 19 वर्ष की आयु मे आपके भाई तिरखाराम ने आपका विवाह कर दिया। आप विवाह करना नही चाहते थे किन्तु विवश होकर आपको अपने भाई का प्रस्ताव स्वीकार करना पड़ा। आपके मन मे उस समय भी वैराग्य की भावनाएँ घर कर गई थी। जिसका

परिणाम यह हुआ कि विवाह के डेढ वर्ष बाद ही आपने विरक्त का-सा जीवन-यापन शुरू कर दिया। यह आपके जीवन की एक विशेषता थी कि गृहस्थ मे रहते हुए भी आप सन्तों-जैसा जीवन व्यतीत करते रहे और जिस समय आपने इस ससार का त्याग किया तब आपके छह पुत्र और चार पुत्रियाँ थी।

आपने अपने जीवन मे कुछ ऐसी धारणाएँ बनाई थी जिनमे गुरु के पद पर रहते हुए और गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए किसी की नौकरी न करने का निश्चय प्रमुख था। जब आप केवल 11 वर्ष के ही थे तब ही मे आपने अपने मन मे यह सकल्प कर लिया था कि वर्तमान सामाजिक जीवन मे आप किसी प्रकार भी लिप्त न होगे और आप इस दिशा मे यावज्जीवन पूर्णत सतर्क और सावधान रहे। गृहस्थ जीवन मे रहते हुए भी सन्यासियो-जैसा अपरिग्रह और ब्राह्मण-कुल मे उत्पन्न होकर भी पूर्णतया अयाचित वृत्ति अपना लेना आपके जीवन की एक विशेषता थी। आपने पूर्णत विरक्त होकर पारिवारिक मोह-माया त्यागकर इधर-उधर भ्रमण करके सत्सग प्रारम्भ कर दिया और आप पण्डित हजारीलाल से महात्मा दयालशरण 'आनन्दप्रकाशी' हो गए तथा आपका सम्पर्क जगद्गुरु शकराचार्य, स्वामी कृष्णबोधाश्रम, स्वामी करपात्री जी, महामण्डलेश्वर स्वामी गगेश्वरानन्द जी तथा स्वामी हरिहर बाबा आदि देश के अनेक शीर्षस्थ विद्वानो तथा सन्तो से भी हो गया था।

आपने अपने इस जीवन मे यत्र-तत्र जो भी विचार प्रकट किए थे वे 'सत्य शुद्ध वाणी' नामक पुस्तक मे सग्रहीत हैं। आपको लोग गुरुदेव के नाम से भी पुकारा करते थे। अपने भक्ति-भावपूर्ण प्रवचनो मे आप प्राय सन्तों-जैसी सूक्तियो का प्रयोग ही किया करते थे। भक्ति-भावनाओ को आपने गद्य की अपेक्षा पद्य मे भी प्रकट किया था। आपकी कुछ ऐसी रचनाएँ आपके सुपुत्र श्री चन्द्रबल शर्मा 'अरुण' द्वारा लिखित 'आनन्द-लहरी' नामक आपकी जीवनी मे सकलित है।

अपने निधनसे पूर्व आपने अपने शिष्य पुण्डरीकाक्ष तथा पुत्र चन्द्रबल शर्मा को यह स्पष्ट बतला दिया था कि मै 19 दिसम्बर सन् 1962 को मध्याह्न मे 12 बजे अपने इस पच तत्त्व के भौतिक शरीर को अवश्य छोड दूँगा और वास्तव मे आपने उसी दिन वाराणसी के त्रिलोचन घाट पर इहलीला सवरण की थी।

श्री दयाशंकर दीक्षित 'देहाती'

श्री देहाती का जन्म उत्तर प्रदेश के कानपुर नगर मे सन् 1894 को हुआ था। शैशव-काल मे अपने माता-पिता के स्नेह से वचित हो जाने के कारण आपका पालन-पोषण आपके पितामह की देख-रेख मे हुआ था। यद्यपि आपकी विधिवत् कोई स्कूली शिक्षा नही हुई थी, किन्तु आप कबीर और रवीन्द्र की भाँति स्वत ही स्वाभाविक काव्य-प्रतिभा लेकर इस धराधाम पर अवतीर्ण हुए थे। यद्यपि आपकी रचनाओ का मूल स्वर व्यग्य और हास्य था, किन्तु उसमे भी आप अनेक राष्ट्रीय समस्याओ के समाधान प्रस्तुत करने मे नही चूकते थे। खडी बोली, ब्रजभाषा, अवधी और बैसवारी आदि भाषाओ मे आप स्वाभाविक रचना करने मे सर्वथा निपुण थे। अपनी रचनाएँ यद्यपि आपने कवित्त, सवैया और कुण्डली छन्दो मे भी बहुत लिखी है, किन्तु छोटे-छोटे दोहो के माध्यम से यमक और श्लेष-युक्त शब्द-सयोजन करके रचना लिखने मे आप बहुत दक्ष थे। हास्य-कवियो मे सामान्यत जो तुकबन्दी की भावना दृष्टिगत होती है वैसी आपकी रचनाओ मे नही है।

आपके द्वारा लिखित दोहो मे कही-कही बिहारी-जैसी जो अद्भुत छटा देखने को मिलती है वह आपके कवित्त की उत्कृष्टता की द्योतक है। दो-चार दोहे इस प्रकार है :

जगत् करे परपच मिलि, करत जीव इमि तग।
जिमि अकेलि तिय फँस गई, पल्टनियन के सग॥

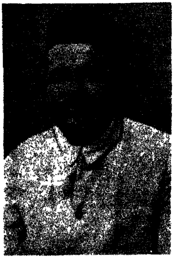
तिय ब्यूटीफुल ग्रेजुएट, पति कुरूप बेमेल।
मानहु बम्बुर वृक्ष पै, बिहरति अम्बर बेल॥

कमल नयन हरि के जबै, निज नैनन मे दीख।
निज नैना है माँगते, हरि नैनन सो भीख॥

आपने होली की गन्दी और गाली भरी कबीरो के स्थान पर शिष्ट और हास्यप्रद कबीरे लिखी थी। सन् 1920 मे आप काव्य-क्षेत्र मे अवतरित हुए थे और जीवन-पर्यन्त उसके माध्यम से ही जन-जागरण का कार्य करते रहे। आप उत्तर प्रदेश हिन्दी-सस्थान की ओर से पुरस्कृत हुए थे, किन्तु सम्मान समारोह मे सम्मिलित होने से पूर्व ही 27 अगस्त सन् 1982 को आपका निधन हो गया।

श्री दयाशंकर दुबे

श्री दुबेजी का जन्म 18 जुलाई सन् 1896 को खण्डवा (मध्य प्रदेश) में हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा खण्डवा, होशंगाबाद जबलपुर, नागपुर और प्रयाग मे हुई थी। आप अनेक वर्ष तक प्रयाग विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग मे प्राध्यापक रहे थे और हिन्दी माध्यम से अर्थशास्त्र-जैसे गुरु-गम्भीर विषय पर ग्रन्थ लिखने वाले



लेखकों मे आपका नाम सर्वाग्रणी है। राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन के प्रमुख सहयोगी के रूप मे आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कार्यों को प्रगति देने मे उल्लेखनीय कार्य किया था। आपने अनेक वर्ष तक उसके परीक्षा मन्त्री, साहित्य मन्त्री और अर्थ मन्त्री के रूप मे जो सेवा की थी वह सर्वथा अभिनन्दनीय रही है। परीक्षा मन्त्री के रूप मे दुबे जी ने सम्मेलन की परीक्षाओ को लोकप्रिय बनाने और उसके पाठ्यक्रम को स्तरीय रूप देने की दिशा मे भी अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था।

अर्थशास्त्र-जैसे दुरूह विषय को हिन्दी-पाठको के लिए सहज और सुबोध बनाने के साथ-साथ आपने उसके वाणिज्य, राजस्व और कृषि-जैसे उपयोगी अगों के विषय मे भी कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे थे। भूगोल के सम्बन्ध मे भी आपने अपनी लेखनी से कई उपयोगी ग्रन्थ प्रस्तुत किए थे। वास्तव मे जिन दिनो आपने इस क्षेत्र मे लेखन का कार्य प्रारम्भ किया उन दिनो आपके एकाकी प्रयास ने ही हिन्दी माध्यम से इन विषयों के उच्चतम स्तर पर अध्ययन-अध्यापन का मार्ग प्रशस्त किया था। अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से संचालित 'हिन्दी विद्यापीठ' के आचार्य के रूप मे आपने कई वर्ष तक कार्य किया था।

हिन्दी मे इन विषयों पर लिखने की प्रेरणा आपको आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी-जैसे ऋषितुल्य व्यक्तित्व से प्राप्त हुई थी। अपने साहित्यिक जीवन के प्रारम्भ में आपने जो लेख आदि लिखे थे पहले वे हिन्दी की सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे छपे थे और बाद मे आपकी इन विषयों से सम्बन्धित पुस्तकों का प्रकाशन हुआ था। जिन पत्र-पत्रिकाओं मे आपके लेख छपते थे उनमे 'सरस्वती', 'विशाल भारत', 'नवयुग', 'महारथी', 'त्याग-भूमि', 'शिक्षामृत', 'विद्या', 'भारती', 'साहित्य सन्देश', 'कर्मयोगी', 'उत्थान', 'जीवन साहित्य' तथा 'दिव्य जीवन' आदि के नाम विशेष महत्त्व रखते है। जिन दिनो राष्ट्रपिता महात्मा गाधी ने हरिजनों और ग्रामीण क्षेत्रो के उत्थान का आन्दोलन चलाया था, आपका ध्यान तब उस ओर भी गया और आपने हरिजनो के उत्थान और ग्रामीण-जीवन के उत्कर्ष के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डालने वाले ग्रन्थ भी लिखे थे। वास्तव मे हिन्दी मे अर्थशास्त्र, राजस्व, वाणिज्य, भूगोल, नागरिकता और राजनीति-जैसे विषयो पर ग्रन्थ लिखने की दिशा मे आपने ही सर्वप्रथम मार्गदर्शक का कार्य किया था। जो लोग पहले यह कहते हुए नही अघाते थे कि हिन्दी मे इन विषयो पर उचित और स्तरीय साहित्य का सर्वथा अभाव है उनके समक्ष श्री दुबे के साहित्य की उपादेयता और प्रचुरता ने एक चुनौती प्रस्तुत कर दी थी।

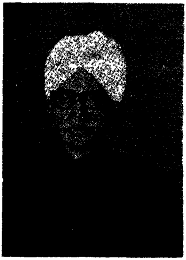
आपने जहाँ 'नागरिकता' जैसे विषयो के मर्मज्ञ श्री भगवानदास केला के साथ मिलकर 'ब्रिटिश साम्राज्य शासन' 'धन की उत्पत्ति', 'अर्थशास्त्र शब्दावली', 'हिन्दी में अर्थ शास्त्र' और 'राजनीति साहित्य', 'सरल अर्थशास्त्र' नामक ग्रन्थ लिखे थे वहाँ स्वतन्त्र रूप मे आपके द्वारा प्रस्तुत किए गए ग्रन्थो की सख्या भी बहुत अधिक है। आपकी ऐसी रचनाओं मे 'विदेशी विनिमय', 'अर्थशास्त्र की रूपरेखा', 'ग्रामीण ग्रामोदय','ग्राम्य अर्थशास्त्र', 'सम्पत्ति का उपयोग', 'आधुनिक व्यापार','सरल राजस्व', 'भारत मे कृषि-सुधार', 'आज का गाँव', 'भारत का आर्थिक भूगोल', 'निर्वचन नियम', 'हमारे हरिजन', 'पुराणों मे गगा', 'नर्मदा रहस्य', 'नर्मदा परिक्रमा मार्ग', 'भारत के तीर्थ' (दो भाग), तथा 'गगा रहस्य' के नाम विशेष उल्लेखनीय है। आपने श्री शकरसहाय सक्सेना और श्री मुरलीधर जोशी के सहयोग से भी क्रमश 'प्रारम्भिक अर्थशास्त्र' तथा 'अर्थशास्त्र की रूपरेखा' नामक ग्रन्थ लिखे थे। आपकी 'आधुनिक व्यापार' नामक

कृति पर उत्तर प्रदेश सरकार का 7 हजार रुपये का पुरस्कार प्रदान किया गया था।

आपका निधन सन् 1961 मे हुआ था।

मुन्शी दरबारीलाल वर्मा

मुन्शी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा जनपद के कागारौल नामक स्थान के एक जाट-परिवार मे सन् 1881 मे हुआ था। आपके पिता जी वृत्ति से अध्यापक होते हुए भी चिकित्सा तथा कृषि के कार्यों मे संलग्न रहने के कारण बिलकुल भी फुरसत नही पाते थे। इसी कारण आपकी शिक्षा की ओर उन्होने यथोचित ध्यान नही दिया। फलस्वरूप आपका अध्ययन आठवी कक्षा से आगे नही बढ सका था। मिडिल की परीक्षा देने के उपरान्त आप अपने पिताजी के पुरुषार्थ के कारण अध्यापक हो गए और उसीमे अपने जीवन को पूर्ण रूप से खपा दिया। इस बीच आपने अपने परिश्रम से नार्मल ट्रेनिंग भी कर ली थी।



अध्यापन के दिनों मे जब आप समय निकालकर घर की खेती की देख-भाल किया करते थे तब आपको कविता का चस्का लग गया और थोडे ही प्रयास से आपने चौपाई दोहा, सोरठा, छप्पय, सवैया, कवित्त और गीतिका आदि अनेक छन्दों मे काव्य-रचना करने का अच्छा अभ्यास कर लिया। धीरे-धीरे ग्रामीण सस्कारो के कारण आप होली, झूलना तथा खयाल आदि बनाने मे भी सिद्धहस्त हो गए। अपनी इन रचनाओ के कारण आपकी ख्याति उस क्षेत्र मे दूर-दूर तक फैल गई।

एक दिन आपको 'चित्र-काव्य' का एक ऐसा अनूठा ग्रन्थ देखने को मिला, जिसे पढकर आपका कविता करने का मान-गुमान सर्वथा जाता रहा और आपके मन मे उसी शैली की कविता करने की भावना बलवती हो गई। आपने थोडे ही प्रयास से 'श्रीमद्रामरसालय' नामक काव्य की रचना प्रारम्भ कर दी और सन् 1962-63 मे उसे पूर्ण भी कर लिया। इस बीच आपने 'दरबारी लाल पच शतक', 'दरबारी लाल निदान वैद्यक ग्रन्थ' तथा 'फुटकर काव्य-संग्रह शिरोमणि' आदि ग्रन्थो की रचना भी कर ली। इनमे से आपकी 'दरबारीलाल पच शतक' नामक रचना सन् 1964 मे प्रकाशित हुई थी। शेष रचनाएँ अभी अप्रकाशित ही है।

आपका निधन सन् 1969 मे हुआ था।

श्री दर्शन दुबे

श्री दुबे का जन्म बिहार प्रदेश के सन्ताल परगना क्षेत्र के अन्तर्गत बन्देलवार नामक ग्राम मे सन् 1876 मे हुआ था। आजकल गोड्डा अनुमण्डल के अन्तर्गत इस ग्राम का स्थान अत्यन्त प्रमुख है। आजकल इस ग्राम को 'बन्दनवार' कहा जाता है। जिन दिनो श्री दुबे का जन्म यहाँ हुआ था तब यहाँ शिक्षा की कोई उचित व्यवस्था नही थी, किन्तु आजकल तो यहाँ एक उच्च विद्यालय भी है। आपने वारकोप के इगलिश मिडिल स्कूल से छात्रवृत्ति पाकर सन् 1890 मे मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण की थी और उसके उपरान्त आपकी आगे की शिक्षा का क्रम अवरुद्ध हो गया था। बाद मे आपने आगे की पढ़ाई जारी रखने की दृष्टि से भागलपुर के हाईस्कूल मे प्रवेश लिया, किन्तु पारिवारिक परिस्थितिवश आपको अपनी पढाई बीच मे ही बन्द करके घर वापिस लौटना पडा था। उन दिनो आपके इस विद्यालय के हिन्दी-सकृत-शिक्षक सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री अम्बिकादत्त व्यास थे। व्यास जी के इस थोड़े से काल के सान्निध्य मे आपके मानस मे कवित्व का स्रोत सहसा ही प्रस्फुटित हो गया था।

सन् 1894 मे घर वापिस लौटकर आप पूर्णत: कविता मे ही डूबने-उतराने लगे और आपने थोडे ही प्रयास से

काव्य-सृजन में अच्छी पटुता प्राप्त कर ली थी। आपकी फुटकर कविताएँ आपके 'दर्शन विनोद' (1894) नामक संकलन में समाविष्ट हैं। आपने भगवती दुर्गा की स्तुति मे 'दुर्गा आगमनी स्तव' नामक जो रचना छप्पय छन्द मे लिखी थी उसका प्रकाशन सन् 1904 मे कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दी बगवासी' नामक पत्र मे हुआ था। आपकी रचनाएँ उन दिनो हिन्दी की सभी प्रमुख पत्रिकाओ मे ससम्मान छपा करती थी। उन दिनो क्योकि समस्या-पूर्ति-पद्धति पर ही अधिकाश रचनाएँ लिखी जाती थी, अत श्री दुबे भी उस प्रभाव से अछूते कैसे रह सकते थे?

आपने प्रचुर काव्य-साहित्य का निर्माण किया था, किन्तु कुछ नाटक भी लिखे थे। फुटकर कविताओ के सकलनो के अतिरिक्त आपने जो 6 काव्य लिखे थे उनमे 'प्रेम प्रवाह' (1897), 'युगल विहार' (1898), 'प्रबोध चन्द्रिका' (1908), 'शृगार तिलक', 'ऋतुमाला तथा 'शैशवानन्द' के नाम अन्यतम है। इनमे से पहले 3 काव्य प्रकाशित हो चुके है और शेष अप्रकाशित है। आपकी अन्य कृतियो मे 'दर्शन विनोद', 'जय दुर्गा' (1895), 'मणि रत्नमाला' (1896), 'सगीत सार' (1897), 'दुर्गा स्तोत्र आगमनी' (1900), 'प्रबोध पचासा' (1900), के अतिरिक्त 'पावन पचासा' 'चौतीस सग्रह' के नाम भी अन्यतम है। आपके द्वारा लिखित नाटकों मे 'मेघनाथ वध' तथा 'द्रोपदी चीर हरण' भी प्रमुख रूप से चर्चनीय है। आपने सस्कृत मे भी 'शृगार सहार' नामक एक काव्य की समर्थ रचना की थी।

आपकी रचना-प्रतिभा का प्रत्यक्ष परिचय आपके 'ऋतुमाला' नामक काव्य के इस पद को देखने से भली-भाँति मिल जाता है.

झरना झरत अनवरत झमाझम से,
झिल्ली झनकारें झोंकू झीगुर झिंगारे है।
बार-बार वारिद मे विरही बिहारे बोलै,
प्तारे 'पियू-पियू' के पपैयन पुकारे है।।
मदन को दूत मजबूत मृदु मुख बोलै,
डोलत मलिन्द रसमत्त मतवारे है।
केकिन कुहुक कोकिला को कल कूक कान,
'दर्शन' अनूप दम्पती को विचारे है।।

आपकी रचनाओ मे रीति-कालीन कवियो-जैसी शृगारिकता, अनुप्रासबहुलता और भावशबलता प्रचुर परिमाण मे दृष्टिगत होती है। आपकी रचनाओं का पाठ अब भी यदा-कदा पटना आकाशवाणी से सुनने को मिल जाता है।

आपका निधन सन् 1912 मे केवल 36 वर्ष की आयु मे हुआ था।

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती

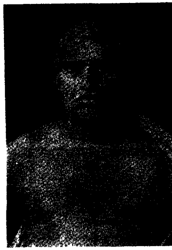
स्वामी जी का जन्म पजाब प्रदेश के लुधियाना जनपद के जगराँव नामक नगर के एक सारस्वत ब्राह्मण-परिवार मे सन् 1861 मे हुआ था। आपके पिता पण्डित रामप्रताप शर्मा एक बडे जमीदार थे और लेन-देन का कार्य किया करते थे। उनके छोटे भाई श्री दयाराम का जब असामयिक देहान्त हो गया तो उन्होंने अपनी धर्मशीला भाभी का शेष वैधव्य का जीवन शान्तिपूर्वक व्यतीत होने की दृष्टि से उनके निवास के लिए बनारस के अस्सीघाट पर एक दोमजिला मकान बनवा दिया था और 25-30 ब्रह्मचारी संस्कृत के अध्ययन के लिए वहाँ रखने की व्यवस्था भी करवा दी थी। स्वामी जी का बचपन का नाम 'नेतराम' था, किन्तु कुछ वर्ष बाद अनेक सम्बन्धियो के परामर्श पर उसे बदलकर 'कृपाराम' कर दिया गया था। आपके पिता कभी-कभी बनारस जाकर रहा करते थे इसी कारण कृपाराम भी उनके साथ वहाँ बराबर आते-जाते रहते थे। 11 वर्ष की स्वल्प सी आयु मे ही आपका विवाह कर दिया गया था। आपको बचपन मे पहलवानी का बडा शौक था और आप स्वभाव से बडे भुलक्कड थे। 19 वर्ष की आयु मे आपको घर से वैराग्य हो गया और घर से निकल गए। इस बीच आपने स्वामी दयानन्द सरस्वती के भाषणो से प्रभावित होकर सन् 1901 मे स्वामी अनुभवानन्द मे सन्यास की दीक्षा ग्रहण कर ली और 'कृपाराम' से 'दर्शनानन्द' हो गए।

अपने पिता के साथ काशी आते-जाते रहने के कारण बालक कृपाराम का प्रारम्भिक अध्ययन पजाब की तत्कालीन परिपाटी के साथ उर्दू मे प्रारम्भ होकर सस्कृत मे भी हुआ था। अपने अध्ययन के प्रसग मे और अपनी चाची जी के पास काशी मे रहने के कारण आपने सस्कृत के प्राय. सभी

उच्चकोटि के ग्रन्थो का सर्वागीण अध्ययन कर लिया था। काशी मे अपना अध्ययन समाप्त करके जब आप पजाब लौटे तो आर्यसमाज के सुधारवादी आन्दोलन मे सम्मिलित हो गए। अपने पिताजी से आपने काशी लौटकर वहाँ पर एक प्रिंटिंग प्रेस खोलने की इच्छा प्रकट की और कहा कि मै वहाँ सस्कृत की पुस्तके छापकर छात्रो को सस्ते मूल्य मे बेचा करूँगा। कृपाराम जी के इस प्रस्ताव को आपके पिता ने महज भाव से स्वीकार कर लिया और मुँहमाँगा पैसा देकर उन्हे वहाँ से विदा किया।

कृपाराम जी ने काशी जाकर 'तिमिर भास्कर प्रेस' नाम से एक प्रेस स्थापित करके उसकी ओर से सस्कृत की पुस्तके छापकर सस्ते मूल्य पर बेचने का काम प्रारम्भ कर दिया। उन दिनो जर्मनी की 'ला जरस कम्पनी' ही सस्कृत के बडे-बडे ग्रन्थ छापा करती थी। कृपाराम जी ने अपने प्रेस से सस्कृत के ग्रन्थ छापने के अतिरिक्त 'ब्राह्मण' नामक पत्र भी निकाला था। आपने प्रेस का सचालन करने के साथ-साथ काशी के 'ज्ञानवापी' नामक मोहल्ले मे पुस्तको की एक दुकान भी खोल रखी थी। इस दुकान की एक विशेषता यह भी थी कि इसमे सस्कृत के छात्रो को आप अपने प्रेस मे मुद्रित सस्कृत के 'काशिका' तथा 'महाभाष्य' आदि ग्रन्थ सस्ते मूल्य मे उपलब्ध करा दिया करते थे। अपनी इस प्रवृत्ति के कारण आप काशी की छात्र-मण्डली मे अत्यन्त लोकप्रिय हो गए थे। जो भी विद्यार्थी उनके पास 'काशिका' और 'महाभाष्य' की प्रतियाँ सस्ते मूल्य पर लेने के लिए पहुँचता था उसे आप कभी-कभी पैसे न होने पर नि शुल्क ही दे दिया करते थे। काशी के कई धूर्त प्रकाशको तथा पुस्तक-विक्रेताओ ने इस प्रकार ऐसे अनेक विद्यार्थियो द्वारा सैकडो पुस्तकें मँगा-मँगाकर जमा कर ली थी और पीछे सस्करणो की समाप्ति पर दुगुने तथा तिगुने मूल्य पर उन्हे बेचा था।

अपने इन कार्यों मे सलग्न रहते हुए भी आपने अपना स्वाध्याय नही छोडा और आपने स्वामी मनीष्यानन्द से सस्कृत के अनेक दर्शनो का भीअध्ययन काशी मे रहते हुए किया था। इसी स्थान पर आपकी भेट उन पण्डित गगादत्त शास्त्री से हुई थी, जो बाद मे 'स्वामी शुद्धबोध तीर्थ' के नाम से प्रख्यात हुए थे और जिनका आपकी ही प्रेरणा पर आर्य-समाज की 'गुरुकुल काँगडी' तथा 'गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर' जैसे कई प्रमुख शिक्षा सस्थाओ से निकट सम्पर्क हो गया था। जिन दिनो आप काशी मे सस्कृत के अनेक दुर्लभ ग्रन्थों का अपने प्रेस मे पुनर्मुद्रण करके उन्हे छात्रो के लिए सुलभ करने का प्रशसनीय कार्य कर रहे थे उन दिनो पण्डित गगादत्त शास्त्री ने भी आपको इस कार्य मे अपना उल्लेखनीय सहयोग दिया था। जर्मनी की ला जरस कम्पनी की मँहगी पुस्तके जब बिकनी बन्द हो गई तब उसने आपके ऊपर 'कापी राइट' का दावा कर दिया। बहुत दिन तक यह अभियोग चला, किन्तु अन्त मे विजय आपकी ही हुई। परिणाम स्वरूप आपकी विजय से 'ला जरस कम्पनी' सदा के लिए दब गई और काशी मे सस्ते मूल्य पर सस्कृत के ग्रन्थ मिलने लगे। आपने अपनी सारी ही सम्पत्ति ऐसे कार्यों मे व्यय कर डाली थी।



आपको सस्कृत की पाठशालाएँ खोलने, प्रेस खोलने, पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित करने और समाज-सुधार-सम्बन्धी पुस्तके लिखने का बडा शौक था। इस प्रसग मे आपने अनेक ग्रन्थो की रचना करने के साथ-साथ बहुत-सी पत्र-पत्रिकाओ का प्रकाशन भी अनेक स्थानो से किया था। आपके द्वारा सम्पादित तथा प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओ मे 'तिमिर नाशक', 'वैदिक धर्म', 'गुरुकुल समाचार', 'आर्य सिद्धान्त', 'ऋषि दयानन्द' तथा 'वेद प्रचारक' के नाम विशेष उल्लेखनीय है। आपकी लेखनी जहाँ दिन-रात अनवरत चलती रहती थी वहाँ वाणी का भी अभूतपूर्व वरदान आपको प्राप्त था। आप विरोधियो से शास्त्रार्थ करने मे परम प्रवीण थे। प्रतिपक्षी को अपने प्रबल युक्ति-बल के द्वारा परास्त करने की कला मे आप परम निष्णात थे। उन दिनो आर्यसमाज के क्षेत्र मे आप-जैसा शास्त्रार्थ महारथी पण्डित गणपति शर्मा के अति-रिक्त और कोई नही था। इस सन्दर्भ मे आपके द्वारा काशी, आगरा, बिजनौर, गोरखपुर तथा पेशावर आदि अनेक

स्थानों मे किये गए शास्त्रार्थ अत्यन्त उल्लेख योग्य है। आपके द्वारा गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के वार्षिक उत्सव के अवसर पर 8 अप्रैल सन् 1912 को आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् पण्डित गणपति शर्मा से 'वृक्षो मे जीव' विषय पर किया गया शास्त्रार्थ जहाँ अपनी विशिष्टता के लिए विख्यात है वहाँ जून सन् 1912 मे प्रख्यात जैन विद्वान् पण्डित गोपालदास बरैया से 'ईश्वर सृष्टिकर्ता है' विषय पर किया गया शास्त्रार्थ भी अत्यन्त ऐतिहासिक रहा था। इस शास्त्रार्थ की सफलता का सबसे उज्ज्वल प्रमाण यही है कि इसे सुनकर पण्डित दुर्गादत्त शास्त्री और पण्डित शम्भुदयाल जैन मत का परित्याग करके आर्य समाज मे सम्मिलित हो गए थे।

आप शास्त्रार्थ करने की कला मे निष्णात होने के साथ-साथ संस्कृत के अध्ययन-अध्यापन का कार्य जारी रखने की दिशा मे भी अत्यन्त सचेष्ट रहा करते थे। आपने इस उद्देश्य से क्रमश सिकन्दराबाद, ज्वालापुर, बदायूँ, बिरालसी तथा पोठोहार आदि विभिन्न स्थानो मे जिन गुरुकुलों की स्थापना की थी उनमे से प्राय. सभी ने आर्यसमाज तथा सस्कृत साहित्य के प्रचार तथा प्रसार मे उल्लेखनीय योगदान दिया है। इनमे से 'गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर' का देश की शिक्षा-सस्थाओ मे अत्यन्त प्रमुखतम स्थान है। यहाँ यह बात विशेष रूप से चर्चनीय है कि इन सभी सस्थाओ मे स्वामी जी ने नि.शुल्क शिक्षा देने की व्यवस्थाएँ की थी। यहाँ यह बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि आपकी प्रेरणा पर आपके काशी के साथी पण्डित गगादत्त शास्त्री, जो गुरुकुल काँगडी मे अध्यापन-निरत थे, उस समय गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर मे चले आए जब आपने उसकी स्थापना सन् 1908 मे की थी।

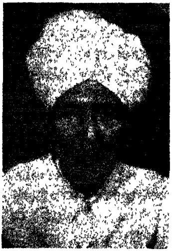
आपकी लेखन-क्षमता का सुपुष्ट प्रमाण उन असख्य ट्रैक्टो तथा ग्रन्थों को देखने से मिल जाता है जो आपने अपने इस कार्मिक जीवन की अत्यधिक व्यस्तता मे लिखे थे। आपने जहाँ 100 से अधिक ट्रैक्टों की रचना की थी वहाँ 'मनुस्मृति' तथा 'गीता' के अतिरिक्त 6 दर्शनो और सभी उपनिषदो के हिन्दी-अनुवाद भी प्रस्तुत किए थे। इनमे से कुछ ट्रैक्ट आपने उर्दू में भी लिखे थे। आपके द्वारा हिन्दी मे लिखे गए ट्रैक्टों मे से कुछ के नाम इस प्रकार है—'ईश्वर विचार', 'ईश्वर-प्राप्ति', 'जीवात्मा के अस्तित्व के प्रमाण', 'जीवात्मा द्रव्य है या गुण', 'प्रकृति का अनादित्व', 'ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता', 'वेदो की आवश्यकता', 'वेद किस पर प्रकट हुए', 'वेद का महत्त्व', 'वेद का विषय', 'वैदिक धर्म सब मतों की उत्तमता का केन्द्र है', 'क्या वेदो के पढ़ने का अधिकार सबको है', 'सृष्टि प्रवाह से अनादि है', 'आत्म-शिक्षा', 'आत्मिक बल', 'धर्म शिक्षा', 'रामायण-सार', 'मुक्ति व्यवस्था', 'षट् शास्त्रों की उत्पत्ति का क्रम', 'वर्ण-व्यवस्था', 'कर्म व्यवस्था', 'मुक्ति और पुनरावृत्ति', 'यज्ञ', 'गुरुकुल', 'स्वामी दयानन्द और वृक्षो मे जीव', 'स्थावर में जीव विचार', 'पुनर्जन्मवाद', 'अकाल-मृत्यु-मीमांसा', 'श्राद्ध-व्यवस्था', 'ईसाई मत खण्डन', 'जैन पण्डितों से प्रश्न', 'जैन-भ्रान्ति निवारण', 'कुरान की छानबीन', 'नियोग और उसके दुश्मन', 'बाबा गुरुनानक साहब' तथा 'देव समाज से प्रश्न' आदि। आपके द्वारा लिखित सभी ट्रैक्टों को 'दर्शनानन्द ग्रन्थ सग्रह' नाम से आपके छोटे भाई पण्डित कर्ताराम शर्मा (बाद मे स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती के रूप मे विख्यात) ने प्रकाशित करा दिया था। आजकल इस साहित्य का प्रकाशन 5 भागो में मधुर प्रकाशन दिल्ली की ओर से किया गया है। आपके इन ट्रैक्टो का सर्वप्रथम प्रकाशन पण्डित भीमसेन शर्मा ने सन् 1915 मे भरतपुर के श्री नैपाल शर्मा के प्रेस मे कराया था।

आप नि शुल्क शिक्षा के कितने बडे समर्थक थे इसका प्रमाण आपके द्वारा सन् 1898 मे लिखा गया वह लेख है जिसमे आपने देश के लिए शिक्षा पर किसी भी प्रकार के शुल्क का विधान त्याज्य तथा अनुपयोगी ठहराया था। आपका यह निश्चित मत था—"जिस देश मे विद्या बिकने लगे—जो कि आत्मिक जीवन का कारण है, और निर्धन लोग धनाभाव के कारण विद्या से वचित रहें, तो वह देश क्यो न प्लेग, दुर्भिक्ष और मुकद्मेबाजी का शिकार होगा। भला वेद विद्या, जिसको कि आज तक भारत के ऋषि-मुनि बाँटते ही चले आए है, जो मनुष्यो के हृदयो मे आत्म विश्वास पैदा करने वाली है, यदि वह बिकने लगे तो विद्या के निरादर से और निर्धनो को विद्या से वचित रखने के कारण उस देश का नाश क्यों न होगा।" आपने अपने इन्ही विचारों को क्रियान्वित करने की दृष्टि से ही देश मे जिन गुरुकुलों की स्थापना की थी उन सबमे ही नि शुल्क शिक्षा-प्रणाली प्रचलित की थी।

आपका निधन 11 मई सन् 1913 को उस समय हुआ था जब आप हाथरस आर्यसमाज के वार्षिक उत्सव पर शास्त्रार्थ करने के निमित्त गए हुए थे।

ठाकुर दलपतिसिंह

ठाकुर साहब का जन्म मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ क्षेत्र के रायपुर जनपद के अन्तर्गत मन्दरौंद नामक ग्राम मे सन् 1881 मे हुआ था। आपके पिता ठाकुर हीरासिंह गाँव के मालगुजार थे। आपको जीवन मे अपने पिता से देशभक्तिपूर्ण सस्कार और माता से धार्मिकता की भावनाएँ उपहार-स्वरूप प्राप्त हुई थी। छत्तीसगढ़ के जिन जन-सेवको ने नाम आज भी आदर के साथ याद किये जाते है उनमे सर्वश्री नारायणराव मेघावाले, नत्थूजी जगताप और सुन्दरलाल शर्मा के साथ आपका भी नाम अन्यतम है। यद्यपि आपकी शिक्षा-दीक्षा ग्रामीण परिवेश मे साधारण ही हुई थी किन्तु 'राम-चरित मानस' के निरन्तर नियमित



पाठ से आपके मानस मे जो साहित्य-चेतना उद्भूत हुई थी उसीके कारण आप इस क्षेत्र मे सक्रिय हुए थे। आप जहाँ अनेक वर्ष तक ग्राम-पचायत के सरपच रहे थे वहाँ 'रायपुर डिस्ट्रिक्ट कौसिल' के उपाध्यक्ष का पद भी आपने सुशोभित किया था।

सर्वप्रथम सन् 1908 मे आपने 'कवि समाज' राजिम की सम्मानित सदस्यता स्वीकार करके अपने साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ किया था। आपने सन् 1920 मे 'श्री राम यश मन रजन' नामक जिस कृति का निर्माण किया था उसमे महाराजा दशरथ के करुण विलाप तथा श्रवण कुमार के माता-पिता द्वारा दिये गए शाप का वर्णन आपने अत्यन्त सजीव शैली में किया था। इस ग्रन्थ मे उसकी समाप्ति करते हुए आपने अपना परिचय इस प्रकार दिया था

सम्वत् उन्नीस सौ सतहत्तर साल।
महिना असाढ पूरण भयो ख्याल।।
गौंडाडिह मन्दरौंद बसत दूना गाँव।
क्षत्री बरण दलपति सिंह नाँव।।
ये मनरजन तउने बनाइस है।
लेउगा मति से कछु गाइस है।।
गलती होहिहै तो क्षमा करिहौ।
अनबुद्धी समझके दया करिहौ।।
पूरगे मनरजन करहू बिसराम।
मन थिर करिके जपहू सीताराम।।
तोर ऊपर बीती जान भजो भगवान्।
तजो अभिमान समुझ अज्ञान।।

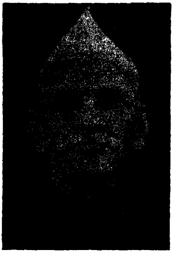
आपकी दूसरी कृति 'सवैया रामायण' है, जिसे आपकी प्रायोगित कृति कहा जा सकता है। इसकी रचना ठाकुर साहब ने सन् 1954 मे की थी। इन दोनो कृतियो का विधिवत् प्रकाशन हो चुका है। आपकी कई अप्रकाशित कृतियाँ भी अपनी विशिष्टताओ के लिए ध्यातव्य है। जिनमे पहली 'हनुमत सन्देश', दूसरी 'सुवा गीत' तीसरी 'नूतन मान-लीला', चौथी 'सुदामा लीला', पाँचवी 'प्रह्लाद लीला', छठी 'भक्त विजय', अर्थात् 'अम्बरीष लीला' सातवी, 'श्रीकृष्ण लीला विनोद' और आठवी 'श्रीराम लीला विनोद' है।

आपकी उक्त सभी कृतियो मे आपकी प्रतिभा के बहु-मुखी रूप दृष्टिगत होते है। यदि किसी कृति को आपने 'गीति-नाट्य' शैली मे प्रस्तुत किया है तो किसी को दोहा-चौपाई छन्दो मे ही निबद्ध किया है। यदि किसी की रचना 'लोक-गीत' की बहुप्रचलित धुनो के आधार पर की गई है तो किसी-किसी कृति के निर्माण मे आपने अपने अन्य कवि मित्रो की काव्य-पक्तियों का भी प्रचुरता से प्रयोग किया है। छत्तीसगढ क्षेत्र के साहित्यकारो मे आप ही अकेले ऐसे महानुभाव थे जो रामायण के प्रचार के लिए परीक्षाओं का संचालन भी किया करते थे।

आपका निधन 25 जनवरी सन् 1967 को हुआ था।

श्री दशरथप्रसाद द्विवेदी

श्री द्विवेदीजी का जन्म उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद के डोहरिया नामक ग्राम मे सन् 1891 मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा प्रयाग के कायस्थ पाठशाला कालेज तथा म्योर सेण्ट्रल कालेज मे हुई थी। शिक्षा-प्राप्ति के अनन्तर आपने पहले अपने पिता के आदेश पर बी० एण्ड एन० डब्ल्यू० रेलवे मे नौकरी की थी और फिर सन् 1916 मे पुलिस मे भरती होने का विचार किया था और उसकी ट्रेनिंग प्राप्त करने के लिए जब आप मुरादाबाद जा रहे थे तब आपकी भेंट अकस्मात् लखनऊ मे श्री गणेशशंकर जी विद्यार्थी से हो गई थी। इस आकस्मिक सम्पर्क ने आपके जीवन की धारा ही बदल दी और उनकी प्रेरणा से मुरादाबाद न जाकर आप उनके साप्ताहिक पत्र 'प्रताप' मे कार्य करने की दृष्टि से कानपुर चले गए।



आपने कानपुर मे श्री विद्यार्थीजी के निरीक्षण मे सन् 1919 के मध्य तक उनके 'प्रताप' मे कार्य करके जो कुछ सीखा था, उससे आपके मानस मे स्वतत्र रूप से एक साप्ताहिक प्रकाशित करने की भावनाएं हिलोरे मारने लगी थी। फलस्वरूप आपने अपनी जन्मभूमि गोरखपुर मे लौटकर सन् 1920 मे वहाँ के सर्वश्री नवलकिशोर अधिवक्ता, शिवमंगल गाधी और महावीरप्रसाद पोद्दार आदि कई अपने उत्साही मित्रो एव साहित्य-प्रेमियों के सहयोग से 'स्वदेश' नामक साप्ताहिक का प्रकाशन प्रारम्भ किया, जो सन् 1938 तक नियमित रूप से प्रकाशित होता रहा था। अपने प्रकाशन के इस दीर्घ काल मे 'स्वदेश' पर उसकी निर्भीक तथा निष्पक्ष नीति के कारण ब्रिटिश नौकरशाही के द्वारा अनेक आक्रमण हुए, अनेक बार जुर्माने भी देने पड़े और कई बार द्विवेदीजी को जेल की यात्राएँ भी करनी पड़ी थी। यहाँ यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि एक बार 'स्वदेश' के 'विजयांक' का सम्पादन जब पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' ने किया था तब ब्रिटिश नौकरशाही ने उसे जब्त घोषित कर दिया था।

'प्रताप' की भाँति 'द्विवेदी' के 'स्वदेश' ने भी राष्ट्रीय सग्राम की चेतना को लक्ष्य मानकर ही जनता-जनार्दन की सेवा का व्रत लिया था। 'स्वदेश' के उद्देश्यों का प्रकटीकरण उस पर छपने वाली इन पक्तियो मे भलीभाँति होता है

जो भरा नहीं है भावों से,
बहती जिसमे रस-धार नहीं।
वह हृदय नही है, पत्थर है,
जिसमे 'स्वदेश' का प्यार नही।।

उन दिनो 'स्वदेश' कितना लोकप्रिय था इसका परिचय इसी बात से मिल जाता है कि इसकी प्रतियाँ श्रीलंका, बर्मा, बैंकाक, मलाया, सिंगापुर, फिजी, नेपाल, काबुल, रूस, अमरीका तथा इंग्लैंड आदि अनेक देशों मे भी जाया करती थी। इस पत्र की साहित्यिक महत्ता का अनुमान इसी बात से हो जाता है कि इसमे उन दिनो आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, हरिऔध, मुकुटधर पाण्डेय, मन्नन द्विवेदी गजपुरी, विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक, हरिभाऊ उपाध्याय, सत्यनारायण कविरत्न, मैथिलीशरण गुप्त, श्रीकृष्णदत्त पालीवाल, रूपनारायण पाण्डेय, गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' तथा पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'-जैसे अनेक ख्यातिलब्ध साहित्यकारो की रचनाएँ छपा करती थी। इस प्रकार 'स्वदेश' साहित्य और राजनीति दोनो ही दिशाओ मे देश की उल्लेखनीय सेवा कर रहा था।

'स्वदेश' के सम्पादन के दिनों जहाँ द्विवेदीजी को अनेक बार ब्रिटिश नौकरशाही का कोप-भाजन बनना पड़ा था, वहाँ अगस्त क्रान्ति के प्रख्यात 'भारत छोड़ो आन्दोलन' मे भी आपने जेल-यात्रा की थी। जब आप इस आन्दोलन के प्रसंग मे हुई अपनी जेल-यात्रा से वापिस लौटे थे तब भी आपने सन् 1945 मे 'स्वदेश' का पुन प्रकाशन किया था। इसके उपरान्त आप सन् 1952 से सन् 1957 तक मानीराम क्षेत्र से भारत की लोकसभा के सदस्य भी रहे थे। सन् 1957 मे आपने चुनाव का बहिष्कार कर दिया था। आपने प्रदेश कांग्रेस कमेटी, शहर व जिला कांग्रेस कमेटी तथा

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य के रूप में भी गोरखपुर जनपद की उल्लेखनीय सेवा की थी। आप कई वर्ष तक 'जिला बाढ़ राहत समिति' तथा 'भ्रष्टाचार उन्मूलन समिति' आदि अनेक समितियों के सक्रिय सदस्य रहने के साथ-साथ 'जिला विकास संघ' के अध्यक्ष भी रहे थे।

यहाँ यह बात विशेष रूप से ध्यातव्य है कि 'स्वदेश' के प्रकाशन के दिनो मे आप उसके लिए कभी भी विज्ञापन प्राप्त करने का प्रयास नही करते थे और विशुद्ध साहित्य-सेवा और राष्ट्र-भक्ति की भावनाएँ प्रचारित करना ही आपने अपने इस पत्र का प्रमुख लक्ष्य घोषित किया था। व्यक्तिगत धन बढाने अथवा सम्पत्ति-सग्रह की लालसा या ब्रिटिश शासकों से किसी भी प्रकार की सुविधा प्राप्त करने का विचार आपके मन मे नही आया था। सम्पत्ति, सत्ता और ऐश्वर्य की कामना से सर्वथा दूर रहते हुए आपने 'स्वदेश' को अश्लील साहित्य के प्रकाशन और 'ब्लैकमेलिंग' से भी सर्वथा दूर रखा था। एक बार आपने 'स्वदेश' के सम्पादकीय मे अपने लक्ष्य की घोषणा इस प्रकार की थी

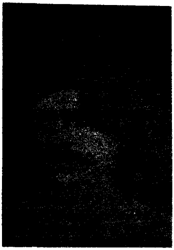
स्वार्गालय के लिए आत्म-बलि हम न करेंगे।
जिस 'स्वदेश' मे जिये, उसी पर सदा मरेंगे।।

छायावाद-युग की काव्य-धारा को राष्ट्रीयता का स्वर देने की दिशा मे 'स्वदेश' का प्रमुख योगदान रहा था।

आपका निधन 9 अप्रैल सन् 1962 को 'ब्रेन हेमरेज' हो जाने के कारण हुआ था।

डॉ० दशरथ शर्मा

आपका जन्म 9 मार्च सन् 1903 को राजस्थान के चूरू नामक नगर मे हुआ था। आप प्रख्यात विद्वान् पण्डित हरनामदत्त भाष्याचार्य के पौत्र तथा विद्या-वाचस्पति श्री देवीप्रसाद शास्त्री के द्वितीय पुत्र थे। आपके ज्येष्ठ भ्राता पण्डित विद्याधर शास्त्री देश के सस्कृत वाङ्मय के मनीषियो मे अपना अप्रतिम स्थान रखते है। बी० ए० आनर्स की परीक्षा उत्तीर्ण करके आपने इतिहास तथा संस्कृत विषयो मे एम० ए० करने के उपरान्त आगरा विश्वविद्यालय से इतिहास विषय मे अपना शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-एच०डी० की उपाधि प्राप्त की थी। आप राजस्थानी, गुजराती, बगाली, पंजाबी, अँग्रेजी, संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश आदि कई भाषाओं के गम्भीर विद्वान् होने के साथ-साथ इतिहास एवं पुरातत्त्व के क्षेत्र मे भी अपना सर्वथा विशिष्ट स्थान रखते थे। आपका 'इण्डियन हिस्टोरिकल रिकार्ड कमीशन',



'राजस्थान राज्य आबू समिति', 'भारतीय इतिहास परिषद्', 'सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट', 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा', 'भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इस्टीट्यूट', 'न्यू मिस्मैटिक सोसाइटी आफ इण्डिया', 'इतिहास परीक्षा समिति' तथा 'इतिहास पुस्तक निर्वाचन समिति' आदि देश की इतिहास, सस्कृति, साहित्य एव पुरातत्त्व के क्षेत्र से सम्बन्धित अनेक सस्थाओ से निकट का सम्बन्ध था। आप जहाँ 'इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस' तथा 'हिन्दी पारिभाषिक शब्द विशेषज्ञ समिति' के सक्रिय सदस्य रहे थे वहाँ 'वरदा', 'विश्वम्भरा' तथा 'राजस्थान भारती' आदि विभिन्न शोध-पत्रिकाओं के सम्पादक मण्डल के वरिष्ठ सदस्य भी थे।

आपने अपना कार्मिक जीवन जिन अनेक शिक्षण-संस्थाओ से सम्बद्ध रहकर बिताया था उनमे डूँगर कालेज बीकानेर तथा हिन्दू कालेज दिल्ली के नाम विशेष महत्त्व रखते है। डूँगर कालेज बीकानेर मे आपने एक साधारण शिक्षक के रूप मे कार्य प्रारम्भ करके उसके उप प्राचार्य पद तक का कार्य-भार सँभाला था। दिल्ली के हिन्दू कालेज मे आप राजनीति शास्त्र और इतिहास विभाग के विभागाध्यक्ष भी रहे थे। आपने जहाँ प्रथम बीकानेर राज्य साहित्य सम्मेलन की अध्यक्षता की थी वहाँ आपने 'सादूल राजस्थानी रिसर्च इस्टीट्यूट' के सचालक के रूप मे भी प्रशसनीय कार्य किया था। आप जहाँ बीकानेर की 'अनूप सस्कृत लाइब्रेरी' के

अध्यक्ष रहे थे वहाँ 'सादूल प्राच्य ग्रन्थमाला' का सम्पादन भी आपने किया था। लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की ओर से प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' के सम्पादन मे भी आपका अभिनन्दनीय योगदान रहा था। राजस्थान के पुरातत्त्व-सम्बन्धी इतिहास के विद्वानो मे आपका सर्वोपरि स्थान है। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप दिल्ली विश्वविद्यालय के प्राच्य भारतीय इतिहास और पालि विभाग में कार्य-रत थे।

आपके जो अनेक शोधपूर्ण लेख हिन्दी की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहते थे उनसे आपकी गम्भीर विद्वत्ता का प्रत्यक्ष अनुमान हो जाता है। आपके निधन के उपरान्त 'हिन्दी विश्वभारती अनुसन्धान परिषद् बीकानेर' ने सन् 1977 मे आपके कुछ शोधपूर्ण लेखो का जो एक सकलन 'डा० दशरथ शर्मा लेख सग्रह' (प्रथम भाग) नाम से प्रकाशित किया है उसे देखकर शर्माजी के अगाध ऐतिहासिक ज्ञान तथा पुरातत्त्व-विशेषज्ञता का सही अनुमान लगाया जा सकता है। इसी ग्रन्थ मे इसके सम्पादको (डॉ० मनोहर शर्मा तथा डॉ० दिवाकर शर्मा) ने आपके द्वारा लिखित 200 से अधिक उन सभी शोध-निबन्धो की तालिका भी प्रस्तुत कर दी है जो समय-समय पर प्रकाशित होते रहे थे। आपके द्वारा हिन्दी तथा सस्कृत मे लिखित एव सम्पादित ग्रन्थो मे से 'दयालदास री ख्यात' (सम्पादित), 'क्यामखा रासो' (सम्पादित), 'पवार वश दर्पण' (सम्पादित), 'इन्द्रप्रस्थ प्रबन्ध' (सम्पादित), 'अमरसिंहाभिषेक काव्य (सम्पादित), 'मुद्राराक्षस-पूर्व सकथानक', 'रास और रासान्वयी काव्य' तथा 'ओझा निबन्ध संग्रह' आदि प्रमुख रूप से उल्लेख्य है।

आपका निधन 5 जुलाई सन् 1976 को हुआ था।

प्रो० दाऊदअली दत्त

प्रो० दाऊदअली दत्त का जन्म पश्चिमी बगाल के कलकत्ता नगर मे 28 सितम्बर सन् 1895 को एक हिन्दू-परिवार मे हुआ था और आपका वास्तविक नाम प्रमथनाथ दत्त था। कलकत्ता विश्वविद्यालय से स्नातक होने के उपरान्त 20 वर्ष की आयु मे आप उच्च अध्ययन तथा राष्ट्र-सेवा के उचित अवसर की खोज मे लन्दन चले गए और वहाँ से अमरीका, यूरोप, अफ्रीका, मध्यपूर्व होते हुए पहले तुर्की और बाद मे ईरान पहुँच गए थे। तुर्की मे जाकर आपने सुविधापूर्वक कार्य सम्पन्न करने की दृष्टि से अपना नाम 'दाऊदअली' रख लिया और बाद मे इसी नाम से प्रसिद्ध भी हो गए।

सन् 1918 से सन् 1921 तक तेहरान विश्वविद्यालय मे अँग्रेजी के प्राध्यापक रहने के उपरान्त आप सन् 1922 मे सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी के निमन्त्रण पर लेनिनग्राद के आधुनिक प्राच्य भाषाओ के संस्थान के भारतीय विभाग मे चले गए और वहाँ पर 16 वर्ष तक कार्य-रत रहे। सन् 1938 मे आप लेनिनग्राद विश्वविद्यालय के 'भारतीय तिब्बत भाषा विज्ञान विभाग' मे रीडर नियुक्त हुए और सन् 1943 मे मास्को के 'प्राच्य



अध्ययन सस्थान' मे चले गए। इसके उपरान्त आपने मास्को के 'उच्च राजनयिक स्कूल' तथा 'विदेशी व्यापार सस्थान' मे भारतीय भाषाओ का अध्यापन भी किया था।

सन् 1952 मे सोवियत सघ मे प्रवास के 30 वर्ष पूर्ण हो जाने पर आपके शोध-छात्रो, प्राध्यापक मित्रों और हितैषी विद्वानो ने मिलकर आपका भावभीना हार्दिक अभिनन्दन किया था। इस प्रकार हम यह नि सकोच कह सकते है कि सोवियत सघ मे हिन्दी, बगला और उर्दू आदि आधुनिक भारतीय भाषाओ के अध्ययन की परम्परा के प्रथम उल्लेखनीय प्रवर्त्तक प्रो० दाऊद अली दत्त थे। आजकल रूस मे प्रायः जितने भी भारतवेत्ता है वे सब आपकी ही शिष्य-परम्परा मे है।

आपने रूस मे रहते हुए ही सन् 1932 मे वहाँ की एक महिला ल्यूबोव अलेक्सान्द्रोव्ना से विवाह कर लिया था। उसे प्रायः आप 'नूरजहाँ' कहकर पुकारा करते थे। आपका एक

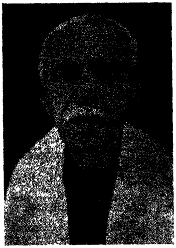
'ईगर दत्त' नामक पुत्र भी है, जो आजकल वहाँ पर कुशल इंजीनियर है। आपकी प्रमुख प्रकाशित कृतियों मे 'हिन्दी में समाचार पत्रों के पाठों का संकलन' (1947-48) 'हिन्दी भाषा का शब्द-विज्ञान' (1952) तथा 'हिन्दी रूसी शब्द-कोश' (1953-54) है। आपकी ये सब कृतियाँ सम्पादित ही है।

आपका निधन 7 अप्रैल सन् 1954 को हुआ था।

मुन्शी दामोदरदास खत्री

श्री खत्री जी का जन्म उत्तरप्रदेश के ललितपुर जनपद (पुराना झाँसी) के तालबेहट नामक नगर मे सन् 1889 मे हुआ था। आपके पिता श्री नन्दकिशोर एक अत्यन्त साधारण स्थिति के व्यक्ति थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा तालबेहट मे ही हुई थी। मिडिल की परीक्षा मे 1906 मे प्रथम आने पर यद्यपि आपको छात्रवृत्ति भी प्रदान की गई थी किन्तु पारिवारिक स्थिति ठीक न होने के कारण आप अपने अध्ययन को आगे जारी न रख सके। परिणाम स्वरूप आप जखौरा (झाँसी) मे सहायक शिक्षक हो गए और 2 वर्ष शिक्षण का कार्य करने के अनन्तर आप ट्रेनिग प्राप्त करने के लिए जुलाई सन् 1908 मे आगरा चले गए। ट्रेनिग करने के उपरान्त आप सन् 1910 मे पारौन (झाँसी) मे प्रधानाध्यापक हो गए और अपने सुदीर्घ अध्यापन-काल मे प्रधानाध्यापक ही रहे। इस सेवा-काल मे आपने मोठ, मऊरानीपुर तथा झाँसी आदि अनेक स्थानो के विद्यालयों मे कार्य किया और सभी स्थानो मे पर्याप्त लोकप्रियता अर्जित की। इस अवधि मे यद्यपि आपको 'सहायक शिक्षा-निरीक्षक' का पद भी प्रदान करने का अनुरोध किया गया, किन्तु आपने उसे स्वीकार नही किया। सेवा-निवृत्ति के समय (16 जुलाई सन् 1945) आप अपनी जन्म-भूमि तालबेहट मे ही कार्य-रत थे।

अपने इस अध्यापन-काल मे आप काव्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए और इस क्षेत्र मे भी आपने पर्याप्त सफलता प्राप्त की। इस प्रसंग मे आपका सम्पर्क श्री नाथूराम माहौर तथा घनश्यामदास पाण्डेय-जैसे बुन्देलखण्ड के अनेक कवियो से भी हो गया था। सेवा-निवृत्ति के बाद भी आपकी कर्मठता में कोई कमी नही आई थी। फलस्वरूप पहले तो आपने 2 वर्ष तक टीकमगढ के पृथ्वीपुर और पलेरा नामक स्थानों के विद्यालयो मे कार्य किया और फिर 11 अगस्त सन् 1947 को अपनी जन्म-भूमि मे ही 'मर्दानसिह हायर सेकेडरी स्कूल' का शुभारम्भ करके दिनानुदिन उसकी प्रगति मे तत्पर रहे। अपने इस विद्यालय मे आप समय-समय पर



पर अनेक 'कवि-सम्मेलन' तथा 'साहित्य-समारोह' भी करते रहते थे। आपकी 'मौन कगूरे' तथा 'मर्दन महान् की' आदि समस्या-पूर्तियाँ इसी अवधि मे की गई थी। 31 जुलाई सन् 1950 को इस विद्यालय से अवकाश ग्रहण करके आपने 'शकर मैडीकल स्टोर' प्रारम्भ किया, जो परिस्थितिवश बन्द कर देना पडा। फिर आप मत्ता टीला चले गए और सन् 1952-1955 तक का समय आपने वहाँ बडे सघर्ष मे बिताया। इसके उपरान्त आपने सन् 1961 मे बबीना (झाँसी) मे एक प्राथमिक शाला भी प्रारम्भ की थी।

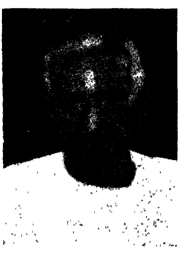
आप बुन्देलखण्डी कहावतो के तो कोश ही कहे जाते थे। अपने शिक्षक-जीवन मे खत्रीजी ने जहाँ बुन्देलखण्ड के अनेक युवकों को साहित्य-निर्माण की दिशा मे प्रेरणा प्रदान की थी वहाँ आप हाकी तथा वालीबॉल-जैसे खेलो मे भी पूर्णत दक्ष थे। 'सादा जीवन और उच्च विचार' ही आपके जीवन का एक-मात्र लक्ष्य था। आप 'बुन्देलखण्ड प्रान्तीय साहित्य परिषद्' के सक्रिय सदस्य होने के साथ-साथ अन्य अनेक साहित्यिक सस्थाओ मे सम्बद्ध थे। आपकी रचनाओ का जो सकलन आपके जीवन-काल मे ही 'पचाशिका' (1966) नाम से प्रकाशित हुआ था उसकी प्रशसा सर्वश्री वृन्दावनलाल वर्मा, रामचरण हयारण 'मित्र' तथा राधेश्याम द्विवेदी आदि अनेक साहित्यकारो ने की थी। आपको समय-

समय पर 'वाग्भूषण', 'सभा चतुर', और 'सरस्वती कुल-भूषण' आदि उपाधियों से भी अलंकृत किया गया था। आपके निधन के उपरान्त आपके सुपुत्र श्री शकरशरण बत्ता के अथक प्रयास से सन् 1973 में जो 'मुन्शी श्री दामोदरदास खत्री स्मृति-ग्रन्थ' प्रकाशित किया गया था उससे आपके विशाल व्यक्तित्व का परिचय मिलता है।

आपका निधन 11 मई सन् 1972 को हुआ था।

श्री दामोदरदास खन्ना

श्री खन्ना का जन्म सन् 1888 मे कलकत्ता मे श्री छुटकामल खन्ना के यहाँ हुआ था। आपको 'लाला बाबू' भी कहा जाता था। आपके पूर्वज कई शताब्दी पूर्व लाहौर मे आकर यहाँ बस गए थे। यह परिवार मूलत कलकत्ता के वस्त्र उद्योग से सम्बद्ध था। आपकी शिक्षा अत्यन्त साधारण हुई थी। आप यद्यपि बगला माध्यम से 'मैट्रिक' तक ही पढ सके थे, पर अपने स्वाध्याय तथा अध्यवसाय के बल पर आपने सस्कृत, हिन्दी और बगला भाषाओ के अतिरिक्त अँग्रेजी भाषा पर भी अच्छा अधिकार प्राप्त कर लिया था और आप इन सब भाषाओ मे धारा-प्रवाह भाषण देने की अद्भुत क्षमता रखते थे। आपके इन भाषणों की सर्वश्री जवाहरलाल नेहरू, डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, श्री चक्रवर्ती राज-गोपालाचार्य और राधाकृष्णन् - जैसे महानुभावो ने मुक्त कण्ठ से सराहना की थी। आप अपने शैशवकाल से ही



परिवार के व्यापारिक कार्यों मे रुचि लेने लगे थे और धीरे-धीरे उसमे अत्यन्त कुशलता प्राप्त कर ली थी। आप व्यापारिक कार्यों मे भाग लेने के साथ-साथ नगर की अनेक सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक सस्थाओ के कार्यों मे रुचि लेते रहते थे। आपको इन प्रवृत्तियों मे भाग लेने की मूल प्रेरणा सुप्रसिद्ध विद्वान् महामहोपाध्याय पण्डित लक्ष्मण शास्त्री से मिली थी। वे उन दिनो कलकत्ता विश्व-विद्यालय के सस्कृत विभाग में वरिष्ठ अध्यापक थे।

अपने इन्ही गुरुदेव से प्रोत्साहन पाकर आपने सन् 1920 मे उत्तर कलकत्ता मे 'शिवकुमार सस्कृत सांगवेद विद्यालय' की स्थापना करके एक अद्भुत तथा क्रान्तिकारी कार्य किया था। इस विद्यालय मे उन दिनो सभी छात्रो के लिए शिक्षा के अतिरिक्त नि शुल्क आवास तथा भोजन आदि की भी व्यवस्था थी। इस प्रकार इस विद्यालय ने सस्कृत भाषा एव भारतीय सस्कृति के प्रचार तथा प्रसार के अद्भुत कार्य किये थे। किन्तु दुर्भाग्यवश सन् 1946 के हिन्दू-मुस्लिम-उपद्रवो के दिनो यह सस्थान बन्द हो गया और शरणार्थियो ने इस पर अपना अधिकार जमा लिया। उन दिनो आपका बगाल के शीर्षस्थ नेता सर आशुतोष मुखर्जी से भी गहरा सम्पर्क रहा था और भारतीय सस्कृति के अनन्य उन्नायक महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय की आप पर बहुत कृपा थी। आप 'अखिल भारतीय मन्दिर सरक्षण कमेटी' तथा 'अखिल भारतीय वर्णाश्रम स्वराज्य सघ'-जैसी सस्थाओ के भी प्रबल पोषक थे। आपने सन् 1946 मे पूर्वी बगाल के नोआखाली नामक क्षेत्र मे हुए उपद्रवों के समय भी प्रख्यात जन-नेता श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी के साथ मिलकर सराह-नीय सेवा-कार्य किया था।

आपका जहाँ विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के साथ भी अच्छा सम्पर्क था वहाँ आपने बगला-रगमच के माध्यम से बगला साहित्य का भी अत्यन्त तलस्पर्शी अध्ययन कर लिया था। उस समय के सर्व श्री गिरीश घोष, अमर कृष्णदत्त तथा द्विजेन्द्र लाल राय आदि अनेक ख्यातिलब्ध बगला लेखकों का आपके जीवन पर प्रचुर प्रभाव पडा था। भारतीय सगीत के प्रति भी आप अनन्य अनुराग रखते थे और शास्त्रीय सगीत की दिशा मे भी आपकी उत्कट आस्था थी। सन् 1932 से सन् 1965 तक आपने कलकत्ता मे अनेक 'अखिल भारतीय सगीत सम्मेलन' किए थे। पुरानी पीढ़ी के फैयाज खाँ, केसर बाई, बड़े गुलाम अली खाँ, ओंकारनाथ ठाकुर, इनायत खाँ, गौहर बाई तथा मलका बाई आदि अनेक

ख्यातिलब्ध संगीतकारों से आपका घनिष्ठ सम्पर्क था। आपने अनेक नाटकों मे अभिनय करके अपनी कला-चातुरी का परिचय भी दिया था।

आपने सन् 1962 से सन् 1982 तक अपने जीवन के महत्त्वपूर्ण दिन हिन्दी भाषा और साहित्य की सेवा मे व्यतीत किये थे। हिन्दी की पुरानी पीढ़ी के वरिष्ठ पत्रकार पण्डित गोविन्दनारायण मिश्र को आप अपना साहित्यिक गुरु मानते थे और वे भी आपको पुत्रवत् स्नेह करते थे। वास्तव मे उनकी प्रेरणा तथा नित्य-प्रति के सत्संग से ही आपके मानस मे हिन्दी-प्रेम की भावनाएँ उद्भूत हुई थी। आपने जहाँ कलकत्ता मे उनकी 'प्रस्तर प्रतिमा' स्थापित कराई वहाँ उनके चुने हुए निबन्धो का सकलन 'गोविन्द निबन्धावली' नाम से प्रकाशित कराया था। कलकत्ता की प्रख्यात साहित्यिक सस्था 'श्री हनुमान मन्दिर न्यास' के भी आप सरक्षक थे। इस सस्था के माध्यम से जहाँ हिन्दी की स्नातकोत्तर कक्षाओ के अनेक असहाय तथा निर्धन छात्रों को छात्रवृत्तियाँ दी जाती हैं वहाँ इस न्यास की ओर से हिन्दी की उत्कृष्ट रचनाओ पर क्रमश. 5-5 हजार के 2 पुरस्कार और सस्कृत की रचना पर भी 2500 रुपये का पुरस्कार देने की योजना है। यह पुरस्कार अभी तक डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र 'राजहंस', डॉ० भुवनेश्वर मिश्र 'माधव', डॉ० राजबली पाण्डेय, श्री श्रीकान्त शरण, डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह, डॉ० कृष्णदत्त वाजपेयी, प्रो० दिनेश भट्टाचार्य, श्री केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' तथा डॉ० वासुदेव उपाध्याय प्रभृति हिन्दी विद्वानो को उनकी क्रमश 'तुलसी दर्शन', 'राम भक्ति साहित्य मे मधुरोपासना', 'रामचरित मानस . सिद्धान्त भाष्य', 'राम भक्ति मे रसिक सम्प्रदाय', 'प्राचीन भारत का विदेशो से सम्बन्ध', 'प्राचीन भारतीय मनोविद्या', 'कैकेयी' तथा 'गुप्त अभिलेख' कृतियो पर प्रदान किए गए है।

आपका निधन 10 मई सन् 1979 को हुआ था।

सेठ दामोदरदास राठी

श्री राठी का जन्म राजस्थान के मारवाड प्रदेश के पोकरण कस्बे मे 8 फरवरी सन् 1884 को हुआ था। मैट्रिक तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने अपने परिवार के पारम्परिक कार्य 'कृष्णा मिल ब्यावर' को सँभाला था। आपका सम्बन्ध देश के अनेक क्रान्तिकारियों और साहित्यकारों से रहा था और आप समय-समय पर उनको आर्थिक सहायता भी प्रदान करते रहते थे। आप जहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की सहायता करते रहते थे वहाँ अनेक स्थानों पर आपने हिन्दी विद्यालय, वाचनालय और पुस्तकालय भी स्थापित कराए थे।

आप हिन्दी के इतने भक्त थे कि आपने सन् 1914 में श्री गिरिजाकुमार घोष की प्रेरणा पर अपनी मिल का सारा काम-काज ही हिन्दी मे कराना प्रारम्भ कर दिया था। आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के तत्कालीन अध्यक्ष श्री अमृतलाल चक्रवर्ती के निर्देश पर ब्यावर मे 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना करके उसके माध्यम से हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार का अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किया था। यहाँ तक कि आपके सुझाव तथा प्रेरणा पर अजमेर के तत्कालीन कमिश्नर ने अपना सारा प्रशासकीय कार्य हिन्दी मे करना स्वीकार कर लिया था।

आपका देश के अनेक क्रान्तिकारी नेताओ और सुधारको से अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध रहा था। यह आपकी ही हिम्मत थी कि आपने अपनी मिल का मैनेजर श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा-जैसे क्रान्तिकारी व्यक्ति को बनाया था और उन्ही की प्रेरणा पर आपने देश की स्वाधीनता के निमित्त किए जाने वाले अनेक क्रान्तिकारी आन्दोलनो मे अपना आर्थिक सहयोग प्रदान किया था। आपका उन दिनो देश के जिन



नेताओं से सम्पर्क था उनमे सर्वश्री महामना मदनमोहन मालवीय, सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, मोतीलाल घोष और पजाब केसरी लाला लाजपतराय के नाम विशेष रूप से

उल्लेखनीय हैं। आपने जहाँ देश की स्वाधीनता के निमित्त किए जाने वाले कार्यों मे अपना आर्थिक सहयोग प्रदान किया था वहाँ शिक्षा-सम्बन्धी अनेक सस्थाओ की भी सहायता करते रहते थे। अकाल, बाढ और भूकम्प के समय भी आपने जनता की उदारतापूर्वक सेवा की थी। स्वदेशी वस्तुओं के प्रचार एव प्रसार की दिशा मे भी आपका अनन्य योगदान रहा था। राजस्थान में क्रान्ति-आन्दोलन के स्रष्टा सर्वश्री अर्जुनलाल सेठी, केसरीसिह बारहठ, गोपालसिह खर्वा और विजयसिह 'पथिक' से भी राठी जी का अत्यन्त घनिष्ठ संबध रहा था।

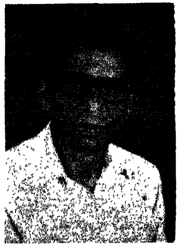
अपनी मृत्यु से पूर्व आपने हिन्दी के प्रख्यात लेखक श्री भगवानदास केला के नाम 27 दिसम्बर सन् 1917 को जो पत्र लिखा था उसमे उनके क्रान्तिकारी विचारो की सही अवतारणा हुई थी। आपने लिखा था —"काम करने का समय आ गया है। देश और जाति पर प्राण-न्योछावर करने वालो की आज सबसे बडी आवश्यकता है। देश को आज उन नौजवानों की आवश्यकता है जो अपने विश्वासो पर दृढ रहे। मनुष्य बडे-बडे पद भले ही पा ले, परन्तु उसे बडे-से-बडा काम और देश के लिए बडी-से-बडी कुरबानी करने का हौसला अपने मे पैदा करना चाहिए।"

आपका निधन केवल 34 वर्ष की आयु मे ही 2 जनवरी सन् 1918 को हुआ था।

डॉ० दामोदरप्रसाद थपलियाल

डॉ० थपलियाल का जन्म उत्तर प्रदेश के पौडी गढवाल क्षेत्र की खातस्यूँ पट्टी के पालकोट नामक ग्राम मे 23 मार्च सन् 1923 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपनी ननिहाल रीठावाल मे हुई थी और बाद मे आपने पजाब विश्वविद्यालय से शास्त्री तथा हिन्दी प्रभाकर की परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर ली थी। आपने अपने कर्ममय जीवन का प्रारम्भ एक शिक्षक के रूप मे किया था। देहरादून के गाधी इण्टर कालेज मे अध्यापन-कार्य मे व्यस्त रहते हुए भी आपने आगरा विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त 'म्यूनिसिपल डिग्री कालेज मसूरी' में हिन्दी प्रवक्ता के रूप मे कार्य करना प्रारम्भ कर दिया था। आपके एम० ए० के लघु शोध-निबन्ध का विषय 'रीति-कालीन रस-स्वरूप-विवेचन का क्रमिक एवं तुलनात्मक अध्ययन' था। वहाँ पर अध्यापन-रत रहते हुए ही आपने गढवाली कवि भोलाराम तोमर के कवि और कलाकार पक्ष पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके मेरठ विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि भी प्राप्त की थी।

आपने जहाँ एक अध्ययनशील अध्यापक के रूप मे अच्छी ख्याति अर्जित की थी वहाँ साहित्य-रचना के क्षेत्र मे आपने अपनी प्रचुर प्रतिभा का परिचय दिया था। देहरादून की 'गढवाली जन साहित्य परिषद्' की स्थापना मे आपका अनन्य योगदान रहा था। परिषद् की ओर से 'पयोली' नामक पत्रिका का प्रकाशन भी आपके सत्प्रयास से हुआ था। आपके इन कार्यों की गढवाल जनपद के अनेक मनीषियो तथा साहित्य-कारो ने मुक्त कण्ठ से सराहना की थी। हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक तथा कथाकार श्री पहाडी की इन पक्तियो से श्री थपलियाल की साहित्य-साधना का अच्छा परिचय मिल जाता है—"गढवाली भाषा के उन्नायक के रूप मे आप सदा हमारी धरती पर अमर रहेगे। यह आपका ही प्रयास था कि गढवाली ने बोली की केचुली उतारकर भाषा का सबल रूप ले लिया है। आप स्वय मे एक सस्था थे।"



आपका निधन 12 नवम्बर सन् 1977 को हुआ था।

श्री दामोदर शास्त्री सप्रे

श्री सप्रे जी का जन्म सन् 1848 मे महाराष्ट्र के पूना

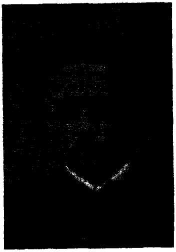
नगर में हुआ था। 17 वर्ष की आयु मे ही आप विद्याध्ययन के लिए काशी चले आए थे और यहाँ पर आपने सर्वश्री राजाराम शास्त्री कालेकर, राजाराम शास्त्री बोडस और राम शास्त्री खरे के निकट रहकर सस्कृत साहित्य के विभिन्न विषयों का विधिवत् अध्ययन किया था। यही पर आपने सन् 1876 में एक नाटक-मण्डली की भी स्थापना की थी और उसके द्वारा कई नाटक खेले थे। काशी मे श्री ढुंडिराज शास्त्री के द्वारा आपका परिचय भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र से हुआ था, जिसके कारण आप कई वर्ष तक वहाँ के 'सरस्वती भवन' के व्यवस्थापक रहे थे। इसके उपरान्त आप बिहार शरीफ (बिहार) के एक हाई स्कूल मे सस्कृत शिक्षक होकर वहाँ चले गए। आपकी कुछ रचनाएँ भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के 'कवि वचन सुधा', 'हरिश्चन्द्र मेगजीन' तथा 'बाला बोधिनी' आदि पत्रो मे प्रकाशित हुई थी।

बिहार मे जाने पर आपकी घनिष्ठता 'बिहार बन्धु' नामक पत्र के जन्मदाता श्री मदनमोहन भट्ट से हो गई। उन्ही के आग्रह पर आपने सन् 1876 ईस्वी मे बॉकीपुर के 'बिहार बन्धु प्रेस' मे कार्य करना प्रारम्भ किया था। 'बिहार बन्धु' की उन्नति आपके सम्पादन-काल मे बहुत हुई थी। कुछ दिन वही कार्य करने के उपरान्त आप उदयपुर (राजस्थान) आ गए और नाथद्वारा से प्रकाशित होने वाले सस्कृत के एक मासिक पत्र 'विद्यार्थी' का सम्पादन करने लगे। नाथद्वारा मे ही आपने प० मोहनलाल विष्णुलाल पड्या के अनुरोध पर 'श्री हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' और 'मोहन चन्द्रिका' का सम्पादन भी किया था और 'विद्यार्थी' को भी इसमे समाविष्ट कर लिया गया था। जब आप उदयपुर मे थे तब आपका पत्र-व्यवहार 'खड्ग विलास प्रेस पटना' के व्यवस्थापक बाबू रामदीनसिंह से होता रहता था। उन्होने आपसे सस्कृत के अमर ग्रन्थ कल्हण की 'राजतरगिणी' का हिन्दी अनुवाद कराया था। आपके अनेक हिन्दी-सस्कृत के ग्रन्थ 'खड्ग विलास प्रेस, पटना' से प्रकाशित हुए थे। आपके कुछ हिन्दी म प्रकाशित ग्रन्थों के नाम इस प्रकार है 'नियुद्ध शिक्षा', 'मेरी पूर्व दिग्यात्रा', 'मेरी दक्षिण दिग्यात्रा', 'रामायण समय विचार', 'मेरी जन्मभूमि यात्रा', 'बाल खेल या ध्रुव चरित्र', 'चित्तौडगढ़ का इतिहास', 'लखनऊ का इतिहास' आदि।

आपका निधन सन् 1921 को हुआ था।

श्री दामोदरसहाय सिंह 'कविकिंकर'

श्री 'कविकिंकर' का जन्म बिहार प्रदेश के छपरा जनपद के शीतलपुर नाम स्थान मे 14 दिसम्बर सन् 1875 को हुआ था। आपके पिता मुंशी शिवशकरसहाय सिह छपरा के प्रतिष्ठित मुख्तार थे। जब आप केवल 11 वर्ष के ही थे तब आपके पिता का असामयिक निधन हो गया था। माता का देहान्त पिता की मृत्यु से पूर्व ही हो चुका था। फलस्वरूप आपकी शिक्षा-दीक्षा का सारा भार आपके चचेरे भाई मुशी हीरालाल पर पडा था और उनके ही निरीक्षण मे आपने 14 वर्ष की आयु मे छात्रवृत्ति लेकर वर्नाकुलर मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इसके बाद आपने क्रमश छपरा के जिला स्कूल मे सन् 1894 मे इण्ट्रेंस और सन् 1897 मे पटना के बी० एन० कालेज से एफ० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। सन् 1900 मे आप अपनी आगे की पढाई को बीच मे ही छोडकर छपरा के जिला स्कूल मे अध्यापक हो गए थे।



अपने अध्यापन का कार्य अत्यन्त निष्ठापूर्वक करने के कारण आपकी ख्याति धीरे-धीरे सर्वत्र फैलती जा रही थी और इसी कारण आप सन् 1903 मे मुगेर जनपद मे 'उप निरीक्षक' के पद पर प्रोन्नत होकर चले गए थे। इस बीच सन् 1919 मे आपने जब एल० टी० की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली तब आप सन् 1926 मे 'उपविद्यालय निरीक्षक' बनाकर भेज दिए गए और इससे अगले ही वर्ष सन् 1927 मे आप छपरा मे 'जिला विद्यालय निरीक्षक' होकर आ गए। आपने इस पद पर लगभग 3 वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया ही था कि स्वतन्त्र प्रवृत्ति और स्वाभिमानी स्वभाव के कारण आपको फिर 'विद्यालय उपनिरी-

क्षक' बना दिया गया और जीवन-पर्यन्त इसी पद पर बने रहकर आप 5 नवम्बर सन् 1931 को सेवा-निवृत्त हुए थे।

आप जहाँ एक कुशल शिक्षक और सफल प्रशासक थे वहाँ साहित्य के क्षेत्र में भी आपने अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। वैसे तो अपने छात्र-जीवन से ही आपने साहित्यिक क्षेत्र में अच्छी लोकप्रियता अर्जित कर ली थी, किन्तु आपकी वास्तविक साहित्य-सेवा उस समय प्रारम्भ हुई थी जबकि आप छपरा के जिला स्कूल मे शिक्षक रहे थे। उस समय प्रख्यात साहित्यकार पण्डित अम्बिकादत्त व्यास भी उसी विद्यालय मे पढाया करते थे। उनका सत्सग पाकर आपकी साहित्यिक चेतना और भी प्रस्फुटित हुई और आपने इस क्षेत्र मे धीरे-धीरे अपना अच्छा स्थान बना लिया। उन्ही दिनो आपको आरा-निवासी बाबू शिवनन्दन सहाय से भी प्रचुर प्रोत्साहन मिला था। इन दोनो महानु-भावो के प्रश्रय और प्रोत्साहन से आपने गद्य तथा पद्य दोनो ही क्षेत्रो मे अपनी अच्छी प्रतिभा का परिचय दिया था। आपने ब्रजभाषा तथा खड़ी बोली दोनो मे सफल काव्य-रचना करने के अतिरिक्त अनेक साहित्यिक निबन्ध भी उन दिनो लिखे थे। आपकी ब्रजभाषा मे लिखी गई रचनाओ का सकलन 'सुधा सरोवर' नाम से प्रकाशित हुआ था।

आपकी गद्य-पद्य मे लिखी गई प्रकाशित और अप्रका-शित अनेक प्रौढ रचनाओं मे 'सुधा सरोवर' के अतिरिक्त 'मन्धि सन्देश', 'कविता कुसुम', 'श्री हरिगीतिका', 'कल है', 'उद्यम विचार', 'नृप सूर्यास्त', 'काल पचासा', 'चातक चालीसा', 'भ्रातृ-भाव', 'शिक्षा-निबन्धावली', 'हमारी शिक्षा प्रणाली', 'निगम और आगमन', के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आपने बालोपयोगी साहित्य-रचना के क्षेत्र मे भी अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपकी ऐसी रचनाओं मे 'रसाल', 'अगूर', 'सरल सितारी', 'बाल सितारी', 'बाल सकीर्तन', 'धार्मिक वार्तालाप' और 'कबीर . एक लघु जीवनी' के नाम उल्लेख्य है। अपने निधन से कुछ समय पूर्व आप 'कविता की भाषा' विषयक एक समीक्षात्मक तथा विचारपूर्ण ग्रन्थ भी लिख रहे थे, किन्तु वह अधूरा ही रह गया।

आप जहाँ उच्चकोटि के रचनाकार थे वहाँ साहित्य-सग्रह की दृष्टि से भी आपका स्थान बिहार के हिन्दी-सेवियो मे सर्वोपरि है। आपने अपनी जन्मभूमि शीतलपुर मे पुस्तकों का इतना विशाल संकलन किया था कि उसे देखकर उसकी समृद्धि का आभास होता था। उसमे ऐसी अनेक प्राचीन पुस्तकें संग्रहीत की गई थी, जिनका हिन्दी-वाङ्मय के उत्कर्ष मे बहुत अधिक महत्त्व है और वे दुर्लभ हैं। आपने अपने इस पुस्तकालय का नाम 'हिन्दी मन्दिर' रखा था। आपने वहाँ पर एक 'हिन्दी-नाट्य समिति' की स्थापना भी की थी, जो प्रतिवर्ष वहाँ नाटक खेला करती है। इसके अतिरिक्त आप समय-समय पर हिन्दी-प्रचार के निमित्त किये जाने वाले अनेक आन्दोलनों तथा सभा-सम्मेलनों मे भी सोत्साह भाग लिया करते थे। जब कविता के लिए खड़ी बोली को अपनाने का आन्दोलन चला था तब आपने उसमे भी बढ-चढकर भाग लिया था। आप अपने द्वारा सस्थापित 'हिन्दी मन्दिर' नामक सस्था के लिए एक भवन का निर्माण भी करने वाले थे कि इस असार ससार से चल बसे।

आपका निधन 8 जून सन् 1932 को 57 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री दामोदरस्वरूप गुप्त

श्री गुप्त का जन्म सन् 1900 मे उत्तर प्रदेश मे बुलन्दशहर जनपद के ख्यातिलब्ध कस्बे शिकारपुर मे हुआ था। मिडिल तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त जीविका के लिए आप घर से निकल गए और प्रयाग जाकर वहाँ पर पुस्तक-विक्रय का कार्य प्रारम्भ कर दिया। वहाँ पर आपने सर्व-प्रथम हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षाओ के पाठ्यक्रम मे निर्धारित पुस्तकें ही अपने यहाँ विक्रयार्थ रखी थी। धीरे-धीरे आपने कार्य को आगे बढाया और हिन्दी के दूसरे प्रमुख प्रकाशकों की पुस्तकें भी मँगाना प्रारम्भ कर दिया। जिन दिनो आपने अपना यह कार्य शुरू किया था तब आप कदा-चित् प्रयाग मे अकेले ही 'पुस्तक-विक्रेता' थे।

धीरे-धीरे जब आपको अपने काम मे सफलता मिलने लगी तब आपने प्रकाशन भी प्रारम्भ कर दिया और स्वय पुस्तकें भी लिखी। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'राज-नैतिक भारत', 'आदर्श स्त्रियाँ', और 'हिन्दी रत्न-कोश' के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण है। इनमें से 'हिन्दी रत्न-कोश' का

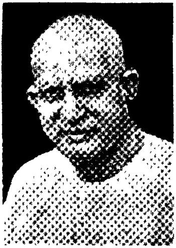
निर्माण आपने जिस निष्ठा एवं अध्यवसाय से किया था, उसीका सुपरिणाम यह हुआ कि थोडे ही समय मे आपको इसका पुनर्मुद्रण करना पड़ा। अभी तक इसके कई सस्करण हो चुके हैं। विद्यार्थियो के लिए उन दिनों इससे अधिक उपयुक्त तथा सार्थक कोई भी कोश न था। इसमें जहाँ 42291 शब्दो को संकलित किया गया था वहाँ 1063 मुहावरे भी थे। इस शब्द-कोश मे ब्रजभाषा, अवधी, भोजपुरी, खडी बोली, उर्दू, अरबी, फारसी, तुर्की, सस्कृत तथा अँग्रेजी के उन शब्दों को भी सम्मिलित किया गया था जो हिन्दी मे समा गए है।

आपका निधन सन् 1971 मे हुआ था।

महन्त दिग्विजय नाथ

आपका जन्म उदयपुर(राजस्थान)के इतिहास-प्रसिद्ध मेवाड-वशीय राणा परिवार मे सन् 1894 मे हुआ था। अत्यन्त अल्प-सी अवस्था मे ही आपको आपके चाचा ने 'गोरखनाथ मन्दिर' के योगिश्रेष्ठ श्री फूलनाथ जी को समर्पित कर दिया था। फलस्वरूप योगी जी आपको गोरखपुर ले गए थे। आपका बचपन का नाम 'राणा नान्हूसिह' था। आपकी शिराओ मे राष्ट्र-गौरव महाराणा प्रताप के वशजो का पवित्र रक्त प्रवाहित होता था। आपकी ओजस्विता का परिचय आपके शैशव-काल से ही मिलने लगा था। शिक्षा तथा क्रीडा दोनो ही क्षेत्रो मे आप सर्वथा अग्रणी स्थान रखते थे। स्वतन्त्रता और देश-भक्ति के सस्कार आपमे वशानुगत थे। फलस्वरूप सन् 1921 मे जब महात्मा गाधी जी ने अँग्रेजी शिक्षा और विदेशी वस्त्रो के बहिष्कार के लिए समग्र देश के युवको का आवाहन किया था तब आप भी कालेज की शिक्षा को सर्वथा तिलाजलि देकर सक्रिय राजनीति मे कूद पडे थे। इतिहास प्रसिद्ध 'चौरी-चौरा-काण्ड' का नेतृत्व आपने ही किया था और आप उसके प्रमुख अभियुक्त थे।

आगे चलकर काग्रेस की मुस्लिम तुष्टीकरण की नीति से खिन्न होकर आप 'वीर सावरकर' के सम्पर्क मे आ गए और 'हिन्दू महासभा' के द्वारा एक सक्रिय कार्यकर्ता के रूप मे आपने देश को सर्वथा नई दिशा दी और आजीवन 'हिन्दी, हिन्दू और हिन्दुस्तान' के कट्टर समर्थक रहे। सन् 1921 से लेकर सन् 1969 तक देश के राजनीतिक इतिहास मे ऐसी कोई प्रमुख घटना नही है, जिसमे महन्त जी का सक्रिय योगदान न रहा हो। आपने सन् 1931 की जनगणना के अवसर पर हिन्दुओ के व्यापक हितो के लिए जहाँ अथक संघर्ष किया वहाँ आपने 'साइमन कमीशन' और 'क्रिप्स मिशन' का भी बहिष्कार किया था।



सन् 1942 की क्रान्ति मे आपने जहाँ बढ-चढकर भाग लिया वहाँ हैदराबाद के निजाम की निरकुशता के विरोध करने मे भी प्रबल आन्दोलन किया। देश-विभाजन के समय भी आप उसका विरोध करने मे पीछे नही रहे। हिन्दू महासभा के अध्यक्ष के रूप मे सारे देश का भ्रमण करके आपने जहाँ देश को एक नई दिशा दी थी वहा 'विश्व हिन्दू-सम्मेलन' के आयोजन द्वारा युवको मे नई प्राण-शक्ति का सचार भी किया था।

सन् 1934 मे आप 40 वर्ष की आयु मे गोरखपुर के 'गोरक्षनाथ मन्दिर' के विधिवत् महन्त हुए थे। इस आसन पर रहते हुए भी आपने देश के सास्कृतिक जागरण की दिशा मे उल्लेखनीय मार्ग-प्रदर्शन देने के साथ-साथ राष्ट्रोन्नति के विविध कार्यो मे बढ-चढकर भाग लिया था। शिक्षा के क्षेत्र मे आपकी देन अद्भुत और अनन्य कही जा सकती है। आपने 'महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद्' की विधिवत् स्थापना करके उसके माध्यम से 'महाराणा शिशु विहार', 'गोरक्षनाथ सस्कृत विद्यापीठ', 'महाराणा प्रताप इण्टर कालेज', 'महाराणा प्रताप पोलिटेकनिक', 'महाराणा प्रताप यूनिवर्सिटी कालेज' तथा 'महन्त दिग्विजयनाथ स्नातकीय महाविद्यालय' आदि अनेक सस्थाओ का सूत्रपात करके उस क्षेत्र की उल्लेखनीय सेवा की है। ये सारी सस्थाएँ आपके सेवा-भाव, त्याग, तप, सकल्प और उत्साह के प्रतीक के रूप मे आज भी आपके

गौरव को बढ़ा रही है।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के उन्नयन और विकास की दिशा में आपकी सेवाएँ कम महत्त्व नही रखती। सन् 1947 में हिन्दी भाषा की रक्षा के लिए आपने जो जेल-यात्रा की थी, वह आपके हिन्दी-प्रेम की परिचायक है। आपके द्वारा संस्थापित और संचालित सभी शिक्षा-संस्थाओं के माध्यम से हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार का जो ऐतिहासिक कार्य हुआ है, वह हम सबके लिए गौरव की बात है।

आपका निधन 28 सितम्बर सन् 1969 को हुआ था।

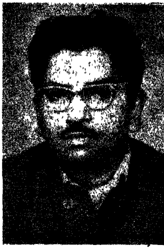
श्री दिनेशचन्द्र पाण्डेय

श्री पाण्डेय का जन्म उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद नामक नगर मे दिसम्बर सन् 1921 मे हुआ था। आप उच्चकोटि के कवि, उपन्यासकार, नाटककार और पत्रकार थे। मुरादाबाद से प्रकाशित होने वाले कहानी-प्रधान मासिक पत्र 'अरुण' के आप पर्याप्त समय तक सह-सम्पादक रहे थे। आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'किरण जाल' (काव्य सकलन) के अतिरिक्त 'श्रीमती जी', 'यौवन का झुरमुट', 'बिजली के फूल' (सभी उपन्यास) तथा 'दीदी' (नाटक) के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

आपका निधन 16 अप्रैल सन् 1968 को हुआ था।

डॉ० दिनेशचन्द्र वाचस्पति

श्री वाचस्पति का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा नगर के माईथान नामक मोहल्ले के बेगम डोरी नामक स्थान मे 29 दिसम्बर सन् 1929 को हुआ था। आपके पिता आचार्य प्रेमशरण 'प्रणत' प्रख्यात पत्रकार और समाज-सेवी थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने पिताजी के ही निरीक्षण मे हुई थी। आपने सन् 1952 में दरभगा के 'दी सिनहा होमियो मैडिकल कालेज' से एच० एम० बी० एस० की उपाधि प्राप्त करके सन् 1955 मे इण्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इसके उपरान्त आप अपने पिताजी की जन्म भूमि पैतखेड़ा (आगरा) में स्थापित 'प्रेम प्रेस' की ओर से प्रकाशित होने वाले 'वन्दे मातरम्' पत्र का सम्पादन कई वर्ष तक बड़ी निष्ठा और तत्परता से करते रहे थे। इसके अतिरिक्त आपने 'माहौर वैश्य', 'विद्या-भास्कर', 'सेण्ट्रल एजुकेशन गजट' और 'विद्यापीठ गजट' आदि कई पत्र-पत्रिकाओ का सम्पादन भी किया था।



आपने दिल्ली मे आकर यहाँ 'विद्या भारती प्रकाशन,' 'मुकुल प्रकाशन', 'सी० बी० ए० ई० प्रिंटिंग प्रेस' तथा 'प्रभा मुद्रणालय' आदि विभिन्न सस्थाओं की स्थापना करके लेखन और प्रकाशन का कार्य किया था। आपके द्वारा लिखित रचनाओ मे 'सास्कृतिक गद्य-सग्रह' (1960), 'सास्कृतिक पद्य-सग्रह' (1961), 'सास्कृतिक सुमन' (1965) तथा 'सास्कृतिक दर्पण' (1970) आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

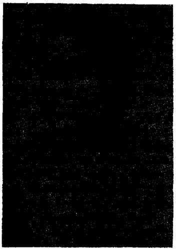
आपने सन् 1964 मे 'केन्द्रीय उच्चशिक्षा-परिषद्' तथा 'हिन्दी विद्यापीठ' की स्थापना करके इनके माध्यम से असख्य विद्यार्थियो को हिन्दी की ओर उन्मुख किया था और इन सस्थाओ के देश-भर मे 500 से अधिक केन्द्र खोले थे। अहिन्दी-भाषी क्षेत्रो में हिन्दी का प्रचार करने की दिशा मे आपका अत्यन्त अभिनन्दनीय योगदान था।

आपका निधन 3 मई सन् 1970 को एक स्कूटर-कार दुर्घटना के कारण हुआ था।

श्री दिनेशदत्त झा

आपका जन्म 13 अक्तूबर सन् 1893 को बिहार प्रदेश के

भागलपुर नगर के बरारी मोहल्ले मे अपनी ननिहाल में हुआ था। आपके पिता का मूल निवास-स्थान पूर्णिया जनपद के सदर थाने के अन्तर्गत जाफरपुर (अब रामपुर) गाँव था। प्रारंभिक शिक्षा मे अच्छी योग्यता के साथ सफलता प्राप्त करने पर आपको सरकारी छात्रवृत्ति प्राप्त हुई थी। आपके छात्र-जीवन के अध्ययन-काल की एक विशेषता यह भी थी कि आप कभी भी अपनी परीक्षाओ मे अनुत्तीर्ण नही होते थे और कक्षा मे सदैव सर्वोपरि स्थान प्राप्त करते थे। गणित की ओर आपकी विशेष रुचि रहती थी।



युवावस्था मे आपको पर्यटन का बहुत शौक था। आपके बडे भाई क्योंकि रेलवे मे कार्य-रत थे अत आपने भी उनके साथ सन् 1911 से 1917 तक कटिहार, सोनपुर तथा गोरखपुर आदि कई स्थानो मे रेलवे के कैरेज, वैगन, लोको तथा ट्रैफिक विभाग मे रेलवे कर्मचारी के रूप मे कार्य किया था। कुछ समय तक आपने ई० बी० रेलवे मे अध्यापन का कार्य किया था। कुछ वर्ष तक यह कार्य करने के उपरान्त फिर आपको रेलवे के कार्य से वितृष्णा-सी हो गई और आप उसे छोडकर जनवरी सन् 1918 मे कलकत्ता चले गए और वहाँ पर 'समाचार' नामक एक दैनिक पत्र मे कार्य करना प्रारम्भ कर दिया जब वहाँ पर भी आपका मन नही लगा तब आप अपने मूल निवास-स्थान को ही लौट आए।

सन् 1921 मे आपने भागलपुर से 'शान्ति' नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन-प्रकाशन प्रारम्भ किया, उसके दो अक ही प्रकाशित होने पाए थे कि उसका प्रकाशन बन्द कर देना पडा। उन्ही दिनो काशी से दैनिक 'आज' का प्रकाशन प्रारम्भ हो चुका था। पत्रकारिता की ओर अपने झुकाव के कारण ही श्री झा 20 जुलाई सन् 1921 को काशी चले आए और उसके तत्कालीन संपादक श्री श्रीप्रकाश से मिले। श्री श्रीप्रकाश जी ने आपकी योग्यता की भली-भाँति जाँच-परख करके आपको 'आज' के सम्पादकीय विभाग मे नियुक्त कर लिया। आपने 16 अगस्त सन् 1921 से 'आज' मे नियमित रूप से कार्य प्रारम्भ किया, किन्तु कुछ पारिवारिक कारणों से फिर भागलपुर लौट गए। इसके उपरान्त आप 10 अप्रैल सन् 1923 को फिर 'आज' मे आ गए और तब से फरवरी सन् 1940 तक 'आज' के सम्पादकीय विभाग मे विभिन्न पदो पर (कभी रिपोर्टर, कभी डाक-सम्पादक और कभी प्रबन्ध सम्पादक) कार्य-रत रहे। जब सन् 1940 मे पटना से 'आर्यावर्त' दैनिक का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तब आप उसके प्रधान सम्पादक नियुक्त हो गए और अप्रैल सन् 1944 तक इस पद पर कार्य-सलग्न रहे। सन् 1944 मे आपका सक्रिय पत्रकारिता का जीवन समाप्त हो गया और आप विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे लिखकर ही अपना जीवन-यापन करने लगे थे। आप 12 सितम्बर सन् 1942 को प्रथम बार 'काशी पत्रकार सघ' के अध्यक्ष भी निर्वाचित हुए थे।

आप अत्यन्त स्वाध्यायशील और धर्मप्राण व्यक्ति थे और नित्यप्रति 'दुर्गा सप्तशती' का पाठ किया करते थे। अपनी पत्रकारिता के दिनों में आपने ही दैनिक 'आज' मे सर्वप्रथम 'अन्तर्राष्ट्रीय' और 'राष्ट्रीय' शब्दो के स्थान पर क्रमश· 'अन्तराष्ट्रीय' और 'राष्ट्रिय' शब्दो का प्रचलन प्रारम्भ किया था। भाषा की सरल और एकरूपता के आप बहुत समर्थक थे और समाचार के शीर्षकों मे 'क्रियापद' का प्रयोग करने के आप प्रबल विरोधी थे। जब कभी अँग्रेजी के पारिभाषिक शब्दो का उपयुक्त शब्द आपको हिन्दी मे उपलब्ध नही होता था तो आप घण्टों तक माथापच्ची करके स्वतन्त्र शब्दो का निर्माण किया करते थे। पत्रकारिता के जीवन के लिए आपकी यह मान्यता थी कि "पत्रकार को अपने कर्त्तव्यो के प्रति निष्ठा होनी चाहिए और बाद मे अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए माँग करनी चाहिए।" आपका निवास-स्थान पत्रकारों के लिए एक 'प्रशिक्षण-शिविर' ही बन गया था और आप प्राय सबको इस सम्बन्ध मे उचित मार्गदर्शन दिया करते थे।

आपका निधन 8 दिसम्बर सन् 1961 को काशी में हुआ था।

डॉ० दिवाकरप्रसाद विद्यार्थी

श्री विद्यार्थी का जन्म बिहार प्रदेश के मोतीहारी जनपद के सुबइयाँ नामक ग्राम में सन् 1913 में हुआ था। मोतीहारी के जिला स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरांत आपने मुजफ्फरपुर के जे० बी० बी० कालेज (आजकल जिसे लंगटसिंह कालेज कहते है) से बी० ए० और पटना विश्वविद्यालय से अँग्रेजी विषय मे एम० ए० किया था। कुछ दिन तक आप अँग्रेजी साहित्य के उच्चतम अध्ययन तथा शोध के प्रसग मे लन्दन विश्वविद्यालय मे भी रहे थे। आपने 'उन्नीसवी शताब्दी के अँग्रेजी उपन्यास' विषय पर लन्दन विश्वविद्यालय से सन् 1935 मे पी-एच० डी० की उपाधि भी प्राप्त की थी। आपने सन् 1947 से सन् 1949 तक बी०बी०सी० लन्दन के हिन्दी-कार्यक्रमों का सचालन भी किया था। अपने निधन से पूर्व आप पटना कालेज मे अँग्रेजी साहित्य के सम्मानित अध्यापक थे। आप जहाँ सन् 1941 से सन् 1956 तक पटना कालेज के अँग्रेजी-अध्यापक रहे थे वहाँ आप सन् 1956 से सन् 1962 तक बी० एन० कालेज पटना के प्राचार्य भी रहे थे। आपने सन् 1941 से सन् 1943 तक पटना कालेज के 'गजाधर मन्दिर के छात्रावास' का अधीक्षक पद भी सफलतापूर्वक सँभाला था।



आप जहाँ अध्ययनशील शिक्षक और कुशल प्रबन्धक के रूप मे अपनी अनेक विशेषताएँ रखते थे वहाँ आप अच्छे लेखक भी थे। आपकी ऐसी प्रतिभा का परिचय हिन्दी-जगत् को उस समय मिला था जब आपने अपनी कहानियाँ, निबन्ध तथा कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित करानी प्रारम्भ की थी। वैयक्तिक निबन्ध लिखने मे तो आप परम प्रवीण थे। अँग्रेजी और हिन्दी साहित्य के जागरूक अध्येता होने के कारण आपकी रचनाओं मे विचारो की जिस तलस्पर्शी गम्भीरता के दर्शन होते हैं उसमें आपकी गहन विद्वत्ता स्थल-स्थल पर झाँकती दृष्टिगत होती है। आपकी कहानियों और निबन्धो के सकलन क्रमश. 'रजनी और तारे' (1962) तथा 'पानी पर की लकीरें' (1965) नाम से प्रकाशित हो चुके हैं। आपने केन्द्रीय साहित्य अकादेमी के लिए शेक्सपीयर के प्रख्यात नाटक 'ऑथेलो' का हिन्दी अनुवाद भी किया था।

आपकी रचनाधर्मिता का सबसे उत्कृष्ट प्रमाण यही है कि आपकी रचनाएँ समय-समय पर 'पाटल', 'पुस्तकालय सन्देश', 'ज्योत्स्ना', 'योगी', 'माधुरी', 'सुधा', 'हंस', 'जागरण', 'विशाल भारत', 'बिजली', 'पारिजात', 'अवन्तिका', 'नई धारा' और 'आनन्द' नामक देश की तत्कालीन अनेक प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। आप उच्च कोटि के समीक्षक भी थे। आपने आई० ए० रिचर्ड्स की प्रख्यात कृति 'प्रिंसिपल ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म' का हिन्दी अनुवाद भी बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के अनुरोध पर करना प्रारम्भ किया था। खेद का विषय है कि यह पूरा नही हो सका।

आप अपने शिक्षकीय और लेखकीय जीवन की अनेक व्यस्तताओ मे भी बिहार की बहुत-सी साहित्यिक तथा शैक्षणिक सस्थाओ से सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहे थे। आप जहाँ सन् 1939 मे चम्पारन जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष रहे थे वहाँ 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' तथा 'बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के सचालक मण्डल एव स्थायी समिति के अनेक वर्ष तक सम्मानित सदस्य रहे थे।

आपका निधन सन् 1962 मे हुआ था।

पण्डित दीनदयाल उपाध्याय

श्री उपाध्याय जी का जन्म 25 सितम्बर सन् 1916 को अपने नाना पण्डित चुन्नीलाल शुक्ल के यहाँ धनकिया (राजस्थान) मे हुआ था, जहाँ पर वे स्टेशन-मास्टर थे। दीनदयाल जी के पिता पण्डित भगवतीप्रसाद उपाध्याय भी उन दिनो जलेसर रोड स्टेशन पर स्टेशन-मास्टर थे। वैसे उनका पैतृक निवास उत्तर प्रदेश के मथुरा जनपद का फरह

नामक ग्राम था। असमय मे ही अपने पिता का देहावसान हो जाने के कारण आप अपनी माता और छोटे भाई शिवदयाल के साथ अपने मामा पण्डित राधारमण शुक्ल के पास चले गए थे जो उन दिनो गगापुर (राजस्थान) स्टेशन पर मेल गार्ड थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा पहले गगापुर और बाद मे कोटा (राजस्थान) तथा रायगढ़ (मध्य प्रदेश) मे हुई थी और सीकर (राजस्थान) के कल्याण हाई स्कूल से आपने सन् 1935 मे अजमेर बोर्ड की मैट्रिक परीक्षा अत्यन्त उत्कृष्ट स्थान प्राप्त करके उत्तीर्ण की थी और आपको इसके लिए स्वर्ण पदक भी प्रदान किया गया था। इण्टरमीडिएट की परीक्षा मे भी आपको दो स्वर्ण पदक प्राप्त हुए थे। गणित विषय लेकर बी० ए० की परीक्षा देने के उपरान्त आपने एम० ए० मे प्रवेश लिया, किन्तु पारिवारिक बाधाओं के कारण आपको प्रथम वर्ष के बाद ही अपने अध्ययन को तिलाजलि देनी पडी थी। बाद मे आपने गवर्नमेंट ट्रेनिंग कालिज प्रयाग से एल० टी० की परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी।

जब सन् 1937 मे कानपुर मे सर्वप्रथम 'राष्ट्रीय स्वय सेवक सघ' की स्थापना हुई तब आप उसके पहले स्वयसेवक बने थे और उसी वर्ष आप जब नागपुर मे होने वाले सघ के ग्रीष्मकालीन शिक्षा वर्ग मे सम्मिलित हुए तब चालीस दिन की स्वल्प-सी अवधि मे ही आपने वहाँ मराठी भाषा भी सीख ली थी। सघ के इस सम्पर्क मे ही आपने आजीवन अविवाहित रहने का प्रण कर लिया और फलस्वरूप आप सघ मे विभिन्न पदो पर रहते हुए राष्ट्र-सेवा करते रहे। आप जहाँ लगभग 15 वर्ष तक (सन् 1952-1967) सघ के महामन्त्री के पद पर प्रतिष्ठित रहे वहाँ दिसम्बर सन् 1967 मे भारतीय जनसघ के कालीकट अधिवेशन के अध्यक्ष भी निर्वाचित हुए थे। आपके अध्यक्ष-काल मे 'भारतीय जनसघ' की प्रवृत्तियो को बहुत अधिक बढ़ावा मिला था।

आप एक कुशल राजनीतिज्ञ और कर्मठ सेनानी के रूप मे जहाँ राजनीति को एक सर्वथा नई दिशा दे रहे थे वहाँ आपके द्वारा लिखी अनेक महत्त्वपूर्ण पुस्तको ने भी भारतीय सस्कृति और साहित्य का एक अमर आलोक प्रदान किया था। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थों मे 'राष्ट्र जीवन की समस्याएँ', 'भारतीय अर्थ नीति—विकास की एक दिशा', 'हमारा कश्मीर', 'अखण्ड भारत', 'शंकराचार्य' तथा 'चन्द्रगुप्त मौर्य' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आपने सघ के संस्थापक डॉ० हैडगेवार के जीवन-चरित्र का भी मराठी से हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया था। राजनीति मे 'एकात्म मानववाद' के प्रणेता के रूप मे आपका अन्यतम स्थान है। आप औद्योगिक, आर्थिक और प्रशासनिक व्यवस्थाओ के विकेन्द्रीयकरण मे गहन विश्वास रखते थे। अपने कार्यकाल मे आपने भारतीय जनसंघ को एक नई दिशा दी थी। आपका दृष्टिकोण पूर्णत दार्शनिक और मानवतावादी पृष्ठभूमि से सयुक्त होता था। राजनीति आपके लिए साधन थी साध्य नही। वह मार्ग थी मजिल नही। आप राजनीति का पूर्णत आध्यात्मीकरण चाहते थे। भाषा के सम्बन्ध मे भी आपका दृष्टिकोण सर्वथा अभिवन्दनीय था। आप हिन्दी के साथ-साथ देश के काम-काज के लिए भारत की सभी प्रादेशिक भाषाओ के प्रयोग के समर्थक थे।



आपका यह दृढ मत था—"जब तक राज-काज मे अँग्रेजी की अनिवार्यता समाप्त नही होती तब तक भारत की भाषाओ के व्यवहार का प्रारम्भ नही हो सकता। देश के काम-काज के लिए अपने ही देश की भाषाओ का प्रयोग व्यावहारिक एव राष्ट्रीय स्वाभिमान दोनो ही दृष्टि से आवश्यक है। केन्द्र मे अँग्रेजी के स्थान पर हिन्दी के प्रयोग मे शासन की नीति के कारण जो बराबर कठिनाई हो रही है वह खेद का विषय है।—अँग्रेजी का तो प्रभुत्व निर्बाध बना रहे तथा हिन्दी के प्रयोग की भी छूट न हो, यह बर्दाश्त नही किया जा सकता।"

यह दुर्भाग्य की बात है कि आपकी 11 फरवरी सन् 1968 को रेल-यात्रा के समय लखनऊ और मुगल सराय के बीच रहस्यमय परिस्थितियो मे हत्या कर दी गई। आज तक यह हत्या *रहस्य ही बनी हुई है।*

डॉ० दीनदयालु गुप्त

डॉ० गुप्त का जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जनपद की खैर तहसील के सुजानपुर नामक ग्राम में 4 अक्तूबर सन् 1903 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा 'अलीगढ मे हुई थी और इण्टर की परीक्षा आपने आगरा से उत्तीर्ण की थी। इसके उपरान्त आपने बी० ए०, एम० ए० तथा डी० लिट्० की उपाधियाँ प्रयाग विश्वविद्यालय से प्राप्तकरके एल-एल० बी० की परीक्षा लखनऊ विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण की थी। पहले-पहल आपने अपना शिक्षकीय जीवन कानपुर के क्राइस्ट चर्च कालेज से प्रारम्भ किया था और सन् 1930 मे आप लखनऊ विश्वविद्यालय मे 'हिन्दी प्रवक्ता' होकर चले गए थे। जिन दिनो आप लखनऊ विश्वविद्यालय मे नियुक्त हुए थे उन दिनो विश्वविद्यालय मे 'हिन्दी विभाग' पृथक् नही था। वह उन दिनो सस्कृत विभाग से सम्बद्ध था। यह आपकी कर्मठता और ध्येयनिष्ठा का प्रमाण है कि आपने ही अपने सतत प्रयास से 'हिन्दी विभाग' का पृथक् निर्माण कराया और उसके प्रथम अध्यक्ष तथा प्रोफेसर बने।



अपने शिक्षकीय जीवन मे जहाँ आपने विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग को विकसित तथा समृद्ध बनाने की दिशा मे अथक परिश्रम किया वहाँ आप कई वर्ष तक विश्वविद्यालय की 'कार्य समिति' के सदस्य तथा 'कला सकाय' के अधिष्ठाता भी रहे थे। आपने जहाँ उत्तर प्रदेश प्रशासन के अनेक विभागो की हिन्दी-समितियो के सम्मानित सदस्य के रूप मे उल्लेखनीय कार्य किया था वहाँ आप कई वर्ष तक उसकी 'हिन्दी समिति' के अध्यक्ष भी रहे थे। आपकी ही अध्यक्षता मे समिति की ओर से उत्कृष्टतम मानक ग्रन्थो के प्रकाशन की वह महत्त्वाकाक्षी योजना बनाई गई थी जो कालान्तर मे क्रियान्वित हुई।

आपने प्रशासन की ओर से जहाँ दक्षिण भारत में हिन्दी-प्रचार-योजना के सिलसिले मे कई बार यात्राएँ की थीं वहाँ आप 'नागरी प्रचारिणी सभा' और 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' से भी अत्यन्त निकटता से जुडे हुए थे। आपने 'अखिल भारतीय विश्वविद्यालय हिन्दी परिषद्' के आगरा अधिवेशन की अध्यक्षता भी की थी।

आपने डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के निर्देशन मे डी० लिट्० की उपाधि प्राप्त करने के लिए 'अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय' नामक जो शोध-प्रबन्ध लिखा था उसकी हिन्दी के शोध-क्षेत्र मे पर्याप्त प्रशसा की गई थी। अपनी इस शोध के सिलसिले मे आपने श्री नाथद्वारा, काँकरौली, सूरत, कामवन, मथुरा, गोकुल और वृन्दावन आदि अनेक स्थानो की यात्राएँ करके जो निष्कर्ष निकाले थे उन्ही का प्रस्तुतिकरण अपने इस ग्रन्थ मे आपने किया था। इस ग्रन्थ के परीक्षकों में महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज, श्यामसुन्दरदास और अमरनाथ झा-जैसे विद्वान् महानुभाव थे। इन सभी ने डॉ० गुप्त के इस कार्य की भूरि-भूरि सराहना की थी। सर्वप्रथम इस ग्रन्थ मे ही अष्टछाप के कवियो के साहित्यिक पक्ष की विवेचना विस्तारपूर्वक की गई थी।

आप जहाँ उच्चकोटि के अनुसन्धाता और अध्ययनशील अध्यापक थे वहाँ समीक्षा के क्षेत्र मे आपकी देन सर्वथा स्पृहणीय रही है। 'अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय' नामक शोध-प्रबन्ध के अतिरिक्त आपने जिन ग्रन्थो की रचना की थी उनमे 'सूर प्रभा' और 'कबीर दर्शन' के अतिरिक्त डॉ० प्रेम नारायण टण्डन के सहयोग से निर्मित और 9 भागो मे प्रकाशित 'ब्रजभाषा सूर कोश' भी अन्यतम है। आपके शोध प्रबन्ध पर जहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने अपना सर्वोच्च पुरस्कार 'मंगलाप्रसाद पारितोषिक' प्रदान किया था वहाँ उसे 'हरजीमल डालमिया पुरस्कार' से भी सम्मानित किया गया था। यहाँ यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय तथ्य है कि लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की ओर से आपने प्रकाशन-कार्य का भी सूत्रपात कराया था। इस योजना के अन्तर्गत विश्वविद्यालय की ओर से कई ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं।

आपका निधन 3 सितम्बर सन् 1969 को हुआ था।

पण्डित दीनदयालु शर्मा
व्याख्यान वाचस्पति

पण्डितजी का जन्म हरियाणा प्रदेश के रोहतक जनपद के झज्झर नामक नगर मे मई सन् 1863 मे हुआ था। आपके पिता पण्डित गंगासहाय का निधन आपके जन्म से तीन मास पूर्व हो गया था और आपका लालन-पालन अपनी माता की देख-रेख मे ही हुआ था। कदाचित् आपकी शोक-कातर माता ने इसे भगवान् की माया समझकर ही आपका नाम 'दीनदयालु' रखा था। आपके पिता उर्दू-फारसी के अद्वितीय विद्वान् होने के साथ-साथ फारसी मे शायरी भी किया करते थे। जिस समय उनका देहावसान हुआ था तब उनकी आयु केवल 21 वर्ष की ही थी। उन दिनों की प्रचलित परम्परा के अनुसार आपकी पढाई-लिखाई भी उर्दू के 'मकतब' मे 'बिस्मिल्ला-उल-रहमान-उल-रहीम' की पद्धति से हुई थी और आपने भी अपने पिता की भाँति थोडे ही दिनो मे उर्दू के 'गुलिस्ताँ' तथा 'बोस्ताँ' आदि अनेक ग्रन्थो का अच्छा पारायण कर लिया था। जब आपने गाँव के एक मौलवी के मकतब मे अक्षर-ज्ञान प्रारम्भ किया था तब आप अपने सभी साथियो मे अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि थे।



क्योंकि आपका विवाह केवल 18 वर्ष की आयु मे ही हो गया था अत आपने परिवार के पालन पोषण की दृष्टि से सरकार के मर्दुम-शुमारी के महकमे मे कार्य करना प्रारम्भ कर दिया था। आपकी कार्यकुशलता और परिश्रमशीलता से उस विभाग के अधिकारी इतने प्रसन्न हुए थे कि आप शीघ्र ही 'सुपरिटेंडेट' भी बना दिए गए थे। इन्ही दिनो आपने समाज-सेवा की भावना से प्रेरित होकर 'पंचायत तरक्कीए हिन्द' अर्थात् 'हिन्दुओ की उन्नति की सभा' नामक एक संस्था की स्थापना की। फिर आपने सन् 1883 मे इस सस्था का नाम बदलकर 'रिफाहे आम सोसाइटी' (सर्व-हितकारिणी सभा) रख दिया और उसके उद्देश्यो की पूर्ति के लिए उर्दू मे झज्झर से 'हरयाना' नामक एक पत्र का प्रकाशन भी करने लगे। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि हिन्दी की प्राचीन पीढी के ख्यातनामा पत्रकार श्री बालमुकुन्द गुप्त के लेख प्रारम्भ मे इसी उर्दू पत्र में प्रकाशित हुआ करते थे। श्री गुप्त का जन्म-स्थान 'गुड़ियानी' झज्झर के समीप ही था। उन दिनो गुप्त जी की भेंट प्राय आपसे झज्झर मे ही हुआ करती थी। आपकी रचनाएँ गुप्तजी के साथ ही उर्दू के 'अवध अखबार' और 'अखबार चुनार' मे भी साथ-साथ प्रकाशित हुआ करती थी।

जब आप केवल 22 वर्ष के थे तब आपके मन मे अचानक ब्रज प्रदेश की यात्रा करने की भावनाएँ उद्भूत हुई। आपने उस प्रदेश के सभी प्रमुख स्थानो की यात्राएँ की थी। इस यात्रा के दौरान आपकी भेट वहाँ 'नारायण स्वामी' नामक एक ऐसे महानुभाव से हुई, जो ब्रजभाषा के अच्छे कवि तथा भक्त थे। स्वामी जी का सम्पर्क पाकर आपके मानस मे सस्कृत और हिन्दी भाषाओ का ज्ञान प्राप्त करने की लालसा बलवती हो गई और आपने स्थायी रूप से मथुरा मे रहने का सकल्प भी कर लिया। थोडे समय तक आपनेवहाँ रहकर 'मथुरा समाचार' नामक एक साप्ताहिक पत्र भी उर्दू मे प्रकाशित किया था। फिर आप लाहौर से प्रकाशित होने वाले प्रख्यात उर्दू मासिक 'कोहेनूर' के सम्पादक होकर वहाँ चले गए और अपने बाल-सखा श्री बालमुकुन्द गुप्त को भी 'सहकारी सम्पादक' के रूप मे बुला लिया। इस बीच आपकी प्रवृत्ति उर्दू की ओर से हटकर धीरे-धीरे हिन्दी की ओर बढती जा रही थी और जब आपको सस्कृत और हिन्दी का अच्छा ज्ञान प्राप्त हो गया तब आप सार्वजनिक सेवा के क्षेत्र मे कूद पडे और अपने भाषणो से देश मे जागृति का जो महान् सन्देश दिया उसीके कारण थोडे ही समय मे आपकी ख्याति दूर-दूर तक फैल गई तथा आपको जनता में 'व्याख्यान वाचस्पति' कहा जाने लगा। इस बीच आपकी अनुपस्थिति मे 'कोहेनूर' के सम्पादन का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व आपके बालसखा श्री बालमुकुन्द गुप्त ने सँभाल लिया था।

आपने जिन दिनों सार्वजनिक सेवा के क्षेत्र मे पदार्पण किया था तब कांग्रेस की स्थापना हो चुकी थी। आप सन् 1886 में दादा भाई नौरोजी की अध्यक्षता मे सम्पन्न होने वाले उसके द्वितीय अधिवेशन के समय जब कलकत्ता गए थे तब आप 'कोहेनूर' के सम्पादक थे। इस कांग्रेस के अवसर पर ही आपके हृदय मे 'सनातन धर्म' का एक संगठन स्थापित करके उसके माध्यम से हिन्दुओ में सांस्कृतिक और राजनीतिक चेतना जागृत करने का संकल्प जगा था। इस सम्बन्ध में आपने कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'धर्म दिवाकर' के सम्पादक पण्डित देवीसहाय और 'उचित वक्ता' के सम्पादक पण्डित दुर्गाप्रसाद मिश्र तथा पण्डित गोविन्दनारायण मिश्र से भी विचार-विमर्श किया था। आपने अपनी इन भावनाओ को जब महामना पण्डित मदन-मोहन मालवीय के समक्ष प्रकट किया तब उन्होने इस योजना को न केवल पसन्द किया प्रत्युत उसे आगे बढाने के लिए भी आपको प्रोत्साहित किया। फिर किया था, आपने 'भारत धर्म महामण्डल' की स्थापना का निश्चय करके उसका प्रथम अधिवेशन हरिद्वार में बुलाने की भी घोषणा कर दी। फल-स्वरूप सन् 1887 को 31 मई को हरिद्वार के एक विशाल सम्मेलन मे इसकी विधिवत् स्थापना कर दी गई। आपके इस महत्प्रयास का अत्यन्त सजीव वर्णन उन दिनो 'उचित वक्ता' के सम्पादक पण्डित दुर्गाप्रसाद मिश्र ने अपनी 'भारत धर्म' नामक पुस्तक मे 'आँखो देखी' शीर्षक के अन्तर्गत किया था।

'भारत धर्म महामण्डल' की स्थापना के उपरान्त आपने इस संस्था के माध्यम से जहाँ सांस्कृतिक उन्नयन की दिशा मे उल्लेखनीय सेवा की थी वहाँ हिन्दुओ में राष्ट्रीयता की भावनाएँ कूट-कूट कर भरी थी। आपकी संगठनक्षमता का परिचय इसी बात से भली-भाँति मिल जाता है कि थोडे ही दिनो में आपके इस कार्य में महामहोपाध्याय पण्डित शिव-कुमार शास्त्री, महामहोपाध्याय राम मिश्र शास्त्री, पण्डित अम्बिकादत्त व्यास, पण्डित नन्दकुमारदेव शर्मा, महामहो-पाध्याय पण्डित हरनारायण शास्त्री, विद्यावारिधि पण्डित ज्वालाप्रसाद मिश्र तथा पण्डित माधवप्रसाद मिश्र आदि देश के अनेक मूर्धन्य विद्वान् भी सहयोगी हो गए। आपने जहाँ अपनी इस संस्था के माध्यम से देश के कोने-कोने मे अनेक विद्यालयो, गोशालाओ, पुस्तकालयो की संस्थापना को वहाँ संस्कृत तथा हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार का भी महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। कलकत्ता का 'श्री विशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालय'-जैसा शिक्षण-संस्थान आपके ही प्रयास से स्थापित हुआ था। लाहौर का 'सनातन धर्म कालेज', दिल्ली का 'हिन्दू कालेज' तथा बम्बई का 'मारवाड़ी विद्यालय' भी आपके ही परिश्रम का सुपरिणाम है।

आपने हिन्दू धर्म तथा संस्कृति के उत्थान के लिए जो कार्य किए थे उनके अतिरिक्त आपने सारे देश मे घूम-घूम-कर देवनागरी लिपि के प्रचार का भी अद्भुत कार्य किया था। जस्टिस शारदाचरण मित्र की 'एक लिपि विस्तार-परिषद्' नामक संस्था की स्थापना मे भी आपकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही थी। हैदराबाद-जैसे उर्दू-प्रधान राज्य मे उर्दू के साथ-साथ हिन्दी, मराठी और तेलुगु आदि भाषाओं के अध्ययन की व्यवस्था भी आपने वहाँ के निजाम से मिलकर कराई थी। जब आपने अपनी हैदराबाद-यात्रा के प्रसंग मे वहाँ के दीवान महाराज कृष्णप्रसाद के अतिथि होकर प्राय एक मास तक वहाँ रहकर अपने 28 ऐतिहासिक भाषण दिए थे तब आपने अपने भाषणो मे हिन्दी तथा अन्य भाषाओ के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था करने की प्रेरणा उन्हे दी थी। सन् 1905 मे जस्टिस शारदाचरण मित्र शर्मा जी के जिन शब्दो से प्रभावित हुए थे वह इस प्रकार है—"भारत-वर्ष के प्रत्येक प्रान्त मे अलग-अलग भाषाएँ बोली जाती है और उनके लिखने के लिए अलग-अलग प्रान्तीय लिपियां है। चाहे भाषाएँ अलग-अलग ही रहे, पर वे सब एक लिपि मे लिखी जावे। जिस प्रकार यूरोप के भिन्न-भिन्न देशो में भिन्न-भिन्न बोलियाँ बोली जाती है, परन्तु वे लिखी एक ही रोमन लिपि मे जाती है, उसी प्रकार भारतवर्ष की सब भाषाएं भी एक ही लिपि देवनागरी मे लिखी जाया करें।" आपका यह भाषण कलकत्ता के ग्राण्ड-थियेटर मे हुआ था। कलकत्ता से 17 वर्ष पहले भी आपने मेरठ की 'सनातन धर्म सभा' के वार्षिक उत्सव के अवसर पर यही बात जनता के समक्ष प्रस्तुत की थी। आपने जहाँ मेरठ मे 'हिन्दी प्रचारिणी सभा' स्थापित की थी वहाँ सन् 1925 मे आपने 'पंजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की अध्यक्षता भी की थी। बीकानेर और अलवर आदि राज्यो मे आपने हिन्दी को अदालती भाषा बनाया था। आपके निमन्त्रण पर ही लाहौर मे अखिल भारतीय

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन हुआ था।

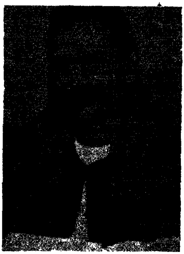
यह आपके ही सत्प्रयास का सुपरिणाम था कि 20 जुलाई सन् 1906 को कलकत्ता के 'यूनिवर्सिटी इस्टीट्यूट' के विशाल भवन मे कर्नल डी० सी० फिलार की अध्यक्षता मे 'एक लिपि विस्तार परिषद्' का प्रथम वार्षिक अधिवेशन हुआ था। इस अवसर पर आपने जो भाषण दिया था उसके कुछ अश इस प्रकार है—"सज्जनो, जिस देवनागरी लिपि का प्रचार आप सारे भारत में करना चाहते है वह ऐसी लिपि है जिसकी उत्पत्ति प्राकृतिक नियमो से स्वय हुई है। इसके स्वर और व्यजन बडे वैज्ञानिक रूप मे विभक्त है। आप अपनी-अपनी प्रान्तीय लिपियो को नाना प्रकार की ट्रेन समझिए और जैसे थ्रू लाइन से सब ट्रेने पास होती है वैसे ही देवनागरी लिपि की लाइन से सारे भारत मे विभिन्न प्रान्तीय भाषाओ को पहुँचाइए।"

आपके हिन्दी-प्रेम का सबसे सुपुष्ट प्रमाण यह भी है कि आपने अपने बाल-सखा श्री बालमुकुन्द गुप्त को भी उर्दू पत्रकारिता से हिन्दी पत्रकारिता की ओर उन्मुख किया और उन्हे कलकत्ता के 'भारत मित्र' के सम्पादक के रूप मे प्रतिष्ठित करके उन्हे अखिल भारतीय ख्याति दिलवाई। 'कोहेनूर' और 'अखबारे चुनार'-जैसे उर्दू पत्रो के सफल सम्पादक के रूप मे गुप्तजी ने जो प्रतिष्ठा उर्दू साहित्य मे प्राप्त की थी उससे अधिक उन्होने हिन्दी साहित्य के उन्नयन एव विकास मे अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था। यह आपके ही प्रोत्साहन का सुपरिणाम था कि इटावा के कुँवर गणेशसिह भदौरिया ने 'कलकत्ता समाचार' को खरीदकर दिल्ली से उसे 'हिन्दू ससार' के रूप मे कई वर्ष तक प्रकाशित किया था। यहाँ यह बात विशेष रूप से स्मरणीय है कि 'हिन्दू ससार' का सम्पादन भी 'कलकत्ता समाचार' के सम्पादक पण्डित झाबरमल्ल शर्मा ही किया करते थे। यह भी सौभाग्य की बात है कि आपके पुत्रो मे से ज्येष्ठ पण्डित हरिहरस्वरूप शास्त्री जहाँ सस्कृत और हिन्दी के अद्वितीय विद्वान् के रूप मे परिचित रहे है वहाँ द्वितीय पुत्र पण्डित मौलिचन्द्र शर्मा ने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधानमन्त्री के रूप मे हिन्दी की बड़ी सेवा की थी। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि सन् 1963 मे दिल्ली मे आपकी जन्म-शताब्दी सोत्साह मनाई गई थी। उस समारोह की अध्यक्षता श्री लालबहादुर शास्त्री ने की थी तथा उद्घाटन पण्डित जवाहरलाल नेहरू द्वारा सम्पन्न हुआ था। आपकी पुण्य-स्मृति मे दिल्ली के तत्कालीन उपराज्यपाल डॉ० आदित्यनाथ झा ने 25 अप्रैल सन् 1972 को तिमारपुर के समीप 'दीनदयालु शर्मा मार्ग' पर स्थापित की गई आपकी प्रतिमा का अनावरण भी किया था।

आपका निधन सन् 1930 मे हुआ था।

श्री दीनानाथ भार्गव 'दिनेश'

श्री 'दिनेश' का जन्म भारत की राजधानी दिल्ली के एक अत्यन्त साधारण परिवार मे सन् 1910 मे हुआ था। क्योकि आपके पिता ग्वालियर राज्य की सेवा मे थे इसलिए आपकी शिक्षा-दीक्षा उज्जैन, ग्वालियर तथा दिल्ली मे हुई थी। आपके दादा का दिल्ली मे 'पुस्तक-व्यवसाय' था, अत. यहाँ के हिन्दू कालेज मे भी आप कुछ समय पढे थे। अपने छात्र-जीवन से ही आपका झुकाव लेखन, काव्य-सृजन और साधु-सन्तो की सेवा-सहायता करने की ओर था। ग्वालियर मे रहते हुए आप वहाँ महात्मा लोचनदास नामक सन्त से बहुत प्रभावित हुए थे। एक प्रकार से आपने उनको अपना एक आध्यात्मिक गुरु ही मान लिया था। बाद मे जब आपने काव्य के क्षेत्र मे पदार्पण किया तब आपने दिल्ली के श्री छाजूराम 'छबेश' का शिष्यत्व अगीकार किया था। गीता का गहन अध्ययन आपने सस्कृत वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान् महामहोपाध्याय पण्डित हरनारायण शास्त्री विद्यासागर के श्रीचरणो मे बैठकर किया था।



आपके जीवन मे कविता के प्रति प्रेम जागृत करने की

दिशा मे यहाँ की प्रसिद्ध संस्था 'दिल्ली कवि समाज' का प्रमुख योगदान रहा था। अपने गुरुदेव श्री 'छबेश' जी की प्रेरणा पर आप जहाँ इस पथ पर अग्रसर हुए वहाँ 'कवि समाज' की गोष्ठियो में अपनी रचनाओं का पाठ करके आपको बहुत प्रोत्साहन प्राप्त होता था। उन दिनों 'कवि-समाज' के कर्त्ता-धर्त्ता श्री पन्नूलाल वर्मा 'करुणेश' थे और गोष्ठियो मे सर्वश्री शम्भुनाथ 'शेष', कैलाशचन्द्र 'पीयूष', ईशकुमार 'ईश' तथा जगदीशलाल श्रीवास्तव 'दीश' जैसे कुछ गिने-चुने लोग ही सम्मिलित हुआ करते थे। बाद मे सन् 1940 के आस-पास इसके सदस्य प्रख्यात समीक्षक डॉ० नगेन्द्र भी हो गए थे, जो उन दिनों अपनी युवावस्था मे दिल्ली के 'कॉमर्शियल कालेज' मे अंग्रेजी-प्रवक्ता के रूप मे आए थे और उसके दरियागज के छात्रावास मे रहा करते थे। बाद मे इस गोष्ठी के नियमित सदस्यों मे श्री विष्णु प्रभाकर भी सम्मिलित हो गए थे।

दिनेश जी ने जहाँ सन् 1931 मे 'काग्रेस प्रेस' का प्रबधक रहकर प्रेस व्यवसाय की दीक्षा ग्रहण की थी वहाँ आपने अपना निजी 'जमना प्रिंटिंग प्रेस' भी स्थापित कर लिया था। इसी प्रेस से आपकी प्राय सब रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। आपने 28 वर्ष तक 'मानव धर्म' नामक एक सास्कृतिक तथा धार्मिक पत्र का सम्पादन भी किया था। अपनी इसी व्यस्तता मे आपने श्रीमद्‌भगवद्‌गीता का पद्यानुवाद 'हरिगीतिका' छन्द मे लिखना प्रारम्भ किया था, जिसका संशोधन आप प्रतिदिन प्रात· अपने गुरु पण्डित हरनारायण शास्त्री विद्यासागर के पास जाकर कराया करते थे। इस प्रकार आपका यह पद्यानुवाद सन् 1933 मे 'श्री हरि गीता' नाम से प्रकाशित हुआ था। आपकी इस कृति की लोकप्रियता का अनुमान इसीसे हो जाता है कि इसके अभी तक लगभग 20 सस्करण प्रकाशित हो चुके है। आपकी अन्य प्रकाशित कृतियो मे 'गीता ज्ञान', 'गीता अध्ययन', 'गीता के सप्त स्वर', 'उपनिषद् ज्ञान', 'सन्ध्या वन्दन', 'सत्यनारायण की कथा', 'अपना अपना राग है', 'महापुरुष', 'श्री सूक्त', 'गायत्री साधना', 'गोमाता', 'योगेश्वर श्रीकृष्ण', 'मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम', 'गौतम बुद्ध', 'शिव-साधना' तथा 'मार्ग दर्शन' आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य हैं। आपने बच्चों के लिए भी सरल और सुबोध शैली मे कविताएँ लिखी थी। जो 'बाल पद्यमाला' नाम से दो भागो में प्रकाशित हुई है। इनके अतिरिक्त आपकी लगभग 18 कृतियाँ अप्रकाशित ही रह गईं।

आकाशवाणी से नित्य-प्रति प्रसारित होने वाले अपने गीता-प्रवचन से आप अत्यन्त लोकप्रिय हो गए थे। आपके गीता-सम्बन्धी प्रवचनो के रिकार्ड भी 'हिज मास्टर्स वायस' कम्पनी ने तैयार किए थे। आपका कण्ठ इतना मधुर था कि काव्य-पाठ करते समय आप जनता को मन्त्रमुग्ध कर लिया करते थे। आपकी भाषण-पटुता और काव्य-माधुरी की लोकप्रियता का सबसे सुपुष्ट प्रमाण यही है कि आप भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद के विशेष अनुरोध पर राष्ट्रपति भवन मे प्राय. गीता प्रवचन करने के सदर्भ मे आमन्त्रित किए जाते थे। आप जहाँ 'दिल्ली कवि समाज' के सस्थापक प्रधान थे वहाँ 'गीता रामायण सभा' नामक सस्था की स्थापना मे भी आपकी प्रमुख प्रेरणा रही थी। निरन्तर कर्म-रत रहने के कारण आपका स्वास्थ्य दिनानुदिन क्षीण होने लगा था और अन्तिम दिनो मे तो आपको 'पक्षाघात', 'मधुमेह' तथा 'रक्तचाप'-जैसे असख्य असाध्य रोगो ने घेर लिया था।

आपका निधन 19 अप्रैल सन् 1974 को हुआ था।

श्री दुर्गाचन्द्र जोशी

श्री जोशी का जन्म सन् 1893 मे उत्तर प्रदेश के प्रख्यात तीर्थ कनखल (हरिद्वार) मे हुआ था। आपके पिता श्री योगेश्वर जोशी उत्तर भारत के प्रख्यात आयुर्वेदिक चिकित्सको मे थे। अपने पिता के सस्कारो के अनुरूप श्री दुर्गाचन्द्र जी भी सस्कृत तथा आयुर्वेद के अतिरिक्त अँग्रेजी भाषा के भी मर्मज्ञ विद्वान् थे।

आपने सन् 1924 मे कनखल से 'हिन्दू सर्वस्व' नामक एक हिन्दी साप्ताहिक का प्रकाशन-सम्पादन किया था, जो दो-ढाई वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक प्रकाशित हुआ था। उन्ही दिनो आपने पुस्तकाकार मे एक कहानियो का पत्र भी निकाला था। दोनो पत्रो का सम्पादन आप स्वयं ही किया करते थे। आप बगला-भाषा के भी अच्छे जानकार थे और आपने बगला के प्रख्यात लेखक श्री नारायणचन्द्र भट्टाचार्य के एक प्रख्यात उपन्यास का हिन्दी अनुवाद 'सुशीला' नाम से

करके स्वयं ही प्रकाशित किया था।

आपका निधन सन् 1941 में हुआ था।

श्री दुर्गादत्त त्रिपाठी

श्री त्रिपाठी का जन्म 19 मई सन् 1906 को उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद जनपद के चन्दौसी नामक नगर मे हुआ था। दिल्ली के रामजस कालेज से बी० ए० तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप महात्मा गाधी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग लेने लगे थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा काशी के डी० ए० वी० कालेज मे हुई थी। वहाँ पर रहते हुए ही आपका हिन्दी के प्रख्यात कवि और साहित्यकार लाला भगवानदीन और हास्य रस के प्रसिद्ध कवि श्री बेढब बनारसी से अच्छा सम्पर्क हो गया था। इनके अतिरिक्त आपने काशी के सर्वश्री जयशकरप्रसाद, विनोद-शकर व्यास, शिवदास गुप्त 'कुसुम' और शिवपूजन सहाय-जैसे अनेक साहित्यकारो का सान्निध्य-सुख भी प्राप्त किया था।

सर्वप्रथम आपने दिल्ली से प्रकाशित होने वाले 'महारथी' नामक मासिक पत्र मे सहायक सम्पादक के रूप मे कार्य प्रारम्भ किया था। उन दिनो 'महारथी' के सम्पादकीय विभाग मे सर्वश्री जैनेन्द्र-कुमार और भगवती-प्रसाद वाजपेयी भी कार्य-रत थे। मूलतः आप कवि थे और आपकी कविताओ पर प्रख्यात छायावादी कवि श्री जयशंकर प्रसाद का प्रचुर प्रभाव था। जब आपने यह अनुभव किया कि साहित्यिक कार्यों मे सलग्न रहते हुए जीवन-निर्वाह होना सर्वथा कठिन है तब आपने रेलवे में 'गार्ड' की नौकरी कर ली। आप सन् 1929 से लेकर सन् 1961 तक इस पद पर निरन्तर कार्य-रत रहे। आप 25 मई सन् 1961 को रेलवे की इस सेवा से निवृत्त हुए थे। आपके पिता श्री गोविन्द दत्त त्रिपाठी भी रेलवे-कर्मचारी थे और उन्हीकी प्रेरणा पर आपने रेलवे की यह नौकरी की थी। आपने कुछ समय तक कलकत्ता के 'माडर्न रिव्यू' (मासिक) मे भी कार्य किया था।



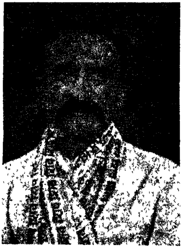
आप जहाँ उत्कृष्ट कवि थे वहाँ एक सशक्त कथाकार के रूप मे भी आपने अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। यद्यपि आपने 'स्वर्ग', 'निर्बलता का शाप', 'शकराचार्य' (महाकाव्य), 'सन्धि और विच्छेद' (खण्ड काव्य), 'आरोह', 'आसव', 'सौम्या', 'ऋतम्भरा', 'भूयसी', 'श्रेयवदा', 'मधु-लिपि', 'पत्राक', 'रक्तग्रन्थी', 'वृन्दा', 'अनुजा', 'मासिका', 'यज्ञशेष', 'कलापी' 'प्रयाति', 'सद्यस्का', 'परिचित और प्रशस्तियाँ', 'उर्वशी', 'त्वदीया', 'दित्सा', 'छन्दा', 'गतिक', 'वेणुजा', 'गीतिका', 'निशार्क', 'निबन्ध गीत' (तीन खण्ड), 'कन्या', प्रत्यय', 'स्वरान्यास', 'उपनाह', 'प्रकाम', 'शरण्या', 'गेया', 'युगीन', 'युगकाव्य' और 'मुहूर्त' (काव्य सग्रह); 'उत्तरदायी','बर्लिन की रक्त-रेखा' तथा 'जहाँ बटवारा नही होता' (उपन्यास), 'क्रमागत', 'जीने का सहारा', 'विश्वास का लक्ष्य', 'उतरा हुआ मद' तथा 'झुकझुकी' (कहानी सग्रह); आदि अनेक पुस्तको की रचना की थी, किन्तु ये सभी अप्रकाशित है। इनके अतिरिक्त आपकी कई कृतियाँ प्रकाशित भी हुई है। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'शकुन्तला' खण्डकाव्य (1932), 'अमर सत्य' उपन्यास (1942), 'गाधी सवत्सर', महाकाव्य (1963), 'मण्टो मिला था' उपन्यास (1966) तथा 'तीर्थ शिला' गीत-सग्रह (1971) प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

त्रिपाठी जी ने जहाँ जागरूक पत्रकार, सहृदय कवि तथा प्रबुद्ध उपन्यासकार के रूप मे अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था वहाँ सन् 1942 मे श्री देवकी बोस के निर्देशन मे बनी हिन्दी फिल्म 'रामानुज' के सवाद लिखने के अतिरिक्त उस चित्र मे 'सेनापति' का अभिनय भी किया था। आपके गद्य-पद्य-लेखन दोनों पर ही जयशकर प्रसाद जैसी भावनाप्रवणता की छाप थी।

आपका निधन 31 जनवरी सन् 1979 को मुरादाबाद मे हुआ था।

पण्डित दुर्गादत्त पन्त

श्री पन्त का जन्म उत्तर प्रदेश के नैनीताल जनपद के काशीपुर नामक नगर मे सन् 1868 मे हुआ था। आपके



पूर्वज भारत के भूत-पूर्व गृहमन्त्री और प्रख्यात नेता पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्त के ग्राम के निवासी थे। आप उनके तथा पण्डित रामदत्त ज्योतिर्विद के अत्यन्त घनिष्ठ मित्रो मे से थे। आपको शिक्षा घर पर ही अपने पिता की देख-रेख मे हुई थी। वे सस्कृत-वाड्मय के अद्वितीय विद्वान् थे और उन्होने काशी मे रहकर समस्त प्राचीन साहित्य का विधिवत् अध्ययन किया था। अपनी शैशवास्था से ही पण्डित दुर्गादत्त ने अपने नगर मे एक 'छात्र-सभा' स्थापित करके भाषण देने का अच्छा अभ्यास कर लिया था। आपकी वक्तृत्व-कला का सबसे अधिक परिचय जनता को पहले-पहल उस समय मिला था जब कि आपने 'गढमुक्तेश्वर' के गगा मेले मे अपने व्याख्यानो से अपार भीड को मन्त्र-मुग्ध कर लिया था।

आप मूलत सनातनधर्मी विचार-धारा के प्रचारक पण्डितो मे अग्रगण्य थे और समस्त देश मे घूम-घूमकर भारतीय सस्कृति के प्रचार तथा प्रसार मे अपना अनन्य योगदान देते रहते थे। आपकी वक्तृत्व-कला से मुग्ध होकर सनातन धर्म के प्रख्यात नेता व्याख्यान वाचस्पति पण्डित दीनदयालु शर्मा ने आपका 'भारत धर्म महामण्डल' मे 'महोपदेशक' के पद पर नियुक्त कर लिया था। अपने मुललित शैली के भाषणो के द्वारा देश के जिन महोपदेशकों ने हिन्दी को जन-साधारण मे अत्यन्त लोकप्रिय बनाया था उनमे पण्डित दुर्गादत्त पन्त का नाम विशेष स्थान रखता है।

आपने जहाँ सारे देश में घूम-घूमकर सनातन धर्म का प्रचार किया वहाँ पीलीभीत, हरिद्वार, चूरू, बीकानेर, काशीपुर, दिल्ली, लखनऊ, महोबा तथा औरय्या आदि अनेक नगरो मे सस्कृत की पाठशालाएँ स्थापित कराईं। काशीपुर का 'उदयराज हाई स्कूल' आपके ही द्वारा स्थापित हुआ था। 'ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम हरिद्वार' भी आपने ही स्थापित किया था। महात्मा गाधी जी आपके ही निमन्त्रण पर इस सस्था मे पधारे थे। आपने शिक्षा और सस्कृति का प्रचार-कार्य करने के अतिरिक्त अपनी लेखनी के माध्यम से भी समाज की बहुत बडी सेवा की थी। आपके द्वारा लिखी गई पुस्तको मे 'ब्रह्मचर्योपदेश', 'प्रेमा भक्ति', 'तीर्थ महिमा', 'ईश्वरावतार', 'मातृ-पितृ-भक्ति', 'प्रतीकोपासना', 'नारी-धर्म', 'पुराणो की कथा', 'शिशु रक्षा', तथा 'देश की स्वतन्त्रता' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

आपकी शिक्षा, धर्म तथा सस्कृति की विशिष्ट सेवाओ को दृष्टि मे रखकर ब्रिटिश सरकार ने आपको जहाँ 'राय साहब' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी वहाँ आपको जनता मे 'कूर्माचल भूषण' भी कहा जाता था। इनके अतिरिक्त आपको देश के अनेक राजा-महाराजाओ, धर्म-मण्डलो और धर्माचार्यो ने अनेक सम्मानोपाधियाँ तथा प्रशस्तियाँ प्रदान की थी। आपके कर्मठ जीवन की यह विशेषता थी कि आपने देश के कोने-कोने मे भ्रमण करके हिन्दू-सस्कृति का व्यापक प्रचार किया था। आपकी प्रशस्ति मे किसी कवि ने यह ठीक ही लिखा था

पण्डित बदरीदत्त सुत, दुर्गादत्त उदार।
धर्म काज सुन्दर सभा नियत कीन्ह निज द्वार॥
नूतन धर्म समाज चुनि, जिमि दीपक उजियार।
धर्म सनातन रवि उदय, मलिन होत इक बार॥

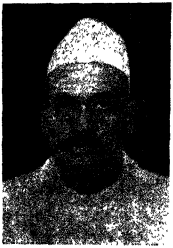
आपका निधन 74 वर्ष की आयु मे सन् 1942 मे हुआ था।

श्री दुर्गाप्रसाद खत्री

श्री खत्री जी का जन्म उत्तर प्रदेश के विख्यात तीर्थ वाराणसी मे 12 जुलाई सन् 1895 को हुआ था। आपके पिता श्री देवकीनन्दन खत्री हिन्दी के प्रमुख तिलस्मी उपन्यास-

लेखक थे और उनके उपन्यासो ने हिन्दी को जन-साधारण में लोकप्रिय बनाने मे उल्लेखनीय कार्य किया था। अपने पिता जी के चरण-चिह्नो पर चलकर श्री दुर्गाप्रसाद खत्री ने भी उपन्यास-लेखन मे अपनी विशिष्ट प्रतिभा प्रदर्शित की थी। आपकी शिक्षा अधिक नही हो सकी थी। सन् 1913 मे केवल इण्ट्रेंस की परीक्षा देकर ही आपने लेखन को अपना लिया था और महात्मा गाधी के 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' मे भाग लेकर सन् 1921 से सन् 1943 के बीच लगभग 5 बार जेल-यात्राएँ की थी और कई बार आपके घर की तलाशियाँ भी हुई थी।

अपने पिता श्री देवकीनन्दन खत्री के निधन के उपरान्त आपने जहाँ पढाई को बीच मे ही तिलाजलि देकर लेखन और प्रकाशन के व्यवसाय को गभीरता से अपनाया वहाँ अपने पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह भी सफलतापूर्वक किया था। आपने न केवल बनारस मे अपनी दुकान खोली, प्रत्युत कलकत्ता तथा कानपुर मे भी कार्य प्रारम्भ करके अपने प्रकाशन - व्यवसाय को आगे बढाया था।



आपने जहाँ सन् 1913 मे 'उपन्यास लहरी' नामक पत्र का सम्पादन-प्रकाशन किया था वहाँ 'भारत जीवन' तथा 'लहरी' नामक पत्र भी सम्पादित किए थे। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप 'लहरी' को पाक्षिक रूप मे सम्पादित किया करते थे। आपने कुछ मास तक 'सन्मार्ग' दैनिक तथा सन् 1931-32 के आन्दोलन के समय 'रणभेरी' पत्रिका का सम्पादन भी किया था।

आपने जहाँ कुशल व्यवसायी के रूप मे सफलता प्राप्त की थी वहाँ अपने पिताजी की लेखन-परम्परा को प्रचलित करने की दृष्टि से तिलस्मी उपन्यासों के लेखन मे भी अपनी प्रतिभा का प्रचुर परिचय दिया था। आपने जहाँ अनेक उपन्यासो की रचना की थी वहाँ 500 से अधिक कहानियाँ भी लिखी थी। आपके द्वारा लिखे गए लगभग 31 उपन्यासों के अतिरिक्त कहानियो के भी 23 संकलन प्रकाशित हो चुके हैं। तिलस्मी तथा ऐयारी के उपन्यासो के अतिरिक्त आपने ऐतिहासिक, राजनैतिक, सामाजिक और वैज्ञानिक उपन्यासो के लेखन मे भी अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। हास्य-प्रधान बाल-उपन्यास-लेखन की कला मे भी आप परम प्रवीण थे।

आपकी प्रकाशित कृतियों मे 'अभागे का भाग्य', 'अनग पाल', 'बलिदान', 'जब मेघ छाए', 'काला चोर', 'कलक कालिमा', 'लाल पजा', 'माया', 'मृत्यु-किरण अथवा रक्त मण्डल', 'प्रतिशोध', 'रोहताश मठ अथवा तिलस्मी भूत', 'सागर-सम्राट्', 'साकेत', 'संसार चक्र', 'सन्यासी', 'सफेद शैतान', 'सुवर्ण रेखा', 'स्वर्ण पुरी', 'उपन्यास-कुसुम', 'एकलव्य', 'कालेज गर्ल', 'ठगराज','देवता का प्रसाद','प्रेम', 'प्रोफेसर भोदू', 'बिना सवार का घोडा', 'माँ', 'रूप का बाजार', 'रूप-ज्वाला', 'विधाता की लीला', 'वेश्या', 'श्यामा', 'समझ का फेर', 'तान कौतुक पचासा', 'शेरसिह', 'रामरखा का खून', 'खूनी कलाई', 'सकट मोचन', 'काला चोर', 'पगला खूनी', 'बलिदान', 'बलिवेदी पर', 'आनन्द महल', 'दुष्ट दमन', 'ससार चक्र', 'लाला पकौडी मल', 'आत्म त्याग', 'गर्म राख', 'विचित्र चोर' तथा 'विधाता की लीला' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। इनमे से 'भूतनाथ', 'रोहताश मठ' तथा 'सफेद शैतान' आदि कई भागो मे प्रकाशित है।

आपका निधन 5 अक्तूबर सन् 1973 को हुआ था।

श्री दुर्गाप्रसाद 'दुर्गेश'

श्री 'दुर्गेश' का जन्म उत्तर प्रदेश के झाँसी नामक स्थान मे सन् 1918 मे हुआ था। आपने अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन की 'साहित्यरत्न' परीक्षा देने के अतिरिक्त हिन्दी विषय मे एम० ए० की उपाधि भी प्राप्त की थी। आप हिन्दी तथा संस्कृत के अतिरिक्त मराठी और उर्दू भाषाओं के भी अच्छे जानकार थे। आप मूलत कवि थे और आपकी

कविताएँ हिन्दी की सभी प्रमुख पत्रिकाओं मे ससम्मान छपा छपा करती थी। आपकी कविताओं का मूल स्वर 'वीर रस-प्रधान' होता था।

आपने कविता के अतिरिक्त गद्य-लेखन के क्षेत्र मे भी अच्छी प्रतिभा का परिचय दिया था। आपका मुख्यत कार्य-क्षेत्र दतिया रहा था और आप लगभग 12 वर्ष तक वहाँ की 'दतिया जिला साहित्य परिषद्' के अध्यक्ष भी रहे थे। आपकी गणना बुन्देलखण्ड के प्रमुख कवियो मे की जाती थी। आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'गाधी रामायण', 'सृजन', 'बगला की ललकार' और 'श्रद्धा के सुमन' आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है।



आपका निधन 30 अगस्त सन् 1973 को दतिया मे हुआ था।

श्री दुर्गाप्रसाद रस्तोगी 'आदर्श'

श्री रस्तोगी का जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद नगर के दारागज मोहल्ले मे सन् 1911 मे हुआ था। आपके पिता श्री मुन्नूलाल रस्तोगी बडे ही मितव्ययी और सरल स्वभाव के अध्यवसायी व्यक्ति थे। आपके यहाँ कपड़े का व्यवसाय होता था, किन्तु आप व्यवसाय मे न फँसकर साहित्य-सेवा मे ही आजीवन लगे रहे। आप पूर्णतः राष्ट्रीय विचार-धारा से परिपूर्ण व्यक्तित्व वाले साहित्यकार थे। आपके द्वारा लिखित 'गाधी गीता' नामक रचना के सम्बन्ध मे प्रख्यात पत्रकार ठाकुर श्रीनाथ सिंह ने जो विचार प्रकट किये है उनसे आपके व्यक्तित्व तथा कृतित्व का अच्छा परिचय मिलता है। उन्होंने लिखा था—"श्री दुर्गाप्रसाद रस्तोगी से व्यक्तिगत परिचय का सौभाग्य मुझे प्राप्त है। वे हिन्दी के अच्छे लेखक और कवि हैं। इनके विचार राष्ट्रीय है और इनकी रचनाओ मे सामयिकता की छाप रहती है। उनकी यह नवीन कृति—'गाधी गीता' देश-काल के अनुरूप एक सुन्दर रचना है और हिन्दी कविता के इतिहास मे यह एक नवीन पृष्ठ जोड़ती है।"

आपने श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित की जीवनी पत्रो के रूप मे लिखी थी। 'युग वीणा', 'विरह गीत', 'प्रगति गीत', 'समर गीत', 'कसक', 'सप्त दान', 'राजर्षि महिमा', 'निद्रा' और 'अखण्ड विश्व' आदि आपकी काव्य-कृतियाँ है। आपकी अन्य रचनाओ मे 'शान्तिदूत लक्ष्मण' (नाटक), 'काला साँप' (कहानी सग्रह) तथा 'तपवधान' (उपन्यास) के नाम भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपकी 'समर-गीत' नामक कृति के सम्बन्ध मे वीर सावरकर के द्वारा प्रकट किए गए विचार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है—"मानव मे वीरभाव को प्रोत्साहित कर आपकी लेखनी ने हमारे साहित्य की उल्लेखनीय सेवा की है।



आपका निधन 11 अगस्त सन् 1979 को हुआ था।

श्री दुर्गाशंकर कृपाशंकर मेहता

श्री मेहता का जन्म मध्य प्रदेश के होशगाबाद नामक नगर मे 7 अप्रैल सन् 1887 को हुआ था। जबलपुर व इलाहाबाद से उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने सन 1909 से सिवनी मे वकालत प्रारम्भ कर दी थी। जब सन् 1921 मे

महात्मा गांधी का 'असहयोग आन्दोलन' प्रारम्भ हुआ तब आपने वकालत छोड़कर सक्रिय राजनीति को पूर्णत अपना लिया था। आपने क्रमश सन् 1923 के झण्डा सत्याग्रह, सन् 1930 के जंगल सत्याग्रह, सन् 1940 के व्यक्तिगत सत्याग्रह और सन् 1942 के 'भारत छोडो आन्दोलन' मे भी सक्रिय रूप से भाग लेकर अनेक बार जेल की विषम यातनाएँ सही थीं।

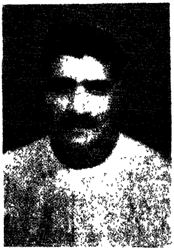
सन् 1936 मे जब सारे देश मे काग्रेस द्वारा लोकप्रिय मन्त्री-मण्डलों की स्थापना की गई थी तब आप प्रान्तीय धारा सभा के निर्वाचन मे विधिवत् सफल होकर मध्यप्रदेश के मन्त्री-मण्डल के भी प्रमुख सदस्य रहे थे। जिन दिनो आप सन् 1942 के भारत छोडो आन्दोलन के सिलसिले मे बेलोर जेल मे थे तब वहाँ पर आपने 'अनबुझी प्यास' नामक एक यथार्थवादी उपन्यास भी लिखा था। इस उपन्यास की भूमिका मे मध्यप्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री पण्डित द्वारकाप्रसाद मिश्र ने जो विचार प्रकट किये थे उनसे श्री मेहता की लेखन-पटुता का परिचय मिलता है। उन्होंने लिखा था—"अनबुझी प्यास' मे मुझे सर्वत्र मेहता जी का व्यक्तित्व दीखता है। सुसस्कृत समाज मे सदा विचरण करने वाले ही नही उसमे विशेष आनन्द लेने वाले होने पर भी ग्रामीण जीवन से आपका अत्यधिक सम्पर्क रहा है। बुन्देलखण्डी ग्रामीण जीवन से मेहता जी सुपरिचित है और उसी का चित्रण इस उपन्यास मे हुआ है। आपके पात्रो की भाषा मे तो बुन्देली का लहजा है ही, अत आपकी भाषा पर भी उसका प्रभाव है।" इस उपन्यास मे मूलत सन् 1930-32 के राजनीतिक आन्दोलनो का सजीव चित्रण भी आद्यन्त देखने को मिलता है। इन आन्दोलनों का प्रभाव भारतीय मानस और ग्रामीण जन-जीवन मे जिस सीमा तक हुआ था, इसका सही दस्तावेज मेहता जी ने इस उपन्यास मे प्रस्तुत किया है।



आपका निधन सन् 1961 मे जबलपुर मे हुआ था।

डॉ० दुर्गाशंकर नागर

डॉ० नागर का जन्म मध्य प्रदेश के मालवा अञ्चल के शाजापुर नामक स्थान मे सन् 1894 मे हुआ था। आपका मानसिक चिकित्सा के क्षेत्र मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान था। आपने अनेक वर्ष तक जहाँ उज्जैन मे 'आध्यात्मिक मण्डल' की स्थापना करके उसके माध्यम से मानसिक चिकित्सा को लोकप्रिय बनाने की दिशा मे उल्लेखनीय कार्य किया था वहाँ आपने इस पद्धति का व्यापक परिचय देने की दृष्टि से 'कल्प-वृक्ष' नामक एक मासिक पत्र का भी सन् 1922 मे अनेक वर्ष तक सफलतापूर्वक सम्पादन एव प्रकाशन किया था।



आप जहाँ उच्चकोटि के चिकित्सक एव सफल पत्रकार थे वहाँ आपने अपने चिकित्सा-सम्बन्धी दीर्घकालीन अनुभवो को लिपिबद्ध करके प्रकाशित भी किया था। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'प्राण चिकित्सा', 'प्रार्थना कल्पद्रुम', 'ध्यान से आत्म चिकित्सा', 'उपासना और हवन विधि', तथा 'स्वर्ण सूक्त' आदि प्रमुख है। आपकी यह निश्चित मान्यता थी कि मनुष्य अपनी मानसिक प्रवृत्तियो के आधार पर बडे-से-बडे असाध्य रोगो का उपचार कर सकता है। दृढ इच्छा शक्ति तथा अपूर्व साधना के बल पर वह कठिन-से-कठिन रोगो मे छुटकारा प्राप्त कर सकता है।

आपने तपोनिष्ठ पण्डित शिवदत्त की प्रेरणा पर 'आध्यात्मिक साधनालय' की स्थापना करके उसके माध्यम से देश के अनेक असाध्य रोगियों का उपचार करने का प्रशसनीय कार्य किया था। आपने अपनी इस चिकित्सा-पद्धति को आध्यात्मिक चिकित्सा, मानसिक चिकित्सा, मर्दन चिकित्सा, सूर्य किरण चिकित्सा मिट्टी और वाष्प चिकि-सा तथा उपवास चिकित्सा आदि अनेक रूपो मे विकसित किया था। आपकी यह निश्चित मान्यता थी कि कल्प, आसन, प्राणायाम, नेती, धोती आदि अनेक पद्धतियो की चिकित्सा के साथ-साथ प्रार्थना के बल पर भी अनेक असाध्य रोग दूर किये जा सकते है।

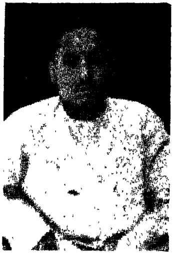
धीरे-धीरे डॉ० नागर की चिकित्सा-पद्धति इतनी लोकप्रिय हो गई थी कि आपकी 'आध्यात्मिक मण्डल' नामक सस्था की देश के कोने-कोने मे अनेक शाखाएँ भी स्थापित हो गई थी। प्राणायाम और प्रार्थना के बल पर आपकी इस सस्था ने देश के बहुत से अध्यात्म-प्रेमियो की जीवन-पद्धति को ही बदल दिया था।

आपका निधन 24 नवम्बर सन् 1951 को हुआ था।

श्री दुर्गाशंकर शुक्ल 'रसिकेश'

श्री शुक्लजी का जन्म उत्तर प्रदेश के पीलीभीत नामक नगर मे सन् 1900 मे हुआ था। आपके पिता श्री गुमानीलाल शुक्ल सस्कृत के अद्वितीय विद्वान् और कुशल चिकित्सक थे। पिता के सस्कारो के अनुरूप श्री शुक्लजी भी सस्कृत भाषा के अद्वितीय ज्ञाता होने के साथ-साथ हिन्दी के सुलेखक भी थे। आप 'शक्ति' के उपासक थे और आपने इस उद्देश्य से शक्ति के साधकों के हित को दृष्टि मे रखकर 'परिवस्या रहस्य' नामक सस्कृत ग्रन्थ का अनुवाद भी प्रस्तुत किया था। आपकी शक्ति-सम्बन्धी रचनाएँ जहाँ प्रयाग से श्री देवीदत्त शुक्ल द्वारा सम्पादित 'चण्डी' नामक पत्रिका मे प्रकाशित हुआ करती थी वहाँ अन्य लेख तथा रचनाएँ हिन्दी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे छपती थी।

आपकी शक्ति-साधना से प्रभावित होकर आपको जहाँ 'कुल पराशर' की सम्मानोपाधि प्रदान की गई थी वहाँ आपने 'तन्त्र शास्त्र' का जन-साधारण मे प्रचार करने की दृष्टि से 'श्री शारदा तिलक' नामक सस्कृत ग्रन्थ का हिन्दी-अनुवाद भी प्रस्तुत किया था।



आपके द्वारा किया गया 'सौन्दर्य लहरी' का पद्यानुवाद बहुत ही सरस तथा प्रभावोत्पादक था। साहित्यिक क्षेत्र मे अभिनन्दनीय कार्य करने के साथ-साथ आपने राष्ट्रीय आन्दोलन मे भी बढ-चढकर भाग लिया था और अनेक बार जेल-यात्राएँ की थी। उन दिनो के आपके जेल के साथियो मे श्री चण्डीप्रसाद बी० ए० 'हृदयेश' तथा पण्डित कन्हैयालाल त्रिवेदी प्रमुख थे। आपने सन् 1938 मे 'जागरण' तथा सन् 1947 मे 'देशभक्त' नामक पत्र भी प्रकाशित किए थे।

आपकी शक्ति की उपासना का इससे बडा प्रमाण और क्या हो सकता है कि जब सन् 1950 मे आप 'उधरनपुर (हरदोई)' मे प्रात. पूजा मे सलग्न थे तब ही ब्रह्माण्ड फट जाने के कारण आपका देहावसान हुआ था।

ठाकुर दुर्गासिंह 'आनन्द'

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के बिसवाँ कस्बे के समीपवर्ती दिवकोलिया नामक ग्राम मे सन् 1845 के हुआ था। आपके पितामह ठाकुर जिरावनसिंह तथा पिता ठाकुर रणजीतसिंह अत्यन्त धर्म-प्रवण और साहित्य-प्रेमी थे। अपने पूर्वजो के इन संस्कारो के कारण ही आप साहित्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए थे। जिन दिनों आपने इस क्षेत्र मे

पदार्पण किया था तब रीतिकाल का उत्तरार्द्ध था। फलस्वरूप आपकी रचनाओ मे उस समय जैसा उक्ति-वैचित्र्य और चमत्कार-बाहुल्य ही अधिक मात्रा मे दृष्टिगत होना है।



आप जहाँ नायिका-भेद और रूप-वर्णन की रचनाएँ करने मे निष्णात थे वहाँ रीतिकालीन अलकारो की अवतारणा करने मे सर्वथा दक्ष थे। आपकी रचनाओ मे उपमा, उत्प्रेक्षा एव अलकारो की छटा दखते ही वनती है। एक उदाहरण देखिए :

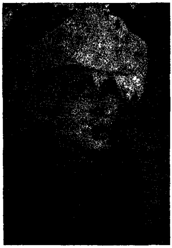
लट री लट पीठि पै यों दरमै,
जनु कचन खम्भ पै नाग घिर्यो।
मुख पै छवि घूँघट की सरमै,
जस पूनो निसाकर मेघ घिर्यो॥
मुसकानि अनन्द जी मन्द लसै,
कछु दाडिम ज्ञान प्रवाह चिर्यो।
नहि पगनि गोम है कज कलो,
जुग सम्पुट मध्य समुद्र गिर्यो॥

आपकी 'आनन्द सिन्धु' नामक कृति में 288 छन्द समाविष्ट है। यह सकलन आपके वशधरो ने सन् 1932 मे किया था। आपकी 'प्रह्लाद चरित्र' नामक कृति भी अत्यन्त उल्लेखनीय है। इस कृति मे आपका सक्षिप्त जीवन-वृत्त भी प्रस्तुत किया गया है।

आपका निधन सन् 1929 मे हुआ था।

ठाकुर दुलारेसिंह 'वीर'

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के फतहपुर जनपद की बिन्दकी तहसील के दीघ नामक ग्राम मे 15 जून सन् 1894 को हुआ था। आप आजीवन अविवाहित रहे थे। अपने दृढ संयम, ब्रह्मचर्य और चारित्रिक ओज की विशिष्ट प्रवृत्ति के कारण आप प्राय. वीर रस की रचनाएँ ही किया करते थे।



आप जहाँ मानव-समाज मे वीरता की भावनाएँ उद्वेलित करने के समर्थक थे वहाँ देश की नई पीढी को भी ओज तथा तेज का पाठ पढाने की अद्भुत क्षमता रखते थे। यही कारण है कि आपने कभी शृगार रस की रचनाएँ नही लिखी। वीर रस को स्थायी बनाने के उद्देश्य से आपने 'वीर गर्जना' नामक काव्य की रचना की थी। आपने युवको मे गोरा-बादल, आल्हा-ऊदल तथा मन्ना झाला बनने की प्रेरणात्मक भावनाएँ ही भरी थी। आपकी यह पक्तियाँ इसकी ज्वलन्त साक्षी है

तुम राजपूत हो माता का,
अपमान देखते सुनते हो॥
तुम वीर पुरुष हो, दुश्मन की,
हुकार-गर्जना सुनते हो॥
तूफान तुम्हारे हाथो मे,
भूचाल तुम्हारे पैरों मे।
है आग जल रही सीने मे,
अगार बरसते नैनों मे॥

आपकी ऐसी रचनाएँ 'बाल गीत' नाम से सन् 1977 मे प्रकाशित हुई थी। आपकी अन्य प्रकाशित कृतियो मे 'अद्भुत बलिदान' (1966), 'वीर गर्जना' (1972) तथा 'ललकार' (1981) के नाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आपकी 'कृष्ण दर्शन', 'विचित्रा' तथा 'मेरे जीवन गीत' नामक कृतियाँ अभी अप्रकाशित है।

आपका निधन 10 अप्रैल सन् 1979 को हुआ था।

श्री दुष्यन्तकुमार

श्री दुष्यन्त का जन्म उत्तर प्रदेश के बिजनौर जनपद के राजपुर नवादा नामक ग्राम के एक कृषक-परिवार में 1 सितम्बर सन् 1933 को हुआ था। आपकी शिक्षा अपने गाँव के अतिरिक्त चन्दौसी तथा इलाहाबाद मे हुई थी। अपने छात्र-जीवन से ही आपको कविता-लेखन का चस्का लग गया था। अपने माता-पिता के द्वारा रखा गया आपका असली नाम 'दुष्यन्त-नारायण' था, जो आज हिन्दी-पाठकों के लिए केवल 'दुष्यन्तकुमार' ही हो गया है। पहले आप अपने दुष्यन्त-कुमार नाम के साथ 'परदेसी' उपनाम को जोडा करते थे। बाद मे 'परदेसी' के स्थान पर 'त्यागी' शब्द रख लिया था, और फिर केवल 'दुष्यन्त-कुमार' ही हो गए थे। नाम के ये प्रयोग आपने उसी प्रकार किये थे जिस प्रकार आपने कविता मे अपने को बदला था। आपने सर्वप्रथम रूमानी अन्दाज की कविताएँ लिखी थी और फिर 'परिमल' की गोष्ठियो का रग आप पर चढा, जो बाद मे धीरे-धीरे नई कविता की राह से होता हुआ 'हिन्दी गजल' के रहनुमा के रूप मे हिन्दी-पाठकों के सामने प्रकट हुआ था।



आपके साहित्यिक जीवन का विकास उन दिनो मे हुआ था जब कि आप प्रयाग विश्वविद्यालय की एम० ए० कक्षा के छात्र थे और कमलेश्वर तथा मार्कण्डेय-जैसे उठते-उभरते हुए साहित्यकार आपके अत्यन्त जिगरी दोस्त थे। आपके साहित्यिक व्यक्तित्व के विकास मे प्रयाग के उन दिनो के ख्यातिलब्ध पत्रकार तथा साहित्यकार श्री श्रीकृष्णदास का भी बहुत बडा हाथ था। दास बाबू ही अकेले उन दिनों ऐसे लोकप्रिय व्यक्ति थे, जिनके इर्द-गिर्द नये लेखको की उक्त 'त्रिमूर्ति'-जैसे न जाने कितने युवक मँडराया करते थे। 'परिमल' की गोष्ठियों और 'नये पत्ते'-जैसे पत्र के माध्यम से दुष्यन्त ने जो दिशा ग्रहण की थी यह उसका ही प्रभाव था कि थोड़े ही समय मे आपने उस पीढ़ी के लेखकों मे अपनी सर्वथा नई पहचान बना ली थी।

कुछ वर्ष तक आकाशवाणी के विभिन्न स्टेशनो के हिन्दी-कार्यक्रमों मे उत्तरदायित्वपूर्ण पद सँभालने के साथ-साथ आप बाद मे मध्य प्रदेश के भाषा विभाग से जुड गए थे और वहाँ पर सहायक निदेशक के रूप में अनेक वर्ष तक कार्य किया था। मूलत. तो आप कवि थे, किन्तु बाद मे उपन्यास तथा नाटक की विधा मे भी आपने अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। आपका पहला काव्य-सकलन 'सूर्य का स्वागत' था, जिसने हिन्दी के तत्कालीन कवियो मे दुष्यन्त को बिलकुल अलग खडा कर दिया था। आपके 'छोटे-छोटे सवाल', 'आँगन मे एक वृक्ष' तथा 'दुहरी जिन्दगी' नामक उपन्यास भी आपके कथाकार रूप का सही प्रतिनिधित्व करते है। इसी प्रकार 'एक कण्ठ विषपायी', 'मन के कोण' तथा 'मसीहा मर गया' (सभी नाटक) आपकी रूपक-रचना की प्रतिभा के उत्कृष्ट नमूने है। 'आवाजो के घेरे' आपका दूसरा काव्य-सकलन था। इसमे दुष्यन्त का कवि रूप और भी परिपक्व रूप मे हिन्दी पाठको के समक्ष प्रकट हुआ था। इसी प्रकार 'जलते हुए वन का वसन्त' भी आपका एक काव्य-सकलन था।

आपने अपनी रचनाधर्मिता का सही और उत्कृष्ट रूप हिन्दी मे गजल कहकर दिया था। वास्तव मे गजल के क्षेत्र मे भाषा, शैली और कथ्य के जितने विविध प्रयोग दुष्यन्त ने किये थे उतने कदाचित् आपसे पूर्ववर्ती किसी अन्य रचनाकार ने नही किये थे। आपका 'साये मे धूप' नामक अकेला गजल-सकलन ही आपकी काव्य प्रतिभा का ज्वलन्त साक्ष्य प्रस्तुत करता है। आपकी कला की स्पष्टवादिता किस रूप मे प्रकट होती है उसका प्रमाण आपकी गजलो की कुछ ये पक्तियाँ हैं :

अब तो इस तालाब का पानी बदल दो,
ये कमल के फूल कुम्हलाने लगे हैं।

यहाँ तो सिर्फ गूँगे और बहरे लोग बसते है,
खुदा जाने यहाँ पर किस तरह जलसा हुआ होगा।

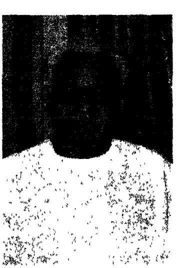
कहाँ तो तय था चिराग हर घर के लिए,
कहाँ चिराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।

अपनी गजलों की रचना-प्रक्रिया के विषय मे आपने जो भाव व्यक्त किये थे वे आज भी पूर्णतः सटीक-से लगते हैं। आपने लिखा था—"मै स्वीकार करता हूँ कि गजल को किसी भूमिका की जरूरत नही होती। हिन्दी की आधुनिक कविता, जिसे पढने के बाद एक धुंधला-सा चित्र उभरता है और जिसके बारे मे पाठक निश्चयपूर्वक नही कह सकता कि यह वही चित्र है जिसे कवि उभारना चाहता है, मेरी कविता नही है। मैं प्रतिबद्ध कवि हूँ...यह प्रतिबद्धता किसी पार्टी से नही, आज के मनुष्य से है, और मैं जिस आदमी के लिए लिखता हूँ, यह भी चाहता हूँ कि वह आदमी उसे पढ़े और समझे।"

आपका निधन 30 दिसम्बर सन् 1975 को भोपाल मे हुआ था।

श्री देवकीनन्दन गोयल

श्री गोयल का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर के डालमपाड़ा मोहल्ले मे 10 नवम्बर सन् 1913 को हुआ था। मेरठ कालेज से बी०एस-सी० करने के उपरान्त आप सन् 1935 मे भारत सरकार के केन्द्रीय कार्यालय मे सेवा-रत हो गए थे। अपने सेवा-काल मे आपने प्रशासनिक कार्यों मे हिन्दी का प्रयोग करने की दिशा मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। आपके मन मे प्रारम्भ से ही यह भावना घर कर गई थी कि प्रशासनिक कार्यों मे जो स्थान अँग्रेजी को



मिला हुआ है वह हिन्दी को मिलना चाहिए। अपनी इसी भावना को मूर्त्त रूप देने की दृष्टि से आपने अपने कुछ मित्रो के सहयोग से सन् 1960 मे 'केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद्' की स्थापना करके उसके माध्यम से सरकारी काम-काज मे हिन्दी के प्रयोग के लिए उचित वातावरण बनाया था।

यद्यपि उन दिनो इस परिषद् का अध्यक्ष या उपाध्यक्ष सरकार के मन्त्रालय का कोई आई० सी० एस० अथवा 'आई० ए० एस०' सचिव ही हुआ करता था, परन्तु गोयल जी ने लगभग एक दशक तक परिषद् के उपाध्यक्ष पद को सुशोभित किया था। अपने इस कार्य-काल में आपने परिषद् की विभिन्न प्रवृत्तियो के माध्यम से हिन्दी को राज-काज मे प्रयुक्त करने की दिशा मे अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किया था। जब दिल्ली मे 'प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की स्थापना हुई तब आप उससे भी जुड गए और कई वर्ष तक उसमे अनेकों पदो पर रहकर आपने उल्लेखनीय सेवा की। आप उसके 'आजीवन सदस्य' भी रहे थे। सरकारी फाइलो मे 'मिस्टर','मिसेज' और 'मिस' के स्थान पर सर्वप्रथम 'श्री', 'श्रीमती' और 'कुमारी' शब्दो का प्रयोग आपने उन दिनो प्रारम्भ किया था जब सरदार वल्लभभाई पटेल 'गृह मन्त्री' थे। इस प्रस्ताव पर उन्होने ही स्वीकृति प्रदान की थी।

यह आप-जैसे महानुभावो की कर्मठता और ध्येय-निष्ठा का ही सुपरिणाम है कि 'केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद्' आज एक सुदृढ सस्था के रूप मे भारत सरकार के विभिन्न मन्त्रालयो मे हिन्दी-सम्बन्धी कार्य को सफल बना रही है। अपने सेवा के इन दिनों मे गोयल जी को हिन्दी की प्रतिष्ठा के लिए अनेक सघर्षों का भी सामना करना पडा था, किन्तु आपने हिम्मत नही हारी थी। आज भारत सरकार के विभिन्न कार्यालयो मे हिन्दी का जो प्रचलन हो सका है, उसको लोकप्रिय बनाने मे आप-जैसे महानुभावो का बहुत बडा योगदान रहा है। आप खाद्य-मन्त्रालय के अवर सचिव के रूप मे सेवा-निवृत्त हुए थे।

आपका निधन 19 सितम्बर सन् 1981 को नई दिल्ली मे हुआ था।

श्री देवकीनन्दन जोशी 'विकल'

श्री विकल का जन्म उत्तर प्रदेश के अलमोड़ा नगर के समीप-

वर्ती गल्ली नामक ग्राम मे सन् 1930 मे हुआ था। आपके पिता श्री लीलाधर जोशी ठेकेदारी का कार्य करते थे, किन्तु जब इस कार्य मे उन्हे घाटा हो गया तब आपके परिवार की आर्थिक स्थिति अत्यन्त विपन्न हो गई थी। फलस्वरूप आप अपना अध्ययन बीच मे ही छोडकर केवल 14 वर्ष की आयु मे ही घर की सहायता करने की दृष्टि से दिल्ली आ गए और यहाँ पर सर्वप्रथम अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी मे सेवा-रत हो गए। अपने इस कार्य-काल मे आपने अपने स्वाध्याय को नही छोडा और धीरे-धीरे वह दिन भी आ गया जब आप कविता लिखने लगे और अपने नाम के साथ 'विकल' उपनाम भी जोड लिया।



धीरे-धीरे आपकी रचनाएँ हिन्दी की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे भी छपने लगी और दिल्ली के कवि-समाज मे भी आपका स्थान बनता चला गया। इस बीच आपको 'राष्ट्रीय गांधी सग्रहालय' के 'वाचनालय' मे सहायक का कार्य मिल गया और आपका कार्य भली-भाँति चलने लगा। आपकी कविताओ के 'अश्रु भागिनी' तथा 'प्रेरणा' नामक सकलन है और आपने महात्मा गाधी की जन्म-शताब्दी के अवसर पर 'गाए युग तव गाथा' नामक एक खण्ड काव्य भी लिखा था। आपके इस काव्य की देश के अनेक मनीषियो तथा साहित्यकारो ने मुक्तकण्ठ से प्रशसा की थी।

आपका निधन 17 नवम्बर सन् 1977 को हुआ था।

श्री देवकीनन्दन शर्मा

श्री शर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के बिजनौर जनपद के जलालाबाद नामक ग्राम मे सन् 1899 मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा यद्यपि पहले उर्दू मे हुई थी किन्तु बाद मे छठी कक्षा से आपने उर्दू को छोडकर हिन्दी और संस्कृत विषय ले लिए थे। आपने नजीबाबाद के स्कूल से आठवी कक्षा उत्तीर्ण करके देहरादून के डी० ए० वी० कालेज से मैट्रिक की परीक्षा दी थी। उन दिनों प्रख्यात शिक्षा-शास्त्री श्री लक्ष्मणप्रसाद इस कालेज के प्राचार्य थे। आपका सामाजिक उत्कर्ष की प्रवृत्तियो की ओर कितना झुकाव था इसका ज्वलन्त प्रमाण यही है कि अपनी छात्रावस्था मे ही जहाँ आपने 'वेदान्त अध्ययन मण्डल' की स्थापना की थी, वहाँ आप 'आर्य कुमार सभा' के मन्त्री भी रहे थे। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि महात्मा गांधी ने भी आर्य कुमार सभा के इस पुस्तकालय की प्रशसा मुक्त-कण्ठ मे की थी।

मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप आगे की पढाई जारी रखने की दृष्टि से आगरा के 'सैण्ट जान्स कालेज' मे प्रविष्ट हो गए थे। वहाँ से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने कानपुर के डी० ए० वी० कालेज से एम० ए० किया था। जिन दिनो आप कानपुर मे पढा करते थे तब आपके सहपाठियो मे पण्डित अयोध्यानाथ शर्मा और श्री रामकृष्ण शुक्ल 'शिलीमुख' अन्यतम थे। यहाँ यह बात भी विशेष रूप से उल्लेख्य है कि जब महात्मा हसराज के कर कमलो द्वारा डी०ए०वी० कालेज, कानपुर का उद्घाटन हुआ था तब आपने उस कालेज के प्रथम छात्र के रूप मे अपना नाम लिखाया था। कालेज के प्रथम आचार्य प्रख्यात दार्शनिक प्रो० दीवानचन्द बने थे।



डी० ए० वी० कालेज, कानपुर से एम० ए० करने के पश्चात आपने सन् 1922 मे सैण्ट जान्स कालेज, आगरा से

एल-एल० बी० की परीक्षा देने के लिए जब प्रवेश लिया तब वहाँ आपने 'ट्यूटर' के रूप मे कार्य प्रारम्भ किया था। आप उन दिनों वहाँ पर बी० ए० के छात्रों को अँग्रेजी पढाया करते थे। वहाँ से एल-एल० बी० की परीक्षा देने के उपरांत आप खुर्जा के एन० आर० ई० सी० कालेज मे प्राध्यापक होकर आ गए और यहाँ पर आपने ससदीय प्रणाली पर 'सभा विज्ञान और वक्तृता' नामक एक पुस्तक लिखी। इसकी भूमिका सयुक्त प्रान्तीय लेजिलेटिव कौसिल के तत्कालीन अध्यक्ष सर सीताराम ने लिखी थी और सन् 1926 मे इसका प्रकाशन 'आनन्द प्रकाशनालय खुर्जा' की ओर से हुआ था। हिन्दी मे ससदीय प्रणाली के सम्बन्ध मे कदाचित् यह पहली ही पुस्तक थी। यह प्रसन्नता की बात है कि उन दिनो इस पुस्तक का देश मे सर्वत्र अच्छा स्वागत हुआ था।

इसके उपरान्त आप सन् 1927 मे अजमेर के गवर्नमेण्ट कालेज मे सहायक प्रोफेसर नियुक्त हो गए और फिर सन् 1931 मे आप वही पर 'तर्क शास्त्र' और 'दर्शन' विषय के अध्यापक का कार्य करने लगे। अपने इस शिक्षकीय जीवन के दिनो मे आप जहाँ सन् 1951 से अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक इस कालेज के प्राचार्य रहे वहाँ सन् 1950 मे कुछ समय के लिए आपने अजमेर राज्य के सहायक शिक्षा निदेशक तथा निदेशक का उत्तरदायित्व भी सँभाला था। अपने इस स्वल्प से कार्य-काल मे आपने जहाँ शिक्षा विभाग के लिए लगभग एक लाख पुस्तके नि शुल्क प्राप्त की थी वहाँ लगभग 10 हजार रुपए की राशि भी एकत्र की थी।

यह आपके कर्ममय जीवन की एक विशेषता ही थी कि अपने शैक्षणिक दायित्वों से समय निकालकर आप समाज-सेवा की अन्य प्रवृत्तियो मे भी निरन्तर सलग्न रहते थे। आप जहाँ अजमेर की प्रख्यात कन्या-शिक्षण-सस्था 'सावित्री गर्ल्स स्कूल' (अब कालेज) के कई वर्ष तक मन्त्री रहे थे वहाँ आर्यसमाज अजमेर के अन्तर्गत सचालित 'अनाथालय' के अधिष्ठाता का कार्य भी आपने अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। आगरा विश्वविद्यालय की सीनेट के सदस्य रहने के अतिरिक्त आप राजस्थान की अनेक शिक्षा-सस्थाओ से भी जुडे रहे थे। समाज-सुधार के प्रति आपके मानस मे कितनी लगन थी इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यही है कि आपने कई वर्ष तक 'विप्र' नामक मासिक पत्र का सचालन तथा सम्पादन करके ब्राह्मण समाज मे प्रचलित अनेक कुरीतियों के निवारण का आन्दोलन भी चलाया था। आपने ब्राह्मण समाज मे 'विधवा विवाह' का प्रचलन करने की दिशा मे जहाँ अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किया था वहाँ आपने 'राजस्थान ब्राह्मण सभा' के जयपुर तथा बहरोड (अलवर) अधिवेशनो की अध्यक्षता भी की थी। राजस्थान के विभिन्न महाविद्यालयो मे 'सोशल सर्विस लीग' की स्थापना कराने के साथ-साथ आपने राजस्थान मे सन् 1943 मे पहले-पहल 'महिला हॉकी प्रतियोगिता' का आयोजन भी किया था। शिक्षा-क्षेत्र की ऐसी कोई सस्था तथा प्रवृत्ति नही थी, जिससे आपका निकट का सम्बन्ध न रहा हो। जब आप अजमेर की नगरपालिका (अब परिषद्) के मानद सदस्य मनोनीत हुए थे तब भी आपने अजमेर की जनता की उल्लेखनीय सेवा की थी।

ससदीय विज्ञान के विशेषज्ञ के रूप मे तो आप अपनी 'सभा विज्ञान तथा वक्तृता' नामक पुस्तक के प्रकाशन से ही प्रतिष्ठित हो गए थे, किन्तु उसके बाद भी आपने अपनी लेखनी को विराम नही दिया और अपने व्यस्त जीवन से समय निकाल कर आपने 'आलेखन कला' तथा 'नवीन रचना प्रणाली' नामक दो पुस्तके और लिखी थी।

आपका निधन सन् 1952 मे हुआ था।

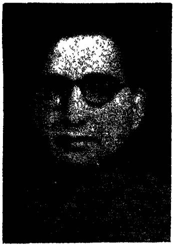
श्री देवचन्द्र नारंग

श्री नारग का जन्म अविभाजित पजाब के कमालिया नामक स्थान मे 25 दिसम्बर सन् 1905 को हुआ था। आप प्रख्यात इतिहासवेत्ता श्री जयचन्द्र विद्यालकार के छोटे भाई थे। आपसे बडे और श्री जयचन्द्र जी से छोटे श्री धर्मचन्द्र थे, उनसे छोटे श्री देवचन्द्र नारग है, जो आजकल प्रयाग मे है।

श्री जयचन्द्र विद्यालकार जब गुरुकुल काँगडी से विधिवत् स्नातक होकर लाला लाजपतराय के 'कौमी महाविद्यालय' लाहौर मे प्राध्यापक हुए तब उन्होने अपने इन तीनो भाइयो को उस विद्यालय मे अध्ययनार्थ प्रविष्ट करा दिया था। जब इस महाविद्यालय से श्री धर्मचन्द्र जी ने बी० ए० करने के उपरान्त कुछ कार्य करने का विचार किया तब सन् 1924 मे अपने ज्येष्ठ भ्राता श्री जयचन्द्र विद्यालकार की प्रेरणा पर दो सौ रुपये ऋण लेकर लाहौर

में 'हिन्दी भवन' नामक एक प्रकाशन-संस्था की स्थापना की थी।

श्री देवचन्द्र जी ने भी हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'विशारद' की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त अपने बडे भाई धर्मचन्द्र जी के साथ ही 'हिन्दी भवन' मे कार्य प्रारम्भ कर दिया था। आपने दिन-रात एक करके हिन्दी-भवन को लोकप्रियता के चरम शिखर पर पहुँचा दिया था। धर्मचन्द्र जी जहाँ 'भवन' की आन्तरिक व्यवस्था की देख-भाल करते थे वहाँ देश के प्रमुख साहित्यकारो तथा मनीषियों से सम्पर्क करने का कार्य श्री देवचन्द्र जी का था। यह आपके ही परिश्रम का सुपरिणाम था कि हिन्दी भवन की ओर से पुस्तको के प्रकाशन के अलावा उन दिनो 'भारती' नामक एक साहित्यिक मासिक पत्रिका का प्रकाशन भी किया गया था।



इसका सम्पादन श्री जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द' और श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी' को सौपा गया था। यहाँ यह भी विशेष उल्लेखनीय तथ्य है कि प्रेमी जी इस पत्रिका के सम्पादन के सिलसिले मे ही लाहौर गए थे और फिर वही स्थायी रूप से रहने लगे थे। श्री सन्तराम 'विचित्र' के सम्पादन मे हिन्दी भवन से 'कमल' नामक जो बालोपयोगी पत्र प्रकाशित किया गया था, उसकी परिकल्पना भी श्री देवचन्द्र नारग ने ही की थी।

हिन्दी भवन की स्थापना जिन दिनो हुई थी तब पजाब विश्वविद्यालय की ओर से हिन्दी-रत्न, हिन्दी-भूषण तथा हिन्दी प्रभाकर की परीक्षाएँ हुआ करती थीं। श्री देवचन्द्र जी ने इस परीक्षा के पाठ्यक्रम के लिए हिन्दी के अनेक वरिष्ठ साहित्यकारों की कृतियाँ प्राप्त करके 'हिन्दी भवन' की ओर से प्रकाशित की थी। आप स्वय भी अच्छे लेखक थे और आपकी कई पुस्तकें छपी थी।

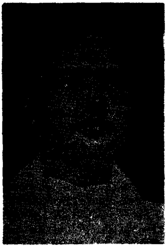
जब सन् 1942 में अगस्त का 'भारत छोडो' आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तब श्री देवचन्द्र जी तथा आपके दोनों भाई धर्मचन्द्र नारंग और इन्द्रचन्द्र नारग भी उससे अछूते न बचे और पजाब सरकार द्वारा गिरफ्तार करके नजरबन्द कर दिए गए। आपके अग्रज श्री जयचन्द्र विद्यालकार पहले ही गिरफ्तार हो चुके थे। जब भारत का विभाजन हुआ तब 19 सितम्बर को श्री देवचन्द्र जी को लाहौर मे मुस्लिम आतताइयो ने छुरा घोंप दिया, जिसके परिणाम स्वरूप वहाँ के सर गगाराम अस्पताल मे 21 सितम्बर सन् 1947 को आपका प्राणान्त हो गया। आपकी सहधर्मिणी श्रीमती ब्रह्मवती नारग और सुपुत्र श्री शरद आजकल देहरादून मे रह रहे है।

श्री देवदास गांधी

आपका जन्म सन् 1900 मे दक्षिण अफ्रीका के जोहान्सबर्ग नामक नगर मे उस समय हुआ था जब आपके पिता महात्मा गाधी वहाँ की जनता पर अँग्रेज गोरो द्वारा किये जाने वाले अत्याचारो के विरुद्ध सघर्ष-रत थे। उन दिनो वे बैरिस्टर गांधी के नाम से जाने जाते थे। देवदास जी गाधी जी के सबसे छोटे और चौथे पुत्र थे। गाधी जी के निरीक्षण मे ही आपकी शिक्षा-दीक्षा होने के कारण आपकी जीवन-चर्या अत्यन्त नियमित रहती थी। दक्षिण अफ्रीका मे स्थापित उनके आश्रम मे ही आपके जीवन का प्रारम्भिक समय व्यतीत हुआ था। इसके उपरान्त जब सन् 1915 मे गाधी जी सपरिवार भारत लौटे तो आपको अपने बडे भाई रामदास गाधी के साथ महात्मा जी ने गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के 'शान्ति निकेतन' मे भेज दिया था। इसके उपरान्त आप कुछ समय तक एनी बेसेण्ट के आश्रम काशी मे रहे थे और अन्त मे आपको गाधी जी ने स्वामी श्रद्धानन्द के द्वारा सस्थापित 'गुरुकुल काँगडी' मे भेज दिया था।

जब महात्मा जी ने अहमदाबाद मे कोचरब आश्रम की स्थापना की तब उन्होने देवदास जी को भी वहाँ पर बुला लिया था। महात्मा जी ने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सन् 1918 मे हुए वार्षिक अधिवेशन की

अध्यक्षता के समय दक्षिण भारत मे हिन्दी-प्रचार करने का जो संकल्प लिया था उसकी सम्पूर्ति के लिए उन्होंने सर्वप्रथम हिन्दी-प्रचार के कार्यकर्ता के रूप में श्री देवदास को ही मद्रास भेजा था। मद्रास में आपके इस कार्य मे सहयोग देने के निमित्त अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की ओर से अगस्त सन् 1918 में स्वामी सत्यदेव परिव्राजक भी भेजे गए थे। मद्रास मे रहकर आपने हिन्दी-प्रचार का जो कार्य प्रारम्भ किया था उसीका परिवर्द्धित रूप 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' है। आपने वहाँ के 'गोखले हॉल' मे सर्वप्रथम मई सन् 1918 मे हिन्दी की कक्षाएँ प्रारम्भ की थी और उनका विधिवत् उद्घाटन श्रीमती एनी बेसेण्ट ने 'होमरूल लीग' के कार्यालय मे किया था। इस समारोह की अध्यक्षता डॉ० सी० पी० रामास्वामी अय्यर ने की थी।



यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि उन दिनो 'होमरूल लीग' के मुख पत्र दैनिक 'न्यू इण्डिया' में अँग्रेजी अनुवाद के साथ हिन्दी के लेख भी प्रकाशित हुआ करते थे। आपके इस कार्य मे उन दिनो श्री हरिहर शर्मा, श्री शिवराम शर्मा और बन्देमातरम् सुब्रह्मण्यम् ने भी सहयोग दिया था। उन दिनो आप इण्डियन प्रेस प्रयाग की ओर से प्रकाशित बालोपयोगी पुस्तको से ही पढाने का काम चलाया करते थे। बाद मे दक्षिण की जनता की आवश्यकता को दृष्टि मे रखकर आपकी ही प्रेरणा पर स्वामी सत्यदेव परिव्राजक ने 'हिन्दी की पहली पुस्तक' नाम से एक रीडर लिखी थी। इसके बाद आप पत्रकारिता के क्षेत्र मे चले गए। जब सन् 1920-21 मे श्री मोतीलाल नेहरू ने इलाहाबाद से 'इण्डिपेडेंट' नामक राष्ट्रवादी पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया तब महात्मा गाधी जी के कहने पर 21 वर्षीय देवदास जी उसमे चले गए। इसके बाद आप कुछ समय तक 'जामिया मिलिया' मे भी रहे थे। डॉ० जाकिर हुसैन ने महात्मा जी से विशेष अनुरोध करके आपको अपनी इस संस्था मे बुलाया था। यहाँ पर आप हिन्दी पढ़ाने के अतिरिक्त कताई भी सिखाया करते थे।

जब आप दक्षिण मे हिन्दी-प्रचार के कार्य में सलग्न थे तब चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य की कनिष्ठा कन्या लक्ष्मी से आपका परिचय हो गया था, जिसकी परिणति बाद मे 'प्रणय-परिणय' मे हुई थी। फलस्वरूप आपका विवाह सन् 1934 मे पूना मे लक्ष्मी जी से हो गया था। विवाहोपरान्त आप दिल्ली के 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में आ गए और इस सस्थान की व्यवस्था मे अपनी पूर्ण दक्षता का प्रयोग किया। आपने जहाँ अँग्रेजी 'हिन्दुस्तान टाइम्स' को लोकप्रियता के शिखर तक पहुँचाया था वहाँ हिन्दी के दैनिक व साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' और 'कादम्बिनी' (मासिक) के द्वारा हिन्दी की समृद्धि मे भी अपना अभूतपूर्व योगदान दिया था। आपके द्वारा हिन्दी मे लिखित 'बा, बापू और भाई' नामक पुस्तक विशेष महत्त्वपूर्ण है।

आपका निधन सन् 1957 मे हुआ था।

श्री देवदूत विद्यार्थी

श्री विद्यार्थी का जन्म बिहार प्रदेश के शाहाबाद जनपद के प्रबोधपुर डेरा नामक ग्राम मे सन् 1903 मे हुआ था। आपका वास्तविक नाम 'देवनारायण पाण्डेय' था और आप कविता तथा गद्य-गीतो मे कभी-कभी 'कुमार हृदय' नाम का प्रयोग भी किया करते थे। आप गाधी जी की पुकार पर बिहार से हिन्दी-प्रचार के निमित्त मद्रास गए थे और फिर वहाँ ऐसा सम्पर्क स्थापित हुआ कि दक्षिण के ही हो गए। आप सर्वप्रथम सन 1920 में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से वहाँ गए थे। मद्रास जाकर आपने जहाँ सभा की ओर से तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल मे हिन्दी-प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया वहाँ आप सन् 1922 मे 'तमिलनाडु हिन्दी प्रचारक विद्यालय' के प्रधानाध्यापक रहे थे। आपने वहाँ 'हिन्दी प्रचारक प्रशिक्षण महाविद्यालय' मे अध्यापन-कार्य भी किया था।

आप जहाँ अच्छे अध्यापक और हिन्दी-प्रचारक थे वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आपकी प्रतिभा का परिचय हिन्दी-जगत् को मिला था। आपने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के



मासिक मुखपत्र 'हिन्दी प्रचारक' का सम्पादन जहाँ अनेक वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था वहाँ आपने हिन्दी मे अनेक ग्रन्थो की रचना भी की थी। गद्य-गीत लिखने मे भी आप पूर्णत प्रवीण थे। आपके द्वारा लिखित गद्य-गीतो मे 'कुमार हृदय का उच्छ्वास' और 'तूणीर' नामक सकलन उल्लेखनीय है। उपन्यास तथा नाटक-लेखन मे भी आपने अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। आपकी ऐसी कृतियो मे 'कर्तव्य', 'दीवान बहादुर', 'हार या जीत', 'पाँच बेत' और 'भारतीय राष्ट्रीयता' के नाम अनन्य है। हिन्दी की पाठ्य-पुस्तको के निर्माण मे भी आपने अच्छे प्रयोग किए थे। 'हिन्दी की चौथी पोथी', 'हिन्दी अनुवादमाला' और 'हिन्दी बातचीत' आपकी ऐसी ही रचनाएँ है।

दक्षिण मे हिन्दी-सम्बन्धी कोई भी ऐसी गतिविधि नही है जिसमे आपका सक्रिय योगदान न रहा हो। आपने जहाँ एर्नाकुलम मे 'प्रथम केरल प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' का आयोजन सन् 1929 मे किया था वहाँ सन् 1933 मे 'केरल प्रान्तीय हिन्दी प्रचार सभा' की स्थापना भी की थी। आप सन् 1933 से सन् 1944 तक इस सभा के मन्त्री भी रहे थे। आपने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की सेवा उसका प्रचार मन्त्री तथा परीक्षा मन्त्री रहकर भी अनेक वर्ष तक की थी। आप जहाँ कई वर्ष तक अखिल भारतीय हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय, आगरा के सचालक रहे थे वहाँ सेवा-निवृत्ति के उपरान्त बिहार जाकर वहाँ की 'बालिका विद्यापीठ लखी सराय' के अवैतनिक प्रधानाचार्य भी रहे थे। आपने ब्रिटिश गयाना और दक्षिण अमरीका के बहुत से द्वीपो में भी हिन्दी-प्रचार का प्रशसनीय कार्य किया था।

आपका निधन सन् 1972 मे हुआ था।

श्री देवनाथ महाराज

श्री देवनाथ का जन्म सन् 1754 मे महाराष्ट्र के अमरावती जनपद के सुर्जी आँजनगाँव नामक स्थान मे हुआ था। आपके पिता श्री राजो पन्त जी निजाम हैदराबाद के राज्य मे एक कर्मचारी थे। श्री देवनाथ जी का बचपन का नाम 'देवराव' था। बचपन से ही आपको 'पहलवानी' करने का बहुत शौक था और इसी कारण आपकी शिक्षा-दीक्षा भी अधिक न हो सकी थी। आप बहुत मामूली पढे-लिखे थे और आपका झुकाव भक्ति मार्ग की ओर शुरू से ही हो गया था।

आपने नाथ सम्प्रदाय के श्री गोविन्दनाथ महाराज' से दीक्षा ली थी और उन्हीके साथ 'धुरार' नामक ग्राम मे रहने लगे थे। आपने हिन्दी मे बहुत-से भक्तिपदो की रचना की थी। आप ग्रामों मे 'घूम-घूमकर भगवान् का कीर्तन किया करते थे और आपने भारत के समस्त तीर्थो का भ्रमण किया था। श्री देवनाथ जी ने आँजनगाँव नामक स्थान मे अपना मठ स्थापित किया था।

आप अपने समय के अच्छे कवि और कीर्तनकार थे। हिन्दी-पदो के अतिरिक्त आपने मराठी भाषा मे भी अच्छे पद लिखे है। आपने सूरदास, कबीरदास, तुलसीदास और मीराबाई के पदो का बड़ी गम्भीरता से अध्ययन किया था। यही कारण है कि आपके द्वारा लिखित अनेक हिन्दी पदों मे सूर और तुलसी का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।आपके अधिकाश पदों मे सगुणोपासना-पद्धति के दर्शन होते है।

आपके पदों का उन दिनो देश मे सर्वत्र बहुत प्रचार था। अचलपुर के नवाब और नागपुर के भोंसले जहाँ आपके अनन्य अनुयायी थे वहाँ पूना के पेशवा और ग्वालियर के सिन्धिया भी आपको अपना गुरु मानते थे। आपकी भाषा और शैली का परिचय आपके इस पद से भली भाँति मिल जाता है

आज मोरी साँवरिया सों लागी प्रीत।
रैन दिन मोहे चैन परे नहि, उलट भई सब रीत।।
कहाँ करौं कित जाऊँ सखी री, कैसी बनी अब बीत।
'देवनाथ' प्रभु नाथ निरंजन, निसदिन गावे गीत।।

आपने अनेक 'उलटबासियाँ' और 'बारहमासियाँ' भी लिखी थी।

आपका देहावसान सन् 1821 मे ग्वालियर मे उस समय हुआ था जब आप वहाँ पर एक मण्डप मे कीर्तन कर रहे थे। मण्डप में आग लग जाने के कारण आप वहाँ भस्म हो गए थे।

श्री देवनारायण व्यास

श्री देवनारायण जी का जन्म राजस्थान प्रदेश के जोधपुर नगर मे सन् 1915 को हुआ था। आप राजस्थान के प्रख्यात नेता श्री जयनारायण व्यास के इकलौते पुत्र थे। आपको राष्ट्रीयता और देश-भक्ति के भाव जन्म से ही घुट्टी मे प्राप्त हुए थे, अत आप



अपने छात्र-जीवन मे ही स्वातन्त्र्य-सग्राम मे सक्रिय रूप मे भाग लेने लगे थे। जोध- मे रहते हुए ही एम० ए० तक की शिक्षा प्राप्त करके अपने पिताजी की भाँति ही आपने पत्रकारिता को अपनाया था। पहले-पहल आपने बम्बई जाकर वहाँ के 'टाइम्स आफ इण्डिया' सस्थान के हिन्दी दैनिक 'नवभारत टाइम्स' मे अपना पत्रकारिता का जीवन प्रारम्भ किया था और उसके उपरान्त आप जोधपुर चले आए थे। जोधपुर मे रहते हुए आपने जहाँ 'प्रेरणा' नामक पत्र सन् 1953 में साप्ताहिक एव मासिक रूप में निकाला था वहाँ 'तरुण राजस्थान' नामक दैनिक का भी सम्पादन कई वर्ष तक किया था। इनके अतिरिक्त आप देश के अनेक प्रमुख पत्रों के संवाददाता भी रहे थे।

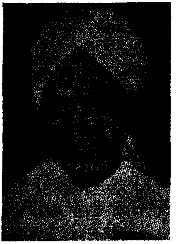
पत्रकारिता मे रहते हुए आप राजनीति में भी पूर्णत· सक्रिय रहा करते थे। आप जहाँ पहले कई वर्ष तक 'जोधपुर लोक परिषद्' के मन्त्री व अध्यक्ष रहे थे वहाँ आप 'जोधपुर नगर काग्रेस कमेटी' के भी प्रधान रहे थे। जिन दिनो आप 'मारवाड खादी सघ' के मन्त्री थे तब आपके कार्य-काल मे इस सस्थान ने अपना उत्पादन बढाने मे अत्यन्त उपयोगी कार्य किया था। राजस्थान के द्वितीय पीढ़ी के पत्रकारों मे आपका अत्यन्त विशिष्ट स्थान था। आपने दैनिक 'तरुण राजस्थान' के माध्यम से पश्चिमी राजस्थान की अनेक ज्वलन्त समस्याओ को मुखरित करके उनके समाधान के लिए प्रबल आन्दोलन किया था। आपके द्वारा लिखित 'विवेक और साधना' नामक पुस्तक को देखकर आपकी विवेकशीलता का परिचय मिलता है।

आपका निधन सन् 1969 मे हुआ था।

पण्डित देवप्रकाश अमृतसरी

आपका जन्म पंजाब प्रदेश के गुरदासपुर जिले के धर्मकोट बग्गा नामक ग्राम मे सन् 1889 मे हुआ था। सन् 1912 मे आपका आर्य समाज के सुधारवादी आन्दोलन से सम्पर्क हुआ था और तब से ही आप उससे सक्रिय रूप से सम्बद्ध हो गए थे। अपनी छात्रावस्था से ही आपकी रुचि इस्लाम धर्म के सिद्धान्तो का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त करने की ओर थी। आपने स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती द्वारा लिखित ट्रैक्टों को पढकर वैदिक धर्म की उपादेयता और इस्लाम धर्म के खोखलेन का अच्छा परिचय प्राप्त कर लिया था। अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए आप जब अमृतसर के लाला मुन्शीराम सर्राफ की दुकान पर आकर आभूषण बनाने का कार्य सीख रहे थे उन्ही दिनो से आपका वास्तविक कार्मिक जीवन प्रारम्भ हुआ था। यहाँ रहते हुए आपने लोहागढ मे 'आर्य युवक समाज' की स्थापना करके अपना समाज-सुधार का कार्य प्रारम्भ कर दिया था।

आपकी यह सुधारवादी प्रवृत्ति तब और भी अधिक बढी जब आपने सन् 1923 मे स्वामी श्रद्धानन्द और महात्मा हंसराज जी आदि पजाब के शीर्षस्थ नेताओं की प्रेरणा पर 'अखिल भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा' आगरा के कार्यों में रुचि लेना प्रारम्भ किया और आपने उसके प्रधान-मन्त्री का कार्य-भार सँभाला था। आपने अपने स्वाध्याय के बल पर 'मुस्लिम धर्म' के सभी सिद्धान्तो का इतनी गम्भीरता से पारायण कर लिया था कि आप उसमे पूर्णत पारगत हो गए थे। इस सभा के माध्यम से आपने हजारो राजपूत मुसलमानो को पुन. हिन्दू धर्म मे दीक्षित किया जो कभी बलात् मुसलमान बना लिए गए थे। माला-बार के मोपला काण्ड के समय भी आपने वहाँ की जनता की उल्लेखनीय सेवा की थी।



आपने मध्य प्रदेश के रतलाम के समीपवर्ती पिछडे हुए क्षेत्रो मे रहकर वहाँ के आदिवासियो के सुधार तथा उद्धार का जो कार्य किया था वह भी आपकी कर्मठता का ज्वलन्त साक्षी है। आपने वहाँ के आदिवासियो के सुधार के लिए पाठ-शालाओ, औषधालयो और छात्रावासो की स्थापना करके वहाँ के निवासियो को ईसाई तथा मुसलमान बनने से बचाने का जो प्रशसनीय कार्य किया था उसमे आपकी कर्मठता का परिचय मिलता है। आपकी यह दृढ मान्यता थी कि जब तक हिन्दू युवक अरबी तथा फारसी का विधिवत् अध्ययन करके 'मुस्लिम धर्म' के ग्रन्थ 'कुरान' का बारीकी से स्वाध्याय नही करेंगे तब तक वे मुस्लिम धर्म की कमियो को जनता के समक्ष उजागर न कर सकेंगे। फलस्वरूप आपने अमृतसर के पास 'गण्डासिंह वाला' नामक स्थान मे अरबी और फारसी का अध्ययन कराने की दृष्टि से एक विद्यालय की स्थापना की थी। जब रामलाल कपूर ट्रस्ट की ओर से लाहौर के पास रावी तट पर 'शाहदरा' में पण्डित ब्रह्मदत्त जिज्ञासु ने आर्ष पद्धति पर सस्कृत वाङ्मय का सक्रिय और सर्वांगीण ज्ञान कराने की दृष्टि से एक विद्यालय की स्थापना की थी तब आपने उस कार्य में भी अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया था। आप जहाँ अच्छे प्रचारक, कुशल सगठक और अरबी तथा फारसी के गम्भीर विद्वान् थे वहाँ आपने हिन्दी मे ऐसी अनेक पुस्तकों की रचना की थी जिनके स्वाध्याय से हमारे देश की नई पीढी का मार्ग-प्रदर्शन हो सकता है। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थो मे 'कुरआन परिचय', 'ख्वाजा हसन निजामी का वास्तविक रूप', 'आस्तिक विचार', 'इजीलो मे परस्पर विरोधी कल्पनाएँ अर्थात् ईसाई मत का वास्तविक स्वरूप', 'घोर आक्रमण', 'यथार्थ दर्शन', 'बाहाई मत समीक्षा' और 'आर्यसमाज के विशिष्ट आर्यजनों का जीवन परिचय' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। आपकी समाज-सेवा की 'हीरक जयन्ती' के अवसर पर 29 अक्तूबर सन् 1972 को अमृतसर की आर्यसमाज लोहा-गढ की ओर से महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती के कर-कमलो द्वारा आपको एक अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया गया था।

आपका निधन 29 दिसम्बर सन् 1980 को दयानन्द मठ दीनानगर (पजाब) मे हुआ था।

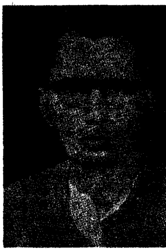
डॉ० देवराज उपाध्याय

आपका जन्म बिहार प्रदेश के भोजपुर जनपद के बभनगावां नामक ग्राम के एक सम्भ्रान्त ब्राह्मण-परिवार मे 23 अक्तूबर सन् 1908 को हुआ था। आपने पटना विश्वविद्यालय से इतिहास, हिन्दी तथा सस्कृत विषयो मे एम०ए० की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त अध्यापन-कार्य प्रारम्भ कर दिया था। प्रारम्भ मे आप राजस्थान के जोधपुर नगर के 'जसवन्त कालेज' मे हिन्दी के प्रवक्ता नियुक्त हुए थे और बाद मे पी-एच०डी० की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त आप 'उदयपुर विश्वविद्यालय' के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हो गए थे। आपके दो विवाह हुए थे। आपकी पहली पत्नी हिन्दी के सुप्रसिद्ध पत्रकार और साहित्यकार श्री पारसनाथ त्रिपाठी

की सुपुत्री लीलावती देवी थी, जिनका देहावसान विवाह के थोड़े ही दिन बाद हो गया था। बाद में आपका दूसरा विवाह हिन्दी तथा संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् महामहोपाध्याय पण्डित रामावतार शर्मा की द्वितीय पुत्री वसुमती के साथ हुआ था, जो हिन्दी के ख्याति-प्राप्त समीक्षक श्री नलिन-विलोचन शर्मा की बडी बहन है। श्रीमती वसुमती जी स्वयं भी विदुषी महिला है और वे भी लम्बी अवधि तक राजस्थान सरकार के शिक्षा विभाग में कार्य-रत रहने के उपरान्त अब सेवा-निवृत्ति प्राप्त कर चुकी है। डॉ० उपाध्याय सेवा-निवृत्ति के उपरान्त राजस्थान छोडकर स्थायी रूप से आरा (बिहार) मे रहने लगे थे।

यद्यपि यह बात निर्विवाद सत्य है कि आपका अधिकाश समय शैक्षणिक कार्य मे सलग्न रहने के कारण राजस्थान मे ही व्यतीत हुआ था, किन्तु बिहार से आपका सम्पर्क बराबर रहता आया था। आप बिहार के प्रमुख साहित्यकारो मे अग्रणी सर्वश्री रामवृक्ष बेनीपुरी, रामधारी सिह 'दिनकर' मनोरजनप्रसाद सिह तथा भुवनेश्वरप्रसाद मिश्र 'माधव' के अत्यन्त घनिष्ठ मित्रो मे थे। आप सरल एव मृदु स्वभाव वाले मूक साधक साहित्यकार के रूप मे प्रतिष्ठित थे। अपने समकालीन साहित्यकारो मे आपका स्थान सर्वथा विशिष्ट तथा अनन्य था। यद्यपि आप वज्र-बधिर थे, किन्तु आपकी बधिरता कभी भी आपके कार्य मे आडे नही आई। अपने छात्रों मे आप बहुत लोकप्रिय थे। एक उत्कृष्ट मनोवैज्ञानिक समीक्षक के रूप मे आपकी गणना की जाती थी। आपके निरीक्षण मे अनेक छात्रों ने शोध-कार्य किया था।

आप एक मनस्वी अध्यापक और अध्ययनशील समीक्षक के रूप मे तो विख्यात थे ही, लेखन के क्षेत्र मे भी आपकी देन कम महत्त्व नही रखती। आपने सन् 1926 से लिखना प्रारम्भ किया था और आपका सबसे पहला लेख 'खड्ग-विलास प्रेस पटना' की ओर मे प्रकाशित होने वाली 'शिक्षा' नामक पत्रिका मे प्रकाशित हुआ था। आपकी समीक्षा-पद्धति पूर्णत. मनोवैज्ञानिक होती थी और आपकी ऐसी रचना-प्रतिभा आपके प्राय सभी ग्रन्थो मे पूर्णत प्रस्फुटित हुई है। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'साहित्य की रेखा', 'हिन्दी का आधुनिक कथा साहित्य और मनोविज्ञान', 'कथा के तत्त्व', 'साहित्य और साहित्यकार', 'जैनेन्द्र के उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन','साहित्य एव शोध-कुछ समस्याएँ','भाषा, साहित्य और मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति', 'डॉ० रागेय राघव के उपन्यास और मेरी मान्यताएँ', 'रोमांटिक साहित्य-शास्त्र' तथा 'बचपन के वे दिन' आदि प्रमुख है। आपने 'कालिदास साहित्य का मनोवैज्ञानिक अध्ययन' नामक जो शोधपूर्ण ग्रन्थ लिखा था, वह अप्रकाशित ही रह गया। आपने जहाँ इतने मौलिक ग्रन्थो की रचना की थी वहाँ अनुवाद के क्षेत्र मे भी आपकी देन कम महत्त्व नही रखती। आपकी ऐसी कृतियों मे 'कार्ल एण्ड अन्ना' (लियो-गार्ड),'इण्डिया आफ माई ड्रीम्स (महात्मा गांधी) तथा 'कल्चरल प्रोब्लम्स ऑफ इण्डिया' (पी० टी० राजू) आदि प्रमुख है।

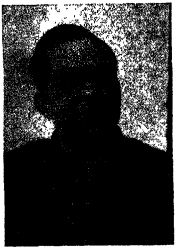


अध्यापन और लेखन के अतिरिक्त आपने अपनी कारयित्री प्रतिभा का परिचय जिन अनेक साहित्यिक सस्थाओ की प्रवृत्तियो मे सक्रिय रूप से भाग लेकर दिया था उनमे 'अखिल भारतीय कुमार साहित्य परिषद्', 'अन्तर्भारती अजमेर' और 'भोजपुर (बिहार) जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन' तथा 'राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर' के नाम विशेष महत्त्व रखते है। आप इनमे से पहली तीन सस्थाओ के जहाँ कई वर्ष तक अध्यक्ष रहे थे वहाँ अन्तिम संस्था की 'सरस्वती सभा' के सदस्य के रूप मे अपना रचनात्मक सहयोग प्रदान किया था। उदयपुर विश्व-विद्यालय से निवृत्ति प्राप्त करने के उपरान्त आप स्थायी रूप से आरा (बिहार) मे रहने लगे थे। बिहार मे आने पर 'बिहार प्रशासन की राजभाषा परिषद्' ने जहाँ आपकी साहित्यिक सेवाओ का सम्मान किया था वहाँ 'भोजपुर जिला साहित्य सम्मेलन' के भी आप जीवन-पर्यन्त अध्यक्ष रहे थे।

आपका निधन 7 जुलाई सन् 1981 को आरा (बिहार) में हुआ था।

डॉ० देवराज चानना

डॉ० चानना का जन्म अविभाजित पंजाब के लायलपुर नामक नगर मे 5 मई सन् 1920 को हुआ था। आपके पिता लाला भगतराम चानना और ताऊ लाला बिहारीलाल चानना पंजाब के अग्रणी नेताओं और स्वाधीनता-सेनानियों मे थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा पण्डित लीलाधर शास्त्री के आचार्यत्व मे लायलपुर के 'ऋषिकुल आश्रम' मे हुई थी और लगभग 10 वर्ष तक आपने सस्कृत तथा हिन्दी साहित्य का अत्यन्त गम्भीर अध्ययन किया था। लायलपुर के 'सनातनधर्म हाई स्कूल' से सन् 1939 मे 'हाई स्कूल' की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे ससम्मान उत्तीर्ण करके आपने 'स्वर्ण पदक' प्राप्त किया था। सन् 1941 मे लायलपुर के 'गवर्नमेण्ट कालेज' से इण्टर की परीक्षा भी प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप आगे के अध्ययन के लिए लाहौर चले



आए थे। लाहौर के 'फोरमैन क्रिश्चियन कालेज' मे आपने बी० ए० की परीक्षा भी सन् 1943 मे प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की थी। इसके उपरान्त आपने पजाब विश्वविद्यालय के 'ओरियटल कालेज' के सन् 1946 मे सस्कृत विषय मे एम० ए० की परीक्षा मे सारे पजाब मे सर्वप्रथम स्थान प्राप्त करके 'स्वर्ण पदक' भी प्राप्त किया था। इसके उपरान्त आपने सस्कृत की 'शास्त्री' परीक्षा उत्तीर्ण करके विश्वविद्यालय की एम० ओ० एल० उपाधि भी प्राप्त कर ली थी।

अपने इस अध्ययन की समाप्ति पर आपने भारत सरकार की विशेष छात्रवृत्ति पर पेरिस के सारबोनी विश्वविद्यालय से 'प्राचीन भारत मे दास प्रथा' विषय पर शोधपूर्ण ग्रन्थ लिखकर पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। आपके इस शोध ग्रन्थ की उपादेयता का सबसे उत्कृष्ट तथा महत्त्वपूर्ण प्रमाण यही है कि यह फ्रासीसी, अँग्रेजी तथा रूसी भाषाओं मे भी प्रकाशित हो चुका है और भारतीय भाषाओ में इसके अनुवाद का कार्य 'इण्डियन कौसिल फॉर हिस्टारिकल रिसर्च' की ओर से हो रहा है। भारत-विभाजन के उपरान्त आपने पजाब विश्वविद्यालय से सम्बद्ध दिल्ली के 'कैम्प कालेज' मे सस्कृत-हिन्दी-अध्यापक के रूप मे अपने कर्ममय जीवन का प्रारम्भ किया था और बाद मे आप 'दिल्ली विश्वविद्यालय' के अन्तर्गत सचालित 'पोस्ट ग्रेजुएट इवनिग कालेज' मे सस्कृत तथा हिन्दी के वरिष्ठ अध्यापक हो गए थे। सन् 1967 मे आप बैंकाक के 'थम्पसन विश्वविद्यालय' मे भारतीय इतिहास पर भाषण देने के लिए आमन्त्रित किये गए थे। आपके इस कार्य की उस विश्वविद्यालय के उपकुलपति ने भूरि-भूरि सराहना की थी। आप पेरिस की 'सोसाइटी एशियाटिक' आदि कई प्रतिष्ठित शोध-सस्थाओ के सक्रिय सदस्य भी रहे थे। अनेक शोध-पत्रिकाओ मे छपे आपके महत्त्वपूर्ण निबन्ध आपकी ऐसी शोधपूर्ण प्रवृत्ति के परिचायक है।

आप अपने निधन से पूर्व 'प्राचीन भारत मे कृषि का विकास—प्राविधिक तथा आर्थिक परिप्रेक्ष्य मे' विषय पर शोध-कार्य मे सलग्न थे। खेद है कि आप इस कार्य का पूर्ण न कर सके। आपके निधन के उपरान्त आपकी स्मृति को चिरस्थायी बनाने की दृष्टि से दिल्ली विश्वविद्यालय की ओर से प्रतिवर्ष 'देवराज चानना मैमोरियल लैक्चर्स' का आयोजन होता है। इस भाषणमाला के अन्तर्गत अभी तक प्रोफेसर सॉकलिया, प्रोफ़ेसर इरफान हबीबी आदि के भाषण हो चुके है। इन भाषणो के विषय भारतीय विद्या, इतिहास, पुरातत्त्व, सस्कृत एव पालि भाषाओं से सम्बन्धित होते है। आप हिन्दी तथा सस्कृत के अतिरिक्त पजाबी-भाषा के भी अद्वितीय विद्वान् थे।

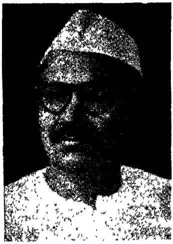
आपका निधन 19 मई सन् 1968 को हुआ था।

श्री देवव्रत शास्त्री

श्री शास्त्री का जन्म सन् 1901 मे बिहार प्रदेश के मोती-

हारी जनपद के गौरे नामक ग्राम में हुआ था। सन् 1922 मे आपने 'प्रवेशिका' की परीक्षा उत्तीर्ण करके बाद में काशी विद्यापीठ से 'शास्त्री' की उपाधि प्राप्त की थी। केवल 19 वर्ष की आयु मे ही आप महात्मा गांधी के आवाहन पर उनके 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' मे कूद पडे थे। काशी विद्यापीठ से विधिवत् स्नातक होने के उपरान्त आप श्री गणेशशकर विद्यार्थी के सम्पादन मे कानपुर से प्रकाशित होने वाले 'प्रताप' साप्ताहिक के सम्पादकीय विभाग से जुड गए थे और वहाँ पर सन् 1927 से सन् 1931 तक अत्यन्त सफलता-पूर्वक कार्य किया था।

जिन दिनो आप काशी विद्यापीठ मे पढा करते थे तव डॉ० भगवानदास, आचार्य नरेन्द्रदेव, श्री श्रीप्रकाश और डॉ० सम्पूर्णानन्द प्रभृति महानुभाव आपके आचार्य रहे थे। लगभग 12 वर्ष तक बिहार से बाहर रहने के उपरान्त आपने स्थायी रूप से वहाँ जाकर हिन्दी-पत्रकारिता के क्षेत्र मे अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था। आपने जहाँ लगभग 37 वर्ष तक बिहार मे कई दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रो का सफल सचालन किया था वहाँ आपने बिहार मे हिन्दी पत्रकारिता का स्तर-निर्माण भी किया था। 'प्रताप' से कार्यमुक्त होने के उपरान्त आपने सर्वप्रथम सन् 1934 मे 'नवशक्ति' नामक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन तथा प्रकाशन किया था और बाद मे आपने 'राष्ट्रवाणी' तथा 'नवराष्ट्र' नामक दैनिक पत्रो का सम्पादन भी पटना से किया था। इन दोनों पत्रों का बिहार की हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र मे अनन्य स्थान रहा था। 'नवशक्ति' भी अपने समय की उत्कृष्टतम साप्ताहिक पत्रिकाओ मे प्रमुख थी। आपने पटना से ही 'हिमालय सदेश' तथा 'उद्योग भूमि' नामक साप्ताहिक पत्रों का सम्पादन भी



कई वर्ष तक बडी सफलतापूर्वक किया था।

आप जहाँ उच्चकोटि के देश-भक्त और जागरूक पत्रकार थे वहाँ हिन्दी-सम्बन्धी अनेक गतिविधियो मे भी अपना सक्रिय सहयोग देते रहते थे। आपके हिन्दी-प्रेम का सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि आपने सन् 1952 मे जमशेदपुर मे आयोजित 'बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के वार्षिक अधिवेशन की अध्यक्षता की थी। आपने सन् 1956 में 'बिहार राज्य पुस्तकालय सघ' के गया अधिवेशन के अध्यक्ष रहने के अतिरिक्त सन् 1961 मे 'चम्पारन जिला पत्रकार सम्मेलन' के प्रथम अधिवेशन की अध्यक्षता भी की थी। आपने जहाँ सन् 1930 तथा 1942 के स्वाधीनता-आन्दोलनो मे कारावास की सजाएँ भोगी थी वहाँ आप सन् 1941 मे 'बिहार प्रदेश काग्रेस कमेटी' के मत्री भी रहे थे।

आप जहाँ एक प्रखर पत्रकार तथा हिन्दी-सेवी के रूप मे अग्रणी स्थान रखते थे वहाँ आप लेखक भी उच्चकोटि के थे। आपकी ऐसी प्रतिभा का परिचय आपके द्वारा लिखित 'गणेशशकर विद्यार्थी', 'मुस्तफा कमाल पाशा' (जीवनी), 'साहित्यकारो की आत्मकथा', 'हिन्दी की उत्कृष्ट कहानियाँ' (सकलन), 'ग्राम सुधार' (निबन्ध), 'माओ के चीन मे' तथा 'वर्तमान रूस' (यात्रा-वृत्तान्त), 'आदर्श कलाकार', 'गरीबो की आह', 'हँसाने वाली कहानियाँ', 'नवशक्ति-सुधा' एव 'निर्माणों और अभियानो की भूमि' आदि पुस्तकों से भली भाँति मिल जाता है।

आपका निधन 10 जनवरी सन् 1962 को उस समय हुआ था जब आप पिपरा (चम्पारन) से अपना विधान सभा के चुनाव का नामाकन पत्र भरने के लिए जीप द्वारा बरौनी जा रहे थे। घने कोहरे के कारण आपकी जीप से ट्रक टकरा गया था, जिसके कारण आप घायल हो गए थे। उसी अवस्था मे पटना चिकित्सालय को जाते हुए मार्ग मे ही आपका प्राणान्त हो गया था।

पण्डित देवशरण शर्मा त्रिपाठी 'कंज'

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जनपद की सोराँव नामक तहसील के समीपवर्ती 'बलुआ तिवारी का पुरा' नामक

ग्राम में सन् 1886 में हुआ था। इस ग्राम का नाम आपके पूर्वजों के नाम पर पड़ा था। आपके पिता पण्डित विश्वनाथ-प्रसाद त्रिपाठी संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे और उन्होंने आपको भी अपने अनुरूप ही विद्वान् बनाने का संकल्प किया था। 'कज' भी भी संस्कृत और हिन्दी के अपूर्व विद्वान् तथा पौराणिक साहित्य के अपूर्व व्याख्याता थे। आप रामायण के इतने मर्मज्ञ थे कि आपके द्वारा किये जाने वाले रामायण के प्रवचनों को जनता बड़ी रुचिपूर्वक सुनाती थी और आप 'कज रामायणी' नाम से विख्यात थे।

आपने रामायण का विधिवत् अध्ययन काशी के प्रख्यात मानस-मर्मज्ञ श्री विजयानन्द त्रिपाठी के सान्निध्य मे रहकर किया था और उनके निर्देशन मे 'राम-चरित-मानस' की एक टीका भी लिखनी प्रारम्भ की थी। खेद का विषय है कि आप उसे अपने जीवन-काल मे पूरा नही कर सके थे। प्रयाग मे आपने 'रसिक मण्डल' नाम से एक ऐसी सस्था का सूत्रपात किया था, जिसमे ब्रजभाषा-काव्य के



मर्मज्ञ विद्वान् तथा साहित्यकार कविवर श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' और डॉ० रामशकर शुक्ल 'रसाल'-जैसे महानु-भाव बराबर आते-जाते रहते थे।

जब सन् 1936 मे कुछ ज्योतिषियों और हस्तरेखा-विशेषज्ञों ने आपकी सन् 1937 मे मृत्यु होने की घोषणा कर दी तब आप यह सोचकर काशी चले गए थे कि वहाँ पर रहने मे स्वत ही मुक्ति प्राप्त हो जाती है। कविवर श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के सुपुत्र श्री राधेकृष्णदास ने अपनी बगीची मे आपके निवास के लिए 'कज-कुटीर' बनवा दिया था। वहाँ पर रहते हुए ही आपका परिचय काशी के प्रख्यात मानस-मर्मज्ञ श्री विजयानन्द त्रिपाठी से हुआ था।

श्री त्रिपाठी का शिष्यत्व ग्रहण करके आपने अपने मन मे 'रामचरित मानस' का प्रचार करने का जो संकल्प किया था उसको मूर्त्त रूप देने की दृष्टि से आप स्थान-स्थान पर रामायण-प्रचार या मानस-मेला करते रहे थे। आपका अयोध्या, प्रयाग, चित्रकूट तथा नेमिषारण्य आदि अनेक तीर्थ-स्थानों का यात्राएँ करने का भी विचार था। 'ब्रज चौरासी कोस' की यात्राओं की भाँति ही आप इन यात्राओ को करना चाहते थे। आपने इस दृष्टि से 'श्री भरत-यात्रा' नामक एक पुस्तक भी लिखी थी, जिसका प्रकाशन परम सन्त श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी के 'संकीर्तन भवन झूंसी, प्रयाग' की ओर से हुआ है।

आपका निधन सन् 1972 मे हुआ था।

श्री देवीदत्त त्रिपाठी 'दत्तद्विजेन्द्र'

श्री त्रिपाठी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के बिसवाँ कस्बे के झज्झर नामक मोहल्ले मे सन् 1871 मे हुआ था। आपने 17 वर्ष की अल्पायु मे उर्दू मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इसके 3 वर्ष उपरान्त नगर के लाला बेनीमाधव रईस की प्रेरणा से आपके मानस मे सस्कृत तथा हिन्दी के अध्ययन की भावना जगी थी। उन्ही दिनो बिसवाँ मे स्वामी कृष्णानन्द सरस्वती पधारे थे। आपने उनसे 'सिद्धान्त कौमुदी' का अध्ययन प्रारम्भ किया और 6 मास मे ही आपने उसे हृदयगम कर लिया। इसके उपरान्त आपने अपने स्वाध्याय के बल पर ज्योतिष का अध्ययन किया और अँग्रेजी भाषा भी भली-भाँति सीखी। ज्योतिष का ज्ञान अर्जित करने मे आपको अपने श्वसुर श्री सेवकराम जी से बहुत सहायता प्राप्त हुई थी।

30 मई सन् 1897 को आपने 'श्री बिसवाँ कवि मण्डल' की स्थापना की और नगर के प्रमुख साहित्य-प्रेमी रईस श्री दुर्गासिह 'आनन्द' तथा लाला बेणीमाधव की प्रेरणा से 'काव्य सुधाकर' नामक पत्र निकालना प्रारम्भ किया। यह पत्र लगभग 6 वर्ष तक बडी सफलतापूर्वक प्रकाशित हुआ था और इसमे समस्त देश के कवियो की समस्यापूर्तियाँ छपा करती थी। आपकी कवित्व-प्रतिभा का परिचय आपके द्वारा विरचित उन 23 ग्रन्थों को देखने मे

भली-भाँति मिल जाता है जो आपने समय-समय पर प्रकाशित किये थे। इनमे मौलिक ग्रन्थों के अतिरिक्त सस्कृत ग्रन्थों के अनुवाद भी प्रस्तुत किये गए है। आपकी ऐसी कृतियों मे 'शृगार तिलक' प्रमुख है। आपके 'नरहरि चम्पू' काव्य पर केशव भट्ट के 'सस्कृत नरहरि चम्पू' का भरपूर प्रभाव है। 'कान्यकुब्ज प्रबोधन' मे आपने कान्यकुब्ज ब्राह्मणो को प्रेरणा देने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। आपके इन ग्रन्थों मे अनेक मात्रिक और वर्णिक वृत्तों का प्रयोग किया गया है। समस्या-पूर्ति करने में आपको अपूर्व कौशल प्राप्त था।

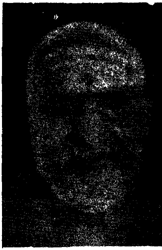
आपका निधन 27 मई सन् 1909 को हुआ था।

पण्डित देवीदत्त शुक्ल

श्री शुक्ल जी का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के बकसर नामक ग्राम मे सन् 1888 मे हुआ था। जब अपने घर पर साधारण-सी शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप पास के कस्बे मौरावाँ मे पढा करते थे तब आपने 'भारत मित्र' नामक पत्र को पढना प्रारम्भ कर दिया था। यह घटना सन् 1904 की है। उस पत्र मे 'भीषण डकैती' शीर्षक एक लेख पढकर आपके मन मे अखबार पढने की उत्सुकता जगी थी। फिर धीरे-धीरे आपने अपने सगी-साथियो से मिलकर 'भारत मित्र' के साथ 'हिन्दी केसरी', 'हिन्दी ग्रन्थमाला', 'ब्राह्मण सर्वस्व' और 'अभ्युदय' आदि कई पत्र मँगाने प्रारम्भ कर दिए थे। उन दिनों सारे देश मे बग-भंग के कारण 'स्वदेशी आन्दोलन' छिडा हुआ था। इन पत्रो को पढने से आपके मन मे लेखक बनने की ललक हो गई थी। उन्ही दिनो मौरावाँ के एक पण्डित श्री शम्भुदत्त शुक्ल के सम्पर्क के कारण आपका हिन्दी के प्रति धीरे-धीरे अनुराग बढने लगा और पण्डित परमेश्वरदीन वाजपेयी की कृपा से 'चन्द्रकान्ता' उपन्यास पढने को मिल गया। इस उपन्यास के पारायण से शुक्ल जी की रुचि उपन्यास पढने की ओर हुई थी। मौरावाँ मे ही आपको श्री श्यामलाल नामक एक सज्जन के द्वारा 'छन्द प्रभाकर' ग्रन्थ देखने को मिला था। इससे आपने छन्द-रचना का अभ्यास भी कर लिया था।

थोड़े दिन बाद सन् 1908 मे आप अपने हिन्दी तथा संस्कृत के ज्ञान को बढाने के लिए काशी चले गए। वहाँ पहुँचकर आपको कुछ ऐसे व्यक्तियो का सत्सग मिला जिसके कारण आप लेख तथा कविताएँ लिखने लगे। आपके दो लेख उन दिनो 'हिन्दी बगवासी' और 'भारत-जीवन' मे छप भी गए। 'छन्द प्रभाकर' के निरन्तर पारायण से आपने कविता लिखने मे भी दक्षता प्राप्त कर ली थी। आपने उन दिनो 'कृषक विनय' नाम से जो कविता लिखी थी उसे श्री देवीप्रसाद शुक्ल 'कवि चक्रवर्ती' ने बहुत पसन्द किया था और यत्र-तत्र कुछ सशोधन भी कर दिए थे। श्री हरिभाऊ उपाध्याय ने, जो उन दिनो बनारस से 'औदुम्बर' नामक पत्र सम्पादित किया करते थे, अपने पत्र मे उसे छापा था। आपके सहपाठियो मे उन दिनो जहाँ श्री हरिदास माणिक उदीयमान उपन्यास-लेखक होते जा रहे थे वहाँ श्री राम-प्रसाद त्रिपाठी ने भी अपना एक उपन्यास लिखकर छपवा लिया था। आपके मन मे भी वैसे ही उपन्यास लिखने की भावनाएँ हिलोरे मारने लगी, किन्तु आपको उसमे सफलता नही मिल सकी।

इस प्रकार जब आप इण्टरमीडिएट की परीक्षा भी उत्तीर्ण न कर सके और लिखने की ओर आपका झुकाव बढता ही गया तब आपने किसी पत्र-पत्रिका का सम्पादक बनने का सकल्प किया। परिणाम-स्वरूप आपने 'भारत मित्र' और 'अभ्युदय' मे अपने प्रार्थना पत्र भेजे। 'भारत मित्र' की ओर से तो कोई उत्तर नही आया, हाँ, 'अभ्युदय' से यह उत्तर अवश्य मिला, "अभी कोई जगह खाली नही है। जगह होने पर सूचना दी जायगी।" इस प्रकार सम्पादक बनने का जो शेखचिल्ली का सपना आपके मन मे पनप रहा था वह छिन्न-भिन्न हो गया। विवश होकर आपने काशी मे ही 'ट्रैफिक सुपरिटेंडेट' के



कार्यालय मे नौकरी कर ली। किन्तु 15 दिन बाद उससे त्याग पत्र दे दिया। थोड़े दिन आपने पुलिस विभाग मे भी नौकरी की, किन्तु वहाँ भी मन नही रमा। फिर एक सज्जन की प्रेरणा पर आप 'बरहज बाजार' (गोरखपुर) मे 'स्कूल मास्टर' होकर चले गए। उन्ही दिनो आपको अलवर राज्य के शिक्षा विभाग मे नौकरी मिल गई और बरहज से अलवर चले गए और वहाँ के 'निजारा' नामक स्थान मे अध्यापक हो गए। वहाँ से जब आप ग्रीस्मावकाश मे अपनी जन्म-भूमि आए तब अपने ही गाँव के श्री गिरिजाशकर वाजपेयी के साथ आप पूर्वी मध्य प्रदेश के महा समुन्द (रायपुर) नामक नगर मे जाकर नौकर हो गए। वहाँ से आपने 6 छप्पय लिखकर 'मर्यादा' मे प्रकाशनार्थ भेजे थे। साथ ही 'सम्मिलित परिवार-प्रणाली' के समर्थन मे एक लेख भी भेज दिया था। जब ये दोनो 'मर्यादा' मे प्रकाशित हो गए तो आपका उत्साह बहुत बढ गया। उन्ही दिनो आपने 'तैमूर-लग के 12 नियम' तथा 'गृह शासन' नामक दो लेख 'सरस्वती' मे भी प्रकाशनार्थ भेजे थे। आचार्य महावीर-प्रसाद द्विवेदी ने उन्हे कृपापूर्वक अपनी पत्रिका मे छाप दिया। इस प्रकार आपका लेखक बनने का स्वप्न सफल होने लगा था।

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का ग्राम दौलतपुर भी आपके गाँव के पास ही था। वे प्राय पैदल चलकर ही आपके गाँव तक आ जाया करते थे। अस्वस्थता के कारण आप सन् 1914 से सन् 1918 तक मध्य प्रदेश के महा-समुन्द नगर की नौकरी से छुट्टी लेकर अपने गाँव मे ही रहने लगे थे। जब द्विवेदी जी से शुक्ल जी ने महासमुन्द न लौट-कर आस-पास ही दूसरी नौकरी करने की बात कही तब उन्होने कहा—"मेरे पास इस समय तीन नौकरियाँ है। एक कलकत्ता मे हिन्दी पुस्तक एजेन्सी की, 60 रुपए मासिक और रहने का मकान मुफ्त। दूसरी नागरी प्रचारिणी सभा काशी की, 75 रुपए मासिक। और तीसरी इण्डियन प्रेस प्रयाग की, 50 रुपए मासिक।" बस फिर क्या था? डूबते को तिनके का सहारा मिल गया और आपने द्विवेदी जी के पास प्रयाग मे ही नौकरी करने का अपना विचार प्रकट कर दिया। द्विवेदी जी के सुझाव पर आपने इण्डियन प्रेस के मालिक के नाम जो प्रार्थना पत्र भेजा था उसके अन्त मे 2 पद्य भी लिख दिए थे। इस प्रकार अक्तूबर सन् 1919 मे आप द्विवेदी जी कृपा से जब इण्डियन प्रेस मे गए तब आप एक साधारण स्थिति में थे। आपको क्या मालूम था कि आप वहाँ ऐसे जम जायँगे कि 'सरस्वती' के सम्पादक होकर सन् 1945 तक अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करके हिन्दी के उच्चकोटि के सम्पादको मे अपना स्थान बना लेंगे।

जब आपने इण्डियन प्रेस के 'साहित्य विभाग' मे कार्य प्रारम्भ किया था तब आपको श्री कामताप्रसाद गुरु के सहायक का काम सौंपा गया था। गुरु जी उन दिनो इण्डियन प्रेस से प्रकाशित होने वाले 'बाल सखा' पत्र का सम्पादन करने के साथ-साथ 'सरस्वती' के सम्पादन मे भी सहायता किया करते थे। उन दिनो श्री लल्लीप्रसाद पाण्डेय भी उनके पास ही बैठते थे। धीरे-धीरे आपने इन दोनो महानुभावो के सम्पर्क एव सान्निध्य से अपना काम प्रारम्भ किया और उत्तरोत्तर सफलता प्राप्त करते गए। आपका काम 'बाल सखा' के लिए आए हुए लेखो तथा कविताओ को पढना, उनकी भाषा को शुद्ध करना तथा प्रूफ पढना आदि था। इण्डियन प्रेस मे कार्य करते हुए आपने जहाँ अपने ज्ञान मे अभिवृद्धि की थी वहाँ हिन्दी के अनेक दिग्गज लेखको के दर्शन करने का सौभाग्य भी आपको प्राप्त हुआ था। इस बीच खैरागढ से श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी भी आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी को 'सरस्वती' के सम्पादन मे सहायता करने के लिए प्रयाग आ गए थे। आचार्य द्विवेदी जी ने सन् 1905 से सन् 1920 तक 'सरस्वती' का सम्पादन किया था और उनके बाद श्री बख्शी जी उसके सम्पादक बने थे। बख्शीजी के सहायक के रूप मे आपको नियुक्त कर दिया गया था। सन् 1925 मे जब बख्शी जी 'सरस्वती' की नौकरी छोडकर खैरागढ के अँग्रेजी स्कूल मे अध्यापक होकर चले गए तो 'सरस्वती' के सम्पादन का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व आपके ऊपर आ गया था।

आपने अपने सम्पादन-काल मे 'सरस्वती' की उसी परम्परा को सर्वथा अक्षुण्ण बनाए रखा था, जिसका सूत्रपात आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी कर गए थे और बाद मे बख्शी जी ने उसका निर्वाह किया था। यद्यपि आपके सम्पादन-काल मे 'सरस्वती' को अनेक आन्दोलनों मे फँसना पडा था, फिर भी उसकी लोकप्रियता में कोई कमी नही आई थी। यहाँ यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि मुन्शी प्रेमचन्द के 'रगभूमि' नामक उपन्यास के सम्बन्ध में

श्री अवध उपाध्याय द्वारा लिखी गई लेखमाला आपने छाप कर हिन्दी मे बहुत हलचल मचाई थी। जब 'रंगभूमि' की समीक्षा 'सरस्वती' मे पूरी छप चुकी तब अवध उपाध्याय ने 'प्रेमाश्रम' की समीक्षा 'सरस्वती' मे मुद्रणार्थ दी थी। प्रेमचन्द-जैसे लोकप्रिय उपन्यासकार के विरुद्ध लेख छापना उन दिनो साधारण बात न थी। शुक्ल जी ने यह कार्य करके अपने अभूतपूर्व साहस का परिचय दिया था। अपने 25 वर्ष के कार्य-काल मे आपने जहाँ 'सरस्वती' की प्राचीन ज्वलन्त परम्परा का निर्वहण किया वहाँ उसके माध्यम से अनेक लेखक तथा कवि भी हिन्दी को प्रदान किए। आपने सन् 1945 मे जब 'सरस्वती' के सम्पादन से अवकाश ग्रहण किया था तब आपके सहयोगी श्री उमेशचन्द्रदेव मिश्र थे, जो बाद मे सम्पादक बन गए थे।

आपने 'सरस्वती' के सम्पादन के दिनो मे इस दायित्व का निर्वाह करते हुए कहानी, उपन्यास, जीवनी, इतिहास, धर्म एव दर्शन सम्बन्धी अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी लिखे थे। ऐसे ग्रन्थो मे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण आपकी 'सम्पादक के पच्चीस वर्ष' नामक वह पुस्तक है जिसमे आपने अपने 'सरस्वती' के सम्पादकीय जीवन के संस्मरण लिखे है। अपने इन संस्मरणो मे जहाँ शुक्ल जी ने अपने कार्य-काल की अनेक प्रवृत्तियो का तटस्थ विवेचन किया है वहाँ यथा प्रसग हिन्दी के अनेक छोटे-बडे साहित्यकारो के संस्मरण भी यथा प्रसग आ गए है। आपकी अन्य कृतियो मे 'द्विवेदी काव्य माला' और 'भट्ट निबन्धावली' आदि सम्पादित पुस्तको के अतिरिक्त 'काल रात्रि', 'जादूगरनी', 'पचमती', 'क्रातिकारी', 'विचित्र निबन्ध' (दो भाग), 'जापान का हाल', 'आल्हा-ऊदल', 'बाल द्विवेदी', 'हिन्दुओ की पोथी', 'आर्यो का मूल स्थान', 'महाभारत मीमासा', 'अवध के गदर का इतिहास', 'एक आत्म-कथा' तथा 'स्वाधीनता के पुजारी' आदि प्रमुख हैं। आपकी 'कुछ खरी-खोटी' नामक रचना मे 'सरस्वती' के सम्पादन-काल मे आपके द्वारा लिखित हिन्दी के महारथियो की कृतियो की ऐसी दो टूक समीक्षाएँ सकलित है जिनके कारण हिन्दी मे उन दिनो बडा तहलका मचा था। आप विचार-धारा मे शाक्त थे और अनेक वर्ष तक आपने प्रयाग मे 'चण्डी' नामक मासिक पत्रिका का भी सम्पादन किया था। आपने तन्त्र-विद्या से सम्बन्धित अनेक पुस्तके भी लिखी थी।

आपका निधन 20 मई सन् 1970 को हुआ था।

श्री देवीदास लक्ष्मण महाजन

आपका जन्म महाराष्ट्र प्रदेश के नांदेड नामक नगर मे सन् 1896 मे हुआ था। अपनी शिक्षा पूरी करने के उपरान्त आपने लगभग 17 वर्ष तक नांदेड के ही 'प्रतिभा निकेतन हाई स्कूल' मे शिक्षा का कार्य किया था। आप पुरानी तथा नई परम्परा के कवियो मे प्रमुख स्थान रखते थे और साहित्य के प्रति आपकी गहन रुचि थी। आप जहाँ अनेक साहित्यकारो के 'प्रेरणा-स्रोत' रहे थे वहाँ आपने 'मराठ-



वाडा साहित्य परिषद्' के आठवे अधिवेशन की अध्यक्षता भी की थी। महाराष्ट्र की अनेक साहित्यिक सस्थाओं ने आपका सम्मान भी किया था।

आप गोस्वामी तुलसीदास के अमर ग्रन्थ 'रामचरित-मानस' के बडे प्रेमी थे और सन् 1930 के लगभग आपने उसका मराठी भाषा मे सक्षिप्त रूप मे पद्यबद्ध अनुवाद किया था। जब आपको उससे सन्तुष्टि नही हुई तब आपने सन् 1956 तथा सन् 1957 मे सम्पूर्ण 'रामचरितमानस' का मराठी अनुवाद करके उसे 'मानस विहार' नाम से दो खण्डो मे प्रकाशित किया था। आपने यह अनुवाद मराठी के प्रच-लित 'ओवी' छन्द मे किया था।

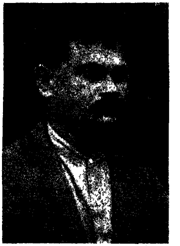
आपका निधन 3 अप्रैल सन् 1967 को हुआ था।

श्री देवीप्रसाद गुप्त 'कुसुमाकर'

श्री 'कुसुमाकर' का जन्म मध्य प्रदेश के होशगाबाद जनपद के बनखडी नामक ग्राम मे सन् 1893 मे हुआ था। आपकी

शिक्षा-दीक्षा प्रारम्भ मे उर्दू मे हुई थी, किन्तु जब आप होशगाबाद के हाई स्कूल से मिडिल तक की शिक्षा प्राप्त करके जबलपुर के 'राबर्टसन कालेज' मे आगे के अध्ययन के लिए प्रविष्ट हुए थे तब आपने वहाँ आकर हिन्दी का अच्छा अभ्यास कर लिया था। सन् 1917 मे इस कालेज से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से एल-एल० बी० की परीक्षा देकर जबलपुर मे वकालत की प्रैक्टिस प्रारम्भ कर दी थी। बाद मे आप स्थायी रूप से सोहागपुर चले गए थे, जहाँ पर आप अपने जीवन के अन्त तक रहे थे।

सोहागपुर जाकर जहाँ आपकी वकालत का कार्य बहुत चमका था वहाँ आप नगर की अनेक सामाजिक, साहित्यिक और राजनीतिक सस्थाओं से भी जुड गए थे। जब आप बी० ए० के छात्र थे तब आपने 'अमेरिकन राज्य की शासन-प्रणाली' नामक एक पुस्तक की रचना भी की थी, जिसका प्रकाशन उन दिनो सेठ गोविन्ददास ने अपनी 'श्रीशारदा पुस्तकमाला' के अन्तर्गत उसके चौथे पुष्प के रूप मे किया था। यहाँ यह बात विशेष रूप से ध्यान देने की है कि उन दिनो अपने विषय की यह हिन्दी मे पहली पुस्तक थी। आपने असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर जहाँ अनेक देशभक्तिपूर्ण कविताएँ, नाटक, प्रहसन और कहानियाँ लिखी थी वहाँ अनेक गम्भीर समीक्षाएँ लिखने मे भी आप अन्यतम थे।



आपने सन् 1913 मे कविता लिखना प्रारम्भ किया था। आपकी रचनाओं को जहाँ स्थानीय पत्र बडी रुचि से प्रकाशित करते थे वहाँ आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने आपको बहुत प्रोत्साहन प्रदान किया था। आपकी एक कविता सबसे पहले 'सरस्वती' के जुलाई सन् 1916 के अक मे प्रकाशित हुई थी। इसके बाद तो आप देश की सभी प्रमुख पत्रिकाओं मे छपने लगे थे। आपने लगभग 20 पुस्तकें लिखी थी, लेकिन यह दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि उनमे से कोई भी प्रकाशित न हो सकी। आप जहाँ हिन्दी मे बड़ी सशक्त कविताएँ लिखा करते थे वहाँ उर्दू मे भी 'गुलजार' नाम से आपकी रचनाएं प्रकाशित हुआ करती थी। आपने 2 नाटक भी लिखे थे, जिनमे से 'दुर्गावती' नाटक अत्यन्त उत्कृष्ट बन पडा है। यदि यह नाटक प्रकाशित हो जाता तो आपकी गणना हिन्दी के शीर्षस्थ नाटककारो मे हो सकती थी। आपकी उर्दू रचनाएँ जहाँ 'कलामे गुलजार' नाम से प्रकाशित हुई है वहाँ आपकी 'केशर शतक' तथा 'कुसुमाकर विनोद' नामक कृतियो मे क्रमश. ब्रजभाषा और खडी बोली की कविताएँ सकलित की गई है।

आपने समीक्षात्मक रचना करने की दिशा मे भी अत्यन्त दक्षता प्राप्त कर ली थी। आपके विचारो की परिपक्वता का इसीसे अनुमान हो जाता है कि उन दिनो आपने छन्द-विहीन कविता करने वाले लोगो को अत्यन्त स्पष्ट तथा दो टूक शैली मे यह प्रताडना दी थी—"कुछ सज्जन ऐसे है, जो खड़ी बोली मे छन्द-रहित कविता लिखते है। मै उनके पक्ष मे नही हूँ। यदि वे छन्द-रहित कविता लिखते है तो गद्य-काव्य ही क्यो नही लिखते? पद्य मे लिखने की उनको आवश्यकता ही क्या है? परन्तु वास्तव मे भिन्नतुकान्त अथवा छन्द-रहित कविता लिखना उतना ही सरल है, जितना भोजन बनाने मे खिचडी या दलिया पकाना?" आप जहाँ गम्भीर रचनाएँ लिखने मे प्रवीण थे वहाँ हास्य रस की कविताएँ भी अत्यन्त सफलता पूर्वक लिखा करते थे।

आपका निधन 2 जून सन् 1955 को 62 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री देवीप्रसाद तिवारी 'घण्टाघर'

आपका जन्म मध्य प्रदेश के खण्डवा नामक नगर मे 6 मार्च सन् 1896 को हुआ था। आप श्री माखनलाल चतुर्वेदी के सम्पर्क के कारण हिन्दी कविता करने की ओर प्रवृत्त हुए थे। आप प्राय हास्य तथा व्यग्य-प्रधान रचनाएँ लिखा करते

थे और अपने समय के अच्छे व्यंग्य कवियों में आपकी गणना होती थी। आपकी रचनाएँ उन दिनो हिन्दी की सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थीं; किन्तु पुस्तक रूप मे उनका प्रकाशन नही हो सका। आप हिन्दी नाटकों मे अभिनय करने की कला में भी पूर्णत दक्ष थे।

आपका निधन 12 दिसम्बर सन् 1970 को हुआ था।

श्री देवीप्रसाद धवन 'विकल'

श्री 'विकल' का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रमुख औद्योगिक नगर कानपुर मे 5 मई सन् 1910 को हुआ था। उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप लेखन के क्षेत्र मे अवतरित हो गए थे और सर्वप्रथम आपने दिल्ली से प्रकाशित होने वाले 'महारथी' मासिक मे कार्य प्रारम्भ किया था। आपकी गणना हिन्दी के अच्छे कथाकारो मे की जाती है। कहानी तथा उपन्यास के क्षेत्र मे अपनी प्रतिभा से जहाँ आपने अनेक महत्त्वपूर्ण कृतियाँ प्रदान की है वहाँ नाटक-लेखन की दिशा मे भी आपको अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई थी। पत्रकार के रूप मे भी आपने 'महारथी' के अतिरिक्त 'सविता' तथा 'सुमित्रा' नामक मासिक पत्रिकाओ का सम्पादन कई वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। ये दोनो पत्रिकाएँ कानपुर से प्रकाशित हुआ करती थी।



आपकी प्रकाशित कृतियों मे 'आरक्षिता', 'आत्महत्या', 'चिनगारी', 'समस्या', 'सीधे-सादे रास्ते','तपस्या', 'भाभी', 'प्रभातपुर की रानी' 'आगा मीर', 'दिल्ली रहस्य', 'पाप और प्रकाश', 'प्रायश्चित्त', 'सोने का हिरन', 'थोडी देर हो गई', 'सुनहरे धब्बे', 'दो विद्रोही', 'उल्टे मार्ग', 'निरजन शर्मा', 'मैं पाषाण हूँ', 'दोषी कौन ?', 'उत्तराधिकार (उपन्यास)', 'दस कहानियाँ', 'प्रदर्शिनी', 'जन्म-पत्र' (कहानी), 'सन्त तुलसीदास', 'सरदार भगतसिह', 'चन्द्रशेखर आजाद', 'कलयुग', 'दिल्ली की रानी' 'ताशकन्द', तथा 'तुम मुझे खून दो' (नाटक) आदि प्रमुख है। आपने हिन्दी के प्रमुख साहित्यकारों के सस्मरण भी 'साहित्यकार निकट से' नामक पुस्तक मे प्रस्तुत किए है।

आपका निधन 5 मई सन् 1968 को हुआ था।

राय देवीप्रसाद 'पूर्ण'

श्री 'पूर्ण' जी का जन्म सन् 1868 मे मध्य प्रदेश के जबलपुर नामक नगर मे हुआ था। आपके पूर्वज उत्तर प्रदेश के कानपुर जनपद के भदरस ग्राम के निवासी से। आप जब केवल 4 वर्ष के शिशु ही थे तब आपके पिता श्री राय वशीधर का देहान्त हो गया था। फलस्वरूप आपके पालन-पोषण का भार आपके चाचा राय लीलाधर के ऊपर आ गया था। आपकी शैशवावस्था और विद्यार्थी-जीवन जबलपुर मे व्यतीत हुआ था। जबलपुर से बी० ए० करने के उपरान्त आप वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण करके कानपुर चले आए थे और यही पर वकालत की प्रैक्टिस करने लगे थे। आपकी गणना कानपुर के प्रसिद्ध वकीलो मे की जाती थी। आप जहाँ श्रीमती एनी बेसेण्ट की 'थियोसोफिकल सोसाइटी' के सक्रिय सदस्य रहे थे वहाँ 'कानपुर म्युनिसिपल बोर्ड' के भी कई वर्ष तक मेम्बर रहे थे। स्थानीय काग्रेस कमेटी के सभापति रहने के साथ-साथ लन्दन की 'रायल एशियाटिक सोसाइटी' के भी सदस्य रहे थे। आपने उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के गोरखपुर मे होने वाले अधिवेशन की अध्यक्षता भी की थी।

आप सस्कृत, उर्दू और फारसी आदि कई भाषाओ के ज्ञाता होने के अतिरिक्त हिन्दी और ब्रजभाषा के उच्चकोटि के कवि थे। आपने कविता करने का अभ्यास पण्डित ललिताप्रसाद त्रिवेदी 'ललित' के सान्निध्य मे किया था और उसमे पर्याप्त दाक्षिण्य प्राप्त कर लिया था। आप अपने समय

के अत्यन्त प्रौढ तथा दक्ष कवि थे। कानपुर की प्रख्यात साहित्यिक संस्था 'रसिक समाज' की ओर से आयोजित होने वाले समस्या-पूर्ति-समारोहो मे आप प्राय भाग लिया करते थे। इस सस्था मे श्री 'ललित' जी के अतिरिक्त श्री 'रत्नेश' तथा मन्नीलाल मिश्र 'द्विजमणिलाल' - जैसे उच्चकोटि के कवियो का समागम हुआ करता था। आपकी रचनाएँ 'रसिक समाज' की ओर से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'रसिक वाटिका' तथा 'रसिक मित्र' मे भी प्राय छपा करती थी। आपके द्वारा लिखित 'क्या हिन्दी मुर्दा भाषा है' शीर्षक खडी बोली की एक लम्बी कविता की यह पक्तियाँ



अन्धकार है वहाँ, जहाँ आदित्य नही है

मुर्दा है वह देश, जहाँ साहित्य नही है

आज भी प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी के कण्ठ की अमर वाणी हो गई हैं।

आप बहुमुखी प्रतिभा-सम्पन्न कवि थे। आपकी रचनाओ मे राष्ट्र-भक्ति और राज-भक्ति दोनो की वैसी ही भावनाएँ समाविष्ट रहती थी जैसी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की रचनाओ मे दृष्टिगत होती है। पहले-पहल आप ब्रजभाषा मे ही रचना किया करते थे, किन्तु बाद मे खडी बोली को भी आपने अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया था। उर्दू और फारसी के प्रचलित शब्दो तथा मुहावरो का प्रयोग भी आप अपनी खडी बोली की रचनाओ मे स्वच्छन्दतापूर्वक किया करते थे। आपने जहाँ महाकवि कालिदास के 'मेघदूत' का अनुवाद 'धाराधर धावन' नाम से ब्रजभाषा मे किया था वहाँ आपने सन् 1912 मे खडी बोली मे भी 'स्वदेशी कुण्डल' और 'वसन्त वियोग' नामक रचनाएँ प्रस्तुत की थी। आपकी अन्य रचनाओं मे 'मृत्युजय' (1904), 'प्रदर्शनी स्वागत' (1906), 'राज दर्शन' (1911) तथा 'रम्भा शुक सम्वाद' (1913) के नाम भी विशेष महत्त्व रखते है। आपने 'चन्द्रकला भानुकुमार' नाटक की रचना करके अपनी नाट्य-कला-लेखन-निपुणता भी प्रदर्शित की थी। आपकी समग्र रचनाओ को श्री लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी ने सम्पादित करके 'गंगा पुस्तकमाला लखनऊ' की ओर से 'पूर्ण सग्रह' नाम से प्रकाशित किया था। श्री हरदयाल सिंह के सम्पादन मे आपकी रचनाओं का एक और सकलन 'पूर्ण पराग' नाम से सन् 1939 मे प्रकाशित हुआ था। आपने अपनी रचनाओ मे कुण्डलिया, छप्पय, कवित्त, रोला तथा सवैया आदि अनेक छन्दो का प्रयोग प्रचुरता से किया था। आप ब्रजभाषा की परम्परावादी रचना करने के साथ-साथ खडी बोली मे आधुनिक भाव-धारा की कविताएँ लिखने मे भी पूर्णत दक्ष थे।

आपका निधन 30 जून सन् 1915 को हुआ था।

श्री देवीप्रसाद शुक्ल

श्री शुक्ल का जन्म सन् 1877 मे कानपुर मे हुआ था। उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त पहले आप कानपुर के क्राइस्ट चर्च कालेज मे अध्यापक नियुक्त हो गए थे और फिर प्रयाग विश्व-विद्यालय के हिन्दी-विभाग मे प्राध्यापक होकर इलाहाबाद चले गए थे। आपका महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय से भी अच्छा सम्पर्क था। इसी कारण आप प्रयाग विश्व-विद्यालय मे अध्यापन कार्य करने के साथ-साथ मालवीय जी द्वारा सस्थापित 'हिन्दू बोर्डिंग हाउस' के सुपरिटेंडेंट का कार्य भी किया करते थे। जिन दिनो सन् 1920 में स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण आचार्य श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी ने



'सरस्वती' के सम्पादन से अवकाश ग्रहण कर लिया था तब आपने ही एक वर्ष तक 'सरस्वती' का सम्पादन किया था।

श्री शुक्ल जी की सहायता के लिए जबलपुर से श्री कामताप्रसाद गुरु वहाँ आ गए थे, जो 'सरस्वती' के साथ-साथ 'बाल सखा' के सम्पादन-कार्य का निर्वाह भी किया करते थे। गुरुजी जबलपुर के 'हितकारिणी महाविद्यालय' मे अध्यापक थे और कुछ समय की छुट्टी लेकर ही वहाँ आए थे। आपकी सहायता के लिए श्री देवीदत्त शुक्ल की भी नियुक्ति इण्डियन प्रेस के 'साहित्य विभाग' मे हो गई थी। आपने अपने अध्यापन-कार्य के साथ-साथ 'सरस्वती' के सम्पादन का कार्य बडी कुशलता से सम्पन्न किया था।

आपका निधन 82 वर्ष की आयु मे सन् 1959 मे हुआ था।

श्री देवीरत्न अवस्थी 'करील'

श्री 'करील' का जन्म उत्तर प्रदेश के रायबरेली जनपद के 'बरदर' नामक स्थान मे 7 अगस्त सन् 1912 को हुआ था। आपने क्रमश आगरा विश्वविद्यालय से बी० ए०, नागपुर विश्वविद्यालय से एम० ए० तथा अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन से साहित्यरत्न की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। आपने सन् 1930 के नमक सत्याग्रह, सन् 1932 के करबन्दी आदोलन तथा सन् 1940 और 1942 के आन्दोलनों मे सक्रिय रूप से भाग लेकर अनेक बार कारावास की नृशस यातनाएँ भोगी थी। आप कई वर्ष तक उत्तर प्रदेश के प्रातीय रक्षक दल मे सेवा-रत रहे थे।

आप ब्रजभाषा तथा खड़ी बोली दोनो मे ही बडी सशक्त रचनाएँ किया करते थे। आपकी रचनाओ मे 'देवार्चन' नामक काव्य अत्यन्त प्रसिद्ध है। इसकी रचना आपने गोस्वामी तुलसीदास को लक्ष्य करके की थी। उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से आपका यह काव्य पुरस्कृत भी हुआ था। आपने 'मधुपर्क' नाम से एक काव्य ब्रजभाषा मे भी लिखा था। बैसवारी भाषा मे भी आपने 'लोकरीति' नामक एक काव्य की रचना की थी। 'सर्वोदय' नामक खडी बोली के काव्य मे आपने महात्मा गाधी के लोकोत्तर चरित्र का विश्लेषण किया है। आपने सस्कृत के 'रघुवंश', 'कुमारसम्भव' और 'गीत गोविन्द' काव्यो के भी हिन्दी पद्यानुवाद प्रस्तुत किए थे। इनमे से 'रघुवश' का प्रकाशन साहित्य अकादेमी नई दिल्ली की ओर से हुआ था।

आपका निधन सन् 1977 मे हुआ था।

श्री देवीलाल सामर

श्री सामर का जन्म राजस्थान के प्रख्यात नगर उदयपुर के खैरादीवाडा नामक मोहल्ले मे 28 जून सन् 1911 को हुआ था। आप जब माता के पेट मे ही थे कि आपके पिता का देहावसान हो गया था और आपका लालन-पालन आपकी ननसाल मे हुआ था।



अपनी प्रारम्भिक शिक्षा उदयपुर मे पूर्ण करने के उपरान्त आप सन् 1927 मे आगे की पढाई जारी रखने की दृष्टि से काशी चले गए। आप वहाँ से इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद सन् 1930 मे बी० एस-सी० की परीक्षा की तैयारी कर रहे थे कि अचानक महात्मा गाधी के द्वारा 'सत्याग्रह आन्दोलन' प्रारम्भ हो गया। फलस्वरूप आप पढाई बीच मे छोडकर उदयपुर लौट आए। आपके उदयपुर वापिस लौटने मे आपकी नानी का विशेष आग्रह था। इस आग्रह के कारण ही आप फिर अपनी आगे की पढाई पूरी करने के लिए बनारस न जा सके और उदयपुर मे रहते हुए आपने लोककलाओ, नाटको और रासलीलाओ मे रुचि लेना प्रारम्भ कर दिया।

उदयपुर मे आप प्रख्यात शिक्षा शास्त्री डॉ० मोहनसिह महता की प्रेरणा पर उनकी सस्था 'विद्या भवन' मे काम करने लगे। आपने जिस समय इस संस्था मे कार्य करना

प्रारम्भ किया था तब उसमे केवल 3 शिक्षक ही थे और चपरासी से क्लर्क तक का सारा कार्य आपको ही करना होता था। आपके उन दिनो के साथियो मे भारत सरकार के भूतपूर्व शिक्षा मन्त्री श्री कालूलाल श्रीमाली भी थे। 'विद्या-भवन' में ही सामर जी ने 'लोक कला मण्डल' की स्थापना करके लोक कला के क्षेत्र मे अनेक नये प्रयोग किए थे। अपने इस कार्य-काल मे आपने बी० ए० और एम० ए० की परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण कर ली थी। शिक्षण और लोक-कला सम्बन्धी विभिन्न प्रयोगो मे व्यस्त रहते हुए आपने अपनी लेखनी का चमत्कार भी दिखलाया। आप एक उत्कृष्ट कवि, सफल नाटककार और भावना-प्रवण गद्य-गीत-लेखक के रूप मे भी विख्यात हो गए थे।

सन् 1940 मे आप कुछ समय के लिए भारत-विख्यात नर्तक श्री उदयशकर के पास अलमोडा मे भी रहे थे। वहाँ पर रहकर आपने नृत्य-कला मे जो कौशल प्राप्त किया था उसके कारण आप उनके 100 शिक्षार्थियो मे सर्वश्रेष्ठ घोषित किये गए थे। आपने जहाँ श्री उदयशकर की 'कल्पना' फिल्म मे मुन्दर भूमिका का सफल निर्वाह किया था वहाँ अनेक गीतों और सवादो के पुनर्लेखन मे भी उल्लेखनीय सहायता की थी। इस बीच श्री सामर जी से 'लोक कला मण्डल' की भूमिका पर विद्या भवन के अधिकारियो का मतभेद हो गया और आपने तुरन्त वहाँ से त्याग पत्र देकर 22 फरवरी सन् 1952 को अलग ही 'लोक कला मण्डल' की विधिवत् स्थापना कर दी। प्रारम्भ मे तो आपको अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, किन्तु धीरे-धीरे वे कठिनाइयाँ दूर होती गई और आप लोक-कलाओ के उत्कर्ष के लिए पूर्णत समर्पित हो गए। अपनी इस सस्था के माध्यम से आपने राजस्थान मे अनेक लोक-कलाओ का पुनरुद्धार करने के साथ-साथ 'कठपुतली कला' को सफलता के चरम शिखर पर पहुँचा दिया। आपकी सफलता का सबसे बडा प्रमाण यही है कि आपने एकाधिक बार विदेशो मे जाकर यहाँ की लोक-कलाओं के प्रति लोगो की अभिरुचि बढाई। आज तो स्थिति यह है कि सामर जी की यह संस्था हमारे देश की सर्वोच्च सस्थाओ मे गिनी जाती है।

आपकी कला-प्रियता का सबसे उत्कृष्ट प्रमाण यह है कि आपको जहाँ सन् 1968 मे भारत सरकार की ओर से 'पद्मश्री' की सम्मानोपाधि प्रदान की गई थी वहाँ आप कई वर्ष तक 'राजस्थान संगीत नाटक अकादमी' के अध्यक्ष भी रहे थे। आपको इलाहाबाद की 'कालिदास अकादमी' ने जहाँ 'लोकनाट्यश्री' की उपाधि से अलंकृत किया था वहाँ राजस्थान विद्यापीठ उदयपुर की ओर से 'कलानिधि' का अलकरण प्रदान किया गया था। आपने जहाँ कई बार ईरान, भूटान, सिक्किम स्पेन, डेनमार्क, स्वीडेन, इंगलैण्ड और रूमानिया आदि देशों की सांस्कृतिक यात्राएँ की थी वहाँ अनेक बार 'अन्तर्राष्ट्रीय कठपुतली समारोहों' मे भारत से बाहर जाकर उसका प्रतिनिधित्व किया था। सन् 1971 मे आपको अपने जीवन की षष्टि-प्रविष्टि के अवसर पर 'गेहरो फूल गुलाब रो' नामक जो अभिनन्दन ग्रन्थ भेट किया गया था उससे आपके व्यक्तित्व की गरिमा का अच्छा परिचय मिलता है।

आप जहाँ उच्चकोटि के कला-मर्मज्ञ थे वहाँ आपने अपनी लेखनी के चमत्कार से भी समस्त साहित्य-प्रेमियो को कृतार्थ किया था। आपने जहाँ कला-समीक्षा-सम्बन्धी ग्रन्थ लिखने मे अपनी प्रतिभा प्रदर्शित की थी वहाँ नाटक और कठ-पुतली-कला से सम्बन्धित अनेक पुस्तके लिखी थी। आपकी ऐसी कृतियो मे 'आत्मा की खोज', 'मृत्यु के उपरान्त', 'चन्द्रलोक', 'राजस्थान का भीष्म' (सभी नाटक), 'भारतीय ललित कलाएँ', 'राजस्थान के रावल', 'राजस्थान के भवाई', 'लोक-कला निबन्धावली', 'कठपुतली' 'कला और समस्याएँ', 'लोकधर्मी प्रदर्शनकारी कलाएँ' तथा 'लोककला निबन्धावली' के नाम विशेष उल्लेखनीय है। आपने 'लोक-कला' नामक पत्रिका के सम्पादन के अतिरिक्त 'भारतीय लोक कला मण्डल' द्वारा 'रगायन' नामक पत्रिका भी प्रारम्भ कराई थी। इस पत्रिका का सम्पादन आजकल डॉ० महेन्द्र भानावत कर रहे हैं।

आपका निधन 3 दिसम्बर सन् 1981 को हुआ था।

डॉ० देवीशंकर अवस्थी

श्री अवस्थी का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के सथनी बाला खेडा नामक ग्राम में 5 अप्रैल सन् 1930 को हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा कानपुर मे हुई थी। आगरा

विश्वविद्यालय से एम० ए०(हिन्दी) करने के उपरान्त आपने 'अठारहवी शती के ब्रजभाषा-काव्य मे प्रेमा भक्ति' विषय पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-एच०डी० की उपाधि प्राप्त की थी। सन् 1953 से सन् 1961 तक डी० ए० वी० कालेज कानपुर मे अध्यापन-कार्य करने के उपरान्त आप सन् 1961 में दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्रवक्ता बनकर यहाँ आ गए थे।

अपने इस अध्यापन-काल में आपने जहाँ हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाओं का गहनता से अध्ययन किया वहाँ अपने लेखन के द्वारा समीक्षा के क्षेत्र मे अपनी एक विशिष्ट पहचान बना ली थी। 'साठोत्तरी कहानी' और 'नई कहानी' पर होने वाले विवादों मे आपने अपनी प्रखर मेधा के द्वारा हिन्दी-समीक्षा को सर्वथा नए आयाम प्रदान किए थे। दिसम्बर सन् 1965 मे कलकत्ता मे हिन्दी-कहानी पर जो एक विशेष गोष्ठी आयोजित की गई थी उसमे आपका 'समापन भाषण' सर्वथा ऐतिहासिक था। वह भाषण आपकी समीक्षा-कृति 'रचना और आलोचना' मे प्रकाशित हो चुका है।



आपने समकालीन भारतीय समीक्षा और पश्चिमी आलोचना के सिद्धान्तों को दृष्टि मे रखकर एक ऐसे ग्रन्थ का सम्पादन किया था, जो हिन्दी समीक्षा की प्रगति को नापने-जोखने मे अभूतपूर्व सहायता करता है। आपकी मृत्यु के उपरान्त आपके इस ग्रन्थ का प्रकाशन 'मैकमिलन एण्ड कम्पनी दिल्ली' की ओर से 'साहित्य-विधाओं की प्रकृति' नाम से प्रकाशित हुआ है। आपके द्वारा सम्पादित अन्य ग्रन्थों मे 'कहानी विविधा', 'विवेक के रंग' तथा 'नई कहानी : सन्दर्भ और प्रकृति' के नाम भी अपनी विशिष्टता रखते है। श्री अजितकुमार के साथ सम्पादित 'कविताएँ 1954' भी आपके द्वारा सम्पादित कृतियों में उल्लेखनीय है। आपकी अन्य मौलिक रचनाओं में शोध प्रबन्ध के अतिरिक्त 'आलोचना और अलोचना' भी प्रमुख रूप से स्मरणीय है। आपने 'कलजुग' नाम से एक पत्रिका का सम्पादन भी किया था।

आपका निधन 13 जनवरी सन् 1966 को स्कूटर-दुर्घटना के कारण हुआ था।

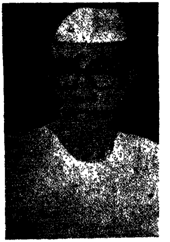
वैद्य देवीशरण गर्ग

श्री गर्ग का जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जनपद के विजयगढ नामक कस्बे मे 18 जून सन् 1911 को हुआ था। आपका जन्म एक ऐसे वैश्य परिवार मे हुआ था, जिसमे कई पीढियो से चिकित्सा-व्यवसाय का कार्य होता आया था। आपके पितामह श्री नारायणदास और पिता श्री राधावल्लभ जी अपने समय के उस क्षेत्र के अच्छे चिकित्सको मे गिने जाते थे। आप जब केवल 7 वर्ष के ही थे कि आपके पिता देव-लोक को प्रयाण कर गए। आपकी माता श्रीमती लड़ैती देवी ने अपने कच्चे परिवार तथा पारम्परिक कार्य की देख-भाल के लिए अपने भाई श्री बाँकेलालजी को विजयगढ़ बुला लिया और उन्हीकी देख-रेख मे आपके पिता के द्वारा सचालित 'धन्वन्तरि कार्यालय' तथा 'धन्वन्तरि' पत्र का कार्य सुचारु रूप से चलने लगा। आपके पिता जहाँ 'धनवन्तरि कार्यालय' के द्वारा आयुर्वेदीय औषधियो के निर्माण का कार्य किया करते थे वहाँ 'धन्वन्तरि' नामक मासिक पत्र का सम्पादन भी किया करते थे।

देवीशरण जी की प्रारम्भिक शिक्षा विजयगढ के प्राइमरी स्कूल मे हुई थी और बाद मे आप सोरो (एटा) की सस्कृत पाठशाला मे सस्कृत के अध्ययनार्थ भेजे गए थे। वहाँ पर आपके गुरु श्री गगावल्लभ पाण्डेय ने आपको सस्कृत का अच्छा ज्ञान करा दिया था। जब आपने सस्कृत का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया तब आपके मामा श्री बाँकेलाल ने आपको आयुर्वेद के अध्ययन के लिए खुर्जा (बुलन्दशहर) भेजा। जहाँ पर आपने 'आयुर्वेद विद्यालय' के आचार्य श्री नारायणदत्तजी की देख-रेख मे 4 वर्ष रहकर आयुर्वेद के

सभी प्रमुख ग्रन्थो का विधिवत् अध्ययन किया था। इस प्रकार आप सस्कृतत था आयुर्वेद का अच्छा ज्ञान प्राप्त करके विजयगढ आ गए और अपने मामाजी के कार्यों मे सहयोग करने लगे।

धीरे-धीरे आपने अपने सभी कार्यों को भली-भाँति समझ लिया। लगभग 4 वर्ष बाद जब आप पूर्णत सक्षम हो गए तब आपके मामा श्री बाँकेलालजी ने आपको पूरा कार्य-भार सौपकर अपना कार्य अलग 'प्राणाचार्य भवन' नाम से प्रारम्भ कर दिया। जब आपके कन्धो पर सारा कार्य-भार आ गया तो आपने दिन-रात एक करके उसे अच्छी तरह सँभाल लिया। कार्यालय के कार्य को देखने के साथ-साथ आप रोगियो की चिकित्सा-व्यवस्था करने मे भी पूर्णत जागरूक रहते थे। साथ ही 'धन्वन्तरि' मासिक के सम्पादन मे भी आपने पूर्ण तत्परता तथा योग्यता का परिचय दिया था। तब तक आपके छोटे भाई श्री ज्वालाशरण जी भी अपनी बी० एस-सी० तक की शिक्षा पूरी करके विजयगढ आ गए थे। परिणामस्वरूप दोनो भाइयो ने मिलकर लगभग 4 वर्ष तक 'धन्वन्तरि कार्यालय' के कार्य-व्यापार को इतनी सफलतापूर्वक चलाया कि देश-भर मे 'धन्वन्तरि' पत्र और उसकी सचालिका सस्था 'धन्वन्तरि कार्यालय' की धूम मच गई।



आपके जीवन मे सन् 1972 मे फिर एक मोड उस समय आया जब आपके भाई श्री ज्वालाशरण ने 'धन्वन्तरि कार्यालय' तथा 'धन्वन्तरि' मासिक के विभाजन की माँग करके अपना कारोबार अलग करने की इच्छा प्रकट की। आपको अपने छोटे भाई के इस प्रस्ताव से बहुत धक्का लगा, और आपने इस बात का बहुत प्रयत्न किया कि इस कार्य का विभाजन न हो। किन्तु जब आपकी कुछ भी न चली तो विवश होकर आपको अपने कार-बार का विभाजन करना पडा। विभाजन में 'धन्वन्तरि' मासिक पत्र आपके छोटे भाई को मिला और औषध-निर्माण का 'धन्वन्तरि कार्यालय' आपसे हिस्से मे आया। हमारे पाठक इसी बात मे यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि उन दिनो अकेले 'धन्वन्तरि' मासिक का कितना महत्त्व था। 'धन्वन्तरि' ने हिन्दी के आयुर्वेद-सम्बन्धी पत्रों मे जो अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था उसके पीछे आपकी निष्ठा, तत्परता तथा गहन परिश्रमशीलता ही थी। 'धन्वन्तरि' के अनेक महत्त्वपूर्ण विशेषांको ने आयुर्वेद-चिकित्सा के क्षेत्र मे जो लोकप्रियता प्राप्त की थी उसमे श्री देवीशरणजी की सूझ-बूझ तथा सम्पादन-पटुता का बहुत बडा हाथ था। आपने अच्छे-खासे जमे हुए पत्र को अपने छोटे भाई को इस प्रकार सौप दिया जैसे कुछ हुआ ही न हो और अपना एक अलग पत्र 'सुधानिधि' नाम से प्रकाशित करना प्रारम्भ कर दिया।

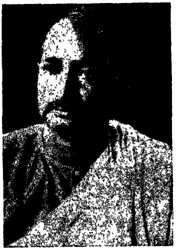
आपके सम्पादन मे 'धन्वन्तरि' के जो महत्त्वपूर्ण विशेषाक प्रकाशित हुए थे उनमे 'चरक चिकित्साक', 'माधव निदानाक', 'गुप्त सिद्ध प्रयोगाक', 'शिशु रोगाक', 'प्राकृतिक चिकित्साक', 'पुरुष रोगाक', 'शिशु रोगाक', 'चिकित्सा विशेषाक' तथा 'कल्प पच कर्म विशेषाक' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। इन विशेषाको के महत्त्व का इसी बात से अनुमान लगाया जा सकता है कि इनमे से जहाँ 'वनौषधि विशेषाक' विशालकाय 6 भागो मे पूर्ण हुआ था वहाँ 'गुप्त सिद्ध प्रयोगाक' तथा 'चिकित्सा विशेषाक' क्रमश 4 तथा 2 भागो मे प्रकाशित हुए थे। आप आयुर्वेदिक चिकित्सा-प्रणाली को सफल बनाने के लिए कितनी समर्पण भावना रखते थे उसका कुछ परिचय आपके द्वारा सम्पादित 'सुधानिधि' पत्र के प्रथम विशेषाक के सम्पादकीय की इन पक्तियों से भली-भाँति मिल जाता है—"आयुर्वेदीय पत्रकारिता मेरे जीवन की साध रही है। 'धन्वन्तरि' मासिक को मैं अपना प्राण मानता था, वर्षों तक अनथक परिश्रम और प्रचुर हानि उठाकर मैं उसे उस स्थिति मे पहुँचा सका था जिसकी सुखद छाया मे हम शान्ति अनुभव कर सकते थे। किन्तु 'धन्वन्तरि' रूपी प्राण मेरे पास से चला गया। इस प्राण के जाने पर मुझे निष्प्राण होना कदापि स्वीकार नही था। 'चरैवेति-चरैवेति' जीवन का मुख्य मन्त्र मानने वाले पुरुषार्थ

के लिए यह नई चुनौती उभरी थी।" फलस्वरूप आपने आचार्य रघुवीरप्रसाद त्रिवेदी के सहयोग से 'सुधानिधि' पत्र प्रकाशित किया था। 'सुधानिधि' का 'महिला रोग-चिकित्सांक' नामक पहला विशेषांक जब हिन्दी पाठकों के समक्ष आया था तो उन्होंने उसे विस्मय के साथ देखा था। आपके सम्पादन में दूसरा 'पुरुष-चिकित्सांक' अभी छप ही रहा था कि आप सदा-सर्वदा के लिए इस संसार से विदा हो गए। आयुर्वेदिक पत्रकारिता के इतिहास में आप 'धन्वन्तरि' तथा 'सुधानिधि'-जैसे महत्त्वपूर्ण पत्रों का सम्पादन करने के कारण सदा-सर्वदा अमर रहेंगे।

आपका निधन 18 मार्च सन् 1974 को हुआ था।

श्री देवेन्द्रनाथ शास्त्री सांख्यतीर्थ

श्री शास्त्री का जन्म उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर जनपद के सिकन्दराबाद नामक स्थान में सन् 1892 में हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा गुरुकुल महाविद्यालय सिकन्दराबाद में



हुई थी और आपने वहाँ से स्नातक होने के उपरान्त भी काशी में रहकर संस्कृत के अनेक ग्रन्थों का गम्भीर अध्ययन किया था। पंजाब विश्वविद्यालय से 'शास्त्री' तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय से 'सांख्यतीर्थ' की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के पश्चात् आप कार्य-क्षेत्र में अवतरित हो गए थे और अपने पिता पण्डित मुरारीलाल शर्मा की भाँति ही प्रायः आर्यसमाज के माध्यम से सांस्कृतिक जागरण का कार्य करने में संलग्न रहते थे।

कुछ समय गुरुकुल सिकन्दराबाद में अध्यापन-कार्य करने के बाद आप आर्य समाज के प्रचार-कार्य में ही लग गए थे। आप जहाँ उच्चकोटि के विद्वान् तथा प्रखर वाग्मी थे वहाँ आपने आर्य विचार-धारा को दृष्टि में रखकर कुछ ग्रन्थ भी लिखे थे। आपके द्वारा लिखित उपनिषदों की टीका के अतिरिक्त 'नास्तिकवाद' तथा 'सिकन्दराबाद शास्त्रार्थ' प्रमुख हैं। 'नास्तिकवाद' नामक ग्रन्थ की रचना आपने 'महर्षि दयानन्द जन्म-शताब्दी समारोह' के अवसर पर की थी। आप जैन साहित्य तथा दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान् थे और प्रायः जैनियों से शास्त्रार्थ भी किया करते थे।

आपका निधन 15 अक्तूबर सन् 1942 को हुआ था।

श्री देवेन्द्रप्रसाद जैन

आपका जन्म बिहार प्रदेश के शाहाबाद (अब भोजपुर) जनपद के आरा नामक नगर में 27 अक्तूबर सन् 1888 को हुआ था। आपके पिता श्री सुपार्श्वदास बड़ी ही धार्मिक प्रकृति के सज्जन थे। जब आपकी आयु केवल 3 मास की ही थी तब आपके पिता



ने पटना में गंगा में जल-समाधि ले ली थी। यह भी एक संयोग था कि उसी दिन आपका बी० एल० का परीक्षा-परिणाम निकला था, जिसमें आप प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए थे। पितृ-हीन बालक देवेन्द्रप्रसाद की प्रारंभिक शिक्षा पहले आरा में हुई थी और उसके बाद आपने काशी के 'सेण्ट्रल हिन्दू कालेज' में प्रवेश लिया था। उन दिनों इस कालेज में पण्डित ईश्वरीप्रसाद शर्मा ('मनोरंजन'-सम्पादक) आपके सहपाठी थे। इस कालेज के प्रिंसिपल जार्ज सिडनी अरण्डेल आप पर बहुत

अनुरक्त थे और आपका बड़ा ख़याल रखा करते थे। आपने भी अपनी गुरु-भक्ति का परिचय उनके द्वारा लिखित एक अँग्रेजी पुस्तक का हिन्दी-अनुवाद 'सेवा मार्ग' नाम से प्रकाशित करके दिया था।

आपने सन् 1909 मे काशी के 'स्याद्वाद विद्यालय' का कार्य-भार ग्रहण करने के साथ-साथ वहाँ पर 'सेण्ट्रल जैन पब्लिशिंग हाउस' भी स्थापित किया था। इस सस्था के माध्यम से आपने जहाँ अँग्रेजी मे एक 'जैन धर्म ग्रन्थ माला' का प्रकाशन किया था वहाँ स्वरचित 'ऐतिहासिक स्त्रियाँ', 'अध्यापिका जानकी बाई की जीवनी' और ब्रह्मचारिणी चन्दाबाई द्वारा लिखित 'उपदेश रत्नमाला' नामक पुस्तके भी प्रकाशित की थी। इसके उपरान्त आपने सन् 1915 मे आरा मे 'प्रेम-मन्दिर' नामक प्रकाशन-संस्था स्थापित करके उसकी ओर से हिन्दी पुस्तको का प्रकाशन-कार्य किया था। इस संस्था की ओर से प्रकाशित की गई पुस्तको का उन दिनो हिन्दी-जगत् मे बडा स्वागत हुआ था। उनका सुरुचि-पूर्ण मुद्रण और आकर्षक कलेवर अत्यन्त नेत्र-रजक होता था।

आपको जहाँ उत्तम से उत्तम ग्रन्थो के सग्रह करने का शौक था वहाँ भारत के समस्त जैन-तीर्थों के चित्र भी आपके पास इकट्ठे हो गए थे। आपने इन चित्रो के विषय मे अनेक पुरातत्त्ववेत्ता विद्वानों से सम्पर्क करके उनके ऐतिहासिक विवरण और टिप्पणियाँ लिखवाई थी। आप इस ग्रन्थ को प्रकाशित करने का विचार कर ही रहे थे कि अचानक आप इस ससार मे विदा हो गए। यदि यह ग्रन्थ प्रकाशित हो जाता तो हिन्दी के भण्डार मे एक अभिवृद्धि हो जाती। आप कुछ समय के लिए काशी से कलकत्ता भी गए थे, जहाँ पर आपने 'वगीय सर्वधर्म परिषद्' नामक सस्था की स्थापना की थी। आपने इस सस्था के द्वारा बिहार तथा बंगाल में भारतीय सस्कृति का प्रचार करने की दिशा में अत्यन्त उल्लेखनीय कार्य किया था।

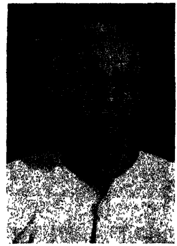
आप जहाँ उच्चकोटि के संस्कृति एव धर्म-प्रेमी थे वहाँ अच्छे लेखक भी थे। आपने अपने लेखन में अपनी जिस बहु-मुखी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय प्रस्तुत किया था वह वास्तव मे आपकी अध्ययनशीलता का परिचायक है। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'प्रेम कली', 'प्रेम पुष्पाजलि', 'भावना-लहरी', 'रसाल वन', 'त्रिवेणी', 'प्रेम धर्म' तथा 'ऐतिहासिक स्त्रियाँ' आदि उल्लेखनीय हैं। हिन्दी-प्रकाशन के इतिहास मे आपकी सस्था 'प्रेम मन्दिर' की ओर से प्रकाशित पुस्तको का सामग्री और स्तर दोनों ही दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है।

आपका निधन 17 मार्च सन् 1921 को शीतला रोग के कारण कलकत्ता मे हुआ था।

ठाकुर देशराज जघीना

आपका जन्म राजस्थान की भरतपुर स्टेट के एक गाँव जघीना मे सन् 1901 मे हुआ था। यद्यपि आपकी शिक्षा-दीक्षा साधारण ही हुई थी, किन्तु अपने स्वाध्याय के बल पर आपने बहुत अधिक ज्ञान अर्जित कर लिया था। आपका स्थान भरतपुर राज्य के सामाजिक एव राजनीतिक क्षेत्र मे सर्वथा विशिष्ट तथा अन्यतम था। पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपकी सेवाएँ सर्वथा अभिनन्दनीय रही थीं। आपने 'राजस्थान सन्देश', 'गणेश', 'किसान सन्देश', 'किसान जगत्' और 'नव जागृति' नामक अनेक पत्रो का सम्पादन अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था।

आप जहाँ उच्चकोटि निर्भीक पत्रकार थे वहाँ आपने अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो की रचना भी की थी। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थो मे



'जाट इतिहास','सिख इतिहास', 'किसान राज्य', 'आर्थिक कठिनाइयाँ', 'गुरु मत दर्शन', 'जाट राष्ट्र निर्माता' और 'तरुणाई के बोल' के नाम विशेष उल्लेख्य है। प्रख्यात सामाजिक नेता और हिन्दी-प्रेमी स्वामी केशवानन्द को जो अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया गया था उसका सम्पादन भी आपने ही किया था।

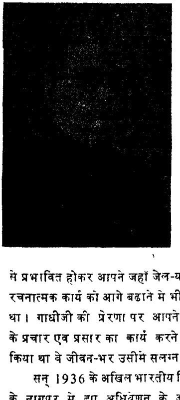
काग्रेस के साथ घनिष्ठता से जुड़े रहने के कारण आपने

'भरतपुर राज्य प्रजामण्डल' के माध्यम से भरतपुर की जनता में जो कार्य किया था वह आपकी कर्मठता का परिचायक है। आपने सन् 1930, 1939 और 1948 मे कई बार जेल-यात्राएँ भी की थी। भरतपुर के अतिरिक्त अजमेर, जोधपुर, बीकानेर, जयपुर और अलवर आदि राज्यो मे भी आपने स्मरणीय सेवाएँ की थी।

आपका निधन 17 अप्रैल सन् 1970 को हुआ था।

श्री दौलतराम शर्मा

श्री शर्मा जी का जन्म अविभाजित पंजाब के स्यालकोट जनपद के शहजादा नामक ग्राम मे सन् 1904 मे हुआ था।



छोटी-सी आयु मे ही पिता का असामयिक स्वर्गवास हो जाने के कारण आप सिन्ध चले गए और भारत-विभाजन के समय तक वही रहे। आपने वहाँ अनेक कठिनाइयों के बावजूद सामाजिक क्षेत्र मे अपना प्रमुख स्थान बना लिया था। महात्मा गाधी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर आपने जहाँ जेल-यात्रा की थी वहाँ उनके रचनात्मक कार्य को आगे बढाने मे भी खुलकर कार्य किया था। गाधीजी की प्रेरणा पर आपने सिन्ध प्रदेश मे हिन्दी के प्रचार एव प्रसार का कार्य करने का जो पुनीत सकल्प किया था वे जीवन-भर उसीमें सलग्न रहे।

सन् 1936 के अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के नागपुर मे हुए अधिवेशन के अवसर पर दक्षिणेतर अहिन्दी-भाषी प्रान्तो मे हिन्दी का प्रचार करने के निमित्त 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' नामक जिस सस्था की स्थापना की गई थी उसकी शाखा जब सन् 1938 मे सिन्ध मे स्थापित की गई तब आप ही उसके सचालक नियुक्त किये गए थे। शर्मा जी ने अपनी अटूट लगन तथा अध्यवसाय से जहाँ सिन्ध प्रान्त मे हिन्दी-प्रचार के 70 केन्द्र खोले वहाँ इन केन्द्रो से लगभग 5 हजार विद्यार्थियो को राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की हिन्दी परीक्षाओं मे भी बैठाया था।

भारत-विभाजन के उपरान्त शर्मा जी राजस्थान मे आ गए और यहाँ पर रहते हुए आपने सिन्ध तथा पजाब मे उजडकर आए हुए शरणार्थियो की जी-जान से सेवा की। राजस्थान मे स्थापित 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' की शाखा के सचालक के रूप मे भी आपने हिन्दी-प्रचार का जो कार्य किया वह सर्वविदित है। आपका यह कार्य केवल सिन्धी और पजाबियों तक ही सीमित न रहकर सारे प्रदेश मे व्याप्त हो गया था। यह आपकी अटूट लगन और अभूतपूर्व अध्यवसाय का ही परिणाम है कि आज राजस्थान मे समिति के 200 से अधिक केन्द्र हैं। यहाँ से अभी तक एक लाख से अधिक व्यक्ति समिति की हिन्दी-परीक्षाओं मे सम्मिलित हो चुके है। जयपुर मे हिन्दी-भवन बनाने की भी आपकी योजना थी।

आप जहाँ दृढ निश्चयी और ध्येयनिष्ठ समाज-सेवक के रूप मे जाने जाते थे वहाँ आप उच्चकोटि के लेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित कहानियो का एक सकलन 'कोरी डिगरियाँ' नाम से प्रकाशित हो चुका है। इन कहानियो मे से प्राय सभी आकाशवाणी के जयपुर केन्द्र से प्रसारित होने के साथ-साथ अधिकाश पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हो चुकी है। यद्यपि शर्मा जी के पास हिन्दी की कोई योग्यता-उपाधि नही थी, परन्तु फिर भी आपके लेखन मे किसी प्रकार की कोई कमी दृष्टिगत नही होती। आपकी कहानियो मे 'कला' की बजाय 'सोद्देश्यता' अधिक परिलक्षित होती है। विभिन्न सामाजिक कुरीतियों और समाज मे प्रचलित मिथ्या आडम्बरो पर करारी चोट करना ही आपके कहानीकार का मुख्य उद्देश्य था। आपने थाईलैण्ड, कम्बोडिया, वियतनाम, हांगकाग, जापान, सिंगापुर आदि अनेक देशो की यात्राएँ करके वहाँ पर हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि की उपादेयता के सम्बन्ध मे अनेक भाषण देकर हिन्दी के लिए समुचित वातावरण तैयार किया था।

आपका निधन 9 नवम्बर सन् 1971 को जयपुर मे हुआ था।

मास्टर द्वारकाप्रसाद अग्रवाल

मास्टर जी का जन्म सन् 1841 मे उत्तर प्रदेश के इटावा नगर के कटरा सेवाकली नामक मोहल्ले मे हुआ था। आपके



पिता श्री हरदयाल जी इटावा मे सर्राफे का काम करते थे। शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त आप गवर्नमेण्ट हाई स्कूल इटावा मे अँग्रेजी के अध्यापक हो गए थे। बाद मे आपका स्थानान्तरण इलाहाबाद के लिए हो गया था। इलाहाबाद मे रहते हुए आपने 'मैट्रिकुलेशन ट्रासलेशन' और 'मिडिल स्कूल ट्रासलेशन' नामक पुस्तके तैयार करके प्रकाशित की थी। आपके 'रामनारायणलाल' और 'रामदयाल अग्रवाल' नामक दो पुत्र थे। जो बाद में प्रकाशन-व्यवसाय मे पडकर 'रामनारायणलाल' तथा 'रामदयाल अगरवाला' के नाम से विख्यात हुए थे। यहाँ रहते हुए ही आप सेवा-निवृत्त हुए थे।

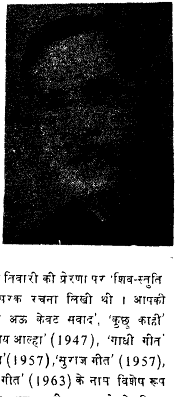
क्योकि 'रामनारायणलाल' मास्टर द्वारकाप्रसाद के ज्येष्ठ पुत्र थे अत आप उन्हीके साथ रहकर उनके प्रकाशन-व्यवसाय मे सहयोग देने लगे थे। आपके निरीक्षण मे जहाँ आपके ज्येष्ठ पुत्र का प्रकाशन-व्यवसाय दिन-प्रतिदिन उन्नत होता गया था वहाँ आपके कनिष्ठ पुत्र ने भी पुस्तक प्रकाशन के क्षेत्र मे अच्छी ख्याति प्राप्त कर ली थी। 'रामनारायणलाल बुकसेलर' सस्था के माध्यम से आपने विभिन्न पाठ्य पुस्तको के प्रकाशन के साथ-साथ उच्चकोटि की साहित्यिक पुस्तके भी प्रकाशित की थी। इसी प्रकार आपके दूसरे पुत्र द्वारा सचालित 'रामदयाल अगरवाला' फर्म भी प्रकाशन क्षेत्र मे महत्त्वपूर्ण रही है।

आपका निधन 95 वर्ष की आयु मे सन् 1935 मे हुआ था।

श्री द्वारकाप्रसाद तिवारी 'विप्र'

श्री 'विप्र' का जन्म मध्य प्रदेश के विलासपुर नगर मे 6 जुलाई सन् 1908 को हुआ था। आपके पिता श्री नान्हूराम तिवारी देवी के महान् उपासक भागवती पण्डित थे। मैट्रिक तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप वहाँ के सहकारी बैंक मे नौकर हो गए थे और बाद मे उसके मैनेजर के रूप मे ही सेवा-निवृत्त हुए थे। आप हिन्दी तथा छत्तीसगढी के अच्छे कवियो मे अग्रगण्य समझे जाते थे। विलासपुर की 'भारतेन्दु साहित्य समिति' के आप अनेक वर्ष तक प्रधानमत्री रहे थे।

आपकी रचनाएँ जहाँ मध्य प्रदेश के 'छत्तीसगढ मित्र' 'हितकारिणी', 'कर्मवीर' तथा 'प्रभा' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित होती थी वहाँ मध्य प्रदेश से बाहर के पत्र भी आपकी रचनाओ से वचित नही रहते थे। आपने जहाँ भक्तिपरक रचनाएँ लिखने मे दक्षता प्राप्त की थी वहाँ हास्य-व्यग्य से परिपूर्ण सहज चुटीली कविताएँ लिखने मे भी आप अत्यन्त पटु थे। आपने अपने



अग्रज श्री गोविन्दप्रसाद तिवारी की प्रेरणा पर 'शिव-स्तुति (1937)-जैसी भक्तिपरक रचना लिखी थी। आपकी अन्य कृतियो मे 'राम अऊ केवट सवाद', 'कुछु काही' (1935), 'काग्रेस विजय आल्हा' (1947), 'गाधी गीत' (1948),' क्रान्ति प्रवेश' (1957), 'सुराज गीत' (1957), तथा 'पचवर्षीय योजना गीत' (1963) के नाम विशेष रूप से स्मरणीय है। इनमे प्राय सभी रचनाओ के विषय ग्रामोन्नति, विकास तथा नई चेतना से प्रभावित रहे थे।

हास्य तथा व्यग्य की रचनाएँ लिखने मे 'विप्र' जी अत्यन्त निपुण थे। आपकी 'गिरिया' शीर्षक यह कुण्डली

इसकी ज्वलत साक्षी है :

तिरिया ऐसी चाहिए, लड़ै रोज दस बेर।
घुड़की भूल कभी दिए, देखें आँख लडेर।।
देखें आँख लडेर, नागिन-सी फुन्नावें।
कलह रात-दिन करै, बात बोतल भन्नावें।।

इसी प्रकार आध्यात्मिक भावना से परिपूर्ण रचना लिखने मे भी आप बेजोड थे। आपकी ऐसी भावनाएँ इस कुण्डली मे प्रत्यक्ष हुई हैं

माटी की काया बनी, भीतर-बाहर जान।
विप्र समझ ले आपको, दो दिन का मेहमान।।
दो दिन का मेहमान देह क्षण-भगुर तेरा।
सपने का ससार, कहाँ का तेरा-मेरा।।

विलासपुर की 'भारतेन्दु साहित्य समिति' ने जहाँ आपका अभिनन्दन किया था, आपके निधन से कुछ दिन पूर्व ही 25 दिसम्बर सन् 1980 को रायपुर मे आयोजित 56 वे अखिल भारतीय मराठी साहित्य सम्मेलन' मे भी आपको समादृत किया गया था। आप मध्य प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन से भी अत्यन्त निकटता से सम्बद्ध रहे थे। रायपुर के डी० के० अस्पताल मे आपका हार्निया का आपरेशन किया गया था और इसीके कारण 2 जनवरी सन् 1981 को आपका निधन हुआ था।

श्री द्वारकाप्रसाद शर्मा

श्री शर्मा का जन्म सिन्ध प्रदेश (अब पाकिस्तान) के दादू नामक स्थान मे 13 सितम्बर सन् 1898 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा सिन्ध प्रदेश की परम्परा के अनुसार उर्दू मे हुई थी, किन्तु बाद मे आर्य समाज के प्रभाव मे आने पर आप हिन्दी की ओर उन्मुख हो गए थे। आपने जहाँ सिन्ध प्रदेश मे हिन्दी का प्रचार एव प्रसार करने का सराहनीय कार्य किया था वहाँ 'सिन्धु सभ्यता' के सम्बन्ध मे एक पुस्तक भी लिखी थी। सिन्धी भाषा और साहित्य के सम्बन्ध मे आपके अनेक शोधपूर्ण लेख हिन्दी की प्रमुख-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहते थे।

आपका निधन सन् 1966 में जयपुर (राजस्थान) मे हुआ था।

श्री द्वारिकाप्रसाद गुप्त 'रसिकेन्द्र'

श्री 'रसिकेन्द्र' का जन्म उत्तर प्रदेश के कालपी नगर मे सन् 1889 मे हुआ था। आप राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के बहनोई थे। आपके उपनाम की कहानी भी बडी रोचक है।



यह बात बहुत कम लोगो को मालूम है कि मैथिलीशरण गुप्त पहले-पहल ब्रजभाषा मे कविता लिखा करते थे और प्राचीन परिपाटी के कवियो की भाँति अपना उपनाम भी लिखा करते थे। उस समय उनका उपनाम 'रसिकेन्द्र' था। बाद मे जब वे खडी बोली मे कविताएँ लिखने लगे तब भी उनकी कई कविताएँ 'वैश्योपकारक' नामक पत्र मे इस उपनाम से छपती थी। किन्तु जब वे आचार्य महावीर-प्रसाद द्विवेदी के प्रभाव मे आए तब उन्होने ब्रजभाषा की काव्य-रचना छोडने के साथ-साथ इस उपनाम का भी परि-त्याग कर दिया था।

जब द्वारिकाप्रसाद जी का सम्बन्ध गुप्त जी के परिवार मे हुआ था तो आप भी कविताएँ किया करते थे। उस समय आप प्राय प्राचीन परिपाटी की रचनाएँ 'घनाक्षरी' और 'सवैया' छन्दो मे लिखा करते थे। इस प्रसग मे आपको अपनी रचनाओ मे प्रयुक्त करने के लिए एक 'उपनाम' की तलाश हुई। जब आपने मैथिलीशरण गुप्त से इस सम्बन्ध मे परामर्श किया तब उन्होंने कहा था कि "मेरा पुराना उपनाम 'रसिकेन्द्र' बडा सुन्दर है। मैने उसे छोड दिया है। तुम वही ले लो!" इस प्रकार द्वारिकाप्रसाद गुप्त जी 'रसिकेन्द्र' हुए थे और आपको यह नाम ससुराल पक्ष से दहेज मे प्राप्त हुआ था।

रसिकेन्द्र जी समस्या-पूर्तिपरक रचना करने मे अत्यन्त दक्ष थे। आपके द्वारा की गई समस्या-पूर्तियाँ इतनी चमत्कार-

पूर्ण होती थी कि उन्हें पढ़कर तथा सुनकर पाठक अथवा श्रोता मन्त्रमुग्ध हुए बिना नहीं रहता था आपकी पहली काव्य-कृति 'आत्म-समर्पण' सन् 1919 में लखनऊ की 'गगा पुस्तक माला' की ओर से प्रकाशित हुई थी। इसके उपरान्त आपके 'हरिजन कथा', 'कीर्ति कुसुम', 'सती सारन्धा', 'पारिजात विजय' तथा 'कालि वध' नामक प्रबन्ध काव्यों का प्रकाशन हुआ था। यद्यपि आप बुन्देलखण्ड के पिछडे हुए क्षेत्र से सम्बन्धित थे, परन्तु आप अपने क्षेत्र से बाहर भी अत्यन्त लोकप्रिय हुए थे। 'बुन्देलखण्ड' के प्रति आपके मन मे कितना अनन्य अनुराग था, इसका परिचय आपके द्वारा लिखित इन पंक्तियों से मिल जाता है :

उर्वर भव्य धरा है यहाँ की,
छिपे पड़े रत्न यहाँ अलबेले।
मुण्ड चढ़े यहाँ चण्डिका पै,
उठ कण्ठ लड़े है यहीं असि ले ले।।
खण्ड बुन्देल की कीर्ति अखण्ड,
बना गए वीर प्रचण्ड बुन्देले।
झेल के संकट खेल के जान पै,
खेल यहीं तलवार से खेले।।
राम रमे वनवास मे आकर,
है गिरि की गुरुता को बढाया।
पादप-पुज ने दे फल-फूल,
किया शुभ स्वागत है मन भाया।।
राम लला की कला ने यहीं,
अचला बन के है प्रताप दिखाया।
जीवन धन्य हुआ 'रसिकेन्द्र',
सुपावन भूमि मे जन्म जो पाया।।

यद्यपि आपने 18 पुस्तको का निर्माण किया था, किन्तु आपकी केवल 6 पुस्तकें ही प्रकाशित हो सकी थी।

आपका निधन 14 अप्रैल सन् 1946 को हुआ था।

कवि केहरी धँधलीमल

श्री धँधलीमल का जन्म सन् 1880 मे राजस्थान के बाडमेर नामक स्थान में हुआ था। आपको काव्य-प्रतिभा विरासत मे ही मिली थी। यही कारण था कि केवल 8 वर्ष की अवस्था मे ही आपने कविता लिखनी प्रारम्भ कर दी थी। आपका मूल नाम 'मोतीलाल' था, जो बाद मे सन्त समागम के कारण 'धँधलीमल' हो गया था।

एक बार जब महात्मा गाधी जी की उपस्थिति मे आपने दिल्ली के कांग्रेस-अधिवेशन में कविता-पाठ किया था तब आपकी ख्याति 'देश-व्यापी' हो गई थी। जब लोकनायक श्री जयनारायण व्यास राजस्थान के मुख्यमन्त्री बने थे तब उन्होने तथा जोधपुर-नरेश महाराजा उम्मेदसिह ने आपकी कविताओ को सुनकर सम्मानित किया था।

यद्यपि आपकी रचनाओं की सख्या अनगिन है, किन्तु उनमे से प्रकाशित एक भी नही हो सकी। आपकी रचनाओ मे वैष्णव समाज और जैन समाज को प्रेरणा देने वाली भाव-धारा कूट-कूट कर भरी हुई है। आजकल जैन-समाज मे आपकी रचनाएँ श्रुति-परम्परा मे प्रचलित है।

आपका निधन 20 मार्च सन् 1963 को हुआ था।

श्री धनंजय भट्ट 'सरल'

आपका जन्म हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार प्रयाग-निवासी पण्डित बालकृष्ण भट्ट के परिवार की तीसरी पीढ़ी मे 29 दिसम्बर सन् 1909 को बँगलौर मे हुआ था। आप श्री बालकृष्ण भट्ट के ज्येष्ठ पुत्र श्री मूलचन्द्र भट्ट के सुपुत्र थे। मूलचन्द्र भट्ट के 3 और छोटे भाई थे। जिनके नाम क्रमश महादेव भट्ट, लक्ष्मीकान्त भट्ट और जनार्दन भट्ट थे। इनमे से आजकल केवल जनार्दन भट्ट ही



जीवित है। श्री धनंजय भट्ट अपने पिता के 3 पुत्रो मे से द्वितीय थे। आपके पिता रेलवे मे नौकरी करने के कारण

प्रायः बाहर ही रहा करते थे। जब आपका जन्म हुआ तब आपका परिवार बँगलौर में रहा करता था। जब आप केवल 5 वर्ष के थे तब सन् 1914 में प्रयाग आ गए थे और आपकी शिक्षा-दीक्षा यहाँ ही हुई थी। प्रारम्भ में आप वहाँ के 'विद्या मन्दिर हाई स्कूल' में पढ़ा करते थे और जब आप केवल 10 वर्ष के ही थे तब कविता करने में अत्यन्त दक्ष हो गए थे। आपके पिता सन् 1918 तक बँगलौर रहे थे और बाद में 1 वर्ष पूना में रहे थे। आप जब केवल 16 वर्ष के ही थे तब आपके पिता का असामयिक देहावसान हो गया था। परिणाम-स्वरूप आपको बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा और आप अत्यन्त विषम परिस्थितियों में हाई स्कूल तक की शिक्षा ही प्राप्त कर सके थे।

इस बीच आपके बड़े भाई विद्यापति भट्ट का भी देहान्त हो गया और आपके ही कन्धों पर सारे परिवार के भरण-पोषण का दायित्व आ गया था। इन घनघोर आर्थिक विषमताओं और कठिनाइयों के वातावरण में आप अपने परिवार की गाड़ी को खींचते हुए अपने अन्य सामाजिक दायित्वों का निर्वाह कर रहे थे कि आपकी भेंट प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री मन्मथनाथ गुप्त से हो गई और आपने उन्हें 'क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास' नामक पुस्तक लिखने में काफी सहयोग दिया। सन् 1938 में विवाह हो जाने के पश्चात् आपने प्रारम्भ में कुछ व्यवसाय किया और फिर इलाहाबाद के किले में सरकारी नौकरी कर ली। किन्तु वहाँ से भी युद्ध के बाद हुई छँटनी में आपको सन् 1947 में अलग कर दिया गया। सन् 1947 से 1950 तक आप अपनी ससुराल, इलाहाबाद से 60 मील दूर रामसहाईपुर में रहे और फिर अपना अलग मकान बनाकर स्थायी रूप से वहाँ पर ही रहने लगे। धीरे-धीरे गाँव में रहते हुए जब आपका अच्छा प्रभाव हो गया तब आप सन् 1957 में ग्राम सभा के सभापति निर्वाचित हुए और सन् 1959 में 'सरपंच' भी हो गए। इस बीच एक दुर्घटना में सन् 1962 में आपकी एक टाँग टूट गई और आप सारे जीवन के लिए अपाहिज हो गए।

जब आप ऐसी दयनीय अवस्था में हो गए तब आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रेस में पुस्तक-सम्पादन तथा प्रूफ-संशोधन का कार्य प्रारम्भ किया था। सम्मेलन में आकर आपने अपने नित्य-प्रति के दायित्व का निर्वाह करने के साथ-साथ अपने पितामह श्री बालकृष्ण भट्ट द्वारा लिखित निबन्धों और नाटकों का सम्पादन भी सम्मेलन के लिए किया। ये दोनों ग्रन्थ सम्मेलन की ओर से 'भट्ट निबन्धावली' तथा 'भट्ट नाटकावली' नाम से प्रकाशित हुए हैं। इनके अतिरिक्त आपकी अन्य मौलिक एवं सम्पादित रचनाओं में 'दमयन्ती स्वयंवर', 'नूतन ब्रह्मचारी', 'वेणी संहार', 'हिन्दी की दशा और पत्रकारिता', 'साहित्य-समीक्षा' तथा 'कुछ विचार सुझाव' के नाम प्रमुख हैं।

आपका निधन 15 अक्तूबर सन् 1981 में हुआ था।

महन्त धनराज पुरी

श्री पुरी का जन्म बिहार प्रदेश के चम्पारन जनपद के सिकटा (रामनगर) नामक ग्राम में सन् 1903 में हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने घर पर ही हिन्दी तथा संस्कृत में हुई थी। आप मुख्यतः हिन्दी के शिकार-साहित्य के लेखकों में गिने जाते थे। भारत के स्वातन्त्र्य-संग्राम में सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण आपने कई बार कारावास की नृशंस यातनाएँ भोगी थीं। सन् 1942 की अगस्त-



क्रान्ति के दिनों में अँग्रेजी सरकार ने आपको अनिश्चित काल के लिए नजरबन्द कर दिया था और सन् 1945 में आपका यह प्रतिबन्ध हटा था।

आप राजनीति में नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की उग्र राजनीति के समर्थक 'फारवर्ड ब्लाक' के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष भी अनेक वर्ष तक रहे थे। अपनी शिकार तथा यात्रा-सम्बन्धी रचनाओं के कारण आपने हिन्दी के लेखकों

मे अपना सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था। आप कुशल गद्य-लेखक होने के साथ-साथ एक सहृदय एवं संवेदनशील कवि भी थे। आपकी रचनाओ मे 'उच्छ्वास' तथा 'इला' नामक काव्य-कृतियो के अतिरिक्त 'आखेट' (शिकार-सम्बन्धी कहानियाँ) और 'अविरल आँसू', 'मौत की माँद मे' तथा 'मृत्यु से मुठभेड' नामक उपन्यास प्रमुख है। इनमे से आपकी 'आखेट' नामक कृति पर बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् की ओर से एक हजार रुपये का पुरस्कार भी प्रदान किया गया था।

आपका निधन सन् 1975 मे हुआ था।

श्री धनराज विद्यालंकार

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जनपद के रायपुर नामक ग्राम मे 8 जनवरी सन् 1900 को हुआ था। आपके पिता श्री जादोराम आर्यसमाजी विचार-धारा से विशेष प्रभावित थे, इसलिए उन्होंने आपको शिक्षा-दीक्षा के लिए स्वामी श्रद्धानन्द के शिक्षण-संस्थान 'गुरुकुल काँगडी' मे प्रविष्ट किया था। 14 वर्ष तक गुरुकुल मे विद्याध्ययन करके आपने जब वहाँ से स्नातक हुए तब कुछ समय आपने स्वामी श्रद्धानन्द के निजी सचिव का कार्य करने के साथ-साथ गुरुकुल मे दर्शनाध्यापक का कार्य भी किया था। बाद मे आप देहरादून चले गए और वहाँ पर रहते हुए कुछ व्यवसाय भी किया था। जब आपको अपने इस व्यवसाय मे सफलता नही मिली तब आप अलीगढ के 'पर्ल्स एण्ड बीड्स इण्डिया' नामक संस्थान मे कार्य-रत हो गए थे।



आपने जहाँ महात्मा गांधी के सविनय आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग लेकर अपनी अपूर्व देश-सेवा-भावना का परिचय दिया था वहाँ आप सन् 1936 के चुनावों मे कांग्रेस के प्रत्याशी भी रहे थे। अपनी समाज-सेवा की प्रवृत्तियों से समय बचाकर आप साहित्य-सृजन मे भी संलग्न रहा करते थे। आपने जहाँ रोम्याँ रोलाँ की प्रख्यात पुस्तक 'रामकृष्ण परमहंस' का हिन्दी अनुवाद किया था वहाँ आपके द्वारा किया गया श्री दिलीपकुमार राय की पुस्तक 'अमंग दि ग्रेट' का 'महापुरुषो के साथ' नामक अनुवाद भी हिन्दी मे पर्याप्त लोकप्रिय हुआ था। आपके सुपुत्र डॉ० रघुराज गुप्त भी हिन्दी के प्रख्यात लेखक और समाज-शास्त्री है।

आपका निधन 3 सितम्बर सन् 1977 को हुआ था।

प्रज्ञाचक्षु श्री धनराज शास्त्री

श्री शास्त्री का जन्म उत्तर प्रदेश के बस्ती जनपद की खलीलाबाद तहसील के बेलहर कलाँ नामक ग्राम मे सन् 1873 मे हुआ था। आपके पिता का नाम नेपाल मिश्र था और आप जब केवल दो-ढाई वर्ष के ही थे तब चेचक के कारण आपकी दोनो आँखे जाती रही थी। आप वास्तव मे 'प्रज्ञाचक्षु' थे। आपने अपनी अपूर्व मेधा और धारणा-शक्ति के कारण भारतीय वाङ्मय के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का गहन ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आप एक ही दिन मे कई हजार श्लोक कण्ठाग्र कर लेते थे। बाल्यावस्था मे ही आपने अनेक विद्वानो और संन्यासियो के सत्संग का लाभ उठाकर अनेक प्राचीन दुर्लभ ग्रन्थो की जानकारी प्राप्त कर ली थी। आपको कुल 83 लाख 40 हजार श्लोक कण्ठाग्र थे। कहा जाता है कि आपने डॉ० भगवानदास-जैसे मनीषी को भी उनके 'प्रणववाद' नामक ग्रन्थ की रचना मे अपना सक्रिय सहयोग दिया था।

आपकी विद्वत्ता की इतनी ख्याति थी कि भरतपुर, अलवर, छतरपुर, मझौली, मनकापुर तथा बाराबकी के राजाओ-महाराजाओ ने अपने-अपने राज्यो मे बुलाकर आपका सम्मान किया था। आपके विलक्षण वैदुष्य का इससे अधिक बडा प्रमाण और क्या हो सकता है कि आपने इटावा

की 'ज्ञानपीठ' को 'वनस्पति चन्द्रोदय' और उत्तर प्रदेश शासन को 'धनुर्वेद' नामक ग्रन्थों के निर्माण मे अपनी अपूर्व सहायता प्रदान की थी। आप जहाँ सस्कृत के 6 विषयों के आचार्य थे वहाँ फारसी के भी मर्मज्ञ थे। ब्रजभाषा मे काव्य-रचना करने का उन्हे इतना अभ्यास था कि प्राय कथा-वाचन ब्रजभाषा-छन्दो मे ही किया करते थे।

आपका निधन सन् 1958 मे लखनऊ मे उस समय हुआ था जब आप उत्तर प्रदेश सरकार के निमन्त्रण पर वहाँ रहकर एक पुस्तक लिखा रहे थे।

थे, किन्तु उनका पुस्तक रूप मे प्रकाशन न हो सका था। आपके द्वारा लिखित बहुत-सी अप्रकाशित सामग्री 'अगिरा शोध संस्थान' मे अब भी सुरक्षित है।

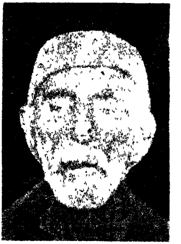
आप एक अच्छे लेखक होने के अतिरिक्त एक उत्कृष्ट सामाजिक तथा राजनीतिक कार्यकर्ता भी थे। आपके पास प्रचुर साहित्य के संग्रह था, जिसे अब 'धनराम पुस्तकालय' का नाम दे दिया गया है। आपके द्वारा 'राम जीन्दी' नाम से लिखित 'भक्ति दर्शन सूत्र' नामक पुस्तक उल्लेखनीय है।

आपका निधन 17 फरवरी सन् 1971 को हुआ था।

वैद्य धनराम कौंडिन्य

श्री कौडिन्य का जन्म 2 जुलाई सन् 1880 को हरियाणा प्रदेश के भिवानी जनपद के मित्ताथल (धनाना) नामक स्थान म हुआ था। वैसे आपका मूल निवास-स्थान रोझला था, किन्तु बाद मे जीद मे रहने लगे थे।

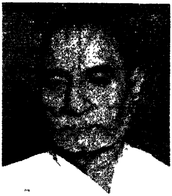
आप हिन्दी के अच्छे लेखक थे और आपने जीद मे 19 फरवरी, 1970 को 'अगिरा शोध सस्थान' नामक एक सस्था की स्थापना करके उसके माध्यम से हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार का बहुत बडा कार्य किया था। जीद राज्य 'प्रजा मण्डल' की ओर से प्रारम्भ किये गए 'हिन्दी आन्दोलन' मे आपने सक्रिय रूप मे भाग लिया था।



आप आयुर्वेदिक साहित्य के प्रचार मे सक्रिय रहने के अतिरिक्त 'आल्हा साहित्य' के लेखन और गायन मे भी रुचिपूर्वक कार्य किया करते थे। आपके द्वारा लिखे हुए लेख आदि छुट-पुट इधर-उधर पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए

श्री धनरूप गोस्वामी

आपका जन्म राजस्थान के बीकानेर नगर के एक सम्भ्रान्त गोस्वामी-परिवार मे 5 नवम्बर सन् 1893 को हुआ था। 10 वर्ष की अल्पायु मे ही आपने अपने पिता श्री बसन्तलाल जी के सान्निध्य मे सस्कृत, व्याकरण और धर्मशास्त्रों का अच्छा अध्ययन कर लिया था। सन् 1917 मे आपने सस्कृत तथा गणित विषय मे विशेष योग्यता के साथ प्रथम श्रेणी मे मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। सन् 1920 मे इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने सस्कृत की शास्त्री परीक्षा देकर अध्यापन का कार्य प्रारम्भ कर दिया था।



आपकी पहले बीकानेर की जैन पाठशाला मे नियुक्ति हुई थी और तत्पश्चात् आपने वहाँ के 'मोहता मूलचन्द विद्यालय' मे अध्यापन-कार्य किया था। वहाँ पर 2 वर्ष तक कार्य करने के उपरान्त पहले आप डूंगर कालेज मे और फिर

बाद सन् 1950 मे सादूल उच्च माध्यमिक विद्यालय मे मुख्याध्यापक हो गए थे। जिन दिनों आप इस विद्यालय मे कार्य करते थे तब राजस्थान के भूतपूर्व राज्यपाल डॉ० सम्पूर्णानन्द उसके प्रधानाध्यापक थे। उनके साथ आपको सहायक के रूप मे कार्य करने का सुअवसर प्राप्त हुआ था।

आपका बीकानेर के शिक्षण-जगत् मे इतना महत्त्वपूर्ण स्थान हो गया था आपके पास प्राय. सस्कृत तथा हिन्दी के अनेक जिज्ञासु अपनी शंकाओ के समाधान के लिए आते रहते थे। इस विद्यालय की सेवा से उपरति पाकर आप सन् 1960 मे 'भारतीय विद्या मन्दिर बीकानेर' मे साहित्य विषय का अध्यापन करने के निमित्त नियुक्त हो गए थे। अपने इस कार्य-काल मे आपने बीकानेर की साहित्यिक चेतना के उन्नयन मे अभिनन्दनीय योगदान किया था। आपकी शिक्षा तथा साहित्य के क्षेत्र मे की गई अमूल्य सेवाओ के उपलक्ष्य मे 'भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान' ने आपका नागरिक अभिनन्दन किया था। आपकी साहित्य-सेवाओ के उपलक्ष्य मे राजस्थान सरकार की ओर से आपको 1200 रुपये वार्षिक की आजीवन सहायता मिलती रही थी।

लेखन के क्षेत्र मे यद्यपि आपकी कोई विशेष कृति प्रकाशित नही हुई, किन्तु आपके द्वारा लिखा गया 'आर्या त्रिशती' नामक ग्रन्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमे आपने मानव-जीवन के शैशव, तारुण्य तथा वार्धक्य इन तीनो रूपो का अच्छा विवेचन किया है। आपके इस विवेचन की राजस्थानी भाषा के मर्मज्ञ विद्वान् श्री नरोत्तमदास स्वामी मे भूरि-भूरि प्रशसा की थी। आपने फाल्गुन जी गोस्वामी को उनकी सस्कृत मे प्रकाशित 'जय भारतादर्श' नामक पुस्तक के लेखन मे अभिनन्दनीय सहयोग प्रदान किया था।

आपका निधन 81 वर्ष की आयु मे 19 मार्च 1974 को हुआ था।

श्री धन्यकुमार जैन

श्री जैन का जन्म पश्चिमी बगाल के कलकत्ता नामक नगर के उत्तरपाडा नामक स्थान मे 31 दिसम्बर सन् 1900 को हुआ था। आपके पूर्वज आगरा जनपद के फीरोजाबाद नगर के निवासी थे। आपके पितामह श्री धनपतराय व्यवसाय के सिलसिले मे कलकत्ता जाकर उत्तरपाडा में बस गए थे। जब धन्यकुमार जी केवल 3 वर्ष के थे तब आप घर के पास वाले एक तालाब मे डूब गए थे। आपकी लाश जब पानी मे ऊपर तैर रही थी तो आपके बाबा ने उधर से गुजरते हुए उसे देखा जब उसे तालाब में से निकाला गया तो पता चला कि वह लाश तो उनके पोते की है। लाश की टाँगे पकडकर उन्होने घुमाना शुरू किया। इस प्रक्रिया से बालक के पेट के अन्दर समाया हुआ पानी धीरे-धीरे बाहर निकला। दो घटे बीत जाने पर भी कोई सन्तोषजनक फल नही दिखाई दिया और सबने उसे मरा हुआ समझ लिया। जब श्री धनपतराय जी रोते-बिलखते हुए उस बालक की लाश को लिये हुए श्मशान की तरफ जा रहे थे तब भाग्यवश उन्हे एक परिचित डाक्टर मार्ग मे मिल गए। डाक्टर के अनुरोध पर उस लाश को अस्पताल म ले जाया गया और उसके सतत प्रयत्नो से बालक बच सका।



धन्यकुमार जी वैसे तो जन्मना बंगाली थे, किन्तु पारिवारिक सस्कारो के कारण ब्रजभाषा पर भी आपका असाधारण अधिकार था। आपके परिवार मे ब्रजभाषा ही बोली जाती थी। आपका अध्ययन बगाली पाठशाला मे ही हुआ था, क्योकि उन दिनों वहाँ पर हिन्दी का कोई स्कूल ही नही था। हिन्दी का ज्ञान तो आपने 14 वर्ष की आयु मे आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी द्वारा सम्पादित 'सरस्वती' की पुरानी फाइलो को पढ-पढ़कर तब प्राप्त किया था जब आप काशी मे श्री गणेशप्रसाद वर्णी और पन्नालाल बाकलीवाल के पास गए हुए थे। जब सन् 1928 मे 'विशाल भारत' का प्रकाशन कलकत्ता के प्रवासी प्रेस से श्री

बनारसीदास चतुर्वेदी के सम्पादकत्व मे प्रारम्भ हुआ था तब आप उनके सहयोगी के रूप मे उससे जुड गए और अनेक वर्ष तक इसमे सफलतापूर्वक कार्य किया। 'विशाल भारत' मे आने से पूर्व आपने अपने हिन्दी-ज्ञान को इतना बढा लिया था कि आप बंगला से हिन्दी मे अनुवाद का कार्य अत्यन्त सफलतापूर्वक करने लगे थे। आपने सन् 1918 से लेकर कई वर्ष तक नगेन्द्रनाथ वसु द्वारा तैयार किये जाने वाले 'विश्व कोश' मे भी कार्य किया था।

जब चतुर्वेदी जी से श्री धन्यकुमार जी ने पहले-पहल भेट की थी तब 'हमऊँ फिरोजाबाद के ई है' कहकर बहुत ही विनय के साथ अपना परिचय दिया था। 'विशाल भारत' मे आकर श्री जैन ने अपनी लोकप्रियता मे जो चार चाँद लगाए उनमे आपके द्वारा अनूदित प्रतिमास उसमे छपने वाली परशुराम आदि विभिन्न बगला-लेखकों की रचनाएँ भी प्रमुख थी। आपने लगभग 10 वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक वहाँ कार्य किया था। उन दिनो 'विशाल भारत' कार्यालय मे श्री व्रजमोहन वर्मा तथा श्रीपति पाण्डेय भी आपके साथ कार्य करते थे। क्योकि आप सन् 1916-17 से बगला से हिन्दी मे अनुवाद का कार्य अत्यन्त सफलता तथा योग्यतापूर्वक करते रहे थे अत 'विशाल भारत' मे प्रकाशित आपके द्वारा अनूदित रचनाओ ने साहित्य मे आपकी अच्छी साख जमा दी थी। परशुराम और रवीन्द्रनाथ की रचनाओ के अनुवादो के साथ-साथ आपने हिन्दी के पाठको को शरच्चन्द्र चटर्जी और रवीन्द्रनाथ मैत्र आदि अनेक प्रतिष्ठित लेखको की प्रतिभा से भी परिचित किया था। आपका बगला के जिन अनेक लेखको से अत्यन्त घनिष्ठ सम्पर्क था उनमे गुरुदेव रवीन्द्र, परशुराम तथा शरच्चन्द्र चटर्जी के अतिरिक्त सुनीतिकुमार चटर्जी, सजनीकान्त दास, प्रमथनाथ बिशी तथा ताराशकर बनर्जी आदि के नाम विशेष उल्लेख्य है।

'विशाल भारत' से अलग होने पर आपने 'रवीन्द्र-ग्रन्थागार' नामक एक प्रकाशन-सस्था का सूत्रपात करके उसके द्वारा गुरुदेव के समग्र साहित्य का जो हिन्दी-अनुवाद 28 भागो में प्रकाशित किया था, उससे आपने हिन्दी-साहित्य के प्रकाशन-जगत् मे जहाँ एक उत्कृष्ट मानदण्ड स्थापित किया वहाँ आपके अनुवादों से साहित्य-प्रेमी पाठको को सुरुचिपूर्ण साहित्य पढ़ने को मिला। जब धीरे-धीरे आपके द्वारा अनूदित अनेक रचनाएँ साहित्य की अभिवृद्धि मे अपना योगदान दे रही थी तब अनेक कठिनाइयों के कारण आपका प्रकाशन-कार्य शिथिल पड गया और सन् 1966 में आपने अपने उस प्रकाशन को सर्वथा बन्द कर दिया। धन्यकुमार जी ने अपने कर्ममय जीवन मे बंगला की अनेक प्रमुख कृतियो के अनुवाद प्रस्तुत करने के अतिरिक्त गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 87 कहानियो, 11 उपन्यासों, 7 नाटको, 5 एकाकियो, 36 निबन्धो तथा अनेक गद्यकाव्यो के अत्यन्त सफल अनुवाद हिन्दी-साहित्य को भेट किए थे। आपने गुरुदेव की आत्म-कथात्मक कृति 'जीवन-स्मृति' का अनुवाद भी अत्यन्त सजीव एव प्राजल शैली मे किया था। इस कृति पर भारत सरकार ने श्री जैन को पुरस्कृत भी किया था। बगला से हिन्दी के अनुवाद करने के क्षेत्र मे आपके मुकाबले पर कोई नही टिकता था। आपके द्वारा अनूदित रचनाओ की उत्कृष्टता का सबसे बडा प्रमाण यह है कि वे पाठक को मूल-जैसा आनन्द प्रदान करती थी।

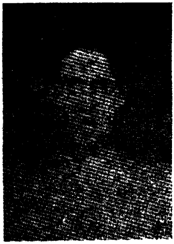
आप फरवरी सन् 1965 मे अपनी ससुराल बरहन (आगरा) मे चले आए थे। यहाँ आकर आपको गहन अर्थ-सकट का सामना करना पडा था। 2 वर्ष तक आपने आगरा के प्रख्यात हिन्दी-सेवी श्री महेन्द्र के अनुरोध पर 'एम०डी० जैन कालेज आगरा' में 'जैन शोध ग्रन्थ माला' का कार्य भी किया था और फिर श्रीमहावीर जी (राजस्थान) की एक जैन सस्था मे भी कुछ समय तक कार्य किया था। किन्तु जब वहाँ भी आपका मन नही लगा तब आप फिर 'बरहन' चले आए और मृत्यु-पर्यन्त यहाँ ही रहे। यहाँ रहते हुए भी आपने 'राजपाल एण्ड सन्स' तथा 'हिन्द पाकेट बुक्स' के लिए बगला से हिन्दी कृतियो के कुछ अनुवाद किए थे। श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के अथक प्रयास से आपको उत्तर प्रदेश शासन की ओर से 150 रुपए मासिक की आर्थिक सहायता 5 वर्ष तक निरन्तर मिलती रही थी।

आपका निधन 19 नवम्बर सन् 1980 को मूत्र रोग के कारण हुआ था।

श्री धन्यकुमार जैन 'सुधेश'

आपका जन्म मध्य प्रदेश के सतना जनपद के नागौद नामक

स्थान में 19 मई सन् 1927 को हुआ था। आपके पिता श्री बाबूलाल जैन एक मध्यवित्तीय सद्गृहस्थ थे। आप नागौद की प्राथमिक एवं माध्यमिक पाठशाला में अध्ययन करने के उपरान्त जुलाई सन् 1942 में रीवाँ के दरबार हाई स्कूल में आगे का अध्ययन करने के लिए प्रविष्ट हुए थे, किन्तु महात्मा गांधी द्वारा 'अँग्रेजो भारत छोड़ो' आन्दोलन प्रारम्भ किए जाने पर आपने अँग्रेजी माध्यम वाले स्कूल में पढ़ने से मुँह मोड़ लिया और सन् 1944 में सागर के 'श्री गणेश दिगम्बर जैन संस्कृत महाविद्यालय' में प्रविष्ट



होकर निरन्तर 5 वर्ष के अध्यवसाय के उपरान्त आपने हिन्दी की 'साहित्यरत्न' तथा संस्कृत की 'काव्य-तीर्थ' उपाधियाँ प्राप्त की। उन दिनों अपने विद्यार्थी-जीवन में आप अत्यन्त परिश्रमी तथा योग्यतम छात्रों में गिने जाते थे।

जब आप अपने जन्म-स्थान नागौद के विद्यालय में 'सातवीं' कक्षा के छात्र थे तब आपके मानस में कविता करने के भाव अंकुरित हो गए थे। परिणाम स्वरूप आपने थोड़े ही समय में कविता-लेखन में अत्यन्त निपुणता प्राप्त कर ली थी। आपकी पहली रचना 'जैन गजट' में प्रकाशित हुई थी और फिर तो धीरे-धीरे आपकी लेखनी ने वह चमत्कार दिखाया कि आपने थोड़े-से ही समय में अनेक रचनाएँ लिख डाली। कुल मिलाकर आपने 28 पुस्तकों की रचना की थी, किन्तु इनमें से केवल 14 ही आपके जीवन-काल में प्रकाशित हो सकी थीं।

आपकी प्रकाशित कृतियों में 'परम ज्योति महावीर', 'विराग', 'शहीद-गाथा', 'वीरायण', 'मुण्डमाल', 'आर्यिका', 'पुण्य तीर्थ पपोरा', 'भामाशाह', 'जैन कला तीर्थ खजुराहो', 'आचार्य शान्ति सागर पूजन', 'मनुज प्रकृति से शाकाहारी', 'खजुराहो का शान्तिनाथ-पूजन' और 'मंगल गान' के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इनमें से जहाँ आपका 'विराग' नामक काव्य विन्ध्य प्रदेश शासन की ओर से 'लाल पुरस्कार' से सम्मानित हुआ था वहाँ आपके 'भामाशाह' नाटक पर मध्य प्रदेश शासन के द्वारा 'व्यास पुरस्कार' प्रदान किया गया था। आपकी 'परम ज्योति महावीर' नामक कृति एक सहस्र रुपये के 'गोपालदास बरैया पुरस्कार' से सत्कृत की गई थी। आपकी अप्रकाशित रचनाओं में 'अन्तर्ध्वनि', 'कल्पलता', 'कुछ पानी, कुछ दूध', 'मधुवन की ओर', 'शूलों के गजरे' तथा 'क्षत्र चूड़ामणि' प्रमुख हैं।

आप जहाँ उच्चकोटि के कवि थे वहाँ समाज-सेवा के क्षेत्र में भी आपकी सेवाएँ सर्वथा अभिनन्दनीय रही थीं। आपने जहाँ नागौद में 'साहित्य संगम' संस्था की स्थापना करके उसके माध्यम से साहित्यिक चेतना जागृत करने का उल्लेखनीय कार्य किया था वहाँ आपने 'वर्णी विद्या मन्दिर' तथा 'जनता महाविद्यालय'-जैसी शिक्षण-संस्थाओं की स्थापना करके नागौद की जनता की प्रशंसनीय सेवा की थी।

आपका निधन सन् 1970 में हुआ था।

कामरेड धन्वन्तरि

कामरेड धन्वन्तरि का जन्म जम्मू (कश्मीर) के कर्नल श्री दुर्गादत्त के यहाँ अप्रैल सन् 1903 में हुआ था। आप शैशवावस्था से ही बड़ी सूझ-बूझ वाले हिम्मती दिखाई देते थे। जम्मू के 'रणवीर हाई स्कूल' में आपने सन् 1908 में प्रवेश लिया था और सन् 1918 में वहाँ से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करके आप आगे की पढ़ाई जारी रखने की दृष्टि से लाहौर के डी० ए० वी० कालेज में दाखिल हो गए। वहाँ से विज्ञान विषय में एम० ए० की परीक्षा देकर आपने 'आयुर्वेद वाचस्पति' और 'वैद्य कविराज' की उपाधियाँ प्राप्त की थीं। जिन दिनों आप डी० ए० वी० आयुर्वेदिक कालेज में पढ़ा करते थे तब श्री सुरेन्द्रमोहन प्रिंसिपल थे, जो क्रांतिकारी विचार-धारा रखने वाले नवयुवकों के प्रति बहुत सहानुभूति रखते थे।

जब आप कालेज में ही पढ़ रहे थे तब पंजाब में मार्शल लॉ जारी करके अँग्रेज सरकार ने 'जलियाँ वाला बाग'-जैसा

हत्याकाण्ड रच दिया था। इस रोमांचक घटना ने धन्वन्तरि-जैसे अनेक युवकों को उद्वेलित कर दिया। परिणाम स्वरूप सन् 1925 में 'अखिल भारत नौजवान सभा' की स्थापना की गई और 'धन्वन्तरि' उसमें अग्रणी नेता बने। इस सभा का उद्देश्य युवकों को अँग्रेजो के द्वारा किये जाने वाले अत्याचारो के विरुद्ध सगठित करके सघर्ष के लिए तैयार करना था। परिणामस्वरूप उनके सगठन के कुछ युवको ने पजाब के तत्कालीन गवर्नर की हत्या करने का निश्चय किया और वे उसमे सफल भी हो गए। गवर्नर तो इस ससार से कूच कर गए, किन्तु धन्वन्तरि के संगठन के 4 साथी पकडे गए और उन्हे आजीवन कारावास की सजाएँ हो गई। इसी प्रसग मे सन् 1930 मे धन्वन्तरि दिल्ली के चाँदनी चौक बाजार मे पकडे गए और आपको 7 साल की सजा हो गई।



कामरेड धन्वन्तरि मार्क्सवादी विचार-धारा रखने वाले ऐसे नवयुवक थे जिन्होंने देश के अनेक नवयुवको को देश की स्वतन्त्रता की लडाई मे सशस्त्र क्राति करने के लिए तैयार किया था। इसके लिए आपको कितने सघर्ष करने पडे थे इसे वे ही जान सकते है जिन्हे इस प्रकार की प्रवृत्तियो का कुछ अनुभव है। आपने अपने इस संघर्ष को जारी रखने के लिए इस प्रकार के प्रचुर साहित्य की रचना की थी, जिसे पढकर वे सोत्साह अपने कर्त्तव्य का निश्चय कर सके। आपके उस समय के साथियों मे सरदार भगतसिंह तथा बी०के०दत्त-जैसे कई नवयुवक थे। आपको 'दिल्ली षड्यत्र केस' मे भी एक अभियुक्त बनाया गया था। जब सन् 1946 मे युद्ध की समाप्ति हुई तो आपको जेल से रिहा किया गया था। 'दिल्ली षड्यन्त्र केस' मे प्रख्यात लेखक श्री सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन भी आपके साथ अभियुक्त थे।

आपका निधन 3 जुलाई सन् 1953 को हुआ था।

श्री धरणेन्द्रकुमार जैन 'कुमुद'

श्री शास्त्री का जन्म मध्य प्रदेश के दमोह जनपद के नीमटोरिया नामक स्थान मे सन् 1911 मे हुआ था। पहले आपकी शिक्षा अपनी जन्मभूमि के प्राइमरी स्कूल मे हुई थी और फिर आपने सागर जाकर पूज्य सहजानन्द जी महाराज और श्री गणेशप्रसादजी वर्णी के सान्निध्य मे रहकर जैन-ग्रन्थो का पारायण प्रारम्भ किया था। उन्ही दिनो आप 'जैन मित्र' नामक पत्र मे लेख आदि लिखने लगे थे। फिर आपने राजस्थान मे आकर अध्यापन-कार्य प्रारम्भ किया और पत्र-पत्रिकाओ मे भी लिखते रहे। इस बीच प्रख्यात जैन साहित्यकार श्री मूलचन्द 'वत्सल' की सुपुत्री सौभाग्यवती देवी से आपका विवाह हो गया। इस सम्पर्क से आपकी साहित्यिक प्रतिभा और भी विकसित हुई थी।



सन् 1936 मे आप रुडकी आ गए और फिर जीवन-पर्यन्त यही रहे। यहाँ रहते हुए आपने विद्यार्थियो को पढाने का कार्य प्रारम्भ किया और सामाजिक कुरीतियो के विरोध मे अपनी लेखनी का सदुपयोग करने लगे। यहाँ रहते हुए आपने जहाँ संस्कृत की 'कल्याण मन्दिर स्तोत्र' तथा 'महावीराष्टक' रचनाओ का अनुवाद प्रस्तुत किया वहाँ 'जैन भजन मजरी', 'कुमुद गीताजलि', 'रक्षाबन्धन कथा' आदि पुस्तको के अतिरिक्त अनेक फुटकर रचनाएँ भी लिखी थी। आप प्राय. कवि-सम्मेलनो मे भी भाग लिया करते थे। आपकी सुपुत्री सुनीता का विवाह सम्पूर्णानन्द सस्कृत विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डॉ० गोकुलचन्द्र जैन के साथ हुआ था।

आपका निधन 20 मार्च सन् 1965 को रुडकी मे हुआ था।

सन्त धर्मचन्द्र 'प्रशान्त'

आपका जन्म 29 सितम्बर सन् 1922 को लाहौर (पाकिस्तान) मे हुआ था। आपके पिता सन्त गोकुलचन्द्र शास्त्री वहाँ के डी० ए० वी० हाई स्कूल मे हिन्दी-संस्कृताध्यापक थे, अतः आपकी प्रवृत्ति भी उसी ओर रही। आपने पजाब विश्वविद्यालय से हिन्दी, संस्कृत तथा राजनीति विषयों मे एम० ए० की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त अध्यापन-कार्य प्रारम्भ कर दिया था। भारत-विभाजन के उपरान्त आप दिल्ली आ गए थे और यहाँ पर पहले पजाब विश्वविद्यालय के अन्तर्गत सचालित 'कैम्प कालेज' मे हिन्दी-अध्यापक हो गए थे और फिर कुछ दिन विभागाध्यक्ष भी रहे थे। जब 'कैम्प कालेज' समाप्त हुआ तब आप दिल्ली विश्वविद्यालय के 'दयालसिह कालेज' के हिन्दी विभाग से सम्बद्ध हो गए थे और निधन के समय विभागाध्यक्ष ही थे।



आपको लेखन का वरदान अपने पिताश्री से प्राप्त हुआ था और उनके निरीक्षण मे आपने इस दिशा में अच्छी प्रगति कर ली थी। आपने जहाँ सस्कृत से कुछ रचनाओ का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया था वहाँ साहित्यिक समीक्षा-सम्बन्धी ग्रन्थों की रचना करने के अतिरिक्त कई बाल्योपयोगी पुस्तकें भी लिखी थी। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'ऋजु पाठ' (सस्कृत, 1945), 'हिन्दी साहित्य का सक्षिप्त इतिहास' (1945), 'नवीन लोकोक्तियाँ और मुहाविरे' (1949), 'हिन्दी गद्य का आविर्भाव और विकास' (1955), 'सिद्धान्तालोचन' (1957) तथा 'साहित्य समीक्षण' (1958) के अतिरिक्त 20 से अधिक बालोपयोगी पुस्तकें प्रमुख है। आपकी बालोपयोगी रचनाओ में 'बलिदान की कहानियाँ', 'विष परीक्षा', 'शीश-दान', 'लाडले का बलिदान', 'दुर्ग विजय', 'होरी और हीरा', 'नया युग', 'किशोर रूपक', 'किशोरो का मंच', 'श्रद्धा और मनु', 'रूप और रुचि', 'इतिहास के पन्ने', 'जादू की टहनी', 'सुनहला हिरन' तथा 'कमल और शोभा' आदि प्रमुख रूप से उल्लेख्य है। इनमे से कई बालोपयोगी उपन्यास भी है।

आपका निधन सन् 1974 मे हुआ था।

श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

आपका जन्म 12 फरवरी सन् 1901 को अविभाजित पजाब के मुलतान जनपद के दुनियापुर नामक ग्राम में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गुरुकुल मुलतान मे हुई थी और फिर आप आगे के अध्ययन के लिए 'गुरुकुल कांगडी' मे चले आए थे। 23 मार्च सन् 1921 को आपने गुरुकुल से विधिवत् स्नातक बनकर 'सिद्धान्तालकार' और 'विद्यावाचस्पति' की उपाधियाँ प्राप्त की थी। आपको वैदिक वाङ्मय-सम्बन्धी उच्चकोटि की शोध करने के उपलक्ष्य मे गुरुकुल की ओर से उसकी मानद उपाधि 'विद्यामार्तण्ड' भी प्रदान की गई थी। 28 फरवरी सन् 1976 को आर्यसमाज के प्रख्यात सन्यासी महात्मा आनन्द स्वामी द्वारा संन्यास आश्रम मे दीक्षित होने के उपरान्त आपका नाम 'धर्मानन्द सरस्वती' हो गया था।



गुरुकुल से स्नातक होने के अनन्तर आपने सन् 1921 से सन् 1943 तक दक्षिण भारत मे कर्नाटक के बगलौर नगर को अपना केन्द्र बनाकर वहाँ पर वैदिक धर्म का प्रचार करने

के साथ-साथ जनता को हिन्दी के अध्ययन के लिए भी प्रेरित किया था। यह कार्य आपने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की प्रेरणा पर किया था। आपने जहाँ कुछ समय तक सन् 1926 मे गुरुकुल मुलतान का आचार्य पद सँभाला था वहाँ आप सन् 1954 से सन् 1963 तक 'गुरुकुल कागड़ी विश्वविद्यालय' मे भी वेदोपाध्याय के पद पर कार्य-रत रहे थे। गुरुकुल मे रहते हुए आपने जहाँ इस सस्था के पत्र 'गुरुकुल पत्रिका' का सफलतापूर्वक सम्पादन किया था वहाँ आप 'अँग्रेजी-सस्कृत-हिन्दी-कोश' के निर्माण मे भी सलग्न रहे थे। आप सन् 1942 से सन् 1953 तक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के सहायक मत्री रहे थे और इस अवधि मे आपने सभा के पत्र 'सार्वदेशिक' का भी सफलतापूर्वक सम्पादन किया था। कई वर्ष तक आप सार्वदेशिक सभा की 'धर्मार्य सभा' के मन्त्री तथा प्रधान भी रहे थे। आप जहाँ 'सार्वभौम वैदिक परिवार सघ' के आचार्य थे वहाँ आपने 'विश्व वेद परिषद्' के अध्यक्ष पद को भी सुशोभित किया था। 'आर्य-समाज-स्थापना शताब्दी' के अवसर पर अन्य विद्वानो के साथ आपका भी अभिनन्दन किया गया था।

आप हिन्दी-सस्कृत-वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान् होने के साथ-साथ हिन्दी के उच्चकोटि के लेखक भी थे। आपकी रचनाओ मे 'वेदो का यथार्थ स्वरूप', 'धर्म शिक्षा', 'महर्षि दयानन्द और अन्य वेदभाष्यकार', 'वैदिक कर्तव्य शास्त्र', 'भारतीय समाज-शास्त्र', 'स्त्रियों का वेदाध्ययन और वैदिक कर्मकाण्ड मे अधिकार', 'वैदिक धर्म प्रश्नोत्तरी', 'आर्य धर्म निबन्ध माला', 'अमर धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द', वेदो का महत्त्व', 'उदारतम आचार्य महर्षि दयानन्द', 'वैदिक ईश्वर-वाद और वर्तमान विज्ञान', 'बौद्ध मत और वैदिक धर्म', 'हमारी राष्ट्रभाषा और लिपि', 'साम सगीत सुधा', 'भक्ति कुसुमाजलि', 'महर्षि दयानन्द और महात्मा गाधी', 'वेद-मूलक आर्य राजनीति', 'वेदभाष्यो का तुलनात्मक अनुशीलन', 'एक मन्त्र के अनेकार्थ', 'श्री मध्वाचार्य और ऋषि दयानन्द', 'गो-रक्षा परम कर्तव्य—गो-हत्या महापाप' तथा 'डाकखानों मे हिन्दी की उपेक्षा क्यो ?' के नाम मुख्यतः उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपने सस्कृत मे भी 'महापुरुष कीर्तनम्' तथा 'महिला मार्तण्ड कीर्तनम्' नामक पुस्तको की रचना की थी। आपकी इन दोनों पुस्तकों पर जहाँ उत्तर प्रदेश शासन ने पुरस्कार प्रदान किया था वहाँ आपके द्वारा लिखित 'महर्षि दयानन्द और अन्य वेदभाष्यकार' नामक ग्रन्थ को चौधरी प्रतापसिह ट्रस्ट द्वारा सम्मानित किया गया था। आप हिन्दी और संस्कृत के अतिरिक्त अँग्रेजी-लेखन पर भी अच्छा अधिकार रखते थे। इसका प्रमाण आपके द्वारा किये गए सामवेद और यजुर्वेद के अँग्रेजी भाष्य है। आपकी साहित्य-सेवाओ से प्रभावित होकर आपको 'सस्कृत धुरीण', 'तर्क मनीषी' और 'साहित्य भूषण' उपाधियों से भी विभूषित किया गया था। आपने सन् 1944 मे दिल्ली मे 'केन्द्रीय हिन्दी रक्षा समिति' की भी स्थापना की थी।

आपका निधन 8 नवम्बर सन् 1978 को हुआ था।

डॉ० धर्मनारायण ओझा

आपका जन्म राजस्थान के जोधपुर नगर के एक परम वैष्णव ब्राह्मण-परिवार में सन् 1947 मे हुआ था। आपकी प्रारम्भ से लेकर स्नातकोत्तर स्तर तक की शिक्षा जोधपुर मे ही हुई थी। सन् 1965 मे आपने जोधपुर विश्वविद्यालय से बी० ए० करने के उपरान्त सन् 1967 मे एम० ए० की उपाधि विशिष्टता के साथ प्राप्त की थी। जिन दिनो इस विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग मे डॉ० चन्द्रप्रकाश सिह अध्यक्ष थे तब आपकी नियुक्ति विश्वविद्यालय मे हिन्दी-प्रवक्ता के रूप मे सन् 1967 मे हुई थी। आपने अपने



विभागाध्यक्ष श्री सिह के निरीक्षण मे ही अपना शोध प्रबन्ध लिखा था। आपके शोध प्रबन्ध का विषय 'सूर साहित्य मे पुष्टिमार्गीय सेवा-भावना' था। यह शोध प्रबन्ध आपने 'मगध विश्वविद्यालय' के लिए लिखा था। उन दिनो डॉ०

चन्द्रप्रकाश सिंह 'मगध विश्वविद्यालय' मे हिन्दी विभागाध्यक्ष होकर चले गए थे। सन् 1971 में आपके शोध-प्रबन्ध पर पी-एच० डी० की उपाधि प्रदान की गई थी।

आपके लेख आदि जहाँ विश्वविद्यालय की शोध-पत्रिका मे प्रकाशित होते रहते थे वहाँ आप 'कल्याण', 'वल्लभ विज्ञान', 'सम्भावना', 'अग्निकुमार', 'मीरा', 'शतदल' और 'नारी' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे भी आप बराबर लिखते रहते थे। आपने अपनी जातीय पत्रिका 'श्रीमाली सन्देश' का सम्पादन भी कई वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। आपने विश्वविद्यालय मे अध्ययन-रत रहते हुए अपना डी०लिट्० का शोध-प्रबन्ध भी पूर्ण कर लिया था। विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम मे निर्धारित 'गद्य परिमल' का सम्पादन आपने अत्यन्त कुशलतापूर्वक किया था। आप जहाँ विश्वविद्यालय की 'राष्ट्रीय सेवा-योजना' के प्रमुख अधिकारी रहे थे वहाँ राजस्थान राज्य की 'प्रौढ शिक्षा समिति' के परामर्शदाता और उसके जोधपुर सम्भाग के सहयोगी भी रहे थे। अपने थोड़े-से जीवन मे आपने जहाँ सस्कृत, गुजराती और हिन्दी के अनेक दुर्लभ हस्तलिखित ग्रन्थो का सर्वांगीण अध्ययन किया था वहाँ भारत की अन्य कई भाषाओ मे भी परम निष्णात हो गए थे।

आपका निधन सन् 1979 मे हुआ था।

श्री धर्मवीर एम० ए०

आपका जन्म अविभाजित पजाब के झेलम जनपद के चकवाल नामक एक छोटे-से ग्राम मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा गवर्नमेंट कालेज लाहौर तथा सेण्ट स्टीफन कालेज दिल्ली मे हुई थी। एम० ए० करने के पश्चात् आपने लन्दन, फ्रांस तथा इटली मे जाकर पत्रकारिता और कहानी-लेखन-कला का प्रशिक्षण प्राप्त किया था। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त पहले-पहल आपने भाई परमानन्द के उर्दू पत्र 'हिन्दू' का सम्पादन प्रारम्भ किया था और बाद मे उनके 'आकाशवाणी' हिन्दी का सम्पादन भी करने लगे थे। अपनी छात्रावस्था से ही आप अत्यन्त कर्मठ, अध्ययनशील और कुशाग्र बुद्धि रखते थे। इसी कारण आपने इतिहास-सम्बन्धी प्राय. सभी ग्रन्थो का अच्छा पारायण कर लिया था।

आप भाई परमानन्द के दामाद थे। इस कारण आपका कार्य-क्षेत्र बहुत विस्तृत हो गया था। पजाब-केसरी लाला लाजपतराय के 'नेशनल कालेज' के स्नातक के रूप मे आप एक सास्कृतिक मिशन मे नेपाल भी गए थे। सन् 1933 मे जब भाई परमानन्द गोल मेज कान्फ्रेंस के सयुक्त संसदीय सदस्य के रूप मे लन्दन गए थे तब आप भी उनकी सहायतार्थ साथ ही गए थे। सन् 1934 मे आप 'सर्व प्रशान्त बौद्ध सम्मेलन' मे भारतीय प्रतिनिधि के रूप मे सम्मिलित होने के लिए टोकियो भी गये थे। आपने लगभग 11 वर्ष तक पजाब विश्वविद्यालय से सम्बद्ध कई कालेजो मे अँग्रेजी भाषा और साहित्य का अध्यापन करने के अतिरिक्त लगभग 30 वर्ष तक पत्रकारिता के क्षेत्र मे प्रशसनीय कार्य किया था। 'हिन्दू' तथा 'आकाशवाणी' के अतिरिक्त आप अनेक साप्ताहिक और दैनिक पत्रो से भी सम्बद्ध रहे थे। आपने चीन, जावा, बाली और लका आदि कई देशो का भ्रमण भी किया था।



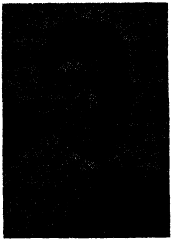
आप जहाँ अँग्रेजी साहित्य और इतिहास के गम्भीर विद्वान् थे वहाँ हिन्दी मे भी आपकी पर्याप्त रुचि थी। आपके लेख तथा कहानियाँ हिन्दी की 'सरस्वती' आदि अनेक प्रमुख पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित होती थी। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'ससार की कहानियाँ', 'पजाब का इतिहास', 'अमरपुत्र और बारह कहानियाँ', 'दक्षिण का इतिहास', 'लाला हरदयाल की जीवनी', 'भाई परमानन्द और उनका युग', 'गुरु गोलवलकर', 'विष कन्या' तथा 'मदनलाल ढींगड़ा' आदि प्रमुख है। इनमे से अन्तिम दो का अभी प्रकाशन नही हो सका है। आप 'राष्ट्रीय स्वयं सेवक सघ' के पंजाब प्रान्त के मन्त्री भी रहे थे।

आपका निधन 2 अक्तूबर सन् 1973 को हुआ था।

डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री

श्री शास्त्री का जन्म बिहार प्रदेश के सारन जिले के एक ग्राम में 28 सितम्बर सन् 1906 को हुआ था। आपने हिन्दी, संस्कृत और दर्शनशास्त्र मे एम० ए० की उपाधियाँ प्राप्त करने के उपरान्त सन्त मत के सम्बन्ध में शोध ग्रन्थ प्रस्तुत करके पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। आप सन्त साहित्य के विशेषज्ञों मे अपना प्रमुख स्थान रखते थे। आप जहाँ अनेक वर्ष तक पटना विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष के रूप मे प्रतिष्ठित रहे थे वहाँ 'बिहार राष्ट्र भाषा परिषद्' के मन्त्री भी रहे थे। बिहार राज्य के लोक शिक्षा निदेशक के रूप मे भी आपकी सेवाएँ सर्वथा स्पृहणीय रही थी। आप कई वर्ष तक जगजीवन कालेज आरा के प्राचार्य भी रहे थे।

आपने एक कुशल शिक्षक और कर्मठ प्रशासक होने के साथ-साथ अध्ययनशील समीक्षक के रूप मे भी प्रचुर ख्याति अर्जित की थी। सन्त



साहित्य से सम्बन्धित आपके जिन शोध-ग्रन्थो ने आपको अखिल भारतीय स्तर की प्रतिष्ठा प्रदान की थी उनमे 'सन्त कवि दरिया' एक अनुशीलन' तथा 'सन्त मत का सरभग सम्प्रदाय' के अतिरिक्त 'दरिया ग्रन्थावली' (सम्पादित) प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। आपके द्वारा लिखित अन्य ग्रन्थो मे 'गुप्त जी के काव्य की करुण धारा', 'महाकवि हरिऔध और उनका प्रियप्रवास' तथा 'सामाजिक शिक्षा और समाज-सेवा' आदि प्रमुख है। आपने अनेक हस्तलिखित ग्रन्थों का सम्पादन भी किया था।

आपकी साहित्य-सम्बन्धी सेवाओ के लिए आपको एक अभिनन्दन-ग्रन्थ भी भेट किया गया था।

आपका निधन सन् 1964 मे हुआ था।

श्री धर्मेन्द्र वीर शिवहरे

श्री शिवहरे का जन्म उत्तर प्रदेश के फतहपुर नामक नगर मे 23 अक्तूबर सन् 1911 को हुआ था। आपके पिता श्री मथुराप्रसाद शिवहरे आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध नेता और प्रकाशक थे। अपने पिता के अनुरूप आपने भी शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त जहाँ उनके प्रकाशन के कार्य मे उल्लेखनीय सहायता की थी वहाँ राष्ट्रीय आन्दोलनो मे भी बढ़-चढ़कर अपना उल्लेखनीय योगदान किया था। आप सन् 1930 तथा सन् 1942 के स्वाधीनता-आन्दोलनों मे सक्रिय भाग लेकर जेल भी गए थे।

अपने छात्र-जीवन से ही आपका झुकाव लेखन की ओर था। कविता, कहानी तथा लेख आदि लिखने मे आपने अपूर्व दाक्षिण्य प्राप्त कर



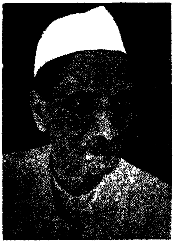
लिया था और थोडे ही दिनो मे आपकी रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओ मे स्थान पाने लगी थी। लेखन के साथ-साथ समाज-सेवा के क्षेत्र मे भी आपका स्थान सर्वथा अप्रतिम था। आप लगभग 6 वर्ष तक जहाँ अजमेर नगर-पालिका के सक्रिय सदस्य रहे थे वहाँ नगर की अन्य बहुत-सी समाज-सेवी सस्थाओं से भी निकटता से जुडे हुए थे।

अपने पिता द्वारा सचालित 'आर्य साहित्य मण्डल लिमिटेड'-जैसी प्रकाशन-सस्था मे रहकर आपने मुद्रण और प्रकाशन की कला मे इतनी दक्षता प्राप्त कर ली थी कि आपने कई वर्ष तक राजस्थान सरकार के प्रिंटिंग तथा स्टेशनरी विभाग के निदेशक का उत्तरदायित्व भी अत्यन्त सफलता-पूर्वक सँभाला था। जिन दिनो आप इस पद पर प्रतिष्ठित थे तब आपके विभाग मे अनेक उपयोगी कार्य हुए थे।

आपका निधन 9 अप्रैल सन् 1963 को हुआ था।

डॉ० धीरेन्द्र वर्मा

आपका जन्म 17 मई सन् 1897 को उत्तर प्रदेश के बरेली शहर के भूड़ मोहल्ले में हुआ था। आपके पिता श्री खानचन्द जी इसी जनपद की बहेड़ी तहसील के शकरस नामक ग्राम के रहने वाले थे। आपके पिता अपने छात्र-जीवन से ही आर्य-समाज के सुधारवादी आन्दोलन से अनुप्राणित थे, जिसका प्रभाव आपके पारिवारिक जीवन, विचारों और शिक्षा आदि पर बहुत अधिक हुआ था। वर्मा जी की प्रारम्भिक शिक्षा सस्कृत में हुई थी और हिन्दी आप पहले ही सीख चुके थे। प्रारम्भ मे कई वर्ष तक आपने पुराने ढग के पण्डितो से संस्कृत व्याकरण आदि पढ़ा था। आपके पिता जी आपको भारतीय सस्कृति के अनुकूल वातावरण मे शिक्षा देने की दृष्टि से 'गुरुकुल काँगडी' मे प्रविष्ट कराना चाहते थे, किन्तु आपकी दादी और माँ आपको अधिक दिन तक अलग नही रखना चाहती थी।



परिणामस्वरूप आपको सन् 1908 मे देहरादून के डी० ए० वी० कालेज मे प्रविष्ट कर दिया गया तथा आपकी दादी और माँ भी वही मकान लेकर रहने लगी। परन्तु यह क्रम भी अधिक दिन तक नही चल सका और एक वर्ष बाद ही आप अपने पिताजी के पास लखनऊ चले गए, जहाँ पर वे सरकारी नौकरी के सिलसिले मे कार्य-रत थे। वहाँ पर आपका नाम 'क्वीन्स एग्लो हाई स्कूल' मे लिखाया गया, जहाँ से आपने सन् 1914 मे हाई-स्कूल की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की थी। उन दिनो आपके स्कूल के सहपाठियो मे हिन्दी के विख्यात साहित्यकार श्री दुलारेलाल भार्गव भी थे।

हाई स्कूल की परीक्षा देने के उपरान्त आपने आगे की शिक्षा के लिए प्रयाग के 'म्योर सेण्ट्रल कालेज' मे अपना नाम लिखाया और वहाँ के 'हिन्दू बोर्डिंग हाउस' मे रहने लगे। उन दिनों आपके छात्रावास के साथियों मे आचार्य नरेन्द्रदेव, पण्डित परशुराम चतुर्वेदी, श्री सुमित्रानन्दन पन्त और डॉ० बाबूराम सक्सेना भी थे। डॉ० सक्सेना की यह मित्रता दिनानुदिन बढती गई और उसने भावी जीवन मे पारिवारिकता का ही रूप ले लिया था। आपने सन् 1916 मे इण्टर की परीक्षा विशेष योग्यता के साथ उत्तीर्ण करके छात्रवृत्ति प्राप्त की थी। इसके उपरान्त आपने सन् 1918 मे बी० ए० करने के पश्चात् सन् 1921 मे एम० ए० (सस्कृत) की उपाधि प्राप्त की थी। एम० ए० करने के उपरान्त आपने 100 रुपये प्रतिमास की छात्र-वृत्ति प्राप्त करके डॉ० प्रसन्नकुमार आचार्य के निर्देशन में ब्रजभाषा के विकास पर शोध करके डी० लिट्० की उपाधि प्राप्त करने का सकल्प किया। सन् 1924 मे जब प्रयाग विश्वविद्यालय मे 'हिन्दी विभाग' का अलग से गठन हुआ तब विश्वविद्यालय के तत्कालीन उपकुलपति डॉ० गगानाथ झा की प्रेरणा पर आपकी नियुक्ति उसमे प्रथम हिन्दी-प्रवक्ता के रूप मे हुई थी। इस बीच सन् 1922 मे आपका विवाह हो गया था। आपके विश्वविद्यालय मे नियुक्ति के प्रारम्भिक कई वर्ष तो विश्वविद्यालयीन स्तर के बी० ए० तथा एम०ए० के 'हिन्दी-पाठ्यक्रम' को क्रमबद्ध करने मे ही व्यतीत हो गए। इसी कारण डी० लिट्० की शोध का कार्य भी रुक-सा गया था। परिणामस्वरूप सन् 1934 मे आप भाषा विज्ञान के विशेष अध्ययन के लिए यूरोप चले गए और वहाँ पर जाकर आपने प्रख्यात भाषा-शास्त्री 'ज्यूल ब्लाख' के निर्देशन मे सन् 1935 मे 'पेरिस विश्वविद्यालय' से डी० लिट्० की उपाधि प्राप्त कर ली थी। यह शोध-प्रबन्ध मूलत. फ्रेंच भाषा मे प्रस्तुत किया गया था और हिन्दी मे यह अनूदित रूप मे ही है।

जिस समय आपकी नियुक्ति के साथ विश्वविद्यालय मे 'हिन्दी विभाग' प्रारम्भ हुआ था तब उसमे केवल 5 छात्र थे। आपके उस समय के प्रारम्भिक छात्रों मे डॉ०रामकुमार वर्मा, डॉ० रामशकर शुक्ल 'रसाल' डॉ० माताप्रसाद गुप्त, आचार्य ललिताप्रसाद सुकुल और डॉ० दीनदयाल गुप्त के नाम अन्यतम है। अपने विभाग का दायित्व सँभालकर आपने दिन-रात उसके विकास और प्रसार के लिए जो घन-घोर परिश्रम किया था उसीका यह सुपरिणाम है कि आज

प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग का शिक्षा के क्षेत्र में अपना एक विशिष्ट स्थान है। आपने अपने शिक्षण-काल मे हिन्दी-साहित्य के बहुमुखी विकास के लिए जो कार्य किया था वह सर्वविदित है। अपने इस कार्य को गति देने की दृष्टि से आपने हिन्दी के जिन अनेक विद्वानो का दिशा-निर्देश प्राप्त किया था उनमे अवधवासी लाला सीताराम बी० ए० 'भूप', आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, राव राजा श्यामबिहारी मिश्र और डॉ० श्यामसुन्दरदास के नाम अन्यतम है। आप सन् 1935 मे विश्वविद्यालय मे रीडर हुए थे और सन् 1946 मे आपको विधिवत् 'प्रोफेसर' बनाया गया था। तब से लेकर मार्च सन् 1959 मे अवकाश ग्रहण करने तक आपने विश्वविद्यालय के लिए जो-जो कार्य किये वे सर्वविदित है।

आपने जहाँ हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की दिशा मे सर्वथा नई परम्पराओ और पद्धतियो का प्रारम्भ किया था वहाँ हिन्दी-सम्बन्धी शोध को भी सर्वथा नये आयाम प्रदान किये थे। आपकी अध्यक्षता मे विश्वविद्यालय से जितने भी विद्वान् प्रशिक्षित और दीक्षित होकर निकले उन सबका हिन्दी-साहित्य मे अपना एक विशिष्ट स्थान बन गया है। यह आपकी सगठन-क्षमता और कार्य-पद्धति का ही ज्वलन्त प्रमाण है कि आपने अपने सत्प्रयास मे विश्वविद्यालयीय हिन्दी अध्यापको को हिन्दी शोध और साहित्य-सम्बन्धी विविध दिशाओं के मार्गदर्शन के निमित्त 'अखिल भारतीय हिन्दी परिषद्' की स्थापना करके उसकी ओर से 'हिन्दी अनुशीलन' नामक एक शोध त्रैमासिक प्रारम्भ किया था। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि आपने जहाँ हिन्दी के शैक्षणिक स्तर को उन्नत करने की दिशा मे अपना अनन्य योगदान दिया था वहाँ अपने विभाग की ओर से 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' से सम्बन्धित अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का प्रकाशन भी कराया था। आप जहाँ अनेक वर्ष तक विश्वविद्यालय की विभिन्न समितियो के प्रमुख सदस्य रहे थे वहाँ आपने प्रयाग की प्रमुख साहित्यिक सस्था 'हिन्दुस्तानी एकेडेमी' की भाषा तथा साहित्य-सम्बन्धी प्रवृत्तियो को भी आगे बढाने में उल्लेखनीय सहयोग दिया था। आप कई वर्ष तक उसके मन्त्री भी रहे थे। आप अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे जबलपुर विश्वविद्यालय के 'कुलपति' के के पद पर प्रतिष्ठित थे।

अपनी इन सब व्यस्तताओं के रहते हुए भी आप साहित्य तथा भाषा-सम्बन्धी अनेक संस्थाओं से सक्रिय रूप से जुडे रहते थे। आप जहाँ सन् 1958-59 मे 'लिंग्युस्टिक सोसाइटी आफ इण्डिया' के अध्यक्ष रहे थे वहाँ आपने 'ओरियण्टल कान्फ्रेंस' के लखनऊ अधिवेशन के समय उसके हिन्दी विभाग की अध्यक्षता भी की थी। आपने जहाँ अनेक वर्ष तक 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की ओर से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दी शब्द सागर', 'हिन्दी विश्व कोष' तथा 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास' की विस्तृत योजना को दिशा-निर्देश दिया था वहाँ आपके प्रधान सम्पादकत्व मे 'ज्ञान मण्डल' काशी की ओर से 'हिन्दी साहित्य कोश' (1952) का भी महत्त्वपूर्ण प्रकाशन दो खण्डों मे हुआ था। आपने 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' के निमन्त्रण पर वहाँ मध्य देशों की सस्कृति से सम्बन्धित जो महत्त्वपूर्ण भाषण दिए थे उनसे आपके विचारो की मौलिकता तथा गहन ऐतिहासिक दृष्टि का परिचय मिलता है। आप जहाँ अत्यन्त गहन अन्वेषी प्रवृत्ति के अध्यापक थे वहाँ साहित्य की अनेक विधाओं की समृद्धि मे भी आपने उल्लेखनीय सहयोग दिया था। आपके द्वारा लिखित लगभग सारे ही ग्रन्थ इसके ज्वलन्त साक्षी हैं। आपकी प्रमुख कृतियों मे 'हिन्दी राष्ट्र' (1930), 'हिन्दी भाषा का इतिहास' (1933), 'हिन्दी भाषा और लिपि' (1933), 'ग्रामीण हिन्दी' (1933), 'नवीन हिन्दी व्याकरण' (1935), 'ब्रज भाषा व्याकरण' (1937), 'विचार-धारा' (1942), 'यूरोप के पत्र' (1943), 'मध्य देश' (1948), 'अष्टछाप' (1950), 'वाल्मीकीय रामायण सार' (1951), 'ब्रजभाषा' (1954), 'मेरी कालिज डायरी' (1958), 'सूर सागर सार' (1958) तथा 'कम्पनी के पत्र' (1959) के नाम विशेष महत्त्व रखते है। इनके अतिरिक्त आपके सम्पादन मे सन् 1929 मे 'गल्प माला' और 'परिषद् निबन्धावली' का प्रकाशन भी हुआ था।

हिन्दी शोध और समीक्षा के क्षेत्र मे आपका सर्वथा विशिष्ट योगदान था। वास्तव में जो कार्य हिन्दी-समीक्षा के क्षेत्र मे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने किया है, हिन्दी-शोध के क्षेत्र में वही कार्य आपका है। अपनी विशिष्ट चिन्तन-शैली और शोध-दृष्टि से आपने हिन्दी साहित्य को जो सांस्कृतिक पीठिका प्रदान की है वह आपके व्यक्तित्व की उपलब्धि है।

आपका निधन 23 अप्रैल सन् 1973 को हुआ था।

श्री धूड़चन्द सोनी 'राजीव'

श्री सोनी का जन्म 2 मई सन् 1938 को राजस्थान के बीकानेर नगर में हुआ था। साधारण-सी शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप 'स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर' में लिपिक के रूप में कार्य करने लगे थे। अपनी छात्रावस्था से ही आप कविता तथा लेख आदि लिखने लगे थे और आपकी रचनाएँ 'नवभारत टाइम्स', 'नवज्योति', 'हिन्दुस्तान' 'वीर अर्जुन', 'मधुमती', 'योजना' तथा 'दिनमान' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी थी।



गद्य और पद्य दोनों दिशाओं में ही आप अत्यन्त दक्ष थे। आपकी गद्य तथा पद्य की जो पुस्तकें अभी तक प्रकाशित हुई है उनमें 'जीवन साथी पुस्तकें', 'शास्त्री महान्', 'जय जवान जय किसान', 'जजीरे टूटेगी' तथा 'चुनाव उम्मीदवार और मतदाता' विशेष उल्लेखनीय है।

आपका निधन 26 जून सन् 1969 को हुआ था।

श्री नकछेदीराम द्विवेदी 'उमापति'

श्री उमापति का जन्म उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद के कसवाँ नामक ग्राम में सन् 1854 में हुआ था। आप अपने समय के अत्यन्त धुरन्धर विद्वानों में अग्रणी थे। महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय जी के अनुरोध पर आपने 'सनातन धर्मोद्धार' नामक एक ऐसे ग्रन्थ की रचना की थी जिसमें वेद, मीमासा, न्याय, कर्म-काण्ड तथा भारतीय सस्कृति से सम्बन्धित अनेक अगो का विशद वर्णन प्रस्तुत किया गया था। इस ग्रन्थ का प्रकाशन सन् 1932 और सन् 1942 के मध्य चार भागो मे हुआ था। वास्तव मे इसे हिन्दू सस्कृति और विशेषत सनातन धर्म का विश्वकोश ही कह सकते है।

आपका निधन सन् 1911 में हुआ था।

श्री नगीनदास 'नागेश'

जन-कवि 'नागेश' का जन्म मध्यप्रदेश के बुरहानपुर नामक स्थान में 4 सितम्बर सन् 1922 को हुआ था। आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'साहित्यरत्न' परीक्षा देने के उपरान्त हिन्दी विद्यापीठ देवघर (बिहार) की 'साहित्यालकार' उपाधि भी प्राप्त की थी। आप आन्ध्र प्रदेश के हैदराबाद नगर के 'धर्म वत्त हाई स्कूल' में अध्यापन कार्य करने के साथ-साथ वहाँ की 'हिन्दी प्रचार सभा' से भी सम्बद्ध रहे थे।

आपने जहाँ हैदराबाद की 'आनन्द ललित कला सघ' नामक सस्था के 'साहित्य मन्त्री' का कार्य-भार सँभाला हुआ था वहाँ आप 'हिन्दी प्रचार सभा' की ओर से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'अजन्ता' के व्यवस्थापक भी थे। आपने सन् 1942 के स्वतन्त्रता-आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेकर कारावास की यातनाएँ भोगी थी। आप मूलत कवि थे और आपकी कविताओं का सकलन सन् 1962 में 'अन्तर के स्वर' नाम से प्रकाशित हुआ था।

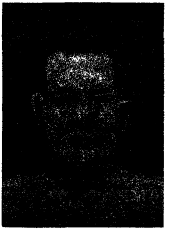
आपका निधन 3 जुलाई सन् 1961 को हृदयाघात के कारण हुआ था।

श्री नगेन्द्रनाथ बसु

श्री बसु का जन्म 6 जुलाई सन् 1866 को पश्चिमी बगाल के कलकत्ता नगर में हुआ था। आपके पूर्वज वैसे हुगली जनपद के माहेश नामक स्थान के निवासी थे और आपके पिता का नाम श्री नीलरतन बसु था। आप कवि, नाटककार

और इतिहासकार के रूप में प्रसिद्ध थे। आपकी कविताएँ प्रारम्भ मे छद्म नाम से प्रकाशित हुआ करती थी। आपने शेक्सपियर के कुछ नाटको का अनुवाद भी बँगला भाषा मे किया था। बाद मे आप सकलन, सम्पादन और ऐतिहासिक खोज के गहन तथा गुरुतर कार्यों मे संलग्न हो गए थे। आप जहाँ 'कायस्थ सभा' के सस्थापको मे अग्रणी स्थान रखते थे वहाँ आपने 'बगीय साहित्य परिषद्' की पत्रिका 'साहित्य परिषद् पत्रिका' और 'कायस्थ पत्रिका' का भी कई वर्ष तक सफलतापूर्वक सम्पादन किया था। आपने जहाँ बगला मे अनेक मौलिक ग्रन्थों की रचना की थी वहाँ बहुत-से प्राचीन तथा उल्लेखनीय ग्रन्थो का सम्पादन भी किया था। आपके द्वारा लिखित 'एशियाटिक सोसाइटी' मे पढे गए इतिहास तथा पुरातत्त्व-सम्बन्धी अनेक निबन्ध भी अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण थे।

आपने जहाँ 27 वर्ष तक अखण्ड परिश्रम करके बगला भाषा मे 25 खडो मे 'विश्वकोश' प्रकाशित किया था वहाँ हिन्दी मे भी ऐसा ही 'विश्वकोश' प्रस्तुत करके ऐतिहासिक अभाव की पूर्ति की थी। आपने नागरी अक्षरो मे 'शब्द कल्पद्रुम' तथा 'भारतीय लिपि तत्त्व' नामक ग्रन्थो की रचना भी की थी। 'इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका' को देखकर आपके मानस मे इस प्रकार के 'विश्वकोश' की रचना करने की प्रेरणा जगी थी। 'हिन्दी विश्वकोश' के प्रकाशन पर आपने उसके 'मुखबन्ध' मे जिन परिस्थितियों का वर्णन किया था उन्हे पढकर आप इस कार्य मे हुई कठिनाइयो का सही अनुमान लगा सकते है। आपने लिखा था—"इस गुरु-



तर दायित्वपूर्ण कार्य-भार के ग्रहण करने के 3 वर्ष के भीतर ही मैं स्नायुविक दुर्बलता, हृद्‌रोग और श्वास-कृच्छ्र रोग से पीडित होकर बीमार पड़ गया और क्या कहूँ, उस समय से आज पर्यन्त मैं एक प्रकार से घर के भीतर ही बन्द हूँ। शैया ही मेरा प्रधान आश्रय है। घर से बाहर निकलने की शक्ति जाती रही। 6-7 वर्ष तक नाना प्रकार की चिकित्सा करने पर भी जब कोई फल न हुआ तो मैंने सब प्रकार की औष-धियों की आशा त्यागकर एकमात्र दैवी शक्ति पर निर्भर रहना प्रारम्भ किया। मैंने मन मे निश्चय कर लिया कि जब कभी पीडा के घात-प्रतिघात की विषम यन्त्रणा से अस्थिर हूँगा तभी एकमात्र औषधि के रूप मे उसी भगवती महा-शक्ति के मन्त्र का जप करूँगा। आपको क्या बताऊँ कि यही उपाय करके मैं कितनी बार मृत्यु-यन्त्रणा से प्रकृतिस्थ हुआ हूँ। यद्यपि मुझमे चलने-फिरने योग्य शक्ति नही है, यद्यपि हृद्‌रोग और श्वास-कृच्छ्र रोग मुझे बीच-बीच मे पीडित कर डालते है, किन्तु फिर भी मेरा दृढ विश्वास है कि इस समय भी मैं उसी महाशक्ति, आद्या शक्ति की कृपा से जीवित हूँ। उन्हीकी अपार करुणा से आज मैं 'हिन्दी विश्वकोश' रूपी महाव्रत का उद्यापन करने मे समर्थ हो सका हूँ।"

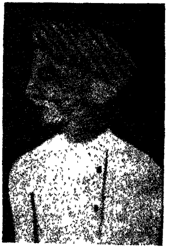
श्री बसु की इन पक्तियो से आप यह अनुमान लगा सकते है कि किन कठिन परिस्थितियो मे आपने हिन्दी भाषा को विश्वकोश का यह उपहार प्रदान किया था। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि निरन्तर 20 वर्ष तक आपने जिस महत्त्वपूर्ण कार्य को सम्पन्न करने के लिए अद्वितीय साधना की थी वह ग्रन्थ बगला का अनुवाद न होकर स्वतन्त्र रूप से हिन्दी मे ही प्रस्तुत किया गया था। बगला मे प्रकाशित उस ग्रन्थ मे जिन आधुनिक वैज्ञानिक खोजो का विवरण नही दिया जा सका था, वह विवरण भी 'हिन्दी विश्वकोश' मे आपने कठिन परिश्रम करके प्रस्तुत किया था। आपके इस कोश मे लगभग 30 हजार विषयो की उपयोगी जानकारी प्रस्तुत की गई है। इस विश्वकोश के सभी खडो का मूल्य उस समय कुल 317 रुपये था और एक खण्ड 12 रुपये मे मिल सकता था। श्री बसु के इस कोश का बगला रूप जहाँ सन 1902 से सन् 1911 तक सम्पूर्ण हुआ था वहाँ हिन्दी कोश सन् 1913 से सन् 1931 तक ही छप सका था। इस कोश की महत्ता का इससे बडा प्रमाण और क्या हो सकता है कि जब राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी ने इसे देखा तो उन्होने यह विचार प्रकट किये थे—"वास्तव मे आज मैंने तीर्थ-दर्शन का पुण्य लाभ प्राप्त किया है।" जिन दिनों श्री बसु पक्षा-घात से पीडित थे तब महात्माजी आपको देखने के निमित्त

आपके निवास-स्थान पर गए थे। आपका निवास-स्थान कलकत्ता के बड़ा बाजार मे जिस गली मे था उसे आज 'विश्वकोश लेन' कहा जाता है। आपके बगला कोश का प्रथम सस्करण आपके जीवन-काल मे ही समाप्त हो गया था। उसके दूसरे सस्करण के केवल 5 खण्ड ही आपके जीवन-काल मे मुद्रित हो पाए थे। आपकी इस महत्त्वपूर्ण साहित्य-सेवा को दृष्टि मे रखकर आपको 'प्राच्य विद्या महन्त' की उपाधि से भी विभूषित किया गया था।

आपका निधन अक्तूबर सन् 1938 मे हुआ था।

जन-कवि नजीर अकबराबादी

जन-कवि नजीर साहब का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा नामक नगर के ताजगज मोहल्ले मे सन् 1735 मे हुआ था। आप मकतब मे बालको को पढ़ाया करते थे। जिन दिनों पेशवा आगरा मे नजरबन्द थे तब आपने उनके लडके को पढ़ाया था। आप जीविका के लिए आगरा के माईथान मोहल्ले के सेठो और महाजनों के बालको को पढ़ाने जाया करते थे। आप स्वतन्त्र प्रकृति के व्यक्ति थे और किसी राजा, बादशाह अथवा नवाब की प्रशसा करने मे आपका विश्वास नही था। आप इतने उदार थे कि एक बार जब आप अपने मकतब से वेतन लेकर घर को वापिस लौट रहे थे तब मार्ग मे किसी व्यक्ति ने आपसे अपनी लडकी के विवाह के लिए सहायता की याचना की। फलस्वरूप आप सारे वेतन के पैसे देकर बैरंग ही घर चले गए।



आप वैसे मुसलमान थे, किन्तु हिन्दू देवी-देवताओ तथा पर्वों-त्योहारो की प्रशसा में आपने अनेक कविताएँ लिखी थी। आपकी दृष्टि मे हिन्दू, मुसलमान, सिख तथा ईसाई आदि किसी मे कोई भेद नही था। आप जिस श्रद्धा और भक्ति से हजरत अली को देखते थे उसी प्रेम और निष्ठा से गुरु नानक और भगवान् कृष्ण की स्तुति करते थे। आपने इतनी सरल भाषा और सुबोध शैली मे अपनी नज्में लिखी थी कि उनको कोई भी व्यक्ति सुविधापूर्वक समझ सकता है। आपने अपना परिचय इन शब्दों मे दिया था .

आशिक कहो, असीर कहो, आगरे का है,
मुल्ला कहो, दबीर कहो, आगरे का है।
मुफलिस कहो, फकीर कहो, आगरे का है,
शायर कहो, नजीर कहो, आगरे का है।

आपने कृष्ण-लीला-सम्बन्धी रचनाएँ ऐसी सरल हिन्दी मे लिखी थी कि उन्हे देखकर या पढकर कोई भी सहजता से उनको हृदयगम कर सकता है। उनके इस प्रकार के काव्य की बानगी आप इन पक्तियों मे देख सकते है

यारो सुनो यह दधि के लुटैया का बालपन
औ' मधुपुरी नगर के बसैया का बालपन
मोहन-सरूप नृत्य करैया का बालपन
बन-बन मे ग्वाल-गौवे-चरैया का बालपन
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैया का बालपन
परदे मे बालपन के ये उनके मिलाप थे।
जोती स्वरूप कहिये जिन्हे सो वो आप थे।।

आपने होली तथा दिवाली आदि अनेक हिन्दू-पर्वों का बडा ही सजीव वर्णन किया था। आपकी रचनाओ मे 'आदमीनामा', 'रोटीनामा', 'जोगीनामा' तथा 'बनजारा-नामा' आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है। आपने अपनी कविताओ मे जहाँ भारत के पर्वों-त्योहारो और जन-जीवन का वर्णन किया था वहाँ आपने किसानों तथा महा पण्डितो तक को भी अपनी कविताओ का विषय बनाया था। यहाँ तक कि एक बार जब नजीर कल्लन भटियारे की दुकान पर पडी चारपाई पर बैठे थे तब कल्लन ने मौके का फायदा उठाकर उनसे फरमाइश की थी कि "नजीर साहब, कुछ रोटी पर भी सुनाइये।" उस समय आपने रोटी के सम्बन्ध मे जो एक लम्बी-सी नज्म लिखी थी उसकी कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है :

जब आदमी के पेट मे जाती है रोटियाँ,
फूली नहीं बदन मे समाती है रोटियाँ;
रोटी न पेट मे हों तो फिर कुछ जतन न हो,
मेले की सैर ख्वाहिशे-बागो-चमन न हो,
भूखे गरीब दिल की खुदा से लगन न हो,
सच है कहा किसी ने कि भूखे भजन न हो,
अल्लाह की भी याद दिलाती हैं रोटियाँ।

नजीर के व्यक्तित्व की एक विशेषता यह भी है कि आपका फारसी और उर्दू भाषा पर जितना अधिकार था उससे कही अधिक आप संस्कृत, हिन्दी और पंजाबी भाषाओ मे दक्ष थे। अवधी और भोजपुरी मे भी आपने कविताएँ लिखी थी। पुरबियो का लहजा और मारवाडियो की परिभाषाओ का भी आपने पूरा अभ्यास कर लिया था। आपकी 'बनजारा-नामा' की इन पंक्तियो मे आप उनकी भाषा का एक और रूप देख सकते है :

टुक हिर्स ओ हवा को छोड मियाँ,
मत देस-बिदेस फिरे मारा।
कज्जाक अजल का लूटे है,
दिन-रात बजाकर नक्कारा।
क्या बधिया, भैंसा, बैल, शुतुर,
क्या गोने पलना सर मारा।
क्या गेहूँ, चावल, मोठ, मटर,
क्या आग, धुवाँ और अंगारा,
सब ठाठ पडा रह जाएगा,
जब लाद चलेगा बनजारा।

नजीर की सफलता का यह सबसे बडा प्रमाण है कि आप जनता के कवि थे। जनता के भावो को, जनता की भाषा मे आपने ऐसे चित्रित कर दिया है जैसे वह आम लोगो की बात कह रहा हो। आपके द्वारा लिखा गया 'चना जोर गरम बाबू, मै लाया मजेदार, चना जोर गरम'-जैसा लोकप्रिय गाना आज हमारे देश की गली-गली मे गाया जाता है। आपके कृतित्व के सम्बन्ध मे यूरोप के सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ० फालन ने यह सही ही लिखा है—"नजीर ही एक ऐसा कवि है, जो यूरोपवासियो की निगाह मे भी कवि कहे जाने का अधिकारी है। उसकी सब कविताओ ने आम लोगो के दिलो मे जगह बना ली है। लोग उसकी कविताओ को सड़कों, गलियो और खेत-खलिहानो मे गाते फिरते है। वही एक ऐसा कवि था जिसने बच्चों और माँ की ममता पर कविताएँ लिखने के साथ दुखी लोगो के साथ हमदर्दी दिखाई है।"

यह नजीर को ही सौभाग्य प्राप्त है कि उसकी याद मे अब भी आगरा मे प्रतिवर्ष मेला लगता है और वहाँ के हिन्दू-मुसलमान सभी बडे प्रेम से उसके मजार पर फूल चढाकर अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते है।

नजीर ने 95 वर्ष की दीर्घायु पाई थी और आपका देहान्त सन् 1830 मे हुआ था।

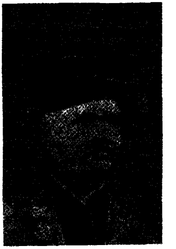
श्री नत्थाराम शर्मा गौड़

श्री गौड का जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ जनपद के हाथरस जक्शन रेलवे स्टेशन के समीपवर्ती ग्राम दरियापुर मे 14 जनवरी सन् 1874 को हुआ था। आपने 14 वर्ष की आयु मे सन् 1888 मे मिडिल परीक्षा पास की थी। क्योकि आपके पिता श्री भगीरथमल जल्दी ही अन्धे हो गए थे अत परिवार के भरण-पोषण का सम्पूर्ण दायित्व आपके ऊपर ही आ गया था। फलस्वरूप आप आजीविका की तलाश मे हाथरस नगर मे चले आए थे और वहाँ के इन्दरमन अखाड़े के उस्ताद श्री चिरजीलाल जी को अपना गुरु बनाकर उनके पास रहकर सगीत-कला सीखने लगे थे। थोडे ही दिनो मे आपने स्वल्प मे प्रयास से सगीत के साथ-साथ स्वाँग मडलियो मे जाकर अभिनय करने का भी अच्छा अभ्यास कर लिया था। आपके 'लोक-सगीत-नाटक-कला' के क्षेत्र मे आने की भी एक कहानी है। परिवार का दायित्व असमय मे ऊपर आ जाने के कारण जब आपने मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करके किसी विद्यालय मे अध्यापन का कार्य करने के निमित्त अपना प्रार्थना-पत्र दिया था तब वह तत्कालीन जिला विद्यालय-निरीक्षक द्वारा निरस्त कर दिया गया था। विवश होकर आप इस क्षेत्र मे आए थे।

गुरु इन्दरमन के अखाडे मे सगीत और अभिनय-कला मे पूर्ण निपुणता प्राप्त करके आपने अपनी 'स्वाँग मण्डली' का गठन किया और उसके द्वारा अपने ही स्वाँग-नाटक लिखकर उनका अभिनय प्रारम्भ किया। धीरे-धीरे आपको इस कार्य मे सफलता मिलनी प्रारम्भ हो गई और एक दिन

ऐसा भी आया जब आप जनता मे लोकप्रियता प्राप्त करने मे सफल हो गए। आप अपने लोक-सगीत-नाटकों मे ब्रज-भाषा और खडी बोली दोनो का प्रचुरता से प्रयोग किया करते थे। आप जहाँ अपनी कविता मे दोहा, चौपाई, कडा तथा छडा छन्दो का प्रयोग किया करते थे वहाँ लावनी, दादरा, चौबोला, ठुमरी, कव्वाली और सोहनी आदि छन्द भी आपकी रचनाओ का प्रमुख आधार थे। आपकी रचनाओं मे उपमा, रूपक, अनुप्रास, यमक, श्लेष और वक्रोक्ति आदि विविध अलकारो का भी अत्यन्त मनमोहक तथा सार्थक प्रयोग देखने को मिलता है। जहाँ तक रसो का सम्बन्ध है इस दिशा मे भी आपने अपनी अपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। अपनी प्राय सभी रचनाओ मे आपने यथाप्रसग शृगार, वीर, रौद्र, करुण तथा वीभत्स आदि सभी रसो की बानगी प्रस्तुत करके जिस कला-चातुरी का परिचय दिया है वह भी स्पृहणीय है।

अपनी प्राय सभी कृतियो मे आपने भारतीय इतिहास के सभी उल्लेखनीय चरित्रो को आधार बनाकर जिस कला-चातुरी का परिचय दिया है वह सर्वथा अद्भुत है। आपकी रचनाओं मे जहाँ लैला-मजनूँ, हीर-राँझा, स्याहपोश, श्रीमती मजरी और अन्धी दुलहिन आदि प्रेम-प्रसग आधार बनाए गए है वहाँ महारानी पद्मावती, पृथ्वीराज चौहान, छत्रपति शिवाजी, अमरसिंह राठौर, आल्हा-ऊदल और ताला-सैयद की वीर गाथाएँ भी वर्णित की गई है। हमारे पौराणिक पात्रो मे से उषा-अनिरुद्ध, नल-दमयन्ती, ध्रुव-प्रह्लाद, सावित्री और रुक्मिणी-जैसे अनेक चरित्रो को आपने अपनी रचनाओ का मुख्य आधार बनाया था। अपनी इन रचनाओ के माध्यम से भक्तो के चरितो की भक्ति-भावना, प्रेम-प्रसगों मे वास्तविक प्रेम, वीरो की शौर्य-गाथाओ मे अद्वितीय शौर्य तथा स्फुट कथनो मे त्याग, रोमाच तथा सौहार्द आदि अनेक महत्त्वपूर्ण पक्षों का निदर्शन पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर देखने को मिलता है। हिन्दी को देश के कोने-कोने तक पहुँचाने के उद्देश्य से आपने अपनी इन सब रचनाओं को सुलभ कराने की दृष्टि से हाथरस में 'श्याम प्रेस' और 'गौड़ बुक डिपो' की स्थापना करके इनके माध्यम से उन्हे प्रकाशित कराया था।



अपने लेखन मे आप भारतीय सस्कृति की स्थापना और चरित्र-निर्माण को इतना महत्त्व देते थे कि आपने उनमे कही भी कोई ऐसा प्रसग नही आने दिया जिसे फूहड अथवा वर्ज्य समझा जा सके। ब्रह्मचर्य, आदर्श चरित्र, सात्विकता और शालीनता आपकी रचना-प्रतिभा का मूल आधार थे। यहाँ तक कि आप अपने स्वाँगो और नाटको के प्रदर्शन मे पात्र-पात्राओं के द्वारा अश्लील भाव-भगिमाओ पर भी कठोर नियन्त्रण रखते थे। आपका अखाडा 'तुर्रा अखाडा' कहलाता था, जिसमे आपके अतिरिक्त सर्वश्री हरमुखराय, गोविन्द-राम, चिरजीलाल, नारायणदास, प्रसादीलाल, मदनलाल, गणेशीलाल, हीरालाल, जानकीप्रसाद, भोलानाथ, बाबूखाँ, मुन्नन खाँ, तथा उस्ताद घूरेखाँ आदि विशेष प्रभावशाली कलाकारो का जमघट रहता था। आपके नाटको और सगीत की शैली अन्य प्रदेशो की मण्डलियो से सर्वथा अलग थी, इसीलिए उसे 'हाथरस-शैली' की सज्ञा से अभिहित किया गया था। देश मे आप ही अकेले ऐसे व्यक्ति थे जिन्हे सगीत और अभिनय दोनो ही कलाओं मे पूर्ण पटुता प्राप्त थी। आपके द्वारा गठित 'स्वाँग-मण्डली' देश की ऐसी प्रथम व्यावसायिक मण्डली थी जिसने भारत से बाहर रगून आदि कई देशो मे भी अपने नाटको-स्वाँगो का प्रदर्शन करके भारतीय कला को उजागर किया था।

आपके द्वारा लिखित 200 से अधिक पुस्तिकाएँ ऐसी है जिनमे आपने भारतीय लोक-सगीत और अभिनय-कला का सही रूप प्रस्तुत किया है। आपकी प्रमुख रचनाओ मे 'रामायण' (25 भाग) तथा 'महाभारत' (36 भाग) के नाम सर्वथा अनन्य है। इनके अतिरिक्त आपकी अनेक रचनाएँ ऐसी है जिनमे आपने भारतीय पौराणिक तथा ऐति-हासिक कथाओ को आधार बनाया है। आपकी पौराणिक रचनाओ में 'भगत पूरनमल', 'नल चरित', 'उषा-अनिरुद्ध',

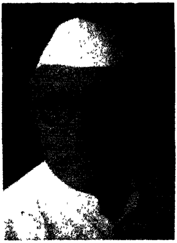
'भगत मोरध्वज', 'ध्रुव चरित', 'प्रह्लाद चरित', 'रुक्मिणी हरण' तथा 'सती-सावित्री' के नाम प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। ऐतिहासिक आख्यानों में 'पद्मावती', 'पृथ्वीराज चौहान', 'छत्रपति शिवाजी', 'आल्हा का ब्याह', 'मलखान का ब्याह', 'बेला का गौना', 'जागन का ब्याह' और 'अमरसिंह राठौर' के नाम उल्लेख्य है। इन सभी कृतियो मे आपने प्रेम, भक्ति, सतीत्व, त्याग, साहस, बलिदान और हिन्दू-मुस्लिम-एकता के अतिरिक्त पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय भावनाओ के प्रसार पर बहुत अधिक बल दिया था। आपके इन प्रदर्शनो की एक विशेषता यह भी थी कि भारतीय नाट्य-शिल्प के अनुरूप मगलाचरण और गर्वोक्ति से आपके स्वाँग प्रारम्भ होते थे और दृश्य-परिवर्तन के लिए उनमे गायन और नगाडे की जोरदार ध्वनि का प्रयोग किया जाता था। आप अपने स्वाँगो मे एक तख्त बिछाकर खुले रगमच पर ही बिना पर्दे के सारे दृश्यो को प्रस्तुत करने की अद्भुत क्षमता रखते थे। आपने एक बार 'मोरध्वज' के स्वाँग मे राजा-रानी द्वारा अपने लडके ताम्रध्वज को आरे से चीरने का दृश्य ऐसे स्वाभाविक और आकर्षक ढग से प्रस्तुत किया था कि उसे देखकर श्रोताओ की आँखो मे आँसू की धारा बह निकली थी। आपकी अभिनय-कला मे प्रभावित होकर आपको 'हिन्दी भूषण' की उपाधि से विभूषित किया गया था। पश्चिमी भारत मे ऐसे लोगो की बहुत अधिक सख्या है, जिन्होने आपकी स्वाँग-पुस्तिकाओं के माध्यम से ही हिन्दी का ज्ञान अर्जित किया था।

आपका निधन 23 मई सन् 1943 को हुआ था।

श्री नत्थूलाल सराफ

श्री सराफ का जन्म मध्य प्रदेश के प्रख्यात नगर जबलपुर मे 9 मई सन् 1904 को हुआ था। आप मूलत शिक्षक थे और इतिहास विषय मे आपकी विशेष रुचि थी। नगर की अनेक सामाजिक, राजनीतिक और साहित्यिक प्रवृत्तियो से आप निकटता से जुडे रहते थे और वहाँ पर होने वाले 'नव रस कवि सम्मेलन' मे आप प्राय हास्य रस का ही प्रतिनिधित्व किया करते थे। लोगो के चेहरो की मुर्दनी तथा उदासी दूर करना ही जैसे आपके जीवन का एक-मात्र लक्ष्य था। आप जहाँ भी, जिस मण्डली मे भी बैठ जाते थे उदासीनता दूर होकर वहाँ मुस्कान, हास्य तथा व्यग्य-विनोद का वातावरण उभर आता था। आपने अपने 'परिहास पुष्प' नामक काव्य-सकलन की भूमिका मे यह सही ही लिखा था—"सघर्षमय जीवन के बीच हँसते-हँसाते रहना मेरे जीवन की परिपाटी-सी बन गई है।"

इतिहास तथा पुरातत्त्व मे आपकी इतनी रुचि थी कि आप सदा जबलपुर की निकटवर्ती कलचुरियो की राजधानी त्रिपुरी और उसके निकटवर्ती अचलो के गोड तथा चन्देल राजाओ से सम्बन्धित पुरातत्त्व की अमूल्य सामग्री मँजोने मे ही सलग्न रहते थे। इस धुन मे आप प्राय इधर-उधर भटकने मे तनिक भी थकान अनुभव नही करते थे। आपने अपनी इस शोध-वृत्ति का परिचय अपनी 'जबलपुर - एट ए ग्लान्स' तथा 'जबलपुर दर्शन' नामक कृतियो मे अत्यन्त गम्भीरता से दिया है। 'रानी दुर्गावती सग्रहालय' की स्थापना आपके ही सत्प्रयास से हुई थी। मध्य प्रदेश का शासन इस दिशा मे अब जो इतनी रुचि लेने लगा है, यह सब आपके ही प्रयत्नो का सुफल है। एक बार तो आपने मध्य प्रदेश के पुरातत्त्व विभाग के एक बडे अधिकारी द्वारा एक बहुमूल्य प्रतिमा को विदेश भेजने की तस्करी के षड्यन्त्र का भण्डाफोड करके अपनी अद्वितीय सूझ-बूझ का परिचय भी दिया था।



आपका जीवन इतना बहु-आयामी था कि इतिहास तथा पुरातत्त्व-जैसे शुष्क विषय से सम्बद्ध होते हुए भी आप 'जबलपुर साहित्य सघ' तथा 'जबलपुर नाट्य सघ'-जैसी सस्थाओं की विभिन्न प्रवृत्तियो मे अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग देते रहते थे। इस कार्य मे आपको हिन्दी के प्रमुख नाटककार

सेठ गोविन्ददास का भी उदारतापूर्ण सहयोग सुलभ होता रहता था। यह संस्था आज जो जबलपुर की जनता की इतनी सेवा करने मे अग्रसर है उसका प्रमुख श्रेय आपको ही है। आप जहाँ हास्य-रस की रचनाएँ करने मे पूर्ण प्रवीण थे वहाँ वीर रस पूर्ण कविता लिखने मे भी आपको अपूर्व दाक्षिण्य प्राप्त था। आपने महाकवि चन्द बरदाई और जगनिक की परम्परा को जीवित रखने के लिए 'आल्हा' छन्द अपनाकर 'राष्ट्र गर्जना' नामक जिस कृति की रचना की थी उसे देखकर आपकी कवित्व-प्रतिभा का अच्छा परिचय मिलता है। छम्ब और जोरियाँ के भारत-पाकिस्तान-युद्ध का वर्णन करते हुए आपने विजय का शंखनाद इस प्रकार किया है

चाविण्डा पसरूर जीतकर, पहुँचे स्यालकोट के द्वार।
बात-बात में बरकी जीता, हुआ छावनी पर अधिकार ।।
दुश्मन धकेलते पीछे-पीछे, पहुँचे ईछोगिल के तीर।
करगिल, उरी, पुछ को जीता, जीता दर्रा हाजी पीर ।।
नभ मे उड़ा तिरगा झण्डा, चमकी भारत की शमशीर।
कायम हुआ नागरिक शासन, दुश्मन की छाती को चीर ।।

आप इतनी बहुमुखी प्रतिभा रखते थे कि साहित्य के सभी क्षेत्रों मे आपकी प्रतिभा समान रूप से प्रस्फुटित होती रहती थी। हास्य और व्यंग्य तो जैसे आपके जीवन का प्रमुख आधार ही थे। जबलपुर मे कदाचित् ऐसी कोई ही गोष्ठी होती होगी जिसमे आपके हास्य-व्यग्य से वातावरण मुखरित न होता हो। वसन्तोत्सव के अवसर पर आयोजित कवि-गोष्ठियों में तो आपका यह रूप और भी सहजता मे प्रकट होता था। उस समय गोष्ठी का वातावरण ही बिलकुल बदल जाता था जब आप एक विशिष्ट मुद्रा मे हास्य का फव्वारा छोड़ते हुए अभिनय के साथ यह कहते थे

जब कोयल कूकी उपवन मे,
घर मे चौका बौडम बसन्त।
दौडा अनंग शर-चाप लिये,
कामुकता फैली दिग् दिगन्त ।।
शरमाती-सी, सकुचाती-सी,
बालाएँ निकलीं लिये कन्त।
छवि-गृह में मचने लगी धूम,
मनचले निपोरे फिरे दन्त ।।

आप जहाँ 'जबलपुर साहित्य सघ' के कई वर्ष तक अध्यक्ष और सचिव रहे थे वहाँ 'जबलपुर नाट्य संघ' की स्थापना आपके ही सत्प्रयास से हुई थी। आपकी काव्य-प्रतिभा 'परिहास-पुष्प' (1956), 'बापू द्वादशी' (1957) तथा 'सन सत्तावन' (1957) आदि कृतियों के द्वारा जाँची-परखी जा सकती है। 'पैरोडी' लिखने मे भी आप अत्यन्त कुशल थे। नगर के राष्ट्रीय जागरण मे भी आपका अभूतपूर्व योगदान रहा था। आप समर्पण की भावना रखने वाले श्रेष्ठ नागरिको मे थे।

आपका निधन 27 अप्रैल सन् 1976 को हुआ था।

बाबू नन्दकिशोर

आपका जन्म हरियाणा के अम्बाला नगर की प्रतिष्ठित फर्म 'हरगुलाल एण्ड सस' के परिवार मे 7 सितम्बर सन् 1910 को हुआ था। आपने लाहौर के गवर्नमेण्ट कालेज से स्नातक-स्तर की शिक्षा प्राप्त करके रुडकी के 'थाम्पसन इजीनियरिंग कालेज' से सिविल इजीनियरिंग की उपाधि ग्रहण की थी और इसके उपरान्त आप 'इस्टिट्यूट आफ इण्डिया' के सदस्य तथा फैलो भी रहे थे। आप जब



लाहौर मे 'गवर्नमेण्ट कालेज' मे पढा करते थे तब आपने हिन्दी मे लिखने का संकल्प लिया था और कालेज की पत्रिका 'रावी' मे आपकी रचनाएँ छपा करती थीं। आपको हिन्दी मे लिखने की प्रेरणा आपके कालेज के हिन्दी-प्राध्यापक श्री जगेश द्वारा मिली थी। आपको अपने छात्र-जीवन मे हिन्दी-लेखन के लिए पजाब के तत्कालीन गवर्नर द्वारा 15 रुपए पुरस्कार मे मिले थे। उन्ही दिनो आपने

कहानी लिखना भी प्रारम्भ किया था और आपकी पहली कहानी 'हिंसक' कालेज की पत्रिका 'रावी' में छपी थी। आपकी इस कहानी की भी आपके अध्यापको ने उस समय भूरि-भूरि प्रशंसा की थी। यहाँ यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेख्य है कि गवर्नमेण्ट कालेज की पत्रिका 'रावी' के हिन्दी विभाग की उन दिनों इतनी चर्चा हुई थी कि लाहौर के दूसरे कालेजों (डी० ए० वी० तथा सनातन धर्म) मे भी हिन्दी-लेखन की लहर फैल गई थी।

यह एक विचित्र-सी बात है कि विज्ञान का छात्र होते हुए भी आपने हिन्दी-लेखन मे इतनी रुचि दिखाई थी। रुड़की के इंजीनियरिंग कालेज से शिक्षा समाप्त करके जब आप आकर अपने कारोबार मे लगे तब भी आपने हिन्दी-लेखन बन्द नही किया। आपकी कहानियों का जो सकलन भारती साहित्य मन्दिर दिल्ली की ओर से 'रगमच' नाम से प्रकाशित हुआ था उसकी भूमिका साहित्यकार डॉ० गोविन्ददास ने लिखी थी। आपने कहानी के अतिरिक्त 'सफेद चादर' और 'मेरा विवाह' नामक दो उपन्यास भी लिखे थे। कविता-लेखन मे भी आपकी पर्याप्त रुचि थी। आपकी कविताओ का सकलन 'अमर कृति' है। आपकी कहानियाँ प्राय दिल्ली से श्री दीनानाथ भार्गव 'दिनेश' द्वारा सम्पादित और प्रकाशित 'मानव धर्म' मे प्रकाशित हुआ करती थी। आपने कुछ एकाकी नाटको की रचना भी की थी, जो सनातन धर्म कालेज अम्बाला के मच से कई बार मचित हुए थे। आप जहाँ अम्बाला की अनेक सामाजिक सस्थाओ से सम्बद्ध थे वहाँ 'सनातन धर्म कालेज' की विविध प्रवृत्तियो मे भी आपका सक्रिय सहयोग रहता था। आप वहाँ के 'रोटरी क्लब' के अध्यक्ष भी रहे थे और आपने क्लब के साप्ताहिक पत्र 'दि रोटेरियन' का भी अनेक वर्ष तक सम्पादन किया था। एक भावुक कवि, सफल कथा-लेखक और उत्साही नाटक-लेखक के रूप मे आपका स्थान नगर के साहित्यकारो मे सर्वथा विशिष्ट था।

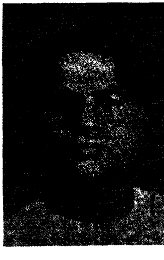
पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का जो 'रजत जयन्ती उत्सव' सन् 1958 मे अम्बाला मे सोत्साह मनाया गया था उसमे भी आपने अपना महत्त्वपूर्ण सक्रिय सहयोग प्रदान किया था। उस अवसर पर सम्मेलन के प्रधानमन्त्री श्री भीमसेन विद्यालकार के सम्पादन मे जो 'रजत जयन्ती स्मृति-ग्रन्थ' प्रकाशित हुआ था उसमे आपका 'मेरी पहली कहानी की जन्म-कथा' शीर्षक जो संस्मरण छपा है उससे आपके प्रारम्भिक लेखकीय जीवन पर अच्छा प्रकाश पडता है।

आपका निधन 5 फरवरी सन् 1975 को हुआ था।

श्री नन्दकिशोर तिवारी

श्री तिवारी का जन्म बिहार प्रदेश के शाहाबाद जनपद के तिवारीपुर नामक ग्राम मे सन् 1898 मे हुआ था। विश्व-विद्यालय स्तर की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने पूर्णत पत्रकारिता को अपना लिया था और हिन्दी-लेखन के क्षेत्र मे आपने अनेक महत्त्वपूर्ण प्रयोग किए थे। गद्य-काव्य-लेखन मे आपने अपनी जिस प्रखर मेधा का परिचय दिया था उसके कारण आपकी गणना हिन्दी के प्रमुख गद्य-काव्य-सृष्टाओं मे होती है। पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपने अपनी अभूतपूर्व सूझ-बूझ और व्यापक दृष्टि से ऐसे अनेक प्रयोग किए थे जिनके कारण आपके द्वारा सम्पादित पत्र साहित्य-क्षेत्र मे सहज ही लोकप्रिय हो गए थे।

आपने जिन पत्र-पत्रिकाओ के सम्पादन मे अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था उनमे 'महारथी', 'चाँद', 'सुधा', 'कर्मयोगी', 'मतवाला' और 'भविष्य' के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। जिन दिनों आप 'महारथी' का सम्पादन करते थे तब आपकी पत्रकारिता का जो ज्वलन्त रूप हिन्दी-जगत् के समक्ष प्रकट हुआ था उससे पत्रकारिता के क्षेत्र मे नई जागृति उत्पन्न हुई थी। देश के नवयुवको मे देश-भक्ति और वीरता के भावों को जगाना इस पत्र का प्रमुख ध्येय था और तिवारी जी वैसी ही सामग्री



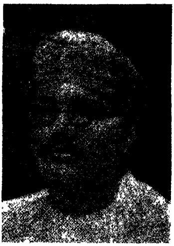
उसमे दिया करते थे। 'चाँद' के सम्पादन के दिनो मे आपने उसके जो कई 'विशेषांक' सम्पादित किये थे उनमे 'अछूत अक' तथा 'पत्राक' प्रमुख है। 'पत्राक' में आपने सारी सामग्री पत्रो के रूप मे ही प्रस्तुत करने का क्रान्तिकारी प्रयोग किया था और इस विशेषांक मे आपने 'विश्व स्तरीय पत्र-साहित्य' की जो साहित्यिक पृष्ठभूमि अपने सम्पादकीय मे प्रस्तुत की थी, उससे आपके साहित्यिक ज्ञान की गम्भीरता का परिचय हिन्दी-जगत् को पहले-पहल मिला था। आपके लिखे गए लेख आपकी प्रगतिशील विचार-धारा का परिचय भी प्रस्तुत करते थे। 'चाँद' का पाँचवे वर्ष का जो पहला अक 'प्रवेशाक' के नाम से प्रकाशित हुआ था वह सर्वथा अनुपम एव बेजोड था। इसी प्रकार 'कर्मयोगी', 'भविष्य', 'मतवाला' और 'सुधा' आदि पत्र-पत्रिकाओ के सम्पादन मे भी हिन्दी-जगत् को आपकी प्रतिभा अत्यन्त ऊर्जस्वित रूप मे देखने को मिली थी।

आप जहाँ उत्कृष्ट कोटि के पत्रकार और गम्भीर गद्य-काव्य-लेखक के रूप मे साहित्य मे प्रतिष्ठित थे वहाँ कहानी और उपन्यास-लेखन की विधा मे भी आप पूर्णत दक्ष थे। आपकी ऐसी रचना-प्रतिभा के दर्शन आपकी 'मरण का त्योहार है सखि' और 'स्मृति कुज' नामक औपन्यासिक कृतियों मे हो जाते है। आपकी भाषा अत्यन्त वेगवती, कल्पना सरल-मधुर और शैली बहुत प्रभावपूर्ण रहती थी। आपकी गणना उत्कृष्ट शैली के गद्य-काव्य-लेखकों मे होती थी। आपके गद्य-काव्य-लेखन की प्रतिभा आपकी 'पद्य पराग' नामक कृति मे भलीभाँति दृष्टिगत होती है। यदि आप लिखना बराबर जारी रखते तो साहित्य की बहुत अभिवृद्धि होती। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप बिहार सरकार के जन सम्पर्क निदेशालय मे प्रचार-अधिकारी थे और आपने कई वर्ष तक सरकारी पत्र 'बिहार' का सम्पादन भी किया था।

आपका निधन सन् 1976 मे हुआ था।

श्री नन्दकिशोर नामावाल

श्री नामावाल का जन्म राजस्थान के जयपुर नगर के एक दाधीच ब्राह्मण परिवार मे 3 दिसम्बर सन् 1904 को हुआ था। आपका परिवार विद्वज्जनो का ही रहा है। आपके प्रपितामह श्री छोटेलाल, पितामह श्री श्रीनारायण और पिता श्री जयकृष्ण उर्फ घीसीलाल जी अपने समय के अच्छे विद्वान् थे। सन् 1924 मे आपने सस्कृत की शास्त्री परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की थी और फिर जयपुर के सस्कृत कालेज से सन् 1926 मे 'साहित्याचार्य' की परीक्षा उत्तीर्ण करके आप राजकीय छात्र-वृत्ति पर आगे के



अध्ययन एवं शोध के लिए वाराणसी के क्वीन्स कालेज मे शोध-छात्र के रूप मे प्रविष्ट हुए थे। वहाँ पर आपने महामहोपाध्याय पण्डित गोपीनाथ कविराज के निरीक्षण मे पुरालेख, पुरालिपि, मुद्राशास्त्र, सूची-पत्र-निर्माण और सदर्भ-ग्रन्थ-सूची-निर्माण प्रक्रिया का विशेष अध्ययन करने के साथ-साथ धर्म शास्त्रो के अध्ययन-सम्बन्धी अनेक शोधपूर्ण लेख लिखे थे।

अपने अध्ययन तथा शोध की इस प्रक्रिया के उपरात आपने वाराणसी के 'सारस्वत लोक' नामक पत्र मे 'सस्कृत कवि परिचय' शीर्षक एक लेख लिखकर अपनी जिस शोध-पूर्ण दृष्टि का परिचय दिया था उससे साहित्य-जगत् मे आपका अच्छा स्वागत हुआ था। इसके उपरान्त आपने 'महामहोपाध्याय पण्डित शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी की जीवनी', 'पोकरण की प्राचीनता' तथा 'दाधिमथ ब्राह्मणो का परिचय' आदि अनेक शोध-लेख लिखकर अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। आपने सस्कृत के 'हर्षचरित' तथा 'चन्द्रालोक' आदि कई ग्रन्थो का सम्पादन करके काशी से प्रकाशित भी कराया था। आप अनेक वर्ष तक हिन्दू विश्वविद्यालय के 'बोर्ड आफ स्टडीज' के सक्रिय सदस्य भी रहे थे।

आप सन् 1933 मे काशी से जयपुर के महाराजा सस्कृत कालेज मे प्राध्यापक होकर आ गए थे। जयपुर मे

रहते हुए आपने राजस्थान में संस्कृत वाङ्मय के प्रचार तथा प्रसार की दिशा में अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किया था। अपनी योग्यता तथा प्रतिभा के बल पर धीरे-धीरे आप कालेज के साहित्य विभाग के अध्यक्ष भी हो गए थे। संस्कृत साहित्य की उल्लेखनीय सेवाओ के कारण आपको 'वेदान्त भूषण' की सम्मानोपाधि से भी विभूषित किया गया था।

आपका निधन सन् 1947 मे हुआ था।

श्री नन्दकिशोर मिश्र 'लेखराज'

श्री 'लेखराज' का जन्म सन् 1831 मे लखनऊ नगर मे हुआ था। आपके पूर्वज हरदोई जनपद के भगवन्तनगर नामक कस्बे के रहने वाले थे और लखनऊ मे जाकर बस गए थे। जब सन् 1857 के स्वतन्त्रता-सग्राम मे उनकी सम्पत्ति लूट ली गई तो वह परिवार सीतापुर जनपद के गन्धौली नामक कस्बे मे जाकर बस गया था। आपकी शिक्षा-दीक्षा लखनऊ मे हुई थी और आप हिन्दी तथा सस्कृत के अतिरिक्त अँग्रेजी, अरबी और फारसी आदि भाषाओ के भी मर्मज्ञ थे। 14-15 वर्ष की आयु मे ही आपने काव्य-रचना प्रारम्भ कर दी थी।

आपके द्वारा लिखित ग्रन्थो मे 'रस रत्नाकर', 'राधा नख शिख', 'लघु भूषण' और 'गगा भरण' के नाम प्रमुख है। आपकी गगा के प्रति अभूतपूर्व निष्ठा थी और उसकी महिमा मे आपने अनेक पदो की रचना की थी। आपने एक बार जब गगाजल अशुद्ध हो जाने पर 3 दिन का उपवास किया तब आपने जो पद लिखा था उससे आपकी गगा-भक्ति का सम्यक् परिचय मिलता है। आपने लिखा था

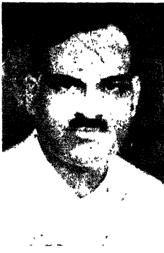
गग के नीर को नेम लियो बस,
जीवन के भये बास परे है।
कैयो दिना सु बिना जल के गये,
पै पनते नहिं नेकु टरे है।।
हेरत राह लखो 'लेखराज',
सुलाखन ही अभिलाष भरे है।
तौ लग धीमर भार भरे,
जल गग को लाय के धाम धरे है।

आपका निधन सन् 1892 में हुआ था।

श्री नन्दकिशोर विद्यालंकार

आपका जन्म सन् 1897 मे उत्तर प्रदेश के बिजनौर जनपद के मण्डावर कस्बे के गोविल गोत्रीय लाला मथुराप्रसाद के यहाँ हुआ था। आपके पिता पटवारी थे और आर्यसमाज की विचार-धारा से प्रभावित होकर उन्होंने आपको स्वामी श्रद्धानन्द के शिक्षण-सस्थान 'गुरुकुल काँगडी' मे प्रविष्ट करा दिया था। इस सम्बन्ध मे यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि आपकी माता श्रीमती भगवती देवी उन मुन्शी अमनसिह की छोटी बहन थी जिन्होंने अपने काँगडी ग्राम की जमीन स्वामी श्रद्धानन्द को इस गुरुकुल के लिए दान मे दे दी थी। उस भूमि पर स्थापित होने के कारण ही उसका नाम 'गुरुकुल काँगड़ी' पडा था। सन् 1918 मे गुरुकुल से विधिवत् स्नातक होने के उपरान्त सर्वप्रथम आपने दिल्ली के रामजस कालेज मे सस्कृताध्यापक का कार्य प्रारम्भ किया था और बाद मे असहयोग आन्दोलन के प्रभाव मे आकर आपने इस नौकरी से त्यागपत्र दे दिया था।

इस आन्दोलन के प्रभाव के कारण सरकारी कालेजों के स्थान पर अहमदाबाद और कलकत्ता मे जो राष्ट्रीय विद्यापीठ (नेशनल कालेज) स्थापित हुए थे आप उनमे शिक्षक होकर चले गए थे। पहले आपने अहमदाबाद मे पढाया था और बाद मे आप श्री सुभाषचन्द्र बोस के अनुरोध पर कलकत्ता की राष्ट्रीय विद्यापीठ मे चले गए थे। जब अँग्रेजो की दमन नीति के कारण कलकत्ता का वह महाविद्यालय



बन्द कर दिया गया तब आपने विवश होकर व्यापार करने की भावना से 'हैप्पी इण्डिया इश्योरेन्स कम्पनी' की स्थापना करके अपना स्वतन्त्र व्यवसाय प्रारम्भ कर दिया था।

व्यापार मे सलग्न हो जाने पर भी आपने अपनी

स्वाध्याय-वृत्ति को नही छोडा और संस्कृत के प्राय सभी दर्शनों का सांगोपांग पारायण करने मे संलग्न रहे। आप कलकत्ता-निवास के दिनों में वहाँ की आर्यसमाज के प्रधान भी रहे थे। यद्यपि आपका विवाह कलकत्ता के एक अत्यन्त समृद्ध परिवार मे हुआ था, किन्तु आप उसके व्यवसाय मे न फँसकर स्वतन्त्र ही रहे और अपने सिद्धान्तो को भी आपने नही छोड़ा। यह भी एक विचित्र सयोग है कि अपने व्यवसाय मे पूर्णत: सलग्न रहने के साथ-साथ आपने अपने वैदिक साहित्य के ज्ञान को जन-साधारण को भी सुलभ कराया और अपनी लेखनी से 'पुनर्जन्म' तथा 'वैदिक विवाह पद्धति' नामक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो की रचना की। आपने प्रख्यात दार्शनिक सर्वपल्ली डॉ० राधाकृष्णन की अँग्रेजी पुस्तक 'इण्डियन फिलासफी' का भी हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया था जो राजपाल एण्ड सस, दिल्ली की ओर से 'भारतीय दर्शन' नाम से प्रकाशित हो चुका है। आपके इस अनुवाद पर उत्तर प्रदेश शासन ने पुरस्कार भी प्रदान किया था।

इस ग्रन्थ का अनुवाद केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की प्रकाशन-योजना के अन्तर्गत किया गया था और इसमे निदेशालय द्वारा निर्मित-स्वीकृत पारिभाषिक शब्दावली का ही प्रयोग किया गया था। इस अनुवाद की उपादेयता का सबसे उत्कृष्ट प्रमाण निदेशालय के तत्कालीन निदेशक प्रो० चन्द्रहासन की यह पक्तियाँ है—"हिन्दी के विकास और प्रसार के लिए शिक्षा मन्त्रालय के तत्वावधान मे पुस्तको के प्रकाशन की विभिन्न योजनाएँ कार्यान्वित की जा रही है··· प्रस्तुत पुस्तक इन्ही योजनाओ के अन्तर्गत प्रकाशित की जा रही है।···इस पुस्तक मे शिक्षा मन्त्रालय द्वारा निर्मित शब्दावली का प्रयोग किया गया है।"

आपका निधन 23 जून सन् 1965 को कलकत्ता मे हुआ था।

श्री नन्दकुमारदेव शर्मा

श्री शर्मा जी का जन्म उत्तर प्रदेश के मथुरा नगर मे 23 नवम्बर सन् 1882 को हुआ था। आप जब छात्र थे तब इतिहास आपका प्रिय विषय था। 11-12 वर्ष की आयु मे ही आपने भारत के इतिहास को पूरी तरह से पढ डाला था। एक बार जब आपके विद्यालय के अध्यापक इतिहास पढा रहे थे तब उनकी कई गलत बातों का खण्डन करने के कारण आपको विद्यालय से निष्कासित कर दिया गया था। विद्यालय से निष्कासित होने के अनन्तर आपने निजी स्वाध्याय के बल पर ही अपना ज्ञान बढाया था। उन दिनों सारे देश मे नव जागरण की लहर फैली हुई थी। नित्य-प्रति समाचार पत्र पढना, नेताओ के भाषण सुनना और एकान्त मे भाषण देने का अभ्यास करना ही आपका नियम बन गया था। स्वदेश की सेवा करने के न जाने कितने अरमान आपके युवा-हृदय मे समाए हुए थे। इसी बीच आपके पिता का असमय मे देहावसान हो गया और घर मे सबसे ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण परिवार के भरण-पोषण का सम्पूर्ण भार आपके कन्धो पर आ पडा।

इस असामयिक आपदा के कारण आप आजीविका की तलाश मे बम्बई जा पहुँचे और वहाँ सन् 1904 मे 'ज्ञान सागर' नामक मासिक पत्र मे सम्पादक हो गए। इसके अतिरिक्त 'शरमन समाचार' नामक साप्ताहिक का सम्पादन आपने किया था। इस पत्र मे औषधियो के विज्ञापन के साथ-साथ देश-विदेश के समाचार भी छपा करते थे। इसके उपरान्त आपने लाहौर आकर यहाँ मे प्रकाशित होने वाले 'स्वदेश बन्धु' नामक पत्र का सम्पादन भी सन् 1906 मे किया था। इसके बाद आप कुछ समय तक आगरा से प्रकाशित होने वाले 'आर्यमित्र' साप्ताहिक के सम्पादक भी रहे थे। आपने जहाँ पटना से प्रकाशित होने वाले 'बिहार बन्धु' का कई वर्ष तक कुशलतापूर्वक सम्पादन किया था वहाँ आप दिल्ली से प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति के सम्पादन मे प्रकाशित होने वाले 'सद्धर्म प्रचारक' के सयुक्त सम्पादक भी रहे थे। आप नागपुर से प्रकाशित होने वाले 'मारवाड़ी'



नामक पत्र का सम्पादन भार सँभालने के अतिरिक्त सन् 1921 में कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'भारत मित्र' का सम्पादन उन दिनों किया था जब वे कुछ समय के लिए जेल चले गए थे।

आप जहाँ ध्येयनिष्ठ पत्रकार थे वहाँ कुशल वक्ता के रूप में भी आपकी बडी ख्याति थी। स्वाभिमानी आप इतने थे कि अपने स्वभाव के अनुरूप आप किसी के सामने झुकना पसन्द नही करते थे। स्वार्थ-लिप्सा और चाटुकारिता से आप कोसों दूर रहते थे। आपने अपने ही अध्यवसाय से हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, उर्दू, फारसी और बगला आदि कई भाषाओं के साहित्य का अच्छा ज्ञान अर्जित कर लिया था। इतिहास-सम्बन्धी शोध करने मे आपकी विशेष रुचि थी और इसी कारण आपने इतिहास-सम्बन्धी अनेक उत्कृष्ट ग्रन्थ भी लिखे थे। आप इतने उदारमना थे कि निजी बातो को ताक पर रखकर सामाजिक दायित्व को सदा महत्त्व दिया करते थे। सन् 1921 मे एक बार जिन दिनों आप 'गान्धी समाचार' का सम्पादन किया करते थे तब अपनी पत्नी के देहावसान के उपरान्त कलकत्ता चले गए थे। वहाँ की 'नेशनल लायब्रेरी' मे आप घण्टो तक बैठकर ग्रन्थो का अध्ययन करते रहते थे।

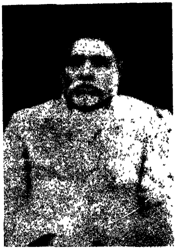
आपके द्वारा सर्वप्रथम जिस पुस्तक की रचना हुई थी उसका नाम 'युवक शिक्षा' था। इसमे आपने देश के नवयुवको के लिए एक सर्वथा नई दिशा प्रदान की थी। आपके द्वारा लिखित अन्य पुस्तकों मे 'स्वामी विवेकानन्द' (1914), 'वक्तृत्व कला' (1915), 'महात्मा गोखले' (1915), 'स्वामी रामतीर्थ' (1915), 'इटली की स्वाधीनता का इतिहास' (1915), 'प्रताप चरितामृत' (1916), 'सिक्खो का उत्थान और पतन' (1917), 'पजाब केसरी महाराजा रणजीतसिंह' (1920), 'ब्रजेन्द्र वंश भास्कर' (1921), 'पजाब हरण और दलीपसिंह' (1922), 'प्रेम पुजारी राजा महेन्द्रप्रताप' (1923), 'वीर केसरी शिवाजी' (1923), 'पत्र सम्पादन कला' (1923), 'लाजपत महिमा' (1924) तथा 'अर्वाचीन भारत' (1925) आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त आपने 'लाला जी के लेख और व्याख्यान' तथा 'हिन्दू मुस्लिम प्रश्न' नामक पुस्तकें भी अनूदित रूप मे प्रस्तुत की थी। यहाँ यह बात विशेष रूप से चर्चनीय है कि आपने 'पत्र सम्पादन कला' नामक पुस्तक की रचना प्रख्यात पत्रकार श्री राधामोहन गोकुलजी की प्रेरणा पर की थी। जब कलकत्ता में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य का 11वाँ वार्षिक अधिवेशन डॉ० भगवानदास की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुआ था तब श्री माधवराव सप्रे ने यह प्रस्ताव प्रस्तुत किया था—"यह सम्मेलन अपनी स्थायी समिति को यह आदेश देता है कि वह अपनी हिन्दी विद्यापीठ मे सम्पादन-कला की शिक्षा देने का प्रबन्ध करे। साथ ही अन्य राष्ट्रीय विद्यालयों के संचालको से अनुरोध करता है कि यथा सम्भव वे भी अपने यहाँ सम्पादन-कला को एक विषय बनाये।" श्री नन्दकुमारदेव शर्मा ने सप्रे जी के इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए यह पुस्तक लिखने का सकल्प भी व्यक्त किया था। इस विषय पर हिन्दी मे यह सबसे पहली पुस्तक थी। जिस समय यह पुस्तक प्रकाशित हुई थी तब इसके प्रेरक श्री राधामोहन गोकुलजी आगरा जेल मे थे। यदि वे बाहर होते तो इस पुस्तक के संशोधन-परिमार्जन मे उनका अभूतपूर्व सहयोग सुलभ हो जाता। कलकत्ता की हरिदास एण्ड कम्पनी की ओर से सन् 1914 मे प्रकाशित आपकी 'वक्तृत्व कला' नामक पुस्तक आपके उस भाषण के आधार पर निर्मित है जो आपने सन् 1917 मे अलवर की 'हिन्दी साहित्य समिति' में दिया था। आपका यह भाषण पुस्तक रूप मे आने से पूर्व सन् 1914 मे 'सम्मेलन पत्रिका' मे प्रकाशित हुआ था।

आप उर्दू और फारसी के शब्दो मे नुक्ता लगाने के समर्थक थे, किन्तु जब आपकी 'वीर केसरी शिवाजी' नामक पुस्तक का सन् 1923 मे हिन्दी पुस्तक एजेन्सी कलकत्ता की ओर से प्रकाशन हुआ था तब आपने उस पुस्तक मे इस पद्धति का अनुसरण न कर पाने के लिए जो स्पष्टीकरण दिया था वह भी सर्वथा ऐतिहासिक है। आपने लिखा था—"फारसी-उर्दू शब्दों मे नुक्ता लगाने का मैं आदी हूँ, पर इस पुस्तक मे इस नियम का पालन नही हो सका। 'भारत मित्र' के सुयोग्य सम्पादक बन्धुवर प० लक्ष्मणनारायण गर्दे के आग्रह से उर्दू-फारसी के शब्दो के नीचे 'नुक्ता' का प्रयोग नही किया गया है। गर्दे जी के साथ ही मित्रवर डॉ० हेमचन्द्र जोशी का भी इस विषय मे यही मत है। अतएव इच्छा न होने पर भी 'नुक्ता प्रयोग' के विषय मे मुझे कलकत्ता के मित्रो के मत की रक्षा करनी पड़ी है।"

आपका निधन 11 नवम्बर सन् 1926 को मथुरा मे हुआ था।

श्री नबीबख्श 'फलक'

श्री फलक साहब का जन्म सन् 1892 मे मध्य प्रदेश के दतिया नगर मे हुआ था। यद्यपि आपकी शिक्षा तो साधारण ही हुई थी किन्तु उचित वातावरण और सत्सग के कारण आपने अपनी योग्यता बहुत बढा ली थी। क्योकि आपके परिवार मे प्रारम्भिक रूप मे जर्राही (शालिहोत्र) का कार्य होता था अत आप भी पशु-चिकित्सक नियुक्त हो गए थे। किन्तु आप अधिक दिन तक इस पद पर बने न रह सके। आपने अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए अनेक प्रकार के धन्धे किए थे, किन्तु साहित्यिक प्रवृति होने के कारण आपका मन उनमे नही लगता था। कुछ दिन तक बेकार रहने के बाद आपने बिसातखाने की दुकान खोली और एक बार म्यूनिसपैलटी का चुनाव लडकर उसमे विजयी भी हुए थे।



फलक जी का कविता के प्रति झुकाव उन दिनो हुआ था जब आप दतिया के प्रख्यात साहित्य-प्रेमी स्व० पर्वतसिह के घर पर प्रतिदिन रात्रि को होने वाली कवि-गोष्ठियो मे सम्मिलित हुआ करते थे। उक्त कवि-गोष्ठियाँ दतिया की सस्था 'साहित्य मडल' के तत्वावधान मे हुआ करती थी और इस सस्था के प्रधानमत्री पर्वतसिह के पुत्र श्री बलवीर सिह थे। श्री बलवीरसिह स्वय भी एक समर्थ कवि थे।

फलक जी भी उन गोष्ठियो मे सम्मिलित होकर काव्य-रचना करने की ओर प्रवृत्त हुए थे आपका कठ अत्यन्त मधुर था। अनेक कवियो की घनाक्षरी और सवैया छन्दो मे लिखी गई रचनाओ का पाठ वे अत्यन्त मनमोहक शैली मे किया करते थे। इस काव्य-पाठ ने आपकी काव्य-चेतना को और भी उकसाया और आपने साहित्य मण्डल के प्रधानमंत्री श्री बलवीरसिह को अपना काव्य-गुरु मानकर विधिवत् रचनाएँ प्रारम्भ कर दी। वैसे इसके पूर्व फलक जी उर्दू की 'बज्मे अदब' नामक संस्था मे निरन्तर भाग लिया करते थे और उर्दू मे रचनाएँ किया करते थे। अपनी ब्रजभाषा की रचनाओं के सस्वर पाठ से आपने थोडे ही दिनों में इतनी लोकप्रियता अर्जित कर ली थी कि आप देश के कोने-कोने मे कवि-सम्मेलनो में सम्मानपूर्वक आमन्त्रित किये जाते थे। अपनी भक्तिरस से परिपूर्ण रचनाओ के कारण आपको हिन्दी का 'रसखान' भी कहा जाता था। अपनी सरस काव्य-माधुरी के कारण उन दिनो आपका देश-व्यापी समान हो गया था।

साहित्य की ओर प्रारम्भ से ही झुकाव होने के कारण आपने कविता करनी प्रारम्भ कर दी थी और थोडे ही समय में अपने क्षेत्र के अच्छे कवियों मे गिने जाने लगे थे। अपनी सतत साधना और प्रबल ध्येयनिष्ठा के कारण आपको कविता-लेखन मे बहुत सफलता मिली थी। आपकी रचना-चातुरी का प्रमाण इन पक्तियो से मिलता है

राम या रहीम रहमान का न भेद मान,
मन्दिर मे, मस्जिद मे रोज-रोज जाता हूँ।
आयते कुरान की खुशी से पढता हूँ यथा,
वेद औ पुराण के तथैव गीत गाता हूँ ॥
मेरे यहाँ काशी और काबा मे न भेद-भाव,
साधुओं-फकीरों मे प्रसन्न दिखलाता हूँ।
हिन्द की जबान हिन्दी, उर्दू का गुमान मुझे,
दतिया-निवासी कवि 'फलक' कहाता हूँ ॥

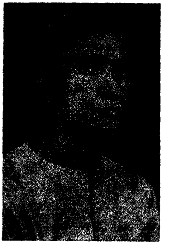
हिन्दू-मुस्लिम-एकता का वातावरण प्रस्तुत करने मे 'फलक' जी ने अपनी कृष्ण-भक्तिपूर्ण अनेक रचनाओ से महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। खेद है कि आपकी रचनाएँ पुस्तक रूप मे प्रकाशित नही हो सकी और 'फलक सतसई' नाम से आपके 700 दोहे भी अप्रकाशित ही रह गए।

आपका निधन सन् 1950 मे हुआ था।

श्री नरसिंहदास अग्रवाल

श्री अग्रवाल का जन्म सन् 1901 मे मध्यप्रदेश के जबलपुर नगर मे हुआ था। आप नगर के प्रतिष्ठित राष्ट्रकर्मी और

देशभक्त कवि थे। अपने छात्र-जीवन से ही आप लोकमान्य तिलक तथा महात्मा गाधी से प्रभावित होकर स्वाधीनता-आन्दोलन मे भाग लेने लगे थे। आपकी कविताओं मे राष्ट्र की पराधीनता के पाशविक पजे मे छुडाने की व्याकुलता-पूर्ण छटपटाहट रहती थी। समस्या-पूर्तियो से लेकर ख्याल-पद्धति तक की रचना करने मे आपकी दक्षता परिलक्षित होती है। आपकी वीररस पूर्ण रचनाओं के कारण ही आपको महाकौशल का भूषण कहा जाता था। आपकी ऐसी रचना-चातुरी का परिचय मध्य प्रदेश की जनता को प्राय वहाँ के नगरो मे आयोजित होने वाले कवि-सम्मेलनो मे सरलता से मिल जाता था। एक रचना का उदाहरण देखे :



कैधों काल-दण्ड औ प्रचण्ड शम्बु-खण्ड हेत,
कैधों नवों खण्डन मे माहो द्विजराज है।
कैधों धर्मराज की सुरीति नीति न्याय काज,
कैधों धनराज है कि दौलत दराज है।।
कैधो जलराज है सुताय दूर करन हेत,
कैधों भवराज राज राज सिरताज है।
कैधों सुरराज है सुकैधो ब्रजराज है या,
कैधों रघुराज है कि गान्धी महाराज है।।

आपकी रचनाएं 'छात्र सहोदर', 'हितकारिणी' तथा 'शुभ चिन्तक' आदि पत्र-पत्रिकाओं मे छपा करती थी। आपने 'छात्र सहोदर' का सम्पादन भी किया था। आपका व्यक्तित्व बहुत निर्भीक था। राष्ट्र को बन्धन-मुक्त करने की अदम्य लालसा ने आपको वीररसप्रधान रचनाएँ लिखने की प्रेरणा प्रदान की थी। आपने कई बार जेल-यात्राएँ भी की थी। आपकी रचनाओ मे 'ग्राम' तथा 'भारत की एक झलक' के नाम प्रमुख हैं।

आपका निधन 14 नवम्बर सन् 1955 को हुआ था।

श्री नरसिंहराम शुक्ल

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के बस्ती जनपद के गौरा उपाध्याय नामक ग्राम मे 21 मार्च सन् 1903 को हुआ था। आपके पिता पण्डित निवासराम शुक्ल वहाँ की महसो रियासत के गुरु थे। अपने ग्राम मे उर्दू की मिडिल तक की शिक्षा प्राप्त करके आपने काशी जाकर बी० ए० की उपाधि प्राप्त करने के साथ-साथ अपनी हिन्दी-योग्यता को भी बढाया था। अपने छात्र-जीवन मे ही आपका महामना मदनमोहन मालवीय, सी० वाई० चिन्तामणि तथा बाबूराव विष्णु पराडकर आदि अनेक महानुभावो से अच्छा सम्पर्क हो गया था और असहयोग के दिनो मे आपने पूर्ण बगावत का रूप धारण कर लिया था और अँग्रेजो के विरुद्ध बुलेटिन आदि छापने लगे थे।

जब अँग्रेजो के विरुद्ध विद्रोह करने के कारण आपने फरारी का जीवन बिताया था तब कुछ दिनो के लिए आप रीवाँ के महाराज गुलाबसिंह के यहाँ चले गए थे और राज्य की ओर से 'साप्ताहिक प्रदीप' नामक पत्र निकालने लगे थे। जब आपके कारण महाराज गुलाबसिंह भी देशद्रोही घोषित कर दिए गए तब आप वहाँ से भी निकल गए और जयपुर, बडौदा, ग्वालियर और कश्मीर के राज-परिवारो मे सम्पर्क करके कुछ समय तक इन स्थानों पर रहे थे।



अपनी इस यायावरी की दशा मे आपका सम्पर्क जहाँ नेताजी सुभाषचन्द्र बोस से हुआ था वहाँ आपने सर्वश्री डॉ० राममनोहर लोहिया, जयप्रकाश नारायण, लालबहादुर शास्त्री और पण्डित जवाहरलाल नेहरू से भी भेंट की थी।

इसके उपरान्त आपने सन् 1940 मे 'सजनी' नामक एक क्रान्तिकारी मासिक पत्रिका का सम्पादन प्रयाग से करना प्रारम्भ किया था। शुरू-शुरू मे यह पत्रिका 'चाँद

प्रेस' में मुद्रित होती थी और बाद में 'लीडर प्रेस' से छपने लगी थी। इस पत्रिका में आप भारत के स्वातन्त्र्य-संघर्ष की कथा प्रकाशित किया करते थे। इस कार्य में आपको भारत के विभिन्न राज-परिवारों, नेताओं और धनीजनों से अच्छी आर्थिक सहायता मिला करती थी। जब आपकी यह पत्रिका अपने पैरो पर खडी हो गई तब आपने 'साजन' नाम से शासन विरोधी पत्र मासिक रूप मे निकालना प्रारम्भ किया था। इस पत्र के माध्यम से आप शासन-विरोधी गुप्त समाचार एजेन्सियो से सहयोग प्राप्त करके देश की जनता को सघर्ष के लिए प्रेरणा दिया करते थे। इस पत्र के 26 जनवरी सन् 1946 को प्रकाशित एक विशेपाक ने तो गजब ही ढा दिया था, जिसके कारण उसे जब्त घोषित कर दिया गया था।

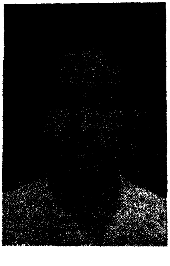
स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् आपने 'ललना', 'शेर बच्चा', 'जासूसघर', 'प्रदेशमित्र', और 'भागीदार' आदि जिन कई पत्रो का सम्पादन तथा मुद्रण प्रारम्भ किया था उनमे से प्राय सभी ने जनता मे बहुत लोकप्रियता प्राप्त की थी। उन्ही दिनो सन् 1952 मे आपने बस्ती जनपद के पूर्वी निर्वाचन क्षेत्र से उत्तर प्रदेश विधान सभा का चुनाव भी स्वतन्त्र उम्मीदवार के रूप मे लडा था। किन्तु दुर्भाग्यवश आप उसमे हार गए। इस बीच 'सजनी' तथा 'साजन' के राज-परिवारों पर हुए अत्याचारो से सम्बन्धित विशेषाकों की सामग्री के आधार पर आपने 'बेगम', 'जयश्री', 'राजकुमारी', 'मानसी', 'कुचक्र' और 'हसीना' आदि कई उपन्यास भी लिखे थे। आपने अपनी पत्रिकाओं के अनेक विशेषाको मे सर्वश्री जवाहरलाल नेहरू, सुभाषचन्द्र बोस, लालबहादुर शास्त्री, राममनोहर लोहिया, वीर सावरकर तथा शेख अब्दुल्ला आदि अनेक नेताओं की जीवनियाँ भी प्रकाशित की थी। आपने इस बीच सोहबतिया बाग मे अपना मकान बनाने के साथ-साथ एक अच्छा-सा प्रेस भी लगा लिया था।

सन् 1960 तक आते-आते आपकी आर्थिक स्थिति बिगडने लगी। फलस्वरूप आपने 'ललना' और 'जासूसघर' का प्रकाशन बन्द कर दिया और केवल 'सजनी' तथा 'शेर बच्चा' का प्रकाशन ही करते रहे। आपके 'शेर बच्चा' पत्र ने जहाँ बाल-साहित्य मे वीरता के भावो को भरने का प्रशसनीय कार्य किया था वहाँ 'सजनी' के माध्यम से आपने 'किलर काण्ड','नानावती काण्ड','भारत-चीन युद्ध', 'भारत-पाक युद्ध' तथा बस्तर के राजा प्रवीरचन्द्र भंजदेव की हृदय-द्रावक हत्या से सम्बन्धित कई उल्लेखनीय विशेषांक प्रकाशित किए थे। प्रवीरचन्द्र भंजदेव की करुण गाथा पर आधारित आपके द्वारा लिखित 'महाराजा के आँसू' नामक उपन्यास ने तो मध्यप्रदेश का शासन ही बदल दिया था। इनके अतिरिक्त आपने पौराणिक गाथाओं के आधार पर 'तुलसी बावनी' और 'सक्षिप्त रामचरित मानस' नामक पुस्तकों की रचना भी की थी। इसी प्रकार आपने भारत की स्वतन्त्रता की रजत-जयन्ती के उपलक्ष्य मे अपनी 'सजनी' पत्रिका का जो विशेषाक प्रकाशित किया था वह भी आपकी सम्पादन-कला का उत्कृष्ट उदाहरण था।

सन् 1967 मे जब आप हृदय रोग से आक्रान्त होकर पूर्णत: अस्वस्थ हो गए तब आपके इन पत्रो के प्रकाशन का कार्य आपके ज्येष्ठ सुपुत्र श्री विष्णुकुमार शुक्ल के ऊपर आ गया और वे उन्हे बराबर देखते रहे थे। आपके इस कार्य मे श्री विष्णुकान्त मालवीय भी सहयोगी रहे थे।

आपका निधन 20 जनवरी सन् 1976 को हुआ था।

प्रोफेसर नरहर कुरुन्दकर



श्री कुरुन्दकर का जन्म महाराष्ट्र प्रदेश मे सन् 1932 मे हुआ था। मूलत मराठी होते हुए आप हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार मे पर्याप्त रुचि लिया करते थे। मराठवाड़ा आन्दोलन के सूत्रधार के रूप मे भी आपको याद किया जाता है। आप प्रख्यात सामाजिक कार्यकर्ता चिन्तक, समीक्षक और इतिहासवेत्ता थे। साहित्य के गहन अध्ययन मे रुचि रखने के साथ-साथ आप राजनीतिक एवं सामाजिक

समस्याओं के समाधान में सदा अग्रसर रहा करते थे।

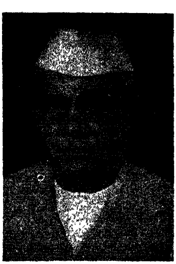
महाराष्ट्र में एक कुशल प्राध्यापक तथा आचार्य के रूप मे भी आपकी अच्छी प्रतिष्ठा थी। अन्तिम दिनो में आप नांदेड़ के पीपुल्स कालेज के आचार्य थे। आप जहाँ मराठी के गम्भीर लेखक के रूप मे परिचित थे वहाँ हिन्दी-लेखन की दिशा में भी आपने अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। 'रिचर्ड्स की कला मीमांसा' आपकी हिन्दी मे पहली समीक्षात्मक पुस्तक थी। आपके अनेक लेख हिन्दी के 'धर्मयुग'-जैसे प्रतिष्ठित पत्रों मे भी प्रकाशित हुए थे।

आपका निधन 10 फरवरी सन् 1982 को नादेड़ मे हुआ था।

पण्डित नरेन्द्र

आपका जन्म 15 अप्रैल सन् 1907 को दक्षिण के हैदराबाद नगर मे हुआ था। आपके पूर्वज उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर से वहाँ पहुँचे थे। आपके पिता राय केशवप्रसाद सक्सेना अपनी बिरादरी मे 'शम्भू राजा' के नाम से विख्यात थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने ही नगर की 'कायस्थ पाठशाला' मे हुई थी और फिर आगे की पढाई के लिए आप धर्मवन्त हाई स्कूल मे प्रविष्ट हुए थे। जब आप केवल 15 वर्ष के थे तब आपने 'जगदीश सभा' नाम से एक पुस्तकालय की स्थापना करके अपने साथी छात्रो मे स्वाध्याय तथा पठन-पाठन की प्रवृत्ति उत्पन्न की थी। आध्यात्मिकता के प्रति आपकी प्रारम्भ से ही रुचि थी, जिसके फलस्वरूप आप बाल्यावस्था से ही मराठी के प्रख्यात सन्त कवि तुकाराम के अभग गाने लगे थे। आर्यसमाज सुलतान बाजार के उत्सवों में होने वाले पण्डित रामचन्द्र देहलवी के भाषणो को सुनकर आपके युवा-मानस मे यह भावनाएँ बहुत वेग से हिलोरें लेने लगी थी कि "मै आर्यसमाज का प्रचारक बनकर हैदराबाद राज्य मे वैदिक धर्म का प्रचार करते हुए सारे जीवन मे ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा।"

अपनी उक्त धारणा को सार्थक करने की भावना से आप सन् 1930 मे लाहौर जाकर वहाँ के 'उपदेशक विद्यालय' मे प्रविष्ट हो गए और विद्यालय के प्रधानाचार्य स्वामी स्वतन्त्रतानन्द के श्री चरणों मे बैठकर आपने आर्य सिद्धान्तों का विधिवत् पारायण किया। अपने लाहौर के छात्र-जीवन में जहाँ पत्र-पत्रिकाओ मे अनेक लेख आदि लिखकर अपनी लेखन-प्रतिभा को विकसित किया था वहाँ आपने अनेक भाषण प्रतियोगिताओ मे भाषण देकर कई पारितोषिक भी प्राप्त किए थे। उन्ही दिनो आपका सम्पर्क आर्यसमाज के महात्मा हसराज तथा श्री खुशहालचन्द्र 'खुरसन्द'



(बाद मे आनन्द स्वामी सरस्वती) से हो गया था। इस सम्पर्क के कारण पहले-पहल आपने पजाब के प्रमुख उर्दू पत्रो मे अपने लेख प्रकाशित कराने प्रारम्भ किए थे और बाद में हिन्दी मे लिखने लगे थे।

लाहौर से विद्याध्ययन समाप्त करके आप जब हैदराबाद लौटे थे तब भी आपने अपनी वाणी और लेखनी से वहाँ की जनता मे जागृति उत्पन्न करने का अभिनन्दनीय कार्य किया था। सबसे पहले आपने 'आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद' के उर्दू साप्ताहिक पत्र 'वैदिक आदर्श' का सम्पादन प्रारम्भ किया था। इस पत्र के द्वारा आपने अपने आदर्शों तथा सिद्धान्तो के प्रचार का जो कार्य किया था उसकी महत्ता इसी बात से सिद्ध हो जाती है कि हैदराबाद रियासत ने 'वैदिक आदर्श' के प्रकाशन पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया था। जब पत्र के प्रकाशन पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया तो आपने अपने ओजस्वी भाषणो के द्वारा वहाँ की जनता में निजामशाही के अत्याचारो का विरोध करके चेतना जागृत करनी प्रारम्भ कर दी। उन दिनो जब सारे देश मे महात्मा गाधी के सत्याग्रह आन्दोलन और स्वदेशी वस्तुओ के प्रचार की भावनाएँ बडे वेग से फैल रही थी। आप भी उससे अछूते कैसे बच सकते थे? परिणाम स्वरूप आपने आर्यसमाज के सिद्धान्तो का प्रचार करने के साथ-साथ स्वदेशी आन्दोलन

मे भी सक्रिय रूप से भाग लेना प्रारम्भ कर दिया । आपके इन कार्यों में उस समय और भी प्रगति हुई थी जब सन् 1936 मे आप आर्यसमाज सुलतान बाजार के मन्त्री निर्वाचित हुए थे ।

आर्यसमाज सुलतान बाजार के मन्त्रित्व का कार्य-भार सँभालते ही आपने हैदराबाद के निजाम की ओर से वहाँ की हिन्दू जनता पर किये जाने वाले अनेक अत्याचारो के विरोध मे प्रबल आन्दोलन छेड़ दिया और आपने सारे देश के आर्यों को वहाँ की जनता के अधिकारों की प्राप्ति के लिए आन्दोलन मे सहयोग देने की प्रेरणा की । जब निजामशाही आपके इस आन्दोलन से आतंकित हो गई तो उसने आपको गिरफ्तार करके 3 वर्ष के कठोर कारावास की सजा देकर निजाम राज्य मे 'कालेपानी' के रूप मे विख्यात 'मन्नानूर' (महबूबनगर) जेल भेज दिया गया था । आपकी इस गिरफ्तारी तथा सजा की घोषणा से सारे आर्य जगत् मे भयकर तूफान आ गया था । परिणामस्वरूप 29 दिसम्बर सन् 1938 को शोलापुर मे हुए एक 'विशाल आर्य सम्मेलन' मे हैदराबाद की हुकूमत के अत्याचारो के विरुद्ध 'आर्य सत्याग्रह' छेडने का निश्चय कर लिया गया । इस निश्चय के अनन्तर सारे देश के आर्यों ने आकर उस सत्याग्रह मे सोत्साह भाग लिया । निजामशाही का नाक मे दम हो गया और इससे विवश होकर उसने आर्यसमाज की सब माँगे तो मजूर कर ली, किन्तु नरेन्द्र जी को जेल से मुक्त करने की बात उसने नही मानी । आपके कार्य की महत्ता इसीमे प्रमाणित हो जाती है कि जब महात्मा गांधी, श्री घनश्यामसिंह गुप्त और स्वामी अभयदेव ने आपकी मुक्ति के लिए विशेष प्रयास किए तब ही आपको जेल से मुक्त किया गया था ।

जेल से वापिस आने पर फिर पूर्ण मनोयोग से अपने कार्यों मे सलग्न हो गए । उसी वर्ष अर्थात् सन् 1940 मे आपको 'आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण' का मन्त्री मनोनीत किया गया । इस कार्य-भार को सँभालते ही आपने उसी तत्परता से निजामशाही का विरोध करना प्रारम्भ किया, जिसके परिणामस्वरूप आपको फिर राजद्रोही ठहराकर भाषण देने और लिखने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया । जब आपने इन प्रतिबन्धो की पूर्ण उपेक्षा की तब निजामशाही ने विवश होकर आपको फिर 29 जुलाई सन् 1947 को बन्दी बनाकर अनिश्चित काल के लिए जेल मे नजरबन्द कर दिया । उन दिनो हैदराबाद की सेण्ट्रल जेल में आपके साथ हैदराबाद के प्रथम मुख्यमन्त्री श्री बी० रामकृष्ण राव और स्वामी रामानन्द तीर्थ भी थे ।

आपने जहाँ आर्यसमाज के अनेक सुधारवादी आन्दोलनों मे भाग लेकर हैदराबाद की जनता का मार्ग-प्रदर्शन किया था वहाँ आपने अनेक हिन्दुओं को ईसाई तथा मुसलमान होने से भी बचाया था । आप ही अकेले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने हैदराबाद की निजामशाही का समय-समय पर प्रबल विरोध करके वहाँ को हिन्दू जनता के मनोबल को क्षीण होने से बचाया था । आप जहाँ सन् 1944 मे 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' के उपाध्यक्ष बनाए गए थे वहाँ सन् 1946 मे आपको हैदराबाद राज्य काग्रेस का मन्त्रित्व भी सौपा गया था । काग्रेस-सगठन की बागडोर सँभालकर आपने जिस निर्भीकता और कर्मठता का परिचय दिया था उससे वहाँ की जनता मे उत्साह का नया वातावरण उत्पन्न हो गया था । भारत की स्वतन्त्रता-प्राप्ति के उपरात जब निजाम का शासन समाप्त हुआ तब आपने 'हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य' के लिए भी अभिनन्दनीय कार्य किया था । सन् 1952 मे आप हैदराबाद राज्य विधान सभा के सदस्य भी निर्वाचित हुए थे । आपने सन् 1973 मे मारीशस मे आयोजित 'आर्य महासम्मेलन' के कार्य को एक मास वहाँ रहकर जो प्रगति प्रदान की थी उससे आपकी सगठन-क्षमता का परिचय मिलता है । आपने 'आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह' के क्रम मे सन् 1975 मे उसके वाराणसी-अधिवेशन की अध्यक्षता भी की थी ।

आप जहाँ आर्यसमाज तथा काग्रेस के अनेक आन्दोलनो से सक्रिय रूप से जुडे हुए थे वहाँ हिन्दी भाषा और साहित्य के उन्नयन एव विकास की दिशा मे भी आपकी सेवाएँ सर्वथा अविस्मरणीय रही थी । आप जहाँ अनेक वर्ष तक वहाँ की 'हिन्दी प्रचार सभा' के अध्यक्ष रहे थे वहाँ 'हिन्दी अकादमी' के अध्यक्ष के रूप मे भी आपने हिन्दी-प्रचार का अद्भुत कार्य किया था । सन् 1948 मे आचार्य चन्द्रबली पाण्डेय की अध्यक्षता मे 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' का जो वार्षिक अधिवेशन हुआ था उसमे 'राष्ट्रभाषा परिषद्' के स्वागताध्यक्ष आप ही थे । 'हिन्दी-प्रचार सभा' हैदराबाद का 'रजत जयन्ती समारोह' भी आपके ही सत्प्रयासो से अत्यन्त सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ था । 'आन्ध्र

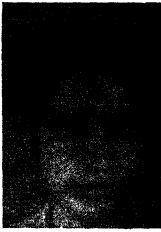
प्रदेश खादी एण्ड विलेज इण्डस्ट्रीज बोर्ड' के मन्त्री के रूप मे की गई आपकी सेवाएँ भी कम महत्त्व नही रखती। आपने हैदराबाद मे 'प्राच्य भाषा महाविद्यालय' की स्थापना के द्वारा वहाँ के शिक्षा-क्षेत्र मे जो जागृति उत्पन्न की थी वह आज भी सबकी चर्चा का विषय है। 'आन्ध्र प्रदेश हिन्दी विद्यार्थी सघ' के परामर्शदाता के रूप मे आपने हैदराबाद मे आयोजित होने वाले अनेक हिन्दी-सम्मेलनो तथा अन्य समारोहो को जो दिशा-दान दिया था वह सर्वथा स्पृहणीय है। जब आर्यसमाज ने पजाब सरकार की हिन्दी-विरोधी नीति के विरुद्ध सत्याग्रह आयोजित किया था उस समय भी आपने वहाँ जाकर उसके संचालन मे अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया था। आन्ध्रप्रदेश के जन सम्पर्क विभाग की ओर से 'आन्ध्र प्रदेश' नामक हिन्दी मासिक पत्र का प्रकाशन भी आपके उद्यम से हो सका था। आपने भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय को हैदराबाद मे एक 'केन्द्रीय हिन्दी विश्व-विद्यालय' स्थापित करने की दिशा मे भी प्रेरित किया था। जब हैदराबाद मे सन् 1961 तथा सन् 1971 की जन-गणना हुई थी तब वहाँ की जनता को मातृभाषा के रूप मे हिन्दी लिखाने की प्रेरणा भी आपने दी थी।

आपकी धर्म, समाज, भाषा और साहित्य-सम्बन्धी बहुविध सेवाओ को दृष्टि मे रखकर जहाँ आपकी अर्धशती-पूर्ति पर हैदराबाद की 'विवृति' नामक मासिक पत्रिका ने अप्रैल सन् 1958 मे अपना एक विशेषाक 'नरेन्द्र अक' नाम से प्रकाशित किया था वहाँ सन् 1975 मे आपके 69वे वर्ष मे प्रवेश करने पर आपको 'हैदराबाद के लौह पुरुष प० नरेन्द्र' नामक एक ग्रन्थ भी समर्पित किया गया था। अपनी बहुविध महत्त्वपूर्ण सेवाओ के लिए आपको एक 'कर्मठ' और 'ओजस्वी' व्यक्तित्व का प्रतीक समझा जाता था। आपने जहाँ हैदराबाद के प्रथम लोकप्रिय मन्त्रि-मण्डल के शिक्षा मन्त्री श्री विनायकराव विद्यालकार को समर्पित किए गए 620 पृष्ठो के विशाल ग्रन्थ के सम्पादन मे अपना प्रशसनीय सहयोग प्रदान किया था वहाँ 'हैदराबाद के आर्यों की साधना और सघर्ष' नामक ग्रन्थ भी आपकी लेखनी का पावन अव-दान है।

14 मार्च सन् 1976 को आपने सन्यास की दीक्षा लेकर 'सोमानन्द' नाम रख लिया था और 24 सितम्बर सन् 1976 को आपका निधन हुआ था।

श्री नरेन्द्र उनियाल

श्री उनियाल का जन्म उत्तर प्रदेश के गढ़वाल जनपद के रुकनोली असवालस्यूँ नामक ग्राम मे सन् 1951 में हुआ था। पौड़ी गढवाल से हाई स्कूल और इटर-मीडिएट की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के बाद आप आगे के अध्ययन के लिए देहरादून के डी० ए० वी० कालेज मे प्रविष्ट हो गए थे, किन्तु सक्रिय राजनीति मे पड जाने के कारण आगे न पढ़ सके थे। आप अपने छात्र-जीवन से ही विद्रोह तथा विरोध की राजनीति मे सक्रिय रहे थे। अपने अध्ययन की समाप्ति पर आपने श्री परिपूर्णानन्द पैन्यूली के सरक्षण मे पत्रकारिता के क्षेत्र मे प्रवेश किया था। आपने सन् 1974 मे 'धधकता पहाड़' नामक जो पत्र पौड़ी (गढवाल) से निकाला था उसके माध्यम से आपकी पत्र-कारिता का प्रखर रूप गढ देश की जनता को देखने को मिला था। सन् 1977 मे आपने पौड़ी से स्वतन्त्र उम्मीदवार के रूप मे उत्तर प्रदेश विधान सभा का चुनाव भी लड़ा था।



सन् 1979 मे जब आपने कोटद्वार से 'जयन्त' साप्ता-हिक का प्रकाशन प्रारम्भ किया था तब उसके माध्यम से आपने बहुत ख्याति अर्जित की थी। आपात्काल मे आपने 21 महीने तक जेल की नृशस यातनाएँ भोगी थीं। आपने अपनी पत्रकारिता के द्वारा गढवाल की विभिन्न समस्याओं के सम्बन्ध मे जो निर्भीक विचार समय-समय पर प्रकट किए थे उनसे आपकी वैचारिक उग्रता का सही आभास वहाँ की जनता को होता रहता था। राजनीति मे आपकी कितनी पैठ थी, इसका परिचय इसीसे मिल जाता है कि आप श्री अटलबिहारी वाजपेयी के निकटतम सहयोगी रहे थे।

आपका निधन 23 जुलाई सन् 1981 को नई दिल्ली के सर गगाराम अस्पताल मे हुआ था।

श्री नरेन्द्र खजूरिया

श्री खजूरिया का जन्म जम्मू-कश्मीर राज्य के एक ग्राम में सन् 1933 में हुआ था। आप जब केवल 6 वर्ष के ही थे कि आपकी माता का देहावसान हो गया था और 8 वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते आप पिता के स्नेह से भी वंचित हो गए थे। फलस्वरूप आपका लालन-पालन और शिक्षण आपके बड़े भाई श्री रामनाथ शास्त्री के निरीक्षण में हुआ था। शिक्षा-प्राप्ति के अनन्तर आप कश्मीर राज्य के शिक्षा विभाग की एक प्राथमिक पाठशाला में अध्यापक हो गए थे। आपकी सर्वप्रथम नियुक्ति राज्य के एक छोटे-से ग्राम में हुई थी।

अपने इस शिक्षकीय जीवन में आपका सम्पर्क वहाँ की ग्रामीण जनता से अत्यन्त निकट का हो गया था। अपने सम्पर्क में आने वाले भोले-भाले पहाड़ी जनों से प्रेरणा पाकर ही आप साहित्य-रचना की ओर अग्रसर हुए थे। आपने अपनी कहानियों और नाटकों में वहाँ के लोक-जीवन का जो चित्रण किया है वह आपकी सवेदनशीलता का ज्वलन्त साक्षी है। डोगरी भाषा का आपका पहला कहानी-सकलन 'कोल्ले दियाँ लीकराँ' नाम से सन् 1958 में प्रकाशित हुआ था। इस सकलन के प्रकाशन के साथ ही आपने डोगरी क्षेत्र के साहित्यकारों में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया था। आप डोगरी के अतिरिक्त हिन्दी के भी अच्छे लेखक थे। कहानी के अतिरिक्त आपने रेडियो-नाटक-लेखन में भी अपनी सर्वथा अलग पहचान बना ली थी। बालोपयोगी रचनाएँ लिखने की दिशा में भी आपको विशेष सफलता प्राप्त हुई थी। आपकी जहाँ अनेक कृतियाँ जम्मू-कश्मीर राज्य के द्वारा पुरस्कृत हुई थी वहाँ आपकी दूसरी कथा-कृति 'नीला अम्बर काले बादल' (1967) पर साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली की ओर से 5 हजार रुपये का मरणोपरान्त पुरस्कार प्रदान किया गया था। आप अनेक वर्ष तक 'जम्मू-कश्मीर अकादेमी आफ आर्ट एण्ड कल्चर एण्ड लैंग्वेजेज' के 'शीराजा' नामक हिन्दी पत्र के सम्पादक भी रहे थे।

आपका निधन सन् 1970 में हुआ था।

श्री नरेन्द्र गोयल

श्री गोयल का जन्म 26 फरवरी सन् 1925 को लखनऊ (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। आपके पिता श्री दयाचन्द्र गोयलीय हिन्दी के बहुत अच्छे लेखक थे और लखनऊ में रहकर जिन दिनों वे वहाँ प्रकाशन-कार्य करते थे तब ही आपका जन्म हुआ था। आपने काशी विश्वविद्यालय से दर्शन शास्त्र में एम० ए० करने के उपरान्त पत्रकारिता तथा स्वतन्त्र लेखन प्रारम्भ कर दिया था। आपने सन् 1942 के अगस्त-आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेकर जेल-यात्रा भी की थी। आपने जहाँ कुछ स्वतन्त्र निबन्ध लिखे थे वहाँ कहानी-लेखन की दिशा में भी अपना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया हुआ था।

प्रारम्भ के कुछ दिनों में आप राज्यसभा-सचिवालय में अनुवादक तथा सहायक सम्पादक रहे थे और फिर 'नवभारत टाइम्स' दैनिक (नई दिल्ली) के सपादकीय विभाग में पूर्ण रूप में जुड़ गए थे। 'नवभारत टाइम्स' की सेवा में आने से पूर्व श्री गोयल ने स्वतन्त्र रूप से एक अँग्रेजी मासिक पत्र 'कण्टेम्पोरेरी' का सम्पादन-प्रकाशन भी सन् 1956 और 1958 के बीच किया था। पत्रकारिता के जीवन में प्रवेश करने से पूर्व आप डी० ए० वी० कालेज लखनऊ में मनोविज्ञान के प्राध्यापक भी रहे थे। आपका हिन्दी, अँग्रेजी और उर्दू आदि कई भाषाओं पर अच्छा अधिकार था। आपके द्वारा लिखित 'दरीचा और आईना' (1969) उपन्यास के अतिरिक्त 'गुरु मेहमान, चेला मेजबान' (1970) नामक कहानी-सकलन महत्त्वपूर्ण है। आपके द्वारा लिखित निबन्धों का एक सकलन जहाँ 'हिन्दी विश्वभारती' नाम से प्रकाशित हुआ था वहाँ आपके द्वारा अनूदित 'प्रारम्भिक अर्थशास्त्र' का नाम भी विशेष महत्त्व रखता है।



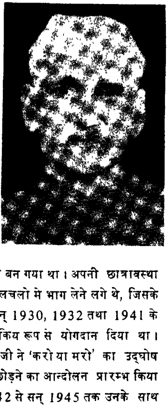
आपका निधन 17 फरवरी सन् 1975 को नई दिल्ली में हुआ था।

आचार्य नरेन्द्रदेव

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर नामक नगर के एक प्रतिष्ठित परिवार में सन् 1890 में हुआ था। आपके पिता श्री बलदेवप्रसाद वैसे फैजाबाद के रहने वाले थे किन्तु सीतापुर में वकालत किया करते थे। बाल्यावस्था से ही आपने अपने पिता के सात्विक और सच्चरित्र जीवन से बहुत कुछ सीख लिया था और उनकी छत्रछाया में ही हिन्दी तथा संस्कृत का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आपने घर पर रहते हुए ही 'रामचरितमानस', 'महाभारत', 'श्रीमद्-भगवद्गीता', 'लघु कौमुदी' और 'अमरकोश' आदि अनेक ग्रन्थों का स्वाध्याय कर डाला था। सन् 1902 में आप स्कूल में प्रविष्ट हुए थे और सन् 1908 में आपने मैट्रिक की परीक्षा अच्छी योग्यता के साथ उत्तीर्ण कर ली थी। अपने पारिवारिक संस्कारों के कारण आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से बी० ए० करने के उपरान्त एम० ए० की परीक्षा संस्कृत विषय से ही दी थी। यद्यपि आपके परिवार वाले आपको वकालत की शिक्षा दिलाना चाहते थे, किन्तु आपका उस ओर झुकाव ही नहीं था। घर वालों के अनुरोध की रक्षा करने की दृष्टि से ही आपने वकालत की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली थी।

क्योंकि आपके पिताजी सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यों में बराबर रुचि लेते रहते थे, इसी कारण आपके परिवार में स्वामी रामतीर्थ, महामना मालवीय और पण्डित दीनदयालु शर्मा व्याख्यानवाचस्पति-जैसे महानुभाव बराबर आते-जाते रहते थे। इस सम्पर्क के कारण ही आपके मानस में भारतीय संस्कृति के प्रति विशेष अनुराग जागृत हो गया था। जिन दिनों आपने सन् 1915 से सन् 1920 तक फैजाबाद में वकालत की थी, उन दिनों सारे देश में असहयोग आन्दोलन का वातावरण बन चुका था। परिणाम स्वरूप आपने वकालत छोडकर राजनीति में भाग लेने का निश्चय किया और अपने मित्र श्री जवाहरलाल नेहरू की प्रेरणा तथा श्री शिवप्रसाद गुप्त के आमन्त्रण पर आप 'काशी विद्यापीठ' में अध्यापक हो गए। जिन दिनों आप फैजाबाद में वकालत करते थे तब आपने वहाँ पर श्रीमती एनी बेसेण्ट की 'होमरूल लीग' की एक शाखा भी स्थापित की थी। उन दिनों मौलाना मोहम्मद अली तथा शौकत अली की गिरफ्तारी के विरोध में फैजाबाद में जो सार्वजनिक सभा हुई थी उसमें आपको भी पहले-पहल भाषण देना पड़ा था। आपने बड़े डरते-डरते और अत्यन्त सकोच के साथ वह भाषण दिया था। परन्तु जब आपके उस भाषण की प्रशंसा हुई तो आपका उत्साह बढ गया और आप धीरे-धीरे अत्यन्त प्रभावपूर्ण भाषण देने लगे। इस सम्बन्ध में आपके यह विचार पठनीय है—"वह मेरा पहला भाषण था। मैं बोलते हुए बहुत डरता था, किन्तु किसी प्रकार बोल गया। कुछ लोगों ने मेरे भाषण की बड़ी प्रशसा की। इससे मेरा उत्साह बढ गया और फिर धीरे-धीरे सकोच दूर हो गया। मैं अब सोचता हूँ कि यदि मेरा पहला भाषण बिगड गया होता तो शायद मैं भविष्य में भाषण देने का कभी साहस न करता।"

सर्वप्रथम आपने काशी विद्यापीठ में डॉ० भगवानदास की अध्यक्षता में कार्य करना प्रारम्भ किया था, किन्तु सन् 1926 में आप अध्यक्ष हो गए थे। अध्यापन के कार्य के साथ-साथ राजनीतिक हलचलों में भाग लेते रहने का स्वभाव भी आपका हो गया था। आपका व्यक्तित्व इतना गरिमामय था कि विद्यापीठ के दिनों में आपके साथी श्री श्रीप्रकाश ने आपको 'आचार्य' के जिस विशेषण से पुकारना प्रारम्भ किया था, वह विशेषण फिर आपके नाम का अनिवार्य अंग ही बन गया था। अपनी छात्रावस्था से ही आप राजनीतिक हलचलों में भाग लेने लगे थे, जिसके परिणाम स्वरूप आपने सन् 1930, 1932 तथा 1941 के विभिन्न आन्दोलनों में सक्रिय रूप से योगदान दिया था। जब सन् 1942 में गाधी जी ने 'करो या मरो' का उद्घोष करके अँग्रेजों को भारत छोड़ने का आन्दोलन प्रारम्भ किया था तब आप भी सन् 1942 से सन् 1945 तक उनके साथ अहमदनगर किले में नजरबन्द रहे थे। जिन दिनों आप



कांग्रेस के इन आन्दोलनों में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे थे तब आपने श्री जयप्रकाश नारायण, डॉ० राम-मनोहर लोहिया तथा श्री अच्युत पटवर्धन आदि अपने कई साथियों के साथ मिलकर 'कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी' की स्थापना सन् 1934 में कर दी थी और उसका जो प्रथम अधिवेशन हुआ था उसकी अध्यक्षता भी आपने ही की थी।

यद्यपि आप विचार-धारा से मार्क्सवादी समाजवादी थे, किन्तु आपकी यह निश्चित धारणा थी कि भारत में समाजवाद को राष्ट्रीयता और किसानों के आन्दोलन से जोड़ना अत्यन्त अनिवार्य है। इस दिशा में आचार्य जी ने जो महत्त्वपूर्ण कार्य किया था उसीसे 'भारतीय समाजवाद' की पृष्ठभूमि का निर्माण हुआ था। आप जहाँ राजनीति में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते थे वहाँ शिक्षा, साहित्य और संस्कृति भी आपसे अछूती नहीं रही थी। आपने लखनऊ तथा काशी के विश्वविद्यालयों के कुलपति पद पर प्रतिष्ठित रहकर जहाँ शिक्षा के क्षेत्र में अपनी महत्त्वपूर्ण छाप छोड़ी थी वहाँ साहित्य-रचना और पत्रकारिता के क्षेत्र को भी आपकी प्रतिभा का वदान्य उपहार प्राप्त हुआ था। आपने जहाँ समाजवादी विचार-धारा के साप्ताहिक पत्र 'संघर्ष' का प्रकाशन लखनऊ से करके राष्ट्रीय पत्रकारिता को सर्वथा नई दिशा दी थी वहाँ 'जनवाणी' मासिक का प्रकाशन काशी से करके अपनी राजनीतिक विचार-धारा का अच्छा प्रचार किया था। इसके अतिरिक्त आपने श्री रामवृक्ष बेनीपुरी द्वारा सम्पादित और पटना से प्रकाशित 'जनता' साप्ताहिक को भी समुचित दिशा-निर्देश दिया था। आपने काशी विद्यापीठ के त्रैमासिक पत्र 'समाज' के सम्पादन के दिनों में भी अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था। जब डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल और श्री बनारसीदास चतुर्वेदी आदि हिन्दी के अनेक मूर्धन्य साहित्यकारों ने 'जनपदीय आन्दोलन' प्रारम्भ किया था तब आप भी उनके इस आन्दोलन में सहयोगी थे। आपने 'अखिल भारतीय जनपदीय परिषद्' के त्रैमासिक पत्र 'जनपद' के सम्पादन में भी महत्त्वपूर्ण परामर्श प्रदान किया था।

आप जहाँ हिन्दी, अँग्रेजी, फारसी, और उर्दू के प्रकाण्ड विद्वान् थे वहाँ पालि साहित्य का भी आपने गम्भीर अध्ययन किया था। आप भगवान् बुद्ध और उनके जीवन-दर्शन से इतने प्रभावित थे कि अपने जीवन के अन्तिम दिनों में आपने 'बौद्ध धर्म दर्शन' नामक एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ की संरचना की थी। इसके अतिरिक्त आपकी महत्त्वपूर्ण कृतियों में 'अभिधर्म कोश' भी प्रमुख है। आपकी अन्य प्रमुख पुस्तकों में 'राष्ट्रीयता और समाजवाद', 'समाजवाद : लक्ष्य तथा साधना', 'समाजवाद और राष्ट्रीय क्रान्ति', 'समाजवादी क्रान्ति और कांग्रेस', 'समाजवाद का बिगुल', 'भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास', 'समाजवाद' और 'बोधि-चर्या तथा महायान' आदि उल्लेखनीय हैं। आपने जहाँ 'अखिल भारतीय हिन्दी परिषद्' के प्रयाग-अधिवेशन का उद्घाटन किया था वहाँ देवनागरी लिपि के सुधार के लिए भी कई उपयोगी सुझाव दिये थे। आपने 'सम्पूर्णानन्द अभिनन्दन ग्रन्थ' और 'नेहरू अभिनन्दन ग्रन्थ' के सम्पादन में भी अपने अनेक उपयोगी परामर्श दिये थे।

आपकी 'बौद्ध धर्म दर्शन' नामक कृति पर आपको साहित्य अकादेमी का 'पुरस्कार' मरणोत्तर प्राप्त हुआ था।

आपका निधन 19 फरवरी सन् 1956 को हुआ था।

डॉ० नरेन्द्रदेव वर्मा

आपका जन्म महाराष्ट्र के वर्धा नगर (भूतपूर्व मध्य प्रदेश) में 4 नवम्बर सन् 1939 को हुआ था। आपके पिता श्री धनीराम महात्मा गांधी और श्री जवाहरलाल नेहरू के अनन्य अनुयायी थे और 19 अप्रैल सन् 1938 से 30 अप्रैल सन् 1940 तक आपने वर्धा में रहकर गांधी जी की रचनात्मक प्रवृत्तियों में भाग लिया था। गांधी जी के आदेशानुसार ही आप 1 मई सन् 1940 को रायपुर को अपना कार्य-क्षेत्र बनाने के लिए वहाँ चले गए थे। उन्हीं दिनों 10 अगस्त सन् 1942 को आप रायपुर के अग्रणी नेता महन्त लक्ष्मीनारायणदास तथा पण्डित रविशंकर शुक्ल सहित गिरफ्तार करके जेल में भेज दिये गए थे। उस समय बालक नरेन्द्र देव की आयु केवल 3 वर्ष की थी। आपके बड़े भाई भुलेन्द्र वर्मा और दूसरे भाई देवेन्द्र वर्मा भी उन दिनों रायपुर में ही थे। ये दोनों भाई आजकल रामकृष्ण मठ नागपुर में स्वामी आत्मानन्द और स्वामी निजात्मानन्द नाम से रह रहे हैं। आपसे छोटे और तीसरे भाई राजेन्द्र

वर्मा भी आजकल ब्रह्मचारी प्रीतिचैतन्य के रूप मे जाने जाते है। आप अपने भाइयो मे तीसरे स्थान पर थे। आपके चौथे भाई डॉ० ओमप्रकाश के रूप में कार्य-रत हैं। आपकी एकमात्र बहन डॉ० लक्ष्मी का स्थान अपने परिवार मे पंचम है। आप अपने भाई राजेन्द्र वर्मा से छोटी और ओमप्रकाश वर्मा से बड़ी हैं। इस प्रकार आपके दो अग्रज तथा एक अनुज जहाँ सास्कृतिक क्षेत्र मे अपना विशिष्ट स्थान बना गए वहाँ आपने भी साहित्य के क्षेत्र में अपनी सर्वथा अद्भुत छाप छोडी थी।

आपकी इण्टर तक की शिक्षा रायपुर मे हुई थी और सन् 1954 मे आप आगे की पढ़ाई जारी रखने की दृष्टि से अपने ज्येष्ठ भ्राता स्वामी आत्मानन्द के पास जाकर नागपुर के रामकृष्ण मठ मे रहने लगे थे। रामकृष्ण मठ के इस निवास ने आपके मानस मे आध्यात्मिकता के जो भाव उत्पन्न कर दिए थे कालान्तर में उनका अच्छा परिपाक हुआ था। आपने सागर विश्वविद्यालय मे भाषा विज्ञान विषय मे एम० ए० करने के उपरान्त वहाँ से ही आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के निरीक्षण मे 'छत्तीसगढी भाषा का उद्भव तथा विकास' विषय पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। अपने अध्ययन की समाप्ति के उपरान्त आप शासकीय सेवा मे आ गए और अपने 17 वर्ष के अध्यापकीय जीवन में आपने बालाघाट, दमोह, दुर्ग और रायपुर के अनेक महाविद्यालयों मे कार्य करके अत्यधिक लोकप्रियता अर्जित कर ली थी। आप अपने निधन से पूर्व हिन्दीविभागाध्यक्ष के रूप मे प्रतिष्ठित थे। इस अवधि मे आपने जहाँ अनेक विद्यार्थियो को अपने विवेक-पूर्ण मार्गदर्शन से कृतार्थ किया था वहाँ छत्तीसगढी और हिन्दी भाषा के साहित्य के क्षेत्र मे भी उल्लेखनीय कार्य किया था। आप जहाँ गम्भीर समीक्षक के रूप मे प्रतिष्ठित थे वहाँ कविता, गीत, उपन्यास, नाटक, कहानी और निबन्धों के क्षेत्र मे भी आपने अपनी अपूर्व मेधा एव प्रतिभा का परिचय दिया था। छत्तीसगढ की मिट्टी से आपका विशेष लगाव था। वहाँ की लोक-सस्कृति और जीवन-प्रणाली का चित्रण करने मे आप पूर्ण प्रवीण थे। आपके उपन्यासो तथा कविताओं मे छत्तीसगढ़ अचल की मिट्टी की सौंधी सुगन्ध अपनी सम्पूर्ण उदग्रता से परिव्याप्त हुई थी। आपने जहाँ एक विवेकशील अध्यापक के रूप मे शिक्षा के क्षेत्र मे लोकप्रियता अर्जित की थी वहाँ कुशल नाट्य-निर्देशक, प्रकाण्ड भाषा-वैज्ञानिक और प्रखर वक्ता के रूप मे भी आपने अच्छी ख्याति प्राप्त कर ली थी। आकाशवाणी के वार्ताकार के रूप मे भी आपने अच्छा स्थान बना लिया था। आपके निर्देशन मे कई छात्रों ने रायपुर विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधियाँ भी प्राप्त की थी।

आपने साहित्य की विभिन्न विधाओ में इतना अधिक लिखा था कि उसे देखकर आश्चर्य होता है। आपकी प्रकाशित रचनाओ मे 'प्रयोगवाद', 'हिन्दी स्वच्छन्दतावाद : पुनर्मूल्याकन', 'आधुनिक पाश्चात्य काव्य और समीक्षा के उपादान', 'नयी कविता सिद्धान्त और सृजन', 'हिन्दी नव स्वच्छन्दतावाद', 'अज्ञेय और समकालीन कविता', 'मुक्तिबोध का काव्य', 'प्रगतिकार अचल और बच्चन' तथा 'छत्तीसगढी भाषा का उद्विकास' आदि समीक्षात्मक कृतियों के अतिरिक्त 'सुबह की तलाश' (उपन्यास) तथा 'अपूर्वा' (काव्य) के नाम प्रमुख है। आपने इन मौलिक



रचनाओ के अतिरिक्त अनेक ग्रन्थो का हिन्दी मे अनुवाद भी किया था। इनमे से जो ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं उनमे 'मोगरा', 'श्री माँ की वाणी', 'श्री कृष्ण की वाणी', 'श्री राम की वाणी', 'बुद्ध की वाणी', 'ईसामसीह की वाणी' और 'मुहम्मद पैगम्बर की वाणी' के नाम उल्लेख्य है। सम्पादन के क्षेत्र मे भी आपने अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। आपके द्वारा सम्पादित 'आधुनिक काव्य सकलन' तथा 'छायावादोत्तर काव्य सकलन' नामक पुस्तके प्रमुख है। यह दुर्भाग्य का विषय है कि डी० लिट्० की उपाधि के लिए प्रस्तावित आपका 'हिन्दी वर्तनी के मानकीकरण की समस्याएँ और समाधान' ग्रन्थ अभी तक अप्रकाशित ही है। 4 नवम्बर को आप अपने जन्म दिवस पर इस शोध प्रबन्ध

को रायपुर विश्वविद्यालय मे प्रस्तुत करने वाले थे। इनके अतिरिक्त आपकी अनेक पुस्तकें और शोध-निबन्ध भी प्रकाशन की प्रतीक्षा मे है। आपकी 150 से अधिक छत्तीसगढी भाषा और 100 से अधिक हिन्दी की कविताएँ पुस्तक रूप मे प्रकाशित होने से वंचित रह गई है। आपने छत्तीसगढी की 14 कविताओ का अँग्रेजी मे भी अनुवाद किया था, इनमे से 7 कविताएँ आपकी ही है। छत्तीसगढ़ी भाषा मे लिखित आपका 'सोनहा विहान' नामक सगीत नाटक अत्यन्त लोकप्रिय हुआ था।

आपके व्यक्तित्व और कृतित्व की सक्षिप्त झाँकी 'साहित्य पुरुष डॉ० नरेन्द्र देव वर्मा स्मृत्यजलि' नामक उस 'स्मारिका' को देखने से मिल जाती है जिसका प्रकाशन आपके निधन के उपरान्त 'डॉ० नरेन्द्र देव वर्मा स्मारिका समिति रायपुर' ने किया था। इस स्मारिका का सम्पादन सर्वश्री बालचन्द कछवाहा, हरि ठाकुर, देवीप्रसाद वर्मा, नन्दकिशोर तिवारी तथा शिवकुमार अग्रवाल ने किया था।

आपका निधन 8 सितम्बर सन् 1979 को हुआ था।

डॉ० नरेन्द्रदेवसिंह शास्त्री

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के मैनपुरी जनपद के मकरन्दपुर (मौजा काकन) नामक ग्राम मे 7 दिसम्बर सन् 1901 को हुआ था। आपके पिता ठा० बलदेवसिंह चौहान ब्रिटिश फौज के रिसाले मे नौकर थे और वहाँ से अवकाश प्राप्त करने के उपरान्त आर्यसमाज के क्षेत्र मे एक लोक-कवि के रूप मे बहुत प्रसिद्ध हुए थे। आपने अपनी शिक्षा दौलतपुर ग्राम के प्राइमरी स्कूल मे प्रारम्भ की थी और बाद मे आपके पिता ने आपको करहल मे पढने को भेज दिया था। क्योकि आपके पिता कट्टर आर्यसमाजी विचार-धारा के थे अत. उन्होने आपको विद्याध्ययन के लिए उत्तर भारत के सुप्रसिद्ध शिक्षण-सस्थान 'गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर' मे प्रविष्ट कराया था। इस सस्थान में निर्धन छात्रो को नि:शुल्क शिक्षा दी जाती थी। गुरुकुल मे लगभग 10-11 वर्ष शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने पहले-पहल अपनी जन्म-भूमि के समीपवर्ती सिरसागज नामक स्थान मे अध्यापन प्रारम्भ किया था और बाद में मनपुरी के क्रिश्चियन स्कूल में चले गए थे। इस स्कूल मे आपने लगभग 14 वर्ष तक अत्यन्त परिश्रम से कार्य किया था।

अपने इस अध्यापकीय जीवन मे आपने अँग्रेजी की इण्टर तथा बी० ए० की परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण कर ली थीं। अपने इस अँग्रेजी ज्ञान और संस्कृत के वैदुष्य के आधार पर आपकी नियुक्ति सन् 1934 में आगरा के 'बलवन्त राजपूत इण्टर कालेज' मे हो गई। इस कालेज के प्रधानाचार्य डॉ० रामकरन सिह भी उसी वर्ष इस शिक्षण-सस्थान मे आए थे। आगरा की इस नियुक्ति के उपरान्त आपने प्राइवेट परीक्षार्थी के रूप मे धीरे-धीरे हिन्दी तथा सस्कृत विषयो मे एम० ए० की परीक्षाएँ भी प्रथम श्रेणी मे ससम्मान उत्तीर्ण कर ली थी। सन् 1942 मे आपने



कालेज से आधे वेतन पर अवकाश लेकर 'सस्कृत महाकाव्यो' पर शोध करके प्रयाग विश्वविद्यालय से डी० फिल० की उपाधि प्राप्त की थी। जब आप अपना शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करके प्रयाग से आगरा आए थे तब आपका कालेज 'डिग्री कालेज' हो चुका था। फलस्वरूप सेवा-निवृत्ति के समय तक आप इस कालेज मे विभागाध्यक्ष रहे थे।

आपने अपने शिक्षकीय जीवन मे जिन अनेक छात्रो को सस्कृत तथा हिन्दी मे उच्च स्तरीय शोध एव अनुसधान कराया था उनमे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के वर्तमान हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ० विजयपाल सिंह, मेरठ विश्वविद्यालय के डॉ० नत्थनसिह तथा नागपुर विश्वविद्यालय के डॉ० इन्द्रपालसिंह 'इन्द्र' के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आप जहाँ विलक्षण प्रतिभा-सम्पन्न अध्यापक के रूप मे प्रतिष्ठित थे वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आपने कई विशिष्ट कृतियाँ प्रदान की थीं। आपकी ऐसी रचनाओं मे 'भारतीय

दर्शन शास्त्र का इतिहास', 'कथा कुमुदावली', 'पालि कथा प्रकाश' और 'भ्रमर गीत सार' प्रमुख हैं। आपकी सेवा-निवृत्ति के समय आपके छात्रों ने कुछ धन एकत्रित करके आगरा विश्वविद्यालय मे जमा किया था, जिससे प्रतिवर्ष संस्कृत एम० ए० की परीक्षा मे प्रथम स्थान पाने वाले छात्रों को 'डॉ० नरेन्द्र देव सिंह स्वर्ण पदक' दिया जाता है। आप शिक्षण तथा लेखन के कार्य से समय निकालकर समाज-सेवा के क्षेत्र मे भी यदा-कदा योगदान देते रहते थे। आप अपनी शिक्षा-संस्था 'गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर' के भी कई वर्ष तक मन्त्री रहे थे।

सेवा-निवृत्ति के उपरान्त आप स्थायी रूप से मैनपुरी मे जाकर अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री विश्वदेव सिंह चौहान के पास रहने लगे थे। वहाँ रहते हुए आपने अपनी 'आत्मकथा' भी लिखी थी, जो आपकी मृत्यु के उपरान्त आपके पुत्र ने प्रकाशित की है। इस आत्मकथा से आपके जीवन-संघर्ष का सही परिचय पाठको को मिल सकता है। आपको 6 दिसम्बर सन् 1966 को भयकर हृदयाघात हुआ, जिसके कारण आपको चिकित्सार्थ आगरा के 'सरोजिनी नायडू अस्पताल' मे ले जाया गया था, जहाँ पर 11 मार्च सन् 1967 को आपका देहावसान हो गया।

श्री नरोत्तमदास पाण्डेय 'मधु'

श्री 'मधु' का जन्म उत्तर प्रदेश के झाँसी जनपद के मऊरानीपुर नामक कस्बे मे सन् 1915 मे हुआ था। मैट्रिक तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप झाँसी मे पचायत निरीक्षक हो गए थे। जिन दिनों आप मऊरानीपुर की श्रीकृष्ण पाठशाला (अब इण्टर कालेज) मे आठवी कक्षा के विद्यार्थी थे तब आपको प्रख्यात साहित्यकार डॉ० श्यामसुन्दर 'बादल' से सस्कृत का अध्ययन करने का सुअवसर भी प्राप्त हुआ था। आपके पिता श्री घनश्यामदास पाण्डेय भी हिन्दी के उत्कृष्ट कवि थे।

आप अपने छात्र-जीवन से ही हिन्दी तथा बुन्देलखण्डी मे अच्छी कविताएँ करने लगे थे। आपकी कवित्व-प्रतिभा से प्रभावित होकर ओरछा-नरेश श्री वीरसिंह जूदेव ने आपको अपने राज्य का 'द्वितीय राज कवि' घोषित कर दिया था। आपने जहाँ बहुत-से सैर और ख्याल लिखकर लोक-काव्य की उल्लेखनीय सेवा की थी वहाँ गद्य-लेखन में भी आप परम प्रवीण थे। आपके द्वारा लिखी 'अल्हैत' (आल्हा-गायक) शीर्षक कहानी ही हमारे इस कथन की पुष्टि करने के लिए पर्याप्त है। आपके द्वारा लिखे गए ख्याल आज भी बुन्देलखण्ड के गाँवो मे चंग पर गाए जाते हैं और अनेक फड़बाजियों मे उनका प्रचुरता से प्रयोग किया जाता है। आपके द्वारा लिखी 'शशि शतक' तथा 'मुरली माला' नामक कृतियाँ आपकी काव्य-प्रतिभा की ज्वलन्त साक्षी हैं।

कवित्त तथा सवैया छन्दो के लिखने मे आप इतने दक्ष थे कि उन्हे देख तथा पढकर आपकी कवित्व-प्रतिभा और छन्द-विधान का लोहा मानना पडता है। चन्द्रमा पर आपने जो अनेक सवैये लिखे थे वे आपकी 'शशि शतक' नामक कृति मे समाविष्ट है। आपकी ऐसी कवित्व-प्रतिभा की बानगी आपके द्वारा लिखित इन पक्तियो मे भली-भाँति देखी जा सकती हैं·

लहरत आवै लोल लहर पियूष कैसी,
पावन प्रकाश पट पहिरत आवै है।
थहरत आवै कल कुमुद कली मे ठोक,
ठिठकत ठाम-ठाम ठहरत आवै है ॥
बहरत आवै बन बागन तड़ागन मे,
गमक गुराई गर्व गहरत आवै है।
फहरत आवै, दुग्ध-फेन फैल-फैल छटा,
छिति पै छपाकर को छहरत आवै है ॥

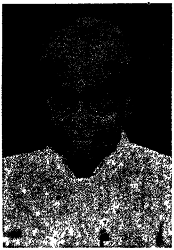
आपने 'रामचन्द्रिका' के रचयिता महाकवि केशवदास की प्रशस्ति मे भी अनेक कवित्त लिखे थे। आपकी खड़ी बोली की रचनाओ मे 'गरीब की दुनिया' नामक विस्तृत कविता अत्यन्त लोकप्रिय थी। उसकी निम्न प्रारम्भिक पंक्तियाँ ही उसकी उत्कृष्टता का साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त है :

ओ उच्च भवन वालो बोलो
ओ अतुलित धन वालो बोलो
कान्तित कचन वालो बोलो
जगमग जीवन वालो बोलो
क्या कभी निहारी है तुमने
अनजान गरीबों की दुनिया।
बेजान गरीबों की दुनिया!

आपका निधन केवल 36 वर्ष की अल्पावस्था मे ही सन् 1951 में हुआ था।

श्री नरोत्तमदास स्वामी

श्री स्वामी का जन्म राजस्थान के बीकानेर नगर मे 2 जनवरी सन् 1905 को हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा बीकानेर मे हुई थी और आगरा विश्वविद्यालय से हिन्दी तथा संस्कृत दोनो विषयो में एम० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप 'डूंगर कालेज बीकानेर' मे 'हिन्दी-विभागाध्यक्ष' (सन् 1935 से सन् 1955) रहे थे। इससे पूर्व आपने जहाँ सन् 1927 से सन् 1929 तक बीकानेर स्टेट की 'लेजिस्लेटिव असेम्बली' मे अनुवादक का कार्य अत्यन्त सफलता पूर्वक किया था वहाँ 'डूंगर इण्टर कालेज बीकानेर' (सन् 1929 से सन् 1934) तथा 'बिरला इण्टर कालेज पिलानी' (सन् 1924 से सन् 1935, मे भी कार्य किया था। डूंगर कालेज बीकानेर के उपरान्त आप जहाँ सन् 1955 से सन् 1962 तक उदयपुर के 'महाराणा भूपाल कालेज' के उपाचार्य और हिन्दी विभागाध्यक्ष रहे थे वहाँ आपने सन् 1963 से सन् 1967 तक 'वनस्थली विद्यापीठ जयपुर' मे भी हिन्दी-विभागाध्यक्ष के रूप मे कार्य किया था। वहाँ से निवृत्ति पाने के बाद आप बीकानेर मे ही रहकर अध्ययन तथा लेखन मे सलग्न रहने के साथ-साथ अनेक शोध-छात्रो का निर्देशन भी करते रहे थे।



अपने इस कर्ममय जीवन मे शिक्षा के क्षेत्र मे अपनी अमूल्य सेवाएँ देने के साथ-साथ आप देश की अनेक साहित्यिक एवं सास्कृतिक संस्थाओं से भी सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहे थे। ऐसी सस्थाओ मे 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा', 'भाण्डारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना', 'नागरी भण्डार बीकानेर', 'भारतीय विद्या मन्दिर बीकानेर','सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट' तथा 'राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर' आदि के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण है। आपने 'राजस्थानी साहित्य पीठ बीकानेर' की स्थापना के द्वारा राजस्थानी साहित्य और भाषा की जो अभिनन्दनीय सेवा की थी, वह सर्व विदित है। आपका उक्त सभी सस्थाओ से जहाँ अत्यन्त निकट का सम्बन्ध रहा था वहाँ आप 'राजस्थानी ज्ञानपीठ बीकानेर' तथा 'भारतीय विद्या मन्दिर बीकानेर' के कुलपति और 'राजस्थानी भाषा साहित्य सगम अकादमी बीकानेर', 'गुण प्रकाशक सज्जनालय बीकानेर' तथा 'राजस्थानी साहित्य सम्मेलन' के सभापति भी रहे थे। आपने 'सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट बीकानेर' और राजस्थानी साहित्य पीठ बीकानेर' की सेवा कई वर्ष तक 'साहित्य मन्त्री' के रूप मे भी की थी।

लेखन के क्षेत्र मे आपने राजस्थानी तथा हिन्दी भाषा की समृद्धि मे भी अपनी महत्त्वपूर्ण रचनाओ के माध्यम से अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपने जहाँ 'रासो साहित्य और पृथ्वीराज रासो', सक्षिप्त राजस्थानी व्याकरण', 'हिन्दी गद्य का 'सक्षिप्त इतिहास', 'अलकार परिचय' और 'अलकार पारिजात' आदि कई मौलिक और स्वतन्त्र ग्रन्थो की रचना की थी वहाँ सम्पादन के क्षेत्र मे भी आपकी सेवाएँ स्पृहणीय रही थी। आपके द्वारा सम्पादित ग्रन्थों मे 'राजस्थान रा दूहा', 'ढोला मारू रा दूहा', 'राजस्थान के लोकगीत' (दो भाग) 'राजस्थान के ग्रामगीत', 'राजस्थान के वीर गीत', 'राजस्थानी कहावते', 'राजस्थानी लोकगीत विहार', 'कृष्ण रुक्मिणी री बेलि', 'वीर सतसई', 'राजिया रा दूहा', 'मीरा मन्दाकिनी', 'त्रिमूर्ति', 'सूरदास', 'मधुपर्क', 'मधुसचय', 'देवकाव्यरत्नावली', 'पद्य पारिजात', 'गद्य विहार', 'गद्य लतिका', 'संस्कृत पाठमाला', 'बालको के गीत', 'बीकानेर के गीत', 'अपभ्रश पाठमाला', 'हिन्दी साहित्य विहार' (तीन भाग), 'स्वर्ण महोत्सव पाठमाला' (छह भाग), 'अगरचन्द नाहटा लेख-सूची' तथा 'पृथ्वीराज रासो' (लघुत्तम संस्करण भाग एक) के नाम विशेष महत्त्व रखते है। इनके अतिरिक्त आपने 'सूर्यकरण पारीक राज-

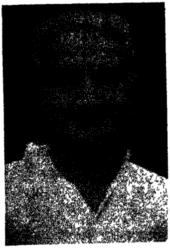
स्थानी ग्रन्थमाला पिलानी' की ओर से प्रकाशित होने वाले ग्रन्थों में भी अनेक उपयोगी परामर्श दिये थे।

पुस्तकों के लेखन तथा सम्पादन-सम्बन्धी कार्यों के अतिरिक्त आपने हिन्दी के अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ के सम्पादन-मण्डल के सदस्य के रूप में भी हिन्दी और राजस्थानी भाषा की अभिनन्दनीय सेवा की थी। ऐसे पत्रों मे उपन्यास-सम्राट् मुन्शी प्रेमचन्द के 'हस' (काशी) के अतिरिक्त 'जगती जोत' (बीकानेर), 'जन भारती' (कलकत्ता), 'राजस्थान भारती (बीकानेर)' 'शोध पत्रिका' (उदयपुर) तथा 'मरुश्री' (चूरू) आदि के नाम विशेष उल्लेख्य है। साहित्य भाषा और सस्कृति-सम्बन्धी अपनी बहुविध सेवाओ के उपलक्ष्य मे आपको जहाँ सन् 1937 मे 'महाराजा गगासिह सुवर्ण जयन्ती पदक' प्रदान किया गया था वहाँ आप अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, अखिल भारतीय मारवाडी सम्मेलन और भूतोडिया पुरस्कार विवेक सस्थान कलकत्ता की ओर से भी सम्मानित हुए थे। 'राजस्थान साहित्य अकादमी (सगम) उदयपुर' ने भी सन् 1972 मे आपका अत्यन्त भव्य अभिनन्दन किया था। आपको 'विद्या महोदधि' तथा 'विद्यार्णव' आदि कई सम्मानोपाधियाँ भी प्रदान की गई थी। राजस्थानी भाषा और साहित्य के उन्नायको मे आपका स्थान सर्वथा अप्रतिम और अनन्य है। आप राजस्थानी के अतिरिक्त खडी बोली और ब्रजभाषा के अच्छे कवि भी थे।

आपका निधन 13 अगस्त सन् 1981 को हुआ था।

श्री नरोत्तम नागर

श्री नागर का जन्म अपनी ननसाल मेरठ (उत्तर प्रदेश) मे 3 फरवरी सन् 1913 को हुआ था और आपके पूर्वज नारनौल (हरियाणा) के रहने वाले थे। आपकी सारी शिक्षा-दीक्षा मेरठ मे ही हुई थी और बाद मे अपने पिता के पास इलाहाबाद चले गए थे, जहाँ के साहित्यिक वातावरण मे आपकी प्रतिभा अत्यन्त उन्मुक्तता से मुखर हुई थी। केवल 14-15 वर्ष की आयु मे ही आपने लेखन-कार्य प्रारम्भ कर दिया था। केवल 18 वर्ष की आयु मे आपने गांधी जी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन मे भाग लेकर एक वर्ष का कारावास भी भुगता था। शुरू-शुरू मे आपने जहाँ मेरठ से 'सघर्ष' नामक पत्र का सम्पादन किया था वहाँ कुछ समय तक आप दिल्ली से श्री ऋषभचरण जैन के सम्पादन मे प्रकाशित होने वाले एक सिनेमा - साप्ताहिक 'चित्रपट' के सहकारी सम्पादक भी रहे थे। इसके उपरान्त आपने श्री लेखराम के साथ 'रंगभूमि' के सम्पादन मे भी सहयोग दिया था। आपने अपने 'संघर्ष' नामक पत्र को समाजवादी पार्टी को बेच दिया था, जो बाद मे लखनऊ से आचार्य नरेन्द्रदेव तथा मोहनलाल सक्सेना प्रभृति अनेक नेताओ के सम्पादन मे कई वर्ष तक प्रकाशित होता रहा था।



लखनऊ मे रहते हुए आपने प्रख्यात उपन्यासकार और लेखक श्री अमृतलाल नागर के सहयोग से 'चकल्लस' नामक एक व्यग्य-प्रधान साप्ताहिक पत्र भी सम्पादित किया था। डेढ-दो वर्ष बाद आपने प्रयाग जाकर वहाँ से 'उच्छृंखल' नामक मासिक पत्र भी निकाला था। प्रयाग मे रहते हुए आपने कुछ समय तक जहाँ 'सेवा समिति' के मासिक पत्र 'सेवा' का सम्पादन किया था वहाँ इण्डियन प्रेस से प्रकाशित होने वाली कहानी पत्रिका 'मजरी' का सम्पादन भी अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। इसके अतिरिक्त शुरू-शुरू मे आपने मथुरा से प्रकाशित होने वाले मासिक पत्र 'ब्रजवासी' का सम्पादन भी कुछ दिन तक किया था। जब अमृतराय के निरीक्षण मे 'हस' का प्रकाशन काशी मे होता था तब आप भी उसके कुछ समय तक सम्पादक रहे थे।

स्वतन्त्रता के उपरान्त आप भारत की राजधानी दिल्ली मे आ गए थे और पहले-पहल आपने दिल्ली नगरपालिका की ओर से प्रकाशित होने वाले 'राजधानी' नामक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन किया था। कुछ समय तक

फ्रीलान्सिंग करने के उपरान्त आप 'सोवियत दूतावास, नई दिल्ली' से सम्बद्ध हो गए थे। आपने फिर दिल्ली से प्रकाशित 'हिन्दी टाइम्स' नामक साप्ताहिक पत्र का कई वर्ष तक अत्यन्त सफल सम्पादन किया था।

आप जहाँ कुशल पत्रकार के रूप मे एक सर्वथा विशिष्ट पहचान रखते थे वहाँ उपन्यास लेखन मे भी आपने अपनी बिलकुल नई शैली का परिचय दिया था। आपने 'शुतर्मुर्ग पुराण' और 'वर्जित प्रदेश'-जैसे सशक्त उपन्यास लिखे थे वहाँ कहानी-लेखन मे भी आपने अत्यन्त अनूठे प्रयोग किये थे। अनुवाद के क्षेत्र में भी आपने अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था। आपकी मौलिक एव अनूदित कृतियों में 'घर की आग', 'दहकते अंगारे', 'दिन के तारे' 'फूल और पतझड़', ~~'फूल और पत्थर'~~, 'रजिया की बेटी', 'सुमंगला', 'काले बादल', 'चुनी हुई कहानियाँ', 'जीवन से बहिष्कृत', 'इक्कीस रूसी कहानियाँ', 'मैक्सिम गोर्की—जीवन की राहों पर', 'उपन्यास और लोकजीवन' तथा 'दर्शन, साहित्य और समालोचना' आदि प्रमुख है।

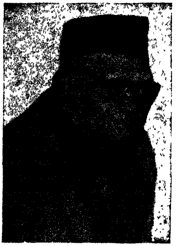
आप अपना निजी प्रकाशन करने का विचार कर ही रहे थे कि अकस्मात् 5 फरवरी सन् 1968 को आपका निधन हो गया।

श्री नरोत्तम व्यास

श्री व्यासजी का जन्म सन् 1895 में उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद नगर मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने नगर मे ही हुई थी। पहले आपने पत्रकारिता प्रारम्भ की थी और बाद मे सिनेमा-जगत् मे चले गए थे; जहाँ पर आपने कथा-लेखक और सवाद-लेखक आदि अनेक रूपो मे कार्य किया था। आप सिनेमा-जगत् के चलते-फिरते इतिहास और सन्दर्भ-कोश कहे जाते थे। आपने जहाँ सर्वप्रथम सिनेमा-सम्बन्धी साप्ताहिक पत्र सन् 1930 मे 'रगमच' नाम से कलकत्ता से निकाला था वहाँ दक्षिण मे प्रथम हिन्दी फिल्म 'प्रेम सागर' (सन् 1937-38) की कहानी लिखने के लिए आप मद्रास भी गए थे। इसकी यह विशेषता थी कि इसमें मुख्य पात्रों को छोड़कर शेष सभी पात्र दक्षिण के थे और आपने ही उन्हें हिन्दी सिखाई थी। आपने प्रख्यात फिल्म 'मुगले आजम' के श्री के०आसिफ को अपनी निर्देशित फिल्म 'प्रेम सागर' मे सबसे पहले एक चोबदार की भूमिका दी थी। आप ही अकेले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने सर्वप्रथम 'गीत नाटिका' शैली की एक ऐसी फिल्म बनाई थी जिसमें सब सवाद पद्य मे ही थे। धार्मिक फिल्मों के निर्माण में आपका इतना महत्त्वपूर्ण योगदान था कि आप उस क्षेत्र के 'भीष्म पितामह' कहे जाते थे।

आपका साहित्यिक जीवन कलकत्ता मे उस समय प्रारम्भ हुआ था जब आपने सन् 1917 मे वहाँ से प्रकाशित होने 'दारोगा' पत्र का सम्पादन किया था। इसके उपरान्त आपने अपने कलकत्ता के पत्रकार साथी श्री शिवपूजनसहाय के सुझाव पर ही 'रंगमंच' नामक साप्ताहिक प्रारम्भ किया था। यह हिन्दी का प्रथम सिने-साप्ताहिक था। इस पत्र के माध्यम से ही आपने फिल्मी जीवन मे प्रवेश किया था और जब आप इस पत्र का सम्पादन करते थे तब ही आपका परिचय सिने-जगत् की प्रमुख हस्ती देवकी बोस से हुआ था। उनके अनुरोध पर आपने सन 1932 मे 'पूरणभगत' नामक जो फिल्म-कथा लिखी थी उस पर आपने इलाहाबाद बैंक कलकत्ता के किसी दुबे नामक व्यक्ति का नाम इसलिए दे दिया था कि आप अपनी साहित्यिक छवि को लाछित नही होने देना चाहते थे। क्योंकि उन दिनों सिनेमा को रडियों और भड ओ की लाइन कहा जाता था। उन्ही दिनो आपने 'राजरानी मीरा' नामक जो फिल्म-कहानी लिखी थी वह बहुत लोकप्रिय हुई थी। इस फिल्म मे पृथ्वीराज कपूर और दुर्गा खोटे ने भी भाग लिया था और फिल्म का निर्देशन किया था देवकी बोस ने। उन दिनो आपने जब अपने 'रगमच' पत्र मे 'न्यू थियेटर्स' की एक फिल्म की अत्यन्त तीखी आलोचना छापी थी तब उसके मालिको ने बहुत बुरा माना था। इस सम्बन्ध मे उनसे व्यासजी ने स्पष्ट रूप से यह कहकर अपने स्वाभिमान का परिचय दिया था कि "मैं आपके अधीन हूँ, मेरा पत्र नही।" श्री पृथ्वीराज कपूर और देवकी बोस ने भी आपके इस कथन का पूर्ण समर्थन किया था। आपने कलकत्ता से 'नारायण' नामक एक मासिक पत्र का सम्पादन भी सन् 1926 मे किया था। कुछ समय तक आपने प्रयाग से प्रकाशित 'गृह लक्ष्मी' के सम्पादन मे भी सहयोग दिया था।

जब देवकी बोस ने न्यू थियेटर्स छोड़कर अपनी नई फिल्म-कम्पनी 'ईस्ट इण्डिया कम्पनी' नाम से प्रारम्भ की तब व्यासजी ने उसके लिए सन् 1933 मे 'सीता' फिल्म की कहानी लिखी थी। सन् 1934 मे इस फिल्म को अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए थे। इस फिल्म के पुरस्कृत होने के कारण श्री व्यासजी का नाम सिने क्षेत्र मे बहुत लोकप्रिय हुआ था। इसके उपरान्त आपने मोहन भवनानी के लिए सन् 1935-36 मे 'नवजीवन', 'दिलावर', 'जग-बहादुर' और 'स्वप्न स्वयवर' नामक फिल्मे लिखी थी तथा फिर आपने वी० शान्ताराम के अनुरोध पर पहली सामाजिक फिल्म 'महात्मा' लिखी। इस फिल्म मे अछूतोद्धार की समस्या को आपने ही पहले-पहल समाज के सामने रखा था। जब सेंसर ने इसके नाम पर आपत्ति की तब इसका नाम 'महात्मा' की बजाय 'धर्मात्मा' रखा गया था। इस फिल्म के बाद 'अमर ज्वाला', 'राजपूत रमणी' तथा 'बियोण्ड द होराइजन' नामक फिल्मों की कहानियाँ भी आपने लिखी थीं। भवनानी के लिए सन् 1935 मे लिखित आपकी 'जागरण' नामक फिल्म ने देश मे राष्ट्रीय चेतना जागृत करने की दिशा मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। इस फिल्म को देखकर महात्मा गाधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर और जवाहरलाल नेहरू आदि अनेक नेताओ ने उसकी भूरि-भूरि प्रशसा की थी। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि इस फिल्म की कथा, सवाद तथा गीत आदि के साथ-साथ निर्देशन भी आपका ही था। इससे भवनानी इतने प्रसन्न हुए थे कि आपको उन्होंने 'पाताल परी', 'सुनहरा बाल' और 'मामाजी' नामक फिल्मो का निर्देशन भी सौप दिया था।



हिन्दी के फिल्म-जगत् में व्यासजी का नाम इतना लोकप्रिय हो गया था कि सभी निर्देशक और फिल्म-कम्पनियों के मालिक उनसे ही कहानी लिखने का अनुरोध करते रहते थे। यह तथ्य भी ज्ञातव्य है कि सन् 1939 मे जब 'बाम्बे टाकीज' की ओर से 'कंगन' नामक फिल्म का निर्माण हुआ था तब उसमे गीत लिखने के लिए आपने ही 'प्रदीप' को अवसर दिया था। इस फिल्म मे 4 गीत व्यासजी के थे और 4 गीत 'प्रदीप' के। आपने देवकी बोस के लिए 'विद्यापति' (1938) नामक जो फिल्म-कथा लिखी थी उसकी एक विशेषता यह थी कि देवकी बोस ने ही सर्वप्रथम इस फिल्म के माध्यम से 'प्ले बैक' सिस्टम का प्रयोग किया था। इसके साथ-साथ आपने 'श्री रामानुज', 'सुलह' और 'मेघदूत' आदि फिल्मो की कथाएँ भी देवकी बोस के लिए लिखी थी। सन् 1944 मे आपने भवनानी की अन्तिम फिल्म 'बीसवीं सदी' की कहानी भी लिखी थी। इसमे आपने मोतीलाल और नरगिस के साथ स्वय भी अभिनय किया था। उस समय आपका वेतन 1500 रुपये था। इन फिल्मो के अतिरिक्त आपने 'दशहरा', 'शिव-कन्या', 'सम्पूर्ण रामायण', 'नाग पचमी' और 'रत्न दीप' फिल्मों के लिए भी कहानियाँ लिखी थी। 'रत्नदीप' की कहानी आपने सन् 1961 मे देवकी बोस के लिए लिखी थी। आपकी अन्तिम फिल्म-कहानी 'नाग पचमी' (1962) थी, जिसमे पृथ्वीराज कपूर ने हीरो का पार्ट अदा किया था।

बीच मे आपने स्वतन्त्र रूप से फिल्म बनाने की दिशा मे भी कई नये प्रयोग किये थे। जब आपने सन् 1947 मे 'सेवाग्राम' और 'भाई दूज' नामक फिल्मे बनाई थी तब बम्बई के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री बाल गगाधर खेर तथा गृह मत्री श्री मोरारजी देसाई ने उसे देखा था और उसकी मुक्तकण्ठ से सराहना भी की थी। व्यासजी को यह शिकायत रही थी कि जब मोरारजी देसाई देश के प्रधान-मन्त्री बने तब आपने उनको कई पत्र इस आशय के लिखे थे कि गाधी-दर्शन से ओत-प्रोत मेरी 'सेवाग्राम' फिल्म को पुन प्रदर्शित करने, और यदि सम्भव हो तो बदले हुए परिवेश मे नई फिल्म के निर्माण की आयोजना की जाय। खेद का विषय है कि आपको देसाईजी की ओर से कोई उत्तर नही मिल सका और आप अपनी इस अन्तिम इच्छा को पूरा न कर सके। व्यासजी द्वारा निर्मित अन्तिम फिल्म 'नाचघर' (1953) थी। दुर्भाग्यवश यह फिल्म प्रदर्शित न हो सकी

थी। जब आपके द्वारा निर्मित कुछ फिल्में असफल रही तो आपको इसका अफसोस नहीं हुआ था। हाँ, आपको यह शिकायत अवश्य थी—"मैं फिल्मों में पैसे के लिए गया था और पैसा कमाया भी। उन दिनों मेरे कुछ निश्चित सिद्धान्त थे। आज के स्टार-सिस्टम ने फिल्मों के ढाँचे को बिगाड़ दिया है, अब यूनिट वाली बात नहीं। अब तो सब निर्माता सैक्स, शराब और मार-धाड़ की कहानियाँ ही चाहते हैं। वैसा मैंने जिन्दगी में कभी किया नहीं। अब अन्तिम समय में अपना धर्म क्यों बिगाड़ूँ।" आप धार्मिक फिल्मों के 'भीष्म पितामह' कहे जाते थे।

फिल्म-क्षेत्र से सन्यास लेकर आपने सन् 1953 में बम्बई में 'तुलसी मानस मन्दिर' की स्थापना करके उसके लिए एक ऐसी पाँच मंजिली इमारत बनवाई थी जिसकी लागत उन दिनों 5 करोड़ रुपये से अधिक थी। आप अन्तिम समय तक इसके 'संस्थापक-कुलपति' रहे थे। आपने 'तुलसी-स्मारक' के इस भवन के निर्माण में एक भी पैसा नहीं लिया था, हाँ लाखों रुपये अपने पास से उसमें जरूर लगाए थे। आप प्रकृति से इतने कंजूस थे कि अपने चाय के प्यालों की प्रशंसा में यह कहकर लोगों को आश्चर्य-चकित कर देते थे कि "ये प्याले मेरी पत्नी ने 50 वर्ष पूर्व 2 आने में खरीदे थे।"

एक उत्कृष्ट फिल्म-कथा-लेखक और निर्माता के रूप में तो आपका नाम हिन्दी-जगत् में अमर रहेगा ही; लेखक के रूप में भी आपकी देन कम महत्त्व नहीं रखती। देश-पूज्य महात्मा गांधी का विस्तृत जीवन-चरित हिन्दी में सर्व प्रथम आपने ही 'गांधी-गौरव' नाम से सन् 1916 में लिखा था। इसका प्रकाशन सन् 1921 में आर० एल० बर्मन एण्ड कम्पनी कलकत्ता की ओर से हुआ था। इसके उपरान्त आपने उनके जीवन तथा सिद्धान्तों से प्रभावित होकर 'गांधी गीता' (सन् 1922) नामक एक पुस्तक की रचना भी की थी। आपने 'सुरा-सुन्दरी-सम्पदा' (सन् 1962) नामक एक ऐसे प्रतीकात्मक उपन्यास की रचना भी की थी जिसके पात्रों में सुशील देश के वर्तमान शासन, वृद्धा माँ राष्ट्रीय सभा, डॉ० परमानन्द गांधीजी के रामराज्य के प्रतिरूप और रमा, छैल तथा कामताप्रसाद वर्तमान व्याप्त भयानक भ्रष्टाचार है। इस उपन्यास में आपने भारत में व्याप्त उस भ्रष्टाचार का वर्णन किया है जिसे गांधीजी 'शैतान' कहा करते थे। आपके द्वारा रचित अन्य कृतियों में 'अत्याचार' (1919), 'परशुराम', 'सती पंचरत्न', 'सती विदुला', 'पण्डित मोतीलाल नेहरू' (सभी सन् 1922) तथा 'पृथ्वीराज' (1925) आदि के नाम प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

आपका निधन 27 फरवरी सन् 1980 को मुरादाबाद में हुआ था। आप उन दिनों बम्बई छोड़कर अपने मूल निवास-स्थान पर ही आ गए थे।

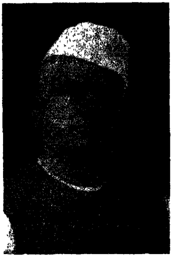
सरदार नर्मदाप्रसादसिंह

आपका जन्म मध्य प्रदेश के रीवाँ राज्य के अन्तर्गत वैकुण्ठपुर नामक स्थान में 26 जनवरी सन् 1889 को हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा इन्दौर के 'डेली कालेज' और अजमेर के 'मेयो कालेज' में हुई थी। शिक्षा-प्राप्ति के अनन्तर आप पहले-पहल रीवाँ राज्य में 'तहसीलदार' के रूप में नियुक्त हुए थे और बाद में वहाँ 'डिप्टी कलक्टर' हो गए थे। अपने स्वतन्त्र राजनैतिक विचारों के कारण आपकी रीवाँ के तत्कालीन नरेश महाराज सर गुलाबसिंह से अनबन हो गई थी, जिसके फलस्वरूप सन् 1924 में आपको रीवाँ राज्य से निष्कासित कर दिया गया था और आप अपने पूरे परिवार के साथ इलाहाबाद में रहने लगे थे।

इलाहाबाद आकर भी आपने रीवाँ राज्य की राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेना बन्द नहीं किया था और आप वहाँ रहते हुए भी रीवाँ की जनता को कांग्रेस का संदेश देते रहते थे। इलाहाबाद आकर आपका सर्वश्री मोतीलाल नेहरू, मदनमोहन मालवीय, जवाहरलाल नेहरू, पुरुषोत्तमदास टण्डन तथा कृष्णकान्त मालवीय आदि सभी नेताओं से अच्छा सम्पर्क हो गया था। आप लगातार 19 वर्ष तक इलाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष रहे थे और आपने क्रमश: सन् 1930, 1932, 1933, 1941 तथा 1942 के विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनों में सक्रिय रूप से भाग लेकर अनेक बार जेल-यात्राएँ भी की थीं। आपकी बड़ी पुत्री जानकी देवी भी देश की वर्तमान प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के साथ पिकेटिंग करती हुई गिरफ्तार हुई थी और अल्पवयस्का होने के कारण दोनों छोड़ दी गई थीं।

सन् 1932 मे आप नैनी जेल की उसी बैरक मे रहे थे जिसमे सर्वश्री मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू, रणजीत सीताराम पण्डित और सैयद महमूद आदि थे । आप उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी के सदस्य भी रहे थे।

आप जहाँ राष्ट्रीय प्रवृत्तियो मे बढ-चढ़कर भाग लेते रहते थे वहाँ आपका हिन्दी-सम्बन्धी गतिविधियों में भी सक्रिय सहयोग रहता था। जिन दिनों अखिल भारतीय



हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन सन् 1935 तथा 1936 मे क्रमश महात्मा गाधी और डॉ० राजेन्द्रप्रसाद की अध्यक्षता मे इन्दौर तथा नागपुर मे हुए थे तब आप ही सम्मेलन के प्रधान मन्त्री थे। जिन दिनो सन् 1937 मे कांग्रेस ने सर्व प्रथम चुनावों मे भाग लिया था तब आपका पर्चा इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया गया था कि आप ब्रिटिश भारत के रहने वाले नही थे। उस समय आपके 'डमी उम्मीदवार' श्री लालबहादुर शास्त्री को चुनाव लडना पड़ा था।

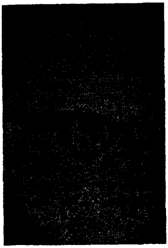
लगभग 15 वर्ष तक अपनी जन्म-भूमि से निष्कासित रहने के उपरान्त 4 जुलाई सन् 1938 को रीवाँ-नरेश महाराज गुलाबसिंह ने आपका वह प्रतिबन्ध हटाया था। इसमे भी पण्डित जवाहरलाल नेहरू और सरदार वल्लभभाई पटेल का प्रमुख हाथ था। रीवाँ राज्य मे आपकी वापसी पर आपको जहाँ अपनी पैतृक जागीर वापिस मिली थी वहाँ आप 'हारोल' की सम्मानित उपाधि से भी विभूषित हुए थे। स्वाधीनता के उपरान्त सन् 1948 मे जब 'विन्ध्य प्रदेश' का गठन हुआ तब उसके प्रथम लोकप्रिय 'मन्त्रिमडल' मे आप 'आपूर्ति मन्त्री' रहे थे। आप उत्कृष्ट कोटि के देशभक्त और प्रखर हिन्दी-प्रेमी होने के साथ-साथ सहृदय कवि भी थे। आपकी कविताएँ तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान छपा करती थी। 'सरस्वती' के 'हीरक जयन्ती ग्रन्थ' मे भी आपकी एक कविता प्रकाशित हुई है।

आपका निधन 17 दिसम्बर सन् 1961 को हुआ था।

पाण्डेय नर्मदेश्वरसहाय

आपका जन्म बिहार प्रदेश के भोजपुर शाहाबाद जनपद के बक्सर अनुमण्डल के कुल्हरिया नामक ग्राम मे 3 मार्च सन् 1911 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने ग्राम की प्राथमिक पाठशाला मे हुई थी और तदनन्तर आपने पटना के एंग्लो संस्कृत हाई स्कूल से हाई स्कूल की परीक्षा दी थी। कुछ दिन तक प्रयाग की 'कायस्थ पाठशाला' में अध्ययन करने के अनन्तर आपने पटना के न्यू कालेज मे प्रवेश ले लिया था और फिर वहाँ के बी० एन० कालेज से बी०ए० और बी० एल० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। सन् 1938-39 मे आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'विशारद' और हिन्दी विद्यापीठ देवधर की 'साहित्यालकार' परीक्षाएँ भी दी थी।

अपने अध्ययन-काल मे आप श्री अक्षयवट मिश्र 'विप्रचन्द' और श्री केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' के सम्पर्क मे आकर हिन्दी के प्रति उन्मुख हुए थे। प्रयाग के अपने छात्र-जीवन मे आपने सन् 1924-25 मे श्रीमती महादेवी वर्मा तथा डॉ० धीरेन्द्र वर्मा आदि अनेक साहित्यकारो से भी प्रचुर प्रेरणा प्राप्त की थी। जिन दिनो आप पटना विश्वविद्यालय मे बी० ए० के छात्र थे तब आपको 'अखिल



भारतीय विश्वविद्यालय भाषण प्रतियोगिता' मे सर्वाधिक अक प्राप्त करने के उपलक्ष्य मे 'स्वर्ण पदक' प्राप्त हुआ था।

सन् 1927 मे मोतीहारी में जो 'बिहारी छात्र-सम्मेलन' हुआ था उसमें आयोजित 'कविता प्रतियोगिता' में आप सर्व प्रथम रहे थे। आपकी रचनाएँ 'माधुरी', 'विशाल भारत' 'लक्ष्मी', 'चाँद', 'भारती', 'हिमालय', 'उषा' और 'बिजली' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थीं।

आप भोजपुरी तथा हिन्दी के उत्कृष्ट कवि के रूप मे माने जाते थे। आपकी रचनाएँ 'शतरूपा' नामक कृति मे प्रकाशित हुई थी। आप पेशे से वकील होते हुए भी साहित्य-सेवा को अपना प्रमुख धर्म समझते थे। आपने कुछ महत्त्वपूर्ण संस्मरण और निबन्ध भी लिखे थे। बिहार के न्यायालयो मे हिन्दी को प्रतिष्ठित करने की दिशा मे भी आपने महत्त्व-पूर्ण कार्य किया था। इसी कारण आपको बिहार सरकार ने 'हिन्दी विधायी समिति' का सदस्य मनोनीत किया था। आप जहाँ 'साहित्य समाज गुलजार बाग पटना' के मन्त्री रहे थे वहाँ 'बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की स्थायी समिति के सदस्य के रूप मे भी आपने महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। आप 'भोजपुरी परिषद् पटना' और 'अन्तर जनपदीय परिषद्' के अध्यक्ष रहने के अतिरिक्त 'भोजपुरी साहित्य सम्मेलन' के उपाध्यक्ष भी रहे थे। भोजपुरी भाषा के त्रैमासिक पत्र 'अजोर' के संस्थापक सम्पादक के रूप मे भी आपने भोजपुरी भाषा तथा साहित्य की महत्त्वपूर्ण सेवा की थी। आप भोज-पुरी भाषा मे 'बिरहा' तथा 'गजल' लिखने मे भी पूर्णत निष्णात थे। आपके द्वारा किया गया भोजपुरी की रच-नाओ का 'नीमन' नामक सकलन अत्यधिक उपादेय कहा जा सकता है। आप सन् 1978 से 'भोजपुरी अकादमी' से भी सम्बद्ध रहे थे। सहाय जी मृदुभाषी, सुमधुर गायक, अच्छे लेखक और सुवक्ता थे। आपने महा पण्डित राहुल साकृत्यायन के निर्देशानुसार 'भोजपुरी साहित्य सम्मेलन' की स्थापना करके उसके द्वारा भोजपुरी भाषा और साहित्य के उत्कर्ष का अभिनन्दनीय कार्य किया था।

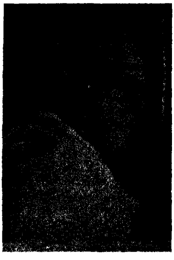
'शतरूपा' के अतिरिक्त आपकी प्रकाशित पुस्तको मे 'चित्रा' (कहानी-संकलन) का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसका प्रकाशन राजा राधिकारमणप्रसादसिंह के सहयोग से हुआ था। कचहरियो का काम-काज हिन्दी मे कराने की दृष्टि से आपने 'कानूनी प्रक्रिया बोध' नामक एक अत्यन्त उपयोगी पुस्तक की रचना भी की थी।

आपका निधन 24 अप्रैल सन् 1980 को हुआ था।

श्री नलिनविलोचन शर्मा

आपका जन्म 18 फरवरी सन् 1916 को पटना (बिहार) मे हुआ था। आपके पिता महामहोपाध्याय पण्डित रामावतार शर्मा देश के प्रमुख विद्वानों एवं दार्शनिकों में अग्रगण्य स्थान रखते थे। आपकी माता उनकी तीसरी पत्नी थी और आपके पूर्वज छपरा नगर के निवासी थे। आप जब केवल 13 वर्ष के थे तब ही आपके पिता का देहावसान 3 अप्रैल सन् 1929 को हो गया था। अपने पिता की मृत्यु के उपरान्त आपने पटना के कालिजिएट स्कूल मे प्रविष्ट होकर वहाँ से सन् 1932 मे मैट्रिक और सन् 1936 मे पटना विश्वविद्यालय से बी० ए० (आनर्स) किया था। तदनन्तर आपने सस्कृत तथा हिन्दी मे एम० ए० की परीक्षाएँ क्रमशः सन् 1938 और सन् 1943 मे ससम्मान उत्तीर्ण की थी। सस्कृत मे एम० ए० करने के उपरान्त आपने 'कौटिल्य के अर्थशास्त्र मे दण्ड विधान' विषय पर कई वर्ष तक डॉ० अनन्त प्रसाद बनर्जी शास्त्री के निरीक्षण मे रिसर्च का कार्य भी किया था।

सन् 1942 मे आपकी नियुक्ति आरा के हरप्रसाद जैन कालेज के सस्कृत विभाग मे हुई थी और वहाँ पर आपने सितम्बर सन् 1946 तक अत्यन्त सफलता-पूर्वक कार्य किया था। इसके उपरान्त आपकी नियुक्ति पटना कालेज मे हुई थी और कुछ समय तक आप राँची कालेज मे भी सन् 1947 मे रहे थे। इसके बाद आप फिर पटना विश्वविद्यालय मे हिन्दी - विभागाध्यक्ष होकर आ गए थे।



अपने शिक्षण-काल मे आपने जहाँ अपनी प्रतिभा तथा योग्यता का अपूर्व परिचय दिया था वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आपका अनन्य योगदान रहा था। आपने जहाँ समीक्षा के

क्षेत्र में अपनी महत्त्वपूर्ण मेधा का परिचय दिया था वहाँ कविता के क्षेत्र मे भी आपकी देन सर्वथा अप्रतिम थी। हिन्दी कविता में 'नकेनवाद' के प्रतिष्ठाता के रूप मे आपका प्रशसनीय स्थान बन गया था। आपकी ऐसी मनीषा का परिचय आपकी 'नकेन के प्रपद्य' नामक कृति को देखने से मिल जाता है। बिहार के साहित्यकारो की नई पीढ़ी मे आपके द्वारा प्रोत्साहित ऐसे अनेक युवक हैं जिन्होने साहित्य मे अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया है।

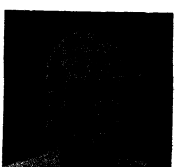
आप जहाँ शिक्षा के क्षेत्र मे एक अध्ययनशील अध्यापक के रूप मे प्रतिष्ठित थे वहाँ साहित्य के क्षेत्र मे कवि,समीक्षक तथा कथाकार के रूप मे आपका पर्याप्त समादर था। सर्वप्रथम साहित्यिक क्षेत्र मे आपने सन् 1932 मे पदार्पण किया था और उसके बाद आपकी प्रतिभा का परिचय हिन्दी-जगत् को अनेक रूपों मे मिला था। बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से प्रकाशित होने वाले त्रैमासिक पत्र 'साहित्य' का कई वर्ष तक सफल सम्पादन करने के अतिरिक्त आपने 'दृष्टिकोण' तथा 'कविता' नामक द्वैमासिक पत्रो का सम्पादन करके अपनी सम्पादन-पटुता की अद्भुत छाप छोडी थी। 'दृष्टिकोण' का सम्पादन आपने श्री शिवचन्द्र शर्मा 'अद्भुत' के सहयोग से किया था। आप बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के साहित्य मन्त्री भी रहे थे और आपने सम्मेलन के द्वारा सस्थापित 'श्री बदरीनाथ सर्वभाषा महाविद्यालय' के आचार्यत्व का कार्य-भार भी बहुत समय तक सँभाला था।

आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'दृष्टिकोण', 'मानदण्ड', 'साहित्य का इतिहास-दर्शन' (सभी समीक्षा-पुस्तकें) तथा 'विष के दाँत' (कहानी सग्रह) के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण है। आपने 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' के निमन्त्रण पर 'हिन्दी भाषा और उसका साहित्य' विषय पर निबन्ध-पाठ करने के अतिरिक्त 'साहित्य का इतिहास दर्शन' विषय पर भी कई भाषण दिये थे। आपके यह भाषण ही बाद मे पुस्तकाकार प्रकाशित हुए थे। आपके द्वारा सम्पादित जो कई ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके है उनमे 'पद्माभरण', 'हरि चरित', 'भारत की प्रतिनिधि कहानियाँ', 'निबन्ध मानस,' 'हिन्दी की उत्तम कहानियाँ', 'गोस्वामी तुलसीदास', 'रूपक कथा-कुज', 'लोक-गाथा-कोश', 'लोक साहित्य-आकर साहित्य सूची', 'हिन्दी रचना कोश' और 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियो का वर्णन' (तीन भाग) आदि प्रमुख है। 'बिहार राष्ट्र भाषा परिषद्' की ओर से प्रकाशित 'सदल मिश्र ग्रन्थावली' का प्रकाशन भी आपके ही सम्पादन मे सम्पन्न हुआ था। आपने एक उपन्यास लिखने की भी योजना बनाई थी, जो क्रियान्वित न हो सकी। इसकी कुछ झाँकी आपकी 'डायरी' के उस अश से भली-भाँति मिल जाती है, जो आपके निधन के उपरान्त 'साहित्य' के 'नलिन स्मृति अक' के पृष्ठ 67 पर 'धीरेन की भूमिका' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। आपके निधन पर 'नई धारा' ने भी एक अत्यन्त उपादेय विशेषाक प्रकाशित करके अपनी कृतज्ञता प्रकट की थी। इन दोनों विशेषाकों का सम्पादन क्रमश. आचार्य शिवपूजनसहाय, केसरी कुमार तथा ब्रजकिशोर 'नारायण' ने किया था।

आपका निधन 12 सितम्बर सन् 1961 को हुआ था।

डॉ० नलिनीमोहन सान्याल

डॉ० सान्याल का जन्म सन् 1861 मे दरभगा (बिहार) मे हुआ था। आप मूलत बगला-भाषा-भाषी थे। पटना कालेज से इण्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने सर्वप्रथम मुजफ्फरपुर मे अध्यापन-कार्य प्रारम्भ किया था और तदुपरान्त आप कलकत्ता चले गए थे। कलकत्ता मे आपने 18 वर्ष तक मुख्याध्यापक के रूप मे वहाँ के शिक्षा-जगत् मे अपना विशिष्ट स्थान बना लिया था। जिन दिनो सर आशुतोष मुखर्जी कलकत्ता - विश्वविद्यालय के उपकुलपति थे तब उनके



अभूतपूर्व प्रयास से 'विश्वविद्यालय' मे हिन्दी एम० ए० की जो कक्षाएँ प्रारम्भ हुई थी उसमे पहले छात्र श्री सान्याल थे। कलकत्ता विश्वविद्यालय से सर्वप्रथम हिन्दी एम० ए०

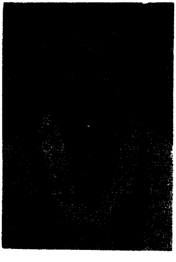
करने का श्रेय आपको ही प्राप्त है। आप सात वर्ष तक कलकत्ता विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्राध्यापक भी रहे थे। आपने 82 वर्ष की आयु में हिन्दी मे पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी।

आपने जहाँ सर्वप्रथम हिन्दी मे भाषा विज्ञान की पुस्तक लिखने की पहल की थी वहाँ 'सूर साहित्य की उपादेयता' पर भी आपने ही साधिकार लिखा था। समीक्षा के क्षेत्र मे आपने विशिष्ट प्रतिभा प्रदर्शित की थी। आपकी ऐसी कृतियो मे 'भाषा विज्ञान','तुलनात्मक भाषा विज्ञान की उपक्रमणिका', 'भक्त शिरोमणि महाकवि सूरदास', 'भक्त शिरोमणि महाकवि तुलसीदास', 'समालोचना तत्त्व', 'बिहारी भाषाओं की उत्पत्ति और विकास', 'उच्च विषयक लेखमाला' तथा 'मोहन माला' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

आपका निधन सन् 1951 मे हुआ था।

श्री नवनीतलाल चतुर्वेदी

आपका जन्म सन् 1858 मे मथुरा (उत्तर प्रदेश) के एक प्रतिष्ठित चतुर्वेदी परिवार मे हुआ था। आप प्रचार और विज्ञापन मे सर्वथा दूर रहकर काव्य-रचना मे निमग्न रहते थे। आपकी कविता के विकास मे 'कांकरौली' (राजस्थान) वाले श्री गोस्वामी बालकृष्ण जी का बहुत बडा हाथ था। उन दिनो कांकरौली में श्रीमान् गट्टू लाल जी 'भारत मार्तण्ड' का प्राय जमाव रहा करता था और आए दिन वहाँ 'कवि सम्मेलन' हुआ करते थे। इन कवि-सम्मेलनो मे रचनाएँ सुनते-सुनते आपके मानस मे भी कविता-कुरगिनी कुलाँचे भरती रहती थी।



यद्यपि आपने अधिकांश रचनाएँ प्रेम और शृंगार से सम्बन्धित लिखी है, किन्तु आप आधुनिक राष्ट्रीय विचार-धारा से भी पूर्णत. प्रभावित थे। देश के दीन-हीन कृषक-जनो की दयनीय अवस्था को देखकर एक बार आपने अपने उद्‌गार इस प्रकार प्रकट किये थे :

आशा करि पैलै पृथिवी को शुद्ध शोध कियो,
पीछे बैल लाइकै सम्हारि हर जोते खेत।
'नवनीत' प्यारे बीज बोइकै पियायो नीर,
हाति हरि आई आड कीन्हीं चहुँधा सचेत।
कभ् धूप, कभ् छाँह बादरि उमडि आवै,
कभ्-कभ् मन्द-मन्द पवन झकोरे लेत।
आयों जब जीवन के जीवन को जोग तापै,
बरसि बरसि हाय बारिधर बोरैं देत।।

आपने प्रेम-सम्बन्धी जो रचनाएँ की है वे आपकी 'प्रेम पचीसी', 'प्रेम रत्न' और 'स्नेह शतक' नामक कृतियो मे समाविष्ट है। लेकिन दुर्भाग्यवश इनमे से एक भी प्रकाशित नही हो पाई। आपने उत्कृष्ट गद्य भी लिखा था, जिसका परिचय आपकी 'वैष्णव धर्म' नामक गद्य-कृति को देखने से भलीभाँति मिल जाता है। आपकी अन्य प्रकाशित कृतियो मे 'रहिमन शतक', 'गोपी-प्रेम-पीयूष प्रवाह', 'मूर्ख शतक', 'श्यामाग अवयव भूषण' तथा 'कुब्जा पच्चीसी' प्रमुख है।

आपका निधन सन् 1932 मे हुआ था।

मुन्शी नवलकिशोर

आपका जन्म 3 जनवरी सन् 1836 को उत्तर प्रदेश के मथुरा जनपद के रीढ़ा नामक ग्राम मे अपनी ननसाल मे हुआ था। आपके पिता पण्डित यमुनाप्रसाद भार्गव अलीगढ जनपद के सासनी कस्बे के एक प्रभावशाली ब्राह्मण जमीदार थे और आपके पितामह पण्डित बालमुकुन्द आगरा मे मुगल बादशाह शाह आलम के यहाँ खजाची थे। 6 वर्ष की आयु तक आप अपनी ननसाल मे ही रहे थे और बाद मे अपनी पढ़ाई शुरू करने के लिए सासनी आ गए थे। सासनी मे आपको पढ़ाने के लिए एक पण्डित रखा गया था और

10 वर्ष की आयु तक आपने घर पर ही पढ़ाई की थी। इसके बाद आपको आगरा कालेज मे प्रविष्ट कर दिया गया। वहाँ रहते हुए आपने हिन्दी, अँग्रेजी, उर्दू, सस्कृत, अरबी, फारसी आदि भाषाओं मे अच्छी तरह योग्यता प्राप्त कर ली थी। इस बीच आपको अखबार पढने का चस्का लगा और अपनी छात्रावस्था मे ही आप आगरा के 'सफीर' नामक उर्दू अखबार मे लेख भी लिखने लगे थे।

इसका सुपरिणाम यह हुआ कि आपका रुझान पत्र-कारिता की ओर हो गया और आपने 'सफीर' अखबार से पत्रकारिता प्रारम्भ कर दी। इसके उपरान्त आप अपने कार्य मे और भी दक्षता लाने की दृष्टि से लाहौर से प्रकाशित होने वाले 'कोहेनूर' मासिक पत्र मे चले गए। उस समय 'कोहेनूर' के सचालक मुन्शी हरसुखराय ने तब आपका वेतन 15 रुपये मासिक निश्चित किया था। आपको 'कोहेनूर' का प्रबन्धक बनाया गया था। थोड़े दिन मे



अखबार की रगत ही बदल गई और वह चमक उठा। वहाँ रहते हुए आपने धीरे-धीरे कम्पोज करना, मैटर बाँधना, प्रूफ उठाना, मेकअप करना, करैक्शन करना, फर्मे मशीन पर कसना, मशीन चलाना यहाँ तक कि बाइडिग का कार्य भी भली भाँति सीख लिया। यह एक विचित्र-सी बात थी कि जब-जब भी मुन्शी हरसुखराय आपसे वेतन बढाने की बात करते थे तब-तब ही आप 15 रुपये से अधिक वेतन लेने को तैयार ही न होते थे। इस बीच एक बार सन् 1854 मे जब मुन्शी हरसुखराय को एक फौजदारी मुकद्मे मे जेल जाना पड़ा तब उन्होने नवलकिशोर को पूरे प्रेस का दायित्व इसलिए सौप दिया था, क्योकि वे निस्सतान थे। उनके जेल जाने के बाद आपने प्रेस की व्यवस्था इतनी सुदृढ कर दी थी कि लोगो ने आपको 'मुन्शी' कहना शुरू कर दिया और आप 'मुन्शी नवलकिशोर' कहलाने लगे। आपने मुन्शी हरसुखराय को भी प्रयत्न करके जेल से छुडाने का बहुत प्रयास किया था। जब आपको इस प्रयास मे सफलता मिल गई तो उससे आपकी प्रसिद्धि और भी हो गई।

21 वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते आपने अपने मन मे ससार को अच्छे साहित्य का सन्देश देने की दृष्टि से 'कोहेनूर' छोड़कर अपना ही निजी प्रेस खोलने का सकल्प कर लिया और आप लाहौर से आगरा आ गए। जब आप आगरा आए थे तब 1857 की क्रान्ति प्रारम्भ हो चुकी थी और सभी कवि तथा लेखक दिल्ली को छोडकर लखनऊ जा रहे थे। परिणाम स्वरूप आपने भी भारतीय भाषाओं द्वारा भारतीय सस्कृति और राष्ट्रीय एकता को परिपुष्ट करने की दृष्टि से सन् 1858मे लखनऊ में जाकर वहाँ के 'रकाब-गंज' मोहल्ले मे 'नवलकिशोर प्रेस' की स्थापना कर दी और उसकी ओर से अच्छे साहित्य का प्रकाशन करने का कार्य प्रारम्भ कर दिया। धीरे-धीरे जब आपका काम उन्नति करने लगा तब आपने हजरतगंज मे एक मकान किराए पर लिया और प्रेस को रकाबगज से वहाँ ले आए। जब हजरत-गज मे प्रेस आ गया तो आपने जर्मनी से कुछ अच्छी मशीने और टाइप आदि मँगाए। इसके उपरान्त आपने 26 नवम्बर सन् 1858 को 'अवध अखबार' नामक उर्दू पत्र वहाँ से प्रकाशित करना प्रारम्भ किया। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि यह उन दिनो देशी भाषाओ का सारे एशिया मे सबसे पहला पत्र था।

जब 'अवध अखबार' का प्रकाशन अत्यन्त सफलतापूर्वक होने लगा तो आपने अँग्रेजी का एक साप्ताहिक पत्र 'अवध रिव्यू' भी अपने प्रेस से ही प्रकाशित किया था। इन अखबारो का कार्य अच्छी तरह जम जाने पर आपने प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया और उसके माध्यम से हिन्दी, सस्कृत, उर्दू, अरबी और फारसी के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ छापकर आपने साहित्य तथा समाज की उल्लेखनीय सेवा की थी। 'रामचरितमानस', 'सूर सागर' और कबीर का 'बीजक' आदि अनेक हिन्दी ग्रन्थो को आपने ही सर्वप्रथम सशोधनोपरान्त प्रकाशित किया था। आपने जहाँ हिन्दी और सस्कृत के अनेक महत्त्वपूर्ण सन्दर्भ ग्रन्थो का प्रकाशन किया वहाँ 'सिहासन बत्तीसी', 'बेताल पच्चीसी', 'किस्सा हातिमताई', 'हीर-राँझा', 'किस्सा चहार दरवेश', 'तोता-

मैना की कहानी', 'अलिफ लैला' और 'आल्हा' आदि अनेक पुस्तकें छापकर भारतीय लोक-जीवन मे नई चेतना का सचार किया था। आपकी सबसे बडी देन साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र मे यही है कि जो ग्रन्थ सैकडो रुपये खर्च करने के बाद भी उन दिनो उपलब्ध नही होते थे उन्हे आपने जन-साधारण के लिए सहज ही उपलब्ध करा दिया था। आपने जिन-जिन विषयो पर अच्छी पुस्तको का अभाव अनुभव किया उन्हे भी अच्छे लेखको द्वारा तैयार कराकर प्रकाशित कराया था। धीरे-धीरे आपके प्रकाशन का कार्य इतना बढ गया कि देश के सभी प्रमुख नगरो मे आपकी शाखाएँ स्थापित हो गईं। आपने नगर-नगर और गाँव-गाँव मे भी अपने एजेण्ट नियुक्त कर दिए थे।

जब मुन्शी जी ने अच्छे कोशो का अभाव अनुभव किया तो अरबी, फारसी और उर्दू के अनेक कोश प्रकाशित करने के साथ-साथ हिन्दी मे भी 'मंगल कोश' दो भागो मे प्रकाशित किया था। श्री शिवसिंह सेंगर द्वारा लिखित 'शिवसिह सरोज' तथा मुन्शी हफीजुल्ला खाँ का 'हजारा' भी आपने ही अपने यहाँ से सर्वप्रथम प्रकाशित किया था। इसके अतिरिक्त 'कविप्रिया' और 'रसिकप्रिया' भी आपने ही प्रकाशित किए थे। धार्मिक ग्रन्थो के प्रकाशन के विषय मे आपकी यह दृढ मान्यता थी कि उनकी पवित्रता की रक्षा की जानी चाहिए। आपके प्रेस मे हिन्दी के कम्पोजीटर और उर्दू के कातिब नहा-धोकर बडी पवित्रता से उन पुस्तको की छपाई एव किताबत किया करते थे। प्रेस मे जूता पहनकर जाने की भी मनाही थी। कुल मिलाकर आपने 2612 पुस्तके प्रकाशित की थी। इस सख्या मे वे पुस्तके सम्मिलित नही है जो पाठ्यपुस्तको के रूप मे छापी जाती थी।

हिन्दी पुस्तको के प्रकाशन की दिशा मे जहाँ आपका अभिनन्दनीय योगदान रहा था वहाँ पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपके सस्थान 'नवलकिशोर प्रेस' की ओर से सन् 1922 मे प्रकाशित 'माधुरी' नामक साहित्यिक मासिक पत्रिका का भी अपना सर्वथा विशिष्ट स्थान रहा था। इसके सम्पादक-मण्डल मे आपके पारिवारिक जन श्री दुलारेलाल भार्गव के अतिरिक्त मुन्शी प्रेमचन्द, श्री रूपनारायण पाण्डेय तथा शिवपूजन सहाय आदि अनेक ख्यातिलब्ध साहित्यकार रहे थे। मिश्रबन्धुओ मे से एक कृष्णबिहारी मिश्र ने भी जहाँ कुछ समय तक 'माधुरी' के सम्पादन मे अपना अमूल्य सहयोग दिया था वहाँ श्री मातादीन शुक्ल 'सुकवि नरेश' और श्री रामसेवक पाण्डेय भी इसके सम्पादक रहे थे। 'माधुरी' ने हिन्दी साहित्य के उन्नयन और विकास मे जो योगदान दिया था, वह सर्वथा अनुपम एव अभिनन्दनीय है। किसी समय 'माधुरी' ही अकेली ऐसी हिन्दी पत्रिका थी जिसमे लिखकर हिन्दी के अनेक लेखकों ने साहित्य मे अपना विशिष्ट स्थान बनाया था। इस पत्रिका के प्रकाशन मे 'नवलकिशोर प्रेस' को लगभग 20 हजार रुपये की हानि हुई थी। सन् 1950 मे इसे बन्द कर दिया गया था।

साहित्य एव सस्कृति के क्षेत्र मे की गई आपकी बहु-मूल्य सेवाओ के लिए तत्कालीन अँग्रेज सरकार ने आपका बडा सम्मान किया था। आप पूरे 18 वर्ष तक 'लखनऊ नगरपालिका' के मनोनीत सदस्य रहे थे। उन दिनों स्वायत्त शासन कानून के अनुसार लखनऊ में ही सर्वप्रथम सन् 1875 मे नगरपालिका बनाई गई थी। लखनऊ के 'जुबली कालेज' की स्थापना आपने ही की थी। पहले इसका नाम 'नवलकिशोर हाई स्कूल' था। आपने जहाँ अलीगढ की मुस्लिम यूनिवर्सिटी को उसके प्रारम्भिक काल मे 3 लाख रुपये दान मे दिए थे वहाँ आगरा कालेज मे भी बोर्डिंग हाउस के निर्माण के लिए भी काफी धन प्रदान किया था। आप समय-समय पर अनेक असहायों, विधवाओं और जरूरत-मन्दो की सहायता करने मे भी पीछे नही रहते थे। देश के असख्य निर्धन परिवारो की कन्याओं के विवाह मे भी आप सहायता पहुँचाते रहते थे। आपकी अनकविध सेवाओं के उपलक्ष्य मे 'ब्रिटिश सरकार' ने आपको 'कैसरे हिन्द' और 'सी० आई० ई०' का सम्मान प्रदान किया था। स्वतन्त्रता के उपरान्त आपकी स्मृति मे भारत सरकार के सचार मन्त्रालय की ओर से एक 'डाक टिकिट' भी जारी किया गया था।

आप जहाँ एक जागरूक प्रकाशक और मुद्रक के रूप मे प्रख्यात थे वहाँ आपने हिन्दी मे कुछ पुस्तके भी लिखी थी। आपने जहाँ 'जानकी मगल', 'पार्वती मगल', 'वैराग्य सगीत', 'नहछू' और 'बरवा' को सम्पादित करके एक स्थान पर 'पच-रत्न' नाम से सन् 1886 मे प्रकाशित किया था वहाँ आपकी अन्य रचनाओ मे 'वन यात्रा' (1868), 'मनोहर कहानियाँ' (1880), 'वर्ण प्रकाशिका' (1891) के नाम विशेष महत्त्व रखते है। आपके द्वारा सम्पादित 'रहीम रत्नावली' का

प्रकाशन आपके निधन के उपरान्त सन् 1898 मे किया गया था।

आपका निधन 19 फरवरी सन् 1895 मे हुआ था।

श्री नवलकिशोर 'धवल'

आपका जन्म बिहार प्रदेश के पटना जनपद के ससीढ नामक स्थान मे 11 नवम्बर सन् 1911 को हुआ था। आपने हिन्दी विद्यापीठ देवघर से 'साहित्य भूषण' और 'साहित्यालंकार' की उपाधियाँ प्राप्त करके पत्रकारिता का जीवन अपना लिया था। आपने जहाँ सन् 1939-40 मे मुगेर से प्रकाशित होने वाले 'प्रभाकर' (साप्ताहिक) मे कार्य प्रारम्भ करके पत्रकारिता के क्षेत्र मे पदार्पण किया था वहाँ मुगेर से ही प्रकाशित 'नारद' साप्ताहिक मे भी कार्य किया था। इनके अतिरिक्त आपने 'मशाल' साप्ताहिक (1951), 'वीर बालक' मासिक (1952), 'चेतावनी' मासिक (1955-56) तथा 'आदमी' साप्ताहिक (1956) का भी सम्पादन किया था। आपने काशी से प्रकाशित होने वाले 'आज' दैनिक के सम्पादकीय विभाग मे भी कार्य किया था। पत्रकारिता के क्षेत्र मे अपना जीवन-यापन करते हुए आप बीच-बीच मे स्वाधीनता-संग्राम मे भी यथोचित योगदान देते रहे थे। इस प्रसग मे आपने कुल मिलाकर 9 वर्ष का 'कारावास' भी भोगा था।

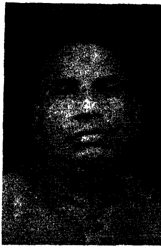
पत्रकारिता और समाज-सेवा के कार्यों से समय बचाकर आपने कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकों की रचना भी की थी। आपकी ऐसी रचनाओं मे कविता तथा नाटक की साहित्यिक विधाओं के अतिरिक्त इतिहास, राजनीति और समाजशास्त्र से सम्बन्धित अनेक विषयो को पुस्तके है। आपकी ऐसी कृतियो मे 'विप्लवी किसान' (1931), 'अन्ध श्रेणी का सघर्ष क्यों' (1940), 'अर्थशास्त्र का क, ख, ग' (1946), 'मार्क्स के सिद्धान्त' (1947), 'मन का फेर' (1956), 'रग और अबीर', 'भूदान गीत', (1967), 'रग के छीटे' (1957), 'बाँध और धारा' (1956), 'नदिया बूँद-बूँद भरी' (1960), 'आया नया जमाना' (1961), 'यह क्या अन्धेर है' (1962) तथा 'बढ़ो हिन्द के वीर जवानो' (1963) आदि के नाम प्रमुख है।

आप जहाँ अनेक वर्ष तक बिहार प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी, मुगेर जिला समाजवादी दल एव रेलवे मजदूर यूनियन मुगेर-जैसी राजनीतिक संस्थाओ से सम्बद्ध रहे थे वहाँ प्रदेश की बहुत-सी साहित्यिक सस्थाओ मे भी जुड़े हुए थे। आपने मुगेर मे महावीर पुस्तकालय की स्थापना के अतिरिक्त वहाँ की जनपद साहित्य परिषद और जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन की विविध प्रवृत्तियों में भी अपना उल्लेखनीय सहयोग प्रदान किया था। आप जहाँ 'बिहार साहित्यकार सघ' के उपाध्यक्ष रहे थे वहाँ बिहार राज्य के 'सूचना एव जन-सम्पर्क विभाग' मे 'साहित्य पदाधिकारी' के रूप मे भी आपने हिन्दी की प्रचुर सेवा की थी। आप अपनी मातृभाषा मगही मे भी रचनाएँ करने मे पूर्ण दक्ष थे।

आपका निधन सन् 1964 मे हुआ था।

श्री नवल प्रभाकर

श्री नवल जी का जन्म अप्रैल सन् 1918 मे दिल्ली के करौलबाग क्षेत्र मे हुआ था। आपके पिता श्री छाजूराम राजस्थान से आकर दिल्ली मे बस गए थे। हाई स्कूल तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त श्री नवल जी जीवन-सघर्ष मे पड गए और आपने पत्रकारिता को अपना लिया। कुछ दिन तक आपने 'हिन्दू महासभा' के साप्ताहिक पत्र 'हिन्दू' मे भी कार्य किया था। आपकी कुछ कहानियाँ सन् 1937 मे दिल्ली से प्रकाशित होने वाले 'फिल्म चित्र' मे प्रकाशित हुई थी।



सन् 1935 से आपने कांग्रेस के विभिन्न आन्दोलनो मे सक्रिय रूप से भाग लिया था और 'भारत छोडो आन्दोलन' के सिलसिले मे आपको 6 मास का कारावास भी भुगतना पड़ा था। आपने क्योंकि पिछडे वर्ग मे जन्म लिया था, अत आपने हरिजनो के उत्थान के लिए भी अनेक कार्य किए थे। आप जहाँ कई वर्ष तक दिल्ली प्रदेश कमेटी के सदस्य रहे थे वहाँ सन् 1951 से सन् 1954 तक 'दिल्ली नगर पालिका' के निर्वाचित सदस्य के रूप मे भी आपने अपने क्षेत्र की उल्लेखनीय सेवा की थी। इसके अतिरिक्त आप सन् 1952 से सन् 1962 तक करौलबाग सुरक्षित सीट से लोकसभा के सदस्य भी रहे थे।

अपने सामाजिक एव राजनीतिक दायित्वो का निर्वाह करते हुए आप लेखन मे भी लगे रहते थे। आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'नालन्दा विशाल शब्द सागर' तथा 'नालन्दा हिन्दी शब्दकोश' नाम विशेष रूप से उल्लेख्य है।

आपका निधन 28 अक्तूबर सन् 1970 को हुआ था।

श्री नवाबसिंह चौहान 'कंज'

आपका जन्म सन् 1909 मे उत्तर प्रदेश के अलीगढ जनपद के जवाँ नामक ग्राम मे एक किसान परिवार मे हुआ था। इण्टर तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप सक्रिय राजनीति मे भाग लेने लगे थे। आप जब आठवी कक्षा मे पढ़ा करते थे तब हिन्दी के प्रख्यात कवि श्री गोकुलचन्द्र शर्मा आपके गुरु थे। उनकी प्रेरणा पर ही आपने हिन्दी मे कविताएँ लिखना प्रारम्भ किया था। बाद मे 'सुकवि' के सम्पादक श्री गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' तथा अलीगढ जनपद के शीर्षस्थ हिन्दी कवि पण्डित नाथूराम शर्मा 'शकर' के सम्पर्क मे आकर आपने अपना उपनाम 'कज' रख लिया था। आप खडी बोली तथा ब्रज भाषा दोनो मे ही अत्यन्त सशक्त रचना किया करते थे।

आपका जन्म क्योंकि ग्राम मे हुआ था और वहाँ की अनेक समस्याओ का आपको अत्यन्त निकट का अनुभव था, अत आपने अपनी रचनाओ मे वहाँ के जीवन की विभिन्न परिस्थितियो का ही चित्रण किया था। मूलत. किसान-परिवार में जन्म लेने के कारण आप उनके जीवन की अनेक विषमताओं को सहज ही अनुभव कर लेते थे। ऐसी ही विकट परिस्थिति का चित्रण आपने अपनी एक रचना में इस प्रकार किया है .

जब भूख से सूख शरीर गया,
वसुधा सु-सुधा उपजाए तो क्या!
अरविन्द को मार तुषार गया,
मुसकाता हुआ रवि आए तो क्या!
कुम्हलाय गईं जब पंखुडियाँ,
घनश्याम पीयूप चुवाए तो क्या!
जब प्राण कलेवर छोड चले,
तब 'कज' कहो तुम आए तो क्या!

आपने अपनी रचनाओ मे प्राचीन गाथाओं और लोक-सस्कृति का भी अच्छा चित्रण किया था। आपकी रचनाओ का एक सकलन 'बुझा न दीप प्यार का' नाम से प्रकाशित हो चुका है। इस संकलन मे आपकी खडी बोली और ब्रज-भाषा मे लिखी गई 76 कविताओ को समाविष्ट किया गया है।

आपने राष्ट्रीय आन्दोलनो मे भाग लेकर कई बार कारावास की नृशस यातनाएँ भी भोगी थी। आपने जहाँ उत्तर प्रदेश विधान सभा के सदस्य के रूप मे अलीगढ जनपद की उल्लेखनीय सेवा की थी वहाँ आप 'अलीगढ जिला परिषद्' के अध्यक्ष भी रहे थे। सन् 1947 से लेकर काग्रेस के विभाजन तक आप उसमें अनेक महत्त्वपूर्ण पदो पर प्रतिष्ठित रहे थे। आप जिन दिनो पहले-पहल राज्य सभा के सदस्य के रूप मे मनोनीत होकर 'भारतीय ससद्' मे पधारे थे तब आपने सेठ गोविन्ददास के साथ मिलकर ससद् मे हिन्दी को राजभाषा बनाने का प्रबल आन्दोलन किया था। आपातकाल के उपरात जब देश में 'जनता पार्टी'



का शासन हुआ था तब भी आप 'लोकसभा' के सदस्य रहे थे। अपने इस संसदीय कार्य-काल में आपने हिन्दी के उत्कर्ष के लिए उल्लेखनीय सहयोग दिया था। नई दिल्ली मे रहते हुए आपने आकाशवाणी के हिन्दी-कार्यक्रमों मे भी सक्रिय सहयोग प्रदान किया था। आपके अनेक सगीत-रूपक और वार्ताएँ यहाँ से प्रसारित हुए थे।

आपका निधन 5 अप्रैल सन् 1981 को 72 वर्ष की आयु मे अलीगढ में हुआ था।

श्री नागेश्वर बड़गैयाँ 'नागेश'

श्री 'नागेश' का जन्म मध्य प्रदेश के मण्डला नामक स्थान मे 26 अक्तूबर सन् 1937 को हुआ था। आप उम क्षेत्र के युवा पीढी के अत्यन्त प्रतिभाशाली एव सशक्त कवि थे और आपकी रचनाओ की वहाँ के कवि-सम्मेलनों मे खूब धूम रहती थी। आपकी रचनाओं मे उर्दू और फारसी से प्रभावित सूफी रहस्यवाद का दर्शन ही अधिक होता है। कही-कही सामाजिक विषमताओ के प्रति विद्रोह भी आपकी रचनाओं मे प्रतिच्छायित मिलता है। आपने कुछ मुक्तक भी लिखे थे जो 'नागेश के मुक्तक' नाम से अभी अप्रकाशित है।

आप स्वभाव से इतने स्वाभिमानी और तेजस्वी थे कि प्राय उसकी झलक भी कभी-कभी आपकी कविताओ मे दृष्टिगत हो जाती थी। बन्धन-मुक्ति के प्रति उद्घोष, कर्मठ पौरुष तथा उत्साह का उद्रेक भी आपकी कुछ रचनाओं मे अत्यन्त उत्कटता से प्रकट हुआ था।

आपका निधन 4 जून सन् 1964 को हुआ था।

श्री नाथूराम खड्गावत

श्री खड्गावत का जन्म राजस्थान के बीकानेर नगर मे 16 अक्तूबर सन् 1919 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा मुख्यत. बीकानेर नगर मे ही हुई थी और यही से आपने मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की थी। बाद मे आप उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से आगरा चले गए और वहाँ से आपने इतिहास विषय मे एम० ए० की परीक्षा देकर उसमें सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया था। जिन दिनो आप आगरा मे इतिहास विषय का विधिवत् अध्ययन कर रहे थे तब आपके गुरु प्रख्यात इतिहासवेत्ता श्री आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव थे। मई सन् 1944 के प्रारम्भ मे आपकी नियुक्ति सर्वप्रथम बीकानेर के अनाथालय मे अधीक्षक के रूप मे हुई थी और सन् 1946 मे आप पजाब के महीपालनगर के खालसा कालेज मे इतिहास विषय के प्रवक्ता के रूप मे नियुक्त हुए थे। इसके उपरात आप डूंगर कालेज बीकानेर के इतिहास विभाग के अध्यक्ष होकर वहाँ आ गए थे। अपने इस कार्य-काल मे आपने अपने साथी अध्यापकों तथा छात्रो मे बहुत लोकप्रियता प्राप्त की थी।

सन् 1947 मे भारत की स्वतन्त्रता के उपरान्त जब अनेक पुरालेखागार सरकार के हाथ मे आए तब उन्हे ठीक तरह से व्यवस्थित करके इतिहास के प्रेमियों के लिए उपयोगी बनाने की ओर सबका ध्यान गया था। ऐसे कठिन समय मे अध्यापन के सुविधापूर्ण जीवन को तिलाजलि देकर अपने कर्तव्य की पूर्ति के लिए खड्गावत जी ने पुरातत्त्व के क्षेत्र मे आना श्रेयस्कर समझा था। इसके फलस्वरूप



आपको केवल 38 वर्ष की आयु मे ही 'इण्डियन हिस्टोरिकल रिकार्ड कमीशन'-जैसी महत्त्वपूर्ण और उपयोगी सस्था का सदस्य बनाकर बीकानेर रियासत का प्रतिनिधित्व करने के लिए भेजा गया था। सन् 1954 से सन् 1956 तक आपको राजस्थान सरकार की ओर से '1857 के आन्दोलन मे राजस्थान की भूमिका' के विषय मे शोध का कार्य सौपा गया था। सन् 1958 मे आप राजस्थान सरकार के 'पुरालेख विभाग' के निदेशक पद पर नियुक्त हुए थे। अपने इस

कार्य-काल में आपने सरकारी और निजी क्षेत्रों मे इधर-उधर बिखरी हुई प्रचुर सामग्री को इकट्ठा करने के लिए जो कठिन परिश्रम किया था, वह सर्वथा अभिनन्दनीय कहा जा सकता है।

आपने 'राजस्थान पुरा-लेख विभाग' की समृद्धि करने में जो महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाही थी उसकी महत्ता का इसी-से अनुमान लगाया जा सकता है कि दत्तो वामन पोतदार-जैसे विख्यात मनीषी ने आपके विभाग के सम्बन्ध मे अपने यह विचार प्रकट किए थे—"मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नही है कि बीकानेर मे संगठित और सुरक्षित सग्रह सामग्री की उपादेयता की दृष्टि से तमाम भारत के सग्रहालयों मे प्रथम श्रेणी का प्रतीत होता है।" इस सग्रहालय मे श्री खड्गावत ने राजस्थान के राजघरानों से प्राप्त बहियों, पत्रो, नक्शो और अखबारात का ऐसा अद्भुत सकलन किया था कि उससे इस विभाग का नाम दूर-दूर तक विख्यात हो गया था। सन् 1963 मे राजस्थान के सभी रजवाड़ो का सम्पूर्ण रिकार्ड आपने बीकानेर मे संचित करके आपने एक महान् स्वप्न को साकार किया था। शोध-जगत् के लिए यह सग्रहालय आपकी ऐसी महान् देन है जिसमे अनेक शोधकर्ता आकर अपनी इतिहास-यात्रा को सफल करते है। आपके इस कार्य की राजस्थान विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति डॉ० मोहनसिह मेहता ने भी भूरि-भूरि प्रशसा की थी।

लेखन की ओर भी आपकी रुचि अपने छात्र-जीवन से थी। भावात्मक गद्य और कहानी-लेखन की दिशा मे भी आपने उन दिनो कई नए प्रयोग किए थे। कवि भी आप उच्चकोटि के थे। दिसम्बर सन् 1957 में जब 'राजस्थान कालेज जयपुर' मे 1857 के बलिदानो के सम्बन्ध मे वहाँ एकत्रित विद्वान् ऐतिहासिक ऊहापोह मे संलग्न थे तब आपने वहाँ पर कुछ दोहे सुनाकर जो लोकगीत सुनाया था उसकी ये पक्तियाँ आज भी हमारी बलिदानी परम्परा का उद्घोष कर रही है :

ढोल बाजे, थाली बाजे
भेलो बाजै बाँकियो
अजट ने ओ मारने देखा
बाँकियो जूझ आउवो।······

जिन दिनो राजस्थान सरकार की ओर से 'राजस्थान थ्रू दी एजेज' नामक योजना को क्रियान्वित करने का भार आपको सौंपा गया था तब आपने अपनी अभूतपूर्व कर्मठता का परिचय दिया था। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थों मे कुछ के नाम इस प्रकार हैं—'1857 के संघर्ष में राजस्थान का भाग', 'जयपुर के शासकों को उनके वकीलों द्वारा प्रेषित रिपोर्टों की विवरणात्मक सूची', 'मुगल बादशाहों और उनके राजकुमारादि द्वारा राजस्थान के राजाओं को प्रेषित फरमानों, मसूरों और निशानों की विवरणात्मक सूची' तथा 'राजस्थान पुरालेखागार की सन् 1958-59 और सन् 1959-60 की प्रशासनिक रिपोर्ट'। आपने 'राजस्थान इतिहास-सम्मेलन' की स्थापना मे भी प्रशसनीय सहयोग दिया था। 'हिन्दी विश्वभारती बीकानेर' के सचालन मे भी आपका स्मरणीय सहयोग रहा था।

आपकी कर्मठता का सबसे ज्वलन्त उदाहरण यही है कि 3 अप्रैल सन् 1970 को जब आप जयपुर की अदालत मे एक अभियोग के सिलसिले मे सरकारी पक्ष को प्रस्तुत करने के कठिन उत्तरदायित्व का निर्वाह कर रहे थे तब हृदय-गति रुक जाने से आपका निधन हुआ था।

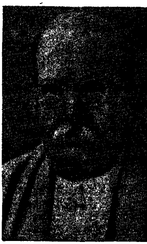
श्री नाथूराम प्रेमी

श्री प्रेमी जी का जन्म मध्य प्रदेश के सागर जनपद के देवरी नामक कस्बे मे सन् 1881 मे हुआ था। आपके पिता श्री टूंडेलाल मोदी मेवाड के रहने वाले परवार वैश्य थे। पहले यह जाति हथियार बाँधती थी और बाद मे व्यापार करने लगी थी। पुराने 'शिला-लेखों' मे इस जाति का नाम 'पौरपट' भी मिलता है। आपने अत्यन्त निर्धनता मे अपनी पढाई पूरी की थी। आपने सागर के मिडिल स्कूल मे हिन्दी मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करके नार्मल ट्रेनिंग की थी और तदुपरान्त अध्यापन का कार्य प्रारम्भ कर दिया था। सबसे पहले आपने एक देहाती स्कूल मे 7 रुपये मासिक पर अध्यापकी की थी और उसमें से 3 रुपये मे अपना खर्च चला-कर 4 रुपये घर भेजा करते थे। अपने इस अध्यापन-काल मे ही आपने सस्कृत, बगला, गुजराती तथा मराठी आदि कई भाषाओ का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। अपने इस

अध्यापकी के दिनों मे ही आपका परिचय हिन्दी के प्रख्यात कवि और लेखक सैयद अमीर अली 'मीर' से हो गया था और उनके इस ससर्ग से आप भी उनके 'मीर मण्डल कवि-समाज' के सदस्य होकर कविता करने लगे थे।

'मीर' साहब के इस सत्संग के फलस्वरूप आपमे कविता करने के जो भाव अंकुरित होने प्रारम्भ हुए थे उनसे धीरे-धीरे आपमे साहित्य के अध्ययन की प्रवृत्ति बढ़ने लगी और आपने अपना 'प्रेमी' उपनाम रखकर अनेक कविताएँ लिख डाली थीं। आपकी यह रचनाएँ उन दिनो प्रायः समस्या-पूर्ति के रूप मे हुआ करती थी, जो 'रसिक मित्र' और 'काव्य सुधाकर' आदि तत्कालीन अनेक पत्रो मे छपती रहती थी। उन्ही दिनो आपने 'बम्बई प्रान्तिक दिगम्बर जैन सभा' की ओर से छपे हुए एक विज्ञापन को पढ़ा, जिसमे एक क्लर्क की आवश्यकता का निर्देश था। आपने तुरन्त उसके लिए अपना प्रार्थना-पत्र भेज दिया और उसके उत्तर की प्रतीक्षा करने लगे। आपकी हस्तलिपि अत्यन्त सुन्दर थी और मोती-जैसे अक्षरो मे ही आपने वह प्रार्थना-पत्र भेजा था। उस विज्ञापन को पढ़कर प्रार्थना-पत्र तो बहुत से लोगों ने भेजे थे, लेकिन आपके हस्तलेख की सुन्दरता के कारण आपको ही बुला लिया गया। यदि आपकी हस्तलिपि इतनी सुन्दर न होती तो कदाचित् आपको बम्बई न बुलाया जाता और हिन्दी-जगत् 'हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर'-जैसी सुदृढ़ प्रकाशन-सस्था और उसके सुरुचिपूर्ण प्रकाशनो से वचित रह जाता।

बम्बई पहुँचकर आपको जहाँ 'बम्बई प्रान्तिक दिगम्बर जैन सभा' के कार्यालय मे चिट्ठी-पत्री लिखने तथा रोकड़ सँभालने का कार्य करना पड़ता था। वहाँ आपको सभा के मुख पत्र 'जैन मित्र' के सम्पादन से लेकर उसे डाक मे डालने तक का सारा कार्य भी सँभालना होता था और वेतन केवल 25 रुपये ही था। एक दिन सहसा जब आपको अपने स्वाभिमान पर आँच आने का अनुभव हुआ तब आपने वह नौकरी छोड़ दी, किन्तु 'जैन मित्र' के सम्पादन का कार्य करते रहे। उन्ही दिनो जैन-जगत् के प्रख्यात विद्वान् श्री पन्नालाल बाकलीवाल ने 'जैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय' नाम से एक प्रकाशन-सस्था प्रारभ की थी और उसकी ओर से 'जैन हितैषी' नामक मासिक पत्र भी प्रकाशित होता था। 'प्रेमी' जी ने इस पत्र के सम्पादन मे अपना सहयोग देना प्रारम्भ कर दिया और उनकी पुस्तको की बिक्री मे भी सहायता करने लगे। फिर श्री बाकलीवाल ने आपको अपनी इस सस्था मे आधे का भागीदार भी बना लिया। आपने इसके कार्य को देखने के साथ-साथ 'जैन-हितैषी' पत्र के माध्यम से जैन-जगत् मे धीरे-धीरे अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी। उन दिनो इसका सम्पादन इतना अच्छा होता था कि बहुत-से लोग उसकी तुलना 'सरस्वती' से करने लगे थे। बाद मे आपने 24 सितम्बर सन् 1912 को 'हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय' की स्थापना करके उसकी ओर से हिन्दी के उत्तम ग्रन्थो के प्रकाशन की योजना बनाई। उन दिनो हिन्दी मे यही एक-मात्र ऐसी सस्था थी, जिसकी ओर से उच्चकोटि का साहित्य प्रकाशित होना प्रारम्भ हुआ था।



'हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर' की ओर से प्रकाशित होने वाले साहित्य को देखकर आपकी सम्पादन-पटुता और सूझ-बूझ का अच्छा परिचय मिल जाता है। आपने जहाँ इस सस्था की ओर से मौलिक ग्रन्थो के प्रकाशन की योजना बनाई थी वहाँ बगला, मराठी तथा गुजराती के अतिरिक्त अँग्रेजी के भी उत्कृष्टतम ग्रन्थों के अनुवाद भी प्रकाशित किये थे। आपने अपने निरीक्षण मे जहाँ बगला के बकिम, रवीन्द्र, शरत् और द्विजेन्द्रलाल राय-जैसे अनेक ख्यातिलब्ध साहित्यकारो की उत्कृष्टतम रचनाओ को सुन्दर और सुरुचिपूर्ण ढग से प्रकाशित किया था वहाँ गुजराती और मराठी के श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी तथा हरनारायण आप्टे-जैसे अनेक लेखको की रचनाएँ प्रस्तुत की थी। आपने अपने इस सस्थान के द्वारा हिन्दी साहित्य के जिन शीर्षस्थ रचनाकारों की कृतियाँ प्रकाशित की थी उनमे आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, हजारीप्रसाद द्विवेदी, सुदर्शन, जैनेन्द्रकुमार, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी तथा वशीधर विद्यालकार प्रभृति के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। सुन्दर मुद्रण, सुरुचि-

पूर्ण आवरण और श्रेष्ठतम सम्पादन आपके प्रकाशनों की प्रमुख विशेषता थी।

आपने जहाँ साहित्य में समस्या-पूर्ति के माध्यम से कविता करके प्रवेश किया था वहाँ 'जैन-मित्र' और 'जैन हितैषी'-जैसे पत्रों के सम्पादन के समय आपकी काव्य-कला बहुत विकसित हो गई थी। उन दिनों 'जैन हितैषी' पत्र मे आपकी एक रचना ऐसी छपी थी, जो कालान्तर मे जैन-जगत् में इतनी लोकप्रिय हुई कि अधिकांश जैन शिक्षणालयो मे वह प्रार्थना के रूप मे गाई जाने लगी थी। आपकी वह रचना इस प्रकार है :

दयामय ऐसी मति हो जाय।
त्रिभुवन की कल्याण कामना, दिन-दिन बढती जाय।
औरों के सुख को सुख समझूँ, सुख का करूँ उपाय।
अपने दुख सब सहूँ किन्तु, परदुख नहिं देखा जाय।।
अधम अज्ञ अस्पृश्य अधर्मी, दुखी और असहाय।
सबके अवगाहन हित मम उर, सुरसरि सम बन जाय।।
भूला-भटका उलटी मति का जो है जन समुदाय।
उसे सुझाऊँ सच्चा सत्पथ, निज सर्वस्व लगाय।।
सत्य धर्म हो, सत्य कर्म हो, सत्य ध्येय बन जाय।
सत्यान्वेषण मे ही 'प्रेमी' जीवन यह लग जाय।।

आपके सुपुत्र श्री हेमचन्द्र मोदी भी अच्छे साहित्यकार थे। खेद का विषय है कि जब 'प्रेमी' जी को उनकी सहायता की आवश्यकता थी तब वे आपको असहाय अवस्था मे छोडकर इस ससार से विदा हो गए। 'हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर' का कार्य बहुत अधिक उन्नति करता यदि हेमचन्द्र जी-जैसे उनके योग्य पुत्र उसे सँभालने के लिए जीवित रहते। आप जहाँ उच्च कोटि के प्रकाशक, सहृदय कवि और जागरूक सम्पादक थे वहाँ गद्य-लेखन मे भी आपने अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। आपने जैन धर्म के कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों के सम्पादन के अतिरिक्त अनेक मौलिक पुस्तको की रचना की थी। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'स्वच्छता की प्रथम पुस्तक' (1893), 'जैन व्रत कथा सग्रह' (1895), 'पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय' (1904), 'बनारसी विलास और बनारसी चरित्र' (1906), 'अर्हत्पाशा केवली' (1908, सम्पादन), 'अर्ध कथानक' (1910, सम्पादन), 'फूलों का गुच्छा' (1913), 'कर्नाटक जैन कवि' (1914), 'उपमिति भव प्रपंच प्रस्ताव' (1915), 'विद्वद्रत्नमाला' (1916), 'हिन्दी जैन साहित्य का इतिहास' (1917), 'दिया तले अँधेरा' (1918), 'दिगम्बर जैन ग्रन्थकर्ता और उनके ग्रन्थ' (1919), 'जॉन स्टुअर्ट मिल' (1921), 'प्रतिभा' (1922), 'शिक्षा' (1923, अनुवाद), तथा 'जैन साहित्य और इतिहास' (1942) आदि प्रमुख हैं। आपकी हिन्दी-सेवाओ के उपलक्ष्य मे आपको एक अभिनन्दन ग्रन्थ भी भेंट किया गया था।

आपका निधन 30 जनवरी सन् 1960 को हुआ था।

कवीन्द्र नाथूराम माहौर

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के झाँसी नगर मे सन् 1885 मे हुआ था। आपके पिता श्री रामलाल माहौर दूध-दही के व्यवसायी थे और बाद मे उन्होने कपडे की दुकान कर ली थी। आपकी शिक्षा-दीक्षा विधिवत् किसी स्कूल अथवा कालेज मे न होकर झाँसी के सुप्रसिद्ध विद्वान् एव सुकवि श्री मदनमोहन दुबे 'मदनेश' के निरीक्षण मे हुई थी। प्रारम्भ मे आप रामलीला के लिए छन्द-रचना किया करते थे और बाद मे अभिनय भी करने लगे थे। अपने भानजे डॉ० भगवानदास माहौर को भी श्री 'मदनेश' अपने पास झाँसी ले आए थे और अपने ही निरीक्षण मे उनका पालन-पोषण किया था। बाद मे वे श्री चन्द्रशेखर आजाद तथा सरदार भगतसिह आदि अनेक क्रान्तिकारियो के द्वारा निर्मित उस दल मे सम्मिलित हो गए थे जिसका उद्देश्य सशस्त्र क्रान्ति करके भारत को स्वतन्त्रता दिलाना था।

अपने भानजे भगवानदास माहौर की इन क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो के कारण कवीन्द्र नाथूराम का झुकाव भी राष्ट्रीय विचारो की ओर हो गया था। पहले आप शृगार एव भक्ति की रचनाएँ किया करते थे, किन्तु बाद मे आप पूर्णत राष्ट्रीयता की ओर झुक गए थे और आपने सन् 1926 मे महात्मा गाधी के झाँसी आगमन के समय अपने इस छन्द द्वारा उनकी स्तुति की थी :

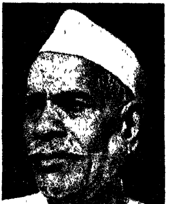
कालीनाथ नाथो उन, नाथे इन गोरे नाथ,
नाथ विष नाथन को, गरल गिरायो है।
माखन चुरायो उन, खायो औ खवायो खूब,
नमक चुराय इन, लुटायो है बनायो है।।

'नाथूराम' उन बिन शस्त्र कंस ध्वंस कियो,
इन बिन शस्त्र शत्रु-मुख झरकायो है।
नन्द नन्द मोहन ने, मोहन बनायो ब्रज,
कर्मचन्द मोहन, जग मोहन बनायो है।।

माहौर जी द्वारा रचित उनकी 'दीन के आँसू' नामक जो कृति ब्रिटिश सरकार द्वारा जब्त कर ली गई थी उसका भी एक छन्द बानगी के रूप मे प्रस्तुत है

दिन रात रुलावत है जितना,
उतना ही रुलायेंगे दीन के आँसू।
कल पाय रहा दिल आज जितै,
कल ही कलपायेंगे दीन के आँसू।
इक बार सतायबे के बदले,
सत बार सतायेंगे दीन के आँसू।
कर जुल्म तू दीन बना ही चुका,
तुझे दीन बनायेंगे दीन के आँसू।

आपकी रचना-चातुरी से प्रभावित होकर खनिया धाना नरेश ने जहाँ आपको 'कवीन्द्र' की उपाधि से विभूषित किया था वहाँ 'बुन्देलखण्ड रामायण महासभा' ने भी आपको 'बुन्देलखण्ड भूषण' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी। आप छन्द-शास्त्र के नियमो, पिंगल, रस व अलकारों और काव्य के गुण-दोष आदि की बारीकियो के मर्मज्ञ थे। जब कभी भी बुन्देलखण्ड के कवियो मे नायिका-भेद आदि विषयो पर विवाद होता था तब आपका ही निर्णय सर्वमान्य समझा जाता था। बुन्देलखण्ड के आप ही अकेले ऐसे कवि थे जिनके यहाँ कविता सीखने और सुनाने वालों का ताँता लगा रहता था। आप झूम-झूमकर कवि-सम्मेलनो में जिस शैली मे



अपनी रचनाएँ सुनाया करते थे, वह सर्वथा अभिनन्दनीय और अनुकरणीय थी। आप भाषा के विवाद से भी सर्वथा दूर रहते थे। इसका सबसे बडा प्रमाण यही है कि आपने अपनी अधिकांश रचनाएँ बुन्देलखण्डी मे न लिखकर खडी बोली और ब्रजभाषा में ही लिखी थी। यह आपकी सरस काव्य-माधुरी का ही प्रबल प्रभाव था कि आपने जनता को उर्दू शायरी के प्रभाव से हिन्दी की ओर मोडकर एक सर्वथा नया वातावरण बनाया था। आपने इसके लिए सैकडों कवि-सम्मेलनो, सैर सम्मेलनों और कविता के दगलो का आयोजन करके अपनी बहुत-सी पूँजी भी स्वाहा कर दी थी। आपकी रचना-चातुरी का सही आस्वादन श्रोताओ को अनेको कवि-दगलो और 'फडो' मे मिलता था। जब कभी श्री घनश्याम-दास पाण्डेय या श्री घासीराम व्यास झाँसी आते थे अथवा श्री माहौर जी मऊरानीपुर जाते थे तब प्राय फडो की अखाडेबाजी या कविताओ के दंगल उनके निवास-स्थानो पर हुआ करते थे। सन् 1959 मे आपको एक अभिनन्दन ग्रन्थ भी भेट किया गया था।

माहौर जी का बुन्देलखण्ड के अनेक राज-परिवारो मे पर्याप्त सम्मान हुआ था। ओरछा दरबार म जब श्री श्याम-बिहारी मिश्र दीवान थे तब उन्होने ओरछा-नरेश से माहौर जी का परिचय कराया था। उस समय माहौर जी ने छत्र-साल की तलवार का वर्णन कुलटा, दूती, गणिका आदि विभिन्न नायिकाओ के रूप मे जिस प्रकार किया था वह सर्वथा अभूतपूर्व था। उसका एक पद इस प्रकार है.

म्यान से निकल बल खाती हुई जाती जब,
'नाथूराम' चपल दिखावे गति चाल की।
रग बरसाती, अग सुषमा सुहाती दिव्य,
उपमा लजाती द्युति विद्युत् के जाल की।।
जग जोडने की है तरग प्रकटाती सदा,
प्रतिभा बढाती रण-मण्डल बिसाल की।
कण्ठ प्रति कण्ठ से बिहार कर जाती वेग,
कुलटा समान तीव्र तेग छत्रसाल की।।

यद्यपि आपने अनेक रचनाएँ लिखी थी किन्तु उनमे से कुछ ही प्रकाशित हो पाई थी। आपकी प्रकाशित कृतियो में 'वीर वधू', 'अश्रुमाला', 'दीन का दावा', 'शान्ति सागर', 'सूर सुधा निधि', 'द्रौपदी दुक्कान पच्चीसी', 'गोरी बीबी', 'दीन के आँसू', 'वीर बाला' और 'व्यग्य विनोद' प्रमुख है। आपकी 'गोपी उद्धव सवाद', 'श्रृंगार वागीश', 'षड्ऋतु दर्पण', 'बेतवा बत्तीसी', 'रम्भा शुक संवाद', 'राष्ट्रीय लहर',

'बीज की कहानी' और 'वीर छत्रसाल गुणावली' आदि रचनाएँ अप्रकाशित ही रह गईं।

आपका निधन सन् 1959 में हुआ था।

श्री नाथूराम रेजा

आपका जन्म मध्यप्रदेश के नरसिंहपुर नामक नगर में सन् 1886 में हुआ था। आपकी शिक्षा कुछ अधिक नहीं हुई थी, क्योंकि आपको अपने पिताजी का असामयिक देहावसान हो जाने के कारण शीघ्र ही अपने पैतृक व्यवसाय में लगना पड़ा था। आपका पालन-पोषण आपके मँझले भाई श्री गरीबदास की देख-रेख में हुआ था। घर पर रहकर अपने स्वाध्याय के बल पर ही आपने साहित्य का प्रचुर ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

आपने नरसिंहपुर में 'हिन्दी साहित्य प्रचारक कार्यालय' की स्थापना करके उसके माध्यम से प्रकाशन का जो अद्भुत कार्य किया था, उसमें देश के अनेक गण्य-मान्य साहित्यकारों की रचनाएँ छपी थीं। आपकी इस संस्था के द्वारा उन दिनों मध्य-प्रदेश के बहुत से साहित्यकारों को प्रचुर प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था। आपने 'सहकारी सखा' तथा 'शिक्षामृत' नामक मासिक पत्रों का सम्पादन एवं प्रकाशन भी अपनी देख-रेख में किया था। उन दिनों आपकी 'शिक्षामृत' पत्रिका जहाँ मध्यप्रदेश के प्रायः सभी विद्यालयों में जाती थी वहाँ 'सहकारी सखा' सभी बैंकों, व्यापारिक संस्थानों और समितियों में बराबर मँगाई जाती थी। आपने 'गहोई वैश्य' नामक पत्रिका का सम्पादन भी कई वर्ष तक बड़ी योग्यतापूर्वक किया था।



आपने अपनी इन पत्रिकाओं में मध्यप्रदेश के जिन अनेक नवयुवक लेखकों की रचनाएँ छापकर प्रोत्साहित किया था उनमें डॉ० रामकुमार वर्मा का नाम अन्यतम है। आपके इस प्रकाशन एवं सम्पादन के कार्य में मध्य प्रदेश के जिन साहित्यकारों ने सक्रिय सहयोग प्रदान किया था उनमें सर्वश्री दशरथ बलवन्त जाधव, शुकदेवप्रसाद तिवारी और आनन्दीलाल श्रीवास्तव के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

आपकी संस्था की ओर से हिन्दी की जो महत्त्वपूर्ण पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं उनमें 'कर्मक्षेत्र', 'भाग्य निर्माण', 'नारी नीति', 'महिला सप्त सरोज', 'गृहिणी भूषण', 'गान्धी ज्ञान', 'दम्पत्ति शिक्षक', 'आर्थिक सफलता', 'सदाचार सोपान', 'प्रबन्ध पारिजात', 'नाट्यकला-प्रदर्शन', 'गुरु शिष्य संवाद', 'गैरीबाल्डी', 'सुखद सम्मिलन' और 'विपत्ति निवारणाष्टक' आदि उल्लेखनीय हैं।

आपका निधन मई सन् 1926 में कलकत्ता में उस समय हुआ था, जब आप अपने इलाज के लिए वहाँ गए हुए थे।

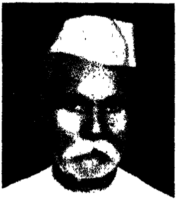
श्री नाथूराम शर्मा

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के बदायूँ जनपद के गुन्नौर नामक स्थान में सन् 1840 में हुआ था। आपके पिता श्री राधाकृष्ण गुन्नौर के समीप ही एक ग्राम की पाठशाला में अध्यापक थे। 16 वर्ष की अल्पायु में ही जब आपके पिता का असामयिक देहावसान हो गया तब सारे परिवार के भरण-पोषण का भार आपके ही निर्बल कन्धों पर पड़ा था। प्रारम्भ से परिस्थितियाँ अनुकूल न होने के कारण आपकी शिक्षा अधिक नहीं हो सकी थी और जो भी ज्ञान आपने अपने अध्यवसाय से प्राप्त किया था वह उर्दू भाषा के द्वारा ही प्राप्त किया था। क्योंकि बदायूँ मुस्लिम-बहुल क्षेत्र है अतः वहाँ उन दिनों अधिकांशतः उर्दू के ही मकतब थे।

उर्दू-प्रधान क्षेत्र होने के कारण वहाँ पर उर्दू का ही बोल-बाला था, अतः आपका झुकाव उर्दू शायरी की ओर हो गया था। आपको प्रायः वहाँ पर होने वाले मुशायरों में आमन्त्रित किया जाता था और आप उनमें अपनी जो रचनाएँ

सुनाया करते थे उनमे हिन्दी शब्दों का प्रयोग भी प्रचुरता से होता था। यद्यपि शर्मा जी ने काव्य-शास्त्र का विधिवत् ज्ञान कही भी प्राप्त नही किया था, किन्तु आपकी रचनाओं में अलंकारों की छटा प्रायः सर्वथा अनूठे रूप मे देखने को मिलती थी। उस समय की प्रचलित परिपाटी के अनुसार आप प्रायः 'कवित्त' तथा 'सवैया' छन्दो मे ही रचना किया करते थे।

आपने महाकवि गोस्वामी तुलसीदास के 'जानकी मंगल' की शैली पर 'पार्वती मगल' नामक एक ऐसे काव्य की रचना की थी, जिसमे शिव तथा पार्वती के विवाह के कथानक को काव्य मे निबद्ध किया गया है। आपकी वह रचना पूर्णत. साहित्यिक न होकर 'लोक-साहित्य' के गुणो के अधिक निकट है। क्योकि उन दिनो प्रकाशन के कोई विशेष साधन नही थे अत आपकी अधिकाश रचनाएँ अप्रकाशित ही रह गई। यदि आपको प्रकाशन तथा प्रचार की थोडी-सी भी सुविधा उन दिनो प्राप्त हो जाती तो आपकी काव्य-प्रतिभा का और भी विकास हो सकता था। आपने वसन्त ऋतु के माध्यम से वियोग शृंगार का जो भाव-भीना वर्णन किया है उसका किंचित् परिचय आपको इस एक छन्द से मिल सकता है



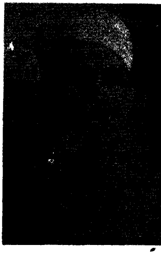
हौं तो छवि छीनो, पर मन को हूँ छबीलो मै,
मोहि देखि लाजि है मढ़ैया जरी फूस की।
तवे मे ताव नही, काजरहू मे आब नहीं,
मेरो आव देखि आब जात आबनूस की ।।
काग और कोयल की उपमा को बखाने कौन,
कहेगे लोग उपमा दोनो है मनहूस की।
कहै कवि 'नाथूराम' ऐसी देखी ना छबीली बाम,
आँगन में ठाड़ी ज्यों अँधेरी माहा पूस की।।

आपका निधन सन् 1960 मे हुआ था।

श्री नाथूसिंह महियारिया

आपका जन्म राजस्थान के उदयपुर नगर के सापो के खेड़े की हवेली, राव जी का हाटा नामक स्थान मे अपनी ननसाल मे सन् 1891 में हुआ था। आपके परिवार का निवास 'कालीवास' नामक ग्राम था। आपका जन्म का नाम 'विजय सिंह' था। क्योंकि उन दिनो मेवाड राज्य मे नाम के आगे 'सिंह' लगाने पर प्रतिबन्ध था, अत. आपके पिता श्री केसरीसिंह ने आपका नाम 'नाथूदान' रख दिया था। जब 7 वर्ष के ही थे कि आपके पिता का देहान्त हो गया और 13 वर्ष की अवस्था तक पहुँचते-पहुँचते आपकी माता जी भी चल बसी थी। आपके पिता ने कक्षा 3 तक पढ़ा-लिखाकर आपको कविता का अच्छा अभ्यास करा दिया था। आप उस छोटी-सी आयु मे ही दोहे एव गीत आदि अत्यन्त सफलतापूर्वक लिखने लगे थे। पिता के असामयिक देहान्त के कारण आपके अध्ययन-क्रम मे सदा के लिए पूर्ण विराम लग गया था, किन्तु आपका काव्य-सृजन का अभ्यास जारी रहा था।

जब माता और पिता दोनों का स्वर्गवास हो गया तो आप अन्यमनस्क से रहने लगे और आपका ध्यान कविता की ओर से हटकर शिकार खेलने की ओर हो गया। धीरे-धीरे शिकार का यह शौक इतना बढा कि आप दिन-रात गाँव से बाहर नदी के किनारे शिकार की टोह मे लगे रहते थे। इस प्रसग मे एक बार आपके पैर की हड्डी भी टूट गई थी। शिकार के कार्य से उकताकर आप कभी-कभी मनोविनोद के लिए दोहे और गीत आदि भी लिखते रहते थे। धीरे-धीरे स्फुट काव्य-रचना करने का आपका अभ्यास चलता रहा और आपने अनेक कवित्त, छप्पय, सवैया और चौपाई आदि छन्द लिखे। आपको काव्य-रचना मे इतना



दाक्षिण्य प्राप्त हो गया था कि अनायास ही वर्ण-मात्रानुसार छन्द बन जाते थे। आपके गीतो की रचना से प्रसन्न होकर एक बार उदयपुर के महाराजा श्री चतरसिंह ने यह दोहा कहा था .

आवध नाख्या आदरँ, जनम जाय नर जोत।
नाथूरा श्रीनाथ कृत, गीता ज्यूँ ही गीत॥

जब देश मे महात्मा गान्धी के आन्दोलन की धूम हुई तब आप भी उस ओर झुक गए और आपने 'वीर सतसई' नामक एक विशाल काव्य-ग्रन्थ की रचना की। आपकी काव्य-पटुता का इससे उत्कृष्ट प्रमाण और क्या हो सकता है कि आपके सम्बन्ध म एक बार प्रख्यात इतिहासकार श्री यदुनाथ सरकार ने यह कहा था—"मुझे उदयपुर मे सिर्फ दो वस्तुओ ने खीचा है। जिनमे एक तो 'हल्दीघाटी' है और दूसरी 'महियारिया जी की कविता'।" भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद भी आपकी रचनाओ से बहुत प्रभावित हुए थे। 'वीर सतसई' के अतिरिक्त आपकी 'हाडी शतक', 'गान्धी शतक','चूडा शतक', 'झालामान शतक' और 'वीर शतक' नामक कृतियाँ भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह खेद का विषय है कि 'वीर सतसई' का प्रकाशन सन् 1977 मे हुआ था और इसका सम्पादन आपके दो सुपुत्रो कुँवर मोहनसिंह और कुँवर महतावसिंह ने किया था।

आपकी रचना-चातुरी का परिचय बिसाऊ (राजस्थान) के रावल मेजर रघुबीरसिह के उन शब्दो से भली भाँति मिल जाता है जो उन्होंने आपकी 'वीर सतसई' के 'कवि परिचय' के अन्त मे लिखे थे—" 'वीर सतसई' राजस्थान के साहित्य मे एक स्थायी सम्पत्ति है। सरल, सरस, सुन्दर, सुघड भाषा, सहज स्फूर्ति एव मार्मिक अनुभूति, तीव्र अभिव्यक्ति तथा राजस्थान की एक समय वास्तविक, पर आज दुर्भाग्य से विस्मृत, अग्नि की सस्कृति का व्यापक और विशद वर्णन भारत के सहृदयजनो को हमेशा के लिए अपनी ओर आकर्षित करता रहेगा।"

आपका निधन सन् 1975 मे हुआ था।

श्री नामदेव श्रीकृष्णदास 'जीवन-प्रभा'

आपका जन्म सन् 1818 मे आबू (राजस्थान) मे हुआ था। आपके पिता श्री तोला जी नामदेव छीपा बंशी राजस्थान के रामसीण ग्राम के निवासी थे। उस ग्राम के जागीरदार ठा० नवलसिंह लँगड़े थे। जब कुछ धूर्तों ने उनसे यह कहा कि श्रीकृष्णदास शिव का भक्त है और आपके पैर को ठीक कर देगा तब ठा० नवलसिंह ने आपको बुलाकर कहा—"या तो मेरा पैर ठीक कर दो अन्यथा ग्राम से निकल जाओ!" इस घटना के बाद आपने वह ग्राम छोड दिया था और गढा नगर मे रहने लगे थे। वहाँ पर आपने 12 वर्ष तक सत्संग और भक्ति करके काव्य-साधना की थी। जब रामसीण मे दुर्भिक्ष, महामारी और अकाल-मृत्युओं का चक्कर चला तब वहाँ के ठाकुर साहब और ग्राम्यजन आपको मनाकर वहाँ वापिस ले गए थे।

आप अत्यन्त उच्च कोटि के कवि और भक्त थे। आपकी प्रमुख रचनाओ में 'तत्त्व बोध', 'मुक्तामणि', 'विवेक सागर', 'अद्वैत प्रकाश', 'श्री गुरु महिमा', 'प्रेम पुकार', 'जस तिलक', 'श्री बोध प्रस्ताव', 'नरहरि लीला', 'जानकी मगल', 'लका काण्ड' और 'नामदेव चरित्र' है। इन सब रचनाओ को एकत्र करके जालौर (राजस्थान) की सारणेश्वर सस्कृत विद्यापीठ सियाना' के श्री देवानन्द ब्रह्मचारी ने 'नामदेव श्रीकृष्णदास ग्रन्थावली' नाम से प्रकाशित करा दिया है। इनके अतिरिक्त आपने कई फुटकर स्तोत्रो, स्तुतियो, छन्दो एव गीतो की रचना की थी, जिसमे 'करुणाष्टक', 'शुभ कोरडो', 'गण पत्रिका', 'मजरी','नाममाला','विष्णु पत्रिका', 'आपेश्वर', 'सारणेश्वर' और 'शिव स्तोत्र' बहुत प्रसिद्ध है।

आपकी जीवन-मुक्ति सन् 1898 मे हुई थी।

श्री नारायण चतुर्वेदी

श्री चतुर्वेदी जी का जन्म राजस्थान के जयपुर जिले की दौसा तहसील के भाडारेज नामक एक छोटे-से ग्राम मे 12 जनवरी सन् 1920 को हुआ था। अपनी छात्रावस्था मे ही आप राजनीति मे पड गए थे और आपकी शिक्षा अधिक नही हो सकी थी। पहले आप 'जयपुर राज्य प्रजा-मण्डल' के सदस्य बने थे और बाद मे कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण की थी। आप कई वर्ष तक राजस्थान प्रदेश कांग्रेस

कार्यकारिणी के सदस्य रहने के साथ-साथ अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य भी रहे थे। सन् 1977 में आप जनता पार्टी मे सम्मिलित हो गए थे।

पत्रकारिता के क्षेत्र मे आप साप्ताहिक 'अमर ज्योति' के सचालक-सम्पादक के रूप मे अत्यन्त विख्यात थे। आपने अपने अध्यवसाय तथा लगन से इस पत्र को 3 दशक से अधिक समय तक अत्यन्त सफलतापूर्वक संचालित किया था।



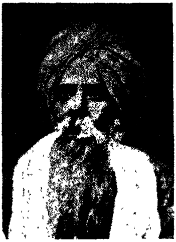
आप पत्रकारिता को धन्धा न मानकर सेवा का एक माध्यम कहा करते थे और इसी दृष्टिकोण से आपने पत्रकारिता के क्षेत्र मे प्रवेश किया था। आप 'अमर ज्योति' के ख्यातनामा सम्पादक होने के नाते 'राजस्थान राज्य पत्रकार परिषद्' की जयपुर शाखा के अध्यक्ष रहने के अतिरिक्त 'अखिल भारतीय लघु एव मध्यम समाचार पत्र सघ' कानपुर के उपाध्यक्ष भी रहे थे। आप राजस्थान राज्य जन-सम्पर्क विभाग की 'पत्रकार अधिस्वीकरण समिति' के भी सक्रिय सदस्य थे। आपके लेखन मे इतनी स्पष्टता होती थी कि पाठक उसे सहज ही हृदयगम कर लेता था।

आपका सामान्यत. सारे राजस्थान और विशेषत' जयपुर की अनेक सस्थाओ से निकट का सम्बन्ध रहा था। आप जहाँ 'जयपुर जिला सहकारी भूमि विकास बैंक' के अध्यक्ष रहे थे वहाँ 'जयपुर केन्द्रीय सहकारी बैंक' के अध्यक्ष भी चुने गए थे। साराशत जयपुर नगर की ऐसी कोई सस्था अथवा सरकारी सस्थान नही था जिससे आप जुडे हुए न हों। राजस्थान मे जब प्रथम विधान सभा का निर्माण हुआ था तब सन् 1952 से 1957 तक आप उसके सदस्य चुने गए थे। आप राजस्थान प्रशासन के कृषि, सहकारिता, बिजली तथा परिवहन आदि अनेक विभागों से सम्बन्धित कई समितियो के भी सदस्य रहे थे। आप राजस्थान के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री श्री हीरालाल शास्त्री के निजी सचिव भी रहे थे।

7 सितम्बर सन् 1979 को किसी अज्ञात व्यक्ति ने आपकी निर्मम हत्या कर दी थी।

श्री नारायणदत्त शास्त्री

श्री शास्त्री का जन्म उत्तर प्रदेश के लखनऊ नगर के रानी कटरा मोहल्ले के पण्डित बलभद्र देव के यहाँ सन् 1866 मे हुआ था। अपने



पिता के निरीक्षण मे आपकी शिक्षा-दीक्षा हुई थी और आपने क्रमश पजाब विश्वविद्यालय की प्राज्ञ, विशारद और शास्त्री परीक्षाएँ अत्यन्त सफलतापूर्वक उत्तीर्ण की थी। आपने 20 वर्ष तक काशी विद्यापीठ मे रहकर वहाँ के प्रख्यात विद्वान् श्री ताँतिया शास्त्री से सस्कृत साहित्य का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। सन् 1886 से सन् 1893 तक आपने लखनऊ के अनेक विद्यालयो मे शिक्षण का कार्य करने के बाद सन् 1894 मे वहाँ के सैंटिनियल स्कूल मे सस्कृत-शिक्षक का कार्य प्रारम्भ किया था और वहाँ सन् 1905 तक कार्य-रत रहे थे। बाद मे मिशनरियो ने आपको अपने क्रिश्चियन कालेज मे बुला लिया था। यद्यपि वह शिक्षा-सस्थान ईसाइयो का था, फिर भी वहाँ आपकी विद्वत्ता के प्रति सभी विनत रहते थे। आपने सन् 1923 मे 58 वर्ष की अवस्था मे वहाँ से अवकाश ग्रहण किया था।

आपने जहाँ अनेक छात्रों को भारतीय संस्कृति का उदार सदेश देकर सर्वथा नई प्रेरणा प्रदान की थी वहाँ समाज मे भी अपने व्यक्तित्व की अद्भुत छाप छोडी थी।

आज आपके अनेक शिष्य-प्रशिष्य हिन्दी-साहित्य के उन्नयन एवं विकास मे सलग्न है। आप संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् होने के साथ-साथ हिन्दी के उच्चकोटि के लेखक भी थे।

आपका निधन पक्षाघात के कारण सन् 1932 मे हुआ था।

श्री नारायणदत्त सिद्धान्तालंकार

आपका जन्म सिन्ध प्रान्त के रोहड़ी नामक स्थान मे अगस्त सन् 1903 मे हुआ था। आपके पिता श्री दयानामल विचारो से पूर्णत. आर्यसमाजी थे और इसी कारण उन्होंने आपको 'गुरुकुल कांगडी' मे प्रविष्ट करके उच्चतम शिक्षा दिलाई थी। गुरुकुल से सन् 1925 में स्नातक होने के पश्चात् आपने प्रारम्भ मे 'दयानन्द उपदेशक विद्यालय लाहौर' मे दर्शनशास्त्र के अध्यापक के रूप मे कार्य किया था और बाद मे आप आयुर्वेद के अध्ययन मे संलग्न हो गए थे। फिर आपने जयपुर और लाहौर आदि कई स्थानों पर रहकर आयुर्वेद का भी विधिवत् अध्ययन किया था।

आयुर्वेद का विधिवत् अध्ययन करने के उपरान्त आप पहले 'बिरला जूट मिल कलकत्ता' मे चिकित्सक नियुक्त हुए थे और फिर आप दिल्ली की 'बिरला क्लाथ मिल' मे आ गए थे। यहाँ पर आपने सन् 1932 से सन् 1963 तक प्रधान चिकित्सक के रूप मे कार्य किया था। मिल की सेवा से निवृत्ति प्राप्त करने के उपरान्त आपने जन-सेवा के क्षेत्र मे भी अति अभिनन्दनीय कार्य किया था।



अपने चिकित्सा एवं जन-सेवा आदि के कार्यों से समय निकालकर आप लेखन में भी पर्याप्त समय दिया करते थे। आपके द्वारा विरचित जिन अनेक ग्रन्थों का हिन्दी-जगत् मे पर्याप्त समादर हुआ था उनमे 'शंकराचार्य—जीवन और दर्शन', 'गुरुनानक—जीवन और दर्शन', 'महर्षि दयानन्द—जीवन और दर्शन', 'वैदिक साम्यवाद', 'ओंकार उपासना', 'जपुजी' (हिन्दी व्याख्या) तथा 'संध्या' (हिन्दी व्याख्या) आदि के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण है।

आप आर्य समाज और कांग्रेस से सम्बन्धित अनेक प्रवृत्तियों तथा आन्दोलनों से सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहा करते थे। आप सन् 1951-1962 की अवधि मे दो बार दिल्ली नगर पालिका के सदस्य भी कांग्रेस की ओर से चुने गए थे। इस काल मे आपने यहाँ की जनता की प्रशंसनीय सेवा की थी।

आपका निधन 10 जनवरी सन् 1980 को हुआ था।

प्रो० नारायणदास नेवन्दराम भटेजा

श्री भटेजा का जन्म पाकिस्तान के सिन्ध प्रदेश के सक्खर नामक नगर मे 5 जुलाई सन् 1905 को हुआ था। संस्कृत साहित्य की उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने शिक्षकीय जीवन को अपना लिया था और अपने जीवन के अन्तिम दौर मे आप बम्बई के 'जयहिन्द कालेज' मे संस्कृत-प्राध्यापक के रूप मे सेवा-निवृत्त हुए थे।

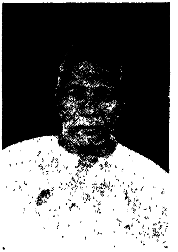
सिन्ध प्रदेश मे आपने सस्कृत तथा हिन्दी के प्रशिक्षण का कार्य करने के साथ-साथ वहाँ की अनेक सस्थाओ से सम्बद्ध रहकर हिन्दी-प्रचार का अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपने हिन्दी और संस्कृत मे कई ग्रन्थो की रचना करने के अतिरिक्त साहित्य अकादेमी नई दिल्ली की ओर से प्रकाशित होने वाले 'भारतीय कविता' नामक काव्य-सकलन मे सिन्धी कविताओ का हिन्दी-अनुवाद भी प्रस्तुत किया था।

आपका निधन सन् 1960 मे बम्बई मे हुआ था।

श्री नारायणदास 'बौरवल'

आपका जन्म सन् 1922 मे राजस्थान के अजमेर नगर में

हुआ था। वैसे आपके पूर्वज बुन्देलखण्ड के निवासी थे। आप कबीर, सूर और जायसी की परम्परा के अनुपालक ऐसे कवि थे जिनकी रचनाओं मे निर्गुण और सगुण भक्ति की भावनाएँ उन्मुक्त रूप से प्रवाहित हुई हैं। शिक्षा के नाम पर आप पाँचवी कक्षा से आगे नही बढ़ सके थे। किन्तु साहित्यिक सत्सग और अपनी निरन्तर साधना से आपने काव्य-रचना करने मे अभूतपूर्व सिद्धि प्राप्त कर ली थी। आपको अपनी कविता के लिए घर से निष्कासन का दण्ड भी सहन करना पडा था। यद्यपि आपके पिता सरकारी सर्विस मे थे, किन्तु आप घर से बाहर ही रहे थे।



जब महात्मा गाधी द्वारा सारे देश मे असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ हुआ था तब आपने भी बढ़-चढकर भाग लिया था और अनेक बार जेल-यात्राएँ की थी। अध्ययन की कमी के कारण आपकी कविताओ मे भाषा की पचमेली खिचडी ही दृष्टिगत होती है। आपकी रचनाओ मे लोक-भाषा का जो आचलिक रूप दृष्टिगत होता है वह आपकी घुमक्कड प्रवृत्ति का ही द्योतक है। आपने जहाँ अनेक देशभक्तिपरक रचनाएँ लिखी थी वहाँ प्राकृतिक सुषमा का वर्णन करने मे भी आप पूर्णत दक्ष थे। आपकी प्रतिभा का परिचय इन पक्तियो मे मिलता है

वहग वसन्त वनि वगर्‌यो वनि-बागनि बीच,
बसन बसन्ती पहन सरसों सरसायो है।
मंजरी मुसकाय प्रणय गधारी गागर ले,
रसकिनि रगरेलिनि हेतु हुलास ढरकायो है।।
भौंरन की झौरन मे छायो भुजग अग,
प्रतिद्वन्द वरुण पासग पान पायो है।
कदली, अनार, आम, 'बौखल' बौराई भोर,
नेवला विभोर भोर ऋतुराज आयो है।।

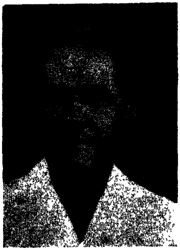
आप अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे उत्तर प्रदेश के प्रख्यात तीर्थ चित्रकूट धाम के कर्वी नगर के काजी मोहल्ले के बोरों के बगीचे मे रहा करते थे। आपका जीवन पूर्णत फक्कड़ तथा मस्ती का जीवन था और इससे पूर्व आपने प्राय. यायावरी वृत्ति अपनाकर देशाटन किया था। इस प्रसंग मे यह उल्लेख्य है कि आप जब पजाब के ग्रामो मे भ्रमण कर रहे थे तब आपने स्वतन्त्रता-सग्राम मे भाग लेना प्रारम्भ किया था और कई बार आप जेल भी गए थे। आपका अधिकांश जीवन वृन्दावन (मथुरा) मे व्यतीत हुआ था और आप प्राय: फक्कड़ अवस्था मे रहा करते थे। आपका काव्य-जीवन जयपुर से प्रारभ हुआ था और आपने कर्वी मे रहकर अनेक ग्रन्थों की रचना की थी। आपके प्रमुख ग्रन्थो मे 'नारायण नैवेद्य' (दो भाग), 'बौखल ग्रन्थ' और 'नारायण अजली' के नाम उल्लेखनीय है। इनमें से 'नारायण नैवेद्य' का प्रथम खण्ड तथा 'बौखल ग्रन्थ' प्रकाशित हो चुका है और 'नारायण अजली' तथा 'नारायण नैवेद्य' का द्वितीय खण्ड अभी अप्रकाशित है। 'नारायण नैवेद्य' मे उनके लगभग 7-8 हजार पद तथा 'नारायण अंजलि' मे 10 हजार से अधिक दोहे सकलित हैं। इनके अतिरिक्त आपकी 'श्रीराम चरितावली' और 'श्रीराम रहस्य चरितावली' नामक कृतियाँ भी अप्रकाशित है।

आपका निधन सन् 1962 मे हुआ था।

डॉ० नारायण दुलीचन्द व्यास

श्री व्यास का जन्म मध्य प्रदेश के रतलाम नामक नगर के एक गुजराती ब्राह्मण परिवार मे 16 अगस्त सन् 1896 को हुआ था। विज्ञान की उच्चतम शिक्षा प्राप्त करके आपने अपने ही अध्यवसाय से हिन्दी-लेखन का कार्य प्रारम्भ किया था और रसायन शास्त्र के अध्यापक के रूप मे आपने बहुत प्रतिष्ठा अर्जित की थी। आप अनेक वर्ष तक केन्द्रीय सरकार के 'पूसा इन्स्टीट्यूट' मे अध्यापक निरत रहे थे। आप केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय की 'पारिभाषिक शब्दावली समिति' के सम्मानित सदस्य भी रहे थे। 'कृषि-सम्बन्धी शब्दावली' के निर्माण मे भी आपका प्रमुख योगदान रहा था।

अपने अध्यापन के दिनो मे आपने अपनी स्वाध्याय की प्रवृत्ति बराबर बनाए रखी थी और अपनी लेखनी के द्वारा भी आपने 'हिन्दी साहित्य' को अनेक उल्लेखनीय ग्रन्थ प्रदान किए थे। आपके ऐसे ग्रन्थो मे 'साग-भाजी की खेती' (1933), 'फलों की खेती और व्यवसाय' (1935), 'खेती की रीति' (1954), 'अन्नो की खेती' (1956), 'दलहन की खेती' (1956), 'तिलहन की खेती' (1957), 'रोक फसलो की खेती' (1957), 'कृषि विज्ञान कोश' (1961) तथा 'कृषि दीपिका' (1967) आदि के नाम विशेष महत्त्व रखते है। इनमे से अधिकाश रचनाओ पर आपको पुरस्कृत भी किया गया था।



आपका निधन 9 जुलाई सन् 1971 को हुआ था।

पण्डित नारायणपति त्रिपाठी

आपका जन्म सन् 1873 मे काशी के एक प्रतिष्ठित एव सस्कारी ब्राह्मण-परिवार मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा पूर्णत सस्कृत मे ही हुई थी और आप सस्कृत की 'साहित्य-शास्त्री' की परीक्षा की तैयारी कर रहे थे कि बीच मे पढाई छोडकर जमीदारी के पारिवारिक कार्य की देख-भाल करने लगे थे। आप इतने विद्या-व्यसनी थे कि आपने सस्कृत के प्राय सभी प्रमुख ग्रन्थों का पारायण कर लिया था। आप संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् महामहोपाध्याय पण्डित शिवकुमार शास्त्री के 'जामाता' थे और उस समय के अनेक सस्कृत तथा हिन्दी-विद्वानो से आपकी घनिष्ठ मैत्री थी। हिन्दी के जिन विद्वान् साहित्यकारों से आपकी घनिष्ठ मैत्री थी उनमे सर्वश्री देवकीनन्दन खत्री, किशोरीलाल गोस्वामी, अम्बिकादत्त व्यास, सुधाकर द्विवेदी और महामहोपाध्याय पण्डित अयोध्यानाथ शर्मा के नाम प्रमुख हैं।

आपकी प्रखर विद्वत्ता का सबसे ज्वलन्त प्रमाण यह है कि आप प्राय हिन्दी-सस्कृत-काव्य-पुराण-साहित्य की चर्चा में निमग्न रहते थे। आपका सारा ज्ञान स्वार्जित था। आप जहाँ सस्कृत वाङ्मय के प्रकाण्ड विद्वान् थे वहाँ तुलसी, बिहारी, देव तथा केशव आदि हिन्दी के अनेक प्रमुख रचनाकारों की कविता के अनन्य प्रेमी थे। आप प्राय. जगन्नाथदास 'रत्नाकर' से हिन्दी कविता की चर्चा उन्मुक्त भाव से किया करते थे।

आपने स्कन्दपुराणान्तर्गत 'काशी खण्ड' का हिन्दी मे 'अविकल श्लोकानुसारी अनुवाद' प्रस्तुत किया था, जिसमे आपने यथासम्भव हिन्दी के सरल शब्दो का प्रयोग करने की ओर विशेष ध्यान देकर उर्दू शब्दो के प्रयोग से बचने का पूर्ण प्रयास किया था। आपकी यह पुस्तक बम्बई के 'वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस' की ओर से प्रकाशित हुई थी और इसकी रचना के समय आपने लगभग 10-12 वर्ष तक काशी की गली-गली मे घूमकर वहाँ के मदिरो की पहचान करने का दुस्साध्य कार्य भी सम्पन्न किया था। आप जहाँ सस्कृत मे काव्य-रचना करने मे परम प्रवीण थे वहाँ हिन्दी मे भी आपने सस्कृत के पचासो स्तोत्रो का अनुवाद कवित्त तथा सवैया छन्दो मे किया था।



शकराचार्य के पाँच स्तोत्रो का आपके द्वारा किया गया हिन्दी पद्यानुवाद मूल सहित 'भारत जीवन प्रेस वाराणसी' से प्रकाशित हुआ था। आपने पुष्पदन्त के 'शिवमहिम्न स्तोत्र' की एक पंचमुखी टीका भी लिखी थी, जिसका प्रकाशन 'चौखम्भा सस्कृत सीरिज' के अन्तर्गत हुआ है। इस ग्रन्थ मे

हिन्दी गद्यानुवाद, संस्कृत व्याख्या, संस्कृत पद्यानुवाद, हिन्दी में शिखरिणी छन्द में किया गया बिम्बानुवाद एक साथ प्रस्तुत है।

जिन दिनों द्वितीय महायुद्ध के समय बंगाल मे भयकर अकाल पडा था तब आपने संस्कृत एवं हिन्दी मे अनेक छन्द तथा कविताएँ लिखी थी। संस्कृत मे लिखी गई आपकी ऐसी रचनाएँ उस समय सस्कृत के 'सुप्रभातम्' नामक पत्र मे प्रकाशित हुई थी। आपने जहाँ सस्कृत मे लगभग 3-4 हजार पद्यों की रचना की थी वहाँ हिन्दी मे भी आप कुछ-न-कुछ लिखते रहा करते थे। आपने हिन्दी में एक बगला उपन्यास का अनुवाद 'वसन्त मालती' नाम से किया था, जो 'भारत जीवन प्रेस' ने प्रकाशित किया था।

आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री कमलापति त्रिपाठी जहाँ हिन्दी के उच्चकोटि के पत्रकार और लेखक रहे है वहाँ भारतीय राजनीति मे भी उनका सर्वथा विशिष्ट स्थान है। 'आज' तथा 'संसार' के जागरूक सम्पादक के रूप मे उन्होने जहाँ हिन्दी-पत्रकारिता का मानदण्ड ऊँचा किया है वहाँ वे उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री भी रह चुके है। केन्द्रीय मन्त्रि-मण्डल मे भी उन्होने विविध रूपो म अभिनन्दनीय सेवा की है। आपके दूसरे पुत्र श्री करुणापति त्रिपाठी भी हिन्दी तथा सम्कृत के सुलेखक और शिक्षा-शास्त्री है। वे कई वर्ष तक काशी विश्वविद्यालय मे शिक्षण करने के अतिरिक्त 'सम्पूर्णानन्द सस्कृत विश्वविद्यालय' वाराणसी के कुलपति भी रह चुके है।

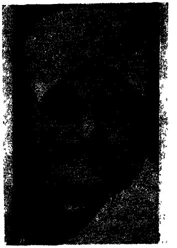
आपका निधन सन् 1946 मे हुआ था।

श्री नारायणप्रसाद 'बेताब'

श्री 'बेताब' जी का जन्म उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर जनपद के औरंगाबाद कस्बे मे 17 नवम्बर सन् 1872 को हुआ था। आपके पिता श्री ढुल्लाराम मिर्जा गालिब के शिष्य और अच्छे शायर थे। आप जब केवल ढाई वर्ष के ही थे कि आपकी माता की मृत्यु हो गई थी। आपका पालन-पोषण आपके दादा-दादी की छत्रछाया मे हुआ था। आपके पिता हलवाई का काम करते थे और पढ़ाई-लिखाई के प्रति उनका कोई रुझान नही था। क्योंकि बेताब जी पढना चाहते थे और आपके पिता की यह इच्छा थी कि आप दुकान पर बैठकर उनके काम मे सहयोग करे, फलत आप केवल 14 वर्ष की आयु मे घर से निकल गए और दिल्ली आकर यहाँ के 'कैसरे हिन्द' प्रेस मे नौकर हो गए। जिन दिनों आप अपनी जन्मभूमि मे थे तब आपने पिता के लाख विरोध के बावजूद औरगाबाद के हकीम मोहम्मद खाँ तालिब से उस समय की परिपाटी के अनुसार उर्दू पढना सीखकर प० श्लेषचन्द्र वैद्य से' पिंगल शास्त्र' का कुछ ज्ञान प्राप्त कर लिया था। उन्हीं दिनो आप 'झूलने' और 'कव्वालियाँ' आदि भी लिखकर इधर-उधर दगलों मे सुनाने लगे थे।

दिल्ली के प्रेस मे आपको उन दिनो केवल 5 रुपए मासिक वेतन मिलता था। जिन दिनो आप 'कैसरे हिन्द' प्रेस मे काम करते थे तब वहाँ पर एक 'नाटक-कम्पनी' आई थी। इस कम्पनी मे होने वाले नाटकों को देखने के लिए आप भी प्राय जाया करते थे। एक दिन जब उस कम्पनी को अपने नाटक कार बाबू घनपतराय 'बेकस' की अनुपस्थिति मे एक गाने की जरूरत हुई तब प्रेस मे ही कार्य करने वाले आपके एक दूरके रिश्ते के भाई श्री बालमुकुन्द से कम्पनी के मैनेजर ने कहा—"हमे एक शायर की आवश्यकता है, जो हमारा एक गाना बना दे।" इस पर उन्होने मैनेजर से कहा—"मेरा एक छोटा भाई (बेताब) है, जो प्राय प्रतिदिन आधी रात तक सितार पर 'तानारीरी' करता रहता है, वह अक्सर मुशायरो मे 'गजले' भी पढता है। मैं उसे भेजे देता हूँ।" इस प्रकार अपने भाई बालमुकुन्द की सिफारिश पर आपके भीतर बैठे हुऐ 'नाटककार' को जमादार की कम्पनी मे जाने का शुभ अवसर मिल गया और आपने अपने भाई के आदेश का पालन करते हुए वहाँ जाकर गाना लिख दिया। प्रेस मे कार्य करते हुए सस्कृत के एक विद्वान् पण्डित शम्भूनाथ से आपका सम्पर्क हो गया। वे भी आपके साथ ही काम किया करते थे। उनकी कृपा से आपने हिन्दी का अच्छा ज्ञान बढा लिया और एक दिन ऐसा भी आया जब आपने नाटक लिखना प्रारम्भ कर दिया। आपके उन दिनो लिखे गए नाटको मे 'हुस्ने फरंग' और 'कत्ले नजीर' के नाम प्रमुख है। आपके 'हुस्ने फरग' नाटक पर आगा हश्र कश्मीरी ने बहुत अच्छी सम्मति लिखी थी। लिखने के क्रम मे यह आपका पहला नाटक था और रंगमंच पर आने के क्रम मे दूसरा।

जब आप प्रेस में काम कर रहे थे तब वहाँ पर आपको 5 रुपए मासिक मिलते थे। 4-5 रुपये आप इधर-उधर करके और कमा लेते थे। इस प्रकार 10 रुपए में आपका अच्छा काम चल रहा था। इस बीच एक दिन अचानक जो नाटक-कम्पनी दिल्ली आई थी उसके मालिक श्री जमादार साहब का लुधियाना से आपको इस आशय का पत्र मिला कि "तुम कम्पनी मे नौकरी कर सको तो हम लेने को तैयार है।" इस पर आपने उन्हे लिख दिया कि "यदि मुझे लाला जी (प्रेम के मालिक) आज्ञा देगें तो मैं आ सकूंगा। आप सीधे लाला जी के नाम पत्र लिखिये!" परिणाम स्वरूप लाला जी के नाम जमादार साहब का पत्र आ गया कि "आपके प्रेस मे जो नारायण-प्रसाद नाम का कम्पोजीटर है, उसे हमे दे दीजिये।" इस पर लाला जी ने आपको बुलाकर समझाया—"प्रेस मे बहुत ही तरक्की होगी तो बरसो बाद 15 रुपए मासिक होगे। कम्पनी मे तो हम अभी 20-25 रुपए माहवार मुकर्रर करा देंगे।" फलस्वरूप आपने कम्पनी के मालिक श्री जमादार को लिख दिया—"30 रुपए माहवार तनख्वाह दो तो लडके को भेज सकते है।" कम्पनी के मैनेजर ने लाला जी का वह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और इस प्रकार बेताब जी का प्रवेश नाटक के क्षेत्र मे हो गया।



आपने अपने जीवन मे जितने भी नाटक लिखे वे प्राय सभी पौराणिक पृष्ठभूमि पर आधारित है और उन सभी की रचना रगमच को दृष्टि मे रखकर की गई थी। आपने नाटक के क्षेत्र मे जो लोकप्रियता प्राप्त की उसका सबसे बड़ा कारण यह है कि आपकी भाषा, भाव तथा कथानक आदि सब ऐसे होते थे जिन्हे जन-साधारण सरलता से ग्रहण कर लेता था। आपने 45 वर्ष के साहित्यिक जीवन के बीच 26 नाटक, 31 फिल्म-कथाएँ और विविध विषयों की 36 पुस्तकें लिखी थी। आपने जहाँ अनेक वर्ष तक 'अल्फ्रेड थियेट्रिकल कम्पनी' मे नाटक-लेखक के रूप मे कार्य किया था वहाँ सिनेमा के क्षेत्र में भी आपकी देन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। 'अल्फ्रेड' कम्पनी के द्वारा खेले गए आपके नाटकों में 'महाभारत', 'रामायण', 'जहरी साँप', 'गणेश-जन्म' तथा 'सीता वनवास' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। आपने सन् 1912 तक एक ही शैली मे गानों के साथ 15 नाटक लिखे थे, जिनमे 'फरेबे नजर' अत्यन्त लोकप्रिय हुआ था। सन् 1912 के पश्चात् आपने पौराणिक नाटक लिखने प्रारम्भ किए थे। आपका 'महाभारत' नामक नाटक सर्व-प्रथम जब दिल्ली के 'सगम थियेटर' मे 29 जनवरी सन् 1913 को खेला गया था तो उसकी बड़ी धूम रही थी। इसके उपरान्त आपने कुछ सामाजिक तथा राष्ट्रीय नाटकों की रचना भी की थी। आपके प्राय. प्रत्येक नाटक में ऐसे गानो की भरमार रहा करती थी, जिन्हे सुनकर दर्शक मन्त्रमुग्ध हो जाते थे। अपने हिन्दी-प्रेम की अभिव्यक्ति के लिए आपने अपने सभी नाटकों को ऐसे रूप मे प्रस्तुत किया था, जिससे जनता उन्हे सहज ही ग्रहण कर लेती थी। अपनी भाषा-सम्बन्धी नीति की घोषणा आपने अपने 'महाभारत' नाटक के मचन के समय इस प्रकार की थी.

न ठेठ हिन्दी, न खालिस उर्दू,
जबान गोया मिली-जुली हो।
अलग रहे दूध मे न मिसरी,
डली - डली दूध मे घुली हो॥

भाषा-सम्बन्धी अपने इसी व्यापक और उदार दृष्टि-कोण को सामने रखकर आपने अपने नाटको के माध्यम से हिन्दी को लोकप्रिय बनाने की महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। वास्तव मे 'हिन्दी रगमच' को आपकी यह सबसे बडी देन है। कालान्तर मे श्री पृथ्वीराज कपूर जैसे अनेक लेखको और अभिनेताओं ने आपसे प्रेरणा पाकर भाषा के क्षेत्र मे अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया था। आपने 'पृथ्वी थियेटर' के लिए 'शकुन्तला' नामक जो नाटक लिखा था वह भी इस दृष्टि से अभूतपूर्व था। आपने यथाप्रसंग अपने नाटको मे भाषा का सरल, सहज समन्वित रूप प्रस्तुत करने के साथ-साथ अनेक जगह वेद-मन्त्रों, ब्रजभाषा, अँग्रेजी और फारसी आदि के प्रयोग द्वारा भाषा का सही निखरा हुआ रूप

हमारे सामने प्रस्तुत किया था। जब 15 जनवरी सन् 1944 को 'पृथ्वी थियेटर्स' का जन्म हुआ था तब आपने ही इस संस्था का नामकरण किया था और मुहूर्त भी आपके करकमलों द्वारा सम्पन्न हुआ था। इसी दृष्टि से पृथ्वीराज ने आपसे 'शकुन्तला' नाटक लिखवाया था।

भारतीय चलचित्रों की पट-कथा के लेखन के क्षेत्र में भी बेताब जी की देन सर्वथा अप्रतिम और महत्त्वपूर्ण रही थी। आपका प्रथम पौराणिक चित्र 'देवी और देवयानी' सन् 1931 में रजतपट पर आया था। इस चित्र में मिस गौहर ने 'देवयानी' की और मास्टर भगवानदास ने 'कच' की भूमिकाएँ अदा की थीं। इस फिल्म के उपरान्त आपने 'राधारानी', 'सती सावित्री' तथा 'शैल बाला' आदि कई फिल्मों के संवाद और गाने लिखे थे। दिल्ली के मुस्लिम समाज ने इस्लाम और कुरान को लेकर आपकी 'सितमगर' नामक फिल्म का बहुत विरोध किया था। आपकी फिल्म 'राधा रानी' भी उन दिनों बहुत लोकप्रिय हुई थी। सन् 1936 के आस-पास आपकी एक फिल्म 'तूफानी तरुणी' का जो गाना बहुत लोकप्रिय हुआ था उसकी प्रारम्भिक पक्तियाँ इस प्रकार है :

महा मन्त्र है यह जपा कर, जपा कर,
हरि ओम् तत्सत्, हरि ओम् तत्सत्
कि जब साँस आए ध्वनी हो बराबर-
हरि ओम् तत्सत, हरि ओम् तत्सत्

आपके द्वारा लिखी गई अन्य फिल्म-कहानियो मे 'भक्त अम्बरीष', 'शाह बहराम', 'तारा सुन्दरी', 'देवदासी', 'बैरिस्टर की पत्नी', 'नादिरा', 'मेरे वतन', 'मिस 1933' तथा 'तूफानी तरुणी' आदि के नाम भी महत्त्वपूर्ण कहे जा सकते है।

आपने जहाँ नाटको के मचन और फिल्म-कथा-लेखन मे उल्लेखनीय कार्य किया था वहाँ हिन्दी-साहित्य की अभिवृद्धि की दिशा मे भी आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान था। आपने जहाँ 'प्रास पुज', 'पद्य परीक्षा' और 'पिगल सार' जैसी पुस्तकों की रचना करके हिन्दी के काव्य-प्रेमियो को उचित दिशा-निर्देश किया था वहाँ आपके द्वारा लिखित 'नारायण शतक', 'हिन्दी सुभाषित' तथा 'शख की शरारत' आदि कई पुस्तकें भी विशेष उल्लेख्य है। कदाचित् यह बात भी हमारे बहुत कम पाठकों को ज्ञात होगी कि आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संगों मे गाये जाने वाले .

अजब हैरान हूँ भगवन्, तुम्हें क्योंकर रिझाऊँ मैं
नहीं वस्तु कोई ऐसी, जिसे सेवा मे लाऊँ मै।

भजन के रचनाकार भी श्री बेताबजी ही थे। आपने 'महर्षि दयानन्द दिग्दर्शन' नामक एक और पुस्तक की रचना भी की थी। उसमें आपकी उर्दू-मिश्रित भाषा का रूप भी देखने को मिल जाता है। अपनी उस कृति में 'मृतक श्राद्ध' के विरुद्ध आपने जो विचार कविता के माध्यम से प्रकट किये हैं वे भी अद्भुत है। बानगी देखिये :

यहाँ तक थे हम होशियारे जमाना,
कि भिजवाते रहते थे मुर्दो को खाना।
बडे पेट थे या बड़ा डाकखाना,
किये पारमल उनसे अकसर रवाना।
जरा देखिये डाकियों का कलेजा,
जमीं का पुलन्दा फलक पर भी भेजा।
रसीद आज तक किसी की भी न आई,
वह शय पाने वालों ने पाई न पाई।
बहुत खो चुके जब अपनी कमाई,
ऋषि ने बताया है कि है ये ठगाई।
गया पार्सल यह तसल्ली है झूठी,
लुटेरों ने वह डाक रस्ते मे लूटी।

जब मिश्रबन्धुओ ने अपने 'हिन्दी नवरत्न' नामक ग्रन्थ मे 'ब्रह्म भट्ट' जाति के सम्बन्ध मे कुछ लाछन लगाये थे तब आपने अपनी 'मिश्रबन्धु प्रलाप' नामक कृति मे उन लाछनो का युक्तियुक्त खडन करके उन्हे मुँहतोड उत्तर दिया था। आपके द्वारा लिखित 'बेताब चरित' नामक आत्मकथात्मक कृति से आपके प्रारम्भिक जीवन-सघर्ष का सही चित्र आँखो के सामने झूमने लगता है। आपने हिन्दी-रगमच और सिने-जगत् की अत्यन्त अभिनन्दनीय सेवा की थी।

आपका निधन 73 वर्ष की आयु मे अपने बम्बई के निवास-स्थान मे 15 सितम्बर सन् 1945 को हुआ था।

श्री नारायण शास्त्री रिवस्ते

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के प्रख्यात तीर्थ काशी के एक

अत्यन्त सस्कारी महाराष्ट्रीय ब्राह्मण परिवार में सन् 1885 मे हुआ था। अपनी शिक्षा सम्पूर्ण करने के उपरान्त आपने सर्वप्रथम काशी के सस्कृत विश्व विद्यालय मे 'पुस्तकाध्यक्ष' के रूप मे कार्य प्रारम्भ किया था और बाद मे आप वहाँ प्रोफेसर भी हो गए थे। आप तन्त्र-शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित और बडे विद्याव्यसनी महानुभाव थे। आपकी सस्कृत-वाङ्मय - सम्बन्धी योग्यता से प्रभावित होकर ब्रिटिश सरकार ने आपको 'महामहोपाध्याय' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी।



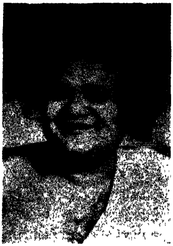
आपके भारतीय सस्कृति तथा साहित्य से सम्बन्धित अनेक महत्त्वपूर्ण लेख हिन्दी की सभी प्रमुख पत्रिकाओं मे प्रकाशित होते रहते थे। आपकी प्रकाशित रचनाओ मे 'अभिज्ञान शाकुन्तल' और 'सस्कृत सोपान' के अतिरिक्त 'अलकार सार मजरी' का नाम विशेष महत्त्व रखता है।

आपका निधन 13 अप्रैल सन् 1961 को हुआ था।

श्री नारायण स्वामी

आपका जन्म 23 फरवरी सन् 1909 को उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर नामक नगर मे हुआ था। आपके पिता पण्डित भीमसेन वेदपाठी काशी के अत्यन्त प्रख्यात विद्वानो मे थे। आपकी शिक्षा यद्यपि अधिक नही हुई थी, किन्तु आपने अपने अनुभव और अध्यवसाय से अपने ज्ञान को बढ़ाया था। सन् 1922 मे जब आप पढा करते थे तब अध्यापक के बुरी तरह डाँटने-फटकारने पर आप घर से भागकर सुजानगढ (राजस्थान) चले गए थे।

आप सन् 1936 में पूर्णत: विरक्त जीवन अपनाकर 'नारायण स्वामी' हो गए थे। आपका जन्म-नाम हनुमद्दत्त था। अपने इस विरक्त जीवन मे अपने स्वाध्याय को बढ़ाकर संस्कृत के दर्शन, ज्योतिष तथा तन्त्र आदि अगो का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आप संस्कृत के अतिरिक्त हिन्दी, बगला, उर्दू जर्मन और अग्रेजी भाषाओ के भी अच्छे जानकार थे। आप हिन्दी तथा सस्कृत के अच्छे लेखक भी थे। आपने जहाँ सस्कृत के 'बोधसार' तथा 'पचदशी' आदि कई ग्रन्थो की टीकाएँ हिन्दी मे लिखी थी वहाँ सस्कृतनिष्ठ हिन्दी मे आपने 'शिवोऽहम्' नामक एक काव्य भी लिखा था। आप हिन्दी के प्रख्यात लेखक आचार्य सीताराम चतुर्वेदी के छोटे भाई थे।



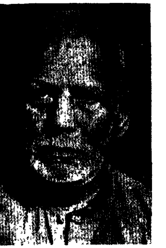
आपका निधन 28 मार्च सन् 1973 को हुआ था।

महात्मा नारायण स्वामी

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जनपद के सिकन्दराराऊ नामक कस्बे मे सन् 1865 मे हुआ था। आपका जन्म-नाम नारायणप्रसाद था और सन्यासावस्था मे पहुँचने मे पूर्व आप मुन्शी नारायणप्रसाद के नाम से जाने जाते थे। आपके पिता श्री सूर्यप्रसाद का देहान्त आपकी बाल्यावस्था मे ही हो गया था। पहले आपकी शिक्षा तत्कालीन प्रथा के अनुसार अरबी और फारसी के 'मकतब' मे हुई थी और बाद मे आपने अँग्रेजी के साथ हिन्दी का ज्ञान प्राप्त किया था। जिन दिनों आप हाथरस मे पढ़ा करते थे तब आपने आर्यसमाज के प्रवर्त्तक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का नाम सुना था।

उन दिनों वे वहाँ पर आए थे। अपनी शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आपने जब मुरादाबाद की कचहरी में नौकरी प्रारम्भ की थी तब वहाँ के एक निष्ठावान आर्यसमाजी कार्यकर्ता पण्डित हरसहाय के सम्पर्क से आप आर्यसमाज की ओर झुके थे और उन्हींके द्वारा आपको 'सत्यार्थ प्रकाश' भी पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। 'सत्यार्थ प्रकाश' के पारायण से आप आर्यसमाज और उसके संस्थापक महर्षि दयानन्द के प्रति अत्यधिक अनुरक्त हो गए थे।

मुरादाबाद में रहते हुए आपने जहाँ आर्यसमाज की अनेक सुधारवादी प्रवृत्तियों में बढ़-चढ़कर भाग लिया था वहाँ आपने आर्यसमाज के 'उपमन्त्री' के रूप में भी वहाँ की जनता की उल्लेखनीय सेवा की थी। आर्यसमाज के कार्य को करते हुए आपने स्वाध्याय के बल पर अपना हिन्दी तथा संस्कृत का ज्ञान भी धीरे-धीरे बहुत बढ़ा लिया था। अपनी अद्भुत संगठन-क्षमता और कार्य-तत्परता के कारण आप धीरे-धीरे उत्तर प्रदेश की 'आर्य प्रतिनिधि सभा' की अन्तरंग सभा के सदस्य भी हो गए थे। मुरादाबाद



में रहते हुए जहाँ आपने 'शुद्धि आन्दोलन' के कार्य का संचालन किया था वहाँ प्रतिनिधि सभा के द्वारा गुरुकुल खोलने का निर्णय किये जाने पर आपने उसके लिए स्थान-स्थान पर घूमकर 13 हजार रुपये भी एकत्र किये थे। जब वृन्दावन में राजा महेन्द्रप्रताप ने गुरुकुल की स्थापना करने के लिए जमीन दी तो आपके प्रयास से ही वहाँ गुरुकुल की स्थापना की गई थी। जब प्रतिनिधि सभा ने सर्व सम्मति से आपसे गुरुकुल का कार्य-भार सँभालने का अनुरोध किया तो आप अच्छी-खासी जमी हुई नौकरी को तिलांजलि देकर वृन्दावन चले गए। आपने सन् 1892 से सन् 1912 तक वह नौकरी की थी और कलक्टर उन्हें 'तहसीलदार' बनाना चाहता था, किन्तु आर्यसमाज के कार्य के सामने आपने उस पद को ठुकरा दिया था।

गुरुकुल वृन्दावन के 'मुख्याधिष्ठाता' का कार्य सँभालने के बाद आपने दिन-रात एक करके जहाँ उसकी सर्वाङ्गीण उन्नति में अभिनन्दनीय सहयोग दिया था वहाँ आप अपने स्वाध्याय को बढ़ाकर लेखन-कार्य में भी प्रवृत्त हो गए थे। उन्हीं दिनों आपने सन् 1920 में 'वानप्रस्थ' आश्रम की दीक्षा ले ली थी और 'मुन्शी नारायणप्रसाद' से 'महात्मा नारायणप्रसाद' कहलाने लगे थे। इसके बाद आप रामगढ़ (नैनीताल) में नारायण आश्रम बनाकर वहाँ रहने लगे थे। आजकल वहाँ पर आपकी स्मृति में 'नारायण स्वामी हाई-स्कूल' चल रहा है। इसके अनन्तर आपने सन् 1922 में आर्यसमाज के प्रख्यात सन्यासी स्वामी सर्वदानन्द से 'सन्यास आश्रम' की दीक्षा ले ली और आप 'महात्मा नारायण स्वामी' कहलाने लगे। सन् 1925 में मथुरा में जो 'दयानन्द दीक्षा अर्धशताब्दी समारोह' मनाया गया था उसके अध्यक्ष भी आप रहे थे। आप 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' लगभग 14 वर्ष तक अध्यक्ष रहे थे। आपके सतर्क निर्देशन में जहाँ 'दयानन्द जन्मशताब्दी' और 'दयानन्द निर्वाण अर्धशताब्दी' जैसे समारोह अत्यन्त भव्यता से सम्पन्न हुए थे वहाँ ज्वालापुर (हरिद्वार) में स्थापित 'आर्य वानप्रस्थ आश्रम' की स्थापना में भी आपका प्रमुख योगदान रहा था। 'सार्वदेशिक सन्यासी वानप्रस्थ मण्डल ज्वालापुर' का निर्माण करके उसके द्वारा भी आपने अनेक उपयोगी कार्य किये थे। जिन दिनों हैदराबाद के निजाम के विरुद्ध सन् 1939 में देश-भर के आर्यों ने जोरदार सत्याग्रह किया था तब आप ही उसके 'प्रथम डिक्टेटर' बनाए गए थे। सन् 1944 में जब सिन्ध सरकार ने 'सत्यार्थ प्रकाश' पर प्रतिबन्ध लगा दिया था तब आपने ही आन्दोलन चलाकर उसे निरस्त कराया था।

अपनी इन सब सामाजिक व्यस्तताओं में भी आप समय निकालकर कुछ-न-कुछ लिखते रहते थे। आपने ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक और श्वेताश्वतर आदि 11 उपनिषदों की हिन्दी में टीका लिखने के अतिरिक्त 'वेद रहस्य', 'योग रहस्य', 'विद्यार्थी जीवन-रहस्य', 'गृहस्थ जीवन रहस्य' 'आत्म दर्शन', 'ब्रह्म विज्ञान', 'अमृत वर्षा', 'आर्यसमाज क्या है', 'कथा माला', 'कर्तव्य दर्पण', 'धर्म रहस्य', 'नारायण

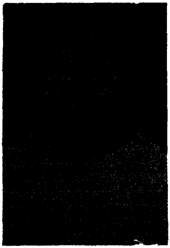
उपदेश', 'वैदिक यज्ञ रहस्य', 'वैदिक सन्ध्या रहस्य', 'वैदिक सिद्धान्त', 'नवीन और प्राचीन समाजवाद', 'मृत्यु और परलोक' तथा 'प्राणायाम विधि' आदि कई पुस्तकों की रचना की थी। आपके द्वारा लिखित 'आत्म-कथा' भी विशेष महत्त्व रखती है। आप उच्चकोटि के वक्ता के रूप में भी विख्यात थे। आर्यसमाज के क्षेत्र मे की गई आपकी अनेकविध सेवाओं के प्रति कृतज्ञता अर्पित करने के सदुद्देश्य से आपको एक 'अभिनन्दन ग्रन्थ' भी भेंट किया गया था। इस अभिनन्दन ग्रन्थ का सम्पादन श्री विश्वम्भर सहाय 'प्रेमी' ने किया था। आपकी स्मृति को स्थायित्व देने की दृष्टि मे 'आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश' ने अपने लखनऊ मे निर्मित केन्द्रीय कार्यालय का नाम भी 'नारायण स्वामी भवन' रख दिया है।

आपका निधन 15 अक्तूबर सन् 1947 को बरेली मे हुआ था।

स्वामी नारायणानन्द सरस्वती 'अख्तर'

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के पीलीभीत नगर मे सन् 1877 मे हुआ था। आपका पूर्व नाम लक्ष्मीनारायण तिवारी था और आपके पिता श्रीकृष्ण तिवारी किराने की दूकान किया करते थे। बाल्यावस्था मे आप भी दूकान पर बैठा करते थे। दूकान पर कार्य करते हुए आपने अपने स्वाध्याय के बल पर ही हिन्दी, सस्कृत, उर्दू और फारसी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आपको बचपन से ही ख्याल गाने का शौक था और आपके आस-पास जहाँ कही भी 'ख्यालबाजी' के अखाडे जमते थे आप वहाँ अवश्य ही जाते थे। धीरे-धीरे लावनी और ख्याल के प्रति आपको इतना अधिक अनुराग हो गया कि आप स्वय भी चग बजाने वाली उन मण्डलियो मे शामिल होकर गाने लगे। बाद मे आपका यह लावनी-प्रेम इतना अधिक पुष्ट हो गया कि 15-16 वर्ष की आयु मे ही आप कविता भी लिखने लगे थे।

इस बीच आपको घर से विरक्ति हो गई और आप सन् 1902 मे 'सरस्वती सम्प्रदाय' में दीक्षित होकर 'स्वामी नारायणानन्द सरस्वती' हो गए। जब आप ख्याल और लावनियाँ लिखने लगे तो आपने अपना उपनाम 'अख्तर' रख लिया। आपके कलगी, तुर्रा, लावनी और ख्याल के गुरु



बरेली के उस्ताद गोपीनाथ और खतौली (मुजफ्फरनगर) के उस्ताद नत्थासिह तालिब थे। धीरे-धीरे आप अपने कलगी, तुर्रा, ख्याल और लावनी के गायकों के अखाडे लेकर देश के विभिन्न स्थानो में जाने लगे और आपकी ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। इस सम्बन्ध मे आपकी इन पक्तियों से अच्छा प्रकाश पडता है—"मुझे थोडी ही उम्र से ख्याल गाने का शौक हो गया था। भगवद्-कृपा से मैं ख्याल लिखने लगा। मैंने पण्डित गोपीनाथ बरेली वालों को अपना गुरु बनाया और उनकी कृपा से मैंने इस विषय का काफी ज्ञान प्राप्त किया। मुद्दत-भर मैंने चंग बजाकर लावनी गाई। इधर 32 साल से गाना छोड दिया। पहले मैं लावनी का शौक पूरा करने के लिए कानपुर आया था। वह शायद 1911 की बात होगी।"

स्वामी जी हिन्दी मे कदाचित् ऐसे पहले कवि थे जिन्होंने लावनियो और ख्यालों मे सर्वप्रथम हिन्दी का प्रयोग किया था। आपकी लावनियों का सकलन सन् 1922 मे 'लावण्य लता' नाम से प्रकाशित हुआ था। इस पुस्तक की भूमिका सुकवि श्री गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' ने लिखी थी। इस भूमिका मे उन्होंने अख्तर जी की काव्य-कला का चित्रण करते हुए यह सही ही लिखा है—" 'लावण्य लता' के लेखक तुर्रा पक्ष के समर्थक हैं। आपने अपनी प्रतिभा का सदुपयोग करके ऐसे ख्यालों की रचना की है, जो प्रीति, धर्म, ज्ञान, वैराग्य और भक्ति-सम्बन्धी विविध विषयो से पूर्ण है। इसके अतिरिक्त इस पुस्तक मे शब्दालकार और अन्य सनअतें, जो ख्यालों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते है, प्रस्तुत है। आपकी वर्णन-शैली बड़ी मनोहारिणी और चित्ताकर्षक है।" आपने

'लावनी का इतिहास' नामक एक 352 पृष्ठ का ग्रन्थ भी लिखा था। इस ग्रन्थ में आपने लावनी के साहित्यिक महत्त्व के सम्बन्ध में अत्यन्त सरस और प्रांजल शैली मे अपने अत्यन्त उपयोगी विचार प्रतिपादित किए हैं। इसके अतिरिक्त सन् 1921 में आपकी 'संजीवनी' नामक एक पुस्तक का प्रकाशन हुआ था, जिसमे आपकी विभिन्न राष्ट्रीय कविताओं के साथ श्री 'सनेही' जी की भी रचनाएँ समाविष्ट हैं।

कानपुर मे कवि-सम्मेलनो की परम्परा के प्रवर्तक के रूप मे भी 'अख्तर' जी का नाम सर्वथा अग्रगण्य स्थान रखता है। जिन दिनो आपने सन् 1923 मे कानपुर मे सर्वप्रथम एक 'अखिल भारतीय कवि सम्मेलन' का आयोजन किया था तब आप कानपुर के 'लाठी मोहाल' मोहल्ले की 'लक्ष्मणदास धर्मशाला' मे रहा करते थे। सन् 1924 मे आपने 'कवीन्द्र' नामक एक कविता-सम्बन्धी मासिक पत्र का सम्पादन-प्रकाशन किया था। हिन्दी के प्रमुख कवि और 'सनेही' जी के पट्ट शिष्य श्री अनूप शर्मा 'कवीन्द्र' मे सहकारी सम्पादक के रूप मे कार्य करते थे। इस पत्र मे कविताओं के अतिरिक्त साहित्य-सम्बन्धी लेख तथा समीक्षाएँ भी छपा करती थी। सन् 1934 मे आपने 'सन्त सन्देश' नामक एक और पत्र भी निकाला था। आपने देवबन्द (सहारनपुर) के 'देवीकुण्ड सस्कृत विद्यालय' की स्थापना की थी, और आजीवन आप ही उसके 'मुख्याधिष्ठाता' रहे थे। आपने कानपुर मे 'ख्याल-खोजक मण्डल' नामक सस्था की स्थापना के द्वारा लावनी तथा ख्याल की खोज का कार्य करने का भी प्रयत्न किया था।

आपके द्वारा लिखित लावनी को देखकर आप उनकी काव्य-कला और शब्द-कौशल का सही अनुमान लगा सकते है। कुछ पक्तियाँ देखिए

सुख सुगन्ध लोभी मन-मधुकर
काम-कमल पर जा बैठा
प्रेम-पाँखुरी में फँसकर
अपने को आप गँवा बैठा

यह ससार सरोवर जिसमे—
नारि रूप हैं नीर अगम
पुत्र, पौत्र, परिवार रूप—
खिल रहे विमल पकज उत्तम
कोई आत्मा कोई नील श्वेत छवि
भाँति-भाँति छहरात पदम
तिन पर मोहित फिर मधुप-मन
प्रिय पराग की चाह अधम
यौवन-रूपी जलज निरख—
घूं-घूं करता तहँ आ बैठा
प्रेम पाँखुरी मे फँसकर
अपने को आप गँवा बैठा।

अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप अपनी जन्म-भूमि मे इसलिए पहुँच गए थे कि आपकी इच्छा यह थी कि "मेरा प्राणान्त मेरी जन्म-भूमि मे ही हो।" आपके एकमात्र पुत्र श्री रामस्वरूप तिवारी ने आपका बहुत उपचार किया, किन्तु कोई लाभ न हुआ और आपका प्राणान्त हो गया। मृत्यु से एक मास पूर्व आपने 'पीलीभीत' के कुछ साहित्य-प्रेमियों से 'हिन्दी साहित्य परिषद्' की स्थापना की जो आकाक्षा व्यक्त की थी, वह आपके जीवन-काल मे तो पूर्ण न हो सकी, किन्तु बाद मे नगर के कुछ युवको ने मिलकर सन् 1954 मे जिस परिषद् की स्थापना की थी, वह अब भी अख्तरजी की पावन स्मृति को अक्षुण्ण बनाए हुए है।

आपका निधन सन् 1954 मे हुआ था।

श्री नित्यगोपाल तिवारी

श्री तिवारी का जन्म 10 मार्च सन् 1917 को मध्यप्रदेश के जबलपुर नगर मे हुआ था। आपको साहित्यिक अभिरुचि अपने पिता श्री देवकीप्रसाद तिवारी से विरासत में मिली थी। आप मध्यप्रदेश के सकल्पित पत्रकार और उत्कृष्ट लेखक के रूप मे जाने जाते थे। अपने अध्ययन की समाप्ति के उपरान्त पहले आपने अपने 'चलचित्र प्रेस' से एक सिनेमा-प्रधान पत्र 'चलचित्र' प्रकाशित किया और फिर कई वर्ष तक जबलपुर से हिन्दी का एक सान्ध्य दैनिक 'जबलपुर समाचार' भी निकाला था। उसके लेखो और सम्पादकीय टिप्पणियो की बडी धाक रहती थी।

आप कांग्रेस के भी अत्यन्त सक्रिय और कर्मठ कार्यकर्ता रहे थे। कुछ समय तक आपने अपने पत्र के माध्यम से

कांग्रेस की अच्छी सेवा की थी। आपने 'पौरुष' नाम से एक साप्ताहिक पत्र भी सम्पादित किया था। आप अपने उग्र विचारों को व्यक्त करने मे कभी सकोच नही करते थे। जबलपुर की हिन्दी-पत्रकारिता के क्षेत्र मे आपकी एक सर्वथा विशिष्ट पहचान थी।

आपका निधन 30 जनवरी सन् 1974 को क्षय रोग के कारण भोपाल मे और दाह सस्कार अपने गृह-नगर जबलपुर मे हुआ था।

स्वामी नित्यानन्द ब्रहमचारी

आपका जन्म राजस्थान के मारवाड अचल के अन्तर्गत जालौर नामक कस्बे के श्रीमाली ब्राह्मण-परिवार मे सन् 1860 मे हुआ था। आपकी शिक्षा महर्षि दयानन्द के शिष्य स्वामी गोपाल गिरि के द्वारा काशी मे हुई थी। स्वामी गोपाल गिरि महर्षि दयानन्द के निर्वाण के समय उनके पास अजमेर मे ही थे। आपका आर्यसमाज से प्रथम परिचय उस समय हुआ था जब आप काशी जाते हुए मार्ग मे बरेली रुके थे। बरेली मे आप जब एक आर्यसमाजी पण्डित यज्ञदत्त को वेदान्त पढाने लगे थे तब इन्ही पण्डित जी की कृपा से आपको महर्षि दयानन्द जी के ग्रन्थ 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' और 'सत्यार्थ प्रकाश' आदि पढने को मिले थे। इसके उपरान्त तिलहर-निवासी मुन्शी चिम्मनलाल वैश्य के द्वारा भी आपको आर्यसमाज की प्रवृत्तियों का विस्तृत परिचय मिला था। आप जब भ्रमण करते हुए बरेली से तिलहर (शाहजहाँपुर) पहुँचे थे तब मुन्शी चिम्मनलाल वैश्य से आपकी भेंट हुई थी।



अपनी इस ज्ञान-यात्रा के क्रम में आप जब दिल्ली की ओर आ रहे थे तब आपकी भेंट गाजियाबाद स्टेशन पर 'स्वामी विश्वेश्वरानन्द' नामक एक सन्यासी से हुई थी। इस भेंट को आर्यसमाज के इतिहास में 'ऐतिहासिक' कहा गया है। इन दोनों विभूतियों के जीवन में इतना चमत्कारी प्रभाव हुआ कि वे आपस में इतने घुल-मिल गए कि सदैव साथ ही रहने लगे। आप स्वामी विश्वेश्वरानन्द के साथ मेरठ आर्यसमाज के वार्षिक उत्सव मे गए थे और वहाँ पर आपका जो भाषण हुआ, उसे वहाँ की जनता ने बहुत पसन्द किया था। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेख्य है कि स्वामी विश्वेश्वरानन्द से आपका सम्पर्क जीवन-पर्यन्त रहा था और आप दोनो को 'सन्यासी-युगल' कहा जाता था। आप अनेक भाषाओ के ज्ञाता और श्रेष्ठ वक्ता थे। आपने देश के बूँदी, इन्दौर, झाँसी, अजमेर, पूना, कश्मीर, मैसूर, हैदराबाद तथा बम्बई आदि विभिन्न स्थानों मे घूम-घूमकर अपने शास्त्रार्थों के द्वारा आर्यसमाज का जो उल्लेखनीय प्रचार-कार्य किया था उससे हिन्दी-प्रचार मे बहुत बडी सहायता मिली थी। समाज-सेवा के विभिन्न क्षेत्रो मे कार्य करने के प्रसग मे आपने देश के जिन समाज-सुधारको और नेताओ को प्रभावित किया था उनमे महादेव गोविन्द रानाडे और ब्रह्म समाज के नेता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर का नाम प्रमुख है। देशी रियासतो के जिन नरेशों ने आपके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर अपने राज्य मे सस्कृत और हिन्दी के प्रचार का प्रशसनीय कार्य किया था उनमे शाहपुरा (राजस्थान) के नरेश महाराज नाहरसिह प्रमुख थे। उन्होने आपके द्वारा लिखित 'पुरुषार्थ प्रकाश' नामक ग्रन्थ को अपने व्यय से प्रकाशित किया था। यह ग्रन्थ आर्यसमाज के क्षेत्र मे 'सत्यार्थ प्रकाश'-जैसा ही महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। आपका 'बूँदी शास्त्रार्थ' ग्रन्थ भी उल्लेखनीय है। आपने ब्रह्मसमाज के संस्थापक श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर को ब्रह्मसमाज का आर्यसमाज मे 'विलयन' कर देने का परामर्श दिया था और आपने कांग्रेस के बम्बई, काशी और कलकत्ता-अधिवेशनो मे भी भाग लिया था। कांग्रेस के काशी अधिवेशन के अवसर पर आयोजित 'सामाजिक परिषद्' मे आपने 'विधवा विवाह' के समर्थन का प्रस्ताव पारित कराया था और नासिक मे 'गुरुकुल' की स्थापना भी आपकी ही अध्यक्षता मे हुई थी।

आपकी साहित्यिक प्रतिभा का परिचय आपके द्वारा निर्मित 'वैदिक कोष' नामक उस ग्रन्थ को देखने से मिल जाता है, जो आपने चारों वेदो मे प्रयुक्त सम्पूर्ण शब्दों के पूर्ण विवरण सहित प्रस्तुत किया था। यह ग्रन्थ 4 खण्डों में प्रकाशित हुआ है। उसकी प्रशंसा जहाँ देश और विदेश के अनेक वैदिक विद्वानो ने की थी वहाँ 'सरस्वती' और 'वेंकटेश्वर समाचार' आदि अनेक हिन्दी पत्रों मे इसकी प्रशसापूर्ण समीक्षाएँ प्रकाशित हुई थी। जिन प्रमुख विद्वानों ने आपके इस ग्रन्थ की उन्मुक्त कण्ठ से प्रशसा की थी उनमें सर आशुतोष मुखर्जी, श्री श्रीनिवास शास्त्री, महामहोपाध्याय सतीशचन्द्र विद्याभूषण, महामहोपाध्याय प० रामावतार शर्मा, डॉ० भगवानदास, श्री आदित्यराम भट्टाचार्य, डॉ० गगानाथ झा तथा डॉ० रामकृष्ण गोपाल भाण्डारकर के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपने यह कोश-सम्बन्धी कार्य सन् 1903 मे प्रारम्भ किया था और सन् 1910 तक यह कार्य पूर्ण हो सका था।

आपको इस कोश के निर्माण मे स्वामी विश्वेश्वरानन्द से भारी सहायता मिली थी। आपके निधन के उपरान्त उन्होंने ही यह कार्यभार सँभाला था, जो बाद मे 'विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान' के नाम से विख्यात हुआ। भारत के वायसराय लार्ड लैंसडाउन भी आपके कश्मीर-प्रवास मे आपसे बहुत प्रभावित हुए थे। आपकी जन्म-शताब्दी के अवसर पर 4 सितम्बर सन् 1960 को 'विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध सस्थान' होशियारपुर की ओर से 'स्वामी नित्यानद : जीवन और कार्य' नामक एक पुस्तक भी प्रकाशित की गई थी, इससे आपके जीवन और कृतित्व का विशद एवं प्रामाणिक परिचय मिलता है।

आपका निधन 8 जनवरी सन् 1914 को बम्बई मे हुआ था।

श्री नित्यानन्द वेदालंकार

आपका जन्म गुजरात प्रदेश के नवसारी नगर के समीपवर्ती सातेम नामक ग्राम मे सन् 1913 मे हुआ था। आपके पिता श्री हीराभाई आर्यसमाज के सिद्धान्तो से बहुत प्रभावित थे। इसी कारण उन्होंने बालक नित्यानन्द की शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध 'गुरुकुल कांगड़ी'-जैसे शिक्षा-संस्थान में किया था। आपने गुरुकुल से 'वेदालंकार' की उपाधि प्रथम श्रेणी मे प्राप्त करके दिल्ली विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इसके उपरान्त आपने इसी विश्वविद्यालय से हिन्दी तथा सस्कृत मे एम० ए० की परीक्षाओं मे प्रथम श्रेणी प्राप्त करके 'स्वर्ण पदक' भी प्राप्त किया था। आपने 30 वर्ष से भी अधिक समय तक डी० एम० कालेज, मोगा (पंजाब) तथा 'गार्डा कालेज' नवसारी (गुजरात) मे अध्यापन-कार्य करने के अतिरिक्त 'महिला कालेज पोरबन्दर' (सौराष्ट्र) मे 'आचार्य' का पद भी सँभाला था।

अपने इस शैक्षणिक जीवन मे जहाँ आपने अनेक विद्यार्थियो को शोध-कार्य मे निर्देशन दिया था वहाँ आप दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय की 'सीनेट' तथा 'सिण्डीकेट' के प्रमुख सदस्य भी रहे थे। अपने इस कार्य-काल मे आपने विश्वविद्यालय की 'विद्वत् परिषद्' और 'कला सकाय' के प्रतिष्ठित सदस्य के रूप मे अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किये थे। गुजराती-भाषी होते हुए भी जहाँ आपका



मातृभाषा पर असाधारण अधिकार था वहाँ आप सस्कृत हिन्दी और अग्रेजी के भी परम निष्णात विद्वान् थे।

आप एक प्रभावशाली वक्ता तथा कुशल लेखक के रूप मे विख्यात थे। आपकी लेखन-क्षमता का उत्कृष्ट प्रमाण आपके द्वारा लिखित 'सन्ध्या सुमन', 'सन्ध्या विनय', 'मनोविज्ञान की रूपरेखा', 'छायावाद : नया मूल्यांकन', 'पूर्व और पश्चिम', 'प्रभावशाली व्यक्तित्व', 'सच्चे इन्सान बनो', 'सुराज्य की रूपरेखा', 'प्रार्थना-दीप', 'जीवन की राहें' और 'प्रेमचन्द के उपन्यास-साहित्य मे सांस्कृतिक चेतना' नामक ग्रन्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। इनमे से जहाँ आपकी 'मनोविज्ञान

की रूपरेखा' नामक कृति का पंजाबी भाषा में अनुवाद सम्पन्न हो चुका है वहाँ आपकी 'छायावाद : नया मूल्यांकन' नामक पुस्तक कई वर्ष तक पंजाबी विश्वविद्यालय (पटियाला) और 'दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय' की एम० ए० के पाठ्यक्रम में रह चुकी है। आपकी इस पुस्तक की भूमिका डॉ० रामधारीसिंह 'दिनकर' ने लिखी थी।

आपका 'प्रेमचन्द के उपन्यास साहित्य मे सांस्कृतिक चेतना' नामक शोध प्रबन्ध आपके निधन के उपरान्त सन् 1981 मे प्रकाशित हुआ है। जिसे आपके निधन के उपरान्त आपकी सुयोग्य सहधर्मिणी डॉ० श्रीमती सुभद्रा पटेल ने अद्यतन स्वरूप प्रदान किया है। श्रीमती सुभद्रा जी स्वयं भी एक विदुषी महिला है और आजकल वे 'गार्डा कालेज नवसारी' के हिन्दी विभाग की अध्यक्षा हैं। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि श्री नित्यानन्द जी इस शोध-प्रबन्ध को पी-एच० डी० की उपाधि के लिए प्रस्तुत नही कर सके थे। इस ग्रन्थ की भूमिका प्रेमचन्द जी के सुपुत्र श्री अमृतराय ने लिखी है।

आपका निधन सन् 1978 मे हुआ था।

आशुकवि श्री नित्यानन्द शास्त्री

आपका जन्म सन् 1889 मे राजस्थान के जोधपुर नगर मे हुआ था और आपके पारिवारिकजन जैतारण नामक ग्राम के निवासी थे। जब आप कठिनाई से 7 वर्ष के ही हो पाए थे कि आपके पिता जी का देहावसान हो गया और आपकी शिक्षा अपने बड़े भाई श्री भगवतीलाल की देख-रेख में हुई। आपको सबसे पहले नगर की 'वैदिक पाठशाला' में प्रविष्ट कराया गया था। वहाँ पर पढते हुए ही आपने पहले पंजाब विश्वविद्यालय की संस्कृत 'विशारद' परीक्षा उत्तीर्ण की और बाद में आप आगे की पढ़ाई पूरी करने की दृष्टि से लाहौर जाकर वहाँ के 'ओरियण्टल कालेज' मे प्रविष्ट हो गए और शास्त्री की परीक्षा योग्यतापूर्वक उत्तीर्ण की।

अपने कालेज-जीवन मे आपने अपनी पुस्तकीय शिक्षा प्राप्त करने के साथ-साथ संस्कृत मे कविता-लेखन का इतना अच्छा अभ्यास कर लिया था कि आप 'आशुकवि' कहलाने लगे थे। आपकी कविताएँ उन दिनों संस्कृत के अनेक पत्रों में ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। आपके कालेज के प्रिंसिपल श्री ए० सी० वुलनर और प्रधानाध्यापक महामहोपाध्याय पण्डित शिवदत्त शर्मा आपकी प्रतिभा एवं योग्यता से बहुत प्रसन्न थे। अपने छात्र-जीवन में ही आपने लाहौर में रहते हुए संस्कृत के साथ-साथ हिन्दी-लेखन का भी अच्छा अभ्यास कर लिया था और उसमे पूर्ण निष्णात हो गए थे।

शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आपने अपने गुरु पण्डित शिवदत्त शास्त्री के परामर्श पर बम्बई के 'श्री वेंकटेश्वर प्रेस' मे जाकर वहाँ से प्रकाशित होने वाले हिन्दी तथा संस्कृत के ग्रन्थों के सम्पादन का कार्य प्रारम्भ कर दिया था। किन्तु संयोगवश आप कुछ समय बाद ही वहाँ के 'महावीर कालेज' मे संस्कृताध्यापक हो गए और तदुपरान्त आपने भावनगर (गुजरात) मे जाकर वहाँ से प्रकाशित होने वाली 'आत्मानन्द जैन ग्रन्थमाला' के अनेक ग्रन्थो का सम्पादन भी किया था। आपके भावनगर-निवास-काल मे आपसे अनेक जैन मुनियों ने संस्कृत का अध्ययन भी किया था।



आप सन् 1912 मे जोधपुर के रिजेण्ट सर प्रतापसिंह के विशेष आमन्त्रण पर वहाँ के 'नोबल हाई स्कूल' मे संस्कृताध्यापक के पद पर नियुक्त हो गए। यह विद्यालय नगर से लगभग 5 मील दूर चौपासनी नामक स्थान मे था और इसमे राजा-महाराजाओ और जागीरदारों के बच्चे ही पढा करते थे। जोधपुर नरेश स्व० श्री उम्मेदसिंह भी इसी संस्थान मे पढ़े थे। ऐसे सुन्दर तथा रमणीक स्थान मे रहकर आपने बहुत-से ग्रन्थों की रचना करने की ओर भी विशेष ध्यान दिया था। कुछ समय तक आप वहाँ के 'राजकीय पुस्तकालय' के अध्यक्ष भी रहे थे। आपने अनेक ग्रन्थों की रचना एवं सम्पादन करने के साथ-साथ 'दधिमति' और

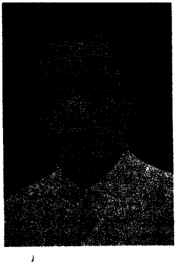
'सनातन' आदि पत्रों का सम्पादन भी किया था । आप 'राजस्थान संस्कृत साहित्य सम्मेलन' के जोधपुर-अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष भी रहे थे ।

आपने जोधपुर राज्य के पुस्तकालय के अध्यक्ष के रूप में जहाँ हिन्दी तथा सस्कृत के अनेक ग्रन्थों की खोज का अभिनन्दनीय कार्य किया था वहाँ उनके सम्पादन एव प्रकाशन की दिशा मे भी आप अनेक वर्ष तक सलग्न रहे थे। आपके द्वारा लिखित एव सम्पादित सभी ग्रन्थ बम्बई के 'श्री वेकटेश्वर प्रेस' से प्रकाशित हुए थे। आपके ऐसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो मे 'आर्या मुक्तावली', 'कृष्णाष्टमी', 'आर्य नक्षत्रमाला', 'बालकृष्ण नक्षत्रमाला', 'पुण्य चरित', 'विविध देव-स्तव-संग्रह', 'ऋतु विलास', 'द्विज दशा दर्पण', 'आदि-शक्ति वैभव' और 'सुकवि कविता कलाप' के नाम उल्लेखनीय है।

आपका निधन सन् 1961 मे हुआ था।

श्री निरंजननाथ आचार्य

श्री आचार्य का जन्म राजस्थान के उदयपुर जनपद के ओही नामक ग्राम मे 1 फरवरी सन् 1911 को हुआ था। उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने सन् 1938 मे वकालत प्रारम्भ की थी और सन् 1943 मे मेवाड मे 'पब्लिक प्रोसीक्यूटर' हो गए थे। सन् 1944 से सन् 1949 तक आप जहाँ 'मेवाड स्टेट रेलवे कर्मचारी सघ' के अध्यक्ष रहे थे वहाँ स्वतन्त्रता के उपरान्त जब 'बृहत्तर राजस्थान' बना तब सन् 1948 मे आपने उसके प्रथम प्रधानमंत्री के निजी सचिव का कार्य भी किया था।



आप सन् 1954-55 में उदयपुर नगर मण्डल के अध्यक्ष रहने के अतिरिक्त कई वर्ष तक 'राजस्थान विधान सभा' के उपाध्यक्ष तथा अध्यक्ष भी रहे थे। इससे पूर्व आपने राजस्थान के मन्त्रि-मण्डल में उपमन्त्री के रूप मे भी कार्य किया था। इनके अतिरिक्त राजस्थान की जिन अनेक संस्थाओं की आपने विविध रूपों मे उल्लेखनीय सेवाएँ की थी उनमे 'जमनास्टिक सांस्कृतिक सघ', 'गांधी सेवा सदन, 'राजसमन्द' प्रमुख है। आप राजस्थान साहित्य अकादमी के अध्यक्ष भी रहे थे।

राजनीति और समाज-सेवा के क्षेत्रो मे आपने जहाँ अपनी बहुविध सेवाओ के कारण अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था वहाँ लेखन की दिशा मे भी आपकी देन सर्वथा अप्रतिम रही थी। आपकी महत्त्वपूर्ण रचनाओ मे 'आस्ट्रेलिया के आँचल मे', 'बिखरे पात', 'झलकियाँ', 'अर्चना के फूल', 'राष्ट्र के प्रहरी', 'गुरु पूर्णिमा', 'गाँव की ज्योति', 'जानी अनजानी तस्वीर' तथा 'धरती के गीत' आदि प्रमुख है।

आपका निधन सन् 1976 ई० मे हुआ था।

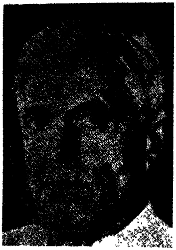
श्री निरंजन शर्मा 'अजित'

श्री 'अजित' का जन्म सन् 1897 मे भरतपुर (राजस्थान) मे हुआ था। आपके पिता श्री सोहनलाल शर्मा मिहिर भरतपुर-नरेश के राजमहल मे कोठारी (स्टोरकीपर) थे। बचपन मे उनका देहावसान हो जाने के कारण अजितजी की शिक्षा-दीक्षा और भरण-पोषण मे कोई कठिनाई इसलिए नही हुई कि आपकी माता बडी जीवट वाली महिला थी। आप अभी पढ ही रहे थे कि देश मे फैले स्वतन्त्रता-आन्दोलन स प्रभावित होकर लोकमान्य तिलक के अनुयायी बन गए। बी० ए० की परीक्षा देने मे पूर्व ही आप आन्दोलन मे कूद पडे। जिन दिनो आप छात्र थे तब साहित्य-रचना की ओर भी आपका बहुत झुकाव था। फलस्वरूप 'हिन्दी साहित्य समिति' की स्थापना के लिए आप प्रयत्नशील रहे और एक समय ऐसा भी आया जब आपने अपने इस सकल्प को पूर्ण भी कर लिया।

इसके बाद आप सन् 1922 में दिल्ली चले आए और यहाँ से प्रकाशित होने वाले 'वैभव' नामक दैनिक पत्र का सम्पादन करने लगे। इस पत्र के माध्यम से आपने देशी राज्यों की प्रजा पर उनके शासको द्वारा होने वाले अनेक अत्याचारों के विरुद्ध सर्वप्रथम आवाज उठाई थी। थोडे ही दिनो में आपकी लेखनी के चमत्कार से 'वैभव' अत्यन्त लोकप्रिय हो गया। इस बीच जब कुँवर गणेशसिह भदौरिया और पण्डित झावरमल्ल शर्मा ने दिल्ली से 'हिन्दू ससार' नामक साप्ताहिक पत्र प्रारम्भ किया था, तब आप उसका सम्पादन करने लगे थे। जिन दिनो आप 'हिन्दू ससार' मे कार्य करते थे तब आपका देश के प्रख्यात नेता पण्डित दीनदयालु शर्मा व्याख्यान वाचस्पति से अच्छा सम्पर्क हो गया था। उनकी प्रेरणा पर आप वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई की ओर से प्रकाशित होने वाले 'वेकटेश्वर समाचार' (साप्ताहिक) के सम्पादक होकर वहाँ चले गए। इस पत्र का सम्पादन आपने सन् 1925 से लेकर कई वर्ष तक किया था। अपने इस कार्य-काल मे आपने जहाँ अग्रेजी भाषा का अच्छा अभ्यास कर लिया था वहाँ आप मराठी, गुजराती, उर्दू, फारसी और बगला आदि भाषाओ मे भी पारगत हो गए थे।

बम्बई मे रहते हुए आपने जब वहाँ पर हिन्दी की दुर्दशा देखी तब आप चुपचाप नही बैठे और वहाँ पर हिन्दी को प्रतिष्ठित करने के लिए आपने अथक प्रयास किया। थोडे ही प्रयास से आपको अपने कार्य मे सफलता मिलने लगी और आपने वहाँ अनेक 'प्राथमिक' विद्यालयो की स्थापना की। इन विद्यालयो के सचालन के लिए आपको जो परिश्रम करना पड़ा था उसे वे ही जान सकते है जिन्होने उन दिनो आपको कार्य करते हुए देखा था। आज जो बम्बई मे हिन्दी का वातावरण दिखाई देता है वह अजितजी का ही प्रताप कहा जा सकता है। आपने जहाँ बम्बई मे अनेक हिन्दी विद्यालय सचालित किये थे वहाँ आपने बहुत-सी हिन्दी-सस्थाओं की स्थापनाओ मे भी अपना सक्रिय सहयोग दिया था।

अनेक वर्ष तक 'वेंकटेश्वर समाचार' का सम्पादन करने के अतिरिक्त आपने बम्बई से प्रकाशित होने वाले 'अखण्ड भारत', 'स्वाधीन भारत' और 'स्वतन्त्र भारत' नामक दैनिक पत्रों का सम्पादन भी किया था। राष्ट्रीय जागरण के प्रारम्भिक दिनो मे 'अजितजी' के द्वारा सम्पादित 'स्वाधीन भारत' हिन्दी का पहला दैनिक पत्र था। इन पत्रों के माध्यम से भी आपने



देशी राज्यो मे जन-जागृति उत्पन्न करने के कार्य मे बहुत अधिक सहायता की थी। आपने 'सुदर्शन चक्र' नामक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन भी किया था। यह पत्र ब्रिटिश भारत मे होने वाली गतिविधियों का सन्देश-वाहक था। आपने सौराष्ट्र के श्री अमृतलाल सेठ के सहयोग से 'अखिल भारतीय देशी राज्य प्रजा परिषद्' की स्थापना भी की थी। बाद मे आप इस परिषद् के माध्यम से धीरे-धीरे महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, शेख अब्दुल्ला और सेठ जमनालाल बजाज आदि अनेक महानुभावो के सम्पर्क मे आए थे।

जब सन् 1931 मे लन्दन मे गोल मेज कान्फ्रेंस मे भाग लेने का निर्णय 'देशी राज्य परिषद्' ने किया तब महात्मा गाधी की यह हार्दिक इच्छा थी कि श्री अजित देशी राज्यो की समस्याओ को उक्त कान्फ्रेस मे प्रस्तुत करने मे सहायता करने के उद्देश्य से उनके साथ लन्दन चले, लेकिन 'अजित' जी ने अपने बदले मे बैरिस्टर चुडगर को ले जाने का प्रस्ताव किया और वे ही लन्दन गए थे। वहाँ पर बैरिस्टर चुडगर ने देशी राज्यो के सम्बन्ध मे जो तथ्यपूर्ण सामग्री 'गोल मेज कान्फ्रेंस' मे प्रस्तुत की थी उससे जहाँ ब्रिटिश सरकार आश्चर्य-चकित हो गई थी वहाँ देशी रजवाडो के शासको की बोलती भी बन्द हो गई थी।

'अजित' जी ने लगभग 12 वर्ष तक फिल्म-जगत् मे भी कथा-सवाद-लेखक और गीतकार के रूप मे कार्य किया था। उस युग की अत्यन्त प्रसिद्ध फिल्म-निर्माता-कम्पनी 'सागर मूवीटोन' से आप कई वर्ष तक सम्बद्ध रहे थे और इस कम्पनी की ओर से बनने वाली कई फिल्मों के लिए आपने

पट-कथाएँ, संवाद तथा गीत लिखे थे। जिन दिनों आप फिल्म-क्षेत्र में कार्य-रत थे तब आपने 'सिनेमा-संसार' तथा 'हनुमान' नामक दो सिनेमा-सम्बन्धी पत्रों का सम्पादन-प्रकाशन किया था। ये दोनों ही अपने समय के सर्वथा अनूठे और सुरुचिपूर्ण पत्र थे। फिल्म-जगत् मे भी आप अधिक समय तक न ठहर सके और शीघ्र ही उसको अलविदा कहकर फिर राष्ट्रीय पत्रकारिता के क्षेत्र मे आ गए। आप जहाँ उच्च-कोटि के पत्रकार थे वहाँ आपने अनेक ग्रन्थों की रचना भी की थी। आपके द्वारा रचित पुस्तकों मे 'सत्यार्थ प्रदर्शन', 'योगेश्वर या शिव तथ्य', 'साम्ब पुराण', 'सूर्य-पूजा-पद्धति', 'ज्ञान गीतांजलि', 'गोल मेज', 'कनेजे के टुकडे', 'अभिमन्यु' (नाटक) तथा 'सुभद्रा हरण' (नाटक) प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

जिन दिनो सन् 1941 मे हिन्दी के प्रख्यात पत्रकार प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति ने बम्बई से 'नवराष्ट्र' नामक दैनिक निकालने का सकल्प किया था तो 'अजित' जी ही उसके पहले सम्पादक बनाए गए थे। आपने 'नवराष्ट्र' को अत्यन्त परिश्रम और निष्ठा से सम्पादित किया था और थोडे ही दिनो मे उसे बहुत लोकप्रिय बना दिया था। कुछ समय तक आपने बम्बई से प्रकाशित 'सग्राम' साप्ताहिक का सम्पादन भी किया था और जब कलकत्ता के 'विश्वमित्र' का बम्बई-संस्करण प्रकाशित होना प्रारम्भ हुआ तब आप ही उसके आदिसम्पादक बनाए गए थे। वास्तविकता तो यह है कि पत्रकारिता से आप इतनी निकटता से जुडे हुए थे कि बम्बई से प्रकाशित होने वाले प्राय सभी हिन्दी पत्रो को आपका सहयोग समय-समय पर प्राप्त होता रहता था। आपने अपने जातीय पत्र 'शाकद्वीपीय ब्राह्मण बन्धु' का सम्पादन भी सन् 1935 से लेकर काफी समय तक किया था और जीवन-पर्यन्त उसके साथ जुडे रहे थे।

स्वतन्त्रता के उपरान्त सन् 1956 मे जब उदयपुर (राजस्थान) से साप्ताहिक 'प्रताप' प्रकाशित करने का निश्चय किया गया तब उसके प्रबन्धको ने 'अजित' जी को ही उसके सम्पादन का दायित्व सौंपा था। आपने इन्दौर से प्रकाशित होने वाले 'अशोक' साप्ताहिक का भी सम्पादन किया था। अपने जीवन के अन्तिम समय मे आप योगाभ्यास करने लगे थे और 'सूर्योपासना' के भी अनन्य भक्त हो गए थे। आपके निधन की भी विचित्र घटना है। 15 जून सन् 1970 को आपको बम्बई में सड़क के किनारे चलते हुए एक बैलगाडी से टकरा जाने के कारण काफी चोट आ गई थी। जब मरहम-पट्टी करने पर भी कोई लाभ नही हुआ तो आपको 20 जुलाई को 'टाटा मेमोरियल अस्पताल' मे प्रविष्ट कराया गया, जहाँ लगभग एक मास तक रहने के उपरान्त ठीक होकर अपने मकान पर आए ही थे कि सहसा 21 अगस्त सन् 1970 को आपका निधन हो गया।

साधु निश्चलदास

आपका जन्म भारत की राजधानी दिल्ली से पश्चिम मे स्थित हरियाणा प्रदेश के हिसार जनपद के कहरौली नामक ग्राम के एक जाट-परिवार मे सन् 1781 मे हुआ था। आप दादूपन्थी सम्प्रदाय के सिद्धान्तो के अनन्य अनुयायी थे और आपने काशी में जाकर तथा अपने को ब्राह्मण बतलाकर सस्कृत-वाङ्मय का तलस्पर्शी ज्ञान अर्जित किया था। जिन दिनो आप काशी मे पढा करते थे तब आपकी शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आपके गुरु ने अपनी पुत्री का विवाह आपसे करने की इच्छा प्रकट की थी। उस समय निश्चलदास ने अपने जाट होने की बात प्रकट करके उन्हें आश्चर्य मे डाल दिया था। आपने अपने परिश्रम से वेदान्त और दर्शन की जिन गूढतम पहेलियो को समझा था उसकी झाँकी आपके काव्य मे प्रचुर परिमाण मे देखने को मिलती है। अपने जन्म-स्थान के विषय में आपने एक स्थान पर यह लिखा था :

दिल्ली तें पश्चिम दिसा, कोस अठारह गाँव।
ता मै यह पूरो भयो, कहरौली तिह नाम ॥

आपने अपनी रचनाओ मे दादू पन्थ के विचारों और सिद्धान्तो का अच्छा चित्रण किया है। भगवान् के स्वरूप के सम्बन्ध मे आपकी यह पक्तियाँ ध्यातव्य है :

जो जल मे प्रकाश को, नहिं प्रतिबिम्ब लखाय।
थोरे मे गम्भीर का, ह्वै प्रतीति किहि भाय ॥
यातें जल मे व्योम को, लख आभा सस जान।
रूप रहित जिमि शब्द तै, ह्वै प्रतिध्वनि को भान।

आपकी पुस्तको मे 'वृत्ति प्रभाकर', 'युक्ति प्रकाश'

और 'विचार सागर' अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। इनमें से 'विचार सागर' की रचना आपने अलवर के महाराजा के विशेष अनुरोध पर अपने गाँव में रहकर ही की थी। इस ग्रंथ मे गुरु-शिष्य-संवाद के रूप में वेदान्त और न्याय के गूढतम सिद्धान्तों को हिन्दी गद्य और पद्य मे अत्यन्त स्पष्टता से समझाया गया है। आपका यह ग्रन्थ भारतीय जीवन-साधना के क्षेत्र मे इतना लोकप्रिय हुआ था कि अंग्रेजी, बंगला और मराठी आदि कई भाषाओं मे इसके अनुवाद भी हुए थे। आपने इस ग्रन्थ की रचना का उद्देश्य साधु निश्चलदास ने हिन्दी-गद्य मे इस प्रकार समझाया है—"वेद के वचन बिना ज्ञान होवै नही, सो नियम नही।'''जो वेद के बिना ज्ञान न होवै तौ वे सम्पूर्ण प्रकरण निष्फल होय जावैगे। यातै आत्मा के स्वरूप प्रतिपादक जो वाक्य हैं, तासूं ज्ञान होवै है, सो वेद का होवै अन्यथा अन्य न होवै। यातै भाषा ग्रन्थ से भी ज्ञान होवै है, यह वार्ता सिद्ध हुई।"

आपकी रचना-चातुरी का सुपुष्ट प्रमाण आपकी उक्त सभी रचनाओं मे स्थल-स्थल पर देखने को मिलता है। आपने ब्रह्म के स्वरूप का वर्णन जिस सशक्त शैली मे किया है, वह आपकी विशिष्ट विचार-प्रणाली का परिचय देता है.

दीनता को त्यागकर आपुनो सरूप देख,
तू तो सुध ब्रह्म अज दृष्य को प्रकासी है।
अपुने अज्ञान तै, जगत् सब तू ही रचे,
सर्व को महार करै आपु अविनासी है।।
मिथ्या प्रपच देखि, दुखि जानि आनि हिय,
देवन को देव तू तो सब सुख-रासी है।
जीव जग बस होय, माया के प्रभाव तू ही,
जैसे रज्जू सौंप सीप रूप ह्वै प्रकासी है।।

आपके 'विचार सागर' नामक ग्रन्थ का महत्त्व इसी से प्रमाणित हो जाता है कि उसके सम्बन्ध मे स्वामी विवेकानन्द ने यह लिखा था कि "भारत मे जितना प्रभाव इस पुस्तक का है उतना पिछली तीन शताब्दियो मे किसी भी भाषा मे लिखी गई दूसरी पुस्तक का नहीं है।" यद्यपि निश्चलदास जी संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड विद्वान् थे किन्तु आपने अपने इन ग्रन्थों को सस्कृत मे न लिखकर हिन्दी मे इसलिए लिखा है कि वैसा करने से उसका महत्त्व कम हो जाता। आपने 'कठोपनिषद्' की एक टीका संस्कृत मे ही लिखी थी। संस्कृत मे दर्शन पढ़कर उसे हिन्दी मे व्यक्त करने से उनके विचारों की मौलिकता और स्पष्टता बढ़ी है। इस सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द का यह कथन और भी अधिक सटीक लगता है—"जहाँ-जहाँ हिन्दी बोली जाती है वहाँ निम्न वर्ग के लोग भी बगाल के उच्च वर्ग के अधिकांश लोगो की अपेक्षा वेदान्त को अधिक समझते हैं।"

'वृत्ति प्रभाकर' ग्रन्थ की उत्कृष्टता के सम्बन्ध में 'भारतीय देशभक्तों की कारावास कहानी' नामक पुस्तक में गिरीडीह (बिहार) के प्रो० मनोरजन गुह ठाकरता ने यह लिखकर तो आपके उस ग्रन्थ के महत्त्व को और भी अधिक बढ़ा दिया है—"जेल में 'वृत्ति प्रभाकर' पढ़ा। बड़ा चमत्कारी ग्रन्थ है। वर्तमान बगभाषा वैभवशालिनी होने पर भी इस श्रेणी के ग्रन्थ-रत्न उसके भण्डार मे नही पाए जाते।"

हिन्दी मे 'विचार सागर' को लिखने के सम्बन्ध में निश्चलदास ने अपनी मान्यता इस प्रकार व्यक्त की है :

यह विचार सागर कियो, जामैं रत्न अनेक।
गोप्य वेद-सिद्धान्त हैं, प्रकट लहत सविवेक।।
साख्य, न्याय मे स्रम कियो, पढि व्याकरण अशेष।
पढे ग्रन्थ अद्वैत के, रह्यो न एकहु शेष।।
कठिन जु और निबन्ध हैं, जिनमें मत के भेद।
स्रम तो अवगाहन कियो, निश्चलदास सवेद।।
तिन यह भाषा ग्रन्थ किये, रच न उपजी लाज।
ता मैं यह इक हेतु है, दया धर्म सिरताज।।
बिन व्याकरण न पढि सकै, ग्रन्थ सस्कृत मन्द।
पढै याहि अनयास ही, लहै सु परमानन्द।।

आपका निधन सन् 1863 मे हुआ था।

श्री नीलकण्ठ तिवारी

श्री तिवारी का जन्म 11 जून सन् 1914 को मध्यप्रदेश के इन्दौर नगर मे हुआ था। आपने एम०ए० तथा साहित्यरत्न तक की शिक्षा प्राप्त करने के साथ-साथ कविता-लेखन मे अपने छात्र-जीवन से ही रुचि लेनी प्रारम्भ कर दी थी। जिन दिनो आप इन्दौर मे कालेज मे पढ़ते थे तब आप वहाँ प्रायः नाटको के अभिनय में रुचि लिया करते थे। एक बार जब आपने बगला के प्रख्यात कवि और नाटककर रवीन्द्रनाथ

ठाकुर तथा द्विजेन्द्रलाल राय के नाटकों के अभिनय में अपने कालेज में भाग लिया था तब आपको श्रेष्ठ अभिनय के लिए स्वर्ण पदक का पुरस्कार प्रदान किया गया था। आपके अभिनय से प्रभावित होकर आपके प्राचार्य ने आपको फिल्म-क्षेत्र मे जाने का परामर्श दिया था। उन दिनो भले घर के लड़कों के लिए यह उचित नहीं समझा जाता था, अतः आप तब फिल्म-क्षेत्र मे नही गये।

फिर एक दिन सहसा आपकी दृष्टि 'बम्बई टाकीज' के एक विज्ञापन पर पड़ी, जिसमे कम्पनी मे कार्य करने के लिए



पढ़े-लिखे युवक-युवतियों की माँग की गई थी। आपने भी अपना आवेदन पत्र भेज दिया। सौभाग्य से आपको इण्टरव्यू के लिए आमन्त्रित कर लिया गया और आपको वहाँ 'सिनेरियो लेखक' के रूप मे नौकरी मिल गई। फिर आप वहाँ से 'नेशनल स्टुडियोज' मे चले गए। आपने वहाँ जाकर उसके 2 चित्रों मे अभिनय भी किया था। 'अपना पराया' नामक फिल्म मे आपका अभिनय इतना प्रभावशाली रहा था कि लोग आज भी उसे यदा-कदा याद कर लेते है। फिर वातावरण अनुकूल न होने तथा स्वाभिमानी स्वभाव होने के कारण आपने अभिनय आदि का कार्य बन्द कर दिया और गीत लिखने लगे। इसके बाद आपने 'बाम्बे टाकीज' और 'लक्ष्मी प्रोडक्शन' मे कार्य करना प्रारम्भ किया और कई चित्रों के गीत लिखे। आपके द्वारा लिखित गीतों के कारण हिन्दी की जिन फिल्मों को लोकप्रियता प्राप्त हो चुकी है उनमें 'बसन्त सेना', 'वीर कुणाल', 'मीनल देवी', 'राम बाण', 'सिन्दूर' और 'सनम' आदि के नाम उल्लेखनीय है। आपने फिल्मिस्तान के प्रमुख चित्र 'शर्त' तथा एन० बी० एम० प्रोडक्शन के 'लाल कुँवर' मे भी अभिनय किया था।

आपने जहाँ फिल्मी कवि और अभिनेता के रूप मे अपनी उत्कृष्टतम प्रतिभा का प्रदर्शन किया था वहाँ आप अत्यन्त सरल और सहृदय कवि के रूप में भी अत्यन्त लोकप्रिय थे। आपने अपना उपनाम कुछ समय तक 'जख्मी' भी रखा था। आपकी कविताओ के दो सकलन 'इन्द्रधनुष' तथा 'भावना के फूल' नाम से प्रकाशित हो चुके है। आपकी 'भावना के फूल' नामक काव्य-कृति मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हो चुकी है। आपके द्वारा लिखित 'फीजी-प्रवासी श्री अमीचन्द विद्यालकार की जीवनी' नामक पुस्तक को देखकर आपकी गद्य-लेखन-क्षमता का भी परिचय मिल जाता है। किसी समय आप हिन्दी के अत्यन्त लोकप्रिय कवियो मे गिने जाते थे और आपको सुकवि नरेन्द्र शर्मा और अचल-जैसे रूमानी कवियों के समक्ष समझा जाता था। आप छायावादी भाव-धारा के गीतकारो में अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान रखते थे। फिल्मी क्षेत्र मे रहते हुए भी आपने विशुद्ध साहित्यिक रचनाएँ लिखने की दिशा मे पर्याप्त ध्यान दिया था। शुरू-शुरू के अपने कवि-जीवन मे आप प्रायः कवि सम्मेलनो मे भी भाग लिया करते थे और अच्छे-खासे 'अखाड़िये कवि' समझे जाते थे। अपनी साहित्यिक चेतना के सम्बन्ध मे आपका यह कथन सर्वथा अविस्मरणीय है—"मेरे हिन्दी-प्रेम ने मुझे सामाजिक एव साहित्यिक जीवन के विविध क्षेत्रो मे कार्य करने के जो अनेक सुअवसर प्रदान किये और फिल्मी दुनिया की तटस्थता से, मेरी साहित्यिक एव व्यक्तिगत स्फूर्तियों को बचाया, इसे मैं माँ हिन्दी का अपने प्रति एक महान् वरदान समझता हूँ।"

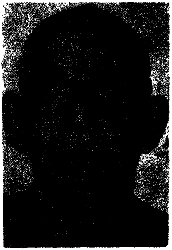
आपका निधन 12 फरवरी सन् 1976 को हुआ था।

श्री कुरूर नीलकंठन नम्पूतिरि

श्री नम्पूतिरि का जन्म केरल प्रदेश के त्रिचूर जनपद के आटाट्टु कुरूर नामक स्थान मे फरवरी 1896 मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने बड़े भाई कुरूर उण्णि नम्पूतिरि पाट के निरीक्षण मे घर पर ही हुई थी। बाद मे आपका अध्ययन त्रिचूर के ब्रह्मत्व-मठ मे सम्पन्न हुआ था। अपने बड़े भाई के चरण-चिह्नों पर चलकर आपने भी

समाज-सेवा के कार्यों में रुचि लेना प्रारम्भ कर दिया था। त्रिचूर के ब्रह्मस्वमठ के प्रशासन के विरुद्ध भी आपने बड़ा जोरदार आन्दोलन किया था। आपके इस आन्दोलन के फलस्वरूप ही मठ के महन्त को अपनी गद्दी छोड़नी पड़ी थी।

गांधी जी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन के प्रति आपका झुकाव प्रारम्भ से ही था और जब गांधी जी केरल गए थे तो आपने उनसे मिलकर उनका आशीर्वाद ग्रहण किया था। आपने सन् 1920 के सत्याग्रह आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेकर छः मास की जेल-यात्रा भी की थी। इस जेल-यात्रा के परिणाम स्वरूप आपको केरल के 'नम्पूतिरि समाज' ने अपने समाज से सर्वथा बहिष्कृत कर दिया था। मलयालम के प्रख्यात पत्र 'मातृभूमि' की जब सन् 1923 में स्थापना हुई तब आपने उसमें बहुत महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया था। आप मलयालम के 'लोकमान्यन' पत्र के सम्पादक भी रहे थे। जब आपने ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध इस पत्र में एक अत्यन्त उग्रतम सम्पादकीय लेख लिखा तो उसके विरुद्ध शासन ने अभियोग चलाया और माफी न माँगने पर आपको छः मास का कारावास भी भुगतना पड़ा।



आप स्वभाव से अत्यन्त उग्र और निर्भीक थे। फलस्वरूप आपको समय-समय पर केरल की पुलिस का कोप-भाजन भी बनना पड़ा था। जब गांधी जी ने दक्षिण में हिन्दी-प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया तब आप सम्पूर्ण भाव से समस्त प्रदेश में हिन्दी का कार्य करने में जुट गए। यह आपकी अद्भुत कर्मठता और कार्य-पद्धति का ही सुपरिणाम है कि आज केरल में हिन्दी इतनी लोकप्रिय है। हिन्दी प्रचार-कार्य के साथ-साथ योगासन तथा प्राणायाम आदि के कार्यों में भी आपकी रुचि रही थी।

आपका निधन 31 अगस्त सन् 1981 को हुआ था।

श्री नूतनकुमार तैलंग

श्री तैलंग का जन्म मध्य प्रदेश के सतना नामक नगर में 28 जून सन् 1915 को हुआ था। आप एक कुशल कवि और सुपठित लेखक थे। हिन्दी तथा अँग्रेजी की उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के अनन्तर आपने अनेक वर्ष तक मध्यप्रदेश के कई महाविद्यालयों में अध्यापन का कार्य किया था। जिन दिनों भारत की स्वतन्त्रता के उपरान्त सारे देश की रियासतों में लोकप्रिय सरकारों की स्थापना हुई थी तब आप भोपाल राज्य के शिक्षा विभाग में 'विद्यालय निरीक्षक' भी रहे थे। संस्कृत, हिन्दी, उर्दू और अँग्रेजी आदि कई भाषाओं पर आपका असाधारण अधिकार था।



आप एक कुशल शिक्षा-शास्त्री के रूप में तो विख्यात थे ही, अपनी कविताओं और अन्य साहित्यिक कृतियों के कारण भी आपने मध्यप्रदेश के साहित्यकारों में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया था। कविता के अतिरिक्त आप कहानी, नाटक, उपन्यास और समीक्षा आदि लिखने में भी परम प्रवीण थे। आपकी प्रकाशित कृतियों में 'अर्घ्य', 'धूप-दीप', 'पड़ोसी' और 'भोर का पंछी' के नाम विशेष महत्त्व रखते हैं।

आपका निधन 18 अगस्त सन् 1974 को हुआ था।

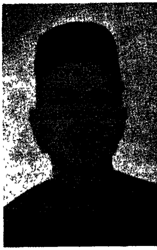
पण्डित नेकीराम शर्मा

आपका जन्म 8 सितम्बर सन् 1877 को हरियाणा प्रदेश के रोहतक जनपद (अब भिवानी) के केलगा नामक ग्राम में हुआ

था। आपके पूर्वज पहले पाण्डवों की राजधानी हस्तिनापुर (मेरठ) में रहते थे और बाद मे वे सहारनपुर जनपद के मगलौर नामक कस्बे मे जा बसे थे। फिर वे मगलौर छोडकर यहाँ आ बसे थे। मगलौर नामक स्थान के निवासी होने की स्मृति को चिरस्थायी बनाने की दृष्टि से आपके पूर्वजों ने केलंगा गाँव के समीपवर्ती तालाब पर 'मगोलसर' नामक गाँव बसाया था, जो आजकल केलगा गाँव से लगभग 3-4 फर्लांग की दूरी पर एक ऊजड़ खेडे के रूप मे पडा है। यहाँ जो एक तालाब बना हुआ है उसको अब भी 'मगोलसर' ही कहते है। आपके परिवार को आज भी 'मिश्रवशी मगलोरिया' कहा जाता है। आपके पिता का नाम पडित हरिराम मिश्र था।

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने पितामह पडित पृथ्वीराम की देख-रेख मे हुई थी। उनसे सस्कृत के अन्य कर्मकाण्ड के ग्रन्थों के साथ 'व्याकरण चन्द्रिका' का अध्ययन भी आपने किया था। 11 वर्ष की आयु मे आपने कर्मकाण्ड की विभिन्न पद्धतियो को सीखकर 'पौरोहित्य' का अपना पारम्परिक कार्य प्रारम्भ कर दिया था। अपने पितामह के सत्सग के कारण आपने 'रामचरितमानस' का अच्छा अध्ययन कर लिया था और बडे मधुर कण्ठ से उसका पारायण किया करते थे। जब दुर्भाग्यवश सन् 1900 मे आपके पितामह श्री पृथ्वीराम मिश्र का देहान्त हो गया तो आपकी शिक्षा अधूरी रह गई। अपनी इस शिक्षा-सम्बन्धी कमी को पूरा करने के लिए आप सीतापुर (उत्तर प्रदेश) जाकर वहाँ की 'विक्टोरिया सस्कृत पाठशाला' मे प्रविष्ट हो गए। उन दिनों वहाँ पर आपके अध्यापक पण्डित विश्वनाथ शुक्ल थे, जो आपसे बडा स्नेह करते थे। यहाँ की शिक्षा समाप्त करके आप काशी जाकर वहाँ के "क्वीन्स कालेज' मे प्रविष्ट हो गए। वहाँ पर आप व्याकरण और साहित्य का अच्छा अध्ययन करने के उपरान्त फिर सीतापुर लौट आए। सीतापुर मे आकर आपने 'श्री सनातनधर्मवर्धिनी सभा' की स्थापना करके अपने कर्ममय जीवन का प्रारम्भ किया। उस सभा की ओर से होने वाले सत्संगों मे आपने अपनी भाषण-कला को इतना विकसित कर लिया था कि थोडे ही दिनो में आप अच्छे वक्ता हो गए। शुरू-शुरू मे आप पहले लिखकर उसे याद करके बोला करते थे, किन्तु बाद मे आपको अभ्यास हो गया और आप धुआँधार भाषण देने लगे। एक बार जब सन् 1905 मे बनारस मे काग्रेस का वार्षिक अधिवेशन श्री गोपालकृष्ण गोखले की अध्यक्षता मे हुआ था तब आपने उस अधिवेशन के बाद 'टाउन हाल' में हुई सभा मे हिन्दी मे जो भाषण दिया था, वह इतना प्रभावशाली था कि महामहोपाध्याय पण्डित शिवकुमार शास्त्री जब उधर से गुजरे तो वे आपकी भाषण-कला से बहुत प्रभावित हुए थे। उन्होंने आपका पूरा भाषण सुनकर यह विचार प्रकट किए थे—"इस लडके का जब इस समय यह हाल है तो आगे जाकर न जाने क्या बनेगा।" शास्त्री जी की यह भविष्यवाणी पूर्णत. सार्थक हुई और शीघ्र ही आप देश के अच्छे वक्ताओ मे गिने जाने लगे।

इसके बाद आपने अपनी जन्मभूमि मे लौटकर अपना पारम्परिक कार्य प्रारम्भ कर दिया, किन्तु फिर आप पजाब की 'कोट कपूरा' नामक मण्डी मे चले गए। जिन दिनो आप 'कोट कपूरा' मे थे तब आपको अखबार पढने का चस्का लग गया था। थोडे दिन वहाँ रहने के उपरान्त आप फिर अपनी जन्मभूमि मे वापिस लौट आए। गाँव म आकर आपने 'वेंकटेश्वर समाचार' और 'अभ्युदय' नामक



साप्ताहिक पत्र मँगाने प्रारम्भ कर दिए। धीरे-धीरे आप इन दोनो पत्रो म लेख आदि लिखने लगे। उन्ही दिनो सन् 1907 मे जब आपने 'वेंकटेश्वर समाचार' मे पजाब केसरी लाला लाजपतराय के देश-निष्कासन का समाचार पढा तब आपने यह प्रतिज्ञा की कि "जब तक अँग्रेजी राज्य समाप्त नही होगा, तब तक मैं चैन से नही बैठूंगा।" इस बीच सन् 1908 मे लोकमान्य बाल गगाधर तिलक पर मुकद्दमा चला और उसमे उनको सजा हुई तब भी आपने एक दिन का व्रत रखकर अपनी उक्त प्रतिज्ञा को दुहराया था। इसके उपरान्त आप सक्रिय राजनीति मे उतर पडे और देश की

स्वतन्त्रता के लिए होने वाले अनेक आन्दोलनों में पूरी तरह भाग लिया। आपने जहाँ राजनीतिक क्षेत्र में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया था वहाँ समाज-सेवा के क्षेत्र मे भी आपकी देन सर्वथा महत्त्वपूर्ण थी।

अपने इस राजनीतिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र मे कार्य करते हुए आपका जो सम्पर्क सनातन धर्म के नेता व्याख्यान वाचस्पति पण्डित दीनदयालु शर्मा और पण्डित झाबरमल्ल शर्मा आदि कई महानुभावो से हुआ था उससे आपको प्रचुर प्रेरणा प्राप्त हुई थी। फलस्वरूप आपने राजनीति के अतिरिक्त सस्कृति के प्रचार और समाज के सुधार के लिए भी अनेक उल्लेखनीय कार्य किए थे। आपके इन कार्यों का सामान्यत: सारे देश के व्यापारी वर्ग और विशेषत मारवाड़ी समुदाय के लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ा था। राजनीति के क्षेत्र मे भी आपका इतना महत्त्वपूर्ण स्थान बन गया था कि महात्मा गांधी के अतिरिक्त महामना पडित मदनमोहन मालवीय आदि देश के अनेक शीर्षस्थ नेताओ से आपका अच्छा सम्पर्क हो गया था। आपने विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लेकर जहाँ कारावास की अनेक नृशस यातनाएँ भोगी थी वहाँ आपने हरियाणा की जनता मे भी अद्भुत चेतना जागृत की थी। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आपने 'हरियाणा केसरी' नामक पत्र का सम्पादन एव प्रकाशन भी किया था। महात्मा गाधी ने एक बार जब बिना डिक्लेरेशन की पत्रिका का प्रकाशन किया था तब आप उनके अँग्रेजी लेखो का हिन्दी अनुवाद किया करते थे। आपने जहाँ 'अग्रवाल महासभा' की स्थापना करके वैश्य समुदाय को समाज-सुधार की दिशा मे अग्रसर किया था वहाँ हरियाणा के किसानो के उद्धार के लिए भी आपने अनेक आन्दोलन चलाए थे। आपका जीवन सस्कृति, समाज-सुधार और राजनीति की अद्भुत त्रिवेणी था। आपने 'हिन्दू महासभा' में सम्मिलित होकर हिन्दू समाज मे फैली हुई अनेक कुरीतियों को दूर करने का प्रशसनीय कार्य किया था।

यह आपके कर्मठ जीवन का सबसे बडा प्रमाण है कि आपकी देश, धर्म और समाज के लिए की गई अनेकविध सेवाओं के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए सन् 1953 मे कलकत्ता में आपका अत्यन्त भावभीना अभिनन्दन किया गया था और उस अवसर पर आपको एक 'अभिनन्दन ग्रन्थ' भी भेंट किया गया था। उक्त अवसर पर आपने जो उद्गार व्यक्त किये थे वे भी आपकी देश-भक्ति के परिचायक है। आपने कहा था—"आपका यह सिपाही बूढ़ा हो गया है, परन्तु मुझे प्रसन्नता है कि मै युद्ध-भूमि मे जख्मी हुआ हूँ, घर मे लेटकर बीमार नही हुआ। अब चाहे मै मर जाऊँ परन्तु इस खुशी को साथ ले जाऊँगा।···जो कृपा, जो श्रद्धा, जो प्रेम आप लोगो ने मेरे प्रति दिखाया है वह वापिस न लीजिएगा। मैंने जो काम किया, आप लोगो के सहयोग से किया। मुझे यह खुशी है कि मैं देश को आजाद देख सका। मैने लोकमान्य तिलक के चरणों मे बैठकर प्रतिज्ञा की थी कि जब तक देश स्वतन्त्र न होगा, आराम से न बैठूंगा। यह प्रतिज्ञा प्रत्येक आपत्ति के समय मुझे याद रही है।"

आपका निधन 8 जून सन् 1956 को हुआ था।

पण्डित नेमनिधि शर्मा 'निर्झर'

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के बदायूं जनपद के 'भतरी गोवर्धनपुर' नामक ग्राम मे सन् 1910 में हुआ था। आपकी शिक्षा बिलसी के मिडिल स्कूल मे हुई थी और वहाँ से मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त ट्रेनिंग करके आप बिलसी के प्राइमरी स्कूल में अध्यापक हो गए थे। आपके पिता पण्डित रामसहाय शर्मा सस्कृत और फारसी के अद्वितीय विद्वान् होने के साथ-साथ हिन्दी और ब्रजभाषा के अच्छे कवि थे। श्री 'निर्झर' को कविता करने की प्रेरणा अपने पिता जी द्वारा ही प्राप्त हुई थी। आपने सबसे पहली रचना सन् 1927 मे 'ताजमहल' शीर्षक मे की थी। यद्यपि वह कथात्मक अधिक है, किन्तु उससे आपके छन्द-ज्ञान का अच्छा परिचय मिल जाता है। आपकी उस कविता की कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है:

मुमताज मरणासन्न थीं, व्याकुल कलेवर क्लेश से।
पर प्राण जाते थे न सहसा, मजु मानस-देश से॥
सम्राट् ने रोते हुए नत नेत्र, ऊपर को किये।
पूछा, 'बता दो कौन-सी तकलीफ है तुमको प्रिये!'

सन् 1927 से सन् 1937 के बीच आपने बहुत-सी अत्यन्त परिपुष्ट रचनाएँ लिखी थी, जिनमे 'गणिका',

'विधवा' तथा 'गरीब किसान' प्रमुख हैं। आपकी इन रचनाओं मे करुणा, ओज और हार्दिक सहानुभूति के दर्शन हो जाते हैं। जिन दिनों सारे देश में ब्रिटिश नौकरशाही के द्वारा होने वाले अनेक अत्याचारों का नर्तन हो रहा था तब आपने अपनी 'ज्वाला' शीर्षक रचना मे उसके प्रति जो रोष और विद्रोह व्यक्त किया था वह भी अद्भुत है। आपने लिखा था .

ज्वाला जले, ज्वाला जले,
ऐसी विकट ज्वाला जले।
जिसमे नृशस फिरंगियों के,
मुण्ड की माला जले॥
हर शत्रु मतवाला जले,
कानून हर काला जले।
अन्याय और अनीति का-
फैला हुआ जाला जले॥

आपने राष्ट्रीय भावनाओ की रचनाओ के अतिरिक्त छायावादी शैली मे भी कुछ शृगार तथा प्रेम की रचनाएँ की थीं। आप अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे महात्मा गाधी पर एक खण्ड-काव्य भी लिख रहे थे। इस काव्य के दो सर्ग ही आप लिख पाए थे कि क्षय रोग से ग्रस्त होने के कारण 6 जून सन् 1952 को आपका शरीरान्त हो गया।

डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री ज्योतिषाचार्य

आपका जन्म राजस्थान के धौलपुर जनपद के बाबरपुर (राजाखेडा) नामक ग्राम मे 16 सितम्बर सन् 1922 को हुआ था। आप जब केवल 6 मास के ही थे कि आपके पिता श्री बलबीर जी का असामयिक देहान्त हो गया था। परिणामस्वरूप आप अपने मामा के पास 'बसई घियाराम' मे चले गए थे और वहाँ पर ही आपकी प्रारम्भिक शिक्षा हुई थी। बाद मे आपने राजाखेडा के मिडिल स्कूल मे मिडिल की परीक्षा देकर 'कुन्दकुन्द विद्यालय' की प्रवेशिका कक्षा मे प्रवेश ले लिया था। इसके बाद आप बनारस चले गए और वहाँ के 'स्याद्वाद विद्यालय' से आपने जैनधर्म शास्त्री, ज्योतिषतीर्थ और न्यायतीर्थ की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। इन परीक्षाओ के अनन्तर स्वाध्यायी विद्यार्थी के रूप मे आपने हिन्दू विश्वविद्यालय से हिन्दी, संस्कृत और प्राकृत में एम० ए० की परीक्षाएँ देकर भागलपुर तथा मगध विश्व-विद्यालय से क्रमश सन् 1961 में पी-एच० डी० तथा सन् 1965 मे डी० लिट्० की उपाधियाँ प्राप्त की थी।

अपने अध्ययन और शोध-कार्य की समाप्ति के पश्चात् आपने सर्वप्रथम आरा की 'जैन रात्रि पाठशाला' मे अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया और बाद मे 'जैन बाल विश्राम' के प्रधानाध्यापक हो गए। उन्ही दिनो आप 'जैन सिद्धान्त भवन आरा' के पुस्तकालयाध्यक्ष भी रहे थे। कुछ समय तक सुलतानगज (भागलपुर) के सस्कृत विद्यालय मे ज्योतिष का अध्यापन करने के बाद आप 'जैन कालेज आरा' मे आ गए थे। आपने सन् 1940 से सन् 1974 तक निरन्तर 34 वर्ष तक शिक्षक का कार्य किया था। इस अवधि मे आपके निर्देशन मे असख्य छात्रो ने शोध-कार्य करके पी-एच० डी० की उपाधियाँ प्राप्त की थी।



एक कुशल और निष्णात अध्यापक होने के साथ-साथ आप गम्भीर एवं विवेकशील लेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित 'मुहूर्त मार्तण्ड' (1941), 'केवलज्ञान प्रश्न चूडामणि' (1950), 'भारतीय ज्योतिष' (1952), 'भद्रबाहु सहिता' (1956), 'हिन्दी जैन साहित्य परिशीलन' (1956), 'आदिपुराण मे प्रतिपादित भारत ग्रन्थ' (1970) तथा 'सस्कृत गीतकाव्यानुचिन्तनम्' (1971) आदि अत्यन्त प्रमुख है। इनमे से प्राय सभी पर उत्तर प्रदेश सरकार ने पुरस्कार प्रदान किया था। आपने 'भगवान् महावीर और उनकी आचार्य परम्परा' नामक 2000 पृष्ठो का ग्रन्थ लिखकर तो अपनी प्रकाण्ड प्रतिभा का परिचय दिया था। इन ग्रन्थो के अतिरिक्त और भी छोटी-मोटी कई पुस्तके

आपकी प्रतिभा का ज्वलन्त साक्ष्य प्रस्तुत कर रही हैं, जिनमे से 'विष्णुपुराण मे प्रतिपादित भारत','अभिधान चिन्तामणि', 'वैजयन्ती कोष', 'ज्वलित प्रदीप', 'रूपक', 'शब्द रत्नावली' तथा 'युग और साहित्य' उल्लेख्य है।

आपने अध्यापन और लेखन की दिशा में तो अभिनन्दनीय कार्य किया ही था, साथ ही आप अनेक प्रमुख साहित्यिक संस्थाओ से भी जुड़े हुए थे। ऐसी संस्थाओं मे 'आरा नागरी प्रचारिणी सभा' और 'बिहार प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के अतिरिक्त 'वैशाली प्राकृत शोध-संस्थान' और 'दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद्' के नाम विशेष ध्यातव्य हैं। आपने कई वर्ष तक 'जैन सिद्धान्त भवन आरा' के पत्र 'जैन सिद्धान्त भास्कर' का सम्पादन भी अत्यन्त योग्यतापूर्वक किया था।

आपका निधन 9 जनवरी सन् 1974 को पटना मे हुआ था।

श्री पंचकौड़ी बन्द्योपाध्याय

आपका जन्म बिहार प्रदेश के भागलपुर नामक नगर मे सन् 1867 मे हुआ था। आपके पिता श्री वेणीमाधव बनर्जी वहाँ की कलक्टरी कचहरी मे सेवा-रत थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा पटना कालेजिएट स्कूल तथा पटना कालेज मे हुई थी। वहाँ से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप उसी कालेज मे अध्यापक हो गए थे। फिर कुछ दिन बाद आपने अध्यापन के कार्य को सर्वथा तिलाजलि देकर काशी जाकर संस्कृत पढी थी और कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले हिन्दी पत्र 'बंगवासी' पत्र के सम्पादक हो गए थे। अपनी मातृभाषा बगला होते हुए भी आपका हिन्दी, संस्कृत, अँग्रेजी और उर्दू आदि कई भाषाओं पर असाधारण अधिकार था।



'बगवासी' के उपरान्त आपने 'भारत मित्र','हितवादी', 'टेलीग्राफ' तथा 'बंगाली' आदि कई पत्रो का सम्पादन किया था। आप व्यंग्य तथा हास्य के अच्छे लेखक थे। आप बड़ी तीखी तथा सटीक शैली मे व्यग्य लिखने की अद्भुत क्षमता रखते थे। बगाल के सामाजिक इतिहास का गहन ज्ञान रखने के साथ-साथ आपकी 'तन्त्र-शास्त्र' मे भी अच्छी गति थी। आपने अपने जीवन का अधिकाश समय हिन्दी पत्रो का सम्पादन करने मे ही व्यतीत किया था। अन्तिम दिनो मे आप दैनिक 'नायक' का सम्पादन किया करते थे।

आपका निधन 16 नवम्बर सन् 1923 को हुआ था।

श्री पतराम गौड़ 'विशद'

श्री गौड जी का जन्म राजस्थान के पिलानी नामक स्थान के श्री खेमराज गौड के यहाँ 13 जून सन् 1913 को हुआ था। यह वही पिलानी है जो सेठ घनश्यामदास बिरला जी की भी जन्मभूमि है। देशी राजाओ के शासन-काल मे यहाँ कोई उल्लेखनीय शिक्षा-संस्थान तक नही था और आज वहाँ बिरला जी की कृपा से विश्वविद्यालय-स्तर का 'बिरला इस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी एण्ड साइन्सेज' है। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा बिरला जी के इसी संस्थान मे हुई थी और आपने बाद मे सन् 1936 मे आगरा विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी मे एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। उन दिनो सारे राजस्थान के 'शिक्षा-संस्थान' आगरा विश्वविद्यालय मे ही सम्बद्ध हुआ करते थे।

अपनी शिक्षा पूर्ण करने के उपरान्त आपने सन् 1936 मे पहले 'बिरला हाई स्कूल' मे शिक्षक का कार्य प्रारम्भ किया था और बाद मे सन् 1955 तक वहाँ के कालेज विभाग मे प्राध्यापक रहे थे। तदुपरान्त आप नवसारी (गुजरात) के एस०पी० गार्डी कालेज मे चले गए थे। किन्तु पिलानी के आकर्षण ने आपको फिर वहाँ बुला लिया। केवल 14 महीने तक वहाँ कार्य करने के उपरान्त आप सन् 1956

में 'बिरला साइन्स कालेज' के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हो गए। वहाँ कार्य करते हुए जब पिलानी की सभी शिक्षण-संस्थाओं का एकीकरण होकर 'बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी एण्ड साइन्सेज' बना तब आप उसमें 'असिस्टेंट प्रोफेसर' और हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हो गए तथा इस पद पर आप सन् 1976 तक कार्य-रत रहे।



आप अच्छे पारंगत शिक्षक होने के साथ-साथ उच्चकोटि के भाषा-शास्त्री और सुलेखक थे। आपके द्वारा सम्पादित 'वीर सतसई' नामक ग्रन्थ अनेक वर्ष तक राजस्थान विश्वविद्यालय के एम०ए० के पाठ्य-क्रम में रहा था। राजस्थानी भाषा में भी आपने कुछ कहानियाँ तथा कविताएँ लिखी थी। आपकी कहानियों का संकलन जहाँ 'चौबोली' नाम से प्रकाशित हुआ था वहाँ आपके द्वारा लिखित 'रेगिस्तान' नामक खण्डकाव्य भी उल्लेखनीय है। 'विशद' उपनाम से हिन्दी में भी आप कविताएँ लिखा करते थे। आपके द्वारा तुलसी के सम्बन्ध में लिखी गई एक दीर्घ कविता 'बिरला कालेज' के मैगजीन के 13 पृष्ठों में छपी थी। राजस्थानी भाषा के अतिरिक्त आप अपभ्रंश के भी अच्छे मर्मज्ञ थे। आपने जहाँ 'मरु भारती'-जैसी अनेक पत्रिकाओं में शोध-निबन्ध लिखे थे वहाँ बहुत-से छात्रों का पी-एच० डी० के कार्य में मार्ग-प्रदर्शन भी किया था। आपने 'बंगाल हिन्दी मण्डल' के 'राजस्थानी हिन्दी शब्दकोश' के निर्माण में सहायता करने के अतिरिक्त प्राचीन भारतीय टैक्नोलॉजी पर 'बिरला इंस्टीट्यूट' में कई उपयोगी भाषण भी दिये थे।

यहाँ यह बात विशेष उल्लेख-योग्य है कि आपने जहाँ राजस्थानी और अपभ्रंश भाषाओं के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया था वहाँ आपने ही सर्वप्रथम भारत-सरकार को खेतड़ी में ताँबा और सोना होने की सूचना प्रदान की थी और इस विषय में पत्र-पत्रिकाओं में कई लेख लिखे थे। अपने अध्यापकीय जीवन में आपका झुकाव अध्यात्म और जड़ी-बूटियों की खोज करने की ओर भी हो गया था। परिणामत. आपने जहाँ काशी की 'थियोसोफिकल सोसाइटी' से सम्बद्ध होकर अपनी आध्यात्मिक भूख मिटाई वहाँ सैकड़ों रोगियों को गुलाब के फूलों और मन्त्रों की सहायता से पूर्णत स्वस्थ किया था। 'ज्योतिष' और 'कायाकल्प'-जैसे विषयों में भी आपकी पर्याप्त रुचि थी। आपने सुजानगढ के सेठ खेतान द्वारा संचालित 'महन्ताश्रम' में आयुर्वेद के माध्यम से कैंसर रोग की चिकित्सा करने का अभिनन्दनीय कार्य किया था।

आपका निधन 13 फरवरी सन् 1981 को हुआ था।

श्री पदमचन्द जैन 'भगतजी'

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ नगर के एक छावड़ा गोत्रीय जैन-परिवार में श्री अमोलकचन्द जैन के यहाँ सन् 1915 में हुआ था। आगरा नगर के प्रसिद्ध कवि श्री सूरजभान 'प्रेम' आपके गुरु थे। आप हिन्दी के अच्छे कवि थे और आपने हिन्दी में गजल, कव्वाली, पद और भजन आदि अत्यन्त तन्मयता से लिखे थे। आपकी ऐसी रचनाएँ 'पदम शतक' नामक पुस्तक में संकलित की गई हैं।

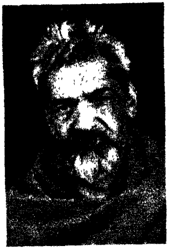


आपका निधन सन् 1979 में हुआ था।

श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी

श्री बख्शी जी का जन्म मध्य प्रदेश के खैरागढ नामक स्थान

मे सन् 1894 मे हुआ था। आपका अक्षर-ज्ञान सन् 1903 मे प्रारम्भ हुआ था और हाई स्कूल की कक्षाओ तक पहुँचते-पहुँचते आप बाबू देवकीनन्दन खत्री की 'चन्द्रकान्ता' तथा 'चन्द्रकान्ता सन्तति' नामक कृतियो के माया-जाल मे फँसकर आप पूर्णत साहित्य को समर्पित हो चुके थे। इस सम्बन्ध मे आपके इन शब्दो से व्यापक प्रकाश पडता है—"यथार्थ मे किसी चुडैल के माया-जाल से कही अधिक दृढतर पाश खत्री जी का माया-जाल था। मै यह नही समझता था कि मैं भैरोंसिह नही हो सकता। मैं टूटे-फूटे घरो मे अवश्य



घूमने जाया करता था, मैं खेतों मे जाकर उस आसमानी रग के फूल की खोज करता था, जिसके रस से जगन्नाथ ने वीरेन्द्रसिह को चैतन्य किया था। मैं तो छोटा था, पर मेरे इस काम में सहायक जो गजराज बाबू थे, वे ऊँची कक्षा मे पढते थे। यह सच है कि वे स्कूल से नही भागते थे। पर अवसर मिलते ही वे भी मेरे साथ घूमा करते थे। 'चन्द्रकान्ता सन्तति' के माया-जाल मे वे भी आबद्ध हो चुके थे। एक बार हम लोगो ने बडे परिश्रम से एक बेहोशी की दवा तैयार की। हमे विश्वास था कि तम्बाकू के साथ किसी को वह दवा पिलाने से वह बेहोश हो जायगा। हमने उसे एक व्यक्ति को दिया। वह गजेडी था। उसे पीकर वह प्रसन्न हुआ, परन्तु बेहोश नही हुआ।" साहित्य के प्रति इस अनुराग ने बख्शी जी को कक्षा मे भागने तक को विवश किया, जिसके कारण आपको अपने विद्यालय के तत्कालीन मुख्याध्यापक पण्डित रविशकर शुक्ल से बेंतो की सजा भी भुगतनी पडी थी। आप वही शुक्ल जी है, जो बाद मे राजनीति मे आकर मध्यप्रदेश के मुख्यमन्त्री रहे थे।

साहित्य-सेवा के क्षेत्र मे कुछ कर गुजरने की इस ललक का दुष्परिणाम यह हुआ कि आप मैट्रिक की परीक्षा मे अनुत्तीर्ण हो गए। किन्तु प्रसन्नता की बात यह हुई कि आपकी पहली कहानी 'भाग्य' शीर्षक से जबलपुर से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'हितकारिणी' में छप गई। इससे आप अत्यन्त उत्साहित हुए थे। फिर प्रयास करके आपने मैट्रिक किया और सन् 1912 में आप बी० ए० की परीक्षा में भी उत्तीर्ण हो गए। लगभग इसी समय आपका 'सोना निकालने वाली चीटियाँ' शीर्षक एक लेख उस समय की सर्वश्रेष्ठ पत्रिका 'सरस्वती' में छपा था। सन् 1916 में आपने 'राजनादगाँव' के हाई स्कूल में शिक्षक के रूप में कार्य प्रारम्भ किया और साहित्य-रचना की दिशा मे भी बराबर प्रयास-रत रहे। धीरे-धीरे लेखन के क्षेत्र मे आपने इतनी दक्षता प्राप्त कर ली थी कि आपकी गणना अच्छे लेखको मे होने लगी। जब सन् 1920 मे आपको आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका का सहकारी सम्पादक बनाकर प्रयाग आने का आमन्त्रण दिया तब तो आपका मन-कुरग कुलाँचें भरने लगा था। फलस्वरूप आप स्कूल से मुक्ति प्राप्त करके वहाँ पहुँच गए।

'सरस्वती' का सम्पादन आपने सन् 1921 से सन् 1925 तक किया था। इस काल मे आपको हिन्दी के बहुत-से ख्यातिप्राप्त लेखको के विरोध का भी सामना करना पडा था। ऐसी विषम परिस्थिति मे पत्रिका को नियमित रूप से प्रकाशित करने के लिए आपको अनेक विषयो पर बहुत-से लेख लिखने को विवश होना पड़ा था। उन दिनो आपको सहकारी के रूप मे श्री देवीदत्त शुक्ल मिले थे, जिन्होंने आपके बाद अनेक वर्ष तक 'सरस्वती' का सम्पादन किया था। आपके सम्पादन-काल मे 'सरस्वती' का 'पुस्तक समीक्षा' वाला स्तम्भ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझा जाता था। उस समय आपको उस स्तम्भ के लिए जो नये किस्म की समीक्षाएँ लिखनी पडी थीं वे आपकी 'हिन्दी साहित्य विमर्श' नामक पुस्तक मे छपी है। इस अवधि मे आपने कविता, कहानी और समीक्षा सभी क्षेत्रो मे अपनी विशिष्ट प्रतिभा प्रदर्शित की थी। आपकी कविताओ का पहला संकलन 'शतदल' नाम से प्रकाशित हुआ था। आपने ही सर्वप्रथम श्री मुकुटधर पाण्डेय की 'कुररी के प्रति' नामक रचना को हिन्दी की प्रथम छायावादी रचना घोषित किया था। तब आपने ही 'सरस्वती' मे छायावादी रचनाओं को छापकर उस भाव-धारा को प्रचुर प्रश्रय और प्रोत्साहन दिया था।

विदेशी साहित्य-सिद्धान्तों के परिप्रेक्ष्य मे हिन्दी-समीक्षा प्रस्तुत करने की दिशा मे भी आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान रहा था।

अक्तूबर सन् 1925 में आप 'सरस्वती' से त्यागपत्र देकर फिर अपनी जन्म-भूमि खैरागढ़ लौट गए और मध्य-प्रदेश के बस्तर क्षेत्र के 'कॉकेर' नामक स्थान मे शिक्षक का कार्य करने लगे। सन् 1927 मे आप फिर 'सरस्वती' का सम्पादन करने के लिए प्रयाग चले गए और सन् 1929 मे आपने फिर स्वेच्छा से त्यागपत्र दे दिया। आपके इस त्याग-पत्र की पृष्ठभूमि आपके उत्तराधिकारी पण्डित देवीदत्त शुक्ल के इन शब्दों से जानी जा सकती है—"उस समय 'माधुरी' और 'चाँद' दोनों ही पत्रिकाएँ बडी धूम-धाम से निकलती थी। परन्तु 'सरस्वती' अपनी अलग विशेषता रखती थी। इसका सारा श्रेय उसके विद्वान् सम्पादक श्री बख्शी जी को था। बख्शी जी बडे भावुक थे। वे लोगो के तीव्र कटाक्षो तथा कुत्सापूर्ण संकेतो को अधिक समय तक नही सह सके और अन्त मे ऊबकर 'सरस्वती' से अलग हो जाना ही उन्होंने श्रेयस्कर समझा।" सन् 1952 से 1956 तक आपने खैरागढ से ही 'सरस्वती' का सम्पादन किया था, और अपने लम्बे सम्पादकीय लेख वहाँ से ही लिखकर भेज दिया करते थे। उन दिनों श्री देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त' आपके सहकारी के रूप मे प्रयाग मे कार्य-रत थे।

सन् 1929 मे आप 'सरस्वती' से त्यागपत्र देकर खैरा-गढ आ गए और इस अवधि मे आपने जमकर साहित्य-रचना की। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'शतदल' और 'हिन्दी साहित्य विमर्श' के अतिरिक्त 'अश्रुदल', 'अजलि', 'कथा-चन्द्र', 'झलमला', 'और कुछ', 'कुछ', 'पच पात्र', 'पद्मवन', 'प्रदीप','अन्तिम अध्याय', 'प्रबन्ध पारिजात','मकरन्द बिन्दु', 'यात्री', 'मेरे प्रिय निबन्ध', 'देश की सैर', 'ससार की सैर' 'मेरी अपनी कथा', 'विश्व साहित्य', 'समस्या और समा-धान', 'साहित्य-चर्चा', 'बिखरे पन्ने', 'हिन्दी कथा-साहित्य', 'तुम्हारे लिए', 'तीर्थ केन्द्र', 'जिन्हें नही भूलूँगा' और 'नव कथा परिचय' आदि उल्लेखनीय है। आपने श्री नर्मदाप्रसाद खरे और श्री हेमचन्द्र मोदी के साथ 'साहित्य शिक्षा' तथा 'मजरी' नामक पुस्तकों का सम्पादन भी किया था। सन् 1935 में आपने खैरागढ के 'विक्टोरिया हाई स्कूल' मे अँग्रेजी शिक्षक का कार्य प्रारम्भ किया था और 14 वर्ष तक निरन्तर वहाँ शिक्षण करने के उपरान्त आप स्वेच्छा से सन् 1949 मे वहाँ से कार्य-मुक्त हुए थे। इसके बाद भी आपने सन् 1949 से सन् 1957 तक खैरागढ राज्य की राजकुमारियो को पढाने का काम किया था। बाद मे सन् 1959 में आपको राजनांदगाँव के 'दिग्विजय स्नातकोत्तर महाविद्यालय' के हिन्दी-विभागाध्यक्ष बनाया गया था, इससे आपकी योग्यता और क्षमता का परिचय मिलता है।

आपकी बहुविध साहित्य-सेवाओ को दृष्टि मे रखकर जहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने आपको सन् 1949 मे 'साहित्य वाचस्पति' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी वहाँ सन् 1960 मे आपको सागर विश्वविद्यालय ने डी० लिट्० की उपाधि से विभूषित किया था। आप जहाँ सन् 1950 मे मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभा-पति निर्वाचित हुए थे वहाँ मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने अपने रायपुर अधिवेशन के अवसर पर आपका अत्यन्त भावभीना सम्मान किया था। सन् 1968 से मध्यप्रदेश शासन द्वारा आपके प्रति विशेष सम्मान प्रदर्शित करने की दृष्टि मे आजीवन तीन सौ रुपये प्रतिमास की आर्थिक सहायता भी प्रदान की गई थी।

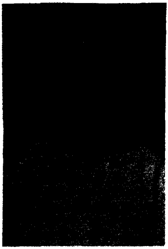
आपका निधन 28 दिसम्बर सन् 1971 को रायपुर के डी० के० अस्पताल मे 77 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री पद्मनारायण आचार्य

श्री आचार्य का जन्म मध्यप्रदेश के नरसिंहपुर जनपद के गाडरवारा नामक स्थान मे 10 जनवरी सन् 1908 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने जन्म-स्थान मे ही हुई थी और बाद मे आप उच्च शिक्षा के लिए काशी चले गए थे। आपने काशी के 'हिन्दू विश्वविद्यालय' मे हिन्दी तथा सस्कृत दोनो विषयो मे एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करके सन् 1931 मे विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग मे अध्यापन-कार्य प्रारम्भ कर दिया था। अपने इस कार्य-काल मे आपने जहाँ अनेक वर्ष तक 'पण्डित पत्र', 'ब्रह्म-विद्या' और 'गीता धर्म' नामक पत्रो का सफल सम्पादन किया था वहाँ आप काशी नागरी प्रचारिणी सभा की शोध पत्रिका 'नागरी

प्रचारिणी पत्रिका' के भी सम्पादक रहे थे।

आपके साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ 'शिक्षा में सुधार', 'वैदिक स्वर', 'शब्द-शक्ति', 'साहित्य की आत्मा', 'भक्ति-भाव की अभिनव मीमांसा' प्रभृति अनेक शोध-निबन्धों के लेखन द्वारा हुआ था और भाषा-विज्ञान तथा समीक्षा-शास्त्र के आप प्रकाण्ड पण्डित थे। आपके द्वारा लिखित 'भाषा रहस्य' (1934) नामक ग्रन्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस पर आपको नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से 'द्विवेदी स्वर्ण पदक' भी प्रदान किया गया था। सन् 1934 से लेकर सन् 1938 तक आपने काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय के तत्कालीन हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ० श्यामसुन्दरदास के साथ संयुक्त लेखक के रूप में कई ग्रन्थ लिखे थे। आपके द्वारा लिखित तथा सम्पादित अन्य ग्रन्थों में 'नई कहानियाँ', 'गद्य भारती', 'नवरत्न', 'चुने फूल' तथा 'सफल एकांकी' आदि उल्लेख्य है। 'कामायनी' के सम्बन्ध में भी आपकी शोध अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी।



आपका निधन 31 जनवरी सन् 1968 को काशी में हुआ था।

श्री पद्मप्रकाश 'सन्तोष'

श्री 'सन्तोष' जी का जन्म उत्तर प्रदेश के सहारनपुर नगर में 16 अक्तूबर सन् 1918 को हुआ था। अपने किशोर-काल से आप सुन्दर कविताएँ लिखने लगे थे। इसकी प्रेरणा आपको हिन्दी के प्रमुख पत्रकार और कवि श्री भगवत्प्रसाद शुक्ल 'सनातन' (सम्पादक 'कोकिल') से मिली थी।

आप एक सहृदय कवि होने के साथ-साथ उत्कृष्ट लेखक भी थे। अनुभूतिशील गद्य लिखने में आप अत्यन्त दक्ष थे। आपकी अनुभूति की तीव्रतम गहराइयों का परिचय आपकी 'सर्वे भवन्तु सुखिन' नामक कृति से मिलता है। 'माँ तेरे ये लाल' नामक अपनी गद्य-पुस्तक में श्री 'सन्तोष' जी ने राष्ट्र की वेदी पर हँस-हँस कर अपने प्राणों की बलि चढ़ाने वाले युवकों की जीवन-गाथाएँ अत्यन्त सरल और ओजमयी शैली में प्रस्तुत की है।



आपकी काव्य-प्रतिभा का सुपुष्ट प्रमाण आपके 'भक्तिमती मीरा' नामक काव्य में देखने को मिलता है। आपने 'भव्य भारत' नामक एक मासिक पत्र का सम्पादन भी कुछ दिन तक किया था। इसके अतिरिक्त 'देशभक्त', 'मजदूर मेल' आदि पत्रों के संचालन में भी आपका प्रमुख सहयोग रहा था। आप एक 'समाचार समिति' का संचालन भी किया करते थे।

आपका निधन सन् 1976 में हुआ था।

श्री पन्नालाल जैन (सिंघई)

आपका जन्म 12 जनवरी सन् 1893 को मध्यप्रदेश के सागर जनपद के देवरी नामक स्थान में हुआ था। बम्बई विश्वविद्यालय से इण्टरमीजिएट की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप कलकत्ता जाकर वहाँ की 'केशोराम काटन मिल' में काम करने लगे थे। आपकी रुचि लेखन और प्रकाशन में अधिक थी। इसी कारण आपने अपना प्रकाशन-कार्य भी किया था।

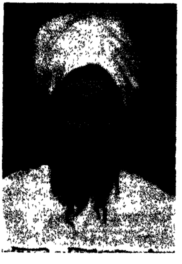
कलकत्ता की सुप्रसिद्ध संस्था 'हिन्दी नाट्य-परिषद्' के सक्रिय सदस्य होने के साथ-साथ आप राष्ट्रीय प्रवृत्तियों में भी यदा-कदा अपना सहयोग देते रहते थे। जैन धर्म में विशेष आस्था होने के कारण आपने जैन धर्म से सम्बन्धित कई पुस्तकें प्रकाशित करने के अतिरिक्त आपने 'सुखी गृहस्थ', 'प्रेम', 'कर्म पथ', 'भाग्य उद्योग' और 'स्वराज्य सप्ताह' आदि अनेक पुस्तकें भी प्रकाशित की थी।



आपका निधन सन् 1927 में हुआ था।

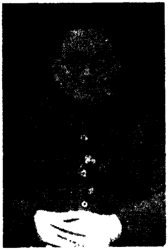
श्री पन्नालाल 'पन्नी'

आपका जन्म हरियाणा प्रदेश के जींद नामक नगर में सन् 1890 में हुआ था। शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त सर्वप्रथम आप सन् 1922 से सन् 1946 तक भारतीय सेना में रहे थे और बाद में आपने अपने भजनों के माध्यम से हिन्दी का व्यापक प्रचार किया था। हरियाणा के प्राचीन हिन्दी - सेवकों में आपका नाम अपनी एक विशिष्ट महत्ता रखता है। आपका निधन सन् 1954 में हुआ था।



श्री पन्नालाल बलदुआ

श्री बलदुआ का जन्म मध्यप्रदेश के होशंगाबाद जनपद की हरदा तहसील के मरदानपुर नामक ग्राम में 16 अप्रैल सन् 1912 को हुआ था।



आपकी प्राथमिक शिक्षा गाडरवारा (मध्यप्रदेश) में हुई थी। पिलानी के 'बिरला कालेज' से बी० ए० की उपाधि प्राप्त करके आपने कानपुर के सनातन धर्म कालेज से एम० ए० (अर्थशास्त्र) की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त जब आपकी सबसे पहली नियुक्ति वर्धा के 'गोविन्दराम सेकसरिया कालेज' में हुई थी तब इस शिक्षणालय के प्रधानाचार्य श्रीमन्नारायण अग्रवाल थे। उनके बाद आप ही इस महाविद्यालय के प्राचार्य बने थे।

आप जहाँ अच्छे शिक्षक के रूप में विख्यात थे वहाँ आपने अर्थशास्त्र-सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों की रचना भी की थी। आपकी ऐसी कृतियों में 'वाणिज्य कोश', 'अर्थशास्त्र शब्दकोश', 'सांख्यिकी शब्दकोश', 'आधुनिक पुस्तपालन', 'सुबोध-पुस्तपालन', 'लेखा-कर्म के सिद्धांत', 'उच्चमाध्यमिक पुस्तपालन', 'व्यावहारिक लेखा-कर्म', 'भारत का आर्थिक विकास और नियोजन', 'उच्च लेखा कर्म' तथा 'अर्थशास्त्र' प्रमुख आदि हैं।

वर्धा के उपरान्त आप जबलपुर के 'अर्थ वाणिज्य महाविद्यालय' में प्राचार्य होकर चले गए थे। आपने 'अर्थ सदेश' नामक त्रैमासिक पत्र का सम्पादन भी किया था। अर्थशास्त्र-सम्बन्धी ग्रन्थ-लेखन के क्षेत्र में जहाँ आपने अपना सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था वहाँ शिक्षण-सम्बन्धी प्रविधियों के सचालन में भी उल्लेखनीय कार्य किया था।

आपका निधन 25 अगस्त सन् 1969 को हुआ था।

श्री पन्नालाल बाकलीवाल

आपका जन्म राजस्थान के सुजानगढ़ नामक नगर मे सन् 1864 को हुआ था। विद्याध्ययन की समाप्ति के उपरान्त आपने आपना कार्य-क्षेत्र बम्बई बना लिया था और वहाँ पर 'जैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय' की स्थापना करके उस समय जैन धर्म से सम्बन्धित ग्रन्थों के प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया था जब कि जैन-ग्रन्थ छापने वालो को लोग अच्छी दृष्टि से नहीं देखते थे। बाद में आप अपनी इस संस्था का सारा कार्य-भार श्री नाथूराम प्रेमी को सौंपकर बनारस के 'स्याद्वाद महाविद्यालय' की सेवा मे चले गए थे। बम्बई मे रहते हुए आपने 'जैन हितैषी' पत्र का सम्पादन भी कई वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। आपने बम्बई के 'निर्णयसागर प्रेस' की प्रेरणा पर 'प्रमेय कमल मार्तण्ड' और 'यशस्तिलक चम्पू'-जैसे महान् ग्रन्थ प्रकाशित कराए थे, जिनका प्रकाशन उस समय असम्भव-सा ही दिखता था।

काशी मे रहते हुए आपने 'भारतीय जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी' नामक मस्था की स्थापना करके उसकी ओर से भी प्रकाशन का कार्य किया था। बाद मे आप अपनी इस सस्था को कलकत्ता ले गए और वहाँ के महामहोपाध्याय विधुशेखर शास्त्री भट्टाचार्य, श्री हरिहर शास्त्री, श्री शरच्चन्द्र घोषाल और श्री चिन्ताहरण चक्रवर्ती-जैसे अनेक विद्वानो से सम्पर्क साधकर उन्हे जैन साहित्य की ओर आकर्षित किया और वहाँ पर 'बगीय अहिसा परिषद्' की स्थापना करके उसकी ओर से 'बगला जिनवाणी' पत्रिका भी प्रकाशित की थी। आपने कलकत्ता मे 'शास्त्र प्रकाश यन्त्रालय' की स्थापना करके जैन धर्म की समस्त पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करने की महत्त्वपूर्ण योजना भी बनाई थी। आप अपनी इस प्रकाशन-सस्था को 'गीता-प्रेस गोरखपुर'-जैसा रूप रूप देना चाहते थे, किन्तु वैसा न कर सके।



आप अपने जीवन के अन्तिम दिनों में मुरादाबाद में आ गए थे और यहाँ रहते हुए आपने मुरादाबाद के सर्वश्री ज्वालाप्रसाद मिश्र, ज्वालादत्त शर्मा और शंकरलाल वैद्य आदि अनेक लेखको को बंगला, गुजराती और मराठी भाषाएँ सिखाई थी। आपकी प्रकाशित कृतियों में 'प्राकृत प्रकाश', 'जैन बाल बोधक' (चार भाग) तथा 'स्त्री शिक्षा' (दो भाग) आदि के नाम विशेष उल्लेख हैं। जैन समाज को जैन धर्म की सच्ची शिक्षा देने के उद्देश्य से आपने जैन विद्यालयों के लिए उत्कृष्ट पाठ्य-पुस्तकों का निर्माण भी किया था।

आपका निधन सन् 1920 में हुआ था।

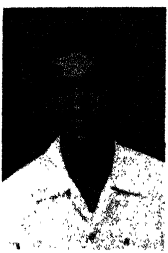
श्री परदेशी साहित्यरत्न

आपका जन्म प्रतापगढ़ (राजस्थान) मे 26 जुलाई सन् 1923 को हुआ था। आपका वास्तविक नाम मन्नालाल था और बाद मे आप 'परदेशी साहित्यरत्न' के नाम से ही परिचित हो गए थे। आपने उपन्यास, कहानी, कविता, नाटक, राजनीति, आलोचना और बाल साहित्य आदि सभी क्षेत्रों मे प्रचुर साहित्य की रचना की थी। आपने प्रारम्भ मे जहाँ 'ज्योति' नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन-प्रकाशन किया था वहाँ इन्दौर से प्रकाशित होने वाले 'कारवाँ' नामक मासिक के सम्पादन मे भी आपने उल्लेखनीय सहयोग प्रदान किया था। कुछ समय तक आप 'धर्मयुग' के सम्पादकीय विभाग से भी मम्बद्ध रहे थे। आप 'राजस्थान साहित्य अकादमी (सगम) उदयपुर' के सदस्य भी रहे थे।

आपने इतने अधिक साहित्य की रचना की थी कि अभी तक उसका समुचित आकलन तथा प्रकाशन भी नहीं हो सका है। फिर भी आपकी रचनाओं की महत्ता का इसीसे अनमान लग जाता है कि आपकी कई कृतियाँ जहाँ दक्षिण की भाषाओ मे अनूदित हो चुकी हैं वहाँ आपकी कुछ पुस्तकें अँग्रेजी मे भी अनूदित हुई थी। आप हिन्दी तथा अंग्रेजी के

अतिरिक्त उर्दू, गुजराती और मराठी भाषाओं के भी अच्छे जानकार थे। आप वास्तव में ऐसे मसिजीवी साहित्यकार थे जिन्होंने अपने जीवन का प्रत्येक क्षण साहित्य के चिन्तन, मनन और लेखन में ही व्यतीत किया था।

आपकी रचना-प्रतिभा का ज्वलन्त उदाहरण आपकी ये कृतियाँ हैं—'औरत, रात और रोटी', 'चट्टानें', 'भगवान् बुद्ध की आत्मकथा', 'सपनों की जजीरें', 'जय महाकाल', 'महामात्य मेदिनी-राय', 'बडी मछली छोटी मछली', 'दूध के बादल', 'त्याग का देवता' (सभी उपन्यास), 'चम्पा के फूल', 'सदेह का सिन्दूर' (कहानी-सग्रह), 'चित्तौड', 'जय हिन्द', 'परदेशी के गीत' (काव्य), 'एशिया की राजनीति', 'कश्मीर का सवाल' (राजनीति),



'अर्जन और सर्जन' (साहित्यिक निबन्ध), 'कल्पना' (नाटक) 'स्वप्नों के विधाता', 'डॉ० अलबर्ट स्विट्जर', 'सुन्दर सौदागर' तथा 'गुजरात की लोक-कथाएँ' (बाल साहित्य) आदि। इनके अतिरिक्त आपकी अँग्रेजी, गुजराती और मराठी से अनूदित लगभग एक दर्जन से अधिक कृतियाँ है। उनमे से 'बेजामिन फ्रेकलिन', 'हेनरी फोर्ड', 'त्याग का देवता', 'कोनटिकी', 'तूफान', 'व्यापार के नवक्षितिज' (अंग्रेजी से अनूदित), 'मगधपति', 'राम हरिहर', 'कृष्णा जी नायक', 'राम रेखा', 'महामात्य माधव', 'एक परछाई दो दायरे', 'लता' (गुजराती से अनूदित) आदि प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त लगभग 2 दर्जन कृतियाँ अभी अप्रकाशित है।

आपकी साहित्यिक प्रतिभा की सराहना हिन्दी के प्रायः सभी उच्चकोटि के समीक्षकों तथा साहित्यकारों ने की थी। सन् 1962 मे आपके 'महाकाल' नामक उपन्यास को 'राजस्थान साहित्य अकादमी' ने पुरस्कृत भी किया था। आपकी कई औपन्यासिक कृतियाँ विशेष रूप से चर्चित हुई थी।

आपका निधन 20 अप्रैल सन् 1976 को हुआ था।

श्री परम वेदालंकार

श्री वेदालंकार का जन्म सन् 1906 में हरियाणा के रोपड नामक नगर मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय मे हुई थी और सन् 1932 में आप वहाँ से विधिवत् 'स्नातक' हुए थे। अध्ययन-समाप्ति के बाद आपने अपने एक सहाध्यायी श्री सत्यपाल 'उन्मुख' विद्यालंकार के साथ साइकिल द्वारा भारत-भ्रमण कर, बर्मा मे रहकर 'फोटोग्राफी' का व्यवसाय भी किया था।

आप जहाँ कुछ समय तक गुरुकुल सोनगढ (गुजरात) और गुरुकुल वैद्यनाथ धाम (बिहार) के आचार्य रहे थे वहाँ आपने दिल्ली से 'दैनिक समाचार' नामक एक पत्र का प्रकाशन भी किया था। जिन दिनों आप बर्मा मे रहते थे तब आपने वहाँ एक 'प्रिंटिंग प्रेस' भी खोला था। इसके अतिरिक्त आपने दिल्ली मे प्रकाशित होने वाले कई पत्रों के सम्पादकीय विभागों मे भी कार्य



किया था। आपने फ्रांस की समाचार समिति की दिल्ली शाखा 'नफेन' मे भी काफी दिन सेवा की थी।

एक कुशल और श्रमजीवी पत्रकार के रूप मे दिल्ली मे आपने जहाँ पत्रकारिता के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए अनेक न्यूज-एजेंसियो मे अपना मार्ग-दर्शन दिया था वहाँ अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप कुछ रूसी विद्वानों के सहयोग से एक 'सर्व-भाषा-कोश' के निर्माण मे संलग्न थे। आप लगभग 10 वर्ष से 'रक्त-कैंसर' से ग्रस्त थे और इसीके कारण 10 अक्तूबर, 1981 को आपका देहावसान हो गया।

देवता-स्वरूप भाई परमानन्द

देवता-स्वरूप भाई परमानन्द का जन्म अविभाजित पंजाब के झेलम जनपद के करियाला नामक ग्राम मे 4 नवम्बर सन् 1876 को हुआ था। आपके पिता भाई ताराचन्द बडे धर्म-प्रेमी व्यक्ति थे और आपकी माता का आपके शैशव मे ही निधन हो गया था। जब आप चकवाल के मिडिल स्कूल मे पढा करते थे तब आपका परिचय आर्य समाज की सुधारवादी प्रवृत्तियो से हो गया था और आपने तब ही अपने जीवन को समाज-सेवा के कार्यो मे खपा देने का महान् संकल्प कर लिया था। चकवाल के विद्यालय से मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप उच्च शिक्षा के लिए डी० ए० वी० कालेज, लाहौर मे जाकर प्रविष्ट हो गए। उन दिनो आर्य समाज ही एक-मात्र ऐसी सस्था थी, जो देश मे राष्ट्रीय जागृति का अद्वितीय कार्य कर रही थी और उसके द्वारा संस्थापित डी० ए० वी० कालेजो द्वारा सर्वत्र उचित वातावरण तैयार हो रहा था। कालेज-कमेटी की ओर से उन दिनों संस्कृत की 'अष्टाध्यायी कक्षा' भी सचालित हुआ करती थी। भाई परमानन्द जी ने उसीमे प्रवेश लिया था। जब वह कक्षाएँ टूट गई तो आपने प्राइवेट रूप मे पजाब विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी।

बी० ए० करने के उपरान्त आपने एबटाबाद के हाई स्कूल के प्रधानाचार्य के पद पर कार्य-निरत रहते हुए ही सन् 1903 मे एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली और डी० ए० वी० कालेज की सचालन-समिति के आजीवन सदस्य बन गए। जब आपसे कालेज की प्रबन्ध-समिति ने कालेज मे प्राध्यापक के रूप मे कार्य करने का अनुरोध किया तब आपने 75 रुपये मासिक पर 'अर्थशास्त्र' पढाने का कार्य स्वीकार कर लिया। यहाँ यह बात विशेष रूप से ध्यातव्य है, क्योंकि आपने 'आजीवन-सदस्य' के रूप मे डी० ए० वी० कालेज की सेवा करने का संकल्प लिया हुआ था अत. आप इसी वेतन पर कालेज की सेवा करते रहे थे। आपकी इस प्रतिज्ञा का ज्वलन्त प्रमाण यह भी है कि जब आप 'पजाब विश्वविद्यालय' के परीक्षक बने थे तब उससे होने वाली आय को आप 'कालेज' को ही दे दिया करते थे। अपने कालेज-अध्यापन के इस काल मे आपका पंजाब-केसरी लाला लाजपतराय से अच्छा सम्पर्क हो गया था। यह आप दोनों के परिश्रम का ही प्रतिफल था कि उन दिनो डी० ए० वी० कालेज 'राष्ट्र-भक्ति' और 'समाज-सुधार' की प्रवृत्तियों का प्रमुख केन्द्र बन गया था।

जब महात्मा हसराज से दक्षिण अफ्रीका मे रहने वाले भारतीयो की ओर से सन् 1906 मे किसी ऐसे व्यक्ति को वहाँ भेजने का अनुरोध किया गया जो वहाँ जाकर भारतीय सस्कृति के प्रचार का कार्य कर सके तो उन्होने आपको ही वहाँ भेजा था। दक्षिण अफ्रीका के इस प्रवास मे आप वहाँ के जोहान्सबर्ग नामक नगर मे एक मास तक महात्मा गाधी के पास ठहरे थे। आपने जहाँ महात्मा गाधी से ऋषि दयानन्द के अनन्य भक्त और प्रख्यात क्रान्तिकारी श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा का परिचय कराया था वहाँ प्रख्यात अमरीकन तत्त्ववेत्ता थोरो की पुस्तक 'भद्र अवज्ञा के कर्तव्य' की प्रति भी आपने ही उनके पास अमरीका से भेजी थी। अफ्रीका मे रहते हुए ही आपका सम्पर्क सरदार अजीतसिंह तथा सूफी अम्बाप्रसाद आदि अनेक क्रान्तिकारियो से हो गया था। उन दिनो आपने वहाँ के मुम्बासा, नैरोबी, जोहान्सबर्ग और डरबन आदि अनेक नगरो मे जिस उदार हिन्दू राष्ट्रवाद का प्रचार किया था वह महात्मा गाधी को बहुत अच्छा लगा था और आपके इस प्रचार से प्रभावित होकर ही उन्होंने आपको अपने पास ठहरने का निमन्त्रण दिया था।

जब आपके इस प्रचार-कार्य मे अफ्रीका के शासको को विद्रोह की गन्ध आने लगी तो आपको दक्षिण अफ्रीका छोड़कर अमरीका जाना पडा था। अमरीका मे ही आपकी भेंट प्रख्यात क्रान्तिकारी लाला हरदयाल से हुई थी। वहाँ पर वे भारत मे क्रान्ति करने के लिए कार्यकर्ताओ का 'गदर पार्टी' नामक एक दल सगठित कर रहे थे। वहाँ से आप उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से लन्दन चले गए और भारतीय इतिहास के ब्रिटिश काल का अध्ययन करने के प्रसग मे आपको 'ईस्ट इण्डिया कम्पनी' के रिकार्ड को भी देखने का सुअवसर मिला। उस रिकार्ड को देखने के उपरात आपके शिक्षा-सम्बन्धी विचारों मे भारी परिवर्तन हुआ था और आप इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि भारत की शिक्षा-प्रणाली को तुरन्त बदलकर अँग्रेजी को शिक्षा के माध्यम से बिलकुल हटा देना चाहिए। भारत वापिस लौटने पर आपने

अपने इन विचारों को डी० ए० वी० कालेज की प्रबन्ध-समिति के समक्ष रखा था। आपके सुझाव पर ही 'डी० ए० वी० प्रबन्ध समिति' ने लाहौर में 'डी० ए० वी० आयुर्वेदिक कालेज' की स्थापना भी की थी।

जिन दिनों आप लन्दन में थे तब आप प्राय विनायक दामोदर सावरकर से मिला करते थे। एक लाख रुपये की लागत से 'इण्डिया हाउस' की स्थापना करने वाले प्रख्यात देशभक्त श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा भी उन दिनों वहीं पर थे। लाला हरदयाल भी वहाँ पर आते रहते थे। उन दिनों वे ब्रिटिश छात्रवृत्ति प्राप्त करके उच्च अध्ययन करने के निमित्त 'आक्सफोर्ड' गए हुए थे। जब



अंग्रेजी शिक्षा-प्रणाली की बुराई उन्हें बताई गई तो उन्होंने भी उन छात्रवृत्तियों को ठुकराकर 'हिन्दू राष्ट्रवाद' का प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया था। 'गदर पार्टी' का सगठन आपकी ऐसी ही प्रवृत्ति का परिचायक है। आपने भी भारत में क्रान्ति कराने वाले इस सगठन में सम्मिलित होकर महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। यहाँ यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि आपको बम बनाने की विधि श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा ने बताई थी।

भारत वापिस लौटने पर सन् 1909 में आपने पूना, अहमदाबाद, बगलौर, सेलम और मद्रास आदि अनेक नगरों में भ्रमण करके राष्ट्रीयता की जिन भावनाओं का प्रसार किया था उससे ब्रिटिश नौकरशाही आतंकित हो गई और आपके पीछे गुप्तचर लगा दिए गए। आपने लन्दन में रहकर 'भारत का इतिहास' नये सिरे से लिखने के लिए जो सामग्री एकत्रित की थी वह भी रहस्यमय ढग से चोरी चली गई। इस चोरी में ब्रिटिश गुप्तचरों के कुटिल चक्र की उल्लेखनीय भूमिका थी। लगभग 3 मास की यात्रा से लौटकर आप अपने गाँव चले गए और आपने वहाँ जाकर 'भारत का इतिहास' नामक पुस्तक की रचना की, जो उन दिनों हिन्दी में प्रख्यात देशभक्त श्री शिवप्रसाद गुप्त की प्रकाशन संस्था 'ज्ञानमण्डल लिमिटेड काशी' से 'एक इतिहास प्रेमी' के नाम से प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक के प्रकाशन ने देश में अद्भुत क्रान्ति की थी, जिसके कारण इसे ब्रिटिश सरकार ने जब्त घोषित कर दिया था।

इसके उपरान्त आप भारतीय औषध विज्ञान का विशेष अध्ययन करने की दृष्टि से फिर अमरीका चले गए। जब आप अमरीका पहुँचे थे तब न्यूयार्क के कालेजों का सत्र प्रारम्भ हो गया था, फलस्वरूप आपने ब्रिटिश गायना में जाकर 'हिन्दू दर्शन' पर व्याख्यान देने का निश्चय किया। जब सन् 1913 में आपने 'औषध विज्ञान' का कोर्स समाप्त कर लिया तब आपने वहाँ पर 'हिन्दू एसोसिएशन' की स्थापना करके ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया। सन् 1915 में भारत लौटने पर आपने क्रान्तिकारी प्रवृत्तियों को प्रचारित करने की दिशा में प्रयत्न प्रारम्भ किया ही था कि ब्रिटिश सरकार आतंकित हो गई। परिणामस्वरूप आपको 'राष्ट्रभक्ति' के अपराध में 'मृत्यु-दण्ड' सुनाया गया। किन्तु बाद में यह सजा 'आजन्म कारा-वास' के रूप में बदल दी गई और आपको काला पानी की सजा काटने के लिए 'अण्डमान' भेज दिया गया। जब भारत-भक्त श्री सी० एफ० एण्ड्रूज को आप पर ब्रिटिश सरकार की ओर से अण्डमान में किए जाने वाले अनेक अमानुषिक अत्याचारों का पता चला तो उन्होंने आपकी मुक्ति के लिए अथक प्रयास किया था। जब आपने वहाँ आमरण अनशन कर दिया तब ब्रिटिश सरकार ने विवश होकर सन् 1919 में आपको रिहा किया था।

आप जब स्वदेश लौटे थे तब देश का राजनीतिक वाता-वरण सर्वथा बदल चुका था और महात्मा गाधी का 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' चल रहा था। विदेशी शिक्षा-संस्थाओं के बहिष्कार के आन्दोलन के कारण उन दिनों पजाब-केसरी लाला लाजपतराय ने लाहौर में जिस 'नेशनल कालेज' की स्थापना की थी आपको उसका 'उपकुलपति' तथा इतिहास का प्राध्यापक बनाया गया था। अमर शहीद सरदार भगतसिंह के हृदय में देश-भक्ति की भावनाएँ आपने ही अंकुरित की थी। जब आपको कांग्रेस की मुसलमानों के

तुष्टीकरण की नीति से असहमति हुई तो आप 'हिन्दू महासभा' मे सम्मिलित हो गए। इस कार्य मे आपको महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय का भी उल्लेखनीय सहयोग मिला था। सन् 1933 में आप 'अखिल भारतीय हिन्दू महासभा' के अजमेर-अधिवेशन के अध्यक्ष मनोनीत हुए थे। आपने हिन्दू महासभा की ओर से हिन्दी मे 'हिन्दू' नामक एक दैनिक तथा साप्ताहिक पत्र भी सन् 1938 मे नई दिल्ली से प्रकाशित करना प्रारम्भ किया था, जो कई वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक चला था। इस पत्र के माध्यम से आपने हिन्दुत्व की भावनाओं, इच्छाओ और आकाक्षाओ की पूर्ति के लिए अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपने हिन्दी में जो 'भारत का इतिहास' लिखा था उसमे भी आपने राजाओ, युद्धो और महापुरुषों के जीवन-वृत्तों को प्रधानता न देकर अपने सर्वथा नये दृष्टिकोण का परिचय दिया था।

आप जहाँ उच्चकोटि के राजनीतिक नेता और समाज-सुधारक थे वहाँ लेखक भी उच्चकोटि के थे। 'भारतवर्ष का इतिहास' के अतिरिक्त आपने हिन्दी में जो ग्रन्थ लिखे थे उनमे 'आप बीती' (1921), 'काले पानी की कारावास कहानी' (1921), 'देश-पूजा में आत्म-बलिदान' (1921), 'भारत माता का सन्देश' (1922), 'शिक्षा-प्रणाली' (1922), 'वीर वैरागी' (1923),'जीवन-रहस्य'(1925), 'आर्यसमाज और कांग्रेस' (1925), 'वाल्मीकि मुनि का जीवन-चरित' (1925), 'महात्मा सुकरात' (1925), 'गीता रहस्य' (1925), 'भारत रमणी-रत्न' (1925), 'छत्रपति' (1926), 'यूरोप का इतिहास' (1927), 'स्वराज्य-सग्राम' (1927), 'हिन्दू सगठन'(1928), 'महाराष्ट्र का इतिहास'(1928),'हिन्दू धर्म और उदासीन सन्त' (1928) 'हिन्दू जीवन का रहस्य' (1928), 'भारत माता का सन्देश (1929), 'दो लहरो की टक्कर' (1929), तथा 'मेरे अन्त समय के विचार' (1941) आदि के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण है। आपकी इन सभी रचनाओ ने किसी समय देश के युवको मे नई चेतना तथा स्फूर्ति उत्पन्न की थी।

भारत-विभाजन के उपरान्त आपने जालंधर से भी 'आकाशवाणी' नामक साप्ताहिक पत्र हिन्दी मे प्रकाशित करके हिन्दू राष्ट्रवादी भावनाओ के प्रचार का महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। भारत-विभाजन की असह्य वेदना ने आपके तन और मन दोनो को छलनी बना दिया था, जिसके कारण आप निरन्तर अस्वस्थ रहने लगे थे। भारत-विभाजन से पूर्व एक बार अत्यन्त पीड़ा के साथ आपने देशवासियों के प्रति यह उद्गार प्रकट किए थे—"मैंने हिन्दुओं से अनेक बार कहा, 'तुम कुपथ पर चल रहे हो। अब तुमने काठ के देवताओ की पूजा करने को अपना धर्म मान लिया है। यही तुम्हे ले डूबेगे। तुम इतिहास की शिक्षा को नही सुनते, तुम्हें उजाड दिया जायगा। तुम संगठित हो जाओ, अन्यथा सर्व-नाश तुम्हारे सामने है। जिन बातों की चेतावनियाँ मैं तुम्हें बार-बार देता रहा, वे अब तुम्हारे सम्मुख आ रही हैं।' इनके लिए इतना समय जिन्दा रहा। इसके साथ ही मरना चाहिए। मेरा प्रियतम, मेरा राष्ट्र अपमानित किया जा रहा है। मेरे जीने से क्या लाभ।"

और वास्तव मे यह देश-भक्त 8 दिसम्बर सन् 1947 को जालन्धर मे इस ससार से महाप्रयाण कर गया।

स्वामी परमानन्द महाराज

आपका जन्म सन् 1830 मे उत्तर प्रदेश के मथुरा जनपद की माट तहसील के चाँदपुर नामक ग्राम मे हुआ था। आप प्रख्यात सन्त और सुधारक थे। आपने देश के प्राय सभी भागो मे घूम-घूमकर अपने प्रवचनों के द्वारा हिन्दू-धर्म और सस्कृति के प्रचार का प्रशसनीय कार्य किया था। आपके जीवन का अधिकाश समय हरियाणा मे व्यतीत हुआ था। यहाँ के रेवाड़ी नगर को अपना केन्द्र बनाकर



आपने जन-जागारण का महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। आपके द्वारा रामपुरा रेवाडी में स्थापित 'श्री भगवद्भक्ति आश्रम'

इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

आपने अपने विचारो के प्रचार के लिए रेवाडी के इसी आश्रम से 'भक्ति' नामक एक उच्चकोटि की हिन्दी-पत्रिका का प्रकाशन भी किया था। इस पत्रिका के माध्यम से अध्यात्म-साधना की दिशा में बहुत बड़ा कार्य हुआ था। आपने रेवाड़ी के अतिरिक्त जीन्द मे भी 'श्री भगवद्भक्ति आश्रम' की स्थापना की थी।

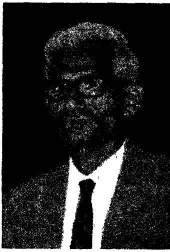
आपके जीवन और कृतित्व का सम्यक् परिचय 'श्री परमानन्द स्मृति-कण' (1974) नामक पुस्तक से भली-भाँति मिल जाता है। इसके अतिरिक्त स्वामी कृष्णानन्द द्वारा लिखित 'परमहंस स्वामी परमानन्दजी' (1970) नामक पुस्तक मे आपकी विस्तृत जीवनी प्रस्तुत की गई है।

आपका निधन 9 जुलाई सन् 1936 को हुआ था।

डॉ० परमानन्द शास्त्री

आपका जन्म 20 सितम्बर सन् 1916 को अमृतसर (पजाव) मे हुआ था। पजाब विश्वविद्यालय से सस्कृत की शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने लाहौर के ओरियण्टल कालेज से सस्कृत विषय मे एम० ए०, एम० ओ० एल० की उपाधियाँ प्राप्त की थी। आप आर्य समाज की प्रख्यात शिक्षण-सस्था 'दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय' के स्नातक थे। आचार्य विश्वबन्धु-जैसे गुरुजनो के चरणो मे बैठकर आपने आर्य समाज के सिद्धान्तों का गहन अध्ययन किया था। आपने 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका और स्वामी दयानन्द' विषय पर पजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ मे अँग्रेजी मे शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करके सन् 1954 मे पी-एच० डी० की उपाधि भी प्राप्त की थी। इस ग्रन्थ म आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति पर भारतीय विचार-धारा के महत्त्व को प्रतिपादित किया गया है। आपके इस शोध-कार्य की देश के अनेक शीर्षस्थ मनीषियो ने मुक्तकण्ठ से प्रशसा की थी।

शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आप पहले 'दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय लाहौर' के सन् 1937 से सन् 1939 तक प्राचार्य रहे थे और तदुपरान्त आपने लाहौर के 'फतहचन्द कालेज फार विमेन' मे हिन्दी तथा संस्कृताध्यापक (सन् 1939 से सन् 1947 तक) का कार्य किया था। सन् 1947 से सन् 1951 तक आप जहाँ 'पजाब शिक्षा सलाहकार बोर्ड' मे अंग्रेजी, हिन्दी, सस्कृत एवं पंजाबी भाषाओं के सम्पादक रहे थे वहाँ आपने कई वर्ष तक पंजाब के अनेक कालेजों मे स्नातकोत्तर कक्षाओ का अध्यापन-कार्य भी किया था। सन् 1961 मे जब पंजाब सरकार ने अपने शासन मे 'भाषा विभाग' की स्थापना की थी तब आप ही इस विभाग के 'प्रथम निदेशक' नियुक्त किये गए थे। जब सन् 1966 मे 'हरियाणा राज्य' अलग बना तब आप उसके 'भाषा विभाग' मे निदेशक बने थे।



अपने इस कार्य-काल मे आपने जहाँ पजाब विश्वविद्यालय की विभिन्न समितियो के सक्रिय सदस्य के रूप मे अभिनन्दनीय कार्य किया था वहाँ आप 'गुरु नानक विश्वविद्यालय अमृतसर' के 'सस्कृत बोर्ड' के अध्यक्ष भी रहे थे।

अपने इस बहुमुखी कर्ममय जीवन मे आपने जहाँ एक कुशल शिक्षक और विवेकी अधिकारी के रूप मे अपनी विशिष्ट प्रतिभा तथा योग्यता का परिचय दिया था वहाँ लेखन तथा पत्रकारिता की दिशा मे भी पूर्णत. अपनी जागरूक मेधा का परिचय दिया था। प्रारम्भ मे जहाँ आपने 'आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा लाहौर' के मासिक मुख-पत्र 'आर्य जगत्' का सफल सम्पादन किया था वहाँ 'भाषा विभाग पजाब' तथा 'हरियाणा' के हिन्दी पत्रो 'सप्त सिन्धु' तथा 'जन साहित्य' के सम्पादन को दिशा-दान करने मे भी आपकी प्रमुख भूमिका रही थी। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे लेख आदि लिखने के अतिरिक्त आपने अनेक उपयोगी पुस्तकों की रचना भी की थी। आपकी प्रमुख रचनाओ मे 'शान्ति और क्रान्ति के कवि', 'पिंगल पीयूष', 'सरल सुबोध व्याकरण', 'नव रत्न', 'स्वतन्त्र्य-सग्राम के महारथी', 'भारत

की दिव्य विभूतियाँ', 'प्राचीन कवि परिक्रमा', 'जपुजी साहिब' तथा 'भीष्म प्रतिज्ञा' आदि के नाम स्मरणीय है। आपने प्रशासकीय सेवा में रहते हुए 'पजाबी हिन्दी शब्द-कोश' तथा 'पजाब-शब्द-जोड़-कोश' के सम्पादन में भी उल्लेखनीय सहयोग किया था।

आपने शिक्षा, साहित्य एव सस्कृति के अनेक क्षेत्रों में उल्लेखनीय सेवाएँ करके अपनी एक विशिष्ट छाप छोडी थी। आपका जहाँ प्रशासन की भाषा तथा साहित्य-सम्बन्धी विभिन्न समितियों से निकट का सम्बन्ध रहा था वहाँ आप कई वर्ष तक 'पजाब सस्कृत साहित्य सम्मेलन' के अध्यक्ष और 'पजाब प्रातीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के सचिव भी रहे थे। आपकी सस्कृत तथा हिन्दी-सम्बन्धी सेवाओं को दृष्टि में रखकर काशी के विद्वानों ने आपको 'विद्यारत्न' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी। आर्यसमाज के विद्वानों में आपने अपनी विद्वत्ता के कारण अच्छा स्थान बनाया हुआ था और आप समय-समय पर उसकी विभिन्न प्रवृत्तियों में अपना सक्रिय सहयोग देते रहते थे।

आपका निधन 26 जुलाई सन् 1978 को नई दिल्ली के 'अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान सस्थान' में हुआ था।

श्री परमानन्द शुक्ल

आपका जन्म सन् 1909 में उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद के एक ग्राम में हुआ था। काशी के 'हिन्दू विश्वविद्यालय' में शिक्षा प्राप्त करके आप हिन्दी के प्रतिष्ठित कथाकार श्री वाचस्पति पाठक के प्रयास से प्रयाग के लीडर प्रेस से प्रकाशित होने वाले हिन्दी दैनिक 'भारत' में 'साहित्य-सम्पादक' हो गए थे। अपने जीवन के अन्तिम समय तक वहाँ पर ही कार्यरत रहे थे। अपने इस कार्य-काल में आपने जहाँ साहित्य-रचना के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था वहाँ अनेक लेखकों को भी उचित दिशा-निर्देश दिया था।

आप जहाँ एक जागरूक पत्रकार के रूप में जाने जाते थे वहाँ एक सहृदय एव सवेदनशील कवि के रूप में भी आपने अपनी अपूर्व क्षमता का परिचय दिया था। आपने अत्यन्त सशक्त गीतकार और कल्पना-प्रवण कवि के रूप में अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। अपने विधुर एवं एकाकी जीवन में विरह से आप्लावित गीत लिखकर आपने अपने समकालीन अनेक कवियों को चमत्कृत कर दिया था। आपकी कल्पना-शक्ति इतनी उर्वर और अद्भुत थी कि आप अपनी अनुभूतियों को अत्यन्त सहजता से चित्रित कर देते थे। बाल-साहित्य-निर्माण की दिशा में भी आपने अपनी योग्यता तथा क्षमता का अच्छा परिचय दिया था। आकाशवाणी के प्रयाग-केन्द्र से आपकी रचनाएँ प्राय प्रसारित होती रहती थी।



आपका निधन 20 जून सन् 1979 को हुआ था।

श्री परमेश्वरदयाल विद्यार्थी

श्री विद्यार्थी का जन्म मध्यप्रदेश के राजगढ जनपद के पचोर नामक स्थान में 15 सितम्बर सन् 1915 को हुआ था। आपके पिता राय साहब रघुवरदयाल माथुर नरसिंहगढ स्टेट के 'रेवेन्यू मेम्बर' थे। आपने 14 वर्ष की आयु में ही नरसिंहगढ के स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा देकर जयपुर आकर बी० ए० किया था। इसके उपरान्त आप वकालत की एल-एल० बी० परीक्षा देने की दृष्टि से लखनऊ चले गए थे। वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप दिल्ली आ गए और फिर यहाँ ही कार्य-रत रहे थे। यद्यपि आपने वकालत की परीक्षा इसलिए उत्तीर्ण की थी कि आप एक उच्चकोटि की वकील बनना चाहते थे, किन्तु आपने वकालत न करके 'पत्रकारिता' के क्षेत्र में कार्य प्रारम्भ कर

दिया था। अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी के कार्यों से प्रभावित होकर ही आपने अपना 'विद्यार्थी' उपनाम रखा था। आपने 'आर्यसमाज के जगमगाते हीरे' नामक एक पुस्तक की रचना भी की थी, जो 'पुस्तक भण्डार जयपुर' की ओर से प्रकाशित हुई थी।

आपने पत्रकारिता को अपनाकर जहाँ दिल्ली से प्रकाशित होने वाले अंग्रेजी दैनिक 'नेशनल कॉल' के सम्पादकीय विभाग मे कार्य किया था वहाँ आप 'वीर अर्जुन' तथा 'हिन्दुस्तान' आदि हिन्दी के कई दैनिक पत्रों मे कार्य-रत रहे थे। समाज-सेवा के क्षेत्र मे भी आपने 'आर्य समाज' के माध्यम से दिल्ली के युवको मे नई चेतना तथा स्फूर्ति उत्पन्न की थी। आप जहाँ अनेक वर्ष तक 'आर्य कुमार सभा' के मन्त्री रहे थे वहाँ राजनीति मे भी समय-समय पर सक्रिय योगदान देते रहते थे।



जिन दिनों राजस्थान मे 'प्रजामण्डल' का निर्माण होकर उसकी ओर से 'जय प्रजा' नामक पत्र प्रकाशित होना प्रारम्भ हुआ था तब आपने उसका कुशल सम्पादन करके राजस्थान की जनता की उल्लेखनीय सेवा की थी। जब आपने वहाँ की तत्कालीन राजशाही के विरुद्ध अपने पत्र मे एक सम्पादकीय लिखा था तब 16 जनवरी सन् 1941 को आपको गिरफ्तार करके डेढ वर्ष की सजा के साथ 500 रुपये जुर्माना अदा करने का दण्ड सुनाया गया था। मुकद्दमा चलने पर जब आपकी उसमे विजय हुई तब 6 जून सन् 1941 को आप जयपुर जेल से रिहा किये गए थे।

इसके उपरान्त आप दिल्ली से प्रकाशित होने वाले 'दैनिक हिन्दुस्तान' मे चले आए और कांग्रेस की विभिन्न प्रवृत्तियो मे भी सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। सन् 1942 के आन्दोलन मे भी आपकी महत्त्वपूर्ण सेवाएँ रही थी। जब आप अंग्रेज सरकार को उलटने के लिए भूमिगत रहकर अनेक क्रान्तिकारी प्रवृत्तियों मे भाग ले रहे थे तब मार्च सन् 1943 मे गिरफ्तार करके आपको अनिश्चित समय के लिए नजरबन्द कर दिया गया था। आप उन दिनो दिल्ली तथा फीरोजपुर (पंजाब) की जेलो मे रहे थे। जेल के एकान्तिक जीवन में आपका झुकाव योगिराज अरविन्द की विचार-धारा और उनके जीवन-दर्शन की ओर हो गया था। जेल से मुक्ति प्राप्त करने के उपरान्त पहले तो आपने कुछ समय तक घी का व्यापार किया, किन्तु जब उसमे आपको हजारो रुपये का घाटा उठाना पडा तब आपने दिल्ली मे किसी मित्र की साझेदारी मे 'इन्द्रप्रस्थ प्रिंटिंग प्रेस' खोला, किन्तु उसमे भी आप सफल न हो सके। फिर कुछ समय तक दिल्ली मे वकालत की। वकालत के कार्य मे भी आपका सरल स्वभाव आड़े आया और वह कार्य भी आपको रास नही आया।

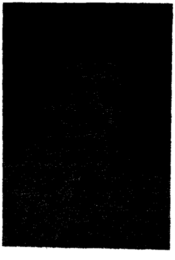
आप स्वभाव से इतने सरल तथा निश्छल थे कि किसी को आपत्ति मे फँसा देखकर सहज ही द्रवित हो जाते थे। अपनी इस सरलता के कारण कभी आप अपनी छडी किसी को दे आते थे और कभी अपना चैस्टर उतारकर लोगों को सौप देते थे। समाज-सेवा के कार्यों मे आपकी इतनी अधिक रुचि रहती थी कि भूखा रहकर भी आप दिन-रात उनमे निमग्न रहते थे। आपकी ऐसी ही प्रवृत्ति सन् 1957 के उस निर्वाचन मे देखने को मिली थी, जिसमे भाग लेने के लिए आप माधोपुर (राजस्थान) गए हुए थे। भूखे-प्यासे काम मे लगे रहने की आदत ने आपके शरीर को खोखला कर दिया था। माधोपुर के पोलिंग-बूथ पर 25 फरवरी सन् 1957 को आप जब सरकारी अधिकारियो मे वहाँ की अव्यवस्था के प्रति अपना विरोध प्रकट कर रहे थे तब अचानक हृदय की गति रुक जाने के कारण आपका निधन हो गया।

महामहोपाध्याय पण्डित परमेश्वरानन्द शास्त्री

आपका जन्म 1 जनवरी सन् 1898 को उत्तर प्रदेश के देहरादून नगर मे हुआ था। आपके पूर्वज गढ़वाल अंचल के

श्रीनगर जनपद के डाँग नामक स्थान के निवासी थे। आपके पिता श्री अच्युतानन्द घिल्डियाल संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे और अपने पौरोहित्य के कार्य प्रसग मे वे देहरादून आकर रहने लगे थे। उनकी इच्छा परमेश्वरानन्द जी को एक अच्छा वकील बनाने की थी और इसी दृष्टि से उन्होने आपकी शिक्षा-दीक्षा का समुचित प्रबन्ध करने का विचार किया था। आप जब सातवी कक्षा मे पढ रहे थे तब ही एक दिन आपने सस्कृत के एक विद्वान् का प्रवचन सुनकर अपने पिताजी से संस्कृत पढने की इच्छा प्रकट की। परिणाम स्वरूप आपके पिता ने आपको हरिद्वार के 'ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम' मे प्रविष्ट करा दिया। जिन दिनो आप हरिद्वार में पढा करते थे तब आपके आचार्य महामहोपाध्याय पण्डित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी थे। वे अध्यापन का कार्य करने के साथ-साथ उन दिनो 'ब्रह्मचारी' नामक मासिक पत्र का सम्पादन भी किया करते थे। अपनी छात्रावस्था मे ही आप पत्र-सम्पादन एव निबन्ध-लेखन आदि मे श्री चतुर्वेदी जी की सहायता कर दिया करते थे। इसलिए शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त उन्होने आपको ऋषिकुल मे ही अध्यापक नियुक्त करा दिया था।

ऋषिकुल मे कार्य करते हुए आपने पजाब विश्व-विद्यालय की शास्त्री परीक्षा भी अच्छे अक प्राप्त करके उत्तीर्ण कर ली थी। जब आपके गुरु श्री चतुर्वेदी जी लाहौर के 'सनातन धर्म सस्कृत कालेज' के आचार्य बनकर वहाँ पर गए थे तब आपको भी वे साथ ही लेते गए थे। इस प्रकार आपने सन् 1920 से सन् 1947 तक उसी सस्था मे कार्य किया था। प्रारम्भिक 4 वर्ष तक तो आप उस कालेज के 'उपाचार्य' रहे थे, किन्तु फिर सन् 1924 से आप पर 'प्रधानाचार्य' का उत्तरदायित्व आ गया था। अपने इस कार्य-काल में आपने जहाँ संस्कृत के अनेक छात्रों को अपनी विद्वत्ता से गरिमा मण्डित किया था वहाँ आपकी प्रतिष्ठा प्रदेश की सीमा का अतिक्रमण करके देश-व्यापी हो गई थी। यह आपके व्यक्तित्व की महत्ता का ही ज्वलन्त प्रमाण है कि आपको जून सन् 1942 मे 'महामहोपाध्याय' की सम्मानोपाधि से विभूषित किया गया था। अपने कालेज से कुछ समय के लिए अवकाश लेकर सन् 1947 मे आप देहरादून आकर रह रहे थे कि भारत का विभाजन हो गया और आप पुन लाहौर नही जा सके।



स्वतन्त्रता-प्राप्ति अथवा भारत-विभाजन के उपरान्त कुछ समय तक तो आपने 'ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम हरिद्वार' में 'आचार्यत्व' का कार्य सँभाला और फिर जब 'सनातन धर्म कालेज' का सचालन विधिवत् अम्बाला से होने लगा तब आप फिर उसकी सेवा मे चले आए थे। कुछ समय बाद आप जालन्धर के 'ओरियण्टल कालेज' मे प्रोफेसर भी हो गए थे। इसके बाद सन् 1962 मे जब दिल्ली मे भारत सरकार की ओर से 'केन्द्रीय सस्कृत विद्यापीठ' की स्थापना की गई तब आप उसके 'आचार्य' होकर दिल्ली आ गए। अब यही विद्यापीठ 'लालबहादुर शास्त्री केन्द्रीय सस्कृत विद्यापीठ' के नाम से जाना जाता है। विद्यापीठ के आचार्यत्व का कार्य-भार सँभालकर आपने शासकीय स्तर पर सस्कृत के शिक्षण को गति देने का अभिनन्दनीय कार्य किया था।

आपने अपने अध्यापन-काल मे जहाँ सस्कृत-वाङ्मय के उत्कर्ष के लिए अथक परिश्रम किया था वहाँ अनेक सस्कृत ग्रन्थो की हिन्दी टीकाएँ भी प्रस्तुत की थी। आपके निरीक्षण मे प्रशिक्षित और दीक्षित अनेक छात्र ऐसे निकले थे, जिन्होने कालान्तर मे सस्कृत तथा हिन्दी साहित्य के उन्नयन और विकास मे अपना विशिष्ट स्थान बना लिया था। आपने जहाँ सस्कृत के 'मकरन्द' तथा 'सस्कृत रत्नाकर' नामक पत्रो का सम्पादन अत्यन्त पटुता से किया था वहाँ अपने छात्र-जीवन मे 'उषा' तथा 'बालक' नामक हस्तलिखित मासिक पत्र भी सम्पादित किये थे। आपकी साहित्यिक गरिमा का विशद परिचय उस 'स्मृति-ग्रन्थ' को देखने से मिल जाता है, जिसे सन् 1973-1974 मे 'लालबहादुर शास्त्री केन्द्रीय सस्कृत विद्यापीठ नई दिल्ली' ने आपके निधन के उपरान्त प्रकाशित किया था।

आपका निधन 3 जुलाई सन् 1973 को हुआ था।

श्री परमेष्ठीदास जैन न्यायतीर्थ

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के झांसी जनपद के ललितपुर नगर मे सन् 1907 मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा ललितपुर मे हुई थी और तदुपरान्त आपने मुरैना, जबलपुर और इन्दौर आदि नगरों मे अध्ययन करके 'जैन सिद्धान्त शास्त्री' तथा 'न्यायतीर्थ' की उपाधियाँ प्राप्त की थी। सन् 1929 मे आप सूरत (गुजरात) चले गए और वहाँ पर 'जैन मित्र' नामक पत्र का कई वर्ष तक सम्पादन करते रहे। अपने इसी कार्य-काल में आपने गुजरात मे हिन्दी का प्रचार करने के उद्देश्य से वहाँ पर 'राष्ट्रभाषा प्रचारक मण्डल' नामक सस्था की स्थापना की और उसकी ओर से हिन्दी का अध्यापन करने की दृष्टि से 'राष्ट्रभाषा विद्यामन्दिर' भी संचालित किया। आपने इस सस्थाओं के माध्यम से गुजरात में हिन्दी-प्रचार का अभिनन्दनीय कार्य किया था।

अपने इस कार्य-काल मे राष्ट्रीय प्रवृत्तियो की ओर भी आपका झुकाव हो गया था और देश-पूज्य महात्मा गान्धी, काका कालेलकर, श्री मशरूवाला, भदन्त आनन्द कौसल्यायन तथा श्रीमन्नारायण अग्रवाल आदि अनेक नेताओं, सुधारकों एव मनीषियो के सम्पर्क मे आकर आपने अपनी राष्ट्रीय प्रवृत्तियों को पूर्ण तन्मयता से आगे बढाया था। आपने जहाँ हरिजन-सेवा, मद्य-निषेध और स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार के प्रचार मे पूर्ण तन्मयता प्रदर्शित की थी। वहाँ आपने गाधी जी के निजी सम्पर्क मे आकर अपनी योजनाओं के सम्बन्ध मे उनसे अनेक उपयोगी परामर्श और निर्देश भी प्राप्त किये थे। यहाँ तक कि जब अगस्त 1942 का 'भारत छोड़ो आन्दोलन' प्रारम्भ हुआ तब भी आप उससे अछूते नही बचे थे और फरवरी 1943 मे गिरफ्तार करके साबरमती जेल मे भेज दिये गए थे। जेल मे रहते हुए भी आपने राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार का कार्य बन्द नही किया था और वहाँ से आपने जिन अनेक जेल-यात्रियों को 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा' की परीक्षाएँ दिलवाई थी, उनमे भारतीय लोक सभा के प्रथम अध्यक्ष श्री गणेश वासुदेव मावलकर का नाम अन्यतम है।



जेल से मुक्त होने के उपरान्त आपने दिल्ली आकर अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद्' के मुख-पत्र साप्ताहिक 'वीर' का कई वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक सम्पादन किया था। सन् 1948 मे आप अपनी जन्म-भूमि वापिस चले गए थे और वहाँ पर जैनेन्द्र प्रेस' की स्थापना करके जन-सेवा और साहित्य-सेवा का कार्य करने लगे थे। उन दिनो आप कई वर्ष तक जहाँ 'नगर काग्रेस कमेटी' के उपाध्यक्ष रहे थे वहाँ नगर के 'वर्णी जैन इण्टर कालेज' तथा 'नेहरू महाविद्यालय' की सचालन-समिति के भी सक्रिय सदस्य रहे थे। आपने सन् 1944 मे कुछ समय तक श्री जैनेन्द्रकुमार के 'लोक जीवन' नामक मासिक पत्र का सम्पादन भी किया था। आप जहाँ कर्मठ हिन्दी-प्रचारक, उत्कृष्ट समाज-सेवक तथा जागरूक पत्रकार के रूप मे जनता मे समादृत थे वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आपकी देन सर्वथा अनन्य थी। अनेक जैन ग्रन्थो का हिन्दी मे अनुवाद करने के अतिरिक्त आपने जिन पुस्तको की रचना की थी उनमे 'हिन्दी प्रवेशिका', 'राष्ट्रभाषा प्रारम्भिकी' तथा 'हिन्दुस्तानी प्रवेशिका' प्रमुख है।

आपका निधन 12 जनवरी सन् 1978 को हुआ था।

श्री परशुराम चतुर्वेदी

आपका जन्म 25 जुलाई सन् 1894 को उत्तर प्रदेश के बलिया जनपद के जवही नामक ग्राम मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा महाजनी पद्धति पर हुई थी और उसके साथ ही आपको सस्कृत का भी अभ्यास कराया गया था। शैशवावस्था से सस्कृत के प्रति आपके इस लगाव ने ही कालान्तर मे आपके भावी जीवन मे बड़ी सहायता की थी। गाँव मे आप हिन्दी की कक्षा 2 तक ही पढ पाए थे कि आपके मामा

ने आपको बलिया बुलाकर वहाँ के गवर्नमेण्ट हाई स्कूल में प्रविष्ट करा दिया। आपने अभी वहाँ पढ़ना प्रारम्भ किया ही था कि सन् 1911 में 'वन्देमातरम् आन्दोलन' प्रारम्भ हो गया। आपने भी उसमें सक्रिय रूप से भाग लेना प्रारम्भ किया। परिणाम स्वरूप आपको विद्यालय से निष्कासित कर दिया गया। किन्तु आपके मामा जी ने विद्यालय के अधिकारियों से कह-सुनकर आपको विद्यालय में फिर प्रविष्ट करा दिया।

इस विद्यालय से सन् 1914 में एम० एल० सी० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप आगे के अध्ययन के लिए प्रयाग भेजे गए और वहाँ की 'कायस्थ पाठशाला' में प्रविष्ट होकर 'हिन्दू बोर्डिंग हाउस' में रहने लगे। उन दिनों आपके समकालीन छात्रों में आचार्य नरेन्द्रदेव, डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, डॉ० बाबूराम सक्सेना, श्री रामचन्द्र टण्डन, श्री ललिता-प्रसाद सुकुल, पण्डित द्वारकाप्रसाद मिश्र, सुमित्रानन्दन पन्त, श्री कृष्णानन्द पन्त, श्री हीरालाल जैन और श्री दुलारे-भार्गव-जैसे अनेक महानुभाव थे। इन सभी ने भविष्य में हिन्दी भाषा और साहित्य की उल्लेखनीय सेवाओं के कारण विशेष ख्याति अर्जित की है। अपने इन सब साथी छात्रों के सहयोग से आपने प्रयाग विश्वविद्यालय के तत्कालीन सेण्ट्रल कालेज में एक 'हिन्दी परिषद्' की स्थापना भी की थी, जिसका प्रथम मन्त्री आपको ही बनाया गया था। आपने यहाँ से इण्टर, बी० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थीं।

बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपका रुझान दर्शन की ओर हो गया और आप आगे के अध्ययन के लिए काशी चले गए। वहाँ से आपने हिन्दू विश्वविद्यालय से सन् 1922 में एम०ए० की परीक्षा दर्शन विषय लेकर उत्तीर्ण की थी। एम०ए० करने के उपरान्त आप वकालत की पढ़ाई के लिए फिर इलाहाबाद चले गए और इस परीक्षा में सफलता प्राप्त करने के उपरान्त आपने सन् 1925 में बलिया आकर वकालत की प्रैक्टिस प्रारम्भ कर दी। वकालत के जीवन में फँसकर भी आपका साहित्य तथा दर्शन के क्षेत्र में स्वाध्याय बराबर चलता रहा। आप जहाँ राजनीति में लोकमान्य तिलक की विचारधारा के समर्थक थे वहाँ साहित्य में कबीर के फक्कड़पन के उपासक थे। वकालत के कामों से समय निकाल कर आप जहाँ अपने स्वाध्याय में संलग्न रहते थे वहाँ समाज-सेवा के क्षेत्र में भी आप बराबर सक्रिय रहते थे। अपनी इस प्रवृत्ति के कारण ही आप जहाँ कई वर्ष तक 'ग्राम सुधार बोर्ड' के अध्यक्ष रहे थे वहाँ अपने जनपद में आनरेरी मजिस्ट्रेट भी बने थे।

अपने छात्र-जीवन से ही आपकी साहित्य-रचना की ओर पर्याप्त रुचि थी और उसमें प्रयाग के साहित्यिक वातावरण ने बहुत अधिक प्रेरणा प्रदान की थी। श्री गणेश शंकर विद्यार्थी के 'प्रताप' में आपकी रचनाएँ छपनी प्रारम्भ हो गई थीं और उन्होंने आपको बहुत प्रोत्साहित किया था। 'प्रताप' के अतिरिक्त आपकी रचनाएँ 'कन्या मनोरंजन', 'कवि कौमुदी' एवं 'मर्यादा' आदि कई पत्रिकाओं में भी छपा करती थीं। आपकी कविताओं



का मूल स्वर उन दिनों पूर्णतः राष्ट्रीय था और उसमें आप धीरे-धीरे परिपक्व होते जा रहे थे। आपकी ऐसी रचनाओं का संकलन 'राष्ट्रीय वीणा' नाम से प्रकाशित हुआ था। बाद में आप गद्य-लेखन की ओर उन्मुख हुए और विभिन्न सामाजिक तथा राजनीतिक समस्याओं पर लेख आदि लिखने लगे। आपके ऐसे लेख उन दिनों अजमेर से प्रकाशित होने वाली 'त्यागभूमि' तथा बिलासपुर के 'विकास' में छपा करते थे। आपके ऐसे लेखों का संकलन आपकी 'गार्हस्थ्य जीवन और ग्राम सेवा' नामक पुस्तक में हुआ है।

धीरे-धीरे आपका अध्ययन साहित्य की गहनतम समीक्षा की दिशा में बढ़ने लगा और आप प्राचीन कवियों की रचनाओं का इस दृष्टि से पारायण करने की ओर प्रवृत्त हो गए। संस्कृत तथा हिन्दी के प्रेम और शृंगार के काव्य का अनुशीलन भी आप प्रायः किया करते थे। इसी क्रम में भक्ति साहित्य की गूढ़तम पहेलियों को सुलझाने की दिशा में भी आप पूर्ण मनोयोग से लगे रहते थे। परिणामस्वरूप आपने मीरा तथा तुलसी के काव्य का भी अत्यन्त बारीकी

से अध्ययन किया था। इस शृंखला में आपने अपनी प्रतिभा का परिचय सन् 1934 में उस समय प्रस्तुत किया था जब आपने 'रामचरित मानस' का संक्षिप्त सस्करण सम्पादित करके 'हिन्दुस्तानी प्रेस बाँकीपुर पटना' से प्रकाशित कराया था। आपकी प्रकाशित पुस्तकों में यह सबसे पहली थी। क्योंकि उस समय इसकी विस्तृत भूमिका वाला अंश कहीं खो गया था, अत उस सस्करण में केवल 'रामचरित मानस' का पाठ-मात्र ही छपा था। अब यह रचना भूमिका सहित 'मानस की रामकथा' नाम से प्रकाशित हो चुकी है।

आप धार्मिक और दार्शनिक क्षेत्र में जहाँ सुकरात, शकराचार्य और रामतीर्थ आदि के विचारों से प्रभावित थे वहाँ सामाजिक क्षेत्र में रानाडे, गोखले और चन्दावरकर आपके जीवन को आगे बढ़ने की प्रेरणा देते रहते थे। गांधी जी की सत्यनिष्ठा तो आपके जीवन की मुख्य प्रेरणा-विन्दु ही थी। आपके जीवन पर उसका बहुत बड़ा प्रभाव था। आपकी अधिकाश रचनाओं में आपका सात्विक जीवन पूर्णत रूपायित हुआ था। वैष्णवजनोचित सहज साधना आपका प्रमुख लक्ष्य थी और उसकी सिद्धि के लिए आप सतत प्रयत्नशील रहा करते थे। सन्त-साहित्य के मर्मान्वेषी समीक्षक के रूप में आपका हिन्दी-जगत् में प्रचुर सम्मान था। आपकी रचनाओं का विवरण काल-क्रम से इस प्रकार है—'मीराबाई की पदावली' (1941), 'उत्तरी भारत की सन्त परम्परा' (1951), 'सूफी काव्य सग्रह' (1951), 'सन्त काव्य' (1952), 'हिन्दी-काव्य-धारा में प्रेम प्रवाह' (1952), 'वैष्णव धर्म' (1953), 'मानस की राम-कथा' (1953), 'गार्हस्थ्य जीवन और ग्राम सेवा' (1952), 'नव निबन्ध' (1951), 'मध्यकालीन प्रेम साधना' (1952), 'कबीर साहित्य की परख' (1954), 'भारतीय साहित्य की सास्कृतिक रेखाएँ' (1955), 'बौद्ध साहित्य की सास्कृतिक झलक' (1957), 'मध्यकालीन शृंगारिक प्रवृत्तियाँ' (1960), 'भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा' (1961), 'हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान' (1962), 'भक्ति-साहित्य में मधुरोपासना' (1963), 'रहस्यवाद' (1964) तथा 'साहित्य पथ' (1966) आदि। इन महत्त्वपूर्ण रचनाओं के अतिरिक्त आपके अनेक शोधपूर्ण लेख अभी अप्रकाशित ही हैं।

आप मध्यकालीन सन्त साहित्य के विशेषज्ञ के रूप में हिन्दी साहित्य में अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखते थे। आपकी अगाध ज्ञान-राशि का परिचय आपके प्राय सभी ग्रन्थों को देखने से मिल सकता है। आपकी रचना-प्रतिभा का सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि आपकी रचनाएँ जहाँ भारत के अनेक शीर्षस्थ विद्वानों के द्वारा प्रशसित एव समादृत हुई है वहाँ आपको उन पर अनेक पुरस्कार भी प्राप्त हुए थे। आपकी प्रकाण्ड विद्वत्ता एव ज्ञान-गरिमा के कारण ही अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने जहाँ आपको 'साहित्य वाचस्पति' की सम्मानोपाधि से सत्कृत किया था, वहाँ आपकी 'उत्तरी भारत की सन्त परम्परा' नामक कृति पर अपना 'मगलाप्रसाद पारितोषिक' भी प्रदान किया था। आपकी विद्वत्ता और शोध-पटुता का परिचय आपकी उस भाषणमाला को देखने से मिल जाता है जो आपने प्रख्यात मनीषी डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल की अध्यक्षता में 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' के निमन्त्रण पर पटना में दी थी। आपका यह विस्तृत भाषण 'रहस्यवाद' नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुका है। यहाँ यह भी तथ्य सर्वथा अविस्मरणीय है कि आपके 'उत्तरी भारत की सन्त परम्परा' नामक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ को परिषद् ने अपने उद्घाटन समारोह के अवसर पर सन् 1951 में 'अखिल भारतीय ग्रन्थ पुरस्कार प्रतियोगिता' में पुरस्कृत करके अपने को सम्मानित किया था।

आपका निधन 3 जनवरी सन् 1979 को लखनऊ में हुआ था।

श्री पशुपाल वर्मा

श्री वर्मा जी का जन्म मध्यप्रदेश के इन्दौर नगर के इमली बाजार मोहल्ले में 6 अक्तूबर सन् 1890 को हुआ था। आपकी शिक्षा केवल मिडिल तक ही हो सकी थी और असमय में ही पिता के देहावसान के कारण जब परिवार के भरण-पोषण का दायित्व आपके ऊपर आ पड़ा तब विवश होकर आपने 'गवर्नमेण्ट प्रेस' में 'कम्पोजीटर' की नौकरी कर ली थी। अपने इस कार्य-काल में आपने परिवार का दायित्व सँभालते हुए अपने स्वाध्याय को भी नहीं छोड़ा था

और हिन्दी के साथ-साथ मराठी, अँग्रेजी एव सस्कृत भाषाओ का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

धीरे-धीरे आपने अपने ज्ञान को परिपुष्ट करके हिन्दी-लेखन की ओर ध्यान दिया और सर्वप्रथम मराठी ग्रन्थों का अनुवाद किया। इन्दौर के श्री एम० एम० सोजतिया के द्वारा प्रकाशित होने वाली 'दो आना' सिरीज के लिए भी आपने कई कहानियाँ लिखी थी। उपन्यासो के अतिरिक्त गम्भीर विषयो के लेखन की ओर भी आपने ध्यान दिया था। आपके लेख प्रारम्भ मे प्रायः 'वीणा' मे छपा करते थे। आपके द्वारा मौलिक रूप मे लिखित एव अनूदित कृतियो का हिन्दी जगत् म अच्छा स्वागत हुआ था।



आपकी ऐमी रचनाओ मे 'बाबू अरविन्द घोष के पत्र' (1921),'यूरोप का आधुनिक इतिहास' (1923), 'बर्कले और कॅण्ट का तत्त्व-ज्ञान (1924), 'समार की सघ-शासन-प्रणालियाँ'(1934),'जर्मनी मे लोक शिक्षा'(1935), 'प्रेम परीक्षा (1936),'प्रेम लक्ष्मी' (1937), 'नई तिजौरी या खूनी काका' (1937) तथा 'भयकर भाभी यानी घर की आग' (1938) आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य है। इनम मे 'समार की सघ शासन-प्रणालियाँ', 'जर्मनी मे लोक-शिक्षा' तथा 'बाबू अरविन्द घोष के पत्र' नामक पुस्तके अनुवाद है।

आप इतने स्वाध्यायशील थे कि सस्कृत का अध्ययन करने के लिए कई महीने तक आपने 7-8 मील की यात्रा प्रतिदिन पैदल ही की थी। आप आर्यसमाजी विचार-धारा से विशेष रूप से प्रभावित थे और इन्दौर के 'श्रद्धानन्द अनाथालय' की स्थापना मे आपका प्रमुख योगदान रहा था। प्रारम्भ मे आपने अपने कर्ममय जीवन का प्रारम्भ 'कम्पोजीटर' के रूप मे किया था, किन्तु सेवा-निवृत्ति के समय आप 'हेड कम्पोजीटर' हो गए थे। मध्य भारत हिन्दी साहित्य समिति' के कार्यों में भी आप उन्मुक्त भाव से सहयोग देते रहते थे। आपका कई पुस्तकों का प्रकाशन 'मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति' ने ही किया था। श्री पशुपाल जी का इन्दौर के साहित्यिक क्षेत्र मे इतना महत्त्वपूर्ण स्थान बन गया था कि कोई भी साहित्यिक आयोजन आपके बिना अधूरा ही रहता था।

आपका निधन 16 जून सन् 1958 को हुआ था।

श्री पी० कुंञिराम कुरुप

आपका जन्म केरल प्रदेश के कण्णूर जनपद के पल्लिकुन्नु नामक ग्राम मे 13 अप्रैल सन् 1888 को हुआ था। बी०ए०, एल०टी० और हिन्दी की 'साहित्य रत्न' परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप कालीकट (केरल) के 'कलैक्टरेट आफिस' मे लिपिक हो गए थे। बाद मे आपने तलियरम्पु नामक स्थान मे अध्यापन प्रारम्भ किया था और फिर धीरे-धीरे आप एक हाई स्कूल मे प्रधानाध्यापक हो गए थे। अपने इस अध्यापन-काल मे आपने सस्कृत का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था।



आपने मलयालम के सुप्रसिद्ध पत्र 'स्वदेश मित्रम्' का सम्पादन करने के साथ-साथ 'हिन्दी प्रचार' की दिशा मे अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर कोचीन के महाराजा ने आपको स्वर्णपदक प्रदान किया था। आपने मलयालम में कई पुस्तको की रचना भी की थी।

आपका निधन 10 अप्रैल सन् 1968 को हुआ था।

श्री पीताम्बर त्रिवेदी 'पीत'

श्री 'पीत' का जन्म उत्तर प्रदेश के कूर्मांचल के अलमोड़ा नामक नगर में 3 सितम्बर सन् 1903 को हुआ था। आपकी पारिवारिक आर्थिक स्थिति अत्यन्त क्षीण थी, अतः अभावों में अनेक कष्टों को झेलते हुए आपने अपने जीवन का निर्माण किया था। आप मुख्यतः प्रवृत्ति से साहित्यकार लगते थे, किन्तु अपनी जीविका-निर्वाह के लिए आपने प्रारम्भ में सेनेटरी इंस्पेक्टर की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। बाद में आपने 'होम्योपैथी' की चिकित्सा का अच्छा अभ्यास कर लिया था। नैनीताल की 'गुरुद्वारा कमेटी' की आप नि शुल्क सेवा किया करते थे।

साहित्य-सेवा के क्षेत्र में आपने कवि के रूप में विशेष ख्याति अर्जित की थी, किन्तु गद्य-लेखन में भी आप पर्याप्त गति रखते थे। आपके



अनेक समीक्षात्मक निबन्ध आपकी गद्य-लेखन-शैली के उत्कृष्ट प्रमाण हैं। आपकी कविताएँ प्राय छायावाद और प्रतीकवाद से समन्वित हुआ करती थी। 'सुधा', 'माधुरी', 'विश्वमित्र' और 'कुमायूँ कुमुद' में प्रकाशित आपकी अनेक रचनाएँ हमारे इस कथ्य का साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त है। आपकी लगभग 500 रचनाएँ इधर-उधर बिखरी हुई हैं।

आप जहाँ एक सहृदय कवि और गम्भीर प्रकृति के समीक्षक थे वहाँ ज्योतिष के क्षेत्र में भी आपकी अभूतपूर्व गति थी। हस्त-रेखाओं के भी आप अच्छे ज्ञाता थे। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों में 'बृहत् कर्मकाण्ड पद्धति','रामलीला नाटक' तथा 'भूगोल जिला नैनीताल' प्रकाशित हैं। आपने कूर्मांचल केसरी पण्डित बद्रीदत्त पाण्डे को भी 'कुमाऊँ का इतिहास' लिखने में प्रचुर सहायता की थी। आपकी अप्रकाशित रचनाओं में 'कुमायूनी कवियों की कविताओं का संकलन' तथा 'कुमायूँ में ब्राह्मण जाति का इतिहास' प्रमुख हैं। आपने कूर्मांचल के प्रख्यात कवि श्री गुमानी के विषय में भी एक समीक्षात्मक पुस्तक लिखी थी।

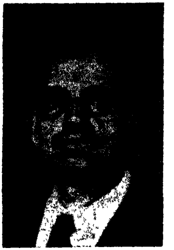
आपका निधन 11 नवम्बर सन् 1978 को हुआ था।

डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल

आपका जन्म 2 दिसम्बर सन् 1901 को उत्तर प्रदेश के गढ़वाल जनपद के लैंसडाउन अचल के समीपवर्ती पाली ग्राम में हुआ था। आपके पिता पण्डित गौरीदत्त ज्योतिष के कर्मकाण्डी विद्वान् थे। प्रारम्भिक शिक्षा अपने ग्राम के विद्यालय में प्राप्त करने के उपरान्त आपने पहले तो श्रीनगर (गढवाल) के सरकारी हाई स्कूल में प्रवेश लिया, किन्तु बाद में लखनऊ चले गए और वहाँ के 'कालीचरण हाई स्कूल' से 'हाई स्कूल' की परीक्षा उत्तीर्ण की। उन दिनों इस स्कूल के मुख्याध्यापक वही डॉ० श्यामसुन्दरदास थे जिनकी अध्यक्षता में आपने काशी विश्वविद्यालय में कालान्तर में डी० लिट० की उपाधि प्राप्त की थी। हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त सन् 1922 में आपने डी०ए०वी० कालेज कानपुर में प्रवेश लिया और वहाँ में इण्टरमीजिएट किया। कानपुर में रहते हुए आपने वहाँ के पर्वतीय छात्रों के प्रयास से प्रकाशित होने वाले 'हिलमैन' नामक पत्र का सम्पादन भी किया था।

जब आपने इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण की थी तब अचानक अपने पिताजी के असामयिक देहावसान हो जाने के कारण दो वर्ष तक आपका अध्ययन रुक गया और आप गाँव में रहकर परिवार की देख-रेख करते रहे। इसके उपरान्त आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवेश लेकर सन् 1922 में बी०ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। जिस वर्ष आपने बी०ए० किया था उसी वर्ष विश्वविद्यालय में एम०ए० (हिन्दी) की कक्षाएँ प्रारम्भ हुई थी। आप एम०ए० कक्षा के प्रथम छात्र थे और आपके विभागाध्यक्ष वही डॉ० श्यामसुन्दरदास थे जो आपके हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करते समय 'कालीचरण हाई स्कूल लखनऊ' के मुख्याध्यापक थे। आपने सन्

1928 में एम०ए०की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की थी और आपके द्वारा लिखा गया 'छायावाद' शीर्षक निबन्ध उस समय बहुत चर्चित हुआ था। एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने 2 वर्ष तक कठिन परिश्रम करके डॉ० श्यामसुन्दरदास के निरीक्षण-निर्देशन में शोध करके अपना महाप्रबन्ध प्रस्तुत किया और सन् 1922 में विश्वविद्यालय से डी०लिट्० की उपाधि प्राप्त की। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि आप हिन्दी के पहले डी०लिट्० थे। आपका यह शोध-प्रबन्ध 'हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय' नाम से प्रकाशित हो चुका है। यह शोध-प्रबन्ध आपने मूल रूप में 'दि निर्गुण स्कूल आफ हिन्दी पोयट्री' शीर्षक से अंग्रेजी में लिखा था।



शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करने से पूर्व एम०ए० करने के उपरान्त आपने सन् 1930 में 2 वर्ष तक विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में अध्यापन का कार्य किया था। अध्यापन-कार्य करने के साथ-साथ आप अपने शोध के कार्य में भी निरन्तर लगे रहते थे। आपकी शोध-प्रवृत्ति तथा कार्य-प्रणाली से प्रभावित होकर 'नागरी प्रचारिणी सभा' ने आपको अपने शोध-प्रभाग का अवैतनिक सचालक बना दिया था। अपने विश्वविद्यालय के अध्यापकीय जीवन में आपने जहाँ अध्यापन की दिशा में अत्यन्त लोकप्रियता प्राप्त की थी वहाँ शोध और अनुसन्धानपरक लेख आदि भी लिखते रहते थे। जिन दिनों आप सन् 1922 से सन् 1924 की अवधि में 2 वर्ष के लिए घर पर रहे थे तब आपने 'प्राणायाम विज्ञान और कला' तथा 'ध्यान से आत्म-चिकित्सा' नामक 2 पुस्तकें भी लिखी थीं। आपने अनेक शोधपरक लेख लिखने के अतिरिक्त आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के साथ 'कबीर ग्रन्थावली' तथा 'राम चन्द्रिका' के अतिरिक्त 'गद्य सौरभ' नामक पुस्तक का सम्पादन भी किया था। इसी प्रकार अपने गुरु डॉ० श्यामसुन्दरदास को 'गोस्वामी तुलसीदास' और 'रूपक रहस्य' नामक ग्रन्थों के लेखन में भी आपने बहुत सहायता की थी। डॉ० श्यामसुन्दरदास के 'साहित्यालोचन' नामक प्रख्यात ग्रन्थ की रचना में भी आपका सक्रिय योगदान रहा था। इनके अतिरिक्त आपने स्वतन्त्र रूप से भी कई ग्रन्थ लिखे थे। ऐसे ग्रन्थों में 'गोरख-बानी' (सम्पादन), 'रामानन्द की हिन्दी रचनाएँ'(सम्पादन), 'योग प्रवाह', 'सूरदास' तथा 'हस्तलिखित ग्रन्थों का चौदहवाँ त्रैमासिक विवरण' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपके कुछ फुटकर साहित्यिक निबन्धों का सकलन भी 'मकरन्द' नाम से प्रकाशित हुआ था। आपकी 'कबीर की साखी', 'सर्वांगी', 'हरिदास की साखी', 'रैदास की साखी', 'हरिभक्ति प्रकाश' 'सेवादास' तथा 'नेपाली साहित्य' आदि कृतियाँ अप्रकाशित ही रह गई।

आपके शोध-प्रबन्ध का हिन्दी-जगत् में अत्यन्त हार्दिकता से स्वागत किया गया था। जिन विद्वानों ने भी उसे देखा था उन्होंने उसकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की थी। आपकी शोध-प्रवृत्ति और विवेचनपटुता से प्रभावित होकर आपको लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की सेवा में नियुक्ति मिल गई थी। सन् 1937 में शिमला में आयोजित अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर आपको साहित्य परिषद् में निबन्ध-वाचन के लिए आमन्त्रित किया गया था। सन् 1940 में तिरुपति (आन्ध्रप्रदेश) में आयोजित 'प्राच्य विद्या सम्मेलन' में भी आप उसकी हिन्दी शाखा के अध्यक्ष बनाए गए थे। आप लखनऊ विश्वविद्यालय में अभी ठीक तरह से जम भी न पाए थे कि आपका स्वास्थ्य खराब हो गया। अपने कार्य-काल में आपने सन्त साहित्य से सम्बन्धित प्रचुर सामग्री की खोज की थी और इस प्रसंग में आपको अनेक स्थानों की यात्राएँ भी करनी पड़ती थीं। आपने सन्त साहित्य के सम्बन्ध में कुछ ऐसी मान्यताएँ स्थापित कर दी थीं, जिनके कारण हिन्दी-जगत् में आपकी शोध-प्रवृत्ति को बहुत सराहा गया था। यहाँ तक कि आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी और श्री परशुराम चतुर्वेदी-जैसे समीक्षकों ने भी अपने ग्रन्थों में आपकी मान्यताओं का समुचित उपयोग किया है।

आपने जहाँ हिन्दी-सन्त-साहित्य के उन्नयन तथा विकास

के क्षेत्र मे अत्यन्त उल्लेखनीय कार्य किया था वहाँ गढ़वाल अचल की समस्याओ के प्रति भी आप सर्वथा जागरूक रहे थे। आपने जहाँ सन् 1922 मे कानपुर मे अपने छात्र-जीवन मे 'हिलमैन' नामक अग्रेजी मासिक पत्र का सम्पादन किया था वहाँ अपने श्रीनगर के छात्र-जीवन में आपने 'मनोरंजनी' नामक एक हस्तलिखित पत्र भी सम्पादित किया था। सन् 1921 मे आपने श्रीनगर मे 'नवयुवक सम्मेलन' की स्थापना के लिए बहुत प्रयास किया था। गढवाल मे प्रकाशित होने वाले 'पुरुषार्थ' नामक मासिक पत्र से आप अत्यन्त निकटता से जुडे रहे थे और उसमे आपकी जो अनेक रचनाएँ प्रकाशित हुई थी उनमे कुछ कविताएँ भी है। आप जहाँ 'गढवाल साहित्य परिषद्' की स्थापना के लिए प्रयत्नशील रहे थे वहाँ आप लैंसडाउन मे प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'कर्म-भूमि' के सस्थापक भी रहे थे। उन दिनों इस पत्रिका का सम्पादन श्री भक्तदर्शन किया करते थे। आपने उत्तराखण्ड की अनेक दुर्गम यात्राएँ करके 'उत्तराखण्ड मे सन्त मत तथा सन्त साहित्य' नामक अपना एक शोध लेख लिखा था।

यह एक दुर्भाग्य की बात ही कही जायगी कि डॉ० बडथ्वाल अल्प वय मे ही इस ससार से विदा हो गए। आपके निधन पर प्रख्यात मनीषी डॉ० सम्पूर्णानन्द ने यह सही ही लिखा था—"डॉ० बडथ्वाल की मृत्यु से हिन्दी-ससार की बडी क्षति हुई है। उन्होंने हमारे वाड्मय के एक विशेष क्षेत्र को, जिसका सम्बन्ध आध्यात्मिक रचनाओं से है, अपने अध्ययन का विषय बनाया था। इस दिशा मे उन्होंने जो काम किया था, उसका आदर विद्वत्-समाज मे सर्वत्र हुआ। यदि आयु न धोखा न दिया होता तो वे और भी गम्भीर रचनाओं का सर्जन करते।"

आपका निधन 24 जुलाई सन् 1944 को अपने ग्राम पाली मे ही हुआ था।

श्री पीताम्बर पाँडे

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के कूर्मांचल क्षेत्र के भीमताल नामक स्थान के निकट एक ग्राम मे सन् 1906 मे हुआ था। आपके मन मे प्रारम्भ से ही देश-भक्ति की भावनाएँ हिलोरे मारती रहती थी, फलस्वरूप आप पढ़ाई-लिखाई की तरफ अधिक ध्यान न दे सके और लखनऊ जाकर आपने 'नेशनल हैरल्ड' नामक पत्र मे 'हॉकरी' का कार्य प्रारम्भ कर दिया था। प्रारम्भ मे आपका सम्पर्क कुछ क्रांतिकारियों से हुआ था और बाद मे आप महात्मा गाधी की विचार-धारा से अनु-प्राणित हो गए थे। जिन दिनों आप क्रांतिकारियों की टोली मे सक्रिय रूप मे कार्य-रत थे तब कानपुर मे आपका एक पैर पुलिस की गोली मे छोटा हो गया था। आप उन दिनो अपने साथियों मे 'कामरेड' नाम से जाने जाते थे। पैर मे गोली लगने के कारण आप अपनी जन्म-भूमि वापिस लौट आए थे।



अपनी जन्मभूमि लौटने पर पहले तो कुछ दिन अलमोडा के एक अखबार मे नौकरी की, किन्तु जब वहाँ आपकी पटरी नही बैठी तो आप हलद्वानी लौट आए और यहाँ से 'जागृत जनता' नामक पत्र का सम्पादन एव प्रकाशन प्रारम्भ किया। आप स्वय ही पत्र के लिए लेख लिखते, समाचारों का सकलन करते, कम्पोज करते और छापते भी थे। आपकी सहधर्मिणी भी इस कार्य मे आपकी सहायता किया करती थी। आपकी कर्मठता का सबस बडा प्रमाण यह है कि आप अकेले ही पत्र का सम्पादन, प्रकाशन, मुद्रण और वितरण किया करते थे। यहाँ तक कि नगे पैरो ही आप उसे घर-घर बाँटकर आते थे। आपने अपने पत्र के माध्यम से जहाँ जनता मे 'राष्ट्र-प्रेम' की पुनीत भावनाएँ भरने का प्रशसनीय कार्य किया था वहाँ आपने उसके द्वारा हिन्दी का भी प्रचुर प्रचार किया था।

यह आपकी लगन का ही सुपरिणाम है कि हलद्वानी मे आज अनेक प्रेस तथा पत्र है। एक दैनिक पत्र भी वहाँ से प्रकाशित होता है। लेकिन इस वातावरण को बनाने मे

श्री पीताम्बर पाडे का जो महत्त्वपूर्ण कार्य था, उसे लोग आज भी स्मरण करते है। अपने पत्र को नियमित रूप से चलाते रहने के लिए आपको जिन अनेक कठिनाइयो का सामना करना पड़ा वे आज इतिहास का अमर आलेख हो गई हैं। आप जहाँ उत्कट देशभक्त और लगनशील पत्रकार थे वहाँ अच्छे लेखक एव कवि भी थे। आपकी 'भ्रमरगीत संग्रह' और 'चिड़ियो की बारात' नामक कृतियाँ इसकी साक्षी हैं।

आपका निधन अक्तूबर सन् 1971 मे हुआ था।

श्री पीर मुहम्मद मूनिस

आपका जन्म बिहार प्रदेश के चम्पारन जनपद के बेतिया नामक स्थान मे सन् 1897 मे हुआ था। हिन्दी के उत्कर्ष मे जिन कुछ इने-गिने मुसलमानो ने अपना महत्त्वपूर्ण योग-दान किया है उनमे आपका नाम भी विशेष रूप से उल्लेख्य है। आप जहाँ हिन्दी के अच्छे साहित्यकार थे वहाँ राष्ट्र-सेवा मे भी आपकी देन कम महत्त्व नही रखती। जब महात्मा गांधी ने चम्पारन मे गोरे निलहो के विरुद्ध अपना सत्याग्रह रचा था तब आप भी इस अभियान में सम्मिलित थे। आप उच्चकोटि के राष्ट्र-कर्मी होने के साथ-साथ हिन्दी के उत्कृष्ट लेखक भी थे। आपके लेख उन दिनों अमर शहीद गणेशशकर विद्यार्थी के पत्र 'साप्ताहिक प्रताप' मे छपा करते थे।



आपने जहाँ 'बिहार प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की स्थापना मे अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया था वहाँ आपने 'चम्पारन के राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास' भी लिखा था। यह दुर्भाग्य की बात है कि आपकी यह पुस्तक प्रकाशित नही हो सकी। आपकी अनेक साहित्यिक और सामाजिक रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ की फाइलों मे छिपी पड़ी है। आपकी अधिकाश रचनाएँ अर्थाभाव के कारण प्रकाशित होने से रह गईं। यदि आपकी सभी रचनाएँ प्रकाशित होकर हिन्दी के पाठकों के समक्ष आ जाती तो बड़ा ही उपयोगी कार्य होता।

आप 'बिहार प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के पन्द्रहवें अधिवेशन के अध्यक्ष रहे थे। यह अधिवेशन सन् 1931 मे आरा मे हुआ था। आपको अपनी हिन्दी-निष्ठा के कारण अपनी बिरादरी का भी कोप-भाजन बनना पडा था। आपका जीवन अत्यन्त अर्थ-सकट और अभावो म व्यतीत हुआ था।

आपका निधन सन् 1948 मे हुआ था।

श्री पुत्तीलाल शुक्ल 'लालकवि'

श्री शुक्ल का जन्म सन् 1876 मे विलासपुर (मध्यप्रदेश) हुआ था। शैशवावस्था मे माता तथा पिता का देहावसान हो जाने के कारण आपका लालन-पालन अपनी ननसाल मे हुआ था। वही से सन् 1894 मे मिडिल तक की पढाई करने के उपरान्त आप नौकरी की खोज मे फिर विलासपुर आ गए थे और वहाँ पर पटवारी का काम करने लगे थे।

पटवारी के पद पर कार्य करते-करते आप अपनी निष्ठा तथा परिश्रमशीलता से 'राजस्व निरीक्षक' के पद तक पहुँच गए थे और सन् 1930 मे इस पद से अवकाश ग्रहण कर लिया था। आप जहाँ एक कुशल प्रशासक थे वहाँ साहित्य-रचना मे भी पर्याप्त प्रवीण थे। आपकी प्रकाशित रचनाओं मे 'विलासपुर विभूति' (1946) का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आप खडी बोली म काव्य-रचना करने के साथ-साथ अवधी तथा व्रजभाषा के भी उत्कृष्ट रचनाकार थे। आप 'लालकवि' उपनाम से भी लिखा करते थे।

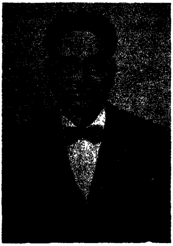
आपका निधन 79 वर्ष की आयु मे सन् 1955 मे हुआ था।

श्री पुत्तूलाल वर्मा 'करुणेश'

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के इटावा जनपद के इकदिल नामक कस्बे मे सन् 1895 में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपनी जन्मभूमि के प्राइमरी स्कूल मे ही हुई थी। अपनी कुशाग्र बुद्धि के कारण आप अपनी कक्षा के सभी छात्रो में अग्रणी स्थान प्राप्त किया करते थे। अपने ही परिश्रम से आपने हिन्दी साहित्य का अच्छा ज्ञान प्राप्त करके 'साहित्य भूषण' और 'साहित्य रत्नाकर' की उपाधियाँ प्राप्त करने के साथ-साथ उर्दू और इंग्लिश का भी अच्छा अभ्यास कर लिया था।

आपके परिवार मे परम्परा से वाटिका-विज्ञान का कार्य हुआ करता था अत आपका ध्यान भी उधर ही गया और आप भी इस कार्य मे प्रवृत्त हो गए। सर्वप्रथम आप ग्वालियर के महाराजा माधवराव सिन्धिया के स्टेट गार्डन मे सहकारी रहे थे। उन दिनो उस गार्डन के अध्यक्ष एक आयरिश सज्जन श्री बी० एफ० केबना थे, जिन्हें महाराजा सिन्धिया अपने साथ लन्दन से ले आए थे और उन्हे 'स्टेट गार्डन' का डायरेक्टर बना दिया था। जिन दिनो नई दिल्ली का राजधानी के रूप मे निर्माण हो रहा था तब महाराजा सिन्धिया की जो कोठी यहाँ दिल्ली मे बन रही थी उसकी वाटिका बनाने के प्रसग मे आप भी प्राय अपने डायरेक्टर श्री केबना के साथ दिल्ली आते रहते थे। श्री केबना के साथ आपको जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, भरतपुर, इन्दौर, बडौदा, भोपाल, नरसिहगढ और राजगढ आदि अनेक देशी रियासतो के पार्कों के नक्शे बनाने का कार्य करना पड़ा था। ग्वालियर उज्जैन और शिवपुरी के 'पब्लिक पार्क' आपके ही निरीक्षण मे बने थे।

जब श्री केबना इगलैण्ड वापिस चले गए तब आपको ही महाराजा सिन्धिया की नई दिल्ली मे बनने वाली कोठी के पार्कों के निरीक्षण का कार्य सौपा गया था। दिल्ली मे रहते हुए आपने महाराजा सिन्धिया की नौकरी से त्यागपत्र देकर स्वतन्त्र रूप से अपना कार्य करने का विचार किया था। फलस्वरूप यहाँ बनने वाले प्राय सभी भवनो मे पार्क आदि बनाने और उन्हे विकसित करने का कार्य आपको मिलने लगा। आपने सुप्रसिद्ध उद्योगपति श्री घनश्यामदास बिरला की जन्म-भूमि पिलानी में निर्मित 'विद्या विहार' की बस्ती को सुन्दर बनाने का कार्य किया था वहाँ उनके कलकत्ता, बृजराजनगर (उड़ीसा) तथा राँची आदि स्थानो में निर्मित विविध औद्योगिक संस्थानों मे जाकर आपने ही वहाँ के उद्यान आदि विकसित किए थे। भारत सरकार के 'हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड राँची' के अधिकारियो तथा कर्मचारियों के निवास के लिए बनने वाली नई बस्ती के सौन्दर्यीकरण का कार्य भी आपको ही सौपा गया था। आप अपने इस कार्य मे इतने निपुण हो गए थे कि फिर आपने नई दिल्ली मे गुरुद्वारा रकाबगज के पास अपनी स्वतन्त्र 'नर्सरी' ही स्थापित कर ली थी। आप भारतीय वाङ्मय मे आए विभिन्न वृक्षों, लताओं और पुष्पो के साहित्यिक नामो का सकलन करने का भी अद्भुत कार्य कर रहे थे। आपने जिन पुष्पों के साहित्यिक नामो की खोज की थी उनमे से कुछ के नाम इस प्रकार है— मल्लिका, केतकी, वरुण, केसरी, किमुक, कचनार, सेवती, पाटल, मालती, चम्पक, दाडिम, पाडर, आम्र, लवगलता, कुन्दलता,



बिम्बाफल, कुरबक, तिलक, अशोक, उसीर, तमाल, बजुल, बेला, बकुल, हारिल, कुमुद, चन्दन, सोनजुही, शिरीष, निवारी, पलाश, ताम्बूल, शेफाली, रजनीगधा, बिल्व, जवा, पारिजात, माधवीलता, जूही, कुटज, कुमुदिनी, कम्पिल्ल, धातुफल, शाल, ताल, मधुक, कदली, कदम्ब, लोध्र पुष्प, मदार, गेल्लाला तथा सिलवर ओक।

यह एक सयोग की ही बात है कि विभिन्न पेड-पौधो और पुष्पो के सौरभपूर्ण वातावरण मे रहते हुए आपके मानस मे कवित्व के बीज अकुरित हो गए थे और आप काव्य-रचना करने की दिशा मे अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय देने लगे थे। आपकी साहित्यिक प्रवृत्ति का सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि जिन दिनो आप ग्वालियर में रहते थे तब आपने वहाँ

पर 'कवि समाज' की स्थापना करके वहाँ अच्छा साहित्यिक वातावरण तैयार किया था। दिल्ली में आकर भी आप चुप नहीं बैठे और यहाँ पर पहले 'हिन्दी प्रचारिणी सभा' के कार्यों मे सहयोग देना प्रारम्भ किया और बाद में स्वतन्त्र रूप से 'कवि समाज' की स्थापना करके प्रत्येक मोहल्ले मे हिन्दी की कवि-गोष्ठियाँ आयोजित करके साहित्यिक वातावरण बनाने का अभिनन्दनीय कार्य किया। आपने 'कवि समाज' के माध्यम से दिल्ली में जो वातावरण बनाया था उसे और भी विस्तार देने की दृष्टि से यहाँ 2 अप्रैल सन् 1945 को 'हिन्दी प्रचारिणी सभा' को दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के रूप में बदल दिया गया और सर्वप्रथम आपको ही सम्मेलन का 'प्रधान मन्त्री' बनाया गया। इससे पूर्व आप 'कवि समाज' और 'हिन्दी प्रचारिणी सभा' के माध्यम से हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार का जो कार्य किया करते थे उसे 'दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के द्वारा करने लगे।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि सन् 1933 मे दिल्ली मे सम्पन्न हुए 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के वार्षिक अधिवेशन के समय भी आपने अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया था। इस अधिवेशन के अवसर पर आप स्वागत-समिति के मन्त्री थे। यह अधिवेशन बड़ौदा-नरेश सयाजीराव गायकवाड़ की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुआ था। जब आपने दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन' का प्रधानमन्त्रित्व सँभाला तब स्वतन्त्रता के उपरान्त आपके प्रयास से सम्मेलन की ओर से नई दिल्ली मे जो 'राजभाषा व्यवस्था परिषद्' आयोजित हुई थी उसमे सभी भारतीय भाषाओ के उच्च-कोटि के विद्वानो को बुलाकर हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करने का सकल्प लिया गया था। आप जहाँ 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की स्थायी समिति के सदस्य रहे थे वहाँ 'ब्रज साहित्य मण्डल' के भी सक्रिय सदस्य रहे थे। जिन दिनो सन् 1945 मे 'ब्रज साहित्य मण्डल' का वार्षिक अधिवेशन दिल्ली में हुआ था तब आप ही उसके स्वागत-मन्त्री थे।

जहाँ आप कुशल सगठक और उत्साही साहित्य-प्रेमी थे वहाँ आप एक सहृदय कवि के रूप मे भी प्रतिष्ठित थे। आपकी कविताओं का सकलन 'अलिका' नाम से प्रकाशित हुआ था। आपकी रचनाओं मे जहाँ 'ऊषा' तथा 'सन्ध्या' शीर्षक कविताएँ अत्यन्त लोकप्रिय हुई थी वहाँ 'परदेशी अपने घर जाओ' शीर्षक आपकी कविता ने तो सन् 1942 के आन्दोलन के समय बहुत ख्याति अर्जित की थी। आपने मिर्जापुर-निवासी एक अवकाश-प्राप्त न्यायाधीश के सहयोग से 'हैहय वंश' नामक एक ग्रन्थ की रचना भी की थी, जो सन् 1961 मे प्रकाशित हुआ था। आप 'हिन्दी ज्ञान कोश' के 'विज्ञान विभाग' के लेखक व सम्पादक थे। जिन दिनों सन् 1925 से सन् 1927 तक आप ग्वालियर मे थे तब आपने वहाँ अपने जातीय पत्र 'हैहयवंश' का सम्पादन भी किया था। आपने इस पत्र का सम्पादन नई दिल्ली से भी सन् 1952 से सन् 1956 तक किया था। आपकी 'पुष्पोद्यान विज्ञान' नामक पुस्तक भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आपने 'मयूर' नामक धूपघड़ी तथा 'दस सहस्रवर्षीय कैलेण्डर' का भी निर्माण किया था।

अपने जीवन के अन्तिम दिनों में आप अपनी जन्म-भूमि इटावा चले गए थे और वहीं पर रह रहे थे। वहाँ पर ही आपका निधन 4 अगस्त सन् 1962 को हुआ था। आपके निधन के उपरान्त श्री वाल्मीकि ऋषीश्वर तथा कृष्णकुमार वर्मा के सम्पादन मे 'श्री करुणेश स्मृति ग्रन्थ' का प्रकाशन किया गया था।

श्री नादेल्ल पुरुषोत्तम कवि

आपका जन्म आन्ध्र प्रदेश के कृष्णा जनपद के दिवि तालुके के सीतारामपुरी नामक स्थान मे 13 अप्रैल सन् 1863 को हुआ था। जब आप केवल 1 वर्ष के थे तब बगाल की खाड़ी मे आए भयकर तूफान से आपका जन्म-ग्राम सीतारामपुरी भी बह गया था। आपका परिवार उस जल-प्रलय से बड़ी कठिनाई से ही बच सका था। सीतारामपुरी ग्राम के नष्ट हो जाने के कारण आपके माता-पिता क्योंकि 'नादेल्ल' नामक गाँव मे रहने लगे थे, इसलिए आपके नाम के पूर्व 'नादेल्ल' शब्द जुड गया। आपके पिता ने आपका अक्षरारम्भ 'पचाक्षरी' से कराया था। आप जब केवल 9 वर्ष के ही थे कि आपके पिता का देहावसान हो गया। फलस्वरूप आपने हैदराबाद में रहकर तेलुगु के अतिरिक्त फारसी, उर्दू, सस्कृत

और हिन्दी की शिक्षा प्राप्त की थी।

आपने अपने जीवन-निर्वाह के लिए सन् 1896 मे हैदराबाद से मछलीपट्टणम् के समीपवर्ती रामनगरम् नामक स्थान मे जाकर एक छोटी-सी पाठशाला खोलकर वहाँ बालकों को पढ़ाना प्रारम्भ कर दिया। वहाँ पर रहते हुए ही आपने अँग्रेजी भाषा भी सीख ली थी। इसी बीच आपने मछली पट्टणम् के 'हिन्दू हाई स्कूल' मे भरती होकर विधिवत् शिक्षा ग्रहण की तथा टीचर्स ट्रेनिंग की परीक्षा उत्तीर्ण करके आप राजकीय पाठशाला मे अध्यापक हो गए। आपने अपने इस शिक्षकीय जीवन मे थोडा समय निकालकर तेलुगु भाषा के काव्यो, पुराणो तथा नाटको का भी विधिवत् पारायण कर लिया था।



सन् 1880 मे जब आन्ध्रप्रदेश मे 'धारवाड नाटक मण्डली' सर्वत्र तेलुगु नाटको का प्रदर्शन कर रही थी तब वहाँ की जनता मे हिन्दुस्तानी भाषा मे नाटक देखने की भावनाएँ प्रबल हो रही थी। जनता की इस भावना की सम्पूर्ति के लिए आपने सन् 1884 और सन् 1886 के बीच हिन्दी (हिन्दुस्तानी भाषा) मे लगभग 32 नाटको की रचना की थी। इन नाटको मे 7 के कथानक रामायण पर, 4 के महाभारत पर, 2 के इतिहास पर तथा शेष 19 के पुराणो पर आधारित है। उन दिनो ये सभी नाटक मछलीपट्टणम् के अतिरिक्त अन्य स्थानो पर भी लगभग 10-15 वर्ष तक निरन्तर प्रदर्शित होते रहे थे। इन नाटकों का निर्देशन आप स्वय ही किया करते थे। यहाँ यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि सन् 1884 मे आपके 'कलावती परिणयम्' नाटक का मचन देखकर धारवाड कम्पनी के निदेशक 'गाबाजी' ने उसकी बडी प्रशसा की थी। इन नाटकों के अतिरिक्त आपने तेलुगु और संस्कृत मे भी लगभग 80 पुस्तकों की रचना की थी। आपने 'सुलभ वस्तु वैद्य बोधिनी' नामक एक आयुर्वेद-सम्बन्धी पुस्तक भी तेलुगु भाषा मे लिखी थी।

आपके नाटकों मे हिन्दी नाटकों की भाँति ही सभी लक्षण पाये जाते है। उन्हे देखने से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आपने भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के निधन के पश्चात् हिन्दी मे रगमचीय नाटक प्रस्तुत करने की दिशा मे अभिनन्दनीय कार्य किया था। यहाँ यह बात विशेष रूप मे उल्लेखनीय है कि भारतेन्दु के अधिकांश नाटक अभिनेय नही थे। आपने अपने इन नाटकों का प्रचार करने के निमित्त सन् 1889 मे 'बुध विधेयिनी' नामक एक तेलुगु पत्रिका भी चलाई थी। इस पत्रिका के माध्यम से आप कांग्रेस के राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रचार भी प्राय: करते रहते थे। एक बार आपने 'मछलीपट्टणम्' के मुसलमानो की सभा मे हिन्दुस्तानी मे भाषण भी दिया था। जिन दिनो आप सन् 1887-88 मे वहाँ के 'हिन्दू ब्राच स्कूल' के प्रधानाध्यापक थे तब आपने अपने छात्रों की शैक्षणिक तथा मानसिक उन्नति के लिए अनेक प्रशसनीय कार्य किए थे। आप मछलीपट्टणम् मे 'कवि जी' के नाम मे विख्यात थे। आपकी कवित्व-प्रतिभा पर मुग्ध होकर मछलीपट्टणम् के साहित्यिक बन्धुओं ने आपको 'सरस-चतुर्विध-कविता-साम्राज्य-धुरन्धर' की सम्मानोपाधि से विभूषित किया था। आप गर्भ, चित्र तथा बन्ध कविता की रचना करने मे परम प्रवीण थे।

अपने शिक्षकीय जीवन के साथ-साथ आप आयुर्वेदिक औषधियाँ तैयार करके निर्धन लोगो की नि शुल्क चिकित्सा भी किया करते थे। वेद विद्या के उद्धार के लिए आपने 'सामवेद पाठशाला' की स्थापना भी की थी। इस पाठशाला मे जहाँ आपने छात्रो को नि शुल्क शिक्षा देन की व्यवस्था की थी वहाँ आप उन्हे सन्ध्या-वन्दन आदि भी सिखाते थे। सन् 1895 से आप प्रतिवर्ष वैदिक विद्वानो का यथोचित सम्मान किया करते थे। आपका निधन 27 नवम्बर सन् 1938 को हुआ था।

आपके निधन के उपरान्त आपके पारिवारिक जन इस परम्परा का अब भी निर्वाह कर रहे है।

डॉ० पुरुषोत्तमदास अग्रवाल

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के वाराणसी नगर मे 15 जनवरी

सन् 1930 को हुआ था। आपके पारिवारिकजन मूलतः मऊनाथ भंजन (आजमगढ़) के निवासी थे। वंश-परम्परा से आपके परिवार मे व्यापार ही होता आया है और आपके सभी भाई बनारस तथा गोरखपुर मे व्यापार-कार्य मे संलग्न हैं। गोरखपुर के सैण्ट एण्ड्रूज कालेज से हिन्दी विषय मे एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने एक प्राइवेट परीक्षार्थी के रूप मे



संस्कृत एम० ए० की परीक्षा दी थी और तदुपरान्त राजस्थान विश्वविद्यालय से 'मध्यकालीन हिन्दी कृष्ण काव्य मे रूप-सौन्दर्य' विषय पर शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। आपने जहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'साहित्य रत्न' परीक्षा ससम्मान उत्तीर्ण की थी वहाँ 'प्रयाग संगीत समिति' की 'वाद्य-संगीत' (सितार) की भी परीक्षा दी थी।

अपने अध्ययन की समाप्ति पर आपने पारिवारिक व्यवसाय में न पड़कर अध्यापन को ही जीवन-निर्वाह के लिए चुना था। परिणामतः आप 'दिल्ली विश्वविद्यालय' के अन्तर्गत संचालित पी० जी० डी० ए० वी० कालेज (सान्ध्य) मे हिन्दी के प्रवक्ता हो गए और अपने जीवन के अन्तिम दिनों में वहाँ ही कार्य-रत थे। आपने अपने शोध-प्रबन्ध-लेखन के साथ-साथ साहित्य-रचना की दिशा में कई उल्लेखनीय पुस्तकें हिन्दी-जगत् को प्रदान की थी। आपकी ऐसी रचनाओं में आपके शोध-प्रबन्ध के अतिरिक्त 'साहित्यिक निबन्ध', 'शब्द शक्ति' तथा 'ध्रुव स्वामिनी—शास्त्रीय विवेचन' प्रमुख हैं। 'श्रीमद्भगवद्गीता' के सम्बन्ध मे भी आपने एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ की रचना की थी। आपने 'पाँच आधुनिक काव्य' नामक कृति की रचना सहलेखन में की थी। आपकी 'मुसलमान कवि-कोश' नामक रचना के अतिरिक्त एक विचारात्मक निबन्धों का संकलन अभी अप्रकाशित है।

आपका निधन 8 मार्च सन् 1974 को हुआ था।

पण्डित पुरुषोत्तमदेव व्यास

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के प्रख्यात तीर्थ मथुरा में 10 दिसम्बर सन् 1866 को हुआ था। आपको 'लल्लो जी महाराज' नाम से भी अभिहित किया जाता था। आपके पिता श्री गोपालदेव जी व्यास सस्कृत के प्रख्यात विद्वान् थे, इसी कारण आपकी शिक्षा भी संस्कृत की प्राचीन पद्धति से ही हुई थी। आप हिन्दी के सुकवि, वक्ता, ज्योतिषी, कथा-वाचक और सुलेखक थे। आपने जहाँ ज्योतिष के



अनेक प्रख्यात ग्रन्थो का अच्छा स्वाध्याय किया था वहाँ पौराणिक साहित्य के गम्भीर विद्वान के रूप मे भी आपकी विशिष्ट ख्याति थी।

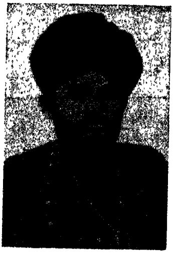
आप संस्कृत वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान् होने के साथ-साथ ब्रजभाषा-साहित्य के गम्भीर ज्ञाता थे। आपकी ब्रज-भाषा मे लिखित कविताओ का संकलन सन् 1915 मे जहाँ 'युगल गीत' नाम से प्रकाशित हुआ था वहाँ आपका सस्कृत एव हिन्दी मे लिखित ग्रन्थ 'ज्योतिष सिद्धान्त पंचाध्यायी शास्त्रम्' नाम से सन् 1917 मे छपा था।

ब्रज प्रदेश में आपकी विद्वत्ता की बहुत अधिक धाक थी। संस्कृत, हिन्दी और ब्रजभाषा की साहित्य-रचना करने मे आप अत्यन्त दक्ष थे।

आपका निधन 9 सितम्बर सन् 1940 को हुआ था।

श्री पुरुषोत्तमप्रसाद पाण्डेय

आपका जन्म सन् 1881 में मध्यप्रदेश के बिलासपुर जनपद के महानदी-तटवर्ती बालपुर नामक ग्राम मे हुआ था। आपके पूर्वज बापूपुरा (गोरखपुर) के निवासी थे और आपके प्रपितामह श्री सोमनाथ पाण्डेय ने सम्बलपुर के महाराजा से बालपुर आदि 5 ग्राम जमींदारी में प्राप्त किये थे। आपके पितामह श्री शालिग्राम पाण्डेय जहाँ बडे गो-ब्राह्मण - सेवक एव अतिथि-परायण थे वहाँ आपके पिता श्री चिन्तामणि पाण्डेय हिन्दी साहित्य के अनन्य प्रेमी थे। उनके पास तुलसी-कृत 'रामायण', 'सूर सागर', 'कबीर साखी' 'ब्रज विलास' और 'महाभारत' आदि अनेक धार्मिक, साहित्यिक एव ऐतिहासिक ग्रन्थो का अच्छा संकलन था।



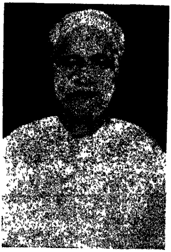
वे अपने व्यय मे हिन्दी की पाठशाला भी चलाया करते थे। हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक श्री अनन्तराम पाण्डेय ने अपनी प्राथमिक शिक्षा इसी पाठशाला मे प्राप्त की थी। आप हिन्दी के प्रख्यात कवि-द्वय श्री लोचनप्रसाद पाण्डेय और मुकुटधर पाण्डेय के सबसे ज्येष्ठ भाई थे। आपके 7 अन्य भाइयों मे श्री लोचनप्रसाद पाण्डेय का स्थान आपसे चौथा तथा श्री मुकुटधर पाण्डेय का आठवाँ था। आपको साहित्य-सेवा की प्रेरणा अपने मामा श्री अनन्तराम पाण्डेय (रायगढ-निवासी) से प्राप्त हुई थी और भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के अनन्य सखा ठाकुर जगमोहनसिंह तथा शबरीनारायण निवासी पण्डित मालिकराम भोगहा आपके अनन्य मित्र थे।

हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार श्री माधवराव सप्रे द्वारा सम्पादित 'छत्तीसगढ़ मित्र' में आपकी रचनाएँ प्रायः प्रकाशित होती रहती थीं। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने भी 'सरस्वती' में आपकी कई रचनाएँ प्रकाशित की थी। आपने सर्वप्रथम छत्तीसगढ़ अचल मे प्रचलित लोक-कथाओं को हिन्दी मे प्रस्तुत करने का अभिनन्दनीय प्रयास किया था। आपकी ऐसी कहानियों का एक सकलन उन दिनों 'सरस्वती विलास प्रिंटिंग प्रेस' के द्वारा 'एक लाल गुलाल' के नाम से प्रकाशित हुआ था। आपने श्री अनन्तराम पाण्डेय की रचनाओं का संकलन 'अनन्त लेखावली' नाम से सम्पादित करके रायगढ़ के राजकीय मुद्रणालय 'नटवर प्रेस' से दो भागों मे प्रकाशित कराया था। आपकी साहित्यिक प्रतिभा एव योग्यता से प्रभावित होकर ही आपके उक्त दोनों अनुज साहित्य-क्षेत्र मे प्रतिष्ठित तथा प्रशसित हुए थे। आपके इन दोनों अनुजों के पास हिन्दी की 'सरस्वती', 'सुधा', तथा 'माधुरी' आदि जो अनेक पत्र-पत्रिकाएँ आया करती थी, आप उनके स्वाध्याय से अपना मनोरंजन किया करते थे।

आपका निधन सन् 1951 मे हुआ था।

पण्डित पुरुषोत्तम व्यास

आपका जन्म सन् 1893 मे उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद नगर मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपनी पारिवारिक परम्परा के अनुसार सस्कृत-हिन्दी मे ही हुई थी। अपने निजी स्वाध्याय के बल पर आपने सस्कृत के सभी धर्म-ग्रन्थो का चूड़ान्त पारायण कर लिया था। सगीत एव हिन्दू धर्म-शास्त्रो के पारगत विद्वान् होने के साथ-साथ आप अच्छे उपदेशक भी थे। आपकी सगीत - पटुता एवं वक्तृत्व - शैली के कारण रीवाँ, अवागढ, शेखूपुरा और नैहर आदि अनेक रियासतो के राजा-महाराजा आपका बडा सम्मान किया



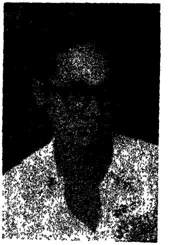
करते थे और आप अनेक राज्यों के 'राजगुरु' कहलाते थे।

आप जहाँ अच्छे कथावाचक एवं संगीतज्ञ के रूप में लोकप्रिय थे वहाँ लेखन की दिशा मे भी आपने अपनी अच्छी प्रतिभा का परिचय दिया था। आपकी काव्य-कृतियों मे 'कृष्ण-सुदामा' प्रकाशित हो चुकी है और 'राम चरित' तथा 'कृष्णायन' अभी अप्रकाशित है। आपके सुपुत्र श्री मदनमोहन व्यास भी हिन्दी-संस्कृत के गम्भीर विद्वान् एवं प्रतिष्ठित कवि हैं।

आपका निधन 11 मई सन् 1963 को हुआ था।

श्री पुरुषोत्तम साहनी 'शबाब'

श्री साहनी का जन्म 16 दिसम्बर सन् 1937 को उत्तर प्रदेश के कानपुर नगर मे हुआ था। आपने कवि और चित्रकार के रूप मे समाज मे अपना प्रमुख स्थान बना लिया था। आपने



जीवन-भर संघर्षों और बाधाओं के बीच ही अपना मार्ग बनाया था। आपके चित्रों तथा कविताओं पर समाजवादी क्रान्ति-दर्शन एवं विचार-धारा का प्रबल प्रभाव था।

जिन दिनों सन् 1957 मे 'सोवियत शिष्ट मण्डल' कानपुर आया था तब आपने उसको 'सुदर्शन चक्रधारी श्रीकृष्ण' का जो इन्द्रधनुषी चित्र भेंट किया था वह भारतीय चित्रकला का उत्कृष्ट प्रमाण था। आपने सदैव आपाधापी के वातावरण से दूर रहकर अपनी कला और साहित्य की साधना की थी। समाज मे उपेक्षित रहने के कारण आपकी कला का समुचित मूल्यांकन नहीं हो सका था।

जब इस जनवादी कवि तथा चित्रकार का असामयिक निधन 31 अक्तूबर सन् 1976 को हुआ था तब श्री सुदर्शन चक्र, श्रीमती ममता मालपाणी तथा श्री मुक्तिकुमार मिश्र के सम्पादन में एक छोटी-सी स्मारिका भी प्रकाशित की गई थी।

श्रीमती पुष्पा भारती

श्रीमती पुष्पा भारती का जन्म सन् 1925 में उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर मे हुआ था। आप अध्यापिका थी और वहाँ की सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक हलचलों मे बराबर सक्रिय रहती थी। आपने कुछ कविताएँ तथा कहानियाँ लिखी थीं। आपकी कहानियों का संकलन जहाँ 'इन्कलाब' नाम से प्रकाशित हो चुका है वहाँ आपकी कवित्व-प्रतिभा का परिचय श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' द्वारा सम्पादित 'आधुनिक हिन्दी कवयित्रियों के प्रेमगीत' नामक कृति में प्रकाशित आपके गीत को देखकर मिल सकता है।



आपका निधन 12 सितम्बर सन् 1948 को हुआ था।

श्री पूरनचन्द्र जैन 'नाहर'

श्री नाहर का जन्म पश्चिमी बंगाल के मुर्शिदाबाद नगर के एक अत्यन्त प्रतिष्ठित श्वेताम्बर जैन परिवार में सन्

1875 में हुआ था। आपका परिवार राजस्थान से जाकर वहाँ बस गया था। आपने वहाँ के अजीमगंज स्कूल से मैट्रिक और बरहमपुर कालेज से इण्टरमीजिएट की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। तदुपरान्त कलकत्ता के 'प्रेसीडेन्सी कालेज' से बी० ए०, एम० ए० तथा वकालत की परीक्षाएँ देकर आपने बरहमपुर मे ही वकालत प्रारम्भ की थी। बरहमपुर मे 4 वर्ष तक प्रैक्टिस करने के बाद आप कलकत्ता चले आए और यहाँ के हाईकोर्ट के वकीलो मे अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया था। प्रारम्भ में आपने कलकत्ता हाईकोर्ट के विख्यात एटर्नी जनरल श्री भूपेन्द्रनाथ बसु के यहाँ 'आर्टिकल क्लर्क' के रूप मे कार्य प्रारम्भ किया और 4 वर्ष तक उनके साथ यह कार्य तत्परतापूर्वक करते रहे थे।

श्री नाहर जी के पिता अत्यन्त दूरदर्शी तथा बुद्धिमान थे। वे सम्मिलित परिवारो मे सम्पत्ति को लेकर होने वाले कलह से पूर्णत परिचित थे, इसीलिए उन्होने अपनी सारी सम्पत्ति को अपने चारो पुत्रो मे समान रूप से विभाजित करके उनके मकानो के लिए भी अलग-अलग जमीने खरीद दी थी। वे यह भी चाहते थे कि उनके जीवन-काल मे ही उनके सारे पुत्र अपने-अपने दायित्वों का पूर्णत निर्वाह करने मे पूर्णत सफल हो जायें। इसी बीच उनके सबसे छोटे भाई कुमारसिह, उनकी पत्नी तथा पुत्र का असामयिक देहान्त हो गया। पूरनचन्द जी के पिता ने जब उसकी सम्पत्ति को उनके तीनो भाइयो को सौपने की बात कही तो श्री नाहर ने इसका प्रतिवाद करते हुए इस सम्पत्ति का एक 'ट्रस्ट' बना देने का सुझाव अपने पिताजी को दिया। आपके पिता को आपका यह सुभाव जँच गया और उन्होंने एक ट्रस्ट बनाकर एक सभा भवन, आदिनाथ का मन्दिर तथा उनकी माताजी की स्मृति मे एक पुस्तकालय बनाया, जो 'कुमारसिंह हाल' और 'गुलाबकुमारी लायब्रेरी' के नाम से विख्यात है। इसी भवन के ऊपर वाली मंजिल में 'आदिनाथ' का मन्दिर है।



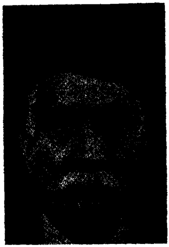
क्योंकि श्री नाहर ने कलकत्ता-हाईकोर्ट मे 4 वर्ष तक प्रैक्टिस करने के उपरान्त अपना सारा जीवन भारतीय कला तथा पुरातत्त्व की सेवा मे लगा दिया था और अपने यहाँ प्राचीन कला तथा संस्कृति से सम्बन्धित अनेक महत्त्वपूर्ण वस्तुओ का सग्रह कर लिया था, इसलिए इस सारी सामग्री को आपने इस पुस्तकालय को ही समर्पित कर दिया। इस सामग्री से आपके सग्रहालय का महत्त्व और भी बढ गया। आज आपका यह सग्रहालय तथा पुस्तकालय भारतीय कला और पुरातत्त्व का एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र माना जाता है। इस सग्रहालय मे मूर्तियाँ, सिक्के, चित्र, कलमी चित्र, मुगल चित्र, राजपूत चित्र, जैन चित्र, आधुनिक चित्र, काँच पर तसवीरो, हाथी-दाँत पर तसवीरो, अबरक पर तसवीरो, चमडे पर तसवीरो के अतिरिक्त उर्दू, फारसी, हिन्दी और सस्कृत के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो की हस्तलिखित पाण्डुलिपियाँ सिक्के, तमगे, पीतल और काँसे की मूर्तियाँ, हाथी-दाँत की चीजें तथा मीने के काम की चीजें आदि सुरक्षित है। भारतीय कला और इतिहास से सम्बन्धित कदाचित् कोई ही ऐसा ग्रन्थ होगा जो आपके इस सग्रहालय मे न हो। ऐसे ग्रन्थो की सख्या लगभग 10 हजार होगी।

आप जहाँ कला, साहित्य और पुरातत्त्व के सकलन मे इतनी रुचि रखते थे वहाँ लेखन की दिशा मे भी आपने महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। आपने जैन शास्त्रो और जैन इतिहास पर अँग्रेजी मे जहाँ कई ग्रन्थ लिखे थे वहाँ 'प्राकृत सूक्ति रत्नमाला' के नाम से प्राकृत की सुन्दर सूक्तियों का सग्रह भी प्रकाशित किया था। आपने 'ऐतिहासिक जैन लेख सग्रह' नामक ग्रन्थ का कई भागो मे प्रकाशन करके इतिहास के क्षेत्र मे महत्त्वपूर्ण काम किया था। आपके द्वारा स्थापित किया गया यह पुस्तकालय एव सग्रहालय मारवाडी तथा जैन समाज के लिए तो गौरव की वस्तु है ही, अखिल देश के विद्वानो के लिए भी तीर्थ-तुल्य है। कलकत्ता जाने वाले देश-विदेश के सभी विद्वान् और विद्या-व्यसनी महानुभाव इस सग्रहालय को देखकर नाहर जी के कला और साहित्य-प्रेम की भूरि-भूरि प्रशसा करते नही अघाते।

आपका निधन सन् 1936 मे हुआ था।

श्री पूर्णचन्द्र एडवोकेट

आपका जन्म 7 मई सन् 1888 को उत्तर प्रदेश के नैनीताल नगर में हुआ था। आपके पिता श्री जवाहरलाल उत्तर प्रदेश के गवर्नर के कार्यालय मे काम करते थे और इस प्रसग मे ही वे सपरिवार उन दिनों नैनीताल मे थे। उन दिनों गवर्नर का कार्यालय 6 मास इलाहाबाद मे और 6 मास नैनीताल मे रहता था। वैसे पारम्परिक रूप से आपका परिवार आगरा के माईथान मोहल्ले का है। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा एक मौलवी से इलाहाबाद मे हुई थी। उन दिनो हिन्दी का प्रचार बहुत कम था। जब आपके पिता शासकीय सेवा मे निवृत्ति पाकर स्थायी रूप से आगरा आकर रहने लगे तब आगरा के 'कालिजिएट स्कूल' मे आपने प्रविष्ट होकर विधिवत् शिक्षा प्रारम्भ की थी। जब आपके बड़े भाई श्री हीरालाल सूद बी० ए० करने के उपरान्त मेरठ के डी०ए०वी० स्कूल मे मुख्याध्यापक होकर वहाँ आ गए तब आपने सन् 1904 मे वहाँ से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी।



इसके उपरान्त आप आगे की पढ़ाई जारी रखने के लिए आगरा चले गए और वहाँ के सेण्ट जॉन्स कालेज मे प्रवेश ले लिया। आपने क्योंकि मैट्रिक मे भी उर्दू भाषा ही ली हुई थी अत: एफ० ए० मे भी आपने विवश होकर फारसी भाषा ली थी। इस प्रकार आपने बी० ए० की परीक्षा भी अर्थशास्त्र, अँग्रेजी और फारसी विषयों के साथ उत्तीर्ण की थी। आपने सन् 1910 मे एल-एल०बी० की परीक्षा देने के बाद कुछ समय तक अध्यापन-कार्य किया था और तदुपरान्त वकालत की प्रैक्टिस करने लगे थे। अपने अध्ययन के इस काल मे आपका आर्यसमाज से सम्पर्क हो गया और इस सम्पर्क के कारण ही आपने हिन्दी में इतनी प्रगति कर ली थी कि आप लेख आदि भी लिखने लगे थे।

सन् 1910 में आप आर्यसमाज हींग की मण्डी, आगरा के सदस्य बने थे और कालान्तर मे आप आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के क्रमश: मन्त्री, उपप्रधान तथा प्रधान भी रहे थे। आर्य समाज के इन विभिन्न उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर प्रतिष्ठित रहते हुए आपने अपनी वाणी और लेखनी दोनों से ही समाज की उल्लेखनीय सेवा की थी। धीरे-धीरे वह समय भी आया जब आप सन् 1959 मे आर्य जगत् की शिरोमणि संस्था 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिध सभा' के प्रधान भी निर्वाचित हो गए।

आपने अपने कार्य-काल मे अनेक रचनात्मक प्रवृत्तियो और आन्दोलनो का प्रवर्त्तन किया था। आप जहाँ कुशल प्रशासक और जागरूक संगठक थे वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आपकी देन अविस्मरणीय है। आपकी प्रमुख रचनाओ मे कर्म व्यवस्था', 'मन मन्दिर', 'विश्व की पहेली', 'दिव्य दयानन्द', 'चरित्र निर्माण', 'हमारा राष्ट्र','दौलत की मार', 'खेल तमाशा', 'भ्रष्टाचार निरोध का मनोविज्ञान', 'हमे क्या चाहिए', 'अनुशासन', 'अनुशासन का विधान', 'ईश्वर-उपासना', 'धर्म और धन', 'कहाँ बचोगे, कहाँ छिपोगे', 'शान्ति कैसे', 'भ्रष्टाचार क्यो', 'नशाबन्दी की सफलता', 'अपराध-निरोध', 'भ्रष्टाचार निरोध की योजना', 'ईश्वर प्राप्ति और उसके साधन', 'ज्ञान की उत्पत्ति', 'गुरु दीक्षा का सन्देश', 'यज्ञ और पूर्णता', 'छुआछूत का कलक', 'भावनात्मक एकता' तथा 'ईश्वर-उपासना और चरित्र-निर्माण' आदि उल्लेखनीय है। आपकी जो आत्म-कथा 'जीवन के अनुभव' नाम से प्रकाशित हुई है उसे पढ़कर आपके जीवन-संघर्ष का सही परिचय मिल सकता है।

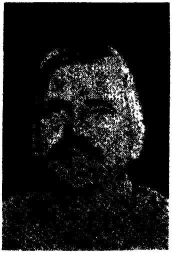
आपका निधन 8 जून सन् 1979 को लखनऊ मे हुआ था, वहाँ पर आप अपने पुत्र श्री बालेश्वरसिंह के पास ठहरे हुए थे।

श्री पूर्णचन्द्र विद्यालंकार

आपका जन्म अम्बाला के केसरी नामक स्थान मे

22 अक्तूबर सन् 1907 को हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा गुरुकुल काँगड़ी मे हुई थी और सन् 1929 में आपने वहाँ से शिक्षा-समाप्ति पर 'विद्यालंकार' की उपाधि प्राप्त की थी। अपनी स्नातक परीक्षा के लिए आपने 'खादी' पर लघु शोध-निबन्ध लिखा था। इस शोध-निबन्ध के परीक्षक आचार्य पद्मसिंह शर्मा आपकी लेखन-शैली से इतने प्रभावित हुए थे कि उन्होंने इस निबन्ध को 'विशाल भारत' मे छपवा दिया था। गुरुकुल मे स्नातक होते ही आप सबसे पहले गान्धी जी के पाँचवे पुत्र सेठ जमनालाल बजाज के निजी सचिव के रूप में कर्म-क्षेत्र में अवतरित हुए थे। सेठ जी के साथ आपने पण्डित जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुए कांग्रेस के लाहौर-अधिवेशन मे सम्मिलित होकर रावी तट पर अपने जीवन को आजादी के यज्ञ मे होम देने का पावन व्रत लिया था। देखते-ही-देखते गान्धी जी की पुकार पर सारे देश म आन्दोलन छिड गया और आपने भी उसमे कूदने का साहसिक संकल्प कर लिया। आपने डटकर आन्दोलन मे भाग लिया और गुरुकुल के जत्थे के साथ 'नमक सत्याग्रह' के सिलसिले मे रुडकी मे गिरफ्तार होकर जेल चले गए।

आपके जीवन पर गान्धी जी का इतना गहरा रग चढा था कि जेल से वापिस लौटकर आप जहाँ 'गान्धी सेवा सघ' के आजीवन सदस्य हो गए वहाँ जिला कांग्रेस कमेटी सहारनपुर व 'गान्धी सेवाश्रम हरिद्वार' के अध्यक्ष भी बना दिए गए। जब गान्धी जी ने अपने सभी कार्य-कर्ताओं को ग्रामोन्मुख होने की प्रेरणा दी तो आपने भी सहारनपुर जिले के एक गाँव 'चुड़ियाला' को अपना केन्द्र बनाकर उनकी सभी रचनात्मक प्रवृत्तियों के प्रयोग वहाँ रहकर किये। खादी के प्रति आपका आजीवन इतना लगाव रहा कि अपने हाथ से कते सूत के वस्त्र ही आपने आजीवन प्रयुक्त किये। स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग के प्रति आपकी इतनी गहन निष्ठा थी कि कैसी भी अवस्था मे आप अपनी इस धारणा से रंच मात्र भी टस से मस नही होते थे। यद्यपि आप 'जन्मना' वैश्य थे, परन्तु जीवन मे जाति-बिरादरी से सदा ऊपर रहे और मानव मात्र को आपने सदा अपना आत्मीय जन ही माना था। आपकी राष्ट्र-भक्ति इतनी अधिक दृढ थी कि कोई भी आन्दोलन ऐसा नही बचा था जिसमे आपने बढ़-चढ़कर भाग न लिया हो। सन् 1930 से लेकर सन् 1942 तक आपने 8 बार जेल-यात्राएँ करके अपनी अखण्ड राष्ट्र-भक्ति का परिचय दिया था।



आपने अपने कर्म-सकुल जीवन मे जहाँ अनेक बार गान्धी जी की पुकार पर उपवास व अनशन करके अपनी अनुशासनप्रियता का सुपुष्ट प्रमाण दिया था वहाँ अनेक बार हिन्दू-मुस्लिम-एकता स्थापित करने, हरिजनो को कुओं मे पानी भरने देने तथा उन्हें मन्दिरों मे प्रवेश दिलाने आदि अनेक कार्यक्रम भी सचालित किये थे। आप जहाँ सन् 1952 मे सन् 1962 तक उत्तर प्रदेश विधान सभा के सक्रिय सदस्य रहे थे वहाँ आपने अपने क्षेत्र मे जन-जागरण-सम्बन्धी अनेक उपयोगी योजनाएँ प्रारम्भ की थी। आप कट्टर देश-भक्त और अनुशासनप्रिय सैनिक के रूप मे तो विख्यात थे ही सादगी स्नेह की प्रतिमूर्ति भी थे। एक उत्कृष्ट राष्ट्रीय कार्यकर्ता होने के साथ-साथ आपने चिन्तनशील लेखक एव पत्रकार के रूप मे भी अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। आपने जहाँ सहारनपुर से काफी समय तक 'प्रतिनिधि' साप्ताहिक का सम्पादन-प्रकाशन किया था वहाँ गुरुकुल मे रहकर कई वर्ष तक 'वैदिक शब्दकोश' के सम्पादन मे भी अपना सक्रिय सहयोग दिया था। 'चरखे का अर्थशास्त्र' नामक आपका प्रकाशित निबन्ध भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

आपका निधन 13 जुलाई सन् 1977 को हुआ था।

बाबा पूर्णदास

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा नगर के एक ब्राह्मण-परिवार मे 9 जनवरी सन् 1880 को हुआ था। घर पर

साधारण-सी शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप 15 वर्ष की आयु मे ही हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश) चले गए थे और वहाँ पर उदासीन मठ के महन्त बनने के उपरान्त हैदराबाद के निजाम के प्रार्थनाकर्ता (दुआगू) भी रहे। आपने जहाँ 'हिन्दू-मुस्लिम-एकता' के लिए अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किया था वहाँ आपने अपने उदासीन मठ मे हिन्दी का एक अच्छा 'वाचनालय' स्थापित किया था।

आपने देश के प्रयाग, हरिद्वार, नासिक और उज्जैन आदि अनेक तीर्थ-नगरों मे होने वाले कुम्भ-मेलो के अवसर पर जहाँ अनेक धर्मार्थ आयुर्वेदिक औषधालय तथा आतुरालय स्थापित किये थे वहाँ जनता-जनार्दन की सेवा के लिए इन सब स्थानो पर नि शुल्क हिन्दी-वाचनालय भी खोले थे। आपकी इस सेवा-भावना से प्रभावित होकर ही आपकी प्रेरणा पर हैदराबाद के निजाम ने हिन्दी माध्यम का एक 'आयुर्वेद महाविद्यालय' खोलने की अनुमति प्रदान की थी।

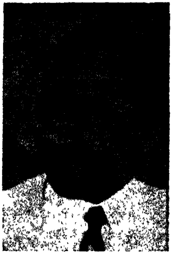
आपके इस कार्य मे पण्डित राधाकृष्ण द्विवेदी और पण्डित गोवर्धन शर्मा ने भी बहुत अधिक सहयोग प्रदान किया था। आपने हैदराबाद नगर मे हिन्दी माध्यम की एक 'कन्या पाठशाला' भी स्थापित की थी, जो अब भी वहाँ की जनता की प्रशंसनीय सेवा कर रही है। आप सनातनधर्मी और आर्यसमाजी सभी क्षेत्रो मे समान रूप से समादृत थे।

आपका निधन 4 जुलाई सन् 1959 को हुआ था।

श्री पूर्ण सोमसुन्दरम्

आपका जन्म विशाखापत्तनम् (वर्तमान आन्ध्र प्रदेश) मे 15 अगस्त सन् 1917 को हुआ था। आपके पितामह वहाँ पर वकालत किया करते थे। आप यद्यपि तमिल-भाषी थे, परन्तु हिन्दी, मलयालम, तेलुगु और उर्दू आदि अनेक भाषाओ के ज्ञाता होने के अतिरिक्त अंग्रेजी के भी अच्छे मर्मज्ञ थे। यद्यपि आप विधिवत् कक्षा 5 तक ही विद्यालय मे पढ़ सके थे, परन्तु आपने अपनी शैक्षणिक योग्यता इधर-उधर घूम-फिरकर और जन-सम्पर्क द्वारा ही बढ़ाई थी। सन् 1940-41 मे आप भारतीय सेना मे भरती हो गए थे। जब आप बर्मा के मोर्चे पर नियुक्त थे तब नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के भारत को स्वतन्त्र कराने के प्रयासों से इतने प्रभावित हुए थे कि उनकी 'आजाद हिन्द फौज' में सम्मिलित होकर उसके 'सूचना एव प्रचार विभाग' का कार्य देखने लगे थे।

जब युद्ध का पासा पलटा और अंग्रेजों ने एक बार फिर बर्मा को अपने कब्जे मे ले लिया तब आप अपने अन्य साथियों सहित 'युद्धबन्दी' बना लिये गए थे। एक बार मौका पाकर आप अंग्रेजो के चगुल से भाग निकले और जैसे-तैसे सिगापुर पहुँच गए। फिर आप वहाँ से वेश बदलकर बर्मा के दुर्गम पर्वतो और घाटियो को पार करके जैसे-तैसे अंग्रेजो से निगाह बचाकर सन् 1946 मे भारत आने मे सफल हो गए। भारत आने पर आपको फिर गिरफ्तार करके



दिल्ली के लालकिले मे युद्ध-बन्दी बना लिया गया। यहाँ से रिहा होने के उपरान्त आपने 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास' मे जाकर हिन्दी-प्रचार का कार्य प्रारम्भ कर दिया। आपने वहाँ के 'देवकोटा' केन्द्र का कार्य इतनी सफलतापूर्वक किया था कि आपको उसके उपलक्ष्य मे 'मेहता स्वर्ण पदक' भी भेंट किया गया था।

अपने मद्रास-प्रवास के समय ही आपने प्रख्यात राजनीतिज्ञ चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य की 'व्यासर विरुदु' नामक तमिल पुस्तक का हिन्दी अनुवाद किया था, जो सस्ता साहित्य मण्डल नई दिल्ली से 'महाभारत-कथा' नाम से प्रकाशित हो चुका है। इस अनुवाद पर आपको 'राष्ट्रपति पुरस्कार' भी प्रदान किया गया था। आपकी दूसरी हिन्दी पुस्तक 'तमिल और उसका साहित्य' है, जिसका प्रकाशन श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' द्वारा सम्पादित 'भारतीय साहित्य परिचय' नामक पुस्तकमाला के अन्तर्गत किया गया था।

यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि उन दिनों हिन्दी में तमिल साहित्य के इतिहास से सम्बन्धित यह पहली ही पुस्तक थी।

फिर आप 'आजाद हिन्द फौज' के अपने एक साथी श्री रामसिंह रावल की सलाह पर दिल्ली आ गए और यहाँ से प्रकाशित होने वाले हिन्दी दैनिक 'अमर भारत' में उप-सम्पादक नियुक्त हो गए। जब 'अमर भारत' की आर्थिक स्थिति आपने अच्छी न देखी तो आप 'नवभारत टाइम्स' के सम्पादकीय विभाग में चले गए और अनेक वर्ष तक वहाँ जमकर कार्य किया। सन् 1956 में आप जब मास्को गए थे तब आप इसी पत्र में कार्य-रत थे। मास्को जाने के उपरान्त आपने 'रेगिना' नामक एक रूसी महिला से विवाह कर लिया था। आपके 2 कन्याएँ 'चन्द्रिका' और 'सविता' हैं, जिनमें से चन्द्रिका का विवाह भी हो चुका है।

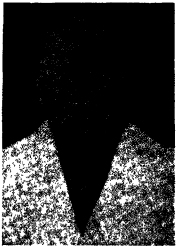
अपने रूस-प्रवास के दिनों में आपने रूसी भाषा में अनेक छोटी-मोटी पुस्तकें लिखने के अलावा कई महाकाव्यों का अनुवाद भी किया था। आपने रूसी भाषा से तमिल में लगभग 150 और हिन्दी में 10 पुस्तकों का अनुवाद सम्पन्न किया था। आपने रूस के जिन लेखकों की रचनाओं के अनुवाद किये थे उनमें सर्वश्री गोर्की, टालस्टाय, चेखव, तुर्गनेव, शोलखोव तथा फेदिन आदि के नाम प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। मृत्यु से पूर्व आप पुश्किन की एक कृति का अनुवाद कर रहे थे, जो अपूर्ण रह गया है। आपकी सहधर्मिणी मास्को के 'लेनिन पुस्तकालय' में कार्य-रत हैं।

आपका निधन 13 सितम्बर सन् 1981 को मास्को में हुआ था।

श्री प्रकाश कविरत्न

आपका जन्म सन् 1903 में अजमेर (राजस्थान) में हुआ था। आपके पूर्वज अलीगढ़ के निवासी थे, किन्तु आपके पिताजी अजमेर आ गए थे। आपके पिता पण्डित बिहारी लाल जी कट्टर सनातनधर्मी और पौराणिक थे। आर्यसमाज के प्रख्यात उपदेशक पण्डित रामसहाय (बाद में स्वामी ओम्‌भक्त) की प्रेरणा से आपने आर्यसमाज में प्रवेश किया था और यावज्जीवन आपने अपनी लेखनी तथा वाणी से वैदिक धर्म के प्रचार का जो कार्य किया वह सर्वविदित है। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अजमेर के डी० ए० वी० हाई स्कूल में हुई थी। अपने शैशव-काल में ही पिता का देहान्त हो जाने के कारण आप मिडिल से आगे नहीं पढ़ सके थे। सर्वप्रथम आपने भड़ौंच (गुजरात) की एक मिल में लिपिक के रूप में कार्य किया था और जब देश में 'जलियाँ वाला बाग' का नृशंस हत्याकाण्ड हुआ था तब वहाँ से त्यागपत्र देकर राष्ट्रीय संग्राम में भाग लेने लगे थे।

उन्हीं दिनों जब आपने शुक्ल तीर्थ (गुजरात) के मेले में भोले-भाले अनेक हिन्दू ग्रामीणों को ईसाई पादरियों द्वारा ईसाई बनाए जाने का दृश्य देखा तो आपके मन में बड़ी वेदना हुई। फलस्वरूप आपने तुरन्त आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं से सम्पर्क साधकर उन हिन्दुओं को धर्म-परिवर्तित करने से बचाया। इसी प्रकार जब मलाबार में मोपला मुसलमानों के द्वारा हिन्दुओं को बलात् मुसलमान बनाया जा रहा था तब भी आपने आर्य-समाज के प्रचारकों के माध्यम से उन्हें मुसलमान होने से बचाया था। हिन्दुत्व की रक्षा की भावना के वशीभूत होकर आप विधिवत् आर्यसमाज में शामिल हो गए और समाज-सुधार के कार्यों में रुचि लेने लगे। अपने इस कार्य-काल में आपको आर्यसमाज के जिन अनेक नेताओं और कार्यकर्ताओं से प्रेरणा प्राप्त हुई थी उनमें स्वामी श्रद्धानन्द, पण्डित सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, पण्डित शंकरदेव विद्यालंकार, पण्डित मुकुन्द जी और पण्डित माथुर शर्मा के नाम उल्लेखनीय हैं।



अजमेर वापिस लौटकर आपने पण्डित रामसहाय आर्योपदेशक की प्रेरणा से आर्य समाज में प्रचारक का कार्य प्रारम्भ कर दिया। आर्य समाज के सुप्रसिद्ध नेता देश-भक्त

कुंवर चाँदकर शारदा और पण्डित जियालाल के साथ जब आप 'दयानन्द जन्म शताब्दी' के उत्सव में सम्मिलित होने के लिए मथुरा जाने लगे तब आपने जो एक गीत लिखा था, वह इतना प्रसिद्ध हुआ कि उसने आपको लोक-प्रियता के उत्तुंग शिखर पर प्रतिष्ठित कर दिया। उस गीत की प्रारम्भिक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

वेदों का डंका आलम में,
बजवा दिया ऋषि दयानन्द ने
हर जगह ओ३म् का झण्डा फिर,
फहरा दिया ऋषि दयानन्द ने।

मथुरा के उस उत्सव में यह गीत इतना प्रचारित हुआ कि उसके कारण आपको लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही गई। इसी उत्सव के अवसर पर आपने हिन्दी के प्रख्यात कवि श्री नाथूराम शंकर शर्मा के दर्शन किये थे। आपने उस समय उनको अपना काव्य-गुरु बनाकर काव्य के क्षेत्र मे प्रसिद्धि प्राप्त करने का उपक्रम किया था। 'शंकर' जी की 'अनुराग रत्न' और 'शंकर सरोज' नामक कृतियों के पारायण से आपका मार्ग दिन-प्रतिदिन प्रशस्त होता चला गया और आप एक कुशल कवि के रूप में प्रतिष्ठित हो गए।

आपने अपनी कविताओ और भजनो के द्वारा जहाँ आर्यसमाज के सिद्धान्तों को प्रचारित करने का प्रशंसनीय कार्य किया था वहाँ उसके माध्यम से भारी साहित्य-सेवा भी की थी। आर्यसमाज के सुधारवादी आन्दोलन मे भाग लेने के अतिरिक्त आप राष्ट्र के स्वाधीनता-संग्राम में सहयोग देने मे भी पीछे नही रहे थे। सन् 1930 के राष्ट्रीय आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग लेकर आपने जेल मे जो विषम यातनाएँ भोगी थी, उनसे आपको बडी प्रेरणा प्राप्त हुई थी। जेल-जीवन की उन अनेक कठिनाइयों का वर्णन आपने उस समय एक कवित्त मे इस प्रकार किया था :

नगी देह पं उडाते चाबुक थे अधिकारी,
किन्तु थीं हमारे लिए फूल की-सी झड़ियाँ।
स्वाद आता था सुधा-सा रूखी-सूखी रोटियों मे,
मारे भूख जब सूख जाती थी अँतड़ियाँ॥
गाते थे तराने देश-प्रेम के दीवाने बन,
तसले की ताल पं बजाके हथकड़ियाँ।
था हर्षोन्माद, न था किंचित् विषाद अहा,
आती है याद वो जेल-जीवन की घड़ियाँ॥

लगभग 25 वर्ष तक अथक भाव से अपनी कविताओं के द्वारा आपने सामान्यतः सारे देश और विशेषतः आर्यसमाज की जो सेवा की थी वह सर्वथा अभिनन्दनीय है। अन्तिम दिनों में आप गठिया रोग मे आक्रान्त होकर चलने-फिरने मे भी अशक्त हो गए थे।

आपकी काव्य-कृतियों में 'प्रकाश भजनावली'(5 भाग) 'प्रकाश भजन सत्संग', 'प्रकाश गीत' (4 भाग), 'प्रकाश तरंगिणी' (साहित्यिक कविताएँ), 'कहावत कवितावली', 'गो-गीत प्रकाश', 'बाल हकीकत' तथा 'दयानन्द प्रकाश' (महाकाव्य) आदि उल्लेखनीय है। आपकी राष्ट्र, साहित्य एवं आर्यसमाज के प्रति की गई उल्लेखनीय सेवाओं के लिए आपको 23 अक्तूबर सन् 1971 को एक विशाल 'अभिनन्दन ग्रन्थ' भेंट किया गया था। इस अभिनन्दन के अवसर पर आपने आभार प्रकट करते हुए जो भावनाएँ व्यक्त की थी, वे इस प्रकार हैं

माना हो गया हूँ आधि-व्याधि-ग्रस्त क्षीणकाय,
पोर-पोर मे अपार वेदना है, दाह है।
बह रहा तदपि अजस्र उर मे उछाह खूब,
आशा की परम प्रतीति प्रीति का प्रवाह है॥
हूँ नही हताश मैं, यद्यपि जीवन की साँझ,
होने आई इसकी न रच परवाह है,
आर्य बन सच्चे वेद-वाणी का प्रचार कर,
ऋषिराज - ऋण के उतारने की चाह है॥

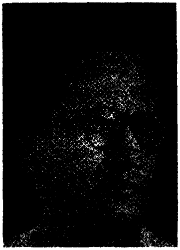
आपका निधन 11 दिसम्बर सन् 1977 को हुआ था।

प्रो० प्रकाशचन्द्र गुप्त

आपका जन्म 16 मार्च सन् 1908 को भक्कर (पंजाब) में हुआ था। वहाँ आपके पिताजी रेलवे में स्टेशन-मास्टर थे। आपके पूर्वजों का निवास-स्थान उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर जनपद का अनूपशहर नामक कस्बा है। इसी कस्बे में आपकी प्रारम्भिक शिक्षा हुई थी। बाद मे आपने आगे की पढ़ाई अपने मामा के यहाँ कानपुर में रहकर की थी। जहाँ पर आपके मामा प्रख्यात अमर शहीद श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के 'प्रताप प्रेस' के मैनेजर थे। कानपुर से हाईस्कूल की

परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप आगे की पढ़ाई पूरी करने के लिए काशी के हिन्दू विश्वविद्यालय मे प्रविष्ट हुए थे। वहाँ से आप केवल 'इण्टरमीजिएट' की परीक्षा ही उत्तीर्ण कर सके थे कि आपको फिर 'इलाहाबाद विश्वविद्यालय' मे आना पड़ा। वहाँ अँग्रेजी साहित्य मे एम० ए० की परीक्षा मे सफल होने के उपरान्त आप आगरा के 'सैण्ट जान्स कालेज' मे अंग्रेजी के प्रवक्ता होकर वहाँ आ गए।

अपने प्रयाग के छात्र-जीवन मे ही आपका 'भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी' से निकट का सम्पर्क हो गया था और कालान्तर मे पार्टी मे जिन लोगों ने नेतृत्व का भार सँभाला था उनमे से कामरेड रुद्रदत्त भारद्वाज और श्री पूरनचन्द जोशी आपके सहपाठी रहे थे। लेखन के प्रति आपकी रुचि अपने छात्र-जीवन से ही थी। यद्यपि आप अँग्रेजी के प्राध्यापक थे, किन्तु लेखन के लिए आपने हिन्दी को ही अपनाया था। वैसे यदा-कदा आप अँग्रेजी मे भी लिख लिया करते थे। वैसे आपने मुख्य रूप मे समीक्षा के क्षेत्र मे अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया था, किन्तु स्कैच-लेखन की कला मे भी आप पूर्ण प्रवीण थे। हिन्दी साहित्य मे 'प्रगतिशील समीक्षक' और 'रेखाचित्र-लेखक' के रूप मे आप अत्यन्त लोकप्रिय हुए थे। शुरू-शुरू मे आपने कुछ गद्य-गीत और कुछ एकाकी लिखने का प्रयास भी किया था, परन्तु आगे उसमे पूर्ण विराम लग गया था। हिन्दी से अँग्रेजी और अँग्रेजी से हिन्दी मे अनुवाद करने की कला में भी आप पूर्ण दक्ष थे। आपने प्रेमचन्द की कई कहानियों का अँग्रेजी तथा कुछ रूसी उपन्यासो का हिन्दी में अत्यन्त सफल अनुवाद किया था।



अँग्रेजी साहित्य के निष्णात शिक्षक होने के साथ-साथ आपने अपनी प्रगतिवादी समीक्षाओं के माध्यम से साहित्य में अपना अप्रतिम स्थान बना लिया था। आपके जो रेखा-चित्र तथा स्कैच अपनी शैलीगत उत्कृष्टता के कारण आज भी याद किये जाते हैं उनमें 'शेरशाह की सड़क', 'अल्मोडे का बाजार', 'दिल्ली दरवाजा' और 'लैटर बाक्स' प्रमुख हैं। आपके आगरा के (सन् 1931 से सन् 1941) प्राध्यापन-काल में जो छात्र आपसे विशेष रूप से प्रभावित हुए थे उनमे हिन्दी के जाने-माने आलोचक डॉ० नगेन्द्र प्रमुख हैं। नगेन्द्र जी उन दिनों 'सैण्ट-जान्स कालेज' में पढा करते थे और वहाँ से ही उन्होंने अँग्रेजी साहित्य मे एम० ए० किया था। आपके अच्छे स्कैच और रेखाचित्र आगरा-निवास के दिनो मे ही लिखे गए थे। सन् 1941 मे आप प्रयाग विश्व-विद्यालय मे चले गए थे और 16 मार्च सन् 1970 को वहाँ से 'विभागाध्यक्ष' के रूप मे सेवा-निवृत्त हुए थे। अपने इस कार्य-काल मे आपने जहाँ शिक्षण के क्षेत्र मे अपनी विशिष्ट छाप छोड़ी थी वहाँ साहित्यिक क्षेत्र मे भी महत्त्वपूर्ण योग-दान किया था। यद्यपि आपने 'प्रगतिशील साहित्य' के सिद्धान्तो पर प्रकाश डालने वाले किसी भारी-भरकम ग्रन्थ की रचना नही की थी, किन्तु यदा-कदा लिखे गए अपने अनेक समीक्षात्मक फुटकर लेखों के माध्यम मे भी आपने 'प्रगतिवाद' को समझने की समुचित दिशा प्रदर्शित की थी।

अपने प्रगतिवादी लेखन के लिए आपको सन् 1954 के नवम्बर मास मे मास्को मे आयोजित 'लेखक सम्मेलन' में भाग लेने के लिए भी निमन्त्रित किया गया था। आपकी यह पहली और अन्तिम विदेश-यात्रा थी। मृत्यु से पूर्व आप दिल्ली मे आयोजित 'अफ्रो-एशियन लेखक सम्मेलन' मे भाग लेने आने वाले थे और उसके लिए आपने 'परम्परा और नवीनीकरण' विषय पर एक लेख भी लिखा था, किन्तु आप उसे उसमे पढ नही सके थे। आपके द्वारा जो अनेक मौलिक पुस्तकें हिन्दी मे प्रकाशित हुई थी उनका विवरण काल-क्रम से इस प्रकार है—'नया हिन्दी साहित्य एक दृष्टि'(1939) 'रेखाचित्र' (1940), 'पुरानी स्मृतियाँ और नये स्कैच' (1947), 'आधुनिक हिन्दी साहित्य . एक दृष्टि' (1952), 'साहित्य धारा' (1956), 'विशाख' उपन्यास (1957) तथा 'प्रेमचन्द' (1969)। इनके अतिरिक्त आपने हिन्दी मे जिन रचनाओं का अनुवाद प्रस्तुत किया था उनमे 'स्तालिन-ग्राद का महायुद्ध' (1944), 'जनता अजेय है' (1945)

तथा 'पहाड़ों की बेटी' प्रमुख है। आपने सन् 1962 में 'प्रगति—राहुल और गुप्त' नामक ग्रन्थ का सम्पादन भी किया था। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित, अनूदित एवं सम्पादित अँग्रेजी की भी अनेक पुस्तकें हैं। आपका अन्तिम हिन्दी लेख पटना से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका 'ज्योत्स्ना' के सन् 1970 के 'दीपावली अंक' में 'आलोचक और नवलेखन' शीर्षक मे प्रकाशित हुआ था।

आपका निधन 10 नवम्बर सन् 1970 को हुआ था।

श्री प्रकाश पण्डित

आपका जन्म 6 अक्तूबर सन् 1924 को अविभाजित पंजाब के लायलपुर नगर में हुआ था। आपकी शिक्षा अमृतसर और लाहौर में हुई थी और प्रारम्भ में आपने उर्दू में लेखन-कार्य शुरू किया था और बाद में उर्दू तथा हिन्दी दोनों भाषाओं में ही लिखने लगे थे। उर्दू शायरी के अध्ययन का शौक आपको अपने शैशव-काल से ही था। अपनी इस प्रवृत्ति के कारण ही आप उर्दू कविता के अनेक उत्कृष्टतम सकलन हिन्दी पाठको को सुलभ करा सके थे। आपने जहाँ



प्रारम्भ में 'फनकार' और 'प्रीतलडी'-जैसे उर्दू एव पजाबी के पत्रों का सम्पादन किया था वहाँ भारत-विभाजन के उपरान्त आप कई वर्ष तक दिल्ली से 'शाहराह' नामक उर्दू पत्र का सम्पादन करते रहे थे।

आपने जहाँ उर्दू साहित्य में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया था वहाँ हिन्दी के पाठको के सामने भी आपका नाम अपरिचित नही था। आपने उर्दू के प्रमुखतम शायरों के जीवन-परिचयों के साथ चुनी हुई शायरी प्रस्तुत करने का जो अभिनन्दनीय कार्य अपनी 'आज के लोकप्रिय शायर' नामक पुस्तकमाला के माध्यम से किया था, उससे आप हिन्दी के पाठकों में अत्यन्त लोकप्रिय हुए थे। बाद में आपने 'हिन्द पाकेट बुक्स' और 'राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली' की ओर से उर्दू शायरी के बहुत-से ऐसे सकलन प्रस्तुत किये थे, जिनसे हिन्दी पाठकों में उर्दू शायरी को जानने तथा समझने की सूझ-बूझ पैदा हुई थी। आपके द्वारा हिन्दी तथा उर्दू के अनेक लेखकों के सम्बन्ध में लिखे गए व्यंग्य लेख भी आपकी विशिष्ट शैली के द्योतक है। आपने कुछ दिन श्री गुरुदत्त और बी० आर० चोपड़ा के साथ फिल्मो में भी काम किया था। आपने 'चाँदी की दीवार' नामक फिल्म के सवाद भी लिखे थे।

आपने अपने कर्ममय जीवन के अन्तिम 10-15 वर्ष 'हिन्द पॉकेट बुक्स' तथा 'राजपाल एण्ड सन्स' के साथ गुजारे थे। आपको लम्बे समय से कैंसर का असाध्य रोग था, जिसकी चिकित्सा आपने कुछ दिन तक बम्बई में रहकर भी कराई थी। आपने अपना सारा जीवन सघर्षों मे ही व्यतीत किया था और अन्तिम समय तक भी आप पूर्णत मसिजीवी रहे थे। उर्दू तथा हिन्दी में अनेक मौलिक पुस्तकों की रचना करने के अतिरिक्त आपने उर्दू शायरी को हिन्दी मे रूपान्तरित करने का जो कार्य किया था वह अकेला ही हिन्दी पाठकों में उन्हे अमर कर गया है। आपके द्वारा रचित, अनूदित, रूपान्तरित और सम्पादित पुस्तकों की सख्या 100 से अधिक है। आपको जिन बहुत-सी पुस्तको पर पारितोषिक मिले थे उनमे 'चाँद का सफर' विशेष उल्लेख्य है। आपके द्वारा अनेक साहित्यकारो के सम्बन्ध में लिखे गए व्यग्य लेखो का जो सकलन 'गुस्ताखियाँ' नाम से प्रकाशित हुआ था, वह भी हिन्दी पाठकों में अत्यन्त लोकप्रिय हुआ था।

आपका निधन 26 दिसम्बर सन् 1982 को हुआ था।

स्वामी प्रज्ञानानन्द

आपका जन्म महाराष्ट्र के ठाणा जनपद के माहीम (पालघर) नामक स्थान मे 15 मई सन् 1893 को हुआ था। आपकी

शिक्षा स्नातक कक्षा तक हुई थी। आपका वास्तविक नाम 'श्री दत्तात्रेय नारायण कर्वे' था। आपने सन् 1943 में पूना जनपद के खेड़ नामक कस्बे में श्री स्वामी वासुदेवानन्द सरस्वती से सन्यास की दीक्षा ग्रहण करके 'प्रज्ञानानन्द' नाम ग्रहण किया था।

शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आप कुछ समय तक एक हाई स्कूल में शिक्षक रहे थे। बाल्यावस्था से ही धार्मिक प्रवृत्ति होने के कारण आप गोस्वामी तुलसीदास की परम्परा के एक साधु बाबा गंगादास के अनन्य भक्त हो गए थे और 6-7 वर्ष तक निरन्तर आपने उनके पास जाकर 'रामचरितमानस' का अच्छा अध्ययन किया था। आपकी अनन्य राम-भक्ति तथा 'रामचरितमानस' के पारायण में गहन निष्ठा को देखकर बाबा गंगादास ने यह भविष्यवाणी की थी "श्री गोस्वामी तुम्हारे मुख में बोलेंगे"। गंगादास जी का यह आशीर्वाद कालान्तर में ऐसा फलीभूत हुआ कि आपने महाराष्ट्र के उस्मानाबाद जनपद के 'पराडा' नामक स्थान में तीन दिन तक 'रामचरितमानस' के 108 पारायण कराने के साथ-साथ वहाँ पर 'मराठी मानस मण्डल' की स्थापना भी की थी।

यद्यपि आपकी मातृभाषा मराठी थी, परन्तु हिन्दी, संस्कृत, गुजराती तथा अँग्रेजी आदि भाषाओं पर भी आपका असाधारण अधिकार था। आपने दोहा तथा चौपाई छन्द में सन् 1949 में 'रामचरित मानस' का मराठी में अनुवाद करके प्रकाशित कराया था। मराठी-भाषी क्षेत्र में 'स्वामी प्रज्ञानानन्द' आज भी 'रामचरित मानस' के अधिकारी और प्रामाणिक विद्वानों में माने जाते हैं।

आपने 'रामचरित मानस' की एक हिन्दी टीका भी 'मानस पीयूष' नाम से लिखी थी, जो गीता प्रेस गोरखपुर की ओर से प्रकाशित हुई है। आपने 'रामचरित मानस— गूढार्थ चन्द्रिका' नामक लगभग 6000 पृष्ठों का एक ग्रन्थ मराठी में लिखा था, जिसका लगभग 700 पृष्ठ का 'प्रस्तावना खण्ड' ही प्रकाशित हो सका है। इसके अतिरिक्त आपने 'संगीत गीता मराठी अनुवाद' तथा अन्य अनेक फुटकर रचनाएँ प्रस्तुत की थी। आपकी इन रचनाओं के कारण आज महाराष्ट्र के कोने-कोने में 'रामचरितमानस' और उनके आराध्यदेव भगवान् राम का व्यापक प्रचार हो गया है।

आपका निधन 23 मार्च सन् 1968 को हुआ था।

श्रीमती प्रताप कुँवरि बाई

आपका जन्म राजस्थान के जोधपुर राज्य के जाखण नामक ग्राम में सन् 1816 में हुआ था। आपके पिता का नाम ठाकुर गोयन्ददास था। आपका विवाह जोधपुर के राज-परिवार में हुआ था। आप जोधपुर के महाराजा मानसिंह की महारानी थी।

आप हिन्दी की उच्चकोटि की कवयित्री थी और आपकी रचनाएँ राम-रस से ओत-प्रोत होती थी। महाराजा मानसिंह की मृत्यु के पश्चात् आपका काव्य विषाद और वेदना से परिपूर्ण हो गया था। अपने जन्म-जात संस्कारों और तत्कालीन राज-दरबारों के वातावरण का प्रभाव आपकी कविताओं में परिलक्षित होता है। धीरे-धीरे आप अपने पति की वियोगजन्य पीडा के कारण इतनी दुखी रहने लगी थी कि कभी-कभी आपका मन विक्षिप्तता की सीमा को छू जाता था।

आपकी प्रमुख रचनाओं में 'ज्ञान सागर','ज्ञान प्रकाश', 'प्रताप पच्चीसी', 'प्रेम सागर', 'रामचन्द्र नाम महिमा', 'रामगुण सागर', 'रामसुजश पच्चीसी', 'रघुनाथ जी के कवित्त', 'भजन पद हर जस', 'प्रताप विनय', 'श्री रामचन्द्र विनय' और 'हरिजस गायन' आदि के नाम महत्त्वपूर्ण हैं। आपकी इन सभी रचनाओं को महारानी रत्नकुँवरि (महाराजा प्रतापसिंह ईडर-नरेश की रानी) ने संग्रहीत करके प्रकाशित करा दिया है। आपकी रचनाओं में पति-वियोग-जन्य पीडा के स्पष्ट दर्शन होते हैं। एक रचना इस प्रकार है

पति वियोग दुख भयो अपारा
सूनो लगत सकल संसारा
कछु न सुहाय नयन बहै नीरा
पति बिन कौन बँधावै धीरा
सुनि - मुनि कथा पुराण अपारा
सब झूठो जान्यौ संसारा
एक समै सपनेउ निसि आयउ
रघुबर दरसन मोहि दिखायउ
मेघ बरन तन स्याम बिराजै
धनुष - बाण प्रभु कर मैं छाजै

आपका निधन सन् 1892 में हुआ था।

पुरोहित प्रतापनारायण

आपका जन्म 1 जनवरी सन् 1901 को जयपुर (राजस्थान) मे हुआ था। आपके पिता पुरोहित रामप्रताप जी जयपुर राज्य के सिनवार ठिकाने के जागीरदार और 'जयपुर राज्य परिषद्' के सदस्य थे। पिता के पश्चात् आप जागीरदार बने थे और जयपुर राज्य मे 'ताजीमी सरदार' कहलाए थे। आपने सस्कृत, अँग्रेजी और हिन्दी की उच्चतम शिक्षा प्राप्त की थी। आप हिन्दी के अत्यन्त सफल कवि थे। राजस्थान के खडी बोली के कवियो मे आपका स्थान सर्वथा अप्रतिम था। आपकी रचनाओ मे जहाँ राष्ट्रीयता का नव जागरण दृष्टिगत होना है वहां द्विवेदीयुगीन शैली का भी अच्छा परिपाक हुआ है। आपके द्वारा विरचित 'नल नरेश' नामक काव्य की हिन्दी के अनेक शीर्षस्थ विद्वानों एव साहित्यकारो ने मुक्त कण्ठ से प्रशसा की थी।



आप हिन्दी के ऐसे रचनाकार थे जिन्होंने अपनी रचनाओं मे भारतीय सस्कृति एव सभ्यता का अच्छा चित्रण किया है। आप राजसी वातावरण मे पलकर भी अत्यन्त साधारण स्वभाव के व्यक्ति थे। आपने हिन्दी मे लगभग 20 काव्य-कृतियो की रचना की थी। आपको आपकी साहित्य-सेवाओ के उपलक्ष्य मे जहाँ अनेक बार 'स्वर्ण' एव 'रजत पदक' प्रदान किये गए थे वहाँ आपको 'साहित्य सभा जयपुर' और 'काशी पण्डित सभा' ने क्रमश 'कविरत्न' और 'साहित्यभूषण' की उपाधियों से सम्मानित किया था। आपकी प्रमुख काव्य-कृतियो मे 'नल नरेश' (1933) के अतिरिक्त 'काव्य कानन' (1934), 'नव निकुंज' (1940), 'सरस सूक्तियाँ' (1943), 'मन्दाकिनी' (1946), 'मणियों की माला' (1946), 'काव्य श्री' (1948), 'अरे वोट वाले ले चल' (1950), 'सुषमा' (1952), 'वसन्त' (1952), 'गुणियों के गायन' (1953), 'सरस संग्रह' (1953), 'चारु चुनाव' (1954), 'रसमयी' (1960) तथा 'श्रीरामार्चन' (1962), 'काव्य श्री और दीपक' (1964) तथा 'इन्दिरायण' (1969) के नाम उल्लेखनीय हैं।

आपका निधन 23 जून सन् 1970 को हुआ था।

श्री प्रतापनारायण मिश्र

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के बेजेगाँव नामक ग्राम मे सन् 1856 मे हुआ था। आपके पिता पण्डित सकटाप्रसाद कात्यायन गोत्री कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे और उस क्षेत्र मे ज्योतिषी जी के नाम से विख्यात थे। क्योंकि अपने ज्योतिष-सम्बन्धी कार्य के प्रसग मे आपके पिता कानपुर के नौघरा मोहल्ले मे आकर रहने लगे थे अत आप भी उनके साथ वहाँ चले आए थे। यद्यपि आपके पिता की इच्छा आपको ज्योतिष शास्त्र मे प्रवीण करने की थी, किन्तु अपने मस्तस्वभाव के कारण आपकी रुचि उस ओर नही हुई। फलस्वरूप आपको एक अग्रेजी स्कूल मे भरती करा दिया गया। वहाँ जाकर भी आप पढाई-लिखाई से विमुख ही रहे और जब आप केवल 18 या 19 वर्ष के ही रहे होंगे कि आपके पिता जी का देहावसान हो गया। इस घटना से आपका मन पढाई से बिलकुल उचट गया और आपने स्कूल मे सर्वथा पिण्ड छुड़ा लिया।

यद्यपि आपकी शिक्षा अधूरी ही रह गई थी, किन्तु फिर भी आपने अपने अध्यवसाय एवं लगन से हिन्दी, उर्दू और बगला भाषाओ का अच्छा ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ संस्कृत, फारसी और अँग्रेजी में भी पर्याप्त योग्यता अर्जित कर ली थी। आपके इन भाषाओ के ज्ञान के विषय मे सन् 1907 मे 'भारत मित्र' मे उसके सम्पादक श्री बालमुकुन्द गुप्त ने आपका जो जीवन-परिचय प्रकाशित किया था, उसमे यह स्पष्ट लिखा था कि इन सभी भाषाओ मे आप धाराबाहिक रूप से बोल लेते थे। क्योंकि आप छात्रावस्था मे 'कवि वचन सुधा' का नियमित पारायण किया करते थे, इसलिए आपका झुकाव साहित्य की ओर हो गया

था। प्रारम्भ में आप कानपुर के लावनीबाजों के अखाड़ों मे जाया करते थे। इस सम्पर्क के कारण ही पहले-पहल आपने हिन्दी में लावनियाँ लिखनी प्रारम्भ की थीं। कभी-कभी उर्दू तथा फारसी में भी नज्मे लिख लिया करते थे। आप स्वभाव से मस्त, निर्भीक और दबंग थे। आपकी यह मस्ती आपकी रचनाओं में भी दृष्टिगत होती है।

आप कोरे साहित्यकार ही नहीं थे, प्रत्युत कानपुर की अनेक सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक सस्थाओ से भी जुडे रहते थे। यहाँ तक कि काग्रेस के इलाहाबाद-अधिवेशन मे भी आप कानपुर के प्रतिनिधि के रूप मे सम्मिलित हुए थे। आपने एक बार कानपुर मे 'पारसी थियेट्रिकल कम्पनी' के विरुद्ध विशुद्ध हिन्दी का रगमच स्थापित करने का भी प्रयास किया था। आप स्वय नाटको में अभिनय करने की कला मे पूर्णत दक्ष थे। एक बार तो आपने स्त्री पात्रो का अभिनय करने के निमित्त अपने पिता जी से मूँछे मुँडवाने की अनुमति भी प्राप्त की थी। इसी प्रकार 'खड्गविलास प्रेम पटना' के बाबू रामदीनसिंह ने जब बाँकीपुर मे भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा लिखित 'सत्य हरिश्चन्द्र' नाटक का अभिनय किया था तब उसमे भारतेन्दु बाबू ने 'हरिश्चन्द्र' और मिश्र जी ने 'रोहिताश्व' का अभिनय अत्यन्त कुशलता से किया था। सन् 1882 के आस-पास आपने भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र की पत्रिका 'कवि वचन सुधा' मे अपने सरस कवित्त तथा सवैये भी प्रकाशित कराए थे। सन् 1883 मे जब आपकी ऐसी रचनाओ का प्रथम सकलन 'प्रेम पुष्पावली' नाम से प्रकाशित हुआ था तब भारतेन्दु ने उसकी बडी प्रशसा की थी। आपकी रचनाओ का मूल स्वर मुख्यत भक्ति, प्रेम और शृंगार का ही होता था। कभी-कभी आप अपनी राष्ट्रीय रचनाओ मे ऐसा तीखा व्यग्य करते थे कि उसे पढकर पाठक तिलमिला उठता था। अँग्रेजी राज्य की प्रजा-हितैषिता की थोथी भावनाओ के प्रति व्यग्य करते हुए एक बार आपने यहाँ तक लिख दिया था :

जिन धन धरती हरी, सो करिहै कौन भलाई
बन्दर काके मीत, कलन्दर केहिके भाई।

सब धन लिहै जात अगरेज
हम केवल लैक्चर में तेज।

काग्रेस की राजनीति मे जब एक बार उदारवादियों का स्वर प्रखरता से उभरा था तब भी आप चुप नही रह सके थे और समझौतावादियो के प्रति व्यग्य करते हुए आपने यहाँ तक लिख दिया था :

पढ़ि कमाय कीन्हों कहा, हरे न देस कलेस।
जैसे कन्ता घर रहे, तैसे रहे बिदेश।।

मिश्र जी इतने विनोदी स्वभाव के थे कि अपने दैनिक जीवन मे भी आप फब्तियाँ कसने मे नही चूकते थे। एक बार कानपुर के जनरलगज मोहल्ले मे एक पादरी ने अपने भाषण मे हिन्दुओ को सम्बोधित करते हुए यह कहा कि "गाय तुम्हारी माता है तो बैल तुम्हारा पिता हुआ। लेकिन मैंने बैल को गन्दी नालियो का पानी पीते हुए देखा है।" इस पर भीड मे भाषण सुनने वाले मिश्र जी ने तत्काल उत्तर दिया—"वह ईसाई हो गया होगा।"



आपके इस उत्तर को सुनकर जहाँ श्रोताओ मे हँसी का फौवारा छूट पडा था वहाँ पादरी पर घडो पानी पड गया था।

आप जहाँ उच्चकोटि के कवि, वक्ता और अभिनेता थे वहाँ पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी आपका सर्वथा विशिष्ट स्थान था। आपके द्वारा सन् 1883 मे सम्पादित एवं प्रकाशित 'ब्राह्मण' नामक पत्र आपकी ऐसी कला का उज्ज्वल उदाहरण प्रस्तुत करता है। आपने अपना यह पत्र सन् 1894 तक भयकर आर्थिक कष्ट उठाकर भी सचालित किया था। इस पत्र के माध्यम से आपने सशक्त व्यग्य-लेखन की जो परम्परा चलाई थी वह सर्वथा अनूठी और अद्भुत थी। अपने लेखन की सजीवता, सादगी, बाँकपन और फक्कड़पन से आपने हिन्दी-गद्य का जो शृंगार किया था उससे उन दिनों के अनेक लेखक प्रभावित हुए थे।

जब आपको 'ब्राह्मण' के ग्राहक उसका चन्दा समय पर नही भेजते थे तो विवश होकर आपको अपनी व्यंग्यपूर्ण शैली मे यह लिखना पड़ा था :

आठ मास बीते जजमान
कुछ तो करो दच्छिना दान, हरि गगा !
आज काल जो रुपया देव
मानो कोटि यज्ञ करि लेव , हरि गगा !

कविताओ की भाँति आपकी गद्य-शैली भी बड़ी चुटीली थी। आपके 'दाँत', 'बुढ़ापा', 'भौह', 'बात', 'मुच्छ', 'परीक्षा', 'ट' और 'द' शीर्षक निबन्धो से आपकी गद्य-शैली के विभिन्न आयामो का परिचय मिल सकता है। 'ब्राह्मण' के माध्यम से आपने जहाँ कविता मे नया निखार प्रस्तुत किया था वहाँ गद्य के क्षेत्र मे भी आपकी प्रमुख देन है।

'ब्राह्मण' के अतिरिक्त आपने महामना पण्डित मदन-मोहन मालवीय के अनुरोध पर सन् 1898 मे केवल 25 रुपये मासिक पर कालाकाँकर (उत्तर प्रदेश) से प्रकाशित होने वाले राजा रामपालसिह के दैनिक पत्र 'हिन्दोस्थान' मे भी कुछ समय तक सहकारी सम्पादक का कार्य किया था। उन दिनो श्री मालवीय जी वहाँ पर प्रधान-सम्पादक थे। वहाँ से वापिस लौटने पर आपने कानपुर मे सन् 1891 मे 'रसिक समाज' की स्थापना करके वहाँ के साहित्यिक जागरण मे भी उल्लेखनीय योगदान दिया था। आपने अनेक साहित्यिक और राजनीतिक प्रवृत्तियो मे सक्रिय रूप से जुड़े रहने के अतिरिक्त कानपुर नगर मे 'भारत धर्म महामण्डल', 'धर्म सभा' तथा 'गोरक्षिणी-सभा' आदि कई सस्थाओं की स्थापना मे भी भारी सहायता की थी। आप भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र की भाँति ही 'हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्थान' के समर्थक थे। यद्यपि आपने बहुत थोड़ा जीवन पाया था, फिर भी आपने हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि के लिए अपनी रचनात्मक प्रतिभा से एक सर्वथा विशिष्ट भाव-भूमि प्रस्तुत की थी। यहाँ यह भी उल्लेनीय है कि

पितु-मातु सहायक स्वामि-सखा,
तुम ही इक नाथ हमारे हो।
तथा
शरणागत पाल कृपाल प्रभो,
हमको इक आस तुम्हारी है।

जैसी प्रार्थनाओं के लेखक श्री मिश्र जी ही थे।

कविता और गद्य-लेखन मे अपनी अनूठी शैली का प्रदर्शन करने के अतिरिक्त अभिनय-कला मे भी आपने नये मानदण्ड स्थापित किए थे। पत्रकारिता और राजनीति मे भी आपका व्यक्तित्व बिलकुल बेजोड़ और निराला था। आपकी समाज-सुधार की भावनाएँ आपकी प्रायः सभी रचनाओ मे स्पष्टत. प्रतिबिम्बित होती थी। आपकी प्रमुख रचनाओ की तालिका इस प्रकार है—'चरिताष्टक', 'तृप्यन्ताम्', 'पचामृत', 'मन की लहर', 'मानस विनोद', 'लोकोक्ति शतक', 'कलि कौतुक', 'भारत दुर्दशा', 'कथा-माला', 'विक्रमादित्य', 'होली है', 'निबन्ध नवनीत','सुचाल शिक्षा', 'बोधोदय', 'शैव सर्वस्व', 'गो-सकट', 'कलि-प्रभाव', 'हठी हमीर', 'जुआरी खुआरी', 'पचामृत','नीति रत्नावली', 'सेन वश का इतिहास','सूबे बगाल का भूगोल', 'वर्ण परिचय', 'शिशु विज्ञान', 'राजसिह', 'इन्दिरा', 'राधारानी', 'युगलागुलीय', 'प्रेम पुष्पावली', 'ब्रैडला स्वागत', 'दगल खण्ड', 'कानपुर साहित्य' तथा 'शृगार विलास' आदि। आपकी उर्दू मे भी 'दीवाने बरहमन' नामक एक पुस्तक प्रकाशित हुई थी। आपकी सभी गद्य-रचनाओ का सकलन-'प्रतापनारायण ग्रन्थावली' के नाम से नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की ओर से प्रकाशित हुआ है। इसका सम्पादन श्री विजयशकर मल्ल ने किया है।

आप सन् 1892 के अन्त मे गम्भीर रूप से बीमार पड़े थे और केवल 38 वर्ष की आयु मे आपका निधन 6 जुलाई सन् 1894 को हुआ था।

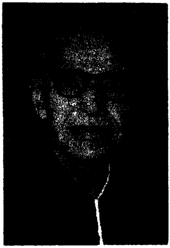
श्री प्रतापनारायण वाजपेयी

श्री वाजपेयी जी का जन्म 21 फरवरी सन् 1896 को उत्तर प्रदेश के कानपुर नगर मे हुआ था। आप हिन्दी के वरिष्ठ पत्रकार पण्डित अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी के पारिवारिक जनो मे से थे। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आपने उन्हीके साथ प्रथम विश्वयुद्ध के दिनों मे कलकत्ता के प्रख्यात दैनिक 'भारत मित्र' से अपने पत्रकार-जीवन का प्रारम्भ किया था। जब श्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी ने अपने निजी हिन्दी दैनिक 'स्वतन्त्र' का प्रारम्भ किया तो उसका

सारा कार्य आप ही देखते थे। प्रतापनारायण जी को पत्रकारिता की वास्तविक शिक्षा यहाँ ही मिली थी। 'स्वतन्त्र' के माध्यम से आपने अपनी लेखनी को इतना प्रखर किया कि आपके लेखों में राष्ट्र-प्रेम उभरकर सामने आया। आप देश को दुहने की ब्रिटिश शासन की नीति का डटकर विरोध किया करते थे। परिणाम स्वरूप उन दिनों तत्कालीन ब्रिटिश नौकरशाही द्वारा 'स्वतन्त्र' पर अनेक प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष प्रहार हुए थे।

'स्वतन्त्र' में पत्रकारिता की ट्रेनिंग लेने के उपरान्त आपका आत्म विश्वास दृढ़ से दृढ़तर हो गया। फलस्वरूप आपने स्वतन्त्र रूप से 'स्वाधीन भारत' नामक एक और पत्र का सम्पादन प्रारम्भ किया। यहाँ भी आपकी लेखनी चुप नहीं रह सकी और इस पत्र पर भी ब्रिटिश नौकरशाही की कोप-दृष्टि हो गई। फलस्वरूप 'स्वाधीन भारत' का प्रकाशन बन्द करके आपने शेयर बाजार में शेयर खरीदने तथा बेचने का कार्य प्रारम्भ किया, जिसमें वे 25 वर्ष तक निरन्तर जुड़े रहे। अपने इस जीवन में आपने जहाँ शेयर बाजार की कार्य-कारिणी के सक्रिय तथा कर्मठ सदस्य के रूप में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया वहाँ सरकार द्वारा गठित 'कम्पनी कानून कमेटी' के भी आप सम्मानित सदस्य रहे थे। इस कमेटी ने जो सिफारिशें की थी उन्हें सरकार ने सन् 1956 में क्रियान्वित किया था। जब आपने सन् 1956 में शेयर बाजार की क्रियाशील प्रवृत्तियों से अवकाश ग्रहण करने का निश्चय किया तब आपके एक मित्र श्री विश्वम्भरनाथ चतुर्वेदी ने आपसे यह ठीक ही कहा था—"पण्डित जी यों अकर्मण्य रहकर आपका मन कैसे लगेगा ? आप पत्रकारिता के पूरे ज्ञाता है। हमारा तो सुझाव है कि आप हिन्दी में एक आर्थिक व्यापारिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ करें। इससे हिन्दी-जगत् तो लाभान्वित होगा ही, साथ ही वे व्यापारी भी, जो अँग्रेजी नहीं जानते तथा जो जानते है किन्तु अँग्रेजी पत्रों की एकांगी नीति से गुमराह होते है, आपके कृतज्ञ होंगे। इस तरह हिन्दी में एक निष्पक्ष व्यापारिक-आर्थिक पत्र का अभाव भी दूर हो जायगा।"

इस घटना से पूर्व कलकत्ता के शेयर बाजार के प्रमुख श्री ओंकारमल जटिया ने भी वाजपेयी जी पर अँग्रेजी के 'कैपीटल'-जैसा पत्र हिन्दी में निकालने के लिए दबाव डाला था। उस समय जटिया जी ने आपको इस कार्य में प्रत्येक प्रकार का सहयोग देने का आश्वासन भी दिया था। उन दिनों श्री जटिया शेयर मार्केट में पूरी तरह तप रहे थे। वे एड्यूल कम्पनी के भागीदार होने के अतिरिक्त कई विदेशी बैंकों और दर्जनों कम्पनियों के निदेशक थे। वाजपेयी जी ने उस समय 'व्यापारी' नामक एक पत्र निकालने की पूरी रूपरेखा बना भी ली थी, किन्तु उन्हीं दिनों श्री अम्बिका-प्रसाद वाजपेयी द्वारा सचालित एवं सम्पा-



दित 'स्वतन्त्र' के सचालन का सारा भार आपके कंधों पर आ पड़ा और आप इस योजना को क्रियान्वित न कर सके। इस कारण तब वाजपेयी से श्री जटिया जी रुष्ट भी हो गए थे। बाद में जब वाजपेयी जी ने इस कार्य के लिए उप-युक्त अवसर देखा तब आपने अपने पुराने मित्र व उद्योगपति श्री घनश्यामदास बिरला से इस सम्बन्ध में परामर्श करते हुए स्पष्ट रूप से यह भी कहा था कि आप उनसे आर्थिक सहायता लेने नहीं, बल्कि एक आर्थिक-व्यापारिक पत्र के प्रकाशन के सम्बन्ध में सलाह लेने आए है। पत्र की रूपरेखा बताने के बाद जब नामकरण की बात आई तब 'आर्थिक जगत्' नाम का निश्चय किया गया। वाजपेयी इस बात से अपरिचित न थे कि बिरला जी का 'ईस्टर्न इकोनॉमिस्ट' काफी धन व्यय हो जाने पर भी अभी तक स्वावलम्बी नहीं हुआ था, किन्तु फिर भी आपका हिन्दी में ऐसा पत्र प्रकाशित करने का दृढ़ निश्चय बन चुका था।

फलस्वरूप वाजपेयी जी ने एक 'परामर्श मण्डल' का गठन करके 'आर्थिक जगत्' का प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया। उसके 'परामर्श मण्डल' में कलकत्ता स्टाक एक्सचेंज के तत्कालीन अध्यक्ष श्री विश्वम्भरनाथ चतुर्वेदी के अतिरिक्त सर्वश्री आनन्दीलाल पोद्दार, भगवती प्रसाद खेतान, चौथमल सराफ और ईश्वरदास जालान-जैसे अनेक ख्यातिप्राप्त

उद्योगपतियों, नामी कर-विशेषज्ञों, विशिष्ट विधिवेत्ताओं और वरिष्ठ सासदों के नाम रखे गए। 'कम्पनी और कानूनी मामलो के विशेषज्ञ' और प्रख्यात आर्थिक पत्रकार डॉ० अतुलकृष्ण सूर को भी इस 'परामर्श मण्डल' मे स्थान दिया गया। इसके उपरान्त वाजपेयी जी ने सन् 1956 मे विधिवत् 'आर्थिक जगत्' का सम्पादन-प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया, जो अब भी अत्यन्त सफलतापूर्वक देश के आर्थिक तथा व्यापारिक क्षेत्र की अत्यन्त उल्लेखनीय सेवा कर रहा है। इस पत्र के माध्यम से अपनी स्पष्ट निर्भीक और तटस्थ नीति के कारण वाजपेयी जी ने जहाँ इस क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बनाया वहाँ समय-समय पर अपनी दूरगामी दृष्टि से देश के औद्योगिक क्षेत्र को उचित तथा प्रेरक दिशा-निर्देश भी दिया। आपकी वैचारिक निर्भीकता का सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि जब मूँधड़ा-काण्ड के समय कृष्णमाचारी वित्त मन्त्री थे तब आपने उनके प्रस्तावो और कार्य-प्रणाली की खुलकर आलोचना की थी। आपकी निष्पक्ष आलोचना का सरकार पर ऐसा चमत्कारी प्रभाव हुआ कि कृष्णमाचारी तथा उनके सचिव दोनो को हटना पडा था। इसी प्रकार जब मोरारजी देसाई ने वित्त-मन्त्री के रूप मे 'स्वर्ण-नियत्रण विधेयक' बनाया तब भी वाजपेयी ने उस विधेयक के परिणामस्वरूप होने वाली स्वर्णकारो की तबाही के लिए उनकी कडी आलोचना की थी। कैसी भी राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय घटना का क्रमबद्ध विश्लेषण-विवेचन करना आपका बाएँ हाथ का खेल था।

वाजपेयी जी एक जागरूक एव निष्पक्ष पत्रकार होने के साथ-साथ उत्कृष्ट कोटि के समाज-सेवी भी थे। स्वाधीनता आन्दोलन के दिनो मे आपने कलकत्ता की जनता की जो सेवा की थी, वह इतिहास के पन्नो मे अमिट अक्षरो मे अंकित है। सन् 1926 तथा सन् 1946 के हिन्दू-मुस्लिम-दगो के समय मे भारी आर्थिक हानि उठाकर भी आपने कबीर को .

कबिरा खडा बजार मे सबकी माँगे खैर।
ना काहू से दोस्ती, ना काहू से बैर॥
कबिरा खडा बाजार मे, लिये लुकाठी हाथ।
जो घर जारै आपना, चले हमारे साथ॥

इस अमर वाणी को पूरी तरह सार्थक किया था। आपकी लेखनी की प्रखरता से शत्रु और मित्र सभी भयभीत रहा करते थे। आपका मूल मन्त्र 'शत्रोरपि गुणा वाच्या, दोषा वाच्या गुरोरपि' था, इसलिए आप जीवन-भर अपनी लेखनी की प्रखरता को अक्षुण्ण बनाए रहे।

आपका निधन 31 दिसम्बर सन् 1981 को हुआ था।

श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव

आपका जन्म 20 सितम्बर सन् 1904 को उत्तर प्रदेश के कानपुर नगर के हरवश मोहाल मोहल्ले मे हुआ था। आपके पूर्वज नवाबी जमाने के सरकारी कर्मचारी थे। जब आप 15 वर्ष के थे तब आपकी माताजी का देहावसान हो गया था और 24 वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते आप पिता के स्नेह से भी वंचित हो गए थे।



आपकी शिक्षा कानपुर और लखनऊ मे हुई थी। आपने सन् 1921 मे मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करके कानपुर के क्राइस्ट चर्च कालेज से सन् 1925 मे बी० ए० किया था और बाद मे सन् 1927 मे लखनऊ विश्वविद्यालय मे एल-एल० बी० की परीक्षा दी थी। अग्रेजी साहित्य मे रुचि होने के कारण आपने एम० ए० मे प्रवेश ले लिया था और प्रथम वर्ष की परीक्षा मे उत्तीर्ण भी हो गए थे, किन्तु इस बीच सन् 1928 मे आपको जोधपुर रियासत मे 'न्यायाधीश' के पद पर कार्य करने का सुअवसर मिल गया, अत आप अँग्रेजी मे एम०ए० नही कर सके। 20 वर्ष तक 'न्यायाधीश' के पद पर कार्य करने के उपरान्त आपने सन् 1949 मे स्वेच्छा से वह कार्य छोड दिया और स्थायी रूप से कानपुर मे आकर रहने लगे थे। सन् 1948 से सन् 1952 तक आप 'कानपुर विकास बोर्ड' मे हिन्दी अधिकारी भी रहे थे। आप अँग्रेजी, हिन्दी, उर्दू, फारसी और संस्कृत

के अतिरिक्त बंगला, गुजराती, मराठी, फ्रेंच और लेटिन भाषाओं के भी अच्छे मर्मज्ञ थे।

आपने अपने जीवन में लगभग 48 वर्ष तक निरन्तर साहित्य-साधना की थी और अपनी अद्वितीय प्रतिभा के बल पर हिन्दी के शीर्षस्थ कथाकारों में अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था। आपने 21 उपन्यास, 5 कहानी-संग्रह, 2 एकांकी-संकलन हिन्दी साहित्य को भेंट करने के अतिरिक्त जापानी उपन्यासकार जून एचिरो टानाजाकी के उपन्यास 'ओ सुइक थोरोसी' का हिन्दी-अनुवाद भी प्रकाशित कराया था। इनके अतिरिक्त आपकी अनेक कहानियाँ, कविताएँ और निबन्ध अप्रकाशित ही रह गए। आप 'घोंघा छब्बे' नाम से हास्य-व्यंग्य की रचनाएँ भी लिखा करते थे। आपकी बहुत-सी रचनाएँ 'मनोरंजन' (कानपुर), 'इन्दु' (काशी), 'मर्यादा' (प्रयाग), 'माधुरी' (लखनऊ), 'माया' (प्रयाग), 'प्रताप' (कानपुर), 'प्रभा' (कानपुर)', 'सविता' (कानपुर), 'सहयोगी' (कानपुर) और 'मनु' (कानपुर) के अनेक अकों में बिखरी पड़ी है। इतिहास, अध्यात्म, दर्शन, विज्ञान, ललित साहित्य और सामयिक राजनीति आपके प्रिय विषय रहे थे।

आप स्वभाव से एकान्त प्रेमी और शान्त वातावरण के उपासक थे। भीड़-भब्बड़ वाली सभाओं और गोष्ठियों से आप प्राय दूर ही रहा करते थे। प्रचार और विज्ञापन में आपकी कोई विशेष रुचि न थी। आप पूर्णत: भाग्यवादी थे। आपने सन् 1924 में जब अपना पहला उपन्यास 'विदा' लिखना प्रारम्भ किया था तब आपके पिताजी ने उसकी पाण्डुलिपि को देखकर अपनी आश्वस्ति प्रकट करते हुए उनसे कहा था – "अब तुम शौक से लिखो, मैं इसमें कोई रुकावट नहीं डालूँगा।" पिताजी की स्वीकृति मिलते ही आपको जो प्रेरणा मिली उसीका यह सुपरिणाम है कि आपने इतने सशक्त उपन्यासों की रचना सहज भाव में कर डाली। आपके प्रथम उपन्यास 'विदा' के सम्बन्ध में उपन्यास सम्राट् मुन्शी प्रेमचन्द ने अपने विचार इस प्रकार से प्रकट किये थे—"विदा मौलिक उपन्यास है और मेरे विचार में भाषा-सौष्ठव, चरित्र-चित्रण और भाव-व्यंजना में, जो उपन्यास के तीन प्रधान स्तम्भ हैं, प्रतापनारायण जी को अपने पहले ही प्रयास में जितनी सफलता मिली है, वह महान् आशाओं से परिपूर्ण है।" और वास्तव में आपने प्रेमचन्द जी की भविष्यवाणी को सार्थक कर दिया।

आपके उपन्यासों की एक विशेषता यह भी है कि प्राय. उन सब ही के नाम आपने प्रारम्भ में 'व' अक्षर पर रखे थे। जैसे 'विदा', 'विकास', 'विसर्जन', 'विजय', 'वन्दना', 'वंचना', 'विवाह विभ्राट्', 'वेदना', 'व्यावर्तन', 'विषमुखी', 'विधाता का विधान', 'विपथगा', 'विश्वास की वेदी पर', 'विनाश के बादल', 'विजय का व्यामोह' आदि। इनके अतिरिक्त आपकी 'दो साथी','हमारी भी कहानी है','बेकसी का मजार', 'नवयुग', 'बन्धन विहीना', 'निकुंज', 'आशीर्वाद' तथा 'पाप की ओर' नामक कृतियाँ भी उल्लेखनीय है। आपने अपनी सभी कथा-कृतियों में समाज की अनेक विकृतियों का पर्दाफाश करके जिन मूल्यों की स्थापना की थी, वे आपके जीवन के उदात्त आदर्श रहे थे। उच्चमध्यवर्गीय समाज के जीवन का चित्रण करने में आप पूर्णत सफल हुए थे। राजनीतिक और ऐतिहासिक कथानकों पर लिखकर भी आपने अपनी विशिष्ट रचना-पद्धति का परिचय दिया था। आपकी प्राय: सभी रचनाएँ भारतीय आदर्शवाद और पारिवारिक परम्पराओं का चित्रण करने में पूर्ण सफल रही है। आपके कई उपन्यासों के भारत की कई भाषाओं में अनुवाद भी हुए थे।

अपने जीवन के अन्तिम दिनों में आप कुछ अर्ध विक्षिप्त से रहने लगे थे। आपके निधन के उपरान्त कानपुर नगर की 'महापालिका' ने आपके निवास से आजाद नगर (नवाबगंज) की ओर जाने वाली सड़क का नाम आपके नाम पर रखने की घोषणा की थी।

आपका निधन 14 फरवरी सन् 1978 को हुआ था।

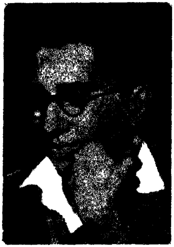
श्री प्रद्युम्नकृष्ण कौल

आपका जन्म 22 अप्रैल सन् 1897 को मध्यप्रदेश के होशंगाबाद शहर के एक सारस्वत ब्राह्मण-परिवार में हुआ था। बचपन में ही जब आपके पिता का देहावसान हो गया तब आपका परिवार इलाहाबाद में आकर रहने लगा था। आपकी शिक्षा वहाँ के सी०ए०वी० कालेज में हुई थी। आपका वास्तविक नाम 'राधाकृष्ण झिंगरन' था और घर के लोग

आपको 'रद्दू' कहकर बुलाते थे। आपने कुछ रचनाएँ शुरू-शुरू में 'राधाकुमुद भिगरन' नाम से भी छपवाई थीं। बाद में आपने अपना नाम 'प्रद्युम्नकृष्ण कौल' रख लिया था और साहित्य-जगत् में इसी नाम से जाने जाते थे। लेखन की ओर अपने छात्र-जीवन से ही रुचि होने के कारण आप विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में अपनी रचनाएँ प्रकाशनार्थ भेजने लगे थे। 'हिन्दू पंच' (कलकत्ता) के तत्कालीन सम्पादक पण्डित ईश्वरीप्रसाद शर्मा आपकी रचनाओं से इतने प्रभावित हुए थे कि उन्होंने आपको अपना सहकारी बनाकर कलकत्ता ही बुला लिया था। जून सन् 1926 से मई 1927 तक आप उनके सहकारी रहे थे और उनके निधन के उपरान्त अप्रैल सन् 1929 तक आप 'हिन्दू पंच' के प्रधान सम्पादक रहे थे।

'हिन्दू पंच' में सहकारी सम्पादक के रूप में जब आपकी नियुक्ति हुई थी तब आपका वेतन 50 रुपये मासिक था। उस समय वेतन का न तो कोई ग्रेड निश्चित था, और न वेतन-वृद्धि का ही कोई क्रम था। अतः सम्पादक हो जाने पर भी आपका वही वेतन रहा था। 'छुट्टी' और 'बीमारी' इत्यादि का वेतन मिलने का भी उन दिनों कोई 'डौल' नहीं होता था। पत्र के संचालक श्री रामलाल बर्मन 'नो वर्क, नो पे' वाली नीति से बुरी तरह चिपके हुए थे। परिणामस्वरूप अप्रैल सन् 1929 में आप प्रयाग से प्रकाशित होने वाले 'भारत' (पहले साप्ताहिक, फिर अर्ध साप्ताहिक और बाद में दैनिक) में 60 रुपये मासिक पर सहकारी सम्पादक होकर चले आए और अन्तिम समय तक आपका वेतन 85 रुपये मासिक ही था। 'भारत' में भी वेतन-वृद्धि का कोई निश्चित नियम नहीं था, हाँ, 5-5 वर्ष की अवधि के उपरान्त आपके वेतन में 15-15 रुपये की वृद्धि अवश्य होती रही थी। 30 रुपये मासिक का मँहगाई भत्ता भी बहुत बाद में मिलना प्रारम्भ हुआ था। सन् 1944 में बिलकुल पहली बार कम्पनी के मालिकों ने एक-एक मास का वेतन बोनस के रूप में दिया था। पेंशन और ग्रेच्युटी का उन दिनों कोई विशेष नियम न था।

आप इन पत्रों में कार्य करने के अतिरिक्त पृथक् से जो लेखन का कार्य किया करते थे उससे आपका थोड़ा अर्थ-कष्ट दूर होता था। आप मुख्यतः व्यंग्य-रचनाएँ लिखा करते थे, जो प्रायः 'कुमुद', 'मिस्टर पी०', 'मिस्टर के०', 'ब्रह्म राक्षस' और 'चकाचक' आदि अनेक काल्पनिक नामों से छपा करती थीं। जिन दिनों आप कलकत्ता में रहते थे तब हिन्दी के प्रख्यात नाटककार आगा हश्र कश्मीरी के नाटकों का वहाँ बहुत प्रचार था। 'पारसी थियेट्रिकल कम्पनी' की ओर से अभिनीत नाटकों को देखकर आपने भी 'बुन्देला बाला' तथा 'बलिदान' नाम के नाटकों की रचना करके वहाँ पर उनका मंचन भी किया था। बाबू देवकीनन्दन खत्री और सैक्स्टन ब्लैक-जैसे जासूसी उपन्यास-कारों से प्रभावित होकर आपने जासूसी और तिलिस्म से सम्बन्धित लगभग 4 दर्जन उपन्यासों की रचना भी की थी, जो आज सभी अप्राप्य हैं। इनमें से 'जवाहरात का गोला', 'खूनी टापू' तथा 'द्वीप का कैदी' नामक उपन्यास उन दिनों बहुत लोकप्रिय हुए थे।



इनके अतिरिक्त आपने अपनी पत्रकारिता के इस दीर्घ-काल में अनेक शोधपूर्ण लेख भी लिखे थे। आपके ऐसे लेख आदि हिन्दी की तत्कालीन अनेक पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित होते रहते थे। आपके कुछ लेख फीजी द्वीप से प्रकाशित होने वाले 'शान्तिदूत' नामक पत्र में भी छपे थे। आपकी कहानियाँ 'सरस्वती', 'मनोरमा' तथा 'माया' आदि कई पत्रिकाओं की पुरानी फाइलों में छिपी पड़ी हैं। आपको कई बार विदेशों से भी हिन्दी पत्रों का सम्पादन करने के निमन्त्रण प्राप्त हुए थे, किन्तु आपने भारत से बाहर जाना पसन्द नहीं किया था। आपको अपने पत्र-कार-जीवन में अनेक आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। आपकी ऐसी परिस्थिति की किंचित् झलक आपके इन शब्दों में मिल सकती है—"अपनी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए मनुष्य अपनी लाइन चुनता है। लक्ष्य चाहे जितना भी ऊँचा और सुन्दर क्यों न हो, यदि उससे मनुष्य को भूखा रहने की नौबत आ जाए तो उसे क्लेश होता है और

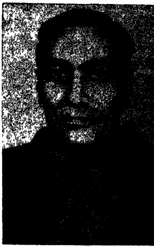
वह दूसरे जीवन-क्रम को अपनाने की चेष्टा करता है। ठीक यही दशा पत्रकारों की आम तौर से है और मेरी भी है। कभी-कभी इस धन्धे को ही नमस्कार करके दूसरे पथ का पथिक बनने को जी करने लगता है।" आपके इन शब्दो से आपके जीवन-संघर्ष का कुछ पता चल जाता है। स्वतन्त्रता के उपरान्त अब पत्रकारिता 'मिशन' न रहकर धन्धा हो गई है और आज का पत्रकार आर्थिक दृष्टि से पूर्णत समृद्ध जीवन जी रहा है। आपके जीवन-संघर्ष की कहानी भावी पीढी के लिए प्रेरणादायक है। आपने अनेक सकटो मे अपने पारिवारिक दायित्व को पूरी तरह निभाया था और अपनी सन्तानो को भी सुयोग्य बनाने की दिशा मे सतत प्रयत्नशील रहे थे। आपके एक सुपुत्र श्री अनूप झिगरन उत्तर रेलवे मे वरिष्ठ अधिकारी है।

आपका निधन 9 जून सन् 1969 को 72 वर्ष की आयु मे प्रयाग मे हुआ था।

श्री प्रभाकर ठाकुर

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के बलिया जनपद के 'भुआल छपरा' नामक ग्राम मे 30 अगस्त सन् 1914 को हुआ था। आपकी शिक्षा बलिया और वाराणसी मे हुई थी। प्रारम्भ मे आपने मैट्रिक की परीक्षा एल० डी० मैस्टन हाई स्कूल (महन्त हाई स्कूल) मे उत्तीर्ण की थी और तदुपरान्त हिन्दू विश्वविद्याय से बी० ए०, एम० ए० तथा एल० टी० की परीक्षाएँ देकर आप प्रयाग के 'अग्रवाल इण्टर कालेज' (आजकल राधाकृष्ण इण्टर कालेज) मे प्राध्यापक नियुक्त हो गए थे। आप आजन्म इसीमे सम्बद्ध रहे थे। पहले इण्टर कालेज मे थे और बाद मे इसके स्नातकोत्तर विभाग 'इलाहाबाद डिग्री कालेज' मे प्राध्यापक हो गए थे और 'प्राचार्य' के रूप मे वहाँ से अवकाश ग्रहण किया था।

जिन दिनों आप प्रयाग मे आए थे तब दारागज मे आकर रहे थे और सन् 1968 तक वही रहे थे। दारागज किसी समय हिन्दी-प्रकाशन का प्रमुख केन्द्र समझा जाता था और वहाँ पर अनेक प्रमुख प्रकाशक व लेखक रहा करते थे पण्डित लक्ष्मीधर बाजपेयी, केदारनाथ गुप्त और गणेश पाण्डेय की प्रकाशन-सस्थाएँ यहाँ पर ही थी। दारागंज-निवास के प्रारम्भिक दिनो मे आपका सम्पर्क वहाँ के प्रकाशको से बहुत अधिक हो गया था। परिणाम स्वरूप आपने वहाँ की 'छात्र हितकारी पुस्तकमाला' की ओर से प्रकाशित होने वाली 'बाल जीवनी माला' के लिए बहुत-सी जीवनियाँ लिखी थी, जो उन दिनो बहुत लोकप्रिय हुई थी। 'छात्र हितकारी पुस्तकमाला' के कुशल व्यवस्थापक श्री गणेश पाण्डेय क्योकि आपके जिले के ही निवासी थे अत. आप प्राय. उनके पास ही बैठा-उठा करते थे। इस सत्सग के कारण ही आपका लेखन की ओर विशेष झुकाव हो गया था और आपने खूब जमकर लेखन का कार्य किया था। आपकी लेखन-क्षमता की उन दिनो हिन्दी-जगत् मे बडी धाक थी।



जब आपकी बालोपयोगी जीवनियो का हिन्दी-जगत् में अच्छा स्वागत हुआ तब आपने कई अन्य प्रौढ पुस्तको का भी निर्माण किया। आपकी ऐसी रचनाओं मे 'भारतीय समाजशास्त्र की रूपरेखा' और 'समाजशास्त्र के सिद्धान्त' के नाम प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। जब श्री भगवानदास केला ने प्रयाग मे आकर अपनी 'भारतीय ग्रन्थ माला' का प्रारम्भ किया तब आपने उनके लिए भी 'भारतवर्ष का इतिहास' नामक ग्रन्थ की रचना की थी। इनके अतिरिक्त आपने 'मनुष्य और समाज' नामक पुस्तक की रचना भी की थी। इसके महत्त्व का इसीसे परिचय मिल जाता है कि इसे उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से पुरस्कृत किया गया था। आपकी 'नागरिक शास्त्र के सिद्धान्त' नामक पुस्तक भी अपने विषय की उपादेयता के कारण लोकप्रिय हुई थी। आपकी इन सभी रचनाओ का अच्छा स्वागत हुआ था और उनमे से कई तो उन दिनों पाठ्य-पुस्तक के रूप मे भी स्वीकृत थी।

आपका निधन 3 मार्च सन् 1978 को हुआ था।

श्री प्रभागचन्द्र शर्मा

आपका जन्म 25 अप्रैल सन् 1914 को मध्यप्रदेश के शाजापुर नामक स्थान में हुआ था। 20 वर्ष की आयु में ही आपने लिखना प्रारम्भ कर दिया था और प्रारम्भ में सन् 1940-41 में आपने कलकत्ता से प्रकाशित होने वाली जोशी बन्धुओं (डॉ० हेमचन्द्र जोशी तथा इलाचन्द्र जोशी) की पत्रिका 'विश्ववाणी' में सहकारी सम्पादक के रूप में कार्य किया था और तदुपरान्त आप खण्डवा (मध्यप्रदेश) से सम्पादित 'कर्मवीर' साप्ताहिक में सहकारी सम्पादक के रूप में आ गए थे। 'कर्मवीर' में कुछ समय कार्य करने के उपरान्त आपने खण्डवा से ही 'आगामी कल' नामक एक साप्ताहिक स्वतन्त्र रूप से स्वयं भी प्रकाशित किया था। आपके इस पत्र का हिन्दी-पत्रकारिता में अपना एक विशिष्ट स्थान था। इस पत्र का सम्पादन आपने 13 वर्ष तक किया था।

आप जहाँ एक कुशल एवं जागरूक पत्रकार के रूप में हिन्दी-जगत् में प्रतिष्ठित थे वहाँ एक संवेदनशील कवि के रूप में भी आपकी अच्छी ख्याति थी। आपकी कविताएँ उन दिनों देश की सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में छपा करती थीं। आपने उत्कृष्ट निबन्ध-लेखक और कहानीकार के रूप में भी प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। आपके 'अमिताभ' नामक खण्ड-काव्य पर मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद् की ओर से 5 हजार रुपये का 'केशव पुरस्कार' प्रदान किया गया था। साहित्यिक क्षेत्र में आगे बढ़ने की प्रेरणा आपको अपने गुरु प्रो० रमाशंकर शुक्ल 'हृदय' से प्राप्त हुई थी।



आप कर्मठ पत्रकार, सहृदय साहित्यकार और संवेदनशील कवि होने के साथ-साथ उच्चकोटि के राष्ट्रीय कार्यकर्ता भी रहे थे। आपने सक्रिय राजनीति में भाग लेकर सन् 1942 के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' के समय जेल-यात्रा भी की थी। आप मध्यप्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री पण्डित द्वारका-प्रसाद मिश्र के अनन्य विश्वासपात्र तथा सहयोगी रहे थे। उन्हीं के आग्रह पर आप आकाशवाणी की नौकरी छोड़कर सक्रिय राजनीति में आए थे और मध्यप्रदेश विधान-सभा के सदस्य भी रहे थे। अपनी साहित्य-सेवा के विषय में आपने अपने 'अमिताभ' नामक काव्य की भूमिका में जो विचार प्रकट किए हैं उनसे आपके जीवन और कृतित्व को समझने में विशेषतः सहायता मिलेगी। आपने लिखा था—"मूलतः मेरी रुचि साहित्य-सृजन की ओर रही है। मेरे जीवन के विगत कुछ वर्ष सक्रिय राजनीति और पत्रकारिता के बने रहने के कारण सर्जनात्मक लेखन-कार्य बहुत-कुछ अवरुद्ध रहा। छुट-पुट लेखन अवश्य कुछ हुआ, किन्तु उसे प्रकाशन का धरातल छूने का भाग्य नहीं मिलता रहा। कुछ मेरे प्रमाद और आलस्य के कारण और कुछ हर काम में त्वरा के प्रति मेरी उदासीनता के कारण। इसे मैं अवश्य अपना सौभाग्य और स्नेही बन्धुओं का प्रेम मानता हूँ कि मुझे सदैव उन्होंने स्नेह दिया और गले में लगाए रखा।" सक्रिय राजनीति में पड़ जाने के कारण आपका साहित्य-सृजन पिछड़ गया था। यदि आप लेखन में ही रहते तो साहित्य को आपसे बहुत-कुछ महत्त्वपूर्ण उपलब्धि हो सकती थी।

आपका निधन 28 नवम्बर सन् 1971 को हुआ था।

श्री प्रभातचन्द्र बोस

आपका जन्म मध्यप्रदेश के जबलपुर नगर में सन् 1878 में हुआ था। शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त आपने सामान्यतः समस्त मध्यप्रदेश और विशेषतः जबलपुर नगर की अनेक रूपों में अभिनन्दनीय सेवा की थी। वहाँ के शैक्षणिक और सामाजिक क्षेत्र में आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान था। इस शताब्दी के तीसरे दशक में आपने पुराने मध्यप्रदेश के समय जहाँ उसके विभिन्न विभागों की मन्त्री के रूप में मध्य-प्रदेश की जनता की सेवा की थी वहाँ आपने 'जबलपुर म्युनिसिपल कमेटी' के अध्यक्ष के रूप में भी जबलपुर नगर के निर्माण तथा विकास में अपना उल्लेखनीय सहयोग प्रदान

किया था। आपके अध्यक्षकाल में ही म्युनिसिपल कमेटी के भवन का निर्माण हुआ था और म्युनिसिपल-कार्यों में आपने हिन्दी को प्रचलित करने की दिशा में भी प्रचुर प्रश्रय प्रदान किया था।

आप जहाँ अनेक वर्ष तक 'हिन्दू महासभा' के सक्रिय सदस्य रहे थे वहाँ आपने जबलपुर की 'बंगाली एसोसिएशन' के अनेक वर्ष तक प्रेरक-अध्यक्ष के रूप मे भी अपनी महत्त्वपूर्ण छाप छोडी थी। आपने अपनी स्वर्गीया धर्मपत्नी श्रीमती सिद्धिबाला बोस की स्मृति में एक पुस्तकालय की स्थापना भी इस एसोसिएशन के अन्तर्गत की थी। आप एक अच्छे अधिवक्ता और विधिवेत्ता के रूप मे भी अत्यन्त समादृत थे। आपकी विविध लोकोपयोगी सेवाओ को दृष्टि मे रखकर अँग्रेज सरकार ने आपको 'राय बहादुर' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी।

क्योंकि आपका जन्म तथा अध्ययन आदि सभी जबलपुर मे हुआ था, अत. हिन्दी के प्रति आपके मन मे अनन्य अनुराग होना स्वाभाविक था। परिणाम स्वरूप आपने अपने शिकार-सम्बन्धी अनुभवो को अपनी मातृभाषा बंगला मे न लिखकर हिन्दी मे ही प्रस्तुत किया था। आपकी पुस्तक 'मध्यप्रदेश मे शिकार' नाम से प्रकाशित हुई थी। मध्यप्रदेश मे आप ही अकेले ऐसे लेखक थे जिन्होने अपने शिकार-सम्बन्धी अनुभव हिन्दी मे लिखे थे। आपकी यह पुस्तक उन दिनो अत्यन्त प्रशंसित तथा चर्चित हुई थी। मध्यप्रदेश के अहिन्दी-भाषी हिन्दी-लेखको और उन्नायकों मे आपका नाम विशेष महत्त्व रखता है।

आपका निधन सन् 1966 मे हुआ था।

श्री प्रभात तिवारी

आपका जन्म 17 फरवरी सन् 1930 को अविभाजित पजाब के मुलतान नगर मे हुआ था। विभाजन के उपरान्त आप जबलपुर चले आए थे और यहाँ पर ही आपके व्यक्तित्व का विकास हुआ था। आपने जबलपुर के 'महाकौशल महाविद्यालय' से संस्कृत मे विशेष योग्यता प्राप्त करने के साथ बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आपने जबलपुर के 'प्रान्तीय शिक्षण महाविद्यालय' में एम० ए० (मनोविज्ञान) की पढाई प्रारम्भ की थी कि कविता की धुन ने उसे बीच में ही छुडवा दिया। आपके पिता श्री सत्यदीन तिवारी उन दिनों जबलपुर के 'मॉडल हाई स्कूल' में शिक्षक थे। कालेज के छात्र-जीवन मे आपके मानस मे कविता के जो बीज अकुरित हो गए थे, वे अपने ज्येष्ठ भ्राता श्री देवेन्द्रनाथ 'प्रशान्त' का प्रश्रय और सहयोग पाकर धीरे-धीरे विकसित, पल्लवित तथा पुष्पित हो गए थे।



धीरे-धीरे आपने कविता के अतिरिक्त गम्भीर दार्शनिक एव ऐतिहासिक निबन्ध भी लिखने प्रारम्भ कर दिए और कविता को पूर्णत: अपनाकर उसी ओर प्रवृत्त हो गए थे। आजीविका के लिए आपने 'अध्यापन' का कार्य प्रारम्भ किया था, किन्तु उसमे भी आपका मन नही लगा। आपने उर्दू-साहित्य का भी अच्छा अध्ययन किया था जिसके कारण आपकी भाषा मे उर्दू की मुहावरेबन्दी भी पूर्णतः प्रस्फुटित हुई थी। रुबाइयाँ और गीत लिखने मे आप पूर्णत दक्ष थे। आपकी रचनाओ मे वर्तमान सामाजिक व्यवस्था के प्रति इतना आक्रोश प्रकट होता था कि लोग यह कहने लगे थे—"प्रभात जी, आप कविता क्या पढते है, लाठी-चार्ज करते है।" आपकी रचनाओ के शब्द-शब्द मे प्राय युवकोचित हठधर्मी, आवेश एव आक्रोश इस प्रकार प्रकट होता था, जैसे वह जन-साधारण को आज की व्यवस्था के विरुद्ध जिहाद बोलने को प्रेरित कर रहा हो। आपने अपनी उन भावनाओ को एक रुबाई मे इस प्रकार व्यक्त किया था

दस्तक न दे, खटका न किसी के दर को
चल, लौट के चल 'प्रभात' अपने घर को।
हमदर्दी वहाँ, प्यार भी सच्चा है वहाँ—
रोटी का सहारा भी है जीने-भर को।

अपनी रचनाओं में प्रयुक्त शब्द-शब्द के प्रति आपको हठधर्मी की सीमा तक इतना विश्वास था कि ऐसा प्रतीत होने लगता था कि यदि आप मध्ययुग मे होते तो लोगो को तलवार से अपने अनुकूल चलने को विवश कर देते। आपने रुबाइयो के अतिरिक्त कुछ विशेष प्रकार के सॉनेट भी लिखे थे। भाव-सघनता, वस्तु-विस्तार और काव्य-कौशल सभी दृष्टि से आपकी रचनाएँ हिन्दी पाठको एव श्रोताओ दोनो का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने की अद्भुत क्षमता रखती थी। आपकी कुछ रचनाएँ 'प्रभात के स्वर' नामक काव्य-कृति मे देखी जा सकती हैं। आपने अपनी छोटी-सी आयु मे इतना प्रचुर परिमाण मे लिखा था कि उन दिनो की कोई भी पत्रिका आपकी विशिष्ट रचनाओ मे अछूती नही रहती थी।

अन्त मे आपकी सामाजिक विषमताओ के प्रति विद्रोह एव आक्रोश की वह भावना इस सीमा तक जा पहुँची थी कि आपने एक दिन जीवन-सघर्ष से ऊबकर रेल के नीचे आकर आत्म-हत्या कर ली। 18 जुलाई सन् 1959 की शाम को आप एक मालगाडी के नीचे कुचले पाए गए। आपकी जेब से जो एक पर्चा उस समय निकला था उससे स्पष्ट रूप से यह प्रतिभासित होता है कि सासारिक विषमताओ और सघर्षों से ऊबकर ही आपने अपने जीवन का यह दारुण अन्त करने का निश्चय किया था। उस कागज पर आपने लिखा था—"इस देश में गरीब कवि के लिए सबसे बडा अभिशाप उसकी सवेदनशीलता है...मैं कायर हूँ...जो सघर्ष कर रहे है वे महान् है...मैं उन्हे अन्तिम बार प्रणाम करता हूँ। वे मुझ पर लानत भेजे। मैं स्वय अपने को धिक्कार रहा हूँ।"

कवि प्रभात तिवारी ने समाज की विभीषिकाओ तथा उपेक्षा-वृत्ति से तग आकर जो यह घनघोर निश्चय किया था, उससे आपकी मानसिक स्थिति का सहज ही अनुमान हो जाता है। आपकी इस हृदय-विदारक मृत्यु के उपरान्त सन् 1960 मे 'शिल्पिक' का जो 'प्रभात श्रद्धाजलि अक' प्रकाशित हुआ था उसमे श्री रामेश्वर गुरु 'कुमार हृदय' ने अपनी श्रद्धांजलि इस प्रकार अर्पित की थी

चिता पर लाश को दो टूक रखकर दिल नहीं टूटा,
फवारा खून का छूटा, मगर धीरज नहीं छूटा।
गिरे आँसू, चिता की ओर फिर अन्तिम नजर डाली,
तरुण कवि अलविदा, जाओ हमारी देख पामाली।

श्री प्रभुदयाल शर्मा

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के इटावा नगर के एक सनाढ्य ब्राह्मण-परिवार मे 20 अगस्त सन् 1885 को हुआ था। शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त आपने पत्र-कारिता और लेखन को ही अपने जीवन का प्रमुख लक्ष्य बना लिया था और सन् 1936 से लेकर अपने जीवन की अन्तिम साँस तक आपने 'सनाढ्य जीवन' नामक मासिक पत्र का अत्यन्त सफल सम्पादन तथा प्रकाशन किया था। आप



अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की इटावा शाखा के कई वर्ष तक सक्रिय सदस्य एव पदाधिकारी भी रहे थे।

'सनाढ्य जीवन' का सफल सम्पादन करने के अतिरिक्त आपने जिन अनेक महत्त्वपूर्ण पुस्तकों की रचना की थी उनमे 10 भागों मे प्रकाशित 'भुवन मोहिनी' (1915), नामक उपन्यास के अतिरिक्त 'कोकशास्त्र' (1920), 'साबुनसाजी एव घड़ीसाजी शिक्षा' (1922), 'ब्राह्मणोत्पत्ति' (1925), 'सनाढ्य परिजात' (1930) तथा 'ज्योतिष चमत्कार' (चार भाग, 1936) आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आपने 'सनाढ्य जीवन' के 'हरिऔधाक' (1936) तथा 'तुलसी-स्मृति-ग्रन्थ' (1938) नामक महत्त्वपूर्ण विशेषाक भी सम्पादित किए थे।

आपका निधन 12 फरवरी सन् 1971 को हुआ था।

श्री प्रभुदास ब्रह्मचारी

आपका जन्म सिन्ध प्रदेश (अब पाकिस्तान मे) के नौशहरा

फेरोज नामक स्थान में 21 फरवरी सन् 1904 को हुआ था। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आपने शिक्षकीय जीवन अपना लिया था। अपने इस कार्य-काल मे आपने जहाँ अपने विद्यार्थियों को हिन्दी मे पढ़ने की ओर प्रवृत्त किया था वहाँ आपने हिन्दी रचनाएँ भी हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित करनी प्रारम्भ कर दी थी। भारत-विभाजन से पूर्व सिन्ध मे हिन्दी-प्रचार की दिशा मे जिन महानुभावो ने उल्लेखनीय सेवा की थी उनमे आपका नाम अग्रगण्य है। आप कई वर्ष तक सिन्ध मे 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा' के केन्द्र-व्यवस्थापक भी रहे थे।



विभाजनोपरान्त आपने अपना कार्य-क्षेत्र अजमेर (राजस्थान) को बना लिया था और यहाँ रहकर आप जहा सिन्धी लोगो को हिन्दी पठन-पाठन के लिए प्रेरित करते रहते थे वहाँ आपने 'हिन्दी-अँग्रेजी-सिन्धी-शब्दकोश' (1962) के निर्माण मे भी अपना मूल्यवान सहयोग प्रदान किया था।

आपका निधन 20 दिसम्बर सन् 1977 को अजमेर मे हुआ था।

श्री प्रयागदत्त शुक्ल

श्री शुक्ल का जन्म मध्यप्रदेश (अब महाराष्ट्र) के नागपुर नामक नगर मे सन् 1898 मे हुआ था। मैट्रिक तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने पत्रकारिता को अपना लिया और उसीमे पूरी तरह रम गए। आपने इतिहास-सम्बन्धी अन्वेषण के क्षेत्र मे अपनी लेखनी का प्रचुर प्रयोग किया है। राजनीति, इतिहास और सस्कृति से सम्बन्धित आपके अनेक लेख समय-समय पर 'सरस्वती' आदि तत्कालीन प्रमुख पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहते थे।

गम्भीर और गवेषणात्मक साहित्य के सृजन के अतिरिक्त आपने पत्रकारिता के क्षेत्र में भी बहुत प्रशसनीय कार्य किया था। आपके द्वारा सम्पादित पत्र-पत्रिकाओ मे 'सकल्प', 'धर्मवीर', 'मानवता', 'हमारे गाँव' (मासिक) तथा 'रेखा' (त्रैमासिक) आदि के नाम विशेष रूप से ध्यातव्य है।



आपके द्वारा लिखित प्रथम पुस्तक 'दादा भाई नौरोजी' सन् 1917 में प्रकाशित हुई थी। सन् 1925 मे आपने 'मध्य प्रान्त मरीचिका' और सन् 1930 मे 'मध्यप्रदेश का इतिहास' लिखा था। इनके अतिरिक्त शुक्ल जी द्वारा लिखित 'मध्य प्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोसले', 'सतपुडा की सभ्यता', 'मध्य देश की आदि जातियाँ', 'गोरक्षिणी', 'नागपुर नेत्र', 'होशगाबाद हुकार', 'विन्ध्याटवी के अचल मे' तथा 'बालाघाट वैभव' नामक ग्रन्थ भी अपनी विशिष्टता के लिए विख्यात हैं। आपने जहाँ मराठी तथा हिन्दी मे 'प्रान्तीय कांग्रेस का इतिहास' लिखा था वहाँ आपके द्वारा प्रकाशित 'हिन्दी साहित्य को विदर्भ की देन' नामक ग्रन्थ भी विशेष रूप से चर्चनीय है।

मध्य प्रदेश के प्रथम मुख्यमन्त्री श्री रविशकर शुक्ल का 2 अगस्त सन् 1955 को नागपुर मे मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से जो अभिनन्दन किया गया था, उसकी प्रेरणा आपने ही की थी और आपके ही सत्प्रयास से उस अवसर पर उन्हें एक भव्य अभिनन्दन-ग्रन्थ भी समर्पित किया गया था।

आपका निधन 24 जुलाई सन् 1967 को नागपुर मे हुआ था।

श्री प्रवीण गुप्त

आपका जन्म सन् 1910 में उत्तर प्रदेश के कानपुर नगर मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा केवल इण्टरमीजिएट तक ही हो सकी थी। बाद मे



आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'विशारद' परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली थी। जीवन-संघर्ष मे पडकर आप अपने पारिवारिक दायित्वो का निर्वाह करते हुए काव्य-साधना मे भी सलग्न थे। सुकवि श्री गया-प्रसाद शुक्ल 'सनेही' के सम्पर्क मे आकर आपकी काव्य-प्रतिभा बहुत विकसित हुई थी।

आपकी रचना-चातुरी का परिचय आपकी इस रचना के द्वारा सहज ही हो जाता है

नाचत मयूरी सारिकाहू अभिसारिका-सी,
बनी-ठनी आनन्द-विभोर हुई जाती है।
कोकिल-कुमारी विरुदावली सुनाती भव्य,
भौरन की भीड खड़ी, तुरही बजाती है॥
काँधे पर दिग्पाल पालकी उठाए मजु,
शीस पै समीर चारु चँवर डुलाती है।
सुकवि 'प्रवीण' कर काम की कमान लिये,
देखो ऋतुराज की सवारी चली आती है॥

थोडे से जीवन मे आपने अनेकविध रचनाएँ की थीं। आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'पुष्पाजलि', 'आह्वान' और 'मगल कलश' प्रमुख रूप मे उल्लेख्य है। आपका वास्तविक नाम 'मदनमोहन गुप्त' था।

कानपुर के सनेही कवि-मण्डल के जिन कवियों ने अपनी काव्य-प्रतिभा से तत्कालीन वातावरण को प्रभावित किया था उनमे प्रवीण जी का स्थान सर्वथा विशिष्ट था।

आपका निधन 1 अगस्त सन् 1967 को हुआ था।

श्री प्रहलाद पाण्डेय 'शशि'

श्री 'शशि' का जन्म मध्यप्रदेश के इन्दौर जनपद के खातेगाँव नामक स्थान मे 10 जनवरी सन् 1915 को हुआ था। आपके मन मे प्रारम्भ से ही ब्रिटिश नौकरशाही के प्रति विद्रोह की भावनाएँ समाई हुई थी। शासकीय विद्यालय मे शिक्षक के रूप मे कार्य करते हुए भी आप अपने छात्रों तथा जनता मे राष्ट्रीयता की भावनाएँ भरते रहते थे। अपनी इन्ही विद्रोही भावनाओ के कारण आपको सन् 1931 मे शासन का कोप-भाजन बनना पड़ा था। परिणामत. आपने नौकरी छोड दी और कुछ दिन वर्धा के अनाथालय मे मैनेजर रहे। जब वहाँ भी आपकी नही पटी तब आपने उज्जैन मे जाकर 'युग प्रवर्तक प्रकाशन' की स्थापना करके उसकी ओर से 'राष्ट्रीय भाव-धारा का साहित्य' प्रकाशित करने का उपक्रम किया।

इसके उपरान्त आपने बेतूल को अपना स्थायी निवास बनाया और वहाँ रहते हुए आपने सर्वप्रथम एक प्रेस की स्थापना की तथा बाद मे 'नया जमाना' (1953-54) तथा 'बैतूल समाचार' (1957) नामक पत्रो का सम्पादन एव प्रकाशन किया। तत्पश्चात् आपने सन् 1960-1961 मे 'सतपुडा युगवाणी' और सन् 1967-68 मे क्रमश 'सतपुड़ा सन्देश' तथा 'बैतूल मित्र' आदि पत्रो का सम्पादन किया था। इन सभी पत्रो के माध्यम मे आप



राष्ट्रीयता की भावनाओ का प्रचार करते रहे थे। थोडे दिन के लिए आपने जीविकोपार्जन की दृष्टि से 'जबलपुर समाचार' और दैनिक 'देशबन्धु' के संवाददाता का कार्य भी किया था।

आप जहाँ जागरूक एव प्रबुद्ध पत्रकार थे वहाँ आप राष्ट्रीय भावधारा से परिपूर्ण कविताएँ लिखने में भी पूर्णत: दक्ष थे। प्रारम्भ में सन् 1942-43 मे ही आपकी 'विद्रोहिणी'

तथा 'तूफान' नामक कृतियो के प्रकाशन के द्वारा आपने अच्छी ख्याति अर्जित कर ली थी। यहाँ तक कि ब्रिटिश नौकरशाही को आपकी इन दोनों कृतियों में विद्रोह की झलक दिखाई दी और उसने इनको जब्त घोषित करके आपकी गिरफ्तारी के वारण्ट जारी कर दिए थे। आप भूमिगत हो गए और काफी दिन तक गिरफ्तारी से बचे रहे थे। आपकी काव्य-प्रतिभा का सहज अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि आप जब केवल 19 वर्ष के ही थे तब एक 'कवि सम्मेलन' मे श्री माखनलाल चतुर्वेदी ने आपको श्रेष्ठ कवि घोषित करके एक 'रजत पदक' प्रदान किया था।

इसके उपरान्त आपकी 'नौ अगस्त', 'ताजमहल होटल मे रगरेलियाँ', 'रायबहादुर', 'कमल का सौदा', 'पाखण्ड भवन', 'खतरे की घण्टी' और 'सेठो के षड्यन्त्र' नामक कृतियो मे भी आपकी विद्रोही प्रवृत्ति का हिन्दी जगत् को अच्छा परिचय मिला था। इन सब रचनाओ का प्रकाशन आपके द्वारा उज्जैन मे सस्थापित 'युग प्रवर्तक प्रकाशन' की ओर से हुआ था। आपकी 'सघर्ष और सृजन', 'लौह-खण्ड','पिनाकी' तथा 'सजल घन' आदि कृतियाँ अभी अप्रकाशित ही है। आपका 'मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद्', 'जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन बैतूल' तथा 'सारग साहित्य समिति बैतूल' की ओर से अभिनन्दन भी किया गया था।

आपका निधन 8 सितम्बर सन् 1976 को हुआ था।

श्री प्रागदास तिवारी

श्री तिवारी का जन्म मध्य प्रदेश की रीवाँ रियासत मे सन् 1858 मे हुआ था। आप मूलत भक्ति-प्रधान भावना के कवि थे। आपकी रचनाओ मे राम के प्रति अनन्य अनुराग दृष्टिगत होता है। एक उदाहरण देखे

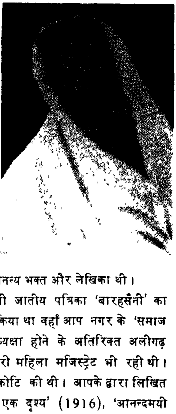
हरि मे ऐसा नेह लगावै।
जैसी प्रीति चकोर करत है,
शशि विहीन दुख पावै।
जैसी रटन पपीहा की है,
स्वाति-बूंद को ध्यावै।
'प्रागदास' कहु प्रीति मीन की,
बिनु जल प्रान गँवावै।

आपकी भक्ति-सम्बन्धी रचनाओं मे 'सीता-स्वयंवर', 'राम भजन दीपिका' एव 'भजन दीपिका' प्रमुख हैं। इनमे से 'सीता स्वयवर' नामक कृति में आपने रामचन्द्र जी के जन्म से लेकर विवाह तक का वर्णन अत्यन्त ही मनोरम शैली मे किया है।

आपका देहान्त सन् 1933 मे हुआ था।

श्रीमती प्रियंवदा गुप्ता

श्रीमती प्रियवदा गुप्ता का जन्म उत्तर प्रदेश के शाहजहाँपुर जनपद के तिलहर नामक कस्बे मे सन् 1896 मे हुआ था। आप हिन्दी के प्रख्यात लेखक और प्रकाशक मुन्शी चिम्मनलाल वैश्य की सुपुत्री थीं। विवाहोपरान्त आप अलीगढ आ गई थी। आपके पति श्री विश्वम्भरसहाय एडवोकेट अलीगढ मे वकालत करते थे। अपने पिता के सस्कारो के अनुरूप आप भी आर्यसमाज के सस्थापक महर्षि



दयानन्द सरस्वती की अनन्य भक्त और लेखिका थी।

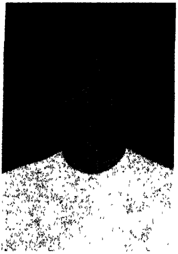
आपने जहाँ अपनी जातीय पत्रिका 'बारहसैनी' का सम्पादन कई वर्ष तक किया था वहाँ आप नगर के 'समाज कल्याण बोर्ड' की अध्यक्षा होने के अतिरिक्त अलीगढ़ जनपद की प्रथम आनरेरी महिला मजिस्ट्रेट भी रही थी। आप लेखिका भी उच्चकोटि की थी। आपके द्वारा लिखित 'कलयुगी परिवार का एक दृश्य' (1916), 'आनन्दमयी रात्रि का स्वप्न' (1917) तथा 'धर्मात्मा चाची और अभागा भतीजा' (1918) नामक उपन्यासो के अतिरिक्त 'हमारी दशा' नामक पुस्तके प्रकाशित हो चुकी है। आपकी सुपुत्री

श्रीमती उर्मिला वार्ष्णेय, हिन्दी के प्रख्यात पत्रकार श्री शरदेन्दु (दैनिक 'हिन्दुस्तान') की सहधर्मिणी और हिन्दी की अच्छी लेखिका है।

आपका निधन सन् 1972 मे हुआ था।

श्री प्रियबन्धु शर्मा

श्री शर्मा जी का जन्म बिहार प्रदेश के एक ग्राम मे 5 मई सन् 1906 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने ग्राम मे हुई थी और



आप बाद मे उच्च शिक्षा के लिए सन् 1917 मे गुरुकुल काँगडी मे प्रविष्ट हुए थे। सन् 1927 मे वहा की 'विद्याधिकारी' परीक्षा देकर आप 'दिल्ली क्लाथ मिल' मे आकर कार्य-रत हो गए थे। 4 जून सन् 1935 को आप दिल्ली को छोडकर हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश) चले गए और वहाँ पर स्वतन्त्र व्यवसाय करने लगे थे। आप गुरुकुल काँगडी के स्नातक श्री देशबन्धु विद्यालकार के कनिष्ठ भ्राता थे।

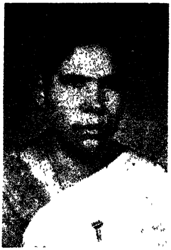
हैदराबाद मे रहते हुए आपने सन् 1942 से वहाँ की 'हिन्दी प्रचार सभा' के कार्यो मे सहयोग देना प्रारम्भ किया था और आप उसके सहायक मन्त्री एव कार्यालयाध्यक्ष भी रहे थे। सभा मे कार्य करते हुए आपने हैदराबाद के 'हार्डीकर बाग' मे हिन्दी की एक 'रात्रि-पाठशाला' भी खोली थी और इसके माध्यम से अनेक लोगो को हिन्दी पढाने का प्रशसनीय कार्य किया था। आप अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक हिन्दी-प्रचार मे ही लगे रहे थे।

आपका निधन सन् 1967 मे हुआ था।

श्रीमती प्रेमकुमारी शर्मा

आपका जन्म 20 जनवरी सन् 1930 को आगरा के बसई ताजगज नामक उपनगर मे हुआ था। आप हिन्दी के वयोवृद्ध पत्रकार और कवि श्री देवीप्रसाद शर्मा 'दिव्य' की सुपुत्री और आगरा के प्रख्यात जन-सेवक, पत्रकार और शिक्षाविद् श्री फूलसिंह शर्मा 'नीरव' की सहधर्मिणी थी। अपने सस्कारी पिता और स्वाध्यायी पति के सहयोग से आपने जहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की 'साहित्य रत्न' और 'आयुर्वेद रत्न' परीक्षाएँ योग्यतापूर्वक उत्तीर्ण की थी वहाँ आगरा विश्वविद्यालय से हिन्दी तथा इतिहास विषयो मे एम० ए० भी किया था।

आप व्रज प्रदेश की प्रथम महिला पत्रकार थी। आपने जहाँ कई वर्ष तक प्रख्यात हिन्दी मासिक 'युवक' का सम्पादन किया था वहाँ आप 'सूर वाणी' की सम्पादिका भी रही थी। इनके अतिरिक्त आप दैनिक 'भारत', 'अमृत पत्रिका' 'अमृत बाजार पत्रिका' (प्रयाग), 'नव प्रभात' (ग्वालियर-भोपाल), 'वीर अर्जुन' (दिल्ली), 'लोकवाणी' और 'राष्ट्रदूत' (जयपुर) तथा 'प्रताप' व 'वर्तमान' (कानपुर)



आदि पत्रो की मण्डलीय सवाद-प्रेषिका भी थी। आपकी 'नारी और रसोई' तथा 'गृह-शास्त्र दर्शन' नामक पुस्तके प्रकाशित हो चुकी थी। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा गृह-शास्त्र, इतिहास, समाजशास्त्र तथा व्रज की लोक-संस्कृति पर लिखित अनेक लेख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए थे।

आप जहाँ उच्चकोटि की पत्रकार तथा लेखिका थी वहाँ आप अनेक शिक्षा-सस्थाओं से भी सम्बद्ध थी। आपने जहाँ कई वर्ष तक राजकीय ग्राम-सेविका प्रशिक्षण केन्द्र बिचपुरी (आगरा) मे मुख्य शिक्षिका का कार्य किया था

वहाँ नागरी प्रचारिणी सभा आगरा की ओर से संचालित उसके 'महिला विद्यालय' की आप प्रथम आचार्या रही थी। आपने 'राष्ट्रीय महिला विद्या मन्दिर आगरा' की संस्थापना करने के अतिरिक्त 'गोवर्धन शिक्षा संघ मथुरा' तथा 'सन्त रविदास शिक्षा संघ' आगरा के संचालन मे भी अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया था। विभिन्न शैक्षणिक प्रवृत्तियो मे सक्रिय रूप से सलग्न रहने के साथ-साथ आप अनेक सास्कृतिक एव समाज-सेवी सस्थाओ से भी जुडी हुई थी। ऐसी जिन सस्थाओ से आपका अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध था उनमे अखिल भारतीय सास्कृतिक सस्थान 'लोक भारती' (आगरा, मथुरा, अजमेर) का नाम महत्त्वपूर्ण है। आप जहाँ ब्रज-लोकगीतो और वाद्य-यन्त्रो के गायन एवं वादन मे निष्णात थी वहाँ आपने नगर मे अनेक 'महिला कवि सम्मेलन', 'लोकगीत-सम्मेलन' तथा 'लोक-नृत्य-समारोह' आयोजित करके अपनी अपूर्व सगठन-क्षमता का परिचय दिया था।

आपका निधन 20 जनवरी सन् 1975 को हुआ था।

डॉ० प्रेमचन्द्र महेश

आपका जन्म 22 मई सन् 1926 को उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद जनपद (पहले मेरठ) के हापुड नामक प्रख्यात नगर मे हुआ था। आप अपनी छात्रावस्था से ही साहित्य-सेवा मे लगे रहे थे। आगरा विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) करने के उपरान्त आपने पहले-पहल हापुड नगर के 'सरस्वती विद्यालय इण्टर कालेज' में अध्यापन प्रारम्भ किया था और बाद मे आप कई वर्ष तक राजस्थान के शिक्षा विभाग मे अध्यापन-रत रहे थे। अपने निधन से पूर्व आप 'दिल्ली-प्रशासन' के शिक्षा विभाग मे वरिष्ठ हिन्दी अध्यापक का कार्य कर रहे थे।



आपकी प्रवृत्ति अपने छात्र-जीवन से ही लेखन की ओर थी और हापुड मे रहते हुए आपने वहाँ की 'हिन्दी साहित्य समिति' की विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियो मे भाग लेकर उसे पूर्णत. परिपुष्ट कर लिया था। यह आपको ही सौभाग्य प्राप्त था कि आपकी पहली ही कृति 'हर्षवर्धन' (बालोपयोगी उपन्यास) भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय द्वारा पुरस्कृत हुई थी। आपने जहाँ हापुड मे रहते हुए कई हस्तलिखित पत्रिकाओ का सम्पादन किया था वहाँ अनेक कवि-गोष्ठियो और सास्कृतिक समारोहो के आयोजनो मे भी अत्यन्त उल्लेखनीय सहयोग दिया था। आप उत्कृष्ट कवि और गद्य-लेखक थे। 'हर्षवर्धन' के उपरान्त आपकी 'सम्राट् अशोक', 'आचार्य चाणक्य और चन्द्रगुप्त', 'कबीर', 'नर्मदा के तट पर' और 'साहित्य सगम' आदि कई कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी थी।

आपने अपने निधन से पूर्व मेरठ विश्वविद्यालय मे पी-एच० डी० उपाधि के निमित्त 'आधुनिक हिन्दी राम-काव्य का विकास' विषय पर अपना शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किया था। आपके जीवन की यह कितनी बडी त्रासदी है कि आपके इस निबन्ध पर डाक्टरेट की उपाधि मरणोपरान्त घोषित हुई थी।

आपका निधन 2 जून सन् 1978 को अपनी ससुराल अमरोहा (मुरादाबाद) मे हुआ था।

श्री प्रेमनाथ दर

श्री दर का जन्म श्रीनगर (कश्मीर) मे 26 जुलाई सन् 1914 को हुआ था। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आप कुछ समय तक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'स्टेट्समैन' के सम्पादकीय विभागो से सम्बद्ध रहकर बाद मे केन्द्रीय सरकार की सेवा मे आ गए थे और अनेक वर्ष तक उसके सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय के अधीन विभिन्न विभागो मे अनेक उत्तरदायित्वपूर्ण पदो पर सेवा-रत रहे थे। आकाशवाणी के कई केन्द्रों पर भी आपने निदेशक के रूप मे कार्य किया था।

आप जहाँ अंग्रेजी के पत्रकार रहे थे वहाँ उर्दू तथा हिन्दी मे आप कहानी-लेखक के रूप में भी पर्याप्त लोकप्रिय थे।



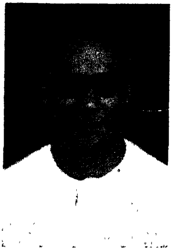
आपकी हिन्दी-कहानियाँ राजधानी के साहित्यकारो की प्रमुख सस्था 'शनिवार समाज' की अनेक गोष्ठियो मे चर्चित एव प्रशसित हुई थी। आपकी कहानियो के सग्रह 'नीली आँखे' और 'कागज का वासुदेव' नाम से प्रकाशित हुए थे। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखे गए नाटक भी 'घर की बात' तथा 'जुई गवर' नाम से पुस्तकाकार छप चुके है। कश्मीर राज्य के 'स्वतन्त्रता-सग्राम' मे भी आपने सक्रिय रूप से भाग लिया था।

आपका निधन 6 सितम्बर सन् 1976 को नई दिल्ली मे हुआ था।

डॉ० प्रेमनारायण टण्डन

आपका जन्म 13 जनवरी सन् 1915 को कानपुर (उत्तर प्रदेश) के चौक मोहल्ले मे अपने ताऊ बाबू ब्रजबिहारीलाल टण्डन के मकान मे हुआ था। आप अपने पिता बाबू हरनारायण टण्डन की पहली सन्तान थे। आपके पारिवारिक जन लखनऊ के चौक क्षेत्र के रानी कटरा मोहल्ले मे रहते थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा लखनऊ मे हुई थी। वहाँ के 'कालीचरण हाईस्कूल' से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने 'कान्यकुब्ज इण्टर कालेज' से इण्टर किया था। 'कालीचरण हाईस्कूल' मे आपको जहाँ स्कूल के हेड-मास्टर श्री कालिदास कपूर से साहित्य-क्षेत्र मे आगे बढ़ने की प्रेरणा मिली थी वहाँ कान्यकुब्ज कालेज मे आपको श्री छंगालाल मालवीय का सौजन्यपूर्ण सहयोग सुलभ हो गया था। इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त ही आप सन् 1935 मे 35 रुपये मासिक वेतन पर 'कालीचरण हाईस्कूल' मे हिन्दी-अध्यापक हो गए थे। वहाँ पर रहते हुए आपने अपनी सबसे पहली पुस्तक 'प्रताप समीक्षा' (1939) मे लिखी थी। इसका प्रकाशन 'साहित्य रत्न भण्डार आगरा' से हुआ था। आपकी इस पहली पुस्तक का हिन्दी-जगत् मे पर्याप्त स्वागत हुआ था। इससे आपको भावी साहित्यिक जीवन मे सफलता प्राप्त करने की प्रचुर प्रेरणा प्राप्त हुई थी।

जिन दिनों आप छात्र थे तब से ही आप अपनी जातीय पत्रिका 'खत्री हितैषी' का सम्पादन भी करने लगे थे और निरन्तर 6 वर्ष तक आपने उसका अत्यन्त सफल सम्पादन किया था। लेखन और सम्पादन के प्रति आपकी रुचि तब और अधिक परिष्कृत हुई जब आपने श्री कालिदास कपूर-जैसे साहित्यकार के निरीक्षण मे अपना अध्यापकीय जीवन प्रारम्भ किया था। आप बहुमुखी प्रतिभा-सम्पन्न साहित्यकार थे। एक ओर आपने जहाँ कविता, कहानी, रेखा-



चित्र, एकाकी, नाटक, निबन्ध और समीक्षा, सम्पादन, अनुसन्धान और शिक्षा-सम्बन्धी अनेक पुस्तके लिखी थी वहाँ बाल साहित्य के निर्माण मे भी अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। एक कुशल अध्यापक के रूप मे आपने जहाँ विभिन्न छात्रोपयोगी कृतियों के निर्माण मे पर्याप्त रुचि प्रदर्शित की वहाँ अनेक पत्र-पत्रिकाओ का सम्पादन भी आप पूर्ण तत्परता से करते रहे थे। पहले आप अपने नाम के साथ 'प्रेमी' उपनाम भी जोड़ा करते थे, किन्तु बाद मे उसे हटा दिया था। आपने 'रसवन्ती'-जैसी समीक्षात्मक एवं साहित्यिक पत्रिका का सम्पादन करने के अतिरिक्त 'होनहार'

जैसे बालोपयोगी पत्र का सम्पादन भी अनेक वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। शिक्षा-सम्बन्धी पत्रिका 'भारतीय शिक्षा' के भी आप कई वर्ष तक सहायक सम्पादक रहे थे। अपने इस सम्पादन-काल में आपको अनेक छद्म नामों से भी प्रच्छन्न लेखन करना पड़ा था। जिन अनेक नामों से आपने प्रचुर साहित्य का निर्माण किया था उनमें 'रसिकबिहारीलाल' तथा 'बालबन्धु' नाम भी उल्लेख्य हैं।

आपके द्वारा मौलिक रूप से लिखित एवं सम्पादित कृतियों की संख्या 100 से ऊपर है। आपने इतने विविध और प्रचुर साहित्य की रचना की थी कि उसे देखकर आश्चर्यचकित हो जाना पड़ता है। विषय-क्रम और काल-क्रम से आपकी प्रमुख कृतियों की सूची इस प्रकार है—**समीक्षा :** 'प्रताप समीक्षा' (1938), 'द्विवेदी मीमांसा' (1939), 'हमारे गद्य-निर्माता' (1941), 'हिन्दी साहित्य के निर्माता' (1943), 'हिन्दी साहित्य का छात्रोपयोगी इतिहास' (1944), 'बीसवीं शताब्दी में पूर्व हिन्दी गद्य का विकास' (1948), 'हिन्दी साहित्य कुछ विचार' (1956), 'सूर की भाषा', पी-एच० डी० का शोध प्रबन्ध (1957), 'सूर साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन' (1958), 'भाषा-अध्ययन के आधार' (1958), 'सूरसारावली एक अप्रामाणिक रचना (1960), 'ब्रजभाषा व्याकरण की रूपरेखा' (1962), **एकांकी तथा नाटक :** 'प्रेरणा' (1945), 'संकल्प' (1946), 'कर्मपथ' (1948), 'दिवा स्वप्न' (1956), 'अजातशत्रु' (1958), 'कृष्ण-जन्म' (1962), 'निराला एक झलक' (1962), 'नेहरू · एक झलक' (1966), 'माखनलाल चतुर्वेदी एक झलक' (1966); **गद्यकाव्य और काव्य :** 'हीरे की बात' (1960), 'सप्त स्वर' (1961), 'साधना पथ' (1961), 'रत्ना की बात' (1961), 'नवलिका मंजरी' (1961); **विविध :** 'हास्य विनोद' (1945), 'हमारे अमर नायक' (1945), 'तुलसी के राम' (1946), **सम्पादित :** 'साकेत समीक्षा' (1942), 'पुण्य स्मृतियाँ' (1942), 'साहित्यिकों के संस्मरण' (1942), 'प्रेमचन्द . कृतियाँ और कला' (1942), 'हिन्दी-सेवी संसार' (1943-1951 तथा दो खण्डों में 1963), 'गोपी विरह, भँवर गीत', सूर-कृत (1944), 'भँवर गीत' नन्ददास (1945), 'सुदामाचरित' (1945), 'कामायनी मीमांसा' (1945), 'पद्मावती समय, रासो' (1946), 'रहस्यवाद · हिन्दी-कविता' (1946), 'साहित्यिक पारिभाषिक शब्दावली' (1948), 'सूर रामायण' (1950), 'संक्षिप्त सूर सागर' (1957), 'पाण्डेय स्मृति ग्रन्थ' (1959), 'सूर विनय पदावली' (1960), 'प्राचीन हिन्दी कवियों की काव्य-कला' (1960), 'रास पंचाध्यायी नन्ददास' (1961), 'अनूप शर्मा कृतियाँ और कला' (1961), 'आधुनिक हिन्दी कवियों की काव्य-कला' (1961), 'महाकवि निराला व्यक्तित्व एवं कृतित्व' (1962), 'माखनलाल चतुर्वेदी व्यक्तित्व कृतित्व' (1966) आदि।

इन कृतियों की सूची को देखने से आपकी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय मिल जाता है। आप घनघोर परिश्रमी और अध्ययनशील थे, यह सूची ही इसका पर्याप्त प्रमाण है। सन् 1939 में आपने बी० ए० की परीक्षा शिक्षक रहते हुए दी थी और इसके उपरान्त आगरा विश्वविद्यालय से आपने सन् 1941 में एम०ए० (हिन्दी) किया था। तदुपरान्त सन् 1952 में आप लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग में प्राध्यापक हो गए थे। इसके उपरान्त तो आपका दायित्व और भी अधिक बढ़ गया था। इतने बहुविध लेखन में आपने जो सबसे बड़ा उपयोगी कार्य किया वह था 'हिन्दी-सेवी संसार' नामक परिचय-ग्रन्थ के सम्पादन का था। लोग भले ही इस कार्य को नगण्य समझते हों, लेकिन सन्दर्भमूलक सामग्री प्रस्तुत करने वाले ग्रन्थों में आपकी इस कृति का बहुत महत्त्व है। विश्वविद्यालय में अध्यापन-कार्य करने के लिए पी-एच० डी० उपाधि भी प्राप्त करनी अनिवार्य थी। इसलिए आपने अत्यन्त तत्परता और निष्ठा से उस कार्य को भी सम्पन्न करके सन् 1956 में पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त कर ली थी। इसमें आपको कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, इसे वे ही जानते थे। पहले आपको 'प्रेमचन्द उनकी कृतियाँ और कला' विषय शोध के लिए दिया गया था। जब शोध-प्रबन्ध तैयार हो गया और उसे टंकण में देने की व्यवस्था की जा रही थी तब आपके निदेशक और विश्वविद्यालय के तत्कालीन हिन्दी-विभागाध्यक्ष डॉ० दीनदयालु गुप्त ने आपको बुलाकर बड़े ही उदासी भरे स्वर में अत्यन्त खिन्नता के साथ यह कहा—"टण्डन, तुम्हारी सारी मेहनत बेकार हो गई। कल एक सज्जन ने इसी विषय पर उर्दू में अपना शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत कर दिया। मुझे उनके विषय में पता न था। मुझे बहुत दुःख है। एक ही विषय पर

दो शोध-प्रबन्ध एक ही विश्वविद्यालय से स्वीकृत नही हो सकते। अतः नियमतः आपका विषय कैन्सिल हो गया।" आपको इससे बहुत गहरा आघात पहुँचा, परन्तु आपने हार न मानी और थोड़े ही समय मे 'बीसवी शताब्दी के पूर्व हिन्दी गद्य का विकास' विषय पर शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की। इससे आपकी कार्य-तत्परता, अध्यवसायिता और कर्मठता का परिचय मिलता है। और कोई व्यक्ति होता तो हिम्मत हार जाता और तीन जन्म मे भी 'डॉक्टर' न बन पाता।

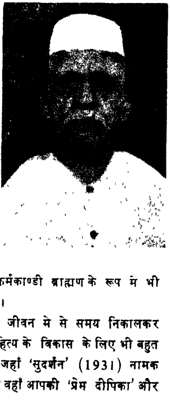
यह आपकी योजना-पटुता का ही उज्ज्वल प्रमाण है कि इतने व्यस्त जीवन मे भी आपने 'विद्या मन्दिर'-जैसी संस्था की स्थापना करके इसके माध्यम से प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया था और उसे अपने छोटे भाई श्री तेजनारायण टण्डन को सौंपकर पूर्णत. निश्चिन्त हो गए थे। आपकी कई पुस्तके उत्तर प्रदेश सरकार के द्वारा पुरस्कृत भी हुई थी। यहाँ इस सम्बन्ध मे हुई एक घटना का उल्लेख कर देना अप्रासगिक न होगा। इससे आपकी ईमानदारी और आदर्शवादिता का परिचय मिलता है। एक बार आपकी 'सूर साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन' पुस्तक पर जब उत्तर प्रदेश सरकार का पुरस्कार घोषित हुआ तो आपने पुस्तक के प्रकाशक अपने छोटे भाई को बुलाकर स्पष्ट रूप से यह कहा—"तेज, तुमने वह पुस्तक बिना मुझे बताए पुरस्कार के लिए भेजकर अच्छा नही किया। तुम जानते हो कि पिछले वर्ष 'सूर की भाषा' नामक मेरे ग्रन्थ पर पुरस्कार मिल चुका है और मेरी यह पुस्तक उसी ग्रन्थ का एक भाग है। अत मेरा दिल गवाही नही देता कि जिस पुस्तक पर पुरस्कार मिल चुका है उसी पर दूसरे नाम से पुस्तक भेजकर दुबारा उसी सरकार से पुरस्कार मिल जाये।···मै इसे पसन्द नही करता।" उन्होने पुरस्कार-समिति को स्पष्ट रूप से यह लिख दिया—"प्रकाशक की भूल से मेरी यह पुस्तक पुरस्कार के लिए भेज दी गई थी। उसे मैं वापिस लेता हूँ। क्योकि मूल ग्रन्थ पर पिछले वर्ष पुरस्कार मिल चुका है अत. मेरी आत्मा गवाही नही देती कि इस पुस्तक पर मै दुबारा पुरस्कार लूँ।" फलस्वरूप पुस्तक वापिस ले ली गई। परन्तु आपकी इस भावना को किसी ने भी नही सराहा।

'रसवन्ती' के प्रकाशन के समय आपके मन मे ऐसी पत्रिका के सम्पादन का जो उत्साह था वह अन्त समय तक बना रहा और निरन्तर घाटा उठाकर भी आप निरन्तर 15-16 वर्ष तक उसका प्रकाशन करते रहे। आप प्रतिमास 400 रुपये अपने पास से उसमें दिया करते थे। आपका कहना था—"क्या हुआ जो मुझे 400 रुपये प्रतिमास अपनी जेब से इसमें लगाने पड़ते है। लोग अपने शौक के लिए जुआ खेलते है, रेस मे जाते है, और भी न जाने क्या-क्या वाहियात शौक करते है, मेरा यही शौक सही। मुझे यूनिवर्सिटी से रिटायर होकर छुट्टियाँ लेने दो, तब देखना कि यह 'रसवन्ती' क्या नही कर दिखायगी।"

आपका निधन 20 अप्रैल सन् 1973 को हुआ था।

श्री प्रेमनिधि शर्मा वैद्य

आपका जन्म सन् 1886 मे उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर जन-पद के कल्यावली नामक ग्राम मे हुआ था। आप जब केवल 3 मास के ही थे कि आपके पिताजी का निधन हो गया था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने ग्राम के विद्यालय मे ही हुई थी और आपने कई स्थानो पर रहकर सस्कृत तथा आयुर्वेद शास्त्र का सर्वांगीण अध्ययन किया था। आप जहाँ कुशल चिकित्सक के रूप मे अपने क्षेत्र मे सम्मा-



नित हुए थे वहाँ एक कर्मकाण्डी ब्राह्मण के रूप मे भी आपकी बडी मान्यता थी।

आपने अपने व्यस्त जीवन मे से समय निकालकर सस्कृत तथा हिन्दी साहित्य के विकास के लिए भी बहुत कार्य किया था। आपने जहाँ 'सुदर्शन' (1931) नामक पुस्तक की रचना की थी वहाँ आपकी 'प्रेम दीपिका' और

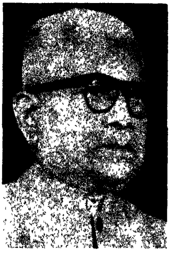
'आत्मबोध' नामक कृतियाँ भी आपके निधन के उपरान्त प्रकाशित हुई थीं।

कुशल चिकित्सक के रूप में भी आपने जहाँ हिमाचल प्रदेश के गढ़वाल नामक स्थान के 'सेनिटोरियम' में कार्य किया था वहाँ आप खण्डवा (मध्यप्रदेश) की 'मैडिकल आयुर्वेद डिस्पेंसरी' के भी अध्यक्ष रहे थे।

आपका निधन सन् 1960 में हुआ था।

श्री प्यारेलाल गुप्त

आपका जन्म मध्यप्रदेश के बिलासपुर जनपद के रतनपुर नामक स्थान में 17 अगस्त सन् 1891 को हुआ था। आपको साहित्यिक क्षेत्र में कार्य करने की प्रेरणा प्रख्यात साहित्यकार श्री जगन्नाथप्रसाद 'भानु' से प्राप्त हुई थी। आपने छत्तीसगढ़ अंचल की साहित्यिक उन्नति में अत्यन्त अभिनन्दनीय योगदान किया था। आपकी प्रतिभा बहुमुखी थी। आपने जहाँ कुशल कवि के रूप में अपनी प्रतिभा का परिचय वहाँ की



जनता को दिया था वहाँ गद्य-लेखन में भी आप अत्यन्त दक्ष थे। आप हिन्दी के अध्ययनशील साहित्यकार होने के साथ-साथ छत्तीसगढ़ी भाषा के भी उत्कृष्ट साहित्य-कर्मी थे। प्रारम्भ में आप केवल गद्य ही लिखा करते थे परन्तु अपने जीवन के उत्तरार्ध में आपने कविता के क्षेत्र में पदार्पण करके अपनी अद्भुत प्रतिभा का परिचय दिया था। आप अनेक वर्ष तक 'बिलासपुर सहकारी बैंक' के मैनेजर रहे थे।

आपने छत्तीसगढ़ में अनेक संस्थाओं की स्थापना और संवर्धन में उल्लेखनीय सहयोग दिया था। आप जहाँ 'महाकोसल इतिहास समिति बिलासपुर' के उपसचिव रहे थे वहाँ आपने 'छत्तीसगढ़ सम्भागीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के भिलाई अधिवेशन की अध्यक्षता भी की थी। आप हिन्दी के उत्कृष्ट साहित्यकार होने के साथ-साथ छत्तीसगढ़ी भाषा के कृतिकार के रूप में भी प्रतिष्ठित थे। आपकी छत्तीसगढ़ी कविताओं में

हमर कतका सुन्दर गाँव
जइसे लक्ष्मीजी के पाँव

जैसी गौरवमयी पंक्तियों से समन्वित ग्राम-सम्बन्धी रचना उस प्रदेश में बहुत लोकप्रिय है। आप पुरातत्त्व तथा ऐतिहासिक विषयों के अवगाहन में भी बहुत रुचि रखते थे।

छत्तीसगढ़ क्षेत्र के पुराने साहित्यकारों और नई पीढ़ी के बीच आप अद्भुत सेतु का कार्य किया करते थे। आपकी प्रमुख कृतियों में 'फ्रांस की राज्य-क्रान्ति', 'बिलासपुर वैभव', 'विष्णु महायज्ञ (रतनपुर) स्मारक ग्रन्थ', 'सहकारी साख सभा हिसाब-किताब शिक्षक', 'सुखी कुटुम्ब', 'प्राचीन छत्तीसगढ़', 'ग्रीस का इतिहास', 'लवंगलता', 'पुष्पहार', 'रतीराम का भाग्य-सुधार' तथा 'एक दिन का नाटक' के नाम स्मरणीय हैं। आपने हिन्दी के प्रख्यात कवि श्री लोचनप्रसाद पाण्डेय के निधन के उपरान्त उनके सम्बन्ध में भी एक सुन्दर स्मृति-ग्रन्थ सम्पादित किया था। आप 'रविशंकर विश्वविद्यालय' की सीनेट के सदस्य होने के अतिरिक्त उस क्षेत्र की अनेक संस्थाओं से सम्बद्ध थे। 'मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन' ने आपका अपने राजनादगाँव अधिवेशन में अत्यन्त भावभीना अभिनन्दन किया था। सन् 1966 में 'भारतेन्दु साहित्य समिति बिलासपुर' ने भी आपका अभिनन्दन किया था।

आपका निधन 14 मार्च सन् 1976 को हुआ था।

श्री प्यारेलाल मिश्र बैरिस्टर

श्री मिश्रजी का जन्म सन् 1875 में नागपुर में हुआ था। आप जाति के सनाढ्य ब्राह्मण थे और आपकी शिक्षा नागपुर के ही 'हिस्लाप कालेज' में हुई थी। प्रख्यात पत्रकार पंडित

माधवराव सप्रे और सुप्रसिद्ध राजनेता पंडित रविशंकर शुक्ल आपके सहपाठियों मे से थे। प्रारम्भ में आपने मध्य-प्रदेश के सचिवालय में नौकरी की थी, किन्तु बाद में उससे त्यागपत्र दे दिया था। आप प्रारम्भ से ही हिन्दी-साहित्य की रचना में दिलचस्पी लेने लगे थे और आपके लेख उस समय की प्रमुख साहित्यिक पत्रिका 'सरस्वती' मे प्रकाशित होने लगे थे।

कदाचित् यह बात हमारे पाठकों मे से अधिकांश से अविदित ही होगी कि श्री मिश्र जी ने हिन्दी के प्रमुख पत्र 'भारत मित्र' (कलकत्ता) के सम्पादन मे भी अपना अनन्य सहयोग दिया था। इस पत्र के सम्पादन में हिन्दी के जिन महारथियों ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया था उनमे सर्व श्री छोटूलाल मिश्र, दुर्गाप्रसाद मिश्र, हरिमुकुन्द शास्त्री, जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, अमृतलाल चक्रवर्ती, राधाकृष्ण चतुर्वेदी, रामदास वर्मा, रुद्रदत्त शर्मा, बालमुकुन्द गुप्त, अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी और लक्ष्मणनारायण गर्दे आदि अनेक महानुभावों के नाम विशेष रूप से परिगणनीय है। बाद मे आपने पत्रकारिता को छोडकर नागपुर मे आकर वकालत प्रारम्भ कर दी थी। फिर नागपुर छोडकर छिन्दवाडा (म० प्र०) मे चले गए थे और वही पर प्रैक्टिस करने लगे थे।

जब 'मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की स्थापना हुई तो इसके प्रथम अधिवेशन की अध्यक्षता 30 मार्च सन् 1918 को श्री मिश्रजी ने ही की थी। आपकी हिन्दी-सेवाओं के सम्बन्ध मे प्रख्यात साहित्यकार श्री माधवराव सप्रे ने यह उपयुक्त ही लिखा था—"प्रदेश के हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रथम सभापति का आसन ग्रहण करने योग्य सज्जन मिश्र जी ही है। मेरी हिन्दी-सेवा का श्रेय उन्हीको है। उन्हीकी प्रेरणा से मैं हिन्दी ससार की सेवा कर सका हूँ। दूसरा कारण मिश्रजी की सार्वजनिक योग्यता है। उन्होंने हिन्दी की अच्छी सेवा की है। वे कलकत्ता मे कुछ वर्षों तक 'भारत मित्र' के गुप्त और प्रकट सम्पादक रहे हैं। अनेको स्वदेशी तथा विदेशी सभाओ में देश की स्थिति पर व्याख्यान देकर तथा हिन्दी परीक्षाओं के परीक्षक होकर भी इन्होंने देश और भाषा की उत्तम सेवा की है। इन्होंने लेख और पुस्तकें लिखकर हिन्दी को समर्थ बनाने का सूत्रपात किया है।"

मिश्रजी के लेख आदि 'सरस्वती' के अतिरिक्त 'मर्यादा' तथा 'प्रभा' आदि प्रमुख पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते थे। आपकी आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी से बहुत घनिष्ठता थी और आप विचारो से लोकमान्य तिलक के अनुयायी थे। 'होमरूल आन्दोलन' मे भी आपने बढ़-चढ़कर भाग लिया था। आप मध्यप्रदेश विधान सभा के सदस्य भी रहे थे। मध्यप्रदेश के न्यायालयों मे हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने मे आपने महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। आपके द्वारा हिन्दी मे अनूदित 'दत्तक विधान कानून' इसका ज्वलन्त प्रमाण है।

आपका निधन सन् 1928 में हुआ था।

श्री प्यारेलाल सन्तोषी

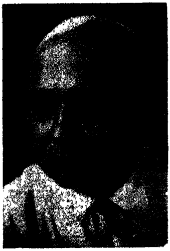
श्री 'सन्तोषी' जी का जन्म 7 अगस्त सन् 1916 को मध्य-प्रदेश के जबलपुर नगर मे हुआ था। आपकी प्राइमरी की शिक्षा अपने पिता श्री छोटेलाल श्रीवास्तव की देख-रेख मे हुई थी और आपकी माता का देहान्त बचपन मे ही हो गया था। आपने मैट्रिक की परीक्षा जबलपुर के 'हितकारिणी विद्यालय' से उत्तीर्ण की थी। जब आप मिडिल की कक्षा मे ही पढ रहे थे तब आपने कविता लिखनी प्रारम्भ कर दी थी। अपने विद्यालय के शिक्षक श्री पी० एल० तिवारी से आपको इस दिशा मे बहुत प्रोत्साहन मिला था। उन्ही दिनों हिन्दी के प्रख्यात कवि श्री केशवप्रसाद पाठक भी वहाँ शिक्षक रहे थे। उनसे भी आपने बहुत-कुछ सीखा था। आपको कालेज का जीवन रास नही आया था और थोडे दिन बाद आपने आगे की पढ़ाई बन्द कर दी थी।

उन्ही दिनो जबलपुर मे पण्डित द्वारकाप्रसाद मिश्र ने सेठ गोविन्ददास के साथ मिलकर 'आदर्श चित्र लिमिटेड' कम्पनी की स्थापना करके उसकी ओर से 'धुआँधार' नामक फिल्म बनानी प्रारम्भ की थी। आपने उस फिल्म के संवाद लिखने के अतिरिक्त 'दलित कुसुम' के भी सवाद लिखे थे। बाद में आपने सेठ भीखाभाई मगनलाल के 'विष वमन' नामक चित्र मे भी कुछ काम किया था। परन्तु जब आपका मन वहाँ नही लगा तो विवश होकर आप बम्बई चले गए। शुरू-शुरू मे आपको वहाँ बहुत सघर्ष करना पड़ा था।

परिणामस्वरूप आपने 2 रुपये प्रति गीत की दर से वहाँ की एक रिकार्ड-कम्पनी को अपने गीत भी बेचे थे।

सर्वप्रथम आपको 'सोहराब मोदी' ने अपनी फिल्म-कम्पनी में कार्य देने का श्रेय प्राप्त किया था, किन्तु वहाँ पर पारिश्रमिक इतना कम था कि एक मास तक काम करने के उपरान्त दूसरे मास मे आप वहाँ गए ही नही। कुछ दिन तक आपने जद्दनबाई की कम्पनी मे 'असिस्टेंट डाइरेक्टर' के रूप मे कार्य किया था। जब यह कम्पनी बन्द हो गई तब श्री ई० आरदेशर ईरानी ने आपको अपनी 'इम्पीरियल कम्पनी' मे रख लिया। जब वहाँ भी आपको सन्तुष्टि नही हुई तब श्री चन्दूलाल शाह ने आपको 'रणजीत फिल्म कम्पनी' मे गीतकार के रूप मे बुला लिया। आपने इस कम्पनी मे कई वर्ष तक कार्य किया था और कई फिल्मो मे गीत लिखे थे।

जब आपने सन् 1941-42 मे 'बम्बई टाकीज' मे कार्य करना प्रारम्भ किया था। तब आपकी प्रतिभा एक सर्वथा नये और आकर्षक रूप मे जनता के सामने प्रकट हुई थी। उन दिनो 'वसन्त' और 'पुर्नमिलन' नामक फिल्म मे आपके द्वारा लिखे गए गीत बहुत लोकप्रिय हुए थे। आपने जहाँ 'झूला' नामक फिल्म की कहानी लिखी थी वहाँ 'किस्मत' के सिनेरियो भी आपने बनाए थे। प्रभात फिल्म मे जाकर आपको 'डायरेक्टर' बनने का स्वर्ण अवसर मिला और आपने 'हम सब एक हैं' नामक फिल्म बनाई। 'साम्प्रदायिक एकता' के लिए इस फिल्म का एक विशेष महत्त्व है। सर्वप्रथम इस फिल्म मे ही आपने देवानन्द को पोस्ट आफिस की क्लर्की से पिण्ड छुड़ाकर नायक का गौरव प्रदान किया था। आपने जब 'फिल्मिस्तान' के लिए 'शहनाई' नामक दूसरी फिल्म बनाई थी तब आपने उसमे रेहाना और राज कपूर को प्रस्तुत किया था। इस फिल्म का सगीत श्री सी० रामचन्द्र ने तैयार किया था। 'शहनाई' के बाद आपने स्वय अपनी एक कम्पनी खोलकर उसकी ओर से 'खिडकी' नामक फिल्म बनाई थी। आपके :



दिल लूटने वाले जादूगर
अब मैंने तुझे पहचाना है।

खिडकी तले सीटी बजाना छोड दो।

किस्मत हमारे साथ है
जलने वाले जला करे
तथा
बाप बडा न भैया
सबसे बड़ा रुपैया।

जैसे अनेक गीत किसी समय बडे ही लोकप्रिय हुए थे। आपकी 'रगीली' और 'सरगम' फिल्म का भी अच्छा स्वागत हुआ था। आपकी फिल्म 'खिडकी' के

आना मेरी जान संडे के सडे

गीत के रिकार्ड बजाने पर तो उस समय पाबन्दी भी लगा दी गई थी। आपके द्वारा निर्देशित 'बरसात की रात' और 'दिल ही तो है' नामक फिल्मो को अत्यधिक सफलता मिली थी। आपने कुछ भोजपुरी फिल्मो के लिए भी गीत लिखे थे। आप फिल्म-क्षेत्र मे 'गुरुजी' के नाम से विख्यात थे और सुप्रसिद्ध निर्देशक सुबोध मुखर्जी तथा गुरुदत्त आपके सहायक रहे थे। अन्तिम दिनों मे आपने 'हम पछी एक डाल के' जैसी फिल्म बनाकर अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। इस फिल्म को भारत सरकार की ओर से पुरस्कृत भी किया गया था।

आपका निधन 7 सितम्बर सन् 1978 को हुआ था।

ठाकुर प्यारेलालसिंह

आपका जन्म 21 दिसम्बर सन् 1891 को मध्यप्रदेश के राजनादगाँव जनपद के दैहान नामक ग्राम के एक राजपूत परिवार मे हुआ था। सन् 1909 मे आपने मैट्रिक की

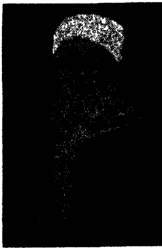
परीक्षा उत्तीर्ण की थी और सन् 1916 में आपने वकालत की परीक्षा दी थी। जब आप छात्रावस्था में ही थे कि आपका सम्पर्क बंगाल के क्रान्तिकारी युवकों से हो गया था। आपने अपना राजनीतिक जीवन क्रान्तिकारी साहित्य के प्रचार से प्रारम्भ किया था। अपने इस कार्य में सफलता प्राप्त करने की भावना से आपने सन् 1909 में राजनादगाँव में 'सरस्वती पुस्तकालय' की स्थापना की थी। इस पुस्तकालय के माध्यम से आप अपने सहयोगी अनेक युवकों के द्वारा राजनीतिक गतिविधियों को संचालित किया करते थे।

जब सन् 1920 में गांधीजी का असहयोग आन्दोलन छिड़ा तब आपने उसमें भी बढ़-चढ़कर भाग लिया था। आन्दोलन की समाप्ति पर आपने सन् 1924 में अपनी वकालत के कार्य को फिर से सँभाला और डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र-जैसे साहित्यकारों का सहयोग प्राप्त करके राजनादगाँव में 'राष्ट्रीय मन्दिर' नामक एक संस्था की स्थापना की। इस संस्था के द्वारा भी आप राष्ट्रीय आन्दोलन को गति देने का अभिनन्दनीय प्रयास करते रहते थे। इसके उपरान्त आपने श्रमिक आन्दोलनों में भी सक्रिय रूप से भाग लेना प्रारम्भ कर दिया था। उन दिनों देश का ऐसा कोई आन्दोलन नहीं था, जिसमें आपका क्रियात्मक योगदान न रहा हो।

जब सन् 1937 में देश के कई प्रान्तों में कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल गठित हुए थे तब आप उसमें शिक्षा-मन्त्री बनाए गए थे। किन्तु आप अपने स्वभाव के अनुरूप उसमें अधिक दिन नहीं रह सके थे। उसी वर्ष आपने 'छत्तीसगढ़ एजुकेशन सोसाइटी' की स्थापना करके छत्तीसगढ़ क्षेत्र में उच्च शिक्षा के लिए मार्ग प्रशस्त किया था। आपने जहाँ सन् 1942 के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का संचालन किया था वहाँ सन् 1950 में असम प्रदेश में जाकर वहाँ के श्रमिकों की कठिनाइयों को दूर करने के लिए भी संघर्ष किया था। उन्हीं दिनों आपने रायपुर से 'राष्ट्रबन्धु' नामक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन तथा प्रकाशन प्रारम्भ किया था। इस पत्र के माध्यम से आपकी लेखनी की प्रखरता अत्यन्त उदग्रतापूर्वक प्रकट हुई थी। आप स्थानीय नगरपालिका के अध्यक्ष भी रहे थे। सन् 1951 में आप कांग्रेस से त्यागपत्र देकर भूदान आन्दोलन में सम्मिलित हुए थे। इस प्रसंग में आपको अनेक स्थानों की जो पद-यात्रा करनी पड़ी थी उसके कारण आपका स्वास्थ्य डगमगा गया और 20 अक्तूबर सन् 1954 को आपका शरीरान्त हो गया। आपके निधन के उपरान्त रायपुर में सन् 1963 में आपकी एक आदमकद कांस्य-प्रतिमा का अनावरण आचार्य विनोबा भावे द्वारा सम्पन्न हुआ था।

श्री फतहकरण उज्वल

श्री उज्वल का जन्म जोधपुर राज्य के ऊजलाँ ग्राम में सन् 1852 में हुआ था। आपने अपने बाल्य-काल में सर्वश्री गिरधारीलाल व्यास, नारायणदेव ज्योतिषी, पंडित न्याय विजय, पण्डित मणिविजय, पण्डित उदयविजय तथा कृष्णकवि से क्रमश: व्याकरण, ज्योतिष-गणित, षट्भाषा, जैन रामायण, धर्मशास्त्र और काव्य-साहित्य की शिक्षा प्राप्त की थी। आपका उपनाम 'जयकरण उज्वल' भी था। चारण होने के नाते आपने अस्त्र-शस्त्र-संचालन, घुड़सवारी और युद्ध विद्या में भी अच्छी निपुणता प्राप्त कर ली थी। अपने इन्हीं सद्गुणों के कारण आप जोधपुर-नरेश महाराणा सज्जनसिंह के अत्यन्त कृपापात्र बन गए थे और वे आपका बहुत सम्मान किया करते थे। बाद में आप अपने जीवन के उत्तरकाल में उदयपुर के महाराणा की सेवा में चले गए थे।



आप डिंगल और पिंगल के अद्वितीय विद्वान् तथा सुकवि थे। आपके प्रकाशित ग्रन्थों में 'वंश प्रदीप' तथा 'पत्र प्रभाकर' प्रमुख हैं। आपने श्री सूर्यमल्ल मिश्रण द्वारा विरचित 'वंश भास्कर' की टीका भी लिखी थी, जो अभी

तक अप्रकाशित ही है। इस टीका मे आपने कवि श्री मिश्रण की कुछ अशुद्धियों का परिहार भी किया है। इनके अतिरिक्त आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ भी यत्र-तत्र उपलब्ध होती हैं।

आपका निधन सन् 1921 मे हुआ था।

डॉ० कुन्दनलाल अग्निहोत्री

आपका जन्म 7 अगस्त सन् 1882 को उत्तर प्रदेश के पीलीभीत नामक नगर मे हुआ था। अपनी एम० डी० (लन्दन) की उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप उत्तर प्रदेश शासन मे अनेक महत्त्वपूर्ण पदो पर रहे थे और आप भुवाली (नैनीताल) के टी० बी० सैनेटोरियम के अध्यक्ष के रूप मे पर्याप्त लोकप्रिय हुए थे। अपने सामाजिक कर्तव्यो के निर्वाह के प्रसग मे आप काग्रेस तथा आर्य समाज के सुधारवादी आन्दोलनो से विशेष प्रभावित हुए थे। आप जहाँ उच्चकोटि के चिकित्सक थे वहाँ लेखन के क्षेत्र मे भी आपने अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था।



आपने अधिकाशतः चिकित्सा-सम्बन्धी साहित्य ही लिखा था। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थो की सख्या लगभग डेढ़ दर्जन है, जिनमे 'ईश प्रार्थना' (1901), 'भारतवर्ष का सक्षिप्त इतिहास' (1912), 'सुखमय जीवन' (1918), 'मलेरिया की चिकित्सा' (1922), 'बवासीर की चिकित्सा' (1931), 'देवयात्रा' (1941), 'यज्ञ चिकित्सा' (1949), 'आरोग्य शास्त्र' (1950) 'सकट मोचन' (1951), 'आयुर्वेदिक प्राकृतिक चिकित्सा' (1953), 'राष्ट्र उत्थान की कुंजी' (1954), 'महात्मा गांधी की ग्रामीण चिकित्सा' (1956), 'वैदिक पंचशील' (1956), 'कब्ज और उसकी चिकित्सा' (1957) 'गोपालन से धनवान कैसे बनें' (1960) तथा 'क्षय रोग की अचूक चिकित्सा' (1961) अत्यन्त प्रमुख हैं। इन पुस्तकों के अतिरिक्त आपने अनेक छोटे-मोटे ट्रैक्ट भी लिखे थे। आपकी 'आयुर्वेदिक प्राकृतिक चिकित्सा' नामक कृति की भूमिका भारतीय लोक सभा के प्रथम अध्यक्ष श्री गणेश वासुदेव मावलकर ने लिखी थी। आपके इस साहित्य का हिन्दी-जगत् मे अच्छा स्वागत हुआ था।

आपका निधन 14 दिसम्बर सन् 1962 को हुआ था।

श्री फूलचन्द जैन 'पुष्पेन्दु'

श्री 'पुष्पेन्दु' का जन्म लखनऊ नगर के याहियागज मोहल्ले के एक मध्यवर्गीय परिवार मे सन् 1914 मे हुआ था। आप अपने माता-पिता की चौथी सन्तान थे। आपकी पढ़ाई तीसरे या चौथे दरजे से अधिक नही चल सकी थी। परिवार की आर्थिक अवस्था ठीक न होने के कारण आप 10-11 वर्ष की आयु मे टिकुली-बिन्दी-मिस्सी की पेटी लिये लखनऊ की गलियों मे फेरी लगाया करते थे। कुछ दिन तक एक कैमिस्ट के यहाँ नौकरी भी की थी। वहाँ पर 3-4 वर्ष तक कार्य करने के उपरान्त आपने एक परिचित दुकानदार के यहाँ से 25-30 रुपये का माल उधार लेकर परचून की छोटी-सी दुकान भी खोली थी।

जिन दिनों आप अपने जीवन की इस सघर्ष-यात्रा मे सलग्न थे उन दिनों लखनऊ की गलियों मे छोटी-मोटी कवि-गोष्ठियों का जोर बहुत था। आपने उनमे जाना शुरू कर दिया और धीरे-धीरे इसमे आपको रस आने लगा। समस्यापूर्तियो का जोर उन सम्मेलनों और गोष्ठियो मे बहुत होता था। धीरे-धीरे फूलचन्द जी के मन मे भी कविता-कुरगिनी कुलाँचे भरने लगी और आपने भी तुकबन्दियाँ शुरू कर दी। तखल्लुस के रूप में समस्यापूर्तिपरक आपकी कविताओ मे जब आपका 'फूलचन्द' नाम कहीं भी फिट होता न दिखा तो आपने अपना उपनाम 'पुष्पेन्दु' रख लिया।

आप अभी कविता के कण्टकाकीर्ण मार्ग पर बढ़े ही थे कि आपका विवाह हो गया। दुर्भाग्यवश पत्नी अधिक दिन जीवित न रह सकी और 8-9 मास के बाद ही उनका असामयिक निधन हो गया। 2-3 वर्ष बाद आपने दूसरा विवाह किया। धीरे-धीरे आपकी कविता का विकास होने लगा और एक दिन ऐसा भी आया जब सर्वश्री शुकदेवबिहारी मिश्र, भगवतीचरण वर्मा, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', अमृतलाल नागर तथा श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान-जैसे विख्यात साहित्यकारो ने आपके कृतित्व को उन्मुक्त मन से सराहा। श्री रूपनारायण पाण्डेय ने तो अपने 'माधुरी' के सम्पादन-काल मे आपकी कई कविताएँ उसमें प्रकाशित भी की। लेकिन सकोची स्वभाव का होने के कारण 'पुष्पेन्दु' साहित्य-जगत् से छिपे ही रहे। इस बीच आपकी दूसरी पत्नी का भी असामयिक देहावसान हो गया।

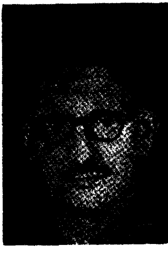


इस दुर्घटना के 3-4 वर्ष उपरान्त आपने अपने मित्रो के अनुरोध-आग्रह के फलस्वरूप तीसरा विवाह भी कर लिया। इस विवाह से आप बहुत सन्तुष्ट हुए और आपके जीवन मे फिर से नव वसन्त का वातावरण महमहाने लगा। इस पत्नी से आपको 4 कन्याओं की प्राप्ति भी हुई। कन्याओ के पिता होने के कारण आपके सामने गहन अर्थ-सकट आ गया। फिर आपने अपने निजी स्वाध्याय के बल पर 38 वर्ष की आयु मे ही पहले मैट्रिक तथा इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण की। बी० ए० करने की लालसा मे आपने परचून की दुकान को सदा-सर्वदा के लिए तिलाजलि देकर अध्यापन-कार्य अपनाया और फिर 'नवजीवन' दैनिक के सम्पादकीय विभाग मे कार्य करने लगे। इस संघर्ष मे आपके स्वास्थ्य ने जवाब दे दिया। आप पेट की एक भयकर बीमारी की चपेट मे आ गए तथा इसीमे 28 मई सन् 1963 को आपके जीवन का अन्त हो गया।

आपके निधन के उपरान्त आपके द्वारा रचित लगभग 250 कविताओं मे से कुछ का चयन करके 'बसन्त बहार' नाम से एक संकलन सन् 1965 मे श्री जैन धर्म प्रवर्द्धिनी सभा लखनऊ ने प्रकाशित किया था। इस संकलन की भूमिका और परिचय के रूप मे क्रमश. श्री भगवतीचरण वर्मा तथा श्री अमृतलाल नागर ने अपनी जो भावनाएँ व्यक्त की है उनसे कवि 'पुष्पेन्दु' का महत्ता का स्वत. अनुमान हो जाता है। आपने जैन कविवर ब्रह्मराय द्वारा विरचित 'बजरगबली हनुमान' नामक कृति का भी कमलकुमार जैन शास्त्री के साथ सम्पादन किया था। इस कृति का प्रकाशन भी आपके निधन के बाद अब भीकमसेन रतनलाल जैन वकीलपुरा दिल्ली की ओर से हुआ है।

श्री फूलचन्द जैन 'सारंग'

आपका जन्म आगरा जनपद के एक छोटे से ग्राम मे। जनवरी सन् 1913 को हुआ था। आगरा से इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने अपना कर्ममय जीवन एक शिक्षक के रूप मे प्रारम्भ किया था। अपने शिक्षकीय दायित्व का निर्वाह करते हुए ही आपने बी० ए० और एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थीं। आपने जहाँ 'जैन रत्न विद्यालय भोपाल गढ' (राजस्थान) मे प्रधानाध्यापक के रूप मे कुछ समय तक कार्य किया था वहाँ आप 'महावीर दिगम्बर जैन इण्टर कालेज आगरा' मे हिन्दी-प्रवक्ता रहे थे। आपके सुपुत्र डॉ०



रमेशचन्द्र जैन भी अच्छे लेखक थे, जिनका अल्पायु मे ही देहावसान हो गया था।

सारंग जी जैन साहित्य, सस्कृति एवं दर्शन-सम्बन्धी मासिक पत्रिका 'जिन वाणी' जोधपुर (राजस्थान) के संस्थापक-सम्पादक थे। आपने आलोचना, निबन्ध, नाटक और जीवनी-सम्बन्धी अनेक पुस्तकें लिखने के अतिरिक्त छात्रोपयोगी प्रचुर साहित्य का निर्माण भी किया था। आपके द्वारा लिखित 'जीवन-निर्माण' नामक पुस्तक लगातार 17 वर्ष तक 'उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद्' के पाठ्यक्रम मे रही थी। आपकी प्रमुख रचनाओं मे 'हिन्दी और उसके कलाकार', 'हमारे कवि और लेखक', 'प्रबन्ध प्रबोध', 'निबन्ध निधि', 'निबन्ध नवनीत', 'ग्रामो मे नवज्योति', 'जीवन-निर्माण', 'आदर्श बालक', 'हमारे राष्ट्र निर्माता', 'हृदय-सम्राट् नेहरू', 'नये भारत के निर्माता' और 'संगम' उल्लेखनीय है।

आपका निधन सन् 1968 मे हुआ था।

पण्डित बख्तावरलाल भट्ट 'टीकाराम'

आपका जन्म सन् 1875 मे उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के उदय-नेवरा नामक ग्राम मे हुआ था। आप गणित और ज्योतिष के मर्मज्ञ तथा धर्म-प्रेमी सज्जन थे। आपको पूरा 'रामचरितमानस' कण्ठस्थ था। आप कुशल कवि और सुधारक के रूप मे विख्यात थे। आपके द्वारा लिखित 'कौशल्या हरण' प्रबन्ध काव्य सन् 1950 मे प्रकाशित हुआ था। आपकी दूसरी कृति 'टीका पदावली' सन् 1945 मे स्वय कवि के द्वारा कही खो गई थी।

आप प्राय सारा जीवन लखनऊ जनपद के इटौजा नामक स्थान के समीपवर्ती चौगवां नामक नगर मे रहे थे। आप बाराबकी (उत्तर प्रदेश) के निवासी सुकवि श्री त्रिभुवननाथ शर्मा 'मधु' के पितामह थे।

आपका निधन सन् 1958 मे हुआ था।

श्री बख्तावरसिंह

श्री बख्तावरसिंह का जन्म राजस्थान प्रदेश के 'बसी' नामक ग्राम मे सन् 1813 मे हुआ था। आपने उदयपुर के महाराणा के दरबार में पर्याप्त सम्मान प्राप्त किया था। राजस्थानी भाषा के उन्नायक कवियों में श्री सूर्यमल्ल मिश्रण के बाद आपका प्रमुख स्थान है। आप कुशल कवि होने के साथ-साथ उत्कृष्ट गद्य-लेखक भी थे। आपकी रचनाओं मे 'सज्जन यश प्रकाश', 'अन्योक्ति प्रकाश' तथा 'केहर प्रकाश' के नाम विशेष महत्त्व रखते है।

आपका निधन सन् 1894 मे हुआ था।

श्री बच्चू सूर (आशु-कवि)

आपका जन्म सन् 1896 मे उत्तर प्रदेश के लखीमपुर जनपद के मैंगलगज क्षेत्र के जमुनिहा नामक स्थान मे हुआ था। आप आशु-कविता मे अत्यन्त निपुण थे। ताली बजा-बजाकर सहज भाव से आप गम्भीर-से-गम्भीर विषयों को कविता मे प्रस्तुत करने मे बहुत कुशलता प्रदर्शित किया करते थे। आपकी इस कला की अनेक स्थानो पर विविध प्रसगो मे परीक्षा भी हुई थी, किन्तु आपने अपनी काव्य-चातुरी से सबको आश्चर्यचकित कर दिया था।

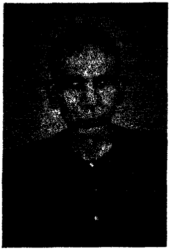
आप तालियो द्वारा और मुख मे तबला-वादन की ध्वनि निकालने मे भी बहुत दक्ष थे। आप ज्योतिष के अभूतपूर्व ज्ञाता होने के साथ-साथ शास्त्रीय सगीत के भी निष्णात विद्वान् थे। आपने लगभग 700 ग्रन्थो का अध्ययन किया था। आपके द्वारा रचित 'कजरी' भी जनता मे बहुत लोकप्रिय हुई थी। आपकी रचनाओ मे आध्यात्मिक ज्ञान के साथ आपके धर्म-प्रचारक रूप का भी सम्यक् प्रकटीकरण हुआ है। आपकी रचनाएँ 'अमृत राग' और 'अमृत बहार' नाम से प्रकाशित हो चुकी है।

आपका निधन सन् 1975 मे हुआ था।

श्री बजरंगबली गुप्त विशारद

आपका जन्म भारत के प्रख्यात तीर्थ वाराणसी मे सन् 1904

में हुआ था। आप बडे स्वाध्यायशील और परिश्रमी व्यक्ति थे। अपनी निरन्तर



अध्ययन करते रहने की प्रवृत्ति के कारण आपने कई भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था और बगला भाषा के तो आप अत्यन्त सफल अनुवादक थे। आपने बंगला के जिन अनेक उपन्यासो का अनुवाद किया था उनमे 'मयूख' का नाम अन्यतम है। आप जालपा देवी स्थित सीताराम प्रेस के मालिक और स्वतन्त्र पत्रकार थे।

आपका निधन सन् 1973 मे हुआ था।

श्री बटुकनाथ शर्मा एम० ए०

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के वाराणसी नगर मे सन् 1895 मे हुआ था। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से एम० ए० की उच्चतम उपाधि प्राप्त करने के अतिरिक्त आपने सस्कृत वाड्मय का अत्यन्त तलस्पर्शी अध्ययन किया था। आप कुशल अध्यापक होने के साथ-साथ हिन्दी के उत्कृष्ट लेखक भी थ। आपकी प्रकाशित रचनाओ मे 'भामह और उनका काव्यालंकार', 'पीयूष वर्षी' तथा 'कवि जयदेव' के नाम विशेष उल्लेखनीय है। आपने पण्डित बलदेव उपाध्याय के साथ मिलकर 'रसिक गोविन्द और उनकी कविता' नामक पुस्तक की रचना भी की थी।

आधुनिक समय मे काशी के हिन्दी तथा संस्कृत के जिन विद्वानो ने अपनी लेखनी के द्वारा साहित्य-सेवा की थी उनमे श्री शर्मा का अन्यतम है।

आपका निधन सन् 1944 को हुआ था।

महाकवि बदरीदास पुरोहित

आपका जन्म राजस्थान के जोधपुर नगर के पुष्करणा ब्राह्मण-परिवार मे 17 अगस्त सन् 1887 को हुआ था। आप सस्कृत और हिन्दी के अच्छे ज्ञाता तथा ज्योतिष एव अध्यात्म दर्शन के अनन्य उपासक थे। आपका राष्ट्र-पिता महात्मा गान्धी, डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय तथा श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार आदि महानुभावों से अत्यन्त घनिष्ठ सम्पर्क था। आपने जहाँ अपनी जातीय पत्रिका 'पुष्करणा ब्राह्मण' (मासिक) का सन् 1915 मे कुशल सम्पादन किया था वहाँ आप कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'धर्म शिक्षक व धर्म रक्षक' पत्र के सम्पादक भी रहे थे। आपको 'वेदान्त विनोद', 'वेदान्त भूषण' तथा 'धर्म मनीषी' आदि अनेक सम्मानोपाधियाँ भी प्रदान की गई थी।

आपकी प्रमुख कृतियों मे सन् 1905 मे प्रकाशित 'योग वाशिष्ठ महारामायण', 'षोडश सस्कार प्रयोग', 'गीतार्थ प्रबोध', 'पाप पुण्य की डायरी' तथा 'आन्हिक धर्म प्रयोग' के नाम विशेष रूप से स्मरणीय है।



आपने 'योग वाशिष्ठ रामायण' की रचना अवधी भाषा मे दोहा तथा चौपाई छन्दो मे की थी। आपकी 'त्रिकाल सध्योपासना' (1941) नामक कृति भी विशेष महत्त्व रखती है। आपने इतना अधिक लिखा था कि आपकी सब रचनाएँ प्रकाशित नही हो सकी थी। ऐसी रचनाओ मे 'महारामायण' (खडी बोली), 'श्रीमद्भागवत', 'राम रहस्य', 'वेदान्त भारती', 'भगवद्वाणी', 'भगवती विभव', 'स्वात्म सुधा', 'स्तोत्र सुधा', 'योग दर्शन', 'मानव महोदय', 'जीवन्मुक्त' (नाटक), 'अवधूत गीता', 'प्रणय प्रबोध', 'भक्ति दर्शन' तथा 'श्रीकृष्ण-

स्तवन' के नाम ध्यातव्य है। आपने सन् 1934 मे वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण कर लिया था।

आपका निधन 58 वर्ष की आयु में 28 फरवरी सन् 1945 को हुआ था।

श्री बद्रीप्रसाद आचार्य

आपका जन्म राजस्थान प्रदेश के बीकानेर क्षेत्र के चूरू जनपद के रेणी अथवा तारानगर नामक कस्बे मे सन् 1902 मे हुआ था। आपकी नियमित शिक्षा केवल नवम कक्षा तक ही हो सकी थी और उसके उपरान्त आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की 'विशारद' परीक्षा उत्तीर्ण की थी। शैशवावस्था मे अपने पिता के देहान्त हो जाने के कारण आपका विद्याध्ययन बीच मे ही रुक गया था और आपने परिवार का उत्तरदायित्व आ पडने के कारण नौकरी कर ली थी।

बीकानेर के सेठ रामगोपाल मोहता ने आपके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर आपको अपने 'मोहता मूलचन्द विद्यालय' मे अध्यापक के रूप मे नियुक्त करने के अतिरिक्त उसके छात्रावास की व्यवस्था भी सौप दी थी। आपने कई वर्ष तक 'अखिल भारतवर्षीय पुष्करणा महासभा' के प्रमुख मासिक पत्र 'पुष्करणेन्दु' का सफल सम्पादन किया था। उन दिनो आपके सहकारी श्री वशीधर थानवी थे। आपकी भाषा प्रौढ़ एव सुसस्कृत होती थी और आपने 'राष्ट्रीय किकर' नाम से कविताएँ और नीति-सम्बन्धी दोहे भी लिखे थे।



आपकी लेखन-प्रतिभा से प्रभावित होकर सेठ जयदयाल गोयन्दका तथा श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार ने आपको 'गीता प्रेस गोरखपुर' के प्रकाशन विभाग मे सम्पादक के रूप मे नियुक्त किया था। वहाँ पर आपने जहाँ उसके प्रकाशनों के सम्पादन में अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया था वहाँ 'कल्याण' के सम्पादन मे भी अत्यन्त तत्परता से कार्यरत रहे थे। आप जब वहाँ पर अस्वस्थ रहने लगे तब सेठ गोयन्दका ने आपको अपने चूरू के 'ऋषिकुल ब्रह्मचर्य आश्रम' का आचार्य बनाकर वहाँ भेज दिया था। आपने 20 वर्ष तक इस पद पर योग्यता तथा निष्ठापूर्वक कार्य किया था। इसके कारण आप अब चूरू मे बड़े सम्मान के साथ याद किये जाते है।

आप एक उच्चकोटि के अध्ययनशील अध्यापक, पत्रकार और लेखक होने के साथ-साथ काग्रेस के भी एकनिष्ठ कार्यकर्ता थे। जब चूरू मे अकाल पडा था तब आपने सरकार तथा अन्य समाज सेवी सस्थाओं के सहयोग से वहाँ की जनता की अत्यन्त उल्लेखनीय सेवा की थी। चूरू की बहुत-सी साहित्यिक एव सास्कृतिक सस्थाओ को भी आप दिशा-निर्देश देते रहते थे। आप राजस्थान के प्रथम मुख्य मन्त्री श्री जयनारायण व्यास के समधी थे। आपके भतीजे श्री देवीप्रसाद को व्यास जी की पुत्री ब्याही थी। आपकी कविताएँ तथा लेख आदि 'पुष्करणेन्दु' तथा 'कल्याण' की पुरानी फाइलो मे देखे जा सकते है। आपने जोधपुर के 'पुष्टिकर युवक सघ' के अध्यक्ष पद से जो भाषण दिया था उसमे आपकी भाषा का अत्यन्त परिनिष्ठित तथा प्रौढ रूप दृष्टिगत होता है। आपने समाज मे प्रचलित अनेक रूढियो तथा विकृतियों का ऐतिहासिक विवेचन अपनी दो पुस्तको मे किया है। आप जहाँ एक कुशल लेखक तथा कवि के रूप मे प्रतिष्ठित थे वहाँ अत्यन्त प्रभावशाली वक्ता भी थे।

आपका निधन सन् 1949 मे 47 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री बद्रीप्रसाद पाण्डेय 'रविवर्द्धन'

श्री 'रविवर्द्धन' का जन्म मध्यप्रदेश की रीवाँ रियासत के

समीपवर्ती बाँसा ग्राम मे सन् 1912 में हुआ था। यह गाँव गोविन्दगढ़ नामक स्थान के समीप है जो श्वेत शेरों के लिए विख्यात है। आप एक उत्कृष्ट कवि, ओजस्वी वक्ता और सहृदय मानव थे। यद्यपि आपकी शिक्षा-दीक्षा अत्यल्प ही हुई थी किन्तु फिर भी आपने अपने अध्यवसाय एव लगन से वैद्यक तथा धर्म शास्त्रों का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। तंत्र-विद्या और शाक्त सम्प्रदाय की उपासना-पद्धति के विषय मे भी आपकी जानकारी बहुत अधिक थी।

एक उच्चकोटि के भक्त और कुशल चिकित्सक होने के साथ-साथ आप ब्रजभाषा में भक्तिपरक रचनाएँ करने मे भी अत्यन्त निपुण थे। आपकी राधा-कृष्ण-विषयक रचनाएँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कही जा सकती है। आप प्रायः भाव-विभोर होकर खजडी बजाते हुए अपनी कविताएँ गाया करते थे और कभी-कभी नाचने भी लगते थे। आपका एक पद इस प्रकार है :

मोहन माखन चोर कहावत।
भोर उठत नित श्याम छबीलो घर-घर टेर लगावत।
मोर पख की मुकुट बिराजै कर मुरली दरसावत।
सूनो सदन पाइके कान्हा दधि मटकी लै आवत।
अपनौ खात सखन कौ दै दै कछु महि में ढरकावत।
'रवि वर्द्धन' लखि स्याम चरित अस बार-बार प्रभु-
को सिर नावत।

आपका दुखद निधन 16 दिसम्बर सन् 1947 को उस समय हो गया था जब आप कीचड मे फँसी हुई एक भैंस की प्राण-रक्षा करने का प्रयास कर रहे थे।

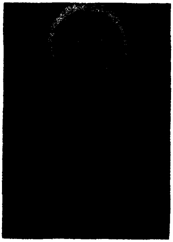
श्री बद्रीप्रसाद पाल 'पाल'

श्री पाल का जन्म उत्तर प्रदेश के बस्ती जनपद के हरिहरपुर नामक ग्राम मे सन् 1908 मे हुआ था। आपके पिता स्वर्गीय महाराजकुमार श्री अम्बिकाप्रसाद पाल का विवाह बिहार-केसरी बाबू कुंअरसिंह के वश में ही शाहाबाद(आरा) जनपद के दिलीपपुर नामक स्थान में हुआ था। आपकी माता श्रीमती चन्द्रवदन कुंवरि बड़ी धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थी। कविवर पाल जी ब्रजभाषा के अत्यन्त सिद्ध कवि तथा काव्य-शास्त्र के मर्मज्ञ थे। प्राचीन शैली पर ब्रजभाषा में काव्य-रचना करने मे वे परम निष्णात थे। आपकी रचनाएँ 'सुकवि', 'काव्य कलाधर', 'रसराज' तथा 'अनुरजिका' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रहती थी। 'सनेही-मण्डल' और 'रीतिकाव्य-परम्परा' के कवियो मे आपका स्थान अत्यन्त शीर्षस्थ था।

आपने अपना परिचय एक पद मे इस प्रकार प्रस्तुत किया है :

जनपद बस्ती हरिहरपुर ग्राम धाम,
क्षत्री भानुवंश जाकी महिमा मही विशाल।
जामे धर्मधारी बलशाली भये केते भूप,
जाते सदा भारत को भयो रहै ऊँचो भाल।
शील गुण-राशि सौम्यमूर्ति ज्ञानवान महा,
अम्बिकाप्रसाद पाल को इकलौत लाल।
पूरो नाम बदरीप्रसाद पाल जानै जग,
कविता यों सबै ठौर लघु करि राख्यो पाल॥

जिस प्रकार महाकवि भूषण ने शिवाजी की वीरता का वर्णन अपनी 'शिवा बावनी' नामक रचना मे किया है उसी प्रकार 'पाल' जी ने भी शिवाजी की तलवार 'भवानी' के सम्बन्ध मे 52 छन्दो की रचना की थी। आपकी यह कृति 'खग बावनी' नाम से कटनी (मध्य प्रदेश) निवासी प्रसिद्ध काव्यानुरागी श्री चन्द्रभान जैन ने अपने ही व्यय मे प्रकाशित कराई थी। इस रचना के माध्यम से पाठक यह जान सकेंगे कि तलवार के द्वारा समय-समय पर इतिहास मे कितने उलट-फेर हुए है। 'पाल' जी की यह रचना 'सुकवि' में प्रकाशित हुई थी।



आपका निधन 27 फरवरी सन् 1979 को पक्षाघात के कारण गोरखपुर मे हुआ था।

श्री बद्रीप्रसाद 'शैंवी'

श्री 'शैंवी का जन्म 8 सितम्बर सन् 1905 को उत्तर प्रदेश के बाँदा नामक नगर में हुआ था। आपके पिता श्री बलदेव-प्रसाद प्रसिद्ध रामायणी थे और उनके सत्संग के कारण ही आपमें कविता के प्रति रुचि उमगी थी। आप कई भाषाओं के मर्मज्ञ थे। कविता के अतिरिक्त कहानी तथा नाटक-लेखन के क्षेत्र मे भी आपने अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया था। हिन्दी के मूर्धन्य कवि श्री जयशकरप्रसाद और माखनलाल चतुर्वेदी से आपकी बडी घनिष्ठता थी।

आपकी काव्य-कृतियो मे 'कवित्त्व लतिका', 'गीतिका' और 'शुक्लाभिसारिका' आदि के नाम विशेष परिगणनीय है। आपकी कवित्त्व-प्रतिभा का परिचय इस कवित्त से भली-भाँति मिल जाता है

आय कै निकट वहै पीत पट वारो बाल,
अटपटे बैन बरजोरी बतरात है।
देत न भरन घट, पट को पकरि अली।
नट सो नचावै नैन, नेकु न डरात है॥
मुकवि सुजान 'शैंवी' लोटी उर लाजन सौ,
लगर निकट हठ नित अधिकात है।
बार-बार घेरैं सुनै मन हट जात है री,
पनघट जात ताको पन घट जात है॥

आपका देहावसान 31 मई सन् 1970 को हुआ था।

बाबू बनमालीलाल 'अर्जीनवीस'

बाबू बनमालीलाल का जन्म मध्यप्रदेश के रायपुर नामक नगर मे सन् 1857 मे हुआ था। जिन दिनो आपका जन्म हुआ था उन दिनो आपके क्षेत्र मे सस्कृत तथा उर्दू का ही प्रचार अधिक था, फलस्वरूप उर्दू और सस्कृत का अच्छा ज्ञान प्राप्त करके आपने शिक्षक का कार्य प्रारम्भ कर दिया था। वी० टी० सी० करने के उपरान्त आपने लगभग 16-17 वर्ष तक वहाँ के कई स्कूलों में हेडमास्टर का कार्य अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था।

वैसे अपनी रुचि, संस्कार तथा प्रवृत्ति के कारण आप अच्छे अध्यापक ही हो सकते थे, किन्तु न जाने क्यो वे बाद मे अध्यापकी का धन्धा छोड़कर 'अर्जीनवीस' हो गए। आप मे किसी धनवान या जालसाज मुकद्मेबाज की खुशामद करके अधिक धन अर्जित करने की भावना कदापि न थी, फलस्वरूप उतरती उम्र मे जो भी मिल जाता उसमे ही सन्तुष्ट हो जाते थे। अपनी आस्तिकता की प्रवृत्ति के कारण आप आने वाले कल की विशेष चिन्ता नहीं करते थे। कभी-कभी आप परमात्मा के नाम पर काव्यमय अर्जियाँ ही लिख डालते थे।

अपनी काव्यमयी प्रवृत्ति के कारण आप प्राय काव्य-रचना करने मे ही आनन्द का अनुभव किया करते थे। आपकी ऐसी अनेक रचनाएँ यत्र-तत्र आपकी मित्र-मण्डली मे देखने को मिलती हैं जिनमे आपकी काव्य-प्रतिभा पूर्णत परिपुष्ट रूप मे प्रकट हुई है। यह दुःख की बात है कि आपके जीवन-काल मे आपकी कोई भी कविता प्रकाशित न हो सकी थी। आपकी रचना-चातुरी आपके इस कवित्त मे भलीभाँति प्रकट हो जाती है

जगत् कुलीन नर सोचिके अधीन होत,
तब जानो दाया दीनबन्धु जगदीश की।
काके कौन आए काम, लीजे मित्र राम नाम,
देखो सरि ग्राम-ग्राम माया एक श्रीश की॥
सुनहु सुहृद लोग जग सुख दुख भोग,
मिलै कर्म के सयोग वाणी है कवीश की।
रामापति राम रण-शूर चिन्ता दूर कीन्है,
बाबू बनमालीलाल 'अरजीनवीस' की॥

आप प्राय अपनी रचनाओ के प्रकाशन के प्रति उदासीन रहा करते थे। आप प्राय. कहा करते थे कि "मैं अपने परमात्मा को रिझाने के लिए ही कुछ तुकबन्दी किया करता हूँ, न तो मुझे संसार को रिझाना है, और न नाम ही कमाना है।"

आपका निधन सन् 1920 मे हुआ था।

श्री बनवारीलाल भटनागर 'विशारद'

आपका जन्म 18 फरवरी सन् 1899 को मध्यप्रदेश के

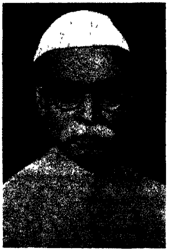
ग्वालियर नगर में हुआ था। आप अनेक वर्ष तक मालवा की सीतामऊ रियासत के 'श्री राम विद्यालय' मे शिक्षक के पद पर रहे थे। अपने इस कार्य-काल मे आपने वहाँ अपने जीवन तथा कृतित्व से अनेक छात्रो को प्रभावित किया था।

आप कुशल तथा सच्चरित्र अध्यापक होने के अतिरिक्त अच्छे कवि तथा साहित्यकार भी थे। आपकी कृतियो मे 'विरही राम', 'नारद मुनि', 'पारिजात' (सभी काव्य), 'अबला हितमयी', 'रामचन्द्र' तथा 'विद्यार्थी' (उपन्यास) के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमे से 'पारिजात' के अतिरिक्त अन्य सभी रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी है।

आपका निधन 13 फरवरी सन् 1957 को हुआ था।

श्री बनारसीलाल काशी

आपका जन्म बिहार प्रदेश के रोहतास जनपद (पुराना शाहाबाद) के राम डिहरा नामक स्थान मे सन् 1896 मे हुआ था। आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'साहित्यरत्न' और अखिल भारतीय सस्कृत परिषद् अयोध्या की 'विद्या-भूषण' की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। आपने बिहार सरकार के शिक्षा विभाग मे 41 वर्ष तक उत्साही अध्यापक के रूप मे कार्य करके अपनी विशिष्ट योग्यता का परिचय दिया था। आपको इस शिक्षक जीवन मे अपनी विशिष्ट सेवाओं के लिए कई बार अभि-नन्दित भी किया गया था।



आपने अत्यन्त उत्साही और लगनशील अध्यापक होने के साथ-साथ कुशल कवि और लेखक के रूप में भी बहुत प्रतिष्ठा अर्जित की थी। आपने कविता, कहानी, जीवनी और सस्मरण आदि अनेक विधाओ से सम्बन्धित रचनाएँ करके हिन्दी की अभिनन्दनीय सेवा की थी। बालोपयोगी साहित्य का सृजन करने की दिशा मे भी आप अत्यन्त पटु थे। आपकी विविध रचनाएँ जहाँ तत्कालीन अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित होती थी वहाँ आपने कई पुस्तके भी लिखी थी। आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'रामायण के उपदेश' (1920), 'हिन्दी पाठमाला' दो भाग (1931) तथा 'अलकार प्रवेशिका' (1954) आदि प्रमुख है। आपके द्वारा रचित अन्य कृतियो मे 'भरत चरिता-मृत', 'रोहतास' तथा 'कुलीना' के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य है। खेद है कि ये सभी रचनाएँ अप्रकाशित ही रह गई।

आप हिन्दी के अतिरिक्त भोजपुरी मे भी रचनाएँ किया करते थे। आपने 'शाहाबाद जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के बारहवे अधिवेशन के अवसर पर आयोजित 'भोजपुरी परिषद्' की अध्यक्षता भी की थी। साहित्य-रचना के अतिरिक्त आपने हिन्दी-प्रचार के निमित्त जिन अनेक सस्थाओ के निर्माण मे रुचि ली थी उनमे 'हिन्दी नव-जीवन पुस्तकालय भभुआ' (1923), 'काशी साहित्य मन्दिर रामडिहरा' (1939) तथा 'प्रगतिशील पुस्तकालय रामडिहरा' (1947) के नाम महत्त्व रखते है।

आपका निधन 7 अप्रैल सन् 1973 को हुआ था।

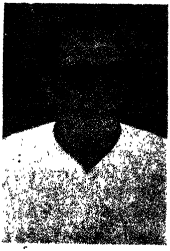
श्री बन्देअली फातमी

आपका जन्म सन् 1912 मे मध्यप्रदेश के रायगढ नगर मे हुआ था। आप अपने पिता की एकमात्र सन्तान थे। अपने पिता के व्यवसाय को सर्वथा तिलाजलि देकर आपने समाज-सेवा, राजनीति और साहित्य मे ही अपने जीवन को पूर्णत खपा दिया था। जब सन् 1935 मे महात्मा गांधी और पण्डित जवाहरलाल नेहरू रायगढ पधारे थे तब आपने उनके परामर्श पर वहाँ 'प्रजा मण्डल' की स्थापना की थी। जब आपने खण्डवा से श्री माखनलाल चतुर्वेदी के सम्पादन मे प्रकाशित होने वाले 'कर्मवीर' साप्ताहिक मे 'छत्तीसगढ

राज्य प्रजामण्डल की आवश्यकता' शीर्षक लेख प्रकाशित कराया था तब आपकी बुरी तरह पिटाई करने के साथ-साथ आप पर राज-द्रोह का मुकद्दमा चलाकर आपको नजरबन्द भी कर दिया गया था।

आपकी इस गिरफ्तारी का विरोध जहाँ कानपुर से प्रकाशित होने वाले श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के पत्र 'प्रताप' ने किया था वहाँ 'कर्मवीर' मे 'रायगढ़ या अन्यायगढ' शीर्षक अग्रलेख लिखकर उसकी तीव्र भर्त्सना की थी। आपकी प्रशंसा में 'कर्मवीर'-सम्पादक श्री चतुर्वेदी जी ने 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के हरिद्वार अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण मे यह सही ही कहा था—"और बन्दे अली फातमी महाकौशल की स्नेह-स्निग्धा वाणी के दूत, युग लिखने मे प्रखर है, सजग हैं।" उन्ही दिनो सन् 1942 के आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग लेने पर आपको तत्कालीन नौकरशाही का कोप-भाजन बनना पडा था।

आप जहाँ प्रखर राष्ट्रीय कार्यकर्ता तथा उत्कृष्ट समाज-सेवक के रूप मे जाने जाते थे वहाँ आपकी राष्ट्रीय कविताओ ने अपने प्रदेश के राष्ट्रीय जागरण मे प्रमुख भूमिका निबाही थी। आपकी रचनाएँ उन दिनो 'हम', 'चाँद', 'माधुरी', 'सरस्वती', 'सुकवि', 'कर्मवीर', 'प्रताप' तथा 'शुभचिन्तक' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी। हिन्दी मे रुबाइयाँ प्रारम्भ करने वाले कवियो मे आप अन्यतम थे। आपने अपनी किशोर अवस्था मे रायगढ मे 'प्रेम मन्दिर' नामक एक साहित्यिक सस्था की स्थापना भी की थी।



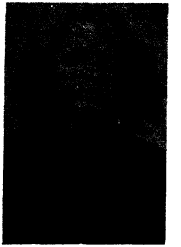
आप हिन्दू-मुस्लिम-एकता के जीवन्त प्रतीक थे। आपने श्रीकृष्ण से सम्बन्धित अनेक रचनाएँ लिखी थी। आपकी ऐसी कविताओ मे 'शख' और 'मुरली' आदि प्रमुख रूप से ध्यातव्य है। आप रायगढ़ के हिन्दू मन्दिरों में अत्यन्त उत्साह एवं प्रेमपूर्वक जाया करते थे। आपने उस क्षेत्र के अनेक युवको को साहित्य-सेवा के क्षेत्र मे अग्रसर करने के कार्य मे प्रचुर प्रोत्साहन प्रदान किया था। यह दुर्भाग्य की बात है कि सन् 1964 के 'हिन्दू मुस्लिम दगे' मे आपकी झोपडी जला दी गई थी और आपकी अनेक रचनाएँ अग्नि मे स्वाहा हो गई थी।

यह भी एक विचित्र-सी बात है कि अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप अत्यन्त अर्थ-सकट मे थे और स्वाधीनता-सेनानी होते हुए भी आपको शासन से पेंशन नही मिल सकी थी। सन् 1972 से लिखा-पढी ही चलती रही थी और अन्त मे यह साहित्यकार बड़ी कठिनाई से 200 रुपये मासिक की सहायता प्राप्त कर सका। आप 70 वर्ष की आयु मे भी स्वतन्त्रता-सग्राम के सेनानियो को मिलने वाली सम्मान-निधि के विषय मे कोई सम्मानजनक निर्णय कराने के लिए प्रयत्नशील थे और 'स्वतन्त्रता सग्राम सैनिक सघ' के विशेष अधिवेशन मे सम्मिलित होने के लिए भोपाल गए थे। आपके निधन के उपरान्त मध्यप्रदेश के मुख्य मन्त्री श्री अर्जुनसिंह ने आपके परिवार के लिए 3 हजार रुपये की तात्कालिक सहायता दी थी।

आपका निधन 21 नवम्बर सन् 1891 को हृदय-गति रुक जाने के कारण हुआ था।

मास्टर बलदेवप्रसाद

आपका जन्म मध्यप्रदेश के सागर नगर मे सन् 1888 मे हुआ था। आपके जन्म से 2 मास पूर्व ही आपके पिताजी का असामयिक देहावसान हो गया था और जब आप केवल 3 वर्ष के थे तब आपकी माता आपको असहायावस्था मे छोडकर चल बसी थी। आपका पालन-पोषण आपके फूफा के निरीक्षण मे हुआ था। उनके कोई सन्तान नही थी। उन्होने ही आपको लिखा-पढ़ाकर योग्य बनाने की दिशा मे भरपूर प्रयास किया था। आपका जब विवाह हुआ था तो उसके 2 वर्ष बाद ही आपकी पत्नी का भी स्वर्गवास हो गया था।



आपने सन् 1916 में सागर में 'नगर सेवा समिति', 'सरस्वती वाचनालय' तथा 'हिन्दी नाट्य परिषद्' की स्थापना करने के साथ-साथ रतौना नामक स्थान में बनने वाले 'कसाईखाने' का भी जोरदार विरोध भी किया था। सन् 1919 मे आपने डॉ० बालकृष्ण शिवराम मुजे की अध्यक्षता मे 'मध्य-प्रदेश राजनैतिक परिषद्' का जो आठवाँ अधिवेशन सागर मे कराया था उसके कारण आप अपने क्षेत्र मे बडे लोकप्रिय हुए थे। आपने महात्मा गाधी के आवाहन पर देश मे हुए प्राय· सभी आन्दोलनों मे सक्रिय रूप से भाग लेकर अनेक बार जेल-यात्राएँ की थी। आपने कभी भी कोई पद नही चाहा और न किसी प्रकार का पुरस्कार प्राप्त करने मे आपकी रुचि थी।

आप जहाँ राजनीति तथा समाज-सेवा के क्षेत्र मे अपना विशिष्ट स्थान रखते थे वहाँ साहित्य के क्षेत्र मे भी आपकी सेवाएँ सर्वथा अविस्मरणीय रही थी। आपने जहाँ सागर मे 'प्रकाश' नामक दैनिक पत्र का अनेक वर्ष तक सफलतापूर्वक सम्पादन और सचालन किया था वहाँ 'बच्चो की दुनिया' नामक एक बालोपयोगी पत्र भी सम्पादित किया था। आपको सागर नगर मे 'मास्टरजी' के स्नेहिल सम्बोधन से अभिहित किया जाता था। आपने सन् 1924 मे पुस्तको की एक दुकान खोलने के अतिरिक्त 'सुन्दर प्रेस' के नाम से एक प्रिंटिंग प्रेस भी चलाया था। सन् 1919 मे सागर मे आपने 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' का सफल अधिवेशन भी किया था।

15 अगस्त सन् 1972 को जब स्वतन्त्रता की 'रजत जयन्ती' समारोहपूर्वक मनाई गई थी तब आपका सागर की जनता की ओर से अत्यन्त भावभीना अभिनन्दन किया गया था। आपका निधन सन् 1982 मे हुआ था।

श्री बलदेवप्रसाद अवस्थी 'द्विज बलदेव'

श्री 'द्विज बलदेव' का जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के दासापुर (बलदेव नगर) नाम ग्राम में सन् 1840 मे हुआ था। आप ज्योतिष, व्याकरण और कर्मकाण्ड के प्रकाण्ड पण्डित थे। 15 वर्ष की आयु मे आपने काव्य-रचना प्रारम्भ कर दी थी। आपने भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के दर्शन भी किये थे और आपने कविता की विधिवत् दीक्षा काशी-निवासी स्वामी निजानन्द सरस्वती से ग्रहण की थी। आपकी कवित्व-प्रतिभा से प्रभावित होकर आपको भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने जो प्रमाण-पत्र प्रदान किया था उस पर भारतेन्दु जी के अतिरिक्त जगन्नाथदास 'रत्नाकर', राधाकृष्णदास, सरदार, नारायण तथा सेवक आदि तत्कालीन प्रमुख कवियों और साहित्यकारो के हस्ताक्षर है। आपको 'बिसवाँ कवि मण्डल' की ओर से 'भारत रत्न कवीन्द्र' की सम्मानोपाधि भी प्रदान की गई थी।

आप आशु कविता करने मे बहुत निपुण थे। आपका कहना था

दीजिए समस्या तापै कवित बनावै चट
कलम रुकै तो कर कलम कराइए।

आपकी आशु-कविता-कला की अनेक स्थानो पर परीक्षा की गई थी, जिसमे आप खरे उतरे थे। अवध क्षेत्र की एक छोटी-सी रियासत इटौंजा के राजा इन्द्र विक्रमसिह ने आपकी कविता से प्रसन्न होकर आपको 'हरदा' नामक गाँव तथा एक हाथी प्रदान किया था।

आपका बूँदी की चन्द्रकला बाई से विशेष प्रेम था। अपने इस प्रेम की अभिव्यक्ति आपने अपने 'चन्द्रकला काव्य' मे सफलतापूर्वक की है। इसके अतिरिक्त आपके द्वारा विरचित 'प्रताप विनोद' एक ऐसा रीतिबद्ध काव्य है जिसमे रस, अलकार, छन्द और शब्द-शक्ति का नायक-नायिका-भेद के प्रसग मे अच्छा निर्देशन मिलता है। आपके अन्य काव्यो मे 'समस्या प्रकाश', 'अन्योक्ति महेश्वर', 'शृगार सुधाकर', 'शृंगार सरोज', 'प्रेम तरंग' और 'हीरा जुबली काव्य' आदि उल्लेखनीय हैं।

आपके 'समस्या प्रकाश' नामक ग्रन्थ में 'मध्या स्वाधीन-पतिका नायिका' का वर्णन जिस प्रकार किया गया है वह आपकी काव्य-चातुरी का सुपुष्ट प्रमाण है। आपने लिखा है :

धीर तजि भूषन बसन की सम्हार नहीं।
ठाड़े ब्रजराज आज लाज-पट दीजे ना।
'द्विज बलदेव' कहै, वाजिब विलोकिबो है,
बखत विचारिकै नहीं को रस पीजै ना॥
यह इनकार ही है भार से कठिन अति,
सार बसी करण को मन्त्र ताहि कीजै ना।
नेक हँस सरस परस रस बस हरि,
तो सम तिहारो यश अपयश लीजै ना॥

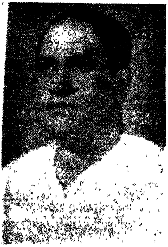
आपका निधन सन् 1914 मे हुआ था।

श्री बलदेवप्रसाद मिश्र

आपका जन्म भारत के विख्यात तीर्थ काशी मे सन् 1910 में हुआ था। आपके पिता महामहोपाध्याय पण्डित विद्याधर गौड सस्कृत वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान् थे। वे उन दिनो काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के धर्म विभाग के अध्यक्ष थे। अपने सस्कारवान पिता के निरीक्षण में ही आपकी शिक्षा-दीक्षा हुई थी। आपने जहाँ गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज वाराणसी से सस्कृत की 'साहित्याचार्य' परीक्षा उत्तीर्ण की थी वहाँ आपने लखनऊ विश्वविद्यालय से एम० ए० की उपाधि भी प्राप्त की थी।

आपकी स्मरण-शक्ति इतनी अद्भुत थी कि जिस पुस्तक को भी आप एक बार पढ लेते थे उसे भूलते नही थे। किस पुस्तक के, किस पृष्ठ पर, क्या है यह भी आपको स्मरण रहता था। सस्कृत-साहित्य के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का पारायण आपने अत्यन्त तल्लीनता से किया था। लेखन मे भी नये भाव, नये शब्द और नये प्रयोग प्रस्तुत करने की दिशा मे आप सतत प्रयत्नशील रहते थे। जिन दिनो आप छात्र थे तब हिन्दू स्कूल के अध्यापक श्री साँवल जी नागर आपकी प्रतिभा से बहुत प्रभावित हुए थे। आपने हिन्दी मे जब कहानियाँ लिखना प्रारम्भ किया था तब आपने प्रेमचन्द जी से भी सम्पर्क किया था। उन्होंने आपकी कहानियाँ 'जागरण' में छापकर भी आपको पर्याप्त प्रोत्साहन दिया था। आपकी उन दिनो जो कहानियाँ 'हंस' और 'जागरण' मे छपी थी वे ही बाद मे 'सरस्वती प्रेस बनारस' से 'अनुभूति' के नाम से प्रकाशित हुई थीं।

प्रारम्भ मे आपने कविताएँ लिखनी भी शुरू की थी। आप ब्रजभाषा मे बडी सशक्त कविताएँ लिखा करते थे। आपकी खड़ी बोली की कविताओ का सकलन 'दीपदान' तथा ब्रजभाषा की रचनाओं का सग्रह 'ब्रज विभूति' नाम से प्रकाशित हुआ था। पहले आपका ध्यान पढने की ओर कम था, किन्तु श्री दामोदरलाल गोस्वामी की प्रेरणा से आपने उस दिशा मे अग्रसर होकर सस्कृत का चूडान्त ज्ञान अर्जित कर लिया था। अपने



अध्ययन की समाप्ति पर आपने पहले-पहल सन् 1943 मे पटना से प्रकाशित होने वाले 'आर्यावर्त' दैनिक मे कार्य प्रारम्भ किया था और तदुपरान्त आप 'आज' के सम्पादकीय विभाग मे आ गए थे। सन् 1948 मे आप लखनऊ से प्रकाशित 'स्वतन्त्र भारत' मे चले गए थे और इसी पत्र मे कार्य-रत रहते हुए आपका देहावसान हुआ था। आपने कुछ समय तक लखनऊ से प्रकाशित 'रक्षक' नामक पत्र का सम्पादन भी किया था।

आप जहाँ जागरूक पत्रकार, कुशल कहानी-लेखक और सहृदय कवि थे वहाँ हास्य-व्यग्य-लेखन में भी पूर्णत दक्ष थे। बगला मे परशुराम ने जिस प्रकार की प्रतिभा का प्रदर्शन हास्य-व्यग्य-लेखन मे किया था, लगभग वैसी ही प्रतिभा के धनी आप भी थे। आपकी ऐसी रचनाएँ साहित्य-जगत् मे उन दिनो बहुत लोकप्रिय हुई थी। आपकी कहानियो के सकलन 'उलूक तन्त्र' तथा 'शव साधना' नाम से प्रकाशित हो चुके है। आपने जहाँ अनेक गम्भीर निबन्ध लिखे थे वहाँ 'कौटिल्य' के अर्थशास्त्र का भी अनुवाद किया था। आप सस्कृत, हिन्दी, अँग्रेजी, और बगला आदि कई भाषाओ मे पूर्ण दक्षता रखते थे। आपके निबन्धो का एक सकलन भी 'मौलिकता का मूल्य' नाम से प्रकाशित हुआ था।

आप हिन्दी के अनन्य शैलीकार श्री शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र' काशिकेय के साथ मिलकर एक उपन्यास लिख रहे थे, किन्तु वह पूरा न हो सका था। आपके 2-3 उपन्यास और 2 महाकाव्य अधूरे ही पडे रह गए।

आपका निधन सन् 1956 मे हुआ था।

डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र 'राजहंस'

आपका जन्म मध्यप्रदेश के राजनादगाँव नामक नगर मे 12 सितम्बर सन् 1898 को हुआ था। आपके पिता श्री नारायणप्रसाद मिश्र उत्तर प्रदेश से आकर वहाँ पर बस गए थे। आपकी शिक्षा राजनादगाँव तथा नागपुर मे हुई थी। सन् 1914 मे आपने प्रवेशिका, सन् 1918 मे बी०ए० सन् 1920 मे एम० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। एम० ए० करने के उपरान्त पहले तो आपने कुछ समय तक राष्ट्रीय कार्यों मे भाग लेना प्रारम्भ किया था। फिर एल-एल० बी० (1921) की परीक्षा उत्तीर्ण करके रायपुर मे वकालत का कार्य किया था। वकालत का यह पेशा आपको रास नही आया और थोडे ही दिन बाद आपने रायगढ राज्य मे जाकर नौकरी कर ली और वहाँ पर अनेक वर्ष तक जज, नायब दीवान तथा दीवान रहे थे। वकालत का पेशा छोड़ने के सम्बन्ध मे आपने एक बार यों लिखा था : "वकालत के पेशे की सौदेबाजी, झूठ-फरेब से 6 मास मे ही घबरा उठा। उधर हालत यह कि मैं इस व्यवसाय मे नितान्त असफल रहा। पहले मुकद्दमे की बहस मैंने बडी लगन से तैयार की और उसी तैयारी मे देर से पहुँचने के कारण मैं मुकद्दमा हार गया।"

रायगढ रियासत मे आप लगभग 18 वर्ष रहे थे। इस अवधि मे आपको अनेक खट्टे-मीठे अनुभव हुए थे। अनेक कठिनाइयो का भी सामना आपको करना पडा था, किन्तु साहित्य-साधना मे आप बराबर लगे रहे थे। साहित्य-रचना की ओर प्रवृत्त होने की प्रेरणा आपको सन् 1916 मे उस समय मिली थी जब आप अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सातवे अधिवेशन के अवसर पर अपना 'विशारद' परीक्षा का प्रमाण पत्र लेने जबलपुर गए थे। जबलपुर के 'मदन महल' को देखकर आपने जो अपनी पहली तुकबन्दी लिखी थी वह उसी समय 'हितकारिणी' नामक मासिक पत्रिका मे प्रकाशित हुई थी। रायगढ़ मे रहते हुए आपने अपने प्रशासनिक दायित्वों से समय निकालकर साहित्य-रचना का क्रम बराबर जारी रखा था। आपकी सबसे पहली कृति 'शकर दिग्विजय' नामक नाटक है। यह नाटक पहले श्री द्वारिकाप्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित मासिक पत्रिका 'श्री शारदा' मे धारा-वाहिक रूप मे प्रकाशित हुआ था और बाद मे जबलपुर के 'राष्ट्रीय हिन्दी मन्दिर' की ओर से सन् 1923 मे प्रकाशित हुआ था। रायगढ की नगरपालिका का अध्यक्ष रहने के अतिरिक्त आप खरसिया तथा राजनादगाँव की नगरपालिकाओ के अध्यक्ष भी रहे थे। आपने जहाँ कुछ समय तक रायपुर की नगरपालिका के उपाध्यक्ष के रूप मे नगर की सेवा की थी वहाँ आप बिलासपुर के 'सतर्कता आयोग' के सम्भागीय अध्यक्ष भी रहे थे।



शिक्षा के क्षेत्र मे भी आपकी सेवाएँ कम महत्त्व नही रखती। आपने जहाँ ठाकुर प्यारेलालसिह के सहयोग मे राजनादगाँव मे सर्वप्रथम 'राष्ट्रीय विद्यालय' की स्थापना की थी वहाँ आप अपने कर्ममय जीवन मे एस० बी० आर० कालेज बिलासपुर, न्यू आर्ट्स एण्ड कामर्स कालेज (वर्तमान दुर्गा महाविद्यालय) रायपुर और कल्याण महाविद्यालय, भिलाई के आचार्य भी रहे थे। आप जहाँ कई वर्ष तक राजनादगाँव के महिला महाविद्यालय के सस्थापक प्राचार्य रहे थे वहाँ आप 'इन्दिरा सगीत विश्वविद्यालय खैरागढ' के उपकुलपति भी रहे थे। यही नही आप लगभग 10 वर्ष तक नागपुर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अवैतनिक अध्यक्ष रहकर उसकी उल्लेखनीय सेवाएँ करने के अतिरिक्त

बड़ौदा विश्वविद्यालय के 'विजटिंग प्रोफेसर' भी रहे थे। इतने उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर कार्य-रत रहते हुए भी आप साहित्य-रचना के लिए बराबर समय निकाल लेते थे।

जिन दिनों आप रायगढ़ मे दीवान थे तब आपने 'तुलसी दर्शन' (1939) नामक एक अत्यन्त शोधपूर्ण कृति लिखकर नागपुर विश्वविद्यालय से 'डी० लिट्०' की उपाधि प्राप्त की थी। आपके इस शोध-प्रबन्ध का हिन्दी-जगत् मे इतना सम्मान हुआ था कि आप मानस-साहित्य के एक मात्र विशेषज्ञ समझे जाते थे। 'तुलसी दर्शन' के उपरान्त आपकी 'मानस मन्थन' नामक जो कृति प्रकाशित हुई थी उसका भी हिन्दी के समीक्षा-साहित्य मे अपना सर्वथा विशिष्ट स्थान बन गया था। आप जहाँ कुशल-समीक्षक और विवेकशील प्राध्यापक के रूप मे सर्वत्र समादृत थे वहाँ आपने अपनी लेखनी के द्वारा साहित्य की अनेक विधाओ का साहित्य-सृजन करके उसे समृद्ध किया था। अपने साहित्यिक जीवन के प्रारम्भ मे आपने जहाँ 'शकर दिग्विजय' नामक नाटक सन् 1923 मे लिखा था वहाँ आपकी 'असत्य सकल्प' (1928), 'वासना वैभव' (1928), 'समाज सेवक' (1932), 'मृणालिनी परिणय' (1932) और 'क्राति' (1939) आदि नाट्य-कृतियाँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आपकी अन्तिम नाट्य-कृति 'शकर दिग्विजय' का ही रूपान्तरित सस्करण है।

सन् 1929 मे आपके द्वारा लिखित 'जीव विज्ञान' नामक ग्रन्थ का भी अत्यधिक स्वागत किया गया था। इसके उपरान्त आपने 'मानस मे रामकथा' (1952), 'भारतीय सस्कृति को गोस्वामीजी का योगदान' (1955) तथा 'मानस माधुरी' (1958) नामक जो ग्रन्थ प्रस्तुत किये थे उनसे भी हिन्दी-साहित्य के राम-समीक्षा-सम्बन्धी पक्ष की अभूतपूर्व समृद्धि हुई थी। आपकी अन्य समीक्षा-कृतियो मे 'साहित्य लहरी' (1934) और 'तुलसी सौरभ' (1967) के नाम भी विशेष महत्त्वपूर्ण है। धर्म और सस्कृति-सम्बन्धी आपकी प्रतिभा का विशिष्ट परिचय आपके 'गीता सार' (1934), 'भारतीय सस्कृति' और 'भारतीय सस्कृति की रूपरेखा' (1952) नामक ग्रन्थो को देखने से मिल जाता है। अनुवाद के क्षेत्र मे आपने अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था। आपकी ऐसी कृतियों में 'मादक प्याला' (उमर खैयाम की रुबाइयाँ, 1932), 'ईश्वर निष्ठा' (1950) तथा 'हृदय बोध (मनाचे श्लोक, 1951) के नाम उल्लेखनीय हैं।

एक उत्कृष्ट कवि और सुचिन्तित महाकाव्यकार के रूप मे मिश्र जी का स्थान साहित्य के क्षेत्र मे सर्वथा अनन्य एव अनुपम था। आपने जहाँ 'कौशल किशोर' (1934), 'साकेत सन्त' (1946) तथा 'राम राज्य' (1960) नामक उच्चकोटि के महाकाव्यो की रचना की थी वहाँ आपके द्वारा लिखित एव सम्पादित 'शृगार शतक' (1928), 'वैराग्य शतक' (1938), 'जीवन-संगीत' (1940), 'हमारी राष्ट्रीयता' (1943), 'स्वग्राम गौरव' (1951), 'ज्योतिष प्रवेशिका' (1952), 'मानस के चार प्रसग' (1955), 'श्याम शतक' (1958), 'मानस रामायण (1959), 'व्यग्य विनोद' (1561),'उदात्त सगीत' (1967) तथा 'गांधी गाथा' (1969) आदि कृतियाँ भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आपकी जो अनेक रचनाएँ अप्रकाशित ही रह गई उनमे 'कृष्णायन-अनुशीलन', 'सस्कृत-साहित्य-सौरभ', 'ग्रन्थ और ग्रन्थकार', 'सुराज्य और रामराज्य', 'मानस की सूक्तियाँ,' 'रघुनाथ गीता', 'राम का व्यवहार' 'मानस मे उक्ति-सौष्ठव', 'मानस माधुरी', 'नरेश शतक', 'सरोज शतक 'छाया कुण्डल', 'अमर सूक्तियाँ', 'साख्य तत्त्व' तथा 'साख्य कारिका' आदि प्रमुख है। छत्तीसगढ क्षेत्र को दृष्टि मे रखकर आपने कुछ विशिष्ट ग्रन्थो की रचना की थी। आपकी ऐसी कृतियो मे 'छत्तीसगढ परिचय' 'छत्तीसगढी लोक-जीवन' और 'छत्तीसगढ का जनपदीय साहित्य' के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। हास्य, व्यग्य, सस्मरण और यात्रा आदि विभिन्न विधाओ की रचनाएँ लिखने मे भी आपने अपनी महत्त्वपूर्ण प्रतिभा का परिचय दिया था।

आपने जहाँ शिक्षा, साहित्य और सस्कृति के विभिन्न क्षेत्रो मे अनेक विशिष्ट सेवाएँ की थी वहाँ राजनीति मे भी आप पूर्णत सक्रिय रहे थे। आपके उन दिनो के साथी कार्य-कर्ताओ मे जहाँ मध्यप्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री श्री रविशकर शुक्ल अन्यतम थे वहाँ ठाकुर प्यारेलालसिह भी आपके अत्यन्त घनिष्ठ साथियो मे थे। आप काफी समय तक मध्य प्रदेश मे 'भारत सेवक समाज' के सयोजक भी रहे थे। आप जहाँ मध्य प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के तीन बार अध्यक्ष रहे थे वहाँ देश के विभिन्न भागो मे भी आपको अनेक बार समादृत किया गया था। आपकी उल्लेखनीय साहित्य सेवाओ के लिए अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने आपको

अपनी सर्वोच्च सम्मानित उपाधि 'साहित्य वाचस्पति' प्रदान की थी।

आपका निधन 4 सितम्बर सन् 1975 को हुआ था।

श्री बलदेवसहाय शर्मा

श्री शर्मा जी का जन्म उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जनपद की शामली तहसील के बावरी नामक ग्राम के एक



सारस्वत ब्राह्मण-परिवार में 11 जून सन् 1887 को हुआ था। आपकी शिक्षा विधिवत् तो केवल कक्षा चार तक ही हो सकी थी, किन्तु अपने अध्यवसाय और लगन से आपने अपना ज्ञान बहुत बढ़ा लिया था। आप जहाँ अनेक वर्ष तक 'मेरठ डिस्ट्रिक्ट बोर्ड' के कार्यालय में सहायक लेखाधिकारी रहे थे वहाँ मेरठ और मुजफ्फरनगर के 'स्काउट कमिश्नर' के रूप में भी आपकी सेवाएँ अविस्मरणीय रही थी।

आप स्वभाव से इतने मस्त मौला थे कि कैसी भी सोसाइटी मे सहज ही लोकप्रियता प्राप्त कर लेते थे। अपने फक्कड़ और मस्ती के स्वभाव के कारण आपने न केवल भारत प्रत्युत काबुल, लका और नेपाल आदि अनेक देशो की यात्राएँ बिना पासपोर्ट और वीसा आदि के कर ली थी। यहाँ यह विशेष रूप से उल्लेख्य तथ्य है कि इन यात्राओ मे आपने भारत के अतिरिक्त उन सभी देशो की भाषाओ का अनुकरण करना भी सीख लिया था।

आपकी अनुकरण करने की यह प्रवृत्ति इतनी विकसित और प्रौढ हो गई थी कि आपको 'हरफनमौला' तथा 'तिकड़म कला' का आचार्य समझा जाने लगा था। आप अरबी, संस्कृत, फारसी, नेपाली तथा सिंहली आदि के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं के बोलने की कला मे भी पूर्णत: दक्ष थे। बहुभाषाविद् बनने की कला मे निष्णात होने के साथ-साथ आप गूँगे, बहरे, अन्धे और हकले बनकर भी अपना काम निकाल लेते थे। अपनी इन यात्राओं मे आपकी इस कला ने बडी भारी सहायता की थी। कभी-कभी आप भाषाओ को इतने फर्राटे से बोलते थे कि उन भाषाओं के जानकार भी आपके सामने मात खा जाते थे। अपनी इस 'हरफनमौला' और 'तिकडमी' प्रवृत्ति के कारण आपको 'हास्यरसावतार' भी कहा जाता था। अपने मस्त स्वभाव और विनोदपूर्ण वार्तालाप से आप कैसे भी समाज में अपना स्थान बना लेने की अद्भुत क्षमता रखते थे।

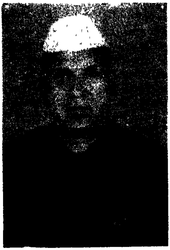
आपने इन रोमाचक यात्राओ का मनोरंजक विवरण अपनी 'जीवन-परिचय' नामक उस पुस्तक मे प्रस्तुत किया है, जिसका प्रकाशन सन् 1972 मे हुआ था। इस पुस्तक मे श्री शर्मा ने जहाँ अपनी सघर्ष-गाथा का वर्णन किया है वहाँ इससे पाठक उनकी यात्राओ का वर्णन पढकर अपना मनोरजन भी कर सकेगे। अपनी कर्मठता, मनोरजनप्रियता और मिलनसारिता से आपने मेरठ के जन-जीवन मे अत्यन्त लोकप्रियता प्राप्त कर ली थी। आप नि सन्तान थे। आपने अपनी सारी सम्पत्ति अपने पारिवारिकजनो को न देकर अनेक लोकोपयोगी कार्यों मे लगा दी थी। आपने अपनी जन्म-भूमि मे जहाँ एक 'कन्या पाठशाला' स्थापित की थी वहाँ 'मेरठ आर्यसमाज' मे भी आपने अपने दान से कुछ कमरे बनवाए थे।

आपका निधन 21 नवम्बर सन् 1982 को हुआ था।

श्री बलभद्रप्रसाद गुप्त 'रसिक'

श्री रसिक जी का जन्म 19 सितम्बर सन् 1905 को उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद नगर के पुराना कटरा नामक मोहल्ले में हुआ था। आपके पिता श्री माताप्रसाद गुप्त की वैद्यक की दुकान थी। आपकी शिक्षा प्रयाग के माडर्न स्कूल मे हुई थी। सन् 1932 के सत्याग्रह-आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग

लेने के कारण आपका अध्ययन बीच में रुक गया और आपने निजी स्वाध्याय के बल पर 'साहित्य रत्न', 'साहित्य शास्त्री' और 'साहित्याचार्य' परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थीं। आप सन् 1942 के आन्दोलन मे भी जेल गए थे। आपकी राष्ट्रीय भावनाओ का परिचय इसी बात से भलीभाँति मिल जाता है कि आपने 'खून के छीटे', 'गदर के गीत','बम के गोले' तथा 'फाँसी का झूला' आदि ऐसी अनेक ऐसी पुस्तकों की रचना की थी जिन्हे तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने जब्त कर लिया था।



आपने अपना कार्मिक जीवन सर्वप्रथम एक अध्यापक के रूप मे प्रारम्भ किया था और आप अनेक वर्ष तक प्रयाग के 'सेवा समिति विद्या मन्दिर हाई स्कूल' मे हिन्दी-अध्यापन करते रहे थे। अध्यापन के अतिरिक्त लेखन ही आपका प्रमुख व्यवसाय था। आपने जहाँ 'मदारी', 'जीवन ज्योति' (पाक्षिक), 'लीला', 'आलोक', 'अगूर के गुच्छे' तथा 'विद्यार्थी' (मासिक) आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओ के सम्पादन मे अपना सहयोग प्रदान किया था वहाँ आपके द्वारा लिखित उक्त क्रातिकारी पुस्तको के अतिरिक्त 'शहीदे आजम', 'नौकरशाही की तबाही', 'रणभेरी', 'काव्य-कुज की कोकिलाएँ', 'गल्प-गगन की तारिकाएँ', 'कहानी-साहित्य मे महिलाओ की देन', 'राष्ट्र के पुजारी', 'राष्ट्र के कर्णधार', 'महान् आत्माएँ', 'कहानी कुज', 'राधा मन्दिर','कला रानी', 'हमारे तीर्थ-स्थान', 'हमारे घरेलू उद्योग-धन्धे', 'हमारे त्योहार', 'आत्मदान की कथाएँ', 'तथागत' तथा 'गद्य नवनीत' आदि अनेक प्रौढ कृतियाँ विशिष्ट है। इनमे जीवनी, आलोचना, कहानी, उपन्यास तथा नाटक आदि अनेक विधाओं का अद्भुत परिचय आपने दिया था।

बालोपयोगी साहित्य की रचना करने की दिशा मे आपको जो अभूतपूर्व सफलता मिली थी उसीके कारण आपने 'मदारी' तथा 'अंगूर के गुच्छे'-जैसे बालोपयोगी पत्रों के सम्पादन मे अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया था। आपकी बालोपयोगी पुस्तकों में 'मणिमाला', 'बच्चों की कहानियाँ', 'जादू की खुरपी तथा अन्य कहानियाँ' और 'नानी की कहानियाँ' विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। अपने जीवन के अन्तिम दो वर्ष आपने बड़े ही कष्ट मे व्यतीत किये थे। एक दिन अचानक गिरकर चोट लगने से आपके घुटने की टोपी सर्वथा अलग हो गई थी, जिसके कारण आप खडे नही हो सकते थे और बाहर आने-जाने मे सर्वथा असमर्थ थे।

आपका निधन 27 दिसम्बर सन् 1982 मे हुआ था।

श्री बलभद्रप्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस'

आपका जन्म सन् 1898 मे उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के अम्बरपुर नामक ग्राम मे हुआ था। आपके बड़े भाई श्री दीनबन्धु अपने जनपद के समीपवर्ती कसमण्डा राज्य मे नौकर थे और उन्होंने ही आपका पालन-पोषण किया था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा कसमण्डा मे ही हुई थी और सन् 1920 मे आपने हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करके कालेज मे प्रवेश लिया था। किन्तु पारिवारिक परिस्थितियो की विवशता के कारण आपने 6 मास बाद ही पढाई बीच मे छोडकर कसमण्डा राज्य मे नौकरी कर ली थी। वहाँ पर आप सन् 1935 तक रहे थे। जब आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री बुद्धिभद्र 'बाम्बे टाकीज' मे नौकर हो गए तो आप भी उनके साथ बम्बई चले गए थे।

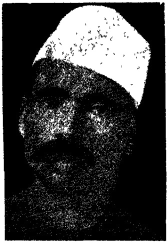
बम्बई मे जब आपका मन नही लगा तब आप वहाँ से अपने गाँव लौट आए और साहित्य-रचना मे प्रवृत्त हो गए इन्ही दिनों शायद अगस्त सन् 1938 मे आपने लखनऊ रेडियो-स्टेशन से पहली बार अपनी कविताओ का पाठ किया था। नवम्बर सन् 1938 मे आपने रेडियो मे नौकरी कर ली और सन् 1940 मे यह नौकरी छोड़ भी दी। अपने लखनऊ के निवास-काल मे आप जिन दिनों रेडियो मे सेवारत थे तब आपने अपनी अवधी भाषा की रचनाओ के माध्यम से साहित्य-जगत् मे अपना अच्छा-खासा स्थान बना

लिया था। जिन दिनों आप कसमण्डा मे कार्य करते थे तब सन् 1934 में आपका परिचय हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' से हो गया था। इस परिचय से आपके काव्य-जीवन का पर्याप्त विकास हुआ था।

अपनी कविता के लिए आपने अपना 'पढीस' उपनाम इसलिए चुना था कि आप उसे किसान का पर्यायवाची मानते थे। एक बार किसानो को लक्ष्य करके आपने अपनी कविता मे यह लिखा था

च्यानउ-च्यातउ स्वाचउ-स्वाचउ
ओ बड़े पढीसउ दुनिया के।

आपकी प्राय सारी रचनाएँ किसानों की भावनाओ को लक्ष्य करके ही लिखी गई थी। आपका 'चकल्लस' नामक जो काव्य-सकलन सन् 1933 मे छपा था उसकी भूमिका मे आपने यह सही ही लिखा था —"शहरो मे रहने वाला शिक्षित समाज अपने को देहाती और उनकी भाषा से अपने को उतना ही अलग समझता है जितना कि किसी और देश का रहने वाला हिन्दुस्तानियो और हिन्दुस्तान से।" आपने किसानो की ही भाषा मे किसान की भावनाओ को चित्रित किया था। आपकी कविताओ को पढकर ऐसा लगता है कि मानो वे खेतो मे ही फली-फूली हो। जिन दिनो आपने लोक-भाषा मे कविताएँ लिखना प्रारम्भ किया था उन दिनो ऐसा प्रचलन नही था। खडी बोली के प्रभाव के कारण उन दिनो उसी मे कविताएँ लिखी जा रही थी। 'पढीस' जी ने उस लीक से हटकर अपना अलग मार्ग बनाया था।



आपकी रचनाएँ उन दिनो अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे स्थान पाने लगी थी। आपने कविता-लेखन के अतिरिक्त कहानी और निबन्ध लिखने मे भी अत्यन्त पटुता प्रदर्शित की थी। आपकी ऐसी कहानियाँ और निबन्ध सन् 1936, 37 तथा 38 मे 'माधुरी' मे छपे थे। आपकी उन कहानियों का संकलन आपके जीवन-काल मे 'लामजहब' नाम से निकला था, जो 'माधुरी' के अतिरिक्त 'विप्लवी ट्रैक्ट', 'हंस', 'संघर्ष' और 'चकल्लस' आदि कई पत्रो मे प्रकाशित हुई थीं। हास्य-रस के माध्यम से सशक्त व्यंग्य करना आपकी कविता का प्रमुख लक्ष्य था। यद्यपि आप प्रमुखत हास्य एवं व्यंग्य की रचनाएँ लिखने मे सिद्धहस्त थे, किन्तु मीठे गीत लिखने मे भी आप किसी से पीछे नही थे। आपका

पपीहा बोलि जा रे,
हाली डोलि जा रे।

गीत आपकी स्वर-लहरी के कारण उन दिनों काफी लोक-प्रिय हुआ था।

27 जून सन् 1942 को आपके पैर मे एक घातक चोट लगी, जिसके कारण आप चिकित्सा के लिए लखनऊ के 'बलरामपुर अस्पताल' मे प्रविष्ट हुए और 14 जुलाई सन् 1942 को इस ससार से महाप्रयाण कर गए। आपके निधन के उपरान्त डॉ० रामविलास शर्मा के सम्पादन मे 'माधुरी' ने फरवरी सन् 1943 मे जो 'पढीस अक' निकाला था उससे आपके जीवन, व्यक्तित्व एव कृतित्व पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

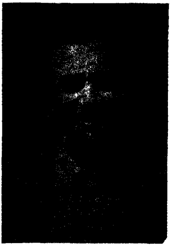
श्री बलराज साहनी

आपका जन्म 1 मई सन् 1913 को रावलपिण्डी (पश्चिमी पाकिस्तान) मे हुआ था। अपनी प्रारम्भिक शिक्षा रावल-पिण्डी मे पूरी करके आप उच्च शिक्षा के लिए लाहौर चले आए और वहाँ के गवर्नमेण्ट कालेज से अंग्रेजी साहित्य मे एम० ए० की परीक्षा देकर अपने व्यापार मे लग गए। जब व्यापार मे आपका मन नही लगा तो आप 'विश्व भारती शान्ति निकेतन' चले गए।

शान्तिनिकेतन मे आपने सन् 1938 से सन् 1940 तक हिन्दी का अध्यापन किया और फिर गान्धी जी के आश्रम वर्धा से प्रकाशित होने वाली 'नई तालीम' पत्रिका के सम्पादकीय विभाग मे कार्य करने लगे। जब उस कार्य मे आपका मन नही लगा तो साल-भर बाद लन्दन चले गए

और वहाँ के बी०बी०सी० मे सन् 1940 से सन् 1944 तक 'अनाउन्सर' के रूप में अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया।

लन्दन से वापिस लौटकर सर्व प्रथम आपने 'कम्युनिस्ट पार्टी आफ इण्डिया' के 'लोक-नाट्य-संघ' मे कार्य किया और फिर 'फिल्म-अभिनेता' बन गए। अपने फिल्म-जीवन मे लगभग 20 वर्ष तक आपने लगातार जिन 200 फिल्मो मे काम किया था। उनमे 'काबुलीवाला', 'दो बीघा जमीन', 'हम लोग', 'अनुराधा' तथा 'हीरा मोती' आदि विशेष उल्लेखनीय है। 'अनुराधा' पर राष्ट्रपति का स्वर्ण पदक प्रदान किया गया था। फिल्म-क्षेत्र मे आपने कथा एव सवाद-लेखन, निर्देशन और अभिनय सभी दृष्टि से अभूतपूर्व लोकप्रियता अर्जित की थी।



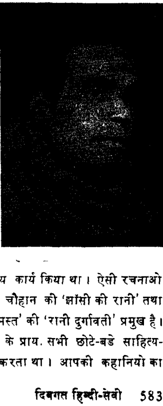
लेखन की ओर आपकी प्रारम्भ से ही रुचि थी। आप पहले अग्रेजी तथा बाद मे हिन्दी तथा पजाबी मे भी लिखने लगे थे। पजाबी मे आपकी जहाँ अनेक कृतियाँ पाठकों मे पर्याप्त समादृत हुई है वहाँ हिन्दी मे भी आपने बहुत लिखा था। शान्तिनिकेतन मे रहते हुए तो आपने हिन्दी मे कविताएँ भी लिखी थी। आपकी ऐसी कविताएँ उन दिनो 'विशाल भारत' तथा 'विश्व वाणी' आदि कई पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रहती थी। आपकी हिन्दी मे जो पुस्तके प्रकाशित हुई है उनमे 'सिनेमा और स्टेज', 'यादो के झरोखे से', 'पूरब के नाई', 'मेरा पाकिस्तानी सफरनामा', 'मेरा रूसी सफरनामा', 'बसन्त क्या कहेगा', 'मेरी फिल्मी आत्म-कथा','मेरी गैर जज्बाती डायरी','अन्तिम पत्र','बापू ने कहा था', 'मेरे विचार : मेरी धारणाएँ' तथा 'डपोरशख' प्रमुख हैं। इन सभी रचनाओं में आपने अपनी अद्भुत लेखन-पटुता का परिचय दिया है। आत्म-कथा, सस्मरण, कहानी, नाटक और कविता आदि सभी विधाओ का पूर्ण परिपाक आपकी इन रचनाओ मे देखने को मिलता है।

आपका निधन 13 अप्रैल सन् 1973 को हुआ था।

श्री बलराम रामभाऊ पगारे 'अणु'

आपका जन्म 21 सितम्बर सन् 1910 को मध्यप्रदेश के खण्डवा नगर के एक ब्राह्मण-परिवार मे हुआ था। आपकी रुचि अपने छात्र-जीवन से ही अभिनय की ओर थी और उसके कारण ही आपने नाट्य-कला मे इतनी दक्षता प्राप्त कर ली थी कि एक बार खण्डवा के 'नर्मदेश्वर प्रादेशिक नाटक मण्डल' के द्वारा प्रस्तुत एक नाटक मे आपके अभिनय को देखकर सोहराब मोदी-जैसे कलाकार के मुख से भी प्रशसा के शब्द निकल गए थे।

आप जहाँ उच्चकोटि के अभिनेता थे वहाँ अच्छे गायक, कवि और कहानीकार भी थे। आपकी सगीत-रचनाएँ जहाँ आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रो से प्रसारित हुआ करती थी वहाँ आपकी कहानियाँ भी 'कहानी', 'कर्मवीर', 'आगामी कल','माया','वसुधा', 'सरिता' और 'लोकतन्त्र' आदि अनेक पत्र पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रहती थी। आपके द्वारा गाई गई कुछ काव्य-कृतियो को सन् 1937-38 मे 'हिज मास्टर्स वायस' नामक कम्पनी ने रिकार्ड करके जन-जन तक पहुँचाने का प्रशसनीय कार्य किया था। ऐसी रचनाओ मे श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान की 'झांसी की रानी' तथा श्री देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त' की 'रानी दुर्गावती' प्रमुख है।



आपके यहाँ हिन्दी के प्राय. सभी छोटे-बडे साहित्य-कारो का जमाव रहा करता था। आपकी कहानियो का

संकलन 'तने तार और तराजू की कील' जहाँ अप्रकाशित ही रह गया वहाँ आपने 'बाललोड' नामक निमाड़ी काव्य-सग्रह भी तैयार किया था।

आपका निधन 27 फरवरी सन् 1972 को हुआ था।

श्री बसन्तीलाल श्रीवास्तव विशारद

श्री विशारद जी का जन्म मध्य प्रदेश के मन्दसौर जनपद के आगर क्षेत्र के तनाडिया नामक ग्राम मे सन् 1908 में हुआ था। जब आप केवल 15 वर्ष के ही थे तब आगर आ गए थे और



यावज्जीवन वहाँ ही रहे। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आप सन् 1923 से 1934 तक पटवारी रहे थे और बाद मे आगर की म्युनिसिपल कमेटी में क्लर्क रहे थे। अपनी कर्मठता और कार्य-तत्परता के बल पर आप फिर धीरे-धीरे वहाँ 'हेड क्लर्क' भी हो गए थे। सन् 1951 में आप इस पद से त्यागपत्र देकर बडौदा रियासत में 'रेवेन्यू एजेण्ट' होकर चले गए थे।

यहाँ यह बात विशेष रूप से स्मरणीय है कि अपने इस कार्य-काल में आपने सन् 1936 मे जहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की 'विशारद' परीक्षा उत्तीर्ण की थी वहाँ सन् 1939 में ग्वालियर राज्य की 'रेवेन्यू-एजेण्टी' की परीक्षा भी पास कर ली थी। अपने इन कार्यों मे व्यस्त रहते हुए भी आप साहित्य-रचना के लिए प्रचुर समय निकाल लिया करते थे। आपको गद्य तथा पद्य दोनों के लेखन में पूर्ण पटुता प्राप्त थी और आपकी रचनाएँ प्रमुख-पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थी। आप कविताओं में 'वसन्त' नाम का प्रयोग किया करते थे। राष्ट्र भाषा हिन्दी के सम्बन्ध मे आपका एक पद पठनीय है :

सब गुण आगर उजागर तरनि-जैसी,
मंजु कुन्द कलिका-सी अमल प्रकाशा है।
अति ही सुबोध अरु सरस सुधा-बूँद-जैसी,
सुवित सुभाव मनों विधु-सी उजासा है।।
भाव भरी, चाव भरी, गुण-गण खान भरी,
परम पुनीत वर बुद्धि-सी विकासा है।
प्यारी यह सुनागरी जननी सम वन्दनीया,
हिन्दी ही हमारी एक-मात्र राष्ट्र-भाषा है।।

आपका निधन 9 जनवरी सन् 1953 को हुआ था।

मुगल-सम्राट् बहादुरशाह जफर

आपका जन्म 14 अक्तूबर सन् 1775 को भारत की राजधानी दिल्ली में हुआ था। आप मुगल-साम्राज्य के अन्तिम शासक थे और आपका पूरा नाम 'अबू अल जफर सिराजुद्दीन मोहम्मद-शाह जफर' था। जिस वातावरण मे आपने आँखे खोली थी, तब के वातावरण में मुगल शासकों की बादशाहत दिखावा मात्र ही रह गई थी। अँग्रेजी 'ईस्ट इण्डिया कम्पनी' उनकी बादशाहत को समाप्त करने का निश्चय कर चुकी



थी। फलस्वरूप तत्कालीन शासक लार्ड एमहर्स्ट ने जफर के पिता 'अकबर शाह सानी' को दी गई सभी सुविधाएँ समाप्त करके केवल एक लाख रुपया मासिक देने का निश्चय कर लिया था। जफर इस अपमानजनक स्थितियों में रह रहे थे कि अचानक उनके सिपाहियो ने मई 1857 मे अँग्रेजों के

विरुद्ध विद्रोह करके उन्हे भारत का स्वतन्त्र बादशाह घोषित कर दिया।

फलस्वरूप जब अँग्रेजों और सिपाहियो मे युद्ध छिड़ गया तब बहादुरशाह जफर को बन्दी बनाकर विद्रोह के अपराध में उन पर मुकद्दमा चलाया गया और दण्ड-स्वरूप 12 अक्तूबर सन् 1858 को रगून मे नजरबन्द कर दिया गया। अपनी नजरबन्दी के वे दिन बहादुरशाह जफर ने जिन परिस्थितियों मे व्यतीत किए थे, वे बडी भयावह थी। वहाँ पर रहते हुए आपने जो कविता और शायरी की थी वह साहित्य की अतुल सम्पदा के रूप मे जानी जाती है।

आप जहाँ उर्दू के अच्छे शायर थे वहाँ ब्रजभाषा और हिन्दी मे भी आपने अपनी कवित्व-प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। रगून मे रहते हुए आपने अपनी मातृभूमि का स्मरण इस प्रकार किया था :

कौन नगर से आए हम,
और कौन नगर मे बासे है।
जाएँगे हम कौन नगर को,
होते मन मे हिरासे है॥
क्या-क्या पहलू देखे हमने,
पहले इस फुलवारी मे।
अब जो फले इसमे फल है,
कुछ और ही इसमे बासे है॥

इन पक्तियो की भाषा उर्दू न होकर खडी बोली हिन्दी-जैसी है। ब्रजभाषा मे भी आपने अच्छी रचनाएँ की थी। एक उदाहरण इस प्रकार है

जिन गलियन मे पहले देखी,
लोगन की रगरलियाँ थी।
फिर देखा तो उन लोगन बिन,
सूनी पडी वे गलियाँ थी॥
रोज बहारे लूटते थे वे,
जा-जाकर जिन बागन मे।
'शौक' रग अब जो देखा वाँ,
नही फूल व कलियाँ थी॥

आप ब्रजभाषा तथा हिन्दी की रचनाएँ 'शौक' उपनाम से किया करते थे।

आपने सर्वथा असहाय अवस्था मे 7 नवम्बर सन् 1862 को अपने जीवन की अन्तिम साँस ली थी।

कविराजा बाँकीदास आसिया

श्री बाँकीदास का जन्म राजस्थान के जोधपुर राज्य के पचमपरा परगने के 'भाडियावास' नामक ग्राम मे सन् 1751 मे हुआ था। आप आसिया शाखा के चारण-कवि थे। बाल्यावस्था में ही थोडा-सा अक्षर-ज्ञान प्राप्त करके आप जोधपुर चले गए थे और वहाँ पर ही आपने अनेक ज्ञानी गुरुजनो के पास रहकर काव्य, व्याकरण और इतिहास आदि विभिन्न विषयो का गम्भीर ज्ञान अर्जित किया था। आपकी विद्वत्ता तथा कवित्व-शक्ति से प्रसन्न होकर आपको महाराज मानसिंह ने 'कविराजा' की सम्मानित उपाधि भी प्रदान की थी।

आप सस्कृत, पिगल, फारसी और ब्रजभाषा आदि कई भाषाओ के पूर्ण मर्मज्ञ पडित होने के साथ-साथ 'आशुकवि' और इतिहास के अच्छे पडित थे। एक बार जब ईरान का कोई सरदार भारत-भ्रमण करता हुआ जोधपुर आया तो उसने महाराजा मानसिंह से उनके राज्य के किसी सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ से मिलने की इच्छा प्रकट की थी। महाराजा मानसिह ने श्री बाँकीदास से जब उस सरदार की भेंट कराई तो वह आपके गम्भीर ज्ञान तथा तीव्र स्मरण-शक्ति को देखकर दग रह गया। वहाँ से विदा होते समय उस सरदार यात्री ने जो विचार प्रकट किए थे उनसे श्री बाँकीदास के व्यक्तित्व पर अच्छा प्रकाश पडता है। उसने कहा था—"जिस आदमी को आपने मेरे पास भेजा था वह इतिहास का ही पूर्ण ज्ञाता नही, प्रत्युत कवि भी उच्चकोटि का था। इतिहास का ऐसा पूर्ण ज्ञान रखने वाला कोई दूसरा व्यक्ति मेरे देखने मे नही आया। मैं ईरान का रहने वाला हूँ, पर वह 'ईरान का इतिहास' भी मुझसे अधिक जानता है।"



आपकी उल्लेखनीय कृतियों मे 'सूर छत्तीसी', 'सीह

छत्तीसी', 'बीर बिनोद', 'धवल पच्चीसी', 'दातार बावनी', 'नीति मंजरी', 'सुपह छत्तीसी', 'बैसक वार्ता', 'भावड़िया मिजाज', 'कृपण दर्पण', 'मोह मर्दन', 'चुगल मुख चपेटिका', 'बैस वार्ता', 'कुकवि बत्तीसी', 'विदुर बत्तीसी', 'भुरजाल भूषण', 'गज लक्ष्मी', 'झमाल नखशिख', 'जेहल जस जड़ाव' 'सिद्धराव छत्तीसी', 'सन्तोष बावनी', 'सुजस छत्तीसी', 'वचन विवेक पच्चीसी', 'कायर बावनी', 'कृपण पच्चीसी', 'हमरोट छत्तीसी' और 'स्फुट सग्रह' आदि प्रमुख हैं। आपका स्थान पिंगल भाषा के कवियो मे अन्यतम था। विभिन्न रसों और अलंकारो की अद्भुत छटा आपकी रचनाओ मे देखने को मिलती है। बाँकीदास ने दुर्जनो, कायरो, मूँजियो और चुगलखोरों के स्वभाव-लक्षणो का विशद वर्णन अपने काव्य मे किया था। इनके अतिरिक्त आपने पिंगल भाषा मे 2800 छोटी-छोटी कहानियाँ भी लिखी थी।

जब आपका निधन सन् 1833 मे जोधपुर मे हुआ था तब महाराजा मानसिंह को इससे गहरा आघात पहुँचा था। उन्होने अपने शोकोद्‌गार इस प्रकार प्रकट किए थे

सद्विद्या बहु साज, बाँकी थी बाँका वसु।
कर सूधी कवराज, आज कठी गो आसिया।।
विद्या-कुल विख्यात, राज-काज हर रहसरी।
बाँका तो विण बात, किण आगल मनरी कहाँ।।

पण्डित बाबूनन्दन वैद्य

आपका जन्म उत्तर प्रदेश की विख्यात नगरी वाराणसी मे सन् 1869 मे हुआ था। आप एक पीयूषपाणि चिकित्सक और सिद्ध लेखक थे। आपका झुकाव साहित्य-रचना की ओर भी था और आप हिन्दी कविताएँ भी लिखा करते थे। आपके द्वारा सयोजित अनेक कवि-गोष्ठियो मे भारतेन्दु-कालीन बहुत-से कवि भाग लिया करते थे। 'सनातन धर्म सभा' की साप्ताहिक गोष्ठियों मे भी आपका काव्य-पाठ होता रहता था। अपने चिकित्सा-सम्बन्धी व्यस्त जीवन मे भी आप इन गोष्ठियो मे भाग लेने के लिए कुछ समय बराबर निकाल लेते थे।

आप जहाँ कुशल चिकित्सक और सहृदय कवि के रूप में तत्कालीन समाज मे अत्यन्त प्रतिष्ठित थे वहाँ गद्य-लेखन के क्षेत्र में भी आपकी



देन कम महत्त्व नही रखती। आपने आयुर्वेद से सम्बन्धित कई उल्लेखनीय ग्रन्थो की रचना की थी। आपकी 'ताम्बूल पद्धति' नामक पुस्तक सन 1892 मे लीथो पद्धति पर प्रकाशित हुई थी। इसके अतिरिक्त आपने धर्म तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी कई पुस्तको की रचना करके अपनी प्रतिभा का परिचय दिया था।

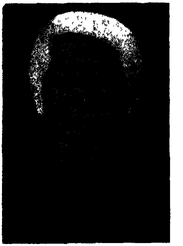
आपका निधन सन् 1904 मे हुआ था।

प्रो० बाबूराम गुप्त

आपका जन्म 23 नवम्बर सन् 1904 को बुलन्दशहर जनपद के डिबाई क्षेत्र के ऊँचागाँव नामक स्थान मे हुआ था। अतरौली के मिडिल स्कूल मे मिडिल तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने अलीगढ से हाई स्कूल तथा खुर्जा से इण्टरमीजिएट की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। इसके उपरान्त आपने कानपुर के डी० ए० वी० कालेज मे प्रवेश लेकर वहाँ मे बी० ए० किया और तदनन्तर आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी मे प्रथम स्थान प्राप्त करके सन् 1930 मे सस्कृत एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। अपने इस अध्ययन-काल मे आपने 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की 'विशारद' परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली थी। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आपने जहाँ कुछ दिन तक 'आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश' मे उपदेशक का कार्य किया था वहाँ आप लगभग 2-3 वर्ष तक इस सभा के साप्ताहिक मुखपत्र 'आर्यमित्र' के सम्पादक भी रहे थे। जिन दिनों आप

'आर्यमित्र' के प्रधान सम्पादक थे उन दिनों आर्यसमाज की ओर से हैदराबाद के निजाम के विरुद्ध जो सत्याग्रह हुआ था उसमें भी आपने उल्लेखनीय सहयोग प्रदान किया था। कुछ समय तक आपने आगरा से प्रकाशित होने वाले 'ताजा वार' दैनिक मे भी कार्य किया था।

जब आपको पत्रकारिता का यह कार्य रास नही आया तब आप डी० ए० वी० कालेज शोलापुर (महाराष्ट्र) मे सस्कृत विभाग के अध्यक्ष होकर चले गए और वहाँ पर सन् 1942 से 1945 तक अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया। सन् 1945 मे ही आप 'आगरा कालेज' मे हिन्दी-सस्कृत के प्रवक्ता होकर आ गए थे और सन् 1964 मे यहाँ से 'विभागाध्यक्ष' के रूप मे सेवा-निवृत्त हुए थे। आप जहाँ एक कुशल उपदेशक, अध्यापक और पत्रकार थे वहाँ आपने कुछ अग्रेजी ग्रन्थो का हिन्दी मे अनुवाद भी किया था। आपके द्वारा हिन्दी मे अनूदित ग्रन्थो मे 'आधुनिक इग्लैण्ड का इतिहास', 'मराठो का नवीन इतिहास' तथा 'यूरोप का इतिहास' प्रमुख रूप से उल्लेख्य है।

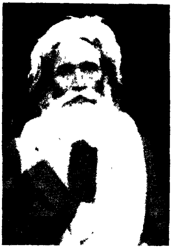


लेखन, अध्यापन और स्वाध्याय के कार्यों से समय निकालकर आप विविध समाजोपयोगी कार्यो मे भी अपना उल्लेखनीय योगदान देते रहते थे। आप जहाँ कई वर्ष तक 'गुरुकुल वृन्दावन' के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित रहे थे वहाँ आप 'केदारनाथ सेकसरिया इण्टर कालेज आगरा' के 'प्रशासक' भी रहे थे। आप आर्यसमाज राजा मण्डी आगरा के प्रधान व मन्त्री रहने के अतिरिक्त 'माहौर वैश्य सभा एटा' तथा 'आर्य केन्द्रीय सभा आगरा' के अध्यक्ष भी रहे थे।

आपका निधन 20 दिसम्बर सन् 1979 को आगरा मे हुआ था।

कवि-सम्राट् बाबूराम शुक्ल

श्री शुक्ल का जन्म उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद नगर के कटरा नुनहाई नामक मोहल्ले मे सन् 1864 मे हुआ था। आपके पिता पडित-पचानन श्री वृन्दावन शुक्ल खजुहा जिला फतेहपुर से आकर यहाँ बस गए थे। वे सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान्, भाष्यकार तथा कवि थे। उन्होने जिला प्रतापगढ के विधाधर ग्राम के निवासी श्री माधवाचार्य से शिक्षा प्राप्त की थी। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने पिताजी के निरीक्षण में ही हुई थी। आप अनेक वर्ष तक फर्रुखाबाद के 'सालिगराम सनातन धर्म विद्यालय' मे अध्यापक रहे थे। जिन दिनो महात्मा गाधीजी का असहयोग-आन्दोलन चल रहा था उन दिनो आपने बढ़-चढकर उसमे भाग लिया था। उस समय आप कन्नौज के डी० जे० हाई स्कूल मे सस्कृताध्यापक थे और आन्दोलन के प्रभाव के कारण आपने वहाँ पढाना छोड दिया था। बाद मे आप फर्रुखाबाद की 'हरनन्दराय पाठशाला' मे मुख्याध्यापक हो गए थे और छात्रो को प्राचीन पद्धति पर पढ़ाने लगे थे।



आप निष्णात अध्यापक होने के साथ-साथ उत्कृष्ट कोटि के कवि, सफल ग्रन्थकार और कुशल सम्पादक भी थे। तन्त्र-मन्त्र और कर्मकाण्ड मे रुचि रखने के अतिरिक्त आप मल्ल विद्या मे भी प्रवीण थे। जब 'कान्यकुब्ज महती सभा' ने फर्रुखाबाद से 'कान्यकुब्ज' नामक मासिक पत्र सन् 1905 मे प्रकाशित करना प्रारम्भ किया था तब आपने ही उसके सम्पादन और प्रकाशन का दायित्व अपने ऊपर लिया था। आप सस्कृत के मर्मज्ञ कवि होने के साथ-साथ हिन्दी, अग्रेजी, फारसी, और उर्दू के भी ज्ञाता थे। आपने 'लल्लू लुगत' नामक एक ऐसे कोश-ग्रन्थ का निर्माण किया था

जिसमे आपने पद्यों के माध्यम से एक शब्द के विभिन्न भाषाओं मे नाम निर्दिष्ट किये थे । एक उदाहरण देखिए :

है 'कैरोल' गान मगल का, 'बून' अशीष बताई ।
'कांग्रेचूलेशन' के माने है, जय-जयकार बधाई ।।
ईश्वर 'गाड' खुदा भी कहिए, 'नेचर' मीन्स खुदाई ।
'अर्थ' जमीन, सूर्य 'सन', चन्दा 'मून', गगन 'स्काई' ।।
लल्लू कैसी लुगत बनाई ।"

इस रचना के अतिरिक्त आपके द्वारा विरचित 'म्लेच्छोक्ति सुधाकर', 'श्री शालीन सुधाकर', 'श्रीराम नाम सुधाकर', 'गीता सूक्ति सुधाकर', 'तुलसी सूक्ति सुधाकर', 'गुरु नक्षत्र माला' तथा 'शक्ति सुधाकर' आदि प्रमुख है। इनके अतिरिक्त आपने 'श्रीमद्भगवद्गीता' का हिन्दी पद्य मे अनुवाद भी किया था। आपकी ब्रजभाषा-काव्य-रचना का एक उदाहरण इस प्रकार है

बहु बार उबारिके दुःखनु ते,
तुम वेगि बढ़ाय सुखै मोहि पोटा ।
अब की यह काहे विलम्ब भयो,
थिर क्यों दुख भयो अति खोटा ।।
करतै तब आस गए बहु मास,
कितेक के पास भ्रमो लइ लोटा ।
मम काज को आज परो किम आय,
कृपा निधि केरि कृपा यह टोटा ।।

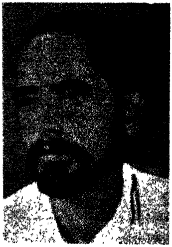
आप जहाँ कुशल कवि थे वहाँ अनेक तन्त्र-मन्त्रो मे भी उलझे रहते थे। शारदा-पीठ के शकराचार्य महाराज ने आपकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर आपको 'कवि-सम्राट्' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी। आपने 'महाशयजी नमस्ते-समीक्षा' नामक एक ऐसा चमत्कारी ग्रन्थ भी लिखा था जिसमे आपने यह सिद्ध किया था कि 'नमस्ते' शब्द केवल ईश्वर के लिए ही प्रयुक्त किया जाना चाहिए, अन्य व्यक्ति के लिए इसका प्रयोग वर्जित है।

आपका निधन सन् 1937 मे हुआ था।

श्री बाबूलाल डेरिया

आपका जन्म 30 मार्च सन् 1907 को मध्यप्रदेश के होशगाबाद जनपद के बाठई नामक ग्राम में हुआ था। आप अपनी छात्रावस्था से ही सामाजिक कार्यों में रुचि लेने लगे थे और आपने हरिजनोद्धार के लिए अनेक आन्दोलन भी किये थे। राष्ट्रीय स्वाधीनता-सग्राम मे सक्रिय रूप से भाग लेकर आपने कई बार जेल-यात्राएँ की थी। आप एक बार जब जेल मे थे तब आपकी माता जी का देहावसान हो गया था। इस घटना से मर्माहत होकर आपने जेल मे 'बेटा को कारावास, माँ को स्वर्गवास' शीर्षक एक कविता भी लिखी थी। आपकी कविताएँ राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत होती थी।

आप इतने स्वाभिमानी थे कि जब आर्थिक विपन्नता को देखकर आपको मध्यप्रदेश सरकार ने पेशन देनी चाही तो आपने सर्वथा इन्कार कर दिया। आप 'अखिल भारतीय दिगम्बर जैन परिषद्' के कार्यों मे बड़ी रुचि लिया करते थे। आपने 2 अक्तूबर सन् 1971 को आचार्य रजनीश से सन्यास ग्रहण किया था। आपने 'तारण बन्धु' नामक एक पत्र का सम्पादन भी कई वर्ष तक किया था।



आपका निधन 2 नवम्बर सन् 1975 को हुआ था।

श्री बालकृष्ण जोशी 'विपिन'

श्री 'विपिन' का जन्म मध्यप्रदेश के पश्चिम नीमाड क्षेत्र के बडवानी नामक स्थान मे 30 सितम्बर सन् 1922 को हुआ था। आप जहाँ एक उत्साही राष्ट्रीय कार्यकर्ता थे वहाँ कुशल कहानीकार और सवेदनशील कवि के रूप मे भी आपकी बहुत ख्याति थी। इटारसी के 'गाधी वाचनालय' के साथ भी आपका अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध रहा था। मध्य-

प्रदेश के मालवा-अंचल की माटी की सौंधी सुगन्ध आपकी रचनाओ मे अत्यन्त सघनता से समाई हुई थी।

आपकी रचनाओ का जो सकलन 'साधना के स्वर' नाम से प्रकाशित हुआ था उसकी भूमिका मे पण्डित माखनलाल चतुर्वेदी ने आपकी काव्य-प्रतिभा का उन्मुक्त भाव से अभिनन्दन किया था। श्री श्रीकान्त जोशी के शब्दों मे "वे प्रणय, प्रकृति और पूजा के गायक थे और इन तीनों मे उनकी आध्यात्मिक दृष्टि अपनी शक्तियों सहित अनुस्यूत रहती थी।" श्री माखनलाल चतुर्वेदी के मत मे श्री विपिन का कवि जगत् के आकर्षण से इतना बेवास्ता रहता था कि जगत् की चीजो की ओर ध्यान ही नही देता था।



आपका निधन 18 अगस्त सन् 1961 को हुआ था।

श्री बालकृष्णदास उर्फ बल्लीबाबू

आपका जन्म सन् 1893 मे काशी के एक सम्भ्रान्त परिवार मे हुआ था। आपकी शिक्षा केवल मिडिल कक्षा तक ही हो सकी थी। जिन दिनो आप काशी के 'जयनारायण स्कूल' मे पढ़ते थे उन्ही दिनो आपका अध्ययन बीच मे अवरुद्ध हो गया था। आप भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द के फुफेरे भाई तथा 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' के प्रथम सभापति श्री राधाकृष्णदास के सुपुत्र थे। और अपने उन्ही सस्कारो एव भारतेन्दु के पारिवारिकजनों के सम्पर्क एवं साहचर्य के कारण आप हिन्दी-सेवा की ओर उन्मुख हुए थे।

आपकी हिन्दी-सेवा का सबसे ज्वलन्त उदाहरण यही है कि आपने काशी मे 'भारतेन्दु नाटक मण्डली' की स्थापना करके उसके द्वारा हिन्दी-रगमच को समृद्ध करने का अभिनन्दनीय कार्य किया था। इस मण्डली के माध्यम से आपने जहाँ अनेक अभिनेता तैयार किये थे वहाँ अनेक नाटकों को निर्देशित करने की दिशा मे भी अपनी प्रमुख भूमिका निबाही थी। यहाँ तक कि सन् 1950 मे जब भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र की 'जन्म-शती' सारे देश मे समारोह पूर्वक मनाई गई थी तब आपने 'भारतेन्दु' पर नाट्य-रूपक का अत्यन्त सफल निर्देशन करके उस समारोह को एक गरिमा प्रदान की थी।

आपने काशी के अनेक सम्भ्रान्त परिवारो के प्रबुद्ध युवकों को अभिनय के क्षेत्र मे प्रवृत्त करने का जो प्रशसनीय कार्य किया था, उससे वहाँ के साहित्यिक जागरण में अत्यन्त उल्लेखनीय सहयोग मिला था। यहाँ तक कि आपने अपनी सुपुत्री डॉ० प्रतिभा अग्रवाल को भी अभिनय की कला मे लगाकर उन दिनो रूढि-ग्रस्त हिन्दू-समाज को एक बड़ी चुनौती दी थी। यह आपकी उस प्रेरणा का ही सुपरिणाम है कि आजकल प्रतिभा जी कलकत्ता की 'अनामिका' नामक सस्था के द्वारा हिन्दी-रगमच की अभिवृद्धि मे अभिनन्दनीय योगदान दे रही है।



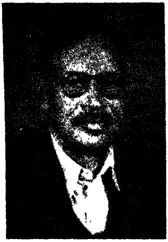
आप जहाँ नाट्य-कला मे रुचि लेने की दिशा मे अग्रसर थे वहाँ आपने प्रसिद्ध बगला-लेखक सर माइकेल मधुसूदन दत्त के नाटक 'शर्मिष्ठा' का अत्यन्त सफल हिन्दी अनुवाद भी प्रस्तुत किया था। इसके अतिरिक्त आपने हिन्दी के लगभग 20 हजार मुहावरो का सकलन किया था, जिस पर आपके निधन के उपरान्त आपकी सुपुत्री श्रीमती प्रतिभा अग्रवाल ने कार्य किया है।

आपका निधन 8 अगस्त सन् 1959 को हुआ था।

श्री बालकृष्ण भट्ट

आपका जन्म उडीसा राज्य के सम्बलपुर जनपद के बडगढ नामक स्थान में 3 अप्रैल सन् 1894 को हुआ था। आपके पिता डॉक्टर गिरधारीलाल भट्ट वैसे मूलत मध्यप्रदेश के जबलपुर नगर के निवासी थे, किन्तु शासकीय सेवा में संलग्न होने के कारण वे उन दिनों बडगढ के चिकित्सालय मे सहायक चिकित्सक के पद पर प्रतिष्ठित थे। आपका परिवार उन दाक्षिणात्य तैलंग ब्राह्मणो मे से था जिनके पूर्वज अनुमानत पन्द्रहवी शताब्दी मे अथवा उससे कुछ पूर्व आन्ध्र-प्रदेश से उत्तर भारत मे आकर बस गए थे तथा अपनी विद्वत्ता एवं पाडित्य के बल पर विभिन्न राज-परिवारो में 'राजगुरु' अथवा 'राज पुरोहित' के रूप मे प्रतिष्ठित हो गए थे। क्योकि आपके पिता छत्तीसगढ और उड़ीसा के पिछडे हुए क्षेत्रो मे शासकीय सेवा मे सलग्न थे अत बार-बार स्थानान्तरण होते रहने के कारण आपकी 'शालेय शिक्षा' इण्टरमीजिएट तक ही हो पाई थी।

जब आपके पिता शासकीय सेवा से निवृत्ति पाकर अपने जन्म-स्थान जबलपुर लौट आए तो आपके सामने जीविका का साधन जुटाने का प्रश्न उपस्थित हुआ। परिणामत आप सन् 1917 मे मण्डला (मध्य प्रदेश) के शासकीय हाई स्कूल मे शिक्षक हो गए। इसके उपरान्त आप 'स्पेन्स ट्रेनिंग कालेज जबलपुर' से दो वर्षीय प्रशिक्षण प्राप्त करके सिवनी के 'राबर्टसन नार्मल प्रैक्टिसिग स्कूल' मे प्रशिक्षित शिक्षक हो गए और इस स्कूल मे लगभग 20 वर्ष तक कार्य-रत रहे। अपने इस कार्य-काल मे आपने उन्नति करके 'मुख्याध्यापक' का सम्मानित पद भी प्राप्त कर लिया था। अपने शिक्षकीय जीवन मे आपने जहाँ एक कर्मठ और कुशल



अध्यापक के रूप मे लोकप्रियता प्राप्त की थी वहाँ अपनी लेखन-प्रतिभा का भी अच्छा परिचय दिया था। आपके द्वारा हिन्दी मे लिखित नागरिक शास्त्र और गणित-सम्बन्धी पुस्तकें उन दिनों मध्यप्रदेश राज्य की प्राथमिक एव माध्यमिक शालाओं के पाठ्यक्रम मे निर्धारित थी।

जब मध्य प्रदेश मे पहले-पहल काग्रेसी सरकारों का निर्माण हुआ और सारे प्रान्त मे गांधी जी की नीति के अनुसार नई शिक्षा-पद्धति का प्रचलन हुआ तब आपने सन् 1939 मे वर्धा के 'विद्या मन्दिर' मे जाकर वहाँ से बेसिक शिक्षा का विधिवत् प्रशिक्षण प्राप्त किया और सन् 1940 मे आपकी नियुक्ति सागर के 'गवर्नमेण्ट हाई स्कूल' मे हो गई। सन् 1946 मे आपका स्थानान्तरण नरसिंहपुर को हो गया और सन् 1947 मे आप फिर सागर लौट आए। उस समय आपकी नियुक्ति वहाँ के 'नार्मल स्कूल' मे हुई थी। लगभग 30-32 वर्ष तक प्रदेश के विभिन्न विद्यालयों मे अत्यन्त तत्परतापूर्वक सफल कार्य करने के उपरान्त आपने 31 अगस्त सन् 1950 को 56 वर्ष की आयु मे शासकीय सेवा से निवृत्ति प्राप्त की थी। क्योंकि उन दिनो आपके ज्येष्ठ पुत्र दुर्गाशकर भट्ट की शिक्षा 'सागर विद्यालय' मे हो रही थी अत आप सन् 1952 तक वहाँ ही बने रहे। इस अवधि मे आपने अपने को व्यस्त रखने की दृष्टि से सागर के 'मोराजी हाई स्कूल', 'जनता हाई स्कूल' तथा 'माडल हाई स्कूल' आदि कई गैर सरकारी विद्यालयों मे शिक्षण का कार्य किया था। जब आपके सुपुत्र की शिक्षा पूर्ण हो गई तो आप अपनी पितृभूमि जबलपुर लौट गए। आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री दुर्गाशकर भट्ट आजकल भारत सरकार के 'वन्य अनुसन्धान सस्थान एव महाविद्यालय देहरादून' मे हिन्दी अधिकारी है। जबलपुर मे रहते हुए भी आप चुप नही बैठे और वहाँ के 'डी० एल० जैन हाई स्कूल' मे अध्यापक के रूप मे कार्य-रत हो गए।

अपने शिक्षकीय जीवन मे आप जहाँ अपने सहकर्मियो मे 'भट्ट मास्टर' के रूप मे जाने जाते थे वहाँ छात्रो मे आप 'पण्डित जी' के गौरवपूर्ण अभिधान से मण्डित थे। अपने इतने लम्बे कार्य-काल मे आप अत्यन्त कर्त्तव्य-परायण, संकोची, अनुशासनप्रिय, सत्यवक्ता, स्नेही और परोपकार-परायण विभूति के रूप मे लोकप्रिय थे। आपने जहाँ गणित और नागरिक शास्त्र-जैसे शुष्क विषयो पर अनेक पुस्तको

की रचना की थी वहाँ काव्य-प्रणयन करने की दिशा मे भी आप परम प्रवीण थे। समस्या-पूर्ति, फुटकर कविताओं और गीतों के रूप मे आपने अनेक रचनाएँ की थी। आपकी काव्य-प्रवृत्ति का विकास अपने शिक्षकीय जीवन मे विभिन्न नगरों की साहित्य-गोष्ठियों में भाग लेते हुए हुआ था। आपकी इन रचनाओ मे तत्कालीन सामाजिक तथा राजनीतिक भावनाओं का अच्छा परिपाक देखने को मिलता है।

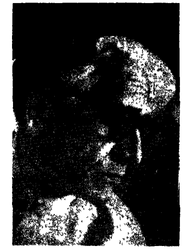
आपने जिन पाठ्य-पुस्तको की रचना की थी उनमे 'अक प्रभाकर', 'नागरिकता' और 'शिशु अक बोध' के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आपकी इन सभी पुस्तकों का प्रकाशन 'मिश्रबन्धु कार्यालय जबलपुर' से हुआ था। आपकी 'अंक प्रभाकर' नामक पुस्तक जहाँ 'विद्यार्थी माला' और 'शिक्षकमाला' के रूप मे पृथक्-पृथक् 4 भागो मे प्रकाशित हुई थी वहाँ 'नागरिकता' के भी तीन भाग थे। इसी प्रकार 'शिशु अक बोध' भी तीन भागो मे छपी थी। आपकी काव्य-कृतियो में से 'दयामय दीजे यह वरदान' तथा 'जय जय भारत देश हमारा' मध्य प्रदेश की अनेक पठ्य-पुस्तको मे प्रकाशित होकर अत्यन्त लोकप्रिय हुई थी।

अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आपको मधुमेह हो गया था और बाद मे आपको तपेदिक ने भी आ घेरा था। फलत आप निरन्तर 7-8 मास तक भोपाल के टी० बी० अस्पताल मे चिकित्सा कराते रहे। जब कुछ आराम होता दिखाई दिया तो आप अपने नगर जबलपुर लौट गए। मधुमेह के कारण आपकी शारीरिक स्थिति इतनी अधिक नाजुक हो गई थी कि आप अधिक समय तक जीवित न रह सके और 4 नवम्बर सन् 1963 को 69 वर्ष की आयु मे इस ससार से विदा हो गए।

श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

आपका जन्म मध्य प्रदेश के ग्वालियर राज्य के शाजापुर जनपद के अन्तर्गत भयाना नामक ग्राम मे 8 दिसम्बर सन् 1898 को हुआ था। आपके पिता गरीब, नि:साधन और भगवद्-भक्त ब्राह्मण थे, अत जन्म के समय थाली बजाने के सिवा कोई विशेष धूमधाम नही हुई थी। क्योकि आपके पिता वैष्णव सम्प्रदाय के अनन्य अनुयायी थे अत आप अपने माता-पिता के साथ नाथद्वारा (राजस्थान) चले गए थे। आप वहाँ की गलियों और मन्दिरो मे इधर से उधर चौकड़ी भरते हुए उन्मुक्त भाव से घूमा करते थे। आपकी माता ने आपके पिता से कहा कि लडका यहाँ आवारा हो जायगा और वे आपको लेकर शाजापुर लौट आईं। जब आप 11 वर्ष के थे तब आपका यहाँ अक्षरारम्भ हुआ था। शाजापुर के स्कूल से अँग्रेजी मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप हाई स्कूल की परीक्षा देने के विचार से उज्जैन चले गए और वहाँ के 'माधव कालेज' मे प्रविष्ट हो गए।

जब आप दसवी कक्षा मे पढ़ रहे थे तब एक ऐसा योग बना कि आपकी समूची जीवन-धारा ही बदल गई। उन दिनों लखनऊ मे काग्रेस का वार्षिक अधिवेशन होने वाला था। काग्रेस पर उस समय लोक मान्य बाल गगाधर तिलक के उग्र विचारो का प्रभाव अधिक था। उन्होने अपने एक भाषण मे देश की जनता को काग्रेस के लखनऊ अधिवेशन मे पहुँचने के लिए निमन्त्रित किया था। जब आपने लोकमान्य का वह भाषण पढा तो आपने भी लखनऊ जाने का निश्चय कर लिया और इधर-उधर से कुछ रुपये जुगाडकर आप लखनऊ पहुँच गए। लखनऊ मे आपकी



भेंट सुकवि माखनलाल चतुर्वेदी से हो गई, जो उन दिनो खण्डवा से 'कर्मवीर' (साप्ताहिक) तथा 'प्रभा' (मासिक) का सम्पादन किया करते थे। 'प्रभा' पर यद्यपि श्री कालूराम गंगराड़े का नाम सम्पादक के रूप मे छपा करता था, किन्तु काम सब चतुर्वेदी जी ही करते थे। चतुर्वेदी जी के साथ आप जब काग्रेस के पण्डाल मे गए तो आपकी भेंट वहाँ पर श्री गणेशशकर विद्यार्थी (सम्पादक 'प्रताप' कानपुर) मे हो

गई। लखनऊ मे ही आपने राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के पहले-पहल दर्शन किये थे। उस समय वे सिर पर पीले रंग की बुन्देलखण्डी पगड़ी बाँधे हुए थे, जिसके कारण आपने उनको कोई पंसारी समझ लिया था। श्री गणेशशकर विद्यार्थी ने जब आपसे आपके भावी कार्यक्रम के बारे मे पूछा तो आपने उनसे स्पष्ट रूप से मैट्रिक करने के बाद बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने का अपना इरादा व्यक्त कर दिया था। जब आप लखनऊ से वापिस लौटने लगे तो गणेश जी ने आपको सहज भाव से यह कह दिया था "आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई। इसे आप लोकाचार न समझें। मेरे लायक सेवा लिखते रहे।"

जब आपने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली तब आपको अपनी आगे की पढाई जारी रखने की दृष्टि से गणेश जी का ध्यान आया और जून सन् 1917 मे कानपुर पहुँच गए। वहाँ पहुँचकर आपने 'क्राइस्ट चर्च कालेज' मे प्रवेश ले लिया। अपने इस अध्ययन-काल मे आपका परिचय जहाँ पण्डित विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक, भगवतीचरण वर्मा और गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' आदि कानपुर के कई साहित्यकारो से हो गया था वहाँ सर्वश्री वृन्दावनलाल वर्मा लक्ष्मीधर वाजपेयी, वेंकटेशनारायण तिवारी और बद्रीनाथ भट्ट-जैसे कई अन्य साहित्यकारो के दर्शनो का सौभाग्य भी आपको प्राप्त हुआ था। आपके कालेज-जीवन के साथियो मे श्री उमाशकर दीक्षित का नाम भी अनन्य है, जो बाद मे अनेक वर्ष तक केन्द्र सरकार मे मन्त्री रहने के अतिरिक्त कर्नाटक के राज्यपाल भी रहे थे। आप पढ़ते हुए 'प्रताप' मे कार्य करते हुए ट्यूशन आदि भी कर लिया करते थे। जब आप कालेज मे चतुर्थ वर्ष के छात्र थे तब अचानक गाधी जी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन के प्रवाह मे पढना छोड़ दिया और पूरी तरह राष्ट्र-सेवा, श्रमिक आन्दोलन और पत्र-कारिता के कार्य को ही अपना लिया।

एक कुशल कवि, कर्मठ कार्यकर्ता और जागरूक पत्रकार के रूप मे आपने जो प्रतिष्ठा अर्जित की थी उसके पीछे श्री गणेशशकर विद्यार्थी-जैसे व्यक्तित्व का बहुत बडा हाथ था। आपने भी पूरी तरह गणेश जी का अनुयायी बनकर जहाँ आजीवन उनके 'प्रताप' की सेवा की वहाँ उनके द्वारा प्रदर्शित राष्ट्र-सेवा के मार्ग पर चलकर उल्लेखनीय कार्य भी किया था। आपने राष्ट्रीय सग्राम के सिलसिले मे अनेक बार कारावास की नृशंस यातनाएँ भोगी थीं। अपने जेल-जीवन में आपको राष्ट्र-नायक जवाहरलाल नेहरू, राजर्षि पुरुषोत्तम-दास टण्डन और आचार्य कृपलानी-जैसे अनेक शीर्षस्थ महानुभावों का सम्पर्क-साहचर्य प्राप्त हुआ था। आप कुल मिलाकर 6 बार जेल गए थे और कारावास की अवधि पूरे 9 वर्ष रही थी। अपने इस जीवन मे आपने जहाँ राष्ट्रपिता महात्मा गाधी के प्रति अन्ध-श्रद्धा रखी थी वहाँ आप नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के भी अनन्य अनुयायी थे। जब महात्मा गाधी ने सुभाषचन्द्र बोस के मुकाबले मे काग्रेस के अध्यक्ष पद के लिए डॉ० पट्टाभि सीतारमैया को खड़ा किया था तब आपने गाधी जी से विद्रोह करके सुभाषचन्द्र बोस के पक्ष मे ही अपना मत दिया था। जब गाधी जी ने 'चौराचौरी' की घटना के उपरान्त अपना सत्याग्रह स्थगित कर दिया था तब गाधी जी के प्रति आपने अपनी प्रतिक्रिया इस प्रकार व्यक्त की थी·

आज खड्ग की धार कुण्ठिता,
है खाली तूणीर हुआ।
विजय-पताका झुकी हुई है,
लक्ष्य-भ्रष्ट यह तीर हुआ।।

जब आपको इससे भी सन्तोष न हुआ तो आपने अपने अन्तर के विद्रोह को इन शब्दो मे प्रकट किया था

कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ,
जिससे उथल-पुथल मच जाए।
एक हिलोर इधर से आए,
एक हिलोर उधर से आए।।

आपका कवि पूर्णत मन, वचन तथा कर्म से राष्ट्र-सेवा के लिए समर्पित था। आपकी राष्ट्रीय रचनाओ ने देश की तरुणाई मे जागृति का जो भैरवी मन्त्र फूंका था वह इतिहास मे सदा अमर रहेगा। आप जहाँ दुर्धर्ष व्यक्तित्व वाले प्रखर योद्धा के रूप मे हमारे जन-जीवन पर छाये हुए थे वहाँ आपके मानस मे प्रेम, सौन्दर्य और विरह की सरस त्रिवेणी भी प्रवाहित होती रहती थी। आपने जिस सफलता से राष्ट्रीय कविताएँ लिखी थी उसी तन्मयता से प्रेम और शृगार रस से परिपूर्ण गीत भी लिखे थे। जिन दिनो 'नवीन' जी के शृगारिक गीतो की बडी धूम थी और आप अपनी रचनाओं के माध्यम से हिन्दी के छायावादी काव्य मे हालाबाद की चाशनी मिला रहे थे तब एक दिन आचार्य महावीर-

प्रसाद द्विवेदी ने आपसे बैसवारी भाषा में पूछा, "काहे हो, बालकिशन, तुहार यू प्रेयसी कहाँ रहत है, जे कर बारे मे तुहई सब सजनी, सखी, सलौनी, प्रान-प्रान लिखत रहत हो?" इस पर नवीन जी ने आचार्य जी को जो उत्तर दिया उससे उनके स्वभाव की मस्ती तथा मनोरंजनप्रियता का परिचय मिलता है। उन्होंने कहा था, "अब तुम वूढ भयो, का करिहौ इन सजननि का मरम जानिकै।" आप जहाँ एक सफल कवि के रूप मे साहित्य में प्रतिष्ठित थे वहाँ गद्य-लेखन मे भी आपने अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। देश की सामयिक राजनीति पर लिखे गए आपके निबन्धो और लेखो मे भी आपकी शैली का अद्भुत निखार दृष्टिगत होता था। आप न केवल एक पत्रकार, कवि और निबन्ध-लेखक थे अपितु कहानी-लेखन मे भी भी आपको अभूतपूर्व सफलता मिली थी। आपकी दिसम्बर सन् 1916 की 'सरस्वती' मे प्रकाशित 'सन्तू' नामक कहानी आपकी कथा-लेखन-पटुता का ज्वलन्त साक्ष्य प्रस्तुत करती है। इस कहानी को लिखने की प्रेरणा आपको हिन्दी के प्रख्यात पत्रकार श्री सिद्धनाथ माधव आगरकर के कनिष्ठ भ्राता के असामयिक निधन से मिली थी, जो आपके बाल्यकाल के सहपाठी थे।

यद्यपि आपने 51 वर्ष की उतरती आयु मे सरला मघेरमलानी नामक एक सिन्धी युवती से विवाह सम्पन्न कर लिया था, किन्तु आप वैवाहिक जीवन बिताते हुए भी 'अनिकेतन' की तरह रहे थे। आपने जो भावनाएँ, 1 अप्रैल सन् 1940 मे विवाह से लगभग 10-11 वर्ष पूर्व लिखी गई अपनी एक कविता मे व्यक्त की थी, वे आपके जीवन पर सही रूप से चरितार्थ होती है। आपने लिखा था

हम अनिकेतन, हम अनिकेतन!
हम तो रमते राम, हमारा—
क्या घर, क्या दर, क्या वेतन?

आपकी रचना-प्रतिभा का बहुमुखी परिचय आपकी काव्य-कृतियों को देखने से भली-भाँति मिल जाता है। आपकी प्रमुख प्रकाशित कृतियो मे 'कुकुम' (1936), 'अपलक' (1951), 'क्वासि' (1952), 'रश्मि-रेखा' (1952), 'विनोबा-स्तवन' (1953), 'उर्मिला' (1958), 'प्राणार्पण' (1962) तथा 'हम विषपायी जनम के' (1964) के नाम उल्लेखनीय है। इनमे से अन्तिम दो कृतियाँ आपके निधन के उपरान्त प्रकाशित हुई थी। आपने जहाँ गुजरात के प्रख्यात साहित्यकार श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी का समर्पित 'अभिनन्दन ग्रन्थ' के सम्पादन मे सहयोग दिया था वहाँ सन् 1960 मे प्रकाशित 'हमारी ससद्' नामक पुस्तक के लेखन मे श्री अनन्तशयनम् आयंगर की भी सहायता की थी। आपकी चुनी हुई कविताओ का एक सकलन श्री भवानीप्रसाद मिश्र के सम्पादन में राजपाल एण्ड संस दिल्ली की 'आज के लोकप्रिय कवि' पुस्तकमाला के अन्तर्गत मई सन् 1967 में प्रकाशित हुआ है।

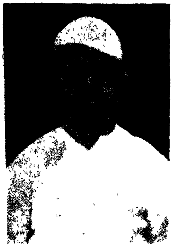
आपने जहाँ अनेक वर्ष तक 'प्रताप' और 'प्रभा'-जैसे पत्रों के सम्पादन मे अपना उल्लेखनीय सहयोग दिया था वहाँ कानपुर के बहुत-से मजदूर-आन्दोलनों मे भी आपका अत्यन्त सक्रिय योगदान रहा था। अपने विरोधियो के प्रति भी आप सदा उदारता का व्यवहार किया करते थे। आप पुरातनता के स्थान पर नवीनता की स्थापना के पक्षपाती तो अवश्य थे, किन्तु भारतीय सस्कृति को तिलाजलि देकर नई मान्यताओं को अपनाने के समर्थक न थे। आप मार्क्स के बजाय गाधी तथा हिन्दुस्तानी के स्थान में 'हिन्दी' को ही ठीक समझते थे।

आप जहाँ अनेक वर्ष तक उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी के सचिव रहे थे वहाँ स्वतन्त्रता के उपरान्त 'विधान निर्मात्री परिषद्' के सदस्य के रूप मे भी आपकी सेवाएँ सर्वथा अभिनन्दनीय रही थी। उन दिनो हिन्दी को राष्ट्र-भाषा के रूप मे प्रतिष्ठित करने की दिशा मे आपने अभूतपूर्व सघर्ष किया था। आप सन् 1952 मे जहाँ 'भारतीय लोकसभा' के सदस्य निर्वाचित हुए थे वहाँ मृत्यु से पूर्व भी राज्य-सभा के सदस्य थे। भारत के राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद द्वारा आपको 26 अप्रैल सन् 1960 को 'पद्मभूषण' की सम्मानोपाधि प्रदान की गई थी और आपका निधन 3 दिन बाद 29 अप्रैल सन् 1960 को हुआ था।

श्री बालकृष्ण शर्मा वैद्यराज

आपका जन्म राजस्थान के अलवर राज्य के बहरोड़ नामक स्थान मे सन् 1901 मे हुआ था। घर के वातावरण मे हिन्दी तथा सस्कृत की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आपने दिल्ली के 'बनवारीलाल आयुर्वेद विद्यालय' मे आयुर्वेद का सर्वांगीण

अध्ययन किया था और दिल्ली मे ही आयुर्वेद की प्रैक्टिस करने लगे थे। अपने पारिवारिक संस्कारों के कारण आप



हिन्दी तथा सस्कृत मे काव्य-रचना करने मे पूर्णत. सिद्धहस्त थे। आपको बनारस के आयुर्वेद-जगत् की ओर से 'आयुर्वेद भूषण' की सम्मानोपाधि प्रदान की गई थी।

जिन दिनो दिल्ली मे हिन्दी का कुछ भी प्रचार नही था तब आप-जैसे व्यक्तियो ने ही यहाँ हिन्दी का बिरवा रोपा था। आप जहाँ कई वर्ष तक राजधानी की एक-मात्र पहली साहित्यिक सस्था 'कवि समाज' के प्रमुख पदाधिकारी और सक्रिय सदस्य रहे थे वहाँ आपने आकाशवाणी दिल्ली पर आयोजित पहले 'हिन्दी कवि सम्मेलन' मे भी भाग लिया था। आपके द्वारा किया गया 'श्रीमद्भगवद्गीता का हिन्दी-अनुवाद' और 'पवन दूत' नाम का मौलिक खण्ड-काव्य अप्रकाशित ही है।

आपका निधन 7 जून सन् 1974 को हुआ था।

श्री बालमुकुन्द मिश्र

श्री मिश्र का जन्म राजस्थान की अलवर रियासत के ततारपुर नामक ग्राम के एक कुलीन ब्राह्मण-परिवार में 13 दिसम्बर सन् 1921 को हुआ था। आपके पिता श्री ओंकारनाथ दिल्ली के चाँदनी चौक बाजार के महाजनी मोहल्ले के एक मन्दिर मे पुजारी थे और आप उन्हीके साथ बचपन मे दिल्ली आ गए थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा उनके निरीक्षण मे दिल्ली मे ही हुई थी। विधिवत् किसी विद्यालय मे न पढकर मिश्र जी ने अपने स्वाध्याय के बल पर ही सस्कृत हिन्दी, उर्दू तथा रूसी आदि भाषाओं का अच्छा ज्ञान अर्जित कर लिया था और 'तर्क रत्न' तथा 'साहित्यालंकार' की उपाधियाँ भी आपने प्राप्त की थी।

आपने 'वीर अर्जुन' दैनिक के संचालक तथा प्रसिद्ध पत्रकार प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति के निजी सहायक के रूप मे कई वर्ष तक कार्य किया था और जब वे दैनिक 'जनसत्ता' के सम्पादक नियुक्त हुए थे तब आप उनके साथ उसके सम्पादकीय विभाग के कार्य करने लगे थे। एक कवि, पत्रकार तथा लेखक के रूप मे आपने राजधानी में अपना अच्छा-खासा स्थान बना लिया था और स्थानीय संस्था 'कवि समाज' की विभिन्न प्रवृत्तियो मे आप सक्रिय रूप से भाग लिया करते थे।

आपने जहाँ दैनिक 'स्वराज्य' तथा 'वीर हिन्दू' (साप्ताहिक) नामक उर्दू पत्रो मे कार्य किया था वहाँ 'हरिजन हितैषी', 'युग छाया', 'अशोक' तथा 'साधना' आदि अनेक हिन्दी पत्रो के



सम्पादन मे भी अपना सक्रिय सहयोग दिया था। पिछले कई वर्ष से आप जहाँ 'दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के खारी बावली मण्डल की ओर 'तथ्य' नामक एक साहित्यिक त्रैमासिक पत्र का सम्पादन कर रहे थे वहाँ उसी मण्डल की ओर से प्रति वर्ष होली के अवसर पर होने वाले 'व्यग्य-विनोद कवि सम्मेलन' के समय प्रकाशित की जाने वाली 'स्मारिका' का सम्पादन भी आप नियमित रूप से किया करते थे।

आप एक भावना-प्रवण कवि के रूप मे प्रतिष्ठित होने के साथ-साथ श्रमजीवी लेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित तथा सम्पादित प्रकाशित कृतियों मे 'न्यायाधीश का निर्णय' (प्रहसन), 'आर्यसमाजी सस्कार विधि-दिग्दर्शन', 'आर्यसमाज की ओर', 'आज के गीत' तथा 'दीवाने जफर' आदि प्रमुख

हैं। आप द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान भारत सरकार के 'साग्स पब्लिसिटी आर्गनाइजेशन' में कवि एवं गीतकार भी रहे थे। आकाशवाणी के नई दिल्ली केन्द्र से भी आपकी वार्ताएँ तथा कविताएँ प्रसारित होती रहती थी।

आपका निधन 6 जनवरी सन् 1982 को हुआ था।

श्री बालाबख्श पाल्हावत

श्री पाल्हावत का जन्म राजस्थान की जयपुर रियासत के हणूतिया नामक ग्राम मे सन् 1855 मे हुआ था। आपके पिता नृसिहदास, पितामह जमराज और प्रपितामह हुकमराय भी अच्छे कवि के रूप मे विख्यात थे। 'वाणी भूषण', 'सत्योपदेश', 'भाषा राजनीति' तथा 'भाषा चाणक्यानुवाद' आदि अनेक ग्रन्थो के रचनाकार पाल्हावत बारहठ उम्मेदराय जी भी आपके पूर्वजो म थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा घर पर ही हुई थी और बाद मे आपने दादू पन्थी सन्त खेमदास से अनेक ग्रन्थो का अध्ययन किया था।

आप पिगल तथा डिगल दोनो ही भाषाओ के अनन्य प्रेमी थे और दोनों मे ही आपने अनेक ग्रन्थों की रचना करके अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया था। आपकी कृतियो मे 'अश्व विधान सूचना', 'भूपाल सुजस वर्णन', 'आसीस विगनावली', 'आसीस अष्टक', 'आसीस पच्चीसी', 'षट् शास्त्र साराश', 'खडेला पाना खुर्द की वशावली', 'शास्त्र विधान सूचना', 'शास्त्र प्रकाश', 'शस्त्र सार', 'सन्ध्योपासना उत्थानिका', 'क्षत्रिय शिक्षा पचाशिका', 'छन्द देवियो के', 'छन्द राजाओ के', 'राव राजा माधवसिह सीकर वालो का स्मारक काव्य', 'मान महोत्सव महिमा', 'कछवाहो के खाँपे और ठिकाने' तथा 'तरुकुल सुयश' आदि उल्लेखनीय है।

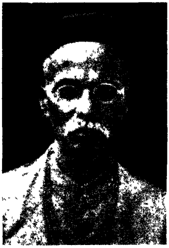
आपने नागरी प्रचारिणी सभा काशी को सन् 1922 मे 5 हजार रुपये और सन् 1923 मे 2100 रुपये दान मे दिये थे, जिसके ब्याज से सभा की ओर से कुछ समय तक 'बालाबख्श चारण राजपूत ग्रन्थमाला' प्रकाशित हुई थी। इसके अतिरिक्त आपने अनेक असहाय चारण बालको के अध्ययन के लिए छात्रवृत्ति देने के निमित्त 10 हजार रुपये का दान जोबनेर हाई स्कूल को भी दिया था।

आपका निधन सन् 1913 मे हुआ था।

श्री बिहारीलाल जैन 'चैतन्य' बुलन्दशहरी

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर नगर मे 15 अगस्त सन् 1867 को एक प्रतिष्ठित अग्रवाल जैन-परिवार मे हुआ था। तत्कालीन परिपाटी के अनुसार आपकी प्रारम्भिक शिक्षा उर्दू-फारसी मे ही हुई थी और आपने मैट्रिक की परीक्षा सन् 1891 मे फारसी भाषा के साथ उत्तीर्ण की थी। मैट्रिक की परीक्षा मे सफल होने के उपरान्त सर्वप्रथम आप सन् 1893 मे गवर्नमेण्ट हाई स्कूल बुलन्दशहर मे केवल 12 रुपये मासिक पर शिक्षक नियुक्त हुए थे और फिर उत्तर प्रदेश के अमरोहा और बाराबकी नामक नगरो मे स्थानान्तरित होते हुए अन्त मे सन् 1925 मे बिजनौर आकर सेवा-निवृत्त हुए थे और यहाँ पर ही 'चैतन्य प्रेस' नाम से अपना प्रकाशन एव मुद्रण का कार्य करते थे।

क्योकि आपकी प्रारम्भिक शिक्षा उर्दू मे ही हुई थी, अतएव आपने लेखन के क्षेत्र मे पहले-पहल उर्दू के माध्यम से ही प्रवेश किया था। आपने सन् 1897 से सन् 1905 तक उर्दू मे 'दिल आराम' नामक एक पत्र का सम्पादन तथा प्रकाशन बुलन्दशहर से किया था और उन दिनो आपकी 'तशरीहुत मसाहत' नामक एक उर्दू पुस्तक बहुत दिन तक शिक्षा विभाग के पाठ्य-क्रम मे भी नियत रही थी। आपकी 'अनमोल बूटी' 'फादे जहर' तथा 'गजनीए मालूमात' नामक 3 उर्दू पुस्तके और भी थी। आपने अमरोहा, बाराबकी और बिजनौर मे जैन पाठशालाएँ भी स्थापित की थी।



आपने अपने निजी स्वाध्याय एव अध्यवसाय के बल पर अग्रेजी, उर्दू तथा फारसी के अतिरिक्त सस्कृत एव हिन्दी का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। बाद मे आपने

अपनी लेखनी के द्वारा जो अनेक ग्रन्थ-रत्न हिन्दी में लिखे थे उनमें 'संस्कृत हिन्दी व्याकरण', 'सोग सार', 'राम चरित्र', 'हनुमान चरित्र', 'मिथ्यात्व नाशक नाटक', 'वैराग्य कौतूहल' 'जम्बू कुमार', 'भोज प्रबन्ध नाटक', 'विश्व अवलोकन', 'अग्रवाल इतिहास', 'हकीम अरस्तू', 'हकीम अफलातून', 'शंकराचार्य', 'दवामी जन्त्री' तथा 'सुदामा चरित्र' आदि प्रमुख हैं। आपके द्वारा सस्कृत से हिन्दी मे अनूदित कृतियो मे 'जैन वैराग्य शतक', 'भर्तृहरि शतक' तथा 'चाणक्य नीति दर्पण' के नाम प्रमुख रूप से महत्त्व रखते है। आपने 'बृहत् जैन शब्दार्णव' नामक एक विशाल कोश का निर्माण भी दो भागों में किया था। इसका प्रकाशन आपने अपने बाराबकी के निवास-काल मे किया था।

आपका निधन सन् 1927 मे हुआ था।

श्री बुधजी आसिया

श्री आसिया का जन्म राजस्थान के बाडमेर क्षेत्र के पचपदरा परगने के 'भांडियावास' नामक गाँव मे सन् 1784 मे हुआ था। आपका वास्तविक नाम बुद्धयान था। आप कविराजा बाँकीदास के भाई होते हुए भी उनसे खट-पट रखते थे। मारवाड के महाराजा मानसिंह आपको बहुत समझाया करते थे और उन्होने आपका नाम 'बालकनाथ' रख दिया था। आपके द्वारा रचित अनेक 'डिंगल गीत' आज भी राजस्थान मे अत्यन्त लोकप्रिय है। एक बार जब आप बहुत भयकर रूप से बीमार हुए तब 'मायाराम' नामक एक दर्जी ने आपकी बहुत सेवा की थी। इससे प्रसन्न होकर आपने 'दर्जी मायाराम री बात' नाम से एक ख्यात लिखकर उसे सदा-सर्वदा के लिए अमर कर दिया।

यद्यपि आपने बहुत कम लिखा है, परन्तु फिर भी आपकी जो कृतियाँ आजकल उपलब्ध है उनमे 'दर्जी मायाराम री बात' के अतिरिक्त 'दवावैत मानसिंह री', 'देवनाथ जी रा कवित्त', 'माखा रासो', 'दवावैत हडमान जी री', एवं 'भगतमाल' अत्यन्त उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखे गए अनेक फुटकर गीत भी प्राप्त है।

आपका स्वभाव बडा उग्र और उद्धत था, किन्तु फिर भी जोधपुर-नरेश महाराजा मानसिंह ने आपको अपने दरबार के 'सम्मानित' कवियो में स्थान दिया था। उग्र स्वभाव का होने के कारण आपको कोई गाँव आदि दान मे नही मिला था। बुध जी ने महाराजा मानसिंह के निधन पर जो मरसिया (शोक-काव्य) लिखा था वह इस प्रकार है :

आजकलू आवियो आज मरजादा उट्ठी।
आज हुवो अन्याय आज धुम पाजा फुट्टी।।
आज सोच उपजो आज भागी धन आसा।
मान आज महाराज कियो बेंकुठो बासा।।
आज रो दीह ऊगो अरक भूंडे रग भयान से।
आज रो दीह खोटी अरक मरण सुनायो मान से।।

आपका देहावसान सन् 1863 मे हुआ था।

श्रीमती बुन्देलाबाला

श्रीमती बुन्देलाबाला का जन्म उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जनपद के शादियाबाद नामक कस्बे के एक कायस्थ परिवार मे सन् 1883 मे हुआ था। आपका वास्तविक नाम गुजरातीबाई था और आप हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार लाला भगवानदीन की धर्मपत्नी थी। जब आप 20 वर्ष की थी तब उनसे आपका विवाह सन् 1903 मे हुआ था। यद्यपि यह बात बिलकुल ठीक है कि आपके कवि-व्यक्तित्व का विकास लाला जी की प्रेरणा से ही हुआ था, परन्तु उनके श्रृगारी स्वभाव का प्रभाव बुन्देलाबाला के कवि पर बिलकुल भी नही पड सका था। लाला जी रीतिकालीन परम्परा के समर्थक तथा सम्पोषक थे और बुन्देलाबाला अपनी रचनाओं मे राष्ट्रीय भावनाओ का प्रचुर समावेश किया करती थी। कुछ लोगों का तो यहाँ तक विचार है कि लालाजी ने 'वीर पंच रत्न' नामक अपनी अत्यन्त ख्यातिप्राप्त कृति की रचना आपकी ही प्रेरणा से की थी। आपकी रचनाओ का एक सकलन छतरपुर-निवासी श्री चतुर्भुजसहाय वर्मा ने 'बाल विचार' नाम से प्रकाशित किया था।

देश के नवयुवकों मे साहस तथा शौर्य के भाव जगाने की दिशा मे आपकी रचनाओं ने बहुत बड़ा कार्य किया था। आपकी ये प्रेरणात्मक पंक्तियाँ इसका ज्वलन्त प्रमाण है :

सावधान हे युवक उमंगो, सावधानता रखना खूब।
युवा समय के महा मनोहर, विषयों मे जाना मत डूब ।।
सब कारज करने के पहले, पूछो अपने दिल से आप—
'इसका करना इस दुनिया मे, पुण्य मानते हैं या पाप ।।'

है प्रत्येक ऊँच मे नीचा, प्रति मिठास मे कड़वा स्वाद।
प्रति कुकर्म में शर्म भरी है, मर्म खोय मत हो बरबाद ।।
प्रकृति नियम यह सदा सत्य है, कैसे इसे मिटाओगे-
जग मे जैसा कर्म करोगे, वैसा ही फल पाओगे ।।

आपका निधन सन् 1910 मे विवाह के केवल 6-7 वर्ष उपरान्त ही हो गया था।

श्री बैजनाथ केडिया

आपका जन्म राजस्थान मे खेतडी क्षेत्र के चिडावा नामक नगर मे सन् 1885 मे हुआ था। आपके पिता ने आपको अपने पास कलकत्ता बुला लिया था, जहाँ पर वे कपडे की दलाली का कार्य करते थे। प्रारम्भ मे आपने भी वही कार्य किया, किन्तु बाद मे जब देश मे स्वाधीनता-आन्दोलन की धूम मची तब श्री नागरमल मोदी और श्री पदमराज जैन नामक अपने दो साथियों के सहयोग से आपने स्वदेशी वस्तुओ के प्रचार का कार्य केवल 50 रुपये की स्वल्प-सी पूँजी से शुरू किया था। 'तिलक स्वराज्य फण्ड' के लिए चन्दा एकत्रित करने के अतिरिक्त जब देश मे सविनय अवज्ञा आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तब उसमे भी आपने सोत्साह भाग लिया था।

आपने सन् 1930 मे 'हिन्दी पुस्तक एजेन्सी' नाम से हिन्दी-पुस्तकों के प्रकाशन और विक्रय का जो कार्य कलकत्ता मे प्रारम्भ किया था वह धीरे-धीरे इतना विस्तार पाता गया कि उसकी काशी, पटना, दिल्ली तथा लाहौर मे भी शाखाएँ स्थापित हो गई थी। हिन्दी के प्रख्यात उपन्यासकार प्रेमचन्द जी की पुस्तकें सर्वप्रथम आपने ही प्रकाशित की थी। आपने हिन्दी पुस्तक एजेन्सी के माध्यम से हिन्दी के प्रकाशन-व्यवसाय मे एक नया आदर्श स्थापित किया था। 'एजेन्सी' की ओर से सन् 1931 मे आपने 'विजय' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन भी किया था, जिसके आदिसम्पादक श्री लक्ष्मणनारायण गर्दे थे। उनके बाद इस पत्र का सम्पादन श्री विश्वम्भरनाथ जिज्जा तथा ठा० रामाशीषसिंह ने किया था। श्री छबिनाथ पाण्डेय ने भी बीच मे कुछ समय तक इसका सम्पादन किया था।

आप जहाँ उच्चकोटि के प्रकाशक तथा सामाजिक कार्य-कर्ता थे वहाँ आपने स्वाधीनता-आन्दोलन मे भी बढ़-चढ़कर भाग लिया था। जब महात्मा गांधी ने अपने सभी कार्यकर्ताओं को ग्रामोन्मुख होने तथा वहाँ खादी-उत्पत्ति के केन्द्र स्थापित करने की प्रेरणा की थी तब आपने अपने मित्र श्री महावीर-प्रसाद पोद्दार के सहयोग से बनारस-मुगलसराय मार्ग पर दुलही ग्राम के समीप 50 बीघा जमीन लेकर 'चर्खा-प्रचार' का एक केन्द्र स्थापित किया था। इसी प्रकार आपने रूढि-ग्रस्त अग्रवाल समाज के उत्थान के लिए 'मारवाडी अग्रवाल सभा' तथा 'केडिया जाति सहायक सभा' नामक सस्थाओ की स्थापना भी की थी। कुछ समय तक आपने कलकत्ता मे गो-रक्षा-आन्दोलन की दिशा मे भी उल्लेखनीय कार्य किया था और वहाँ पर 'श्रीकृष्ण गोशाला' की स्थापना की थी।



आपने जहाँ कलकत्ता की 'मारवाडी रिलीफ सोसाइटी' की स्थापना मे अपना प्रमुख सहयोग प्रदान किया था वहाँ बिहार-भूकम्प के समय तक वहाँ की जनता की उल्लेखनीय सहायता की थी। कलकत्ता की 'बडा बाजार कुमार सभा' और उसके 'विद्यालय' की सस्थापना मे भी आपका घनिष्ठतम सहयोग रहा था। आप जहाँ उच्चकोटि के प्रकाशक राष्ट्रीय एव सामाजिक कार्यकर्ता थे वहाँ आपने लेखन के क्षेत्र मे अपनी प्रतिभा का अच्छा प्रदर्शन किया था। आपके द्वारा विरचित एव सम्पादित रचनाओ मे 'जल चिकित्सा',

'स्त्री और पुरुष', 'अस्फुट कलियाँ' (1930), 'काने की करतूत' (1930), 'व्यंग्य चित्रावली' (1933), 'दूर्वा दल' (1933), 'छूत-अछूत' (1933), 'तीन तिकड़मी'(1933), 'देखो और हँसो' (1933), 'नटखट नाथू' (1933), 'शेर का शिकारी' (1933), 'एक तीसमारखाँ' (1933), 'महिला मण्डल' (1938), 'समाज के हृदय की बातें' (1938), 'काला साहब'(1936), 'चोखी-चोखी कहानियाँ' (1939), 'चौपट चपेट' (1939), 'बाल हठ' (1939), 'सफा चट' (1940) तथा 'ग्रामीण आदर्श' (1940) के नाम उल्लेखनीय है। आपने अपनी 'हिन्दी पुस्तक एजेन्सी' नामक सस्था के द्वारा 7-8 सौ से अधिक प्रकाशन किए थे। आपके प्रकाशन से उन दिनो श्री प्रेमचन्द के अतिरिक्त सर्वश्री जे० पी० श्रीवास्तव, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' आदि अनेक लेखको की पुस्तके प्रकाशित हुई थी।

आपका निधन 21 दिसम्बर सन् 1947 को हुआ था।

श्री बैजनाथ भोंडले

श्री भोडले का जन्म मध्य प्रदेश के दतिया नामक नगर मे सन् 1823 मे हुआ था। आप अपने समय के अच्छे कवि थे। आपकी अनेक स्फुट अप्रकाशित रचनाएँ आज भी समस्त बुन्देलखण्ड की साहित्यिक परम्परा के लिए एक प्रकाश-स्तम्भ का कार्य कर रही है। रस, छन्द और अलकार के आकर्षक चमत्कार के साथ-साथ आपकी रचनाएँ भक्ति रस से ओत-प्रोत थी। आपकी रचना का एक उदाहरण इस प्रकार है

जरब जरी पै नग जटित जवाहर के
पदर किनारा गज-मुक्ता मन गोड जात।
माज तन भूषण अभूत कन्दर्प अर्प,
झरफ दवानल की उपमान रौंध जात।
कहे 'बैजनाथ' आफताब को दबावे अम्ब,
ताब महताब की न चचलान कौंध जात।
तेरे मुख-चन्द्र को प्रकाश छिति माँहि देख,
चकत भयो सो चित्त चन्द्र चकचौंध जात॥

आपका निधन सन् 1863 मे हुआ था।

श्री बोधा कवि

बोधा कवि का जन्म सन् 1747 मे उत्तर प्रदेश के आगरा जनपद के फीरोजाबाद नामक नगर मे हुआ था। आपका असली नाम बुद्धिसेन था, किन्तु लोग आपको 'बोधा' ही कहा करते थे। बोधा फीरोजाबाद नगर के समीपवर्ती ग्राम 'रहना' मे खेती किया करते थे, जहाँ पर आपके पूर्वजो की जमीन थी। एक बार लगान न चुकाने के कारण आपके जमीदार मिर्जा गफूर ने जब आपकी खेती बे-दखल करा ली थी तब बोधा कवि ने उसे जो कविता बनाकर सुनाई थी उसकी अन्तिम पक्ति इस प्रकार थी

'गरज-गरज गाज गिरे, गजे गफूर पै'

इस कविता को सुनकर जमीदार गफूर हँस पडा और उसने बोधा को खेत वापिस कर दिए। कुछ लोग इनका जन्म राजापुर (बाँदा) मानते है, जो ठीक नही है।

यह भी कहा जाता है कि बोधा कवि का पन्ना दरबार मे भी बडा सम्मान था। वहाँ पर आपका 'सुभान' नाम की एक वेश्या से प्रेम हो गया था। जब पन्ना-नरेश को इसका पता चला तो उन्होंने आपको 6 मास के लिए अपने राज्य से निकाल दिया। फलस्वरूप बोधा ने ये 6 मास बडे कष्ट मे व्यतीत किए। जब आप यह निर्वासन का दण्ड भोगकर पुन दरबार मे पहुँचे तो अपने 'विरह वारीश' ग्रन्थ से आपने यह पद सुनाए:

अति खीन मृनाल के तारहु ते,
तेहि ऊपर पाँव दै आउनो है।
सुइ बेहते द्वार सकी न तहाँ,
परतीति को टाँडो लदावनो है॥
कवि 'बोधा' अनी घनी नेजहू ते,
चढि तापै न चित्त डरावनो है।
यह प्रेम को पन्थ कराल महा,
तलवार की धार पै धावनो है॥
एक 'सुभान' के आनन पै,
कुरबान जहाँ लगि रूप जहाँ को।
कैयो शतक्रतु की पदवी,
लुटियै लखि कै मुस्काहट ताको॥
सोक जरा गुजरा न जहाँ,
कवि 'बोधा' जहाँ उजरा न तहाँ को।

जान मिलै तो जहान मिलै,
नहिं जान मिलै तो जहान कहाँ को ।।

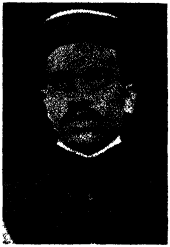
इन पदों को सुनकर महाराज बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने आपसे कुछ माँगने के लिए कहा। इस पर बोधा के मुख से सहसा 'सुभान अल्लाह' निकल गया। महाराज ने प्रसन्न होकर आपको 'सुभान' ही दे दी। प्रेम की पीर को अभिव्यक्त करने मे आप पूर्णत. सिद्ध थे। आपकी ऐसी प्रतिभा का परिचय 'विरह वारीश' के अतिरिक्त आपकी 'इश्कनामा' नामक पुस्तक मे भी देखने को मिलता है। इन दो रचनाओं के अतिरिक्त आपकी 'बारहमासी', 'फूलमाला' और 'पक्षी मजरी' नामक रचनाएँ भी उल्लेख्य है। आपकी 'बाग विलास या बाग वर्णन' नामक कृति में फीरोजाबाद के महासिह बाग का वर्णन किया गया है।

आपका निधन सन् 1803 मे हुआ था।

श्री ब्रजनन्दनप्रसाद मिश्र

श्री मिश्र जी का जन्म उत्तर प्रदेश के पीलीभीत नामक नगर मे सन् 1891 मे हुआ था। आप सस्कृत तथा हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान् और कुशल आयुर्वेदिक चिकित्सक थे। पीलीभीत के सामाजिक जीवन मे भी आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान था। राजनैतिक क्षेत्र के आप प्रथम और सर्वश्रेष्ठ कार्यकर्ता थे। इसी कारण आप पीलीभीत जनपद से सर्वप्रथम एम०एल०सी० चुने गए थे। लखनऊ मे जब काग्रेस का अधिवेशन हुआ था तब उसमे भाग लेने के लिए पीलीभीत नगर के प्रतिनिधि के रूप मे आपको ही भेजा गया था। उत्तर प्रदेश के प्रथम मुख्यमन्त्री श्री गोविन्दवल्लभ पन्त आपके परम मित्र थे।

आप एक उच्चकोटि के सामाजिक तथा राजनीतिक कार्यकर्ता होने के साथ-साथ हिन्दी के कट्टर हिमायती, वक्ता और सुलेखक थे। जिन दिनो कचहरियों मे सर्वत्र उर्दू का ही बोलबाला था तब आपने जन-साधारण की सहायता के लिए वकालतनामे के फार्म हिन्दी मे छपवाए थे। आयुर्वेदिक तथा होम्योपैथी चिकित्सा के व्यस्त जीवन से समय निकालकर आप हिन्दी मे लेखन भी नियमित रूप से किया करते थे। मौलिक लेखन के अतिरिक्त आपने बंगला तथा अँग्रेजी के कई ग्रन्थों का अनुवाद भी अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। आपने पीलीभीत से ही अपनी रचनाओ के प्रकाशन के लिए 'राष्ट्रीय साहित्य कार्यालय' नामक एक प्रकाशन-सस्था की स्थापना भी की थी।



आपके द्वारा लिखित एव अनूदित रचनाओ मे 'कुसुम वाटिका', 'सुमन वाटिका', 'यूनान की कहानियाँ', 'अभिमन्यु वध', 'गुरु गोविन्द-सिंह', 'शिवाजी और मराठा जाति', 'भाग्य-चन्द्र', 'दामिनी', 'अश्रु-धारा', 'लोकमान्य तिलक के स्वराज्य के भाषण' तथा 'लोकमान्य तिलक का जीवन-चरित' आदि के अतिरिक्त सन् 1910 मे हुए लोकमान्य बाल गगाधर तिलक पर अभियोग का हिन्दी अनुवाद भी उल्लेखनीय है।

आपका निधन सन् 1927 मे हुआ था।

श्री ब्रजभूषण

श्री भूषण का जन्म 2 अप्रैल सन् 1924 को उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर मे हुआ था। आप हिन्दी के सुविख्यात कवि तथा फिल्मी गीतकार श्री सरस्वतीकुमार 'दीपक' के छोटे भाई थे। मेरठ कालेज से उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप कुछ दिन तक दिल्ली मे हिन्दी के प्रतिष्ठित साहित्यकार श्री जैनेन्द्रकुमार के साहित्यिक सहायक रहे और बाद मे बम्बई चले गए।

बम्बई मे आपने फिल्म-क्षेत्र मे जाकर फिल्मो के सवाद लिखने का कार्य प्रारम्भ किया और उसमे आपको आशातीत सफलता भी प्राप्त हुई। आपने के० ए० अब्बास की

अनेक उर्दू रचनाओं तथा फिल्मी संवादों का उर्दू से हिन्दी मे अनुवाद भी किया था। आपने बम्बई आकाशवाणी के लिए हिन्दी के प्रख्यात उपन्यासकार प्रेमचंद की 'मन्त्र' कहानी का रेडियो रूपान्तर भी किया था।

आप नाटक के क्षेत्र मे यथार्थवादी शैली के सफल प्रयोक्ता थे। इस सम्बन्ध में आपने सन् 1962 मे 'हिन्दी ब्लिट्ज' मे लेख भी लिखे थे। आपके द्वारा लिखित 'आधुनिक पत्नी','प्रतिकार या प्यार', 'मुगल साम्राज्य की अन्तिम ज्योति', 'मन्नाटा', 'कुतुबमीनार तथा 'हीन भावना और उसका उपचार' आदि रचनाएँ आकाशवाणी से प्रसारित होकर पर्याप्त लोकप्रिय हुई थी। आप 'फिल्म राइटर्स एसोसिएशन' के सक्रिय सदस्य भी रहे थे।

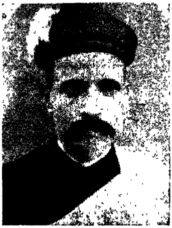


अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप दिल्ली आ गए थे और यहाँ 'फिल्म डिवीजन' तथा 'राष्ट्रीय शिक्षण अनुसधान सस्थान' मे लेखक के रूप मे कार्य कर रहे थे। आपको प्रारम्भ से ही दमे की भयकर व्याधि ने घेरा हुआ था और इसी के कारण आपका निधन 4 दिसम्बर सन् 1977 को हुआ था।

श्री ब्रजरत्न भट्टाचार्य

श्री भट्टाचार्य का जन्म सन् 1875 मे उत्तर प्रदेश के प्रख्यात नगर मुरादाबाद मे हुआ था। आपके पूर्वज गुजरात से वहाँ पर आए थे और आपके प्रपितामह, पितामह और पिता ने ज्योतिष शास्त्र में अच्छी ख्याति अर्जित की थी। आपको भी पारिवारिक सस्कारों के कारण सस्कृत एव ज्योतिष आदि की अच्छी शिक्षा प्राप्त हुई थी और आप हिन्दी एवं सस्कृत के बहुत समर्थ कवि थे। आपकी रचनाएँ उन दिनों 'कवि व चित्रकार', 'भारत भानु', 'कलकत्ता समाचार' और 'हिन्दोस्थान' आदि अनेक पत्रो मे ससम्मान छपा करती थी।

आपके पिता ज्वालानाथ शास्त्री शिक्षा, धर्म और सस्कृत के प्रचार के प्रति इतना अनन्य अनुराग रखते थे कि उन्होने मुरादाबाद मे सस्कृत की एक बहुत अच्छी पाठशाला खोल रखी थी। इस पाठशाला में वे असहाय और निर्धन छात्रों को नि शुल्क पुस्तकें आदि देकर विद्याध्ययन की सुविधाएँ प्रदान किया करते थे। जब सयुक्त प्रान्त की तत्कालीन सरकार ने प्रदेश की अदालतों मे नागरी का प्रचार करने का आदेश जारी किया था तब आपने अपने नगर के लोगो को हिन्दी पढ़ाने के लिए प्रेरित किया था। आपने प्रयाग विश्वविद्यालय म उन छात्रो के लिए स्वर्ण पदक तथा घड़ियाँ आदि उपहार मे देने की व्यवस्था की हुई थी जो हिन्दी तथा सस्कृत मे अच्छे अक प्राप्त करके उत्तीर्ण हुआ करते थे।



आप हिन्दी और सस्कृत साहित्य के इतने मर्मज्ञ विद्वान् थे कि आपने सस्कृत के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो की हिन्दी टीकाएँ प्रस्तुत की थी। आपकी ऐसी कृतियो मे 'श्रीमद्भगवद्गीता', 'राम गीता', 'शिव गीता', 'योग वाशिष्ठ', 'अभिज्ञान शाकुन्तल', 'रत्नावली नाटिका', 'हनुमन्नाटक', 'केदार खण्ड', 'मुहूर्त्त मार्तण्ड', 'मान सागरी', 'लीलावती', 'अमृत सागर', 'औषधि कल्पलता', 'रघुवश', 'अमरकोश', 'हठयोग प्रदीपिका' तथा 'योग दर्शन' के नाम विशेष उल्लेखनीय है। आपकी रचना-प्रतिभा से प्रभावित होकर देश के अनेक राजाओ और महाराजाओ ने आपका बहुत सम्मान किया था।

आपका निधन सन् 1950 मे हुआ था।

हकीम ब्रजलाल बर्मन

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के मथुरा नगर में सन् 1891 मे हुआ था। आपके पिता श्री मन्नीलाल बर्मन नगर के प्रख्यात हकीम थे। आप बचपन से अत्यन्त निर्भीक प्रकृति के थे और



अपनी कमर में तलवार बाँधकर घर से दुकान पर जाया करते थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा नगर के 'मिशन स्कूल' मे हुई थी। जब आपको 'बाइबिल' पढने को विवश किया गया तब आपने स्कूल जाना छोड दिया और बाल्यावस्था से ही राष्ट्रीय प्रवृत्तियो मे सहयोग देना प्रारम्भ कर दिया। आप जब केवल 14 वर्ष के ही थे तब आपने अरविन्द घोष की बहन की अपील को पढकर उनके भाई पर चलने वाले मुकदमे की सहायता के लिए 21 रुपये भेजे थे। इसी प्रकार जब लोकमान्य बाल गगाधर तिलक पर अभियोग चला था तब भी आपने उनके सिद्धान्तों का प्रचार करने की दिशा मे अग्रणी कार्य किया था।

आप जब केवल 17 वर्ष के ही थे कि आपके पिता का आकस्मिक देहावसान हो गया और आप पर सारे परिवार का बोझ आ पडा था। आपने 'बग भग आन्दोलन' मे सन् 1905 मे सक्रिय रूप से भाग लेकर विदेशी वस्त्रो के बहिष्कार का उल्लेखनीय कार्य किया था। आपने जहाँ मथुरा में 'होमरूल लीग' और 'सेवा समिति' आदि सस्थाओं की स्थापना मे सहयोग दिया था वहाँ सन् 1911 मे 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना भी की थी। आप उच्चकोटि के सामाजिक कार्यकर्ता होने के साथ-साथ एक उत्कृष्ट पत्रकार के रूप मे भी प्रतिष्ठित थे। आपने 'ब्रजवासी' नामक साप्ताहिक पत्र के माध्यम से निरन्तर 44 वर्ष तक अपने क्षेत्र की जनता की उल्लेखनीय सेवा की थी। यह पत्र मथुरा जनपद की जनता मे राष्ट्रीय भावनाओ का सचार करने के कारण प्राय विदेशी शासन का कोप-भाजन रहा करता था।

आप राष्ट्रीयता के इतने प्रखर पोषक थे कि प्राय सभी स्वाधीनता-आन्दोलनों में आपने बढ-चढकर भाग लिया था। यहाँ तक कि इन आन्दोलनो के प्रसग मे की गई जेल-यात्राओं के समय आपको अनेक हृदय-विदारक विपत्तियो का सामना करना पडा था। सन् 1930 के आन्दोलन के समय आपको उस समय गिरफ्तार किया गया था जब कि आपकी पुत्री के विवाह के बाद बारात विदा हो रही थी। इसी प्रकार सन् 1931 की जेल-यात्रा के समय उचित चिकित्सा और देख-भाल न हो पाने के कारण आपकी सहधर्मिणी की मृत्यु हो गई थी। आप जब सन् 1938 मे जेल मे थे तब आपको अपने एकमात्र पुत्र की दारुण मृत्यु का असह्य शोक सहन करना पडा था। इतनी सब विपत्तियो मे भी हकीम जी ने अपनी राष्ट्रीयता की उपासना मे कोई कमी नही आने दी और आप अपने कर्तव्य-पालन मे सर्वथा अडिग रहे।

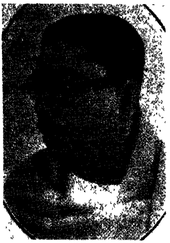
आपने एक ओर जहाँ जिला काग्रेस कमेटी, प्रान्तीय काग्रेस कमेटी और अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी के अनेक वर्ष तक कर्मठ सदस्य के रूप मे अपने नगर और क्षेत्र की उल्लेखनीय सेवा की थी वहाँ दूसरी ओर अपने जनपद तथा नगर की अनेक समाज-सेवी सस्थाओं से निकटता से जुडे रहते थे। प्रख्यात क्रान्तिकारी राजा महेन्द्रप्रताप की अमर सस्था 'प्रेम महाविद्यालय वृन्दावन' के सचालन मे आपका प्रमुख सहयोग रहा था। इसके अतिरिक्त आपने 'जानकी बाई कन्या पाठशाला' की सस्थापना मे उल्लेखनीय सहयोग देने के साथ-साथ अपने जनपद के ग्रामीण अचलो मे अनेक औषधालयो की स्थापना भी की थी। अपनी दीर्घकालीन राष्ट्रीय सेवाओ के प्रसग मे आप सन् 1941 तथा 1944 मे 'उत्तर प्रदेश विधान परिषद्' के सदस्य भी मनोनीत हुए थे।

आप जिन दिनों सन् 1942 के आन्दोलन के सिलसिले मे आगरा जेल मे बन्दी थे तब प्रथम बार आप पर 'पक्षाघात' का आक्रमण हुआ था। इसके पश्चात् सन् 1957 के आम चुनावो के समय आप दूसरी बार लकवे से आक्रान्त हुए थे। आप कई बार 'पक्षाघात' के आक्रमणो का सामना करने के कारण बहुत निर्बल हो गए थे, किन्तु फिर भी आपने जीवन से हार नही मानी और निरन्तर सेवा-रत रहे। फिर

अचानक 24 अप्रैल सन् 1960 को आप पर सातवीं बार पक्षाघात का इतना भयंकर आक्रमण हुआ कि उससे त्राण न पा सके और 4 मई सन् 1960 को इस संसार से विदा हो गए।

श्री ब्रजेन्द्रनाथ बन्द्योपाध्याय

श्री बन्द्योपाध्याय का जन्म 21 सितम्बर सन् 1891 को बंगाल के हुबली जिले के बाली नामक स्थान मे हुआ था। यद्यपि आपकी शिक्षा केवल कक्षा 9 तक ही हुई थी, परन्तु गम्भीर अध्ययन तथा सतत अध्यवसाय से आपने अपनी योग्यता को बहुत बढा लिया था। आपके अध्ययन मे प्रमुख बाधा परिवार की विपन्नता ही रही थी। पहले-पहल आपकी नियुक्ति कलकत्ता की 'जेम्स फिनले कम्पनी' मे आशुलिपि-टंकक के रूप मे हुई थी। बचपन से ही साहित्यिक रुचि होने के कारण आप लेखन की ओर अग्रसर हो गए थे और आपकी सबसे पहली रचना बगला की 'जाह्नवी' नामक पत्रिका मे सन् 1912 मे प्रकाशित हुई थी।



बगला भाषा के अतिरिक्त आपने अग्रेजी मे भी 'बगाल आफ बगाल' नामक एक इतिहास-पुस्तक की रचना की थी, जिसे देखकर प्रख्यात इतिहासवेत्ता श्री यदुनाथ सरकार ने उसे इतिहास-पुस्तक न कहकर 'उपन्यास' की सज्ञा दी थी। श्री सरकार ने आपको प्रोत्साहित करते हुए इतिहास और शोध के क्षेत्र से कार्य करने की सलाह भी दी थी। बगला भाषा मे आपके द्वारा सम्पादित तथा मौलिक पुस्तको की सख्या लगभग 33 है, जिनमे 'साहित्य साधक चरितमाला' तथा 'सवाद पत्रे से कालेर कथा' प्रमुख हैं। आप 'हिस्टारिकल सोसाइटी' के भी सक्रिय सदस्य रहे थे। आपको सन् 1952 में 'रवीन्द्र स्मृति पुरस्कार' भी प्रदान किया गया था।

हिन्दी भाषा और साहित्य के लिए श्री बन्द्योपाध्याय की सबसे बडी देन यह है कि आपने सन् 1931 में हिन्दी के सबसे पहले समाचार पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' (साप्ताहिक) का पता लगाकर 'विशाल भारत' के मई अक मे एक लेख प्रकाशित कराया था। उससे पूर्व हिन्दी के इतिहासकार यही लिखा करते थे कि हिन्दी का सबसे पहला समाचार पत्र 'बनारस अखबार' है। 'उदन्त मार्तण्ड' का प्रकाशन कलकत्ता से सन् 1826 मे हुआ था, जबकि 'बनारस अखबार' सन् 1845 मे निकला था। इसके उपरान्त श्री बन्द्योपाध्याय ने हिन्दी साहित्य के प्रेमियों के लिए एक नई शोध और की थी। आपने अपनी शोध का नया परिणाम यह भी दिया कि हिन्दी का पहला दैनिक पत्र एक बगला-भाषी सज्जन श्री श्यामसुन्दर सेन द्वारा सम्पादित 'समाचार सुधा वर्षण' है। जिसका प्रकाशन जून सन् 1854 मे (16/10, कमलनयन गली, बडा बाजार) कलकत्ता से हुआ था। यह पत्र हिन्दी तथा बगला दोनो भाषाओ मे प्रकाशित होता था और प्रत्येक अक मे 6 या 8 पृष्ठ होते थे। इस पत्र मे आधे से अधिक भाग हिन्दी मे होता था और बगला मे आधे मे कम। बगला मे तो केवल बाहर से आने वाले जहाजो की खबरें, कुछ विज्ञापन और कुछ सक्षिप्त समाचार ही रहा करते थे। हिन्दी मे मुख्य-मुख्य समाचार, लेख और सम्पादकीय टिप्पणियाँ आदि रहती थी।

यदि श्री बन्द्योपाध्याय खोज करके हिन्दी पाठकों के समक्ष यह चमत्कारी सूचना प्रस्तुत न करते तो हिन्दी वाले सर्वथा अन्धकार मे ही रहते। आपका यह खोजपूर्ण लेख 'विशाल भारत' के मई सन् 1936 के अक मे प्रकाशित हुआ है। इस लेख के प्रकाशन से पूर्व हिन्दी के पाठक, पत्रकार तथा इतिहासकार केवल यही समझते थे कि हिन्दी का पहला दैनिक पत्र 'भारत मित्र' है। श्री बन्द्योपाध्याय ने अपने इस लेख मे यह भी सूचना प्रदान करके हिन्दी साहित्य का बडा हित किया था कि 'समाचार सुधा वर्षण' के कुछ अंक अभी भी लन्दन के 'ब्रिटिश म्युजियम' मे सुरक्षित है। इस पत्र के दूसरे वर्ष की पूरी फाइल कलकत्ता की 'नेशनल लाइब्रेरी' मे

सुरक्षित होने तथा सन् 1868 का एक अंक 'बगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता' के सग्रहालय मे होने की सूचनाएँ भी आपने प्रदान की थी।

आपने कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले स्वर्गीय श्री रामानन्द चट्टोपाध्याय के 'प्रवासी' (बगला) तथा 'माडर्न-रिव्यू' (अग्रेजी) मासिको मे सहकारी सम्पादक के रूप मे अनेक वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया था। सन् 1929 मे इन पत्रो से सम्बद्ध होकर जहाँ आपने पत्रकारिता की उल्लेखनीय सेवा की थी वहाँ साहित्य-शोध के कार्य मे भी अविराम भाव से संलग्न रहे थे।

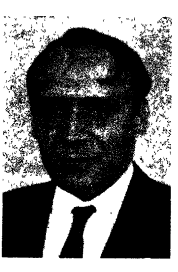
आपका निधन 3 अक्तूबर सन् 1952 को हुआ था।

सन् 1963 मे आप दिल्ली मे प्रकाशित होने वाले दैनिक 'हिन्दुस्तान' मे आ गए और इसमे लगभग 12 वर्ष तक अनेक रूपो मे कार्य किया। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप 'विशेष सवाददाता' के रूप मे कार्य-रत थे। सन् 1970 मे आप 'अमरीकी प्रेस इंस्टीट्यूट' के निमन्त्रण पर दैनिक 'हिन्दुस्तान' का प्रतिनिधित्व करने के निमित्त अमरीका की यात्रा पर भी गए थे। आपने अपनी इस यात्रा के दौरान वहाँ के समाचार पत्रों के कार्यालयों मे जाकर 'समाचारों के सकलन और सम्पादन' का व्यापक अध्ययन किया था।

आपका निधन केवल 40 वर्ष की अल्प आयु मे ही 20 सितम्बर सन् 1974 को हुआ था।

श्री ब्रह्मर्षिकुमार पाण्डेय

श्री पाण्डेय का जन्म उत्तर प्रदेश के बलिया नगर के एक प्रतिष्ठित परिवार मे सन् 1935 मे हुआ था। वहाँ के 'सतीशचन्द्र कालेज' मे हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करके आपने उच्चतम शिक्षा 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' से प्राप्त की थी। सन् 1955 मे आपने वही से 'प्राचीन भारतीय इतिहास एव सभ्यता' विषय मे एम० ए० की उपाधि भी प्राप्त की थी।



अपने छात्र-जीवन मे ही आपने पत्र-कारिता को अपना लिया था और 'समार', 'आज' और 'लीडर' जैसे पत्रो को सवाद भेजने लगे थे। फिर आप 'भारत' दैनिक के सवाददाता हो गए और इसके उपरान्त लगभग 3 वर्ष तक पटना से प्रकाशित होने वाले 'आर्यावर्त' दैनिक मे 'सहायक सम्पादक' भी रहे।

श्री ब्रह्मानन्द

आपका जन्म राजस्थान के आबू अचल के खाण नामक ग्राम मे सन् 1771 मे हुआ था। यद्यपि 15 वर्ष की आयु तक आपको समुचित शिक्षा प्राप्त नही हो सकी थी, फिर भी ईश्वर-प्रदत्त शक्ति के बल पर आप बचपन से ही दोहा-गीत की रचनाएँ करने लगे थे। फिर आपने अपने स्वाध्याय के बल पर विद्या-अर्जित की और 29-30 वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते आप काव्य-क्षेत्र मे अत्यन्त प्रतिष्ठित हो गए थे। आपने सिरोही के नरेश की सतत प्रेरणा पर गुजरात के कच्छ (भुज) प्रदेश के एक राजपूत के यहाँ रहकर वहाँ की 'ब्रजभाषा पाठशाला' मे डिगल साहित्य का विधिवत् अध्ययन किया था। राजस्थान के 'सिरोही राज्य' के अतिरिक्त उदयपुर, जोधपुर और बीकानेर आदि राज्यो मे आप जहाँ अत्यन्त लोकप्रिय थे वहाँ आपने गुजरात-काठियावाड के बडौदा, जूनागढ तथा भावनगर आदि राज्यो मे घूमकर अपार यश अर्जित किया था। आपका पूर्व नाम 'रगदास' था।

इसी बीच आपकी भेट सन् 1803 मे स्वामी रामानन्द के शिष्य स्वामी सहजानन्द जी से हो गई थी, जिसके कारण आपके ज्ञान मे अपूर्व वृद्धि हुई थी। 32 वर्ष की आयु तक आते-आते आप अपूर्व ज्ञानी हो गए और गुजरात-काठियावाड

के विभिन्न क्षेत्रों में घूमकर आपने स्वामी सहजानन्द जी द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चलते हुए विवाह तक न करने की प्रतिज्ञा भी कर ली थी। अपनी प्रसन्नता आपने इस प्रकार व्यक्त की थी :

आज नी घड़ी रे, धन्य आज नी घड़ी,
मैं निरख्या सहजानन्द, धन्य आज नी घड़ी।

बड़ौदा-नरेश सर सयाजीराव गायकवाड जब आपको अपना 'राजकवि' बनाकर 25 हजार रुपये की जागीर देना चाहते थे तब आपने उसे भी ठुकरा दिया और आपने अपने जीवन का शेषांश अपने गुरु द्वारा प्रवर्तित 'नारायण धर्म' के प्रचार-प्रसार में ही लगा दिया।

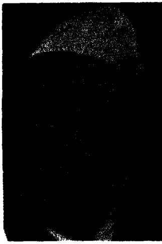
आपकी प्रमुख कृतियों में 'उपदेश चिन्तामणि', 'उपदेश रत्नदीपक', 'सम्प्रदाय प्रदीप', 'सुमति प्रकाश', 'वर्तमान विवेक', 'विदुर नीति', 'ब्रह्म विलास', 'शिक्षा पत्री' (गुजराती में भी), 'सत्संग पंचक','षट् दर्शन', 'माया पंचक', 'देसावतार स्तुति', 'राधाकृष्ण स्तुति', 'सिद्धेश्वर शिव-स्तुति', 'हरिकृष्णाष्टक', 'रासाष्टक', 'हवलाष्टक', 'घनश्यामाष्टक', 'हरिकृष्ण महिमाष्टक' और 'धर्म प्रकाश' आदि के नाम विशेष प्रसिद्ध है। इन कृतियों के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखे हुए 8 हजार से अधिक स्फुट पद भी उपलब्ध है। इन रचनाओं में से 'सुमति प्रकाश', 'विदुर नीति', 'ब्रह्म विलास' और 'धर्म प्रकाश' प्रकाशित रूप में उपलब्ध है, शेष अप्रकाशित है।

सन् 1829 में जब आपके गुरु स्वामी सहजानन्द का निधन हुआ तो आपको उससे बहुत धक्का लगा और धीरे-धीरे आपका शरीर क्षीण होने लगा। इन्हीं दिनों आपकी पीठ में 'कारबकल' फोड़ा निकल आया और ज्वर भी रहने लगा। इसी रोग में अपने गुरु के देहावसान से लगभग 2 वर्ष बाद सन् 1831 में आप भी इस संसार से प्रयाण कर गए।

आचार्य ब्रह्मानन्द शुक्ल

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जनपद के चरथावल नामक कस्बे में सन् 1904 में हुआ था। आपके पिता पण्डित माईदयाल शुक्ल वहाँ के सम्पन्न व्यक्ति थे। आप जब केवल 4 वर्ष के थे कि तब अकस्मात् आपकी जन्म-भूमि में प्लेग फैल गया और देखते-ही-देखते आपके सारे पारिवारिकजन काल के गाल में समा गए। परिवार में केवल आप तथा आपके अनुज श्री मित्रसेन ही बच पाए थे। आप दोनों भाइयों का पालन-पोषण आपकी ननसाल में हुआ था।

अपने मामा तथा ममेरे भाई की स्नेहमयी छाया में आपकी शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था हुई थी और आपने अपने ही अध्यवसाय से संस्कृत-वाङ्मय का गहन ज्ञान अर्जित किया था। फिर डेरा बसी, कालका और मुजफ्फरनगर आदि अनेक नगरों के संस्कृत विद्यालयों में अध्यापन करने के उपरान्त आप खुर्जा (बुलन्दशहर) श्री राधाकृष्ण संस्कृत महाविद्यालय के प्रधानाचार्य विद्या-



वाचस्पति पण्डित परमानन्द शास्त्री के निमन्त्रण पर वहाँ चले गए। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि आपका विद्याध्ययन भी इसी महाविद्यालय में हुआ था और पण्डित परमानन्द शास्त्री आपके गुरु थे। आप अपने जीवन के अन्तिम क्षणों तक इसी संस्था में रहे थे और अपने गुरुदेव के उपरान्त आपने ही वहाँ का 'प्रधानाचार्य' पद सँभाला था।

आप जहाँ विलक्षण प्राध्यापक और गम्भीर विद्वान् थे वहाँ संस्कृत एवं हिन्दी के सुकवि एवं सुलेखक भी थे। आपकी विद्वत्ता एवं मनस्विता की छाप संस्कृत वाङ्मय के अध्ययन एवं मनन के क्षेत्र में दूर-दूर तक थी। आपके संस्कृत-काव्य-पाठ का ढंग इतना निराला था कि जो भी एक बार आपके श्रीमुख से आपकी रचनाओं का पाठ सुन लेता था वह मन्त्रमुग्ध हुए बिना नहीं रहता था। आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से आपकी वार्ताओं और कविताओं का प्रसारण होता रहता था। आपकी रचना-चातुरी एवं विद्वता

से प्रभावित होकर 'भारत धर्म महामण्डल काशी' ने आपको 'कविरत्न' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी। सस्कृत की भाँति आपने अपनी हिन्दी-रचनाओ से भी सभी साहित्य-प्रेमियों को चमत्कृत कर दिया था। 'संस्कृत परिषद् अलीगढ़' की ओर से आपका जो भावभीना अभिनन्दन किया गया था वह अभूतपूर्व था।

आपका निधन 10 फरवरी सन् 1970 को वसन्त पचमी के दिन हुआ था। आपके प्राण सरस्वती की पूजा करते-करते परम ज्योति मे विलीन हुए थे।

श्री भगवत्स्वरूप जैन 'भगवत'

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा जनपद के एतमादपुर नामक कस्बे मे सन् 1911 में हुआ था। आपकी स्कूली शिक्षा प्राय बिलकुल नही हुई थी। यह आपके कुछ पूर्व जन्म के पुण्यों तथा सस्कारो का ही प्रताप था कि आपने केवल अपने निजी स्वाध्याय तथा अध्यवसाय के बल पर केवल 16 वर्ष की आयु मे ही लिखना प्रारम्भ कर दिया था। अपने स्वल्प से जीवन-काल मे आपने इतने प्रचुर परिमाण में बहुविध साहित्य की रचना की थी कि उसे देखकर आश्चर्य-चकित हो जाना पडता है। क्या कविता, क्या कहानी और क्या नाटक साहित्य की ऐसी कोई विधा नही बची थी जिसमे आपने अपनी लेखनी का चमत्कार न प्रदर्शित किया हो। आपने सुरुचिपूर्ण बाल-साहित्य के निर्माण का भी उल्लेख-नीय कार्य किया था।

क्योकि आपका जन्म एक जैन-परिवार मे हुआ था, अत यह स्वाभाविक ही था कि आपने जैन धर्म से सबधित अनेक ग्रन्थों का अत्यन्त तन्मयता से पारायण किया था। आपकी अधिकांश रचनाओ मे आपका वह स्वाध्यायजनित ज्ञान स्थल-स्थल पर परिलक्षित होता है। घर वाले जब आपकी ओर से पूर्णत निराश हो गए थे और यह सोच बैठे थे कि हमारे परिवार मे यही एक बालक निरक्षर रह जायगा तब आपने अपनी अध्ययनशीलता से सबको चकित कर दिया था। धीरे धीरे जासूसी उपन्यासो के पढने से आपका हिन्दी ज्ञान बढ़ा और एक दिन वह भी आया जब आप गूढ-से-गूढ़ ग्रन्थों का अध्ययन करने मे रुचि लेने लगे। आपकी अध्ययनशीलता ने इतना विशद रूप धारण कर लिया कि आपका घर एक अच्छे-खासे 'पुस्तकालय' के रूप में परिवर्तित हो गया।

आप जहाँ गम्भीर प्रकृति के लेखन मे पूर्णत दक्ष थे वहाँ सरस और रोचक कहानियों एवं नाटको की रचना करने मे भी आपने अपनी अपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। छायावादी भावनाओ की कविता लिखने मे आपने अपनी अनुभूति-प्रवणता का गहन परिचय प्रस्तुत करने के अतिरिक्त अनेक महत्त्वपूर्ण नाटक भी सफलता-पूर्वक लिखे थे। आपकी रचना-प्रतिभा के प्रत्यक्ष दर्शन आपकी सभी कृतियो के द्वारा हो जाते है। आपके



कृतित्व की सफलता का इससे अधिक उत्कृष्ट प्रमाण और क्या हो सकता है कि आपकी कई रचनाओ का अनुवाद मराठी भाषा मे भी प्रकाशित हुआ था।

आपने अपने केवल 14-15 वर्ष के लेखन-काल मे इतने बहुविध साहित्य की रचना की थी कि उसे देखकर आश्चर्य होता है। आपकी कुल प्रकाशित पुस्तको की सख्या 2 दर्जन से अधिक है। इनके अतिरिक्त भी आपकी अनेक रचनाएँ अभी अप्रकाशित ही पडी है। आपकी प्रकाशित रचनाओ की सूची इस प्रकार है—**कविता** 'चाँदनी', 'मधु-रस', 'घर वाली', 'जय महावीर', 'तरुण गीत', 'झनकार', 'दर्शन कथा', 'त्रिशला-नन्दन', 'फल-फूल', 'उपवन', **नाटक** . 'भाग्य', 'अत्याचार', 'सन्यासी', 'गरीब', 'बलि, जो चढी नहीं', 'घूंघट', 'आहुति', **कहानी** 'क्रान्तिकारी की माँ', 'दुर्ग द्वार', 'दो हृदय', 'पारस-पत्थर', 'विश्वासघात', 'उस दिन', 'पण्डित जी पालागे', 'मिलन', 'रस भरी', 'मानवी', 'उसके आँसू' तथा 'आँख मिचौनी' आदि। आपने जैन सस्कृति और

जैन आदर्शों को आधार बनाकर जो रचनाएँ की थीं उनसे आपको जैन-जगत् में पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त हुई थी। आपके कृतित्व की लोकोपयोगिता का सबसे बडा प्रमाण यही है कि आपकी अधिकाश पुस्तकों के कई-कई सस्करण हो चुके है।

आपने इतने अधिक साहित्य की रचना की थी कि उसे देखकर आश्चर्य होता है। जिन दिनो आपने लिखना प्रारम्भ किया था उन दिनों 'चाँद', 'अभ्युदय', 'विचार', 'सचित्र भारत', 'सुमित्रा', 'हिन्दुस्तान', 'माया', 'मनमोहन' तथा 'अनेकान्त' आदि अनेक पत्रो मे आपकी रचनाएँ ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। आपकी सबसे पहली कविता 'जैन मार्तण्ड' मे प्रकाशित हुई थी और पहली पुस्तक 'झनकार' सन् 1934 मे लखनऊ से प्रकाशित हुई थी। आपके द्वारा विरचित अनेक गीत इतने लोकप्रिय हुए थे कि उनके रिकार्ड बना लिए गए थे, जो अब भी सब जगह प्रचलित है। आपके अनुज श्री बसन्तकुमार जैन के उद्योग से श्री भगवत का साहित्य अब भी सुलभ है।

आपका निधन 5 दिसम्बर सन् 1944 को हुआ था।

श्रीमती भगवतीदेवी शर्मा 'विह्वला'

श्रीमती 'विह्वला' का जन्म हरियाणा प्रदेश के होडल नामक स्थान मे सन् 1906 मे हुआ था। आपकी शिक्षा अपने पारिवारिकजनो की देख-रेख मे केवल मिडिल तक ही हो सकी थी। उन दिनो के वातावरण मे इतना पढ लेना भी हरियाणा मे बहुत समझा जाता था। विवाहोपरान्त आप जब दिल्ली मे आ गई तब आपने अपने निजी स्वाध्याय और अध्यवसाय के बल पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन की प्रथमा, मध्यमा और साहित्यरत्न तथा पजाब विश्वविद्यालय की 'हिन्दी प्रभाकर' आदि परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। 'साहित्य रत्न' का अध्ययन आपने विधिवत् प्रयाग जाकर ही सम्मेलन की ओर से सचालित 'विद्यापीठ' मे किया था।

अपने प्रयाग के अध्ययन-काल मे आपका सम्पर्क वहाँ महाकवि निराला, श्रीमती महादेवी वर्मा और डॉ० रामकुमार वर्मा आदि अनेक साहित्यकारो से हो गया था, जिसके कारण आप साहित्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुई थीं। उन सभी महानुभावों की प्रेरणा तथा प्रोत्साहन से आपने कविताओं के अतिरिक्त अनेक लेख आदि भी लिखे थे। आपकी रचनाएँ दिल्ली के अनेक हिन्दी पत्रो मे समय-समय पर प्रकाशित हुआ करती थी। आपसे प्रेरणा प्राप्त करके दिल्ली मे अनेक महिलाएँ हिन्दी-लेखन की ओर अग्रसर हुई थी। आप दिल्ली की सबसे पुरानी हिन्दी



अध्यापिका के रूप मे सब ओर समादृत की जाती थी। आपकी कविता का सग्रह 'भावना' अभी अप्रकाशित ही है।

आपका निधन सन् 1968 मे हुआ था।

श्री भगवानदीन 'दीन'

श्री 'दीन' जी का जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद मे सन् 1866 मे हुआ था और आपकी शिक्षा वाराणसी मे हुई थी। ज्योतिषाचार्य श्री श्यामाचरण जी से आपने ज्योतिष का अध्ययन किया था। आपका भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र से अच्छा सम्पर्क था। आपके इस परिचय के कारण आपका रुझान कविता की ओर हो गया था। आपकी कवित्व-प्रतिभा से प्रभावित होकर 'त्रिसवा कवि मण्डल' ने आपको 'बिबुधालकार' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी।

आपकी कविताओं मे रीतिकालीन प्रवृत्तियो की सुन्दर छटा दृष्टिगत होती है। नायक-नायिका-भेद और ऋतु-वर्णन आदि के सम्बन्ध मे आपकी लेखनी बडी कुशलता से चली थी। आप प्राय समस्या-पूर्तियाँ ही किया करते थे,

आपने स्वतन्त्र ग्रन्थ कोई नही लिखा। आपकी 'नागरी के हैं' समस्या की पूर्ति इस प्रकार है :

जोरि कर पाँय परिबे की अरिबे की बानि,
नीके हम जानि लीन्हे, लच्छन हरी के हैं।
कौन री प्रयोजन तिहारो जो निहारै मोहिं,
'दीन' बे नवीन नित सीखत तरीके है।।
मंजुल मुकुत माल मेलै उनही के उर,
देहिं उनही बो पर जटित जरी के हैं।
इति जनि आवै मेरो, चित न दुखावै तित,
जावै जित जागे राति जौन नागरी के है।।

आपने वैसे प्राय सभी रसो मे रचनाएँ की थी, किन्तु मुख्यत शृगार रस की रचना करने मे आपको अभूतपूर्व सिद्धि प्राप्त थी। आपका निधन सन् 1934 मे हुआ था।

पण्डित भगवानप्रसाद चौबे

श्री चौबे जी का जन्म सन् 1843 मे बिहार जनपद के भागलपुर नगर के मोहल्ला हुसैनाबाद मे हुआ था। आपके प्रपितामह पण्डित आशाराम चौबे उत्तर प्रदेश के फतेहपुर जनपद के असनी नामक ग्राम के निवासी थे और वे जगन्नाथ पुरी की तीर्थ-यात्रा के प्रसग मे भ्रमण करते हुए जब भागलपुर आए थे तब यही बस गए थे और यहाँ पर ही उनका विवाह हुआ था। आपके पूर्वजो के द्वारा बनवाया हुआ एक पुल छोटी असनी और बड़ी असनी (उत्तर प्रदेश) मे बना हुआ है। इसकी मरम्मत भी आप प्राय कराया करते थे। आपके पिताजी के सम्बन्ध मे एक कहावत इस प्रकार प्रचलित है

गुनो गुनानन्द बानि असमान
गगा रख लेन चौबे का मान

कहा जाता है कि इस कहावत की उत्पत्ति तब हुई थी जब एक बार गगा जी मे बडी बाढ आई थी और उससे चौबे जी के पूर्व पुरुषो के कटेरा, परमेश्वरपुर (मिल्की) और निकट-वर्ती ग्राम ढहने लगे थे। बडे-बडे धर्मनिष्ठ लोगो ने उस समय गगा की धारा को पीछे हटाने के लिए प्रार्थनाएँ की, किन्तु असफल रहे, किन्तु जब चौबे जी के पिता जी ने आग्रह और विनय की तब वह पीछे हट गई थी। उनके सुपुत्र श्री ठाकुरप्रसाद का विवाह भागलपुर जनपद के परमेश्वरपुर उर्फ मिल्की ग्राम मे हुआ था। इनके देवीप्रसाद तथा गौरी-प्रसाद नामक दो पुत्र थे, जिनमे से देवीप्रसाद जी के सुपुत्र पण्डित भगवानप्रसाद



चौबे थे। चौबे जी के पूर्व पुरुषो का निवास 'बिहपुर' नामक वह ग्राम था जहाँ आकर डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद ने सत्याग्रह-आन्दोलन की शुरूआत की थी। उस अचल मे उन दिनो आपके परिवार की बडी ख्याति थी। आप उस क्षेत्र के अच्छे जमीदार थे। आप प्राय: सभी सामाजिक कार्यों मे भाग लिया करते थे और भ्रमण करने का आपको बडा शौक था। आप लोकल बोर्ड तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के भी सदस्य थे और यावज्जीवन आनरेरी मजिस्ट्रेट भी रहे थे।

आपने अग्रेजी शिक्षा-नीति से आक्रान्त भारतीय युवको मे राष्ट्र-प्रेम एव हिन्दी-प्रेम जागृत करने की दृष्टि से भागलपुर मे एक 'हिन्दी पुस्तकालय' की स्थापना की थी और उसके सचालन के लिए विधिवत् एक ट्रस्ट बनाकर उसके उद्देश्यों की घोषणा इस प्रकार की थी, "इस पुस्तकालय का उद्देश्य हिन्दी भाषा का प्रचार है, अत इसमे अधिकतर हिन्दी की पुस्तके रखी जायेगी। पुस्तक प्रदान करने वालो को भी चाहिए कि वे अधिकतर हिन्दी की पुस्तके प्रदान करे।" इस पुस्तकालय का विधिवत् प्रारम्भ भागलपुर के तत्कालीन कमिश्नर मि० एच० जे० मेर्टेटोश के करकमलो द्वारा 7 दिसम्बर सन् 1913 को अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के चतुर्थ अधिवेशन के शुभ अवसर पर किया गया था। इस सम्मेलन की अध्यक्षता महात्मा मुन्शी-राम (बाद मे स्वामी श्रद्धानन्द) ने की थी और इसमे डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद भी सम्मिलित हुए थे। इस पुस्तकालय का

नामकरण चौबे जी के नाम पर ही 'भगवान पुस्तकालय' किया गया था। इस पुस्तकालय की स्थापना से पूर्व चौबे जी इस जनपद के हिन्दी-प्रेमियों में सर्वथा अग्रगण्य स्थान बना चुके थे और आपके ही सत्प्रयास से अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का उक्त अधिवेशन भागलपुर मे सम्पन्न हुआ था और आप उसकी स्वागत-समिति के 'उपसभापति' बने थे। सभापति का पद बनैली-नरेश श्री कीर्त्यानिन्दसिंह ने स्वीकार किया था। आप 'भागलपुर हिन्दी सभा' के प्रमुख स्तम्भ थे, जिसके निमन्त्रण पर यह अधिवेशन यहाँ बुलाया गया था। आपके हिन्दी-प्रेम तथा कर्तव्य-निष्ठा का परिचय बिहार के प्रसिद्ध साहित्यकार बाबू शिवनन्दन सहाय की इन पंक्तियों से भली-भाँति मिल जाता है—"चौबे जी ने सभा के लिए दस हजार की लागत का एक मकान भी बनवाया है, जो सभा की स्थिति पक्की और सन्तोषजनक होने पर उसे समर्पण किया जायगा, इसमे एक पुस्तकालय भी होगा।"

हिन्दी साहित्य सम्मेलन के उक्त अधिवेशन के अवसर पर जो साहित्य प्रदर्शनी की गई थी उसका आयोजन 'भगवान पुस्तकालय' मे ही हुआ था। इसी पुस्तकालय मे 'हिन्दी सभा' की विभिन्न बैठको के अतिरिक्त अनेक बडे-बडे साहित्यिक समारोह भी समय-समय पर होते रहे है। भागलपुर के नागरिको ने सन् 1919 मे इस सस्था के निर्माण के उपलक्ष्य मे चौबे जी का जो भावभीना अभिनन्दन किया था, उससे आपकी साहित्यिक महत्ता का परिचय मिल जाता है। वास्तव मे आप भागलपुर के साहित्यिक जागरण के एक प्रेरणा-स्तम्भ थे। आपके निधन के उपरान्त आपके भतीजे श्री अलोपीप्रसाद चौबे ने इस पुस्तकालय के विकास मे पर्याप्त रुचि ली थी और वर्तमान में इस पुस्तकालय का जो रूप दृष्टिगत होता है उसमे उनका अनन्य योगदान है।

यह बडी प्रसन्नता की बात है कि चौबे जी का अमर कीर्ति मन्दिर 'भगवान पुस्तकालय' आज प्रदेश के अत्यन्त समृद्ध पुस्तकालयो मे गिना जाता है और इसके द्वारा लाखों हिन्दी-प्रेमी लाभान्वित हो रहे हैं। इस पुस्तकालय की महत्ता इसीसे प्रमाणित हो जाती है कि इसमे हिन्दी, अंग्रेजी संस्कृत, उर्दू तथा बगला आदि अनेक भाषाओ की 20 हजार से अधिक पुस्तको का सकलन किया गया है। इनमे भारतीय वेद, वेदांग, उपनिषद्, स्मृति, धर्मशास्त्र और पुराणो के अतिरिक्त काव्य, नाटक, उपन्यास, समालोचना तथा कोश आदि बहुविध विधाओं के अनेक दुर्लभ प्राचीन तथा अर्वाचीन ग्रन्थ हैं। इस सन्दर्भ मे उक्त दोनों महानुभावों के साथ-साथ इसके उद्यमी पूर्व पुस्तकाध्यक्ष पण्डित उग्रनारायण झा ज्योतिषाचार्य का नाम भी गौरव के साथ स्मरण किया जाता रहेगा, जिन्होंने जनवरी सन् 1925 से सन् 1957 तक इस पुस्तकालय की अभिवृद्धि मे अपना अभिनन्दनीय योगदान दिया था और अब भी वे इस 'प्रबन्ध-समिति' तथा 'न्यास-समिति' के सक्रिय सदस्य के रूप में अपना अमूल्य परामर्श देते रहते है। यहाँ यह बात भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि पुस्तकालय के वर्तमान मन्त्री डॉ० बेचन झा श्री उग्रनारायण झा के ही सुयोग्य पुत्र है। पण्डित भगवानप्रसाद चौबे के हिन्दी-प्रेम का ज्वलन्त स्मारक यह 'भगवान पुस्तकालय' आज न केवल बिहार अपितु समस्त देश के अत्यन्त समृद्ध पुस्तकालयो मे अग्रणी स्थान रखता है। चौबे जी की कर्तव्य-निष्ठा का परिचय अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कलकत्ता मे आयोजित तृतीय अधिवेशन के उस कार्य विवरण से मिल जाता है जिसका प्रकाशन सन् 1912 मे किया गया था।

आपका निधन 12 सितम्बर सन् 1924 को हुआ था।

श्री भतमाल जोशी

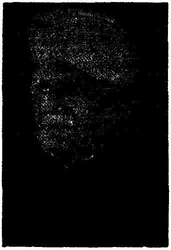
श्री जोशी जी का जन्म राजस्थान के बीकानेर नगर के श्री रामकिशन जोशी के परिवार मे सन् 1895 में हुआ था। अपनी प्रबल मेधा और अद्भुत प्रतिभा के कारण आपने 11 वर्ष की अल्पायु मे ही अनेक सस्कृत-ग्रन्थों का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। इसी प्रसंग में धीरे-धीरे आपके मानस मे कवित्व की प्रतिभा जागृत हो गई और आप बाल-विवाह तथा कन्या-विक्रय आदि अनेक सामाजिक कुरीतियो के विरुद्ध रचनाएँ करने मे प्रवृत्त हो गए। आपने समाज मे प्रचलित अनेक अन्ध विश्वासो पर भी जमकर प्रहार किया था। राजस्थानी और हिन्दी के कवियों मे आपका स्थान अग्रगण्य था।

धीरे-धीरे कवित्व के अतिरिक्त आप रगमंच की प्रवृत्तियों में भी रुचिपूर्वक भाग लेने लगे और अनेक नाटक

तथा गायन-मण्डलियों के माध्यम से आपने अपने गीतों के द्वारा सामाजिक जागृति के क्षेत्र मे उल्लेखनीय कार्य किया था। आप हिन्दी तथा राजस्थानी दोनों ही भाषाओ मे अत्यन्त परिष्कृत रचनाएँ किया करते थे। विभिन्न कवि-सम्मेलनों तथा सार्वजनिक मंचो से आपने अपनी तेजस्वी रचनाओं के द्वारा जन-जागरण के कार्य को बहुत आगे बढ़ाया था। आप कहा करते थे :

वह विद्या अपनाइए, हो सबका कल्याण।
दु ख पहुँचे ससार को, उसे अविद्या जान ॥

आप प्रचार तथा विज्ञापन से सर्वथा दूर रहकर सदैव साहित्य-साधना मे सलग्न रहे और अपनी 'विवेक वचनावली' नामक कृति को भी आपने 'एक बट्टा सब' नाम से प्रकाशित किया था। इसका प्रकाशन श्रीराम विद्यालय बीकानेर के तत्कालीन आचार्य श्री गोवर्धनलाल पणिया ने सन् 1948 मे किया था। आपकी राजस्थानी भाषा मे लिखी गई कविताएँ 'थे लोठा घणा' नाम से सन् 1968 मे प्रकाशित की गई थी। इनका सम्पादन श्री भवानीशकर 'विनोद' तथा श्री शिवराज छगाणी ने किया था और प्रकाशन 'बीकानेर नागरिक अभिनन्दन समिति' की ओर से हुआ था।

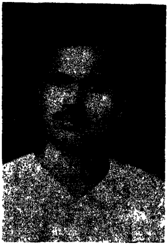


आपका निधन 3 जनवरी सन् 1975 को हुआ था।

श्री भवानीशंकर षडंगी

श्री षडगी का जन्म 2 अक्तूबर सन् 1922 को मध्यप्रदेश के रायगढ़ नामक नगर में हुआ था। आपकी शिक्षा रायगढ़, रायपुर, जबलपुर, इलाहाबाद और नागपुर आदि नगरों मे हुई थी और आपने एम० ए० (हिन्दी) तथा एम० एड० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी।

अपनी मातृभाषा उड़िया होते हुए भी श्री षडंगी जी ने हिन्दी को ही पूर्णत. अपना लिया था और उसमें ही लिखने लगे थे। उडिया तथा हिन्दी के अतिरिक्त आप अंग्रेजी, सस्कृत, बंगला, गुजराती और मराठी आदि कई भाषाओ के भी मर्मज्ञ थे। निरन्तर स्वाध्याय करते रहने के अपने स्वभाव के कारण आप अपनी आय का प्राय आधा अश पुस्तको तथा पत्र-पत्रिकाओ के क्रय पर ही व्यय किया करते थे।



आपने रायगढ के 'नगरपालिका उच्चतर माध्यमिक विद्यालय' के प्रधानाचार्य के रूप मे कार्य करते हुए वहाँ के अनेक युवको मे हिन्दी के प्रति उल्लेखनीय अनुराग जगाया था। आप जहाँ उत्कृष्ट कोटि के शिक्षक के रूप मे उस क्षेत्र मे विख्यात थे वहाँ कवि के रूप मे भी आपने पर्याप्त ख्याति अर्जित की थी। आपकी रचनाओं की प्रशसा सर्वश्री सुमित्रानन्दन पन्त, महादेवी वर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' तथा विनयमोहन शर्मा आदि हिन्दी के अनेक महारथियों ने मुक्त कण्ठ से की थी।

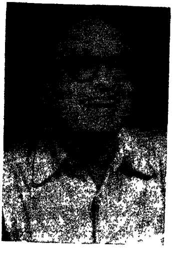
आपकी हिन्दी कविताएँ 'हरीतिमा' नामक पुस्तक में सकलित है, जिसका प्रकाशन सुधीर प्रकाशन रायपुर की ओर से 1972 मे हुआ था। आपके कवित्व की उत्कृष्टता का सबसे बडा प्रमाण यह है कि इस सकलन के प्रकाशन से पूर्व ही सन् 1944 मे जब श्री षडंगी जी ने अपनी कविताओं का पाठ आकाशवाणी के लखनऊ केन्द्र से किया था तब श्रीमती महादेवी वर्मा ने आपको 'हिन्दी साहित्य का अपना सबसे छोटा भाई' स्वीकारा था। आपके कवित्व पर रायगढ अचल

के साहित्य वाचस्पति श्री लोचनप्रसाद पाण्डेय और श्री मुकुटधर पाण्डेय के व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप परिलक्षित होती है।

आपका निधन सन् 1981 मे हुआ था।

डॉ० भारतभूषण अग्रवाल

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के मथुरा नगर मे 2 अगस्त सन् 1919 को हुआ था। सन् 1935 मे वहाँ के 'चम्पा अग्रवाल हाई स्कूल' से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप चन्दौसी के एस०एम० कालेज मे इण्टरमीजिएट की परीक्षा देने के विचार से प्रविष्ट हो गए थे। फिर आपने अपने अग्रज श्री विद्याभूषण अग्रवाल के साथ 'सैंण्ट जान्स कालेज' आगरा से सन् 1941 मे अग्रेजी साहित्य मे एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इसके अनन्तर आप कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'समाज सेवक' के सम्पादक होकर वहाँ चले गए। कलकत्ता का वातावरण जब आपको अनुकूल न जँचा तो आप लगभग 3 वर्ष तक हाथरस की एक मिल मे कार्य-रत रहे। तदुपरान्त आप हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार श्री सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन द्वारा सम्पादित त्रैमासिक 'प्रतीक' के कार्य मे सहयोग देने की दृष्टि से प्रयाग चले आए। प्रयाग मे रहते हुए ही आपने आकाशवाणी मे कार्य करना प्रारम्भ कर



दिया और उसके प्रयाग, लखनऊ, भोपाल तथा नई दिल्ली केन्द्रो पर पहले स्क्रिप्ट-लेखक और बाद मे कार्यक्रम अधिकारी के रूप मे सन् 1948 से सन् 1959 तक सेवा-रत रहे। आप सन् 1960 से सन् 1974 तक साहित्य अकादेमी नई दिल्ली के सहायक मन्त्री रहने के साथ-साथ अपने निधन से पूर्व शिमला के 'उच्चतर अध्ययन सस्थान' के फैलो थे।

आप जहाँ हिन्दी की प्रयोगवादी धारा के पुरस्कर्ता कवियों मे थे वहाँ आपने अपने व्यंग्य और हास्य से परिपूर्ण 'तुक्तक' लिखकर हिन्दी के काव्य-साहित्य को एक नई दिशा प्रदान की थी। अग्रेजी तथा हिन्दी के अतिरिक्त बगला तथा जर्मन भाषाओं पर आपका असाधारण अधिकार था। अपने छात्र-जीवन के प्रारम्भ से साहित्य के क्षेत्र मे कुछ नया कर गुजरने की अदम्य लालसा आपके मानस मे थी, इसीलिए आप दिन-प्रतिदिन अपने उद्दिष्ट पथ पर सफलता प्राप्त करते हुए अग्रसर होते रहे। आपके कवि रूप का उदय जहाँ सन् 1943 मे 'तार सप्तक' के कवि के रूप मे हुआ था वहाँ कालान्तर मे आपने कविता के अतिरिक्त एकांकी, कहानी, उपन्यास, व्यग्य तथा निबन्ध की दिशा मे भी अपनी प्रतिभा का प्रचुर परिचय दिया था। आकाशवाणी मे रहते हुए आपने बहुविध लेखन करने के साथ-साथ तुक मिलाने के चमत्कारी काव्य का लेखन इतनी तेजी मे करना प्रारम्भ किया कि आप 'तुक्तक काव्य' के अन्यतम कवि कहे जाने लगे। आपकी प्राय सभी रचनाओं मे नई सामाजिक चेतना का जो रूप अपनी प्रखरता के साथ उभरा था वह सर्वथा अनन्य और अनुपम था। आपकी 'मै और मेरा पिट्ठू' नामक कविता इतनी लोकप्रिय हुई थी कि उसमे आपकी रचना-प्रतिभा एव कुशल सामाजिक अनुभूतिमत्ता का सहज ही अनुमान हो जाता है। अकादेमी के कार्य-काल मे आपने जहाँ गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के नाटको एव कविताओ का अनुवाद प्रस्तुत करके अपनी अनुवाद-कला का सहज परिचय दिया था वहाँ सन् 1970 मे दिल्ली विश्वविद्यालय से 'हिन्दी उपन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव' विषय पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके 'पी-एच० डी०' की उपाधि भी प्राप्त की थी।

आपके नाम के बिना जहाँ हिन्दी की नई कविता के कवियों की सूची सर्वथा अधूरी रहेगी वहाँ सहज, सरल व्यग्य-हास्य की गुदगुदियो से आप्लावित व्यग्य-काव्य-लेखन मे भी आपका अपना एक विशिष्ट स्थान था। आपने जहाँ अपने कवि-जीवन के प्रारम्भ मे गम्भीर वेदना और वियोग से परिपूर्ण गीत लिखे थे वहाँ प्रगतिवादी आन्दोलन से जुडकर तत्कालीन राजनीतिक वातावरण की उष्णता को प्रस्तुत करने

वाली अनेक सशक्त रचनाएँ भी प्रस्तुत की थी। आपकी ऐसी रचनाएँ 'छवि के बन्धन' तथा 'जागते रहो' नामक सकलनो मे देखी जा सकती है। धीरे-धीरे आपकी अनुभूतियो का क्षेत्र विस्तार पाता गया और एक समय ऐसा आया जब आप 'तार सप्तक' के माध्यम से 'प्रयोगवादी कविता' के क्षेत्र मे प्रतिष्ठित हो गए। अपने छात्र-जीवन से ही कविताओ को कण्ठस्थ करने और 'तुक' मिलाने की प्रवृत्ति के कारण आपने अन्त मे 'तुक्तक काव्य' के क्षेत्र म अपना सर्वथा अग्रणी स्थान बना लिया था। आपने 'तुक' मिलाने की इस प्रवृत्ति के सम्बन्ध म 'तार सप्तक' मे अपनी सफाई इस प्रकार दी है—"स्कूल की प्रारम्भिक कक्षाओ मे दूसरों के पद्यो को कण्ठस्थ करके उनकी आवृत्ति करने ने ही सम्भवत मुझे कविता की ओर प्रेरित किया, और क्योंकि 'तुक' के कारण कण्ठस्थ करने मे सुविधा होती थी, इसलिए अनजाने मे ही तुक को मै महत्त्वपूर्ण मानने लग गया। फल यह हुआ कि कुछ ही दिनो मे मै तुकबन्दी करने लग गया, जिसमे जो न्यूनाधिक भाव होते थे वे सब उधार खाते, विन्यास मेरा अपना। और गलत तुक या कमजोर तुक की कविता को रद्दी कविता मानने की मेरी आदत तो बहुत दिनो तक बनी रही।"

आपने सजग राजनीति एव सामाजिक चेतना से परिपूर्ण कविता-लेखन की दिशा मे भी कई महत्त्वपूर्ण प्रयोग किए थे। कविता के अलावा आपने जो-कुछ भी लिखा था उसे देखकर आपकी प्रखर मेधा और जागरूक प्रवृत्ति का स्पष्ट परिचय मिलता है। आपकी रचनाओ का विषय और काल के क्रम से विवरण इस प्रकार है—**काव्य** 'छवि के बन्धन' (1941), 'जागते रहो' (1942), 'तार सप्तक' सहयोगी सकलन (1943), 'मुक्ति मार्ग' (1947), 'ओ अप्रस्तुत मन' (1958), 'कागज के फूल' तुक्तक-सग्रह (1964), 'अनुपस्थित लोग' (1965), 'एक उठा हुआ हाथ' (1970) 'उतना वह सूरज है' (1977), 'बहुत बाकी है' (1978), **नाटक और काव्य-रूपक** 'पलायन' (1942), 'सेतु बन्धन' (1955), 'और खाई बढती गई' (1956), 'अग्नि लीक' (1976), 'युग युग या पाँच मिनट' (1983), **निबन्ध-आलोचना** 'प्रसगवश' (1970) 'हिन्दी उपन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव' शोध-प्रबन्ध (1971), 'कवि की दृष्टि' (1978), 'लीक अलीक' (1980), **उपन्यास** 'लौटती लहरों की बाँसुरी' (1964), **कहानी** 'आधे-आधे जिस्म' (1978); **बाल-साहित्य**: 'किसने फूल खिलाए' (1955) तथा 'मेरे खिलौने' (1980)। इन रचनाओं मे से 'पलायन' का जो नया सस्करण सन् 1982 मे अग्रवाल जी के निधन के उपरान्त छपा है उसमे 'पलायन' नाटक के अतिरिक्त 5 अन्य ऐसे रेडियो नाटक भी समाविष्ट कर दिए गए हैं जिनमे प्राचीन काल के पौराणिक, ऐतिहासिक और साहित्यिक चरित्रों को आधार बनाया गया है। आपकी 'उतना वह सूरज है', 'युग युग या पाँच मिनट', 'लीक-अलीक', 'मेरे खिलौने' नामक कृतियाँ भी आपके देहावसान के बाद ही प्रकाशित हुई है। यहाँ यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि आपकी 'उतना वह सूरज है' नामक काव्य-कृति को जहाँ आपके मरणोपरान्त 'साहित्य अकादेमी' की ओर से पुरस्कृत किया गया था वहाँ आपकी 'और खाई बढती गई' तथा 'हिन्दी उपन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव', नामक कृतियाँ क्रमश उत्तर प्रदेश एव मध्यप्रदेश की सरकारो द्वारा पुरस्कृत हुई थी। आप अनुवाद-कला मे भी पूर्णत दक्ष थे। आपकी ऐसी प्रतिभा का परिचय आपके द्वारा अनूदित साहित्य अकादेमी के प्रथम सचिव श्री कृष्ण कृपलानी की रवीन्द्र और गाधी की जीवनियो को देखने मे मिल जाता है।

आपका निधन 23 जून सन् 1975 को शिमला मे हुआ था।

श्री भारतसिंह बघेल

श्री बघेल का जन्म मध्य प्रदेश की रीवाँ रियासत के महसुआ हजूर नामक स्थान मे सन् 1905 मे हुआ था। इनके पिता लाल ददनसिह ने आपकी शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध घर पर ही किया था। आप उत्कृष्ट कवि, निबन्धकार, समीक्षक और पत्रकार थे। आपकी रचनाएँ रीवाँ से प्रकाशित होने वाले 'बान्धव बन्धु' और 'प्रकाश' नामक पत्रो मे छपा करती थी। इन स्थानीय पत्रो के अतिरिक्त 'सरस्वती', 'माधुरी' तथा 'त्यागभूमि' आदि प्रसिद्ध पत्रिकाओ मे भी आपकी रचनाएँ ससम्मान प्रकाशित होती थी।

आप विन्ध्यप्रदेश के छायावादी कवियो मे अपना विशिष्ट स्थान रखते थे। आपकी रचनाओ मे 'बान्धव गान' तथा

'देव तालाब माहात्म्य' प्रकाशित हो चुकी हैं और 'शैव्या' तथा 'भगवान् भरत' नामक काव्य अप्रकाशित है। आपने 'तीन चित्र' नामक एक उपन्यास भी लिखा था। आपकी अन्य गद्य-कृतियों में 'विन्ध्य वैभव' तथा 'विन्ध्य के प्राचीन ग्रन्थ' भी अभी तक अप्रकाशित हैं।

आपका देहावसान सन् 1965 मे हुआ था।

श्री भीष्मलाल मिश्र

श्री मिश्र का जन्म मध्य प्रदेश के दुर्ग नामक स्थान मे सन् 1882 मे हुआ था। आपके पूर्वज बिहार प्रदेश के दरभगा नामक जनपद के मैथिल ब्राह्मण थे और आप वहाँ से वाराणसी (उत्तर प्रदेश) चले आए थे। वाराणसी से आपके पिता श्री हरिकृष्ण मिश्र नागपुर आकर वहाँ के राज-पुरोहित हो गए थे। आप श्रीमद्भागवत के प्रकाण्ड पण्डित थे। भीष्मलाल जी अपना अध्ययन समाप्त करके दुर्ग की माध्यमिक पाठशाला के प्रधानाध्यापक हो गए थे।

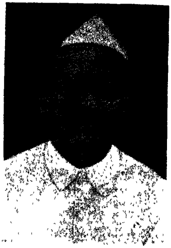
जिन दिनों आप दुर्ग मे अध्यापन का कार्य करते थे उन दिनों 'मैथिली मगल' नामक काव्य के रचयिता हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि श्री शुकलालप्रसाद पाण्डेय भी आपके सहयोगी थे। वास्तव मे उनकी प्रेरणा पर ही आपकी रुचि साहित्य-रचना की ओर हुई थी। आप प्राय भक्ति तथा नीति-प्रधान रचनाएँ किया करते थे। छत्तीसगढ़ी भाषा मे भी आपने बहुत-सी रचनाएँ की थी। आपकी छत्तीसगढी की कृतियों मे 'पुरू झुरू' का नाम अन्यतम है।

आपका देहावसान 25 मार्च सन् 1937 को हुआ था।

पण्डित भोलानाथ शर्मा

श्री शर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के नैनीताल जनपद के काशीपुर नामक नगर मे 22 जनवरी सन् 1906 को हुआ था। आपकी हाई स्कूल तक की शिक्षा काशीपुर के उस हाई स्कूल में हुई थी जो आजकल 'उदयराज हायर सेकण्डरी स्कूल' कहलाता है। प्रथम श्रेणी मे हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने एस० एम० हाई स्कूल चन्दौसी से इटर की परीक्षा दी और तदुपरान्त बी० ए० बरेली से किया था। आपने एम० ए० (संस्कृत) मेरठ कालेज मे प्रविष्ट होकर प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया था। इसके उपरान्त आपने आगरा विश्वविद्यालय से ही हिन्दी और अँग्रेजी विषय लेकर एम० ए० की परीक्षाएँ भी प्रथम श्रेणी प्राप्त करके उत्तीर्ण की थी।

शिक्षा-समाप्ति के अनन्तर आप सन् 1930 में बरेली कालेज मे हिन्दी-प्रवक्ता के रूप मे नियुक्त हुए और जीवन-पर्यन्त वहाँ रहकर ही आपने अनेक छात्रो को साहित्य-सेवा के क्षेत्र मे आगे बढ़ने को प्रेरित किया था। जब सन् 1940 मे कालेज मे सस्कृत विभाग प्रारम्भ हुआ तब उस विभाग की अध्यक्षता भी आपको ही सौपी गई थी। यह आपकी असाधारण योग्यता एव पाण्डित्य का ही प्रभाव था कि आगरा विश्वविद्यालय की 'विद्वत् परिषद्' ने



आपको 'भरत मुनि के नाट्यशास्त्र तथा अरस्तू के पोयटिक्स का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर सीधी डी० लिट्० की उपाधि के लिए शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान की थी। खेद है कि आप इस कार्य को आपने जीवन-काल मे पूर्ण नही कर सके थे।

आपकी अध्ययनशीलता का सबसे सुपुष्ट प्रमाण यही है कि आपने अपने निजी स्वाध्याय के बल पर बगला, गुजराती, मराठी, उर्दू, हिन्दी, तमिल और तेलुगु आदि भारत की कई भाषाओ का अच्छा ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ जर्मन, ग्रीक, फ्रेंच, इटालियन, लातीनी और अँग्रेजी आदि बहुत-सी विदेशी भाषाओ मे भी प्रावीण्य प्राप्त कर लिया था। इनके अतिरिक्त आपका हिब्रू, पालि और प्राकृत भाषाओं का

विस्तृत परिचय इसी बात से मिल जाता है कि आपने ग्रीक और जर्मनी भाषाओं की कई कृतियों को हिन्दी में अनूदित करके प्रकाशित कराया था। आपकी ऐसी पुस्तकों मे 'आदर्श नगर व्यवस्था', 'अरस्तू की राजनीति', 'शुद्ध बुद्धि की मीमांसा' तथा 'फाउस्ट' आदि के नाम उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपने 'वैलमटेल' नामक जर्मन क्लासिक का 'वीर निजय' नाम से अनुवाद किया था, जो अभी तक अप्रकाशित ही है। इनमे से 'आदर्श नगर व्यवस्था' नामक ग्रन्थ केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय की ओर से पुरस्कृत भी किया गया था। आपके द्वारा अनूदित सुकुमार सेन की पुस्तक 'बगला साहित्य की कथा' और भरत-मुनि-कृत 'नाट्य-शास्त्र' भी आपकी विशिष्ट प्रतिभा के परिचायक है।

आप हिन्दी के उन विशिष्ट सेवकों मे प्रमुख थे, जिनके बहुभाषा ज्ञान की धाक सारे देश मे थी। महापण्डित राहुल साकृत्यायन के बाद आप ही अकेले ऐसे व्यक्ति थे, जिन्हें इतनी अधिक भाषाओ का सर्वांगीण ज्ञान था। आपकी प्रकाण्ड विद्वत्ता का एक सबसे बडा प्रमाण यह भी है कि आपने जहाँ नागरी प्रचारिणी सभा काशी' की ओर से प्रकाशित हुए 'हिन्दी विश्वकोश' मे ग्रीक-साहित्य-सम्बन्धी सामग्री प्रस्तुत की थी वहाँ आपकी अरस्तू, प्लेटो, हेगेल, गेटे तथा मेकियावली आदि अनेक विदेशी विचारको के उल्लेखनीय ग्रन्थो को हिन्दी मे प्रस्तुत करने की भी एक अत्यन्त महत्वाकांक्षी योजना थी। यह दुर्भाग्य का विषय है कि आप अपनी इस अभिलाषा को सर्वांशत पूर्ण नही कर सके।

आपका निधन 23 अक्तूबर सन् 1960 को हुआ था।

श्री भोलानाथ सक्सेना 'भोरी सखि'

श्री सक्सेना का जन्म मध्यप्रदेश के विदिशा नामक नगर मे सन् 1887 मे हुआ था। शैशव-काल से ही आपका झुकाव ईश्वर-भक्ति की ओर अधिक था। फलस्वरूप शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त जब आपने बजरगगढ नामक स्थान मे पहले-पहल शिक्षक का कार्य करना प्रारम्भ किया तब आपका सम्पर्क प्रख्यात वैष्णव सन्त श्री गोपीलाल से हो गया। इस सम्पर्क के कारण आपने उनसे राधावल्लभीय सम्प्रदाय की दीक्षा ग्रहण करके तत्सम्बन्धी समस्त आध्यात्मिक साहित्य का गहन अध्ययन किया। इस अध्ययन का सुपरिणाम यह हुआ कि आप भक्ति-साहित्य की रचना की ओर प्रवृत्त हो गए। शिक्षक का कार्य करते हुए ही जब आपने बी॰ ए॰ की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली तब छतरपुर-नरेश श्री विश्वनाथसिंह जी ने आपको अपने राज्य का धार्मिक सलाहकार बना लिया था।

छतरपुर मे रहते हुए आपने वहाँ वकालत भी करनी प्रारम्भ की थी। कुछ दिन तक आपने विदिशा, कोलारस, और ग्वालियर मे भी वकालत की थी। किन्तु आध्यात्मिक प्रवृत्ति की ओर रुचि हो जाने तथा कुछ पारिवारिक जनों की असामयिक मृत्यु की घटना ने आपको विरक्ति की ओर अग्रसर किया और आप सब-कुछ छोडकर वृन्दावन में आकर स्थायी रूप से रहने लगे। वहाँ रहकर आपने भक्ति-मूलक अनेक पुस्तको की रचना की। आपके द्वारा विरचित पुस्तको मे 'आदर्श रामचन्द्र', 'प्रबन्ध', 'प्रभावती परिणय' (नाटक) तथा 'राधावल्लभ भाष्य' प्रमुख है। आपने संस्कृत के कुछ ग्रन्थों का ब्रजभाषा मे काव्यानुवाद भी किया था, जिनमे 'राधा सुधानिधि' प्रमुख है। आपके द्वारा लिखी गई 'उत्सव निर्णय', 'ब्रह्म सूत्र' तथा 'सेवा विचार' नामक ग्रन्थों की टीकाएँ भी विशेष महत्त्वपूर्ण है। आप भक्ति-सम्बन्धी रचनाओ मे 'भोरी सखि' के अतिरिक्त 'हित भोरी' उपनाम का प्रयोग भी प्राय किया करते थे।

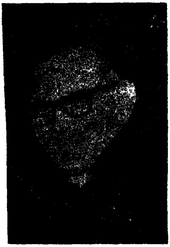
आपका निधन सन् 1933 मे वृन्दावन मे हुआ था।

श्री मणिराम कंचन

श्री कचन का जन्म उत्तर प्रदेश के ललितपुर जनपद (पुराना झाँसी) के तालबेहट नामक स्थान मे 10 जनवरी सन् 1913 को हुआ था। अपने छात्र-जीवन से ही आप सामाजिक तथा राजनीतिक कार्यों मे सक्रिय रूप से भाग लेने लगे थे। फलस्वरूप महात्मा गाधी द्वारा 'असहयोग आन्दोलन' प्रारम्भ होने पर आपने उसमे बढ़-चढकर भाग लिया और सन् 1932 से 1945 तक अनेक बार जेल जाकर यन्त्रणाएँ भोगी। आप सन् 1938 से 1956 तक झाँसी जिले की कम्युनिस्ट

पार्टी से सम्बद्ध रहे और उसमें रहते हुए अनेक क्रान्तिकारी आन्दोलनों मे सक्रिय रूप से भाग लिया। सन् 1956 मे आप कम्युनिस्ट पार्टी से त्यागपत्र देकर पुनः कांग्रेस मे शामिल हो गए और अन्त तक उससे ही सम्बद्ध रहे। कांग्रेस में रहते हुए आप 'अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी' के सदस्य भी रहे थे।

एक कर्मठ तथा लगनशील राष्ट्रीय कार्यकर्ता और नेता होने के अतिरिक्त आप प्रखर पत्रकार, प्रभावशाली वक्ता और गम्भीर लेखक भी थे। पहले-पहल आपने झाँसी से 'मार्गदर्शक' नामक मासिक पत्र का सम्पादन प्रारम्भ किया था और बाद मे 'जन सग्राम', 'सयुक्त मोर्चा', 'झाँसी न्यूज' (साप्ताहिक) तथा 'प्रकाश' और 'प्रभात' नामक दैनिक पत्रो का सम्पादन भी किया था। इन पत्रो के माध्यम मे आपने जहाँ अपने क्षेत्र मे राजनीतिक जागरण का क्रान्तिकारी कार्य किया वहाँ आपकी लेखनी दिन-प्रतिदिन प्रखर से प्रखरतम होती गई। इसी बीच आपने 'साप्ताहिक बुन्देलखण्ड' नामक पत्र का सम्पादन करके भी अपने क्षेत्र की उल्लेखनीय सेवा की थी। आपका 'मौत और दूध का कटोरा' नामक उपन्यास भी उल्लेखनीय है।



साहित्य और राजनीति का अद्भुत समन्वय आपके जीवन मे था। आपकी प्रतिभा का लाभ अनेक मजदूर सगठनो ने भी उठाया था। किसानो को सामूहिक सघर्ष के लिए प्रेरित करने के साथ-साथ आप रेल कर्मचारियो की यूनियनो को सगठित और सचालित करने मे भी उल्लेखनीय सहयोग दिया करते थे। आप प्रगतिशील समाजवादी विचार-धारा के प्रचार तथा प्रसार मे ही यावज्जीवन लगे रहे और इस प्रसग मे आपने कई बार विदेश यात्राएँ भी की थी। आपकी समाज-सेवा का सबसे उत्कृष्टतम प्रमाण यह है कि आप कई वर्ष तक ललितपुर की नगरपालिका और झाँसी की नगरपालिका के सक्रिय सदस्य और 'जिला बोर्ड' की शिक्षा-समिति मे अध्यक्ष भी रहे थे। आपने 'अन्तरिम जिला परिषद् झाँसी' के उपाध्यक्ष के रूप मे भी कई वर्ष तक उस क्षेत्र की जनता की सेवा की थी। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सोशलिस्ट फोरम के संयोजक भी रहे थे।

आपका निधन 16 मार्च सन् 1975 को नई दिल्ली में हुआ था।

आचार्य मणिशंकर द्विवेदी

श्री द्विवेदी जी का जन्म 29 अगस्त सन 1913 को राजस्थान के जोधपुर राज्य के बाड़मेर नामक जनपद के पातनवाडा ग्राम के सुप्रसिद्ध श्रीमाली ब्राह्मण-परिवार मे हुआ था। आपके पिता श्री जयशंकर द्विवेदी सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे। प्रारम्भ मे उनके तथा बाद मे महाराष्ट्र के रत्नागिरि जिले के विद्वद्वर काशीनाथ विनायक पाध्ये के आचार्यत्व मे आपने शिक्षा प्राप्त की थी। आप सस्कृत तथा हिन्दी के प्रकाण्ड पण्डित होने के साथ-साथ सिन्धी भाषा के भी अद्वितीय विद्वान् थे। आपके जीवन के लगभग 30 वर्ष सिन्ध प्रदेश (अब पाकिस्तान) के हैदराबाद नामक स्थान मे व्यतीत हुए थे। प्रारम्भ मे आपने वहाँ की गिदूमल सस्कृत पाठशाला मे अध्ययन किया था और बाद मे वहाँ पर ही अध्यापन-कार्य करने लगे थे। वहाँ पर रहते हुए आपने जहाँ सस्कृत वाङ्मय का चूडान्त अध्ययन किया था वहाँ सगीत की शिक्षा भी ग्रहण की थी।

भारत-विभाजन के उपरान्त आप सन् 1948 मे जोधपुर (राजस्थान) आ गए थे। यहाँ पर आप सस्कृत महाविद्यालय, चौपासनी विद्यालय तथा दरबार सस्कृत महाविद्यालय मे सम्बद्ध रहे थे। आप कई वर्ष तक जोधपुर के सस्कृत कालेज के प्रधानाचार्य भी रहे थे। अपने इस कार्य-काल मे आपने जहाँ 'कौमुदी' नामक पत्रिका का सम्पादन किया था वहाँ आप सन् 1964-65 मे 'माधवी' नामक एक आंग्ल-हिन्दी तथा सस्कृत भाषा की पत्रिका का सम्पादन

भी करते थे। आप संस्कृत के सुलेखक और कवि होने के साथ-साथ हिन्दी के भी अच्छे कवि तथा लेखक थे। आपके द्वारा हिन्दी मे अनूदित सिन्धी के प्रख्यात कवि शाह लतीफ के जीवन और कृतित्व पर प्रकाश डालने वाली कृति 'शाह लतीफ का काव्य' का प्रकाशन साहित्य अकादेमी नई दिल्ली की ओर से हुआ है। इसमे दी गई शाह लतीफ के काव्य की समीक्षा से आपके गहन अध्ययन का स्पष्ट परिचय मिल जाता है।



राजस्थान के सस्कृत के विद्वानो मे आपका प्रमुख एव उल्लेखनीय स्थान था। आप 'राजस्थान सस्कृत साहित्य सम्मेलन' के जोधपुर अधिवेशन के स्वागत मन्त्री रहने के साथ-साथ पूरे 8 वर्ष तक उसके मण्डल मन्त्री भी रहे थे। राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा आयोजित अनेक 'उपनिषदो' मे जहाँ आपने अनेक बार अपने शोधपूर्ण निबन्धो का पाठ किया था वहाँ आपकी हिन्दी तथा सस्कृत की रचनाएँ आकाशवाणी से भी प्रसारित हुआ करती थी। आप जहाँ उत्कृष्ट कवि और लेखक थे वहाँ कुशल वक्ता के रूप मे भी आपकी बहुत ख्याति थी। अनेक सभाओ तथा समारोहो मे आपके भाषण बडी रुचि से सुने जाते थे। आप कुछ दिन तक अलवर कालेज मे प्रवक्ता भी रहे थे।

आपका निधन 8 अप्रैल सन् 1967 को 54 वर्ष की आयु मे जोधपुर मे हुआ था।

श्री मदनलाल दाना

आपका जन्म सन् 1894 को उत्तर प्रदेश के बरेली नगर के एक प्रतिष्ठित वैश्य-परिवार मे हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा तत्कालीन परिपाटी के अनुसार उर्दू मे हुई थी और 9 वर्ष की अवस्था से ही आपने उर्दू के साथ हिन्दी, सस्कृत तथा अँग्रेजी का विधिवत् अध्ययन प्रारम्भ कर दिया था। यद्यपि आप उर्दू तथा फारसी के प्रकाण्ड विद्वान् थे, किन्तु सस्कृत तथा हिन्दी के श्रेष्ठ साहित्य को उर्दू मे अनूदित करने की आपकी अदम्य लालसा थी। अँग्रेजी साहित्य का सर्वांगीण अध्ययन करके आपने अपने बौद्धिक परिवेश को बहु आयामी विस्तार दिया था।

यह आपकी स्वाध्यायशीलता का ही ज्वलन्त प्रमाण है कि आपने जहाँ सस्कृत के उपनिषदो तथा दर्शनो का व्यापक ज्ञान अर्जित किया था वहाँ हिन्दी के प्रख्यात शृगारी कवि बिहारीलाल की विशिष्ट कृति 'बिहारी सतसई' को उर्दू मे अनूदित किया था। आपके द्वारा किया गया यह अनुवाद प्रख्यात नाटककार श्री राधेश्याम कथा-वाचक द्वारा सचालित 'भ्रमर' नामक



हिन्दी मासिक मे धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुआ था। आपने सूर और तुलसी के अनेक प्रसिद्ध पदो का भी हिन्दी-अनुवाद प्रस्तुत किया था।

यह आपके व्यक्तित्व की एक अनूठी विशेषता ही थी कि आप उर्दू, फारसी, हिन्दी और सस्कृत के अनेक प्रमुख ग्रन्थो का पारायण करने के साथ-साथ आयुर्वेद तथा यूनानी चिकित्सा-शास्त्र का भी अच्छा ज्ञान रखते थे। जिस प्रकार पेशेवर चिकित्सक न होते हुए भी आप सफल चिकित्सक थे उसी प्रकार आप जमीदार होते हुए भी जमीदार और व्यापारी होते हुए भी व्यापारी नही थे। आप अपनी इन बहुआयामी विशेषताओ के कारण बरेली के सामाजिक जीवन मे अपना सर्वथा अनुपम स्थान रखते थे।

आपका निधन 5 जनवरी सन् 1951 को हुआ था।

श्री मदनलाल मिश्र ज्योतिषाचार्य

ज्योतिषाचार्य श्री मिश्र का जन्म सन् 1874 मे भरतपुर (राजस्थान) में हुआ था। आपके पिता पण्डित बंशीधर मिश्र संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे। अपने पिता की योग्यता के अनुरूप ही आपने संस्कृत वाङ्मय तथा ज्योतिष शास्त्र मे जो निपुणता प्राप्त की थी उसीके कारण 'श्री चक्र' के उपासक, श्रेष्ठ कर्मकाण्डी प्रबल हिन्दी-भक्त हो गए थे। जब आपके मन में ज्योतिष शास्त्र का एक पत्र सम्पादित करने की अभिलाषा हुई तो आपने बेलनगंज, आगरा से 'ज्योतिष कल्पतरु' नामक एक मासिक पत्र सन् 1925 में प्रकाशित करना प्रारम्भ किया था। क्योकि उन दिनों भरतपुर रियासत मे प्रेस और प्रकाशन पर प्रतिबन्ध लगा था इसलिए आपने आगरा जाकर यह कार्य करने का दृढ़ सकल्प किया था। 'ज्योतिष सम्बन्धी विभिन्न विषयों को प्रश्न रूप मे या सिद्धान्त रूप मे जनता के समक्ष उपस्थित करके उनका समाधान करना' ही इस पत्र का मुख्य उद्देश्य था।

श्री मिश्र ने 'ज्योतिष कल्पतरु' के माध्यम से जहाँ ज्योतिष शास्त्र के अनेक पक्षो का विशद परिचय हिन्दी पाठको के लिए प्रस्तुत किया वहाँ आपने इस पत्र मे श्री योगेश्वर द्वारा विरचित 'कुण्डली कल्पवृक्षम्' नामक विशाल ज्योतिष ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद भी क्रमश. प्रकाशित करना प्रारम्भ किया था। खेद है कि इस पत्र के कुछ ही अंक प्रकाशित हो सके थे कि उसे स्थगित कर



देना पड़ा। उन्ही दिनों आपने 'श्री भारत शिरोमणि पंचाग' का प्रकाशन प्रारम्भ किया, जो दृश्य गणितानुसार तैयार किया गया था। आपने जहाँ 'ज्योतिष चन्द्रार्क' नामक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ का हिन्दी में अनुवाद प्रस्तुत किया था वहाँ 'सायण ग्रह साधन' और 'छन्दोबद्ध मानसिक पूजा' नामक पुस्तकें भी लिखी थीं। खेद है कि आपकी ये रचनाएँ प्रकाशित नहीं हो सकी।

सोलन (हिमाचल प्रदेश) से प्रकाशित और श्री हरिदेव शर्मा त्रिवेदी द्वारा सम्पादित 'श्री स्वाध्याय' नामक प्रख्यात त्रैमासिक पत्र को आपका सक्रिय सहयोग मिलता रहता था। आजकल श्री त्रिवेदी जी 'ज्योतिष्मती' त्रैमासिक का सम्पादन कर रहे है। अभी उसका 'रजत जयन्ती विशेषांक' भी प्रकाशित हुआ है। 'हिन्दी साहित्य समिति भरतपुर' की स्थापना के समय से ही आप उसके प्रमुख सहायक रहे थे। 30 मार्च सन् 1965 को समिति की ओर से कामा (कामवन) स्थित 'ज्योतिष ज्ञान केन्द्र' के अन्तिम उत्तराधिकारी और ज्योतिष शास्त्र की साहित्यिक तथा ऐतिहासिक परम्परा के प्रतीक के रूप में आपका अत्यन्त भावपूर्ण अभिनन्दन किया गया था। आपके पास संस्कृत तथा हिन्दी के अनेक दुर्लभ हस्तलिखित ग्रन्थो का जो अपूर्व संग्रह था, अब उसकी रक्षा मिश्र जी के सुयोग्य पुत्र ज्योतिष विशारद पण्डित भगवत्प्रसाद शर्मा कर रहे है।

आपका निधन 15 अप्रैल सन् 1967 को हुआ था।

श्रीमती मधु अग्रवाल

श्रीमती मधु का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर मे बा० गंगाप्रसाद के यहाँ 1 दिसम्बर सन् 1930 को हुआ था। आपके पिता नगर के प्रतिष्ठित जनो मे अपना प्रमुख स्थान रखते थे। बचपन मे सुसंस्कृत वातावरण मिलने के कारण आपकी रुचि साहित्य की ओर हो गई थी और आपने केवल 12 वर्ष की आयु मे ही कविता लिखना प्रारम्भ कर दिया था। एम० ए० एल०टी० तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप पहले-पहल मेरठ के 'आर्य कन्या इण्टर कालेज मे' 'वाइस प्रिंसिपल' हो गई थी और बाद मे वहाँ के 'राजवंश गर्ल्स इण्टर कालेज' की प्राचार्य के रूप मे अनेक वर्ष तक सफलतापूर्वक कार्य किया था।

आपने अपनी कविता-लेखन की प्रेरणा के विषय मे अपने 'ऋतुपर्णा' नामक काव्य-संकलन मे जो विचार प्रकट

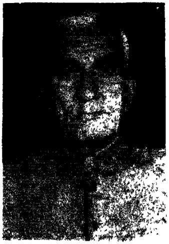
किये थे वे इस प्रकार हैं—"कविता लिखने की सर्वप्रथम प्रेरणा मुझे मिली अपने पूज्य प्रातः स्मरणीय पिता जी से, जो हम छोटे-छोटे भाई-बहनों के मनोरंजनार्थ साधारण से साधारण बात को भी तुकबन्दी में बोला करते थे। जो स्वयं दर्शन-शास्त्र में एम० ए० हैं और आध्यात्मिक चिन्तन में विशेष रुचि रखते हैं। उनके मुख से बचपन में चाँद-सितारों, पृथ्वी आदि के जन्म की कहानियाँ सुन-सुनकर प्रकृति के प्रति एक जिज्ञासा, एक कौतूहल मन में उत्पन्न हुआ, जिसके कारण प्रकृति के साथ एक अटूट रागात्मक सम्बन्ध स्थापित हो गया। एक अनन्य सखी की भाँति मैंने प्रकृति को सदा ही अपने सर्वाधिक निकट पाया है।"



श्रीमती मधु जी की रचनाएँ 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' और 'कादम्बिनी' आदि हिन्दी की अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थीं। आपकी रचनाओं का संकलन 'ऋतुपर्णा' नाम से कलकत्ता के 'सुपर्णा प्रकाशन' की ओर से आपके निधन के कुछ समय बाद सन् 1969 में प्रकाशित हुआ था। आपका निधन कपड़ों में अचानक आग लग जाने के कारण सन् 1968 में हुआ था। 'ऋतुपर्णा' के प्रकाशन के उपरान्त मधु जी की स्मृति में 'सुपर्णा प्रकाशन' की ओर से कलकत्ता में 4 अप्रैल सन् 1970 को 'ऋतुपर्णा काव्य-समारोह' का आयोजन करके इस संकलन का विधिवत् विमोचन किया गया था, जिसमें मधु जी की 2 गीति-रचनाओं का श्रीमती जयश्री गुप्ता ने गायन किया था।

श्री मनुदत्त शास्त्री

श्री शास्त्री जी का जन्म सन् 1908 में उत्तर प्रदेश के बिजनौर जनपद की धामपुर तहसील के अन्तर्गत शिवपुरी गाँव में हुआ था। आप जब केवल 9 वर्ष के ही थे कि आपके पिताजी का देहावसान हो गया था। आपकी शिक्षा-दीक्षा धामपुर, अमरोहा, मुरादाबाद, हरिद्वार और चाँदपुर की संस्कृत पाठशालाओं में हुई थी और 'शास्त्री' की परीक्षा आपने पंजाब यूनिवर्सिटी से उत्तीर्ण की थी। लाहौर में रहते हुए ही आपने अंग्रेजी का ज्ञान भी प्राप्त कर लिया था। शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त आपने पहले-पहल पाठ्य-पुस्तकों और सहायक पुस्तकों के लेखन का कार्य किया और बाद में पत्रकारिता के क्षेत्र में आ गए। सर्वप्रथम आपने सन् 1935 में हरिद्वार से 'प्रकाश' नामक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन किया था। कनखल (हरिद्वार) के स्वामी कृपालुदेव की 'विश्व ज्ञान मन्दिर' संस्था के पत्र 'विश्व ज्ञान' (मासिक) का सम्पादन सन् 1936 में किया और बाद में मुरादाबाद से प्रकाशित होने वाले मासिक पत्र 'अरुण' से जुड़ गए। वहाँ आप सन् 1942 से सन् 1944 तक रहे। इसके उपरान्त आपने सन् 1952 से सन् 1962 तक मुरादाबाद के 'संयुक्त मोर्चा प्रेस' से प्रकाशित होने वाले 'संयुक्त मोर्चा' नामक साप्ताहिक पत्र का सफलतापूर्वक सम्पादन किया।



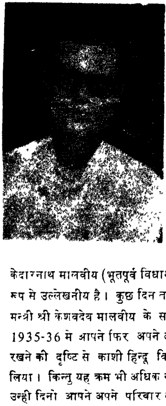
आपने लेखन तथा पत्रकारिता के अतिरिक्त 'ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम संस्कृत विद्यालय' और 'अग्रवाल इण्टर कालेज मुरादाबाद' में अध्यापन-कार्य किया था तथा 30 जून सन् 1974 को वहाँ से सेवा-निवृत्त हुए थे। एक उत्कृष्ट पत्रकार तथा सफल अध्यापक होने के साथ-साथ आप कर्मठ स्वतन्त्रता सेनानी भी थे। आपने कांग्रेस के विभिन्न स्वतन्त्रता-आंदोलनों में सक्रिय रूप से भाग लिया था और कई बार जेल-यात्राएँ भी की थीं। बाद में आप कांग्रेस से त्यागपत्र देकर 'स्वतन्त्र पार्टी' में रहे और फिर 'कम्युनिस्ट पार्टी' में चले गए। आपने

'हिमालय वनौषधि भण्डार' नामक औषधनिर्माणशाला की स्थापना करने के साथ-साथ सन् 1958-59 मे कृषि सहकारिता मे भी सक्रिय रूप से भाग लिया था।

आपका निधन 1 मई सन् 1979 को मुरादाबाद मे हुआ था।

श्री मनोहर मालवीय

श्री मालवीय का जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जनपद के रेरा ग्राम मे पण्डित सीताराम मालवीय के यहाँ सन् 1912 मे हुआ था। श्री सीताराम जी रीवाँ दरबार मे राजपण्डित थे अत आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने ज्येष्ठ भ्राता के निरीक्षण मे इलाहाबाद मे हुई थी। मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप राष्ट्र की पुकार पर पढाई छोडकर युवको के क्रान्तिकारी दल मे सम्मिलित हो गए और अपना नाम बदल कर 'आजाद' रख लिया। जब आपकी क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो के कारण आपके पारिवारिक जनो को पुलिस सताने लगी तो आप घर से निकल गए। आपके उन दिनो के साथियो मे श्री हर्षदेव मालवीय (भूतपूर्व सासद) तथा केदारनाथ मालवीय (भूतपूर्व विधायक) आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कुछ दिन तक आप भूतपूर्व केन्द्रीय मन्त्री श्री केशवदेव मालवीय के सम्पर्क मे भी रहे थे। सन् 1935-36 मे आपने फिर अपने अध्ययन को आगे जारी रखने की दृष्टि से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय मे प्रवेश ले लिया। किन्तु यह क्रम भी अधिक समय तक न चल सका। उन्ही दिनो आपने अपने परिवार तथा समाज का विरोध सहकर भी हिन्दी के प्रख्यात लेखक श्री बालकृष्ण भट्ट के तृतीय पुत्र श्री लक्ष्मीकान्त भट्ट की पुत्री कुमारी प्रतिभा से 2 दिसम्बर सन् 1936 को विवाह कर लिया और कलकत्ता चले गए।



कलकत्ता मे जाकर आपने 'इलाहाबाद बैंक' मे नौकरी कर ली, किन्तु स्वाभिमानी स्वभाव होने के कारण आपकी बैंक के अंग्रेज मैनेजर से अधिक न पट सकी और आनन-फानन मे उस नौकरी को लात मारकर आप श्री मूलचन्द्र अग्रवाल द्वारा सचालित 'विश्वमित्र' (साप्ताहिक) मे चले गए। श्री अग्रवाल श्री लक्ष्मीकान्त भट्ट तथा उनके मित्र श्री माधव शुक्ल से पहले से परिचित थे, अत मालवीय जी को उन्होंने बड़ी ही उदारता से अपने यहाँ रखा। किन्तु यहाँ भी आपका स्वाभिमानी तथा अक्खड स्वभाव आडे आया और मूलचन्द्र जी से आपकी खटपट रहने लगी। मूलचन्द्र जी आपको अपार स्नेह करते थे, इसलिए मालवीय जी का अक्खड स्वभाव भी उन्होंने बराबर सहन किया और जब 'विश्वमित्र' को बम्बई से दैनिक रूप मे निकालने का निश्चय हुआ तो आपको वहाँ भेज दिया। वहाँ पर स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण मूलचन्द्र जी ने आपको 'विश्वमित्र' के पटना-सस्करण का सम्पादक बनाकर वहाँ बुला लिया।

इस बीच आपने कई बार 'विश्वमित्र' छोडा और कई बार वहाँ गए। वैचारिक मतभेद होते हुए भी मूलचन्द्र जी और मालवीय जी के सम्बन्ध बराबर मधुर ही बने रहे। 'विश्वमित्र' को छोडकर आपने कई वर्ष तक कलकत्ता मे 'सात्विक जीवन' नामक साप्ताहिक का भी सम्पादन किया था। इसी प्रकार जब वहाँ से 'सन्मार्ग' दैनिक का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तब आपका उससे भी सम्बन्ध हो गया और आपने कई वर्ष तक उसके सम्पादन मे अपना विविध सहयोग दिया। उन दिनो 'सन्मार्ग' मे प्रकाशित मालवीय जी की 'दिल्ली दरबार' नामक रचना चर्चा का विषय रही थी। अनेक प्रच्छन्न नामो से भी आप प्राय लिखा करते थे। पत्र-कारिता के इतने लम्बे समय मे मालवीय जी ने जो विशेष उल्लेखनीय कार्य किया था वह था 'गल्प भारती' नामक पत्रिका का प्रकाशन-सम्पादन। इस पत्रिका के 'कलकत्ता के हिन्दी कथाकार' तथा 'कलकत्ता के उर्दू कथाकार' नामक विशेषाक अपनी साहित्यिक सामग्री के लिए आज भी याद किये जाते है। इस पत्रिका के प्रकाशन मे आपने भारी

आर्थिक हानि उठाई थी।

आपका निधन 23 मई सन् 1975 को कलकत्ता में पक्षाघात के कारण हुआ था।

श्री मन्नन द्विवेदी गजपुरी

श्री गजपुरी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद में राप्ती नदी के किनारे पर बसे हुए गजपुर नामक ग्राम में सन् 1885 में हुआ था। आपके पिता श्री मातादीन द्विवेदी भी ब्रजभाषा के अच्छे कवि थे और 'हरिदास' नाम से वे कविता लिखा करते थे। आपका सारा ही परिवार साहित्य-प्रेमी था। आपकी एक बहन श्रीमती सूर्यदेवी दीक्षित 'उषा' भी एक प्रतिष्ठित कवयित्री है और उनका 'निर्झरिणी' नामक काव्य-संकलन प्रकाशित हो चुका है। इस काव्य-संकलन पर श्रीमती 'उषा' को अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन के शिमला-अधिवेशन में 'सेकसरिया पुरस्कार' से सम्मानित किया गया था। श्री गजपुरी जी के अनुज श्री रामअवध द्विवेदी भी हिन्दी के अच्छे साहित्यकार थे।

मन्नन द्विवेदी ने बनारस के गवर्नमेण्ट कालेज से बी० ए० की परीक्षा सन् 1908 में उत्तीर्ण की थी और तदुपरान्त आप आजमगढ़ में तहसीलदार हो गए थे। अपने छात्र-जीवन में ही आपके मानस में देश-प्रेम की भावनाएँ हिलोरें मारती रहती थीं, जिसके फलस्वरूप आपने सरकारी सेवा में रहते हुए भी राष्ट्रीय रचनाएँ करने में मुह नहीं मोड़ा। यह एक आश्चर्य की ही बात है कि इतनी प्रशासकीय व्यस्तताओं के रहते हुए भी आप लिखने के लिए समय निकाल लेते थे। जब आप छठी कक्षा में पढ़ते थे तब से ही आपने पत्र-पत्रिकाओं में लिखना प्रारम्भ कर दिया था। आपकी तत्कालीन रचनाएँ 'सरस्वती', 'अभ्युदय', 'मर्यादा', 'इन्दु', 'प्रताप', 'प्रभा', 'वर्तमान' तथा 'राजपूत' आदि पत्र-पत्रिकाओं में छपा करती थीं। शासकीय सेवा में रहते हुए आपने अपने स्वाभिमान को कभी चोट नहीं आने दी तथा अपनी भावनाओं का प्रकटीकरण सर्वथा निर्द्वन्द्व भाव से किया था। गोरखपुर से प्रकाशित होने वाले 'स्वदेश' साप्ताहिक के तो आप स्थायी लेखक ही थे। उसमें प्रति सप्ताह प्रकाशित होने वाले 'गोरखधन्धा' नामक स्तम्भ का लेखन आपने 'मुछन्दरनाथ' नाम से अविराम और निःशंक भाव से किया था। इसके अतिरिक्त आप उसमें 'बडबडानन्द सरस्वती', 'चक्र सुदर्शन' 'गुरु घण्टाल' और 'दुर्गेश' आदि अनेक छद्म नामों से भी लिखा करते थे।

यद्यपि आप मुख्यतः कवि ही थे, किन्तु गद्य-लेखन में भी आपको अभूतपूर्व सिद्धि प्राप्त हुई थी। 'स्वदेश' (साप्ताहिक) के माध्यम से आपके गद्य में जो प्रौढ़ता आई थी उसके फलस्वरूप आपने कविता के साथ-साथ कई उत्कृष्ट गद्य-कृतियाँ भी हिन्दी-साहित्य को समर्पित की थीं। आप जहाँ पद्य की भाषा को द्विवेदी-मण्डल के कवियों के प्रभाव से मुक्त करने का सफल प्रयास कर रहे थे वहाँ गद्य में भी आप अपने युगान्तकारी विचारों का प्रसार यदा-कदा करते रहते थे। हिन्दी-कविता के सम्बन्ध में आपके विचार एकदम क्रान्तिकारी थे। आपके मत में "अँग्रेजी तालीम और अँग्रेज साहित्य के असर ने हमको आजादी सिखाई। इस आजादी का पहला नतीजा यह हुआ कि हमारे पद्य ने एक नया और समय-काल के मुताबिक कपड़ा पहन लिया। वह कपड़ा खड़ी बोली यानी बोल-चाल की भाषा में बहुत फायदेमन्द है। नई बात होने की वजह से कुछ लोग इसके बहुत खिलाफ हुए, लेकिन अब सब झगड़ा तय हो गया है। खड़ी बोली के विरोधी भी अब इसमें कविता करने लगे हैं।"

परिमाण की दृष्टि से यद्यपि श्री गजपुरी जी ने कम कविताएँ लिखी थीं, किन्तु फिर भी आपके 'बन्धु विनय', 'धनुष भंग' और 'प्रेम' नामक काव्य उल्लेखनीय हैं। गद्य के क्षेत्र में भी आपने अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। आपकी उल्लेखनीय गद्य-कृतियों में 'गोरखपुर विभाग के कवि', 'भारत के प्रसिद्ध पुरुष', 'मुसलमानी राज्य का इतिहास', 'रणजीतसिंह का जीवन चरित', 'आर्य ललना' तथा 'हमारा भीषण ह्रास' आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। उपन्यास-लेखन की दिशा में भी आपने अपनी प्रतिभा का पुष्कल परिचय दिया था। आपके उपन्यासों में 'रामलाल', 'कल्याणी' और 'सरवरिया' के नाम विशेष ध्यातव्य हैं। इनमें से 'सरवरिया' की रचना आपने भोजपुरी भाषा में की थी।

यह एक विचित्र संयोग की बात है कि इतनी बुद्ध प्रतिभा के धनी गजपुरी जी अधिक आयु न पा सके और

केवल 36 वर्ष की अल्पावस्था में ही सन् 1921 में परलोक सिधार गए।

डॉ० (श्रीमती) ममता मालपाणी

श्रीमती ममता का जन्म 17 अक्तूबर सन् 1946 को कानपुर में हुआ था। आप हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार श्री बालकृष्ण बलदुआ की पुत्री थी और आपका विवाह जबलपुर के अच्छे गीतकार श्री भवानीशकर मालपाणी के साथ सन् 1961 मे हुआ था। विवाहोपरान्त आपने अपने पति के सम्पर्क मे आकर जहाँ अँग्रेजी साहित्य मे एम० ए० की परीक्षा ससम्मान उत्तीर्ण की वहाँ अँग्रेजी के विख्यात कवि ब्राउनिग पर अपना शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके जबलपुर विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि भी प्राप्त की थी। इसी बीच आप जबलपुर के 'चचलाबाई महिला महाविद्यालय' मे अँग्रेजी की व्याख्याता भी हो गई थी।

वैसे तो आपको साहित्यिक प्रतिभा अपने पिता से विरासत मे ही मिली थी और विवाह से पूर्व ही आपने लेखन को अपना लिया था, किन्तु अपने मनोनुरूप पति को पाकर तो आप इस दिशा मे और भी उन्मुक्तता से बढ़ती जा रही थी। कविताओं के अतिरिक्त आपने कहानियाँ और रिपोर्ताज आदि लिखने मे भी अभूतपूर्व सिद्धि प्राप्त कर ली थी। आपकी प्रतिभा का स्पष्टतम परिचय आपकी 'दर्द की भीड' नामक उस कृति को देखकर मिल जाता है जिसका प्रकाशन श्री बालकृष्ण बलदुआ द्वारा प्रकाशित 'नन्ही पुस्तकें' के अन्तर्गत हुआ था।



आप जहाँ उत्कृष्ट कवयित्री के रूप में उभरकर हिन्दी-जगत् के समक्ष आई थीं वहाँ कहानी-लेखन की दिशा में भी आपको अभूतपूर्व सफलता मिली थी। श्रीमती उषादेवी मित्रा ने अपनी 72 वर्ष की परिपक्व वय मे जिन अनुभूतियों का चित्रण अपनी कहानियों में करके चूड़ान्त प्रसिद्धि प्राप्त की थी, वह सब श्रीमती मालपाणी ने अपनी संवेदनशील लेखनी से इतनी कम आयु मे कर दिखाया था। यह एक विचित्र संयोग ही कहा जायगा कि ममता जी ने मध्यवर्गीय शोषित-पीडित नारी की अन्तर्वेदना को उमी सफलता तथा आत्मीयता से अपनी रचनाओं मे रूपायित किया है, जिस तन्मयता से श्रीमती उषादेवी मित्रा ने युग की अनुभूतियो का संस्पर्श किया था।

यह दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि श्रीमती ममता के 35 वर्षीय जीवन का बडा करुण अन्त हुआ। 20 सितम्बर सन् 1981 की रात को स्टोव से खाना गरम करते समय आप आग की लपेट मे आ गई और अनेक उपचार करने पर भी 6 दिन बाद 26 सितम्बर को आपने इस लोक से प्रयाण कर दिया।

श्री मरदानसिंह

श्री मरदानसिंह का जन्म मध्यप्रदेश के नादन टोला अमर पाटन नामक स्थान मे सन् 1861 मे हुआ था। भक्ति-विषयक रचना करने मे आप बहुत प्रवीण थे। अपनी काव्य-गत उपलब्धि तथा रचना-प्रतिभा के कारण आपने साहित्य मे अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया था। आपकी कविता मे भाषा, भाव, अलकार तथा छन्द का जो माधुर्य रहता था उसकी झाँकी आपके इस पद मे देखी जा सकती है

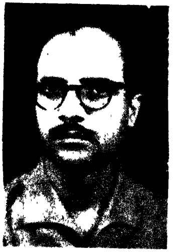
प्रकट भये हैं पानि पकज लकुट लीन्हे,
आँखे अनियारी मीस मुकुट सु धारे हैं।
कारे कच-कुचित कपोलन पै कुण्डल त्यों,
कण्ठ पै कपोलन की सुषमा सवारे हैं।।
'मर्दन' बखानै मान मथन मनोभव के,
गरुए गयन्दन की गति को पसारे हैं।
आइकै अनोखे आसु अवनि अनूपम ते,
लाल ब्रज बालन पै वचन उचारे है।।

आपकी 'छन्दमाला' नामक कृति प्रकाशित हो चुकी है।

आपका देहावसान सन् 1922 मे हुआ था।

श्री मलयज

श्री मलयज का जन्म उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जनपद के महुई नामक ग्राम मे 15 जुलाई सन् 1935 को हुआ था। आपका वास्तविक नाम 'भरतजी श्रीवास्तव' था, किन्तु साहित्य के क्षेत्र में आपकी पहचान 'मलयज' नाम से ही थी। आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से सन् 1963 मे अंग्रेजी विषय मे एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। कवि और समीक्षक के रूप मे आपका आज के हिन्दी के आधुनिक लेखकों मे अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान था। वैसे डायरी-लेखन और कहानी-लेखन मे भी आपको अद्वितीय सिद्धि प्राप्त थी। आपके साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ सन् 1955-56 से उसी समय हो गया था जब आप स्थायी रूप से प्रयाग मे आकर रहने लगे थे। नाटककार के रूप मे भी 'मलयज' ने हिन्दी-पाठको पर अपनी एक ऐसी छाप छोड़ी थी जिसके कारण आप अत्यन्त लोकप्रिय हुए थे। आकाशवाणी के इलाहाबाद केन्द्र से प्रसारित होने वाले आपके नाटक इस सम्बन्ध मे स्मरणीय हैं।



एक कुशल कवि, सहृदय समीक्षक, सवेदनशील नाटककार और जागरूक कथा-लेखक के रूप मे 'मलयज' बहुत थोड़े समय मे साहित्य मे प्रतिष्ठित हो गए थे। श्री सर्वेश्वरदयाल सक्सेना के सहयोग से सम्पादित कवि शमशेरबहादुरसिंह के व्यक्तित्व तथा कृतित्व के सम्बन्ध मे आपकी जो पुस्तक सन् 1971 में प्रकाशित हुई थी उससे आपकी समीक्षा-दृष्टि का स्पष्ट परिचय मिल सकता है। यद्यपि कवि के रूप में आपने सन् 1956 से ही अपना एक सर्वथा अलग स्थान बना लिया था, किन्तु आपके कविता-संकलन 'जख्म पर धूल' (1971) तथा 'अपने होने को अप्रकाशित करता हुआ' (1980) बहुत बाद में प्रकाशित हुए थे। आलोचना के क्षेत्र मे आपकी 'कविता से साक्षात्कार' (1979) नामक कृति को विज्ञजनों ने इस दशक की विशेष उपलब्धि माना है।

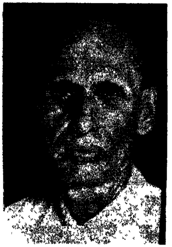
पिछले 17 वर्ष से आप दिल्ली मे रहने लगे थे और एक स्वतन्त्र लेखक तथा पत्रकार का जीवन व्यतीत कर रहे थे। आपका निधन 26 अप्रैल सन् 1982 को हृदय गति बन्द हो जाने के कारण हुआ था।

श्री महेन्द्रनाथ शास्त्री

श्री शास्त्री जी का जन्म बिहार प्रदेश के सारन जनपद के महाराज गज नामक नगर के निकटवर्ती ग्राम रतनपुरा मे 16 अप्रैल सन् 1901 को हुआ था। सन् 1906 मे अक्षरारम्भ करके आपने सन् 1922 मे काशी विद्यापीठ से विधिवत् 'शास्त्री' परीक्षा उत्तीर्ण की और बाद मे अपने निजी स्वाध्याय के बल पर साहित्य का गहन अध्ययन किया। बचपन मे ही विवाह हो जाने और पिता के असामयिक देहावसान के कारण पूरे परिवार के भरण-पोषण का भार आपके ऊपर आ पडा था। विवाह के लगभग 2 वर्ष उपरान्त जब आपकी सहधर्मिणी का देहावसान हो गया तो आपने आजीवन अविवाहित रहने का जो निश्चय कर लिया था उस पर सर्वथा अडिग रहे थे।

आपने अपने कर्ममय जीवन का प्रारम्भ सन् 1922 मे 'भारत धर्म महामण्डल वाराणसी' से किया और बाद में गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर (हरिद्वार) मे दर्शनाध्यापक हो गए थे। वहाँ पर भी आप थोड़े ही दिन कार्य कर पाए थे कि पारिवारिक परिस्थितियो के कारण आप वहाँ से छोड़कर बिहार चले गए और फिर वहाँ के ही हाजीपुर, गोरेया कोठी, देवघर, पहलेजपुर तथा महाराजगज आदि

अनेक स्थानो के विभिन्न शिक्षणालयो मे अध्यापन का कार्य किया। बीच-बीच मे यदा-कदा जब अध्यापन के कार्य मे व्यवधान हो जाता था तब पत्रकारिता के कार्य मे भी जुट जाते थे। अपनी इन बहुविध व्यस्तताओ मे आप समाज-सेवा के कार्यों मे भी बराबर भाग लेते रहते थे और सन् 1921 तथा 1930 के सत्याग्रह आदोलनो मे भी आपने बढ-चढकर भाग लिया था। यहाँ तक कि आप उन दिनो 3-4 मास तक सारन जिले के आन्दोलन के डिक्टेटर भी रहे थे। सन् 1942 के 'भारत छोडो आन्दोलन' मे भी आपने सक्रिय रूप से भाग लिया था। इन राष्ट्रीय आन्दोलनो मे आपको अनेक बार जेल की विषम यातनाएँ भी भुगतनी पडी थी। महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने जब एक बार सारन जिले मे 'किसान आन्दोलन' का सफल नेतृत्व किया था तब आपने भी उसमे भाग लिया था।



इन राजनीतिक आन्दोलनो मे भाग लेने के अतिरिक्त आप अनेक सामाजिक तथा सास्कृतिक कार्यो मे भी बराबर भाग लेते रहते थे। अछूतोद्धार, नशाबन्दी, दहेज-प्रथा-उन्मूलन तथा पर्दा-प्रथा-विरोधी आदि सामाजिक आन्दोलनो का सफल नेतृत्व करने के साथ-साथ आपने शिक्षा-प्रसार और पुस्तकालयो का सस्थापना के क्षेत्र मे भी अभिनन्दनीय कार्य किया था। आपने अनेक साहित्यिक सस्थाओ के सगठन सस्थापन और विकास मे भी अद्भुत प्रेरणा प्रदान की थी। आप जहाँ 'सारन जिला भोजपुरी साहित्य सम्मेलन' के आदि सस्थापक और सूत्रधार थे वहाँ आपने सन् 1961 मे थावे (सारन) मे आयोजित 'सारन जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के चौदहवे अधिवेशन की अध्यक्षता भी की थी। आप अनेक वर्ष तक 'बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की स्थायी समिति के सदस्य रहने के अतिरिक्त 'अखिल भारतीय सस्कृत साहित्य सम्मेलन' और 'बिहार संस्कृत संजीवन समाज' के भी बहुत दिन तक सम्मानित सदस्य रहे थे।

एक जागरूक समाज-सेवी और कुशल सगठनकर्ता होने के साथ-साथ बिहार के साहित्यिक प्रेरणा-स्रोतों मे भी आपका प्रमुख तथा उल्लेखनीय स्थान था। हिन्दी के पत्रकार के रूप में आप जहाँ कई वर्ष तक 'विशाल भारत' (कलकत्ता) तथा 'योगी' (पटना) से सम्बद्ध रहे थे वहाँ आपने वाराणसी से प्रकाशित होने वाले सस्कृत के 'सुप्रभातम्' नामक पत्र मे सस्कृत मे भी नियमित लेखन किया था। सन् 1940 मे आपने जहाँ भोजपुरी भाषा मे द्वैमासिक 'भोजपुरी' पत्र का प्रकाशन किया था वहाँ सन् 1929-30 के प्रारम्भिक दिनों मे 'तरुण तरग' नामक एक हस्तलिखित मासिक पत्र का सम्पादन किया था। आपने हिन्दी तथा सस्कृत मे बहुविध लेखन-कार्य करने के साथ-साथ भोजपुरी भाषा को अपनी प्रतिभा का पावन अवदान प्रदान किया था। आपकी 'सुक्ति सरिता', 'सस्कृतामोद' और 'सस्कृत सार' नामक सस्कृत पुस्तको के अतिरिक्त 'भकोलवा', 'चोखा', 'धोखा' तथा 'आज की आवाज' नामक भोजपुरी कृतियाँ भी प्रकाशित हुई थी। आपके द्वारा विरचित हिन्दी कविताएँ पाण्डेय कपिल द्वारा सम्पादित 'सारण्यक' नामक काव्य-सकलन मे देखी जा सकती है। आपकी सस्मरणात्मक कृति 'मै और मेरे' मे आपके जीवन-सघर्ष की सही झाँकी मिलती है।

आपकी विशिष्ट साहित्य-सेवाओ के लिए सारन जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने 9 जनवरी सन् 1966 को छपरा (बिहार) मे आपको सम्मानित करने के साथ-साथ 20 नवम्बर सन् 1968 को जमशेदपुर मे आयोजित 'भोजपुरी साहित्य परिषद्' द्वारा भी अभिनन्दित किया गया था। इनके अतिरिक्त 'सारन जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की ओर से सन् 1970 मे आपका जो अभिनन्दन किया गया था उस अवसर पर आपको 'आचार्य महेन्द्र शास्त्री : व्यक्तित्व और कृतित्व' नामक एक ग्रन्थ भी भेंट किया गया था। इस ग्रन्थ का सम्पादन पाण्डेय कपिल ने किया था। इस ग्रन्थ मे जहाँ शास्त्री जी के व्यक्तित्व पर व्यापक प्रकाश डाला गया है वहाँ इसके 'कृतित्व' खण्ड मे आपकी चुनी हुई रचनाएँ भी सकलित की गई है। इन रचनाओं को देखकर शास्त्री जी के 'साहित्यकार' रूप का सही-सही परिचय पाठकों को मिल सकता है। जब यह ग्रन्थ शास्त्री जी को

समर्पित किया गया था तब स्वर्गीय सिपाहीसिंह 'श्रीमन्त' सारन जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान मन्त्री थे।

आपका देहावसान 31 दिसम्बर सन् 1972 को हुआ था।

सेठ महेशचन्द्र

श्री सेठ महेशचन्द्र का जन्म सन् 1909 मे हिसार मे हुआ था। आपके पिता लाला जसवन्तराय प्रसिद्ध उद्योगपति तथा समाज-सेवी थे। आर्यसमाज और शिक्षा के क्षेत्र मे उनकी सेवाएँ अनन्य और उल्लेखनीय है। उनके द्वारा सस्थापित 'फतहचन्द कालेज फार विमैन' पहले लाहौर मे एक सुप्रसिद्ध शिक्षणालय था और भारत-विभाजन के उपरान्त वह अब हिसार मे सेठ महेशचन्द्र के निरीक्षण मे ही चल रहा था।

महेशचन्द्र जी हिन्दी के कट्टर समर्थक और राष्ट्रीयता के अनन्य भक्त थे। सत्याग्रह आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण पजाब के प्रमुख राष्ट्र-सेवको मे आपकी गणना होती थी।



आपने पजाब विश्वविद्यालय की सीनेट मे अनेक वर्ष तक रहकर वहाँ की शैक्षणिक उन्नति मे बहुत दिलचस्पी ली थी। सन् 1952 मे हिसार मे सम्पन्न हुए 'पजाब प्रातीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन' की स्वागत-समिति के आप ही अध्यक्ष थे। आप पुराने 'पजाब विश्वविद्यालय' के रजिस्ट्रार श्री भोपालसिह के दामाद थे। भारत-विभाजन के उपरान्त आपने हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार मे बहुत उल्लेखनीय कार्य किया था। आप कई वर्ष से हिसार से 'हरियाणा सन्देश' नामक हिन्दी साप्ताहिक का सम्पादन कर रहे थे।

आपका देहान्त 4 दिसम्बर सन् 1981 को हृदयाघात के कारण हुआ था।

श्री महेशदत्त 'रंक'

श्री 'रक' का जन्म उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जनपद के थाना भवन कस्बे मे 15 जुलाई सन् 1927 को हुआ था। आपके पिता पण्डित सूरजभान थाना भवन छोडकर सहारनपुर चले गए थे और वहाँ पर ही आपकी शिक्षा-दीक्षा हुई थी। आपने 'सनातन धर्म सस्कृत विद्यालय सहारनपुर' से सस्कृत की प्रारम्भिक परीक्षा देकर ऋषिकेश के 'आयुर्वेदिक कालेज' मे आयुर्वेद का विधिवत् अध्ययन किया



था। यह कालेज बाबा काली कमली वाले की ओर से सचालित होता था। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आपने पहले-पहल देहरादून के एक धर्मार्थ औषधालय मे कार्य प्रारम्भ किया था और फिर सहारनपुर मे आकर अपना ही औषधालय वहाँ के 'पुरानी मण्डी' नामक मोहल्ले मे प्रारम्भ किया था। बाद मे आपने नगर के एक समीपवर्ती ग्राम छतौली मे अपना औषधालय खोला था और वहाँ पर ही चिकित्सा-कार्य करने लगे थे।

आप जहाँ एक कुशल चिकित्सक के रूप मे अपने क्षेत्र मे अत्यन्त लोकप्रिय थे वहाँ आपने अपनी कविताओ और गीतो के माध्यम से उस क्षेत्र मे बहुत ख्याति अर्जित की थी। यद्यपि 'स्वास्थ्य' और 'धन' दोनो से ही आप अपने 'रक' नाम को पूर्णत: सार्थक करते थे किन्तु अपनी कवित्व-प्रतिभा

से आपने सहारनपुर के साहित्यिक क्षेत्र मे अच्छी प्रतिष्ठा अर्जित कर ली थी। आपको अपनी इस काव्य-यात्रा मे वहाँ के प्रख्यात वैद्य एवं सुकवि श्री रतनलाल 'चातक' का विशिष्ट प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था। बाद मे हिन्दी के प्रमुख गीतकार श्री शान्तिस्वरूप जैन 'कुसुम' ने आपको काव्य-पथ पर बढने की जो प्रेरणा प्रदान की थी उसीके परिणामस्वरूप आपने स्वल्प-काल में अपनी रचना-प्रतिभा से सहारनपुर जनपद ही नही प्रत्युत पश्चिमी उत्तर प्रदेश के गीतकारो मे अपना सर्वथा अलग स्थान बना लिया था।

थोडे-से ही समय मे आपने इतनी ख्याति अर्जित कर ली थी कि आप आकाशवाणी के दिल्ली केन्द्र पर भी आमन्त्रित किये जाने लगे थे। आपके जो गीत आज भी काव्य-प्रेमियो के कण्ठ से अनायास मुखरित होते रहते हैं उनमे

आज मै फिर से तुम्हारे,
पास आना चाहता हूँ।

बदलियों से रह गया घिरता गगन,
प्यास मै अपनी बुझाता रह गया।

डोल न जाएँ पाँव कही पहली बाजी पर,
इसीलिए मैं आज जरा-सी पी आया हूँ।

तथा

तुम क्या मिले, सौप दी तुमने पीडा की सौगात।
घायल बदली सिसक-सिसक कर बरसी सारी रात॥

विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यदि आप दीर्घायु पाते तो हिन्दी-गीत-काव्य की समृद्धि मे आपका अभूतपूर्व योगदान रहता।

आपका निधन 12 मार्च सन् 1967 को हुआ था।

श्री महेशानन्द नैथाणी

श्री नैथाणी का जन्म उत्तर प्रदेश के गढवाल अचल के कोटद्वार भावर के निकटवर्ती जसोधरपुर नामक ग्राम मे सन् 1901 मे हुआ था। आपकी अधिक शिक्षा नही हो सकी थी और आप 10वीं कक्षा से ही अपनी पढाई छोडकर समाज-सुधार के बहुत से आन्दोलनों में भाग लेने लगे थे। आपके पिताजी की विचार-धारा पौराणिक थी और आपमें आर्य-समाज के सुधारवादी आन्दोलनों मे भाग लेने का अत्यधिक उत्साह था।

पहले आप 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' के दिल्ली-स्थित कार्यालय मे लिपिक हो गए थे और बाद मे आप 'कन्या गुरुकुल' तथा 'गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ' मे कार्य करने लगे थे। आप हिन्दी के अच्छे लेखक थे। आपके लेख आदि कोटद्वार से प्रकाशित होने वाले 'गढ देश' नामक पत्र मे प्रकाशित हुआ करते थे।

आपका निधन 27 दिसम्बर सन् 1929 को अल्पायु मे ही हो गया था।

ठाकुर महेश्वरबख्शसिंह

ठा० महेश्वरबख्शसिह का जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के रामपुर मथुरा नामक स्थान मे सन् 1860 मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा घर पर निजी स्वाध्याय के बल पर ही हुई थी और आपने सस्कृत की 'मध्यमा' परीक्षा अच्छे अक प्राप्त करके उत्तीर्ण की थी। आपने अपने स्वाध्याय के बल पर उर्दू और फारसी का अच्छा ज्ञान भी प्राप्त कर लिया था।

आप भगवान् शकर के अनन्य भक्त थे और इसी कारण आपकी रचनाओ के नाम उन्हीसे सम्बन्धित है। आपके द्वारा अनूदित अनेक ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण हैं। इनमे से 'महेश्वर विचार', 'महेश्वर परीक्षा', 'महेश्वर स्मृति', 'महेश्वर स्वरोदय' तथा 'महेश्वर गो-गज-चिकित्सा' आदि प्रमुख हैं। इन ग्रन्थो मे आपने 'भविष्य पुराण' का भाषानुवाद प्रस्तुत करने के साथ-साथ 'मनुस्मृति' का दोहों और चौपाइयों में अनुवाद भी प्रस्तुत किया है। अन्तिम ग्रन्थ मे गायों और हाथियों के लगभग 600 रोगो के लक्षणो और उपचारो का वर्णन दिया गया है।

इन अनूदित ग्रन्थों के अतिरिक्त आपने 'महेश्वर चन्द्रिका', 'महेश्वर विनोद' और 'महेश्वर प्रियग्रन्थ' नामक

तीन अन्य ऐसे ग्रन्थों की रचना भी की थी जिनमे आपकी कवित्व-प्रतिभा अत्यन्त परिपक्व रूप मे प्रकट हुई है। आपके 'महेश्वर विनोद' नामक ग्रथ मे भगवान् कृष्ण के रुक्मिणी-वियोग का वर्णन अत्यन्त तन्मयता से किया गया है। 'महेश्वर प्रिय ग्रन्थ' मे आपके अनेक विषयो से सम्बन्धित कवित्त और सवैये समाविष्ट हैं। इस ग्रन्थ मे 'सवैया' छन्द मे आपने 'राम की वन्दना' जिस प्रकार की है वह अभूतपूर्व है। एक पद इस प्रकार है

पावत वेद पुरान न नेक,
गने गुन के जिनके बल थाहै।
जाहि समीप मे जाइबे को,
मुनि ध्यान धरें जय जोग उमाहैं।।
साखै जहाँ तरुदेव की है,
सम राखै महेश्वर पै नित छाहै।
सोच हरै जन को छन मे,
समरत्थ सदा रघुबीर की बाहै।।

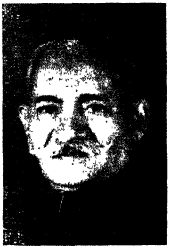
आपका निधन सन् 1901 मे हुआ था।

श्री मातादीन शुक्ल 'सुकवि नरेश'

श्री शुक्ल जी का जन्म उत्तर प्रदेश के फतहपुर जनपद के किसनपुर नामक ग्राम मे सन् 1891 मे हुआ था। आपके पिता श्री छोटेलाल शुक्ल का देहावसान उस समय हो गया था जब आप केवल 11 वर्ष के ही थे। उसी वर्ष आपका विवाह भी हो गया था। जब सारे परिवार के भरण-पोषण का भार आपके ऊपर आ गया तब आप फतहपुर के गवर्नमेंट हाई स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा देकर इलाहाबाद चले गए और इण्टरमीजिएट करके वहाँ के 'अकाउटेण्ट जनरल' के कार्यालय मे नौकरी कर ली। आप अभी ठीक तरह से नौकरी करते हुए अपने पारिवारिक दायित्वो का निर्वाह कर ही रहे थे कि देश मे राष्ट्रीय आन्दोलन की लहर चल पड़ी और एक दिन वह भी आया जब आपने लोकमान्य बाल गगाधर तिलक का भाषण सुनकर नौकरी छोड दी।

इसके बाद आपको महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय के साप्ताहिक पत्र 'अभ्युदय' के सम्पादकीय विभाग मे कार्य मिल गया। उन दिनों हिन्दी के प्रख्यात पत्रकार श्री वेंकटेश-नारायण तिवारी भी आपके साथ कार्य करते थे। एक वर्ष तक वहाँ पर कार्य करने के उपरान्त आप कटनी(मध्यप्रदेश) के 'मिशन स्कूल' मे अध्यापक होकर चले गए, किन्तु जब वहाँ पर आपने 'ईसाइयत' का बोल-बाला देखा तो आप अपने को उस वातावरण मे खपा न सके और जबलपुर जाकर वहाँ के 'हितकारिणी हाई स्कूल' मे नौकरी कर ली। अपने इस कार्य को सम्पन्न करते हुए आपने जबलपुर मे 'हितकारिणी' और 'छात्र सहोदर' नामक पत्रो का सम्पादन भी किया था। कुछ समय तक आपने 'कान्यकुब्ज नायक', 'सत्य वक्ता', 'कर्मवीर' तथा 'तिलक' आदि कई पत्रो के सम्पादन मे भी सहयोग दिया था। उन दिनो 'कर्मवीर' खण्डवा के बजाय जबलपुर से ही प्रकाशित हुआ करता था। जब कुछ समय के लिए 'कर्मवीर' का प्रकाशन स्थगित हो गया था तब आप थोडे समय के लिए कटनी के 'साधुराम हाई स्कूल' मे अध्यापक भी रहे थे।

सन् 1925 मे आप लखनऊ के 'नवलकिशोर प्रेस' से प्रकाशित होने वाली प्रख्यात मासिक पत्रिका 'माधुरी' के सम्पादक होकर वहाँ चले गए। 'हितकारिणी हाई स्कूल' मे कार्य-रत रहते हुए आपने अपनी योग्यता बहुत बढा ली थी। आपने जहाँ इस अवधि मे अपने हिन्दी तथा संस्कृत भाषाओ के ज्ञान मे अभूतपूर्व वृद्धि कर ली थी वहाँ अँग्रेजी भाषा पर भी अच्छा अधिकार बना लिया था। आप जहाँ हिन्दी और ब्रज-भाषा मे अत्यन्त सशक्त कविताएँ



किया करते थे वहाँ आपने राष्ट्रीय रचना लिखने मे भी परम प्रवीणता प्राप्त कर ली थी। अपने जबलपुर के निवास-काल मे ही आपने आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की 'पाखण्ड प्रतिरोध' नामक उस कविता के विरोध मे 'पाखण्ड परिच्छेद' शीर्षक

कविता लिखी थी जिसमे आचार्य शुक्ल ने छायावादी कवियों का उपहास करते हुए उन पर करारा व्यंग्य किया था। आपकी 'पाखण्ड परिच्छेद' कविता की उन दिनों हिन्दी के साहित्यिक जगत् में बडी चर्चा हुई थी। राष्ट्रीय रचना करने मे भी आपने उन दिनो अपनी अच्छी प्रतिभा का परिचय दिया था। आप जहाँ ब्रजभाषा की कविताएँ 'सुकवि नरेश' उपनाम से लिखा करते थे वहाँ कभी-कभी 'विदग्ध' नाम का प्रयोग भी किया करते थे। एक उदाहरण देखिए :

सत्य को न त्यागै अऊ, भाखै न असत्य कहूँ,
चिन्ता नहीं मानै जौलौ कारज न सर जाय।
धीरज न छोड़ै अऊ, धावै नहीं धाम-धाम,
हीनत न भाखै चाहे सिरहू उतर जाय।।
हाथहू पसारै नही, सूमन के आगे कहूँ,
भाखत 'विदग्ध' कमलाहू नाहिं फिर जाय।
इन्द्र वज्र छूटै अऊ टूटै गिरिराज शीस,
वीर ठान ठानै तो न कबहूँ मुकर जाय।।

आप जहाँ कवि-सम्मेलनों मे अपनी कविताओ का वाचन करने मे परम प्रवीण थे वहाँ आपकी ब्रजभाषा रचनाओ की श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर'-जैसे अनेक महा-रथियो ने मुक्तकण्ठ से प्रशसा की थी।

'माधुरी' मे जाकर आपने अपनी साहित्यिक पत्रकारिता का जो परिचय हिन्दी-जगत् को दिया था वह इतिहास का अमर आलेख हो गया है। आपके सम्पादन-काल मे 'माधुरी' ने सामग्री तथा साज-सज्जा सभी दृष्टि से हिन्दी की तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में अपना सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था। आपके सम्पादन-काल में 'माधुरी' मे अनेक साहित्यिक आन्दोलनों का सूत्रपात भी हुआ था। आपने लगभग 8-10 वर्ष तक उसका अत्यन्त सफल सम्पादन किया था। जब 'माधुरी' का प्रकाशन स्थगित हो गया तो नवलकिशोर प्रेस के सचालको ने आपको अपने जबलपुर मे स्थापित 'एजुकेशनल बुकडिपो' का व्यवस्थापक बनाकर वहाँ भेज दिया। फिर आप स्थायी रूप में जबलपुर मे ही रहने लगे थे।

आपने जहाँ साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र मे 'माधुरी' के माध्यम से अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया था वहाँ आपके द्वारा लिखे गए अनेक समीक्षात्मक लेख भी आपकी गद्य-लेखन-क्षमता और आलोचना-पद्धति के ज्वलन्त साक्षी है। राष्ट्रीय कविताएँ लिखने में भी आप पूर्णत सिद्ध-हस्त थे। आपके द्वारा लिखित 'स्वतन्त्रता का जन्म' शीर्षक कविता में जहाँ आपकी ऐसी काव्य-क्षमता के दर्शन होते हैं वहाँ शोक-गीतों के क्षेत्र मे आपके द्वारा विरचित 'अम्मा की चिता' का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस कविता का प्रकाशन ब्योहार श्री राजेन्द्रसिंह द्वारा सम्पादित 'नक्षत्र' नामक उस सकलन मे हुआ है जिसमे मध्यप्रदेश के कवियो की रचनाएँ समाविष्ट है। इस सकलन का प्रकाशन 'मध्य-प्रान्त विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की ओर से सन् 1947 मे हुआ था। भावनात्मक निबन्ध-लेखन मे भी आप अत्यन्त कुशल थे। आपकी ऐसी प्रतिभा के सम्बन्ध मे डॉ० श्रीकृष्ण-लाल ने अपने 'आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास' नामक ग्रन्थ मे यह लिखा था—"भावनात्मक निबन्ध कभी-कभी स्वगत भाषण का रूप भी ले लेते हैं, जबकि लेखक नाटकीय ढग से किसी अदृश्य व्यक्ति या वस्तु को सम्बोधन करके अपनी भावनाओ का पूर्ण और नाटकीय प्रदर्शन करते है। जुलाई सन् 1919 की 'मर्यादा' मे पण्डित मातादीन शुक्ल ने अपने 'आशा' शीर्षक निबन्ध मे यही विशेषता दिखाई है।"

यह बात कदाचित् हमारे बहुत-से पाठको से सर्वथा अविदित ही होगी कि हिन्दी के प्रख्यात कवि और लेखक श्री रामेश्वर शुक्ल 'अचल' आपके ही सुपुत्र है। अचल जी के साहित्यिक व्यक्तित्व का निर्माण तथा विकास आपकी ही छत्रछाया मे हुआ था।

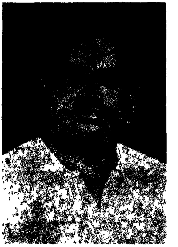
आपका निधन 4 सितम्बर सन् 1954 को हुआ था।

श्री मादेटि साम्बमूर्ति

श्री साम्बमूर्ति का जन्म आन्ध्र प्रदेश के अनकापल्ली नामक स्थान मे 1 जुलाई सन् 1923 को हुआ था। 'हिन्दी प्रवीण', 'हिन्दी प्रचारक' और 'साहित्य रत्न' की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप सन् 1940 मे हिन्दी-प्रचार के कार्य मे प्रवृत्त हुए थे। आप अनकापल्ली के 'हिन्दी महाविद्यालय' के सस्थापक, 'हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय अनकापल्ली' के सयोजक, 'आन्ध्र प्रदेश हिन्दी प्रचार सभा' के अध्यक्ष,'लक्ष्मी ग्रन्थालय' के सस्थापक एव अध्यक्ष और 'केन्द्रीय हिन्दी

प्रचार सभा' की सचालन-समिति के सदस्य थे।

आप अपनी कर्मठता और निष्ठा के कारण अपने जन्म-स्थान अनकापल्ली मे 'गुरुजी' के नाम से प्रख्यात थे। आपके द्वारा शिक्षित एव दीक्षित अनेक शिष्य आज आन्ध्र प्रदेश के अनेक विद्यालयो तथा महाविद्यालयो मे हिन्दी-शिक्षण का कार्य अत्यन्त सफलतापूर्वक कर रहे है। 'आन्ध्र विश्वविद्यालय वाल्तेयर' मे भी आपके कई शिष्य 'प्रोफेसर' है। आप जहाँ सन् 1967 से सन् 1977 तक 'जिला ग्रन्थालय' और 'स्टेट लाइब्रेरी कमेटी' के सदस्य और 'म्युनिसिपिल कौंसिलर' रहे थे वहाँ 1977 मे 'जिला ग्रन्थालय सघ' के अध्यक्ष भी रहे थे।



'आन्ध्रप्रदेश हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद' की रजत जयन्ती के अवसर पर आपको 'प्रतिष्ठित प्रचारक' और 'हिन्दी हायर एजुकेशन डिपार्टमेण्ट दिल्ली' की ओर से 'साहित्य भूषण' की सम्मानोपाधियाँ प्रदान की गई थी।

आपका निधन 9 फरवरी सन् 1982 को हुआ था।

श्री मायानन्द चैतन्य

श्री चैतन्य का जन्म मध्यप्रदेश के छिन्दवाडा नामक स्थान मे सन् 1868 मे हुआ था। आप महाराष्ट्रीय ब्राह्मण थे और आपने काशी के एक प्रख्यात सन्यासी स्वामी विशुद्धानन्द का शिष्यत्व ग्रहण कर लिया था। उनसे सन्यास की विधिवत् दीक्षा ग्रहण करने के उपरान्त आपने नर्मदा नदी की परिक्रमा की थी। आप नर्मदा के तटवर्ती स्थान 'ओकारेश्वर' मे ही प्राय रहा करते थे। आपकी कृतियो मे 'आदिगीता' का नाम उल्लेखनीय है।

आपका निधन सन् 1934 मे हुआ था।

श्री मालिकराम त्रिवेदी

श्री त्रिवेदी का जन्म मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ क्षेत्र के शिवरीनारायण नामक स्थान मे सन् 1875 मे हुआ था। आपके पूर्वज शिवरीनारायण के मन्दिर के पुजारी थे और पिता श्री यदुनाथ भोगहा वहाँ आनरेरी मजिस्ट्रेट थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने सुयोग्य पिता की देख-रेख मे हुई थी। आप एक उत्कृष्ट तथा प्रबुद्ध नाटककार के रूप मे विख्यात थे। आपने नाटको मे भारतेन्दुयुगीन सुधारवाद को विशेष महत्त्व दिया था। इन नाटको मे भारतीय नाट्य-शास्त्र के सभी प्राचीन नियमो का पूर्णत. निर्वाह किया गया था। आपके नाटको मे 'प्रबोधचन्द्रोदय' और 'राम राज्य वियोग' के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण है। इनमे मे अन्तिम नाटक का प्रकाशन हरिदास एण्ड कम्पनी कलकत्ता ने किया था।

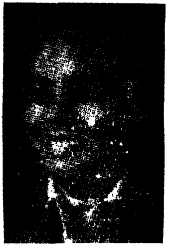
काव्य-रचना के क्षेत्र मे भी त्रिवेदी जी की देन सर्वथा अलग थी। आपने अनुप्रास और अलकारो से युक्त रचना करने मे जो सफलता प्राप्त की थी उससे आपकी साहित्यिक प्रतिभा का सम्यक् परिचय मिलता है। प्राचीन छन्दो का प्रयोग करने मे आप अत्यन्त प्रवीण थे। आपके द्वारा विरचित एक शिखरिणी छन्द को प्रख्यात साहित्यकार ठाकुर जगमोहनसिह ने अपनी एक पुस्तक मे उद्धृत करके आपके काव्य की उत्कृष्टता प्रमाणित की है।

यह दुर्भाग्य का विषय है कि इतना प्रतिभाशाली साहित्यकार असमय मे ही केवल 35 वर्ष की आयु मे सन् 1910 मे इस ससार से उठ गया।

श्री मिश्रीमल जैन 'तरंगित'

श्री जैन का जन्म हिन्दी की विभूतियो—मीराबाई और कविवर बृन्द की जन्मभूमि मेडता सिटी (राजस्थान) मे सन्

1912 में हुआ था। हिन्दी की 'साहित्य रत्न' तथा 'हिन्दी प्रभाकर' आदि उच्चकोटि की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के साथ-साथ आपने एम०ए० एल-एल० बी० भी किया था। पारिवारिक परिस्थितियो की विवशता के कारण आपने 'बिजलीघर' मे राजकीय सेवा ग्रहण कर ली थी और इस कार्य मे संलग्न रहते हुए ही आपने अपने अध्ययन को आगे बढाया था। बचपन मे ही जब आपके परिवार के एक के बाद एक क्रमश 14 सदस्य आपको असहाय अवस्था मे छोडकर चल बसे तब आप जोधपुर चले गए और वहाँ से ही मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करके आपने अपने मार्ग को प्रशस्त किया था।



आपने मुख्यत हास्य-व्यग्य-प्रधान रचनाएं ही लिखी है और अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम लघुकथा, रेखा-चित्र, निबन्ध, एकांकी और कविता आदि ही रखा है। आपकी प्रकाशित रचनाओ मे 'रसीले रूपक', 'बाँके बोल', 'बसन्ती बाबू के पत्र' और 'व्यग्य-वाटिका' आदि प्रमुख है। आपकी अन्य पुस्तको मे 'चटकीले चुटकुले', 'उल्टी गगा', 'पुराने प्रश्न . नये उत्तर', 'व्यग्य सतसई', 'व्यग्य एकाकी', 'इनसे मिलिये', 'झीनी झाँकी' और 'उनकी पूजा' के नाम भी परिगणनीय है। आपने लगभग 5 वर्ष तक 'चुलबुला' नामक हास्य-व्यग्य-प्रधान एक मासिक पत्र का भी सफलता पूर्वक सम्पादन किया था।

आपका निधन 13 सितम्बर सन् 1981 को हुआ था।

श्री मु० नरसिंहाचार्य

श्री नरसिंहाचार्य का जन्म आन्ध्रप्रदेश के काकिनाडा नामक स्थान मे 28 अगस्त सन् 1918 को हुआ था। आपका पूरा नाम 'मुडुम्बै नरसिंहाचार्य' था। आप एक गाँधीवादी विचार-धारा के सक्रिय कार्यकर्ता होने के साथ-साथ कर्मठ और अध्यवसायी हिन्दी-प्रचारक थे। आपने राष्ट्रपिता गाधी जी के आवाहन पर 'नमक सत्याग्रह' तथा 'असहयोग आन्दोलन' आदि विभिन्न राष्ट्रीय प्रवृत्तियो मे सक्रिय रूप से भाग लेकर कई बार जेल यात्राएँ भी की थी।

आप गाधी जी की प्रेरणा पर ही 31 जुलाई सन् 1945 को 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास' की सेवा में आए थे और उसमे ग्रन्थपाल, प्रेस में सहायक और साहित्य विभाग के व्यवस्थापक के रूप मे बहुत समय तक कार्य किया। आप सभा के मासिक मुखपत्र 'हिन्दी प्रचार समाचार' के सहकारी सम्पादक भी रहे थे।

आप कुशल व्यवस्थापक और विचक्षण हिन्दी-प्रचारक होने के साथ-साथ तेलुगु तथा हिन्दी भाषाओ के सुलेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित और सभा के प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित 'आन्ध्र सस्कृति' नामक ग्रन्थ का जहाँ हिन्दी-जगत् मे उचित समादर हुआ था वहाँ वह उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हुआ था। आन्ध्र प्रदेश की सस्कृति, इतिहास, साहित्य और लोक-जीवन से सम्बन्धित आपके लेख समय-समय पर हिन्दी की अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहते थे। आपने अपनी प्रतिभा का परिचय लेखन के क्षेत्र मे देने के अतिरिक्त चित्रकला की दिशा मे भी दिया था। आपके अनेक चित्र अपनी उपादेयता के कारण सम्मानित और पुरस्कृत भी हुए थे।

आपका निधन 20 जुलाई सन् 1971 को माम्बलम, मद्रास मे हुआ था।

श्री मुकुन्दराज 'दादाजी साधु'

श्री मुकुन्दराज का जन्म महाराष्ट्र के चाँदा जिले के एक ग्राम मे सन् 1800 मे हुआ था। आपको भोसलो के दरबार की ओर से जीविका-वृत्ति मिला करती थी। आप अच्छे कीर्तनकार थे और लोग आपको 'दादा जी साधु महाराज' कहा करते थे। कीर्तन मे गाने के लिए आपने जहाँ अनेक

मराठी पदों रचना की थी वहाँ आपने हिन्दी मे भी बहुत से पद लिखे थे। आपके द्वारा मराठीभाषा मे लिखे गए पदो में हिन्दी पदों का व्यवहार भी प्रचुरता से हुआ था। उनमे प्रायः तुलसी, सूर, कबीर और बिहारी के पद भी प्राय दृष्टिगत होते है।

छन्द-शास्त्र और सगीत-शास्त्र के अच्छे ज्ञाता होने के साथ-साथ आप 'रास क्रीडा-आख्यान' लिखने मे भी बहुत निपुण थे। आपके प्रिय ग्रन्थो मे 'ब्रज विलास' और 'विनय पत्रिका' के नाम अन्यतम हैं। आपके द्वारा विरचित पदो मे 'कृष्ण' का नाम प्रचुरता मे प्रयुक्त किया गया है। एक नमूना देखिये

बिन हरि भक्ति वृथा तन खोयो।
त्रिभुवन के अघभगा गगा, पाई अनि मन आँगन धोयो
उम पर आम मिलो बर कामिनि आलिगन बिन मूरख सोयो
कृष्ण धरन करि नागर नागर भाग रहित वहाँ बीज न बोयो

आप हिन्दी तथा मराठी दोनो भाषाओं के कुशल वक्ता थे। नागपुर की 'गोरक्षिणी सभा' की सस्थापना आपके द्वारा ही हुई थी।

आपका निधन सन् 1889 म हुआ था।

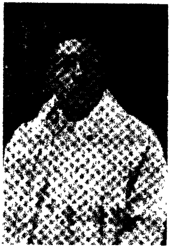
कवि श्री मुकुन्दराम

श्री मुकुन्दराम का जन्म सन् 1881 मे मध्यप्रदेश के आगर नामक स्थान मे हुआ था। आप वैसे दुकानदारी का कार्य करते थे, किन्तु कलगी और तुर्रा शैली की काव्य-रचनाएँ करने मे अत्यन्त दक्ष थे। आपकी रचनाओ मे खडी बोली का प्रयोग प्रचुरता से हुआ है।

आपका निधन सन् 1945 में हुआ था।

लाला मुन्शीलाल वैश्य मेरठी 'हरिदास'

श्री मुन्शीलाल वैश्य का जन्म 31 अगस्त सन् 1879 को उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर मे हुआ था। आपका जीवन अपने बाल्य-काल से भक्ति की ओर उन्मुख था। परिणाम स्वरूप आप समय-समय पर भक्ति-भावना से प्रेरित रचनाएँ करके अपने मानस को तृप्ति देते रहते थे। प्रारम्भ मे आप उर्दू मे लिखा करते थे, किन्तु बाद मे देवनागरी लिपि सीखकर हिन्दी मे लिखने लगे थे।



अपनी वृद्धावस्था मे आपने देवनागरी लिपि मे जो भक्ति तथा वैराग्यपरक रचनाएँ लिखी थी उनका प्रकाशन आपके निधन के उपरान्त आपके पारिवारिकजनो ने सन् 1937 मे 'हरिपदाजलि' नाम से प्रकाशित किया था। आपकी इन रचनाओ मे जहाँ एक ओर उत्कृष्ट हिन्दी की शब्दावली का प्रयोग प्रचुर मात्रा मे हुआ है वहाँ उर्दू और फारमी का भी प्रयोग आपने स्वच्छन्दता से किया था।

आपकी इन भक्तिपरक रचनाओ की एक प्रमुख विशेषता यह भी है कि इन्हे राग और ताल की दृष्टि से भी जाँचा-परखा जा सकता है। आपकी अधिकाश रचनाओं पर राग और ताल का 'निर्देश' भारत-विख्यात सगीतज्ञ श्री विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के शिष्य कराची-निवासी पण्डित कल्याणेश्वर जी ने किया है। ज्ञान, भक्ति और वैराग्य की अद्भुत त्रिवेणी का प्रवाह श्री 'हरिदास' की इन रचनाओ मे देखने को मिलता है।

आपका निधन 6 जुलाई सन् 1935 को हुआ था।

कविराज मुरारिदान

आपका जन्म राजस्थान की जोधपुर रियासत के ढाढरवाड़ा

ग्राम में सन् 1835 मे हुआ था। आप राजस्थानी और ब्रज-भाषा के प्रख्यात कवि श्री बाँकीदास के पौत्र थे और आपके पिता का नाम भारतदान था। भारतदान स्वय भी हिन्दी और राजस्थानी के अच्छे कवि थे। आप जोधपुर राज्य मे अनेक उच्च पदो पर सेवारत रहे थे। जिन दिनो महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती की प्रेरणा पर जोधपुर-नरेश ने अपने राज्य की अदालतो की भाषा मारवाडी कर दी थी उन दिनो आप वहाँ पर न्यायाधीश थे। न्यायधीश के पद से आप जो निर्णय लिखा करते थे वे मारवाडी मे ही होते थे।



आप एक कुशल प्रशासक होने के साथ-साथ उच्चकोटि के कवि भी थे। डिगल और पिगल दोनो मे आपकी अभूतपूर्व गति थी। आपके द्वारा विरचित 'जमवन्त जसोभूषण नामक विशाल ग्रन्थ राजकीय मुद्रणालय जोधपुर की ओर से प्रकाशित हुआ था और आपकी साहित्य-सेवाओ से प्रसन्न होकर आपको जोधपुर नरेश ने 'लाख पसाव' का पुरस्कार प्रदान किया था। ब्रिटिश सरकार की ओर से भी आपको 'महामहोपाध्याय' की सम्मानोपाधि प्राप्त हुई थी। आपकी रचना-शैली का परिचय आपके इस पद से मिल जाता है

गोकुल जनम लीन्हो, जल जमुना को पीन्हो,
सुबल सुमित्र कीन्हो, ऐसो जस-जाप है।
भनत 'मुरार' जाके जननी जसोदा-जैसी,
उद्धव निहार नन्द तैसो निहि बाप है।।
काम-बाम ते अनूप तज बृज चन्दमुखी,
रीझे वह कूबरी, कुरूप सो अमाप है।
पच तीर भय को न, वीर नेह-नय को न,
बम को न, पूतना के पय को प्रताप है।।

आपका निधन सन् 1913 मे हुआ था।

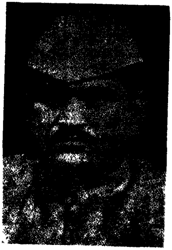
चौधरी मुल्कीराम

चौधरी मुल्कीराम जी का जन्म अपनी ननसाल भगवानपुर (मेरठ) मे 11 अप्रैल सन् 1910 को हुआ था। आपके पिता श्री दानशाह ग्राम भटियाना तहसील हापुड जिला मेरठ (अब गाजियाबाद) के मूल निवासी थे। आपका शैशव प्राय अपनी ननसाल मे ही व्यतीत हुआ था। गाँव के विद्यालय मे अपनी प्रारम्भिक शिक्षा पूरी करके आपने आगे की पढाई के लिए हापुड के 'गवर्नमेण्ट हाई स्कूल' मे प्रवेश ले लिया था और वही मे सन् 1930 मे 'हाई स्कूल' की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। सन् 1935 मे जब आपने 'मेरठ कालेज' मे बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी तब देश मे महात्मा गाधी द्वारा सचालित 'असहयोग आन्दोलन' जोरो पर था। अपने छात्र-जीवन मे आपके जीवन पर सेवा भाव, लगन और देश-प्रेम की पुनीत भावनाओ ने पूर्णत प्रभाव डाल दिया था। यद्यपि आपके कुछ साथियो ने आपसे हापुड क्षेत्र मे एम० एल० ए० का चुनाव लडने का अनुरोध किया, किन्तु आगे अध्ययन जारी रखने की लालसा ने आपको ऐसा करने से रोक दिया और आपने 'मेरठ कालेज' की लॉ क्लास मे प्रवेश ले लिया।

जिन दिनो आप वकालत का अध्ययन कर रहे थे तब आपका देश के अनेक राष्ट्रीय कार्यकर्ताओ तथा नेताओ से घनिष्ठ सम्पर्क भी हो गया था। उन्ही दिनो उत्तर प्रदेश के प्रमुख काग्रेसी नेता श्रीकृष्णदत्त पालीवाल की प्रेरणा पर आपने अपना अध्ययन बीच मे ही छोडकर सन् 1936 मे उत्तर प्रदेश के 'ग्राम सुधार विभाग' मे 'सुपरिटेडेट' के पद पर कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। ग्रामवासी होने के कारण आप ग्रामो की समस्याओ को अत्यन्त निकटता से जानते तथा समझते थे। परिणामत आपने अपनी लगन और कर्तव्य-निष्ठा से उस विभाग मे अपना प्रमुख स्थान बना लिया। अपने इसी कार्य-काल मे आपका सम्पर्क प्रख्यात राष्ट्रीय नेता श्री रफी अहमद किदवई से हो गया, जिनके सहयोग और सौजन्य के परिणामस्वरूप आपका कार्य-क्षेत्र विशद होता गया। उनकी प्रेरणा पर आपने पी० सी० एस० की परीक्षा दे दी और उसमे आपने आशातीत सफलता प्राप्त कर ली।

पी० सी० एस० परीक्षा मे सफलता प्राप्त करने के उप-

रान्त आपने उत्तर प्रदेश शासन में अनेक उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया। आपकी पहली नियुक्ति नवम्बर सन् 1940 मे हरदोई मे 'डिप्टी कलक्टर' के पद पर हुई थी। प्रशासन मे आकर प्राय लोग अपने स्वभाव को बदल लेते है, किन्तु चौ० मुल्कीराम इसके अपवाद थे। ब्रिटिश नौकरशाही के भयकर दमन के समय सन् 1942 के 'क्रान्ति आन्दोलन' के दिनो मे आपने राष्ट्रीय कार्यकर्ताओ से अत्यत सहृदयतापूर्ण व्यवहार किया था। अग्रेज कलक्टर से यह बात छिपी हुई नही थी और उसने मैनपुरी जिले की जनता के साथ आपके द्वारा किये गए सौजन्यपूर्ण



व्यवहार के प्रति जब अपनी नाराजगी प्रकट की तब आपने बिना झिझक अपना त्याग-पत्र जेब से निकालकर तुरन्त उनके सामने रखते हुए निर्भीकता पूर्वक यह कहा—"यह लीजिये इस्तीफा। हिन्दुस्तान आज नही तो कल अवश्य आजाद होगा। आप लोगों की आत्मा मर चुकी है, जो दमन से भारत के लोगो को दबाना चाहते है।" कलक्टर खून का घूंट पीकर रह गया और उसने आपके कार्य-कलापो की निगरानी करने के लिए आपके पीछे सी० आई० डी० लगा दी और आपका स्थानान्तरण मैनपुरी से आगरा को कर दिया।

आगरा मे आप एस० डी० एम० के रूप मे गए थे। वहाँ पर आपका श्री श्रीकृष्णदत्त पालीवाल, पण्डित हरिशकर शर्मा तथा बाबू गुलाबराय आदि अनेक साहित्यकारो से निकट का सम्पर्क हो गया। उनके निरन्तर साहचर्य और सत्संग से आप साहित्य-निर्माण की ओर अग्रसर हो गए। प्रशासनिक कार्यों मे सलग्न रहते हुए भी आपने गीता, रामायण, वेद और उपनिषदो का पारायण अत्यन्त तन्मयता से किया था। 'गाधी दर्शन' के भी आप धीरे-धीरे मर्मज्ञ हो गए थे। भारतीय सस्कृति की अध्यात्ममूलकता से आपका मानस ओत-प्रोत हो चुका था। फलत. आपका वह चिन्तन कविता के रूप मे प्रस्फुटित हो गया और आपने अनेक सफल काव्य-रचनाएँ की। प्रशासन मे रहते हुए भी आपकी अध्ययनशीलता मे कोई कमी नही आई। प्राय. सारे ही उत्तर प्रदेश के अनेक नगरो मे आप रहे तथा सभी स्थानो पर अत्यन्त लोकप्रियता अर्जित की। आप समय-समय पर अपनी कवित्व-प्रतिभा का परिचय देकर जनता को चमत्कृत कर दिया करते थे। दिल्ली की 'भगी बस्ती' में जब महात्मा गाधी जी प्रवचन किया करते थे तब आपके कवि-मानस मे जो भावना प्रस्फुटित हुई थी उसका प्रमाण आपकी ये पक्तियाँ है

भक्ति भाव से शीश झुकाने का सबको अधिकार बराबर है।
श्रद्धा से शीश झुकाने का सबको अधिकार बराबर है॥

आपकी अनेक विषयो पर प्रेरणाप्रद रचनाएँ इधर-उधर बिखरी पडी है। आपके निधन के उपरान्त श्री ताराचन्द पाल 'बेकल' के सम्पादन म जो स्मृति ग्रन्थ अक्तूबर सन् 1969 मे प्रकाशित हुआ था, उसमे आपकी जो कविताएँ यत्र-तत्र प्रकाशित है उनसे आपके कवि-मानस की चिन्तन-शक्ति का सम्यक् परिचय मिलता है। आपकी कविताओ का एक सकलन 'हृदयोद्गार' नाम से प्रकाशित हुआ है।

जिन दिनों आप फतहपुर मे कार्य-रत थे तब आपको 4 अगस्त सन् 1954 को अचानक विशूचिका का भयकर प्रकोप हुआ और उसीके कारण 21 अगस्त सन् 1954 को आपने इस ससार से महाप्रयाण कर दिया।

श्री मेदिनीप्रसाद पाण्डेय

श्री पाण्डेय का जन्म मध्यप्रदेश के बिलासपुर जनपद के पारसापाली नामक ग्राम मे सन् 1869 मे हुआ था। आपकी शिक्षा अपने बाबा के निरीक्षण म मक्ती मे हुई थी, जहाँ पर वे राज-दरबार मे एक कर्मचारी थे। वही पर पाण्डेयजी का सम्पर्क उस राज्य के युवराज से हो गया, जो साहित्य-प्रेमी होने के साथ-साथ एक सुकवि भी थे। उनसे प्रभावित होकर आपने उन्ही दिनो ब्रजभाषा मे कविता लिखनी प्रारम्भ कर दी थी। इसके उपरान्त आपको उच्च शिक्षा के निमित्त रायगढ़ जाना पड़ा, जहाँ पर आपकी भेट हिन्दी के

सुप्रसिद्ध लेखक श्री अनन्तराम पाण्डेय से हो गई। इस सपर्क से भी आपकी साहित्यिक चेतना को प्रचुर प्रोत्साहन मिला था। श्री अनन्तराम पाण्डेय समवयस्क होने के साथ-साथ आपके सजातीय भी थे।

अपने अध्ययन की समाप्ति पर आप रायगढ से फिर अपने ग्राम में चले गए और पारम्परिक कृषि-कार्य को देखने लगे। इस कार्य मे पूर्णत दत्त चित्त होते हुए भी आपने अपना साहित्य-रचना का क्रम जारी रखा। उन दिनो आपकी रचनाएँ कानपुर से प्रकाशित होने वाले 'रसिक मित्र' नामक पत्र मे छपने लगी थी। आपकी प्रमुख कृतियो मे 'श्रृगार सुधा सग्रह' और 'गणेशोत्सव दर्पण' प्रमुख है। इनके प्रकाशन क्रमश: नरसिहपुर के 'सरस्वती-विलास प्रेस' और कानपुर के 'रसिक मित्र' के द्वारा सम्पन्न हुए थे। इन दोनों कृतियो के अतिरिक्त आपकी 'सत्सग विलास' नामक एक और कृति है, जो प्रकाशित नही हो सकी थी।

आपका निधन सन् 1950 मे हुआ था।

श्री मोहनसिंह सेंगर

श्री सेंगर जी का जन्म राजस्थान प्रदेश के जोधपुर नगर के एक क्षत्रिय-परिवार मे 12 सितम्बर सन् 1914 को हुआ था। आपके पिता ठाकुर मगलसिह जोधपुर रियासत के एक जागीरदार थे, जो मूलत उत्तर प्रदेश के इटावा जनपद के निवासी थे। श्री सेगर जी की शिक्षा 5-6 वर्ष की आयु मे ही प्रारम्भ हो गई थी और आपने सन् 1928 मे मैट्रिकुलेशन की परीक्षा जोधपुर मे रहते हुए ही उत्तीर्ण की थी। बाद मे आगे की पढाई जारी रखने की दृष्टि से आप इलाहाबाद जाकर सन् 1929 मे वहाँ के 'मिशनरी कालेज' मे भरती हो गए थे। किन्तु सन् 1930 मे महात्मा गाधी द्वारा सचालित 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' प्रारम्भ हो जाने के कारण आपने कालेज छोड दिया और उसमे सक्रिय रूप से भाग लेने लगे।

आपका विचार 'पत्रकार-कला' को अपनाने का बिलकुल नही था, किन्तु जब आपके परिवार वालो को सी० आई० डी० पुलिस ने तंग करना प्रारम्भ किया तब आपने आदोलन मे भाग न लेने का निश्चय करके 'जीवकोपार्जन' के लिए स्वतन्त्र रूप मे रहने के उद्देश्य से प्रयाग से ही प्रकाशित होने वाले अंग्रेजी दैनिक 'पायोनियर' में पत्रकार-कला सीखनी प्रारम्भ कर दी। इसके उपरान्त आपने कुछ दिन तक 'चाँद' तथा 'अभ्युदय' मे काम किया और फिर सैलाना से प्रकाशित होने वाले अपनी जातीय महासभा के पत्र मासिक 'राजपूत' का सम्पादन करने लगे। जिन दिनो आप इस पत्र का सम्पादन करते थे तब आपका नाम उस पत्र पर कुँवर मोहनसिह सेंगर 'चन्द्र' के रूप मे छपा करता था। यह घटना सन् 1932-33 की है।

इसके उपरान्त आप दिल्ली आ गए और यहाँ से श्री रामचन्द्र शर्मा के सम्पादन मे प्रकाशित होने वाले 'महारथी' मासिक मे सहकारी सम्पादक हो गए। दिल्ली मे आकर आपकी पत्रकार-कला मे अद्भुत निखार आया और फिर आप सन् 1934 मे आप दिल्ली मे प्रकाशित होने वाले 'नवयुग' दैनिक मे कार्य करने लगे। जब सन् 1937 मे आपने 'दैनिक हिन्दुस्तान' मे कार्य प्रारम्भ किया ही था कि आपको लाहौर से प्रकाशित होने वाले 'शक्ति' दैनिक का प्रधान सम्पादक बनकर वहाँ जाना पडा। इस पत्र का प्रकाशन पजाब की प्रख्यात सामाजिक कार्यकर्त्री और नेत्री श्रीमती शन्नोदेवी एम० एल० ए० (केन्द्रीय) ने प्रारम्भ किया था। अपने स्वाभिमानी स्वभाव के कारण आप वहाँ भी अधिक समय तक न जम सके और फिर दिल्ली आकर आपने सन् 1939 मे 'जाग्रत' नामक एक साप्ताहिक स्वतन्त्र रूप से प्रारम्भ किया। किन्तु जब आपका यह प्रयोग निष्फल रहा तब आप अपने ही 'दैनिक हिन्दुस्तान' के कार्य-



काल के पुराने साथी श्री अभिन्न हरि द्वारा प्रारम्भ किये गए 'अग्रसर' नामक साप्ताहिक पत्र स जुड गए। जब

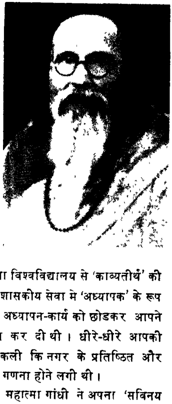
'अग्रसर' का प्रकाशन बन्द हो गया तब आप कलकत्ता चले गए और वहाँ पर कुछ दिन स्वतन्त्र पत्रकारिता करते रहने के उपरान्त फिर 'विशाल भारत' में कार्य करने लगे। 'विशाल भारत' का सम्पादन आपने सन् 1940 से सन् 1946 तक किया था। जब 'विशाल भारत' में भी आपकी पटरी नहीं बैठी तब आपने सन् 1948 मे एक ट्रस्ट बनाकर 'नया समाज' नामक मासिक भी प्रारम्भ किया था, जो कई वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक प्रकाशित होता रहा। जब किन्ही कारणो से 'नया समाज' का प्रकाशन स्थगित हो गया तब आपने 'आकाशवाणी' के कलकत्ता केन्द्र मे 'हिन्दी कार्य-क्रम निष्पादक' के रूप मे कार्य प्रारम्भ कर दिया और अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक उसी से जुडे रहे। देहान्त के समय आप आकाशवाणी के दिल्ली-केन्द्र मे कार्य-रत थे।

एक जागरूक और अध्ययनशील पत्रकार के रूप मे आपने 'विशाल भारत' तथा 'नया समाज' के माध्यम से हिन्दी मे जो नये मानदण्ड स्थापित किये, वे आपकी अद्भुत प्रतिभा के परिचायक है। विषय-विवेचन और सामयिक विषयो पर टिप्पणियाँ लिखने मे आपको जो कौशल प्राप्त था, वह बहुत कम पत्रकारो मे देखने को मिलता है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का विश्लेषण करने मे आप पूर्णत. दक्ष थे। एक उत्कृष्ट कोटि के पत्रकार के रूप मे तो आपने हिन्दी मे अपना एक विशिष्ट स्थान बनाया ही था, इसके साथ-साथ आप संवेदनशील कथा-लेखक के रूप मे भी विख्यात थे। अपनी कहानी-कला को निखारने और उसे चरम सफलता प्रदान करने की दृष्टि मे आपने टालस्टाय, डास्टोवस्की, गोर्की, तुर्गनेव, इब्सन, बर्नार्डशा और शरत्-चन्द्र आदि अनेक विदेशी तथा देशी कलाकारो एव लेखको की रचनाओं का गहन अध्ययन किया था। अपने पत्रकारिता के जीवन मे आपको सर्व श्री प्रेमचन्द, कृष्णकान्त मालवीय, बनारसीदास चतुर्वेदी तथा रामरखसिह सहगल आदि अनेक प्रमुख पत्रकारो से प्रचुर प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था। इसका एक ज्वलन्त प्रमाण तो यही है कि सन् 1937 मे प्रकाशित आपके पहले कहानी-सकलन 'चिता की चिनगारियाँ' की भूमिका प्रेमचन्द जी ने सन् 1933 मे लिखी थी और वास्तव मे उनके प्रोत्साहन से ही वह सकलन प्रकाशित हो सका था। आपकी पहली कहानी अप्रैल सन् 1930 मे 'अभ्युदय' मे प्रकाशित हुई थी। 'चिता की चिनगारियाँ' के अतिरिक्त आपके 'खून के धब्बे', 'जीवन का सत्य', 'नये युग की नारी', 'टूटी लकीर', 'नया स्वर', 'नरक का न्याय', 'मुर्दे की मौत' और 'डूबता सूरज' नामक कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए थे। आपके द्वारा रचित 'अँधियारे तारे' नामक एक उपन्यास भी उल्लेखनीय है।

आपका निधन 8 फरवरी सन् 1972 को नई दिल्ली स्टेशन पर हृदयाघात के कारण उस समय हुआ था जब आप डीलक्स ट्रेन द्वारा किसी कार्यवश अपनी भानजी से मिलने के लिए फरीदाबाद जा रहे थे।

श्री यज्ञनारायण उपाध्याय

श्री उपाध्याय जी का जन्म काशी के भदैनी मोहल्ले के एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण परिवार मे सन् 1878 मे हुआ था। आपके पिता श्री रामेश्वरदत्त ज्योतिषी ज्योतिष-शास्त्र के निष्णात विद्वान् थे। आपकी प्राय सारी शिक्षा-दीक्षा काशी मे ही हुई थी और वहाँ के गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज से सस्कृत मे एम०ए० करने के उपरान्त आपने एल० टी० तथा एल-एल० बी० की परीक्षाएँ इलाहाबाद यूनिवर्सिटी से उत्तीर्ण की थी।



कलकत्ता विश्वविद्यालय से 'काव्यतीर्थ' की परीक्षा देकर आप पहले शासकीय सेवा मे 'अध्यापक' के रूप मे चले गए और बाद मे अध्यापन-कार्य को छोडकर आपने वकालत करनी प्रारम्भ कर दी थी। धीरे-धीरे आपकी वकालत इतनी चल निकली कि नगर के प्रतिष्ठित और प्रमुख वकीलों मे आपकी गणना होने लगी थी।

जब सन् 1920 मे महात्मा गांधी ने अपना 'सविनय

अवज्ञा आन्दोलन' छेड़ा तो आप भी अपनी अच्छी-खासी चलती हुई वकालत को लात मारकर उसमे कूद पड़े। अनेक बार कारावास की यन्त्रणाएँ भी भोगी। जब बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने 'काशी विद्यापीठ' की स्थापना की तब आपने उनके निमन्त्रण पर उसमे 'अध्यापन-कार्य' अपना लिया। जब प्रान्तीय विधान सभाओ का निर्माण हुआ तब आप लगभग 15 वर्ष तक वाराणसी के देहात क्षेत्र से चुने जाते रहे। इस अवधि मे आपने अपने क्षेत्र की बहुत सेवा की थी।

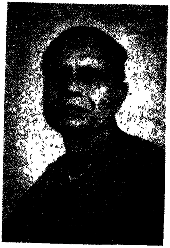
राजनीतिक तथा सामाजिक क्षेत्रो मे कार्य करते हुए आप जब महामना मालवीय जी के सम्पर्क मे आए तब उन्होने आपको 'विद्यालय की कौसिल' का सेक्रेटरी नियुक्त कर दिया। इसके साथ-साथ आप गोरक्षा समिति, च्यवन आश्रम तथा अखिल भारतीय सनातन धर्म सभा के महामन्त्री भी रहे थे। इस कार्य-काल मे आपने हिन्दी तथा संस्कृत मे 100 से अधिक लेख भी लिखे थे, जिनमे से अधिकाशत 'सनातन धर्म' नामक साप्ताहिक पत्र मे प्रकाशित हुए थे। आपने अपने जेल-जीवन के संस्मरण 'कारागार के दिन' नाम से लिखे थे, जो अभी तक अप्रकाशित ही है। इसके अतिरिक्त आपने मालवीय जी के सम्बन्ध मे भी कई पुस्तके लिखी थी। काशी के संस्कृति-प्रेमियो ने आपकी 'जन्म शताब्दी' सन् 1977 मे मनाई थी।

आपका निधन 3 सितम्बर सन् 1957 को काशी मे हुआ था।

श्री यमुना कार्यी

श्री कार्यी जी का जन्म बिहार प्रान्त के समस्तीपुर जनपद के देवपार (पूसा) नामक ग्राम मे एक किसान-परिवार मे सन् 1900 की गणेश चतुर्थी को हुआ था। आप अभी केवल 6 महीने के भी न हो पाए थे कि आपके पिता का स्वर्गवास हो गया और आपकी विधवा माँ ने आपको पाल-पोसकर बड़ा किया और पढ़ाया-लिखाया। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने ग्राम के समीपवर्ती दिघडा नामक स्थान के 'माध्यमिक विद्यालय' मे हुई थी और हाई स्कूल की परीक्षा आपने दरभगा के नार्थबुक हाई स्कूल मे उत्तीर्ण की थी। इसके अनन्तर आप उच्च शिक्षा के लिए कलकत्ता चले गए और वहाँ के 'प्रेसीडेन्सी कालेज' से आपने बी० ए० तथा एल-एल० बी० की परीक्षाएँ ससम्मान उत्तीर्ण की थीं।

जिन दिनो आप कलकत्ता मे पढ़ा करते थे तब अपनी पढाई आदि का खर्च चलाने के लिए आपने वहाँ से प्रकाशित होने वाले दैनिक 'भारत मित्र' पत्र के सम्पादकीय विभाग मे कार्य करना प्रारम्भ कर दिया था। बाद मे धीरे-धीरे वह दिन भी आया जब आप उसके विधिवत् सम्पादक नियुक्त हो गए थे। 'भारत मित्र' के उपरान्त आप कलकत्ता मे अपनी जन्मभूमि वापिस आ गए और समाज-सेवा के क्षेत्र मे अग्रणी कार्य करने लगे। थोडे ही दिनो मे आपने अपनी कर्मठता और तत्परता मे ऐसी लोकप्रियता प्राप्त कर ली कि आप दरभगा की जिला परिषद् के सदस्य चुन लिए गए। बाद मे आप अनेक वर्ष तक दरभगा नगरपालिका के भी उपाध्यक्ष रहे थे।



अपने समाज-सेवा के कार्यों को विस्तार और गति देने की दृष्टि मे आपने दरभगा मे 'राम नारायण प्रेस' की स्थापना करके उसकी ओर से 'लोक संग्रह' नामक एक साप्ताहिक पत्र भी प्रकाशित किया और बाद मे 'सुलभ प्रेस' के नाम से एक और प्रेस स्थापित किया। जब सन् 1929 मे 'बिहार प्रान्तीय किसान सभा' का गठन किया गया था तब आप उसके सचिव नियुक्त हुए और किसान सभा के संस्थापक स्वामी सहजानन्द के देहावसान के बाद भी जीवन-पर्यन्त उसके कार्य की देख-रेख करते रहे। सन् 1937 मे जब बिहार मे काग्रेस का मन्त्रिमण्डल बना था तब आप 'बिहार विधान सभा' के सदस्य भी चुने गए थे। सन् 1939 के 'किसान आन्दोलन' के दिनो मे आपने जेल-यात्रा भी की थी। आप जहाँ प्रदेश की अनेक राष्ट्रीय संस्थाओं से सम्बद्ध

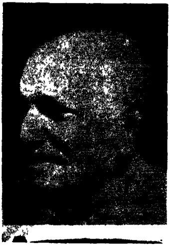
रहे थे वहाँ 'बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन' से भी आपका अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध था। आपने उसके गया मे हुए 35वें वार्षिक अधिवेशन की अध्यक्षता भी की थी। आपने सन् 1942 मे 'हुकार' नामक जिस राष्ट्रीय साप्ताहिक का सम्पादन-सचालन प्रारम्भ किया था वह आज भी प्रदेश की जनता की उल्लेखनीय सेवा कर रहा है। आपने सन् 1951-1952 मे 'कृषि सोपान' नामक एक ग्रन्थ की रचना की थी, जो चार भागों मे प्रकाशित हुआ है।

आपका निधन कैंसर के कारण 30 अक्तूबर सन् 1953 को हुआ था।

श्री यशवन्त माधव पारनेरकर

श्री पारनेरकर जी का जन्म मध्यप्रदेश के ईसागढ नामक ग्राम मे 12 सितम्बर सन् 1898 को हुआ था। आप जब उज्जैन के 'माधव महाविद्यालय' मे पढा करते थे तब हिन्दी के प्रख्यात कवि श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आपके सहपाठी थे। बाद मे आपको कृषि-विज्ञान की उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के लिए पूना भेजा गया। आपको वहाँ अध्ययन के लिए ग्वालियर राज्य से 'छात्रवृत्ति' मिला करती थी। जब आप अपना अध्ययन समाप्त करके वापिस आए तो ग्वालियर राज्य मे ही नौकरी करनी पडी थी। जब आपका राज्य के एक तानाशाह अधिकारी से झगडा हो गया तो आपने वहाँ से त्यागपत्र दे दिया और 'घाटकोपर' की गोशाला मे कार्य करने चले गए।

जिन दिनो आप उक्त गोशाला मे कार्य करते थे उन्ही दिनो महात्मा गाधीजी ने अहमदाबाद मे 'साबरमती आश्रम' की स्थापना कर दी थी। पारनेरकर जी सन् 1927 मे उनके सम्पर्क मे आए और आजीवन उनकी रचनात्मक प्रवृत्तियो मे सहयोगी रहे। गाधी जी के 'सत्याग्रह-आन्दोलन' के सिलसिले मे आप सन् 1930 मे जेल मे भी रहे थे। 'साबरमती आश्रम' से आने के बाद आप कुछ समय तक धूलिया (महाराष्ट्र) की गोशाला मे रहे और वहाँ पर रहते हुए एक 'चर्मालय' का भी सचालन किया। सन् 1938 मे जब सेवाग्राम मे गाधीजी का आश्रम बना तब आप वहाँ चले गए और सन् 1948 तक वहाँ रहकर आश्रम की 'गोशाला' के सचालन मे अपना सक्रिय योगदान देते रहे। सन् 1948 के उपरान्त आपने नागपुर मे रहकर 'की विलेज स्कीम' बनाई, जिसे तत्कालीन मध्यप्रदेश सरकार ने 'पारनेरकर स्कीम' के नाम से प्रचारित किया था। इसके उपरान्त उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्त के विशेष अनुरोध पर आप ऋषिकेश मे गाधीजी की अनन्य शिष्या मीरा बेन द्वारा चलाए जाने वाले 'पशु लोक' नामक सस्थान मे चले गए और वहाँ पर रहते हुए आपने अनेक वर्ष तक पहाडी भेडो की नस्लो के सुधार के अनेक प्रयोग किए। वहाँ पर आपने फलो का एक बगीचा भी लगाया था। इस प्रसग मे आपको एक बार आस्ट्रेलिया भी जाना पडा था। 'पशु लोक' के अनेक क्रान्तिकारी प्रयोगो मे आपको अपने पुराने साथी श्री वसन्तकृष्ण कर्णिक की सक्रिय सहायता भी मिली थी।



सन् 1958-59 मे जब भारत सरकार के तत्वावधान मे 'केन्द्रीय गोसवर्धन कौसिल' का निर्माण हुआ तब आप दिल्ली आ गए और इस कौसिल के परामर्शदाता का कार्य करने के साथ-साथ उसके पत्र 'गोसवर्धन' का सम्पादन भी करते रहे थे। आपके अनेक लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे छपे थे। आपने अपने जीवन के सस्मरण 'नेहरू स्मारक सग्रहालय' मे भी रिकार्ड कराए थे। आपके द्वारा लिखित लगभग 11 पुस्तकें अभी अप्रकाशित ही है। कौसिल का कार्य आप सर्वथा सेवाभाव से अवैतनिक ही किया करते थे। अपने इस कार्य के प्रसग मे आपको सारे देश की यात्राएँ भी करनी पडती थी। आपकी त्याग-वृत्ति तथा निस्पृह सेवा-साधना के कारण आपको जयपुर मे आयोजित 'गो सम्मेलन' मे 'गो विद्यावाचस्पति' की सम्मानोपाधि भी प्रदान की गई

थी। आप जब मई सन् 1970 में पटना मे आयोजित 'गो सम्मेलन' से वापिस लौटे थे तब आपको पीलिया हो गया था। आप अपने दामाद डॉ० प्रभाकर माचवे के पास रहकर चिकित्सा करा रहे थे। जब आपको कोई लाभ होता दृष्टिगत न हुआ तो आप 'अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान' मे चिकित्सार्थ प्रविष्ट हो गए थे। वहाँ पर 22 मई को आपके पेट का आपरेशन किया गया और 28 मई सन् 1970 को आप इस संसार से विदा हो गए।

श्री युगलप्रसाद मिश्र 'ब्रजराज'

श्री 'ब्रजराज' का जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के गन्धौली नामक स्थान मे सन् 1861 मे हुआ था। आप श्री नन्दकिशोर मिश्र 'लेखराज' के द्वितीय सुपुत्र थे। आपकी काव्य-शिक्षा अपने चाचा श्री बनवारीलाल के द्वारा सम्पन्न हुई थी। आप रीतिकालीन रचनाएँ करने मे बडे निपुण थे। रीतिकाल के प्रमुख कवि देव के 'शब्द रसायन' नामक ख्याति-प्राप्त ग्रन्थ पर श्री 'ब्रजराज' जी ने एक टीका लिखी थी। समस्या-पूर्ति की कला मे आप बहुत निष्णात थे। आपके द्वारा रचित अनेक छन्द तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित हुए हैं। आपकी 'बाँसुरी बजावै है' एक समस्या की पूर्ति इस प्रकार है

सीस मजु मुकुट बिराजै, मजु माल गरे,
तैसो पीत पट तन दुति दरसावै है।
लचकि-लचकि इठलाति 'ब्रजराज' वीर,
ग्वालन समेत नित भोर इतै आवै है।।
निकट छुवाए अग भृकुटि नचाय रव,
अधर दबाय करि सिसकी सुनावै है।
मो तन निहारि असि ईछन निरीछन सों,
मन्द मुसकाय मुरि बाँसुरी बजावै है।।

आपका देहावसान सन् 1910 मे लखनऊ मे हुआ था।

स्वामी योगानन्द

स्वामी योगानन्द का जन्म सन् 1831 मे हुआ था। आप जाति के कान्यकुब्ज ब्राह्मण और बिठूर के समीपवर्ती स्थान वैकुण्ठपुर के निवासी थे और आप प्रख्यात हिन्दी-लेखक श्री प्रयागदत्त शुक्ल के पिता के मामा थे। सन् 1857 की क्रान्ति के समय आपकी अवस्था 26 वर्ष की थी। क्योंकि आपका प्राय. सारा परिवार सन् 1857 की उस क्रान्ति मे नष्ट हो गया था, अत आप भी साधु का वेश धारण कर घर से निकल गए थे। आपने काशी मे जाकर सन्यास आश्रम की दीक्षा ली थी और बाद मे महाराष्ट्र के अचलपुर नामक स्थान मे जाकर रहने लगे थे। अमरावती और अचलपुर मे आपके अनेक गृहस्थ शिष्य थे।

आप उच्चकोटि के हिन्दी-कवि होने के साथ-साथ उत्कृष्ट गद्य-लेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित 'स्वरोदय' (सन् 1888) नामक ग्रन्थ तत्कालीन उत्कृष्ट गद्य का नमूना प्रस्तुत करता है। इस ग्रन्थ की भूमिका मे आपने उसकी विषय-वस्तु के सम्बन्ध मे अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किए है—"इस ग्रन्थ मे स्वरोदय योग का वर्णन किया गया है। इसलिए इसके पढ़ने से मनुष्य सदा सुखी रहकर समस्त कामना की सिद्धि को प्राप्त होता है।"

इसी ग्रन्थ के अन्त मे आपने जो यह दोहा लिखा है उससे आपकी कवित्व-प्रतिभा का भी सम्यक् परिचय मिल जाता है

स्वासन स्वासन शिव रटै, वृथा साँस मति खोय।
ना जाने या स्वास को, यही अन्त कहुँ होय।।

आप जहाँ हिन्दी के मर्मज्ञ विद्वान्, कवि तथा सुलेखक थे वहाँ मराठी भाषा के भी अच्छे ज्ञाता थे। महाराष्ट्र मे आपके बहुत शिष्य है। अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे आप प्रयाग मे त्रिवेणी तट पर आकर रहने लगे थे और वही पर सन् 1911 मे आपने इस शरीर को छोडा था।

श्री योगेश्वर शर्मा गुलेरी

आपका जन्म 18 अप्रैल सन् 1909 को जयपुर (राजस्थान) मे हुआ था। आपके पिता हिन्दी के प्रख्यात कथाकार श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी उन दिनो वहाँ पर महाराजा संस्कृत कालेज मे प्राध्यापक थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने

पिता की देख-रेख मे जयपुर में हुई थी और तदनन्तर आप डी० ए० वी० कालेज देहरादून तथा मेयो कालेज अजमेर में पढ़े थे। बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप कुछ समय तक जयपुर रियासत के 'होम सेक्रेटरी' रहे थे और तदनन्तर जयपुर के महाराजा ने आपको अपने 'मान प्रकाश' टाकीज का मैनेजर बना दिया था। साहित्यिक अभिरुचि होने के कारण आपका मन वहाँ उस कार्य मे नही लगा और आपने वहाँ से त्याग-पत्र देकर स्वतन्त्र रहना ही उपयुक्त समझा। जयपुर के निवास-काल मे आपको हिन्दी के प्रख्यात समीक्षक श्री रामकृष्ण शुक्ल 'शिलीमुख' का सान्निध्य प्राप्त हुआ, जिसके कारण आपमे साहित्यिक चेतना प्रस्फुटित हुई थी।

कुछ समय तक सन् 1944 मे महामना पण्डित मदन-मोहन मालवीय के निजी सचिव रहने के उपरान्त आपने स्वतन्त्र ही रहकर साहित्य-सेवा करने का सकल्प कर लिया था। क्योंकि आपका स्वास्थ्य ठीक नही रहता था इसलिए आपने देहरादून में 22 बीघा जमीन लेकर वहाँ रहकर कृषि-कार्य मे सलग्न होना उचित समझा। आपने आम तथा अमरूद के 2 बाग भी वहाँ लगाए थे।



पारिवारिक भरण-पोषण के कार्यों के लिए कृषि मे सलग्न रहते हुए आपने साहित्य-रचना भी करनी प्रारम्भ कर दी थी। स्वतन्त्र लेखन के साथ-साथ आप कुछ विदेशी साहित्य-कारो की रचनाओ का हिन्दी अनुवाद भी कर लिया करते थे। आपकी रचनाएँ उन दिनों 'विशाल भारत', 'नया समाज', 'सरिता', 'सरस्वती' और 'कल्याण' आदि अनेक पत्रो मे प्रकाशित हुआ करती थी।

यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि जब नई दिल्ली से प्रकाशित होने वाले 'दैनिक हिन्दुस्तान' ने एक 'अखिल भारतीय हिन्दी कहानी प्रतियोगिता' का आयोजन किया था तब आपकी 'राम जी मरजी' तथा 'जीवन का संगीत' शीर्षक कहानियाँ तीसरे व छठे स्थान पर पुरस्कृत हुई थी। आपकी साहित्यिक प्रतिभा से प्रभावित होकर देहरादून की 'हिन्दी साहित्य समिति' तथा जयपुर की 'हिन्दी सभा' ने उस समय आपका अभिनन्दन किया था। आपकी कहानियों का सकलन 'जीवन का सगीत' नाम से सन् 1949 मे प्रकाशित हुआ था। इसमें आपकी 7 कहानियाँ सकलित है। आपने 'गुलेरी जी की अमर कहानियाँ' नाम से अपने पिता श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की कहानियो का एक संकलन भी सम्पादित किया था। उस पर आपने तथा आपके भाई श्री शक्तिधर ने एक विस्तृत भूमिका भी लिखी थी। इस सकलन का प्रकाशन इण्डियन प्रेस प्रयाग से हुआ था। आपने श्री जे० सी० कुमारप्पा तथा चैस्टर मैकनार की कुछ अँग्रेजी पुस्तको का हिन्दी-अनुवाद भी किया था। आपने 'विडम्बना' नामक एक उपन्यास भी लिखा था।

आपका निधन 20 जून सन् 1952 को देहरादून मे हुआ था।

प्रज्ञाचक्षु रघुनन्दन शास्त्री

श्री शास्त्री जी का जन्म सन् 1899 मे उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद नामक नगर मे हुआ था। आप जब 9 वर्ष के ही थे कि चेचक के कारण आपकी नेत्र-ज्योति चली गई थी। आपने अपनी सारी शिक्षा ऐसी ही अवस्था मे सम्पूर्ण की थी। आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से 'धर्म शास्त्र' विषय मे 'आचार्य' की परीक्षा उत्तीर्ण करने के साथ-साथ वहाँ से ही हिन्दी तथा सस्कृत विषयो मे



एम० ए० भी किया था।

आप एक कुशल अध्यापक होने के साथ-साथ हिन्दी के सुलेखक तथा कवि भी थे। अपने अध्ययन की समाप्ति पर आपने सन् 1934 से सन् 1940 तक दिल्ली के 'इन्द्रप्रस्थ गर्ल्स स्कूल' मे शिक्षक रूप मे कार्य करने के साथ-साथ दिल्ली मे ही 'ओरियण्टल कालेज' नामक एक शिक्षण-संस्थान की स्थापना करके उसके माध्यम से छात्र-छात्राओं को हिन्दी की 'रत्न', 'भूषण' और 'प्रभाकर' परीक्षाओ के अध्यापन की सुविधा भी सुलभ कराई थी।

आपके द्वारा लिखित 'श्री प्रसाद गीता' नामक ग्रन्थ मे विभिन्न राग-रागिनियों पर आधारित श्रीमद्भगवद्गीता का पद्यानुवाद प्रस्तुत किया गया है।

आपका निधन 1 अक्तूबर सन् 1977 को हुआ था।

श्री रघुनन्दन स्वामी 'मुक्त'

आपका जन्म सन् 1905 मे उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जनपद के शामली नगर के एक ब्राह्मण परिवार मे हुआ था। आपके पिता श्री प्रतापदत्त स्वामी अच्छे सस्कारवान पण्डित थे। उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप कुछ समय तक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' नई दिल्ली मे कार्य-रत रहे थे और तदनन्तर आपने सन् 1937-38 मे मेरठ से प्रकाशित होने वाले 'किसान सेवक' नामक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन किया था। यह पत्र मेरठ जनपद के प्रख्यात नेता चौधरी विजयपालसिंह तथा उनकी श्रीमती सत्यवती स्नातिका के द्वारा सचालित होता था। उन दिनो यह दम्पति उत्तर प्रदेश विधान सभा के सदस्य थे।



'किसान सेवक' के बाद आपने स्वतन्त्र रूप से 'जन्म-भूमि' साप्ताहिक का प्रकाशन भी मेरठ से किया था। जब आर्थिक कठिनाइयो के कारण वह बन्द हो गया तो आप अपने जन्म-स्थान शामली चले गए और वहाँ की सामाजिक एव राजनीतिक गतिविधियो मे सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। आप काफी दिन तक एस० एस० लाइट रेलवे की यूनियन के अध्यक्ष भी रहे थे। आपने शामली से भी सन् 1950 मे 'सुधारक' नामक पत्र का सम्पादन-प्रकाशन किया था। जिन दिनो भारत पर चीन ने आक्रमण किया था तब आपने 'भारत पर चीनी आक्रमण' नामक एक पुस्तक भी प्रकाशित की थी।

आपका निधन 2 जून सन् 1974 को हुआ था।

श्री रघुनाथप्रसाद शास्त्री

श्री शास्त्री जी का जन्म उत्तर प्रदेश के बिजनौर नामक नगर मे सन् 1898 मे हुआ था। आपने निरन्तर 11 वर्ष तक काशी मे रहकर वहाँ के 'क्वीन्स कालेज' और 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' मे उच्चकोटि की शिक्षा प्राप्त करके 'व्याकरणाचार्य', 'आयुर्वेदाचार्य' तथा 'आयुर्वेद बृहस्पति' उपाधियाँ ग्रहण की थी। अपने अध्ययन-काल मे आपका महामना प० मदनमोहन मालवीय से अत्यन्त घनिष्ठ सम्पर्क हो गया था और आपने बिजनौर जनपद का दौरा भी कराया था। अपने अध्ययन की समाप्ति के उपरान्त जहाँ आपने हिन्दी के प्रचारार्थ अजमेर से 'मार्तण्ड' तथा 'हिन्दी भास्कर' पत्रो का सम्पादन एव प्रकाशन किया वहाँ



आपने 'अखिल भारतीय पण्डित समाज' की स्थापना करके परीक्षाओ की व्यवस्था भी की थी।

आपने बाद मे चिकित्सा-व्यवसाय को अपनाकर अपने पारिवारिक अर्थ-संकट को दूर किया था। प्रारम्भ मे आप विभिन्न राजकीय चिकित्सालयो मे चिकित्साधिकारी रहे और देश के नवयुवकों मे नैतिक शिक्षा का प्रचार करने की दृष्टि से आपने 'धर्मांजली' नामक एक पुस्तक भी लिखी थी। आपके आयुर्वेद-विषयक अनेक लेख समय-समय पर तत्सम्बन्धी 'धन्वन्तरि' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहते थे। आप जहाँ उच्चकोटि के गद्य-लेखक थे वहाँ 'घड़ियाली' नाम से हास्य-कविताएँ भी किया करते थे। आप काफी दिन तक राजस्थान के महेन्द्रगढ नामक स्थान मे 'सस्कृत महाविद्यालय' के प्रधानाचार्य भी रहे थे।

आपका देहावमान 10 अक्तूबर सन् 1962 को हुआ था। आपने एक दिन पूर्व ही अपने निधन की घोषणा कर दी थी।

श्री रघुनाथ माधव भगाड़े

श्री भगाडे का जन्म मध्यप्रदेश के दमोह जिले मे सन् 1874 मे हुआ था। आपने बी० ए० तक की शिक्षा प्राप्त करके पहले सरकारी नौकरी की थी और बाद मे 'सेशन जज' के पद पर रहते हुए सेवा-निवृत्त हुए थे। जन्म से मराठी होते हुए भी आप हिन्दी के बहुत प्रेमी थे। आपने मराठी के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'ज्ञानेश्वरी' का जो हिन्दी अनुवाद किया था उसकी भूमिका मे जो भाव प्रकट किये थे वे हम सबके लिए ध्यातव्य है। आपने लिखा था—"श्रीमद्भगवद्गीता की अनेक सस्कृत और भाषा-टीकाएँ प्रसिद्ध है। इनमे से ज्ञानेश्वर महाराज-कृत 'भावार्थ दीपिका' नामक व्याख्या, जो साहित्य की दृष्टि से अनुपम है तथा सिद्धान्त की दृष्टि से अनोखी है। इसमे गीता के प्रत्येक श्लोक का केवल भाव ही दिया है, पर सम्पूर्ण व्याख्यान अद्वैत ज्ञान तथा भक्ति से भरा हुआ है। इस ग्रन्थ की यही विशेषता है। इसमे शकरमतानुसार शुद्धाद्वैत मानते हुए साथ ही भक्ति का अत्यन्त सरस, अत्यन्त प्रेमयुक्त और अत्यन्त हृदयगम निरूपण किया है। सस्कृत मे श्रीमद्भागवत जितनी मधुर है, हिन्दी मे तुलसी-कृत रामायण जितनी ललित है, उतनी ही मनोहर मराठी मे यह ज्ञानेश्वरी है। इसके प्रणेता श्री ज्ञानेश्वर महाराज महाराष्ट्र के प्रमुख सन्तों मे से एक है। वे मराठी के आदिकवि समझे जाते है। यह ग्रन्थ उन्होने अपनी अवस्था के 15 वे वर्ष मे लिखा है। इसीसे उनकी लोकोत्तर बुद्धि और सामर्थ्य की कल्पना हो सकती है।"

भगाडे जी की भूमिका के इन शब्दों से आपकी भाषा-शैली का परिचय भली-भाँति मिल जाता है। यह अनुवाद सन् 1915 मे पहले-पहल वर्धा के श्री गुलाबराव रोडे नामक एक हिन्दी-प्रेमी ने प्रकाशित किया था। बाद मे यह ग्रन्थ 'इण्डिय प्रेस प्रयाग' से सन् 1955 मे सशोधित रूप मे प्रकाशित हुआ था। श्री भगाडे जी 'रामचरितमानस' के बड़े प्रेमी थे और उसका नियमित स्वाध्याय किया करते थे। आपने 'एकनाथी भागवत' का भी मराठी से हिन्दी मे अनुवाद प्रारम्भ किया था, किन्तु खेद है कि आप इसे पूरा नही कर सके और सन् 1938 मे आपका नागपुर मे देहावसान हो गया। अन्तिम दिनो मे आप नागपुर मे रहने लगे थे।

श्री रघुराजसिंह बान्धवेश

आपका जन्म रीवाँ राज्य (मध्यप्रदेश) मे सन् 1823 मे हुआ था। आपका स्थान भक्ति-काल के कवियो मे अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण था। भक्ति और शृगार की रचना करने मे आप बहुत निपुण थे। आपकी 'राम स्वयवर' नामक रचना अपनी विशिष्ट कवित्व-शैली की दृष्टि से हिन्दी-साहित्य मे एक उत्कृष्ट वर्णनात्मक प्रबन्ध-काव्य समझी जाती है। आपकी अन्य रचनाओ मे 'रुक्मिणी परिणय', 'आनन्दाम्बुनिधि', 'रामाष्ट याम','भक्ति विलास', 'विनयमाला' तथा 'जदुराज विलास' प्रमुख है। इनमे 'आनन्दाम्बुनिधि' मे आपने श्रीमद्-भागवत का पद्यात्मक अनुवाद प्रस्तुत किया है।

आपको साहित्य-प्रेम पारिवारिक विरासत मे प्राप्त हुआ था। आपके पिता विश्वनाथसिंह भी हिन्दी के अच्छे कवि तथा साहित्यकार थे। अपने पिता की भाँति ही आपने

हिन्दी के अतिरिक्त सस्कृत मे जो रचनाएँ की थीं, रीवाँ राज्य के पुस्तकालय मे उनमे से अधिकांश की पाण्डुलिपियाँ सुरक्षित हैं। भक्ति और शृंगारपरक रचनाएँ करने के साथ-साथ आप वीर रस-प्रधान कविताएँ लिखने मे भी अत्यन्त प्रवीण थे। आपकी ऐसी प्रतिभा का परिचय इन पक्तियों से मिल जाता है :

कीन्हों अट्टहास, रघुराजे मोद रासि दीन्हों,
सेवैं कीन्हों टापि, बजरग रग छाइकै।

आपकी उपर्युक्त रचनाओ के अतिरिक्त रीवाँ राज्य के 'सरस्वती भण्डार' मे जिनका उल्लेख मिलता है उनकी सख्या 30 के लगभग है। इनमें से कुछ सस्कृत की रचनाएँ भी है।

आपका निधन सन् 1879 मे हुआ था।

श्री रघुवंशलाल गुप्त आई० सी० एस०

श्री गुप्त का जन्म उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर जनपद की खुर्जा तहसील के जरगवाँ नामक ग्राम मे 7 अगस्त सन् 1905 को हुआ था। क्योकि आपके पारिवारिकजन गाँव को छोडकर अलीगढ मे जा बसे थे इसलिए आपकी प्रारम्भिक शिक्षा वहाँ के 'धर्मसमाज हाई स्कूल' मे हुई थी। मैट्रिक की परीक्षा अलीगढ से उत्तीर्ण करके आपने शेष शिक्षा इलाहाबाद मे प्राप्त की थी। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सन् 1928 मे एम० ए० करके आपने उसी वर्ष आई० सी० एस० की परीक्षा मे भी सफलता प्राप्त की और 2 वर्ष के लिए विलायत चले गए।

विदेश से वापिस आने पर सन् 1930 से सन् 1960 तक आप बिहार प्रान्त तथा भारत सरकार के सचिवालय मे अनेक उल्लेखनीय पदो पर कार्य-रत रहे। आपने भारत सरकार के 'खाद्य-सचिव' और 'परिवहन-सचिव' के रूप मे भी कई वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया था। सन् 1960 मे सरकारी सेवा से निवृत्ति पाने के उपरान्त आप हैदराबाद के 'एडमिनिस्ट्रेटिव स्टाफ कालेज' के प्राचार्य भी रहे थे। सन् 1968 मे वहाँ से निवृत्ति पाकर आप नई दिल्ली मे ही रहने लगे थे।

प्रशासकीय कार्यों मे व्यस्त रहते हुए भी आपने हिन्दी के प्रति अपने अनुराग को कम नही होने दिया और काव्य-रचना की ओर बराबर अग्रसर रहे। हिन्दी-कविता के प्रति आपका झुकाव उन्ही दिनों मे हो गया था जब आप 'धर्म समाज हाई स्कूल अलीगढ़' मे पढ़ा करते थे। उन दिनो हिन्दी के प्रख्यात कवि पण्डित गोकुलचन्द्र शर्मा आपके हिन्दी-शिक्षक थे और उन्ही की प्रेरणा पर आप कविता-लेखन की ओर प्रवृत्त हुए थे। आपकी रचनाएँ 'बाल सखा', 'प्रभा' और 'सरस्वती' आदि पत्र-पत्रिकाओं में ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। आपने



जहाँ 'प्रयागनारायण' नाम से अपने कई व्यग्यात्मक लेख 'सरस्वती' मे प्रकाशित कराए थे वहाँ आपके द्वारा किया गया उमर खैयाम की रुबाइयात और कवीन्द्र रवीन्द्र के गीतो का काव्यानुवाद भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था। आपकी ऐसी रचनाएँ 'उमर खैयाम की रुबाइयाँ' (1938) तथा 'रवि बाबू के कुछ गीत' (1950) के नाम से क्रमश किताबिस्तान इलाहाबाद और इण्डियन प्रेस प्रयाग की ओर से प्रकाशित हुई थी। बाद मे दूसरी पुस्तक का सशोधित और परिवर्द्धित सस्करण आपने 'रवीन्द्र रत्नाकर' नाम से भारतीय विद्या भवन बम्बई के द्वारा सन् 1964 मे प्रकाशित कराया। आपकी 'रवि बाबू के कुछ गीत' नामक पुस्तक पर भारत सरकार ने एक हजार रुपये का पुरस्कार भी प्रदान किया था, जो आपने 'विश्व भारती शान्ति निकेतन' के हिन्दी भवन को दान-स्वरूप दे दिया था। इस पुस्तक की भूमिका मे आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपनी आशसा इस प्रकार अभिव्यक्त की थी—"मेरा विश्वास है कि ये गान पाठक को रवीन्द्रनाथ के गानो का बहुत-कुछ आस्वाद दे सकेंगे और मूल गीत पढने की ओर उनकी अभिरुचि भी बढ़ायेंगे।"

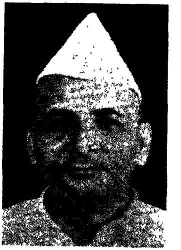
'उमर खैयाम की रुबाइयाँ' नामक रचना की प्रेरणा

आपको अपने गुरुओं सर्वश्री परशादीलाल दीक्षित (वैद्य), गोकुलचन्द्र शर्मा और डॉ० अमरनाथ झा के द्वारा मिली थी। आपके सहपाठी डॉ० दीनदयाल गुप्त का योगदान भी इस दिशा मे कम महत्त्व नही रखता। इन सभी महानुभावों का उल्लेख श्री गुप्त ने अपनी इस रचना के 'निवेदन' में किया है। आपकी हिन्दी-सम्बन्धी उल्लेखनीय सेवाओं के लिए सन् 1962 में 'सरस्वती हीरक जयन्ती समारोह' के अवसर पर आपका अभिनन्दन भी किया गया था।

आपका निधन 25 अगस्त 1969 को नई दिल्ली मे हुआ था।

श्री रघुवरदयालु मिश्र

श्री मिश्र का जन्म उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद जनपद के कायमगज क्षेत्र के सिकन्दरपुर खास नामक ग्राम में 21 जुलाई सन् 1898 को हुआ था। अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की मध्यमा परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप 24 नवम्बर सन् 1920 को दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास मे 'हिन्दी प्रचारक' के रूप मे गए थे और जीवन-पर्यन्त उसी कार्य मे सलग्न रहे। आपने मद्रास के अतिरिक्त तमिलनाडु के तजाउर, मदुरै और तिरुचिरापल्ली आदि अनेक नगरों में सभा की शाखाएँ स्थापित करके उनकी ओर से 'हिन्दी-प्रचार विद्यालय' चलाए थे।



आप सभा के प्रारम्भिक अध्यापकों तथा प्रचारकों मे सर्वथा महत्त्वपूर्ण स्थान रखते थे। अपने इस कार्य-काल मे आपका सम्पर्क उस क्षेत्र के अनेक समाज-सेवियों, विद्वानों और नेताओं से अत्यन्त घनिष्ठ हो गया था। सन् 1942 मे आप सभा के केन्द्रीय कार्यालय के 'स्थानापन्न मन्त्री' रहने के साथ-साथ सभा मे अनेक बार 'साहित्य मन्त्री' और 'सयुक्त मन्त्री' भी रहे थे। सन् 1946 मे जिस समय महात्मा गाधी जी सभा के 'रजत जयन्ती समारोह' मे मद्रास पधारे थे तब आप ही सभा के 'साहित्य मन्त्री' थे। आपने सभा की ओर से हिन्दी की अनेक पाठ्यपुस्तको का निर्माण और प्रकाशन कराया था।

आपकी निष्ठा तथा लगन का सबसे ज्वलन्त प्रमाण यही है कि हिन्दी-प्रचार के कार्य से समय निकालकर आपने जहाँ अपनी योग्यता बढाई वहाँ अपनी प्रतिभा के बल पर लेखन के क्षेत्र मे भी अच्छा कार्य किया। जिस समय आपने सभा मे कार्य प्रारम्भ किया था तब आपका अध्ययन केवल 'हिन्दी विशारद' की परीक्षा तक ही सीमित था, किन्तु बाद मे आप अपनी प्रतिभा के बल पर 'मद्रास विश्वविद्यालय' की सीनेट तथा 'बोर्ड आफ स्टडीज' के सदस्य हो गए थे। आप विश्वविद्यालय की 'हिन्दी-परीक्षाओं' के परीक्षक भी रहा करते थे। आपके द्वारा हिन्दी मे लिखित 'हैदरअली की जीवनी' नामक पुस्तक पर केन्द्रीय शासन ने आपको एक हजार रुपये का पुरस्कार भी प्रदान किया था। श्रीमती महादेवी वर्मा तथा श्री रामधारीसिह 'दिनकर'-जैसे प्रतिष्ठित साहित्यकारो से आपका अच्छा परिचय था।

आपका निधन 27 फरवरी सन् 1954 को मद्रास के 'स्टैनली अस्पताल' मे हुआ था।

पण्डित रजपाल पाण्डेय

श्री पाण्डेय जी का जन्म उत्तर प्रदेश के सुलतानपुर जनपद की अमेठी तहसील के पण्डरी नामक ग्राम मे सन् 1900 में हुआ था। आप मुख्यत वीर एव शृगार रस मे रचनाएँ किया करते थे और कभी-कभी अवधी मे भी आपकी प्रतिभा प्रस्फुटित होती थी। आपकी रचनाओ मे 'अर्जुन हनुमान सवाद', 'सन्धि शतक' और 'सीता स्वयवर' आदि प्रमुख है। इनके अतिरिक्त आपने रामायण तथा महाभारत पर आधारित

अनेक स्फुट रचनाएँ लिखने के अतिरिक्त देशभक्ति से ओत-प्रोत बहुत-सी कविताएँ भी लिखी थी।

आप स्वभाव से अत्यन्त मस्त और शरीर से सुडौल थे। देखने मे आप पहलवान-जैसे प्रतीत होते थे। बड़ी-बड़ी मूँछो से युक्त आपका मुखमण्डल साक्षात् वीर रस की अवतारणा करता था। आपने अपना परिचय एक पद मे इस प्रकार दिया था

विश्व माँहि भारत प्रसिद्ध औध प्रान्त तहाँ,
जहाँ सुलतानपुर सुन्दर मुकाम है।
तालुका अमेठी तहसील थाना गौरीगज,
पोस्ट गेह ककवा औ पण्डरी मे धाम है।
रामहरख पाण्डे स्वर्गीय है पिता मम,
पिता श्रीगोपाल जाको नाम सरनाम है।
सवत् उन्नीस सौ सत्तावन मे जन्म भयो,
कहै इष्ट मित्र रजपाल मेरो नाम है।

आपका निधन 11 अप्रैल सन् 1958 को हुआ था।

वैद्य रतनलाल 'चातक'

श्री 'चातक' जी का जन्म उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जनपद के देवबन्द नामक कस्बे मे सन् 1902 मे हुआ था। आपके पिता श्री राधेलाल जी सन् 1911 मे उस समय वीरगति प्राप्त कर गए थे जब कि रामलीला की शोभायात्रा के समय कुछ गुण्डो ने 'सीता' का बलपूर्वक अपहरण कर लिया था और देखते-ही-देखते सारे नगर मे साम्प्रदायिकता का नगा नाच होने लगा था। आपके पिता गुण्डो से 'सीता' का पुनरुद्धार तो कर लाए, किन्तु उसी समय शहीद हो गए थे। पिता जी का असमय मे देहावसान हो जाने के कारण आपको आगे की शिक्षा के लिए 'ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम हरिद्वार' मे प्रविष्ट कर दिया गया। आप वहाँ पर अभी अध्ययन-रत थे कि अचानक गाधी जी का सन् 1921 का 'असहयोग आन्दोलन' प्रारम्भ हो गया। परिणामस्वरूप 'चातक' जी अपने गुरुजनो और साथियो को बताए बिना ही 'विद्यालय' के 'ब्लैक बोर्ड' पर

बाधित होकर यहाँ से, धर यात्री का वेश।
रतनलाल जी चल दिए, ऋषिकुल से निज देश॥

यह सन्देश लिखकर चुपचाप वहाँ से चले गए।

गांधी जी के सत्याग्रह के आवाहन से प्रभावित होकर आप सहारनपुर चले आए और वहाँ पर रहकर राजनीतिक, सामाजिक तथा साहित्यिक कार्यों में जुट गए। वहाँ रहते हुए ही आपने सन् 1922 मे 'हिन्दी साहित्य समाज' नामक सस्था की सस्थापना करके साहित्य - गोष्ठियाँ करनी प्रारम्भ थी। बाद मे जब श्री हरिप्रसाद शर्मा 'अविकसित' भी आपके इस कार्य मे सहयोगी बन गए। सन् 1924 मे इस सस्था का नाम बदलकर 'हिन्दी साहित्य समिति' कर दिया गया, जो बाद मे क्रमश सन् 1926 मे 'हिन्दी हितैषिणी सभा' और सन् 1934 मे 'हिन्दी मित्र मण्डल' हो गया। यह 'हिन्दी मित्र मण्डल' आज भी श्री चातक जी की कीर्ति का ज्वलन्त प्रतीक है। आपने 'मित्र मण्डल' की विभिन्न प्रवृत्तियो के माध्यम से नगर के अनेक नवयुवको को साहित्य-रचना के क्षेत्र मे प्रोत्साहित किया था। आपने श्री ललिताप्रसाद 'अख्तर' और हकीम पन्नालाल के सहयोग मे 'हिन्दू कुमार सभा' की स्थापना भी की थी।



आपका मुख्य कार्य-क्षेत्र राजनीति का था। सन् 1921 के 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' से लेकर सन् 1942 के क्रान्ति-आन्दोलन तक आपने देश की स्वाधीनता की लड़ाई में बढ़-चढकर भाग लिया था और अनेक बार जेल-यात्राएँ की थी। आजीविका के लिए आपने 'आयुर्वेदिक चिकित्सा' का मार्ग अपनाया हुआ था और आपने इसकी विधिवत् दीक्षा प० रामचन्द्र शर्मा वैद्य (कनखल वाले) से ग्रहण की थी। आपने 'नौजवान भारत सभा' की स्थापना करके उसकी ओर से जो 'शानदार सम्मेलन' सहारनपुर मे आयोजित किया था उसकी अध्यक्षता अमर शहीद सरदार भगतसिह के पिता

सरदार किशनसिंह ने की थी। एक कर्मठ सामाजिक कार्यकर्ता तथा कुशल चिकित्सक होने के साथ-साथ अत्यन्त मधुर कण्ठ वाले सफल कवि के रूप में भी आपकी देन विशेष महत्त्व रखती है। आपकी ये पंक्तियाँ हमारे इस कथन की साक्षी के लिए पर्याप्त हैं :

आज बीती बात कहने का मजा जाता रहा
रात भर एकान्त में इक भाव टकराता रहा
दृष्टि-पथ में जब भी वे आए उजाला हो गया—
चोट खाकर दर्द उभरा, घाव मुस्काता रहा।

आपकी रचनाएँ 'सहारनपुर के कवि' तथा 'रजत रेणु' नामक पुस्तकों में संकलित की गई हैं।

आपका निधन 26 अक्तूबर सन् 1979 को हुआ था।

श्री रवीन्द्रप्रताप

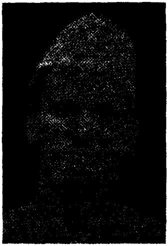
आपका जन्म 28 जुलाई सन् 1928 को देहरादून में हुआ था। उन दिनों आपके पिता श्री महेन्द्रप्रताप शास्त्री वहाँ के डी०ए०वी० कालेज में प्राध्यापक थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने पिताजी के निरीक्षण में ही हुई थी और आपने हाईस्कूल, इण्टर और बी० ए० की परीक्षाएँ क्रमश सन् 1945 सन् 1947 तथा सन् 1949 में उत्तीर्ण की थी। आपने 'प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति' विषय में लखनऊ विश्वविद्यालय से एम०ए० की परीक्षा सन् 1951 में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की थी। इस परीक्षा में आशातीत सफलता प्राप्त करने के उपरान्त आपने सर्वप्रथम मुरादाबाद के एक डिग्री कालेज में अध्यापन प्रारम्भ किया था और बाद में लखनऊ विश्वविद्यालय के 'प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विभाग' में प्राध्यापक हो गए थे।



आप अपने छात्र-जीवन से ही प्रखर मेधा के धनी थे। जब आप कक्षा 8 के छात्र थे तब 'उत्तर प्रदेशीय वाद-विवाद प्रतियोगिता' में आपने अपनी वक्तृत्व शैली का अभूतपूर्व परिचय देकर प्रथम स्थान प्राप्त किया था। कविता एवं कहानी-लेखन की दिशा में भी आपकी पर्याप्त रुचि थी और आपकी रचनाएँ प्रायः सभी अच्छे पत्रों में प्रकाशित होने लगी थी। जब आप लखनऊ विश्वविद्यालय में पढा रहे थे तब जिगर बढ़ जाने और गुर्दे खराब हो जाने के कारण आपका स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया था। अपनी इस लम्बी बीमारी के कारण ही 5 जून सन् 1962 को आपका असामयिक देहावसान हो गया।

श्री रसूलखाँ 'रसूल'

श्री 'रसूल' का जन्म उत्तर प्रदेश के बिसवाँ कस्बे के समीपवर्ती मुनौना (रामपुर कलाँ) नामक ग्राम में सन् 1916 में हुआ था। आपकी शिक्षा हिन्दी-उर्दू की मिडिल कक्षा तक हुई थी और आपने हिन्दी की 'विशेष योग्यता' परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी। आपका अधिकाश जीवन अध्यापन क्षेत्र में ही व्यतीत हुआ था, धार्मिक कट्टरता से आप कोसों दूर थे। अध्यापन के कार्य से समय निकालकर आप प्राय कभी-कभी कविता कर लिया करते थे।



आपकी रचनाओं में एक भक्त कवि की साधना और भावना के दर्शन होते है। आपके द्वारा लिखा गया 'तुलसी'

से सम्बन्धित एक पद इस प्रकार है :

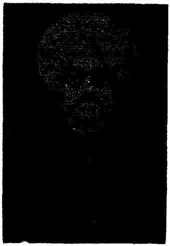
यमराज को पापी मिले न कहीं,
सदा छाती रहै झुलसी झुलसी।
निधि नेह की राम-कथा पढ़ती,
जनता मन में हुलसी हुलसी।।
हुलसी-सुत की कविता कलि मे,
भवसागर मे पुल-सी पुल-सी ।
सभी ठौर मे धूम जहान मे है,
तुलसी, तुलसी, तुलसी, तुलसी।।

आपका निधन 1 फरवरी सन् 1962 को हुआ था।

श्री राजनारायण शर्मा

श्री शर्मा का जन्म राजस्थान के अलवर राज्य की राजपुर तहसील के माचाडी नामक ग्राम मे सन् 1899 मे हुआ था। आपके पिता श्री लक्ष्मीनारायण उन दिनो रियासत के पुलिस विभाग मे थे। आप मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करते ही पहले वहाँ के 'कार्मशियल स्कूल' मे अध्यापक हो गए थे और बाद मे वहाँ के 'नोबल्स स्कूल' मे पढाने लगे थे। जिन दिनो आप अलवर मे पढ़ाया करते थे तब वहाँ के राजगढ हाई स्कूल के मुख्याध्यापक श्री कृष्णजसराय से आपका सम्पर्क हो गया और उनकी प्रेरणा से आप दिल्ली आ गए। उन दिनो श्री कृष्णजसराय दिल्ली के 'कर्मशियल स्कूल' मे मैनेजर थे। उन्होने श्री शर्मा को इस विद्यालय मे हिन्दी अध्यापक के रूप में लगा लिया।

दिल्ली मे आकर आपका स्थानीय 'हिन्दी प्रचारिणी सभा' के कार्यकर्ताओं मे अग्रणी श्री रामचन्द्र शर्मा महारथी से सम्पर्क हो गया और राजधानी की हिन्दी-सम्बन्धी प्रवृत्तियो मे भाग लेने लगे। धीरे-धीरे आपका झुकाव कविता की ओर हो गया और आप 'समस्या-पूर्तियो' के माध्यम से अच्छी कविता करने लगे। स्वतन्त्रता-सग्राम के उस वातावरण का आपके मानस पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि आप वीर-रस की कविता करने मे पूर्णत: दक्ष हो गए। उन्ही दिनो आपने 'भूषण-ग्रन्थावली' की भी एक टीका की थी। इस टीका से प्रभावित होकर डी० ए० वी० कालेज मोगा के तत्कालीन प्रधानाध्यापक महामहोपाध्याय पण्डित आर्यमुनि ने आपको 'वीर रस वारिधि' की उपाधि प्रदान की थी।



जिन दिनों आप 'कर्मिशयल हाई स्कूल दिल्ली' मे अध्यापक थे उन दिनो दिल्ली मे यहाँ का बहुत बोल-बाला था। अपने हिन्दी-नाटको द्वारा भी आप उस वातावरण को हिन्दीमय बनाने के लिए अनेक प्रयास किया करते थे। आपके निधन के उपरान्त 'कर्मिशयल स्कूल' की पत्रिका का जो विशेषाक प्रकाशित हुआ था उसके मुखपृष्ठ पर छपी इन पक्तियो से आपके व्यक्तित्व पर अच्छा प्रकाश पडता है

हिन्दी के पोषक, श्री-वर्धक, कवि, लेखक, वक्ता, विद्वान्।
विद्यालय के भरत मुनि सम, नाट्य-कला मे निपुण महान्।।
पण्डित राजनारायण शर्मा, वन्दनीय आचार्य सुजान।
नत मस्तक हो, शिष्य तुम्हारे, प्रेम सहित करते गुण-गान।।

आपने 'हिन्दी प्रचारिणी सभा दिल्ली' की ओर से उन दिनों अनेक ऐसी गोष्ठियाँ आयोजित की थी, जिनसे राजधानी मे धीरे-धीरे हिन्दी का वातावरण बनता जा रहा था। आपकी कविताएँ उन दिनो राजधानी से प्रकाशित होने वाले एक-मात्र हिन्दी मासिक 'महारथी' मे प्रमुख रूप से प्रकाशित हुआ करती थी। वास्तव मे जब कभी दिल्ली के हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार का व्यापक इतिहास लिखा जायगा तब शर्मा जी-जैसे असख्य मूक साधको का उल्लेख अत्यन्त प्रमुखता से किया जायगा।

आपका निधन 23 सितम्बर सन् 1956 को हुआ था।

श्रीमती राजरानी चौहान

श्रीमती राजरानी चौहान का जन्म उत्तर प्रदेश के कानपुर

जनपद के खम्भापुर नामक ग्राम में सन् 1909 की बसन्त पंचमी के दिन हुआ था। आपके पिता रावत भूपसिंह जूदेव 'भूप' स्वयं हिन्दी के बहुत अच्छे कवि थे और आपकी बडी बहन श्रीमती रामकुमारी चौहान भी हिन्दी की उत्कृष्ट कवयित्री थी। परिवार के साहित्यिक वातावरण ने आपको जो प्रेरणा प्रदान की थी उसीके कारण आपने भी हिन्दी मे कविता लिखना प्रारम्भ किया था।

आपने सर्व प्रथम कविता के क्षेत्र मे वीर-रस और भक्ति-रस की रचनाओं के माध्यम से प्रवेश किया था और बाद मे



छायावादी भाव-धारा से प्रभावित होकर आप वेदनापरक गीत भी लिखने लगी थीं। आपकी कवित्व-प्रतिभा का परिचय हिन्दी-जगत् को उस समय प्राप्त हुआ था जबकि आपने प्रयाग मे पहले-पहल अखिल भारतीय सम्मेलन के अवसर पर आयोजित 'महिला कवि सम्मेलन' मे अपनी कविताओ का पाठ करके सबको चमत्कृत कर दिया था। आपको वहाँ पर कविता-पाठ के लिए 'स्वर्ण पदक' भी प्रदान किया गया था। आपकी रचनाओ का संकलन 'झलक' नाम से तैयार था, जो प्रकाशित नही हो सका।

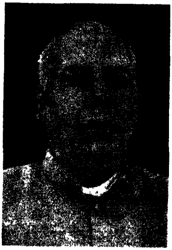
आपका असामयिक निधन 24 जून सन् 1949 को हुआ था।

श्री राजाराम पाण्डेय

श्री पाण्डेयजी का जन्म उत्तर प्रदेश के फैजाबाद जनपद के अगिथरा नारायणपुर नामक ग्राम में 10 फरवरी सन् 1902 को हुआ था। आपके पिता पण्डित नागेश्वर पाण्डेय सस्कृत के अद्वितीय विद्वान्, ज्योतिषी और कथावाचक थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा वाराणसी के सनातन धर्म विद्यालय और क्वीन्स कालेज में हुई थी और बाद में आपने सैण्ट इण्ड्रूज कालेज गोरखपुर से आगरा विश्वविद्यालय की एम० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की थी।

शिक्षा-समाप्ति के अनन्तर आप सन् 1930 मे इलाहाबाद के डी० ए० वी० हाई स्कूल मे अध्यापक हो गए, जहाँ आप सन् 1949 तक रहे। कुछ दिन तक अस्थायी रूप से आपने एग्लो बंगाली इण्टर कालेज इलाहाबाद और होबर्ट त्रिलोकीनाथ इण्टर कालेज टाँडा (फैजाबाद) में भी कार्य किया था। सन् 1949 मे आप 'राष्ट्रीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, तेदुआई कलाँ (फैजाबाद)' के प्रधानाचार्य नियुक्त हुए थे, जहाँ पर मृत्यु-पर्यन्त रहे।

जिन दिनों आप प्रयाग के डी० ए० वी० हाई स्कूल मे अध्यापक थे तब उस विद्यालय के प्रधानाध्यापक प्रख्यात लेखक श्री गगाप्रसाद उपाध्याय थे। आर्य-समाज के क्षेत्र मे उपाध्याय जी अपना विशिष्ट स्थान रखते थे। उनके सम्पर्क के कारण श्री पाण्डेयजी लेखन की दिशा मे अग्रसर हुए थे और उनके अनेक विद्वत्ता-पूर्ण लेख हिन्दी के कई पत्रो मे प्रकाशित हुए थे। काव्य-रचना मे आप इतने दक्ष थे कि



छात्रो को गूढ बातें सरल और सुबोध कविताओ के माध्यम से समझाया करते थे। आप अनेक वर्ष तक अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'विशारद' तथा महिला विद्यापीठ की 'विद्या विनोदिनी' परीक्षाओं के परीक्षक भी रहे थे। आप आर्यसमाज रानी मण्डी प्रयाग के प्रधान रहने के साथ-साथ 'आर्य उप प्रतिनिधि सभा' के सक्रिय सदस्य भी रहे थे। चिकित्सक के रूप मे भी आपने अच्छी ख्याति प्राप्त कर ली थी। इस नाते आप कई वर्ष तक 'जिला वैद्य सम्मेलन'

के प्रधान मन्त्री भी रहे थे।

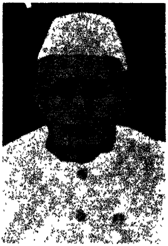
आपकी प्रकाशित रचनाओं में 'सन्ध्या का पद्यानुवाद' (1934), 'भक्ति भजनावली' (1935), 'अन्धों का हाथी' (पद्यबद्ध कहानी-1938), 'भन भन भन' (1940) तथा 'सीता शतक' (1943) आदि विशेष परिगणनीय हैं। आपके निधन के उपरान्त सन् 1968 में आपके सुपुत्र श्री शशिभूषण पाण्डेय के सम्पादन में 'राजाराम पाण्डेय व्यक्तित्व और कृतित्व' नामक जो ग्रन्थ प्रकाशित हुआ था उससे आपके बहुमुखी व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन 'अवध प्रवासी संघ कलकत्ता' के द्वारा हुआ था।

आपका निधन 12 जून सन 1962 को काशी में हुआ था। आप उन दिनों अपने कनिष्ठ भ्राता श्री रामसुन्दर पाण्डेय के पास ठहरे हुए थे।

श्री राजाराम शुक्ल 'राष्ट्रीय आत्मा'

श्री शुक्ल जी का जन्म उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद जनपद के परसूपुरवा नामक ग्राम में सन् 1898 में हुआ था। इस गाँव में आपकी ननिहाल थी और आपके पूर्वज कानपुर जनपद के मन्धना नामक स्थान से दो मील दूर पचौर के रहने वाले थे। जब आप 14 वर्ष के थे तभी आपके माता-पिता की छत्र-छाया आपके ऊपर से उठ गई थी। बड़ी विपन्न परिस्थिति में आपने प्राइमरी और मिडिल की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थीं। इसके उपरान्त अपने चाचा पण्डित गयाप्रसाद शुक्ल का आश्वासन पाकर आप उनके पास बैतूल (म० प्र०) चले गए और वहीं पर नार्मल की परीक्षा उत्तीर्ण करके नौकरी करने लगे थे। उन दिनों बाल-विवाह की प्रथा समाज में बहुत प्रचलित थी। फलस्वरूप आपका विवाह 11 वर्ष की आयु में ही हो गया और तदुपरान्त आप अपने छोटे भाई रामकृष्ण को लेकर बैतूल में ही सपरिवार रहने लगे थे।

जिन दिनों आप मध्यप्रदेश में थे तब आपका परिचय हिन्दी के प्रख्यात कवि श्री माखनलाल चतुर्वेदी (एक भारतीय आत्मा) से हो गया था, जिसके आधार पर आपने भी अपना उपनाम 'राष्ट्रीय आत्मा' रख लिया था। आपने अपनी अधिकांश राष्ट्रीय रचनाएँ इसी नाम से लिखी थीं और शृंगारिक रचनाएँ आप 'चितचोर' उपनाम से लिखा करते थे। बैतूल में रहते हुए ही आपके दो पुत्र हुए थे। सन् 1919 में आप वहाँ से कानपुर चले आए और यहाँ के डी० ए० वी० हाई स्कूल में अध्यापन कार्य करने लगे। उन्हीं दिनों दैव दुर्विपाक से इनफ्लूएंजा के कारण आपकी पत्नी और दोनों बच्चे दिवंगत हो गए। आपके दोनों बच्चों की आयु उस समय क्रमशः 5 और 3 वर्ष की थी। थोड़े दिन बाद आपने दूसरा विवाह कर लिया, किन्तु दुर्भाग्यवश दूसरी पत्नी से आपको कोई सन्तान नहीं हुई।



शुक्ल जी ने लगभग 31 वर्ष तक इस विद्यालय में वरिष्ठ अध्यापक के रूप में कार्य करके 1951 में अवकाश ग्रहण किया। अपने इस कार्य-काल में आपने जिस संयम, चरित्र-निष्ठा और कर्तव्यपरायणता का परिचय दिया वह अभूतपूर्व था। आपने अपने अध्यापक-जीवन में बहुत-से साधनहीन छात्रों को आर्थिक सहायता प्रदान करके उनका मार्ग प्रशस्त किया था। डी० ए० वी० स्कूल से सेवा-निवृत्ति के उपरान्त आपने जुलाई सन् 1955 में 'राजाराम सरस्वती विद्यालय' नामक एक विद्यालय की स्थापना भी कानपुर के जवाहरनगर नामक मुहल्ले में की थी। यह विद्यालय शुक्ल जी के अपने निजी निवास में अब भी आपके पोष्य पुत्र श्री अशोककुमार त्रिपाठी के निरीक्षण में सफलतापूर्वक चल रहा है।

आप एक कुशल अध्यापक होने के साथ-साथ उच्चकोटि के कवि और साहित्यकार भी थे। कानपुर में आपका वहाँ के जिन अनेक वरिष्ठ कवियों और साहित्यकारों से सम्पर्क था उनमें अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी, बालकृष्ण शर्मा

'नवीन', गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' और जगदम्बाप्रसाद मिश्र 'हितैषी' के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन सभी महानुभावों के स्नेहमय प्रोत्साहन और दिशा-निर्देशन से आपने अपने कृतित्व को निखारा था। आपकी रचनाएँ उन दिनो 'चाँद', 'माधुरी', 'सरस्वती', 'सुधा', 'वीणा', 'प्रभा', 'श्रीशारदा' तथा 'विशाल भारत' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओं में ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। आपके कृतित्व की वरिष्ठता का इसीसे अनुमान हो जाता है कि आपकी 'मुक्ति की युक्ति', 'जीवन', 'मगल कामना', 'विधवा' तथा 'छाया' आदि कृतियाँ आपके जीवन-काल मे प्रकाशित हो चुकी थी। आपकी सन् 1941 मे प्रकाशित 'जीवन' नामक कृति की भूमिका हिन्दी के सुप्रसिद्ध समीक्षक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखी थी। उन्होने लिखा था---"वास्तव में शुक्ल जी ने मानव-जीवन के विविध पक्षों को कवि की दृष्टि से देखा है। जीवन किसी अज्ञात उद्‌गम से प्रकट होकर अनेक रूप-सघातो और व्यापार-चक्रो के बीच से होता हुआ नाना दशाओं का कटु और मधु अनुभव करता हुआ चलता है। इन सबकी सुन्दर झाँकी इस पुस्तक मे मिलती है।"

शुक्ल जी की 'अनोखी आँखे' और 'जानकी जीवन' नामक काव्य-कृतियाँ आपके निधन के बाद प्रकाशित हुई थी। 'अनोखी आँखे' नामक आपकी रचना मे एक सौ ग्यारह दोहे है और 'जानकी जीवन 21 सर्ग का सस्कृत वर्ण-वृत्तो मे लिखा हुआ एक महाकाव्य है। इस महाकाव्य की उपादेयता इसीसे स्वत सिद्ध है कि इसकी आशसा हिन्दी के प्रख्यात विद्वान् डॉ० मुन्शीराम शर्मा और डॉ० प्रेमनारायण शुक्ल ने मुक्त कण्ठ से की है। इनके अतिरिक्त अन्य बहुत-सी सामग्री भी शुक्ल जी की अप्रकाशित ही रह गई, जिसमे ब्रज भाषा मे आपके द्वारा लिखित 'उद्धव गोपी सम्वाद' से सम्बन्धित एक सौ सत्ताईस छन्द और हजारो समस्या-पूर्तियाँ है। यह प्रसन्नता का विषय है कि शुक्लजी के निधन के उपरान्त आपकी काव्य-कृति 'जानकी जीवन' अनेक वर्ष तक कानपुर विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम मे रही है और अनेक शोध छात्रो ने आपके साहित्य पर शोध करके डाक्टरेट की उपाधियाँ भी प्राप्त की है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि 'राजाराम शुक्ल राष्ट्रीय आत्मा स्मारक समिति' की स्थापना करके कानपुर के नागरिको ने प्रतिवर्ष इस समिति की ओर से 1100/- रुपये का पुरस्कार देने की योजना भी प्रारम्भ की है।

आपका निधन 11 फरवरी सन् 1962 को हृदय रोग से पीडित होने के कारण हुआ था।

डा० राजेन्द्र सिंह

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के टिकरा नामक स्थान मे सन् 1890 मे हुआ था। आप बडे ही सहृदय तथा साहित्य-प्रेमी महानुभाव थे और आपके यहाँ प्राय कवियों की मण्डली जुडी रहती थी। कवियो की इस मण्डली के सत्सग के कारण ही आप कविता करने की ओर उन्मुख हुए थे। आपके द्वारा लिखित 'शिव पच्चीसी' नामक कृति का नाम विशेष रूप से उल्लेख्य है। इस रचना मे आपने पच्चीस छन्दो मे भगवान् शिव की स्तुति की है। एक पद इस प्रकार है :

अति पापिन के सिरमौर सही,
हम आपने को परमान लियो।
जग - जाल - जँजालन मे फँसिकै,
पद-वन्दन की नहि बानि लियो॥
तुम तारत हौ सदा दीनन को,
करुना करि कै जिय जानि लियो।
तिनि के कृपा है शिव तारहुगे,
यह तो निहचै करि मानि लियो॥

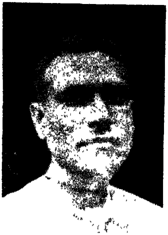
आपका निधन 8 नवम्बर सन् 1939 को हुआ था।

डॉ० राधेश्याम शर्मा

श्री शर्मा जी का जन्म 23 सितम्बर सन् 1896 को उत्तर-प्रदेश के बिजनौर जनपद के धामपुर नामक नगर मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा पीलीभीत, बरेली, चन्दौसी और काशी मे हुई थी। आप जिन दिनो काशी हिन्दू विश्वविद्यालय मे पढ़ते थे तब ही आपकी माता का देहावसान हो गया था। इसके उपरान्त जब आप 20 वर्ष के थे तब आपके पिताजी भी असमय मे इस ससार से चले गए। इस प्रकार साधन-

हीन अवस्था में आपने अपने भावी जीवन को कर्म-पथ पर अग्रसर किया था। आपके पिता श्री रघुवरदयाल शर्मा रेलवे मे असिस्टेंट स्टेशन मास्टर थे और माता श्रीमती यशोदादेवी धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थी।

जब आपका विवाह हो गया तो सबसे पहले आपने पीलीभीत के 'कलेक्टरी' आफिस में नौकरी की और सन् 1948 मे उससे अवकाश ग्रहण करके आपने पीलीभीत मे ही एक प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना करके 'ग्राम सुधार' नामक एक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। इसके उपरान्त सन् 1950 में आपने 'देशभक्त' नामक साप्ताहिक प्रकाशित किया, जो आज भी प्रकाशित हो रहा है। इन पत्रो के सम्पादन के दिनो मे आपने पीलीभीत जनपद की जनता की उल्लेखनीय सेवा-सहायता की थी। 'देशभक्त' मे विशेष रूप से 'कविता' का एक स्तम्भ रखकर आपने सामान्यत समस्त जनपद और विशेषत. पीलीभीत नगर के नवयुवकों को कविता-रचना की ओर अग्रसर किया था। आप 'आल इण्डिया स्माल एण्ड मीडियम न्यूज पेपर एडीटर्स फैडरेशन' की उत्तर प्रदेश शाखा के कई वर्ष तक उपाध्यक्ष भी रहे थे।



पत्रकारिता के साथ-साथ आपने विशुद्ध सेवा-भाव मे 'होम्योपैथिक चिकित्सा' का भी अच्छा अभ्यास कर लिया था और एक 'दातव्य होम्योपैथिक चिकित्सालय' के सचालक के रूप मे आपने नगर की जनता की बडी सेवा की थी। अनेक शिक्षा-सस्थाओं और समाज-सेवा के सस्थानो से भी आपका अत्यन्त निकट का सम्बन्ध रहा था। जनपद मे स्काउटिंग और सहकारी आन्दोलन को आगे बढाने मे भी आप सदैव अग्रसर रहा करते थे। आपके एक-मात्र पुत्र श्री कृष्णचन्द्र शर्मा भी अच्छे पत्रकार रहे है। उन्होने हिन्दी की प्रख्यात साहित्यिक पत्रिका 'कादम्बिनी' के वरिष्ठ उप-सम्पादक के पद पर अनेक वर्ष तक सफलतापूर्वक कार्य करके सितम्बर सन् 1979 मे ही अवकाश ग्रहण किया है।

आपका निधन 4 जनवरी सन् 1974 को बरेली में हुआ था तथा अन्तिम सस्कार 5 जनवरी सन् 1974 को पीलीभीत में हुआ था।

डॉ० रामअवध द्विवेदी

डॉ० द्विवेदी का जन्म उत्तर प्रदेश के गोरखपुर नामक नगर में 17 जुलाई सन् 1907 को हुआ था, जहाँ आपके पिता अपने परिवार के साथ रहा करते थे। आप हिन्दी के पुराने साहित्यकार श्री मन्नन द्विवेदी गजपुरी के कनिष्ठ भ्राता थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा देवरिया मे हुई और बाद मे आप गोरखपुर मे पढे थे। गोरखपुर के बाद आपने डी० ए० वी० कालेज कानपुर से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की और एम० ए० करने के लिए 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' मे विधिवत् प्रवेश ले लिया। वहाँ से ही आपने अंग्रेजी साहित्य में एम० ए० करने के साथ-साथ एल-एल० बी० की परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी।

अपना अध्ययन समाप्त करने के उपरान्त आप काशी हिन्दू विश्वविद्यालय मे ही अंग्रेजी के प्राध्यापक हो गए। अपने इस कार्य-काल मे आपने जहाँ अंग्रेजी साहित्य का गहन अध्ययन किया वहाँ हिन्दी-साहित्य-समीक्षा की दिशा मे भी अपनी प्रतिभा का पूर्ण परिचय दिया था। कुछ दिन तक आप देवरिया के 'सन्त विनोबा डिग्री कालेज' के प्रधानाचार्य भी रहे थे। अध्यापन का कार्य करते हुए ही आपने अंग्रेजी साहित्य से प्रख्यात विद्वान् डॉ० वी० मी० नाग के निर्देशन मे 'साहित्यिक समीक्षा' विषय पर अपना शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से डी०लिट्० की उपाधि प्राप्त की और फिर हिन्दी-लेखन मे भी सलग्न हो गए। अपने इस अध्यापन-काल मे आपने हिन्दी मे पाश्चात्य समीक्षा के सिद्धान्तों पर प्रकाश डालने वाले ग्रन्थों के अभाव का अनुभव करके अपनी प्रतिभा का इस दिशा मे पूर्ण प्रयोग किया था।

वैसे आप कविता पहले से ही लुक-छिपकर लिखा करते थे, परन्तु गद्य-लेखन की ओर भी अग्रसर हो गए। कविता



के प्रति आपका रुझान अपने ज्येष्ठ भ्राता श्री मन्नन द्विवेदी गजपुरी के कारण ही हुआ था। आप हिन्दी के प्रख्यात कवि तथा लेखक थे। आपने समीक्षापरक निबन्ध लिखने के साथ-साथ ललित निबन्धों के लेखन की दिशा में भी अपनी लेखनी का पावन अवदान दिया था। एक समय ऐसा आया कि कविता से धीरे-धीरे पल्ला छुडाकर आप पूर्णत गद्य-लेखन मे ही सलग्न हो गए। आपकी हिन्दी की प्रमुख प्रकाशित कृतियो मे 'आविष्कारो की कहानियाँ' (1953), 'हमारे भोजन की समस्या' (1953), 'हिन्दी साहित्य के विकास की रूपरेखा' (1956), 'साहित्य रूप' (1960), 'अग्रेजी भाषा और साहित्य' तथा 'साहित्य-सिद्धान्त' (1962) आदि प्रमुख है। इन पुस्तको के अतिरिक्त आपके अनेक समीक्षापरक निबन्ध हिन्दी की विभिन्न पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए थे। हिन्दी की समीक्षा-प्रधान प्रमुख त्रैमासिक पत्रिका 'आलोचना' से प्रकाशित आपके निबन्धो मे 'साहित्य के उपकरण', 'यूनानी नाट्य-शास्त्र मे ट्रेजेडी का स्वरूप', 'काव्य मे प्रतीक विधान' तथा 'स्वच्छन्दतावाद का परवर्ती काव्य-चिन्तन' आदि प्रमुख है।

आपने जहाँ हिन्दी मे अनेक उल्लेखनीय ग्रन्थो की रचना की थी वहाँ अँग्रेजी साहित्य का प्राध्यापक होते हुए आपने अग्रेजी मे भी अनेक उत्कृष्ट ग्रन्थो की रचना की थी। आपके ऐसे ग्रन्थो मे 'डायनामिक्स आफ प्लाटमेकिग' (1941), 'एन्थालाजी आफ इगलिश प्रोज' (1941), 'हिन्दी लिट्रेचर' (1953), 'वन एक्ट प्ले', 'लिटरेरी-क्रिटिसिज्म' तथा 'ए क्रिटिकल सर्वे आफ हिन्दी लिट्रेचर' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। आपने जहाँ अंग्रेजी मे 'हिन्दी साहित्य' का परिचय देने के लिए अनेक लेख और ग्रन्थ लिखे वहाँ आपने 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की ओर से प्रकाशित होने वाली अग्रेजी की मासिक पत्रिका 'हिन्दी रिव्यू' का अनेक वर्ष तक सफलतापूर्वक सम्पादन किया था।

निरन्तर स्वाध्याय और लेखन मे संलग्न रहने के कारण धीरे-धीरे आपकी नेत्र-ज्योति क्षीण होने लगी। पहले एक आँख की ज्योति गई और फिर सन् 1948 मे दूसरी आँख भी बेकार हो गई। इस कारण आपके लेखन की गति में अवरोध आ गया। बहुत चिकित्सा कराने पर भी जब आपको कोई लाभ होता दृष्टिगत न हुआ तो फिर चिकित्सा के लिए इगलैंड जाने की तैयारी भी की गई। किन्तु बाद मे लोगों के परामर्श पर यह निश्चय बदल दिया गया। हिन्दू विश्वविद्यालय मे सेवा-निवृत्त होने के उपरान्त आपने 'काशी विद्यापीठ' में रहकर भी वहाँ के छात्रो को लाभान्वित किया था। आप वहाँ पर कार्य-रत ही थे कि पक्षाघात के कारण 19 अक्तूबर सन् 1971 को आप दिवगत हो गए।

श्रीमती रामकली 'प्रभा'

श्रीमती 'प्रभा' का जन्म उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जनपद के अमीन नगर नामक ग्राम मे अक्तूबर सन् 1907 मे हुआ था और आप हिन्दी के वरिष्ठ पत्रकार और लेखक श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' की सहधर्मिणी थी। विवाह के पूर्व आपका अक्षर-ज्ञान वर्णमाला की पहचान तक भी नही था, किन्तु बाद मे अपने अध्यवसाय और



श्री 'प्रभाकर' जी के सम्पर्क-साहचर्य से आपने न केवल अक्षर-

ज्ञान प्राप्त किया प्रत्युत हिन्दी की इतनी योग्यता अर्जित कर ली थी कि आप लेखन के क्षेत्र में भी अवतरित हो गई थी।

आपके द्वारा लिखित अनेक लेख, कविताएँ और कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। आपने जहाँ एक उदारमना व्यक्ति-सम्पन्न कुशल गृहिणी के रूप में श्री 'प्रभाकर' जी की जीवन-यात्रा मे प्रचुर प्रेरणा प्रदान की थी वहाँ आपके सम्पर्क से हिन्दी के अनेक साहित्यकार और पत्रकार आप्लावित हुए थे। आपकी कविता का आस्वादन श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' द्वारा सम्पादित 'आधुनिक हिन्दी कवयित्रियों के प्रेमगीत' नामक काव्य-संकलन से किया जा सकता है।

आपका निधन 19 नवम्बर सन् 1941 को हुआ था।

श्री रामकिशोर मालवीय

श्री मालवीय का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रयाग नगर मे सन् 1896 मे हुआ था। आपके माता-पिता की असमय मे ही मृत्यु हो जाने के कारण आपका पालन-पोषण अपने नाना पण्डित ठाकुरदास दुबे के निरीक्षण मे हुआ था। जब नाना का भी देहान्त हो गया तो आपकी नानी ने आपका लालन-पालन किया था। जब तक आप वयस्क हुए तब तक आपकी देख-भाल आपके ज्येष्ठ भ्राता श्री बालमुकुन्द मालवीय ने ही की थी, जो पहले सन् 1920 तक महालेखाकार के कार्यालय और इसके बाद सन् 1965 तक इलाहाबाद की 'ट्रेजरी' मे क्लर्क थे। रामकिशोर जी की शिक्षा प्रयाग के 'शिवराखन स्कूल' (अब सी० ए० बी० कालेज) में केवल मैट्रिक तक ही हुई थी। पारिवारिक परिवेश की विपन्नता के कारण आप इससे आगे अपना अध्ययन जारी रखने के लिए सर्वथा विवश हो गए थे।

बाल्य-काल से ही साहित्य की ओर रुचि होने के कारण सबसे पहले आपने श्री कृष्णकान्त मालवीय के 'अभ्युदय' साप्ताहिक मे कार्य प्रारम्भ किया। इसी बीच एक ऐसा काण्ड हो गया जिसने आपके जीवन को ही बदल दिया। सरकार के विरुद्ध 'बम विस्फोट' करने के सम्बन्ध मे जो एक पर्चा छपा हुआ पुलिस को मिला उसका टाइप 'अभ्युदय प्रेस' के टाइप से मिलता-जुलता था। इसी सन्देह में पुलिस ने आपको पकड लिया। महामना मालवीय के सुपुत्र श्री रमाकान्त मालवीय आदि हाईकोर्ट के अनेक वकीलों द्वारा पैरवी किए जाने के उपरान्त ही बडी कठिनाई से आपको इस झंझट से मुक्ति मिल पाई थी।

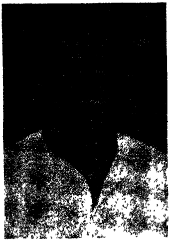
आपने 'अभ्युदय प्रेस' के अतिरिक्त अनेक वर्ष तक 'चाँद' (मासिक) के सम्पादकीय विभाग मे भी कार्य किया था। कुछ समय तक आप पण्डित श्रीराम वाजपेयी की 'सेवा' पत्रिका मे भी रहे थे। जिन दिनो आप 'चाँद' मे कार्य करते थे उन दिनो आपके द्वारा लिखित 'शान्ता' तथा 'शैलकुमारी' नामक उपन्यास प्रकाशित हुए थे। आपने कुछ दिन इलाहाबाद कांग्रेस कमेटी के पत्र 'स्वराज्य' का सम्पादन भी किया था। आपके द्वारा लिखित 'महात्मा गांधी की नोआखाली यात्रा' नामक पुस्तक का प्रकाशन 'आदर्श हिन्दी पुस्तकालय इलाहाबाद' द्वारा हुआ था। वैसे आपका अधिकांश जीवन 'अभ्युदय' मे ही व्यतीत हुआ था, किन्तु जब राष्ट्रीय आन्दोलन की उग्रता के कारण सरकारी दमन की चपेट मे 'अभ्युदय' का प्रकाशन बन्द हो गया तब आप लीडर प्रेस से प्रकाशित होने वाले हिन्दी दैनिक 'भारत' के सम्पादकीय विभाग से जुड गए और एक लम्बी अवधि तक कार्य करने के उपरान्त वहाँ से ही सेवा-निवृत्त हुए थे।

आपका निधन 86 वर्ष की आयु मे 31 मार्च सन् 1982 को हुआ था।

श्री रामकृष्णदेव गर्ग

श्री गर्ग का जन्म उत्तर प्रदेश के मथुरा जनपद के छयोली ग्राम मे 25 दिसम्बर सन् 1905 को हुआ था। जब बाल्य-काल मे ही आपकी माता का असामयिक देहावसान हो गया तो आपके पिता आपको तथा आपके छोटे भाई को लेकर वृन्दावन जाकर रहने लगे थे। वृन्दावन आकर आपके पिता श्री मोहनलाल गर्ग ने वहाँ की 'हित शिक्षा पाठशाला' मे अध्यापन का कार्य प्रारम्भ किया था। उन दिनों वृन्दावन में संस्कृत के जो उच्चकोटि के विद्वान् रहते थे उनका नाम उनमे अन्यतम था। रामकृष्णदेव गर्ग को भी उन्होंने प्रारम्भ

मे पारिवारिक ब्राह्मण-रीत्यनुसार संस्कृत की ही शिक्षा प्रदान की थी। अल्पायु मे ही रामकृष्णजी ने व्याकरण की मध्यमा परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी और फिर आगे का अध्ययन जारी रखने की दृष्टि से आप अपने पिता के निर्देशानुसार लाहौर के 'सनातन धर्म कालेज' मे प्रविष्ट हो गए थे। उन दिनो यह कालेज सस्कृत वाड्मय के अध्ययन - अध्यापन का उत्कृष्टतम केन्द्र समझा जाता था। इस कालेज मे प्रख्यात विद्वान् महामहोपाध्याय पडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी प्राचार्य थे और प्रसिद्ध वैयाकरण श्री परमेश्वरानन्द शास्त्री शास्त्री वहाँ पढाया करते थे। वहाँ से शास्त्री की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करके आप वृन्दावन आ गए।



वृन्दावन आकर आपने अग्रेजी की इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त हिन्दी मे लेख आदि लिखने प्रारम्भ कर दिए और थोडे ही दिनो मे आप उत्कृष्ट कहानियाँ लिखने लगे। आपका सस्कृत, हिन्दी तथा अग्रेजी तीनो ही भाषाओं पर इतना अधिकार हो गया था कि आप उनमे सहज भाव मे लिख सकते थे। आपकी कहानियाँ उस समय के अत्यन्त लोकप्रिय पत्रो ('विशाल भारत' तथा 'सचित्र भारत' आदि) मे प्रकाशित हुआ करती थी। आपकी प्रतिभा से प्रभावित होकर 'चाँद' के ख्यातनामा सचालक श्री रामरखसिह सहगल ने आपको अपने पत्र का सहकारी सम्पादक बनाकर इलाहाबाद बुला लिया था। इस पत्र का 'फाँसी अक' जब प्रकाशित हुआ था तब आप वहाँ ही कार्य करते थे। जब सरकार ने उस विशेषाक को जब्त कर लिया और 'चाँद' के प्रकाशन पर अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध लगा दिए गए तो आप विवश होकर वृन्दावन वापिस लौट आए।

वृन्दावन वापिस लौटने के उपरान्त कुछ दिन तक आपने इधर-उधर कार्य किया, किन्तु फिर सन् 1940 मे वृन्दावन नगरपालिका के 'उच्चतर माध्यमिक विद्यालय' मे अध्यापक हो गए और इस कार्य में सलग्न रहते हुए ही आपने हिन्दी तथा सस्कृत दोनों विषयों मे एम० ए० किया। इसके उपरान्त आप मथुरा के 'जवाहर इण्टर कालेज' मे आ गए थे और सन् 1966 मे अवकाश ग्रहण करने तक इसी सस्था मे हिन्दी-सस्कृत-प्रवक्ता के रूप मे कार्य-रत रहे थे। अपने इस अध्यापन-काल मे भी आपने लिखना बन्द नही किया था और आप बराबर कहानियाँ लिखते रहते थे। आपकी कहानियों की भाषा अत्यन्त सरल, सहज, सुबोध और चुटीले व्यग्यो से परिपूर्ण होती थी। यह आपकी कहानी-कला की एक विशेषता ही थी कि थोडे ही दिनो मे आपका नाम हिन्दी के विशिष्ट कहानी-लेखको की पक्ति मे आ गया था। जब आपकी कहानियाँ 'विशाल भारत' तथा 'चाँद' के अतिरिक्त 'सरस्वती', 'सुधा' और 'माधुरी' आदि पत्रिकाओ मे छपने लगी तब हिन्दी-जगत् के सुधी समीक्षकों का भी ध्यान आपकी ओर गया था। यह आपकी कहानी-कला की उत्कृष्टता का सुपुष्ट प्रमाण है कि आपकी 'रूप' शीर्षक कहानी का अग्रेजी अनुवाद प्रख्यात साहित्यकार श्री सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने दिल्ली के 'थॉट' नामक साप्ताहिक पत्र मे 'दी ब्यूटीफुल विमेन' शीर्षक से प्रकाशित किया था। आपकी 'ये अलमौही अखियाँ' तथा 'सिनेमा की सैर' शीर्षक कहानियाँ भी बहुत लोकप्रिय हुई थी।

जीवन के अन्तिम दिनो म आपने सस्कृत के भक्तिपरक ग्रन्थो का हिन्दी रूपान्तर भी किया था। ऐसे ग्रन्थो मे श्री हितहरिवश गोस्वामी के 'श्री राधा सुधानिधि स्तोत्र' नामक विशाल ग्रन्थ की 'रसकुल्या टीका' के अतिरिक्त नाभाजी के 'भक्तमाल' का हिन्दी गद्यानुवाद प्रमुख है। आपने सस्कृत मे एक उपन्यास भी लिखना प्रारम्भ किया था। सस्कृत के अनेक उच्चकोटि के विद्वानो ने उसकी शैली तथा भाषा की प्रशसा उन्मुक्त मन से की थी। यदि यह उपन्यास प्रकाशित हो जाता तो श्री गर्ग का स्थान सस्कृत वाड्मय के उन्नायक गद्यकारों मे प्रमुख होता। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थो मे 'राधावल्लभीय सम्प्रदाय' का नाम भी विशेष रूप मे उल्लेखनीय है। आपकी कहानियो का एक सकलन 'आपरेशन' नाम से छपा था। आपका गार्हस्थ्य जीवन अर्थ-सकट मे ही व्यतीत हुआ था। यद्यपि आपके मानस मे अपना लेखन-कार्य

जारी रखने की अदम्य लालसा थी, किन्तु स्वास्थ्य के साथ न देने के कारण विवश थे।

आपको सन् 1971 मे पक्षाघात का जो भयंकर आघात सहना पड़ा था उसीके कारण आप सर्वथा अशक्त हो गए थे और तीन वर्ष तक निरन्तर संघर्ष करते हुए आपने 27 मार्च सन् 1974 को अपनी इहलीला संवरण की थी।

श्री रामकृष्ण बोवा 'करतालकर'

श्री रामकृष्ण बोवा का जन्म सन् 1846 मे नागपुर मे हुआ था। आपके पूर्वज भोसला राज्य के अवसान से पूर्व नागपुर मे आकर बसे थे और उन्हे भोंसला-राजवश के राजा श्री जानोजीराव ने वहाँ आश्रय दिया था। आप सस्कृत, साहित्य और ज्योतिष के प्रकाण्ड विद्वान् थे। आप प्राय 'करताल' लेकर ही कीर्तन किया करते थे, इसी कारण आपके नाम के साथ 'करतालकर' का विशेषण लग गया था। नागपुर के सुप्रसिद्ध विद्वान् पंडित गोपालजी हरदास के ज्येष्ठ भ्राता 'बापू'जी की आप पर बहुत कृपा थी। जब आप मोहपा के सुप्रसिद्ध सन्त तुकाराम बोण से मिलने के लिए गए थे तब उन्होंने आपको गले से लगा लिया था। आपने भारत के विभिन्न अचलो का व्यापक भ्रमण किया था। वास्तव मे आप गृहस्थ होसे हुए भी पहुँचे हुए सन्त थे।

आप उच्चकोटि के भक्त एव साधक होते हुए भी अच्छे कवि थे। पदो की शैली मे आपने हिन्दी मे जो रचनाएँ की थी उनसे आपकी भक्ति-पद्धति तथा कीर्तन-प्रियता का सम्यक् परिचय मिलता है। आपके हिन्दी पदों मे विदर्भ प्रदेश की हिन्दी का प्रचुर परिमाण मे प्रयोग हुआ है। एक पद इस प्रकार है ·

प्रभु ने कैसी रेल चलाई।
तन की गाड़ी, बल का इजन, क्रोध की आग जलाई।
श्वास की सीटी बजाई॥

नाड़ी तार सम खबर लेन को, दशम द्वार फैलाई।
इन्द्रियों की बनाई टेसन, ज्ञान की घटी बजाई।
सुनो तुम कान लगाई॥

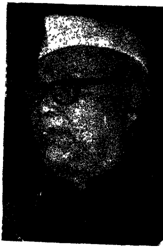
उत्तम मध्यम अधम तीन हैं, दरजे इसके भाई।
कर्म अकर्म की टिकट बटत है, पाप-पुण्य पहुँचाई।
धर्म-कर्म की खेप लगाई॥

जीवात्मा इसमें बैठे, टिकट अपना दिखलाई।
देखने वाला वो जगदीश है, जिसने रेल बनाई।
'रामकृष्ण' कहे मुझे प्रभू ने, हित की रेल दिलाई।

आपका देहावसान सन् 1903 में हुआ था।

श्री रामचन्द्र भारती

श्री भारती का जन्म दिल्ली मे 19 फरवरी सन् 1899 को हुआ था। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से अपनी शिक्षा समाप्त करके आपने दिल्ली के 'नरेला हाई स्कूल' से अपना अध्यापन-जीवन प्रारम्भ किया था। यहाँ पर कार्य करते हुए ही आप आर्यसमाज की सुधारवादी प्रवृत्तियो के सम्पर्क मे आए और अपने 'आनन्द पर्वत' पर आर्यसमाज की स्थापना की थी। सन् 1928 मे आप डी० ए० वी० हाई स्कूल आगरा मे सहायक अध्यापक होकर चले गए और वहाँ पर भी आपने 'आर्यमित्र सभा' का संगठन करके अपना सुधार-कार्य जारी रखा। वहाँ पर रहते हुए ही आपने उक्त सभा की ओर से एक 'अखिल भारतीय आर्य युवक कान्फ्रेस' का आयोजन किया, जिसकी अध्यक्षता कालाकाँकर के राजा अवधेशसिह ने की थी। जब महात्मा गांधी द्वारा सत्याग्रह-आदोलन प्रारम्भ किया गया तब आपने भी उसमे सक्रिय रूप से भाग लिया था।



सन् 1930 मे आप डी० ए० वी० हाई स्कूल माण्डले के प्रधानाचार्य होकर बर्मा चले गए और वहां पर अनेक वर्ष तक रहे। बर्मा में रहते हुए आपने जहां भारतीय भाषाओ के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था कराई वहां डी०ए० वी० हाई स्कूल के छात्रावास मे रहने वाले छात्रों मे वैदिक आचार-पद्धति का प्रचार भी किया। आपने बर्मा मे 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' का वार्षिक अधिवेशन भी किया था। इस अधिवेशन की अध्यक्षता आपने ही की थी। आपके ही प्रयत्न से वहां पर 'बर्मा हिन्दू शिक्षा बोर्ड' का गठन किया गया था, जिसके अध्यक्ष बाबा राघवदास और मन्त्री स्वय भारतीजी थे। सन् 1935 मे सेठ श्री जुगलकिशोरजी बिडला के प्रयास से बर्मा मे 'आर्य धर्म सेवा सघ' का एक अधिवेशन भी हुआ था, इसके माध्यम से भारतीजी ने वहां के बौद्धों को हिन्दू धर्म मे दीक्षित करके उनमे प्रचलित 'गोमांस-भक्षण' की प्रथा को सर्वथा समाप्त करने का प्रबल प्रयास किया था। आपने महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित 'गोकरुणानिधि' नामक पुस्तक का बर्मी भाषा मे अनुवाद कराकर वहां की जनता मे 'गोरक्षा की उपयोगिता' का प्रचार किया था।

बर्मा मे रहते हुए आपने जहां 'सरस्वती प्रेस' नामक एक हिन्दी-प्रेस की स्थापना करके वहां की जनता मे हिन्दी के प्रति प्रेम जागृत किया वहां 'आर्य जीवन माला' और 'विनय माला' नामक पुस्तके हिन्दी मे प्रकाशित करके बर्मा की जनता मे हिन्दी का प्रचार किया। आपने विज्ञान मार्तण्ड वात्स्यायन नामक एक बौद्ध भिक्षु से महर्षि स्वामी दयानन्द के जीवन पर 'बोधरात्रि' नामक एक हिन्दी महाकाव्य की रचना कराकर उसे प्रकाशित किया था। इस काव्य मे क्योंकि अंग्रेजी शासन के विरुद्ध उग्र विचार प्रकट किए गए थे अत बर्मा सरकार ने इसे जब्त कर लिया था। यहां यह बात विशेष उल्लेखनीय है कि इस ग्रन्थ की लगभग 3 हजार प्रतियां उन दिनों भारत मे भी भेजी गई थी।

द्वितीय विश्वयुद्ध छिड़ जाने पर भारतीजी सन् 1940 मे दिल्ली आ गए और यहां पर 'रामजस हाई स्कूल' के प्रधानाचार्य हो गए। प्रारम्भ से ही राष्ट्रवादी विचार-धारा होने के कारण जब महात्मा गाधी का 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' आंदोलन प्रारम्भ हुआ तब आप सर्वात्मना उसमे कूद पड़े। उन्हीं दिनो आपने फिर दिल्ली मे भी 'सरस्वती प्रेस' की स्थापना करके उसकी ओर से 'आहुति', 'बापू का अन्तिम सन्देश', 'आजादी की लड़ाई', 'स्वतन्त्र भारत', '1942 की क्रान्ति', 'जयहिन्द नेताजी' तथा 'बगाल का हत्याकाण्ड' नामक अनेक पुस्तकें प्रकाशित की। आपकी इन पुस्तकों मे से कई आपत्तिजनक समझी गई थी और आपके प्रेस से सरकार ने जमानत भी मांगी थी। भारतीय सस्कृति का और सस्कृत भाषा का प्रचार करने के कार्य मे भी आप पीछे नही रहे और आपने अपने प्रेस से 'सस्कृत प्रचारकम्' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया जिसके माध्यम से दिल्ली के विद्यालयो मे सस्कृत का प्रचार-कार्य बहुत आगे बढा है। यह पत्र अब भी बराबर प्रकाशित हो रहा है। सस्कृत के प्रचार एव प्रसार का कार्य निरन्तर आगे बढाने की दृष्टि से आपने 'अखिल भारतीय सस्कृत शिक्षा समिति' की स्थापना भी की थी, जिसके आप अनेक वर्ष तक अवैतनिक मन्त्री रहे थे। आप प्रति वर्ष गणतन्त्र दिवस के अवसर पर 22 जनवरी को 'सस्कृत कवि सम्मेलन' भी आयोजित कराया करते थे।

आपका निधन 30 जून सन् 1978 को दिल्ली मे ही हुआ था।

डॉ० रामचन्द्र राय

श्री राय का जन्म 16 दिसम्बर सन् 1932 को लखनऊ में हुआ था। सन् 1954 मे प्रयाग विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने वहां से ही 'राजस्थान के हिन्दी पुरालेखों का भाषाशास्त्रीय एव लिपिशास्त्रीय अध्ययन' विषय पर शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करके डी० फिल० की उपाधि प्राप्त की थी।

अपने अध्ययन की समाप्ति पर आप प्रारम्भ में सन् 1955 से 1960 तक 'राष्ट्रीय इण्टर कालेज सुजानगंज, जौनपुर (उत्तर प्रदेश)' मे अध्यापक रहे थे और फिर आप उदयपुर विश्वविद्यालय से सम्बद्ध 'महाराणा भोपाल कालेज उदयपुर' मे हिन्दी-प्राध्यापक हो गए थे। अपने छात्र तथा अध्यापन के दिनो मे आप विभिन्न रूपो मे लेखन-कार्य करते रहे थे। आपने मुख्यतः 'शोधपरक निबन्ध' ही

लिखे थे। आपके ऐसे निबन्धों मे 'रामपुर राज्य का प्राचीन राजनीतिक इतिहास', 'रायबरेली का राजनीतिक इतिहास' और 'प्रतापगढ का राजनीतिक इतिहास' प्रमुख है।

आपने 'राजस्थान रूसी भाषा परिषद्' राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर की ओर से प्रकाशित 'प्रात' नामक पत्रिका का सम्पादन भी सन् 1967 मे किया था। इसके अतिरिक्त आप अनेक शोध-कार्यों से निकटता से जुड़े हुए थे। हिन्दी की अनेक शोध-सम्बन्धी पत्रिकाओ मे आपके शोध-लेख समय-समय पर प्रकाशित होते रहते थे। अपने निधन से पूर्व आप भाषा विज्ञान से सम्बन्धित एक प्रामाणिक कोश के निर्माण मे सलग्न थे, जो 'मैकमिलन कम्पनी दिल्ली' की ओर से प्रकाशित होने वाला था।



आपका निधन 4 जनवरी सन् 1976 को हुआ था।

पण्डित रामचन्द्र शर्मा 'अखबारी पण्डित'

श्री शर्मा का जन्म सन् 1880 मे भरतपुर (राजस्थान) मे हुआ था। आपके पिता पण्डित गगाधर के कारण ही आप मे 'हिन्दी-प्रेम' की पुनीत भावनाएँ जाग्रत हुई थी। जब आगरा मे भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र की प्रेरणा पर श्री तोताराम ने 'हिन्दी-सभा' की स्थापना की थी तब आप जहाँ उस सभा के सदस्य बने थे वहाँ आपने पण्डित गगाप्रसाद शास्त्री, केदारनाथ मिश्र, ज्ञानी सुन्दरलाल और मुन्शी जानकीवल्लभ आदि अपने कई मित्रों को भरतपुर मे 'हिन्दी साहित्य समिति' की स्थापना के लिए प्रोत्साहित किया था। आपके पास जो पत्र-पत्रिकाएँ आया करती थी आप उन्हे 'समिति के वाचनालय' को दे दिया करते थे। क्योंकि आपको समाचार पत्रो के अध्ययन और सकलन का बहुत शौक था इसीलिए आप भरतपुर की जनता मे 'अखबारी पण्डित' के नाम से विख्यात थे।

आपको 'रामचरितमानस' से विशेष अनुराग था और उसके आधार पर अपने नगर मे 'रामलीला' चालू कराने मे आपने बडा परिश्रम किया था। आपने अनेक वर्ष तक एक कुशल अध्यापक के रूप मे कार्य करते हुए अन्त मे भरतपुर के नोबल्स स्कूल मे 'प्रधानाध्यापक' का गौरवपूर्ण पद प्राप्त कर लिया था और अनेक पाठ्य-पुस्तकों की रचना भी की थी। हिन्दी-सेवा और मानस-प्रेम के ये सस्कार आपके सुपुत्र पण्डित प्रभुदयाल 'दयाल' मे भी ज्यो-के-त्यों विद्यमान है। आप एक सहृदय कवि होने के साथ-साथ 'हिन्दी साहित्य समिति भरतपुर' की विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियो से कई वर्ष तक जुड़े रहे थे। समिति की 'कार्यकारिणी' के सदस्य और 'पुस्तकालयाध्यक्ष' के रूप मे आपकी सेवाएँ सर्वथा प्रशसनीय रही है।



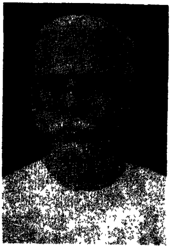
श्री शर्मा का निधन सन् 1908 मे हुआ था।

श्री रामचन्द्र शुक्ल

श्री शुक्ल का जन्म 7 मई सन् 1894 को उत्तर प्रदेश के देहरादून नगर मे हुआ था। आपके पूर्वज गनियापुर (बहराइच) के निवासी थे और आपकी शिक्षा-दीक्षा लखनऊ के सुप्रसिद्ध शिक्षणालय 'केनिंग कालेज' में हुई थी। आप

उन दिनों बी० ए० की परीक्षा मे अंग्रेजी विषय मे प्रथम आए थे। आपका अधिकाश जीवन शिक्षक के रूप मे व्यतीत हुआ था। पहले-पहल आप थियोसोफिकल स्कूल कानपुर मे शिक्षक नियुक्त हुए थे और बाद मे वाराणसी के 'थियोसोफिकल नेशनल स्कूल' मे चले गए थे। इसके अतिरिक्त अनेक स्थानों पर शिक्षक के रूप मे कार्य करने के उपरान्त आप अन्त मे उन्नाव के 'सुभाष नेशनल ट्रेनिंग कालेज' के प्रधानाचार्य हो गए थे और वहाँ मे सन् 1954 मे अवकाश ग्रहण किया था।

शिक्षण के कार्य से विश्राम ग्रहण करने के उपरान्त आप अनेक वर्ष तक वाराणसी की 'थियोसोफिकल सोसाइटी' के सहायक सचिव रहे थे और उन्ही दिनो आपने इस सोसाइटी के मासिक पत्र 'आनन्द' का सम्पादन भी किया था। इससे पूर्व आपने 'अवतार' नामक एक मासिक पत्र का सम्पादन भी किया था। सन् 1964 मे जब आपकी धर्मपत्नी का देहावसान हो गया तब आप प्राय अपने पुत्रो के पास रहने लगे थे। अन्तिम दिनो मे आपकी नेत्रों की ज्योति भी क्षीण हो गई थी और एक बार गिर पडने के कारण चलने-फिरने से भी अशक्त हो गए थे।



आप सन् 1922 मे कुछ समय तक कानपुर मे भी रहे थे, जहाँ आपने स्व० श्री गणेशशकर विद्यार्थी के साथ 'प्रताप' मे कार्य किया था। उन दिनों श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आपके सहयोगी थे। प्रख्यात साहित्यकार श्री भगवतीचरण वर्मा के आप अध्यापक रहे थे। हिन्दी और अँग्रेजी के अच्छे विद्वान् होने के साथ-साथ आप कुशल लेखक और सुकवि भी थे।

आपने जहाँ अधिकाशत. 'थियोसोफिकल सोसाइटी' के ब्रह्म विद्या-सम्बन्धी अनेक ग्रन्थो का अँग्रेजी से हिन्दी मे अनुवाद किया था वहाँ हिन्दी मे कविताएँ भी लिखी थीं। आपके द्वारा लिखित 'अछूत की आह' नामक रचना हिन्दी साहित्य मे आपके नाम की बजाय 'आचार्य रामचन्द्र शुक्ल' के नाम से जानी जाती है। यह भ्रम इसलिए उत्पन्न हुआ कि प्रख्यात साहित्यकार श्री रामनरेश त्रिपाठी ने अपने 'कविता कौमुदी' नामक ग्रन्थ के द्वितीय भाग के पृष्ठ 357 पर इस रचना को 'आचार्य रामचन्द्र शुक्ल' के नाम से प्रकाशित कर दिया था। इसके उपरान्त इस कविता की उत्कृष्टता का सारा श्रेय आपको न मिलकर आलोचक रामचन्द्र शुक्ल को मिलने लगा। आपकी उस कविता की प्रारम्भिक पंक्तियाँ इस प्रकार है .

एक दिन हम भी किसी के लाल थे।
आँख के तारे किसी के थे कभी।।
बूँद भर गिरता पसीना देखकर,
था बहा देता घडों लोहू कोई।।
देवता देवी अनेकों पूजकर,
निर्जला रहकर कई एकादशी।
तीरथों मे जा द्विजों को दान दे,
गर्भ मे पाया हमे माँ ने कहीं।।
जन्म के दिन फूल की थाली बजी,
दुख की राते कटी सुख दिन हुआ।
प्यार से मुखडा हमारा चूमकर,
स्वर्ग-सुख पाने लगे माता-पिता।।

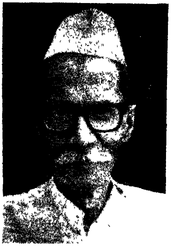
आपके द्वारा अनूदित 'ब्रह्म विद्या'-सम्बन्धी पुस्तको मे 'श्री गुरुचरणेषु' तथा 'नैवेद्य' आदि प्रमुख है।

आपका निधन 2 अप्रैल सन् 1976 को लखनऊ मे हुआ था। उन दिनों आप अपने ज्येष्ठ पुत्र के पास वहाँ रह रहे थे।

श्री रामचन्द्र सैनी

श्री सैनी का जन्म आगरा मे 16 अक्तूबर सन् 1900 को हुआ था। आपके पिता श्री जमुनाप्रसाद सैनी बडे सहृदय और सज्जन पुरुष थे। श्री सैनी जी की शिक्षा केवल हाई स्कूल तक ही हुई थी। अपने जातीय परिवेश के कटु तिक्त अनुभवों

को अपने मानस में सँजोकर आप एक प्रकार से नीलकण्ठ ही बन गए थे। आप एक दृढ़-प्रतिज्ञ देश-भक्त, उदार धर्म-प्रेमी और स्नेह तथा बन्धुत्व के आदर्श प्रतीक थे। आप फूलों की छोटी-सी अपनी पारिवारिक दुकान पर बैठकर ही काव्य-रचना किया करते थे। आपने सर्वप्रथम ब्रजभाषा में काव्य-रचना प्रारम्भ की थी और बाद में खड़ी बोली में भी कविता करने लगे थे। आपने अपनी काव्य-प्रतिभा का उदात्त परिचय अरबी और फारसी के अनेक कवियों की रचनाओं का अनुवाद करके भी दिया था। आपके द्वारा प्रस्तुत किये गए 'उमर खय्याम', 'सुलेमान' तथा 'हाफिज' की रुबाइयों के सरस पद्यानुवाद आपकी प्रतिभा के ज्वलन्त साक्षी हैं। आपने जहाँ शेखसादी के 'करीमा' नामक ग्रन्थ का अनुवाद सहज और सरल भाषा में किया था वहाँ आपकी अनेक मौलिक रचनाएँ भी हिन्दी पाठकों के समक्ष आई थीं। आपकी प्रकाशित कृतियों में 'पैगामे मुहम्मद', 'मजाके शायरी', 'हाफिज की रुबाइयाँ, तथा 'रुबाइयात उमर खय्याम' विशेष हैं।



आप एक उत्कृष्ट कवि और साहित्य-साधक होने के साथ-साथ बहुत अच्छे लिपिकार भी थे। आपके हस्तलेख में लिखित 'करीमा' आदि कृतियों की पाण्डुलिपियाँ बड़ी ही मनमोहक शैली से लिखी गई थीं।

आपका निधन 8 अगस्त सन् 1971 को हुआ था।

श्री रामचरणदास

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ जनपद के एक गाँव में सन् 1760 में हुआ था। कुछ दिन तक आप अपने जनपद के एक राजा के यहाँ कार्य करने के उपरान्त अयोध्या चले गए थे और वहाँ पर महात्मा रामप्रसाद बिन्दुकाचार्य का का शिष्यत्व ग्रहण कर लिया था। वहाँ रहते हुए आपने अपने गुरु श्री बिन्दुकाचार्य के साथ चित्रकूट और मिथिला आदि अनेक स्थानों की यात्राएँ की थीं। शृगारी साधना करने की दृष्टि से आपने राजस्थान के जयपुर नगर के समीपवर्ती रैवासा नामक स्थान की यात्रा भी की थी। इसी प्रसग में आपने 'अग्रसार' का अध्ययन करने की दृष्टि से अपना तिलक भी परिवर्तित कर दिया था। फिर आपने अपनी भ्रमण करने की प्रवृत्ति का सर्वथा त्याग करके स्थायी रूप से अयोध्या में ही रहने का निश्चय कर लिया और वहीं पर जमकर साधना में सलग्न हो गए थे। अवध के तत्कालीन नवाब ने आपकी साधना से प्रभावित होकर आपको बहुत-सी सम्पत्ति तथा भूमि भेंट कर दी थी।

आप राम-भक्ति-सम्प्रदाय के उच्चकोटि के कवि थे और आपने 'रामचरितमानस' की एक टीका भी लिखी थी। इस टीका को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझा जाता है। साम्प्रदायिक आचार्य होने के साथ-साथ आप विभिन्न साधना-पद्धतियों का सैद्धान्तिक विवेचन करने में भी बहुत पटु थे। आपकी प्रायः सभी रचनाओं में उनका वर्णन देखा जा सकता है। आपकी रचनाओं में 'अमृत खण्ड', 'शत पचाशिका', 'रसमालिका', 'राम पदावली', 'सियाराम रस मजरी', 'सेवा विधि', 'छप्पै रामायण', 'जयमाल सग्रह' 'चरण चिह्न' 'कवितावली', 'दृष्टान्त बोधिका', 'तीर्थ यात्रा', 'विरह शतक', 'वैराग्य शतक' 'नाम शतक', 'उपासना शतक', 'विवेक शतक', 'पिगल', 'काव्य शृगार', 'झूलन', 'कौशलेन्द्र रहस्य', 'राम नवरत्न सार सग्रह', 'अष्टयाम सेवा विधि' और 'रामानन्द लहरी' आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

आपका निधन सन् 1835 में अयोध्या में हुआ था।

श्री रामचरित उपाध्याय

श्री उपाध्याय जी का जन्म उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ नगर के समीपवर्ती महाराजपुर नामक ग्राम में 20 अक्तूबर सन्

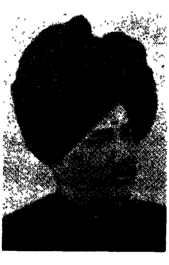
1872 को हुआ था। आपके पूर्वज वैसे गोरखपुर जनपद के धमौली ग्राम के निवासी थे और वहाँ से चार पीढ़ी पहले वे अपने वंशागत पेशे पण्डिताई तथा पौरोहित्य के निमित्त यहाँ आकर बस गए थे। श्री रामचरित जी के पिता श्री हरिप्रपन्न उपाध्याय संस्कृत वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान् थे और वे प्राय: अपने कार्य के सिलसिले मे गाजीपुर रहा करते थे। उपाध्याय जी का शैशव-काल भी वहाँ अपने पिताजी के पास व्यतीत हुआ था। दैव दुर्विपाक से अभी आप 15 वर्ष के भी न हो पाए थे कि आपके पिताजी का असामयिक देहावसान हो गया और आप अपनी जन्मभूमि महाराजपुर लौट आए। इसके उपरान्त आप अपनी पढाई जारी रखने की दृष्टि से काशी चले गए और सन् 1890 से सन् 1904 तक वहाँ महामहोपाध्याय पण्डित शिवकुमार शास्त्री के यहाँ रहकर उनसे शिक्षा प्राप्त करते रहे। विद्याध्ययन के पश्चात् उपाध्यायजी कुछ दिन तक पहले अपनी जन्मभूमि महाराजपुर मे रहे और फिर गाजीपुर चले गए और आपका अधिकांश समय वही पर व्यतीत हुआ।

जिन दिनो आप अपने पिता के पास गाजीपुर मे जाकर रहने लगे थे उन्ही दिनो आपका सम्पर्क वहाँ पर 'रामचरित तिवारी' नामक एक ऐसे महानुभाव से हो गया जो होली, चैती तथा कजली आदि की रचना किया करते थे। उनके सम्पर्क से उपाध्याय जी के मन मे भी वैसी कविताएँ करने के सस्कार उद्भूत हुए और स्वल्प से प्रयास से आप भी अत्यन्त सफल रचनाएँ करने लगे थे। 14-15 वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते आपने 'विजयी वसन्त' तथा 'सावन सुहावन' नामक दो पुस्तके भी तैयार कर ली थी। इनमे से पहली पुस्तक मे होली और चैती सकलित थी और दूसरी मे कजलियो का सग्रह किया गया था। यह दुर्भाग्य ही कहा जायगा कि उपाध्यायजी की ये दोनो प्रारम्भिक कृतियाँ कभी प्रकाशित न हो सकी थी। क्योकि प्रारम्भिक काल मे भाषा तथा भावो की अपरिपक्वता आदि के ग्रामीणता तथा अश्लीलता आदि के दोष इन दोनों कृतियों मे थे, इसलिए उपाध्याय जी ने इन्हे प्रकाशित करना उचित न समझा था।

जिन दिनो आप काशी मे रहकर सस्कृत वाङ्मय के गाथा सप्तशती' और 'आर्या सप्तशती' आदि ग्रन्थो का अध्ययन-अनुशीलन कर रहे थे उन दिनो आपने उनके अनुकरण पर ब्रजभाषा मे रचना करना प्रारम्भ कर दिया था। इस अवधि में आपने दोहों मे 'शृगार सौमई', 'नीति चौसई' और 'शान्त चौसई' आदि की रचना करने के अतिरिक्त कुण्डलियाँ तथा बरवै छन्दों मे क्रमश: 'सुधा शतक' और 'बरवै चौसई' नामक पुस्तको की रचना भी की थी। इस बीच आपका सम्पर्क 'सरस्वती' के तत्कालीन सम्पादक आचार्य श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी से हो गया और उनकी प्रेरणा तथा प्रोत्साहन पर आपने खड़ी बोली मे काव्य-रचना करनी प्रारम्भ कर दी। आपकी 'देव दूत', 'देव सभा', 'विचित्र विवाह', राष्ट्र भारती', 'भारत-भक्ति' और 'भव्य भारत' आदि अनेक छोटी-बड़ी फुटकर रचनाएँ उन दिनों 'सरस्वती' तथा अन्य तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित हुई थी। आपकी उस समय की कविता-कला का परिचय आपकी इन पक्तियो से भली-भाँति मिल सकता है जिन्हे आप प्राय दुहराते रहते थे :

मन रमा रमणी रमणीयता, मिल गई यदि ये विधि योग से।
पर जिसे न मिली कविता-सुधा, रसिकता सिकता सम है उसे।।

खडी बोली की कविता मे सस्कृत के 'द्रुतविलम्बित' छन्द का प्रयोग सर्वप्रथम उपाध्याय जी ने ही किया था। इस सम्बन्ध मे आप यह गर्वपूर्वक कहा करते थे कि "सस्कृत वर्ण-वृत्तो मे हिन्दी की कविता लिखने के लिए सस्कृत का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।" क्योकि आप महामहोपाध्याय पडित शिवकुमार शास्त्री के शिष्य थे, इसलिए आपको इसमे अभूतपूर्व दक्षता प्राप्त थी। आप बडे स्वाभिमानी, निरहकारी और मृदुल व्यवहार के व्यक्ति थे। आप प्राय कीमती कोट और साफा पहना करते थे और पान



खाने के बहुत शौकीन थे। प्रतिदिन सन्ध्या के समय गाजीपुर नगर के चौक वाली पान की दुकान पर बैठकर ही आप अपने समय का यापन किया करते थे।

जीवकोपार्जन के लिए आप छात्रों को हिन्दी-सस्कृत पढाया करते थे और पारिश्रमिक लेकर कविताओं का सशोधन भी आप प्राय. किया करते थे। उस समय के ऐसे अनेक कवि है जिन्होंने आपके द्वारा सशोधित रचनाओ के द्वारा साहित्य मे पूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। स्वतन्त्र प्रकृति तथा स्वाभिमानी स्वभाव का होने के कारण आप किसी 'कवि सम्मेलन' आदि मे भी कभी नही जाते थे। आपकी यह मान्यता थी कि कवि को स्वतन्त्र होना चाहिए। दरबारगिरी और कवि-सम्मेलन आदि कवि की इस प्रवृत्ति मे भारी बाधा पहुँचाते है।

जिन दिनो उपाध्याय जी की कविता-कला पूर्ण उत्कर्ष पर थी उन दिनो हिन्दी-कवियो की रचनाओ मे राष्ट्रीयता के भाव भी परिलक्षित होने लगे थे। आपने जहाँ प्राचीन पौराणिक और ऐतिहासिक महापुरुषो के जीवन पर अनेक प्रबन्ध-काव्यो की रचना की वहाँ उनके जीवनादर्शों को भी सामयिक प्रसगो के माध्यम से अपनी रचनाओ मे सफलता से उतारा था। राष्ट्रीयता, देश-प्रेम, स्वाधीनता और समाज-सुधार आपकी रचनाओ के प्रमुख स्वर थे। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'सूक्ति मुक्तावली' (1914), 'देवदूत' (1917) 'रामचरित चन्द्रिका' (1919), 'उपदेश रत्नमाला' (1919) 'रामचरित चिन्तामणि' (1920), 'राष्ट्र भारती' (1921) 'सूक्ति शतक' (1927-28) 'शुक सवाद' (1928), 'मुक्ति मन्दिर' (1934) तथा 'ब्रज सतसई' (1937) आदि प्रमुख है। इनके अतिरिक्त आपकी 'देव सभा', 'भारत भक्ति' और 'वृद्ध विवाह' नामक रचनाएँ भी प्रकाशित हुई थी। इन काव्य-कृतियों के अतिरिक्त आपने 'देवी द्रोपदी (1920) नामक एक उपन्यास भी लिखा था। जिस प्रकार श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने अपने 'प्रिय प्रवास' नामक काव्य मे श्रीकृष्ण के चरित को सर्वथा उदात्त रूप मे प्रस्तुत किया है उसी प्रकार श्री उपाध्याय जी ने भी अपने 'रामचरित चिन्तामणि' नामक प्रबन्ध-काव्य मे राम के चरित्र को एक सर्वथा नूतन परिवेश मे प्रस्तुत किया है। आपके ऐसे काव्य की बानगी इस प्रकार है :

जिस श्याम सुन्दर राम को लख ईश होता मोद मे।
वह है मचलकर रो रहा, विश्वेश दशरथ-गोद मे।।
जिसकी भृकुटि इंगित हुए यह नाचता ससार है।
वह ठुमुक करके नाचता, अवधेश के आगार है।।

'सूक्ति' और 'नीति' काव्य की रचना के क्षेत्र मे भी आपका स्थान सर्वथा अनुपम था। आपकी उक्त रचनाओ के अतिरिक्त 'सूरि शतक' और 'सीता समाचार' नामक दो रचनाएँ और है, जिनका प्रकाशन 'आत्मानन्द जैन सोसाइटी अम्बाला' ने किया था।

यह प्रसन्नता की बात है कि 'आजमगढ जनपद हिन्दी साहित्य सम्मेलन' ने सन् 1972 में पण्डित रामचरित उपाध्याय की जन्म-शती का जो आयोजन किया था उसके निर्णयानुसार डॉ० कन्हैयासिंह के सम्पादन मे 'रामचरित ग्रन्थावली' नामक एक ग्रन्थ सन् 1974 मे प्रकाशित हो गया है। इस ग्रन्थ से उपाध्याय जी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व का अच्छा परिचय प्राप्त हो जाता है। यह उत्सव उपाध्याय जी की जन्म-भूमि 'महाराजपुर' मे मनाया गया था और उस अवसर पर ही आचार्य सीताराम चतुर्वेदी तथा भूतपूर्व विदेश-मन्त्री श्री दिनेशसिंह आदि महानुभावों की उपस्थिति मे डॉ० किशोरीलाल गुप्त ने आपकी समस्त रचनाओ को 'पुस्तकाकार' प्रकाशित करने का यह क्रान्तिकारी सुझाव रखा था।

आपका निधन 12 नवम्बर सन् 1938 को हुआ था।

श्री रामचरित्र पाण्डेय 'पावन'

श्री पाण्डेय जी का जन्म उत्तर प्रदेश के बस्ती जनपद के बेलझरिया नामक ग्राम मे सन् 1894 मे हुआ था। आप 'लुच्चेश' और 'गँवार' उपनामो से भी क्रमश हास्यरसात्मक और जनबोलियों की रचनाएँ किया करते थे। आप जब मैट्रिक की कक्षा मे ही पढ़ रहे थे तब महात्मा गाधी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर आपने पढना बन्द कर दिया और स्वतन्त्रता-सघर्ष मे कूद पड़े। इस आन्दोलन के सिलसिले मे ही आप प्रारम्भ मे राष्ट्रीय रचनाएँ करने लगे थे। आप खड़ी बोली, ब्रज भाषा और भोजपुरी तीनों भाषाओ मे ही साधिकार रचनाएँ किया करते थे।

अपनी राष्ट्रीय रचनाओ के कारण जहाँ आपको 'पावन' नाम से जाना जाता था वहाँ आप अपनी हास्यरसात्मक रचनाओ के कारण 'लुच्चेश' के नाम से विख्यात थे। भोजपुरी भाषा मे आपने 'गँवार' नाम से अनेक प्रभावपूर्ण

रचनाएँ की थी। चुलबुलेपन और व्यंग्य से परिपूर्ण हास्य-रसात्मक रचनाओं के कारण आप पूर्वी जनपद मे अत्यन्त लोकप्रिय थे। आपकी खड़ी बोली की रचनाओ का सम्यक् आस्वाद उन अनेक कवि-सम्मेलनों मे जन-साधारण को मिलता था जिनमे आपको ससम्मान आमन्त्रित किया जाता था। आप अपने क्षेत्र में इतने लोकप्रिय थे कि स्वतन्त्रता के उपरान्त जब देश मे विभिन्न प्रदेशो की विधान सभाओ के पहले चुनाव हुए तब आप काग्रेस की ओर से अपने क्षेत्र के विधायक भी चुने गए थे।

आपकी विभिन्न विषयक रचनाओ के तीन-चार सकलन प्रकाशित हुए थे, जिनमे 'माता-पिता-स्तवन', 'ढेलाष्टक' तथा 'कुक्कुराष्टक' आदि रचनाएँ बहुत ही चर्चित रही थी। अनेक राजनीति, सामाजिक तथा धार्मिक विकृतियों पर व्यग्य करने मे आप बहुत सिद्धहस्त थे।

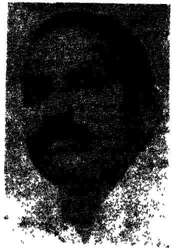
आपका निधन 14 अगस्त सन् 1971 को लम्बी बीमारी के कारण हुआ था।

श्री रामदत्त शुक्ल

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के शाहजहाँपुर जनपद के भावलखेडा नामक ग्राम मे सन् 1895 मे हुआ था। आपके पिता पण्डित नन्दकिशोरदेव शर्मा आर्य समाज के प्रचारक थे। आपने लखनऊ विश्वविद्यालय से एम० ए०, एल-एल० बी० की परीक्षाएँ प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करने के उपरान्त लखनऊ के उच्च न्यायालय मे वकालत की प्रैक्टिस प्रारम्भ कर दी थी। वकालत के कार्यों से समय निकालकर आप अपना स्वाध्याय भी बराबर करते रहते थे। आपके पिताजी के सस्कारो से प्रभावित होकर आपने आजीवन ब्रह्मचारी रहकर आर्यसमाज की उल्लेखनीय सेवा की थी। आप जहाँ सन् 1944 से सन् 1948 तक आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के मन्त्री रहे थे वहाँ आपने कई वर्ष तक सभा के साप्ताहिक पत्र 'आर्यमित्र' का सम्पादन भी अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था।

आपका प्राय. सारा ही जीवन वेद-वेदांगो और उपनिषदों के तलस्पर्शी पारायण मे व्यतीत हुआ था। आपका मन तथा मस्तिष्क सदैव ऊर्ध्वरेता ऋषि-मुनियो के समान ज्ञान से आलोकित रहता था। आपने सभी सहिताओ, सभी उपनिषदों और ब्राह्मणो के चिन्तन तथा मनन मे ही अपना अधिकाश समय व्यतीत किया था। वैदिक साहित्य का स्वाध्याय और अध्यात्म-साधना आपके जीवन के प्रमुख लक्ष्य थे। आप वक्ता भी उच्चकोटि के थे। आप अपने सुमधुर भाषणो से घण्टो तक जनता को मन्त्र-मुग्ध किये रहते थे।

हिन्दी साहित्य के उद्भट विद्वान् डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल आपके अनन्य मित्र थे। आपके सम्पर्क मे आकर ही उनका झुकाव वैदिक वाड्मय के गहनतम पारायण की ओर हुआ था। आपके द्वारा लिखित एव सम्पादित पुस्तको मे 'वैदिक निघण्टु', 'पिप्पलादि सहिता', 'आत्मशारीरिकोपनिषद्' तथा 'गायत्री उपनिषद्' के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे सन् 1955 मे आपका रक्त-चाप बढ गया था और आप पक्षाघात से भी आक्रान्त हो गए थे। कुछ समय तक लखनऊ के मैडिकल कालेज मे चिकित्सा कराने के उपरान्त आप अपने जन्म-स्थान (शाहजहाँपुर) चले आए थे और वही पर आपका शरीरान्त हुआ था। आपकी स्मृति मे आपके पारिवारिक जनो ने आपकी जन्म-भूमि मे 'रामदत्त हाई स्कूल' की स्थापना कर दी है।



आपका निधन 8 फरवरी सन् 1956 को हुआ था।

पण्डित रामनाथ त्रिपाठी

श्री त्रिपाठी का जन्म सन् 1873 मे उत्तर प्रदेश के मिर्जा-

पुर जनपद के पचराव-चुनार नामक स्थान मे हुआ था। आप हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी आदि कई भाषाओं के अच्छे ज्ञाता थे। मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप प्राय: सार्वजनिक सेवा के कार्यों मे भाग लेने लगे थे। हिन्दी साहित्य और भाषा मे आपकी कितनी गहन रुचि थी इसका सुपुष्ट प्रमाण यही है कि आप 'सरस्वती' के जन्म-काल से ही उसके नियमित ग्राहक थे। आप 'नागरी प्रचारिणी सभा काशी' के भी सक्रिय सदस्य रहे थे और यथाशक्ति उसकी सेवा भी करते रहते थे।

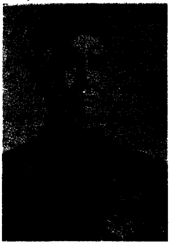
आप मातृभाषा हिन्दी के अनन्य अनुरागी थे और प्राय: हिन्दी के उत्थान मे सलग्न सभी संस्थाओ की सहायता करने मे अग्रसर रहा करते थे। सरस्वती के प्रति आपका बहुत प्रेम था। आप प्राय यह कहा करते थे "सरस्वती ही एक ऐसी पुरानी पत्रिका है जो बहुत दिनो से मातृभाषा की सेवा करती चली आ रही है। मैं जीवन-पर्यन्त इसका ग्राहक बना रहूँगा।" आपके सुपुत्र श्री देवदत्त त्रिपाठी भी हिन्दी के प्रेमी थे।

आपका निधन सन् 1931 मे काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय के अस्पताल मे हुआ था।

राजा रामपालसिंह (कुर्री सुदौली)

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के रायबरेली जनपद की 'कुर्री सुदौली' नामक रियासत मे 7 अगस्त सन् 1867 को हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा 'अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय' मे हुई थी। हिन्दू सस्कृति के प्रचार व प्रसार के प्रति आपका बहुत अधिक झुकाव था। आप जहाँ सन् 1910 मे 'भारतीय हिन्दू कान्फ्रेंस' के सभापति रहे थे वहाँ सन् 1911 मे आपको 'ब्रिटिश इण्डियन एसोसिएशन आफ अवध' का अध्यक्ष भी बनाया गया था। शिक्षा-सम्बन्धी कार्यों मे भी आपकी बहुत रुचि रहती थी। इसी कारण आप सन् 1909 मे प्रयाग विश्वविद्यालय के 'फैलो' निर्वाचित हुए थे। आप जहाँ लखनऊ के क्षत्रिय कालेज के कई वर्ष तक मन्त्री रहे थे वहाँ 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' की सीनेट के भी सदस्य रहे थे।

अनेक सामाजिक, सास्कृतिक और व्यावसायिक प्रतिष्ठानों से जुड़े रहने के साथ-साथ साहित्यिक कार्यों को प्रोत्साहित करने की दिशा मे भी आपकी बहुत अभिरुचि रहती थी। आपके इसी संस्कृति-प्रेम से प्रभावित होकर राष्ट्र-कवि मैथिलीशरण गुप्त ने अपने प्रख्यात काव्य-ग्रन्थ 'भारत-भारती' का समर्पण आपको ही किया था। आपने जहाँ अपनी रियासत मे हिन्दी-साहित्य का प्रचुर प्रचार करने मे अग्रणी कार्य किया था वहाँ आप सन् 1917 से सन् 1920 तक प्रयाग की 'विज्ञान परिषद्' के भी सभा-



पति रहे थे। आप लीडर प्रेम, इलाहाबाद बैंक और महा-लक्ष्मी शुगर कारपोरेशन के प्रबन्ध-निदेशक और भागीदार भी रहे थे। आपको भारत सरकार ने सन् 1916 मे 'नाइट' की उपाधि से भी सम्मानित किया था।

आपका निधन सन् 1937 मे हुआ था।

डॉ० रामप्रसाद त्रिपाठी

डॉक्टर त्रिपाठी का जन्म सन् 1890 मे उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर नामक शहर मे हुआ था। उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त पहले आप प्रयाग विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग मे प्रवक्ता रहे और बाद मे 'विभागा-ध्यक्ष' हो गए। जब 'सागर विश्वविद्यालय' की स्थापना हुई तब आप ही उसके प्रथम 'उपकुलपति' बनाए गए थे। सागर विश्वविद्यालय से अवकाश ग्रहण करने के उपरान्त आप अनेक वर्ष तक उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा सस्थापित 'हिन्दी समिति' के अध्यक्ष रहे और अपने निरीक्षण मे

समिति की ओर से विविध विषयों पर प्रामाणिक पुस्तकें लिखवाने और प्रकाशित करने की महत्त्वपूर्ण योजना बनाई और उसका कार्यान्वयन भी किया। आप कई वर्ष तक काशी नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दी विश्व कोश' के प्रधान सम्पादक भी रहे थे।

आप इतिहास के प्रकाण्ड विद्वान् होने के साथ-साथ ब्रजभाषा के भी उच्चकोटि के कवि थे। अपने प्रयाग विश्वविद्यालय के कार्य-काल में आप 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के सन् 1941 से लेकर सन् 1946 तक प्रधानमन्त्री भी रहे थे। आपने मैनपुरी में आयोजित 'ब्रज साहित्य मण्डल' के वार्षिक अधिवेशन की अध्यक्षता भी की थी। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मन्त्रित्व-काल में आपने अनेक महत्त्वपूर्ण योजनाएँ कार्यान्वित की थीं। आप सन् 1929 से सन् 1933 तक सम्मेलन के 'परीक्षा मन्त्री' भी रहे थे। ब्रजभाषा के मर्मज्ञ कवि होने के अतिरिक्त आप उत्कृष्ट लेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित इतिहास-सम्बन्धी जिन अनेक पुस्तकों का साहित्य-क्षेत्र में पर्याप्त समादर हुआ है उनमें 'इंगलैण्ड का इतिहास', 'मुगल साम्राज्य का उत्थान और पतन' तथा 'विश्व इतिहास' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त आपने 'अंग्रेजी शिष्टाचार' नामक एक और पुस्तक भी लिखी थी। आप 15 वर्ष से लन्दन में ही रह रहे थे। आपकी साहित्य-सम्बन्धी उत्कृष्ट तथा महत्त्वपूर्ण सेवाओं को दृष्टि में रखकर हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने आपको 'साहित्य वाचस्पति' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी। आप प्रख्यात नेता श्री हेमवतीनन्दन बहुगुणा के श्वसुर थे।



आपका निधन 22 अगस्त सन् 1982 को लन्दन में हुआ था।

पण्डित रामप्रसाद मिश्र

श्री मिश्र का जन्म सन् 1890 में उत्तर प्रदेश के कानपुर नामक नगर में हुआ था। आपके पूर्वज उन्नाव जनपद के एक ग्राम के निवासी थे। घर पर ही हिन्दी का अच्छा ज्ञान प्राप्त करके आपने अंग्रेजी की दसवीं कक्षा में प्रवेश लिया था। विद्यालय में जाकर आपने अनेक वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में भाग लेकर जहाँ अपनी वक्तृत्व-कला का कुशल परिचय दिया था वहाँ कविता करने की ओर भी आपकी रुचि हो गई थी। फिर ऐसी स्थिति आ गई कि आपको आगे पढ़ने से विरक्ति हो गई और आपने अपना अध्ययन सर्वथा बन्द कर दिया। विद्यार्थी-जीवन की समाप्ति के उपरान्त आपने 'श्री कान्यकुब्ज हितकारी' नामक अपने जातीय मासिक पत्र का सम्पादन प्रारम्भ कर दिया और दो वर्ष तक आपने इस कार्य को सफलतापूर्वक सम्पन्न किया। उन्हीं दिनों आप सन् 1906 में 'कलकत्ता कांग्रेस' में सम्मिलित होने के लिए वहाँ गए। उस समय 'बंग भंग आन्दोलन' छिड़ चुका था। मिश्र जी भी उससे प्रभावित हो गए और आपने कानपुर लौटकर जहाँ नगर में सबसे पहला एक सार्वजनिक पुस्तकालय स्थापित किया वहाँ बंगला के 'युगान्तर', 'कर्मयोगी' तथा 'हितवार्ता' आदि पत्रों का व्यापक प्रचार किया। इन सभी पत्रों में 'बंग भंग आन्दोलन'-सम्बन्धी प्रचुर सामग्री प्रकाशित हुआ करती थी।



सन् 1910 में आपने आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के सहायक रूप में 'सरस्वती' में कार्य करना प्रारम्भ किया। द्विवेदी जी के साथ कार्य करते हुए आपने एक उच्चकोटि की राष्ट्रीय पत्र के प्रकाशन का अनुभव किया। फलस्वरूप सन्

1911 मे आपने 'सरस्वती' से सम्बन्ध-विच्छेद करके 'जीवन' नामक एक राष्ट्रीय मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया, जो बाद मे क्रमशः साप्ताहिक और दैनिक के रूप मे परिवर्तित हो गया था। दुर्भाग्यवश केवल 4 वर्ष चलने के उपरान्त ही सन् 1914 के अन्त मे यह बन्द हो गया। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि कानपुर से 'प्रताप' का प्रकाशन भी श्री गणेशशकर विद्यार्थी ने 'जीवन' के पश्चात् प्रारम्भ किया था और आप सन् 1911 मे हुए 'दिल्ली-दरबार' मे 'जीवन' के सम्पादक के रूप मे सम्मिलित हुए थे। जिन दिनो मिश्र जी ने 'जीवन' का प्रकाशन किया था उन दिनों समाचारपत्रो की स्थिति बहुत बुरी थी। श्री मिश्र जी ने पत्र को चलाने के लिए बहुत संघर्ष किया, किन्तु अन्त मे 3-4 हजार रुपये का घाटा उठाकर इसे बन्द ही कर देना पडा। पत्र को चलाने के लिए और उसका घाटा पूरा करने के लिए आप स्थानीय 'पृथ्वीनाथ हाई स्कूल' मे अध्यापकी करने के अतिरिक्त ट्यूशन आदि भी किया करते थे। उन दिनो आपको प्रबन्धक-सम्पादक और प्रूफ-रीडर आदि सभी का कार्य करना पडता था। निरन्तर घनघोर परिश्रम करने के कारण आपको 'उन्निद्र रोग' भी हो गया था। पत्र को बन्द करने का एक कारण आपकी यह अस्वस्थता भी थी।

डाक्टरो के परामर्श पर आपने लगभग 8 मास तक फैजाबाद के 'गुप्तार घाट' नामक स्थान पर एकान्तवास किया और स्वस्थ होने पर जब आप वहाँ से पुन. कानपुर लौटे तब आपकी 'जीवन' को पुनर्प्रकाशित करने की इच्छा हुई। फलस्वरूप आपने उरई जाकर वहाँ से सन् 1916 मे 'उत्साह' नामक एक साप्ताहिक पत्र निकालना प्रारम्भ किया, जो सन् 1920 तक अत्यन्त सफलतापूर्वक चला था। आपको अपनी सम्पादकीय निर्भीक नीति के कारण ब्रिटिश सरकार से अनेक बार लोहा लेना पडा, जिसके फलस्वरूप उसकी जमानत जब्त हो गई और पत्र के प्रकाशन को बन्द करना पडा था। उन्ही दिनो आपने 'भारत नाटक समिति' तथा 'नाट्यग्रन्थ प्रसारक मण्डल' नामक सस्थाओ की स्थापना भी की थी। समिति के माध्यम से आपने जहाँ अनेक नाटको की प्रस्तुति करके हिन्दी रंगमच को आगे बढ़ाने का अभिनन्दनीय कार्य किया था वहाँ 'नाट्य ग्रन्थ प्रसारक मण्डल' की ओर से आपने 'राजसिंह' नामक नाटक का प्रकाशन किया था। 'उत्साह' के माध्यम से आपने राष्ट्रीय आन्दोलन को आगे बढ़ाने का जो कार्य किया था उसके कारण आपको उत्तर प्रदेश की तत्कालीन सरकार की ओर से अनेक प्रलोभन भी दिये गए थे, किन्तु आप उन प्रलोभनों के सामने बिलकुल भी नही झुके। आपने अपनी राष्ट्रीय प्रवृत्तियों निरन्तर आगे ही आगे बढाया। आपने कांग्रेस के विभिन्न कार्यक्रमो मे बढ-चढ़कर भाग लिया और जब कानपुर मे उसका अधिवेशन हुआ तब तो आपने वहाँ सर्व प्रथम 'कम्युनिस्ट कांग्रेस' का अधिवेशन ही आयोजित कर डाला था।

जिन दिनो सन् 1922 मे कानपुर मे अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का वार्षिक अधिवेशन हुआ था और आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी उसके स्वागताध्यक्ष थे तब मिश्र जी उसके प्रकाशन विभाग के मन्त्री बनाए गए थे। आप 1924 से सन् 1927 तक कानपुर नगरपालिका के सदस्य भी रहे थे और सन् 1926 मे उसके शिक्षा विभाग का अध्यक्ष पद भी आपने सँभाला था। नगर की अनेक सामाजिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक सस्थाओ से आपका अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध रहा था। राष्ट्रीय आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण आपने कारावास का दण्ड भी भोगा था। आप जहाँ आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के कृपापात्र थे वहाँ सर्वश्री बालमुकुन्द गुप्त, बालकृष्ण भट्ट, गोविन्दवल्लभ पन्त तथा उदयनारायण वाजपेयी आदि अनेक साहित्यकारो से आपका अत्यन्त निकट का सम्पर्क रहा था।

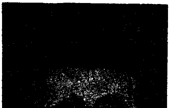
गाधी-इरविन-समझौते के बाद आप जब मार्च सन् 1931 मे जेल से रिहा हुए तब आपका स्वास्थ्य ठीक नही था। फलस्वरूप आप अपने पैतृक निवास उन्नाव जनपद के गाँव मे स्वास्थ्य-सुधार के लिए चले गए और वहाँ पर ही आपका देहावसान 41 वर्ष की आयु मे 23 जून सन् 1931 को हो गया।

श्री रामभरोसे वाजपेयी 'प्रेमनिधि'

श्री 'प्रेमनिधि' का जन्म उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद नगर के खतराना नामक मोहल्ले मे सन् 1896 मे हुआ था। आपकी

शिक्षा केवल हाई स्कूल तक ही हो पाई थी। बाद में आपने जीवन-संघर्षों से जूझते हुए इण्टरमीजिएट और 'साहित्य रत्न' की परीक्षाएँ भी ससम्मान उत्तीर्ण की थीं। आपका विवाह भी 16 वर्ष की अल्पायु मे हो गया था। आजीविका के लिए आपने अध्यापन-वृत्ति को अपनाया था और सन् 1957 मे आप इस कार्य से निवृत्त हुए थे।

साहित्य के प्रति आपकी रुचि सन् 1935 से हुई थी और आपने अपने क्षेत्र के प्रख्यात कवि एव साहित्यकार श्री वचनेश जी के कुशल निर्देशन मे लेखन का कार्य प्रारम्भ किया था। आप वचनेश जी की साहित्यिक संस्था 'कवि कोविद सघ' के सक्रिय सदस्य थे। आपने ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनो ही मे काव्य-रचना करके अपनी प्रतिभा का परिचय दिया था। आपने जहाँ प्रारम्भ मे छन्दो, सवैयो और दोहों मे काव्य-रचना की थी वहाँ रामायण तथा महाभारत के कुछ प्रसगों को आधार बनाकर कुछ प्रबन्ध काव्य भी लिखे थे। आप अपने दोहो से कवि सम्मेलनो मे जनता को मन्त्र-मुग्ध करने के साथ-साथ अपनी 'सत्य-नारायण व्रत-कथा' नामक रचना भी अत्यन्त तन्मयता से सुनाया करते थे। कानपुर के प्रख्यात कवि श्री हरनारायण गौड 'हरिजू' ने तो आपके दोहो की रचना-प्रतिभा से प्रभावित होकर ही आपको 'बिहारी' की उपाधि प्रदान की थी।



आपकी प्रतिभा का प्रमाण वे सब रचनाएँ है जिनमे आपने अपनी कवित्व-शैली का उत्कृष्ट परिचय दिया है। यद्यपि साहित्य-जगत् को आपकी कवित्व-शक्ति का परिचय प्रख्यात मनीषी श्री गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' के पत्र 'सुकवि' मे प्रकाशित होने वाली उनकी रचनाओ के द्वारा पहले ही मिल गया था, किन्तु बाद मे आपके द्वारा लिखे गए कई काव्यों ने आपको साहित्यिक मान्यता भी प्रदान कर दी थी। आपकी ऐसी रचनाओं मे 'अर्जुनोर्वशी', 'सत्यवान सावित्री' तथा 'नलोपाख्यान' आदि प्रमुख है। इनके अतिरिक्त आपकी 'सत्यनारायण व्रत-कथा', 'आनन्द रामायण', 'मूल रामायण', 'देह रामायण', 'यक्ष युधिष्ठिर संवाद' और 'सर्प युधिष्ठिर संवाद' आदि कृतियाँ भी अपना विशेष महत्त्व रखती है।

आपके व्यक्तित्व और कृतित्व के प्रति फर्रुखाबाद के साहित्य-प्रेमियो के मानस मे कितनी आस्था थी इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यही है कि वहाँ की 'इन्दीवर' और 'सस्कृति साहित्य कला सगम' नामक सस्थाओं के द्वारा 20 मई सन् 1973 को आपका अत्यन्त भावभीना अभिनन्दन किया गया था।

आपका निधन सन् 1974 मे हुआ था।

श्री रामरत्न थपलियाल

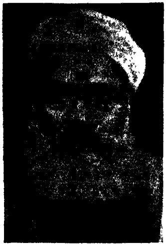
श्री थपलियाल का जन्म उत्तर प्रदेश के पौढी गढवाल क्षेत्र की पट्टी असवालस्यूँ के चिलोली नामक ग्राम मे सन् 1899 मे हुआ था। आप अपने अध्ययन को छोडकर असहयोग आन्दोलन मे कूद पडे थे। एक सम्पन्न परिवार मे जन्म लेने के कारण आपने काँसखेत के पास कताई-बुनाई करने का एक कारखाना भी खोला था। इसी बीच सरकार की कोपदृष्टि आप पर पड गई और आपका यह कार्य बीच मे ही रुक गया। इस आर्थिक क्षति का आपके मानस पर गहरा आघात लगा और आप विरक्त जीवन व्यतीत करने लगे।

आप हिन्दी के एक अच्छे लेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित 'विश्व दर्शन', 'संसार स्वराज्य विधान' और 'ससार का भव्य स्तम्भ' नामक कृतियाँ उल्लेखनीय है। आपकी रचनाओं मे आध्यात्मिकता का जो पुट दिखाई देता है उसमे आपके मानसिक विचारो की दिव्यता निहित है। इनके अतिरिक्त आपकी कुछ अन्य रचनाएँ भी है। इनमे से केवल 'विश्व दर्शन' ही सन् 1932 मे प्रकाशित हो सकी थी। आपके सुपुत्र श्री विश्वप्रकाश थपलियाल ने आपकी इस कृति का अब नया सस्करण भी प्रकाशित किया है।

आपका निधन 24 सितम्बर सन् 1951 को हुआ था।

श्री रामरत्न सनाढ्य 'रत्नेश'

श्री 'रत्नेश' का जन्म उत्तर प्रदेश के जालौन जनपद के कालपी नामक स्थान मे सन् 1851 में हुआ था। आपने केवल 18 वर्ष की



आयु मे ही व्याकरण, ज्योतिष और आयुर्वेद के अनेक ग्रन्थों का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। सर्व प्रथम आपने लखनऊ के एक सम्भ्रान्त रईस श्री मोहनलाल सरिश्तेदार के यहाँ कार्य प्रारम्भ किया था, किन्तु बाद मे आप स्थायी रूप से कानपुर मे रहकर वहाँ वैद्यक करने लगे थे। जब कानपुर मे 'रसिक समाज' नामक साहित्यिक सस्था की स्थापना हुई तो सर्व प्रथम आप ही उसके प्रधानमन्त्री बनाए गए थे और जब 'समाज' के प्रधान श्री ललिताप्रसाद त्रिवेदी 'ललित' का देहावसान हो गया तब आपको उसकी अध्यक्षता का भार भी सौपा गया था।

आप राधा और कृष्ण के अनन्य उपासक थे, अत आपकी कविताओ मे उनकी विविध लीलाओ का वर्णन प्रचुरता से देखने को मिलता है। यद्यपि आपकी रचनाओ मे ब्रजभाषा का प्रयोग प्रचुरता मे हुआ है किन्तु उर्दू के लोक-प्रचलित शब्दों का प्रयोग भी आप बडी सहजता से करते थे। नख-शिख-वर्णन मे आपको जो पटुता प्राप्त थी वह आपकी अपनी अनूठी ही विशेषता है। आपकी 'रत्नेश शतक', 'राधा सुधा निधि का भाष्य', 'दिनचर्या और कर्म-पद्धति', 'ध्वनि-व्यंजना' तथा 'नायिका-भेद' आदि कृतियाँ प्राप्य है, जिनमे से 'रत्नेश शतक' प्रकाशित भी हो चुकी है।

आपकी प्रसादगुणयुक्त रचनाएँ जन-साधारण और विद्वत् समाज सभीको आनन्दित किया करती थी। आपकी अलकार-प्रधान भाषा, भाव तथा व्यजना की झलक इस पद मे देखी जा सकती है :

आनन अमन्द अवलोकि चन्द मन्द भयो,
नासिका निरखि कीर कानन लुकाने हैं।
श्रुति दुति देखि सीपी बूड़ि गई देह बीच,
अधर ललाई लखि बिम्ब उरझाने है।।
दन्त छवि तकत दरार खाई दाड़िम ने,
मृदुल कपोल देखि पाटल लजाने हैं।
भृकुटि विलोकत ही इन्द्रधनु लोप भयो,
नैनन निहारि कै सरोज सकुचाने हैं।।

आपका निधन सन् 1936 मे 85 वर्ष की आयु में कानपुर मे हुआ था।

श्री रामरीझन रसूलपुरी

श्री रसूलपुरी जी का जन्म 10 मई सन् 1906 को बिहार प्रदेश के मुजफ्फरपुर जनपद के रसूलपुर नामक ग्राम मे हुआ था। आपकी शिक्षा मुजफ्फरपुर के 'राष्ट्रीय विद्यालय' मे हुई थी। इस विद्या-



लय के शिक्षक 'बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के सस्थापको मे श्री रामधारीप्रसाद थे। उन्हीकी प्रेरणा तथा सहायता से आप लेखन की ओर प्रवृत्त हो गए थे। आपकी रचनाएँ 'हिन्दू पच', 'विश्वमित्र', 'विश्व-बन्धु', 'कर्मवीर', 'इन्दु', 'आजकल', 'आज', 'नई धारा' तथा 'परिषद् पत्रिका' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रहती थी।

सन् 1936 से आपने पत्रकारिता के क्षेत्र मे पदार्पण किया था और सन् 1957 से पटना से प्रकाशित होने वाले 'उत्तर बिहार' के सम्पादन से जो जुडे तो अन्त तक उसीकी

सेवा में संलग्न रहे। आपने पत्रकारिता का प्रारम्भ मुजफ्फरपुर से प्रकाशित होने वाले 'तिरहुत समाचार' के सम्पादन से किया था और कुछ दिन तक आप पटना से प्रकाशित होने वाले 'राष्ट्रदूत' (साप्ताहिक) और 'योगी' (साप्ताहिक) के सहकारी सम्पादक भी रहे थे। आपने 'नन्हे-मुन्ने' तथा 'असहाय बन्धु' मासिक पत्रो मे भी कार्य किया था। सन् 1949 से सन् 1956 तक आप सिहभूम जिले के आदिवासी क्षेत्रो म हिन्दी-प्रशिक्षण-केन्द्र के अनुदेशक तथा अवर शिक्षा-निरीक्षक भी रहे थे।

सन् 1957 मे जब पटना से 'उत्तर बिहार'(साप्ताहिक) का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तब आप उसके सम्पादक बनाए गए और वास्तव मे इस पत्र के माध्यम से रसूलपुरी जी ने जहाँ बिहार की जनता की उल्लेखनीय सेवा की वहाँ हिन्दी-सम्बन्धी अनेक गतिविधियो मे भी बढ-चढकर भाग लिया। आपके सम्पादन-काल मे 'उत्तर बिहार' केवल बिहार का ही नही, प्रत्युत अखिल हिन्दी-जगत् का एक जागरूक प्रहरी सिद्ध हुआ था। यह आपकी सम्पादन-पटुता का ही ज्वलन्त प्रमाण है कि 'उत्तर बिहार' हिन्दी के प्राय सभी उच्चकोटि के लेखको की रचनाएँ प्रकाशित होती थी। 'उत्तर बिहार' को यदि उन दिनो 'हिन्दी का एक-मात्र सजग प्रहरी' कहा जाता था तो इसमे कोई अतिरजना नही थी। आपकी प्रकाशित कृतियो मे 'आर्यसमाज का इतिहास','युगपुरुष और युग धर्म', 'भारतीय सस्कृति की एक झलक', 'जगल गाता है' और 'जगल नाचता है' आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

आपकी एकनिष्ठ हिन्दी-सेवा को दृष्टि मे रखकर जमशेदपुर के श्री सूरजप्रसाद मिश्र ने सन् 1975 मे आपका जो अभिनन्दन किया था वह वास्तव मे अभूतपूर्व था। इस समारोह की अध्यक्षता प्रख्यात पत्रकार स्वर्गीय श्री गगा-प्रसाद 'कौशल' की धर्मपत्नी श्रीमती सरला देवी ने की थी। उस अवसर पर सिहभूम जिला हिन्दी लेखक सघ, भोजपुरी परिषद्, निराला परिषद्, अखिल भारतीय अन्तरजनपदीय परिषद्, वज्जिका परिषद्, और रचनाकार सघ के प्रतिनिधियो ने आपकी साहित्य-सेवाओ का विशद वर्णन किया था। श्री सूरजप्रसाद मिश्र ने इस अवसर पर आपको एक थैली भी भेट की थी। आप पिछले 3-4 वर्ष से निरन्तर अस्वस्थ चले आ रहे थे। आपकी चिकित्सार्थ 'बिहार राष्ट्र-भाषा परिषद्' ने भी अपना आर्थिक साहाय्य प्रदान किया था।

आपका निधन 27 सितम्बर सन् 1981 को हुआ था।

श्री रामलला 'लला'

श्री लला का जन्म उत्तर प्रदेश के सुप्रसिद्ध नगर मथुरा मे सन् 1906 मे हुआ था। आपके पिता श्री हनुमान जी सरदार नगर के सुप्रसिद्ध व्यक्तियो मे थे। 15 वर्ष की अवस्था मे श्री रामलला मथुरा के सुप्रसिद्ध कवि श्री भोला जी भण्डारी के सम्पर्क मे आए थे और उन्होने ही आपको पिगल शास्त्र की प्रारम्भिक शिक्षा दी थी। काव्य-शास्त्र का विधिवत् अध्ययन आपने ब्रजभाषा के सिद्ध कवि श्री नवनीत चतुर्वेदी से किया था। क्योकि आपका



पारम्परिक पारिवारिक व्यवसाय 'पण्डागिरी' था इसलिए सस्कृत साहित्य के प्राय सभी उल्लेखनीय ग्रन्थो का पारायण भी आपने अपने निजी स्वाध्याय के बल पर कर लिया था। ब्रजभाषा और ब्रज-सस्कृति के आप 'कोश' कहे जाते थे। 'अमृतध्वनि' छन्द मे तो आपको अपूर्व कौशल प्राप्त था। 'अखिल भारतीय ब्रज साहित्य सम्मेलन' का जो अधिवेशन हाथरस मे हुआ था उस अवसर पर भारत गणतन्त्र के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद ने आपके 'अमृतध्वनि' छन्द को सुनकर आपकी प्रशसा मुक्तकण्ठ से की थी।

आपकी प्राय सभी रचनाएँ रीतिकालीन परम्परा और पद्धति से जुडी हुई है, जिनमे नख-शिख, नायिका-भेद तथा ऋतु-वर्णन आदि का उत्कृष्ट परिपाक दृष्टिगत होता है। आपकी ऐसी रचनाओं मे 'द्रौपदी दुकूल', 'विक्रमादित्य

वैभव', 'मोदक महिमा', 'द्वारिकाधीश का नखशिख', 'सूर पच्चीसी', 'वृन्दावन विरुद' तथा 'अमृत ध्वनि भूषण' आदि विशेष हैं। इन प्रकाशित रचनाओं के अतिरिक्त आपकी सहस्राधिक स्फुट रचनाएँ अभी अप्रकाशित ही है। आपकी मल्ल-युद्ध-सम्बन्धी अमृतध्वनि की बानगी इस प्रकार है :

मल्लन युधिकर मल्ल गन, मल्ल भूम्मि छकि छक्क।
सुकवि 'लला' लुभ लुम्म बहु, पेचच्चलत अचक्क॥
पेचच्चलत अचक्कक्ककर चख बक्कक्कर कर।
संकक्कर उर डंकक्कर सुनि कक्कक्कतधर॥
लकक्कुलिसन लकक्कुच्चल निसकक्कुदकर।
हल्लल्लहि हियरल्लल्लरन जुमल्लन युधिकर॥

यह अमृतध्वनि श्रोताओ को बहुत प्रभावित करती थी। इसका सौन्दर्य आपके काव्य-पाठ के समय ही निखरता था।

आपका निधन सन् 1975 मे हुआ था।

श्री रामलाल बरौनिया 'दीन'

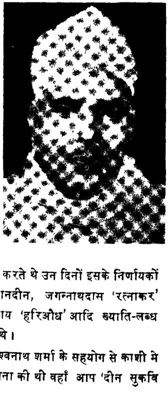
श्री बरौनिया का जन्म मध्य प्रदेश के सागर जनपद मे 19 दिसम्बर सन् 1878 को हुआ था। सागर मे उस युग के ब्रजभाषा के कवियो मे आपकी अच्छी प्रतिष्ठा थी। आपने बी० ए० तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त काव्य-लेखन मे विशेष सिद्धि प्राप्त कर ली थी और आप अपनी रचनाओं मे 'दीन' उपनाम का उपयोग करते थे। आपके द्वारा लिखी गई रचनाओं मे 'सुदामा चरित' और 'दीन विनोद' (दो भागों मे) के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपकी कविताओं मे रीतिकालीन शृंगार भावना का प्रचुर परिदर्शन मिलता है। आपके काव्य की उत्कृष्टता का अनुमान आपकी इन पंक्तियों मे सहज ही हो जाता है

खेलत फाग श्याम श्यामा को,
ग्वालिनि घेर लियो री।
मोर मुकुट श्यामा सिर धरि पुनि,
कटि बिच पीत पिछोरी॥
कुण्डल कान गले बन माला,
मुरली अधर धरो री।
ललित त्रिभंगी मूरति सजिकै,
लकुटी हाथ दियो री॥
पहिरा लहगा उढ़ा चूनरी,
श्याम सुवेश सजो री।
मोती माँग, भाल बेंदी, उर-
चन्द्र - हार राजो री॥
कटि किंकिनी, करनि कल कंकन,
पग नूपुर, मुख रोरी।
प्रिय प्रियता छवि निरखि अनूपम,
रहो 'दीन' कर जोरी॥

आपका निधन सन् 1947 मे हुआ था।

श्री रामशंकर वैद्य

श्री वैद्य जी का जन्म काशी के एक सम्भ्रान्त परिवार मे सन् 1897 मे हुआ था। आपको अपने जीवन के प्रारम्भिक दिनो मे ही साहित्य-रचना का जो चस्का लग गया था वह कालान्तर मे इस सीमा तक पहुँच गया कि आपने ब्रजभाषा तथा खडी बोली दोनो मे अत्यन्त सफल कविताएँ करके 'काशी हिन्दी विश्वविद्यालय' से निरन्तर 10 वर्ष तक 'रामरेखा प्रसाद साही' का प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया था। जिन दिनो आप इन कविता - प्रतियोगिताओ मे भाग लिया करते थे उन दिनों इसके निर्णायकों मे सर्वश्री लाला भगवानदीन, जगन्नाथदास 'रत्नाकर' तथा अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' आदि ख्याति-लब्ध साहित्यकार हुआ करते थे।



आपने जहाँ श्री विश्वनाथ शर्मा के सहयोग से काशी मे 'दीन विद्यालय' की स्थापना की थी वहाँ आप 'दीन सुकवि

मण्डल' नामक संस्था के माध्यम से अनेक साहित्यिक गोष्ठियाँ आयोजित किया करते थे। आप 'जैन नाटक मण्डली' नामक सांस्कृतिक संस्था के मन्त्री और सभापति रहने के साथ-साथ कई वर्ष तक संगीत तथा नाटक के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य करने वाली 'ललित' नामक संस्था के संस्थापक सभापति भी रहे थे। आपने इस संस्था के द्वारा जहाँ काशी में अनेक हिन्दी नाटकों का सफल मंचन कराया था वहाँ सर्व प्रथम सन् 1930 में काशी में एक 'विशाल हिन्दी कवि-सम्मेलन' का आयोजन किया था।

आप उच्चकोटि के सामाजिक कार्यकर्ता और कुशल संगठक होने के साथ-साथ अच्छे लेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थों में 'वात व्याधि' नामक ग्रन्थ में पक्षघात-जैसे घातक रोगों की चिकित्सा का विशद वर्णन प्रस्तुत किया गया है। आपने 'स्वामी-भक्ति या दुर्गादास' नामक एक नाटक की रचना भी की थी, जो अभी तक अप्रकाशित ही पड़ा है।

आपका निधन 31 जुलाई सन् 1959 को हुआ था।

भक्त रामशरणदास

भक्त जी का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ जनपद (अब गाजियाबाद)के एक छोटे-से कस्बे पिलखुवा के प्रख्यात धनाढ्य वैश्य जमींदार ला० नारायणदास बझेडेवालों के घर में सन् 1912 में हुआ था। आप अपने पिता के यद्यपि इकलौते पुत्र थे, फिर भी आपने स्पष्ट रूप से जमींदारी के किसी भी काम में रुचि लेने से इन्कार कर दिया था। सर्व प्रथम गाजियाबाद के सनातनधर्म स्कूल में अध्ययन के दौरान आप अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त विद्वान् पुरी के शंकराचार्य स्वामी भारतीकृष्ण तीर्थ के सम्पर्क में आए थे और उनसे प्रभावित होकर आपने अपना जीवन अध्यात्मवाद के प्रचार व प्रसार में लगाने का संकल्प लिया था। इसके बाद प्रसिद्ध सन्त श्री उड़िया बाबा (स्वामी अखण्डानन्दजी के गुरु) के निकट सम्पर्क में आकर उनके साथ अनेक पद-यात्राएँ कीं। आपने गृहस्थी के चक्कर में पड़ने से भी इन्कार कर दिया था, किन्तु बाद में आपके पिता लाला नारायणदास की प्रार्थना पर उड़िया बाबा ने आपको विवाह कराने का आदेश दिया। विवाह करने तथा पुत्र-पुत्रियों के बावजूद आप घर-गृहस्थ के प्रति हमेशा निर्लिप्त ही रहे। 17 वर्ष की अल्पायु से ही आपने अपना जीवन धर्म-सेवा के लिए समर्पित करने का संकल्प लिया था, जिसे आपने आखिरी साँस तक निभाया। इससे ध्येय के प्रति आपकी अनन्य अनुरक्ति और अद्वितीय कर्मनिष्ठा का उदात्त परिचय मिलता है।

भक्त जी कट्टर पुरातनपंथी सनातनधर्मी परम्परा की कड़ी थे। धर्मशास्त्रों, गाय तथा ब्राह्मण के प्रति आपकी अटूट आस्था थी। धर्मशास्त्रों के प्रति निष्ठा के कारण आप ब्राह्मणों के प्रति जो श्रद्धा का भाव रखते थे। उसका आपने जीवन-भर अविचल भाव से पालन किया। आप सनातनधर्म के अलावा अन्य सम्प्रदायों के प्रति भी उदारता की भावना रखते थे।



इसी कारण स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, भाई परमानन्द, प० चन्द्रगुप्त वेदालंकार, महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती, प० बिहारीलाल शास्त्री, श्री अमर स्वामी-जैसे प्रख्यात आर्यसमाजी सन्यासी तथा विद्वान् भी आपके निवास-स्थान पर पधारकर, आपके संग्रहालय का निरीक्षण कर आनन्द का अनुभव कर चुके थे। अनेक सिख, बौद्ध तथा जैन सन्त भी आपके यहाँ पधारकर अपने प्रवचनों द्वारा जनता तक धार्मिक सन्देश पहुँचाते रहे थे।

सनातनधर्म के क्षेत्र में भक्तजी के विचारों और कार्यों का भारी सम्मान था। प्रख्यात सन्त उड़िया बाबा, हरि बाबा, आनन्दमयी माँ, स्वामी करपात्री जी, स्वामी ब्रह्मानन्दजी आदि के आप अत्यन्त निकट रहे थे। 'धर्मसंघ' तथा 'वर्णाश्रम स्वराज्य संघ' के प्रत्येक अभियान में आपका सक्रिय योगदान रहा था। सन् 1946 में जब धर्मसंघ के

तत्वावधान मे भारत-विभाजन के विरुद्ध सत्याग्रह हुआ तो आप 'भारत अखण्ड हो' का उद्‌घोष करते हुए जेल भी गए थे। सन् 1967 मे 'गोहत्याबंदी आन्दोलन' में आपने आर्य विद्वान् श्री अमर स्वामीजी के साथ सत्याग्रह किया था।

भक्तजी 'कल्याण' के सस्थापक स्व० हनुमानप्रसाद पोद्दार के निकट सहयोगी भी रहे थे। 'कल्याण' के प्रकाशन से लेकर अब तक आपका उसे सक्रिय सहयोग मिला था। श्री पोद्दारजी आपको 'कल्याण दूत' कहा करते थे। कल्याण के प्रत्येक विशेषांक मे आपका भारी योगदान रहता था तथा समय-समय पर आपके सग्रहालय से अनेक सत-महात्माओं के दुर्लभ चित्र, लोक-परलोक, पुनर्जन्म, भूत-प्रेत-सम्बन्धी प्रचुर सामग्री उसे प्राप्त होती थी।

यद्यपि भक्तजी कट्टर सनातनधर्मी थे परन्तु धर्म के नाम पर पनपने वाले पाखण्डो के आप प्रबल विरोधी थे। अपने को ईश्वर का अवतार बताकर धार्मिक जनता का शोषण करने वाले पाखडियो के खिलाफ जितना आपने लिखा था, शायद ही किसी अन्य व्यक्ति ने लिखा होगा। आपने ऐसे कलियुगी अवतारो की पूरी सूची ही बनाई हुई थी। आप उनसे स्वय मिलकर उनके पाखण्ड की प्रत्यक्ष जानकारी लेते थे तथा बाद में उनका भण्डाफोड करते थे।

भक्तजी सामाजिक कुरीतियों के भी प्रबल विरोधी थे तथा सादगी के समर्थक थे। आप विवाहो तथा सामाजिक समारोहो मे भगडा नृत्य, शराब के सेवन तथा भौडे प्रदर्शनो को धर्म-विरुद्ध मानते थे। आपने अपने किसी भी पुत्र या पुत्री के विवाह मे शराब या नृत्य का नगा नाच नही होने दिया। शुद्ध पत्तलो तथा मिट्टी के पात्रो मे ही भोजन परोसवाकर आदर्श उपस्थित किया था। आपकी कथनी और करनी मे कभी भी अन्तर नही रहता था।

भक्तजी ने अपने छोटे से कस्बे (पिलखुवा उत्तर प्रदेश) मे अपना चित्र व साहित्य-सग्रहालय बनाया हुआ था। इस सग्रहालय मे भारत के धर्माचार्यों, सन्त-महात्माओ, विद्वानो, मनीषियो, वीर-वीरागनाओ के लगभग तीन हजार चित्र आपने श्रद्धाभाव से रखे हुए थे। चित्रो के अलावा महाराणा प्रताप, शिवाजी, गुरु गोविन्दसिह, आद्य शकराचार्य, पद्मिनी आदि सतियो के जन्म-स्थान की पवित्र मिट्टी, पवित्र नदियो का जल, अँग्रेजो द्वारा जब्त दुर्लभ साहित्य, धर्मशास्त्रों, समाचार पत्रो की कतरनों आदि का भी आपके पास दुर्लभ संग्रह था।

भक्तजी के इस संग्रहालय में चारो पीठों के शंकराचार्य, निम्बार्काचार्य, आनन्दमयी माँ, स्वामी करपात्रीजी, महा-महोपाध्याय पडित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी आदि पधारकर उसकी मुक्त कण्ठ से प्रशसा कर चुके थे। कांग्रेस के वरिष्ठ नेता तथा हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक सेठ गोविन्ददास भी पिलखुवा जाकर आपसे विचार-विनिमय किया करते थे। आनन्दमयी माँ ने पिलखुवा आने पर कहा था—"भक्त रामशरणदास सफेद वस्त्रो मे सन्त है।"

भक्तजी ने धर्म के विभिन्न पहलुओं, लोक-परलोक, पुनर्जन्म आदि विषयो पर तो लिखा ही था, साथ ही तम्बाकू, शराब, मास आदि दुर्व्यसनो के खिलाफ 'सब पापो की जड चाय-तम्बाकू'-जैसी पुस्तक भी लिखी थी। आपकी अन्य पुस्तको मे 'एक मनोरजक शास्त्रार्थ', 'गो-महिमा', 'भारत महिमा', 'ब्राह्मण महिमा', 'पुराणो का महत्त्व', तथा 'गाधीजी की विचित्र अहिंसा'-जैसी पुस्तके उल्लेखनीय है। अन्तिम पुस्तक के लिखने के कारण तो उत्तर प्रदेश की सरकार ने आपकी गिरफ्तारी के वारण्ट भी जारी कर दिए थे। बच्चो के लिए प्रेरक तथा पौराणिक कहानियाँ भी आप समय-समय पर लिखते रहे थे। 'पुनर्जन्म', 'लोक-परलोक' तथा 'तन्त्र-मत्र' आपके प्रिय विषय रहे थे। जब कभी आपको यह पता चलता कि अमुक स्थान पर पुनर्जन्म की कोई घटना घटी है तो आप स्वय वहाँ पहुँचकर उसकी वास्तविकता की जाँच किया करते थे। भूत-प्रेतों की घटनाओ का पता लगाकर भी आप 'दूध का दूध और पानी का पानी' करने की कोशिश करते थे।

गाय के महत्त्व के प्रति भी आपने भारी खोज की थी। गोमूत्र, गोबर आदि मे क्या तत्त्व है, गाय पूज्य क्यो है आदि विषयो के तो आप महान् ज्ञाता थे। गोदुग्ध तथा तुलसी को आप जीवनी-शक्ति और अमृत की सज्ञा दिया करते थे। व्यक्तिगत आचार-विचार व खान-पान मे आप अत्यन्त कट्टर थे। जीवन मे कभी भी आपने घर से बाहर का भोजन नही किया था। लखपति परिवार मे जन्म लेकर भी आपने सदा लकडी की खडाऊँ ही पहनी थी, बिना प्रेस किये मोटे वस्त्र धारण किये थे तथा अपने शरीर व वस्त्रो को कभी साबुन नही लगने दिया था।

भारतीय संस्कृति का यह आलोक-स्तभ कड़े आचार-

विचार व नियमों के कारण अनेक शारीरिक व्याधियों का शिकार होता गया और अन्त मे 67 वर्ष की आयु में 16 अक्तूबर सन् 1981 को भगवन्नाम का जाप करते हुए गोलोकधाम प्रयाण कर गया। निधन से एक महीने पहले ही आपने अपने युवा पौत्र चि० नरेन्द्र गोयल (सुपुत्र श्री शिवकुमार गोयल) के हाथों 'धर्मपुत्र' पाक्षिक का प्रकाशन शुरू कराया था। निधन से तीन दिन पूर्व आपने अपने हाथों से 'श्रेष्ठ मृत्यु कैसी होती है' शीर्षक वाक्य अंकित किए थे जिसमे लिखा था—"ब्रह्म-चिन्तन करते हुए मरना अथवा युद्ध-क्षेत्र मे मातृभूमि की रक्षा के लिए जूझते हुए प्राण देने से बढकर श्रेष्ठ मृत्यु नही हो सकती।"

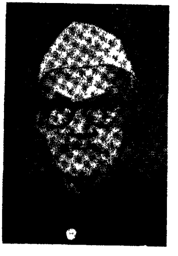
यह प्रसन्नता की बात है कि भक्तजी के ज्येष्ठ पुत्र श्री शिवकुमार गोयल ने भी पत्रकारिता तथा साहित्यिक क्षेत्र मे आपका अनुकरण करने का सफल प्रयास किया है।

आपकी विशेष ख्याति इण्डियन प्रेस प्रयाग द्वारा प्रकाशित 'भारती कवि विमर्श' नामक समीक्षात्मक कृति के कारण हुई थी। आपने हिन्दी और सस्कृत के कवियों की तुलनात्मक समीक्षा का सूत्रपात किया था। जब महापण्डित राहुल सांकृत्यायन की प्रख्यात कृति 'दर्शन दिग्दर्शन' का प्रकाशन हुआ था तब आपने उनकी मिथ्या धारणाओं के निराकरण के लिए इसी शीर्षक से अनेक सुपुष्ट प्रमाणो से युक्त एक विस्तृत लेख लिखा था,जो दिसम्बर सन् 1944 की 'माधुरी' मे प्रकाशित हुआ था। उर्दू के सुप्रसिद्ध कवि दयाशकर 'नसीम' की विख्यात रचना 'मसनवी गुलजोर नसीम' पर लिखी हुई आपकी विस्तृत समीक्षा 'समालोचक' मे प्रकाशित हुई थी। आपके द्वारा लिखे गए अनेक लेख और हिन्दी की कविताएँ अप्रकाशित ही पडी है।

आपका निधन सन् 1977 मे हुआ था।

श्री रामसेवक पाण्डेय

श्री पाण्डेय का जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के बड़ागाँव (मिश्रित) नामक स्थान मे सन् 1897 मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा घर पर ही अपने पारिवारिक जनो की देख-रेख में हुई थी और आप सस्कृत के 'साहित्याचार्य' होने के साथ-साथ 'आयुर्वेदाचार्य' भी थे। आप द्विवेदी युग के लेखको मे अपना अन्यतम स्थान रखते थे। आपकी रचनाएँ 'कान्यकुब्ज', 'ब्राह्मण सर्वस्व', 'सरस्वती', 'समालोचक', 'माधुरी' और 'सुधानिधि' आदि अनेक पत्रो में ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी।



श्री रामाधीनलाल खरे

श्री खरे का जन्म मध्य प्रदेश के रीवाँ राज्य के मैहर नामक स्थान मे सन् 1884 मे हुआ था। आपके पिता श्री मुन्शी रामचरणलाल श्रीवास्तव कायस्थ थे। आप सस्कृत फारसी, उर्दू तथा हिन्दी के पारगत विद्वान् थे और ओरछा राज्य के दरबारी कवि थे। शैशव-काल से आपकी रुचि काव्य-रचना की ओर थी और आपने केवल 17 वर्ष की आयु मे ही 'रामचरितमानस' के 'सुन्दर काण्ड' का घनाक्षरी, दोहा तथा सवैया आदि छन्दों मे अनुवाद किया था। आपकी कवित्व-प्रतिभा से प्रभावित होकर ओरछेश ने आपको 'अन्योक्ति आचार्य' की उपाधि प्रदान की थी। इसी प्रकार आप रीवाँ राज्य की ओर से 'साहित्य मार्तण्ड', विद्या विभाग कांकरौली से 'कवि भूषण' तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन उदयपुर की ओर से 'कविराज' की मानद उपाधियो से विभूषित किए गए थे।

आपने लगभग 40 ग्रन्थो की रचना की थी। जिनमे से 'श्रीकृष्ण जन्मोत्सव', 'छत्रसाल प्रशंसा', 'पद्मिनी चमत्कार', 'बीकानेर वीरबाला', 'तोते की कहानी', 'क्षमा पचीसी', 'जीव हिसा', 'सती सावित्री', 'विनय माला', 'ऋतु विहार',

'अन्योक्ति माला', 'आर्य धर्म प्रभाकर', 'राम बिलास', 'हनुमद् विजय', 'धर्मवीर हरदौल', 'वीरसिंह देव चरित', 'प्रेम पचाशिका', 'सुतीक्ष्ण', 'बालि सुग्रीव', कर्णार्जुन', 'धर्मराज', 'छत्रसाल चरितावली', 'मार्तण्ड शतक', 'जड़ भरत' तथा 'गाधी गौरव' आदि प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त आपने संस्कृत के 'रघुवश' 'शिशुपाल वध' तथा 'किराता-र्जुनीय' आदि ग्रन्थो का हिन्दी अनुवाद भी किया था। आपकी प्राय. सभी रचनाएँ ब्रजभाषा मे है।

आपकी रचनाओ मे प्राचीन तथा अर्वाचीन भाव-धाराओ का अद्भुत सम्मिश्रण देखने को मिलता है। यथा प्रसग आपने अपनी रचनाओ मे उर्दू तथा फारसी शब्दों का प्रयोग भी किया है। आपकी ब्रजभाषा की एक रचना की बानगी देखिये

धारन मे पच्छके सुविमल विचारन मे,
अगना अगारन के गोल जुर धावो री।
पिचक अबीर रग नीर ते भिजाय अग,
झोरी औ गुलाब गहि लाल को छुडावो री॥
'रामधीन' छान छनि लकुट मुकुट वशी,
घूमि-घूमि घाघरे की छोहन छिपावो री।
निपट अहीर बिन पीर जान येरी बीर,
चोर हरिबे को आज बदला चुकावो री॥

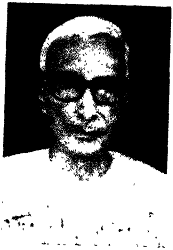
यद्यपि आप मुख्य रूप से राम-भक्ति की रचनाएँ ही किया करते थे, किन्तु राधा-कृष्ण के प्रचलित आख्यानो का वर्णन भी आपने अपनी रचनाओ मे किया था। आपने जहाँ अपनी रचनाओं मे महात्मा गाधी के गौरव का गान किया था वहाँ जवाहरलाल नेहरू के जौहरो से भी पाठकों को परिचित कराया था।

आपका देहावसान 27 अगस्त सन् 1962 को 78 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री रामानन्द शर्मा

श्री शर्मा का जन्म बिहार प्रदेश के दरभगा जिले के पुनास नामक स्थान मे 17 सितम्बर सन् 1901 को हुआ था। आप सस्कृत, बगला, उडिया, तेलुगु, तमिल तथा अग्रेजी आदि भाषाओ के मर्मज्ञ होने के साथ-साथ हिन्दी के सुलेखक भी थे। आपने उत्तम अध्यापक, सफल सम्पादक, उत्कृष्ट लेखक और अनुपम व्याख्याता के रूप मे अनेक वर्ष तक 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास' से सम्बद्ध रहकर हिन्दी-प्रचार के कार्य मे जो महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया था उसीका सुपरिणाम यह है कि आज दक्षिण मे हिन्दी के अनेक सुलेखक और प्रचारक दिखाई देते है।

आप सर्व प्रथम महात्मा गाधी के आवाहन तथा बिहार-रत्न डॉ० राजेन्द्रप्रसाद की प्रेरणा पर जब केवल 20 वर्ष की अवस्था मे हिन्दी-प्रचार की पुनीत भावना से नवम्बर सन् 1920 मे मद्रास पहुँचे थे तब दरभगा से मद्रास का किराया केवल 18 रुपए ही था। मद्रास पहुँचकर आपने हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार के कार्य मे विविध रूपो मे अपनी भूमिका निबाही और एक दिन वह भी आया जब शर्माजी 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास' का मेरु-दण्ड समझे जाने लगे। आपने सभा के लिए जहाँ हिन्दी की अनेक पाठ्य-पुस्तके तैयार करने मे अपना अद्वितीय सहयोग प्रदान किया वहाँ उसकी ओर से प्रकाशित 'प्राचीन पद्य सग्रह', 'आधुनिक पद्य सग्रह', 'चयनिका' तथा 'मधु मजरी' आदि कई पाठ्य-पुस्तको की विशद भूमिकाएँ भी लिखी थी।



एक सफल अध्यापक होने के साथ-साथ आप उच्चकोटि के लेखक भी थे। आपकी ऐसी प्रतिभा का परिचय आपकी 'मानस की महिलाएँ', 'पुनर्मिलन', 'तोरण के पर्ण', 'कीर्ति-राका कौशल्या', 'पीया चाहे प्रेम रस', 'वन्दनीया', 'कैकेयी की कुटिलता', 'महाकाव्य मन्थन', 'मन्थन', 'गौरी शकर', 'कन्या कुमारी के पथ पर', 'उड़ते घन पटल', 'सपनों की सगिनी', 'जीत मे हार', 'खडहर की आवाज' तथा 'आँसू—

एक अध्ययन' आदि अनेक पुस्तकों से मिल जाता है। आपने जहाँ मद्रास मे सन् 1954 मे 'साहित्यानुशीलन समिति' की स्थापना द्वारा अनेक युवकों को साहित्य के प्रति उन्मुख किया था वहाँ आपने सन् 1950-55 तक मद्रास सरकार के प्रकाशन विभाग की ओर से प्रकाशित होने वाले 'दक्खिनी हिन्द' नामक मासिक पत्र का सम्पादन भी अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। 'रामचरित मानस' के मर्मज्ञ विवेचक और विद्वान् समीक्षक के रूप मे आपका हिन्दी साहित्य मे अपना सर्वथा विशिष्ट स्थान था।

दक्षिण भारत के हिन्दी-प्रचार-आन्दोलन के सम्बन्ध मे लिखे गए आपके सस्मरण भी अपनी प्रेरणाप्रद शैली के लिए याद किए जाते हैं। आप अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे दक्षिण से अपनी जन्म-भूमि बिहार चले आए थे और वही पर 'कन्याकुमारी प्रकाशन' की स्थापना करके अपना प्रकाशन-कार्य दुमका (सथाल परगना) मे प्रारम्भ किया था।

आपका देहावसान 10 अक्तूबर सन् 1981 को प्रात: अपनी जन्म-भूमि पुनास (बिहार) मे ही हुआ था।

श्री रामेश्वर झा द्विजेन्द्र

श्री द्विजेन्द्र का जन्म बिहार प्रदेश के भागलपुर जनपद मे 24 नवम्बर, सन् 1904 को हुआ था। आप उत्कृष्ट कवि और कथाकार के रूप मे अत्यन्त प्रसिद्ध थे। आप जैसा कण्ठ, वाणी और रूप बहुत कम लोगो को सुलभ होता है। आप जब कविता-पाठ किया करते थे तो जनता उसी प्रकार मन्त्र-मुग्ध हो जाती थी, जिस प्रकार सपेरे की बीन को सुनकर विषधर नाग मन्त्र-मुग्ध हो जाते है।

आपकी कविताओ का सकलन 'ये शूल फूल' नाम से प्रकाशित हुआ था और कहानियाँ 'किरात कन्या' नामक पुस्तक मे सकलित हैं। इसके अतिरिक्त आपके द्वारा विरचित 'रजनी गन्धा' काव्य-सकलन भी अपनी विशिष्टता के लिए उल्लेखनीय है। आपने सन् 1939 मे लिखना प्रारम्भ किया था और अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक लेखनी को विश्राम नही दिया। आपकी रचनाओ मे जहाँ छायावादयुगीन भावनाप्रवणता के दर्शन होते है, वहाँ प्रगति युग की प्रतिभा भी अँगड़ाई लेती दृष्टिगत होती है।

आपका निधन 7 अप्रैल सन् 1968 को हुआ था।

श्री रामेश्वरप्रसाद शुक्ल विशारद

श्री शुक्ल का जन्म सन् 1914 मे मध्यप्रदेश के कटनी नामक नगर के एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण-परिवार मे हुआ था। आप शैशवावस्था से ही अत्यन्त प्रतिभाशाली थे और बहुत थोड़ी आयु मे ही आपने हिन्दी साहित्य का बहुमुखी ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आप हिन्दी की प्राय सभी पत्र-पत्रिकाओं का स्वाध्याय नियमपूर्वक किया करते थे और हिन्दी मे अच्छी कविताएँ भी लिखने लगे थे।

आपके द्वारा मुक्त वृत्त म लिखी गई 'कविते' शीर्षक जो एक कविता आपके निधन के उपरान्त जुलाई सन् 1932 की 'सरस्वती' मे प्रकाशित हुई थी उसे देखकर आपकी प्रतिभा का परिचय मिलता है। उसकी अन्तिम कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है·

तुम्हारे पद-पद मे है भरी—
वियोगी बालाओं की आह!
हृदय-कम्पन,
वैभव का चित्र
भावनाओं का हास-विलास,
कभी अद्भुत उल्लास,
वेदना प्रेमी की साकार,
कभी आशाओ का उन्माद,
लुटे हृदयों की करुण पुकार,
कभी रहता शिशु-क्रीडा-चित्र,
निराशा का घनघोर-निनाद
स्वर्ग का अनुपम, सुख है कभी
कभी भीषण वाडव का दाह!

आपने छोटी-सी अवस्था मे अपनी जिस काव्य-प्रतिभा का परिचय दिया था, वह आश्चर्य-चकित करने वाला है।

यह अत्यन्त दुर्भाग्य की बात है कि अपने विवाह के केवल 9 दिन बाद ही आपका केवल 18 वर्ष की आयु मे ही एक जून सन् 1932 को असामयिक देहान्त हो गया।

श्री रिषभदास राँका

श्री राँका जी का जन्म 3 सितम्बर सन् 1903 को महाराष्ट्र के खानदेश क्षेत्र के फत्तेपुर नामक ग्राम में हुआ था। आपके पूर्वज राजस्थान के जोधपुर राज्य के निम्बाज तथा जैतारण नामक स्थानों के निवासी थे। आपका कार्य-क्षेत्र फत्तेपुर, जामनेर, जलगाँव, वर्धा, पूना और बम्बई रहा था। अपने पैतृक व्यवसाय के अतिरिक्त आपने 'बच्छराज खेती लिमिटेड' नामक संस्था मे भागीदार के रूप में कृषिगोपालन का भी कार्य किया था। आपके परिवार में कपडे का व्यापार हुआ करता था। कुछ दिन बाद आपने बीमा-व्यवसाय मे भी उल्लेखनीय सेवा की थी।



गाधी जी के असहयोग आन्दोलन के दिनो मे आपने घर-बार को छोडकर नमक-सत्याग्रह मे सक्रिय रूप से भाग लिया था और सन् 1931 मे जेल-यात्रा भी की थी। इसके उपरान्त सन् 1932 तथा सन् 1942 के आन्दोलनो मे भी आपने प्रमुख भूमिका निबाही थी और इस प्रसग मे धूलिया और विसापुर की जेलो मे रहे थे। भारत छोडो आन्दोलन के सिलसिले मे आप 13 मास तक नागपुर जेल जेल मे नजरबन्द भी रहे थे। सन् 1923 से आपने अपने जीवन को पूर्ण रूप से खादी-प्रचार, ग्राम-सेवा, हरिजनोद्धार, तथा गो-सेवा आदि की अनेक रचनात्मक प्रवृत्तियो मे लगा लिया था।

सन् 1949 मे आप 'भारत जैन महामण्डल' के मद्रास-अधिवेशन के अध्यक्ष निर्वाचित हुए थे। उससे पूर्व आप मण्डल के मुखपत्र 'जैन जगत्' का सम्पादन करते थे। सन् 1968 से सन् 1971 तक आपने 'अणुव्रत समिति' का उपाध्यक्ष पद संभालने के साथ-साथ उसके पाक्षिक पत्र 'अणुव्रत' का सम्पादन भी अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। प्रख्यात समाज-सुधारक श्री जमनालाल बजाज के अत्यन्त निकटवर्ती होने के कारण आपने उनके निर्देशन मे संचालित अनेक लोकोपयोगी संस्थाओ मे अत्यन्त तत्परतापूर्वक भाग लिया था। सन् 1958 मे आप बम्बई चले गए थे और बाद मे स्थायी रूप से पूना मे रहने लगे थे। भगवान् महावीर के 2500वें निर्वाण महोत्सव के अवसर पर आप बम्बई की समिति के मन्त्री भी रहे थे।

आपका निधन 10 दिसम्बर सन् 1977 को पूना मे हुआ था।

लाल रुद्रनाथसिंह 'पन्नगेश'

श्री 'पन्नगेश' जी का जन्म उत्तर प्रदेश के बस्ती जनपद के धेनुगवाँ (सिकन्दरपुर) नामक ग्राम मे सन् 1890 मे हुआ था। आपके परिवार का अयोध्या-नरेश से घनिष्ठ सम्बन्ध था। आपकी शिक्षा-दीक्षा घर पर ही हुई थी। इण्ट्रेन्स की परीक्षा उत्तीर्ण करने के साथ-साथ आपने हिन्दी, सस्कृत फारसी और उर्दू आदि भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। अयोध्या की महारानी के निजी सचिव बाबू जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के निकट सम्पर्क से आपकी प्रवृत्ति काव्य-रचना की ओर हुई और आपने ब्रजभाषा मे फुटकर रचनाओ के अतिरिक्त अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का भी निर्माण किया। जहाँ आप मुक्तक काव्य-रचना मे अत्यन्त दक्ष थे वहाँ प्रबन्ध काव्यो की निर्मिति में भी आपकी लेखनी ने अभूतपूर्व चमत्कार दिखाया



था। अयोध्या के राज-दरबार में उन दिनों अच्छे-अच्छे कवियो का जमाव रहा करता था। जिसके कारण आपने काव्य-शास्त्र की अनेक गहनतम गुत्थियों को सहज ही सुलझा-कर विभिन्न विधाओं मे काव्य-रचना करने का अच्छा अभ्यास कर लिया था।

बीसवी शताब्दी के तृतीय दशक के प्रारम्भ मे आप बुन्देलखण्ड की पन्ना स्टेट मे तहसीलदार के पद पर नियुक्त हुए थे। उक्त पद पर रहते हुए आपने जहाँ बुन्देलखण्ड के अनेक प्राकृतिक दृश्यों और रमणीय फलों से प्रचुर प्रेरणा प्राप्त की थी वहाँ अनेक तीर्थों का परिभ्रमण भी किया था। प्रकृति की रमणीयताओ से भरपूर टीकमगढ, पन्ना और विजावर आदि स्थानो के आकर्षक दृश्यों ने आपकी कवित्व-प्रतिभा को और भी प्रस्फुटित किया था। यहाँ से आपने सन् 1930 मे अवकाश ग्रहण कर लिया था। इसके बाद आप अयोध्या राज्य मे मैनेजर हो गए थे, जहाँ पर आप सन् 1956 तक कार्य-रत रहे थे। इसके उपरान्त आप फैजाबाद मे रहने लगे थे। रत्नाकर जी के सम्पर्क से आपने जहाँ अपनी कवित्व-प्रतिभा को निखारा था वहाँ गद्य-लेखन की दिशा मे भी आपने अपनी प्रतिभा का प्रचुर परिचय दिया था। आपने जहाँ बगला के प्रख्यात उपन्यासकार चण्डी-चरण सेन के उपन्यास 'मान कुमारी' का सफल अनुवाद किया था वहाँ अपने जातीय पत्र 'शाकद्वीपीय ब्राह्मण बन्धु' नामक पत्र मे भी अनेक लेख लिखकर अपनी अपूर्व गद्य-लेखन-क्षमता का परिचय दिया था। आपकी 'पुष्यमित्र विजय', 'भूत', 'सम्राट् अशोक', 'नारान्तक चरित्र', 'कैकेयी चरित्र', 'हिन्दी हितोपदेश', 'निन्नी', 'रमरजिया', 'वीर हमीर', 'उषा सुन्दरी', 'धोखा', 'अमर बेलि', 'मधुर मिलन मजरी' तथा 'कल्पना कल्पद्रुम' आदि रचनाएँ उल्लेखनीय है। आपके द्वारा लिखित 'सौमित्र विजय' नामक प्रबन्ध-काव्य अपनी विशिष्ट रचना-पद्धति के कारण पुरस्कृत भी हुआ था। आपका 'बृहद्रथ' नामक ब्रजभाषा मे लिखा प्रबन्ध-काव्य आपको रत्नाकर जी की परम्परा के कवियो मे प्रतिष्ठित करने का गौरव प्रदान करता है। इसमे लगभग 600 रोला छन्दो मे तथा 28 सर्गों मे कवि ने अपनी प्रतिभा का अभूतपूर्व परिचय दिया है। दोहा, रोला, गीतिका, घनाक्षरी, छप्पय, कुण्डलिया, उल्लाला, बरवै, कृपाण, सोरठा, चौपाई और सवैया के लगभग 706 छन्दो मे आपने 'हितोपदेश' की रचना करके एक चमत्कार का ही कार्य किया था। जिस प्रकार रत्नाकर जी ने '**उद्धव शतक**' की रचना करके अपनी अनूठी प्रतिभा का परिचय दिया था उसी प्रकार आपने भी 'मधुर मिलन मजरी' नामक खण्डकाव्य के माध्यम से राधा और कृष्ण के स्वरूप को एक सर्वथा नए रूप मे प्रस्तुत किया है। आपके गद्य का वैभव आपके 'पुष्य मित्र विजय', 'सम्राट् अशोक', 'निन्नी' और 'भूत' नामक उपन्यासो में देखा जा सकता है। आपकी 'हिन्दी हितोपदेश' नामक रचना उत्तर प्रदेश शासन की वित्तीय सहायता से प्रकाशित हुई थी। मृत्यु से पूर्व आपने 'वन विहार' नामक पुस्तक की रचना की थी।

आपका निधन 22 मार्च सन् 1976 को गोंडा जनपद के खड़ौवा नामक स्थान मे हुआ था।

श्रीमती रूपकुमारी चन्देल

श्रीमती रूपकुमारी का जन्म उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड अचल के हमीरपुर जनपद के जलाला नामक ग्राम मे सन् 1881 मे हुआ था। आपके पिता ठा० जीतसिह और कानपुर जनपद के बन्नापुर कञ्जरी नामक ग्राम के निवासी थे। आपका विवाह झाँसी के भूपसिह जू देव 'भूप' से हुआ था। आप अपने पति की चतुर्थ पत्नी थी। आप प्रायः भक्ति-रस-प्रधान रचनाएँ ही किया करती थी। आपकी ऐसी रचनाएँ 'बुन्देलखण्ड वागीश' नामक पत्र मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थी। एक रचना की बानगी इस प्रकार है :

नित बम्बन कौ रहयौ छाई अतक,
औ दुष्टन कौ भय है पसरौ।
अति व्याकुल है दुनिया सगरी,
नहि कोऊ सहायक है हमरौ।
अब रूपकुमारी बतावै कहा,
जुग सौ दिन बीतत है सगरौ।
बिन मोहन कौन सहाय करै,
हरि आवहु बेगि कलेस हरौ।

आप जिस निष्ठा और लगन से काव्य-रचना किया

करती थी उसी तन्मयता से काव्य-पाठ भी करती थी। आपकी मधुर स्वर-लहरी का प्रभाव श्रोताओं पर बहुत अच्छा होता था। आपकी भक्ति और शृगार रस के ओत-प्रोत रचनाओं का एक सकलन 'काव्य मजरी' नाम से प्रकाशित हुआ था।

आपका निधन सन् 1952 मे झाँसी मे हुआ था।

पिलानी में 'सहकार भारती' नामक संस्था की स्थापना भी की थी। आजकल इस संस्था का कार्य आपके पौत्र श्री निखिल शेखर (सुपुत्र श्री अखिल विनय) देख रहे है। आपके छ पुत्रों मे आचार्य नित्यानन्द सारस्वत, अखिल विनय और डॉ० ओमानन्द रू० सारस्वत हिन्दी के सुलेखक हैं।

आपका निधन 16 जून सन् 1950 को हुआ था।

श्री रूपराम शास्त्री सारस्वत

आपका जन्म हरियाणा प्रदेश के हिसार जनपद की हाँसी तहसील के गगन खेड़ी नामक एक छोटे-से ग्राम मे 13 अगस्त सन् 1864 को हुआ था। आप विचारो से आर्यसमाजी होते हुए उसके सुधारवादी आन्दोलन से बहुत प्रभावित थे। आपका कार्य-क्षेत्र प्रमुखत राजस्थान का शेखावाटी नामक स्थान था। आपने महात्मा गाधी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन मे सहयोग देने के निमित्त विदेशी वस्त्रो के



बहिष्कार और स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग का जो व्रत लिया था, उसे आजीवन निबाहते रहे। आपकी सहधर्मिणी श्रीमती रुक्मिणी देवी ने भी आजीवन महिलाओ को हिन्दी सिखाने का अभिनन्दनीय कार्य किया था।

आपकी विद्वत्ता का सबमे उत्कृष्ट प्रमाण यही है कि हिन्दी के प्रख्यात समीक्षक श्री कन्हैयालाल सहल ने सस्कृत की एम० ए० परीक्षा देने के दिनो मे आपसे ही सस्कृत का अध्ययन किया था। आप उन दिनो पिलानी के सस्कृत विद्यालय के प्राचार्य थे। आपको 'श्रीमद्भगवद्गीता' के अठारहो अध्याय पूर्णत कण्ठाग्र थे। आपने जनता मे स्वध्याय की प्रवृत्ति जागृत करने की दृष्टि से सन् 1949 मे

डॉ० लक्ष्मणसरूप

डॉ० सरूप का जन्म 15 जनवरी सन् 1894 को उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जनपद के कैराना नामक कस्बे के एक वैश्य-परिवार मे हुआ था। आपकी सारी शिक्षा-दीक्षा पजाब मे हुई थी। मैट्रिक तक वहाँ के फीरोजपुर नामक नगर मे पढने के उपरान्त आप लाहौर चले गए और वहाँ के डी० ए० वी० कालेज मे प्रवेश लेकर सन् 1913 में आपने पजाब विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा सफलतापूर्वक उत्तीर्ण की। बाद मे 'ओरियण्टल कालेज' से आपने सन् 1915 मे एम० ए० किया और अपना शोध-कार्य करने की दृष्टि से लन्दन चले गए। वहाँ पर सन् 1916 से सन् 1920 तक 'आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय' मे रहकर आपने 'डी० फिल०' की उपाधि प्राप्त की। इस शोध-कार्य के लिए आपको भारत सरकार ने 'स्टेट स्कालरशिप' प्रदान किया था। आपने यास्क के 'निरुक्त' पर अनुसन्धान करके अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित की थी। आपने अपना यह शोध-निबन्ध सस्कृत-वाड्मय के प्रख्यात विदेशी विद्वान् श्री ए० ए० मैक्डोनल की देख-रेख मे तैयार किया था। लन्दन जाने से पूर्व आपने कुछ दिन तक लाहौर के डी० ए० वी० कालेज मे अध्यापन का कार्य भी किया था।

लन्दन से विधिवत् 'डाक्टरेट' की उपाधि प्राप्त करने के अनन्तर जब आप भारत पधारे तो सन् 1920 मे ही आपको 'पजाब विश्वविद्यालय' ने सस्कृत का प्रोफेसर नियुक्त कर लिया और फिर सन् 1942 मे आप इसी विश्वविद्यालय के अन्तर्गत सचालित 'ओरियण्टल कालेज के प्रधानाचार्य' नियुक्त हो गए। इन दोनो पदों पर रहते हुए आपने विश्व-विद्यालय के अधीन अनेक उपयोगी योजनाएँ चलाई और

संस्कृत तथा हिन्दी के उत्कर्ष तथा उन्नयन के लिए अनेक छात्रों को प्रोत्साहन प्रदान किया। आपके कार्य-काल मे पंजाब विश्वविद्यालय के अन्तर्गत संचालित सस्कृत तथा हिन्दी की प्राज्ञ, विशारद, शास्त्री, रत्न, भूषण तथा प्रभाकर परीक्षाओं का स्तर बहुत उन्नत हुआ था। आप जहाँ 'आल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेंस' के कोषाध्यक्ष तथा कार्यकारिणी के सदस्य रहे थे वहाँ 'भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट' के भी सम्मानित सदस्य थे।

आपने जहाँ अंग्रेजी भाषा के माध्यम से सस्कृत एव हिन्दी-वाङ्मय की उन्नति के लिए अनेक शोध लेख लिखे थे वहाँ आप हिन्दी तथा सस्कृत के भी उत्कृष्ट लेखक थे। आपने फ्रेंच भाषा के सुप्रसिद्ध लेखक मौलियर के कई नाटको का हिन्दी मे अनुवाद प्रस्तुत किया था। आपकी ऐसी कृतियों म 'बनिया चला नवाब की चाल' तथा 'वहमी रोगी' प्रमुख है। इनके अतिरिक्त आपके 'चन्द्रगुप्त मौर्य' और 'नल दमयन्ती' नामक दो मौलिक नाटक अनेक वर्ष तक पजाब विश्वविद्यालय की 'हिन्दी प्रभाकर' परीक्षा के पाठ्य-क्रम मे निर्धारित रहे थे। यास्क के 'निरुक्त' के सम्बन्ध मे भी आपके अनेक शोधपूर्ण निबन्ध हिन्दी की प्रमुख पत्रिकाओ मे समय-समय पर प्रकाशित होते रहते थे। आपने लाहौर मे 'फ्रेंच भाषा और साहित्य' के उन्नयन के लिए भी एक सस्था की स्थापना की हुई थी।



आप जहाँ उत्कृष्ट कोटि के अनुसधाता और लेखक थे वहाँ हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार की दिशा मे भी आपकी सेवाएँ अत्यन्त उल्लेखनीय रही थी। आपके अथक प्रयत्नों से ही 'पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' मे नवीन शक्ति का सचार हुआ था और आपने इस सम्मेलन के 'लायलपुर अधिवेशन' की अध्यक्षता भी की थी। आपने अपने कार्य-काल मे जहाँ शिक्षा के क्षेत्र मे प्रचुर क्रान्ति की थी वहाँ हिन्दी के क्षेत्र मे भी अनेक लोगों को प्रोत्साहित किया था।

आपका निधन 26 अक्तूबर सन् 1946 को लाहौर मे हुआ था।

श्री लक्ष्मीकान्त भट्ट

श्री भट्ट का जन्म 18 जुलाई सन् 1882 को प्रयाग के अहियापुर (वर्तमान मे मालवीयनगर) मोहल्ले मे हुआ था। आप हिन्दी की पुरानी पीढ़ी के साहित्यकार श्री बालकृष्ण भट्ट के तृतीय पुत्र थे।

आप अपने बाल्य-काल से ही बडे क्रान्तिकारी विचारो के थे और समाज-सुधार के कार्यों मे बढ-चढकर भाग लिया करते थे। आप सामाजिक रूढियो के इतने विरोधी थे कि अपनी एक कन्या का विवाह अपने वर्ग से बाहर के दूसरे ब्राह्मण-पुत्र से, जो देहरादून का निवासी था, कर दिया था। इस घटना से मालवीय समाज के पुराने ढर्रे के लोगो मे बडी हलचल मची थी। यद्यपि लक्ष्मीकान्त जी की एक पुत्री का विवाह महामना मदनमोहन मालवीय के सुपुत्र श्री गोविन्द मालवीय के साथ हुआ था, फिर भी महामना ने उन्ही लोगो का साथ दिया, जो भट्टजी का सामाजिक बहिष्कार करने मे अग्रणी थे।



साहित्यिक क्षेत्र मे भी लक्ष्मीकान्त जी सर्वथा अनूठे और बेजोड़ थे। आपकी भाषा-शैली अपने पिता श्री बालकृष्ण भट्ट की भाँति ही अत्यन्त सजीव होती थी। उसमे

प्रवाह और समन्वय का अद्भुत निखार दृष्टिगत होता है। आपकी ऐसी रचनाएँ 'हिन्दी प्रदीप', 'विशाल भारत', 'सरस्वती','माधुरी','मर्यादा' और 'विश्व-मित्र' आदि अनेक पत्रों एवं पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थी। प्रमुखत: व्यंग्य-लेखन मे ही आपको अभूतपूर्व सफलता मिली थी।

जिन दिनों आप छात्र थे तब आपने प्रयाग मे 'रामलीला नाटक मण्डली' और 'नागरी वर्द्धिनी सभा'-जैसी संस्थाओं के माध्यम से नाटको के अभिनय और हिन्दी-लेखन का जो अभ्यास प्रारम्भ किया था, कालान्तर मे वही पल्लवित और पुष्पित होकर आपके भावी जीवन की सफलता का मुख्य आधार बना। आपकी अभिनय-कला का उत्कृष्टतम प्रमाण 'महाभारत' तथा 'महाराणा प्रताप' नामक नाटक है, जिनमे आपने क्रमश: शकुनि और गुलाबसिंह का अभिनय किया था। मार्च सन् 1928 के 'विशाल भारत' मे प्रकाशित आपके 'हिन्दी नाट्य-जगत्' नामक लेख से आपकी नाट्य-प्रतिभा का प्रभूत परिचय मिलता है।

आपको पशु-पक्षियो से बहुत प्रेम था और आपने अपने घर मे अनेक तोते तथा मैना पाल रखे थे। अपनी मैना को आपने 'लाला लाजपतराय की जय', 'स्वतन्त्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है','तिलक की जय' और 'वन्देमातरम्' आदि प्रेरक नारे अच्छी तरह सिखा रखे थे। एक बार जब लाला लाजपतराय आपके पिता श्री बालकृष्ण भट्ट से मिलने आपके घर पर पधारे थे तब उनको यह सब देख-सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ था। उन्होंने गद्गद् कण्ठ से उस समय यह कहा था—"पण्डित जी, जिस घर मे पशु-पक्षियो मे भी राष्ट्रीयता के भाव कूट-कूटकर भरे जाते है उस घर के बच्चे कैसे होंगे?"

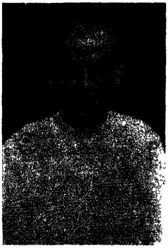
अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे श्री लक्ष्मीकान्त भट्ट कलकत्ता मे रहने लगे थे और वहाँ पर 'विशाल भारत' के सम्पादक श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के सम्पर्क मे आपकी साहित्यिक रुचि का विपुल विकास हुआ था। उन्हीकी प्रेरणा से आपने हिन्दी मे कई लेख भी लिखे थे। आपके द्वारा लिखित 'बालकृष्ण भट्ट की जीवनी' (1973) उल्लेखनीय है। इसका प्रकाशन आपकी मृत्यु के उपरान्त हुआ था।

आपका निधन बनारस मे अपने भतीजे (श्री महादेव भट्ट के सुपुत्र) डॉ० दिवस्पति भट्ट के पास 14 नवम्बर सन् 1940 को हुआ था।

श्री लक्ष्मीदत्त जोशी

श्री जोशी का जन्म उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा नगर मे सन् 1880 मे हुआ था। आपने वहाँ प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करके बरेली कालेज से इण्टरमीजिएट तथा प्रयाग के म्योर सेण्ट्रल कालेज से बी० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी।

विद्याध्ययन के उपरान्त सन् 1905 मे आपकी नियुक्ति उत्तर प्रदेश शासन मे 'डिप्टी कलक्टर' के पद पर हो गई और आपने बिजनौर, मुरादाबाद, आजमगढ़, उरई, इटावा, झाँसी तथा बलिया आदि अनेक स्थानों पर सफलतापूर्वक कार्य किया। आप अपनी सेवा-निवृत्ति के समय (सन् 1935 मे) पौडी गढ़वाल मे इस पद पर कार्य-सलग्न थे।



जिन दिनो आप बलिया मे कार्य-रत थे तब आपका सम्पर्क हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' से हो गया, जिसके कारण आपमे भी काव्य-चेतना प्रस्फुरित हो गई। उन दिनो श्री 'हरिऔध' जी इनके साथ ही 'सरिश्तेदार' रहे थे। हरिऔधजी के इस सान्निध्य एव निरन्तर स्वाध्याय मे सलग्न रहने की प्रवृत्ति ने आपकी साहित्यिक चेतना को और भी उद्बुद्ध किया।

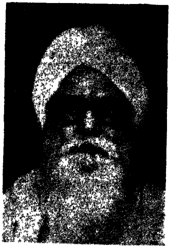
आप जहाँ सस्कृत तथा हिन्दी के प्रकाण्ड विद्वान् थे वहाँ अग्रेजी तथा फारसी भाषाओ मे भी पूर्ण दक्ष थे। वेदो, पुराणो तथा दर्शनो का गम्भीर चिन्तन करने के साथ-साथ आप 'श्रीमद्भगवद्गीता' के अनुशीलन मे भी अहर्निश सलग्न रहते थे। आपमें अध्यात्म-चिन्तन की भावनाएँ इतनी बलवती हो गई थी कि आप रामकृष्ण परमहस, स्वामी विवेकानन्द तथा महर्षि रमण-जैसे विचारको तथा सन्तों की विचार-धारा से बहुत प्रभावित हो गए थे। समय-समय पर आप रोम्याँ रोलाँ और विलियम वाकनर-जैसे विदेशी

विचारकों की रचनाओं का स्वाध्याय भी करते रहते थे।

'हरिऔध' जी के सत्संग का प्रभाव यह हुआ कि आपने साहित्य-सेवा को अपने जीवन का व्रत बना लिया और आपने 'जपा कुसुम' नामक एक उपन्यास की रचना कर डाली। आपका यह उपन्यास लक्ष्मीनारायण प्रेस मुरादाबाद की ओर से सन् 1920 के लगभग प्रकाशित हुआ था। इसके अतिरिक्त आपने 'भारत भारती' नाम से एक और उपन्यास की भी रचना की थी, जो अप्रकाशित ही रह गया। इनके अतिरिक्त आपने 'उमर खैयाम की रुबाइयो का ब्रजभाषा में अनुवाद भी किया था। आपकी यह मान्यता थी कि खडी बोली के माध्यम से खैयाम के काव्य के माधुर्य को उतनी सफलता से प्रतिमूर्त्त नही किया जा सकता, जितनी सफलता से उसे ब्रजभाषा मे प्रस्तुत किया जाता है।

आपकी रचनाएँ उन दिनो की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रहती थी। यह खेद की बात है कि आपकी ऐसी रचनाओं का कोई संकलन प्रकाशित नही हो सका। आपका निधन 15 अप्रैल सन् 1956 को नैनीताल मे हुआ था।

पत्रकारिता के साथ-साथ ग्रन्थ-लेखन मे भी आपको बहुत दक्षता प्राप्त थी। आपकी प्रमुख प्रकाशित रचनाओं में 'सुमनांजलि', 'पुराणो की कथाएँ', 'हिन्दुत्वादर्श' तथा 'कर्म-काण्ड समुच्चय' आदि कई उल्लेखनीय हैं।



आपने ऋषिकेश (उत्तर प्रदेश) मे 'तन्त्रात्मक चतुर्व्यूह साधना पीठ' नामक सस्था के लिए उत्तर प्रदेश सरकार से लगभग 100 एकड़ जमीन प्राप्त की थी और इस सस्था का शिलान्यास भी हो चुका था। इसी प्रसंग मे आर्थिक सहायता-प्राप्ति के उद्देश्य से आप लखनऊ गए हुए थे कि वहीं पर 23 जून सन् 1981 मे आपका निधन हो गया।

श्री लक्ष्मीनारायण झा शास्त्री

श्री शास्त्रीजी का जन्म बिहार के दरभगा जनपद के अन्दौली नामक ग्राम मे 2 अक्तूबर सन् 1890 को हुआ था। आपने धर्मशास्त्र, पुराण, इतिहास तथा ज्योतिष आदि विषयो मे पूर्ण दक्षता प्राप्त की हुई थी। विद्याध्ययन के उपरान्त आपने अपना कार्य-क्षेत्र हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश) को बना लिया था। वहाँ पर आपने 'श्रीकृष्ण हिन्दी-सस्कृत विद्यालय' तथा 'सनातन हिन्दी विद्यालय' आदि शिक्षा-सस्थाओ की सस्थापना करने के साथ-साथ 'श्यामसुन्दर मुद्रणालय' की स्थापना भी की थी।

आप एक उच्चकोटि के विद्वान्, कुशल सगठनकर्ता और कर्मठ कार्यकर्ता होने के साथ-साथ उत्कृष्ट पत्रकार भी थे। आपने अपने 'श्यामसुन्दर मुद्रणालय' से 'कर्तव्य' नामक मासिक पत्र भी निकाला था, जिसका सम्पादन आप स्वय किया करते थे।

श्री लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी

श्री चतुर्वेदी का जन्म उत्तर प्रदेश के मैनपुरी नामक नगर मे 15 अगस्त सन् 1903 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा वहाँ ही हुई थी और बाद मे आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'साहित्य रत्न', पजाब विश्वविद्यालय की 'हिन्दी प्रभाकर' परीक्षाएँ देकर गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज वाराणसी की शास्त्री तथा एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण की थीं।

आप सुलतानपुर (उत्तर प्रदेश) के 'मधुसूदन विद्यालय इण्टर कालेज' मे सन् 1935 से कार्य-रत थे। वहाँ पर आपने अध्यापक, उपप्राचार्य और प्राचार्य आदि अनेक पदों पर अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य किया था। अन्तिम दिनो मे आप इस विद्यालय के 'प्राचार्य' थे। आपने सन् 1925 से 1928 तक महात्मा गांधीजी के आवाहन पर 'हिन्दी

साहित्य सम्मेलन प्रयाग' की ओर से दक्षिण भारत मे हिन्दी का अध्यापन तथा प्रचार-कार्य किया था।

आप एक कुशल अध्यापक होने के साथ-साथ एक सफल कवि, उत्कृष्ट लेखक और अध्यवसायी सम्पादक भी थे। आपने सन् 1929 से 1932 तक जहाँ प्रयाग से प्रकाशित होने वाले 'खिलौना' का सम्पादन अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था वहाँ अपने जातीय पत्र 'चतुर्वेद मार्तण्ड' के सम्पादन मे भी सहयोग दिया था। आपके द्वारा लिखित तथा सम्पादित पुस्तको मे 'नल दमयन्ती', 'भगवान् रामचन्द्र', 'नेपोलियन बोनापार्ट', 'रमेशचन्द्र दत्त', 'स्वामी विवेकानन्द', 'सर जगदीशचन्द्र बसु', 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' तथा 'पृथ्वीराज चौहान' की बालोपयोगी जीवनियो के अतिरिक्त 'भैंसासिह', 'फुर-फुर-फुर', 'आँख मिचौनी' आदि कविता और कहानियो की बाल-पुस्तको का निर्माण भी किया था। आपके द्वारा बगला से अनूदित 'सोने का बाला' और 'अन्तिम परिणाम' नामक दो बालोपयोगी उपन्यास भी उल्लेखनीय है। आपके द्वारा सम्पादित 'रहिमन नीति दोहावली', 'वृन्द सतसई', 'बिहारी सतसई', 'शिवा बावनी', 'भूषण रत्नावली', 'रहीम रत्नावली' और 'नन्ददास ग्रन्थावली' के नाम भी महत्त्वपूर्ण है। आपकी अन्य मौलिक प्रौढ रचनाओ मे 'आचार्य सोमनाथ : व्यक्तित्व और कृतित्व' नामक शोध प्रबन्ध है, जो आपके निधन के कारण प्रस्तुत न किया जा सका।



शिक्षा के क्षेत्र मे उल्लेखनीय योगदान देने के अतिरिक्त आपने हिन्दी के प्रचार-प्रसार मे भी समय-समय पर अपनी विशिष्ट प्रतिभा प्रदर्शित की थी।

आपका निधन 29 फरवरी सन् 1972 को हैदराबाद (दक्षिण) मे हुआ था।

रायबहादुर लज्जाशंकर झा

श्री झा का जन्म मध्य प्रदेश के सागर नामक स्थान मे जुलाई सन् 1873 मे हुआ था। आपके पिता श्री कृपाशंकर झा सागर के राजकीय हाई स्कूल मे प्रधानाध्यापक थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता की देख-रेख मे सागर मे ही हुई थी। बाद मे जबलपुर तथा इलाहाबाद आदि अनेक स्थानो म आगे की शिक्षा को पूर्ण करके आप मध्यप्रदेश शासन मे शिक्षक नियुक्त हो गए थे।



अपने इस अध्यापन-काल मे आपने अपनी कर्मठता तथा कार्य-कुशलता से धीरे-धीरे उन्नति की, और एक दिन ऐसा भी आया जब आप जबलपुर के 'स्पेन्स ट्रेनिग कालेज' के प्राचार्य नियुक्त हो गए। वहाँ पर कार्य करते हुए आपकी गणना देश के प्रमुख शिक्षा-शास्त्रियो मे होने लगी और आपकी योग्यता से प्रभावित होकर ही आपको महामना मदनमोहन मालवीय ने अपने 'हिन्दू विश्वविद्यालय' के 'टीचर्स ट्रेनिग कालेज' का प्राचार्य बनाया था।

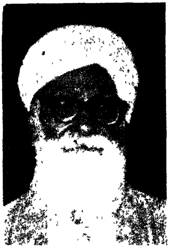
बनारस मे जाकर जहाँ आपने शिक्षा के क्षेत्र मे उल्लेखनीय स्थान बनाया वहाँ साहित्य-सेवा की दिशा मे भी आप पीछे नही रहे। आपने 'शिक्षा और स्वराज्य' तथा 'जीवन-सग्राम'-जैसी महत्त्वपूर्ण पुस्तके लिखने के साथ-साथ बहुत-सी पाठ्य-पुस्तको का निर्माण भी किया था। ऐसी पाठ्य-पुस्तको मे 'साहित्य सरोज' तथा 'सरल महाभारत' प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। आप उन दिनों मध्य प्रदेश के अकेले ऐसे भारतीय थे जो आई० सी० एस० मे सफल हुए थे। आपकी शिक्षा-सम्बन्धी उल्लेखनीय सेवाओ को दृष्टि मे रखकर सरकार ने आपको 'रायबहादुर' की उपाधि प्रदान की थी। जबलपुर विश्वविद्यालय ने भी आपको 'डाक्टरेट' की मानद

उपाधि से विभूषित किया था। आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री वेणीशंकर झा हैं, जो अनेक वर्ष तक 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' के 'उपकुलपति' रहे हैं और आजकल वे 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' के अध्यक्ष है।

आपका निधन सन् 1972 मे हुआ था।

श्री लाडलीप्रसाद श्रीवास्तव

आपका जन्म मध्यप्रदेश के भिण्ड जनपद की गोहद तहसील के अम्बाह नामक स्थान में सन् 1897 मे हुआ था। आप इतने कुशाग्र बुद्धि थे कि मिडिल की परीक्षा मे सम्पूर्ण ग्वालियर राज्य मे द्वितीय स्थान प्राप्त किया था। हिन्दी साहित्य के अध्ययन के प्रति आपकी रुचि प्रारम्भ से ही थी और आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की 'विशारद' परीक्षा केवल 18 वर्ष की आयु मे ही उत्तीर्ण कर ली थी। आप अपनी जन्म-भूमि अम्बाह मे प्राय हिन्दी के कवि-सम्मेलन आदि कराते रहते थे। आप अपने जीवन के प्रारम्भ से ही आर्य समाज के सिद्धान्तों के कट्टर अनुयायी थे। आपने जहाँ अपने नगर मे आर्यसमाज की स्थापना की थी वहाँ डी० ए० वी० कालेज के निर्माण मे भी आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान रहा था।



आप व्यवसाय से यद्यपि वकील थे, किन्तु वकालत मे भी आपने नैतिकता और सदाचार के सिद्धान्तो को तिलाजलि नहीं दी थी। आपने महात्मा गांधी की प्रेरणा पर सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भाग लेकर 1 वर्ष का कारावास भी भोगा था। आप हिन्दी के सुलेखक एवं कवि थे। आपकी कविताएँ आपके कर्ममय जीवन के प्रारम्भिक काल मे सभी पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित हुआ करती थी। सन् 1932 मे श्री रामकिशोर शर्मा 'किशोर' के सम्पादन मे ग्वालियर राज्य के हिन्दी-कवियों का जो सकलन 'निकुज' नाम से प्रकाशित हुआ था उसमे आपकी कविता भी समाविष्ट है। आपकी रचना का एक उदाहरण इस प्रकार है.

पुत्र के जन्म उछाह महा,
अरु पुत्रिहि देखिके भीति भई है।
आपु फिरे अति विज्ञ बने,
परदे की तियान को नीति ठई है।।
स्वास्थ-अन्ध भये सबरे नर
को न कहै अब प्रीति गई है।
माधव आर्य पधारहु वेगहि,
भारत मे यह रीति नई है।।

आप अपने पीछे भी एक समृद्ध साहित्यिक परम्परा छोड गए है। आपके पौत्र श्री प्रणव पुष्प कमठान (सुपुत्र श्री हरिश्चन्द्र कमठान) भी हिन्दी के सुकवि और लेखक है।

आपका निधन 11 फरवरी सन् 1969 को हुआ था।

श्री लालबिहारी मिश्र 'द्विजराज'

श्री 'द्विजराज' का जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के गन्धौली नामक स्थान मे सन् 1854 मे हुआ था। आप ब्रजभाषा के प्रमुख कवि श्री नन्दकिशोर 'लेखराज' के ज्येष्ठ पुत्र थे। अपने पिता की भाँति ही आपकी रचनाएँ अत्यन्त उच्चकोटि की होती थी। आपकी रचनाओ मे 'भव्यार्णव लहरी', 'नख-शिख', 'दुर्गा विनय', 'नाम निधि', 'वर्णमाल', 'वासुदेव पचक', 'प्यारी जू को सिख नख', 'श्री रामचन्द्र नख-शिख' तथा 'विनय मजरी लतिका' के नाम प्रमुख है।

श्री द्विजराज जी दुर्गा के अनन्य उपासक थे। आपकी 'दुर्गा स्तुति' तथा 'विजयानन्द चन्द्रिका' नामक कृतियों मे अधिकाशत ऐसी ही रचनाएँ समाविष्ट है। आपकी सभी कृतियो का एक समन्वित संस्करण 'द्विजराज शतक' नाम से प्रकाशित हुआ है। आपकी एक समस्या-पूर्ति इस प्रकार है

सिर मौर है मोर के पखन को,

जेहिसों दिन नाथ छले गए हैं।

दृग लोने मृगान को मान दहैं,

दल नीरज नीर दले गए हैं।।

तन साँवरो अम्बर पीरो मनौ,

दुति दामिनि मेघ मले गए है।

गुन दै 'द्विजराज' नयन्दन को,

यहि ओर ते कौन चले गए हैं।।

आपका निधन 52 वर्ष की आयु मे सन् 1906 मे हुआ था।

ठा० लालसिंह 'प्रियराज'

श्री प्रियराज का जन्म उत्तर प्रदेश मे सीतापुर जनपद के हथिया नामक स्थान मे सन् 1887 मे हुआ था। आपके पूर्वज मूलत. कानपुर जनपद के शिवराजपुर नामक स्थान के रहने वाले थे। वर्नाकुलर मिडिल तक की शिक्षा प्राप्त करने के अनन्तर आपने नार्मल ट्रेनिग की थी और फिर अध्यापन का कार्य करने लगे थे। आपने काफी दिन तक बाडी, महमूदाबाद और सीतापुर के विद्यालयों मे अध्यापन किया था। अन्तिम दिनो मे आप 'प्रधानाध्यापक' हो गए थे।

आपने कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नही लिखा था। आपकी अनेक स्फुट रचनाएँ उपलब्ध है। द्रोपदी के चीर-हरण की घटना को लेकर आपने एक पद इस प्रकार लिखा था :

बैठे बड़े-बड़े वीर व्रती,

रन सम्मुख कालहु से जो मखैया।

मौन है द्रोण-से आज गुरु,

नहि नीति की बात है कोऊ भखैया।।

दीन दयाल बिसारि तुम्हे,

अबला की दसा अब कौन लखैया।

कासों पुकार करों करुना-निधि,

लाज बिगारत, लाज-रखैया।।

इससे आपकी काव्य-पटुता का स्पष्ट आभास मिल जाता है।

आपका निधन सन् 1952 मे हुआ था।

ठाकुर लोकपालसिंह

ठाकुर साहब का जन्म सितम्बर सन् 1906 में उत्तर प्रदेश के एटा जनपद के लुहारी खेड़ा (राजा का रामपुर) नामक ग्राम के एक सम्भ्रान्त क्षत्रिय-परिवार मे हुआ था। आप बाल्यावस्था से ही बड़े क्रान्तिकारी स्वभाव के थे। आगरा के 'बलवन्त राजपूत कालेज' से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपका अध्ययन रुक गया था और समाज-सुधार के अनेक कार्यों मे रुचि लेने लगे थे। आपको हाथी, घोडे, बैल तथा कुत्ते आदि पालने के अतिरिक्त



मल्लविद्या का भी बडा शौक था। आपका अखाडा बराबर जारी रहता था। अछूतो और दलितो के प्रति अपार स्नेह रखने के अतिरिक्त आप उनके उद्धार तथा भलाई के लिए अनेक कार्य करते रहते थे।

आपने जहाँ लगभग 20 वर्ष तक 'एटा जिला परिषद्' के सदस्य और उपाध्यक्ष के रूप मे अपने क्षेत्र की जनता का अपूर्व प्रेम अर्जित किया था वहाँ सन् 1962 मे अलीगज (एटा) क्षेत्र से जनसघ पार्टी के टिकट पर विधायक भी निर्वाचित हुए थे। आर्यसमाज के शुद्धि-आन्दोलन मे आप विशेष रूप से प्रभावित थे। इसी कारण अपने क्षेत्र मे आपने लगभग 20 हजार नवमुस्लिमो की शुद्धि की थी। आपके शुद्धि-प्रेम से खीझकर एक धर्मान्ध मुसलमान ने आपको एक बार गोली मार दी थी। उसके इस घातक प्रहार से अत्यन्त घायल हो जाने पर भी आपने उसे पकड लिया था, जिसके कारण उसे सजा हो गई थी। आप गोरक्षा-आन्दोलन मे भी बराबर सक्रिय रहा करते थे, जिसके कारण आपको जेल-यात्रा भी करनी पडी थी।

आप जहाँ उत्कृष्ट कोटि के समाज-सुधारक और नेता

थे वहाँ साहित्य-रचना की दिशा में भी आपको अभूतपूर्व सफलता मिली थी। आपकी रचनाएँ प्रायः वीर रस से परिपूर्ण हुआ करती थी। आपने अपनी रचनाओ मे महारानी लक्ष्मीबाई, मदनलाल ढीगरा, रामप्रसाद बिस्मिल, चन्द्रशेखर आजाद, लाला लाजपतराय, सरदार भगतसिंह और महात्मा गांधी-जैसे अनेक वीर-रत्नों और नेताओं की गाथाओ का बडी ही ओजस्वी शैली मे वर्णन किया है। आपकी ऐसी रचनाओ मे 'शहीद श्रद्धांजलि' का नाम विशेष रूप में उल्लेखनीय है, जिसका प्रकाशन सन् 1958 में मथुरा की हिन्दी साहित्य परिषद् ने किया था। इनके अतिरिक्त आपकी 'रण हुकार', 'धनुष्टकार', 'शम्भु स्थापना' तथा 'माँ का प्यार' आदि काव्य-कृतियाँ महत्त्वपूर्ण है। आपके द्वारा लिखित 'मोरध्वज' (कलयुगी) तथा 'आदर्श स्काउट' नामक नाटक भी अपनी विशिष्ट पृष्ठभूमि के लिए विख्यात है। आपकी 'झाँसी की रानी' नामक रचना की ये पक्तियाँ द्रष्टव्य है .

मन गोरी सत्ता बनने दो,
यह सन् सत्तावन बोल उठा।
झाँसी वाली की आँखों मे हो,
वक्र शनिश्चर डोल उठा।।
पैंतो को खोल साथियों के सग,
खड्ग तौतिया तोल उठा।
झटपट नाना का गोल उठा,
चट नाना विधि भूडोल उठा।।

आपका निधन 10 दिसम्बर सन् 1978 को हुआ था।

श्री लोचनप्रसाद पाण्डेय

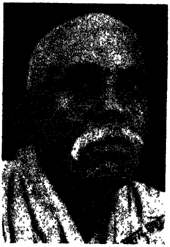
श्री पाण्डेयजी का जन्म मध्य प्रदेश के बिलासपुर जनपद के बालपुर नामक ग्राम मे 4 जनवरी सन् 1886 को हुआ था। आपके पिता पण्डित चिन्तामणि पाण्डेय स्वय भी हिन्दी साहित्य के बडे प्रेमी थे। उनके पास हिन्दी के प्राचीन साहित्यिक तथा धार्मिक ग्रन्थो का अच्छा संग्रह था। वे काशी से प्रकाशित होने वाले 'भारत जीवन' नामक पत्र के ग्राहक थे और अपने ग्राम में हिन्दी की उन्होने एक प्राथमिक पाठशाला भी खोल रखी थी। हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक श्री अनन्तराम पाण्डेय ने भी प्राइमरी तक की शिक्षा इसी पाठशाला मे प्राप्त की थी। पाण्डेयजी के प्रपितामह उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद के बामपुरा (सरवर) नामक स्थान से आकर पहले-पहल उड़ीसा के सम्बलपुर नामक नगर के बाहर एक बगीचे मे ठहर गए थे। वहाँ पर जब सम्बलपुर के चौहान क्षत्रिय राजा ने उनके पाण्डित्य की प्रशंसा सुनी तो उन्होंने उनसे अपने राज्य में ही ठहर जाने का आग्रह किया। वे उस समय पुरी की यात्रा के लिए निकले हुए थे। परिणाम स्वरूप उन्होंने इस यात्रा से लौटकर वहाँ आने का वचन दिया और जब आप वहाँ पहुँचे तो महाराजा नारायणसिंह से बालपुर समेत पाँच ग्राम नीलाम मे लिये, जो पाण्डेय-परिवार का स्थायी निवास बना था।

श्री पाण्डेयजी ने अपने पिताजी द्वारा स्थापित प्राथमिक पाठशाला मे ही विद्यारम्भ किया और फिर सम्बलपुर के हाई स्कूल मे प्रविष्ट होकर वहाँ से कलकत्ता विश्वविद्यालय की 'प्रवेशिका' परीक्षा उत्तीर्ण की। कुछ दिन तक आप काशी के 'सेण्ट्रल हिन्दू कालेज' मे भी पढे थे, किन्तु पारिवारिक उलझनों के कारण आपकी शिक्षा का क्रम टूट गया और आप वापिस घर लौट गए। आपने अपने वश का परिचय एक कवित्त मे इस प्रकार दिया था .

हेमधर पाँडे गुमानधर पाँडे सुत,
सोनसाय ताके सुत साहसी बखानिये।
भोलानाथ पाँडे अरु देवनाथ पाँडे दोऊ,
सोनसाय पाँडे जू के सुत पहचानिये।।
भोलानाथ को भे सुत नाम शालिग्राम जाको,
शालिग्राम-पुत्र बलो चिन्तामणि मानिये।
'लोचन' इन्हीं के सुत छहो हम भाई अहै,
द्विज सरवरिया बामपुरा पाँडे जानिये।।

जिन दिनों आप काशी से घर लौटे थे उन दिनो आपके अग्रज श्री पुरुषोत्तमप्रसाद पाण्डेय के लेख श्री माधवराव सप्रे के सम्पादन मे रायपुर (मध्य प्रदेश) से प्रकाशित होने वाले 'छत्तीसगढ मित्र' मे छपा करते थे। आपका रामगढ़ के सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री अनन्तराम पाण्डेय तथा शबरीनारायण के पण्डित मालिकराम भोगहा आदि से काफी पत्र-व्यवहार होता रहता था। एक बार जब सन् 1904 मे

भोगहाजी आपके अग्रज के पास बालपुर पधारे थे तब आपके पास ठाकुर जगमोहनसिंह द्वारा रचित गद्य-काव्य की पुस्तक 'श्यामा स्वप्न' की एक प्रति थी, जिसे पढ़कर लोचनप्रसाद जी के मन मे सोये हुए साहित्यिक सस्कार जाग्रत हो उठे और आपने मन-ही-मन लेखन के कार्य मे ही जुट जाने का सकल्प कर लिया। अपने अग्रज के पास नियमित रूप से आने वाली 'सरस्वती' पत्रिका के पारायण से आपके वे सस्कार और भी परिपुष्ट हो गए। धीरे-धीरे वह दिन भी आया जब आपके लेख आदि पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होने लगे। आपकी सबसे पहली कृति 'दो मित्र' (उपन्यास) थी, जो मुरादाबाद के लक्ष्मीनारायण प्रेस से सन् 1906 मे प्रकाशित हुई थी। फिर धीरे-धीरे आप गद्य-लेखन के साथ-साथ पद्य की रचना की ओर भी उन्मुख हुए और उसमे आपको इतनी सफलता प्राप्त हुई कि आपकी गणना हिन्दी के तत्कालीन प्रमुख कवियों मे होने लगी। आपको खड़ी बोली तथा ब्रजभाषा दोनो की काव्य-रचना करने मे अभूतपूर्व सिद्धि प्राप्त थी। आपकी सबसे पहली कविता श्री बालकृष्ण भट्ट द्वारा सम्पादित 'हिन्दी प्रदीप' मे सन् 1905 मे प्रकाशित हुई थी, जिसका सशोधन राय देवीप्रसाद पूर्ण ने किया था। उन्ही दिनो आपकी रचनाएँ 'सरस्वती' मे भी प्रकाशित होने लगी थी।



किसी समय सवैया छन्द मे लिखी गई पाण्डेयजी की 'मृगी दुख मोचन' नामक रचना ने हिन्दी-जगत् मे बहुत लोकप्रियता प्राप्त की थी। इस सम्बन्ध मे हिन्दी के प्रमुख समीक्षक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' नामक ग्रन्थ मे जो आशसात्मक शब्द लिखे थे उनसे पाण्डेयजी की काव्य-कला पर अच्छा प्रकाश पडता है। उन्होने लिखा था—'मृगी दुख मोचन' मे इन्होने खडी बोली के सवैयों मे एक मृगी की अत्यन्त दारुण परिस्थिति का वर्णन सरल भाषा मे किया है, जिससे पशुओं तक पहुँचने वाली इनकी व्यापक और सर्वभूत-दयापूर्ण काव्य-दृष्टि का पता चलता है। इनका हृदय कही-कहीं पेड़-पौधों तक की दशा का मार्मिक अनुभव करता पाया जाता है।" आपकी इस रचना की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है

चढ जाते पहाडों मे जाके कभी,
कभी झाड़ों के नीचे फिरे, विचरे।
कभी कोमल पत्तियाँ खाया करे,
कभी मीठी हरी-हरी घास चरे।।
सरिता-जल मे प्रतिबिम्ब लखे निज,
शुद्ध कही जल-पान करे।
कही मुग्ध हो झर-झर निर्झर से,
तरु-कुज मे जा तप-ताप हरे।।
रहती जहाँ शाल रसाल तमाल के,
पादपों की अति छाया घनी।
चर के तृण आते, थके वहाँ बैठते-
थे मृग औ' उसकी घरनी।।
पगुराते हुए दृग मूँदे हुए,
वे मिटाते थकावट थे अपनी।
खुर से कभी कान खुजाते कभी,
सिर सींग पै धारते थे टहनी।।

पाण्डेयजी जहाँ उत्कृष्ट कोटि के गद्य-लेखक और सहृदय कवि थे वहाँ इतिहास और पुरातत्त्व के क्षेत्र मे भी आपका अन्यतम स्थान था। लगभग 40 वर्ष तक आपने पुरातत्त्व के क्षेत्र मे भी उल्लेखनीय कार्य किया था। छत्तीसगढ़ के इतिहास को नये ढग से प्रस्तुत करने की दिशा मे आपका अनन्य योगदान था। आपने ऐसे दर्जनों दुर्लभ ग्रन्थों, सिक्को, शिलालेखो और दस्तावेजो को इतिहासवेत्ताओ के समक्ष प्रस्तुत किया था, जिनके विषय मे उस समय तक किसी को कुछ भी जानकारी नही थी। आपने न केवल यह कार्य किया, प्रत्युत अपनी इन खोजो और मान्यताओ के सम्बन्ध मे अनेक शोधपूर्ण तथा प्रामाणिक लेख लिखकर पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित कराये। यहाँ तक कि 'महाकोशल इतिहास समिति' की स्थापना करके आप 40 वर्ष तक उसके सचिव रहे और उसके माध्यम से अनेक महत्त्वपूर्ण खोजे की। आपके ऐसे कार्यों मे 'किरारी स्तम्भ' तथा 'विक्रम खोल' नामक ऐसी

खोजें हैं, जिनके कारण सर काशीप्रसाद जायसवाल, डॉ० मिराशी तथा डॉ० धीरेन्द्रनाथ मजूमदार-जैसे इतिहास-वेत्ताओं और पुरातत्त्वज्ञों ने आपकी आशसा की थी। अपनी इन खोजो के सम्बन्ध में उन्ही दिनो आपने श्री जायसवालजी को कृतज्ञता की जो पक्तियाँ लिखी थी वे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आपने लिखा था :

"विक्रम खोल शिला-लिपि चित्र विचित्र ।
लखि नयन जुडायो ए मित्र ।।
दाया करि याके पठवावन काग ।
धन्यवाद है अगणित पण्डितराज ।।
नाग गोंड दुइ राक्षस जाति विशाल ।
लिपि तिनिको की पढि है जायसवाल ।।"

उडीसा के सम्बलपुर जिले के सघन जंगल मे इस शिला-लेख की खोज के लिए पाण्डेयजी ने बडा खतरा मोल लिया था। सर काशीप्रसाद जायसवाल के मतानुसार यह शिला-लेख 4 हजार वर्ष से 7 हजार वर्ष के बीच का है। इससे महाकौशल की सभ्यता की प्राचीनता पर भी अच्छा प्रकाश पडता है। श्री पाण्डेयजी ने इस सम्बन्ध मे अमरीका के एक साप्ताहिक पत्र मे अग्रेजी मे एक शोधपूर्ण लेख छपवाकर विश्व के पुरातत्त्वज्ञों के समक्ष एक सर्वथा नई मान्यता प्रस्था-पित की थी। आपने इस सम्बन्ध मे एक अग्रेजी का 'रिसर्च जर्नल' भी प्रकाशित किया था, जिसका सम्पादन आप स्वय किया करते थे। यह सब कार्य पाण्डेयजी ने 'महाकौशल इतिहास समिति' के द्वारा ही सम्पन्न किया था।

पाण्डेयजी ने यद्यपि कवि के रूप मे अच्छी ख्याति अर्जित की थी, परन्तु आप सफल गद्य-लेखक भी थे। आपकी पहली गद्य-कृति 'दो मित्र' के अतिरिक्त 'प्रवासी', 'नीति कविता', 'बालिका विनोद', 'कवित्व कुसुममाला', 'हिन्दू विवाह और उसके प्रचलित दूषण', 'दिल बहलाने की दवा', 'आनन्द की टोकनी', 'प्रेम प्रशसा', 'छात्र दुर्दशा', 'साहित्य-सेवा', 'माधव मजरी', 'मेवाड गाथा', 'चरितमाला', 'बाल विनोद', 'हमारे पूज्य पिता', 'काव्योपाध्याय हीरालाल', 'शोकोच्छ्वास', 'सम्राट् स्वागत', 'कृषक बाल सखा', 'भर्तृ-हरि नीति शतक', 'वीर भ्राता लक्ष्मण', 'कौशल प्रशस्ति माला', 'क्षय रोग निवारण के उपाय', 'रघुवश सार', 'कौशल रत्नमाला', 'जीवन ज्योति', 'पद्य पुष्पांजलि', 'वैदिक प्रार्थना' और 'हा माधव' आदि रचनाएँ उल्लेखनीय है। इन हिन्दी-कृतियो के अतिरिक्त आपकी उड़िया तथा अग्रेजी भाषाओ मे लिखी गई अनेक प्रकाशित रचनाएँ हैं। हिन्दी के कदाचित् आप ही ऐसे पहले साहित्यकार थे, जिन्होंने अपनी भाषा मे उत्कृष्ट काव्य-रचना करने के साथ-साथ दूसरी प्रातीय भाषा मे उसी सफलता से साहित्य-सर्जना की थी। उडिया तथा बगला भाषाओ पर भी आपका उतना ही अधिकार था, जितना हिन्दी पर। आपके द्वारा उडिया भाषा मे लिखित काव्य-कृतियो मे 'कविता कुसुम', 'रोगी सेवन' और 'महानदी' उल्लेख्य हैं। आपके 'महानदी' नामक काव्य पर प्रसन्न होकर तत्कालीन 'आमण्डा नरेश' ने आपको 'काव्य विनोद' की उपाधि से विभूषित किया था। अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने भी आपको अपने सन् 1948 मे सम्पन्न हुए मेरठ-अधिवेशन मे 'साहित्य वाचस्पति' की अपनी सम्मानोपाधि प्रदान की थी। आपकी विशिष्ट हिन्दी-सेवाओं के लिए जहाँ 'मध्य प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन' ने अपने गोंदिया-अधिवेशन मे आपका सम्मान किया था वहाँ 'भारतेन्दु साहित्य समिति विलासपुर' ने भी आपको अभिनन्दित किया था। आप 'मध्य प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के जबलपुर-अधिवेशन के सभापति रहने के साथ-साथ देश की अनेक सास्कृतिक तथा साहित्यिक सस्थाओं से सम्बद्ध रहे थे। आपने सन् 1918 मे 'छत्तीसगढ गौरव प्रचारक मण्डली' की सस्थापना करके उसकी ओर से 'जीवन ज्योति' तथा 'विलासपुर वैभव' नामक पुस्तको का प्रकाशन भी कराया था।

आपने अपने कर्म-सकुल जीवन मे साहित्य-रचना के क्षेत्र मे इतना बहुमुखी कार्य किया था कि उसका सही मूल्याकन अभी तक भी नही हो सका है। आपने अपने प्रच-लित और बहु विज्ञापित नाम के अतिरिक्त 'कृष्णदास', 'एक भारतीय प्रजा', 'एक मध्यप्रदेशवासी', 'आत्माराम भार्गव' तथा 'दुर्मुख शर्मा' आदि गुप्त नामो से भी बहुत-सी साहित्य-रचना की थी। आपने जहाँ हिन्दी, अग्रेजी तथा उड़िया भाषाओं मे उन्मुक्त भाव से लेखन-कार्य किया वहाँ अपने अचल छत्तीसगढ़ की बोली को भी अपनी कृतित्व-प्रतिभा के पावन अवदान से कृतार्थ किया था। आपके द्वारा सम्पादित 'छत्तीसगढी व्याकरण' इस दिशा मे अभि-नन्दनीय कृति है। आपके निधन के उपरान्त श्री प्यारेलाल गुप्त ने सन् 1961 मे 'स्वर्गीय पडित लोचनप्रसाद पाण्डेय'

नामक जिस पुस्तक का सम्पादन किया था, उससे आपके बहुमुखी व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर विस्तृत प्रकाश पड़ता है। इस पुस्तक का प्रकाशन 'छत्तीसगढ़ विभागीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन विलासपुर' ने किया था।

आपका निधन 18 नवम्बर सन् 1959 को रायगढ़ मे हुआ था।

श्री वंशीधर श्रीवास्तव

श्री श्रीवास्तव का जन्म उत्तर प्रदेश के खीरी जनपद के गोला गोकर्णनाथ नामक स्थान मे 3 जुलाई सन् 1929 को हुआ था। वैसे आपके पूर्वज तहसील मुहम्मदी (खीरी) के ग्राम राजगढ के मूल निवासी थे। एम० ए० एल० टी० और साहित्यरत्न की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप 'कृषक समाज इण्टर कालेज गोला' में 'प्राचार्य' का कार्य कर रहे थे। यह सस्था उस क्षेत्र के प्रख्यात राष्ट्रीय नेता बा० बालगोविन्द वर्मा ने स्थापित की थी। आप कई वर्ष तक केन्द्रीय मन्त्रिमडल मे 'उपमन्त्री' भी रहे थे।

आज जहाँ उच्चकोटि के शिक्षक थे वहाँ साहित्य-रचना की दिशा मे भी आप पूर्णत. दक्ष थे। आपकी कवित्व-प्रतिभा का प्रत्यक्ष परिचय आपके एक-मात्र प्रकाशित काव्य 'कौशिक' से मिल जाता है। इस काव्य में आपने राम-कथा को एक सर्वथा नए आयाम और नूतन पृष्ठभूमि पर प्रस्तुत किया है। विश्वामित्र, वशिष्ठ तथा परशुराम के चरित्रों के माध्यम से आपने इस काव्य मे 'आर्य तथा अनार्य-सस्कृतियों का सघर्ष' चित्रित किया है।



इस काव्य की रचना करने के उपरान्त आप 'केशव' नाम से एक दूसरे काव्य के निर्माण मे संलग्न थे कि 18 मई सन् 1975 को 42 वर्ष की अवस्था में इस ससार से विदा हो गए।

श्री वनमाली

श्री वनमाली का जन्म मध्यप्रदेश के रायपुर नामक नगर मे सन् 1857 मे हुआ था। आपकी शिक्षा उन दिनों घर पर ही हुई थी। छत्तीसगढ़ अचल में क्योंकि उन दिनो अँग्रेजी शिक्षा का प्रचार अधिक नहीं हुआ था, अत आपने अपने निजी स्वाध्याय के बल पर हिन्दी, सस्कृत और उर्दू का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आप कचहरी मे 'अर्जीनवीस' का कार्य किया करते थे। जब कोई मुवक्किल आपके पास न आता तो आप वहाँ बैठे-बैठे ही छन्द-रचना किया करते थे।

क्योंकि आपकी प्रवृत्ति झूठे मुकदमो से आमदनी बढ़ाने की न थी अत आप प्राय कष्ट मे ही रहा करते थे। जब 'अर्जीनवीस' के काम से आपका पारिवारिक भरण-पोषण का कष्ट दूर न हुआ तो आपने 'टीचर्स सर्टिफिकेट' प्राप्त करके अध्यापन का कार्य प्रारम्भ कर दिया और लगभग 16-17 वर्ष तक अपने क्षेत्र के अनेक स्कूलो मे सफलतापूर्वक शिक्षक का कार्य किया था। कुछ दिन तक आप वहाँ के हिन्दी-स्कूलो के प्रधानाध्यापक भी रहे थे। यह खेद का विषय है कि आपकी कोई कृति पुस्तक रूप मे नही छप सकी। आपकी रचनाओ मे भगवान् की भक्ति के प्रति दृढ आस्था प्रचुर परिमाण में देखने को मिलती है। कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है·

जगत कुलीन नर सोचिके अधीन होत,
तब जानो दया दीनबन्धु जगदीश की।
काके कौन आए काम, लीजै मित्र राम नाम,
देखी सारे ग्राम-ग्राम, माया एक श्रीश की।।

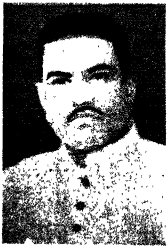
अपनी कवित्व-प्रतिभा से आपने उस क्षेत्र के रचनाकारो मे अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था।

आपका निधन सन् 1920 मे रायपुर मे हुआ था।

डॉ० वासुदेव उपाध्याय

श्री उपाध्याय जी का जन्म उत्तर प्रदेश के बलिया जनपद के सोनबरसा नामक ग्राम मे सन् 1922 मे हुआ था। आपके पिता 'श्रीमद्‌भागवत' तथा 'रामचरितमानस' के अच्छे ज्ञाता और व्याख्याता थे। आपके शैशव-काल मे ही आपके पिता जी का निधन हो गया था, परिणामस्वरूप अपनी प्राथमिक शिक्षा ग्राम के विद्यालय मे प्राप्त करके आप काशी चले गए, जहाँ आपके अग्रज डॉ० बलदेव उपाध्याय के निरीक्षण मे आपकी आगे की शिक्षा-दीक्षा हुई थी। हिन्दू विश्वविद्यालय काशी से प्राचीन भारतीय इतिहास एव सस्कृति विषयों मे एम० ए० करके आपने पटना विश्वविद्यालय से 'उत्तरी भारत की सामाजिक एव धार्मिक अवस्था' विषय पर शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करके आपने 'डी० फिल०' की उपाधि प्राप्त की थी।

इसके उपरान्त आपने कुछ दिन तक लखनऊ के डी०ए०वी० कालेज मे अध्यापन-कार्य किया और फिर हिन्दी की प्रख्यात प्रकाशन-सस्था 'भारती भण्डार प्रयाग' मे चले गए, जहाँ पर रहते हुए आपने अनेक ग्रन्थ लिखे थे। भारती भण्डार से आप पटना विश्वविद्यालय के 'प्राचीन भारतीय इतिहास एव पुरातत्त्व विभाग' मे अध्यापक होकर चले गए और सेवा-निवृत्ति तक वहाँ पर ही कार्य-रत रहे। भारत के प्राचीन इतिहास, पुरातत्त्व, मुद्राशास्त्र और अभिलेखो आदि के अनुसन्धान तथा शोध-कार्य के क्षेत्र में आपकी अभिनन्दनीय एव उल्लेखनीय देन रही है। आपके इन विषयो से सम्बद्ध अनेक शोध-निबन्धो और ग्रन्थों के कारण आपको जो अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हुई थी वह सर्वथा स्पृहणीय और प्रशसनीय थी। आपके ऐसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों मे 'गुप्त साम्राज्य का इतिहास', 'भारतीय सिक्के', 'प्राचीन भारतीय अभिलेख', 'प्राचीन भारतीय मूर्ति-विज्ञान', 'प्राचीन भारतीय गुहा और मन्दिर', 'प्राचीन भारतीय मुद्राएँ', 'पूर्व मध्यकालीन भारत', 'भारतीय गौरव', 'भारत के प्राचीन ग्राम', 'गुप्त अभिलेख' तथा 'हिन्दू अपराध और दण्ड विधान' आदि उल्लेख्य है।



आपको अपने इन ग्रन्थों मे से कई पर कतिपय सम्मान और पुरस्कार भी प्रदान किए गए थे। आपकी 'गुप्त साम्राज्य का इतिहास' नामक कृति पर जहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से 'मगलाप्रसाद पुरस्कार' प्रदान किया गया था वहाँ आपकी 'प्राचीन भारतीय मूर्ति विज्ञान', 'प्राचीन भारतीय गुहा और मन्दिर' तथा 'प्राचीन भारतीय मुद्राएँ' नामक कृतियाँ भी उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से पुरस्कृत की गई थी। भारत सरकार ने आपके 'प्राचीन भारतीय ग्राम' नामक ग्रन्थ को जहाँ सम्मानित किया था वहाँ 'बगाल हिन्दी मण्डल कलकत्ता' की ओर से आपकी 'विजयनगर साम्राज्य का इतिहास' नामक पुस्तक भी पुरस्कृत की गई थी। नागरी प्रचारिणी सभा काशी की ओर से भी आपकी 'प्राचीन भारतीय अभिलेख' नामक कृति पर 'जोधसिह पुरस्कार' और 'गुलेरी रजत पदक' प्रदान किया गया था। आपके 'गुप्त साम्राज्य का इतिहास' तथा 'विजयनगर साम्राज्य का इतिहास' नामक ग्रन्थो को जहाँ सिहली भाषा मे अनूदित किया गया है वहाँ आपकी 'प्राचीन भारतीय मुद्राएँ' नामक कृति का भी जर्मनी भाषा मे अनुवाद हुआ था। इन सब सम्मान और पुरस्कारो के अतिरिक्त सन् 1976 में आपको कलकत्ता के 'हनुमान मन्दिर साहित्य अनुसन्धान सस्थान' की ओर से आपकी 'गुप्त अभिलेख' नामक महत्त्वपूर्ण कृति पर 5 हजार रुपए का पुरस्कार भी प्रदान किया गया था।

प्राचीन भारतीय सस्कृति और पुरातत्त्व विज्ञान के क्षेत्र मे उपाध्याय जी का सर्वथा विशिष्ट एव अनुपम स्थान था। अपनी अनेक महत्त्वपूर्ण कृतियो और शोध-पत्रों के कारण आपकी ख्याति अन्तर्राष्ट्रीयता के शिखर को छू गई थी। आप जहाँ देश-विदेश की अनेक पुरातात्विक सस्थाओ से सम्बद्ध रहे थे वहाँ 'बिहार रिसर्च सोसाइटी' के अनेक वर्ष तक 'कोषाध्यक्ष' भी रहे थे। पटना विश्वविद्यालय से निवृत्ति प्राप्त करने के उपरान्त आप 'विश्वविद्यालय अनुदान

आयोग नई दिल्ली' द्वारा सचालित अनेक शोध-कार्यों से सम्बद्ध रहकर इतिहास तथा संस्कृति की सेवाओं में संलग्न थे। अपनी विविध साहित्यिक सेवाओं के कारण आपका स्थान भारतीय पुरातत्त्व एव इतिहास के विद्वानों मे सर्वथा अप्रतिम एव अग्रणी था।

आपका निधन 3 मार्च सन् 1979 को हुआ था।

श्री विजयकृष्ण तैलंग

श्री तैलंग का जन्म मध्य प्रदेश के बुन्देलखण्ड अचल के टीकमगढ नामक स्थान मे 13 मार्च सन् 1944 को हुआ था। एम० ए०, बी० एड० तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप सागर ज़िले के एक शास-कीय उच्चतर माध्य-मिक विद्यालय माल-थौम म व्याख्याता के रूप मे कार्य करने मे सलग्न थे कि असमय मे इस संसार से चले गए। छोटी-सी आयु मे ही आपने अपनी रचना - प्रतिभा के द्वारा मध्य प्रदेश के तरुण लेखको मे अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया था।



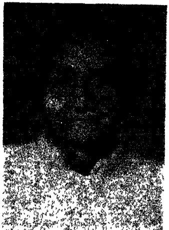
आप मुख्यत: बालोपयोगी रचनाएँ किया करते थे और सामान्यत: अन्य विधाओं के विविध विषयक लेखन मे भी आपकी अभिरुचि थी। आपकी रचनाएँ मुख्यत. 'पराग', 'बालसखा', 'नवनीत', 'मुक्ता' तथा 'सरिता' आदि अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी। आपकी लगभग 80 कविताएँ प्रकाशित हो चुकी थी। कुछ रचनाएँ अभी अप्रकाशित हैं।

आपका निधन 17 मार्च सन् 1972 को हुआ था।

श्री विजय वर्मा

श्री वर्मा जी का जन्म 16 जून सन् 1897 को झाँसी मे हुआ था। आपका वास्तविक नाम जगदम्बाप्रसाद वर्मा था और आपके पिता श्री महावीरप्रसाद झाँसी मे तहसीलदार थे। आपके पूर्वजो की जन्म-भूमि इलाहाबाद जनपद के शृंगवेरपुर नामक स्थान का निकटवर्ती ग्राम श्यामपुर था। वर्मा जी की शिक्षा-दीक्षा अपने पिता के पास झाँसी मे ही हुई थी। मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करके आपने सन् 1923 मे इन्कमटैक्स मे नौकरी कर ली थी। जब सन् 1930 मे महात्मा गाधी ने सारे देश की जनता को 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' मे भाग लेने के लिए प्रेरित किया तब आपने भी सरकारी नौकरी को लात मार दी और आजीवन खद्दर ही पहनते रहे।

नौकरी छोडने के उपरान्त एक दिन आपकी भेट अचानक श्री क्षितीन्द्रमोहन मित्र 'मुस्तफी' से हो गई। आप प्रयाग से हिन्दी की एक मासिक पत्रिका निकालना चाहते थे। फलस्वरूप 'माया' नामक पत्रिका प्रकाशित करने की योजना बनाई गई और विजय वर्मा उसके सम्पादक बने और क्षितीन्द्र बाबू प्रकाशक। प्रारम्भ मे 'माया' मे राष्ट्रीय भावनाओं की कहा-नियाँ दी जाती थी, किन्तु क्षितीन्द्र बाबू उसमे रोमाण्टिक कहानियाँ प्रकाशित करना चाहते थे। इस पर वर्मा जी और मुस्तफी जी मे मतभेद हो गया और एक वर्ष बाद आपको 'माया' से अलग होना पडा। 'माया' से पृथक् होकर आपने श्री मोहनलाल नेहरू द्वारा संचालित मासिक पत्रिका 'सहेली' का कई वर्ष तक सफलतापूर्वक सम्पादन किया। इसी बीच श्री मोहनलाल नेहरू ने 'सहेली' के प्रकाशन के सर्वाधिकार श्री वर्मा जी



को दे दिए। फलस्वरूप वर्मा जी ने 'सहेली सघ' की स्थापना करके उसकी ओर से उसका प्रकाशन प्रारम्भ किया। वर्मा जी ने इस पत्रिका का 'कमला-जवाहर-अक' नामक जो विशेषांक सन् 1925 में प्रकाशित किया था, वह सर्वथा अभूतपूर्व था। इस विशेषाक की सारी सामग्री इतनी अधिक उग्र थी कि सरकार ने उस पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। श्री वर्मा जी की आर्थिक स्थिति ऐसी न थी जो इस पत्रिका को निर्विघ्न चला पाते। परिणाम स्वरूप आपने इसका प्रकाशन स्थगित करके स्वतन्त्र लेखन तथा पत्रकारिता आरम्भ कर दी। आपने कुछ दिन तक 'लीला', छाया' तथा 'विश्ववाणी' आदि कई पत्रिकाओ का सम्पादन भी किया था।

जब हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकार श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी ने दारागज से 'साहित्य मन्दिर' नामक अपनी एक प्रकाशन-सस्था का प्रारम्भ किया था तब उसकी ओर से 'मीठी चुटकी' नामक जो उपन्यास सन् 1931 मे प्रकाशित हुआ था उस पर लेखक की जगह 'त्रिमूर्ति' नाम छपा था। वास्तव मे यह उपन्यास श्री वर्मा जी, शम्भूदयाल सक्सेना तथा वाजपेयी जी ने मिलकर लिखा था। हिन्दी मे इससे पूर्व ऐसा कोई उपन्यास प्रकाशित नही हुआ था जिसे कई व्यक्तियों ने मिलकर लिखा हो। इसके अतिरिक्त आपने 'भारत रहस्य','अग्रणी','जीवन ज्योति','बडेबाबू','वह युवक', 'नया कदम' और 'प्रगति' नामक कई उपन्यास और भी लिखे थे। आपकी कहानियों का सकलन 'प्रेम और क्रान्ति' नाम से प्रकाशित हुआ था। आपने श्री विश्वप्रकाश तथा श्री भैरवप्रसाद गुप्त के सहयोग से 'प्रतिशोध का खून' नामक एक कहानी-सकलन भी प्रकाशित किया था, जिसमे तीनो लेखको की एक-एक कहानी समाविष्ट थी। आपकी राजनीति-प्रधान रचनाएँ 'नये एशिया के निर्माता' तथा 'वर्तमान प्रगति तथा ससार का भविष्य' अपनी विशिष्टता के लिए उन दिनो बहुत प्रसिद्ध हुई थी। आपकी 'नये एशिया के निर्माता' नामक पुस्तक का प्रकाशन श्री शम्भूदयाल सक्सेना ने अपनी प्रकाशन-सस्था 'नवयुग ग्रन्थ कुटीर बीकानेर' से किया था। यह पुस्तक कई वर्ष तक सम्मेलन की परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में भी रही थी।

आपने कुछ दिन तक 'इण्डियन प्रेस' मे भी कार्य किया था। वहाँ से 'मंजरी' नामक कहानी पत्रिका का प्रकाशन आपके ही सत्प्रयास से किया गया था। अपने जीवन के उत्तरार्ध मे आपने हिन्दी साहित्य-सम्मेलन मे कार्य किया था और कुछ समय तक आप 'सम्मेलन पत्रिका' के सम्पादक भी रहे थे। सम्मेलन से निवृत्ति पाने के उपरान्त आपका जीवन अत्यन्त कष्ट मे ही व्यतीत हुआ था। अन्तिम दिनों मे आपका मानसिक सन्तुलन भी ठीक नही रहता था। आपने 'दुविधा के पंख' नामक एक उपन्यास और भी लिखा था, जो प्रकाशित न हो सका था।

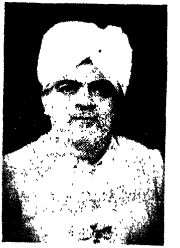
आपका निधन 12 जुलाई सन् 1979 को हुआ था।

श्री विजयानन्द त्रिपाठी 'मानस हंस'

श्री त्रिपाठी जी का जन्म सन् 1881 मे विजयदशमी के दिन उत्तर प्रदेश की प्रख्यात तीर्थ-स्थली काशी के भदैनी नामक मोहल्ले मे हुआ था। विजयदशमी के दिन जन्म लेने के कारण ही आपका नाम विजयानन्द पड़ा था। हिन्दी साहित्य मे आपको 'मानस-मर्मज्ञ' के रूप मे जाना जाता है। आपने मुख्य रूप मे सारा जीवन सामान्यतः तुलसी साहित्य और विशेषत रामचरितमानस के गहन अध्ययन मे ही लगा दिया था। आपकी विद्वत्ता का परिचय इसी बात से भली भाँति मिल जाता है कि फ्रास के एक विद्वान् मिस्टर एलेनडेला ने अग्रेजी मे लिखी अपनी एक पुस्तक मे आपकी विद्वत्ता की चर्चा अत्यन्त विस्तार से की है। श्री एलेनडेला ने कई वर्ष तक काशी मे रहकर उनसे योग तथा वेदान्त-सम्बन्धी ग्रन्थों का अध्ययन किया था। आपकी विद्वत्ता की धाक काशी मे इतनी थी कि दूर-दूर से लोग आपसे अपनी शकाओ का निवारण करने के लिए वहाँ आया करते थे। रामचरितमानस के सम्बन्ध मे आपके द्वारा लिखी गई 'विजया टीका' हिन्दी साहित्य की गौरवनिधि है। आपको 'मानस हस' की उपाधि भी प्रदान की गई थी।

आप उच्चकोटि के साहित्य-मर्मज्ञ होने के साथ-साथ एक जागरूक पत्रकार के रूप मे भी अपनी निर्भीकता के लिए प्रसिद्ध थे। स्वामी करपात्री जी ने जब 'धर्म संघ' नामक सस्था की स्थापना करके उसकी ओर से 'सन्मार्ग' पत्र का प्रकाशन मासिक रूप मे किया था तब त्रिपाठी जी ने कई वर्ष

तक उसका सफल सम्पादन करके अपनी सम्पादन-कला का ज्वलन्त परिचय दिया था। इसी प्रकार करपात्री जी की



प्रेरणा से प्रकाशित 'सिद्धान्त' नामक पत्र के सम्पादन-कार्य मे भी आपने अनन्य सहयोग दिया था। आप विचारों से पूर्ण सनातनधर्मी थे और देश के उत्थान के लिए आपने जीवन-पर्यन्त 'धर्म सघ' के प्रधानमन्त्री के रूप मे समाज और राष्ट्र की उल्लेखनीय सेवा की थी। आपने हिन्दू कोड बिल और गो-हत्या का अत्यन्त सशक्त शैली मे और डटकर विरोध किया था। आपने योगत्रयानन्द श्री 108 शिवराम किंकर जी नामक बगाली महात्मा से योग विद्या का भी सक्रिय ज्ञान प्राप्त किया था।

आपकी लेखनी की प्रखरता का इसीसे आभास हो जाता है कि आपने तुलसी-साहित्य मे स्थान-स्थान पर प्रयुक्त होने वाले अनेक शब्दो को किस ढग से पढा जाय इसके सम्बन्ध मे भी एक सहज पद्धति का अविष्कार किया था। इस सम्बन्ध मे आपके द्वारा लिखित यह पद विशेष ध्यातव्य है ·

तुलसी भाषा पद्य में कतहू न देत णकार।
लेखक लिख्यों णकार जहँ पढ़िये तहाँ नकार।
लिखित खकार षकार ज्यों तथा क्षकार छकार।
कतहूँ तत्सम रूप पुनि तद्भव रूप लखाय।
उच्चारण-सौकर्य ते भक्ति भगति हो जाय।

इस प्रकार उन्होने तुलसी-साहित्य के अध्ययन और अध्यापन की नई परम्परा प्रचलित की थी। आपका यह अटल विश्वास था कि भारत मे 'रामचरितमानस' ही एक ऐसा आध्यात्मिक ग्रन्थ है जिसके पारायण से जन-साधारण का मानस शुद्ध हो सकता है। 'रामचरितमानस' की विजया टीका के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित 'पक्ति पावन परिणय', 'कल्कि विजय नाटक', 'प्रबोध चन्द्रोदय नाटक का गद्य-पद्यमय अनुवाद' 'मन्दिर प्रवेश मीमासा', 'शतपथ चौपाई', 'काशी केदार-माहात्म्य का अनुवाद', 'मानस-प्रसंग', 'मानस-मूल्य','मानस-व्याकरण', 'वीरसिंह नाटक', 'शत शत्रुञ्जय हनुमत् स्तोत्र', 'त्रिपुरा रहस्य' (ज्ञानकाण्ड) का अनुवाद' तथा 'भक्ति मुक्तावली' आदि ग्रन्थ विशेष उल्लेखनीय है।

त्रिपाठी जी की मृत्यु के सम्बन्ध मे उनके द्वारा 'अध्यात्म रामायण' नामक पुस्तक के प्रथम पृष्ठ पर लिखित आपकी ये पक्तियाँ भी विशेष रूप से ध्यातव्य है :

बनेगी क्या ऐसी भी बात,
मोरे नाथ स्वय जावेगे अन्नपूर्णा साथ।
तारक मत्र सुनाकर सिर पर फेरेंगे निज हाथ.
विजयानन्द महामगल के दिन अब केवल सात।

इस कविता को पढने से ऐसा प्रतीत होता है कि आपको यह आभास हो गया था कि आप सप्तमी को ही अपना शरीर छोड़ेंगे। यहाँ यह ध्यातव्य है कि जिस दिन त्रिपाठी जी ने यह कविता लिखी थी उस दिन प्रतिपदा और होली थी। उस दिन आपने सबसे प्रेम-पूर्वक मिलकर आशीर्वाद भी दिया था। अपनी मृत्यु से आठ मास पूर्व भी आपने मध्य-प्रदेश के होशगाबाद जिले के करेली नामक स्थान मे एक महात्मा का दर्शन करके काशी मे अपने प्राण-त्याग करने का आशीर्वाद माँगा था। आपने अपनी इच्छानुसार 16 मार्च सन् 1955 को ही इहलीला सवरण की थी।

श्री विधुशेखर भट्टाचार्य

श्री भट्टाचार्य का जन्म पश्चिमी बगाल के मालदह जनपद के हरिश्चन्द्रपुर नामक ग्राम मे सन् 1878 मे हुआ था। आपकी शिक्षा काशी मे हुई थी। 17 वर्ष की आयु मे कलकत्ता सस्कृत कालेज से 'काव्यतीर्थ' की परीक्षा उत्तीर्ण करके आपने क्वीन्स कालेज बनारस से शास्त्री की उपाधि प्राप्त की थी। इन्ही दिनों आपने सस्कृत वाङ्मय के विविध अंगों-उपागों का गहन अध्ययन भी किया था। सन् 1904 मे आप गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर की प्रख्यात शिक्षण-सस्था 'विश्वभारती शान्तिनिकेतन' मे सस्कृत के अध्यापक होकर

गए थे और 30 वर्ष तक अनवरत उस संस्था की अनेकाविध सेवाएँ कीं।

शान्तिनिकेतन में जाकर गुरुदेव के सम्पर्क से आपने फारसी, जर्मन, तिब्बती और चीनी भाषाओं का अध्ययन करने के साथ-साथ पालि भाषा तथा बौद्ध दर्शन का भी गहन ज्ञान प्राप्त किया था।



अपने छात्र-जीवन मे आपने जहाँ काव्य-रचना मे अत्यन्त प्रावीण्य प्राप्त किया था वहाँ न्याय, दर्शन, व्याकरण, पालि तथा बौद्ध धर्म से सम्बन्धित लगभग 17 मौलिक एवं सम्पादित ग्रन्थो की रचना की थी। विश्वभारती से अवकाश प्राप्त करने के उपरान्त आप कुछ समय तक कलकत्ता विश्वविद्यालय मे भी सस्कृत विभाग के अध्यक्ष रहे थे।

आपके प्रखर वैदुष्य से प्रभावित होकर भारत सरकार ने सन् 1936 मे आपको जहाँ 'महामहोपाध्याय' की उपाधि से सम्मानित किया था वहाँ विश्वभारती की ओर से भी आपको सन् 1957 मे 'देशिकोत्तम' की सम्मानोपाधि प्रदान की गई थी। आपने सस्कृत-वाङ्मय के अनेक लुप्त ग्रन्थो का पुनरुद्धार किया था। आप हिन्दी को सार्वदेशिक व्यवहार की भाषा बनाने के कट्टर समर्थक थे।

आपका निधन सन् 1957 मे हुआ था।

कर्नल विश्वनाथ उपाध्याय

कर्नल विश्वनाथ उपाध्याय का जन्म सन् 1878 मे जम्मू (कश्मीर) मे हुआ था। आपके पूर्वज मूलत काशी के निवासी थे। आपके पिता प० द्वारिकाप्रसाद उपाध्याय कश्मीर के महाराजा रणवीरसिंह द्वारा संचालित जम्मू की 'राजकीय संस्कृत पाठशाला' मे अध्यापनार्थ वहाँ चले गए थे और स्थायी रूप से वहाँ पर रहकर ही संस्कृत साहित्य के प्रचार एवं प्रसार का कार्य कर रहे थे। यहाँ यह स्मरणीय है कि सन् 1863 मे उक्त पाठशाला के प्रधानाध्यापक श्री वेंकटराम शास्त्री को जब कश्मीर के महाराजा ने काशी के क्वीन्स कालेज के प्रिंसिपल श्री ग्रिफित के पास अपने विद्यालय के लिए सस्कृत के कुछ पडितो को बुलाने के लिए भेजा था तब जो विद्वान् वहाँ गए थे उनमे उपाध्याय जी के अतिरिक्त प० बाबूराम शास्त्री, काशीनाथ शास्त्री और गुरुप्रसाद पाण्डेय के नाम भी उल्लेख योग्य है।

कश्मीर के महाराज रणवीरसिंह की यह अत्यन्त हार्दिक इच्छा थी कि उनकी सेना के सचालन और कवायद के आज्ञा-वाक्य सस्कृत भाषा मे ही हो। फलस्वरूप रणवीर सस्कृत पाठशाल के प्रधानाध्यापक श्री वेंकटराम शास्त्री ने इन विद्वानो की सहायता से यह कार्य प्रारम्भ किया था। जलवायु अनुकूल न होने के कारण उपाध्याय जी के उक्त तीन साथी तो काशी वापस लौट आए और आप ही वहाँ रुके रहे। महाराजा को आपके द्वारा किया गया अनुवाद-कार्य बहुत पसन्द आया और प्रसन्न होकर उन्होने उपाध्याय जी को 'कर्नल' का पद प्रदान करने के साथ-साथ सेना मे शिक्षा का प्रचार करने का सम्पूर्ण भार ही सौप दिया। श्री उपाध्याय जी ने सैन्य-सचालन की तब तक सम्पूर्ण पुस्तको का अंग्रेजी से सस्कृत और हिन्दी मे अनुवाद कराने के लिए एक अलग विभाग ही खोल दिया और इसके लिए 'युद्ध यन्त्रालय' नाम से एक प्रेस भी खोल दिया गया। आपके द्वारा अनूदित कुछ शब्दो के नमूने इस प्रकार है—



क्विक मार्च—शीघ्र व्रजत

स्लो मार्च—शनैः व्रजत

डबल मार्च—शीघ्रतरं व्रजत

फार्म फोर्स—चतुष्क रचयत

सन् 1883 मे महाराजा रणवीरसिंह के देहान्त के बाद भी महाराजा प्रतापसिंह के राज्य-काल तक संस्कृत कवायद का प्रचार रहा था। जब राज्य के नवीन प्रबन्ध के कारण संस्कृत कवायद बन्द कर दी गई तब श्री उपाध्याय जी को सैनिक विभाग से हटाकर राज्य का कोषाध्यक्ष और सेना का एडजूटेंट जनरल नियुक्त कर दिया गया था। सन् 1894 मे वहाँ से अवकाश ग्रहण करके जब आप काशी को लौट रहे थे तो मार्ग मे ही आपका देहान्त हो गया था।

अपने पिता की सेवा-निवृत्ति के बाद विश्वनाथ जी ने भी सेना मे कार्य प्रारम्भ कर दिया था और धीरे-धीरे आप मेजर, ब्रिग्रेड मेजर, लैफ्टिनेंट कर्नल और जनरल आफीसर कमाण्डिग के पद तक पहुँचकर सन् 1923 मे सेना से निवृत्त हुए थे। सेवा-निवृत्ति के बाद आप काशी चले आए थे और मृत्यु-पर्यन्त वही रहे थे। अपने 30 साल के सैनिक जीवन मे आपने साहित्य और संस्कृति के प्रति अपनी निष्ठा को कम नही किया था। काशी मे रहते हुए नित्यप्रति गंगा-स्नान, पूजा, ध्यान और मनन मे ही आपका अधिकाश समय व्यतीत होता था। साहित्य के प्रति आपकी रुचि का ज्वलन्त प्रमाण यही है कि आपने कश्मीर की प्राकृतिक सुषमा के सम्बन्ध मे ब्रजभाषा मे 'कश्मीर छटा' नामक एक काव्य-पुस्तिका की भी रचना की थी। इस पुस्तिका का एक पद इस प्रकार है :

जहँ केसर अरु कुसुम फल,
सुधा सरिस सरसात।
भारत का सोइ मुकुट मणि,
काश्मीर विख्यात।

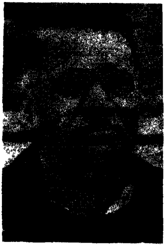
कर्नल साहब के एक-मात्र पुत्र श्री काशीनाथ उपाध्याय 'भ्रमर' भी हिन्दी के अच्छे साहित्यकार है और वे 'बेधड़क बनारसी' नाम से हास्य-रचना करते है।

आपका निधन मार्च सन् 1956 मे हुआ था।

श्री विश्वनाथ गंगाधर वैशम्पायन

श्री वैशम्पायन का जन्म उत्तर प्रदेश के बाँदा नामक नगर मे 28 नवम्बर सन् 1910 को हुआ था। आपकी शिक्षा केवल इण्टर तक ही हो सकी थी कि छात्रावस्था मे ही आपका सम्पर्क क्रातिकारी दल से हो गया और आप सन् 1929 मे गृह त्याग करके उसके सक्रिय सदस्य हो गए। आप लगभग दो वर्ष तक अज्ञातवास मे रहे। किन्तु फिर नौकरशाही के चंगुल से बचे न रह सके और 11 फरवरी सन् 1931 को कानपुर मे गिरफ्तार करके अनिश्चित काल के लिए जेल में डाल दिए गए। आप लगभग 9 वर्ष तक कारावास मे रहे। आपने जेल मे रहते हुए अपने अध्ययन को आगे बढ़ाया था। अनेक अभियोगो के सिलसिले मे आप पर मुकदमा चलता रहा, किन्तु जब न्यायालय मे आपके विरुद्ध कोई प्रमाण न मिल सका तो केन्द्रीय शासन ने 16 अगस्त सन् 1933 को आपको अनिश्चित काल के लिए नजरबन्द किए जाने के आदेश दे दिए। आपने अपने नजरबन्दी के दिनों मे ब्रिटिश नौकरशाही के नृशस अत्याचारों के विरुद्ध 23 दिन का अनशन भी किया था। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इस अनशन के बाद ही 19 मार्च सन् 1939 को आप जेल से रिहा किए गए थे।

आपका सम्बन्ध जिस क्रातिकारी दल मे था उसमे अमरशहीद चन्द्रशेखर आजाद और सरदार भगतसिंह-जैसे अनेक क्रातिकारी देश की आजादी की लडाई मे सशस्त्र क्राति करने के विचार से जुटे हुए थे। वैशम्पायन जी चन्द्रशेखर आजाद के सहायक के रूप मे ही मुख्यत रहा करते थे। अपने जेल-जीवन मे आपने अपने अध्ययन को आगे बढ़ाते हुए कुछ लेखन का अभ्यास भी कर लिया था। फलस्वरूप जेल से छूटने के उपरान्त आपने जहाँ पत्रकारिता को अपनाया वहाँ अनेक ग्रन्थो के निर्माण मे भी अपने को लगाया। आपने कुछ दिन मुन्शी प्रेमचन्द के सरस्वती प्रेस मे कार्य करने के बाद दिल्ली से प्रकाशित होने वाले



'नया हिन्दुस्तान' नामक दैनिक पत्र का भी सन् 1946-47 में लगभग डेढ़ वर्ष तक सफलतापूर्वक सम्पादन किया था। इसके उपरान्त आप मध्यप्रदेश चले गए और रायपुर से प्रकाशित होने वाले 'दैनिक महाकोशल' का सम्पादन अनेक वर्ष तक किया था। वहीं पर रहते हुए जब आपने 'महा-कोशल' से त्यागपत्र दिया तब रायपुर में ही 'आजाद प्रिंटिंग प्रेस' की स्थापना करके उसकी ओर से लगभग आठ वर्ष तक 'विचार और समाचार' पत्र का सफल सम्पादन भी आपने किया था। आप अपने जीवन के अन्तिम दिनों में लगभग 12 वर्ष तक छत्तीसगढ़ क्षेत्र के निवासी रहे। आपकी सह-धर्मिणी श्रीमती ललिता वैशम्पायन भी मध्यप्रदेश के अनेक शिक्षणालयों की प्राचार्या रही थी।

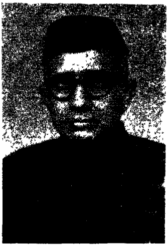
आप जहाँ कुशल कहानीकार और उपन्यास-लेखक थे वहाँ नाटक-लेखन में भी आपकी प्रतिभा का अवदान हिन्दी को मिला था। आपने बगला, मराठी और अँग्रेजी से भी अनेक रचनाओं का अनुवाद प्रस्तुत किया था। इतिहास-लेखन में भी आप पीछे नहीं रहे थे, आपकी मौलिक रचनाओं में 'भारतीय स्वतन्त्रता का इतिहास' (राजनीति), 'मातृत्व का अभिशाप', 'मातृत्व की परिधि', 'बबूल के काँटे और फूल' 'बौराई ठकुराइन' (उपन्यास) तथा 'बर्फीली चट्टानों को गर्म लहू' (नाटक) आदि प्रमुख है। इनके अतिरिक्त आपने अनेक कहानियाँ भी लिखी थी जो प्रकाशकों की उपेक्षा-वृत्ति के कारण पुस्तक के रूप में प्रकाशित न हो सकी। आपके द्वारा अनूदित कृतियों में 'जाई जुई', 'महाराष्ट्र प्रभात' (मराठी से), 'कगाल की बेटी' तथा 'निर्दोष कन्या' (बगला से) आदि प्रमुख है। अग्रेजी से भी आपने 'अकबर दि ग्रेट' नामक ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया था। मूलत मराठीभाषी होने के कारण आप हिन्दी के अतिरिक्त मराठी में भी लिखा करते थे। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में आपने अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद के संस्मरण भी लिखे थे।

श्री वैशम्पायन ऐसे क्रातिकारी लेखक थे जिनके एक हाथ में लेखनी और दूसरे हाथ में पिस्तौल रहा करती थी। आपके सम्बन्ध में हिन्दी के अनन्य शैलीकार श्री रामवृक्ष बेनीपुरी की वे पक्तियाँ अक्षरश सटीक सिद्ध होती है जो उन्होंने एक बार लिखी थी। वे पक्तियाँ इस प्रकार है—"भाई वैशम्पायन ने लड़कपन से ही बम और पिस्तौल के खेल खेले है। जो आग से खेलता है उसके हृदय में कैसे अगारे जलते होते है, काश! हम यह अनुभव कर पाते। जिस हाथ में बम और पिस्तौल थे उसने अब लेखनी पकड़ी है। भाई वैशम्पायन में जीवन है, वे बढ रहे है। अपनी लेखनी से वे नित्य नई चीजें देते जा रहे है, जो हमारे को देश को नए साँचे में ढालने में सिद्ध हो सकेगी।"

आपका निधन 20 अक्तूबर सन् 1967 को मधुमेह और रक्तचाप की बीमारी के कारण हुआ था। लगभग 17 वर्ष की बीमारी ने आपके शरीर को खोखला कर दिया था।

डॉ० विश्वनाथ गौड़

डॉ० गौड का जन्म उत्तर प्रदेश के कानपुर नगर में 31 मार्च सन् 1921 को हुआ था। आपके पिता पण्डित कृष्णलाल गौड नगर के प्रख्यात कर्मकाण्डी, विचारक एव ज्योतिषी थे। उन्हीके निरीक्षण में आपका लालन-पालन बड़े ही धार्मिक तथा सास्कृतिक वातावरण में हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा पण्डित चन्द्रशेखर पाण्डेय तथा पण्डित अयोध्यानाथ शर्मा-जैसे प्रख्यात विद्वानों की देख-रेख में हुई थी और उनके ही सत्प्रयास से आपने शास्त्री, साहित्य-रत्न आदि परीक्षाएँ देने के उपरान्त आगरा विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी तथा सस्कृत) तथा पी-एच० डी० किया



था। आपकी प्रकाण्ड प्रतिभा का परिचय उसी समय मिल गया था जब आपने हाई स्कूल और इण्टरमीजिएट की परीक्षाओं में सारे प्रदेश में सर्वाधिक अक प्राप्त करके प्रथम श्रेणी ग्रहण की थी। आपको अपने छात्र-जीवन में इस उपलक्ष

मे मेधावी छात्र के रूप में तीन बार स्वर्ण पदक प्रदान किये गए थे।

आपने सर्वप्रथम सन् 1945 मे सनातन धर्म कालेज नवाबगंज कानपुर के संस्कृत-विभाग मे प्राध्यापक के रूप मे अपना कार्य प्रारम्भ किया था और सन् 1949 में उस पद पर स्थायी हो गए थे। सन् 1955 मे आपने 'आधुनिक हिन्दी-काव्य में रहस्यवाद' विषय पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी और सन् 1957 मे उसी कालेज मे 'विभागाध्यक्ष' बन गए थे, जिससे आप 30 जून सन् 1981 को अवकाश ग्रहण किया था।

अपने इस कार्य-काल मे आपने एक कुशल शिक्षक के रूप मे तो ख्याति अर्जित की ही थी, लेखन के क्षेत्र मे भी अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। आपकी प्रमुख प्रकाशित रचनाओ मे 'आधुनिक हिन्दी काव्य मे रहस्यवाद' (1961) नामक शोध-ग्रन्थ के अतिरिक्त 'पद्मावति समय · पृथ्वीराज रासो' (1948) तथा 'ऋतु वर्णनसमुच्चय' (1954) के नाम विशेष उल्लेख्य है। इनके अतिरिक्त आपके अनेक शोधपूर्ण लेखो के 4-5 सकलन अभी अप्रकाशित ही पडे है।

अपने अध्यापक-जीवन मे 'कानपुर विश्वविद्यालय' की स्थापना के उपरान्त आपने सन् 1967 से सन् 1975 नक 'हिन्दी पाठ्यक्रम समिनि' के सदस्य और सयोजक के रूप मे सफलतापूर्वक कार्य करने के अतिरिक्त 'विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी समिति' के सदस्य के रूप मे भी उल्लेखनीय सेवाएँ की थी। इनके साथ-साथ आप लखनऊ, जोधपुर, जयपुर, रुहेलखण्ड, गोरखपुर, गढवाल और अवध विश्व-विद्यालयो की 'हिन्दी पाठ्यक्रम समितियो' के भी सक्रिय तथा उत्साही सदस्य रहे थे। आपने अपने निरीक्षण मे जहाँ अनेक छात्रो को हिन्दी का शोध-निर्देशन दिया था वहाँ 'सनातन धर्म कालेज' के विकास मे भी आपकी प्रमुख भूमिका रही थी। आपके सतर्क निरीक्षण मे सम्पन्न हुए अनेक शोध-प्रबन्ध हिन्दी की गौरव-निधि है।

कालेज से सेवा-निवृत्ति के उपरान्त आपका स्वास्थ्य गड़बड़ा गया था और इसी कारण 4 दिसम्बर सन् 1981 को आपका हृदयगति रुक जाने के कारण असमायिक निधन हो गया।

आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र

आचार्य मिश्र का जन्म सन् 1906 में उत्तर प्रदेश के प्रख्यात तीर्थ वाराणसी के ब्रह्मनाल नामक मोहल्ले में हुआ था। आपके पूर्वज संस्कृत के प्रख्यात काव्य 'नैषध चरित' के अमर प्रणेता श्रीहर्ष के वंशज शाण्डिल्य गोत्री कान्यकुब्ज मिश्र ब्राह्मण थे। आपके पिता श्री रघुनन्दन मिश्र निसगर (रायबरेली) के निवासी थे और उनका विवाह काशी के ब्रह्मनाल मोहल्ले के पण्डित वृन्दावन शुक्ल की सबसे बड़ी पुत्री अन्नपूर्णा देवी से हुआ था। क्योकि पण्डित वृन्दावन शुक्ल अपने दामाद को काशी मे ही रखना चाहते थे अतः उन्होने आपको वहाँ के 'भारत जीवन प्रेस' मे काम दिला दिया था। यहाँ पर ही आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र का जन्म हुआ था। आप जब केवल 3 वर्ष के ही थे कि आपके पिता का एक महामारी के कारण सन् 1910 मे असामयिक निधन हो गया और आपकी माता गाँव की खेती के कार्य की देख-रेख के लिए रायबरेली चली गई। आपकी शिक्षा-दीक्षा अपनी नानी की देख-रेख मे काशी मे ही हुई थी।

श्री मिश्र जी जिन दिनो सन् 1920 मे काशी के हरिश्चन्द्र महाविद्यालय मे अध्ययन कर रहे थे तब आपने गाधीजी के असहयोग-आन्दोलन के कारण पढाई छोड दी। उन दिनो पढाई छोडने वाले आपके सहपाठियो मे भारत के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री और पश्चिमी बगाल के भूतपूर्व राज्यपाल श्री त्रिभुवननारायणसिह भी थे। असहयोग-आन्दोलन मे प्रत्यक्ष रूप से योगदान न करके आप श्री मन्मथनाथ गुप्त के साथ क्रान्तिकारी आन्दोलन मे भाग लेने लगे और बचाव के लिए लाला भगवानदीन के 'हिन्दी साहित्य विद्यालय' की सायकालीन कक्षाओ मे अपना नाम भी लिखा लिया। 'दीन' जी के साहित्य विद्यालय मे रहते हुए ही आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की प्रथमा, मध्यमा और उत्तमा की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की और 'दीन' जी से 'रामचरितमानस' का विधिवत् गहन अध्ययन किया। 8 वर्ष तक निरन्तर क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो मे भाग लेते रहने के कारण आप विधिवत् अपने अध्ययन को जारी नही रख सके थे, किन्तु लाला भगवानदीन जी की प्रेरणा पर आपने प्राईवेट छात्र के रूप में 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' की 'प्रवेशिका' परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण कर ली थी।

आप इधर-उधर कुछ काम-काज करके ही अपना अध्ययन जारी रखने का विचार रखते थे, परन्तु 'दीन' जी के अनवरत प्रोत्साहन से आपने सन् 1928 मे विश्वविद्यालय मे विधिवत् प्रवेश ले लिया था।

क्योंकि आप उन दिनों अनेक क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो मे भाग लिया करते थे इसलिए आपने जहाँ 'भगवानदीन साहित्य विद्यालय' के माध्यम से अपनी हिन्दी की योग्यता बढाई थी वहाँ संस्कृत का भी अपना अध्ययन जारी रखा था। प्रख्यात क्रान्तिकारी श्री चन्द्रशेखर आजाद आपके निवास-स्थान को निरापद और सुरक्षित समझते थे अत. वे प्राय. वहाँ आया करते थे। फलस्वरूप आपका घर बन्दूक, पिस्तौल, रिवाल्वर, बम तथा अन्य विस्फोटक पदार्थों का गोदाम-सा ही बन गया था। 'काकोरी' की डकैती की सारी योजना आपके ही निवास-स्थान पर बनी थी और क्रान्तिकारी आन्दोलन से सम्बन्धित प्राय· सारा साहित्य वहाँ ही तैयार हुआ करता था। प्रख्यात क्रान्तिकारी श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल की पुस्तक 'बन्दी जीवन' के हिन्दी-अनुवाद का बहुत-सा अश आपने ही शुद्ध किया था और 'चन्द्रशेखर आजाद' से बहुत प्रभावित होने के कारण ही आपने अपने ज्येष्ठ पुत्र का नाम' चन्द्रशेखर' रखा था। चन्द्रशेखर आजाद ने उन दिनो सस्कृत का अध्ययन करने की दृष्टि से भी काशी को अपना केन्द्र बनाया था। सन् 1921 मे पढाई छोड देने के उपरान्त आपकी ननिहाल के लोगो ने आपका विवाह करा दिया, किन्तु थोडे ही समय मे आपकी पहली पत्नी का प्रसूति रोग मे शरीरान्त हो गया और परिवार वालो के विवश करने पर आपको द्वितीय विवाह करना पडा। जिन दिनो आप क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो मे भाग ले रहे थे तब आजीविका की समस्या के समाधान के निमित्त आपने अपने मित्र श्री बजरगबली गुप्त के परिवार वालो के द्वारा सचालित 'लक्ष्मीनारायण प्रेस' मे कम्पोजिग का कार्य भी सीखा था और कुछ दिन तक यह कार्य करने के उपरान्त आपने 'ज्ञान मण्डल' मे जाकर 'प्रूफ रीडिग' का कार्य करना प्रारम्भ किया था। आप ज्ञान-मण्डल मे कार्य करने के अतिरिक्त काशी के अन्य प्रकाशको की पुस्तको के प्रूफ देखकर अपनी जीविका उपार्जित किया करते थे। उन्ही दिनों आपका सम्पर्क अलकार शास्त्र के प्रख्यात पण्डित और 'भारती भूषण'-जैसे प्रसिद्ध ग्रन्थ के लेखक सेठ अर्जुनदास केडिया से हो गया और आप उनके लेखन-कार्य में सहायता करते रहे।

जब आपके सामने निश्चित आजीविका का प्रश्न विकट रूप से उपस्थित हुआ तो आपने 'अखिल भारतीय मठाधीश सम्मेलन' मे विधिवत् नौकरी कर ली और अपने क्रान्तिकारी मित्र श्री बजरगबली गुप्त के सहयोग से 'साहित्य सेवक कार्यालय' नाम की एक प्रकाशन-सस्था स्थापित की, जिसकी ओर से सर्व प्रथम लाला भगवानदीन की 'कविता का टीका' नामक पुस्तक प्रकाशित की गई थी। सन् 1930 तक आप इस प्रकाशन-सस्था से बराबर जुडे रहे, किन्तु बाद मे अपना अध्ययन जारी रखने की भावना से आपने प्रकाशन का कार्य पूर्णत श्री बजरगबली गुप्त को सौप दिया और 'मठाधीश सम्मेलन' की नौकरी भी छोड दी थी।



उन्ही दिनो इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण करके जब आपने आगे की पढाई जारी रखने की दृष्टि से विश्वविद्यालय मे विधिवत् प्रवेश लिया तब आपको 'आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी छात्रवृत्ति' भी मिलने लगी थी, जो 2 वर्ष तक बराबर मिलती रही थी। जब आप बी० ए० मे पढ ही रहे थे कि अकस्मात् आपके गुरु लाला भगवानदीन का देहावसान हो गया और मित्रो के अनुरोध पर लालाजी की स्मृति को अक्षुण्ण रखने की दृष्टि से आपको उनके विद्यालय को सँभालना पडा। आपने इस कार्य को सँभालने के साथ ही उसका नाम 'श्री भगवानदीन हिन्दी साहित्य विद्यालय' रख दिया और अपने सतत परिश्रम तथा अनवरत अध्यवसाय से उसको दिनानुदिन उत्कर्ष के चरम शिखर तक पहुँचाने का उल्लेखनीय कार्य किया। यह आपके ही अटूट परिश्रम तथा कार्यनिष्ठा का सुपरिणाम है कि वाराणसी के मान मन्दिर के महलो मे से एक महल इस विद्यालय के लिए खरीद लिया गया और उसे एक अनुपम 'अनुसधान केन्द्र' में परिवर्तित करने की

क्रान्तिकारी योजना भी आपने ही बनाई थी।

बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने संस्कृत तथा हिन्दी दोनों विषयों मे एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की और महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय के पत्र 'सनातन धर्म' के सम्पादन मे भी सहयोग देते रहे। एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा की समाप्ति पर आपने 'बिहारी की कविता' नाम से एक शोधपूर्ण प्रबन्ध भी प्रस्तुत किया था। उन दिनो एम० ए० के छात्रों के लिए ऐसा प्रबन्ध लिखकर देने की अनिवार्यता थी। बाद मे मिश्र जी का यह प्रबन्ध 'बिहारी की वाग्विभूति' नाम से प्रकाशित भी हुआ था। आपकी इस सफलता पर मालवीय जी बहुत प्रसन्न हुए थे और उन्होने आपको डी० लिट्० की उपाधि के लिए शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करने का आदेश भी दिया था। इसी बीच जब विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ० श्यामसुन्दरदास सेवा-निवृत्त हुए और उनके स्थान पर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल अध्यक्ष बनाए गए तब आप भी सन् 1937 मे हिन्दी विभाग मे प्रवक्ता के रूप मे नियुक्त हुए थे। उन दिनो आपके साथ आचार्य शुक्ल के अतिरिक्त हिन्दी विभाग मे पण्डित अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', आचार्य केशवप्रसाद मिश्र तथा डॉ० पीताम्बरदत्त बडथ्वाल-जैसे दिग्गज महानुभाव कार्य-निरत थे। विश्वविद्यालय मे कार्य करने के साथ-साथ आपने 'भगवानदीन हिन्दी साहित्य विद्यालय' के कार्य मे भी ढील नही आने दी और उसे भी दिन-प्रतिदिन उत्कर्ष के चरम शिखर पर पहुँचाने का आप अनवरत प्रयास करते रहे थे। काशी विश्वविद्यालय मे अध्यापन का अवसर मिलने से आपके अध्यापन-कौशल मे और भी निखार आ गया और आपकी ख्याति काशी की परिधि को लाँघकर देश के कोने-कोने तक पहुँच गई। आपकी अध्यापन-पटुता का अनुमान इसी बात से हो जाता है कि आपकी कक्षा मे साहित्य के छात्रो की सर्वाधिक संख्या हो जाया करती थी और दूसरे वर्गो के छात्र भी वहाँ आकर लाभान्वित हुआ करते थे।

विश्वविद्यालय मे अध्यापन-कार्य करने के साथ-साथ आपने 'नागरी प्रचारिणी सभा' के तत्कालीन प्रधानमन्त्री (और सभा के संस्थापकों मे एक) श्री रामनारायण मिश्र की प्रेरणा पर सभा के कार्य मे सहयोग देना प्रारम्भ किया और आप उसके 'हस्तलिखित पुस्तकों की खोज' विभाग के अध्यक्ष हो गए। प्राचीन साहित्य मे खोज की अभिरुचि तथा प्रवृत्ति को ध्यान मे रखकर ही आपको यह विभाग सौंपा गया था। आपके कार्य सँभालने से पूर्व वह विभाग डॉ० श्यामसुन्दर-दास, डॉ० हीरालाल तथा डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल-जैसे विद्वानो की देख-रेख मे चलता था। आपने लगभग 11-12 वर्ष के अथक परिश्रम से इस विभाग की जो समृद्धि एवं अभिवृद्धि की, उससे सभा का गौरव बहुत बढ़ा है। जब सभा की 'स्वर्ण जयन्ती' मनाने का निश्चय किया गया तब सभा का एक प्रामाणिक इतिहास प्रस्तुत करने का दायित्व भी आपको सौंपा गया था। जब आप सभा के 'साहित्य मन्त्री' बनाए गए तब आपके निरीक्षण मे प्राचीन ग्रन्थो के सम्पादन की जो क्रान्तिकारी योजना बनाई गई थी उसके अन्तर्गत प्रकाशित अनेक ग्रन्थो से हिन्दी-साहित्य की अभिवृद्धि की दिशा मे बहुत बडा कार्य हुआ है। आपके कार्य-काल मे जहाँ 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' के माध्यम से शोध के क्षेत्र मे नये आयाम उद्घाटित हुए वहाँ उसका प्रकाशन भी नियमित रूप से होने लगा। आपने पत्रिका के लिए एक पूर्णकालिक सहायक सम्पादक की नियुक्ति की व्यवस्था कार्यसमिति के माध्यम से कराई और सर्व प्रथम डॉ० शिवनाथ (वर्तमान मे 'विश्व भारती शान्ति निकेतन' मे हिन्दी विभाग से सम्बद्ध) की नियुक्ति की गई। जब सन् 1946 मे डॉ० सम्पूर्णानन्द सभा के अध्यक्ष तथा आप प्रधानमन्त्री बनाए गए तब आपने जहाँ सभा की अनेक साहित्यिक प्रवृत्तियो को संवर्द्धित किया वहाँ विधि-सम्बन्धी शब्दावली, पारिभाषिक शब्दावली तथा अंग्रेजी शब्दों के समानान्तर शब्दो के निर्माण के लिए आपने विधिवत् एक 'कोश विभाग' की स्थापना ही कर दी। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि सभा के इस विभाग मे सहयोग देने के लिए जहाँ उत्तर प्रदेश शासन ने अपने न्यायाधीश श्री गोपालचन्द्र सिनहा को भेजा था वहाँ सर्वश्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी, सुनीतिकुमार चटर्जी तथा बाबूराव विष्णु पराडकर प्रभृति विद्वानो ने अपना सक्रिय योगदान दिया था। आपके ही प्रधानमन्त्रित्व-काल मे डॉ० सम्पूर्णानन्द को अभिनन्दन-ग्रन्थ समर्पित करने का निश्चय किया गया था। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की प्रख्यात कृति 'रस मीमांसा', आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी द्वारा सम्पादित 'सूर सागर' और पण्डित शम्भूनारायण चौबे द्वारा सम्पादित 'रामचरित मानस' आदि ग्रन्थो का प्रकाशन भी आपके ही कार्य-काल मे हुआ था।

जब सन् 1947 मे डॉ० सम्पूर्णानन्द उत्तर प्रदेश सरकार के शिक्षामन्त्री होकर लखनऊ चले गए तब काशी की प्रख्यात साहित्यिक संस्था 'प्रसाद परिषद्' के सभापति आप ही बनाए गए थे। इस परिषद् के प्रथम अध्यक्ष आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और द्वितीय अध्यक्ष डॉ० सम्पूर्णानन्द थे। इस परिषद् के अध्यक्ष के रूप मे आपने जहाँ काशी मे अनेक साहित्यिक कार्यक्रमो का प्रारम्भ किया वहाँ आपने स्वयं भी साहित्य-रचना करने की दिशा मे अभूतपूर्व प्रगति की। आपकी 'घन आनन्द और आनन्द घन', 'भारतीय साहित्य शास्त्र' तथा 'घनानन्द ग्रन्थावली' नामक कृतियों का प्रकाशन 'प्रसाद परिषद्' की ओर से ही हुआ था। नागरी प्रचारिणी सभा की 'हीरक जयन्ती' के उपलक्ष्य में सभा की ओर से 'हिन्दी शब्द सागर' (आठ खण्ड) और 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास' को कई खण्डो मे प्रकाशित करने की जो महत्त्वपूर्ण योजना बनी थी उसके सम्पादन का दायित्व भी आपको ही सौंपा गया था। आपके ही निरीक्षण में नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से जिन अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थावलियो के प्रकाशन तथा सम्पादन का कार्य प्रारम्भ हुआ था उनमे से 'भिखारीदास ग्रन्थावली', 'मान ग्रन्थावली', 'पद्माकर ग्रन्थावली' और 'मतिराम ग्रन्थावली' आदि प्रमुख है। डॉ० हेमचन्द्र जोशी और किशोरीदास वाजपेयी-जैसे विद्वानो के निरीक्षण मे कोश के कार्य को सुचारु रूप से सम्पन्न कराने मे आपका अभिनन्दनीय योगदान रहा था। जब आप मगध विश्वविद्यालय गया मे हिन्दी-विभागाध्यक्ष होकर चले गए तो आपने सभा के कार्यों से अपने को विरत कर लिया था। इसी प्रकार जब उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से हिन्दी के लेखको को पुरस्कार देने की योजना प्रारम्भ हुई और 'हिन्दी समिति' की स्थापना करके उसकी ओर से उत्कृष्ट मानक ग्रन्थो के प्रकाशन की योजना का सूत्रपात हुआ तब उसके कार्यान्वयन मे भी आपका उल्लेखनीय सहयोग रहा था। मगध विश्वविद्यालय से निवृत्ति पाने के उपरान्त सन् 1968 में आप विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन के तत्कालीन उप-कुलपति डॉ० शिवमगलसिंह 'सुमन' की प्रेरणा पर वहाँ स्थापित 'बालकृष्ण शर्मा नवीन शोध पीठ' के निदेशक बनकर वहाँ चले गए। सन् 1973 के अन्त मे आप वहाँ से निवृत्ति पाकर काशी आ गए और 'रामचरितमानस' के शब्दानुवर्ती तिलक और 'मानस-मीमासा' के कार्य के साथ-साथ आप 'सूर सागर' के छूटे हुए कार्य को सम्पूर्णता देने मे संलग्न हो गए।

आपकी गणना जहाँ कुशल अध्यापक और साहित्य के मर्मज्ञ विद्वानों मे की जाती थी वहाँ आप मध्ययुगीन और रीति-काव्य के प्रकाण्ड पण्डित थे। सम्पादन, आलोचना और अन्वेषण के अतिरिक्त अनेक दुरूह काव्य-ग्रन्थों की प्रामाणिक टीकाएँ प्रस्तुत करने की दिशा मे भी आपका प्रमुख योगदान था। डॉ० श्यामसुन्दरदास की सम्पादन-कला, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की समीक्षा-पद्धति और लाला भगवानदीन की टीका-परम्परा को आपने अपने कृतित्व मे सर्वात्मना समाविष्ट कर लिया था। आपने जहाँ कुछ समय तक महामना मालवीय जी के पत्र 'सनातन धर्म' का सम्पादन किया था वहाँ 'वर्णाश्रम धर्म' नामक पत्र के भी सम्पादक रहे थे। आपके द्वारा प्रस्तुत किए गए अनेक मौलिक ग्रन्थो मे 'शीतलाष्टक', 'हिन्दी साहित्य का अतीत', 'हिन्दी का सामयिक साहित्य', 'वाङ्मय विमर्श', 'हिन्दी-नाट्य-साहित्य का विकास', 'बिहारी की वाग्विभूति' तथा 'काव्याग कौमुदी' आदि प्रमुख हैं। आपके द्वारा सम्पादित और टीका-ग्रन्थो की सख्या भी बहुत बडी है, किन्तु उनमे 'रसखानि', 'घनानन्द ग्रन्थावली', 'घनानन्द कवित्त', 'पद्माकर ग्रन्थावली', 'रसिक प्रिया', 'कवितावली', 'बिहारी', 'केशवदास', 'केशव ग्रन्थावली','रामचरितमानस (काशिराज सस्करण), 'भूषण ग्रन्थावली', 'जगत् विनोद', 'पद्माभरण', 'सुदामाचरित', 'सत्य हरिश्चन्द्र नाटक' तथा 'हम्मीर हठ' आदि प्रमुख है। आपकी समीक्षा-पद्धति की एक-मात्र यही विशेषता है कि आप प्राचीन और नवीन दोनो का अद्भुत समन्वय करने के पक्षपाती रहे थे। आप प्रगतिशीलता को अपनाने के समर्थक अवश्य थे, किन्तु उसके कठमुल्लेपन के सर्वथा विरोधी थे। आपने अपनी समीक्षा-पद्धति से जहाँ अनेक अनुसन्धाताओ का मार्ग प्रशस्त किया वहाँ हिन्दी-साहित्य के इतिहास को भी एक सर्वथा नई दिशा दी थी। आप कुशल समीक्षक होने के साथ-साथ उच्चकोटि के कथा-लेखक भी थे। आपकी ऐसी रचनाएँ 'नीला कण्ठ उजले बोल' नामक कृति मे समाविष्ट है।

आपकी साहित्यिक प्रतिभा का इससे अधिक उत्कृष्ट उदाहरण और क्या हो सकता है कि आपकी 'वाङ्मय विमर्श' नामक कृति को सन् 1944 मे हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ कृति

मानकर काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने 'आचार्य महावीर-प्रसाद द्विवेदी स्वर्ण पदक' प्रदान किया था। यह आपकी विद्वत्ता की चरम कसौटी ही है कि आपको सन् 1967 में 'विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन' ने अपनी डी० लिट्० की सम्मानित उपाधि प्रदान की थी। आपकी हिन्दी भाषा तथा साहित्य के प्रति की गई विशिष्ट सेवाओं के उपलक्ष्य में 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' ने आपको 'साहित्य वाचस्पति' के सम्मान से भी अभिषिक्त किया था। आपके अनेक शिष्यों और अनुयायियों ने भारत की राजधानी दिल्ली में सन् 1976 में एक अत्यन्त भावभीना अभिनन्दन समारोह आयोजित करके आपको एक अभिनन्दन ग्रन्थ भी समर्पित किया था। इस अभिनन्दन का आयोजन मिश्र जी के शिष्य डॉ० रामजी मिश्र ने किया था और ग्रन्थ के प्रधान सम्पादक डॉ० विजयेन्द्र स्नातक थे।

आपका निधन 12 जुलाई सन् 1982 को काशी में हुआ था।

महाराज विश्वनाथसिंह

रीवाँ-नरेश महाराज विश्वनाथसिंह का जन्म रीवाँ (मध्य प्रदेश) में सन् 1789 में हुआ था। आपको साहित्यिक कृतित्व का प्रसाद अपने पिता महाराज जयसिंह से विरासत में मिला था। वे अत्यन्त साहित्यानुरागी शासक थे। उन्होंने भी लगभग 20 पुस्तकों की रचना की थी। इसी साहित्यिक वातावरण की फलश्रुति महाराजा विश्वनाथसिंह के साहित्यिक व्यक्तित्व के निर्माण में परिलक्षित होती है। आप जहाँ संस्कृत के उत्कृष्ट साहित्यकार थे वहाँ हिन्दी-साहित्य के उन्नयन तथा विकास के लिए भी आपकी देन कम महत्व नहीं रखती। रीवाँ राज्य के पुस्तकालय 'सरस्वती भण्डार' में जहाँ आपकी लगभग 19 संस्कृत की रचनाएँ सुरक्षित हैं वहाँ हिन्दी की लगभग 15 पुस्तकें प्राप्य हैं।

आपकी विशेष ख्याति इसलिए भी है कि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आपके द्वारा लिखित 'आनन्द रघुनन्दन' नामक रचना को हिन्दी का 'प्रथम नाटक' माना है। आपकी भक्ति और विद्या-व्यसन का भी उन्होंने अत्यन्त प्रशस्य शब्दों में उल्लेख किया है। आप कवियों को अपने शासन में जिस उदारता से प्रश्रय देते थे उसी तत्परता से साहित्य-रचना में भी तल्लीन रहते थे। आपके दरबार में जिन कवियों का विशेष सम्मान था उनमें माधव और लक्ष्मणप्रसाद (उपनाम लखनेस) के नाम प्रमुख हैं। आपकी हिन्दी रचनाओं में 'परम तत्त्व', 'आनन्द रघुनन्दन', 'संगीत रघुनन्दन', 'गीत रघुनन्दन', 'व्यंग्य प्रकाश', 'विश्वनाथ प्रकाश', 'आह्निक अष्टयाम', 'धर्मशास्त्र त्रिशत् श्लोक', 'परधर्म निर्णय', 'पाखण्ड खण्डिनी कवि', 'शास्त्र शतक', 'ध्रुवाष्टक', 'अयोध्या-माहात्म्य', 'अवध नगर का वर्णन' तथा 'फुटकर भजन' उल्लेख्य हैं।

आपका निधन सन् 1854 में 65 वर्ष की आयु में हुआ था।

श्री विश्वम्भरदत्त त्रिपाठी

श्री त्रिपाठी का जन्म गढ़वाल क्षेत्र की विचला नागपुर पट्टी के विशाल ग्राम में 8 दिसम्बर सन् 1925 को हुआ था। इण्टरमीजिएट तक की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप फौज में भरती हो गए थे। आपकी प्रतिभा का परिचय आपकी उस 'हिम सुमन' शीर्षक कविता को पढ़कर मिल जाता है जो श्री शम्भुप्रसाद बहुगुणा ने अपनी पुस्तक 'सुन्दर-असुन्दर' में प्रकाशित की है।

आप झाँसी में कार्य-रत थे कि जून 1947 में किसी ने आपका कत्ल कर दिया।

श्री विष्णुदत्त वाजपेयी

श्री वाजपेयी का जन्म मध्य प्रदेश के नरसिंहपुर जनपद के एक सरयूपारीण ब्राह्मण-परिवार में सन् 1893 में हुआ था। अपने ग्राम की प्राथमिक पाठशाला में प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करके आपने जबलपुर के 'हितकारिणी महाविद्यालय' से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी और इसके उपरान्त

आप अध्यापन के क्षेत्र मे चले गए थे।

सर्व प्रथम आपने जबलपुर के सुप्रसिद्ध शिक्षणालय 'लज्जाशकर हायर सेकेण्डरी स्कूल' मे शिक्षक का कार्य प्रारम्भ किया था और वही से सेवा-निवृत्त भी हुए थे। उक्त सस्थान से निवृत्ति पाने के उपरान्त आपने जहाँ 'नवीन विद्या भवन' नामक शिक्षा-सस्था के उत्कर्ष तथा उत्थान मे अपने को संलग्न किया था वहाँ भूगोल, अग्रेजी और हिन्दी की अनेक पुस्तको की रचना भी की थी। आपकी इन पुस्तको का सारे प्रदेश मे बहुत प्रचार था।

अपने इतने लम्बे शिक्षक-जीवन मे आपकी ख्याति एक अत्यन्त अनुशासनप्रिय शिक्षक के रूप मे तो थी ही, अपने सुमधुर व्यवहार तथा शालीनता के लिए भी आप बहुत लोकप्रिय थे। अपने नियमित जीवन तथा परदु:खकातरता के लिए आप विख्यात थे। यह एक विचित्र सयोग ही कहा जायगा कि जिस समय 29 दिमम्बर सन् 1981 की प्रात आप अपने अनन्य मित्र, सहयोगी, साहित्यकार एव शिक्षक श्री शालग्राम द्विवेदी की शवयात्रा मे सम्मिलित होने के सकल्प से अपने घर से चले उसी समय एक ट्रक की टक्कर से घटनास्थल पर ही आपका प्राणान्त हो गया और अपने मित्र के साथ ही नर्मदा-तट पर आपका भी दाह-सस्कार किया गया।

श्री विष्णुदास

श्री विष्णुदास जी का जन्म सन् 1864 मे महाराष्ट्र के एक ग्राम मे हुआ था। वैंमे आपके पारिवारिक जन सतारा नगर के रहने वाले थे। आप जाति के ब्राह्मण थे और आपके पिता का नाम श्रीधर राव था। आपका बचपन का नाम 'कृष्णराव' था और आपके छोटे भाई का नाम विष्णुपन्त था। पुराने चलन के अनुसार आपका विवाह 16 वर्ष की आयु मे ही हो गया था, किन्तु 2 वर्ष बाद ही आपको वैराग्य हो गया और आपने अपना नाम 'विष्णुदास' रख लिया और घर से निकल गए। कुछ दिन बाद आपके परिवार वालो को जब आपका पता चला तो उन्होने फिर आपको वापिस घर ले जाना चाहा, किन्तु आप नही गए। इस बीच सन् 1896 मे आपकी पत्नी राधाबाई का देहान्त हो गया। इसी अवस्था में आप विचरते हुए उमरखेड नामक स्थान के प्रख्यात स्वामी नित्यानन्द के पास पहुँच गए और उनसे सन्यास की दीक्षा लेकर 'विष्णुदास' से 'पुरुषोत्तमानन्द' हो गए, किन्तु जनता मे आप 'विष्णुदास' के नाम से ही जाने जाते थे।

वैराग्य की भावनाएँ उत्पन्न होने के उपरान्त आपने निरन्तर साधना की ओर अपने भक्ति, ज्ञान और वैराग्य के मनोभावों को अभिव्यक्त करने के लिए हिन्दी तथा मराठी भाषा मे अनेक 'लावनियाँ' लिखी। कुछ लावनियाँ आपने ऐसी भी लिखी थी जिनमे मराठी और हिन्दी दोनों भाषाओ का प्रयोग हुआ था। आपकी लावनियों को आपके शिष्यगण गा-गाकर मस्त हो जाते थे। आपके हिन्दी पदो में विदर्भ प्रदेश की हिन्दी के दर्शन हो जाते है। आपका एक पद इस प्रकार है

अह, सोह, अजपा, जप का बाजा बजत है कानन मो।
नहीं उखारी पर नारी की सूरत गडी जो मन मो॥
बहुत अग को भसम लगाकर, पहना भगवा कपडा।
अलख पुकारत आगे भगत है, पीछे पेट का लकडा॥
बैठा सिर पर जटा बढाकर, पीवे गाँजा घट्टा।
चेले जमाए जमा-जमाकर, अन्दर सट्टा-भट्टा॥
दुनिया खातिर झूठा ढोंगी, बन गए जोगी बच्चा।
आत्म-ज्ञान जब लग नहि पावे, तब लग चेला कच्चा॥
'विष्णुदास' कहे वो ही सच्चा, पूरा मुरशद कहना।
मेरा मुझको रूप बतावे, आगे पकडकर आइना॥

सन् 1910 मे आपने पैन गगा के तट पर एक 'सिद्धेश्वर आश्रम' का निर्माण कराया था, किन्तु एक वर्ष बाद ही आप आश्रम छोडकर यवतमाल जिले के माहूसे नामक स्थान पर चले गए थे, जहाँ सन् 1921 मे आपने यह चोला त्यागा था।

वीर राघवय्या मेदिड्डाव

श्री वीर राघवय्या का जन्म 15 अप्रैल सन् 1910 को आन्ध्र प्रदेश के कृष्णा जिले के ककिपाडु नामक स्थान मे हुआ था। आपने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की

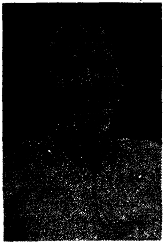
हैदराबाद शाखा के अन्तर्गत सचालित 'हिन्दी विद्यालय' से 'प्रचारक' तथा 'हिन्दी विद्वान्' की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करके एस० एल० सी० की परीक्षा भी दी थी।

सन् 1937 से आप अपने क्षेत्र के जिला बोर्ड के एक विद्यालय मे अध्यापन का करते थे।

आपका निधन 'हिन्दी प्रचारक सघ' की सेवा का कार्य करते हुए सन् 1951 मे हुआ था।

श्री वृन्दावन ध्यानी

श्री ध्यानी का जन्म उत्तर प्रदेश के गढवाल अचल के देवप्रयाग नामक स्थान के समीपवर्ती रणाकोटा ग्राम मे सन् 1902 मे हुआ था। आपके पारिवारिकजन देव प्रयाग तथा बद्रीनाथ मे पौरोहित्य का कार्य करते थे। आपने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा देव प्रयाग मे प्राप्त करके काशी मे जाकर सस्कृत का विधिवत् अध्ययन किया था। जब महात्मा गाधी द्वारा देश मे असहयोग



आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तब आपने उसमे पूर्ण सहयोग दिया था। गढवाल जिला बोर्ड के सदस्य रहने के अतिरिक्त आप देव प्रयाग की नगरपालिका के अध्यक्ष भी रहे थे।

साहित्य-प्रेम की भावनाएँ तो आपमे कूट-कूटकर भरी हुई थी। हिन्दी के सुलेखक होने के साथ-साथ आप साहित्यिक योजनाओ के कार्यान्वियन मे बहुत दिलचस्पी लिया करते थे। आपके अनेक शोधपूर्ण लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे ससम्मान प्रकाशित हुआ करते थे। आपने अपने क्षेत्र मे एक पुस्तकालय की स्थापना करके उसकी ओर से प्रतिवर्ष 'तुलसी जयन्ती' समारोह पूर्वक मनाने की योजना प्रारम्भ की थी, जो आज भी क्रियान्वित होती है।

आपके निधन के उपरान्त श्री मोहनलाल बाबुलकर के संयोजन मे एक 'स्मृति ग्रन्थ' तैयार किया गया था, जिसका विमोचन 21 जून सन् 1973 को किया गया था।

आपका निधन 28 जनवरी सन् 1969 को हुआ था।

महारानी वृषभानु कुँवरि

महारानी वृषभानु कुँवरि का जन्म बुन्देलखण्ड अचल के पमारवशीय कुँवर विजयसिह के यहाँ सन् 1857 मे हुआ था और आप ओरछा-नरेश सवाई महेन्द्र महाराजा प्रतापसिह जी देव की महारानी थी। आपने अयोध्या मे 'कनक भवन' तथा जनकपुर मे 'जानकी मन्दिर' का निर्माण कराया था। अपने माता-पिता के सस्कारों के अनुरूप आप कोमल कवि-हृदय भी रखती थी। आपकी रचनाओ मे 'राम-भक्ति' का अच्छा परिपाक देखने को मिलता है। आपने 'रामप्रिय सहचरी' नाम से भी रचनाएँ की थी। आपके द्वारा लिखित 'श्रीमद्रामचन्द्र माधुर्य लीलामृत सार' नामक रचना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

आपकी एक भक्तिरसपूर्ण रचना की कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है

जय जय जय मिथिलेश किशोरी।
प्रथमहिं पितहि मुतप साधित लखि,
दिप वर गुनि हिय प्रीति अथोरी।

अलि वृषभानु कुँवरि बरनत जस,
करु पद जलज अलिनि मति मोरी॥

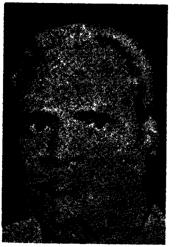
आपकी रचनाओ मे 'विनोद लहरी', 'बधाई', 'बना', 'मिथिला जी की बधाई', 'होरी रहस' और 'पावस' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

आपका निधन सन् 1906 मे हुआ था।

श्री वेंकट कृष्णय्या कंचर्ल

श्री कृष्णय्या का जन्म 15 जुलाई सन् 1907 को आन्ध्र

प्रदेश के कृष्णा जिले के कृष्णापुरम नामक स्थान मे हुआ था। आपने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचारसभा की हैदराबाद शाखा के विद्यालय से राष्ट्रभाषा विशारद, कोविद तथा साहित्य रत्न की परीक्षाएँ देकर एस० एस० एल० सी० की परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी। सन् 1923 मे आपने हिन्दी-प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया था। और दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के पदेपल्लि, अल्लूरु तथा विजयवाडा केन्द्रो के सचालन मे सक्रिय रूप से भाग लिया था।



आपका निधन 8 फरवरी सन् 1957 को हुआ था।

श्री वेंकट सुब्बाराव पीसपाटि

श्री सुब्बाराव का जन्म आन्ध्र प्रदेश के गुण्टूर जिले के केतेरू नामक स्थान मे सन् 1894 मे हुआ था। आपने 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' के केन्द्रो मे हिन्दी का विधिवत् ज्ञान प्राप्त करके सन् 1920 मे हिन्दी-प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया था और सभा के गुण्टूर, तुल्लूर सीतानगरम्, मद्रास तथा विजयवाडा आदि केन्द्रो मे हिन्दी-प्रचार-कार्य करते रहे थे। आप सन् 1941 तक 'आन्ध्र राष्ट्र हिन्दी प्रचार सघ' नामक वहाँ की प्रख्यात सस्था के मन्त्री भी रहे थे।



आपका निधन 22 मार्च सन् 1941 को हुआ था।

श्री वेंकटाचलम् चिर्रावूरि

श्री वेंकटाचलम् का जन्म आन्ध्र प्रदेश के कृष्णा जिले के कैकलूर नामक स्थान मे 7 जुलाई सन् 1890 को हुआ था। 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' के प्रचारक विद्यालयो मे विधिवत् शिक्षित होकर आपने कैकलूर तथा गुरजा आदि स्थानो मे सन् 1932 मे हिन्दी के प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया था और अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक इसी कार्य मे सलग्न रहे।

आपका देहावसान सन् 1952 मे हुआ था।

ओरुगंटि वेंकटेश्वर शर्मा शास्त्री

श्री शर्मा का जन्म आन्ध्र प्रदेश के नेल्लूर जनपद के कावली नामक स्थान मे सन् 1906 मे हुआ था। आपने सन् 1929 मे काशी विद्यापीठ से 'शास्त्री' की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त मद्रास विश्वविद्यालय से 'आयुर्वेद भिषक्' और हिन्दी साहित्य सम्मेलन से 'विशारद' की परीक्षाएँ ससम्मान उत्तीर्ण की थी। आप दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के नेल्लूर केन्द्र के सचालक रहने के उपरान्त 'आन्ध्र विश्वविद्यालय' के हिन्दी विभागाध्यक्ष हो गए थे।

आप कुशल अध्यापक होने के साथ-साथ गम्भीर प्रकृति के सफल हिन्दी-लेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित ग्रन्थो मे 'आध्यात्मिक योग चित्त विकलन', 'गुप्त भारत की खोज', 'रमण महर्षि की जीवनी', 'लक्ष्मी शृगार कुसुम मजरी' तथा 'हिन्दी तेलुगु कोश' आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। इनमे से अन्तिम पुस्तक का प्रकाशन जहाँ दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास की ओर से किया गया था वहाँ 'आध्यात्मिक योग चित्त विकलन' नामक ग्रन्थ का उद्घाटन आपके निधन के उपरान्त भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ०

राजेन्द्रप्रसाद के करकमलों द्वारा सम्पन्न हुआ था।

आपका देहावसान सन् 1942 में हुआ था।

श्री वेदमित्र 'व्रती' साहित्यालंकार

आपका जन्म 1 जुलाई सन् 1920 को उत्तर प्रदेश के मेरठ जनपद की मवाना तहसील के सठला नामक ग्राम में हुआ था। यह ग्राम क्योंकि मुस्लिम-बहुल आबादी वाला था, अत आपका परिवार स्थायी रूप से 'ततीना' ग्राम में जा बसा था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा पहले ततीना में ही हुई थी, तदुपरान्त आपने मवाना के मिडिल स्कूल से हिन्दी तथा उर्दू में मिडिल की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के उपरान्त अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग और हिन्दी विद्यापीठ देवघर (बिहार) की क्रमश. 'साहित्य रत्न' और 'साहित्यालकार' उपाधियाँ प्राप्त की थीं। आपने पण्डित परिषद् अयोध्या की शास्त्री परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी। इसके उपरान्त आपने पजाब विश्वविद्यालय की 'हिन्दी प्रभाकर' परीक्षा उत्तीर्ण करके वहाँ से अंग्रेजी की मैट्रिक परीक्षा भी दी थी।



बाद में आपने लाहौर के दयानन्द उपदेशक विद्यालय' में विधिवत् प्रविष्ट होकर वहाँ से 'सिद्धान्त विशारद' की उपाधि भी प्राप्त की थी।

आप बड़े स्वाध्यायशील एव अध्यवसायी महानुभाव थे। आपने अपनी शैक्षणिक योग्यता अपने ही पुरुषार्थ से बढ़ाई थी। आपने कुछ समय तक लाहौर के 'देव-समाज गर्ल्स कालेज' में भी अध्यापन किया था। लाहौर में रहते हुए आपने कई पुस्तकों की रचना की थी।

आपकी 'कृष्ण-काव्य की रूप-रेखा' नामक पुस्तक का प्रकाशन 'ओरियण्टल बुक डिपो, नई सड़क, दिल्ली' ने किया था। इसके अतिरिक्त आपके द्वारा विरचित 'रूपक रत्नावली' तथा 'रूपक विकास' नामक पुस्तकों का प्रकाशन काशी में रामचन्द्र वर्मा की प्रकाशन-सस्था 'साहित्यरत्नमाला कार्यालय' की ओर से हुआ था।

भारत-विभाजन के उपरान्त आप काशी चले गए और वहाँ पर पद्मभूषण श्री रामचन्द्र वर्मा के निर्देशन में बनने वाले काशी नागरी प्रचारिणी सभा के कोश में अपना सहयोग देने लगे थे। वहाँ पर कार्य-रत रहते हुए ही 15 मई सन् 1948 को आपका निधन हुआ था।

श्री शंकरचरण श्रीवास्तव 'फूलन जी'

आपका जन्म बिहार राज्य के बक्सर अनुमण्डल के शाहाबाद जनपद के डुमराँव नामक स्थान में सन् 1907 में हुआ था। आपके पिता श्री शिवकुमार लाल रीवाँ राज्य (मध्य प्रदेश) के ख्याति-प्राप्त दीवान थे।

आपकी शिक्षा-दीक्षा प्राय. घर पर ही हुई थी। स्कूल तथा कालेज की विधिवत् शिक्षा के अभाव में भी आपकी क्षमता और योग्यता में किसी भी प्रकार की कोई कमी नहीं आई थी, बल्कि आपका बौद्धिक विकास विद्यालयों एव महाविद्यालयों में अध्ययन करने वाले बहुत-से व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक प्रखरता से हुआ था।

आपकी ऐसी प्रतिभा का ही यह उत्कृष्ट प्रमाण था कि आपने कविता तथा कहानी आदि लिखने में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की थी। आपके द्वारा लिखित कहानियाँ और कविताएँ 'उषा', 'आर्य महिला', 'माधुरी', 'कला' तथा 'मतवाला' आदि तत्कालीन अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती थीं।

आपने सस्कृत के काव्यों का भी हिन्दी में पद्यानुवाद करने का उपक्रम किया था। आपकी हिन्दी कविताओं का सकलन आपके सुपुत्र सियारघुवीशरण द्वारा 'पंखुड़ियाँ' नाम से प्रकाशित हुआ है।

आपका निधन 25 दिसम्बर सन् 1938 को हुआ था।

श्री शंकरदान सामौर

श्री सामौर का जन्म सन् 1824 मे राजस्थान के बीकानेर राज्य की सुजानगढ़ तहसील के बोबासर नामक गाँव मे हुआ था। यद्यपि आप अपने पिता श्री शेरदान के इकलौते पुत्र थे और आपका जीवन अत्यन्त वैभव मे व्यतीत हुआ था, किन्तु असमय मे ही अपने पिता के देहावसान के कारण आपको भयकर सघर्ष का सामना करना पडा था। पिता के देहावसान (सन् 1847) के केवल 3 वर्ष उपरान्त ही आपकी धर्मपत्नी भी चल बसी थी। इस कारण आपके हृदय को बहुत बडा आघात पहुँचा था।

अपने बाल्य-काल से ही साहित्य मे रुचि होने के कारण आप अच्छी रचनाएँ करने लगे थे। काव्य के क्षेत्र मे आप अपने



चचेरे भाई श्री पृथ्वीसिंह से बहुत प्रभावित हुए थे और उनसे वे दोहे, कवित्त तथा कुण्डलियाँ आदि अनेक छन्द सुनकर काव्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए थे। आप इतने स्वाभिमानी स्वभाव के थे जब आपकी काव्य-प्रतिभा मे प्रभावित होकर सीकर-नरेश ने पिपराली गाँव तथा बीकानेर-नरेश ने तीन गाँवो का पट्टा आपके नाम करना चाहा तो आपने अस्वीकार कर दिया था।

आपकी रचनाओ मे 'शक्ति सुजस', 'साकेत शतक', 'भैरूँजी रा गीत', 'वगत वायरो' तथा 'देश दरपण' प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। आपके सम्बन्ध मे प्रचलित यह दोहा आज भी राजस्थान के जन-जन के कण्ठ का हृदय-हार बना हुआ है .

शकर ये सामौर रा, गोली जेहड़ा गीत।
मित्तर साचा मुलक रा, रिपुवाँ उलटी रीत ॥

आपका निधन सन् 1878 मे हुआ था।

श्री शंकरदेव विद्यालंकार

श्री शकरदेव का जन्म गुजरात के मलवाड़ा गाँव (जिला वलसाड) मे सन् 1907 मे हुआ था। आपके पिता श्री मुकुन्द जी कुँवर जी अनाविल ब्राह्मण थे और वे ऋषि दयानन्द के विचारों तथा आदर्शों मे अत्यधिक प्रभावित थे। इसीलिए उन्होंने अपनी सभी सन्तानों को सुदूर उत्तर भारत में आर्य-समाज की शिक्षा-सस्था गुरुकुल कागडी मे अध्ययन के लिए भेजा था। आपने सन् 1914 से 1928 तक 14 वर्ष गुरुकुल कांगडी (हरिद्वार) मे शिक्षा प्राप्त करके 'विद्यालकार' की उपाधि प्राप्त की थी।

वहाँ से स्नातक होने के उपरान्त आप 1942 तक गुरुकुल सूपा (जिला सूरत) म सस्कृत, हिन्दी और इतिहास के अध्यापक रहे थे। बाद मे अपनी मातृ-सस्था गुरुकुल काँगडी की पुकार पर आपने सन् 1943 से सन् 1957 तक वहाँ आकर हिन्दी-प्राध्यापक और आश्रमाध्यक्ष के पदो पर कार्य किया। उन्ही दिनो आपने आगरा विश्वविद्यालय से हिन्दी तथा सस्कृत मे एम० ए० की परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण की थी। इन 14 वर्षों की एकनिष्ठ सेवा ने आपमे नारी का हृदय, माता का वात्सल्य और पिता के अनुशासन की गुण-गरिमा भर दी थी।

तदनन्तर आप आर्य कन्या गुरुकुल और महिला महाविद्यालय, पोरबन्दर (सौराष्ट्र) गुजरात के निमन्त्रण को स्वीकार करके सन् 1957 मे सुदामापुरी पहुँच गए। वहाँ पर आपकी ज्ञान-गरिमा से प्रभावित होकर और सस्था की छात्राओ के जीवन मे उच्च आदर्शों की लौ जगाने के लिए सस्था के सचालक, सेठ श्री नानजी भाई कालिदास मेहता ने



आपको अपने ट्रस्ट का 'व्यवस्थापक ट्रस्टी' भी बना दिया

था। वहाँ के विद्वत् समाज ने आपको 'चलता-फिरता जीवित विश्व-कोष' की संज्ञा दी थी और विद्या-मन्दिर की तपो-भूमि मे आपको सदा प्रेमपूर्वक 'भाई जी' कहकर सम्बोधित किया जाता था। जीवन के अन्तिम पटाक्षेप तक आप इन्हीं कच्चे धागो से बँधे रहे और अपनी पितृभूमि को भी न लौट सके।

आपको नागपुर के विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर अहिन्दी-भाषी प्रदेश के प्रकाण्ड हिन्दी-विद्वान् के रूप मे सम्मानित किया गया था। सन् 1979 मे गुजराती पत्र 'कुमार' (मासिक) मे आपने एक वर्ष तक विविध फूलो का विस्तृत परिचय दिया था, जिसके फलस्वरूप वर्ष का सर्व-श्रेष्ठ लेखक घोषित करके आपको स्वर्ण पदक और 500 रु० का पारितोषिक दिया गया था।

शकरदेव जी के चरित्र-गठन मे गुरुकुल काँगडी के कुलपति और यशस्वी पत्रकार प० इन्द्र विद्यावाचस्पति, सस्कृत के पण्डित वागीश्वर विद्यालकार साहित्याचार्य, काशी नागरी प्रचारिणी सभा के सस्थापक श्री रामनारायण मिश्र, मनीषी विद्वान् काका कालेलकर, साहित्य-कला-मर्मज्ञ राय कृष्णदास और 'कुमार' के प्रवर्त्तक श्री बच्चूभाई रावत का विशेष हाथ रहा था। श्री रामनरेश त्रिपाठी, श्री हजारी-प्रसाद द्विवेदी और कालाकाँकर के श्री सुरेशसिह आदि साहित्य-प्रेमियो से आपका घनिष्ठ सम्पर्क था। महर्षि दयानन्द के दर्शन और महाकवि रवीन्द्रनाथ के काव्यत्व को आपने आत्मसात् कर लिया था। आपके पूर्ण विकसित व्यक्तित्व ने सहस्रो छात्रो-छात्राओ को भारतीय सस्कृति और प्रकृति का प्रेमी तथा चारित्रिक आदर्शों का पुजारी बना दिया था।

शंकरदेव जी की हिन्दी-सस्कृत की कविताएँ प्राय सभा-समारोहों मे सुनने को मिलती थी। आपके लेख 'नवनीत', 'कादम्बिनी' और 'कुमार' सरीखे हिन्दी-गुजराती पत्रो मे बहुधा प्रकाशित होते थे। कविवर रवीन्द्र की रचनाएँ-- 1. 'रवीन्द्र कथा', 2. 'नैवेद्य' (गद्यगीत), 3 'चित्रागदा', 4. 'फूलों की डाली' और 5. 'भूले पछी' नाम से आपने हिन्दी मे रूपान्तरित की थी। 'अन्तिम पाठ' (कहानियाँ), 'प्राचीन भारत के विद्यापीठ' (इतिहास) आपकी विशिष्ट रचनाएँ हैं। इसके अतिरिक्त आपने अन्तिम कुछ वर्षो मे अनेक अभिनन्दन-ग्रन्थो एव स्मृति-ग्रन्थो का विद्वत्तापूर्ण सम्पादन भी किया था, जिनमें 'स्मृति अने संस्कृति', 'जीवन तथा सस्कृति' और 'आर्यसमाज शिक्षा-दर्शन' आदि प्रमुख है। इनमें से पहला सेठ नानजी कालिदास मेहता (आर्य कन्या गुरुकुल पोरबन्दर के संस्थापक), दूसरा कर्मवीर पण्डित आनन्दप्रिय (कन्या महाविद्यालय बड़ौदा के सचालक) तथा तीसरा श्री महेन्द्रप्रताप शास्त्री (कन्या गुरुकुल हाथरस के कुलपति) के अभिनन्दनो के अवसर पर प्रकाशित हुए थे।

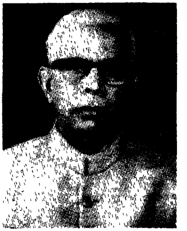
पोरबन्दर महिला कालेज ने 9 दिसम्बर सन् 1980 को आपकी 24 वर्षों की अथक सेवाओ के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए आपका अभिनन्दन भी किया था। उसके बाद दो मास तक बम्बई मे चिकित्सको के चक्र-व्यूह मे रहकर 2 अप्रैल सन् 1981 को 74 वर्ष की आयु मे आपका देहावसान हो गया।

श्री शंकरलाल गुप्त 'बिन्दु'

आपका जन्म 13 दिसम्बर सन् 1905 को भारत की राजधानी दिल्ली के बाजार सीताराम नामक मोहल्ले मे हुआ था। आपके पिता का नाम लाला प्रभुदयाल था और आप अपने मामा लाला श्यामकिशोर के यहाँ गोद चले गए थे। दोनो परिवारों मे अकेले लडके होने के कारण आपका लालन-पालन बडे लाड-प्यार मे हुआ था। तत्कालीन परम्परा के अनुसार आपकी शिक्षा-दीक्षा कुछ विशेष न हो सकी थी और आपने महाजनी पाठशाला मे जाकर उसकी थोड़ी-सी कामचलाऊ जानकारी प्राप्त कर ली थी। श्री देवकीनन्दन खत्री के 'चन्द्रकान्ता' और 'भूतनाथ'-जैसे उपन्यासों को पढने की ललक ने आपको हिन्दी की ओर उन्मुख किया और एक दिन वह भी आया जब आप अपने हिन्दी-ज्ञान के कारण लोगो के कान काटने लगे थे। आपकी सारी योग्यता स्वार्जित थी। आप जहाँ उन दिनों दिल्ली के परेड के मैदान मे होने वाले पारसी थियेट्रिकल कम्पनियो के नाटको को देखने मे रुचि लिया करते थे वहाँ प्राय. तिलिस्मी और ऐयारी के उपन्यासो के पारायण मे भी लिप्त रहा करते थे।

ज्यों-ज्यो आप बडे होते गए आपके जीवन मे निखार

आता चला गया और जब समस्त देश में महात्मा गांधी का सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तब आपने भी उसमे बढ-चढ़कर भाग लिया। धीरे-धीरे वह दिन भी आया जब आप 12 अक्तूबर सन् 1930 को ब्रिटिश नौकरशाही द्वारा गिरफ्तार कर लिए गए। उसी दिन श्रीमती मेमोबाई, लाला अमरनाथ कपूर तथा लाला बनारसीदास जौहरी आदि भी गिरफ्तार हुए थे। आपने उन दिनो गाधी जी के 'स्वदेशी वस्तुओ के व्यवहार' के व्रत को भी पूर्णत· अपना लिया था। अपने तेज स्वभाव और स्वाभिमानी प्रवृत्ति के कारण उन दिनो आप दिल्ली की पुलिस की आँखो मे बहुत खटका करते थे। राष्ट्रीय प्रवृत्तियो मे सक्रिय रूप से भाग लेने के अतिरिक्त आप मोहल्ले की अन्य सामाजिक हलचलो मे भी अत्यन्त तन्मयता से सम्मिलित हुआ करते थे।



जेल से लौटने के उपरान्त आपने पहले तो कुछ समय तक अपने पारिवारिक व्यवसाय मे सहयोग दिया, किन्तु जब उसमे आपका मन नही रमा तब आपने स्वतन्त्र रूप से नगर के अपने एक साथी श्री ऋषभचरण जैन के सहयोग से प्रेस और प्रकाशन का कार्य करना प्रारम्भ किया। आपके प्रकाशन का नाम 'साहित्य मण्डल' था और उसमे हिन्दी की उत्कृष्टतम पुस्तके प्रकाशित होती थी। आपके प्रकाशन मे उन दिनो सर्वश्री ऋषभचरण जैन के अतिरिक्त आचार्य चतुरसेन शास्त्री, ठाकुर राजबहादुरसिंह, देवीप्रसाद शर्मा, गोपालसिंह नेपाली और प्रफुल्लचन्द्र ओझा 'मुक्त' आदि अनेक लेखको की रचनाएँ प्रकाशित हुई थी। कलकत्ता काग्रेस के समय आपकी सस्था की ओर से प्रकाशित 'रूस का पचवर्षीय आयोजन' नामक ग्रन्थ का अच्छा स्वागत हुआ था और उसकी हजारों प्रतियाँ थोडे ही समय मे सारे देश में फैल गई थी। उन दिनों आपने प्रयाग, काशी और कलकत्ता के प्रमुख पुस्तक-विक्रेताओं से अच्छा सम्पर्क साध लिया था।

आपकी कर्मठता और परिश्रमशीलता का ही यह सुपरिणाम था कि थोड़े ही दिनों मे आपके प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तके हिन्दी-जगत् मे पर्याप्त लोकप्रिय हुईं। दिल्ली में रहते हुए आपके साथी ऋषभचरण जैन जहाँ मुद्रण और प्रकाशन के कार्य की देख-भाल किया करते थे वहाँ आपके अथक प्रयास से आपके यहाँ से प्रकाशित पुस्तको का देश-व्यापी प्रचार हो गया था। अपनी इन यात्राओ मे आपका सम्पर्क जहाँ सर्वश्री लक्ष्मीधर वाजपेयी, रामरखसिह सहगल, भगवानदास अवस्थी, गिरिधर शुक्ल, गणेश पाण्डेय, केदारनाथ गुप्त, दुलारेलाल भार्गव बैजनाथ केडिया, दशरथ पाण्डेय और अयोध्यासिह प्रभृति अनेक प्रकाशको से हुआ वहाँ आचार्य शिवपूजनसहाय, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', विनोदशकर व्यास और चन्द्रशेखर शास्त्री-जैसे अनेक साहित्यकारो से भी आपकी घनिष्ठता बढ़ गई थी। इधर जब प्रकाशन का कार्य चल निकला तो श्री ऋषभचरण जैन ने 'चित्रपट' मासिक और 'सचित्र दरबार' नामक साप्ताहिक पत्रो के प्रकाशन और सम्पादन का कार्य प्रारम्भ कर दिया। इन पत्रो के प्रकाशन के कारण आपके पुस्तक-प्रकाशन-व्यवसाय पर विपरीत प्रभाव पडा और एक दिन वह भी आया जब दोनो साथियों मे मतभेद बढ गए और उन्हे अपना अलग-अलग कार्य करने को विवश होना पडा।

कारोबार के विभाजन मे 'सचित्र दरबार' आपके हिस्से मे आया और प्रकाशन लगभग बन्द ही हो गया। आपने 'वर्तमान साहित्य मण्डल' नाम से अपना प्रकाशन अलग प्रारम्भ किया और 'सचित्र दरबार' भी चलाते रहे। 'चित्रपट' जहाँ उन दिनो सिनेमा-जगत् का प्रमुख पत्र समझा जाता था वहाँ 'सचित्र दरबार' मे देशी रियासतो और रजवाडो से सम्बन्धित सामग्री रहा करती थी। इस पत्र के माध्यम से ही आपका देशी रियासतो मे अच्छा प्रवेश हो गया था। इस पत्र का प्रकाशन बडा स्तरीय हुआ करता था। जिन लोगो ने 'सचित्र दरबार' के 'ग्वालियर अक' को देखा है वे श्री 'बिन्दु' जी की योजना-पटुता की प्रशसा किये बिना नही रह सकते। यह विशेषांक आज भी अपनी स्वाँगीण विषय-सामग्री और साज-सज्जा की दृष्टि से सर्वथा उपादेय है। यह सारा ही विशेषांक आर्ट-पेपर पर दो रंगों में प्रकाशित हुआ था। स्वतत्रता के उपरान्त जब देशी राज्यो की

समाप्ति हो गई तो धीरे-धीरे 'सचित्र दरबार' की लोकप्रियता समाप्त हो गई और अर्थ-सकट के कारण उसकी सम्पादन-नीति मे भी परिवर्तन आया। आपने उसका 'बृहत्तर राजस्थान(मारवाड़)अंक' भी प्रकाशित करके अपनी अनोखी सूझ-बूझ का परिचय दिया था। यह विशेषाक भी अपने पूर्व विशेषांक की भाँति अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सन्दर्भ-सामग्री से युक्त था।

'चित्रपट' की कमी दूर करने की दृष्टि से आपने 'छाया' नामक एक सचित्र साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन भी सन् 1934 मे प्रारम्भ किया था। इनका सम्पादन जहाँ हिन्दी के प्रख्यात कथाकार श्री विनोदशकर व्यास किया करते थे वहाँ इसमे सर्वश्री जयशंकर प्रसाद, नरोत्तमप्रसाद नागर, जगदीश झा 'विमल' तथा छविनाथ पाण्डेय-जैसे अनेक प्रतिष्ठित लेखकों की रचनाएँ छपा करती थी। अपनी सुपुष्ट साहित्यिक सामग्री के कारण 'छाया' का उन दिनो की पत्रिकाओ मे प्रमुख स्थान था। खेद का विषय है कि केवल एक वर्ष तक ही इसका प्रकाशन हो सका और फिर इसे बन्द कर देना पडा। आपके भी अनेक लेख इस पत्रिका मे छपे थे। 'सचित्र दरबार' बराबर चलता रहा और उसके माध्यम से आप पत्रकारिता के क्षेत्र मे अपना उल्लेखनीय योगदान देते रहे। 'सचित्र दरबार' के सम्पादन मे आपको सर्वश्री चन्द्रधर, नरोत्तमप्रसाद नागर, खेमराज जोशी, श्रीकृष्ण मोर, सम्पतलाल पुरोहित और रामानुज दासू-जैसे अनेक साहित्यकारो का सहयोग सुलभ हुआ था। इस बीच आपने हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार श्री चतुरसेन शास्त्री के साथ मिलकर 'एम० सेन एण्ड कम्पनी' नाम से भी प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया था, किन्तु उसमे सफलता प्राप्त नही हो सकी। आपको अपने साथियो से विश्वास-घात-जैसे घातक व्यवहार की जो प्रताड़ना समय-समय पर मिलती रही थी उसके कारण आपका स्वभाव कुछ कटु हो गया था। इस प्रसग मे आपको अनेक मुकद्दमे और अभियोग भी करने पड़े और धीरे-धीरे वह दिन भी आया जब आप भयकर अर्थ-सकट मे घिर गए और उस सबसे मुक्ति प्राप्त करने के उपरान्त आप सन् 1955 में दिल्ली के एक उपनगर शाहदरा मे चले आए और वहाँ पर एक 'प्रिंटिंग प्रेस' चलाकर अपने परिवार का भरण-पोषण करते रहे।

यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि एक सम्पन्न परिवार मे गोद चले जाने के बाद भी आपने वहाँ की सम्पत्ति का कोई उपभोग नही किया और यावज्जीवन स्वाभिमानपूर्वक स्वतन्त्र जीविका चलाकर ही अपना जीवन-यापन करते रहे। यहाँ तक कि आपकी पहली पत्नी के निधन हो जाने के उपरान्त जब आपके पारिवारिक जनो की ओर से दूसरा विवाह करने का दबाव आप पर डाला गया तो आपने यह स्पष्टत: कहा था कि यह विवाह मेरे साथ नही, बल्कि मेरी सम्पत्ति के साथ हो रहा है। और वास्तव मे आपने परिवार से सर्वथा सम्बन्ध-विच्छेद करके स्वतन्त्र रूप से स्वावलम्बी जीवन ही व्यतीत किया था। आपने स्वेच्छा से अपना एक तीसरा विवाह पारिवारिक रूढियो को तोड़कर अमृतसर की जिस महिला से किया था उन्होंने ही अपने जीवन-पर्यन्त आपकी सहधर्मिणी रहकर सुख-दु:ख की अनेक घडियो मे अपना प्रशंसनीय सहयोग दिया था। आपके समक्ष ऐसे अनेक अवसर आए जब आपके जीवन मे पूर्णत: अन्धकार था, किन्तु अपनी कर्मठता तथा स्वाभिमानी प्रवृत्ति के कारण आप अपना मार्ग निरन्तर प्रशस्त करते रहे।

आप जहाँ उत्साही प्रवृत्ति के प्रकाशक, जागरूक पत्रकार और उत्कृष्ट कोटि के समाज-सेवी थे वहाँ आपने ऐसे अनेक दुर्लभ ग्रन्थों और पत्र-पत्रिकाओ का सकलन भी अपने पास किया हुआ था, जो अन्यत्र कठिनाई से ही दृष्टिगत होती है। विभिन्न विषयो से सम्बन्धित लेखो की कतरनें रखने का भी आपको बहुत अधिक शौक था। आपका निवास एक प्रकार से एक सग्रहालय-जैसा ही लगता था। आपके पास हिन्दी के अनेक लेखको और प्रकाशकों से सम्बन्धित ऐसे बहुत-से सस्मरण थे, जिन्हे सुनकर बड़ी प्रेरणा मिला करती थी। आप वास्तव मे हिन्दी-प्रकाशन-व्यवसाय के जीवन्त कोश ही थे। प्रकाशन-व्यवसाय से सम्बन्धित ऐसा कोई पक्ष नही था, जिसकी प्रामाणिक जानकारी आपके पास न हो। आपने अपने जीवन के अन्तिम 10-15 वर्ष शहीदो और क्रान्तिकारियो के प्रति अपनी श्रद्धा तथा भक्ति प्रकट करने मे ही लगा दिए थे। आपने जहाँ 'स्वतन्त्रता सैनिक सम्मान समिति' की स्थापना की थी, वहाँ आप अपने निधन से पूर्व सरदार भगतसिंह की शहादत का 'अर्ध शताब्दी उत्सव' मनाने की भूमिका भी बना रहे थे। खेद है कि आप अपनी इस योजना को क्रियान्वित न कर सके और सहसा हमसे विदा हो गए।

आपका निधन 16 मार्च सन् 1983 को अचानक पक्षाघात और रक्त-चाप के कारण राजधानी के लोकनायक जयप्रकाशनारायण अस्पताल में हुआ था।

श्री शंकरलाल जैन वैद्य

श्री वैद्य जी का जन्म उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद जनपद के कुन्दरखी नामक ग्राम मे सन् 1876 मे हुआ था। बाल्यावस्था मे ही अपने पिता श्री भोजराज जैन का असामयिक निधन हो जाने के कारण आप 8-9 वर्ष की आयु मे ही अपने एक सम्बन्धी के यहाँ मुरादाबाद चले आए थे। मुरादाबाद मे ही आपकी शिक्षा-दीक्षा अपने उन्ही सम्बन्धी की देख-रेख मे हुई थी। किसी प्रकार का कोई साधन न होते हुए भी आपने अपने ही अध्यवसाय से हिन्दी, संस्कृत, बंगला, मराठी तथा गुजराती आदि कई भाषाओ का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था और फिर धीरे-धीरे आयुर्वेद की ओर झुक गए थे।

आयुर्वेद का विधिवत् ज्ञान प्राप्त करके आपने थोड़े ही दिनों मे अपने क्षेत्र के चिकित्सकों मे अच्छा स्थान बना लिया और एक दिन वह भी आया जब अपने आयुर्वेद-सम्बन्धी ज्ञान को लोकोपयोगी तथा बहुजन-सुलभ बनाने की दृष्टि से आपने 7 अक्तूबर सन् 1912 को 'वैद्य' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। इस पत्र के द्वारा आपने आयुर्वेद-जगत् की जो सेवा की, वह सर्व विदित है। 'वैद्य' का सम्पादन करते हुए आपने आयुर्वेद के अनेक ग्रन्थो का हिन्दी मे अनुवाद भी प्रस्तुत किया था। अपने निधन से पूर्व आपने 'भैषज्य भास्कर' नामक एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी आयुर्वेद के सम्बन्ध मे लिखा था, जिसकी पाण्डुलिपि आपने स्वयं 'वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई' को प्रकाशनार्थ भेजी थी। खेद का विषय है कि वैद्य जी का यह ग्रन्थ अभी तक प्रकाशित नही हो सका। आपके द्वारा 10 वर्ष के अनवरत अध्यवसाय से तैयार किया गया 'बृहत् वैद्यक कोष' एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। आपकी अन्य रचनाओं मे 'बंगसेन', 'रस रत्न समुच्चय', 'भैषज्य रत्नावली', 'निघण्टु भूषण', 'शार्ङ्गधर संहिता', 'हितोपदेश वैद्यक', 'औषधि क्रिया', 'सन्निपात मंजरी', 'रसेन्द्र सार संग्रह' तथा 'वन्ध्या तन्त्र' आदि प्रमुख है। आपने जहाँ हेमचन्द्राचार्य के 'अभिधान चिन्तामणि' नामक कोष का हिन्दी अनुवाद किया था वहाँ आपके द्वारा अनूदित आयुर्वेद के कई ग्रन्थ प्रकाशित हुए थे।



आप इतने पीयूष-पाणि चिकित्सक थे कि आपकी गणना कविराज गणनाथ सेन-जैसे सिद्धहस्त वैद्यो मे होने लगी थी। आप जहाँ कुशल चिकित्सक थे वहाँ आपका काव्य-ज्ञान भी अभूतपूर्व था। आपकी आयुर्वेद के उद्धार के प्रति इतनी निष्ठा थी कि अपने औषधालय का नाम भी आपने 'आयुर्वेदोद्धारक औषधालय' रख दिया था। आपने मुरादाबाद मे 'आयुर्वेद प्रचारिणी सभा' की भी स्थापना की थी।

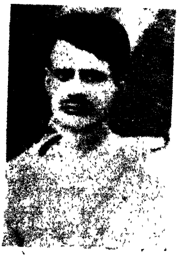
आपका निधन 18 अक्तूबर सन् 1934 को हुआ था।

श्री शंकरलाल तिवारी 'बेढब सागरी'

श्री 'बेढब सागरी' का जन्म 2 नवम्बर सन् 1900 को मध्य-प्रदेश के सागर नामक स्थान मे हुआ था। आपने केवल आठवी कक्षा तक ही शिक्षा प्राप्त की थी कि अचानक सन् 1918 मे आपके पिता श्री कुंजीलाल तिवारी का असामयिक देहावसान हो गया। इस कारण विवश होकर आपने अपने अध्ययन को विराम देकर सागर के 'अलकाट प्रेस' मे 'कम्पोजीटरी' का कार्य प्रारम्भ कर दिया था।

कम्पोजीटरी का कार्य करते-करते अनेक प्रकार की रचनाओं को पढते रहने के संस्कार के कारण आपकी प्रवृत्ति लेखन की ओर हो गई और आप छोटी-छोटी

कविताएँ लिखने लगे। धीरे-धीरे आपकी रचनाएँ पहले 'उदय' तथा 'समालोचक' आदि स्थानीय पत्रो मे छपने लगी और



बाद मे आप देश के दूसरे पत्रो मे भी लिखने लगे। कविता-लेखन के साथ-साथ गद्य लिखने की ओर भी आपका रुझान हो गया और एक दिन वह आया जब आप जबलपुर से प्रकाशित होने वाले 'सत्य' नामक पत्र के सहायक सम्पादक होकर वहाँ चले गए। वहाँ पर 4-5 वर्ष तक कार्य करने के उपरान्त आप फिर सागर मे प्रकाशित होने वाली बालोपयोगी मासिक पत्रिका 'बच्चो की दुनियाँ' के सम्पादन के लिए वहाँ आ गए। इस पत्रिका का प्रकाशन सागर के मास्टर बलदेवप्रसाद किया करते थे।

इन पत्रिकाओ के सम्पादन-काल मे आपकी लेखन-प्रतिभा ने बहुमुखी विकास किया और आपने 6 उपन्यास भी लिखे। आपके ऐसे उपन्यासो मे 'सन् 1857 के बाद का भारत' विशेष महत्त्वपूर्ण है। अंग्रेजी शासन-काल मे बिहार सरकार द्वारा यह जब्त घोषित कर दिया गया था और स्वतन्त्रता के उपरान्त इस उपन्यास पर से पाबन्दी हटी थी। आप जहाँ जागरूक पत्रकार और कुशल लेखक थे वहाँ हास्य के क्षेत्र मे भी आपकी प्रतिभा हिन्दी-जगत् के समक्ष अपनी विशिष्ट शैली के लिए उजागर हुई थी। एक उत्कृष्ट हास्य कवि के रूप मे आपका नाम मध्य प्रदेश की सीमाओ को लाँघकर देश-व्यापी लोक-प्रियता प्राप्त कर गया था और आपकी रचनाएँ 'नोक झोक' आदि सभी प्रतिष्ठित हास्य पत्रो मे ससम्मान प्रकाशित होने लगी थी। आपकी अनेक रचनाएँ अप्रकाशित ही रह गई थी। इनमे से 'लल भजनलाल' नामक उपन्यास की पाण्डुलिपि सागर विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डॉ० बलभद्र तिवारी प्रकाशनार्थ ले गए थे, जो अभी तक अप्रकाशित ही है।

पत्रकारिता और लेखन की दिशा मे अपनी प्रतिभा का परिचय देने के साथ-साथ तिवारी जी राष्ट्रीय आन्दोलन के क्षेत्र मे भी पीछे नही रहे थे और अनेक आन्दोलनो मे आपने सक्रिय रूप से भाग लिया था। ब्रिटिश शासन के दिनो मे अनेक देशी राज्यों मे होने वाले अमानुषिक अत्याचारों के विरुद्ध भी आपने डटकर लोहा लिया था। एक बार जब सन् 1918 मे उस क्षेत्र मे भयकर लाल बुखार फैला था और कई स्थानो पर हैजे का प्रकोप हुआ था तब भी आप जन-सेवा के कार्य मे पूर्ण तत्परता एव तन्मयता से जुटे रहे थे।

आपका निधन 30 जुलाई सन् 1947 को केवल 47 वर्ष की आयु मे ही हुआ था।

डॉ० शंकर शेष

डॉ० शेष का जन्म मध्य प्रदेश के विलासपुर जनपद के जूना विलासपुर नामक स्थान के एक महाराष्ट्रीय जमीदार परिवार मे 2 अक्तूबर सन् 1933 को हुआ था। सामन्ती सस्कारो मे रहते हुए भी आपमे पढने-लिखने का शौक बचपन से ही था। अपनी प्रारम्भिक शिक्षा विलासपुर मे पूरी करके आप नागपुर चले गए थे और वही मे बी० ए०(ऑनर्स) एम० ए० तथा पी-एच० डी० किया था। आप अपने छात्र-जीवन मे नागपुर के मारिस कालेज के अत्यन्त प्रतिभाशाली छात्रो मे गिने जाते थे। आपकी योग्यता और कार्य-कुशलता की धाक जहाँ अपने समवयस्क छात्रो पर थी वहाँ आपके गुरुजन भी आपको गौरव की दृष्टि से देखते थे।

अपने अध्ययन की समाप्ति पर पहले तो कुछ दिन तक आपने मध्य प्रदेश के शिक्षा विभाग मे अध्यापक के रूप मे कार्य किया और फिर वहाँ के 'आदिवासी कल्याण विभाग' तथा 'मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी' मे उपसचालक के रूप मे भी कई वर्ष तक सेवा-निरत रहे थे। जिन दिनो आप 'आदिवासी कल्याण विभाग' मे कार्य करते थे उन दिनो आपको अपने कार्य के सिलसिले मे मध्यप्रदेश के जगलो मे भी पर्याप्त भटकना पडा था। अपने उसी कार्य-काल में आपने 'फन्दी' नामक नाटक लिखा था, जिसके कारण

आपकी ख्याति इस क्षेत्र में दूर-दूर तक हो गई थी। आपके द्वारा लिखित 'बिन बाती का दीया' नाटक भी अपनी विशिष्टता के लिए पर्याप्त प्रसिद्ध है। बम्बई और दिल्ली के दूरदर्शन से जब आपके 'चेहरे' नाटक का प्रदर्शन हुआ तो उसने आपकी ख्याति हिन्दी के प्रथम कोटि के नाटककार के रूप में कर दी।

आपके 'खजुराहो के शिल्पी' नाटक के आधार पर प्रख्यात फिल्म-निर्माता व्ही० शान्ताराम ने फिल्म बनाने का अनुबन्ध किया था। 'घरौंदा' और 'दूरियाँ' नामक फिल्में भी आपके नाटकों के आधार पर बनाई गई थीं। इन दोनों फिल्मों के निर्माता तथा निर्देशक श्री भीमसेन हैं। जब आपके 'रक्त बीज' और 'पोस्टर' नामक नाटक भारत के अनेक नगरों में अभिनीत हुए तब उनसे डॉ० शेष को पर्याप्त ख्याति मिली थी। आपने अपने लेखन में लोक शैली, प्रतीक शैली और यथार्थवादी शैली का आश्रय लिया था। आपके प्रायः सभी कथानकों में वर्तमान सामाजिक व्यवस्था के प्रति काफी व्यंग्य देखने को मिलता है।



आपके 'रक्त बीज', 'पोस्टर' और 'खजुराहो के शिल्पी' के अतिरिक्त 'कोमल गान्धार', 'चेहरे', 'एक और द्रोणाचार्य' तथा 'अरे मायावी सरोवर' आदि कई नाटकों ने अपने कथानकों, भाव-भूमि और वर्णन शैली के कारण पर्याप्त लोकप्रियता अर्जित की थी। आप नाटक के अतिरिक्त कविता भी लिखा करते थे, किन्तु आपका कवि नाटककार के नीचे दबकर रह गया था। फिल्म-लेखन की कला में भी आपको जो सफलता मिली थी, वह आपकी प्रतिभा की परिचायिका है। आप एक फिल्म श्याम बेनेगल के लिए और एक गोविन्द निहलानी के लिए भी लिख रहे थे। 'आक्रोश' में भी आपकी प्रतिभा देखने को मिलती है।

अपने जीवन के अन्तिम दिनों में आप 'भारतीय स्टेट बैंक' में 'प्रमुख राजभाषा अधिकारी' के पद पर नियुक्त होकर बम्बई चले गए थे और इसी प्रसंग में अपनी मृत्यु से पूर्व आप इस बैंक की श्रीनगर (कश्मीर) शाखा में कार्य करते थे। आपका निधन वहीं पर हृदयाघात के कारण 48 वर्ष की आयु में 28 अक्तूबर सन् 1981 को हुआ था।

श्रीमती शकुन्तला खरे

श्रीमती शकुन्तला जी का जन्म मध्यप्रदेश के जबलपुर जनपद के बिलहरी नामक स्थान में जुलाई सन् 1919 में हुआ था। शैशवावस्था में ही पिता का देहावसान हो जाने के कारण आपकी शिक्षा-दीक्षा घर पर ही हुई थी। सन् 1933 में आपका विवाह हिन्दी के मधुर गीतकार श्री नर्मदाप्रसाद खरे के साथ हुआ था और उनके सम्पर्क में आकर आपकी साहित्यिक चेतना का बहुमुखी विकास हुआ था।

विवाहोपरान्त जब आप अपने पति श्री खरे के साथ जबलपुर में आकर रहने लगीं तो वहाँ पर आपका सम्पर्क हिन्दी की प्रख्यात कवयित्री श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान से भी हो गया। श्री खरे तथा श्रीमती सुभद्राजी के इस सान्निध्य में आपकी कवित्व-प्रतिभा मुखर हो उठी और आपने भावना, कल्पना तथा करुणा से ओत-प्रोत रचनाएँ लिखनी प्रारम्भ कर दी। आपकी रचनाएँ उन दिनों 'प्रेमा' तथा 'सरस्वती' आदि पत्रिकाओं में ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थीं।



आपकी कवित्व-प्रतिभा का परिचय इसीसे मिल जाता

है कि हिन्दी के छायावादी काव्य के प्रमुख समीक्षक श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी ने जहाँ अपनी 'कवि और काव्य' नामक समीक्षात्मक कृति में श्रीमती खरे के कवित्व की प्रशसा की है वहाँ 'हिन्दी काव्य की कोमिलाएँ' तथा 'हिन्दी काव्य-गगन की तारिकाएँ' नामक पुस्तकों मे भी आपकी प्रतिभा का साहित्यिक मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है। मेरे 'आधुनिक हिन्दी कवयित्रियों के प्रेमगीत' नामक ग्रन्थ मे भी आपका विस्तृत परिचय प्रस्तुत किया गया था।

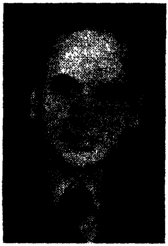
आपकी कविताओ का सकलन 'शेष सुमन' नाम से लोक चेतना प्रकाशन, जबलपुर से सन् 1971 में प्रकाशित हुआ था उसकी भूमिका मे हिन्दी के प्रख्यात कवि श्री सुमित्रा-नन्दन पन्त ने उसकी शुभकामना इस प्रकार प्रकट की थी - "श्रीमती शकुन्तला खरे को मैं हार्दिक बधाई देता हूँ कि उन्होने अनजाने मे ही जैसे ऐसे कविता-सुमनो का हार माँ भारती के गले मे डाल दिया है कि उसमे कही पर कला और शिल्प की कृत्रिमता देखने को नही मिलती।" इस संकलन को श्रीमती खरे ने हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा को समर्पित किया था।

आपका निधन 21 सितम्बर सन् 1981 को जबलपुर मे हुआ था।

श्री शम्भुनाथ सक्सेना

श्री सक्सेना का जन्म 14 जनवरी सन् 1919 को ग्वालियर (मध्य प्रदेश) मे हुआ था। विद्याध्ययन के उपरान्त आपने अपना कर्ममय जीवन पत्रकारिता से ही प्रारम्भ किया था और यावज्जीवन उसीमे सघर्षशील रहे। शुरू शुरू मे सन् 1939 में आप कुछ दिन तक पटना (बिहार) से प्रकाशित होने वाले 'किशोर' (मासिक) के सह-सम्पादक रहे और बाद मे श्री भगवतीचरण वर्मा द्वारा सम्पादित और कलकत्ता से प्रकाशित 'विचार' (साप्ताहिक) में चले गए। वहाँ की जलवायु अनुकूल न होने के कारण आप वहाँ से चले आए और फिर उरई (उ० प्र०) से प्रकाशित होने वाले 'आनन्द' साप्ताहिक के सम्पादक रहे। तदुपरान्त आपने कुछ दिन तक ग्वालियर से प्रकाशित होने वाले 'आरोग्य मित्र' का सपादन भी किया। उन्ही दिनो आप ग्वालियर राज्य से प्रकाशित साप्ताहिक 'जयाजी प्रताप' के भी कुछ दिन तक सम्पादक रहे थे।

स्वाभिमानी स्वभाव होने के कारण आप कही भी अधिक समय तक टिक नही पाते थे। फलस्वरूप ग्वालियर छोडकर आप सन् 1945-46 में दिल्ली आ गए और पहले कुछ दिन आपने डॉ० लंकासुन्दरम् द्वारा सम्पादित 'कामर्स एण्ड इण्डस्ट्री' नामक अंग्रेजी साप्ताहिक मे सहकारी सम्पादक के रूप मे कार्य किया और फिर जब 'सरिता' (मासिक) का प्रकाशन दिल्ली प्रेस ने प्रारम्भ किया तो आप उसमे सहायक सम्पादक हो गए। दुर्भाग्यवश यहाँ भी आप अधिक समय न ठहर सके और यहाँ से 'दैनिक विश्व-मित्र' (नई दिल्ली) मे सहायक सम्पादक हो गए। इस बीच आपने सन् 1941 मे कुछ समय तक मोदपुर (कलकत्ता) के 'खादी प्रतिष्ठान' मे खादी तथा ग्रामोद्योगो का व्यावहारिक प्रशिक्षण भी लिया था।



स्वतन्त्रता के उपरान्त जब राज्यो का पुनर्गठन हुआ तो आप मध्यभारत के राज्यप्रमुख ग्वालियर-नरेश के प्रेस-सचिव हो गए। उन्ही दिनो सन् 1951 मे अखिल भारतीय अपराध-निरोध-सस्थान द्वारा आप जेनेवा मे होने वाले 'बाल अपराध-निरोध सम्मेलन' के लिए प्रतिनिधि भी चुने गए थे। कुछ समय तक आपने 'बिरला काटन मिल्स ग्वालियर' के प्रचाराध्यक्ष के रूप मे भी कार्य किया था। सन् 1956 तक ये सब कार्य करने के उपरान्त आपने सन् 1956 मे फिर स्वतन्त्र रूप से अपना 'नूतन प्रिंटिंग प्रेस' स्थापित करके उसकी ओर से 'नर्मदा' नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन-प्रकाशन प्रारम्भ किया। इस पत्रिका के अनेक विशेषाक अपनी उल्लेखनीय तथा उपादेय सामग्री

के लिए आज भी याद किए जाते हैं। आपने जहाँ इस पत्रिका का विशेषांक 'गणेशशंकर विद्यार्थी' की स्मृति में प्रकाशित किया था वहाँ प्रख्यात अमरीकन विचारक हेनरी डेविड थोरो के सम्बन्ध मे भी निकाला था। इन दोनों विशेषांकों का सम्पादन प्रख्यात पत्रकार श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने किया था। जब गणेशशकर विद्यार्थी के अनन्य भक्त श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का निधन हुआ तब उनकी स्मृति में भी आपने 'नर्मदा' का एक सग्रहणीय विशेषांक प्रकाशित किया था। आपने जहाँ मासिक 'नर्मदा' के द्वारा हिन्दी-साहित्य की उल्लेखनीय सेवा की वहाँ राज्य की जनता की सेवा के उद्देश्य से लश्कर से 'दैनिक निरंजन' भी सम्पादित किया था, जो अभी तक निरन्तर प्रकाशित हो रहा है।

आप जहाँ उत्कृष्ट पत्रकार, कुशल सगठक और लगनशील समाज-सेवक थे वहाँ रचनात्मक साहित्य का सर्जन करने मे भी पीछे नही रहे थे। आपके द्वारा लिखित अनेक कहानियाँ, रेखाचित्र, सस्मरण तथा उपन्यास आज भी हिन्दी-पाठको के मन मे बसे हुए है। अपनी इस प्रकार की प्रतिभा का हिन्दी-जगत् को परिचय देने की दृष्टि से आपने 'नूतन प्रकाशन मन्दिर' नाम से एक प्रकाशन-संस्था की स्थापना करके उसकी ओर से अपनी 'कब्रो की दुनिया', 'इन्सान मर गया', 'पतझड', 'हमारी शेरवानी', 'हरिधना गा उठा', (कहानी-सकलन)' 'महाबलीदत्त जयखडीकर', 'वे चेहरे', 'विरखा भगत' (रेखाचित्र-संस्मरण), 'विगत और वर्तमान', 'जीवन और मरण' (उपन्यास), 'मधुमक्खी पालन', 'हाथ से कागज बनाना', 'जीवन के प्रश्न' तथा 'हमारे ग्राम-गीत' नामक अनेक पुस्तकें प्रकाशित की थी। इनमे से 'कब्रो की दुनिया' नामक कहानी-संकलन उत्तर-प्रदेश तथा मध्यप्रदेश की सरकारो द्वारा पुरस्कृत भी हुआ था। इनके अतिरिक्त आपकी 'नितीन की कहानी' तथा 'अनुभव के रज-कण'आदि कई पाण्डुलिपियाँ अभी अप्रकाशित ही पडी है।

पत्रकारिता और लेखन मे इतना व्यस्त रहते हुए सक्सेना जी समाज-सेवा के अनेक कार्यों मे भी बराबर रुचि लेते रहते थे। आप जहाँ 'बृहत्तर ग्वालियर पत्रकार सघ' तथा 'साहित्यकार सघ ग्वालियर' के अनेक वर्ष तक प्रधानमन्त्री रहे थे वहाँ 'मध्य भारत पत्रकार सघ' के सक्रिय सदस्य भी रहे थे। 'मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के प्रधानमन्त्री होने के साथ-साथ आप 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग' की कार्यकारिणी के सदस्य भी अनेक वर्ष तक रहे थे। जब प्रख्यात पत्रकार श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने 'भाषावार प्रान्त निर्माण-आन्दोलन' प्रारम्भ किया था तब आपने उसमे भी सक्रिय रूप से भाग लिया था। आप 'जीवाजीराव विश्वविद्यालय' मे 'पत्रकार संकाय स्थापना समिति' के सदस्य रहने के साथ-साथ मध्यप्रदेश की 'प्रेस सलाहकार समिति' के भी कर्मठ सदस्य रहे थे। आपने अमर शहीद गणेशशकर विद्यार्थी की स्मृति को बनाए रखने की दृष्टि से प्रतिवर्ष प्रदेश के श्रेष्ठ पत्रकारो और मध्यप्रदेश मे भावात्मक एकता के लिए कार्य करने वाले कार्यकर्ताओ को सम्मानित करने के लिए दो पुरस्कार देने की योजना भी बनाई थी।

आप जहाँ हिन्दी के उत्कृष्ट पत्रकार और सफल लेखक थे वहाँ अँग्रेजी की पत्रिकाओ मे भी बराबर लिखते रहते थे। आर्थिक विषयो पर लेख आदि लिखने मे आप अत्यन्त दक्ष थे। फिल्मो मे हिंसा, दुराचरण, सैक्स तथा अतिरजित नग्नता के प्रदर्शन के विरुद्ध आपने अपनी लेखनी का बराबर सदुपयोग किया था। आप जहाँ 'इकनामिक इंस्टीट्यूट ऑफ लन्दन' द्वारा पुरस्कृत हुए थे वहाँ सन् 1976 मे 'पश्चिम बग नागरी प्रचारिणी सभा' ने आपको 'पत्रकार शिरोमणि' की सम्मानोपाधि भी प्रदान की थी।

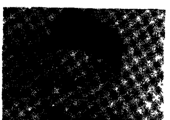
आप कई वर्ष से निरन्तर अस्वस्थ चले आ रहे थे और इसीके कारण 13 दिसम्बर सन् 1981 को आपका असामयिक देहावसान हो गया।

श्री शालिग्राम वैष्णव

श्री वैष्णव का जन्म उत्तर प्रदेश के गढवाल क्षेत्र के चमोली जनपद के नागनाथ पोखरी के निकटवर्ती गोपी नामक ग्राम मे अक्तूबर सन् 1873 मे हुआ था। आप पोखरी की प्रारम्भिक पाठशाला से प्राइमरी की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त चोपडा (पौड़ी) के माध्यमिक विद्यालय से मिडिल की परीक्षा देकर जिलाधीश के कार्यालय मे लिपिक हो गए थे। वहाँ से आपको शासन की ओर से कृषि कालेज कानपुर

भेजकर 'कानूनगो' की परीक्षा दिलाई गई। फलस्वरूप पहले आप 'सुपरवाइजर कानूनगो' बनाए गए और बाद में आपको 'नायब तहसीलदार' बनाकर बद्रीनाथ भेज दिया गया। वहाँ पर आप सन् 1916 से सन् 1920 तक उस मन्दिर के मैनेजर रहे और सन् 1926 में आपने 'तहसीलदार' के पद पर कार्य करते हुए अवकाश ग्रहण किया था।

अपनी शासकीय व्यस्तताओं में भी आपने अपने स्वाध्याय के बल पर 'श्रीमद्भागवत' की हिन्दी टीका 'शान्ति सन्दीपनी' नाम से लिखी। आपने अपनी इस टीका की बहुत-सी प्रतियाँ अपने क्षेत्र में बिना मूल्य वितरित कराई थीं। गीता के प्रति आपकी इतनी अनुरक्ति थी कि आपने गीता प्रेस गोरखपुर की ओर से सचालित होने वाली गीता परीक्षाओं का केन्द्र भी अपने यहाँ स्थापित कराया था। आपने सरकारी सेवा से निवृत्ति प्राप्त करने के उपरान्त 'अलकनन्दा' के तट पर एक आश्रम की स्थापना की थी, जिसका नाम 'शान्ति सदन' रखा था। इसी बीच आपके एक-मात्र पुत्र श्री गोविन्द वैष्णव का असामयिक निधन हो गया, जिसकी स्मृति में आपने 'गोविन्द पाठशाला' की स्थापना की थी। इसके लिए आपके बड़े भाई श्री आत्माराम वैष्णव ने 10 हजार रुपये का दान देकर एक ट्रस्ट की स्थापना कर दी थी। इस ट्रस्ट द्वारा वह पाठशाला अब भी सचालित हो रही है।



आप कुशल प्रशासक तथा अध्यात्म-चिन्तक होने के साथ-साथ उच्चकोटि के लेखक भी थे। आपने 'श्रीमद्भागवतगीता' की शान्ति सन्दीपनी टीका' के अतिरिक्त आपने 'भूगोल जिला गढ़वाल', 'उत्तराखण्ड रहस्य' तथा 'गढवाल दिग्दर्शन' नामक पुस्तकें भी लिखी थीं। गढवाली लोकोक्तियों का व्याख्या सहित सकलन करके आपने उन्हें 'गढवाली परवाणे' नाम से तैयार किया था, जिसका प्रकाशन डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' में धारावाहिक रूप से कराया था। इस पुस्तक का प्रकाशन 'गढवाल साहित्य परिषद्' की ओर से हुआ था और इसकी भूमिका स्वयं बड़थ्वाल जी ने लिखी थी। अपने 'गढवाल दिग्दर्शन' नामक ग्रन्थ में आपने गढवाल के इतिहास, भूगोल, समाज-सगठन तथा आर्थिक दृश्य आदि पर अपनी सर्वथा नई गवेषणाएँ की थीं।

आपका निधन 22 मार्च सन् 1953 को हुआ था।

श्रीमती शिवकुँवर देवी

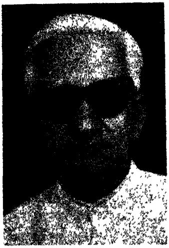
श्रीमती शिवकुँवर देवी का जन्म सैलाना (रतलाम) मध्यप्रदेश में 9 अक्तूबर सन् 1893 को हुआ था। आपमें शैशवकाल से ही कवित्व की जो प्रतिभा थी समय तथा सुविधा मिलने पर वह यथासमय प्रस्फुटित हुई और आपने कविता के क्षेत्र में अपनी अपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया। आपकी प्रमुख कृतियों में 'कमध्वज शतक', 'कमध्वज कमान लक्ष-1','कमध्वज कमान लक्ष-2' तथा 'कवि के हृदयोद्गार' आदि उल्लेखनीय हैं।

आपका निधन 10 जून सन् 1964 को हुआ था।

श्री शिवकुमार विद्यालंकार

श्री विद्यालंकार का जन्म अविभाजित पजाब के मुजफ्फरगढ जनपद के मनावाँ नामक ग्राम में मार्च सन् 1914 में हुआ था। आपके पिता श्री रामचन्द्र कुकरेजा ने आपको विद्याध्ययन के लिए 'गुरुकुल काँगडी विश्वविद्यालय' में प्रविष्ट किया था और आप वहाँ से सन् 1935 में विधिवत् स्नातक हुए थे। स्नातक होने के उपरान्त पहले-पहल आपने कुछ दिन तक गुरुकुल मुलतान (अब पाकिस्तान) में अध्यापन का कार्य किया और फिर पत्रकारिता के क्षेत्र में अवतरित हो गए। अपने पत्रकारिता के जीवन का प्रारम्भ आपने दिल्ली से

प्रकाशित होने वाले 'वीर अर्जुन' दैनिक द्वारा किया था और बाद मे 'दैनिक हिन्दुस्तान' मे चले गए थे। 'हिन्दुस्तान' मे आपने सन् 1976 तक विभिन्न रूपो मे अत्यन्त सफलता-पूर्वक कार्य किया था। पत्रकारिता के इस दायित्व का निर्वाह करते हुए भी आप प्राय भारतीय राज-नीति तथा इतिहास मे सम्बन्धित अनेक लेख लिखते रहते थे, जो 'नया समाज', 'सरस्वती', 'आजकल', 'विश्वदर्शन' तथा 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' आदि हिन्दी के अनेक पत्रों मे प्रकाशित हुए है।

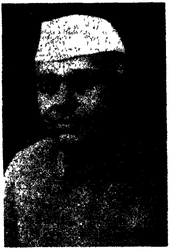


स्वतन्त्र लेखन और पत्रकारिता के अतिरिक्त आप राजनीतिक घटना-चक्रो मे भी बराबर रुचि लेते रहते थे। आपने जहाँ भारतीय स्वतन्त्रता-आन्दोलन मे जेल-यात्रा की थी वहाँ साम्यवादी आन्दोलन की विभिन्न प्रवृत्तियो से भी आप सक्रिय रूप से जुड़े हुए थे। 'इण्डो सोवियत कल्चरल सोसाइटी' के सक्रिय एव कर्मठ सदस्य होने के साथ-साथ आप अनेक श्रमिक सस्थाओ से भी सम्बद्ध रहे थे। 5 वर्ष तक आप 'हिन्दुस्तान टाइम्स कर्मचारी सघ' के भी कार्य-कर्त्ता रहे थे। दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से आयोजित अनेक समारोहो मे भी आपने अपना सक्रिय योगदान दिया था।

आपका निधन 1 जनवरी सन् 1977 को हुआ था।

श्री शिवचरणलाल शर्मा

श्री शर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के एटा जनपद के नगला डरू नामक ग्राम मे 23 मार्च सन् 1898 को हुआ था। आपने उच्चकोटि के पत्रकार तथा लेखक के रूप मे तो प्रतिष्ठा अर्जित की ही थी, साथ ही आप प्रथम श्रेणी के समाज-सेवी भी थे। राजनीतिक क्षेत्र मे आपकी सेवाओ का इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि आपको सन् 1918 मे 'मैनपुरी षड्यन्त्र' मे 5 वर्ष की कडी सजा हुई थी। 'काकोरी केस' के अभियुक्तो मे भी आपका अन्यतम स्थान था। पर्याप्त और सुपुष्ट प्रमाण न होने के अभाव मे कई महीने तक मुकद्दमा चलने के बाद आप उस केस मे सर्वथा बरी हो गए थे।



आपने 'सैनिक', 'त्याग भूमि' और 'राजस्थान सन्देश' आदि हिन्दी के अनेक पत्रो के सम्पादकीय विभागो मे कार्य करने के अतिरिक्त अग्रेजी के 'इडियन एक्सप्रेस', 'हिन्दुस्तान टाइम्स', 'टाइम्स ऑफ इडिया', 'लीडर' तथा 'पायनियर' आदि अनेक पत्रो के सवाददाता के रूप मे भी अनेक वर्ष तक कार्य किया था। आप हिन्दी के 'हिन्दुस्तान' तथा 'नवभारत टाइम्स' के सवाददाता भी रहे थे।

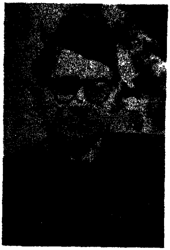
आपके द्वारा लिखित तथा अनूदित जो कई पुस्तके प्रकाशित हुई थी उनमे 'अमेरिका को स्वतन्त्रता कैसे मिली' नामक पुस्तक तो अग्रेज नौकरशाही द्वारा उन्ही दिनो अपने प्रकाशन के साथ ही जब्त कर ली गई थी। 'सस्ता साहित्य मण्डल' अजमेर की ओर से प्रकाशित 'जब अग्रेज यहाँ नही आए थे' नामक आपकी पुस्तक भी अपनी विद्रोहात्मक सामग्री के लिए विशेष उल्लेखनीय है।

आप काफी दिन से मथुरा मे रहने लगे थे और वहाँ की अनेक सामाजिक, सास्कृतिक और राजनीतिक सस्थाओ से आपका घनिष्ठ सम्बन्ध रहा था। मथुरा मे राजनीतिक जागरण की दिशा मे आपने उल्लेखनीय कार्य किया था।

आपका निधन 7 जून सन् 1969 मे हुआ था।

पण्डित शिवदत्त शुक्ल

शुक्ल जी का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा नगर में सन् 1912 में शिवरात्रि के पावन पर्व पर हुआ था। अल्पायु में ही अपने पिता का देहावसान हो जाने के कारण आपने अभावों और गरीबी में ही अपना जीवन बिताया था। आपकी माता श्रीमती भगवती देवी ने आपको जब सेण्ट जान्स हाई स्कूल मे प्रविष्ट कराया था तब आपकी आर्थिक दशा अत्यन्त शोचनीय थी। फलस्वरूप सन् 1932 मे हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करके जब आपने आगे का अध्ययन



जारी रखने की दृष्टि से बलवन्त राजपूत कालेज मे इण्टर की कक्षा मे प्रवेश लिया तो आपको अपना अध्ययन बीच मे ही छोड़ना पडा था। आपका विवाह 10 फरवरी सन् 1933 को काशी विद्यापीठ वाराणसी के कुल-सचिव श्री रामनाथ पाठक की बडी बहिन सीतादेवी के साथ हुआ था। असमय मे गृहस्थ का भार ऊपर आ जाने के कारण आपने उत्तर प्रदेश शिक्षा विभाग मे 40 रुपये मासिक पर लिपिक का कार्य स्वीकार कर लिया और उसी विभाग मे 34 वर्ष तक अनवरत कार्य-रत रहने के उपरान्त सन् 1967 मे मडलीय विद्यालय निरीक्षक आगरा के कार्यालय अधीक्षक के पद से अवकाश ग्रहण किया था।

सरकारी सेवा से अवकाश ग्रहण करके भी आप निरन्तर गतिशील रहे और पर्याप्त समय तक आपने आगरा के 'रत्न मुनि जैन गर्ल्स इण्टर कालेज' मे भी कार्यालयाध्यक्ष के पद पर सफलतापूर्वक कार्य किया। आप जहाँ एक सद्गृहस्थ और समाज-सेवा-परायण नागरिक के रूप मे आगरा में विख्यात थे वहाँ आपकी रुचि लेखन की ओर भी थी। आपने 'भक्ति ज्योति' नामक एक पुस्तक लिखकर अपनी माता भगवतीदेवी को समर्पित की थी, किन्तु खेद है कि इस पुस्तक का प्रकाशन आप अपने जीवन-काल मे नही करा सके थे। अब आपके निधन के बाद आपके छोटे पुत्र अनुराग-कुमार शुक्ल ने इस पुस्तक का प्रकाशन शुक्ल जी की प्रथम पुण्य तिथि पर 27 सितम्बर सन् 1981 को किया है।

आपका निधन 27 नवम्बर सन् 1980 को आगरा में हुआ था।

श्री शिवदयाल शुक्ल

श्री शुक्ल का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के खुटहा नामक ग्राम में सन् 1845 मे हुआ था। शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त आप नागपुर चले गए थे और वहाँ के सीताबर्डी मोहल्ले मे ही आपका प्राय सारा जीवन व्यतीत हुआ था। आप संस्कृत, उर्दू और हिन्दी के तो विद्वान् थे ही, नागपुर मे रहने के कारण मराठी भाषा का भी आपको अच्छा ज्ञान हो गया था। आप 'विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन नागपुर' के अनन्य सूत्रधार पंडित प्रयागदत्त शुक्ल के पितामह थे।

आपका प्राय: सारा जीवन समाज-सेवा मे ही व्यतीत हुआ था। सर्व प्रथम आपने गो-सेवा के लिए अपने मित्र श्री शिवचरणलाल शर्मा के सहयोग से नागपुर मे 'गोरक्षिणी सभा' की स्थापना की थी, जिसके अध्यक्ष नागपुर के सुप्रसिद्ध सन्त दादाजी साधु महाराज थे। इन 'दादाजी साधुमहाराज' का पूर्व नाम श्री 'मुकुन्दराज' था, जो हिन्दी के कुशल कवि और वक्ता थे। इसी सभा की ओर से 'गोरक्षा' नामक जो पाक्षिक पत्र प्रकाशित होता था, शुक्लजी उसके सम्पादक थे।

आपने जहाँ गद्य मे गोरक्षा-सम्बन्धी अनेक छोटी-बडी पुस्तकें लिखी थी वहाँ व्रजभाषा, खडी बोली और अवधी मे भी सफल काव्य-रचनाएँ की थी। आपके काव्य का चमत्कार इस पद से प्रकट होता है :

कथा सुजान कान को, यथा सुनी प्रमान की,
तथा न होत आन को, जहान ना लखी गई।
समेत कस सैन्य को, पठाय देव ऐन को,
बिठाय उग्रसेन राज, आप चाकरी ठई।।

रही जु एक सेव की, कुजात औ कुभेव की,
बहू कहात देव की, लगाय हीयरी लई।
अपंग अग ज्यों हरी, कुढंग नारि त्यों बरी,
उमंग है घरी-घरी, अरी अली भली भई॥

आपका निधन सन् 1903 मे हुआ था।

श्री शिवदास जायसवाल 'कुसुम'

श्री 'कुसुम' का जन्म सन् 1895 मे उत्तर प्रदेश के देवरिया जनपद के बरहज नामक स्थान मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' मे हुई थी। विद्याध्ययन करते समय ही आपका सम्पर्क सर्वश्री लक्ष्मणनारायण गर्दे, जयशकरप्रसाद, रामनारायण मिश्र, मन्नन द्विवेदी गजपुरी तथा उदित मिश्र आदि हिन्दी के अनेक साहित्यकारो से हो गया था। इस सम्पर्क के कारण ही आपमे लेखन की प्रवृत्ति उद्भूत हुई थी। हिन्दी की प्रख्यात पत्रिका 'मर्यादा' में प्रकाशित आपकी 'आँख सतत लड़ती रहे' शीर्षक कविता उन दिनों काव्य-मर्मज्ञों को बहुत पसन्द आई थी।

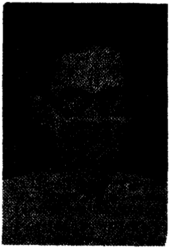
आपने जहाँ अनेक काव्य, उपन्यास, प्रहसन तथा नाटक लिखे, वहाँ निबन्ध-लेखन की दिशा मे भी सफलता प्राप्त की थी। आपकी रचनाओ मे 'पीयूष' (निबन्ध सग्रह), 'भारतोदय', 'वीर बाला' (नाटक), 'भगतिन बिलइया' (प्रहसन), 'भारत की शासन प्रणाली' (राजनीति), 'श्यामा' (उपन्यास), 'आरती', 'कीचक वध', 'कुसुम कली' (कविता), 'सप्तर्षि', 'कर्मवीर बैंजमिन फ्रेंकलिन' (जीवनी) आदि उल्लेखनीय है।

आपके निधन से पूर्व गगा पुस्तकमाला कार्यालय लखनऊ की ओर से आपका 'उषा' नामक काव्य भी प्रकाशित हुआ था।

आपका निधन सन् 1925 मे हुआ था।

आचार्य शिवदुलारे शर्मा 'शिव'

श्री 'शिव' जी का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के तौरा नामक ग्राम में सन् 1911 में हुआ था। आपका सम्पर्क अपनी किशोरावस्था से ही हिन्दी के प्रख्यात कवि श्री गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' से हो गया था और उनके शिष्यत्व मे ही आपने कविता करनी प्रारम्भ की थी। आप जहाँ लगभग 15 वर्ष तक 'सुकवि' के प्रबन्ध-व्यवस्थापक के पद पर आसीन रहे थे वहाँ 'सुकवि' के बन्द हो जाने के उपरान्त आपने 'रसराज' नामक कविता-सम्बन्धी मासिक पत्र का निरन्तर तीन वर्ष तक सम्पादन तथा प्रकाशन किया था। 'सुकवि' मे आप अपनी गवर्नमेण्ट आर्डिनेंस फैक्टरी की 100 रुपए मासिक की स्थायी नौकरी छोडकर केवल 30 रुपए मासिक पर ही साहित्य-सेवा की भावना से आए थे। आप 'स्वामी अक्खडानन्द', 'मनमौजी', 'बे-नजीर', 'मुंहफुक्का' तथा 'रगी' आदि अनेक उपनामो से भी समयानुकूल रचनाएँ किया करते थे।



आपकी रचनाओं मे मुख्यत साम्यवादी विचार-धारा का प्राचुर्य दृष्टिगत होता है। आपकी रचनाएँ 'सुकवि' और 'रसराज' के अतिरिक्त 'प्रताप', 'वर्तमान', 'जागरण', 'कानपुर टाइम्स', 'नागरिक' एव 'नवराष्ट्र' आदि अनेक पत्रों मे ससम्मान प्रकाशित होती रहती थी। आपने हास्यरस की भी अनेक रचनाएँ की थी। स्वतन्त्रता के उपरान्त आपने अपनी भावनाओ को अपनी 'वन्दना' शीर्षक एक रचना मे जिस प्रकार व्यक्त किया था उससे आपकी भाव-धारा का सही-सही परिचय मिल जाता है। आपने लिखा था :

जय, जनता की जय!
बीत चुकी अब काली रजनी, रवि का हुआ उदय।
करता रहा जहाँ मनमानी, अपने मन का भूत।
उट्ठा वही बदलकर करवट, धरती माँ का पूत॥

लगा कतरने दानवता के पर होकर निर्भय !
जय, जनता की जय !
जागी ज्योति, जगत् है जागा, जागा है अनुराग।
आज विषमता की होली में स्वयं लगी है आग ।।
पापों का, सन्तापों का दल, जलकर होगा क्षय !
जय, जनता की जय !

आपकी ऐसी जन-प्रेरक रचनाओं का सकलन 'जयघोष' नाम से प्रकाशित हुआ था। इस सकलन की अधिकाश रचनाएँ शोषण-पीडन-दोहन के विरुद्ध है। आप अपने जीवन के अन्तिम दिनों में साम्यवादी विचार-धारा का समर्थन करने लगे थे। आप साहित्य और राजनीति के बीच कोई भेद नही मानते थे। नवम्बर सन् 1957 में आपकी साहित्य-सेवाओं को दृष्टि मे रखकर जो अभिनन्दन किया गया था, उस अवसर पर आपको एक 'अभिनन्दन ग्रन्थ' भी भेंट किया गया था। इस ग्रन्थ का सम्पादन सर्व श्री सुदर्शन चक्र, कृष्ण-कुमार त्रिवेदी 'कोमल' और कृष्णकुमार मिश्र ने किया था। 'जयघोष' के अतिरिक्त आपकी 'ठेलहाव' और 'मातृ-स्तवन' नामक रचनाएँ भी प्रकाशित हुई थी। आपकी 'मधुवन', 'चारु चयन', 'जनता बावनी' और 'मेरे गीत' नामक रचनाएँ अप्रकाशित ही रह गईं।

आपका निधन सन् 1976 में हुआ था।

डॉ० शिवनारायण श्रीवास्तव

श्री श्रीवास्तव जी का जन्म उत्तर प्रदेश के वाराणसी जनपद के कोंहडिया नामक ग्राम मे 3 दिसम्बर सन् 1913 को हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा काशी में हुई थी। आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा सन् 1939 में उत्तीर्ण की थी और सन् 1962 मे वहाँ से ही पी-एच० डी० भी हुए थे। एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आप पहले-पहल 'हिन्दी विद्यापीठ देवघर (बिहार)' के 'प्राचार्य' नियुक्त हुए थे। जब अगस्त-आन्दोलन के कारण यह संस्था बन्द हो गई तब आप सन् 1943 में के० डी०एम० कालेज बरेली मे 'हिन्दी अध्यापक' के रूप में नियुक्त हुए और इसके उपरान्त आप सन् 1944 से सन् 1948 तक मिर्जापुर के बी०एल०जे० कालेज में सेवा-रत रहे। तदुपरान्त जुलाई सन् 1948 में आपकी नियुक्ति आजमगढ़ के 'शिबली नेशनल डिग्री कालेज' मे 'हिन्दी विभागाध्यक्ष' के पद पर हो गई, किन्तु उसी समय आपको जौनपुर 'तिलकधारी कालेज' मे 'हिन्दी विभागाध्यक्ष' के पद पर कार्य करने का आमन्त्रण मिला और आप वहाँ चले गए। आपने इस पद पर सन् 1962 तक कार्य किया और फिर जुलाई सन् 1962 से मृत्यु-पर्यन्त 'दयानन्द महाविद्यालय आजमगढ' के प्राचार्य रहे।

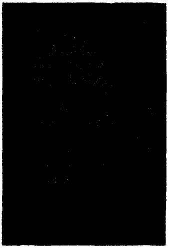


आप जहाँ एक कुशल शिक्षक के रूप मे अपनी प्रतिष्ठा बना चुके थे वहाँ अध्ययनशील एवं मननशील रचनाकार की दृष्टि से भी आपकी सेवाएँ सर्वथा अविस्मरणीय है। आपने एम० ए० (हिन्दी) मे 'हिन्दी उपन्यास' विषय पर जो लघु प्रबन्ध लिखा था पी-एच० डी० की उपाधि भी आपको उसके परिवर्धित रूप पर प्राप्त हुई थी। यहाँ यह बात विशेष रूप से ज्ञातव्य है कि हिन्दी मे उपन्यासो के विवेचन पर आपकी यह पुस्तक किसी समय बिलकुल अकेली थी और हिन्दी-जगत् मे उसका पर्याप्त स्वागत हुआ था। आपकी इस कृति ने अनेक शोधार्थियो को जहाँ उचित दिशा-निर्देशन दिया था वहाँ उसने हिन्दी के प्राध्यापकों का मार्ग भी प्रशस्त किया था। श्री श्रीवास्तव जी ने यदि इस कृति को न लिखा होता तो कदाचित् उनको इतनी लोकप्रियता प्राप्त न हुई होती। इस महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ के अतिरिक्त आपके द्वारा विरचित अन्य कृतियो मे 'हिन्दी के प्रमुख साहित्यकार', 'कविता की शिक्षा', 'निबन्ध निधि', 'प्रबन्ध पयोधि' तथा 'नूतन गद्य भारती' आदि के नाम विशेष परिगणनीय है।

आपका देहावसान 20 फरवरी सन् 1972 को हृदयाघात के कारण हुआ था।

श्री शिवन्न शास्त्री जंघ्याल

श्री शास्त्री का जन्म आन्ध्र प्रदेश के कृष्णा जनपद के 'कोनिपाडु अग्रहारम्' नामक ग्राम मे 5 दिसम्बर सन् 1896 को हुआ था। आपने



गुडिवाडा ताल्लुके मे सन् 1921 मे 'हिन्दी प्रचार केन्द्र' की स्थापना करके हिन्दी के प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया था। आपने साहित्य विशारद की परीक्षा भी दी थी। आप दर्शन, व्याकरण तथा साहित्य के मर्मज्ञ होने के साथ-साथ तेलुगु तथा सस्कृत भाषाओ के निष्णात पडित थे। आपने 'हिन्दी-तेलुगु' और 'तेलुगु-हिन्दी-कोश' बनाने के साथ 'हिन्दी-तेलुगु-व्याकरण' तथा 'ब्रजभाषा व्याकरण' भी लिखा था। डी० एल० राय के कई नाटको का बगला से तेलुगु मे अनुवाद करने के अतिरिक्त आपने तेलुगु भाषा मे भी बहुत-सी रचनाएँ की थी।

आपका निधन 1 अगस्त सन् 1929 को हुआ था।

आचार्य शिवपूजनसहाय

आपका जन्म बिहार प्रदेश के शाहाबाद जनपद के उनवाँस नामक ग्राम मे 9 अगस्त सन् 1893 को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने ग्राम के विद्यालय मे हुई थी और इसके उपरान्त सन् 1903 मे आरा के 'कायस्थ जुबली एकेडेमी' नामक विद्यालय मे प्रविष्ट हो गए थे और वहाँ से ही आपने सन् 1912 मे मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। अपनी छात्रावस्था से आपका लेखन की ओर झुकाव हो गया था और आपकी रचनाएँ उन दिनो 'शिक्षा', 'लक्ष्मी', 'मनोरंजन' और 'पाटलिपुत्र' आदि बिहार की अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होने लगी थी। मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने सन् 1914 मे आरा के 'टाउन स्कूल' मे अध्यापन का कार्य प्रारम्भ कर दिया था। जब सन् 1920 मे महात्मा गांधी का 'असहयोग आन्दोलन' प्रारम्भ हुआ था तब आपने सरकारी नौकरी से त्यागपत्र देकर आरा के 'राष्ट्रीय स्कूल' मे अध्यापन प्रारम्भ कर दिया था।

आप मूलत पत्रकार थे और आपका पत्रकार-जीवन उस समय प्रारम्भ हुआ था जब आपने सन् 1921 मे आरा से प्रकाशित होने वाले 'मारवाड़ी सुधार' नामक मासिक पत्र का सम्पादन किया था। इसके उपरान्त आप अपने साहित्यिक गुरु पण्डित ईश्वरीप्रसाद शर्मा की प्रेरणा पर सन् 1923 मे कलकत्ता जाकर वहाँ के 'मतवाला-मण्डल' मे सम्मिलित हो गए। इस मण्डल मे उन दिनो मिर्जापुर के महादेवप्रसाद सेठ, नवजादिकलाल श्रीवास्तव, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' तथा सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' थे। आपके वहाँ पहुँचने पर महादेवप्रसाद सेठ द्वारा 'मतवाला' नामक जो पत्र प्रारम्भ किया गया था उससे आपकी सम्पादन-प्रतिभा का अच्छा विकास हुआ था। अपने कलकत्ता-प्रवास के उन दिनो मे आपने 'मतवाला' के अतिरिक्त 'मौजी', 'आदर्श', 'गोल-माल', 'उपन्यास-तरग' और 'समन्वय' आदि कई पत्रो के सम्पादन मे भी अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया था। इसके उपरान्त आप सन् 1925 मे कुछ समय के लिए 'माधुरी' के सम्पादन मे सहयोग देने के निमित्त लखनऊ भी गए थे, किन्तु सन् 1926 मे 'मतवाला-मण्डल' मे वापिस कलकत्ता पहुँच गए थे। जिन दिनो आप 'माधुरी' मे कार्य-रत थे उन दिनो प्रेमचन्द जी भी वहाँ पर आपके साथ थे। उनके 'रंगभूमि' नामक उपन्यास का मुद्रण आपके ही निरीक्षण मे हुआ था। आपने उसकी पाण्डुलिपि का सम्पादन भी किया था।

कलकत्ता के बाद आपने कुछ समय तक सुलतानगज (भागलपुर) से प्रकाशित होने वाली 'गगा' नामक प्रख्यात साहित्यिक पत्रिका का सम्पादन भी किया था। 'गगा' के उपरान्त आप 'पुस्तक भण्डार' के सचालक आचार्य रामलोचनशरण 'बिहारी' के निमन्त्रण पर उनके प्रकाशनो के सम्पादन एव मुद्रण मे सहयोग देने के निमित्त लहेरिया

सराय (दरभंगा) चले गए और वहाँ पर आपने कई वर्ष तक जमकर कार्य किया था। पुस्तक भण्डार के प्रकाशनों के मुद्रण के प्रसंग में जब आप काशी जाने लगे तब आपका



सम्पर्क वहाँ पर हिन्दी के अनेक सुप्रसिद्ध साहित्यकारों से हो गया था। इस सम्पर्क का सुपरिणाम यह हुआ कि आपने वहाँ से 'जागरण' नामक एक पाक्षिक पत्र का सम्पादन - प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि आपको इस कार्य में काशी के सर्वश्री प्रेमचन्द, जयशंकरप्रसाद और विनोदशंकर व्यास आदि अनेक साहित्यकारों का सहयोग सुलभ हो गया था। जब 'जागरण' के संचालन में आपको कठिनाई अनुभव होने लगी तब आप उसका कार्य श्री विनोदशंकर व्यास को सौंपकर सन् 1933 में वापिस लहेरिया सराय चले गए।

लहेरिया सराय जाकर आपने 'पुस्तक भण्डार' की ओर से प्रकाशित होने वाले बालोपयोगी मासिक पत्र 'बालक' का सम्पादन कई वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक किया। इसके उपरान्त सन् 1939 में आप 'पुस्तक भण्डार' से अवकाश ग्रहण करके छपरा के 'राजेन्द्र कालेज' में हिन्दी के अध्यापक होकर चले गए और सन् 1949 तक इस पद पर अत्यन्त सफलतापूर्वक कार्य करते रहे। बीच में एक वर्ष का अवकाश ग्रहण करके आपने सन् 1946 में 'पुस्तक भण्डार पटना' की ओर से प्रकाशित होने वाले साहित्यिक पत्र 'हिमालय' का सम्पादन भी किया था। 'हिमालय' के सम्पादन के दिनों में आपके द्वारा लिखी गई टिप्पणियों से हिन्दी के साहित्यिक जगत् में अच्छी चहल-पहल रहती थी। 'हिमालय' के अतिरिक्त आपने 'बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की ओर से सन् 1950 में 'साहित्य' नामक जो शोध-प्रधान त्रैमासिक प्रारम्भ कराया था उसके आदि सम्पादक भी आप ही थे। अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक आपने 'साहित्य' के सम्पादन द्वारा शोध और समीक्षा के जो नये मानदण्ड प्रस्तुत किये थे उनका हिन्दी-जगत् में समुचित स्वागत हुआ था।

साहित्यिक पत्रकारिता और संस्मरण-लेखन की कला में आपने अपनी लेखनी का जो अवदान दिया है वह हिन्दी-साहित्य में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। आपके व्यक्तित्व की महत्ता और गरिमा के कारण ही जहाँ आपको सन् 1941 में बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सत्रहवें अधिवेशन का अध्यक्ष बनाया गया था वहाँ आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सन् 1944 में हुए जयपुर-अधिवेशन के अवसर पर आयोजित 'साहित्य परिषद्' की अध्यक्षता भी की थी। सन् 1950 में जब बिहार सरकार के शिक्षा विभाग की ओर से 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' की स्थापना की गई थी तब आप ही उसके प्रथम 'निदेशक' बनाए गए थे। आपने इस पद पर 31 अगस्त सन् 1959 तक कार्य-रत रहते हुए परिषद् के साहित्यिक स्वरूप को सजाने और सँवारने में जो परिश्रम किया था उसके कारण थोड़े से समय में ही परिषद् को अभूतपूर्व ख्याति मिल गई थी। उसकी ओर से 'प्रकाशित' अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भारतीय वाङ्मय की अक्षय निधि है। देश के मूर्धन्य विद्वानों को परिषद् में बुलाकर अनेक महत्त्वपूर्ण विषयों पर उनके भाषण कराना और बाद में उन्हें पुस्तकाकार प्रकाशित करना आपकी सूझ-बूझ का ही परिचायक है। आपने परिषद् के कार्य-काल में 'बिहार का साहित्यिक इतिहास' प्रस्तुत करने की जो महत्त्वपूर्ण योजना बनाई थी उससे हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि में अभूतपूर्व कार्य हुआ है। इस योजना के दो खण्ड आपके जीवन-काल में पूरे हो गए थे और तीसरा खण्ड सन् 1976 में प्रकाशित हुआ था। चौथा खण्ड इस समय मुद्रणाधीन है। यदि आप यह महत्त्वपूर्ण कार्य प्रारम्भ न करते तो बिहार की बहुत-सी अतुल साहित्य-सम्पदा विलुप्त ही रह जाती। इसी प्रकार अन्य बहुत-सी ऐसी योजनाएँ भी आपने परिषद् के माध्यम से प्रारम्भ की थी।

आप साहित्य के प्रति कितने समर्पित थे इसका ज्वलन्त उदाहरण यही है कि जब आपको 'परिषद्' की ओर से डेढ़ हजार रुपये का 'वयोवृद्ध साहित्यिक सम्मान पुरस्कार' प्रदान किया गया तब आपने उस राशि में पाँच सौ रुपये और

सम्मिलित करके उसे 'बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन' को दान में दे दिया। इस राशि से सम्मेलन ने आचार्य जी की धर्मपत्नी की स्मृति मे 'बच्चनदेवी साहित्य-गोष्ठी' की स्थापना की और इसके अन्तर्गत प्रायः साहित्यिक भाषण होते रहते हैं। आपकी साहित्य-सेवाओं के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिए सन् 1960 मे जहाँ भारत सरकार की ओर से 'पद्मभूषण' की उपाधि प्रदान की गई थी वहाँ आपको सन् 1962 मे 'भागलपुर विश्वविद्यालय' ने डी० लिट्० की उपाधि से अभिषिक्त किया था। सन् 1961 मे 'पटना नगर निगम' ने भी आपका 'नागरिक सम्मान' आयोजित करके अपनी कृतज्ञता ज्ञापित की थी।

एक पत्रकार के रूप में अपने साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ करके आपने जिस रचना-प्रतिभा का परिचय दिया था उससे हिन्दी-साहित्य की श्री-वृद्धि मे बहुत बडा योगदान मिला है। आपने इतनी बहुविध रचनाओ का निर्माण किया था कि जिन्हें देखकर आश्चर्यचकित हो जाना पडता है। कदाचित् यह बात हमारे बहुत-से पाठको को विदित न होगी कि हिन्दी मे आचलिक उपन्यास-लेखन के क्षेत्र मे आपने ही सर्वप्रथम अपने 'देहाती दुनिया' नामक उपन्यास के द्वारा सर्वाग्रणी स्थान बनाया था। हम आपकी इस कृति को 'प्रथम आंचलिक उपन्यास' कह सकते है। इसमे भोजपुर जनपद के जन-जीवन का चित्रण आपने अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। इस उपन्यास के अतिरिक्त आपने जिन मौलिक कृतियो की रचना की थी उनमे 'बिहार का विहार', 'विभूति', 'अर्जुन', 'भीष्म', 'ग्राम-सुधार', 'दो घडी', 'माँ के सपूत', 'अन्नपूर्णा के मन्दिर मे', 'महिला महत्त्व', 'बालोद्यान' और 'आदर्श परिचय' के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपकी इन रचनाओ को देखकर आपके बहुमुखी व्यक्तित्व का सही परिचय मिल जाता है। इनके अतिरिक्त आपकी जो असख्य रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे इधर-उधर बिखरी पड़ी थी उन सबका प्रकाशन अब 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' की ओर से 'शिवपूजन रचनावली' नाम से 4 खण्डों मे हो चुका है। इनमे से पहले खण्ड मे जहाँ आपकी 'बिहार का विहार', 'विभूति' और 'देहाती दुनिया' नामक 3 कृतियाँ समाविष्ट है वहाँ दूसरे भाग में आपकी अन्य सभी प्रकाशित पुस्तको का समावेश किया गया है। इस ग्रन्थावली के तीसरे खण्ड में जहाँ आपकी साहित्यिक टिप्पणियाँ, लेख तथा भाषण संकलित है वहाँ चौथे भाग मे अनेक जीवनियाँ, संस्मरण और सम्पादकीय लेख प्रस्तुत किये गए है। इस ग्रन्थावली के चारों खण्डों को देखकर आश्चर्य-चकित हो जाना पड़ता है कि आचार्य शिवपूजन सहाय ने अपने कर्म-रत जीवन मे अनेक व्यस्तताओ के होते हुए भी कितने प्रचुर साहित्य का निर्माण किया था !

इस सर्जनात्मक साहित्य के अतिरिक्त आपने जिन बहुत-से ग्रन्थो का सम्पादन किया था उनमे 'द्विवेदी अभिनन्दन ग्रन्थ', 'श्री राजराजेश्वरी ग्रन्थावली', 'राजा कमलानन्दसिंह ग्रन्थावली', 'राजेन्द्र अभिनन्दन ग्रन्थ', 'आत्म-कथा', 'रजत जयन्ती स्मारक ग्रन्थ', 'बिहार की महिलाएँ' और 'सेवा धर्म' के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण है। इनमे से 'द्विवेदी अभिनन्दन ग्रन्थ' आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी को सन् 1933 मे 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की ओर से समर्पित किया गया था और 'रजत जयन्ती स्मारक ग्रन्थ' का प्रकाशन 'पुस्तक भण्डार लहेरियासराय' की रजत जयन्ती के अवसर पर सन् 1942 मे किया गया था और इसे पुस्तक भण्डार के सचालक आचार्य रामलोचनशरण को उनके जीवन की 'स्वर्ण जयंती' पर समर्पित किया गया था। इसी प्रकार 'राजेन्द्र अभिनन्दन ग्रन्थ' का सम्पादन आपने जहाँ भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के निमित्त किया था वहाँ आपने उनके द्वारा लिखित 'आत्मकथा' को सम्पादित करके पुस्तकाकार प्रकाशित होने से पूर्व 'हिमालय' मे छापा था। 'बिहार की महिलाएँ' नामक ग्रन्थ का सम्पादन भी आपने डॉ० राजेन्द्रप्रसाद को समर्पित करने की दृष्टि से किया था। इसी प्रकार आपने श्री 'राजराजेश्वरी ग्रन्थावली' और 'राजा कमलानन्दनसिंह ग्रन्थावली' को भी सम्पादित करके मुद्रित कराया था। आपकी प्रतिभा के ऐसे अनेक आयाम थे जिनके कारण सामान्यत. सारे भारत तथा विशेषत. बिहार मे अद्वितीय साहित्यिक जागरण हुआ था। बिहार मे ऐसे अनेक साहित्य-सेवी हुए है, जिनके निर्माण मे आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान रहा था। आपने जहाँ अपनी पीढी के साहित्यकारो को दिशा-दान देने में अभिनन्दनीय कार्य किया था वहाँ आपके बाद की पीढ़ी के रचनाकार भी आपसे प्रचुर प्रेरणा प्राप्त करते रहे थे। आपका पारिवारिक जीवन अत्यन्त संकट-सम्पन्न रहा था और

आपने 3 विवाह किये थे। पहली दोनों पत्नियों के असामयिक निधन के उपरान्त आपकी अन्तिम पत्नी श्रीमती बच्चनदेवी से 2 पुत्र और 2 पुत्रियाँ उत्पन्न हुई थी। आपके दोनो पुत्र (श्री अर्धेन्दुशेखर आनन्द मूर्ति तथा श्री बालेन्दुशेखर मगलमूर्ति) आपकी साहित्यिक विरासत का सही सरक्षण कर रहे है और स्वय भी अपनी साहित्य-रचना के द्वारा हिन्दी की सेवा करने मे पूर्णत सलग्न है।

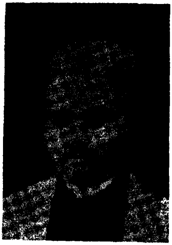
आपके निधन के उपरान्त जहाँ बिहार की 'नई धारा' ने अपना एक सर्वांग पूर्ण विशेषाक प्रकाशित करके अपने कर्त्तव्य का पालन किया था वहाँ बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के पत्र 'साहित्य' ने भी अपना सग्रहणीय विशेषाक प्रकाशित किया था। इसी प्रकार 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'साहित्य सन्देश' और 'ज्योत्स्ना' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओ के भी महत्त्वपूर्ण सामग्री से परिपूर्ण विशेषाक उन दिनो मुद्रित हुए थे।

आपका निधन 21 जनवरी सन् 1963 को पटना मे हुआ था।

श्री शिवप्रकाश द्विवेदी 'प्रकाश'

श्री द्विवेदी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के मथुरा नगर के एक सम्भ्रान्त ब्राह्मण-परिवार मे सन् 1872 मे हुआ था। आप नगर के सुप्रसिद्ध ज्योतिषी थे और इसी कारण आपको 'विद्या कला निधि' तथा 'ज्योतिषमार्तण्ड' की सम्मानोपाधियाँ प्रदान की गई थी। आप जहाँ ज्योतिष, धर्मशास्त्र, साहित्य-सम्बन्धी अनेक ग्रन्थो के निष्णात पण्डित और अलकार-मर्मज्ञ थे वहाँ सस्कृत मे गद्य-रचना करने मे भी परम प्रवीण थे। आपकी ऐसी गद्यमयी रचनाएँ बाणभट्ट की 'कादम्बरी' की याद करा देती है। उन रचनाओ मे अर्थ-गौरव और पद-लालित्य के साथ-साथ अलकारो की सुरम्य छटा भी दृष्टिगत होती है।

संस्कृत वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान् होने के साथ-साथ आप ब्रजभाषा के पारगत कवि भी थे। आपके द्वारा विरचित ब्रजभाषा की उल्लेखनीय कृतियो मे 'शक्ति चरितामृत', 'कवि कुमुद कौमुदी' और 'सूक्ति मौक्तिक माला काव्य' प्रमुख है। आपकी प्रथम रचना 'शक्ति चरितामृत' मे 'दुर्गा सप्तशती' का पद्यानुवाद प्रस्तुत किया गया है। इसकी रचना तेरह अध्यायों मे दोहा, चौपाई, रोला तथा त्रोटक आदि छन्दो मे की गई है। इसका प्रकाशन सन् 1902 मे 'गुर्जर यन्त्रालय मथुरा' ने किया था। आपकी दूसरी पुस्तक 'कवि कुमुद कौमुदी' मे ऋण, व्यय, नीति, क्षमा, सज्जन, दुर्जन, सन्मित्र, लोभ, ममता,



मोह, सत्य, ससार, वृद्धत्व और मृत्यु से सम्बन्धित 75 मार्मिक कवित्त दिए गए है। इसी प्रकार तीसरी कृति 'सूक्ति मौक्तिक माला काव्य' मे कवि ने नारायण स्वामी, कबीरदास, तुलसीदास आदि प्रसिद्ध कवियो के दोहो का सस्कृत नीतिमय अनुवाद प्रस्तुत करने के साथ-साथ कुछ स्वरचित नीतिमय दोहे सकलित किए है।

आपका निधन सन् 1933 मे हुआ था।

श्री शिवप्रसाद पाण्डेय 'सुमति'

श्री 'सुमति' जी का जन्म सन् 1876 मे बिहार प्रदेश के पटना नगर के महेन्द्रू (रानी घाट) नामक मोहल्ले मे हुआ था। आपके पिता श्री सजीवन पाण्डेय के असमय मे ही काल-कवलित हो जाने के कारण आपका पालन-पोषण तथा लालन-पालन आपके ज्येष्ठ भ्राता श्री रामप्रसाद पाण्डेय द्वारा सम्पन्न हुआ था। आपके पूर्वज शाहाबाद जिले के 'बेदउली' नामक ग्राम से आकर पटना मे बस गए थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने बडे भाई की देख-रेख मे हुई थी और आगे चलकर साहित्य-शास्त्र का विधिवत् अध्ययन

आपने श्री अम्बिकादत्त व्यास 'सुकवि' के निरीक्षण में किया था। आपने हिन्दी तथा संस्कृत के साथ-साथ बंगला तथा अंग्रेजी भाषाओं का ज्ञान भी भली-भाँति अर्जित किया था और संस्कृत के काव्य-पुराण-उपनिषदों का सम्यक् ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ आपने कानपुर की 'रसिक सभा' से 'कवि कुल तिलक' की उपाधि भी प्राप्त की थी। आपने जहाँ पटना कालेज के तत्कालीन संस्कृत-अध्यापक श्री कन्हैयालाल त्रिपाठी से संस्कृत साहित्य का सर्वांगीण ज्ञान प्राप्त किया था वहाँ पण्डित सुखवासी त्रिपाठी द्वारा काव्य-रचना का विधिवत् अभ्यास भी किया था। श्री सुखवासी त्रिपाठी जी ने ही आपका उपनाम 'सुमति' रखा था।

संस्कृत तथा हिन्दी के विभिन्न ग्रन्थों का विधिवत् पारायण करके आपने सर्वप्रथम बिहार राज्य के अनेक विद्यालयों में 'संस्कृताध्यापक' के रूप में कार्य प्रारम्भ किया था। आप सन् 1906 से सन् 1915 तक बेतिया राज्य के हाई स्कूल में संस्कृत के मुख्य अध्यापक रहे थे। इसके उपरान्त आप अनेक वर्ष तक पटना की प्रख्यात प्रकाशन-संस्था 'खड्ग विलास प्रेस' में रहे थे। इससे पूर्व कुछ दिन तक आपने 'पाटलिपुत्र' नामक साप्ताहिक पत्र में सहायक सम्पादक के रूप में कार्य किया था। अपने इन कार्यों में व्यस्त रहते हुए भी आपने अपने साहित्य-ज्ञान को बहुत बढ़ा लिया था। हिन्दी की समस्या-पूर्ति की काव्य-रचना करने में आप अत्यन्त निष्णात हो गए थे। खड़ी बोली और ब्रजभाषा दोनों में आपको सफल काव्य-प्रणयन करने में अभूतपूर्व सिद्धि प्राप्त थी। आप अपनी काव्य-प्रतिभा के कारण उत्तर प्रदेश के अनेक नगरों में अत्यन्त लोकप्रिय हो गए थे। कानपुर के 'रसिक समाज' में तो आप सम्मानित थे ही, 'बिसवाँ' (सीतापुर) के 'कवि मण्डल' ने भी आपको 'बिहार भूषण' की सम्मानोपाधि प्रदान की थी। उत्तर प्रदेश के जौनपुर जनपद के पिलकिछा नामक स्थान के 'कवि समाज' ने आपको पगड़ी और घड़ी देकर सम्मानित किया था। आपने जहाँ बिहार के अनेक कवि-सम्मेलनों की अध्यक्षता करके वहाँ के नवयुवकों का मार्ग-प्रदर्शन किया था, वहाँ उत्तर प्रदेश के कानपुर, सीतापुर और लखनऊ आदि अनेक नगरों में आयोजित अनेक कवि-सम्मेलनों और गोष्ठियों की अध्यक्षता भी की थी। आपने सन् 1933 में बिहार प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भागलपुर अधिवेशन के अन्तर्गत आयोजित उस 'कवि सम्मेलन' की अध्यक्षता की थी जिसमें श्री रामधारीसिंह 'दिनकर' ने सर्वप्रथम अपनी 'हिमालय' शीर्षक रचना का पाठ किया था।



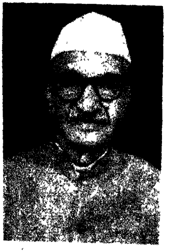
आपकी ब्रजभाषा और खड़ी बोली की कृतियाँ 'पीयूष-प्रवाह', 'हिन्दोस्थान', 'पाटलिपुत्र', 'शिक्षा', 'रसिक मित्र', 'रसिक रहस्य', 'काव्य सुधाकर' और 'काव्य-सुधानिधि' आदि तत्कालीन अनेक पत्र-पत्रिकाओं में सम्मानपूर्वक प्रकाशित हुआ करती थीं। आपने यद्यपि प्रचुर साहित्य का निर्माण किया था, किन्तु वह सब अप्रकाशित ही रह गया। आपकी ऐसी रचनाओं में 'सुमति विनोद' (दो भाग), 'ऋतु महार का अनुवाद', 'शिव महिम्न स्तोत्र', 'शिव ताण्डवस्तोत्र का अनुवाद', 'प्रार्थना', 'प्रेम परिचय', 'अलंकार दर्पण', 'मानव जीवन', 'साहित्य प्रसंग', 'सुकवि सतसई के दोहों पर कुण्डलियाँ अर्थात् सुमति सतसई', 'विनय पत्रिका की टीका', 'रामचरित मानस की टीका', 'छप्पय रामायण की टीका', 'जानकी रामायण की टीका', 'तुलसी भूषण', 'अलंकार परिचय', 'वैदिक सन्ध्या पद्धति', 'गौतमाश्रमो-पाख्यान काव्य', 'दुर्गा पूजा पद्धति', 'श्री रघुवर गुण दर्पण', 'श्री चित्रगुप्त कथा', 'नित्य तर्पण पद्धति', 'नूतन साहित्य', तथा 'विनय पद्य संग्रह' आदि प्रमुख हैं। आपने इतना अधिक लिखा था कि आपके जीवन-काल में वह सब प्रकाशित भी नहीं हो सका। यह प्रसन्नता का विषय है कि आपके निधन के उपरान्त श्री परमानन्द पाण्डेय के उद्योग से आपकी कुछ रचनाएँ 'सुमति ग्रन्थावली' नाम से 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' की ओर से प्रकाशित हुई हैं और पाण्डेय जी के ही सत्प्रयास से आपके जन्म-स्थान (रानी घाट) पर 'सुमति साहित्य गोष्ठी' नामक एक संस्था का संचालन हो गया है।

'सुमति' जी की इस ग्रन्थावली मे आपके 'अलंकार परिचय', 'तुलसी भूषण' और 'श्रीकृष्ण रसायन' नामक ग्रन्थ समाविष्ट हैं। ये सभी ग्रन्थ सुमति जी की साहित्यिक प्रतिभा के ज्वलन्त साक्षी हैं।

आपका निधन 31 अक्तूबर सन् 1938 को 'गोपाष्टमी' के दिन पटना मे ही हुआ था।

श्री शिवशंकर रावल

श्री रावल जी का जन्म मध्य प्रदेश के उज्जैन नगर मे सन् 1890 मे हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा भी सब उज्जैन मे ही हुई थी। विद्यार्थी जीवन से ही आपका झुकाव सामाजिक सेवा के क्षेत्र मे कार्य करने की ओर था। आप उज्जैन की 'सार्वजनिक सभा' नामक सस्था के आजीवन मन्त्री रहे थे। आप प्रारम्भ से ही महात्मा गाधी जी द्वारा सचालित आन्दोलनो मे सक्रिय रूप से भाग लेने लगे थे, जिसके कारण आपको अनेक बार कारागार की नृशम यातनाएँ भोगनी पड़ी थी। जिन दिनो देशी रियासतो की जनता मे राष्ट्रीय चेतना उत्पन्न करने के लिए 'देशी राज्य लोक परिषद्' नामक सस्था की स्थापना राष्ट्र-नायक श्री जवाहर-लाल नेहरू की अध्यक्षता मे की गई थी तब से ही आप उसकी प्रवृत्तियो से पूर्णतया जुड़ गए थे। 'ग्वालियर स्टेट कांग्रेस' के माध्यम से आपने अपने क्षेत्र की जनता की उल्लेखनीय सेवा की थी।



आप एक अच्छे राष्ट्रीय कार्यकर्ता और नेता होने के साथ-साथ उच्चकोटि के लेखक और जागरूक पत्रकार थे। जिन दिनों आप 'खादी जीवन' नामक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन किया करते थे उन दिनो ग्वालियर का गोरा रेजीडेण्ट आपसे इतना रुष्ट था कि उसने आपके पत्र का 'पोस्टल रजिस्ट्रेशन' भी नही होने दिया था। आप जहाँ उच्चकोटि के रचनात्मक कार्यकर्ता के रूप मे सामान्यत. मध्य प्रदेश और विशेषत: 'मध्य भारत' मे सम्मानित थे वहाँ देश के सभी उच्चकोटि के नेता आपकी निष्ठा, लगन और निर्भीकता की कद्र करते थे। आपके व्यक्तित्व की इन्ही विशेषताओ के कारण आपको 'मालवा का गाधी' कहा जाता था। आपकी निर्भीकता और स्पष्टवादिता का ज्वलन्त प्रमाण आपके सन् 1962 मे लिखे गए लेख की इन पक्तियो से भली-भाँति मिल जाता है—"भूल यह भी की गई कि काग्रेस को आजादी मिलने के बाद समाप्त नही किया गया—जैसा कि बापू कहते थे। एक भूल यह भी की गई कि काग्रेस मे सख्या पर बल दिया गया, योग्यता पर नही। ये सब भूलें हमारे देश का विधान यूरोपीय साँचे मे ढालने की योजनाओ से हुई। आज की काग्रेस और यह काग्रेसी शासन गाधी जी के विचारों की हत्या कर रहा है।"

आप जहाँ उच्चकोटि के पत्रकार और विचारक थे वहाँ आपके पास हिन्दी की पुरानी पत्र-पत्रिकाओं का भी काफी विशाल संग्रह था, जिनमे से बहुत-सी सामग्री आपने अपने जीवन-काल मे ही दिल्ली-सग्रहालय को भेंट कर दी थी। आपने अपने निजी निवास का नाम जहाँ 'वन्देमातरम् भवन' रखा था वहाँ उस पर यह पंक्तियाँ भी अंकित हैं—"जो शासन देश की सस्कृति, धर्म और धन को बर्बाद करना है उसे बदल दो या नष्ट कर दो!" इन पक्तियों के ऊपर गोस्वामी तुलसीदास की यह पक्तियाँ भी अंकित है :

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी,
सो नृप अवसि नरक अधिकारी।

अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे आपने अपने जीवन का लक्ष्य 'गो-सेवा' को ही बना लिया था और शिवपुरी मे आपने एक ऐसे 'गो-सदन' की स्थापना की थी जिसकी ख्याति केन्द्रीय सरकार तक पहुँची और उसने आपके इस गो-सदन की तरह सारे देश मे 'गो-सदन' बनाने का विचार किया था। आप स्वतन्त्र चिन्तन और लेखन मे व्यस्त रहते हुए भी अछूतोद्धार, खादी-प्रचार, महिला-जागरण और मजदूर-आन्दोलन आदि की अनेक रचनात्मक प्रवृत्तियों मे सक्रिय

रूप से भाग लेते रहे थे। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित चुने हुए आपके लेखों का संकलन 'भारत पर युद्ध का संकट' नाम से आपके मित्र श्री जमनालाल ओझा ने सम्पादित करके प्रकाशित कर दिया था, जिसकी भूमिका श्री कन्हैयालाल वैद्य ने लिखी थी।

आपका निधन 1 नवम्बर सन् 1981 को हुआ था।

श्री शीतलाप्रसाद त्रिपाठी

श्री त्रिपाठी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के विख्यात नगर वाराणसी के गोवर्धन सराय मोहल्ले में सन् 1835 में हुआ था। आप भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के अनन्य सहयोगी और मार्गदर्शक थे। भारतेन्दु जी ने हिन्दी में संस्कृत के जितने भी नाटक अनूदित किये थे उन सबका संशोधन-परिष्कार त्रिपाठी जी ही किया करते थे। आपके पिता श्री देवीदयाल त्रिपाठी और भाई श्री छोटूराम त्रिपाठी भी हिन्दी तथा संस्कृत भाषाओं के मर्मज्ञ विद्वान् थे। सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन को भी लेखन-कार्य में आपने बहुत सहायता दी थी। आप अच्छे कवि, भाषा-मर्मज्ञ तथा नाटककार थे।

आपके द्वारा लिखित 'जानकी मंगल' नामक नाटक का सर्वप्रथम अभिनय काशी में जब हुआ था तब उसमें भारतेन्दु जी ने भी स्वयं सक्रिय रूप से भाग लिया था। इस नाटक के अभिनय को तत्कालीन काशी-नरेश श्री महाराजा ईश्वरीनारायणसिंह ने भी स्वयं पधारकर देखा था। इस नाटक का पूर्ण विवरण उन दिनों अंग्रेजी के 'इण्डिया मेल' नामक पत्र के 8 मई सन् 1868 के अंक में प्रकाशित हुआ था और इसका मंचन 'बनारस थियेटर' के हाल में हुआ था। इस नाटक को सफलतापूर्वक अभिनीत करने में बाबू ऐश्वर्यनारायणसिंह उर्फ 'लरबर बबुआ' ने भी विशेष सहयोग दिया था।

यद्यपि इस नाटक में तुलसीदास के 'रामचरितमानस', 'विनय पत्रिका' तथा 'गीतावली' आदि अनेक ग्रन्थों के उद्धरण प्रस्तुत किये गए हैं और उसमें तुलसी की अवधी भाषा का प्रभाव प्रचुरता से परिलक्षित होता है, फिर भी खड़ी बोली गद्य के प्रयोग की दृष्टि से भी अभिनय के क्षेत्र में इसका ऐतिहासिक महत्त्व है। इस नाटक की रोचकता, नाटकीयता और संवाद-योजना में तुलसी की काव्य-छटा का बहुत बड़ा योगदान रहा है। व्यावसायिक नाटक-मण्डलियों के घटाटोप में श्री त्रिपाठी जी ने अपने इस नाटक के द्वारा हिन्दी-रंगमंच को एक सर्वथा नई दिशा प्रदान की थी। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि हिन्दी के प्रख्यात कवि और साहित्यकार श्री प्रतापनारायण मिश्र ने त्रिपाठी जी के इस नाटक में अभिनय करने के लिए अपनी मूँछें तक मुड़ाने की आज्ञा अपने पिता से माँगी थी।

'जानकी मंगल' के अतिरिक्त श्री त्रिपाठी जी की अन्य रचनाओं में 'रामचरितावली' (1885), 'करुण त्रिशतिका' (1894), 'सावित्री चरित्र' (1895), 'नल दमयन्ती', 'विनय पुष्पावली' और 'भारतोन्नति स्वप्न' आदि के नाम भी उल्लेखनीय हैं। आपने 'प्रबोध चन्द्रोदय' नाटक का हिन्दी अनुवाद भी किया था। 'खड्ग विलास प्रेस पटना' के स्वामी श्री रामदीनसिंह के अनुरोध पर आपने 'हिन्दी का विशाल व्याकरण' भी लिखना प्रारम्भ किया था, किन्तु उसे आप पूरा नहीं कर सके थे।

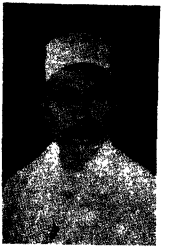
आपका निधन जनवरी सन् 1895 में हुआ था।

श्री शुकलालप्रसाद पाण्डेय

श्री शुकलालप्रसाद पाण्डेय का जन्म मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ़ क्षेत्र के बिलासपुर जनपद के शिवरीनारायण नामक स्थान में सन् 1885 में हुआ था। आपके पूर्वज मैनछ ग्राम के भारद्वाज गोत्रीय ब्राह्मण थे, जो वहाँ से आकर बिलासपुर जनपद के बिरकोना नामक ग्राम में बस गए थे। बाद में उन्होंने शिवरीनारायण को अपना स्थायी निवास बना लिया था। जब आपकी पढ़ने की आयु हुई तब आप अपने मामा के यहाँ चाँपा चले गए थे। वहाँ की प्राथमिक पाठशाला के शिक्षक आपसे बहुत स्नेह किया करते थे। आपके मामा भी उसी पाठशाला में आपके साथ पढ़ा करते थे, जो प्रायः पाठशाला जाने से जी चुराया करते थे। वे शुकलालप्रसाद जी से भी पाठशाला न जाने का आग्रह किया करते थे, किन्तु उनके लाख मना करने पर भी शुकलालजी पाठशाला

अवश्य जाया करते थे। जब इसके कारण मामा-भानजे मे भयंकर संघर्ष रहने लगा तो आपके पिता ने आपको अपने पास शिवरीनारायण मे ही रखकर पढ़ाने का निश्चय किया।

अपनी माताजी के सस्कारो के कारण आपकी प्रवृत्ति भी 'रामायण' का नित्य पारायण करने की ओर हो गई थी। रामायण की चौपाइयो तथा दोहो के नित्य पारायण से आपके मानस मे कविता-लेखन का जो बीज अकुरित हुआ था, उसका यह प्रभाव हुआ कि आपने एक बार अपने गुरुजी के समक्ष छुट्टी माँगने का प्रार्थना पत्र पद्य मे लिखकर दिया। आपके गुरु श्री शिवराम दुबे उत्तर-प्रदेश के रायबरेली जनपद के निवासी थे। बालक की कवित्व-प्रतिभा से वे इतने प्रभावित हुए थे कि उन्होंने उसी समय यह घोषणा कर दी थी---"बच्चा, तू एक दिन कवि बनेगा।" आपके गुरु का यह आशीर्वाद इतना फला कि आगे चलकर श्री शुकलालप्रसाद जी की गणना प्रदेश के अच्छे कवियो मे होने लगी। आप जब सन् 1903 मे रायपुर के नार्मल स्कूल मे पढ़ा करते थे तब आप अपनी कक्षा मे सदा प्रथम स्थान प्राप्त किया करते थे। उन दिनो वहाँ आपके शिक्षक हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार श्री कामताप्रसाद गुरु थे। अपने गुरुजी की रचनाओ को जब आप हिन्दी के अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे छपा हुआ देखते थे तब आपका मन भी वैसी ही कविताएँ लिखने के लिए उत्साहित होने लगता था। श्री गुरु जी के प्रोत्साहन से ही आप खडी बोली मे अच्छी रचनाएँ करने लगे थे।



रायपुर के नार्मल स्कूल से शिक्षा की समाप्ति के उपरान्त आप अपने क्षेत्र के एक ग्राम मे शिक्षक हो गए और छन्द-पिगल की विधिवत् जानकारी प्राप्त करके आपने अच्छी कविताएँ करनी प्रारम्भ कर दी। धीरे-धीरे आपने पत्र-पत्रिकाओ मे भी अपनी रचनाएँ भेजनी शुरू कर दी और आप प्रदेश के उदीयमान कवियो मे गिने जाने लगे। उन दिनों आपकी रचनाएँ 'स्वदेश बान्धव', 'नागरी प्रचारक', 'हितकारिणी', 'सरस्वती', 'मर्यादा', 'मनोरजन', 'शारदा' तथा 'प्रभा' आदि मे ससम्मान छपा करती थी। जिन दिनो सन् 1917-1918 मे आप जबलपुर के 'शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय' मे ट्रेनिंग की शिक्षा प्राप्त कर रहे थे तब वहाँ के सुप्रसिद्ध नागरिक राजा गोकुलदास (सेठ गोविन्ददास के पिता) के यहाँ आई हुई एक बारात की शोभा-यात्रा की भव्यता से आकर्षित होकर आपके मानस मे एक काव्य लिखने की जो भावनाएँ उत्पन्न हुई थी वे ही बाद मे आपके 'मैथिली मगल' नामक महाकाव्य की प्रेरिका बनी थी। इस काव्य की सर्जना आपने 'राम विवाह' के प्रसग को माध्यम बनाकर की है। इस महाकाव्य को आपने साकेत सर्ग, बरात सर्ग, विवाह सर्ग, कोहवर सर्ग, कुँवर कलेवा सर्ग, जेवनार सर्ग, विदा सर्ग, अयोध्यागमन सर्ग, प्रमोद सर्ग और दाम्पत्य सर्ग आदि अनेक खण्डो मे विभक्त करके अपनी जिस काव्य-प्रतिभा का परिचय दिया है वह सर्वथा अद्भुत है।

इस महाकाव्य मे जानकी जी के सौन्दर्य का वर्णन आपने जिस आकर्षक शब्दावली मे किया है वह सर्वथा अनुपम और अनन्य है। सीताजी की मुस्कान की छवि आप उनके इस पद मे देख सकते है·

शोभा-सरि मध्य प्रेम-चन्द्र प्रतिबिम्ब है या,
स्नेह-सघ मध्य प्यार-दीप दीप्तिमान है।
नन्दन-निकुज मध्य, काम का या श्वेत छत्र,
शोभा ताल मे या पुण्य पद्म द्युतिवान है॥
हेम लतिका मे शुभ हीरकों का गुच्छ है या,
पारिजात-पुष्प स्वर्ण छाल मे अम्लान है।
भावनाएँ मन मे जगाती यों ही नाना भाँति,
जानकी की ऐसी अति मजु मुसकान है॥

इस काव्य के अतिरिक्त 'बाल शिक्षण पहेली', 'भूल-भुलैयाँ', 'पद्य पचामृत', 'मातृ मिलन', 'परिहास पचक', 'चतुर चितरजन', 'छत्तीसगढ गौरव', 'नैषध काव्य' और 'गीयाँ' नामक रचनाओ का भी प्रणयन किया था। आपकी 'गीयाँ' नामक कृति छत्तीसगढी भाषा मे लिखी गई थी। यह खेद का विषय है कि इनमे से आपकी एक भी पुस्तक आपके

जीवन-काल मे नही छप सकी थी। 'मैथिली मंगल' महाकाव्य का प्रकाशन आपके निधन के उपरान्त 'मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद्' की ओर से सन् 1971 में हुआ था। आपकी इन रचनाओं मे से 'मातृ मिलन', 'छत्तीसगढ गौरव' तथा 'नैषध काव्य' के प्रकाशन का निश्चय भी 'मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद्' ने किया था। यह खेद का विषय है कि वे प्रकाशित न हो सकी। इन रचनाओ मे से 'भूल भुलैयाँ' मे आपने जहाँ शेक्सपियर के प्रख्यात अंग्रेजी नाटक 'कामेडी आफ एरर्स' का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया है वहाँ 'मातृ मिलन' आपकी मौलिक नाट्य-कृति है। 'नैषध काव्य' मे संस्कृत के महाकाव्य का अनुवाद प्रस्तुत करने के साथ-साथ 'छत्तीसगढ गौरव' मे आपने उस क्षेत्र के वैभव का अकन किया है।

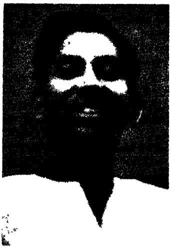
यह दुर्भाग्य की बात है कि आपकी आर्थिक अवस्था सदा दीन-हीन ही रही रही थी और अपने पारिवारिक जनो का भरण-पोषण आप बडी कठिनाई से ही कर पाते थे। आपकी आर्थिक विपन्नता का सही चित्र आपके इस एक कवित्त मे देखा जा सकता है जो आपने एक बार मध्यप्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री पण्डित रविशकर शुक्ल की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुए रायपुर के 'शिक्षक सम्मेलन' में सुनाया था

मिलता पगार प्रभागार तभी पूर्णिमा है,
ले-दे हुए रिक्त अमावस भय दानी है।
आज तक वेतन के रुपये हजारों मिले,
झोंपडी बनी न पेट-दरी ही अघानी है।।
पास है न पैसा एक, कफन मिलेगा क्या न,
'शुकलाल' ताक रही मृत्यु महारानी है।
जड लेखनी भी रो रही है काले आँसुओं से,
हिन्दी-शिक्षकों की ऐसी करुण कहानी है।।

आपका देहावसान 2 जनवरी सन् 1951 को रायगढ अस्पताल मे 'प्लूरिसी' के कारण हुआ था।

श्री श्यामकृष्णदास

आपका जन्म काशी के प्रख्यात साहित्य-सेवी श्री बालकृष्णदास (बल्ली बाबू) के यहाँ सन् 1927 में हुआ था। आपके ज्येष्ठ भ्राता स्व० श्री गोपालकृष्णदास भी अच्छे साहित्यकार थे। आपके पितामह स्व० श्री राधाकृष्णदास भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के फुफेरे भाई थे। बाल्यावस्था से ही अपने पारिवारिक सस्कारों के कारण साहित्य की ओर आपकी स्वाभाविक रुचि थी। काशी विश्वविद्यालय से विज्ञान विषय मे स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के साथ-साथ आपने एम०ए० (हिन्दी) की कक्षा मे प्रवेश लिया था कि असमय मे ही इस ससार से विदा हो गए। आप अपने छात्र-जीवन मे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की 'कल्चरल एसोसिएशन' के सक्रिय सदस्य भी रहे थे। 'भारतेन्दु मण्डल' की विभिन्न गतिविधियो मे भी आपका सक्रिय योगदान रहता था।



अपने छात्र-जीवन मे अध्ययन से समय निकालकर आप जहाँ विभिन्न सास्कृतिक एव सामाजिक गतिविधियो मे तन्मयतापूर्वक भाग लिया करते थे वहाँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे आपके लेख आदि भी ससम्मान प्रकाशित हुआ करते थे। शिष्ट हास्य तथा मनोरजन की पत्रिका 'तरंग' मे भी हल्की-फुल्की शैली मे लिखे गए आपके अनेक लेख प्रकाशित हुए थे। दैनिक 'आज' मे भी आप बराबर लिखा करते थे। आपके द्वारा लिखित लेखों मे 'बटन चोर कोट', 'पोस्ट आफिस', 'जनेऊ', 'दो चित्र', 'पाँच रुपये के नोट', 'तुलसी जयन्ती', 'इजारबन्द', 'ग्यारह बजकर बीस मिनट' तथा 'कमल और कविता' आदि विशेष चर्चनीय रहे थे। आपके इन लेखो मे शिष्ट और शालीन व्यग्य-मिश्रित हास्य का जो पुट होता था वह आपकी शैली की विलक्षणता का द्योतक है।

आपका निधन 30 अक्तूबर सन् 1949 को अपने

ज्येष्ठ भ्राता की मृत्यु के 16 दिन उपरान्त केवल 22 वर्ष की अल्पायु मे ही हो गया था।

सन्त श्यामचरणसिंह

सन्त श्यामचरणसिंह का जन्म मध्यप्रदेश के दुर्ग जनपद के कवर्धा नामक नगर के एक हैहयवशी क्षत्रिय-परिवार मे 22 जुलाई सन् 1890 (नागपंचमी) को हुआ था। आपकी प्राइमरी और मिडिल तक की शिक्षा कवर्धा मे ही हुई थी और आपने सन् 1907 मे 'पीलालाल' नाम से मिडिल तक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आप 'पीलालाल चिनौरिया' कहलाते थे। आपके सम्पर्क मे रहने वाले पुराने लोग आपको इसी नाम से जानते है और दुर्ग जनपद के सरकारी कार्यालय मे आपका यही नाम दर्ज है। आपको पेशन इसी नाम से मिला करती थी। बाद मे जब आपने लिखना प्रारम्भ किया तब आपने अपना नाम 'श्यामचरण' रख लिया था और कविताओ मे 'श्याम' तथा 'कमलेश' उपनाम का प्रयोग भी करने लगे थे। आपकी 'प्रबोधामृत' एक रचना की पाण्डुलिपि पर आपका नाम 'हैहयवशी हंसकुंवर श्यामचरण कमलेश' लिखा है। बाद मे आपके भक्तो ने आपको 'सन्त सद्गुरुशरण श्यामचरण' के नाम से भी पुकारना प्रारम्भ कर दिया था। इस सम्बन्ध मे आपकी यह उक्ति ही सुपुष्ट प्रमाण प्रस्तुत करती है :

गुनिन को मित्र, अरु वैरी बद राहिन को,
नाम श्यामचरणजू जानियो हमारो है।

शिक्षा-प्राप्ति के आप सन् 1907 मे अपनी जन्मभूमि कवर्धा के प्राइमरी स्कूल मे ही 3 रुपये मासिक पर अध्यापक हो गए थे। बाद मे आपकी नियुक्ति 10 रुपये मासिक पर पास के ही एक ग्राम जामुल मे 'प्रधानाध्यापक' के पद पर हो गई थी। यहाँ से आपके क्रान्तिकारी जीवन तथा साहित्य-रचना का प्रारम्भ हुआ था। उन दिनों सारे छत्तीसगढ क्षेत्र मे केवल रायपुर में ही एक हाई स्कूल था। आपको वहाँ पर सन् 1918 मे ट्रेनिंग प्राप्त करने के लिए भेजा गया। जिन दिनों आप ट्रेनिंग कर रहे थे तब ही आपका विवाह कर दिया गया। जब आप सन् 1925 मे भिलाई के 'प्राइमरी स्कूल' मे प्रधानाध्यापक थे तब ही आपकी धर्मपत्नी श्रीमती कमला का निधन हो गया। इसके उपरान्त आपने एक विदुषी महिला श्रीमती सुमित्रादेवी 'अमोला' से पुनर्विवाह कर लिया, जिससे आपको 2 सन्तानें प्राप्त हुईं—डॉ० विद्यावती मालविका तथा श्री कमलसिंह 'सरोज'। दोनों का ही साहित्य मे अच्छा स्थान है। मालविका जी की सुपुत्री कुमारी वर्षा सिंह भी हिन्दी की अच्छी कवयित्री हैं।

जिन दिनो आप 'जामुल' नामक स्थान मे कार्य-रत थे तब आपको वहाँ के वयोवृद्ध जमीदार दाऊ गोपालसिंह का सत्सग प्राप्त हो गया, जिसके कारण आपको महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के 'सत्यार्थ प्रकाश' तथा 'ऋग्वेदादि भाष्य-भूमिका' नामक ग्रन्थों का अध्ययन करने का सुअवसर प्राप्त हुआ था। वहाँ पर रहते हुए ही आपने 'सम्पूर्ण देवी भागवत' को जवारा गीतों मे लिखा। उन्ही दिनो आपका सम्पर्क छत्तीसगढ़ के प्रख्यात साहित्यकार श्री उदयप्रसाद 'उदय' (पूर्व नाम श्री हेमनाथ चन्द्रवशी) तथा श्री युगलप्रसाद काडवशी से हो गया और आप साहित्य-रचना मे सलग्न हो गए। उन दिनों इन तीनो की रचनाएँ 'त्रिमूर्ति' के नाम से प्रकाशित हुआ करती थी। उन्ही दिनों आपका स्थानान्तरण सन् 1925 मे अर्जुन्दा नामक स्थान के लिए हो गया। वहाँ के निवासी पिछडे वर्ग के लोगो को न तो अपने कुओ से पानी भरने देते थे और न उनके बच्चों को स्कूलों मे भर्ती होने देते थे। जब श्यामचरण जी को इस घटना का पता चला तो आपने पिछडे वर्ग के लोगो को अपने बच्चो को स्कूल मे भेजने की प्रेरणा दी और उन्हें अपने विद्यालय मे प्रविष्ट किया। इस घटना का उस स्कूल के आपके सहायक अध्यापकों ने भी विरोध किया और उन्होने हड़ताल कर दी। श्री श्यामचरण को जान से मार डालने



तक का षड्यन्त्र भी किया गया, किन्तु आप अपने निश्चय से नहीं डिगे और अन्त मे सभी हड़ताली अध्यापक क्षमा मांग-कर 10 दिन बाद अपने काम पर लौट आए।

आपके इस दृढ़ कर्मनिष्ठा का उस क्षेत्र के सामाजिक कार्यकर्ताओं पर बहुत अच्छा प्रभाव पडा और कई प्रमुख व्यक्ति आपके सहयोगी हो गए। ऐसे महानुभावों मे श्री कोदूराम 'दलित' का नाम प्रमुख है। 'अर्जुन्दा-काण्ड' केवल उस ग्राम तक सीमित न रहकर सारे छत्तीसगढ़ क्षेत्र मे फैल गया और श्री श्यामचरण जी की सहायता करने के लिए अनेक कांग्रेसी और आर्यसमाजी कार्यकर्त्ता आगे आ गए। आपके इस आन्दोलन के फलस्वरूप सारे छत्तीसगढ अचल के पिछडे वर्ग के लोगो मे बडी चेतना आई और वे निर्भीकता-पूर्वक कुओं पर पानी भरने के साथ-साथ अपने बच्चो को निर्भीकतापूर्वक पढने के लिए भेजने लगे। आपके इस कार्य मे आपकी द्वितीय पत्नी श्रीमती सुमित्रादेवी अमोला भी बराबर सहयोगी रहती थी। आप उपदेश देते थे, कविता सुनाते थे और श्रीमती अमोला हारमोनियम बजाया करती थी। उस क्षेत्र की जनता की इस दम्पत्ति के प्रति अपार श्रद्धा थी और प्राय सभी व्यक्ति श्री श्यामचरण जी को 'गुरु' के रूप मे आराध्य समझते थे।

जब आपका स्थानान्तरण अर्जुन्दा से भिलाई के लिए हो गया तब आपने वहाँ पर तत्कालीन सरपच श्री गिरवर-लाल को उत्साहित करके पिछडे वर्ग के छात्रों के लिए एक 'छात्रावास' का निर्माण भी कराया था। उन्ही दिनो वहाँ के सत नामियो मे भी आपने प्रचार-कार्य किया और उनमे प्रचलित गोहत्या और मासाहार आदि कुरीतियों को दूर करने मे प्राणपण से कार्य किया तथा 'सतनाम सागर' एव 'सतनाम भजनमाला' की रचना की। सतनामियो के गुरु अगमदास साहब ने आपकी इन दोनों रचनाओ का मुद्रण कराया और आपको अपना धर्म-सलाहकार मानकर 'जामवन्त' की उपाधि प्रदान की। आपने छत्तीसगढ़ क्षेत्र के कुम्हारों और केवटों आदि पिछड़े वर्गों में घूम-घूमकर अनेक सुधार-कार्य किये थे। अपने इस कार्य को आगे बढाने के लिए आपने 'कुम्हार वशावली' नामक पुस्तक की रचना भी की थी। जब दुर्भाग्यवश सन् 1930 मे आपकी आँखों मे मोतियाबिन्द हो गया और आपकी आँखो की ज्योति मन्द हो गई तो आप सेवा-मुक्त कर दिए गए। श्री उदयप्रसाद 'उदय' के अथक प्रयासों से आपको केवल 12 रुपये 18 पैसे की पेंशन जीवर-भर मिलती रही थी।

सेवा-निवृत्ति के उपरान्त आपका झुकाव कबीर साहित्य और बौद्ध धर्म के ग्रन्थों की ओर हो गया और धीरे-धीरे आप बौद्ध ही हो गए। आपने 'धम्मपद' का विधिवत् अध्ययन करके अनेक स्थानो में बौद्ध धर्म के प्रचार का कार्य किया और आपने बौद्ध-चिन्तन से परिपूर्ण 'बौद्ध चिन्तन' नामक काव्य-ग्रन्थ की भी रचना सन् 1960 मे की थी। आपकी अन्य उल्लेखनीय कृतियो मे 'कमल विनोद', 'छत्तीसगढ कोविद कदम्ब', 'धर्म निरूपण', 'गाय गुहार' आदि प्रकाशित हैं और अप्रकाशित कृतियो मे 'भोला विरद प्रवाह', 'प्रबोधामृत', 'कमलेश विलास', 'लालबुझक्कड़ कीर्ति-कलाप', 'कलामे श्याम', 'प्रेमामृत प्रवाह', 'पद्य पुष्पाजलि', 'भजनामृत', 'मच्छड पच्चीसी', 'खटमल बत्तीसी', 'कुमुद सुन्दरी', 'गोपाल गौरव', 'कबीर बारहमासी' तथा 'हैहयवश बखान' आदि प्रमुख है।

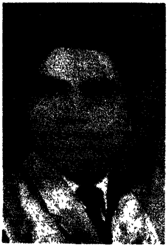
आपका निधन अपनी पुत्री डॉ० विद्यावती 'मालविका' के पास 18 जनवरी सन् 1977 को पन्ना मे हुआ था।

श्री श्याममोहन श्रीवास्तव

श्री श्रीवास्तव का जन्म उत्तर प्रदेश के जौनपुर नगर मे 12 अप्रैल सन् 1935 को हुआ था। प्रयाग विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) और एल-एल० बी० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के उपरान्त पहले आपने अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की ओर से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दी अग्रेजी कोश' मे कार्य किया और फिर बाद मे नई दिल्ली के 'केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय' मे 'सहायक निदेशक' हो गए। इस पद पर रहते हुए आपने 'पारिभाषिक शब्दावली' के निर्माण मे उल्लेखनीय कार्य करने के साथ-साथ निदेशालय की हिन्दीतर क्षेत्रों मे हिन्दी-प्रचार-प्रसार-सम्बन्धी अनेक योजनाओ में अपना अनन्य सहयोग दिया।

आप नई कविता के कवियों में अपना प्रमुख स्थान रखते थे। आपने कविताओं के अतिरिक्त कहानियाँ और समीक्षाएँ भी लिखी थी। 'भाषा', 'नये पत्ते', 'सम्मेलन

पत्रिका', 'निकष', 'भारत' और 'अमृत पत्रिका' नामक अनेक पत्र-पत्रिकाओं में भी आपने सहयोगी सम्पादक के रूप मे कार्य किया था। श्री जगदीश चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित नई कविता के अद्वितीय सकलन 'प्रारम्भ' मे भी आपकी कविताएँ प्रकाशित हुई थी। इसके अतिरिक्त आपने डॉ० धीरेन्द्र वर्मा द्वारा सम्पादित 'हिन्दी साहित्य कोश' मे भी कई विषयो पर टिप्पणियाँ लिखी थी। आपने सन् 1967 मे 'अकहानी' नामक पत्रिका का सम्पादन करने के साथ-साथ 'वैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली आयोग नई दिल्ली' की ओर से प्रकाशित 'भारतीय साहित्य रत्न माला' नामक पुस्तक के सम्पादन मे भी सहयोग दिया था।



आपका निधन 24 मार्च सन् 1976 को असमय मे ही हो गया।

कविराजा श्री श्यामलदास

श्री श्यामलदास का जन्म राजस्थान के जोधपुर राज्य के ढोकलिया ग्राम की दधवाडिया शाखा के परिवार मे सन् 1836 मे हुआ था। आपने 10 वर्ष की आयु मे सस्कृत के 'वृत्त रत्नाकर', 'साहित्य दर्पण', 'रस मजरी' और 'कुवलयानन्द' आदि कई ग्रन्थो का अच्छा अध्ययन कर लिया था। सस्कृत के अतिरिक्त आप राजस्थानी, हिन्दी, उर्दू तथा फारसी आदि कई भाषाओ के अच्छे ज्ञाता थे। ज्योतिष तथा वैद्यक शास्त्र मे भी आपकी गहन रुचि थी।

जोधपुर के महाराणा सज्जनसिंह ने आपकी सभा-चातुरी, नीति-निपुणता और स्पष्टवादिता से प्रभावित होकर आपको अपने दरबार मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान दे रखा था। आपके निरीक्षण में ही शासन का इतिहास-कार्यालय, म्युजियम तथा पुस्तकालय आदि का कार्य चलता था। आपको महाराजा ने 'कविराजा' के महत्त्वपूर्ण विरुद से भी अभिषिक्त किया था। ब्रिटिश सरकार ने भी आपकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर आपको 'महामहोपाध्याय' तथा 'कैसरे हिन्द' का सम्मान प्रदान किया था।

एक कवि तथा इतिहासकार के रूप मे राजस्थान मे आपका नाम अत्यन्त आदर के साथ स्मरण किया जाता है। आपके द्वारा लिखा गया 'वीर विनोद' नामक इतिहास-ग्रन्थ दो भागों मे प्रकाशित किया गया है। यह एक सयोग की ही बात है कि मुद्रित हो जाने पर भी उक्त ग्रन्थ बहुत दिन तक जनता के समक्ष नही आ सका था। यह ग्रन्थ अपनी उपादेय सामग्री तथा प्रामाणिकता की दृष्टि से सर्वथा अपूर्व माना जाता है। इसमे प्राचीन शिलालेखों, दानपत्रो, सिक्को तथा बादशाही फरमानो का महत्त्वपूर्ण सकलन प्रस्तुत किया गया है। आपके द्वारा लिखित 'सज्जन यश वर्णन' पुस्तक भी महत्त्वपूर्ण है।

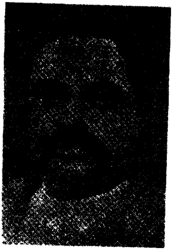
आपका निधन सन् 1894 मे हुआ था।

डॉ० श्यामस्वरूप सत्यव्रत

श्री सत्यव्रत जी का जन्म 26 जुलाई सन् 1882 मे पजाब (अब पाकिस्तान मे) मुलतान मे हुआ था। आपके पिता श्री रामस्वरूप वहाँ राजकीय सेवा-रत ओवरसियर थे। लाहौर के डी० ए० वी० कालेज के छात्रावास मे रहकर आपने शिक्षा प्राप्त की थी। सन् 1899 मे जब महात्मा मुशीराम(स्वामी श्रद्धानन्द) लाहौर गये तो उनके भाषण का आप पर ऐसा प्रभाव पडा कि आप आर्यसमाजी विचारो के हो गए। सन् 1906 मे आपने लाहौर के मेडिकल कालेज मे प्रवेश लिया और सन् 1911 मे एल० एम० एस० की उपाधि प्राप्त करके उसी वर्ष बरेली आकर प्रैक्टिस प्रारम्भ कर दी। कुछ ही वर्षों मे आप नगर के एक कुशल डाक्टर माने जाने लगे।

सन् 1912 मे आपने 'आर्य विद्या सभा' नाम से एक सस्था स्थापित की और इसके द्वारा जनता को शिक्षित

बनाने के उद्देश्य से 'सरस्वती विद्यालय इंटर कालेज', 'स्त्री सुधार विद्यालय हायर सेकेण्डरी स्कूल', 'महात्मा गांधी



हायर सेकेण्डरी स्कूल', 'कलक्टरबकगंज जूनियर हाई स्कूल', तथा 'गुरुकुल आर्योला' आदि-आदि बहुत-सी संस्थाओं की स्थापना की। 'आर्य विद्या सभा' की ओर से आप एक साप्ताहिक 'आर्य पत्र' भी निकालते थे, जो आपके जीवन मे बराबर निकलता रहा। उन्होने 'वैदिक सघ' नाम से स्वाध्याय के लिए भी एक सस्था स्थापित की थी, जिसकी ओर से 'वैदिक सघ पत्र' निकलता था। उसका सम्पादन भी आप ही करते थे।

जब महात्मा गाधी बरेली आए थे तो उन्होने डॉक्टर साहब से कहा था—"मुझे तो आप-जैसे निस्वार्थ जनसेवी की अपने साथ काम करने के लिए बडी आवश्यकता है।" डॉक्टर साहब ने उनसे कहा था—"मेरी आपके इस स्वाधीनता-प्राप्ति के कार्य के प्रति अगाध श्रद्धा है, किन्तु मेरे तो जीवन का लक्ष्य हजारो अधकार म पडे हुए लोगो को मार्ग पर लाना है। यदि आप मेरी इन सस्थाओ के सचालन का कोई प्रबन्ध कर दे तो मै आपके साथ चलने को तैयार हूँ।"

आपने कई पुस्तके भी लिखी थी, जिसमे 'वेद विचार', 'ईशोपनिषद् का भाष्य', 'ब्रह्म यज्ञ' तथा 'सध्या विधि' प्रमुख है। इनके अतिरिक्त 'सत्यार्थ प्रकाश' के प्रत्येक समुल्लास पर एक-एक अलग पुस्तक भी आपने लिखी थी।

आप अपने समय मे बरेली के सर्वाधिक प्रतिष्ठित एव लोकप्रिय व्यक्तियो मे से एक थे। बरेली मे आर्य समाज और आर्य अनाथालय को बनाने मे भी आपका बडा योगदान रहा था।

आपका निधन 7 दिसम्बर सन् 1954 को हुआ था।

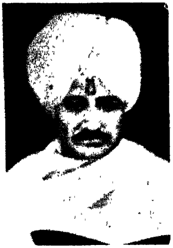
पण्डित श्रद्धाराम फिल्लौरी

पण्डित श्रद्धारामजी का जन्म पजाब प्रदेश के लुधियाना जनपद के 'फिल्लौर' नामक नगर मे सन् 1837 मे हुआ था। आपके पिता श्री जयदयाल जोशी शक्ति के उपासक, गायन विद्या मे निपुण तथा ज्योतिष शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् थे। 'पौरोहित्य' का पारम्परिक कार्य सम्पन्न करने के अतिरिक्त श्रद्धारामजी बचपन मे ज्योतिष तथा सगीत मे भी पर्याप्त रुचि लेने लगे थे। इसके साथ-साथ आपको खेल-कूद तथा मेलो-तमाशो मे भाग लेने के साथ-साथ बाजीगरी और जादूगरी के करतब देखने-दिखाने मे भी बडा आनन्द आता था। आपने थोडे समय मे ही रागो के भिन्न-भिन्न स्वरूपो, अलाप, ध्रुपद, ख्याल, टप्पा, तराना, रेख्ता, रुबाई तथा ठुमरी आदि के लक्षण एव भेद भी सहज भाव से कण्ठस्थ कर लिए थे। कविता करने की रुचि आपके बाल-मानस मे प्रारम्भ से ही जागृत हो गई थी और पजाबी, उर्दू तथा हिन्दी मे आप समान रूप से रचनाएँ करने लगे थे। वास्तव मे आपकी बुद्धि इतनी तीव्र एव धारणा-शक्ति इतनी प्रबल थी कि आप कठिन-से-कठिन विषय को सहज भाव से आत्मसात् कर लेते थे।

आपका उपनयन-सस्कार प्रख्यात ब्रह्मवेत्ता स्वामी मइयाराम के द्वारा सन् 1850 मे केवल 13 वर्ष की आयु मे सम्पन्न हुआ था। इस कालावधि मे फिल्लौरीजी ने हिन्दी, उर्दू तथा पजाबी भाषाओ का सहज ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ सस्कृत भाषा की भी अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली थी। फलस्वरूप आपका जीवन एक जिज्ञासु और श्रद्धा-प्रवण साधक के रूप मे प्रारम्भ हुआ तथा लगभग 10 वर्ष तक आपने सस्कृत के व्याकरण का विधिवत् ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ न्याय तथा वेदान्त आदि षड् दर्शनो का गम्भीरता से परिशीलन किया और महाभारत, रामायण, पुराणो, वेदो एव उपनिषदो का गम्भीर अवगाहन करने के अतिरिक्त भारत के विभिन्न मत-मतान्तरो का भी सूक्ष्म परिचय प्राप्त कर लिया। उर्दू तथा फारसी की योग्यता अर्जित करने की ओर से भी आप उदासीन नही रहे और उनका भी एक मौलवी साहब की सहायता से विधिवत् अध्ययन किया था।

अपने गम्भीर ज्ञान और मधुर कण्ठ के कारण आप एक

'कथावाचक' एवं 'व्याख्याता' के रूप में इतने प्रसिद्ध हो चुके थे कि आपको देश के अन्य प्रान्तों से भी निमन्त्रण आने लगे थे। पजाब प्रदेश के विभिन्न नगरों में आपके भाषणों तथा प्रवचनों की इतनी धूम हो गई थी कि वहाँ के हिन्दू आपको अपना धार्मिक नेता ही मानने लगे थे। आपने देश के अनेक प्रमुख स्थानों की यात्रा करके हिन्दू धर्म तथा सस्कृति के उन्नयन की दिशा में अत्यन्त उल्लेखनीय कार्य किया था।



एक बार आप जब सन् 1863 मे जालधर छावनी मे कथा-कीर्तन करने के उद्देश्य से गए हुए थे तब आपको कही से यह सूचना मिली कि कपूरथला-नरेश महाराजा रणधीरसिह ईसाई धर्म ग्रहण करने जा रहे है। समाचार प्राप्त होते ही पण्डितजी ने उन्हे लिखा—"मैंने सुना है कि आपका निश्चय 'इजील' पर हो गया है और हिन्दू धर्म से उठ गया है, परन्तु मै यह लिख रहा हूँ कि जब तक मुझे न मिल ले 'इजील' पर निश्चय न लाये। कुछ धैर्य करें, क्योकि हम लोग ब्राह्मण इसी कार्य के लिए घर-बार छोडे फिरते है, और यही हमारा काम है कि स्वधर्म पर निश्चय दिलाना।" यह सूचना प्राप्त होते ही महाराजा ने तुरन्त पण्डितजी को अपने यहाँ बुलाया और निरन्तर 18 दिन तक उनसे आपका वाद-विवाद चलता रहा। अन्त मे पण्डितजी की विजय हुई। अपनी शकाओं का समाधान पाकर महाराजा साहब ने आपका बडा सम्मान किया तथा राज्य की ओर से आपको पाँच सौ रुपये वार्षिक की वृत्ति भी प्रदान की। इस घटना से फिल्लौरीजी की ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। देश मे ईसाई मत के बढते हुए प्रभाव को रोकने तथा हिन्दू जनता में अपने धर्म के प्रति निष्ठा बढाने की दिशा मे आपने देश-व्यापी आन्दोलन किया था।

एक बार सन् 1857 में जब आप अपने ही नगर फिल्लौर में महाभारत की कथा कह रहे थे तब सरकार को यह आशका हो गई कि आप लोगों को सरकार के विरुद्ध उकसा रहे है। वे दिन सैनिक विद्रोह के थे, फलस्वरूप सरकार ऐसे किसी भी उत्सव या सभा को शंका की दृष्टि से ही देखा करती थी। पण्डित जी को भी इस शंका का शिकार होना पडा और आपको फिल्लौर की सीमा से तुरन्त निकल जाने की आज्ञा दे दी गई। यहाँ पर यह बात विशेष रूप मे ध्यातव्य है कि फिल्लौर मे पुलिस के प्रशिक्षण का एक बहुत बडा केन्द्र था और सरकार को यही आशका थी कि कही पण्डितजी पुलिस को सरकार के विरुद्ध न भडका दें। पुलिस-प्रशिक्षण का यह केन्द्र आजकल भी वहाँ पर है। इस बीच पण्डितजी का सम्पर्क लुधियाना के प्रसिद्ध पादरी न्यूटन से हो गया और आपने उनकी सहायता मे ईसाई मत की कई छोटी-मोटी पुस्तकों का हिन्दी तथा उर्दू मे अनुवाद भी किया। बाद मे इन्ही पादरी साहब के उद्योग से लगभग 3 वर्ष बाद पण्डितजी की यह पाबन्दी हटी। इस प्रतिबन्ध-काल मे फिल्लौरीजी सन् 1857 मे 1859 तक हरिद्वार तथा ऋषिकेश आदि स्थानों मे अपने अध्ययन, मनन, चिन्तन और लेखन में ही सलग्न रहे थे।

इसके उपरान्त आपका प्राय सारा समय पजाब के प्रमुख नगरो मे भ्रमण करके सनातन धर्म का प्रचार करने में ही व्यतीत हुआ था। आपके व्याख्यानो का विषय जहाँ धार्मिक चेतना उत्पन्न करना रहा करता था वहाँ आप यदा-कदा आर्यसमाज, ब्रह्मसमाज तथा ईसाई धर्म के सिद्धान्तो पर भी करारी चोट करते रहते थे। आपने अपने प्रकाण्ड पाण्डित्य, अद्भुत वक्तृत्व-शक्ति और मनमोहक भाषा के द्वारा जन-साधारण के हृदय को अपने वश मे कर लिया था। यद्यपि आप विचारो से सनातनधर्मी थे परन्तु आर्यसमाज के अनेक सिद्धान्तो से वैमत्य रखते हुए भी उसके 'शुद्धि' तथा 'विधवा-विवाह' से सम्बन्धित आन्दोलनो के कट्टर समर्थक थे। आपने अपने सिद्धान्तों और मान्यताओं का प्रचार जहाँ वाणी के माध्यम से किया वहाँ अपनी लेखनी के द्वारा भी ऐसे अनेक ग्रन्थ-रत्न प्रदान किये जिनसे भारतीय सस्कृति और धर्म के उन्नयन की दिशा मे आगे चलकर बहुत बड़ा कार्य हुआ है। आपने जहाँ सस्कृत भाषा मे 'नित्य प्रार्थना' तथा 'आत्म चिकित्सा' नामक पुस्तको का प्रणयन किया था वहाँ हिन्दी मे भी 'तत्त्व दीपक', 'सत्य धर्म मुक्तावली',

'भाग्यवती', 'रमल कामधेनु', 'शतोपदेश', 'बीज मन्त्र', और 'सत्यामृत प्रवाह' आदि की रचना करके अपनी अभूत-पूर्व प्रतिभा का परिचय दिया। इनमें से 'भाग्यवती' नामक कृति आपके द्वारा लिखित एक सामाजिक उपन्यास है। इसकी रचना आपने सन् 1877 में की थी। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने इतिहास में इसे हिन्दी का पहला सामाजिक उपन्यास लिखा है। लेकिन यह सूचना नितान्त भ्रामक है। इससे पहले मेरठ के पण्डित गौरीदत्त के 'देवरानी-जेठानी की कहानी' नामक उपन्यास का प्रकाशन सन् 1870 में हो चुका था। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि शुक्लजी ने अपने इतिहास मे आपको 'फिल्लौरी' के स्थान पर 'फुल्लौरी' लिख दिया है। जिसके कारण शुक्लजी के परवर्ती सभी इतिहासकार तथा समीक्षक इन्हे 'श्रद्धाराम फुल्लौरी' लिखने की भूल करते आ रहे है और इस भूल का परिमार्जन करने की दिशा में किसी का ध्यान नही गया है। इसका सबसे ताजा प्रमाण डॉ० नगेन्द्र द्वारा सम्पादित 'भारतीय साहित्य कोश' (1981 में प्रकाशित) मे देखा जा सकता है। फिल्लौरीजी की 'सत्यामृत प्रवाह' पुस्तक आपकी 'आत्म चिकित्सा' नामक सस्कृत कृति का हिन्दी अनुवाद है। 'सत्य धर्म मुक्तावली' मे पण्डितजी द्वारा रचित भिन्न-भिन्न अवसरो पर रचे गए भजनों का सकलन प्रस्तुत किया गया है।

हिन्दी गद्य और पद्य लिखने मे फिल्लौरीजी को जो दक्षता प्राप्त थी वह उस समय की स्थिति को देखते हुए सर्वथा प्रशसनीय कही जा सकती है। उन दिनो गद्य-लेखन का कार्य उतनी सफलतापूर्वक नही चल पाया था। आपके 'सत्यामृत प्रवाह' नामक ग्रन्थ की यह पक्तियाँ उस समय के गद्य का ज्वलन्त उदाहरण है—"फिर जो आप कहते हो कि ईश्वर शक्तिमान है, इसमे हमारा एक प्रश्न है। अर्थात् यदि शक्तिमान है तो मेरी बुद्धि को अनीश्वरवाद से फेर के ईश्वरवाद मे क्यों नही ले आता। यदि कहो कि तुम्हारे अनीश्वरवादी होने से उसको क्या हानि है तो इससे अधिक हानि उसकी क्या होगी कि मै सहस्रो जन को अनीश्वरवादी बना दूँगा।" आप ने इसकी रचना आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित 'सत्यार्थ प्रकाश' की शैली पर की थी। यह प्रसन्नता की बात है 'पंजाब हिन्दी साहित्य अकादमी' ने फिल्लौरीजी की समस्त प्राप्त रचनाओं को 'श्रद्धाराम ग्रन्थावली' नाम से नेशनल पब्लिशिग हाउस नई दिल्ली के द्वारा प्रकाशित (सन् 1966 मे) करा दिया है। इस पुस्तक का सम्पादन डॉ० सरनदास भनोत ने किया है।

कदाचित् यह बात भी हमारे बहुत से पाठकों को विदित न होगी हिन्दू समाज के प्रत्येक धार्मिक अवसर पर गाई जाने वाली आरती 'जय जगदीश हरे' के रचयिता श्री फिल्लौरीजी थे। यह आरती कालान्तर में हमारे देश में इतनी लोकप्रिय हुई है कि इसके अनुकरण पर अनेक लोगों ने अन्त मे 'कहत शिवानन्द स्वामी' तथा 'कहत हरिहर स्वामी' आदि पदो को जोड़कर उसको सर्वथा अपना बना लिया है। यह आरती हमारे समाज मे इतनी प्रचलित हुई थी कि होशियारपुर (पजाब) निवासी पण्डित कन्हैयालाल शास्त्री ने उन दिनों इसका सस्कृत छन्द मे भी अनुवाद कर दिया था। मूल हिन्दी आरती इस प्रकार है

जय जगदीश हरे।
भक्त जनों के सकट छिन मे दूर करे॥
जो ध्यावे फल पावे दुख विनशे मन का।
सुख सपत घर आवे कष्ट मिटे तन का॥
मात-पिता तुम मेरे शरण गहूँ किसकी।
तुम बिन और न दूजा आस करूँ जिसकी॥
तुम पूरण परमातमा तुम अतरयामी।
पारब्रह्म परमेश्वर तुम सबके स्वामी॥
तुम करुणा के सागर तुम पालन करता।
मैं मूरख खल कामी कृपा करो भरता॥
तुम हो एक अगोचर सबके प्राणपती।
किस बिधि मिलौं गुसाई तुमको मैं कुमती॥
दीनबधु दुख हरता ठाकुर तुम मेरे।
अपने हाथ उठावो द्वार पडा तेरे॥
विषय विकार मिटावो पाप हरो देवा।
'श्रद्धा' भक्ति बढावो सतन की सेवा॥

सस्कृत तथा हिन्दी मे अनेक ग्रन्थो की रचना करने के अतिरिक्त फिल्लौरीजी ने उर्दू तथा पजाबी में भी बहुत-सी पुस्तकें लिखी थी।

आपका देहावसान 24 जून सन् 1881 को हुआ था। देहान्त से पूर्व श्री फिल्लौरीजी के मुख से सहसा यह वाक्य निकला था—"भारत मे भाषा के लेखक दो हैं—एक काशी मे दूसरा पजाब मे। परन्तु आज एक ही रह जायगा।"

काशी के लेखक के रूप में यहाँ आपका आशय 'भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र' से था।

श्री श्रीकृष्णदास

श्री श्रीकृष्णदास का जन्म उत्तर प्रदेश के जौनपुर जनपद के राम मंडल नामक स्थान मे 12 मार्च सन् 1917 को हुआ था। जिन दिनों महात्मा गाधी जौनपुर मे गए थे तब ही आपके परिवार का सम्बन्ध उनके द्वारा प्रदर्शित राष्ट्रीय विचार-धारा की ओर हो गया था। फलत आपने 13 वर्ष की अल्पायु मे ही आजीवन खादी धारण करने, राष्ट्रीय सघर्ष मे भाग लेने और हिन्दी साहित्य की सेवा करने का जो भीषण व्रत लिया था उसे आजीवन निबाहते रहे। उन्ही दिनों आप इलाहाबाद आ गए थे और वहाँ से ही आपका राजनीतिक जीवन प्रारम्भ हुआ था। सन् 1930 मे आपने 'वानर सेना' के सक्रिय सदस्य की हैसियत से स्वाधीनता-सग्राम मे खुलकर भाग लिया और सन् 1932 मे पहली बार जेल-यात्रा करके अपनी देश-भक्ति का अपूर्व परिचय दिया। सन् 1936 मे एक 'अन्तर्राष्ट्रीय षड्यन्त्र केस' के सिलसिले मे आपके घर की कई बार तलाशी ली गई और फिर गिरफ्तारियों तथा तलाशियो का सिलसिला जारी हो गया।

इन्ही सघर्षों के बीच आपने सन् 1939 मे काशी विश्वविद्यालय से राजनीति विषय मे एम० ए० किया। सन् 1940 मे ब्रिटिश शासन-विरोधी भाषण के फलस्वरूप आपको गिरफ्तार करके डेढ वर्ष की सजा दी गई थी। आप सन् 1942 मे जब अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के कार्यालय 'स्वराज्य भवन' मे 'प्रकाशन अधिकारी' थे तब भी गिरफ्तार करके नजरबन्द कर दिए गए थे। निरन्तर सक्रिय राजनीति मे भाग लेने और जेल जाने के कारण आपके व्यक्तित्व का बहुमुखी विकास हुआ था।

आप अपने छात्र-जीवन मे ही क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो मे भाग लिया करते थे। इस कारण इलाहाबाद का आपका निवास-स्थान भी क्रान्तिकारियो का एक अड्डा-सा ही बन गया था। आपका सम्पर्क चोटी के अनेक क्रान्तिकारियो से था। इस सम्पर्क के कारण आप जीवन-भर क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो से जुडे रहे और आपका कांग्रेस के अतिरिक्त अनेक वामपन्थी संस्थाओ, किसान व मजदूर-आन्दोलनों में भी सक्रिय सहयोग रहा था।

आप अपने विद्यार्थी-जीवन से ही लेखन और पत्रकारिता मे रुचि रखते थे। इसी कारण आप लगभग 15 वर्ष तक प्रयाग से प्रकाशित होने वाले 'अमृत पत्रिका' नामक पत्र के साहित्य-सम्पादक रहे थे। इसके अतिरिक्त आपने 'मित्र प्रकाशन' मे भी प्रकाशन-अधिकारी का कार्य किया था। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप जहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'सम्मेलन पत्रिका' के सम्पादन मे सहयोग दे रहे थे वहाँ उसकी ओर से प्रकाशित होने वाले 'भारतीय धर्म-सस्कृति विश्वकोश' की योजना को कार्यान्वित करने मे सलग्न थे। आप जहाँ उच्च-कोटि के पत्रकार थे वहाँ लोक-सस्कृति, लोक-साहित्य और लोक-नाट्य-कला के अध्ययन, मनन, अनुशीलन, शोध और प्रकाशन की दिशा मे भी अत्यन्त जागरूक थे। आपने सन् 1958 मे 'लोक सस्कृति शोध सस्थान' की स्थापना करने के साथ-साथ नाट्य-मचन के प्रोत्साहन के निमित्त 'कालिदास अकादमी' के सस्थापक निर्देशक के रूप मे भी साहित्य की अभिनन्दनीय सेवा की थी। इस अकादमी के पत्र 'रूप दक्ष' का सम्पादन भी आपने अत्यन्त सफलतापूर्वक किया था। इन सस्थाओ के अतिरिक्त आप प्रयाग की लगभग एक दर्जन अन्य सास्कृतिक सस्थाओं से सम्बद्ध रहे थे।



आपने साहित्य के क्षेत्र मे जहाँ अपनी बहुविध सेवाओ के कारण अपना एक सर्वथा विशिष्ट स्थान बना लिया था वहाँ आप सस्कृत, फारसी, बंगला, उर्दू, गुजराती और मराठी आदि कई भारतीय भाषाओं के मर्मज्ञ विद्वान् भी थे।

आपने पहले-पहल अंग्रेजी मे ही लिखना प्रारम्भ किया था, किन्तु बाद मे आप सर्वात्मना हिन्दी के हो गए थे। आपने हिन्दी मे जहाँ लगभग 15 पुस्तकें मौलिक लिखी थी वहाँ आपके द्वारा सम्पादित रचनाओं की संख्या लगभग 75 है। कुछ उल्लेखनीय पुस्तकों के नाम इस प्रकार है—'स्वतन्त्रता संग्राम के 90 वर्ष', 'अजेय कश्मीर', 'अजेय चीन', 'साम्राज्यवादी जापान', 'मलय देश', (यूनेस्को प्रकाशन), 'धर्म पर लेनिन के विचार', 'द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद', 'गान्धीवाद मार्क्सवाद', 'साम्प्रदायिक विद्वेष पर बापू के विचार', 'हमारी नाट्य-परम्परा', 'लोकगीतो की सामाजिक व्याख्या', 'हमारी लोक-नाट्य परम्परा' 'हमारी लोक-तान्त्रिक परम्परा' (राजनीतिक इतिहास), 'द्वादशी' (निबन्ध-संग्रह), 'अवधी लोकगीत', 'धरती-लाभ' लघु-नाटिका), 'तुलसीदास-व्यक्तित्व और कृतित्व', 'जौनपुर का सक्षिप्त इतिहास', 'अग्निरथ' (उपन्यास), 'जुलेखा' (उपन्यास), 'क्रान्तिदूत' (उपन्यास), 'दीप शिखा' तथा 'दीप वर्तिका' आदि। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा अनूदित कृतियों मे 'रगमच', 'जन माध्यम' और 'शतकत्रयम्' उल्लेखनीय है।

आपने बालचर स्काउट सेवा समिति, मद्य तथा दहेज-प्रथा-निषेध आदि अनेक क्षेत्रो मे सक्रिय सहयोग देने के साथ-साथ साहित्यिक क्षेत्र मे जिन अनेक युवकों को प्रोत्साहित करके आपका पथ-प्रदर्शन किया था उनमे सर्वश्री मार्कण्डेय और दुष्यन्तकुमार-जैसे कई नाम आज साहित्य मे स्वर्णिम हस्ताक्षर समझे जाते है। आप जहाँ कुशल मार्ग निर्देशक और सफल सगठनकर्ता थे वहाँ मच पर अभिनय करने की कला मे भी परम प्रवीण थे। आपने सन् 1927 मे भारतेन्दु बाबू के 'सत्य हरिश्चन्द्र' नाटक मे 'हरिश्चन्द्र' का अभिनय करने के अतिरिक्त सन् 1958 मे महाकवि कालिदास के 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' मे कण्व का अभिनय अत्यन्त सफलता-पूर्वक किया था। आप 'सरस्वतीकुमार', 'स्वामी गोविन्दानन्द', 'अभयशकर शास्त्री', और 'भक्तदर्शन' नाम से भी लिखा करते थे। आपकी साहित्य तथा सस्कृति के क्षेत्र मे की गई बहुविध सेवाओ को दृष्टि मे रखकर 'उत्तर प्रदेश' हिन्दी सस्थान' ने सन् 1981 मे आपको विशिष्ट पुरस्कार से सम्मानित किया था। इस अवसर पर प्रत्येक साहित्यकार को 15 हजार रुपये की राशि प्रदान की जाती है।

आपका निधन 6 अप्रैल सन् 1981 को हुआ था।

श्री श्रीगोविन्द हयारण

श्री हयारण का जन्म उत्तर प्रदेश के इटावा जनपद के इकदिल नामक कस्बे मे सन् 1902 मे हुआ था। आप हिन्दी के अच्छे पत्रकार तथा लेखक होने के साथ-साथ उच्चकोटि के राष्ट्रीय कार्यकर्ता भी थे। अपने थोडे मे कार्मिक जीवन मे आपने जहाँ अनेक पत्र-पत्रिकाओ के सम्पादन तथा प्रकाशन मे अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया था वहाँ आप बहुत-सी पुस्तको के लेखक भी थे। आपने अपनी जन्म-भूमि इकदिल मे 'हैहयवश' नामक अपने एक जातीय पत्र का सम्पादन करने के अतिरिक्त इटावा से 'कर्तव्य' और 'हलधर' नामक पत्रो का सम्पादन भी कई वर्ष तक सफलतापूर्वक किया था। प्रेम महाविद्यालय वृन्दावन से प्रकाशित होने वाले 'प्रेम' (मासिक), कानपुर से प्रकाशित 'भविष्य' (दैनिक) और दिल्ली के 'वीर अर्जुन' (दैनिक) से भी आपका सम्पर्क रहा था। भरतपुर से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक 'भारतवीर' तथा दिल्ली के 'हिन्दू ससार' के सम्पादन-सचालन मे भी आपकी प्रमुख भूमिका रही थी।

सामाजिक एव राष्ट्रीय जागरण के क्षेत्र मे भी आपका योगदान कम महत्त्वपूर्ण नही था। जिन दिनो आप 'भारत वीर' (भरतपुर) मे कार्य करते थे तब भरतपुर राज्य के सम्बन्ध मे आपने ऐसी बहुत-सी बातो का प्रकटीकरण किया था, जिनके कारण भरतपुर का अग्रेज प्रशासक सर डकन जार्ज किनेडी आपसे बहुत रुष्ट हो गया था। आप भरतपुर के तत्कालीन नरेश श्री कृष्णसिंहजी के



अत्यन्त विश्वास-पात्र परामर्शदाता थे। महात्मा गाधी द्वारा सचालित अनेक आन्दोलनो मे भी आपने बढ-चढकर भाग लेकर अनेक बार जेल-यात्राएँ की थी। आप सन् 1923

में जहाँ इटावा की जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान रहे थे वहाँ आपने वहाँ पर 'इटावा जिला किसान सघ' की स्थापना भी की थी। जिन दिनों आप वृन्दावन रहे थे तब मथुरा तथा वृन्दावन मे भी कांग्रेस के संगठन-कार्य में आपने बहुत बड़ा सहयोग किया था।

एक उत्कृष्ट पत्रकार और ध्येयनिष्ठ समाज-सेवक होने के साथ-साथ आप उच्चकोटि से लेखक भी थे। आपके द्वारा रचित पुस्तको में 'विदुषी कमला', 'राजा महेन्द्रप्रताप', 'मधुर मिलन','सरला के पत्र','राष्ट्रपति वल्लभभाई पटेल', 'देशी राज्यों मे व्यभिचार' और 'राजस्थान' नामक 7 रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी है। 'विद्रोही भारत' और 'हैहय-वश का इतिहास' नामक पुस्तकें अभी तक अप्रकाशित हैं। आपकी इन सभी प्रकाशित रचनाओ की देश के अनेक मनीषियो तथा प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ ने मुक्त कण्ठ से प्रशसा की थी। आप दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रमुख सूत्रधार स्व० श्री पुत्तूलाल वर्मा 'करुणेश' के छोटे भाई थे।

आपका निधन 25 सितम्बर सन् 1932 को दिल्ली मे हुआ था।

डॉ० श्रीचन्द्र जैन

श्री जैन का जन्म 22 जनवरी सन् 1915 को उत्तर प्रदेश के झाँसी जनपद के अमरा नामक ग्राम मे हुआ था। बचपन से ही माता-पिता की छत्र-छाया से वचित रह जाने के कारण आपका जीवन अनेक सघर्षों और कठिनाइयो मे व्यतीत हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा उत्तर प्रदेश के प्रख्यात ऐतिहासिक स्थल हस्तिनापुर (मेरठ) के जैन गुरुकुल मे हुई थी और बाद मे आपने आगरा विश्वविद्यालय से बी० ए० तथा एल-एल० बी० की उपाधियाँ प्राप्त की थी। अपने कर्म-रत जीवन में अनेक कष्टों और सघर्षों से जूझते हुए आपने अपने जीवन का उत्तरोत्तर विकास किया था। आप स्वभाव से अत्यन्त सरल एव विनम्र थे। आप लम्बे समय तक बुन्देलखण्ड की प्रसिद्ध रियासत समथर मे जिलाधीश भी रहे थे।

भारत-विभाजन के उपरान्त जब रियासतो का पूर्णतः विलयन हो गया तब आपने नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी मे एम० ए० करने के उपरान्त मध्यप्रदेश शासन के अन्तर्गत सचालित रीवाँ, खरगोन, ग्वालियर, जबलपुर तथा उज्जैन आदि नगरों के विभिन्न महाविद्यालयों मे हिन्दी प्रवक्ता, विभागाध्यक्ष तथा प्राचार्य के रूप मे अनेक वर्ष तक सफलता-पूर्वक कार्य किया था।



अध्यापन के साथ-साथ लेखन के क्षेत्र मे भी आपने अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया था। आप मुख्यत डॉ० वैरियर एलविन, कामता प्रसाद सागरीय आई० एफ० एस० तथा रामनरेश त्रिपाठी के सतत सम्पर्क के कारण आदिवासी सस्कृति और लोक-साहित्य पर विशेष रूप से लिखा करते थे। आपने जहाँ हिन्दी मे अनेक प्रौढ रचनाएँ लिखी है वहाँ बुन्देलखण्डी भाषा मे भी आपके द्वारा विरचित अनेक कृतियाँ विशेष सम्मान प्राप्त कर चुकी है। बाल-साहित्य के निर्माण की दिशा मे भी आपका योगदान कम महत्त्व नही रखता। हिन्दी की विभिन्न प्रमुख शोध-पत्रिकाओ विन्ध्य प्रदेश की लोक-सस्कृति और वहाँ के आदिवासियों के जीवन से सम्बन्धित आपके अनेक महत्त्वपूर्ण लेख समय-समय पर प्रकाशित होते रहे थे।

वैसे तो आपने सभी विधाओं मे प्रचुर साहित्य की सर्जना की थी किन्तु आपकी गणना विशेष रूप से लोक-सस्कृति के गहनतम अध्येताओं मे ही की जाती है। आपके द्वारा रचित ग्रन्थो मे 'मध्यप्रदेश के हिन्दी कवि', 'बन-बन घूमा बजारा', 'मोरी धरती मैया', 'विधिना तेरी गति लखिना परै', 'जैसी करनी वैसी भरनी','हमारे ये पशु-पक्षी', 'भारतीय कहावतें', 'बनवासी भील और उनकी सस्कृति', 'बुन्देली लोक साहित्य', 'विन्ध्य प्रदेश के आदिवासियो के लोकगीत', 'जागो रात के साइयाँ', 'सुखी परिवार', 'विन्ध्य

के लोक-कवि', 'भारत के वृक्ष', 'पूर्वी भारत की लोक-कथाएँ', 'भारत की लोक-कथाएँ', 'ये वन के पशु', 'उत्तरी भारत की लोक-कथाएँ', 'आदिवासियों के बीच' और 'जैन कथाओं का सांस्कृतिक अध्ययन' आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। इन कृतियों में से अधिकांशत. भारत सरकार, उत्तर प्रदेश शासन, विन्ध्यप्रदेश शासन, मध्यप्रदेश शासन तथा अखिल भारतीय दिगम्बर जैन परिषद् आदि से पुरस्कृत भी हो चुकी है।

आपने 'हिन्दी काव्य में पादप-पुष्प' विषय पर उत्कृष्ट-तम शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-एच० डी० की उपाधि भी प्राप्त की थी। आप एक सहृदय और सरस कवि भी थे। आपकी ऐसी रचनाएँ 'पतझड़' नामक पुस्तक में संकलित हैं। आपने जहाँ विक्रम विश्वविद्यालय के अन्तर्गत अनेक छात्रों को विभिन्न विषयों पर शोध-सम्बन्धी कार्यों का महत्त्वपूर्ण निर्देशन किया था वहाँ आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों पर आदिवासी संस्कृति और लोक-साहित्य से सम्बन्धित अनेक वार्ताएँ भी प्रसारित की थी।

आपका निधन अकस्मात् 9 दिसम्बर सन् 1980 को बम्बई में उस समय हो गया जब आप किसी आवश्यक कार्य-वश वहाँ गए हुए थे।

पण्डित श्रीनाथ मिश्र

श्री मिश्र का जन्म उत्तर प्रदेश के गाजीपुर नगर के हरिशंकरी नामक स्थान में 1 जुलाई सन् 1903 को हुआ था। आपने सन् 1916 में गाजीपुर के टाउन स्कूल में हिन्दी-उर्दू में मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण की थी और गोरख-पुर से सन् 1924 में हिन्दी की 'विशेष योग्यता' परीक्षा दी थी। सन् 1928 में आप हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की 'साहित्य रत्न' परीक्षा में अलीगढ़ केन्द्र से बैठे थे। मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त ही आपने सन् 1917 में डिस्ट्रिक्ट बोर्ड गाजीपुर के एक प्राथमिक विद्यालय में अध्यापन-कार्य प्रारम्भ कर दिया था और सन् 1925 तक आप डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के विभिन्न विद्यालयों में अध्यापन-निरत रहे थे। सन् 1926 से सन् 1949 तक आपने नगर-पालिका गाजीपुर के विद्यालयों में अध्यापक का कार्य किया और बाद में 'सहायक उपस्थिति-निरीक्षक' के रूप में इस पद से सन् 1963 में सेवा-निवृत्त हुए थे।

अपने छात्र-जीवन से ही आपमें साहित्यिक चेतना उद्भूत हो गई थी। आपके चाचा श्री श्यामबिहारी मिश्र भारतेन्दु तथा हरिऔध जी-जैसे समर्थ एवं सशक्त साहित्यकारों के सम्पर्क में रह चुके थे, इस कारण साहित्य की ओर आपका झुकाव सहज भाव से हो गया था। आपके चाचा ने नायिका-भेद और पिंगल शास्त्र के सम्बन्ध में दो पुस्तकें भी लिखी थी, जो अप्रकाशित ही रह गईं। श्री मिश्र जी की सबसे पहली रचना 'प्रणयानुरोध' शीर्षक एक कविता के रूप में गोरखपुर से श्री दशरथप्रसाद द्विवेदी के सम्पादकत्व में प्रकाशित होने वाले



'स्वदेश' नामक पत्र में सन् 1919 में उन दिनों प्रकाशित हुई थी, जब आपकी आयु केवल 16 वर्ष थी। क्योंकि आपके नाम में दो रेफ आते थे इस कारण बेटावर (गाजीपुर) निवासी पण्डित वाराणसी त्रिवेदी ने आपका नाम 'द्विरेफ' भी रख दिया था। इस नाम से आपकी 'फूल पत्ता', 'पाक पिक' तथा 'मिलिन्द माली' शीर्षक रचनाएँ प्रकाशित भी हुई थी। आपकी अनेक गीति-रचनाएँ उन दिनों कलकत्ता से श्री रामगोविन्द त्रिवेदी शास्त्री के सम्पादन में प्रकाशित होने वाले 'सेनापति' नामक पत्र में भी प्रकाशित हुई थी। 'सरस्वती' और 'चाँद' आदि पत्र-पत्रिकाओं के आप अत्यन्त लोकप्रिय कवि थे।

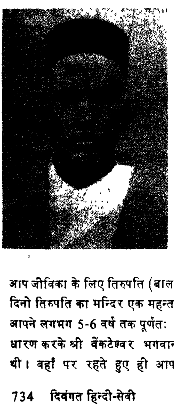
आप जहाँ गम्भीर प्रकृति के सफल कवि थे वहाँ गद्य-लेखन के क्षेत्र में भी आपकी प्रतिभा सर्वथा अद्वितीय थी। आपकी 'भरत चरित' तथा 'गंगा संतरण' नामक दो अप्रकाशित रचनाएँ इसका सुपुष्ट साक्ष्य प्रस्तुत करती है। गीति-काव्य की पुनर्प्रतिष्ठा करने वाले गाजीपुर जनपद के

कवियों में आपका स्थान सर्वथा अप्रतिम और अनुपम था। आपकी साहित्यिक देन के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापित करने के लिए 1 अक्तूबर सन् 1974 को जो आपका भावभीना अभिनन्दन किया गया था, वह सर्वथा अनूठा था। उस अवसर पर प्रकाशित एक स्मारिका मे हिन्दी के वरेण्य समीक्षक आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने उनके व्यक्तित्व के प्रति अपनी गहरी आस्था अभिव्यक्त की थी।

आपका निधन 30 मई सन् 1977 को हुआ था।

पण्डित श्रीरंगाचार्य कान्दूर

आपका जन्म तमिल प्रदेश के काँची मण्डल के कान्दूर नामक ग्राम मे सन् 1875 मे हुआ था। आपका जन्म-स्थान श्री रामानुजाचार्य की जन्म-भूमि भूतपुरी से 5 मील की दूरी पर है। आपके पूर्वज अनेक शास्त्रो के ज्ञाता ऐसे श्रोत्रिय ब्राह्मण थे जिनका परिवार बहुत बडा था और उनकी 2-3 ग्रामो मे खेती होती थी। आपके परिवार को आस-पास के क्षेत्र मे 'बडा घर' कहा जाता था। आपने अपने पिता और बडे भाई के पास रहकर तमिल के भक्ति-साहित्य और सस्कृत के अनेक प्रमुख ग्रन्थो का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। जब आपके पिता का देहान्त हो गया तब आप जीविका के लिए तिरुपति (बाला जी) चले गए थे। उन दिनो तिरुपति का मन्दिर एक महन्त के अधीन था। वहाँ पर आपने लगभग 5-6 वर्ष तक पूर्णतः एकनिष्ठ ब्रह्मचर्य व्रत धारण करके श्री वेंकटेश्वर भगवान् की पूजा-अर्चना की थी। वहाँ पर रहते हुए ही आपने हिन्दी और तेलुगु के अलावा 'वैष्णव पंचरात्र आगम' का भी विधिवत् गम्भीर अध्ययन कर लिया था।



जब आप 25 वर्ष के थे तब आपका विवाह हो गया। इसके उपरान्त आप सन् 1904 के लगभग वृन्दावन चले आए और यहाँ 'रगजी के मन्दिर' में पूजा-अर्चना करने लगे। यहाँ रहते हुए आपने हिन्दी तथा सस्कृत का इतना अधिक अभ्यास कर लिया था कि आपको 'श्रीमद्भागवत' के कई खण्डो मे प्रकाशित होने वाले हिन्दी अनुवाद का कार्य सौंपा गया था, जिसे आपने अत्यन्त योग्यता एव तत्परता से सम्पूर्ण किया था। यह ग्रन्थ 12 भागो मे हिन्दी तथा संस्कृत की व्याख्याओं सहित बगाल के 'ताडास राज्य' के भूपति श्री वनमाली राय की आर्थिक सहायता से वृन्दावन के 'श्री देवकीनन्दन यत्रालय' से सन् 1904 से सन् 1909 तक केवल 5 वर्ष मे सम्पूर्ण रूप से प्रकाशित हुआ था और उस समय उसके सब खण्डो का कुल मूल्य केवल 50 रुपये था। आपने दक्षिण की तेलुगु आदि कई भाषाओं के आधार पर उस ग्रन्थ के संपादन मे अपना हाथ बँटाया था। ब्रजभाषा शैली से समन्वित आपके गद्य का एक उदाहरण इस प्रकार है—"जो पुरुष इस पापहारी इतिहास को सुने अथवा श्रद्धा से सुनावे, यत्नवान होवे, भक्तियुक्त होवे, वह पुरुष कभी नरक मे नही जावेगा। न युगल पुरुष उसको देखेगे, यद्यपि, पापी मनुष्य होवे तो भी विष्णु लोक मे प्रतिष्ठित होवेगा।"

तमिल-भाषी होते हुए भी आपने ब्रजभाषा-गद्य लिखने में कितनी निपुणता प्राप्त कर ली थी, यह इस गद्यांश से विदित होता है। धीरे-धीरे आपकी विद्वत्ता की कीर्ति बम्बई के 'वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस' के मालिक सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास के कानो तक पहुँची और आप उनकी प्रार्थना पर सन् 1920 मे बम्बई चले गए और उनके प्रेस से मुद्रित होने वाले ग्रन्थो के सम्पादन मे अपना सहयोग देने लगे। आपने वहाँ जाकर जिन अनेक सस्कृत व हिन्दी ग्रन्थो का सम्पादन किया था उसमे 'वाल्मीकि रामायण', 'सायण भाष्य' और 'शतपथ ब्राह्मण' आदि प्रमुख है। 2 वर्ष तक 'वेंकटेश्वर प्रेस' मे कार्य करने के उपरान्त आप उनके भाई श्री गगाविष्णु के कल्याण-स्थित 'लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस' के 'शास्त्री खाते' मे चले गए थे। 'पंचरात्र आगम' के अप्रतिम ज्ञाता होने के कारण आपको राजस्थान के रोळ नामक ग्राम से लेकर मराठवाड़ा के नादेड़ तक के वैष्णव मन्दिरों की

प्रतिष्ठापना के लिए बुलाया जाता था। आपने अपने जीवन-काल में लगभग 20-25 मन्दिरों की प्रतिष्ठापना की थी। सेठ-साहूकारो के द्वारा अनेक विनयपूर्ण प्रार्थना करने पर भी आप आने-जाने के खर्च के अतिरिक्त और कुछ नही लेते थे। अन्तिम समय तक आप बडे निस्पृह और विरक्त रहे थे।

आप यावज्जीवन धर्म-परायण रहे और केवल 60 रुपये मासिक मे अपने जीवन का भली-भाँति निर्वाह करते रहे। आप 'सुदर्शन' भगवान् के उपासक थे और प्रतिदिन 'सुदर्शन शतक' तथा 'रामायण' का पाठ किए बिना भोजन तक नही करते थे। आप 'स्वयं पाकी' थे, किसी दूसरे व्यक्ति के द्वारा बनाया गया भोजन आप ग्रहण नही करते थे। आपकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर पण्डितो और जिज्ञासुओ का आपके पास प्राय मेला-सा लगा रहता था। सभी आगन्तुक व्यक्तियो की शकाओ का समाधान करने मे आप अपने जीवन की सार्थकता समझते थे।

आप बम्बई मे रहते हुए अपने सभी कार्य-व्यापारो का भली-भाँति निर्वाह कर रहे थे कि अचानक 30 नवम्बर सन् 1937 को गम्भीर रूप से अस्वस्थ हो गए। आपकी अस्वस्थता की सूचना जब आपके सुपुत्र का० श्री श्रीनिवासाचार्य को मिली तो वे तुरन्त आपकी सेवा-सुश्रूषा के लिए मद्रास से वहाँ चले गए थे। वे उन दिनो 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' के मुख्य कार्यालय मे कार्य किया करते थे।

अनेक उपचार करने पर भी आप स्वस्थ न हो सके और 3 दिसम्बर सन् 1937 को आपने इहलीला सवरण कर दी।

ठा० संसारसिंह

आपका जन्म उत्तर प्रदेश के बिजनौर जनपद के बहादुरपुर नामक ग्राम मे सन् 1888 मे हुआ था। यह ग्राम गगा और मालनी नदी के सगम पर महर्षि 'कण्व' के आश्रम के निकट है। आपका पालन-पोषण 12 वर्ष की आयु तक अपनी ननिहाल मे हुआ था। यद्यपि आपकी शिक्षा प्राइमरी से आगे नही हो सकी थी, किन्तु मुन्शी नारायणप्रसाद (महात्मा नारायण स्वामी) तथा पण्डित कृपाराम (स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती) आदि आर्य समाज के अनेक उपदेशकों और संन्यासियों के उपदेशो को सुन-सुनकर आपके जीवन का निर्माण हुआ था, आर्य समाज के प्रख्यात वयोवृद्ध उपदेशक पण्डित बिहारीलाल शास्त्री काव्यतीर्थ ने आपका उपनयन (यज्ञोपवीत) सस्कार कराया था।

जिन दिनों भारत मे द्वितीय महा समर छिडा हुआ था तब आप 'इण्डियन टेरिटोरियल फोर्स' मे भरती होकर ट्रेनिंग के लिए मेरठ चले गए थे। वहाँ पर जब आपको पजाब-केसरी लाला लाजपतराय का भाषण सुनने से रोका गया तब आपने अपने अग्रेज कैप्टन से झगडकर अपना हवलदारी का बैज-फीता फेंक दिया और अपने घर चले आए। वहाँ से आकर आपने आर्यसमाज का प्रचार-कार्य करने का सकल्प कर लिया और रात-दिन उसीमे लग रहे। अपने एक-मात्र पुत्र को आपने स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती द्वारा सस्थापित 'गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर' मे प्रविष्ट कर दिया और आप भी उसी सस्था की सेवा मे सलग्न हो गए। यहाँ यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि ठाकुर साहब की प्रेरणा पर ही इन पक्तियो के लेखक ने इस सस्था मे विद्याध्ययन किया था। यदि ठाकुर साहब का प्रोत्साहन मुझे उस समय न मिला होता तो कदाचित् यह ग्रन्थ पाठकों के हाथो मे न पहुँच पाता।



जिन दिनो आप गुरुकुल महाविद्यालय की सेवा मे सलग्न थे उन्ही दिनो आपके हृदय मे हरिद्वार मे कन्याओ की शिक्षा के लिए भी एक ऐसी ही आवासीय सस्था स्थापित करने का विचार उठा। परिणामस्वरूप मई सन् 1933 मे आपने सर्वथा साधनहीन अवस्था मे कनखल के पास एक 'कन्या गुरुकुल' की स्थापना कर दी। आज यह सस्था अत्यन्त उन्नत अवस्था मे अपने सस्थापक की गुण-गरिमा को द्योतित कर

रही है और आपके सुपुत्र कविराज योगेन्द्रपाल शास्त्री विधिवत् गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर से स्नातक बनने के उपरान्त इसका सचालन कर रहे हैं।

आप जहाँ उच्चकोटि के सगठनकर्ता और कुशल प्रचारक थे वहाँ आपने 'प्राचीन राजवशों का इतिहास' तथा 'क्षत्रिय जातियों का उत्थान-पतन' नामक ग्रन्थों की रचना भी की थी। इन ग्रन्थों के प्रकाशन से आपको जहाँ देश-व्यापी लोकप्रियता प्राप्त हुई थी वहाँ प्रचुर धनराशि की उपलब्धि भी हुई थी। इसके साथ-साथ आपने कनखल मे गंगनहर के पुल के पास 'आयुर्वेद शक्ति आश्रम' की स्थापना करके उसकी ओर से 'शक्ति सन्देश' नामक साप्ताहिक पत्र का संचालन भी किया था। आजकल इसका सम्पादन आपके सुपुत्र कविराज योगेन्द्रपाल शास्त्री करते है। यहाँ यह बात भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि जहाँ आपने अपने पौत्र चिरजीव हर्षवर्धन को उच्चतम शिक्षा दिलाने का ध्यान रखा वहाँ आपने उसे जन-सेवा के क्षेत्र मे कार्य करने के लिए भी प्रोत्साहित किया था। आजकल आपके द्वारा सस्थापित कन्या गुरुकुल की देख-रेख का सम्पूर्ण दायित्व इन्ही पर है।

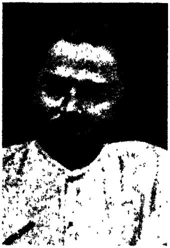
आपने अपने कर्ममय जीवन से जहाँ अपनी सन्तान को सफलता का अमर मन्त्र प्रदान किया था वहाँ अपने पारिवारिकजनो को भी निरन्तर कठोर परिश्रम करने की पावन प्रेरणा प्रदान की थी। आपसे प्रेरणा पाकर ही आपके भतीजे चौ० हरिसिह ने शाहदरा मे अपना निजी प्रेस 'गजेन्द्र प्रिंटिंग प्रेस' के नाम से सचालित किया हुआ है।

आपका निधन 20 नवम्बर सन् 1974 को हुआ था।

श्री सखाराम गणेश देउस्कर

श्री देउस्कर का जन्म 17 दिसम्बर सन् 1869 को बंगाल के वीरभूम नामक स्थान मे हुआ था। आपके पूर्वज तीन पीढ़ी पूर्व महाराष्ट्र के रत्नागिरि जिले के 'देउस' नामक गाँव से आकर वहाँ बस गए थे, इसी कारण यह परिवार 'देउस्कर' कहलाता था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा बगला मे हुई थी। आप जिस विद्यालय मे पढते थे उसके प्रधान शिक्षक श्री योगेन्द्रनाथ वसु की आप पर बहुत कृपा-दृष्टि थी। फलस्वरूप उन्हींकी प्रेरणा पर सन् 1891 मे आप मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त सन् 1893 मे उसी विद्यालय मे शिक्षक हो गए थे।

अध्यापन-कार्य करते हुए आपकी प्रवृत्ति लेखन की ओर हुई और मराठी भाषा-भाषी होते हुए भी आपने बगला के तत्कालीन प्रख्यात साहित्यकार श्री राजनारायण वसु की प्रेरणा पर बगला मे लिखना प्रारम्भ कर दिया और आपके लेख बगला के 'हितवादी' नामक पत्र मे प्रकाशित होने लगे। धीरे-धीरे आपके लेखन का यह प्रभाव हुआ कि 'हितवादी' के सचालको ने आपको अपने पत्र मे 'सम्पादक' के रूप मे कार्य करने के लिए कलकत्ता ही बुला लिया।



बंग-भग के समय आपका सम्पर्क अनेक क्रान्तिकारी युवको से हो गया और आप अनेक क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो मे सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। जब समग्र देश मे सरकारी शिक्षणालयो के बहिष्कार का आन्दोलन प्रारम्भ हुआ और सारे भारत मे 'राष्ट्रीय विद्यापीठ' स्थापित हुए तब आपने कलकत्ता मे स्थापित विद्यापीठ मे इतिहास तथा बंगला भाषा के शिक्षक के रूप मे भी कार्य किया था। सन् 1910 मे आप वहाँ से त्यागपत्र देकर फिर 'हितवादी' के सम्पादक हो गए। उन्ही दिनों आपने देश के युवको मे क्रान्ति की प्रेरक भावनाएँ भरने के उद्देश्य से 'देशेर कथा' नामक एक ऐसी क्रान्तिकारी पुस्तक बगला मे लिखी, जिसके थोडे ही दिनों मे 5 सस्करण हो गए थे। तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने यह पुस्तक जब्त कर ली थी, परन्तु जब्ती की घोषणा होने तक इस पुस्तक की लगभग 13 हजार प्रतियाँ बिक चुकी थी। आपके द्वारा लिखित 'बाजीराव' नामक पुस्तक का भी अपना एक विशेष महत्त्व है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि

हिन्दी के प्रख्यात पत्रकार श्री बाबूराव विष्णु पराडकर श्री देउस्कर जी के भानजे थे। श्री देउस्कर जी की प्रेरणा पर ही पराडकर जी पहले क्रान्तिकारी आन्दोलन मे सम्मिलित हुए और बाद मे पत्रकारिता के क्षेत्र मे उतरे। उन्हीके द्वारा आप पहले 'हिन्दी बगवासी' तथा बाद मे (सन् 1907 मे) 'हितवार्ता' नामक पत्रो के सम्पादकीय विभागों मे नियुक्त हुए थे।

श्री देउस्कर जी यद्यपि बगला पत्र का सम्पादन करते थे, परन्तु हिन्दी-भाषियो को भी राष्ट्रीय एव सामाजिक कार्यों मे बढ-चढकर भाग लेने की प्रेरणा देते रहते थे। इसका ज्वलन्त प्रमाण यह है कि जब कलकत्ता मे 'वैश्य सभा' की स्थापना हुई तब आपने मारवाडी युवको मे नई चेतना तथा स्फूर्ति उत्पन्न करने के पावन उद्देश्य से उसके तत्त्वावधान मे 'बुद्धिवर्द्धिनीसभा' की स्थापना कराई और अनेक वर्ष तक उस सभा के अध्यक्ष के रूप मे आपने बहुत-से मारवाडी युवको का पथ-प्रदर्शन किया था। अपने भाषा, इतिहास तथा राजनीति के गहन ज्ञान के कारण आपने इस सभा के माध्यम से उत्तर भारतीय समाज मे भी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया था। यह देउस्कर जी के प्रखर व्यक्तित्व का ही प्रताप था कि कलकत्ता के अनेक मारवाडी युवक आपकी प्रेरणा पर उन दिनों स्वदेशी-आन्दोलन के प्रचार तथा प्रसार मे सक्रिय रूप से भाग लेने लगे थे। वास्तविकता तो यह है कि सन् 1905 मे हुए 'बग भग' के आन्दोलन से प्रभावित होकर जब से आप इस ओर प्रवृत्त हुए थे तब से ही आपने युवको मे क्रान्ति का मन्त्र फूंकने का सकल्प कर लिया था। आपके ही सत्प्रयास से सनातनधर्म के नेता पण्डित दीनदयालु व्याख्यान वाचस्पति ने 'विशुद्धानन्द सरस्वती मारवाडी विद्यालय कलकत्ता' मे 'स्वदेशी का प्रचार' विषय पर अपना क्रान्तिकारी भाषण भी दिया था। 'बुद्धिवर्द्धिनीसभा' के माध्यम से देउस्कर जी ने कलकत्ता के मारवाडी समाज की बहुत सेवा की थी।

आपका निधन 23 नवम्बर सन् 1912 को हुआ था।

श्री सच्चिदानन्द तिवारी 'आनन्द'

श्री आनन्द का जन्म सन् 1950 मे उत्तर प्रदेश के लखीमपुर खीरी अंचल के गोला गोकर्णनाथ मे हुआ था। इण्टर तक शिक्षा प्राप्त करके आप कृषि के कार्य मे लग गए और उसी-मे आनन्द अनुभव किया। आपने गोला गोकर्णनाथ मे 'चन्द्र आनन्द प्राइमरी पाठशाला' और 'साहित्यानन्द परिषद्' की स्थापना भी की थी। आपकी कविताएँ हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं में छपा करती थी, लेकिन कोई पुस्तक प्रकाशित न हो सकी थी।

आपका निधन कैंसर के कारण सन् 1969 मे केवल 19 वर्ष की आयु मे हुआ था।

श्री सतीशकुमार बी० ए०

श्री सतीशकुमार का जन्म सन् 1900 मे उत्तर प्रदेश के बरेली नगर के बिहारीपुर नामक मोहल्ले मे हुआ था। आपके पिता श्री छैलबिहारी कपूर भी नगर के अत्यन्त प्रतिष्ठित एवं सम्भ्रान्त व्यक्ति थे और सामाजिक क्षेत्र मे आपका एक अन्यतम स्थान था। 'बरेली कालेज' के निर्माण मे श्री कपूर के पिता श्री का योगदान अत्यन्त उल्लेखनीय रहा था। श्री सतीशकुमार पर भी अपने पिता के गुणो का प्रभाव होना अनिवार्य था। फलत आप भी बरेली कालेज से बी० ए० करने के उपरान्त समाज-सेवा के कार्यो मे बढ-चढकर भाग लेने लगे थे।



जिन दिनो आपने बरेली कालेज से सस्कृत विषय लेकर बी०ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी उन्ही दिनो प्रख्यात साहित्यकार श्री राधेश्याम कथावाचक ने बरेली से 'भ्रमर' नामक साहित्यिक मासिक पत्र प्रकाशित करने का निश्चय

किया था। उन्होने श्री सतीशकुमार जी को अपने प्रेस के सचालन और 'भ्रमर' के सम्पादन का भार सौप दिया और आपने यह कार्य अत्यन्त कुशलता से सम्पन्न किया था। इस कार्य के साथ-साथ आप कथावाचक जी की अन्य कृतियो के सम्पादन और प्रकाशन मे भी अपना सक्रिय सहयोग दिया करते थे। बरेली कालेज मे हिन्दी की एम० ए० कक्षाएँ प्रारम्भ कराने मे भी आपका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा था।

अपने पिता के सस्कारो के अनुरूप समाज-सेवा की भावनाएँ भी आपके मानस मे कूट-कूटकर भरी हुई थी। फलस्वरूप आपने सन् 1928 मे 'बरेली कार्पोरेशन बैंक' नाम से एक बैंक की स्थापना की और जीवन-पर्यन्त आप उसके 'मैनेजिग डायरेक्टर' रहे। आपके कुशल निरीक्षण मे बैंक ने अभूतपूर्व उन्नति की थी। आपने स्वाधीनता-सग्राम मे भी अपना सक्रिय सहयोग दिया था और शुद्ध खादी के वस्त्र ही धारण किया करते थे। सन् 1942 के 'भारत छोडो आन्दोलन' मे भी आपका महत्वपूर्ण योगदान रहा था। काग्रेस मे कार्य करते हुए आपका सम्पर्क सर्वश्री गोविन्द-वल्लभ पन्त, पुरुषोत्तमदास टण्डन, आचार्य नरेन्द्रदेव और दामोदरस्वरूप सेठ आदि अनेक शीर्षस्थ नेताओ से हो गया था। अनेक राष्ट्रीय, सामाजिक और धार्मिक सस्थाओ को आर्थिक सहायता देने मे भी आप पीछे नही रहते थे।

आपका निधन सन् 1943 मे थोडी-सी बीमारी के कारण हो गया था।

श्री सतीशचन्द्र 'सन्तोषी'

श्री सन्तोषी का जन्म 5 फरवरी सन् 1921 को उत्तर प्रदेश के बरेली नगर मे हुआ था। आपकी माता का नाम 'सन्तोष' था, इसी कारण आपने अपना उपनाम 'सन्तोषी' रख लिया था। अनेक पारिवारिक उलझनो और आर्थिक कठिनाइयो के कारण आपको अधिक शिक्षा नही मिल सकी थी और आपको 'बरेली इलैक्ट्रिक सप्लाई कम्पनी' मे क्लर्की करनी पडी थी।

साहित्य के प्रति आपका रुझान शैशव-काल से ही था, परिणामस्वरूप आप 'साहित्य अकादमी बरेली', 'आलोक' तथा 'हीरो क्लब'-जैसी अनेक साहित्यिक तथा सास्कृतिक सस्थाओं से जुड गए थे। इन सस्थाओं के सम्पर्क मे आकर आपमे लेखन की जो प्रतिभा जागृत हुई थी, बाद मे वह धीरे-धीरे विकसित होकर इस सीमा तक पहुँच गई कि आपका स्थान नगर के प्रमुख कवियो तथा साहित्य-कारो मे विशिष्टता प्राप्त कर गया।



आपने जहाँ 'पतवार' तथा 'जगत्' नामक दो साप्ताहिक पत्रो का सम्पादन किया था वहाँ आपकी कविताएँ भी 'आलोक वेला', 'गीत और सरगम' तथा 'हिम शिखर बलिदान मॉगता' नामक काव्य-सकलनो मे प्रकाशित हुई थी। आपके एक लोकप्रिय गीत की यह पक्तियाँ आज भी प्रत्येक काव्य-प्रेमी के कण्ठ से यदा-कदा सुनाई दे जाती है

हजार गीतों मे कोई राहत, बिना तुम्हारे अभी अधूरी।
हजार सपनों की बादशाहत, बिना तुम्हारे अभी अधूरी॥

खेद का विषय है कि केवल 51 वर्ष की आयु मे ही अकस्मात् हृदय गति अवरुद्ध होने के कारण सन् 1973 मे आपका असामयिक देहान्त हो गया।

स्वामी सत्यदेव परिव्राजक

स्वामी जी का जन्म सन् 1879 मे पजाब प्रदेश के लुधियाना नामक नगर के 'नौघरा' मोहल्ले के एक थापर गोत्रीय सिख परिवार मे हुआ था। यद्यपि आपके प्रपितामह श्री अमरसिंह जी सिख धर्म के अनुयायी थे, तथापि आपके पितामह श्री रूपचन्द जी ने शैवमत की दीक्षा ले ली थी। स्वामी जी के पिता श्री कुन्दनलाल जी ने सनातनधर्मी विचार-धारा के

अनुयायी होते हुए भी आपको विद्याध्ययन के लिए लाहौर के डी० ए० वी० स्कूल मे प्रविष्ट कराया था। क्योंकि स्वामी जी के बडे भाई केदारनाथ जी लाहौर मे रहकर वकालत की तैयारी कर रहे थे, अतएव उन्होंने इसी को सुविधाजनक समझा था। हिन्दी पढने की ओर स्वामी जी बहुत रुचि रखते थे। अपने विद्यालय की वार्षिक परीक्षा मे सर्वश्रेष्ठ होने के कारण आपको पुरस्कार मे 'सत्यार्थ प्रकाश', 'स्वामी दयानन्द की जीवनी' और 'राबिन्सन क्रूसो' नामक तीन पुस्तके मिली थीं। 'सत्यार्थ प्रकाश' ने स्वामी जी के मानस मे जहाँ कट्टरता के भाव भरे वहाँ उनकी जीवनी को पढकर आपने मन-ही-मन सन्यासी बनने का सकल्प कर लिया था। 'राबिन्सन क्रूसो' के पारायण ने आपको कठिनाइयो पर विजय प्राप्त करके घर से निकल भागने को भी प्रेरित किया था। उन्ही दिनो आपके हाथ पजाब केसरी लाला लाजपतराय द्वारा उर्दू मे लिखित 'मेजिनी की जीवनी' भी पड गई, जिसके स्वाध्याय ने आपको इस दिशा मे बढने की अद्वितीय प्रेरणा दी थी। धीरे-धीरे डी० ए० वी० स्कूल के अध्यापको के सम्पर्क मे आकर सत्यदेव जी ने स्वामी दयानन्द सरस्वती की विचार-धारा का अत्यन्त निकटता से अध्ययन किया और आपका झुकाव 'आर्यसमाज' की ओर हो गया। फलस्वरूप आप आर्यसमाज के सत्सगो मे नियमित रूप से जाने लगे। इसी प्रभाव के कारण आपने अपना विवाह भी न करने का निश्चय कर लिया था। इस बात की विधिवत् घोषणा आपने उस समय की जब केवल 16 वर्ष की आयु मे ही आपके पिता ने आपका विवाह करने का निश्चय किया। बात यह थी कि जब स्वामी जी की आयु केवल 4 वर्ष की थी तब ही आपके पिता ने आपकी 'सगाई' कर दी थी।



स्वामी जी ने सन् 1897 में जैसे-तैसे मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की और यह भी निश्चय कर लिया कि आप आजन्म ब्रह्मचारी रहकर समाज-सेवा के कार्य मे ही अपने को सलग्न रखेगे। उधर आपके पिता आपको रेलवे की नौकरी मे लगाना चाहते थे और इधर स्वामी जी का मन उच्चतम ज्ञान प्राप्त करने के लिए आतुर-उत्सुक था। आपने मन-ही-मन घर छोड देने का निश्चय किया और पैदल ही अमृतसर भाग गए। अमृतसर मे एक पुराने अध्यापक की सहायता से वहाँ आप अपने अध्ययन का जुगाड बिठा ही रहे थे कि आपके पारिवारिकजनो को पता चल गया और वे आपको वहाँ से वापिस घर ले गए और आपको नौकरी करा दी। इस बीच स्वामी जी के बडे भाई और बहन का असामयिक निधन हो गया था, जिसके कारण आपकी माता जी अत्यन्त खिन्न रहने लगी थी। माता की ममता और प्रसन्नता के लिए ही आपको घर लौटकर नौकरी करने का विचार करना पडा था।

आर्यसमाजी वातावरण मे रहने के कारण आपके मानस मे समाज-सुधार की भावनाएँ निरन्तर हिलोरे मारती रहती थी। इस क्षेत्र मे गम्भीरता से कार्य करने के लिए आपको सस्कृत भाषा का अध्ययन करने की आवश्यकता अनुभव हुई। अपने धर्म और सस्कृति के वास्तविक मर्म को समझने की अदम्य आकाक्षा ने आपको फिर अध्ययन की ओर प्रवृत्त किया। परिणामस्वरूप नौकरी छोड़कर आप आगे की पढाई जारी रखने के लिए डी० ए० वी० कालेज, लाहौर मे प्रविष्ट हो गए। कुछ दिन तक आपने पटियाला के 'महेन्द्र कालेज' मे भी अध्ययन किया था। लाहौर मे अध्ययन करते समय आप लाला लाजपतराय के व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित हुए थे। स्वामी रामतीर्थ और स्वामी विवेकानन्द के क्रान्तिकारी विचारों का भी आपके मानस पर बहुत गहरा प्रभाव पडा था। जिन दिनो आप लाहौर तथा पटियाला मे अध्ययन कर रहे थे उन दिनो देश मे राष्ट्रीय जागरण की जो धारा बह रही थी उससे आप भी अछूते न रहे और अपने अध्ययन को बीच मे ही छोडकर 'स्वतन्त्रता की खोज में' आपने केवल 20 वर्ष की आयु मे ही देशाटन करने का क्रान्तिकारी निश्चय कर लिया और आप सस्कृत के अध्ययन के लिए निकल पडे। ब्राह्मण-परिवार मे जन्म न लेने के कारण आपको सस्कृत के अध्ययन के मार्ग मे अनेक कठिनाइयो का सामना करना

पड़ा। कोई भी विद्वान् आपको अपना शिष्य बनाने को तैयार नही होता था।

आप इस तरह भटक ही रहे थे कि स्वामी महानन्द नामक एक सन्यासी ने आपको अपनाया और आप विधिवत् उनसे दीक्षा लेकर 'सत्यदेव' से 'स्वामी सत्यदेव परिव्राजक' हो गए। सस्कृत वाङ्मय का सर्वांगीण अध्ययन करने के निमित्त आप देहरादून तथा कानपुर आदि कई नगरो मे होते हुए अन्त मे 4 वर्ष तक काशी मे रहे। वहाँ रहते हुए आपने संस्कृत के अनेक ग्रन्थो का विधिवत् अध्ययन करने के साथ-साथ हिन्दी भाषा का भी अच्छा ज्ञान अर्जित कर लिया था। यहाँ तक कि आप हिन्दी मे लेख आदि भी लिखने लगे थे। जिन दिनो आप काशी मे अध्ययन कर रहे थे उन्ही दिनों सन् 1893 की 16 जुलाई को वहाँ श्री श्यामसुन्दर-दास ने अपने दो सहयोगी मित्रो (श्री रामनारायण मिश्र तथा ठा० शिवकुमारसिह) के साथ मिलकर एक किराये का मकान लेकर 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की थी। आर्यसमाज के सत्सगो मे निरन्तर भाग लेते रहने और इस तरुण-मण्डली के सम्पर्क के कारण आप हिन्दी-लेखन की ओर प्रवृत्त हुए थे। उन्ही दिनो आपका सबसे पहला हिन्दी-लेख 'राजर्षि भीष्म पितामह' 'शीर्षक से 'सरस्वती' मे छपा था। जहाँ आप लेखन की ओर अपने को पूर्णत सलग्न कर चुके थे वहाँ आर्यसमाज के मचो पर 'एक कुशल वक्ता' के रूप मे भी आपकी ख्याति होनी जा रही थी। क्योकि आपके नेत्रों की ज्योति अपने बाल्यकाल से ही मन्द थी, इसलिए अपनी चिकित्सा कराने तथा अपने अध्ययन को आगे बढाने के उद्देश्य से आपने अमरीका जाने का निश्चय कर लिया। काशी मे रहते हुए ही आपने स्वामी रामतीर्थ से पत्र-व्यवहार करके वहाँ के सम्बन्ध मे पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर ली थी। फलस्वरूप अपने निश्चय के अनुसार आप 1 जनवरी सन् 1905 को केवल 26 वर्ष की आयु मे केवल 15 रुपये की स्वल्प-सी राशि लेकर अमरीका-यात्रा पर निकल पडे। निश्चय ही इससे आपकी कर्मठता और ध्येय-निष्ठा का परिचय मिलता है।

अमरीका पहुंचने मे आपको कितनी कठिनाइयो का सामना करना पडा। इसकी कहानी भी बहुत लम्बी है। काशी से बम्बई जाकर स्वामी जी ने सर्वप्रथम वहाँ के बन्दर-गाह मे ठहरने वाले स्टीमरो मे नौकरी की खोज की। स्वामी सोमदेव नामक एक और महानुभाव भी आपके साथ इस खोज में सम्मिलित हो गए। वहाँ पर बहुत प्रयास करने पर 'खलासी' की नौकरी मिली। शरीर से बहुत दुबले-पतले और मरियल से होने के कारण सोमदेव तो वहाँ से भाग खड़े हुए, परन्तु 'सत्यदेव जी' का पंजाबी हट्टा-कट्टा शरीर आपके इस कार्य मे पूर्णतः सहायक सिद्ध हुआ। बचपन से कमजोर आँखो के कारण 'खलासी' होने लायक न थे। इस कार्य के लिए हट्टा-कट्टा होने के साथ-साथ आँधी और तूफानो मे कूद-फाँद करनी भी आवश्यक होती है। आँखों की कमजोरी के कारण वे इस काम मे अपने को सर्वथा असमर्थ पाते थे। जहाजों के डाक्टर कल्याणदास ने जब स्वामी जी की इस परिस्थिति को समझा तो उन्होंने स्वामी जी को गुजरात-काठियावाड़ मे भ्रमण करके वहाँ पर आर्यसमाज का प्रचार करने की प्रेरणा दी। फलस्वरूप आप अपना यह निश्चय छोडकर आर्यसमाज का प्रचार करने की भावना से अहमदाबाद चले गए और सर्व प्रथम वहाँ के 'भोलानाथ लिटरेरी इस्टिट्यूट' की ओर से 'उन्नति का द्वार' विषय पर व्याख्यान दिया। जब इस यात्रा मे आपके पास पैसे की कुछ व्यवस्था हो गई तो आपने बम्बई से कलकत्ता जाकर 'अमरीका यात्रा' के लिए अपना भाग्य आजमाने का निश्चय किया। अमरीका जाने के लिए कम-से-कम 500 रुपयो की आवश्यकता थी। जब आप कलकत्ता पहुँचे तो वहाँ आपकी भेट अचानक सोहनलाल रवि नाम के एक युवक से हो गई। वे भी 'कृषि विज्ञान' की उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए अमरीका जाना चाहते थे और उनके पास रुपया भी काफी था। फलस्वरूप 'खूब गुजरेगी जब मिल बैठेगे दीवाने दो' के अनुसार इन दोनो युवको न अमरीका-यात्रा की तैयारी प्रारम्भ कर दी। यात्रा के लिए आवश्यक सामग्री खरीदकर आप दोनो 8 मई सन् 1905 को कलकत्ता बन्दरगाह से चलने वाले स्टीमर से दूसरे दर्जे मे चल दिए। इस प्रसग मे आपको कितनी कठिनाई हुई, इसका विस्तृत वर्णन स्वामी जी ने अपनी 'अमरीका प्रवास की मेरी अद्भुत कहानी' नामक पुस्तक मे दिया है।

अमरीका के शिकागो नगर मे पहुँचकर सन् 1906 के जून मास मे आपने वहाँ के विश्वविद्यालय मे प्रवेश लिया और निरन्तर 5 वर्ष तक उच्च शिक्षा प्राप्त की। जब इससे भी आपकी तृप्ति नही हुई तब आपने अमरीका की जनता के

रहन-सहन, आचार-व्यवहार, तथा वहाँ के ग्रामीण जीवन का निकट से अध्ययन करने की भावना से देश की लगभग 2500 मील की पद-यात्रा की। इस यात्रा मे स्वामी जी को कही खाना तक भी नसीब नही हुआ और कही-कही कड-कड़ाती सर्दी मे बाहर सोना पडा तथा कही-कही अपमान तक भी सहना पडा। अपने अमरीका-प्रवास में आपने 'स्वतन्त्रता के मूल्य' को समझकर उसके व्यावहारिक स्वरूप को भली-भाँति आँका और फिर आपने सारे यूरोप की यात्रा की। अमरीका मे रहते हुए ही आपका पत्र-व्यवहार 'सरस्वती' के सम्पादक आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी से हुआ। परिणाम-स्वरूप उनकी प्रेरणा पर आपने वहाँ से अपनी 'अमरीका-यात्रा' के सस्मरण भी भेजने प्रारम्भ किये, जिनके कारण हिन्दी-प्रेमी जनता मे 'स्वामी सत्यदेव परिव्राजक' का नाम सुपरिचित हो गया। जब स्वामी जी के लेख 'सरस्वती' मे छपते थे तो उन्हे पढने के लिए पुस्तकालयों मे युवको की भीड जमा हो जाती थी। 'सरस्वती' की ग्राहक-सख्या बढाने मे भी स्वामी जी के लेखो का बहुत बडा हाथ था। स्वामी जी के उन लेखो से उन दिनो भारत के अनेक युवको ने प्रचुर प्रेरणा ग्रहण की थी। सन् 1911 के जुलाई मास मे आप भारत लौटे और लगभग एक वर्ष तक काशी मे रहकर ही लेखन-कार्य किया और 'सत्य ग्रन्थमाला' नाम से आपने अपनी पुस्तके प्रकाशित की। काशी मे रहते हुए आपका सम्पर्क प्रख्यात पत्रकार श्री लक्ष्मणनारायण गर्दे से हुआ था, जिनके कारण आपको लेखन-कार्य मे प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था।

अपनी पुस्तको के माध्यम से आपने जहाँ अपनी अमरीका यात्रा के रोमाचक सस्मरण प्रस्तुत किये वहाँ देश की स्वाधीनता के लिए सघर्ष करने की भी प्रचुर प्रेरणा प्रदान की। आपकी रचनाओ से देश के युवको ने बडा ही प्रेरक प्रभाव ग्रहण किया था। काशी से आप कानपुर चले गए और वहाँ के पटकापुर मोहल्ले से प्रकाशन-कार्य प्रारम्भ किया। कानपुर मे सर्वश्री गणेशशकर विद्यार्थी और नारायणप्रसाद अरोडा के सम्पर्क से आपने अपने कार्य को बहुत आगे बढाया था। आपके लेखन का उस समय एकमात्र उद्देश्य देश के नवयुवको में राष्ट्रीयता की प्रेरक भावनाएँ जागृत करने का था। 'स्वाधीनता के प्रति प्रेम और दासता के प्रति घृणा' उत्पन्न करना ही आपके जीवन का एक-मात्र लक्ष्य था। अपनी ऐसी ही भावनाएँ आपने उस समय 'राष्ट्रीय सन्ध्या' नामक अपनी कृति में अभिव्यक्त की थी। आप पग-पग पर अपने भाषणों और लेखो मे अमरीका का उदाहरण देकर 'स्वतन्त्रता का सन्देश' दिया करते थे। आपकी यह प्रवृत्ति तत्कालीन नौकरशाही को तनिक भी नही भाती थी। वह ऐसा भयकर समय था, जिसमे 'वन्देमातरम्' कहना तक गुनाह समझा जाता था। आप अपने भाषणो के माध्यम से अपनी पुस्तको का प्रचार भी किया करते थे, जिसमे आपको पर्याप्त सफलता भी मिलती थी। सन् 1913 मे आप प्रयाग चले गए और वहाँ के जान्सनगज मोहल्ले मे 'सत्य ग्रन्थमाला' का कार्यालय स्थापित किया। वहाँ पर आपका परिचय राजर्षि पुरुषोत्तम-टण्डन से हुआ। उनके सम्पर्क से स्वामी जी मे 'हिन्दी-प्रचार' की भावनाएँ और जोर से हिलौरे लेने लगी। उनकी प्रेरणा पर आप पजाब मे हिन्दी-प्रचार के लिए भी गए थे। वहाँ पर आर्यसमाज के मच से स्वामी जी ने जो भाषण दिये थे उनसे आपके हिन्दी-प्रेम का परिचय मिलता था। उन भाषणो के माध्यम से आप यथाप्रसग 'स्वाधीनता का सन्देश' भी देते रहते थे। सन् 1911 से सन् 1918 तक आपने बिहार मे जाकर भी प्रचार-कार्य जारी रखा।

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन की प्रेरणा से ही आपको 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग' की ओर से दक्षिण मे हिन्दी-प्रचार के कार्य के लिए भेजा गया, जहाँ आपने मद्रास के 'गोखले हाल' मे अगस्त 1918 मे विधिवत् हिन्दी की कक्षाएँ चलाकर राष्ट्रपिता महात्मा गाधी के निर्देशानुसार उनके सुपुत्र श्री देवदास गान्धी के साथ हिन्दी-प्रचार के कार्य का सूत्रपात किया था। वहाँ पर रहते हुए आपने दक्षिण-वासियो को हिन्दी सिखाने की दृष्टि से 'हिन्दी की पहली पुस्तक' की रचना की। इससे पूर्व स्वामी जी ने इण्डियन प्रेस प्रयाग की ओर से प्रकाशित 'बाल रामायण' के माध्यम से ही हिन्दी पढाने का कार्य प्रारम्भ किया था। मद्रास मे अपने हिन्दी-प्रचार-कार्य की स्मृति स्वामी जी ने अपनी उन पक्तियो के द्वारा दिलाई है जो आपने सन् 1932-33 मे 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार-सभा मद्रास' के एक उत्सव पर अपनी शुभ-कामना का सन्देश भेजते हुए लिखी थी। आपने लिखा था.

"मै दक्षिण मे हिन्दी आन्दोलन के प्रति गहरी आस्था रखता हूँ। मैंने चौदह वर्ष पूर्व हिन्दी का जो बीज वहाँ

बोया था, वह आज एक महावृक्ष के रूप मे परिणत हुआ है और उसकी छाया मे सैकडो हिन्दी-प्रचारक एकत्रित होकर हिन्दी-साहित्य की चर्चा कर रहे है, यह देखकर मै अत्यन्त मुग्ध हूँ।"

यद्यपि आँखो के कष्ट के कारण स्वामी जी को अपने साहित्यिक जीवन को आगे बढाने मे बहुत बाधाएँ आई, किन्तु आपका लक्ष्य महान् था और आप देश की नई पीढी में एक नई स्फूर्ति तथा चेतना फूंकना चाहते थे, इसलिए इस बाधा को भी बहादुरी पूर्वक झेला। आपने छात्रो मे नया जीवन डालने की दृष्टि से जहाँ 'शिक्षा का आदर्श' और 'सजीवनी बूटी' नामक प्रेरक पुस्तकें लिखी वहाँ हिन्दू समाज मे नई चेतना प्रस्फुटित करने के लिए 'सगठन का बिगुल' नामक ग्रन्थ के माध्यम से सगठन का अद्भुत आदर्श प्रस्तुत किया। स्वामी जी हिन्दी के उन लेखको मे थे जिन्होने अपनी लेखनी का उपयोग पूर्णत देश के युवको तथा सामान्य नागरिको मे चेतना तथा स्फूर्ति जगाने के लिए किया था। आपने अपने लेखो तथा भाषणो मे 'चन्द्रकान्ता सन्तति' तथा 'दारोगा दफ्तर'-जैसे अनेक जासूसी उपन्यासो की धज्जियाँ उडाई थी। आप वास्तव मे ऐसे ही साहित्य का सृजन करने के पक्षपाती थे जिसे पढकर हमारे देश के नागरिक अपने जीवन को उत्कर्ष की ओर ले जा सके। आपने अपनी लेखनी को आज के लेखको की भाँति कभी भी व्यावसायिकता की ओर नही मोडा। अपने इस कर्ममय जीवन मे आपका सम्पर्क जहाँ राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी और देशरत्न राजेन्द्रप्रसाद-जैसे महापुरुषो से हुआ था वहाँ सर्वश्री पाण्डेय रामावतार शर्मा, श्रीधर पाठक, चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी आदि अनेक प्रमुख साहित्यकार भी आपके अनन्य प्रशसको मे से थे। 'सरस्वती' मे प्रकाशित आपके अमरीका-प्रवास-सम्बन्धी लेखो को प्रकाशित करके जहाँ आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने आपको हिन्दी-साहित्य मे प्रतिष्ठित किया था वहाँ श्री लक्ष्मीधर वाजपेयी ने आपको प्रकाशन की दिशा मे आगे बढने की प्रेरणा प्रदान की थी। प्रयाग मे रहते हुए ही आपने कैलाश तथा मानसरोवर की दुर्गम यात्राएँ भी कर डाली थी। अपनी आँखो की चिकित्सा कराने के विचार से आपने सन् 1923 मे जर्मनी की यात्रा भी की थी, किन्तु 4 बार जर्मनी जाने पर भी आप अपनी आँखो की ज्योति न लौटा सके और शेष जीवन 'चक्षुहीन' अवस्था मे ही बिताने को विवश होना पडा।

आप अपने विचारो मे कितने क्रान्तिकारी थे इसका प्रमाण आपके उस लेख से मिल जाता है जो कभी आपने 'क्रान्ति' शीर्षक से लिखा था। उस लेख की कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है

"मेरा नाम क्रान्ति है। मै पुरानी, जर्जर, सड़ी-गली और दकियानूसी बातो को जलाकर भस्म कर देती हूँ और नवजीवन का सचार करती हूँ। अविरल यौवन का मूल कारण हूँ और बुढापे का नाश करती हूँ। जहाँ मै हूँ वही जिन्दगी है, जहाँ मै नही हूँ वहाँ मौत है।··· याद रखो, मै गुरुडम की घोर शत्रु हूँ। पाखण्डी मौलवी-मुल्लाओ, धूर्त्त पण्डितो और मक्कार पडे-पुरोहितो के लिए मै भीषण काल हूँ।···मै स्वतन्त्रता की देवी हूँ। सब प्रकार की गुलामी की बेडियो को मै काटने वाली हूँ। मै सबको स्वाधीन बनाती हूँ। क्योकि स्वाधीनता ही पवित्रता है और स्वाधीनता से बढकर कोई श्रेष्ठतम पदार्थ नही।"

जिस प्रकार आपने केवल 15 रुपये से ही अमरीका जैसे देश की दुर्गम यात्रा करके अपने अभूतपूर्व साहस और कर्मठता का परिचय दिया था उसी प्रकार केवल 75 रुपये से आपने अपना प्रकाशन-कार्य भी प्रारम्भ किया था। 'सत्य ग्रन्थमाला' नाम से आपने जो प्रकाशन-कार्य प्रारम्भ किया था उसकी ओर से आपकी जो पुस्तके प्रकाशित हुई थी वे इस प्रकार है—'अमरीका दिग्दर्शन' (1911), 'राष्ट्रीय सन्ध्या' (1911), 'हिन्दी का सन्देश' (1914), 'सत्य निबन्धावली' (1914), 'सजीवनी बूटी' (1915), 'लेखन कला (1916) 'राजर्षि भीष्म' (1916), 'वेदान्त का विजय मन्त्र' (1917) 'श्री बुद्धगीता' (1919), 'मनुष्य के अधिकार' (1922), 'हमारी सदियो की गुलामी' (1922), 'सगठन का बिगुल' (1922), 'मेरी जर्मन यात्रा' (1924), 'यात्री मित्र' (1936), 'भारतीय समाजवाद की रूपरेखा' (1939), 'यूरोप की सुखद स्मृतियाँ' (1939), 'लहसुन बादशाह' (1951), 'विचार स्वातन्त्र्य के प्रागण मे' (1952), 'स्वतन्त्रता की खोज मे' (1952), 'पाकिस्तान एक मृग-तृष्णा' (1954), 'ज्ञान के उद्यान मे' (1954), तथा 'अनन्त की ओर' (1958)। इनमे से 'अमरीका दिग्दर्शन' का परिवर्द्धित सस्करण 'अमरीका-प्रवास की मेरी अद्भुत कहानी'

नाम से सन् 1958 में प्रकाशित हुआ था। 'अनुभव' को बाद में आपने 'अनुभूतियाँ' नाम से सन् 1958 मे छपवाया था। इसमें स्वामी जी की प्रेरक कविताएँ सकलित है।

प्रयाग के बाद आप कुछ दिन लाहौर चले गए और फिर सन् 1935 मे 'सत्य ज्ञान निकेतन' नाम से एक आश्रम का निर्माण करके ज्वालापुर (हरिद्वार) मे रहने लगे थे। 30 नवम्बर सन् 1953 को आपने अपने निधन से पूर्व इस सारी सम्पत्ति को 'नागरी प्रचारिणी सभा' के नाम लिख दिया था। आपकी यह हार्दिक इच्छा थी कि आपका यह आश्रम पश्चिमोत्तर भारत मे हिन्दी के प्रचार का अद्भुत केन्द्र बने। खेद है कि आपकी यह आशा-आकाक्षा सफल न हो सकी और 'नागरी प्रचारिणी सभा' के अधिकारी इस दिशा मे कोई उल्लेखनीय कार्य न कर सके। आपकी हिन्दी-सेवाओ को दृष्टि मे रखकर पजाब सरकार के भाषा विभाग ने सन् 1959 मे आपका अभिनन्दन भी किया था।

आपका निधन 10 दिसम्बर सन् 1961 को हुआ था।

श्री सत्यनारायण शास्त्री वैद्य-सम्राट्

श्री शास्त्री जी का जन्म सन् 1885 मे उत्तर प्रदेश के वाराणसी नगर मे हुआ था। आपके जन्म के साथ एक आख्यान यह जुडा है कि आपकी माँ ने एक ऐसा स्वप्न देखा था जिसमे कोई जटाजूट तपस्वी सुन्दर-सा फल देकर अचानक अन्तर्धान हो गया था। इस घटना के ठीक नवे मास की पूर्ति पर श्री सत्यनारायण जी इस ससार मे पधारे थे। दैवी आशीर्वाद से सम्बद्ध होने के कारण आपका नाम 'सत्यनारायण' रखा गया था। आपके नाना पण्डित शिवलोक शर्मा काशी के प्रसिद्ध वैद्य थे। उन्होंने अपनी परम्परागत हस्तलिखित पुस्तकें अपने उत्तराधिकारियों को सौपकर यह कहा था—"यह बालक इन्ही पुस्तको से मेरी अभिलाषा पूर्ण करेगा।" फलस्वरूप काशी मे आयुर्वेद की जो परम्परा दिवोदास, सुश्रुत और धर्मदास से चली आ रही थी, सत्यनारायण शास्त्री अपने नाना के आशीर्वाद से उस परम्परा के अनन्य सवाहक बने।

जिस काशी मे नागेश भट्ट के उपरान्त सर्वश्री पण्डित शिवकुमार शास्त्री, दामोदर शास्त्री और गगाधर शास्त्री-जैसे प्रकाण्ड विद्वानों की परम्परा का स्वर्ण-काल था उन्ही विद्वानो की छत्रछाया मे सत्यनारायण जी का अध्ययन प्रारम्भ हुआ। आपने सस्कृत के अनेक ग्रन्थो का सम्यक् अनुशीलन करके जीविका के लिए कविराज पण्डित धर्मदास से विधिवत् आयुर्वेद का अध्ययन प्रारम्भ किया। उन दिनों पण्डित धर्मदास जी महामना मालवीय जी द्वारा सस्थापित 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' के 'आयुर्वेद विभाग' का कार्य सँभाल रहे थे। आपने जहाँ उनसे आयुर्वेद के विभिन्न ग्रन्थो का सर्वांगीण अध्ययन किया वहाँ उनके बड़े भाई कविराज पण्डित अन्नचरणदास से 'औषध निर्माण' का ज्ञान भी विधिवत् प्राप्त किया। आयुर्वेद का गहन ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ आप ज्योतिष, तन्त्र और योगशास्त्र मे भी पारगत हो गए थे।

शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आपने सन् 1909 मे चिकित्सा का कार्य प्रारम्भ किया और थोडे ही दिनो मे आप उस क्षेत्र मे 'पीयूषपाणि चिकित्सक' के रूप मे अत्यन्त लोकप्रिय हो गए। शास्त्री जी ने परम्परा से चली आने वाली उस चिकित्सा-पद्धति को सर्व-जन-सुलभ बनाने मे अभूतपूर्व योगदान दिया और आपने अनेक निर्धन साधुओ, पण्डितो, अध्यापको और छात्रो की जीवन-भर नि शुल्क चिकित्सा की। धीरे-धीरे आपकी ख्याति देश-व्यापी हो गई और मालवीय जी ने आपको 20 अगस्त सन् 1925 को हिन्दू विश्वविद्यालय के 'आयुर्वेद विभाग' मे बुला लिया। प्रारम्भ मे आपने वहाँ एक अध्यापक के रूप मे कार्य किया और फिर सन् 1938 मे आप 'आयुर्वेदिक कालेज' के प्रधानाचार्य बना दिए गए। हमारे देश के विश्वविद्यालयों मे 'विभागाध्यक्ष' या 'प्रधानाचार्य' के पद उन्ही व्यक्तियो के लिए एक आकर्षण का केन्द्र होते है, जिनकी रुचि पढ़ने-पढाने के स्थान पर 'कूटनीतिक जाल' मे होती है। पण्डित सत्यनारायण शास्त्री इसके अपवाद थे। अनेक प्रशासनिक दुरूहताओ और प्रतिदिन के स्वाध्याय मे पडने वाली बाधाओ के कारण आपने 'प्रधानाचार्य' का पद छोड दिया और मुख्याध्यापक के रूप मे ही कार्य करते रहे। आपने सन् 1950 मे विश्वविद्यालय से अवकाश ग्रहण किया था।

विश्वविद्यालय मे कार्य करते हुए आप जहाँ सन् 1938 मे 'इण्डियन मैडिसिन बोर्ड' के सदस्य निर्वाचित हुए थे वहाँ

अवकाश-प्राप्ति के बाद भी आजीवन विश्वविद्यालय के 'सम्मानित प्रोफेसर' रहे थे। जब सन् 1960 मे विश्वविद्यालय के 'आयुर्वेदिक कालेज' को बन्द कर दिया गया तब शास्त्री जी को गहन मानसिक वेदना हुई थी। जिस विश्वविद्यालय मे आयुर्वेदिक कालेज के प्रथम प्रधानाचार्य त्रिविक्रम जी रहे थे और जिस पद पर उनके उपरान्त श्री धर्मदास-जैसे महानुभाव प्रतिष्ठित हुए थे उसी पद पर शास्त्री ने अनेक वर्ष तक बड़ी निष्ठापूर्वक कार्य करके अपनी योग्यता का परिचय दिया था। आपकी योग्यता का सबसे उत्कृष्ट प्रमाण यही है कि भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद ने आपकी चिकित्सा-पद्धति से मुग्ध होकर एलोपैथी को सर्वथा तिलांजलि देकर सन् 1950 मे आपको अपना चिकित्सक नियुक्त किया था।

शास्त्री जी जहाँ उच्चकोटि के चिकित्सक एव सफल प्राध्यापक के रूप मे अपनी देश-व्यापी प्रतिष्ठा बना चुके थे वहाँ समाज-सेवा के विभिन्न क्षेत्रो मे भी आपका बड़ा सम्मान था। सनातन धर्म-जगत् मे आप सास्कृतिक मान्यता के एक ज्वलन्त प्रतीक माने जाते थे। आप काशी की 'पण्डित परिषद्' तथा 'शास्त्रार्थ महासभा' के अध्यक्ष होने के साथ-साथ 'विद्वत् परिषद्' के आजीवन सरक्षक भी थे। 'वाराणसेय शास्त्रार्थ महाविद्यालय' के स्थायी सभापति होने के अतिरिक्त आप 'अर्जुन दर्शनानन्द महाविद्यालय' के प्रवर्त्तक भी थे। स्वतन्त्रता के उपरान्त आपने अखण्ड भारत, गोरक्षा और हिन्दू कोड विरोधी आन्दोलनो मे सक्रिय रूप से भाग लिया था। जब स्वतन्त्रता मे पूर्व सन् 1938 मे देश मे काग्रेस मन्त्रिमण्डलो का निर्माण हुआ तब काग्रेस की ओर से आपसे एम० एल० ए० का चुनाव लडने का आग्रह किया गया, किन्तु आपने उसे अस्वीकार कर दिया था। बाद मे महामना मालवीय जी के सुपुत्र श्री गोविन्द मालवीय को काग्रेस ने अपना प्रत्याशी बनाया था। जब 'वाराणसेय सस्कृत विश्वविद्यालय' की ओर से श्री सुरतिनारायणमणि त्रिपाठी के कुलपतित्व-काल मे महामहोपाध्याय श्री गोपीनाथ कविराज और राजेश्वर शास्त्री द्रविड के साथ आपका भी सम्मान किया गया था तब आपने सम्मान तो स्वीकार कर लिया था, किन्तु सम्मानित विद्वानो को प्रतिमास 1500 रुपये दिये जाने की योजना के अनुसार वह राशि लेने से इन्कार कर दिया था। भारत सरकार की ओर से सन् 1955 मे आपको 'पद्मभूषण' की सम्मानित उपाधि भी प्रदान की गई थी। इस उपाधि को आपने सरकार की हिन्दी-विरोधी नीति से रुष्ट होकर वापिस कर दिया था। यहाँ यह बात विशेष रूप से ध्यातव्य है कि आपको यह उपाधि सस्कृत तथा आयुर्वेद-जगत् की उल्लेखनीय सेवाओं के कारण प्रदान की गई थी। चिकित्सा के क्षेत्र मे आपके निदान की भाषा 'सस्कृत' और दैनिक कार्य-व्यवहार की भाषा 'बनारसी' थी; किन्तु फिर भी आपने यह उपाधि त्यागकर अपने उत्कृष्ट हिन्दी-प्रेम का जो परिचय दिया वह हिन्दी के इतिहास मे सदा गौरव के साथ स्मरण किया जायगा।

आपका निधन 23 सितम्बर सन् 1969 को हुआ था।

श्रीमती सत्यवती शर्मा



श्रीमती सत्यवती का जन्म पजाब के लुधियाना नामक नगर मे 18 अप्रैल सन् 1911 को हुआ था। आप हिन्दी के विख्यात कहानी-लेखक, उपन्यासकार और नाटककार श्री पृथ्वीनाथ शर्मा की धर्मपत्नी थी। अपने पति के सम्पर्क मे आकर आप साहित्य-क्षेत्र की ओर उन्मुख हुई और सर्वप्रथम आपने अपना साहित्यिक जीवन कविता-लेखन से प्रारम्भ किया। आपकी सबसे पहली कविता प्रयाग से प्रकाशित होने वाले 'चाँद' पत्र के 'विदुषी अक' मे सन् 1933 मे प्रकाशित हुई थी।

कविता-लेखन के अतिरिक्त कहानी के क्षेत्र मे भी आपकी देन अनुपम है। आपकी कहानियाँ आपके पति श्री पृथ्वीनाथ शर्मा के साथ 'विवाह-चक्र' नामक सकलन मे

प्रकाशित हुई हैं। आपकी कविताएँ 'विश्वमित्र', 'विशाल भारत', 'सरस्वती' और 'नया समाज' आदि हिन्दी की अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थी। आपकी कविताओ का संकलन सन् 1955 मे 'प्रथम सुमन' नाम से प्रकाशित हुआ था। आपकी कविताओं का दूसरा सग्रह सन् 1973 मे 'जुगनू का जन्म' नाम से प्रकाशित हुआ था। इसमे श्रीमती शर्मा द्वारा लिखित वे बालोपयोगी काव्य-कथाएँ सकलित हैं जिनका प्रकाशन समय-समय पर 'बाल भारती' तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओ मे होता रहा था।

आपका देहावसान 12 अक्तूबर सन् 1973 को चण्डीगढ मे हुआ था।

श्री सत्यव्रत

श्री सत्यव्रत का जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ जनपद के हरदुआगज नामक स्थान मे सितम्बर सन् 1901 मे हुआ था। आप जब केवल 5 वर्ष के ही थे कि आपके माता-पिता का असामयिक देहावसान हो गया था। आपकी माता बुलन्दशहर जनपद के जेवर नामक कस्बे की थी। आपका लालन-पालन अपने ज्येष्ठ भ्राता श्री हजारीलाल माहेश्वरी ने किया था। आपकी शिक्षा पहले 'प्राइमरी' तक ही हो सकी थी और इसके उपरान्त आप पारिवारिक व्यवसाय मे सलग्न हो गए थे। जब आपके मन मे अपने अध्ययन को आगे बढाने की भावनाएँ जागृत हुई तब आप हरदुआगज से अलीगढ आ गए और वहाँ से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करके सार्वजनिक जीवन मे प्रवेश कर गए। अलीगढ़ मे रहते हुए आपका सम्पर्क प्रख्यात राष्ट्रीय नेता ठाकुर मलखानसिंह से हो गया जिसके कारण आपका झुकाव राष्ट्रीय आन्दोलन की ओर हो गया।

यद्यपि आपके बडे भाई श्री हजारीलाल आपको अपने पारिवारिक व्यवसाय मे ही लगाए रखना चाहते थे, किन्तु आपके मानस मे राष्ट्रीय आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग लेने की अदम्य लालसा थी। इसी बीच आपकी भेंट उत्तर प्रदेश के प्रख्यात पत्रकार तथा राष्ट्रीय नेता पण्डित श्रीकृष्णदत्त पालीवाल से हो गई, जिन्होंने आपको 'प्रताप' के सम्पादक श्री गणेशशकर विद्यार्थी के पास कानपुर भेज दिया। कानपुर पहुँचकर आपने 'प्रताप' के सम्पादकीय विभाग मे कार्य प्रारम्भ कर दिया। विद्यार्थी जी के इस सम्पर्क तथा सान्निध्य ने आपमे जो सस्कार उत्पन्न किए थे उन्हीके कारण आप आगे के अपने पत्रकार-जीवन मे निरन्तर प्रगति करते रहे।

'प्रताप' के बाद आप प्रयाग से प्रकाशित होने वाले श्री कृष्णकान्त मालवीय के साप्ताहिक पत्र 'अभ्युदय' मे चले गए। जब राष्ट्रीय आन्दोलन मे एक बम-विस्फोट-सम्बन्धी क्रान्तिकारी पर्चा छापने के प्रसग मे 'अभ्युदय प्रेस' सरकारी दमन की चपेट मे आकर सर्वथा बन्द हो गया तब आपने कुछ दिन 'पुस्तक-प्रकाशन' तथा 'पुस्तक-विक्रय' का भी कार्य किया था। जब इस कार्य मे आपको सफलता नही मिली तो विवश होकर आपको एक बैंक मे खजांची का कार्य भी करना पडा था। इसी बैंक मे 'माया प्रेस' का हिसाब भी था। फलस्वरूप धीरे-धीरे आपका सम्पर्क 'माया' के सचालक श्री क्षितीन्द्रमोहन मित्र 'मुस्तफी' से हो गया और उन्होंने आपकी साहित्यिक प्रवृत्ति से प्रभावित होकर आपको अपने सस्थान मे बुला लिया।



'माया प्रेस' मे नियुक्ति पाने के उपरान्त आप उसके विविध प्रकाशनो तथा पत्रो के सम्पादन मे निष्ठापूर्वक कार्य करते रहे। आपने जहाँ इस प्रेस की ओर से प्रकाशित होने वाले बालोपयोगी पत्र 'मनमोहन' का कई वर्ष तक अत्यन्त सफलतापूर्वक सम्पादन किया वहाँ अनेक बालोपयोगी पुस्तको की रचना भी की थी। आपकी बालोपयोगी कहानियो का एक सग्रह 'हीरा और मजीरा' नाम से सन् 1970 मे 'परिमल प्रकाशन' की ओर से छपा था। आपके द्वारा लिखित अन्य पुस्तको मे 'अब्राहम लिंकन', 'स्वास्थ्य चर्चा'

तथा 'आत्म शुद्धि' के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। 'अब्राहम लिंकन' का प्रकाशन 'अभ्युदय प्रेस, प्रयाग' की ओर से हुआ था और यह अनेक वर्ष तक उत्तर प्रदेश के प्राथमिक विद्यालयों मे पाठ्य-पुस्तक के रूप मे भी निर्धारित रही थी। आपने अपने कर्ममय जीवन में अनेक लेखको को साहित्य-रचना की प्रेरणा देकर बड़ा अभिनन्दनीय कार्य किया था। आप अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक 'माया प्रेस' से ही सम्बद्ध रहे थे।

आपका निधन 3 अप्रैल सन् 1976 को 76 वर्ष की आयु मे प्रयाग मे हुआ था।

श्री सदानन्द घिल्डियाल

श्री घिल्डियाल का जन्म उत्तर प्रदेश के गढ़वाल अचल के कठूलस्यूं खोला नामक ग्राम मे सन् 1898 मे हुआ था। आयुर्वेद शास्त्र के गम्भीर ज्ञाता होने के साथ-साथ आपका साहित्यिक क्षेत्र मे भी बहुत सम्मान था। चिकित्सा के कार्य से समय निकालकर आप आयुर्वेद-सम्बन्धी ग्रन्थो की रचना करने मे भी सलग्न रहा करते थे।

आपने जहाँ आयुर्वेद के 'चक्रदत्त' तथा 'नवनीतिकम्' आदि ग्रन्थो की टीका हिन्दी मे की थी वहाँ 'रसतरंगिणी' नामक आयुर्वेद-सम्बन्धी एक स्वतन्त्र ग्रन्थ की रचना भी की थी। यह ग्रन्थ सस्कृत की कोमल कान्त पदावली मे बनाया गया था। सस्कृत-रचना मे पूर्णत दक्ष होने के साथ-साथ आपने हिन्दी-लेखन मे भी अपनी प्रतिभा का प्रचुर प्रयोग किया था। आपका 'प्रायश्चित्त' नामक हिन्दी नाटक तथा कविताओ का सकलन 'भाव कुसुमाजलि' विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

आपका निधन सन् 1928 मे हुआ।

श्री सदानन्द जखमोला 'सन्तत'

श्री 'सन्तत' का जन्म उत्तर प्रदेश के पौड़ी गढ़वाल क्षेत्र के चण्डा पट्टी सीला नामक ग्राम मे 10 जुलाई सन् 1900 को हुआ था। अपर मिडिल तक की शिक्षा प्राप्त करके पहले आपने नौकरी की और फिर बाद मे समाज-सेवा के कार्यों मे लग गए। आप गढ़वाली भाषा के अच्छे कवि थे। आपके द्वारा गढ़वाली मे अनूदित कालिदास का अमर काव्य 'मेघदूत' अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आपने अपनी 'महाकवि कालिदास' नामक कृति मे यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि उनका जन्म गढ़वाल प्रदेश मे हुआ था।



'कण्वाश्रम' की स्थापना के लिए भी आपने बहुत प्रयास किया था और इस सम्बन्ध मे अनेक लेख भी लिखे थे। आपकी 'कण्वाश्रम का परिचय' नामक कृति आपकी तत्सम्बन्धी विचार-धारा का अच्छा परिचय देती है। आप अन्तिम दिनो मे बिजनौर जनपद के मोटाढाक नामक ग्राम मे रहने लगे थे।

आपका निधन 29 अक्तूबर सन् 1977 को हुआ था।

श्री सनातनानन्द सकलानी

श्री सकलानी का जन्म उत्तर प्रदेश के गढवाल अचल के श्रीनगर नामक स्थान मे नवम्बर सन् 1873 में हुआ था। आप हिन्दी, उर्दू, सस्कृत, अंग्रेजी, फारसी तथा अरबी आदि भाषाओ विद्वान् थे। आप गढ़वाली तथा हिन्दी दोनों भाषाओं मे समान रूप से साधिकार लिखा करते थे। बी० ए० तक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप टिहरी राज्य में अध्यापक नियुक्त हो गए थे और बाद में प्रदेश के शिक्षा-विभाग मे विद्यालय-निरीक्षक के रूप मे कार्य करने लगे थे।

आपकी प्रारम्भिक हिन्दी तथा गढ़वाली भाषाओं की रचनाएँ 'गढवाली' मे प्रकाशित हुआ करती थी। किन्तु बाद मे आपका कार्य-क्षेत्र विस्तृत हो गया था। आपकी कवित्व-प्रतिभा का विकास 'सरस्वती' के द्वारा हुआ था और उसमें आपकी रचनाएँ सन् 1905 मे सन् 1924 तक ससम्मान प्रकाशित होती रही थी। क्योंकि आप शासकीय सेवा में थे अत आपकी रचनाएँ 'सत्कविदास' नाम से ही प्रकाशित हुआ करती थी।

'सरस्वती' के अतिरिक्त आपकी रचनाएँ 'माधुरी' तथा 'बगवासी' आदि तत्कालीन अनेक प्रमुख पत्रो मे भी छपा करती थी। वास्तव मे आप हिन्दी के उन कुछ वरेण्य कवियों मे थे जिनका स्थान गढवाली भाषा में भी प्रमुख था। आपकी रचनाओ के सकलन 'स्वार्थ सप्तक' तथा 'सीख सच्चा सपूतक' नाम से प्रकाशित हुए थे। आपकी दूसरी पुस्तक मे गढवाली रचनाएँ सकलित हैं।

आपका निधन 16 अगस्त सन् 1928 मे बुलन्दशहर मे 55 वर्ष की आयु मे हुआ था, जब आप वहाँ पर 'सब-डिप्टी इन्स्पेक्टर ऑफ स्कूल्स' थे।

महाराजा सावन्तसिंह जू देव बहादुर

आपका जन्म ओरछा राज्य की राजधानी टीकमगढ (मध्य प्रदेश) मे सन् 1877 ईस्वी मे हुआ था। आप ओरछा के तत्कालीन नरेश सर प्रतापसिह जू देव के द्वितीय पुत्र थे और बिजावर के राजा महाराजा भानुप्रतापसिह ने आपको गोद लिया था। आप बड़े साहित्य-प्रेमी और प्रजा-वत्सल राजा थे। आपके सिहासनारूढ होने से पूर्व बिजावर मे कोई अच्छा राजमहल न था। आपने सर्व प्रथम वहाँ के दुर्ग का पुनरुद्धार करके 'सावत भवन', 'लाल महल' और श्री बिहारीजी का मन्दिर' आदि इमारते बनवाई थी।

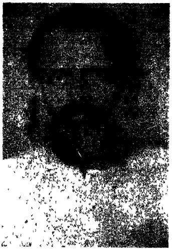
आप अच्छे साहित्यानुरागी होने के साथ-साथ ब्रजभाषा-काव्य के मर्मज्ञ भी थे। आपने अपने दरबार मे जिन अनेक सुकवियों को आश्रय दे रखा था उनमे श्री बिहारीलाल ब्रह्मभट्ट के अतिरिक्त श्री देवीप्रसादजी 'प्रीतम' का नाम विशेष उल्लेख्य है। आपने अपने राज्य मे 'साहित्य समाज' नामक एक संस्था की स्थापना भी की थी। इस संस्था के माध्यम से आपने वहाँ साहित्य के उत्कर्ष के लिए बहुत बडा कार्य किया था।

आपका निधन सन् 1946 मे हुआ था।

श्री सिपाहीसिंह 'श्रीमन्त'

श्री 'श्रीमन्त' का जन्म बिहार प्रदेश के गोपालगज जनपद के मूँजा (मटियारी) नामक ग्राम मे 8 मई सन् 1923 को हुआ था। बिहार विश्वविद्यालय से एम० ए० करने के उप-रान्त आपने पटना विश्वविद्यालय से एम० एड्० किया और फिर पूर्णत साहित्य-सेवा में ही सलग्न हो गए।

आपने जहाँ 'अरुणोदय', 'ग्राम्य जीवन', 'उदयाचल' और 'भोजपुरी जन मन' आदि पत्रो का अनेक वर्ष तक कुशलतापूर्वक सम्पादन किया था वहाँ 'भोजपुरी सम्मेलन' और 'लोक सस्कृति सम्मेलन' के मन्त्री भी रहे थे। 'अखिल भारतीय भोजपुरी साहित्य-सम्मेलन' की भी आपने मन्त्री और प्रधानमन्त्री के रूप मे कई वर्ष सेवा की थी। जब आप 'सारन जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के प्रधान मन्त्री थे तब आपके सत्प्रयास से सन् 1970 मे हिन्दी तथा भोजपुरी के प्रख्यात साहित्यकार 'आचार्य महेन्द्र शास्त्री' को एक अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया गया था।



अपने साहित्यिक जीवन के प्रारम्भिक दिनों मे आप अपने नाम के साथ 'पागल' लिखा करते थे, किन्तु बाद मे 'श्रीमन्त' हो गए थे। भोजपुरी और हिन्दी मे आपकी जो अनेक रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी है उनमे 'उषा रानी'

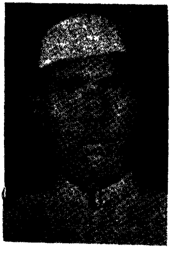
(भोजपुरी-1950), 'नाश और निर्माण' (हिन्दी-1951), 'आँधी' (भोजपुरी-1951), 'द्वापर की क्रान्ति' (हिन्दी-1953), 'हीरा मोती' (भोजपुरी-1972), 'जवानी के जगाइले' (भोजपुरी-1973), 'बाजी बाँसुरी' (हिन्दी-1975), 'प्रतिनिधि भोजपुरी कहानियाँ' (1977) तथा 'भोजपुरी निबन्ध-निकुज' (1977) आदि प्रमुख है।

आपकी अप्रकाशित रचनाओं में रवि बाबू की 'गीता-जलि' का भोजपुरी अनुवाद और 'घरूहट के लोकगीत' नामक शोध-ग्रन्थ उल्लेख्य हैं। आपने अपने जीवन का अधिकांश समय भोजपुरी तथा हिन्दी साहित्य की सेवा में ही व्यतीत किया था। आप प्रगतिशील विचार-धारा के पोषक सघर्षशील साहित्यकार थे। वास्तव में अपने कार्य-कलापो से आपने अपना 'सिपाही' नाम पूर्णतः सार्थक कर दिया था।

आपका निधन 30 जनवरी सन् 1980 को हुआ था।

कवि-कप्तान श्री सीताराम 'भुरजेश'

श्री भुरजेश का जन्म उत्तर प्रदेश के खीरी जनपद के लखीमपुर नामक नगर में सन् 1908 में हुआ था। आपके पिता श्री कुन्दनलाल जी क्योंकि जाति के भडभूजे (भुरजी) थे अत वे आपको अच्छी शिक्षा नहीं दिला सके थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा का हाल 'कबीरदास' की तरह का था। अपने सीमित ज्ञान के आधार पर ही भुरजेश जी ने अपनी प्रतिभा का जो चमत्कारी परिचय दिया था वह आपकी काव्य-कला-पटुता का स्पष्ट प्रमाण है। अपने अथक परिश्रम और अटूट लगन से आपने माँ सरस्वती की जो आराधना की थी, उसीके कारण आपको 'कवि-कप्तान' की उपाधि से विभूषित किया गया था।



अपने वश तथा परिवार के सम्बन्ध में 'भुरजेश' जी ने जो कवित्त लिखा था वह आपका सही चित्र उपस्थित करता है। आप लिखते है :

विधि ने दिया है हमे जन्म भुरजी के भौन,
वशज भिलन्दन ऋषि के कहलाते है।
करके तैयार भाँति-भाँति के चबैने चारु,
पण्डित, पुजारी जिन्हे चाव से चबाते हैं।।
भटवाँस, चूड़े, चने, चबाते ही बनते है,
जब हम ऊपर से नमक लगाते है।
अन्य कवि भाड़ झोंकना ही जानते है किन्तु,
'भुरजेश' भाड झोंक कविता बनाते है।।

'भुरजेश' जी महात्मा गाधी जी के सत्याग्रह-आन्दोलन से भी बहुत प्रभावित हुए थे। आपकी रचनाओ मे स्वदेश-प्रेम तथा राष्ट्रीय जागरण का उद्घोष प्रचुर मात्रा में देखने को मिलता है। स्वाधीनता के उपरान्त जब हमारे देश को कश्मीर-समस्या ने आक्रान्त किया तब भुरजेश जी का कवि भी चुप न रह सका था। आप महाकवि श्री गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' की शिष्य-मण्डली मे अपने को अत्यन्त सौभाग्यशाली अनुभव करते थे। आपकी रचना-प्रतिभा खड़ी बोली तथा ब्रजभाषा की रचनाएँ करने के साथ-साथ अवधी में भी प्रचुर परिमाण में प्रस्फुटित हुई थी। 'सुकवि' में आपकी रचनाएँ प्राय. प्रकाशित हुआ करती थी।

एक बार सन् 1935 में जब 'खीरी कवि मण्डल' की ओर से रायबहादुर श्री सकटाप्रसाद वाजपेयी की अध्यक्षता मे एक कवि-सम्मेलन हुआ था तब आपको 'कवि-कप्तान' की उपाधि से अलकृत किया गया था। वास्तव में श्री वाजपेयी के प्रोत्साहन से ही श्री 'भुरजेश' काव्य-क्षेत्र में इतनी लोक-प्रियता प्राप्त कर सके थे। आपने लगभग 575 कवि-सम्मेलनों में भाग लेकर हिन्दी-कविता के प्रति लोक-रुचि को जाग्रत करने में जो सहयोग दिया था वह आपकी अनन्य हिन्दी-निष्ठा का द्योतक है। आपके द्वारा रचित कविताओं के तीन सकलन—'भुरजेश भारती', 'भुरजेश गीतांजलि' तथा 'प्रणय प्रयास' तैयार थे, किन्तु आपके जीवन-काल में केवल 'भुरजेश भारती' का ही प्रकाशन हो सका था। इसका प्रकाशन प्रख्यात राष्ट्रकर्मी और साहित्यकार श्री वशीधर

मिश्र ने सन् 1961 मे किया था। इस कृति से 'भुरजेश' जी की बहुमुखी प्रतिभा की कुछ जानकारी अवश्य मिल जाती है।

आपका निधन सन् 1975 मे हुआ था।

श्री सुखराम चौबे गुणाकर

श्री गुणाकर का जन्म मध्य प्रदेश के सागर जनपद के रहली नामक ग्राम मे सन् 1867 मे हुआ था। आपके पिता श्री गणेशराम चौबे भी उस क्षेत्र के अत्यन्त ख्याति-प्राप्त नागरिक थे। अध्ययन की समाप्ति पर पहले आपने सागर के मिडिल स्कूल मे कार्य करना प्रारम्भ किया था और बाद मे जबलपुर के नार्मल स्कूल मे क्रमश व्यायाम-शिक्षक, छात्रावास-अध्यक्ष और अध्यापक के रूप मे कार्य-रत रहकर वहाँ से ही सेवा-निवृत्त हुए थे।

आपका स्थान हिन्दी-साहित्य मे बालोपयोगी साहित्य के सर्जको मे अन्यतम है। आपने जहाँ बालोपयोगी उत्कृष्ट साहित्य की रचना की वहाँ प्रयाग, लखनऊ, पटना और इन्दौर आदि अनेक स्थानो पर आयोजित अ० भा० हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशनो के अवसर पर अनेक महत्त्वपूर्ण भाषण भी दिये थे। बाल-मनोविज्ञान के आप इतने पारखी थे कि अपनी रचनाओ मे ऐसे ही शब्दो का प्रयोग किया करते थे, जिन्हे सभी वर्गों के बच्चे सरलता-



पूर्वक समझ लेते थे। आपको हिन्दी वर्णमाला सिखाने की नवीन शैली का आविष्कार करने पर मध्यप्रदेश शिक्षा विभाग की ओर से अनेक पदक और प्रमाणपत्र प्रदान किये गए थे। बच्चो मे वीरता की भावनाओ का सचार करना ही आपके कवि का प्रमुख ध्येय था।

आपकी रचनाओं मे 'हिन्दी प्रवेशिका', 'गीत प्रबोध', 'वर्ण प्रबोध', 'लिपि प्रबोध', 'महिलागानमाला', 'पाती पचक', 'रहली रहस्य', 'तुलसीदास महिला' तथा 'राम रहस्य' आदि के नाम विशेष ध्यातव्य हैं।

आपका निधन 31 मार्च सन् 1956 को हुआ था।

श्री सुदर्शनप्रसाद पाठक

श्री पाठक जी का जन्म मध्य प्रदेश के रीवाँ राज्य के समीपवर्ती हुजूर तहसील के साँय नामक ग्राम मे सन् 1857 मे हुआ था। आपको हिन्दी तथा सस्कृत का अच्छा ज्ञान था। आपकी पुस्तक 'भजनमाला' अप्रकाशित ही रह गई। आपकी एक ब्रजभाषा-रचना इस प्रकार है ·

ऐ हो चित चोर छैल भूपति किशोर राम,
प्रीति को लगाय अब करत दगा छली।
तन मन बेच्यो बिन मोलन तिहारे हाथ,
कीन्यो सत्कार सब भाँतिन भली-भली॥
कौन भृङ्ग चाहे मकरन्द रघुनन्द प्यारे,
फैली तो मुखारबिन्दु सुषमा कली-कली।
जैहो जो बिसारि कै 'सुदर्शन' तो ह्वै अधीर,
फिरैगी बिहाल अली मिथिला गली-गली॥

आपका निधन सन् 1926 मे हुआ था।

पण्डित सुदर्शनाचार्य बी० ए०

पण्डित सुदर्शनाचार्य का जन्म उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद नगर मे सन् 1879 मे हुआ था। आपके पिता पण्डित नारायणदास शर्मा मध्यप्रदेश की रियासत रीवाँ मे दीवान थे। आपने बनारस के क्वीस कालेज से सस्कृत के आचार्य की परीक्षा पास करके प्रयाग विश्वविद्यालय से बी० ए० किया था। महात्मा गांधी जी के सत्याग्रह-आन्दोलन से प्रभावित होकर आपने पूर्णत स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार

का ही व्रत ले लिया था। राष्ट्रोन्नयन के लिए महिलाओं में शैक्षणिक और सामाजिक जागृति उत्पन्न करने की दृष्टि से आपने सन् 1911 मे प्रयाग से 'गृहलक्ष्मी' नामक एक मासिक पत्रिका का सम्पादन व प्रकाशन प्रारम्भ किया था। आपने इस पत्रिका के माध्यम से नारी जागरण की दिशा मे बहुत बडा कार्य किया था। आपकी पत्रिका को उन दिनो अनेक हिन्दी-भाषी रानियाँ, महारानियाँ और सेठानियाँ बडे आदर और श्रद्धा के साथ पढा करती थी और वे इस कार्य मे समय-समय पर सुदर्शनाचार्य



जी की आर्थिक सहायता भी करती रहती थी। 'गृहलक्ष्मी' के साथ-साथ आपने 'शिशु' नाम से एक बालोपयोगी मासिक पत्र भी सन् 1916 मे प्रारम्भ किया था।

जिन दिनो आप इलाहाबाद से इन दोनो पत्रिकाओ का सम्पादन तथा प्रकाशन कर रहे थे उन दिनो आपके कार्यालय मे जहाँ सर्वश्री पुरुषोत्तमदास टण्डन, द्वारिका-प्रसाद चतुर्वेदी, रामजीलाल शर्मा, बाबू श्यामसुन्दरदास, ठा० शिवकुमारसिंह और मैथिलीशरण गुप्त-जैसे प्रख्यात साहित्यकारो का जमाव रहता था वहाँ सर्व श्री सुमित्रानन्दन पन्त, रामकुमार वर्मा और गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'-जैसे नवोदित साहित्यकार भी वहाँ आकर आपसे प्रेरणा प्राप्त किया करते थे। उन दिनो आपका कार्यालय हिन्दी के साहित्यकारों के जमाव का एक अच्छा-खासा अड्डा बना हुआ था। इसी कार्यालय मे बैठकर जहाँ सुकवि श्री सुमित्रा-नन्दन पन्त ने अपनी प्रथम कृति 'पल्लव' की रचना की थी वहाँ रामकुमार वर्मा की प्रथम रचना 'ललना ललाम' का प्रकाशन भी 'गृहलक्ष्मी' कार्यालय से हुआ था। हिन्दी की सुविख्यात कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा भी उन दिनो पण्डित जी की सुपुत्री विमला देवी के साथ क्रास्थवेट गर्ल्स कालेज में पढ़ा करती थी और वे भी आपकी पुत्री के साथ प्रायः आपके कार्यालय मे आती-जाती रहती थी। पण्डित जी ने जहाँ 'गृहलक्ष्मी' मे श्रीमती महादेवी वर्मा की रचनाएँ प्रकाशित की वहाँ श्री तोरनदेवी शुक्ल 'लली' और श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान आदि अनेक महिलाओं को आपने हिन्दी कविता के क्षेत्र मे प्रतिष्ठित करने मे अपनी पत्रिका के माध्यम से एक बड़ा महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था। हिन्दी के प्रमुख पत्रकार ठा० श्रीनाथसिंह ने जहाँ आपके साथ कार्य करके पत्रकारिता का प्रारम्भ किया था वहाँ हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठित लेखक और नाटककार प० नरोत्तम व्यास भी आपके सहयोग से साहित्य मे प्रतिष्ठापित हुए थे।

इन दोनो पत्रिकाओ के माध्यम से सुदर्शनाचार्य जी ने बालोपयोगी तथा महिलोपयोगी साहित्य की प्रोन्नति की दिशा मे जो कार्य किया था वह सर्वथा अभिनन्दनीय कहा जा सकता है। इन पत्रिकाओ के प्रकाशन के साथ-साथ आपने बालोपयोगी मासिक पत्र 'शिशु' का अनेक वर्ष तक सफलता-पूर्वक सम्पादन करने के साथ-साथ शिशु कार्यालय से जिन अनेक बालोपयोगी पुस्तको का प्रकाशन किया था उनसे प्रेरणा प्राप्त करके बाल-साहित्य के क्षेत्र मे बाद मे बहुत-से लेखक प्रकाश मे आये। आपने प्रयाग से ही दैनिक 'देशबन्धु' तथा लखनऊ से 'देहात' एव 'राजवैद्य' नामक पत्रो का सम्पादन भी किया था।

आपका निधन सन् 1942 मे 63 वर्ष की अवस्था मे लखनऊ मे हुआ था।

महामहोपाध्याय पण्डित सुधाकर द्विवेदी

श्री द्विवेदी जी का जन्म सोमवार 26 मार्च सन् 1860 को उत्तर प्रदेश के वाराणसी जनपद के खजूरी नामक ग्राम मे हुआ था। आपके पिता पण्डित कृपालुदत्त द्विवेदी प्राचीन परिपाटी के एक विद्या-व्यसनी ब्राह्मण थे। उन दिनो ऐसे लोग विरले ही देखने मे आते थे जो अपने यहाँ समाचार पत्र मँगाकर पढने के शौकीन हों। पण्डित कृपालुदत्त जी इसके अपवाद थे। उनके यहाँ काशी के श्री तारामोहन मित्र द्वारा सम्पादित पत्र 'सुधाकर' नियमित रूप से आया करता था।

एक बार डाकिये ने जिस समय इस पत्र की प्रति उनके हाथ में दी उसी समय उनको यह सूचना मिली कि उनके यहाँ पुत्र उत्पन्न हुआ है। कृपालुदत्तजी ने उसी समय अपने इस नवजात पुत्र का नाम 'सुधाकर' रख दिया था। यह भी एक संयोग की बात है कि सुधाकरजी का जन्म तथा मरण सोमवार को ही हुआ था। आपके पिता के द्वारा आपका नाम 'सुधाकर' रखने के पीछे यह भी एक रहस्य निहित था कि 'सोम' का अर्थ 'सुधाकर' भी होता है।

आप जब 8 वर्ष के थे तब श्री कृपालुदत्तजी ने आपको पहले अक्षरारम्भ तथा उसके 2 मास बाद यज्ञोपवीत कराया था। पारिवारिक परम्परा के अनुसार पहले आपने संस्कृत का अध्ययन प्रारम्भ किया और फिर हिन्दी के अध्ययन मे संलग्न हुए। थोडे ही दिनो मे 'अमर कोश' को कण्ठाग्र करने के साथ-साथ आपने ज्योतिष एव गणित का भी ज्ञान प्राप्त कर लिया। आपकी गणित तथा ज्योतिष-सम्बन्धी प्रतिभा से महामहोपाध्याय बापुदेव शास्त्री इतने प्रभावित हुए थे कि आपको उन्होने 'वृहस्पति' की उपमा भी दे डाली थी। पण्डित सुधाकरजी बाल्यावस्था मे जहाँ अपने अध्ययन, मनन और चिंतन मे पूर्णत संलग्न रहते थे वहाँ आपको पतग उडाने का भी बहुत शौक था। एक बार आप पतग उडाते-उडाते अपने गाँव से सारनाथ के समीपवर्ती उस जगल तक चले गए थे जहाँ प्राय बनैले सुअर रहते थे। इस पर आपको अपने पिता द्वारा जो डाट-फटकार पडी थी, उसने भी आपको अध्ययन-निमग्न होने की प्रचुर प्रेरणा प्रदान की थी। धीरे-धीरे आपने अपने स्वाध्याय के बल पर संस्कृत वाङ्मय के ज्योतिष एव गणित-सम्बन्धी ग्रन्थो का गहन अध्ययन करने के साथ-साथ हिन्दी साहित्य मे रुचि लेनी प्रारम्भ कर दी थी। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र आपके



समवयस्क मित्रो मे अग्रणी थे और आप दोनों प्रायः मिल-बैठकर हिन्दी-सम्बन्धी चर्चा किया करते थे। आपने केवल 15 वर्ष की आयु मे बनारस के गवर्नमेंट संस्कृत कालेज के 'सरस्वती भवन' पुस्तकालय मे कार्य करना प्रारम्भ किया और एक दिन वह भी आया जब आप अपने अद्भुत अध्यवसाय और अद्वितीय योग्यता के कारण सन् 1883 मे उसके 'पुस्तकाध्यक्ष' हो गए। इतनी छोटी-सी आयु मे इतने बडे संस्थान मे 'पुस्तकाध्यक्ष' का पद प्राप्त कर लेना एक अद्भुत विस्मयजनक घटना ही थी। इस पद पर रहते हुए आपने संस्कृत तथा हिन्दी के ज्ञान को इस सीमा तक बढाया कि आपने जहाँ संस्कृत मे गणित तथा ज्योतिष से सम्बन्धित अनेक उल्लेखनीय ग्रन्थो का निर्माण किया वहाँ हिन्दी-साहित्य भी आपकी प्रतिभा एव योग्यता से पूर्णत लाभान्वित हुआ। आपकी विद्वत्ता और योग्यता से प्रभावित होकर ब्रिटिश सरकार ने आपको महारानी विक्टोरिया की जयन्ती के उपलक्ष्य मे 16 फरवरी सन् 1887 को 'महा-महोपाध्याय' की सम्मानित उपाधि से विभूषित किया था।

संस्कृत वाङ्मय के चूडान्त विद्वान् होने के साथ-साथ आप हिन्दी-साहित्य के भी अनन्य हितचिन्तक थे। आपके समकालीन राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द जब हिन्दी को उर्दूनुमा बनाने के षड्यन्त्र मे तत्कालीन शासको के सहभागी बन रहे थे तब आपने ही उनसे डटकर लोहा लिया था। कचहरियो मे उर्दू के स्थान पर हिन्दी को प्रचलित कराने के लिए आपने जो अनवरत उद्योग किया था वह सर्व विदित है। एक बार जब सर जार्ज ग्रियर्सन ने श्री द्विवेदीजी के सामने यह दलील दी थी कि 'उर्दू लिपि मे लिखना सरलता से हो सकता है' तब आपने उन्हे 'चुनौती' देते हुए इसका प्रबल प्रतिवाद किया था। अदालतो मे हिन्दी को प्रचलित कराने के उद्देश्य से उत्तर प्रदेश के तत्कालीन अस्थायी राज्यपाल सर जेम्स लाट्स से 1 जुलाई सन् 1898 को काशी नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से 5 व्यक्तियो का जो प्रतिनिधि मण्डल मिला था उसमे आप भी सम्मिलित थे। आपने एक बार एक उर्दू लिपिक के साथ प्रतियोगिता मे स्वय भाग लेकर और निर्धारित समय से 2 मिनट पहले ही एक लेख सुन्दर तथा स्पष्ट देवनागरी लिपि मे लिखकर यह सिद्ध कर दिया था कि उर्दू की अपेक्षा हिन्दी शीघ्रता से लिखी जा सकती है। इस प्रकार उत्तर प्रदेश के न्यायालयो मे उर्दू के

साथ देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी को उस समय जो स्थान मिला था, उसमे द्विवेदीजी का योगदान भी उल्लेखनीय रहा था।

द्विवेदीजी भाषा के ऐसे स्वरूप के समर्थक थे जिसे जन-साधारण भी भली भांति समझ सके। पण्डिताऊ हिन्दी के आप सर्वथा विरोधी थे। अपने इन विचारों का प्रकटीकरण आपने अपनी 'राम कहानी' नामक पुस्तक की भूमिका मे इस प्रकार व्यक्त किया था—"मेरी समझ मे हिन्दी से हिन्द की सभी भाषाओ को ले सकते है। पर अब आजकल बनारस के चारो ओर सौ-सौ कोस की दूरी पर जो बोल-चाल है उसीको हिन्दी भाषा समझना चाहिए···। इसी तरह हिन्दी अक्षर से हिन्द के सब देशो के अक्षरों को ले सकते हो।··· जो शब्द आप-से-आप प्रचलित हो गए है उन्हे न बदलना चाहिए। उनके बदलने से कुछ भी फायदा नही, उलटा लोगो के न समझने से नुकसान ही है। विलायत से जिस समय हिन्दुस्तान मे दियासलाई (मैच) आई उस समय पण्डितो की कौन कमेटी बैठी थी कि 'मैच' का तर्जुमा 'दियासलाई' ठीक किया जाए और अब ऐसी कौन जरूरत है कि पण्डितों की कमेटी बैठाकर 'मैच' का तर्जुमा 'दीपशलाका', 'स्फुलिग दड' 'स्फुलिगोत्पादक' या 'स्फुलिगजनक' किया जाए।...आज-कल सब देश के लोगो की यही राय है कि भाषा ऐसी होनी चाहिए जिसे पढ़ते ही मन मे मतलब आ जाए। भाषा सुधारने के लिए कमेटी बैठाने की जरूरत नही है, हम लोग घर मे जैसी बोली बोलते है उसीको सुधारकर लिखने की आदत डालें तो थोडे ही दिनो मे आप-से-आप भाषा सुधर जाएगी।" और अपने इन विचारो को क्रियात्मक रूप देने की दृष्टि से ही कदाचित् आपने अपनी इस पुस्तक की रचना की थी। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि इस पुस्तक के प्रथम पृष्ठ पर सबसे ऊपर 'सीधी हिन्दी बोली मे' यह शब्द छपे है।

यह द्विवेदीजी की अभूतपूर्व प्रतिभा और योग्यता का उत्कृष्टतम प्रमाण है कि आपने 'सरस्वती भवन पुस्तकालय' के अध्यक्ष के रूप मे अपने स्वाध्याय के बल पर इतना ज्ञान अर्जित कर लिया था कि आपकी विद्वत्ता की धाक विरोधियो को भी माननी पडी थी। गणित के विभिन्न सिद्धान्तो एव प्रश्नो के सम्बन्ध मे आपके जो लेख तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते थे उनसे प्रभावित होकर ही उत्तर प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल ने द्विवेदीजी को 'गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज' के प्रधानाचार्य डॉ० वेनिस के विरोध के बावजूद वहाँ गणित और ज्योतिष विभाग का प्रधानाध्यापक नियुक्त किया था। यहाँ यह बात भी विशेष रूप से ध्यातव्य है कि आप ऐसे पहले भारतीय विद्वान् थे जिन्होने सस्कृत में ज्योतिष तथा गणित-सम्बन्धी लगभग 29 ग्रन्थो की रचना करके विदेशी वैज्ञानिको तथा विद्वानो का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया था। द्विवेदी जी का गणित-सम्बन्धी ज्ञान इतना गहन था कि जब एक बार सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री बापुदेव ने अपने 'सिद्धान्त शिरोमणि' नामक ग्रन्थ की एक टिप्पणी मे प्रख्यात पाश्चात्य विद्वान् डलहोस के एक सिद्धान्त का अनुवाद प्रस्तुत किया तब द्विवेदी ने उस सिद्धान्त को अशुद्ध बतलाते हुए उस पर पुनर्विचार करने का अनुरोध उनसे किया था। सस्कृत वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान् होते हुए भी द्विवेदी जी ने हिन्दी भाषा और साहित्य के उत्कर्ष को भी अपने जीवन का लक्ष्य बनाया हुआ था। आपने जहाँ सस्कृत मे अनेक ग्रन्थो की रचना की थी वहाँ हिन्दी मे आपकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुई थी। आपने जहाँ सरल हिन्दी के उत्कृष्टतम नमूने के रूप मे 'रामकहानी' नामक पुस्तक लिखी थी वहाँ आपके द्वारा लिखित 'चलन कलन', 'चल-राशि कलन', 'समीकरण मीमासा', 'गणित का इतिहास', 'गणक तरगिणी', 'पचांग विचार' तथा 'ग्रहण करण' आदि गणित तथा ज्योतिष से सम्बन्धित ग्रन्थ विशेष महत्त्व रखते है। इनके अतिरिक्त हिन्दी-साहित्य के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो की टीकाएँ प्रस्तुत करने मे आपने अद्वितीय कार्य किय था। आपने जहाँ डॉ० ग्रियर्सन के साथ जायसी के 'पदमावत का सम्पादन किया था वहाँ आपके द्वारा स्वतन्त्र रूप से सम्पादित 'तुलसी सुधाकर', 'दादू दयाल शब्द' तथा 'विनय पत्रिका' आदि ग्रन्थ भी उल्लेख्य है। आपके द्वारा प्रस्तुत 'हिन्दी वैज्ञानिक कोश', 'हिन्दी भाषा का व्याकरण', 'भाष बोध' तथा 'राधाकृष्णदानलीला' नामक पुस्तके भी महत्त्व पूर्ण कही जाती है। आपने कुछ दिन तक 'मानस पत्रिका नामक एक पत्रिका का सम्पादन करके उसके द्वारा 'राम चरित मानस' के सम्बन्ध मे उठाई गई अनेक शकाओ व समाधान भी हिन्दी के पाठको के समक्ष प्रस्तुत किया था।

आप जहाँ अनेक वर्ष तक नागरी प्रचारिणी सभा तथ हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सम्मानित सदस्य रहे थे वा

काशी के हिन्दू कालेज की प्रबन्ध समिति और प्रान्तीय पाठ्य-पुस्तक-निर्धारण-समिति के भी सक्रिय सदस्य थे। आप जहाँ 'भाषा-परिष्कार' मे अत्यन्त उदार दृष्टिकोण रखते थे वहाँ 'समाज-सुधार' के क्षेत्र मे भी आपकी मान्यताएँ अत्यन्त क्रान्तिकारी थी। वर्ण-व्यवस्था को गुण-कर्म-स्वभावानुसार मानने के अतिरिक्त आपको हिन्दू धर्म के उन कट्टर-पन्थियो से भी समय-समय पर लोहा लेना पडता था, जो विदेश से लौटे हुए भारतीयो को जातिच्युत करने का जघन्य कार्य किया करते थे। एक बार 30 अगस्त सन् 1910 को आपकी अध्यक्षता मे काशी मे एक सार्वजनिक सभा आयोजित करके विलायत-गमन के कारण जाति-च्युत हुए लोगों को पुन जाति मे समाविष्ट करने की अपील भी की गई थी। आप 'नागरी प्रचारिणी सभा' के उपसभापति और उसकी ओर से प्रकाशित होने वाली 'पुस्तकमाला' के सम्पादक भी रहे थे।

आप जहाँ उच्चकोटि के गणितज्ञ, समालोचक, भाषा-शास्त्री और सुधारक थे वहाँ एक सहृदय कवि भी थे। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के साथ कभी-कभी विनोदवश आप ऐसी काव्य-रचनाएँ प्रस्तुत कर देते थे कि उन्हें देखकर आश्चर्य होता है। आपने सर अब्राहम ग्रियर्सन के साथ जायसी के महाकाव्य 'पद्मावत' की जो टीका 'सुधाकर चन्द्रिका' नाम मे की थी उसकी भूमिका मे आपकी ऐसी काव्य-प्रतिभा पूर्णत प्रस्फुटित हुई थी। आपने लिखा था .

लखि जननी की गोद बिच, मोद करत रघुराज।
होत मनोरथ सुफल सब, धनि रघुकुल सिरताज।।
जनकराज-तनया सहित, रतन सिंहासन आज।
राजत कोशलराज लखि, सुफल करहु सब काज।।
का दुसाधु, का साधुजन, का बिमान सम्मान।
लखहु सुधाकर चन्द्रिका, करत प्रकाश समान।।
मलिक मुहम्मद मतिलता, कविता कनक बितान।
जोरि-जोरि सुबरन बरन, धरत 'सुधाकर' सान।।

क्योंकि द्विवेदी जी राम के अनन्य भक्त थे अत इसमे भी आपने राम की महिमा ही वर्णित की है।

एक बार जब काशी मे राजघाट का निर्माण हो रहा था तब उसे देखकर द्विवेदी जी ने भारतेन्दु को जो दोहा लिखकर सुनाया था उसमे भी आपकी काव्य-प्रतिभा के दर्शन होते है। वह दोहा इस प्रकार है

राजघाट पर बनत पुल, जहँ कुलीन को ढेर।
आज गए कल देखि के, आजहि लौटे फेर।।

यह बडे ही आश्चर्य की बात है कि हिन्दी साहित्य के आदि-इतिहास-लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की पैनी दृष्टि से द्विवेदी जी-जैसा उद्भट विद्वान् कैसे ओझल रहा! आपने जहाँ अनेक छोटे-मोटे लोगो का गुण-कीर्तन करके अपनी लेखनी को धन्य बनाया है वहाँ द्विवेदी जी को उन्होने कैसे भुला दिया, जबकि वे भारतेन्दु के समकालीन ही थे।

द्विवेदी जी का निधन केवल 50 वर्ष की आयु में 28 नवम्बर सन् 1910 को काशी मे हुआ था।

गोस्वामी पण्डित सुधाधरदेव शर्मा

श्री गोस्वामी जी का जन्म 11 फरवरी सन् 1892 को निम्बार्क सम्प्रदाय मे दीक्षित कौशिक गोत्रीय गौड ब्राह्मण-परिवार मे पजाब के अमृतसर नगर मे हुआ था। बहुत पहले आपके पूर्वज जोधपुर राज्य के कंकरोद नामक गाँव से आकर मथुरा (उत्तर प्रदेश) मे बस गए थे। आपके पितामह पण्डित उदयप्रकाश आर्यसमाज के सस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के उन दिनो के सहपाठी थे जब वे प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द सरस्वती के श्रीचरणो मे बैठकर मथुरा मे पढा करते थे। आपके पितामह श्री उदय-प्रकाश जी ने 'यजुर्वेद' का हिन्दी-भाष्य भी किया था, जो प्रकाशित हो चुका है। आपके पिता पण्डित नन्दकिशोरदेव भी उच्चकोटि के विद्वान्, ज्योतिषी और व्याख्याता थे। उन्हें अपने इन सब गुणो के कारण 'महोपदेशक' और 'विद्यारत्न' की सम्मानोपाधियाँ प्रदान की गई थी। आपके चाचा श्री मुकुन्ददेव शर्मा भी अपने समय के व्याकरण के सुप्रसिद्ध विद्वान् थे। आपके पिता जी अमृतसर मे रहा करते थे और चाचा जी ने अपना स्थायी निवास मथुरा को ही बनाया हुआ था। चाचा जी के कोई सन्तान न होने के कारण उन्होने आपके बडे भाई को गोद लिया हुआ था। वे चाचा जी के पास मथुरा मे ही रहा करते थे। चाचा जी के देहावसान के उपरान्त जब आपके बड़े भाई का भी निधन हो गया तो

आपको मथुरा की सम्पत्ति आदि की देख-भाल के लिए वहाँ आना पड़ा था और अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक आप मथुरा मे ही रह रहे थे। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि आर्यसमाज की ओर से सन् 1975 मे आयोजित 'आर्यसमाज-स्थापना शताब्दी समारोह' के अवसर पर उपराष्ट्रपति श्री बी० डी० जत्ती ने आपका अभिनन्दन किया था।

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने विद्वान् पिता के निरीक्षण मे अमृतसर मे ही पहले उर्दू मे हुई थी, क्योकि उन दिनो पजाब मे स्कूलो मे हिन्दी के अध्ययन तथा अध्यापन का कोई विशेष प्रबन्ध नही था। हिन्दी तथा सस्कृत का अध्ययन आपने घर पर रहते हुए ही अपने पिता जी से किया था। प्राइमरी तक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप आगे की पढाई जारी रखने की दृष्टि मे वहाँ के 'हिन्दू सभा हाई स्कूल' मे प्रविष्ट हो गए, जहाँ पर आपने



अग्रेजी का ज्ञान प्राप्त किया था। इसी बीच बीमारी तथा अन्य पारिवारिक कारणो से सन् 1908 मे आपकी स्कूली शिक्षा मे व्यवधान पड़ गया। फलस्वरूप आपने घर पर रहते हुए ही सन् 1917 मे सस्कृत की 'प्राज्ञ' तथा आयुर्वेद की 'विशारद' परीक्षा सन् 1919 मे उत्तीर्ण की। इसके साथ-साथ आप सगीत तथा ज्योतिष की शिक्षा भी अपने ही व्यक्तिगत प्रयास से प्राप्त करते रहे। क्योंकि आपकी पारिवारिक आजीविका का मुख्य साधन पैतृक सम्पत्ति और मन्दिर की सेवकाई था, अत. आपने कही भी कोई नौकरी आदि नही की और घर पर रहते हुए आप सामाजिक कार्यों के साथ-साथ अपना स्वाध्याय भी बढ़ाते रहे।

उन दिनों आपका झुकाव काग्रेस के राष्ट्रीय स्वाधीनता-सग्राम की ओर हो गया था और लेखन की ओर भी आप प्रवृत्त हो गए थे। उन दिनो 13 अप्रैल सन् 1919 को अमृतसर के जालियाँ वाला बाग मे जो लोमहर्षक नर-हत्या-काण्ड हुआ था उसके आप प्रत्यक्षदर्शी और भुक्तभोगी थे। यह कुछ दैवी चमत्कार ही था कि उस गोली-काण्ड मे आप बाल-बाल बच गए थे। 'जालियाँ वाला बाग' के इस भीषण काण्ड ने आपके जीवन की दिशा ही बदल दी और आप काग्रेस की नरम नीति से असन्तुष्ट होकर उस कार्य से सर्वथा विमुख हो गए और आपने अपने शेष जीवन को पूर्णत. लेखन मे लगा लिया। राजनीति से हटकर आप धार्मिक तथा सामाजिक विषयो पर लेख तथा कविताएँ आदि लिखने लगे। उन दिनो आपकी लिखी हुई रचनाएँ लाहौर से प्रकाशित होने वाले 'धर्म' तथा 'बन्देमानरम्' आदि पत्रों के अतिरिक्त 'वेंकटेश्वर समाचार', 'भारत', 'सरस्वती', 'माधुरी', 'मतवाला', 'अर्जुन' तथा 'नवयुग' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी।

जब विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे आपकी रचनाएँ ससम्मान प्रकाशित होने लगी तब आपके पिता ने आपको 'वेश्याओ का इतिहास' लिखने की प्रेरणा दी। इस प्रेरणा ने आपको इस विषय पर अध्ययन तथा शोध करने की जो दिशा सुझाई थी उसीका सुपरिणाम आपका 'वर-वधू-विवेचन' नामक वह महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है, जिसका प्रकाशन सन् 1929 मे 'साहित्य सदन अमृतसर' ने किया था। इस ग्रन्थ के निर्माण मे आपने अपने समक्ष अपने पिता जी की उस चेतावनी को एक चुनौती के रूप मे स्वीकार किया था जिसमे उन्होने स्पष्ट रूप से यह कहा था—"तुम केवल इस विषय मे ही रुचि रखना, विषय से सम्बन्धित व्यक्तियो मे रुचि न लेना।" यद्यपि आपको अपने इस ग्रन्थ के लिए सामग्री सकलित करने मे अनेक मोहक प्रलोभनों से गुजरना पडा था और आपको इसके लिखने मे अनेक असुविधाएँ हुई थी, किन्तु फिर भी आपने अपने अनवरत अध्यवसाय तथा लगन से लगभग 400 ग्रन्थो का सागोपांग अध्ययन करके इस ग्रन्थ को प्रस्तुत किया था। आपने इस प्रसग मे वेद, पुराण, स्मृति, जातक तथा विभिन्न कोशो के अतिरिक्त अनेक धार्मिक ग्रन्थो का पारायण करने के साथ-साथ इस विषय मे विशेष खोज करने की दृष्टि से लाहौर, जालन्धर, कपूरथला, मेरठ, दिल्ली, सागर, आगरा, लखनऊ, बनारस तथा कलकत्ता आदि अनेक प्रमुख नगरो की कष्टप्रद यात्राएँ करके वहाँ की सभी ख्याति-प्राप्त वेश्याओं से भेंट करके

आपने ग्रन्थ से सम्बन्धित बहुत महत्त्वपूर्ण सामग्री एकत्र की थी।

आपने अपने इस ग्रन्थ को 14 रत्नों (अध्यायो) में विभाजित करके देश के इस अत्यन्त उपेक्षित वर्ग के विभिन्न पक्षों की जो सामग्री प्रस्तुत की है वह वास्तव में भारतीय वाड्मय को ही नही, प्रत्युत विश्व-साहित्य को भी आपकी अप्रतिम एव अनुपम देन है। आपने अपने इस ग्रन्थ की भूमिका मे विशेषत भारत और सामान्यत समस्त विश्व के सामाजिक क्षेत्रो मे वेश्याओं के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए जो विचार प्रकट किए थे वे वास्तव मे आज भी हमे उस वर्ग के प्रति किये जाने वाले हमारे उपेक्षापूर्ण व्यवहार के प्रति सजग करते दृष्टिगत होते है। आपने लिखा था—"प्राचीन भारत मे जाति से अधिक गुण का सम्मान होता था। उच्च पुरुष भी गुण सीखने के लिए निम्न-से-निम्न व्यक्ति के पास जा उसे गुरु बनाते थे। वात्स्यायन मुनि के समय मे प्रति माह नगर मे गोष्ठियाँ होती थी जहाँ राज-परिवार के तथा उच्च परिवारो के लोग कलावन्ती वेश्याओ को आमन्त्रित कर उनसे ललित कलाओ की (वाद्य, सगीत और नृत्य आदि) शिक्षा लेते थे। वेश्याओ को समाज मे उच्च स्थान प्राप्त था। वे शारीरिक सुख की नही मानसिक उन्नति का प्रतीक थी।" आपने इस ग्रन्थ मे सभी धर्मों और सम्प्रदायो के धर्म-शास्त्रो के आधार पर 'वेश्याओ के अस्तित्व की महत्ता' का जो प्रतिपादन किया है वह वास्तव मे अत्यन्त रोचक होने के साथ-साथ महत्त्वपूर्ण भी है। द्वितीय विश्व-युद्ध के दिनो मे जापान, जर्मनी तथा अमरीका आदि देशो ने वहाँ की लड़कियो को किस प्रकार बलात् वेश्या बनने को विवश किया जाता था, इसका रोमाचक वर्णन भी यथा प्रसग आपने इस ग्रन्थ मे किया है। इसके एक अध्याय मे आपने 'काशी वेश्या सभा' की अध्यक्षा हुस्नाबाई का वह भाषण भी प्रस्तुत किया है जो उसने अपनी सभा मे महात्मा गाधी जी की उपस्थिति मे दिया था। गांधी जी ने उनको गाँव-गाँव मे जाकर देश-भक्ति के गीत सुनाने का जो आदेश दिया था उसका उन्होंने अक्षरश पालन किया था। फलस्वरूप वे जेल गई और पुलिस की मार खाकर भी गाधी जी के आदेशो का पालन करती रही थी। उस समय काशी की विद्याधरी नामक वेश्या 87-88 वर्ष की आयु मे भी ब्रिटिश नौकरशाही की तनिक-सी भी परवाह न करके सार्वजनिक सभाओ मे प्राय जो भजन गाया करती थी उसकी कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है

चुन-चुन के फूल ले लो,
अरमान रह न जाए।
ये हिन्द का बगीचा,
गुलजार रह न जाए॥

इस सम्बन्ध मे यहाँ एक अत्यन्त रोचक तथा महत्त्वपूर्ण प्रसग उद्धृत कर देना भी अप्रासगिक न होगा। जिन दिनों हिन्दी के प्रतिष्ठित उपन्यासकार श्री अमृतलाल नागर अपने वेश्या-जीवन पर प्रकाश डालने वाले उपन्यास 'ये कोठेवालियाँ' के लेखन के लिए सामग्री जुटाने मे व्यस्त थे उन दिनो श्री मोहन राकेश के उपन्यास 'अन्धेरे बन्द कमरे' को पढते हुए उन्हे इस तथ्य का पता चला कि श्री राकेश के पिता श्री कर्मचन्द गुगलानी ने कोई 'वार-वधू-विवेचन' पुस्तक लिखी है और अनेक सामाजिक सस्थाओ से सम्बद्ध होने के कारण उस पर अपना नाम नही दिया है। श्री राकेश द्वारा दी गई सूचना के आधार पर नागर जी ने अपने उपन्यास मे इसकी सूचना अपने पाठको को दे दी कि 'वार-वधू विवेचन' नामक ग्रन्थ के लेखक मोहन राकेश के पिता श्री कर्मचन्द गुगलानी हैं। नागर जी के इस वक्तव्य को पढकर श्री कृष्णाचार्य ने एक पत्र लिखकर 'धर्मयुग' मे उसे गलत सिद्ध करते हुए यह बताया था कि इस ग्रन्थ के वास्तविक लेखक श्री सुधाधरदेव गोस्वामी है, जो भारत-विभाजन मे पूर्व अमृतसर मे ही स्थायी रूप से रहा करते थे और आजकल मथुरा मे रह रहे हैं। श्री कृष्णाचार्य को श्री गोस्वामीजी द्वारा यह सूचना भी प्राप्त हुई थी कि श्री राकेश के पिता श्री गुगलानी को उन्होंने इस ग्रन्थ के कुछ अश सुनाए थे और गोस्वामी जी ने एक 'धर्म गुरु' होने के कारण उस पर अपना नाम नही छपवाया था। यह पुस्तक उन्होंने अपने ही व्यय से छपवाई थी और कुछ प्रतियाँ अब भी उनके पास पडी हुई है। नागर जी को जब इस घटना का पता चला तो उन्होने मथुरा के प्रख्यात साहित्यकार डॉ० त्रिलोकीनाथ ब्रजबाल को लिखा कि वे गोस्वामी जी मे मिलकर इसके सम्बन्ध मे विस्तृत जानकारी प्राप्त करे। नागर जी की प्रेरणा पर डॉ० 'ब्रजबाल' ने गोस्वामी जी से मिलकर इस ग्रन्थ की रचना और श्री राकेश जी द्वारा दी गई भ्रामक सूचना के सम्बन्ध मे एक विस्तृत 'इण्टरव्यू'

लिया था, जो 3 जनवरी सन् 1982 के 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थ की समीक्षा भी श्री गोस्वामी जी के निधन के उपरान्त 2 मई सन् 1982 के 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में इस टिप्पणी के साथ प्रकाशित हुई है—"छपते-छपते हमारे पास समाचार आया है कि 'वार-वधू-विवेचन' के लेखक श्री सुधाधरदेव शर्मा का स्वर्गवास हो गया है।" उक्त इण्टरव्यू और इस समीक्षा के अध्ययन से श्री शर्मा के कृतित्व और वैदुष्य का स्पष्ट प्रमाण मिल जाता है।

आपका निधन 13 अप्रैल सन् 1982 को मथुरा में हुआ था।

पण्डित सुन्दरलाल शर्मा

श्री शर्मा जी का जन्म सन् 1881 में मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ क्षेत्र के रायपुर जनपद के राजिम नामक ऐतिहासिक स्थान में हुआ था। इस क्षेत्र के सामाजिक, साहित्यिक तथा राजनीतिक जागरण में आपका महत्त्वपूर्ण हाथ था। आपको 'छत्तीसगढ का क्रान्ति-दूत' कहा जाता था। जन-जागरण की दिशा में आपकी कितनी लगन थी इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण यही है कि आपने रायपुर जिले के अपने चन्दसूर, चचौद, घोंट, पोंड तथा कांकेर रियासत के 11 गाँवों को बेचकर अपने को पूर्णतः शोषित-पीडित जनों की सेवा में ही सलग्न कर लिया था। महात्मा गाधी के असहयोग-आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेकर आपने जेल की यातनाएँ भी सही थी।

छत्तीसगढ़ी भाषा और उसके साहित्य के निर्माण तथा उत्कर्ष की दिशा में भी आपका महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा था। यद्यपि छत्तीसगढी भाषा में साहित्य-रचना का प्रारम्भ 17 वीं शताब्दी से रतनपुर-निवासी गोपाल मिश्र के काव्यों से हो चुका था, किन्तु उसे विभिन्न विधाओं में लेखन करके समृद्ध करने की दृष्टि से पण्डित सुन्दरलाल की उल्लेखनीय भूमिका रही थी। आपने इस भाषा में कविता, कहानी, उपन्यास तथा नाटक आदि की समर्थ रचनाएँ करके छत्तीसगढ़ी साहित्य की जो श्री-वृद्धि की थी वह इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित की जाने योग्य है। आपको छत्तीसगढ़ी भाषा का प्रथम कवि कहा जाता है। आपकी कृतियों में 'छत्तीसगढ़ी दानलीला' खण्ड काव्य, 'राजिम प्रेम पीयूष', 'काव्यामृतवर्षिणी', 'अरुणा पचीसी', 'कंस वध' (खण्ड काव्य) 'विक्टोरिया वियोग', 'स्फुट पद्य संग्रह', 'श्री राजिम स्तोत्र माहात्म्य', 'स्वीकृति भजन संग्रह', 'रघुराज गुण कीर्तन', 'प्रलाप पदावली', 'ब्राह्मण गीतावली' (कविता), 'सीता परिणय', 'पार्वती परिणय', 'प्रह्लाद चरित्र', 'ध्रुव आख्यान', 'विक्रम शशिकला' (नाटक), 'सच्चा सरदार' (उपन्यास) तथा 'श्रीकृष्ण जन्म' (कहानी) आदि उल्लेखनीय है। आप हिन्दी के भी उच्चकोटि के कवि थे।

समाज-सेवा के क्षेत्र में आपकी जो अभूतपूर्व ख्याति थी उसीके कारण आपको 'गुरु' कहा जाता था। हरिजनों, आदिवासियों और पिछडी जातियों के लोगों के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने की दिशा में आपने बडा ही क्रान्तिकारी कार्य किया था। जब आप इस कार्य में जुटे हुए थे तब समाज के उच्च वर्ग के लोगों की ओर से आपको अनेक यातनाएँ भी सहनी पडी थी। आपको 'चमरा ब्राह्मण' की अपमानजनक संज्ञा से भी सम्बोधित किया गया था, किन्तु इससे आपके काम में कोई कमी नहीं आई थी। आपने अनेक पिछडे प्रदेशों में घूम-घूमकर उनके घरों में 'सत्यनारायण की कथा' तथा 'भागवत' के पाठ भी आयोजित कराए थे। 26 दिसम्बर सन् 1981 को आपकी जन्म-शताब्दी के पुनीत अवसर पर राजिम के 'राजीवलोचन महाविद्यालय' ने एक स्मारिका प्रकाशित करके आपकी प्रख्यात कृति 'छत्तीसगढी दानलीला' के महत्त्व पर अच्छा प्रकाश डाला है। इस स्मारिका का सम्पादन डॉ० चित्तरंजन कर ने किया है।

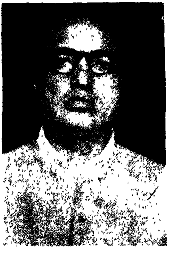


आपकी साहित्य तथा समाज के प्रति की गई उल्लेखनीय सेवाओं का सम्मान करने की दृष्टि से राजिम के नवापारा (गांधी चौक) नामक स्थान में आपकी एक भव्य प्रतिमा स्थापित की गई थी। छत्तीसगढ़ प्रदेश में हुए 'नहर सत्याग्रह' में श्री शर्मा जी ने ब्रिटिश नौकरशाही के घुटने टिकवा दिए थे। अपनी अद्वितीय कर्मठता, लगन तथा निर्भीकता के कारण आप अपने प्रदेश की जनता का हृदयहार हो गए थे। स्वदेशी-आन्दोलन के दिनों में आपने 'सन्मित्र मण्डली' नामक एक ऐसी संस्था की स्थापना भी की थी जिसके द्वारा स्वदेशी वस्तुओं की बिक्री का प्रबन्ध किया जाता था।

आपका देहावसान सन् 1940 में हुआ था।

डॉ० सुन्दरलाल शर्मा

डॉक्टर शर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ जनपद की बागपत तहसील के बड़का नामक ग्राम में 15 दिसम्बर सन् 1930 को हुआ था। आपके पिता पण्डित हरिसिंह बड़े निष्ठावान धार्मिक व्यक्ति थे। साहित्य-सर्जना और समाज-सेवा के भाव डॉक्टर शर्मा को अपने पिता जी से ही प्राप्त हुए थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा पहले उर्दू में हुई थी और बाद में आपने हिन्दी का अध्ययन किया था। अपने छात्र-जीवन से ही आप स्वाधीनता-संग्राम में भाग लेने लगे थे और इसके लिए आपने कारावास की नृशंस यन्त्रणाएँ भी भोगी थी। आपने सन् 1955 में अंग्रेजी विषय में एम० ए० तथा सन् 1961 में हिन्दी में एम० ए० किया था। अपने जीवन का प्रारम्भ आपने एक अध्यापक के रूप में किया था और सन् 1961 से लेकर सन् 1979 तक आप राजस्थान के अनेक महाविद्यालयों में हिन्दी विभाग के प्राध्यापक तथा अध्यक्ष रहे थे। अपने निधन के समय आप नीम का थाना के महाविद्यालय में हिन्दी विभागाध्यक्ष थे।



आप एक अध्ययनशील शिक्षक होने के साथ-साथ कुशल कवि और सहृदय समीक्षक भी थे। आपकी कविताओं में वीर, करुण और रौद्र रस का अद्भुत सम्मिश्रण हुआ करता था। 'बहादुरशाह जफर' के सम्बन्ध में लिखी गई आपकी एक लम्बी लयात्मक कविता श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध कर लिया करती थी। व्यंग्य-कविता लिखने में भी आप अत्यन्त सिद्धहस्त थे।

कहानी-लेखन में भी आपकी प्रतिभा अत्यन्त नवीन रूप में साहित्य-प्रेमियों के समक्ष प्रकट हुई थी। आपकी उल्लेखनीय कहानियों में 'गन्ने की पोरी' प्रमुख है। आपकी रचनाएँ 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'कल्पना', 'सप्त सिन्धु' और 'वीर अर्जुन' आदि अनेक प्रमुख पत्रों में प्रकाशित होती रहती थी।

सन् 1974 में आपने 'हिन्दी नाट्य-कला का उद्भव और विकास' विषय पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके राजस्थान विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। यह शोध प्रबन्ध सन् 1975 में सस्ता साहित्य भण्डार दिल्ली द्वारा प्रकाशित हो चुका है।

आपका आकस्मिक देहावसान 31 दिसम्बर सन् 1979 को महाविद्यालय-परिसर में हृदय गति अवरुद्ध हो जाने से हुआ था।

श्री सुब्बाराव गुप्ता

श्री सुब्बाराव का जन्म आन्ध्र प्रदेश के कृष्णा जिले के गुडिवाड तालुके के दोडपाडु नामक स्थान में सन् 1929 में हुआ था। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा से राष्ट्रभाषा विशारद तथा विशेष योग्यता परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने सन् 1945 में दोडपाडु तथा पेदयाल पर्रु

नामक केन्द्रों मे हिन्दी-प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया था। आप एक उत्कृष्ट हिन्दी-प्रचारक होने के साथ-साथ कुशल अभिनेता भी थे। आपने हिन्दी के कई नाटको का सफल मचन भी किया था। इसके कारण आपकी अपने क्षेत्र मे बडी ही ख्याति थी।



खेद का विषय है कि आपका सन् 1947 मे असामयिक देहावसान हो गया।

श्रीमती सुमित्रादेवी 'अमोला'

श्रीमती सुमित्रादेवी का जन्म मध्य प्रदेश के नन्दकठी नामक स्थान के एक मध्यवर्गीय परिवार मे सन् 1911 मे हुआ था। आप श्री सन्त श्यामचरण की द्वितीय पत्नी थी। आपसे उनका पुनर्विवाह हुआ था। आपकी सुयोग्य सन्तानो मे श्रीमती डॉ० विद्यावती मालविका का नाम हिन्दी मे विशेष विख्यात है। आप विदुषी महिला थी। आपके पति श्री श्यामचरण जी जब छत्तीसगढ के अछूतो मे फैली हुई कुरीतियो के निवारण के लिए वहाँ उपदेश दिया करते थे तब आप



उनके साथ प्राय. हारमोनियम बजाया करती थी। आपके पति प्रख्यात सामाजिक कार्यकर्त्ता और आशुकवि थे। उन्होने अपने स्वनिर्मित घर को सिहावा की आर्यसमाज को दान कर दिया था।

आपके पति ने बाद मे 'धम्म पद' के अध्ययन से प्रभावित होकर बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था और आप भी उनके साथ प्रचार-कार्य मे सहयोग दिया करती थी। आपके द्वारा रचित 'बौद्ध दीपिका' नामक काव्य-कृति प्रकाशित हो चुकी है। इसमे श्रीमती अमोला ने 100 कुण्डलियों मे बौद्ध धर्म के सिद्धान्तो का परिचय प्रस्तुत किया है। इस पुस्तिका का प्रकाशन आपकी सुपुत्री श्रीमती विद्यावती मालविका ने सन् 1960 मे आपके निधन के पश्चात् कराया था।

श्रीमती अमोला का निधन 16 जून सन् 1960 को रीवाँ मे हुआ था।

श्री सुरेशचन्द्र शर्मा हारीत

श्री हारीत का जन्म सन् 1935 मे मेरठ नगर के मोरीपडा नामक मोहल्ले मे हुआ था। आपका झुकाव राजनीति तथा धर्म की दिशा मे अधिक था। अच्छी-खासी अपनी सरकारी नौकरी को छोडकर आपने 'पत्रकार' बनने का सकल्प किया और सर्व प्रथम मेरठ मे ही 'साप्ताहिक सन्मार्ग' का सम्पादन किया। थोडे दिन बाद यह पत्र बन्द हो गया।



तदनन्तर आप काशी मे प्रकाशित होने वाले 'सन्मार्ग' दैनिक के सम्पादकीय विभाग मे चले गए। जब 'सन्मार्ग' का प्रकाशन कलकत्ता से प्रारम्भ हुआ तो आप वहाँ चले गए थे।

राजनीति तथा धर्म से सम्बन्धित आपके अनेक लेख उन दिनों 'सन्मार्ग' के अतिरिक्त हिन्दी के अनेक पत्रों में प्रकाशित हुआ करते थे।

आपका सम्बन्ध मेरठ की कई सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाओ से अत्यन्त निकट का था और विभिन्न प्रवृत्तियों मे आपका सक्रिय योगदान रहता था। आपने 'सन्मार्ग' में कार्य करते हुए करपात्रीजी का एक जीवन-चरित्र भी लिखा था, जिसे आपकी मृत्यु के उपरान्त आपकी धर्मपत्नी ने प्रकाशित किया है।

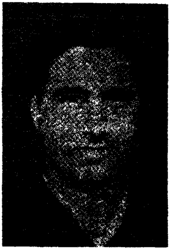
आपका निधन जून सन् 1963 मे हुआ था।

श्री सुरेश दुबे 'सरस'

श्री 'सरस' का जन्म बिहार प्रदेश के पटना जनपद के ग्राम बिलारी (वारसलीगज) मे 30 जनवरी सन् 1938 को हुआ था। इस सघर्षशील साहित्यकार ने अपने थोडे-से जीवन मे हिन्दी तथा मगही भाषाओ मे अनेक रचनाएँ प्रदान की थी। आप जहाँ एक सहृदय कवि के रूप मे उभर रहे थे वहाँ कुशल सयोजक के रूप मे भी आपने अपनी प्रतिभा का पूर्ण परिचय दिया था। 'नव सगम परिवार' की स्थापना करके आपने उसकी ओर से 'नवाकुर' शीर्षक से कई सहयोगी सकलन प्रकाशित करके अनेक नई प्रतिभाओ को हिन्दी के रचना-क्षेत्र म उतारा था। आप 'निराला परिषद् पटना' तथा 'नव प्रतिभा परिषद्' के भी अध्यक्ष रहे थे।

कविता के अतिरिक्त आप कहानी, उपन्यास, सगीत-रूपक तथा हास्य-व्यग्य आदि सब-कुछ लिखते थे। आपकी कविताएँ आकाशवाणी के पटना-केन्द्र से प्राय. प्रसारित होती रहती थी। आपने अपने स्वल्प-से जीवन मे अनेक पुरस्कार तथा सम्मान प्राप्त किये थे। सन् 1955 मे आपको जहाँ 'बिहार राज्य राष्ट्रीय उत्सव समिति' की ओर से बिहार के तत्कालीन राज्यपाल डॉ० जाकिरहुसेन द्वारा स्वर्ण-पदक प्राप्त हुआ था वहाँ सन् 1961 मे पटना के 'जीवन अध्ययन मडल' की ओर से भारत की तत्कालीन उपवित्तमन्त्रिणी श्रीमती तारकेश्वरी सिनहा द्वारा भी सम्मानित किया गया था।

आपकी अनेक प्रकाशित रचनाओ मे 'लाल कटोरा', 'भिखारी का बेटा', 'नानी की कहानी', 'राजा बेटा', 'खिलते फूल चटकती कलियाँ', 'मानिक सेन की शिकार-यात्रा', 'गुरु घटाल', 'भूँजे का मूल्य', 'गा ले गीत सुहाने', 'चना जोर गरम', 'बूझो तो जाने', 'कोपल', 'पुजारी काका', 'पीयूष', 'बैलून वाला', 'रानी बेटी' तथा 'शीतल छाँह' आदि प्रमुख है। इनके अतिरिक्त आपका 'कलम की रोटी' नामक काव्य-सकलन भी उल्लेखनीय है। आपकी 'निहोरा' नामक मगही रचना भी महत्त्वपूर्ण है।

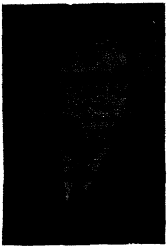


आपकी रुग्णावस्था मे चिकित्सार्थ 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' ने पाँच सौ रुपये की आर्थिक सहायता प्रदान की थी, किन्तु फिर भी आपका स्वल्पायु मे ही सन् 1968 मे असामयिक देहावसान हो गया।

डॉ० सुरेश सिनहा

श्री सिनहा का जन्म उत्तर प्रदेश के जौनपुर नामक नगर मे 18 अगस्त सन् 1940 को हुआ था। आपके पिता डॉ० अक्षयवरलाल श्रीवास्तव अत्यन्त साहित्यानुरागी सज्जन थे। अपने पिता के सस्कारो से प्रेरित होकर आप बाल्यावस्था से ही साहित्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा उनके निरीक्षण मे ही प्रयाग मे हुई थी। प्रारम्भ मे आप वहाँ के 'अग्रसेन इण्टर कालेज' मे पढते थे और बाद मे आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त डी० फिल० की उपाधि भी प्राप्त की थी।

अपनी शिक्षा की समाप्ति के उपरान्त आपने कुछ समय तक दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में अध्यापन किया और सन् 1964 में यहाँ से त्यागपत्र देकर आप प्रयाग चले गए थे और स्वतन्त्र रूप से लेखन-कार्य में संलग्न हो गए थे। आप एक अच्छे कहानीकार, उपन्यास-लेखक और समीक्षक थे। आपके 'वापसी' (1961), 'एक और अजनबी' (1963), तथा 'सुबह अन्धेरे पथ पर' (1965) नामक उपन्यासों के अतिरिक्त 'हिन्दी आलोचना का विकास' (1964) तथा 'हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास' (1965) नामक समीक्षा-ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं और 'सुबह होने तक' नामक कहानी-संकलन की पाण्डुलिपि तैयार है। आपके द्वारा लिखित 'नई कहानी की मूल संवेदना' नामक जिस समीक्षा-कृति का प्रकाशन सन् 1966 में हुआ था उसकी हिन्दी के समीक्षा-जगत् में बहुत चर्चा हुई थी।

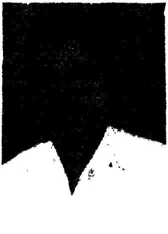


आपका निधन सन् 1973 में हुआ था।

श्री सोमदेव शर्मा 'सारस्वत'

श्री शर्माजी का जन्म सन् 1907 में उत्तर प्रदेश के अलीगढ जनपद के भवीगढ नामक ग्राम में हुआ था। आपकी शिक्षा अतरौली, खुर्जा तथा वाराणसी में हुई थी। आपने संस्कृत की शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण करने के साथ-साथ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में आयुर्वेद का विधिवत् अध्ययन करके वहाँ से ए० एम० एस० की उपाधि प्राप्त की थी। संस्कृत और आयुर्वेद के अध्ययन के दिनों से ही आपने अंग्रेजी का भी अच्छा ज्ञान अर्जित कर लिया था।

अपना विद्याध्ययन समाप्त करने के उपरान्त आप अनेक वर्ष तक फतहपुर, जयपुर, लाहौर, पीलीभीत तथा लखनऊ आदि अनेक स्थानों में आयुर्वेद का अध्यापन करते रहे थे। आप जहाँ लाहौर के सनातन धर्म आयुर्वेदिक कालेज में अध्यापक रहे थे वहाँ आपने लखनऊ के 'स्टेट आयुर्वेदिक कालेज' और पीलीभीत के 'ललित हरि आयुर्वेदिक कालेज' में भी अध्यापन-कार्य किया था। कुछ दिन तक आप रामपुर के आयुर्वेदिक कालेज के प्राचार्य भी रहे थे। वहाँ से सेवा-निवृत्त होने के उपरान्त आप पीलीभीत के 'ललित हरि कालेज' में रीडर के पद पर प्रतिष्ठित थे।



अपने अध्यापन के दिनों में आपने जहाँ आयुर्वेद के विभिन्न ग्रन्थों के हिन्दी-अनुवाद प्रस्तुत किए थे वहाँ आयुर्वेद-सम्बन्धी अनेक पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया था। आपके द्वारा सम्पादित पत्रिकाओं में 'अश्विनीकुमार' प्रमुख है। आपके द्वारा लिखित और अनूदित ग्रन्थों में 'आयुर्वेद प्रकाश', 'आयुर्वेदिक प्रश्नोत्तरावली' (दो भाग), 'रससिद्धि विमर्श', 'रस चिकित्सा विमर्श', 'चरक मुनि', 'अभिनव रस शास्त्र', 'आयुर्वेद का संक्षिप्त इतिहास', 'अभिनव पदार्थ विज्ञान', 'काव्य-मीमांसा', 'वैदिक आयुर्वेद' तथा 'रस कामधेनु' आदि प्रमुख हैं। इनमें से इण्डियन मेडिसिन बोर्ड यू० पी० ने आपको 'कामधेनु' पर 1500 रुपये और 'आयुर्वेद प्रकाश' आयुर्वेद महासम्मेलन लाहौर ने स्वर्ण पदक प्रदान किये थे। आपकी रचनाएँ देश के प्रमुख आयुर्वेद-सम्बन्धी पत्रों में ससम्मान प्रकाशित हुआ करती थीं। आप संस्कृत तथा हिन्दी के अच्छे कवि भी थे।

आपका निधन 1 अप्रैल सन् 1971 को पीलीभीत में हुआ था।

बख्शी हनुमानप्रसाद

श्री बख्शी का जन्म मध्यप्रदेश के रीवाँ नगर मे सन् 1852 मे हुआ था। आप रीवाँ-राज्य के सुप्रसिद्ध कवि श्री समनेस के वंशज और बख्शी कामताप्रसाद के पुत्र थे। रीवाँ-नरेश महाराज रघुराजसिंह के दरबारी कवियों मे आपका स्थान अन्यतम था। उर्दू, फारसी तथा हिन्दी तीनो भाषाओ पर आपका पूर्ण अधिकार था। शृंगार-वर्णन मे आप रीति-कालीन कवियो की परम्परा के संवाहक थे। आप रीवाँ-दरबार मे क्रमशः नायक, दीवान एव सेक्रेटरी कौसिल के पदो पर प्रतिष्ठित रहे थे।

आपकी रचनाओ मे छन्दो की विविधता के साथ विभिन्न रस तथा अलकारो का सम्यक् विवेचन दृष्टिगत होता है। आपकी 'काची कली कचनार-सी नेकु, उहै उलटे कुच कान्तिमयी है'-जैसी चमत्कारपूर्ण पक्तियों से आपके काव्य की विशिष्टता का सम्यक् परिचय मिलता है। आपका 'साहित्य सरोज' नामक ग्रन्थ आपकी रचना-क्षमता का अच्छा परिचय देता है।

आपका निधन सन् 1927 मे हुआ था।

श्री हरिचन्द पराशर

श्री पराशर का जन्म 7 मार्च सन् 1927 को हिमाचल प्रदेश के ऊना जनपद के धर्मशाला (महन्ता) नामक स्थान मे हुआ था। सन् 1945 मे आपने दौलतपुर चौक के डी० ए० वी० स्कूल से हाई स्कूल की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करके पजाब सरकार का 25 वर्ष का रिकार्ड तोडा था। उसी वर्ष आप लाहौर के समीपवर्ती ओकाडा नामक नगर की एक 'स्पिनिंग मिल' मे क्लर्क हो गए थे। सन् 1947 मे भारत-विभाजन के उपरान्त आप शिमला मे पजाब सरकार के 'मुद्रण एव लेखन-सामग्री' विभाग में लिपिक हो गए थे और इस कार्य में सलग्न रहते हुए ही आपने हिन्दी की 'भूषण' और 'प्रभाकर' परीक्षाएँ उत्तीर्ण करके अग्रेजी मे एफ० ए० और बी० ए० किया था। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि आपने पजाब विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) की परीक्षा भी प्रथम श्रेणी मे ही उत्तीर्ण की थी। बाद मे आपने 'स्वान्त सुखाय' पजाबी भाषा और दर्शन शास्त्र मे भी एम० ए० की परीक्षाएँ दी थी। इसी बीच आपने 'बी०एड्०' और 'साहित्य रत्न' की परीक्षाएँ भी अपनी कार्य-व्यस्तता मे उत्तीर्ण कर ली थी।

अपने जीवन-संघर्ष मे आपने निजी स्वाध्याय को बढ़ाते हुए शैक्षणिक योग्यता अर्जित करने के साथ-साथ 'साहित्यिक प्रतिभा' को भी विकसित कर लिया था। सन् 1956 मे जब आप पंजाब सरकार के 'भाषा विभाग' मे 'अनुसन्धान सहायक' होकर पटियाला गए तब आपने वहाँ रहते हुए 'एल-एल० बी०' की परीक्षा भी दे डाली थी। भाषा विभाग मे रहते हुए आपकी लेखन-प्रतिभा पूर्णत विकसित हुई और विभाग की ओर से प्रकाशित होने



वाले 'जन साहित्य' तथा 'सप्त-सिन्धु' पत्रो के अतिरिक्त आपकी रचनाएँ साधु आश्रम होशियारपुर की 'विश्व ज्योति' पत्रिका मे भी प्रकाशित होने लगी थी। इन पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित आपके 'पहाडी बोली' से सम्बन्धित खोजपूर्ण लेखो ने साहित्य-जगत् का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया था। आप अपनी कर्मठता और योग्यता से विभाग की उन्नति मे सर्वात्मना सलग्न रहते थे।

सन् 1966 मे जब 'हिमाचल प्रदेश' का अलग सगठन हुआ तब आप वहाँ के शिक्षा विभाग मे 'सहायक निदेशक' हो गए। इस पद पर रहते हुए भी आपने 'पहाड़ी भाषाओ के विकास' के अपने कार्य को बन्द नही किया। परिणामस्वरूप जब सन् 1968 मे हिमाचल मे 'राज्य भाषा सस्थान' की सस्थापना हुई तब आपने उसके माध्यम से भी पहाड़ी बोलियों के उत्कर्ष के लिए बहुत प्रयास किया। 'राज्य भाषा सस्थान' मे 'सहायक निदेशक' के रूप मे कार्य करते हुए आपके ही

अथक प्रयासों के परिणामस्वरूप हिमाचल मे 'भाषा, कला और संस्कृति अकादमी' स्थापित हुई और आप उसके प्रथम सचिव नियुक्त हुए। इस पद पर रहते हुए आपने अपनी अनोखी सूझ-बूझ तथा अटूट परिश्रम से हिमाचल की कला' साहित्य और संस्कृति के उत्कर्ष के लिए अनेक उपयोगी योजनाएँ प्रारम्भ की थी। हिमाचल मे जब 'लोक-नाट्य-आन्दोलन' को सुदृढ करने की बात चली तो उसमे भी आप पीछे नही रहे। कुछ दिन के लिए आप भाषा विभाग से शिक्षा विभाग मे जाकर एक 'हायर सेकेण्डरी स्कूल' के प्रधानाचार्य भी रहे थे।

आप जहाँ कुशल सगठक के रूप मे याद किये जाते है वहाँ भावना—प्रवण लेखक के रूप मे भी आपकी प्रतिभा अनन्य थी। आपकी 'भाव ज्योति' नामक कृति इसका ज्वलन्त साक्ष्य प्रस्तुत करती है। उसके 'आत्मकथ्य' की ये पक्तियाँ पराशर जी की अपूर्व प्रतिभा और गहन चिन्तना की द्योतक है·

"मिथक, कला, संस्कृति, साहित्य और पढने-लिखने की मानसिकता के सम्बन्ध मे मेरा चिन्तन कभी-कभी दार्शनिक गहराई मे उतर जाता है, और कभी-कभी लोक-व्यवहार की सतह पर सतही हो जाता है। मेरे स्वभाव की यह सीमा इन निबन्धित विचारो की सीमा है। दुरूहता और सरलता के मध्य मे किसी बिन्दु पर व्यक्ति की विलक्षणता छिपी रहती है।"

इस पुस्तक की रचना आपने अपने 'दिवगत पुत्र' की पुनीत स्मृति मे की थी। आपके पहाड़ी भाषा, कला, साहित्य और सस्कृति से सम्बन्धित अनेक लेख 'ज्योति कलश' नाम स प्रकाशित होने वाले थे कि आपका आकस्मिक निधन हो गया। आपकी स्मृति मे हिमाचल प्रदेश के 'भाषा एव सस्कृति विभाग' की त्रैमासिक पत्रिका 'हिम भारती' ने मार्च सन् 1980 मे अपना 'श्रद्धाजलि अक' भी प्रकाशित करके अपनी कृतज्ञता का परिचय दिया था।

आपका निधन 15 जनवरी सन् 1980 को हुआ था।

कवि श्री हरिदास बाबा

कवि हरिदास का जन्म सन् 1843 मे मध्यप्रदेश के आगर नामक स्थान मे हुआ था। आप वहाँ के नाना बाजार के श्री लक्ष्मीनारायण जी के मन्दिर के पुजारी थे। आप जितने अच्छे कवि और गायक थे उतने ही पखावज बजाने में दक्ष थे। आप स्वभाव से अत्यन्त फक्कड और अपनी धुन के पक्के साधु थे। आपके जीवन का मूल मन्त्र तुलसीदास जी का यह दोहा था :

तीन टूक कोपीन के, अरू भाजी बिन नोन।
रामकृपा मिलती रहे, इन्द्र बापुरो कौन॥

सन् 1857 की क्रान्ति का वर्णन भी आपने अपनी कविताओं मे किया था। जब आपकी अवस्था लगभग 48 या 49 वर्ष की थी तब आपको गलित कुष्ठ हो गया था।

आपका निधन सन् 1898 मे हुआ था।

श्री हरिनाम शर्मा

श्री शर्मा जी का जन्म उत्तर प्रदेश सीतापुर जनपद के बघैया नामक स्थान मे सन् 1891 मे हुआ था। आपको कविता लिखने की प्रेरणा अपने विद्या-गुरु श्री चन्द्रभाल चतुर्वेदी से प्राप्त हुई। आप लगभग 14-15 वर्ष तक वाराणसी मे रहे थे। वही पर आपने 'सरस विनोद' और 'काशी कल्पद्रुम' आदि दो छोटे-छोटे काव्य-ग्रन्थ भी लिखे थे। इनमे विभिन्न रसो की झाँकी देखने को मिलती है।

आप प्राय हास्य रस की रचनाओ के माध्यम से समाज मे प्रचलित कुरीतियो पर करारा व्यग्य किया करते थे। षोडशी ललनाओ को मोहित करने के लिए बूढे लोग खिजाब लगाकर अपना स्वरूप किस प्रकार निखारने का प्रयास करते है इसके सम्बन्ध मे आपका एक छन्द इस प्रकार है :

कभी खोलै नहि निसि मे टटिया,
खटिया परे मिट्टी खराब करै।
'हरिनाम' हिया मे भुला ही दिया,
कुलटों को बुलाया जनाब करै॥
हँसी-ठट्ठा मजाक सिताब करै,
समझाके हिसाब अजाब करै।
अरविन्द मुखीन के मोहिबे को,
बुढऊ धरे ऐना खिजाब करै॥

आपका निधन सन् 1974 मे हुआ था।

श्री हरिराम त्रिवेदी 'हरि'

श्री हरि जी का जन्म मध्यप्रदेश के दमोह नामक नगर में सन् 1873 में हुआ था। आप सनाढ्य ब्राह्मण थे और हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत तथा उर्दू के भी अच्छे ज्ञाता थे। ब्रजभाषा की काव्य-रचना करने में आप बहुत प्रवीण थे। आपकी कविताओं में ब्रजभाषा के रीतिकालीन कवियों की भाँति अलंकारप्रियता के दर्शन होते हैं। आपने ब्रजभाषा का एक महाकाव्य भी लिखा था।

आपका देहावसान सन् 1960 में हुआ था।

कवि हीरानाथ स्वामी

कवि हीरानाथ का जन्म राजस्थान की बाडमेर तहसील के बाण्ड नामक ग्राम में सन् 1875 में हुआ था। आप प्रमुखत. निर्गुण भक्ति-पद्धति की रचनाएँ ही किया करते थे। सन्त कबीर की सुधारवादी विचार-धारा का सम्मिश्रण आपकी प्राय सभी रचनाओं में दृष्टिगत होता है। आपने दोहों, सोरठों, चौपाइयों और भजनों की रचना की है। आपके 'गुरु महिमा' और 'गुरु उपदेश पचरत्न' नामक ग्रन्थों में आपकी ऐसी प्रतिभा के दर्शन होते हैं। आपकी इन दोनों कृतियों का प्रकाशन क्रमश सन् 1926-27 में हुआ था। आपकी तीसरी कृति 'भक्त चेतावनी' नाम से सन् 1956 में प्रकाशित हुई थी।

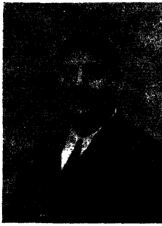
समाज-सुधार की भावना से आपने जो कुछ भी लिखा उसमें सामाजिक बुराइयों, कुरीतियों, अन्धविश्वासों और पाखण्डों पर आपने करारी चोट की है। मूर्ति-पूजा के विरोध में भी आपकी 'भरम अब कैसे भागे','पूजे लोग पाषाण'-जैसी पंक्तियाँ अत्यन्त प्रेरणादायक सिद्ध हुई हैं। बहुत-से ढोंगी एवं पाखण्डी साधुओं के द्वारा समाज को विपथगामी बनाने की दिशा में जो कार्य होते रहे हैं उन पर भी आपने जो कुठाराघात किया है, वह उल्लेखनीय है। आपकी यह पंक्तियाँ इसका सुपुष्ट प्रमाण है

अमल तम्बाकू गाँजा पीवै, नाम धराया साध।
धर्म गया धूल में, लागो बऊ न प्राध॥
किरिया करे पूतला बाँधे, माल मसखरा खावै।
मूऊँआँ पाछे मुक्ति बतावै, गुरु सिध दोजख जावै॥

आपकी सुधारवादी वाणी से अनेक लोगों ने प्रेरणा ग्रहण की थी। आपका निधन सन् 1958 में हुआ था।

रायबहादुर हीरालाल

आपका जन्म मध्य प्रदेश के जबलपुर अंचल के कटनी मुड़वारा नामक कस्बे के एक सम्पन्न परिवार में अक्तूबर सन् 1867 में हुआ था। आप हिन्दी के प्रख्यात कवि राय देवीप्रसाद पूर्ण के सहपाठी थे।



सन् 1888 में बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने शासकीय सेवा में अध्यापक के रूप में कार्य करना प्रारम्भ किया था और धीरे-धीरे अपने अनवरत अध्यवसाय तथा सतत संघर्ष से पदोन्नति करते हुए आप 'डिप्टी कमिश्नर' के पद तक पहुँच गए थे। अपने कर्म-संकुल व्यस्त जीवन में भी आपने स्वाध्याय नहीं छोड़ा था, जिसके कारण भारतीय पुरातत्त्व तथा इतिहास में आपकी गहरी रुचि हो गई थी।

साहित्य और इतिहास की गूढ़-से-गूढ़ जानकारी प्राप्त करने की अद्वितीय लालसा ने ही आपको समाज में एक बहुभाषाविद् पुरातत्त्ववेत्ता तथा अध्ययनशील लेखक के रूप में प्रतिष्ठित किया था। मध्यप्रदेश के गजेटियर बनाने के प्रसंग में आपने प्रान्त के अनेक प्रमुख अंचलों की साहित्यिक उपलब्धियों का जो विवरण एकत्रित किया था उसीका सुपरिणाम आपकी 'जबलपुर ज्योति', 'सागर सरोज', 'मण्डला मयूख' और 'दमोह दीपक' आदि कृतियाँ हैं। आपके द्वारा लिखित 'मध्यप्रदेशीय भौगोलिक नामार्थ परिचय'

तथा 'मध्यप्रदेश का इतिहास' नामक ग्रन्थ भी आपकी शोध-पूर्ण ऐतिहासिक दृष्टि का ज्वलन्त प्रमाण है। आपकी योग्यता से प्रभावित होकर ब्रिटिश सरकार ने आपको सन् 1910 मे 'रायबहादुर' की उपाधि प्रदान की थी।

आप एक प्रबुद्ध शिक्षा-शास्त्री, इतिहासवेत्ता और प्रशासक के रूप में जहाँ मध्यप्रदेश के शीर्षस्थ लोगों मे गिने जाते थे वहाँ आपकी गणना अखिल भारतीय इतिहासज्ञो मे भी होती थी। आप 'रायल एशियाटिक सोसाइटी', 'एशियाटिक सोसाइटी बंगाल' और 'हिस्टॉरिकल सोसाइटी पंजाब' के भी सक्रिय सदस्य रहे थे। आप अनेक वर्ष तक 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' के अध्यक्ष और 'नागपुर विश्वविद्यालय' की 'एकेडेमिक कौंसिल' के सदस्य भी रहे थे।

आपका देहावसान सन् 1934 मे हुआ था। आपकी स्मृति मे 'हैहय क्षत्रिय' का जो विशेषाक सन् 1936 में प्रकाशित हुआ था उसका सम्पादन प्रख्यात वैज्ञानिक डॉक्टर गोरखप्रसाद ने किया था।

श्री हीरालाल खन्ना

श्री खन्ना जी का जन्म मध्य प्रदेश के रीवाँ राज्य के एक सम्भ्रान्त परिवार में नवम्बर सन् 1889 मे हुआ था। वहाँ आपकी ननसाल थी। आपके पिता लाला ठाकुरदास की आय बिलकुल साधारण थी, अत आपकी शिक्षा-दीक्षा का सम्पूर्ण भार आपकी माता पर ही पड़ा था। वे लखनऊ मे कसीदा आदि काढकर अपना और अपने परिवार का भरण-पोषण किया करती थी। क्योंकि खन्ना जी बचपन से ही बहुत शरारती थे और अपनी माँ के द्वारा पेट काटकर जमा किये गए पैसो को स्कूल की फीस मे जमा न करके आप चौक मौहल्ले की चाट की दुकानो पर उड़ा दिया करते थे, इसलिए आपकी माता ने आपको आपके बडे भाई बाबू बालमुकुन्दलाल के पास पढने के लिए बहराइच भेज दिया, जहाँ पर वे सैटलमेण्ट क्लर्क थे। किन्तु वहाँ से मिडिल की परीक्षा देने के उपरान्त आपको आगे की पढाई जारी रखने के लिए श्री गगाप्रसाद जी के पास रीवाँ भेज दिया गया। रीवाँ मे जाकर भी जब आप परिवार की ओर से मिलने वाली रोज-रोज की झिड़कियाँ तथा डाट-फटकार से तग आ गए तो वहाँ से एक दिन चुपचाप बम्बई चले गए। बम्बई मे जाकर कुछ दिन कुलीगिरी करने के उपरान्त आप अस्वस्थ हो गए। आपके पिता जी के एक बम्बई निवासी मारवाड़ी सेठ को जब आपकी अस्वस्थता का पता चला तो वह आपको अपने घर ले गया और उसने आपको आपके बडे भाई के पास अम्बाला भेज दिया, जहाँ पर वे किसी सरकारी नौकरी में थे। अम्बाला पहुँचकर ही आपने वहाँ से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी।

जिन दिनों आपने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की थी उन्ही दिनो देश मे भीषण अकाल पड़ा था और महामना मदनमोहन मालवीय ने उसके लिए सहायता-कार्य करने का अभूतपूर्व सगठन किया था। खन्ना जी मालवीय जी के इस संगठन मे कार्य करने लगे। जब मालवीय जी को आपके परिवार की आर्थिक स्थिति का पता लगा तो उन्होने खन्ना जी के लिए एक छात्रवृत्ति का प्रबन्ध कर दिया, जिसके कारण खन्ना जी ने प्रयाग विश्वविद्यालय मे प्रवेश ले लिया और ट्यूशन आदि करके अपने अध्ययन को जारी रखा। ट्यूशन आदि के न मिलने पर आपने अखबार बेचने और जगह-जगह घूमकर उनके लिए समाचार एकत्र करने का भी कार्य किया था। अनेक आर्थिक कठिनाइयो मे भी आपने अपने अध्ययन को जारी रखा और बी० एस-सी० की परीक्षा उत्तीर्ण करके आप इलाहाबाद के सी० ए० बी० हाई स्कूल मे ही 80 रुपये मासिक पर अध्यापक हो गए। इस सस्था मे कार्य-रत रहते हुए ही आपने सन् 1912 मे शिक्षक प्रत्याशी के रूप मे



एम० एस-सी० की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली थी। इसी बीच आगरा के 'सैंट जान्स कालेज' मे जब गणित के प्रोफेसर का पद रिक्त हुआ तब आपने भी अपना प्रार्थना-पत्र वहाँ भेज दिया। जब आपको यह पता चला कि आपके एक

बेकार तथा अभावग्रस्त मित्र ने भी अपना प्रार्थना पत्र वहाँ भेजा है तो आपने तुरन्त उस कालेज के प्रिंसिपल के नाम भेजे गए अपने पत्र मे यह लिखा—"मैं अपने उक्त मित्र के पक्ष मे अपना प्रार्थना-पत्र वापिस लेता हूँ।" आपके इस पत्र का कालेज के प्रिंसिपल पर बहुत अच्छा प्रभाव पडा और उन्होंने खन्ना जी को लिखा—"आपके मित्र की नियुक्ति की कोई आशा नही है, अत. आपकी अनुमति पर वह स्थान आपको मिल सकता है।" फलस्वरूप सन् 1915 मे आप 'सैण्ट जान्स कालेज आगरा' मे चले गए और वहाँ पर 5 वर्ष तक रहे। जब सन् 1919 मे कानपुर में डी० ए० वी० कालेज की संस्थापना हुई तो आप वहाँ चले गए। जब सन् 1927 मे कानपुर का बी० एन० एस० डी० कालेज बना तब आप उसके प्रधानाचार्य नियुक्त हुए और अवकाश-प्राप्ति (सन् 1950) तक उसी पद पर बने रहे।

अपने इस दीर्घकालीन शिक्षक जीवन मे आपने शिक्षा-क्षेत्र मे जो लोकप्रियता अर्जित की थी वह सर्वथा स्पृहणीय एव अनुकरणीय कही जा सकती है। जब आप प्रयाग मे शिक्षक थे तब आपने वहाँ पर 'विज्ञान परिषद्' नामक जिस सस्था की स्थापना मे अपना अनन्य सहयोग दिया था कालान्तर मे उसके द्वारा हिन्दी मे विज्ञान-सम्बन्धी साहित्य-रचना का प्रचुर कार्य हुआ है। जहाँ आपने परिषद् के माध्यम से हिन्दी मे वैज्ञानिक साहित्य के निर्माण को पर्याप्त गति प्रदान की थी वहाँ आप स्वय भी हिन्दी मे इस प्रकार का साहित्य-सृजन करने मे अग्रणी रहे थे। आप अपनी विज्ञान-सम्बन्धी अनेक उपलब्धियो के कारण जहाँ सन् 1926 मे 'विज्ञान परिषद्' के आजीवन-सदस्य निर्वाचित हुए थे वहाँ सन् 1931 मे अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के झाँसी अधिवेशन के अवसर पर आयोजित 'विज्ञान परिषद्' के अध्यक्ष भी बनाए गए थे। सन् 1951 मे आप 'विज्ञान परिषद्' के सभापति चुने गए और आपके ही सत्प्रयास से परिषद् के अपने भवन-निर्माण के लिए अर्थ-सग्रह किया गया था और सन् 1956 मे आपने भारत के प्रधान मन्त्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू के कर कमलों से परिषद् के निजी भवन की आधार-शिला रखवाई थी। आप जहाँ नागरी प्रचारिणी सभा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन और हिन्दुस्तानी एकेडेमी के कर्मठ एव उत्साही आजीवन सदस्य रहे थे वहाँ देश की अनेक समाज-सेवी संस्थाओ से भी आपका निकट का सम्पर्क रहा था। आपकी शिक्षा तथा समाज के क्षेत्र मे की गई अनेक लोकोपयोगी सेवाओं को दृष्टि मे रखकर सन् 1950 मे कानपुर मे आपका बड़ा भावभीना अभिनन्दन किया गया था। इस अवसर पर आपको एक अभिनन्दन ग्रन्थ भी समर्पित किया गया था।

आपमें हिन्दी-प्रेम की भावना तब उत्पन्न हुई थी जब आप सम्मेलन की स्थापना से पूर्व सन् 1908-09 मे 'हिन्दी प्रचारिणी सभा' के उत्साही सदस्य रहे थे। इसी प्रकार आप हिन्दी के पुरानी पीढ़ी के सुप्रसिद्ध लेखक श्री बालकृष्ण भट्ट द्वारा सस्थापित एक मनोरंजक सस्था 'खर मण्डली' के भी उत्साही सदस्य रहे थे। सन् 1912 मे जब हिन्दी-प्रेम की हवा देश मे जोरो से चली थी तब डॉ० गगानाथ झा की प्रेरणा से 'विज्ञान परिषद्' की स्थापना की जो योजना बनी थी उसमे भी आप प्रमुख सहयोगी रहे थे। 'विज्ञान परिषद्' की ओर से 'विज्ञान' नामक हिन्दी मासिक पत्र के प्रकाशन मे भी आपका बहुत बड़ा हाथ था। जिन दिनों आप आगरा मे कार्य-रत थे तब वहाँ की 'नागरी प्रचारिणी सभा' के तत्का-लीन प्रधानमन्त्री श्री जसपतराय कपूर को आपने बहुत सहयोग दिया था। कानपुर की 'नागरी प्रचारिणी सभा' के कार्य को आगे बढ़ाने मे अपना सक्रिय दिशा-निर्देशन देने के साथ-साथ आप अदालतो मे हिन्दी के प्रचलन के कार्य में भी बढ-चढकर भाग लिया करते थे। आपने अनेक वर्ष तक 'विज्ञान परिषद्' के 'विज्ञान' नामक जिस पत्र का सम्पादन किया था, आपके निधन के उपरान्त फरवरी सन् 1966 मे उसका 'खन्ना स्मृति अक' नामक एक विशेषांक भी प्रकाशित हुआ था।

आपका देहावसान 29 सितम्बर सन् 1965 को कानपुर मे हुआ था।

श्रीमती हेमन्तकुमारी देवी भट्टाचार्य

आपका जन्म सन् 1886 मे लखनऊ (उत्तर प्रदेश) मे हुआ था। आपके पिता श्री उमेशचन्द्र चौधुरी चातरा (बगाल) के निवासी थे और लखनऊ के आडिट आफिस मे कार्य करते थे। हेमन्तकुमारी जी की शिक्षा-दीक्षा लखनऊ के 'बालिका

विद्यालय' में हुई थी। आपका विवाह जामग्राम (बंगाल) निवासी पण्डित मार्कण्डेयप्रसाद भट्टाचार्य के साथ हुआ था। आपके पति बड़े स्वाध्याय-प्रेमी और विद्वान् व्यक्ति थे। उनके परिवार में एक अत्यन्त समृद्ध पुस्तकालय था, जिसके कारण हेमन्तकुमारी जी का स्वाध्याय दिनानुदिन बढ़ता ही गया था। उत्तर प्रदेश में जन्म लेने के कारण आपने हिन्दी को मातृभाषा के समान सीखकर उसमें लेखन का भी अभ्यास कर लिया था। गोस्वामी तुलसीदास के 'रामचरितमानस' में आपकी विशेष रुचि थी और प्राय उसका पारायण करती रहती थी।



आपके पति बंगला-भाषा के अच्छे लेखक थे और उन्होंने 'हिन्दू धर्म भास्कर' नाम से बंगला में जो एक महत्त्व-पूर्ण ग्रन्थ लिखा था उसका हिन्दी अनुवाद आपने ही किया था। आपको अपने एक हिन्दी निबन्ध के कारण 500 रुपये का पुरस्कार प्राप्त हुआ था। यह निबन्ध आपने सन् 1911 में प्रयाग में सम्पन्न हुई एक प्रदर्शनी के अवसर पर लिखा था और इस पुरस्कार की घोषणा खैरागढ़ की महारानी श्रीमती शरदकुँवरि जी ने की थी। इस अवसर पर अनेक प्रतियोगियों ने अपने निबन्ध भेजे थे, किन्तु आपका निबन्ध ही सर्वोत्कृष्ट समझा गया था। आपकी इस अभूतपूर्व सफलता पर जहाँ हिन्दी तथा उर्दू के अनेक पत्रों ने आपको बधाई दी थी वहाँ प्रयाग के 'पायोनियर'-जैसे अंग्रेजी पत्र ने भी अपना सन्तोष प्रकट किया था।

इसके उपरान्त एक बार सिकन्दराबाद (बुलन्दशहर) के बाबू हरज्ञानसिंह ने 'आदर्श पुरुष रामचन्द्र' विषय पर उत्तम निबन्ध लिखने के लिए 50 रुपये की जो घोषणा की थी उस समय भी आपका निबन्ध ही पुरस्कृत हुआ था। इसके उपरान्त आपने 'हिन्दू महिलाओं का कर्तव्य' शीर्षक निबन्ध लिखकर भी 500 रुपये का एक पुरस्कार और जीता था। आपके द्वारा हिन्दी में लिखित 'स्त्री कर्तव्य', 'युक्त प्रदेश का व्यापार' तथा 'वैज्ञानिक कृषि' नामक पुस्तकें उल्लेखनीय हैं। आपने हिन्दी में एक 'विश्वकोश' तैयार करने का भी विचार किया था। खेद का विषय है कि आप अपने इस संकल्प को पूर्ण नहीं कर सकीं।

आपका निधन सन् 1940 में हुआ था।

परिशिष्ट-1

सन्दर्भ-सामग्री

पुस्तकें

अक्षर पुरुष—केसरी
अजमेर वार्षिकी एवं व्यक्ति परिचय—घीसूलाल पाण्ड्या
अधूरी आत्मकथा—डॉ० नरेन्द्रदेव शास्त्री
अनुभूति के स्वर—सम्पादक : डॉ० हिम्मतसिंह जैन
अन्तर्राष्ट्रीय ज्ञान कोष—रामनारायण यादवेन्दु
अमरकीर्ति श्री चन्द्रधर जौहरी—डॉ० हरिहरनाथ टण्डन
अमरीका-प्रवास की मेरी अद्भुत कहानी—स्वामी सत्यदेव परिव्राजक
असम प्रान्तीय हिन्दी साहित्य—डॉ० कृष्णनारायण प्रसाद 'मागध'
आगर का इतिहास—डॉ० गणेशदत्त शर्मा 'इन्द्र'
आगरा एक सांस्कृतिक परिचय—विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
आगरा दर्शन—विशन कपूर
आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र अभिनन्दन ग्रन्थ—डॉ० विजयेन्द्र स्नातक
आचार्य श्री किशोरीदास वाजपेयी—सम्पादक : श्री रामधारीसिंह 'दिनकर' तथा श्री हजारी प्रसाद द्विवेदी
आज का जयपुर
आज के लोकप्रिय कवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'—भवानीप्रसाद मिश्र
आज के हिन्दी-सेवी—अद्भुत शास्त्री
आधुनिक जैन कवि—रमारानी जैन
आधुनिक युग की हिन्दी-लेखिकाएँ—डॉ० उमेश माथुर
आधुनिक हिन्दी कवयित्रियों के प्रेम गीत—क्षेमचन्द्र 'सुमन'
आधुनिक हिन्दी साहित्य—डॉ० श्रीकृष्णलाल
आधुनिक हिन्दी साहित्य—स० ही० वात्स्यायन
आधुनिक हिन्दी साहित्य—डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय
आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास—कृष्णशंकर शुक्ल
आधुनिक हिन्दी साहित्य को अहिन्दी लेखकों का योगदान—डॉ० विलास गुप्ते
आनन्द-लहरी—चन्द्रबल शर्मा 'अरुण'
आन्ध्र के हिन्दी कवि—डॉ० राजकिशोर पाण्डेय
आर्य क्रान्तिकारी—बनारसीसिंह एम० ए०
आर्यभाषा पुस्तकालय सूची-पत्र (प्रथम खण्ड)—नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
आर्यसमाज का इतिहास—प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति
आर्यसमाज के पत्र और पत्रकार—डॉ० भवानीलाल भारतीय
आर्यसमाज के वेद-सेवक विद्वान्—डॉ० भवानीलाल भारतीय
आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी—डॉ० भारतीय
आर्यसमाज के सौ रत्न—अशोक कौशिक
आर्यसमाज साहित्य सर्वस्व—गौरीशंकरसिंह, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली
आस्था के शिखर—सम्पादक : आनन्द मिश्र
इतिहास आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश—शिवदयालु
उदय और विकास—रामचरण हयारण 'मित्र'
उदयनी—सिंहल साहित्य निकेतन, भोपाल
औरंगाबाद की हिन्दी-सन्त-वाणी—डॉ० भालचन्द्र राव तैलंग
कंकड़-पत्थर—चन्द्रकुंवर बर्त्वाल
कच्छना भक्तिमान कवियो—दुलेराय काराणी

कथा-चक्र—शिवचन्द्र नागर
कर्नाटक मे हिन्दी-प्रचार—कर्नाटक प्रान्तीय हिन्दी प्रचार सभा, धारवाड
कल की बात—सरस्वती प्रेस, बनारस
काकोरी के दिलजले—रामदुलारे त्रिवेदी
काव्य-कलश—हिन्दी साहित्य मण्डल, कानपुर
कुछ आत्मकथाएँ— महावीरप्रसाद अग्रवाल
कुछ खरी-खरी—पं० देवीदत्त शुक्ल
कुमाऊँनी भाषा और उसका साहित्य—त्रिलोचन पाण्डे
केरल क्षेत्रीय हिन्दी साहित्य का इतिहास—सम्पादक : डॉ० भीमसेन निर्मल
केशव पाठक की काव्य-कृतियाँ—साहित्य सघ, जबलपुर
केरली वैभव—डॉ० एन० पी० कुट्टन पिल्लै
खडी बोली का इतिहास—ब्रजरत्नदास अग्रवाल
खेतडी का इतिहास—प० झाबरमल्ल शर्मा
खेतडी नरेश और विवेकानन्द—प० झाबरमल्ल शर्मा
गढवाल की दिवगत विभूतियाँ—भक्तदर्शन
गढवाली भाषा और उसका साहित्य—हरिदत्त भट्ट 'शैलेश'
गढवाली साहित्यकार—विनयकुमार डबराल
गाथा सवत्सरी—सुतीक्ष्ण मुनि
गुजरात की हिन्दी-सेवा—डॉ० अम्बाशकर नागर
गुजरात के सन्तो की हिन्दी वाणी—सम्पादक अम्बाशकर नागर
गुजराती सन्तो की हिन्दी वाणी—सम्पादक : गोवर्धन शर्मा
गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर का 50 वर्षीय इतिहास—सम्पादक : प० नरदेव शास्त्री
गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर का इतिहास—महाविद्यालय सभा ज्वालापुर
गेहरो फूल गुलाब रो—डॉ० महेन्द्र भानमावत
चतुर्दश भाषा निबन्धावली—बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्
चम्पारन, साहित्य और साहित्यकार—रमेशचन्द्र झा
चारण साहित्य का इतिहास—मोहनलाल जिज्ञासु
चारु चरितावली— वेंकटेशनारायण तिवारी
चौ० मुल्कीराम स्मृति-ग्रन्थ—स० : ताराचन्द पाल 'बेकल'
छत्तीसगढ़ का साहित्य और उसके साहित्यकार—डॉ० गंगाप्रसाद बरसैयाँ
छत्तीसगढ़ के रत्न—हरि ठाकुर
छत्तीसगढ़ के साहित्यकार—डॉ० ब्रजभूषण
छत्तीसगढ के स्वातन्त्र्य-सग्राम के सेनानियों का परिचय (भाग-1)—कमलाकान्त शर्मा
छत्तीसगढ़ी दानलीला एक समीक्षा—सम्पादक : डॉ० चित्तरंजन कर
छत्तीसगढी लोकजीवन और लोक-साहित्य का आधार—डॉ० शकुन्तला वर्मा
छत्तीसगढी साहित्य अरु साहित्यकार—विनयकुमार पाठक
छत्तीसगढी साहित्य का ऐतिहासिक अध्ययन—नन्दकिशोर तिवारी
जयन्ती स्मारक ग्रन्थ—पुस्तक भण्डार, पटना
जयप्रकाशनारायण अभिनन्दन ग्रन्थ—सम्पादक : डॉ० के० एल० शर्मा
जय विनोद—महेशचन्द्र बी० ए०
जागृति—हिन्दी साहित्य परिषद्, हापुड
जानकी जीवन—प० राजाराम शुक्ल 'राष्ट्रीय आत्मा'
जिन्होंने जीना जाना—जगदीशचन्द्र माथुर
जीवन के अनुभव—बाबू पूर्णचन्द्र एडवोकेट
जीवन दर्शन (ब्रह्मलीन परम सन्त चतुर्भुजसहाय जी)—प० मिहीलाल
जीवन-परिचय—पं० बलदेवसहाय शर्मा
जीवन सघर्ष (महाशय कृष्ण की जीवनी)—सत्यदेव विद्यालंकार
जीवन-साथी पुस्तके—राजीव सोनी
जीवन-स्मृतियाँ—क्षेमचन्द्र 'सुमन'
जैन जागरण के अग्रदूत—आयोध्याप्रसाद गोयलीय
जैसा हमने देखा—क्षेमचन्द्र 'सुमन'
जोधपुर पुष्करणा ब्राह्मण सन्त महात्माओ का सचित्र जीवन-चरित्र—मूलाजी पुरुषोत्तम महाराज
जौनपुर का इतिहास—त्रिपुरारि भास्कर
ज्ञान और भक्ति (दिनेश स्मृति-ग्रन्थ)—डॉ० रघुवीरशरण
टीकमगढ दर्शन (मगल प्रभात)—महेन्द्र द्विवेदी
ठाकुर प्यारेलाल सिह—हरि ठाकुर
डॉ० दशरथ शर्मा लेख-सग्रह—सम्पादक : डॉ० मनोहर शर्मा, डॉ० दिवाकर शर्मा
डॉ० प्रेमनारायण टण्डन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व—सम्पादक : तेजनारायण टण्डन

डॉ० रामजीवन त्रिपाठी स्मृति-ग्रन्थ—सम्पादक : देवदत्त शास्त्री
तरकस—प्रगतिशील लेखक संघ, कानपुर
ताज की छाया में—शिवदानसिंह चौहान
तार सप्तक—अज्ञेय
तारिका लेखक पत्रकार निदेशिका—कहानी लेखन महाविद्यालय, अम्बाला
तूर्य के नाद . शख का स्वर—ऋषि जैमिनी कौशिक बरुआ
दक्षिण भारत के हिन्दी प्रचार आन्दोलन का समीक्षात्मक इतिहास—श्री के० पी० केशवन् नायर
दम्पतिद्युतिभूषण—कविवर जानीबिहारीलाल
दम तस्वीरें—जगदीशचन्द्र माथुर
दहकते स्वर—मनोहरलाल 'श्रीमन्', मुखवीर विश्वकर्मा
दिल की धड़कन कलम की थिरकन—रूपनारायण ओझा
दिल्ली जैन डायरेक्टरी—जैन सभा, नई दिल्ली
देवप्रकाश अमृतसरी अभिनन्दन ग्रन्थ—सम्पादक . महाशय पिण्डीदास ज्ञानी
देश के इतिहास में मारवाड़ी जाति का स्थान—बालचन्द मोदी
देशभक्त कुंवर चाँदकरण शारदा—डॉ० भवानीलाल भारतीय
दो आध्यात्मिक महाविभूतियो के प्रेरक प्रसग—श्रीकृष्ण जन्मस्थान-सेवा सघ, कटरा केशवदेव, मथुरा
नक्षत्र—ब्योहार राजेन्द्रसिह
नया साहित्य—एक दृष्टि—प्रकाशचन्द्र गुप्त
नये-पुराने झरोखे—डॉ० हरवशराय बच्चन
नये भारत के निर्माता—क्षेमचन्द्र 'सुमन'
नवीन-दर्शन—केशवदेव उपाध्याय
नारायण अभिनन्दन ग्रन्थ—सम्पादक महेन्द्रप्रताप शास्त्री, धर्मदेव विद्यावाचस्पति, विश्वम्भरसहाय 'प्रेमी'
नारी तेरे रूप अनेक—क्षेमचन्द्र 'सुमन'
निकुज—रामकिशोर शर्मा 'किशोर'
नेशनल बिब्लियोग्राफी आफ इण्डियन लिटरेचर (वॉ०-2)
पचाशिका—सम्पादक : शकरशरणलाल बत्ता
पजाब का हिन्दी साहित्य—सत्यपाल गुप्त
पजाब—जीवन और साहित्य—मनसाराम शर्मा 'चंचल'
पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन रजत जयन्ती स्मृति-ग्रन्थ (अप्रैल 1958)—सम्पादक : भीमसेन विद्यालंकार
प० जयचन्द्र विद्यालकार—भाषाविभाग पंजाब, पटियाला
पं० झाबरमल्ल शर्मा अभिनन्दन ग्रन्थ—काशीनाथ शर्मा
पण्डित दीनदयालु शर्मा स्मृति-ग्रन्थ
प० नरेन्द्र हैदराबाद के लौह पुरुष—नरेन्द्र अभिनन्दन समिति, हैदराबाद (1975)
प० बच्चूलाल जी सूर का चरितामृत—प० राजाराम शर्मा
प० बालकृष्ण भट्ट की जीवनी—लक्ष्मीकान्त भट्ट
पत्रकार की आत्मकथा—मूलचन्द्र अग्रवाल
पत्रकारिता के अनुभव—मुकुटबिहारी वर्मा
पत्रकार प्रेमचन्द और हम—डॉ० रत्नाकर पाण्डेय
पर्वतीय साहित्यकार कोश—मोहनलाल बाबुलकर
पीलीभीत का साहित्यिक इतिहास—गणेशशकर शुक्ल 'बन्धु'
पुण्य-स्मरण—हरिभाऊ उपाध्याय
पुरानी स्मृतियाँ और नये स्केच—प्रकाशचन्द्र गुप्त
पुरुषोत्तम कवि के हिन्दुस्तानी नाटक—श्रीमती के० शारदा, एम० ए०
पूर्णा—विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन, नागपुर
पूर्वाचला—डॉ० विश्वनाथप्रसाद
प्रकाशचन्द्र कविरत्न अभिनन्दन ग्रन्थ—सदाविजय आर्य
प्रगति और परम्परा—डॉ० रामविलास शर्मा
प्रतिनिधि हास्य कहानियाँ—मनमोहन 'सरल', श्रीकृष्ण
प्रारम्भ—जगदीश चतुर्वेदी
प्रोग्रेसिव जैन्स आफ इण्डिया—सतीशकुमार जैन
फाइल-प्रोफाइल—पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'
फिजी मे भारतीय प्रतिज्ञाबद्ध कुलीप्रथा—मी०एफ०एण्ड्रयूज
फिजी मे मेरे 21 वर्ष—प०तोताराम सनाढ्य
फीरोजाबाद परिचय—गणेशलाल शर्मा 'प्राणेश'
फूल-पत्ती—मदनगोपाल सिहल
बडा बाजार पुस्तकालय के कार्यकर्ता—राधाकृष्ण नेवटिया
बम्बई के हिन्दी कवि—दाऊदत्त उपाध्याय, मधुकर गौड
बसत बहार—पुष्पेन्दु जैन
बान्धव राज्य के विस्मृत कवि—लाल भानुसिंह बाघेल
बालमुकुन्द गुप्त निबन्धावली } बनारसीदास चतुर्वेदी
बालमुकुन्द गुप्त स्मारक ग्रन्थ } झाबरमल्ल शर्मा
बाल साहित्य समीक्षा (अनेक अंक)—सम्पादक डॉ० राष्ट्रबन्धु, रामकृष्ण नगर, कानपुर

बिसवाँ के कवि—डॉ० गणेशदत्त सारस्वत
बिहँसते फूल . विकसती कलियाँ—सीताराम अग्रवाल, मदन शलभ, प्रेम 'निर्मल', प्रेम 'महेश'
बिहार की साहित्यिक प्रगति—बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पटना
बिहार की साहित्यिक प्रगति (बिहार हि० सा० सम्मेलन के 26वें से 33वें अधिवेशन तक के अध्यक्षो के भाषण)—बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पटना
बीती यादें—परिपूर्णानन्द वर्मा
बीसवी सदी दो दशक—डॉ० कुसुम अग्रवाल
बीसवी सदी के सिन्धी कवियों का हिन्दी मे योगदान—डॉ० दयाल आशा
बुन्देली काव्य परम्परा—डॉ० बलभद्र तिवारी
बुन्देलखण्ड के कवि (पूर्वार्द्ध)—प० कृष्णदास
बुन्देली का फाग साहित्य—श्यामसुन्दर बादल
बुन्देली काव्य परम्परा (द्वितीय खण्ड-आधुनिक काव्य)—डॉ० बलभद्र तिवारी
बुन्देली लोक-काव्य भाग-1—डॉ० बलभद्र तिवारी
बृहद् हिन्दी ग्रन्थ-सूची (दो भाग)—यशपाल महाजन
बेतवा वाणी—सम्पादक . भगवानदास माहौर, डॉ० भगवानदास गुप्त, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी
बेताब चरित—श्री नारायणप्रसाद 'बेताव'
भक्ति ज्योति—शिवदत्त शुक्ल
भाई परमानन्द और उनका युग—प्रो० धर्मवीर एम० ए०
भारत का मुक्ति संघर्ष और रूसी क्रान्ति (1922-1929)—विश्वमित्र उपाध्याय
भारत का मुक्ति सघर्ष और रूसी क्रान्ति (1930-1942)—विश्वमित्र उपाध्याय
भारत के महापुरुष दादा साधु वास्वानी—डॉ० दयाल आशा
भारत मे देशी राज्य—सुखसम्पत्तिराय भडारी
भारतीय नेताओं की हिन्दी-सेवा—डॉ० ज्ञानवती दरबार
भारतीय लेखक कोश—रामगोपाल परदेशी
भारतेन्दु की खडी बोली का भाषा-विश्लेषण—डॉ० उषा माथुर
भारतेन्दु मण्डल—ब्रजरत्नदास अग्रवाल
मंडला जिला का साहित्यिक विकास—नरेशकुमार विनोद
मदनकोष अर्थात् जीवन चरित्र स्तोम—मदनलाल तिवारी
मध्यप्रदेश के आधुनिक साहित्यकार—डॉ० ब्रजभूषणसिंह 'आदर्श'
मध्यप्रदेश के अहिन्दी भाषियो की हिन्दी-सेवा—डॉ० ब्रजभूषणसिह 'आदर्श'
मध्यप्रदेश के मध्यकालीन साहित्यकार—डॉ० ब्रजभूषण-सिह 'आदर्श'
मनोरजक सस्मरण—श्रीनारायण चतुर्वेदी
ममता भरी यादे—बालकृष्ण बलदुआ
मयराष्ट्र मानस—डॉ० कृष्णचन्द्र शर्मा
मराठी सन्तो की हिन्दी को देन—डॉ० विनयमोहन शर्मा
महाकवि अनीस और उनका काव्य—श्री रामानुजलाल श्रीवास्तव
महाकौशल के साहित्यकार—डॉ० ब्रजभूषणसिह 'आदर्श'
महान् क्रान्तिकारी धन्वन्तरि—रमेश विद्रोही
महामनीषी जगदम्बाप्रसाद 'हितैषी'—सत्यव्रत शर्मा 'अजेय'
महायुद्ध—शकरलाल 'बिन्दु'
महाराष्ट्र के लोकप्रिय हिन्दी स्वर—सम्पादक शैलेन्द्र, शिवशकर वाशिष्ठ
महोपदेशक चरितावली—रामदत्त ज्योतिर्विद
मातृभूमि शब्दकोश—रघुनाथ विनायक धुलेकर
मानस मदाकिनी—शभुप्रसाद बहुगुणा
मानसरोवर—सम्पादक शकरशरणलाल बत्ता
मारवाडी हिन्दी पुस्तकालय सूचीपत्र—मारवाडी हिन्दी पुस्तकालय बम्बई-2
माहेश्वरी जन-जागृति दर्शन—विश्वम्भरप्रसाद शर्मा
मिश्रबन्धुविनोद (सभी भाग)—मिश्रबन्धु
मील के पत्थर—रामवृक्ष बेनीपुरी
मुशी दामोदरदास खत्री स्मृति ग्रन्थ—सम्पादक गौरीशकर द्विवेदी 'शकर'
मूर्धन्या—सेवक वात्स्यायन, वीरेण कात्यायन
मेरठ आर्यसमाज के सौ वर्ष—चन्द्रप्रकाश अग्रवाल
मेरठ का साहित्यिक परिचय—मदनगोपाल सिहल
मेरठ जनपद · एक सर्वेक्षण—क्षेमचन्द्र 'सुमन'
मेरठ जनपद की साहित्यिक चेतना—क्षेमचन्द्र 'सुमन'
मैत्री क्लब परिचय पुस्तिका (सभी सस्करण)—मैत्री क्लब कैलास, आगरा
मैथिली-मंगल—शुकलालप्रसाद पाण्डेय

मैं इनसे मिला (दो भाग)—डॉ० पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'
मैंने स्मृति के दीप जलाए—रामनाथ 'सुमन'
मोत्तूरि सत्यनारायण अभिनन्दन ग्रन्थ—दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास
यादगारे एकबाल —सकलक : मु० मुस्तफा
रजत जयन्ती ग्रन्थ—उत्कल प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार सभा
रजत जयन्ती ग्रन्थ—बम्बई हिन्दी विद्यापीठ
रजत जयन्ती ग्रन्थ—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा
रजत जयन्ती महोत्सव स्मृति ग्रन्थ—सम्पादक रजनीकान्त चक्रवर्ती, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति,गुवाहाटी
रजत रेणु—शान्तिस्वरूप 'कुसुम'
रजतोत्सव ग्रन्थ—कर्नाटक प्रान्तीय हिन्दी प्रचार सभा, धारवाड
राजस्थान में स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानी—सुमनेश जोशी
राजस्थान के हिन्दी साहित्यकार (परिचय-ग्रन्थ)—स्वागत समिति हिन्दी साहित्य सम्मेलन, जयपुर
राजस्थान वार्षिकी एव व्यक्ति परिचय—केशरलाल अजमेरा जैन
राजस्थान संस्कृत परिचय ग्रन्थ (1962)—राजस्थान संस्कृत साहित्य सम्मेलन, रतनगढ़
राजस्थान साहित्यकार परिचय कोष (हिन्दी-संस्कृत)—राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर
राजस्थानी भाषा और साहित्य—मोतीलाल मेनारिया
राजस्थानी साहित्यकार परिचय कोष—राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर
राजा राधिकारमण ग्रन्थावली—अशोक प्रेस, पटना
रामचरित ग्रन्थावली—सम्पादक : डॉ० कन्हैयासिंह
रायबरेली के कवि—चन्द्रशेखर पाण्डेय 'चन्द्रमणि'
राष्ट्रभाषा—श्री केशव वामन पेठे
राष्ट्रभाषा—हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
राष्ट्रभाषा आन्दोलन—गो० प० नेने
राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय समस्या—डॉ० रामधारीसिंह 'दिनकर'
राष्ट्रभाषा का इतिहास—किशोरीदास वाजपेयी
राष्ट्रभाषा की समस्या और हिन्दुस्तानी आन्दोलन—रविशंकर शुक्ल
राष्ट्रभाषा परिवार ग्रन्थ—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा
राष्ट्रभाषा हिन्दी—क्षेमचन्द्र 'सुमन'
रेखाएँ और संस्मरण—क्षेमचन्द्र 'सुमन'
विजय हमारी है—नवयुग ग्रन्थ कुटीर, बीकानेर
विद्वत् अभिनन्दन ग्रन्थ—लालबहादुर शास्त्री, विमल कुमार जैन, बाबूलाल जैन फागुल्ल
विन्ध्य के अमर रत्न—रामसागर शास्त्री
विन्ध्याचल का आधुनिक हिन्दी काव्य—डॉ० नागेन्द्रसिंह 'कमलेश'
विलासपुर वैभव—प्यारेलाल गुप्त
वीर सतसई—नाथूसिंह महियारिया
वे दिन वे लोग—मार्तण्ड उपाध्याय
वे दिन वे लोग—शिवपूजन सहाय
वे स्मरणीय प्रसंग—वियोगी हरि
व्यक्ति और वाङ्मय—डॉ० प्रभाकर माचवे
शिवसिंह सरोज—ठा० शिवसिंह सेंगर
श्री करुणेश स्मृति ग्रन्थ—वाल्मीकि ऋषीश्वर, कृष्णकुमार वर्मा
श्री कुंजबिहारी स्मृति सुमन (1949)—सम्पादक : सुबोधकुमार अग्रवाल
श्री चन्द्रधर जौहरी स्मृति अंक—सम्पादक डॉ० हरिहरनाथ टण्डन
श्री छाँगाणी अभिनन्दन ग्रन्थ—सम्पादक गुलजार शर्मा मिश्र आयुर्वेदाचार्य
श्री तोताराम सनाढ्य स्मारिका—जगन्नाथ लहरी
श्री परमानन्द स्मृति-कण—ओंकारनाथ अग्रवाल
श्रीमद्भगवद्गीता का सार—चन्द्रभाल
श्री माहौर अभिनन्दन ग्रन्थ—सम्पादक गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर'
श्री राजाराम पाण्डेय—व्यक्तित्व और कृतित्व—शशिभूषण पाण्डेय
शारदा सेवक—देवीदास शर्मा तथा कन्हैयालाल 'चंचरीक'
शिवपूजन रचनावली (सभी भाग)
श्रद्धाराम ग्रन्थावली—सम्पादक डॉ० सरनदास भनोत
श्री 108 स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती का संक्षिप्त जीवन-चरित्र—सम्पादक : आचार्य नरदेव शास्त्री

संस्कृति और साहित्य—डॉ० रामविलास शर्मा
सचित्र आगर का इतिहास—श्री गणेशदत्त 'इन्द्र' विद्या-वाचस्पति
सचित्र कौन क्या है—सम्पादक . श्री प्रेमनारायण अग्रवाल
सचित्र शुद्धबोध—सम्पादक : नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ
सत्यदेव परिव्राजक—भाषा विभाग पजाब, पटियाला
सनेह सागर—डॉ० बलभद्र तिवारी
सन्त दुर्गाशकरजी नागर—रामेश्वरप्रसाद दुबे 'मजु'
सन्त श्यामचरण जीवन तथा कृतित्व—भिक्षु धर्म रक्षित
सबद रमन्ता सबद गुणन्ता—ओप्रकाश
समन्वय के साधक—सम्पादक-मण्डल यशपाल जैन सरोजिनी नानावटी, हसमुख पाठक
समाचार पत्रो का इतिहास—अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी
सम्पादक के पच्चीस वर्ष—देवीदत्त शुक्ल
सम्मेलन के रत्न—सिद्धनाथ दीक्षित 'सन्त'
सहारनपुर के कवि—शरदकुमार मिश्र
सहारनपुर के साहित्यकार—ओप्रकाश दीक्षित
सारण्यक—पाण्डेय कपिल
साहित्यकार निकट से—देवीप्रसाद धवल 'विकल'
साहित्य की झाँकी—डॉ० सत्येन्द्र
साहित्य-चर्चा—आचार्य ललिताप्रसाद सुकुल
साहित्य जगत् के विनोबा बख्शीजी—नर्मदाप्रसाद खरे
साहित्य परिचय—डॉ० रामशकर शुक्ल 'रसाल'
साहित्य वाचस्पति प० झाबरमल्ल शर्मा अभिनन्दन ग्रन्थ—युगलकिशोर चतुर्वेदी
साहित्य-साधिकाएँ—कैलाश कल्पित
साहित्यिक कोष—डॉ० ओप्रकाश शर्मा
साहित्यिको के सस्मरण—प्रेमनारायण टण्डन
सिन्धी कवियों की हिन्दी साधना—डॉ० दयाल आशा
सिन्धी भाषा और उसका साहित्य—श्री मोतीलाल जोतवाणी, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना
सीतापुर जनपद के कवि—डॉ० गणेशदत्त सारस्वत
सुमति ग्रन्थावली—शिवप्रसाद पाण्डेय 'सुमति'
सूर्यपुरा मण्डल की साहित्यिक परम्परा—प० जगदीश शुक्ल
सौरभ—जे० पी० गोविल, हरिप्रसाद तिवारी
स्नातक परिचायिका · गुरुकुल विश्वविद्यालय कागड़ी—विद्यासागर विद्यालकार, डॉ० विनोदचन्द्र विद्यालकार
स्मरणांजलि—सम्पादक . काका साहब कालेलकर
स्व० पं० लोचनप्रसाद पाण्डेय—प्यारेलाल गुप्त
स्वर्ण जयन्ती ग्रन्थ—द० भा० हि० प्रचार सभा, मद्रास
स्वर्ण जयन्ती ग्रन्थ—श्री हिन्दी साहित्य समिति, भरतपुर
स्वामी नित्यानन्द : जीवन और कार्य—सम्पादक : विश्वबन्धु शास्त्री
हमारे गद्य-निर्माता : प्रेमनारायण टण्डन
हरियाणा के हिन्दी सेवी—शान्त शास्त्री 'शालिहास'
हरियाणा मे रचित हिन्दी साहित्य—सत्यपाल गुप्त एम० ए०
हरियाणा सांस्कृतिक दिग्दर्शन—लोक सम्पर्क विभाग, हरियाणा
हरियाणा साहित्यकार निर्देशिका —भाषा विभाग हरियाणा, चण्डीगढ
हाडौती दर्शन (1972)—नाथूलाल जैन, डॉ० शान्ति भारद्वाज 'राकेश'
हिन्दी-आलोचना-कोश—यशपाल महाजन
हिन्दी उपन्यास—शिवनारायण श्रीवास्तव
हिन्दी और महाराष्ट्र का स्नेह-सम्बन्ध—अशोक प्रभाकर कामत
हिन्दी-कथा-साहित्य मे पजाब का अनुदान—चन्द्रगुप्त विद्यालकार
हिन्दी कविता कौमुदी (भाग 1-2)—रामनरेश त्रिपाठी
हिन्दी का उच्चतर साहित्य—मगलनाथसिंह
हिन्दी काव्य की कलामयी तारिकाएं—श्री व्यथित हृदय
हिन्दी काव्य को नारी की देन—शकुन्तला सिरोठिया
हिन्दी की पत्र-पत्रिकाएँ—अखिल विनय, गीण्डाराम वर्मा 'चचल'
हिन्दी के गौरव स्तम्भ—सतीशराज पुष्करणा
हिन्दी के पजाबी सेवक—डॉ० बनारसीदास जैन
हिन्दी के वर्तमान कवि और उनका काव्य—गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'
हिन्दी के सामाजिक उपन्यास—ताराशंकर पाठक
हिन्दी के स्वीकृत शोध-प्रबन्ध—डॉ० उदयभानुसिंह
हिन्दी के निर्माता (भाग-1)—बाबू श्यामसुन्दरदास
हिन्दी के निर्माता (भाग-2)—बाबू श्यामसुन्दरदास
हिन्दी गद्य-गाथा—सद्गुरुशरण अवस्थी
हिन्दी गद्य-मीमासा—रमाकान्त त्रिपाठी

हिन्दी गद्य-शैली का विकास—डॉ० जगन्नाथप्रसाद शर्मा
हिन्दी नाट्य परम्परा—दिनेशनारायण उपाध्याय
हिन्दी नाट्य विमर्श—गुलाबराय एम० ए०
हिन्दी नाट्य साहित्य का इतिहास—ब्रजरत्नदास
हिन्दी नाट्य साहित्य का इतिहास—डॉ० सोमनाथ गुप्त
हिन्दी नाट्य-साहित्य का विकास—आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र
हिन्दीना विकासमा गुजरातीओना फालो—जयशकर मनुशकर दवे
हिन्दी निबन्ध और निबन्धकार—ठाकुरप्रसाद सिह
हिन्दी पत्रकारिता—डॉ० कृष्णबिहारी मिश्र
हिन्दी पत्रकारिता—डॉ० रत्नाकर पाण्डेय
हिन्दी पत्रकारिता के 150 वर्ष—डॉ० वेदप्रताप वैदिक
हिन्दी पत्रकारिता विविध आयाम—डॉ० वेदप्रताप वैदिक
हिन्दी पुस्तक साहित्य—डॉ० माताप्रसाद गुप्त
हिन्दी विश्वकोश (सभी भाग)—नगेन्द्रनाथ बसु
हिन्दी विश्वकोश (सभी खण्ड)—नागरी प्रचारिणी सभा
हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास—आचार्य चतुरसेन शास्त्री
हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'
हिन्दी वाड्मय बीसवी सदी—डॉ० नगेन्द्र
हिन्दी समाचारपत्र सूची—बकटलाल ओझा
हिन्दी समाचार पत्र निर्देशिका (1956)—बकटलाल ओझा
हिन्दी साहित्य—गणेशप्रसाद द्विवेदी
हिन्दी साहित्य और बिहार (सभी भाग)—बिहार राष्ट्र-भाषा परिषद्
हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास—जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन—अनुवादक डॉ० किशोरीलाल गुप्त
हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास—रामबहोरी शुक्ल
हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (सभी खण्ड)—नागरी प्रचारिणी सभा
हिन्दी साहित्यकार कोश—डॉ० प्रेमनारायण टण्डन
हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर—नरेशचन्द्र चतुर्वेदी
हिन्दी साहित्य का सक्षिप्त इतिहास—आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी
हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास—बाबू गुलाबराय
हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास—डॉ० सूर्यकान्त
हिन्दी साहित्य की रूपरेखा—डॉ० सूर्यकान्त
हिन्दी साहित्य के इतिहास का उपोद्घात—डॉ० मुन्शीराम शर्मा
हिन्दी साहित्य के इतिहासो का इतिहास—डॉ० किशोरी-लाल गुप्त
हिन्दी साहित्य के विकास मे दक्षिण का योगदान—जी० सुन्दर रेड्डी आदि
हिन्दी साहित्य को विदर्भ की देन—प्रयागदत्त शुक्ल
हिन्दी साहित्य को हिन्दीतर प्रदेशो की देन—डॉ० मलिक मोहम्मद
हिन्दी साहित्य कोश (भाग-2)—डॉ० धीरेन्द्र वर्मा
हिन्दी साहित्य प्रकाश—डॉ० रामशकर शुक्ल 'रसाल'
हिन्दी साहित्य विमर्श—पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी
हिन्दी साहित्य बीसवी सदी—आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी
हिन्दी साहित्य सारिणी (दो भाग)—विश्वेश्वरानन्द—वैदिक रिसर्च इन्स्टीट्यूट, होशियारपुर
हिन्दी सेवी ससार (सभी सस्करण)—कालिदास कपूर, प्रेमनारायण टण्डन
हिन्दुस्तानी आन्दोलन की समीक्षा—कमलनारायण झा 'कमलेश'
हिन्दुस्तानी के प्रचारक महात्मा गाधी—नवजीवन प्रेस अहमदाबाद
हू इज हू इन इण्डियन लैजिस्लेचर्स—प्रेमनारायण अग्रवाल
हू इज हू आफ इण्डियन राइटर्स—साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली
हू इज हू : राज्यसभा (सभी)
हू इज हू : लोकसभा (सभी)
हैदराबाद मे हिन्दी—मधुसूदन चतुर्वेदी

पत्र-पत्रिकाएँ एवं स्मारिकाएँ

'अचल भारती' नागरी प्रचारणी सभा, देवरिया (उ० प्र०) स्वर्ण जयन्ती अंक—सम्पादक जयनाथमणि त्रिपाठी
अखिल भारतीय लघु एवं मध्यम समाचार पत्र सघ स्मारिका (1971)—स्थायी समिति बैठक, जबलपुर

अतीत के पृष्ठ (हिन्दी दिवस-1968)—जबलपुर साहित्य सघ

अनेकान्त—आचार्य श्री 'युगवीर' जन्म शताब्दी अक (जुलाई दिसम्बर-1977)—सम्पादक . गोकुलप्रसाद जैन

अभिनन्दन स्मारिका · कविवर रामभरोसे वाजपेयी 'प्रेमनिधि' —इन्दीवर साहित्य कला सगम, फर्रुखाबाद, (उ० प्र०)

'अमृत' (फीरोजाबाद जनपद अक)—सम्पादक : ब्रजकिशोर जैन

'अर्जुन' (रजत जयन्ती विशेषाक)—सम्पादक . कृष्णचन्द्र विद्यालकार

'आर्य जगत्' (सत्यार्थ प्रकाश शताब्दी समारोह विशेषाक)—सम्पादक क्षितीशकुमार वेदालकार

'आर्य मार्तण्ड' अभिनन्दन विशेषाक (नवम्बर 1970)—सम्पादक डॉ० भवानीलाल भारतीय

आर्य मार्तण्ड प० गणपति शर्मा विशेषाक—सम्पादक : डॉ० भवानीलाल भारतीय

'आर्य विरक्त' (वानप्रस्थ एव सन्यास) आश्रम ज्वालापुर स्वर्ण जयन्ती स्मारिका, 1978

'आर्यसमाज शताब्दी समारोह' (मेरठ, कानपुर तथा वाराणसी की स्मारिकाएँ)

'आशा' (सासनी सर्वेक्षण अक)—के० एल० जैन इण्टर कालेज, सासनी (अलीगढ)

उत्कल प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार सभा का 26 वाँ वार्षिक कार्य-विवरण

'उत्तर प्रदेश' (विभिन्न अक)—सम्पादक चन्द्रमोहन शर्मा, लखनऊ

उत्तर प्रदेश हिन्दी सस्थान सम्मान तथा पुरस्कार-विवरण (1981)

'उदयन' (कोटला विशेषाक)—सम्पादक प० बनारसीदास चतुर्वेदी, श्री रामचन्द्र कुन्दनलाल इण्टर कालेज, कोटला, आगरा

'काल प्रवाह' (मासिक)—आचार्य जगदीशचन्द्र मिश्र श्रद्धाजलि-विशेषाक

'केरल ज्योति' (अनेक अक)—केरल हिन्दी प्रचार सभा, त्रिवेन्द्रम

'गोधन' धर्म-सम्राट् स्वामी करपात्री जी स्मृति-अक (मई, 1982)—सम्पादक . विश्वम्भरप्रसाद शर्मा

'चतुर्वेदी' हीरक जयन्ती विशेषांक, अक-11 (नवम्बर 1976) —चतुर्वेदी कार्यालय, ग्वालियर

'चित्रोत्पला' (1980-81)—राजीवलोचन कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, राजिम

'चिदम्बरा' (अनेक अक)—प्रधान सम्पादक : श्री नन्दन चतुर्वेदी, श्री भारतेन्दु समिति, कोटा-6 (राजस्थान)

'जन साहित्य' हरियाणा लोक-मानस विशेषाक (अक्तूबर-नवम्बर 1965)—हिन्दी विभाग, पंजाब, पटियाला

'जागरण' आचार्य जगदीशचन्द्र मिश्र स्मृति अक (1982)—वैद्य शरदकुमार मिश्र 'शरद'

'जागरण' दैनिक (रजत जयन्ती अक)—सम्पादक . नरेन्द्र-मोहन, कानपुर

'जैन जगत्' श्रद्धाजलि अक (फरवरी 1978)—सम्पादक चन्दनमल 'चाँद'

'जैन सिद्धान्त भास्कर' (आरा) दिसम्बर 1977—सम्पादक ज्योतिप्रसाद जैन

जैमिनी (अर्द्धवार्षिक जनवरी सन् 1967) · ऋषि जैमिनी कौशिक बरुआ

'ज्योत्स्ना' शिवपूजनसहाय स्मृति अक (जुलाई 1963)—सम्पादक शिवेन्द्र नारायण

'तीर्थंकर' जैन पत्र-पत्रिकाएँ विशेषाक (अगस्त, सितम्बर 1977)—सम्पादक डॉ० नेमीचन्द्र जैन

'तीर्थंकर' मुनि श्री चौथमल जन्म शताब्दी अक (1977)—सम्पादक डॉ० नेमिचन्द्र जैन

'त्रिपथगा' (श्रद्धाजलि अक)—सम्पादक काशीनाथ उपाध्याय 'भ्रमर', सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ

दक्षिण दर्शन (हीरक जयन्ती स्मारिका ग्रन्थ)—दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

'दिनमान' (अनेक अक)—टाइम्स आफ इण्डिया प्रकाशन, नई दिल्ली 2

'नई धारा' (अनेक अक) सम्पादक श्री उदयराजसिंह, सुरेशकुमार सार

'नई धारा' नलिन स्मृति अक—सम्पादक रामवृक्ष बेनीपुरी, ब्रजकिशोर नारायण

'नई धारा' शिवपूजन सहाय स्मृति अक सम्पादक श्री रामवृक्ष बेनीपुरी

नगरपालिका वृन्दावन शताब्दी स्मारिका (1968)—सम्पादक . डॉ० शरणबिहारी गोस्वामी
'नया जीवन' (अनेक अंक)—सम्पादक . कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'
'नर्मदा' (ग्वालियर) नवीन अंक अगस्त 1963—सम्पादक बनारसीदास चतुर्वेदी, शम्भुनाथ सक्सेना
'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' शोध विशेषांक—सम्पादक : सुधाकर पाण्डेय
'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' श्रद्धांजलि अंक (1967 ई०)—सम्पादक सुधाकर पाण्डेय
पत्रकार (1972)—सम्पादक माधवप्रसाद मिश्र
पत्रकार पराड़कर स्मृति (जनवरी 1955)—पत्रकार संघ काशी की स्मारिका
पत्रकार स्मारिका (1975)—काशी पत्रकार संघ
परशुराम चतुर्वेदी एक परिचय—60वीं वर्षगाँठ पर प्रकाशित स्मारिका
'परिचय पत्रिका' (स्वर्ण जयन्ती समारोह)—अखिल भारतीय दिगम्बर जैन परिषद्, दिल्ली-6
'परोपकारी' (अनेक अंक)—सम्पादक भवानीलाल भारतीय परोपकारिणी सभा, अजमेर
पुरुषोत्तम माहनी स्मारिका—सम्पादक सुदर्शन चक्र
'प्रकाशन समाचार' (अनेक अंक)—अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ, दिल्ली
'प्रेरणा' व्यास स्मृति अंक (मार्च-अप्रैल 1965)—सम्पादक देवनारायण व्यास
बरेली—जनसम्पर्क विभाग, बरेली
बाड़मेर जिले के साहित्यकार, राजस्थान साहित्य अकादमी स्मारिका जनवरी 1981
बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के अब तक के सभी वार्षिक कार्य-विवरण—मन्त्री, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना
'ब्रज भारती' (अनेक अंक)—सम्पादक : वृन्दावनदास, अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मण्डल, मथुरा
भाई परमानन्द स्मारिका-1982—भाई परमानन्द स्मारक समिति, नई दिल्ली
'भारती' पत्रकार कला विशेषांक—सम्पादक महेशचन्द्र धूसर, भारती कार्यालय, लक्ष्मणगंज, झाँसी
'भारती'—आर्य कन्या गुरुकुल पोरबन्दर, शंकरदेव विद्यालंकार विशेषांक (अप्रैल-1982)
भारतीय साहित्य : आदान-प्रदान (अप्रैल 1972)—सम्पादक · क्षेमचन्द्र 'सुमन'
'मंगल प्रभात' (सितम्बर 1981)—गांधी हिन्दुस्तानी साहित्य सभा, नई दिल्ली
मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन—तृतीय अधिवेशन जबलपुर (1965) वार्षिक विवरण
'मनीषा' एटा जनपद विशेषांक (1975-76) सम्पादक प्रो० रामलखन पाण्डेय, कोठीवाल आढतिया महाविद्यालय, कासगंज, (उ० प्र०)
'मराल' (नवम्बर 1939 से अक्तूबर 1940)—सम्पादक . आचार्य किशोरीदास वाजपेयी
'मरुश्री' (सभी अंक)—लोक संस्कृति शोध संस्थान नगर-श्री, चूरू, राजस्थान, सम्पादक : गोविन्द अग्रवाल
मासिक विवरणिका (अनेक अंक)—मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन, जबलपुर-भोपाल
रजत नीराजना (ललितपुर के स्वतन्त्रता सेनानियों की स्मारिका)—सम्पादक डॉ० परशुराम शुक्ल 'विरही'
'राष्ट्रभाषा-स्मारिका'—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा
लहँदी भाषा और साहित्य—डॉ० हरदेव बाहरी, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना-4
'लोकराज' वार्षिकी 1977 पत्रकारिता 150 वर्ष, सम्पादक मण्डल जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी, मन्नूलाल द्विवेदी, प्रेमनाथ चतुर्वेदी
वार्षिक विवरण, नागरी प्रचारिणी सभा
वार्षिक विवरण, मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन
वार्षिक विवरण, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा
वार्षिक विवरण, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
'विक्रम'—सम्पादक सूर्यनारायण व्यास, उज्जैन (मालवा)
'विज्ञान स्मारिका' (1978)—दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन
'विनय' अलवर अंक (1969)—राजर्षि कालेज, अलवर
विवृति—नरेन्द्र अंक (अप्रैल 1959) सम्पादक : विनयकुमार साहित्यलंकार
'विश्व ज्योति' संस्मरणांक—सम्पादक . सन्तराम बी० ए०, साधु आश्रम, होशियारपुर
'विश्वमित्र' रजत जयन्ती विशेषांक—सम्पादक :

कृष्णचन्द्र अग्रवाल, कलकत्ता

'विश्वम्भरा'—खड्गावत विशेषांक (1972)—सम्पादक विद्याधर शास्त्री

'विश्वविद्यालय समाचार' (हिन्दी पत्रकारिता के 150 वर्ष)—जबलपुर विश्वविद्यालय, पत्रकारिता विभाग

'वीणा' (इन्दौर) नवीन स्मृति अंक (अगस्त-सितम्बर 1960)—सम्पादक प्रभागचन्द्र शर्मा

'वीणा' मालवी अंक (सितम्बर-अक्तूबर 1971)—सम्पादक मोहनलाल उपाध्याय 'निर्मोही'

'वेद प्रकाश' (अनेक अंक)—सम्पादक : विजयकुमार—नई सड़क, दिल्ली-6

'वैचारिकी' बीकानेर अंक—सम्पादक सत्यनारायण पारीक, मूलचन्द प्राणेश, भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर, राजस्थान

श्रद्धांजलि—डॉ० गणेशनारायण शुक्ल

श्री वेंकटेश्वर समाचार' हीरक जयन्ती अंक—सम्पादक देवेन्द्र शर्मा शास्त्री, बम्बई-4

शताब्दी संवाद (नवम्बर, 1973), सम्पादक : डॉ० बेचन

संकेतिका— चौ० मुल्कीराम विचार मंच, मेरठ

'संज्ञा' विविध अंक (रायपुर, मध्यप्रदेश)—सम्पादक : हरि ठाकुर

'सचित्र दरबार' (ग्वालियर अंक)—सम्पादक . शंकरलाल गुप्त 'बिन्दु'

सत्यार्थ प्रकाश शताब्दी समारोह पानीपत स्मारिका आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, दिल्ली

'सनातनधर्म' व्याख्यान वाचस्पति विशेषांक (1972)—सम्पादक बालकृष्ण शर्मा धर्मालंकार

सन्त कवि चौ०मुल्कीराम जन्म दिवस स्मारिका (1982)—चौ० मुल्कीराम विचार मंच, मेरठ

'सन्दर्भ भारती' (अनेक अंक) -भारती भाषा परिषद्, कलकत्ता-13

'सप्त सिन्धु' हरियाणा साहित्य विशेषांक—भाषा विभाग, हरियाणा, चण्डीगढ़

'समय' साप्ताहिक (स्वर्ण जयन्ती विशेषांक) जौनपुर (उत्तर प्रदेश)

सरस्वती हीरक जयन्ती समारोह (1962)—सम्पादक श्रीनारायण चतुर्वेदी

'साधना' परिचयांक—सम्पादक : सत्येन्द्र एम० ए०

'सारिका' दुष्यन्त विशेषांक (मई 1976)—सम्पादक : कमलेश्वर

'साहित्य'—बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पटना

'साहित्य' नलिन स्मृति अंक (अक्तूबर 1961)—सम्पादक . शिवपूजनसहाय, केसरीकुमार, श्रीरंजन सूरिदेव

'साहित्य'—शिवपूजन स्मृति अंक (जनवरी 1964) सम्पादक : केसरीकुमार, श्रीरंजन सूरिदेव

साहित्य त्रिमूर्ति अभिनन्दन समारोह (1966)—भारतेन्दु साहित्य समिति, बिलासपुर

'साहित्य पर्यवेक्षक' (कानपुर विश्वविद्यालय दीक्षान्त समारोह विशेषांक)—सम्पादक वाल्मीकि त्रिपाठी, कानपुर-12

साहित्य पुरुष डॉ० नरेन्द्र देव वर्मा (स्मृत्यंजलि) 1980—डॉ० नरेन्द्रदेव वर्मा स्मारिका समिति, रायपुर

'साहित्य सन्देश' उपन्यास अंक—गुलाबराय एम० ए० महेन्द्र

'साहित्य सन्देश'—शिवपूजन सहाय स्मृति अंक (जून 1963) सम्पादक महेन्द्र

'सिद्धान्त' (मासिक) वाराणसी, अक्तूबर 1980

'सुकवि विनोद'—सुकवि साहित्य परिषद्, लखनऊ

'सुधानिधि'—वैद्य देवीशरण गर्ग स्मृति अंक (1974)—धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ़ (अलीगढ़)

'सूर सौरभ' (अनेक अंक) सम्पादक उदयशंकर शास्त्री, सूर स्मारक मण्डल, आगरा

स्मारिका 1979—आर्य उप प्रतिनिधि सभा, मुरादाबाद

स्मारिका—आर्यसमाज देहरादून शताब्दी (1980)

स्मारिका—उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन, मेरठ

स्मारिका—अ० भा० लघु एवं मध्यम समाचार पत्र संघ, जबलपुर

स्मारिका—जनपद हिन्दी साहित्य सम्मेलन स्वर्ण जयन्ती हिन्दी भवन, जौनपुर

स्मारिका मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन (1972)

स्मारिका प्रकाश कविरत्न अभिनन्दन समारोह (1972)—सम्पादक सदाविजय आर्य

स्मारिका—मेरठ आर्यसमाज शताब्दी समारोह (1978)

स्मारिका—2017 विक्रमी—नागरी भण्डार, बीकानेर

स्मारिका (स्वर्ण जयन्ती समारोह 1980)—भारतेन्दु समिति, कोटा

स्मारिका (षष्ठम अधिवेशन)—मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन, राजनांदगाँव

स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ—दिल्ली प्रादेशिक, हिन्दी साहित्य सम्मेलन

स्वतन्त्र्योत्तर पत्रकारिता स्मारिका (अगस्त 1972)—भोला भवन, मिर्जा इस्माइल रोड, जयपुर-1

स्वर्ण जयन्ती स्मारिका—आर्य विरक्त आश्रम, ज्वालापुर (1978)

'हरिऔध' (अनेक अंक)—हरिऔध कला भवन समिति, आजमगढ़

'हिन्दी अनुशीलन' : डॉ० धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक—भारतीय हिन्दी परिषद्, प्रयाग

'हिन्दी प्रचारक' (अनेक अक)—स० कृष्णचन्द्र बेरी

'हिन्दी प्रचारक समाचार' (अनेक अक)—दक्षिण-भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

हिन्दी सभा (38वाँ वार्षिकोत्सव)—हिन्दी सभा, लाल बाग, सीतापुर, उत्तर प्रदेश

सरस्वती हीरक जयन्ती ग्रन्थ—श्रीनारायण चतुर्वेदी

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का 47वाँ वार्षिक विवरण—हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग का संक्षिप्त परिचय—सम्पादक : श्यामकृष्ण पाण्डेय

•

परिशिष्ट-2

नामानुक्रमणी

परिशिष्ट 3

आगामी खण्डों में समाविष्ट होने वाले हिन्दी-सेवी

अजनीनन्दन शरण
अक्षयकुमार दत्त
अक्षयकुमारसिंह
अक्षयानन्द
अगरचन्द नाहटा
अचलीबाई
अचिन्त्यलाल शाह
अच्युतन वेद्यर
अच्युतराव कोल्हटकर
(स्वामी) अच्युतानन्द परमहंस
अच्युतानन्द सरस्वती
अछरजू चौकीनवीस
अजब गवैया
अजबेश नवीन
अजय चौहान
अजयराम लवानिया
अजयेश भट्ट
अजितकुमार शास्त्री
अजितप्रसाद
महता अजीतसिंह
अजीम बख्त
स्वामी अटलराम
अतिसुखशकर त्रिवेदी
अनन्त गणेश धारेश्वर
अनन्त वामन वाकणकर
अनन्तशयनम् आयंगर
अनन्तसिंह 'फितरत'

अनामिका उपाध्याय
अनिरुद्ध चौबे 'शेखर कवि'
(ठाकुर) अनिरुद्धसिंह
अनुज पंडित
(शान्त स्वामी) अनुभवानन्द सरस्वती
अनूपचन्द दुबे
अनूपदास
अनूपलाल मण्डल
अब्दुल रहमान 'मजर'
अब्दुल रहीमखाँ
अब्दुल हक
(मुंशी) अब्बास अली
अभयराजसिंह परिहार
अभयराम
अमरकृष्ण चौबे
अमरचन्द व्यास
(ठाकुर) अमरदान कविया
अमरनाथ तिवारी
अमरनाथ दत्त
अमरनाथ श्रीवास्तव
अमरसिंह
अमरेश मिश्र
(भगत) अमीचन्द
(बाबू) अमीरसिंह—1
अमीरसिंह—2
अमीराय
अमृतनाथ झा

(डॉ०) अमृतलाल गणात्रा
अमृतलाल दुबे (विलासपुर)
अमृतलाल पढियार
अमृत वाग्भव आचार्य
अम्बाडि इक्कावम्मा
(श्रीमती) अम्बाडि कार्त्यायनी अम्मा
अम्बादत्त
(पण्डित) अम्बाप्रसाद
अम्बाप्रसाद 'अम्बुज'
अम्बिकाकान्तसिंह
अम्बिकादत्त बहुगुणा
अम्बुज
अम्मिणि अम्माल तरवत्त
अयोध्यानाथ शर्मा 'अवधेश'
अयोध्याप्रसाद पाठक (चतुर्वेदी)
अयोध्याप्रसाद पाठक
अयोध्याप्रसाद मिश्र
अयोध्याप्रसाद शुक्ल
अयोध्याप्रसाद सरयूपारीण
अयोध्यासिंह
अरदेशर फ्रामजी खबरदार
अरविन्द कान्त
अरिसूदन शर्मा
अर्जुन
अर्जुन जोशी
अर्जुनदेव 'रश्क'
अर्जुननाथ रैना

(ठा०) अर्जुनसिंह
अलक झलक बाबा
(हाजी) अली खाँ
(सैयद) अली मोहम्मद
अवधकिशोरसहाय वर्मा 'बाण'
अवधप्रसादसिंह
अवधबक्श
(स्वामी) अवधबिहारीदास नागाबाबा
अवधबिहारीलाल माथुर
अविनाशानन्द
(बाबू) अविनाशीलाल
असगरअली 'आजाद'

आक्कूर अनन्ताचारी
आछेलाल भाट
आठा जवान जी
(स्वामी) आत्मानन्द सरस्वती
(जैन मुनि) आत्माराम
(डॉ०) आत्माराम
आत्माराम देवकर
आत्माराम विश्वनाथ
(स्वामी) आत्माराम सन्यासी
आत्मीयनारायण व्यास
आदित्यनारायणसिंह शर्मा
आदित्यप्रकाशसिंह बाघेल
(बाबू) आदित्यप्रसादसिंह
आदित्यराम सगीताचार्य
(डॉ०) आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये
आद्याप्रसाद शुक्ल
आद्याप्रसाद शुक्ल एम० ए०
आनन्दसिंह
आनन्दसिंह कुडरा
(महात्मा) आनन्दस्वरूप
आनन्दस्वरूप (साहबजी महाराज)
आर० कृष्णैयर
आर० गणेशन
आर० जी० आनन्द
आर० नारायण पणिक्कर
आर० राघव मेनन
आर्यमुनि (महामहोपाध्याय)
आवडदान
आशाराम शुक्ल
आशुप्रसाद मुख्तार

इकबालबहादुर देवसरे
(श्रीमती) इक्काकुट्टि तम्पुरान
इच्छाशंकर वैष्णव
इन्दा
इन्द्र एम० ए०
इन्द्रचन्द्र शास्त्री
(मुन्शी) इन्द्रजीतसिंह कायस्थ
इन्द्रजीतसिंह
इन्द्रदेव उपाध्याय
(डॉ०) इन्द्रदेवप्रसाद चतुर्वेदी
इन्द्रदेवप्रसाद रावत 'रडेश'
इन्द्रदेव शर्मा
(डॉ०) इन्द्रपालसिंह
इन्द्रबाई रतनू
इन्द्रमल ब्रह्मभट्ट
इन्द्रशंकर मिश्र
इन्द्रसिंह चक्रवर्ती
(मौलवी) इक्तिखारखाँ 'जिगर'
इलाचन्द्र जोशी

ई० के० शंकर वर्मा राजा
ई० के० शारदादेवी
ई० वी० रामस्वामी नायिक्कर
ई० शारदा
ईशुफ शाह
ईश्वरचन्द्र पत्रकार
ईश्वरचन्द्र मधेसिया
ईश्वरचन्द्र विद्यासागर
ईश्वरदत्त
ईश्वरदत्त मेधार्थी विद्यालंकार
ईश्वरप्रसाद तिवारी
ईश्वरराम
ईश्वरलाल भाई देसाई
(मुन्शी) ईश्वरशरण
(चौ०) ईश्वरसिंह
ईश्वरीदान
(मुन्शी) ईश्वरीप्रसाद
ईश्वरीप्रसाद गुप्त
ईश्वरीप्रसाद तिवारी
ईश्वरीप्रसाद त्रिपाठी
ईश्वरीप्रसाद वर्मा 'शब्द'
(भाई) ईसरलाल

उ० वे० स्वामिनाथ अय्यर
(मास्टर) उग्रसेन
उजियारेलाल द्विज 'ललितेश'
उत्तमनाथ
उत्तमराम शुक्ल
उत्तमसिंह तोमर
उदयनाथ
उदयनाथ कवीन्द्र
(मुन्शी) उदयभानु
उदयलाल कासलीवाल
उदितनारायणलाल वर्मा
उदितनारायणसिंह करचुली 'अभिरा
उदैराम कवि
उद्धव औघड
(सेठ) उद्धवदास ताराचन्द
उन्नडजी
(कविराज) उपेन्द्रनाथ शर्मा आगिरस
(चौ०) उमरावसिंह
उमरावसिंह पँवार
उमरावसिंह पाण्डेय 'प्रेम' विशारद
उमरावसिंह मिश्र
उमाकान्त मालवीय
उमाचरण पाण्डेय 'त्रिदण्डी'
उमादत्त 'दत्त'

उमादत्त शर्मा
उमादास
उमानाथ मिश्र
उमा नेहरू
उमापति त्रिवेदी
उमापतिदत्त पाण्डेय
उमारत्न त्रिवेदी
उमाशंकर द्विवेदी
उमाशकर वाजपेयी 'उमेश'
उमाशंकर शुक्ल
उमाशकरमहाय
उमासिह भदौरिया
उमेशचन्द्र देव मिश्र
उमेश शुक्ल
उम्मेदराम
(ठा०) उम्मेदमिह बारहठ
(महाराजा) उम्मेदसिह शाहपुरा
उरदाम चौधरी
उल्लाट्टिल गोविन्दन कुट्टि नायर

ऊधो कवि
ऊमरदान लालम

ऋषभदाम

ए० आर० मनोन
(बैरिस्टर) ए० के० पिल्लै
(डॉ०) ए० एन० उपाध्ये
ए० एन० राघवन नायर
(कुलपति) ए० पी० सी० वीरबाहु
ए० फाटकवाला 'प्रेमसखा'
ए० रगस्वामी अय्यंगार
(डॉ०) ए० वी० नागेश्वर राव
एन० एस० ईश्वरन
एन० जी० रामकृष्ण पणिक्कर
एन० सुन्दरैयर
एनी बेसेण्ट

एम० आर० आशीर्वादम्
एम० एस० कृष्णैयर
एम० एम० सत्यार्थी
एम० पी० माधव कुरुप
एम० वर्मा
एस० एम० जामिन अली
एस० देवराजन
एस० धर्मराजन
एस० पद्मनाभन
एम० लक्ष्मण शास्त्री

ओंकारनाथ 'दिनकर'
ओंकारनाथ पाण्डेय
ओंकारनाथ मिश्र शास्त्री
ओंकारलाल वैश्य 'प्रणव'
ओंकारेश्वरदयाल 'नीरद'
(माता) ओंकारेश्वरी
ओधवदास
ओपाजी
ओम्वती

कँवलावती देवी 'कमल'
कण्ठमणि शर्मा 'दिशिकेन्द्र'
(कवि-सम्राट्) कण्णदासन
(गोस्वामी) कदम्बदयाल
कनकलता पासबान
कनकाप्रसाद चौधरी
कनारदास
कनीराम
कन्हई साव
कन्हैयालाल (अभिनेता)
(मुन्शी) कन्हैयालाल एडवोकेट
कन्हैयालाल खन्ना
कन्हैयालाल गोस्वामी
कन्हैयालाल चौबे
कन्हैयालाल जैन
(सेठ) कन्हैयालाल पोद्दार

कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी
कन्हैयालाल मिण्डा 'शान्तेश'
कन्हैयालाल मिश्र एडवोकेट
कपिलदेव मालवीय
कमलकुँवर
कमलनाथ
कमलनारायण झा 'कमलेश'
कमलाकर 'कमल'
कमलाकान्त
कमलानाथ शर्मा 'मदनेश'
कमलाप्रसाद वर्मा
कमलावती चिनौरिया
कमलेशकुमार अग्रवाल
कमलेश्वर शुक्ल 'कमलेश'
कमाल
कम्मोदसिह
करम सुब्बाराव
(मौलवी) करीमुद्दीन
करुणाशकर शुक्ल
करुणाशकर शुक्ल 'करुणेश'
(पंडित) कर्णवीर नागेश्वर राव
कर्पूरचन्द पाटनी
(डॉ०) कर्मनारायण बहल
(भाई) कलाचन्द
कल्याण चौबे
कल्याणदास
(महात्मा) कल्याणदास
कल्याणराम जोशी
कल्याणसिह
कल्याणसिह कुडरा
कल्याणसिह शेखावत
कल्याणसिह वैद्य
कवि कहान
कवि मान
कस्तूरमल बाँठिया
का० न० रामन्ना शास्त्री
का० मा० शिवराम शर्मा

काजी अनवर
(फकीर) कादिर बाबा' बेदिल'
(सूबेदार) कानन
कानसिंह भाटी
कान्तिलाल रतनलाल पारीख
(मुनि) कान्तिसागर
कान्हजी प्रश्नवर
कान्हलाल 'कान्ह'
कान्हसिंह
कान्हीराम पारीक
कान्हीदान बारहठ
(बाबू) कान्हूलाल 'कान्हू'
कामताप्रसाद निगम
(मुन्शी) कामताप्रसाद 'बाल कवि'
कामताप्रसाद 'वीर कवि'
(परम गुरु) कामताप्रसाद,
सरकार साहब
कामेश्वर शर्मा 'कमल'
कारे कवि
कार्तिकप्रसाद डोगरा
कालिकाप्रसाद त्रिपाठी
कालकाप्रसाद त्रिपाठी 'मिलिन्द'
कालिकाप्रसाद
कालिकाप्रसाद बी० ए०
(डॉ०) कालिकाप्रसाद भटनागर
कालिकाप्रसाद मिश्र
कालिकाप्रसाद 'विनोद'
(महाराज कुमार) कालिकाप्रसाद सिंह
'कालिका'
कालिकारजन कानूनगो
कालिकासिंह
कालिदास तिवारी
(बाबू) कालीचरण
कालीचरण त्रिपाठी 'वारिद'
कालीचरण दीक्षित 'फणीन्द्र'
कालीचरण 'सेवक'
कालीदीन
कालीप्रसाद मिश्र
कालीप्रसाद 'विरही'
कालूराम गगराड़े
कालूराम शीतलदास मेतपाल
कावुड्गल नीलकण्ठ पिल्लै
(प्रो०) कावेरी देवी
काशीगिरि बनारसी
काशीनाथ
काशीनाथ जैन
काशीनाथ मालवीय
काशीनाथ शर्मा काव्यतीर्थ
काशीनाथ शास्त्री
काशीनारायण मालवीय
काशीपति त्रिपाठी 'प्रेमीहरि'
काशीप्रसाद शुक्ल
काशीप्रसाद सिनहा
काशीप्रसाद सिंह
(लाला) काशीराम
काशीविश्वम्भर अग्रवाल
काशी शास्त्री दुगवेकर
किशनचन्द जेबा
किशनजी आढा
किशनजी मिढायच
किशनलाल 'कृष्णकवि'
किशनसिंह सैनी
किशुनेश भाट
(डा०) किशोरसिंह बार्हस्पत्य
किशोर
किशोरसिंह सौदा
किशोरीलाल गुप्त
किशोरीलाल लिटौरिया
किशोरीशरण बिटौरिया
किसनदास
(मुशी) किसनलाल
कीरतसिंह 'श्रीधर'
कीर्तिभानु राय
कुजबिहारी पाण्डेय
कुजबिहारी लाल
कुजबिहारीलाल गुप्त
कुजबिहारीशरण 'कुज'
कुजलाल
कुंजलाल श्रीवास्तव 'रत्न'
कुंजीलाल दुबे
कुजीलाल चौबे
कुञ्जिपिल्ला कुट्टि तम्पुरान
कुंवर कन्हैयाजू
कुंवरजी नाथ वैद्य
कुंवरलाल न्यायतीर्थ
कुच्चाम्मणि तम्पुरान
कुन्दनलाल 'निर्मोही'
कुन्दनलाल मिश्र
कुन्दनलाल शर्मा
(डॉ०) कुलदीप
कुलदीप चड्ढा
(बाबू) कुलदीपसहाय
कुलपति मिश्र
कुलानन्ददास 'नन्दन'
कुलोमण पन्त 'कुलमणि'
(सन्त) कुंवरदास 'करुणासागर'
(राजा) कुशलपालसिंह
कृपानाथ मिश्र
कृपाराम
कृपाशकर अवस्थी
कृपाशकर अवस्थी (मुंगेर)
कृष्णकर
कृष्ण कवि
कृष्णकिशोर श्रीवास्तव
कृष्ण केशव शिंगलेकर
कृष्णचन्द्रविद्यालकार
कृष्णचन्द्र विरमानी
कृष्णचन्द्र शास्त्री
कृष्णजसराय
(पडित) कृष्णदत्त
(बाबा) कृष्णदास

कृष्णदास आजू
कृष्णदेव
कृष्णदेव विद्यावाचस्पति
कृष्णनन्दन सहाय
कृष्णनाथ मिश्र
कृष्णप्रसाद दर
कृष्णप्रसादसिंह 'अवनीन्द्र'
कृष्ण बलवन्त पावगी
(स्वामी) कृष्णबोधाश्रम, शंकराचार्य
कृष्णराय गोतमगोर्चा
कृष्णमोहन वर्मा
कृष्णराव
कृष्णराव रिंगे
(गोस्वामी) कृष्णलाल
कृष्णलाल
(डॉ०) कृष्णलाल 'हंस'
कृष्णस्वरूप श्रोत्रिय
कृष्णस्वामी अय्यगार 'सुदामा'
कृष्णाजी ग० कवचाले
कृष्णानन्द व्यास
(कुमार) कृष्णानन्दसिंह
कृष्ण पाण्डे
के० एन० परमेश्वर पणिक्कर
के० एम० बनर्जी (रेवरेण्ड)
के० एम० वासु अच्चन
के० कृष्णपिल्लै
के० केलप्पन
(विद्वान्) के० नारायणन
के० ना० डाँगे
(विद्वान्) के० नारायण
के० पद्मनाभ पिल्लै
के० पी० कुट्टिकृष्णन नायर
के० भुजबली शास्त्री
के० राजगोपालन
के० राम आचार्य
के० वासु अच्चन
के० वासुदेवन पिल्लै
के० वेलायुधन नायर
(कवि) केदार
केदारनाथ कुलकर्णी
केदारनाथ गोयनका
केदारनाथ पाठक
केरल वर्मा-1
केरल वर्मा-2
केवलचन्द स्वामी
(सन्त) केवल पुरी
(स्वामी) केवलराम
केवलराम त्यागी
केशरलाल अजमेरा
केशव अनन्त पटवर्धन
केशवदेव ज्ञानी
केशवदेव शर्मा
केशवप्रसाद खत्री
केशवदेव ज्ञानी
(पण्डित) केशवप्रसाद मिश्र
केशवप्रसाद वर्मा
केशवप्रसाद शर्मा
केशवप्रसाद सिंह
केशव फडसे
केशव मिश्र
केशवराम भट्ट
केशवराम विष्णुलाल पण्ड्या
केशव वर्मा भट्ट
केशव वामन पेठे
(पण्डित) केशवराम
केशवानन्द
केशवानन्द जयली
केशवानन्द स्वामी
केशवानन्द चौबे
केशोराय कायथ
केशरीसिंह महियारिया
कैलाशचन्द्र दत्त शास्त्री
कैलाशचन्द्र मिश्र
कैलाशनाथ वाजपेयी
कोतवालसिंह नेगी
कोदूराम 'दलित'
क्याखूब चौबे रामप्रसाद राव

क्षमानन्द पाठक
क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय
क्षेमकरण कवि
क्षेमधारी सिंह
क्षेमेन्द्र गुलेरी

खड़राव
खगनियाँ
(महाराजकुमार) खड्गबहादुर मल्ल
खानचन्द गौतम
खिलावन लाल
खीम साहब
खुमानसिंह
खुशालचन्द जैन
(महात्मा) खुशीराम
खूबचन्द 'पुष्कल'
खूबचन्द बाघिल
खूबचन्द रमेश
खूबचन्द शास्त्री
खूबीराम लवानिया
खूबीलाल 'अनीश'
खेतसिंह
(सेठ) खेमराज श्रीकृष्णदास
मुन्शी खैराती खाँ (मण्डला)
खोडा भाई पटेल
ख्यालीराम खुल्बे

गंगजी गौड
गंगादत्त शास्त्री
(ठा०) गंगादान कविया
गंगादास
गंगाधर अवस्थी 'द्विजगंग'
गंगाधर चौबे

गगाधर मिश्र
गगाधर मु० शुक्ल
गंगाधर मेहर
गगाधर व्यास
गगाधर सीताराम 'अभंग'
गगानारायण वाजपेयी 'गगहरी'
गगाप्रसाद
गगाप्रसाद 'गग'
गगाप्रसाद गुप्त
गंगाप्रसाद मिश्र 'द्विजगग'
गगाप्रसाद राजपूत
गंगाप्रसाद शास्त्री (शामली)
गंगाप्रसाद शास्त्री (भरतपुर)
गंगाप्रसादसिह
गगाप्रसाद सुनार
गगाबिसन
(स्वामी) गगाराम
गगाराम राना
गगाराम शर्मा
गगाराम मूलचन्द 'शृगी'
गगालहरी शर्मा
गगाविष्णु कानूनगो (गगादास)
गगाविष्णु शास्त्री धर्मभूषण
(सेठ) गगाविष्णु श्रीकृष्णदास
गगाशरण भार्गव
(पण्डितवर) गगासहाय
गगासहाय पाराशरी 'कमल'
गगासिह रावत
गगोत्तरीप्रसादसिह
गजन
गजरादेवी जमीदार
(ठा०) गजराजसिह
गजाधर शुक्ल
गजाधर शुक्ल 'द्विजशुक्ल'
गजाधरसिंह
गजानन्द केडिया
गजानन दिगम्बर माडगूलकर
गजानन भाई शास्त्री
गटभाई ध्रुव
गणपति जानकीराम दुबे
गणपतिकृष्ण गुर्जर
गणपति मिश्र
गणेश
गणेश चौकावार
गणेशदत्त पाठक
गणेशदत्त शास्त्री महोपदेशक
गणेश दीक्षित
गणेशनारायण सोमानी
गणेशपाल सिह 'गनपाल'
गणेश पुरी 'गुप्त जी'
(सेठ)गणेशप्रसाद अग्रवाल, कवि भूषण
गणेशप्रसाद झोगला
गणेशप्रसाद धुरमटिया
गणेशप्रसाद मिश्र 'इन्दु'
गणेश प्रसाद शर्मा
गणेशप्रसाद शुक्ल
गणेशप्रसाद शुक्ल 'गणाधिप'
गणेशप्रसाद सिघई
(ठा०) गणेशबख्शसिह 'गनपाल'
गणेशबिहारी मिश्र
गणेश भारतीय
गणेश रामचन्द्र शर्मा
गणेशराम मिश्र
गणेश वडेरिया
गणेश वासुदेव मावलकर
गणेश सदाशिव भोपटकर
गणेशसिह बेदी
गणेशानन्द शर्मा
गदाधर
गदाधरप्रसाद 'इष्ट' वैद्य
गदाधरप्रसाद त्रिवेदी 'प्रेमीहरि'
गदाधरप्रसाद ब्रह्मभट्ट 'नवीन'
गदाधरप्रसाद शुक्ल
गदाधरप्रसाद श्रीवास्तव
(ठा०) गदाधरबख्श सिंह
गदाधर भट्ट
गनपत
गनपत 'गनेस'
गनपत शर्मा
गनेश कवि
गबरी बाई
गयाप्रसाद तिवारी
(मुन्शी) गयाप्रसाद श्रीवास्तव
गरीबदास गोस्वामी
गाधि अनन्ताचार्य शौरिराजन
गान्धीराम 'फोकस'
गिरधारी
(कविवर) गिरधारीलाल
गिरधारीलाल द्विवेदी 'गिरधारी'
गिरधारीलाल बहुगुणा
गिरवरदान कविया
गिरवरसहाय पाण्डेय
गिरिजादत्त नैथाणी
गिरिजादत्त वाजपेयी
गिरिजानन्दन तिवारी
गिरिजाप्रसाद द्विवेदी
(सर) गिरिजाशकर वाजपेयी
गिरिधर
गिरिधर शर्मा
गिरिधर शर्मा 'गिरीश'
गिरिधर शुक्ल
(मुन्शी) गिरिधारीलाल
गिरिधारीलाल शर्मा गर्ग
गिरिराजप्रसाद शर्मा 'कुम्हेर'
गिरीशचन्द्र चतुर्वेदी
गिरीशचन्द्र 'सखा'
गीतानन्द सरस्वती
(महाराज) गुमानसिंह
गुरदास
गुरमुखसिंह 'जान'
गुरबचन

गुरदित्ता खन्ना
(स्वामी) गुरुचरणदास महामण्डलेश्वर
गुरुदत्त विद्यार्थी
गुरुदत्त शुक्ल
(कर्नल) गुरुदत्तसिंह
गुरुदयाल मलिक
गुरुदीनराय बन्दीजन
गुरुप्रसाद अग्निहोत्री 'कज'
गुरुप्रसाद शर्मा 'मुरेन्द्र'
गुरुमहादेवाश्रय प्रताप शाही
गुरुराम विश्वकर्मा
(मुन्शी) गुरुसहाय 'मुल्तजी'
गुरुसहायलाल
गुरुसहाय 'विरक्त'
गुलाबअली
गुलाब कविराय
गुलाबचन्द उपाध्याय 'गुलाब'
गुलाब जी
गुलाबन मिश्र
गुलाब विजय
गुलावशंकर
(धाऊ) गुलाबसिंह
(राव) गुलाबसिंह
गेदालाल दीक्षित
गेदालाल 'लाठ'
गोकरणनाथ मिश्र
गोकर्णप्रसाद मिश्र 'प्रमाद'
गोकुल कवि
(बाबू) गोकुलचन्द
गोकुलचन्द चतुर्वेदी
गोकुलचन्द 'चन्द्र'
गोकुलचन्द मिश्र
गोकुलदास पारीख
गोकुलप्रसाद
गोदावरीश मिश्र
गोपदेव दार्शनिक
गोपाल

गोपालजी कविया
(मास्टर) गोपाल जी बी० ए०
गोपालदत्त जोशी
गोपालदत्त पन्त
गोपालदान
गोपालदास-1
गोपालदास-2
गोपालदास खाकी
गोपालदास देवगण शर्मा
गोपालदास बरैया
गोपालदीन शुक्ल
गोपालनारायण शिरोमणि
गोपालप्रसाद
गोपालप्रसाद चतुर्वेदी
गोपालप्रसाद शर्मा मुद्गल
गोपाल मिश्र
गोपालराव हरिजी देशमुख 'लोकहितवादी'
गोपालराव हरि शर्मा
(प०) गोपाललाल गुल
गोपाललाल माहेश्वरी 'चन्द्र'
गोपाललाल शर्मा
(डॉ०) गोपाल व्यास
गोपालशरणसिंह सेंगर
गोपाल शुक्ल
(राव) गोपालसिंह 'राष्ट्रवर' (खर्वा नरेश)
(प्रो०) गोपाल स्वरूप भार्गव
गोपालानन्द
गोपीनाथ
(महामहोपाध्याय) गोपीनाथ कविराज
गोपीनाथ कुमर
गोपीनाथ वर्मा
गोपीनाथ शास्त्री
गोप्य अली देवी 'ज्ञानकला'
गोरखनाथ चौबे
गोरधनभाई फूलाभाई पटेल

गोरेलाल तिवारी
(डॉ०) गोवर्धननाथ शुक्ल
गोवर्धनलाल
गोवर्धनलाल गोस्वामी
गोविन्द कवि
(धामाई) गोविन्ददास
गोविन्ददास पचौरी
गोविन्दनारायण अवस्थी
गोविन्दप्रसाद
गोविन्दप्रसाद तिवारी
गोविन्दप्रसाद पाठक
गोविन्दप्रसाद 'महाभारती'
गोविन्दप्रसाद शास्त्री
गोविन्दप्रसाद शुक्ल
गोविन्दप्रसाद श्रीवास्तव
गोविन्द भट्ट शास्त्री
गोविन्द रघुनाथ थत्ते
गोविन्दवल्लभ पन्त (नेता)
गोविन्द शास्त्री दुगवेकर
गोविन्दसहाय
(ठा०) गोविन्दसिंह
(मेजर) गोविन्दसिंह
गौर गुलाई
गौरहरि शर्मा
गौरीदत्त वाजपेयी
गौरीनाथ झा
गौरीनाथ पाठक
गौरीशंकर जोशी 'धूमकेतु'
गौरीशंकर त्रिपाठी
गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर'
गौरीशंकर पण्डा 'गौरी'
गौरीशंकर मिश्र
गौरीशंकर 'सुधाकर'
गौरीशरण शर्मा कौशिक
(जन-कवि) गौर्दा
(चौबे) ग्यारसीराम मिश्र
ग्वाल कवि

घ्वालानन्द

घनश्याम गोस्वामी
(सेठ) घनश्यामदास पोद्दार
घनश्याम प्रसाद 'श्याम'
(प०) घनश्यामराव
घनश्याम शुक्ल
घनानन्द पन्त
घनानन्द बहुगुणा
घमण्डीलाल राना
(गुरु) घासीदास
(पंडित) घासीराम
घासीराम गोवर्धन
(बाबा) घिसियावनदास
(संत) घीसादास
घूरेलाल 'लाल कवि'

चक्रधर 'हंस' नौटियाल
चक्रपाणि
चक्रपाणि शर्मा
चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य
चण्डिकाप्रसाद मिश्र
चण्डीचरण सेन
चण्डीदान
चण्डीसिंह
चतुरबिहारी राव
चतुरसिंह राणा
चतुर्भुज औदीच्य
चतुर्भुज पाठक 'कंज'
चतुर्भुज मिश्र
(राव) चतुर्भुजसहाय
चन्दनसिंह
चन्दा झा
चन्दूलाल सी० सेठ
चन्दूलाल शाह
चन्द्रकला बाई
चन्द्रकान्त

(रानी) चन्द्रकुँवरि
चन्द्रधर
चन्द्रनाथ मालवीय 'वारीश'
(महन्त) चन्द्रनाथ योगी
चन्द्रभागा कोली
चन्द्रभानसिंह बैस
(ठा०) चन्द्रभानसिंह
राजा चन्द्रभानसिंह जूदेव 'रज'
चन्द्रभाल चतुर्वेदी 'चन्द्र'
चन्द्रमनोहर मिश्र
चन्द्रमाराय शर्मा
चन्द्रशंकर भट्ट
चन्द्रशेखर कवि
चन्द्रशेखर पाठक-1
चन्द्रशेखर पाठक-2
चन्द्रशेखर बडोला
चन्द्रशेखर वाजपेयी
चन्द्रशेखर शास्त्री ज्योतिषी
चन्द्रसिंह झाला 'मयंक'
चन्द्रारानी सिंह
चन्द्रिका
चन्द्रिकाप्रसाद त्रिपाठी
चन्द्रिकाप्रसाद शुक्ल 'चन्द्रमौलि'
चन्द्रिकाप्रसाद सिंह 'प्रवीण' क्षमापति
चन्द्रिकाशरण महन्त
चन्द्रिकासिंह 'करुणेश'
चमनसिंह
चमूपति एम० ए०
चम्पालाल जैन
चम्पालाल जौहरी 'सुधाकर'
चरणदास
चाँदबिहारीलाल 'मवा'
चारुशीलाशरण गुप्त
स्वामी चिद्घनानन्द
(स्वामी) चिदानन्द सरस्वती
चिन्तामणि
चिन्तामणि जोशी

चिमनदास
चिमनलाल मालोत
चिरंजीलाल उस्ताद
चिरंजीलाल शर्मा
चिरंजीलाल लोयलका
चिरंजीव मिश्र
(पंडित) चुन्नालाल
चैनकर्ण साँदू
चैनदास
चैनसुखदास न्यायतीर्थ

छगालाल बिहारी 'छगन मगन'
छगन भाई क० पटेल
छज्जूमल शास्त्री विद्यार्थी
छत्रधारी सिंह 'शारद'
छत्रसाल तिवारी
छन्नूप्रसाद 'कृष्णदास'
छन्नूलाल द्विवेदी
छाजूराम 'छवेश'
छाजूराम शास्त्री विद्यासागर
छुट्टन चौधरी
छन्नूलाल वाजपेयी
छेदालाल शर्मा
छेदी झा
छेदीलाल बार० एट० लॉ
छेदीलाल झा 'सेवक'
छैलबिहारीलाल बजाज
(मन्त कवि) छोटम
छोटूराम तिवारी
(पण्डित) छोटूलाल मिश्र
छोटूलाल 'लाल कवि'
छोटे महाराज
छोटेलाल जैन
छोटेलाल देहाती
(लाला) छोटेलाल बार्हस्पत्य
छोटेलाल शुक्ल

जगबहादुर सिंह अष्ठाना 'जयरामदास'
जगलीलाल ब्रह्मभट्ट 'जगली'
जगत्नारायणलाल
जगतनारायण शुक्ल
(मुन्शी) जगदम्बाप्रसाद
जगदम्बालाल बख्शी
जगदम्बासहाय श्रीवास्तव
जगदीश कवि
(भिक्खु) जगदीश काश्यप
जगदीशनारायण चौबे
जगदीशनारायण रूमिया
जगदीशनारायण सिंह
जगदीशप्रसाद अग्निहोत्री
जगदीशबख्शसिंह 'भूपति'
(गोस्वामी) जगदीशलाल
जगदीश वर्मा
जगद्धर शर्मा गुलेरी
जगनलाल गुप्त मुख्तार
जगन जी 'मुन मुन जी'
(महर्षि) जगन्नाथ
जगन्नाथ खन्ना
जगन्नाथ गुप्त
(रायबहादुर) जगन्नाथ चौधरी
जगन्नाथ चौबे माथुर
(मुन्शी) जगन्नाथदास
जगन्नाथदास दुर्रानी
जगन्नाथप्रसाद
जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी
जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी 'जुगलशरण'
जगन्नाथप्रसाद शर्मा
जगन्नाथप्रसाद सिंह 'कविकिंकर'
जगन्नाथबख्शसिंह 'लाल'
जगन्नाथ भक्त
जगन्नाथ भारतीय
(चौबे) जगन्नाथ मिश्र
जगन्नाथ शरण
जगन्नाथ शर्मा राजवैद्य
जगमोहनदास
जगमोहन ब्रह्मभट्ट
(मुन्शी) जगमोहनलाल
जगमोहन 'विकसित'
(राजा) जगमोहनसिंह
जटाधरप्रसाद शर्मा 'विकल'
जनकधारी लाल
जनकेश
जनजय राम
जनार्दन भट्ट गोस्वामी
जनार्दन मिश्र
जनेश्वरप्रसाद 'मायल'
जमुनादास मेहरा
जमुनाप्रसाद पचौरिया
जमुनाप्रसाद पाण्डेय, नृत्याचार्य
जमुनाप्रसाद श्रीवास्तव
(महाराज) जयकृष्णदास शर्मा
(राजा) जयकृष्णदास चतुर्वेदी
जयगोविन्द
जयगोविन्द महाराज
जयचन्द छावडा
जयजयराम मिश्र
जयजयराम शरद
जयदत्त पंडित
(डॉ०) जयदेव कुलश्रेष्ठ
(राजकवि) जयदेव ब्रह्मभट्ट
जयदेव विद्यालंकार
(पं०) जयदेव शर्मा
जयदेव शर्मा 'इन्दु'
जयनारायण झा 'विनीत'
जयनारायणलाल
जयन्त
जयन्तीप्रसाद दुबे
जयन्तीलाल मुरती
जयपालसिंह 'मनोज'
जयप्रकाश लाल
जयभगवान वकील
जयरामदास गुप्त
(पं०) जयराम शर्मा
जयलाल 'मास्टर'
(महाराजा) जयसिंह, बघेलखण्ड
जयसिंह राव
जयाचार्य महाराज
जयेन्द्र पुरी महामण्डलेश्वर
(महाराणा) जवानसिंह
जवाहरलाल जी शाह
(डॉ०) जवाहरलाल रोहतगी
(पण्डित) जवाहरलाल शर्मा
जवाहरलाल हकीम
जवाहिरमल्ल अग्रवाल 'पोखराज'
जसकरण
(कुँ०) जसवन्तसिंह जूदेव
(राजा) जसवन्तसिंह (तिर्वा)
(सरदार) जसवन्तसिंह
जसोदा
जहाँगीरदास
जहावलसिंह सावनजी
जहावलसिंह वैद्य
(हाजी) जहूरअली
जागेश्वर बख्श
(मिर्जा) जान
जानकीदत्त द्विवेदी
जानकीदास
जानकीदेवी भण्डारी
जानकीनाथ विद्यार्थी
जानकीनाथसिंह 'मनोज'
जानकीप्रसाद दुबे
(ठा०) जानकीप्रसाद पँवार
जानकीप्रसाद मिश्र
जानकीराम
जानकीशरण त्रिपाठी
जानकीशरण 'स्नेहलता'
(दीवान) जानीबिहारीलाल
जाममुता प्रतापबाला

जालिम राणा
जालेजर दीनशाजी चावडा
(ठा०) जाहरसिंह
जिन्दाकौल 'मास्टरजी'
जियालाल त्रिपाठी
जी०एस० पथिक
जी०वी० अवस्थी 'अटल'
जी०बी० हल्लिकेरी
जी० सुब्रह्मण्यम
जीतनसिंह
(सन्त) जीतादास
जीता मुनिनारायण
प० जीवधर
जीवणदास
(सन्त) जीवतसिंह
जीवनचन्द्र जोशी
जीवनदास गुप्त
जीवनदास पेशनर
जीवनराम पण्डित
जीवनराम पाण्डेय
जीवनराम भाट
(बाबा) जीवनलाल
(बोहरा) जीवनलाल
जीवनलाल गुप्त
जीवनलाल नागर
जीवनलाल श्रीवास्तव
जीवनशकर याजिक
जीवनसिंह
(बाबा) जीवनसिंह बेदी
जीवनारायण मिश्र
जीवराम गारे
जुगलकिशोर अग्रवाल
जुगलकिशोर मिश्र 'जुगलेश'
जुगलकिशोर मिश्र 'ब्रजराज'
जुगलप्रसाद चौबे
जुगल प्रिया
जुगलेश

जेठमल व्यास
जैनेन्द्रकिशोर
(महता) जैमिनी बी०ए०
(पंडित) जैलाल
जोगीदान
जोधसिंह
जोधसिंह मेहता
जोधसिंह रावत
जौहरीलाल मीतल 'समुद्रतरंग'
ज्योतिप्रकाश बर्मन
ज्योतिप्रसाद जैन
ज्योतिप्रसाद 'प्रेमी'
ज्योतिर्मयी ठाकुर
ज्योतिशरण रतूडी
ज्योतिषचन्द्र घोष
ज्योत्स्ना देवी
ज्वालादत्त जोशी
ज्वालाप्रताप सिंह
(लाला) ज्वालाप्रतापसिंह
वेणुवंशी 'लालजू'
ज्वालाप्रसाद दौआ
ज्वालाप्रसाद मिश्र, एडवोकेट
(डॉ०) ज्वालाप्रसाद सिंहल
ज्वालाप्रसाद 'विलक्षण'

(यति) ज्ञानचन्द
ज्ञानचन्द्र वर्मा
ज्ञानप्रकाश बहुखण्डी
(जैन सन्त) ज्ञानसार
ज्ञानेन्द्रकुमार भटनागर
ज्ञारसीराम चौबे

झनकारबाई नाहर
झब्बीलाल मिश्र

टी० आर० कृष्णस्वामी अय्यर
टी० के० गोविन्द एलच्चेरी
टी० के० रामन मेनन
टी०वी० श्रीनिवास मूर्ति
टीकाराम
टीकाराम स्वर्णकार
टीकाराम त्रिवेदी
टेकनारायणप्रसाद तर्क वागीश

ठग मिश्र
ठाकुर
ठाकुरजू मनवटी
(राय) ठाकुरदत्त धवन
ठाकुरदत्त मिश्र
(प०) ठाकुरदास
(महाराज) ठाकुरदास शर्मा
ठाकुरप्रसाद त्रिपाठी
ठाकुरप्रसाद त्रिवेदी
ठाकुरप्रसाद मिश्र
ठरसूमल बजाज

डकदास चौधरी
डब्ल्यू० पी० इग्नेशियस
डालचन्द महर
डिप्टीमल जैन
डिब्बाराम पाण्डे 'देवेश'
डोलरराम माकड

(मुनि) ढण्डा

नखुमा मालकी
नाँतीलाल देवपुरिया
नात्या साहब सर्वटे
तारकचरण भट्ट
तारकचरण भट्ट 'तारक'
तारकनाथ अग्रवाल
तारणस्वामी
(कुँवरानी) तारा जगदीश
तारादेवी छत्रकर्ण जमीदार

तारा बहन आचार्य
तारामोहन मिश्र
तिलकदास
तीरथराम 'कुलमित्र'
(कविवर) तीर्थराज
तुकुमगिरि (लावनीबाज)
तुकोजी राव पँवार
तुलसीदत्त 'शैदा'
(कविवर) तुलसीराम
तुलसीराम वाजपेयी 'कलाधर'
तुलसीराम वैश्य 'भास्कर'
तुलसीराम सरावगी
तुलसी साहब (हाथरस वाले)
(बोहरा) तुलाराम
तेग अली
तेज कवि
तेजदान
तेजनाथ झा
तेजनाथ झा 'मिहिर'
तेजरानी पाठक
(ठा०) तेजसिंह
तेजूमल मुरलीधर कनल
तोप्पिल कुमारन कृष्णन
तोमरदास
तोलचोंसिह
तोलाराम पारगीर
त्रिकम भाई सी० पटेल
त्रिकम साहब
त्रिभुवननाथ त्रिपाठी
त्रिभुवननारायण सिंह
त्रिलोकचन्द्र शास्त्री
त्रिविक्रमानन्द
त्रिवेणी उपाध्याय
त्रैलोक्यनाथ चक्रवर्ती
त्र्यम्बक दामोदर पुस्तके

थोक चोम गोधूसिंह

दत्ताराम चौबे
दत्तात्रेय नारायण कर्वे
दत्तात्रेय म० बोरगांवकर
दत्तात्रेय सुब्बाराव हेरूर
दयानन्द थपलियाल
(स्वामी) दयानन्द बी०ए०
दयापतिराय
दयाराम
दयाराम तहसीलदार
दयाराम बेरी
दयालदास
दयालदास सिढायक
दयाशंकर झा
दयाशंकर 'मगन'
दरबारीलाल सक्सेना
दरियाखान
(चौबे) दर्यावसिंह 'दिल दरयाव'
दर्शनसिंह बाघेल
दलपतराम विद्यार्थी
दलपतिराम
दशरथ लाल
दशरथ बलवन्त जाधव
(बाबू) दशरथलाल श्रीवास्तव
दाऊकृष्ण किशोरदास
दानबिहारी शर्मा
दामोदरदास त्यागी
दामोदर बलवन्त दाण्डेकर
दामोदर भट्ट 'दाम कवि'
(गो०) दामोदर शास्त्री
माध्वगोडेश्वराचार्य
दाराबख्श 'अभिलाषी'
दासी जीवण
दिगम्बरनाथ शर्मा
(कर्मयोगी) दिगम्बरराव बिन्दु
दिनेशप्रसाद वर्मा
दिनेशचन्द्र पाण्डेय
दिनेशप्रसाद भट्ट

दिनेशप्रसाद सिंह
दिमान बहादुर सिंह
दिवाकरप्रसाद वर्मा
दिवाकर शर्मा शास्त्री
दीनदयाल
दीनदयाल गिरि
दीनदयाल 'दयाल'
दीनदयालु शास्त्री सिद्धान्तालंकार
दीन दरवेश
दीनदास
दीनबन्धु मिश्र
दीनानाथ 'अश्क'
दीनानाथ 'दीन'
दीनानाथ मिश्र
दीनानाथ शास्त्री चुलैट
दीनानाथ सिगतिया
दीपचन्द वर्णी
दीपनारायण 'नारायण कवि'
(प्रो०) दीवानचन्द्र शर्मा
दुःखभजन कवि
दुग्गिराल बलराम कृष्णैया
(प्रो०) दुनीचन्द
दुर्गागिरि
दुर्गादत्त पाण्डेय 'बेढबानन्द'
दुर्गादान
दुर्गादास भास्कर
प० दुर्गाप्रसाद
(बाबा) दुर्गाप्रसाद
(मास्टर) दुर्गाप्रसाद
दुर्गाप्रसाद काचरू
दुर्गाप्रसाद कायस्थ
दुर्गाप्रसाद गुप्त
दुर्गाप्रसाद बैरिस्टर
(ला०) दुर्गाप्रसाद 'शाद'
दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव
दुर्गाबाई देशमुख
दुर्गेशनन्दन 'माणिक'

दुर्गेश्वर
दुलारेलाल मिश्र
दुलीचन्द
दुलीचन्द परवार
दुलेराम
दुव्वरि विल्हन शास्त्री
दूलाभाया काग
दूलेराय काराणी
देवकवि (काष्ठजिव्हा)
देवकीनन्दन गुप्त
देवकीनन्दन तिवारी (त्रिपाठी)
देवकीनन्दन ध्यानी
देवकीनन्दन शास्त्री
देवकीनन्दन शुक्ल
देवकीनन्दन सिंह
(राजर्षि) देवकुमार जैन
(डॉ०) देवदत्त
देवदत्त त्रिपाठी
देवदत्त शर्मा
देवदत्त शर्मा उपाध्याय
देवदत्त शर्मा 'महिदेव'
देवदत्त शास्त्री
देवदत्त सिरोठिया
देवनाथ पुरोहित
देवरत्न शुक्ल
देवराज विद्यावाचस्पति
देवशंकर त्रिवेदी
देवाचार्य अवस्थी
(मास्टर) देवीचरणसिंह
देवीदत्त उनियाल
देवीदत्त द्विवेदी, टैम्प्रेम प्रीचर
देवीदत्त शुक्ल 'किंकर'
देवीदयाल गुप्त
देवीदयाल वैद्य
देवीदयाल श्रीवास्तव
देवीदयालु शुक्ल 'प्रणयेश'
देवीदान

देवीदास देवीप्रसाद
देवीद्विज
(पण्डित) देवीदीन
देवीदीन ब्रह्मभट्ट
देवीदीन शर्मा
देवीनारायण कोहली
देवीप्रसाद
देवीप्रसाद खरे
देवीप्रसाद 'प्रीतम'
देवीप्रसाद शुक्ल 'कवि चक्रवर्ती'
देवीप्रसाद मुन्शी
देवीप्रसाद रसदेव
देवीप्रसाद शर्मा
देवीप्रसाद शुक्ल 'कवि चक्रवर्ती'
देवीप्रसाद शुक्ल 'प्रणयेश'
देवीप्रसाद सक्सेना
देवीशंकर जोशी
(पंडित) देवीसहाय
देवीसहाय वाजपेयी 'शिवभक्त'
देवीसिंह भडेरिया
देवेन्द्र अग्रवाल
देवेन्द्रकिशोर जैन
देवेन्द्रचन्द्र विद्याभास्कर
देवेन्द्रप्रसाद जोशी
देवेन्द्रवल्लभ व्यास 'दिनेश'
दौलतराम
दौलतराम शास्त्री
दौलतराय मांकड
दौलतसिंह लोढा 'अरविन्द'
द्वारकानाथ उपाध्याय
द्वारकानाथ ठाकुर
द्वारकानाथ मैत्र
द्वारकाप्रसाद कायस्थ
द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी
द्वारकाप्रसाद पाण्डेय (नम्बरदार)
(बख्शी) द्वारकाप्रसाद 'रामरसिकेन्द्र'
द्वारकाप्रसाद शर्मा

द्वारकाप्रसाद सनाढ्य 'रणछोर'
द्वारकालाल गुप्त
द्वारकेशलाल गोस्वामी
द्वारिकाप्रसाद 'द्वारिका'
द्विज
द्विजचन्द
द्विजदेवनारायण शर्मा 'विधु'
द्विज धर्मदास
(आचार्य) द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री

धनसिंह राय
धनीराम
धनीराम शर्मा
धनुधरी राम शर्मा
धनुषधारी मिश्र
(प०) धन्नालाल शास्त्री
धरणीधर मिश्र
धरमदास बारभाया
धर्मचन्द्र नारंग
धर्मदत्त त्रिपाठी
(स्वामी) धर्मदास
धर्मयशदेव
धर्मलालसिंह
धर्मवीर वेदालंकार
धाँधू चौबिनसवारे
धीरा भगत
(डॉ०) धीरेन्द्रनाथ मजूमदार
ध्रुवनारायण सिंह
डा० ध्रुवसिंह
धूमावती पाण्डेय
धोकलराम
ध्यानदास शर्मा

नकछेदी तिवारी 'अजान'
नगनारायणसिंह
नजीरउद्दीन सिद्दीकी 'उपमा'
नटवरलाल वैद्य

नत्थाप्रसाद दीक्षित 'मिलिन्द'
नत्थीराम पुरोहित
नत्थीलाल चौरसिया नत्थी
(राजवैद्य) नत्थीलाल शर्मा
नन्दकिशोर दुबे
(प्रो०) नन्दकिशोर निगम
नन्दकिशोर पटेरिया
नन्दकिशोर भार्गव
(चौ०) नन्दकिशोर श्रीवास्तव 'किशोर'
(ठा०) नन्दकिशोरसिंह 'किशोर'
नन्दकिशोर शुक्ल, वाणी भूषण
नन्दकुमार शर्मा
नन्दन जी महाराज
नन्दलाल 'अटल'
नन्दलाल खन्ना
नन्दलाल चत्ता
नन्दलाल विश्वनाथ दवे
नन्दी शर्मा रावत
नन्ने भाट 'श्रीनिधि'
नन्हूलाल
नन्हेलाल पण्डा
नभुलाल
(महाराज) नयनाराम शर्मा
नरसिंहदास
नरसिंह मोहन मिश्र 'सिंह'
नरहर दुर्गाशंकर जोशी
नरहर विष्णु गाडगिल
नरेन्द्रसिंह (कालाकाँकर)
नरेन्द्रसिंह, महाराजा पटियाला
(रावल) नरेन्द्रसिंह
नरेस
(कवि) नर्मद
नर्मदाप्रसाद मिश्र
(डॉ०) नर्मदेश्वरप्रसाद
(प०) नर्मदेश्वरप्रसाद उपाध्याय
नर्मदेश्वरप्रसादसिंह 'ईशकवि'
नलिनीबाला देवी
नलनसिंह
नवनीतराम यदुराम भट्ट
नवलदान
नवलसिंह कायस्थ
नवलसिंह प्रधान
नवाबसिंह रघुवंशी
नवीनगोपालसिंह
नागभूषण हलीखेड
नागेश कवि
नागेश्वर प्रसादसिंह वर्मा
नाथ
नाथराम दोसी
(ठा०) नाथूदान बारहट
नाथूदान महियारिया
नाथूराम चतुर्वेदी 'ब्रज'
नाथूराम दर्जी
नाथूराम प्रवीण
नाथूराम शर्मा-2
नाथूराम शुक्ल
नाथूराम सिढायच
नाथूलाल बारहठ
नाथूलाल व्यास
नानकचन्द
नानालाल चमनलाल महेता
नानूराम वर्मा
नानूलाल राणा
नारायण
(मुनि) नारायण
नारायण जी सेंगरिया 'जीत'
नारायणदत्त पाठक
नारायणदत्त बहुगुणा
नारायणदत्त सहगल
नारायणदास
नारायणप्रसाद जैन
(प्रो०) नारायणप्रसाद शास्त्री
नारायणप्रसाद शुक्ल
नारायणप्रसादसिंह
नारायण बाबू
नारायण माधव वैद्य
नारायणराव नाखरे
नारायणराव पाखेटकर
नारायणलाल गोस्वामी 'रसलीन'
नारायण वासुदेव गोडबोले
(भाई) नारायणसिंह 'प्रेमनिधि'
(ठा०) नारायणसिंह भदौरिया
नारायणसिंह वर्मा
नारायण स्वामी
(ठा०) नाहरसिंह
(स्वामी) निजानन्द
नित्यबोध विद्यारत्न
नित्यानन्द पर्वतीय
निरजनदेव शर्मा
निरणम कात्यायनी अम्मा
निरान्त
निर्भयलाल चौधरी
निर्मल डगवाल
निर्मलदास
निर्मला मित्रा
निवाजीलाल यादव
(स्वामी) निष्कुलानन्द
(सेठ) निहालचन्द
(सन्त) निहालसिंह
निहालसिंह 'हर्ष'
नीरो वर्मा
नीलकण्ठ गणेश लेले
नीलकण्ठ शर्मा
नीलकण्ठ शास्त्री गोरे
नीलमणि फूकन
नृसिंहदास
नृसिंहदास कायस्थ
नृसिंहाचार्य
(सन्त) नेकीराम महाराज
नेमनारायण गुप्त
नैषधराय बापालाल दवे

(प०) नौबतराम शर्मा
न्यामतसिंह

पंचम कवि
(राजा) पचमसिंह, लेफ्टिनेंट कर्नल
पचमसिंह वर्मा
पचमसिंह शर्मा
पत्तनलाल 'सुशील'
पद्मधर अवस्थी 'पद्म'
(डॉ०) पद्मनाभन
पद्मसिंह उपनाम रामप्रसाद
पद्माकर भट्ट
पनजी सुत चेली
पन्नालाल उपाध्याय
पन्नालाल जैन अग्रवाल
(गोस्वामी) पन्नालाल जी महाराज
पन्नालाल पुरोहित
(मुशी) पन्नालाल 'प्रेमपुज'
पन्नालाल भैया 'छैल'
पन्नालाल श्रीवास्तव
पन्नालाल सिंघी
पन्नालाल 'सुशील'
पन्नालाल सोनी
पन्नेसिंह
परतीतराय लक्ष्मणसिंह
(महाकवि) परमानन्द
परमानन्द खत्री
परमानन्द पाठक
परमानन्द पाण्डेय
परमानन्द प्रधान
(डॉ०) परमानन्द बदलाणी
(भक्त) परमानन्द मौनी महाराज
परमानन्द लल्ला
परमानन्द शास्त्री
(योगिराज) परमानन्द सन्त
परमानन्द सिंघई
परमानन्द सुहान

परमेश बन्दीजन
परमेश्वरसिंह
श्री परमेश्वरी भट्ट
परशुराम नौटियाल
परशुराम पटेरिया
(ठा०) परशुरामसिंह
परसन
पलटू साहब
महात्मा पहलवानदास
(कवि स्वामी) पहिलाजराम
पाण्डुरग खानखोजे
पाण्डुरग सदाशिव साने गुरुजी
पातीराम पटोला
पावूदान
पारसदास निगोत्या
पारसनाथ त्रिपाठी
पारसनाथसिंह
पारसनाथसिंह विशारद
पारक्कल वासु मेनन
(बहन) पार्वतीदेवी
(वर्धमान) पार्श्वनाथ शास्त्री
पालिराम
पिगलशी गठवी
पी० आर० नाम्बियार
पी० एम० नायर
पी० एस० जनार्दनन
(डॉ०) पी० कृष्णन नायर
पी० कृष्णमूर्ति
पी० गोविन्दन नायर
पी० बी० नारायणन नायर
पीताम्बरदत्त पसबोला
पीताम्बर भट्ट रमाधर
पुण्यानन्द झा
कवि पुत्तन
पुत्तनलाल शर्मा
पुत्तूलाल अनरिया
पुरुषोत्तमदास

पुष्करसिंह सोलंकी
पूरनचन्द जोशी
पूर्णमल्ल ब्रह्मभट्ट
पेट्टियिल रामन पिल्लै
पृथ्वीपालसिंह
पृथ्वीराज कपूर (अभिनेता)
पृथ्वीसिंह 'बेधड़क'
प्रकाशानन्द सन्यासी
प्रतापकवि (जैन मुनि)
प्रतापनारायणसिंह
प्रताप बाला
(राव) प्रतापसहाय
प्रताप साहि बन्दीजन
प्रतापसाहि सिरोहिया राव
प्रतापसिंह
(सवाई) प्रतापसिंह, जयपुरनरेश
प्रतापसिंह कविराज
प्रतापसिंह नेगी
प्रतापसिंह मेहता
प्रतिपालसिंह ठाकुर
प्रतीतराय लक्ष्मणसिंह
(लाल) प्रद्युम्नसिंह
प्रबोधचन्द्र
प्रभाकरेश्वरप्रसाद उपाध्याय
प्रभातकुमार जोशी
(महात्मा) प्रभु आश्रित
प्रभुदयाल
प्रभुदयाल चतुर्वेदी
प्रभुदयाल द्विवेदी 'दयालु'
प्रभुदयाल पाण्डेय
प्रभुदयाल यादव
प्रभुदयाल वाजपेयी 'महिदेव'
प्रभुदान
(सन्त) प्रभुदास
प्रमोदशरण पाठक
प्रयागदत्त ब्रह्मभट्ट
प्रयागदत्त त्रिपाठी

प्रयागनारायण संगम
प्रवीण राणा
प्रवीरचन्द्र भजदेव
प्रसन्नकुमार ठाकुर
(डॉ०, कुमारी) प्रसन्नी सहगल
प्रसाद
प्रह्लाद
प्रह्लाद दुबे
(प्रो०) प्रह्लाद प्रधान
प्रह्लाद यदुभूषण
(डॉ०) प्राणनाथ विद्यालंकार
प्रीतमदास
प्रेमदास
प्रेमनारायण त्रिपाठी
प्रेमनारायण वाजपेयी
(श्रीमती) प्रेमलता धाकरे
प्रेमवल्लभ जोशी
प्रेमशंकर भाई भट्ट
प्रेमसखी
(ब्रह्मचारी) प्रेमसागर पंचरत्न
प्रेमसिंह
प्रेमानन्द प्रेमसखि
प्रेमीजी मुखराई
प्यारेमोहन चतुर्वेदी
(बा०) प्यारेमोहन बनर्जी
प्यारेलाल चतुर्वेदी 'भ्रमर'
प्यारेलाल टहनगुरिया
प्यारेलाल दीक्षित
प्यारेलाल मिश्र

फकीरचन्द
(मुन्शी) फकीरबख्श 'विनीत'
फणीश्वरनाथ 'रेणु'
(बाबा) फतहकरण चारण
फतहनारायणसिंह
चौबे फतहराम मिश्र
(राजा) फतहसिंह
(राजा) फतहसिंह अहलूवालिया
(महाराज) फतहशाह
फदालीराम स्वर्णकार 'नूतन'
फाल्गुनजी गोस्वामी
(भट्ट) फूलचन्द
फूलचन्द शर्मा
फूलाभाई पटेल

बंकिमचन्द्र चटर्जी
बंग अवधूत
बंग महिला, राजेन्द्रबाला घोष
बखत कुँवरि
(कविराज) बख्तावर
(सेठ) बख्तारचन्द नाहर
बख्तावरदान
बख्शराम पाण्डेय 'सुजान'
बचऊदास 'सत्यनामी'
बच्चू दुबे 'प्रकाश'
बच्चूलाल औदीच्य
बजरंगदत्त शर्मा
बजरंगराव ब्रह्मभट्ट
बजरंगसिंह
बटुकदेव मिश्र
बटुकदेव शर्मा
(रायबहादुर) बटुकप्रसाद खत्री
बट्टूलाल 'बटु' कविरत्न
बदरीनाथ सेठ
बदरीनारायण त्रिपाठी
बदरीनारायण मिश्र
बदरीनारायणराय सिनहा
बदरीनारायण सिनहा
बद्रीदान बारहट
(डॉ०) बद्रीनाथप्रसाद
(स्वामी) बद्रीप्रपन्न 'त्रिदण्डी'
बद्रीप्रसाद चतुर्वेदी
बद्रीप्रसाद त्रिपाठी
बद्रीप्रसाद शर्मा उर्फ सन्तोषानन्द
(पंडित) बद्रीलाल शर्मा
बनमाल गुड्डु चतुर्वेदी
बनवारीलाल मिश्र
बनवारीलाल 'शोला'
(महात्मा) बना दास
(डॉ०) बनारसीदास जैन
(डॉ०) बनारसीप्रसाद सक्सेना
बन्दीदीन दीक्षित
बबुआ जी मिश्र
बरकत उल्लाह 'पेमी'
बलजीत शास्त्री
बलदेव कवि
बलदेव जी
बलदेवदान कविया
(बाबू) बलदेवदास
बलदेव पाण्डे 'बलभद्र'
(लाला) बलदेवप्रसाद
बलदेवप्रसाद टण्डन
बलदेवप्रसाद नौटियाल
(मुंशी) बलदेवप्रसाद भट्ट
बलदेवप्रसाद मिश्र 'छबीन'
बलदेवप्रसाद मिश्र 'द्विजेश'
बलदेवप्रसाद 'शील'
बलदेव भट्ट
बलदेवलाल 'बलदेव'
बलदेवसिंह
लाल बलदेवसिंह
(ठा०) बलदेवसिंह वर्मा, चौहान
बलभद्र ठाकुर
बलभद्र तिवारी 'भद्र'
बलभद्र पाण्डेय 'बलभद्र'
बलभद्रप्रसाद 'रसराज'
बलभद्र मिश्र
बलभद्र शर्मा
(महाराजा) बलभद्रसिंह झा
बलभद्रसिंह पँवार
बलवन्त

(राजा) बलवन्तसिंह, अवागढ़
बसन्तराम शर्मा
बसन्तराम शास्त्री
(महाराज) बसन्तराय
बसन्तलाल गुप्त
(पंडित) बसीश्वरनाथ
(सैयद) बहाउद्दीन अहमद
बहादुरसिंह
(कर्नल) बहादुरसिंह
बहादुरसिंह रघुवंशी
बाँकेबिहारी शर्मा
(बाबू) बाँकेबिहारीलाल
बाँकेबिहारी वाजपेयी
(वैद्य) बाँकेलाल गुप्त
बाजूराम द्विजदास
(महामहोपाध्याय) बापूदेव शास्त्री
बापू साहब गायकवाड़
बाबूराम बित्थरिया
बाबूराम शर्मा इटावा
बाबूराम कानूनगो
बाबूलाल त्रिपाठी
बाबूलाल भार्गव 'कीर्ति'
बाबूलाल मयाशंकर दुबे
बाबूलाल मार्कण्डेय
बारेलाल हूँका
(महात्मा) बालकराम 'विनायक'
बालकराम 'शिशुराम'
बालकृष्ण गुप्त
बालकृष्ण गोस्वामी 'बब्बन गुरु'
(कवि) बालकृष्ण चौबे
बालकृष्ण माहेश्वरी
बालकृष्ण राव
बालकृष्ण लक्ष्मण साठे
(गोस्वामी) बालकृष्णलाल
बालकृष्ण लाहोटी
बालकृष्ण शर्मा, बम्बई
बालकृष्ण शास्त्री
बालकृष्ण सहाय
बाल गंगाधर खेर
(लोकमान्य) बाल गंगाधर तिलक
बाल गंगाधर शास्त्री
बालगोविन्द गुप्त
बालगोविन्द मिश्र 'कमलेश'
बालचन्द मोदी
बालचन्द शास्त्री
बालमुकुन्द
बालमुकुन्द भरतिया
बालमुकुन्द विजयवर्गीय
बालमुकुन्द व्यास
बालमुकुन्द शर्मा विशारद
बालाशंकर कन्थारिया
(भक्तश्री) बालुभाई जी
बालेश्वरप्रसाद 'अधम'
बालेश्वरप्रसाद बी० ए०
(ठा०) बिडर्दसिंह माधवकवि
(मास्टर) बिन्दाप्रसाद 'औघड़'
बिन्दु गोस्वामी
बिन्दु ब्रह्मचारी
बिबुधचन्द्र भट्ट
बिशन कपूर
बिशुनजी बागीपुरी
(लाला) बिमनसिंह
बिसाहूराम मोती
बिहारीदास
बिहारीदास चौबे माथुर
(पं०) बिहारीलाल
बिहारीलाल चौबे
बी० पार्थसारथी अय्यंगार
बी० वी० मोहन
बुद्धदान
बुद्धदेव उपाध्याय
बुद्धदेव मीरपुरी
बुद्धदेव विद्यालंकार
(डॉ०) बुद्धप्रकाश
बुद्धिचन्द्र पीयूष मुनि
बुद्धिनाथ झा 'कैरव'
बुद्धिलाल 'श्रावक'
बुद्धिवल्लभ पन्त
बुधसिंह
बूलचन्द बसूमल राजपाल
बृजनन्दन पाण्डेय
बृजनारायणसिंह (पडरौना नरेश)
बृजबिहारी
बृजबिहारी वर्मा
बृजबिहारी श्रीवास्तव
(पंडित) बृजभूषण
बृजेन्द्र शर्मा
बृजराज
बेचरदास दोशी
बेचूनारायण, रायबहादुर
बेणीराम 'द्विजबेनी'
बेदिल
बेनी प्रवीन
बेनीप्रसाद अग्रवाल
बेनीप्रसाद वाजपेयी 'मंजुल'
(डॉ०) बेनीप्रसाद 'सत्यशोधक'
बेनी बन्दीजन
बेनीमाधव अग्रवाल
बेनीमाधव खन्ना
बेनीमाधव तिवारी
बेनीमाधव द्विवेदी आयुर्वेदाचार्य
(पंडित) बेनीराम
बेनीसिंह परमेहण्डी
बेलुदान
बैजनाथ चौबे
बैजनाथ द्विवेदी
बैजनाथ पण्ड्या
बैजनाथ व्यास
(ठा०) बैजनाथसिंह 'किंकर'
बैजू कवि
बोधनलाल चौधरी 'रंजन'

भद्रसेन गुप्त
भमानी पुरी
भरत व्यास
भरतू दीक्षित
(राजा) भरपूरसिंह (नाभा)
भवप्रीतानन्द ओझा
भवानीचरण मुखोपाध्याय
भवानीदत्त थपलियाल
भवानीदास
भवानीदीन 'भावन'
(श्रीमती) भवानीदेवी, कोट्टायम
(लाला) भवानीप्रसाद
(डॉ०) भवानीप्रसाद तिवारी
भवानीप्रसाद पाटक'भावन'
(डॉ०) भवानीप्रसाद 'भगवन्त'
भवानीभीख त्रिपाठी
भवानीशंकर याज्ञिक
(महाराजा)भवानीसिंह, झालावाड-नरेश
भवेन्द्रचन्द्र चौधुरी
भा० ग० जोगलेकर
भाऊलाल गोस्वामी
भागवतप्रसाद 'भानु'
भागवतप्रसाद वर्मा 'दुखित'
भागवत मिश्र
भागीरथ कानोडिया
भागीरथ भास्कर
भागीरथ मिश्र
भागीरथी
भागीलाल भावसार
भाण
भाणजी मोहनजी मगन
भानीरामजी पुरोहित
भानुनन्दनसिंह
(डॉ०) भानुप्रकाश कौशिक
भानु भक्त
भानुसिंह बाघेल
भारतदान आसिया
भारतसिंह 'कमलाकर'
भारतसिंह चौहान
भारती विद्यार्थी
भालचन्द्र जोशी
भावन कवि
भास्कर गोविन्द घाणेकर
भास्करदत्त दीक्षित
भास्करप्रसाद श्रीवास्तव
भास्कर रामचन्द्र ताम्बे
भास्कर रामचन्द्र भालेराव
भास्करराव दत्तात्रेय राणे
(डॉ०) भीखनलाल आत्रेय
भीखूभाई जोसी
(महाराजा) भीमसिंह, झालावाड
भीमसेन वेदपाठी
(पण्डित) भीमसेन शर्मा (आगरा)
भीमसेन शर्मा (इटावा)
भीमसेन शास्त्री
भीमसेन हलवाई
भुजबलसिंह ठाकुर
भुजविशाल चतुर्वेदी
भुवनचन्द्र गर्ग
भुवन झा
भुवनेश
भुवनेश मिश्र
भुवनेश्वर झा 'भुवनेश'
भुवनेश्वर मिश्र
(डॉ०) भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'
भुवनेश्वरसिंह 'भुवन'
भूदेव शर्मा
भूदेव शर्मा शास्त्री
भूपनारायण
भूपनारायण दीक्षित
भूपसिंह
भूपसिंह 'भूप'
भूपेन्द्रनाथ दत्त
भूपेन्द्रनाथ सान्याल
(स्वामी) भूमानन्द सरस्वती
भूमित्र शर्मा
(डॉ०) भूरसिंह शेखावत
भूरिसिंह मानसिंह
(राजकवि) भूलदासानी भावन
भृगुरामाश्रय मिश्र
भैयालाल कन्हौआ
भैरवदत्त मिश्र 'कवीन्द्र'
भैरू गुरू
भैरू लुहार
भैरो गुप्त
भैरोदत्त आसोपा दाधीच
भोगीलाल
भोगीलाल गुप्त
भोगीलाल भावसार
भोजराम 'भोजल'
भोजा भगत
भोलादत्त काला
भोलादत्त चन्दोला 'अम्बरीष'
भोलादत्त देवराणी
भोलानाथ
(गोस्वामी) भोलानाथ गौड
भोलानाथ चौबे 'इशरत'
भोलानाथ दत्त पाण्डेय
भोला भण्डारी
भोलालाल दास
भौन कवि

मगतराम उपाध्याय
मगतराम जोशी 'मगल'
मगलदत्त पुराण मार्तण्ड
मगलदास
मगलदास कायस्थ
मगलदीन उपाध्याय
मगलदेव शर्मा-1
मगलदेव शर्मा-2
मगलदेव शर्मा शास्त्री

(डॉ०) मंगलदेव शास्त्री
(राव) मंगलप्रसाद
मंगलप्रसाद निगम
मगलप्रसाद मैत्र
मगलराम
मंगलप्रमादसिह
मगलसेन विशारद
मगलसिंह जैन
मगलानन्द नौटियाल 'अभागा'
(स्वामी) मगलानन्द पुरी
मंगलाप्रसाद
मगलीप्रसाद दुबे
मछाराम
मकरन्द
मक्खनलाल गर्ग
मक्खनलाल शास्त्री
मक्खनसिह 'मानस'
साहित्याचार्य मग (महेन्द्र मिश्र)
मगनभाई प्रभुदास देसाई
(भक्तवर) मगनभाई व्यास
(पडित) मगनलाल
मगनलाल भाई
मगनलाल भूधर भाई पटेल
मगनीराम साकरिया
मणिराम शर्मा
मणिराम मिश्र
मणिलाल देसाई
मणिलाल (एम० एल०) पाण्डेय
मणिलाल मिश्र
मथुरादत्त त्रिवेदी
(भट्ट) मथुरानाथ शास्त्री
मथुरानाथ शुक्ल
(रायबहादुर) मथुराप्रसाद
(लाला) मथुराप्रसाद 'अनूप'
(प०) मथुराप्रसाद उपाध्याय
मथुराप्रसाद गुप्त (भुर्जी)
मथुराप्रसाद चौधरी
मथुराप्रसाद दीक्षित-1
मथुराप्रसाद दीक्षित-2
मथुराप्रसाद 'द्विजमोद'
मथुराप्रसाद मिश्र (काशी)
मथुराप्रसाद वैद्य
मथुराप्रसाद शिवहरे
मथुराप्रसाद सिंह
मथुरा भगत
(डॉ०) मथुरालाल शर्मा
मथेन मगलचन्द
मदन भट्ट
मदनमोहन
मदनमोहन झा
मदनमोहन त्रिपाठी
मदनमोहन द्विवेदी 'मदनेश'
मदनमोहन 'भक्त शिरोमणि'
मदनमोहनलाल दीक्षित
मदनमोहनलाल चतुर्वेदी
मदनमोहन सेठ
मदनलाल अजमानी
मदनलाल तिवारी
मदनलाल शर्मा
मदनलाल शर्मा मिश्र
मदनलाल 'हितैषी'
मदनेश
मधुमगल मिश्र
मधुरप्रसाद शर्मा
मधुराद्वैताचार्य
मधुसूदन ओझा 'स्वतत्र'
मधुसूदन चौबे
मनई नागाच मनीषी
मनफूल त्यागी 'सुधीर'
मनबोधनलाल श्रीवास्तव
मनमोहन चौधरी
मनमोहन तिवारी
मनसाराम 'वैदिक तोप'
मनसुख थगई
मनसुखराय मोर
मनीराम
मनीराम शुक्ल
मनु गंगवाल
मनुज देपावत
मनुभाई त्रिवेदी
(प्रो०) मनोरजनप्रसाद सिंह
मनोहरकृष्ण गोलवलकर
मनोहरदास वैष्णव
मनोहर पन्त
मनोहरप्रसाद मिश्र
मनोहरलाल
मनोहरलाल मिश्र
मनोहरलाल वर्णी
मनोहरसिह बारहठ
मनोहरसिह सेगर
मनोहर स्वामी
(रसराशि ब्राह्मण) मन्नालाल
मन्नालाल द्विवेदी 'द्विज'
मन्नालाल पटवारी
(कवि) मन्नीलाल
मन्नीलाल तिवारी
मन्नीलाल वर्मा 'स्वर्ण'
मन्नीलाल स्वर्णकार 'ब्रजचन्द'
मन्नूलाल द्विवेदी
(गोस्वामी) मन्नूलाल 'मनु'
मयाशकर याज्ञिक
(महाराज) मलखानसिह
मल्लिनाथ शर्मा
महताबराय
महताबसिह 'देशभक्त'
महमूदअहमद 'हुनर'
महाचन्द
महात्माराम
महादान
महादेवप्रसाद त्रिपाठी
महादेवप्रसाद घस्माना

महादेवप्रसाद पाण्डेय 'शंकर'
महादेवप्रसाद 'मदनेश'
महादेवप्रसाद मिश्र 'अतीत'
महादेवप्रसाद वर्मा 'सामी'
महादेवप्रसाद शुक्ल
महादेवप्रसाद शुक्ल 'शंकर'
महादेवप्रसाद सेठ
महादेव 'भट्ट'
महादेवराम
महादेवलाल बरगर
महादेवसिंह शर्मा
महाबल सावजी
महाबलीसिंह
महामुनि विद्यालंकार
महाराजदत्त चतुर्वेदी 'दत्त'
(ठा०) महाराजसिंह
महाराणीशंकर शर्मा
महावीर त्यागी
महावीरप्रसाद गहमरी
महावीरप्रसाद चौधरी 'विभूति'
महावीरप्रसाद पोद्दार
महावीरप्रसाद मालवीय वैद्य
डॉ० महावीरप्रसाद लखेड़ा
महावीरप्रसाद श्रीवास्तव
महावीरप्रसाद श्रीवास्तव 'अनुराग'
महावीरराय (रिक्शा-चालक)
महावीर शुक्ल
(लाल) महावीरसिंह
महावीरसिंह 'वीरन'
महाव्रत विद्यालंकार
महीधर डगवाल
महीधर शर्मा बडथ्वाल
महीपति द्विज
महीपति सिंह
(डॉ०) महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य
महेन्द्रकुमार वाजपेयी 'सिद्धिरस'
(स्नातक) महेन्द्रकुमार वेदशिरोमणि

(डॉ०) महेन्द्रकुमार शास्त्री
महेन्द्र जी
महेन्द्र त्रिवेदी
महेन्द्रदेव शास्त्री
महेन्द्रनाथ चतुर्वेदी 'महेन्द्र'
महेन्द्रनाथ वर्मा
महेन्द्रनाथ शास्त्री
(राजा) महेन्द्र प्रताप
महेन्द्रप्रताप जोशी
महेन्द्रप्रसाद
महेन्द्र भाई
महेन्द्र राय (अग्रहरि)
महेन्द्रसिंह
महेशचन्द्र
(बाबू) महेशचन्द्रप्रसाद
महेशचन्द्र शर्मा
महेशचन्द्र शर्मा 'मोची'
महेशदत्त दुबे
महेशदत्त शुक्ल
(मौलवी) महेशप्रसाद
महेश मिश्र
महेशस्वरूप भटनागर
महेशानन्द थपलियाल
महेशानन्द नौटियाल
महेश्वरबख्शसिंह (लाल साहब)
महेश्वर राय
माँगीलाल अग्निहोत्री
माँगीलाल गुप्त 'कवि किंकर'
माँगेराम (लोक-कवि)
(पण्डित) माँगेलाल
माँगेराम
माँगेलाल मिश्र 'विशारद'
माईदयाल जैन
माखनराव भट्ट
माखन लखेर
माखनलाल
माणकचन्द कटारिया

(पं०) माणिकचन्द न्यायतीर्थ
माणिक्यचन्द जैनी
माता ओंकारेश्वरी
मातादीन दीक्षित
मातादीन चतुर्वेदी
मातादीन भगेरिया
मातादीन मिश्र
(डॉ०) माताप्रसाद गुप्त
माताप्रसाद द्विवेदी 'द्विजदत्त'
मातासेवक पाठक
मातृदत्त त्रिपाठी 'प्रणयेश'
माधवचरण द्विवेदी 'माधव'
माधवदान
माधवप्रसाद खन्ना
माधवप्रसाद तिवारी
माधवप्रसाद पौराणिक
माधवप्रसाद मिश्र
माधवप्रसाद श्रीवास्तव
(डॉ०) माधवराम 'शैवाल'
माधवराव शिवराव सन्त
माधवराव सिन्धिया
(महता) माधवसिंह
(लाल) माधवसिंह 'क्षितिपाल'
माधवीदेवी
(कुंवर) माधोसिंह
(डॉ०) मानकरण शारदा
मानकवि (खुमानी)
मानजी
मानजू अवतार
मानदान कविया
मानसिंह, महाराजा
(महाराज) मानसिंह 'द्विजदेव'
मानिकचन्द दुबे
मानिकलाल पाठक 'मानिक'
मानूलाल 'द्विज'
(चौ०) मामराज सिंह
मामा साहेब बरेरकर

मायादत्त नैथाणी
मायानन्द 'चैतन्य'
मारोर साहब
मार्कण्डेय कवि
मार्कण्डेय पाण्डेय
मार्तण्ड उपाध्याय
मालिकराम त्रिवेदी (भोगहा)
मालोजीराव नरसिंहराव शितोले
मावलीप्रसाद श्रीवास्तव
(खड्ग कवि) मिहारी
मिहीलाल 'मिलिन्द'
मीठालाल व्यास
(सन्त) मीता साहब
मु० नरसिंहाचार्य
मुन्शीलाल अग्रवाल
(मीर) मुराद
(शेख) मुईनुद्दीन
(प्रो०) मुकुटबिहारी लाल
मुकुट लाल
मुकुटलाल मिश्र
मुकुटवल्लभ गोस्वामी
मुकुन्द केशव पाध्ये
मुकुन्दलाल खड़िया
मुकुन्ददान बारहठ
मुकुन्ददास गुप्त प्रभाकर
मुकुन्ददास मूंधड़ा
मुकुन्द दैवज्ञ
मुकुन्दराम
मुकुन्दराम बड़थ्वाल
मुकुन्दराम स्वामी
मुकुन्दराव त्रिवेदी
(ठा०) मुकुन्दसिंह
(बैरिस्टर) मुकुन्दीलाल
(स्वामी) मुक्तानन्द
मुक्तिनारायण शुक्ल आयुर्वेदाचार्य
(डॉ०) मुक्तेश्वर तिवारी 'बेसुध'
(चौ०) मुख्तारसिंह

मुड़िया स्वामी
मुत्तूर राघवन नायर
(भारत-सन्तान) मुत्तैया दास
मुनई नागाच मनीषी
मुनलाल मानन्द लाल
मुनीश पाण्डेय
मुन्दर शर्मा
मुन्नालाल 'चित्र'
मुन्नालाल मिश्र
मुन्नालाल ममगोरया
मुन्नालाल श्रीवास्तव
मुमताजुद्दीन
मुरलीधर पाण्डेय
मुरलीधर भट्ट
(डॉ०) मुरलीधर श्रीवास्तव 'शेखर'
मुरलीधराचार्य 'तिलक'
मुरलीमनोहर
(अध्यापक) मुरारीलाल शर्मा
मुरारीलाल शर्मा, सिकन्दराबाद
मुरारीलाल शास्त्री
मुसद्दीराम शर्मा
(मुन्शी) मुसद्दीलाल
मुसद्दीलाल शर्मा गौड़
मुहब्बतसिंह दोमदास
मुहम्मद अब्दुस्सत्तार 'प्यारे'
(मौलाना) मुहम्मद मजूर आलम 'मुस्तफा'
मुहम्मद वजीर खाँ
(ठा०) मूरतसिंह
मूलचन्द किसनदास कापडिया
मूलचन्द परसराम शर्मा
मूलचन्द 'वत्सल'
मृगेन्द्र
मेदराम बारहठ
मेधाव्रत कविरत्न
(प०) मेवालाल
मेवालाल चौधरी

(डॉ०) मोतीचन्द्र
(सेठ) मोतीलाल जालान
(डॉ०) मोतीलाल मेनारिया
मोतीलाल लाठ
मोतीलाल विजयवर्गीय
मोतीलाल शास्त्री
मोलाराम तोमर
मोहन चोपड़ा
मोहन राकेश
मोहन भाई शाह
(प०) मोहनलाल
मोहनलाल अग्निहोत्री
मोहनलाल केडिया
मोहनलाल चतुर्वेदी
मोहनलाल तिवारी
मोहनलाल नेहरू
मोहनलाल मिश्र
मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या
मोहनलाल सक्सेना
मोहनवल्लभ पन्त
मोहन शर्मा
मोहन शर्मा, विद्याभूषण
मोहन सफदर 'आह'
(कविराज) मोहनसिंह
(राव) मोहनसिंह
मोहन सिनहा
मोहन स्वर्णकार
मोहब्बतसिंह
(डॉ०) मोहम्मद सफदर 'आह'
(मुल्ला) मोहम्मद हुसैन 'किताबी'
मोहिनीलाल गुप्त 'रसमय सिद्ध'
(सन्त) मौलाराम

यज्ञदत्त पुरोहित 'यज्ञेश'
यज्ञदत्त शर्मा
यज्ञदत्त शर्मा उपाध्याय
यज्ञदत्त शर्मा, पत्रकार

यज्ञनारायण चौबे 'रामायणी'
(ठा०) यज्ञेश्वरसिंह 'पामर'
यदुनन्दनप्रसाद
यदुनन्दनप्रसाद श्रीवास्तव
यदुनाथप्रसाद उपाध्याय
(डॉ०) यदुवंशीलाल माथुर
यमुनाप्रसाद तिवारी
यमुनाप्रसाद पाण्डेय
यशकरण खडिया
यशपाल
यशपाल वेदालकार
यशवन्त रामकृष्ण दाते
(सरदार) यशवन्तसिंह
(राजा) यशवन्तसिंह, तिर्वा
यशोदादेवी
यशोदानन्दन
यशोदानन्दन अखौरी
मुनि यशोविजय
यादवकल वासुदेव मेनन
यादराम शर्मा
यादवशंकर जामदार
(लाल) यादवेन्द्रसिंह करचुली
युगल किशोर
युगलकिशोर मस्करा 'पुष्प'
युगलकिशोर मिश्र 'युगलेश'
युगलकिशोरसिंह शास्त्री
युगलप्रसाद कायस्थ
युगलानन्द शरण
युगलेश
युगेश्वर मिश्र 'युगेश'
युवानसिंह चक्रवर्ती
योगध्यान मिश्र
योगानन्द स्वामी
योगीन्द्रपति त्रिपाठी
योगीन्द्र पुरी
योगेन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति
योगेन्द्रनाथ पाठक 'महिदेव'
योगेन्द्रनाथ समाद्दार
योगेन्द्रनारायण सिनहा
योगेन्द्र पाण्डेय
योगेशचन्द्र 'पराग'
योगेशचन्द्र बसु
योगेश्वराचार्य

रकनाथ कृष्णानन्द
रग अवधूत
(सेठ) रंगनाथ खेमराज
(पण्डित) रगनाथ पाठक
रगनाथ पाण्डेय
रगनाथ शर्मा
रगपाल (महाराज कुमार)
रगीलदास
रगीलाल गौड
रचुकराम अग्निहोत्री
रघुनन्दन त्रिपाठी
रघुनन्दन दास बउए
रघुनन्दनप्रसाद घिल्डियाल
रघुनन्दनप्रसाद निगम
रघुनन्दनप्रसाद पतोखी
रघुनन्दनप्रसाद मिश्र 'कवीन्द्र'
रघुनन्दनलाल श्रीवास्तव 'राघवेन्द्र
(पण्डित) रघुनन्दन शर्मा, साहित्य भूषण
रघुनन्दनसिंह वर्मा 'लाल'
रघुनाथ कवि
रघुनाथ झा
रघुनाथ दास
रघुनाथदास वबुए
(बाबा) रघुनाथदास महन्त 'रामस्नेही'
रघुनाथ दुबे 'प्रमोद'
रघुनाथप्रसाद कायस्थ
रघुनाथप्रसाद परसाई
रघुनाथप्रसाद पाण्डेय
रघुनाथप्रसाद मिश्र
रघुनाथप्रसाद मुख्तार
रघुनाथ मिश्र
(राज) रघुनाथराव
रघुनाथलाल गोस्वामी
रघुनाथ शाकद्वीपी
रघुनाथसिंह
रघुनाथसिंह मेहता
रघुपतिसहाय 'फिराक'
रघुमणिसिंह
(ठा०) रघुराजसिंह 'चित्रभक्त'
(बान्धवेश) रघुराजसिंह
रघुराय मनबोधन
(रानी) रघुवशकुमारी
(सरदार) रघुवशनारायणसिंह
रघुवश सहाय
रघुवरदत्त
रघुवरदत्त बहुगुणा
(कवि) रघुवरदयाल
रघुवरदयाल त्रिवेदी 'सत्यार्थी'
रघुवरदयाल शर्मा नगायच
(महन्त) रघुवरदास
रघुवर मिट्ठूलाल शास्त्री
रघुवीरदयाल रघुवीर
रघुवीरनारायण
रघुवीरप्रसाद
रघुवीरशरण जौहरी 'घनश्यामदास'
रघुवीरसिंह शास्त्री
रजनधारी सिंह
रज्जन श्रीवास्तव
रज्जीलाल दुबे
रजनीकान्त शास्त्री
रणछोड भट्ट
रणछोडलाल गोस्वामी
रणजीत तिवारी
रणधीर साहित्यालंकार
रणमलसिंह
रतनचन्द छत्रपति
रतनचन्द जैन मुख्तार

राधेश्याम विद्यार्थी
राधेश्याम सक्सेना 'रसिकेश'
रामअवध शर्मा
रामआधार मिश्र
रामकरण आसोपा
रामकिशन पंडित
रामकिशोर
(पं०) रामकिशोर शर्मा
रामकिशोरी श्रीवास्तव
रामकीर्ति तिवारी
रामकृष्ण एम० ए०
(सेठ) रामकृष्ण डालमिया
रामकृष्ण त्रिवेदी 'कृष्ण'
रामकृष्ण पाण्डेय 'विचित्र'
रामकृष्ण मुकुन्द लघाटे
रामकृष्ण वर्मा
रामकृष्ण व्यास
(मास्टर) रामकुमार, बुकसेलर
रामकुमार काले
रामकुमार चौबे
रामकुमार त्रिवेदी
रामकुमार शुक्ल
रामकुमार सिंह
(दीवान) रामकुमारसिंह कुमार
रामगुलाम अवस्थी
रामगुलाम चौधरी
रामगुलाम द्विवेदी
रामगुलाम राय
(पं०) रामगोपाल
रामगोपाल 'गोपाल'
रामगोपाल पाराशर
रामगोपाल मिश्र
(सेठ) रामगोपाल मुमड्डी
रामगोविन्द त्रिवेदी
रामचन्द्र गोविन्द काटे
रामचन्द्र टण्डन
रामचन्द्र दुबे
रामचन्द्र देहलवी
रामचन्द्र द्विवेदी
रामचन्द्र नीमा
रामचन्द्र भाई अमीन
रामचन्द्र भार्गव
रामचन्द्र मालवीय
रामचन्द्र मिश्र
रामचन्द्र मिश्र 'चन्द्र'
रामचन्द्र 'मुंहतोड'
रामचन्द्र मोरेश्वर करकरे
रामचन्द्र यक्ता
रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे
रामचन्द्र लाल
रामचन्द्र वेदान्ती
(वैद्य) रामचन्द्र विद्यार्थी
रामचन्द्र शर्मा
रामचन्द्र शर्मा 'विद्यार्थी'
(मेहता) रामचन्द्र शास्त्री
रामचन्द्र 'श्रीपति'
रामचन्द्र शुक्ल 'सरस'
रामचन्द्र सघी
रामचरणराय एडवोकेट
रामचरन कवि 'बलवन्त'
रामचरन वर्मा
रामचरनलाल मिश्र 'द्विजादेव'
रामचरित तिवारी
रामजीदास वैश्य
रामचरित्र सिंह
रामजमन
रामजीदास वैश्य
(डॉ०) रामजीलाल उपाध्याय
रामजीवन त्रिपाठी
(बाबा) रामजीवनदास
रामजीशरण विन्ध्याचल 'कैत्रिकिंकर'
रामजी शर्मा
रामजू भट्ट
रामदत्त
रामदत्त ज्योतिर्विद
रामदत्त बहुगुणा
(पंडित) रामदत्त राम शर्मा
रामदत्त शर्मा
रामदत्त सांकृत्य
रामदया या रामदयाल
(लाला) रामदयाल अग्रवाल
रामदयाल कविया
रामदयाल चौबे
रामदयाल तिवारी
रामदयाल 'दयाल'
(लाला) रामदयाल दीवान
रामदयाल पाण्डेय 'रामानन्द'
रामदयाल शर्मा
रामदयाल श्रीवास्तव
रामदहिन शर्मा
रामदान
रामदास गौड
रामदास 'निर्मोही'
रामदास वर्मा
(स्वामी) रामदास वधवा
(बाबू) रामदीनसिंह, महाराजाकुमार
रामदुलारे त्रिवेदी
रामदुलारे मिश्र
रामदुलारे शुक्ल 'गुरुसन्त'
(प्रो०) रामदेव एम० ए०
रामदेव झा
(पं०) रामद्विज
रामधन
रामधारीप्रसाद
रामनजरसिंह, राजर्षि
रामन पिल्लै आसान
रामनरेशसिंह 'रजन'
(राव) रामनाथ
(लाल) रामनाथ
रामनाथ अग्रवाल
रामनाथ कविया

(ठाकुर साहब) रामनाथ कविया
(पंडित) रामनाथ तिवारी
रामनाथ प्रधान
रामनाथ रतनू चारण
रामनाथ वाजपेयी
रामनाथ व्यास 'परिकर'
(राव) रामनाथसिंह
रामनाथ 'सुमन'
रामनारायण चतुर्वेदी
रामनारायण चौबे
रामनारायण दुबे 'अवधूत'
(बाबू) रामनारायण दुग्गड
रामनारायण द्विवेदी 'रमेश'
रामनारायण मिश्र, काशी
रामनारायण मिश्र 'छपरा'
रामनारायण मिश्र 'भूगोलजी'
रामनारायण रावत
(लाला) रामनारायण लाल
रामनारायण लाल
रामनारायण विश्वनाथ पाठक
रामनारायण व्यास
रामनारायण शुक्ल
रामनारायणसिंह
रामनिवास
रामपरीक्षण त्रिपाठी
रामप्रताप ताम्बूली
रामप्रताप पुरोहित
रामप्रताप शर्मा
रामप्रसाद
रामप्रसाद नायक
रामप्रसाद निरंजनी
रामप्रसाद 'प्रमादकवि'
रामप्रसाद 'बिस्मिल'
रामप्रसाद लोहिया
रामप्रसाद शास्त्री
रामप्रसाद शुक्ल
रामप्रसादसिंह

रामप्रसादसिंह 'साधक'
रामप्रीत शर्मा 'प्रियतम'
रामप्रीत शर्मा 'शिव'
रामफल राय
रामबख्शदास सत्यनामी
रामबालक शास्त्री
रामबिहारी लाल
रामबिहारी सहाय
रामबिहारी सिंह
रामबीज सिंह 'वल्लभ'
रामभजदत्त चौधरी
(पं०) रामभरोसीलाल बेंदेल
रामभरोसे अग्रवाल
(पं०) रामभरोसेलाल 'पंकज'
रामभरोसे मालवीय
रामभाऊ साठवणे
राममनोहर बृजपुरिया 'सम्राट्'
(डॉ०) राममनोहर लोहिया
(ठा०) राममनोहरसिंह
राम मिश्र शास्त्री
रामरक्षा मिश्र
रामरणविजयसिंह, रायबहादुर
रामरतन कोचर
रामरतन शर्मा
रामरतन सनाढ्य 'रत्नेश'
रामराव चिंचोलकर
रामरिखदास दाहिमा
रामरुद्रप्रसाद सिंह 'रुद्र'
रामरेखासिंह
रामलखनप्रसाद वर्मा
रामलाल
रामलाल खरे
रामलाल गनेरीवाल
रामलाल झा
रामलाल पाण्डेय
रामलाल वर्मन
रामलाल वैश्य

(राजवैद्य) रामलाल शर्मा
रामलोचन मिश्र
रामलोचन शर्मा 'कण्टक'
राम वर्मा
रामविलास ज्योतिषी
रामविलाससिंह
रामविलास शारदा
रामविशाल मिश्र
रामवृक्षराय शर्मा
रामशंकर गुप्त 'कमलेश'
रामशंकर त्रिपाठी
रामशंकर त्रिपाठी 'रंगी'
रामशरण
रामशरण उपाध्याय
रामशरण विद्यार्थी
रामशेषय्या
रामसकल पाठक 'द्विजराज'
रामसरनदास
रामसहाय चतुर्वेदी
रामसहाय 'मराल'
रामसिंह
(ठा०) रामसिंह
रामसिंह चौधरी
(भाई) रामसिंह
रामसिंहासन शास्त्री
रामसुख त्रिपाठी 'रसाल'
रामसुभग पाण्डेय
(डॉ०) रामसुरेश त्रिपाठी
रामसेवक गुप्त
रामसेवक पाण्डेय
रामसेवक मिश्र
रामसेवक शुक्ल 'नवराम'
रामस्वरूप
रामस्वरूप गुप्त
रामस्वरूप टण्डन
रामस्वरूप पाण्डेय
(मुन्शी) रामस्वरूप माथुर

रामस्वरूप मिश्र विशारद
(ऋषिकुमार) रामस्वरूप शर्मा
रामस्वरूप शर्मा विशारद
रामस्वरूप शास्त्री काव्यतीर्थ
रामस्वरूप शुक्ल
(डॉ०) रामस्वार्थ चौधरी 'अभिनव'
रामाधार त्रिपाठी 'जीवन'
रामाधार द्विवेदी
रामाधार मिश्र
(स्वामी) रामानन्द
रामानन्द चटर्जी
रामानन्द तिवारी-1
रामानन्द तिवारी-2
(स्वामी) रामानन्द तीर्थ
रामानन्दसिंह
रामनाथ सिंह
रामानुजदयालु त्यागी
रामानुज दासू
रामायणप्रसाद
रामायणशरण
रामावतार जायसवाल
रामावतार शर्मा 'विकल'
रामेश्वर 'अरुण'
रामेश्वरदत्त रविदत्त शर्मा
रामेश्वरदयाल शर्मा
रामेश्वरनाथ भट्ट
रामेश्वर पुजारी 'रमेश'
रामेश्वरप्रसाद अग्निहोत्री
रामेश्वरप्रसाद ओझा
रामेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी
रामेश्वरप्रसाद पाण्डे 'कामतेश'
रामेश्वरप्रसाद वर्मा
रामेश्वरप्रसाद शर्मा
रामेश्वरप्रसाद सिंह
(ठा०) रामेश्वरबख्श 'श्रीनिधि'
रामेश्वर सिंह
रामेश्वर शुक्ल

रामेश्वरीप्रसाद 'राम'
रायभाण
रायसाहबसिंह 'अजीत'
रायसिंह चारण
(महापंडित) राहुल सांकृत्यायन
रिपुदमनसिंह (महाराजा नाभा)
रिड्दान
रुचिराम साहनी
(श्रीमती) रुक्मिणी लक्ष्मीपति
(कामरेड) रुद्रदत्त भारद्वाज
रुद्रदत्त मिश्र
रुद्रदत्त शर्मा सम्पादकाचार्य
रुद्रप्रतापसिंह 'अटल'
(सेठ) रूडमल गोयनका
(महारानी) रूपकुंवर
रूपनाथ झा
रूपनारायण त्रिपाठी शास्त्री
रूपनारायण वाजपेयी
रूपनारायणसिंह 'रूप'
रूपप्रसाद 'रूप'
रूपमोहन सकलानी
रूपरतन
रूपराम कल्ला
(चौधरी) रूपसिंह
रूलीराम शर्मा
(सन्तकवि) रेण
(मौलवी) रेयाजुलहक
(बाबू) रेवाराम
(साई) रोशन अली

लक्ष्मण आर्योपदेशक
लक्ष्मण खण्डकर
लक्ष्मण गोविन्द आठले
लक्ष्मण छेदासिंह
लक्ष्मणजी बुलबुल
लक्ष्मणदत्त
लक्ष्मणप्रसाद तिवारी

लक्ष्मणप्रसाद नायक
लक्ष्मणराव काठोलकर
लक्ष्मण शास्त्री द्रविड
(ठा०) लक्ष्मणसिंह चौहान
(राजा) लक्ष्मणसिंह
लक्ष्मणसिंह 'मयंक'
लक्ष्मणसिंह प्रतीतराय
लक्ष्मणसिंह सेंगर
(गोस्वामी) लक्ष्मणाचार्य
(महन्त) लक्ष्मणाचार्य वाणीभूषण
लक्ष्मणानन्द सन्यासी
(डॉ०) लक्ष्मी
लक्ष्मीकान्त झा
लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी
लक्ष्मीचन्द्र कौशिक 'शिशु'
(डॉ०) लक्ष्मीचन्द्र खुराना
(लाला) लक्ष्मीचन्द्र खोमला
लक्ष्मीदत्त कथावाचक 'लालप्रताप'
(पं०) लक्ष्मीदत्त 'लालप्रताप'
(डॉ०) लक्ष्मीदत्त शर्मा
लक्ष्मीदत्त शास्त्री
लक्ष्मीदेवी
लक्ष्मीधर अवस्थी 'द्विजलक्ष्य'
लक्ष्मीधर चतुर्वेदी
(महामहोपाध्याय) लक्ष्मीधर शास्त्री
लक्ष्मीधर 'श्रीधर'
लक्ष्मीनाथ
लक्ष्मीनारायण-1
लक्ष्मीनारायण-2
लक्ष्मीनारायण अग्रवाल
लक्ष्मीनारायण उपाध्याय
लक्ष्मीनारायण गुप्त आइ० सी० एस०
लक्ष्मीनारायण गौड़ 'विनोद'
(पं०) लक्ष्मीनारायण दीक्षित
लक्ष्मीनारायण दीनदयाल अवस्थी
लक्ष्मीनारायण पाण्डेय
लक्ष्मीनारायण बोस

लक्ष्मीनारायण लाल (रायसाहब)
(पं०) लक्ष्मीनारायण शर्मा
लक्ष्मीनारायण सिंह
(चौ०) लक्ष्मीनारायणसिंह 'ईश'
(डॉ०) लक्ष्मीनारायणसिंह 'सुधांशु'
लक्ष्मीनारायण सिंहानिया
(गोस्वामी) लक्ष्मीपति
लक्ष्मीप्रसाद
लक्ष्मीप्रसाद तिवारी
लक्ष्मीप्रसाद पाठक
लक्ष्मीप्रसाद मिस्त्री 'रमा'
लक्ष्मीप्रसाद श्रीवास्तव
लक्ष्मीप्रसाद सिंह कवि
लक्ष्मीशंकर अवस्थी
(रायबहादुर) लक्ष्मीशंकर मिश्र
लखनसेन परिहार
लखमीचन्द
लच्छीराम कवि ब्रह्मभट्ट
लच्छीराम तावणिया
लछमन छेदसिंह
(महात्मा) लटूरसिंह
ललितकुमारसिंह 'नटवर'
ललितमाधव शर्मा
ललिताप्रसाद 'अख्तर'
ललिताप्रसाद उनियाल 'ललाम'
ललिताप्रसाद डबराल
ललिताप्रसाद बी० ए०
(पं०) ललिताप्रसाद मिश्र 'ललित'
(आचार्य) ललिताप्रसाद सुकुल
लल्लीप्रसाद पाण्डेय
लल्लूजी महाराज 'लालसखी'
लल्लूजीलाल 'लालकवि'
लल्लूप्रसाद शर्मा
(सरदार) लहनासिंह मजीठिया
लाख कवि
(लाला) लाजपतराय
लाडलीप्रसाद मिश्र 'कुसुम'

लालचन्द पमनाणी
लालचन्द सेठी
लालचन्द्र शर्मा पुरोहित
लालचन्द्र शास्त्री
लालचन्द्र विद्याभास्कर
लालजी जाडू
लालजी ब्रह्मभट्ट
लालदास साहब
लालबहादुर चौबे
लालमणि पाण्डेय 'प्रमोद'
लालाराम शास्त्री
लालीप्रसाद नेगी
लीलाधर
(डॉ०) लीलाधर गुप्त
लीलाधर जोशी
लीलानन्द कोटनाला
लीलावती 'उमा'
लीलावती कृष्णलाल वर्मा
लीलावती झवेर 'सत्य'
लेखराम आर्यपथिक
(चौबे) लोकनाथ
लोकनाथ तर्कवाचस्पति
लोकबन्धु मिश्र
लोकमणिदास चतुर्वेदी
लोकेश्वर बडगैयां
लोचनप्रसाद उपाध्याय
लोनेसिंह गौर 'हरिमित्र'
(ठा०) लौटूसिंह गौतम

वंशीधर दुबे
वंशीधर न्यायालंकार
वंशीधर पाठक
वंशीधर पाण्डेय
वंशीधर भट्ट
वंशीधर श्रीवास्तव
वंशी पंडित
वंशीलाल वकील

वजमल नीमहेडूँ
(मीर) वजीरअली
(लोक-कवि) वजीर मुहम्मद
वज्रपाणिसिंह परिहार
वनमाली चतुर्वेदी
वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री
(दीवान बहादुर, सेठ) वल्लभदास
(गोस्वामी) वल्लभदास
वल्लभसखा
वल्लभानन्द शर्मा
(प्रो०) वशिष्ठ शर्मा
वशिष्ठप्रसाद पाण्डे
वसन्तराम व्यास
वसन्तलाल गुप्त
वागीश्वर विद्यालंकार
वागेश्वरीप्रसाद
वाणीविलास डबराल
वादेराय भट्ट
वाधुमल कीमतराम जोतवाणी
वारेलाल हूका
वामदेव शर्मा ओझा
वामनराव बलीराम लाखे
(ज्योतिर्विद) वासवानन्द घिल्डियाल
(सैयद) वासित अली 'वासित'
वासुदेव उपाध्याय
वासुदेव गोविन्द आप्टे
(अखौरी) वासुदेवनारायण सिनहा
वासुदेव पाठक
वासुदेवप्रसाद उपाध्याय
वासुदेव ब्रह्मचारी
वासुदेव भट्ट गोस्वामी
वासुदेव शास्त्री
वि० मुकर्जी 'गुंजन'
विक्रमपाल शिक्षार्थी
विक्रमभाई खोडीदास पटेल
(कुंवर) विक्रमसिंह कपूरथला
(महाराजा) विक्रमाजीतसिंह

विक्रमादित्यसिंह
(स्वामी) विचारानन्द सरस्वती
विचित्रनारायण दत्त बरुआ
विच्छन्दचरण पट्टनायक
विजयगोविन्द द्विवेदी
विजयदान
विजयदेवनारायण साही
विजयराम रतूड़ी 'मुनि'
विजयवल्लभ सूरि
विजयसिंह
विजयसेन अग्रवाल
विजयानन्द त्रिपाठी, आरा
(आचार्य) विजयानन्द सूरि
विदुर वैद्य 'विदुर'
विद्याधर गौड (महामहोपाध्याय)
विद्याधर डगवाल
विद्याधर विद्यालकार
विद्याधर शास्त्री
विद्याधरी जौहरी
विद्यानाथ शर्मा
विद्याभास्कर सुकुल
विद्याराम बसनजी त्रिवेदी
(डॉ०) विद्याव्रत शास्त्री
विद्यासागर विद्यालकार
विनायक गणेश साठे
विनायक दामोदर सावरकर
(मुन्शी) विनायकप्रसाद तालिब
विनायक मिश्र
विनायक विश्वनाथ, वेद-विख्यात
विनायक सीताराम सर्वटे
विनायकानन्द सरस्वती 'विनायक'
विनोदशंकर पाठक
विनोदशंकर व्यास
(आचार्य) विनोबा भावे
विन्ध्यवासिनी देवी
विन्ध्यवासिनीप्रसाद 'अनुगामी'
विन्ध्याचलप्रसाद ब्रह्मभट्ट
विन्ध्याचलप्रसाद 'ललित'
विन्ध्येश्वरी
विन्ध्येश्वरीप्रसाद द्विवेदी
विन्ध्येश्वरीप्रसाद 'पकज'
विन्ध्येश्वरीप्रसाद शास्त्री
विन्ध्येश्वरीप्रसाद श्रीवास्तव
विन्ध्येश्वरीप्रसाद सिंह
विन्ध्येश्वरीप्रसाद स्वर्णकार
(डॉ०) विपिनबिहारी त्रिवेदी
विबुधचन्द्र भट्ट
विमल केरलीय
विमला देवी 'रमा'
विमलानन्द स्वामी
(श्रीमती) विमला रैना
(कुमारी) विमला सक्सेना
विशन कपूर
विशनदास भोजराज शिवदासानी
विशालमणि शर्मा उपाध्याय
विशुनजी वागीपुरी
(डॉ०) विश्वनाथ
विश्वनाथ गणेश आगोश
विश्वनाथ मिश्र 'राजेश'
विश्वनाथ शर्मा
(डॉ०) विश्वनाथ शर्मा
विश्वनाथ सखाराम खोडे
विश्वनाथसिंह जूदेव
(डॉ०) विश्वप्रकाश विजयवर्गीय
विश्वम्भरदत्त उनियाल
विश्वम्भरदत्त डेवराणी
विश्वम्भरदत्त त्रिपाठी
विश्वम्भरदयाल त्रिपाठी
विश्वम्भरदास गार्गीय
विश्वम्भर 'द्विज'
(लाला) विश्वम्भरनाथ
विश्वम्भरनाथ खत्री
विश्वम्भरनाथ जिज्जा
(डॉ०) विश्वम्भरनाथ भट्ट
विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक
विश्वम्भरप्रसाद गौतम
विश्वेश्वरदत्त मिश्र
विश्वेश्वरदयाल त्रिपाठी 'द्विजमान'
विश्वेश्वरदयालु चतुर्वेदी
विश्वेश्वरप्रसाद शर्मा
विश्वेश्वरसिंह बाघेल
(आचार्य) विश्वेश्वर सिद्धान्त शिरोमणि
विष्णुदत्त अमोली
विष्णुदत्त कपूर
(रायबहादुर) विष्णुदत्त शुक्ल
विष्णु नयनाराम शर्मा
विष्णुनारायण भार्गव
विष्णुप्रसाद कुमरिया
विष्णुप्रसाद पण्ड्या
विष्णुलाल शर्मा
विष्णुसिंह
विष्णुसेवक अवस्थी 'श्रीनिधि'
वी० अप्पुणि
वी० एन० नायर
वी० एम० जनार्दन
वी० के० मूत्तन
वी० गोविन्दन नायर
(प्रो०) वी० डी० ऋषि
(डॉ०) वी० राघवन
वी० रामदास पन्तुलु
वीर राधाकृष्ण मूर्ति
वीरजी भक्त
वीरदेव 'वीर'
वीर विक्रमसिंह वाजपेयी
वीरसेन सिंह
(डॉ०) वीरेन्द्रसिंह आर्य
वीरेन्द्रसिंह मगरोरा (राजा)
वीरेश्वरसिंह
वृजनन्दन 'वृजेश'
वृजराज

वृजलाल गोवर्धन यादव
वृजवासीलाल
वृन्दावन
(मुंशी) वृन्दावन
वृन्दावनदास हिन्दी भूषण
वृन्दावन नामदेव
वृन्दावनबिहारी मिश्र
वृन्दावन ब्रह्मभट्ट
वृन्दावन मिश्र
वेंकटेश वामन सोवनी
वेणीमाधव खन्ना
वेणीमाधव मिश्र
वेणीराम त्रिपाठी 'श्रीमाली'
(लाला) वेणीमाधव रईस
वेणीशंकर झा
वेदव्रत वेदालकार
वैद्यनाथ
वैद्यनाथ ऐयर
व्रजजीवनदास
व्रजमोहनलाल शर्मा 'व्रजेश'
(महाकवि) व्रजेश

शंकर गुरु 'जीवट'
शकर त्रिपाठी
शकरदत्त भट्ट
शकरदत्त शर्मा
शकरदयालु श्रीवास्तव
शकर दामोदर चितले
शकरदास
शकर दीक्षित
शकर द्विवेदी
शकरप्रसाद
शंकरप्रसाद श्रीवास्तव
(डॉ०) शंकर रामचन्द्र ओक
शंकर रामचन्द्र हातवलणे
शंकरराव खोत
शंकरराव पोहनकर
शंकरराव बखरे
(वैद्य) शंकरलाल माहेश्वर
शकरलाल मेहता
शंकरलाल वर्मा
शकर शैलेन्द्र
शकरसहाय अग्निहोत्री
शकरानन्द
(स्वामी) शकरानन्द सरस्वती
शकुण्णि नबियार
(ठा०) शक्तिसिंह रघुवंशी
शत्रुघ्न राजापुरी
शत्रुसूदनसिंह करचुली
शन्नोदेवी (एम० एल० ए०)
(मुन्शी) शम्भुदयाल 'दानिश'
शम्भुदास
शम्भुनाथतिवारी
शम्भुनाथ पारिभू
शम्भुनाथ शुक्ल
शम्भुनारायण चौबे
शम्भुरत्न मिश्र
(मुन्शी) शम्भूदयाल
(महाराजा) शम्भूसिंह सुठालिया
शम्भूदयाल नायक
शम्भूदयाल 'व्रजेश'
शम्भूदयाल राय 'हंस'
शम्भूदयाल शर्मा 'विमल'
शम्भूदास अग्रवाल
शम्भूनाथ आशिया
शम्भूनाथ त्रिपाठी
शम्भूनाथ शुक्ल
शम्भूप्रसाद मिश्र
शम्भूराम
(कैप्टन) शरत्कुमार चौधरी
शरदेन्दु सिनहा
(स्वामी) शशिधर
शशिन यादव
शशिभूषणदास गुप्त
शशिभूषण राय
शशिशेखरानन्द सकलानी
(कुमारी) शान्तादेवी
(महन्त) शान्तानन्द नाथ
शान्तिधर देसाई
शान्तिप्रकाश महाराज
(डॉ०) शान्तिप्रसाद गोवर्धन व्यास
(साहू) शान्तिप्रसाद जैन
(सर) शान्तिस्वरूप भटनागर
शामल भट्ट
शारदाप्रसाद चतुर्वेदी 'मौलिक'
शारंगधर सिंह
शारदाप्रसाद भण्डारी
शारदाप्रसाद मालवीय 'मुक्तक सम्राट्'
शारदाप्रसाद दयालवीर्य
शारदाप्रसाद श्रीवास्तव 'शारद रसेन्द्र'
शारदाबहन मेहता
शारदा शर्मा
शालग्राम द्विवेदी
(परमगुरु महाराज) शालिग्राम
शालिग्राम वर्मा
(वैद्य) शालिग्राम वैश्य
शाह आलम
शाहजहाँ बेगम (भोपाल)
शिक्षार्थी
शिखरचन्द्र जैन
शिरोमणि पाठक
शिवकिशोर शुक्ल
शिवकुमारलाल
(महामहोपाध्याय) शिवकुमार शास्त्री
(ठा०) शिवकुमारसिंह
शिवकुमारी देवी
(ठा०) शिवगुलामसिंह
शिवगोविन्द शुक्ल
शिवचन्द्र मिश्र
शिवचन्द्र शर्मा 'अद्भुत'
शिवचरणलाल शुक्ल 'शम्भुपद'

शिवजगत मिश्र
(योगिराज) शिवदत्त महाराज
शिवदत्त शर्मा
शिवदत्त सकलानी
(लाला) शिवदयाल
(स्वामी) शिवदयाल सिंह
शिवदान
शिवदास पाण्डेय
शिवदीनसिंह
शिवदुलारे त्रिवेदी
शिवदुलारे त्रिपाठी 'नूतन'
शिवदुलारे मिश्र 'मधुकर'
शिवनन्दन त्रिपाठी
शिवनन्दनप्रसाद सिंह
शिवनन्दन मिश्र 'नन्द'
शिवनन्दन शास्त्री
शिवनाथ मिश्र
शिवनाथसिंह सेंगर
शिवनारायण अग्निहोत्री
शिवनारायण लाल
शिवनारायण वर्मा 'नैन'
शिवनारायण शर्मा
शिवनारायण शुक्ल 'शम्भूनारायण'
शिवनारायण सिंह
शिवनारायणसिंह विष्ठ
(महाराज) शिवप्रकाश सिंह
डुमराँव नरेश)
(राय) शिवप्रसाद
शिवप्रसाद गुप्त
शिवप्रसाद चतुर्वेदी
शिवप्रसाद पाण्डेय 'शिव'
शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र काशिकेय'
शिवप्रसाद शर्मा
शिवप्रसाद श्रीवास्तव
(राजा) शिवप्रसाद सितारेहिन्द
शिवप्रसादसिंह 'शिव'
(ठा०) शिवबख्श चारण
शिवबख्श पाल्हावत
(बाबू) शिवमगलसिंह
शिवमूर्ति शिव 'कौतुक बनारसी'
(मुन्शी) शिवरतनलाल कायस्थ
शिवरत्न शुक्ल 'सिरस'
शिवरामदास गुप्त
शिवराम पाण्डेय वैद्य
(प०) शिवराम शर्मा (तमिलभाषी)
शिवराम शर्मा 'रमेश'
शिवराम शुक्ल
शिवलाल दुबे
शिवबिहारीलाल मिश्र
शिवशंकर काव्यतीर्थ
शिवशंकर पाठक 'कलित'
शिवशंकर पाण्डेय 'शिव'
शिवशंकर भट्ट
शिवशंकरराम शोकहा
शिवशंकर शर्मा काव्यतीर्थ
शिवशर्मा महोपदेशक
(प०) शिवशर्मा वैद्य
शिवसम्पत्तिसुजान शर्मा
शिवसहाय चतुर्वेदी
(ठा०) शिवसिंह
(ठा०) शिवसिंह सेंगर
शिवसेवक मिश्र
शिवानन्द स्वामी
शिशुनील शरीफ
शिशुपालसिंह 'शिशु'
शीतलप्रसाद
शीतलप्रसाद उपाध्याय
शीतलप्रसाद ब्रह्मचारी
शीतलप्रसाद विद्यार्थी
शीतलप्रसादसिंह
शीतलाप्रसाद त्रिपाठी
शीतलाप्रसाद दीक्षित 'रसरंग'
शीतलाबख्शसिंह
शील चतुर्वेदी
शीलचन्द्र महाराज
शीशराम ममगाईं
(महन्त) शुकदेव
शुकदेव पाण्डे
शुकदेवप्रसाद तिवारी 'निर्बल'
शुकदेवप्रसाद पाण्डेय
शुकदेव शास्त्री वैद्य
शुकदेव सिंह
(कविकुमार) शेरसिंह
शेरादान खडिया, चारण
शेषमणिराय शर्मा 'मणिपुरी'
शैलेन्द्रनाथ घोष
(कुमारी) शोभना भूटानी
शोभाचन्द्र जोशी
शोभाराम 'धेनुसेवक' कविरत्न
(सर) शौरीन्द्रमोहन ठाकुर, राजा
(मुन्शी) श्यामगुलाम लाल
श्यामचन्द्र नेगी
श्यामजी कृष्ण वर्मा
श्यामजी शर्मा
श्यामधारीप्रसाद सिंह
श्यामनन्दन सहाय, रायबहादुर
श्यामनन्दनसिंह
श्यामनाथ शर्मा
श्यामनाथ शुक्ल 'द्विजश्याम'
श्यामनारायणप्रसाद
श्यामप्रकाश दीक्षित
श्यामलाल उपाध्याय श्याम
श्यामलाल 'सुहृद'
श्यामबिहारी तिवारी 'देहाती'
श्यामबिहारी मिश्र
श्यामबिहारीलाल 'विरागी'
श्यामबिहारी शर्मा 'बिहारी'
श्यामबिहारी शुक्ल 'तरल'
श्यामलाल मिश्र
श्यामलाल चतुर्वेदी
श्यामलाल मेहर

श्यामलाल शर्मा
श्यामलाल शुक्ल 'द्विजश्याम'
श्यामलाल शुक्ल 'शण्ठकवि'
श्याम शर्मा
श्याम सखी
श्यामसुन्दर कवीश्वर
श्यामसुन्दर पाण्डेय 'छविश्याम'
(डॉ०) श्यामसुन्दरलाल दीक्षित
श्यामसुन्दर वाजपेयी
श्यामसुन्दरशरण 'श्रीबाबू जी'
श्यामसुन्दर शर्मा 'कलानिधि'
श्यामसुन्दर सेन
श्यामसेवक मिश्र
श्यामाचरणदत्त पन्त
श्यामाचरण 'सरोज'
श्यामारुण वशी
(प०) श्रवणलाल महोपदेशक
श्रीकर त्रिपाठी
श्रीकान्त शर्मा
श्रीकिशन
श्रीकृष्ण गुप्त
श्रीकृष्णदास
श्रीकृष्णदास (केरल)
श्रीकृष्ण भट्ट-1
श्रीकृष्ण भट्ट-2
श्रीकृष्ण मिश्र
श्रीकृष्ण राजदान
(डॉ०) श्रीकृष्णलाल
श्रीकृष्ण शर्मा, आर्य मिशनरी
श्रीकृष्ण शास्त्री तैलग
श्रीकृष्ण सेन्द्रे 'हृदयेश'
(बिहार केसरी) श्रीकृष्णसिह्
श्रीकृष्ण हसरत
श्रीगोपाल आचार्य
श्रीगोपाल नेवटिया
श्रीगोपाल पुरोहित
श्रीधर कौल डुलू

श्रीधरप्रसाद जेमाल
श्रीधरानन्द घिल्डियाल
श्रीनाथ शाह
(मुशी) श्रीनारायण
श्रीनारायण मिश्र
श्रीनारायण वर्मा
श्रीनिवास जगदत्त
श्रीनिवास चतुर्वेदी
(लाला) श्रीनिवासदास
श्रीनिवासदास अजमेरा
श्रीनिवास शास्त्री
श्रीपतानन्द
श्रीपति पाण्डेय
श्रीपाल त्रिपाठी
(मुशी) श्रीप्रसाद
श्रीमद्भागवत प्रसाद वर्मा
श्रीरत्न शुक्ल
श्रीराम अग्रवाल
श्रीराम मिश्र
श्रीराम वाजपेयी
श्रीराम शर्मा
श्रीराम शर्मा 'वैदिक'
श्रीलाल त्रिवेदी
श्रीलाल शालग्राम पण्ड्या
श्रीवल्लभ बेंदेल
श्रीशचन्द्र शुक्ल
श्रूपदाम

(मुशी) सकटाप्रसाद
सकटाप्रसाद शुक्ल
सगमलाल अग्रवाल
मसारनाथ पाठक
(स्वामी) सच्चिदानन्द 'परिवाद'
सच्चिदानन्द शर्मा
सच्चिदानन्द 'सव्यसाची'
सज्जन कवि
(महाराणा) सज्जनसिह

सज्जनसिंह् बाघेल
सतीशचन्द्र श्रीवास्तव
सतीश चौबे
सतीश जुयाल
सतीशबहादुर वर्मा
सतीश श्रीवास्तव
सत्यदेव शर्मा
सत्यनारायण कविरत्न
सत्यनारायण निवारी 'ज्योतिर्मय'
सत्यनारायण पाण्डेय 'सत्य'
मत्यपाल विद्यालकार
(डॉ०) मत्यप्रकाश
सत्यप्रकाश कुलश्रेष्ठ
(डॉ०) सत्यव्रत पाराशर
सत्यव्रत शर्मा द्विवेदी
सत्यव्रत शास्त्री
सत्याचरण शास्त्री 'सत्य'
सत्यानद सन्यासी
(स्वामी) सत्यानद सरस्वती
सत्यानन्द स्टोक्स
(डॉ०) सत्येन्द्र
सदल मिश्र
(सैयद) सदवरआलम (स्वामीजी)
सदानन्द कुकरेती
सदानन्द घिल्डियाल
सदानन्द डबराल 'सिद्ध कवि'
सदानन्द परिव्राजक
सदानन्द मिश्र
सदानन्द शुक्ल
सदानन्द सनवाल
सदाशिव दीक्षित
मदाशिव पाण्डुरग खानखोजे
सदासुख जी
(मुशी) सदासुखलाल 'नियाज'
(डॉ०) सद्गोपाल
सनेहीराम ठाकुर
सन्तकुमार त्रिपाठी

सन्तन कवि
सन्तराम गोहिल
सन्तराम महाराज
सन्तराम 'विचित्र'
(भाई) सन्तोखसिंह
सन्तोष पुरी
सन्तोषराय बेताल
सन्नूलाल गुप्त
(मौलवी) सफदरअली
सबसुख
सभासिंह
समीउल्लाखाँ
सम्पतकुमारसिंह करचुली
(पं०) सम्पतराम
सम्पत्तिराय भटनागर
(डॉ०) सम्पूर्णानन्द
सम्मानबाई
(महाराज) सयाजीराव गायकवाड
सयाजीराव लक्ष्मणराव सिलम
सरदार कवि
सरदार बन्दीजन
सरदार शर्मा 'सोमकवि'
सरदारसिंह
सरयूनारायण तिवारी
सरयू पण्डा गौड
सरयूप्रसाद मिश्र
सरयूप्रसाद तिवारी 'मधुकर'
(सैयद) सरवर आलम
सरस वियोगी
सरस्वती देवी
(डॉ०) सरस्वतीप्रसाद चतुर्वेदी
सरूपदास
सर्वदानन्द वर्मा
(स्वामी) सर्वदानन्द
सर्वोत्तम राव
सवितानारायण
सहजानन्द स्वामी
सहदेव दुबे 'दास'
सहदेवप्रसाद
साँवलदान
साँवलदास (दधिवालिया)
सागर महाराज
सात्विकी शर्मा
सादिक अहमद 'सादिक'
सादूलदान साँदू
(बाबू) साधुचरणप्रसाद
साधूराम वैश्य
(चौबे) सालिगराम मिश्र
सालिगराम भार्गव
साहबदीन शुक्ल
साहब लाल
साहिबसिंह 'मृगेन्द्र'
सिंहासनराय 'सिद्धेश'
सिकन्दरखाँ 'अमर'
सिद्धगोपाल कविरत्न
सिद्धगोपाल काव्यतीर्थ
सिद्धिनाथ अवस्थी 'मनोज'
सिद्धिनाथ तिवारी
सिद्धिनाथ त्रिवेदी
सिद्धिनाथ तिवारी
सिद्धिनाथ दीक्षित
सिद्धिनाथ शुक्ल 'सिद्धि'
सिद्धिविनायक द्विवेदी
सियारामशरण गुप्त
सियाललालशरण 'प्रेमलता'
सी० एन० गोविन्दन
(प्रो०) सी० जी० अब्राहम
(डॉ०) सी० मताई
सीतलप्रसाद कायस्थ 'सीतल'
सीताचरण दीक्षित
सीताराम
सीताराम उपाध्याय
(मेजर) सीताराम जौहरी
सीताराम तिवारी
(बाबा) सीतारामदास
सीताराम पाण्डेय
सीताराम बाथम
(लाला) सीताराम भाई 'ध्यान'
सीताराम 'भ्रमर'
सीताराम रावत कुथंल
सीताराम शरण
सीताराम शर्मा
(डॉ०, सर) सीताराम
सीताराम 'साधक'
सीतारामसिंह
सीताराम सेकसरिया
सीती साहब
सीसराम
सुक्खेलाल उपाध्याय
(मुंशी) सुखदयाल
सुखदेवप्रसाद सिनहा 'बिस्मिल'
सुखदेवबिहारी माथुर एडवोकेट
सुखदेव मिश्र
सुखलाल कवि
सुखलाल भाट
(प्रज्ञाचक्षु) पं० सुखलाल संघवी
सुखलालदास 'सत्यनामी'
(रानी) सुजानजू
सुजानमल गोस्वामी
सुजानसिंह-1
सुजानसिंह-2
सुतीक्ष्ण मुनि
(पण्डित) सुदर्शन
(महाराजा) सुदर्शन शाह
(श्रीमती) सुदर्शन देवी
(राजमाता) सुदर्शनाकुमारी
सुदामाप्रसाद पाण्डेय 'धूमिल'
(प्रो०) सुधाकर एम० ए०
सुधाकर झा शास्त्री
(डॉ०) सुधीन्द्र
(डॉ०) सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या

सुन्दरदास खरे
सुन्दरप्रसाद कविराज
सुन्दरलाल
(डॉ०) सुन्दरलाल, सर
(पं०) सुन्दरलाल, कर्मवीर
(प्राणाचार्य) सुन्दरलाल शुक्ल
सुन्नूलाल पटेरिया 'मदन'
सुपार्श्वदास गुप्त
सुबोधचन्द्र शर्मा 'नूतन'
सुबोध मिश्र 'सुरेश'
(राष्ट्रकवि) सुब्रह्मण्य भारती
सुब्बासिंह
(श्रीमती) सुभद्रा वेंकटेश्वरन
सुमित्रादेवी
सुरेन्द्र तिवारी
सुरेन्द्रनाथ त्रिपाठी
सुरेन्द्रनाथ दुबे
(डॉ०) सुरेन्द्रनाथ शास्त्री
सुरेन्द्रपाल सिंह
सुरेन्द्रपालसिंह 'इन्द्र'
सुरेन्द्र मिश्र
सुरेश्वर पाठक विद्यालकार
(सुकवि) सुवंश
सुशीला आगा
सुशीलादेवी बैस
सुशीला मोहिनी देवी
सुशीला कुमालकर
सूरजप्रसाद खत्री
सूरजप्रसाद मिश्र
(बाबू) सूरजभान वकील
सूरजभान वर्मा
सूरजमल
सूरजमल जैन
सूरजशरण शर्मा
(दीवान) सूरजसिंह
सूरश्याम तिवारी
(डॉ०) सूर्यकान्त
सूर्यकुमार जोशी
सूर्यकुमार पाण्डेय 'दिनेश'
सूर्यकुमारी देवी
सूर्यनाथ तकरू
सूर्यनाथ पाण्डेय
सूर्यनारायण त्रिपाठी
सूर्यनारायण दीक्षित
सूर्यनारायण मुन्शी
(चावलि) सूर्यनारायण मूर्ति
सूर्यप्रतापसिंह
सूर्यप्रसाद पाण्डेय
सूर्यप्रसाद मिश्र
(ठा०) सूर्यबलीसिंह
सूर्यमल अग्रवाल झुनझुनवाला 'सूर्य'
सूर्यमल्ल मिश्रण
सेन नापित
सेवक जनेम (नाथू)
सेवकजी
सेवकराम (कवि)
सेवनलाल दीक्षित
सेवाराम
सेवाराम शर्मा 'भारतभ्रमर'
सैयद अली मुहम्मद
सोनासिंह चौधरी
सोनेलाल द्विवेदी
(स्वामी) सोमतीर्थ
(डॉ०) सोमनाथ गुप्त
सोमेश्वरदत्त शुक्ल
(रायबहादुर) सोहनलाल
सोहनलाल पाठक
सोहनलाल शर्मा
सोहनलाल 'सोम'
सौदागरसिंह
(कुमारी) स्नेहलता शर्मा
स्योदान
स्यामसेवक मिश्र
(स्वामी) स्वतन्त्रानन्द
स्वप्नेश्वरदास
स्वराज्यचन्द्र वर्मा
स्वराज्यप्रसाद वर्मा
स्वरूपदास
(गर्भश्रीमान्) स्वाति तिरुनाल
स्वामिनाथ अय्यर
स्वामीनाथ शास्त्री
(डॉ०) स्वामीनाथसिंह
स्वामी मारहरवी

हमराज
(बख्शी) हंसराज
हजारीलाल जैन
(ठा०) हनुमन्तसिंह
हनुमन्तसिंह हाडा
हनुमानप्रसाद शास्त्री
हनुमान वर्मा
हनुमान शर्मा
हनुमान शर्मा 'हिन्दी हितैषी'
हनूमान कवि
हफीजुल्ला खाँ
(जनकवि) हमीदा खटीक
हमीरदान
हरगुलाल वशिष्ठ
हरगोविन्द (उमेदलाल)
हरगोविन्द पन्त
हरचरणलाल वर्मा
(लाला) हरदयाल
हरदान
(मुंशी) हरदेवबख्श
(लाला) हरदेवसिंह 'प्यारेलाल'
हरदेवी
हरद्वारप्रसाद जालान
हरनाथप्रसाद खत्री
हरनाथ सहाय
(ठा०) हरनामसिंह चौहान
हरनारायण अग्निहोत्री

(पं०) हरनारायण गौड़ 'हरिजू'
हरनारायण तिवारी
हरनारायणदास
हरनारायण शास्त्री विद्यासागर
हरप्रसाद कायस्थ 'हरिचन्द'
हरप्रसाद शास्त्री महामहोपाध्याय
हरफूला जाट
हरमुकुन्द शास्त्री
(राव) हरलाल
हरलाल चकोर
हरसहायलाल बी० ए०
हरसिद्धभाई दीवेटिया
हरसेवक पाण्डेय 'कमल'
(डॉ०) हरस्वरूप माथुर
हरिकृष्ण अग्रवाल
हरिकृष्ण गोयनका
हरिकृष्ण जैनली
हरिकृष्ण रतूड़ी
हरिकेशव घोष
हरिगोपाल पाध्ये
हरिचन्द रत्ता
हरिचरण चतुर्वेदी
हरिचरणदास
हरिजन कायस्थ
हरिजी गोविल
(प्रो०) हरिदत्त दुबे
हरिदत्त श्याम
हरिदास
(भक्त) हरिदास
(महात्मा) हरिदास
हरिदास माणिक
हरिदास वैष्णव
हरिदास स्वामी 'भागवतरसिक'
हरिदास 'हरिजन'
हरिदास मिश्र 'द्विजमाथुर'
हरिदीन त्रिपाठी 'द्विजदीन'
हरदेवसिंह
हरिनन्दन ठाकुर
हरिनाथ 'आलूपण्डित'
हरिनाथ पाठक
हरिनाम शर्मा
हरिनारायण
हरिनारायण अग्निहोत्री
हरिनारायण चौधरी
हरिनारायण शर्मा पुरोहित
हरिप्रसन्न घोष
हरिप्रसाद भगीरथ
हरिप्रसाद टम्टा
हरिप्रसाद द्विवेदी शास्त्री
(डॉ०) हरिप्रसाद ब्रजराय
(मुन्शी) हरिबख्श
हरिभाई किंकर
(डॉ०) हरिमंगल मिश्र
हरिमंगल मिश्र एम० ए०
हरिराम धस्माना
हरिराम मिश्र 'चचल'
हरिवंशप्रसाद द्विवेदी जौहरी
हरिवंशप्रसाद श्रीवास्तव
हरिवंशबहादुरसिंह बाघेल
हरिवंश मिश्र
हरिवंशसहाय
हरिवल्लभ 'हरि'
(राजगुरु) हरिवल्लभाचार्य
(डॉ०) हरि वैष्णव
हरिविलास
हरिविलासराय शर्मा
(डॉ०) हरि वैष्णव
हरिशंकर नागर
हरिशंकर वैद्य
हरिशंकर शर्मा
(स्वामी) हरिशरणानन्द
हरिश्चन्द्र उपाध्याय
हरिश्चन्द्र ठाकुर
हरिश्चन्द्र दत्त
हरिश्चन्द्र विद्यालंकार
हरिश्चन्द्र साहू
हरिसिंह
हरिसिंह ठाकुर
(महन्त) हरिहर गिरि
हरिहरनाथ हुक्कू
(मुन्शी) हरिहरप्रसाद
हरिहरप्रसाद (जीतूलाल)
हरिहरप्रसाद 'रसिक'
हरिहरप्रसाद वर्मा 'श्रीहरि'
महाराजकुमार हरिहरप्रसादसिंह
हरिहर मिश्र
हरिहर शर्मा 'लहरी'
हरीदान
हीरालाल मायाणी
हरीश टी० पजाबी
(सर) हरीसिंह गौड़
हरेकृष्ण धवन
हरेन्द्रदेव नारायण
हर्षनाथ झा
हर्षपुरी गोसाई
हर्षरामसिंह 'हर्ष'
हलधरजू कुबरू
हलालूराम सोरी
(श्रीमती) हा० कि० वालम्
हाजी अली खाँ 'अलि'
हाफिजुल्ला खाँ 'हाफिज'
हिंगलाजदान कविया बारहट
हिरदेश
हीराचन्द कानजी
हीरादेवी जोशी
हीराबाई
हीरालाल
(पंडित) हीरालाल
हीरालाल कानजी कवि
हीरालाल काव्योपाध्याय
हीरालाल तिवारी

हीरालाल पटवारी
(चौबे) हीरालाल मिश्र
हीरालाल मिहारी
हीरालाल वर्मा
हीरालाल व्यास 'हृदयेश'
हुलासराय
(मा०) हुलास वर्मा
हुस्नानागरी 'नागरी'
हून्दराज पारूराम शर्मा
(राजकवि) हृदयेश
हेमदान
हेमनाथ यदु

विदेशी दिवंगत हिन्दी-सेवी

(डॉ०) अगुस्तुस ब्राडहेड
(कैप्टन) अब्राहम लाकेट
आरथर लाग्स गायल
ई० एच० रोजेर्स
ई० ग्रीव्स
ई० बी० ईस्टविक
(पादरी) उलमन
एण्ड्र लेम्ली
(डॉ०) ए० एफ० रूडाल्फ हार्नले
ए० जी० एर्डकिन्स
ए० पी० वरान्निकोव
ए० बी० शेरिफ
ए० सी० वुलनर
एच० एच० विलसन
एडम बीड
एडवर्ड बालफर
एडवर्ड स्काट वारिंग
(सर) एडविन आर्नल्ड
(रेवरेण्ड) एडविन ग्रीव्स
एफ० आर० एच० चैपमैन
एफ० आर० अलीची
एफ० ई० केये
एफ० ई० श्नाइडर
एफ० ई० हाल
एफ० एफ० ग्राउस
एफ० एस० सोलोमन ग्राउस
एम० एच० इलियट
(रेवरेण्ड) एम० टी० एडम
एम० तुरोमेनामिम
एम० पी० डेविस
(लार्ड) एम० हर्स्ट
एल० एल० जामिनहाफ
एल० टी० बाल्काट
(डॉ०) एल० डी० बार्नेट
एल० पी० तैस्सितोरी
एलन
एलफिस्टन
(बीबी) एलिजबेथ स्टर्लिंग
एलैक्जैण्डर
(सर) एशली एडन
एस० जे० पालडेण्ट 'दयाकिशोर'
(डॉ०) एस० डब्ल्यू० फालन
ओ० टी० लोर
क्लादिवस बुकेनम
कर्क पैट्रिक
(फादर) कामिल बुल्के
कार्ल गौटलीब फैंडर
(रेवरेण्ड) किड
क्रिश्चियन थियोफिलुस हार्नले
(डॉ०) कीलहार्न
केस्सिगो बेलीगस्ती
कौल्डवेल
गार्सा द तासी
चार्ल्स आर० लेनमेन
चार्ल्स ग्राण्ट
चार्ल्स विल्किंस
चार्ल्स स्टीवर्ट
जॉन उम्राइल
जॉन एडम शूरमन
जॉन ओ गिल बाई
जॉन क्रिश्चियन (जॉन अधम)
जॉन गिल क्राइस्ट (जॉन बौर्थविक)
जॉन चैम्बरलेन
जॉन जोशुआ केटेलेयर
जॉन थाम्पसन प्लाट्स
(डॉ०) जॉन न्यूटन
जॉन पारसन्स
(रेवरेण्ड) जॉन पीयर्सन
जॉन फर्डीनेण्ड
जॉन फिलिप ब्राउन
जॉन बीम्स
जॉन क्लास
जॉन मारडोक
जॉन म्योर
जॉन राब्सन
(कैप्टन) जॉन विलियम टेलर
जॉन शेक्सपीयर
(रेवरेण्ड) जॉन ह्यूलेट
जार्ज एस० ए० रैंकिंग
(सर) जार्ज ग्रियर्सन, अब्राहम
जार्ज डगलस
(रेवरेण्ड) जार्ज जेम्सदान
जार्ज विलफर्ड हि्वटवर्थ
(कैप्टन) जार्ज हैडले
जी० ई० बोराडेली
जी० डब्लू० गिलबर्टन
जी० पी० हैजेल ग्रोव
जी० वी० पार्सन्स
जी० सी० अजबोर्न
जूलियम फ्रेडरिक उल्लमन
जूलियस लोर
जूल्स ब्लाम
जे० आर० बैलेण्टाइन
(डॉ०) जे० गॉस
जे० फर्गुसन
जे० स्टील
जे० सी० आर० मूइग
जे० एच० ब्रडेन
जे० एन० कार्पेण्टर
जे० एफ० बर्नस
(रेवरेण्ड) जे० एम० एलेक्जेण्डर
जे० एम० मेकफाल्ड
जे० जी० बूलर
जे० जे० मूर
जे० जे० लूकस

(रेवरेण्ड) जे० टी० थाम्पसन
जे० टी० बेट्स
जे० डी० बेड
जे० सी० आर० इविंग
जेम्स आर० वेलेण्टाइन
जेम्स केनेडी
(रेवरेण्ड) जेम्स जोजेफ न्यूकस
जेम्स टाम्पसन
जेम्स मोआट
जेम्स हेगर मेस्समोर
जोजेफ एडीमन
जोजेफ टेलर
जोजेफ हेमिल्टन गिल
जोहन्ना फ्रेडरिक फिट्ज
ज्यूलियस फ्रेडरिक उल्लयन
टामस स्टीफेन्स रोबक
टामस स्टीफेन्स
टी० ईवन्स
(रेवरेण्ड) टी० ग्राहम बेली
(रेवरेण्ड) टी० विलियम्स
टी० टी० थाम्पसन
टी० टी० रोबर्ट्स
(प्रो०) टेलर
डंकन फोर्ब्स
डब्ल्यू एडू
डब्ल्यू० एफ० जानसन
डब्ल्यू० एच० पीयर्स
डब्ल्यू० टी० एडम
डब्ल्यू० सेण्ट्स कोयर टिस् डेल
डब्ल्यू० डगलस पी० हिल
डब्ल्यू० नोएल
(कैप्टन) डब्ल्यू० हयेलिग्म
(रेवरेण्ड) डेविड ब्राउन
डानियल कोगी
त्रोदुई पार० ई० लेमेग्मे
थामस केवेन
(कैप्टेन) थामस रोएबक
थामस स्टेवर्ट जानसन
(लेफ्टिनेण्ट) दसल मार्टिन
दे रोजारियो
(कैप्टन) नेपागसन
प्राइस
पीटर ब्रटन
पीलो देलावेल्लो
पैट्रिक कारेनेगी
(रेवरेण्ड) फ्रेंक ई० की
फ्रेंक एडवर्ड शनीउर
फ्रेडरिक पिंकाट
फ्रेडरिक सालोमन ग्राउस
बार्कर
ब्रियान हाटन हागसन
ब्रेग ब्रिनटन हेकलीम बेडले
बेंजामिन शल्ट्ज
(डॉ०) मर्डोगेव
मार्शमेन
मेथ्यू विलियम वाल्लसटन
(मिस) मेरीवर्ड
मेंटूरिन वेसीरे लक्रोम
मोनियर विलियम्स
यूले
(डॉ०) राबर्ट काटन माथर
राबर्ट शेड्डोन डोबी
(डॉ०) रिप्ले मूर
(रेवरेण्ड) रूडोल्फ एडोल्फ
रेडिचे
(रेवरेण्ड) लाशिंगटन
लिस्टर सेण्ट जोसेफ
वार्ड
विलकिंस
(रेवरेण्ड) विलियम एथरिंगटन
विलियम किर्क पैट्रिक
विलियम कैरी
विलियम क्रूक
विलियम जॉन प्राइस
विलियम जोन्स
विलियम बटरवर्थ बेली
(रेवरेण्ड) विलियम बाउले
विलियम बायर्स
विलियम मैकडूगल
विलियम याट्स
(रेवरेण्ड) विलियम राबर्ट जेम्स
विलियम रिजवे
विलियम स्काट
विलियम स्मिथ
विलियम हूटर
(डॉ०) विलियम हूपर
वैलेण्टाइन
शा० वोदाविल
शेरिंग
(रेवरेण्ड) शोलबर्ग
(दीनबन्धु) सी० एफ० एण्ड्रूज
सी० डब्लू० बोउलर बेल
(डॉ०) सी० मताई
सेवास्तिवा रोडल्फ दालगादी
सैंड फोर्ट आर्नेट
सैमुअल रूसो
सैमुअल हैनरी केलाग
हगने स्तैन
हर्नर
हार्नली
(फादर) हेनरिक राय
हेनरी एन० ग्राण्ट
हेनरी ड्रमन्ड विलयमसन
हेनरी थामस कोलब्रुक
हेनरी माय इलियट
हेनरी मार्टिन
(डॉ०) हेनरी मेनसेल
(सर) हेनरी यूले
हेनरी स्टेवर्ट
हेनरी हेरिस
हेरासिम लेबेडेफ

मारीशस तथा फीजी

आत्माराम विश्वनाथ (पण्डित)
काशीनाथ किश्टो
गोपेन्द्रनारायण पथिक
नरसिंहदास
नेमनारायण गुप्त
मगनलाल मणिलाल (डॉ०)
रामअवध शर्मा (पण्डित)
श्रीनिवास जगदत्त
सूरज मगर भगत

दक्षिण अफ्रीका

एस० डी० शकर

नेपाल

(प०) कुलचन्द्र गौतम
मोतीदास भट्ट
विश्वेश्वरप्रसाद कोइराला

विविध

(कुमारी) सरला बेन
मीरा बेन

• • •

